

हिन्दी

विश्वकोष

बंगला विश्वकोषके सम्पादक

श्री अष्टरराश्ट्रीय ज्ञान मन्दिर, बङ्गुर

श्रीनगिन्द्रनाथ वसु प्राच्यविद्यामहापर्व, व,

विद्यालय वर्धमि, बङ्गुरबाजार, तमलिनगालमि पत्त. बंग, ६, बङ्ग

तया हिन्दीके विद्यानों द्वारा मद्रकित ।

सनविंश भाग

[१-खण्ड]

THE ENCYCLOPÆDIA INDICA

VOL. XIX

COMPILED WITH THE HELP OF HINDI EXPERTS

BY

NAGENDRANATH VASU Prāchyavidyāmahārṇava,

Siddhānta varidhi Śabda ratnākara Tattva-chintāraṇi M. P. A.

Complier of the Bengali Encyclopædia; the late Editor of Bangiya Sahitya Parish of

and Kalyanika Patrika; author of Castes & Sects of Bengal, Mayura-

bbanja Archaeological Survey Reports and Modern Buddhism;

Heavy Archaeological Secretary Indian Research Society;

Associate Member of the Asiatic

Society of Bengal &c. &c. &c.

Printed by A. Sen. at the Vishvakosha Press.

Published by

Nagendranath Vasu and Visvanath Vasu

9 Vishvakosha Lane Bagbazar Calcutta

1929

हिन्दी विषुवकोष

चतुर्विंश भाग,

२

२—हिन्दी वर्णमालाका सत्ताएसबाँ व्यञ्जनवर्ण। इसका उच्चारण शीमके अगळे भागको धूर्दाके साथ कुछ स्पर्श करनेसे होता है। यह स्पर्श बण और बप्प वर्णके प्रप्यका वर्ण है। इसका उच्चारणस्थान फ्दर और व्यञ्जनका मध्यवर्ती है, इसीसे इसको अन्तस्थ वर्ण कहते हैं। इसके उच्चारणमें संबाट, नाद और धीप नामक प्रयत्न होते हैं।

एक सीधो रेखा खींच कर पीछे दूसरो रेखा दाहिनी ओरसे ऊपरकी भागमें खींच सगैसे यह कक्षर बनता है। इन रेखाओंमें मवागो, शङ्करी और बह्नि सर्वदा रहता है। इस वर्णको ब्रह्मकपिणी भयीमाता महाशक्ति कहा है। यह वर्ण बनानेका वृत्तय प्रकार—

ऊर्ध्वार्धः क्रमस एक एक रेखा खींच कर उसे त्रिकोण बनाता होगा। पीछे ऊपरकी एक मात्रा और मध्यमें एक रेखा खींचनेसे यह बण बनेगा। त्रिकोण को तीन रेखाओंमें प्रहा बिण्यु और महेश्वर रहते हैं।

ऊपर वाली मात्राको शक्ति तथा मध्यकी रेखाको ब्रह्मि कपिणी जानना होगा। इस वर्णका ध्यान—

“ब्रह्मविद्यां महाशक्तिं रक्षस्वा रक्षशोचनां ।

रक्षरर्ष्याम्बुमुखां रक्षपुष्पोत्तरीजितां ॥

रक्षमात्मान्तरकरां रक्षस्तद्भारपूजितां ।

महाभोज्यवतीं नित्याम्बुविशिष्टप्रदायिकां ॥

एव स्वात्वा ब्रह्मस्य तन्मन्त्रं दद्यात्वा वनेत् ॥”

इस प्रकार इस वर्णका ध्यान करके दृश्य बार इसे मय प्रजाम करना होता है। प्रजाममन्त्र—

“त्रिकोणं त्रितं वैशि । भारतमदि-तत्त्वचतुष्टय ।

सर्वविश्वमयं वर्णं त्वत्तं प्रयामम्यहं ॥”

(वर्णोच्चारण)

इस वर्णका स्वरूप रकार हो ऊपरकीसे पुक, बिण्यु, सुटाकार, पञ्चदेवारमक, पञ्चप्राणमय और त्रिभिन्नु के साथ है।

इसके पाचक शब्द वा पर्याय—रक्त, श्रोत्रिणी, रैफ,

पावक, ओजम्, प्रकाश, अदर्शन, छोप, रत, कृष्ण, शपर, वली, भुजङ्ग, मनि, सूर्य, धातुरक्त, प्रकाशक, व्यापक, रेवती, टास, कक्षांग, वहिमण्डल, उग्ररेखा, स्थूलदण्ड, वेदकण्ठपला, प्रकृति, सुगल, ब्रह्मशब्द, गायक, धन, श्रीकण्ठ, उष्मा, हृदय, मुण्डी, त्रिपुरसुन्दरी, सविन्दु, योनिज, उवाला, श्रीशैल और विश्वतोमुषी ।

(वर्णाभिवानतन्त्र)

मातृकान्यासमें इस वर्णका दक्षिण स्कन्ध पर न्यास करना होता है। काव्यके आदिमें इस प्रत्येक प्रयोग न करे। 'रस्तु टाह', यदि कोई करे तो टाह होता है।

(वृत्तरत्नाकर)

१ छन्दःशास्त्रोक्त गणविशेष । "रत्नमध्य" छन्दः-शास्त्रमें 'र' कहनेसे मध्यवर्णको लघु, प्रथम और शेष वर्णको गुरु तथा मध्यवर्णको लघु समझना होगा ।

३ ध्रात्वनुबन्धविशेष । (कथिकल्पलता)

रंगई (हि० पु०) ध्रावियोंके अन्तर्गत एक जाति जो केवल छपे हुए कपड़ेका काम करती है ।

रंगत (हि० स्त्री०) १ रगका भाव । २ मजा, आनन्द । ३ हालत, दशा ।

रंगतरा (हि० पु०) एक प्रकारकी बड़ी और मोठी नारंगी, संगतरा ।

रंगन (हि० पु०) एक प्रकारका मसोला वृक्ष । इसके हीरकी लकड़ी कड़ी, चिकनी और मजबूत होती है और इमारतके काममें आती है । बंगाल, मध्यप्रदेश और मद्रासमें यह पेड़ बहुतायतसे होता है । इसे 'कांटागन्धक' भी कहते हैं ।

रंगना (हि० क्रि०) १ किसी वस्तुपर रंग चढ़ाना, रंगमें डुबा कर अथवा रंग चढ़ा कर किसी चीजको रंगीन करना । २ अपने कार्यसाधनके अनुकूल करनेके लिये वातचीतका प्रभाव डालना, अपना-सा बनाना । ३ किसीको अपने प्रेममें फसाना । ४ किसीके प्रेममें लिप्त होना ।

रगवदल (हि० पु०) हल्दी ।

रंगविरग (हि० वि०) १ कई रंगोंका । २ तरह तरहके, अनेक प्रकारके ।

रंगविरंगा (हि० वि०) १ अनेक रंगोंका, कई रंगोंका । २ तरह तरहका, अनेक प्रकारका ।

रंगभरिया (हि० वि०) छत, किवाड, दीवार इत्यादि पर रंगोंसे चित्रकारी करनेवाला, रंगमाज ।

रंगमार (हि० पु०) ताशका एक खेल । यह दो, तीन अथवा चार आदिमियोंमें खेला जाता है । इसमें एक एक करके सब खेलनेवालोंको बराबर बराबर पत्ते बाँट दिये जाते हैं और तब खेल होता है । इसमें जिस रंगका जो पत्ता चला जाता है उम्मी रंगके उससे बड़े पत्ते से वह जीता जाता है । यह ताशका सबसे सीधा खेल है ।

रंगरली (हि० स्त्री०) आमोद-प्रमोद, आनन्द, मौज ।

रंगरस (हि० पु०) आमोद प्रमोद, आनन्द-मंगल ।

रंगरसिया (हि० पु०) भोग-विलास करनेवाला शक्ति, विलासी पुरुष ।

रंगरूट (हि० पु०) १ सेना या पुलिस आदिमें नया भर्ती होनेवाला सिपाही । २ किसी काममें पहले पहल हाथ डालनेवाला आदमी, वह आदमी जो कोई काम सीखने लगा हो ।

रंगरेज (फा० पु०) रङ्गरेज रेखा ।

रंगवाई (हि० स्त्री०) रंगई देवो ।

रंगवाना (हि० क्रि०) रंगनेका काम दूसरेसे कराना, दूसरेको रंगनेमें प्रवृत्त करना ।

रंगसाज (फा० पु०) १ मेज, कुर्सी, किवाड, दीवार इत्यादि पर रंग चढ़ानेवाला, वह जो चीजों पर रंग चढ़ाता हो । २ उपकरणोंमें रंग तैयार करनेवाला, रंग बनानेवाला ।

रंगसाजी (फा० स्त्री०) रंगसाजका काम, रंगनेका काम ।

रंगई (हि० स्त्री०) १ रंगनेका काम, रंगनेकी क्रिया । २ रंगनेको मजदूरी । ३ रंगनेका भाव ।

रंगाना (हि० क्रि०) रंगनेका काम दूसरेसे कराना, दूसरेको रंगनेमें प्रवृत्त करना ।

रंगावट (हि० स्त्री०) रंगनेका भाव, रंगई ।

रंगिया (हि० पु०) १ कपड़े रंगनेवाला, रंगरेज । २ रंगसाज ।

रंगी (हि० वि०) आनंदी, मौजी ।

रंगीन (फा० वि०) १ जिस पर कोई रंग चढ़ा हो, रंगा हुआ । २ जिसमें कुछ अनोखापन हो, मजेदार । ३ विलास-प्रिय, आमोदप्रिय ।

रंगीनी (फा० स्त्री०) १ रंगीन होनेका भाष। २ सजावट, बनाव सिंगार। ३ बाँधापन। ४ रसिकता, रंगीलापन।
रंगीरीटा (हि० पु०) एक अंगमी वृक्ष। यह बाजिलिड्गमें अधिकतामें होता है। इसकी मकड़ो बहुत मजबूत होती है और इमारत बनानेक काममें आती है। इससे मैत्र, कुम्भी आदि भी बनाइ जाता है।

रंगामा (हि० वि०) १ आनन्दो, मीठी। २ सुन्दर खुब सूरत। ३ मेरी अनुपमा।

रंगीनी टोड़ी (हि० स्त्री०) सम्पूर्ण आठिकी एक रागिणी। इसमें मन्त्र शुद्ध म्बर लगने हैं। यह टोड़ी रागिणीका एक भेद है।

रंगीया (हि० पु०) रंगवैवाला।

रथ (हि० वि०) घोडा, मन्त्र।

रंज (फ० पु०) १ रूखा, रोद। २ शोक।

रंजक (हि० स्त्री०) १ यह घोड़ो सी बाकर जो बसो लगानेक धास्ने बहूकरी प्याम्बी पर रखी जाती है। २ गाँडे, तमागू या सुन्फेका दम। ३ वह बात आ किसी को मड़काने या उत्तेजित करनेके लिये कही जाय। ४ कोद तोका या धरपटा युष्म।

रंजना (हि० कि०) १ मसख करना, आनन्दित करना। २ मजना, स्मरण करना। ३ रंगना।

रंजा (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी मछली। इसे इनकी भी कहते हैं।

रंजिया (फा० स्त्री०) १ रंज होनेका साथ। २ वैमर्नस्य, शक्ता। ३ मननुदाय, मनबन।

रंजीरगी (फा० स्त्री०) १ रंजीरा होनेका साथ। २ रंजिया।

रंजीरा (फा० वि०) १ जिने रंज हो, दुहित। २ नाराज, अपसन्न।

रंदापा (हि० पु०) विषयाकी रंगा, वेवापन।

रंही (हि० स्त्री०) नाचन-गाने और धन से कर सम्मोग करमेवाली स्त्री वेश्या।

रंहीबाज (फा० पु०) यह जो रंहीवोसे सम्मोग करता हो, वेश्यागामी।

रंहीबाजो (फा० स्त्री०) रंहीके साथ गमन करना वेश्या गमन।

रंभुभा (हि० पु०) यह पुरुष जिनकी स्त्री मर गई हो।

रंभुधा (हि० पु०) रंभुभा देला।

रव (हि० पु०) १ बड़ो इमारतका दोवारोंके से छेद जो रोगनी और हवा आनेक लिये रखे जाते हैं, रोगनदान। २ क्रिलेकी दोवारोंका वह मोला जिसमेंसे वाहरकी ओर बहूक वा तोप चलाई जाती है मार।

रंभना (हि० कि०) रंभसे छील कर लकड़ीको सतह चिकनी करना, रंदा पेरना या चलागा।

रंभा (हि० पु०) बड़का एक भीजार जिससे यह लकड़ी की सतह छील कर बराबर और चिकनी करता है। इसमें एक चौपहल लम्बी और चिकनी सतहवाली मकड़ोके बीचमें एक छोटा लम्बा छेद होता है, जिसमें एक ठेस धारपावा फन्स जड़ा रहता है। इसे हाथमें ले कर किसी मकड़ो पर धार धार रगड़ने या चलाग्नेसे इसके ऊपरसे इमरो हूर सतह उतरने लगती है और घोड़ी देरमें मकड़ोकी सतह चिकनी हो जाती है।

रंभा (हि० पु०) १ रम्भा देला। २ जुलाहोंका छोदेका एक भीजार जो अगमग एक गज लम्बा होता है। यह जमानमें गाड़ दिया जाता है और इसमें तानीकी रस्सी बांधी जाती है।

रंभाना (हि० कि०) १ गायका घोलना, गायका शब्द करना। २ गोमै रंभन कराना, गौको शब्द करनेमें प्रवृत्त करना।

रंभचटा (हि० पु०) मनोरथ सिद्धिकी आसना, छालच।

रंभस् (स० पञ्जी०) रम्भने येन इति रम्भ (रंभश्च। उष् ४।२३) इति असुत्तु इगागमश्च। १ वेग, गति। (प०) २ महाद्विष। ३ चिप्लु।

र (स० पु०) राति ऊहृष्यं गच्छतीति रा इ। १ पावक, मणि। २ कामानि। ३ अलना, कुपसना। ४ भाँच, थाप। ५ सितारका एक बोल। (वि०) ६ तोहण, प्रकर।

रभप्यत (म० स्त्री०) १ प्रवा, रिमाया। २ काश्नकार।

रभत (म० स्त्री०) रभप्यत देला।

रर (हि० स्त्री०) १ रंही मघनेकी लकड़ी, मघानो। २ गेहू का मोटा भाटा, बरतर भाटा। ३ सूजा। ४ मूष्मान। (वि० स्त्री०) १ रूबी कुई, पगी हूर। २ पुक। ३ अनुपक। ४ मिली हूर।

रईस (अ० पु०) १ वह जिसके पास रियासत या इलाका हो, भूखामी । २ प्रतिष्ठित और धनवान् पुरुष, अमीर ।

रपेयत् (अ० स्त्री०) प्रजा, रियाया ।

रकल (हिं० पु०) पत्तोंकी पकौड़ी, पतौड़ ।

रकत (हिं० पु०) १ लहू, रून । (वि०) लाल, सुग्ग ।

रकतकन्द (सं० पु०) रक्तकन्द देखो ।

रकतांक (हिं० पु०) रक्ताङ्क देखो ।

रकतांक (हिं० पु०) १ कुंकुम, केसर । २ रक्तचन्दन, लालचन्दन ।

रकषा (अ० पु०) वह गुणनफल जो किसी क्षेत्रकी लंबाई और चौड़ाईको गुणा करनेसे प्राप्त हो, क्षेत्रफल ।

रकवाहा (हिं० पु०) घोड़ोंका एक भेद ।

रकमंजनी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका पौधा ।

रकम (अ० स्त्री०) १ लिखनेकी क्रिया या भाव । २ छाप, मोहर । ३ तियत संध्याका धन, सम्पत्ति । ४ चलता पुरजा, चालाक । ५ प्रकार, तरह । ६ लगानकी दर । ७ धनवान्, मालदार । ८ नवयौवना और सुन्दरी स्त्री । ९ गहना, जेवर । १० रुपया या बीघा-विसवा आदि लिखनेके फारसीके विशिष्ट अंक जो साधारण संध्यासूचक अंकोंसे भिन्न होते हैं ।

रकमी (अ० पु०) वह किसान जिसके साथ कोई खास रियायत की जाय ।

रकाव (फा० स्त्री०) १ घोड़ोंकी काठीका पावदान जिस पर पैर रख कर सवार होने हैं और बैठनेमें जिससे सहारा लेते हैं, घोड़ेकी जीनका पावदान । यह लोहेका एक घेरा होता है जो जीनमें दोनों ओर रस्सी या तस्मेसे लटका रहता है । २ रकावी, तश्तरी ।

रकावदार (फा० पु०) १ मुरब्बा, मिठाई आदि बनानेवाला, हलवाई । २ वादशाहोंके साथ खाना ले कर चलनेवाला सेवक, खासावरदार । ३ रकाव पकड़ कर घोड़े पर सवार करानेवाला नौकर, सार्इस । ४ रकावियोंमें खाना चुनने और लगानेवाला, खानसामा ।

रकाबा (फा० पु०) बड़ी थाली, परात ।

रकावी (फा० स्त्री०) एक प्रकारकी छिड़ली छोटी थाली जिसकी दीवार बहुत कम ऊँची अथवा बाहरकी ओर मुड़ी हुई होती है, तश्तरी ।

रकार (सं० पु०) र घणका बोधक अक्षर, र ।

रकीक (अ० वि०) १ पानोकी तरह पतला, तरल । २ कोमल, मुलायम ।

रकीव (अ० पु०) यह प्रतियोगी जो किसी प्रेमिकाके प्रेमके सम्बन्धमें प्रतियोग करता हो, प्रेमिकाका दूसरा प्रेमी ।

रकावता (हिं० वि०) रचना देखो ।

रक्त (सं० स्त्री०) रक्तने अङ्गमनेनेति रक्त-पत । १ कुंकुम, केसर । २ तात्र, तावी । ३ प्राचीनामलक, प्राचीन और पका हुआ आवला । ४ पद्मक, लाल कमल । ५ मिन्दूर । ६ हिंगुल, जिगरक । ७ शरीरस्थ सप्त धातुके अन्तर्गत धातुविशेष, शरीरके मध्य स्नात धातुओंमेंसे एक धातु, लहू, रून । पर्याय—रुधिर, अस्त्र, लोहित, अस्त्र, क्षतज, शोणित, पलङ्कार, रोहित, रङ्गक, कीलाक, अङ्गज, रोधिर, स्वज, त्वग्ज, शोण, लोह, चर्मज ।

हम लोग जो सब वस्तु खाने हैं, वह पहले रस रूपमें परिणत होते हैं । पीछे वह रस यकृतमें जा कर रक्तक पित्त द्वारा पाक हो रक्तघर्णका हो जाता है । इसीसे उसको रक्त कहते हैं । यह रक्त सभीके शरीरमें रहता है तथा यह जीवनका श्रेष्ठ आधार स्वरूप है । यह स्निग्ध, गुरु, चलनशील और मधुर होता है । किन्तु दूषित होने पर यह विदग्ध पित्तकी तरह अर्थात् मट्टा हो जाता है । समस्त शरीर ही जीवका वासस्थान है, किन्तु वीर्य, रक्त और मल ये तीनों विशेष आधार बने गये हैं । क्योंकि, इन तीनोंका क्षय होनेसे थोड़े ही समयके अन्दर जीवका क्षय हो जाता है । (भावप्र०)

रक्तका प्रधान आश्रयस्थान यकृत और प्लीहा है । यह इन्हीं दो स्थानोंमें रह कर दूसरे स्थानके रक्तको पोषण करता है ।

खाया हुआ रस पहले हृदयमें जाता है । पीछे वह समान वायु द्वारा परिचालित हो कर पित्तने पाचित और रञ्जित हो लाल हो जाता है । यह सारे शरीरमें रहता है और जीवका उत्तम आधार है ।

(शार्ङ्गधरप० ६ अ०)

सुश्रुतमें लिखा है, कि रसधातुसे रक्त होता है ।

रस धातुका मय है गमन करना, बूँदें रात दिन जाता रहना है, इसीसे उसको रस कहते हैं। यह रस काये हुए पदार्थसे एक ही दिनमें उत्पन्न हो ३०१५ कल अर्थात् पाँच दिनसे कुछ अधिक समयमें एक एक धातुमें भय स्थान कर मन्व धातुमें परिणत हो जाता है, अतएव इस समय यह रस रक्तके रूपमें परलट जाता है।

रस, रक्त, मांस, मेदु, अस्थि, मज्जा और शुक्र यह सात धातु शरीरको धारण किये हुए हैं, इसीसे इन्हें धातु कहते हैं। इन सब धातुओंका क्षय और वृद्धि रक्तके रूपपर निर्भर करती है। रक्तक्षय होनेसे सभी धातु क्षाण और वृद्धि होनेसे सभी धातु बलवायु हो जाते हैं।

विशुद्ध रक्तका सङ्क्षण—प्रिय रक्तका वर्ण इन्द्रगोप कीटको तरह उज्ज्वल, अस्तरित अर्थात् न अधिक गाढ़ा और न तरल तथा अम्लके रंगके औसा और लाल होता है, बही विशुद्ध रक्त है। वायुसे दूषित रक्त केमिक, कुछ आम कासा, कृषा, पतला, शोभ केमने याम्ना और अम्लकी अर्थात् गाढ़बहिरीन होता है।

पित्तदूषित-रक्तक्षण—रक्त पित्त द्वारा दूषित होने पर मोटा, पोका, हरा और तरल होता है। ऐसा रक्त चिउटी और मकड़ीको बहुत मिय है।

स्नेहदूषित रक्तका सङ्क्षण—रक्त द्वारा रक्त दूषित होने पर उसका वर्ण विरगिहोक अरुको तरह पाहड़, सोहित, स्निग्ध, शीतल, घना, पिच्छिय, विरलापी और मांसपेशीकी तरह हो जाता है।

क्षिद्रोषदूषित रक्तक्षण—क्षिद्रोष अर्थात् सजिवात द्वारा रक्त दूषित होने पर वह पूर्वोक्त वातादिके सङ्क्षण युक्त, काँड़ीके समान वर्षाविशिष्ट और दुर्गन्धयुक्त होता है।

वातपित्तज्वदि मिश्रित क्षिद्रोष द्वारा रक्त दूषित होने पर उसमें पूर्वोक्त मिश्रित क्षिद्रोषके सभी लक्षण विचारें देते हैं। दूषित रक्त द्वारा रक्त दुष्ट होने पर रक्त बहुत कासा हो जाता है।

रक्तका रचान—पहले ही कहा जा चुका है, कि यष्टु और प्लोहा ही रक्तका प्रधान स्थान है। रक्त इन दोनों ही स्थानसे रैहकी सभी शोषितरिपाका भाग

कृत्य करता है। रक्त उष्ण नहीं, शीतल भी नहीं, स्निग्ध, रक्तपर्ण गुठ, मांसगन्धयुक्त और पित्तकी तरह बिबाहगुणविशिष्ट होता है।

रक्तप्रकोपका कारण—पित्तका प्रकोप होनेसे ही रक्त बिगड़ जाता है। फिर श्रथ, स्निग्ध और शुद्धपाक वस्तु काये, दिनको सोने, अत्यन्त क्रोध करने, माग और धूप सेवन भ्रम, भ्रमिघात, भ्रमीजननक या विरुद्ध वस्तु खानेसे भी रक्त कुपित हो जाता है। वायु, पित्त और कफ इन तीन दोषोंमेंसे किसी एक दोषके कुपित हुए बिना रक्त कुपित नहीं होता। अतएव यह अनु पत्नी दोष जिस दिन समय कुपित होता है रक्तका भी उन्नी उन्नी समय प्रकोप हुआ करता है। किसी दोषके कुपित होनेसे कोष्ठरेशमें घेवना और देहम दूषित रक्तका सङ्क्षण, अम्लरसयुक्त पानीय श्रथ सेवनकी इच्छा और भ्रममें अरधि होती तथा इन्धमें झेल्ला आश्रय लेता है। रक्त क्षोष होनेसे क्षुब्ध, अनार, मज्जन और स्नेहयुक्त अरण, रक्तसिद्ध मांस खानेकी इच्छा देती है। (मानप्रकाश)

रक्त सङ्क्षण—सभी जीवोंकी छातीमें रैा यन्त्र है, एकका नाम फुसफुस और दूसरेका नाम हृदयपिण्ड है। रक्त ही जीवका मूलाधार है। जीवगण शैा कुछ आते हैं वह परिपाक हो कर रक्तमें परिणत हो जाता है। रक्त शरीरकी सस ससमें फैला हुआ है। रक्त सङ्क्षणके लिये शरीरके सभी अशोमें पथ जा लगी है। ये नसियाँ धमनो गिज अग्नि नामोंसे प्रसिद्ध हैं। दुस्रादि स्थावरगण जिस प्रकार पृथिवीमें रस घूस कर शोषित रहते हैं अङ्गुम जायगण भी उन्नी प्रकार पाक-स्थलीक अमने रक्त संद्रह करके जावन धारण करते हैं। केतके नासे जिस प्रकार केतमें अरु पनुवा कर अनासका रथापे रथते हैं शरीरकी धमनियाँ और गिराय भी उन्ना प्रकार रक्त अमो स्थानोंमें रक्त से जा कर शरीरका सङ्क्षण रक्तो है। इन सब नसियोंका रक्त शरीरके ससा अशोमें अलबन् फैला हुआ है।

साधारण भीरसे यदि माना जाय, तो जीवका हृदय पिण्ड ही रक्तका आधार है। हृदयपिण्डमें यह धमनोमें और धमनीसे गिरामहलमें प्रवाहित होता है। गिज

परिमाण अधिक है, इससे रक्त का अपेक्षित गुणत्व भी अधिक है। गर्भिणीयोंक शोषितमें साल कणिका परिमाण थोड़ा रहता इन कारण असत्वाकी अपेक्षा इनक रक्तका अपेक्षित गुणत्व भी थोड़ा है। स्त्रियों मनुष्यके रक्तमें कठिन द्रव्यका विद्येयतः साल कणिकाका परिमाण अपेक्षाहिन अधिक है। भूमिपमोत्रोको अपेक्षा शाकमोत्रोके रक्तमें कठिन द्रव्य कम है। रक्तमोक्षणसे रक्तकी साल कणिकाका परिमाण ह्रास होता है।

रक्तके वर्णकी विनिमता—शरीरके समा स्थानोंमें रक्तका वर्ण एक प्रकारका नहीं है। घमनिपोंमें जो रक्त है, वह शिराओंके रक्त-सा नहीं है। फिर शिराओंमें भासमी जगह एक तरहका रक्त दिखाई नहीं देता। घमताके रक्तका वर्ण उज्ज्वल लाल होता है, क्योंकि इसमें अपेक्षाहिन अधिक अक्सिजन रहता है। शिराका रक्त बैंगनी वर्णका है क्योंकि इसमें अक्सिजनका परिमाण थोड़ा है। इसके सिवा घमनीका रक्त जितनी जल्दीमें जमता है शिराका रक्त उतनी जल्दीमें नहीं जमता। फिर फुसफुस, यकृत और ग्रीहाकी शिराओंका रक्त अम्यान् शिराओंक रक्तम गिन प्रकारका है।

रक्तका परिमाण—जीयके शरीरमें कितना रक्त है इनका ठीक ठीक तौलसे पता लगाता कठिन है। पर हां, परीक्षा द्वारा पाश्चात्य परिद्वतोंने स्थिर किया है, कि शरीरके समग्र भागका प्रायः १ स ३ भाग रक्त जीव १२ १४ शरीरमें रहता है, परन्तु अवस्थामेंसे इनमें कुछ तारतम्य देवा जाता है। दानिके कुछ समय बाद शरीरमें रक्तका जो परिमाण रहता है, भूनेमें उससे कुछ कम हो जाता है।

रक्तका उपादान—रक्तक चार प्रधान उपादान हैं, रस, कस, कणिका और तन्तु। रक्तक जिस तरह का शमें कणिका बहती है उसे इसका रस कहते हैं। रक्तसे रक्तकी लक्ष्णर अन्तरित होनेस मिला तरल पदार्थ अरशिर रह जाता है, यही इसका कस है। कणिका है। प्रकारकी है, श्वेत वा वर्णहीन और काल। सुख्य शरीरके रक्तमें श्वेत कणिकाकी अपेक्षा काल कणिकाका परिमाण बहुत अधिक है। क्योंकि, ये सब

कणिका ही रक्तकी सार वस्तु हैं तथा इनकी सत्ताके कारण ही शोषितका वर्ण काल हा जाता है।

रक्तका उद्भव—साल कणिका रक्तकी प्रधान सार वस्तु हैं। कोइ कोइ कहने हैं, कि मावकी पशुका अर्थात् पञ्चदशमियोंके मोतर जो रक्तवर्णकी मत्सा रहती है उससे रक्तकी साल कणा उत्पन्न और परिपुष्ट होती है। फिर किसी किसाके मतसे मोहाक्ष उपादानके मध्य काल और वर्णहीन दोनों प्रकारकी कणिका उत्पन्न होती हैं।

रक्तकी क्रिया—रक्त प्राणाके जावकता प्रधान साधन है। यह जोय शरीरके बाह्य और आन्तरिक सभी अंगोंका जीवनरूप है। क्योंकि, इससे सबोंकी क्रिया कुशलता साधित होती है। जो स्नेहपदार्थ मस्तिष्कका प्रधान उपादान है यह शोषितस उत्पन्न होता है। एकमात्र शोषित द्वारा ही शारीरिक सभी अङ्गव्यङ्ग परिपुष्ट होता है।

रक्तोचन—रक्त पहले हृत्पिण्डसे निकल कर घमनी पधसे शरीरके सभी स्थानोंमें जमण करता है तथा शिरापधसे पुनः हृत्पिण्डम सीरता है। इसका नाम रक्तमञ्जकन है। रक्त मारे शरीरमें जमण कर दूषित हो जाता है तथा उस दूषित अवस्थामें ही वह बड़ी शिरा द्वारा हृत्पिण्डके वक्षिण कोष्ठमें भा पहुँचता है। वहाँसे वह वक्षिण हृत्पिण्ड तथा हृत्पिण्ड फुसफुस की घमता द्वारा फुसफुसमें प्रेषण करता है। जहाँ अक्सिजनवाण ग्रहण कर शोषित होता है। फुसफुसस यह विमुक्त रक्त फुसफुसकी शिरा द्वारा हृत्पिण्डके वाम कोष्ठमें जाता है। वहाँसे वाम उर्रमें और पीछे भाद्रि कण्डरा (aorta) द्वारा सारे शरीरमें फिरसे सञ्चालित होता है। अनन्तर वह रक्त बड़ा घमनीसे छोटी घमनी में, पीछे घमनिपोंसे छोटी छोटी केशिक नाभियोंमें केशिक नाभियोंस शिराओंमें तथा शिराओंसे दूषित अवस्थामें वह रक्त पुनः हृत्पिण्डमें सीरता है। जर्मम मृत्यु पर्यन्त हृत्पिण्डके सङ्कोचन और विस्फोरणस रक्त इसी प्रकार बहता रहता है।

हृत्कोष्ठमें रक्तका परिमाण पाश्चात्य परिद्वतोंने परीक्षा द्वारा स्थिर किया है, कि प्रत्येक हृत्पिण्डमें प्रायः

४से ६ औंस रक्त रह सकता है। हृत्पिण्डके प्रत्येक सङ्कोचनसे उतना रक्त शरीरमें सञ्चालित हुआ करता है तथा हृत्पिण्डके विस्फोरणमें फिर उतना ही रक्त इसके कक्षमें घुस जाता है। इस प्रकार हृत्पिण्ड हमेशा सङ्काचित और विस्फारित होता रहता है। इस अविरत विस्फारण और सङ्कोचनके लिये शरीरकी कण्डरों, धमनी और शिरा आदि शोणित नालियां सर्वदा रक्तसे परिपूर्ण रहती हैं।

शरीरका रक्त दूषित होनेसे उसे मोक्षण कर फेंक देना चाहिये। किन्तु क्षोण व्यक्तिके अम्लभोजनके कारण शोथ होनेकी अवस्थामें तथा पाण्डुरोगी, अशरोगी, उदर-रोगी, शोषरोगी और गर्भिणी स्त्री, इनकी शोथावस्थामें रक्तमोक्षण नहीं करना चाहिये। अन्न द्वारा रक्तस्राव क्रिया दो प्रकारसे सम्पादन होती है, उनमेंसे एकको प्रच्छान और दूसरेको शिराव्यधन कहते हैं।

असमयमें अस्त्रप्रयोग करने, चिकित्सकके दोषसे अस्त्र अच्छी तरह प्रयुक्त नहीं होने, अत्यन्त शीताधिक्य और वाताधिक्यके समय भोजनके पहले वा खाते ही अन्न प्रयोग करनेसे अथवा शोणितके अत्यन्त गाढा रहनेसे रक्तस्रुत नहीं होता, यदि होता भी है, तो बहुत थोड़ा। जो मद्य वा विपपानमें मत्त, मूर्च्छागत, परिश्रान्त, निद्रामिभूत और भीत हैं तथा जिनके वात, मल और मूत्ररुद्ध हैं, प्रायः उन्हींका रक्त स्रावित नहीं होता।

रक्तस्राव नहीं होनेसे दोष—उल्लिखित कारणोंसे यदि दूषित रक्त न निकले, तो वह शरीरमें रह कर कण्डु, शोथ, रक्तवर्णता, दाह, पाक और वेदना उत्पन्न करती है।

अतिरिक्त रक्तस्रावका कारण—अनभिन्न चिकित्सक द्वारा अत्यन्त उष्ण कालमें घर्माक्त व्यक्ति वा जिसे अत्यन्त खेद दिया गया है, रक्तमोक्षणके लिये उसके प्रति अन्नप्रयुक्त होनेसे अथवा रोगीका शरीर रक्तस्रावार्थं अतिरिक्त विद्ध होनेसे अपरिमितरूपमें रक्त निकलता है। अतिरिक्त मात्रामें रक्तस्राव होनेसे शिरः-मूत्र, अन्धता, चक्षुरोग, धातुक्षय आदि नाना प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं। यहां तक कि अन्तमें मृत्यु तक भी हो जाया करती है।

रक्तस्रावके नियम और लक्षण—अनतिशीतोष्ण कालमें जिस व्यक्तिको अधिक खेद नहीं दिया गया है तथा जो व्यक्ति सूर्यतापादि द्वारा सन्तापित नहीं है, वैसे व्यक्तिको पहले तिलका यवागू पिला कर पीछे उसका रक्तमोक्षण करना होता है। रक्तस्राव होनेके समय जब रक्तवर्ण विशुद्ध शोणित निकलने लगे अथवा आपे आप रक्तस्राव बंद हो जाय, वा देहकी लघुता, वेदनाका उपशम, रोगके बलका ह्रास और चित्तकी प्रफुल्लता ये सब चिह्न जब दिखाई दे, तब समझना चाहिये रक्तस्राव अच्छी तरह हुआ है।

अच्छी तरह रक्तस्राव नहीं होनेसे इलायची, कपूर, कुट, तगरपादुका, अकवन, देवदारु, विडङ्ग, चीता, सोंठ, पीपल, मिर्च, धूल, हरिद्रा, अकवनकी कली और डहरकरञ्जका फल इन सब द्रव्योंमेंसे जो सब मिल सके, उन्हें एक साथ अच्छी तरह चूर्ण कर तिलतैल और सैन्धव लवणके साथ मिला क्षतस्थान पर घिसनेसे अच्छी तरह रक्तस्राव होता है।

अतिरिक्त रक्तस्रावकी चिकित्सा—अधिक मात्रामें रक्त स्राव होनेसे लोध, मुलेठी, प्रियगु, रक्तचन्दन, गेरुमिट्टी, धूना, रसाञ्जन, शालमलीपुष्प, शङ्ख, सीप, उडद, जौ और गेहू इन सब द्रव्योंको चूर्ण कर उंगलीसे क्षत स्थान पर धीरे धीरे लगाना होता है। शाल वा अजुनवृक्ष, अरिमेद, कर्कटशृङ्गी और धमनी इन सब वृक्षोंकी छालकी चूर्ण वा पट्टवस्त्रको दग्ध कर उसको भस्म, समुद्रफेन वा लाक्षाचूर्ण क्षत स्थानमें लगा देनेसे रक्तस्राव दूर होता है। रोगीको काकोल्यादिके काढे में ईख, चीनी और मधु डाल उसे पान कराना उचित है।

अपरिमित मात्रामें शोणितस्राव होनेसे धातुक्षयके कारण अग्नि मन्द तथा वायु अत्यन्त प्रकुपित हो जाती है। अतएव उस अवस्थामें रोगीको अल्प शीतल, लघु-पाक, स्निग्ध, रक्तवर्द्धक और कुछ अम्ल वा अम्लरस-विहीन द्रव्य खानेको देना चाहिये।

रक्तस्रावनिवारक उपाय—रक्तस्राव चार उपायसे निवारण किया जा सकता है, जैसे, सन्धान, स्कन्दन, दाहन और पाचन। कषाय द्रव्य द्वारा व्रणका संधान अर्थात् सङ्कोचन, शीतक्रिया द्वारा रक्तका गाढापन

होन, तीक्ष्ण क्रिया द्वारा पाचन और श्वेद द्वारा गिरासद्बोधन करे। श्वेतक्रिया द्वारा रक्तन गाढ़ा नहीं होनेसे तब मंथानक्रिया, मन्थानकार्यमें फल नहीं पानेसे पाचन क्रिया करे। इन तीन प्रकारमें किसी प्रकारका फल दिखाई नहीं देनेसे बाहनक्रिया करना उचित है। इस पर रक्तका बोध दूर हो कर अब रक्तप्लाव संघ होता है, तब व्याधि फिरसे उत्पन्न या वर्धित होन नहीं पाती। बोध रहने रक्तप्लाव संघ हो जानेसे फिर रक्तनमोक्षण न करनेके संशयनादि औषध द्वारा बोधका संशोधन करे। क्योंकि रक्त ही शरीर का मूल और वैद्यकार्यका प्रधान उपादान है, अन्तु वैद्यरक्तनमोक्षणकी अच्छी तरह रक्षा करनी चाहिये।

द्विज वर्णितका रक्तप्लाव किया गया है उसकी बोध पूर्ण होनेसे शीतल प्रमेकादि द्वारा उषत प्रकुपित वायु की शमता करे। फिर धूमनाके साथ यदि शोध उत्पन्न हो, तो कुछ गरम घों द्वारा परितेक करनेसे बहुत उपकार होता है।

वाष्पारण्य औषधरुद्धे तन्मन्थने वैशानिक मत्।

आहारके तारतम्यानुसार औषधैर्दमं बलपर्यं एक प्रकारके रसका संज्ञार होता है। यह गिरामशिरादिमें प्रयाहित रह कर वैद्यकी सञ्चोच और सतेज रचता है। प्राकृतिक विपर्वयसे किसी औषधैर्दमं यह रस रक्ताकारमें परिणत हो जाता है। उस समय तरल रक्त (Liquor Sanguinis)-में कणिकाए (Corpuscles) बहनी दूर दिखाई देती हैं। रक्तके तरल अंशमें प्रधानतः खसका भाग हो अधिक है। उस अंशमें फाइब्रिन अल्युमेन, ह्योराइडस् भाव सोडियम और पोटासियम् तथा फोस्फेटस भाव मोडा, साइम और मैगनेशिया मिश्रित भावमें विद्यमान रहते हैं। मज्जाया इसके उसमें कुछ खरबो भी है जिसे रासायनिक लोग "एक्सट्रेक्टिबम सैटर" कहते हैं।

रक्तकणिकाए साधारणतः श्वेत और लाल वर्ण का होती है। श्वेत कणिका अपेक्षाकृत विरस और बड़ी तथा लाल कणिका छोटी होने पर भी संख्यामें अधिक होती है। उषन दोनों प्रकारके कणिका अणु विगुण (Molecules) हैं। श्वेत या वर्णहीन कणिकाए

लाल कणिकाओंकी उत्पत्ति हानि पर भी कत्रोवकास्चियुषत औषसद्बो (Vertebrate Animals) इन्हें उसका बलवैगिष्ठ्य सम्पादित होता है। पक्षी, सरीसृप और मरुस्यादिके शरीरकी रक्तकणिकाए प्रायः द्विगुणितकी और वैद्यकी समान चिपटी तथा मनुष्य और स्तन्य प्राणी अणुसाधारणकी देहमें यह गोलाकार दिखाई देती हैं। ये सब कुञ्जपृष्ठकी होनेके कारण उसके बीचसे चारों बगल अपेक्षाकृत स्पृष्ट होती हैं। यही कारण है, कि अणुवीक्षणयन्त्रकी सहायतासे दृशककारोकी दृष्टि में मध्यभाग उसका वीर्यस्वरूप (Nucleus) मालूम होता है।

मनुष्यकी शरीरमें जो सब रक्तकणिका देखी जाती हैं

यह प्रधानतः $\frac{1}{8000}$ से $\frac{1}{2000}$ इञ्च मोटी हैं। किन्तु सरोसृगादिके शरीरमें यह अपेक्षाकृत बड़ी होती हैं। उषत श्रेयो (Proteus) क औषशरीरकी कणिकाए $\frac{1}{630}$

इञ्च व्यासकी होती हैं तथा अणुवीक्षणदि काचयन्त्रकी सहायताक बिना देखनेसे उसकी लम्बाई सहजमें मालूम हो जाती है। रासायनिक परीक्षा द्वारा देखा गया है, कि उन सब रक्तकणिकाओंमें १०००० अंशमेंसे ३१२ भाग कठिन द्रव्य (Solid matters) खरबो और एक-सप्तान्वित तथा कुछ पातव पदार्थ (Alimental matters) मिश्रित हैं। ग्लोब्युलिन (Globuline) और हिमाटिन (Haematine) नामक पदार्थविशेषके संमिश्रणसे उस क वर्णमें भी पृथक्ता हो गई है।

ग्लोब्युलिन अब बहुते विशिष्टता होता तब विभिन्न आकारके शून्ये पड़ जाते हैं। मनुष्य तथा मांस खानेवाले पशुमांसक शरीरका रक्त पलाकार (Prismatic form) में ढाला बांधता है। मूले और छद्मस्वरका रक्त त्रिकोना (tetrahedral) और कटपिलायका छद्मोना (hexagonal) होता है। हिमाटिन नामक पदार्थमें ४४ भाग अकार, २२ भाग उद्भव, ३ भाग पवप्लासम, ६ भाग क्विससम और १ भाग खोहा मिश्रा रहता है।

वैद्यकी विश्व कर रक्त बाहर निकालनेसे अथवा रक्त श्रोत (Blood vessels)-से रक्त मिश्र पथमें आ कर किसी स्थानमें सञ्चित होनेसे रक्तका रंग बदल जाता

है। इस समय फेब्रिण नामक तन्तु स्त्वानीभूत हो कर कठिन हो जाते हैं तथा रक्तकणिकार्थे परस्पर सम्मूढ हो जम जाती हैं। इसको 'क्लोट' (Clot = crassamentum) कहते हैं।

रक्तके इस प्रकार जम जाने पर भी उसके जलीय अंशमें शुक्लाण और लावणिक पदार्थ (Saline matters) विद्यमान रहते हैं। उस समय रक्तका जो 'कलतानी' वा जलीय अंश बाहर निकलता है, इसे मरुतु (Serum) कहते हैं। रक्तमें विभिन्न पदार्थके रहनेसे रमररक्त (Serum) और स्त्वानीभूत रक्त (Clot) का पार्थक्य परिमाण मालूम किया जा सकता है। इसके सिवा उसीसे जमावट रक्तकी दृढता तथा उसके परिवर्तनके लिये समयकी न्यूनाधिकता मालूम होती है। यदि फाइब्रिन तन्तुकी अधिकता रहे, तो जमनेमें देर लगती है। परिमित ताप तथा वायु लगानेसे रक्त सहजमें जम जाता है। किन्तु ठंड लगने अथवा वायुरहित स्थानमें रख देनेसे वह विलम्बसे जमता है। पतद्भिन्न वज्राघात आदि किसी प्रकारके आकरिमक कारणसे मृत्यु होने पर उसके शरीरका रक्त देरीसे जमता है। साधारणतः मृत्युके बाद भी देहका रक्त शिराओंमें तरल रहता है, किन्तु जोवितावस्थामें यदि शिरासे विच्छ्युत हो रक्त किसी स्थानमें आ कर जम जाय, तो वह देहसे वहि गत रक्तकी तरह थोड़े ही समयमें शरीरके भीतर जम जाता है।

अनेक समय साघातिक वा दोषस्थ ज्वरमें अथवा नासादूपिका (Glanders) और दोषस्थ सपूयत्रण (Malignant pustule) आदि रोगोंके रक्तमें विप-मिश्रित होनेसे अथवा शीताद (Scurvy) आदि रोगों की तरह रक्तकी अल्पता (Poorness of blood) तथा श्वासरोधके कारण मृत्यु होनेसे रक्त सहजमें नहीं जमता।

पहले ही लिखा जा चुका है, कि रक्तमें फाइब्रिन-तन्तुकी अधिकताके अनुसार ही स्त्वानीभूत रक्तकी आकृति और दार्ढ्य संघटित होता है। साधारणतः सुस्थ और वलिष्ठ जीवदेहमें १००० अंशमेंसे केवल २ अंश तन्तु विद्यमान रहता है। शरीरमें किसी कारण वशतः प्रदाह उपस्थित

होनेसे इसकी संख्या बढ़ती है तथा उसके साथ साथ रक्त धीरे धीरे फोमल रक्तपिण्ड (tough clot) में परिणत होता है। उम समय इस जमे हुए पिण्डके ऊपर रक्तवर्णकी कणिका विलकुल देयी नहीं जातीं। जो कुछ देयी भी जाती है, वह उस रक्तपिण्डके आवरणके नीचेकी ओर चली जाती है। ऊपरवाला यह वर्णहीन आवरणकत्वक "Bully coat" कहलाता है। प्राचीन कालके चिकित्सक रक्तपिण्डके आवरणकत्वकके ठेमे वर्ण वैपरीत्यकी प्रदाहका विशेष लक्षण समझते थे तथा वे लोग उसके अपनोदनके लिये रक्तमोक्षण कराते थे। किन्तु वर्तमान वैज्ञानिकोंको कहना है, कि मृत्युपिण्ड (Chlorosis or green sickness) अथवा अन्य किसी अवस्थामें रक्तमें लाल रक्तकणिकाकी अपेक्षा फाइब्रिन-तन्तुकी अधिकता रहनेसे इसी प्रकार अवग्रधान्तर हुआ करता है। रक्ताल्पदेहीके स्त्वानीभूत रक्तपिण्ड (Clots of the impoverished blood) स्वभावतः छोटे और गिथिल (small and loose) हुआ करते हैं तथा वह प्रचुर परिमाणमें रक्तमस (serum)-के मध्य बहते देखे जाते हैं।

हृत्पिण्डसे रक्त जिस प्रकार विभिन्न शिरापथ हो कर प्रवाहित होता है, उसी प्रकार उसके वर्णमें भी विभिन्नता देयी जाती है। फ्लुरिड स्कालेंट नामक धामनिक रक्तस्रोत कौशिका नाडीके मध्य प्रवाहित होनेके बाद अक्सिजन परित्याग कर कार्बनिक एसिडसे भर जाता है। इस समय उसका वर्ण गाढ़ा लाल दिखाई देता है। अनन्तर वह दोनों कुसफुसके मध्य प्रेरित होनेसे पुनः कमला नीवृके जैसे लाल रगमें पलट आता है। क्योंकि कुसफुसमें आनेके बाद कार्बनिक एसिडका परित्याग कर रक्त फिरसे नया अक्सिजन ग्रहण करता है। इस प्रकार प्रत्येक शिरा और प्रशिरामें जब रक्त-सञ्चालित होता है उस समय विभिन्न धातव पदार्थके संयोजन और वियोजनके कारण रक्त पुनः पुनः दूषित और परिष्कृत हो दूसरे वर्णका हो जाता है। ऊपर कह आये हैं, कि भोजनसे जीवशरीरमें रक्तकी उत्पत्ति होती है। वह रस शिराके मध्य प्रहाहित हो यकृतमें आनेसे पित्तके मिश्रणके कारण लाल हो जाता है। पीछे

रक्तमात्र या हृत्पिण्डमें परिष्कृत हो यहाँसे शिरा प्रजिता हो कर सारे शरीरमें फैल जाता है। इसी कारण शारावस्थाविद्युगण हृत्पिण्ड तथा शिराओंको ही रक्त प्रवहणका प्रदृष्ट उपाय जान कर उन सब ग्रन्थीमें रक्त प्रवहणक्रिया (Circulation of blood) का ठीक ठीक नियंत्रण विधिवत् कर गये हैं। हृदय और शिरा देखो।

वैमानिकोंका कहना है, कि रक्तकणिकाओं में अम्लजन मिश्रित होनेसे श्रायद् इसी कारण रक्तके घनमें विभिन्नता देखी जाती है। अम्लजनकी सहायतासे कणिका एक साथ मिल जाती हैं तथा उसीसे रक्तके पहिरावरण (Relieving surface) का ऐसा परिवर्तन हुआ करता है। फिर कायनिक पसिद्धके मिलनेसे शोषित पतला और अपेक्षाहृत शिथिल (More fluid) होता है।

रक्तवर्णके इस रूपान्तरको परोक्षा यदि बरती हो, तो बाहर निकले हुए शीघ्ररक्तक रूपर उपरोक्त वायु (Gases) संयोग करनेसे सहजमें इसका रता रंगा सफ़्त है।

अध्याय्य शीघ्ररक्त शोषित छोड़ कर मनुष्य शरीर के रक्तका पयवक्षण करनेसे जाना जाता है, कि एक मात्र शोषित रक्तकणिका ही मनुष्यदेहपरिष्वङ्गमें उपयोगी है। इसमें स्वमायतः ही अस्किजन हरण (absorbing oxygen) की शक्ति है। हृदयके यान भागसे निकल कर बाह बड़ी धीजोसे शरीरके विभिन्न स्थानोंका सूक्ष्मसे सूक्ष्म शिराओंमें प्रविष्ट होता है तथा शीघ्ररक्तको एक शीघ्रतो शक्ति (Life-giving stimulus) प्रदान करता है। यह रक्त जब कार्यात्मिक पसिद्ध प्रवहण करता है तब रक्त एकत्र विपाक हो जाता है और यदि वह अधिक देर शरीरमें अयस्थान करे, तो शीघ्ररक्तका मात्रा हो सकता है। इस कारण जगदीश्वरकी अपार महिमासे वह दूषित रक्त फुसफुसमें जमा होनेके बाद सम्पूर्णरूप से दोपमुक्त हो पुनः अस्किजन वायु प्रवहण कर शुद्ध होता और शरीरको पुनः बनाये रखता है। इसके बाद यह फिरसे अपनी कार्यकारिता शक्तिको फेला कर जीवन वर्धन इसी एक ऐसी नियमसे शरीरमें सर्वत्र तथा समान शिरा प्रजितादिमें परिष्वगण करता है।

अखिर यह तज्जहोन ही शीघ्ररक्तके मरण कारणमें अयवृष्टता को प्राप्त होता है तथा आयु भी घिलुप्त हो जाता है। शीघ्ररक्तव्यवस्थामें भी रक्तका क्षय हुआ करता है। अक्षिप्त चिन्ता कठिन परिश्रम और सांघातिक पीड़ाओं में भी अनेक समय शरीरसे रक्तका नाश होने देना जाता है।

सुस्थ और अक्षिप्त व्यक्तिके शरीरमें नवोद्भूत रक्त हमेशा परिष्कृत हो क्रमशः मर्म, मेय, अम्लि, मला और पीछे शुक्रके रूपान्तरित हुआ करता है। इस रक्तज शुक्रता क्षय है। ऊर्ध्वरिता संख्या सिधोंकी भी समाप्तिका हीन वेदात्मिक चिन्ताके कारण इस लोच्यव्यक्तिका क्षय होता है। येनो नियमसे यह क्षयविधान नहीं रहनेसे निःसन्धेह यह जीवदेह फल कर नष्ट हो जाती। वैमानिकोंका कहना है, कि "It goes on its useful circuit through the body till following the law which governs the cells and bodies composed of them it wears out degenerates and dies"

रक्तप्रवाह ही श्वासप्रश्वासका (Respiration) एक मुख्य कारण और प्रधान उपादान है। जगदीश्वरने रक्त बहुतेक लिये जिस प्रकार शिरा और स्नायु बादि को उन कार्यके उपयोगी और सहायकरूपमें सगठन किया है उसी प्रकार समी शिराय भी रक्त धारण कर श्वासप्रश्वासादिके द्वारा परिशुद्ध हो शरीरमें टाकत देता है। रक्तकी उपयोगिता और उपकारिताकी ओर लक्ष्य करनेके उद्देश्ये श्वासप्रश्वासका तारतम्य किया है। मनुष्य शरीरकी रक्तप्रवाहके विषय जितनी वायुकी भाव श्यक्तता है, वे ठीक उसी परिमाणमें श्वास लेनेकी व्यवस्था कर देता है। अतएव कहना पड़ेगा, कि जिस प्रकार रक्तप्रवाहाके लिये श्वासकी व्यवस्था है, उसी प्रकार रक्तकी विभिन्नताके अनुसार उन्हींमें श्वासका सो तारतम्य निर्देश कर दिया है। मनुष्यशरीरकी विभिन्नताके अनुसार हम लोग जिस प्रकार श्वासप्रश्वासकार्यका तारतम्य माह्य करती हैं, उसी प्रकार विभिन्न धेनोके पशु और पश्यादिमें विभिन्न प्रकारका धातुज रक्त रहनेसे श्वासकार्यमें विशेष वेवरोध

होता है। सिंह, बाघ, बकरे, सूने आदि पशु तथा अग्रीच से ले कर छोटेसे छोटे चरक पक्षी तकके शरीरमें जिस परिमाणमें जैसा रक्त बहता है, उनके श्वास-प्रश्वामादिकी प्रणाली भी तदनुसार निर्वाहित होती है। इसका प्रमाण प्रत्यक्ष है अर्थात् उन सब जीवादिको एक बार देपनेमें ही मालूम कर सकते हैं। इसका और भी एक प्रमाण है, वह यह कि दुर्गन्धसे मनुष्यादिक श्वासकार्यमें व्याघात पहुंचता है और उस दुर्गन्धमें अन्य जीव खुशोत्त वास करता है। मूषिककी दग्धगन्धरुवन् गन्ध जैसी अत्यहनीय है, दूसरे किसी भी जीवकी वैसी देगी नहीं जाती।

विशेष विवरण श्वास-प्रवास शब्दमें देखो।

रक्तपान करनेसे शारीरिक स्वास्थ्यमें कोई धक्का नहीं पहुंचता, वरन् उनके स्वास्थ्यमें उन्नति देखी जाती है। रक्तस्नेहनसे रक्ताल्पता आश्रितरक्त रोगी सुखित-लाभ करता है। किन्तु यदि रक्त अथवा दूषित रोगीका रक्तपान किया जाय, तो शरीरमें अनेक प्रकारके क्लेश हो सकते हैं। इसी कारण सुविज्ञ चिन्तित्वक रक्ताल्पता (anaemia) आदिमें रोगीका वलिष्ट करनेके लिये meat-juice नामक रक्तमिश्रित पथ्यका प्रयोग करते हैं।

प्राचीनकालमें जिघांसा व्रणवर्ती हो कर मनुष्य शत्रुका रक्त पान करने थे। महाभारत पढ़नेसे मालूम होता है, कि शत्रुका वर्ष चूर्ण करनेके लिये भीमने दुःशासनका रक्तपान किया था। वाइविल ग्रन्थसे भी जाना जाता है, कि पूर्वकालमें हत्याकारीको दण्ड देनेके लिये सामाजिक कोई नियम विधिवत् नहीं था। अथवा राज दण्डसे भी वे दण्डित नहीं होते थे। हतव्यक्तिका कोई निकट आत्मीय बदला लेनेके लिये उसके पीछे पड़ता था तथा जहा उसे पाता, वही मार कर बदला चुकाना था। हिब्रुजातिके मध्य ऐसा जिघांसापरायण व्यक्ति रक्त हिंसक (Goel वा Avenger of Blood) कहलाता है। मूसाने इस प्रकार जीव-हिंसा नहीं करनेकी व्यवस्था दी थी (Numb xxxi)। उन्होंने हत्याकारीको निरापद रखनेके लिये वाइविल निर्दिष्ट छः आश्रयनशरीरोंमें (Cities of Refuge) भेजनेका हुक्म दिया। किन्तु उस समय हत्याकारीकी सख्या दिनोंदिन बढ़ती देख उन्होंने

रूपसे देकर जीवनरक्षा करनेकी व्यवस्था उठा दी। कुगानमें भी रक्तहिंसक (Avenger of blood)-को आश्रय दिया गया है, किन्तु वहा भी हत्याकारीसे उपयुक्त द्रव्य ले कर उसकी प्राणरक्षाकी व्यवस्था है। आज भी अरब-वासियोंमें यह प्राचीन प्रथा बलवती देगी जाती है। पतञ्जल चर्कर और अर्द्धसभ्य विभिन्न देशवासो जातिके मध्य व्रणगत, पारिवारिक अथवा जातिगत विवाद-मूलमें ऐसी रक्तहिंसाका प्रचार है। बोर्नियो, सिलेचिस, जाना आदि द्वीपोंमें असभ्य जातिके मध्य आज भी रणमें बन्दोक्त शत्रुके रक्तमांस भोजनकी बात सुनी जाती है। प्राचीन बौद्ध और जैन धर्मग्रन्थोंमें तथा वाइविलके प्राचीन विभागमें (Old Testament) यज्ञमें निहत रक्ताक्त पशु (animals in sacrifice) मांस भक्षण (Eating of blood) अथवा बलपूर्वक पशुहिंसाको निषिद्ध बताया है।

(पु०) ८ लोहितवर्ण, लाल रंग। ६ कुसुम्भ। १० हिजल नदीतट पर होनेवाला एक प्रकारका वेंत। (भावप्र०) ११ बन्धूक, गुलदुपहरिया।

कविकल्पलतामें रक्तवर्ण वस्तुका उल्लेख इस प्रकार है—शोण, भौम, तीक्ष्णाशु, ताप्र, कुंकुम, तक्षक, गुञ्जा, इन्द्रगोप, सद्योत, विद्युत्, कुञ्जरविन्दु, दृगन्तर, अधर, जिह्वा, असृज्, मास, सिन्दूर, धातु, हिंगुल, कुकुट-शिखा, तेज, सारसमरतक, माणिक्य, हंसका चञ्चु, अग्नि, शुक और मर्कटका मुख, चकोर, कोकिल और पारावतका नख, अग्नि, कुसुम्भ, किंशुक, अशोक, जवा, बन्धूक, पाटल, कपल, दाडिमीपुष्प, विम्ब और किस्पाक-पल्लव, ताम्बूलराग, भञ्जिष्टा, अलक्षक, रक्तचन्दन, नख-क्षतस्थान, धर्म और रौद्ररसादि ये सब रक्तवर्णके कहे गये हैं। (कविकल्पलता २२ कुसुम)

१२ रक्तशिग्रु, लाल सहिंजन। १३ रक्तरहितक, लाल रोहितकका पेड़। १४ मत्स्यविशेष, एक प्रकारकी लाल मछली। १५ सविष मण्डूकभेद, एक प्रकारका जहरीला मेढक। १६ महाविष वृश्चिकभेद, एक प्रकारका जहरीला विच्छू। १७ मन्दविष वृश्चिकभेद, एक प्रकारका कम जहरीला विच्छू। १८ पतङ्गकी लकड़ी।

(लि०) १६ अनुरक्त, चाह या प्रेममें अनुरक्त।

२० रत्नित, रंग हल्का । २१ झाल, सुन्द । २२ बिहार मन्, देवाश । २३ शोचिन साफ किया हुआ ।

रक्तमामातिसार (सं० पु०) एक प्रकारका रोग जिसमें जड़के बसले भाते हैं ।

रक्तक (स० पु०) रक्त रक्तवर्ण कायति प्राप्नोतीति कै क । १ मन्वान दृष्ट । २ बन्धूक दृष्ट गुलबुपरिया का पौधा । ३ रक्तवस्त्र झाल कपड़ा । ४ रक्तशिम्भु, झाल सहिजनका दृष्ट । ५ रक्तरेख झाल मन्त्रोका दृष्ट । (रात्रि०) ६ मन्त्रविशेष, झाल रंगका घोडा । ७ केसर, कुकुम् । रक्त पत्र ल्याये कर । (सि०) ८ शोचित वर्षे झाल रंगका । ९ रक्त बेला । १० अनुरागो प्रेम करनेवाला । ११ बिनोदी, मन्मथता ।

रक्तक (स० झी०) खनाममनिष्ठ पुष्पश्रवणिये, गुल बुपरियाका फूल वा पौधा । पर्याय—बन्धूक, बन्धु शोच, बन्धूकहस्त, पुष्परक्त । भारतके उष्णप्रधान स्थानोंमें पञ्जाबसे मद्रास तकमें तथा बम्बई विभागमें यह गुम्फ अधिक उत्पन्न होने देखा जाता है । घानके छेत और पीली भूमिमें यह बहुत उपजता है । स्थानविशेषमें यह मिम्म मिन्न नामसे परिचित है, यथा—हिन्दो बुपरिया, बन्धुका—काठकान, बांधुमी, सधाली—बड़े वहा, पञ्जाबी—गुलबुपरिया मराठी—ताम्बीबुपारी, तामिल—नाग पुर ।

इसका फूल बड़ा और गाड़े झाल रंगका होता है । बोपहरकी यह फूल अच्छी तरह चिह्नता है और दूसरे दिन सबेरे बूझ जाता है । फूलके वक्ष और पुष्पकायसे जो दूधके जैना निपास निकलता है यह शैत्यगुण विशिष्ट और चारकशाश्वतमय्यन होता है ।

इस धेयोंमें *Ixora coccinea* और *Gomplirena Globosa* नामक और भी दो प्रकारके छोटे पेड़ देखे जाते हैं । पहलो धेयोंके पेड़की स स्त्रुतमें बन्धूक, रक्तक और बन्धुशोचन कहते हैं । डा० रक्षसवर्गके मठमें शीत और मसकासे यह दृष्ट मद्रास और भारतवर्षमें भाया गया है । भारतके उष्णप्रधान देशके उद्यानोंमें यह दृष्ट रोपनेकी ध्यवस्था देकी जाती है ।

इसके फूलको दो तोला धीमें अच्छी तरह भुन कर उसमें ४ गुड्यापरिमित नीरा और नागजैरकी अच्छी

तख पीस कर डाल दे । पीछे उसमें मषबल और मिमरो मिक्का कर गांठी बनाये । आमरक्त रोगमें दिनमें दो बार करके संधान करानेसे बहुत फाय पडू जाता है । घोडे जनके साथ गिलाफण्ड पर इसकी जड़ (सूखी अथवा कषो १५से २० रत्ती) को पीस कर ३४ घण्टेके बाद सेवन करानेसे रक्तातिसार जाता रहता है । १ पाइलट मफुस्तिरिउमें ४ औंस सूखी जड़ आक कर बसका टिखर बनाये ; इस टिखरका आमरक्तरोगमें प्रयोग करनेसे बहुत उपकार होता है ।

यह फूल शिब और विष्णुका बड़ाया जाता है । इन्द्रिय धेयोंके दृष्टमें लाल सफेद फूल लगते हैं । उद्यान की शोभा बढ़ानके लिये बहुतैरे इस पेड़को लगाने हैं । पहिलम भारतमें यह गुलमकमल और झालगुल नामसे परिचित है । अङ्गरेजीमें इस Everlasting flower कहते हैं ।

रक्तकङ्क (सं० पु०) सामका दृष्ट जिससे राल निकलती है ।

रक्तकण्ड (स० ली०) विशकत दृष्ट ।

रक्तकण्ड (स० लि०) १ मिण्डबकिण्डि, मोठी स्वर दासा । २ जिसका कण्ड झाल हो । (पु०) ३ कोकिल, कोयल । ४ मंड, मारु ।

रक्तकण्ड (स० लि०) रक्तवट वेणो ।

रक्तकदम्ब (स० पु०) एक प्रकारका कदम्ब दृष्ट जिसके फूल बहुत झाल रंगके होते हैं ।

रक्तकदमी (स० स्त्री०) कदमीमेद, चम्पा फेला ।

(रैचनि०)

रक्तकम् (स० पु०) रक्त रक्षवर्ण; कन्दोडय । १ विद्रुम, मूगा । २ मषाण्डु, प्याज । ३ रक्षाकु, रताहू । (रात्रि०)

रक्तकन्द (स० पु०) रक्त रक्तवर्ण कन्दले नयाहु, रै यत्य । विद्रुम, मूगा ।

रक्तकमल (स० ली०) रक्त रक्तवर्ण कमल । रक्तोत्पल, झाल रंगका कमल । पर्याय—कोकमद रक्तामोक्ष, अरणकमल, शीलपत्र, अरविन्द रविमिय, रक्तारिद्र । बौध्कमें यह कटु, तिक्त, मधुर, शीतल, रक्तवैयमाशक, बलकारक और पित्त, कफ तथा झालको शमन करनेवाला माना गया है ।

रक्तकम्वल (सं० क्ली०) कम्वलं जलमाश्रयत्वेनारत्यस्येति अर्श आद्यच्, रक्तं रक्तवर्णं कम्वलमुत्पलमिति । रक्तो-
न्पल, लाल कमल, कूई ।

यह खनाम प्रसिद्ध जलज पुष्प (Nymphaea lotus) रक्तनाल नामसे प्रचलित है । गडहं, पुष्करिणी आदि पुराने जलाशयोंमें पद्मकी तरह यह लता उगती है । स्थानविशेषमें यह भिन्न भिन्न नामसे परिचित है, जैसे—पश्चिम भारतमें कम्वल, छोटा कम्वल, बङ्गालमें शालूक, नाल, रक्तकम्वल, छोटी सूंटी, उड़ीसामें धवलकै, सिन्धु—कुनि, पुनि, दाक्षिणात्यमें—अल्लि-
फूल, गुजराती—कम्वल, नीलोपल, तामिल—अल्लो तमरै, अम्वल, तेलगू—अल्लितमर, तेलुगुलव, फोतेक, परकलुव, कलहारम्, कनाडी—नदलेहवु, मलयालम्—अल्पल, ब्रह्मदेशमें—षयह-फुल्यक्रिया, सिंहल—ओलु, संस्कृत पर्याय—कमल, कुमुद, कडार, हल्लक, मन्धयक, अरब और पारस्य—नीलुफर ।

भारतवासी इसके मूल, कन्द, नाल और बीज खाते हैं । कभी कभी इसके-कन्दको सिद्ध कर तरकारीके रूपमें खाते हैं । पुष्पकोटकके मध्य जो बीज रहता है उसे वालूमें भून कर लावा बनाने हैं जिसे लोग भेंटका लावा कहते हैं ।

उदरामय, विस्त्रिका, ज्वर और यकृतकी पीडामें इसका फूल शुष्क और सङ्कोचक औषधरूपमें व्यवहृत होता है । कभी कभी हृत्पिण्डको बलकारक औषध (Cardiac tonic) रूपमें इसका व्यवहार किया जाता है । अतिसार, आमरक्त और अर्शरोगमें इसकी जड़के चूर्णको स्निग्धकारक औषधरूपमें सेवन कराया जाता है । कुष्ठ तथा अन्यान्य चर्मरोगमें बीज बहुत उपकारी हैं । पाकाशय और आतसे रक्त वमन होने पर फूल और डंठलका चूर्ण सेवन करनेसे बहुत लाभ पहुंचाता है । यह विषको दूर करता है ।

रक्तकम्वल—खनामप्रसिद्ध वृक्षविशेष । यह प्रायः ३० फुट तक ऊंचा होता है । फल लाल होते हैं । पेड़में धक्पुष्पकी तरह बड़े बड़े फल होनेसे उनमें लाल गोल गोल बीज लगते हैं । वह बीज दोनों ओर उठा होता है । गुञ्जा फलकी तरह यह भी तौलनेमें व्यवहृत होता है ।

स्त्रियां जपकी संख्या टोक करनेके लिये एक एक रक्त कम्वलको ग्रहण करनी हैं । यह पचित और विपाकत समझा जाता है ।

रक्तकरवीर (सं० पु०) रक्तं रक्तवर्णं करवीरः । लोहित वर्ण करवीर पुष्पवृक्ष, लाल रंगका कनेर । संस्कृत पर्याय—रक्तप्रसव, गणेशकुमुम, चाण्डीकुमुम, कूर, भूतघ्नावी, रविप्रिय । गुण—कटु, तीक्ष्ण, विशोधन, ट्वकद्रोप, व्रण, कण्डू, कुष्ठ और विपनाशक । (राजनि०)
रक्तका (सं० स्त्री०) पानीयामलक, पानी धांचला ।

(वैद्यनि०)

रक्तकाञ्चन (सं० पु०) रक्तः रक्तवर्णः काञ्चनः । खनाम-
ख्यात पुष्पवृक्षविशेष, कचनारका पेड़ । (Bauhinia variegata) संस्कृत पर्याय—विदल, चमरिक, काञ्चनाल ताम्रपुष्प, कुनार । (जटाधर)

स्थानीय नाम, हिन्दी—कचनार, कोनियार, कुराल, पडगिया, मैगल, गुरियाल, गवियार, चरियाल, कलिया, कान्दन, मैरवाल, बङ्गला—रक्तकाञ्चन, मेची—कुमाङ्ग, कोल—सिद्धिया, भूमिज—कुलोल, संथाल—जिद्धिया ; नेपाल—तकि, लेपचा—रा, मध्यप्रदेशमें—कचनार, मराठी—काञ्चन, रक्तकाञ्चन, कोङ्कणी—काञ्चन ; बम्बई—कोपिदार, तामिल—सेगपुमुन्धरी ; कनाडी—काञ्चीवलदो, उडिया—वोरध ; ब्रह्म—वेचिन ।

हिमालयके पहाडी वनविभागमें ४००० फुट ऊंचे स्थान पर यह वृक्ष उत्पन्न होता है । भारतीय जंगलमें और गण्डशीलमाला पर यह बहुतायतसे उत्पन्न होते देखे जाते हैं । इसके गाढ़े, लाल और सफेद फूलसे उद्यानकी शोभा बढ़ती है, इसीसे समतल क्षेत्रवासी बहुतरे लोग इसका आदर करते हैं ।

वृक्षनिर्यास 'सिमलागोंद' कहलाता है । जलमें डालनेसे वह बहुत कुछ गल जाता है और उससे एक प्रकारकी गंध निकलती है । पेड़की छालसे चमड़ा रंगाया और परिष्कार किया जाता है । बीजसे एक प्रकारका तेल बनता है ।

इसके मूलका काढ़ा भजीर्ण, उदरामय और उदरा-
धमान-रोगमें बहुत उपकारी है । पुष्पमें चीनी मिला कर

सेवन करानेसे रक्तनकार्यकी पोषकता होती है। छाल, पुष्प या मूलको खावलके घोष जलमें घोल कर स्फोटक के ऊपर पुष्पटिसकी तरह प्रसेप देनेसे कोड़ा एक ज़ाता है तथा वायु पतकी निश्चयती है। छालका गुण—वातु परिकारक, बलवद्धक और मलरोधक है। मलमण्ड, चमरांग और क्षमादिमें यह विशेष फलप्रद है। गरीरके रक्त और रसकी अधिकतम रगनेके कारण कुष्ठारि रोगमें मा इसका प्रयोग किया जाता है। सूथी कन्वा शीत्य गुणधिशिष्ट और घातक तथा उदरामय रोगमें विशेष उपकारा है। इससे पेटके काड़े दूर हात है।

प्रोथ्मके प्राग्भूममें मर्यादा जाल्जुनके महामैले हो यह पेड़ पुष्प और फलके बोझसे लुप्त जाता है। दो महानके मोतर बोझ पकने है। काड़े कोर पशुमंसके साथ इसकी कन्वा राय कर खाता है।

इसकी छकड़ोका रंग घूसर और मध्यभाग काला होता है। यह मजबूत तो होती है, पर छोटे छोटे लंबोंमें विभक्त हो जालेसे किसी काममें नहीं बानो। केतिहरक भीजातोंकी मूठ साधारणतः इसाम बनता है। बाँद युगके भास्करकापीमें जो पक्ष देया जाता है, उससे इसकी पवित्रताका अनुमान किया जाता है।

इस सेणोके पुष्प *B. purpura* सेणोसे बहुत कुछ मिलने लुप्त है। बहुत थोड़ा अन्तर रहने पर भी उसे लोग रक्तकाष्ठन करने हैं। न्यामीय नाम—पञ्जाबी—कैलाय, कराड करेहा; हिन्दी—कोलिपर, कोलिपर, कन्दन, रौत्वार, मोणा; नेपाल—तीरालो; छेपचा—कचिक; बङ्गला—देवकाष्ठन, रक्तकाष्ठन कैराय; कोल—कुदू, कोहराङ्गा—कैरार; सग्याल—सिङ्गि पाठ मन्ज्यालम्—कुन्दरष, गोंडू—केदवरी; मराठी—रक्तचन्दन, भाममलि, रक्तकाष्ठन, देवकाष्ठन; तामिल—पेया मारेमन्द्रे; तेलगू—काष्ठन, पेडू भारे, धावत चेद्रे; कनाड़ी—सुतास काशीमाल; मद्रा—महलयकापि, महच्छेगणि।

उपरोक्त वृक्षकी तरह इसके गोंडू और छिलकेका गुण और प्रयोग प्रायः एक मा है। छिलका घारक, अङ्ग वायुनाशक मार बल्यद्धक तथा फून विरिधक होता है। छिन्कके काड़ेसे घाब पोसा जाता है। इसका फूल को बहुतेरे रींच कर खात है।

B. tomentosa नामक उस जालिक वृक्षको छोग काष्ठन या काष्ठनी कहते हैं। इसका छिलकेके पीसे रस्सी बनाई जाती है। यह उदरामय और कुमिनाशक है। पशुके प्रदाहमें इसके मूलक छिलकेका काड़ा विधीय फलप्रद है।

रक्तकाठा (स ० कर्षी०) रक्तः रक्तवर्णाः कान्तः दृष्टोऽभ्याः रक्तपुननवा, छाल गदरूपरणा।

रक्तकाग—रोगविशेष। एन्जेपियरके मतसे इसे Haemoptysis कहते हैं। कण्टनासी (*Larynx*), श्वास गामा और फुफ्फुससे यदि सफेद रक्त निकले, तो रक्तो रक्त्या रोग हुआ जानना चाहिये।

पयतर ऊपर चढ़नेके समय बहुत कोपनेसे वा गांसो रहनेसे तथा अति उच्च स्वरमें गान करनेसे अथवा रंगी बजानेसे रक्तधमन हो सकता है। शीताद् घृष्ट रोग (*purpura*) और शोषितकी तरन करनेवाला पीड़ा में अथवा रजोरोध होने पर मुकसे लून निक्कनेकी सम्भावना है। कण्टनासी, श्वासनासी या वायुनली में रक्तप्रसिका प्रदाह वा कर्करोगमें तथा फुसफुसमें गुठली (*tubercle*) सञ्चित हो कर उमस प्रदाह, क्षत, स्फोटक, आघातबीध और विगदम होनेसे अथवा हाइ डेरिड (*byluland*) हृमि और कर्करोग रहनेसे रक्तो रक्त्या हो सकता है।

दानों यक्ष्मापरकके मध्यस्थित स्थान (*mediastinum*) के अनुकूल श्वासनासीमें संयुक्त होनेसे इत् पिण्डक रोगोंमें विशेषतः दक्षिण कोटरका विरुद्ध अथवा वामकोटरका प्रसारण रहनेसे फुफ्फुसीय भ्रमना और गिराकी पाङ्गामोंमें किसी वायुनलीके मध्य घोरालिक पनिजरिजम दिखारू हैनेसे कमा कमी मुकसे रक्त निकल कर वायुनली या श्वासनलीमें जाता है। पीछे यह पुन खोर्ण हो कर हिमप्टिमिस उत्पन्न करता है। कांसो और अधिक परिधम द्वारा रोगकी वृद्धि होती है।

इस व्याधिमें प्रकसर फुसफुसकी केशिकासे तथा किना किसी अगह फुसफुसाय भ्रमनाकी छोटी छोटी शाखाओंके फटनेसे रक्त निकलता है। यक्ष्मारोगमें उक्त भ्रमनाकी जाया प्रजाकामे छोटे छोटे पनिजरिजम उत्पन्न होता है। उनके फट जानेसे अनेक समय अधिक परिमाणमें रक्त निक्कता है।

यह रोग प्रारम्भान् धाम्ना होता है। धाम्नाकुम्भ, वक्षके मध्य भाग योध और इचाला तथा गलेके ओपर व्यापिक जाव्याह जाति हो रक्त निकलनेका पूर्व लक्षण है। रक्तमौमे अधरा हुडान् रक्त उपरकी ओर उठता है, कभी कभी इतना रक्त निकलता है, कि मुंह और नाक भर जाता है। सभी समय जी मन्वता रहता है। श्लेष्माके साथ बिन्दु बिन्दु रक्त निकलता है तथा रक्त हो समयमें अधिक रक्त निकल कर रोगीका प्राण लेता है। घट्टिगेन रक्त फेनिल और उड्डाल लालपरी होता है। कुम्भकुम्भीय धमनामे अधरा रक्तका प्रचुर परिमाणमें रक्तोद्गम होनेसे यह काला दिवाई देता है। अधिग रक्तस्रावरे गट प्रीणित श्लेष्माके साथ अधरा मन्वतभावने गार निकलता है। धोगमिग पनिडमि जमका रक्त देगनेमे लाल मालूम होता है। मन्वा रोगमें रक्तोद्गम होनेसे आणुवीक्षणिक पराक्षा द्वारा रक्त रक्तमें द्युवायल वैमिलम पाया जाता है। यह रोग कटिन होनेसे मनीका मुंह फोटा और म्लान, हाथ पैर का स्पन्दन, धाम्नाकुम्भ और रक्तस्रावके अन्त्यान् अन्त्या दिवाई देने है। कभी कभी थोड़ा उर भी गट आता है। नाडी पुण और टुन, किन्तु कोमल रहती है। यह रोग क्व तरु रहता है, इसका कोई टाक नहीं है। पाडा वार वार होती दुगी जाती है। कभी कभी सामयिक रूपमें उपस्थित होती है। किन्तु मुश्तर लक्षणोंको जानितके बाद कुछ दिन तक श्लेष्माके साथ थोड़ा थोड़ा रक्त निकलता रहता है।

इस समय रोगीकी छाती पर चोट देनेसे जख्म कोई परियर्जन दिवाई नहीं देता। किन्तु श्लेष्मकीव यन्त्र लगा कर मुननेसे बुजबुडोंकी तरह धाम्नाकुम्भ मालूम होता है। मुंह, नाक अधरा पाकाशयमे रक्त स्राव होनेसे रोगके जैसा इसका भ्रम हो सकता है। नाक, मुंहकी अच्छी तरह परोक्षा करनेसे उसका निवारण किया जा सकता है। कुम्भकुम्भीय धमनामे कमा कमी काला रक्त निकलता है। उस समय रक्तपित्त रोग के साथ इसका भ्रम होता है। अतएव ऐसी हालतमें सुविश्व चिकित्सकको चाहिये, कि वे अच्छी तरह देगभाल कर रोगका निर्णय और औषधाधिको व्यवस्था करे। रक्तपित्त देता।

इस रोगमें श्राव मृदु रोगीका उर नहीं रहता। पर हा, कुम्भकुम्भमे यदि रक्त स्रावित निकले तो धाम्नाके अधरा रक्तस्रावके मनी लक्षण उपस्थित हो कर मृदु हो सकता है। कभी कभी निकल रक्तव्य लक्षण कुम्भकुम्भमें उत्पन्न होता है और उमोमे नार्थिक यक्षता या पट्टाया है।

वि. १. रोगीका उर रक्त स्राव कर कर कर कर कर लुम्भमे है। श्लेष्मा स्रावित पर उमो कर्क रक्तना उचित है। छाती पर मधुर रक्त और मुश्तर पार्थिक रक्त तथा देगो पैथी गम्य जगदा मंद ग जेनउम मृदु पटना है। अतएव रक्तोद्गम होनेसे हाथ पैर मन्वा मन्वा है। उमो देगरे उ अधरा मन्वा मन्वा देगरे उ रोगीका उचित है। कभी कभी छाती पर रक्त स्रावनेसे भी लाल पट्टाया है।

मौलिक रक्त, प्रभाई रक्त, मन्वपुत्रिक रक्त, टिन्, धारुट, नार्थिकता सेट, टिं लानीमार्डक आदि मृदुीयक और हनपिण्डकी उपमादर जीकरींदा धाम्नाकारिक प्रयोग करे। रक्तमौमे रक्त रोग प्रभाई रक्तोद्गमके साथ मन्वत कर्कनेसे विविध रक्तव्य होता है। हनपिण्डकी किया प्रथम रक्तनेसे टिंटेरे रक्त का व्यवहार करना उचित है। विरेचियन टिंमपिटिसम (Anker's Hemopepsin) होनेसे उरदेगने जीक लगता होता है। नार्थिक अधरा रक्तोद्गम (Scleroderma) रक्तोद्गमो समनेके नोवे इडुपट करनेसे भी मृदु फायदा देगा उचित है। रोगी यदि क्लिष्ट हो, तो लार्थिक विरेचक औषधीका प्रयोग करे। लक्षण पराव दिवाई देनेसे दुमरे औषके प्रमेरका रक्त रोगीक प्रमेरमे प्रयेज (Trussing of blood) कराना उचित है।

- रक्तकाष्ठ (सं० पटी०) रक्त १।४ यन्त्र। १ पन्त-पतमकी लकड़ी। २ लेहितवण डाल, लाल रंगकी लकड़ी।
- रक्तकुम्भ (सं० पटी०) रक्त लेहितवण कुम्भ। रक्तकैरव, लाल कुम्भ।
- रक्तकुम्भक (सं० पु०) रक्तवण, कुम्भक, रक्तभिट्टी, लालकटमरीया। वैद्यमे यह तिक, उण, कट्टु, वण-

बड़क शोथ और उपजासक मानरोग, कफ, रक्तरोग, पित्त, बाष्पान्म शून्य आस और कासनागक माना गया है।

रक्तकुष्ठ (स० पु०) विसर्प नामक रोग। इसमें सारे शरीरमें बहुत ज्वलन होती है, कमी कमी साठ शरीर साठ रगका हो जाता और कुष्ठकी भांति गलने भी मगता है।

रक्तकुम्भुमा (सं० पु०) रक्तमि रक्तवर्षामि कुसुमानि यस्य । १ पारिमद्र पृष्ठ, फरहृक्का पेड । २ भग्यन पृष्ठ, घामिनका पेड । ३ कषतार । ४ मदार, भाक ।

रक्तकुम्भुमा (स० स्त्री०) मनारका पेड ।

रक्तहृमिमा (स० स्त्री०) साहा, लाह ।

रक्तेशार (स० पु०) रक्ताः कोश्याः किञ्चकहाः भस्य । पारिमद्रक वृक्ष, फरहृक्का पेड ।

रक्तेशित् (स० स्त्री०) जिसके बाल छाल रंगके हों तोमड़े रंगके बालोंवाला ।

रक्तकीरव (स० स्त्री०) रक्त रक्तवर्ण कीरव । रक्त कुम्भु, साळ कुम्भु ।

रक्तकोकनद (सं० स्त्री०) रक्त रक्तवर्ण कोकनद । रक्तोत्पल साळ कमल ।

रक्तकोप (सं० पु०) मोषितप्रकोप, रक्तबिकार ।

रक्तक्षय (सं० पु०) रक्तक्षय लड्डु बहना ।

रक्तक्षयशोथि (सं० स्त्री०) वह यक्ष्मा रोग जो किसी कारण्यश शरीरका रक्त कम हो जानेसे उत्पन्न हो ।

रक्तकविर (सं० पु०) रक्तः रक्तवर्णः कविर । रक्तवर्ण पुष्पविशिष्ट कविरवृक्ष एक प्रकारका सैरका पेड़ जिसके फूल लाल रंगके होते हैं। पर्याय—रक्तसार, धुसार, वात्रसारक, बहुशय्य, यात्रिक, कुष्ठनोद, पूषण्म, मरुत्कविर, मरुत् । इसका गुण—कटु, ठण्ड, कषाय, शुक्र तिक्त, आमघात, जलघात, मण और मूत्रव्यरमाशक । (उभनि०) भावप्रकाशके मतसे पर्याय—गायत्री, इन्तधा वन, कण्टकी, वाळपत्र, बहुशय्य, यक्षिय । गुण—शीतल शरतरोगमें उपकारी, कफ, कास भवविनाशक, तिक्त, कषाय, मेशोष्ण, हृमि, मेह, उपर, मण, श्मिन्, शोथ, आम पित्त, मक्ष्मापण्डु और कफनाशक । (मात्र)

रक्तकाण्डव (सं० पु०) कश्चर वृक्षमेव, एक प्रकारका कश्चरका वृक्ष ।

रक्तनाण्डव (सं० पु०) रक्तकाण्डव इत्ये ।

रक्तगतज्वर (सं० पु०) यह ज्वर जो रोगीके रक्तमें समा गया हो । इसमें रोगी घुल घुलता है, मूत्र बंद रहता है, छटपटाता है और उसे बहुत अधिक ताप तथा तृष्णा होती है । (मात्रनि०) ज्वर यत्र रेखा ।

रक्तगन्धक (सं० स्त्री०) रक्त रक्तवर्ण गन्धक । बोळ गन्धद्रव्य ।

रक्तगन्धा (सं० स्त्री०) अश्वगन्धा, असर्गांध । (वैद्यनि०)

रक्तगर्मा (सं० स्त्री०) गजदन्तनीपृष्ठ, मीहदीका पेड़ ।

रक्तगुन्म (सं० पु०) रक्तजो गुन्मा मध्यपदलोपि कर्मणा० ।

स्त्रियांका एक रोग जिसमें उनके गर्भाशयमें रक्तकी एक गाँठ बन जाती है ।

इसके लक्षण—अथक गमागप होनेसे अथवा यथा समय प्रसव होनेके बाद अथवा प्रसवकालमें अहितकर आहार विहारदिका आचरण करनेसे वायुकुपित हो कर रक्तको दूषित कर डालती है । इसमें अत्यन्त दाह और वैश्मा होती तथा पैचित्त गुन्मके समी लक्षण दिखाई देने हैं । इसमें प्रसवबय मुख पीतवर्ण, स्तनका अग्र भाग काका स्तनसे दुग्ध निर्गम, विविध प्रथ जानेकी इच्छा, मुणसे मलम्राय और बाळस्थ बादि समी गर्भके लक्षण दिखाई देने लगते हैं । परन्तु गर्भ-लक्षणके साथ इसका प्रमेय इतना हो है, कि गर्भास्पन्दन कासमें किसी प्रकारकी वैश्मा नहीं रहती तथा गर्भस्थ भ्रूणका समी अङ्ग एक समय स्थानित न हो कर हस्त पदादि एक एक अङ्ग करके स्थानित होता है । किन्तु रक्तगुन्ममें नमस्त पित्त वैश्मा उत्पन्न कर बहुत समय तक बाद स्थानित होता है । (सुभ्रुत उपमरोमाधि०)

मैयज्वरणावलीमें लिखा है कि रक्तगुन्ममें प्रसव काल अर्थात् ब्रह्मवर्ष महीना बीतने पर शैगिणीको स्नेह और स्वेद प्रदान करनेके शिष्य और चिरैचक है ।

सोर्षा नाटाकरवृक्षकी छाल वैशवाक, वरंगी और पीपलकी एक साथ पीम कर तिक्त कायके साथ सेवन करनेसे रक्तगुन्म जाता रहता है । पुरमे शुद्ध, सिक्कट्ट, होंग, धरंमी इनके साथ तिक्तका काढ़ा, यवहार और त्रिकटुके साथ मद्य अथवा पकासके छिछकीकी मसम कर मलमें सिद्ध घुल पान करनेसे रक्तगुन्म मारोग्य होता है ।

पतझिन्न दन्तीगुडादिको उष्ण विरेचकसे भेद करा कर रक्त-प्रदर-विहित ध्यवस्था करना कर्त्तव्य है। यदि उससे विरेचन न हो, तो क्षार वा थूहरके दूधके साथ निल-पिष्टककी व्यवस्था करे। अधिक रक्तप्राव होनेसे रक्त-पित्तनाशक किया करना आवश्यक है। भिलावेके चूर्ण और कपाय द्वारा यथाविधि घृतपाक फरके चीनीके साथ सेवन करनेसे रक्तगुल्ममें तथा मधुके साथ पान करनेसे कफगुल्ममें बहुत लाभ पहुंचता है।

पारा, तूनिया, गंधक, जयपाल, पीपल, अमलतास फलकी मज्जा, इन्हें थूहरके दूधमें माचना दे कर गोली बनावे। इसका अनुपान आंवले वा इमलीके पत्तेका रस तथा पय्य दधि और अन्न है। सखा मांस, मूली, मछली, सूरा साग, दाल, आलू और मीठा फल गुल्मरोगमें अपध्य है। (मैपन्यर० गुल्माधिकार)

विशेष विवरण गुल्मरोगमें देखो।

रक्तगैरिक (सं० क्लो०) स्वर्ण गैरिक, गेरू।

रक्तग्रन्थि (सं० पु०) १ रक्तलज्जावती, लाल लज्जावती।

२ वह रोग जिससे शरीरमें लहकौ गांठें बंध जाय।

(सुश्रुतनि० ११ ब०)

रक्तग्रीव (सं० पु०) १ कपोत, कदूतर। २ राक्षस।

रक्तघ्न (सं० पु०) रक्त हन्तीति हन् (अमनुष्य कर्तृके च।

पा ३।२।३) इति ठक्। १ रोहितक वृक्ष। (लि०)

२ रक्तनाशक, जिससे रक्तका नाश हो।

रक्तघ्नी (सं० क्लो०) गण्डदूर्वा, एक प्रकारकी दूब।

रक्तचञ्चु (सं० पु०) शुक्र, तोता।

रक्तचन्दन—सनामप्रसिद्ध गन्धकाष्ठ और वृक्षविशेष

(*Pterocarpus Santalinus*)। दक्षिण भारतमें विशेषतः

कड़ाया उत्तर अरन्ट और कर्नूल जिलेमें यह वृक्ष बहु-

तायतसे उत्पन्न होता है। मन्ट्राज प्रेसिडेन्सीके

विभिन्न जिलोंमें तथा बम्बई और बङ्गालके स्थान स्थान-

में इस वृक्षकी खेती होती है। कुछ गरम और शुष्क

जलवायुमें तथा पहाड़ी भूमिमें यह काफी तौरसे पैदा

होता है। यह पेड़ बहुत नहीं बढ़ता। गंधयुक्त और

लाल वर्णके इस काष्ठका लोग बहुत आदर करते हैं।

संस्कृत पर्याय—तिलपर्णी, पत्राङ्ग, रञ्जन, कुचन्दन,

ताम्रसार, ताम्रवृक्ष, चन्दन, लोहित, शोणितचन्दन, रक्त-

मार, ताम्रसारक, क्षुद्रचन्दन, अरुचन्दन, रक्षताङ्ग, प्रवाल फल, पत्तङ्ग, रक्तबीज। इसका गुण—अति शीतल, तिक्त, चक्षुगत रक्तदोष, भूतदोष, पित्त, कफ, फास, ज्वर, भ्रान्ति, वमथ, और तृणानाशक। (राजनि०)

विभिन्न देशोंमें यह विभिन्न नामसे परिचित है।

हिन्दी—रक्तचन्दन, उन्दम, लालचन्दन, रक्तचन्दन ;

बङ्गाली—कुचन्दन, निलपर्णी, रञ्जन, रक्तचन्दन, लाल-

चन्दन, उडिया—रक्तचन्दन-पञ्जाब—चन्दनलाल, बम्बई—

रत्नाञ्जली, रक्तचन्दन, लालचन्दन, मराठी—रक्तचन्दन,

ताम्रवाटचन्दन, ताम्रवाट गंध, हाचालेका, गुर्जर—रत्ना

ञ्जलि, दाक्षिणात्य—लालचन्दन, उन्दम, तेलगू—

कुचन्दन, पर-गन्धपुत्रेक, रक्तचन्दन, लालचन्दन, सेयपू-

चन्दनम्, चन्दम्, एडुचन्दनम्, रक्तगन्धम्, गंडचन्दन,

कणाड़ी—केमपुगन्धकेके, होन्ने, रक्तचन्दन, अगुरु,

मलयालम्—अरुचन्दनम्, रक्तचन्दनम्, ब्रह्म—सन्दक,

नस-नि, सिङ्गापुर—रक्तहन्दन, रतहन्दन, संस्कृत—

रक्तचन्दन, अगुरु-गन्धकाष्ठ, रञ्जन, कुचन्दन, तिलपरि ;

अरब—सन्दलियामर, उन्दम, पारस्य—वक्म, सन्दले-

चुर्न, सुत, उन्दम्, दलसुर्न, अङ्गरेजी—Sanders Red

वा Red sandal wood, फारसी—Santale Rouge,

जर्मन—Rothes Sandelholz, इटली—Sandal

rose दिनेमार—Sandel-Hout

पहले लिखा जा चुका है, कि दाक्षिणात्यवासी

ध्यवसायके लिये इस वृक्षकी खेती करते हैं। वे लोग

मई और जून मासमें बीज सग्रह कर एक टुकड़ा जमीन

तैयार करते हैं। साधारणतः ८ फुट चौकान नरम

मिट्टीवाली जमीनमें प्रायः ७ वा ८सी बीज १ इञ्च गहरी

जमीन खोद कर बोते हैं। पीछे उसमें एक रातके बाद

प्रति तीसरे दिन शामको जल देते हैं। बोनेके पहले

यदि बीजको अच्छी तरह भिगा लिया जावे, तो अंकुर

निकलनेमें सिर्फ २० दिन, नहीं दो ३०से ३५ दिन तक

लग जाती है।

अंकुर उत्पन्न होनेके बाद छः मास तक बड़ी साव-

धानीसे थोड़ा थोड़ा जल सोंचना होता है। छः महीनेमें

जब पौधा थोड़ा बढ जाय, तब उसे जड़से उखाड़ कर

अलग अलग टोकरीमें रखे और छायामें ढोड दे। प्रति

दूसरे या तीसरे दिन इसमें जल देना होगा। अब यह मूल टोकरीमें सफ़ी तरह झाड़ पकड़ से तब उपयुक्त स्थानमें गड़दा बना कर एक एक टोकरी स्वतन्त्र स्थानमें गाड़ दें। चारों ओरें उनमें मारबान होनेसे गृहस्थ उन काट डालने और बाजारमें बेचने हैं। वर्षा प्रदेशोंक बनीं जिल्लेमें इसा तरह रक्तचन्दनकी खेती होती है। यह दस ब्रह्मसे कम तीन वर्ष रहता है। पीछे उसे काट कर घूममें सुखा लेते हैं। पनकी पनली झाड़ सुखा कर राके लिये बाजारमें बेजे जाती है।

वैज्ञानिकों भाषामें रक्तचन्दनके झालवर्ण पदार्थको "Santalal" कहते हैं। किन्ती एक पत्थर पर चन्दन काष्ठ घिसनेसे झालवर्णका जो गाढा पदार्थ निकलता है उसका रोग देवसूक्ष्मपूजा और तिजकादि घारणके लिये व्यवहार करते हैं। इसके काष्ठमें सूती कपड़ा रंगाया जाता है। किंगो ताल भीयपादिकी र गाभिके लिये यूरोपीय औषधघारणमें इसकी काफी रफ्तगी होती है। एन्ड्रिनल इस रोगमें चमके और काष्ठदिकी रंगानेके लिये रक्तचन्दनका बहुत प्रचार देखा जाता है। किस्ती अजनादिका वर्ण और रंग बढ़ानेके लिये इसका व्यवहार किया जाता है।

प्राचीन आयुर्वेदशास्त्रमें आनण्ट या श्वेतचन्दन, पौतचन्दन और रक्तचन्दनके गुणका हाम लिखा है। प्रथमोक्त दो चन्दनरूपका वैज्ञानिक नाम Santalum album है। पन्द देना।

रक्तचन्दन शैत्यगुणविशिष्ट होनेके कारण रोग श्वेतचन्दनको तरह स्नानक बाद विसा रक्तचन्दन की शरीरमें लेपते हैं। सिर दृढ करनेसे रक्तचन्दन जलमें घिस कर कपास पर लगाये, बर्न कीरन दूर हो जायगा। यह पारक और बलवर्धक है। आयुर्वेदीय चिद्विस्तारण औषधघारणमें इसका प्रयोग करते हैं। मुसलमान हकीमके मतसे पिचलावमें श्वेतचन्दन और रक्तचन्दनमें रक्तचन्दन व्यवहार है। मलमें पिच और रक्त होनेसे शरीर प्रकारक कोष्ठके काष्ठका सभन करपाया जा सकता है। तिसनेस (Gingelly-oil)के साथ रक्तचन्दन मिला कर बहुतेरे स्नानके बाद शरीरमें लगाते हैं। उससे चर्मरोग नष्ट होता है। अर और एकोरक प्रवाहमें यह उपास-

की नाग करता है। यह बाँधकी शैतिकी बढ़ाता और पसाना लाता है। मित्रका बटा हुआ चमड़ा जोनेमें चन्दनका विसा जल बहुत उपकारी और ठंडा है। पुगमें रक्तामागधमें इसके बासकोपका काड़ा पारक और बलकारक औषधघारणमें व्यवहार किया जाता है। रामावधिक परोक्षासे देखा गया है, कि इसमें सान्त्विक एसिड (Santalal acid) है। इष्ट, एल काइल और एलरमिप्रित जन्में मधया घने एसिटिक एसिडमें उक्त गणनिर्वास (Resinoid Substance=Santalal) निक्षेप करनेसे वह गन् जाता है। अर्धसिद्ध पदार्थ दामिदार तथा रंग और स्वादहीन होता है। बिडेड (Wedel) साहबने चन्दनके इस वर्णहीन दामेका C₄H₁₀O₃ इन प्रकार रासायनिक विस्लेषण किया है। रक्तचन्दन काष्ठमें इसका संयोग करनेसे हरिताम एक प्रकारका रूत पाया जाता है। इसे पटाशके साथ गन्नासे Resoran नामक पदार्थ उत्पन्न होता है।

रक्तचन्दनकी तरह एक और श्रेयोका घुस (Adenanthera paronina) देखा जाता है। यह बङ्गालमें एकाञ्चन रक्तचन्दन, रक्त और बनी कमी रक्तचन्दन नामने बाजारमें बिकता है। भासाममें यह चन्दन नामसे ही परिचिन है। बाजारमें बुकानदार लोगोंको ठगनेके लिये असली रक्तचन्दनके बड़े इसी काष्ठको बेचते हैं। प्रमेद इतना ही है, कि इसके काष्ठमें उतनी खुशबू नहीं है। बहुतेरे व्यापारी चन्दनकाष्ठके साथ इन एक साथ मिला कर श्नीयिप रज छो डते हैं जिससे इनमें चन्दन सी रंग या जाय।

स्थानविद्येमें यह मो म्थतग्न नामसे परिचित है, जैसे—मंघाकी—शोर मुद्गा, तामिष्ठ—मनेगुणबुमणि, तेलगु—चन्दि गुरुवेन्दा, पेहू गुरिन्निन्दा, मन्वा सम्—मञ्जानि, मराठी—पाल, पोर्नीगञ्ज, वासिवात्य—बडो गुमची, बडो गुमटो, कनाड़ी—मञ्जाड़ी, सिंहभी—मन्तैय, मग—गुद्ग, अन्वामन—रेठेडा, प्रष्ट—यथेगी।

बङ्गाल, वसिणमारत और प्रकदेशमें प्रायः मनी जगह यह बडा पेड़ उत्पन्न होता है। इसका नियास 'मन्तैय' कहलता है। यह कष्ट साधारणतः रक्तचन्दन काष्ठके बड़े व्यवहन होता है। बनी कमी इसे रंगके काममें लाते हैं।

इसके बीजसे तेल निकलता है। बीजचूर्णको विस्फोटकके ऊपर लगानेसे जलन रहने नहीं पानी तथा फोड़े पक जाते हैं। एक टुकड़े पत्थर पर जलसे बीजको घिस कर कपालमें लगानेसे मिरका बर्त जाता रहता तथा शरीरमें जलन देनेके आरम्भमें लगानेसे जलन रुक जाती और शरीर ठंढा हो जाता है। चातुर्गोमं बीजका काथ बहुत उपकारी है। इस बीजचूर्णको जलमें घोल कर शरीर पर लगानेमें फुंसी, फोड़े आदि गात्रस्फोट दूर हो जाते हैं। हकीम लोग गोनोरिया रोगमें इसका चूर्ण व्यवहार करते हैं।

पत्तेका काढ़ा गाठ-वान और चारङ्गीवातमें बहुत उपकारी है। अधिक काल सैद्यन करनेमें पुरुषत्वकी हानि होती है। रक्तमूत्र (Haematuria) और रक्तस्रावमें (Haemorrhage from the bowels) यह काढ़ा बहुत फलप्रद है। उदरामय और आमरक्तमें रोगीके दुर्बल होनेसे यह काढ़ा धारक और बलकारक औषधरूपमें व्यवहृत होता है। कोषप्रदाह (Orchitis)में इसके काष्ठ अथवा चूर्णको जलमें घिस कर प्रलेप देनेमें बहुत लाभ पहुंचता है। यह चूर्ण ३० रत्तों मात्रामें कुछ गरम जलके साथ सेवन करनेसे तुरन्त उलटी आ जाती है। इसका बीज उज्ज्वल, लालवर्णका तथा यह तौलमें २ रत्तों भारी होता है। कुछ लोग तौलनेमें इसका व्यवहार करते हैं। कोई कोई बीजके वर्ण और औज्ज्वल्य पर मुग्ध हो इसका माला बना कर पहनते हैं। इसके चूर्णको सोहागोके साथ पीसनेसे अच्छी रोटी बनती है। चन्दनके भ्रमसे बहुतेरे इस काष्ठको घिस कर तिलक लगाते हैं।

इसका काष्ठ लाल, मजबूत और लचीला होता है। इसी कारण दक्षिण भारतवासी इससे घरके अमवाव और दरवाजा झरोखे आदि बनाते हैं।

शक्तिपूजामें रक्तचन्दन बड़े कामका है। रक्तचन्दनसे काली और तारा आदिका यन्त्र अङ्कित कर पूजा करनेका विधान है। शक्तिदेवतामातृकी ही चन्दन द्वारा पूजा करनी होती है।

रक्तचित्रक (सं० पु०) रक्ते रक्तवर्णचित्रक। लाल रंगका चित्रक या चीता वृक्ष। महाराष्ट्र—रक्तचित्रक,

कनिष्ठा—कंपिनचित्रकमूल, नैलङ्ग—पवरचित्र, तामिल—त्रिचपुत्रिचित्र। संरंजन पर्याय—काल, अट्याल, काल मूल, अतिदीप्य, मार्जार, अग्नि, दाहक, पाचक, चित्राङ्ग, महाङ्ग। इसका गुण—स्थैत्यकर, नचिकारक, कुष्ठप्र, रस-नियामक, लोहवेधक और रसायन माना गया है।

(राजनि०)

रक्तचिल्लिका (सं० खो०) मधुर वाम्बुफ, मीठी गदह-पुरना।

रक्तचूर्ण (सं० फलो०) रक्तं रक्तवर्णं चूर्णं। १ मिन्दुर, मेंदुर। २ रक्तवर्णं चूर्णमात्र, लाल रंगका चूर्ण। (पु०) ३ कम्पिलक, कमीला।

रक्तच्छर्दि (सं० खो०) रक्तवमन, गूनकी फें होना।

रक्तज (सं० त्रि०) रक्ताजायते जन-ज। १ जो रक्तसे उत्पन्न हो, नहूसे उत्पन्न होनेवाला। २ रक्तके विकारके कारण उत्पन्न होनेवाला।

रक्तजलमि (सं० पु०) वह जलमि रोग जो रक्त विकारके कारण उत्पन्न होता है।

रक्तजन्तुक (सं० पु०) रक्तः रक्तवर्णो जन्तुः स्वार्थे कन् वा रक्ता आसक्तता जन्तवोऽस्मिन्। १ भूनाग, मीसा। २ रक्तवर्णं जन्तुमात्र, लाल रंगके प्राणी।

रक्तजवा (सं० पु०) स्वनामधेयात् पुष्पवृक्षविशेष, अडहुल (Hibiscus rosasinensis)। एकमात्र चीनदेशमें ही इस वृक्षके फूलमें बीज उत्पन्न होते हैं। भारतवर्षके नाना स्थानोंमें जवाका पेड़ है सही, पर उसमें फूल होने पर भी बीज नहीं होते। भारतवर्षके समतल क्षेत्रस्थ उद्यानोंमें विभिन्न ध्रणोंके जवाके पेड़ फूलके बोम्बसे सुशोभित देखे जाते हैं। माधवारणतः पञ्चदल, पञ्चमुखी आदि आकृतिका जवा देखनेमें आता है। ज्वेत, पीत, रक्त, वैंगनी और नील रंगके जवा भी इस देशमें होते हैं। चीनदेश जवाका उत्पत्तिस्थान होनेके कारण इस देशके लोग इसके प्रकार-विशेषको आज भी चीनका जवा कहते हैं।

भिन्न भिन्न स्थानमें यह भिन्न भिन्न नामसे प्रसिद्ध है। बङ्गाल—जवा, जया, जिवा, थर, दाक्षिणात्य—मुदेल, कुधल, जासुत्, जासुम; बम्बई—जासवन्द, मराठी—जासवंद, दनिन्दव फूल, गुजराती—जसुव,

तामिल-सप्यत्-सप्यु; सेमू-अवपुपमु अपापुप्यमु
 हासान; क्वाटो-हासबत्; मलयालम्-चेमपरिपुर,
 अपस्वरट्टि; प्रह्ल-कौह्वान्; संकृत-अप, अप
 पुपम्, अपा; धारक बीर वारण्य-महुरै; हिन्दा मन्त्र
 रैओ-shoe flower china rose; फरासी-Ketmia
 de cochin chine।

यह फूल जलम निगो रक्तोप एक प्रकारका गाढ़ा
 सात रंग पाया जाता है। छोटे छोटे मड़कू कागडको
 मान करके किये प्रवा पूर घिमने हैं। उमम योडा
 पसिइ या अत्ररम मिलाने घाड ही समपमे यह
 लडाइ किये सकेइ हो जाता है। पुपके इत्यम जूयाका
 बण कासा होता है, इस कारण अन्तरेमे इसका
 शुक्रावर नाम रया है। चीमवेगमे नी इस फूलख बाक
 काटे किये जाते हैं। इसको छालके रेशोत रस्ता बनाइ
 जा सक्ती है।

पुत्र स्निग्धर और प्रदाहनाशक होता है। सुक
 एफ्फ, योगधर्म जलन कारि रोगमे पुत्रदलका निरप
 या इतिपुत्रक दिया जाता है। यद स्निग्धकारक
 और उपरमे शैत्यकारक है। अपापुपका रम और
 मोलाम तेम ममान गाग ले कार मिस करे, अब जलका
 घम बिलकुल जम जाय तब उतार ले। यह तेम केज
 बंद नमे बहुत उपयोगा है। इसक पत्तोंका रस शैत्य
 गुणाधिगिष्ट, बेदनानियारक, स्निग्धर और मृदुविरैकक
 है। मनुगदर रोग (menorrhagia) मे अया
 पुपको घोमे मुम कर सेयन करानेमे विशेष फल पाया
 जाता है। एगक बीजका न्यूं जलक भाष योद प्रमइ
 (gonorrhoea) रोगप्रस्त ध्विनको सेयन करपाया
 जाय तो बहुत उपकार होता है। अग देना।

रक्तभिद्र (सं० पु०) रका रक्तपर्णा शोषितपानार्थी
 घासका या मिहा यप्य। १ सिद्ध शेर। (जि०)
 २ एधप्रण जिह्वायुक्त जिमको जीम सात रगको हो।

रक्तद्वण (सं० पु०) उगाद, सुहरी।

रक्तभाजुक-लभामलयाल ल्याव भाडडा गाछ (Tamarix
 dioica) मज्जमार और पत्राकी २,५०० गुट ऊको
 भूमिअ वा वृस उत्पन्न होता है।

रक्तचिप्टी (सं० पु०) रका रक्तपर्णा चिप्टा रक्तपण
 चिप्टा पुत्ररस। यवाय-कडक।

रक्तार (सं० क्ली०) द्यपनीरिक, मेक।
 रक्ता (सं० क्ली०) रक्तम्य भाषा तलुदाप्। रक्ता
 माय या घम, सालिमा, लला।
 "रक्तिं पावितस्तन विसनायासि रक्तम्।"
 (शाङ्खपर०)

रक्तपुण्ड (सं० पु०) रकी सुग्री मसद। १ शुक्पश्री,
 तोठा। (जि०) २ कोहितमुखयुक्त जिसका मुह
 साल रगका हो।

रक्तपुण्ड (सं० पु०) रक्तपुण्ड फन्। १ मृगाग,
 मामा। २ रक्तपटवेग।

रक्ततृण (सं० क्ली०) एक प्रकारका लाल रगका तृण।
 रक्तनेत्र (सं० क्ली०) मांस।

रक्तविद्रु (सं० स्तो०) रका चिद्रु। रक्तार्ण जिद्रु,
 मम तेवडा। पर्याय-काभिल्लो, त्रिपुग ताघ्रपुपिडा,
 कुदपर्णा, मसुरो, मसूठा, काकनामिका। इसका गुण-
 तिक, कट्ट, उष्ण, रजत, प्रदानी मल और विराम
 क्षारक तथा हितकारो। (राजनि०)

रक्तशक्ति (सं० जि०) रका इगता मस्या, रक्तवृता
 हाथ कन्, रापि अत इरयं। अरिइका। शुम्भी और
 निगुम्भस युद करके समय देयो अरिइकाके मरी
 वांत असुरोच आमने छाल हो गये थे, इसीसे ये
 रक्तशक्ति नाममे मसिद्ध हुए।

(मार्कण्डेयपु वेदीमा० ६१५१)

रक्तशर्ती (सं० स्तो०) रक्तशक्ति देगा।

रक्तश्या (सं० स्त्री०) रक्तानि इक्षान्यस्या। १ मलिका
 नामका गवद्वय। २ अघितिका।

रक्तदुष्ट (सं० जि०) दूषित रक्त विपाक रसयुक्त।

रक्तदूषण (सं० जि०) रक्तदूषणकारा, गूल परात करनेवाला।

रक्तदृश (सं० पु० स्तो०) रका दृश दृष्टिर्धम्य। १ कपोल,
 कपूर। (जि०) २ रक्तयण चक्षुचिगिष्ट, सात भांवाला।

रक्तद्रुम (सं० पु०) एकबीजासन वृस साल बीजासन
 का पेड़।

रक्तपरा (सं० स्त्री०) वैद्यक अनुसार ममके गीतरकी
 दूमरो कला या किल्वी जो रक्तको धारण किये
 रतना है।

रक्तपानु (सं० पु०) रकी रक्तपर्णा पानु। १ मीरिक, मेक।

२ नाभ्र, तांबा । ३ रक्तवर्णधातुमात्र, लाल रंगका धातु ।
४ शरीरमेंका लाल धातु ।

रक्तनदी—रक्तमय नदी । इस देशमें प्रचलित है कि जो
स्वप्नमें रक्तनदी देखता है वह बड़ा मायबान है ।

रक्तनयन (सं० त्रि०) १ आम्बुनय, लाल आम्बुवाला ।
(पु०) २ क्यूतर । ३ चक्रोर ।

रक्तनाडी (सं० स्त्री०) दन्तमूलगत रक्तज नाडीरोगविशेष,
दानोंकी जड़में होनेवाला एक प्रकारका रोग ।

रक्तनाल (सं० पु०) रक्तो नालोऽस्य । जीवशाक, मुमना ।

रक्तनासिक (सं० पु०) रक्ता नामिकास्य । १ पेचक,
उल्लू । (त्रि०) २ रक्तनामिकायुक्त, लाल नाकवाला ।

रक्तनिर्याम (सं० पु०) रक्तनदीजामनवृद्ध, लाल रंगका
बीजासन पेड़ ।

रक्तनील (सं० पु०) महाविष वृष्टिचक्रविशेष, एक प्रकार-
का बहुत जहरीला विच्छू । (सुश्रुत कल्पस्था० ८ अ०)

रक्तनेत्र (सं० पु०) रक्त नेत्रं यस्य । १ मारन परी ।
२ कपोत, क्यूतर । ३ चक्रोर । (क्ली०) ४ रक्तवर्ण
चक्षुः, लाल रंगकी आँखें । (त्रि०) ५ रक्तवर्णनेत्रयुक्त,
जिसकी आँखें लाल हों ।

रक्तप (सं० पु०) रक्तं पिवतीति पा क । १ राशम ।
(त्रि०) २ रक्तपानकर्ता, लहू पीनेवाला ।

रक्तपत्र (सं० पु०) रक्ती पत्रावस्य । गरुड ।
रक्तपट (सं० त्रि०) १ रक्तवस्त्रधारी, लात्र रंगके कपड़े
पहननेवाला । २ श्रमण ।

रक्तपद (सं० पु०) १ पिएडालु । २ रक्तवर्ण पत्रविशिष्ट ।
रक्तपत्रा (सं० स्त्री०) १ जिमके पत्ते लाल हों, गडहपूरना ।
२ नाकुली ।

रक्तपत्रिका (सं० स्त्री०) रक्तानि पत्राणि अस्याः स्वार्थे
कन्, टापि अत्र इत्वं । १ नाकुली । २ रक्त पुनर्नवा, लाल
गडहपूरना । ३ लोहित पत्र, लालपत्ता ।

रक्तपर्दी (सं० स्त्री०) लजालू, लजावती ।

रक्तपद्म (सं० पु० क्ली०) रक्तो रक्तवर्णो पद्मः । रक्तवर्ण
पद्म, लाल कमल । पद्म देखा ।

रक्तपर्ण (सं० पु०) १ रक्तपुनर्नवा, लाल गडहपूरना ।
(त्रि०) २ रक्तवर्ण पर्णविशिष्ट, जिसके पत्ते लाल हो ।

रक्तपल्लव (सं० पु०) १ अशोकका वृक्ष । २ लोहितपर्ण,
लाल पत्ता ।

रक्तपा (सं० स्त्री०) रक्तं पिवतीति पा क. म्त्रियां टाप् ।
१ जलीका, जोंक । २ टाकिनी । (त्रि०) ३ गोणितपायी,
लहू पीनेवाला ।

रक्तपार्की (सं० स्त्री०) पच्यते इति पत्र वच्, रक्त रक्तवर्ण
पाके यस्याः । गृहती नामकी लता ।

रक्तपात (सं० पु०) १ लङ्का गिग्ना या बहना, रक्त
धारा । २ ऐमा प्रयाग जिमने निम्नोक्त रक्त बहे । ३
ऐसी लडाई-भगडा जिमने रोग जामी हों, गून-खराबी ।

रक्तपाता (सं० स्त्री०) रक्तं पातयतीति पत-णिच्-अच्,
त्रिया टाप् । जलीका, जोंक ।

रक्तपाट (सं० पु०) रक्ती पाटावस्य । १ शुकपद्मी, तोता ।
२ बरनाद । (त्रि०) ३ लोहितचरणयुक्त, जिमके पैर
लाल हों ।

रक्तपायिन् (सं० त्रि०) रक्तं पातुं शीलमस्य, पा णिति ।
१ रक्तपानशील, गून पीनेवाला । (पु०) २ मन्कुन,
खटमल ।

रक्तपायिनी (सं० स्त्री०) जलीका, जोंक ।
रक्तपारट (सं० क्ली०) रक्तं रक्तवर्णं पारटं । हिगुल,
सिंगरफ ।

रक्तपापाण (सं० पु० क्ली०) १ गिरिमृत्तिका, गेरू ।
२ लाल पत्थर ।

रक्तपिटिका (सं० स्त्री०) रक्तवर्ण विरफेष्टक, लाल फोड़ा ।
रक्तपिएड (सं० क्ली०) रक्तं रक्तवर्णं पिएडमिव ।
जवापुप, अज्जुलका फूल ।

रक्तपिएडक (सं० पु०) रक्तं पिएडमिविति रक्तपिएड
इव ई कन् । १ रक्तानू, रतानू । २ जपावृक्ष, अज्जुल-
ना पद ।

रक्तपिएडालु (सं० पु०) रक्तवर्णं पिएडालु, रतानू । महा-
राष्ट्रमें वानालु और कलिद्वंद्वं कॅपि नहेडुल कहते हैं । वृक्ष-
का रस गुण—शीतल, मधुर, बम्ल, श्रमघ्न, दाह और
पित्तनाशक, बलकर, गुरु और पुष्टिकर । (राजनि०)

रक्तपित्त (सं० क्ली०) रक्तद्रवणं पित्तमिति मध्यपदलोपि
कर्मधारय०, रक्तञ्च पित्तञ्च रक्तपित्तमिति द्वन्द्व इति
सुश्रुतः रक्तञ्च तत्पित्तञ्चेति रक्तपित्तं रागप्राप्तपित्त-
मिति कर्मधारयः इति चरकः । रोगविशेष, रक्तपित्त
रोग ।

इस रोगका निदान—भूमि और रौद्रादिका आंतप सेवन व्यायाम, शोक पथ्यपयण, मैथुन तथा मरिचादि तीक्ष्ण द्रव्य भक्षण, धीय द्रव्य क्षार, उषध और कटुरसयुक्त द्रव्य अतिरिक्त रूपमें भाजन करनेसे पित्त बिगड़ कर इस रोगकी उत्पन्न करता है। क्लिबोंके रजोरोध होने पर भी यह रोग हो सकता है। इस रोगमें मुख, नासिका, कण्ठ और कर्ण इन सब ऊर्ध्व मार्ग तथा गुह्य, योनि और जिह्व अघोमार्ग द्वारा रक्तस्राव होता है। यह पीड़ा यदि बहुत बढ़ जाय, तो समस्त रोमकूप द्वारा भी रक्त स्राव हो सकता है।

इस रोगका पूर्वलक्षण—रक्तपित्तोद्यो उत्पन्न होनेके पहले भवसम्पत्ता, शोथन द्रव्य लानेकी इच्छा, कण्ठसे घृमा निकल रहा है ऐसा अनुभव, घमन और निःश्वास में रक्त वा सोहकी गंध सी गंधका अनुभव होता है।

हायमेदमें महत्त्व—हाय उत्पन्न होनेके बाद वात आदि दोषको अधिकताके अनुसार पूषक पूषक, उक्षय दिकाई देते हैं। रक्तपित्तमें वायुको अधिकता रहनेसे श्याम वा भङ्गवर्णका फेनयुक्त पतला और कृशा रक्त बाहर हो जाता है। इसमें गुण्य, धोमि वा जिह्व इन सब अघोमार्ग द्वारा रक्त निकलता है। पित्तको अधिकता रहनेसे दटादि सासक काढ़े जैसा काला गोमूत्रके जैसा पित्तको और सीपीराज्जनक जैसा रक्त निकलता है। श्लेष्माकी अधिकता रहनेसे घमा, कुड पाण्डुयुक्त, मल्य स्निग्ध और पिच्छिल रक्त निकलता है। इसमें मुह, नाक, आन और कान हो कर रक्तस्राव होता है। हाय या तीन हायका अधिकता रहनेसे बग वा या लान है पौक मिश्रित लक्षण दिखाई देते हैं। द्विदोषक मध्य पातलेप्राज्ञिन रक्तपित्तमें ऊपर और दोनों मार्ग द्वारा रक्त निकलता है।

इस रोगमें साध्यासाध्य—जो रक्तपित्त ऊर्ध्वमार्ग गत है अथवा मुखनामिकादि द्वारा रक्त निकलता है जो अल्पयोगयुक्त और उपद्रवशून्य है तथा हेमन्त वा शीत कालमें दिखाई देता है यह सुखसाध्य होता है। जो रक्तपित्त अघोमार्गगत है अर्थात् गुह्य, योनि और जिह्व हो कर रक्त निकलता है तथा जो द्विदोषगत है यह पाय है। जिस रक्तपित्तोद्योमें ऊर्ध्व और अघ-

घ्न दोनों मार्ग द्वारा रक्तस्राव होता है तथा जो निदोषय है उसे असाध्य जानना चाहिये। रोगाके दृढ, मन्वानि युक्त, आहारव्यक्तहोन वा अन्यान्व व्यापियुक्त होने पर भी रक्तापत्त रोग असाध्य है।

इस रोगको उपसर्ग—दुर्बलता भ्वास, कास ज्वर, भूमि, मलता, पाहडुता, दाह, मूर्च्छा, मुक्तद्रव्यका व्यस्य पाक, सवदा अर्पण, हृदयमें वेदना, दुष्णा, मलभेद, मस्तक पर संताप, सारे शरीरमें सङ्को सी गंध, आहार में विद्वेद और अज्ञोण आदि लक्षण दिखाई देते हैं। रक्तमें सङ्को गंध निकलती और उसका घर्ण मांसक धोय हुए जलके समान कठम मेद, पीप, यहृत्त्वण्ड अथवा शानुकक जैसा तथा रक्तद्रव्यकी तरह विभिन्न रंगका होता है।

मृत्युलक्षण—जिस रक्तपित्तमें रोगीके मल छाल हो जाते, उकारमें काल रंग दिखाई देता अथवा समी पदार्थ छालसे मासूम होते अथवा अधिक परिमाणमें रक्तघमन होता उसका मृत्यु निश्चय सम्भवनी चाहिये।

अवस्थामेदमें चिकित्सा—इस रोगमें रोगी बलवान् रहनेसे रक्तस्रावको हटाव् पंद कर देना उचित नहीं। पयोकि, उस दूषित रक्तक देहमें रुद्ध हो कर रहनेसे पाहडु रोग, हृदोग, मूत्रपी, श्लेष्मा, गुम्भ और ज्वर आदि नासा प्रकारकी पीड़ा होनेको सम्भावना है। किन्तु जो दुर्बल रोगी है वा अतिरिक्त रक्तस्रावके कारण जिसका शरीर अल्पसम्भ हो गया है उन्हाका रक्त रुद्ध करना उचित है। दूधका रस, अमारका रस, गोबर या घोड़ेकी विष्टाका रस, इन्हें थोनीक साथ सेवन करनेसे रक्तस्राव अति शीघ्र दूर हो जाता है। अहू, सूकके पत्तोंका रस, पड्डुमरण फलका रस, छाह मिर्गोया हुआ जल और आवापानक पत्तोंका रस सेवन करनेसे रक्तस्राव बंद होता है। अग्नी मर पिडकरक कूर्णकी दूषक साथ सेवन करनेसे मा रक्तस्राव नियारित होता है। रक्तातिसार और रक्ताशरीरके रक्तरोधक अन्यान्व रोगीका भी इस रोगमें साधक विचार कर प्रयोग करनेसे उपकार होता है। नाकसे रक्तस्राव होने पर आँवलेको घोंम मूत्र काकोके साथ पीस कर मस्तक पर प्रलेप देने, थोनी मिश्रित दूध वा जलकी तथा दूधका रस, अमारके

फुलका रस, धलतेका रस, प्याजका रस, गोबर वा घोड़ेकी विष्टाका रस, केवाँचका रस वा हरेका जल इन सब द्रव्योंकी नाम लेनेसे लाभ पहुँचता है। कानसे रक्तस्राव होने पर भी उर्मा प्रकार सुंननी लेनी चाहिये। मूत्रद्वारा हो कर रक्तस्राव होनेसे काश, शर, काली ईश्वर और दन्तुखडका मूत्र कुल मिला कर २ तोला, वक्रगीका दूध १६ तोला इन्हे एक सेर जलमें पाक कर दुग्धभागके रहते उतार ले। उंढा होने पर इसका सेवन करनेसे रक्तस्राव बंद हो जाता है। जनमूली और गोखरूके मूत्रके साथ दूधको पका कर पान करनेसे बहुत उपकार होता है। रक्तचन्दन, वेल्मोट, अतीस कूटजकी छाल और वावलाका आटा, कुल २ तोला, वक्रगीका दूध १६ तोला, जल १ सेर इन्हे मिद कर दूधका भाग रहते उतार ले। इसका पान करनेमें गुद्य, योनि और लिङ्गद्वारा हो कर रक्तका निकलना बंद हो जाता है। किममिस, रक्तचन्दन, लोथ, प्रियंगु इन सब द्रव्योंके चूर्णका अडूसके पत्तोंके रस और मधुके साथ सेवन करनेसे मुह और नाकसे रक्त का निकलना रक जाता है। प्रथित अर्थात् गठीला रक्तस्राव होनेमें क्यूतरकी विष्टाका अति घल्प मात्रामें मधुके साथ मिला कर सेवन करनेमें भी लाभ पहुँचता है। इसके सिवा हिम, धान्यकादि, ह्रीवेराटि और अदरककाटि कवाथ पलादिगुडिका, कुम्भाण्डकण्ड, वामाकुम्भाण्डकण्ड, एण्डकाधलौह, रक्तपित्तान्तकलौह, वासाघृत और ह्रीवेराधनल आदि औषधोंका अच्छी तरह प्रयोग करनेसे यह रोग प्रशमित होता है। रक्तपित्तके साथ उग्र रहनेसे लाल निम्बोथ, श्यामवर्णका निम्बोथ, आमलकी, हर्गतकी, बहेडा, पीपलचूर्ण प्रत्येकका सम भाग, कुल मिला कर जितना हो उमसे दूनी चीनी और मधुके साथ मोटक बनाना होगा। इस मोटकका सेवन करनेसे रक्तपित्त और उग्र इन दोनों रोगोंकी शान्ति होती है। इसके सिवाय रक्तपित्तनाशक और उग्रनाशक दोनोंके औषधको मिला कर इस अरुणामें प्रयोग करना होता है। श्वास, काम, मग्न और उपद्रव उपांशत होनेसे राजयक्ष्मरोगकी तरह चिपिटमा करना चाहिये। अडूसके पत्तोंके

रसके साथ तालीजपत्र चूर्ण और मधु मिला कर पान करनेसे श्वास, कास और खरभङ्गमें उपकारक होता है।
(बुधुत रक्तपित्तरोगाधि०)

भावप्रकाशके मतसे रक्तपित्त रोगीको पहले रक्त-रोधक औषध नहीं देना चाहिये। क्योंकि, उससे वह दूषित रक्त रक कर हृद्रोग, पाण्डुरोग, प्रहणी, प्लीहा, गुल्म और ज्वरादि रोगोंको उत्पन्न करता है।

धान, साठी, कोदों, श्यामा और कंगनी धान रक्त-पित्तरोगीको पानके लिये देना उचित है। मसर, मृंग, चना, वनमृंग और अरहर दालका जूस दिया जा सकता है। अनार, आंवला, परवलका पत्ता, नीम, वेताम्र, प्लुश, वेतका पत्ता और मारसा साग, सफेद वा पाण्डु-वर्णका कबूतर, शशक, कपिफजल और हरिण इनके मांसका जूस रक्तपित्तरोगमें हितकर है। धनिया, आमलकी, अडूस, किसमिस, पित्तपापड़ इनका जीतल कपाय प्रस्तुत करके सेवन करनेसे रक्तपित्त, ज्वर, दाह, पिपासा और शोषरोग नाश होता है। अतिवला, नीलोत्पल, धनिया, रक्तचन्दन, मुलेठी, गुलज, खस-खसकी जड़ और निस्सोथ इनका काढ़ा मधु और चीनीके साथ पीनेसे रक्तपित्तरोग आरोग्य होता है।

रक्तपित्त, क्षय और कासरोगोंमें किसी प्रकारका अरिष्टलक्षण नहीं होनेसे यदि अडूसका प्रयोग किया जाय, तो कोई भय नहीं रहता। अडूस, किसमिस और हरितकी इनका साथ चीनी और मधुके साथ पान करनेसे सभी प्रकारके कास, श्वास और रक्तपित्त नष्ट होते हैं।

इस रोगमें अतिशय रक्तस्राव जारी रहनेसे मधु-संयुक्त रक्तपान करे। नाकसे रक्त निकलने पर आवलेकी घीमें भुन कर काजी द्वारा अच्छी तरह पीस करके मस्तक पर प्रलेप देनेसे रक्तव्रेग निवारित होता है। दूर्वाघृत, एण्डकुम्भाण्डवलेह, वृहत्कुम्भाण्डवलेह, खण्डकुम्भाण्डक, एण्डकाधलौह, गतावरीपाक प्रभृति औषधोंका अग्र यानुसार प्रयोग करे।

(भावप्र० रक्तपित्त०)

भैषज्यरत्नावलीमें रक्तपित्त-रोगाधिकारमें निम्नोक्त औषध घतलाये गये हैं, जैसे—उशीरादिचूर्ण, पलादि-

मुद्दिहा, पुष्पाण्डक, चाम्पापुष्पाण्डक, चाम्पापुष्प, दूधामूल, समगजकण्ठी, जलमूल्यादि लीह, कण्डकाय लीह, रक्तपित्ताम्लधर्माह, सुधाभिषिक्त, हृषिकेशकीर और उनीरामय ।

रक्तद्रोमरसप्रदं अर्धभार, सुधाभिषिक्त, आम मध्यादि लीह, गतमूल्यादि लीह, पपनेरस, रक्तपित्ता म्लच्छरम, रमागुठरस, पुष्पाण्डकण्ड ऊर्ध्वरादि शीह, समगजकण्ठी और कपड करसका प्रयोग देना जाता है ।

विष चिकित्सकके चाहिये कि वे रोगके बल और अग्रगण्यका अच्छा तरह देखनाल कर औषधका प्रयोग करें ।

इस रोगकी प्रथम अग्रगण्यमें पच्यापच्य—ऊर्ध्वगण्य एतद्विस्तार रोगीका बल मांस और अग्निबल क्षीय नहीं होनेसे पहले उपवास करने देना उचित है, किन्तु बलादि क्षीय होनेसे तृणिकर आहार लानेका है । घी मधु और मावाक पूर्णका तैयार किया हुआ मोहन उपकारक है । पिण्डगण्ड, त्रिसामिस, मुलेठा और कालसा इसके काटेको उडा करके औषधी माद्य पान करनेमें विशेष लाभ पहुँचता है । अथवा रक्तपित्त रोगीको तृणिकर पेयादि पानका है । शालपत्री, अकपंड शूली, कण्डकाय और गोण्ड इस पञ्चमूलक काटेका तैयार करके सेवन करनेमें विशेष उपकार होता है ।

इस रोगमें माद्यारण पच्यापच्य—अतिरिक्त रक्त माद्यक बाद यह बंध हा जानेस तथा अग्निदि परिपारक भायक अग्निबल रहनेमें दिनमें पुरान माद्यकका भात । सुग, मगूर और ननको हानिका गुम, बडी भा गा या बादन मण्डोका गिवा परवत हूमर, पञ्चपुष्पाण्डक मानहकपु, करनेसे आदिही तरकारा । प्राणगाक, बकरे, हरिण गरु और बज्जुर आदिका मीसरस बरगका दूध, कण्ड, धनाद, पानरस, त्रिसामिस, आमरको, मिमले कारिवत निमनेल और शूनपड, स्वप्रतर्गादि इन रोगमें लानेका दिया जा सकता है । रातकी मेट वा जीको रोटी अर्धा तन पना मक, देको चार्दिय । गाम अरु उ हा करके पान देना उचित है ।

इस रोगमें निषिद्ध करने—शुण्डराक, ताहलशाप और दूरप्रप हथि, मण्डरा, अचिक मारक द्रव्य, सरसोंका

सिन्धु लाल मिर्च, अधिक लघण, सेम, माल, साग, अही यन्तु उडका हान और पान आदि द्रव्यमोहन, मल मूलादिका योगपारण, क्वथकाट द्वारा क्वथमाजक, प्यापाम, पचपर्वटन घूषपान, घूला और आतप सेवन, उँड खगता, रातिकागणन स्नान, मन्नीत वा उषागुण उषारण, मैथुन और घोड़ेका सपारा पर अग्रम भादि इस रोगमें विशेष अतिकर है । स्नान मही करनेसे यदि रोगी बहुत तक-सोक मालूम करे, तो गरम अलको उडा करके किसी किसी दिन स्नान कर सकता है ।

यह रोग अत्यन्त दुःसाध्य है । रोगी सुपच्यारो हो कर यदि विष चिकित्सकसे बचाव करे, तो आरोग्य भी हा सकता है ।

डाक्टरी मत ।

रक्तपित्तरोगमें पाक्वाण्यसे रक्त निकलता है । एलो पैथिकके मतसे इस रोगका वैज्ञानिक नाम Haemate mias है । यसकपुण्य और अन्यवयसका त्रिपोंके अक-मर यह रोग हुआ करता है ।

उत्पन्न ऊपर किमा प्रकारके आघात, पोतज्वर (Yellow fever) आदि पाठ्या रक्तका परिप्लवण, पाक्वाण्यमें रक्षाधिषय, प्रदाह क्षय, ककटरोग अथवा परायमा उप एमिड अथवा उपेजकद्रव्यमहाण, यष्टु, श्लेहा और अन्यान्य गिरुटयसों यन्त्रको पोडा, विशेषता निरोमिस भाव क्षारक या पोटा गिराम शुभ्रोसिस अथवा एपनिजम होनेसे पाक्वाण्यमें अग्ररुख रक्षाधिषय हीं कर रक्तत्राय होता है । यदि अतिरिक्त एमिउरिजम पाक्वाण्यमें फट जाय अथवा मुगस रक्तत्राय हो कर यही पेटमें चला जाय ता यह फिरक ऊपर उठता है । त्रिपों क अशु परिप्लवण अर्थात् भिषेत्तियस मेतद्रु वेगानमें भी इस प्रकारका रक्तसाय होन देता जाता है ।

संज्ञा—अनक समय रक्त उत्पन्न पहेले रोगीको परक ऊपर दू मायूम होता है तथा यह वेदन हो जाता है । कमा कमा कोर संज्ञा दिगाद इनक पहेले हो शक्यमात्र रक्तप्रमन होता है । रक्तप्रमनकासमें सामान्य अथवा अल्पत पमनका उड क रहता है तथा रक्त अल्प या अधिक परिमात्रमें निकलता है । कमी कमी इनका अधिक रक्तप्रमन होता है, कि उससे घाटे हो समय

मृत्यु हो जाती है। उद्धान्त रक्त काला दिखाई देता है। पाकाशयमें अम्लरसके साथ जोणितमिश्रित होनेसे ही उक्त वर्णमें परिणत हुआ करता है। किन्तु निःसृत होनेके कुछ समय बाद ही यदि रक्तोद्गम हो, तो उसका वर्ण लाल हो जाता है। कभी कभी वहिर्गत रक्तके साथ खाद्य द्रव्य मिला रहता है। निःसृत रक्तका कुछ अंश कभी कभी आतमें जा कर मलके साथ बाहर निकलता है। यह देखनेमें ठीक अलकतरेके जैसा होता है। अधिक रक्तस्राव होनेसे रोगीका शिर घूमता, हाथ पैर कंपने लगता, आपकी ज्योति कम हो जाती तथा वह बहुत कमजोरी मालूम करता है। कभी कभी उसे मूर्च्छा आ जाती है, नाडी क्षीण और धीमी चलने लगती है। अणुवांक्षण द्वारा परीक्षा करनेसे लोहित सभी रक्तकणिका परिवर्तित तथा भिन्न भिन्न वर्णकी कणा मिली हुई दिखाई देती हैं।

रक्तकाशके साथ इस रोगका कभी कभी श्रम हो जाया करता है। रोगनिर्णयकालमें चिकित्सक निम्नलिखित लक्षण देख कर रोगको पहचान ले तथा उसीके अनुसार रोगविशेषकी चिकित्सा भी करे।

रक्तपित्त

रक्तकाश

- १ अधिक वयस्क व्यक्ति और कभी कभी युवती स्त्रीको
- २ रक्तवमनके पहले पेटके ऊपर घेदना और विवमिषा।
- ३ वान्त रक्त काला और उसकी प्रतिक्रिया अम्ल।
- ४ श्वासरुच्छ्र नहीं रहता।
- ५ अधिक परिमाणमें रक्तवमन होनेके बाद कुछ समय रक्तोद्गम नहीं होता।
- ६ मलके साथ रक्त दिखाई देता है।

- १ युवकगण।
- २ रक्तोत्काशके पहले छाती भारी, अस्वच्छन्दता और गलेके भीतर सुरसुरी मालूम होना।
- ३ रक्त उज्ज्वल लालवर्ण और फेनिल तथा प्रतिक्रिया क्षार।
- ४ श्वासरुच्छ्र रहता है और छातीके भीतर बुदबुद शब्द सुनाई देता है।
- ५ रक्तकाशके बाद बहुत थोड़ा कफ और रक्त निकलता है।
- ६ मलमें रक्त नहीं रहता।

कभी कभी मुंह और नाकसे निकला हुआ रक्त पेटमें जा कर रक्तपित्तरोग उत्पन्न करता है। यह रोग प्रायः आरोग्य हो जाता है।

रोगीको स्थिरभावमें रख कर हमें बरफ चूसने देना उचित है। पेटके ऊपर मण्ड प्लष्टर अथवा बरफकी थैली रखनेसे बहुत लाभ पहुँचता है। आभ्यन्तरिक प्रयोगमें अफीमके साथ गैलिक एसिड वा प्लम्बाई एमिटेटीस, आयल आव टार्पेण्टाइन, टिप्रिल, आर्गट, हैमोलिन और बाहरमें आर्गटिन वा स्कलेरोटिक एसिड का इन्जेक्शन दे। यदि अत्यन्त वमन होता हो, तो हाइड्रोसिपेनिक एसिड डिल तथा पीडित स्थानमें माफया इन्जेक्शन कर सकते हैं। पाकाशयको स्थिरभावमें रखनेके लिये ३ वा ४ घंटेके अंतर पर तरल माद्यद्रव्य तथा बरफ जलके साथ थोड़ा दूध या शूप है। रोगीके दुर्बल होनेसे एनिमा द्वारा उत्तेजक औषधका प्रयोग करे।

रक्तपित्तहा (सं० स्त्री०) रक्तपित्तं हन्तीति इन्द्र, स्त्रियां टाप्। रक्तघ्नो, रतघ्नी नामकी द्रव।

रक्तपित्तान्तकलीह (सं० स्त्री०) रक्तनाशक औषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—आंवला, पीपल, चीनी और लोहा, प्रत्येक एक एक तोला, इन्हें एकल करके कूट कर यह औषध प्रस्तुत करे। पीले दोपके बलावल अनुसार अनुपान और माता स्थिर करनी होती है। इसके सेवनसे रक्तपित्त और अम्लपित्तरोग नाश होता है।

रक्तपित्तान्तकरस (सं० पु०) रक्तपित्तरोगका औषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—अवरक, लोहा, सोनामक्खनी, पारा, हरिताल और गंधक बराबर बराबर भाग ले कर ब्रह्मयष्टि, राम और गुरुचके काढ़ेमें एक दिन खल करके माशा भरकी गोली बनावे। इसका अनुपान मधु और चीनी है। इसका सेवन करनेसे रक्तपित्त, उवर, दाह, क्षत, क्षीण, तुष्णा, जोष आदि रोग आरोग्य होते हैं। (रसेन्द्रसारस० रक्तपित्तरोगाधि०)

रक्तपित्तिन् (सं० स्त्री०) रक्तपित्तं अस्यास्तीति इति। रक्तपित्तरोगी, जिसे रक्तपित्त रोग हुआ हो।

रक्तपीठिकादर्शन (सं० स्त्री०) रक्तज विकार। (निदान) रक्तपीतफला (सं० स्त्री०) मधुरधिम्विका। (वैद्यकनि०)

रक्तपुष्पक (सं० लि०) १ रक्त-वर्ण पुष्पविशिष्ट, काल पूष्पाळा । (स्त्री०) २ मरीचूपमेद, एक प्रकारका रंगनेवाला कीडा ।

रक्तपुनर्वा (सं० स्त्री०) रक्ता रक्तवर्णा पुनर्वा । रक्तवर्ण पुनर्वा शाक, काल रंगकी रोन्डवृत्ता । महाराष्ट्रमें—रक्तपेन्डुलि, कलिङ्गमें—कॅपिन विलुडा कलु । संस्कृत पर्याय—शूरा मण्डलपत्रिका रफनकास्ता, मोदिता, रक्तपत्रिका, यैशावी, रक्तवर्णामू, सोफणी, पुण्डिका, विकल्परा, विपद्यो, मरुपेय्या, सारिपो, पर्यायव जीवपल, मीम, पुनमय, नथ, नथ्य । यह तिक, सारक, शोफ, रक्त प्रदर, पाण्ड और पिच्छनाशक मानो गई है ।

रक्तपुष्प (सं० पु०) रक्तं पुष्पमस्य । १ करबीर क्लैर । २ रोहितक नामका पेड़ । ३ रक्तकाञ्चनपुष्प । ४ दार्दिम वृक्ष, अनारका पेड़ । ५ वकवृक्ष । ६ बम्बूका पेड़ गुग्गुलुप हरिया । ७ पुष्पागका पेड़ । (एरबि०) (लि०) ८ रक्तवर्ण पुष्पविशिष्ट, जिसमें काल फूल हों । (स्त्री०) ९ रक्तवर्ण पुष्प, काल फूल । काल फूल शक्तिको पूजामें बड़ा प्रशस्त माना जाता है ।

रक्तपुष्पक (सं० पु०) रक्तं पुष्पमस्य क्व । १ पलाश वृक्ष । २ रोहितक नामका पेड़ । ३ शाल्मलिबृक्ष, सेमर का पेड़ । (रात्रि०)

रक्तपुष्पा (सं० स्त्री०) रक्तं पुष्पं अस्याः । १ शाल्मलि वृक्ष, सेमरका पेड़ । २ पुनर्वा । ३ सिन्दूर । (मम०) ४ कनकवर्मा, चंपकेला । ५ नागदमनी, नागद्वीपा । (एरबि०)

रक्तपुष्पिका (सं० स्त्री०) रक्तपुष्प क्व यापि अत इत्वं । १ कच्छाल, कञ्चवती । २ काल पुनर्वा ।

रक्तपुष्पो (सं० स्त्री०) रक्तं पुष्पमस्याः स्त्रीप् । १ पाटसी वृक्ष, पांडुरका पेड़ । २ श्या, अङ्गुल । ३ भायर्षकी नामकी छटा । ४ नागदमनी नागद्वीपा । ५ कडलीबूझ, फरनाका पेड़ । ६ उपुकास्ता । (रात्रि०) ७ घातकी, धौ । (वैद्यकरवा०)

रक्तपुष्पिका (सं० स्त्री०) काल रंगकी वृत्तिका, काल पोह । वैद्यकमें यह स्निग्ध और मूत्रवर्धक मानो गई है । बच्चों के कई रोगोंमें और सूक्ष्ममें इसका साग गुणकारी माना गया है । शास्त्रमें इसका साग कानिका निषेध है । वृत्तिका देखा ।

रक्तपुष्प (सं० स्त्री०) १ पुष्पाजुसार एव मरकका नाम । २ शूल और पीप ।

रक्तपूरक (सं० स्त्री०) रक्तं पूरयतीति पूर-ण्युप् । वृक्षासु इमयो ।

रक्तपैत (सं० स्त्री०) रक्त पित्र सम्बन्धी ।

रक्तपैतिक (सं० लि०) रक्तपित्तस्य सम्बन्धी ।

रक्तपोस्त (सं० पु०) रक्तजलं रूस, काल पोस्ता (*Papaver Rhoeas Red poppy*) ।

काश्मीर, पञ्जाब, पटना और बिहारके कई स्थानों में तथा भारतवर्षके समतल क्षेत्रादिमें यह बोझ उत्पन्न होत देखा जाता है । स्थान विशेषमें इसका बोझ विश्वविश्व नामसे परिचित है, जैने, हिन्दू—काल पोस्त, काल पोस्ता, नाला; बङ्गाल—काल पोस्त, काल पोस्तका गाछ । बम्बर—बहुव्री मुञ्जिका; मराठी—ताम्बाव परसकसा या काङ्क, गुजरात—साळा काल कसकस जु भ्याड इतिपात्य—काल कसकसका काङ्क; तमिल—शिवपु गमगसा वेदी, शिगपू पोस्तकी वेदी; तेलगू—परम गस गसला चाटे, परर पोस्त काय चाटे; कनाड़ी—केम्पु कसकसो गोडो; मलयाळम्—कोरप्यकस कसकवेदो इत्य—भिभविन् अमो; संस्कृत—रक्तपोस्त वृक्ष, मरक—नवतल कसकसुसमङ्ग; पारस्य—कोकनगर सुर्वा अङ्गुरीनी—*Cornrose* या *Red poppy* ।

अफगानिस्तान और पारस्यराज्यमें इस भेषीका एक और प्रकारका पेड़ (*P. dubian*) बहुतायतसे उत्पन्न होते देखा जाता है । पश्चिम हिमालय प्रदेश, पद्मदाह, कुमाठन, इत्यादि केलुखिस्तान और यूरोपमें भी इस पेड़का अभाव नहीं है । पर्वतकी विभिन्नता केनतेसे दोनों भेषीकी वृधकता समझमें जानो जाती है । उद्यान और गेहूँक क्षेत्रमें यह पीघा काफी तीरसे उपजता है । बीपधोको काल रंग करनेके लिये इससे पत्ते काममें लाये जाते हैं । बीजकोपका दूध नावक गुणविशिष्ट (*Narcotic*) और कुछ बाधसाधक है ।

रासायनिक परीक्षा द्वारा स्थिर हुआ है कि बीजकोप का दूधके जैसा निर्घंस सामान्यरूपमें ही अफीमका काम करता है, क्योंकि उसमें *Morphine* नामक पदार्थ रहता

है। Dr. O Hesse ने इसमें Rhoeadine नामक उपक्षार (Alkaloids) देखा है। यह आश्वादविहीन और पलाकृति श्वेत दानायुक्त होता है तथा २३२' २' उष्णपत्रं जल जाता है। जल, प्लकोहल, इथर, क्लोरोफार्म, वेनजोल, एमोनिया, कार्बोनेट थाय सोडा, ट्रायक, चूनाका जल अथवा अम्लजलमें (dilute acids) बड़ी आसानीसे गल जाता है। इसका वैज्ञानिक नाम है—

C H N O हाइड्रोक्लोरिक एसिड अथवा सलफ्युरिक
21 21 6

एसिडमें मिलानेसे भी इसका रंग नहीं बदलता है।

रक्तप्रतिश्लेष (सं० पु०) प्रतिश्लेष या लुकासका एक भेद, विगडा हुआ लुकास। इसमें नाकसे ग्वून जाता है, आंखें लाल हो जाती हैं, छांतोमें पीडा होती है और मुंह तथा साससे बहुत दुगन्ध आती है।

प्रतिश्लेष शब्द देखो।

रक्तप्रदर (सं० पु०) प्रदररोगका वह भेद जिसमें स्त्रियोंकी योनिसे रक्त बहता है। प्रदर देखो।

रक्तप्रमेह (सं० पु०) पुरुषोंका एक रोग। जिसमें दुर्गन्धियुक्त गरम, खारा और ग्वूनके रंगका पेजाव होता है।

रक्तप्रवृत्ति (सं० स्त्री०) पित्तज रोग, वह रोग जो पित्तके प्रकोपसे उत्पन्न हो।

रक्तप्रसव (सं० पु०) रक्त. रक्तवर्णः प्रसवः पुण्यस्य ।
१ रक्त करवीर, लाल कनेर । २ रक्तमृत्त, लाल आटी ।
३ मुचकुन्दवृक्ष ।

रक्तफल (सं० पु०) रक्तं लोहितवर्णं फलमस्य । १ वटवृक्ष, बडका पेड़ । २ गालमलिवृक्ष, सेमलका पेड़ ।

रक्तफला (सं० स्त्री०) १ कुन्दरू, तुषी । २ स्वर्णवल्ली ।

रक्तफूल (हिं० पु०) १ जवापुष्प, अडहुलका फूल । २ पलाशका वृक्ष ।

रक्तफेनज (सं० पु०) रक्तफेनाज्जायते इति जन-ड ।
फुस्फुस, फेफड़ा ।

रक्तविन्दु (सं० पु०) रक्तानां विन्दुः । १ रक्तकी कणा ।
२ रक्त अपामार्ग । ३ हीरा आदि मणिके भीतरकी लाल दाग ।

रक्तबीज (सं० पु०) रक्तं रक्तवर्णं बीजमस्य । १ डाडिम, अनाग । २ अरिष्टक फल । रक्तं प्रोषितं बीज कारण-
मस्य ।

३ शुम्भ और निशुम्भका सेनापति एक असुर । इस असुरके शरीरमें रक्तकी जितनी बूँदें गिरती थी उतने ही असुर पैदा होने थे । भगवतो चण्डिकाने इस असुरसे युद्ध किया और इसका सब लहू पी कर प्राण हर लिया था । देवीभागवतमें लिखा है, कि महिषासुरके पिता दानव रम्भने दूसरे जन्ममें रक्तबीजरूपमें जन्मग्रहण किया था ।

रक्तबीजका (सं० स्त्री०) रक्तो रक्तवर्णो बीजोऽस्याः
कन्-टाप् । तर्ही नामका एक कटीला पेड़ ।

रक्तबीजा (सं० पु०) सिन्दुरपुपी, सिन्दूरया ।

रक्तभव (सं० स्त्री०) मांस, गोष्ठ ।

रक्तभस्म (सं० स्त्री०) रससिन्दुरादिकरण ।

रक्तभाव (सं० त्रि०) प्रणयासक्त ।

रक्तमञ्जर (सं० पु०) रक्ता रक्तवर्णा मञ्जरी-सा
विद्यतेऽस्येति (अशो आदिभ्योऽच् । पा १।२।१२७)
इत्यच् । १ निचुल वृक्ष, धैतकी लता । २ निम्ब वृक्ष,
नीमका पेड़ ।

रक्तमञ्जरी (सं० स्त्री०) रक्तकरवीर, लाल कनेर ।

रक्तमण्डल (सं० पु०) १ मण्डलिसर्पविशेष, एक प्रकार-
का सांप । (सुश्रुत कल्पस्या० ४ अ०) २ रक्त पद्म, लाल
कमल । ३ विपाक्त पशुविशेष, एक प्रकारका जहरीला
पशु । (त्रि०) ४ रक्तवर्ण मण्डलविशिष्ट । कहते हैं,
कि चन्द्रमाके ऐसा लाल मण्डल है । ५ अनुगतप्रजा या
भृत्यसमन्वित ।

रक्तमण्डलता (सं० स्त्री०) रक्तदुष्टिके लिये शरीरमें
मण्डलाकार लाल चिह्न ।

रक्तमण्डलिका (सं० स्त्री०) रक्तलज्जालुका, लाल
लज्जावती लता ।

रक्तमत्त (सं० त्रि०) रक्तपान द्वारा परितृप्त, वह जो रक्त
पी कर तृप्त हो । जैसे जोंक आदि ।

रक्तमत्स्य (सं० पु०) रक्तो रक्तवर्णो मत्स्यः । रक्त-
वर्णमत्स्यविशेष, एक प्रकारकी लाल रंगकी मछली । यह
बहुत बड़ी नहीं होती है। वैद्यकमें इसका मांस शीतल,
रुचिकारक, पुष्टिकारक, अग्निदीपक और त्रिदोषनाशक
माना गया है ।

रक्तमरिच (सं० स्त्री०) मरिचभेद, लाल मिर्च ।

रक्तमन्तक (सं० पु०) लाल रंगके मिट्टाला मान्य पत्ती ।
रक्तमातृका (सं० स्त्री०) १ वैद्यकके अनुसार यह रक्त
नामक धातु जिसकी उत्पत्ति परमं पंच बुध मोक्षनमे
होती है और जिससे रक्त बनता है । २ वायव्य-रोगमेद ।
(कुम्भिकात्मन् ० य०)

रक्तमाद्री (सं० स्त्री०) स्त्रीरोगविशेष बाधक ।
रक्तमिमातक (सं० पु०) रक्तोग्रान पुष्य पक्ष ।
रक्तमुक्त (सं० पु०) रक्तं मुक्तं यस्य । १ राहितमल्प,
रोग मछली । २ वैद्यक धाम्य साठो घान । (सि०)
३ रक्तमुक्तविशिष्ट लाल मूत्रवासा ।

रक्तमूत्रा (सं० स्त्री०) रक्तप्रसायरोग एक तरङ्गना रोग
जिसमें पेशाबके साथ लहू निकलता है ।
रक्तमूर्च्छ (सं० पु०) मारस पत्ती ।
रक्तमूत्रक (सं० पु०) रक्तं रक्तयप मूत्रं यन्म कन ।
क्षेत्रमर्ष नामको मरसीका पेड़ ।

रक्तमूमा (सं० स्त्री०) रक्तं मूममस्था टापू । लज्जाल,
सखार्वती ।
रक्तमेह (सं० पु०) मेहन मेहः, रक्तम्य मेहः । प्रमहरोग
विशेष, पुरुषोंका एक रोग जिसमें शुगण्डियुक्त गरम
पारा और मूत्रके रंगना पेशाब होता है ।

अमह शब्द देना ।

रक्तमोक्षण (सं० स्त्री०) रक्तस्य मोक्षणं । शोणितस्त्राय ।
वैद्यकशास्त्रमें लिखा है, कि शरीरका रक्त खराब हो जाने
पर उसे बाहर निकाल देना होता है, इसीको रक्तमोक्षण
कहते हैं । शिराविरूपन अन्वाधुप्रयोग, स्फुरकशुद्ध और
शुद्ध रक्त खर उपाय द्वारा रक्तमोक्षण किया जाता है ।
(हरीत शरीरस्था ० ५ य०)

भायप्रकाशों मिला है, कि रोगके प्रथमधातुमार
विषयना करके रोगीको शरीरसे एक प्रस्य, भाय प्रस्य या
शोणाय प्रस्य रक्तमोक्षण करे । "गरुडालमें स्वामाधिक
शरीरमें भा रक्तमोक्षण किया जा सकता है, क्योंकि उम
ममय रक्तमोक्षण करनेमें त्यक्षीय या प्रस्यजोषादि
उत्पन्न नहीं होता । बर्षा शीत, प्राण्य और गरुड कायमें
अब स्वाभाव साफ रहता है तथा शीतकालमें शोषहरको
रक्तमोक्षण करना उचित है ।

शोय, बाह, अक्षुपाक, अक्षुशी रक्तयपना रक्तप्र्याय,
Vol. XII 8

वातरक्त, कुष्ठ, अत्यन्त पीड़ादायक धातुका प्रकोप,
पाण्डुरोग, स्त्रीवद, विषकुष्ठ रक्त, प्रस्य-अर्पुद, अपत्नी,
क्षुद्ररोग, अमिमस्य, विदारी, स्वस्थरोग शरीरको अथस
स्वता और गुच्छक रक्तामिष्यन्ते, तन्द्रा पृथिनाया,
मुलदाह, यहन, पोहा विमर्ष, विद्युत्ति पाश्चका, कर्णपाक,
नासायाक मुखपाक, पाह गिरीरोग, उपर्दश और रक्त
पित्त इन सब रोगोंमें रक्तमोक्षण प्रयत्न है । अत्यप्य
रक्तमें शूद्र, अनीका, अलाहू या शिरावेष द्वारा रक्त
मोक्षण करना चाहिये ।

कुष्ठ, अत्यन्त ध्यापी ह्रीक, अयगीम, गर्मिणी,
मयाःप्रमूना मारी, पाण्डुरोगी, धमनविरुधनादि पञ्चकर्म
द्वारा शोणित स्नेहपात, अशरोगप्रस्य, मार्वाङ्गिक
शोथयुक्त तथा उदर, श्वास, काय, बमि, अनीमार और
कुष्ठरोगाक्षत व्यक्तियोंका तथा अत्यन्त म्दिस्य १६
वर्षके कम उमरवाले पात्रक और ७० वर्षक वृद्धका पर्य
अभुषत, मूर्च्छांरोगप्रस्य निद्रिय, मोत, प्रमल धामि
तथा मन्मूत्रका वेगामिभूत व्यक्तियोंका रक्तमोक्षण
नहीं करना चाहिये । अत्यन्त शीत या अत्यन्त उष्ण
कालमें अथवा अत्यन्त खिन्न और मरुतपित्त व्यक्तिका
भी रक्तमोक्षण करना उचित नहीं । यदि रक्तमोक्षण
क्रिया द्वारा रक्तपरिवर्तित न हो तो कुष्ठ, विषकुष्ठ और
सैन्धवको मिला कर क्षत स्वाममें रगानेमे रक्त निकलता
है । सुविश विचित्रमरुको चाहिये कि वे पचागूपात
करा कर उसका रक्तमोक्षण करे ।

विषकुष्ठ शरीरमें यदि रक्तमोक्षण करना हो, तो
पहले शिरावेष करना होगा । धातु पित्त और कफ द्वारा
रक्त दूषित होने पर पचाजम गामुद्ग अनीका और अलाहू
द्वारा रक्तमोक्षण करना होता है । दिशेय या तिरीय
कर्मक रक्त दूषित होने पर शिरावेष या पत्र द्वारा रक्त
मोक्षण करे ।

शुद्ध द्वारा का उगता स्थानका अनीका द्वारा एक
दायक, अलाहू द्वारा बाह उगती और शिरावेष
द्वारा रक्तमोक्षण करनेसे मार "शरीरका रक्त शोणित
होता है ।

अभिभिन्न व्यक्तिका या अन्धकालमें शिरावेष करनेमे
यदि अत्यन्त रक्त प्रस्यित हो, तो उमका प्रतिविधान

बहुलच्छद, सुगन्ध, केशरी, सिंह, मृगारि । इसका गुण—महावीर्य, मधुर, रसायन, जोफ, आधमान, वायु और पित्तश्लेष्मनाशक । (राजनि०)

रक्तशिम्वी (सं० स्त्री०) शिम्वीभेद, लाल मेम ।

रक्तशीर्षक (सं० पु०) रक्तं रक्तवर्णं शीर्षं अग्रमस्य कन । १ गधाविरोजा । २ सारस ।

रक्तशुक्ता (सं० स्त्री०) शुक्का रक्ताक्त भाव ।

रक्तशुद्ध (सं० पु०) हिमालयकी एक चोटोका नाम ।

रक्तशुद्धिक (सं० स्त्री०) विप, जहर ।

रक्तशेखर (सं० पु०) पुत्राग ।

रक्तश्याम (सं० स्त्री०) कृष्णाम, गाढा लाल ।

रक्तश्वेत (सं० पु०) १ सुश्रुतके अनुसार एक प्रकारका बहुत जहरीला विच्छू । २ रक्त और श्वेतवर्ण ।

रक्तशीघ्रता (सं० स्त्री०) रक्तमय धुत्कारश्रेयणता, श्वेत-के साथ थूकना ।

रक्तशीघ्रि (सं० पु०) एक प्रकारका बहुत ही वातक सन्निपात जिसमें मुँहसे लहू बहता है, सांस और पेट फूलता है, जीभमें चमत्ते पड़ जाते हैं और उनमेंसे लहू निकलता है । यह रोग असाध्य मोना जाता है ।

सन्निपात शब्द देखो ।

रक्तशीघ्री (सं० स्त्री०) रक्तपित्त और यक्ष्मारांगके कारण रक्तका गिरना ।

रक्तसङ्कोच (सं० स्त्री०) कुसुमाका फूल ।

रक्तसङ्कोचक (सं० स्त्री०) रक्तपद्म, लाल कमल ।

रक्तसङ्घक (सं० स्त्री०) रक्तमिति संज्ञाऽस्य । कुंकुम, केसर ।

रक्तसन्दंशिका (सं० स्त्री०) रक्ताय रक्तपानाय सम्यक् दशतीति दन्शण ण्वुल् टापि-अत इत्थं । जलीका, जोंक ।

रक्तसम्बरण (सं० स्त्री०) कृष्णाञ्जन, सुरमा ।

रक्तसन्ध्यक (सं० स्त्री०) रक्त सन्ध्येवेति रक्तान् सन्धीन् अकृति गच्छति प्राप्नोतीति क् । रक्त्न कृष्णार, लाल कमल ।

रक्तसरोरुह (सं० स्त्री०) रक्तं सरोरुह । रक्तपद्म, लाल कमल ।

रक्तसर्पप (सं० पु०) रक्तवर्णं, सर्पपः । रक्तवर्णं सर्पप, लाल सरसों । (Brassica nigra)

सरसों प्रधानतः श्वेती और राईके भेदसे दो प्रकार की हैं । फिर राई-सरसोंके भी अनेक भेद हैं । भिन्न भिन्न स्थानमें यह भिन्न भिन्न नामसे परिचित है । हिन्दी राई-सरसों, सरसों-लाई, गोहा सरसों, बडो राई, बडो लाई, वादगाही राई, शाहजादा राई, खासर्राई ; बङ्गला—राई सरसों , काश्मीर—असुर गुजरात , कच्छ—राई , बम्बई—राई, नसें, राजिका ; मराठी—मोहरो, रायन , सरसत—राजिका ; सिन्धुपुरमें—अब्व । इससे कुछ बडो राई (B nigra)-के भी स्वतन्त्र नाम हैं । हिन्दी—राई, काली राई, तोरा, तारामीरा, वाणारमी राई, जगराई, अमल राई, बोडा राई, मकडा राई इत्यादि , बङ्गला—राईसरिमा , गुजरात—राई, काली राई - बम्बई—राई ; तामिल—कदघो ; तेलगू—अबलो अबली , कनाडी—विले सशिवे, कडो-सशिवे ; संस्कृत—सर्पप, पारम्य—सर्पप , अरघ—खीर्दल या खर्दाल , मिन्नापुर—गनारा , चीन—किदित्साई , अंगरेजी—Black वा True Mustard , फरासी—Montarde Noire , जर्मनी—Mustert Sculsamen , इटली—Senapa , महाराष्ट्र—कालमहुरी, सारना , कलिङ्ग—मासो वाई ।

मारे भारतवर्ष, पश्चिम सिन्धु और मध्य अफ्रिका तथा पूर्वमें चीनसाम्राज्यके प्रायः सभी स्थानोंमें यह पौधा उत्पन्न होता है । रूसियाके दक्षिण और कास्पिय हदतीरवर्ती खारी जमीनमें यह बहुतायतसे उगता है । यूरोपमें सभी जगह वह जंगली तौर पर उपजता है । उत्तरमें यह पौधा विलकुल नहीं देखा जाता । शिवफ्रष्ट, दिषकोराइडिस और प्लिनो आदिने सरसों बीजका उल्लेख किया है । १३वीं सदीमें यूरोपमें पाद्यव्ययरूपमें इसकी खेती होती थी । यहां १६६० ई०में इसके बीज तैलमें क्या गुण हैं, सो लोगोंको मालूम हो गया था । बम्बई सरसोंकी अपेक्षा बङ्गालमें राईसरसोंकी खेती ही अधिक होती है । आसिन कानिकके महीने सूखी जमीन के ऊपर बीज बोया जाता तथा माघ फागुनमें काटा जाता है । कभी कभी मटर, मसूर, गेहू, जी आदिके साथ ही इसे बोते हैं । कटक जिलेका खारी जमीनमें इसकी खेती होती है । चैत और वैशाखमें पकने पर इसे काट

कर बीज भाङ्ग लेते हैं। पड़े बीजसे जो तेल तैयार होता है उससे तरकारी भादि तैयार जाती है। कच्चे पत्तेको छेग सागको गरुड़ रोष कर खाते हैं। कच्चा डेट्ट पोमाय भादिके बन्धेमें मधुगीको तिन्याया जाता है।

प्रत्येक बीजकोपमें १५से २० छोटे छोटे काने दाने रहते हैं। इन दानेको पीस कर या पों हो ठेक या धोमें डाल तरकारी भादि बघारते हैं। सरसोंके तेलमें साग और मधुकी भादि भून कर बानेसे त्पादिष्ट लगती है। भांस मङ्गणकालमें राह बहुत सुखप्रद है।

शरीरके मोठर रक्त संहत होनेसे अथवा भासैपिक (Spasmodic) स्नायुक्षीय (Neuritic) और वातज (Rheumatic) पीडा या वैदनामें इनका प्रलेप देनेसे विशेष लाभ पहुँचता है। मस्तिष्क सम्बन्धीय (Cerebro spinal) पीडामें शरीरका विशेष अयसाद् (depressing influence) नहीं होनेसे इनका सामान्य समन कारण भीयप्रथममें प्रयोग किया जा सकता है। मोहि जनकी छान अथवा छहसुनक साध एकत्र पास कर बमडे पर लगानेसे सरसोंकी कार्यकारिता शक्ति बढ़ती है।

सामान्य परिमाणमें राह अथवा राहका घूर बानेसे अग्निकी शक्ति बढ़ती है। अशौर्ण रोगमें पुष्ट मसखे रुक जाने पर हब वेद कराव हो जाता है, तब बिदेबक रूपमें कमी कमी गरुके खर्ण अथवा अजपड सरसोंका सेवन कराया जाता है।

इस बीजसे निकड़े पीछे २३ भाग शुद्ध तेल निकलता है। उसमें प्लिसिराइडस टेरिक मोलिइक, इममिक और प्रासिक पमिड मिधित है। प्रासिक और भासिक एक प्रायः एक ही साध रहता है। यह गरुहोम है, सूखतो नहीं तथा ० फा-की गरुमेने जम जाती है। इसमें तेलको सिद्ध करनेसे परिष्कृत व्यङ्गहारोपयोगी तेल बनता है। निरुध निबराय तर्पण शब्दमें रेले।

परिष्कृत तेल वैदनाक स्थानमें लगानेसे वैदनाका ह्रास होता है तथा इससे बन्धी कमी प्लिष्टरली उत्पन्न गाल वाह जाता रहता है। धर्मरोगमागक होनेके कारण मोग स्थानके पहले इसे शरीरमें लगाते हैं। आयुर्वेदशास्त्रमें

लिखा है, कि धी आनेकी अपेक्षा तेल लगानेसे शरीरमें भाड गुना बढ होता है। कपूके साथ सरसों तेल लगानेसे धौरुकी घात अगुगुसादि वैदनाका उपशम होता है। बाळकोंको छातीमें शर्दी बैठ जानेसे कपूके साथ तेलको मासिग करनी चाहिये, इससे बिरेय लाभ पहुँचना है। ऊर्ध्वभाग श्लेष्मामें लक्षणके साथ उत्तम सरसोंका तेल तलवेमें कण्ठमें, छातीमें, दोनों आँपमें और नाकको रीङ्ग पर लगानेसे एक ही रातके मोठर ऊर्ध्वभाग श्लेष्मा या शर्दी जाती रहती है। श्लेष्माधिक्य के कारण वायुकोंकी पायुनकीके प्रशहमें उत्तम तेल लगानेसे बहुत फायदा पहुँचता है। इनफ्लुयेन्सा ज्वरमें गरम मलसे पैर पुला कर लक्ष्यमें गरम तेल लगानेसे फल तुरत दिखार देता है। नाकमें तेल डालनेसे शर्दी घूर होती है। सरसोंका प्लिष्टर है कर यदि बहाका बमडा लाल हो जाय, तो उस फौरन फेंक देना चाहिये, नहा तो फु सिया निकल कर फोड़े हो सकते हैं। मानमें तेल लगानेसे श्लेष्माका नाश होता तथा अाँख का श्पोति बढ़ती है। आनेके बाद प्रति दिन कुछ सरसों आनेम भूख बढ़ती है। यह पिच्छिनासारक और मूत्रकारक है।

वैपक मतमें इसका गुण—कटु, तिक्त तण्ण, वातघ्न, घ्नीडा और शुष्कमागक, दाह और पिच्छवर्क, कफ, गुन्म इमि और मणनाशक है। (एकनि०)

रक्तमहा (स० स्त्री०) रक्त सहते इति सह-अधु-अप्। रक्ताग्नान पुष्परुश।

रक्तमार (स० स्त्री०) रक्तपर्णा सायेऽस्य। १ रक्त चल्न, लास चल्न। २ पतङ्ग। ३ अमुधेतस, अमल-येनस। ४ रक्तपरिवर ह्यन और। ५ रक्तबीजासन एत। ६ रक्तशिशया। ७ शाराहीकम्। (त्रि०) रक्त सादी यस्वेति। ८ शोणितसारयुक्त।

रक्तम् (स० स्त्री०) रक्त सूते सू-क्विप्। शरात्सिध रसघामु।

रक्तसौगन्धिक (स० स्त्री०) रक्तवर्णं सौगन्धिकं। रक्तकहार, खाल कमल।

रक्तस्तम्भन (स० पु०) बहते ह्य रक्तको रोकनीकी क्रिया।

रक्तस्यञ्जर (सं० पु०) रक्तगत ज्वरविशेष । इस रोगमें रक्तनिष्ठीवन, दाह, मोह, छर्दन तथा विभ्रम, प्रलाप, पिडका और तृणा ये सब लक्षण होते हैं ।

रक्तस्राव (सं० पु०) रक्त स्रावतीति स्तु णिच् अच् । १ वेतसाम् । रक्तस्य स्रावः । २ घोडोंका एक रोग जिसमें उनको आंखोंसे रक्त या पानी बहता है । ३ रक्त पतन, शरीरसे रक्त बहना या निकलना ।

नाना व्याधि और आघातादि कारणोंसे मनुष्यके शरीरकी धमनी, शिरा अथवा कैजिकासे भी रक्त निकलता है । इस रक्तस्रावको पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञानमें Haemorrhage कहते हैं । शारीरिकविधान वा यत् विशेषमें रक्तस्राव होनेसे उस स्थानके नामानुसार ही चिकित्सकगण उस रक्तस्रावका नाम अलग अलग बतलाते हैं । जैसे—मस्तिष्क अथवा फुसफुसमें रक्तस्राव होनेसे Cerebral apoplexy, और Pulmonary apoplexy उदर वा वस्तिकोटके मध्य होनेसे Extravasation, चमड़ेके नीचे होनेसे कालशिरा (Ecchymosis), सूक्ष्म रक्तचिह्न (Petechia), प्रिगमा वा मिमिसिस ।

किसी नलाकृति स्थानमें रक्तस्राव हो कर विधान छिन्न नहीं होने पर उसे इनफार्क्ट (infarct), नाकमें रक्तस्राव होने पर एपिष्ठाक्सिस (Epistaxis), फुसफुससे होने पर Haemoptysis, पाकाशयमें होने पर Haematemesis, अन्तसे होने पर कृष्णरेचन (melacna), जरायुमें अधिक रज निकलने पर Menorrhagia और मूत्रयन्त्रसे होने पर उसे Haematuria कहते हैं । कारण भेदसे भी उनके भिन्न भिन्न नाम दिये जाते हैं । आघातसे रक्तस्राव होने पर उसे Traumatic तथा अकस्मात् होने पर Spontaneous, धमनी, शिरा वा कैजिकासे रक्तस्राव होने पर उसे Arterial, Venous और Capillary Haemorrhage कहते हैं ।

एक स्थानका नियमित रक्तस्राव अन्य स्थान हो कर निकलनेसे उम स्रावको Vicarious कहते हैं । स्त्रियोंके धार्चव रक्त पाकाशय या फुसफुससे निकलने पर वह 'भाइकेरियस मेनॉड्रुयेगन' कहलाता है । किसी एक सांघातिक पीडाके मध्य रक्तस्राव होनेका नाम Critical Haemorrhage तथा समय समय पर रक्त-

स्राव होनेका नाम म्यामयिक वा Periodical Haemorrhage है ।

रक्तस्राव होनेका कारण--अग्र या आघात द्वारा किसी भी रक्तनालीके कटने तथा मुत्ताश्रारमें मृतपत्थर अथवा आतमें कठिन मल रहनेसे भी घिसनेसे रक्तस्राव हो सकता है । श्वेत, विगलन वा फर्कटरोग द्वारा रक्तनाली विडोर्ण होनेसे तथा रक्ताधिक्यके कारण कभी कभी कैजिकासे रक्त निकलने देखा जाता है । अतिशय रक्ताधिक्यके कारण यकृतकी सिरोमिस पीडामें पाकाशयकी कैजिकासे रक्तस्राव होता है । भाइकेरियस और क्रिटिकल रक्तस्राव ये दोनों प्रकारके हुआ करते हैं । धमनीके विधानमें बसा या कठूबत् अपकृष्टता, हृत् पिण्ड प्राचीरमें एनिउरिजम, शिराकी बकता वा स्फीनता (Varicosity) तथा कैजिककी अपकृष्टता रहनेसे प्रायः रक्तस्राव होता है । मस्तिष्कको फोमलतासे रक्तनालियोंके अच्छी तरह रक्षित नहीं होनेसे रक्तस्राव हुआ करता है । श्वेतस्थानमें नवजात रक्तनालीमें सर्वदा रक्त निकलते देखा जाता है । रक्तनालीकी ग्रिथिलताके कारण पलिपस (Polypus) नामक अर्बुदसे रक्तस्राव होता है । रक्तकी तरलताके कारण एनिमिया, विकारयुक्त ज्वर, धृप्ररोग अथवा जीताद पीडाओंमें रक्तस्राव होता है । कभी कभी अवस्थानुसार भी रक्तपात होते देखा जाता है, जैसे—वीधनावस्थामें नासिकासे, मध्यमावस्थामें फुसफुससे तथा अत्यन्त वृद्धावस्थामें रक्तनालीकी अपकृष्टताके कारण मस्तिष्कसे रक्त निकलता है । अवस्थानुसार अत्यन्त सामान्य कारणसे भी रक्तपात होते देखा जाता है । इस रोगको Haemophilia वा haemorrhagic diathesis कहते हैं ।

स्रावित रक्तके परिमाणानुसार शरीरमें अनेक परिवर्तन हुआ करता है । शरीरमें जहा स्रावके लिये रक्त संहत (Coagulated) होना है उसका वर्ण काला अथवा तांबड़े रंगका दिखाई देता है । कुछ दिन बाद वह रक्तपोटलवर्ण और पीछे पीतवर्ण धारण करता है । अन्तमें वही शुभ्रवर्णमें पलट जाता है । निःसृत रक्त शोषित होनेके बाद चमड़े पर काला दाग पड़ता

है। कमी कमी उनसे चतुष्पार्षदस्य विधानमें प्रथम देती है अथवा उल्लेखमाके कारण निकटवर्ती धारों और पैसी (Cyst) उत्पन्न होती है।

रक्तसायके पहले भांडीकी गति पूर्ण और द्रुत रहती है। किसी स्थानमें रक्तस्राव होनेसे वह स्थान उष्ण और मायूक मालूम होता है। उस समय हाथ पैर ठंडे हो जाते हैं। हठे प्र और बाधुनासीमें रक्तभाव होनेसे हृत्पु मृत्यु हो सकती है। यन्त्रविशेषमें रक्तस्राव होनेम उनको जिसाधमें स्थितिकम देना जाता है। किसी विधानके छिद्र हो कर रक्तसाय होनेसे घमन तथा कुम कुममें होनेसे ग्रांसी उपस्थित होती है। त्यक् धा स्त्रैमिक चिह्नीके नीचे होनेसे रक्तस्राव स्पष्ट दिखाई देता है। साधारण अक्षणके मध्य मुष्मपञ्चम जोना नाडो पुष्प और हाथ पाँव गिघिक मालूम होत हैं। अतिरिक्त सूय होनेसे हाथ पाँव कंघने लगने, शीब कूळ और प्रकारकी हो जाने, काममें शाला शब्द सुनाई देने, अस्थिरता मालूम होती और शीघ्र बीघमें मूर्च्छा भी आ जाती है। येनी अवस्थामें कमी कमी रोगोका मृत्यु भी देना गर है।

त्यक्के नीचे रक्तसाय होनेसे वह सहजमें मालूम हो जाता है। मस्तिकक धा फुसफुसके मध्य होनेम विशेष अक्षय द्वारा निर्णय करना भावश्यक है। कोटरक मध्य रक्तसाय होनेसे उसके ऊपर भाघात देने पर बह बह शब्द सुनाई देता है।

कुमफुससे रक्त निकलने पर उसका यर्ष उश्चयस माल दिवार् है। पाकाशय अथवा भांतस रक्त साय होने पर अमूरससंस्थित होनेके कारण वह कासा हो जाता है। नाक, मुह गुहाडार और मूत्रद्वारमें रक्त प्रारिभत होने पर श्लेष्मा वा मूत्र-मिधित रहता है। बडा सायधानामे रोगका निर्णय करके चिकित्सक उसे दूर करनेको चेष्टा करे। त्यक्से रक्तस्राव होने पर उसमें डर नहीं पर मस्तिकक धा कुमफुससे यदि रक्तसाय हो, तो उसे अंतरनाक जानना चाहिये। अधिक परिमाणमें अथवा किसी विशेष यन्त्र द्वारा रक्तसाय होनेसे भी डर है। श्लेष्मा रोगाका रोगोका रक्तसाय दूर करना कठिन है।

पैसी अवस्थामें रोगोको स्थिर भाव रख कर चिकित्सा

करना उचित है। जिसम गिराके रक्तसञ्चालककी पूरि हो इस ओर चिकित्सकका ध्यान रहना एवाम्त कतथ्य है। इत्यपिचकी क्रिया गिघिल करनेके लिये यकोनास्ट, डिगोटेनोस भादि दिया जा सकता है। कमी कमी रक्तस्रोक्षण भी कर सकते हैं। सक्कोषक शीघ्रके मध्य पमिटेड भाप छेड, गीलिक पमिड, टैलिक पासेड मलपयुरिक पसिड डिस, भापल भाप टायें बटारन भागट, टि मेटिको, टि एिछ, टि हामोमिक्स, हज्जिनोम इत्यादि व्यवहार्य हैं। उन शीघ्रमेंसे किसी किसाका कसीमके साथ व्यवहार करनेसे भी काम पड़ सकता है। जिस अङ्गसे रक्तसाय होता है, उसे उच्च भावमें रचे तथा शीतल अल धा बरफका प्रयोग करे। अस्थान्य उपायके मध्य स्केन्डीरैडिनिक पसिड और भागटिन इन्जेक्टु क्रिया जा सकती है। पीडित स्थान स रक्त हटानेके लिये मण्डई पुनपर, शुष्क धा भाद्र कोपि, शौक अथवा जोभाइस बूटका व्यवहार करना उचित है। गुरुतर होनेसे डिमुलेय अशोध है अथवा रक्त प्रवेश (Transfusion of blood) करे। फुसफुस अथवा पाकाशयसे रक्तसाय होने पर रोगोको बरफ सूसनेके लिये है। कुमफुससे रक्त निकलने समय यदि कांसी होती हो, तो उसकी उच्छेदना बुर करनेके लिये क्षीप निवारक शीघ्रकका सेवन कराये। पाकाशयसे होने तथा घमनका उद्रेक रहने पर घमन निवारक शीघ्रक है सकते हैं।

कमी कमी नाक अथवा अर्गमें रक्तसाय होने पर बहुत उपकार होता है। अधिक निश्चयन पर उसे रोकने का चेष्टा करनी चाहिये। निश्चय रक्तघनके लिये आम्पन्तरिक पोदान भाहयो डारड सेव्य है। पीडित स्थानमें टि भाहयोडारनका श्लेप दिया जा सकता है। सामत रक्तसे प्रवाह होने पर प्रवाह-निवारक शीघ्रक काममें लाये। नुर्गमता अमित रक्तवातमें वसकारक भाहार और टिटिल देना चाहिये।

५।६ कोर्प मनुष्य रतना कमजोर रहता है, कि उसे सामान्य कारणसे ही अधिक रक्तसाय होता है। शरीर की पैसी अवस्थाको हिमोफिलिया वा हेमोरेडिक प्राये पैसिस कहते हैं।

Epistaxis वा नाकसे रक्तस्राव रोग किसी किसीके वज्रपगमगने चला आता है। इस कारण इसे कौलिक भी कहते हैं। डा० हाथिनसनका कहना है, कि पितामाताके रोडिया चात रूढ़नेसे उमके मन्तान को सामान्य कारणसे ही रक्तपात होता है। रक्तमें फाइब्रिन वा लोहितवर्ण रक्तकणिका कम रहनेसे उक्त प्रकारका रक्तस्रुव होने देखा जाता है। परोक्षा द्वारा शोणितके मध्य कोई परिचरान विगाई नहीं देता।

ऐसे रोगोंके शरीरमें किसी प्रकारका परिचरान लक्षित नहीं होता, किन्तु वचनमें नाक हो कर अथवा सामान्य चोट उगने पर अद्भुतप्रदरूपसे रक्तपात होता है। कभी कभी जोरके काटने अथवा दात उखाड़नेसे रक्त इतना निकलता है, कि उमसे प्राणनाश भी हो सकता है। यदि प्राण नाश न हुआ, तो बहुत दिन तक एनिमिया-रोगसे आक्रान्त रहता है। कभी कभी उसकी बड़ी बड़ी गांठोंमें जलन देती है। कभी कभी सामान्य चोट लगनेसे गांठमेंसे रक्त निकलता है तथा उमकी उत्तेजनासे जलन देती और ज्वरके नमी लक्षण दिखाई देने हैं।

दूध, मांस आदि पुष्टिकर आहार तथा औषधके मध्य काइलोभर आयल और टिचर टिल विशेष उपकारी हैं। अतिप्रय रक्तस्राव होनेसे Transfusion of blood कर्तव्य है। किसी किसी गांठमें यदि जलन देती हो, तो उसे स्थिर भावमें रखे तथा वैण्डेज बांध डे। रक्तप्रदर और रक्तस्रुवका विशेष चिक्कर प्रदर और मूलविज्ञान ग्रन्थमें लिखा जा चुका है।

रक्तस्राव, रक्तपिन आदि शब्द देखो।

रक्तस्रुति (म० स्त्री०) रक्तस्य स्रुतिः। रक्तस्राव, स्रुत जाना या गिरना।

रक्तहंसा (स० स्त्री०) रक्ता वर्णाभूताः हंसा अत्र। रागिणीविशेष, एक प्रकारकी रागिणी।

रक्तहर (स० पु०) हरतीति हरः, रक्तस्य हरः। १. मल्ल-तक, भिन्नावा। (त्रि०) २. रक्तवृत्त द्रव्यमान।

रक्ता (स० स्त्री०) रक्तं ताप्। १. गुला, सुवचो। २. लाक्षा, लास। ३. मखिष्टा, मर्जाठ। ४. उद्गकाण्डो, ऊँट कटाग। ५. जिम्बोमेड, एक प्रकारकी सेम। ६. लक्षणाकन्द।

७. वचा, वच। ८. रक्तवर्ण जतपत्री, एक प्रकारकी मकड़ी। ९. कुच्छु माध्य लृताविशेष। १०. कर्णजिरा भेद, कानके पामकी एक जिरा या नसका नाम। ११. जैनोंके अनुसार पेरारवनखंडकी एक नर्तिका नाम।

रक्ताकार (म० पु०) रक्तवर्ण आकारोऽस्य। प्रवाल, मृंगा।

रक्ताफत (म० स्त्री०) रक्तेन रक्तवर्णेनाफतं प्रक्षितं। १. रक्तचन्दन, लाल चन्दन। (त्रि०) २. शोणितमिश्रित, रक्त लगा हुआ। ३. लाल रंग हुआ।

रक्ताक्ष (म० पु०) रक्ते लोहिते अश्रिणी गम्य, (धरणां-उगनात्। पा ५।४।७६) इति अत्र। १. महिष, मँस।

२. पारावत, कवूर। ३. चकोर। ४. कूर। ५. सारस।

६. माट सवन्मरीमेंसे श्रद्धावनवे सवन्मरका नाम। (त्रि०) ७. रक्तवर्ण चक्षुर्विजिष्ट, लाल रंगकी आँखेंवाला। ज्योतिःशास्त्रमें लिखा है, कि यदि मानवके नेत्र स्वाभा-चिक रक्तवर्ण हों, तो लक्ष्मी उमेश कभी नहीं त्याग करेगी। (ज्योतिःशास्त्र)

रक्ताक्षि (स० पु०) रक्ते अश्रिणी यस्य, समासान्तविधेर-नित्यत्वान् अच् समासान्ताभावः। रक्ताक्ष।

रक्ताङ्ग (स० पु०) प्रवाल, मृंगा।

रक्ताङ्ग (म० पु०) रक्तवर्णमद्गम्य। १. मंगलप्रह। २. कम्पिल, कमीला। ३. प्रवाल, मृंगा। ४. मत्कुन, फटमल।

५. मण्डल। ६. नामविशेष। (भारत १।५।१७) ७. चिट्टू म। ८. कुंकुम, केसर। ९. रक्तचन्दन, लाल चन्दन।

रक्ताङ्गी (स० स्त्री०) रक्ताङ्ग डीप्। १. जांचन्ती २. कुटुका, कुटकी। ३. मखिष्टा, मर्जाठ। ४. नकुला।

रक्ताञ्जना (स० स्त्री०) रक्ताञ्जनिना, रक्त शाज्जतिया। (चक्रदत्त)

रक्ताढकी (स० स्त्री०) लाल पुपाढकी, लाल अरहर। गुण—रुचि और बलकर, पित्त और तापादि नाशक।

(राजनि०)

रक्ताण्ड (स० पु०) घोड़ोंके अण्डरूपमें होनेवाला एक प्रकारका रोग।

रक्तानिलार (म० पु०) रक्तं अत्यन्तं सरत्यस्मात् स्रुवञ्। रोगविशेष।

पित्तानिलारमें यदि अत्यन्त पित्तवर्द्धक द्रव्य खाया

जाय, तो यह पित्त बिभेज दूषित हो कर यह कष्टदायक रोग उत्पन्न करता है। इसमें पिशाचोमारके समी मक्षय दिवार होते हैं। इस रोगमें पित्त, रक्त वा हरे रंगका युगल मल द्रव्य निकल पड़ता है। रोगी प्यास मुच्छा, दाह और गुहादेश पकेके जैसा मादह्य करता है।

(माषमि०)

विभ्रिता—इस रोगमें फूटका छिलका और अमारके कषे फलका छिलका दोनों मिश्र कर १ पत्र १५ ८ पत्र जलमें सिद्ध कर अष्टमांज रहने उतार ले। पीछे उसमें मधु शाल कर पान करनेसे रक्तका निकलना बहुत अल्प बंद हो जाता है। फूटकादि कषय, गुडुबिन्दु फूटका क्षीर, शतापरीकण्डक चन्दनकणक और मधुमीतका मधुमेह भादि औषध संयोजते रक्तगीसार रोग दूर होता है।

(माषम) मरीचर रेलो।

रक्तगीसार (सं० पु०) रक्तानिहाररोग।

रक्तगण्ड (स० स्त्री०) किलरी।

रक्तघात (स० पु०) रक्तव्याघात। चर्म, जमडा।

रक्तचिन्मय (स० पु०) एक प्रकारका अधिमन्द्यरोग जो रक्तके विकारसे होता है।

रक्तपराश्रिता (स० स्त्री०) रक्तपुष्य अपराश्रिता, साल भपराश्रिता।

रक्तपह (स० स्त्री०) रक्तमपहस्ताति हन उ। शोथ नामक गन्धद्रव्य।

रक्तपामार्ग (स० पु०) रक्तवर्णः अपामार्गः। रक्तवण भ-रामाग पुस। महापामूर्ते रक्त नदतीर कलिकूर्ते बडा अथाडा, पैडकूर्ते के म्निमुत्तरण। म रुज पर्याय—सुद्रा पामार्ग, भाषट्टक, मुग्धमिन्ना, रक्तविन्द, कल्पपक्षिका। इसका गुण शीतल कटु, कफ, बात, मय कष्ट और पियनाशक, म प्राहक और वमनकारक माना गया है।

(रात्रि०)

रक्तभ्र (स० स्त्री०) सार्धे कम्। रक्तकमल, माय पय।

रक्ताम (स० त्रि०) रक्तमय भामा इय भामा मय्य।

रक्तको तद्व भामाविशिष्ट। (पु०) २ रक्तगोपकीट, बोरकष्टी।

रक्तामा (स० स्त्री०) साल जथा।

रक्तामिष्य (स० पु०) रक्तरोगविशेष। इस रोगमें

मान्से बहुत अधिक नाल हो जाती है और उसमें नाल रंगका पाना निकलता है और आंखोंक भागे लाल रक्तप दिक्का देती हैं। इसमें वैक्तिक अधिमन्द्यक समी मक्षय दिक्का पड़ते हैं।

विशेष विवरण लेखक शब्दमें देखो।

रक्ताम्र (स० स्त्री०) रक्त मस्र। रक्तवर्ण मस्रक, माल मस्र।

रक्ताम्ब (सं० स्त्री०) रक्त रजिनमस्ररं। १ कपापयस्र, लाल रंगका कपडा। (त्रि०) २ रक्तवर्ण वस्त्रविशिष्ट।

(पु०) ३ सन्धासा जो गदधा पत्र पहनता है।

रक्ताम्बुपु—१ रक्त नयो। २ रक्तश्रोता-द्रवित।

रक्ताम्बुद (सं० स्त्री०) रक्तपत्र, लाल कमल।

रक्तान्न (स० पु०) रक्तवर्ण मास्र। कोपान्न, कोसम नामक दूध।

रक्तान्नाटक (स० पु०) रक्तभिण्डी पुष्य।

रक्तान्नाज (स० पु०) रक्त रक्त-वर्ण मा मय्यक, म्नायते इति म्ना-क, मय्यिकरक्तवर्णत्वात् तद्यत्त्वं। एक प्रकारका पीथा जिसमें लाल रंगके फूल लगते हैं।

पर्याय—रक्तसहा, अग्रिमान्न, रक्तान्नक, रागमसय, रक्तमसय कुम्भक, रामाभिङ्गनकाम, वसुदेवमसय, सुमग छमरानन्द। वैद्यकमें इसे कटु, उष्ण वात, शोफ, उर, भाषमान, शूय काज और श्वासनाशक माना है।

रक्तारि (स० पु०) महाराष्ट्री नामक दूध।

रक्तार्य (स० पु०) रक्तकी तरह माल रंग।

रक्तार्क (स० पु०) अरुणाकपूर, लाल भाषक।

रक्तारि (स० स्त्री०) शाण्डितामय, रक्तपाडा।

रक्तार्बुद (स० पु० स्त्री०) रक्तानामुदमम। रोगविशेष, रक्तजन्म अर्बुद रोग। कर्मविपाकमें लिखा है, कि यह रोग उपपातक है। (मसमलवत्कृत कर्मि०)

इसका अक्षय—शरीरके किसी स्थानमें कुपित वसित होय मसिचो दूषित कर जाडता है जिससे मांसकी बुद्धि हा कर पुस, डूड और बिन्दुनायुक्त शोथ उत्पन्न होता है। इसी शोथको अर्बुद कहते हैं। यह वात, पित्त और रक्तके सेदके नामा प्रकारका है।

समो शोथ रक्तकी दूषित तथा शिराओंका पीडित और संदूषित कर पाक उत्पन्न करते हैं। इससे छोटा मांस

पिएड बहुत जल्द बढ़ जाता है और छोटे मांमाङ्कुरकी तरह बढ़ दिखाई देता है तथा उससे बहुत दूषित रक्त स्राव होता है। इसी कारण इसको रक्तार्बुद कहने हैं। यह रोग अमाध्य है। इसमें अत्यन्त रक्तक्षयके कारण रोगीका रंग पीला पड़ जाता है।

(बुधुन निदानस्या० ११ अ०) अर्बुद शब्द देवो ।

२ शूकरोगमेद, शिष्णदेशमें काला स्फोटक वा लाल पीडका और अत्यन्त वेदना उत्पन्न होनेसे उसे रक्तार्बुद कहते हैं।

रक्तामर्षन् (सं० क्ली०) रक्तं ऋच्छतीति ऋ मन् । नेत्र-रोगविशेष । इस रोगमें आंखकी झोड़ी पर मांस इकट्ठा हो कर लाल कमलके रंगका कोमल मंडल बन जाता है।

रक्तार्शस् (सं० क्ली०) रक्तजनितं अर्शः । अर्शरोगविशेष । यह रोग अतिपातकमे होना है।

इस रोगका प्रायश्चित्त ३० कार्यावण है। यह रोग होने पर पहले उसका यथाविधान प्रायश्चित्त कर पीछे चिकित्सा करे। रक्तजन्य अर्शरोगमें पित्तार्शके सभी लक्षण दिखाई देते हैं। इसमें वल वटवृक्षके अंकुर, गुञ्जाफल वा प्रवाल सदृश हो जाती हैं। मल कठिन होने पर उन सब वलियोंसे दूषित अथवा उष्ण रक्त अधिक परिमाणमें हठात् निकलता रहता है और रोगीका शरीर वैगके सदृश पीला हो जाता है। रक्तक्षयके कारण अनेक उपद्रव उत्पन्न होते हैं। इसमें बल, वर्ण, उत्साह और शक्तिका क्षय होता, इन्द्रियां आकुलित हो जातीं, मल श्यामवर्ण कठिन और कृष्ण निकलता तथा अधोवायु (वातकर्म) प्रवर्चन नहीं होती है।

रक्तज अर्शरोग यदि रुखी वस्तु खानेसे उत्पन्न हो तथा पतला, लाल और फेन सहित रक्त निकले, कमर, जांघ और गुह्यद्वारमें दर्द मालूम दे तथा रोगी अत्यन्त बुबला हो जाय, तो उस अर्शको वातोल्वण जानना चाहिये।

कफोल्वणजनित रक्तज अर्श गुरु और स्निग्ध वस्तु खानेसे होता है तथा मल शिथिल, श्वेत वा पीला, स्निग्ध और शीतल, रक्त गाढ़। पाण्डुवर्णका, पिच्छिल और सूतेके समान तथा मलद्वार स्तिमित

(आर्द्रचर्मावृत्तकी तरह) और पिच्छिल इशा करता है।

पित्तोल्वणजनित रक्तज अर्श होनेसे बलि झोलीकी तरह, उमका अग्रभाग नोन्डा, मंस्थामं थोड़ी, आमगंधि और पतला रक्तस्रावी, कोमल और लची होती है। उसकी आकृति सुग्गीकी जीम, यकृतखण्ड वा जोंफके मुखकी तरह अथवा जोके सदृश वीनमें स्थूल होती है। रोगीको शरीरमें जलन देती, ज्वर आता, पसीना छूटना और मूर्च्छा आती है। उमका चमड़ा, गान्ग, मुंह और मल-मूत्रादि साधारणतः पीला दिखाई देता है। (भाप्र० अर्शरोगाधि) अर्शम् शब्द देवो ।

मैत्रय्यरत्नाचलीमें लिखा है, कि चिकित्सक रक्तादि-की चिकित्सा करने समय पहले रक्तस्राव रोकनेकी चेष्टा करे। क्योंकि दूषित रक्तका निष्कृता बंद हो जानेसे मलद्वारमें वेदना, कोष्ठवद्ध और दुष्ट रक्तजनित वात-रक्तादि पीडा उपस्थित हो सकती है।

इस रोगमें २ तोला इन्द्रजौकी आध सेर जलमें सिद्ध कर आध पाव रहने उतार ले। पीछे उसमें २ माशा भर सोंठका चूर्ण मिला कर अथवा वैलसोंठके काढ़ेमें इसी प्रकार सोंठ डाल कर सेवन करे। रक्तार्शमें घोष-लताका मूल पीस कर प्रलेप देना चाहिये।

भूसोरहित ४ तोला निल मक्खनके साथ, ४ माशा नागकेसरका चूर्ण मक्खन और गज्जरके साथ तथा प्रति दिन मट्टा सेवन करनेसे यह रोग दूर होना है। अवस्था-विशेषमें वराहाक्रान्ता, रक्तोत्पलका मूल, मोचरस, लोध, कृष्णतिल और रक्तचन्दन समान भाग मिला कर २ तोला, वकरीका दूध १६ तोला और जल ६४ तोला इस्से आंच पर चढ़ा कर १६ तोला रहने नीचे उतार ले। इसका सेवन करनेसे रक्तार्श दूर होता है।

हरे पद्मपत्रकी या कृष्णतिलकी पीस कर कुछ चीनी और वकरीके दूधके साथ सेवन करनेसे रक्तस्राव अति-शोघ्न बंद हो जाता है। कूटजकी छालकी मट्टेके साथ पीस कर सेवन करनेसे भी बहुत उपकार होता है। अरवा चावलके जलके साथ १ माशा अपामार्ग मूलको छाल वा वकरीके दूधके साथ शतमूली पीस कर अथवा अनारका रस चीनीके साथ पान करनेसे रक्तस्राव तुरत बंद हो जाता है।

कूटजकी छान १०० पक्को ३४ सर जलमें सिद्ध कर ८ सेर रहते जगार ले । उसे छान सेनेके बाद ३० पक्क पुराने गुड़ और ८ पल घोके साथ पाक करे । जब यह सब गाढ़ा हो जाय तब उसमें विडङ्ग, त्रिकटु, त्रिकला रमाञ्जण, शीतामूल इन्द्रजी, बज्र, मठीस और बेचसोंड डाल कर उतार ले । छेह ठंडा होने पर उसमें ८ पक्क मधु मिलाये । मात्रा आध तोमान २ तोला और अनुमान बन्दोका घृष (अभावम उडा जल) बताया गया है । इसका सेवन करनेसे रक्तार्द्रा रक्तपित्त का म और हृमीमकरोग आरोग्य होता है ।

रकासता (सं० स्त्री०) मन्त्रिणा, मन्त्रोड ।
 रक्तालु (सं० पु०) रक्ताः रक्तपर्णो भातुः । रक्तवर्णं आनुविशेष, रतात् नामक कम् । मसरत पर्याय—रक्तपिच्छालु, रक्तपिच्छ लोहित, रक्तकन्द लोहितालु । इसका गुण—शीतल, मधुराम्ल, घ्नम पित्त और वाह नाशक, धूप बलपुष्टिकारक और गुठ । (रात्रि०)
 रकाशरोषक (सं० स्त्री०) बहते हुए रूतको रोकने वाला ।

रकाशसेवन (सं० स्त्री०) रक्तम्य अयमेवमं । रक्त मोक्षण, शरीरका न्यून निरुत्तना । (परक नि० २ सं०)
 रकाशव (सं० स्त्री०) रक्तस्य भागवः । शरीरक मात भागवोंमेंसे शीघ्रा जिनमें रक्तका रचना माना जाता है, वे कोठे जिनमें रक्त रहता है । जैसे—फेफड़ा, हृदय यकृत आदि । (सुभूत शरीरत्वा० १ सं०)

रकाशोफ (सं० पु०) मान अशोकका घृष ।
 रकाशमारुप्य (सं० स्त्री०) रक्तकरवारुप्य, साठ कनेरका कूट ।

रकाशमारि (सं० पु०) रक्तकरवारुप्य, साठ कनेरका कूट । (राषण्डठ गठक०)

रकाश्राय (सं० पु०) रक्तस्य आश्रावः । १ नामास कुठ गाढ़ा और कुठ बण्य रूतका निरुत्तना । (सुभूत उचरत० २ सं०) २ रक्तमोक्षण, शरीरका न्यून निरुत्तना ।

रकि (सं० स्त्री०) रक्त लिम् । १ अनुराग, प्रेम । २ एक परिमाण जो आठ सरसोंके बराबर होता है, रक्तो ।
 रकिः (सं० स्त्री०) रक्तो रक्तपर्णो इत्यस्या रक्त

(मत इन्द्रिणी । पाश्या१११) इति उक्त् । १ गुग्गा, घृषकी । २ रात्रिका सर्पप, राह । रक्तिका परिमाण, एक परिमाण जो आठ सरसोंके बराबर होता है ।

रक्तिम (सं० स्त्री०) लम्बाइ लिये सुखीं भावन् ।
 रक्तिमन् (सं० पु०) रक्त-इमनिष । अतिशय रक्तवर्ण, गाढ़ा छान ।

रक्तिमा (सं० स्त्री०) ललाह, सुखीं ।
 रक्तेह (सं० पु०) रक्तो रक्तवर्णो इह । रक्तवर्ण इह लालरंगका ऊज । पर्याय—सूक्ष्मपक्क शोण, लोहित, यत्नर मधुर, हृल्लमूळ लोहितसु । इसका गुण—मधुर, पाकमें शीतल, मृदु, पित्त और दाहनाशक, बमकर, मेज और बलवर्द्धक । (रात्रि०)

रक्तेरुह (सं० पु०) रक्तवर्ण पररुहः । घृष्यापिरेप, सास म ही । पर्याय—ध्याम इस्तिकर्ण, रुधु, उरुक्क नागवर्ण, घञ्जु, उस्तानपत्रक, करपण, पांचन, स्निग्ध, ध्याम तस रक्तक, चिल्लभोर्ष, हृत्वेररुह । इसका गुण—अपघु यायु, घ्नम, रक्तपोड़ा, पाण्डु, घ्नम, न्यास उचर और अरोषकनाशक । (रात्रि०)

रक्तेर्वीर (सं० पु०) रक्तः रक्तवर्णो पर्वीरः । इन्द्र भावणी मता ।

रक्तोच्छटा (सं० स्त्री०) अत गुग्गा, मफेत्त घृषकी ।
 रक्तोत्पल (सं० स्त्री०) १ लाल कमल । (पु०) शास्त्रमि सेमक ।

रक्तोत्पलाम (सं० पु०) रक्तोत्पलस्य नामेव नामास्य १ शोणवर्ण, सासर ग । (स्त्रि०) साठपर्णमुक ।

रक्तोदर (सं० पु०) १ रोहित मत्स्य, रोह मछली । २ महाविघ घृषिक विशेष । सुभूतक अनुमार एक प्रकार का बहुत जहराणो विषकू ।

रक्तोपदंश (सं० पु०) छहके विकारसे उत्पन्न गरमी या मातशकका रोग ।

रक्तोपल (सं० स्त्री०) १ गिरिमूस्तिका, गेरू नामक सान मिट्टी ।

रक्तोद्म (सं० स्त्री०) १ रक्तगाति आदि मक, साठ घानका भाग । २ मल्लक रमिजत मक, अउतसे र गा हुआ मात ।

रस (सं० स्त्री०) रसतीति रस भ् । १ रसक रस वाजा । (पु०) २ रसा, दिकाजुन । ३ साक, साह ।

४ छत्पयके माठवें भेदका नाम जिसमें ११ गुद और १३० लघु मात्राएं अथवा ११ गुद और १२६ लघु मात्राएं होती हैं।

रक्षईण (स० पु०) रक्षमां ईणः। रावण।

रक्षक (सं० त्रि०) रक्षतीति रक्ष-ण्युल्। १ रक्षाकर्त्ता, वचानेवाला। २ पहलेदार, पहरा देनेवाला। ३ पालन करनेवाला।

रक्षकाम्या (स० स्त्री०) वेदान्तभाष्यकार रामानुजकी स्त्री।

रक्षण (सं० क्ली०) रक्ष भावे ल्युट्। १ रक्षा करना, हिफाजत करना। २ पालन पोषण, पालनेकी क्रिया। (त्रि०) ३ रक्षक, रखवाला।

रक्षणकर्त्ता (सं० पु०) रक्षक, रक्षा करनेवाला।

रक्षणारक (सं० पु०) मूत्रकृच्छ्ररोग।

रक्षणि (सं० स्त्री०) त्रायमाणा लता।

रक्षणीय (सं० त्रि०) रक्ष-अनीयर्। रक्षणाई, रक्षा करनेके योग्य।

रक्षपाल (सं० पु०) रक्षाकर्त्ता, वह जो रक्षा करता है।

रक्षभगवती (सं० स्त्री०) प्रजा-पारमिता।

रक्षमाण (सं० त्रि०) रक्षमान देखो।

रक्षस (सं० क्ली०) रक्षत्यस्मादिति रक्ष (सर्वातुभ्याऽनुब। उण् ४।१८८) इति अनुब। राक्षस।

“दृष्ट्वा तु विक्रान्तं व्यङ्गाननाथात् रोगिण्यस्तथा।

दया न जायते यस्य स रक्ष इति मे मतिः ॥”

(अग्निपुराण)

रक्षस्त्व (सं० क्ली०) राक्षसका भाव या धर्म।

रक्षस्य (सं० त्रि०) रक्षसस्यर्थाय, राक्षसके उपयोगी।

रक्षस्विन् (सं० त्रि०) १ राक्षस सम्बृक। २ मन्दभावा-पन्न। ३ दोषयुक्त। ४ बलवान्, बलिष्ठ।

रक्षसम (सं० क्ली०) रक्षसां राक्षसानां सभा, क्लीवत्व-मसिधानान्। रक्षसमूह।

रक्षा (सं० स्त्री०) रक्षणमिति रक्ष (गुरोश्च हल्ः। पा ३.३।१०३) इति थ, स्त्रियां टाप्। १ रक्षण, आपत्ति या कष्ट या नाश आदिसे बचाना। २ जतु, गौड़। ३ मरुम, राख। जिससे कोई अनिष्ट न हो, ऐसी क्रियाविशेषको रक्षा कहते हैं। यज्ञोदाने श्रीकृष्णको गोमूत्रसे स्नान करा

कर गोपुच्छम्रमणादि द्वारा उनकी रक्षा की थी।

(भाग० १०।६ व०)

पौर्णमासीको रक्षावन्धन करना होता है। इन्ने बोल-चालमें राखीवंधन कहते हैं।

“पौर्यामास्या ह रक्षावन्धनं विधिपूर्वकं।

प्रजराजकृमारत्वात् केचिदिच्छन्ति साधयः ॥”

(हरिमत्तियि० ५१ वि०)

पूर्णिमातिथिमें विधिपूर्वक विंशुक्ता रक्षावन्धन करना होता है। श्रोत्रुणके यह रक्षावन्धन हुआ था, इस कारण पण्डित लोग इसका अनुष्ठान करते हैं। यह श्रावणी और फाल्गुनी पूर्णिमामें नहीं करना चाहिये।

सामवेदीयगण माद्रमासके हस्ता नक्षत्रमें, ऋग्वेदी-यगण श्रावणमासके श्रावण नक्षत्रमें और यजुर्वेदीयगण श्रावणी पूर्णिमामें यह रक्षावन्धन करें। इस समय यदि न किया जाय, तो माद्रमासमें अवश्य कर। श्रावण मासकी शुक्लापञ्चमी इसके अनुकल्पका काल है। यह कार्य चतुर्दशीयुक्त पूर्णिमामें नहीं करना होता है।

(हरिमत्तियि० ५१ व०)

ब्राह्मण, श्रविय, वैश्य और शूद्र इन चारों वर्णोंको यथाविधान राखीवन्धन करना चाहिये। जो विधिपूर्वक इसका अनुष्ठान करते हैं, वे सर्वपापरहित हो सुखसे वास करते हैं। (हरिमत्तियि० ५१ वि०)

सुश्रुतमें लिखा है, कि वैद्य रोगीको गृह्य प्रयोग कर पीछे उसकी रक्षाके लिये रक्षामन्त्रका पाठ करते हुए चारों ओर जलकी छीटा दे। कृत्या देवता और राक्षसोंके भयसे बचानेके लिये यह रक्षाक्रम करना होता है। उस प्रकार मन्त्रपाठ कर रक्षाविधान करनेसे राक्षस, भूत, प्रेत आदिका डर बिलकुल नहीं रहता।

आज भी युक्तप्रदेशमें खास कर राजपूतानेमें राखी वंधनका बहुत आदर देखा जाता है। वहांके लोगोंका विश्वास है, कि श्रावणी पौर्णमासी या संक्रान्ति तिथिमें राखीबंधन करनेसे कुप्रहका प्रभाव क्षीण हो जाता है। महर्षि दुर्वासने श्रावणकी अधिष्ठात्री देवीको ग्रहदृष्टि निवारणार्थे राखीबंधनकी व्यवस्था दी। तभीसे इस प्रथाको हिन्दू-समाजने बड़े आदरसे अपनाया है।

राजपूतकुलललना, कुलपुरोहित और केवल ब्राह्मण

छोग हो राजपूतानेमें राक्षीर्षपणके अधिकारी हैं। राज महिर्षिर्षा इस दिन अपनी अपनी सहचरी भयवा कुल पुरोहितके हाथ अपने अपने माई भयवा वृसर्षीके निकट तिन्हें वे भाई कह कर पुकारती हैं, राक्षी भेज देतो हैं। इसी राक्षीके भेजनेसे महााराणा राजसिंह रूपनगरकी राज कुमारीका अन्धार करनेके लिये सम्राट् औरकुजेवके विरुद्ध रणक्षेत्रमें कूट पड़े थे। यहां तक कि यदि कोई राजपूत-कामिनी जिन किसी राजपूतके निकट तिन्हें यह भाई कहा करती हैं, राक्षी भेजे, तो वह राजपूत उस बहिनके घन, प्राण और मानरक्षाके लिये आत्मर्त्याग तक भी विसर्जन कर देत हैं। यह प्रथा हिन्दुकी एकता रक्षाके सम्बन्धमें अत्यन्त शुभकर थी, इसमें शरा भी सबैह नहीं।

राजपूत-छरनार्ये इस दिन अपने अपने माईके निकट गया वस्त्र और टापा भेजती हैं और माइ उसके बच्चेमें स्वर्णमुद्रा देते हैं। कर्मस टाबने राज न्यायमें रहते समय राजपूतराज-कुम्हारमणियोंके साथ भाई बहनका नाठा जोड़ कर राजपूत प्रधाक अनुसार इन बहनों द्वारा भेजी गई राक्षी प्रसन्न चित्तसे स्वीकार की और उसके बड़े प्रभेक बहनको ठोससे पाँच मुहर करके उपहारमें दी थी।

देवालयके पुरोहित और राजमणके ब्राह्मण इस दिन राक्षी दे कर प्रभुकर घन अर्पण करते हैं। राज पूतानेमें आज भी यह पर्व बढ़ी धूमधामसे सम्पादित होते देखा जाता है।

रक्षापूह (स० ह्री०) स्तिकापूह, यह स्थान जहाँ प्रसूती प्रसव करे।

रक्षातिथि (सं० पु०) नियम म ग, कायदा-कानून तोड़ना।

रक्षाचिह्न (स० पु०) प्राचीनकालको किसी नगरका वह अधिकारी जिसका काम उस नगरकी रक्षा तथा शासन करना होता था।

रक्षापति (सं० पु०) रक्षाकर्ता, प्राचीनकालका वह कर्मचारी जिसका काम नगर-निवासियोंकी रक्षा करना होता था।

रक्षापत्र (सं० पु०) रक्षापत्रकम्पन। १ मूर्खपत्र, मोखपत्र। मोखपत्र पर मन्त्र आदि लिख रक्षाका विधान किया जाता है इसलिये उसे रक्षापत्र कहत हैं। २ श्वेत सर्पपत्र, सफेद सरसों।

रक्षापुत्र (स० पु०) १ प्रहरो पहरदार। २ रक्षाकर्ता, वह जो रक्षावाली करता हो।

रक्षापेक्षक (स० पु०) १ प्रहरी, पहरदार। २ अन्तःपुरमें पहरा दनवाला स ठरो। ३ भूमिनेता, नर।

रक्षाभूषण (स० पु०) तन्त्रक अनुसार वह वीषक जो भूत प्रेत आदिकी बाधासे रक्षा करनेके लिये अछाया जाता है।

रक्षाबन्धन (स० पु०) हिन्दुकीका एक त्यौहार। यह आषण शुक्ल पूर्णिमाको होता है। इस दिन बहनें अपने माइयोंके और ब्राह्मण अपने यजमानोंके दाहिने हाथको कलाई पर अनेक प्रकारके गठि यानी राक्षी बाँधत हैं।

रक्षामूषण (स० ह्री०) कृष्णविषुस अन्धकार या धारणी, यह मूषण या संतर जिसमें किसी प्रकारका कृष्ण आदि हा और जो भूत प्रेत या रोग आदिसे रक्षित रहनेके लिये पहना जाय।

रक्षामर्षिचक्र (स० लि०) रक्षाचक्रको।

रक्षामन्त्र (स० ह्री०) अथर्ववेदाकी प्रकोपनिषारक मन्त्र-लिख क्रियाविशेष, यह अनुष्ठान या धार्मिक क्रिया आदि जो भूत-प्रेत आदिकी बाधासे रक्षित रहनेके लिये की जाय।

रक्षामणि (स० पु०) वह मणि या रत्न आदि जो किसी प्रकारके प्रकोपसे रक्षित रहनेके लिये पहना जाय।

रक्षामङ्ग (स० पु०) राजभेद, एक राजाका नाम।

रक्षामहोषि (स० ह्री०) भीषणविशेष।

रक्षाऋत (स० ह्री०) रक्षामूषणको।

रक्षाऋतप्रदोष (स० पु०) रत्नरक्षित रक्षा-महोषि।

रक्षाप्रदोषको।

रक्षायत् (स० लि०) रक्षा विघटनेपर मनुष्य मर-व।

रक्षाविशिष्ट, रक्षायुक्त।

रक्षामर्षण (स० पु०) सरसों पड़ना।

रक्षि (स० लि०) रक्षाकारी, बचावेवाला।

रक्षिक (स० पु०) १ प्रहरो, पहरदार। २ रक्षक, यह जो रक्षा करता हो। ३ परिदृशीक।

रक्षिका (स० स्त्री०) श्वेत रक्षा स्वार्य कर्म, श्वेत रत्न। रक्षा, हिपाक्षत।

रक्षित (स० लि०) रक्ष-कृत। १ जिसकी रक्षा की गई हो,

रक्षा क्रिया हुआ। पर्याय—लात, लाण, अघित, गोपायित, गुप्त। (वमर) २ प्रतिपालित, पाला पोसा। ३ रखा हुआ। (कौ०) भावे-क्त। ४ रक्षा, हिफाजत, खिया टापू। ५ महाभारतके अनुसार एक अप्सराका नाम। (भारत १६१/५०) ६ वैयाकरणभेद। ७ भेषजतत्त्वाभिज्ञ एक आचार्य।

रक्षितक (सं० त्रि०) रक्षाकारी, वचानेवाला।

रक्षितव्य (सं० त्रि०) रक्ष तव्य। रक्षणीय, रक्षा करनेके योग्य।

रक्षित् (सं० पु०) रक्षतीति रक्ष-न्त्च्। १ रक्षाकर्ता, रक्षा करनेवाला। (पु०) २ रक्षा, हिफाजत। ३ एक अप्सराका नाम।

रक्षिन (सं० त्रि०) १ अभिभावक, रक्षा करनेवाला। (पु०) २ पहरेदार, चौकीदार।

रक्षिवर्ग (सं० पु०) रक्षिणा वर्गः समूहः। पहरेदारोंका समूह।

रक्षिगण (सं० पु०) रक्षसा राक्षसानां गणः समूहः। राक्षसोंका समूह। (भागवत ५/२६/२७)

रक्षोघ्न (सं० क्ली०) रक्षो रक्षसं हन्तीति हन्-ङ्क्।

१ काँड़क, रख कर खट्टा किया हुआ चावलका पानी या मिर्च। २ हिङ्गु, हींग। ३ मल्लातकवृक्ष, भिलारोंका पेड़।

४ श्वेतसर्पप, सफेद सरसों। (त्रि०) ५ रक्षोघिनाश, राक्षस-नाशक-मात्र।

रक्षोघ्नी (सं० स्त्री०) रक्षोघ्न डीपू, चचा, वच।

रक्षोजननी (सं० स्त्री०) रक्षसां जननीव। १ रात्रि, रात। २ राक्षसकी माता।

रक्षोधिदेवता (सं० स्त्री०) रक्षःकुलदेवता।

रक्षोमुख (सं० पु०) १ गोदभेद। २ राक्षसोंके मुख।

रक्षोयुज् (सं० त्रि०) राक्षसका सहचर।

रक्षोवाह (सं० पु०) जातिविशेष।

रक्षोविधोमिनी (सं० स्त्री०) राक्षसोंकी एक देवी मूर्ति-का नाम।

रक्षाहन (सं० पु०) रक्षो हन्तीति हन्-क्विप्। १ गुग्गुलु, गुग्गुलु। २ ऋषिविशेष। ये ऋग्वेदके ऋषि मण्डलके १६० सूक्तके ऋषि थे। (त्रि०) ३ राक्षसहन्ता, राक्षसको मारनेवाला।

रक्षन् (सं० पु०) रक्ष (यज्याचयनविच्छिन्नप्रच्छरको नट्। पा ३।३।६०) इति नट्। लाण, रक्षा।

रक्षय (सं० त्रि०) रक्ष यत्। रक्षणीय, रक्षा करनेके योग्य।

“मदा स्वभ्यः पंभ्यश्च रक्षया राजाभिरन्निभिः।”

(कामन्दकी नीति० ७/२६)

रक्ष्यमाण (सं० त्रि०) १ जिसकी रक्षा की जा सके। २ जिसकी रक्षा की जा रही हो।

रक्षसेताऊस (फा० पु०) १ एक प्रकारका नाच जिम्में घुटनोंके बल हो कर इतनी तेजीमें घूमने हैं, कि काछनी वा पेशवाजका घेग फैल कर चक्र खान लगना है। २ एक प्रकारका नाच। इसमें पेशवाजके दो कोने दोनों हाथोंसे पकड़ कर कमर तक उठा लिये जाते हैं जिससे नाचनेवालोंकी आकृति मोरकी-सी बन जाती है।

रख (हि० स्त्री०) पशुओंके चरनेके लिये बचाई हुई भूमि, चरी।

रखाटी (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी ईख जिसके रससे गुड बनाया जाता है, लखडा।

रखडा (हि० पु०) रखटी देखो।

रखना (हि० क्ति०) १ किसी वस्तु पर या किसी वस्तुके अन्दर दूसरी वस्तु स्थित करना, ठहराना।

२ निर्वाह या पालन करना, विगड़ने न देना। ३ रक्षा करना, हिफाजत करना। ४ सपुर्द करना, सौंपना।

५ रेहन करना, बंधकमें देना। ६ एकल करना, संग्रह करना। ७ अपने अधिकारमें लेना, अपने हाथमें करना।

८ नियुक्त करना, नैनात करना। ९ सकुशल जाने न देना, पकड़ या रोक लेना। १० पालन-पोषण, मनो-

विनोद या व्यवहार आदिके लिये अपने अधिकारमें करना, अपनी अधीनतामें लेना। ११ आघात करना, चोट पहुँचाना। १२ किसी पर आरोप करना, जिम्मे

लगाना। १३ व्यवहार करना, धारण करना। १४ स्थगित करना, मुतलवी करना। १५ उपस्थित न करना, सामने न लाना। १६ ऋणी होना, कर्जादार होना। १७ मनमें अनुभव या धारण करना। १८ स्त्री या पुरुषसे सम्बन्ध

करना, उपपत्नी या उपपति बनाना। १९ सम्भोग करना, प्रसंग करना। २० निवास कराना, डेरा कराना

करना, प्रसंग करना। २० निवास कराना, डेरा कराना

करना, प्रसंग करना। २० निवास कराना, डेरा कराना

२१ गर्म धारण करना । २२ अपने पास पड़ा रखने देना, बचाना । २३ पक्षियों आदिका सजे देना ।
 रखनी (हि० स्त्री०) यह स्त्री जिससे विवाह-सम्बन्ध न हुआ हो और जो यों ही घरमें रग ला गई हो रखेली ।
 रखपा (हि० वि० स्त्री०) रक्षा करनेवाली ।
 रखला (हि० पु०) रखला देना ।
 रखपाई (हि० स्त्री०) १ जेतोंको रखपायी श्रीकीवारी । २ रखबाड़ी करनेवा क्रिया या भाव । ३ रखनेकी क्रिया या ढंग । ४ रखपायीको मजदूरी श्रीकीवारीको मजदूरी । ५ श्रीकीवारीका टिकम । ६ रखनेकी मजदूरी ।
 रखपाणा (हि० स्त्री०) १ रखनेकी क्रिया दूसरेमें बराना, दूसरेको रखनेमें प्रयुक्त करना । २ रक्षान देना ।
 रखवार (हि० पु०) १ रक्षा करनेवाला, रखपाणा । २ श्रीकीवारी, पहरेदार ।
 रखवारी (हि० स्त्री०) रखपायी देखो ।
 रखपाणा (हि० पु०) १ रक्षा करनेवाला, रक्षक । २ श्रीकीवारी, पहरेदार ।
 रखपायी (हि० स्त्री०) १ रक्षा करनेकी क्रिया हिफाजत । २ रक्षा करनेका भाव ।
 रखा (हि० स्त्री०) रल रखा ।
 रखाई (हि० स्त्री०) १ रक्षा करनेकी क्रिया हिफाजत । २ बह घल जो रक्षा करनेके बद्दमें दिया जाय । ३ रक्षा करनेका भाव ।
 रखान (हि० स्त्री०) खराईका भूमि खरी ।
 रखाणा (हि० स्त्री०) १ रखनेकी क्रिया दूसरेमें बराना, दूसरेको रखनेमें प्रयुक्त करना । २ रखपायी करना, नष्ट होनेसे बचाना ।
 रखाव (हि० पु०) एक प्रकारका पाटा जिसका व्यवहार बम्बराप्रान्तमें जुगा हुआ श्वेत बराबर करनेके लिये होता है ।
 रखिया (हि० पु०) १ रखन । २ रखनेवाला । ३ गांधके ममोपका वह पेड़ जो पूजनायै रक्षित रहता है ।
 रखियाला (हि० स्त्री०) १ राखसे बरतनों आदिको मांजना । २ पक्षीके रूप औरके कपड़ेमें सपेट कर राखके अन्दर इस अग्निप्रायसे रखना कि बसका पानी सूख जाय और करारा निकल जाय ।

रखी (हि० पु०) श्रुति, मुनि ।
 रखीराज (हि० पु०) नारद श्रुति ।
 रखेली (हि० स्त्री०) बिना विवाह किये ही घरमें रखी हुई स्त्री, रखनी ।
 रखीन (हि० पु०) पशुओंके करनेके लिये छोड़ी हुई जमीन, खरी ।
 रगइ (हि० पु०) हाथाका कपोल ।
 रग (ए० स्त्री०) १ शतरंजमेंको नम या नाडी । २ पक्षीमें विनाइ पड़नेवाली नखें ।
 रगइ (हि० स्त्री०) १ रगइनेकी क्रिया या भाव धर्षण । २ वह इलका जिह जो साधारण धर्षणसे उत्पन्न हो जाय । ३ दुस्त, अगड़ा । ४ कहावोंको परिभाषामें प्रका । ५ भारी धम, गहरी मेहनत ।
 रगइना (हि० स्त्री०) १ किसी पक्षीको दूसरे पक्षीपर रल कर तथाके रूप बार बार इपर उपर खटाना, धर्षण करना । २ पामना । ३ किसी काममें जल्दी जल्दी और बहुत परिश्रमपूर्वक करना । ४ अन्धास आदिके लिये बार बार कोई काम करना । ५ तग करना, दिक् करना । ६ स्त्रीके माथ सम्मोग करना प्रसंग करना ।
 रगइयाणा (हि० स्त्री०) रगइनेका नाम दूसरेसे कराना, दूसरेको रगइनेमें प्रयुक्त करना ।
 रगइना (हि० पु०) १ रगइनेकी क्रिया या भाव, धर्षण । २ वह अगड़ा जो घराबर होता रहे और जिसका जल्दी अन्त न हो । ३ निरन्तर अथवा अत्यन्त परिश्रम ।
 रगइना (हि० स्त्री०) रगइनेकी क्रिया या भाव, रगइना ।
 रगण (म० पु०) छन्दशास्त्रमें एक गण या तीन वर्णों का मन्त्र इसका पहला वर्ण गुरु, दूसरा छु और तीसरा फिर गुरु होता है । यह साधारणतः पूं से सूक्ति किया जाता है । इसके देवता अग्नि माने गये हैं ।
 रगइना (हि० स्त्री०) रगेना देना ।
 रगणठठा (हि० पु०) १ शतरंजके मीठरी मित्र मित्र अग । २ किसी धिययकी मीठरी और सूक्ष्म बातें ।
 रगवत (अ० स्त्री०) १ खाइ, इच्छा । २ प्रवृत्ति, रुचि ।
 रगर (हि० स्त्री०) रगइ देखो ।
 रगरा (हि० पु०) रगइ देना ।

रगेशा (फा० पु०) १ पत्नियोंकी नसें। २ शरीरके अन्दरका प्रत्येक अंग। ३ किसी विषयकी सीतरी और सूक्ष्म बातें।

रगा (हि० पु०) मोग।

रगी (हि० स्त्री०) १ एक प्रकारका मोटा जूत जो महिसूरमें होता है। २ रगी देगो। ३ रगीला देगो।

रगीला (हि० पु०) १ हठी, जिटो। २ पाजो, दुष्ट।

रगेद (हि० स्त्री०) १ दौड़ाने या भगानेकी क्रिया। २ पक्षियों आदिकी सम्भोगकी प्रवृत्ति या अचमर, जोडा खानेका मौका।

रगेदना (हि० क्रि०) भगाना, खदेड़ना।

रगीली—युक्तप्रदेशके वाराणसी जिलान्तर्गत एक नगरपाल और उसके नीचे एक गण्डग्राम। यह अक्षा० २५ १' ३० तथा देशा० ८०° २२' ५० के मध्य अक्षयगडसे पांच कोस उत्तरमें अवस्थित है। १८०६ ई०में अक्षयगडके राजा लक्ष्मणसिंहसे अंगरेजी सेनाकी लड़ाई हुई जिसमें यहांका दुर्ग अंगरेजोंके हाथ चला गया। राजाके चचा प्रसादसिंहने चहारदीवार और प्राचीर आदिमें यह गिरिदुर्ग मजबूत बना रखा था। अंगरेजी सेनाने बहुत कष्टसे इस दुर्गको चहारदीवार तोड़ फोड़ कर इस पर चढ़ाई कर दी और हिन्दू सेना गुप्ताने दुर्ग छोड़ भाग गई। पीछे अंगरेजी सेनाने यह दुर्ग दखल किया। तबसे वह टूटे फूटे खंडहरमें पड़ा है। यह समुद्रतीरसे १३०० फुट ऊंचा है।

रगा (हि० पु०) १ एक प्रकारका मोटा अन्न जो दक्षिणके पहाड़ोंमें होता है, रगी। (स्त्री०) २ अधिक वर्षाके उपरान्त होनेवाली धूप जो मैदानोंके लिये लाभदायक होती है।

रघु (सं० पु०) लङ्घति ज्ञानसीमां प्राप्नोतीति लङ्घि (लङ्घिबन्धोन्लोपश्च। टण् १।३०) इति कुन्लोपश्च। (वायमूलस्यसुराक्षमगुलीनां वा जो रत्नमापद्यते इति वक्तव्यं। पा ५।२।१५) इति काणिकीयत्या लस्य रत्वं। सूर्य-चंजरीय दिल्लीपरमपुत्र, आंगमचन्द्रके प्रपितामह। रघु चंजरीमें 'रघु' इस नामनिवृत्तिका विषय इस प्रकार लिखा है। रघुके जन्म लेनेके बाद दिल्लीपने कहा, कि यह बालक समस्त शास्त्रोंमें पारदर्शी होगा और युद्धकालमें जन्तुओं-

को फाड़ता हुआ जायगा। इसी कारण उन्होंने गमना-र्थक 'रघ' धातु डाला निरपन्त 'रघु' यह नाम रखा था।

रघुचंजरीमें लिखा है, कि रघुके पिताका नाम महाराज दिल्लीप और पुत्रका नाम अज था। अजके पुत्र दशरथ और दशरथके पुत्र रामचन्द्र थे। अयोध्यामें इनकी राजधानी थी। इन्हींके नामानुसार इनका वंश रघुवंश नाममें प्रसिद्ध है। महागज दिल्लीपने अपने कुन्तगुरु यज्ञिष्ठकी आज्ञामें कामधेनुकी पुत्री नन्दिनीकी प्रसन्न करके यह पुत्र पाया था। महाराज दिल्लीपने एक यज्ञ किया था। उस यज्ञकी अश्वशक्ता भार रघुकी दिया गया था। देवराज इन्द्र उस अश्वको चुरा कर ले गये। रघु और इन्द्रसे युद्ध होने लगा। रघुने इन्द्रको परास्त करके यक्षीय अश्व लुटा लिया। राज्य मिलने पर महाराज रघु अपने राज्यमें सर्वत्र ज्ञान्ति स्थापित करके द्विग्वि-जयके लिये बाहर निकले। चारों दिशाओंको जीत कर रघु जो प्रचुर धन ले आये थे उसमें विश्वजित् नामक एक दान किया और सय धन दानपणोंको दक्षिणामें दे डाला। पाँचों वगन्तुजिग्य कौटम्ब्य उनके निकट आये और गुस्टरक्षिणामें स्वर्णमुद्रा मांगने लगे। खजानेमें स्वर्णकी बात तो दूर रहे, एक कौड़ी भी न थी, सो रघुने कुबेरको जीत कर उनको माग पूरी की थी।

२ रघुवशीय मात्र। (त्रि०) ३ शीघ्रगामी, तेज चलने-वाला। (मृत् ५।१०।१४)

रघुकार (सं० पु०) रघुं नदाम्यं काल्यं करोतीति कृ (स्मृणयण्। पा ३।२।१) इति अण्। रघुचंजरीके प्रणेता कालिदास।

रघुकुल (सं० पु०) राजा रघुका वंश।

रघुगढ़ (राघवगढ़)—ग्वालियरके अधीनस्थ एक सामन्त राज्य। यह मध्यभारतकी गुणा सब एजेन्सीकी देखरेखमें परिचालित होता है। यहांके मरदाचंजरीय चौहान राज-पूतोंकी कोच जाखामें श्रेष्ठ और पूज्य हैं। एक समय इन सामन्तोंने गुणाके चारों ओर प्रायः १५०० मोल स्थान पर अधिकार कर राज्यशासन किया था। उस समय रघुगढ़के सरदार ग्वालियरपतिके मिदराज समझे जाते थे।

१७८० ई०में महाराष्ट्र सरदार माधोजी सिन्धेने राजा

बलवशतसि ह और उनके लड़के जयसि हटो युद्धमें परास्त कर कैद कर लिया था। इस समयसे छे कर १८८१ ई० तक दोनों पक्षमें घोर युद्ध चलता रहा। अन्तिम अंगरेज गवर्नेण्टने बोम्बेमें पञ्च कर षण्ण्डा मिटा दिया। सिन्धेरामने यहाँक सामन्तराजको राजवण्डा मगर, दुर्ग और तत्पार्श्ववर्ती स्याज रूपय आमदनीकी मूलमयति छोड़ दी। १८८३ ई०को उक्त राजमन्तरारम युद्धनिवाद लड़ा हो गया, जिसमें अन्गरेजराजने एक नया बंदीवस्त किया। तन्नुसार उक्त जामीर उम खंजक विजयसि ह, छहगान् भीर अजितसि ह नामक तीन पट्टोहारोंक बीच बँट गई। अजितसि हके उत्तराधिकारा राजा जयमङ्गलसि हक हिस्सेमें १२० प्राय पट्टे जिसकी धार्मिक आय २५०००) रु० की है। रघुगङ्गके सामन्त राजके हिस्सेमें ८८ प्राय है।

२ उक्त सामन्तराज्यका प्रभाव मगर। यह पाथली नदी की एक गाव्याके ऊपर अक्षा० २४ २६' उ० तथा देशा० ७७ १५' पू०के मध्य अवस्थित है। यहाँका दुर्ग यद्यपि मलाबन्धामें पड़ा है, तो मा १९वीं सदीके आरम्भमें इसने दौलतराव निम्बे द्वारा परिचायित मराठा-समा से मगरकी अन्धकी तरह रक्षा की थी। मुगल बादशाह शाहजहाँक जमानेमें केजिगावाक बीडाम राजपूतवंशीय कामसिंह नामक एक व्यक्तिने इसे बसाया था। तभीसे यहाँके मरवाट बंस केजिगावाके वरपति या गोदोपति रूपमें गिने जा रहे हैं।

रघुज (स० लि०) रघुज न ड। १ तेज मालेबाली बोडोवा बछड़ा। (सू० १५१११) २ रघुवंशका मातमाक, जिसका जन्म रघुके यशमें हुआ है।

रघुजी भौंसले (१म)—एक महाराष्ट्र भेमापति। १७३४ ई०में इनकी महाराष्ट्र-दरुके सेना माहब सूबा पद पर तरकी हुई। इनकी कार्य-वसना साहस और कीरता पर प्रसन्न हो कर वेजयाने इन्हें बेरार और नागपुर प्रदेश प्रदान किया। उन्ना सेनाके बख १७३० ई०में वे बेरार और नागपुरके प्रथम राजा हुए थे।

वेजवा बाजीराव और बबसो रघुजी भौंसलेक अन्तु ह्यकाबमें महाराष्ट्र राज्यमें शासनविस्तार और राष्ट्र विभूय उपस्थित हुआ। कमलोर दिखके और राज्य

शासन करमें अममय सताराधिपति रामराज इस समय महाराष्ट्र सिंहासन पर बैठे थे सही, पर यथार्थमें वेजवा और रघुजी यही दोनों राज्यके परिचायक और नेता थे। सन्निवसपान बाजीराव और वेजवापति प्रथम रघुजीने उन्हें सिंहासन परम उतार मब कुछ हदप कर खैनेका पञ्चपन्न किया। अपना मतलब निकामनेके लिये दोनोंने अपने मासिकको ठग कर उनका राज्य आपसमें बाट लिया। तन्नुसार वेजवा प्राचीन राजधानी पूनामें रह कर मराठोंके अधिपत्य समस्त पश्चिम-प्रदेशका तथा रघुजी नागपुरमें रह कर पूर्वाञ्चल शासन करने लगे। दुर्भाग्यवशतः रामराज सताराक दुर्गमें कैद किये गये।

वेजवा बाजीरावको अपने नामसे महाराष्ट्रीय शासन दण्ड परिचायित करत ईश प्रतिद्वन्द्वी रघुनाथ जन्मे लगे। उन्होंने वेजवाकी अपमानना स्वीकार नहीं की। इस कारण दोनोंमें मुठमेड़ हो गई।

रघुजीक पितामह पाम्ब जो सताधा-मास्तबर्ती एक सामान्य अम्बाराही मना-नायक थे। महाराष्ट्रकेजरी शिपाजीक पील शाहजी उनके रणपारिदरप पर मोहित हो उन्हें यकनाके पद पर नियुक्त किया। इनक पिता क्रिमती महाराष्ट्र-कर ठगाहनेके लिये अयोध्या गये और यहाँ मारे गये। अतएव पितामहक बाद शाहजीकी हवास ये ही वैदक सम्पत्तिके अधिकारी हुए थे। ऐतिहासिक लोग उनके उत्तराधिकारियके सम्बन्धमें अपना निम्न निम्न मत लेते हैं। जोर कोई कहत हैं, कि पाम्बजीके पुत्रक जयित रघुने ही शाहजीकी हवासे पाम्बजीके माह रघुजीने बरारकी सम्पत्ति पाई। रघुजी राजा शाहजीके माई थे।

सुर्दासपुर, नागपुर, बरार आदि जयमें रघुजीका योग्य-कहाती लिम्बो जा चुकी है, इस कारण यहाँ पर और कुछ विरोध नहीं किया गया। १७४१ या १७५३ ई०में उनकी मृत्युक समय वे पुत्र जानोजीकी अपना उत्तराधिकारी बना गये। १७७२ ई०में जानोजीने अपने कनिष्ठ मनुषीके पुत्र रघुजी भौंसले २५वने जब अपना उत्तराधिकारी बनाया, तब मारा सम्पत्तिका शासन मार मनुषी पर सौंपा गया। इस समय मनुषीके

वड़े माई सामोजीने सिंहासन पर टावा किया। यह ले कर दोनों माइयोंमें विरोध खड़ा हो गया। युद्धमें मधुजीके हाथ १७७५ ई०की सामोजी मारे गये। नमीने ले कर ३य रघुजी तक नागपुर और बगरका अधिकार मधुजीके वंशधरोंके हाथ रहा।

रघुजी भोंसले (२य) — अभिभावक और पिता मधुजीके राज्यशासनके बाद १७८८ ई०में ये अपने बड़े माईके दिये हुए नागपुर सिंहासन पर बैठे। १८१६ ई०की २२वीं मार्चको इनको मृत्यु हुई।

रघुजी भोंसले (३य) बगर-राज्यके अन्तिम महाराष्ट्र-राज। १८५३ ई०में अपुत्रक अचरगामे इनका मृत्यु होने तथा राजसिंहासनके कोई प्रकृत उत्तराधिकारी न रहनेसे उस समयके गवर्नर जनरलने वह विस्तोर्ण राज्य कंपनीके राज्यमें मिला लिया।

रघुदेव—१ दिनसंप्रह नामक एक ज्योतिष्रन्थके रचयिता। २ मिथिलावासी एक पण्डित विश्वेश्वर मिश्रके पुत्र तथा अच्युत ठाकुरके दौहित्र। इन्होंने विरुटावली नामक एक ग्रन्थकी रचना की।

रघुदेव न्यायालङ्कार भट्टाचार्य—नवद्वीपवासी एक विख्यात पण्डित। ये सम्भवतः नवद्वीपके सुप्रसिद्ध पण्डित भवानन्द सिद्धान्तवासीकी तीन या चार पीढ़ाके वादके थे। गिरीमणिकृत नञ्वादकी "नञ्वादविवेचन" नामक टीकाकी रचना करने समय रघुदेवने ग्रन्थ-प्रारम्भमें अपना परिचय दिया है। जायद रघुदेव पहले हरिरामसे और पीछे जगदीशसे न्यायशास्त्र पढ़ते थे। ये जगदीशके छात्रोंके नमसामयिक थे, इसमें जरा भी मन्देह नहीं। इन्होंने 'पदार्थखण्डनविवरण' नामक रघुनाथ-गिरीमणिकृत पदार्थतत्त्वकी व्याख्या १६४१ शकमें अर्थात् १७१६ ई०में लिखी थी।

इसके अलावा रघुदेव गङ्गे शोषाध्यायकृत तत्त्वचिन्ता-मणिकी गृहार्थतत्त्वदीपिका नाम्नी एक व्याख्यापुस्तिका, महर्षि कणादके वैशेषिकसूत्रका कणादसूत्रव्याख्यान नामक टीका और त्रयस्यारम्भ नामक कई ग्रन्थ रचना कर गये हैं। तन्वचिन्तामणिव्याख्या ग्रन्थके अंश-रूपमें उन्होंने अनुमिति, परामर्शविचार, अवयवग्रन्थ, आकाशावाद, आख्यातवादटिप्पणी, (रघुनाथकृत

आख्यातवादकी टीका), ईश्वरवाद, उपसर्गघोतकत्व विचार, कारणवादार्थ, कार्यकारणभावविचार, चित्ररूपवाद, ज्ञानद्वयवाद, ज्ञानलक्षणविचार, तर्कविचार, दण्डकारणताविचार, धार्मितावच्छेदकप्रत्यासत्तिरूपण, नञ्वादटिप्पणी या नञ्वादटिप्पणी नवीण निर्माण, नानार्थवाद, निरुक्तिप्रकाश, निश्चयत्वनिरुक्ति, निश्चयवाद, पश्रता, प्रतियोगिज्ञानकारणताविचार, प्रतियोगि-ज्ञानस्य हेतुत्वखण्डनम्, मनोवाद, लक्षणवाद, लौकिक-विषयतावाद, विजिष्टवैजिष्ट्यबोधविचार, विजिष्ट-वैजिष्ट्यवाद, विजिष्टवैजिष्ट्यावगाहिपदार्थ, विषयतावाद सामग्रीवाद, स्मृतिसंस्कारविचार आदि बहुत सी टीका प्रणयन कर विशेष प्रसिद्धिलाभ किया है। ये टीकाएँ नैयायिकजगत्में 'रघुदेवी' नामसे परिचित हैं।

रघुदेवज्ञ—चिन्तामणि पीयूषधारा नाम्नी सुहर्षाचितामणिकी टीकाके प्रणेता।

रघुद्वृ (स० द्वि०) श्रीधरगमनकारी, तेजीसे जानेवाला।

रघुनन्द (स० पु०) श्रीरामचन्द्र।

रघुनन्दन—श्रीचैतन्यके एक अनुचर भक्त। ये हुस्नेन-गाह वादशाहके प्रधान चिकित्सक श्रीखण्डवासी वैद्य-वंशीय मुकुन्दके एकमात्र पुत्र थे। वैष्णवसमाजमें रघुनन्दनका स्थान ऊँचा था। क्योंकि, श्रीगौराङ्गने एक दिन इन्हें अपनी गोदमें बिठा कर पुत्र कह कर स्पर्शोपन किया था और बड़े आदरसे इनके गलेमें पुष्पमाला पहनाई थी। यथा—श्रीरूपकृत पद्यमें लिखा है—

“लीलाद्रीहिमहाप्रसुर्यमपि भो फोडे निधायत्पनी,
भक्तायूथमिम ममेति निगदन जानिष्यमेवात्मजम् ।
कपटेप्रारखुनन्दनं सजमदात् स्वीया स्वय कीर्त्तने,
भाले यस्य च चन्दन प्रतिनमस्त रूप नमाम्यह ॥”

इसी कारण रघुनन्दनका प्रणाम-श्लोक निम्नलिखित रूपमें लिखा गया है, यथा—

“मुकुन्दजनये नित्य व्रजकन्दर्परूपिणो ।
गौरप्रेमप्रदायैव गौरपुत्राय ते नमः ॥”

रघुनन्दनके प्रति महाप्रसुकी इतनी कृपा क्यों ? इसका कारण यह है, कि रघुनन्दन जैसे भक्त बहुत थोड़े थे। रघुनन्दनकी कृष्ण भक्ति पर महाप्रसु उनके प्रति

बहुत प्रसन्न रहने थे। कहते हैं कि पाँच धर्यांकी उमर स हा रघुमन्दनके चित्रमें कृष्ण प्रेमका उद्भव हो गया था। तभीसे वे मत्त कहलान बने। गुणवर्तिमार्हमसिंहा प्रथम लिखा है।

“कृष्णानेकरामुमात्रमधुरां च पञ्चसंस्कारम् ।

इत्या कल्प तुनिग्रं परिबरेत् भीगादीनायामिभं ॥

यद्यपि विशुद्धीयमा मुमजुरं नीरं च भाशोर्मुखा ।

काऽप्यं धीरघुमन्दना निबन्धे भीषणः प्रकृतक ॥”

मत्स्ये रघुमन्दनने अपणे गृहदेवता गोपीनाथको बचपनमें सङ्गृह लिखाया था। यह प्रसङ्ग पद्मस्यतदके उद्भवनामके पद्यमें सञ्चित्कार लिखा है।

रघुमन्दन बड़े ही मज्जम थे। उनका शरीरका रंग माँयला था। वे अकस्मर पीतवस्त्र ही पहना करत थे; सन्ने छन्ने बाजोंका सूडा बाँधत थे तथा देवताको प्रसादो पुष्पमाला गणेश पहनता बहुत पसन् करत थे। ऐसे वेगमें सुमञ्जस रघुमन्दनको एक समी विमुग्ध हाते थे।

रघुमन्दनका रचिन “गीतामासूतस्तोत्र” बहुत सुन्दर और सरल स श्रुतम लिखा है, पढ़ने हा इत्य विषय जाना है। रघुमन्दनने विवाह भी किया था। डाकुर कन्हार पुत्रका नाम था।

धोबिबासाचार्य और डाकुर तरोत्तमक समय रघुमन्दन प्रौढ़ वयस्क थे। समी उनका भाद्र करत थे। प्रतिप्रधान महोत्सवादिमें इनका बड़ा सम्मान होता था।

रघुमन्दन (स० पु०) रघुम् रघुपदा-सम्भूतान् मन्थ्य तीति नग्नि-न्पु। भीरामचन्द्र।

रघुमन्दन—वर्द्धमान प्रदेशके अन्तर्गत माङ्गप्रामक निवासी एक पण्डित। ये मिथ्यातन्त्रदर्शीय थे। इनक पिताका नाम था किशोरीमोहन गोस्वामी। इन्होंने मगधत सिद्धान्त मन्त्रसापरिणय, छन्दोमन्त्ररोटीका भादि बहुतसे स न्छन ग्रन्थ लिखे।

रघुमन्दन—१ ह्यम्पूत्रापद्विक प्रणेता। २ छात्राग्या पनिरस प्रदके रचयिता। ३ छात्रापाला प्रमाप्यतएव भीर रसपालपद्विक नामक दो ग्रन्थक प्रणेता। इन दो प्रयोगोंको भाषा और भाव पर्यवेक्षण करतैस पता चलता

है, कि ये दोनों ग्रन्थ स्मृतितत्त्वकार रघुमन्दनने लिखे हैं। ४ बृहस्पथमाला नामक ज्योतिषग्रन्थके रचयिता। ५ विशुद्धिपथक प्रणेता। ६ सङ्कल्पत्रिकाके रचयिता। इनको उपाधि महाचार्य था।

रघुमन्दन भाषावशिरोमणि—कलापनस्वार्थाध नामक व्याकरणके प्रणेता।

रघुमन्दनगिरि—१ आसामप्रदेशके धोइहृ तिलान्तर्गत एक शैलमाला। त्रिपुराज पाषण्डप्रदेशत क्रमशः उत्तर की ओर फैल गइ है। २ बृहस्पक अन्तर्गत एक गिरि श्रेणी।

रघुमन्दन गोस्वामी—रामरसायन और भीरुधामाधयो इय नामक दो बंगला काव्यके रचयिता। सी वर्षसे कुछ अधिक पहले इन्होंने वर्द्धमान जिसके माङ्गप्राममें ग्रन्थ प्रहण किया था। उनक पिता किशोरीमोहन एक प्रसिद्ध भागधत थे। उनको माताका नाम ऊपा भीर धिमाता का नाम मधुमती था। मिथ्यातन्त्र प्रसूके वंशमें रघुमन्दनका जन्म हुआ था। उनका वंशात्तिका इस प्रकार है—१ मिथ्यातन्त्र २ भीरमन्त्र, ३ बलदेव, ४ रामगोविन्द, ५ विश्वम्भर, ६ बलदेव ७ किशोरीमोहन। रघुमन्दन पिताके सबसे छोटे बच्चेके थे। इनसे बड़े तीन भाइयोंके भी नाम मिच्छने हैं।

रामरसायनमें उन्होंने महाकवि बाल्मीकि और तुलसीदासका अनुसरण किया है। कविने उत्तरकांडमें कदम्परसाधित सीतावयर्जन, लक्ष्मणवयर्जन सीताका पातालप्रवेश आदि शामिल नहीं किया है। यह ग्रन्थ उन्होंने अपने गृहप्रतिष्ठित धीरुधामाधवविद्याहक नाम पर उलभगे किया। इन धाधामाधवनी स्मरण कर उन्होंने ह्यण्य भीर धाधा शोकाविषयक बड़ा ग्रन्थ बनाया था। रघुमन्दनका दूसरा नाम मागधत था।

रघुमन्दन महाचार्य—नवद्वीपवासी एक विख्यात स्मृति शास्त्रविद्। स्मार्त महाचार्य का स्मार्त रघुमन्दन नाम से बहूत भयमें इनको प्रसिद्ध थी। इनक पिता हरिहर पन्थो महाचार्य नवद्वीपवासी एक स्मार्त पण्डित थे। उनका बनाया हुआ समय-प्रदीप नामक स्मृतिग्रन्थ प्रसिद्ध है। हरिहर नवद्वीपम स्मृतिका टोल कोड कर सङ्कलितो पढ़ाते थे। उनक बड़े सङ्कक रघुमन्दन भीर

छोटे यदुनन्दनने अपने पितासे ही लिखना पढ़ना सीखा था। यदुनन्दन कच्ची उमरमें ही पञ्चत्वकी प्राप्त हुए।

रघुनन्दनका जन्म कब हुआ था, ठीक ठीक मालूम नहीं। कहा जाता है, कि १६वीं सदीके प्रथम भागमें नवहोपमें इनका जन्म हुआ। तत्सगृहीत ज्योतिस्तत्त्व ग्रन्थमें रविमकान्तिगणनामें लिखा है—

"नवाष्टशकहोनेन शकाब्दाद्गणे पुरिता" इसमें १४८६ शकमें ज्योतिस्तत्त्वसङ्कलनका काल समझा जाता है। जनसाधारणके अनुमानके ऊपर निर्भर करके ज्योतिस्तत्त्वकी यदि उनकी अन्तिम अवस्थाका ग्रन्थ माना जाय, तो उनका जन्म १४२५से १४३० शकके किसी समय साधित होता है। अतएव श्रीचैतन्य महामधुके आविर्भावके प्रायः २०।२५ वर्ष बाद ही वे नवहोपमें अवतीर्ण हुए थे।

इनके बनाये हुए एकादशीतत्त्वमें, विष्णुपूजापद्धतिमें और आह्निकनस्त्रमें हरिभक्तिविलासग्रन्थका उल्लेख है। अतएव रघुनन्दनका सम्प्रह ग्रन्थ हरिभक्तिविलासके बाद सङ्कलित हुआ था, इसमें सन्देह नहीं।

सनातन गोस्वामिकृत बृहद्द्वैणवतोपिणो नामक भागवतके दशम स्कन्धकी टीकामें ग्रन्थसमाप्तिके समय इस प्रकार मर्यादा दी गई है,—“शाके पद्मसप्ततिमर्ता पूर्णयं टिप्पन्तो शुभा।” फिर उसी ग्रन्थके प्रथम अध्यायके ४थ श्लोकका टीकामें उन्होंने लिखा है,—“अन्यत्रगवद्भक्तिविलासटीकायां कथामाहात्म्ये विस्तारितमेवास्ति।” अतः हरिभक्तिविलासटीका बृहद्द्वैणवतोपिणोके पहले अर्थात् १४७४ शकके पहले रची गई थी, ऐसा अनुमान किया जाता है। इससे मालूम होता है, कि उन सब ग्रन्थोंका अंश उक्त समयके आगे पीछे सङ्कलित हुआ था। इसके सिवा उसके ग्रन्थमें रायमुकुट (१४३१ ई०) का उल्लेख और निर्णयसिन्धु (१६१२ ई०) में उनके स्मृतितत्त्वका उल्लेख देखा कर उन्हें दोनोंके मध्यवर्ती समयका आदमी कह सकते हैं।

रघुनन्दन बहुत शान्त स्वभाव और धीर प्रकृतिके आदमी थे। कहते हैं, कि हरिहरको अपने पुत्र (रघु-

नन्दन) की शिकायत नहीं सुननी पड़ी थी। रघुनन्दन जैसे जानते थे, वचनमें ही लिखने पढ़नेमें उनका चैमा ही ध्यान था। पाठशालाका पढ़ना समाप्त कर इन्होंने थोड़े ही समयके अन्दर ध्याकरण, अभिधान और काव्यादि मीमांसा लिये। इतने ही समयमें संस्कृतभाषामें इनका अच्छा अधिकार हो गया। वे इसी कच्ची उमरमें नई नई भावपूर्ण कविताएँ लिख कर सहपाठी और अध्यापकके प्रेमभाजन हो गये। इसी समयसे लोगोंने उन्हें होनहार युवक समझ लिया था।

हरिहर मङ्गकुलीन मन्तान थे। मङ्गकुलीनोंमें उस समय वाल्यविवाह और बहुविवाह चलता था। इस कुप्रथाके विरोधी हरिहरने जब काव्यादिका पाठ शेष नहीं हुआ, तब तक अपने पुत्रका विवाह नहीं किया। विवाहके बादमें ही रघुनन्दन पितासे स्मृति सीखने लगे। स्मृतिशास्त्रमें व्युत्पत्ति लाभ कर उन्होंने नवहोपके तान्कालिक सुविद्ययात स्मृतिवित् और मीमांसक श्रीनाथ आचार्यचणामणिके निकट पढ़ना आरम्भ कर दिया। कहते हैं, कि इन्होंने वासुदेवसे भी शास्त्र पढ़ा था।

रघुनन्दनका समकाल ही यथार्थमें बङ्गालकी अभिनव स्मृद्धिका समय है। इस समय महात्मा श्रीचैतन्य देव सनातन वैष्णवधर्मका मर्मद्वेष कर सभी वर्णोंके लोगोंको धर्मपथके पथिक बना रहे थे। इस समय तर्ककेशरी रघुनाथ शिरोमणिते अपने अलोकसामान्य प्रतिभावलसे तथा असाधारण तर्कशक्तिके प्रभावसे मिथिलाका गर्व चूर कर नवहोपमें न्यायकी प्रधानता स्थापनके साथ बङ्गालको विद्यागौरवमें श्रेष्ठस्थान दिया था। इस समय रघुनन्दन धर्मशास्त्रके लुप्तप्राय तत्त्वों की मीमांसा द्वारा उद्धार कर बङ्गीय हिन्दू-समाजमें अवश्य पालनीय बतलाने हुए उन्हें प्रचलित करनेके लिये तैयार हो गये। इससे बङ्गालमें एकादिक्रमसे विद्याधर्मका गौरव खूब बढ़ गया था।

इस समय बङ्गालके सिंहासन पर सुलतान सैयद हुसेन शाह बैठे थे। हुसेन शाहके दीर्घाण्ड प्रतापसे और प्रायः ४ सौ वर्ष मुसलमानी ससर्गमें पड़ कर उस समय बङ्गवासियोंका आचार-व्यवहार, रीति नीति बहुत

कुछ बड़ गढ़ थी तथा हिन्दूधर्मकी विमल ज्योति मिल पर
 दिन घटनी आ रही थी। सुमेलमानी संसर्गने समाज
 बन्धन हीरा गड़ गया था। ब्राह्मण और शूद्रमें कोई भेद
 न था, खान पानमें भी बहुत छुछ हेरफेर हो गया था।
 चिन्तने हिन्दू प्रकाशप्रयागमें इस्लाम धर्म प्रहण कर
 रहे थे। इस प्रकार सामाजिक विग्रह देघ कर सूक्ष्म
 दर्शी रघुनन्दनको समाज-संस्कारकी भावश्यकता सूख
 पड़ी।

धर्मशास्त्रोंकी भाणोचना करते समय रघुनन्दनको
 अच्छी तरह मालूम हो गया था, कि प्राचीन शास्त्रकारों
 का "मादा मुनिका नाता मत" है तथा मध्य स्मृति
 स प्राहृकगण भी इन मनोंका ठीक ठीक सामञ्जस्य न
 कर सक है। इस प्राचीन और मध्य स्मृतिकारोंका
 समबोधित मन-सामञ्जस्य न कर सकनेसे धर्मशुद्धान
 करना कठिन काम है तथा इसीलिये धर्मान्तरणक
 सम्बन्धमें समाजमें घोर विग्रहोद्भवा उपस्थित हुए हैं।
 हिन्दू समाज अब तक धर्मशास्त्रसे ग्रामित नहीं होगा
 नब तक धर्मशास्त्रका उपाय नहीं, समझ कर स्मात्तपोर
 रघुनन्दनने समाजबन्धनको दूढ़ करके मिये धर्मशास्त्र
 की गई टीका बनानेका सद्बुद्धि किया।

स्मृतिसंग्रह करनेमें प्रवृत्त होने ही से पहले मल
 मामलरुच सग्रह करने लग गये। इस ग्रन्थके प्रारम्भमें
 उन्होंने स्वरचित तख्यग्रन्थोंकी जो एक तासिका दी है
 यह इस प्रकार है,—

- मलिम्बुच दायमाग संस्कारो शुद्धिनिर्णये ।
- प्राथिविचर्च विवाह च शिवी अन्नाहमीश्रत ॥
- दुर्गोत्सव स्वरहनालकाशरिदित्थिये ।
- सङ्गमनचनेत्सर्वे दुपोत्सर्गवप मय ॥
- प्रतिज्ञायां परीक्षायां ज्वातिव बन्धुधर्मके ।
- दीक्षायामाहिक इत्ये क्व भीपुत्रोपमे ॥
- छामगुल्के यत्राभाके शुद्धहर्षवर्षावाये ।
- हरषशक्तिवित्त्वाने तस्य बरषानि यत्नतः ॥ ७

• १ ममलम्, २ दायमाग, ३ मन्त्रार, ४ शुद्धि ५ प्राय
 विचर, ६ विवाह, ७ शिवी, ८ अन्नाहमी, ९ दुर्गोत्सव १०
 स्वरहम, ११ परादरी, १२ अजागवायुल्मी, १३ सुग्देरी

रघुनन्दनने स्वष्टन स्मृतितत्त्वको इस प्रकार २८
 मनोंमें विभक्त कर २८ वर्ष घोर परिश्रमके बाद उसे
 समाप्त किया। इस क्षीयकालमें उन्होंने केवल शास्त्र
 ग्रन्थ पढ़ कर ही अपने मतकी स्थापन किया था, सो
 नहीं। मिथिला, काशी आदि नागा स्थानोंमें घूम कर
 तथा इन देशोंके लोगोंका आचार-व्यवहार देख सुन कर
 वे अपना मत स स्थापन कर गये हैं। किन्तु बङ्गालको
 छोड़ कर भारतमें और कहीं भी रघुनन्दनका मत प्रथ
 जिन नहीं देखा जाता है।

इन मद्धारस स्मृतितत्त्वोंमें हिन्दूके जन्मसे मृत्यु
 पदान्त समा करार्य द्विविध है। उक्त ग्रन्थके सङ्गठन
 क समय परस्पर विरुद्ध मतोंको एकवाक्यता निरूपण
 करनक लिये उन्होंने श्रुति, स्मृति, पुराण तन्त्रादि ग्रन्थ
 पन कर उन विषयोंका प्रमाण इद्भूत किया है। उन्होंने
 अपना असामान्य बुद्धिमत्ता मीमांसकता, सारप्राहिता
 और दूरदर्शिताके बलसे किसी किसी प्राचीन ग्रन्थका
 मत काटकर करके अपने मतकी प्रतिष्ठा की है तथा ग्रन्थ
 विशेषकी सहायतासे श्रुति और स्मृतिकी और प्रकारसे
 व्याख्या करके विरोधमद्भजन-पूर्वक प्राचीन धर्मशास्त्रकी
 विधियोंकी अलाएहनीय और बलवत् रचानेका प्रयत्न
 किया है। पर हां, उन्होंने समबोधयोगी बनानेक लिये
 अपने ग्रन्थमें स्वच्छपोलकल्पित युक्तियोंको स्थान नहीं
 दिया है, ऐसा भी कहा कह सकते हैं।

पारिभ्रम्य शोभूतयाहनने दायमागक सम्बन्धमें
 ज्ञेया भूपोर्देशन और स्पुत्पत्तिका परिषय विद्या है
 रघुनन्दनने भा आचार सम्बन्धमें उससे बड़ कर क्षमता
 विचाराई हैं। वर्तमान समयमें बङ्गालके लोग रघु
 नन्दनक ग्रन्थक अधिकार न होनेसे कोई भी स्मार्त
 नामसे प्रसिद्धसाम न कर सके हैं। किस प्रकार हासी
 का पराज्ञा करना होनी है, किम प्रकार उसका विचार

हरतर्ग, १४ यजुर्वेदीय द्वात्सय, १५ तामवेदीय दुपोत्सर्ग,
 १६ मय, १७ वेदमन्त्रा, १८ त्रिव्य १९ श्यपिय, २० बाम्बु
 पाग २१ हाडा २२ शक्ति, २३ इत्क, २४ मत्रप्रिया,
 २५ पुष्पाण्यजा २६ अन्वीय गाढ २७ यजुर्वेदीय भास,
 २८ शुद्धहर्षविवध ।

करना होता है तथा अन्यान्य कर्मचारियोंके प्रति कैसा व्यवहार करना उचित है, व्यवहारतत्त्वमें वे इसकी अच्छी तरह आलोचना कर गये हैं।

रघुनन्दनके ग्रन्थमें उस समयके प्रचलित आचार-व्यवहारमें बहुत परिवर्तन देना नवद्वीप और अन्यान्य स्थानोंके अध्यापक उनके मतका प्रतिपाद करने लगे। किन्तु इन्होंने ऐसी दृढ़ता और सुयुक्तिके साथ आत्म-पक्षका समर्थन किया था, कि उसके विरोधियोंको आखिर अपनी हार कबूल कर रघुनन्दनका मत स्वीकार करना पडा था।

इस शास्त्रीय विचारमें जयलाम करनेके बाद रघुनन्दनका यज्ञ चारों ओर फैल गया तथा दिनों दिन नाना स्थानोंसे छात्रगण उनके टोलमें पढ़नेके लिये आने लगे। रघुनन्दनकी सुशिक्षासे छात्रगणकी भी गुरु-भक्ति अच्छल हो गई थी। वे छात्र जो जब आगे चल कर स्वयं अध्यापक होते, तब अध्यापकके प्रति अच्छल भक्तिवशतः गुरुके ग्रन्थसे अपनी अपनी छात्रमण्डलीको शिक्षा देते थे। इस प्रकारचौड़े ही समयमें उनका स्मृतिग्रन्थ बङ्गालमें चारों ओर फैल गया। जिन सब प्राचीन स्मृतिकारोंके ग्रन्थसे इन्होंने ग्रन्थसङ्कलन किया था, उनके ग्रन्थका अध्ययन वा अध्यापना बिलकुल विलुप्त हो गई।

पहले ही लिख आये हैं, कि रघुनन्दनका स्मृतिग्रन्थ प्रचलित होनेके बाद प्राचीन रीति-नीतिमें बहुत परिवर्तन हो गया। हिन्दूशास्त्रके मतसे ब्राह्मणोंके लिये सिद्ध चावल, मछली और मसूरकी दाल खाना निषिद्ध था। मुसलमानों अमलमें कितने ही ब्राह्मण सिद्ध चावल, मसूरकी दाल आदि छिपके खाने लगे थे। रघुनन्दनने सामयिक व्यवहार देख कर निषिद्ध द्रव्य भक्षणकी व्यवस्था कर दी थी। निश्चितस्वमें इन्होंने आर्य ऋषियोंकी प्रणे-दित निधिविशेषमें निषिद्ध आहार्य वस्तुकी सम्यक् आलोचना की। फलतः इन्हींका नियम समाजमें विशेष रूपसे प्रचलित होने लगा। प्राचीन मतानुसार एकादशी-निधि परिमित काल उपवासी रहनेसे एकादशीका फल होता था। किन्तु इन्होंने एकादशीके सम्बन्धमें एक दिन उपवासका नियम निकाला। असुस्थ, रुग्ण शय्या शौगधावस्थाके कारण विधवा यदि एकादशीमें उपवास

न कर सकती, तो वे अन्यान्य शास्त्रानुसार अनुकूल कर सकती थी, परन्तु रघुनन्दनने शास्त्राय प्रमाण दिखलाते हुए इसे निषेध कर दिया है।

ब्राह्मण कुलीनोंके मध्य मेल प्रचलित होनेके सौ वर्ष-के भीतर वंशज-चूडामणि स्मात् रघुनन्दन आविर्भूत हुए थे। वे राष्ट्रीय समाजकी अवस्था देख कर बड़े दुःखित हुए तथा उच्च-सम्मानप्राप्त कुलीन ब्राह्मण समाजमें शास्त्रविहित आचार व्यवहार, विधर्मका अनुकरण, सनातन धर्ममें अविश्वास, परश्रीकातरता, परम्परा विद्वेषिता, मूर्खकी प्रधानता, पाण्डितके प्रति असम्मान आदि व्यभिचार देख उन्होंने इसके प्रतिविधानके लिये ही प्रधानतः 'स्मृतितत्त्व' प्रचार करनेका संकल्प किया।

मेलवन्धनके कारण पाताभायप्रयुक्त कुलान कन्याओंका विवाह कही वंश न हो जाय इस भयसे जब श्रीनाथाचार्य आदि कुलीन व्यक्तिगणने शास्त्रीय वचनको उद्धृत कर व्यवस्था कन्याका विवाह और बहु-विवाहका समर्थन किया, तब अनाचार-विरोधित वंशज समाजके मुसप्रात रघुनन्दनने अपने 'उद्गाहृतत्व'में उनलोगोंके मतको अशास्त्रीय घतलाते हुए खण्डन किया था।

प्रवाद है, कि रघुनन्दन स्मृतितत्त्व निकालनेके बाद ही पितृपुरुषोंका श्राद्ध करनेके लिये गया धाम गये। पिण्डदानको इच्छासे जब वे मन्दिर घुसने लगे तब पंडा लोगोंने उनसे असम्भव मूल्य मागा। इस पर वे गुस्सा कर चले आये और एक कोस तक गयाक्षेत्र का परिमाण निर्देश करके एक मैदानमें पिण्डदान करने तैयार हो गये। पीछे पंडा लोगों को जब मालूम हुआ, कि ये नवद्वीपके स्मात् भट्टाचार्य हैं, तब 'वे उन्हें बड़ी बिनतीसे श्रीमन्दिर ले गये और श्राद्धादि कराये। गयालियोंकी रघुनन्दनकी क्षमताका हाल मालूम था। बाहरमें पिण्डदान करनेसे सभी बङ्गवासी उनका पदानुसरण करेंगे, जिससे उनके स्वार्थमें धक्का पहुँचेगा, यह जान कर वे लोग उन्हें प्रसन्न करने लगे।

उनके स्मृतिसंग्रहकी सभी व्यवस्था प्रायः बङ्गदेशमें प्रचलित हुई है, केवल संस्कारतत्त्वकी उपनयन-विधि प्रचलित नहीं है। आज भी बङ्गवासी ब्राह्मणोंके प्राचीन मतानुसार ही उपनयन हुआ करता है।

अर्द्धम स्मृतिसंस्थके अनाया ये रामनाथपदति मरुत्पन्नमिन्द्रिका, त्रिपुरराराजान्ति, प्रमाप्यतस्य, ओमून बादन हृत्त वापमाणा टाका भीर द्वाकावाला नामक भीर भी किलने प्रथमि गये हैं । उन सब प्रयोगोंमें इन्होंने अनापारण्य पान्दिश्य, विचाररत्नाक, प्रगाढपुक्ति और मूढमर्दिताका अच्छा परिचय दिया है । इस प्रकार विद्यासुखिसम्पन्न हाते हुए भी अर्द्धम उनमें सेजामान भी न था । उनक मिते मरुत्पन्नमरुत्स्यके अगितम मूढोक्तसे उनका संघेष्ट सामान्य पाया जाता है—

“विद्वद्गुरुवक्तव्यं यद्वच मापित मया ।

अर्द्धमरुत्स्यं तुभ्यैव स्मृतिवत्स्यं सुपुत्रताया ॥”

इस प्रकार रघुनन्दन आजीवन शास्त्रामोचनार्थमें ध्यातून रूढ़ कर प्रायः स्मरन वर्षोंका उमरमें पद्यस्यकी प्राप्त हुए १० कुछ दिन हुआ उनका वंश शोध हो गया है । राष्ट्रीय कुलपत्रिकामें रघुनन्दनके पुत्र रमागति सिद्धान्त, रमापतिक पुत्र रामनाथ अर्द्धमाय और राम नाथके पुत्र गोपीनाथ अर्द्धमर्षक नाम पाये जाते हैं । रघुनन्दनके अर्द्धम तत्पत्नीकी दो टोका है, उनमें एक काशीराम वाक्यपतिकी और दूसरी गान्धिरामिकासी अर्द्धमर्षकीय राघामोहन गोक्षामोकी वनाह हुई है ।

रघुनाथ (सं० पु०) रघूनां नाथाः क्षुम्पादित्यान् गल्वाभावाः । श्रीरामचन्द्र ।

रघुनाथ—वंशात्का एक महाद्वर इन्द्रियोंका सङ्घार । इस की श्रीमधोर्षकी कथा वंगालियोंके हृदयमें जाग्रत है । बासक बुद्धय होनेसे जनता इसे राघो इन्द्रिन कहा करती थी । कर्कशकाके उत्तर काशीपुरमें जो बाह्य गिषमन्त्रिर् है उसे राघोने बनाया था, ऐसा प्रवाद है ।

रघुनाथ—१ आरयजेष्ठिप्रयोगके रचयिता । २ आघात पद्धति, द्वाभाद्यपद्धति और आद्यपद्धतिके प्रणेता । ३ अजीवनिर्णयक रचयिता । ४ केआयार्ककृत जातक पद्धतिकी टाकाके प्रणेता । ५ अण्डननूयामणि नामक वैद्यमत्त प्रथके रचयिता । ६ अण्डमर्गास्तरीकाके प्रणेता । यह नाटयणक सतीसा थे । ७ शैटरङ्गिणी नामक

उद्योतिप्रस्थके रचयिता । ८ गयानृत्य वा गयानुष्ठान पद्धति नामक ग्रन्थके प्रणेता । ९ जातिविदेकके प्रणेता । १० उद्योतिनिर्णयके रचयिता । ११ त्राम्बरीके टोकाकार । १२ उद्योतिप्रस्थके प्रणेता । १३ धर्ममैत्रिके प्रणेता । १४ पुढयोक्तममहेश्वरनाम नामक प्रथको नामचमिन्द्रिकाके टोकाकार । १५ पूर्णमासाके रचयिता । १६ प्रायश्चित्तनूतनक प्रणेता । १७ अष्टाशोध और अष्टाशोध नामक दो प्रथके रचयिता । १८ मक्तिमीमांसायुक्त और मक्तिमन्वासरिर्णय विवरणके प्रणेता । १९ भरतशास्त्र नामक अयनूतप्रथके रचयिता । २० भावरेतनसमुच्चय नामक उद्योतिप्रस्थके सङ्कल्पिता । २१ पतिधर्मसमुच्चय और पत्यवतकर्मपद्धति नामक दो ग्रन्थके प्रणेता । २२ वैद्यविलासक रचयिता । २३ शाङ्खायनयूनानुवाचधर्मपत्र रचयिता । २४ धीपतिटाका नामक उद्योतिप्रियपत्रक ग्रन्थके प्रणेता । २५ सरस्वतीमूलकयुग्मय नामक व्याकरणके प्रणेता । २६ सुमशोध और सुशोधमद्वरी नाम्नी उद्योतिप्रस्थक रचयिता । २७ दिक्प्रज्ञाटाकाके प्रणेता । २८ धर्माश्रुतमहोदधि नामक ग्रन्थके रचयिता तथा भनरुदेवके पुत्र । २९ एक कवि तथा जयरामके पुत्र । इन्होंने १६६६ ई०में रसिक रमणकाव्य बनाया । ३० प्रयोगनरकक प्रणेता । इनके पिताका नाम था मानुजी । ३१ जातककलोल या कलोल जातक नामक ग्रन्थक प्रणेता और लक्ष्मणके पुत्र । राम पूतानामें ये रघुनन्दन नामसे भी परिचित थे । ३२ शाङ्खायनीय मैवावरणप्रयोगक रचयिता । ये १५११ ई०में जीवित थे । इनके पिताका नाम अक्ष्मीधर तथा पितामहका नाम गोवन्द न था । ३३ विद्वद्गोक्षिक पुत्र य पथ नामक एक ग्रन्थ बना गये हैं । ३४ मुहूर्त्तमाहाक रचयिता । इनके पिताका नाम था सरस । चित्त पायन प्राज्ञधर्मार्थमें इनका अग्रम हुआ था । ३५ पद्यावली पुत्र एक कवि ।

रघुनाथ भाषार्थ—१ मरुत्पन्नचितोर्ध (मृत्यु १६६१ ई० में) तथा सत्यनाथ तीर्था (मृत्यु १६७४ ई०में)-के सम्भवासाधर्मप्रहणक पूर्व नाम । २ धोरायणीय काव्य और सुमद्रपरिमाण्य नाटकके प्रणेता । ३ मुहूर्त्तसर्वस्वके रचयिता । ४ यादवराधयोर्षके प्रणेता ।

रघुनाथ उपाध्याय—कबीन्द्र-चन्द्रोद्भवपुत्र एक कवि ।

● बङ्गर काठीय इतिहात प्रकाशकपत्र १५ मार्गके १९१५ शुद्धमें वंशवली देला ।

रघुनाथ कवि—१ भागवतचम्पूके प्रणेता । २ संस्कृत-मञ्जरी नामक व्याकरणके रचयिता ।

रघुनाथ कवि—काशीके रहनेवाले एक वन्द्यजन और भाषाके कवि । इनका जन्म १८०२ सम्बत्में हुआ था । ये वरिवंदा नरेशके दरवारी कवि थे । इनकी गणना भाषा साहित्यके आचार्योंमें होती है । इनके वनाये ग्रन्थ बड़े मनोहर हैं, वे ये हैं—रसिकमोहन, जगमोहन, काव्य कलाधर, शुकमहोत्सव ।

रघुनाथ कवि—रघुनाथ इनका छाप नाम था । इनका नाम पंडित शिवदीन था । ये रसूलाबादके रहनेवाले ब्राह्मण थे । इनके वनाये भाषामहिम्न आदि कई छोटे छोटे ग्रन्थ हैं ।

रघुनाथ कवि—कवीश्वर राजा अमरसिंह जोधपुरके दरवारी । इनका जन्म सम्बत् १६२५ में हुआ था । इनका पूरा नाम था रघुनाथ राय ।

रघुनाथ कवि—अयोध्यामें रहनेवाले एक मत्त कवि । इनका पूरा नाम था महन्त रघुनाथ दास । ये ब्राह्मण थे और पैतेपुर जिला सीतापुरके निवासी थे । तदनन्तर संसारसे चित्त उपराम होनेके कारण अयोध्याजोमें रहने लगे । इन्होंने रामचंद्रकी स्तुतिमें अनेक कवित्त दोहे वनाये हैं ।

रघुनाथगञ्ज—मुर्शिदाबाद जिलान्तर्गत एक नगर और प्रधान वाणिज्य स्थान ।

रघुनाथ चक्रवर्ती—बङ्गालके एक अद्वितीय शाब्दिक और अमरकोषके टीकाकार । बङ्गालके पाश्चात्यवैदिककुलमें आखोडाके शाण्डिल्यवंशमें इनका जन्म हुआ था । महा देवशाण्डिल्यके सम्बन्धतत्त्वार्णव और लक्ष्मीकान्त वाचस्पतिकी सद्बैदिक कुलपञ्जिकासे मालूम होता है, कि रघुनाथके वृद्ध पितामह रामानन्द हाजाके भयसे आखोडा समाजका परित्याग कर सामन्तसारमें आ कर बस गये । उनके पुत्र गङ्गानन्द और गङ्गानन्दके पुत्र रतिनाथ थे । रतिनाथने सामन्तसारके शौनक-समाज-दारवंशमें विवाह किया था । रतिनाथके पुत्र गौरीकान्त थे । गौरीकान्त वशिष्ठ प्रसिद्ध पण्डित श्रीकृष्ण-वेदभूषणकी कन्याके साथ गौरीकान्तका विवाह हुआ । उन्हींके गर्भसे रामनाथ और प्रसिद्ध शाब्दिक रघुनाथ उत्पन्न

हुए । सामन्तसारमें ही रघुनाथका जन्म हुआ था, इस कारण उन्हींने अपनी टीकामें "सामन्तसारनिलयः" कह कर अपना परिचय दिया है । पिताकी आश्रासे इन्होंने जन्माके कृष्णार्त्रेय गोतीय गोपालकी कन्यासे ध्याह किया था । उस स्त्रीके गर्भसे इनके रामकृष्ण और रामचन्द्र नामक दो पुत्र तथा एक कन्या उत्पन्न हुई । रघुनाथका दूसरा विवाह कोटाकीपाडके सुविम्बान्त शुनक-वंशमें हुआ था ।

इदिलपुरके कायस्थ जमींदार श्रीवल्लभराय चौधरीके उत्साहसे रघुनाथने 'त्रिकाण्डचिन्तामणि' नामक अमर कोषकी टीका लिखी । इसके सिवा उनका प्रतिष्ठित गोपालविग्रह है । उनके वंशधर आज भी उनकी सेवा करने आ रहे हैं । रघुनाथके सामन्तसारकी वासभूमि जलमग्न हो जानेसे उनके पुत्र रामचन्द्र इदिलपुरमें चले आये । इदिलपुरके अन्तर्गत आमतली और तुलासारमें आज भी उनके वंशधर रहते हैं । रघुनाथने धानुकाके कृष्णातक बलराम वाचस्पतिसे दीक्षा ली थी । धानुका-ग्रामस्थ देव-मन्दिरमें उत्कीर्ण शिलालिपिसे जाना जाता है, कि १६७५ शकाब्दमें बलराम वाचस्पतिने पिताकी मुक्तिकामनासे पावती सहित काशीश्वरमूर्ति स्थापित की । अतएव बलरामके मन्त्रशिष्य रघुनाथका उस समय जोधित रहना सम्भव है ।

रघुनाथ चक्रवर्ती—श्रीधरकृत वेदस्तुति टीकाके टिप्पणीकार ।

रघुनाथ तर्कवागीश—एक असाधारण तान्त्रिक, आगम-तत्त्वविलास नामक तन्त्रग्रन्थके रचयिता ।

रघुनाथ तर्कवागीश भट्टाचार्य—साध्यतत्त्वविलासके रचयिता । ये शिवराम चक्रवर्तीके पुत्र और चन्द्रवन्द्यके पीत ।

रघुनाथ तिरुमल सेतुपति—दाक्षिणात्यके एक हिन्दू नरपति ।

रघुनाथतीर्थ—एक विख्यात पण्डित और संन्यासी । इनका पूर्ण नाम कृष्णशास्त्री था । विद्यानिधितीर्थकी मृत्युके बाद इन्हे राजगढ़ी मिली थी । १४४३ ई०में इनकी जीवनलीला शेष हुई ।

रघुनाथदत्त—एक गीतलामङ्गलपालाके रचयिता ।

रघुनाथदास—काशीमाहात्म्यकीमुद्राके प्रणेता। रूप गोस्वामीभूत वानकेसिकीमुद्राकी एक टोका और साध त्सारतस्वस प्रह नामक दूसरे एक ग्रन्थके प्रणेता।

रघुनाथदास गोस्वामी देवा।

रघुनाथदास—ये महाशय रामानुज सम्प्रदायके महन्त थे। इस सम्प्रदायके महन्त गोविन्दराम भद्रदासक द्वारायें हुए। इन्होंने ईश्वर १६११ वर्षमें पिभ्राम सागर नामक एक ग्रन्थ प्रथम बनाया। इनके गिणप सन्तराम, कृपाराम रामचरण रामब्रह्म, काण्हर और हरिराम थे। रघुनाथदासके पुत्र देवदासजी इन्होंने महाराम हरिरामजीके शिष्य थे। इन्होंने फकीर होनेके अतिरिक्त अपने कुल गौत्र आरिका कुछ प्योत नदी लिखा है। ये सब महाराम भयोध्यामें बड़े महन्त थे। भयोध्यामें रामदासके रास्ते पर रामनिब स नामक एक स्थान है। उसी पर ये भोग करते थे और उन्नी स्थान पर इस महारामने यह प्रथम बनाया धारम्भ किया। रघुनाथदासने बन्धुनाम गोस्वामी तुलसीदासका अनुकरण किया है। यहाँ तक, कि कई जगह भाव्यामंत्रोंके भाव मां बिभ्रामसागरमें आ गये हैं। इन प्रथमने पढ़नेसे ज्ञान पहना है, कि रघुनाथदासजी पूरे मल ये और उन्हींमें मर्कोंके विशेषार्थ यह ग्रन्थ बनाया था। इसकी रचना प्रथमिमास और रामाश्वमेधक समान है। इस महारामने संस्कारक ग्रन्थोंका बहुत-सी कथाय लिखी हैं और कुछ श्लोक भी बनाये हैं। इससे चिदित होता है, कि ये संस्कारके जानतेवाले थे। इनकी भाषा गोस्वामी तुलसीदासकी भाषास मिलती जुलती है और उत्तमतामें प्रथमिमासके समान है। इनके वर्णन साधारण उत्तमताके हैं।

रघुनाथदास गोस्वामी—एक प्रसिद्ध मक वैष्णव। हुगली जिल्लेके अन्तर्गत सप्तमामके निकट हरिपुर नामक एक स्थान है। प्रायः बार सौ वर्ष पहले यह हरिपुर एक समुद्रिशाही प्राममें गिरा जाता था। हिरण्य और गोबर्धन नामक दो भाई यहाँ रहते थे। बीस लाख रुपयेके अधिकांश हिरण्य और गोबर्धनका प्रसिद्ध सप्तमाममें अच्छा संग्राम था। जातिके ये कायस्थ थे। महामुद्गर उनकी उपाधि थी।

इन दोनों भाइयोंमें छोटे गोबर्धनके ही पुत्रका नाम रघुनाथदास था। रघुनाथकी प्रकृति बहुत विशिष्ट थी। बचपसे ही वे संन्यासिणागोष्ठी तरह रखा करते थे। सब हरिदास ठाण्डु कुछ दिनके लिये हरिपुरके समीप बाँदपुर जाते थे, तब रघुनाथ उनकी मना-बहम किया करते थे। इस समय रघुनाथने पुरोहित बलराम भाँघादीके घर रह कर लिखना पढ़ना धारम्भ कर दिया। इसी समय महामुद्गर धैतव्यका नाम उनके कर्णगोचर हुआ। रघुने गौराङ्गका नाम सुनते ही उनका चरणोंमें आराम संप्रपण कर दिया। इस समय उनकी चैर्न अन्तर्हित हो गया। ये शास्त्राळाचना, सांसारिक सुख यहाँ तक, कि आहारनिद्राका परित्याग कर गौराङ्गमनुके दर्शनपामका उपाय ढूँढने लगे। उन्हींमें अकळे भाग कर गौराङ्गके समीप आनेकी चेष्टा की। रघुनाथके पिताको पुत्रक येमे आचरण पर बहुत डर हो गया और कर्दों ये भाग न जाय, इस प्रमिप्रायसे उन्हींमें पाँच पहरदार और सत्काने पुत्रकानेके लिये दो प्राङ्गण नियुक्त कर दिया। क्लेश यही नहीं संसारमें भाव्य करनेके लिये उसी छोटी उमर (१७ वर्ष) में एक उन्मुक्त-बौबना सुन्दरी बालिकाके साथ इनका विवाह कर दिया। किन्तु इससे कुछ भी फल न निकला। जिस प्रेमके प्रयत्न आकर्षणसे प्रज-गोपियाँ पति-पुत्रका परित्याग कर पागलका तरह कृष्णके पाठे रैतीली भूमिमें झूटती थी रघुनाथ इस प्रेमके आकर्षणकी छिन्न न कर सके। एक दिन रातको उनके गुरु यदुनम्नाचाचार्यमें सब इन्हे किन्ती काममें बाहर भेजा, तब वे गुरुकी आज्ञा पालन कर ऊर्ध्वाश्वास लेते हुए नोलाचलकी ओर चल दिये। अर्धरात्रिनिद्राका परित्याग कर बाह्य दिनमें वे नोलाचल पर प्रभुके साथ मिले।

रघुनाथके साथ महामुद्गने नदय व्यवहार किया। उन्हींमें रघुनाथकी अपने "त्रितोय स्वरूप" स्वरूप वामो-दरक हाथ समर्पण किया। धैतव्यचरित्तामृतमें लिखा है, कि रघुनाथका वैराग्य अनुभवनीय था।

रघुनाथ साहब वर्ष तक नोलाचल पर महाप्रभुकी सेवा करते रहे। महामुद्गके अन्तर्गतक बाद वे दृष्टावन गये। चरित्तामृतमें लिखा है, कि रघुनाथनेम रहे समय वे कस्ती

भी अन्न नहीं खाते, दिनमें केवल दो तीन पल मट्टा पी कर रहते थे। रात दिन वे राधाकृष्णकी चिन्तामें विभोर रहते थे।

महाप्रभुने प्रसन्न हो कर रघुनाथको एक गुञ्जा-माला और एक गोवर्द्धन-जिला दी थी। रघुनाथ उसीकी सेवा किया करते थे।

रघुनाथ पहले गोवर्द्धनके समीप और पीछे राधा कुण्डके निकट रहते थे। इस राधाकुण्ड और श्याम कुण्डका उद्धार हा रघुनाथकी एक कीर्ति है। उक्त विलुप्त दोनों तीर्थों का यदि उद्धार न होता तो वैष्णवोंके विषादकी सीमा न रहती।

यहा रहते समय रघुनाथने अपने अपूर्व संस्कृत-स्तवमाला ग्रन्थ (स्तवावलीग्रन्थ), संस्कृत ज्ञानचरित और मुक्ताचरित ग्रन्थोंकी रचना की। यहीं पर रहते हुए वे बङ्गभाषामें कुछ पद्य लिख कर बङ्गभाषाका गौरव बढ़ा गये हैं।

वृन्दावनमें श्रीरूपादिके अन्तर्धान पर रघुनाथ बड़े व्यथित हुए। उस समय उन्हें चारों ओर सूना दिग्गर्भ देता था। उन्होंने लिखा भी है—

“शून्यायते महागोष्ठ गिरीन्द्राऽजगरायते।

व्याधुतुपडायते कुपटं वीवातुरहितय मे ॥” इत्यादि

रघुनाथ श्रीशवावस्थामें नीलाचल पर आये थे। उनका नीलाचल जीवन तैलहीन प्रदीपके जैसा था—मनमें जरा भी प्रसन्नता न थी। वहा आश्विनी शुक्लाष्टादशी-तिथिको इनका प्राणान्त हुआ।

रघुनाथदास गोस्वामी—गुणलेशसुखद, मनःशिक्षा और सुरावली नामक ग्रन्थके प्रणेता।

रघुनाथ दीक्षित—१ आश्वलायनगृह्यकारिकाके रचयिता।
२ कवीन्द्रचन्द्रोदयोद्भूत एक कवि।

रघुनाथ पण्डित—कृष्णप्रेमतरंगिणी नामक भागवतके अनुवादक। इनकी उपाधि भागवताचार्य थी। ये गदाधर पण्डितके शिष्य थे। १६वीं सदीके पहले इन्होंने भागवतका बङ्गानुवाद प्रचार किया। १५७६ ई०में विरचित कविकर्णपूरकी गौरगणोद्देशनीपिकामें इस पुस्तकका उल्लेख है। अनुवाद प्रायः २० हजार श्लोकोंसे पूर्ण है।

रघुनाथ पण्डित—राजकोपनिग्रहण या राज्यवहागरकोप नामक अभिधानके प्रणेता। इनके पिताका नाम था नारायण। ये महाराष्ट्र केजरी शिवाजीके (१६६४-८० ई०) एक प्रधान मन्त्री थे।

रघुनाथपुर—मानभूम जिलान्तर्गत एक महकषा। गौराङ्ग-डाहॉसे ८ मील पश्चिम रघुनाथपुरके जंगलोंमें समा-गत गण्डशैलगाला दिग्गर्भ पडती है। वह भुवनेश्वरके एक हजार फुट ऊंचा है। उसकी तीन चौटा पैसी सीधी पडती है, कि इस पर स्तरजमें चढ़ना कठिन है।

रघुनाथपुर—बंगालके चौबिस परगनेके अन्तर्गत एक बड़ा गाव।

रघुनाथपुरम्—मद्रासप्रदेशके गंजाम जिलान्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० १६ ४३' ४०" ३० तथा देशा० ८४' ५१' ५० तक विस्तृत है।

रघुनाथ प्रसाद—ये चरप्यारोक्त रहनेवाले थे। इनका जन्म सन् ११०४में हुआ था। इन्होंने निम्नलिखित ग्रन्थ बनाये,—शृङ्गारचन्द्रिका, पद्मशतुदर्पण, काव्यसुधारता कर, रसिकव्यञ्जीकर, संगीतमुधानिधि, मोदमहोदधि, दुर्गाभक्तिप्रकाश, मनमोजप्रकाश, ज्ञानिपत्रामा, राधिका नमनिका, रमिकमनोहर, राधाकृष्णपचासा। इन ती मृत्यु संवत् १६४८में हुई।

रघुनाथ प्रसाद—साधारण श्रेणीके एक ग्रन्थ-रचयिता। ये जानपुरके रहनेवाले थे। इनका जन्म १६०१ संवत्-में हुआ था। इन्होंने निर्णयमंजरी नामक ग्रन्थ लिखा। रघुनाथ भट्ट—१ स्मृतिरत्न नामक ग्रन्थके प्रणेता। २ याज्ञवल्क्यस्मृतिटीकाके रचयिता। ३ मणिप्रदीप नामक ज्योतिषग्रन्थके सङ्कलयिता। ४ गोविन्दलोलामृत नामक ग्रन्थका बनानेवाला। ५ गोतप्रवरनिर्णयके रचयिता।

रघुनाथभट्ट गुर्जर—एक कवि। कवीन्द्रचन्द्रोदयसे इनका पता चलता है।

रघुनाथभट्ट गोस्वामी—श्रीगौराङ्ग प्रवर्तित छः गोस्वामी-मेंसे एक। वैष्णवसमाजमें ये सभी 'साधारण' गुण कह-लाते थे। इन्होंने वैष्णवधर्मका प्रचार करनेके लिये बहुत-से वैष्णव-ग्रन्थ प्रकाशित किये। इन छः गोस्वामीके यत्न-से ही वृन्दावन धामका नाम तमाम फैला तथा चौरासी वनोंका निर्णय हुआ था।

पद्मान्तोके तोरयत्नी रामपुर ग्राममें तपनमिध नामक एक साधु रहते थे। धागीराज महाप्रभु अपना पूर्ववङ्गकी यात्रामें तपनमिधके साथ मिले। उन्होंने तपनमिधकी साधवसाधनतत्त्वकी शिक्षा दी थी। तपनक प्रभुके साथ नवद्वीप आनेकी इच्छा प्रकट करने पर प्रभुने उन्हें वाराणसी आनेका हुक्म दिया और कहा कि यहीं पर मैं साथ मुलाकात होगी। तबनुसार तपन लोक साथ वाराणसी गये। लगभग १४२७ तकमें तपनमिधक एक पुत्र उत्पन्न हुआ उन्होंनेका नाम रघुनाथ था। पीछे उन्होंने मठ गोस्वामी उपाधिसे वैष्णवसमाजमें प्रतिष्ठा प्राप्त की थी।

श्रीमहाप्रभुने संन्यास ग्रहणके बाद जब पृथ्वायनकी यात्रा की, तब वे वाराणसीग्राममें तपनमिधक घर टहरे और मोक्षनादि किये थे। तपनके पुत्र रघुनाथ उस समय यथासाध्य महाप्रभुकी सेवा-सुभूषण करने थे।

श्रीमहाप्रभुके नौसाहस्र मंत्रों पर रघुनाथ भट्ट यहीं आ कर उनसे मिले। नौसाहस्र पर साठ मास रह कर उन्होंने प्रभुको सब खीसा देकी अथान् वैष्णवधर्ममें विशेष अभिरुचिता प्राप्त की।

रघुनाथ पाक कार्त्तमें सुदक्ष थे; नौसाहस्रमें वे स्वयं पाक कर श्रीमहाप्रभुको पित्नात थे। रघुनाथक पाक करनेका तरीका वैष्णवप्रथादिमें भी लिखा है।

नासाहस्रमें रघुनाथने जब काशा आनेकी आज्ञा मानी, तब प्रभुन उनके प्रति दया करमात हुए उन्हें इस प्रकार उपदेश दिया था, "विवाह न क ना पिता माता की आज्ञा पालन करना, मदा भागवतका पाठ करना और पुनः एक बार नौसाहस्रमें मिलना," इतना कह कर उन्हें आज्ञा पहनाई, बाँह हाथ जगन्नाथकी माछा दी और पीछे आभिर्भूत कर बिदा किया।

रघुनाथने काशी छूट कर प्रभुके भादेशानुसार विवाह नहीं किया। कौमार्य जनका मन्त्रमन्त्र कर वे काशीक्षेत्रमें विविध जास्रका अध्ययन करने लगे। धीरे धीरे वे एक सुपण्डित हो गये थे। पिता माताक स्वर्ग वासी होने पर रघुनाथ पृथ्वायन आये। श्रीकृष्ण और सनातनक साथ इनका परिचय हो गया।

कमलावती भी उनाउन गये।

वे श्रीकृष्णकी समामें भाग्यत पाठ करते थे। उस समय इनक जैना पात्रक और कोई भी न था। मन्त्र रक्षाकरमें इसका पूरा विवरण दिया है।

मठ रघुनाथका बनाया हुआ कोई भी ग्रन्थ देखनेमें नहीं आता। किसी किसीमें पूर्ववङ्गमें महाप्रभुकी लालाक सर्वधर्म उनके बनाये हुए एक ग्रन्थका उल्लेख किया है। मठगोस्वामी पृथ्वायनधाममें १५०१ तकका आभिर्भूत शुद्धशास्त्रोंको स्वर्गधाम मिथारे।

रघुनाथ भूषण—अध्वमेधपर्यन्त-संग्रह नामक ग्रन्थके सङ्कलपिता।

रघुनाथ मस्करो—धूर्वाग्राहाख्यको टोकाके प्रणेता

रघुनाथ मिश्र—सारसंग्रह नामक वैद्यकग्रन्थके रचयिता।

रघुनाथ मिश्र—दोहरप्रकाशक प्रणेता।

रघुनाथ यति—१ मगधधामकीमुक्तोके प्रणेता तथा लक्ष्मीधरास्वामीके गुरु। २ पूजाधिके प्रणेता।

रघुनाथ यतीन्द्र—तख्तसार नामक वैद्यकग्रन्थके प्रणयनकर्ता।

रघुनाथ पाधिक—अष्टाष्टकप्रयोग और द्वावशाहमैत्राकरणप्रयोगके प्रणेता। इनक पिताका नाम था अयाचित खरमठ।

रघुनाथ राय (दीवान —एक मन्त्रीतयिगारद, यद्यमानके चूपोमान निवासी ब्रजचिञ्जोर राय दीवानक पुत्र। वे अच्छी अच्छी कविता बनाते थे। यद्यमानाधिपति राजा जैजयचन्द्र बहादुरके भादेशसे इन्होंने दिल्लीके प्रसिद्ध मन्त्रीतयिसे सेवाक और भूपत् सीधा था। इनके रचित इवामाविषयक गीत कमलाकांत महाध्याय और रामनुसार राय प्रणीत गानोंके जैसे हैं।

रघुनाथ राय (राजा)—भारद्वा ब्राह्मणमूर्तिके एक राज्यापपाटी जमीदार। इनके पिताका नाम बाँकुडा राय था। लण्डीकाव्यक प्रणेता पिलवाल मुकुन्दराम धर्मयतीने इनका आशय साम किया था। पहले वे राजपरिवारके छोटे छोटे लड़कोंके शिक्षकरूपमें नियुक्त हुए। यहाँके मन्त्रमन्त्रेण गुरु कर उन्होंने लण्डीकाव्य प्रणयन किया था। कविदृष्ट्य देना।

रघुनाथ राय—एक मराठा सरदार। लोग इन्हें राघोबा या राघव कहा करते थे। इनके पिताका नाम पेशवा

१५ वाजीराव और पुत्रका नाम अन्तिम पेशवा २५ वाजीराव था। पेशवा २५ मधुराव इनके भतीजे थे।

पेशवा बालाजी रावकी मृत्युके बाद माधवराव और नारायण राव नामक इनके दो पुत्रोंमें सिंहासन ले कर झगडा हो गया। दोनों ही नाबालिग थे, इस कारण उनके भाई रघुनाथ राव दोनों पेशवा पुत्रोंके अभिभावक हुए।

१७७२ ई० तक राज्यशासनकी बागडोर माधवरावके हाथ रही। पीछे उनके मरने पर नारायण राव पेशवा-पद पर अभिष्टित हुए। चचा रघुनाथने बालक नारायण को सिंहासन परसे उतार कर स्वयं पेशवा बनना चाहा। उनके पड़यन्त्रसे गुमनामके हाथ नारायण राव गये। पेशवा देखो।

नारायण रावकी मृत्युके बाद रघुनाथ पेशवा हुए सही, पर वे अधिक दिन म्थायो न हो सके। उसी समय मालूम हुआ कि नारायण रावकी विधवा पत्नी गर्भवती है। मन्त्रियोंने इस बातका ढिंढोरा पिटा दिया। कोई उपाय न देख रघुनाथ मन्त्रियोंके विरुद्ध बलसंग्रह करने लगे। दोनों पक्षमें लड़ाई छिड गई। युद्धमें हार खा कर रघुनाथ सूरत भाग गये। इस घटनासे उनके जीवनकी उन्नतिकी आशा मदाके लिये विलुप्त हो गई। पापिष्ठ रघुनाथ राव अंग्रेजोंके साथ पड़यन्त्रमें मिल कर मराठोंके, विशेषतः हिन्दू-साम्राज्यके स्वाधीनता-मार्गमें काटा रोप गया है।

रघुनाथवर्मन् विन्दुरायकुलोत्तंस—लौकिक न्यायरत्नाकर और लौकिक न्यायसंग्रह नामक ग्रन्थके प्रणेता। ये गुलावराय वर्माके पुत्र तथा रामदयालुके छात्र थे। रघुनाथ शर्मा—प्राकृतानन्दके प्रणेता।

रघुनाथ शास्त्री पार्वतीकर—राधवाचार्यके छात्र। इनका बनाया न्यायरत्न और शङ्करपादभूषण बडा आदृत है। अलावा इसके कूटघटितलक्षण, चक्रवर्तिलक्षण, द्वितीय-स्वलक्षण, पञ्चादटीका, प्रगल्भलक्षण, प्रथमस्वलक्षण, मिश्रलक्षण, व्याप्तिपञ्चक, सामान्यनिरुक्ति द्वितीयलक्षण और सामान्यनिरुक्तिप्रथम लक्षण आदि बहुत-से उनके बनाये खण्ड न्यायग्रंथ भी देखनेमें आते हैं। ये कुछ समयके लिये पूनाके विश्वविद्यालयमें अध्यापक थे।

रघुनाथ ग्राह—मण्डला जिलेके गोगडवंशीय एक सामन्त राजा। १८५७ ई०के गदरमें मदद करने पर अंग्रेज-सरकारने उन्हें मार डाला और उनकी सारी सम्पत्ति जब्त कर ली। उक्त घटनाके पन्ध्रह वर्ष बाद अंग्रेज सरकार उनकी विधवा-स्त्रीकी वार्षिक (१२०) रुपये खुराक के लिये देने लगा।

रघुनाथ शिरोमणि—नवद्वीपवासी एक प्रसिद्ध नैयायिक। १५वीं सदीके श्रेष्ठ भागमें ये नवद्वीपमें प्रादुर्भूत हुए। एक व्यापक काने थे, इस कारण लोग इन्हें 'काणभट्ट शिरोमणि' कहा करते थे। अपनी असाधारण प्रतिभाके कारण विद्वत्समाजमें 'तार्किकचूडामणिभट्टाचार्य' वा शिरोमणि नामसे इनकी प्रसिद्धि थी। दुःखका विषय है, कि मिथिला और नवद्वीपमें प्रचलित कुछ किंवदन्तियोंको छोड़ कर इन असामान्य धौकिसम्पन्न पण्डितोंकी जीवनीसंग्रह करनेका कोई उपाय नहीं।

रघुनाथके जन्मके सम्यन्धमें नवद्वीपवासियोंकी धारणा है, कि नवद्वीपमें ही उनका जन्म हुआ था। किन्तु वैदिक सवादिनी नामक कुन्जग्रंथमें इनका जन्म-स्थान श्रीहट्ट बताया है। उक्त ग्रंथमें लिखा है, कि कात्यायन गोतीय गोविन्द चक्रवर्तीके पुत्र रघुपतिके साथ राजा सुविदनारायणकी कन्या रत्नावतीका विवाह हुआ। रघुपतिके छोटे भाई ही सुप्रसिद्ध रघुनाथ शिरोमणि थे। सीतादेवी उनकी माताका नाम था। प्रायः ४५० वर्ष पहले श्रीहट्टके अन्तर्गत पञ्चखण्डमें उन्होंने जन्मग्रहण किया। इस पञ्चखण्डमें उनके पूर्वपुरुष श्रांघराचार्य मिथिलासे ५३ त्रिपुराष्ट (६४२ ई०) में आ कर बस गये थे। इस वंशमें अनेक पण्डितोंने जन्म लिया था। रघुनाथके पिता भी एक सुपण्डित थे। उन्होंने शुद्धिदोषिकाकी 'दोषिका प्रभा' नाम्नी टीका लिखी है।

रघुनाथके पिताकी सासारिक अवस्था उतनी अच्छी न थी। उनके मृत्युकालमें रघुनाथ केवल तीन चार वर्षके थे, इस कारण तभीसे पुत्रके भरणपोषणका भार दुःखिनी माताके ही ऊपर रहा। दोनताके कारण उन्हें पेट भर भोजन भी नहीं मिलता था। अतः सहाय और सम्पत्तिहीन सीतादेवी भिक्षावृत्ति द्वारा अपनी जीविका-निर्वाह करने लगी।

बढ़ते हैं, कि प्रायः १३६१ गकारमें जब इनकी उमर सिर्फ पांच वर्षोंको धो तभी माताके आदेशसे ये निम्न नामान्ध शिबराम तर्वासिद्धास्तके टोलेमें पढनेके लिये जाने लगे। अक्षर पहचानते समय उन्होंने अपने अध्यापकमें दो 'ज', दो 'न', दो 'ब' और तीन 'श' का कारण पूछा था। यहाँ थोड़े ही समयमें ये आकर आदि ग्राहमें अच्छे पढ़ित हो गये। ग्याह पपकी उमरमें राजा सुविन्दारायणको बीजलसे ज्येष्ठ रघुपति के साथ राजकन्या रत्नावतीका विवाह हुआ। इस विवाहमें उनके आतिथार्थ बड़े नाराज हुए और सभी इनकी मित्रा करने लगे। आतिथि अपमानजनक वाक्य से उल्लेखित हो बालक रघुनाथ देशका परित्याग कर नवद्वीप चले भाये।

इस समय नवद्वीपका नाम थातेँ भीर फौला हुआ था। अहीदृके किलने पढ़ित नवद्वीप आ कर बास करने थे। सीतादेवाकी इच्छा थी, कि पुत्र नवद्वीप जा कर विद्याध्ययन करे। ये पहले पुत्रक साथ गङ्गास्नानकी कामनासे महामुद्राबाध गए। यहाँ कठिन रोगने उन पर आक्रमण कर दिया। माघमें जो मर गये थे, मभी उसी अवस्थामें उन्हें छोड़ चले भाये। आरोग्यतामक बाद रघुनाथ अपनेको असहाय देख कर एक उबार यणिकक साथ नवद्वीप भाये। यहाँ आ कर उन्होंने पसिद्ध नैषा यिक वासुदेव सार्धमीमका आश्रय लिया।

नवद्वीपमें प्रभाव है, कि रघुनाथके पुत्रविषयक बाद इन्द्रिमाता मित्रापूर्ति द्वारा पुत्रका भालन पालन करती थी। इस समय वासुदेव सार्धमीमका टोलम बहुत दूर देगने छात्ररूप ब्यायगत्य पढ़ने भाया करते थे। रघुनाथकी माता कुछ छात्रोंकी सेवा रहल कर बड़े कष्ट अपना भीर पुत्रकी जीवररक्षा करने वाध्य करती था।

रघुनाथकी प्रतिमा पांच ही वर्षकी उमरमें दिग्गद देने लगी थी। जिस कारण ये नक्षिप्यमें एक महापुण्य हो गये थे, उसका पूर्वामास उनके वात्यजीवनकी बड़ जनधनियेमें दिग्गद देता है।

एक दिन रघुनाथ माताके आदेशसे वासुदेव सार्धमीमके टोलमें भाग लाने गये। भाग ला देनेके लिये

टोलमें के एक छात्रको बार बार तंग करने पर उसने भाग ला कर रघुनाथके सामने रख दी। बालक रघुनाथ भाग लानेका क्रोध बरतन नहीं ले गये थे। अब कोई उपाय न देख उन्होंने हथेली पर बाहु रख लिया और उसी पर भागको रत्नना चाहा। इस समय वासुदेव साधर्मिण चतुर्पात्रोंमें उपस्थित थे। ये पांच धपके लड़केको चेम्ना प्रस्तुत्यप्रमति देख कर समस्तित हो गये। उसी दिन उन्होंने रघुनाथकी माताको बुया कर कहा, "तुम्हारा लड़का बड़ा ही बुद्धिमान है, भागे चल कर यह एक रत्न होगा। आजसे मैंने इसका पढ़ाने छिपानेका भार लिया।" वासुदेवसे इस प्रकार सुन कर माता अपनेकी सराहने लगी और उनके हाथ पुत्रका शिक्षामार सौंप भाय निश्चिन्त हो गए।

अनन्तर वासुदेवने शुभ दिनमें शुभसमयमें उसी साक्ष बासकके हाथ लड़ी ही। क प पढ़ते पढ़ते उन्हें ऐसा ब्यास हो भाया, कि पहले 'क' न पढ़ कर यदि 'ल' पढ़ा जाय, तो क्या दोष होगा ? इस प्रश्नको जब ये ज्ञय हल न कर सफ, तब उन्होंने वासुदेवसे पूछा। इस अदिक प्रश्न पर वासुदेव भारी मुश्किलम पड़ गये। उन्होंने रघुनाथ से कहा, कि स स्मृत वर्णमाला स्वरसम्भूत है अर्थात् कख, ताड, मूर्दा, श्ठ और इन्दकी सहायतासे उच्चारित होती है तथा यह वैज्ञानिक प्रणालीमें स पढ है। इस बार तो किसी प्रकार अध्यापक महाशयन सुटकार पाया, पर रघुनाथ कब छोड़नेपाछे थे। उन्होंने फिर पूछा, कि व्यञ्जनवर्णमें दो 'ज', दो 'न', दो 'ब' और तीन 'स' रहनेका कारण क्या ? अब वासुदेवको कुछ सूच्य न पड़े। उन्होंने समझा, कि यह सामान्य बासक नहीं है। प्रश्नक उत्तरम उन्होंने बासकको उच्चारणविधि, णत्व और स्वरविधि आदि ब्याकरण पढा कर 'ज' आदि वर्णों का प्रयोजनोयता अच्छे तरह समझा दी। अतएव एक वर्णमाला पढ़ानेमें वासुदेवको ब्याकरणका बहुत कुछ भ ज निपाता पड़ा था। इस प्रकार थोड़े ही समयमें रघुनाथने ब्याकरण, काव्य और अनिपात पढ़ लिया। पीछे ये रश्मिगान पढ़ कर वासुदेवसे ब्यायगत्य पढ़ने लगे।

वासुदेव जैत यत्नपूर्वक रघुनाथकी पढ़ाते थे, रघु

नाथ भी वैसे ही अध्यापकसाथके साथ पढ़ने लगे। बासु-
देव दिनमें जो पढ़ा देते, रघुनाथ उसे लिखा कर रात्रिमें
पढ़ते थे। जब कभी उनके मतसे अध्यापकका मत
नहीं मिलता, तब वे जग भी मझुचाने नहीं, तुरत
अध्यापकसे पूछ कर अपना सदेह दूर कर लेते थे।
धीरे धीरे वे अपनी प्रतिभाके बल तर्कशास्त्रमें अछटे
पारदर्शी हो गये। तर्ककी उत्कर्षतामें उन्होंने अपने
अध्यापकको जीत लिया था।

बासुदेव 'सार्वभौमनिरुक्ति' नामक जो टीका लिखी
थी, तीक्ष्ण बुद्धि रघुनाथ तर्कशुक्ति द्वारा उसमें अनेक
दोष निकालने लगे। यहा तक कि, नैयायिकराज गंगेशो
पाध्याय भी उसके हाथसे ध्वज न सके थे। उनके बनाये
चिन्तामणि ग्रंथमें भी कितनी भूल निकाल कर रघु-
नाथने छात्रावस्थामें ही अपने मतका समर्थन किया
और उस विषयमें अनेक प्रबंध लिखा कर वे अपने मत-
का प्रचार करने लगे। रघुनाथके ये सब अलौकिक
काण्ड देखा कर नवद्वीपके परिद्धत-समाजमें खलचली
मच गई।

इसी समय नवद्वीपमें श्रीचैतन्य महाप्रभु का आवि-
र्भाव हुआ। रघुनाथ और श्रीचैतन्यदेव सहपाठी थे, इस
कारण दोनोंमें बड़ी दोस्ती थी। रघुनाथ बालक निमार्त-
को पहले उतना ग्राह्य नहीं करते थे, पर पीछे उनकी
प्रतिभाका परिचय पानेसे उनका वह भ्रम जाता रहा।
रघुनाथको जब कभी किसी विषयमें संदेह होता था,
तब चैतन्यप्रभुसे ही उसे दूर कर लेने थे। एक दिन
सार्वभौमने रघुनाथसे किसी प्रश्नका उत्तर देने कहा,
प्रश्न कठिन था, उन्हें कुछ भी समझमें न आया। इस-
लिये उसे हल करनेके लिये वे नवद्वीपके निकटवर्ती एक
मैदानमें हमरक्षकके नीचे चुपचाप बैठ गये। चिन्ता
गोलना ही रघुनाथमें विगेष श्रुण थी। दिन रात उसी
जगह बैठ कर वे ऐसा प्रगाढ़ चिन्तामें मग्न हो रहे थे,
कि पक्षियोंके उनके गरीर पर मलत्याग करने पर भी
उन्हें जरा भी हेश न था।

दूसरे दिन सवेरे प्रातः कृत्यादि करके चैतन्य रघु-
नाथको तलाशमें उसी राह हो कर जा रहे थे। संयोग-

वश रघुनाथ पर उनकी दृष्टि पड़ी और उस अवस्थामें
उन्हें बैठे देखा वे विस्मित हो गये। हंसीके बहाने
उन्होंने थोड़ा जल उनके गरीर पर छिड़का और कहा,
"वनमें रह कर क्या फूट मूठ मोच रहे हो?" उठे
जलका छोट्टा लगनेसे रघुनाथ चमक उठे और चैतन्य
को देखा मुसकुराने लगे। चैतन्यको उत्तरमें उन्होंने कहा,
'मैं जो सोचता हूं, उसे तुम क्या समझोगे।' चैतन्यदेव
इस प्रकार चिन्तामग्न होनेका कारण जाननेके लिये जिद्द
करने लगे। रघुनाथके मुखसे सार्वभौमका प्रश्न सुन
कर उन्होने उसी समय उसका उत्तर दे कर कहा, 'इसी
छोटी बातके लिये तुम्हें ऐसी चिन्ता।' रघुनाथ चैतन्य-
की मीमांसा और मटुनरसे आह्लाहित हो बोले, "भाई!
तुम साधारण मनुष्य नहीं, महापुरुष हो।" तभीसे रघु-
नाथ अपने मतके साथ चैतन्यके मतका मिलान देना
कर स्वतःमिद्ध प्रानसे उसे लिपियद्ध कर रखाते थे।
निम्नोक्त एक दूमरी घटनासे रघुनाथको चैतन्यदेवका
प्रभाव मालूम हुआ था।

रघुनाथने छात्रावस्थामें एक न्यायकी टिप्पणी
लिखना शुरू किया। उन्हें विश्वास था, कि उन्हींका
ग्रंथ अद्वितीय होना और वे इसीसे न्यायि लाभ करेगे।
इस समय उन्हें किसी तरह मालूम हुआ, कि चैतन्य भी
न्यायकी टीका लिख रहे हैं। अतः उन्होंने यह ग्रन्थ
देखनेके लिये चैतन्यसे विशेष अनुरोध किया। चैतन्य
दिपानेकी राजी हो गये। एक दिन जाह्नवीके किनारे
उन्होंने अपना ग्रन्थ ला कर रघुनाथको पढ़ सुनाया।
चैतन्यके ग्रन्थमें अद्भुत विचारपद्धति और सिद्धान्त सुन
कर उनकी चिरपोषित उच्चाकाङ्क्षा दूर हो गई। यहां
तक, कि अधिमानसे उनकी दोनों आंखें उधड़वा उठीं।
यह देख कर चैतन्य बड़े दुःखित हुए और उनसे पूछा,
'भाई! तुम रोते क्यों हो?' रघुनाथने उत्तर दिया,
'मैंने सोचा था, कि इस ग्रन्थसे मेरी न्यायि होगी। किंतु
अभी देखता हूं, कि मैं जिसे दो पृष्ठोंमें समझा न सका
हूं, उसे तुमने एक सतरमें समझा दिया है। अतएव
तुम्हारा ग्रन्थ रहने मेरे ग्रन्थको कोई भी नहीं पूछेगा।' चैतन्यने रघुनाथकी उक्ति पर हंसीको रोक कर कहा,

'इसके सिधे चिन्ता क्यों ? यह अन्तर्जात्र फिर अच्छा बुरा क्या ?' इतना कह कर चेतन्यने स्वर्चित्त टोकाको ज्ञानगीर्ण विसर्जन दिया । तभीसे चेतन्यने स्वायत्तात्म पढ़ना छोड़ दिया । रघुनाथका यही प्रथम दांघिलि ही ।

रघुनाथ और चेतन्य स्वायत्तात्म अध्ययनकालमें एक पयके परिचि हो गये । स्वायत्तधर्मों दोनों एक मतका मय मन्त्रन करते हुए भी चेतन्यदेवकी तरह रघुनाथको धर्म रसविषामा बलवती न थी । इस कारण आशिर दोनों ही मिन्न पयके परिचि हो गये ।

रघुनाथकी प्रतिभा पर विभिन्न होत हुए भी वासुदेव कमी भी मरनचित्तने उनका मत ग्रहण नहीं करते थे । दोनोंके मतमें मेल नहीं पाता था, इस कारण रघुनाथ हमेशा उदास रहा करते थे । वासुदेवके उनके मन्त्राप का कारण पूछने पर उन्होंने कहा 'गुरुदेव ! मैं भाषकी युक्ति और मतको ग्रहण नहीं करता इसीम मुझे मारा दुःखा है । मन करता है, कि मिथिला जा कर एक बार पक्षपर मिश्र निकट अपना मत प्रकट कर आज ।'

वासुदेव उन्हें मिथिला जानेका हुकूम दे दिया । किन्तु उनके मिथिला जानेका दूसरा भी कारण था । उस समय नवद्वीपमें उपाधि देनेका क्रिसाको अधिकार न था । उपाधि सिधने पर भी परिहृत लोग उसे स्वीकार नहीं करते थे । रघुनाथकी इच्छा थी, कि वे पक्षपरकी स्वायत्तात्ममें पराजित कर नवद्वीपमें अपनी प्रधानता स्थापित करें और शत्रुपानी लानें । इसा उद्देशसे वे मिथिला गये थे ।

मिथिलाकी शत्रुपाठामें पढ़े स कर रघुनाथने देखा, कि मैवायिक कुपपति पक्षपरमिभ स्वायत्तात्म पढ़ा रहे हैं । पक्षपरका नियम था, कि कोश भागशुक छात्र यदि पढ़ने उनकी शत्रुपाठको छात्रोंको तर्कमें परास्त कर सकें, तभी यह उनसे बातचीत कर सक्ता है, अन्यथा नहीं । रघुनाथ छात्रोंको स्वायत्तात्मक अदिल प्रश्नोंमें पराजित करके मिश्रकीके समीप गये । पक्षपर भागशुक छात्रकी विद्या बुद्धि आदि बिना जमा भी उसकी और सु ह धमा कर बातचीत न करते थे । रघुनाथक 'ठक' पर विमोहित हो कर इन्होंने भी रघुनाथसे तीन दिन तीन प्रश्न किये । उनपर न दे सकनेक कारण रघुनाथ

अपने डेरे पर सीट आये । चाँधे दिन जब वे फिर मिश्रकीके पहाँ गये, तब उन्होंने देखा, कि मिश्रका घाटी नदी है और उनके आसनक सामने एक प्रथम खुवा पहा है । बड़े ध्यानसे वे उस प्रथमको देखने लगे । उस प्रथमके खुले पूछमें एक जगह एक अक्षप्रयोग का अतिरिक्त देन कर उन्हें मिश्रका संदिग्धम्यास मात्स्य हुआ, सा उन्होंने उस पर एक टोका मिका कर पुस्तक के ऊपर रख दी । उसी समय मिश्रकी घर भाये और पुस्तकक ऊपर बह भस्मिनय टोकाकाएड देन कर बड़े संतुष्ट हुए । उन्होंने प्रतिपादित सूत्रार्थको प्राह कर रघुनाथने पूछा 'यह टोका क्या तुमने मिला है ?' 'हाँ' उत्तर पा कर वे रघुनाथकी बुद्धिको सराहने लगे और उसी दिनसे उन्हें शिष्य बना कर स्वायत्तात्म सिखाने लगे ।

पक्षपरमिभ एक ही जगह बैठ कर छात्रोंका पढ़ाने थे और अरुत पढ़ने पर उन्हें भावस्वकीय विषयकी शिक्षा देन थे । उनकी छात्रमन्त्राली उनक पीछे बैठ कर अपना अपना पाठ पढ़ने थे । रघुनाथने नवद्वीपमें ही चिन्तामयिका अध्ययन किया था । उस विषयमें तर्क और प्रतिवाद द्वारा उन्होंने पक्षपरके तर्कअकिमस्यन छात्रोंको भी परास्त कर अध्यापक मिश्रके पास ही भागना भासन जमाया । एक दिन वे गुरुसे तर्कमें यहन करने लगे । उनका उद्देश्य था, कि ऐसा करनेसे गुरु संतुष्ट होंगे और उनके मनमें भ्रम दूर हो जायगे । तर्कमें संतुष्ट हो पक्षपर मिश्रने उनके प्रति क्यास करके परिषय पूजनेके बहाने कहा—

'भाग्यवदकः सर्वज्ञात् विरुद्धं विज्ञोक्तः ।

कन्ये विज्ञापनाः सर्वे का मन्नेरजाजना ॥'

रघुनाथने अध्यापककी इस व्यक्तिलिसे विद्व कर बड़े भस्मिमानन उत्तर दिया था,—

'ननुहीरुद्रोपेनशोभितः ।

वर्षिदन्तकिञ्चनरिगमिथिलोपिद्यः ॥'

इस उत्तरम मात्स्य होता है कि नवद्वीपवासो तर्क सिद्धान्त और कुजाशीपयामी सिद्धान्त उपाधिपारी वे दोनों भा जन्मसे स्वायत्तात्म पढ़नेके सिधे मिथिला गये थे । वे दोनों बर्तन थे, बट नहीं सकते । फिर दूसरी

जगह लिखा है, कि ये दोनों जब मिश्रजीके घर पर गये, तब रघुनाथको एक चाक्षुहीन देख कर छातोंने उनकी हँसी उड़ाई और उक्त श्लोक पढ़ कर उनका परिचय पूछा। मिश्रकी चतुष्पाटीमें नाना देशके छात्रगण काने पण्डितकी अद्भुत प्रतिभा देख कर मुग्ध हो गये थे।

इस समय पक्षधरमिश्र 'सामान्यलक्षण' नामक एक न्यायग्रंथ लिख रहे थे। रघुनाथके साथ मिश्रजीका पुस्तकके सम्बन्धमें वादानुवाद हुआ। उन्होंने सामान्यलक्षण अस्वीकार कर गुरुके ग्रंथमें अनेक दोष निकाले। इस पर पक्षधरने क्रोधान्वय हो बालक रघुनाथको श्लेषात्मक रूपसे बचनोंमें कहा था :—

“बन्तोजयानकृत् काण्य गये जागति स्फुटम्।

सामान्यलक्षणा कस्मादकस्मादवलुप्यते ॥”

रघुनाथके एक नेत्र न रहनेसे जो उन्हें काना कहा गया, इस पर उन्हें बहुत दुःख हुआ। इसलिये उन्होंने आक्षेप कर कहा था।

“योऽन्व करोत्यन्निमन्त यश्च बाल प्रबोधयेत्।

तमेवाध्यापक मन्येतदन्ये नामधारिणः ॥”

वातचीत करते करते दोनोंमें घोर तर्क आरम्भ हो गया। रघुनाथने त्रिन्तामणि ग्रंथमेंसे कई जटिल प्रश्न किये। पक्षधर बालककी असाधारण तर्कशक्ति और स्थिरबुद्धि देख कर दानो उंगली काटने लगे। सभी प्रश्नोंका जब वे ठीक ठीक प्रत्युत्तर न दे सकें, तब रघुनाथ सतुष्ट न हो कर उन्हें बार बार तर्क करने लगे। इस पर पक्षधरने नैयायिकका चिररघस्त नाक्यजाल फैला कर रघुनाथको परास्त करनेकी चेष्टा की, किन्तु रघुनाथ क्रम छोड़नेवाले थे। युक्तिकर्ममें अध्यापकको परास्त कर उन्हें अपना मत समीचीन स्वीकार कराया। इस प्रकार थोड़े ही दिनोंमें रघुनाथका नाम मिथिला भरमें फैल गया।

पक्षधर यद्यपि उनके साथ कभी कभी परास्त, अप्रतिभ और क्रोधान्वय हो जाते, तो भी उपयुक्त छात्रके प्रति उनका अनुराग सराहनीय था। रघुनाथको निर्जन गृहमें पा कर उन्होंने बड़े प्रेमसे उनका आलिङ्गन किया। दूसरे दिन उन्होंने रघुनाथका मत समर्थन करनेके लिये एक सभा बुलाई और सबके सामने अपनी

हार स्वीकार की। इस दिनसे नवद्वीपके शिरोमणि यथार्थमें भारतवर्षके शिरोमणि हुए।

इसके बाद एक दिन चतुष्पाटीमें कुछ अध्यापक और अनेक छात्र उपस्थित थे। इसी समय पक्षधरने व्याकरण और काव्यसम्बन्धीय शिक्षाका परिचय जानने के लिये उनसे पूछा, न्यायशास्त्रको छोड़ कर दूसरे किस शास्त्रमें तुम्हारा अधिकार है? उत्तरमें रघुनाथने कहा—

“काव्येऽपि कामलधियो वयमेव नान्ये

तर्केऽपि कर्त्तव्यो वयमेव नान्ये।

तन्त्रेऽपि यन्त्रितधियो वयमेव नान्ये

कृष्णोऽपि संयतधियो वयमेव नान्ये ॥”

यह श्लोक सुन कर पक्षधरने कहा, 'तुम तो नैयायिक हो, कविता बनाना किस प्रकार सीखा?' रघुनाथने उत्तर दिया :—

“कवित्वं क्रियदोन्नत्य त्रिन्तामणिसमीपिणः।

निपीतकालकृतस्य हरस्येवाऽपि नेत्रनम् ॥”

इस प्रकार उपस्थित अनेक कविता-रचनामें उन्होंने पक्षधरको मुग्ध किया था।

पक्षधरको विश्वास था, कि जो परम नैयायिक वा वैयाकरण होते, वे कभी भी सुकवि नहीं हो सकते हैं। आज उनका वह विश्वास रघुनाथकी कवितासे दूर हो गया। दुर्गम न्यायशास्त्रमें, जटिल व्याकरणशास्त्रमें, कोमल काव्यशास्त्रमें रघुनाथका समान अधिकार देख कर वे विस्मित हो गये। रघुनाथ जब चाहते, तभी महाकाव्यकी रचना कर सकते थे।

मिथिलामें रह कर रघुनाथ न्यायशास्त्रमें अद्वितीय हो गये। आर्यावर्त्त और दक्षिणात्य-निवासी छात्रगण उनके प्रति चिद्धेपाचरण करने लगे। मिथिलासे लौट कर उन्हें नवद्वीपमें चतुष्पाटी खोलने और छात्रोंको न्यायशास्त्रमें उपाधि देनेकी इच्छा हुई। इसके लिये वे मिथिलासे न्यायशास्त्रके ग्रंथ संग्रह करने लगे। पक्षधर एक भी ग्रंथ अथवा उसकी नकल किसीको अपने दृश ले जाने नहीं देते थे। अध्ययन शेष होने पर रघुनाथने नवद्वीप लौटनेके लिये पक्षधरसे आज्ञा मागी और साथ साथ कुछ न्यायशास्त्रके

प्रथम भी साथ जानेकी इच्छा प्रकट की। वे अनुष्वाठी कोठेंगे सुन कर पक्षधरक शिर पर धामो बजावात ही गया। प्रथम या उसकी नकल ले जानेसे वे बिलकुल इतकार चले गये। इस पर रघुनाथने क्रोधान्ध हो संकल्प किया, कि आज ही रातको गुलका काम तमाम कर डालूंगा। शेषहर रातको जब छात्र युव गहरी निद्रामें सा रहे थे तथा पक्षधर अपनी पत्नी के साथ शयन मन्दिमें गप गप कर रहे थे उसी समय रघुनाथ गुलकी हत्या करमनी कामनामे जागे तन्पार हाथमें लिये दरवाजे पर बहरे ही गये। उन्होंने अपने कानोंसे सुना, पक्षधरको स्त्री कह रही है, स्वामि! इस संसारमें कौन वस्तु भाषकी निमल अंशतो है? मैं या मेरी सन्तान या इस भारतीय आकाशका पूर्ण चन्द्र?" पक्षधरने कहा 'तुम, तुम्हारे सन्तान या आकाशका पूर्णचन्द्र, इनमेंसे कोई भी मेरे लिये निर्मल नहीं। सबदोषके रघुनाथ नामक जिस एक मधोन पुत्रके भा कर मुझसे समस्त न्यायशास्त्र सीखा लिया है, उसकी बुद्धि जैसी निमल वस्तु मैं इस संसारमें और किसीको नहीं देखाता।' रघुनाथ गुदरेषकी बात सुन कर रोने लगे, उनक मनमें गुलमकि जय बड़ी और वे अपनी बुद्धिको सिद्धारने लगे। उन्हें उस समय ऐसा मातृम हुआ कि, "मेरी जिस बुद्धिने उन्हें बंध करके लिये मुझे उमाहा है, उनका जिगाहमें मेरी यह बुद्धि जगहमें सबसे निर्मल धरतु जंभी।' इस प्रकार चिन्ता करते करते उनका हृदय अनुत्पाप-अनमसे वृष्य होने लगा। उनके रोने और दम मरनेका शब्द सुन कर पक्षधर दरवाजा खोल कर बाहर भाये। उन्होंने देखा, कि रघुनाथ जमीन पर गंगो तैल लकड़ार रखा कर फूट फूट कर रो रहा है। पक्षधरके इसका कारण पूछने पर रघुनाथने कहा, 'भापने मुझे प्रथम नहीं दिया और न इसकी नकल ही लेने कहा। इस कारण मैं क्रोधान्ध हो कर भाषका बंध करके लिये यहां भाया था। पीछे मेरे प्रति भाषके अकृत्रिम अनुरागकी बात सुन कर मैं ममाहत हो रो रहा हूँ। अभी मुझे तुपागल या और किसी प्रकारका प्रायश्चित्त दीजिये।' पक्षधर भीर उनकी पत्नी यह सुन कर अघाक् हो रही तथा उनकी

नकल आरमशानि ही उचित प्रायश्चित्त हुई, यह उन्हें समझा दिया। सबैठ होने पर रघुनाथने कहा, "गुदनेय! अभी नवद्वीप जामा मैंने स्वयं गित रमा। मेरा न्याय शास्त्राकरण भ्रम तक भी होय नहीं हुआ है। कुछ दिन और भाषके यहां ठहरूंगा।" पक्षधर बोले "जब तक तुम्हारे इच्छा हो, मेरे यहां रह कर न्याय शास्त्र सीख सकते हो।"

रघुनाथका प्यान एकमात्र प्रथम-संमर्शकी ही भोर लगा था। वे अनन्यमा और अनन्यधर्मा हो कर दिन रात पक्षधरके एक एक कर समा प्रथम कण्ठस्थ करने लगे। सभी प्रथमोंको कण्ठस्थ कर दो एक वर्षके बाद ही रघुनाथ विस्मिन्नवयी नैयायिक हो १३वीं सदीके भारतम् मे ही नवद्वीप छोड़े।

नवद्वीपमें अनुष्वाठी कोठनेके लिये रघुनाथने सङ्कल्प किया किन्तु पासमें पैसा नहीं, खोलते किससे। प्रवाद है कि इस समय नवद्वीपमें हरिषोप नामक एक धनी ग्वाला रहता था। उसने गाप रत्नैक लिये बड़ी गोशाला बनवाई। यह गोशाला आज भी 'हरिषोपका गुदाक' नामक प्रसिद्ध है। हरिषोप होने अपने कर्षसे उस गोशालामें रघुनाथकी अनुष्वाठी खोल दी। रघुनाथके विधोपाखनके बाद और शिक्षादानके पक्षसे छोड़े ही जिनमें नवद्वीप एक प्रवृत्त सारस्वत-मन्दिर हो उठा।

रघुनाथ अनक प्रथम लिख गये हैं, जैसे—तत्त्व चिन्तामणि-शोधित, पदार्थसङ्ग्रह, पदाथरतल-निरूपण, पदाथरतलनामक, भारततत्त्ववैदिक टीका प्रामाण्यवाद, नमर्षं वाद्, क्षणम गुर-वाद् आख्यातवाद् अनुत्पत्तिवाद, लोलावती टीका पण्डित अण्डकाप-टीका, गुणकारण वदोपकाय-शोधित, न्यायकुसुमाक्षलि-टीका न्याय खोलावतीप्रकाशदीप्ति, न्यायखोलावता विमूति, प्रवृत्त सूत्रार्थ और मसिस्त्रुक्त विवेक।

पत्रलिख उनके रचित अर्थोत्तरवाद् अपूर्णवाद रहस्य, समयप्रथम, आकाशावाद्, कैवल्यव्यतिरेक, गुणनिरूपण, धर्मितावच्छेदक प्रत्यागति, निदोभ्यान् पार्थ निरूपण, निरोधरहस्य, पक्षता पञ्चदशवीकोट, योग्यतारहस्य वाक्यवाद् स्यात्तिवाद, शब्दवादात्,

सामान्यनिरुक्ति, सामान्यलक्षण और रघुनाथीय नामक कई न्यायचरूप-ग्रंथ मिलते हैं।

मथुरानाथ और रामभद्र ही रघुनाथके सर्वप्रधान छात्र थे। कोई कोई कहते हैं, कि रघुनाथ आजीवन विवाह नहीं किया था। जब कभी कोई उनसे विवाह करने कहने तब वे कहते थे, 'पुत्र जन्याके लिये आठमाँ विवाह करता हूँ। 'रघुपत्तिवाद' मेरा पुत्र और 'लालावती' मेरी कन्या है।' रघुनाथ आजीवन शास्त्रचर्चामें निरत रह कर १६वीं सदीके मध्य भागमें परलोकको सिधारे।

रघुनाथ सम्राट्स्थपति—आह्निकप्रयोग, कालतत्त्वविज्ञान, पर्वनिर्णय, रचिसंक्रान्तिनिर्णय, गयाकल्पपद्धति, विश्व-च्छोकीभाष्य और दशरुकोटीका आदि ग्रन्थके प्रणेता। इनके पिताका नाम था माधव और माताका ललिता। रामेश्वरभट्टके पीत थे। इनके बड़े भाई विश्वनाथ और प्रभाकर थे। १५८३ ई०में प्रभाकरने रासप्रदीपकी रचना की। उनका बनाया कालतत्त्वविज्ञान १६२० ई०में समाप्त हुआ।

रघुनाथसरस्वती—एक अद्वितीय पण्डित। ये वाल्मीकि भावप्रकाशिकाके प्रणेता, रामचन्द्र सरस्वतीके गुरु और गोविन्दानन्द सरस्वतीके शिष्य थे।

रघुनाथ सार्वभौम भट्टाचार्य—एक विख्यात स्मृति और ज्योतिःशास्त्रविद्वत्। इन्होंने १६६२ ई०में राजा राघवकी आज्ञामें स्मारकव्यन्थार्णव और राजा कामदेवकी अनुमतिमें पदरुन्धमुक्तावली नामक ज्योतिषग्रन्थ प्रणयन किये। अलावा इसके उनका बनाया दायभाग सम्बन्धीय स्वत्व-व्यवस्थार्णवसमुच्चय और सिद्धान्तार्णव नामक वेदान्त ग्रन्थ भी मिलता है।

रघुनाथसिंह—विष्णुपुरके सर्वप्रथम हिंदू राजा। इन्होंने स्थानीय आदिम अधिवासी दुर्द्धर्ष वाग्दियोंको युद्ध-विद्या सिखा कर पेसा रणकुण्ड बना दिया था, कि एक दिन मारा विष्णुपुर राज्य मल्लभूमि कहलाने लगा। अभी वह विस्तृत राज्य बड़ा मान, चौरभूम और वांकुड़ा के अन्तर्भूक्त हो गया है।

रघुनाथकी दया, दक्षिण्य और रणनेपुण्य देख कर यागुद्री लोग उन्हें प्रकृत रघुनाथ (अयोध्यापति रामचन्द्र) समझने लगे। उनके राज्याधिकारके समय प्रजा उन्हें

'आदिमल्ल' कहने लगी थी। १२२ बङ्गाळ (७१५ ई०)में उनका जन्म हुआ। उनके सिंहासनारोहण-कालसे त्रिष्णुपुराब्द गिना जाता है। ३४ वर्ष तक इन्होंने राज्यशासन किया। पश्चिम भारतवासी सूर्यवंशीय राजा इन्द्रसिंहकी कन्या चन्द्रकुमारीसे उनका विवाह हुआ। लाऊग्राममें इनकी राजधानी थी। पुण्ड्रेश्वरी देवीमूर्त्तिकी स्थापना कर इन्होंने एक मन्दिर बनवा दिया था।

यह राजवंश कुथुम ऋषिके गोलसम्भूत है। एक-लिंग और पुराको ये लोग अपना कुलदेवता मानते हैं। इनकी मंत्र-दीक्षा ब्राह्मण-वैष्णवसे होती है। रघुनाथसिंह से ही विष्णुपुर-राजवंशकी श्रुति और सौभाग्य वृद्धि हुई है। विष्णुपुर देखो

रघुनाथ सूरि—भोजनकुन्डल नामक पाकशास्त्रके रचयिता।

रघुनाथेन्द्र यति—काममाहात्म्य और भगवत्साम-माहात्म्य ग्रन्थसमूहके रचयिता।

रघुनाथक (सं० पु०) रघु कुलस्वामी, श्रीरामचन्द्र।

रघुपति (सं० पु०) रघुनां पतिः। रघुवंशके स्वामी, श्रीरामचन्द्र।

"बहुपतेः वगता मथुरापुरी रघुपतेः वगतोत्तरकोशला।

इति विचिन्त्य कूश्मभ मनः सिर न सदिद जगदित्य-

वधारय ॥" (नृपगोस्वामी)

रघुपति—१ कुमारसम्भव व्याख्यासुधाके रचयिता।

२ जगदलोकेश्वरहस्य और तत्त्वचिन्तामण्या लोकसार नामक पञ्चधर मिश्रकृत तत्त्वचिन्तामण्यालोककी टीकाके प्रणेता।

रघुपति उपाध्याय—पद्यावलीधृत एक कवि।

रघुपति महोपाध्याय—पुरुषार्थकौमुदी और लोकसंग्रह नामक दो ग्रंथके रचयिता।

रघुपति महाय—एक भाषा-कवि। इनका जन्म-संवत् १६३०में हुआ था। ये गाजीपुर जिलेके गौसपुर गांवमें रहने लगे। इन्होंने तुलसीदासका जीवनचरित्र लिखा।

रघुपत्तमजंहुस् (सं० लि०) लघुपतनसमर्थपाद।

रघुपत्वन (सं० लि०) शीघ्रगामी, तेज जानेवाला।

(शृक् १५५६)

रघुपणि—भागमसार नामक तन्त्रके प्रणेता । इनके पिता का नाम रामचंद्र था ।

रघुमन्यु (सं० लि) मधुकोपी, मधुपेयी ।

रघुया (सं० मध्य०) शीघ्रगामी, तेजीसे जानेवाला ।

रघुयामन (सं० सि०) छद्म गमन, धोखा जानेवाला ।

रघुर्षा (हि० पु०) श्रीरामचंद्र ।

रघुवंश (सं० पु०) रघुकुलके राजा, श्रीरामचंद्र ।

रघुराजसिंह—अंगदीन शतक नामक सन्तन-ग्रन्थक रचयिता ।

रघुराजसिंह महाराज—रोषाँ-नरेश । रोषाँ-नरेशोंमें महा राजा जयसिंह, उनका पुत्र महाराज विष्णुनाथसिंह और विष्णुनाथके पुत्र महाराज रघुराजसिंह तीनों बहुत अच्छे कवि थे । ये महाराजगण बघेल ठाकुर थे ।

महाराज वीरध्वज मोहनजीके पुत्र महाराज ध्याम देवने गुजरातस आ कर मोरों गोडों, छोटियों आदिसे बभेमकरइ कील कर यहाँ शासन जमाया । कहत हैं कि इस कुटुम्बके पूर्वपुरुष ब्रह्मचोलेक अ ब्रह्मके पानी पर्व सूर्यजाने उत्पन्न हुए थे और इसीप्रिये सूर्यवंशी कहलाये । ब्रह्मचोलेकसे छे कर करणशाह तक ५०३ पुरतें चोलेकजी कहलातों रहत । करणशाहका पुत्र सुलक्ष्मिण हुआ । तबने वीरध्वज पर्यन्त १८२ पीढ़ियाँ मोहनजी कहलाइ । वीरध्वजके पुत्र ध्यामदेव ने यत्नमात्र महाराजिराज शौर्यचन्द्रमरण रामानुजमसाद सिंह जू देय बहादुर तक ३२ पुरतें हुई हैं । य लोग बघेल कहलाते हैं ।

महाराज रघुराजसिंहका जन्म संवत् १८८०में हुआ था । अपने पिताके स्वर्गनाम पर ये सं० १९११में गयो पर बैठे । आप पूर्ण परिश्रम, हिम्मी और सहृदयके अच्छे कवि और मृगवा-व्यसनी थे । आपने बहुतसे छात्रे बड़े प्रथ बनाये हैं और ११ शेर, १ हाथी १६ चीते और हजारों अन्य मृग मी मयन हाथसे मारे । आप बड़े बानी और भारी मज्ज मी ये २००० विष्णुनाम प्रतिदिन जपते थे । उपर्युक्त कार्योंमें समय अधिक लगानेके कारण आप राज्यप्रबंध कम कर सकते थे । मरण कालक ५ वर्ष पूर आपने राज्यप्रबंध विछकुल छोड़ दिया और अ गरीबी सरकारकी औरत प्रबंध होने लगा । सिपादो विद्वीहमें आपने सरकारका साथ दिया था ।

आप बड़े ही कविता-रसिक और कवियोंके कर्मपूत हो गये हैं । इन्होंने कविता प्रकृष बनाई है । इनके रचे हुए प्रथोंके नाम ये हैं—सुन्दरशतक, विमलपत्रिका, कविमणीपरिणय, धानम्बाभुनिधि, भक्तिबिभास, रहस्य पञ्चाध्यायी, मकमाल रामस्वयम्बर, यदुराजयिलास, विनयमाहा, रामरसिकापथी, गद्यशतक, चित्तहृद माहात्म्य, मृगया शतक, पदाबली, रघुराजयिलास, विनय प्रकाश श्रीमद्भागवत माहात्म्य, रामभद्रयाम, मानवतर्भाया रघुपतिशतक गङ्गाशतक, धर्मविलास, शम्भुशतक, राजरत्न, हनुमत्चारित्र भ्रमरगात, परमप्रयोग और अंगनाघटाशतक । इनमेंसे सब प्रथ इन्होंने महाराजने मही बनाये हैं किन्तु वा एकक कुछ भाग इन्होंने स्वयं रचे और कुछ उनका भावित कवीभ्रतोंन बनाये ।

इनकी कविता बहुत बिज्ञाद और मनमोहनी होती थी । इन्होंने विविध छन्दोंमें कविता की है ।

रघुराम—ये अछड़ाबादमें रहते थे । इन्होंने समासार और माधवविलास ग्रन्थ रचे ।

रघुरामग्रह—कालनिर्णयनिदान और जमकी टीका तथा सिद्धान्तनिर्णय नामक प्रथके प्रणेता । गिरिनरराज महाद्वयविदके प्रार्थनानुसार इन्होंने मुजमगरमें रह कर १६-१३-५४ ई०में उक्त प्रथकी रचना की । इनके वितानका नाम त्रयराम और पितामहका धैकृष्ट था ।

रघुशावदास—रामसिद्धान्त-संप्रद नामक प्रथके टीकाकार ।

रघुवंश (सं० पु० क्री०) रघोयज्ञा मन्त्रतिसुर्णनीयो यस्मिन् यथा रघुर्ना यशमतिवज्रय हनमिति अण्ड सुकृत् । १ महाकवि कालिदासका रचा हुआ एक प्रसिद्ध महाकाव्य ।

“रघुयामन्त्रव वरुषे वनुयाम्निमोऽपि स्य ।
वदुष्येः कथ माग्वे वापकाव प्रयोषिः ॥” (रघु० १।६)

कालिदासकृत महाकाव्योंमेंसे रघुवंश सबसे प्रथम है । यह रघुवंश १६ सर्गोंमें समाप्त है । इसमें बिकीपसे छे कर अन्तिवंग तकका विवरण आया है ।

कालिदास हेतो ।

(पु०) २ महाराज रघुका वंश वा ज्ञानदान जिसमें रामचंद्रमी उत्पन्न हुए थे ।

तमर, नागजीवन नागज पिचर, चक्र, कस्तूरी, सिंहार, आनीलक भीर स्वहेत। मासप्रकाशके मतमें रक्त दो प्रकारका होता है गिरिज और मिश्रक। गिरिज भेद्य और मिश्रक महिन जनक होता है।

उत्तम रक्तका मक्षण—जो रंगा बहुत मफेद, मुन्दायम, हनका, निर्मल बिहना अल्पून उंड होता है जिसस तार और पत्तर बनाये जा सकते हैं और जिसके कानेसे दुरत यमि होती है वही रंगा अच्छा है।

शोषित रक्तका गुण—शोषित रंगा कुछ मीठा, कडा, गरीरको गरम रखनेवाला, कुछ, मेह, कफ, पाण्डु और श्वासको नाश करनेवाला, चक्षुका अहितकर, कुछ पित्त परदक, सपू और सारक होता है। सिंह जिस प्रकार सङ्गमें हाथियोंको मार डालता है, रंगा भी उसी प्रकार मय प्रकारके प्रमेहको नाश कर मनुष्यको मजबूत बनाता है। यह प्रबल इन्द्रियका उत्तेजक और सुख दायक है।

बिना शोषा हुआ रंगा बियक समान है। इसका संयम करनेसे शरारमें आक्षेप कम्प, गुल्म, कुष्ठ, मूत्र, पात शोष, पाण्डु, प्रमेह मगन्द, रक्तविकारज रोग, क्षय कफज्वर, सूक्ष्मा, सुषुप्तोरोग और पयरा आदि रोग उत्पन्न होन हैं।

शोधनविधि—रंगिको राका कर लेल, मट्टा, कांठी गोमूत्र, कुलपी, ठण्डका काड़ा और अकतनका दूध हर एक वस्तुमें तीन तीन बार चरक डालने अथवा बूनेके जलमें आध पहर तक डुबाये रखनेसे रंगा शोधित होता है।

मारणविधि—एक मिट्टीके बरतनमें रंगा गळा कर उसमें रंगिका चतुर्पयि इमले और पीपसकी छासका चूर डाले। पीछे दोपहर तक एक लोहके हत्येसे घोटने पर रंगा मसम हो जायगा। अनन्तर उस मसमके बराबर हरिताल चूर्ण मिखा कर अणुरतमें मर्दन करे। फिर उसका द्वामांश हिताल मिला कर एक पहर तक पुन पाचमें पकाये। इस प्रकार द्वा बार पुटपाकसे रंगा मारित होगा। अथवा, रंगिको हरितालचूर्णक साथ मिला कर और अफयनके दूधमें मस कर घूने पीपसके छिलककी भागमें सात बार पुटपाकमें पकानेस रंगा

मारित होगा। अथवा, एक मिट्टीके बरतनमें चिगुय रंगिको गळा कर उसमें उतना ही अथाङ्गचूर्ण मिलाये। पीछे एक लोहेके हत्येसे जिसका बगला भाग मोटा हो, अब तक रंगा मसमाकारमें परिणत न हो जाय तक धीरे धीरे घोटने रहे। अनन्तर उस मिश्रित चूर्णको भाग परसे उतार कर एक डकनेमें रके और ऊपरसे एक दूसरा डकना डेर दे। दोनोंका मुह बंद करके तेज आंचमें पकानेसे रंगा मारित होगा। अथवा रंगिको एक घडेमें गळा कर उसमें पहले हल्दीका चूर, पीछे अशवायनका चूर, उसके बाद जीरेका चूर और तब इमलाको छासका चूर तथा सबसे पीछे पीपसकी छासका चूर मिलावेसे रक्त मारित होता है। अथवा पहले रंगिका पतला पत्तर बना कर उसमें रंगिका चतुर्पयि पारैका छेप दे। पीछे इमलीकी छाल और चापसको एकत्र पीस कर एक पिंवा कर बनाये और उसीमें रंगिका बरतन रख कर गजपुत्रमें पाक करे। अनन्तर उस रंगिमें फिरसे पहलेके बीसा पार। छाप कर शिरीषकी छाल और हल्दीका चूर्ण घृत कुमापीके रसमें पीस पिएड बनाये। उसी पिएडमें रंगा भर कर गजपुत्रमें पाक करनेसे रंगा मारित होगा। अथवा, बहेड़ा और मिलायेके छिलकेको सबमें पीस कर उससे रंगिका बरतन ढीप दे। पीछे उसे ठिंखकी खनीमें भर कर बालीस बार गजपुत्रमें पाक करनेसे रंगा मारित होगा।

मुक्तादिमहाज्वर, मन्मथज्वरघटी, रतिपत्तम, रस राजेश्वर, वृहत्कस्तूरीमैरव महापञ्चघटी, पियमज्वर। न्तकलीड, वृहच्चिन्तामणिरस, महाज्वरचक्रुश, चूडामणि रस मानुचूडामणि, महापञ्चघटीरस, वृहत्तकपाक-घटी ह्मिपूजिजलस्रवरस, ह्मिकापुनररस, अर्केश्वर रस, वृहत्काञ्चनास्रस क्षयकेशरी खरुनीपिञ्जासरस, महोदधिरस कुमुदेश्वररस, उन्मादमञ्जरी, महाक्षिप्य कामानरस मदाखरुनीपिञ्जासरस, आमवातगर्जसिंह मोदक सर्वाङ्गसुन्दररस, त्रिनेत्राक्षरस, इन्द्रघटी चूडा बखेड, वृहत्प्रियाङ्गुररस, आनन्दमैरवरस, चन्द्रप्रभा घटी चक्रेश्वररस, वृहत्प्रज्ञेश्वररस, मेहकेशरी, योगेश्वर रस, तारकेश्वररस, रागनादिलीड, वृहत्सोमनाथरस, पाणिशोषणरस, त्रिपयामन्दरस प्रद्वामन्तकीड, प्रद्व

न्तकरस, गर्भचिन्तामणिरस, बृहदसजाद्वल, श्रीमन्मथ-
रस, पूर्णचन्द्ररस, मकरध्वज, वसन्तनिलकरस, वसन्त-
कुसुमाकररस, नित्यारोगेश्वररस, मेहकुलान्तकरस,
महाकामेश्वरमोदक, बृहत्कामेश्वरमोदक, बृहत्पूर्णचन्द्र-
रस और हेमाद्रिरस प्रभृति औषधोंमें रागाका व्यवहार
होता है।

इस रङ्गधातुको अङ्गरेजीमें Tm कहते हैं। रासाय-
निक मिश्रणमें इसमें स्वभावतः दो प्रकारके गुण आ
जाते हैं। इसका Protoxide, sesquioxide और
Peroxide तथा उनका Chlorides अवस्थानुसार
मिलनेसे यह विशेष गुणयुक्त हो जाता है। उक्त Proto-
salts रेणुमें, Persalts रुईमें और Sesqui-salts
कभी कभी दोनो के रंगानेमें व्यवहृत होता है। इस
प्रकार मिश्रणमें Stannites और Stannates नामक
जो अम्लरस उत्पन्न होता है, उससे सती कपड़े रगाये
जाते हैं। यूरोपीय वैज्ञानिक लोग इसके व्यवहारसे
बच्छी तरह अवगत हैं। विशेष विवरण प्रपु शब्दमें देखें।

(पु०) १ रत्नज घञ् । २ राग, रंगानेवाली वस्तु
(भारत ५।३६।१०) ३ नृत्य, नाच । (विष्णुपु० २।७।२०)
रजति आसज्जति मल्लोऽल रत्न अधिकरणे घञ् । ४
रणभूमि, युद्धक्षेत्र । (मेदिनी) ५, नाट्यस्थान, नाटक
खेलनेका घर । ६ टङ्कण, सुहागा । ७ खटिरगार ।
८ किसी द्रव्य पदार्थका वह गुण जो उसके आकारसे
भिन्न होता है और जिसका अनुभव केवल आँखोंसे ही
होता है, वर्ण ।

जब पहले पहल किसी वस्तु पर हमारी निगाह
पड़ती है, तब हमें अक्सर दो ही बातोंका ज्ञान हुआ
करता है। एक तो उसके आकारका और दूसरा उसके
रंगका । वैज्ञानिकोंने सिद्ध किया है, कि रङ्ग यथार्थमें
प्रकाशकी किरणोंमें हो होता है और वस्तुओंके भिन्न
भिन्न रासायनिक गुणोंके कारण ही हमारी आँखोंको
उनका अनुभव वस्तुओंमें होता है ।

विशेष विवरण वर्षा शब्दमें देखें ।

६ किसी विविध रासायनिक क्रियाओंसे बनाया हुआ
पदार्थका व्यवहार किसी चीजको रंगने या रंगीन बनाने
के लिये होता है । १० दूसरेके हृदय पर पड़नेवाला

शक्ति, गुण वा महत्वका प्रभाव, धाक, रोष । ११
शरीरका ऊपरी वर्ण, बदन और चेहरेकी रंगत । १२
युवावस्था, जवानो । १३ सौन्दर्य, गोमा । १४ प्रभाव,
अमर । १५ क्रीडा, कौतुक । १६ युद्ध, लडाईं ।
१७ दशा, होलत । १८ आनन्द, मजा । १९ मनकी
उमग या तरंग । २० अद्भुत व्यापार, काण्ड ।
२१ प्रेम, अनुराग । २२ ढंग, चाल । २३ भांति,
प्रकार । २४ चौपडकी गोटियोंके खेलके कामके लिये
किये हुए दो कृत्रिम विभागोंमेंसे एक । चौपडकी कुल
गोटियां १६ होती हैं जो चार रंगोंमें विभक्त होती हैं ।
इनमेंसे विविध दो रंगकी आठ गोटियां 'रंग' और शेष
दो रंगोंकी आठ गोटियां 'बदरंग' कहलाती हैं ।

रङ्गकार (सं० पु०) चित्रकार, रंग बनानेवाला ।

रङ्गकारक (सं० पु०) रङ्गकार द्रव्य ।

रङ्गकाष्ठ (सं० क्ली०) रङ्ग रञ्जितं काष्ठमस्य । पतङ्ग
नामकी लकड़ी, वक्रम ।

रङ्गक्षेत्र (सं० क्ली०) १ रङ्गक्षेत्र, अभिनय करनेका
स्थान । २ किसी उत्सव आदिके लिये सजाया हुआ
स्थान ।

रङ्गगृह (सं० क्ली०) १ रङ्गालय, रङ्गभूमि । २ जयन्ती-
के अन्तर्गत एक स्थान ।

रङ्गचर (सं० पु०) १ अभिनेता, नाटकमें अभिनय करने-
वाला । २ मलयुद्धकारी, पहलवान् या नट ।

रङ्गचा—पश्चिमवङ्गवासो एक पहाड़ी जाति ।

रङ्गचाल्ट—इसका पूरा नाम चेटिपनियम वीरवल्लि
रङ्गचाल्ट सी० आर्ट० ई० था । इसका जन्म मद्रास
प्रदेशके चिङ्गलेपट जिलेमें सन् १८३१ ई०को हुआ था ।
इसके पिताका नाम चेटिपनियम राघव चेटियाट था ।
ये चिङ्गलेपटकी कलकुरीमें एक कुर्क थे । बाल्यकालमें
इसकी बुद्धि बड़ी तीव्र थी, परन्तु लिखाने पढ़नेमें इसका
मन बहुत कम लगता था । इसी कारण मद्रासमें हाई
स्कूलकी पढाई समाप्त करके ये नौकरी करने लगे । वहाँ
बहुत दिनों तक काम करके ये रेलवे विभागमें गये ।
तदनन्तर सन् १८६४ ई०में कालिकटके डिपुटी कल-
क्टरकी पद इन्हे मिला । इसी समय महिसुर राज्यकी
दशा अत्यन्त शोचनीय थी । पदच्युत राजा कृष्णराय

उदियावने पर पोष्य पुत्र प्रदण किया था। भारत गवर्नमेंटने इसी पोष्यपुत्रको राजगद्दा पर बैठाया और उसी समय यह निश्चित हुआ, कि १८ वर्षकी अवस्थामें इन्हे राज्यका भार दिया जायगा। गवर्नमेंटकी औरस रङ्गबालू यहाँक कन्वेन्सर (प्रबन्धकर्ता) बनाये गये। इस पद पर रङ्ग कट इन्होंने अनेक राजकीय बातोंमें सुधार किया। राज्यके भागकर्ता स्वार्थियोंकी इन्होंने निकाल बाहर कर दिया। सन् १८७४ ई०में इन्होंने महिदुरमें 'मद्रोज शासन' नामक एक छोटी पुस्तक प्रकाशित की थी और उसे इङ्ग्लैण्डमें प्रकाशित कराया। इसमें रङ्गबालूकी बड़ी प्रतिष्ठि हुई। राज्यके प्रबन्धमें अनेक सुधार करनेके कारण सरकारने इन्हे सौ० आइ० ई० की उपाधि मियो। सन् १८८१ ई०में ये महिदुरके दीवान नियुक्त हुए। १८८२ ई०में कठिन रोगके कारण इनकी मृत्यु हुई।

रङ्गज (सं० झा०) रङ्गाख्यायने इति जनः। निम्बूर। रङ्गजननी (सं० खी०) छाया, भाव।

रङ्गजीवक (सं० पु०) रङ्गेन रङ्गन कार्येण जीवतीति जीवयन्मुक्त्वा। १ बिलकार, चितरा। २ नाट्यकारक वह जो अभिनय करता हो।

रङ्गज्योतिष्यिह—विचारसुधाहर नामक वैद्यकग्रन्थके प्रणेता।

रङ्गज (सं० खी०) मृत्य, नाथ।

रङ्गद (सं० पु०) रङ्ग इति छिनतीति वा क। १ रङ्गण, मोहगा। २ कब्रिस्तार।

रङ्गदम्बिका (सं० खी०) भाग्यहीनता, नायकेम।

रङ्गदक्षिया—एक पहाड़ी जाति।

रङ्गदा (सं० खी०) रङ्गद-टाप्। स्फटी, फिटकरी।

रङ्गदायक (सं० खी०) रङ्गस्य दायकं। ककुष्ठ नामकी पहाड़ी मिट्टी।

रङ्गदुहा (सं० खी०) रङ्गन् दुहा। भूदो, फिटकरी।

रङ्गदेवता (सं० खी०) रङ्गाभिष्ठाती देवो यह कल्पित देवता जो रंगमूर्तिके अभिष्ठाता माने जाते हैं।

र (सं० खी०) रङ्गालयका प्रवेशद्वार।

री—एक नगरका नाम। रणपुर बेणो।

—१ ब्रह्मैतचित्तानामिके प्रणेता। २ भाषुर्दान

नामक ज्योतिषग्रन्थके रचयिता। ३ कर्पूरस्तम्बदीपिका नामक ग्रन्थकर्ता। ४ गुणमन्दारमञ्जरीके प्रणेता। ५ जायम्मुक्तियधिके रचयिता। ६ बिद्वज्जनमनोरमा नामको प्रकाशमूर्त्तिकार तथा आनन्दभाष्यके शिष्य। ७ रामानुजसिद्धान्तप्रवचकके प्रणेता। ८ वृत्तलोकटीकाके रचयिता। ९ मिताभाष्यो भाग्यो स्त्रीभाष्यतोकी टीकाके प्रणयनकर्ता। इनके पिताका नाम था मृगिह। इन्होंने पलभाकरजन, मङ्गोयिमङ्गीकरण और मोहगोळम्बजन नामक मूलने तीन तपस्व ज्योतिशास्त्रप्रिययक ग्रन्थ संकलन किये।

रङ्गनाथ—सूर्यसिद्धान्तगुहायप्रकाशक नामक सूर्यसिद्धांत की टीकाके प्रणेता। १३०४ ई०में इन्होंने उक्त ग्रन्थ समाप्त किया था। इसका पिताका नाम वल्लभगणक और पुत्रका विष्णुदत्त था। जनसाधारणकी धारणा है, कि नारायणोपवीश, विद्याकरजन ज्ञातकपद्धतिकी टीका, निम्बूदायदुली नामकी शीलावतीटीका, केशवाकर्णज ज्ञातकपद्धतिकी प्रीङ्गमनोरमा नामकी टीका तथा सिद्धान्तसुधास्यिह आदि ग्रन्थ इनके लिये हैं।

रङ्गनाथ—विश्वभोष्मेशो-प्रकाशिका नामकी टीकाके प्रणेता। १३-१४ ई०में इन्होंने उक्त ग्रन्थकी रचना की। इनके पिताका नाम बालकृष्ण, पितामहका रङ्गनाथ तथा प्रतिनामहका नाममह था।

रङ्गनाथ आचार्य—विष्णुसहस्रनाम भाष्यक प्रणेता।

रङ्गनाथ शोक्षित—सोमप्रयोगके रचयिता।

रङ्गनाथपुर—दक्षिणात्यक मरुपदेशके अन्तर्गत एक नगर।

रङ्गनाथ मठ—१ दिनकरटीकाके प्रणेता। २ एक विख्यात पण्डित। ये उत्तररामचरितटीकाके प्रणेता नारायणके पिता थे।

रङ्गनाथ पञ्चम—हरिद्वारन परमेश्वरीके परमेश्वरीमक रम्द नामक टीकाकार। ये नारायणके पुत्र तथा लक्षा बोधिनके पीतृ थे। सोलदेश इनका जन्मस्थान था।

रङ्गनाथ सूरि—एक जैन सूरि। ये शक्तिवाद्बिचरणके प्रणेता ह्यम्बमठके पिता थे।

रङ्गनाथा (सं० खी०) राजकल्पामेदु।

उत्पियामे एक पोष्य पुत्र प्रत्य किया था। भारत गयन मेंरम इमा पोष्यपुत्रका राजगहा पर बैठाया और उसा समय यह निरिचत हुआ, कि १८ बपका धबस्थामे इह राजपका मार दिया जायया। गवर्नमेंडकी मोरस रङ्गबालू बहाक कम्प्लेन्ट (प्रबन्धकर्ता) बनावे गये। इस पर पर रङ्ग कर इहोंने भनक राजकीय बातोंमें सुचार किया। राज्यके नाशकर्ता स्वार्थियोंको इहोंने निकाल बाहर कर दिया। सन् १८३४ ई०में इहोंने महिसुरमे 'भङ्गरेज शासन' नामक एक छोटी पुस्तक भङ्गरेजोंमें लिखी और उम इङ्ग्लैण्डमें प्रकाशित कराया। इसमें रङ्गबालूकी बड़ी प्रसिद्धि हुई। राज्यके प्रबन्धमें भनक सुचार करनेके कारण सरकारने इहें सी० मार० ई० की उपाधि मिकी। सन् १८८१ ई०में ये महिसुरक दीवान नियुक्त हुए। १८८२ ई०में कडिन रोगके कारण इनकी मृत्यु हुए।

रङ्ग (सं० झा०) रङ्गस्त्रायन इति जग ह। सिम्पूर। रङ्गजननी (सं० स्त्री०) माता, काण्।

रङ्गजीवक (सं० पु०) रङ्गेण रङ्गन कार्येण शोचताति श्रीब प्युङ्। १ धिनकार, चिन्तित। २ नाशकारक, वह जो धमिनय करता हो।

रङ्गज्योतिष्यिह—विद्यारत्नुधाकर नामक वैद्यकग्रन्थके प्रणेता।

रङ्गज (सं० स्त्री०) मृत्य, नाभ।

रङ्गद (सं० पु०) रङ्ग इति छिनतोति वा क। १ रङ्ग्य, मोहाग। २ अदिरसार।

रङ्गद्विका (सं० स्त्री०) नागबहासता, नागपेक।

रङ्गदन्विया—एक पहाड़ी जाति।

रङ्गदा (सं० स्त्री०) रङ्गु टापू। स्कटी फिटकरो।

रङ्गदायक (सं० स्त्री०) रङ्गस्य दायकं। कफुड नामका पहाड़ा मिठी।

रङ्गदुङ्गा (सं० स्त्री०) रङ्गपद् दुङ्गा। एकठे, फिटफिटो।

रङ्गदेवता (सं० स्त्री०) रङ्गामिद्यासी देवो, यह कल्पित देवता जो रंगमूर्तिके अघिष्ठता माने जाती हैं।

रङ्गहार (सं० स्त्री०) रङ्गसयका प्रयोगहार।

रङ्गनगरो—एक नगरका नाम। एङ्गुर बेगो।

रङ्गनाथ—१ भद्रवैचिन्तामनिके प्रणेता। २ भापुर्दान

नामक ज्योतिषग्रन्थके रचयिता। ३ कपूरस्तबदीपिका नामक ग्रन्थकर्ता। ४ गुणमन्त्रारमन्त्राके प्रणेता। ५ ज्ञानगुणिकवियुक्तके रचयिता। ६ विद्वज्जनमनोरमा नामी ब्रह्मसूत्रगृह्णितकार तथा मानन्दाधमक लिप्य। ७ रामानुजमिद्वान्तपश्वाके प्रणेता। ८ तुच्छलाकरटीकाके रचयिता। ९ मितमायिणो नामने लीलावाताका टीकाके प्रणयनकर्ता। इनके पिताका नाम था श्रीमिह। इहोंने पलभाबरडन, गङ्गोपिमन्त्रारण्य और लोहगोमन्धरडन नामक दूसरे तीन अमङ्ग उपोतिगात्रप्रियवक्त ग्रन्थ संकलन किये।

रङ्गनाथ—सूर्यसिद्धान्तगृह्णयप्रकाशक नामक सूर्यसिद्धान्त का टीकाके प्रणेता। १६०४ ई०में इहोंने उक्त ग्रन्थ समाप्त किया था। इनके पिताका नाम वज्रालगण्यक और पुत्रका विश्वरूप था। जनसाधारणकी चारणा हैं, कि नारायण्यबोध, दिवाकरछन ज्ञानरूपयतिकी टीका, निम्बराधरूयो नामकी लीलावतीटीका, केशवाकैण्डव ज्ञानरग्ययिनी प्रीङ्गमनोरमा नामकी टीका तथा सिद्धान्तगृह्णामि भादि ग्रन्थ इनके रचे हैं।

रङ्गनाथ—विक्रमोर्ध्वको प्रकाशिका नामकी टीकाके प्रणेता। १६५६ ई०में इहोंने उक्त ग्रन्थका रचना की। इनके पिताका नाम शङ्कराण्य पितामहका रङ्गनाथ तथा प्रणितामहका नामनह था।

रङ्गनाथ भाचार्य—विष्णुसहस्रनाम भाष्यक प्रणेता।

रङ्गनाथ वासिष्ठ—सोमप्रयोगक रचयिता।

रङ्गनाथपुर—राक्षिणाण्यक मङ्गलप्रदेशक भन्तर्गत एक नगर।

रङ्गनाथ मङ्ग—१ दिनकरटीकाके प्रणेता। २ एक विषयान परिष्ठत। ये उत्तररामचरितटीकाके प्रणेता नारायण्यक पिता थे।

रङ्गनाथ परम्ब—हरिवृत्तछन पद्मभूतोके पद्मभूतोमक रङ्ग नामक टीकाकार। ये नारायण्यक पुत्र तथा महा वासिष्ठक पीठ थ। षोडशेठ इनका जन्मस्थान था।

रङ्गनाथ सूरि—एक जैन सूरि। ये शक्तियाद्विचरणके प्रणेता छणमहक पिता थे।

रङ्गनाका (सं० स्त्री०) रामकल्यामेङ्।

रङ्गपत्नी (सं० स्त्री०) रङ्ग रक्षार्थं पत्रमस्याः, डीप् ।
नीलीवृक्ष ।

रङ्गपीठ (सं० स्त्री०) रंगगृह, रंगालय ।

रङ्गपुर—बंगालके राजाशाही विभागात्गत एक जिला ।
यह अक्षा० २५° ३' से २६° १६' ३० तथा देशा० ८८° ४४'
से ८९° ५३' पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण
३४६३ वर्गमील है । इसके उत्तरमें जलपाईगुडी जिला
और कोचबिहार, पूर्वमें ब्रह्मपुत्र नदी, दक्षिणमें बगुडा
जिला और पश्चिममें दिनाजपुर और जलपाईगुडी हैं ।
रंगपुर नगर इसका विचार सदर है ।

समस्त रंगपुर जिला एक जलशय्यामल विस्तोर्ण
समनल भूमि है । यहा बड़े बड़े पहाडके न रहनेसे जमीन
तमाम चौरस है । केवल नदीतीरवर्ती स्थान ऊँचा
नीचा दिखाई देता है । यहाँकी जमीन उपजाऊ है ।
उपजमें धान, पटसन, तेलहन, तमाखू, आलू, ईप और
अदरक प्रधान है । इसके सिवा जंगलोंमें छोटे छोटे बँत
और सरकंडे भी उत्पन्न होते हैं ।

ब्रह्मपुत्र और उसकी शाखा प्रशाखा ले कर यहाँकी
नदीमाला बनी है । शापा नदियोंमें तिस्ता, धर्ला,
सङ्कोश, करतोया, गङ्गाधर और दुधकुमार प्रधान है ।
इसके अतिरिक्त आढाई, गोघाट, मनास और गुजरिया
नामक और भी कितनी नदिया बहती हैं ।

इस जिलेका प्राचीन इतिहास जाननेका कोई उपाय
नहीं । एक समय यह रङ्गपुर प्रदेश हिन्दूशामित
कामरूप राज्यकी पश्चिमी सीमामें गिना जाता था ।
यद्यपि उस समयके कामरूप राज्यकी राजधानी आसाम
उपत्यकामें थी, तो भी वे सब प्राचीन राजगण यहाँ आ
कर रहते थे । भारतयुद्धमें व्यापृत महाराज भगदत्तने
रङ्गपुर नगरमें अपना 'सुखावास' स्थापन किया था ।

महाभारतीय भगवदत्तका उपाख्यान छोड़ देने पर
भी स्थानीय अन्यान्य प्रवादसे जाना जाता है, कि
१५वीं सदीके पहले यहा तीन स्वतन्त्र राजवंश राज्य कर
गये हैं । उन तीनोंमें पृथु राजाका वंश ही सबसे प्राचीन
है । वर्तमान जलपाईगुडी जिलेमें उनका राजधानीकी
विस्तृत ध्वस्तकीर्ति दिखाई देती है । पीछे पालरज-
वंशका अभ्युदय हुआ । इस वंशके प्रतिष्ठाता धर्मपालके

दुर्गादिसे सुरक्षित नगरका खडहर आज भी जलपाई
गुडीमें पाया जाता है । पालवशके तृतीय राजा भवचन्द्र
और उनके मंत्रीको अर्थात्क विचारशक्ति तथा तीक्ष्ण
बुद्धिका परिचय नीचे दिया जाता है,—

"भारो तूफानसे एक वनियेकी नाव डूब गई जिसमें
उस बहुत नुकसान हुआ । राजाके पास उसने अपना
दुखडा जा कर रोआ । राजाने मन्त्रीसे सलाह करके
कहा, 'कुम्हारकी भट्टीसे धुआ निकल कर शायद मेनकी
उत्पत्ति हुई है और वही तूफानका कारण है । अतएव
कुम्हारको ही वनियेका कुल हरजाना देना पड़ेगा । एक
दूसरे दिन स्थानीय कुछ अधिवासी एक जंगली सूअर-
का बच्चा ले कर राजाके समीप आये । राजा और
राजमन्त्रीने सोच विचार कर कहा, 'चाहे एक चूहा मोटा
ताजा हो कर, चाहे हाथीका बच्चा क्षयरोगसे दुर्बल हो
कर पेसा हो गया है । तीसरा उपाख्यान 'पोखरकी
धोरो' की घटना है,—एक दिन दो पथिक कहीं जा
रहे थे । राहमें उन्हें शाम हो गई । इसलिये दोनों एक
पोखरके किनारे रसोई बनानेके लिये चूहें बनाने लगे ।
यह देखा कर राजाने समझा, कि अधिरो रातमें ये दोनों
पोखर चुरानेके लिये ही जमीन खोदता है । राजाके
आदेशसे वे दोनों परुडे गये और उन्हें शूलीकी सजा
हुई । दोनोंके लिये दो शूली बनाई गईं । शूली समान न
थी, छोटी बड़ी हो गई थी । आसन्न मृत्यु देख कर दोनों
पथिक छल पूर्वक बड़ी शूली पर ही चढ़नेके लिये आपसमें
भगडने लगे । राजाके भगडनेका कारण पूछने पर उन्होंने
कहा, हम लोग ऐन्द्रजाल विद्या अच्छो तरह जानते हैं ।
जो व्यक्ति इस बड़ी शूली परसे मारा जायगा वह
ससागर पृथ्वीका अधीश्वर और जो छोटी शूली परसे
मरेगा वह राजाका मंत्री होगा । राजा भवचन्द्रने पेसी
निस्रथ्रेणोके लोगोंका परजनमसे राजपद पाना अच्छा न
समझा । इसलिये स्वयं उन्होंने ही बड़ी शूली पर चढ़
कर प्राणत्याग किया । मन्त्री भी छोटी पर चढ़ कर
यमपुरको सिधारा ।" भवचन्द्र राजाके जयचन्द्र मन्त्री
का प्रवाद हम लोगोंके देशमें फैला हुआ है । शायद ये
सब विचार हिन्दूविद्वेषी बौद्धराजाओंके पक्षपात विचार-
की रूपान्तर कल्पना भी हो सकने हैं ।

इस पाठ्यक्रममें राजा गोपीबन्धुका नाम पाया जाता है। इनका गौत भाऊ भी रङ्गपुर जिलेमें प्रचलित है। रङ्गपुरक योगी जोगि हा यह गात पाया करत हैं। राजा माणिकचौदका गौत भी किमास छिया नहा है।

गुपीय राजवंशमें नन्दवन्ध, चन्द्रवन्ध और नौमास्यर नामका तीन राजाके नाम पाये जात हैं। इनमेंसे सप्तप्रधान राजाका कामतापुत्र मगर बसाया। कोबिहार साम्रा पर उस नगरका खंडहर भाग भा देवानेमें भाता है। उसका परिधि प्रायः १३ माछ है। इस राजवंशका विभिन्न राजधानी, राजप्रासाद और गढ़ सभी एक ही विषयमें बने हुए थे। राजा नौमास्यरके साथ गौड़क भक्तगान राजाका युद्ध हुआ था। उस युद्धमें नौमास्यर बन्धा हा श्रीहृषिकेशमें गौड़ नगर लाये राये थे। प्रकृतस्वविद्वगण इस भक्तगान-राजकी सुखतान कुसेन जाह मानते हैं। कुसेन जाह १४२६६ १५२० ई० तक बङ्गालकी मसतद पर बैठे थे।

मुसलमानोंके अधिकारमें यह स्थान भाष पर भा वे जोगि यहाँ अपना शासक प्रभाव फेला न सक थे। पाछे यहाँ भरातकलाका श्रोत बहने लग्गा। आसामका पहाड़ा जातिन बार बार भा हर रंगपुरकी लूटा तथा कोच जोगीस सीमास्त पर कोबिहार राज्य स्थापन किया। इस राजवंशके प्रथम राजा बिशुने भरने मुञ्ज बडसे पूर्वमें आसाम स्वल्पका तक अपना अधिकार फैला लिया था। उनका मृत्युके बाद राज्य का भागोंमें बँट गया। मुगलोंकी बङ्गालमें पाक ज़मनेके बाद मुगल प्रतिनिधियोंने प्रकृतपुत्र पार कर बङ्गालक उत्तर पूर्व सामान्य देशका रक्षाके लिये गालपाड़ाक अस्तगत रंगामादी पर आक्रमण कर दिया। क्योंकि, इस समय अहम मोग बङ्गालमें भा कर लूट पाट द्वारा प्रजाकी बहुत सताते थे। प्रकृत रङ्गपुर विभाग १६८७ ई०में औरङ्गजेबके सेनापतिने मुगल साम्राज्यमें मिला लिया। उस समय भी कोबिहार-राज्य स्वाधीनताकी रक्षा करनेमें समर्थ हुआ था। काबिहार राज।

१७११ ई०में कोबिहार-राज्यके साथ मुगलराजका एक बन्धावस्त हुआ। उम मठके अनुसार बोरा पादप्राम और पूरव भाग परमनाके जमादारके रूपमें थे

खजाना खालि करने पाज्य हुए तथा भवशिष्ट कोच विहार राज्यका स्वाधीन भावने गासन करने लगे। १७५५ ई०म इट इण्डिया कम्पनीके बङ्गालका दावानो पान तट इना प्रहार यहाँका गासन और राजस्व कार्य चलाता रहा था। अङ्गरेजोंनो उम समय मुसलमानोंकी प्रयाक अनुसार कर उगाहनेका भार एक ही व्यक्तिके ऊपर सौंप दिया। किन्तु १७८३ ई०में राजस्व उगाहनेमें नियुक्त राजा श्रीसिंह नामके एक राजपुत्रके भत्या चारसे माग तंग तंग भा गय और सबके सब बागा हो उठे। इस विद्रोहमें इकीर्नाक लूटपाट और भत्याचार स रङ्गपुर तथा उसके आस पासक स्थान उन्मत्तभाव हो गय थे।

अन्ततः भगरेज गयमेंसेको पाज्य हा कर वृसरा बन्धावस्त करना पड़ा। भय इन्होंने आस एक व्यक्ति के ऊपर कर उगाहनेका भार न दिया, समोदायोंकी बुन्यादा और उन्हाक साथ कर उगाहनेका बन्धोपस्त किया। १७७२ ई०में देशी सेनाविभागक कर्मकृत सिपाहो-बन्से परिपुष्ट उकैत दल तथा १७७७ ई०क दुर्मिसला माया उदत प्रजाबन्ध कुन ५० हजार भादमी मिल कर इस जिलेके नाना-स्थानोंमें लूटपाट मचाते लगे। उस समय रङ्गपुर शिवा नेपाक, मूदान कोच विहार और आसामके सीमास्तक्षेत्रमें गिता जाता था। ऐस बड़े भार विस्तृत प्रदेशका शासनकार्य सिर्फ एक कलक्टर द्वारा परिचालित होना बिलकुल कठिन हो गया था। यही कारण था, कि इकैत लोम रङ्गपुरस दूर देशोंमें बे-राज्योकेक लूटपाट किया करत थे। उन उकैतोंका दमन करनके लिये ब्रिटिश सरकार बाच बाचमें हथियारबंद सिपाहा भी भेजा करतो थी। इस प्रकार कमा कमी उकैत दल और छापयेगी संन्यासि दलके साथ अङ्गरेजों-सेनादलकी मुठभेड़ हो ज़ायी करती थी। पढ़ते एक अङ्गरेज सेनापक्ष इन लोमोंस हार भा कर छोड़ा। १७७३ ई०में दस्तान रामस द्वारा परिचालित अङ्गरेजा सेना उकैतोंके विरुद्ध भजो गय। इकीर्नाक हाथ दस्तान रामस दमनक गाथ मारे गय। यहाँ तट कि चार दल खना भज कर भी ब्रिटिश गयमेंसेट उनका कुज भा भनिक न कर सकी। १७८६ ई०में देशक

शान्तिहारक डकैतोंका वृमन करनेके लिये स्वयं कलकटर बहादुर उनके विरुद्ध चले। अंगरेजी सेनादल को सामने देख डकैतोंने पहले बैकुण्ठपुरके घने जंगलमें आश्रय लिया। कलकटर बहादुर दो सौ बरफन्दोज ले कर उन वनमें गोला बरसाने लगे। आखिर वे लोग आत्ममर्पण करने बाध्य हुए। इसके बाद एक वर्षके भीतर प्रायः ५४६ डकैत पकड़े गये थे। इन डकैतोंमेंसे भवानी पाठक ही हमलोगोंका परिचित है।

भवानी पाठक देखा।

शासन-विभागकी सुविधाके लिये रंगपुर जिलेमें बहुत थोड़े परिवर्तनके सिवा कोई ऐतिहासिक घटना घटी। ब्रह्मपुत्र नदीका पूर्वो भाग खालपाडा नामक स्वतन्त्र जिलेमें संगठित हो कर आसाम प्रदेशके अन्तर्भूक्त हो गया। उत्तरके तान परगने ले कर जलपाईगुडी जिला और दक्षिणका कुछ अंज ले कर बगुडा जिला बना है। जलपाईगुडी और बगुडा देखा।

इस जिलेमें ६ गहर और ५२२२ ग्राम लगते हैं। जन संख्या २० लाखसे ऊपर है। गहरोंमें रङ्गपुर और सेरपुर हैं। अधिवासियोंमें मुसलमानकी संख्या ही ज्यादा है। ये लोग पहले स्थानीय आदिमवासी थे। मुसलमानों अमलक समय हिन्दू-समाजमें स्थान न पा कर मुसलमान हो गये। अलावा इसके यहां ब्रमणगोल कितने नेलेडोंका भी वास है। कोच, पलिया और राजवंशी नामक अर्द्धसभ्य जातिकी भी संख्या थोड़ी नहीं है।

महीगञ्ज, धाप और नवापगञ्ज नामक उपरुण्ड ले कर रङ्गपुर सदर म्युनिसिपलिटिकी अधिकार है। इसके अतिरिक्त यहां बरखाता, भोगदावाडी, डिमला, थोडग्राम, छाननाई, वामोनो, कपासो, जालमारी, खानवारितपा, वागडोगरा, नांतवितपा, बरानडी, मागुरा, भूमागाछ, छपारी, भागवाछागडी आदि नगर हैं। महीगञ्ज, लालवाग, घोडामारा, काकिना, कानिया, निसवेदगञ्ज, कालीगञ्ज लालमणोका हाट, कालीदह, यात्रापुर आदि स्थानोंमें यहांका वाणिज्य-केन्द्र है। १८७६ ई०में नदूर्न वेङ्गल ट्रेट रेलवे और उसकी शाखा रङ्गपुराजिलेके मध्य विस्तृत होनेसे स्थानीय वाणिज्यमें बड़ी सुविधा हो गई है।

उक्त जिलेके चार उपविभाग हैं, महीगञ्ज, निसवेदगञ्ज, कुमारगञ्ज, मोटापुकुर और पीरगञ्ज तथा सदर उपविभागके अन्तर्गत हैं। नालफामार्ग उपविभागमें डिमला, जलधाका और दरवानी नामक थाना, कुडिग्राम उपविभागमें नागेश्वरी, बटवाट और उलिपुर तथा गाइवाघा उपविभागमें गोविन्दगञ्ज, नगानागञ्ज, माडुहापुर और सुन्दरगञ्ज थाना है। सैयदपुरमें रेलकम्पनीका कारखाना स्थापित होनेसे यह स्थान विशेष समृद्धिगाली हो गया है। विद्याशिक्षामें यह जिला बहुत पिछडा हुआ है। अभी लोगोंका ध्यान इस ओर कुछ कुछ आरुप हुआ है। फिलहाल कुल मिला कर १२२७ स्कूल हैं जिनमेंसे ६४ सिक्केण्डा और ११३१ प्राइमरी स्कूल हैं। विद्याशिक्षामें कुल २ लाख रुपये खर्च होता है। स्कूलके अलावा यहां २५ दातव्य चिकित्सालय हैं।

२ रङ्गपुर जिलेका एक उपविभाग। यह अक्षा० २५°२८' से २६° १६' ३० तथा देशा ८८°५६' से ८९° ३१' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ११४१ वर्गमोल है और जनसंख्या ७ लाखके करीब है। इसमें रङ्गपुर नामक एक गहर और १८६७ ग्राम लगते हैं। यह उपविभाग बहुत अस्वास्थ्यकर है।

३ उक्त जिलेका एक प्रधान शहर। यह अक्षा० २५° ४५' ३० तथा देशा० ८९° १५' पू०के मध्य विस्तृत है। महामारतोक्त राजा भगदत्त यहांके शासक थे। अफगान राज अलाउद्दीनने इस पर १४६३ ई०में अधिकार जमाया और १५१६ ई० तक राज्य किया। शहरकी आवहवा अच्छी नहीं है। डिस्ट्रिक्ट-जेल् इसी शहरमें है। यहां एक हाई स्कूल और १८८६ ई०में स्थापित टेक्निकल स्कूल है।

रङ्गपुर—आसामप्रदेशके शिवसागर नगरके दक्षिण एक ध्वस्त नगर। १७वीं सदीके आहम-राजाओंके प्रासादादिका जण्डहर आज भी गत कीर्त्तिकी घोषणा करता है। प्रवाद है, कि वह प्रासाद और जयसागर देवमन्दिर प्रायः १६६८ ई०में राजा रुद्रसिंहने बनवाया था। प्रासादके आस पासका स्थान जगलसे ढंका होने पर भी प्राचीन दीवार आज भी अमग्न अवस्थामें विद्यमान है। प्रासाद-गृहकी छत जहां तहां टूटफूट गई है। देवमन्दिरके सामने

जो जयसागर तानाय है यह सम्झाइ और पाइहिमं जिउ
सागर हृदक पराबर दे । मन्दिरका जित्पनेपुष्य इकनमे
चमरतल होना पडता है । मन्दिर उयोका ह्यो कडा है,
किन्तु देवमूर्ति न खनस काइ उसमें पूजा करने नही
जाता । नगरक समीप गडवाँब नामक स्थानमें भी
ब्राह्म-राजाभांका राजधानी थी । १८८४ ई०में राजा
गौरीनाथ रङ्गपुरसे जोड़हाटमें राजधानी उठा लाय ।

रङ्गपुरी (सं० ख०) एक प्रकारकी छोटी नाय जिसके
दोनों धोएकी गमही एक-सा होता है ।

रङ्गपुरी (सं० पु०) रङ्ग रचित पुष्पमस्वभा । नामावृत्त ।

रङ्गप्रथम (सं० प०) अभिनय करनेक लिये किसी पात्रका
रङ्गमूर्तिमाना ।

रङ्गमह—भाष्यात्रपुष्टामयोगशुक्ति प्रमेता ।

रङ्गमधम (सं० पु०) आमोद प्रमाद वा भोगविनास करने
का स्थान, रङ्गमहल ।

रङ्गभूति (सं० ख०) रङ्गस्य रागस्य भूतिः शोभाऽतः ।
काजागर पूर्णिमा भाषितका पूर्णिमा । कहन है कि
जा जोग इस रात को जागर रहल है उम्हें जसो भा कर
पथ देती है ।

रङ्गभूमि (सं० ख०) रंगस्य भूमिः । महभूमि यह
स्थान जहाँ कुत्ती हातो हो बसाडा ।

उत्तरी मुञ्जिनाय व पागण्यारकभंयुता ।

तुष्यकारतमालुका प्रप्रभुम्भु बरुभेत् ॥

वमान विपुताः किंकाण्यु समन्विता ।

एकान्ते विवन रन्ने प्रभुम्भु कारवन् ॥”

(भवने ३११ १२)

महभूमिका स्थान समतल विस्तृत और कुछ पाशु-
युक्त तथा पित्रत और तमचाय होना चाहिये । महभूमि
क लिये यह स्थान त्रिस्तुम्भु अनुपयुक्त है जहाँका मिट्टा
कड़ी, पयरोली और पासम हका हो । २ रथस्थल, युद्ध
क्षेत्र । ३ नाट्यभूमि, नाटक खेलनेका स्थान । ४ जलमय
स्थान । ५ यह स्थान जहाँ काइ जनमा हो, उत्तर
मजानका स्थान । ६ रोम, कूद यो तमार्थ भादिका
स्थान, कौकालस्थल ।

रङ्ग्यागिरि—आनाम प्रजाक गारा पापसाय त्रिजालमंत
एक बड़ा गाँव । यह विमलराम पर्यतका-रक्षित कान्ठ १७मं

भवस्थित है । यहाँ १८७१ ई०में जब गारो जोगेति पैमा
इशमें नियुक्त हा गवर्मेण्टक कुलियाँका निहत किया, तब
अ गरज राजम उनके बिच्छ सेना भेजा । १८७२ ई०में
गारो सोग पराजित हा कर अ गरेडोको वरुफत। लोकार
करनेको बाध्य हुए । तुरासे ल कर रायक धाने तक
जो रास्ता है यह इस गवक बायोकोष हा कर चला
गया है ।

रङ्गमङ्गल (सं० ख०) रंगमञ्च पर मिळ कर उत्सव
करना ।

रङ्गमण्डप (सं० ख०) रंगभूमि, रंगस्थल ।

रङ्गमता—चटगायका एक वन ।

रङ्गमध्व (सं० पु०) रंगमंच रंगस्थल ।

रङ्गमहो (सं० ख०) रङ्गाय रागाय महो । पापा,
भोत ।

रङ्गमहल—दिल्लीका एक विस्तृत प्रासाद । मुगल बादशाह
यहाँ आमोद प्रमाद करत थे ।

रङ्गमदल (सं० पु०) माय विद्याम करनेका स्थान,
आमोद प्रमाद करनेका भवन ।

रङ्गमाषिषय (सं० खी०) माषिषपरत्न ।

रङ्गमातृ (सं० ख०) रङ्गस्य माता त्रिका । १ कुटना ।
२ साक्षा छाव ।

रङ्गमातृका (सं० ख०) रङ्गमातृ स्वार्थे कन्-यप् ।
साभा साक ।

रङ्गराज (सं० पु०) समात वामोदरक अनुसार ताकके
साठ मूष्य मेरींस एक मेह ।

रङ्गराज—एक हिन्दू राजा (१५७२ ८५ ई०) । ये
प्रायश्चित्तप्रदतिक प्रथमा मावचके प्रतिपात्रक थे ।

रङ्गराज—१ शिशुपाय-पथक एक शोकाकार । मल्लिनाथने
इका नामोत्त क किया है । २ अर्धत मुषरके रचयिता ।

३ काक-परिभाषा नामक भक्तपुरप्रणयक प्रथता ।

४ मामांमानवहापिकाक प्रमेता परदरायक पिता
और द्वात्राजक पुत्र, ये जो एक सुपरिचित थे ।

रङ्गराता (सं० खी०) १ भोग विनासम लगा हुआ, पैठ
धाराममें प्रस्त । २ प्रेम युक्त, अनुरागपूर्ण ।

रङ्गयमानुज—उपनिषदायर्थापरत्न (तैत्तिरीयपरिषद्
और द्वात्राजकपरिषद् सम्बन्धाय) उपनिषद् प्रका

जिज्ञा, उपनिषद्भाष्य और द्वाविडोपनिषत्माररत्नावली-
व्याख्या नामक ग्रन्थके प्रणेता । भलावा इसके शङ्करा-
चार्यरुत ईशावास्योपनिषद्भाष्यकी टीका, कठवल्लुपु-
निषद्प्रकाशिका, कौपितक्युपनिषत् प्रकाशिका छान्दो-
ग्योपनिषद्भाष्य, तैत्तिरीयोपनिषद्भाष्य, प्रश्नोपनिषत्-
प्रकाशिका, बृहदारण्यकभाष्य, माण्डुकोपनिषद्भाष्य,
मुण्डकोपनिषद्भाष्य, श्वेताश्वतरोपनिषद्भाष्य तथा गुरु-
भाव-प्रकाशिका, भावप्रकाशिका, मूलभावप्रकाशिका
रंगरामानुजभाष्य (वेदान्त), विषयवाक्यदीपिका,
श्रुतभावप्रकाशिका और रंगरामानुजीय नामक वेदान्त
ग्रन्थ इनके बनाये हैं ।

रङ्गेज (फा० पु०) १ वह जो ब्रह्मादि रगाता हो ।
२ उक्त व्यवसायलक्ष्मी निम्न श्रेणीकी मुसलमान जाति-
विशेष । ३ योगी जातिकी एक शाखा । उत्तर-पश्चिम
प्रदेशमें हिन्दू और मुसलमान रंगेज देखनेमें आते हैं ।
मुसलमान शाखाके मध्य फिर ८१ स्वतन्त्र थोक हैं ।
उनका कहना है, कि खानाबली नामक एक साधुसे उन
लोगोंके मध्य एक प्रवाद इस प्रकार प्रचलित है,—'खाना
बली रंगेज, खो खुदाकी सेज' अर्थात् खाना बली परम
पिता परमेश्वरकी प्रिया रगाते हैं ।

दूसरी जातिके लोग यदि इनमें मिलना चाहें, तो
ये लोग उन्हें अपने समाजमें ले लें हैं सही, पर उनके
साथ विवाहादि नहीं करते । इससे बारह वर्षके भीतर
ही बालकवाल्दिकाका विवाह होने देखा जाता है । यह
विवाह बरहोवा, दोला और सगाईके भेदसे तीन प्रकारका
है । बरहोवा प्रथम बर बारात ले कर कन्याके घर जाता
और विवाह करता है । जो गरोब २ उनमें दोला-प्रथा
का विवाह ही अधिक होता है । इसमें कन्या छिपके
घरके घर लाई और ब्याही जाती है । विधवा विवाहको
सगाई कहते हैं । सुरा पाठके सिवा विवाह-वधनका
और कोई विशेष मन्त्र नहीं है । विधवा अपने देवर
अथवा जिस किसीसे इच्छा हो, विवाह कर सकती है ।
स्त्री वा पुरुषमें जब कोई दोष दिखाई देता और वह दोष
दो-भेसे कोई पंचायतमें पेज करता है, तब विवाह बन्धन
टूट जाता है ।

मुसलमान रंगेजोंमें अधिकांश सुशोभतावलम्बी हैं ।

सुकी सिया लोगोंके साथ आदान प्रदान नहीं करते ।
गाजीमीयां और पाचपीर इनके प्रधान उपास्य देवता
हैं । ज्यैष्ठ मासके प्रथम रविवारको ये लोग उक्त
देवताकी पूजा करते हैं । विवाहके बाद गाजीमीयांको
कन्दूरी चढ़ानेकी प्रथा है । ईद, सब इ-दरात और बकर-
ईद उत्सवोंमें ये लोग पितृपुरुषोंके उद्देशसे उन्हें खाद्यादि
चढ़ाते हैं ।

रङ्गलता (सं० स्त्री०) आवत्तकी लता, मरोडफली ।

रङ्गलाल बन्दोपाध्याय—बंगलाके एक प्रसिद्ध कवि ।
१८२६ ई०में वर्द्धमान जिलेके कालनाके निकटवर्ती
वाकुलिया ग्राममें इनका जन्म हुआ । इनके पिताका
नाम रामनारायण था ।

हुगली कालेजमें रंगलालकी शिक्षा शेष हुई । शारीरिक
अस्वस्थताके कारण वे अधिक दिन कालेजमें न पढ़
सकें । वाध्य होकर उन्हें विद्यालय तो छोड़ना पडा,
पर उनकी पाठस्पृहा दूर न हुई थी । अंग्रेजो काव्य
शास्त्रमें इनका अच्छा अधिकार हो गया था । वे बचपन
से ही कविता-रचनाके अनुरागी थे ।

१८५५ ई०में एडुकेशन गजटके प्रकाशित होने पर
मि० वायन स्मिथ साहब सम्पादक रंगलाल और उनके
सहकारो नियुक्त हुए । बहुत दिन तक इन्होंने यह काय
क्रिया या । उस समयके एडुकेशन गजटमें इनकी गद्य
पद्य दोनों ही रचना प्रकाशित होती थीं । कुछ वर्ष बाद
वे इनकमटेक्सके एसेसर हुए थे । इसमें योग्यता देख कर
गवर्नमेंटने इन्हें डिप्टी मजिस्ट्रेटका पद दिया ।

उनके हृदयमें जातीय स्वाधीनताकी उद्दाम-आकांक्षा
घुस गई थी । इनके बनाये पद्मिनी-उपाख्यान, कर्मदेवी
और शूर सुन्दरी काव्यमें उसका उच्छ्वास देखा जाता
है । उन्होंने संस्कृत कुमारसम्भवका पद्यानुवाद भी
क्रिया या । इसके सिवाय आप बंगला कविता विष-
यक प्रबंध और शरीरसाधनोविद्याके गुणकीर्तनके
संबंधमें और भी दो ग्रंथ लिख गये हैं । १८८७ ई०की
१३वीं मईको रंगलालका देहात हुआ ।

रङ्गलासिनी सं० स्त्री० रंगेण रणेण लसितुं शीलमस्याः
इति लस-फिनि । शोफालिका ।

रङ्गवती (सं० स्त्री०) वासवदत्ता-वर्णित एक नायिका ।
इन्होंने अपने स्वामी रन्तिदेवको मार डाला था ।

रङ्गवैज्ञानिक (सं० स्त्री०) रंगवैज्ञानिक, मागवहारी ।
 रङ्गवस्तु (सं० स्त्री०) रंग ।
 रङ्गवाह (सं० स्त्री०) वह स्थाण जो रंग विज्ञानके लिये
 धिया हो ।
 रङ्गवादाङ्गना (सं० स्त्री०) लक्षको वेस्या, वह वेस्या जो
 नाच गान करती हो ।
 रङ्गविद्याधर (सं० पुं०) १ तासके माठ मुख्य भेदोंमेंसे
 एक भेद । इसमें दो बाली और दो प्लुत मात्राय होती
 हैं । २ वह जो अभिनय करता हो, नट । ३ वह जो
 नाचनेमें कुशल हो ।
 रङ्गवोच (सं० स्त्री०) रङ्ग शोच उत्पत्तिकारणमस्य ।
 रूप्य, चांदी ।
 रङ्गनाला (सं० स्त्री०) रङ्गस्थ शाला । नाट्ययुद्ध, नाटकके
 खेलनेका स्थान ।
 रङ्गनामी—मद्र सप्तश्लोकी मीमंसापरिचयनामका एक शब्द ।
 यह अक्षर ११ २७' २०" ३० तथा देशां ७७ २० पू०के
 मध्य गङ्गातटस्थानी संकरके समीप अवस्थित है । समुद्र
 पृष्ठसे इनकी चौथी ५६३७ फुट ऊँची है ।
 रङ्गदह—मासिकके अन्तगत एक प्राचीन ग्राम ।
 रङ्गाङ्गन (सं० पुं०) रंगस्थान, नाट्यगण्डा ।
 रङ्गाङ्गा (सं० स्त्री०) रंग रगाह अ गमस्याः । रुद्रां,
 किटहरी ।
 रङ्गाचार्य—एक प्रसिद्ध पण्डित । धं सम्म्यासाधनग्रहण
 करनेके बाद योगीशरीर नामसे परिचित हुए तथा
 कथान्तादर्भके विरोधान्तर्गत बाद यह आसन पाया । १३४४
 ४०में ये करानकायक मुगलमें पतित हुए ।
 रङ्गाचार्य—अष्टाक्षरव्याख्या तुलसी मतिनाथ, रघुपीर
 विशाख और रंगपू गवहारी नाम कई संस्कृत ग्रन्थके रच
 यिता । २ भादेशकीमुद्रो नामक वैदान्तग्रन्थके प्रणेता ।
 ३ उत्तर पत्र और गोपब नयन नामक न्याय ग्रन्थके रच
 यिता । ४ शुक्रतन्त्रैकनाम्नके रचयिता ।
 रङ्गाश्रीय (सं० पुं०) रङ्गो हरिताळाद्विस्तनाजोवतीति श्रीय
 मयू, यदा रंग भाजोब बाह्वय । चित्तकर पर जिसकी
 जीयिका रंगाहसे चलती हो ।
 रङ्गारण्य (सं० पुं०) तासके साठ मुख्य भेदोंमेंसे एक भेद ।
 रङ्गार—१ गजपूतोंको एक जाति । इस जातिके लोग मबाइ

और मासवामें रहते हैं । २ वैश्योंको एक जातिके नाम ।
 ३ महाराष्ट्र और मध्यभारतवासी ब्राह्मणों को एक भेणी ।
 शेखावता, रोहिलखण्ड, उत्तर अस्तपर्वको और मद्रिमदेशमें
 इस भेणीके बहुत ब्राह्मण वास करते हैं । पश्चिमके
 मूमिहार ब्राह्मणों को तरह ये भी शेतोबाध करते हैं ।
 अमी बहुतरे सिपाहोंमें भर्त्ता हो गये हैं । ये उदर और
 दुर्बल हैं । आज कल इन्होंने इस्लाम धर्म अवलम्बन
 किया है ।
 रङ्गारि (सं० पुं०) रङ्गस्थ तदाव्यपातोर्परिचय । करघोर,
 कनैर ।
 रङ्गात्म्य (सं० पुं०) मद्रकोडा और नृत्यगीतादिका अमि
 नय प्रदर्शनार्थं गृह । इसे अगरेजीमें Theatre कहते हैं ।
 जहाँ मनुकीडा, क्यायाम, अस्तलाखन आदि विद्याया
 जाता है उसका साधारण नाम Amphitheatre है तथा
 जिस मध्यके ऊपर अथवा नाट्यरङ्गमें जिस अभिनेता और
 अभिनेत्रीगण चरितका हायमाय दिखानेकी और उद्दीपना
 के साथ प्रकृतवद् अभिनय करती हैं वही नाट्यभिनय
 कहलाता है । आज कल प्रचलित पाश्चात्य चित्रदर्शने
 विद्येय घटनामिभित्त किसी चरितके उल्लेखके साथ
 तदनुपपन्न कोरुपरित अभिनीत होता है ।
 प्राचान भारतवर्षमें नाट्यभिनयका विद्येय भावर था ।
 दृशकोंके चित्रयिनोद्धारार्थं उस समय अनेक प्रकारके
 नाटक, प्रहसन आदि रचे गये । भारतीय नाट्यशास्त्रकी
 आलोचना करनेसे इन सब विषयोंके विभिन्न विभागोंके
 प्रयोग का पथेष्ट परिधय पाया जाता है ।
 नाटकविद्वन् दत्ता ।
 भारतीय हिन्दू-राजाओंके निधनविशेषमें अथवा
 जिसा उत्सवमें उत्तम चित्रदर्शनाय राजकविषों द्वारा अनेक
 प्रकारके गीतनाट्य प्रदर्शित हुए । उन सब नाटकों
 का अभिनय विज्ञानके समय भारतीय नाट्याचार्यगण
 जिसा रंगमञ्च और र गण्डय बनाते थे, उसका विवरण
 जानेका कोह उपाय नहीं । क्यो कि, भारतीय रङ्गभूमिका
 एक भी अस्त निवर्तन आज तक आविष्कृत नहीं हुआ
 है । सम्भवतः राजप्रासादके दो किसी स्थानमें यह
 रंगगृह प्रतिष्ठित था अथवा द्वयमन्दिपदिक सम्मुखस्थ
 उधमप्राङ्गणमें या नाट्यमन्दिरमें भावस्थकीय परतों की

यथास्थानमें लट्टा का वह सब खेल खेला जाता था। यही कारण है, कि राजकीय वा देवपूजा-सम्पर्कीय किसी उत्सवके समय राजगृहमें ही नाटकामिनयकी बात सुनी जाती है। राजाश्रयमें प्रतिपालित नाटककार कालिदास, भवभूति आदि कविगण भी इस बातको स्वीकार कर गये हैं।

प्राचीन नाट्यशास्त्रादिमें रङ्गमञ्चकी निर्माण प्रणालीका उल्लेख रहने पर भी उसकी लम्बाई, चौड़ाई और ऊँचाई कितनी होनी चाहिये, उसका कोई निर्दिष्ट परिमाण लिखित नहीं है। जब जैसा नाटक खेला जाता था, तब उसीके अनुसार रङ्गभूमि बनाई जाती थी। किसी किसी नाट्यनिर्माताके अण्डितने उसकी लम्बाई और चौड़ाई प्रत्येक २० हाथ तथा ऊँचाई उसीके अनुसार बतलाई है। ऊपरी भाग काष्ठादि मजबूत पदार्थोंसे बना कर कलम, पताका, पुष्पमाल्य और तोरणादिकें द्वारा उसे परिशोभित करे तथा उसमें झरोखे, पुतली आदि भी रखे। उसका निचला भाग चिकना और सफेद होना उचित है, परन्तु फर्श उतनी चिकनी न रहे। धरती, इससे अभिनेताओंके फिसल जानेका डर है। रङ्गभूमिके पश्चिम प्रान्तमें नेपथ्य बनाना आवश्यक है। कारण, इससे पात्रप्रवेशकी विशेष सुविधा होती है।

अभिनयके आरम्भसे पहले या प्रति अङ्कके अन्तमें जो विचित्र पद द्वारा रङ्गभूमिका सम्मुख भाग आच्छादित किया जाता है, उसका नाम यवनिका या परदा है। बिना लेदके, किन्तु चारोंक वल्ले द्वारा ही यवनिका या परदा तैयार किया जाता है। प्रति अङ्क या प्रति गर्भाङ्कमें जैसे रङ्गभूमिके बीचके पर्तोंका परिवर्तन हुआ करता है, उसी तरह रत्नविशेषमें यवनिकाका परिवर्तन करना उचित है। आदिके रसमें शुभ्र या सादा, वीररसमें पीला, करुणरसमें धुंधला या बुआदार, अद्भुतरसमें हरा, हास्यरसमें विचित्र, भयानकरसमें नीला तथा बोभटस्रसमें धूसर और वीररसमें लाल रंगकी यवनिका या परदा डालना चाहिये। किसी किसी प्राचीन नाट्याचार्योंके मतसे शुद्ध लाल रंगकी ही यवनिका सब रसोंमें व्यवहृत हो सकती है। आधुनिक नाटककार प्रायः इसी मतके अनुसरण करनेवाले देखे जाते हैं।

प्राचीनकालमें यवनिका दो भागोंमें विभक्त थी। पार्श्वीके प्रवेशके समय दो सुन्दर स्त्रियों द्वारा दोनों ओरसे यवनिका खींच ली जाती थी। इस समयकी तरह घिरनियों और डोरियोंके साहाय्यसे ऊपर उठाई नहीं जाती थी।

उस समय दर्शकमण्डलीके बैठनेके लिये आसन विभिन्न स्थानोंमें रखे जाते थे। नाट्यशालाके पूर्वी भागमें राजा या सङ्गीतविशारद, न्युनाधिक विवेचक, मार्गदर्शी, विभागवित्, सानन्दचित्त, रसालङ्काराभिज्ञ, कलानाट्यनिपुण, अभिनयवंता मधु तरहके गुणों और दोषोंके निरूपण, दूसरोंके अभिप्रायके समझनेवाले और श्लाशाल सभापतिता आसन रहता था। दक्षिणमें ब्राह्मणोंके लिये, उत्तरमें अमात्य और बालकोंके लिये, भित्तिपार्श्वमें स्त्रियोंके लिये, सभाप्रान्तमें नर्त्तिका, स्तायक, राजा या सभापतिके शरीर-रक्षक शस्त्रधारियोंके लिये और अन्यान्य दर्शनेच्छु व्यक्तियोंके लिये स्थान निर्दिष्ट होना था। अपरिचित, शस्त्रपाणि, अनाचारी, पांडित, अनभिज्ञ और पापण्डियोंको सभामें आने नहीं दिया जाता था। मध्यस्थता, सावधानता, अचञ्चलता, न्याय-वादिता, निरहङ्कारिता, रसभावामिज्ञता, सानन्दचित्तता आदि गुणों द्वारा भूषित व्यक्तिमात्र ही नाट्यसभाके सभ्य पद पाने योग्य होते थे। सिवा इसके अन्यान्य दर्शक या श्रोता रसभंगके कारण होते थे।

(भरतकृत नाट्यशास्त्र)

प्राचीन-भारतकी तरह पाश्चात्य जगत्में अर्थात् प्राचीन यूरोपके रसभ्य रोमन और यूनानियोंमें और एशियामाइनरवासी यूनानी प्रभावपन्न नवनोंमें बहुत प्राचीनकालसे अभिनय करनेके लिये रंगालय तैयार हुए थे। इतिहासके पढ़नेसे मालूम होता है, कि पथेन्सवालोंने नाटक अभिनय करनेके लिये (dramatic representation) सबसे पहले रंगालय स्थापित किया। दिओनिसस देवके प्रति उत्सव (Dionysiac festivals)-के समय वे अस्थायी लकड़ीके पट्टोंसे रंगमञ्च निर्माण कर अभिनय-कार्य सम्पन्न करते थे। इसके ५०० वर्ष पहले किसी दुर्घटनामें अस्थायी मञ्चके नष्ट हो जानेसे पथेन्सवाले एक स्थायी रंगमञ्च तैयार करने-

में तत्पर हुए। इससे ३५० वर्ष पहले एक सनातनपथ स्थायी र गमक तट्टारक हुआ। इना समय यूनान और पश्चिमो माइजरक नामा स्थानोंमें प्राचीन र गात्रयोंके भनुकृपा अनेक नाट्यशाखाये तैयार हुए। स्वार्थमें कवक व्यष्टिर्भाका समा भीम वृत्त्यामात्रक निये कर र गमक प्रतिष्ठित हुए ये महा किन्तु उनमें आज तक नाट्य-यमितय नहीं हो सका।

विभोनिमस् पवित्र संनियाम् (Lenneum) नामक स्थानकी अहास्तीवाराक भीतर पपेयसके सुप्रसिद्ध विभागिसिन्धु र गात्रय प्रतिष्ठित था। पक्षोपकिस पधनक वृष्टिय-पूर्व कीनेकी जहकी जाइ कर इस र गात्रयमें दर्शकवृत्त्यके बैठनेकी जगह (auditorium) बनी थी। यूनानियोंने जिम जिम जगह र गमूमिको रचना का थी उनमें इस तरहस पधनक पाठ्यूलमें जोइ कर दर्शकोंके बैठनेके निये सिद्धियां वा गैनेरियां बनी थी। इसाक १ अताम्ना पहलू रोमनोंमें समतक भूमि पर र गमक बनानका जोइ सिद्ध पाया गया जाता।

इस समयके जगक बने र गात्रयों पर छत न था। पश्चिमो माइजर कविसिन्धुके वृष्टिय-पूर्वमें मैरा (Myra) नगरमें र गात्रयके जो मयूने मिले हैं, व अत्यन्त प्राचीन न होने पर भी प्राचीनतम यूनानी रंगात्रयोंके जग पर बन हुए थे। इनमें दर्शकोंके बैठनेके निये जो आसन बने थे, वे एक केन्द्रीमूत थे और अर्ध वृत्ताकारमें गैनेरियां बनी थी। अण्योवक सापानाबली या गैनेरियां परकर सटी हुए थी। ये गैनेरियां पधनके हाइवें ईजूमें काइ कर समवृत्ताकारमें (gallery) बनाई गई थी। इस दर्शनमण्डपका नाम Cava था। पांच या छः प किनोंके बाइ दर्शकोंके आने जानेकी सुविधा के लिये एक पथ बनाया जाता था। उनके बाइ येसी हा गैनेरियां बनाई जातीं थी। सबसे पीछे केवम छियां की अजग गैनेरियां रहती थी। यहां स्तम्भो पर छत रहती थी। इसके लिये एक रास्ता या बरा मदा रहता था। इस छत पर जो बैठनेका स्थान रहता था। रोमना की तरह यूनानियों के थियटरमें जो सिनियों के बैठनेके लिये अलग ही पाछे स्थान रहता था। यह आसन बहुत ऊंचे होते थे। (Athenaeus xii, 534)।

नथ पुगमें प्राचीन यूनानियोंमें प्रधान प्रधान पुरोहितों-की छियां (Choral practices) के लिये गैनेरियोंके सामने अर्गर पत्थरके बन सिंहासन बनानका रीति प्रबलित हुए थी। थियटर या रंगात्रय पर छत न रहनेसे दर्शकों की बहो मसुविधा होता था। नूकान और वृष्टिक समय लोगों की गैनेरियों के शीघ्र या रास्तमें या बरामयूम छिपना पड़ता था।

वृष्टि पात्राके मिया छतविहान र गमक पर दर्शक-मण्डलीके कणका एक और कारण था। यह यह, कि पात्र और पात्रियोंके मुखसे निकलने हुए शब्द सुनाइ नहीं देत थे। क्योंकि, छत न रहनेसे आकाशमार्गस शब्द उड़ जाते थे। उनको प्रतिध्वनिका कोइ उपाय न था। इस लिये रंगामयके सजावक सबसे पाछेबासी दोवार और बगनकी सीमावाकी अहास्तीवारांम कितनी हा कुसुङ्गियां बना सत ये। इन कुसुङ्गियोंमें प्राइ भातुक बने बड़े बड़े कलसे लगा दिय जाते थे। छेज या र गमकस निकले बारंबार शब्द इन कलसेमें समा जात थे और कमशः मनीमूत हो कर पूर जमानके लिये हा नाट्याभास्योंने इस तरहक कलसाम्थापनका विधान किया था।

विद्वे विषयमें लिखा है, कि यह कुसुङ्गी भीतरके कलसेके मुताबिक ही बनाइ जाती थी और कलसा भा सुरसमन्वय (tuned in a chromatic scale) अनुसार ही संस्थापित किया जाता था। उनका कहना है, कि यूनानी समापतः इसी उद्देश्य लक्ष्य रचने थे। रोमनोंक रगात्रयोंमें इस तरहके कलसे स्थापित किये जात थे, कि नहीं यह बात ये ज्ञात न थे। सिसली शेषक रोपेमिनियन रंगात्रयकी कुसुङ्गियां आज भी रहित हैं। यह निःसन्देह कहना कठिन है, कि यद्यप्यमें कथो उन लक्षणोंमें इन तरहकी कुसुङ्गी तथा कमसीके स्थापित करनेकी व्यवस्था का थी।

मोक्ष-रंगामकका गैनेरियोंके सामन और छेजके अन्वधानमें जो ऊँचा मण्डप स्थापित हाता था, यह अर्षेष्ट्रा (Orchestra) कहलाता था। यहाँ गायक, पाठक और नचदिवों बैठती थी। इसक बाधमें गैनेरियोंके समान ऊँचा विभोनिमस्को पवित्र पक्षी रहती थी। यहाँक पाछे हा छेज या फला नृत्य

(Proscenium) रहता था। अर्चेट्रॉमकी अपेक्षा उसे ५ फुट तक ऊँचा होता था। इस पर चढ़नेके लिये कई सीढियाँ बनाई जाती थीं। अर्चेट्रॉम बैठे हुए पात्र-पात्रियाँ आवश्यकतानुसार ऊपर स्टेज पर चढ़ कर अपना पार्ट करती हैं। स्टेजके बीचमें जहाँ प्रधान-प्रधान अभिनेतृवर्ग आकर खड़े होने हे वह Pulpitum स्टेजके नीचे एक कोठरी रहती थी।

स्टेजके सबसे पीछे ऊँची एक दीवार रहती थी। यह दर्शकोंके निर्दिष्ट अन्तिम सोपानके पीछेकी ओर स्तम्भश्रेणियोंके समान समोच्च बनती थी, इसका नाम Scena है। इसके नीचे मोतर जानेके लिये तीन दरवाजे बनाये जाते थे। बगलके दोनों दरवाजोंसे साधारण अभिनेता या पात्र और बीचके दरवाजेसे केवल साजसे सज्जित हो कर बाहर होते थे। इसके पीछे पाल-पात्रियोंके लिये 'साज घर' होता था। ये ऊँची दोवार तीन स्तम्भों द्वारा इन ढगमें बनाई जाती थी, जिसे दूरके देखनेवाले समझते थे, कि किसी राजमहलका अगला भाग है। लोगोंको यह मालूम होता था, कि किसी उत्सवके उपलक्ष्यमें किसी राजमहलके सामने अभिनय हो रहा है।

सिवा इसके इन रंगालयकी शोभा बढ़ानेके लिये चिरम्ब्याथी प्रासाद या दीवारके बट्टे और भी नितने ही काष्ठनिर्मित चित्रपटोंकी अवतारणा की जाती थी। ये दृश्यपट इच्छानुसार हटाये जा सकते थे। कभी कभी गलमासितारेके बने चित्रोंसे सुसज्जित परदा पात्रोंके पीछे लगा दिया जाता था। इस तरहके परदे या दृश्यपटका नाम aulaea या Siparium है। पिछले समयमें नाना तरहके चित्र खींच कर रंगालयमें परदा व्यवहार किया जाने लगा। अरिष्टलके मतसे नाना रंगोंसे रचित इस तरहके अङ्कित दृश्यपटने सौको-हिसके बाद रंगालयोंकी शोभा बढ़ाई थी।

दृश्यपटके सिवा आवश्यकतानुसार अनेक फल कार-पानोंका उर्नात हुई है। स्वर्गीय देवताओंके अवतरणकी लीला या अभिनय करनेके लिये अभिनेताको झुन्डा देना होता था। इसके लिये एक यन्त्र निकाला गया था। चक्रपातका शब्द करनेके लिये एक बड़े नानुमय पात्रमें

पत्थर भर कर रखा जाता था। ऐसा पात्र सम्भवतः स्टेजके नीचेवाले कमरे (Gnost chamber)-में रख यद्यपि समय उन्मत्त काम किया जाता था।

एथेन्स महानगरीके दि-नोनिस्सियाकू रंगमञ्चका (जिसके अनुरूप इस समयके रंगालय बनाये आ रहे हैं) व्यंसावशेष सन् १८६२ ई०में प्रतनतत्त्वविभागके यत्नसे प्रोथितावस्थासे ही साधारणकी दिखलाया गया था। उस समय भा उसका प्रोसिनिअम्, अर्चेट्रॉ और नीचेके बैठनेके 'साट' सुरक्षित थे। इनका आकार-प्रकार देख कर अनुमान किया जाता है, कि इस रंगभूमिमें एक बार नाँस हजार मनुष्य बैठ सकते होंगे। इस रंगालयमें साधारण लोगोंके बैठनेकी जगहके समान एथेन्सके प्रधान प्रधान धर्मयात्रकोंके बैठनेके उपयुक्त मर्मरपत्थरके बने ६७ आसन थे। सिंहासनों पर उस समयके धर्म-यात्रकोंका नाम खुदा हुआ है। खुदे हुए सन्से मालूम हाता है, कि ये सभी आसन एक समयके बने नहीं हैं। अगष्टस्के राजत्वकालके पहलेसे हेडियानके राजत्वकाल-क बीच समय-समय पर ये सिंहासन बने थे। रंगालय-का दर्शनमण्डप दर्शकोंकी मर्यादाके अनुसार नियत होता था। इस रंगालयमें इस तरहके १३ भाग होते थे। प्रत्येक भागके आसन एक छोटी चहारदीवारीसे घिरे होते थे। अर्चेट्रॉसे समूचा अडिटोरियम भी इसी तरह चहारदीवारी द्वारा सम्पूर्णरूपसे घृथक था।

एथेन्सके सिवा यूनानके अन्यान्य नगरों में भी रंगालय थे, उनमें मेगालोपोलिस, निडस, माइराकिडस, आर्गोल् और पेपिदौरसका रंगमञ्च उल्लेखनीय है। यह निश्चय है, कि ईसाके ४ शताब्द पहले यूनानके प्रधान प्रधान प्रायः सभी नगरोंमें ऐसा ही एक अभिनयागार प्रतिष्ठित हुआ था। रोमनोंके राजत्वकालमें प्रायः सभी नाट्य मन्दिरोंकी मरम्मत हुई थी और स्थान-विशेषमें नये रंगभवन बना कर देशी नागरिकोंके भोग सुख और विलासपरताकी पूर्ण पराकाष्ठा प्रकट की गई थी। इन सबोंके निदशनस्वरूप पम्फिलियाके अन्तर्गत आस्पेन्दस नगरका रंगालय उम अनात कीर्तिका परिचय दे रहा है। ये भवन २री शताब्दीमें बना था, फिर भी, यह अभी नष्ट भ्रष्ट नहीं हुआ है। यह रंगभवन प्राचीन

रंगमञ्चके अनुकूल ही बना था। इन भास्वेष्यस रंग मञ्चके एंजेके पोछेके द्वारा Scena में तोम दर्जा स्तम्भ लगाये गये हैं।

रोमनागरीक सुप्रसिद्ध कोनोसियम्-रङ्गवादिकाकी तरह इस रङ्गालयमें भी लकड़ोंका मधान बांध कर दर्शन मण्डप पर लिपास चढ़ा कर भाङ्गजान करनेको भास्वया हुआ थी। Scena-भाषोरक करावर और धोणोपयक्त ऋष्टस्त्रम लङ्गे कर उस पर मधान बांधी गई थी। इस मधानके स्तम्भों पर गुल (Corbels) वैजाया जाता था। एंजेका ऊपरी भाग तोप देनेके लिये कामवा छत (Pent-roof) तन्पाए की जाती थी। इस छतका निम्न भाग धरकी समतल छतकी तरह दिक्कहानेके लिये वे लकड़ोंके पट्टेसे भातृत कर खेत थे। यहां एंजे युद्धका ऊदुर्चार्त्तक (Ueling) था। इस सिक्कि छतमें लकड़ोंके गुल खगा कर एंजेकी शोमापुष्टि की जाती थी।

भास्वेष्यस रङ्गालयके पद्लेके मिलने रंगमञ्चोंका उल्लेख गाया जाता है उन समीमें छत नहीं रहती थी। भना उन सब रंग यूर्तोंमें बैठे दर्शकोंका विरोध कर मोगना पकृता था। वे सम्मूल रूपसे सुव्यक उन्नावसे रंग होते थे। इसका शब्द सिस्सलीडोयोके डीरोमिनियम् पियेटर और लाइसियके अन्तर्गत मैरेका रंगमञ्च विरोध रूपसे उल्लेखनीय है। इन दोनों रंगमञ्चोंके कुछ भग चर्चस होने पर भी यह भाङ्ग भा मग्नायथीमें परिपत नहीं हुए हैं। ये भाङ्ग भा सुरक्षित रह कर प्राचान भगलुकी अतोत-कीर्त्तिका परिचय कर रहे हैं।

रोमी प्रचानता: युगानी रंगमञ्चको तरह अपने रंग मय बनाते थे, उनमें विरोधता यहां थी, कि युगानी अर्धेष्टा अर्धेष्टा गौडाकृतिष कुछ अर्थिक रहती थी। कि तु रोमनों की अर्धेष्टा अर्धेष्टा गौडाकृति ही होती थी। रोमन जहां तहां इच्छानुसार पत्थरके स्थायी रंगमञ्च बनाते थे। गजमन्त्रके अन्धुदयकालमें रोमन विसासिताके प्रवर्त्तकने स्थायी रंगमञ्चों की तोड़ कर के क हैना उचित समझा। और तो क्या ईसास १५४ वर्ष पद्लेके सीपियो नासिकाने (Scipio-naiken) रोमन मनामं पत्थरके बन रंगमञ्चोंका चर्चस करनेका अनुरोध किया था। कास्पसजगो नासने उसको पूर्ति का थी। और तो क्या,

ईसासे ५५ वर्ष पूय पम्पोने (I ompey) जब पदरयो का रंगमञ्च बनाया तब उसकी रक्षाके लिये पाष्प ही कर रंगमञ्चने ऊपर बीनास देयता (Venus uictrix)-का मन्त्र बनाता पडा था। मातून हाता था, कि ये रंगमञ्च मन्त्रिका खुलरा हो हैं। यिद्र वियसक लिबनेसे मातून होता है, कि इस खुलर पर आलोस हमार मादमी बैठ सकते थे। फिर यहां रंगमञ्च रोमन-थीरो की कथिर मोडुका स्थानका काम देता था। इस रंग मञ्चकी प्रतिष्ठाक बाद् ही ग्लेडवाडियो (Gladiator)-क हाथसे गॉन् सी नि ह और २० हाथी मारे गये थे। इस बड़े रंगमञ्चकी बगलमें ही और भा वो पियेटर बने हुए थे। उनमें एक जुडियस सीडरने भास्वम किया था और इसास १३ वर्ष पद्ले भगस्वसने भपने भतीके क नाप पर उसको समाति की थी। यह पियेटर भाङ्ग भी प्राचोन रोमन-कारागरीका साक्ष्य प्रदान कर रहा है।

ग्रिनाके यथार्थ इतिहासमें एक अस्थायी रंगमञ्चका उल्लेख है। ईसासे ५८ वर्ष पद्ले M A Emilius Scaurus ने एक पूर्वजिमागोय राजकर्मचारिक कर्त्तसे बने इस रंगमञ्चमें कुछ दिनों तक महासमारोहसे अभिनय कार्य सम्पादित हुआ था। इसी परमें प्राय ८० हजार भाश्मियों के बैठनेका स्थान था। इसके बाठ वर्ष बाद् अर्थात् ईसासे ५० वर्ष पद्ले C Curio द्वारा दो काष्ठ निर्मित रंगमञ्च एक पिनी द्रव्यपर (Pivot) इस तरह स्थापित हुआ था कि प्राताकाममें उक्त दोनों रङ्गमञ्चों में अलग-अलग भाषसे अभिनय किया जाता था और सम्प्ला समय उनको इस तरह घुमा कर एक कर दिया जाता था, जिससे वे एक रंगमञ्च (Amphitheatre) बन जाते थे। बहुतेरे ऐतिहासिक इस अद्भुत रंगमञ्चके अस्तित्वको स्वीकार नहीं करना चाहते। पूर्वीक रंगमञ्चकी वर्त्तकसंख्याको गणना करनेस और व्ययबाहुल्यकी भाषोचना करनेसे एक उच्च कर्मकारीके लिये यह काम असम्भव प्रतीत होता है।

प्राचोन रोमन कर्मो कमी समीप ही दो रंगमञ्च बनाते थे। एकमें कयल युगानी और दूसरने खेदिन भायामे लिबे नादकी का अभिनय होता था। सभ्राद्

हाड्रियानके टिभोली उद्यानके और पम्पिया नगरीका रंगालय इसका दृष्टान्तस्थल है।

एक बार रोम राज्यमें नाट्याभिनयका ऐसा समादर बढ़ा था, कि प्रायः प्रत्येक समृद्धिशाली नगरीमें एक न एक रंगालय प्रतिष्ठित होता हा था। ये सब रोमन-प्रथाके अनुसार अर्द्धचन्द्राकृति अर्धेप्रयुक्त बनता था। रोमके शासनाधीन यूनान नगर आदिमें जो रङ्गमञ्च स्थापित हुए थे वे सभी प्रायः यूनानी सान्नेसे बने थे। क्योंकि, ये सभी रङ्गालयोंके बनानेमें यूनानों कारीगर ही लगाये गये थे। टॉरोमिनियम् आस्पेण्डस् और मैरेका रङ्गालय ही इसके निदर्शनस्थल हैं। एथेन्स नगरीके समीपवर्ती एकोपोलिस् शैलके दक्षिण-पश्चिममें हिरोदेस एटिकासक, जो रङ्गालय दिखाई देता है उसमें अर्द्धगोलाकृति अर्धेप्रारहने पर भी वह उपरोक्त किसी तरहके रंगालयका निर्माण पद्धतिके अनुकरणसे नहीं बना है। सम्राट् हाड्रियानके राजत्वकालमें हेरोदेस एटिकास नामक किसी धनवान् यूनानी द्वारा बहु अर्थ खर्च कर यह रङ्गालय बना था। उनकी अपनी पत्नी Regilla-के नाम पर ही इस रङ्गालयका नाम Regillum रखा गया। रंगालय निर्माणके सिवा उन्होंने एथेन्स महानगरीकी शोभा बढ़ानेके लिये बहुत खर्च किया था।

रिगिलम् रंगमञ्चका दर्शनमण्डप पर्वतका सानुदेश काट कर बनाया गया था। इस पर प्रायः ६ हजार आसनयुक्त सोपान श्रेणियां रखी गई थीं। सुपरिचित दिओनिसस् देवके नाम पर उत्सर्ग किये हुए रंगालयमें आने जानेके लिये एक बड़ा छतवाला रास्ता था। पार्गा-मासवासी द्वितीय युमिनसूने इस भग्नप्राय पथकी मरम्मत कराई थी।

प्राचीन यूनानियोंकी तरह रोमन रंगालयका अर्धेन्द्रा भाग केवल वजाने और गानेवालोंके बैठनेका स्थान ही नहीं था। सभ्य (सिनेटर) और अन्यान्य बड़े बड़े आदमी यहां बैठते थे। रोमनोंने प्राचीन यूनान जातिका अनुकरण करके भी रंगालयके प्लेज और दृश्यपटके सम्बन्धमें अनेक सुधार किये थे। विट्रुवियस तीन प्रकारके ठेला दृश्यपट (Moveable Scenery)-का उल्लेख कर गये हैं—१ वियोगान्त नाटकका उपयोगी

दृश्य और स्तम्भादि परिशोमित राजकीय प्रासादादि ; २ हास्यरसपूर्ण प्रहसनादिके उपयोगी दृश्य खिडकियोंसे सुशोभित छोटे मकान ; ३ व्यंगकाव्य (Satyr drama) उपयुक्त दृश्यादि—हृषकजीवन-सुलभ पथ, घाट, मैदान, चेत, पवत, गुहा और वृक्षादि।

रंगालयके मध्ययुगके इतिहासको वर्णना करनेसे सबसे पहले इंग्लैण्डके सुप्रसिद्ध नाटककार और महाकवि सेक्सपियर और समसामयिक घटनाचर्चाको लिपिवद्ध करना आवश्यक है। पहले पवित्र दृश्यपटादिसे ही अलौकिक क्रियाओंको दिखानेवाले नाटक अभिनीत होते थे। इसके लिये कोई खास घरकी जरूरत नहीं होती थी। किसी जगह एक माच बाध कर तथा गिरजाघरोंमें ही यह अभिनय होता था। सन् १८वीं सदीमें ऐसे पवित्र नाटकोंके आस्वादसे नृम हो कर इंग्लैण्डवालोंने दूसरी तरहके मनचले नाटकोंका अवतारणा की। इंग्लैण्डकी महारानी एलिजाबेथके राजत्वकालमें यह इस ढंगसे प्रचारित हो गया, कि उसने इंग्लैण्डके साहित्य-इतिहासमें एक नई रोशनी पैदा कर दी। नाटकके समादरके साथ साथ नाटकीय भाषा नाना स्थानोंमें विकीर्ण हो कर ऐसी व्यक्तिगत आदरकी वस्तु हो उठी, कि जो चाहे सो अपने अपने घरोंमें तम्बू गामियाने या पथ या घाटमें सराय आदि बड़े बड़े मकानोंमें या बड़े बड़े आंगनोंमें उक्त भाषामें लिखे नाटक अभिनीत करने लगे। इस तरह कुछ समय गतने पर उक्त शताब्दीके अन्तिम भागमें इंग्लैण्डमें स्थायी रंगालय स्थापित होनेका उद्योग हुआ। इस समय नाटकाभिनय दिखानेके लिये राजाकी आज्ञा ले कर सुप्रसिद्ध नाट्याचार्य सेक्सपियरने तथा वर्वेजने एक स्थायी रंगमञ्चकी प्रतिष्ठा की।

सन् १५७६-७७ ई०में लण्डन नगरमें नाट्याभिनय सम्पादनार्थ कारीगर जेम्स वर्वेज नामके एक अभिनेता द्वारा पहला रंगालय बना। यह रंगालय लकड़ीका बना था। सन् १६६८ ई० तक शोरेडिचर हेलियेल लेनमें स्थित मान था, पीछे यह तोड़ दिया गया। यह रंगालय अपने गुणसे "The Theatre" नामसे परिचित था। इसके बाद यहाँ 'कार्टेन' नामक थियेटर स्थापित हुआ। सन्

१६४२ ई०में पारिषदमेव महासभाकी स्थापना के बाद पारिषदमेव स्थापित होन तक भी यह थियेटर चलता रहा था ।

बर्सेजने सन् १५६८ ई०में The Theatre का नाम मसला ले कर ग्लोब थियेटरकी स्थापना की । बैकसाइड नामक स्थानके सेवार गार्डनके निकट यह रङ्गालय स्थापित हुआ । कविवर सेक्सपियरके अमृत्युके प्रतापसे इस थियेटरका पचासौतम दिग्दिगन्तर्ग फलित गया । यह अठकोना छक्कड़ीका बना था । सन् १६१३ ई०में इसमें भाग लगी और इसका कुछ मजज जल कर मसल हो गया । इसका बाद इसकी मरम्मत कर ही गई । फिर सन् १६४४ ई०में इसको तोड़ कर नया बन बाया गया । इसीके समीप इंग्लैण्ड द्वारा सन् १५६२ ई०में The Rose और सन् १५६८ ई०में The Swan नामक नाट्यागार स्थापित हुए थे । यह सब तरहसे ग्लोब थियेटरके अनुरूप ही बने थे ।

सन् १५६६ ई०में प्राचीन डोमिनिकन प्रयातरीक ममीय बर्सेज The Blackfriars Theatre नामक और एक रङ्गालय स्थापित कर लागवान् हुए । इसी समय प्रतियोगी पक्षक धर्मिणने कोइ २० हजार रुपया खर्च कर सन् १५६६ ई०में The Fortune Theatre की स्थापना की । हाइड्रमन स्ट्रीट और गार्डिन लेनक बीच यह नाट्यमन्दिर सन् १८१६ ई० तक विद्यमान था । रामी एलिजबेथक राजस्यकासमें The Red Bull Theatre स्थापित हुआ था । इसका समकालीन Hope Jones Garden Whitehairs Salisbury Court और Newington थियेट्रोका उद्भव हुआ था । सन् १६१६ ई०में चिस्टर टव सरहन थियेमें ग्लोब, हाप और स्वाय थियेट्रोके चित्र दिखलाये गये ।

इंगलैण्डके रंगालय प्राचीन यूनाना या रोमिनीक दिखलाये गयेका अनुसरण कर नहीं सेवार हुए । ये प्राचीन इंगलैण्डक यथानुसार ही बने हुए थे । पहले किस्तो सराय या बड़ी अट्टालिकाक भांगलक बाचमें स्थायी आदमपक्षप या छेज तैवार कर अभिनय दिखाया जाता था । प्रधान प्रधान दृश्योंक लिये बरामदेम मीढियां बना था और अवेष्टादृष्ट होनाबस्थापन हाट्ट

दृश्योंक भांगलके किनारे किनारे बड़े हो कर तमाशा देखा करत थे । इसी प्रथाके अनुसार पुतने ग्लोब कथुन रंगम आदि वीर रसाभित नाटकामिनवीपयोगी रंगालय बने थे । इन सबों और पहलेके अन्धान्य रंगम भागोंके बीचमें जो मज्ज बनता था वहा छेज कहलाता था । इस छेजकी चारो तरफ भासन लगा दिये जाते थे । केवल छिपर साजघर या Green-room छूटा था उबर बाकी रहता था । ऊपर चारों तरफ गैसरो और बक्स रहते थे । इसलिये उस समयके नाट्याचार्य अठकोने रंगमंचको उपयोगिता उपलब्ध की था । फलुन थियेटर चौकोम था । प्राचीनतम इंगलैण्डक थियेटर और हमारे देशकी रासबोला या पाता प्रणामी आलोचना करनसे दोनोंको एक प्रणाली ही दिखाइ देती है । अबक प्रमेइ इतना ही है, कि यानामें छेज नहीं रहता ।

इंगलैण्डक सुप्रसिद्ध नाटककार संवसपियरकी ओषनोके लेखक इन्साथेल फिलिडसने लिखा है, कि फलुन रंगालय सब तरहसे ग्लोब थियेटरकी प्रणालीके अनुरूप ही बना था । अबक प्रमेइ इतना था, कि इसका छेज चौकीन और लकड़ोंके परदे जरा भाटे थे । चारो ओरका दीवार आधा पक्का, आधा लकड़ोंका बना थी, छतमें टासा लगा थी, हानो ओर डिगारो पर दसनका मारियां बनी थी ओक लकड़ोंका छेज था, किन्तु ऊपरसे एक स्पतम्न आकृतावन रहता था जिस भेजामें Shadow कहत है । सार्सीवार जगहोंसे परिकी मित साजघर (tiringe-house) और बैठनेके छिये हो तरहक बक्स भासन (tendensrooms and two penne rooms) सजित थे । सन् १६७२ ई०में कार्फामान हाप सथापित नाट्याभिनय सभ्यमें और विम किस्सम-हूट Londiana mustata (1819); कोस्मिया-हूट History of Dramatic Poetry (1874) इन्नीथेल फिलिडसहूट Life of Shakespeare (1856) मीतान-हूट History of the Stage (1700); और The Antiquary नामक पत्रिकामें थोडिस हूट इंग्लैण्डक प्राचीन रंगालयके ऐतिहासिक लेखामें इन सबों तथा उस समयके अन्धान्य रंगालयोंके यथायथ विवरण दिये गये हैं ।

१६वीं और १७वीं जताब्दीमें लोग जिस ढंगके अभिनयका आदर करते थे उसका नाम masque है। इसकी अभिनय पद्धति विचित्र थी। इसमें नाटकोंके रसोंका विशेष रूपसे अवलम्बन कर उन रसोंके अश्रित नियम प्रतिपालित नहीं होते थे। केवल कुछ अभिनेता और अभिनेत्रीको हंसानेवाला नकाब तथा रंग विरंगे वस्त्रोंसे सुसज्जित कर रंगमञ्च पर लाया जाता था। इस समय दृश्यपटके विशेष आडम्बर और यन्त्रके साहाय्यसे अर्थात्किक कौशल दिखानेका विशेष आग्रह किया जाता था। इंग्लैण्डके राजा १म जैम्स और १म चार्ल्सके राजत्वकालमें वेन जोन्सन और प्रसिद्ध कारीगर इनिगोजोन्स दोनो 'मास्क' अभिनयकी पराकाष्ठा दिखा गये हैं।

जोन्सन 'मास्क'के लिये भीतनाट्यके गाने भरने तथा पात्रोंके पाठ तय्यार करते थे। श्वर इनिगो जोन्स उसके मुताबिक दृश्यपटादिकों कल्पना कर अङ्कित किया करते थे। देवाधिभावके उपलक्ष्यमें जोन्स द्वारा रंग विरंगोंसे सुचित्रित पर्वानमाला, मेघमण्डल, प्राकृतिक शोभा और बड़ी बड़ी अट्टालिकायें ऐसी परिपाटी तथा निपुणताके साथ सम्पादित हुई थीं, कि जोन्सनकी अपेक्षा नाट्यजगत्में उनका नाम विशेषरूपसे प्रसिद्ध हो गया था। अपने प्रतियोगी जोन्सको सुख्याति और श्रीवृद्धिसे ईर्ष्यान्वित और हिंसापरायण हो कर जोन्सन ने उनके विरुद्ध कई विद्रुपात्मक प्रहसनों (Satire) की रचना की थी।

१६वीं शताब्दीमें इटलीमें नाटकाभिनयका पूर्ण प्रभाव दिखाई दिया। इस समय वहाँ विद्वेषियसके प्राचीन रंगालयका अनुकरण कर बहुतेरे नाट्यमन्दिरों की प्रतिष्ठा हुई थी। इन सबमें मिकेनजा नगरका ओलिम्पिक थियेटर आज तक विद्यमान है। पलादियोंने भी इसका गठन नैपुण्य चित्रित किया था, उनको मृत्युके बाद सन् १५८४ ई०में इसमें अभिनय काठ्य आरम्भ हुआ। इसका शिल्पनैपुण्य Scena, प्राचीन रंगालयके अनुकरणसे तीनों प्रवेशद्वार, नाना स्तम्भश्रेणियों और कुलुणियोंको पुतलियोंको देख कर आश्चर्यान्वित होना पड़ता है। सिवा इनके इसमें वर्णचित्रका भी

अभाव न रहता था। पलादियोंके शिष्य स्कामोञ्जिने ओलिम्पि थियेटरकी स्थापना कर सन् १५८८ ई०में साविओनेटा नगरमें ड्युक मेस्पेसियानो गोआगाके लिये एक नये ढंगका (Pseudo classical theatre) रंगालय बनाया। दुःखका विषय है, कि यह अब नष्ट हो गया है।

फ्रान्स देशमें अर्थात्किक वटनाभिनय (Miracle Play)ने धर्ममूलक नाटकका (Secular drama) प्रचलने इंग्लैण्डके बहुत पहलेसे ही प्रचलित था। राजा १२वीं लुईके राजत्वकालमें 'Brothers of the Passion' नामक पद्यदलने अनुमानसे सन् १४६७ ई०में एक नाट्यमन्दिर तय्यार किया था। इस दलके कितने ही धर्ममूलक नाटक अभिनयत हुए थे १६वीं शताब्दीमें कायेरिन डी मेडिसी रंगालयमें परिच्छेद और दृश्यपट आदिके परिवर्तनके लिये बहुत दान खर्च किया गया था। वहाँ १७वीं जताब्दीके मध्य भागमें यथार्थ अपेराका अभिनय होने लगा।

१८वीं जताब्दीके अन्तमें नेपल्सके 'San Carlo' मिलान नगरमें La Scala और मिनिसके La Fenice नामक रंगालयोंने सारे यूरोप महादेशमें कलाविद्याका शोभास्थान अधिकार कर लिया था। इस तरहका सर्वोत्तम अभिनय उस समय यूरोपके अन्य स्थानोंमें कहीं दिखाई नहीं देता। इन रंगालयोंकी १२वीं सदीमें मरम्मत हुई थी सही, किन्तु पेंरे, सेएटपिटसवर्ग और अन्यान्य समृद्धिशाली राजधानियोंमें स्थापित रंगालयोंके शिल्पनैपुण्य तथा आकृतिकी बराबरीमें ये कई अंशोंमें हीन समझे जाते हैं।

इस समयके रंगालयोंके दर्शनमण्डप कई अंशोंमें परिवर्तित हो गये हैं। वक्स, एल, बालकनि, और गैलरी आदि ऊंच तथा कम दामके आसन जिस तरह सजाये जाते हैं, उसका उल्लेख करनेकी आवश्यकता नहीं। पिट नामक आसन एलके अन्तर्भूत हो गया है।

पेटेजके जिस अंशमें अभिनेता और अभिनेत्री खड़े

हो कर अभिनय करते हैं, उसे स्टेजफ्लोर में (Stage floor) कहा जाता है। यह खनावला दर्शकों के स्थान से सामान्य उंच, फिर मो ढालवाँ बनाया जाता है। इस टेढ़ेपनके कारण सामनेके चित्रपट वा दृश्याचली वृत्त पर अवक्षिप्त ज्ञान पड़ती है। दर्शकमण्डलीके भित्तोंके सामने समुचित चित्रपटसम्बन्धित इस दृश्यस्थानके सिखा प्रोमिनिप्यूमके पश्चाद्भागमें अभिनयोपयोगी दृश्य पश्चादि परिचालनार्थ कइ कल कलत्रोंके स्थापन करन योग्य भीर मो कइ स्थान है। ये सामनेके दर्शकमंडप से किसी भङ्गमें होन नहीं। जिन तान प्रधान और विस्तृत स्थानमें नाट्यरङ्गके उपादान प्रतिष्ठित रहते हैं उनका ही विवरण संक्षेपमें यहाँ दिया जाता है—

(१) दोनों बगलमें युक्तपट रक्षकैका स्थान। इसे Wings वा Coullases कहत हैं। इसके दोनों ओर भ्रमरार्थरूपसे गूढ, वन, मेरुपर्वतका छत भावि चित्र मङ्कड़ीके चौखट (Frame) पर कपड़ा सा कर भङ्कित किया जाता है। ये चित्र प्रोसिनिप्यूमके दो गुने ऊँचे तक (stork's high) रचे रहते हैं।

(२) प्लेजका मेजका निचला स्थान Dock वा de-sous नामसे प्रसिद्ध है। यह भाँ तीन चार मञ्चलोंमें विभक्त है और प्रोसिनिप्यूमकी तरह गहरा है। इसके मोतरमें दृश्यपटोंको उठान और गिरानेके लिये वाकफळ (Windlasses वा Ors)से वृत्तकमण्डलीके सामनेसे जो ब बंधा या दूरकमण्डलीके सामने पड़ाएक बंधा देना बहुतेरे उठानेके लियेपटको व्यवस्था है। इनमें इसलिये पट के र गालयका छार द्राप (tar trap) रक्षपथविशेष कीजल और बुद्धिक साथ सम्पानित हुआ है। इसमें एकपत्र अन्तर्धान होनके लिये किसी अभिनेताको मेज से गुरेरे हुए गड्डेमें झूटना नहा होता। अभिनेताके यहाँ भा कर कइ होत हा उसक शारीरिक तातेसे छिद्रपथ का आवरण फट जाता है और अभिनेता सुप्त हो जाता है। इस पतळे कीजका गुप्तद्वार (trap-door of thia board) बंधोळ लोहके बन्धनसे ऐसा बंधा रहता है कि अन्तर्धानके बाद ही उसकी पडकी अवस्था प्राप्त हो जाता है। दर्शकमण्डलीके इस कीजलका ज्ञाप भी नहीं सम्भव सकते। 'सोताका पातासप्रपथ-का अभिनय

इस तरहसे सम्पादित होने पर ऐसा सुन्दर दिखाइ देता है, कि मानो यह काम किसी मौखिककीलाके साहाय्यसे किया जाता हो।

इस तरह 'भाभ्यावर द्राप' नामके पथमें अभिनेता (मानो किसी वैयक्तिक प्रभावने सुदृढ़ पुर्णमिथिमें) सहज ही घुम गया है, ऐसा ही अनुमान होता है। इ ग लेखके प्रधान प्रधान र गालयोंमें नाट्यरङ्गके भावश्य कीय उपादान येये हा वैज्ञानिक मिति तथा सुक्रीयलसे प्रतिष्ठित हुए हैं कि उन्होंने वर्षानान यूरोपके प्रत्येक नाट्यमन्दिरेमें सावर स्थान पाया है।

(३) प्रोसिनिप्यूमके ऊपरसे समूचे प्लेजके उपरि भागमें जो विस्तृत स्थान है, उसका नाम Pices वा Cin tre है। ये कमी कमी प्रोसिनिप्यूमका दृग्गत ऊँचा रहता है। यह स्थान मो कइ मञ्चलोंमें विभक्त हुआ है। यहाँ दृश्यपटोंको उठका रक्षकैके लिये अतन्त्र पाक फल रक्षी गई है। इससे पटोंको न मोड़ कर या न छोड़ कर एकत्रम दृष्टिसे बाहर उठा किया जाता है। इन सब कामोंके लिये इन दोनों स्थानोंमें इस तरहसे रस्सी, तार और भ्रम्याभ्य आवश्यकीय कल रक्षी गई हैं जिनसे देल भाव्यपर्याप्त होना पड़ता है।

पटोंकी प्रथाके अनुसार दोनों बगलसे दो पण्ड-पट बाँच कर बीचमें जा कर मिलानेसे दर्शकोंके सामने एक पूर्ण चित्र दिखाया जाता था। इन (Wings) पिन्ना की उल्लेख कर छे आनेके लिये ऊपर मङ्कड़ीका चौखट (Frame) और मोचो प्लेजके मेज पर एक छिद्र किया रहता था। इस समय किसी र गालयमें मो यह प्रथा प्रय संस नहीं है। ऊपरसे पट या पखा गिरा भयवा युग (चित्र) गिरजा और लो पया—सुविस्तृत राजपरम चित्रसाहाय्यसे प्रस्तुत कर दर्शकोंके सामने जाना हो परामान नाट्याधार्म्यका अभिप्राय होता है। कितने ही कश्चिद्विध भङ्कित कर उनक दो दो कश्चोंकी परस्पर संयोजना कर प्लेजके सामने ये सब दृश्य सम्या दन करना विशेष चित्तोपहारक नहा होता। किन्तु ऊपर कइ हुए बगल प्राथित दृश्यसे सहज ही दर्शकोंकी एक पथाप Perspective चित्रकी छाया भङ्कित की जा सकता है।

इस समय विलायतके सभी रंगालयोंमें यन्त्र-कौशल स्थापनका प्रयास दिखाई देता है। प्लेजके मेजमें मोटे काठ या लकड़ीके बढले इस समय अपेक्षाकृत पतले लोहेके पत्रसे तैयार होनेसे और पाक कलादि लौह निर्मित होनेसे स्थानकी कमीके लिये विशेष सुविधा हुई है। फिर थोड़े ही समयमें कार्यकी पूर्ति भी हो जाती है। जगत्में सर्व-प्रधान और बहुधन्यसे बने पेरिस नगरीका सुप्रसिद्ध "ग्राण्ड अपेरा हाउस" कला कौशलमें शीर्षस्थान अधिकार करने पर भी कलकञ्जे (Mechanical appliances)के अभावके कारण अन्यान्य रंगालयोंकी सहयोगितामें पीछे पड़ गया है।

गर्भाङ्कके एक दृश्यके बाद दूसरे दृश्यका लाना समयसापेक्ष देख कर न्यूनाक नगर मेडिसन स्फायर थियेटरमें हालमें एक अभिनय उन्नति संसाधित हुई है। वहाँके नाट्याचार्य एक अभिनयके बाद फिरसे प्लेज सजाते थे। इससे विलम्ब होता था। इस असुविधाको दूर करनेके लिये उन लोगोंने एक दूसरा प्लेज बना लिया है। जब ऊपरकी मञ्जिलके प्लेज पर अभिनेत्री आ कर अपने अपने पार्ट करती हैं, तब उसीके ठीक नीचे मञ्जिलमें प्लेजके दृश्यपटादिकी संयोजना कर यथा-यथ रूपसे सजा सजाया रखा जाता है। प्रथम अङ्कके अभिनय हो जाने पर दृश्यपटके गिरते न गिरते वह ऊपरको उठ जाता है और दूसरा निचली मञ्जिलका प्लेज वहाँ आ जाता है। इन दोनों प्लेजोंकी मेज ऐसी तुल्यमानसे रखी गई (accurately balanced by heavy counterpoise of weights) हैं, जिससे सहज ही सम्मान्य-शक्ति द्वारा ऐसे बड़े खण्डकी परिचालना की जा सके।

लण्डनके 'पाएटोमाइम' अभिनयमें जैसी यान्त्रिक कुशलता दिखाई देती है, जगत्के और किसी सुसभ्य देशमें दिखाई नहीं देती। दृश्यपटके परिवर्तनकी परिपाटी और सुचतुर कारीगरको शिल्पकारीगरी देख कर यथार्थतः मनमें विस्मय उपस्थित होता है। दर्शकोंके चित्त आकृष्ट करनेके लिये वे कभी कभी जिन कौशलोंका आश्रय लेते हैं, उनमें परीका अंश अभिनयकारी अभिनेत्रियोंके और सांप कीड़े आदि सजानेके लिये

दुधमुँहे बालकोंकी कभी कभी बहुत दुःख भोगना पड़ता है। क्योंकि रमणियोंको 'परो' सजानेके लिये अदृश्य-भावसे ऊपरसे नीचे लटकाने समय कभी कभी दुर्भाग्य वश रस्सी या तार टूट जानेसे गिर पड़ना देखा गया है। सर्प आदि निकालनेके लिये सुकुमार बालकोंको मोटे कागजके खोललेमें भर कर रखते हैं, क्योंकि भीतरसे बालकके हिलनेसे सर्प बाहर निकल आता है। ऐसी दृश्योंमें श्वास बंद होनेके कारण बालकोंकी जान जानेकी सम्भावना होती है। लण्डनकी ड्रेटो लेनका रंगालय इसके सम्बन्धमें एक आदर्श स्थल कहा जाता है।

उपरोक्त कलकञ्जाके उपयोगी स्थान होनेके सिवा रंगालयके अभिनेता-अभिनेत्रीकी सुविधाके लिये पोशाक-घर (dressing room) और पंक्तिवद्ध साजघर (Green room) रहता है। इसके सिवा साज सामान रखनेके लिये स्वतन्त्र भाण्डार और दृश्यपट अङ्कित करने और रखनेके लिये चित्रस्थान (atcher) है। रंगालयके भीतरके सिवा अन्यत्र रखनेकी भी व्यवस्था देखी जाती है।

यूरोपमें प्रधान और प्रसिद्ध चित्रकारोंसे ही चित्र पट अङ्कित कराया जाता है। रोमनगरमें 'राफेल, फ्रांसमें' वातु, बुका और साकोन्द्रीनी और इङ्ग्लैण्डमें 'थान-फिब्ज द्वारा ही दृश्यपटादि अङ्कित हुए हैं। फ्रांस और इङ्ग्लैण्डकी तरह जर्मनीमें भी नेपुण्यपूर्ण चित्रपटका अभाव नहीं है। प्राकृतिक सौन्दर्यव्यञ्जक उत्तमोत्तम चित्र भी रंगालयमें देखे जाते हैं। कभी कभी झील और उसके जलमें प्रतिफलित तोरवर्ती वृक्ष पर्वतादि स्वरूपसे दिखानेके लिये नाट्याचार्य रंगालयमें एक पेनापटके नीचे जरा झुका कर रख देते हैं। इससे पीछेके अङ्कितचित्र यथार्थतः प्रतिफलित हो शोभाकी दुगुना बढ़ा देता है। वेगनरने Magical scene दिखानेके लिये एक कौशल निकाला था। उसने प्लेजकी पीठ छेद कर एक छिद्रयुक्त वाष्पनलिका (Steam-pipe) स्थापित की थी। इस जलसे उठती हुई धूमराशि दूरसे अद्भुत स्वच्छ धुपके परदाकी तरह दिखलाई देती है।

रङ्गालयोंमें Light रोशनी देनेकी व्यवस्था विशेष उल्लेखनीय है। इससे कभी कभी अत्याश्चर्य फल भी

दिखाया जा सकता है। प्राचीन कर्पात् पहेलेकी कुछ खाइरकी प्रथा अब नहीं है। सन् १७२० ई० तक चिराग जलाया जाता था, तबपुनः मोमयत्ती जलाई जाने लगी, इसके बाद M Argand द्वारा चिराग तेजके छम्प जलाये जाने लगे। पुनः सन् १८२२ ई०में पारो नगरके रङ्गलघुमें गैसकी रोशनी हुई। इसके बाद Oxyhydrogen flame light और वर्तमान समयमें इलेक्ट्रो लाइटका व्यवहार होनेसे सब तरहके सम्राज दूर हो गये हैं।

पहेले विद्युत् प्रकाश दिखानेके लिये नारको पोडियम (Lycopodium) मयवा कृतयज (धूना) को धूलि भस्ममें भोजी जाती थी। धात्र भी प्रकृत भस्मि प्रकृतित दिखानेके लिये इसी प्रथाका व्यवहार सेना पड़ता है। किन्तु आज कल मेघमाळा समाप्ताहित द्रव्यपद मङ्कित कर उसमें देङ्के-मिङ्के छेव कर काँचका नख बैठ प्रकृत वैद्युतिक प्रकाश किया जाता है। कमी-कमी वैद्युतिक तारका भी व्यवहार देखा जाता है। जोहेकी चहर मोड़ कर द्योतनपट्टके ऊपरवाँबरकमें तोपठा गोला रख मयवा रस्सोके दो कुङ्कीकी सहायतासे कई छककीके परदे सजा कर इस तरह कीशरसे छटका कर मरका रकते हैं, कि उसमें जप मो रकत जगसेसे मेघमाळा जैसा शब्द होता है। धायवीय शब्दका अनुकरण करनेके लिये एक मोटे बरख बीच-बीच कर बांध देते हैं और उस पर बाँध युक्त एक गोळ मन धुमानैसे भावसमें थोड़ी-थोड़ी वृद्धिकी तरह साँय साँय शब्द होता है और घातय नरुमें मटरका दाना झाड़ कर हिजा देनेसे वृद्धि होनकी तरह शब्द होता है।

इस समय पहेलेकी तरह अर्धेष्टा प्रथित नहीं होती। बावको को द्योतके मयनयत्ते बाहर रखनेके लिये यह स्थान प्रोत्तनियुक्तमें नीचे या ऊपर निर्दिष्ट हुआ है। भस्मिताका पार्श्व निर्देश करनेके लिये उस समय रङ्गाध्यमें प्रम्यटर नियोजित करना पड़ता है। प्रेजके सामने एक छोटे कमरेमें बैठ कर यह प्रत्येक भस्मिता और भस्मितोको उनके पाठ बतला दिया जाता था। यह प्रथा भस्मितोको के लिये तथा द्योतको के लिये

विशेष अनुविचारक धो और भरखि देख wings के निकट रह कर प्रम्यटिंग Prompting करनेकी रीति इस समय प्रवर्धित हुए है।

१३वीं शताब्दीके मध्य भाग तक रङ्गाध्यके भाव स्थकीय उपादान भीर पोशाक आदि संभ्रम करनेके लिये सामान्य द्रव्य वर्ण होता था। सूक्ष्म बात है, कि उस समय वैशम्पाकी उतनी सजावट होती न थी और कोई उस विषयमें आग्रह प्रकाश नो नहीं करता था। पलेके कपड़ेका रंग हुआ पहनेका बरख पड़ता था। यही भस्मिनयके समय एक एक करके पहनते थे। मोटे कागज पर पाकिशुदार चिकना कागज साद कर ठरुधार आदि बनाते थे। इस समय उन सब बातोंका बहुत परिवर्तन हो गया है। किसी प्राचीन भदनाके भाषार पर नाटककी वृद्धि होती थी। इस समय तत्समयोप योगी भूखलिकादि क्यापत्यका निर्दोश चित्तमें दिख लाया जाता है। इसलिये धर्म ध्यय तथा परिभ्रम करनेमें जरा भी नहीं दिखकते। वैशम्पाके लिये भी यथेय पन वर्ण किया जाता है। सुना जाता है, कि किसी-किसी समय एक एक नाटकको तैयार करनेमें तीन तीन छात्र उपाय व्यय किया जाता था।

इस तरहकी वनावटके साथ यथार्थ घटनाको प्रति फलित करने नाटक नाटाचार्य यथार्थ भस्मिनय चित्तको दिखानेमें मूल जाते हैं। उत्तम और प्रकृत विषयोंका भस्मिनय धात्र भी दर्शकोंके भस्मिमें नहीं। यह देख व कई बार कथन द्रव्यपदकी सुस्पृताकी वृद्धिमें ही मन लगाने पर बाध्य होते हैं। काइसियामें 'रोमियो जुलियट' नामक लेखसुपरकृत नाटकके भस्मिनय करते समय प्रथम धङ्के Ball चिह्न दिखानाके समय द्रव्यकी परिपाटी और साधारण जहज पहेलेके गोळनाम से प्रथम प्रथम भस्मितोका पार्श्व (acting) एक इम ही नष्ट हो गया था। कमी कमी पिछले यमार्थके द्रव्य पदोंकी सजा कर यथायथ रकनेकी विद्वयनामें ज्ञाप सीवके सामने छङ्गे भस्मितोको के मुखस निकले शब्द बर कर भी भस्मिनयको बिलत कर देता था।

वर्तमान समयमें किसी परिलेके भस्मिनयके समय भस्मितोको वस्तुताका acting गामनीय हास होनेका

और भी एक गूढ़ कारण देखा जाता है। एक नाटकको लगातार सैकड़ों बार करते रहनेसे पात्रपात्रियोंके सभी पार्ट कण्टस्य हो जाते हैं और उसे वे फलकी पुतलीकी तरह बक जाने हैं। उनका उस समय चरित्रके भाव-पर जरा भी ध्यान नहीं रहता, इसलिये उनके पार्ट खराब होने जाते हैं। इस समय रंगालयके बहुमृत्यु वेशभूषा और सजावटकी अधिकता साधारणके मन-मुग्धकर होनेके कारण अभिनयके विषय-परिवर्त्तनकी ओर लोगोंका ध्यान नहीं जाता। फ्रान्सके Theatre Francais नामकी समाके उपरोक्त नियमोंके समर्थन करने पर भी वहा उच्च अङ्कसे ही वक्तृत्याभिनय सम्पादित होता है।

लण्डनके रंगालयके आकार बड़ा होनेके कारण नाना श्रेणोंके दर्शकोंका समावेश होता है। नित्य अभ्यस्त दर्शकोंके आगमनने रंगालयकी मद्गुठकी संभावना है। क्योंकि वारंवार अभिनयका देख कर एकदमके पाटेकी अच्छाई और बुराई पर विचार करनेमें समर्थ हो सकेंगे। अभिनेता भी प्रशंसा अर्जन करनेके लिये अच्छा पार्ट करेंगे। यदि वे अपने पार्ट स्थानविशेषमें व्यर्थ चीत्कार या अवय्यारूपसे अभिनय (Clap trap या Ranting) करें तो दर्शक उनकी निन्दा कर सकेंगे। किन्तु इस समय दिनेादिन नये नये और अभिनय-अनभिज्ञ दर्शकोंके उपस्थित होनेसे रंगालयके सस्कार-विषयमें विशेषरूपसे व्याघात उपस्थित हो रहा है। इस श्रेणोंके दर्शकोंके लिये ऊपर कहे हुए व्यतिक्रान्त अभिनयकी प्रशंसा करते देखा गया है। वे यथार्थ और सुवचिसम्पन्न वक्तृत्याभिनय उपलब्ध करनेमें समर्थ न हो कर उस विषयमें विशेष आग्रह नहीं करते। इन सब कारणोंसे व्यवसायी-नाट्य सम्प्रदायके उनके उपयुक्त नाटक आदिकी रचना कर अभिनयकार्य-सम्पादनमें बाधा उपस्थित होनेसे नाटककोंको (Dramatic Standard) अवस्थामें अन्तर पड़ गया है और अभिनेताओंके भी चरित्र परिस्फुरण-शक्तिकी कमी होनेके कारण धीरे धीरे वे नोतिमार्गसे भ्रष्ट हो रहे हैं।

अभिनयका इतिहास।

जातीय जीवनको सामाजिक नीति और सासा-

रिक चित्रको प्रकट करना ही अभिनयका प्रधान उद्देश्य है। जातिगत न्युनाधिकके अनुसार इस अभिनय-कार्यमें वैपरोत्य दिखाई देता है। सभ्यता ही इसका अन्यतम कारण है। सुसभ्य रोमन और असभ्य बबर प्राचीन आर्य हिन्दू और असभ्य मंगोलोंमें भी यह विभिन्नता थी। इस समय सुसभ्य जातिमात्रमें अभिनयके लिये रंगालय प्रतिष्ठित हो रहे हैं। किन्तु कोल, भोल आदि भारतीय आदिम अधिवासियोंमें आमोद-प्रमोदके लिये इस तरहका सभ्यवचि प्रणोदित रंगमञ्च नहीं बना है। उनके वर्णरोचित नृत्यगीताभिनय स्वतन्त्ररूपसे किसी गांवमें निर्दिष्ट रंगभूमिमें हुआ करता है।

यह वर्द्धरोचित जगली स्वभाव और उसके उपयोगी जगली गीतको ले कर मानवसमाज जितने ही सभ्यताका सीढ़ियों पर चढ़ने लगा, उतने ही वे प्रामादि प्रतिष्ठित कर कृपिकार्यमें मन लगाने लगे। भोपडेमें रहनेवाले किसान प्राणान्त परिश्रम करनेके बाद जब अपने भोपडेमें आते और अपनी यकावट मिटानेके लिये अपने बालबच्चोंसे घिरे हुए बैठते, तब वहां एक एक दल भा कर अपने नृत्यगीतसे तथा अपने हावभावको दिखा कर थके हुए उन कृपकोंको शान्ति देनेकी चेष्टा करता था। इसके बदलेमें वह दल कुछ धान पाता था इसी धानसे वह दल अपना गुजर करता था। यह सम्प्रदाय Minstrel नामसे पुकारा जाता था। यूनानो कवि होरेजने (ईसासे ६५ वर्ष पूर्व) लिखा है, कि उस समय प्राचीनकालमें किसी प्रकारका रंगालय नहीं था। गीतनृत्य करनेवालोंके सरदार बैलगाड़ियों पर अपने दलके लोगोंको चढ़ा कर जहां जरूरत होती थी वहां ले जाते थे या गांव भरमें घुमा फिरा कर लाते थे। स्पेपस नामक एक यूनानोसे इसी तरह गाड़ी पर चढ़ बाजा बजा कर युद्धके गानेको प्रचलित किया उस समय कई तरहके हाव भाव भी दिखाये जाते थे।

मानव जब अपेशारुत सभ्य हुए; नगर तथा उपनगरोंकी शोभा बढ़ाने लगी, रहने लायक सुन्दर सुन्दर अट्टालिकाओंका निर्माण हुआ, तब आमोदके लिये स्थायी नाट्यशाला या रंगालयकी स्थापना हुई। पाश्चात्य-जगत्के प्राचीनतम सभ्य यूनानी तथा उसके

पोपेकी रोमन शक्तिमें सौकीनदार र गाऊय प्रतिष्ठित हुए । उस समय भूमिनेता भीर भूमिनेत्री शरीरमें कपड़ा लगा कर देहका पुष्टता दिखाती थी । मुझमें नकाश भीर पैरमें जन्मो पड़ोवाका जूता पहन कर पश्ट (act) या मपने पार्टी किया करती थी । भूमिनयके आरम्भसे पूर्व गानेबाजाका एक दल था कर एक दो गाना गाता था भीर भूमिनयका मोटामोटी बिपय दर्शको को समझा देता था । नाट्यशास्त्रबिदु परिदृष्टो की रूपमें गान गानेका प्रघासे ही पढ़े गाननादयकी उत्पत्ति हुई थी । नाटक-कारण्य उस समय स्वतन्त्रभावसे प्रघयका रचना नहीं कर सकत थे । इनको कइ नियमो का पाठन करना होता था । किसी घटनामें बाह्य बर्णको इपरको कोई घटना जोड़ नहा सकते थे । ऐसी शक्ति बन खोगो की नहीं थी, कि ये इच्छम होनसे ही अपने स्थान कौशल द्वारा दर्शको को ४०० क्रोस दूर पर नहो ले जा सकते । कवच-रसातलक या वियोगान्त नाटकमें भी ये स्थान विशेषमें हास्परसका समावेश कर नहीं सकते थे । माहूम होता है, कि ऐसे हा किसी कारणसे यूनानी र गाऊयमें विशेषान्त (Tragedy) नाटकके सिधा, मिस्रान्त नाटकके भूमिनय कालमें यूनानी रमणियो की र गाऊयो में प्रवेश करनेका अधिकार न था ।

यूनानका गीरय सुर्व्व भल्ल हात पर रोमका सम्भुवय हुआ । किन्तु कुशाका बिपय है, कि रोमके प्रभुत्वकालमें नाट्यशास्त्राभो को विशेष उन्नति न हो सकी । युद्धप्रिय लिपुड प्रकृति रोमन नाटकभूमिनयमें विशेष परितुष्टि लाभ नहीं कर सके । ये पशुभोकी अङ्गई तथा वहङ्गानोका प्राणघातक मुख देख कर ही आनोद् प्रमोद् करते थे । सम्भ्रान्त अर्थिकयोकी दृष्टि शिपर होती है, साधारण प्रजाका मो उत्साह उसी भीर होता है । इसीविधे स्वाधीन भावसे नाटककी रचना भीर उसका भूमिनय बिपयमें किसीका भाग्य न था ।

● उत्कल्ल नाटकोंके आरम्भमें नर-मरी भोवाभोका मन्मो भूमिनयका बिपय बना देतो थी । अकिदाव नादि बहुत पुष्टने नाटककारोंने भी बहुत पहल्लेवे उलो प्रजाका भुनूतल्य किया था ।

जिन हो एक पुस्तकोंका भूमिनय हुआ था, वे भी यूनानी रचना पद्यविकी छाया ले कर ही गठित हुए थे ।

नाटको का भूमिनय सर्वासाधारणके मन मुताबिक नहीं हो रहा है, यह ठेक कर नाटकके मध्यम कप्रशा र गमय्य पर मल्लपुष्ट, सिद्ध, बाध भादि हिंस्र जन्तुभो से मनुष्योंकी लड़ाई भादि सुखविबिषय भीर योमस्स रसकी भवतारण्या कर रोमन र गाऊयको कर्मकित बिधा करते थे । प्रायः हो ऐसे धूषित मानव्य उपमोणके छिपे एक न एक भाषमोको कालके गाऊमें माना पड़ता था । यह योमस्स आनोद् छोड़ कर रोमन पवित्र काय्यरसका आस्वादन नहीं करना चाहने थे । इस तथ्य पशु-सदृश भीर क्षोमर्षण रूपय देख देख रोमनोंकी मानसिक सुखोमल दृष्टियां कमयः हा कल्लु यिन होने लगो था । फलतः रोमनोंकी नैतिक मबस्था शोषनीय हो रही थी ।

जब रोमन र गमय्यों पर इन सब कुस्सित कार्योंका भूमिनयार्थ-कोत प्रबाहित हो रहा था, तब इसामसीइने नूमरे इसाई-धर्मका प्रचार किया । नाट्यशास्त्रों इस तब-प्रचारित इसाई धर्मके बिपयय नश्रों पर चढ़ गई । इस तब धर्मके अधिक प्रचारके साथ साथ नाट्यगातों की कमी होने लगी । इसाई-धर्मपाशकोंने नाट्यमञ्चकी 'पापका फम्त्र' तथा उससे सम्बन्ध रखनेवाले व्यक्तिमाल को धूर्सिमान् कदाचार कह कर घोषणा की । उनके मध्यवसाय भीर व्याख्यानोंसे लोग नाटकके प्रति कोत राग हो गये । भूमिनेता भीर भूमिनेत्रियोंकी तथा नाट्य कयोक मध्यमको लोग धूषाकी दृष्टिसे देखते थे । भीर तो क्या—विगत शताब्दोके अन्त तक रोमन कीपजिक पुरोहितमण्डली विश्वेपवश मूठ भूमिनेता भीर ममि नैकियोकी शबदेहको साधारण कप्रगाहमें गाड़ने नहीं देती थी । आज भी इस बोखवी शताब्दोके मो कितने ही धमप्राण हिन्दू तथा कितने ही इसाई धर्मनाशके मयसे धम्मा-स रिषय र गाऊयोमें माते कुष्ठित होते हैं ।

कालकालके परिवर्तनसे रोम-साम्राज्य बिष्यस्त भीर विपयस्त हो गया । बार भयप्रकृता तथा सदा युद्धमें फसे रहनेके कारण रोमके अधिवासी नाटकभूमिनय देखने

नहीं जा सकते थे। इस विशुद्धताके समय नाटककी उन्नतिकी बात तो दूर रहे, रङ्गालय तरु लय प्राप्त होनेकी सम्भावना हो उठी थी। जो हो, बलवान् समयके उलट फेरसे जो धर्मवाचक रंगालयको नरकका प्रतिरूप समझ कर उससे घृणा करते थे, वे ही आज रंगालयकी आवश्यकता उपलब्ध करते हैं। वे अब समझ गये हैं, कि दृश्यपट आदिके साहाय्यसे किसी घटनाका अभिनय करनेसे क्षोण या हीनबुद्धि मनुष्यके मर्मस्थलको स्पर्श किया जा सकता है और सुचारुरूपसे रंगालयका कार्य सञ्चालन करनेसे सम्भवतः इससे सामाजिक-पारत्रिक और धर्मसम्बन्धीय उन्नति हो सकेगी। इसी आशासे प्रणोदित हो कर निरक्षर अज्ञ या मूर्ख मनुष्योको उपासना कार्यामें ब्रती करानेके यन्त्रस्वरूप समझ धूर्त धर्मयाजकोंने थियेटरको अपना एक अल्ल बनाया। उन्होंने समयको व्यर्थ न खो कर वाइविल धर्मग्रन्थकी किसी घटना पर नाटक रच कर उपासनाके समय अभिनय करनेकी प्रथा चलाई। इस तरहके समुदाय अभिनयको Mysteries, Miracle या Moral plays कहते थे।

उस समय ईसाई-संन्यासी जवसलेम नगरीका परिभ्रमण कर स्वदेश लौट राजपथ पर दल बाध कर अपने भ्रमणके अनुभवोंको कवितामें गाते फिरते थे। उनके हाथमें दण्ड, आपादमस्तक चोला, पुष्पमालासे परिशोभित शिर और कई रंगोंसे रंगे पायजामेको देख स्वभावतः ही लोगोके मनमें उनके प्रति भक्ति हो जाती थी। इनकी अभ्यर्थनाके लिये कभी कभी वहाके लोग खेतों में मांच गाड़ देते थे। इसी पर संन्यासी बड़े हाव भावसे अपनी कविताओको सुना कर दर्शकमण्डलीकी तृप्ति किया करते थे। क्रमशः अभिनयकी उन्नतिके साथ साथ रंगालयोंकी भी उन्नति होने लगी। धर्मयाजक अभिनेतृ-समाजमें परिणत हुए। उन्होंने एकत्र हो कर "Contreres de la passion" नामके एक सम्प्रदायकी सृष्टि की। उनके अभिनीत नाटक अङ्कानुसार विभक्त न थे।

नाटकोंका ऐसा ही विभाग किया गया था, कि कौन नाटक किस दिन खेला जायगा। उस समय रोमी-

पोय भी ऐसे अभिनयोंको प्रश्रय देते थे। वे दलभुक्त अभिनेताओंको "सहस्रदिवसावधि" क्षमा प्रदान करते थे। नगरके विभिन्न व्यवसायके लोग विभिन्न अंशका अभिनय करते थे। धर्मपुस्तकसे 'सृष्टि' (Creation) "जलप्लावन" (Deluge) पवित्रीकरण या शुद्धि (Purification) आदि अंश हमेशा अभिनीत होते थे। रंगवाले प्लावनका अंश, बर्दई, लुहार, शुद्धिअंश और वस्त्रविक्रेता सृष्टिके अंशका अभिनय करते थे। इन सबोके अभिनय करते समय वे ईश्वर अंशका अभिनय करनेमें अधर्म नहीं समझते थे। उसीके साथ शैतान (Satan) और पिशाचों (devil) की अवतारणा भी होती थी।

फ्रान्सीसी रङ्गालियोंके इतिहासमें कहा गया है :— सन् १४३७ ई०में मेज नगरके धर्मार्चाचार्य फनएड रेयरने 'रिपुगण' (The passions) नामक रूपक नाटक (Mystery) कराया था। नगरके निकट मेक्सिमेल प्रान्तरमें इसके लिये रंगमञ्च बना था। इस नगरके वृद्ध धर्मयाजक चौरनवासी निकोलस नुसाटेलने (Curate of Saint Victory of Metz) जगदीश्वर (God) का अंश अभिनय किया। इस अभिनयके समय वह यथार्थमें क्रुश पर चढ़ाया गया। यह कार्य ऐसे सुचारुरूपसे सम्पादित हुआ था, कि यदि वह यथासमय साहाय्य नहीं पाता, तो वास्तवमें ही ईसामसीहकी ही दशा यानी मर गया होता। वह इनका निर्वाण हो गया था, कि दूसरे दिन एक दूसरे आदमीको क्रुश पर चढ़ा कर उसने इस अभिनयको सम्पन्न किया था। इसके बाद निकोलसने 'पुनरुत्थान' (Resurrection) अंशका अभिनय किया। इस अभिनयमें उसकी सुख्याति हुई थी।*

इंग्लैण्डमें भी "सेण्ट कथारिन" नामक जेफ्री (Geoffrey) रचित इसी तरहका अभिनय हुआ था। अंग्रेजो साहित्यके इतिहास लेखक टमास वी० साने लिखा है, कि यूरोपके प्रायः सभी कैथलिक प्रधान देशोंमें उस

पुराने समयमें इसी तरहके 'मिड्रि' 'मोल्डटी' और 'मिराकल' भूमिगत होते थे। इस तरहके वर्नरोचित नाटकभूमिगतका प्राधान्य स्पेन, जर्मनी, फ्रांस और इटलीमें अत्यधिक था।

सांख्यिक नामक एक मनुष्यने इंग्लैण्डके राजा तथा राजपुरुषोंके विस्तारोद्धार विद्यालयके छात्रोंके एक मित्रनामक नाटकका भूमिगत कराया था। सन् १५५१ ई०में निकोलस उद्दान द्वारा रचित Ralph Royster Doyster नामक मित्रनामक नाटकका भूमिगत हुआ था। इसी समयसे सारे यूरोपमें प्रकृत नाटकों को भूमिगतका सुबपात हुआ। इसके बाद इंग्लैण्डमें सेक्सपियर, इटलीमें शायो, फ्रांसमें कर्नोडी, स्पेनमें सांख्यिक नामक नाटककार आदिनामक हो कर रंगमंच के नाटकीय युगको भूमिगतमिथि स्थापित कर गये।

भारतका भूमिगत।

भारतवासियों हिन्दुओं की साम्राज्यिक और मानसिक हृत्तियों की सम्यक् उन्नति निरपेक्षमानस साधित हुई थी। वैदिक सम्प्रथ तथा बौद्धिक प्रभावके केलासे ही बहुत पहले ही भारतमें नाट्य भूमिगतकी अत्यधिक पुष्टि हो चुकी थी। प्रायः ही सहस्र वर्ष पहले काश्मिरासने शकुन्तला नाटककी रचना की। इसी प्रथ के नाट्य-साहित्यकी परिपुष्टिको देख कर पश्चिमाय पश्चित अनुमान करते हैं, कि यह प्रथ भारतवासियों के स्वदेशीभावसे पूर्ण होने पर भी इसमें विश्वतोषका काव्यिक नाटकका (Romantic Drama) चिह्न प्रतिफळित हुआ है। और तो क्या, साङ्गस्य देख कर उन लोगों को सम्यक् होता है, कि प्रसिद्ध कवि सेक्सपियरने इस नाटकका आभास लिया था।

नाटक और इसका भूमिगत पहलके राजाओं के लिये बड़ी प्रिय वस्तु तथा बड़े आदरको चीज थी। इसी कारणसे नाटकोंमें विशुद्ध समाजका आदर्शचिह्न अङ्कित हुआ है। भारतीय हिन्दूराजानो का जब प्राधान्य था तब 'बज्रपिता' और कान्यकुब्जका वर्तमान कर्जोत्र' नगर ही नाटकभूमिगतके प्रयास स्थान थे। पुराने नाटकोंमें इनका उल्लेख पाया जाता है।

अध्यापक हासेन, बेबर, स्लीमन, गोल्डस्टुकर आदि जमान परिचित और कनिष्क, द्विवार, ओम्स, विस्सम आदि भारत प्रयासी यूरोपीय पश्चितमें एक वाक्यसे संस्कृत नाट्य-साहित्यका उत्कर्ष स्वीकार किया है। बहुत गवेषणाक बाद अध्यापक विस्समन स्थिर किया, कि हिन्दू नाटकोंमें जितने ही गुण या दोष कर्णों न हो, इसमें सम्यक् नही, कि यह भारतवासियोंके मित्र है। हिन्दू अपने नाट्य साहित्यके लिये किसी वैदिकिकके श्रुतों नही है। १४वीं या १५वीं शताब्दीसे पहले यूरोप की किसी जातिमें कोई भी पद्यार्थ नाटक न था। किन्तु इतना जरूर है, कि उस समय हिन्दू नाटकोंकी सम्पूर्ण अवनति थी।† येतिहासिक दृष्टरका कहना है, कि यूनान और रोमकी तरह प्राचीन भारतमें सम्भवतः वैदिकयुगमें भी यह आविष्क साहाय्यसे वर्बतनुदय कीतुकाभूमिगतकी अत्यन्त थी। किन्तु समुन्नत साहित्ययुगमें (Classical age) परिष्कृत अरिजितसम्भक्ति जो संस्कृत नाटक रचे गये और जिनमें कई हम इस समय देख रहे हैं, वे सम्भवतः पहली शताब्दीसे ८वीं शताब्दी तक संकुचित किये गये हैं।†

मुसलमानोंके सम्पुन्यक समय विश्वतोष भाषाके संसर्गसे प्राचीन सम्यक् संस्कृत भाषाका अभावतन हुआ। इसीके साथ साथ रंगमंचकी अवनति हुई। मुसलमानोंमें फारसी भाषामें रचित कुछ शैरी या काव्योंके सिवा नाट्य काव्योंके वे विवर्जन नहीं मिळता। संगीत आनन्द उपभोग मुसलमानधर्मशास्त्रमें निषिद्ध होनेसे रंग मञ्चोय भूमिगत मुसलमान राजाओंकी उन्नतिक समय प्रथम प्राप्त कर सका। मोगलसम्राट् अकबर साह भारतवासियोंके मनोहर संगीतसे मुग्ध हो कर संगीत विद्याक बड़े पक्षपाती हो गये थे। किन्तु आरम्भपूर्ण रंगभूमिगतमें इनको कुछ भी अज्ञा विज्ञान नही होती था। सम्राट्, औरंगजेब संगीत और वाद्ये की प्रथाक सम्यक् विरोधी थे। सुदूर चीन राज्यों

† Wilson's Hindu Theatre, Preface p. XI

† Indian Empire by W W Hunter chap IV

भी सम्बन्ध नई प्रथाके आधार पर प्रतिष्ठित रंगालय था। किसी किसी विषयमें सुसभ्य और शिक्षित यूरोपीय नाट्यरंगके विषयमें उनके पीछे थे।

पुराणादि हिन्दू-शास्त्रोंकी आलोचना करनेसे देखा जाता है, कि स्वर्गकी देवसभामें देवताके मनोरञ्जन करनेके लिये भरतमुनिने नाट्यशास्त्रोंका प्रणयन किया। उन सब नाटकोंका अभिनय पहले देव-सभामें किया गया था। अर्वांगी आदि विद्याधरी या अप्सरायें नृत्य-गीतादि द्वारा उम समय देवताओंका चित्तविनोद किया करती थीं। उस समयका अभिनय तीन भागोंमें विभक्त था। (१) नाट्य अर्थात् हाव भाव दिखा कर वाक्यका प्रयोग करना। (२) नृत्य या भावहीन अंगोंका परिचालन करना और ३ नृत्त अर्थात् केवल नाच। उत्तरकालमें इन तीनोंके साथ ताण्डव-नृत्य अर्थात् शिव नृत्य तथा लास्य आकर मिल गये। भगवती पार्वतीने स्वयं जिस नृत्यका प्रवर्तन किया, वह लास्यके नामसे पुकारा गया। इस नृत्यको देवीने वाणकी पुत्री ऊपादेवीको तथा उनकी सखियोंको सिखाया था। ऊपासे गोप-गोपियो ने सीखा। पीछे उन सबोंसे सभी जगह फैल गया।

भरतमुनि ही नाटकोंके आदि सृष्टिकर्ता हैं। सभी एक काव्यसे स्वीकार करते हैं, कि उनके समयसे ही संस्कृत नाटकका प्रथम विकाश हुआ। उस समय गन्धर्व और अप्सरायें इसे अभिनीत करती थीं। जहा दर्शक देवता हैं, अभिनेता और अभिनेत्री गन्धर्व और अप्सरायें हैं तथा रंगमञ्च सदा सर्वदा ऋतुराज वसन्त-विराजित स्वर्गधाम है, वहाका अभिनय कैसा सर्वाङ्ग सुन्दर होता होगा, पौराणिक उपाख्यानोंके सिवा उसका विशेष विवरण जाननेका कोई उपाय नहीं।

महाभारतके विराट् पर्वमें (२२।१६) लिखा है, कि मत्स्यराज या विराटराजने अपनी कन्या उत्तराको गान वाजा सिपानेके लिये वृहन्नला (अर्जुन)को नौकर रखा था। इसके लिये उन्होंने स्वतन्त्र एक नृत्यागार तय्यार करवाया था। दिनमें वहां जा कर बालिकायें नृत्यगान सीखा करती थीं। इसका विवरण जाननेका कोई उपाय नहीं, कि यह नृत्यागार किस प्रथाके अनुसार

तय्यार हुआ था। पाणिनिने शिलालि-रचित नटसूत्रका उल्लेख किया है।

भारतीय रङ्गमञ्च ही लुप्त वैभव-स्वरूप संस्कृत भाषामें रचित प्राचीन नाटक आदि आज भी स्पष्टाके साथ हिन्दू जातिका अतीत गौरव बतला रहे हैं। उज्जयिनी-पति विक्रमादित्यके राजत्वकालमें जिस नाट्य साहित्यने शीर्षस्थान अधिकार किया था, दुःख है, कि भारतमें भाष्याकाशमें और कभी वैसा कला विज्ञानका पूर्ण विकास नहीं हुआ। तुलना करने पर विक्रमादित्यके राजत्वकालको Augustion Period कह सकते हैं। रोम सम्राट् अगस्टसकी तरह महाराज विक्रमादित्य भी प्रबल पराक्रान्त सम्राट् थे। रोम-सम्राटकी सभामें जैसे Horace, Vergil, Livy आदि रसज्ञ कवि मौजूद थे वैसे ही उज्जयिनी-राजसभा भी कालिदास आदि रसज्ञ परिद्धतमएडलीके विमलज्ञानालोकसे आलोकित हो रही थी।

कालिदास आदि कवियोंके आविर्भावके समय हिन्दू उन्नतिकी चरमसीमा पर पहुँच चुके थे। उन्हीं कवियोंमें कालिदास, भवभूति आदिने अपने अपने नाटकोंमें हिन्दुओंके जातीय जीवनका जैसा अनुपम और स्वाभाविक चित्र खींचा है, वैसी जातीय चरित्र गहन की शक्ति अति विरल दिखाई देती है। एक शकुन्तला नाटकके सौन्दर्यने समूचे सभ्य जगत्को मोहित किया है। शकुन्तलाकी अपूर्व माधुरीसे मुग्ध हो कर जर्मन कवि गेटे (Goethe)ने गाया था—“I name thee, o akuntala, all at once is said”

दशरूपक, सरस्वती-कण्ठाभरण, साहित्य-दर्पण, संगीतरत्नाकार, काव्यादर्श, अलङ्कारसर्गस्व, रसगंगा-धर, अलङ्कारकौस्तुभ, शृङ्गारतिलक, रसतरंगिणी, रसमञ्जरी, भोजप्रबन्ध, शाङ्गधरपद्धति, काव्यप्रकाश, काव्यालङ्कारवृत्ति, चन्द्रालोक, कुवलयानन्द आदि अलङ्कारशास्त्र पढ़नेसे हिन्दू जातिके नाटक और अभिनयके सम्वन्धमें कुछ आभास मिल सकता है। इन सब ग्रन्थोंमें जिन नाटकोंका उल्लेख है, वे सब उस समय विशेष प्रसिद्ध और दृष्टान्तोपयोगी थे, ऐसा अनुमान होता है। अतः संस्कृत साहित्यके उस समृद्धिके समय

नाटककोंका संख्या निम्नलिखित है इससे भी अधिक थी । नीचे कई प्रसिद्ध संस्कृत नाटककोंके नाम दिये जाते हैं—

भृशुकटिक, शकुन्तला, विक्रमोर्ध्वी, माळिका मिमिक्ष, उत्तर रामचरित, माळतीमाधव, महाभोरचरित, बेपीस हार, मुद्राराक्षस, उदात्तराघव, अनर्घराघव, प्रणयराघव रत्नावली, हनुमाननाटक, कल्पमञ्जरी, कपूरमन्दरी, समुद्रमन्थन, सिधुदाह, पनञ्जयविजय सारदातिलक, यथातिचरित, यथातिचित्रय, मृगाङ्ग लेखन, घुंताम्बु, बालरामायण, विदग्धमाधव, बिद शाब्जमञ्जिका, ममिधरमण्डि, प्रपुञ्जविजय, भीदाम चरित, मधुपानिकह, पूर्जनरंक, भूतसमागम, कंस बध, कौतुकसर्गस्य, चिह्नबध, नागानन्द, अष्टकौशिक, अगस्त्यवल्कल दानकेशि-कीमुदी, हास्यानय, कृष्ण भक्तिसंख्यन सूर्योदय, प्रबोधचन्द्रोदय, प्रसन्नराघव, पारुह-चरित, श्वेतव्याघ्रोदय, वसन्ततिलक, म्रिय दृशिक, क्लिप्तमाधव, भीराम घग्ग, रामान्जुदय, सौगण्डिकाहरण, कुसुमसेकर-विजय, गर्भवती, पाद बोध मृत्कारतिलक, नासन्धिका परिचय, रैवत मव लिखा, सुदर्शनविजय यथातिशमिष्टा, कृष्णमाला, क्रोडारसातक, मायाकापासिक, विजासवती इया महादेव, बाकीवध कण्ठावती माधव, विश्वमती, केकी-रैवतक कामवृत्त आदि ।

हिन्दुनाटकमें मिथ्यानाटक या वियोगान्तका कोह प्रभेद नहीं था । भार्य छोड शोक, त्राप और दुःखसे मय नाटक कमी पसन्द नहीं करते थे । इसीसे उस समय वियोगान्तनाटक बिलकुल ही न था । संस्कृत नाटक साधारणतः खम्बा होता था और उनके अमि नय करनेमें अधिक समय भी लगता था । इसीलिये किसी निर्दिष्ट समयमें एक या दो नाटक शोभ अमिनय करनेके लिये भेजी विभाग कर छोटे छोटे नाटक रचे गये थे । किस समयमें और किसके बाद कौन अमिनय के लिये रंगमञ्च पर उपस्थित किया जाता था, उसका निर्णय करना कठिन है ।

अमिनयवियोगी नाट्यसाहित्य नाटक, रूपक और उपरूपक अथवा तीन प्रकारका है । शकुन्तला, मुद्राराक्षस आदि नाटक उद्यकीयिक नाट्यसाहित्य हैं । प्रकरण,

शुद्ध भीर सद्गोर्ण मेवसे तीन हैं । मृच्छकटिक, माळती माधव आदि इसी श्रेणीके अन्तर्गत हैं । उपरूपक १८ प्रकारके होते हैं । सिया इसके नाटिका श्रेणीमें रत्नावली और कौटुक विययमें विक्रमोर्ध्वी ही उल्लेखनीय हैं । परिचयके लिये कितनी ही श्रेणियोंका विभाग नीचे दिया गया —

प्रकरण समयकार, इहास्य, जिम, व्यायोग, मङ्ग, प्रहसन, माय, शोको, अथस्वयन्वित, असत्प्रकाप, प्रपञ्च नासिका, पाकहासि अधिबध, उरु, व्याहार, मृदय, श्लिप्त, गण्ड, नाटिका, कोटरक, गोष्टी, सङ्क, नाट्यरासक, प्रत्याग उद्घाट्य, काव्य, प्रेङ्गन, रासक, संज्ञापक, भोगदित, शिल्पक, विज्ञासिका, दर्शनसिका, प्रकरणो, हृदयोश और मजिका । इन सब नाटक प्रत्येकी रचना पद्धति और अमिनेता तथा अमिनयोंके प्रदर्शनीय भय परिष्कारता आदि वैशिष्ट्य यथास्थान दिया गया है । इससे यहाँ इनेकी व्यापकता नहीं ।

नाटक, रूपक उपरूपक और अन्यान्य कम्ब देखो ।

यूनानियोंकी तरह प्राचीन हिन्दुओंका अमिनय सदा नहीं होता था । पूर्णिमाकी रातको राजाके अमिनयके दिन, मठमें धमसम्बन्धीय उत्सवमें, लोगोंके समागम होने पर, विवाहमें, मित्रके आन पर, किसी नगर या देशकी विजय पर और सन्तानोत्पत्ति पर हिन्दुओंमें अमिनय करानेकी रीति थी । इन सब उत्सवके दिनोंके सिवा देशी किसी सम्प्रदायके अथवा राजासमीची भावसे ही अमिनय हुआ करता था । यह कहा जा नहीं सकता, कि नाटकामिनयके समय साधारण राजा प्रवेश करते पातो थी या नहीं । क्योंकि अमिनय दिक्नेके बाद लोगोंके मन पर उसका जो स्थायी प्रभाव (Dramatic effect) पड़ता है, मात्तु होता है, वह लोगों पर नहीं पड़ा । ऐसा होनेसे सम्भवतः इतना अल्प नाट्यसाहित्यका विकोप नहीं होता । विशुद्ध संस्कृत मायाके साथ और सेनी, भागयो, अर्द्धभागयो, प्राची, अवन्तिका, श्राविकी, मासिक, दाक्षिणात्य और पैशाची भाषाओंकी मिलावट होनेकी प्रबन्ध ये सब प्रगथ साधारणके लिये दुर्बोध हो गये थ । अनुमान होता है, कि इस कारणसे भी नाटक अमिनय साधारणको सहानुभूति अर्जन नहीं कर सका ।

अपेक्ष हाउसमें राजाके ऊपर चढ़नेके लिये स्वतन्त्र सोझा बनो है।

पंगालमें, बिरोदना कलकत्तेमें जितने र गालस हैं, उनमें यूरोपियोंके परिष्कृत रायल थियेटर, कौरिगिय यन थियेटर, अथवा हाउस और देशी पारसियोंके थियेट्रोको छोड़ कर ब गालियोंके परिष्कृत र मनश्ची की भावोचना करने पर केवल छोट थियेटर ही ऐसा दिखाई देता है, जो यूरोपीय दृष्टि बनाव हुआ है। अग्राह्य समी कथल अनुरूप छाया डे कर गठित हुए हैं।

ब गालसमें किस तरह और किस घटना स्रोतमें र गालसका अभिनय और प्रथम प्रतिष्ठा हुए और किस छत्र इस कलाविधाने अपनी परिपुष्टि का धो, उसका संक्षिप्त इतिहास नीचे लिखा जाता है।

प्राकृतक रचापय ।

ब गालियोंके र गालसको का प्रतिष्ठाका मूल अ मरेज है। किन्तु धर्मजेने कलम हाथमें पकड़ा कर उन्हे नहीं निभाया है। अ प्रज जातिन अपन आनोद-यमाद् के लिये वारेन इतिहासके जमानेमें इस देशमें थियेटरका स्वरूपात किया। उस समयके राजपुत्रय ही इसके अनुष्ठाता तथा अभिनेता थे। यह ठोक ठोक कहना कठिन है, कि कब इसका प्रतिष्ठा हुए। फिर, हिंदीक ब गाल गजटमें दिखाई देता है, कि सन् १७८० ई०में 'कलकत्ता थियेटर' नामक थियेटरमें इनके सात आठ बार नाटक प्रदशन हो चुके थे। उसी समयके "कलकत्ता"अष्टपूर टाइम्स" में इन अभिनयको विज्ञापन छपे है।

Vol II No I 1782 Hickie's gazette से ज्ञाना जाता है, ५वीं जनवरी सन् १७८२ तक यह थियेटर यहाँ मौजूद था।

इसके बाद पेरोदाको क थियेटर मारम्भ हुए और कलकत्तेमें ही ये थियेटर स्थापित हुए और हुए भी तो अ गजेटो का सहायतासे।

इसके बाद ब गालियोंने आक कब थियेटर कायम किया, यह कहना उरता कठिन है। कलकत्तेके (Calcutta Review Vol XIII 850) "कलकत्ता रिभ्यू" नामक पत्रके तैरहवें अंकक १६०में पृष्ठसे ज्ञाना जाता है, कि सन् १८२१ ई०में "कलिराजार पासा" नामक एक नाटक हुआ था। इसी सालका ब गाली संवाद् पत्रिका "संवाद्कीमुद्दी" को ८थी संख्यामें इस अभिनयका विवरण प्रकाशित हुआ था। उस समय होमजाली बङ्गाली पासा या रासकोवासे निरूपण हो इस अभिनयमें कुछ थियेटरक था, महा तो इसका विज्ञापन समाचार-पत्रोंमें कैसे छाप्य जाता। इस समय कइ नाटक छिसे गये। उक्त "कलकत्ता रिभ्यू" में संवाद्कीमुद्दीको जो भावोचना हुई है, उसमें लिखा गया है, कि इसकी पाँचथी संख्यामें 'नयप्रकाशित नाटकोके प्रति कुहकि' " (The evil tendency of the dramas lately invented) जीर्णक एक लेख प्रकाशित हुआ था या नहीं। "कलिराजार पासा" नाटकका अभिनय हुआ था इस विवरणके लिखा ब गालियोंके क्रिसा और नाटकभिनयका परिषय अब तक नहीं मिला है। यह भा १२२७ साल कसलाको घटना है।

इसके बाद सन् १२२७ फसलोंके सम्मयतः छठ्ठी पूर्णमास दिन ब गालियोंके एक नाटकभिनयका थियेटर विवरण मिलता है। रिभ्यू 'पारनिपर' नामक एक प्राचीन पत्रमें (सन् १८३५ ई०के अक्टूबर महानेको एक संख्या में) इसका विवरण प्रकाशित हुआ था। इस विवरणके प्रारम्भमें हा लिखा है— "This private theatre got up about two years ago is still supported by Baba Nobunchandrar Bose" "प्रधान यह स्त्रीकोन थियेटर कोइ हो यय पहलसे तय्यार हुआ है, जिस बाद नवान चन्द्रोस अब तक प्रतिपादित करन भात है।"

• ११वीं जनारी शम्भार Comedy of the Beaux Strat ५em और एक कान ; ११ मार्च Comedy of Foandling और Like master like man नामक कर्त और ४वा मार ११वीं मसत्र School for Acandal अभिनय हुआ। रिभ्यू विवरण Calcutta Central Advertiser १ 1 -9th January and १0 10, 3rd April, 178०) अधिष्ठाने दिया गया है। जिहा एके उक्त वर्ष क १२वीं, १६वीं और ११वीं अक्टूबर Tragedy of Mahomet और Citizen नामक एक और कर्त अभिनय हुआ था।

ही अधिकता थी। सुना जाता है, कि पहला अभिनय दो दिनों समाप्त हुआ था। सन् १८३१ ई० अभिनयके विषयसे देशीय यन्त्रके एकतान वाद्यका परिचय मिलता है। सिंथार, सारगा, पद्मावज, बेहमा आदि वाजे बजाये गये थे। बजानेवालोंमें अधिकतम ब्राह्मण थे। ब्रजनाथ गोस्वामिने येहनामे मूव नाम कमाया था। एक परमेशसुलिते ही मंगलाचरण हुआ था और हुआ था चिह्नित र वर्ग पर ही। इस अभिनयमे भाग लेनेवाले पात्र भार पात्रियोंमे निम्नलिखित नामोंका पता लगता है—

मुन्तर—धामावरय बन्धामात्राय (बरहन्गर-निवासी),
 शिवा—राधाम्निथ (नीथ नाम परिधिया), रना—त्रयपुरा
 मन्दिनी—बबदुर्गा, रक्षपी—रात्रदुमारी (रत्ननामसे परिधिया)

'हिन्दू पार्लियमट'का कहना है, कि जियोका अभि नय राहा बीरसिंहके अभिनयसे भी अधिक मनोहर हुआ था। सुन्तरका पार्ट इस सम्प्रदायको अच्छा नहीं लगता था। मनोमाल परिधर्षमका कीर्तन, पाकूमरु और हावमाय अल्लिम यहाँ हुआ।

सुना जाता है, कि इस अभिनयमें नधीनबाबूका दो ढाक रुपया खर्च हुआ था। इसलिये इनको भ प्रोजे टोकेका एक मकान बिक्री कर देना पड़ा। इस समय जिस विविडङ्गमें Military Accounts है, यहाँ इसका मकान बातायागो नामस मशहूर था। जो हो, पहले रंगमञ्चके अन्तर्गत जगह जगह दुरपयट सजा कर नवीन बाबूने जो अभिनय किया था, उसमें उनक कृतित्वका विशेष परिचय मिलता है। इसके बाद अभिनयक साथ रंगमञ्चका संयोग मालुम होता है, कि धोमसम्बन्धुमार ठाकुरक उत्तर रामचरितके रंगमञ्चको दूब कर ही किया गया था।

एक आश्चर्यकी बात यह है, कि नाट्यभिनयकी इस परकी चेरामें हा विद्यासुन्दरकी अज्ञोत्तमा अश्लोक विषयका अभिनयक छिपे निपाचन—यगलामें लिखे नाटकके अभिनयमें बिरुकि भीर चेरयाका पार्ट करना

हवादि विषयों पर धोर भावोभन समाचार पत्रोंमें उठ षाड़ा हुआ।

जो हो, यह नाट्य-सम्प्रदाय बीच बीचमें अभिनय करते हुए चार वर्षा तक जीता रहा। इसका प्रमाण मिलता है।

इसके बाद यद्यपि बग भाषाओं अभिनय नहीं हुआ था तथापि बगाडियों द्वारा हुआ था, इसीमे यहाँ धोमसम्बन्धुमार ठाकुरक अनुष्ठित उत्तर-रामचरितक अभिनयका बात विवृत हुई है। Hindu Reformer नामक समाचार-पत्रके सन्के १८३२ ई०के जनवरी महीनेकी एक संख्यामें इस नाट्य-सम्प्रदायक पहले पहल अभिनयका विवरण प्रकाशित हुआ था। शुद्धके उपायमें यह अभि नय हुआ था। संस्कृत काव्यके उस समयक सम्पन्न शब्दर होदेश हेमन पिदसन माहबने उत्तररामचरितका भ गरीबोंमें अनुवाद किया इसी अनुवादका अभिनय हुआ था। किता भ प्रोजन इसके लिये दूब समठन करने और इस सुशिक्षित बनानके लिये बड़ा परिश्रम किया था।

किसी रुपयारकी यह अभिनय हुआ। अभिनयसे पहले नाट्य सम्प्रदायकी मोरसे नाटकोंके अभिनयका उद्देश्य बतलाते हुए किसी एक मनुष्यने व्याख्यात किया था। यह नहीं होता, कि इस अभिनयमें किसने किस विषयका पार्ट किया। उत्तर-रामचरितका अभिनय अन्तम हो जाने पर इस सम्प्रदायन लुकिपस-सीधरके पांचवें अनुका अभिनय किया। फिर इसी इलने मार्च महामें गातनाटकके दुर्योधनका अभिनय किया। इस पर प्रसन्न हो कर एक भ प्रोजने 'छिरिडया गजट' में एक पत्र प्रकाशित किया था। इस पत्रमें उसने उस अभिनयकी मूरि मूरि प्रशंसा की थी। जाकर गुब्बनेदारका विषय इस काव्यमें वर्णन किया गया था। उस नाटकक नामका पता नहीं लगता। यह भी स्थिर नहीं किया जा सकता, कि धोमसम्बन्धुमार ठाकुरका यह नाट्य सम्प्रदाय कितने दिनों तक जीवित था।

इसके बाद सन् १८३७ ई०के माघ महानेमें हिन्दू काव्यके छात्रों द्वारा सरकारके 'हारट हाउस' में नाता पुस्तकोंका यणतार्यमें अभिनय हुआ था। यणरत केन र काठे भास्करेड लाड विगण, माननीय इडन आदि

० कन् १८१५ ई के डिसेम्बर मासक यह पत्र प्रकाशित होने लगा।

सज्जन इसके उत्साहदाता थे। ये सब नाटक ठीक तौरसे अभिनीत नहीं हुए थे। इस दलके कई अभिनयों-का विवरण नीचे दिया जाता है :-

पुस्तक	पात्र	अभिनेता।
1. The King and the Miller	King Miller	गोविन्दचंद्र दत्त नरोत्तम दास
2 Soldier's dream	Roldier	शशिविंद्र दत्त (इनको पीछे रायबहादुरका खिताब मिला था)
3 Topsy Tossopot	गोपालनाथ मुखोपाध्याय	
4 Shakespear's Seven ages	अवतारचंद्र गंगोपाध्याय	
5 Lodgings for Single Agent	प्रतापचंद्र वसु	
6 Merchant of Venice	Salarino Duke Shylock Portia Bassamo Nerissa Cratiaus Nellygray	गोपालचन्द्र मुखोपाध्याय राजेन्द्रनाथ सेन उमाचरण मित्र अभयचन्द्र वसु राजेन्द्रनारायण वसु राजेन्द्रनारायण मित्र राजेन्द्रनारायण दत्त गोविन्दचन्द्र दत्त
7 The Dramatic Aspirant	Antonio Patent Dowles	कालीकृष्ण दत्त गोपालकृष्ण दत्त गिरिशचन्द्र घोष

हिन्दूकालेजके छात्रोंको यह अङ्गरेजी अभिनय चेष्टा दूसरी जगह कालक्रमसे सम्प्राप्त हो उठी थी। सन् १८४० ई०में लार्ड आकलेण्डने "ओरियण्टल सेमिनरी" का अभिनय करानेकी तय्यारी की। इस समय इस अभिनयके दारमन जेफ्रे नामक एक फ्रान्सीसी प्रधान शिक्षक थे। रिशी नामक एक और फ्रान्सीसी भी इस समय कलकत्तेमें मौजूद थे, यह इनके मित्र थे। जेफ्रे और रिशीने मिल कर ओरियण्टलके छात्रों द्वारा "जुलियस सीजर"-का अभिनय करनेका संकल्प किया। रिशीने स्थिर किया, कि इस कार्यमें डेढ़ हजार रु० खर्च

होगा। अर्थात्वावसे यह कार्यमें परिणत नहीं हुआ। केवल कई दिन शिक्षा या रिहर्सलका काम हुआ था। यह सन् १२४७ फसलीकी बात है।

इसके बाद १२ वर्षों तक अंग्रेजी या बंगला कुछ भी नाटक नहीं हुआ। सन् १२५६ फसलीमें अर्थात् सन् १८५२ ई०में बडतलेमें "सेण्ट्रल पब्लिक एकेडमी" नामक स्कूलभवनमें "जुलियस सीजर" नाटकका अभिनय हुआ। आज भी बांधा बडतलेकी बगलमें जो बड़ा मकान है, उन्ही मकानमें इस अभिनयका आयोजन हुआ था। पहले इसी मकानमें "ओरियण्टल सेमिनरी" थी। इसके बाद हाटखोलेके दत्तवंशीय गुरुचरण दत्त महाशयने इस भवनमें मेट्रे पब्लिक एकेडमी नामसे और एक स्कूलकी प्रतिष्ठा की। इस बड़े मकानमें इस अभिनयके स्थान पानेसे मालूम होता है, कि स्कूलके प्रतिष्ठाता गुरुचरण बाबू भी इस नाट्याभिनयके एक पृष्ठपोषक थे। सुना जाता है, कि ओरियण्टल सेमिनरीके भूतपूर्व छात्र इस अभिनयके अभिनेता थे। अनुमान होता है, कि पहले रिशी और जेफ्रेने जुलियस सीजरके अभिनय करनेकी चेष्टा थी और उन्हें उसमें सफलता नहीं मिली, उसीको सफल करनेके लिये बहुतेने इस अभिनयमें साथ दिया था। इसका कुछ भी पता नहीं लगता, कि इस अभिनयका कौन अधिष्ठाता थे, किसके खर्चसे यह कार्य सम्पन्न हुआ था, किस किसने अभिनय किया था। किन्तु साखूची नामक थियेटर (अंग्रेजी)-के एक अभिनेता क्लिङ्गाने बड़े यत्नसे इस नाट्य सम्प्रदायको पार्टियाद कराया था। इस अभिनयमें एक विशेष घटना हुई थी। दर्शकोंके लिये टिकट लगा था। यह मालूम नहीं होता, टिकटका मूल्य कितना था और कितने रुपयेका बिक्रा था। टिकट लगा कर सबसे पहले यही अभिनय बंगालमें हुआ।

बडतलेके "जुलियस सीजर" अभिनयके बाद दूसरे वर्षमें वाराणसीघोष जूरीटके प्यारीमोहन वसुके मकानमें "जुलियस-सीजर"-का अभिनय हुआ। यह प्यारीमोहन बाबू उद्युक्त नवीन बाबूके भतीजे थे। इन्होंने शान्तिराम सिंहके वंशकी किसी कन्याओंसे विवाह किया था। प्यारीमोहनके पुत्रोंकी चेष्टासे इस

भमिनयका सूत्रपाठ हुआ। बङ्गलदेके भमिनेताभोंमें बहुतोंने इस भमिनयमें माग किया था। इस भमिनयमें मां दिव्य लगाया गया। एक दो रात इस सम्प्रदायका भमिनय हुआ। यहाँका वर्ष भी व्यारी बाबूके पुत्रोंने दिया था। भमिनेताभोंमें केवल प्रथमाय बाबूका नाम हमें मादूम है। इनके सुविषयात भमिनेता महेश्वरसाह बसु महाराज ये।

माइकेल मधुसूदन बलक भोवन चरितके पङ्कत मादूम होता है, कि जब प्याराबलुक पर बुद्धियससीकर के भमिनयका उद्योग हो रहा था, तब मारियवृत्त लेमिनरोमें भी उस समयके शिक्षकोंके उद्योगसे भोयेछी के भमिनयका उद्योग कर रहा था। मोरियवृत्तके मृत पूर्व छात्रोंने ही यह उद्योग किया था। दोननाथ पाप, मियनाथ बस, राधाप्रसादबसाह, सीताधाम दे, दत्र नाथ बसु और केशवचन्द्र ग गोपाध्याय भावि व्यक्ति इसके अधिष्ठाता और भमिनेता थे। बङ्गलदेके बुद्धियस सीकरके शिक्षक मिशर किमार्, मिशर राबर्टस और मिशर पारकरने इस सम्प्रदायको सिखाया था। मिशर किमार्की तब मिशर राबर्टस सां सूचा पियेटरमें और मिशर पारकर औररुने पियेटरमें थे। मायको मर्सेट्ट भाक वेनिस, हनरो दो फोय और परमि मास नामक चार पुस्तकोंका भमिनय हुआ था। यह सम्प्रदाय मोरियवृत्त पियेटर नामसे पुकारा जाता था। नाच इसका विवरण दिया जाता है।

पुस्तक	गरीब	भमिनेता
भोयेछी (१सा) १६३०११	आम्बिन	भोयलो—
		दातानाथ पाप
		१५५३१२ सितम्बर
		मायागो—
		मियनाथबस
(२रा) १२३०१२०	प्यार	त्रायानजियो—
		कगोत्रनाथ प्रकिक
		१८५३१५ भक, इर—
		डेसिमिनीना
		राजराजेश्वर मिध ।
		परमिया—
		राधाप्रसाद बसाह
मार्च १८६८ भाक	निनिस (१सा) १२३०१२०	कागुन
		शाहलक—
		मियनाथबस

पुस्तक	गरीब	भमिनेता
	१८५४१२ रा	मार्च
		पोगिया—
		राधाप्रसाद बसाह
	(२ रा) १६३०१५	बैल
	१८५४१३	मार्च
हनरो दो फोय	१२३११४	था फाल्गुन
		हेनरी—
		केशवचन्द्र गगोपाध्याय ।
	१५५५१५	फरवरी
		कलछाक—
		मियनाथ बस
		हट्मार—
		नित्यसाह दे
परमि मास	१२३११४	था फाल्गुन
	१८५५१५	फरवरी
		मंजर प्रस—
		केशवचन्द्र
		गगोपाध्याय
		भोयेछाक हुसरे
		भमिनयमें
		जाह' इकहीसाने
		इस पियेटरकी
		पुठपोपकता को थो ।

इस सम्प्रदायक बहुतरे भमिनेता पिछले समय बङ्गलमें नाट्याभिनयके प्रथम उद्योगी तथा भमिनेता हुए थे। जेठे और रिगि नाट्याभिनयका जोज मिनके इश्येजमें पपन कर चुके थे, समय आने पर यह भङ्गित हो कर खूब ही फटा हुआ है।

इसके बाद ही बङ्गलमें भमिनयका सूत्रपाठ हुआ। 'कलिराजाकी यात्रा' नाटक तथा विद्यासुन्दरकी बात छोड़ूने पर पद्यायमें सन् १२३३ फसला साह ही बङ्गलकी भमिनयका मारम्भ कहा जा सकता है। क्योंकि इसके बाद ही बङ्गलक कई जगहोंमें नाटकी क भमिनय की प्रवृत्ति जाग उठी। पयारियाध्यायक निरुद चरकङ्गुा के प्रथम बसाहके मकानमें (सन् १८५३ ई०में) रंगला भमिनयका मारम्भ हुआ। इस समय पवित्र रामनाटयण तर्षारसक डिजे 'कुसोनबुद्धसर्मल' (सन् १८५४ ई०) नामक नाटकका पहले पहल प्रचार हुआ। इस भमिनयमें मोरियवृत्त पियेटरक भमिनेता राधाप्रसाद बसाहने सहाय दिया था। यहाँ भी यह मादूम नहीं होता, कि किसन कौन पार्ट किया था। किन्तु भमिनताभोंमें कह माधवियों के नामका पता लगा है—राधाप्रसाद बसाह, प्रथम बसाह, जगदुर्नम बसाह, नारायणचन्द्र बसाह, राजेश्वरनाथ बगोपाध्याय, मदेश्वर नाथ मुकोपाध्याय और विद्यालिलासबगोपाध्याय (१९०६)

स्त्रियों का पार्ट किया था)। निम्नोक्त व्यक्ति ही पीछे-के सुविख्यात पेकुर (अध्यक्ष) विहारी बाबू हैं। इन लोगों में पीछे बहुतेरे अच्छे अभिनेता हो गये हैं। उक्त कुलीनकुलसर्वस्वके दो बार अभिनय हुए।

इसी समयसे कलकत्ते तथा वहाके देहानोंमें नाटकों-के अभिनयका उद्योग होने लगा। उपर्युक्त राधाप्रनाद बाबू और जयराम बाबूने बड़ा उद्योग किया। दूसरे अभिनेता प्रियनाथदत्त अपने ननिहालमें भी (गद्गाधर सेठके मकानमें) इस 'कुलीनकुलसर्वस्व' का अभिनय किया था। सन् १८५७ ई०में इस दलका पहला अभिनय हुआ। गद्गाधर सेठके पुत्र गोपालचन्द्र सेठ (प्रियनाथ-के मामा) इसके पृष्ठपोषक थे। इस दलमें प्रियनाथदत्त, गापालचन्द्र सेन, नकुलचन्द्र सेठ, नारायणचन्द्र वसाक आदि अभिनेता सम्मिलित थे। नारायण बाबूने इस दलमें जाहनुर्वा और रसिका हजामिनकी भूमिका अभिनय किया।

इस समय अर्थात् जयराम वसाकके मकानमें होने-वाले अभिनयके समयमें ही सिमलेमें छातू बाबूके मकानमें वंगलेमें शकुन्तला नाटकके अभिनयका अनुष्ठान हुआ। इस अभिनयमें प्रियमाधव चसुमल्लिक, शरच्चन्द्र घोष, मणिमोहन सरकार आदि व्यक्ति अभिनेता थे। शकुन्तलाका यही प्रथम वंगानुवाद हुआ। जिस दिन जयराम बाबूके मकानमें अभिनय हुआ, उसके दूसरे दिन ही छातू बाबूके मकानमें शकुन्तलाका अभिनय हुआ था। इस अभिनयमें सभी अभिनेता यथोप-युक्त मूल्यवान् पोशाक पहने हुए थे।

इसी समय चुचडेमें भी कुलीनकुलसर्वस्वका अभिनय हुआ।

बंगला नाटकाभिनयका यह एक युग था। उस समय जहा जितनी चेष्टायें हुईं सव जगह ही कुलीन सर्वस्व और शकुन्तलाके सिवा दूसरे नाटकका अभिनय नहीं हुआ।

इस समय केशवचन्द्र सेनके घरमें (गौरिफा ग्राममें) अंगरेजीमें हेमलेटका अभिनय हुआ। इस अभिनयमें केशवचन्द्रने हेमलेटका, प्रतापचन्द्र मजुमदारने होरेशियोका, महेंद्रनाथ सेन राजाका, भोलानाथ

चक्रवर्तीने फ्लोनियसका, योगेन्द्रनाथसेन वार्नाडोंका, नन्दलाल दामने रानीका, श्रीनरेन्द्रनाथसेनने (मिररके सम्पादक) अफिलियाका पार्ट लिया था। इसके बाद बंगालियोंका अंगरेजी नाटकके प्रति उत्साह श्रीमा पड गया।

इसी समय (सन् १८५७ ई०के मार्च महीनेमें) कालीप्रसन्न सिंहके यत्से उन्हींके मकानमें वेणी-संहार नाटकका वद्वानुवाद अभिनय हुआ। काली प्रसन्न सिंह, उमेशचन्द्र वन्द्योपाध्याय (मिष्टर उल्लिड, सी० बनरजी) विहारीलाल चट्टोपाध्याय, आदि इस दलके अभिनेता थे। विहारी बाबूने स्त्रीका पार्ट किया था। इसके आठ महीने बाद सन् १८५७ ई०के नवम्बरमें 'विक्रमोर्वशी' वद्वानुवादका अभिनय हुआ। इसका अनुवाद कालीप्रसन्न बाबूने एक पण्डितका साहाय्य ले कर स्वयं किया था। इस अभिनयकी बात सन् १८७३ ई०के कलकत्ता-रिभ्युमें प्रकाशित हुई थी। इस समय नडाइल-हाटवाड़ियाके बाबू गुरुदासराय महा-शयके मकानमें भी उनके बडे दालानमें रङ्गमञ्च तैयार कर अभिनय करनेका आयोजन चला रहा था। गुरुदास बाबूके पुत्र श्री गोविन्दचन्द्र राय महाशय उसके प्रधान उद्योगी थे।

छातूबाबूके घर जब शकुन्तलाका अभिनय हुआ था, उसके बाद ही कप्तान पामार ओरियण्टल सेमिनरीके प्रधान शिक्षक मिष्टर डी० एल० रिचार्डसन, रसिकलाल सरकार आदि कई गण्यमान्य व्यक्तियोंने ओरियण्टल सेमिनरीमें फिर सेक्सपियरके नाटकका अभिनय आरम्भ किया।

ओरियण्टल थियेटरके पहले अभिनयकी देख कर ही कालीप्रसन्न सिंह और राजा प्रतापचन्द्र आदिके मनमें थियेटर करनेका भाव जागरित हो उठा। फादम्बरीके अभिनयके समय छातू बाबूका देहान्त हो गया था। महाश्वेता नामसे फादम्बरीका अभिनय हुआ।

राजा उमेशचन्द्रके लिखे एक पत्रसे मालूम होता है, कि ओरियण्टल थियेटरके अध्यक्षोंके साथ केशव-चन्द्र गङ्गोपाध्याय, प्रियनाथदत्त आदिके मनोमालिन्य

उपस्थित होने पर राजा इन्द्रचन्द्र और राजा प्रताप चन्द्रने बंगला नाटकके अभिनयका प्रस्ताव किया। उन्होंने ही मास्य कर कजयचन्द्र गङ्गोपाध्यायको स्थान-निर्वाचनके लिये कहा। किसी बड़े भावमात्र मकान मांग लेने या विराय पर ले कर काव्यी मारम्भ करनेको भी बात बल रही थी। इसक दो या द्वाइ बर्ष तक इसकी कोई चर्चा न बनी। अन्तमें जब यह युवकोंक किसी नाटकक कहीं रिहर्सल करते सुना तो (सम्भवतः जयराम बसाइक मकानका 'कुलानकुलसयम्' इन लोगोंको भी कोई नाटक खेलनेकी इच्छा बढायती हो उठी। इन्होंने माघमें सप्ताह कर जट पर संस्मृत रत्नावलीके अनुवादकी व्यवस्था कर दी। स्थिर हुआ, कि इसका अनुवाद रामनारायण तकरज्यो ही करे। इन्होंने अनुवाद करना स्वीकार भी कर लिया। इस तरह इन्होंने अनुवाद कार्यमें चार महीने बिताये, फिर उसका संशोधन हुआ। संशोधनमें भी कम समय नहीं लगा। पूरा एक महीना ऐसा क्यों हुआ? इसका उत्तर यह है, कि इसका मध्यमा शब्दोंकी निकाल यथायथ शब्दोंको रखनेसे ही इतना देर हो गई। फिर इसके छापान में तीन मास बीते। उसे पाठके लिये लिपिक निर्वचन तथा रिहर्सलमें भी कुछ समय बीता। जो ही सन् १८५८ ई०क शुभाह महीनेमें बेङ्गलियाके द्वारकानाथ ठाकुरके हाथमें पहुँचे पहाल रत्नावलीका अभिनय हुआ। इसमें ओरियण्टलके यह अभिनेताओंने हाथ बटाय था। शिक्षा इनका काम तो केशवचन्द्र गङ्गोपाध्यायके ऊपर ही सीँवा गया था।

रत्नावलीके छः बार अभिनय हुए। अन्तिम अभिनय १९वीं अक्टूबरको ही हुआ। इस अभिनयमें एकदम बाजेका प्रदर्शन हुआ था। महाराज पटौरीमोहनठाकुरके यज्ञसंस्मृताध्यायके श्रेष्ठमोहन गोक्षामी द्वारा पञ्चाङ्ग ले कर यह बाधक सब ब्रिज हुआ था। राजाओंके थपले सजावट और रङ्गमञ्च उत्तम रूपसे तैयार हुआ था। धनोका साहाय्य पा कर तथा मनबल अनुशीलन द्वारा रुचि परिमार्जित होकर इन नाट्य-सम्बन्धवले साधारणका विशेष रूप किया था। बेङ्गलियाका यह नाट्य बल और रङ्गमञ्च

बहुत दिन तक जीवित था। रत्नावलीका अभिनय देखने के लिये सत्रोंक छोटे ब्राह्मण, इन्द्रचन्द्र विद्यालाग, हरिचन्द्र मुखोपाध्याय, रामसाह राय भादि बहुतैरे गण्यमान्य सज्जन उपस्थित थे। मारकेड मधुसूदन वृत्त भां इस अभिनयको देखने जाठ थे। साहबोंके लिये रत्नावलीके मंगरेजो अनुवादकी भावश्यकता हुई। इसी लिये मारकेड मधुसूदनने इसे मङ्गरेजीमें अनुवाद किया। अन्तमें मारकेड मधुसूदनने मंगरेजो प्रकाशके अनुसार अर्मिष्ठाकी रचना की और केशव बाबूको दिवङ्गाया तथा रत्नावलीको गुण-होनाताका परिचय कराया। पीछे राजा इन्द्रचन्द्र इसके अभिनय करने पर उद्यत हुआ।

ऊपर यह युक्त है कि अर्मिष्ठाका मंगरेजीमें अनुवाद मारकेड मधुसूदन दत्तन हा किया था। इसका रिहर्सल सन् १२६५ सालके मगहन महिनेम भारम्भ हुआ और १२६६ सालके माघीकी ३० तारीखको इसका पहला अभिनय हुआ। इसके सात माठ बार अभिनय हुए थे। अर्मिष्ठाके बोधा बजा कर गान गानेको व्यवस्था बड़े कौशलसे सम्पन्न हुआ था। अर्मिष्ठाका अभिनेता सितार हाथमें ले कर परदे पर केवल हाथ फेरत मुखस गान ज्ञाने थे और नेपथ्यसे एक गुणवान वाक्क सितार बजात रहते थे। कथक राजमहलकी लिपिकोंके विधानके लिये एक दिन अर्मिष्ठाका अभिनय हुआ। जब पाइकपाइके राजाके उद्योगसे बेङ्गलिया में रत्नावलीका अभिनय हुआ, उस समय भाहीरोटोके में शत्रुघ्ननाका रिहर्सल चल रहा था। सन् १२६६ फसलीम पहले (१८५६ ई०के मध्य समयमें) पहल जनार्णक मुखोपाध्यायोंके उद्योगस उन्हींके भाहीरोटोके-घांले मकानमें इसका अभिनय हुआ। जयपाम बसाइ इसका मध्यस्थ थे और ममयधरज गुन रिहर्सल कर रहे थे। इस अभिनयके लिये भाहीरोटोकेमें चन्द्रमुखोपाध्यायके यत्नमान बाजारके समीप ही इन्त तय्यार हुआ।

इस अभिनयको 'देवनेके लिये कालीमसज सिद्ध, मारचन्द्रयोग, इन्द्रचन्द्र गुन, द्वारकानाथ विद्याभूषण, गौरीशूर महाचार्य और हुगळो तथा श्रीरामपुर के मजिस्ट्रेट भादि साहब भा उपस्थित थे। "प्रनाकर"

और 'भान्कर' नामक समाचार पत्रोंमें इसका विवरण प्रकाशित हुआ था।

इसके बाद १२६६ फसलीमें या सन् १८५६ ई०के अन्तमें बेलगछियामें होनेवाले प्रथम रत्नावलीके अभिनयके बाद और गर्मिष्ठाके अभिनयसे पहले मालविकानग्निमित्रका अभिनय हुआ था। इस अभिनयमें राजा सर गौरीन्द्रमोहन ठाकुरने बंजुकीका पार्ट किया था। बेलगछियाके इस नाट्यमञ्चने उस समय एक युगान्तर उपस्थित कर दिया था।

जिस समय गर्मिष्ठाका अभिनय चल रहा था, उस समय केशवचन्द्र सेनके यत्न और चेष्टासे सिन्दुरिया-पट्टीमें विधवा-विवाह नाटकके अभिनय करनेका अनुष्ठान हुआ था और रिहसल भी चल रहा था सिन्दुरिया पट्टीके गोपाल मल्लिकके मकानमें ही इसका स्थान नियत हुआ। केशव बाबू ही यहाँके शिक्षक थे। सन् १२६७ फसलीके बैशाख महीनेमें इसका प्रथम अभिनय हुआ।

इस अभिनयमें तीन प्रसिद्ध गवैयोंने गीत गाया था। उमेशचन्द्र भट्ट, राधिकाप्रसाद दत्त, शैलमोहन वसु, पञ्चानन मित्र, गदाधर मित्र, रसिकचन्द्र मुखोपाध्याय और वेणोमाधव सोम प्रभृति प्रसिद्ध व्यक्ति अन्यान्य वाजोंके वजानेवाले थे। बेलगछियाके अभिनयका तरह यह अभिनय भी अति उत्तम हुआ था। पाइकपाडेकी उच्चैःजनासे यह अभिनय किया गया। पहले "पंडेलकी थियेटर" किराये पर ले कर यह अभिनय होनेवाला था। किन्तु थियेटरवालोंने १००) २० महीना किरायेका मांगा। इससे यह सङ्कल्प त्याग कर हलविन साहवके रङ्गमञ्चको और दृश्यपटादिसे सजानेकी तय्यारी होने लगी। इसमें चार हजार रुपये खर्च हुआ। मुरलीधर सेनने ही अधिक रुपया दिया, बाकी रुपया जनसाधारणके चन्देसे आया। उस समयके 'हरकारा' पत्रमें इस अभिनयके विषयमें वाद विवाद हुआ था।

इसके बाद शोभावाजार राजवाड़ीमें नाट्याभिनयकी चेष्टा हुई। कुमार उपेन्द्रकृष्ण देव, कुमार अमरेन्द्रकृष्ण देव, कुमार ब्रजेन्द्रकृष्ण देव, कुमार उदयकृष्ण देव, गोपालचन्द्र रक्षित, चन्द्रकाली घोष और कालीकृष्ण वसु

आदि इसके उद्योगकर्ता थे। सन् १२७१ फसलीमें चमत्कारकृष्ण घोषके दालानमें इसका रिहसल हुआ। इस समय प्रियमाधव वसु मल्लिक, प्यारामोहन दास, मणिमोहन सरकार आदि व्यक्तियोंने साथ दिया था। माइकेलके रचे "एकेडि कि बले सभ्यता" नाटकका अभिनय हुआ।

शोभावाजारकी "थियेट्रिकल सोसाइटी" साधारणकी सम्पत्ति नहीं थी, किन्तु कार्य्य इसका मूख शृङ्खलाके साथ चल रहा था। इसके लिये सभापति, सम्पादक प्रभृति कर्मचारी भी नियुक्त हुए थे। चन्द्रकाली घोष इसके सभापति तथा डाकूर उमेशचन्द्र मित्र इसके सम्पादक थे। राजा देवीकृष्णके मकानमें इसका अभिनय होता था। इसके तीन प्रकाश्य अभिनय हुए थे। कविवर महेशचन्द्र बन्धोपाध्याय इसका अभिनय देखनेके लिये उपस्थित हुए थे। उस समयके प्रथम संवाद-पत्र हिन्दू पेड्रियटमें इन अभिनयोंका विवरण प्रकाशित हुआ था।

शोभावाजार-राजवाड़ीके इस दलसे 'कृष्णकुमारी' का अभिनय होना निश्चय हुआ। इसके लिये रिहसल आरम्भ हुआ। इस समय बागवाजार मदनमोहनतलानिवासी नीलमणि चक्रवर्ती महाशयके पुत्र गोपालचन्द्र चक्रवर्ती महाशय मित्रवाचन आते जाते थे। सन् १२६४ फसलीके अन्तमें जब 'कृष्णकुमारी'के खेलनेका उद्योग हुआ, तब कालिदास सान्यालके साथ राजाओंके मनोमालिन्य उपस्थित होने पर वह तथा गोपाल बाबू बहासे चले आये। इन दोनोंके उद्योगसे गोपाल बाबूके मकानमें एक नाट्य सम्प्रदायकी प्रतिष्ठा हुई। कालिदास बाबूने स्वयं 'नलदमयन्ती' नाटककी रचना की और उसही रिहसल आरम्भ हुआ। गोपाल बाबूको नाट्योपचेष्टा यही पहले स्फुरित नहीं हुई, वरं इससे एक वर्ष पहले सिमलानिवासी जयगोपाल मित्र और नवगोपाल मित्र महाशयोंने जो श्रीवत्सचिन्ता यात्राका दल संगठन किया था, उस यात्राका गाना भी एक बार गोपाल बाबूके मकानमें हुआ था। इसी गानेको सुन कर गोपाल बाबूके मनमें अभिनयकी स्पृहा बढ़ी। इसके बाद ही शोभावाजारकी राजवाड़ीमें जा कर कृष्णाकुमारीके अभिनयमें

सम्मिलित हुए। इसके बाद वे मयम मकानमें धियेटर कायम कर महा उत्साहसे नाटककी शिक्षा देने लगे। इनका काबिदास साम्राज्य महाशय ही यहां शिक्षा देते थे। गोपाल बाबू स्वयं भी कुछ शिक्षा देते थे। सन् १२७१ फसलाक मध्य समयमें लक्ष्मणपत्नीका अभिनय हुआ।

यह एक बार वर्ष तक नियमितरूपसे काम करता रहा। दो वर्ष तक लक्ष्मणपत्नीका अभिनय हुआ था। श्रीरुद्र या पद्मरुद्र बार कथक इसके अभिनय हुए। इसके बीच वरु माल-राजवाहामि माटवाड़ेके महाभाषाके मकान में, श्रीरुद्र गिरीशपुरके श्रीपरियोंक मकानमें जो सब अभिनय हुए, वे अल्पकाल उत्तम थे। माटवाड़ेका अभिनय सभापेक्षा उत्कृष्ट हुआ। इनके सिवा पधरियापाटाके बोरभूसिंह प्रतिष्ठक मकानमें, छप्पनीरायापण मुकोपाध्यायके मकानमें और घसुवाड़ेके गिरिजाम्बर पन्डोपाध्यायके मकानमें इनका अभिनय हुआ। सिवा इनके गोकुल मिश्रके मकानमें भी गायाम्बर बाबूके मकानमें कई बार अभिनय हुए थे। पधरियापाटाके अग्रतम वसाकक मकानमें इसका जो अभिनय हुआ, वह इसका कुंसेरिह सख था। इस अभिनयकी इतनी प्रशंसा हुई, कि लोग शकुन्तला अभिनयकी तरह इसका भी आदर करने लगे थे। महाराज महताबचन्द्र बहादुर इसका अभिनय देख कर इतना मुग्ध हुए कि उस समयसे उसके रचयिता और अभिनेता काबिदास बाबू पर उनकी कृपावृत्ति रहने लगी। काबिदास बाबू बर्दमानराजके यहां लीकरी करते थे। दो वर्षके बाद इस दलसे "इन्द्रमना" नामक एक नाटकका अभिनय हुआ जदामहेश्वरलला निदासो गिरिजाम्बर पन्डोपाध्याय इसका रचयिता थे। "इन्द्रमना" भी पांच सत बार अभिनीत हो चुकी था। किन्तु यह गाऊक मिश्र तथा गोपाल बाबूके मकानके सिवा कहीं दूसरे जगह अभिनीत नहीं हुई।

यहां तक किसी राजा या बाबूके घर ही नाटक हुआ करता था, उस समय अल्पकाल नाटक केवलके ही प्रथा नहीं थी। बागबाजारके मलयमयपत्नीके दलने पहले पहल विदेशमें जा कर इस प्रथाके परिष्कार किया। इन्द्रमना मयके विभिन्नबाबूका पार्ष गोपाल बाबूने किया था।

इस दलकी विवरणोंके साथ साथ और एक दलकी बात लिखनी पड़ती है। पिछले समयमें इस निम्नोक्त दलसे ब्रह्मादके रंगालयसे विशेष सम्बन्ध हो गया था। इस दलके अल्पतम अभिनेता गिरिजाम्बर मिश्र तथा मानवदालमिश्र भोगोफुल्लमिश्रक बंगपर हैं। यह गिरिज बाबू एक उत्तम संगीतज्ञ व्यक्ति थे। मलयमयपत्नीके साथ ही एकताम राजा राजा था उसका बजानेबाजा उसके अभिनेताओंमें ही था। कोह दूसरा नहीं। अन्तमें गिरिज बाबूने एक स्वतन्त्ररूपसे वादक दल संगठित किया था। इस दलमें बागबाजार और मयामबाजार निबामो कितने ही युवकोंने साथ दिया था। इनमें बसुपाड़ेके रत्नेशम गिरिजाम्बर पन्डोपाध्यायके द्वितीयपुत्र गोगोपाय पन्डोपाध्याय, आकर दुगादास करके द्वितीय पुत्र राधामाधवकरका नामोद्धेक करना पड़ता है। यही दो व्यक्ति ही मधिय के बगलाका साधारण रंगालयके प्रतिष्ठाताओंमें प्रधान व्यक्ति हैं। इस दलकेदलमें एक मुखकमान युवकी भी साथ दिया था। इसका नाम था हियुक्त का उरुक हेम बाबू। वे अच्छे सहीतज्ञ तथा हाथवरसमें पट्टु अभिनेता था। पिछले समयमें निशानक धियेटरमें यह अभिनय भी करता था और सङ्गीतका शिक्षा भी देता था।

जिस समय गिरिज बाबूने यह दलकेदल गठित किया था, उस समय मयाकोपुरमें भवैतनिक 'माट मन्दि' नामक एक धियेटर-दलका संगठन हुआ। यहाँ हेमचन्द्रमिश्रके रथे "सीतार बनवास" नाटकका अभिनय हुआ। सन् १८६६ ई०के मार्च महीनेमें मोसमपि मिश्रके मकानमें (सर रमेशचन्द्रमिश्रके पुराने मकान में) इसका पहला जेका हुआ। इसी अभिनयमें मयानी पुरके उस समयके प्रसिद्ध वादक सर रमेशचन्द्रमिश्रके माई केजचन्द्र मिश्रने एकतामवादक-संग्रहायने ही राजा बजाया था।

इस समय बागबाजारके गिरिजाम्बर मिश्रके राजा बाबाका लूण सुनाम हो गया था। मयानीपुरमें जगदाम्बर मुकोपाध्यायके मकानमें बागबाजारका दल एक दिन बजाने गया। उसमें वह यहाँ केजय बाबूका

अपेक्षा अधिक गण अर्जन कर प्राया। इस सुखवातिके वाद नगेन्द्र वायूने गिरिग वावूका दल छोड कर नसुपाडेके अपने मकानमें एक बाजा दलकी प्रतिष्ठा की। राधामाधव वायू और हिगुल पाँ नगेन्द्र वायूके दलमें मिल गये। कमशः गिरिग वावूका दल टूट कर नगेन्द्र वावूका दल मजबूत हुआ।

इस बागवाजारके एकतान वादनदलके दो एक वर्ग पहले श्यामपोषर-निवासी ब्रजनाथदेवने 'श्याम पोषर एकतानवादन-सम्प्रदाय' नामक एक बाजा दल कायम किया। इन्हींके दलमें पहले 'कुरे रिओनेट' वंगी वजाना आरम्भ हुआ। उस समय तरु कर्नेट नहीं बजया जाता था। तात और तारके सारे यन्त्र, गिफ्लो-फ्लयानेट, वंगी, जलतरङ्ग भी इसी दलमें एकत्र बजाया जाता था। सिवा इसके शूद्र वजा कर सुर देना होता था। डिसुरमें कनसाटे वजाया जाता था। छानवीन कर डिसुरके शांल लाया गया था। जब तरु बाजा बजता था, ग्रहनाईके पौधराके हिमावसे इस शांलमें उस तरहका सुर दिया जाता था। इस दलसे राधा-माधव वावूने कुरे रिओनेट वंगी खरीदी थी बागवाजारके दलमें यह वंगी बजती थी। ब्रजवावूके बाजादलने पहले चैत्रके मेलेमें अपने बाजे बजाये थे। नाटककार कवि गिरिगचन्द्र घोष इन ब्रजवावूके बहनेई कहे जाते हैं।

इस समय नाटकीय चेष्टा जाग उठती थी। पहले जैसे कुलीनकुलसर्गस्व तथा शकुन्तलाका एक युग आया था, वैसे ही इस समय "पद्मावती" का आदर बढ़ा था। सन् १२७० फसलीमें पथरियाघाटके यतीन्द्रमोहन ठाकुर (उस समय राजा नहीं हुए थे) के मकानमें एक नाट्य-सम्प्रदाय स्थापित हुआ। यतीन्द्र-मोहनके पैतृक मकानमें (नं० ६५ पथरियाघाट) इसका रङ्गमञ्च नहीं बना था। पथरियाघाटके ठाकुरगोष्ठी आदि मकानोंमें (गोपीमोहन ठाकुरके मकान नं० ६६ पथरियाघाट) अर्थात् उस समयके ईशानचन्द्र मुखो-पाध्यायके मकानके मध्य कमरेमें रङ्गमञ्च स्थापित हुआ। इस स्थानोंमें सन् १२७१ फसलीमें या सन् १८६५ ई०में मालविकानिमित्त अभिनीत हुआ। पाईकपाडेके राजाओं के यत्नसे सन् १२६६ फसलीमें इसके अभिनयमें जिन

अभिनेताओंने अभिनय किया था, उनमें कुछने इस अभि-नयमें साथ दिया था। पाईकपाडेके अभिनय-शिक्षक केशवचंद्र गंगोपाध्याय यहा शिक्षक नियुक्त हुए। यह मालूम नहीं होता, कि ठीक किस तारीखको मालविकानिमित्त पहले पहल अभिनीत हुआ और किस किसने कौन कौन-सा पाट लिया था इसके बाद यतीन्द्रमोहनने रामनारायण तर्करत्नके नये नाटक "कंसवध" अभिनय करानेका उद्योग किया था। किन्तु नाना अमुविधाओंके कारण यह उद्योग परित्याग कर देना पडा। इस समय पुस्तकभावसे यतीन्द्रमोहनने स्वयं विद्यासुन्दरकी रचना कर रिहसल कराया। नौ दश बार इसके अभिनय हुए, उनका कई तारीखें दी गईं १ला सन् १२७१, २३वीं पौष, शनिवार (सन् १८६६ ईजनररी) २रा ,, ,, २७वीं पौष, बुधवार (१८६६, १०वीं जनवरी) ३रा ,, ,, २६वीं माघ, शनिवार (,, १०वीं फरवरी) ४था ,, ,, ७वीं फागुन, ,, (,, १७वीं ,,) ५वा ,, ,, १२वीं ,, ,, (,, २४वीं ,,)

इस अभिनयके समय रोवांके महाराज कलकत्ते आ कर महाराज यतीन्द्रमोहनके मरकतकुञ्ज नामक उद्यानमें मेहमान हुए। विद्यासुन्दरका रिहसल प्रायः समाप्त हो चुका था और इसके चलनेका उद्योग हो रहा था। सन् १८६५ ई०को ३०वीं दिसम्बरको यतीन्द्रमोहनने उनको अपने राजमहलमें आमन्त्रित किया। इनको आप्पायित करनेके लिये इस दिन ही 'विद्यासुन्दर' के ड्रेसिङ्ग रिह-सलकी व्यवस्था की गई। इस रिहसलमें राजपरिवार तथा रोवा-राज दलके लोगोंके सिवा और कोई जाने न पाया। इसके तीसरे अभिनयमें विजयनगरके महाराज दर्शक थे। इस समय यूरोपसे नये आये हुए थैरेश पुशार्ड नामक एक आदमी टाउनहालमें अपने वाद्यकौशलसे लोगोंको मुग्ध कर रहे थे। सन्तोतब यतीन्द्र और शौरीन्द्रमोहनके साथ उनका परिचय हुआ। विद्या-सुन्दरके तीसरे अभिनयमें पुशार्डने निमन्त्रित हो कर वेहला बजाया था। उस समयके वाद्ययन्त्र विक्रेता या बाजा बेचनेवाला "वार्किप् इयं" कम्पनीके अध्यक्ष रिजलेने इस चतुर्थ अभिनयमें पुशार्डके बाजेके साथ पियानो बजाया था।

इन अभिनयोंमें प्रहसन भी होत थे । पहले अभिनयमें 'येमन कर्म तेमनि कळ' नामक प्रहसन हुआ । १३वीं जनवरीके बङ्गालीमें उस समयके सम्पादक पिट्टिबन्धु घोषने इस अभिनयकी बड़ी प्रशंसा की थी ।

इस 'विद्यासुन्दर'-के अभिनयक साथ बङ्गालके साधारण नाट्यजाजाके अन्वयतम प्रतिष्ठाता भर्तृहरिचन्द्र मुस्ताफी महाशयका कुछ सम्बन्ध था । इस अभिनयक समय भर्तृहरि बाबू धारमोपता सूत्रसे पतीन्द्र बाबूके घर रहा करते थे । यहो उनका प्रथम अभिनय देखा था । उन्होंने यहाँ रह कर हा अभिनयक सम्बन्धकी सारी बातोंकी जानकारी प्राप्त की । वे उस समय स्कुलम पढ़ते थे । उस समय ६क उनका मातृकम कोइ सम्बन्ध नहीं था ।

पतीन्द्रमोहनके इस नाट्य सम्बन्धके क्रमस १ 'मास-विक्रान्ति मित्र', २ 'विद्यासुन्दर', ३ 'येमन कर्म तेमनि कळ', ४ 'बुझते कि ना' ५ 'मावती-माधव', ६ 'इमय संकट' ७ 'शुभ्रान्त', ८ 'दक्षिण हरणी', ९ 'रसायिकाट पृथक्' अभिनीत हुए थे और यह सब बहुत दिनों तक जीवित था । 'दक्षिण-हरण' के अभिनय तक पतीन्द्र मोहनका नाट्य सम्बन्ध जगाधार चला भाया । इसके बाद एकएक बंद हो गया । फिर मन् १८८१ ई०में रसायिकाटःपृथक् नामक क्षुद्र रूपकाव्य-रचित और अभिनीत हुआ । इन सब अभिनयोंके साथ शैलमोहन गोस्वामीके प्रतिष्ठित एकठान पावन-सम्बन्धायन बाजा बजाया था । इस सम्बन्धसे केवल देवी बाजे बजाते थे । बेहलाके सिवा अन्य कोइ विदेशी बाजा न था । फू कनेबन्दा काइ बाजा न था । यह 'शरीरमोहनका कनसर्त' नामसे विख्यात था । 'विद्यासुन्दर' नाटकके साथ प्रहसन खेलनकी प्रथा प्रचलित हुई ।

पथरघाटेके पतीन्द्रमोहन ठाकुरके प्रकाशमें चतुर्थ पुस्तक माळतीमाधय-नाटक मन् १८७३ ई०की ३०वीं सितम्बर बुधवतियारको अभिनीत हुआ । यह भाड दण बार अभिनीत हुआ था । एक रातको कंयज साहसोंकी निद्रान्धन द कर अभिनय दिखाया गया । इस दिन जाइ कारेस उपस्थित थे । माळतीमाधय

क गाने बनवादीछाळ राय नामक एक व्यक्तिने भर दिया था ।

इस समय शोभाबाजारकी विप्रेक्षिक सोसाइटी ने 'कृष्णकुमार' नाटकका रिहसैल चला रहा था । मन् १८६८ ई०की २४वीं जुलाई शोभाबाकी इसका प्रथम अभिनय हुआ । यह अभिनय केवल अपने बन्धु-बान्धवों को दिखानेके लिये ही किया गया था । मन् १८६७ ई० की १२वीं फरवरी शनिवारको इसका प्रकाश्यकसे अभिनय हुआ । उस अभिनयके समय इस नाटक-समितिका व्यवस्था भति सुन्दर थी । नीचे उसका पूरा विवरण दिया गया है । इसको एक कार्यानिर्वाहिका समिति थी—

काशीप्रसन्न सिंह	(समापति)
राजेन्द्रनाथ बन्धोपाध्याय	उपसमापति ।
कुमार सुरेन्द्रकृष्ण शै बहादुर	सदस्य ।
कुमार उपेन्द्रकृष्ण शै बहादुर	"
चन्द्रकाठी घोष	"
करसाळ मित्र	"
परदाकाण्ठ मित्र	"
मणिमोहन सरकार	"
कुमार महेन्द्र कृष्ण शै बहादुर	कीर्त्तयज्ञ
" भानन्द "	सम्पादक
प्यारीमोहन दास (वैष्णव)	सहचरो सम्पादक ।
सिवा इसके कितने ही कर्मचारी थे :—	
कुमार उपेन्द्रकृष्ण शै बहादुर	रङ्गमञ्चके अध्यक्ष ।
राजेन्द्रनाथ बन्धोपाध्याय	"
कुमार उपेन्द्रकृष्ण शै बहादुर	} शिक्षक ।
राजेन्द्रनाथ बन्धोपाध्याय	
प्यारीमोहन दास	
रूपकाळ मित्र	} छापणानेके संबंधके कर्मचारी ।
कुमार अरुणेंद्रकृष्ण शै बहादुर	
परदाकाण्ठ मित्र	
प्यारीमोहन दास	

० इस प्रकार नाटकके अभिनयमें छोर कारेके बाहक रहने शोभा बजाया ।

राजेन्द्रनाथ वन्धोपाध्याय	}	एकतान बाजेके
कुमार सुरेन्द्रकृष्ण देव बहादुर		दलके नेता ।
वरदाकान्त मित्र	}	कमरेके तत्त्वाव-
कुमार सुरेन्द्रकृष्ण देव बहादुर		ग्रायक ।
“ उपेन्द्रकृष्ण ” “		
“ ब्रजेन्द्रकृष्ण ” “		
वरदाकान्त मित्र	}	साजघरके तत्त्वाव-
राजेन्द्रनाथ वन्धोपाध्याय		धायक ।
अतुलकृष्ण देव		
चन्द्रकाली घोष	}	अभ्यर्थना-कारक
रूपलाल मित्र		
वरदाकान्त मित्र	}	कर्मचारी-प्रधान ।
कालीकमल लस्कर		
जीवनकृष्ण देव		
अतुलकृष्ण देव		
मणिमोहन सरकार		

प्रति मङ्गल, शुक्र और गनिवारको इनका रिडर्सल चलता था। सन् १८६७ ई०की १२ फरवरीको हिन्दू-पेट्रियटमें इस अभिनयका विस्तृत विवरण प्रकाशित हुआ। इस अभिनयमें प्रसिद्ध नाटककार गिरिज चन्द्र घोष उपस्थित थे, किन्तु नाट्य-सम्प्रदायभुक्त न थे।

पथरियाघाटेकी राजवाडीमें होनेवाले 'विद्यासुन्दर' अभिनयके बाद पटलडङ्गेके अरपुलिमें "अरपुली-न टा-समाज" स्थापित हुआ। यहा पहले "महाश्वेता" पीछे "शकुन्तला" और "चूडो जालिकेर घाड रों" अभिनीत हुए। कुछ लोगोंका कहना है, कि ये दोनों नाटक छानूवायूके मकानमें अभिनीत नाटकद्वयसे विभिन्न हैं और इस सम्प्रदायके किसी व्यक्ति द्वारा रचित हैं। सन् १२७३ ई०के वैशाख महीनेमें (सन् १८६६ ई०के अप्रिल प्रहीनेमें) इस सम्प्रदायका पहला अभिनय हुआ। इसके बाद इस दलने निमाईचरण शालकी "चन्द्रावली" नाटक और 'पराई आचार बड़ लोक' नामक प्रहसन खेले। प्राणीवृत्तान्तके रचयिता सातकौड़ी दत्त इस दलके सम्पादक थे।

जिस समय बागवाजारमें नगेन्द्र बाबूका बाजा-दल गूब जोरीले चल रहा था, उस समय सिमला-शुंडा पाड़ेके गुंडियोंके मकानमें 'वृद्धमावतीका' का अभिनय हुआ। बागवाजारके बाजा-दलके नगेन्द्र बाबू आ कर यहा जिज्ञा देते तथा स्वयं पञ्चुड़ीका साज सज कर अभिनय करते थे। पिछले समय नेशनल थियेटरके अन्यतम प्रतिष्ठिता नगेन्द्रनाथ बाबूका प्रथम यही अभिनय है। सन् १८६६ ई०में इस दलका प्रथमाभिनय हुआ।

इस समय कलकत्तेमें नाट्यारोदका एक प्रचल प्रवाह बह रहा था। प्रायः हरके ग्राममें ही नाट्याभिनयकी चेष्टा हो रही थी। उनमें सब सम्प्रदायोंका विवरण स ग्रह नहीं कर सके। इसी समय कलकत्तेके मवानोपुर और हवडेके जिवपुरमें भी नाट्याभिनयकी चेष्टा हो रही थी।

पथरियाघाटेके अभिनय होनेके समय जोडासाकूके ठारकानाय ठाकुरके मध्यम पुत्र गिरीन्द्रनाथ ठाकुरके मकानमें एक नाट्यसमाज स्थापित हुआ था। इसका नाम था - "जोडासांकी नाट्य-समाज"। गिरीन्द्रनाथके दोनों पुत्र गणेशनाथ और गुणेशनाथ ठाकुर उसके पृष्ठपोषक थे। केशवचन्द्रके छोटे भाई कृष्ण-विहारो सेन और प्यारीचन्द्र मित्रके पुत्र हीरालाल मित्र और गुणेश बाबूके प्रस्ताव करने पर माइकलके लिखे "कृष्णकुमारी" नाटकके अभिनयका प्रस्ताव हुआ। रङ्गमञ्च और रिहसल जारी हुआ। पीछे गणेश बाबूके प्रस्ताव पर किसी समाज हितकर नाटकाभिनयकी कल्पना हुई। कुलोनकुलपर्वस, विधवा विवाह आदि नाटककी तरह नये किसी नाटकके लिये इन्होंने चेष्टा की। अन्तमें ईश्वरचन्द्र विद्यासागर महाशयके परामर्शसे २०० रुपया पुरस्कार देनेकी घोषणा कर बहु-विवाहके सम्बन्धमें नाटक लिखना स्थिर हुआ। उस समयके प्रधान नाटककार रामनारायण तर्करत्न महाशयने "नव नाटक" लिख कर इन लोगोंके सामने उपस्थित किया। सन् १२७३ फसलके २३वीं वैशाख-का एक प्रकाश्य सभामें उनको उक्त पुरस्कार दिया गया। प्यारीचन्द्र मित्र सभापति थे। इसके

बाद भानुहय गणेश्चर और गुणेश्चर इसके भगिनय करनका प्रस्ताव कर्मिटीमें उपस्थित किया। कमिटीमें गणेश्चरनाथ ठाकुर, गुणेश्चरनाथ ठाकुर, महर्षि देवेश्चर नाथ ठाकुरके अ्येष्ठ पुत्र प्रसिद्ध साहित्यरचयी द्विवेद्य नाथ ठाकुर, आनाथ ठाकुर, (आरकागाय ठाकुरक अ्येष्ठ भ्राता राधानाथ ठाकुरके पीछ) यह प्र प्रकाश गङ्गोपाध्याय और नाथकमल मुञ्जोपाध्याय समासत् थे। सन् १८९७ ई०की १वीं जनवरीको इसका प्रथम भगिनय हुआ और १८९७ ई०की २३ वीं फरवरीको इसका नया भगिनय या मन्थम भगिनय हुआ। अब तक होनवाले सब भगिनयो की अपेक्षा यह भगिनय बहुत भयङ्ग हुआ। महर्षिगुणेश्चर मुस्तका का कहना है कि इनी भगिनयका दृक् कर उनके भगिनय-सम्बन्धा समा भगिनयो का पूर्ति हो गई; इन भगिनयको सुकपाति कथकत्वेमें सभी जगह प्रतिष्थित हो उठी।

इसके बाद बङ्गदेशमें जयनारायण मित्रक पुत्र पाँच कीड़ी मित्रक उपासत् ३१६ बिलपुरदाडक मकानमें "पद्मावता" भगिनयका अनुष्ठान हुआ। सन् १८९७ ई०का १४थी सितम्बर शनिवारको इस मकानमें इसका प्रथम भगिनय हुआ।

विद्यार्थी बाबू भगिनयका शिक्षा दत्त थे। गरीबा अ्याकाप्रसाद् भीर बाइक जिताइ भकवर्नी (रामात् पेरवज) मन्थान लिखर थे। इनके दो एक भगिनयोमें माइक उपस्थित थ। बागशाज्ज निबामी जियचम्पू चोपाध्याय (डा मंगलम धियेदरमें "नोलभपज" नाट्यभगिनयमें वाधान इतत थे) इस एवमें थ। किन्तु इन्होंने कीर् पाटी नहा लिया था। पद्मावताक भगिनता जिय बाबू स्वतन्त्र व्यक्त थ।

इसी समय खोरबागानमें "खोरबागान अथैतिक धियेदर" स्थापित हुआ था। कन्हारलान बन्धोपाध्याय नामक एक व्यक्ति इन धियेदरक प्रधान उद्योगी थे। ऊया भगिनयक नाटक भगिनयो हुआ। इस भगिनयमें पध रिया दाइक ठाकुरवंशीकी एक जाया (श्यामलाल ठाकुर क हीदर) हमेश्चरनाथ मुञ्जोपाध्याय (महर्षि देवेश्चर नाथक कृताय आमाता) और "जायनार मुञ्ज भावनि

वेश्चर"के प्रणेता मोलानाथ मुञ्जोपाध्याय उपस्थित थे। खोरबागानक कृष्णमोहन बन्धोपाध्यायक मकानमें (कन्हार बाबुमोंके मकानमें) इस समितिका भगिनय होता था। यह भगिनय बेश कर मोलानाथ बाबूने हमेश्चर बाबूसे प्रस्ताव किया, कि यदि भगिनय करना ही है, तब इन सब 'याता'क उद्योगो धिययोका भगिनय करनसे फल हो क्या ? जिसमें देशाकारका सुधार हो, ऐस सामाजिक धिययोका इस पर परामर्श हुआ, कि हमेश्चर बाबू भगिनयका उद्योग करेंगे; मोला बाबू एक उपयुक्त नाटक लिखेंगे। इसी सम्बन्धमें मोलानाथ बाबूने 'बुनल कि मा' एक प्रहसन लिखा। इसी समय पधरियाघाटक ठाकुरवंशीकी एक शाखा अ्येम्पमोहन ठाकुरक पुत्र अतोय्ठ ठाकुरने अपन मकानमें (१० पध रियाघाटा घोट) एक एकतान बाजाका दल संगठन किया। एक दिन अतोय्ठ बाबूके पैठकमें मोलानाथ बाबू "किन्तु किन्तु बुद्धि" नामक एक प्रहसन लिख कर ले आये। इसका भगिनय करना स्थिर हुआ। कोयला हटा या इस समयक रतनसरकार-गाइलन प्लाटके पैद नाथ मन्थिकक किरायेदार मकानमें भगिनय करनकी बात उठरा। हमेश्चर बाबू तथा अ्येम्पु मुस्तकी पर इल-गठनका भार सौंठा गया। खोरबागानक कन्हार बाबू समेदरा हुए। इनके मित्र बेंटरानियासी मधु मूहन मुञ्जोपाध्याय नामक "भयल पेक्टर" न नाटयशाखा चिन्मयका भार प्रहण किया। अतोय्ठ बाबू हमेश्चर बाबू के सिवा रमानाथ ठाकुरके पीछ शशाश्वरनाथ ठाकुर इसके पृष्ठपाठक थ। क्रमशः इस दलका भावोजन होने लगा। मुस्तकी महाशयके सरमन्त्री और अनुकरव पट्टा ही उनकी निष्कृताका अनुकूल हुए। सन् १८९७ ई०का २ती नवम्बर शनिवारको इसका प्रथमभगिनय हुआ। मुस्तका महाशयक साथ उनका बंगारिया यार सुप्रसिद्ध रगमन्ध्याध्याय धर्मशास सुद इस बसमें सम्मिलित हुए। उन्होंने रगमन्ध्र निर्मायका भार प्रहण किया। उन्होंने इसमें खी चरित्रका पाटी किया था।

इन दिन तक अर्थात् तब तक कितन प्रहसन हुए थ। उन सबकी अपेक्षा यह भगिनय बहुत मनोज्य

हुआ था। इस अभिनयमें अर्द्धेन्दु वावूने तीन अन्धान्य विपर्योका पार्ट कर अच्छी कुशलता दिखलाई। विभिन्न स्वरोंमें विभिन्न हाव-भावसे अच्छी तरह अभिनय करने में उनकी निपुणता इसी समय पूर्ण विकशित तथा प्रदर्शित हुई थी। माइकेल मधुसूदन दत्त इसके एक अभिनयमें उपस्थित थे। मुस्तफी महाशय और धर्मदाससुरका यह प्रथम अभिनय था, किन्तु इसी अभिनयसे उनके जीवनकी गति फिर गई।

यहां बंगालके साधारण नाट्य समाजके प्रधान अभिनेता और प्रतिष्ठाताओंकी सूची इस जगह दी जाती है। इससे स्पष्ट विदित हो जायेगा, कि किसने ऊब पहले कौन-सा अभिनय किया—

नाम	समय	पुस्तक	भूमिका	स्थान
विहारीशाल	१२६३	कुलीनकुल	स्त्रीचरित्र	चडकडागेकी जयराम
चट्टोपाध्याय	फाल्गुन	सर्वस्व	„	वसाकको गली
शरच्चन्द्र घोष	„	शकुन्तला	„	छात्र वावूका मकान
गिरिशचन्द्र घोष (मोट)	१२७१	नलदमयन्ती	ऋषि	बागवाजारके मदन-मोहनका मकान
नगेन्द्रनाथ वन्दोपाध्याय	१२७३	पद्मावती	कञ्चुकी	शु डोपाडा
जीवनकृष्णसेन	१७७४	मादो	„	कलि बडतला
अर्द्धेन्दुशेखर	१७	कार्तिक	किछु	दन्तवक कयलाहटा
मुस्तफी	१२७४	किछु	बुमि	मुरादवाली „
„	„	„	„	चन्दनविष्णोस „
धर्मदास सुर	„	„	„	चन्दनविष्णोसी „

गिरिशचन्द्रघोष (प्रसिद्ध नाटककार), अमृतलाल बसु, राधामाधवकर, मोतीलालसुर, महेन्द्रलाल बसु आदि ख्यातनामा अभिनेताओंमें कोई इससे पहले किसी अभिनयमें सम्मिलित नहीं हुए हैं।

इस समय जयराम वसाकके मकानमें “भेलारे मोर वाप” नामक प्रहसन अभिनीत हुआ।

इस समय बहुवाजारमें भी एक नाट्यसमाज स्थापित हुआ था। इस दलने प्रसिद्ध नाटककार मनोमोहन बसुका “सतीनाटक” और “रामाभिषेक” नाटकका अभिनय किया।

बंगला नाटकका यह तीसरा एक युग है। इसके

प्रथम युगमें “कुलीनसर्वस्व” और “शकुन्तला”, दूसरे युगमें “पद्मावती” और तीसरे युगमें “रामाभिषेक” नाटकके अभिनयका प्रादुर्भाव हुआ था। उस समय रामाभिषेक नाटकके अभिनय कलकत्तेके दक्षिण विभागमें कई जगहोंमें हुए थे। और तो क्या, दक्षिणांगमें यही नाट्यामोदक एकमात्र अवलम्बन हो गया था। किसी रम्य व्यक्ति इसीलिये इसका नाम वर्णपरिचय नाटक रख दिया था।

जो हो, बागवाजारकी ‘रत्नावली’का दल टूट जाने पर नगेन्द्रनाथ वन्दोपाध्यायने अपने एक धियेटरका दल कायम करनेका संकल्प किया। अन्तमें गिरिश वावूके परामर्शसे दीनवन्धु मित्तके नवप्रकाशित “सधवार एकादशी”का अभिनय करना स्थिर हुआ। नगेन्द्र वावू भी बड़े विचित्र आदमी थे। उन्होंने पहले तो शिशाका भार अपने ऊपर लिया। किन्तु कार्यके समय यह भार गिरिश वावूके ही वन्धे पर गया। दीनवन्धु वावूके लिखे नाटकमें नट नटियोंका प्रवेश तथा उसकी प्रस्तावना भी नहीं थी। उस समयकी प्रथाके अवलम्बन पर ही गिरिश वावूने इस अभावकी पूर्ति कर दी। फिर शिक्षा दी जाने लगी। इसके बाद शिक्षा प्रदानके कार्यमें अर्द्धेन्दु वावू भी सम्मिलित हो गये। फिर इन दोनों महारथियोंने शिक्षा देनी आरम्भ की। सन् १२७५ फसलीके शवार महीने या सन् १८६८ ई०के अक्टूबर महीनेमें पूजाके समय सप्तमी पूजाके दिन रातको मुखर्षीपाडेकी गोपालनियोगी गलीमें प्राणकृष्ण हालदारके मकानमें इस दलके पहले अभिनयका निमन्त्रण दिया गया। उस समय इस दलका नाम The Bagh-bazar Amateur Theatre रखा गया था। इसके बाद एक पूर्णिमाकी रातको गिरिश वावूकी ससुरालमें इस अभिनयका आयोजन हुआ। इस अभिनयमें अर्द्धेन्दु वावू, गिरिश वावू, नगेन्द्र वावू और माधववावूने विशेष सुख्याति लाभ की थी। अभिनयके बाद जगन्नाथदत्तके मकानमें इसका तीसरा अभिनय हुआ। गिरिश वावू आ कर ‘निमचांद’के अभिनयके लिये तैयार हुए। यथासमय अभिनय हो गया। सन् १८६६ ई०के फरवरी महीनेमें इस सम्प्रदायका चौथा अभिनय

तापकामिके शान्त राय रामरसाह मिश्र बहादुरके मन्थनमें हुआ। यह भूमिगत विशेषरूपसे उल्लेखनाय हुआ था। इन दिन इनके रंगमञ्चका मुखपरके ऊपर लिखा गया था—“He holds the mirror up to nature” इस दिन दर्शकोंमें प्रग्यकार शीतबन्धु बापू उपस्थित थे। य भूमिगत रेशा कर बहुत सतुष्ट हुए। उन्होंने कहा था—‘गिरिग’ ‘निमन्दाई’ नाटक मानो तुम्हारे सिपे ही लिखा गया था।

गिरिशान्ते पर कवितामें ही हमकी प्रत्याशना लिख दी थी। यह कविता रत्नमञ्च पर पढ़ी गई थी। इसके बाद इस दलके भीर मां पांच भूमिगत हुए। उठा भूमिगत भूमिगत हुआ—लिखितपुस्तके नम्बलाल घोषके मन्थनमें दुर्गापूजाके समय। यह सन् १८९१ ई०के धन्वन्तर महानेकी बात है।

अब इस मञ्चतन्त्रका दल बागबाजारमें कार्य कर रहा था तब अष्टकडमें अचराम बसाकके मन्थनमें फिर एक धियेटर दल प्रतिष्ठित हुआ। यहाँ मोसलाथ के “मेनारे मोर बाप”का रिहसल चल रहा था। फिर यह दल उठ कर माहोरोडाकेमें चला आया। भन्वन्तर मुकोपाध्याय और पूर्वधन्वन्तर मुकोपाध्याय इस दलके पृष्ठ पोषक थे। सन् १८७० ई०के फरपरी महानेमें मुता पाठपाठीक मन्थनमें इनका भूमिगत हुआ। तगेन्द्र बाबू और उपाध्याय बाबू इस भूमिगतकी रूचन गये थे। यह दल कर उन्होंने इसका उत्तर देनेके सिपे एक छोटा नाट्य समाजका स गठन किया। रत्नायत्रीका रिहसल चलने लगा। मियमाधय पसु मलिकने “नडा रे मोर बाप” का उत्तर-स्वरूप एक छोटा सा प्रहसन लिख दिया। इन रत्नायत्रीका भूमिगत बागबाजारके राजप्रसन्नपाड़केमें हुआ। राजा शारोत्रमोहन ठाकुर (इस समय तक वे राजा नहीं हुए थे) दर्शकोंमें उपस्थित थे। मिय बाबूके प्रहसनमें जोसलाथ बाबूके प्रति स्तुतिकार्यक गाना था। जोसलाथ बाबू इसके उत्तरमें ‘प्रनाकर’ में हा उसका उत्तर दत्त। मिय बाबूकी कविता बड़ा सतस होता था।

सन् १२७७ फसलीमें ब्यास पूजिमाके दिन यागा बाजारके बनिवायेकेमें कान्तिधन्वन्तर महापादके मन्थनमें

हपङ्गु-ये टकाके एक नाट्य-समाजमें प्रनाथका भूमिगत किया था। “प्रमायती” सप्तसपिपरके “मर्चेरु भाक वेमिस”-के भाषार पर लिखा गई थी। इस भूमिगत के साथ साथ भर्जेन्नुबाबूके इस सम्प्रदायने राजा बजाया था। इन समय हाटकोलेके प्रसिद्ध महाधन प्रजेन्द्र कुमार साहा उर्जे विगुसाहाका गहाके कर्मचारी गाविन्दनाथ गजोपाध्याय नामक एक व्यक्तिके साथ नाट्य सम्प्रदायका परिचय हुआ। उन्होंने रिहसलका खर्च खनाया खोकार कर लिया। इससे भर्जेन्नुबाबू फिर एक धियेटरदलके स गठन करनेमें प्रवृत्त हुए।

पहले हरमात मित्र धोरमें अचलचन्द्र हासदारके मन्थनमें बागबाजारके “मपैतनिक नाट्य सम्प्रदाय”-की मोरसे सववार एकदलीका रिहसल चल रहा था। इस दलके प्रतिष्ठिता तगेन्द्र बाबू भर्जेन्नु बाबू और परमदास बाबू थे। इस बाग जो दल बैठा, यह सुपरिचित नेगनेल धियेटरका मूल था। सन् १२७७ फसलीके पीव महाने में या सन् १८७१ ई०के भारममें यह दल बैठा। भर्जेन्नु बाबू निरुद्ध हुए। जोसलाथका रिहसल चल रहा था।

गाविन्द बाबूकी सहायतासे खल रिहसलका खर्च चलाया था। उस रत्नमञ्च या पोषक परिच्छद आदि हानरा भाशा न थी। अतएव भर्जेन्नु बाबूने प्रस्ताव किया, कि प्रेञ्ज हिराये पर ले कर टिकट लगा कर इस वार यह नाटक भेसा जाये। टिकटस जो रकम हाथ आयेगा उससे एक स्थाना रत्नमञ्चकी प्रतिष्ठाका भाया जन किया जायेगा। यह प्रस्ताव खोदत हुआ। अन्तमें सन् १८७१ ई०के भूमिगत महानेमें तगेन्द्र बाबूके मन्थनमें एक दिन परोक्षाक सिपे Dress rehearsal हुआ। इस भूमिगतमें धमकाउ बाबू में “उलित” का पाठ लिया था। भूमिगतका सुख्याति हान पर गिरिग बाबू का कर सम्मिलित हुए। किन्तु टिकट बेच कर नाटक खेलनेके प्रत्याय पर यह क्लिसा तदह राजी नहीं हुए। अन्तमें उन्होंने कहा, कि माह-रत्नक प्रस्तावक भन्वन्तर पर पांच दनार रुपये एकत्र करनेका उपाय करा। “किन्तु किन्तु कुम्भिक” के भूमिगतके समय माह-रत्नक भर्जेन्नु बाबू का बहा था, इन तदह व्यक्तियुक्तक भयानुह्वय पर निभर कर का धियेटर चल नहीं सकता।

जो हो, इसके बाद चन्दाका रजिष्टर तय्यार हुआ। इस समय धर्मदास बाबू और कार्तिकचंद्र पाल अनवरत परिश्रम करने लगे। राजेन्द्र बाबू के मकानमें आश्रय लेना और टिकट बेचनेकी आशा इन्हें त्याग करनी पड़ी। नगेन्द्र बाबू के मकानमें रिहर्सल होने लगा। यह सुन कर कि टिकट वेंचा नहीं जायेगा, गिरिश बाबू फिर आ कर मिल गये। सन् १२७८ फसलीके वर्षा-कालमें राजेन्द्रनाथ पालके मकानमें नये मञ्च पर "लीलावती"का प्रथम अभिनय हुआ। इसी समय हिन्दू-मेलके नवगोपाल मित्र इनके साथ मिल गये। इन्हींके प्रस्तावसे इस दलका नाम The Calcutta National Theatre हुआ। अंतमें मोती बाबू के प्रस्तावसे Calcutta वाद दे कर केवल The National Theatre नाम रखा गया। प्रथम दिनसे ही इस नाम पर थियेटर होने लगा।

राजेन्द्र बाबू के मकानमें प्रति शनिवारको ४५ अभिनय हुए। इसके बाद वंदूक-विक्रेता मथुरामोहन विश्वासके (इस समयकी प्रसिद्ध D Biswas & Co) घर पूजाके समय अभिनय हुआ। राजेन्द्र बाबू के मकानमें होनेवाला अभिनयमें दीनबंधु बाबू और डाक्टर महेन्द्रलाल सरकार आदि दर्शक उपस्थित होते थे।

उक्त विश्वास महाशयके मकानमें होनेवाला अभिनय ही अंतिम अवैतनिक अभिनय हुआ। इस समय भी फिर अर्थसंकट उपस्थित हुआ। राजेन्द्र बाबू के आगनमें वर्षासे छेज भौंग कर खराब होने लगा। अर्द्धेन्दु बाबूने फिर टिकट बेचनेका प्रस्ताव उठाया। गिरिश बाबूने इस प्रस्ताव पर फिर मुंह फेर लिया। उन्होंने इस बार कहा, यदि छातूबाबू के मैदानमें प्याभिलियन (नाट्यशाला) कायम किया जाये, तो मैं राजी हूँ। उस समयके लिये असम्भव प्रस्ताव सुन कर सभी दग हो गये।

चन्दा वसूलीके समय रसिकमोहन नियोगीके मध्यम पौत्र भुवनमोहन नियोगीने इस दलको कुछ चन्दा दिया। फिर, इस दलकी दुर्दशा देख के इसका साहाय्य करने पर स्वतः प्रवृत्त हुए। भुवन बाबू उस

समय किशोर अवस्थाके थे। फिर भी, उनके ही मरोसे पर अर्द्धेन्दु बाबू फिर दल तय्यार करने लगे। इसके स्थानके लिये भुवन बाबूने अन्नपूर्णाघाटके अपने वारहदरीवाले घैठकको दे दिया। सन् १८७२ ई०के आरम्भमें इस मकानमें यह संगठित हुआ।

इस तरह आमोद-प्रमोदके उरसाहमें नेशनल थियेटर अन्नपूर्णाघाट पर भुवन बाबूके मकानमें बड़े परिश्रम और अध्यवसायसे "नीलदर्पण"-का रिहर्सल देने लगा। सन् १८७२ ई०के नवम्बर महीनेमें जगदाती-पूजाके दिन नगेन्द्र बाबूके मकानमें इसका ड्रेस रिहर्सल हुआ। इस रिहर्सलके कुछ पहले सुप्रसिद्ध नाटककार अमृतलाल घसु इस दलमें सम्मिलित हुए। वे उससे पहले श्रोकाशीधाममें होमियोपैथिक डाक्टरों करते थे। इस बार कलकत्ते आने पर अर्द्धेन्दु बाबूके आप्रहसे वह इस दलमें आ मिले। अमृत बाबूके पहले यदुनाथ भट्टा-चार्यने सैरिन्ध्रीका पार्ट लिया था। अमृत बाबूने भी वही पार्ट लिया। नवीनमाधवकी मृत्युशय्याके दृश्यमें सैरिन्ध्रीको जो रोना धोना पड़ता था, अमृत बाबू उसे सहज ही आयत्त कर न सके। अन्तमें अमृत बाबू अपने मकानके निकटके एक खण्डहर मकानमें प्रत्येक दिन दोपहरको 'रोना' सीखनेके लिये अभ्यास करने जाया करते थे, अर्द्धेन्दु बाबू वहां जा कर 'रोना' सिखाते थे। दोनों अपने गले मिला मिला कर रोनेका अभ्यास करते थे। आठ दश दिन इसी तरह कठोर साधनासे अमृत बाबूने 'रोना-धोना' आयत्त करालिया था। उनके इस अभ्यासकी बात टोल-पडोसकी स्त्रिया जानती न थी। इससे यह अफवाह फैल गई, कि इस खण्डहरमें रोज दोपहरको भूत रोता है। इससे सहज ही सम्भ्रममें आता है, कि उन्होंने इस अभिनयको सफल करनेके लिये कितना परिश्रम किया था। सन् १३०७ फसलीकी २२वीं अगहनको अर्द्धेन्दु बाबूने वंगला थियेटरके इतिहासके सम्बंधमें जो भाषण दिया था, उसमें उन्होंने इस तरहकी कई घटनाओंका उल्लेख किया था। फलतः जब तक अभिनेताके प्रत्येक शब्दका उच्चारण और भावमंजूरी ठीक नहीं हो जाये, तब तक वे नहीं छोड़ते थे।

नगेद्र बाबूके घर ड्रेसिङसैज हो जानेके बाद अभिनयकी बड़ी प्रशंसा हुई। इसी उत्साहसे शीमला-पूर्वक टिकट बेच कर अभिनय करनेका उद्योग होने लगा। अतमें पधरिपाभाटेकी मोड़ पर मधुसूदन साम्बासका मकान ठीक हुआ। यह मकान जोड़ासांके एक पड़ोसालेका मकान कहा जाता था। साम्बाओं को गिरा भयस्था थी। इन लोगोंने तोस रुपये मासिक किराये पर उसे ले लिया था। इस मकानमें प्लेज बनने लगा। सन् १८७१ ई०की ७वीं दिसम्बर शनिवारको टिकट बेच कर यहाँ चियेटर होना स्थिर हुआ। नौकरचरणका यह पहला अभिनय गद्य था। इसका पहला अभिनय सन् १८६१ ई०में प्रथमकारके उत्साहसे कालेमें हो हुआ था। जो हो, पहली रातकी ७०० रुपयेका टिकट बिक्री होने से नेशनल चियेटरका उत्साह बढ़ गया। इसके बाद इङ्ग्लिशमैत्रिक छापखान (जोस कम्पनीके छापखानेसे) राख्यनुसार भ गटेसी च्चेकाई छपाया गया था। ३०वीं अगस्त शनिवारको नौकरचरणका अभिनय हुआ। बिक्री बढ़ गई। दूसरी सप्ताह अर्थात् ७वीं पीप शनिवारको इस दलने "जमाई बारीक" का अभिनय किया। दो रातके उत्साहसे इन लोगोंको नया अभिनय करनेका साहस हो गया। अर्द्धशु बाबूके प्रस्तावानुसार "जमाई बारीक" ही लिया गया। नौकरचरणके अभिनय में बृशक-मधुसूदन रो उठती थी। 'जमाई बारीक'के तमाशेमें बृशक आनन्दमें विमोह हो कर इस सन उगते थे फिर कदवा रससे आर्द्र भी हो जाते थे। बुधवारके रातसे शनिवारके प्रातःकाल तक हर रोज तीन बार रिहर्सल कर 'जमाई बारीक' खेला गया था। किंतु 'नौकरचरण'का रिहर्सल एक वर्ष तक हुआ था। ५वीं रातको 'नवीन तपस्विनी' नाटक खेला गया। यह भी दस दिनक रिहर्सलके बाद खेला गया था। बुधवारको इस पुस्तकका १२ प्रतिभों प्र गाइ गढ़ भीर अभिनेताओंमें बांट दो गए। फल यह हुआ, कि अभिनेताओंने अपने अपने पारट याद कर लिये और शनिवारको यह नाटक खेला गया। इस तख्ते नेशनल चियेटरक इस मध्य पर एक एक करके तीनच पु बाबूका "नौकरचरण", "जमाई बारीक", "नवीन-तपस्विनी", "विधे-वाग्जा

बुद्धो" भादि नाटक अभिनीत हुए थे। इसके बाद साह केडका 'कम्पकुमार' नाटक अभिनीत हुआ। इसी समय गिरिज बाबूके फिर साथ दिया था। उन्होंने मोमसिंहका पारट किया था। नाट्यके राजा अजनाथ इस समय कलकत्तेमें हो थे। वे प्रति दिन नाटक देखने भाया करते थे। वे कह पेशाक भीर कह तख्तपारें तथा एक मशनर दिया था। अर्द्धशु बाबू गिरिज बाबू, मधेद्र बाबू, अमृत बापू भादि प्रधान प्रधान अभिनेताओंने किसी किसी विषय पर अपना अपना वक्तव्य स्थिर कर लेते थे। इसी तख्ते "चैतियुक्त विस्मयसरो" 'माडेस स्कूल', केमल साहबके "सबडियुटी एक्जामिनेशन" "पब्लिक सबस्कूलस लिष्ट", 'भोन कम आफ प प्राइेट चियेटर', "बिजापती बाबू", "मुस्तफी साहबका पका तमाशा", "मातेय पधन", "परोस्थान" इत्यादि विषयोंका अभिनय हुआ था। इन सर्वोंमें अर्द्धशु बाबू और अमृत बाबूके सहायिका अधिक परिश्रम करना पड़ता है। इस समय राजा अजनाथकी तख्ते और ११ ११ Hunter नामक साहब इसके हितैषी बन गये थे। वे प्रति रातको अमरेज दर्शक बटोर लाते थे। एक मंगलवारको उस समयके बड़े छांट मो तमाशा देखनेके लिये भाये थे। उन्होंने पहले कोइ सूचना न ले कर चियेटरके दरवाजे पर एकाएक आ कर उपस्थित हो गये। सब फाटक पर उनकी गाड़ी आ कर छागी, तब लोगोंको मासूम हुआ। इस समय तत्कालीन सम्पत्क मण्डलान भी विशेष रूपसे हितैषिता दिखाई थी। वे भारतीयता दिखाते थे सहा, किन्तु मृतियोंके विक्लानिमें जरा भी कोइ कसर नहीं रखते थे। वे निरपेक्ष हो कर अभिनयकी समालोचना करते थे। इस समय अमृत बाबूको सबके अनुरोधसे मैनेजर या अध्यक्षका काम करना पड़ा था। सन् १८७१ ई०में वर्षोंके कारण नेश नल चियेटरने काम बन्द कर दिया। बन्द होनेके कुछ दिन पहले गिरिज बाबू आ कर सम्मिलित हुए थे। जिस दिन चियेटरका अन्तिम अभिनय हुआ था, उस दिन गिरिज बाबूके उचित गानोंको गा कर इस चियेटरने अन्तसर मण्डल किया।

साम्बाओंके घटने नेशनल चियेटरका अभिनय देख

कर आशुतोष देवके (छातू बाबूके) दंडित शरन्चन्द्र घोष महाशय साधारण थियेटर करने पर प्रलुब्ध हुए। छातू बाबूके मकानमें ही उसका रिहर्सल होने लगा। अनेक मान्य और सम्मान्त व्यक्ति इसके हितैषी और परामर्शदाता थे—'माइकेल मधुसूदन दत्त, उमेशचन्द्र दत्त (O C Dutta Esq) पण्डित सत्यव्रत सामाश्रमी आदि ।' अभिनेताओंमें शरन्चन्द्र घोष, विहारीलाल चट्टोपाध्याय, गिरिशचन्द्र घोष (मोटे), देवेन्द्रनाथ मित्र, वट्टरूण वन्द्योपाध्याय, क्षेत्रमोहन घोष, अक्षयचन्द्र मजुमदार, महेंद्रनाथ मुखोपाध्याय, अखिलचंद्र मुखोपाध्याय आदि थे। विहारीलाल चट्टोपाध्याय और शरन्चन्द्र घोष ही इसके प्रधान उद्योगकर्त्ता थे। हाटश्रोलैके महाजनोमें कई इसके पृष्ठपोषक बन गये थे। छातू बाबूके मकानके सामने मैदानमें ४०) किराये पर जमीन ले कर गपटैलके मकानमें इसके लिये नाट्यशाला स्थापित की गई। इसका नाम हुआ "बङ्गाल-थियेटर"। सन् १८७३ ई०के अगस्त महीनेमें बङ्गाल थियेटरका पहला अभिनय हुआ। गर्मिष्ठा ही इस अभिनयका नाटक था। प्यारी-मोहन राय इसके घनाध्यक्ष थे। गर्मिष्ठाके अभिनयमें इस दलको सफलता न मिली। अन्तमें माइकेलके "मायाकानन" और "विप कि वसुगुण" नामक दो पुस्तकोंका सत्त्व-खरोद लिया गया। गर्मिष्ठाके अभिनयके समय माइकेल जीवित न थे। नये नाटकोंके सत्त्व इसके पहले ही खरीदा गया था। नया थियेटर होने पर भी बङ्गाल थियेटरमें माइकेलको मृत्युके बाद एक दिन उनके नामसे "साहाय्य रजनीको" व्यवस्था की गई थी। उमेश बाबू, पण्डित सत्यव्रत और माइकेलके परामर्शसे बङ्गाल थियेटरमें स्त्रियोंके चरित्रका वेश्या ही पार्ट किया करती थी। छातू बाबूके मकानमें दीवान रामचन्द्र मुखोपाध्यायके यात्रादलमें स्त्री अभिनेता देव कर शरत् बाबू इस विषयमें बड़े साहसी हुए थे। पहले केवल चार स्त्रियाँ ही लाई गई थीं। इन चारोंके सिवा यदि आवश्यकता होती थी, तब पुरुष भी स्त्री-चरित्रका पार्ट कर लिया करने थे। गर्मिष्ठाकी तरह "मायाकाननमें" भी बङ्गाल थियेटर सफलता प्राप्त

नहीं कर सका। अखिल बाबू मायाकाननके प्रकाशक हुए थे। इस समय पल्लोकेशी-मदन्त विन्नाटके कारण देशमें बड़ी क्रांति मची थी। बङ्गाल थियेटरने इस क्रांतिमें ही "मोहान्तेर परे कि राज" नामक एक नाटकका अभिनय किया। इस अभिनयमें ही इसकी यथेष्ट प्रतिपत्ति हुई। इसने बाद विहारीलाल चट्टोपाध्यायने षट्सचन्द्रकी दुर्गेशनन्दिनीको एजे पर खेलने योग्य बना दिया। दुर्गेशनन्दिनीके अभिनयमें बङ्गाल थियेटरका यश-शौरभ विस्तृत हो गया।

इसके बाद सन् १८७८ ई०के फरवरी महीनेमें बङ्गाल थियेटरमें "रत्नाचली" और "ए राई आषार बङ्गाली साहब" प्रहसन अभिनीत हुआ। इस दिन बहुवाजारके एकतान वादन-सम्प्रदायने राजा बजाया था। इसके बाद १४वीं मार्चके "विद्यासुन्दर" और "धेमन कर्म तेमनि फल" अभिनीत हुए थे। महाराज यतीन्द्रमोहन ठाकुर, पन्नालाल जील, छद्मनलाल राय, आदि इस दिन उपास्थित थे। इस दिन उक्त महाराजके मकानके अभिनेत्री सम्प्रदायके दो एक अभिनेता अवैतनिकरूपसे इस अभिनयमें सम्मिलित हुए थे।

नेशनल थियेटर टूट जानेके बाद इसके दो दल हो गये। एक दलमें धर्मदास बाबू आदि और दूसरे दलमें अर्द्धेन्दु बाबू आदि थे।

धर्मदास बाबूने २६वीं मार्चको टाउनहॉलमें एजे कायम कर नेशनल थियेटरके नामसे "देशी अस्पताल साहाय्य रजनी" कह "नीलदर्पण" नाटकके अभिनय करनेका विज्ञापन प्रकाशित कराया। इसी समयसे गिरिश बाबूने भी रीत्यनुसार साधारण नाट्यशालामें आ मिले। धर्मदास बाबूके दलमें गिरिश बाबूने उच्च साहबका पार्ट लिया था। विज्ञापनमें लिखा गया था—
"The National Theatre will re-open for the benefit of the native Hospital at the Town Hall"
४, २, १, तीन तरहके मूल्यके टिकट विके थे। इस अभिनयके उपलक्षमें इन्होंने ५००) रुपया उक्त अस्पतालको दान किया। ५वीं अप्रिलको इन्होंने दूसरा अभिनय किया। इस दिनके विज्ञापनमें लिखा था—For the benefit of the charitable section of the In-

dian Reform Association इस दिन सचवार एका
हंगी और "भारतमता" का अभिनय हुआ था।

डाउनहाउसमें धर्मदास बाबूक दलको चियेटर करत
देख भर्देंशु बाबूक इनने मो जिबबसेप्लाके भये। हाउस
किराये पर ले कर हिन्दू नेशनल चियेटर" के नामसे
अभिनय किया था। ५वीं एप्रिलका इसका अभिनय
आरम्भ हुआ। माइकेलके "शर्मिष्ठा" नाटकका अभिनय
हुआ। साय-साय "माइन स्कूल" "पिबायता बाबू"
"ठगापि बिबरण" और सुन्दक। साहबका पका ठगागा
अभिनय तथा व्यायामयोगी भक्ति बाबूकी श्रीका मो
बिक्काइ गये थे।

भर्देंशुबाबूक दलने भये। हाउसमें दो बार अभिनय
कर डाकके लिये प्रस्थान किया। धर्मदास बाबूका दल
मो १५वीं महीको गोमाबाजार नाट्यमन्दिरे कपास
कुम्बकाका अभिनय कर डाका चला गया। डाकमें
मो इस समय पुर्नपङ्क-रङ्गभूमि नामसे एक नाट्यगान्हा
स्थापित थी। भर्देंशु बाबूक दलने इसी नाट्यगान्हामें
अभिनय करना आरम्भ किया।

कुछ दिनोंक बाद दोनों दल कलकत्ते खीर आये,
किन्तु इन दोनोंका मिलन नहीं हुआ। इसक बाद दोषा,
पतिपाक कुमार (बाबूमें रामा) प्रमथानाय रायक मध-
प्राणक उपमह्यमें शीघ्रागति या शान्ति भवसर पर
दोनों दल पकल हुए। दार्जिलिंगने यहाँ गार रात तक
अभिनय किया, पीछे ये बरहामपुर चले गये।

इस समय बङ्गाल थियेटरमें "महत्तर पर कि काज"
अभिनय हो रहा था। एक दिन प्रमदास बाबू माद
मुपनबाबू दोनों यह समादा देखने गये। राहमें इन दोनों
को भोगेशु बाबू मो मिले। उस दिन इन दलदलयमें
इतना मोड़ हा गये थे, कि किन चरनेको जगह न थी।
४) टिडक सान्द दवये देने पर मो इन लोगोंको टिडक
नये मिला। इस बिक्कोके देख कर भुजन बाबू उछेजित
हो उठे। बङ्गाल थियेटरके सामने हो चक्रे हो कर दोनों
ने परामर्श किया, कि एक नाट्यगान्हा हम मामोंको मो
घामना होगी। भुजन बाबूने नागामिग होन पर भा
रपया देना खीकार कर लिया। इसक बाद धर्मदासमें
एक छोटे दलसे यु गुर्कुमें को छापरनेमें म्याक थियेटरके

नामसे "महत्तर पर कि काज" नाटक अभिनय किया।
सन् १८७३ ई०को २१वीं सितम्बर सोमवारको
ग्रेट नेशनल थियेटरकी मित्रि स्थापित हुए। धर्मदास
बाबूने उस समयके लुरस थियेटरके (इस समय चयक
थियेटरके भ दश पर एक नाट्यगान्हा तय्यार करा।
ना व इनके दिन यहाँ एक सभाका आयोजन हुआ था।
कर गण्यमान्य सज्जन वहा उपस्थित थे।

इसके बाद सन् १८७३ ई०की ३१वीं दिसम्बर
जनिवारको ग्रेट नेशनल थियेटर कोला गया। इसके
कुछ दिन पहले ७वीं दिसम्बरको नेशनल थियेटरका
प्रथम प्रापिक अधिभेशन हुआ। राजा कासीकृष्ण देव
वहापुर इसके समापति हुए थे। नवगापाल मित्र,
मनोमोहन वसु और भर्देंशु बाबूक व्याख्यान दिया था।
उस समय मा दोनों दल जुटा जुटा थे। प्राधिकारसब
पकल हुआ सहा, कि तु कापौबलोमें स्वतंत्ररूपसे
दोनोंका नामोन्मल किया गया था। ग्रेट नेशनल
थियेटरकी ओरसे संरुहन श्रोकमें भारतीयचन पाठ
तथा नेशनल थियेटरकी ओरसे सङ्गठन द्वारा कार्यारम्भ
हुआ था।

इसक बाद सन् १८७४ ई०में बङ्गाल थियेटरका
भुनुरण कर श्री भनिनेमो सेनेका प्रस्थाप कीकृत हुआ।
इसस भ्रमसत्र हो कर भर्देंशु बाबू सतन्त्र दल कायम
कर डाका बगुजा कृष्णनगर प्रादि स्थानोंमें चले गये।
किन्तु पीछे भुवन बाबू क भुनुरोप करने पर दोनों दल
मिल गये। उस समय पश्चा थियेटरमें भनिनेमोके
कामे जाने लगी थी। सन् १८७४ ई०को २१वीं सित
म्बरको "सता दि क्वड्रिनो"का लोक हुआ। उस समय
मिनिशर धर्मदास बाबू सङ्कटती मर्गेद बाबू तथा
शिवाक भर्देंशु बाबू थे।

कुछ दिनोंक बाद भुजन बाबूको होनापस्थाके कारण
ग्रेट नेशनल थियेटर टूट गया। नाट्यगान्हा किराये
पर रे दिया। पहले गिरिजा बाबूने, पीछे उनके
साथ शारकानाथ देवने, इसक बाद केदारनाथ
श्रीपुराण, इसक बाद महत्तरनाथ वसुन, उमक बाद
कृष्णचन बन्धोवाध्यायन किराया पकल किया था। इस
क बाद यह बिक्री हो गया। प्रताप बाबू उदुपान इस

खरीद लिया। अब गिरिश वावू मनेजर हुए। प्रताप चांदके जमानेमें गिरिश वावूने नाटक लिखना आरम्भ किया। उनका पहला नाटक "रावणवध" है। इसके बाद बनेन्द्र वावूके भाई किरणचन्द्र वन्द्योपाध्यायके द्वारा प्रलोभित हो कर गुरुमुख राय नामक एक व्यक्ति थियेटर करने पर प्रस्तुत हुआ। इसके बाद गिरिश वावू, अमृत वावू आदि कई व्यक्तियोंने सन् १८८३ ई०में 'प्रार थियेटर' (६८ नं०, विडन् स्ट्रीटमें) स्थापित किया। सन् १८८३ ई०की २३वीं जुलाईको प्रार थियेटरका उद्घाटन-कार्य सम्पन्न हुआ। गिरिश वावूके लिखे "दक्ष-यज्ञ" नाटकका पहला अभिनय यहा हुआ। गुरुमुख रायकी मृत्युके बाद प्रार थियेटरके प्रधान अभिनेता अमृतलाल वसु और अमृतलाल मित्र कर्मध्यक्ष, हरिप्रसाद वसु और धर्मदास वावूके मगिनेय दाम्-चरण नियोगी इन चार आदमियोंने प्रार थियेटरकी नाट्यशाला खराद ली। इसके बाद जब वावू गोपाल-लाल शीलने पमारलड थियेटरकी प्रतिष्ठा की, तब उन लोगोंने प्रार थियेटरके विडन् स्ट्रीटकी नाट्यशाला बेच कर कर्नवालिस स्ट्रीटमें वर्तमान नाट्यशालाकी प्रतिष्ठा की। प्रारके वर्तमान नाट्यशालाकी जमीन और मकान दोनों थियेटरकी सम्पत्ति हैं। इस नये मकानसे ही अमृत वावू इसकी अध्यक्षता कर रहे थे। 'नसी राम'-का यहा पहला अभिनय हुआ। प्रारके कर्तृत्वसे कोई परिवर्तन नहीं हुआ। किन्तु गिरिश वावूके पिछले समयमें नाना जगहोंमें आने-जानेके कारण प्रार थियेटरके सुशुद्धल कार्योंमें बाधा पहुंची। प्रार सदासे समान आदर पाता हुआ प्रतिपत्तिके लगातार कार्य करता हुआ अब तक विद्यमान है।

प्रार थियेटर जब विडन् स्ट्रीटमें था, तब नेशनल थियेटरकी नाट्यशालामें भुवन वावूने और एक बार प्रेट नेशनल थियेटरके नामसे अभिनय करनेकी व्यवस्था की थी। कुमारसम्भव और आनन्दमठका अभिनय कर यह चेष्टा फिर सदाके लिये स्थगित कर देनी पड़ी। प्रार थियेटर-वलने पीछे खरीद कर इसे तोड़ डाला। नेशनल थियेटरका चिह्न इस तरह शून्य हो गया।

प्रेट नेशनल थियेटरके स्थापन करनेके समयसे वङ्गाल थियेटरमें कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। किन्तु प्रेट नेशनलके नाना परिवर्तनोंके घात-प्रतिघातके फलसे वङ्गाल थियेटरकी भी कुछ न कुछ परिवर्तन हुआ ही था। अन्तमें प्रताप जहुरीके हाथ नेशनल थियेटर कुछ दिनोंके लिये स्थिर होनेसे वङ्गाल थियेटरका भी काम सुचारुरूपसे चलता रहा। इस थियेटरोंके युगपरिवर्तनका समय था। अच्छे अच्छे नाटकोंके अभाव होनेके कारण नाटकोंके अध्यक्षांने नया नया नाटक लिखवाना आरम्भ किया। नेशनलमें गिरिश वावूकी और वङ्गालमें विहारी वावूकी कलम परकड़नी पड़ी थी। दोनोंका ही पहला नाटक 'रावणवध' है। इस समयसे अभिनेताओंमें साहित्यने प्रवेश किया। वङ्गाल थियेटरमें चाहे जितने परिवर्तन हुए हो, किन्तु विहारी वावूके कर्तृत्वके कारण वङ्गालमें विशेष कोई विशुद्धल न होने पाई। अन्तमें सन् १३०८ फसलीमें विहारी वावूकी मृत्यु हो गई। साथ ही वङ्गाल थियेटर भी लुप्त हो गया। बीचमें युवराज अलवट्टी जब कलकत्ते आये थे, तब उनको अभ्यर्शनाके लिये होनेवाले उत्सवमें वङ्गाल थियेटरने अभिनय किया था। उस समयसे वङ्गाल थियेटर "रायल" यह विशेषणविशिष्ट होनेका अधिकार पाया। अंत तक वङ्गाल थियेटरका यही नाम था।

जुबिलीके वर्षमें वावू गोपाललाल शीलके नाट्यशाला स्थापित करनेको इच्छा प्रकट करने पर अतुलचन्द्र मित्र और अर्द्धेन्दुशेखर मुस्तफीके यत्नसे एक दल गठित हुआ। अतुल वावूके लिखे "भीष्मको शरशय्या" नाटकका रिहसल जारी हुआ। अन्तमें विडन् स्ट्रीटके प्रार थियेटरका मकान और जमीन खरीद लेने पर केदारनाथ चौधुरी इसके अध्यक्ष हुए और उनका रचा "पाण्डव-निर्वासन" अभिनीत हुआ। थियेटरका यह भी एक युग था। केवल गिरिश वावू और अमृत वावूको छोड़ कर अन्यान्य सभी पुराने अभिनेताओंको अर्द्धेन्दु वावूने अपने दलमें मिला लिया था। इस थियेटरका खर्च जैसा हुआ था, वैसा ही अभिनय भी हुआ। किन्तु गोपाल वावूकी बुद्धिके दोषसे सारा नष्ट हो गया। समयके चक्रमें पड़ कर गोपाल वावू छः सप्ताहके बाद ही केदार वावूको

स्वांग कर गिरिजा बाबू के हाथ अल्पज्ञाना समर्पण कर हो। गिरिजा बाबू ने भाते हो केदार बाबू की पुस्तकको बन्द कर कर अपनी जिज्ञा "पूर्वचन्द्र" पुस्तकका अभिमतय फटाया था। गाँठे घाटे घोरे कई चित्रकुचनार्थक हात रहनेसे एमरेड विपेटर धर स हो गया। अतमें प्रेड निगलकको तरह यह भी किराये पर दे दिया गया। पहले हरिभूषण महापात्र्य, मोतोलास सुर, प्रजनाय दास और मई प्रलास बसुने किराया पसून किया। इसके बाद मई प्रलास बसु और अनुजट्टम मिश्रने, इसके बाद महेन्द्रलास बसुने भकडे हा, इसके बाद अर्द्धशु बाबू, अनुजट्टम मिश्र, मोतोलास सुर और निमाइवरण बसु ने, फिर बनारसो दासने किराया पसून किया था। पीछे अर्द्धशुनाय दूधने इस नाट्यशाळाको किराये पर ले कर ब्रह्मानिक विपेटर नामस पर सम्प्रदाय गठन कर योग्यताक साथ अभिनय किया।

एमरेड विपेटरके टूट जाने पर गिरिजा बाबूक प्रयत्नसे प्रसन्नकुमार अष्टकरक ईद्विज नामम्भूषण मुष्पापाष्यायने मेगलक विपेटरको जमीनम मन् १८६० ईमें मिनामो विपेटर नामस नयो नाट्यशाळा स्थापित का। गिरिजा बाबूकी "मकधय" तथा "मुकुममुजरा" नाम्ना पुस्तकका यहाँ प्रथम अभिनय हुआ। अर्द्धशु बाबू यहाँक नाट्य-जिज्ञाक और श्यकण्ड यागको संगताष्यापक थे। मिनामा विपेटर तीन वर्षमें गायब हो गया। इस तीन वर्षका अधधिकी गिरिजा बाबूने कमी मिनामो, कमा छारमें रह कर दिन बिताया। मनोमोहन पाण्डने मिनामोके चलाया था। पीछे मिश्रीक हाग ने मिनामो भा गया। इसके बाद अलकाएडम मिनामो भकमसात हो गया। फिर अब नया मिनामो बना है।

अब एमरेड धर स हा गया, तब राजकण्ठ रायने मधुआबाजार घाटमें "धोपारकुभूमि" नामस नाट्यशाळा स्थापन कर बाबूक अभिनेता द्वारा लियोका घाट कर अभ्यसाय करना आरम्भ किया। चिन्तु ये मकन मना रण नहीं हुए। अन्तमें पार पैसका टिकट बन्द कर जा ये गणनाभूत महा हो सक। किराा तरह भा पाया टिक न सक। राजकण्ठ बाबू कङ्कदार हो गये; अब इनको बाप्य हा कर अपना प्याा पोनाका बव बना पड़ा।

यहाँ मोलमापय चक्रवर्ताने (नेशनल थियेटरके अभिनेता) "सिटि थियेटर" स्थापन किया। यह भी अधिक दिनों तक चल न सका। अन्तमें यहाँ एक पारसीने पहले उर्दू नाटक लेते, पीछे हिन्दी उर्दू दोनों नाटक बड़ी सफलतासे खेल रहे हैं।

कलकत्तेमें हिन्दी और उर्दू नाटकोंकी उत्पत्ति यहाँसे शुरू होती है। कलकत्तेके म ० ५ धर्मतसेमें ३० एक मदन महागयने कोरगियन थियेटरका कोल कर बहुतेरे सुन्दर नाटकोंको प्रकाश कर कलकत्तेकी हिन्दी और उर्दू भाषा-भाषी जनताका मनोरञ्जन किया। कलकत्तेमें नाटकोंका इतना आदर देय बनइको पारसा एड्रिफन कम्पनीने हरिस्तनोकेमें "भलफेड" रङ्गमञ्च पोला। 'बटाऊ' साहब इसके मालिक थे। पञ्जाबी परिवृत मारायणप्रसाद फेठाब महागयने "रामायण", "महा भारत" तथा "विन्वमकुल" आदि कई नाटकोंकी रचना की। समयक अनुसार इनके लिये नाटकोंमें भी उर्दूके थियेय जाय रहते थे। कुछ हा विनोंमें इस कम्पनीने बड़ा नाम कमा लिया। धम मो प्राप्त हुआ। कि मु नाटकक पपुल बटाऊ"के परमोक-गमन करने पर इस कम्पनीमें गूढ़ बियाय आरम्भ हुआ। फल यह हुआ, कि इस कम्पनीको भवस्था गान्धीय हो गयी। अन्तमें इस कम्पनीने मदन साहबक हाथ इन वेब दिया। उचर कोरगियनमें भागा दस साहबकी भोजलिनो लेखना द्वारा निकले नाटकोंक अभिनय हो रहे थे। सुशिक्षित पार-पारिपोस रङ्गमञ्च सिम उठता था। बराकी भी भरमार रहता था। चिन्तु इन नाटकोंमें उर्दू मिश्रित जाय रहनेसे सुसलमान बराक हा अधिक आश्रित हाठे थे। इसके बाद परिवृत तुलसीराम सेरा कोरगियनमें पपारे। एन्हीमे भा कई नाटक लिखे। कि मु भाग इसका तरह उनक नाटकोंमें भा उर्दूक जन्मीको कमी न था। इस समय हिन्दी भाषा भाषी जनता विगुद दिव्याक नाटक रङ्गमञ्च पर बधना पाहते था। नाट्यशाळाक अध्यक्ष प्रबोच ३० एक मदन साहबने इन भभावका अनुभव किया। इसकी प्वाक्रम व य, कि काइ विगुद दिव्या नाटकदार मिल ता रख नू। उन्हीमे "साहित्यामद्वार" धीपुक बाबू

हरेकृष्णजी जौहर हिन्दी बङ्गलासोकें सम्पादकको अपने यहां रख लिया। वद्यपि जौहरजीने पहले कोई नाटक लिखा न था, किन्तु उनका झुकाव नाटककी ओर था, उन्होंने पहले परीक्षाके तौर पर साविली सत्यवान् नाटक लिखा। हिन्दीजगत्ने इसे अपनाया और जौहरजीका इससे साइस बढ़ा। उनके लिये इस पहले नाटकने ही रात दिन उर्दू नाटकोंके खेलनेवाला इम कम्पनीके रङ्गमञ्चको हिन्दी जञ्चोंके प्रवाहसे प्रवाहित कर दिया। अच्छे-अच्छे हिन्दी भाषा-भाषी सज्जन उपस्थित होने लगे। इनका दूसरा नाटक "पतिभक्ति" है। इस नाटकमें जौहरजीने बड़ा मिहनत की थी। फल भी वैसा ही हुआ। इस नाटकको रच कर उन्होंने हिन्दी नाट्य जगत्में युगान्तर उपस्थित कर दिया। इस नाटकके अभिनयमें पावपावियोंके निकले छोटे छोटे और मधुर सरस वाक्यों पर जनताके हर्षध्वनि होने लगती थी। क्लेप्स पर क्लेप्स होते थे। दुहरानेवाली तालियोंसे भी रङ्गमञ्च गूँज उठता था। इस तरह इस नाटकने जनताको मन्त्र मुग्ध कर दिया। इसको सफलभूत बनानेमें कम्पनीने भी नये सीन सिनरियोंके तैयार करनेमें कोर कसर उठा नहीं रखी थी। जनताने इस नाटकको बहुत पसन्द किया, किन्तु अधिकारियोंको इस पर दृष्टि पड़ी और इसके कुछ अंशोंका परिवर्तन करा दिया गया। इसके हर तमाशेमें रङ्गालय भर जाता था, तिल धरनेको जगह नहीं रहती थी। कम्पनीके घर इस तमाशेसे एक लाखमें अधिक रुपये आये। उक्त कम्पनी-मालिक जे० एफ० मदन साहबने उक्त जौहरजीको धन तथा बहुमूल्य पुस्तकें पुरस्कारमें दी थीं। इसके बाद उनके लिये कई नाटक निकले। थोड़े बहुत सभी नाटकोंमें सफलता मिली। इसी समयसे पारसी कम्पनियोंके रङ्गमञ्च पर विशुद्ध हिन्दीको स्थान मिला। इधर कलकत्तेके बड़े बाजारको हिन्दी भाषा-भाषी जनतामें भी नाटकका शौक बढ़ा है। हिन्दी नाट्य परिषद्, वजरङ्ग परिषद् आदि संस्थाओंने भी कई नाटक नें। इनके पास कोई बधा एंज नहीं, किराये पर ले कर यह अभिनय किया करती है। उक्त कम्पनियों द्वारा जितने भी नाटक खेले गये, उनमें स्त्रीके पार्टों

वेश्यायें तथा पुद्गलके पार्टोंको चेतनभांगी पुद्गल किया करते थे। आधुनिक अभिनेताओंमें प्राणर मोहन जनताको मन्त्रमुग्ध बना देनेमें बड़े पटु हैं। इन्हें जनता बहुत चाहती है। इस समय बङ्गला नाटकोंके साथ साथ हिन्दी नाटकोंको भरमार है। इस तरह बङ्गाल भरमें नाट्यका आदर बढ़ गया है।

बङ्गालके रङ्गालयोंका सक्षिप्त इतिहास यहा तक ही है। इन सब बङ्गाली नाट्यशालाओंसे बंगाला नाट्य-साहित्य परिपुष्ट हुआ है सही, किन्तु आज भी नाट्यकलाकी उन्नति नहीं हुई है। समय और विषयोचित वेग भूषा परिपाटा नहीं हुआ है। अंग्रेजों जिसको Make up कहते हैं, उसका कुछ नहीं हुआ। दृश्यपट आदि वस्तुओंकी उन्नति हुई है सही, किन्तु अभी भी उनमें न्यूनी नहीं आई है। प्राकृतिक परिवर्तन दिखानेमें, दृश्ययोजनामें, कुशलता सम्पादन करनेमें, दृष्टिविभ्रम और विस्मय उत्पादन करनेके लिये नाना तरहके यन्त्रोंके साहाय्य और वैज्ञानिक यंत्रणाओंका अनुष्ठान हो रहा है सही, किन्तु इङ्ग्लैण्डकी नाट्यशालाओंके मुकाबिले पतदेशीय नाट्यशालायेँ बहुत ही पीछे हैं। सबसे अधिक त्रुटि तो अभिनयकलामें ही दिखाई देती है। यहांके नाट्यशालाओंमें दो रीतियोंसे अभिनय होते हैं। एक गिरिश वावूका स्कूठ अर्थान् रीति और दूसरी मुस्तफोंके (अर्द्धन्दु वावूका) स्कूठ या रीति कहते हैं। गिरिश वावूकी रीतिसे पद्य अभिनय या गद्य-अभिनयमें अभिनेता मानो एक कविताका सुर पकड़ कर श्रोत सुन्कर उपायसे अभिनय करते रहते हैं। इससे खरके उन्नयन और अवनयन शोभतासे होता है। मुस्तफोंकी रीतिसे गद्य या पद्य कथनोपकथन सुरसे अभिनीत होता है। कोई किसी तरहके नकली सुरका अवलम्बन कर इसकी आवृत्ति नहीं कर सकता। इससे आवृत्ति गुणसे श्रोतसुलभ बनानेकी ओर दृष्टि रखनेकी अपेक्षा वक्तव्य विषयके भावके प्रति अधिक लक्ष्य रखा जा सकता है। गिरिश वावूकी रीति आज कल बहुत फौली हुई है। गिरिश वावू बहुतेरे नाटकोंकी रचना कर प्रधान नाटककार और बङ्गीय गेरिक कहे जाते हैं। इधर अमृत वावू ने अभिनयोपयोगी रङ्गमञ्चोंकी सृष्टि कर प्रसिद्ध दीन-

बन्धुका स्थान से लिया है। पिट्टि बाबू की पति सहज ही अभ्यस्त हो जाती हैं; इससे बहुत थोड़े दिने पढ़े अभिनेताओंकी संख्या इस समय अधिक दिखाई देती है। पुण्य अभिनेताको अपेक्षा अनिनय करनेवालों लियों अधिक उन्नति प्रयासिनो दिखाई देता है।

मुसलमानोंक अगान्तिमय शासनमें नाट्य रगका कुछ पता नहीं चलता। पता लगे कहाँस; लोग सदा सतक हो भारतदेशका ही धुनमें लगे रहत थे। मुसलमानोंके भयसानकाक्रमे भारतीय जनताको जब कुछ फुरसत मिली तब लोगोंका ध्यान कुछ कुछ इतर भाग्य हुआ। फल यह हुआ, कि कितन हा नाटककार दिखाई देने लगे। मयुराक प्रसिद्ध सेठ छस्मीशास्त्र दासके मुनाम भोमिवासाशासदान "सत्ता संवरण", "परोक्षागुरु", "रत्नधारप्रेममोहिनी" आदि कई नाटक लिखे। किन्तु यह मालूम नहीं होता, कि इन नाटकोंमें छेड़ पर कोई भाषा था या नहीं। यह भी पता नहीं लगता, कि कब कहाँ अभिनीत हुआ था। आगराके राजा पृथ्वीसिंहने भा शकुन्तला नाटक लिखा था; किन्तु छेड़ पर लेखनका पता नहीं। प्रयागक पं० बाळकृष्णजी महू महाशय (सम्प्रदायक हिन्दीप्रदीप)-न मो "प्रामदुर्गंग" नाटक लिखा था।

हाँ, जब कानोंमें आते हैं, तब यहाँ एक छेड़ दिखाई देता है। बाँस-करका पर रखा वैद्यनाथ दास महा शयने एक र गमश बनबाया था जो आज मा मौजूद है। इसका नाम 'विश्वेश्वर घियेरदाह' है। इसमें कौनसा पहलें नाटक खला गया इसका पता नहीं लगता। यहाँ भारतगु बाबू हरिचन्द्रने भा कई नाटक लिखे हैं। सिया इस विश्वेश्वर घियेरके कोर स्थायी र गालय यहाँ नहीं है। बाहरका कम्प्रेनिया भा भा कर अवन लेख तमाओ दिखला जाया करता है।

रत्नावतरण (सं० ३१०) रत्नस्य अघतरणं। १ र गका अघ तरण, रंग चढ़ाया। २ अभिनय करनेवाला, नट।

रत्नपठारक (सं० ५०) रत्ने सङ्गमामयन अघतरणाति नृ प्पुन, यदा रंग मृत्यादिकमघतरणति नृ-पिपु प्पुन। १ अभिनय करनेवाला, नट। पर्याय—शैल्य, नरत, गर्ध वमो, भरतपुत्रक, धामोपुत्र, र पजाय, जायाशोक नट, छगाभ्ये, शैलाजो। (६५)

२ रंगावतरणजीयां, रंगदेख। मनुमें लिखा है, कि इसका अर्थ नहीं जाना चाहिये। अज्ञानयतता वा सेनेसे कुछ-बाल्यापयनत करना होता है।

"कमारिय निघण्टय रत्नाठारकस्य च।
मुष्यंरुत्तुं बंधव्य कसत्रिकिपयित्तया ॥
मुसलतोऽन्यदमस्याप्रममत्या पुर्यं भ्यरन्।
मत्या मुक्त्वा परत् इत्तुं देतोनिन्नुमेव च ॥"
(पृ ५ न०)

रत्नावतारि (सं० ५०) रत्नमघतनतीति नृ-पिमि। अभि नय करनेवाला, नट।

"श्रीहरदाशकियमचान्मचामिस्तकः।
रत्नावतारिपर्यवहृत्तुदिकसेनियः ॥"
(याज्ञक्यपं० २२)

रत्न (सं० वि०) रत्नेऽस्त्वस्या इति र ग इनि। १ रंग विशिष्ट, रंगा हुआ। (छा०) २ रंगियो। ३ शठमूर्खी। ४ कैवलिका नामकी छता।

रत्न-निमग्नक के पेरु बिनागान्तर्गत एक जिजा जो म प्रेक्षाक अधिकासे है। निगप विवरण देख लभमें लखो।

रत्नेय-गुणरत्नकोषक प्रयता पराशरमहके प्रतिपासक एक हिन्दू राजा।

रत्नेश्वर (सं० २१०) राजा रत्नेशकी महियो।
रत्नेछासक (सं० ३१०) सनामभ्यात भानुविशेष।
रत्नाजो नट-अर्थैतच्चिन्तामणि श्रीर अर्थैतदास्तसारो- जार नामक दो प्रथक प्रयेता।

रत्नोपजायिन् (सं० ३१०) रत्नेन उपजायति इति पिमि। यह जा रंग्याछामे अभिनय करके अपनी जायिका निर्वाह करता हो, नट।

रत्नपजायो (सं० ५०) रत्नपजायो, नट।
"एतान् प्रवृत्तान्गृह्णति कर्मभक्तप्रातःश्रीमान्तरान्।
वरथन माः उरशादनेनैरुजान पतयन् वधार्थम् ॥"
(इत्येवमिहा ६५४)

रत्न-इसाम धर्मशैलित राजपूत जातिविशेष। रत्नपर अपनी यादाका धना, इसी अर्थत यह नामकरण हुआ है। उत्तर-पश्चिम भारतमें जब शाह शोहान राजपूत मुसल मान होता है, तब उसके शोहानपणका स्थाति नट नहीं होता, अत्रन यह व्यक्तित र पुष्यायक रत्न नामसे पुष्यत जाता है।

बुलन्दशहरवासी जैसवार वा मट्टिराजपूत अपनेको विठ्ठरवासी यशोवन्त रावके पुत्र राजा दलीपके वशधर वनलाते हैं। प्रवाद है, कि उस दलीपके मट्टि और रणधर नामक दो पुत्र थे। रणधरके वशधर सुलतान कुतव उद्दीन और अलाउद्दीनके शासनकालमें इस्लाम-धर्ममें दीक्षित हुए। तभीसे यह मुसलमान शाखा पूर्व-पुरुषके नामसे परिचित होती आ रही है। वर्चमान कालमें इन लोगोंके मध्य कानकौड़िया और नैगानिया अहीर, जाट, सतौला और रघु आदि हिन्दू जातिकी शाखा तथा पार्वती पुरेडोरदि जातिकी सस्य हो गया है।

ये लोग चोरी और उकैती करके जीविका निर्वाह करते हैं। नाना जातिके समाजसे निकाले हुए दुर्वृत्त मनुष्य इस श्रेणीमें मिल गये हैं जिससे रङ्गराज विशेष अत्याचारी हो गये हैं। इस सम्बन्धमें युक्त-प्रदेशमें एक किंवदन्ती इस प्रकार प्रचलित है—

“गूलर रङ्गर दो, कुत्ता बिल्ली दो।

ये चार न हो, तो खुले क्वाडी लो।”

रङ्गस् (सं० क्ली०) रङ्गते प्राप्यते इति रधि (अधिरधि-भ्यानसुन्। उण् ४।२१३) इति असुन्। रंह, वेग।

रचक (सं० पु०) रचना करनेवाला, रचयिता।

रचन (सं० क्ली०) रचि-भावे ल्युट्। निर्माण, रचना।

रचना (सं० स्त्री०) रचयते इति रच णिच् (न्वाश्रन्थो युच्। पा ३।३।१००) इति युच्, टाप्। १ कुसुमप्रकारादि और पत्तावल्यादिका रचन, फूलोंसे माला या गुच्छे आदि बनाना।

“मूपाणामर्द्धरचना वृथा विश्वगवेक्षणाम्।

रहस्याख्यानमीयच्च विज्ञेपो दयितान्तिके ॥”

(साहित्यद० ३।१४६)

२ यथाक्रमसे स्थापन करना, बनानेका ढंग या कौशल। ३ निर्मित, रखने वा बनानेकी क्रिया या भाव, वनावट। ४ स्थान, स्थापित करना। ५ भूषण। ६ केश-विन्यास, बाल गूंधन। ७ गद्य या पद्यमय-वाक्य-विन्यास वह गद्य या पद्य जिसमें कोई विशेष चमत्कार हो।

“असाधारणचमत्कारकारिणी रचना हि निर्मितिः।”

(अलङ्कारकौ० १ द्विष्य)

पर्याय—सन्दर्भ, गुम्फ, श्रन्धन, प्रन्धन। (श्ल०) ८

उद्यम, कार्य। ६ विश्वकर्माकी स्त्रीका नाम। रचना (हि० क्रि०) १ हाथोंसे बना कर तैयार करना, बनाना। २ प्रन्ध आदि लिखना। ३ विधान करना, निश्चित करना। ४ अनुष्ठान करना, ठानना। ५ आडम्बर पड़ा करना, युक्ति या तद्वीर लगाना। ६ तरकीब या क्रमसे रखना। ७ उत्पन्न करना, पैदा करना। ८ काव्यनिक ऋष्टि करना, कल्पना करना। ९ शृंगारकरना, सजाना। १० अनुरक्त होना। ११ रंग चढ़ना, रंगा जाना।

रचनीय (सं० लि०) रचि अनौर्य्। रचना करनेके योग्य।

रचयितृ (सं० लि०) रचि तृच्। निर्माता, रचनेवाला।

रचयाना (हि० क्रि०) १ रचनाके काममें दूसरेको प्रवृत्त करना, रचना करना। २ मेहँदी या महावर लगवाना।

रचाना (हि० क्रि०) १ मेहँदी, महावर आदिसे पैर रंगाना।

रचित (सं० लि०) रचि-क्त। १ कृत, रचा हुआ। २

ग्रथित, गूँथा हुआ। ३ विन्यस्त, अर्पण किया हुआ।

३ शोभित, परिष्कार किया हुआ।

“शिरःपद्मश्रेणोरचितचरणाभोर्बहवलेः।

स्थिरायास्त्वद्भक्तं लिपुरहरविस्फूर्जितमिदम् ॥”

(पुष्पदन्तस्तुति)

रचितत्व (सं० क्ली०) रचितस्य भावः त्व। रचनेका भाव या धर्म, रचना।

रचितव्य (सं० लि०) रचि तव्य। रचनीय, रचना करनेके योग्य।

रज (सं० क्ली०) रजयतीति रज्ज-अच् निपातनान्तलोपः।

१ स्त्रीकुसुम, आसंध। (पु०) २ पराग। ३ गुणभेद, रजो-

गुण। ४ पुराणानुसार एक ऋषिका नाम जो वशिष्ठके

पुत्र माने जाते हैं। ५ स्कन्दकी एक सेनाका नाम।

(भारत ६।४५।७३) ६ चिरजपुत्र। (विष्णुपु० २।१।४०)

७ पर्पटक, खेतपापड़ा।

रज (हि० पु०) चांदी। रज् देलो।

रजउद्वास (सं० लि०) मलोद्वास।

रत्नपात्र—एक हिन्दू राजा ।

रत्नपुत्र (सं० लि०) रत्नपुत्र देवो ।

रत्नामर्षिणी यधि (सं० स्त्री०) ओरोगायिकारोक्त भौषध विद्येय । प्रस्तुत प्रथाको—तित्तकोकीका योज, वस्तीमूत्र, पोषक, गुग्गु मदनकक, मूत्रोका योज और मुलेकी, इन्हे एकत्र पास कर घूरके दूधमें लिखाये । इसकी यथा विधि बत्ती बना कर बोलिमें रखतेसे स्त्रीयोकी रत्नामर्षि होती है ।

रत्नाशय (सं० पु०) रत्नसि शैले स्त्री (नक्षत्रके शंके ११११५) इति मन्त्र । १ कुम्भकृत, कुत्ता । (लि०) २ पूषिशापी । ३ रत्नतमयो ।

रत्नासार (सं० स्त्री०) कर्पूर, कर्पूर ।

रत्नासारधि (सं० पु०) रत्नसार् सार्धिरिच । धातु, हवा । रत्नक (सं० पु०) रत्नति निर्जोत्तमैव श्वेतिमानमाया इयति वस्त्रादीनामिति रत्न (वृषिजनिरत्नम्बः परिगणनं करन्त्यि । ११११५) इति ध्रुव । वर्षसङ्कट आतिविद्येय, घोषी । रत्नपुत्राणीय वचनानुसार घोषर और तोषर कन्याके संगमसे इस जातिकी उत्पत्ति हुई है । प्रथम वैश्वदेवराज्यमें भी ऐसा ही लिखा है—

“तन्मन्वीं वीरदग्गुणे वनम् रत्नकः स्मृतः ।” (अमरवर्त०)
 पर्याय—निर्जोत्तम, शीघ्रेय, कर्मकीलक, धारक । (हेम)
 अत्रि प्रभृति स्मृतिके मतसे रत्नक जाति अस्त्वज्ज है ।
 “रत्नकम्पन्नैकारथे नदी नवद् एव च ।
 केनर्त्तमेदमित्काम्भ तस व आन्त्यया स्मृताः ॥”
 (अमि०)

पासाकाळमें यदि सामने रत्नक दिखाई दे, तो उस यात्रामें विघ्न होता है । यदि प्राङ्गण भूख कर मी रत्नक का भेष भोजन करे, तो उसे प्रायश्चित्त करना होता है ।
 “रत्नके वेष देलूने बेदुधर्मोविवीचिनि ।
 प्लेषां वल्लु मुञ्जीय दिवभ्यन्नापय्यभ्ये ॥”

(प्रायश्चित्त०)
 रत्नकमें क्रियस्तीमूत्रक जो सब भाष्यायिका प्रचलित हैं उनसे मालूम होता है, कि प्रधाके वस्त्र धोने पानी केतमयि या नंगु घोषिनके पंश्वरमें जागे बल कर उसी वृत्तिका अवज्जल किया और ये सबके सब घोषी कहलाये । फिर दूसरे उपास्यानसे मालूम होता

है, कि घोषा मुनिका पुत्र नेता प्रति दिन भवना कीपीन नक्षत्रमें घोषा करता था । एक दिन कीपीन घोषेके बाढ़ उठे ऐसा भाजस हुआ, कि दैनिक पूजाके लिये वह फूल एक मी न तोड़ सका । उसके साथी संन्यासियोमें देव कायमें इस प्रकार मचहेला देल उस ज्ञाप दिया कि, ‘तुम्हारा वंशधर एकमात्र मैला कपड़ा धो कर ही जीवन् व्यतीत करेगा ।’ धमोसे उसके घराघर पहननेका मैला कुत्तेका कपड़ा धोते धा रहे हैं ।

ब्रह्मसके घोषियोमें प्रायः १८ स्वतन्त्र विभाग हैं । पूर्व-यज्ञमें रामका घोषी और सीताका घोषी नामक दो बल देहे जाते हैं । वे लोग अपनेको राम और सीताके वस्त्र धोनेवालोंके वंशधर कहजाते हैं । वे लोग भायस में बान-पान तो करते हैं, पर विवाह शारी नहीं करते । प्रजाद है, कि रामका घोषी केवल पुष्पका और सीताका घोषी केवल स्त्रीका वस्त्र फी छता था । सीताका घोषी सीताका ‘रत्नोवास’ धोता था, इस कारण उसे सोनेकी भी कीड़ी इनाममें मिळती थी । इस डोममें पड़ कर रामका घोषी भी शूरा कर सीताका रत्नोवास धोते छगा । ठनीसे दोनों ही धाक को और पुष्पका कपड़ा फो बने छगा है । उड़ीसाके घोषियोमें भेषी-विभाग नहीं है । बंगालके घोषियोमें अन्नमैत्र, काश्यप और शास्त्रिक्य गात्र तथा उड़ीसाके घोषियोमें नागस गौत्र प्रचलित है । सगोत्रमें विवाह नहीं बलता । इन लोगों के मध्य मरुसर वायव-विवाह ही होता है । बहु विवाह प्रचलित है । स्त्रीके वरिष्ठमें दोप विवाह दूनेले स्वामी पंचायतकी सूचित कर उसे छोड़ सकता है । किन्तु पञ्चायतके नियमानुसार स्वामीको प्रायश्चित्त करना होता है । उस परिस्थिका स्त्रीके साथ फिर कोई भी विवाह नहीं बलता । ब्रह्मसके घोषियोमें विधवा-विवाह विपिद्य है, पर उड़ीसाको विधवा सगाह प्रधासे विवाह कर सकती है ।

ब्रह्मस और उड़ीसाके रत्नकसे विहारके रत्नक विश्व-कुम्भ स्वतन्त्र है । ये लोग अपनेको गार्गी भुर वाके वंश पर बलसाते हैं । इन लोगोंमें कर्नाजिया, मधेया, बेडवाड, अर्धधिया, वाधम्, वोरसार, गधिया और बौगाडा नामक धे जो विभाग देला जाता है । वहाँका मुसलमान घोषी तुर्किया कहलाता है ।

विहाने धोवियोंमें बाल विवाह ही अक्सर हुआ करता है। बहु-विवाह और सगाई प्रथासे विधवा विवाह भी प्रचलित है। कन्याके विवाहमें शगुआ (घटक) बरके पिताके पास जाता और तिलक दे कर विवाह सम्बन्ध टोक कर आता है। विधवा-विवाहमें स्वामी स्त्रीको लाह-की चूड़ी पहनाता है और मांगमें सिन्दूर देता है। मृत स्वामीके भाई रहते विधवा पहले उसीसे व्याह करती है। पञ्चायतके आदेशानुसार कुलटा स्त्रीको छोड़ देनेका नियम है। वह परित्यक्ता स्त्री सगाईकी तरह फिरसे विवाह कर सकती है। किन्तु जो उसे ग्रहण करेगा, समाजमें उसे एक भोज देना होगा।

ये लोग अपने समाजसे निकाले हुए हिन्दूमात्रको अपने समाजमें लेते हैं। किन्तु डोम, मंगी आदि निष्कृष्ट जातिको नहीं लेते। दूमरे हिंदूको समाजमें लेते समय उसका मस्तक मुड़ा देते हैं और पीछे आस पासकी किसी पुण्यसलिला नदीमें नहलवा आते हैं। वह व्यक्ति बादमें मत्पनारायणकी पूजा करने समाजके ब्राह्मणोंको भोजन और दक्षिणा देता है।

ये लोग शिव, विष्णु, कार्तिकेय और सभी प्रकारकी शक्ति मूर्तिकी उपासना करने हैं। मैथिल और जाकड़ोपी जो सब ब्राह्मण रूपके लोभसे इनकी पुरोहिताई करते हैं वे धोविया ब्राह्मण कहलाते और समाजमें हेय समझे जाते हैं। जो सब धोवी वैष्णव-धर्म ग्रहण कर वैरागी होते हैं उनके स्वतन्त्र मन्दिरगुरु हैं।

हिन्दूके उपास्य देवताको छोड़ कर ये लोग गाड़ी-भुईंयां आदि उपदेवताकी भी पूजा करते हैं। श्राद्धण-पञ्चमीमें भी बड़ी धूमधामसे उक्त दोनों देवताकी पूजा होती है। इसके सिवा जानकी, गोसाईं, रामठाकुर और आपाढसंक्रान्तिमें दोसी पचाईकी पूजा करते हैं। ये लोग कपड़े दोनोंके लिये गद्दा रखते हैं। इस कारण 'धोवीका गद्दा' कह कर एक प्रवाद भी प्रचलित है।

बल्हादि धोनेमें ढाकाका धोवी सबसे बड़ा चढ़ा है। आज भी दूर दूर देशसे धोवीके लड़के बड़ा धोवीका काम सीपने आते हैं। ये लोग पहले बकरेकी विष्टा और चूने मिले हुए जलमें मैला कपड़ा भिगो लेते हैं। पीछे सज्जी वा साबनके जलमें सिद्ध कर पाट पर फाँचते

है। अनन्तर मट्टी चढ़ा कर फिरसे ठंडे जलमें उन्हें धो डालते हैं। कमी कमी सूती कपड़ेका पीलापन दूर करनेके लिये नील देते हैं। इसमें कपड़ा बहुत साफ होता है। ये लोग जलको परिष्कार करनेके लिये उसमें निर्मली (Str, chnos potatorum), पुई (Basella) नागफणि (Caetus Indicus) और फिटकरी डालते हैं। ये लोग सूतिका, रजः और अर्शाचकालीन बल्हादि धोते, इस कारण लोग इन्हें अपवित्र समझते हैं। फिर भातके मांड वा अरारोटसे कपड़ा फाँचनेके कारण ब्राह्मणादि उच्च श्रेणीके हिन्दू बोधे हुए कपड़ेको फिरसे साफ जलमें धो कर पहनते हैं।

२ अंशुक। ३ रजकपत्ती, धोविन। (त्रि०) ४ रंग-कारक, रंगनेवाला।

रजक सरस्वती—एक प्राचीन स्त्री कवि।

रजगीर (हि० पु०) फररा, कूट। कूट देखो।

रजतंत (हिं स्त्री०) शूरता, बोरता।

रजत (सं० स्त्री०) रजति प्रियं भवति रज्यत इति वा रजज (षुपरिञ्जिभ्यां क्ति। उण् ३।१११) इति अतच्, क्तिकार्यञ्च। १ कृष्य, चादी। २ हस्तिदन्त, हाथीदांत। ३ धवल। ४ शोणित, लहू। ५ हार। ६ हृद, तालाब। ७ पुराणानुसार जाकड़ोपके अस्तात्रल पर्वतका नाम। ८ स्वर्ण, सोना। (त्रि०) ९ लाल, सुखं। १० शुकुवर्ण-विशिष्ट, सफेद रंगका।

पितृकार्यमें चांदीका वरतन बड़ा प्रशस्त है। सोने, चांदी, तांबेका वरतन भी दिया जा सकता है। सर्वापेक्षा चांदीका वरतन ही पितरोंको अक्षय स्वर्ग देनेवाला है। पितृकार्यकी दक्षिणामें भी रजत (चादी) देनेका व्यवस्था है।

“वीवर्यं राजतं पात्रं पितृणां पात्रमुच्यते।

रजतस्य कथा वापि दर्शनं दानमेव च ॥

राजतैर्भाजनैरेषामथवा रजतान्वितैः।

वार्यपि श्रद्धया दत्तमन्त्रयावोपकल्पते ॥”

(मत्स्यपु० १७ अ०) रोप्य देखो।

रजतकुम्भ (सं० पु०) सोने या चांदीकी कलसी।

रजतकूट (सं० पु०) १ रजतगिरि। २ मलय पर्वतकी एक चोटीका नाम।

रत्नगिरि (सं० पु०) रत्नाक्षर, कीलास-पर्वत ।
रत्नदंष्ट्र (सं० पु०) विद्यापरो के राजा चक्रदंष्ट्रका
पुत्र ।

रत्नधृति (सं० पु०) रत्नस्यैव धृतिरस्य । इन्द्रमान् ।
रत्नानामि (सं० पु०) यहमेव, पुराणानुसार एक पञ्चका
नाम ।

रत्नानामि (सं० लि०) १ श्वेतनामियुक्त, जिसको नामि
सफेद हो । (पु०) २ कुयेरके एक पंशपरका नाम ।

रत्नपर्वत (सं० पु०) रत्नगिरि, कीलास-पर्वत ।

रत्नपात्र (सं० स्त्री०) रत्ननिर्मित पात्र मध्यपञ्चापि
कर्माणां । चादिका बरतन ।

रत्नप्रतिमा (सं० स्त्री०) स्वर्णरीप्यादि धातु द्वारा निर्मित
ईशमूर्ति, यह मूर्ति जो सोने और चांदीकी बनी हो ।
बराहपुराणमें ऐसी ही प्रतिमा बनानेको कहा है ।

रत्नप्रसव (सं० पु०) रत्नस्तम्भया तद्वत् शुभो वा प्रसवा
सानुरस्य । कीलासपर्वत ।

रत्नमात्रण (सं० स्त्री०) रत्ननिर्मित मात्रणम् । रत्नपात्र,
चादिका बरतन ।

रत्नमय (सं० लि०) रत्नात् ब्रह्मणे मयद् । रत्नलक्षक,
चादी जैसा ।

रत्नवाह (सं० पु०) एक प्राचीन श्रविका नाम ।

रत्नवाह (हि० स्त्री०) सफेदी ।

रत्नवाहक (सं० स्त्री०) रत्नस्य वाहकः । १ चादीको वाहन ।
२ एक नगरका नाम ।

रत्नवाहक (सं० पु०) रत्न प्रयानोऽयम् इव, शास्त्रपरिब्र-
विषत् समासाः । १ रीप्य-पर्वत, चादिका पहाड़ । २
महाबानके अन्तर्गत दानविशेष । कुत्रिम चादीका पर्वत
बना कर यथाविधान दान करना होता है । हेमाद्रिके
दानधरममें इसका विस्तृत विवरण सिद्धा है । यह
रत्नवाहकदान नवम महादान है । जो विधिपूर्वक यह
दान करते हैं उन्हें चन्द्रकोकिलो प्राप्ति होती है ।

यह रत्नवाहक दान उत्तम, मध्यम और अधमके भेद
से तीन प्रकारका है । विद्यानुसार जो जैसा दान करने
में समर्थ हैं उन्हें जैसा ही दान करना चाहिये । दण्ड
हजार एक रत्नका बनाया हुआ पर्वत उत्तम, पाँच हजार
का मध्यम और दण्ड हजार एकका बनाया हुआ पर्वत

रीप्य-पर्वत होता है । यदि कोई व्यक्ति इसमें भयक हो, तो
ये विमवानुसार बीस पससे अधिक रत्नका पर्वत बना
कर दान कर सकता है ।

“रत्नो नवमस्तद्विद्वान् यः शर्कान्धः ।

बन्धे विधानमेतेषां वयावदनुपूर्वकः ॥

अतस्त्वं प्रत्यपि तेषांचकमनुचमम् ।

एतदावाहरो वापि शम्भोर्क द्विजोराम ॥

इत्थिः पञ्चवाहकं वचसा रत्नवाहकः ।

पञ्चमिर्मन्थया प्राकृतसर्वानमदा स्मृतः ॥

भयक्षी विज्ञेयस्त्वं कारयेत् श्रितः सदा ।

निष्कम्भ पर्वतस्तद्वत् तुषीवाशेन कल्पेत् ॥

पूर्वव्याजवान् कुम्भान्मन्दासरोव विधानतः ॥”

(मत्स्यपु० ७ अ०)

रत्नाक्षर बना कर उसके चतुर्थांशसे विष्कम्भ
पर्वत बनाया होगा । यह दान वर्ष या पुण्यके दिन
करना होता है । दान-कारका मंत्र इस प्रकार है—

“शित्वा ब्रह्मं प्रत्याह्नि विष्णोर्नां वज्रत्नं च ।

रत्नं पाहि कल्याणः शंकरं वराणांश्र ॥”

(मत्स्यपु० ७ अ०)

इस दानके फलसे दाता यन्धर्व, किधर और मत्स्य
राशोसे परिशोधित हो कर प्रलयकाळ तक चन्द्रकोकिलमें
बास करत हैं । ३ कीलास पर्वत ।

रत्नान्द्रि (सं० पु०) रत्नमयस्तद्वत् शुभो वा मद्रिः शाक
पायिवाहित् समासाः । कीलास पर्वत ।

रत्नोपम (सं० स्त्री०) १ रीप्यमासिक, रूपामासी । (लि०)
२ रत्नसङ्ग्रह, चादीके समान ।

रत्न (सं० स्त्री०) रज्य इति रत्न (रत्ने क्युव । उण् २७६)
इति क्युव (रत्नबननया दृशक्यनान् । पा ३।१।२४) इति
यासिकोक्तेर्गोपश्च । १ राग । (पु०) २ श्रवणविशेष ।
(वैफिरीपर्व० २४/८१)

रत्न (अ० स्त्री०) एक प्रकारका गोंद, राख ।

विशेष विवरण राख रुग्णमें देखो ।

रत्नक (सं० पु०) १ कम्पिलक, कमाळा । २ रत्न रेखी ।

रत्नि (सं० स्त्री०) रत्नित जोका, धन रत्न बाहुल्यकाद्वि
(उण् २।२११) १ रत्नि, रात । २ वास्तुक, बयुभा
नामका साग । ३ हरिया, हन्दी ।

रजनी (सं० स्त्री०) रजनि कृदिकारादिति डीप् । १ गति, रात । २ हरिद्रा, हल्दी । ३ जतुका लता, पहाडी । ४ नीलिनो, नीलो । ५ शालमली द्वीपकी एक नदीका नाम । (भागवत ५।२०।१०) ६ दारुहरिद्रा, दारु हल्दी । ७ वास्तुक, वधुआ नामका साग । (वैयकनि०)

रजनी—रैवतकी पुत्री और वैवस्वतकी स्त्री ।

रजनीकर (सं० पु०) रजनी करोतीति कृट । चंद्रमा ।

रजनोगंधा (सं० स्त्री०) रजन्या गन्धोऽस्याः रात्री विकाशात् तथात्वं । स्वनामख्यात श्वतवर्णा पुष्पविशेष । (Polianthes tuberosa) इसे हिन्दीमें गुलफभु, गुलचेरी, गुलसख्या, बङ्गालमें रजनी, रजनोगंधा, नेलगुमें नेल सम्पेद्दा, वेरुसम्पेद्दा और ब्रह्ममें हनेधेन कहते हैं । यह पुष्प रातको खिलता है और खुशबू महकता है । दक्षिण-अमेरिका, मेक्सिको, भारत, सिंहल, जावा आदि द्वीपोंमें यह पुष्पवृक्ष उत्पन्न होता है । इसके निर्याससे वडिया इतर, गन्धद्रव्य (Essence) और पोमेडम तैल बनता है । यह उष्णवीर्य, शुष्क, मूलकारक और चमनकारक है । सूखी कलौका चूर्ण गनोरिया रोगमें बहुत लाभदायक है । छोटे छोटे लडकोंके मुंहमें और शरीर पर यह चूर्ण मषखन और हल्दीके साथ लगानेसे चर्मरोगमें बहुत लाभ पहुँचता है ।

रजनीचर (सं० पु०) रजन्या चरतीति चर (चरेः । पा ३।३।१६) इरि र । १ राक्षस । २ चौर, चोर । ३ चंद्रमा । (त्रि०) ४ रात्रिविहारक, जो रातके समय चलता या घूमता-फिरता हो ।

रजनीजल (सं० स्त्री०) रजन्यां जल । नीहार, कुहरा ।

रजनीद्रव्य (सं० स्त्री०) हल्दी और दारुहल्दी ।

रजनोपति (सं० पु०) रजन्याः पतिः । चंद्रमा ।

रजनीपुष्प (सं० स्त्री०) रजन्या हरिद्रायाः पुष्पमिव पुष्पस्य । १ पूतिकरञ्ज, दुर्गन्धि करज । २ रजनोगंधा-फूल ।

रजनीमुख (सं० क्ली०) रजन्या मुखं । संध्या, शामका वक ।

रजनीय (सं० त्रि०) १ मोहकर, मोहनेवाला । २ भोग्य ।

३ सुखदायक, सुख देनेवाला ।

रजनीरमण (सं० पु०) रजन्या रमणः । चंद्रमा ।

रजनोग (सं० पु०) चंद्रमा ।

रजनीहामा (सं० स्त्री०) रजन्या हामो विक्राशो यस्याः । शेफालिका पुष्प ।

रजपूत (हि० पु०) राजपूत राजे ।

रजपूती (हि० स्त्री०) १ क्षत्रिय होनेका भाव, क्षत्रियत्व । २ वीरता, शूरता ।

रजबलो (नं० पु०) राजा ।

रजवाही (हि० पु०) किसी नदी या नहरसे निकला हुआ बड़ा नल जिसमें और भी अनेक छोटे छोटे नल निकलते हैं ।

रजयित्री (सं० स्त्री०) चित्रकारिणी ।

रजलवाह (हि० पु०) मैत्र, वादल ।

रजवती (हि० वि०) वह स्त्री जिसका रजस्त्राव हो रहा हो, रजस्वला ।

रजवती (हि० वि०) रजवती देवी ।

रजवट (हि० स्त्री०) १ क्षत्रियत्व । २ वीरता, शूरता ।

रजवाडा (हि० पु०) १ राज्य, देगी रियासत । २ राजा ।

रजवार (हि० पु०) राजाका दरवार, राजद्वार ।

रजवार—बङ्गालकी आदिम-जातिविशेष । छोटानागपुर, बिहार और पश्चिम बङ्गमें इनका वास अधिक है । महि-सुरवासी रचेवार वा राजवारोंके साथ इनकी सदृशता देख कर डा० बुकाननने इन्हें प्राविडीय अनुमान किया है । ये लोग प्रधानतः कृषिजीवी हैं ।

सरगुजा और उसके आस पासके सामन्त राज्य-वासी रजवार अपनेको पतित क्षत्रिय बतलाते हैं । स्वजाति भ्रष्ट होनेके बाद कृषिवृत्तिका अमलमन कर ये लोग असभ्य जंगली जातिके नृत्य-गीतादि जातीय आमोद-प्रमोदमें शामिल हो गये हैं । बिहारवासी रजवार अपनेको भुईयाकी एक शाखा कहते हैं । उनके मुखसे सुना जाता है, कि रजवार और मुसहर एक ऋषिके दो सन्तान थे । रजवार लोग सैनिक वृत्तिका अवलम्वन करनेके कारण इस सम्मानजनक उपाधिसे भूषित हुए और मुसहर लोग चूहे खानेके कारण समाजमें निन्दनीय हो गये हैं । बङ्गालके रजवार, कोल और कुर्मी जातिके संघबसे अपनी उत्पत्ति बतलाते हैं । मान-भूमवासी रजवारोंका कहना है, कि नागपुरमें एक राजा-

के दो पुत्र और दो कन्या थी । बड़े पुत्रके साथ बड़ी कन्याका यथाशक्त विवाह हुआ, किन्तु छोटा भाई और बहन दोनों वृद्धरा जगह भाग गये । राजाके मरने पर दोनों भाई सिंहासनको देखकर भ्रमरुने लगे । आखिर यह स्थिर हुआ, कि किसी निर्दिष्ट दिनमें दोनोंमेंसे जो सब से पहले राजसन्तानमें पहुँचेगा, वही सिंहासन पायेगा । अतुसार उस दिन छोटा भाई धोड़ों पर चढ़ कर अपने घरसे लड़ा । नागपुरक रास्तेमें सोनेके रगड़ा एक कंकड़ा बिछाई दिया । उसे पकड़नेके छिपे उसने धोड़ोंको एक पेड़में बांध दिया और भाप उसकी ओर बीजा । कुछ दूर जानेके बाद बोलसका चिन्हकार उसे अपने मागते हुए धोड़ोंके शब्दके जैसा मन्दम हुआ सो यह पहचाने लीटा । इस प्रकार बिसम्भ हो जानेसे वह लोक समय पर राजसन्तानमें न पहुँच सका । निराशा हो कर वह घर लौट आया । पीछे उसके बंधुपर राजवार कष्टमान लगे ।

इसके मध्य भङ्गकार, छापवार, मिफारिया, सुकुल काड़ा, बड़गड्ढे, मन्थाल गुरिया और बेड़ा राजवार नामक कह पाक तथा भोगता, छापा, छिरा, डुरीहर-योगी, कर हार, भास्वय, कटवार, अरकवार, सधौर, कोहरय गो, मन्थिया, मारिक, मतयाप, नाग श्रयि, शङ्कर और सिं ह नामक स्वतन्त्र रंग वा गोल हैं ।

इसमें बाध्य और दीपन विवाह प्रचलित हैं । बहु विवाह भी लभता है । विधवा सगाह प्रथास देयरके साथ विवाह कर सकती हैं । गवा और शाहाबाव सिद्धा वासी राजवारोंमें केवल पुत्रहीन विधवाओंका ही विवाह होता है । कही कही इस नियमका व्यतिक्रम भी हुआ जाता है । अरिज-दीपसे छोड़ो गई स्त्रिया फिरसे विवाह कर सकती हैं । कन्यागणको विवाह प्रथा कुर्मिंसी ली है । सिन्दूर-दान ही विवाहका प्रथम वर्णन है ।

मैथिल और अयोधिय वर्णब्राह्मण इनके पुरोहित होते हैं । बिहारक राजवार गोराइया दिहाव, जगदम्बा और नाना उपदेशवाकी पूजा करते हैं । ये लोग शवशेहकी प्रकृति और म्यारहवें दिन धाख करते हैं ।

ये लोग हिंदू समाजमें ह्य समझे जाते हैं । ब्राह्मण इनके हाथका प्रथमप्रथम नहीं करत, केवल पुरोहित ही

इनके हाथका निष्ठावादि आते हैं । वैष्णव ब्रह्मचारा इनके मन्त्र-गुण होत हैं ।

रजसू (सं० स्त्री०) रजसूत रज तीति रजसू (मूर्च्छिन्नां भिन् । उष्य १२२१) इत्यसुत । १ वह रजसू जो स्त्रियों और स्तन्यपायी जातिके मादा प्राणियोंके योनिमार्गसे प्रति मास निकलता है । पर्याय—पुष्य, भास्यं श्वतु, कुसुम, रज । (शम्भरत्ना०)

प्राणियोंका वैदस्थित अम्बापम्भ रस (जिस रसकी कुछ भी बिकृति नहीं हुई है) सुप्रसन्न शम द्राप रजित हो कर एक कद्वाने लगता है । इस रसके स्त्रियोंके शरीरमें रज नामक एक उदरान्न होता है । यह रज बारह वर्षसं निकलने लगता है और पचास वर्षमें ह्य को प्राप्त होता है । स्त्रियोंके शरीरमें रजका सञ्चार होने से स्तन, गर्भाशय और योनि धीरे धीरे बढ़ने लगती है ।

स्त्रियोंके यास्यापगमस जब दोनों स्तन पीनोन्नत और योनि बड़ जाती है, तब अरायु-कोपसे जो पतला और सफेद रज निकलता है उसे रज कहते हैं । बोल चानमें इसका नाम स्त्री चर्म या श्वतुका भागा है । प्रति मासमें एक बार करके यह रक्त-श्राव होता है । यह यदि करके एक या काहक अल्पके जैसा हो तथा कपडुमें उस का दाग लगनेसे धोनेके बाद यदि कुछ गो चिह्न न रहता हो, तो उस रजको निर्द्विष समझना चाहिये । रोगशोक चर्मित परिपुष्टको स्त्रियाके प्रयाः बारह वर्ष से ही रजकी प्रदुत्ति होती है और पचास वर्षके बाद यह निवृत्त होता है । शरीर तन्मुदस्त नहीं रहनेसे पचास वर्षके भीतर ही रजोनिवृत्ति हो सकती है । रजःप्रदुत्तिके प्रथम दिन से के कर १६ दिन तक श्वतुकाळ है । यही समय गर्भ महणका उपयुक्त समय है । १६ दिनके बाद उसे गम्भ प्रहणकी शक्ति नहीं रहती । स्त्रियोंके प्रकृति मेरसे श्वतुकाळमें भी परिवर्तन होता है ।

स्त्री चर्मकाळमें अरायुसे तीन दिन तक रजो-रक्त निकलता रहता है । किसी किसी स्त्राके ५-७ दिन तक बराबर जारी रहता है । इस तीन दिनोंमें कमसे कम भाप पाप किसोके मतसे पाय या डेह पाब रक्त निकलता है । जो सब स्त्रा स्वभावता अस्वस्थ तज स्थिनी और कामातुरा हैं तथा आमांश प्रसोद्धमें दिन बिताता है, उनका श्वतुकाळ अपेक्षाकृत दीर्घ होता भार

इस प्रकार लिखा है,—स्त्रियोंकी रजःप्रवृत्तिके प्रथम दिन गमन करनेसे पुरुषका आयुक्षय होता है और उस समय यदि गर्भ रह जाय, तो वह गर्भ प्रसवकालमें छाव हो जाता है। दूसरे दिन गमन करनेसे भी उसी प्रकार छाव होता वा सूतिकागृहमें सन्तान नष्ट हो जाती है। तीसरे दिन गमन करनेसे उक्त फल वा सन्तान असम्पूर्णाङ्ग अथवा अल्पायु होती है। चौथे दिन करनेसे सन्तान सम्पूर्णाङ्ग और दीर्घायु होती है। जिस प्रकार नदी-स्रोतके प्रतिच्छूल कोई वस्तु फेंकनेसे वह उस ओर न जा कर लौट आती है, वीज भी उसी प्रकार प्रवेश न करके लौट आता है। अतएव प्रस्तुतकालमें तीन दिन गमन न करे। (सुश्रुत शरीरसा० १ अ०)

धर्मशास्त्र और पुराणमें भी रजस्वला स्त्री-गमनको अत्यन्त पापजनक कहा है। रजस्वला अवस्थाके प्रथम दिन गमन करनेसे ब्रह्महत्याका चौथाई भाग पाप होता है तथा वे निन्दनीय, देव और पैत्रकार्यमें अनधिकारी होते हैं। द्वितीय और तृतीय दिन कामतः गमन करनेसे ब्रह्महत्याका पाप होता तथा यावज्जीवन देव और पैत्र कार्यसे अधिकार जाता रहता है।

(ब्रह्मवैवर्त पु० श्रीकृष्णजन्मखं० ५६ अ०)

रजस्वला स्त्री-गमन करनेसे बल, कान्ति और सौभाग्यका नाश होता है। महाभारत मीसलपर्वके ८वें अध्यायमें लिखा है,—अर्जुन द्वारकासे लौटते समय जब वेदव्यासके आश्रममें पहुँचे तब व्यासदेवने उनसे पूछा था, 'हे अर्जुन! तुम ऐसा कान्तिहीन क्यों दिखाई देते हो, क्या रजस्वला स्त्रीके साथ तो गमन नहीं किया है? रजस्वला स्त्रीके साथ गमन करनेसे प्रायश्चित्त करना होता है।'

प्रायश्चित्त शब्द देखो।

ज्योतिषमें लिखा है, कि रविवारको प्रथम रजस्वला होनेसे विधवा, सोमवारको पतिव्रता, मङ्गलवारको वेश्या, बुधको सौभाग्य, वृहस्पतिको पतिकी श्रौचिद्धि, शुकको बहु अपत्य और शनिवारको वन्ध्या हांती है।

—“आदित्ये विधवा नारी सोमे चैव पतिव्रता।

मङ्गले च भवेद् वेश्या बुधे सौभाग्यमेव च ॥

वृहस्पती पतिः श्रीमान् शुके चापत्यमेव च।

शनी वन्ध्या विजानीयात् प्रथमा स्त्रीरजस्वला ॥”

(ज्योतिषस्व)

रजस्मिन् (सं० त्रि०) रजोपूर्ण, धूलिमय।

रजा (अ० स्त्री०) १ मरजी, इच्छा। २ स्वीकृति।

३ वखासत, छुट्टी। ४ अनुमति, आज्ञा।

रजाई (हि० स्त्री०) १ एक प्रकारका जाड़ेका ओढ़ना जिसका कपडा दोहरा होना है और जिसमें रुई भरी होती है, लिहाफ। २ राजा होनेका भाव, राजापन।

रजाना (हि० कि०) १ राज्यसुखका भोग कराना।

२ बहुत अधिक सुख देना, बहुत अच्छी तरहसे रखना।

रजामंद (फा० चि०) जो किसी बात पर राजी हो गया हो, सहमत।

रजामंदी (फा० स्त्री०) राजी या सहमत होनेका भाव, सहमति।

रजि (सं० पु०) १ एक प्राचीन राजा। विष्णुपुराणमें

लिखा है, कि एक समय देवासुर-संग्राम उपस्थित हुआ।

देवोंने ब्रह्माके पास जा कर पूछा, कि इस देवासुर-संग्राममें कौन पक्ष विजयी होगा। ब्रह्माने उत्तरमें कहा,

जिस पक्षका नेता राजा रजि होगा। दैत्यगण राजा

रजिके पान सहायताके लिये उपस्थित हुए। रजिने कहा,—मैं सहायता देनेको प्रस्तुत हूँ; परन्तु देवताओंके

परास्त होने पर यदि हमको इन्द्रका पद देना तुम लोग स्वीकार करो। दैत्योंने कहा, कि हम लोग सदा सत्य

बोलते हैं। हमारे इन्द्र प्रह्लाद हैं, उन्हींके लिये हम लोग उद्योग करने हैं। अतएव आपकी बातोंको हम स्वीकार

नहीं कर सकते। यह कह कर दैत्य चले गये। देवताओं ने आ कर उनसे सहायता मागी। रजिने उन लोगोंसे

भी यही कहा। युद्धमें जा कर रजिने दैत्योंका विनाश किया। तदनन्तर इन्द्र आये और उनके पैरों पड़ कर

उन्हें प्रसन्न किया। रजि उनकी बातोंसे प्रसन्न हो गये और इन्द्र हीको इन्द्रपद पर रहने दिया। रजिके अतिशय

बलशाली पाच सौ पुत्र हुए। (विष्णुपुराण ४।८ अ०) २ राज्य। (स्त्री०) ३ कन्याविशेष। “त्व रजि पिठीनसे

दशस्यन” (ऋक् ६।२६।६) ‘रजि एतदाख्या कन्या राज्यं वा’ (सायण) ४ रज्जु, डेरी।

रजिया (हि० स्त्री०) १ अनात्र भापनेका एक मान जो प्रायः बेटु सेरका होता है। २ काठका यह बरतन जो इस मानका होता है।

रजिया बेगम—बिस्तीकी पठान साम्राज्य।

रजिया मुक्ताना बेबा।

रजिपार (अ० पु०) १ यह मफसर जिसका काम लोगोंके लिखित प्रतिज्ञापत्रों या वस्तायेजोंको कानूनके मुताबिक रजिष्ट्री करना अर्थात् उन्हें सरकारी रजिस्ट्रमें दर्ज करना हो। २ यह उच्च कर्मचारि या मफसर जो किसी विध-विद्यालयमें मंत्रीका काम करता हो।

रजिस्टर (अ० पु०) अङ्कुरीको डगकी बही या किताब भादि जिसमें किसी मक्का भाय ब्यय भयवा किसी विषयका बिल्लुव विवरण सिखसिखेवार या जानेवार लिखा जाता हो।

रजिस्टरी (अ० स्त्री०) १ किसी लिखित प्रतिज्ञापत्रको कानूनके अनुसार सरकारी रजिस्ट्रमें दर्ज करानेका काम। प्रायः सगरे देशोंमें यह नियम है, कि बैनामे, इस्ता येज तथा इसी प्रकारके और सब कागज-पत्र लिखे जाने के उपरान्त सरकारी रजिस्ट्रमें दर्ज करा लिये जाते हैं। इससे काम यह होता है, कि उस कागजमें लिखी हुई सब बातें बिलकुल सही हो जाते हैं और यदि कोई पक्ष उन बातोंके विपरीत कोई काम करता है, तो यह न्यायालयसे दंडका भागी होता है। यदि मूल कागज किसी प्रकार खो जाय, तो उसके बच्चेमें आबख्यकता पढ़ने पर रजिष्टरीवाली नकलसे सो काम चल जाता है। २ बिड्वा, पारसक भादि डाकसे मेसनेके समय डाकखानक रजिस्ट्रमें उक्त दर्ज करानेका काम जिसके छिये कुछ भलग फोस या काम देना पड़ता है। इस प्रकारकी रजिष्टरीसे यह ज्ञान होता है, कि रजिष्टरी कराइ हुई चीज खोने नहीं पाती और यदि जो जाय, तो डाकखाना उसके छिये जिम्मेदार होता है। यदि पानेबाळा किसी समय उस बिड्वा या पारसक भादिके पानेसे इन्कार करे, तो उसके बिबुद डाकखानेसे रजिष्टरीका प्रमाण भी लिया जा सकता है।

रजिस्ट (अ० पु०) रेजिस्ट्रें देवो।

रज्ज (अ० बि०) छोटी आतिका, मोय।

रज्जु (सं० स्त्री०) रज्जु देवो।

रज्जु (सं० बि०) उष्ण वा गर्म क्षार मानोत, ऊट या गर्हेसे साया हुआ।

रज्जुगुण (सं० स्त्री०) रज्जु पय गुणः। प्रकृतिका यह लनाव जिससे जीवचारियोंमें भोग बितास तथा दिवावेकी बधि उत्पन्न होती है, राजस। यह सांख्यके अनुसार प्रकृतिके तीन गुणोंमेंसे एक है, जो संख्य और भोगबितास भादिमें प्रयुक्त करनेवाळा कहा गया है।

प्रकृति और रज्जु इन्पर देवो।

रज्जुपोष (सं० पु०) पुरायानुसार वशिष्ठके एक पुत्र।

रज्जुमहि (सं० बि०) रज्जुप्रत्यक्षकारी।

रज्जुवर्ण (सं० स्त्री०) रज्जुसे वर्णमं। खियोंका मासिक धर्म, रजस्वला होना।

रज्जुधम (सं० पु०) खियोंका मासिक धर्म।

रज्जुबल (सं० स्त्री०) रज्जु पय यकति संघृणोतीति, बलच्। अभ्यकार।

रज्जुमक (सं० पु०) बुरो बातसे रोकनेवाला, निषिद्ध कर्म करने पर सावधान करनेवाळा।

रज्जुमेध (सं० पु०) पूछिका मेध।

रज्जोरस (सं० स्त्री०) अभ्यकार, अघेत।

रज्जुरोध (सं० स्त्री०) रज्जुनिर्गम निवारण। कांभिके साथ जवा-फुल पीस कर और ठठाकदकीके पत्तेको भून कर अथवा ठरदुखके साथ दूबका पीडा बनानेसे रज्जु दक जाता है। इसे रज्जुनिर्बलक योग कहते हैं। रसाजय, हरीतकी और भापलेका मृण कर ठंडे पानीके साथ बानेसे रज्जुसोप होता है तथा घर्मोत्पत्तिकी बाधका बहा रू जातो।

रज्जुहर (सं० पु०) रज्जु हरताति इ (हरतुञ्जयनेऽथ। पा ३।२।६) रज्जु, पानी।

रज्जुब (सं० स्त्री०) यह वस्तु जिससे रस्ती तैयारकी जाय।

रज्जुबल—एक प्रतिहार-सामन्तराज।

रज्जु (सं० स्त्री०) सूत्रयते रज्जयते इति सूत्र (धरतुञ्जय। उप् १।२।६) इति इ, मरुत्तुगामरश्च, पातुसकाकोपश्च भागम सकारस्य मरुत्त्वं इकार, तस्यापि कुत्वं इकारं अत्रापि जातेश्चकार जज्जादीनामिति क्यनात् न ऊन्।

१ तन्मनसाधन वस्तु, रस्सी, जेवरी। पर्याय—शुल्ल, वराटक, वटी। गुण—शुल्ल, शुल्ल, श्रुत्व, प्रुल्ल, शुल्ल, सुधम, वराटक, पटाकर, वटीगुण। (अमर और भरत)

रज्जु चुरानेवाला तीन दिन थोडा दूध पीये, तो उसके उस पापका प्रायश्चित्त होता है। (मनु ११।१६६)
२ केशवेणी, स्त्रियोंके सिरको चोटी। ३ घोड़ेकी लगाम की डोरी, वागडोर।

रज्जुकण्ड (सं० पु०) १ पाणिनिका शौनकादि गणोक्त एक शब्द। २ एक प्राचीन आचार्यका नाम।

रज्जुदाल (सं० पु०) एक प्रकारका वृक्ष।

(शतपथब्रा० १३।४।४।६)

रज्जुदालक (सं० पु०) एक प्रकारका जलचर पक्षी। इस पक्षीका मांस खाना शास्त्रमें निषिद्ध कहा है। यदि कोई कामतः खा ले तो उसे तीन दिन तक उपवास कर पापका प्रायश्चित्त करना होता है।

“कलविक्रम सकाफोल सुरव रज्जुदालक।

मत्स्याश्च कानता जग्ध्वा सोपवासस्यैव वसेत् ॥”

(याज्ञवल्क्यसं० १।१७४)

रज्जुवाल (सं० पु०) मनुके अनुसार एक प्रकारका पक्षी।
रज्जुभार (सं० पु०) १ पाणिनिका शौनकादि गणोक्त शब्दविशेष। २ जेवरीका बोझ।

रज्जुशारद (सं० त्रि०) उदक, जल।

रज्जुसर्ज (सं० पु०) रज्जुस्रष्टा, वह जो रस्सी वाटना हो।

रज्जक (सं० क्ली०) रज्जयतीति रज्ज-णिच्-ण्वुल्।
१ हिंगुल, ईंगुर। (पु०) २ कम्पिलक, कमोला। ३ प्रीति जनक। ४ वल्गादि रागकर्त्ता, रंगरेज। ५ सुश्रुतके अनुसार पेटकी एक अग्नि जो पित्तके अन्तर्गत मानी जाती है। कहते हैं, कि यह यकृत और प्लीहाके बीचमें रहता है और भोजनसे जो रस उत्पन्न होता है उसे रज्जित करती है। ६ भल्लातक वृक्ष, भिलावा। ७ नखरज्जनी, मेहंदी।

रज्जन (सं० क्ली०) रज्जयतेऽनेनेति रज्ज करणे ल्युट्।
१ रक्तचन्दन, लाल चन्दन। २ हिंगुल, ईंगुर। रज्ज-णिच्-भावे ल्युट्। ३ प्रीतिजनन चिचको प्रसन्न करनेकी क्रिया। (पु०) ४ मुञ्जवृण, मूँज। ५ स्वर्ण, सोना।

६ जातीफल, जायफल। ७ पारदरज्जन द्रव्य, वे पदार्थ जिनसे रंग बनते हैं।

“कयत्त निम्मेत्त ताम्र वापित रज्जनेन तु।

कुर्वते त्रिगुण्य जीर्ण्यं लाङ्गारतनिभं रसम् ॥”

(रस० चि० ३ भ०)

८ कम्पिलकवृक्ष, कमीलेका पेड़। ९ रंगनेकी क्रिया।
१० पित्त, सफरा। ११ छायाय छन्दके पचासवें भेदका नाम।

रज्जनक (सं० पु०) रज्जन फल, कटफल, कटहल।

रज्जनकेशी (सं० स्त्री०) नीली वृक्ष।

रज्जनगण (सं० पु०) रज्जनद्रव्यगण, वे पदार्थ जिनसे रंग बनते हैं। जैसे,—हल्दी, नील, लाल चन्दन, पतंग, कुसुम, मजीठ, लाद, मेहंदी इत्यादि।

रज्जनद्रु (सं० पु०) रज्जयतीति रज्ज-णिच्-ल्युट्, रज्जन-श्चासौ द्रु प्रचेति। १ अस्त्रुकवृक्ष। २ धूनकवृक्ष।

रज्जनी (सं० स्त्री०) रज्जन टीप्। १ मृगभ-स्वरकी तीन श्रुतियोंमेंसे दूसरी श्रुति। २ नीलीवृक्ष। ३ मञ्जिष्ठा, मजीठ। ४ शोफालिका, निर्गुंडी। ५ हरिद्रा, हल्दी। ६ पर्पटी। ७ नागवल्ली लता। ८ जन्तुका या पहाडी नामकी लता।

रज्जनीपुष्प (सं० पु०) एक प्रकारका फरज या कंजा, धी-पूतिकरज्ज।

रज्जनीय (सं० त्रि०) १ जो रंगनेके योग्य हो। २ आनन्द-दायक, जो चित्त प्रसन्न करे।

रज्जित (सं० त्रि०) रज्ज-क्त। १ जिस पर रंग चढ़ा या लगा हो, रंगा हुआ। २ आनन्दित, प्रसन्न। ३ प्रेममें पडा हुआ, अनुरक्त।

रज्जित (वडी)—वङ्गालमें प्रवाहित एक नदी। यह सिक्किम राज्यसे निकल कर दार्जिलिङ्ग जिलेके उत्तर और पश्चिम प्रान्त होती हुई (अक्षा० २७° ६' ३० तथा देशा० ८८° २६' ५०) तिस्ता नदीमें गिरी है। रङ्गनू और छोटी रज्जित नामक शाखानदी इसके कलेवरको बढ़ाती हैं। इसका दोनों किनारा जंगलसे ढका है, कहीं कहीं धानका खेत भी दिखाई देता है।

रज्जित (छोटी)—वङ्गालमें प्रवाहित एक नदी। यह नेपाल और सिक्किम राज्यके मध्यवर्ती सिङ्गालीला गिरि-

धेयासे निरुद्ध कर बड़ा रञ्जितमें सिनी है। काहेन भसपतान, भोर, रिन्दिं भीर सेरङ्ग नामक कुछ पहाड़ा सोत इसमें आ कर मिल गय है। गीत भीर प्रोथ खनु में इस गद्योमें नी मयिक जन महा रत्ता। मनी उगह पैदन पार करवा होता है।

रञ्जितराय—एक बंगाली काव्यरूप कवि। ये प्रसिद्ध पारेन्द्र काव्यरूप ब्यापारस कीक प्रवीण थे। मराठ मुर्शिदाबादीक राज्यकाळमें तथा मन्नापदीक समय तक ये श्रावित थे। बचपनस हा निरुद्धे पढ़नेमें इनका विशेष प्रेम था। पीरे पारे मरवा फारसी भादि राजकाय भाषा तथा संस्कृत, हिन्दी भीर बहूना भाषामें एहोंने विशेष पाठित्वस्य प्राप्त किया। पुर्तगाळ फारसी भीर मयरेत्र भादि बैरिगिक पयिक् जातिका भाषा मो एहोंने बहुत कुछ मान भा था।

मयाब मुर्शिदाबादीक राजस उगाहनेक टिय प्रत्येक जमींदारके पर मपना कर्मचारा भीर संग मेलन थे। इसी कायमें रञ्जितराय नियुक्त हुए। इस पर काम करनेपालका नाम मनाज था। मयाबक कायानुरोधस एहें कमी कमा दिनाशुकर, रङ्गपुर, राजगाहो भादि जिनोके जमींदारके पदां मो जाना पड़ता था।

कविता रचनामें ये बड़े सुदक्ष थे। जब अहां ज्ञात थे, वहा अधिवासियोके सम्बन्धमें एक एक कविता रच कर रचन थे। इस प्रकार मान्य भाषामें कविता लिख कर एहोंने एक काव्यप्रथ प्रथपन किया। उस प्रथका नाम 'विषयतान बहाय' रखा गया। उनका कविता कवन ल्यान भीर व्यक्तित्वमें प्राप्य धो सो गहो। पर मार्य विषयमें भा उमक बनाये अनक हाइ पाये जान है।

रञ्जित (सं० क्रो०) १२३ दला।
रञ्जितुव—१८वर्षीय एक महाभूतस्य तथा राजा सुहामक पिता। व ईसा सन् १०० वर्ष पहले विद्यमान थे।

रञ्जितस्य दला।

रट (सं० खो०) किसी दुष्टका बार बार उच्चारण करनेका क्रिया।

रदन (सं० खो०) रदन-मुद। कथन, कहना।
रदन (हि० खो०) रदनकी क्रिया या भाव, रट।
रटना (हि० क्रि०) १ किसी गद्दीके बार बार चढ़ना।

२ ब्रह्माया वाक् करनेके लिये बार बार उच्चारण करना।
३ बार बार जम्ह करना, बहना।

रदन (हि० खो०) रदनकी क्रिया या भाव, रटाइ।

रटतो (सं० खो०) रटने पुण्य ज्ञानव्यवस्था कथपताति

रट बाहुलकात् लक्ष ठाप्। शीघ्रबान्द्र माधीय कृष्ण खनु

ठगो। माघ भासको कृष्ण पतुनाका नाम रटतो-तिथि

है। पुराणक मतसे यह दिन बहुत पवित्र है। इस तिथि-

में मूर्धोदयक समय स्नान करके यम तपण करनेसे समो

पाप दूर होत है तथा कमी यमपुरका कृष्ण गहो होता

अर्थात् उस स्वर्गपान हाता है। इस तिथिमें मठयोदय

कालमें स्नान करनेस गतब्रह्मठन पाप उसो समय नष्ट

होते हैं। यह तिथिहस्त्य मयस्य दक्षय है (विधिवस्य)

इस रटतो तिथिमें रातको श्यामापूजा करना होता

है। इसस ममा पित्र जाने रहते हैं। इस रटतो तिथि

में कामो पूजा हाता है, इस कारण इसका रटता कामो

मो कहल है।

“भाय मास्यन्ते पक्षे रटत्याम्ना यदुर्गो।

वशातो कश्चिदभूता तत्र विष्णोवामात्मक ह्”

(कालिकापु०)

इस पञ्चतानुसार पहले स्थिर बुझा, कि कथय रातमें

जातापूजा करनी हागी। किन्तु रातमें किम समय पूजा

हागी, यह ठाक ठाक मान्यस महा दुष्वा। काई काह

निम्नोक्त पञ्चतानुसार कहल है कि यह प्रदेय समयमें

हागी। जाना-पूजाका कान मध्यरात्रिमें निश्चित होने

पर मो रटता कामोपूजा प्रहाय मययमें हागी।

“भाय मास्यन्ते पक्षे रटत्याम्ना यदुर्गो।

तस्यो प्रदात्मय पूषणुपवर्माश्रिनीम्”

(भावार्थ) चूडार्थि-इत इत्यनस्यार्थे पूष वधन)

बहुतेरे इस समयका आकार महा करल है। बहुते

है, कि मध्यरात्रि कालमें हा यह कसो पूजा हागी।

माया ममा विद्वान् इसा मतक अनुपाया है। तन्त्रक

निम्नोक्त पञ्च द्वारा उद्दान विवर किया है, कि मध्य

रात्रि हो रटता पूजाका निहित काय है।

“भाय मास्यन्ते पक्षे रटत्याम्ना यदुर्गो।

तस्यो विद्वान्मय पूषो-दुष्टका भवान्”

“मङ्गल्ये रवी कृष्णचतुर्दश्यां निशादके ।

पूजयत् वक्षिणा कालीं धर्मकामार्थसिद्धये ॥”

(उत्तरकामाख्यातन्त्र)

रटित (सं० त्रि०) रट-क । १ कथित, कहा हुआ । (क्ली०)

२ कथनमात्र, कहना ।

रण (सं० पु० क्ली०) रणन्ति शब्दायन्तेऽत्रेति रण् (ग्रहति । पा ३।३।५८) इत्यत्र ‘वशिरण्योरुपसंख्यानं’ इति काशि कोषत्या अप् । १ युद्ध, लड़ाई । “न कूटैरायुधैर्हन्याद् युध्यमानेरणे रिपून् ।” (मनु ७।६०) २ रमण । ‘पूजनार्थं रणाय ते सुतः’ (ऋक् ८।१७।१२) ‘रणाय रमणाय’ (सायण) (त्रि०) ३ रमणीय । “रणाय वशमश्विनासनये सहस्रा” (ऋक् १।११।२१) ‘रणाय रमणीयाय ।’ (सायण) (पु०) ४ शब्द । ५ गति । ६ दुस्व्या नामक भेडा जिसकी दुम मोटी और भारी होती है ।

रणक (सं० पु०) १ युद्ध, लड़ाई । २ शब्द ।

रणकुशल (सं० त्रि०) रणमें गण्डित, भारी योद्धा ।

रणकारिन् (सं० त्रि०) रणं करोति कृ-णिनि । १ युद्ध-कारी, योद्धा । २ शब्दकारी, शब्द करनेवाला ।

रणकृत् (सं० त्रि०) रणं करोति कृ क्तिप् तुक् च । रण-कर्त्ता, लड़ाई करनेवाला ।

रणक्षिति (सं० स्त्री०) रणस्य क्षितिः । युद्धभूमि, रणक्षेत्र । रणक्षेत्र (सं० क्ली०) रणस्य क्षेत्रं । रणस्थल, लड़ाईका मैदान ।

रणक्षौणि (सं० स्त्री०) युद्धभूमि, रणस्थल ।

रणघण्टासमाकृति (सं० स्त्री०) महाशयन ।

रणछोड़ (हि० पु०) श्रीकृष्णका एक नाम । जरासंधकी चढ़ाईके समय श्रीकृष्ण रणभूमि त्याग कर द्वारकाका ओर चले गये थे इसीसे उनका यह नाम पड़ा है ।

रणजय (सं० पु०) रणे जय । युद्धमें जय, लड़ाईमें जीत ।

रणजित् सिंह (महाराज)—पञ्जाबके ‘सुकरचकिया’ मिशाल (रियासत)-के प्रभावशाली एक अधिपति । वीरवर महासिंहके पुत्र । इनकी माताका नाम माई मलवाई था । सन् १७८० ई०की २० नवम्बरकी पञ्जाब-केशरी रणजित् सिंहने जन्म लिया था । इस समय इनके पिताने रणजित्के जन्मोत्सवके उपलक्षमें सभी सरदारोंको आम-

न्वित किया था और इन सबको बड़ी क्वातिरदारी की । तनों भूजोंको अन्न धनसे मन्तुष्ट किया गया । शैशव-कालमें रणजित् माताकी निरुसारी (Smallpox) से बहुत पीड़ित हुए थे । इस बीमारीमें इनके जीनेकी कोई आशा न थी । पिताने पुत्रकी आरोग्यके लिये देवी-देवताओंकी कितनी ही मनींती की थी । कई आदमी देवी देवताकी पूजाके लिये ज्वालामुखी आदि दूर देशोंमें भेजे गये, सैकड़ों ब्राह्मणों तथा दोन-दुखियोंको भोजन कराया गया तथा दिल रोल कर धन दीलत लुटाई गई । वहुनोंका विश्वास है, कि देव, ब्राह्मण और दरिद्रोंके आशीर्वाद्से ही सिक्ख सूर्य असमयमें अस्त नहीं हो सके । फिर भी, इस कठिन रोगमें उनकी एक आंख नष्ट हो गई । उनका मुँह भी चेचकके टागसे छा गया । पिताने अपनी जीवितावस्थामें ही सन् १७८५ ई०में कन्दियाकुल राजलक्ष्मी गुरुवक्स सिंहकी पत्नी सदा-कुमारीकी प्रार्थना करने पर पञ्चवर्षीय रणजित्का विवाह राजकुमारी “महतावकुमारी”-के साथ कर दिया । इसी मूलमें दो रियासतें परस्पर मित्रतासूत्रमें आवद्ध हुईं । फलतः सुकरचकियाके सरदार रणजित् सिंहकी भावी उन्नतिका पथ उन्मुक्त हुआ । सन् १७९२ ई०में महासिंह गुजरातवाले दुर्गमें परलोक सिधारे । महासिंह देखो ।

उस समय रणजित् सिंहकी उम्र बारह वर्षकी थी । उन्होंने नाममात्रकी राजगद्दी हासिल की । उनकी माता, राजमन्त्री और दीवान लखपत रायकी अभिभावकतामें नावालिकका राजकार्य चलने लगा । रणजित्की माता मलवाईके साथ लखपत रायकी प्रेमासक्तिकी बात जान इन दोनोके संग साथसे अपने दामादका अनिष्ट सोच कर (रणजित्की सास) गुरुवक्सकी पत्नी स्वयं राजकार्यमें हस्तक्षेप करने पर बाध्य हुईं । यथार्थमें इन्हींकी कूटनीति, बुद्धिकौशल और उद्यमसे रणजित् सिक्ख-शक्तिके शीर्षस्थान पर चढ़नेमें समर्थ हुए थे ।

पिताकी मृत्यु तथा माताकी प्रेमासक्तिके कारण बालक रणजित्की विद्याशिक्षाका कोई यथोचित प्रवन्ध न हो सका । उन्होंने भी शिकार खेलने और इन्द्रियासक्तिमें रत रह कर यौवन चरितार्थ करनी आरम्भ की । केवल पुस्तक पढ़ना और पत्र लिखना वे जानते थे ।

इस माताश्रीगोमें ही नकाइके सरदार रामसिंहकी कन्या राजकुमारोके साथ रणजित्ने बुरा विवाह किया।

अकपत राय, माता मखबाई और सास सदाकुमारो के शासनमें रह कर रणजित्ने सत्कारने वयमें पदार्पण किया। अब उन्होंने अपने राजकी शासन बगडोर अपने हाथमें ले कर अपने पिताके मामा वृत्तिसिंहको अपना प्रयाग मन्त्री बनाया। मयासिंहने मृत्युक समय रणजित्के गिर पर सरदारी सिरोपा पर कर इन सब वस्तुसिंहके हाथ ही रणजित्को समर्पित किया था।

वृत्तिसिंहके परामर्शानुसार उन्होने राजकुम्बके कछुअकपतरायको केतास-भुइमें मार डाला। इनके बाद एक दिन माताको आठक मिथ नामक एक व्यक्तिके साथ भतापुरमें प्रेमाहाप करते देख रणजित् बीमो को मार डालनेकी कामनासे नज़्मी तखबार ले कर थके। पद शब्द सुन कर आठक महससे भाग निकला। किन्तु नज़्मी तखबार हाथमें ले कर रणजित् अब माताके कमरमें गया, तब माताको आलुआपित कुत्ता स्वस्थानप्रणय देप बढ़ा ही श्लेषित हुआ। उन्होने श्लेषितमत्त ही आठकके आनेका कारण तथा वह कहाँ छिया है, माता से पूछा। पुत्रमुक्तसे बरिखहीनता-व्यङ्क वाक्यबाणा से रणजित्की माता अङ्कित हो कर पहले पुत्रका यथोचित मर्स्वना करती हुई अपने सतीत्व-रक्षार्थ नाना कीशब्द तथा वाक्यप्रकाश फौजाने लगी। माता पुत्रके बीच कुछ देर तक बाई बियाह होनेक बाद माताके दुर्बलता से श्लेषित हो रणजित्ने अपना अमकती हुई तखवारसे माताका सर घड़से उड़ा दिया। इतने दिनेक बाद कुम्बखिलाके पापका इष्टमिधान हुआ। पापका साधा आठक मिथ मनुत्तरमें भाग गया और वहाँ यह अपने बचनेका इपाय सोचने लगा। मर्त्यय अब की उपाय न सूका, तो यह रणजित्की सास सदाकुमारोके शरणागमन हुआ। सदाकुमाराने पापोको इष्ट बिलामें में "शरण" शब्दका कुछ भी क्याम न कर शरणागमन मिथ" को रणजित्के हाथ सौंप दिया। रणजित् उस मो माताके पचका पचिक बनाया।

इस समय अक्षय श्रावण मयूक मनाके पतिश बुराता सरदार अमान शाह मारवमें साम्राज्य स्थापित करनेक

जिये बारम्बार पञ्जाब पर आक्रमण करनेका उद्योग कर रहा था। अमान शाहके उपर्युपरि आक्रमण और हल्लाव शाहके भत्याचारको स्मरण कर सिद्ध आशिका वीर इत्य भी कम्पित हो उठता था। पहले जब अफगान पञ्जाब पर आक्रमण करते थे, तब सिक्ख अङ्क और पहाड़ों पर छिप जाते थे। फिर उनक सखे जाने पर फिर वहासे वे खीरते और लुप्त-जरा करनेमें प्रयुक्त होते थे।

अब शाहअमान सिन्धु नदीको पार कर लाहोरक राज् कार्यका परिद्वेशन करनेक जिये भागे बढ़ा, तो अग्याम्य सिक्ख सरदारोंके साथ रणमित् मो पहाड़में भागे। वहाँ जाने पर उनको सब रियासतोंके सप्पारोंसे परिषय हुआ। उन्होंने सदाह मशवरा कर मोका देप कर अपने साधियोंको ले सिन्धु नदीको पार किया। शाहको आहारमें फ सा देक और उसका भाना असम्मब समथ रणजित् उसके भयिङ्कन देवोंके भयिघासियोंसे बस पूर्वक कर बखल करने लगे। शाहके अपने देव खीर जाने पर पञ्जाब पर रणजित्का प्रमुत्त्व और प्रमाण फौज गया।

रणजित्का सोमाय्यकस्मीको दिन दिन उद्योगमान देक इपापरायण सहयोगी सरदार उसके बल बध करनेमें प्रयुक्त हुए। छद्म आतिके मरदार इस्मत खाँ रणजित्का बध करनेके जिये भागे बढ़ा। एक दिन रणजित् शिकार खेल कर घर लौट रहे थे, उनके साथी कुछ पीछे पड़ गये थे ऐसे समय इस्मतने अकेला देक वनस निकल उन पर आक्रमण किया। सोमाय्यकसे इस्मत को तखवारका धार रणजित्को न लग उनके घोड़ेकी सौहबल्लतरस बसो गर्दन पर लगा। तखवारकी भनकारण रणजित् अमक जडे। उन्होंने शाहको सामने देक अपना तखवार बीच कर उस पर आक्रमण किया। मुहूर्त्त मर्में रणजित्की खीरसे इस्मतका मुख घड़से भनग हो गया। सरदारके मरण पर उसके साथी रणजित्के पशमें भा गये। रणजित्ने उसके भयिङ्कन चन्द्रभागा नदीके किनारेकी भूमि पर भयिङ्कार कर लिया।

इपर रामगडिया मरदार पशसि हने सदाकुमारोके

राज्य पर आक्रमण किया। सदाकुमारीने अपने दामाद-को खबर भेज कर महायताकी प्रार्थना की। कुछ बुड़सवारोंको साथ ले रणजित् सहायताके लिये बनाला की ओर चले। यशसिंहकी राजधानी भियानी नगरको घेर कर छः महीने तक पाण्डयुद्ध करने रहे। अन्तमें जब चर्पासे किलेकी चारों ओर पानी जमा हो गया, तब वे अपने घर लौट आये।

इससे पहले जब दुर्गाने सरदार शाहजमान पञ्जावसे भागने लगा, तब उसकी कई तौपों फेलम नदी में गिर पडीं। रणजित्ने स्वयं अपना दल-बल ले कर उन सब तौपोंको नदीगर्भसे निकलवाया और उन सब को अपने आदमीको माग्नत काबूल भेजवा दिया। शाहने प्रसन्न हो कर इनाममें लाहौर नगर रणजित्के प्रदान किया। लाहौरका अधिकार पाने पर रणजित्का चित्त विचलित हो उठा, किन्तु वे प्राचीन शत्रुके भयसे पहले कुछ करनेमें साहसी न हुए। उस समय प्राचीन शत्रु और प्रबल प्रतिद्वन्द्वी रामगढ़ाधिपति यशसिंहकी वृद्ध और दीन देखा तथा घोड़े पर न चढ़ सकनेवाले मन्त्री सरदार गुलाबसिंहके युद्ध विग्रहमें असमर्थ जान वे प्रसन्न हो उठे। अन्यान्य शक्तिहीन सरदारोंके विषयमें रणजित् जानते थे, कि वे उनके विरुद्ध अस्त्र न उठावेंगे।

आशामे उन्मत्त हो कर रणजित् लाहौर पर अधिकार करनेकी कल्पना कर रहे थे। ऐसे समय हकीम हाकम राय, भाई गुस्वरुशसिंह, मिथा आशिक अहमद, मोर सादी मिथां, मोहकमदिन, महम्मद बकर, महम्मद ताहिर आदि प्रधान प्रधान और सम्भ्रान्त लाहौर नगर-निवासियोंका एक आवेदनपत्र पहुँचा। इस पत्रको पढ़ कर रणजित् आनन्दित हो उठे। यह गृहविच्छेद ही उनकी अभीष्ट-सिद्धिका मूल था। इस समय लहना सिंह, गुजरसिंह और शोभासिंह नामक तीन सरदारोंके द्वारा लाहौर नगर शासित हो रहा था। लहनाके बाद चेतसिंहके अधिकारके समय नगरवासी प्रधान मुसलमान धनी मिथां, आशिक महम्मदके दामाद मिथां बटुखानके साथ नगावरसी शत्रियोंका विरोध उपस्थित हुआ। क्षत्रियोने प्रतिहिंसापरायण हो कर चेतसिंहको लिखा भेजा, कि "बटुखउदीन काबूलके अमीर शाहजमानके

साथ लुक छिप कर पन्न श्वहार किया करता है, अतएव यह राजद्रोही है।" चेतसिंहने कुछ भी विचार न कर बटुखानको कैद कर दिया। मुसलमानोंने बटुखकी निर्दोषिताका प्रमाण पेश किया था, किन्तु निष्फल हो गया। इसीसे एक ही मर्मके दो आवेदन-पत्र लिख कर एक रणजित् सिंहके पास तथा दूसरा सदाकुमारीके पास उन लोगोंने भेज दिया।

सास सदाकुमारीकी प्ररोचनासे रणजित्ने आशा-घोनमें डुबकी लगाई। युद्धकी तय्यारी होने लगी। चेतसिंहके प्रधान कर्मचारी मिथा आशिक महम्मद और मिथा मोहकमदीनने रणजित्के पास लिख भेजा था, कि आपके आने पर दरवाजा खोल दिया जायगा। आपको नगरमें प्रवेश करने पर बाधा देनेवाला कोई न रहेगा।

ऐसा पत्र पा कर रणजित् अपनी सास सदाकुमारीके घर जा कर युद्धके विषयमें उससे परामर्श करने लगे। सदाकुमारी अपनी अकाली और माजवी नामकी बहा-दुर फौजोंको ले कर अपने दामादके साथ लाहौर विजयके लिये चली; उन्होंने अमृतसर दर्शनका वहाना कर लाहौरके लिये प्रस्थान किया। लाहौर आ कर वे अनारकलीमें पटाव डाल कर नवाब वजीर खाँके बारह-ठारोंमें रहने लगे।

रणजित्के आनेकी बात सुन लाहौरके सरदार नगर की रक्षा करनेके लिये नत्पर हुए। वे दिल्ली-दरवाजे, लाहौरी-दरवाजे तथा रोशनाई दरवाजेको छोड़ कर अन्य दरवाजोंको चहारदीवारसे घेर दिया। साजिश-कारो सरदारोंके परामर्शसे रणजित्ने सन् १७६६ ई०में लाहौरी दरवाजेसे अपनी फौजोंके साथ प्रवेश किया। इधर उन्हींके परामर्शानुसार चेतसिंह दिल्लीदरवाजे पर अपनी पूर्ण-शक्तिसे डटा रहा। रणजित् सिंहके नगरमें घुस आनेकी बात तथा फौजोंका फोलाहल सुन कर चेत सिंह उधर ही-की ओर लौटा। किन्तु फौजोंके घुस आने पर चेतसिंह सामने न आ कर किलेमें जा लिपा। दुर्गसे ही चेतसिंह रणजित् पर गोलावृष्टि करने लगा। किन्तु २४ घण्टे युद्ध करनेके बाद चेतसिंहको साजिशका पता लगा। तब दूसरा कोई उपाय न देख उसने रणजित्के हाथ अन्तसमर्पण किया। रणजित्ने उसको भीर उसके

परिवारको भरण-पोषणोपयोगी सामान तथा पृथि भीर जागार दे कर उस विद्या किया। साहोर नगर मधि कार कर खेनेके बाद रणजित्ने नगरवासियोंके साथ बहुत भयप्य व्यवहार किया था।

रणजित् सिंह साहोर पर अधिकार जमा कर अपनी राजमसिध दृढ़ करनेमें प्रयत्न हुए और साथ ही उन्होंने अपना शक्ति अभ्युपेय रखनेके लिये उचित प्रयत्न कर दिया। उन्होंने अपने भुवबलसे नाना स्थानोंको जीत कर एक बड़े मूकाम पर राज्य विस्तार किया था।

इसके बाद जब ये पञ्जाबकी राजधानी साहोर पर अधिकार कर राज्यभर हो गए, तब भा उनके सहयोगी सर वार हर्षान्तु हो कर उनसे विद्रोहाचरण करनेमें पराङ्मुख न हुए। रामगढ़िया सरदार परसिंह भयूतसरके भूजा सरदार गुजराब सिंह, गुजरातके भूजा-सरदार साहब सिंह, बजोरान्तके पोषसिंह और कसूरके निजाम उद्दीन-खां ये कई भाईयो मिल कर कई सहज सना ले कर साहोर पर अधिकार करने पर उद्यत हुए। इपर रणजित् भी अपनी साससे भावश्यकृतानुसार सैन्यसाहाय्य ले कर शमुपसका गति रोक्नेके लिये मप्रसर हुए। यह सन् १८०० ई०का घटना है। सास सदाकुमारोकी फौजे साहोरके १० कोस दूर पर अस्थित भसिन गाँवमें केमा लड़ा कर द्वा मास तक रहीं। सामान्य पश्युसुद्धीके सिवा विशेष कुछ नहीं हुआ। सरदारोंके तन्मुओंमें 'पानासकि' कुछ बढ़ गए। और तो क्या, भूजासरदार गुजराबसिंह पानक्षेपल मृत्युमुखमें पतित हुए। उससे नक्षिमें विजालोय शूना और भद्रदाका उत्र हुआ। सरदार बिरक हो कर रणक्षेत्र परित्याग कर चले गये।

बतसा प्रामक निरुद्ध रामगढ़िया-सरदार पत्त सिंहके पुत्र पोषसिंहके साथ रणवीर सदाकुमारोका युद्ध हुआ। इस युद्धमें रणजित्ने सासको मोरसे रामगढ़िया सरदारका ध्वंस किया था। विजय प्राप्त कर रणजित् सिंहन महारसपल साहोर गलमें प्रवेश किया। साहोर के सम्भाल अधिकारियोंने विजडाका समुचिन नजर नैट कर भाद्र सत्कार किया। बद्धमें समी सरदारोंकी पयोग्युक्त शिखर दे कर रणजित्ने उन्ह सम्पुष्ट किया।

इसी वर्ष अर्थात् सन् १८०० ई०में रणजित्ने जम्मु जातनेके लिये यात्रा की। मारोवाळ, नरोपाळ और यन्तरवाळ उनके हाथ लगे। जब रणजित् जम्मुनहरके निकट हो कोस पर पहुँचे, तब वहाँके राजासे बोस हजारा रूपया नकद और हाथी उपहार ले कर उनसे मेंट की। रणजित्ने जम्मुराजको शिखर दे कर सम्पुष्ट किया और भाप वहाँसे छीट भापे। इसके बाद स्वाळकोट और विजावरगढ़ पर उन्होंने कब्जा कर लिया। विजावर गढ़के सरदार बाबा केसरीसिंह सोभोको उनके भरण पोषक लिये शाहरूप जागीर मिली। इसी तरह रणजित् नाना स्थानोंकी जीत साहोर भापे। इसी समय वृष्टि-सरकारके नायब युसुफ भन्ने भी हजाराँ रुपये उपकीरन और मित्रतासूचक पत्र ले कर रणजित् सिंहके दरबारमें भापे। उद्दीनि अत्यन्त भाइरके साथ वृष्टि वृत्को स्वीकार किया और बद्धमें स्वदेशीत्यप वहुमुस्य वस्तुओंकी मेंट वृष्टि सरकारके पास भेजी।

सन् १८०१ ई०में रणजित् सिंहन बड़े समारोहके साथ एक दरबार कर 'महाराज'की उपाधि धारण की। इस दरबारमें सभा सामन्तपत्रे, सरदार, चौपटो, सम्पदार और गण्यमान्य व्यक्ति उपस्थित थे। इस अभिषेकोरसयमें रणजित् सिंहके कुलपुरोहितने पमशाख के अनुसार सब अनुष्ठानोंकी सम्पन्न कर कपासमें तिसक छगापा और उसमा लोर्गेने उनके सम्मान तथा मृत्युके लिये स्तुति-पाठ किया था। इसा दिन साहोरमें एक साळ स्थापित हुआ। इसा दिनसे उनके नामसे (महा राज सिखा हुआ) सिखा निरुद्धन छगा। इस सिखके दूधरो पीठ पर नानक द्वारा मुक्तोपिन्धका भातिव्य करना, तसपाट, स्वस्ति और जयसूचक चिह्न चुरा हुआ था। अभिषेकके दिन जितने सिखके तप्यार हुए, वे सब दानपुषियोंको बाँट दिये गये। मुसलमान राजाओं की तरह महाराज रणजित् सि हन भा शासन करनेके लिये काजो और मुगरो निवाचित किया। सिवा इसके नगरकी रक्षाके लिये नहर कोतवाल और द्वा रक्षाक करनके लिये प्रधान हकीम नियुक्त हुआ। इस समय साहोरमें महारदारो भी प्रचलित हुईं। इस प्रथाके अनुसार हरेक महन्तमें एक प्रधान व्यक्ति मुहरर किया

गया। महबूले भरका भार उसी व्यक्ति पर रहता था। इसी समय लाहौर नगरकी रक्षाके लिये चारों ओरसे चहारदीवारीसे घेर कर उसके नीचे बाहरी ओर खाई खुदवानेका भार मोतीराम पर रखा गया। प्रायः इसी समय गुजरातका भङ्गी-सरदार साहब सिंहने गुजरात-वाले पर आक्रमण कर दिया। सदाकुमारीके साथ रणजित् सिंहने भी उसके विरुद्ध यात्रा कर दी। किंतु गुरु नानकवंशीय साहबसिंह वेदीने बीचमें पड़ कर मिटमिटाय कर दिया। फलतः रणजित् लाहौर चले आये। इसी समय बुगदादी हकीम "सफनकुर" नामक एक तरहका मञ्जन तैयार कर बीस हजार आयकी जागीर प्राप्त कर ली।

इधर भङ्गी-सरदार साहब सिंह और कसुरके पठान सरदार निजामुद्दीनने मिल कर बलवा कर दिया। रणजित् सिंह गुजरातमें ससैन्य उपस्थित हुए। कुछ समय युद्ध करनेके बाद भङ्गी-सरदारने बहुत नजराना दे कर रणजित्की वश्यता स्वीकार कर ली। कुछ ही दिनके बाद पठान-सरदारने भी अपने साथीका पदानुसरण किया। पठान सरदारने अपने भाईको रणजित्के पास भेज वश्यता कबूल की थी।

कुछ ही दिन बाद लाहौरमें खबर पहुंची, कि उनके पिताके मित्र सरदार दलसिंह भङ्गी सरदार साहब सिंहके साथ मिल कर लाहौर पर आक्रमण करनेके लिये जोर-शोरसे सैन्य-संग्रह कर रहे हैं। बुद्धिमान् रणजित् सिंहने यहा बुद्धि-कौशलसे काम लिया। उन्होंने अपने पिताके मित्रको पत्र लिखा :—

"मित्र हो कर शत्रुका काम करनेसे लोग हँसेंगे। आप जैसे मेरे पिताको सहायता दिया करते थे, वैसे ही मुझे भी सहायता कीजिये। मित्र बने रहनेसे हम दोनोंका मंगल है।" वृद्ध दलसिंह रणजित् सिंहके वाक्य-जालमें फँस गये। और तो क्या—साहब सिंहको त्याग कर रणजित् सिंहके निमन्त्रण देने पर वे लाहौर चले आये। रणजित् सिंहने अपने पिताके मित्रके प्रति बड़ा सम्मान तथा आदर दिखाया। उनके ठहरनेके लिये किलेमें महाराजने एक महल ही छोड़ दिया। भीतर नौकर चाकरका सब इन्तजाम

कर बाहरसे सशस्त्र पहरा बैठा दिया। इस तरह यह वृद्ध महापुरुष रणजित्के किलेमें आप ही आप कैद हो गये। इसके बाद ही रणजित् सिंहने अपने वीर सैनिकोंको ले कर सरदार दलसिंहके राज्यको हस्तगत करनेके लिये अकालगढ़ पर धावा बोल दिया। रणजित्ने सोचा था, कि वृद्ध सरदार दलसिंहको कैद कर लेनेके बाद अकालगढ़ जीव ही दलाल हो जायेगा। किन्तु उनका वह विचार विचारके रूपमें ही रह गया, कार्यतः ऐसा नहीं हुआ। वृद्ध दलसिंहकी वीरपत्नी रानी तेजोबाई (तेजू) रणरङ्गिनी मूर्ति धारण कर रणप्राङ्गणमें कूद पड़ी। उसके वीर सैनिकोंके दुर्पसे रणस्थल कम्पित हुआ। इधर इस चतुरा महिलाने साहाय्यके लिये वजीरावादके योधसिंह तथा साहबसिंहको संवाद भेजा।

इस रमणीके वीरत्व और साहसको देख कर रणजित् सिंहका विचलित होना पड़ा। कई झण्डयुद्ध हो गये, किन्तु रानीके व्यूहको वे भेद कर न सके। इधर उनको मालूम हुआ, कि सरदार योधसिंह तथा साहबसिंह सहायताके लिये आनेवाले हैं। ऐसी हालतमें रणजित् वहाँ अपना ठहरना असंगत समझ बहासे ससैन्य गुजरातके लिये रवाने हुए। इस तरह उन्होंने अकालगढ़को छोड़ कर गुजरात पर आक्रमण किया। उनको भय था, कि योधसिंह साहबसिंहको मदद दे सकता है। इसलिये वजीरावादके सरदार योधसिंहको उन्होंने अपने पिताकी मित्रताका स्मरण करा तथा उनको यथेष्ट सहायता देनेकी आज्ञा दे कर अपनी तरफ मिला लिया।

साहबसिंहने गुजरातसे एक कोस आगे आ कर शत्रु-सैन्यके साथ मोरचा लिया। रातको भीषण युद्ध आरम्भ हुआ। दूसरे दिन संध्या तक युद्ध चलता रहा। इस तरह तीन दिनों तक अनवरत युद्ध होने पर दोनों ओर बहुतसे सिपाही मारे गये तथा आहत हुए। चौथे दिन साहबसिंहने आत्मरक्षाके लिये अपने दुर्गकी शरण ली। किन्तु वह रणजित्की गोला-वृष्टिके सामने दुर्गकी रक्षा कर न सका। फिर गुरु साहबसिंह बन्दीने बीचमें पड़ कर मिट-माट करा दिया। भङ्गी-सरदारने बहुत नजराना

वे युद्धका इति-पूर्ति करनेका बचन दे कर रणजित् सिंह-से सन्धि करेगा। इस सन्धिपत्रमें धृष्ट सरदार इन्द्र सिंहके छोड़ देनेकी बात भी थी। रणजित् सिंहने साहोब माते हो युद्ध इन्द्रसिंहको छोड़ दिया। किन्तु इन्द्रसिंह रावतमें ही परलोक पधार गये; पर धरुंजनेका मोहत हो न भाए। राज्यदोषण रणजित् सिंहन उनकी मृत्युका समाचार पा कर उनके राज्यकी हस्तगत कर लेनेके उद्देश्यसे भद्रालगढ़ पर घावा बोल दिया। किन्तु रणजित् सिंह यह बात भण्डी तरह जानते थे, कि उस घोर व्यथोके सम्मुख-समरमें पार पाना कठिन है। इससे उन्होंने फिर एक बार बुद्धिसे काम लिया। भद्रालगढ़के निकट पहुँच उन्होंने रानोके पास यह समाचार भेजा कि "अपन पिताके मित्र धृष्ट सरदारकी मृत्युका समाचार पा कर पतिक वियोगसे तुम्हो आपके दुःखमें समवेदना प्रकट करनेके लिये मैं यहाँ भाया हूँ।" उन्होंने वेसा वाक्यजाल फँसा कर पतिको तरह रानोका भी फँसा दिया। रानोका हृदय सख्त हो कोमल था। पहले तो रणजित्क भावसे रानो विचलित हो उठी थी। किन्तु उनके समवेदनायुक्त पत्र पा कर रानोका हृदय विगलित हो उठा। उन्होंने खबर भेजा कि जब मुझको पत्नी टाकर हम कोशीक बोरसमें उपस्थित हैं, तब सुकर यकियाक सरदारके साथ कोइ भगड़ा नहीं है। रणजित् यह समाचार पा कर मिश्रानुभाषण राजमहलमें बने भाये। भाते हो उन्होंने राना तथा उनके पुत्रो को कैद कर लिया। इस विन्यासघातकता पर सनो सैनिक-सरदार सुद ताकते हो रूढ़ गये। रणजित्ने भद्रालगढ़के घन घान्से परिपूर्ण पतानेको मूढ़ किया फिर रोसघाने पर कब्जा कर लिया। अन्तमें राजाक मरण वेपणके लिये हो गाँव दे कर रणजित् साहोब बले भाये।

एकर जब वे साहोब पहुँचे, तब उनकी मातृम दुःखा, कि काङ्गड़ाके राजा संसारधन्ने रानो सहाकुमारोके राज्य पर आक्रमण कर दिया है, यह सुन कर वे ससैन्य सहाकुमारोका सहायताके लिये चल। रणजित्क भावने की बात सुन स संसारधन्ने यहाँसे भाग गया। एकर रणजित् स संसारधन्ने बर्खा भुक्तनेके लिये उसके भविष्यत भीषता पर कब्जा कर उसे सहाकुमारोका दे

दिया। इसके बाद संसारधन्नेको पकड़नेके लिये वे, नूरपुर गये। राजा स संसारधन्ने दुःख पर्यंतमें छिप कर अपनी जान बचाए। लौटने समय रणजित्ने पतानकोटके निकट सुमानपुरके दुर्भेद्य-दुर्गको धूममें मिला दिया। इसके बाद उन्होंने धरमकोट, सुवालगढ़ और बहलमपुर आदि कई पतानोंक भविष्यत दुर्गों पर हमला किया।

इसके उपरांत उन्होंने पिपडी, माटियाल, पोपोघार और घना पर दखल जमा किया। घनी दुर्ग पर अधिकार करनेमें रणजित् सिंहको दो महानेका समय लग गया।

यहास वे साहोब पहुँचे। फिर उन्होंने सुना, कि सितपुर दुर्गके राजा उत्तम सिंह मजिधिया विद्रोही हो गये हैं। किन्तु कुछ ही दिनोंमें विद्रोही राजा या सरदारको बहुत धन दे कर वस्यता स्वीकार करलो पड़ो।

सन् १८०२ ई०में नकाह सरदार काशन सिंहकी कन्या राजकुमारोके गर्भस महाराजकी एक लड़का पैदा हुआ। इसके उपलक्षमें कई दिनों तक बड़ी पूजधामसे समय बीता। परभारमें सरदारोंकी किन्नमत हो गई। प्रत्येक सिपाहीको एक एक सोनेका हार दिया गया। दोन कुम्हियो को भी गूँव धन सुटायो गया। मण्डुमारका नाम हुआ काज गसि ह या कटकसिंह।

पुत्र जगमोहस्य घतम दोमेक बाद रणजित् सिंहने बर्खा, चिनिभोत और तीसरो बार कनूरको जीता। चारों ओर उनको ब्रयध्वनि हो गयो थी। इसी वर्ष उन्होंने जामनगर दोमाव पर अधिकार करनेके लिये यात्रा की। इस यात्रामें ज्ञान समय जितने नगर मिले, उन सर्वों पर रणजित् अधिकार करते गये। इसी यात्रामें उन्होने क्षत्रियराज गृहदमनको पिपया रानाके राज्य पर आक्रमण कर उनकी प्रमृत्त धनसम्पत्ति और कगवार राज्य पर अधिकार किया और उस अरन मियवगु सरदार फरसिंह भाहलुबलियाको ब्रह्मरामें दे दिया।

राजा स संसारधन्ने हिमरीसस भीषे उदर कर फिर जालंधर पर आक्रमण किया। किन्तु रणजित्क भावने का बात सुन उन्होंने फिर पाठ दिया है। इस बार रणजित् जिस राहस गये, उस राहमें भाये सनो दुर्गोंक

सरदारोंसे उन्होंने कर तथा नजर वसूल की। इस समयसे जिन सरदारोंकी मृत्यु होने लगी, उनकी रियासतोंकी रणजित् दखल करने लगे या दखल कर सदाकुमारोंको देने लगे। इससे प्रायः सभी सिक्का सरदार रणजित् सिंहसे नाराज हो उठे। रणजित् सिंहके विरुद्ध तलवार उठानेकी हिम्मत किमीमें न हुई।

जब रणजित् लाहौर वापस आये, तब पूर्ववत् पथेष्ट आमोद-प्रमोदसे उत्सव हुआ। इस समय रणजित् मोरान नाम्ना एक मुसलमानकन्या पर मोहित हो गये। उसकी रूपपिपासामें अधीर रणजित् अपने राजकार्यको भुला कर बहुत दिनों तक उस रमणीके प्रेममें डूबने लगे। अन्तमें मुसलमानपद्धतिसे दोनों आपसमें परिणयसूत्रमें आवद्ध हुए।

उस मुसलमान युवतीने सिक्का शेर पर अपना बहुत प्रभुत्व जमा लिया। इसका प्रभुत्व यहां तक बढ़ा, कि सिक्के पर रणजित् नामके साथ मोरानका नाम खुदा जाने लगा।

जो हो, रणजित्के हृदयसे वह भावण अनुराग जोत्र अन्तर्धान हुआ। फिर उन्होंने राजकार्यमें दिल लगाया। मोरानको ले कर हरिद्वार तीर्थयात्राके लिये रणजित् आये। यहां उन्होंने दीन दरिद्रोंको लब्धाधिक रुपया दान किया।

वहांसे लौट रणजित्ने मुना, कि गृहविवादमें ही कसूरका सरदार निजामुद्दीन खाँ मारा गया है और उसका भाई कुतुबुद्दीनने राज्य पर अधिकार कर लिया। रणजित् शीघ्र ही अपने प्रिय मित्र आहलुवालिया सरदारको साथ ले आगे बढ़े। कुतुब पहलेसे ही तय्यार था। कुतुबके वीर पठान सिपाहियोंने भीमपराक्रमसे रणजित्की गतिको रोक दिया। कई मास बात गये, रणजित् किसी तरहसे पठानोंको हटा नहीं सके। उन्होंने छलबल कलसे उठा नहीं रखा, किन्तु इस बार उनकी कुशलता और चतुरता काम न आई। अन्तमें रणजित्ने पठानोंको रसद बन्द कर दी। किलेमें कहत दिखाई पड़ा। पठान सरदार सिपाहियोंकी प्राणरक्षाके लिये लड़ाईके व्ययस्वरूप कुछ रुपया दे कर सन्धि करने पर बाध्य हुआ।

रणजित्के सिपाहियोंकी अभी वकावट भी नहीं मिटी, तभी उन्होंने मुलतानको विजय करनेके लिये यात्रा की। उस समय मुलतान बड़ा समृद्धशाली था। रणजित्के मनकी बात जान कर मुलतानके नवाब मुजफ्फर खाने नगरसे १५ फीस आगे बढ़ बहुत रुपया नजराने ले कर रणजित्से भेंट की। रणजित् बक्ष्यता स्वीकार कर कर स्वरूप उनसे बहुत धन ले वहांसे लाहौर लौटे। उस समय तक भी अमृतसरमें भट्टों सरदार प्रबल थे। उनके प्रभावको नष्ट करनेके लिये सिक्का शेर रणजित्ने बड़ा उद्योग किया। आहलुवालिया सरदार और रणजित्को साम सदाकुमारोंने अपने सैन्य सामन्तोंको ले कर रणजित् सिंहके साथ अमृतसर पर चढ़ाई कर दी।

उस समय अमृतसरके सरदार गुलाबसिंह मर चुके थे। उनकी विधवा रानी नगरका द्वार बन्द कर दुर्गकी चहारदीवारीसे शत्रुसैन्य पर गोला गृष्टि करने लगी। किन्तु चारों ओरसे शत्रुओंके प्रबल आक्रमणसे तंग आ कर सिपाही निरवसाह हो गये। अन्तमें रानीने अपने पुत्रको ले कर रामगढ़िया सरदार योधसिंहके शरणागत हुई। रणजित् सिंहने अमृतसर पर अधिकार कर लिया। एक साथ ही सभी भट्टों सरदार पराभूत हुए। अब किसीकी हिम्मत न रही, कि वह रणजित्के विरुद्ध वगावत करे। रणजित्ने अमृतसरके मन्दिरमें प्रवेश कर ग्रन्थ साहबको पूजा की। यहां रणजित् सिंहने गरीब दुःखियोंको बहुत धन प्रदान किया।

इस समय अफगानके तैमूर शाहके चार पुत्रोंमें परस्पर-विवाद चल रहा था। इस अवसर पर सन् १८०३ ई०में रणजित्ने वहां पहुंच भट्ट, उच्च, सही-वालगाढ़ पर अधिकार कर लिया। लाहौरमें शाहजहान्के "शालामार" नामसे जो प्रमोदोद्यान था, सिक्का जातिने उसका नाम बदल कर "शालावाघ" रखा था। इसके बाद महाराज रणजित्सिंह अमृतसर पधारे। वहां हरमन्दिरका दर्शन कर उन्होंने सैन्य सामन्तोंको पदोचित मनसब दे कर सम्मानित किया। सिवा इसके उन्होंने वहांके सम्प्रान्त सरदारोंको अवैतनिक सेना-नायकका पद प्रदान कर सम्मानित किया।

सन् १८०५ ई०में रणजित् सिंहने पिपाशा और बन्दुभागाके मुसलमान सरदारोंके साथ मन्धि कर ली। इतने दिनों तक पञ्जाबके मुसलमानको दूष्टिमें काबुलको ममा हो सर्वप्रधान धर्माधिकार्य गिना जाती थी; किन्तु इस समयसे महाराज रणजित् सिंहको पञ्जाबके सरदारोंन भयना सन्नद्ध मान लिया। इसी समयसे रणजित् सिंह पञ्जाबकेसारा कब्जान लगे। इस वर्ष उन्होंने होलीके पक्ष पर विनास विश्वाद्की शरम सीमा पार कर दी किन्तु इससे बाव हो हिन्दुओंको तरह पापक्षय करनेके लिये हरिद्वारमें भा स्नान हान कर उन्होंने ने पाप प्रक्षालन किया।

पहाँसे लौट कर उन्होंने राजस्वविभागका उद्यति प्रबन्ध करनेमें विच सगया। उन्होंने राजस्वकी भीजाम किया। जिन्होंने अधिक कर बसूल करनेका पात्र किया उन्ही के नामसे राजस्वका ठेका मिन्न दिया गया। इस के बाद भङ्गके राजस्वको बढ़ा कर एक लाख बीस हजार कर दिया गया। यह कर बढ़ा कर उन्होंने मुज दान पर बढ़ा कर दी। इस बार भी मुसलमान पर नयाबने ३३०००) दपया नरुद् दे कर महाराजकी विरल किया।

इस समय बन्दुदेज-सेनापति जाई लैफसे पराजित हो कर पराबन्धपार होकर अपने प्रधान सहकारी अमार काँके साथ १५ हजार सैन्धीका छ कर महाराज रण जित् सिंहसे साहाय्य प्राप्त करनेके लिये अमृतसरमें पहुँचे। इपर जाइ लेकन भी बहुतेरी फौजोंका छ कर भजन नशुके किनारे भा कर पड़ाय उल दिया। सुकनुर महाराज रणजित् सिंहने बन्दुदेजके लड़ना उचित न जान अपना एक भूत बन्दुदेजके पास होकरके बारेमें मज्यरपटा करनेके लिये भेजा। होकरके विरोध सुपिया न देष भ प्रेजोंका उत्तर माउका सारा अधिकार दे दिया। रणजित्के साथ बन्दुदेजकी मित्रता स्थापित हुई। विदेशी फौज अपने अपने पड़ाय पर गई।

सन् १८०६ ई०में बीगाबाक महानेमें महाराज रण जित् सि ह सिन्धुके किनारे क्काम तीर्थमें स्नान करने गये। कीट्ये समय ये बहुत कठिन रोगसे भाक्यल हुए। इस समय ये भेसमक किनारे मियातो नामक स्थानमें

रुने लगे। किन्तु शीघ्र ही भारोग्य प्राप्त कर ये छाहोर पयारे। यहाँ भा कर उन्होंने राजामारका उद्यम तथा भलोमर्दन नहरकी मरम्मत कराई। इस समय सलिय जातिके मालमभन्ध सारे सिक्क-सैन्यके अधिनायक पद पर प्रतिष्ठित हुए। इस पर सिक्क-सरदार रणजित् सिंह पर भसन्तुष्ट हुए थे। किन्तु उपयुक्त पास निर्वाचन ही रणजित्को सफलताका कारण था। इसी वर्ष उन्होंने जतद्रु पार कर जिरा, मुनतंभर, कौटकपुरा, धरमकौद, मरी और फरीकौदको जीता। इस समय पटियालाके राजा और उनको पसो रानी भाउसकुमारामें कुछ विरोध उपस्थित हुआ था। रामोका कहना था, कि महाराज हमें तथा हमारे लक्षकके लिये एक सन्मन राज्य प्रदान करें, किन्तु पटियाला नरेश साहब सि ह इस पर राजी नहीं होते थे। रानी साजिन करनेमें रुझियार थी। उसने मराठा-सरदार यशवन्त रावसे साहाय्य पानेका यत्न भी पाया था। किन्तु जाई लैफक भा जानेस यशवन्त राव उभर ही फ स गये। इससे राजा-रानीके भगडूँका फैसला न हो सका था। किन्तु इस घृह-कलहके समय मीका देव नामाके महाराजने पटियाला पर भाक्रमण कर दिया। ऐसे समय कइ सरदार दोनों भोरसे सहायता देने लगे। क्रमशः यह भगडा बढ़ता ही गया। अन्तमें दोनों पक्षसे महाराज रणजित् सि ह भगडा फैसला करनेके लिये पुलाय गये। रणजित् सि ह ऐसे स्वर्णसुयोगको कब छोड़नेवाले थे। २१वीं तुलाईके थे २० हजार पुङ्ग सयारोंके साथ पटियाले पहुँचे। नामा और भिव्कके राजा महाराज रणजित्के साथ भा मिले। किन्तु इस समय पटियालाके पास जकरतसे काफी सैनिक थे। इसछ महाराज रणजित् सि ह उसका कुछ कर न सके। पटियालेक प्रधान सेनापतिकी मज़ू ठ गोळा पृष्टि देक रणजित सि ह बहुत प्रसन्न हुए थे। जो हो, पटियाला नरेशने सन्धिका पैगाम छ कर अपना पक्ष भूत रणजित् क पास भेजा। महाराज रणजित सि हन मन्धि कर ली और अपने जीता हुए होकापि नामक भूमि पटियालाको लौटा दी और इपर नामा-नरेशस ५०००० हजार दपये नरुदनेमें दिये। इसी वर्ष रणजित् न सुपियान पर बढ़ा कर दी और उसक अधिपति मुसलमान राजभूत

वशीय इन्द्रियस खाँकी बेरा बेगम नूहन्तिमा तथा लक्ष्मी-
वाईकी वहासे मगा कर लुवियाने पर ज्जा कर लिया।
पीछे उन्होंने लुवियाना भिन्दके राजाजी दे दिया। इसी
तरह इन्होंने मिया गाउसकी बेरा बेगमसे आरा परगना
निकाल कर अपने प्रिय सेनापति मप्रचन्दको जागीर दे
डाली। इसी तरह राय इन्द्रियसके अतिरिक्त मन्दाळा,
रायकोट, यगराउन, बहोवल, तलबन्दी, डाका, वामिया
आदि नगरे पर ना रणजितने कब्जा कर लिया। पटि-
यालाके साथ सन्धि हुई सही, किन्तु उनकी पत्नीके
मनोमालिन्यका कारण दूर नहीं हुआ।

इसी वर्ष गोर्खा सेनापति अमरसिंह ठामने कान्डूडा
पर आक्रमण किया। इसी समय रणजित् सिंह प्याला-
मुन्नीका दर्शन करने गये। राजा ससारचन्दके छोटे भाई
फतेचन्दने आ कर महाराजसे सहायता मागी और नज-
रानेके तौर पर उहुत-सा रूपया देना स्वीकार किया।

इस रणजित् जब कान्डूडेकी सीमा पर पहुँचे, तब
अमरसिंहके विश्वासी नाँकर गोरावर सिंहने उससे
अधिक रूपया नजराना दे कर उन्हें अपनी ओर मिला
लेना चाहा। किन्तु रणजित्ने पहले आये
हुए सहायतार्थीको विमुख करना असङ्गत समझ
इस जोरावर सिंहके प्रस्तावको अस्वीकृत कर दिया।
कुछ ही समयके बाद यानी सन् १८०६ ई०में गोर्खोंने
अपनी छावनी वहाँसे हटा ली। इसके बाद रणजित्ने
स्वीकृत नजराना ले कर कांगडा परित्याग किया। आने
समय नदाउनमें अपने एक हजार सैन्य रख उन्होंने
सरदार फतेसिंहका विजावरमें हाजिर रहनेका आदेश
दिया था। यह आदेश इसलिये दिया था, कि उनके
चले जानेके बाद मौका पा कर कहीं गोर्खे सीमान्त पर
आक्रमण कर न बैठे। उनकी गतिविधिके परिवेक्षण
करनेके लिये ही सीमान्त पर अपना रण उन्होंने
सरदार फतेसिंहको विजावरमें रहनेकी आज्ञा दी थी।

सन् १८०७ ई०के प्रारम्भमें ही सिक्ख-सरदारके
अधिकृत पगकर तथा चामार-राज्य पर उन्होंने अपना
अधिकार जमा लिया। इसके बाद कसुरके पठान सर-
दार कुतुबुद्दीनके अत्याचारी होनेकी बात सुन उन्होंने
उसे दण्ड देनेके लिये इसी वर्षके फरवरी महीनेमें यात्रा

की। यशसिंह रामगढियाके पुत्र योधसिंहने भी
उनका साथ दिया। इन लोगोंने जा कर नगरको घेर
लिया और एक महीने तक वे वहाँ पड़े रहे। नगरके
लोग भूतों मरने लगे। इन लोगोंने अधिक बिलम्ब न
कर आत्मसमर्पण कर दिया। सिक्खोंने नगरमें प्रवेश
कर वहाँके लोगो पर अत्याचारकी पराकाष्ठा दिखाई
दी। कसुर राज्य लाहौरमें मिठा दिया गया और वहाँका
शासक सरदार नेशाहसिंह अतारीवाला मुहम्मद हूए।
कुतुबुद्दीनकी जतन के उस पार गानलात नगर मिला।
वह वहाँ जा कर रहने लगा।

लाहौर लौट कर रणजित् सिंहने जनशोषणा करनेके
लिए एक दरबार किया और कुतुबुद्दीनसे मिला हुआ
धनका कुछ हिस्सा अमृतसरके सिक्ख दर-मन्दिरकी
उपहारके भेजा। इसके बाद ही उन्होंने दिपालपुर
दुर्ग पर अधिकार कर मुठनान नगरकी घेर लिया।
किन्तु अधिक दिनों तक बड़ा कष्ट न सह मुठनानसे
३००००) रूपये नजरानेका ले कर सम्मानपूर्वक वे लौट
आये। इसी समय वे बहावलपर पर अधिकार कर
लने पर तुल गये। नजवाने उपाय न देय सन्धि कर
ली। इसके बाद उन्होंने अठान नगर तथा कान्डूडा
शैल प्रान्तके रहनेवाले सरदारोंसे बलपूर्वक नजर बसूल
की।

रणजित् सिंहके पटियालासे लौटनेके बाद वहाँ
फिर अज्ञान्ति मची। इस बार फिर वे बुलाये गये।
उन्होंने हरिकृष्णपत्तन नामक स्थानके पास शतद्रुकी पार
किया। उनके साथ मालमचन्द, फतेसिंह आदि प्रधान
प्रधान सेनापति गये थे। फाँटकपूरा, भादौर और
नाभा पार कर वे पटियाला पहुँचे। वहाँ उनकी रानीने
एक हीरेका हार और "रुड़ा सी" नामक एक तोप नजर
की। पटियालेकी अज्ञान्ति दूर कर वे अम्बालाकी ओर
पधारे। यहाँ सरदार गुरुदत्तसिंहकी विधवा पत्नी
रानी दयाकुमारीसे नजराना ले कर उन्होंने कैथलके भाई
लालसिंह, शाहाबादके गुरुदत्तसिंह, बुढियाके मगवान्
सिंह, कलसियाके योधसिंह आदि दरपुर्तवाँसे कर
बसूल कर उन्हें खिलअत प्रदान की थी।

इसके बाद उन्होंने कुमारकिशन सिंहके अधिकृत

अभिज्ञत नारायणयुक्त सिंघे पर आक्रमण कर घेरा बाळ दिया। इसी युद्धमें महाराज रणजित्के पञ्चान सेना पति फतेसि ह कमिलानवाळा, मोहनसि ह और देवसि ह मारि गये। युद्ध अंत छेने पर ४० हजार बपया बजरानेका छे कर सिक्क-केन्द्रो रणजित् सिंघ हने सख्दार फतेसि ह भ्रतुवासियाका नारायणगडका राजा बनाया था। इसी समय उनके सहयोगी रोहन-जुगाजीभर द्वाबाळा सरदार हातासि हकी मृत्यु हो जाने पर उनकी पत्नियां सती होनेके छिये चलीं। यह समाचार पाते ही महाराज रणजित् सिंघ हने इस मृत पुरखकी घन सम्पत्ति तथा राज्य पर आक्रमण करनेके छिये उस दुर्ग की भोर अपना फौजीको भेजा। सिक्क सेनामेंके इस युद्धमें भावत्पल मृत्यु हो कर पर बर्षोंसे द्वाबाळा विषया एको हाथमें लब्धकर छे कर रणजित्के भवशोर्ण हुई थीं। दुखका विषय है, कि शीघ्र ही माचीन दुर्गकी बहारदीपारी जलुभी द्वारा टूट गई। इससे यह किळा शत्रुके हाथ चला। इसक बाद उन्होंने नीशेट, मोविन्द, वहडोळपुर, मरठगड और बन्धी भादि स्थानों पर अधिकार जमा किया। इसी समय रामपुर, वनप्राम, सरहिल्द जीण, कोटकपुरा पधपुर भादि स्थानों पर अधिकार करने समय सरदार फनहसि ह, राजा भागसि ह, यशवन्तसि ह, रामसि ह कमसि ह और शोबान माळसि ह भादिको सिन्हीने इनक साथ युद्धमें यश भोजन किया था, जामीरे वी गए। इस शतदुयुद्धक अन्तमें महाराज रणजित् सिंघ हन ममोळाक समीपारसे २० हजार, मजिमडराक गोपाळसि हसे ३० हजार, रोपारके सरदार हरिसि हसे १५ हजार और शोभाबके मूयपिकारियोंसे १८० हजार खपये मरुद कर वसूल किया था।

इसो वर्षके दिसम्बर महीनेमें रणजित् सिंघ ह लाहोर छौट भाये। रामी महलाबकुमाराने इनको शेरसिंह और ताणसि ह नामके दो पुत्ररत्न (यमत्र अरवच) दिये। ये दोनों पुत्र महलाबकुमारसे अरम्भ महीं हुए थ पर उन्होंने कीशब्धपूर्वक मूमिष्ठ हाते ही दोनों बाळकोंको कपोद कर अपने प्रसन्न करनेकी चाणणा की थी। केवल रणजित्को प्रसन्न कर अपने दाधमें कर देनेक उद्देश्यसे ही याने वैसा किया था।

सन् १८०८ ई०के भारतमें ही रणजित् सिंघ हने पर्वत पद प्रास्तक पठानकोट दुर्ग पर अधिकार किया। इसके बाद यशोदा, खम्बा, बसोली भादि राज्योंकी भी जम्हों ने करर राज्य बनाया। महाराज जब उत्तर-पहाड़ी राज्योंकी वशीमृत करनेमें छगे थे, तब दीवान माळम बन्द शतद्रुके पूर्वक सरदारीको पदमें छानेकी चेष्टा कर रहे थे। उन सबोंने ही महाराज रणजित्को अपना राजा तथा उनकी युद्धक समय युद्धसवार सैनिकोंका साहाय्य वना लोकार किया।

पर्वतसे उतर कर रणजित् सिंघ हने समतलक्षेत्रमें भा कर अपना पक्षाड डाळा और पराजित या करर राजाओं की बुझा कर एक सभाका आयोजन किया। पक्षाडके समी सरदार उस समय सम्मिलित हुए थे। उन सबों ने महाराज रणजित् सिंघकी अपना राजा कर्षू किया। किशु स्याळकोटके सरदार जीवनसि ह और गुर्जरके साहब सिंघ हने उनकी वक्ष्यता लोकार न की। उनकी उद्धाका ययोचित उत्तर देनेके छिये रणजित्ने सलीम पाळा का। साठ दिन तक स्याळकोट पर घेरा बाळने के बाद किळा रणजित्के हाथ मा गया। जीवनसिंह किद कर छिये गये। जीवनकी दुर्देशाकी बात सुन कर सरदार गम्हरसि हने अपना वृत्त भेज कर सन्धि कर छी। रणजित्को यहाँ जाना मो न पड़ा और जम्होंमें वक्ष्यता लोकार कर की। यहाँस रणजित्ने मधनूरकी मोर पाला की। बहोक सरदार भाळम याने उनको रूप युक्त लजपता है कर वक्ष्यता लोकार की।

इसो समय हारन मिनार (शेकपुरा)के सरदार अरवजसि ह तथा ममीरसि ह निकटके राज्योंमें वृद्ध पाठ मन्त्रा कर अधियासियोंको पीड़ित कर रहे थे। इन दोनों 'दुर्हच सरदारीको दख देनेके छिये रणजित्ने अपने ४ हजार युद्धसवार सिपाहियोंक साथ पुनसवार सेनापति चौल छीकी भेजा। महाराजकुमार कङ्ग सिंघ नाममात्रक इनक नायक बने। लाहोरक फौजी ने शेकपुराके दुर्ग पर अधिकार कर लिया। दोना सरदार कैद कर छिये गये। युद्ध अन्त हो जानेके बाद युद्धपक्ष बाङ्ग सिंघकी शेकपुराका किळा भीर राज्य जामीर-स्वकय मिला। युद्धपक्षको माता रामी

नकाई मृत्युकाल तक यही रहें, उनको लाहौर जानेका फिर सौभाग्य प्राप्त न हुआ।

इसके कुछ ही समयके बाद अंग्रेजोंका एक वकील महाराजके लिये उपहार ले कर दरवारमें उपस्थित हुआ। पञ्जाबपतिके साथ सद्भाव स्थापन हो उसके आनेका कारण था। लौटते समय वकीलको माफत महाराजने पाच हजार रुपयेकी एक खिलअत और कितने ही देशोत्पन्न मूल्यवान् वस्तुओंको उपहारस्वरूप अंग्रेजोंको भेजवाया।

इसी वर्षमें महाराजने अमृतसरी गुजरसिंह मन्त्रीके दूटे हुए किलेकी मरम्मत करा कर उसका नाम गोविन्दगढ़ रवा। इसी दुर्गमें उनकी मूल्यवान् वस्तु तथा धनसम्पत्ति रखी गई। धनरत्न और किलेकी रखवाली करनेके लिये यहाँ दो हजार सेना रखी गई। किलेकी चहारदीवारी पर चारों ओर २० तोपें लगाई गईं। इस समय मुलतानके नवाबके पहलेका स्वीकृत कर न देने पर महाराजने ५ हजार घुडसवार सैनिकोंके साथ वायू राजसिंह, यशसिंह मन्त्री और कुतुबुद्दीन खाँ कसुरवाला आदि सरदारोंको भेजा। इन्होंने बलपूर्वक जा कर उनसे कर वसूल किया। इस काममें उन्हें तीन मास लग गया था और दीवान् माखमसिंह आनन्दपुर-मल्लोवलके दक्षिणके समूचे भूभाग पर अधिकार कर अन्तर्वेदीसे ६ लाख रुपये नजराना ले लौट आये।

इस समय अहमदशाह जमानके प्रिय मन्त्री ठाकुरदासके पुत्र और शाह सुजाके राजस्व-सचिव भयानीदास राजदरवारके प्रति विरक्त हो कर लाहौरमें आ उपस्थित हुए। महाराजने सादर उनको बुला कर राजस्व-विभागके कर्तृपद पर नियोजित किया और कर्मचन्दको राजमोहरका (Lord of the Privy seal) पद दिया।

महाराज रणजित् सिंहकी साम्राज्य लोलुपता तथा परराज्यापहरण-प्रवृत्ति उत्तरोत्तर बढ़ती हुई देख कर मालवा और सरहिन्दके सिक्ख भयभीत हुए। उन्होंने रणजित्की सर्वगासिनी शक्तिके अङ्गभूत होनेकी आशङ्कासे बचनेके लिये उपाय खोजनेके लिये एक सभाका आयोजन किया। पटियाला, फ़िन्द और नाभाके सिक्ख-सरदारोंने समाना नामक स्थानमें एकट्ठा हो कर

परामर्श किया, कि रणजित्की वश्यता स्वीकार करनेकी अपेक्षा दूसरेका साहाय्य ग्रहण कर अपनी रक्षा करना उत्तम है। इसके अनुसार इसी वर्षके मार्च महीनेमें फ़िन्दकी ओरसे राजा भागसिंहने, फ़ैयलके सरदार भाई लालसिंहने पटियालाके दीवान् सरदार चैनसिंह और नाभाराजके प्रतिनिधि मोर गुलाम हुसेनने दिल्लीमें आ कर अंगरेजोंके प्रतिनिधिसे भेंट की। अङ्गरेज प्रतिनिधिने कहा, कि मैं प्रकाश्यरूपसे महाराज रणजित्सिंहका शत्रु नहीं बन सकता, किन्तु मौका पाने पर छिप छिप कर आप लोगोंकी सहायता करूंगा। लाहौरमें बैठे रणजित् सिंहको इनकी खबर लगी। उन्होंने बुद्धिमानोंके साथ उन सिक्ख प्रतिनिधियोंको अपने पास बुलाया जो अंगरेजोंसे साहाय्य प्रार्थना करने गये थे। उन्होंने सोचा, कि अंगरेजोंके साहाय्य पाने पर इन सर्वोंको देशमें विद्रोह प्रडा करनेका एक अच्छा मौका मिल जायेगा और यह मजबूत सिक्ख-शक्ति नष्ट हो जायेगी। यह सोच कर उन्होंने उनके मलोमालिन्यको दूर करनेके लिये अमृतसरमें एक सभा की। इस सभामें उन्होंने उनके मनोमालिन्यको दूर करनेकी चेष्टा की थी।

इस समय यूरोपमें फ्रान्सीसी सम्राट् नेपोलियन बोनापार्टकी सारे यूरोपमें विजय-दुन्दुभि वज्र रही थी। फ्रान्सीसी फौजोंके बल-विक्रमको देख कर पश्चिमीय राजे दङ्ग हो गये थे। रूस सम्राट्के साथ नेपोलियनकी होनेवाली सन्धिको देख कर अंगरेजोंके मनमें एक फाल्पनिक आशङ्का जाग्रत हुई थी। उनको यह भय हुआ, कि तुर्की और फारसवालोंके साहाय्य ले नेपोलियन कड़ी भारत पर चढ़ाई न कर दे। भारत-प्रतिनिधि लाई मिण्टोने नेपोलियनको इस सङ्कल्प-संसिद्धिमें बाधा देनेके लिये भारतके सोमान्तमें रहनेवाले राजाओंसे सद्भाव कर गृष्टिश बलवृद्धिका उपाय किया। इसके अनुसार उन्होंने मिण्टर पलफिण्टनको काबुल राजदरवारमें, सर जान मालकमको तिहरानमें और सन् १८०८ ई०के अगस्त महीनेमें चार्ल्स मेटकाफ (पीछे लाई हुए) को लाहौरके दरवारमें भेजा।

महाराज रणजित्का इस समय पञ्जाब भरमें प्रभाव

दिन गया था। सभी सरदार उनके मरने को चाहते थे। समाने उनके अपना राजा मान लिया। स्वजातिक साहाय्यसे मरनेको बन्वान् समझ कर उन्होंने एक दिन शत्रु के किलारेसे यमुनातार तक साम्राज्य स्थापित करनेका ठूट्ट सङ्कल्प किया था। मेरकाण साहबने कसूर में उनसे मेरु कर उनके पैसब खीर गजिका देखा। महाराजने पट्टिका वृत्त सन्धि प्रस्थाप पर कुछ सम्मति प्रकट नहा की। क्योंकि उनके मनमें उस समय शत्रु की विजय-यासना जागरित हो उठी थी। उन्होंने भात्रि सुदीनको मंत्रोक्त वृत्तके साथ खीर जानेका आदेश दे कर फिरोजपुरको याना का। वहाँ उन्होंने मजदगना छे कर फरीदकोट और मलारकोटलाको जोठा। अन्तिम इन दो स्थानोंसे बहुत धन रत्न तथा घर बसूल हुआ था। यहाँसे वे अम्बालाकी ओर पयारे। आनेक समय बर्मा भारते देहोंका सूदने पाटन भाये। अम्बाले में महाराजसे हाथ छीनापत्य प्रधान कर उन्होंने गनिवाक, चाङ्गपुर, चम्बर, पारो और बहरमपुर पर अधिकार कर उन्हें क्षीयान माधमचन्द्रक हाथ सौंप दिया। रघुनाथ, मधुवाङ्ग, कृष्ण नूकोट, जलबाली और कपनावाङ्ग भाद्रि स्थान करम सिद्ध, फतह सिद्ध भाद्रि सरदारोंके हिस्सेमें भाये। इसके बाद शाहाबादक सरदार कलमिद्ध पुनाक और पानेश्वराधिपतिसे उन्होंने बलपूर्वक कर बसूल किया था।

शाहाबादमें रह कर रघुनिन्दने पट्टियामा-नरेशके माध भेद करनेको इच्छा प्रकट की। लखनऊ नगरसे बाबा नाकचक्र धंगपर गुड साहबसिद्ध यहाँके लखमें शान्तका भेद हुए। सन्धिसे वे दोनों मित्रतायुक्तमें भावय्य हुए। यहाँसे रघुनिन्द भूमदसरने जा कर मंत्रोक्त वृत्तके साथ मिले। रघुनिन्द पाठे पाठे यूनन कषमाप्य समझ कर मरकाक शत्रु नहाक किलारे फतहाबादमें टिके। गयनर जनरतने उनके सिब भेजा था, कि नाइ लककी सन्धिक अनुसार शत्रु नरो हा भापक राज्यका मामा है। शत्रु और यमुनाक बापको भूमिमें रहनेपाठ सिक्क सरदार मंत्रोक्त सरदारके माधवापीन है। इस भापको उचित है, कि भाप उन लोगोंस सम्मप्य न रहा। इसा कर भाप उन लोगोंस नविध्यम

बखर्षक कर न पसूल न करे। यह पत्र पा कर भी ओ स्थान उग्रोंने जीत लिये थे, उनकी छोड़ने पर वे राजी नहीं हुए। रघुनिन्दने समझ लिया, कि लख हमें मंत्रोक्तके साथ लड़ना पड़ेगा। इससे वे युद्धकी तैयारी में लगे। इधर साहब मिरठोंने भीका देख कर सर बेपिय अकुरलोंनेओ मंत्रोक्तोंको साथ शत्रुके किलारे भेज दिया। उन्होंने माजप और सरहिन्दके सरदारोंको उनके स्थानों पर प्रतिष्ठित कर साधारणको मंत्रोक्तके माधवका प्रभाव दिखला दिया था। शान्ति व्याकुमाटी अम्बालामें और पूर्वकपित पठान-सरदार माहेरकोटका म पुना प्रतिष्ठित होनेसे मंत्रोक्तोंको प्रति मन साधारणको अस्व बड़ गइ था। वे सुधियानमें पड़ाव डाल कर मगरक गजिका सुड्ड करनी चेष्टा कर रहे थे।

इसा समय मसुदसरने तात्रिये पर अकाली सिक्कों तथा मुसलमानों में भगङ्ग हो गया। अकुरेड-वृत्तके सह गाना खनामे पर्यमें साथ दिया था याना कुछ विषाहो तात्रियेमें शामिल हुए थे। शान्त बलामें अकाली हारे। यह देख कर रघुनिन्दने मद्रासियोंके पूवा अयथाचार करनके लिये मंत्रोक्त वृत्तन क्षमा माँगे। फलतः रघुनिन्दको मंत्रोक्तके प्रायमानुसार शत्रुके किलारेसे उन्हें अपनी फौजोंको हटा लेना पडा। सन् १८०१ ई०को २५ अगस्तका सन्धिक अनुसार यह स्थिर हुआ, कि रघुनिन्द सिद्ध वृत्त शत्रुके मूलाग पर कमी भी भवना अनुसूच स्थापन न कर सकेंगे। इसके बाद आधित सरदारोंको रत्नाके सिध अकुरेडाल सुधियानमें एक छापनी सुकरर की। पक्की महाराज सिद्ध भापका रघुनिन्दकी ओरसे मंत्रोक्तोंका स्थानमें वृत्तके रूपमें रहन लग। म गेरजान सुधयकत राय नामक एक कायस्थको साहोर दरबारमें भेजा।

सन् १८०१ ई०में महाराज रघुनिन्द सिद्धकी सन्धि हुए सहा, किन्तु शान्त पर्यमें किसोंने किसाका विश्वास नहा किया। मर चाउस मरकाकके बहांस सरकते हो उग्रान सुधियानके दूतारे पारमें अथात् शत्रुके उत्तर ओर नितोरे युगको मजबूत कर क्षीयान माधमचन्द्रको यहाँका टिबेहार नियुक्त किया। इसी मौके पर

अमृतसरके गोविन्दगढका किला मजबूत कर दिया गया। किलेसे राज्यके दक्षिण भागकी रक्षा बंदोबस्त कर रणजित् स्वय उत्तरकी ओरके पहाडी राज्योंको जीतनेके लिये निकले।

इस ओर गोर्खा सरदार अमरसिंह ठापाके फिर काङ्गडा किले पर घेरा डालने पर राजा संसारचन्दके आग्रह करनेसे रणजित्को सबसे पहले काङ्गडाका उद्धार करने जाना पडा। वे पठानकोट, ज्वालामुढी, यशरोता, नूरपुर आदि स्थानोंको पार कर काङ्गडा-दुर्गके समीप पहुँचे। लेकिन राजा संसारचन्द अमरसिंहके साथ मित्रताकी सन्धि होना सुन कर उन्होंने उन दोनोंको हाथमें रखनेकी चेष्टा की। उनके अधीनस्थ पहाडी सिक्ख सरदारोंने सम्पूर्णरूपसे गोर्खाकी रसद बन्द कर दी थी। यह देख कर रणजित् वहाँ उपस्थित हो काङ्गडा किलेमें प्रवेश करनेका अधिकार चाहा, किन्तु संसारचन्दने उन्हें ऐसा करने न दिया। युद्ध शुरू हुआ। अमरसिंह ठापाने संसारचन्दकी ओरसे युद्ध किया, किन्तु रणजित्से वे पराजित हुए। अन्तमें काङ्गडा-दुर्ग रणजित्के हाथ आया। देगसिंह मजिठिया काङ्गडा-दुर्गके किलेदार और काङ्गडा, चम्वा, नूरपुर, कोटला, शाहपुर, यशरोता, बसोली, मालकोट, मशवान, शिवा, गोलेर, कौलहर, मण्डी, सुकेत, कुलु और दातारपुर आदि पहाड़ा राज्योंके शासक नियुक्त हुए। पहाडसिंह उनके सेनापति हुए।

यहाँ रणजित् ज्वालामुढीमें आये। सिक्खपति रणजित्ने पूजा करनेके बाद जालन्धर दोआबमें आ कर बघेलसिंहको विधवा पत्नीसे हरियाना राज्य और भूपसिंह फौजपुरियाके अधिकृत प्रदेशोंको निकाल लिया।

इसी वर्षके अन्तमें बजीरावादके सरदार बोधसिंहके परलोक-गमन करने पर रणजित्ने तुरत ही मृत राजाकी सम्पत्तिको ले लेनेके लिये वहाँ पहुँचे। किन्तु उनका पुत्र गेण्डासिंह २ लाख रुपया नजरानेका दे कर रणजित्को सन्तुष्ट किया। इसके बाद गुजरातके साहब सिंह भट्टी और उनके पुत्रमें भ्रगडा होना सुन कर वे चन्द्रभागा पार कर उसी ओरकी दौड़े और धीरे धीरे

उन्होंने उनके अधिकृत इसलामपुर, महवार, जलालपुर आदि नगरों पर अधिकार कर लिया। उनके प्रधान मन्त्री फकीर अजिजुद्दीनने गुजरात पर अधिकार कर लिया। महाराजने उसके वीरत्य पर प्रसन्न हो कर उन्हें खिलधत प्रदान की और उनके छोटे भाई नुरुद्दीनको वहाँका शासक नियुक्त किया। इसी समय दीवान भवानीदासने उनकी ओरसे जम्बू पर दफल कर लिया और वहाँके दोगरा सरदारको बहासे भगा दिया। इसके बाद वे भेलम नदीके पश्चिम पारके सरदारोंको हरा उन्हें कैद कर अपने देशमें ले आये।

सन् १८१० ई०के फरवरी महीनेमें रणजित्ने सुना, कि काबुलके राजा शाह शुजा उलमुल्क युवराज शाह महमूद द्वारा पराजित हो कर अटक नदी पार कर चले आये हैं। यह सुन कर रणजित्ने खुशाब नगरमें जा कर शाह शुजाकी आगत स्वागत किया। किन्तु रणजित्के रक्षा करनेका कोई फल नहीं हुआ। शाह शुजाने पेशावरवालोंके लिये युद्ध किया सही, किन्तु महमूद द्वारा पराजित हुए। फिर शाह शुजा गतदु पार कर इधर चले आये।

इसके बाद रणजित्ने खुशाब और ग्राहवाल पर कब्जा किया। ग्राहवाल-सरदार फतेह खाँ सकुटुम्ब कैद कर लाहौर लाये गये। यहाँसे रणजित् ४थी बार मुलतान विजय करनेके लिये पधारे। दो मास तक घेरा डाल कर भीषण गोला-गुष्टि करनेके बाद भी जब सिक्ख किसी तरह मुलतान पर कब्जा कर न सके, तब पहली स्वीकृति ले कर ही रणजित् लाहौर लौट आये।

वे इसके बाद शुडसवार सैनिकोंके सुधारमें लगे। फिर उन्होंने बजीरावादको सिकस्त करनेके लिये सेना भेजी। अमरिह और गेण्डासिंहको जागीर दान कर उन्होंने प्रवक्षनापूर्वक यह स्थान और बघेलसिंहकी पत्नी रानी राजकुमारीको जागीर बहादुरगढ़ पर अधिकार कर लिया।

दशहराका उत्सव सम्पन्न कर महाराज रणजित् सिंहने अकतूबर महीनेमें मरफा सरदार निधतसिंह पर आक्रमण किया। जातीय प्रथाके अनुसार बाबा

मुसकराज और अमीयातसि ह थेदा नामक सिक्ख-पुरोहितोंके छिये भीर महाराजसे ज़ागोर प्राप्त करनेके उद्देशे बुद्ध निघनसि हने अपने इस्का बुर्गस निरुद्ध रणजित्के छेमेमें आ कर भास्मसर्पण किया। इसी घासिया-सरदार धागसि ह इस समय महाराजके अस्थि-मात्रन होनेका बख्त पुनके साथ कैद कर लिये गये और उनकी सन्धिअच्छ कर ली गई। दीवान माखमघान्ने इस अवसरमें भासबाद, राजायुरी और गांगगिरि किलों पर अधिकार कर लिया। इधर महाराजने पिण्डवाहन काँके निरुद्ध तात किलों पर अधिकार जमाया।

सन् १८११ ई०में महमूदशाहने १४ हजार भफगानो सेन्य छे कर सिन्धु नदीको पार किया। रणजित्ने युद्धकी बाण्डु कर टायलपिएडाके छिये यात्रा की। शाहके साथ जैठ हामे पर शोनांकी मित्रता हो गई थी। इसके बाद उन्होंने अपनी फौजोंकी सहायतासे मुसलान और माफेका बीचकी भूमि, कोटका-जुरी, फेहूमपुरिया वालोंके अधिष्ठत प्रदेश आबखर, फिहीर, पहा, डेट पुर आदि स्थानों पर अधिकार कर लिया।

सन् १८१२ ई०के प्रारम्भमें कुमार अट्टसि हका बाँद कुमारीके साथ विवाह हुआ। इसके उपलक्षमें जाहोर में विशेष घूमघाम हुई थी। अ प्रेजसेनापति अख्तर खोनी निमन्त्रित छिये गये थे। महाराजने उनकी भय्यन आतिथ्यारी की। इस समय दोनों हकमें पूर सज़ाय उपस्थित हुआ था। महाराजन होखी-यब पर भा इन्हें आमन्त्रित किया और इसी तरह इनकी आतिथ्यारा की गई।

कुमारके विवाहके बाद उन्होंने फिर मीमवार पर आक्रमण कर दिया। मीमवारके राजा सुसतान अति आरमसमपण किया। किन्तु महाराजने उसके प्रति सज़ाय न कर उस छा बप तक कैद कर रखा। माम वार पर अधिकार हो जाने पर उन्होंने फिर राजायुरी, जम्बू, अयनूर, सुजानपुर, कोटकाभांडिया आदि स्थानों को ज़ात कर और मुन्तान मिठाताना आदि स्थानोंके सरदारोंसे कर वसूल किया।

इस समय काबुलके राजा शाह महमूदके पंजाब फतेह खाने काश्मीर पर आक्रमण किया। काबुलके

राजमन्त्रीने महाराज रणजित्तिसि हकी मदद देनेका अनुरोध किया। इसके अनुसार दीवान माखमसि हके साथ १२ हजार सैनिकों को भेजा गया। यहाँका शासनकर्ता भाता महमूदके भाग जाने पर फतेह खानि महमूदकी भीरसे काबुल उपस्थका पर दखल जमा लिया। सिक्ख सैनिकोंके युद्धमें पूरी सहायता न करनेका बहाना कर युद्धसे प्राप्त तथा लूटी हुई वस्तुओंमें सिक्खोंको हिस्सा न दिया गया। इस पर रणजित्कोषसे अचोर हो उठे और अरुणामियो का माज करनेके लिये युद्धकी तैयारी करने लगे। सन् १८१३ ई०में अटक-जुरी पर कब्जा कर वे युद्ध करनेके लिये भागे बड़े। इधर नामक स्थानमें दीवान माखमघान्के साथ अरुणान सेनापति महम्मद काँका घोर युद्ध हुआ। इस युद्धमें सिक्खोंकी विजय हुई और सिक्खाने अरुणामियोको कैरवाकासे भगा दिया। इसके बाद रणजित् काश्मीर पर फिर चढ़ाह करनेकी उद्यत हुए, किन्तु पच तुपाराअग्र था, इससे उनकी रुक जाना पड़ा।

इस समय महाराज रणजित् सिहने मखद प्रदेशके अरुणान अधिपतिको अत्याचार-बहानो सुनो। उसको दण्ड देनेके लिये सिपख फौजों भेजी गई। मखदके सरदार बाजीखान अटकके किलेसे माग जाने पर यह स्थान सिक्खोंके हाथ आया। इसी समय दीवान मखानो दासन हरिपुरके पहाड़ी राज्यों पर अधिकार कर लिया।

सन् १८१३ ई०के मार्च महानेमें दिल्लीसे प्रसिद्ध राजा लीलिचिद् गङ्गारामको अपने राज्योंमें छे कर रणजित्ने सेनाविभागके अध्यक्ष 'बकगी' पर नियुक्त किया। इस समय वे काश्मीर युद्धके क्षेत्र शाहजुजासे कीडलस 'कोहिनूर' हीराको छानेको बंधा करेमें लगे। किन्तु ज़ागोर आदि क्षेत्रोंका प्रलोभन देने पर भी उसने इस हीरेको धना न चाहा। अब उन्होंने उसका साथ अमानुषिक अत्याचार करना आरम्भ किया। फखता अत्याचार प्रपोंकृत शाहजुजाने रणजित्तिको यह होरा 'कोहिनूर' प्रदान किया। इसका भी रणजित् पसल या सम्नुष्ट न हुए। उन्होंने गुप्त मयि माणिक्यादिके संग्रह करनेके लिये फिर अत्याचार करने लगे। माइ रामसि हके

अधीन कई स्त्रियोंको जनानघानेमें भेज कर उन्हो ने तलाशी ली। इस तलाशीसे जितने मणि माणिक्य मिले, उन सर्वोंको रणजित्ने हाथमें किया। इस तरहके अत्याचारसे प्रपीडित हो कर जनानघानेकी स्त्रिया एक दिन साधारण स्त्रियोंके वेशमें वस्त्रा या टांगों पर सवार हो कर नगरके बाहर जा अन्नरेजाकी शरणमें लुधियाना चली गईं। इस समाचारसे क्रुद्ध हो कर रणजित् और भी शाहशुजाको कष्ट देने लगे। जहां जा शाहका मणि-माणिक्य मिला वह भी रणजित्ने ले लिया। अन्तमें सन् १८१५ ई०के अप्रिल महीनेमें आधी रातको एक गुप्तरूपमें नगरद्वारसे बाहर जा इरावती नदी तैर कर शाह गुजरानवाला होने हुए गो पर चढ़ कर जम्बू चला गया। वहां आ कर उमने फिर काश्मीर लौटानेकी कोशिश की, किन्तु व्यर्थमनोरथ हुआ।

सन् १८१४ ई०के अप्रिल महीनेमें होला-उत्सवको समाप्त कर महाराजने कागडाके समीपके पहाडी सामन्तोंसे कर संग्रह करनेके लिये ससैन्य यात्रा की। इसके बाद जुलाई महीनेमें काश्मीर जीतनेके लिये वे स्वयं चले। राजायूरी और राजा आगर खाँके कूट परामर्शसे उन्होंने अपनी फौजाको दो पथोंसे भेजा। वैरामगला, पारपञ्जाल, हीरापुर, सुपीन और तोपू मैदानमें सिक्खोंके साथ पञ्चाधिपति वजीर रुहेल खाँकी अफगानी सेनाओंसे युद्ध हुआ। युद्धमें सिक्ख सेना हार खा कर लाहोरको लौट गईं। लौटते समय रणजित्ने चण्डी और पञ्चनगरमें आग लगा दी। नगर छार छार हो गये।

दुःखी मनसे महाराज रणजित् जब लाहोर पहुँचे तब उन्होंने मादामचन्द्रके रोगग्रस्त होनेका समाचार सुन कर वे और भी दुःखित हुए। इसके कुछ समय बाद ही फिह्रौर दुर्गके विश्वस्त राजनीति और समर कुशल सेनापति दीवान भाषनचन्द्रकी मृत्युकी खबर पा कर वे नितान्त दुःखी हुए। सिक्खासम्रदायने इस उन्नत-मना राजभक्त वीरकी मृत्यु पर अत्यन्त शोक प्रकट किया था। महागजने दीवानके पुत्र मोतोरामको फिह्रौर किले और जालन्धर दोआबका शासनकर्त्ता और दीवान तथा काश्मीर-युद्धमें वीरत्व देण दीवानके

पौत्र रामदयालको सिक्खा-सैन्यका प्रधान सेनापति बनाया।

सन् १८१५ से १८१६ ई०में उन्होंने राजायूरी, भीमथार, रामगढ़, नूरपुर, यगवाल, बहावलपुर, भकर, मानकेरा, उच्छ, पारूपत्तन और मुलतान आदि नाना स्थानोंके सरदारोंको हरा कर धनसम्पत्ति लूटी तथा नजराना वसूल किया था। इसी वर्ष कुमार खड्गसिंह युवराज पद पर अभिषिक्त हुए।

सन् १८१७ ई०में उन्होंने मानकेरा, हाजरा और मुलतानकी ओर यात्रा की। दो बार मुलतान दबल करने में असफल होने पर भी वे निरहत्साह नहीं हुए। अन्तमें सन् १८१८ ई०के जून महीनेमें मुलतानका किला उनके हाथ आया। दुर्गके मालिक नवाब मुजाफर खाँ पुत्रके साथ मारे गये थे। जीतनेके बाद सिक्खोंने नगर और किलेको लूट लिया। इसके बाद इस सिक्ख विजय-वाहिनियोंने मुजावाद पर भी अधिकार कर लिया था।

युद्धमें विजय पाने पर जीते हुए देशोंमें रणजित्ने शासन व्यवस्था ठोक कर दी। दालसिंह, योधासिंह, धन्यसिंह आदि सरदारों पर नगर और दुर्गोंकी मरम्मत करानेका भार सौंपा गया। इस समय जमादार खुशाल-सिंह महाराजके अप्रिय हो गये। इससे (Chamberlain) दरवार-सचिवका पद उनसे छीन कर मियां ध्यानसिंहको दिया गया।

मुलतान-अधिकारके बाद राज्यमें शान्ति होने पर महाराज रणजित् सिंहने कुछ दिनों तक शान्तिमय जीवन बिताया। इसके बाद ही उन्होंने सुना, कि काबुलमें बलवा हो गया है। उन्होंने यह उपयुक्त अवसर सोच कर वहांकी यात्रा कर दी और पहुँचते ही खैरावाद, जहांगीरा, पेशावर आदि स्थानों पर अधिकार कर लिया। किन्तु उनके लौटते न लौटते ही दोस्त महम्मद-खाँने फिर पेशावर पर कब्जा कर वहांसे सिक्ख शासक जहान खाँको निकाल बाहर किया। सन् १८१६ ई०में उन्होंने कल्हार-राजधानी विलासपुर पर आक्रमण किया। किन्तु वहांके सरदारको अंग्रेजोंके सहायता देने पर अपना घेरा उठा लेने पर वे बाध्य हुए। इसके बाद उन्होंने सेनाओंको ले कर वे तीसरी बार काश्मीर-विजयके लिये

पड़े। दीपानन्द, बाङ्गुसिंह और स्वयं महाराजने इन युद्धमें सनाका परिचाजन किया था। सुगोन युद्धमें बरक गाना सेना पताजित हुए। काश्मीर सिपकोंके हाथ आया दीपान मोताराम यहांके प्रथम शासक नियुक्त हुए।

इनके बाद साहोबमें भा कर द्वाइरा पर्यंतको सम्पन्न कर दे फिर मुनसान, पश्चिमपुर और शरहर तक सिन्धुदेगोंकी लूटनेमें प्रवृत्त हुए।

काश्मीर और मुनसानके युद्धके समय राजा महताव कुमारीकी तरह रानी श्याकुमारोने भी दो बच्चोंकी संभ्रह कर अपने गर्भसे उत्पन्न होनेको घोषणा की। महाराजने इन दोनों पुत्राका नाम काश्मीरसिंह और पेगाँरा सिंह रखा। रानी रतनकुमारोके गर्भमें उत्पन्न जड़के का नाम मुनसानसिंह रखा गया। सन् १८२० ई०में मुनसानके शिवाहनरोग-पत्र पर सायन मासकी नियुक्ति, जमादार पुमानसिंह द्वारा डेटागजो भाँ पर भ्रमि काद, मानकेटा-सरदार हाकिम भद्रद चाँसे "सफेद परी" नामक घोड़ेकी प्राप्ति, हाजाराको याज्ञा और उमके प्रसङ्गमें शाह दीपान रामवधानकी मृत्यु, सरदार हरि सिंहकी काश्मीर शासक पद पर नियोग, मोतीरामके कागा ज्ञाना और फिर पुनाये जाने पर उनको अपने ही पद पर नियुक्त होना, यिद्रोही रागार सरदार देवूकी युद्ध में पताजित करनेके लिये मुन्नाबसिंहको जागोत्प्राप्ति समभवकारो विधिपत्र मूर-कुफरका साहोरपरिद्वयन म प्रेय देव महाराष्ट्र सरदार आया साहवका संन्यासो के पेशुमें अमृतसरमें जाना और रणजित्तू साहाय्यका प्राथना करना, सास मन्नाकुमारोस रणजित्तूका विरोध और उनका राश्याधिकार, टावठपिहको विजय तथा पीर मरनिहाबसिंह हका जन्म जेना। छप्यकार, मानकीर, बसिप-मुलतान, मरुद, डेटास्वामर पाँ, पानगढ़, संरण, मरुगढ़ और मानकेटा मादि स्थान और हुगका अधिकार भादि उल्लेख योग्य घटना है।

सन् १८२१ ई०में मानकेटाके नयाबके भारतममपेय करने पर सरदार भरीरसिंह सिन्धिपान बाजियाकी पहाँका गालक नियुक्त कर रणजित्तूने राजकुमार राजा की भद्र और चरपाका शासक नियुक्त किया। इसके बाद सन् १८२२ ई०में साहोर छोड भा कर उन्हा न

फिर नारा और सराप छिडे पर भाक्रमण भीर अधिकार किया था।

विषयात क्रमसासो धीर भयोन्निपन बातापादको पित्रविजयिनी जिकिक पाटलरुक् रणोत्तम क्षीप हाने पर क्रमसीसी-सेनापतिकी सामरिक विषयम उन्वितिसाम द्राप सम्पप्रतिष्ठ होनेका भाशा निमूल हो गए। उस समय कइ उरुषाकाइहा युयुक् युयुचिनागमें नौ हरो पाने को भागासे पारस्वक ग्राहक यहाँ भाय। यहाँ भी उरुति उगयुक्त पद नहीं पाया। फिर रणजित्तूसिंहके रजोरसाह को सुन कर उनके यहाँ नौकरा पानेकी गरजस प उनक दरबारमें मान पर उचत हुए। किन्तु कहीं राहमें कौइ विपद् न उपास्थित हो जाय, इसलिये उरुहोंन मुसलमानी देलमें कापुम कइहार होत हुए भारतमें प्रवेग किया। सन् १८२२ ई०के मार्च महानेमें ये साहोर दरबारमें पदु से धीर उरुहोंन उनके यहाँ नौकराक लिये प्राथना की। रणजित्तून पदस तो वैदेशिक होनेको बरह इन पर विश्वास नहो किया। किन्तु पाठे उनको उरुहोंन यूरो पोप ड ग पर सिक्क सीनिर्वाक शिक्षा दिलानेके लिये उन सबोंको भाले यहाँ नौकर रथ किया। भापन नौकर रथनेसे पहले इनको कइ दिया था, कि तुम लोग गो मास भक्षण तथा श्मधुमुपजन (मूठ मुजनाता) नहीं कर सकोगे। पहले कापुमको राहस जो दो युयुक् भाये, उनघ नाम—भेष्टुरा और भाटाई था। ये टाहार नगरमें बाहर एक मकान बना कर रहने लगे। अपन यूरोपोप टगकी शिक्षास सिक्क-सैमिकोंका इन्होंने इतना सुगिष्ठ किया, कि महाराज देव कर उन पर बहुत प्रसन्न हुए थे। इसक तान चार पप बाद स्वैत विजयो क्रमसीसी सेनापति मागान बसरिसक पडाकडू काँजा कोर्ट और भादितापिखमें पदु च कर उनस ना मिले।

सन् १८२३ ई०में पेगायलके शासक वार महम्मद चाँस बलपूर्वक मजराणा पयून करने पर महम्मद मजाम बाँ रणजित्तू प्रति क्रुड हुए। भजाम थाँ माहक भाष रणस रज हाँ कर स्वय पतापर पदु ल। रणजित्तून मा गुज होना भनिपाय समभ कर काँज मेत्री। एक बारह युद्ध हातक बाद सिक्का फौजनि जहांगार किन्हे पर अधिकार कर लिया। इसस भजगाना और भागबूया

हो उठे। दोनों ओरसे फिर युद्ध आरम्भ हुआ। नौशेर रणक्षेत्र बना। शिक्षित सिक्ख फौजोंने अफगानियों को बुरी तरहसे हराया। दोस्त महम्मद और यार महम्मद खाँ पर पेशावरका शासन-भार सौंप कर महाराज रणजित लाहोर लौट आये।

सन् १८२५ ई०में लुधियाना निवासी एक यूरोपीय महिलासे महाराजके प्रिय सेनापति जनरल भेञ्चुराका विवाह हुआ। इस विवाहमें महाराजने बहुत साहाय्य किया था।

सन् १८२७ ई०में सैयद अहमद नामक युसुफजै पहाड़ी एक मुसलमानने अपनेको धर्मसंस्कारक होनेकी घोषणा की। पेशावर तथा अटकके बीचके रहनेवाले अपने चेलोंको महाराजके विरुद्ध उभाड़ कर वह युद्ध करनेके लिये आगे बढ़ा। अकोरेमें सैयदके चले हार गये और पहाड़की गुफामें जा कर उन्होंने अपनी जान बचाई।

इसी वर्षमें महाराजने अपने प्रधान कर्मचारी दीवान मोतोराम और फकीर अजीजुद्दीनको भारत-प्रतिनिधि लाई अमहर्ष्टके साथ भेंट करनेके लिये शिमला भेजा। इसके बाद रणजितके प्रति सौजन्य प्रकाशित करनेके लिये अङ्गरेजोंकी ओरसे लार्डने महाराजके लिये उपद्वीकनके साथ अमृतसरमें एक मिशन भेजा। सन् १८२३ ई०में महाराजने अमृतसरको चहारदीवारीसे घेर दिया था।

इस समय रणजितदेवके वंशधर मियां ध्यानसिंह, गुलाब सिंह और सुचेतसिंहकी प्रतिपत्ति लाहोर दरवारमें बढ़ गई थी। महाराजकी कृपा प्राप्त कर ध्यान सिंहने शीघ्र वजीर-पद और "राजा-ये-राजगान राजा हिन्दपत् राजा वहादुर"-की पदवी प्राप्त की। ध्यान सिंहका पुत्र हीरसिंह रणजितका अतिप्रिय था। महाराज उसको एक दण्ड भी आखासे दूर नहीं करते थे। यह बारह वर्षका बालक महाराजके समीप एक आसन पर बैठकर हमेशा महाराजसे बातचीत किया करता था। अन्यान्य समीप बड़े बड़े कर्मचारियोंको उसके नीचे आसन पर बैठना पड़ता था।

राजा संसारचन्दकी कन्याके साथ हीरसिंहके

विवाह करनेका प्रस्ताव ध्यानसिंहने महाराजसे किया। किन्तु संसारचन्दकी रानीने ऐसे नीच कुलके बालकके साथ विवाह करना नामज़ूर कर दिया और उसके मारे शतद्रुके किनारे अंगरेजोंके राज्यमें जा कर रहने लगी। यहा संसारचन्दकी पत्नी और पुत्र अनिरुद्धचन्दकी मृत्यु होने पर महाराजने ज्ञा कर उसके राज्य पर अधिकार कर लिया और संसारचन्दकी दूसरी रानीसे उत्पन्न दो कन्याओंसे विवाह कर उसका बदला चुकाया था। इसके बाद उन्होंने बड़े ममारोहसे हीरसिंहका किसी उच्च वंशमें विवाह कर दिया। यह सन् १८२६ ई०की बात है।

इस समय सैन्य संग्रह कर पूर्वोक्त सैयद अहमदने सिन्धुनद पार कर पेशावर पर अधिकार कर लिया। जनरल भेञ्चुरा, आलार्ड, हरिसिंह आदिके प्रतिबन्धकता करने पर भी इस वर्मोन्मत्त मुसलमान-दलके हाथसे पेशावरके वरूजें शासक सुलतान महम्मद खाँकी रक्षा न की जा सकी। शीघ्र ही उसका सुखस्वप्न टूट गया। सन् १८३० ई०में सिक्खोंके हाथसे वे पराजित हुए। इसी समय उसके प्रचारित अभिनव विवाहपद्धतिसे युसुफजै चेलों ने रंज हो कर उसका साथ छोड़ दिया। सहायसम्पत्तिहीन सैयद काश्मीर भागा। यहा सन् १८३१ ई०में बालाकोट नामक स्थानमें युवराज शेरसिंहने इस राजद्रोहीका मस्तक काट कर महाराजको उपहार भेजा था।

इस समय रणजितकी राज्यसीमा बहुत दूर तक फैल गई थी और उनकी स्याति और वीरताका प्रभाव चारों ओर फैल गया। इतने दिनोंमें वह यथार्थमें स्वाधीन राजेश्वर हुए। स्वयं अंग्रेजराजने उनसे मित्रता स्वीकार की थी। सन् १८२८ ई०में महाराजके भेजे शाल उपद्वीकनको लार्ड अमहर्ष्ट इङ्ग्लैण्डके राजा विलियमको देनेके लिये ले गये। बदलेमें इङ्ग्लैण्डके राजाने भी लार्ड पलेनके हाथ महाराज को उपहार भेज दिया था। सन् १८३० ई०की २०वीं जूनको अलेक्जेंडर वर्निस नामक एक अंग्रेज सेनापति यह सब उपद्वीकन ले सिन्धुनद पार कर सिक्ख राजदरवारमें आ पहुँचा। महाराजकी आम्नासे उसकी बड़ी खातिरदारो की गई।

सन् १८३१ ई०के अग्रिम महीनेमें महाराजने गवर्नर जनरल काइ विधियम वेस्टिङ्गके यहां गिमतमें भ्रमना एक दूत भेजा । लाइ वेस्टिङ्गने भापसमें राज्य मति सुदृढ़ रकनके लिये महाराजसं से ट टलेका इच्छा प्रकट की । इसके अनुसार दोपर नयनेमें १६वीं अन्तु बरको दोनोकी से टके लिये एक "इशहरा-वर्बाद" किया गया था । २३वीं तारीखकी से सर्वसबल छांटके तमेंमें गय और दूसरे दिन सोअम्य प्रकाश करनेके लिये बड़ काइ रणजित् सिंहके लेनेमे भाये । इस अयसर पर महाराजने अपने अलजिहाका कीराक समागत पूरो पीय भनिधियो को दिलाया था । ३१वां तारीखको परस्पर विवाह समिगलन हुआ । इस अयसर पर भागे की मित्रताको दृढ करनेके लिये एक सन्धिपत्र पर होना के इस्ताफर हुए । इस सन्धिके अनुसार अम्रेजो को सिन्धुनदसे वाणिज्य करनेका अधिकार मिला ।

इसकार दूट जाने पर १६वीं नवम्बरको महाराज काहार राजधानीमें लीट भाये । इसा समय बहावल पुरक सासरक नयाब सादिक महम्मद शाक यहां डेरा गाजो काकि दो वर्षका कर बाका पड़ जान पर जनरल मेज्जुको उसकी सम्पत्ति लूट लेनक लिये भेजा गया । मेज्जुपाने बसपूयक नयाबकी छाः काइकी सम्पत्ति लूट ली ।

इस समय महाराजक इदम्पुं सिन्धुप्रदेशके अधि कारकी वासना जागरित हो उठे । उन्होनि अम्रेजो से सहायता मांगी । बड़े काइने अम्रेजोके व्यपसाय वाणिज्य मुस्त हानक भयसे इस तिययम प्यान न दिया । दोनो मारक वागजित्पत्राके बाद् सिन्धुनदक वाणिज्य कार्यके परिदूरकरूपस सिन्धुनकोटम एक अम्रेज कर्म धारो नियुक्त किया गया । इसके बाद मास बाद् सन् १८३३ ई०के अग्रिम महीनेमें वाणिज्य व्यबसाय पखानके लिये सिन्धुनक अभागे क साथ अम्रेज सरकारकी सन्धि हुआ ।

इसी वर्षमें पानिस साहब फिर लाहोर दरबारमें भाये । सर्वार इंग्लिस इका मृत्यु भाद उसक पुत्र मन्नासि इका इरायती भीर मत्तु क मध्यवर्षी पहाड़ा राजक शासन भाद मति पुसुफजै भीर एक हाजाराकी

विजय, सङ्कल्पित नयाब भासद् जाके पुन शुक्रफिकार जाका अबरौय, सदाकुमारीकी मृत्यु और उसकी सम्पत्ति पर अधिकार तथा उस समयके काबुलके बिन्धव पर योगदान, अमृतसरम बिन्धवत घना शिवप्यास ललियका पनाधिकार, गुलशहर नामकी वेस्पासे विवाह, मुसल मान शैलराज-विजय, काश्मार शासन-संस्कार, अमरल मेज्जुको डेरगाओ काका शासनमार प्रधान और ससारवायके पीतो की जागीर दान भादि इस वर्षकी अन्त्याम्य घटनाये हें ।

सन् १८३३ ई०में महाराजके स्यास्य अरबा हो जानेसे वे पीकृत हुए । पण्डित मजुसूदन भादिने प्रद शक्ति के लिये शास्त्राय प्रावशिक्षककी व्यवस्था की और पाप निवृत्तिके लिये कैदियोंका छाड़ दिया गया । इसी समय सुधियामेस डाक्टर भूर महाराजकी चिह्नितसा करनेके लिये लाहोर आय । महाराज शीघ्र ही रोगमुक्त हुए ।

सन् १८३६ ई०में प्रधान राजक सचिव दीवान मथानी दासकी मृत्यु हो गइ और पण्डित दोननाथको यह पद दिया गया । इस समय बन्गु सीमान्त पर अफ गान विद्रोही हो उठे । महाराजने सभाद् पा कर राजा सुबेतेसि इको विशाह वृमन करनेके लिये भेजा । सीमान्तका विद्रोह शांति हो जानके बाद् महाराज रणजित्ने पेशावरको अपने राजमें मिला लेनेकी चष्टा फा । उनके पीछ मयनिहाक सि ह सिफका-सैबिको का सेनापति बन कर वहाँ थडे । इस वयकी छटौं मइकी पेशावर पर सिफकी का अधिकार हो गया । स्वयं सिफकापतिन पेशावरमें आ कर छावनी कायम कर ली । यह देखा कालुके अमार दोस्त महम्मद मी विचलित हुए । अपने राजके अपहरण करनेवाके रणजित्के विरुद् साहाय्य प्रातिकी आशासे उन्होने अम्रेज प्रतिनिधिसे प्राचना की । इसका कोर फल नहीं हुआ । यह देखा कर उन्होने पारस्वक राजाके पास प्रार्थनापत्र भेजा । अन्तमें प सिफका के साथ युद् करनेके लिये तैयार हुए । रणभेसमें आने पर उनका गाजो फीजांने भापस होमें गइबड़ी मचा ही । अपना सना पर शासन न कर सकनेक कारण से अजासा बाद् छीट भाये । सिफकानि उनका पाछा कर गाना

युष्टि की। इसके बाद सेनाओं के तितर वितर हो जानेके कारण सन् १८३५ ई०में वे काबुल लौट आये। दोस्त महम्मद खराज्यमें जब पहुँच गये तब पेशावरमें महाराजने एक मजबूत किला बनवाया। इसके बाद उन्होंने उत्तर-पश्चिम सीमान्तको सुरक्षित किया।

इधर सन् १८३४ ई०में इंग्लैण्डेश्वरके लिये पत्र और उपढौकनके साथ सरदार गुजानसिंह और भाई गोविन्दरामको कलकत्तेके बड़े लाटके पास भेजा। बड़े समागोहके साथ लाहोरमें दशहरा-दरवार कर महा राज बतला, स्यालकोट और भेलम प्रदेश देवनेके लिये गये। रोहताममें आ कर उन्होंने स्वयं मित्त भिन्दके राजा सङ्गनसिंहके मृत्यु समाचारसे दुःखित हो कर लाहोर लौट आये। इस समय सरदार श्याम सिंह अतारीकी कन्याके साथ राजकुमार नवनिहाल सिंहका विवाह होना निश्चित हुआ। उक्त वर्षमें जम्बु-राज गुलाबसिंहके सेनापतिने लाटक पर अधिकार कर लिया।

सिन्धुप्रदेशके अमीरोंको निर्बल देख सन् १८३६ ई०में रणजितके मनमें उनके प्रदेशों पर अधिकार करने की इच्छा हुई। सिन्धु-सीमाके रोजहनवासी उनके आश्रित गुलाम शाह कल्हारके प्रति सिन्धुवासी मजारियोंके अत्याचार करनेसे उन्होंने उनके विरुद्ध युद्ध कर उनको दण्ड दिया। इसके बाद उन्होंने पेशावरमें जा कर सुलतान महम्मद खाँको कोहाट नगर और दोआबकी जागीर दी थी। इसके थोड़े दिन बाद ही महाराज लकवाकी बीमारीसे आक्रान्त हुए। इसी समय डाक्टर मैकग्रेगर, हर्लन, हनिग्वर्जर, वेण्टून आदि अमेरिका और यूरोपवासी मनीषियोंने लाहोर देखनेके लिये आगमन किया।

सन् १८३६ ई०में पञ्जातरवासी युसुफजै और खैर-वासी अफरीदी जाति पर सिक्खोंने विजय पायी और सिन्धुसीमान्तस्थित रोजइन और कान दुर्ग सिक्खोंके हाथ लगे। इसी सम्बन्धमें उनका अंग्रेजोंसे विरोध उपस्थित हुआ। अङ्गरेज कप्तान चार्डके कहने सुननेसे वे गान्त हुए। किन्तु सिन्धु-प्रदेशका एकाधिपत्य उनके मनमें जागरित रहा।

सन् १८३६ ई०में नवनिहाल सिंहके विवाहके व्ययके लिये महाराजने स्वतन्त्र 'पेशकास' वसूल किया। सन् १८३७ ई०में यह विवाह सम्पन्न हुआ। इस विवाहमें अङ्गरेजराजके प्रधान सेनापति सर हेनरी फेन उपस्थित थे। उन्होंने वरको ११ हजार और राजा ध्यानसिंहको १ लाख २५ हजार रुपया उपहार दिया था। विवाहके बाद कई दिनों तक आमोद-प्रमोदके साथ विवाह कर महाराजने यथोपयुक्त उपढौकन आदि दे कर अंग्रेजराजके सेनापतिको विदा किया।

सन् १८३७ ई०के शोककालमें सिख-सेनापति हरिसिंह खैवर पथसे आ कर जमरूद-दुर्ग पर अधिकार कर लिया। अमीर दोस्त महम्मदने इस समाचारसे सिक्खोंके विरुद्ध सैन्य भेजा। हरिसिंहकी अनुपस्थितिका अनुभव कर मिर्जा शामोखाँ और अमीरके पुत्रोंने ३० एप्रिलको जमरूद पर आक्रमण किया। वे दुर्गमें घुस रहे थे, ऐसे समय हरिसिंहने आ कर पीछेसे गोलावर्षण किया। इस पर अफगान सैनिक तितर वितर हो कर भाग गये। इस अवसर पर अमीरपुत्र महम्मद अफजल खाँ और अफगान सेनापति शमशुद्दीन खाँके अधीनमें साहाय्यकारी सेनादल आ कर सम्मिलित होनेसे फिर दोनों दलोंमें युद्ध आरम्भ हुआ। युद्धमें हरिसिंह मारे गये। सिक्खोंने जमरूद दुर्गमें आश्रय लिया। महाराज अपने लगेटिया यार प्रवीण सेनापतिकी मृत्यु और सिक्ख-सैन्यकी हारसे विचलित हो कर स्वयं रोहतसकी ओर चले और ध्यानसिंहको जमरूद विजयके लिये भेज दिया। ध्यानसिंहके आ जाने पर अफगानी सफेदकोट नामक पहाड़ोंमें छिप गये। इधर हस्तनगर पर आक्रमण करनेवाले अफगान सरदार हाजी खाँ आदि सिक्ख सैन्योंके सामने न उट सकने पर पीछे हटे।

इसी वर्षके अषट्वर महीनेमें सरदार फतेह सिंह अहलुवालियाकी मृत्यु हुई। महाराजके आह्वानुसार सरदारका ज्येष्ठ बेटा निहालसिंह पिताकी सम्पत्तिका उत्तगधिकारी बना। इसी समय मण्डीराजके मन्त्री धानीने आ कर खबर दी, कि बृद्ध राजा राजकार्य संभालनेमें अक्षम हैं। इस पर महाराजने राजाके भतीजे चालावीर सिंहकी ही गद्दीनशीन किया और उसे वहाँका

राज्य बसानेकी भाजा है। राजपूताने सपनिहास सिंह के अधीनस्थ सेनानायक शत्रुघ्नसिंह मान भीर सेत सिंहने टुकड़े बसयेकी शास्य किया।

इस समय हिंदावतिल कामराजके साथ पारस्यके राजसे मनोमामिष्य हो गया। इस-नृत काउट सार्द मोनोक उपदेशानुसार शाहने हिंदावत पर घेरा बाजा भीर नाहिर शाहके राज्यान्तगत गजनी भीर कम्बहार पर बाधा किया। मध्य पश्चिममें कसका प्रानुमाप देक बड़े काट भाकसेरहने उत्तर पश्चिम सीमास्तका मजबूत बनानेके लिये कम्पनीने भलेकजबडर बर्गिसको काबुलके साथ मित्रता स्थापनके इहंश्यसे मेजा। काबुल पहुँच उरहने-ने मित्रता स्थापित करनेकी चेष्टा की, किन्तु ममीने कहा, कि साहोरेके महाराज रणजित्की पराजित करनेमें हमारी मदद करो, तो हमारी तुम्हारी मित्रताकी सन्धि हो सकेगी। किन्तु उन्होंने महाराजके विरुद्धाचारो बनना सोझार न किया, किन्तु इन दोनों क्षमों सझाय स्थापित करा देनेकी चेष्टामें व रहने लगे।

बर्गिस ममी काबुलमें ही थे, कि ममीर काबुलस मेर करनेके लिये कस-नृत विद्वेषिक भाये। काबुलके भूमोर पारस्यके फरमें पड़ गये थे। बर्गिसको बड़े काटने कीट धानेकी भाजा है। सन् १८३८ ई०की यह घटना है। बर्गिस जब भीर कर साहोरे भाये, तो महा राजने उनका बड़ा भार सत्कार किया। बर्गिस जब शिमला पहुँचे, तब उन्होंने बड़े छाटसे काबुलकी समस्या कही। बड़े काटने दोस्त नहम्मद भीर महा राजका मित्रता असम्मय समक शाहशुजाको काबुलकी गहा पर बैडाना स्थिर किया। इसके लिये बड़े काटने राजनीति क समस्याकी समासोचना करनेके लिये दोनों पक्षके हितको कामनासे मिश्र मन्नेटनकी जाहोर दर बारमें मेज दिया। महाराज इस समय अहीन मगमें रहत थे। येर सिंहके पुत्र महाराजके पीठ प्रताप सिंह ने अङ्ग्रेज-नृतका मामत-सागत किया। २६वीं भीर ३१वां महीको महाराजके साथ अङ्ग्रेज-नृतस मेर हुह। महाराज अङ्ग्रेजोंके प्रस्ताव पर अपनी सम्मति दी भीर कहा, कि बिजय होत पर मैं जलासाबाद् खं लूँगा।

सन् १८३८ ई०के नवम्बर महामें अङ्ग्रेजा फौजे

फिरोजपुरमें सिक्कोंके साथ भा मिठा। बड़े काट भाकसेरहने ३०वां नवम्बरको प्रकाश्य दरवाजे महाराज से मेर ट की। अङ्ग्रेज भीर सिक्का फौजोंने शाह शुजाके अधीन रह कर दूसरे वर्ष २६वीं नवम्बरको कम्बहार पर विजय पाई। ८वीं महीको शाहशुजा कम्बहारकी गहो पर विरासमान हुआ।

इस युद्धमें सिक्क-सेन्यकी वीरता देक कर बड़े काट न महाराज रणजित्के पचाय महस्यका हृदयकृत किया। साहं मरु सैरुह भादि भतिघियोंकी अम्यर्थनाक समय महाराज रणजित्सिंहने कुछ अधिक मघपान कर लिया था। फलता ये लकवाकी बीमारीसे पीड़ित हुए। इस बीमारीसे उनको बोख-बाह बन् हो गए। उस समयसे ये इशारेस भाजा देने लगे। इस समय जकूर मूर पीस, मेरु मूर भीर हनिगवाज्जारेक पक्षसे वे रोगमुक्त हुए। इसके बाद ही वे फिर रोगाकान्त हुए। इस तप्य हकीम, राजसैधौने भा कर भीषण-परिषरैमकी भ्यबस्था की। गुरु शास्त्रिसत्यपनादि द्वारा रायशास्त्रिका उपाय करने लगे। अन्तमें राजाकी मानसिक पुबसताकी दूर करनेके लिये हकीम फकीर अजोतुहोनेम अपने हाथसे एक महनुम या मोरुठ प्रस्तुत कर महाराजकी शिजाया। किन्तु ये कृमश दुर्बल ही हाते गये। अन्तमें साहोरे दुर्गमें उन्होंने २८वां जून सन् १८३९ ई०में अपना नभ्वर कसेर लयाग इस घराघामस फूष किया।

उन्होंने मृत्युके पहले ही प्रधान प्रधान सरदारोंके सामने अपने स्पेष्ठ पुत्र वज्रगुप्तिको अपनी भयना उत्तराधिकारी बनाया। राजा ध्यानसिंहको सम्मान जवक उपाधि प्रदान की गई भीर इन्हें मिश्रपद् पर नियुक्त किया गया। राजकार्यके कर्त्तव्यके मनुसार यह समा धार तुरत हा मुजतान, पेशावर, काश्मार भादि अथी नस्य राज्यों के शासनकलाभो के पास मेज दिया गया।

महाराजका अल्पविक्रियाक दिन हजारों उपाय नङ्गे भूषोंकी सुदयाया गया। मृत्युन पूर्व ध्यानसिंहने १० लाख रुपये कर्ष कर एक उष्य बेशा ठप्पार कर उस पर जाम बिछया महाराजकी सुना दिया था। यह जाम द्यु हजार रुपयेका था। महाराजकी अल्पविक्रिय दिन भी जगप्रायदयका प्रसिद्ध कादिनूर हाप दान कर देनेकी

वात हुई । किन्तु तोपखानेके अध्यक्ष मित्र वेणीराम ने उसको राजसम्पत्ति कह कर इस कामके लिये नहीं दिया ।

जब रणजित्की देह चिता पर जलानेके लिये जान लगी थी, तब उनकी निःसन्तान चार रानिया और सात बाँदियाँ स्वर्गरोहणकी कामनासे सती होनेके लिये खुले पैरसे शवदेहके पीछे पीछे चलीं । रानियोंमें संसार-चन्द्रकी कन्या राजदेवी भी थी । डाकुर हनिगजाजार् यह वीभत्स घटनाको देख कर चमक उठे । उन्होंने लिखा है, कि स्वर्गमें स्वामीके साथ सुपत्ने दिन वितानेकी आशासे ही उन रानियों और बाँदियोंने महाराजके चितामें अपने शरीरको जला कर सतीका नाम पाया था । ध्यानसिंहको भी महाराजकी मृत्युका बड़ा जोक हुआ था । उन्होंने भी अपने परिवारके सभी व्यक्तियोंके साथ महाराजकी शवदेहके साथ जल जाना स्थिर कर लिया था । किन्तु वे रोके गये । दो दिन तक चिता जलती रही । इस चिताके साथ कोई चीन्हा प्राणियोंका संहार हुआ । पीछे चितामस्म ले कर उनके परिवारका आदमी हरिद्वारकी गद्दाजीमें डालनेके लिये ले आया । इस समय भी बहुत धन बख लुटाया गया । कहनेका प्रयोजन नहीं, कि तेरह दिनके बाद प्रेतकार्य करनेके दिन ब्राह्मण पण्डित तथा फकीरोंको बड़े धन दान किया गया था ।

महाराज रणजित् सिंह कुछ पढ़े लिखे व्यक्ति न थे, किन्तु सदा वे विद्वान् पण्डितोंका आदर सरकार किया करते थे । उनके राजकार्य चलानेके लिये उच्च पदस्थ कर्मचारी उनके साथ साथ घूमते थे और जो काम या कानून उनकी आज्ञा पर निर्भर करता था, वे उन सबोंके सम्बन्धमें कर्मचारियोंसे फारसी, हिन्दी अथवा गुरुमुखी भाषामें पढ़वा कर अपनी राय दिया करते थे । उनके आज्ञानुसार कार्य हुआ या नहीं इसकी जांच करनेके लिये फिर वे उन्हें पढ़वाते थे । यूरोपीय दर्शकोंसे वे हिन्दी तथा खड़ेगो आदिमियोंके साथ गुरुमुखी भाषामें बातचीत करते थे । वे छोटे कदके थे । बचपनमें ही शीतला रोगसे उनका बाया नेत्र नष्ट हो गया था । मुख पर भी शीतलाका दाग था ।

सुपत्ना मीन्दर्प तो उनको छू नकन गया था, किन्तु उनके गाम्भीर्यकी और दृष्टिपात करने पर उनकी सरलता, चाक्यालापमें मनाहारिता, उच्चान्त और बृह प्रतिष्ठा और निर्भीकता स्वतः ही मनमें दौड़ आती थी । उनकी जो एक आंग बच गई थी, वह ब्रायन, चञ्चल, सूक्ष्मदर्शी और उनके मानसक्षेत्रों गूढ भावशुद्ध थी । उनका दीर्घश्वेतशमश्रु (मूँछ), उनकी शिथिल प्रकृतिपरिचायक था । जब वे सिंहासन पर बैठ कर विचार करने बैठते थे, तब उनका एक हाथ जङ्घे पर और एक हाथ मुँह पर ही रहता था । इससे ही उनके वैयक्तिक गवेषणाका पता चलता था ।

उनका हृदय स्नेह और काठिन्यमें परिपूर्ण था । अतिधिक आदर सरकारकी चरमसीमा वे शिक्षा गये हैं । यूरोपीय और वैदेशिकोंके प्रति उन्होंने जो सरल और सद्यहृदयता दिखाई थी, वह उच्चान्त अक्षरोंमें इतिहासमें लिखा हुआ है । लार्ड-विलियम वेण्ट्रिक और लार्ड बरलैण्ड उनकी सदाशयता और भ्राम्यिकतासे बहुत हा परिचुत हुए थे । फारसी परिदशक सूसों मिस्टर जैकमोएन्ने लाहोरमें आ कर महाराजसे वात्सलाप कर लिया है, कि उनके जैसा अनुसन्धितमापरायण व्यक्ति अति विरल है । वे सब विषयोंमें पूर्ण रूपसे समाचार संप्रद करनेमें विशेष आग्रह प्रकाश करते थे । एक बातमें उनको "छोटा बीनापार्ट और एक असामान्य मनुष्य कहा जा सकता है ।" लेफ्टनेण्ट वर्निस कुछ शब्दोंमें महाराजकी उदारता और महत्त्वका जो परिचय दिया है, उस पर विचार करनेसे मनमें स्फुटि दौड़ती है । उन्होंने अपने नम्रण-वृत्तान्तमें लिखा है —

"I never quitted the presence of a native of Asia with such impression as I left this man, Without education and without a guide he conducts all the affairs of his kingdom with surpassing energy and vigour and yet he wields his power with a moderation quite unprecedented in an eastern Prince"

यौवनके समय वे कर्मठ, वीर्यशाली और उद्यमशील थे । शिकार खेलनेमें उनकी विशेष प्रवृत्ति थी,

घोड़े की मयातीमें पट्टे थे। इसी कारण उन्हींमें प्रसिद्ध लेनों लफटपटा भादि घोड़ोंक सभ्र करमें भागप्र प्रकाश किया था। उनको बहल-बहल पसन् थी। उन्होंने राजकर्मचारियोंको बहुत वेतन और वृत्तिवा दिया करते थे, जिसमें वे बहुतस्य बत्ता का पदन कर इवारका शोभा बढ़ाया करे। वे हुजोंक समय करनेवाले थे, बगलक वृत्त राजाओंको एएके कर, उन्होंने उनक राज्यको लूटा था। पिछले समयमें इस लूटने को प्रवृत्तिमें सी कमी आ गई था। हां नजबाना और करसंग्रह करमें वे जरा भा विषकृत न थे। वे कहर धार्मिक न थे। फिर भी, वे प्रथम साहबका पाठ तथा प्रयासनेय नित्य करी करते हा थ। तादीमें पूजा भादि कर्ममें उनको विशेष भक्ति न थी, गुरु, मार, बाबा साधु और निक्षुकी को अर्थ दान कर उन्होंने क्षामशीलता का विशेष परिचय दिया था।

एनत्रय (सं० पु०) रत्न जयति सि ज मुसूध । १ एनत्रेता युद्धनं त्रय करतोयामा । (भाग० ६।१५।१) २ राजनेत्र एक राजाका नाम ।

एनन्य (सं० स्त्री) एनस्य तृपे । युद्धपाथ, जडाइका बंका । पवाय—संप्रामयवद, अमयकिण्डम ।

एनकार (सं० पु०) अन अन गन्ध करना ।

एनयम्बर—राजपूतानेक जयपुर सामन्तराज्यक अन्तर्गत एक गिरिपुरा । यह अक्षा० २६ २ उ० तथा देशा० ७१ ३० पू०क मध्य अवस्थित है। जनमानसमूह्य एक ऊँचे पर्यंतक ऊपर प्राचोर काइ और बुर्जा द्वारा परिष्ठांनित यह ऊँचा दुर्ग प्राचीन गौरवस्थितिकी घोषणा करता है। दुर्गक भीतर यहाँक गजपूत गासनकर्ताका प्राचीन प्रामाद मसजिद और सनायास स्वतन्त्र मायमें निर्मित है। दुर्गके पूर्व नगर बसा हुआ है। दुर्गबामना पर्यंत पर छोटा बुह सीढ़ा हो कर नगर भाग है।

यह दुर्ग बहुत दिनों तक बीहानवराक अधिपतारमें था। १२३१ ई०में बिहोके विजयपराय मुसलमान राजा अमीरउद्दीन इन दुर्गम घेरा डाला था। किन्तु इनवर्ष न हो सका। १२३६ ई०में इबादाबादक यजमान इस दुर्ग पर आक्रमण किया। अन्तमें अनाउद्दीनने एन यम्बरका ज्ञात कर यहाँक राजाको सपरिहार मार डाला

था। इसके बाद राजपूतों न विहोशरते यह दुर्ग पुनः छान लिया। १५१६ ई०में मालवराज इस दुर्गके अधीश्वर थे। १५१३ ई०में मुगलसम्राज हुमायूने जब महम्मद गाहको विहोस मार भगाया, उसके बाद ही यह वृद्धी राजक हाथ भाया। उन्होंने पीछे रते भकबरजाहको लीटा दिया। १७वीं सदीक मध्यभागमें मुगलसाम्राज्यक अन्तःपतन होने पर जयपुरराजान इसे क्षल किया। दुर्गक भीतर प्राचीन कीर्तिक अमक निशान पड़े हैं। एननुम्बि (सं० पु०) एनस्य दुम्बुभिः। एनमेटी युद्धक मगाहा ।

एननुगांधारण्यमन् (सं० स्त्री०) एननुगाया धारण्यमन् । एननुगांधीका धारण्यमन् । दुगांधीका यह मन्त्र भाष्यपत्रपर लिख कर पहनना होता है।

एनयवन—मेवाडके राजा ।

एनघोर सिंह—कपूरथलाके एक हिन्दू राजा, महापञ्च एन जित्क सनापति साधार फगसिद्धक पीस। ये १८५२ ई०क सितम्बर महोनेमें पिता महालसिद्धके मरने पर २२ वर्ष की अवस्थामें विद्वंसिद्धान्त पर अभिविक्त हुए। उच्च शिक्षागुणस इनका ब्याज बहुत ऊँचा था। अंगरेशा भागामें भा इनको अच्छी प्युल्पसि थी। १८५७ ई०क गर्दमें इन्होंने अपना सनायक सं पर अगरेजोंकी ओरस जालम्बर और दुसियाएपुर दुर्गको रक्षा की था। इसक सिवा इनक तथा इनक भाइ कुमार विजयसिद्ध द्वारा जालम्बर दोबाब और वशिष्ठ रावतू मन्त्रेयका विश्राह गाल्य द्विप ज्ञान पर अगरेज राजमें प्रसन्न हो १ सत्र २३ हजार रुपया सेा राजाक यहाँ हाका था छात्रु दिया और वार्षिक राजकरमेंसे सी ५५ हजार रुपया परा दिया। इसक भत्ताया इनको ११ हजार और इनके भाइका ५ हजार रुपयकी गिरमन दी तथा 'वारकन्द विजयम्व रसिधाम इतिहाद' उपाधिके साथ साथ राजाके सम्मानार्थे तापडा संवा नी बड़ा दी थी। १८५८ ई०में अयाध्यामदहाका विद्रोह जब दमन किया जा रहा था, तब इन्होंने बहा धारता दिया कर १०० सोले ६ हजार टांन डी पो। दूरा महान तक इन्होंने एनयवनमें की अधिधान्य परिधम किया उससे भारत-सरकारन दुर्ग हा एहें अयाध्याके अन्तगत साथ २२५ मायका पू हा और

विजौली राज्य-प्रदान किया। केवल यही नहीं, इनके पिता-के मृत्युकालमें चैतुक वडि-टोभाव सम्पत्ति जो सरकारने छीने ली थी उसे भी वापस कर दिया। कुमार विक्रमसिंह बहादुरको बहराइच जिलान्तर्गत वार्षिक ४५ हजार आय-की एक सम्पत्ति पारितोषिकमें मिली। इसके बाद लार्ड कैनिङ्गने दत्तक ग्रहणका अधिकार देते हुए एक सनद और 'राजा-इ राजगन्'-की उपाधि प्रदान की।

१८६४ ई०के अक्टूबर मासमें रणधीरने लाहोर-दर-वारमें काश्मीर और पतियालाके महाराज, हिन्द और फरिदकोटके राजा तथा अन्यान्य स्वाधीन सिख-सरदारों-के सामनेमें 'स्टार थाव इण्डिया'की पदवी पाई।

१८७० ई०में इन्होंने इङ्ग्लैण्डकी यात्रा कर दी। आदेननगरमें पोडित हो २री अप्रिलको इनकी मृत्यु हुई। अनन्तर इनके लडके खड्गसिंहने पिताकी मृत देह नासिक नगरमें ला कर अन्त्येष्टि किया की।

रणधीरसिंह—जाटराज रणजित् सिंहके पुत्र। पिताके मरने पर ये भरतपुर-मसनद पर बैठे थे।

रणन (सं० क्ली०) शब्द करना, वजना।

रणपरिडत (सं० पु०) योद्धा।

रणपुर—बम्बईके अहमदाबाद जिलेके धनुका विभागका एक नगर। यह अक्षा० २२° २१' उ० तथा देशा० ७१° ४३' पू०के मध्य मद्रनदाके उत्तरी किनारे अवस्थित है। जनसंख्या साढ़े छः हजारसे ऊपर है। वर्त्तमान भाऊ-नगर-राजवंशके पूर्वपुरुष रणाजी गोहेल नामक एक राज-पूत-सरदारने १४वीं सदीके प्रारम्भमें इस नगरको बसाया। रणजीके पिता शेकाजी पहले पहल यहाँ आये थे। उनके नामानुसार पहले इस स्थानका सेजाकपुर नाम पडा। पीछे उनके लडके रणाजीने नगरको दुर्गसे सुरक्षित करके अपने नाम पर इसका रणपुर नाम रखा। १५वीं सदीमें इस वंशका कोई सरदार इस्लाम-धर्ममें दीक्षित हुआ। तभीसे वह वंश रणपुर मोलेसलम कह-लाता है। १६४० ई०में सगदार आजम खाने शाहापुरका दुर्गप्रासाद बनाया। १८वीं सदीमें यह नगर गायक-वाड़ द्वारा अधिकृत हुआ। पीछे १८०२ ई०में यह अंग-रेजोंके हाथ लगा। यहाँ भाऊनगर-गोण्डाल रेल-पथका एक स्टेशन और डाकघरला है। १८८६ ई०में गुनिस-

पलिटी स्थापित हुई है। शहरमें एक मिडिल स्कूल, दो वर्नाकुलर स्कूल और एक अस्पताल हैं।

रणपुर—उडिसा-विभागके अन्तर्गत एक देशी सामन्त-राज्य। यह अक्षा० १६°५४' से २०° १२' उ० तथा देशा० ८५° ८' से ८५° २८' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरि-माण २०३ वर्गमील है। इसके उत्तर, पूर्व और दक्षिणमें पुरी जिला तथा पश्चिममें नयागढ़ राज्य है। इस राज्य-का दक्षिण-पश्चिमपक्ष पहाड और जंगलसे आच्छादित है। इस अंशमें मनुष्योंका वास नहीं है, केवल नयागढ़ राज्यमें जानेका गिरिपथके समीप एक छोटा गाँव है। यहाँ राजाका प्रासाद है। प्रति समाहमें दो बार करके हाट लगती है। खण्डपाडा, चिन्काहद आदि दूर देशोंसे भी इस हाटमें द्रव्यादि विकनेकी आने हैं।

ब्रिटिश सरकारको राजा वार्षिक १४०० रु० कर देते हैं। राजमालामें लिखा है, कि ३६०० वर्ष पहले बासर वासुक नामक एक व्याधने इस राज्यको बसाया। रणशूर-के नामानुसार इस स्थानका नाम रणपुर हुआ। यहाँ-की जनसंख्या ४५ हजारसे ऊपर है जिसमेंसे तृतीयांश हिन्दू हैं। राज्यमें १ मिडिल स्कूल, ३ अपर प्राइमरी और ३८ लोअर प्राइमरी स्कूल तथा १ अस्पताल है।

रणपुरस्वामिन् (सं० पु०) सूर्यमूर्त्तिभेद।

(राजतर० ३।४६२)

रणप्रिय (सं० क्ली०) रणे प्रियं। १ उशीर, खस। (पु०)

रणः प्रियोऽस्य। २ स्येनपक्षी, बाज पक्षी। ३ विष्णु।

(भारत १३।१४६।८३) ४ युद्धप्रियमात।

रणबहादुर शाह—नेपालके एक राजा। इनकी महिषी ललिततिपुरासुन्दरी देवीका १८७५ सम्बत्में उत्कीर्ण शिलाफलक मिलता है। नेपाल देखो।

रणभञ्ज देव—१ उडीसाके भञ्जवंशीय एक राजा, विग्भञ्ज-के पुत्र तथा क्रोडुभञ्जके पौत्र। २ उक्त वंशीय एक दूसरे राजा। इनके पिताका नाम था शत्रुभञ्ज देव।

रणभीत—कलिंगके एक सामन्त राजा।

रणभू (सं० स्त्री०) रणस्य भूः। रणभूमि, लडाईका मैदान।

रणभूमि (सं० स्त्री०) वह स्थान जहाँ युद्ध हो, लडाईका मैदान।

रघुमूष—सहायि वर्णित एक राजा । (कथा० १११२१)
 रघुमण्डल—सहायि वर्णित एक राजा । (कथा० १०११२)
 रघुमरवा (हि० स्त्री०) पूरुषी ।
 रघुमत्त (सं० पु०) रजे रजे प्राण्य वा मत्तः । १ हस्तो
 हायो । २ युद्धमें मत्त ।
 रघुमाली—सहायि वर्णित एक राजा । (कथा० १११३०)
 रघुमह—मदरूपकी (मारवाइ) प्रदेशका एक राजपूत
 राजा ।
 रघुमुञ्ज (सं० स्त्री०) युद्धार्थी मेनादके परम्परका
 सम्मुक्तमाग ।
 रघुमुष्टि (सं० पु०) यिष्टिमुष्टि रूप कुचिमा ।
 रघुमुष्टिजा (सं० स्त्री०) कर्वाट्टगी ।
 रघुमुष्टिन् (सं० पु०) युद्धका सम्मुञ्ज देश ।
 रघुराज (सं० पु०) हायीक बाहरी दोनों दोनोंके बीचका
 भाग ।
 रघुराज (सं० पु०) १ युद्धशील, अर्थात्का अस्माह २
 युद्ध, अर्थात् । ३ रघुस्थ, युद्धसेत ।
 रघुराजस्य—धारा (मामथ) देशाधिपति । रघुने राज
 धारिक नामक योग्यद्वारा एक धारिक प्रणयन किया ।
 मोन्तराज रत्ना ।
 रघुरथ (सं० स्त्री०) १ उदाहन, ध्यमता, धरवाइत । (पु०)
 रघुरथ इति शब्दोऽस्त्यस्येति अर्थ आदिवाइत् । २
 मसक, मच्छक । ३ पठताया रथ । (हि०) रथे रथः
 शब्दो यस्य । ४ रथगज नशील ।
 रघुरथक (सं० पु० स्त्री०) १ कामधेय । २ उत्कृष्टा
 प्रथम कामना । ३ ध्यमता, धरवाइत ।
 रघुरथी (सं० स्त्री०) विजयलक्ष्मी युद्धकी देवी जो
 विजय करमेवाजी मानी जाती है ।
 रघुस्थ (सं० पु०) रथमेव ।
 रघुविक्रम—एक हिन्दू-राजा ।
 रघुविग्रह—एक हिन्दू-रथपति ।
 रघुवीर सिंह—कामोरेक एक गहाराज. महाराज गुमाय
 सिंहके पुत्र । वे १८५३ ई०में राजसिंहासन पर बैठे ।
 १८८५ ई०का १२वीं सितम्बरको इनको मृत्यु हुई । अ ग
 रथ सरकाएल इन पर सत्य हो कर थोड़े मूल्यमें इन्हे
 कामोरे उपत्यका छोड़ दी । इनके पुत्र प्रतापसिंह
 पिताके मरने पर राजा हुए ।

रघुवृत्ति (सं० पु०) सैनिक योद्धा ।
 रणगिज्ञा (सं० स्त्री०) रघुस्थ गिज्ञा । युद्धाभ्यास ।
 रणगुर (सं० पु०) रजे गुर । युद्धस्थलमें घोर, जो
 युद्धमें वीरता दिखाते हैं । २ वृत्तिपराइके भाविगुर
 बन्दोद एक स्वाधीन राजा । ११वीं सदीमें राजेन्द्र
 चौलुके हाथसे पराजित हुए थे ।
 रणसङ्कुल (सं० स्त्री०) रणस्थ स कुल । तुमुक, युद्ध ।
 रणसखा (सं० स्त्री०) सैन्य समाधेरूप ध्यापार मेव ।
 रणसज (सं० स्त्री०) रणयज्ञ ।
 रणसिंघा (हि० पु०) तुमुक, नरसिंघा ।
 रणसिंह—एक मेहराराज ।
 रणसिंह—मेवाड़के एक राजा । ये वायव्यार्धगीय विक्रम
 सिंहके बाद राजगद्दी पर बैठे ।
 रणसिंहा (हि० पु०) प्यथिंघा रत्ना ।
 रणस्तम्भ—राजपूतानेके अन्तर्गत एक नगर । सम्मयता
 यह स्थान वर्तमान रणस्तम्भ या रणस्तम्भक है ।
 (देशानुकी ३३१)
 रणस्तम्भ (सं० पु०) यह स्तम्भ जो किसी रणमें विजय-
 प्राप्त करनेके स्मारकमें बनवाया जाता है, विजयका
 स्मारक ।
 रणस्थल (सं० पु०) अर्थात्का मैदान, रणभूमि ।
 रणस्थान (सं० स्त्री०) रणस्थ स्थान । युद्धस्थान,
 अर्थात्का मैदान ।
 रणसामिन् (सं० पु०) १ गिष, महादेव । रणस्थ
 सामी । २ युद्धका प्रधान सञ्चालक या सेनापति ।
 रणस (सं० पु०) एक वर्णद्वारा नाम । इसके
 प्रत्येक धरणमें सगण, अगण, मगण और राजण होते हैं ।
 इसको 'मनर्हस' 'मानर्हस' और 'मानसह स' भी कहते
 हैं ।
 रणर्हास्तन्—राजविजय नामक श्लोक्तिप्र' धक रचयिता ।
 रणाग्नि (सं० पु०) रणमहाग्नि । रणरूप अग्नि ।
 रणाग्र (सं० स्त्री०) १ युद्धका मार्ग । २ युद्धका
 सम्मुक्त देश ।
 रणाङ्क (सं० स्त्री०) युद्धाङ्क आदि ।
 रणाङ्क (सं० स्त्री०) युद्ध-स्थल अर्थात्का मैदान
 रणाञ्जि (सं० पु०) साध्यमेव ।

रणाजिर (सं० क्ली०) रणस्थल, युद्धक्षेत्र ।

रणातोद्य (सं० क्ली०) वह ढाक जो युद्धक्षेत्रमें वजाया जाता है ।

रणादित्य—१ काश्मीरके एक राजा । ये राजा युधिष्ठिरके पुत्र और नरेन्द्रादित्यके अनुज थे । राजा नरेन्द्रादित्यके परलोकवास होने पर रणादित्यका काश्मीरके सिंहासन पर अभिषेक हुआ । राजा रणादित्य तुज्जिन नामसे भी प्रसिद्ध थे । इनकी स्त्री रणारम्भा स्वयं वैष्णवी शक्ति ले कर भूतलमें अवतीर्ण हुई थी । राजा रणादित्यके पूर्व-जन्मकी कथा राजतर्ङ्गिणीमें लिखी हुई है ।

राजा रणादित्य पूर्वजन्मके जुआड़ी थे । वे किसी समय जुएमें अपना सर्वस्व हार कर विशेष दुःखी हुए । अनन्तर वह धनप्राप्तिकी आशासे शरीर त्याग करने पर उद्यत हुए । धूर्त मृत्युके समय भी स्वार्थ साधन करनेसे नहीं हिचकते । विन्ध्याचलकी देवी भ्रमरवासिनोके दर्शन करनेसे इष्टसिद्धि होती है । इस कारण वे उनका दर्शन करनेके लिये तैयार हुए । परन्तु भ्रमरवासिनी देवीका दर्शन करना बड़ा कठिन है, क्योंकि वहांका मार्ग बड़ा कठिन है । भवरे' और मधु-मक्खियोंके कारण पांच योजन मार्ग काटना बड़ा ही कठिन है । अतएव उसने लोहेका कवच, उस पर मैसेका चमड़ा और उस पर गोबर मिट्टीका लेप लगा कर अमेय कवच बनाया । वे उसी कवचको पहन कर बड़े वेगसे चले । इस कवचसे यद्यपि उनकी पूर्णतः रक्षा नहीं हुई तथापि इससे उन्हें सहायता अधिक मिली, इसमें सन्देह नहीं । वह भगवतीके पास पहुंचे । उनके साहससे प्रसन्न हो कर भगवतीने उन्हें दर्शन दिये । वह भगवतीके रूप पर मोहित हुए और उन्होंने भगवतीके साथ सङ्गमकी प्रार्थना की । भगवतीने उसे बहुत समझाया । परन्तु समझे कौन ? कामियोंमें समझनेकी बुद्धि नहीं होती । अन्तमें उसका दृढ़ निश्चय देख कर भगवतीने कहा, कि दूसरे जन्ममें तुम्हारी यह अमिलाप पूर्ण होगी । वह धूलकार वहांसे चला आया । और प्रयागके अक्षयवटकी शाखासे वही भावना करते हुए गिर कर मर गया । वैष्णवीदेवी रणारम्भाके रूपसे

उत्पन्न और धूलकार रणादित्यके रूपमें उत्पन्न हुआ ।
२ एक प्राचीन कवि ।

रणान्तकम् (सं० त्रि०) १ रणान्तकारी, लडाईं श्रेय करनेवाला । (पु०) २ विष्णु ।

रणायेत (सं० त्रि०) युद्धस्थलसे भाग जानेवाला ।

रणाभियोग (सं० पु०) १ युद्ध करना, लडाईं करना ।
२ वीरकी तरह चढाई करना ।

रणारम्भा—काश्मीर-पति रणादित्यकी महिषी । रणारम्भा-स्वामी नामक एक देवमूर्ति इनकी स्थापित है ।

(राजतर० ३।४६०)

रणालङ्करण (सं० पु०) रणस्थ अलङ्करणः । कट्ट पक्षी ।

रणावनि (सं० स्त्री०) रणस्थ अवनिः । रणभूमि, युद्धस्थल ।

रणाश्व (सं० पु०) राजपुत्रभेद ।

रणितु (सं० त्रि०) रमणशौल, विचरनेवाला ।

रणेचर (सं० त्रि०) रणे चरतीति 'चरेष्ट' इति ट, अलुक्-समासः । १ रणविचारी । (पु०) २ विष्णु ।

रणेश (सं० पु०) १ विष्णु । २ शिव, महादेव ।

रणेश्वर (सं० पु०) १ शिवलिङ्गभेद । २ विष्णु ।

रणेस्वच्छ (सं० पु०) कुक्कट, मुर्गा ।

रणेपिन् (सं० त्रि०) रणेच्छु ।

रणोत्कट (सं० त्रि०) १ रणोन्मत्त, जो रणमें सम्मिलित होने या रण ठाननेके लिये उन्मत्त हो रहा हो ।

रणोजी सिन्दे—ग्वालियरके सिन्दे-राजवंशके प्रतिष्ठाता ।

पूनाके निकटवर्ती पतली ग्राममें इनका जन्म हुआ था । पहले ये १म पेशवा बाजीरावके शरीर रक्षि-सेनादलके-नायकके अधीन काम करते थे । सामान्य सैनिक वृत्तिले निज अध्यवसायके बल धीरे धीरे इनकी तरकी होती गई । राजा शाहजीके राज्यकालके अंतिम समयमें ये पेशवाके साथ मालव जीतनेको गये थे । युद्धमें मालवराज्य महाराष्ट्रीय सेनापतिके हाथ लगा । युद्ध-जयके बाद बाजीराव, सताराराज और होलकर पतिने उस राज्यको आपसमें बांट लिया । रणोजीकी वीरता पर प्रसन्न हो बाजीरावने अपना तथा सतारा-राजका कुछ अंश उन्हें पुरस्कारमें दिया (१७२४ ई०) । वही अंश पीछे उनके वंशधरको जागीरस्वरूप दे दिया

गाया था। १७५० ई०में पांच पुत्रको छोड़ वे पत्नीक सिपाये। पोछे उनके बड़े बड़े जयाणा राज सि हासन पर बैठे।

रघोद—मध्य-मायक ग्यान्धियर राज्यके मलगत एक नगर। यह नरोद नामसे भा प्रसिद्ध है। यह नगर पेरापती वा भहिरपाल नामक पश्चिमी किनारे बसा हुआ है। यहां प्राचीन हिन्दू धीर सुखमान महलोंके बहुतसे खंडहर मजर आते हैं। यहां जो सब गिजासिपि पाइ गए हैं, उनमें राजा मोमेधर भादिक नाम मद्रिन देखे जाते हैं। सम्पन्नता पार्थिवर्षों मरवार राज्यके कच्छप यात रंजाय राजगण यहां राजा करत थे। यहांका मुमकमानो कीर्तिमें ब्रह्मिरो मसजिद उल्लेखनीय है।

रघोदीपसिंह—१ नेपालक प्रधान मन्त्रा। ये १८८५ ई०में नेपालक राजपिद्रोहमें धार्यामज्ञा द्वारा मारे गए थे।

२ मोहसिद्दिक प्रयेता कृष्णगिरिका प्रतिपासक।

रघु (सं० लि०) रघु (भन्तारु)। उष १:१११ इति ४। १ मन्त्रार्थबन्धुभाषयय। २ धूर्त बाहाक। ३ विकल, बधिन।

रघुक (सं० पु०) रघु इति रघु कन्। १ भक्तल रघु, यह पेड़ जिसमें फल न माने हो। २ रघु रत्ना।

रघु (सं० लो०) रमस्तजोति रघु इ-याप्: १ मृषिकपणी। २ विषया, रीढ़।

रघुनाम्—एक प्राचीन कवि।

रघुनाभिमन् (सं० पु०) रघुको बिकल भाभमा सोऽस्त्यस्य रघुनाभम-नि। यह जो ४८ वर्षका भवस्थाक उपराल रघुना हुआ हो, ४८ वर्षकी उम्रक बाद जिसकी स्त्री मरे।

रघु (सं० लि०) रमपाय।

रघुसिद् (सं० लि०) रघुं जयति सि क्तिप्। रमपाय पनजयकारो।

रघुवाधु (सं० लि०) रघुया वाधु वध्व। रमपाय पाध्व युक्त।

रघु (सं० लि०) रमपाय।

रघुवन् (सं० लि०) रमपाय।

रघुवत् (सं० लि०) १ गन्धित, गन्ध किया हुआ। २ म्नुय, स्तुति किया हुआ। (शुक् २:३१)

रत (सं० लो०) रमणमिति रघु भाषे क। १ मैथुन, प्रसङ्ग।

रामनाभमं वाद्य और भाभ्यन्तरमेदसे रत दो प्रकार का कहा है, शुष्मनादि वाद्य तथा मैथुन भाभ्यन्तर रत। २ योगि। ३ लिङ्ग। ४ प्रेम, मोति। (लि०) ५ अनुष्क, प्रेममें पडा हुआ। ६ नियुक्त, कार्य भादिमें लगा हुआ, मित।

रतनाक (सं० पु०) रत मैथुन कारुति परस्पर सपभातीति कील-क। १ कुन्द, कुसा। (रि०) रतस्य कोस। २ सुख-करक।

रतकूजित (सं० लो०) रतस्य कूजित। मैथुनकासीन वाक्य, मणित।

रतगुह (सं० पु०) रतस्य रते वा गुहा। पति, मसम।

रतजगा (हि० पु०) १ किसी वस्त्रस्य वा विहार भादिक द्विये साय रात प्राय कर बिता देना। २ एक त्योहार जो पूर्वी संयुक्त-प्रांत तथा बिहार भादिमें मात्रपद् कृष्ण रानी रातका होता है। इसमें प्रायः स्त्रियों रात भर कतकी भादि गाया करतो है। ३ यह भाभ्यन्तरस्य जो रात भर होता रहे।

रतजवर (सं० पु०) रतन म्परोऽस्य। काक, कीर्मा।

रतनामिन् (सं० पु०) रत लखति प्रतिष्ठां लसत इति तल जिनि। विद्ग, अवारा लपट।

रतनाली (सं० लो०) रते तासः प्रतिष्ठास्याः लोप्। कुन्दनी, कुन्दना।

रतन (सं० पु०) रतने देना।

रतन कवि—भानगर पुर्न्देतरघुक विधासा एक भाया कवि। सन् १७६८ ई०में इनका जन्म हुआ था। वे कवि राजा फतजगह पुर्न्देतरा भानगरक दरबारमें थे। इन्होंने अपने धाभ्यवशता राजाक नाम पर फतजगह भूयन् धीर फतजगज नामक दो ग्रन्थ लिखे हैं।

रतनगढ़—राजपूतानक पाकानेर राजवास्तवक एक नगर। यहां १९ वैपमभिर मीसुर है।

रतनजात (हि० लो०) १ एक प्रकारकी मणि। २ एक प्रकारका बहुत छोटा भूय। यह काश्मीर भारत कुमाऊ में अधिकताय हाता है। इसमें उन्नत प्रायः बड़े पाकिस्तान तक लम्बे हात हैं जिनमें काहूक पत्ताकत प्रायः चार

अंगुल तक लभ्ये और कुछ अनोदार पत्ते और छोटे छोटे फूलों तथा फलोंके गुच्छे लगते हैं। इसकी जड़ लाल रंगकी होती है जिससे लाल रंग निकाला जाता है और तेल आदि रंगे जाते हैं। वैद्यकमें यह गरम, रुक्ष, पित्तज, त्रिदोषनाशक तथा जीर्णज्वर, प्लीहा, गोथ आदिको दूर करनेवाली और मस्तिष्कको हानि पहुंचानेवाली कही गई है। इसके कई भेद होते हैं जिनमेंसे एकके उंठल और पत्ते अपेक्षा कृत बड़े होते हैं और एक छत्तेके आकारकी होती है जिसकी पत्तियां बहुत छोटी होती हैं। वैद्यकके अनुसार इन सबके गुण भी भिन्न भिन्न होते हैं और इनका व्यवहार औषधरूपमें होता है। ३ बृहद्दन्ती, बड़ी दंती।

रतननाथ—एक प्रसिद्ध योगी।

रतनपुर—बम्बईप्रदेशके रेवाकांता एजेन्सीके अन्तर्गत राजपिपली सामन्तराज्यका एक नगर। यह अक्षा० २१° २४' ३०" तथा देशा० ७३° २६' ५०"के मध्य अवस्थित है। मरौच नगरसे यह ७ कोस उत्तर-पूर्व पड़ता है। १७०५ ई०में मरहठोंने यहा सफ्दर खान् वावी और नगर अली खान् द्वारा परिचालित मुगल सेनादलको परास्त किया था। पधंतकी चोटी पर वावा घोरका मकबरा मौजूद है। उस साधुके उद्देशसे यहा प्रति वर्ष मेला लगता है।

रतनपुर—मध्यप्रदेशके विलासपुर जिलान्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २२° १७' ३०" तथा देशा० ८२° ११' ५०"के मध्य विलासपुर शहरसे १६ मील उत्तर पड़ता है। जनसंख्या प्रायः ५४७६ है। इस नगरमें पहले छत्तीस गढ़के हैहयवंशीय राजाओंकी राजधानी थी। १७८७ ई०में राजा विभाजी भोंसलेकी मृत्युके बादसे यह नगर तहस नहस हो गया। आज भी प्राचीन दुर्गके गूम्बज, प्राचीन प्रासादको टूटी फूटी दीवार और सूखी मालाये अतीत स्मृतिकी घोषणा करती है। प्रसिद्ध यहाँ हिन्दू गौरववर्द्धक असंख्य सती-स्तम्भ विद्यमान हैं। इनमेंसे राजा लक्ष्मण-शाहीकी २० रानियोंके सती स्तम्भ उल्लेखनीय हैं। प्रायः २६० वर्ष पहले वे सब बनाये गये थे। नगरांश प्रायः १५ वर्गमील विस्तृत है। शहरमें एक वर्नाक्युलर मिडिल स्कूल है।

रतनपुर धर्मका—बम्बईप्रदेशके क्राठियावाड़ विभागके

गोहेलवाड़ प्रान्तान्तर्गत एक छोटा सामन्तराज्य। राजा बडोदाके गायकवाड़ और जूनागढ़के नवाबको कर देने हैं। रतनमाला—मध्यभारतके भोपावर एजेन्सीके अन्तर्गत एक सामन्तराज्य। यहांके सरदार धीरपसिंह अंगरेज-राजको किसी तरहका कर नहीं देते। उनका छोटा राज्य जंगलोंसे भरा है, इसलिये अंगरेज-सरकारने राजस्व छोड़ दिया।

रतन राव—बूंदीके राव राजा। ये राव राजा भोजके प्रथम पुत्र थे। राव रतनके राज्यकालमें अकबरकी मृत्यु हो गई थी। उस समय जहांगीरके सिर पर मुगल-राजछत्र शोभित हो रहा था। जहांगीरने अपने पुत्र परवेजको दक्षिणके शासनकर्त्ताका पद दिया इससे उनके दूसरे पुत्र खुर्रमने द्वेषके चशमोंको पहन कर अपने सौतेले भाई परवेजको मार डाला। तदनन्तर उसने अपने पिताको भी मारनेके लिये आयोजन किया। खुर्रम राजपूत-नन्दिनीके गर्भसे उत्पन्न हुआ था। अतएव उसे राजपूत राजाओंसे सहायता मिली थी। इस अवस्थामें बादशाह जहांगीरको गद्दीसे उतारनेके लिये यह कुचक्रियोंका दल उद्योग कर रहा था। परन्तु इस दुःखके समय भी राव रतनने बादशाह जहांगीरका पक्ष ग्रहण किया था।

राव रतनसिंहने अपने दोनों पुत्रोंके साथ जहांगीरके उस महादुःखके समय बुरहानपुरमें जा कर पिसुद्रोही खुर्रम और उसके साथी राजाओंको युद्धमें एक बार ही परास्त किया। यह युद्ध सन् १५७६ ई०में हुआ था। इसी विजयके उपलक्ष्यमें जहांगीरने राव रतनको बुरहानपुरका शासन-भार दे दिया। राव रतनने बुरहानपुरके शासन करनेके समय वहाँ 'रतनपुर' नामक एक गाँव भी स्थापित किया था। बुरहानपुरके दूसरे युद्धमें ये मारे गये थे।

रतनाकर (हि० पु०) १ रतनाकर देखो। २ रतनजात देखो।

रतनागर (हि० पु०) समुद्र।

रतनागरम (हि० लो०) पृथ्वी, भूमि।

रतनार (हि० वि०) रतनारा देखो।

रतनारा (हि० वि०) कुछ लाल, सुखी लिये हुए। इस शब्दका प्रयोग अधिकतर आंखोंके लिये ही हांता है।

रतनाराज (सं० पु०) इन्द्रियसेवक । रतनारीच देखो ।
 रतनारा (हि० पु०) १ एक प्रकारका पान । (लो०)
 २ छात्रो, छात्रिणी । (वि०) ३ रतनार देखो ।
 रतनारीच (सं० पु०) रते नार्यां चिनोतीति चि ड । १
 कामरूप । २ कुम्भकुर, कुत्ता । ३ अवार, जंपद । ४ बद्
 चक्रन ।

रतनायका (हि० स्त्री०) रतनघनी रत्ना ।
 रतनिधि (सं० पु०) रतमेव निधियत गोप्य यस्य ।
 खड्गम पद्मे, ममोक्षा ।
 रतनभ्य (सं० पु०) रतस्य बन्धा । रतिरन्ध्र ।

रतिरन्ध्र देखो ।

रतसिंह (सं० स्त्री०) रतस्य श्रद्धिरत्न, शैवादिमापेति कपु ।
 १ दिवस, दिन । २ सुप्रस्थान । ३ अष्टमंगल ।

रतनाम—१ मध्यभारतके पश्चिम माध्य पश्चिमीक अन्त
 गंत एक सामन्त राज्य । यह अक्षा० २३ ३' स २३ ३३
 ३० तथा देशा० ७४ ३१' से ७५ १६' पू०क मध्य भू-
 स्थित है । भूपरिमाण ३२६ वर्गमील है । राजपूताना
 मान्यपक्षे २ रतनपथ इस राज्यकी राजधानी हो कर चला
 गया है । इसक उत्तरमें जीरा और प्रतापगढ़ राज्य,
 पूर्वमें म्याडियर इतिहासमें पार और कुशावगढ़ तथा
 पूर्वमें कुनजगढ़ और बांसवाड़ा है । कहते हैं, कि इसक
 प्रतिष्ठाता रतनसिंहस राज्यका नामकरण हुआ है, पर
 यह ठीक नहीं जंचता । क्योंकि, भारत इ भूकालमें
 अशुभकालकाल निभा है, कि रतनसिंहक पहले यह राज्य
 विद्यमान था और मानवा-सूयाकी उद्भवन-सरकारक
 एक महाहर्षमें गिना जाता था ।

यहाँका राजवंश जोधपुर-राजवंशकी छोटी शाखा
 है । पश्चिम-माध्यक राजपूत-सरवाटोंमें इन्ही का उन्नत
 सबसे श्रेणी है । रतनसिंह नामक इस वंशक किसी
 भागिपुरुषमें सुद्धमें बड़ी कोष्ठा दिना कर शाहजहाँसे
 मान्यपक्षे अन्तगत एक जागर पाई थी । भागे चल कर
 ये लोग सिन्धु-राज्यक करव हो कर म्याडियर राज्यसर
 कारमें पार्षिक ८४ हजार सकोमशाही मुद्रा (११०००
 पीरह) भेज्न लगे थे । १८१६ ई०के बन्धोपस्तक अनु
 सार उस कालक अनाया उनक राज्यशासन सम्पन्न
 में म्याडियर-पतिका कोई अधिकार न रहा । ये लोग

भेज्न कर रतनामके सरदार पर हुकूमत नहीं कर सकते
 थे । १८४४ ई०में अंग्रेजोंके साथ सिन्धु-राज्यकी जो
 सन्धि हुई उसके अनुसार म्याडियर-सेनाधिकारका कुछ
 बर्च-बर्च इन्हीके हिते यह राज्यक अङ्गरेजों के हाथ लगा
 दिया गया था । तनोस यह वृत्ति-सरकारके हाथ
 स हो दिया जाता है । १८५७ ई०के गवर्नेमें बलबन्त
 सिंह राजसिंहासन पर आसूढ़ थे । उन्होने गवर्ने
 कारकारकी कासो मद्द पदु खाई था, इस कारण सर
 कारने उन्ह तथा उनके बन्धुपरको लिखमत दी थी ।
 पोछे १८६४ ई०में रणजितसिंह सिंहासन पर बैठे ।
 उनका नाबाळगो अर्थात् १८८० ई०तक राजकार्य द्रष्टीके
 अर्थात् रहा । राज्यको १० क्षाका रूपकेका देन था, सो
 द्रष्टीके सुशासनसे कुछ सुखा दिया गया । रणजितसिंह
 में ममठ भाई पर जो महसूख लगता था, उसे १८८१
 ई०में उठा दिया केवल अफीम पर रहन दिया । १८८१
 ई०में रणजितसिंहको K (1) B को उपाधि मिली ।
 १८९३ ई०में उनका देहांत हुआ । पाछे उनके जकके
 राजा सख्तसिंह सिंहासन पर अमिषिक हुए । ये ही
 यत्नमान राजा हैं । इन्हें हिज हासन और राजाकी
 उपाधि है तथा ११ सखामी तोपें मिलती हैं ।

राज्यमें रतनाम नामक गहर और २०६ ग्राम लगे
 हैं । जनसंख्या ८२३३३ है जिसमेंसे हिन्दूकी संख्या
 सैकड़ें पोछे ६२, मोलका १३, मुसलमानकी १२
 तथा शैवमें अन्यथा जातियां हैं । यहाँकी प्रधान उपज
 गेहूँ शुभार, जून्हरा और चना है । राज्यकी आय ५
 लाख रूपयेस ऊपर है । यहाँ १८६७ ई०में राज्यकी
 मोरसे बालकका स्कूल, १८७० ई०में बाबिकाका स्कूल
 और १८७२ ई०में रतनाम सेण्ट्रल कांजेज स्थापित
 हुआ । स्कूलक मलाया एक अस्पताल और चिकि
 स्थालय भी है ।

२ उक्त राज्यकी राजधानी । यह अक्षा० २३ १३' उ०
 तथा देशा० ७५ ३' पू० बम्बईसे ४११ मोलकी दूरी पर
 अवस्थित है । समुद्रकी तहसे इसकी ऊँचाई १५३३
 फुट है । जनसंख्या ३५ हजारसे ऊपर है । यहाँ
 अनाम तथा बूसरे बूसरे अनाजोंका मोटों कारवार चलता
 है । नगर हो कर ठेक पदक गुजमस स्थानीय पाणिज्यकी

वडी सुविधा हो गई है। सेण्ट्रल कॉलेजके निवा
शहरमें और भी मज्कारी तथा राज्यके ५० स्कूल हैं।
यहां सरकारी डाकघर, तारघर, डाकबगला तथा राज-
पान्थनिवास हैं।

रतवत् (सं० त्रि०) रमणयुक्त।

रतव्रण (सं० पु०) रतेण व्रणोऽस्य रतं व्रण इव कष्ट-
दायकं जस्येति वा। कुषकुर, कुत्ता।

रतशायिन् (सं० पु०) रते नश्यति तन्मरुत्स्यान्मानमिति
श्रो-णिनि। कुषकुर, कुत्ता।

रतहिएडक (सं० पु०) रते रतार्थं वा हिएडने हिएड ण्वुल्।

१ खीचौर, वह जो खीको चुराता हो। २ लम्पट,
अवारा। पर्याय—पिङ्ग, व्यलोक, पल्लव, ट्राचक,
भुजङ्ग, चुम्बक, लङ्ग, ईधुङ्ग, नारीतरङ्गक, स्वतिक, रत-
नारीय, वन्धक, रतताली, कटार, कामी, पेटी, नागर,
दांसीप्रिय, कुण्डकीट।

रताञ्जली (सं० पु०) रक्तचन्दन, लाल चंदन।

रतान्द्रुक (सं० पु०) रतार्थमन्द्रुक-इव। कुषकुर, कुत्ता।

रतान्ध्री (सं० स्त्री०) रते रन्ध्रीव। कुञ्जटिका।

रतामर्द (सं० पु०) रते रतकाले आमर्दोऽस्य। कुषकुर,
कुत्ता।

रताम्बुक (सं० स्त्री०) ऊवसन्धिके ऊपरका दो गहर।

रतायनी (सं० स्त्री०) रतमेवायन जीवनगतिर्यस्याः।
वेश्या, रंडी।

रतार्थिन् (सं० त्रि०) रतमर्थयते अर्थं णिनि। सुरत-
क्रीडाभिलाषी।

रतार्थिनी (सं० स्त्री०) मैथुनाभिलाषिणा, वह स्त्री
जिसे मैथुन बहुत प्रिय हो।

रतालू (हिं० पु०) १ पिण्डालू नामक कन्द जिसका व्यव-
हार तरकारी बनानेमें होता है। २ बाराहीकन्द, गेंडो।

रति (सं० स्त्री०) रम्यतेऽनया इति रम्-क्तिन्। १ काम-
देवकी पत्नी। यह दक्ष प्रजापतिका कन्या मानी जाती

है। कहते हैं, कि दक्षने अपने शरीरके पसीनेसे इसे
उत्पन्न करके कामदेवकी अर्पित किया था। यह संसार-

की सबसे अधिक रूपवती और सौन्दर्यकी साक्षात् मूर्ति
मानी जाती है। इसे देख कर सभी देवताओंके मनमें

अनुराग उत्पन्न हुआ था, इसलिये इसका नाम रति

पड़ा। जिस समय शिवजीने कामदेवकी अपने तीसरे

नेत्रसे भस्म कर दिया उस समय इसने बहुत अधिक

विलाप करके शिवजीसे यह वरदान प्राप्त किया था कि

अवसे कामदेव बिना शरीरके या अनग हो कर सदा

जना रहेगा। यह भी माना जाता है, कि यह सदा काम-

देवके साथ रहती है। (कालिकापु० ३ अ०) २ अनुराग,
प्रेम। ३ कामक्रीडा, सम्भोग। ४ शोभा, छवि।

५ सौभाग्य, मृगकिन्मतो। ६ साहित्यमें शृंगार रस-
का स्थायी भाव, नायक-नायिकाके मनमें एक दूसरेके

प्रति आकर्षण। ७ वह कर्म जिसका उद्देश्य होनेसे किसी

रमणीय वस्तुसे मन प्रसन्न होता है। (जैन) ८ गुप्त-
भेद, रहस्य। ९ एक अप्सरा। (भारत १३।१६।५)

१० स्त्री देखो।

रति (हिं० स्त्री०) राति, रात, रैन।

रतिकर (सं० त्रि०) १ आनन्ददायक, जिससे आनन्दकी
वृद्धि हो। २ प्रणयवर्द्धक, जिससे प्रेमकी वृद्धि हो।

३ कामी। (पु०) ४ एक प्रकारकी समाधि।

रतिकमेन् (सं० स्त्री०) स्त्री-सहवासरूप काम।

रतिकलह (सं० पु०) मैथुन, सम्भोग।

रतिका (सं० स्त्री०) ऋषभ स्वरकी तीन श्रुतियोंमेंसे
अन्तिम श्रुति।

रतिकान्त (सं० पु०) कामदेव।

रतिकान्त तर्कवागीश—मुग्धवाच व्याकरणके एक टीका-
कार।

रतिकुहर (सं० स्त्री०) रत्याः कुहरः। योनि, भग।

रतिबंलि (सं० स्त्री०) भोगविलास, सम्भोग।

रतिक्रिया (सं० स्त्री०) रत्याः क्रियाः। मैथुन, सम्भोग।
पर्याय—संवेगन।

रतिगुण (सं० पु०) देव-गन्धर्वभेद।

रतिगृह (सं० स्त्री०) रत्याः गृहं। १ योनि, भग। २ रमण-
मन्दिर।

रतिघोष—एक प्राचीन नगर।

रतिचरणसमन्तस्वर (सं० पु०) गन्धर्वराजभेद।

रतिजनक (सं० त्रि०) रत्याः जनकः। १ अनुरागजनक,
प्रीति उत्पन्न करनेवाला। २ राजभेद।

रतिजह (सं० पु०) समाधिभेद।

रतिव्र (सं० वि०) १ रतिकुशल, जो रतिक्रियामें बहुत हो। २ अतुर प्रेमिक, जो किसी स्त्रीक मनमें अपने प्रति प्रेम उत्पन्न करनेमें निपुण हो।

रतिवस्त्र (सं० पु०) सतीत्यनाशकारो, वह जो स्त्रियों को अपने साथ ध्यम्निभर करनेमें प्रवृत्त करता हो।

रतिताळ (सं० पु०) ताळक साठ मुख्य भेदोंमेंसे एक भेद।

रतिदान (सं० पु०) मैथुन, सम्भोग।

रतिदेव (सं० पु०) १ विष्णु। २ एक अश्वत्थ शीघ्र राजाका नाम जो साङ्ख्यिक पुत्र थे। ३ कुम्भकुर, कुला।

रतिपन (सं० पु०) यह मन्त्र जिससे दूमरे भयोंका नाश होता हो।

रतिनाग (सं० पु०) सोलह प्रकारके रतिबन्धोंमेंसे एक प्रकारका रतिबंध। इसके लक्षण—

“मोक्षपुत्रामेन कमुर्क कामिनी बरि।

रतिनामः समस्पातः कामिनीनां म्मोरमः ॥”

(रतिमञ्जरी)

यदि कामिना कामुकको दोनों अंशसे पीड़ा दे, तो यह बंध होता है।

रतिनाथ (सं० पु०) कामठक।

रतिनायक (सं० पु०) कामदेव।

रतिपति (सं० पु०) रत्याः पतिः। कामदेव। साहित्य रूपमें रतिपतिका आधिर्भाव-स्थान इस प्रकार वर्णित है—

“वाचि भीमापुत्रीयां कनकनररक्षयर्षिनीनां कस्यच

इत्त गोडानामनां मुञ्चतिवचनं चोत्कण्ठमेपतनां।

वेकञ्जानां निम्न वरकपनस्त्री करती कस्यच

काप्यत्तनां करो प स्यति रतिपतिर्गुर्वीयां सनपु ॥”

(तपस्विरपण्य)

मायुरो रत्ययिषोऽथ याक्यते, मिथिला जनपद यासि निषोऽथ कस्यचि, गौडनारीक इत्तमें, उत्कल रगयिषोऽथ जयनमें, वैकुण्ठोऽथ नितम्भमें, करतिषोऽथ कटापात्रमें, काप्यारिषोऽथ कटिमें तथा गुर्जरो रमयोऽथ स्तनमें रतिपति आधिर्भूत होत है अर्थात् यह सब स्थान उनके बड़े रमयो है।

रतिपद् (सं० पु०) एक वृक्षका नाम। इसके प्रत्येक अंग में दो गण्य और एक सगण्य होता है।

रतिपाश (सं० पु०) रताः पाश इव। रतिबन्धविशेष।

इसके लक्षण—

“पीडयेदुस्युग्मन कमुग्म यदि मुन्दरी।

रतिपाशरथा क्पातः कामिनीनां सुलाभः ॥”

(स्मरतीपिका)

रतिमञ्जरामें इस बंधका उल्लेख नहीं है। कि तु ‘रतिनागध’ उल्लिखित हुआ है, उसका भी लक्षण इसी प्रकार है। मुन्दरी रतिनागध और रतिपाशबध एक है।

रतिप्रपूर्णा (सं० पु०) कल्पभेद।

रतिप्रिय (सं० पु०) रताः प्रियाः। १ कामदेव। २ सुररप्रिय, वह जिसे मैथुन बहुत प्रिय हो। (देवीभाग० ७१-१६८)

रतिप्रिया (सं० वि० स्त्री०) १ वह स्त्री जिस मैथुन बहुत प्रिय हो। (स्त्री०) २ शक्तिमूर्तिविशेष, ठाम्निहोके अनुसार शक्तिकी एक मूर्तिका नाम। २ वाक्षायिणीका एक नाम।

रतिप्रोत्तर (सं० स्त्री०) यह नायिका जिसका रतिमें प्रेम ही मैथुनसे प्रसन्न होमबाली स्त्री।

रतिबन्ध (सं० पु०) रती बन्धः ७-तत। मैथुन या सम्भोग करनेका प्रकार। इस भासन में कहत हैं। यह सोलह प्रकारका होता है। यथा—पद्मासन नागपाश, खटा बध, मर्द्धसंपुद, कुञ्चिथ, मुन्दर, केशध, हिन्दोळ तर सिंह विरात, ध्रुव धेनुक, उत्कण्ठ, सिंहासन, रतिनाग, विद्याधर। इन सब बन्धोंक लक्षण उन्हीं उन्हींमें दत्ता।

रतिमवन (सं० स्त्री०) रत्याः भवतः। १ रतिगृह, योनि, भग। २ रमणमन्दिर, वह स्थान जहां प्रेमी और प्रेमिका मिल कर रतिक्याङ्क करते हैं।

रतिमाय (सं० पु०) १ नायक-नायिकाका परस्पर आकषण, वाग्दय नाय। २ मीति मुहूर्धत।

रतिमत (सं० वि०) रतिः विद्यतऽस्य मत्सु। अनुगत विचार, रतियुक्त।

रतिमता—विष्णुसहस्रनामें सोन एक प्राकण्य रमणो। इहामे अपना मन्दिरे प्रनामन मयघार वैकुण्ठायिको प्राप्त किया था।

रतिमदा (स० खी०) र्नेर्मंदिऽस्याः । अमरा ।
 रतिप्रन्दिर (स० खी०) र्नेर्मंदिऽर मित्र । १ योनि, नग ।
 २ मैथुनग्रह, रतिमग्न ।
 रतिमिद (स० पु०) र्ती मित्र, मूर्ध्नि । कामजायक
 अनुसार एक प्रकार का रतिबंध या मग्न ।

“रतिमिदं कृषुमे च । र्नेर्मंदिऽर । अमरा ।
 रतिमिदं रत्न-दानः । रत्नमिदं रत्न-दानः ॥”

(रत्नमग्न)

यदि कामु हो खी कामु का ज चमे मिग हर रमण
 रुदे, तो यह रत्न गिता है । यह रत्न कामिनिषा हो रति
 सुपाजनक ।

रतिया—पञ्चापदेशके द्विमार चित्वात्तर्गवै एक नगर ।
 पहले यह स्थान सुयरे राजपुत्रोंके अधिकारमें था । पीछे
 पदानेने इसे स्वतंत्र किया । १७८३ ८४ ई०के महाभारी
 दुर्मिक्षमे यह स्थान जनशून्य हो गया । अनन्तर अंग्रेजों
 अधिकारमें आनेके बाद जाट लोग यहां आ कर उसमें गये
 हैं । नगर अमुनिसूफलिटोंका देवरगाने रहनेक कारण
 साफ सुधरा है ।

रतिरमण (स० पु०) रत्या रमणः । १ कामदेव । २
 मैथुन, सम्भोग ।

रतिरस (स० खी०) महत्त्वम सुख ।

रतिराज (स० पु०) कामदेव ।

रतिलक्ष (स० खी०) रति लक्षयतीति लक्ष्मि अच् ।
 निधुन, मैथुन ।

रतिलम्पट (स० खी०) रमणेच्छु, सम्भोग-प्रिय ।

रतिलील (स० पु०) तालके साठ मुख्य भेदोंमेंसे एक ।

रतिलोल (स० पु०) एक राक्षसका नाम ।

रतिवन्त (खि० खी०) सुन्दर, प्रवसूरन ।

रतिवर (स० पु०) १ कामदेव । २ वह भेट जो किमो
 छोटी उसमें रति करनेके अभिप्रायसे दी जाय ।

रतिवर्द्धन (स० खी०) १ कामवर्द्धक, त्रिमसे काम-
 शक्ति बढ़ती हो । २ प्रणयोन्येपरु ।

रतिवर्द्धनमोदक (स० पु०) मोदक औषधविशेष । बनाने
 का तरीका—गोधूमबीज, कोकिलाक्षबीज, अश्वगन्धा,
 शतमूली, तालमूली, शूकशिखीबीज, मुलेठी, गोपवह्नी और
 विजवट, इनके चूर्णको माषके घीमें भून कर दूधमें सिद्ध

कर । पीछे चीनीके साथ मोदक बनाये । इनमें चूर्णमें
 आठ गुना दूध, चूर्णके बराबर घी और दूध दूधके
 बराबर चीनी आठगुनी होने दे । घण्टिके बजानुसार इस
 मोदकका चैयन करनेमें चंद्र वाजीकरण होता है ।

(नैप-रत्नना-वाजीकरणवि०)

रतिवह्नमोदक (स० पु०) वाजीकरणविहारका औषध
 विशेष । प्रस्तुत प्रणाली—वर्द्धित-वाजीकरण ५ पल, खी ५
 पल, नीली १२ सेर, जलमूलाका रस १३ सेर, तिजिका रस
 ३ सेर, माषका दूध ४ सेर, गदगदा १५ १३ सेर, प्रयोग
 के लिये माषका, जोरा, मगरेला, माष, शरबीनी, श्या-
 यची, जेजवर, नागेश्वर, केवानका पाक, गोपवह्नी, वाड-
 ही आदीका चूर्ण, केसर, मिषादा, विरहट्ट, धनिया, न-
 रक, रागा, हरे, माष, क कीची, औरकेका रस, पिण्डाजूर,
 हृदय, मुलेठी, वृष्ट लवंग, म-र, अजवायन, जंगला
 अजवायन, जीवती और मग्नपापक प्रत्येक दो दो तोला,
 पीछे व्याधिधान इस मोदकको पाक करके नीचे उतार
 ले । अनन्तर उदा घीमें पर २ पल मधु डाल कर मृगनाभि
 और कपूर द्वारा उसे सुरामित करना होना । यह औषध
 अत्यन्त बटवर्द्धक, मानध्यापितानाश, मानपित्तहर, दृष्टि-
 सन्दीपन और रक्तपित्तादि रोगनाशक है । यह रति
 उत्कृष्ट वाजीकरण है । (नैप-रत्नना-वाजीकरणवि०)

रतिवह्नभाष्यपुगपाक (स० पु०) वाजीकरणाधिकारिक
 औषधविशेष । प्रस्तुत प्रणाली—वर्द्धित-वाजीकरणका टुकड़े
 टुकड़े कर जलमें सिद्ध करे । जब यह नरम हो जाय, तब
 धूपमें सुखने दे । अनन्तर उसे चूर्ण कर कपड़ेमें अच्छी
 तरह छान १५ सेर निकाल ले । पीछे ८ गुने दूध और
 आध सेर घीमें पका कर उसमें १६ सेर चीनी मिलावे ।
 अच्छी तरह पाक हो जाय तब उसमें निम्नलिखित चूर्ण
 डालना होगा । चूर्ण यथा—श्यायची, गोपवह्नी, विजयंद,
 पिप्पली, जातीफल, कपित्थ, जातीपत्र, अर्कपत्र, तेजपत्र,
 दारचीनी, सोंठ, वीरणमूल, रतिवला, मोधा, तिफला,
 वशलोचन, शतमूली, शूकशिखी, दास, कोकिलाक्षबीज,
 गोक्षरबीज, रुतती, पिण्डाजूर, क्षोरी, धनिया, केसर,
 मुलेठी, सिहाडा, जोरा, मगरेला, अजवायन, बीजकोप,
 जटामासी, सौंफ, मेथी, भूमिकुष्माण्ड, तालमूली, भस-
 गध, कपूर, नागकेसर, मिर्चा, पियालकबीज, गजपीपल,

पद्मचोत्र, श्वेतचाम्पू, रत्नचाम्पू और लक्ष्मण प्रत्येकका
 कर्णों माथ पाथ । फिर पारैकी मल्ल, रांगा, सीसा, लोहा,
 मयूरक, कस्तूरी और कर्पूर-मूर्णों ये सब वस्तु जहां तक
 हो सके, बारी काफ़ी हैं । अग्नि के ब्रह्मानुसार इस धीपथ
 का सेवन करना उचित है । इसके संवनकालमें किसी
 प्रकारका अन्नशुद्ध व्यवहार न करे । इसका सेवन करने
 से बहुरोगि, बलवीर्य और कामको वृद्धि होती, बाह्य कथ
 नष्ट होता तथा शरीर पुष्ट हो कर घोड़े के समान मधुन
 कारी हो जाता है । यह रविब्रह्मपूजापाठ के कर कामे
 श्वरमोक्ष बनाया जाता है । इसमें और दूसरी दुसरी
 वस्तु मिश्रानेसे कामेश्वरमोक्ष बनाया है ।

(मात्प्र० बाबीकरपाणि)

- रविबन्धी (स० स्त्री०) प्रेम, प्रीति ।
 रविबाही (स० पु०) एक प्रकारका राग । इसके गानैका
 समय रातको १३ वृत्तसे २० वृत्त तक है । यह सभूर्ण
 आतिकांठग है और इसमें सब शुद्ध स्वर उगत हैं ।
 रविशक्ति (स० स्त्री०) रमण करनेकी क्षमता ।
 रविशाय (स० पु०) कोकलाय, यह शास्त्र जिसमें
 रविकी क्रियाओंका विवेचन हो ।
 रविभूर (स० पु०) पुनीत्यादनस्य व्यक्ति, यह मनुष्य
 जो पुत्र उत्पन्न कर सके ।
 रविस योग (स० पु०) मैथुनकिति, सङ्गम ।
 रविस इति (स० स्त्री०) रमण करनेकी क्षमता ।
 रविस स्वर (स० स्त्री०) रती सत्वर । स्वरुषा,
 असवरग ।
 रविसमर (स० पु०) समीप, मैथुन ।
 रविसायन (स० स्त्री०) रत्नाः साधनं । शिख, पुष्पकी
 मूर्ते म्निप ।
 रविसुम्बर (स० पु०) कामशास्त्रके अनुसार एक प्रकार
 का रविबन्ध ।

“नारिबहवर्षं कामी वारुषेवृद्धव पथि ।

श्रुतकपडा रमेव कामी बन्धः स्व्याप्रतिगुम्बरः ॥”

(रविभन्धरी)

कामुक यदि मारोके दोनो पैरोंको बंधे पर रखे और
 इसका गला पकड़ कर रमण करे, तो यह रविसुम्बर
 बन्ध होता है ।

- रविसेध (स० पु०) खोन्नराजाका एक नाम ।
 रती (स० स्त्री०) रक्तगुणा, काष्ठ पु मयी ।
 रती (हि० स्त्री०) १ डाई औ या भाठ धायकका मान ।
 रती रेजो । (वि०) २ घोड़ा, कम । (वि० क्रि०)
 ३ जरा-सा, लती भर ।
 रतुमा (हि० पु०) एक प्रकारकी घास जो बरसातके
 दिनों या ठण्डो ऋणहर्षि अधिकतासे होता है ।
 रत् (स० स्त्री०) प्रतीत्यते इति (मृतम्य ष । उष् १।१५)
 इति कृ भ्मत् । १ देवनयो । २ सत्यभाषो, सत्यवाक् ।
 रत्न (हि० पु०) पैदोकी एक या गन्ना । यह एक धार
 काट देने पर फिर उसा ब्रह्मच निकलता है ।
 रतेन—पञ्चाभ-प्रदेशके केडम्बलक शासनयुक्त एक छोटा
 सामन्त राज्य । यहाँके सरकारीका इपाधि ठाकुर है ।
 रतीव्रह (स० पु०) रत इव इति प्रापयताति वत् वह-अच् ।
 कोटिख, कांयड ।
 रतीरत्न (हि० पु०) १ साठ सुरमा । २ साठ कडिया ।
 ३ गेड ।
 रतीपी (हि० स्त्री०) एक प्रकारका रोग । इसमें रोगो
 को सम्प्राप्त होनेके उपरान्त अर्धरात्रि रातके समय बिड़कुल
 बिचार बारी होता ।
 रत्नक (हि० पु०) रत्नाखिपरमे होनेवाला एक प्रकारका
 पत्थर जो कुछ साठ र गका होता है ।
 रती (हि० स्त्री०) १ एक प्रकारका बहुत छोटा मान ।
 इसका व्यवहार खीने या मोपधियां भादिके तीसमें
 होता है । यह भाठ धायक या डाई औके बराबर होता
 है और प्रायः पुपथीक वानेसे तँका जाता है । यह
 एक मायेका भाठयां भाग होता है । २ वह भाठ जो
 ठीकमें रहने मानका हो । ३ पुपथीका बाना, गुजा ।
 (वि०) बहुत घोड़ा, कि चित् ।
 रत्ना (हि० स्त्री०) लकड़ो या बांसका यह बाँधा या
 स मुक बाँधि जिसमें शयकी रज कर अन्तिम स प्रकार
 क छिपे छे जाने हैं, टिकटो, विमान ।
 रत्न (सं० स्त्री०) रमयति हर्षयतीति रत् म्णिच् (रमत् ष ।
 उष् ३।५) इति न ठकाराह्वास्तापत्ता । १ कुछ पिन्निह
 छोटे धमकीके बहुमूल्य पदार्थ, विधेयता चानिप पदार्थ
 का पत्थर तिनका व्यवहार भाभूयनों भादिमें जड़नेके

लिये होता है, मणि, जवाहिर, नगीना । २ स्वजाति-
श्रेष्ठ, जो अपने वर्ग या जातिमें सबसे श्रेष्ठ हो ।

“जाती जाती यदुत्कृष्ट तद्रत्नमिति काश्यपे ।

जातिमें जो उत्तम है, वही रत्न कहलाता है ।

जैसे—खी-रत्न, मनुष्य रत्न इत्यादि । ३ माणिक्य, लाल ।

रत्नोत्पत्तिका कारण गरुडपुत्राणमें इस प्रकार लिखा
है । बल नामक एक बहुत बलिष्ठ असुर था । इसने
देवताओंको परास्त किया था । देवताओंने यज्ञ करके
इस असुरसे प्रार्थना की थी कि, 'तुम हम लोगोंके इस
यज्ञमें पशु बनो ।' पुण्यान्मा बलने देवताओंको प्रार्थना
स्वीकार कर ली और उस यज्ञमें पशु बन कर अपना
शरीर त्याग कर दिया । उसके इस विशुद्ध कर्म द्वारा
वेहके सभी अवयव रत्नवीजरूपमें परिणत हुए । उसमें
अङ्ग, समुद्र, पर्वत, नदी आदि जिस जिस स्थान पर
गिरे वहाँ रत्नही स्थान बन गई थी । (गरुडपु० ८ अ०)

रत्न नौ प्रकारका है,—१ रत्न (हीरा), २ गारुत्मत
(पन्ना), ३ पुष्पराग, ४ माणिक्य, ५ इन्द्रनील, ६ गोमेद,
७ वैदूर्य, ८ मौक्तिक, ९ विद्रुम ।

रत्नकी नामनिश्चिन्ता—

“धनार्थिना जना सर्व रमन्तेऽस्मिन्मन्तीव यत् ।

ततो रत्नमिति प्रोक्त शब्दशास्त्रविशारदैः ॥” (भावप्र०)

धनभिलाषी मनुष्य रत्न पा कर बहुत आनन्दित
होते और उसमें अत्यन्त रत रहते हैं, इसीसे पण्डितोंने
इसका 'रत्न' नाम रखा है ।

रत्नका दूसरा नाम मणि है । यह रत्न पत्थरके
भेदसे मुक्ता आदि नामोंसे पुकारा जाता है । रत्न ९ हैं,
इस नवरत्नको महारत्न भी कहते हैं ।

“मुक्ताफल हीरकश्च वैदूर्यपद्मरागकम् ।

पुष्परागश्च गोमेदं नीलं गारुत्मत तथा ।

प्रधातयुक्तान्येतानि महारत्नानि वै नव ॥”

(विष्णुधर्मोत्तर श्रुत भावप्र०)

मुक्ता, हीरा, वैदूर्य, पद्मराग, पुष्पराग, गोमेद, नील-
कान्त, पन्ना और प्रवाल ये ९ महारत्न हैं । अग्नि-
पुराणके रत्नपरीक्षा-प्रकरणमें अनेक प्रकारके रत्नोंका
उल्लेख देखनेमें आता है । रत्न ये सब हैं—वज्र, मरकत,
पद्मराग, मुक्ता, महानील, इन्द्रनील, वैदूर्य, गन्धशस्य,

चन्द्रकान्त, सूर्यकान्त, स्फटिका, पुलक, कर्कतल, पुष्प
राग, ज्योतीरस, राजपट्ट, राजमय, सौगन्धिक, गज,
शङ्ख, गोमेद, मधिराज्य, मत्स्यतक, धूली, तुत्थक, सोस,
पीलु, प्रवाल, गिरिनज्ज, भुजङ्ग, मणि, वज्रमणि, टिट्ठिम,
पिण्ड, भ्रामर, उत्पल । (अग्निपु० २४५ अ०)

इन सबकी रत्नोंमें गिनती होने पर केवल ९ ही रत्न
प्रधान हैं । तन्त्रसारमें नवरत्नका इस प्रकार उल्लेख है ।

“मुक्ता माणिक्यवैदूर्य गोमेदान् वज्रविद्रुमौ ।

पुष्पराग मरकत नीलश्चेति यथानमान् ॥” (तन्त्रसार)

मुक्ता, माणिक्य, वैदूर्य, गोमेद, हीरा, विद्रुम, पुष्प-
राग, मरकत और नील ये ९ नवरत्न वा महारत्न हैं ।

शास्त्रमें रत्नधारणको महापुण्यजनक बताया है ।
ज्योतिषशास्त्रमें लिखा है, कि प्रद्वैगुण्य होनेसे रत्न-
धारण और रत्नदान अरिष्टनाशक है । इसका यह मत-
लव नहीं, कि सभी रत्नधारण कर सकते हैं । मूल,
धातु और रत्न इन तीन प्रकारके वस्तुदान और धारण-
की व्यवस्था है । इनसे जो सम्पन्न हैं, वही रत्नधारण
कर सकते हैं । इसीसे उपकार होगा । जो रत्नधारण-
के अनुपयोगी हैं, वे यदि रत्नधारण करें, तो उनका
अनिष्ट होता है ।

जैनोंके मतसे सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्-
चारित्र्य यही तीन रत्न हैं । निरत्न देओ ।

रत्नकन्द (सं० पु०) रत्नाना कन्द इव । प्रवाल,
मूंगा ।

रत्नकर (सं० पु०) कुबेर ।

रत्नकण्ठ—१ पञ्चाङ्गकोतुरु नामक ज्योतिर्गन्धके प्रणेता ।

२ सारसमुञ्जय नामक काश्यपकाशकी एक टीकाके रच-
यिता । ३ एक विख्यात पण्डित तथा धर्म्यवंशीय
शङ्करकण्ठके पुत्र । इन्होंने १६७२ ई०में शिष्यहिता
नामकी युधिष्ठिरविजयटीका और १६८१ ई०में स्तुति-
कुसुमाञ्जलिटीका प्रणयन किये ।

रत्नकर्णिका (मं० स्त्री०) प्राचीनकालका कानमें पहनने-
का एक प्रकारका जडाऊ गहना ।

रत्नकलस (सं० स्त्री०) रत्नकी बनी कलसो ।

रत्नकला (सं० स्त्री०) राजकन्याभेद ।

रत्नकीर्ति (सं० पु०) एक बुद्धका नाम ।

रत्नकुमारी—प्रसिद्ध सिवारे हिन्दू राजा नियम साधको
 था। ये बड़ी बिजुवा था। संस्कृत तथा फारसी
 साहित्यमें इनका ज्ञान बहुत बढ़ा बढ़ा था। संगीत
 ज्ञान तथा चिकित्साशास्त्रमें भी इनका पूरा ज्ञान था।
 राजा नियमसाध कहा करते थे—“हमारे पास जो कुछ
 ज्ञान है वह सब मेरी पूज्य दादाका दिया हुआ है।”
 इनकी कविता बहुत सुन्दर और मङ्गलपूर्ण हुआ करता
 थी। इन्होंने प्रेमरतन नामका एक पुस्तक बनाई।
 इनके बनाये कुछ दोहे यहाँ उद्धृत किये जाते हैं—

“परम रत्न व बन कवच, कुछ पुत्र लक्ष्मणम् ।
 बड़े नृप तव हरित नभ, छाटा मुद्रित लक्ष्मणम् ॥
 बड़े बरही नन्द वर, कृष्ण काञ्चिन्न वीर ।
 व मरुत कञ्जल करत, व यमुनाक तीर ॥
 व पय मृग शङ्ख विनिध, वरत विनिध मुकुटीर ।
 प्रकृति व शैव कम्प, व लज्ज वे नीर ॥
 बड़े निर्मल वन्द्य निठ, बड़े गायीचन्द्र ।
 व रत्नी रत राध वर, करत नरक मन्मथ ॥”

रत्नकूट (स० पु०) रत्नमया कूटी शृङ्गमस्य । १ एक
 पर्वतका नाम । २ एक योगिसत्वका नाम । ३ एक
 द्वीप । (कथासरित्साग० २१।३)

रत्नकूटेश्वर—हिमाद्रयस्थ शिवलिङ्गमेव । (हिमाद्रि ८।१०८)

रत्नकुण्ड (स० पु०) ? कुण्डका नाम । २ एक बौद्ध
 सत्वका नाम । बौद्धमतसे परवर्षों को सहस्र कुण्ड ही
 इस नामसे परिचित होते ।

रत्नकोटि (स० पु०) १ समाधिमेव । २ भद्र क्य
 रत्न ।

रत्नकोटिगिरि—एक पर्वतका नाम ।

रत्नक्षेत्रकूटसम्बन्धन (स० पु०) एक बौधिसत्वका
 नाम ।

रत्नरक्षित (स० लि०) रत्नमरिचक ।

रत्नरत्न (स० लो०) १ रत्नही ज्ञान । २ समुद्र ।

रत्नश्रेय बौद्धित—शैवोपरिष्णय नाटकके प्रमेता । सुमा
 पित रत्नमण्डागार प्रथमें इनका श्लो प है ।

रत्नगर्ग (स० पु०) रत्नानि गर्गं लक्षणं वा भद्रिकारोऽस्य ।

१ कुम्भर । २ समुद्र । ३ एक कुण्डका नाम ।

(लि०) ४ रत्नागमादिग्रिह ।

रत्नगर्ग—महाभारतरोकाके रचयिता तथा हिरण्यगर्भके
 पुत्र और माघयज्ञका पात । उन्होंने वैष्णवाकृत्यमंत्रिका
 नामक विष्णुपुराणकी एक रोका लिखी है जिसमें उन्होंने
 सर्वकारमित्रको राजाका श्लो ल किया है ।

रत्नगर्गपोद्गीरस (सं० पु०) यक्षमारोगाधिकारमें रत्नी
 पथयिष्य । इसका प्रस्तुत प्रयाजी—रत्नसिन्धु, होरा,
 सोना चाँदी, सोसा छोटा ताँबा मिर्च, भस्म, मुक्त, सोनामयकी मूंगा और गुडकी मसम कराबर कराबर
 भाग ले कर तीन दिन अक्षरकके रसम मिगो कर शूर्ण
 करे । पाछ उस कीड़ीमें भर कर सुहागा और मरुतनके
 दूधस कीड़ीका मुह बंद कर दे । अगस्त उस कीड़ीको
 मट्टके बरतनमें मच्छो तरह रक कर गजपुटमें पाक
 करना होगा । बारमें औषध सब उँबा हो जाय, तब
 इसे मच्छा तरह शूर्ण कर सहायक रसमें ७ बार, अक्षर
 कके रसम ७ बार और चित्तके रसम २१ बार मायगा
 द कर सुया ले । इस औषधकी मात्रा ४ रत्नी तथा
 अनुपात मधु और पीपलका बूणा वा धो और मरिच है ।
 यथाविधान इस औषधका सधन करनेसे कृष्णसाल्य
 पक्ष्मा, यात म्याधि, भ्रमरो, कुष्ठ, मद्, उरुतोय, मग
 स्वर, मर्षी और प्रह्वाराग मूर होते हैं । यक्षमारोगकी यह
 उद्यम तथा है ।

रत्नगर्ग साधर्मि—काम्यमंत्रिकात्मक और श्यामाङ्गन
 चन्द्रिका नामक दो मन्थक रचयिता ।

रत्नगमा (सं० लो०) पूष्पा भूमि ।

रत्नगिरि—बम्बई प्रदेशके कोट्टण विभागागस्तगत एक
 जिला । यह क्सा० १५ ४४ से १८ ४ ० तथा देशा०
 ७२ २ से ७३ ५० पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण
 ३६६८ वर्गमील है । इसके उत्तरमें कुळाभा जिला और
 अजिंठरा सामन्तराज्य, पूर्वमें सदाटा और कोङ्कापुर,
 दक्षिणमें सामन्तबागु और पानुगोत्राधिकृत गोमाण्डर्य
 तथा पक्षिममें मरच उपसागर है ।

इस जिलेका प्रायः सभी स्थान पर्वतमय है । उप-
 कूल प्रदेश भी उच्च अधित्यकास परिपुण है । इस अधि-
 त्यकासे जगह जगह समुद्रकी छाड़ो और पयतगाब्याही
 नदीमाला बिद्यमान है । इन सब नदियोंके दानी किनारे
 की अमीन उर्पात है तथा उत्तम किनारे बड़े बड़े नगर

और बन्दर अवस्थित है। समुद्रोपकूलसे करीब १० मील पूरव सहायट्टि-पवतमाला देवी जाती है।

वाणकोट वा भिष्कोरिया दुर्गसे ले कर रेड्डी दुर्गसे दो मील दक्षिण तक समुद्रतट १६० मील विस्तृत है। सुवर्णदुर्ग और मलवार नामक स्थान समुद्रगर्भमें प्रसारित हो दो एक स्थान द्वीपके आकारमें परिणत हो गया है। ये सब भी उपकूलवर्ती पहाड़ी अंशमें उत्पन्न हुए हैं। इन दोनों स्थानोंमें महाराष्ट्र-दुर्गका मन्नावशय आज भी विद्यमान है।

इस जिलेमें बहुतसे गरम सोते हैं। दापोली उप-विभागमें दो और राजापूर उपविभागमें एक है। ये तीनों सोते अनल नामक नगरके समीप अवस्थित हैं। इसके सिवाय खेड और सोमेश्वर नगर, अरवली और तुराल नामक ग्रामों और भी चार गरम सोते देखे जाते हैं।

यहाँके प्राचीन इतिहासादिमें कोई धारावाहिक घटना लिपिबद्ध न रहने पर भी टिपलून और कोल्हागिरिगुहाका पर्यवेक्षण करनेसे स्पष्ट अनुमान होता है, कि ईसाजन्मसे २०० वर्ष पहलेसे ले कर ५० ई० तक उत्तर-रत्नगिरिका एक विशेष समृद्ध बौद्ध-उपनिवेश स्थापित हुआ था। इसके बाद कई प्रबल-पराक्रान्त हिन्दू-राजवंशने यहाँ अधिकार जमाया। इन सब राजवंशवर्तियोंसे चालुक्योंने अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त की थी।

१३१२ ई०में मुसलमानोंने रत्नगिरि लूटा और दामोलको जीत कर वहाँ राजपाट बसाया। किन्तु सच पूछिये, तो १४७० ई० तक वे लोग रत्नगिरिमें अच्छी तरह गोदी न जमा सके थे। इस समय बाह्यनी राजोंने विशालगढ़ और गोश्वाराज्य जीत कर उस प्रदेशमें मुसलमान राजवंशका पूर्ण प्रभाव फैलाया। १५०० ई०के लगभग-सप्तद्विती नदीतट तक सारा दक्षिण कोट्टण-राज्य विजापुर राज्यके अन्तर्भूक्त हुआ। इस समय पुर्तगाली-के साथ जो युद्ध हुआ था उसमें दामोल तथा अन्यान्य समुद्रतीरवर्ती नगरोंको घका पहुँचा था।

महाराष्ट्र-शक्तिके श्रेष्ठयुद्धसे पुर्तगालीका गौरव-रवि दिलकुल डूब गया। महाराष्ट्र-केशरी शिवाजीके प्रभावसे महाराष्ट्रगण मुगल, सिद्दी और पुर्तगाली सेनाओंको बार बार परास्त कर यहाँ हिन्दू सत्ता फिरसे स्थापित

करनेमें समर्थ हुए थे। इसके कुछ समय बाद मिहियोंने इस जिलेका अधिकार दखल कर लिया था।

जलदस्यु कान्होजी अंग्रियाका समुद्रके किनारे एकाधिपत्य देना कर मराठोंने उसे मराठा-नासेनादलका अध्यक्ष बनाया। इसी सूत्रसे कुछ समय बाद कान्होजी-को रत्नगिरिका कुछ अंश सामन्तराज्यरूपमें मिला। १७४५ ई०में कान्होजीके धर्मपुत्र तुलाजी अंग्रियाने वाणकोटसे ले कर सायन्तवाडीके मध्यवर्ती सभी स्थानों पर अधिकार जमाया। उन्होंने पेशवाका आधिपत्य अप्राप्त कर समुद्रोपकूलस्थित बहुतसे जहाज लूटे थे। १७५५ ई०में अंग्रेजोंने पेशवाके साथ मिल कर सुवर्ण-दुर्गका दस्यु-दुर्ग तहस तहस कर डाला। दूसरे वर्ष उन्होंने अंग्रियाके अधिष्ठन नौवाहिनीको समूल नष्ट कर विजयदुर्ग पर कब्जा किया था। इन सब कार्योंके लिये अंगरेजोंके प्रति प्रसन्न हो पेशवाने वाणकोटके साथ नौ ग्राम वृट्टिग-सरकारको पुरस्कारमें दिये। १७६५ ई०में मालवाम और रेड्डी दुर्ग जीता गया। अनन्तर मालवान, कोल्हापुर और रेड्डी सामन्तवाडीके सरदारके अधीन रखा गया था। इसके बाद कोल्हापुर सामन्तवाडीके सरदारोंके मध्य २३ वर्ष तक युद्ध चलता रहा जिससे शासनमें घोर विष्टङ्गला उपस्थित हुई। आखिर अंगरेजराजने बीचमें पड़ कर मेल करा दिया। इसमें अंगरेजोंको मालवान और वेनगुगला मिला तथा रत्नगिरि पेशवाके हाथसे निकल गया। परन्तु १८१७ ई०में गृह-विवादसे पुनः मराठा-सरदारोंके मध्य आग धधक उठी। अंगरेजी सेनाने अच्छा मौका देख कर उस पर दखल किया और साय साय दुर्गादि भी छीन लिये। अंगरेजी अधिकारमें आनेके बाद यहींसे उन्होंने देशी सिपाही संग्रह करनेकी व्यवस्था की है। सिपाहियोंमें मराठोंकी संख्या ही अधिक रहती है।

इस जिलेमें ७ शहर और २३०१ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या ११ लाखसे ऊपर है। हरिक, रागी और वरी यहाँकी प्रधान उपज है। जिलेमें नारियलके पेड़ बहुत पाये जाते हैं।

वर्षईप्रदेशके चौबीस जिलोंके मध्य यह जिला विद्याशिक्षामें दशवा पड़ता है। अभी कुल मिला कर

२१६ स्कूल है जिनमेंसे २ हाइ-स्कूल, १३ मिडिल स्कूल, २३८ प्राथमका स्कूल, ३ स्वेगल स्कूल, २ टेक निकल स्कूल और १ गिरल स्कूल है। स्कूलके अतिरिक्त एक अस्पताल और चार चिकित्सालय हैं। जिलेमें एक पायबखाना भी है।

२ उक्त जिलेका एक उपविभाग। यह भद्रा० १५ ४४ से १० १० उ० तथा देशा० ७३ १२ स ७३ ३३ पू०क मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४१५ वर्गमील और जनसंख्या डेढ़ लाखसे ऊपर है।

३ उक्त जिलेका एक प्रधान शहर। यह भद्रा० १६ ५६ उ० तथा देशा० ७३ १८ पू० बम्बई गहरसे १३६ मील दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है। जनसंख्या प्रायः १६०६४ है। समुद्रोपकूल पर अवस्थित होनेके कारण यहाँका वायुमय जोते बलता है। यहाँ मछलीका कारबार ही अधिक होता है। दो नाइके मध्यवर्ती एक पर्वतक ऊपर यहाँका दुर्ग अवस्थित है। शहरमें एक हाइ-स्कूल, एक मिडिल स्कूल, चार प्राथमके स्कूल और १८३६ ई०में स्थापित एक गिरल-स्कूल है। स्कूलके अतिरिक्त यहाँ सब जगहकी मन्दाबत, पागलघाना, सिमिड अस्पताल और एक कुशाधम भी है।

रत्नगिरि—, राजपुरक अन्तर्गत पांच पर्वता मेंस एक। २ बहसलक करक जिज्ञासर्गत पात्रपुर उपविभागका एक पर्वत। यह भद्रा० २० ३६ उ० तथा देशा० ८६ २० पू०के मध्य कबियो नदीके उत्तरी किनारे अवस्थित है। इसक गिर पर महाकासक एक मन्दिर है। कारक क पास १ से ३० फुट ऊ की पत्थरकी बहुत-सी मूर्तियां पड़ी हैं। उसके पूरव भा काककार्मयुक्त भैरव मूर्तियां पुरी हू देको जाती हैं। इसक सिवा बुद्धबच को बड़े बड़े मस्त्वक पत्थर पर खेदित हैं। कहत है, कि राका विष्णुध्वजेशरी व सब कीर्ति छोड़ गये हैं।

रत्नगिरिरत्न (सं० पु०) उपरधिकात्में रत्नोपधिपियेय। मस्तुत प्रजादी—रत्न, मबरक, सोना, ताँबा, गंधक, म्प्येक बराबर बराबर भाग जाहका अथा तंगी और वैक्यत एहे मामराजक रत्नमें निगा कर पपदीकी तय पाक करे। पीछे उस पूर्ण कर साहजिक रत्नमें नायना है लपुपुरमें पाक करना होगा।

शैवम्यरत्नावनाके मतसे भूद्रराजके रत्नमें मर्न कर उस पर्वतीकी ताद पाक करे। पीछे उक्त पूर्ण कर पथात्म सोहिजन, मङ्गल, सन्माल, वष, भूद्रराज भूद्रवम, कट्टरुते, गुण्य अयसी, वकुपुत्र, माह्यो तितराज और पूतकुमारा प्रत्येकके रत्नमें ३ बार नायना व कर म्यामें बंध कर रजे और बालुकायन्त्रमें लपुपुरसे पकाये। माता २ रत्नी और अनुपान पीपल तथा घनिये का काढ़ा है। इस औपयका लवन करनस समो प्रकार क उबर जात रहत है। (रत्नविद्या)

रत्नमोयतीर्थ (सं० ज्ञी०) एक तीर्थका नाम।

रत्नचन्द्र (सं० पु०) १ एक देयना जो रत्नोंके अधिष्ठाता मान जाते हैं। २ एक बोधिसत्त्वका नाम। ३ विमिसार राजाक एक पुत्रका नाम।

रत्नचूड़ (सं० पु०) १ एक बोधिसत्त्वका नाम। २ पुराणा नुसार एक राजाका नाम।

रत्नच्छत्र (सं० ज्ञा०) रत्न भादिसे अर्चित छत्र।

रत्नच्छत्रकूटसम्पूर्ण (सं० पु०) एक बाधिसत्त्वका नाम।

रत्नच्छत्रान्मुद्रतावमास (सं० पु०) एक पुत्रका नाम।

रत्नज्ञा—विद्योत्तरक महाराणा। महाराणा संग्राम सिद्धक व होसरे पत्र थे। महाराणा संग्राम सिद्धके मरने पर १५८६ सवत्में ये मेवाड़क सिंहासन पर बैठे। ये पिता की तरह दया तथा कीरत्य, सादस, धैर्य, शैवसिवा भादि राजपूतोपनि सङ्गुणोंसे मूषित थे। यदि ये छोड़े विम भी गुणावस्थाके बेगको रोक सकते तो इसमें संदेह नहीं, कि इस राजपूतानेका बड़ा उपकार होता। परन्तु गुणावस्थाके बेगको न रोक सकनेके कारण इनकी अज्ञानमूल्य हू और राजपूताने इससे जो भाशा की थी वह सदाक निपे पिठोन हो गइ।

एहनि मामरके राजा पृथ्वीराजकी कन्यासे गुप्त विवाह कर दिया था, इस बातकी कानों कान भी किसी को खबर न थी। मत्पव कन्याक विवाह मान्य अवस्था प्राप्त करन पर महाराज गुप्याराजन इसका विवाह नूदी नरैज सूत्रमसल पका किया। यह कन्या भी मारै जात्र क पठकी बात नहीं कह सकी। विवाह हानि पर इसकी पबर महाराणा रत्नसिद्धका नगा। इस संवाहका पाठ

ही वे बदला लेनेके लिये श्रद्धा हो गये। अहेरियाका समय उपस्थित हुआ। महाराणाने अपने बैरका बदला लेनेका उचित अवसर पाया। सूरजमल और रत्नजी दोनों अहेर खेलनेके लिये आगे निकल गये। वहाँ इन दोनोंके अतिरिक्त तीसरा कोई नहीं था। मौका देख कर महाराणा रत्नजीने सूरजमल पर वार किया, सूरजमल घोड़े से गिर गया। परन्तु थोड़ी ही देरमें समूहल कर उठने पर सूरजमलने देखा, कि रत्नजी भागा जा रहा है। सूरजमलने कहा—“भाग जा, भाग जा, रे कायर। तेरी इस कापुरुषपताने मेवाड़के श्वेत यशमे सदाके लिये कलङ्क लगा दिया।” रत्नजी जानता था, कि सूरजमल मर गया इसलिये वह भागा जाता था। परन्तु जब उसे मालूम हुआ कि वह जीता है, तब वह लौटा। आ कर वह सूरजमल पर वार करना चाहता ही था, कि इतनेमें सूरजमलने रत्नजीकी छाती पर चढ़ कर उसका काम तमाम कर डाला। राणा रत्नसिंहने पांच वर्ष तक राज्य किया था। उनके शासनकालमें बाबर शाह भारतमें मुगल साम्राज्य स्थापन करने पर भी मेवाड़ तक न बढ़ सके थे। जलुञ्जयके पुण्डरीक-मन्दिरमें उत्कीर्ण १५८७ सवन्के शिलाफलकसे पता चलता है, कि राणा रत्नजीने उसका सातवा जीर्णोत्सकार किया है।

रत्नदत्त (सं० पु०) वणिक्भेद।

रत्नतेजोऽभ्युद्भतराज (सं० पु०) एक बुद्धका नाम।

रत्नत्रय (सं० क्ली०) जैनोंके अनुसार सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चरित्र इन तीनोंका समूह जो मनुष्यको उत्कृष्ट बनानेका साधन समझा जाता है।

रत्नदर्पण (सं० पु०) रत्नादिमण्डित दर्पणभेद।

रत्नदाम (सं० स्त्री०) १ रत्नोंकी माला। २ गर्गसंहिताके अनुसार सोताकी माता और राजा जनककी स्त्रीका नाम।

रत्नदीप (सं० पु०) १ एक कल्पित रत्नका नाम। कहते हैं, कि पातालमें इसीके प्रकाशसे उजाला रहता है। २ रत्नका दीपक।

रत्नदेव—कलिङ्गके हैहयवंशीय तीन राजे। रत्नपुरमें उन लोगीकी राजधानी थी।

रत्नद्रुम (सं० पु०) प्रवाल, मूंगा।

रत्नद्रुममय (सं० लि०) प्रवाल मण्डित मूंगोंसे भर हुआ।

रत्नद्वीप (सं० क्ली०) रत्ननिर्मित द्वीप, शाकपार्थिववत् समासः। १ रत्ननिर्मित स्थान। २ पुराणानुसार एक द्वीपका नाम।

रत्नधर—१ काशीमाहात्म्यके प्रणेता। २ स्मृतिमञ्जरीके रचयिता। इनकी उपाधि मिश्र थी।

रत्नधर (सं० पु०) १ अनवान्, अमीर। २ एक प्रसिद्ध पण्डित।

रत्नधा (सं० लि०) धनशाली, अमीर।

रत्नधार (सं० पु०) पुराणानुसार एक पर्वतका नाम।

(लिङ्गपु० १५३३)

रत्नधारा (सं० स्त्री०) पुराणानुसार एक नदीका नाम।

(हिमवत् ४४०६)

रत्नधेनु (सं० स्त्री०) रत्ननिर्मिता धेनु। महादानविशेष।

रत्नकी धेनु बना कर उसे दान करना होता है। मत्स्यपुराण (२६२ अ०) में इस दानका विधान लिखा है। तुला पुत्रपकी तरह यह दान करना होता है। जो यह दान करते हैं उन्हें गोलोककी प्राप्ति होती है।

निम्न प्रकारसे रत्नधेनुको कल्पित करना होता है। इक्ष्वासी पद्मरागसे मुख, सौ पुष्परागसे नासिका, ललाट पर सुवर्णतिलक, सौ मुक्ताफल द्वारा चक्षु, सौ विट मसे दोनों भ्रू, दो मुक्तासे दोनों कान, सुवर्णसे शृङ्गा, सौ वज्रसे शिर, सौ इन्द्रनीलसे पीठ, स्फटिकसे उदर, सुवर्णसे खुर, मुक्तावलिसे पुच्छ, सूर्यकान्त और चन्द्रकान्तसे घ्राण, कपूर, चन्दन और कुंकुमसे रोम, चाँदीसे नाभि, सौ गारुत्मत मणिले अस्थि तथा विविध रत्नसे सन्धिस्थल और शर्करासे जिह्वाकी रचना करनी होगी। गुड़से गोमय, घृतसे गोमूत्र तथा इसमें दधि और दुग्ध देना होगा। पुच्छाग्रसे चामर, ताम्र दोहनपात तथा सुवर्ण कुण्डल और शकिके अनुसार भूषण देना होता है। इसके चतुर्थांशसे बछड़ेकी कल्पना करनेका विधान है।

कृष्णाजिनके ऊपर इस प्रकार धेनुकी कल्पना कर विशुद्ध दिनमें यथाविधिवाक्य द्वारा दान करना होता है। दानकालमें यह मन्त्र पढ़ना उचित है,—

“धं त्वं वैवर्गायधाम यतः पठन्ति
स्वर्धनुर्विभुः प्रसन्नमानसः ।
वस्वन्तु समस्तमुनिवपश्च्युत
मां पाहि शशि मन्वन्तस्वीर्यमानम् ॥”

जो इस प्रकार धेनुवान करने हैं वे सभी पापोंसे
विमुक्त हो कर बन्धुवाग्धम और पुत्र पीत्रादिके साथ
मद्वक। तरह रूपबिदिए हो शिवलोक जाते हैं ।

(मत्स्यपुराण रत्नधेयनामक २१२ अ०)

हेमाद्रिक शानकरत्नमें भी इस शानका विधान
लिखा है ।

रत्नधेय (सं० श्लो०) धनदान ।

रत्नध्वज (सं० पु०) एक वाचिसरस्वका नाम ।

रत्ननदी (सं० श्लो०) एक नदीका नाम ।

रत्ननिषय (सं० पु०) मणिका समूह ।

रत्ननाथ—स्वायंबोधिनो नामक तर्कसंग्रहदोकाकर्ता ।

रत्ननाभ (सं० पु०) विष्णु ।

रत्ननिधि (सं० पु०) १ अश्विन पक्ष, ममीला । २ समुद्र ।

३ मेघ पर्यंत । ४ विष्णु ।

रत्नन्यास (सं० श्लो०) रत्नसंस्थापन ।

(इषधीर्ष ७८।११)

रत्नपरीक्षक (सं० पु०) यह जो रत्नोंको परचना जानता
हो, अहिरा ।

रत्नपरीक्षा (सं० श्लो०) प्रकृत रत्ननिषाधन ।

रत्नपाठ (सं० पु०) एक लोपका नाम ।

(भागिनीकण १।११)

रत्नपथ (सं० पु०) सुमर परांतका एक नाम ।

(इषिष ४)

रत्नपाणि (सं० पु०) एक बौधिसरस्वका नाम ।

रत्नपाणि—यद्कारकप्रतिष्ठाशुक्र नामक व्याकरणक
प्रणेता ।

रत्नपाणिशर्मन्—एक विश्वयात्र परिद्वत तथा मंगोला
संज्ञोद्योत्तरक पुत्र । ये मिथिलाप्रियति उत्तसिद्धक सना
सदृश । इनक बनाये माभारतसंग्रह, वक्रोद्दिष्टसारविषय,
छन्दोबन्धनचन्द्रिका क्षयमासादिचिन्त्रक, भाद्रोपरोक्षादि
बिचिरसाधन, पारम्पर्यचन्द्रिका, प्रायश्चित्तपारिजात,
महाशानपत्रायासना, मिथिलेश्वररित, मिथिलेश्वरद्विक

भादि प्रथम मिलते हैं । वाक् इसके इन्होंने उन्नतसिद्धके
पत्न्य और कृतसिद्धके पुत्र तोरमुक्तिराज मदेभरतसिद्धके
मताभारतको रचना की थी । रामा कृतसिद्धके भाद्रो-
नुसार इन्होंने सुबोधिता नामक एक शपिनि लिखी ।

रत्नपारको (हि० पु०) रत्नोंको पहचाननेवाला,
अहिरा ।

रत्नपारायण (सं० श्लो०) पारायणमंत्र अथ रत्नस्य
पारायण । सर्वोत्तमधाम ।

रत्नपान (सं० पु०) १ राजमेह । २ चन्द्रेन्द्रराज धीरवर्ग-
के समाकषि ।

रत्नपामकगर्भ—प्रागुत्पत्तिपुत्राधिपति ।

रत्नपीठ (सं० पु०) ताम्रिकीक मनुसार एक तार्यका
नाम ।

रत्नपुर (सं० श्लो०) एक प्राचीन नगरका नाम । यहाँ
कनकपुरा और हर्यपंशीय राजे राज्य करत थे ।

रत्नपुरांमद्भारक—स्वायसारदाकाक प्रणेता ।

रत्नमहीय (सं० पु०) देखा रत्न जो शीपकके समान
प्रकाशमान हो ।

रत्नमम (सं० पु०) १ एक शेषताका नाम । २ एक राजा
का नाम ।

रत्नममा (सं० श्लो०) रत्नार्थ ममा यत् । १ पृथ्वी ।

२ जैमीक मनुसार एक नरकका नाम । ३ जागामेह ।

४ एक जैनसूरिका नाम । इनका बनाया एक प्रथम मिश्रता
है ।

रत्नबाहु (सं० पु०) विष्णु ।

रत्नभोज (सं० श्लो०) धनसञ्चय ।

रत्नभूति—एक प्राचीन कवि ।

रत्नमञ्जरा (सं० श्लो०) विद्यापरोमेह ।

रत्नमति—एक शेषाकरण । तयमुकुटन इनका मत्त
इत्नेन किया है ।

रत्नमद्—शक्तिपारस्वका एक रत्ना ।

रत्नमद्—नपायका एक रत्ना ।

रत्नमय (सं० श्लो०) रत्नमयकके मयद् । रत्नसङ्ग,
रत्नमरिचक ।

रत्नमाका (सं० श्लो०) १ रत्ननिर्मिता माना, मज्जिमीको
माना वा हार । २ राजा बनिका कन्या । पामन

मगवान्को देव्य कर इसके मनमें यह कामना हुई थी, कि ऐसे बालकको मैं दूध पिनाऊँ। इसीलिये यह कृष्णा-वतारमें पूतना हुई थी।

रत्नमालावत् (सं० त्रि०) रत्नमालामदृश।

रत्नमालिका (सं० स्त्री०) रत्नोंकी छोटी माला या हार।

रत्नमालिन् (सं० त्रि०) १ रत्न मालाधारी, रत्नोंकी माला पहननेवाला। (रामा० उ० २६४) (स्त्री०) २ एक प्रकारका देवता। (सहाद्रि० २।१६।४)

रत्नमाली (सं० पु०) राजभेद (सहाद्रि० ३।१५)

रत्नमित्र—एक पाश्चिमी कवि।

रत्नमुकुट (सं० पु०) एक बोधिसत्वका नाम।

रत्नमुख्य (सं० स्त्री०) रत्नेषु मुख्यं। हीरक, हीरा।

रत्नमुद्रा (सं० स्त्री०) समाधिभेद।

रत्नमुद्राहस्त (सं० पु०) एक बोधिसत्त्वका नाम।

रत्नगृष्टि (सं० पु०) एक बुद्धका नाम।

रत्नयुग्मतीर्थ (सं० स्त्री०) तीर्थविशेष।

रत्नरश्मि (सं० पु०) एक बौद्धपति। इन्होंने तिव्यतीय भाषामें कारण्डव्यूह अनुवाद किया था।

रत्नराज (सं० पु०) रत्नेषु राजते राज्-क्तिप्। १ माणिक्य, मुक्ता। २ रत्नश्रेष्ठ।

रत्नराजि (सं० स्त्री०) रत्नानां राजिः। रत्नसमूह, रत्नों-का ढेर।

रत्नराशि (सं० पु०) १ रत्नस्तूप, रत्नसङ्घ। २ समुद्र।

रत्नरेखा (सं० स्त्री०) राजकन्याभेद।

रत्नलिंगेश्वर (सं० पु०) १ शिवलिङ्गभेद। २ बौद्धमतसे स्वयम्भूकी प्रतिधूनि।

रत्नवत् (सं० त्रि०) रत्न विद्यतेऽस्य मनुष्य मस्य व। १ रत्नयुक्त, रत्नविशिष्ट। २ फलप्रद, फलदायक।

रत्नवती (सं० स्त्री०) १ पृथ्वी, भूमि। २ राजा वीरकेतुकी कन्याका नाम। (कथावर्ति० ८८।६) (पु०) ३ पुराणानुसार एक पहाडका नाम। (मार्क० पु० ५।५।७)

रत्नवर्द्धन (सं० पु०) काश्मीरवासी एक व्यक्ति। इन्होंने अपने नाम पर रत्नवद्ध नेज नामक शिवलिङ्गकी स्थापना की। (राजतर० १।४०)

रत्नवर्मान् (सं० पु०) एक प्रसिद्ध कवि।

(कथावर्ति० ५७।५५)

रत्नवर्ग (सं० पु०) यक्षराजभेद।

रत्नवर्षुक (सं० स्त्री०) रत्नानि वर्णितं शीलमस्य (रूप लघपनपदस्येति। पा ३।२।१५४) इति उक्तम्। १ पुष्पकरव। (त्रि०) २ रत्नवर्णणगीत।

रत्नवृक्ष (सं० पु०) प्रवाल, मृंगा।

रत्नविशुद्ध (सं० पु०) जगद्भेद।

रत्नशालाका (सं० स्त्री०) हीरे आदि मुख्यवान् पत्थरोसे बनी हुई एक प्रकारकी शलाका।

रत्नशाला (सं० स्त्री०) १ रत्नोंके रखनेका स्थान। २ जड़ाऊ महल, जिसकी दीवारोंमें रत्न जड़े हो।

रत्नशिपर (सं० स्त्री०) एक बोधिसत्त्वका नाम।

रत्नशिपिन् (सं० पु०) एक बुद्धका नाम।

रत्नशिला (सं० स्त्री०) वह शिला या पत्थर जिस पर अनेक प्रकारके रत्न जड़े हों।

रत्नशेखर—गुणस्थानप्रकरणके रचयिता।

रत्नशेखर—प्रबन्धकोष और प्राकृतछन्दःकोष नामक अधिधान ग्रन्थके प्रणेता। १४२० ई०में इन्होंने यह ग्रन्थ समाप्त किया। ये जैन धर्मावलम्बी थे। इनकी उपाधि सूरि थी।

रत्नश्रेष्ठी (सं० स्त्री०) पद्मोत्थिभेद।

रत्नसंग्रह (सं० पु०) रत्नसञ्चय, रत्न इकट्ठा करना।

रत्नसंघात (सं० पु०) हीरकादि मणिका स्तूप।

रत्नसमुद्रगल (सं० पु०) समाधिभेद।

रत्नसम्भव (सं० पु०) १ एक ध्यानी बुद्धका नाम। २ एक बोधिसत्वका नाम। ३ वह स्थान जहा बुद्ध शशि केतु आविर्भूत होंगे।

रत्नसागर (सं० पु०) समुद्रका वह भाग जहासे प्रायः रत्न निकलते हैं।

रत्नसानु (सं० पु०) रत्नानि सानौ प्रस्ये यस्य। सुमेरु पर्वतका नाम।

रत्नसिंह—चित्तकूटके गुहिलवंशीय एक राजा तथा संप्राम-सिंहके पुत्र।

रत्नसिंह—एक राजा। इनके पुत्र उदयसिंहको क्षेमेन्द्रने औचित्यविचारचर्चा नामक ग्रन्थ उदसर्ग किया था।

रत्नसिंह वास्तव्यकायस्य-वंशीय एक राज-कवि। ये रत्नपुरराज २य जाजल्लदेवकी समामें विद्यमान थे।

रत्नसिंह—बीकानेरके एक महाराज । ये महाराज स्वतंत्र सिद्धके पुत्र थे और उनका परलोकपास होने पर ये बाकानेरके सिंहासन पर आकर बैठे । महाराज स्वतंत्र सिद्धके अधिकारिक होते ही सामन्त और प्रजासौके मनका भाव महाराज बदल गया । उनका हृदयमें नयी नयी बाकांक्षाएँ उत्पन्न होने लगीं । उस समय बीकानेरका राजनैतिक आकाश अनेक प्रकारके बाधसौंसे घिर गया । सिंहासन पर बैठनेके यात्रे दो दिनोंके बाद वह एक बड़े भारी युद्धमें लक्ष्मी बना । जयसमेतकरा प्रजा और कर्माचारियोंमें आराध्यके पीकानेरकी सीमामें लुट-चसोट करना प्रारम्भ कर दिया । इसमें रत्नसिंह ने अत्यन्त कुपित हो कर जयसमेतके राजाको युद्धके लिये निमन्त्रण-पत्र भेजा और जयपुर तथा मेवाड़के महाराजोंसे सहायता मांगी । जयसमेतके राजा युद्धके लिये द्रुत असाहमे तैयार हो गये । जयसमेतकी सीमा पर इनकी सेना पकड़ हुई । इसी समय अंग्रेजों गवर्नमेंट रत्नसिंहके पास पत्र भेजा तथा इस युद्धका अपनी सन्धिका नञ्जु करना बताया । इस पत्रसे महाराज रत्नसिंह युद्धसे निवृत्त हो गए । गवर्नमेंटकी सन्धिके अनुसार मेवाड़के महाराजाने इन दोनों राज्योंके बीच पञ्जु कर अंगड़ा तय कर दिया ।

इस विषयके आन्त होत पर महाराज रत्नसिंह १८२० ई०में राज्यके मानरा अगुओंमें एक स । राज्यके सामन्त विद्रोही हो गये । महाराज रत्नसिंह इससे बड़े भाव हुए और उन्होंने गवर्नमेंटसे सहायता मांगी । रेजिडेंटसे सहायता द्वाक लिये प्रभुत भा हा गये थे, परन्तु बड़े सारके टोकमन ये कर गये ।

गवर्नमेंटकी सहायतासे निराश हा कर रत्नसिंह इन समयमें हो बलसे उन विद्रोहियों हमल करवा डाला । परन्तु इना समय जयसमेतका आकाश पुनः छाया हो गया । इस अगुओंकी गालत करनके लिये गवर्नमेंट ने एक अंग्रेज भेजा और इतनीका अमड़ा तय हो गया ।

इना बीच महाराज रत्नसिंहने अपने राज्यकी साना बङ्गालका प्रयत्न किया था, परन्तु वृटिजसिंहके निषेध करनसे रुक गये । महाराज रत्नसिंहने २५ वर्ष तक राज्य किया था । सन् १८५३ ई०में इनका देहावत हुआ ।

रत्नसिंह इच्छि—जैन सूत्रिनेत्र ।
 रत्नसुन्दरसूत्रि—जैन सूत्रिनेत्र ;
 रत्नसू (सं० स्त्री०) रत्नानि सूत्र इति सू प्रसये द्विप् ।
 १ पुर्वी । (१५० १६५) (ति०) २ रत्नसयकावरी, रत्न रत्नय करनयासा ।
 रत्नसूत्रि (सं० स्त्री०) सूत्रा ।
 रत्नसेन (सं० पु०) एक गङ्गादेगणपति ।
 रत्नसामिन् (सं० स्त्री०) रत्नप्रतिष्ठित शिपिद्विद्ध और मन्दिर ।
 रत्नसिद्धि (सं० स्त्री०) यह भावति ज्ञा राजसूय-यज्ञमें राजाके भेष्ट धनका अन्वेषण कर वो जाती है ।
 (कत्वा० धी० १५११)

रत्ना (सं० स्त्री०) पुष्पजातुमार एक नदीका नाम । यह वातामें आ गिनी है ।
 रत्नाकर (सं० पु०) रत्नानामाकरा उदात्तस्थान । १ समुद्र । २ रत्नोत्पत्तिस्थान, मणियाँके निकलनका स्थान । ३ रत्नोंका समूह । ४ वाक्मीक मुनिका परछेका नाम । ५ स्वनामक्यात कपिचिद्वय । ६ युद्ध देव । ७ एक बाणिसयका नाम । ८ रत्नोभवा अंग्रेज अश्वमेद । ९ एक नगरका नाम ।
 रत्नाकर—द्रव्यगुणविचारके रत्नयिता ।
 रत्नाकर उच्चरुट—दानपत्रिकाके प्रयेता ।
 रत्नाकर पौष्टिकीका वाञ्छित—जयपुरात्मा एक परिचित ।
 ये जयपुराधिपति महाराज अयति एक गुद थ । इनके आदेशसे इस्वीन १७१४ ई०में अयति इस्वीन या प्रलम्भाद्म और अमका सहा लिया ।
 रत्नाकर मिथ—अयतिचत्तारमन्दक रत्नयिता ।
 रत्नाकर विद्याधिपति—कार्योत्पत्ति अयतिधर्मा श्राय श्रोतयामित एक अयतिधर्मा परिचित । व परिचित प्रपर दुर्ग बलक पञ्चपर भार अमृतनानुके पुत्र थ । इहाने अयति गायपत्रिका, पञ्चकपिपञ्चांगिका और इस्वीनय काव्य प्रयत्न किया । छेमेन्वृत्त सुस्वतिलकमें इनका नामा लिये है ।
 रत्नाट्ट (सं० पु०) रत्नानामुद्रियक यन्त्रिन् । १ विष्णु का रथ । (इस्वीनकर) रत्नानामुद्रि । २ रत्नचिह्न ।
 रत्नागिरि (सं० पु०) रत्नगिरि रथ ।

रत्नाङ्गुरीय (सं० स्त्री०) रत्ननिर्मितं अंगुरीयकं । रत्न-
निर्मित अंगुरीयक ।

रत्नाचल (सं० पु०) रत्ननिर्मितः अचलः शाकपार्थिववत्
समासः । पुराणानुसार रत्नोका वह ढेर जो पहाडके
रूपमें लगा कर दान किया जाता है । यह भी एक महा-
दान है । हेमाद्रिके दानखण्ड और मत्स्यपुराणमें इस
दानका विधान इस प्रकार है,—इस पर्वतको इस तरह
कल्पना की जाती है । यह पर्वत उत्तम, मध्यम और
अधम भेदसे तीन प्रकारका है । सहस्र मुक्ता द्वारा जिस
पर्वतकी कल्पना की जाती है वह उत्तम, पाच सौसे
मध्यम और तीन सौसे अधम होता है । इसके चतुर्थांश-
से विष्कम्भ पर्वत दान करना होता है । पूर्वकी ओर वज्र
और गोमेद तथा दक्षिणकी ओर इन्द्रनील और पुष्पराग
रत्न-विन्यास करना पड़ेगा । यह पर्वत इस तरह प्रस्तुत
कर धान्याचलकी भांति और सब काम करने होंगे । जो
विधिपूर्वक यह दान करने हैं वे पापसे छुटकारा पा
विष्णुलोक जाते हैं । (मत्स्यपु० ६० प०)

रत्नाच्य (सं० त्रि०) रत्नमय, रत्नसे भरा हुआ ।

रत्नादेवी (सं० स्त्री०) राजकन्याभेद ।

(राजतर० ५१२४३३)

रत्नादित्य (सं० पु०) एक राजाका नाम ।

रत्नाद्रि (सं० पु०) एक पर्वतका नाम ।

रत्नाधिपति (सं० पु०) १ राजभेद । २ कुवेर ।

रत्नानुनद—वर्द्धमान सेलिमावाद परगनेमें प्रवाहित एक
छोटी नदी । बगालके प्रसिद्ध कवि मुकुन्दराम चक्रवर्ती
इस नदीतीरवर्ती दामुन्या गाँवमें रहते थे ।

रत्नापुर (सं० स्त्री०) मध्य-प्रदेशके अन्तर्गत एक प्राचीन
नगरका नाम ।

रत्नाभरण (सं० स्त्री०) रत्नालङ्कार, रत्नका गहना ।

रत्नाभूषण (सं० स्त्री०) वह आभूषण या गहना जिसमें
रत्न जड़े हों, जड़ाऊ गहना ।

रत्नार्चिचस् (सं० पु०) १ एक बुद्धका नाम । २ रत्न-
मयूख ।

रत्नालोक (सं० पु०) रत्नकी ज्योति ।

रत्नालङ्कार (सं० स्त्री०) रत्ननिर्मितमामरणं अलङ्कारम् ।
मणिमय अलङ्कार, रत्नका गहना ।

रत्नावती (सं० स्त्री०) एक नगरका नाम ।

रत्नावभास (सं० पु०) एक कल्पका नाम ।

रत्नावली (सं० स्त्री०) १ मुक्तामाला, मणियोंकी श्रेणीका
माला । २ एक अर्थालङ्कार जिसमें प्रस्तुत अर्थ निकल-
नेके अतिरिक्त ठोकर क्रमसे कुछ और वस्तु-समूहके
नाम भी निकलते हैं । ३ एक रागिणी जो शास्त्रोंमें दीपक
रागको पुत्रवधु कही गई है ।

रत्नासन (सं० स्त्री०) रत्ननिर्मितम् आमनं । रत्नका
आसन ।

रत्नि (सं० पु०) ऋच्छति प्राप्नोत्यनेनेति ऋ- (ऋतन्य-
स्त्रीति । उण् ४१२) इति क्त्विच् । बद्धमुष्टिइस्त, मुडो
भर ।

रत्निन् (सं० त्रि०) १ रमणीय धनवन्, रमणीय फलवन् ।
२ जिसके घरमें राजप्रदत्त रत्नइतिः समाहित होते हैं ।

रत्निपृष्ठक (सं० स्त्री०) कनुई, केहुनी ।

रत्नेन्द्र (सं० पु०) श्रेष्ठ रत्न । जैसे हीरा, मणि मुक्ता
आदि ।

रत्नेजक—लक्ष्मणसंग्रह नामक न्यायशास्त्रके प्रणेता ।

रत्नेश्वर—१ रत्नदर्पण नामक सरस्वतीकण्ठाभरणके टीका-
कार । ये रामसिंहदेव नामसे भी परिचित थे । २ प्रश्न-
प्रकाश नामक ज्योतिर्ब्रह्मके रचयिता ।

रत्नेश्वर मिश्र—आचारचन्द्रिकाके प्रणेता ।

रत्नेश्वर (सं० पु०) १ काशिके एक शिष्यका नाम । २
मथुराके एक शिष्यका नाम ।

रत्नोत्तमा (सं० स्त्री०) तान्त्रिकोंकी एक देवीका नाम ।

रत्नोज्ज्वल (सं० पु०) एक बौद्ध-यति ।

रत्नोल्का (सं० स्त्री०) तान्त्रिकोंके अनुसार एक देवीका
नाम ।

रत्यङ्ग (सं० स्त्री०) स्तेरङ्ग । योनि, भग ।

रथ (सं० पु०) रथतेऽनेनात् वा रम्- (हनिकुपिनीरमिका-
शिम्यः कथन् । उण् २१२) १ काय, शरीर ।

"आत्मानं रथिन विद्धि, शरीर रथमेव च ।" (गीता)

आत्मा देहरूपमें अवस्थान करती है इसलिये आत्मा-
को रथी कहते हैं । २ चरण, पैर । ३ वेनससृक्ष, वेत ।
४ तिनिसका पेड । ५ प्राचीनकालकी एक प्रकारकी
सवारी जिसमें चार या दो पहिये हुआ करते थे और

त्रिसका व्यवहार युद्ध, यात्रा विहार आदिके लिये हुआ करता था। पर्याय—शताङ्ग, स्वयन्त, स्वयन्मन्त्र। रथ क्षमण गुण—पायुप्रकांषक, मङ्गुका स्थिरीकरण, वसकर और अग्निबद्धक। रथनामा देना। ३ ओङ्कारुपक, विहार करनेका स्थान। ० शतरंजका वह मोहरा जिसे आज कल ऊट कहते हैं। जब चतुरङ्गका पुराना खेल भारतसे फारस और भरत गया तब वहाँ रथके स्थान पर ऊट हो गया।

रथक (सं० पु०) रथ इव प्रतिकृतिः रथ कन्। मन्त्रिता व्यवविशेषे।

रथकट्या (स० स्त्री०) रथानां समूहः (इतिरुप्यचम। पा ५।४।१) इति कट्यश्च, टाप्। रथसमूह रथग्रज।

रथकर (सं० पु०) रथं करोतीति कृ-भच्, रथानां कर्ता। रथकार, रथ बनानेवाला, बढ़ई।

रथकल्पक (सं० पु०) १ प्राचीनकालका वह अधिकारी जिसकी अधीनतामें राजानोंके रथ आदि रहते थे। २ प्राचीनकालके जनमानोंका वह प्रधान अधिकारी जो उनके घर आदि सजाता और उनके पहननेके पत्र आदि रक्कत था।

रथकाय (सं० पु०) रथारोही सनाहक।

रथकार (स० पु०) रथं करोतीति रथ-कृ-भण्। १ रथ निर्मापककर्ता, रथ बनानेवाला बढ़ई। पर्याय—तस्मन्, पदं कि, स्वप्न, काष्ठतरु, सूतधार रथकर, काष्ठरुचक बद्धका। (इम्बरबान्धर) पञ्चमीत देख्ये। २ एक जाति जिसकी उत्पत्ति माहिष्य (क्षत्रियम वैश्याम उत्पन्न) पिता और करिजो (वैश्यसे कुत्रामे उत्पन्न) मातास मानो गई है। इसमें जैसेक आदि स रकार होते हैं। "जेघाये रथकारं पर्याय तक्षाम्" (शुभ्रुत्पुत्र १०।१) 'रथकारं माहिष्येण करुष्यां जातं'। (महीर)

रथकारक (सं० पु०) रथस्य कारकः। सूतधार, बढ़ई।

रथकारस्य (स० स्त्री०) रथकारस्य भायः रथकारस्य। रथकारका भाव या धर्म, बढ़ईका काम।

रथकुटुम्बिक (स० पु०) यह जो रथ चलाता है, सारथा।

रथकुटुम्बिन् (सं० पु०) रथं कुटुम्बयितु धारयितु गोक मस्य, जिनि, यदा रथ एव कुटुम्ब तद्वस्यास्ताति इति। सारथा।

रथह्वर (स० पु०) रथका चक्रमेव।

रथरुत (स० पु०) रथं करोति कृ क्विप् तुक् च। १ रथ-धार, बढ़ई। २ पक्षमेव।

रथरन्तु (स० पु०) रथका निशान, रथध्वज।

रथरन्स्य (स० पु०) रथयत् न्यन्तं कर्मणमस्य। स गीतमें एक प्रकारका ताळ।

"मत्स्यरन्तो रथरन्तो विष्णुक्रान्तस्वतः परं।
सूर्यरन्तो विष्णुक्रान्तो ब्रह्मनिघाण्यङ्गकृत् ॥"
(व गीतरत्नाकर)

रथरन्ता (स० पु०) एक प्राचीन जगपद्का नाम। (बरा० १०)

रथकीत (स० स्त्री०) जो रथक नामसे खरोदा गया हो।

रथक्षय (स० स्त्री०) रथनिवास।

रथक्षीम (स० पु०) रथका हिम्मा।

रथगणक (स० पु०) रथसंख्याकारी राजकर्मचारि मेव।

रथगर्भक (सं० पु०) रथो गर्भोऽस्य। रथरुप्याद्यापान, रथके आकारकी वह सवारी जिसे मनुष्य ऊँचे पर उठा के चलाते हैं। जैसे, पासकी, नासकी आदि।

रथगुप्ति (स० स्त्री०) परमहरणानिपातप्राप्त्यथ रथस्य सम्नाहपदायरथकादि द्रव्यं। रथके किनारे छगा हुआ ऊकड़ा या छोटेका वह डँबा जो शक्य आदि स रथके लिये होता था। पर्याय—बधुध।

रथगुप्तस्य (सं० पु०) रथकर्ममें कुशल, सुनिपुण रथ चालक

रथगोपन (स० स्त्री०) रथस्य गोपन शक्ताहिन्यो रथार्थं भावरणं। रथगुप्ति।

रथमणिय (सं० पु०) रथसम्बन्धी।

रथपौप (स० पु०) रथके पहियेका धरकर शक्य।

रथवलक (स० स्त्री०) रथस्य बलक। रथका पहिया।

रथबलक चन् (स० स्त्री०) रथक पहियेका तरह सजा हुआ।

रथबरण (स० पु०) रथवरण बलक लक्ष्य नामास्य। १ बरुपाक पक्षी, बहवा। (पु० स्त्री०) २ रथबलक, रथका पहिया।

रथवर्षा (स० स्त्री०) रथचक्रना।

रथचर्यासञ्चार (सं० पु०) रथोंके चलनेकी पधकी सडक। यह खजूरकी लकड़ी या पत्थरकी बनाई जाती थी। चन्द्रगुप्तके समयमें इसका विशेष रूपमें प्रचार था।

रथचर्पण (सं० पु०) रथका द्रष्टव्य मध्यदेश।

रथचित्रा (सं० स्त्री०) एक प्राचीन नदीका नाम।

रथजङ्घा (सं० स्त्री०) रथका पिछला भाग।

रथजित् (सं० त्रि०) रथं जयति जि-क्विप् तुक् च।

रथजेता, रथ जीतनेवाला।

रथजृति (सं० त्रि०) रथ पर चढ़ कर चढ़ाई करना।

रथज्ञान (सं० स्त्री०) रथचलानेमें निपुण।

रथज्ञानिन् (सं० त्रि०) सारथी, रथ चलानेवाला।

रथतुर (सं० त्रि०) रथप्रेरयिता, रथ भेजनेवाला।

रथदारु (सं० स्त्री०) वह लकड़ी जो रथ बनानेकी योग्य हो।

रथद्रु (सं० पु०) रथनामा द्रुः। यज्ञ रथस्य रथस्य द्रुः द्रुमः, तद्वैपयोगित्वात्। १ तिनिशका पेड़। २ वैत।

रथद्रुम (सं० पु०) वृक्षभेद।

रथधूर (सं० स्त्री०) रथस्य नाभिः। रथचक्र, रथका पहिया। “यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविचाराः” (शुक्र ब्रह्म ३४।५) ‘रथनाभौ धारा इव, धाराः रथचक्रनाभौ मध्ये प्रतिष्ठिताः’ (वेददीप)

रथन्तर (सं० त्रि०) रथेन तरति यः। १ कल्पविशेष। (मत्स्यपु० १३।३३) (स्त्री०) रथेन तरतीति तृ (स्रथाः भृ-तृ-भृजधारिखाहृतपिदमः। पा ३।२।४६) इति खच्, मुम च। २ एक प्रकारकी अग्नि। ३ सामभेद।

रथन्तरो (सं० स्त्री०) १ पुरुवंशीय ईलिन राजाकी पत्नी। (भारत० १।६४।१७) २ तंसुरकी एक स्त्रीका नाम।

रथपति (सं० पु०) रथका नायक, रथी।

रथपथ (सं० पु०) वह पथ या रास्ता जिस पर गाड़ी चल सके।

रथपर्याय (सं० पु०) रथः पर्यायो यस्य। १ तिनिश-वृक्ष। २ वैत।

रथपाद (सं० पु०) रथस्य पादः। चक्र, पहिया।

रथप्रा (सं० स्त्री०) आत्मियो या स्तोत्रयोका रथ धन द्वारा पूरा करनेवाली।

रथप्रेति (सं० त्रि०) रथस्थितप्रेतिवत् स्थिर सेनानो।

रथासा (सं० स्त्री०) एक प्राचीन नदीका नाम।

रथवन्ध (सं० पु०) रथ बाधनेकी रस्सी।

रथमण्डल (सं० पु० स्त्री०) रथका समूह।

रथमहोत्सव (सं० पु०) रथजनितः महोत्सव वा रथस्य महोत्सवः। रथयात्रा नामक उत्सव।

विशेष विवरण रथयात्रा शब्दमें देखो।

रथमुप (सं० स्त्री०) रथका विचला भाग।

रथया (सं० स्त्री०) रथ आदिके लिये इच्छा।

रथयात्रा (सं० स्त्री०) रथेन यात्रा। देवदेवीको रथ पर विठा कर रथ खींचनेका उत्सव।

यह आर्यजातिका अनुष्ठित एक प्राचीन धर्मोत्सव है। अभी रथयात्रा कहनेसे साधारणतः जगन्नाथदेवकी रथयात्रा ही समझी जाती है। किन्तु एक समय इस भारतवर्षमें क्या सौर, क्या शाक्त, क्या शैव, क्या वैष्णव, क्या जैन, क्या बौद्ध, विभिन्न धर्मसम्प्रदायके मध्य अपने अपने उपास्यदेवके उत्सवविशेषमें रथयात्रा होती थी। राजासे ले कर दीन भिखारी तक सभी इस उत्सवमें शामिल होते थे। कबसे यह रथयात्रा प्रचलित है, इसका आज तक पता नहीं चला है। किसी किसी पाश्चात्य पुरावित् तथा प्रत्नतत्त्वविद् डा० राजेन्द्रलाल मित्रके मतसे बुद्धदेवके जन्मोत्सव-उपलक्षमें बौद्ध लोग जो रथयात्रा उत्सव मनाते थे, उसीसे भारतीय रथयात्राकी उत्पत्ति हुई है।

५वीं सदीमें चीन परित्राजक फाहियानने लि-चुल वा खोतनराज्यमें रहने समय बुद्धकी रथयात्राका वर्णन इस प्रकार किया है—

चतुर्थ मासके १म दिनमें नगरके सभी रास्ते साफ सुथरे किये गये। राजपथ ध्वजा पताकासे सजाया गया नगरके फाटकके ऊपर चन्द्रातप फहराया गया। फाटक के ऊपर राजा, रानी और राजपुरमहिलाओंके बैठनेका फाफो स्थान था। राजा महायानका ही अधिक सम्मान करते थे, इस कारण महायानमतावलम्बी गोमती बौद्धाचार्योंकी प्रतिमायें सबसे पहले निकलीं। नगरसे प्रायः ३।४ लीग दूर उनके विग्रहके लिये रथ तैयार होता था। रथमें चार चक्के थे, सबोंका ऊँचाई ३० फुट थी, वह सप्त-

महारथले मुगोगित था। देवधर्म एक सबल राज प्रासाद-सा मामूम होता था। उसके उपर चारों ओर रथमका चन्द्रानय भीर रथमका परदा छटाका हुआ था। मध्यस्थलमें मूर्त्तिप्रद था। उनके दोनों पाश्वरीं सहचरके रूपमें दो बोधिसत्त्व तथा उनके भी भनुररूपमें नामा देवमूर्त्ति था। सोने और चांदीके लये भीर चमकीने मलद्वार हवाम हिलते थे। रथ जब फाटकके समीप पहुंचा, तब राजाने अपना राजमुकुट फेंक कर गया कपड़ा पहना और हाथमें फुलकी माला तथा पूजा छिपे ये भनुररथसे परिदृश हो गये पैर रथके सामने डप स्थित हुए। भयगत मस्तकध देवके चरणोंमें पुष्पाञ्जलि की और धूप पूजा जजा कर उनका पूजा की। नगर पुसते समय फाटक परत राभी और राज महिलागण पुष्प परसाने लगी।

'इस प्रकार प्रत्येक सकृत्तरामस विभिन्न प्रकारक रथ निकले। चतुर्थमासका प्रतिपदसे सबोंको यात्रा आरम्भ और चतुर्थशीक बाढ़ रोप हुई। ठरसक देव होने पर राजा और राजा समी अपने महलम छीट भाये।'
Po Kwo-ki Ch. II.

फाहियानले पादलिपुत्र दर्शनकालमें भी इसी प्रकार वर्णन किया है,—

'प्रति धर्म दूसरे महालैक ८वें दिनमें पादोत्सव होता है। इस समय वहाँके अभियासी रथ पर पुत्रप्रतिमा विरल कर बाहर निकालते हैं। रथमें चार पहिये होत हैं। बोधमें क्रिष्णाकार ५२ कुट क था ध्यज्जवड कडा रहता है। रथ डोक मन्त्रिक जैसा दिखाई देता है। उसम सफेद चिकने तथा रंग विरंगक रूपक शोभा हते है। फिर साने, चांदी और स्फटिकका मलद्वारयुक्त नामा देव मूर्त्ति है, रथक चारों ओर जैस्य है। उममेंस चार ध्यानी बुद्धमूर्त्ति है। प्रत्येक सामने बोधिसत्त्वमूर्त्ति भी लकड़े है। इस प्रकार २० बड़े बड़े रथ सुसज्जित हो बाहर निकलत हैं। इस रथोत्सवमें क्या पति, क्या भ्रमण, क्या प्राहण, क्या जनसाधारण सभी शामिल होते हैं। नामा प्रकारका राजा भी बजता है। रात भर जग कर सभी दीपाडोकस प्रतिमाका भाषाहन, उनके वहेइवस गातवाद्य और भ्यमाह प्रमोद करते हैं। दूर

दूर देरासे झेक लोग आ कर इस उत्सवमें शामिल होते हैं।'

फाहियानने पादलिपुत्रमें जिस दिन रथोत्सव देखा था, वही दिन बुद्धका जन्म दिन है, ऐसा बहुल्लोका विश्वास है। फाहियानका उक्त वर्णन पढ़ कर बहुतेरे जगन्नाथदेवका रथयात्राको बुद्धदेवकी रथयात्राका ही निर्दर्शन समजते हैं। अतएव बौद्ध धर्मोंसे ही भारत धर्मों रथयात्राका प्रचार हुआ है, वही बहुल्लोका धारणा है। किन्तु इस सम्बन्धमें सम्येह करनेका यथेष्ट कारण भी विचार देना है। पहले बुद्धके जन्मात्सव उपलक्ष्यमें ही रथयात्राको छुट्टि हुए, इस भी हम विश्वास नहीं कर सकते। क्योंकि, प्राचीन बीड़ोंके मध्य एक ही समय इस उत्सवका प्रचार नहीं था। फाहियानके विवरणसे ही मान्दू होता है, कि कही तो २५ मासके १२ दिनमें, और कही ४५ मासके ८२ दिनमें बुद्धदेवको रथयात्रा होती थी। वर्तमान कालमें जगन्नाथ देवकी रथयात्रा भारतधर्मों समी जगह भाषाड मासकी शुद्धाश्रितोया को होती है। अतः वहाँके जगन्नाथदेवकी रथयात्रा और पूयकाञ्चकी रथयात्राको किस प्रकार बुद्धका जन्मोत्सव कह सकते? क्ययक जगन्नाथदेवकी रथयात्रा ही नहीं, कर्म और नविभ्यपुराजसे मात्र मासमें सूर्यको रथयात्रा देवीपुराजसे कार्तिक मासमें देवीकी रथयात्रा, पद्म, बरह और नविभ्योत्तर पुराजसे (रथयात्राके पहले) कार्तिक मासमें श्रीकृष्णको रथयात्रा, मत्स्य और पद्माञ्ज पुराजसे जैक मासमें शिवको रथयात्रा, न्ययम्पुराजसे उषी समय लघमन्नाथ बुद्धकी रथयात्रा तथा जैनपुराज नपका जैनधर्मप्रणय मार्गशीर्ष आनुर्मास्यक बाद पाय्म' नाथ और महावीरकी रथयात्राका विस्तृत विवरण पाया जाता है। यहाँ तक कि, एक समय यूरोपमें भी जो रथयात्रा प्रचलित थी, उसके भी प्रमाण मिलते हैं। क्या इन सभीको बौद्धधर्मायका निर्दर्शन कह सकते हैं? क्वापि नहीं।

विशेषतः जैन-सम्प्रदाय कर्मों मा धर्मनैतिकी बीडोंसे प्रथण या सीकनेक लिये तय्यार नहीं। वे सब जो उत्सवाङ्गि और पूजा करत आ र्थ है पह अधिकांश उनका निजस है। इन लोगमें भी पाश्चिमाय और महावीरसामोका रथयात्रा प्रचलित है।

हम लोगोंका विश्वास है, कि भारतवर्षमें प्रतिमा-पूजाके प्रचलनके साथ रथयात्राका उत्पन्न आरम्भ हुआ है। पुराविदोंने स्थिर किया है, कि बुद्धनिर्वाणके बहुत पीछे यहाँ तक कि सम्राट् अशोकके समय तक बौद्धोंके मध्य बोधिसत्त्व और देवदेवीकी मूर्त्तिपूजाका प्रचार नहीं हुआ। महायानोंके अभ्युदयसे बौद्धसमाजमें प्रतिमा-पूजा प्रचलित हुई थी। सम्राट् कनिष्कके समय महायान मतका सूत्रपात हुआ। नागार्जुनके प्रभावसे यह मत फैला। उक्त कनिष्क राजा शक जातिके थे। शक वा शाक लोग सभी मित्त वा सूर्योपासक थे। और तो क्या, कनिष्ककी कितनी मुद्राओंमें भी मित्तपूजाका प्रकृष्ट निर्दर्शन देखा जाता है। जब मार्किटनवीर अलेक्सन्दर भारतवर्ष आये, उस समय उन्होंने यहाँ बुद्धप्रतिमा अथवा उनकी पूजाका कोई निर्दर्शन नहीं पाया। उस समय उन्होंने पञ्चनद प्रदेशमें मित्त और जिव-पूजाका प्रभाव देखा था*। यहाँ तक कि मार्किटनवीरके परवर्त्ती और शकराजाओंके पूर्ववर्त्ती भारतीय मुसलमान राजाओंकी मुद्रा पर मित्तपूजाका चिह्न दिखाई देता है। परन्तु मुसलमानराजों जो मित्त वा सूर्योपासक थे उसका कोई विशेष प्रमाण नहीं मिलता। उन लोगोंके आनेके बहुत पहलेसे यहाँके लोगोंके बीच मित्तपूजाका बहुल प्रचार था, प्रजावृन्दके मनोरञ्जनके लिये मुसलमानराजोंने अपनी अपनी मुद्रा पर मित्तमूर्त्ति अङ्कित की होगी यहाँ युक्तिसङ्गत प्रतीत होता है। बौद्धसम्राट् अशोकके समय बोधगयामें बज्रासन बनाया गया। वहाँ सात बौद्धोंके रथ पर हम लोग सूर्यकी मूर्त्ति देखते हैं। कूर्मपुराण और भविष्यपुराणके प्राचीन अंशमें सूर्यदेवकी रथयात्राका विस्तृत विवरण लिखा है। मित्तपूजा प्रवर्तन, शाक जातिके धर्ममत और विश्वास ले कर भविष्यपुराणका प्राचीनांश रचा गया है। देवताकी मूर्त्ति गढ़ कर उसकी पूजा सुप्राचीन भारतीय आर्य जातिके मध्य प्रचलित नहीं थी। भारतमें शाकद्वीपीय ब्राह्मणसंन्यके साथ साथ प्रतिमा गढ़नेका आरम्भ हुआ।

उन्हींके यत्नसे केवल भारतवर्ष ही नहीं, मध्य-एशियामें ले कर सुदूर यूरोपमें तक सूर्यकी मूर्त्ति पूजा प्रचलित हुई थी। भविष्यपुराणमें मात्र मासमें सूर्यदेवकी रथयात्राका प्रसङ्ग है, यह पहले ही लिखा आये है। आज भी मात्रमासके आरम्भमें यूरोपके अन्तर्गत सिसली द्वीपमें रथयात्राका अनुष्ठान होता है। सूर्यदेवके रथ पर जिस प्रकार ज्योतिश्चक्र और नवग्रहकी मूर्त्ति अङ्कित होती थी, सिसलीद्वीपके उसी प्रकार बड़े रथ पर भी सूर्यचन्द्रकी नवग्रह और ज्योतिश्चक्र अङ्कित होता है। इस सिसलीके रथ-सम्बन्धमें श्रीमती करासीओला Madame Henrietta Caraciolo ने इस प्रकार वर्णन किया है।

"A colossal car is dragged by a long team of buffaloes through the irregular and ill paved streets. Upon this are erected a great variety of objects, such as sun, moon and principal planets, set in rotatory motion, and diminishing proportionately in size as they approach the summit of the structure. This erection is in itself really imposing, sumptuously decorated, and put in movement in honour of her who gave birth to the God of Charity. But its functions recall to mind the famed car of Jaggernaut, or the nefarious hecatombs of the druids"†

उक्त विलायती रथयात्रा मेरीके उद्देशसे अनुष्ठित तो होती है, पर वह देश, काल और अवस्थानुयायी सुप्राचीन सूर्य रथयात्राका वपान्तरमात्र है, इसमें सन्देह नहीं। सूर्यरथ ही जो सभी रथोंमें प्रथम है वह भी पुराणमें लिखा है।

* पूर्वमेव सहस्रांशोर्यानिहोतार्महात्मनः।

स वत्सरस्यावयवैः कल्पिताऽस्य रथा मया ॥

सर्वान्तु रथानां वै स रथः प्रथमः स्पृतः ॥"

(भविष्यपु० ११/१३)

अभी जिस प्रकार जगन्नाथदेवकी रथयात्रा होती है,

* बङ्गेर जातीय इतिहास, ब्राह्मणकाण्ड रथ भाग ४थ

पहले उसी प्रकार भारतीय वैष्णव-सम्प्रदायक मन्व्य कारिणिक मासमें भीष्मपञ्चा रथयात्राका अनुष्ठान होता था। बौद्ध प्रभावकालमें यह उत्सव एकदम पिलुम हो जाने पर था। महावान् सप्तशतिका प्रचलताक समय उत्कलमें बड़ी भूमधामसे जा बुद्धकी रथयात्रा होता थी, हिन्दूयमके पुनरन्वुत्थकाक्रम उत्कलयात्राका यनो रत्नक विषे उसी समय जगन्नाथदेवका रथयात्रा जब धीरे धीरे तमाम फैल गई, तब भाट्टायकी रथयात्राका विषय प्रायः सभी भूम्-गये। जहां कहीं यह प्राचीन चिष्णुरथयात्रा होता भा है वहां जगन्नाथका रथयात्राका नियम हो पाठन करत देखा जाता है। उत्कलमें चैत मासमें भाद्र मा बड़ी भूमधामस गिबकी रथयात्रा होता है। परन्तु देवोकी रथयात्रा एक तरह सुत-सो हा गई। हिमालयक हा एक स्थानमें देवोकी रथयात्राकी बात सुनो जाता है।

नोथे विभिन्न रथयात्राका संक्षिप्त विवरण दिया जाता है—

बुद्धी रथयात्रा।

मगवान् सूर्यदेवकी रथयात्राका विधान मर्विष्य पुराणमें इस प्रकार लिखा है—

यात्रयासको गुरु सप्तमी तिथिको मगवान् सूर्यदेव का रथयात्रा करने होता है। पहले चतुर्था तिथिमें मयाचिनरूपसे मस्य करके गुरु पञ्चमाक दिन संयत हो कर रहे। पीछे पञ्चको रातको भोजन करे तथा सप्तमा तिथिमें उपवास राह कर मगवान् सूर्यदेवकी रथ पर आरोहण कराये।

मगवान् सूर्यदेवकी रथाटोहन करानक पहले रथक सामन भागमबात्रा करना होता है। रात्रिकलमें सूर्य देवका रथ पर चढ़ा कर रात भर मामोद प्रमोदम जाग कर बिताय। पीछे भद्रमा तिथिमें सबरे नामा प्रकार क यापादि उत्सव करके रथसमय करना उचित है। सूर्यदेवक रथका म परसरके भरपय छात कल्पना करना हानो है। रथककका नाम नामि होमा। ये ठानो नामि लिङ्गामस्यानाय रहगी। इनक वांघ और पद-मदुत भाट छ मनुनमा, रथवेहा उत्तयापय और इतिना पय, एतु मुहूर्त, उमाकास, कण्ठ कापस्यानाय, इरद

क्षण रुकर, कर्मप्रेम निमेष, हाववृत् लय, पक्षय प्रवेग रात्रि ऊर्ध्व प्रतिष्ठित ध्यञ्ज धमास्यरूप, युग भीर मस्रकोटि शो मनु इत्यादि कालस स परसरका कल्पना कर रथ मस्तुत करना होता है। इसम ज्योतिष्यकोक समो मनुवादिका समायग करता उचित है।

(मर्विष्यपु० ५५ म०)

यह रथ सान, चांदो या दूध दूधकाण्डका होता चाहिये। इसका भय युग भीर चक्र मस्तुत दूध होये।

(मर्विष्यपु० ५५ म०)

इस रथ पर प्रह्ला, विष्णु और निवादि देवताको यथाविधान स्थापन करके रथ चखाना होता है। प्रह्ला भी का गमाइक विषे प्रतिपय यह रथयात्रा करना उचित है। रथ पर सूर्य भीर देवताभीका प्रतिमा रख कर हरिद्विष्य मुमस्तय-सम्पन्न पाठे नियोजित करन होतै है।

(मर्विष्यपु० ५५।६१)

रथमें घोड़े या उसक भमायम यनोवह नो निवी जित किया जा सकता है। रथक दोनो बगलमें सूर्यकी दो पल्लदा स्थापित करना होमा, दाहिना बगलमें निष्ठु भा पल्लो भीर बाह बगल राना रहमा। येर दो बगलमें रुद्रदेवकी भी स्थान देना होमा। प्रह्लाकन्य भीम, ऊपरमें कुपर भीर पाठ पर गठइ रहमा। इवत भात पत्र भार सुवर्णवृष्ट ओ रचना होमा। (मर्विष्यपु० ५५ म०) सूर्यक पावद् विह्वस नामक सेबक भीर द्वाएपाल मा रह ग।

इस रथका ध्वजाका सुवर्णबिन्दु भीर मर्विमुकादि द्वारा चिह्नित करना होमा। इसमें इन्द्रधनुषक समान नामा पय दिकाय जायंगे। अत्राक ऊपर मरुण देव का अधिष्ठित करना होमा है। मूषका यह रथ प्राद्वण क सित्रा दूसरा काह ना पय पहल नहीं कर सकता।

(मर्विष्यपु० ५५ म०)

जा भय देवमक तथा कुकिरामक है, उम्ह रथ पाथनका विचकुन मर्विदार मश ह। यह रथ लोकेनेम उपवास करना हाता है। पहले पूवदार हा कर यह रथ म जाय। निरिष्ठ स्थानमें रथक पदु छने पर यहां एक दिन उररता हाता है। उन दिन नामा प्रकारका सरधर्म, वेदपाठ, प्राद्वण नात्रन भार देव-

पूजादि द्वारा विताना चाहिये । सूर्य, ग्रह, नक्षत्र आदि देवताओंकी पूजा भी अवश्य कर्त्तव्य है । सूर्यदेवका रथ धीरे धीरे भ्रमण कराना होता है । भविष्यपुराणमें ५५ अध्यायसे ले कर ६२ अध्याय तक सूर्यरथयात्राका सविस्तार विवरण आया है । स्थानाभावसे यहाँ पर संक्षेपमें दिया गया ।

विष्णुकी रथयात्रा ।

पद्म, स्कन्द और भविष्योत्तरपुराणके मतसे चातुर्मास्यके अन्तमें भगवान्‌के उत्थानके बाद कार्तिककी शुक्ल द्वादशीकी रात विष्णुको रथ पर स्थापन कर यह उत्सव मनाया जाता है । भविष्योत्तरके मतसे प्राचीनकालमें प्रह्लादने पहले पहल महाविष्णुका रथ र्पोंचा था । पीछे देवसिद्ध गन्धर्वोंने इस रथयात्राका अनुष्ठान किया था । भगवान्‌को रथ पर चढा कर नाच, गान, बाजे-गाजेके साथ उस रथको नगरमें घुमाना होता है । रथयात्राके पथमें सुन्दर सुन्दर ध्वजा फहरायगी, बड़े बड़े सुसज्जित फाटक रहेंगे तथा केलेके थम्भ भी जहाँ तहाँ गाड़े जायेंगे । समूचे नगरका प्रदक्षिण करा कर विष्णुको फिर उनके मन्दिरमें लाना होता है । भविष्योत्तरमें लिखा है, कि उस रथका एक एक पद खींचनेसे एक यज्ञका फल हाता है । रथस्थ केशव-मूर्तिके दर्शन करनेसे चण्डालादि भी देवताके पार्षद हो सकते हैं, स्त्रिया भी पिता, माता और स्वामी-कुलके साथ वैकुण्ठ जाती हैं । फिर जो प्रसन्न चित्तसे उस रथकी शोभा बढ़ाने हैं, भगवान्‌ उनके मनोरथ पूर्ण करते हैं । पीछे वैष्णवोंको सारी रात उस विष्णुमन्दिरमें जग कर प्रबोध वासर करना चाहिये । इस प्रकार रात्रि जागरणमें भी अशेष पुण्य वतलाया है । हरिभक्तविलासमें विस्तृत विवरण दिया गया है ।

शिवकी रथयात्रा ।

एकाग्रपुराण (६७ अ०)-में महादेवकी रथयात्राका विषय इस प्रकार लिखा है ।

'शिवकी रथयात्राका नाम अशोकाख्या महायात्रा है । यह रथयात्रा जिवके अत्यन्त सतोष देनेवाली है । जिवकी रथयात्रा करनेमें पहले रथ बनाना होगा । रथ निर्माणके लिये अनिकाष्ठ उत्तम है । काष्ठ बाजे गाजेके

साथ लाना होता है । इस काष्ठसे सफेद रथ बनाना होगा । रथमें चार सुन्दर चक्र रहेंगे । रथको लम्बाई २१ हाथ होगी और घेरा १६ हाथ । इसमें चार द्वार और हर एक द्वारके ऊपर एक एक सोनेका कलस रहेगा । रथ पर त्रिशूलके ऊपर सौरभेय ध्वजा तथा इसके चार आर होंगे । ब्रह्मा इस रथके सारथि होंगे । इसमें दिव्य सिंहासन रहेगा । इस प्रकार हर हालतसे सुन्दर उत्तम रथ बना कर उस पर महादेवको विठा इस रथयात्राका अनुष्ठान करना होता है । -

रथके उत्तर प्रतिष्ठामण्डप बनाना होता है । इस प्रतिष्ठामण्डपमें वेदीके ऊपर शुभ कुम्भ स्थापन कर यथा-विधान भूतशुद्धि और शैवन्यासादि करना आवश्यक है । शिवादि पञ्चदेवताओंकी पूजा और होम भी करना होता है । कुम्भके दक्षिण भागमें वरुणपूजा तथा रुद्राध्यायका जप करना उचित है । रथके दक्षिण नग्दो, उत्तर महाकाल, रथके पृष्ठभाग पर विनायक, आगे वाहनसहित कार्तिक और अरुन्तदेवकी पूजा करके महादेवीकी पूजा करनी होती है । इस प्रकार यथा-विधान पूजादि करके रथ प्रदक्षिण करना होगा । पीछे महादेवको रथ पर विठा कर धीरे धीरे रथयात्रा करे ।

'यह रथयात्रा चैत्रमासकी शुक्लष्टमीके शुभ लग्नमें करनी होती है । जो रथस्थ शिव-दर्शन करने हैं, उन्हें फिर जन्म लेना नहीं पडता । जो इस रथयात्राका अनुष्ठान करते हैं, वे सभी पापोंसे मुक्त हो शिवलोक जाते हैं ।' (एकाग्रपु० ६६।६७)

त्रिपुरदहनकालमें देवताओंने महादेवको जिस प्रकार रथ पर स्थापन कर र्पोंचा था, उसका विवरण मत्स्यपुराणमें दिया गया है ।

जगन्नाथदेवकी रथयात्रा ।

भगवान्‌ जगन्नाथदेवकी रथयात्रा इस प्रकार कही गई है,—भाषाढ मासकी पुष्यानक्षत्रयुक्ता शुक्ल द्वितीया तिथिको जगन्नाथदेवकी रथयात्रा करनी होगी । सुभद्रा और वलरामके साथ जगन्नाथदेवको रथ पर आरोहण करा कर यह उत्सव करना होता है । यदि इस तिथिमें पुष्यानक्षत्रका योग न हो, तो भी केवल तिथिमें इसका अनुष्ठान करना होगा । यहाँ पर केवल तिथिका

ही प्रमाणता है, यथम नक्षत्रका योग होगैसे विशिष्ट गुण होया । इस दिन नाना प्रकारका उत्सव और ब्राह्मण भोजन कराना होता है । सुमद्रा सहित बलरामके साथ जगन्नाथदेवकी रथ पर बड़ा कर यह यात्रा करनी होगी । पीछे सात दिन उस रथको मक्कोके किनारे रत्न दे । आठवें दिन नाना प्रकारके भूषणादि द्वारा रथको नया कर बड़े दिन पुनर्प्राप्ता करे । विष्णुकी वसिष्ठा मिमूनी यात्रा अति दुःखना और मुक्तिप्रदायिका है ।

द्वितीयाकी यात्रा करके नये दिन पूर्णयात्रा करनेमें एकादशीके दिन पुनर्प्राप्ता होगा ।

त्रयोत्था भावाङ्की शुद्धा द्वितीयाकी रथयात्रा करके शुद्धा एकादशीके दिन पुनर्प्राप्ता करनी होगी । इस दिन जयहोमादि महोत्सव करना उचित है । जो रथ पर यात्राते समय विष्णुके दर्शन करते हैं, उनकी विष्णुलोककी गति होती है ।

अप्रभाय, बलराम और सुमद्राका रथ किना होना चाहिये उसका पिपय पुरुरोत्तममाहात्म्यमें इस प्रकार लिखा है —

‘रथनिर्माणकार्यका आरम्भ करनेमें पहले चिमराठके बड़े शस्त्रे महोत्सव करना उचित है । जोहैसे रथके १३ भार और १३ अक्ष पनाये होते हैं । सुन्दर सुन्दर काठकी पुतली लटका देनेकी होगी । रथके मज्जदेशमें समान धेनु तथा इस पर सुन्दर मण्डप बना रहेगा । इसमें चार तोरण और चार द्वार नाना प्रकारके चित्राङ्गित तथा हेम पट्टेसे भूषित होंगे । बाईस हाथकी पताका इस पर कहारावगी । रक्तचन्दन द्वारा मण्डपध्वज बनाना होता है । यह मण्डप बड़ी माकपाजा, हृद्यपुष्ट, कुण्डलविभूषित तथा आकाशमें होनी देने देना कर मानो उड़ रहा है, इसी मानमें अङ्गित करना होगा । ऐत्यहाजर्वीका बन वर्णमासक इसका यह षष्ठी सुपर्ण अङ्कित कर देना होगा ।’

इस प्रकार विष्णुका रथ बना कर उस पर सुपरिष्ठत आसन बनाये । चौदह रथसे बलदेवका रथ और बाह्य षष्ठसे सुमद्राका रथ बनाना होगा । बलभद्रका रथ सप्तध्वजमय और छात्रक ध्वज तथा देवी सुमद्राका रथ पञ्चध्वज विनिर्मित और पञ्चध्वज करना होता है ।

इस प्रकार रथ बना कर यथाविधान उम की प्रतिष्ठा करनी होती है । नागार्द्रिमहोत्सवके ५५वें अभ्यासमें रथनिर्माण प्रणाली सविस्तार लिखी है ।

रथयात्राप्रति ।

निम्नोक्त प्रकारसे भगवान् जगन्नाथदेवकी रथयात्रा करनी होती है । पहले स्वस्तियाचनपूर्वक ‘ओं सूर्यो सोमो’ इत्यादि मन्त्र पढ़ कर सङ्कल्प करे । सङ्कल्प मन्त्र इस प्रकार है—“विष्णुरोम् तन्सन्ध भावाङ् मासि शुक्ले पक्षे द्वितीयायां तिथौ भस्मक गान्तः श्रीभस्मकन्द्यशर्म पिण्डुलीकगणमन्त्रायः षण्पत्स्यादि नाना इयतापूजापूर्वकं श्रीकृष्णरघोस्त्वययात्रामार्गं करिष्ये ।” पीछे सङ्कल्पसूक्त का पाठ कर आसनशुद्धि तथा मृतशुद्धि करके यथेशादि देवताओंकी यथाविधान पूजा करना होगी । भगवान् भगवान् जगन्नाथदेवका ध्यान करके मानसोच्चारसे पूजा करनेके बाद फिरसे ध्यान करे ।

भगवान् जगन्नाथ, बलराम और सुमद्राका स्तव कर के उर्ध्व प्रणाम करे । पीछे रघोरक्षण और रथकी सान धार प्रक्षिप्त कर अर्घ्यगति और जोर्ध्वमादि उत्सव करना उचित है । इसके बाद ७ पा ३ बार रथ चाना कर जगन्नाथदेवका भवने घर के प्राथ तथा पूषयत् अग्निपेठ और पूजादि करे । पुनर्प्राप्ता भी इसी प्रकार करना होता है । पुनर्प्राप्ता दशमोमें किनी किताक मतस नयमीमें करना होता है ।

विष्णुधर्मोत्तरम लिखा है कि एक ही रथ पर जगन्नाथ, बलराम और सुमद्रा इन तीनों मूर्तियोंका स्थापन करे । फिर जो पुरुरोत्तममाहात्म्य और नागार्द्रिमहोत्सव की पद्धतिके अनुसार पुरोधाराममें मात्र मां तीनोंके सिधे तीन बड़े रथ बनाये जात हैं । वे तीनों रथ किस प्रकार बनाने चाहिये, यह पहले ही लिखा जा चुका है ।

जगन्नाथकी रथयात्राके उपलक्ष्यमें आज भी पुरोमें जात्राको मीढ़ रहता है । “रथे च वामने मृदुः पुनःकर्म न सिधते” इस विश्वास पर भक्त हिन्दू नर नारी सभी जगन्नाथके रथदर्शनको जात हैं । इस समयकी बड़े मीढ़ में दो एक मादमो नर भी जात हैं, इस कारण किसी किसी वैदिक मिसनरीने रथयात्राको एक वैशाधिक या असभ्य उत्सव वतमाया है । किन्तु अनुसन्धान करनेसे

मालूम हुआ है, कि इस प्रकार लाखोंकी भीड़ होने पर भी भक्त हिन्दू रथचक्रमें प्राणविसर्जन कर देनेके लिये व्यग्रता नहीं दिखलाते। असाध्य व्याधिसे आक्रान्त जिनके जीवनकी कोई आशा नहीं, वैसे ही दो एक मनुष्य स्वर्ग-कामना करके रथचक्रमें प्राण दत्त हैं। पर यह भी असम्भव नहीं, कि इस बड़ी भीड़में लोगोंके कुचले जाने तथा घूमते हुए रथमें पड़ कर दो एक आदमी न मरता हो। किन्तु सुसभ्य यूरोपके अन्तर्गत सिसली द्वीपमें रथयात्रा के समय जेमा त्रीभत्स और निगुर काम होता है, कि उसे सुननेसे ही शरीर सिहर उठता है। श्रीमती कारासिओलाने इस रथयात्राके विषयमें इस प्रकार लिखा है,—

'The heart sickens at sight of it, and it is difficult to refrain from crying shame upon the horrible barbarity, for, bound to the rays of sun and moon, to the circle forming the spheres of the various planets, are infants yet unweaned whose mothers, for the gain of a few ducat, thus expose their offspring, to represent the cherub escort which is supposed to accompany the Virgin to heaven,

When this huge machine has made its jolting sound these helpless creatures, guiltless of every reproach, but that of being the offspring of brutal mothers, having been wheeled round and round for a period of seven hours, are taken down from this fatal machine, already dead or dying. There ensues a scene impossible to describe—the mothers struggling with each other, screaming and trampling each other down. It not being possible, on account of the number, for each mother to recognise her own child among the survivors, one disputes with the other the identity of her infant, and a storm of imprecations and the lamentations of the more afflicted, joined to the deafening derision of the spectators and the hooting of the mob. Numbers are thus changed in the con-

fusion. The less fortunate mothers, as they receive the dead bodies of their infants, often already cold, the air with their fictitious lamentation, but consoled with the certainty that Maria, enamoured of her child, has taken it with her paradise."

अर्थात् वह रथयात्रा देखनेसे कलेजा फट जाता है। उस विभीषिकामयी असभ्यताको धिक्कार दिये बिना नहीं रह सकती। थोड़े रुपयेके लोभमें पड़ कर देवदूत-स्वरूप (रथस्य) कुमारीके साथ स्वर्गलोक जानेके ख्यालसे माता अपने दुधमुँहे लड़केको सूर्य और चन्द्रमाकी किरणमें विभिन्न ग्रहके मण्डल-निर्देशक चक्रके साथ बांध देती है। जब वह बड़ा यन्त्र चलने लगता है, तब वह निःसहाय दोषरहित नृशंस माताका दुधमुँहा बच्चा सात घंटे तक उस घूमते हुए चक्रमें पोसे जा कर मृत वा मृतकल्प अवस्थामें लाया जाता है। उसके बाद जो निदारुण दृश्य होता है उसका वर्णन मैं नहीं कर सकती। उस समय वे सब मातायें एक दूसरेका पददलित करके क्या ही भीषण आर्त्तनाद करती हैं। उनकी संख्या इतनी अधिक होती है, कि अपना अपना जोचित सन्तान चुन लेना उनके लिये कठिन सा हो जाता है। अपने अपने बच्चेको चुन लेनेके लिये एक दूसरीको गाली देती, शाप देती और शोक प्रकट करती है। इस समय उनके आर्त्तनादसे तथा जनताके कल्लोल कोलाहलसे आकाश गूँज उठता है। उस गोलमालमें कितने तो बेहोश हो जमीन पर गिर पड़ते हैं। अल्प भाग्यवती माता अपने बच्चेकी मृतदेहको जो पहले ही हिमाङ्ग हो गई है, पानेक लिये कृत्रिम रोदनध्वनिसे आकाशको फाड़ देती है। किन्तु मेरी उनके बच्चोंको स्वर्ग ले गई है, इस स्थिर विश्वाससे वे शान्त होती हैं। यही विलायती रथयात्रा है। आजकल यह नृशंस व्यापार बहुत कुछ उठ गया है।

देवीकी रथयात्रा।

देवीपुराणमें महादेवीका रथोत्सव वर्णित है।

(कार्तिकमासमें) तृतीया, पञ्चमी, सप्तमी, एकदशी वा पूर्वमासक दिन सातमीर रथ पर देवीको स्थापन करना होता है। रथमेंटा किङ्कणी, शङ्ख, घामर, पताका, चक्र, शंख और विविध प्रकारके सुगन्धित पुष्पोंसे सजाया होता है। सब तरहके भेषवानाविद्या नैवेद्य भीर बलि भा दानी होती है। रथमें बैतालोकें डहशसे भी बलि देनी चाहिये। देवमङ्गल जन्म शङ्ख धिपु, बाषा और मूवङ्गादिका शब्द करन करत देवीका रथ खोजना होता है। जिस पथसे रथ जायगा उसे तमाम गोबरसे ढीप दे। पथ भीर पथपार्श्वस्थ समा परको सजा रचना होमा। तमाम राजपथसे घुमा कर देवाको फिर लपुहमें लावे। यह रथोत्सव करनेसे स्वर्गलाम होमा है। (११ म०)

नेपालमें विविध रथयात्रा।

भारतवर्षमें अना सचजनप्रसिद्ध जगन्नाथदेवकी रथयात्रा और आनुर्मास्थक मन्ममें धनुष्येव जैनोंक पार्श्वमाथ और महावीर स्वामीकी रथयात्राको छोड़ कर भीर समी देवदेवीकी रथयात्रा एक प्रकार उठ सी गइ है। फिर भा नेपालमें क्या बीछ, क्या शीघ समी सभ्यवायके मध्य मिध मिल समयमें मिल्न मिल्न प्रकार की रथयात्रा प्रचलित है। येसा रथोत्सव भीर कइी भा नही होता। सर्व मरके भीतरये सब यात्रा होती है,—

१मी—भैरवयात्रा और लिङ्गयात्रा। १मी वा २ती बैशाककी दो रथ पर भैरव और भैरवीकी स्थापन कर उन्हे तमाम घुमाते हैं। इसीका नाम भैरवयात्रा है। जब दोनों रथ दरवारके निकट पहुंचते हैं उस समय स्वतन्त्र रथ पर लिङ्गमूर्त्तिको स्थापन कर तीन रथ एक साथ ला च जाते हैं। इसका नाम लिङ्गयात्रा है।

२ता—महादेवीकी यात्रा वा देवायात्रा। भैरवयात्राके बाद शुक्राचतुर्वेदीकी देवीकी यात्रा बड़ी घूमघामस होती है।

३ती—कुमारी-रथयात्रा। कबल 'रथयात्रा' नामस हा नेपालमें सर्वत्र प्रसिद्ध है। देवदेवीकी प्रतिमा ले कर यह रथोत्सव नही मनाया जाता। इसमें मध मायका एक कुमारी तथा गणेश और कुमारस्वरूप

एक बालिका भीर दो बालककी रथ पर पूजा होती है। नेपालमें प्रवाद है, कि राजा जयप्रकाश मङ्गले कुमारीका भयमान करके उनकी सम्पत्ति छीन की थी। उसी रथको उनको रामा मूर्त्तिमें हो गिर पडी तथा कुमारी उनक शरीरमें घुसी हुई हैं, येसा बन्ध मात्स्य हुआ। राजा उर गप भीर बड़े समारोहसे उन्हीं कुमारीकी पूजा की। आज भी नेपालके बाँझाभूमिमें एक साठ वर्षको कुमारी और दू बाळकको पुन छिया जाता है। येसी तैसी कुमारीसे काम नहा चडेगा। जिसे कुमारी बनाया जायगा, उस कन्या भीर बाळक की छेदूस लीप पीते बड़े बड़े नै सेके सो गौसे सज्जित कर एक इरायने घरमें छा छोड़ दिया जाता है। यदि वह उस मीयण दूरयको देन कर जरा भी बिचलित न हो, तो कन्याको खय देवीकी भयतार कुमारी और दो पुत्रको कार्तिक गणेश समक कर समी जन्की मष्ति करते हैं। सर्व नेपालपति भा कर कन्याको पूजा देते हैं तथा उसके कच बर्चके लिये तान हजार रुपयेकी तथा दो बालकको डेढ़ हजार रुपयेकी जागीर देते हैं। ये तीनों जिस घरमें रहते हैं, वह 'देवताका मकान' समझा जाता है। उस कुमारीको देवी समक कर कीइ भी उसके साथ पिबाह नही कर सकता। किन्तु दोनों बाळकके गडेमें माछा पहनाके छिये समी नेवार कुमारियां बस्त्रुक रहती हैं। तीन चार वष तक उन तानोंको पूजा होती है। पीछे फिरसे नये नये बाळक और बालिका खुनी जाते हैं। इन तानोंको सुसज्जित मन्त्रिाकार रथ पर चित्र कर जब रथयात्रा होती है, तब नयाकापिपति सरपटौंसे परिपुष्ट हो सर्व बाहर भा कर उनको पूजा और समान करते हैं। यह रथोत्सव देख कर एक भ गेट्र-लेखकम लिखा है—

The Buddhist festival is evidently adopted from the Hindu festival of Jagannath, in honour of Jagannath and his brother Balaram and the Kumari represents their sister Subhadra, "अर्थात् जगन्नाथकी रथयात्राक अनुकरण पर नेपालके

बोद्धोंकी एक प्रधान उत्सव कुमारी रथयात्रा प्रचलित हुई है।

४थी—मत्स्येन्द्रयात्रा। मत्स्येन्द्रनाथकी रथयात्रा प्रधानतः बौद्धोत्सव कह कर गिनो जाने पर भी नेपालवासी हिन्दू बौद्ध सभी उत्सवमें शामिल होते हैं। नेपालका यही सर्वप्रधान रथोत्सव है। चैत्रमासमें यह उत्सव मनाया जाता है। रामनवमी तिथिमें भगवद्-चतार रामचन्द्रका जन्म हुआ था। बुद्धदेव भी विष्णुके अवतार माने जाते हैं। इसलिये रामनवमी तिथिमें बुद्धका जन्म ले कर मत्स्येन्द्रयात्रा होता है। यथार्थमें चैत्रकी शुक्लाष्टमी, नवमी, दशमी और एकादशी ये चार दिन मत्स्येन्द्रके उत्सवके दिन हैं।

उपरोक्त भैरवयात्राको छोड़ कर और सभी यात्राओं में नेपालके महाराजसे ले कर हिन्दू बौद्ध सबके सब शामिल होते हैं।

रथयाण (सं० क्ली०) रथरूपं यानं । रथ ।

रथयावन् (सं० त्रि०) रथ द्वारा गमनकारी, रथ पर चढ़ कर जानेवाला ।

रथयु (सं० त्रि०) रथेन्द्रुक, रथाभिलाषी ।

रथयुग् (सं० त्रि०) रथं युनक्ति युज्-क्तिप् । १ रथयोजयिता, रथ हाँकनेवाला । २ सारथी ।

रथयुद्ध (सं० क्ली०) रथेन युद्धं । रथसे युद्ध करना ।

रथयुय (सं० पु०) रथसमूह, रथाका ढेर ।

रथयोजक (सं० पु०) रथ हाँकनेवाला, सारथी ।

रथराज (सं० पु०) शाषयमुनिका पूर्वापुरुष ।

रथर्वी (सं० स्त्री०) सर्पभेद, एक प्रकारका साप ।

रथवश (सं० पु०) रथसमूह ।

रथवत् (सं० त्रि०) १ यजमान । २ रथविशिष्ट, रथयुक्त ।

रथवर (सं० पु०) उत्कृष्ट रथ ।

रथवर्तमन् (सं० क्ली०) रथस्य वर्तमं । रथमार्ग, रथ चलानेका रास्ता ।

रथवान् (सं० पु०) रथ हाँकनेवाला, सारथी ।

रथवाह् (सं० त्रि०) रथं वहति वह-निणि । १ रथ-वहनकारी, सारथी । (पु०) २ घोडा ।

रथवाहक (सं० पु०) वह जो रथ हाकता हो, सारथी ।

रथवाहन (सं० क्ली०) चक्रयुक्त काष्ठमण्डप, रथमेंका

वह चौकोर ऊपरी ढाँचा जो पहियोंके ऊपर जडा होता है ।

रथविद्या (सं० स्त्री०) रथविद्यान, रथ चलानेकी बुद्धि ।

रथविमोचन (सं० क्ली०) रथकी रज्जु उन्मोचन ।

रथवीजा (सं० स्त्री०) वह रास्ता जो रथ चलानेके लायक हो ।

रथवीति (सं० स्त्री०) १ राजा । (त्रि०) २ तपस्याकारी, तपस्या करनेवाला ।

रथवेग (सं० पु०) रथकी गमनशक्ति ।

रथव्रज (सं० पु०) रथसमूह ।

रथव्रात (सं० पु०) रथवश, रथका वास ।

रथशक्ति (सं० स्त्री०) युद्धोपयोगी रथका पताकाण्ड, या भंडा ।

रथशाला (सं० स्त्री०) रथारक्षागृह, अस्तबल ।

रथशिक्षा (सं० स्त्री०) रथ चलानेका कौशल ।

रथशिरस् (सं० क्ली०) रथकी चूडा, रथका मुकुट ।

रथशीर्ष (सं० क्ली०) रथमुकुट ।

रथश्रेणि (सं० स्त्री०) बहुतर रथ ।

रथसङ्ग (सं० पु०) रथका हितकर ।

रथसप्तमी (सं० स्त्री०) माघमासकी शुक्ला सप्तमी । कहते हैं, कि सूर्य इसी दिन रथ पर सवार होते हैं, इसीलिये इसका यह नाम पडा है। इस तिथिमें अरुणोदयके समय गङ्गास्नान महापातकनाशक है।

रथसूत (सं० क्ली०) रथ बनानेके नियम या प्रणाली ।

रथस्थ (सं० त्रि०) रथे तिष्ठति स्था क । रथस्थित, रथ पर बैठा हुआ ।

रथस्पति (सं० पु०) सर्वोका पालक ।

रथस्पृश (सं० त्रि०) रथमें नियुक्त ।

रथस्वन (सं० पु०) १ रथका एक प्रकारका शब्द । २ यक्षभेद ।

रथाक्ष (सं० पु०) १ रथका पहिया या धुरा । २ प्राचीन कालका एक परिमाण जो एक सौ चार अंगुलका होता था । ३ कार्तिकेयके एक अनुचरका नाम ।

रथाग्र (सं० पु०) श्रेष्ठ योद्धा ।

रथाङ्का (सं० स्त्री०) एक नदीका नाम ।

रपाङ्ग (स० बन्नी०) रपस्याङ्ग । १ चक्र, रकवा पहिया । २ सुदूरगमकम् । (माघ० २५१) (पु०) ३ चक्रवाक पक्षी अकवा ।
 रपाङ्गुल्लवाह्वय (स० पु०) अकवाक पक्षी, अकवा ।
 रपाङ्गपर (स० पु०) १ भाङ्गपत्र । २ विष्णु ।
 रपाङ्गनामक (स० पु०) अकवाक, अकवा ।
 रपाङ्गनामद (स० पु०) रपाङ्ग नाम यस्य । अकवाक, अकवा । (कुमार १।१०)
 रपाङ्गमि (स० स्त्री०) रपचक्रही ममि, रपक पहियेका भेट वा अकर ।
 रपाङ्गपाणि । स० पु०) विष्णु ।
 रपाङ्गवसो (स० पु०) अकवाक, सघ्राद ।
 रपाङ्गभोगिणिवितम्बा (स० स्त्री०) अद गोलाकृति नितम्ब-विशिष्टा ।
 रपाङ्गसङ्घ (स० पु०) अकवाकपक्षी, अकवा ।
 रपाङ्गसाह (स० पु०) अकवाक पक्षी, अकवा ।
 रपाङ्गाहव (स० पु०) अकवाक पक्षी, अकवा ।
 रपाङ्गी (स० स्त्री०) रपस्याङ्गमिबाह्वयिपस्या, रपाङ्ग-ओप । अदि नामक ओपयि । (उज्ज्वि०)
 रपानोक (स० बन्नी०) अंभीषद रपिसैव्य ।
 रपान्तर (स० पु०) १ पुटापानुसार एक कल्पका नाम । इसको रपन्तर मी कहते हैं । (अग्निपु०) २ एक आचार्य का नाम ।
 रपान्न (स० पु०) वेतस, वेत ।
 रपान्नपुष्य (स० पु०) रपान्नस्य पुष्यमिब पुष्यमस्य । वेतस, वेत ।
 रपारथि (स० अथ०) रपैश्च रपैश्च प्रहस्य युद्धमिदं मरुत् । परस्पर रप द्वारा युद्ध करना ।
 रपाङ्क (स० लि०) रप पर पैठ हुआ ।
 रपापेठ (स० लि०) १ रप पर पैठ कर युद्ध करनेवाला । (पु०) २ रप पर अङ्गवा, रपमें प्रवेश करना ।
 रपारोहित (स० लि०) रपे रोहताति अद प्पिनि । रप पर पैठ कर युद्ध करनेवाला ।
 रपाबराहित (स० पु०) रप अराहताति अद-रह-प्पिनि रपस्य युद्धकर्ता, वह जो रप पर पैठ कर लड़ा करता हो ।

रपामक (स० पु०) छोटा रप ।
 रपावयव (स० पु०) रपका पहिया भादि अग ।
 रपाबर्त (स० पु०) एक तोपका नाम ।
 रपाभ (स० पु०) १ रपमें जोतने योग्य घोड़ा । २ रप नीर घोड़ा ।
 रपासह (स० लि०) अद घोड़ा जो रपको पहन कर सके ।
 रपाहर (सं० लि०) रप पर अङ्ग कर जानेका विन या समय, रपाह ।
 रपाह्य (सं० स्त्री०) एक शरीका नाम । इसका दूसरा नाम रपाङ्गा भी रपाङ्गा भी है । (इहत्वं ११।११)
 रपिक (सं० पु०) रपोऽस्त्यस्येति रप इत् । १ रपो, यह जो रप पर सवार हो । २ तिमिशका पैड़ । (उज्ज्वि०)
 रपेल चरतीति रप (पनादिभ्यः ङ्) । पा अ०१०) इति ङ् । (लि०) ३ रपचारी, रपसामी, रपाङ्क योद्धा ।
 रपिन् (सं० पु०) रपस्य रना प्रभुः शक्रभ्यादित्वाङ्कार छोपा । रपो ।
 रपिर (सं० पु०) रपोऽस्त्यस्येति रप (नेभरपाम्ना मिट्ठन्तिरुक्त्वा) । पा १।१।१०) इत्यस्य पारिक्कोक्त्वा इत् । रपो ।
 रपो (स० लि०) १ रप पर अङ्ग कर अङ्गनेवाला । २ रप पर अङ्ग कर लड़नेवाला रपवाला योद्धा । ३ एक इज्जत योद्धाओंके मकेजा युद्ध करनेवाला । ४ रप पर सवार, रप पर अङ्गा हुआ ।
 रपो (हि० स्त्री०) अद हाँचा मिस पर मुखोंको रक कर अन्त्येष्टिक्रियाके क्रिये छे जात हैं, रप्यो ।
 रपीतर (स० पु०) १ अतिशय रपयुक्त, अहुररप्यामी । २ एक आचार्यका नाम । ३ उनके संशय ।
 रपोनर—अ गिराय उनके एक अर्थिका नाम ।
 रपेचिह्न (स० लि०) रपापस्थित, रप पर अङ्गा हुआ ।
 रपथ (स० पु०) १ रपका अधिकारी । २ रप पर अङ्गा हुआ योद्धा । ३ रपो ।
 रपथा (स० स्त्री०) रपका पहिया या खुदा ।
 रपेयु (स० पु०) याणमेत् ।
 रपण्डा (स० लि०) रपमें परमान, रप पर पैठ हुआ ।
 रपोङ्क (स० लि०) रप द्वारा अभ्युद्यमान आसित ।

रथोत्तम (सं० पु०) उत्कृष्ट रथ ।

रथोत्सव (सं० पु०) रथस्य उत्सवः रथयात्रा नामक उत्सव ।

रथोन्नत (सं० त्रि०) रथ पर चढ़नेमें उन्नत, जिसे रथ पर चढ़नेका गर्व हो ।

रथोद्धता (सं० स्त्री०) ग्यारह अक्षरोंका एक वर्णवृत्त । इसका पहला, तीसरा, सातवा, नवां और ग्यारहवा वर्ण गुरु और बाकी वर्ण लघु होते हैं । अर्थात् इसके प्रत्येक चरणमें र, न, र, ल, ग होता है ।

रथोद्धह (सं० पु०) १ रथ चलानेवालेके बैठनेका आसन । २ यौद्धाके बैठनेका स्थान ।

रथोपस्थ (सं० पु०) १ रथका ऊर्ध्वभाग । (पतंजल्योग ८।१०) २ रथके बीचका स्थान ।

रथोरग (सं० पु०) एक प्राचीन जातिका नाम जिसका उल्लेख महाभारतमें है । (भारत-भोग्ग)

रथोपमा (सं० स्त्री०) पुराणानुसार एक नदीका नाम । (हरिवंश)

रथोघ (सं० पु०) रथस्य ओघः वेग । रथका वेग ।

रथोजस (सं० त्रि०) जो रथगुद्धमें कुशल हो ।

रथ्य (सं० पु०) रथ वहतीति रथ्य (तद्वहति रथ्युगप्रासञ्ज । पा ४।४।६) इति यत् । १ रथवाही घोटक, वह घोडा जो रथमें जोता जाता हो । २ वह जो रथ चलाता हो । ३ रथांस । (क्लृ०) ४ चक्र, पहिया । ५ युग । (त्रि०) ६ रथसम्बन्धी, रथका ।

रथ्या (सं० स्त्री०) रथानां समूहः रथ्य (उल्लगोरयात् । पा ४।२।५०) इति यत् । १ रथोंका समूह । पर्याय—रथकट्या, रथकट्या, रथत्रय । २ रथका मार्ग या लकीर । पर्याय—प्रतौली, विगिखा । ३ नाली, नावदान । ४ रास्ता, सडक । ५ चौक, आगन ।

रद (सं० पु०) रदतीति रदं विलेखने पचादित्वात् अच् । दन्त, दात । अंत विवर्ण होनेमें धनहीन तथा स्निग्ध और घना होनेसे शुभ होता है । (गण्डपु० ६६ अ०)

रद (अ० वि०) १ नष्ट, खराब । २ तुच्छ या निर्दोष ।

रदच्छद (सं० पु०) रदानां छद आच्छादकः । ओष्ठ, ओंठ ।

रदच्छद (हिं० पु०) रति आदिके समय दांतोंके लगनेका चिह्न ।

रदान (सं० पु०) रतिके समय दांतोंसे ऐसा दाना, कि चिह्न पड जाय । यह सात प्रकारकी बाह्य रतियोंमेंसे एक है ।

रदन (सं० पु०) रथनेऽनेनेति रदकरणे व्युट् । १ दन्त, दांत । (क्लृ०) रद भावे व्युट् । २ उत्खलन ।

रदनच्छद (सं० पु०) रदानानां छद आच्छादकः । ओष्ठ, ओंठ । ओंठ विष्य सदृश होनेसे शुभ तथा रुक्ष, खण्डित और विवर्ण होनेमें अशुभ होता है ।

(गण्डपु० ६६ अ०)

रदनिका (सं० स्त्री०) नायिकाभेद । (मृच्छकटिक ३।१५)

रदनिन् (सं० पु०) रदनीं प्रशस्त दन्तावस्त्यस्येति रदन-इनि । १ हस्तों, हाथों । (त्रि०) २ दांतचाला ।

रदपट (सं० पु०) ओष्ठ, ओंठ ।

रदवदल (फा० कि० वि०) परिवर्त्तन, उलट पलट, हेंस-फेर ।

रदावसु (सं० त्रि०) धनदाता, धन देनेवाला ।

(शृक् ७।३।१८)

रदिन् (सं० पु०) रदीं प्रशस्तदन्तावस्य स्त इति रद-इनि । हस्तों, हाथों ।

रदोफ (अ० स्त्री०) १ वह व्यक्ति जो घोड़े पर सवारके पीछे बैठता है । २ वह शब्द जो गजलों आदिमें प्रत्येक काफिय या अन्त्यानुप्रासके बाद वार वार आता है । ३ पीछेकी ओर होनेवाली सेना ।

रदोफवार (फा० कि० वि०) वर्णमालाके क्रमसे, अक्षर क्रमसे ।

रद (अ० स्त्री०) १ जो काट या छाट दिया गया हो । २ जो तोड़ या बदल दिया गया हो । ३ जो खराब या निकम्मा हो गया हो । (स्त्री०) ४ वमन, कै ।

रहा (हिं० पु०) १ दीवारकी पूरी लम्बाईमें एक वार रखी हुई एक ईंटकी जोड़ाई, ईंटोंकी वेडे बलकी एक पंक्ति जो दीवार पर चुनी जाती है । २ मिट्टीकी दीवार उठानेमें उतना अंश जितना चारों ओर एक वारमें उठाया जाता है और कुछ समय तक सूखनेके लिये छोड दिया जाता है । इसकी ऊंचाई प्रायः एक हाथ हुआ करती है । ३ चमडेकी वह मोहरो जो भालुओंके मुंह पर बाधी जाती है । ४ धालीमें मिठाईयोंका चुनाव जो स्तरोंके रूपमें

मीचे ऊपर होता हे । ५ मोचे ऊपर रकी हुई वस्तुओंकी एक वह पा संड । ३ कुन्नीमें अपने प्रतिपक्षको मोचे छा, कर उसकी गरदन पर कुन्नी मीर कडाइके बीचकी हकीसे रगड़ते हुए धापात करना ।

रहो (हि० पि०) १ काममें न माने योग्य, जो बिलकुल खराब हो गया हो । (स्त्री०) २ वे कागज भादि जो कामके न होनेके कारण फेंक दिये गये हों ।

रहोबाना (फा० पु०) बह स्थान जहाँ खराब और निकम्मा चीजे रको कार्फेकी जाय ।

रधार (हि० स्त्री०) भोजनेका दोहरा वस्तु, दोहर ।

रवेत माख (हि० पु०) मछली फंसानेके लिये छोटे छेदाका जाळ ।

रन (हि० पु०) १ जंगल, वन । २ धोख, ताळ । ३ समुद्र का छोटा खंड ।

रनकना (हि० कि०) घु घुक् भादिका मंद मंद शब्द होना ।

रनछोर (हि० पु०) रणछोड़ देणो ।

रनना (हि० कि०) बजना, भ्रमकार होना ।

रनबरिया (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी मेड़ आ निपाळके जंगलोंमें पाई जाती है ।

रनबांकुरा (हि० पु०) शूल्पीर, पोखर ।

रनसंपिका (हि० स्त्री०) गी, गाय ।

रनपाहो (हि० पु०) शूद्र, लड़ाका ।

रनवास (हि० पु०) १ टालियोंके रहनेका महल, भग्ना-पुट । २ जनानखाना ।

रनवासन (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी फली ।

रनित (हि० पि०) बजना हुआ, भ्रमकार कृता हुआ ।

रनिपास (हि० पु०) प्लस्य दवा ।

रनेत (हि० पु०) भाठा ।

रनध (स० ति०) रम-धम्य । धमपार्थ, रम्य करनेके धाम्य ।

रनित (सं० स्त्री०) १ केडि, काड़ा । २ चिराम ।

रनितदेव (स० पु०) रमते इति रम-संज्ञायाम् 'तिङ् रन्ति इषासी देवन्विति' । १ विष्णु । २ अश्वपत्नीय एक राजाका नाम ।

महाभारतमें लिखा है, कि पहले राजा रन्तिदेवकी पाकशासनमें प्रतिदिन दो हजार गो तथा दूसरे दूसरे

पशु मारे जात थे । समांस भक्षण करने राजाने भृगुभोज्य कीर्तिज्ञान किया था ।

महाभारतके ज्ञान्त-पर्व (२६ अ०) में लिखा है, कि संकृतिमन्त्र रन्तिदेवने कडोर तपस्या करके इन्द्रको समतुष्ट किया । जब इन्द्रने घर मांगने कहा तब रन्तिदेव ने प्रायणा का, देवराज । भाव यद्यो घर कीजिये जिससे मेरे घर प्रभुर भ्रम और भतिथिका समागम हो तथा मुझे कमी किसीसे कोई चीज मांगनी न पड़े । इन्द्रने प्रसन्न हो कर वही घर दिया । महारमा रन्तिदेव जब कोई कर्मानुष्ठान करते थे, तब प्राय्य और भारण्यक सभी पशु वहां आते और "मुझे श्रेय और पितृकार्यमें नियोग कीजिये" इस प्रकार राजासे प्रार्थना करते थे । यद्यमें मारे गये पशुओंके खमड़ेसे ह्वेद निकळ कर एक नदी यत गइ दे । वह नदी चर्मण्वता नामसे प्रसिद्ध है । राजा प्रतिदिन प्राण्योंका प्रभुर सुवर्णदान करते थे । इनके घरमें पाल, चड़े, कड़ाह, नाजो भादि सभी वस्तु सोमकी थी । भतिथिके माने पर बीस हजार सी गो मारो जाती थीं, तिस पर गो भतिथियोंकी कृति मर मांस वहाँ मिलता था । राजा रन्तिदेव पुण्यकर्मोंमें भ्रमणी थे ।

२ बुधकूर, कुत्ता ।

रन्तिनदी (स० स्त्री०) धम्मल नदी ।

रन्तिवार (स० पु०) राजपुत्रभेद । (भागवत १।२०।१)

रन्तु (सं० स्त्री०) रमतेऽति रम-न्तुत् । १ बरत, लड़क । २ नदी ।

रन्त्य (सं० लि०) रमयिता ।

रन्त्या (स० स्त्री०) सूर्यकी पत्नी स काका एक नाम ।

रन्त्यक (सं० पु०) १ पाचक, रसोई बनानेवाला । २ नायक, नष्ट करनेवाला ।

रन्त्यन (सं० स्त्री०) रप-रन्तुत् । १ पाक करना, रसोई बनानेकी क्रिया । २ नष्ट करना ।

रन्थि (सं० स्त्री०) १ वशीकरण । (मूक् ७।१८।१८) २ रन्थन, पाक । (भागवत १।१०।२२)

रन्थित (स० स्त्री०) रप-क । १ एतन्मन द्रव्य, संघा हुआ । रन्थन कर द्रव्य दूसरे बरतनमें रचना होता है ।

रवाविया (हिं० पु०) वह जो रवाव वजाना हो, रवाव वजानेवाला ।

रवी (हिं० स्त्री०) १ चमन्त ऋतु । २ वह फसल जो वसंत ऋतुमें काटी जाती है ।

रवील (हिं० स्त्री०) एक प्रकारका पक्षी जो पन्द्रह सोलह अंगुल लम्बा होता है । इसके डैने मूरे, सिर और छाती सफेद, चौंच काली और पैर लाल रंगके होते हैं । यह हिमालयके किनारे गडवालमें आसाम तक पाया जाता है । यह भाड़ियोंमें घोंसला बनाता और अप्रैलसे जून तक दोसे पांच तक अंडे देता है ।

रवत (अ० पु०) १ अभ्यास, मशक । २ सम्बन्ध, मेल ।

रव्य (सं० त्रि०) १ ग्रहण किया हुआ । २ आरम्भ किया हुआ, शुरू किया हुआ ।

रव्य (अ० पु०) रव देना ।

रव्या (अ० पु०) १ वह गाड़ी जिस पर तोप लदी जाती है, तोपघानेकी गाड़ी । २ वह गाड़ी या रथ जिसे बैल खींचते हैं ।

रव्याव (अ० पु०) रवाव देखो ।

रमस् (सं० स्त्री०) १ यज्ञादिका आरम्भ । (ऋक् १।१४।३) २ आहुति । ३ वेग । ४ आशक्ति । ५ बलकर भोज्य ।

रमस (सं० पु०) रमणमिति रम (अत्यविचमिषमिनिमिर भिन्नमिति । उण् ३।११०) इति असच् । १ वेग । २ हर्य । ३ प्रेमोत्साह । ४ रंज, पठताया । ५ पूर्वापर या कारण-कार्यका विचार । ६ औत्सुक्य, उत्सुकता । ७ महान्, बड़ा । ८ बालमौकि रामायणके अनुसार अस्त्रोंका एक सहार अर्थात् शत्रुके चलाये हुए अस्त्रको निष्फल करनेकी विधि जो विश्वामित्रने रामचन्द्रजीको सिखाई थी । ९ रामायणके अनुसार एक राक्षसका नाम ।

रमसनन्दिन्—सम्बन्धोद्योत नामक वेदान्तग्रन्थके प्रणेता । ये बौद्धधर्मावलम्बी थे ।

रमसपाल (सं० पु०) एक आभिधानिक । अमरकोषटीकामें श्रीरखामोने इसका उल्लेख किया है ।

रमसान (सं० त्रि०) वेगकारी ।

रमसत् (सं० त्रि०) रम-असुन् ततः मनुप् । उद्योगयुक्त ।

रमि (सं० स्त्री०) आभरणीया ।

रमिण्य (सं० पु०) उस नामके ऋषि गोत्रमें उत्पन्न पुष्य । रमिष्ट (सं० त्रि०) प्रकृष्टवेगविशिष्ट, अतिशय वेगयुक्त । 'उपमासो रमिष्टाः' (ऋक् १।१६।१) 'रमिष्टाः प्रकृष्टवेगाः' (भाषण) ।

रमोयस् (सं० त्रि०) अत्यन्त वेगविशिष्ट, अतिशय वेगवाला ।

रमेणक (सं० पु०) महाभारतके अनुसार एक राक्षसका नाम । कहते हैं, कि यह साँपके रूपमें रहता था ।

(भाग्न आदिप०)

रभ्यस् (सं० त्रि०) अतिशय वेगयुक्त, अत्यन्त वेगवाला ।

"युवं च रभ्यसो नः" (ऋक् १।१२०।४) 'रभ्यसः अतिशयेन रमस्विनः प्रोद्ध्यमान्' । (भाषण)

रभोदा (सं० त्रि०) बलदाता, शक्ति देनेवाला ।

रम (सं० पु०) रमते इरम् पचाद्यच् । १ कान्त, प्रेमी ।

२ कामदेव । ३ रक्षाशोक, लाल अशोक । ४ रमण ।

५ पति । (त्रि०) ६ प्रिय । ७ सुन्दर । ८ आनन्ददायक,

हर्षोत्पादक । ९ जिससे मन प्रसन्न हो ।

रम (अ० पु०) एक प्रकारकी जराव जो जीसे बनाई जाती है ।

रमक (सं० पु०) रमने इति रम् (रमेरश्चो वा । उण् ३।३३) इत् कृन् । १ कान्त, प्रेमी । २ उपपति, जार ।

रमक (हिं० स्त्री०) १ फूलेकी पेंग । २ तरंग, झकीरा ।

रमक (अ० स्त्री०) १ थोडा-सा सास जो मरते समय

निकलनेकी शेष रह गया हो, मन्निम श्वास । २ नशेका

थोडा असर । ३ खल्प भाग, बहुत थोडा अंश ।

दलका प्रभाव । (वि०) ५ जरा सा, बहुत थोडा ।

रम-कजरा (हिं० पु०) एक प्रकारका धान जो भादोंमें

पक्ता है । यह पकने पर काले रंगका होता है और मोटा

धान माना जाता है । नेपालकी तराईमें यह अधिकतासे

होता है । बगरो या वकीसे इसके चावल कुछ लम्बे

होते हैं और कूटने पर सफेद रंगके निकलते हैं ।

रमकना (हिं० त्रि०) १ हिंडोले पर झूलना, हिंडोले

पर पेंग मारना । २ झूमते हुए चलना, इतराते हुए

चलना ।

रमचकरा (हिं० पु०) वेसनकी मोटी रोटी ।

रमजान (अ० पु०) एक अरबी महानेका नाम । इस

महीनेमें मुसलमान रोजा रखते हैं ।

रामभोज (हि० पु०) रामभोजना रस ।
 रामभोज (हि० पु०) पैरों पहननेक मुचक, नूपुर ।
 राम (म० पत्नी०) राम मठन् । १ बिहू, हींग ।
 (पु०) २ एक प्राचीन देवता नाम । ३ इस देवता
 निवासी ।
 रामध्वनि (सं० पु०) राउ इति शब्देन ध्वन्यत् कथयति
 इति ध्वन-रत्न । हिंशु, हींग ।
 राम (सं० स्त्री०) रामवतानि यम् पिबन्त्यु । १ परब्रह्मका
 ऋक् । २ अन्न । ३ रम् भावे न्युट । ३ ब्रह्मण्य । पर्याय—
 भयप्रथमक, प्रायश्चित्तं सुरत, रत, संयोग निवृत्त,
 मैथुन, रति, उपरथ्य, पणित, श्लोकायत्, महासुख, तिभद्र,
 वायमिथुन, भूमिमानित । ४ श्रीका भानभ्योस्वायत्क
 क्रिया, पितास । ५ रत्नपुष्पात्न । ३ एक वनका नाम ।
 (पु०) रम्यत रमवताति वा यम् पिबन्ति वा न्यु ।
 ७ पति ।

“रम्यमिहं क्वचित् रमय । स्वामनुष्मि यवपि ।”

(सुमत् ० ५१२१)

रमयति स्त्रीपुरुषाभ्यामस्तःकरणमिति । ८ कामव्य ।
 ९ गर्भ, गधा । १० पूष्य, अण्डकोप । ११ सूर्यका अह्न
 नामक सारथी । १२ एकपत्रिक उन्मुका नाम । इसके
 प्रत्येक खण्डमें तीन अक्षर होत हैं जिनमें दो लघु धीरे
 एक गुरु होता है । (हि०) १३ मनोहर, सुन्दर ।
 १४ रामवासा । १५ जिसके मित्रनसे भानन् उपर
 हो गिय ।

रामक (सं० स्त्री०) रामत मोका अन्न रम न्युट, संवर्षा
 क्त् । १ शत्रुदापक अन्तगत एक वष वा लंडका नाम ।
 इस रमक मो कहत है । (पञ्च० मूलपत्र १२८ म०)
 २ वातिहासक एक पुत्रका नाम । (भागवत १२०१११)
 रामकमता (स० स्त्री०) साहित्यमें एक प्रकारकी
 भाषिका जो यह समझ कर दुःखी होता है, कि स कुछ
 स्थान पर नायक भाषा हागा और मैं बह उपस्थित
 व थी ।

रामवपि—इष्यार्थक और सरसता विनास नामक
 कामक प्रकृता ।

रम्या (सं० स्त्री०) १ रम्या । २ एक शक्तिका नाम जो
 रामतोषमें है ।

रम्या (सं० स्त्री०) रम्येऽस्यामिति रम् ल्युट् डीप् ।
 १ नारी, स्त्री । २ सुन्दर स्त्री । ३ बाजा वा सुगन्धबाजा
 नामक गन्धद्रव्य ।

रम्योक (सं० स्त्री०) सुन्दर, मनोहर ।
 रम्योय (सं० स्त्री०) रम भतायर् । सुन्दर, मनोहर ।

रम्यावता (सं० स्त्री०) रम्योयस्य भावाः तल्-डाप् ।
 १ रम्योयस्य, सुन्दरता । २ साहित्यवर्षभक अनुसारा
 यह मायुष्ये जा सब अवस्थाओंमें बना रहे वा छत्र क्षममें
 नयीन रूप धारण किया करे ।

रम्य (सं० स्त्री०) रम् (शम्भ्याम्) उष् १(१०२) इति मय्य-
 प्रत्ययाः । रम्याय ।

रमता (हि० स्त्री०) एक जगह जम कर न रहनेवाला, भूमता
 फिरता ।

रमति (सं० पु०) रमतेऽस्मिन् इति रम् (रम्यन्) उष्
 ५(११) इति भतिप्रत्ययः पिबन्त्यु । १ नायक । २ भग ।
 ३ काक, कौमा । ४ काउ । ५ कामदेव ।

रमदा (हि० पु०) एक प्रकारका जड़हन जो अगहनक
 महोत्तमें पकता है । इसका वायु सासों तक पर
 सक्तता है ।

रमक (सं० पु०) रम्यक रता ।

रमनसारा (हि० पु०) एक प्रकारकी मछली जिसके क बल
 सोता भी बढ़ते है ।

रमना (हि० पु०) १ भोगविलास वा सुप्रमासिक क्रिये
 कहा रहना वा ठहरना । २ मानम् करना, घीन करना ।
 ३ अनुत्क होना अण प्राणा । ४ भोग विलास वा रति
 श्लोका करना । ५ खारी मोर भरपूर हो कर रहना, व्यास
 होना । ६ चनता होना, नायक हो जाना । ७ किसीके
 भास-पास फिरना, भूमता । ८ भानन्पुत्रक इपर उपर
 फिरना, विहार करना । ९ यह इरा भरा स्थान जहाँ
 पशु चरनक लिय छाड़ दिये जाते हैं, खरागाह । १० और
 सुन्दर और रमजाय स्थान । ११ घेत, हाता । १२ यह
 सुपरिष्ठ स्थान वा परा जहाँ पशु निकारण क्रिये वा
 पाननक लिय छाड़ दिये जाते हैं और जहाँ वे अक्षरुता
 पूषक रहते हैं ।

रम्य—सुसज्जमानो फलित ज्योतिषभम् । बहुत पहचल
 पर शान्त कारस भादि इगोमें प्रचलित था । वहाँत

मुसलमानों प्रभावसे भारतवर्ष तथा सुदूर यूरोपमें लाया गया। भारतवर्षमें बहुत दिनोंसे यह ज्योतिष 'रमलपार्णि' नामसे प्रसिद्ध चला आ रहा है। रमलामृतमें लिखा है—

“पुरा यवनपुङ्गवैः कलियितुं विकालशतां ।
यदादमहवाभिवादनवशात् समासादित ।
अलक्ष्ममररेरपि स्वगुरुवत् कृपासागरा-
त्तदय रमलामृतं स्वमतिमुद्गुर्वापवे ॥”

पुराकालमें यवनपुङ्गवोंने भूत, भविष्यत् और वर्तमानका हाल जाननेके लिये बड़े यत्नसे जिस शास्त्रका संग्रह किया है, देवगण भी जिस शास्त्रको न पा सके हैं आज अपने गुरुकी कृपासे अपनी बुद्धिके अनुसार उस रमलामृतका उद्धार करता हूँ।

श्रीपतिमट्टने अपने रमलसारमें भी ऐसा ही भाव दिखाया है। अतएव मुसलमानोंसे ही भारतवासोंने यह शास्त्र पाया है, इसमें सन्देह नहीं।

विलायतमें भी बहुत दिन हुए, इस रमलशास्त्रका प्रचार हुआ है। १६५३ ई०में रिचार्ड सैण्डर्सने जो सामुद्रिक ग्रन्थ प्रकाश किया है, उसमें इस रमलशास्त्रका उल्लेख और फलाफल-गणनाकी प्रणाली देखी जाती है। इस शास्त्र द्वारा क्या किया जा सकता है, रमलामृतमें इस प्रकार लिखा है—

“गणयितुमुदकविन्दु नारदेऽयुत्सहस्रद्वयो
वियति रचयितु वा चिप्रमुद् युक्तचेताः ।
ग्रहगणामखिल यो मुष्टिनाकटुमिष्टं
रमलममलरत्न स स्वयं स्वीकरोतु ॥”

जो यह शास्त्र जानते हैं, वे मेघराशिविद्यत जलविन्दुको गिन सकते, आकाशमण्डलमें चित्र बना सकते और आकाशमण्डलके ग्रहोंकी अपनी मुठ्ठीके अन्दर खींच कर ला सकते हैं।

यह रमलशास्त्र दो प्रकारका है। केवल शून्यपात द्वारा चेहरेको तैयार कर जो फलाफल गिना जाता है उसका नाम सहज रमल है। फिर आठ धातुओंके बने पादोंको फेंक उससे चेहरा बना कर और उन सबके प्रह, राशि, नक्षत्र और उनके दृष्टि बलाबलादि विचारसे जो फलाफल कहा जाता है, उसे यौगिक रमल कहते हैं।

इस शास्त्रमें पागक और प्रस्तारज्ञान, तस्वज्ञान, अक्षरवदनयक्रमान, मीजाजक्रम, हर्फानुक्रम, अयज्जदक्रम, शाकुनक्रम, दशक्रम, साक्षिज्ञान, वर्णज्ञान, पौडगभवफल, शून्यचालन, काविले सलासज्ञान, असली उम्माहातज्ञान, हलक प्रकार, दिनज्ञान, प्रश्नज्ञान, भूमिज्ञान, धनमानपरीक्षा और नाना प्रकारका आकृतिज्ञान वर्णित है।

रमलामृत, रमलसार आदि ग्रन्थ संस्कृत भाषामें लिखे होने पर भी उनमें पारसी पारिभाषिक शब्द भरे हुए हैं। पारसी भाषामें पूरा ज्ञान नहीं होनेसे यह शास्त्र अच्छी तरहसे समझमें नहीं आ सकता।

रमा (सं० छो०) रमयतीति रम् णिच् अच् टाप् च ।
१ लक्ष्मी ।

“रमा यत्र न वाक् तत्र यत्र वाक् तत्र नो रमा ।

ते यत्र विनयो नास्ति सा च सा च स च त्वयि ॥” (उद्धट)

२ शशिध्वजराजकन्या, कल्किदेवके साथ इसका विवाह होगा। (कल्किपु० २५ अ०)

रमाकान्त (सं० पु०) रमायाः कान्तः । रमापति, विष्णु ।
रमाधव (सं० पु०) रमायाः लक्ष्म्याः धवः पतिरिति ।
विष्णु ।

रमाधिप (सं० पु०) रमायाः अधिपः । रमापति, विष्णु ।
रमानरेश (सं० पु०) विष्णु ।

रमाना (हि० क्रि०) १ अनुरंजित करना, मोहित करना ।
२ संयुक्त करना, जोड़ना । ३ अपने अनुकूल बनाना ।
४ ठहराना, रोक रखना ।

रमानाथ (सं० पु०) रमायः नाथः । विष्णु ।

रमानाथ—१ अभिरामकाश्यके प्रणेता । २ जागदीशी-दिप्पणके रचयिता । इसके अलावा आकाशावाद्दिप्पण, आकाशवाद्दिप्पण, आख्यातवाद्दिप्पण और तञ्ज्वाद्दिप्पण नामक उनकी रची कई न्यायशास्त्रीय टीकाएँ मिलती हैं । ३ नारदस्मृतिटीकाके रचयिता । ४ प्रयोग दर्पणके प्रणेता ।

रमानाथ राय—एक प्रसिद्ध वैयाकरण तथा वेदगर्भके पुत्र । इन्होंने मनोरमा नाम्नी कातन्त्रकी गणधातुःस्ति और शब्दासाध्यप्रयोग नामक दो व्याकरण १५३७ ई०में लिखे ।

रमानाथ गैय—एक भायुर्ध्वदम्बि । इन्होंने अजीर्णमञ्जरी
टीका, अर्कप्रकाशटीका, अष्टाङ्गहृदयटीका, प्रायश्चित्तदान
टीका, रसमञ्जरीटीका और रसेन्द्रचिन्तामणिकी टीका
लिखी ।

रमानिवास (सं० पु०) लक्ष्मीपति, विष्णु ।
रमापति (सं० पु०) रमायाः पति । १ विष्णु । २ राम
चन्द्र । ३ श्रीकृष्ण । (भावकव ८।१७७)

रमापति—१ देवालय प्रतिष्ठाधिकिषि के प्रथेता । २ प्राय
श्चित्तधर्मिकाके रचयिता ।

रमापतिमिश्र—भाचार्यचन्द्रिका, भाभारवार्त्तिक और
चिन्तामणि नामक तीन ग्रन्थके रचयिता ।

रमाप्रिय (सं० पु०) रमायाः प्रिय । १ परम, कमल ।
रमाप्रिया यस्या वा रमायाः प्रियाः । २ विष्णु ।

रमारमण (सं० पु०) रमापति, लक्ष्मीपति ।

रमासी (हि० पु०) एक प्रकारका बारीक और स्वादिष्ट
खायक जो करमाकमें होता है ।

रमासीय (सं० पु०) एक ताम्बिक मन्त्र जिसे लक्ष्मी
वीर्य भी कहते हैं ।

रमाशेष (सं० पु०) रमया शेषदेवी शेष-वन्द्य । धर्मवास
चम्पल । इससे ठाकुरीन नामक तेल निकलता है ।

(रामनि०)

रमाशङ्कर—योगतरङ्गके रचयिता ।

रमाश्रय (सं० पु०) रमायाः आश्रयः । विष्णु श्रीकृष्ण ।
(भाग० १।१३२१)

रमास (हि० पु०) रात बला ।

रमित (हि० वि०) नुग्ध, सुभाषा बुझा ।

रमिता (सं० स्त्री०) रम गिञ्-क, टाप् । रतिप्रापिता ।

रमितकर्म (सं० पु०) पापिनिके अनुसार एक व्यक्ति ।
(वा १।१७७०)

रमो (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी घास जो सुभाषा भादि
श्रीपर्वमें होती है । यह रोहाके समान कागज और रस्सी
भादि बनानेके काममें लायी है । सुभाषावाने इसे क्नुह
कहते हैं । पहले इसे कुछ लोग ज्ञानघट रोहा ही समझने
थे ।

रमूज (सं० स्त्री०) १ क्यूस । २ सीम, रशात । ३ गुप्त
बन्ध, भेद । ४ पहेला, गुढ़ाई वापप । ५ खसप ।

रमेश (सं० पु०) रमाया इन्द्र । विष्णु ।

रमेशचन्द्र मित्र (Sir Kt)—महामात्य क्लकृता हाई-कोर्ट
के एक विचारपति । भाव सिफर वी महीनेके सिधे
प्रधान विचारपति (Chief Justice)-के पद पर रह कर
भपने मसाधारण बुद्धिबलसे धर्मधिकारपदकी मर्लद्वत
तथा समम बङ्गालकी आतिके मुपको उन्मथन कर गये हैं ।

२४ परगनेके अग्तगत राजार हाट विष्णुपुर ग्राम
(बमाम्माके समाव)-के सुप्रसिद्ध मित्ररथीय कायस्थ
कुलम १८४० ई०को इनका जन्म हुआ था । उनके
प्रपितामह काजीप्रसाद मित्र मदिवाक कलकृत्के मपीन
काम करके बहुत रुपये कमा गये हैं । काजीप्रसाद बड़े
शान्ति थे । उनके छद्मके रामचन्द्र मित्रके यत्नसे उच्च
शिक्षा पा कर बाङ्गला जिबेके विष्णुपुरमें मुनसफका
पद पाया था । इनका पक्षपातशून्य ग्यायविपार देख
कर ब्रिटिश सरकार तथा प्रजासंरक्षकी उन पर बहुत
प्रसन्न रहती थी । उनके छद्मके रामचन्द्र मित्र उपयुक्त
शिक्षा पा कर सद्ध बीषानो अशासकके सिरेस्तरवार हुए
थे । रामचन्द्रके छा पुत्र थे । प्रसन्नचन्द्र, उमेशचन्द्र,
केशवचन्द्र, काशीचन्द्र, यशोवचन्द्र और कनिष्ठ माननीय
रमेशचन्द्र । अ गरेखा भाषामें सबोंकी मच्छी म्युत्पत्ति
थी । बचपमें ग्राम्य विद्यालयमें पढ़ते समय रमेशचन्द्र
की तीक्ष्ण बुद्धिका यथेष्ट परिचय पाया जाता है । इसी
समयसे लिपने पढ़नेमें इनको उम प्रगुति देख कर लोग
इन्हें होनहार बाळक समझने लगे थे । पन्ध्र वर्षकी
उमरमें ये कठिनस कठिन अ गरेख-संशकोंके ग्रन्थ बिना
शिक्षकको सहायताके पढ़ लेते थे । अथल पढ़ ही नहीं
सते उनका भाव भी समझ जाते थे ।

क्लकृता प्रेसिडेन्सी कालेजमें प्रविष्ट हो कर इन्होंने
भपने मध्यमसायल B. A. पदोप्ता प्राप्त की । उसके
तीन वर्ष बाद आइन B. L. पदोप्ता प्राप्त कर क्लकृताकी
सद्ध बीषानो अशासकमें पकासत करने लगे । १८५६
ई०में इष्ट एडिवा कम्पनीकी तद सतदके अनुसार
माषाम सुभाषकोट और प्रेसिडेन्सी विभागकी
अशासक बदन कर हाईकोर्ट क्लकृता लगे । रमेशचन्द्र
परख डेड पर्य सद्ध वाषानामें और पाठ महामात्य
हाईकोर्ट (Appellate Side), में बाट्य पर्य बड़े इच्छास

वकालत करके एक सुयोग्य प्रधान वकील गिने जाने लगे। १८७१ ई०में माननीय विचारपति अनुकूलचन्द्र मुखोपाध्यायकी मृत्युके बाद ब्रिटिश सरकार इन्हींको उक्त पद प्रदान किया।

२० वर्ष तक इस पद पर रह कर ये अपनी योग्यता और विचारदक्षताका अच्छा परिचय दे गये हैं। १८८२ ई०में प्रधान विचारपति सर रिचार्ड गार्थने जब स्वदेश जानेके लिये छुट्टी ली, तब लार्ड रोपन बहादुरने रमेशचन्द्रको ही प्रधान विचारपति बनाया। बंगालीको उच्च पद पर नियुक्त होने देख कर अङ्ग्रेज-राजकर्मचारो जल उठे। गार्थके वंशुवर्गने उन्हें छुट्टी नहीं लेनेके लिये अनुरोध किया। तदनुसार उन्होंने भारत-राजप्रतिनिधिके पास आवेदनपत्र भेजा। पत्र पढ़नेके पहले वे रमेश वाचूको नियुक्त कर चुके थे, इस कारण गार्थका आवेदनपत्र स्वीकार न किया गया। अतः गार्थ साहबको स्वदेश जाना ही पडा। रमेशचन्द्र उनके पद पर बैठ कर राजकार्यको परिचालना करने लगे। १८९० ई०में स्वास्थ्य खराब हो जानेके कारण वे हाईकोर्टके विचारपतिका पद छोड़ देनेको बाध्य हुए। सद्गुण-सम्पन्न देशवासियोंको राजकार्यके उच्च पद पर नियुक्त करनेके लिये राजप्रतिनिधि लार्ड डफरिन बहादुरने १८८७ ई०में रमेश वाचूको Public Service Commission का सदस्य बनाया। इस पद पर रह कर इन्होंने देशका बहुत उपकार किया था।

इस समय वे कलकत्ता युनिवर्सिटीके फेलो और कलकत्ता तथा २४ परगनेके अन्तर्गत नाना जिम्मा-समितिके सभ्य हुए। उन सब सभाओंका कार्य सुचारुरूपसे करके इन्होंने स्वदेशका मुन्न उज्ज्वल कर दिया था। १८९० ई०में पदत्याग करनेके बाद भारतराज-प्रतिनिधि लार्ड लैन्सडावनने इन्हें अपनी व्यवस्थापक सभाका सभ्य बनाया तथा 'नाइट' उपाधि दी। बड़े लाट लैन्सडावन जब 'सम्मति-सङ्घ' आइन (Consent Bill Act) पास करने तैयार हुए, तब रमेशवाचूने ओज-स्वनी वक्तृता दे कर उन्हें इस कामसे रोका था। आइनका मर्म समझाते हुए इन्होंने स्पष्ट कहा था, कि "यह कानून पास होनेसे बङ्गालियोंके धर्म पर भारी

। पड़ूँगा, अतः प्रजाका यदि कल्याण चाहते हों तो ऐसा कानून पास होने न दिया जाय।" रमेशवाचूकी निभीक और गवेषणापूर्ण वक्तृता सुन कर व्यवस्थापक सभाके सदस्य चमत्कृत हो गये थे। दो दिन बोर वाठानुवादके बाद जब रमेशचन्द्रने देखा, कि बड़े लाट इस कानूनको उठा देनेके लिये तैयार नहीं तथा उनको वान पर विनकुल जान नहीं दिया जाता, तब बड़े अभिमानसे इन्होंने उस माननीय सभ्य पद पर लाट मार कर सभासे अपना हाथ एकदम खींच लिया, जरा भी सरोकार न रखा।

इन्होंने संस्कृत शास्त्रको अध्यापनाके लिये कलकत्तेके भवानोपुरमें एक चतुष्पाठी खोली थी। इसके सिवा स्वदेश और स्वसमाजकी उन्नतिके लिये कितनी सभा समितियां घोल गये हैं। इस प्रकारपरदुःख कातरता और सहृदयताका अच्छा परिचय दे कर ये १८९६ ई०में इस लोकसे चल बसे।

रमेश्वर (सं० पु०) रमाया ईश्वरः। त्रिष्णु।

रमैती (हि० स्त्री०) १ किसानोंको एकरोति जिसमें एक रुपक आवश्यकता पड़ने पर दूसरेके खेतमें काम करता है और उसके बदलेमें वह भी उसके खेतमें काम कर देता है। इसमें मजदूरी बच जाती है और कामके बदलेमें दूसरोंके खेतोंमें काम कर देना होता है। इसे पूर्वमें पैठ और अवधके उत्तरोय भागोंमें हूँड कहते हैं। २ वह नफरो या कामका दिन जो इस प्रकार कार्य करनेमें लगे।

रमैनी (हि० स्त्री०) कवीरदासके बीजकका एक भाग जिसमें दोहे और चौपाइयां हैं।

रम्भ (सं० पु०) रम्भते राग मूर्च्छनादिकमनेनेति रभि कर्मणि भञ्। १ वेणु, वास। रम्भते उद्यमशीलो भवति निरन्तरमुदरभरणायेति भाव. रभि-भञ्। २ एक प्रकारका चाण। ३ भारी शब्द, कलकल। ४ पुराणानुसार महिषासुरके पिताका नाम। (कालिकापु० ५६ अ०) इसने महादेवसे वर पा कर महिषासुरको पुत्ररूपमें प्राप्त किया था। महिषासुर देखो।

इसी रम्भने दूसरे जन्ममें रक्तबीज रूपमें जन्म ग्रहण किया। देवीपुराणमें लिखा है, कि प्राचीनकालमें दनु-

पुत्र रम्म भीरु कम्म नामक शो प्रधान हानव थे । उसके कोइ पुत्र न था । पुत्रकी कामनास उन्होंने पञ्च भरमें बैठ कर मोर तपस्या की । इन्द्र इनके तपसे डर गये भीरु कुम्भीरका रूप धारण कर कम्मको मार डाला । रम्म नाइकी मृत्यु पर बहुत दुःखित हो कर अपना मस्त्वक काट डालनेके लिये तैयार हो गया । इसी समय भग्नि उसके समीप आइ भीरु बोले, 'मूँके हानव ! आत्महत्या मद्रावाप है । ऐसा न करो और भग्निखणित घर मांगो ।' रम्म भग्निको इस बात पर प्रसन्न हो कर बोला—'भाग यदि प्रसन्न हैं, तो यही घर क्षत्रिये कि जिसस जैमोक्ष्यविद्यया शत्रुपक्षयिनाशक मेरे श्रियके अंशसे एक पुत्र उत्पन्न हो जो सब तरहस देव, हानव और मानवका भजेय, महावीरवान् तथा काम रूपी हो ।' 'तथास्तु' कह कर भग्नि यत्नधान हो गइ । इस वरसे रम्मके महिषासुर नामक पुत्र उत्पन्न हुआ ।

(देवीपु० ५।१० व०)

रम्मा (स० स्त्री०) रवि भक्ष-राप् । १ कृषक, केला । २ पुराणानुसार एक प्रसिद्ध अप्सर। पुत्राय भादि शाल्मिंसे इसक सौम्य और सङ्गोत्पारत्विताका विस्तृत विवरण आया है । रामायण पढ़नेसे मालूम होता है कि एक समय रम्मावती राममें मत्कुपेरक पाम जा रही थी । अत्रुधिपति रावणने उसे बलपूर्वक हरण कर मृगार किया । मत्कुपेरके शापसे बल षट् ज्ञानके कारण रामके हाथसे रावण मारा गया ।

(उत्तरकाण्ड ११ सर्ग)

३ गीते । (अष्टाध्याय) ४ गोध्वनि, गीका रंमना या बिन्वना । ५ पेक्षा । ६ द्विषसमेद । ७ उत्तर विष् उत्तर विष्ठा ।

रम्मा (हि० पु०) लोहका बह मोटा भारो डंग जिसकी सहायतासे पेजराज भादि नाचारोंमें उड़ करत या इसो प्रकारके मोर काम करते हैं ।

रम्मानुतोपा (स० स्त्री०) रम्माक्या वृताया । प्रत विरेव, रम्मा मृताया प्रत । यह प्रत अनुपूर्वोयुक्त वृत्तीया की करता होता है । मविष्पुत्पायम लिखा है, कि न्येष्ठ मासकी शुद्धा वृतायाको यह प्रत करना चाहिये । रम्मा नामको अन्तर्धान पहले पहल यह प्रत किया या ।

इसीस इस प्रनका रम्माप्रत नाम हुआ है । (विक्खिस) प्रतविधान—पहले आचमन और स्वस्तिपावन करके उत्तरमुख बैठे और सङ्कल्प करे ।

सङ्कल्प—'विष्णुमनोऽथ न्येष्ठे मासि शुक्ले पक्षे वृतावापान्तिघावारम्प भ्रमुकगोतो भीममुक्क देवी सौभाग्यसम्प्रतिप्राप्तिकामा सर्वस्वरं वायत् प्रतिमासीय शुक्लवृतायायां गणपत्यादिनाना-देवतापूज पूर्वकं तदुत्प हारेणातच्छत्रुदेवता पूजारूपरम्मावतोपवासकर्माहं करिष्ये ।' इस प्रकार सङ्कल्प करके सूकपाठ, पीछे सामान्यार्थ स्थापन और विधानपूर्वक भासन तथा भूतशुष्पादि करके गणेश भादि देवताकी पूजा करनी होगी । इस पूजाके बाद यथागिक उपचार द्वारा गीतोपूजा करनेका विधान है । गीतोप्याय—'भो काल्यायनीं दशमुखां महिषासुरमर्दिनीं ।'

इस घटके प्रथम मासमें विन्ध्यपर्वस गीतोपूजाकी, द्वितीय मासमें कुशवक द्वारा गिरिसुताकी वृत्तीय मासमें कङ्कार द्वारा सुमश्राकी, चतुथ मासमें कुन्डपुण्यसे गोमतीकी, पञ्चम मासमें हर्मनक पुण्यसे विशाखाक्षीकी, षष्ठ मासमें क्षणिकाक पुण्यसे भोमुञ्जीकी, सप्तम मासमें पद्य पुण्यसे नारायणकी, अष्टम मासमें विन्ध्यपर्वस माघवी की, नव मासमें तगरपुण्यसे धीकी, १०म मासमें पद्म पुण्यसे उत्तमाकी, ११म मासमें त्रयापुण्यसे राम पुत्रोका और द्वादश मासमें त्रैतिपुण्यसे पद्मजाकी पूजा करनी होता है । एक वर्ष यह प्रत करके वैधाविधान इसको प्रतिष्ठा करने होगी । यह प्रत करनेसे सौभाग्य-सम्पत्ति और धनधाम्यादिको प्राप्ति होती है । (अग्ने०) रम्माना (हि० कि०) गायका बोलना, गायका शब्द करना ।

रम्मापति (सं० पु०) इन्द्र ।

रम्माफम (सं० पु०) कन्डीफळ, केला ।

रम्माप्रत (सं० स्त्री०) प्रतविधेय, रम्मावृतीयाप्रत ।

रम्मावृतीया देखो ।

रम्माभिसार (सं० पु०) रम्मापण्य ।

रम्मिन् (सं० लि०) १ शब्द किया हुआ, युकाया हुआ ।

२ बजाया हुआ ।

रम्मिन् (सं० पु०) १ वेदधारी या द्वादधारी जो हायम

वैत या दंड लिये हो। (ऋक् २।१।६) २ वृद्ध मनुष्य, बूढ़ा आदमी। ३ द्वारपाल, दरवान। ४ अलङ्कार या आयुधविशेष।

रम्भिनी (सं० स्त्री०) एक रागिणी जो भैरव रागकी पुत्र-वधू मानी जाती है।

रम्भोर (सं० स्त्री०) रम्भे रव ऊरु यस्वाः। १ वह स्त्री जिसकी जाँघ कैलेके यम मी हो। २ सुन्दर, गृध्र-मुरत।

रम्भाल (अ० पु०) रमल फेंकनेवाला, पासा फेंक कर फलित कहनेवाला।

रम्य (सं० स्त्री०) रम-(गारुडपथात् यत् । पा ३।१।८८) इति यत् । १ परवलकी जड़। २ प्रवान धातु, वीर्य। (पु०) रम्यतेऽनेनेति रम-यत् । ३ चम्पकवृक्ष, चंपेका पेड़। ४ वकना पेड़, अगस्त। ५ अग्नित्रके एक पुत्रका नाम। ६ वायुके सात भेदोंमेंसे एक जो घट्टेमें चारसे सात कोस तक चलती है। (ति०) ७ मनोहर, सुन्दर। ८ मनोरम, रमणीय। ९ बलकर, ताकतवर।

रम्यक (सं० स्त्री०) रम्यते जानोऽनेनेति ततः ष्यप्, संज्ञायां कन् वा। १ वर्षविशेष, जम्बूद्वीपके नौ खंडों या वर्षोंमेंसे एक। यह मेरुके दक्षिण और श्वेत पर्वतके उत्तर वायव्य कोणमें माना गया है। इस वर्षके मनुष्य अतिशय बुद्धिमान् तथा जरा और दुःखरहित होने हैं। इस वर्षमें न्यग्रोध अर्थात् वटकी जातिका एक वृक्ष है जिसका फल खा कर यहांके लोग कई दिन तक रह सकते हैं। ---

“दक्षिणेन तु मेरोस्तु श्वेतस्य चोत्तरं च।

वायव्य रम्यकं नाम जायन्ते तत्र मानवाः॥

मतिप्रधाना विमला जरादुःखविवर्जिता।

तथापि तुमहान् वृक्षे न्यग्रोधो रोहितः स्मृतः॥

वत्कल्पप्राग्नादेव जीवन्ति बहुधास्रम्॥”

(बराहपु० ब्रह्मगीता)

देवीभागवतमें लिखा है, कि रम्यकवर्षमें भगवान् विष्णुकी मत्स्यमूर्त्ति विराजित हैं। भगवान् मनुने इस मूर्त्तिका स्तव किया है।

“रम्यके नाम वर्षं च मूर्त्तिं भगवतः पराम्।

मत्स्या देवानुरैर्वन्या मनुः सौति निरन्तरम्॥”

(देवीभागवत ८।८।१८)

विष्णुपुराण २।२।३ तथा ब्रह्माण्डपुराणमें भी इस वर्षका विवरण आया है। २ महानिम्य, वकायन। (वैद्यकनि०)

रम्यकक्षोर (सं० पु०) महानिम्य, वकायन।

रम्यग्राम (सं० पु०) महाभारतके अनुसार एक गाँवका नाम। (भारत समापर्व)

रम्यता (सं० स्त्री०) रमरप भावः तल्-टाप्। रम्यत्थ, सौन्दर्य।

रम्यपुष्प (सं० पु०) रम्य रमणीयं दर्शनीयं पुष्पमस्य।

१ ग्राहमलिवृक्ष, संमलका पेड़। (स्त्री०) २ सुन्दर फूल।

रम्यफल (सं० पु०) रम्यं फलमस्य। कारस्करवृक्ष, कुचिलाका पेड़।

रम्यश्री (सं० पु०) विष्णु।

रम्यसानु (सं० स्त्री०) पर्वतके शिखरकी रमणीय समतल भूमि।

रम्या (सं० स्त्री०) रम यत्-टाप्। १ रात्रि, रात। २ स्थल पश्चिमी। ३ गंगा नदी। ४ महेन्द्रवाशणी लता, इन्द्रायण। ५ लक्षणाकन्द। ७ मेरुकी कन्याका नाम जो रम्यसे ध्याही गई थी। ८ एक रागिणीका नाम। ८ ध्रुवत स्वरकी तीन ध्रुतियोंमेंसे अन्तिम ध्रुतिका नाम।

रम्याक्षि (सं० पु०) एक ऋषिका नाम।

रम्यामली (सं० स्त्री०) भू-धात्री, भुईं आँवला।

रम्हाना (हिं० कि०) गायका बोलना, रमाना।

रय (सं० पु०) रयतेऽनेनेति रय (पु लिसशाया षः प्रायेण । पा ३।२।२२८)-इति ष, गीणात्यनेनेति वा री घ। १ वेग, तेजी। २ प्रवाह। ३ परुवसुके छः पूर्वोंमेंसे चौथेका नाम। (भाष० ६।७।१)

रयणपत्त (हिं० पु०) चन्द्रमा।

रयना (हिं० कि०) उच्चारित करना, बोलना।

रयासत (अ० स्त्री०) रियासत देखो।

रयि (सं० पु०) १ धन, गोरूपधन। “यज्ञियास्ते संसृ-जन्तुनः” (ऋक् १०।१६।७) ‘रम्या गोलक्षणेन धनेन’। (सायण) २ पूर्वालङ्कार।

रयिद (सं० ति०) रयिं धनं ददातीति दा-क। धनद, धन देनेवाला।

रयिन्तम (सं० पु०) अतिशय धनवान्, बड़ा धनशाली।



रवाज (फा० ख्री०) वह वात या कार्य जो किसी वंश, समाज या नगर आदिमें बहुत दिनोंसे बराबर होता चला आया हो, परिपाटी, प्रथा ।

रवादक (स० पु०) वह मनुष्य जिसने गिरवी रखे हुए धन-को हजम कर लिया हो ।

रवादार (फा० वि०) १ सम्बन्ध रखनेवाला, लगाव रखने वाला । २ शुभचिन्तक, हितैषी । ३ जिसमें कण या दाने हों, दानेदार ।

रवानगी (फा० ख्री०) रवाना होनेकी क्रिया या भाव, प्रस्थान ।

रवाना (फा० वि०) १ जिसने कहीसे प्रस्थान किया हो, जो कहीसे चल पडा हो । २ भेजा हुआ ।

रधानी (फा० ख्री०) १ रवाँ होनेका भाव, वहाव । २ विदाई, रखसती ।

रवाव (अ० पु०) रवाव देखो ।

रवाविया (हि० पु०) लाल बलुआ पत्थर ।

रवाविया देखो ।

रवायत (अ० ख्री०) १ कहानी, किस्सा । २ कहावत ।

रवा रवी (फा० ख्री०) २ जल्दी, शीघ्रता । २ भागाभाग, दौडादौड़ ।

रवासन (हि० पु०) एक प्रकारका वृक्ष जिसके वीज और पत्ते औषधके रूपमें काम आते हैं ।

रवि (सं० पु०) रूयते सूर्यते इति क- (अन्वहः । उण् ४।१३८) इति इ । १ सूर्य । २ अर्कवृक्ष, मदारका पेड़ । ३ नायक, सरदार । ४ रक्ताशोकवृक्ष, लाल अशोकका वृक्ष । ५ पुराणानुसार एक आदित्यका नाम । ६ महाभारतके अनुसार धृतराष्ट्रके एक पुत्रका नाम । ७ सौवीरकभेद । ८ सूर्यका भोग दिन, रविवार । रविवारको उड्ड, मछली, मास, मसूर, निम्बपत्त, अदरक, मधु, बेल और काजी ये सब द्रव्य नहीं खाने चाहिये । जो खाते हैं, वे दरिद्र, पुत्रहीन और कुष्ठरोगादि द्वारा आक्रान्त होते हैं । (कर्मलोचन)

रविका स्वरूप इस प्रकार है—रक्तश्याममिश्रित वर्ण, पूर्वदिग्धिपति, पुंग्रह, क्षत्रिय-जाति, सत्त्वगुणान्वित, कटुरस, धिंहराशि, हस्ता नक्षत्र, सप्तमी-तिथि, ताम्रधातु, कलिङ्गदेशका अधिपति, काश्यपगोत्र, द्वादशांगुल परिमित शरीर, पद्महस्तद्वय, पूर्वानन, सप्ताश्ववाहन,

शिवाधिदैवत और वह्निप्रेत्यधिदैवत । (ग्रहयागतत्त्व)

मनुष्योंकी रक्षा करते हैं, इस कारण इनका रवि नाम हुआ है ।

“अवतीमासयात् लोकास्तस्मात् सूर्यः परिभ्रमात् ।

अचिरात् प्रकाशेत अवनत् स रविः स्मृतः ॥”

(मत्स्यपु० १०१ अ०)

रवि सभी ग्रहोंमें श्रेष्ठ ग्रह है । यह ग्रह एक महीनेमें बारह राशिका भोग करता है । रविके एक राशिसे दूसरी राशिमें संक्रमणकालको संक्रान्ति कहते हैं । रविका संक्रमण होता है, इससे इसका एक नाम रविसंक्रान्ति भी है । एक एक राशि ३० अंशोंमें विभक्त है । रवि एक दिनमें करीब करीब एक अंशका भोग करता है, इसी कारण ३० दिनका मास हुआ है । रविके दीप्तांशके जो सब ग्रह रहते हैं, वे सब डूब जाते हैं । इन डूबे हुए ग्रहोंमें फिर कोई शक्ति नहीं रहती । ग्रहोंकी वात्य, वृद्ध, अस्त तथा अतिचार, महातिचार और वक्र आदि गति रविके कारण हुआ करती है । गुरु और शुक्रके वात्य, वृद्ध और अस्तसे जो अकाल होता है उसका कारण भी यही रवि है । बृहस्पति वा शुक्र जब रविके पास रहता है, तब उसमें बल रहने नहीं पाता । इसी कारण वात्य, वृद्ध और अस्तकाल हुआ करता है ।

ग्रहोंका स्फुट, भाव, बल और सन्धि आदि स्थिर कर जात बालकका शुभाशुभ निर्णय करना होता है ।

रविग्रहके शयनादि बारह भावोंका फल ज्योतिषमें इस प्रकार लिखा है—

शयनभावमें रविके रहनेसे मन्दाग्नियुक्त, पित्तशूल रोगाक्रान्त, श्लीषदी (फीलपाच) तथा गुह्यदेशमें रोग होता है । उपवेशनकालमें रहनेसे शिल्पकर्मकारी, श्याम वर्णदेह, उत्तम विधारहित, दुःखयुक्त और परसेवामें तत्पर रहता है । नेत्रपाणि भावमें रह कर यदि लग्नके पञ्चम, नवम, दशम और सप्तम स्थानगत हो, तो सभी प्रकारका सुखलाभ होता है । केवल इसी भावमें रहनेसे क्रूर प्रकृतिका तथा जलदोष रोगयुक्त होता है । प्रकाशभावमें रहनेसे चक्षुरोगी, अतिशय क्रोधी, परद्वेषी, धर्मात्मा और धनवान् होता है । गमनेच्छ भावमें रहनेसे निद्रालु, क्रोधी, नराधम, क्रूर प्रकृतिका, मूर्ख, दाम्भिक रूपण

भीर परदारत समनभावमें रहनम प्रथम ग्वा धार प्रथम पुनः का भाग, प्रथमा भीर पादरागः क्तः, स्थनापयति भायमें रहनम नावापय मना मनक गुणगुण, विद्या धार विनयगुण, भागमनभावमें रहनम मूय, सयरा कुकमरत, निष्पायाद्, कुरिमर विद्यागुण, निडय भीर परनिष्कः; भाजकभावमें रहनम कुरिमर, मांसनाभा मरस्थाहारो, गात्रयेला भीर मदापारा कुरवतिष्मा भायमें रहनम कृपाताया, नाना विचारत ताडगुण्य भीर परिष्कः, कीमुक भायमें रहनम उरगाहा, पना, माता कीमुका हाता नाका भीर गिन्यहुनाता तथा निद्रानाय में रहनम निद्राकु, वाधिमुक प्रथमा रक्षावधुगुण, काया भीर परनिष्क हाता है। इसा प्रकार रविक गपनादि डाङ्गामात्रका कल जाना जाता है।

रविका भुटगायन ।

रविका भुटगायन निष्ठाक प्रकारम करता हाता है। पहन रविका गुड भीर मध्य विपर करता हाता। पाठ गुड भीर मध्यका ही जयह रत कर दक्षमम तादृकातिक संभवम्नाथ तादृकादि पठाये। यदि मध्य वावादिभ मन्थाथ तादृकादि न पठे, तो मपररातिमें बाहक डाङ् कर पठाये। यदि इस प्रकार पठा कर राति बध रहे, तो इसको ३० में गुना करके भ गक साध जोड़ दे। वाककम ओ हाता उमे मन्थ बरुद जानना धारिधे। उमे मन्थ बरुदतिमें जिनना संकश रहना उमेन हा भुटुमें रविका वापककरातेमें डा भुटु रहता है इस जोड कर वापनि करनता उमे नाका रहते है। पाठ उमेक परबला प्रत्य करनता नाव भुटुकरता है। इस भुटु करहाका वापक कामे रत कर परानम डा भुटु कन्ता, बरु नाय करहाता है। इस नावागु जाते बरु उमे कन्तादि गुमिग करके डा गुणककन निष्कयता उमे १० में भाग है। नापकन यदि अन्धपथकरता मध्यक करहाता भुटुकरता पठा है, तो इस अन्धकरता धार यदि करहाता भुटुकरके का परिनाम उरगा है, तो उमे पनकरता रहन है। अथ पन्थ मध्यमें एक नमजागु का करके गुन जोड़ दे। वाकक मन्थरुदु ग करे बरुहाता है। एक मन्थ बरुद ग करके गुड गांवरके मन्थ र क्तादिहा कता है। मन्थ कर उमेनय १३५ कता

पठाये। यदि पठायेकन ३० में जयाहा १६ तो उमे ३० में भाग है भीर येगागुन कता जोड़ कर उमे भाग कन्थे निनाये। इस प्रकार ओ भुटु हाता यही रविका भुटुगायन है। (१ / १०)

इसा प्रकार रविका भुटु गायन करता हाता है। रविक भुटुम उमे मनव रवि दिन रागिक विठन भ गमे किनना कन्थमें भवमिधन है यह जाना जाता है।

रविका गायतन ।

रविक दिन राति में जानमें देना कल हाता है उमे का विषय इस प्रकार निचा है—

‘स्वान् कन्थमि नाकदरिदरा कुन्तुदेव भवन् ।
 दुःखिन विष्णुभक्त न ह्येक मनसुव वाञ्छति ॥
 र म्ब जन्मगा कर्तव्यं विदुः क्ताडुपता क्तयः ।
 तेषाम्बन्धना क्तु न जितो वाञ्छितुव पर्याग ॥
 क्वम हृदिमनसुव क्तयः वि ॥ ३३ ॥ रविका गायतन ॥
 रन्धनरुदरिना म्हात कन्तुव अन्धपता दिवङ्गा ॥
 रविका गायतन ॥

यह गायतन उमे राति प्रात स्थित करना होना है। रविक उमे रातिमें जानम क्वातनाग, गुमेमें मय, तामरेमें मन्थति, धीयमें मानहाति, वांथवेमें वातता, उरुमें गङ्गनाग, मातवेमें मधनाग घाठवेमें म्भरुम पादा, कथेमें मन्थरुम १११वेमें क्मरुति वावावेमें पमरुति भीर वावावेमें प्रथमागक क्वातन प्रहातिरु हाता है। रविमरक प्रबककयमें हा उक कल होन है।

रविका रविकुण्डल ।

‘स्वान् १३५-१३५ गु १३५ ग १३५ ग १३५ वि ३५ ।
 मन्थ ३३५ १३५ ग १३५ ग १३५ ग १३५ ॥
 (१ / ११)

उमे रातिमें ५३ ३ धार वावावे रविकमं गुमिध पाठ कर म्भव मरु हात यदि विरु म ही म्भानु म्भति का पाठ कर म्भव मरु यदि विरु म मरु, तो उमे रातिमें पना क्त १३५ १३५ १३५ मत् १३५ मन्थ विषय रवि गुन र व है। विरु र व ३ गुन मय परिष्कत हा कर ना गुन क्तु नता ३३ । क्वाक मरु हात विरु हाता म्भति का गुनकरिता गुमि जाना हाता है।

रविभुक्तिनिर्णय ।

‘लग्नदण्डपक्ष’ द्विध्न तत् संख्यं क्रमतः पतं ।

विपलञ्च रवेर्भाष्यमेव कल्पनमस्तमे ॥” (सि० गि०)

रवि जिस मासमें जिस रागिमें रहते हैं, वे उसी उसी लग्नोदयके साथ साथ उदय होते हैं। उस उदित लग्नराशिके लग्नमानकी दण्डमध्याको दूना करनेसे जो फल होगा उसे पल माने तथा पलकी संख्याको दत्ता करनेसे जो निरुलेगा वही उस रागिके एक दिनकी रवि भुक्ति है। लग्नमानके दण्डपलको ३०से भाग देने पर एक दिनकी रविभुक्ति कितनी होती है उपरोक्त नियमसे स्थिर किया जाता है।

उपरोक्त नियमानुसार उदय और अस्त लग्नकी दैनिक भुक्तिका निरूपण केवल ३० दिनका महीना होनेसे ही होगा। किन्तु जहाँ २६, ३१ या ३२ दिनका महीना होता है वहाँ महीनेकी दिन संख्यासे भाग करके दिनभुक्ति स्थिर करनी होगी। रविके राशिसंक्रमदिनसे ही भुक्तिका आरम्भकाल गिना जाता है।

रविकी विशेषशुद्धि ।

जन्मराशिसे तीसरे, छठे, दशवें, ग्यारहवें स्थानके तथा महीनेका १३ दिन बीतने पर दूसरे, पांचवें और नौवें स्थानके रवि शुभफल देते हैं। जहाँ रविशुद्धि देखनी होती है वहाँ इसी नियमके अनुसार देखना उचित है।

सूर्य शब्द देखो ।

रवि—१ होराप्रकाशके रचयिता । २ मधुमती नास्त्री काव्य-प्रकाशटीकाके प्रणेता । ये मिथिलापति शिवसिंहके मन्त्री अच्युतके पौत्र और रत्नपाणिके पुत्र थे ।

रविकर (सं० पु०) रवेः सूर्यस्य करः किरणः । सूर्यकी किरण ।

रविकर—पिङ्गलसारविकाशिनी और वृत्तरत्नावलीके प्रणेता । ये भीमेश्वरके पौत्र और हरिहरके पुत्र थे ।

रविकाम्त (सं० पु०) रविणा रविकरसंयोगेन कान्तः क्रमनीयः । सूर्यकाम्त नामक मणि । (राजनि०)

रविकीर्ण (सं० पु०) अर्कवृक्ष, आरुका पेड ।

रविकीर्त्ति—एक प्राचीन कवि । ये ६३४-३५ ई०में विद्यमान थे ।

रविकुल (सं० पु०) सूर्यवंश । इस शब्दके अन्तमें रवि,

मणि आदि शब्द लगनेसे उसका अर्थ ‘रामचन्द्र’ होता है। जैसे—रविकुन्डरवि, रविकुल-मणि ।

रविशुभ—चन्द्रप्रमा-विजयकाव्य और लोकसंख्यब्रह्म नामकाट्ट नामक अलङ्कारग्रन्थके रचयिता ।

रविचञ्चल (सं० पु०) लोलार्क नामक तीर्थास्थल जो काशीमें है ।

रविचक्र (सं० ह्री०) रवेश्चक्र । नराकार सूर्यचक्रविशेष । मनुष्यकी आकृति बना उसमें जगह जगह सभी नक्षत्रोंको बैठकर यह चक्र बनाना होता है। इससे जात-वालकका शुभाशुभ स्थिर किया जाता है। निम्नोक्त प्रकारसे यह चक्र अङ्कित करना होता है। पहले एक मनुष्यकी आकृति बना कर पीछे सूर्य जिस नक्षत्रमें रहते हैं उस नक्षत्रसे तीन नक्षत्र नरवेदके मस्तरु पर रखना होगा। पीछे तीन नक्षत्र मुख पर, एक एक नक्षत्र स्तन पर, एक एक नक्षत्र दोनों बाहु और हाथ पर, पांच छाती पर, एक नाभि पर, एक एक गुह्य और जानु पर, बाकी जो नक्षत्र रह जाते हैं उन्हें पाददेशमें लिखना होगा ।

इन सब नक्षत्रोंमेंसे चरणस्थित नक्षत्र यदि जन्मनक्षत्र हो, तो जातवालक अवपायु, जानुसे विदेशवासो, गुह्यसे परदाररत, नाभिसे थोड़ेमें सतुष्ट, हृदयसे धार्मिक, पाणिसे चौर, भुजासे स्थानन्नष्ट, फरन्धसे धनपति, मुखसे मिष्टान्नभोजी और मस्तरु पर अवस्थित नक्षत्रसे वन्धनमुक्त होता है। (गरुडपु० ६० अ०)

रविचन्द्र—अप्रकृतकरीकाके रचयिता ।

रविज (सं० पु०) रवेर्जातः इति जन उ । शनैश्चर, जिसकी उत्पत्ति रवि या सूर्यसे मानी जाती है ।

रविजकेतु (सं० पु०) एक प्रकारके केतु या पुच्छल तारे जिनकी उत्पत्ति सूर्यसे मानी गई है। कहते हैं, कि इनका आकार प्रायः हारके समान और वर्ण सोनेके समान होता है और वे पूर्व या पश्चिम दिखाई देते हैं ।

रविजप्रिय (सं० पु०) नीलकान्त नामक मणि ।

रविजल (सं० ह्री०) आककी जड़का रस ।

रविजा (सं० ह्री०) यमुना, कालिन्दी ।

रविजात (सं० पु०) सूर्यकी किरण ।

रविजेन्द्र (सं० पु०) जैनोंके एक आचार्यका नाम ।

रविचरनप (सं० पु०) रवेस्तनपः । १ सायण्यि मनु । २ वैश्व
 खत मनु । ३ यमराज । ४ शनिश्चर । (हरत्संहिता १५ १२)
 ५ सुप्रोष । ६ कर्ण । ७ अश्विनीकुमार ।
 रविचरनया (सं० स्त्री०) सूर्यकी कन्या, यमुना ।
 रविचरनुजा (सं० स्त्री०) यमुना ।
 रविचरी (सं० स्त्री०) पुराणानुसार एक प्राचीन तीर्थका
 नाम । (विष्णुपुराण)
 रविचर (स० लि०) एकदारी, चित्तानुशासना ।
 रविचरत्रय (सं० स्त्री०) सूर्यकी चिरण्य ।
 रविचर (स० पु०) १ राजपुरोहितमेव । २ एक कवि ।
 रविदास कवि—मिथ्यावाचकएवम नामक प्रहसनके
 प्रणेता ।
 रविदिन (सं० स्त्री०) रविवार, पतवार ।
 रविदीप्त (सं० लि०) सूर्यकिरणोन्नासित ।
 रविदुग्ध (सं० स्त्री०) भर्षहीर, भाकका बाँटा ।
 रविद्वेष (सं० पु०) काभ्यराक्षसके प्रणेता एक कवि । ये
 मलयवासी मारायणके पुत्र थे । बहुतेरे इन्हे नलोदयके
 रक्षयिता भनुमान करते हैं । अट्टावबोधिनो नामक इनकी
 छिबी एक नलोदयटोका मिछती है ।
 रविदुग्ध (सं० पु०) सदापुष्यरुद्र, भाकका पेड़ ।
 रविमन्द (सं० पु०) रविमन्द देवो ।
 रविमन्त्र (सं० पु०) रवेर्मन्त्रः, यदा रवि मन्त्रयतीति
 मन्त्रिभ्यु । १ सुप्रोष । २ सायण्यि मनु । ३ वैश्वखत
 मनु । ४ शनि । ५ यम । ६ कर्ण । ७ अश्विनीकुमार ।
 रविमन्त्रिनी (सं० स्त्री०) यमुना ।
 रविनाथ (सं० स्त्री०) रविरेव भाषोऽन्वय । १ पद्य, कमल ।
 २ बभ्रुकृष्ण, दुपहरिया फूलका पीषा ।
 रविनामक (सं० स्त्री०) ताग्र, ताँबा ।
 रविन्द (सं० स्त्री०) सरविन्द, पद्य ।
 रविपत्न (सं० पु०) रविपत्नी होसिमत् पत्नी यस्य । भादित्य
 पत्नीपु, मन्वारका पीषा ।
 रविपुत्र (सं० पु०) रवेः पुत्रः । रविमन्द देवो ।
 रविपुत्रा (सं० स्त्री०) उन्वीमेव ।
 रविप्रिय (सं० स्त्री०) रविरेव प्रियमस्य । १ एक कमल,
 छाल कमल । २ ताग्र, ताँबा । (पु०) ३ भादित्यपत्न,
 मन्वार । ४ एक कर्पीर, माल कनेर । ५ सकुच या लकुच
 नामक फल या बसका रुद्र । ६ मोक्षभृत्पुत्र ।

रविप्रिया (सं० स्त्री०) १ पुराणानुसार देवीकी एक मूर्ति ।
 २ सूर्यावर्तशुप ।
 रविप्रिय (सं० स्त्री०) रवे एतन् ततः कन् । १ माणिक्य,
 मानिक । २ सूर्यका मंडल ।
 रविप्रका (सं० स्त्री०) सूर्यावर्तशुप ।
 रविप्रका (सं० स्त्री०) यह छाल मंडल या गोला जो
 सूर्यके घाटों मोर दिखाइ देता है, रविप्रिय ।
 रविप्रिय (सं० पु०) सूर्यकाण्ड नामक मण्य ।
 रविप्रका (सं० स्त्री०) भर्षमूक, भाककी मूक ।
 रविप्रका (सं० स्त्री०) सूर्यकाण्ड नामक मण्य ।
 रविप्रका (सं० स्त्री०) रवे रज, तता कन् । माणिक्य
 मानिक ।
 रविप्रका (सं० पु०) रविर्जन्मनामस्य । विष्णु ।
 रविप्रका (सं० स्त्री०) रविप्रिय जोह । ताग्र, ताँबा ।
 रविप्रका (सं० पु०) सूर्यकुल ।
 रविप्रका (सं० पु०) सूर्यकुलमें उत्पन्न, सूर्यवंशी ।
 रविप्रका—ह्नायुषकृत कविहरस्यके एक यीकाकार ।
 रविप्रका (सं० पु०) मन्त्रपुत्रपुत्र ।
 रविप्रका (सं० स्त्री०) रविप्रकाशुप ।
 रविप्रका (सं० पु०) यह वाण बिसके अन्तर्गत सूर्यका-सा
 प्रकाश उत्पन्न हो ।
 रविप्रका (सं० पु०) रवेः सूर्यप्रकाश वाण । सत्ताहके
 सात दिनो या वाटोंमेंसे एक जो सूर्यका वार माना जाता
 है और जो शनिवारके बाद तथा सोमवारके पहले पड़ता
 है, भादित्यवार ।
 रविप्रका (सं० पु०) रविवार, पतवार ।
 रविप्रका (सं० स्त्री०) १ गति, चाख । २ क्वारियोंके बीच-
 में चलनेके छिमे बना हुआ छोटा मार्ग । ३ तीर, हथ,
 तटीका ।
 रविप्रका—अरुद्र-पत्स्विम भारतवासी एक राजा । एककी
 उपाधि महासामन्त-महाराज थी । इनके पिताका नाम
 राजा सप्रयसेन और माताका नाम शिबरस्वामिनी था ।
 रविप्रका (सं० स्त्री०) रवेः संक्रान्तिः । सूर्यका एक
 राशिमेंसे दूसरी राशिमें जाना, सूर्य संक्राम्य ।
 रविप्रका (सं० स्त्री०) रवि संक्राम्य इति कन् । ताग्र,
 ताँबा ।

रविसारथि (सं० पु०) अरुण ।

रविसाम्य—दाक्षिणात्यके वक्राटक वंशीय राजाओंके अधीनस्थ एक सामन्त राजा । अजयटाके शिलाफलकमें इनका नामोल्लेख है ।

रविसुधन (हिं० पु०) १ सूर्यके पुत्र, अश्विनीकुमार ।
२ रविनन्दन देखो ।

रविसुत (सं० पु०) रविनन्दन देखो ।

रविसुन्दररस (सं० पु०) वैद्यकमें एक प्रकारका रस जो मगंदरके लिये बहुत उपकारी माना जाता है ।

रविसूनु (सं० पु०) रवेः सूनुः । १ सूर्यके पुत्र । २ रवि-
नन्दन देखो ।

रविस्पर्शा (सं० स्त्री०) ह्रस्वमेपशृङ्गी, श्रुट्ट मेढाशृङ्गी ।

रवीन्द (सं० स्त्री०) रविणा सूर्यकरस्पर्शेन इन्दति प्रका-
शते इति इन्द अच् । पद्म, कमल ।

रवीन्द्र—दुर्गमाहात्म्यटीकाके प्रणेता तथा पुरन्दरके पुत्र ।

रवीपु (सं० पु०) कामदेव ।

रशनसम्मित (सं० पु०) यूपकाद्यस्थित रज्जुसदृश या
तद्वत् विलम्बित । (तैत्तिरीयस ६।६।१।१)

रशना (सं० स्त्री०) अश्नुते व्याप्नोतीति अशू व्याप्तौ
(अशे रश च । उण् २।७५) इति युच्, धातोर्शादेश्च ।
१ काञ्चि, करधनी । २ जिह्वा, जीभ । ३ रज्जु, रस्सी ।
४ अंगुली ।]

रशनाकलाप (सं० पु०) धाने आदिकी बनी हुई एक
प्रकारकी करधनी जो प्राचीन कालमें स्त्रियां कमरमें
पहनती थीं ।

रशनाकृत (सं० त्रि०) रज्जु द्वारा चालित ।

(काशितकी० १२०)

रशनागुण (सं० पु०) रशनाकलाप देखो ।

रशनोपमा (सं० स्त्री०) रसनोपमा नामक अलंकार ।
विशेष विवरण रसनोपमा शब्दमें देखो ।

रशक (फा० पु०) १ किसी दूसरके अच्छी दशामें देख
कर होनेवाली जलन या कुहन, डाह । २ लज्जा, शर्म ।

रश्मन् (सं० पु०) रश्मि, किरण ।

रश्मि (सं० पु०) अश्नुते व्याप्नोतीति अशू-व्याप्तौ
(अश्नोतेरश्च । उण् ५।४६) इति मि, धातो रशादेश्च ।
१ किरण । इसका वैदिक पर्याय—खेदय किरण, गो,

अभीपु, दीधिति, गभस्ति, वन, उन्न, वसु, मरोच्चि,
मयूष, सप्तऋषि, साध्य और सुपर्णा । २ पद्म, पलक
के रोप । ३ अश्वरज्जु, घोड़ेकी लगाम ।

रश्मिकलाप (सं० पु०) मौक्तिक कण्ठहारभेद, मोतियोंका
वह हार जिसमें ६४ या ५४ लडियां हों ।

रश्मिकेतु (सं० पु०) १ एक राक्षसका नाम । (रामा०
१।५।२) २ धूमकेतुग्रहभेद, वह केतु या पुच्छल तारा
जो कृत्तिका नक्षत्रमें स्थित हो कर उदित हो । कहते हैं,
कि इसका चोटीमें धूआं रहता है और इसका फल
सातवें केतुके समान होता है । (बृहत्सं० १।१।४०)

रश्मिक्रीड (सं० पु०) रामायणके अनुसार एक राक्षसका
नाम । (रामायण १।१।२।१२)

रश्मिन् (सं० पु०) रश्मि, किरण ।

(भागवत १।६।३८)

रश्मिपति (सं० पु०) रश्मिः पतिः पोषको यस्य ।
१ आदित्यपत्न शुष, मदारका पौधा । २ रविपत्न ।

रश्मिपवित (सं० त्रि०) सूर्यकिरण द्वारा पूत या पवित
किया हुआ ।

रश्मिप्रभास (सं० पु०) एक बुद्धका नाम ।

रश्मिमण्डल (सं० पु०) किरणमाला । (अथर्वप्राति०)

रश्मिमत् (सं० पु०) १ सूर्य । (त्रि०) २ किरणयुक्त ।

रश्मिमय (सं० त्रि०) १ दीप्तिमय । २ किरणोद्भासित ।

रश्मिमालिन् (सं० त्रि०) रश्मिमालाधारी ।

रश्मिसुच् (सं० पु०) सूर्य ।

रश्मिराज (सं० पु०) एक बुद्धका नाम ।

रश्मिवत् (सं० त्रि०) किरणके समान ।

रश्मिशतसहस्रपरिपूर्णध्वज (सं० पु०) एक बुद्धका
नाम ।

रश्मिस (सं० पु०) एक दानवका नाम ।

रस (सं० पु०) रसतोति रस-पचाद्यच् यद्वा रस्यते इति
रस आस्वादाने (पु सि सत्रायां घ. प्रायेण । पा ३।३।१२८)
इति घ । १ वह अनुभव जो मुंहसे डाले हुए पदार्थोंका
जीभके द्वारा होता है, खानेकी चोजका स्वाद । वैद्यकमें
मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त और कषाय ये छः रस
माने गये हैं । इसकी उत्पत्ति भूमि, आकाश, वायु और
अग्नि आदिके संयोगसे जलमें होती है । पृथ्वी और

ब्रह्मके गुणकी अभिव्यक्तासे मधुर रस गूढरी और मन्त्रिके गुणकी अभिव्यक्तासे अम्ल रस, ब्रह्म और मन्त्रिके गुणकी अभिव्यक्तासे कटुरस, वायु और आकाशके गुणकी अभिव्यक्तासे तिक्त रस और पृथ्वी तथा वायुका अभिव्यक्तासे कषाय रस उत्पन्न होता है। इन छः रसोंके मिश्रणसे और भी उत्सास प्रकाशके रस उत्पन्न होते हैं। इस रसका विषय वैद्यकमें इस प्रकार लिखा है।

आकाश, वायु, मन्त्रिके ब्रह्म और भूमि ये पांच महाभूत ५। शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध ये पांच महाकर्म इनके गुण हैं। आकाश और वायु माद्वि भूतोंसे शब्द और स्पर्श माद्वि गुण घोर घोर एक एक कर बढ़ता जाता है। जैसे—आकाशका गुण शब्द, वायुका गुण शब्द स्पर्श और रूप, ब्रह्मका गुण शब्द, स्पर्श, रूप और रस तथा पृथ्वीका गुण स्पर्श, रूप, रस और गन्ध है। अत्यन्त रस ब्रह्मीय गुणसे उत्पन्न होता है। संसर्ग अनुकूल्य और मिश्रणके कारण सभी भूतोंका अंश समीमें मिश्रित है। किन्तु उत्कृष्टता और अग्र्यकृततासे अनुसार वह विभिन्न रूपमें निर्दिष्ट होता है।

ब्रह्मीय गुणसे उत्पन्न यह रस अब सभी भूतोंके साथ मिश्र कर विद्यमान होता तब छः प्रकारमें बँट जाता है। ये छः रस हैं, मधुर, अम्ल, कषय, कटु, तिक्त और कषाय। पार्थिव और ब्रह्मीय गुणकी अभिव्यक्तासे मधुर रस, पार्थिव और आग्नेय गुणकी अभिव्यक्तासे अम्लरस, ब्रह्मीय और आग्नेय गुणकी अभिव्यक्तासे कषयरस, वायव्य और आग्नेय गुणकी अभिव्यक्तासे कटुरस, वायव्य और आकाश गुणकी अभिव्यक्तासे तिक्त रस तथा पार्थिव और वायव्य गुणकी अभिव्यक्तासे कषाय रस उत्पन्न होता है।

मधुर, अम्ल और कषयरस वातकी, मधुर, तिक्त और कषाय रस पित्तकी तथा कटु, तिक्त और कषाय रस कफकी नाश करता है। किसी किसी परिस्थितिमें यह रसोंके मन्त्रिके और सामगुण्य रसके कारण रस दो प्रकारका है—आग्नेय और सौम्य। मधुर, तिक्त और कषाय सौम्य रस, तथा कटु, अम्ल और कषय रस आग्नेय रस है। मधुर, अम्ल और कषय रस स्निग्ध और गुह्य, कटु, तिक्त और कषाय रस हृद्य और

सधु होता है। सौम्यसे शीतल और आग्नेयसे उष्ण समझना चाहिये।

शीतलता, स्फुटा, लघुता, वैशद्य और विद्युन्मत्ता वायुगुणका लक्षण है। कषाय रस इसकी समानयोगि है। इसी कारण कषाय रसकी शीतलतासे पाण्डुकी शीतलता कृशतासे कृशता लघुता वैशद्य और स्तम्भता से वायुकी विशदता तथा स्तम्भता बढ़ती है। उष्णता, तीक्ष्णता, कृशता, लघुता और विशदता पित्तगुणके लक्षण हैं। कटुरस इसकी समानयोगि है। इसी कारण कटुरसके व सव गुण बढ़ते हैं। माधुर्य, स्नेह, गौरव, शैत्य और पिच्छिलता श्लेष्मगुणके लक्षण हैं। मधुर-रस इसका समानयोगि है, इसीसे मधुररसके इन सब गुणोंकी वृद्धि होती है।

श्लेष्माकी अपर अर्थात् असमानयोगि कटुरस है। कटुरसके कटुरत्व द्वारा श्लेष्माकी मधुरता, स्फुटासे स्निग्धता, लघुतासे गुह्यता, उष्णतासे शीतलता और विशदतासे पिच्छिलता नष्ट होती है।

त्रिस रससे परितोष, आह्लाह और तृप्ति उत्पन्न होती है और त्रिस रससे जोषनकी घटा, मुग्धका अवलोक (मुग्ध का बटबट करना) तथा श्लेष्माकी वृद्धि होती है उसको मधुर रस कहते हैं। त्रिस रस द्वारा वृत्तार्थ, मुग्ध रूप और रुचि उत्पन्न होती है उसे अम्लरस त्रिस रस से सिद्धांक अग्र भागमें ब्रह्मन होती है, उद्देग पैदा होता है, सिर दृग् करना है और नाकसे पानी गिरता है उसे कटु रस त्रिससे मुग्धका वैशद्य, अन्तर्में रुचि तथा हर्ष उत्पन्न होता है उस तिक्त रस, त्रिस रससे वक्त्रदेश परितुष्ण, त्रिहा स्तम्भित, कथक बन्ध तथा हृत्पदेश तक आच्छेद और एक तरह पाकृत सा माहृत्न होता है उसे कषाय रस कहते हैं।

मधुररस—इस रसका क्षेपन करनेसे रस, रक्त, मांस, मेद, मज्जा सक्रिय, मोक्ष, शुक्र और स्तम्भकी वृद्धि होती है। यह वृद्धि और फेडवर्द्धक, पर्ण और बलवर्द्धक, अल्पसम्पायक (फटे पायको सुहा दता है) तथा रस और रक्तकी साक रचता है। यह रस बालक, वृद्ध, युवा क्षयरीगमस्त और कुर्बलके विषे हितकर है। रोगी मधुमक्षिका और विपीडिकाकी वृद्धा हो पसन्द करता

है। इससे तृणा, मूच्छा और दाह प्रशमित होता तथा छः इन्द्रियोंको प्रसन्नता गतता है। किन्तु यह कृमि और कफवर्द्धक है। मधुररसमें इस प्रकार अधिक गुण रहने पर भी यदि कोई अधिक मात्रामें इसका सेवन करे, तो यह श्वास, कास, आलस्य और वमनेच्छामें वृष्ट पाता है, तथा उसके स्वरभङ्ग, कृमि, गलगण्ड, अर्बु, श्लेष्म, वस्तिवेज और मलद्वारका उपलेप तथा चक्षुमें वेदना होती है।

अम्लरस—जारक और पाचक है। इसमें वायु शान्त होती, अनुलोम होता तथा कोष्ठमें जलन देता है। यह ऊँदजनक, मुदाप्रिय और वहि शैत्यसाधक है, किन्तु अधिक मात्रामें सेवन करनेसे दन्तदर्प, लोमर्षा तथा नयनसम्मोलन होता है। इसके द्वारा गाढा कफ तरल होता तथा शरीरमें शिथिलता आ जाती है। शरीरका कोई स्थान दग्ध, दृष्ट, मग्न, पिष्ट, छिन्न, विद्ध, अधवा शोफप्रस्त वा विसर्परोगसे आक्रान्त होने पर यदि अधिक अम्लका सेवन किया जाय, तो यह स्थान पक्क जाता है। इसमें आनयेय गुण रहनेके कारण कण्ठ, वक्ष और हृदयमें जलन देता है।

लवणरस—पाचक और संशोधक है। इससे रसोंका विश्लेषण होता तथा शरीरमें शिथिलता आती है। यह रस मार्ग-विशोधक सभी शरीररंशका कोमलतासाधक तथा सभी रसके विरोधी उष्ण गुणयुक्त है। अधिक मात्रामें इसका सेवन करनेसे गात्रकण्डु, मण्डलाकार व्रण, शोफ, विवर्णता, मुप और नेत्रमें व्रण, रक्तपित्त, वातरक्त और पुरुपत्वहानि होती तथा लट्टी उकार आती है।

कटुरस—पाचक, रोचक, अग्निका दीप्तिकर और संशोधक है। यह शरीरका स्थूलकारक तथा सामान्य कफ, कृमि, चिप, कुष्ठ और कण्डुनाशक माना गया है। इससे सन्धिविश्लेषण और शरीरका अवसाद होता है। यह स्तन्य, शुक्र और मेहनाशक है। यह रस अधिक मात्रामें पान करनेसे व्रम और मत्तता उत्पन्न होती, गला, तालू और आँठ सूखते हैं, बलकी हानि होती तथा कम्प, वेदना और भेद आदि रोग उत्पन्न होने हैं। हाथ, पाव, बगल और पीठमें वेदना होती है।

तिक्तरस—कचिकर और शीतिवर्द्धक है। इसमें कण्डु, कुष्ठ, मूच्छा और अरक्त शान्ति होती, स्तन्यका संशोधन होता तथा पिष्ट, सूत्र, ऊँद भेद, वमन और पोष मृग जाता है। यह रस अधिक मात्रामें सेवन करनेसे शरीर स्पन्दहीन हो जाता तथा मन्दास्त्रम्भ, हस्त-पदानिका आशेष, जिग्मूश्च, व्रम, तीक्ष्ण, भेद और विश्व-रपवन् पानना तथा मुपादेरस्य आदि रोग उत्पन्न होते हैं।

कषायरस—सप्रादक अर्थात् मूत्र, मूत्र और श्लेष्मा वाहिका मरुता है। यह काष्ठको नरता तथा ऊँदको मागना है। यह रस अधिक मात्रामें सेवन करनेसे तुष्टोग, सुप्तगोप, उद्गम्व्रान्त, वाक्पराध, तन्वास्त्रम्भ, अङ्गस्फुरण, कानमें चुन चुन शब्द तथा वायुजन और आशेष आदि होता है।

ये सब रस आपसमें मिश्र कर छत्तीस प्रकारमें विभक्त हैं। जैसे, दो रसके परस्पर योगमें पन्द्रह प्रकार, तीन रसके योगमें बाँस प्रकार, चार रसके योगसे पन्द्रह प्रकार, पाँच रसके योगसे छः प्रकार तथा प्रत्येक छः छः प्रकारका है।

द्वेषोंके विदग्ध और अधिदग्धको विवेचना कर यहाँ छत्तीस प्रकारके रस होंगे।

द्विक्र्मायमें मिलनेसे मधुररस पाँच प्रकारका, अम्ल चार प्रकारका, लवणरस तीन प्रकारका, कटुरस दो प्रकारका, तिक्तकषाय मिल कर एक प्रकारका होता है। मधुराम्ल, मधुरलवण, मधुरतिक्त, मधुरकटु, मधुरकषाय—मधुररसके पाँच भेद, अम्ललवण, अम्लकटु, अम्लतिक्त और अम्लकषाय—अम्लरसके चार भेद; लवणकटु, लवण-तिक्त, लवणकषाय—लवणरसके तीन भेद; कटुतिक्त तथा कटुरसके दो भेद तथा तिप्तकषाय—तिक्तरसका यही एक भेद है।

मधुराम्ललवण, मधुराम्लकटु, मधुराम्लतिक्त, मधुराम्लकषाय, मधुरलवणकटु, मधुरलवणतिक्त, मधुरलवणकषाय, मधुरकटुतिक्त, मधुरकटुकषाय, मधुरतिक्तकषाय, मधुररसमूलक त्रिक्र्मयोगसे यही दश प्रकारके रस होते हैं। अम्ललवणकटु, अम्ललवणतिक्त, अम्ललवणकषाय, अम्लकटुतिक्त, अम्लतिक्तकषाय ये छः रस अम्लरसमूलक

हैं। अव्ययकृतिक अव्ययकृत्याय, अव्ययतिकरूपाय तथा कृतिकरूपाय ये तीन तीन रस मित्रनेसे यही दोस प्रकारके मेद होते हैं।

चार चार मिस कर मयुररस दश प्रकारका मयूरम चार प्रकारका तथा लवणरस एक प्रकारका होता है। जैसे—मयुरामुकृतिक, मयुरामुकृत्याय, मयुरलवण तिककटु, मयुरामुतिकरूपाय, मयुरलवणकृतिक, मयुर लवणकृत्याय, मयुरलवणतिकरूपाय, यही दश प्रकार के मेद मयुररसमूत्रक हैं। मयुरलवणकृतिक मयुर लवणकृत्याय, मयुरलवणतिकरूपाय, मयुरकृतिक रूपाय, अव्ययकृतिकरूपाय, चार चार करके यही पन्द्रह प्रकारके रसमेद हुआ करते हैं।

मयुरामुलवणकृतिक, मयुरामुलवणकृत्याय, मयुर मयुरलवणतिकरूपाय, मयुरामुकृतिकरूपाय, मयुरलवण कृतिकरूपाय पाँच पाँच मिस कर यही छः प्रकारके रसमेद हुए।

छा रस मिस कर एक प्रकारका होता है, जैसे— मयुरामुलवणकृतिकरूपाय। ये छः रस धृष्य मायमें छः होते हैं। अतः कुल मिला कर छःसीस प्रकारके रस मेद हुए।

कीर् कीर् परिहत प्रथम, रस, गुण या धोषको प्रधान बतलाते हैं। उनके मतको यहाँ पर संक्षिप्त माओचना करना उचित है। उनके मतसे द्रव्य प्रधान कारण है। पहला द्रव्य व्यवस्थित तथा रस भादि भव्यवस्थित है, जैसे—मपक फलमें जिस प्रकार रसगुण मान्त्र होता है, उस प्रकार पक फलमें नहीं होता। दूसरा—द्रव्यनिष्प और रसगुण भादि अनित्य है। क्योंकि, कल्पादिकी जगह द्रव्यरस धीरे गंधविशिष्ट भयवा रस और गन्ध होन होता है। तीसरा—द्रव्यजातीयगुण नित्य भय सम्बन्ध करता है। जैसे, पार्थिव द्रव्य कमी भी भय भावको प्राप्त नहीं होता। चौथा—पञ्चेन्द्रिय द्वारा द्रव्य ही जिया जाता है, रसादि नहीं। पाँचवाँ—द्रव्य भाग्य तथा रस उसका भागित है। छठा—धीरपके गुणधर्मोंको जगह द्रव्यका ही नाम उल्लेख किया जाता है रसका नहीं। सातवाँ—धीरपके धोषधर्मोंको जगह शास्त्रमें द्रव्यको ही प्रधान बताया है। आठवाँ—

रस भादिका गुण भवस्यासापेक्ष है। जैसे, लवणद्रव्यका लवणरस, पकद्रव्यका पकरस भादि। नवाँ—द्रव्यक पर्कासे भी व्यापिको शांति होती है। इन सब कारणों से द्रव्य ही प्रधान है, न कि रस।

कीर् कीर् भाषार्थ इस स्वीकार नहीं करते। वे रसको ही प्रधान मानते हैं। उनका कहना है, कि पहले शास्त्र प्रमाण ही ग्रहणोप है। शास्त्रमें रसका विषय इस प्रकार लिखा है। रसा—प्राप्योहा जो आहार है। वह रससे परिपूर्ण है और उसीसे वे जीवनधारण करते हैं। रस— गुरुपदेशही जगह रस ही उपदेशका विषय होता है। रस—मनुमानकी जगह रसद्रव्य अनुमित होता है। षष्ठा—मृषिवचनमें भी कहा है, कि पकक सिपे कुछ मयुरलवण संमद करना चाहिये। अतएव रस ही प्रधान है। रस द्वारा ही द्रव्यको गुणसंज्ञा है।

कीर् कीर् रसे भी नहीं मानत। वे धोषको प्रधान बतलाते हैं। क्योंकि धोषके गुणसे धोषपका काम चलता है। धोष मयने बल और गुणमें रसको अतिक्रम कर कार्य कर सकता है। जिस सब रसोंसे वायुकी शांति होती है, उन सब रसोंमें यदि दृष्टता, अमृता और शीतलता गुण रहे, तो वे वायुको शांति नहीं कर सकते। जिन सब रसोंसे पित्तनाश होता है, यदि उन सब रसोंमें तीक्ष्णता उष्णता और अमृता गुण रहे तो उनसे पित्तनाश नाश नहीं हो सकता। फिर जिन सब रसों में शाप श्लेष्मा दमन हाती है, वे यदि स्नेह गौरव और शैत्यगुणयुक्त हों, तो उन सब रसोंसे श्लेष्मा-पृथि होती है। अतएव धार्य ही प्रधान है।

कीर् कीर् इस भा स्वीकार नहीं करते। वे परिपारु-को ही प्रधान मानते हैं। क्योंकि पाया हुआ पदार्थ सब भयसे तह्य पच जाता, तब तो गुण या नहीं तो भवगुण होता है। कीर् कीर् कहते हैं, कि मत्स्येक रससे परिपारु होता है। फिर कीर् मयुर मयुर और कटु रसों ही रसोंसे परिपारु होता है, ऐसा कहते हैं, किंतु यह युक्तिसंगत नहीं है। क्योंकि, द्रव्य, गुण और शास्त्र-को पर्यालोचना कर देखनेसे यही प्रतीत होता है, कि मयुरके विपाक नहीं है। अग्निमाध्य होनेसे पित्त ही विरुध हो कर मयुररसमें परिणत होता है। यदि मयुरका

विपाक स्वीकार किया जाय, तो लवणरसका तथा अन्य प्रकारका पाक होना सम्भव है। किन्तु ऐसा होता नहीं, श्लेष्मा विद्ग्ध हो कर ही लवणताको प्राप्त होती है। कोई कोई कहते हैं, मधुररस परिपाक होनेसे मधुर तथा अमुरस अम्ल ही रहता है। इस प्रकार सभी रस अविच्छत रहते हैं। किसी किसीका कहना है, कि मृदुरस वलवान् रसका अनुगामी होता है।

किन्तु परिणत लोग कार्यविशेषमें इन सबोंकी प्रधानता स्वीकार करते हैं। परन्तु पहले द्रव्यको प्रधान कहना होगा। क्योंकि वीर्यके विना पाक, रसके विना वीर्य तथा द्रव्यके विना रस नहीं हो सकता। देह और देहीकी स्थिति जिस प्रकार परस्पर सापेक्ष है, उसी प्रकार द्रव्यके विना रस तथा रसके विना भी द्रव्य उत्पन्न नहीं होता। वीर्य कहनेसे शीत, उष्ण आदि आठ प्रकारके गुण समझे जाते हैं। ये आठ प्रकारके द्रव्यको ही आश्रय किये हुए हैं। ये सब गुण निर्गुण रसमें कभी भी नहीं रह सकते। द्रव्यसे ही द्रव्य परिपाक होता है, छः रसोंमें इस प्रकार नहीं होता। अतः पच द्रव्य ही प्रधान है। रस, वीर्य और विपाक उसको आश्रय किये हुए हैं। जिस द्रव्यका जैसा रस है उसका गुण भी वैसा ही होता है।

(सुश्रुत सूत्रस्था० ४० अ० उत्तरत० ६० अ०)

चरक, चक्रदत्त, वाभट आदि वैद्यक ग्रन्थोंमें इस रसकी अच्छी तरह आलोचना की गई है। विस्तार हो जानेके भयसे यहाँ पर कुल नहीं लिखा गया।

न्यायके मतसे रसनाग्राह्य वस्तु ही रस है। यह मधुरादि भेदसे अनेक प्रकारका है। इस रसके दो भेद हैं नित्य और अनित्य। (भाषापरि०)

भोजनकालमें कौन रस पहले खाया जाता है उसका विषय भावप्रकाशमें इस प्रकार लिखा है। भोजनके समय तनमनसे पहले मधुररस, पीछे अम्ल और लवणरस और उसके बाद कटु, तिक्त और कपायरस खाना उचित है।

२ शरीरस्थ धातुविशेष। रसधातु। पर्याय—रसिका, स्वेदमाता, वपुःस्रव, चर्माग्भः चर्मसार, रक्तसार, अस्त्र-मातुका, आहार-सम्भव, तेजसम्भव, अग्निसम्भव, पड़-

रसासव, आत्रेय, असृकर, धातुघन, मूलमहापर। (हंम)

जीव जो मधुरादि रस पाता है वह परिपाक हो कर रसमें परिणत होता है। भावप्रकाशमें इसका विषय इस प्रकार लिखा। रसकी निरुक्ति और स्वरूप—

‘गत्यर्थरसधात्वर्थस्ततोऽभवदर्थ रसः।

सदैव सकृत् देह रसतीति रसः स्मृतिः ॥

सम्भक् पच्यस्य भृश्वस्य धारो निगदितो रसः।

य तु द्रव्यः सितः शीतः स्यादुः स्निग्धश्चलो भवेत् ॥”

(भाष०)

गत्यर्थबोधक रस धातुसे रस शब्द बना है। यह रस शरीरमें हमेशा विचरण करता है, इसीसे इसको रस कहते हैं। खाया हुआ पदार्थ अच्छी तरह परिपक्व हो कर जो सार भाग उत्पन्न होता है उसका नाम रस है। यह रस द्रवपदार्थ, श्वेतवर्ण, शीतल, मधुररस, स्निग्ध और गमनशील होता है।

रसका अवस्थितिस्थान—रसके सारे शरीरमें सञ्चालन करने पर भी हृदय ही इसका विशेष स्थान है। क्योंकि यह रस समान वायु द्वारा पहले हृदयमें ही लाया जाता है।

रसका कार्य—यह रस हृदयगत होनेसे वहाँकी रस वाहिनी धमनीमें जा कर सभी धातुको पोषण करता है। पीछे वह अपने गुण द्वारा सारे शरीरमें फैल जाता है। जठराग्निके मन्द होनेसे यदि खाया हुआ पदार्थ न पचे और उससे कटु वा अमुरस उत्पन्न हो, तो वह रस विषके समान काम करता है जिससे अनेक रोग उत्पन्न होते हैं।

परिपक्व आदरके सार अंशका रस और अवशिष्ट प्रहणी नाड़ीस्थ द्रवरूपी मलभागका जलीय अंश जब मूत्रवाहिनी शिरा द्वारा वस्त्याशयमें लाया जाता तब उसे मूत्र तथा अवशिष्ट जो मलभाग रह जाता है उसे विष्टा कहते हैं। यह विष्टा समान वायु द्वारा चालित हो कर मलाशयमें जा कर उहरती है।

खाया हुआ रस समान वायु द्वारा चालित हो कर रसवाहिनी धमनीसे स्थायिरसके अवस्थितिस्थान हृदय में जाता है और वहाँ स्थायिरसके साथ मिल जाता है।

रस तीन प्रकारमें विभक्त है, स्थूलभाग, सूक्ष्मभाग और मज्जमाग । इनमेंसे स्थूलभाग अपने नाथको सबलम्बन करता है, सूक्ष्मभाग परधातुका पोषण करता है और मज्जमाग उसका मज्जल धारण करता है । अर्थात् रसके परिपक्व होनेसे उसका स्थूलभाग रस हो रहता है, सूक्ष्म भाग परधातुके रक्तका पोषण करता है और मज्जमाग कफरूपमें परिपक्व होता है ।

यह रस तीन हजार पन्द्रह कला करके एक एक धातु में रहता है । पौस कलाका एक मुहूर्त अर्थात् दो बरत होता है । इस पर जोड़का मत है, कि काया हुआ रस पाँच रात और डेढ़ वर्षमें रसादि मज्जा पर्यन्त धातुमेंसे एक एकमें परिपक्व होता है ।

यह रस फिर स्थूल और सूक्ष्म इन दो भागोंमें विभक्त है । इनमेंसे स्थूलभाग शरीरामम्भक स्थायिरसके साथ मिश्र कर बैसा हो हो जाता है । पीछे यह सर्व-शरीर व्यापी ध्यान वायु द्वारा चाञ्चित हो कर धमनापधसे जाता और पोषण स्नेहन तथा ऋतरानिकी उष्माञ्जित रतापनिवारण भादि गुण द्वाया सारे शरीरका पोषण करता है । सूक्ष्मभाग प्राणवायु द्वारा प्रेरित हो कर धमनीपधसे शरीराम्भक रसके स्थान यक्ष्ण द्वीधामें जाता और वहाँ स्थायी रसमें मिलता है । इसके बाद उस स्थायीरसके तैल द्वारा फिरसे परिपक्व हो कर पाँच दिन पाँच रात और डेढ़ वर्षमें रस धातुमें परिपक्व होता है ।

माहार जातरस एक मास ती बरतक बाद शुक्र और भातवक्रूपमें परिपक्व होता है । पहले 'रसामृतं शोणितं जातं' रसक रक्तकी उत्पत्तिके बाद रससे हो मांसको, मांस उत्पत्तिके बाद रससे मूत्री, मेढरुत्पत्तिके बाद रससे हो अस्थिकी, अस्थिक बाद रससे मज्जा तथा मज्जाके बाद उस रससे शुक्रकी उत्पत्ति होती है ।

रस शरीरमें ऽभ्रसम्भानवत्, अभिसम्भानवत् (अग्निशिक्षा प्रवाहकी तरह) और ऋससम्भानवत् इन तीन प्रकारसे शरीरमें सञ्चरण करता है ।

इसका अभिप्राय यह है, कि प्राणी तीक्ष्णान्नि, मध्याग्नि और मन्दाग्निविशिष्ट होते हैं । अतएव यह तीक्ष्णान्निविशिष्ट व्यक्तियोंके शरीरमें शब्द-सम्भान-

वत् तीव्र गतिसे मध्यमान्निविशिष्ट व्यक्तियोंके शरीर में अग्निशिक्षा-प्रवाहकी तरह मध्य वेगसे या । मन्दाग्नि-विशिष्ट व्यक्तिके शरीरमें ऋसप्रवाहकी तरह सूक्ष्मवेगसे सञ्चरण करता है । अतएव रससे एक महानिमें जो शुक्र बनता है उसे मध्यवेगके स्थानमें जानना होगा । अग्नी यहो स्थिर हुआ, कि तीक्ष्णान्निविशिष्ट व्यक्तिके एक महानिसे कुछ कममें तथा मन्दाग्निविशिष्ट व्यक्तिके एक महानिसे कुछ अधिक समयमें शुक्र उत्पन्न होता है ।

(भावमन्त्र)

सुधुतमें इसका विषय यो जिज्ञा है—शोतोष्ण मेदसे वा प्रकारका वा शोतोष्ण स्निग्धादि मेदसे जात प्रकारका शोथेयुक्त मधुरादि छः प्रकारके रससमन्वित तथा पेयादि मेदसे चार प्रकारका पाञ्चभौतिक माहाद्रव्य जब अच्छी तरह परिपक्व होता तब उससे तैमोमूल बहुत सूक्ष्म जो सार पदार्थ उत्पन्न होता है, उसका नाम रस है ।

रसका आधार और क्रिया—रसका माहारजात रसका अस्थितिरस्थान इत्ये है । यह ऋतुपूर्वगामी १०, अयोगामी १० और तिर्यकगामी ४ इन १४ धमनियोंमें प्रवेश कर अन्नप मासमें अग्निर्बचनीय कर्म द्वारा रात दिन सारे शरीरको तर्पण, यक्ष न, धारण, पापन और शोषण क्रिया सम्पन्न करता है । यह रस जो सभी स्थानोंमें गमनागमन करता है, क्षयवृद्धिरूप विवृति द्वारा हो उस का अनुभव किया जाता है । प्रय्यानुयायी रस जब शरीर की स्नेहन, शोषण, तर्पण और धारणादि क्रिया सम्पादन करता है, तब वह स्निग्धकारिता गुणविशिष्ट है, इस क्रिये वह सीम्य है ।

रस सञ्जापिष्ययुक्त माहारोप रस यक्ष्णकीधामें जा कर लान हो जाता है अर्थात् रसधातु शरीरस्थ पियुक्त तक्ष (रक्षक नामक पित्त) द्वारा रञ्ज हो कर रस क्लृप्ताने जाता है । रस शब्द रक्षो ।

रस धातुका अर्थ जाना है । यह रात दिन चलता रहता है रससे इसकी रस कहल है । यह रस जाये हुए पदार्थसे एक हा दिनमें उत्पन्न हो कर ३०१५ कला अर्थात् पाँच दिनसे कुछ अधिक समयमें एक एक धातुमें

रहता है और २५ दिन ७५ कलाके बाद एक पुष्पके शुक्र और स्त्रीके आर्चावरूपमें परिणत होता है।

उक्त रस शब्द, अर्चि और जलकी गतिकी तरह अत्यन्त सूक्ष्मरूपमें सारे शरीरमें सञ्चरण करता है अर्थात् शब्दकी तरह तिर्यक् भावमें, अर्चिकी तरह ऊपर और जलकी तरह नीचेकी ओर जाता है।

रसधातु जब एक महीनेमें शुक्ररूपमें परिणत होता है, तब वाजीकरणदि औषधका सेवन करनेसे वह जल्दी क्यों नहीं गिरता ? इसका उत्तर यही है, कि जिन सब औषधोंमें वाजीकरणदि कार्य होता है, उन सब औषधोंका यदि उपयुक्त नियमसे प्रयोग किया जाय, तो वे अपने बल और गुणकी उत्कर्षताके कारण विरेचक औषधकी तरह काम करके शुक्रको बहुत जल्द गिरा देते हैं।

रसधातु जब एक महीनेमें शुक्र बनता है, तब बाल्यावस्थामें जो उसका कोई लक्षण नहीं दिखाई देता, सो क्यों ? इसका उत्तर यह है, कि जिस प्रकार पुष्पकी कलीमें गंध रहती है वा नहीं इसका अनुभव नहीं होता, पर जब वही कली खिल कर पुष्पके आकारमें परिणत होती है, तब वह गंध चारों ओर फैलने लगती है, उसी प्रकार बाल्यावस्थामें शुक्र प्रच्छन्नभावमें रहता है। सूक्ष्मताके कारण उसका कोई चिह्न दिखाई नहीं देता। पीछे वयोवृद्धिके साथ साथ उसका लक्षण दिखाई देने लगता है।

रसधातु सभी प्रकारके धातुओंका पोषक होने पर भी वह वृद्ध मनुष्यके शरीरमें उतना हितसाधक नहीं होता अर्थात् वह रसधातु उनके रक्तादि अन्यान्य धातुओंका पोषण कार्य न करके केवल जीवनधारणमें सहायता करता है।

देहमें रसधातुकी अधिकता होनेसे हृदयोत्फलेद, वमनेच्छा और प्रसेक (लालस्राव) होता है। शरीरका रसधातु क्षय होनेसे हृदयवेदना, हृत्कम्प, हृदयकी शून्यता और तुण्डा उन्पन्न होती है।

रसधातुके दूषित होनेसे भोजनमें अनिच्छा, अर्शुचि, अपाक, अङ्गमर्द, उवर, हृल्लास (वमनेच्छा), परिवृत्त, भोजनकी तरह तृप्तिबोध, अङ्गकी गुण्यता, हृद्रोग, पाण्डु

रोगके सभी स्रोतोंका अवरोध, कृशता, सुप्तवैरस्य, अवसन्नता और अकालमें बलिपतित तथा दृष्टिहीनता आदि लक्षण दिखाई देते हैं। (पुश्रुत)

३ परब्रह्म । वह परब्रह्मकी एकमात्र रसशब्दवाच्य है। ४ विष, जहर । ५ वीर्य । ६ गुण । ७ राग । ८ कोई तरल पदार्थ । ९ गन्धरस । १० जल, पानी । ११ पारद, पारा । पारदकी श्रेष्ठ रस कहा है । पारद दोषो । १२ शिलारस । १३ हिंगुल, शिगरफ । १४ शृङ्गारदि दश प्रकारका स्थायिभाव । शृङ्गार, हास्य, करुण, रीद्र, वीर, भयानक, वीभत्स और अद्भुत ये आठ रस हैं। शान्तको कोई कोई रस नहीं कहते । इन आठ रसोंमें यथाक्रम रति, उदसाह, शोक, भय, चिन्मय, हास्य, जुगुप्सा और क्रोध ये सब स्थायिभाव उपस्थित होते हैं।

साहित्यदर्पणमें शृङ्गार, हास्य, करुण, रीद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्भुत और शान्त ये नौ प्रकारके रस कहे गये हैं। (साहित्यदर्पण ३१२०८)

रत्नकोषमें उक्त नौ प्रकारके रसोंको ही नाट्यरस कहा है। (रत्नकोष)

अमरटीकामें दश प्रकारके रसोंका उल्लेख देखनेमें आता है, जैसे— शृङ्गार, हास्य, करुण, अद्भुत, हास्य, भयानक, वीभत्स, रीद्र, वात्सल्य और शान्त।

शृङ्गारदि आठ प्रकारका रस सर्ववादिसम्भन्धिन्तु शान्त और वात्सल्यरसमें सर्वोकी एक राय नहीं है। एक एक रसमें एक एक स्थायिभाव उपस्थित होता है। इसके सिवा उन सब रसोंके आलम्बन, विभाव और उदीपन विभाव आदि हुआ करते हैं।

(साहित्यदर्पण ३१३६)

विभाव, अनुभाव और सञ्चारिभाव द्वारा प्रकाशित रत्यादि जो स्थायी भाव है उसे रस कहते हैं। इन सब भावों द्वारा रस उत्पन्न होता है। जिस प्रकार दूधमें दूसरी वस्तु मिलानेसे वह दही हो जाता है उसी प्रकार विभावादि द्वारा रत्यादि स्थायिभाव रसरूपमें परिणत होता है।

सत्त्वगुणके उद्रेकके कारण अजण्ड स्वरूपानन्द द्वारा चिन्मयस्वरूप तथा रसास्वादनकालमें अन्य

ज्ञानके असङ्गानके कारण प्रज्ञासाध सहोदर
अर्थात् प्रज्ञानात्मिकात्ममें जिस प्रकार अभ्युपान रहित हो
प्रज्ञानम्में विमोद होता है उसी प्रकार रसज्ञानमें भी
अभ्य विपर्यय ज्ञानशून्य हो केवल रसज्ञानमें निमग्न
होता है ।

अमत्कारित्वको ही रसका सार कहा है । कवचादि
रसमें जो अत्यन्त सुख मालूम होता है, मनस्विषयोंका
अनुभव ही उसका प्रमाण है ।

रसोंमें शृङ्गाररस प्रथम है । शृङ्गाररसक लक्षण
साहित्यवर्षणमें इस प्रकार कहे हैं,—ममयोज्ञेय
अर्थात् कामोद्रेकसे रस रसको उत्पत्ति होती है । इस
रसका नायक उच्चम प्रकृतिवाला तथा वैश्या, परोक्षा
और अनुपगमिणी स्त्री मित्र नायिका होगी । रसमें
आलम्बन अर्थात् तदाक्य विभाग होगा । वृष्टिणादि
नायक (वृष्टि, अनुकूल, घृष्ट और शठ) धन्य, धन्य, न
समरस और कोचिच्च फूजनादि उद्योगन माय तथा
घृष्टिषेय और कदासादि अनुभव होगा । इस रसमें
उपदा, मरण, आकस्म्य और श्रुणुत्साको छोड़ कर अन्य
भाष अविचार्यमाय होगी । इस रसका स्थायिमाय
रति है । इसका रंग सांभला है तथा अविद्याकीवैषया
विशुद्ध है ।

यह ही प्रकारका है—विमलम्भाक्य और सम्भोगाक्य ।
जहाँ नायक और नायिकाका अनुपगम आपसमें लुब्धक
जाता, फिर भी अमिच्छाव पूर नहीं देखा है अर्थात्
नायक या नायिकाकी इच्छा पूरी नहीं होती बहो विप
जम्भाक्य शृङ्गार होगा । (गरील्यद० ११२११-१२)

इस विमलम्भाक्य शृङ्गारमें पहले नायकका पूर्वराग
हूमा करता है । छिपके नायक या नायिकाके परस्पर
दर्शन या गुणमिषमपसे उन्हे पहले अनुपगम उत्पन्न होता
है । पीछे उनकी असातिष्ठ अर्थात् नायक या नायिका
का समिजन नहीं होनेसे जो अवस्था होती है उसे
पूर्वराग कहते हैं । वृत्, वन्दो या सन्धीक मुकसे भवय
तथा एन्द्रास, चिह्न, स्वप्न या साक्षात् रूपमें दर्शन
होता है ।

यह पृथराग फिर मान, प्रवास, कथन और कथना
रमकक मइसे चार प्रकारका है । (गरील्यद० ११२१३-१४)

नायक और नायिकाके पूर्वरागके बाद अमिच्छाव,
चिन्ता, स्मृति, गुणकथन, उद्वेग, सम्मन्नाय, उन्माद,
व्याधि, अकृता और मरण ये वृत्त प्रकारकी अननुपगम
व्यस्थित है ।

परस्पर समिजनकी इच्छाका नाम अमिच्छाव, पर
स्पर समागमके उपाय-बुद्धिनेका नाम चिन्ता, एक दूसरेके
गुणादि स्मरण और कथन सन्धीय वा निज्जीवके प्रति-
ज्ञान नहीं रत्नका नाम उन्माद, चिन्तके प्रमवशतः अकस्म्य
में वाक्यप्रयोगका नाम प्रकाय, [सर्वथा दीर्घनिश्चय,
पाप्युता और इच्छाका नाम व्याधि, अनु और मनकी
होन केच्छाका नाम अकृता है । ये ही भी प्रकारकी
कामवशा घणनीय हैं । शेष इयाम रसका अिच्छेत् होता
है अर्थात् मृत्यु होती है, इस कारण उसका वर्णन करना
उचित नहीं । नायक और नायिकाका अमिच्छाव यदि
शोभ हो पूर्ण होने पर हो, तो मृतमाय कह कर वर्णन
किया जा सकता है, किन्तु मृत्यु वर्णन कभी भी न
करें, नहीं तो रसमङ्ग होगा । (गरील्यद० ११२१०)

यह पूर्वराग फिर नीलो, कुसुम्भ और मञ्जिष्ठाके
भेदसे तीन प्रकारका है । जहाँ मनीगन प्रेम अत्यन्त
बढ़ कर भी नायको प्राप्त नहीं होता उसे नीलो राग,
जहाँ प्रेम अथगत हो कर शोभा पाता है उसे कुसुम्भ
राग और जहाँ प्रेम अथगत न हो कर बहुत शोभा पाता
है वहाँ उसे मञ्जिष्ठा राग कहते हैं ।

(गरील्यद० ११२१०)

जहाँ नायक और नायिका, दोनोंसे एकका वैहास हो
जाय तथा फिरसे इनके आपसमें मित्रिणी पर यदि नायक
या नायिकामेंसे कोई विमवायमान हो, तो कथयत्रिम
सम्भाक्य शृङ्गाररस होता है । (गरील्यद० ११२१४)

नायक और नायिकामें अत्यन्त प्रेम हो कर दर्शन
और स्पर्शनादि अर्थात् पुष्पन परिरम्भणादि प्राप्त होनेसे
उसको सम्भोग शृङ्गार कहते हैं ।

विमलम्भाक्य शृङ्गारक विना सम्भोगकी पुष्टि नहीं
होती । जिस प्रकार वलादि रंगनेक बाद उसे यदि पुला
रंगमें डुबो दिया जाय, तो उसका रंग जिस प्रकार बढ़ता
हो जाता है उसी प्रकार विमलम्भाक्य शृङ्गारके बाद
सम्भोगशृङ्गार बढ़ता है । (गरील्यद० ११२१०)

विकृत आकार, विकृत वाष्प, विकृतवेश और विकृत चेष्टादि द्वारा हास्यरसकी उत्पत्ति होती है। इस रसका स्थायिभाव हास्य, देवता प्रमथ और वर्ण श्वेत है। लोगों-क इसका विकृत आकार, विकृत चेष्टा और विकृत वाक्यादि देख कर हंसी उड़ानेसे वह इसका आलम्बन विभाग तथा उसमें चेष्टा अर्थात् विकृत आकार, विकृत रूप और विकृत वेगादि जो चेष्टा होगी वह उदीपन विभाग तथा अक्षिसङ्कोच और वदनस्मेरतादि अनुभाव, निद्रा, आलस्य और अवहित्यादि इसका व्यभिचारिभाव होगा। इसी प्रकार रौद्रमें क्रोध, वीरमें उत्साह, भयानकमें भय, वीभत्समें जुगुप्सा, अद्भुतमें विस्मय, शान्तरसमें निर्वेद और जम स्थायिभाव हुआ करता है।

१५ किसी पदार्थका सार, तत्त्व। १६ नौकी सध्या। १७ सुखका अनुभव, आनन्द। १८ प्रेम, मुहूर्त्त। १९ विहार, काम-क्रीडा। २० उमङ्ग, जोश। २१ गुण, सिफत। २२ किसी विषयका आनन्द। २३ वन-स्पतियों या फलों आदिमें-का वह जलीय अंग जो उन्हें कूटने, दवाने या निचोड़ने आदिसे निकलता है। २४ शोरवा, जूस। २५ वह पानी जिसमें मोटा या चीनी घुली हुई हो, गरवत। २६ वृक्षका निर्यास। २७ लासा, लुआव। २८ घोड़ों और हाथियोंका एक रोग। इसमें उनके पैरोंमेंसे जहरीला पानी बहता है। २९ वैद्यकमें धातुओंको फ्रंक कर तैयार किया हुआ भस्म। इसका व्यवहार औषधके रूपमें होता है। ३० केशवके अनुसार रगण और सगण। ३१ बोल नामक गन्धद्रव्य। ३२ एक प्रकारकी भेड। यह गिलगितसे उत्तर और पामीरमें मिलती है। ३३ भाँति, तरह। ३४ मनकी तरंग, मौज।

रसक (स० पु०) रस-संज्ञाया कन् । १ निष्कवाथमास, मासका रसा। (क्ली०) २ स्फटिकारी, फिटकरी। ३ खपरितुत्थक, खपरिया।

रसककारवेल्लक (स० पु०) पतला खपरिया, संगवसरी।

रसक दडुर (स० पु०) दलदार मोटा खपरिया या संगवसरी।

रसकपूर् (स० क्ली०) सफेद रंगकी एक प्रकारकी प्रसिद्ध उपधातु जिसका व्यवहार औषधमें होता है, रस-

कपूर्। यह प्रायः इंगुरके समान होता है इसीलिये इसको कुछ लोग गिंगरफ भी कहते हैं। एक और प्रकारका रसकपूर् होता है जो वास्तवमें पारेकी सफेद भस्म होती है और इसका व्यवहार प्रायः युनानी चिकित्सामें होता है। वैद्यकमें इसका विषय जो वर्णित है वह इस प्रकार है,—

पाशुलवण और सैन्धवलवणके साथ निर्मल पारेको थूहरके दूधमें घोंट कर लोहेके बरतनमें रखे और खडिसे मुंह बंद कर दे। पीछे उसे लवण पूर्णभाण्डमें रख कर एक दिन तेज आंच देनेसे कुन्द वा इन्दुके सदृश भस्म सफेद हो जाता है। रसमञ्जरीकारने इसे रसकपूर् तथा चन्द्रिकाकारने श्वेतभस्म कहा है। यह रसकपूर् लवणके साथ ४ रत्ती भर सेवन करनेसे ऊर्ध्वा-विरेचन होता है। इसका सेवन कर बार बार जलपान करना उचित है। (रत्नेन्द्रसार०)

भावप्रकाशके मतसे इसका शोधन प्रणाली—पारेको सक्षिप्त शोधन कर गेरूमट्टो, ईंट, खड़ि, फिटकरी, सैन्धवलवण, क्षारलवण और बरतन रंगानेकी मिट्टी प्रत्येक वस्तु पारेके बराबर ले कर अच्छी तरह चूर्ण करे। पीछे उसे कपड़े में छान कर पारेके साथ एक पहर तक घोंटे। अनन्तर एक थालीमें रख कर दूसरी थाली ऊपरसे ढंक दे। फिर कपड़े और मिट्टीसे दोनों थालीका मुंह बंद कर सुखा ले और फिर उसी प्रकार लेप चढ़ावे। इसके बाद उसमें लगातार चार दिन तक आंच देते रहे। पीछे ठंडा होने पर थालीका मुंह धीरे धीरे खोल कर देखे, कि कपूरकी तरह निर्मल रस हुआ है वा नहीं। अगर हो गया हो, तो उसीको शुद्धरस कपूर जानना चाहिये। यह कपूर बहुत गुणदायक है। देवकुंसुम, चन्दन, कस्तूरी और कुंकुमके साथ जो व्यक्ति इस रसका सेवन करता है, उसका फिरंगरोग बहुत जल्द दूर हो जाता है। इससे अग्निदीप्ति, शरीरकी पुष्टि और वलवीर्यकी वृद्धि होती तथा वह सौ खोगमनमें समर्थ होता है। (भावप्र०)

रसकर्मन् (स० क्ली०) पारेकी सहायतासे रस आदि तैयार करनेकी क्रिया।

रसकल्पना (सं० स्त्री०) द्वाहा बनानेके समय पारेकी उचित रूपमें जाना ।

रसकल्पना (सं० स्त्री०) वैद्यक रसप्रथमेत् ।

रसकल्पनापीयत (सं० स्त्री०) प्रतिकर्मविधेय । भविष्योत्तर पुराणक २२वें अध्यायमें तथा मत्स्यपुराणके ३२वें अध्यायमें इसका विवरण लिखा है ।

रसका (सं० स्त्री०) एक प्रकारका सुद्रु कुष्ठरोग ।

रसकुल्या (सं० स्त्री०) पुराणानुसार कुशाक्षीयकी एक नदी का नाम ।

रसकेतु (सं० पु०) राजद्रुवमेत् ।

रसकेलि (सं० स्त्री०) १ विहार, श्रद्धा । २ हंसो उग्र, विलुगो ।

रसकेशर (सं० स्त्री०) कर्पूर, कपूर ।

रसकेशर (सं० पु०) भोजविशेष । प्रस्तुत प्रणाली—पारा १ तोळा गंधक १ तोळा, खींग ५ तोळा और विष ३ मासा परब्रह्म कर शंकाके पूर्णमें मर्दन करे और उड़द भरका गोली बनाये । सौंड था गुड़के साथ इस भोजक का संवन करनेसे सब प्रकारकी ब्रधचि, आमवात, विस्तृ चिका, क्षामिमाश्रय और मज्जरेपेरोग जाता रहता है ।

रसकोमल (सं० स्त्री०) क्षमिन्न पदार्थविशेष ।

रसक्रिया (सं० स्त्री०) द्रव्यका पनोमूल सारकरण्य, शरीर पर रसोपच मर्दन या स्थेदवान ।

रसकोरा (हि० पु०) रसगुण नामकी मिठाई ।

रसकपूर (सं० पु०) कपरिया, स गषसरी ।

रसबान—विहानोके रहनेवासे एक कवि । इनका नाम सैयद इम्राहीम था । १६३० ई०में इनका जन्म हुआ था । ये थे तो मुसलमान पर मगधानमें इनको अनुपम मलि घो । ये शून्यायनमें रह कर मगधद्रुगुणगान किया करते थे । मकननाममें इनकी कथा लिखी हुई है ।

रसबीर (हि० स्त्री०) बानोके शर्बत भणपा ऊपके रसमें पकाये हुए चावल, मोठा भात ।

रसगतजर (सं० पु०) वैद्यके अनुसार शरीरकी रस पातु में समाया हुआ अचर । कहते हैं, कि जर अधिक दिनोंका हो जानेसे शरीरक रस तक पहुंच जाता है और उससे ग्लानि, पनत और ब्रधचि आदि होती है ।

रसगन्ध (सं० स्त्री०) १ बोन नामक गन्धद्रव्य । (पु०) २ गन्धरस, रसोजन ।

रसगन्धक (सं० पु०) रसगन्ध लार्थे-कन् । १ गन्धरस, रसोत् । २ गंधक । ३ हिगुल शिगरक ।

रसगन्धकमम्भूत (सं० स्त्री०) हिगुल, शिगरक ।

रसगर्म (सं० स्त्री०) १ रसाजन, रसोत् । २ हिगुल, शिगरक ।

रसगुग्गुल (सं० स्त्री०) भोजमेत् । प्रस्तुत प्रणाली—शोषित पारा १०० रत्ता बानो ३० रत्तो, शोषित महि पाक्ष गुग्गुल ४०० रत्तो, पी १०० रत्तो, इन्हें पातनयन्त्रसे अच्छी तरह मर्दन कर ९० गोळा बनाये । इसक सेवनका नियम पूर्णके मेरुवरसकी तरह है अर्थात् प्रथम तीन दिन तीन तीन करके और चौथे दिनसे एक एक करके सेवन करे । १४ दिनमें कुछ भोजन खे हो जायगा । जानका नियम इस प्रकार है—पहले दिन पारांग, दूसरे दिन माथा और उसक बाद तिहारि परिमाणसे जाना उचित है । गुड़ मिठा हुआ अन्न और मसूरकी दालका जूस बहुत कामदायक है । तरकारोंमें पुननका, परब्रह्मका पत्ता, तिलपत्ती, गोबरक और पुटपत्तीको पीमें मूल कर बाने क्या है । कृष्ण खाता निविष्ट है । उसके बच्चे खोती कामम लाये । अन्यान्य मसासेके बच्चे कृष्ण, मंगरेके, होंग और औरैका व्यहार करना होगा । इसमें शैरक रसोक्त समी नियम प्रतिपाद्य है । रसगुग्गुलका संवन करनेसे कुष्ठ और उपर्यंत आदि नाना प्रकारके रोग नूर हो कर शूद्रका सावण्य और भायुकी वृद्धि होती है ।

रसका पूम—शुद्ध रस रंगिका मसम, हरेका मसम, कोमल केसे, फुलका मसम सुपातोका मसम मस्येक १ तोळा, हिगुल हरिताक, गन्धक, वृत्तिया, पत्रकाष्ठ, सरल काष्ठ, श्वेत चन्दन, रक्तचन्दन, शैयहाक, नागेश्वर काष्ठ मस्येक १ माशा संग्रह करे । इन्हें परब्रह्म पूर्ण कर छोड़ेके बरतनमें छोड़ेके हत्येसे अमरकक रस, गुग्गुलो परब्रह्म रस, पुराने गुग्गु और बोके साथ जोड़े और बाधमें छः गोली बनाये । इसका पूमा लेना होता है । उसका नियम यह है, कि रोगीक मु ६, नाक और कानकी छोड़ कर और सध मज्ज संकेत कपड़ेसे ढँक द । किसो बर तनमें निपुंम भाग रख उसमें एक गोळी र । भागका

वरतन ऐसे स्थानमें रखे जिससे धूआ सारे शरीरमें लग सके। अधिक पीडा दिखाई देनेसे २ अथवा ४ गोली तकका धूआ लेना उचित है। इसमें पसीना निकल कर रोगकी शान्ति होती है। धूआ ले चुकनेके बाद पानोंको सफेद कपड़े से पोंछ डाले। तीन दिन इस प्रकार करते रहनेसे रोग आरोग्य होता है। किन्तु एक मास सुषुप्त्य सेवन करके बड़ी मावधानीसे रहना होगा। इसमें साग, खट्टा, दही, गुड, अन्न और खीर आदि खाना मना है। तीन दिनोंके बाद गरम जलमें स्नान करना कर्त्तव्य है। इस क्रियासे कुष्ठ और उपदंश आदि रोग शान्त होते हैं।

(भैषज्यर० उपदशाधि०)

इसका प्रलेप—मोरचा लगे हुए लोहेके वरतनमें लौह-दण्ड द्वारा त्रिपतिन्दुकको अच्छी तरह घोंटे। पीछे यथा-क्रम थूहरका मूल, स्वर्णमाक्षिक, तृतिया और पारा इन्हें एकत्र घिस कर लिङ्गमें प्रलेप दे। यह प्रलेप सूखने पर फिर उसके ऊपर प्रलेप दे। प्रलेपको कभी भी उखाड़ कर न फेंके। इस प्रकार बराबर औषधका सेवन करनेसे रोग बहुत जल्द आरोग्य होता है।

रसगुडिका (सं० खी०) औषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—रसकपूर एक भाग, विडङ्ग, मिर्च और अवरक प्रत्येक तीन तीन होगा। चनपालङ्गके रसमें घोंट कर प्रतिदिन रक्तो भर सेवन करनेसे गुहारो आरोग्य होता तथा अग्निकी वृद्धि होती है। (भैषज्यरत्ना० अर्थ०)

रसगुला (हि० पु०) एक प्रकारकी छेदेकी मिठाई। यह गुलाब जामुनके समान गोल होती और शीर्षमें पड़ी हुई होती है।

रसग्रह (सं० लि०) १ मर्मग्रह। (खी०) २ जिह्वा, जीभ।

रसग्राम—बंगालके अन्तर्गत एक प्राचीन गांव।

(त्र० ख० ७३६)

रसग्राहक (सं० लि०) रसाखादग्रहण शक्तिसम्पन्न।

रसघन (सं० लि०) १ पर्याप्त रसविशिष्ट, जो बहुत अधिक खादिष्ट हो। (पु०) २ आनन्दघन, श्रीकृष्णचन्द्र।

रसघ्न (सं० पु०) रसा रसस्य दोषावहशक्तिं हन्तीति हन-टक्। टट्टण, सुहागा।

रसचन्द्रिकावटा (सं० खी०) औषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—भागका बीया, धतूरेका बीया, कंटकारी, हिजल

और वृद्धदाहका बीया, पारा और गंधक एकत्र कर अर्कके रसमें मर्दन करना होगा। पीछे उसकी उड़द भरकी गोली बनानो होगी। इसका अनुपान जल है। सबेरे इस औषधका सेवन करना होता है। इसका सेवन करनेसे शिरोरोग, आमवात, मन्यास्तम्भ और गलग्रहरोग अति शीघ्र प्रशमित होता है।

रसछत्रा (हि० पु०) ऊषका रस छाननेकी चलनी।

रसज (सं० पु०) रसाज्जात जन-ड। १ गुड। २ सुरा-बीज, शरावकी तलछट। ३ रक्त। (सुश्रुत सूत्रस्था० १४ अ०)। (लि०) ४ रसजात, रससे उत्पन्न।

रसजात (सं० खी०) रसांजन, रसांत।

रसज (सं० लि०) रसा जानाति ज्ञा-क। १ रसवेत्ता, रस जाननेवाला। २ रसायनी। ३ काव्य-मर्मज्ञ। ४ निपुण, कुशल।

रसज्ञता (सं० खी०) रसज्ञस्य भावः तल-दाप। रसज्ञका भाव या धर्म।

रसज्ञा (सं० खी०) १ गंगा। २ जिह्वा, जीभ।

रसज्ञान (सं० खी०) रसस्य ज्ञानं। रसबोध।

रसज्येष्ठ (सं० पु०) रसेषु ज्येष्ठः। १ मधुर या मीठा रस। २ शृङ्गाररस।

रसबली (हि० खी०) एक प्रकारका गन्ना जिसका रंग नीलापन लिये हरा होता है और जो प्रायः बीजापुर और इसके आस-पास बहुत होता है। इसे रसबली भी कहते हैं।

रसड़ा—१ युक्तप्रदेशके वलिया जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २५° ४६' से २६° ११' उ० तथा देशा० ८३° ३८' से ८४° ३' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४३३ वर्गमील और जनसंख्या तीन लाखके करीब है। इसमें दो शहर और ६६७ ग्राम लगते हैं। यह तहसील उत्तर गोगरासे ले कर दक्षिण छोटी सरयू तक फैली हुई है। यहां ईल और घान जिले भरसे अच्छा उपजता है।

२ उक्त तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० २५° ५१' उ० तथा देशा० ८३° ५२' पू०के मध्य विस्तृत है। जनसंख्या दश हजारके लगभग है। यहां वाणिज्य जोरों चलता है। शहरमें ऋद्धियोंसे घिरा मात्र वात्रा नामक एक तालाब है। तालाबके किनारे बहुतसे मट्टीके टीले हैं जिन्हें

लोग सतीता कीर्तिस्तम्भ बतलाते हैं। शहरमें १८५६ ई०में म्युसिक्पनिडी स्थापित हुए हैं। यहाँसे इधर घमड़े और कार्बोनेट माथ सोडेको रफ्तानी तथा दूध, कपड़े, जोड़े भीर मसालेको कामदानी होतो हैं। शहरमें एक अस्पताल भीर एक स्कूल है।

रसतगमाळा (सं० स्त्री०) पाँच तगमाबाभों या महस्वीमेंसे चौथे तस्व अक्षकी तगमाळा।

रसतम (सं० पु०) उत्कृष्ट रस, सार रस।

रसता (सं० स्त्री०) रसस्य भाषा तद्ध राप्। रसका भाष या घम।

रसतासेध्वर (सं० पु०) घेराकमें एक प्रकारका रस जिम का व्यवहार कुछ रोगमें होता है। इसके बनानेका षटको—शंफ, करंज, इलकी मिळाये थोड़ाभाद, गद्द पूरना, गंधक, पाटे, मरिच और बिड ग इन सब द्रव्योंको एकत्र कर गोमूत्रमें पाक करे। होयके बजाबसके अनुसार इसको माळा स्थिर करनी होती है। यह भीषण मनुके साथ सेवन करनेसे कण्ट विषयिका और कुछ मति शीम बिगुलित होता है। (संस्कृतकोश० पुत्रोपधि०)

रसतेजस (सं० स्त्री०) रसान् रसजस्य वा तेजो यस्य। रक्त, मज्ज।

रसत्याग (सं० पु०) दूध, दही, घी, तेल मोठा पकवान् भादि स्नादिष पदार्थोंका त्याग करना जो एक प्रकारका नियम या आचार माना जाता है।

रसत्व (सं० ब्रह्म०) रसका भाष या घर्म, रसता।

रसद् (सं० स्त्री०) १ मानसदापक, सुखद्। २ स्नादिष, मजेदार। (पु०) ३ चिकित्सा करनेवाला, एलाज करनेवाला व्यक्ति।

रसद् (जा० स्त्री०) १ यह जो बंटने पर हिस्सेके अनुसार मिसे, बाँट। २ कथा धनार जो पक्या न गया हो, मोहन बनानेसे ठिये मद्य भादि। ३ सेनाका बह बाध पदार्थ जो उसके साथ रहना है।

रसद् (सं० स्त्री०) श्वेतनिर्गुणही, संमाल्।

रसद् (द्वि० वि०) १ जिसमें किसी प्रकारका रस हो, रसवाला। २ स्नादिष, मजेदार।

रसद् (सं० स्त्री०) रस दामवति इति रस यिच् प्लुत् राप् अत् इत्। पुष्पकंक्षु, पीड़ा गन्ना। (गम्भी०)

रसदायिन् (सं० पु०) रसं द्राययतीनि मु यिच् यिति। गजुर जमीर, मोठा जंजीरो मोद्।

रसदातु (सं० पु०) रसात्सको घातुः। १ पारद, पारा। २ शरीरको सात घातुभोंमेंसे रस नामक घातु।

धियो विरय्य 'रस' शब्दमें रसा।

रसधेनु (सं० स्त्री०) रसकल्पिता घेनुः। पुत्रपानुसार गुडु भादिकी बनाइ हुए बह गी जो दान को जाती है। इस गौकी कल्पना कर दान करना होता है।

'रसधेनु महाशय' कथयामि समासतः।

मनुस्मृतौ महोद्देशे कल्प्यान्नियुधान्तो ऽ॥

(बृहस्प० शतोपाख्यानेमें रसधेनुमा०)

वराहपुराण और हेमाद्रिके दामनचण्डमें इस दानका विषय और विधान वर्णित है। जो विधिपूर्वक यह दान करते हैं। उनको विष्णुकोकमें मति होती है।

रसन (सं० ब्रह्म०) रस माध ज्युद्। १ स्वाद सेना, खजना। २ धन। रस्यत रसपत्यैम वा रसकरये ज्युद्। ३ सिद्धा, मोम। ४ ककका एक नाम। (द्वि०) ५ पसीना ज्ञानैवाज्ञा।

रसन (द्वि० पु०) रस्ता।

रसना (सं० स्त्री०) रस युच्-राप् च। १ सिद्धा, मोम। २ व्यापक अनुसार रस या स्वाद जिसका अनुभव रसना या जीमसे किया जाता है।

'रसलु रसनामन्ना मधुराविरनरुषा।

वहकपरी खजना नित्यवादि च पूर्वत् ऽ॥

मायस्य गात्रय गन्धा गन्धस्वादिषि स्मृतः।

तथा लो रसभाषाया शब्दोऽपि च भुतः ऽ॥

(माधवारी०)

३ टाळा या नागहीना नामकी मोयपि। ४ गन्ध मन्ना नामकी कता। ५ काश्मी, खजुदार। ६ रज्जु, रस्सी। ७ करपनी, मेकला। ८ टगगाम।

रसना (द्वि० द्वि०) १ घारे घारे बहना या टपकना। २ गोजा हो कर या पत्नीसे मार कर घारे घारे कल या भीर काइ द्रव पदार्थ छोड़ना या टपकाना। ३ रसमें मज्य होना, रसस पूर्ण होना। ४ रसपान करना, स्वाद सेना। ५ प्रेममें मनुस्क होना मुहम्मदमें पड़ना। ६ तमय होना, परिपूर्ण होना।

रसनाथ (सं० पु०) रसाना नाथः । पारद, पारा ।
 रसनापद (सं० स्त्री०) रसनायाः पदं स्थान । नितम्ब
 देश, चूतड ।
 रसनाभ (सं० स्त्री०) रसाब्जन, रसांत ।
 रसनायक (सं० पु०) रसाना नायकः नेता रसायन
 विद्याविष्कारकृत्वात्स्य तथात्वं । १ शिव, महादेव ।
 २ पारद, पारा ।
 रसनारव (सं० पु०) वह पशु जिन्हें बोलनेके लिये
 केवल जीभ ही होती है दांत नहीं होते ।
 रसनालिह (सं० पु०) रसनया लेढीति लिह्-क्विप् ।
 १ कुक्कुर, कुत्ता । (त्रि०) २ रमना द्वारा लेहनकारी,
 जीभसे चाटनेवाला ।
 रसनिगड (सं० पु०) रसनियामक शृङ्खलरूप औषध ।
 आकंद, सीजके दूध, पलासबीज, गुग्गुल तथा दुग्ने
 सेंधा नमकके साथ पारा मदेन करनेसे यह औषध बनता
 है । (रसेन्द्रधारण ०)
 रसनिधान—एक कवि । इनका बनाया एक मैत्र्य उदा-
 हरणार्थ नीचे देने हैं,—
 “देवमणि दिनमणि भान दिन कदासे विमिर हरत
 रेनि तपनि त्रिगुण द्वादश आत्म नेत्र मार्त्तियड ।
 हृस्वरश्मपुषा जगतारण्य जनचक्षु
 जगवन्दन प्राणहरण्य प्रचयड ॥
 सुरज सुर महस्य गृह तू वेजानपति
 अगति नू अगति सप्तद्वीप नवपुण्ड्र
 रसनिधान सेवकको दीजे सन्तुष्ट कीजे
 दीजिय सुर ताल अलखड ॥”
 रसनिर्वास (सं० पु०) रसलक्ष्म, शालका पेड़ ।
 रसनिवृत्ति (सं० स्त्री०) आस्वादनशक्तिकी हीनता ।
 रसनीय (सं० त्रि०) १ आश्वादनके योग्य, चखने लायक ।
 २ खादिष्ट, मजेदार ।
 रसनेत्रिका (सं० स्त्री०) रसो नेत्रमिव तदस्त्यस्या इति
 रसनेत्र उन् । मनःशिला, मैनसिल ।
 रसनेन्द्रिय (सं० स्त्री०) रसना जिससे खाद या रस
 लिया जाता है, जीभ ।
 रसनेष्ट (सं० पु०) रसनायाः इष्टः । इष्ट, ऊख ।
 रसनोपमा (सं० स्त्री०) एक प्रकारकी उपमा जिसमें

उपमाओंकी एक शृंखला बंधी होती है और पहले कदा
 हुआ उपमेय आगे चल कर उपमान होता जाता है ।
 यह “उपमा” और “पकावली” को मिला कर बनाया
 गया है । इसे गमनोपमा भी कहते हैं ।

रसपति (सं० पु०) १ चन्द्रमा । २ पारद, पारा ।
 ३ पृथ्वीपति, राजा । ४ रसरज, शृंगाररस ।
 रसपरित्याग (सं० पु०) जैनोंके अनुसार दूध, दही,
 चीनी, नमक या इसी प्रकारका और कोई पदार्थ बिल-
 कुल छोड़ देना और कभी ग्रहण न करना ।
 रसपर्पटी (सं० स्त्री०) ग्रहणी अघ्निकारोक्त औषध
 विशेष । इस औषधका सेवन कर जिसका रोग दूर
 नहीं होता उसकी व्याधिकी असाध्य जानना चाहिये ।
 इसकी प्रस्तुत प्रणाली—

इस पर्पटी क्रियाके पहले पारेका मलदोष दूर करना
 उचित है । निम्नोक्त-आश्रयसे यह दोष दूर करना होता
 है । पहले ८ तोला पारा ले कर घृतकुमारोके रसमें
 घोंटना होगा । इसने पारेका मलदोष, त्रिकलाचूर्णके साथ
 घोंटनेसे वहिदोष तथा चितापत्तेक रसमें घोंटनेसे विष-
 दोष नष्ट होता है । पीछे यथाक्रम जयन्ती, रेंडी, अदरक
 और काममक्लीके पत्तोंके रसमें डाल कर घोंटे । जब तक
 रस बिलकुल सूख न जाय, तब तक घोंटना बंद न करे ।
 इसी प्रकार पारा ले कर गंधकके साथ मिला लेना होगा ।
 जो गंधक सुग्गेकी पूंछकी तरह कान्तिविशिष्ट, मसखनकी
 तरह श्रेणिशाली, चिकनी, कठिन और स्निग्ध होती है
 वही श्रेष्ठ है । इस प्रकार ८ तोला गंधक छोटे छोटे तडु-
 लाकारमें बना कर भृङ्गराजके रसमें ७ बार भावना दे
 और धूपमें सुखा कर धूलके समान चूर्ण कर ले । पीछे
 उस गंधकको लोहेके बरतनमें रख कर निर्धूम घेरकी
 लकड़ीकी आंचमें गलावे और तब उस भृङ्गराजके रसमें
 डाल दे । डालते ही गन्धक कठिन हो जायगी । अनन्तर
 गंधकको धूपमें सुखा कर तथा अच्छी तरह चूर्ण कर
 केतकीपुष्पकी धूलके समान बनाना होगा ।

इस प्रकार शोधित पारा और शोधित गंधक समान
 भाग ले कर अच्छी तरह मर्दन करना होगा । जब तक
 निश्चन्द्र अर्थात् पारा अदृश्य न हो जाय तब तक मर्दन
 करते रहे । चूर्ण कजलके समान होने पर उसे लोहेके

बचतमें रस निधुम बेलको सकड़ीकी भाँधमें गळा कर तैलवत् करना होगा। पोछे गोबरके ऊपर एक कच्चाके केसेका पत्ता बिछा कर उस पर दूधभूत कज्जली डाल दे और ऊपरसे गोबर मरा हुआ एक नूतरा पत्ता बिछा दे। दूधभूत कज्जलीका जो भय कठिन हो कर छोड़ेके बरतनमें लग धायगा उसे न उठाये। यह पर्पटी यदि मयूरपुष्पको चण्डिकाके सङ्ग हो जाय, तो ज्ञानला चाहिये कि यह बिजकुन तैय्यार हो गए। उक्त दिन रेश कर इसका सेवन करना होता है।

घातोदररोगमें १ रत्तो घीटा और १ रत्तो हींगके साथ इनका सेवन करना चाहिये। पर्पटी कानिके बाद सुख अन्न पीना उचित नहीं है। प्रथम दिन दो रत्तो और बाद एक एक रत्तो रोज बढ़ा कर १० रत्तो तक सेवन करे, १० रत्तोसे अधिक मात्रा न बढ़ानो चाहिये। २१ दिन यह औषध सेवन करना नियम है।

इस औषधक व्यवहारकासमें घायु और रौद्रसेवक, क्रोध, अधिक चिन्ता, धार्मिक समय व्यतिक्रम, व्याधाम, परिश्रम, स्नान और बहुत बोलना परशनीय है। घा, सेन्धव, झोटा और पनियासे तीव्र किया हुआ स्पृहनादि, शक्तिपुण्ड्रका भक्ष, वास्तुशुशुक, कायादि श्रात भ्रम क्षिप्त मूत्र, परचज, सुपादो मन्दक, काकमन्दीका साग, साबादि पक्षीका मंस, मीपरा रोहू और कालो मछली, जलके साथ सिद्ध नृष, ये सब सुपप्य बतसाये गये हैं। रम्भाफल निम्बादि तिक्त द्रव्य, उष्णाण वराहादि और अन्नचर भादि पक्षीका मंस मसुद्रव्य इति, शाक भादि निषिद्ध है। त्रिषोक्त साथ सम्प्रापण तक भी न करे। गुड़, चीनो और इत्य भादि द्रव्य नक्षणीय है। मूत्र छगने पर कुछ अन्न या जेना चाहिये। भाघो दातको यदि मूत्र सये, तो भी कुछ अन्न खा ले। यदि कुयव्यक कारण घमन हो जाय तो कारियलका पानी और नृष पीना उचित है। जब तक भयटा तरह भूख न सग्य, तब तक कुछ मां माशन न करे। अल्पहोय होने पर बुग्ध पान हितकर है। जो उक्त नियमका पावन किये बिना भीषणका सेवन करता है, वह धारोम्य तो क्या होगा, पिपिष रोग उसे सताता है। निषमपूर्वक इसका सेवन करनेसे प्रह्ला, अर्य, अन्न, पाण्डु, कामला, गुदम, जलो

दर और मन्मिमाग्यादि नामा प्रकारके रोग शान्त होते हैं। (मैपन्मन्ना० महषीउग्याधि०)

रसपाकज (सं० पु०) रसपाकात् प्रायत इति अन्न उ । १ गुड । २ शर्करा चीनी ।

रसपाचक (सं० पु०) मोक्षन बनानेवाला, रसोदया ।

रसपुण्य (सं० झो०) वैद्यकमें एक प्रकारका दवा जो गंधक, पारे और लकड़े बनाई जाती है।

रसपुष्टिका (सं० खो०) १ माखकंगनी । २ शवापर ।

रसप्रयोग (सं० झो०) रसोपय सेवन करनेकी व्यवस्था ।

रसप्रबन्ध (सं० पु०) १ नाटक । २ वह कविता जिसमें एक ही विषय बहुमते परस्पर सम्बन्ध पद्योमें कहा गया हो ।

रसफल (सं० पु०) रसो अन्न फले यस्य, रसयुक्त फल मस्यति वा शाकपाधिबवत् मध्यपक्षोपिसमासाः । १ कारियलका पेड़ । २ आमलकीवृक्ष, भांबलेका पेड़ ।

रसबन्धकर (सं० पु०) सोमकृता ।

रसबन्धन (सं० झो०) शरीरके अन्तर्गत नाड़ीक एक अंशका नाम ।

रसबन्धो (हि० खो०) एक प्रकारका पक्षीता जिसका व्यवहार पुराने ढंगकी तोपे और बन्दूक बनानेमें होता था ।

रसबरी (हि० खो०) लमरी देली ।

रसमरी (हि० खो०) एक प्रकारका लादिए फल । वकने पर इसका रंग पीलापन बिधे झाल हो जाता है। यह आड़ेके भ्रममें प्रायः बाजारोंमें मिलता है ।

रसमय (सं० झो०) रसात् रसे वा भवतीति भू भक्ष । एक, अन्न ।

रसमस्य (सं० खो०) रसस्य मस्य । पारेका भ्रम, मस्य किया हुआ पारा ।

रसमाष (सं० पु०) रसस्य भावः । रसघन, स्निग्धता भादि ।

रसमीना (हि० वि०) १ आमकर्म मन्त्र । २ मात्र तर गीला ।

रसभेद (सं० पु०) १ वैद्यकमें एक प्रकारका औषध जो पारेसे तीव्र किया जाता है । २ स गीत और नाटक भादिमें बर्जित रससमूहोंका प्रकृत मर्म मालूम करना । ३ रसास्वाद, रसका चजन ।

र (सं० लि०) वह पका हुआ फल जो रस
की अधिकतासे फट जाय और जिसमेंसे रस बहने

न (सं० पु०) १ तरल द्रव्य पीना । २ एक
जिसमें ब्राह्मणों को सिर्फ आम ही खिलाया
है ।

र (सं० क्लो०) वैद्यकमें एक प्रकारका रसौषध ।
प्रस्तुत प्रणाली—हरीतकीका चूर्ण ४ पल, शुद्ध
जा चूर्ण २ पल, विशुद्ध मण्डूरका चूर्ण २ पल,
का रस ४ सेर, केशुरियाका रस ४ सेर, इन सब
को एकत्र कर लोहेके खलमें मर्दन करना होगा ।
सो धूपमें सुखा लेनेसे चूर्ण तैयार करना होगा ।

मात्रा ४ रत्तीसे ले कर ३ मासे तक बढ़ानी होगी ।
पथ वी और मधुके साथ मिला कर सेवन करना
है । इसका व्यवहार शूल और अमुपित्तादि रोगमें
है । (भैषज्यरत्ना० शूलरोगाधि०)

(सं० लि०) रस स्वरूपे मयट् । रसस्वरूप, रसके

दास—एक वैष्णव पद-कर्ता । नीलाचलके गोपी-
रमें गोपवंशमें रसमयने जन्म ग्रहण किया था ।
श्यामानन्दसे वैष्णव-मन्त्रमें दीक्षित हुए । रसमय
नाम कई एक पद बना कर स्मरणीय हो गये हैं ।
रांच पुत्रोंमेंसे सबसे बड़े पुत्र गोपोजनबल्लभ एक
है । रसिकमङ्गल ग्रन्थ (दो वर्ष परिश्रमके बाद)
ही बनाया हुआ है । यह ग्रन्थ अत्यन्त प्रामाण्य
के समसामयिक अनुसङ्गों शिष्यने लिखा है ।

दास—गीतगोविन्दके बंगला पद्योंके अनुवादक ।
श्री गोस्वामीके शिष्य थे ।

दासी—एक प्रवीणा स्त्री कवि । पदकल्पतरुमें
एक पद है । दूसरे दूसरे ग्रन्थों भी इसके पद
हैं ।

न (सं० क्लो०) रसस्य पारदधातोमर्दनं । पारद-
वैद्यकमें पारेकी भस्म करने या मारनेकी क्रिया ।
(सं० क्लो०) शरीरसे निकलनेवाला किसी प्रकार-
का ।

न (हि० वि०) १ रंगमें मस्त, आनन्दमग्न ।
गीनेसे भरा, श्रान्त । ३ तर, गीला ।

रसमाणिक्य (सं० क्लो०) कुष्ठरोगका औषधविशेष ।
प्रस्तुत प्रणाली—वंगपत्र और हरतालको कौहडेके जल
तथा स्रष्टे दहीमें यथाक्रम तीन बार या सात बार भावना
दे कर सुखा ले । पीछे तण्डुलाकृतिका बना कर शरावक
यन्त्रमें रसे और पेरकी पत्तियोंके काढ़ेसे लेप दे । नीचे
एक बरतन रखना होगा । वह बरतन जब तक लाल न
हो जाय, तब तक कड़ी आच देनी होगी । उन्हा होने
पर उसमेंसे औषधकी बाहर निकाल लेना होगा । इससे
हरिताल माणिक्यके समान चमकने लगता है । वी और
मधु मिला कर प्रति दिन दो रत्ती भर सेवन करनेसे
कुष्ठादि नाना प्रकारके रोग नष्ट होते हैं ।

(भैषज्यरत्ना० कुष्ठरोगाधिकार)

रसमातृका (सं० स्त्री०) जिह्वा, जीभ ।

रसमारकद्रव्य (सं० क्लो०) पारदमारक द्रव्य, वह वस्तु
जिससे पारा मारा जाता है । रसमारकद्रव्य ये सब
हैं,—मोधा, वच, चिता, गोखरू, तितलीकी, दन्ती,
जातीपुष्प, राजा, शरपुङ्ख, घृतकुमारी, चण्डालिनो, ओल,
हारमुच, लज्जालु, घोषा, लाक्षा, दन्तोत्पल, अतिवला,
पोपल, सन्हातू, बडी इलायची, विपलांगुली, शाल, आकन्द,
सोमराज, रविभक्ता, काकमाचो, श्वेत आकन्द, अपराजिता,
वायसतुण्डो, थूहर, विजयद, सोंठ, चराहकान्ता, बला-
त्मिका, कदली, कच्ची इमली, हल्दी, दाबहल्दी, पुनर्णवा,
श्वेतपुनर्णवा, घतूरा, काकजंघा, शतमूली, शिरिशा, पर-
गाछा, तिल, भेकपर्णी, दूवा, मूर्वा, हरीतकी, तुलसी,
मूसाकानी । (स्तेन्द्रधारण)

रसमारण (सं० क्लो०) रसस्य पारदस्य मारणं । वैद्यक-
में वह क्रिया जिससे पारा मारा या शुद्ध किया जाता है ।
पारद देखो ।

रसमातृ (सं० क्लो०) १ रसतन्मातृ । २ रसस्वरूप, रस-
के सभान ।

रसमाला (सं० स्त्री०) शिलारस नामक सुगन्धित द्रव्य ।
रसमुंडो (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी यगला मिठाई ।

रसमुयाड़ी—बैलुचिस्तान और सिन्धुप्रदेशके मध्यवर्ती
हाव नदीके मुहाने पर अवस्थित एक अन्तरीप । यह
केपमंज नामसे मशहूर है और अक्षां २४° ५०' उ० तथा
देशां ६६° ४५' पू०के बीच पडता है । यह स्थान जेबेल

पात्र पर्यंतका एक अन्न और समुद्रपृष्ठसे प्रायः तेजः सी फीट ऊँचा है। समुद्रको यहराह कम होनेके कारण यह बन्दरके उपयोग नहीं है।

रसपूर्ण (सं० क्री०) रसस्य पात्रस्य पूर्णम् । पात्रे का पूर्णकरण । पारर रेत ।

रसमूला (सं० पु०) प्राकृत उन्मोमेद् ।

रसमैत्री (सं० स्त्री०) दो चेतने रसोंका मिलना जिनके मिलनेसे स्वादमें सुख हो, दो रसोंका उपयुक्त मेल । जैसे—कड़ुआ और तोठा, तोठा और नमकीन, नमकीन और लहसुन आदि ।

रसयति (सं० स्त्री०) भास्वाह्न चषणा ।

रसयित्थ्य (सं० लि०) भास्वाह्न योग्य सुमिष्टः ।

रसयित् (सं० लि०) भास्वाह्नप्रदकाटा, चक्षनवासा ।

रसपाग (सं० पु०) भायुर्मेवात्क वैज्ञानिक उपायस मिश्रित एक प्रकारकी औषधि ।

रसरङ्ग—उत्पन्नऊके रत्नपाके एक कवि । ये १६०० सम्बत्में विद्यमान थे । इनकी कविता सरस और मनाहर होती थी । इनकी रचनाधेया साधारण कवितामें है । इन्होंने ब्रह्मभाषामें कविता की है और यह सराहनाय है—

“सुनमाके किन्तुका विगारक कुन्दर वे
मयि के करन गुण वृक्षतो निकते है ।
करि उपपारे वागो स्वन्तता उवरी वामे
वेमन वाहाय भो गो हाव रव हरे है ।
कवि रकरन ताका कठ भा निगरे
वातो पधिकार बदन वन विभिने वंशर है ।
बदन संकारि विधि धया हाय जम्पा रंग
वलो भय कन्द, कर भर मय वरे है ॥”

रसरत्न (सं० क्री०) रसस्य रत्नम् । गारेका रत्नता स्थापन ।

रसरस्य (सं० स्त्री०) पारव मारण प्रारणादिवा कर्मिक ।

रसरत्न—एक कवि । इनकी कविता अच्छी होती था ।

१ मका बनाया काली मान वी है—

‘वे हाउ वज्रव हा हा हते ।

नन्दनन्दन वृक्षानुवृत्तिदी भवार दुग्धन चिब

कर भाये ॥

वृन्दानकी कु जगन्निनमें बाक्य हो हो हो ।

परस्पर रंगमें बेरी ॥

कर कंका कंका विपद्यती केार रंग से बोये ।

दिरक्य रंग वृक्षत दिने हृते मिलत ह वत मुष्मोटी

के विवकन विव बोरी ॥

कन वृन्दान कन गोकुच पर नदी बह रत्न रम्भोटी ।

भीरवराज ब्रज ऊपर हाको बन्त वैकुण्ठ करोटी

मुक्य विन कबो बोरी ॥”

रसराज (सं० क्री०) औषधविशेष । प्रस्तुत प्रणाली—
गंधक द्वारा प्रारित ताज १ तोला गंधक १ तोला और
पात्र ४ माशा इन्हें भोसके रसमें एक साथ मर्दन कर
गन्धुपुटमें पाक करे । उँदा होने पर इसे नीचे उतार कर
२ रसोंकी गोली बनाये । मयुके साथ इसका सेवन करने
से प्योहा यकृत और शुष्मरोग प्रशमित होता है ।

रसरत्न (सं० पु०) रसार्त्ता धान्ता रात्रा (पत्राहठकिय
ह्य । वा ११५१) इति रत्न । १ पारव पात्र । २ रसा
अन्न, रसोत् । ३ रसोंका रात्रा, ४ गाररस ।

रसरत्नरस (सं० पु०) पातप्याधिरोगका औषधविशेष ।
प्रस्तुत प्रणाली—रससिन्धूर ८ तोला, अथरक २ तोला,
सोना १ तोला, इन्हें घृतकुमारोके रसमें मिगो रणे ।
पाँटे रंगा, असगंध, चषणू, जैती, धीरककोली प्रत्येक
आध तोला उसमें मिना कर ५ रसोंको एक एक गोली
बनाये । इसका अनुपात दूध और खोनाका ब्रह्म है ।
इसका सेवन करनेसे पक्षाघात, अर्शित, हृन्मूलस्य, मय
तन्त्र और पनुषङ्गुर आदि रोग अच्छे हो जाते हैं ।

रसरत्नरस (सं० पु०) सविपात उपराधिकारमें औषध
विशेष । प्रस्तुत प्रणाली—रस १ पत्र, ताँबा १ पत्र, अथ
रक १ पत्र, सोसा १ पत्र, रंगा १ पत्र गंधक १ पत्र,
इन्हें काक्याचोकर रसमें एक साथ मर्दन करे । पाँटे
रहितमरस्य शूकर मयूर, और बकरैक पिचक साथ
एक एक कर मर्दन करके त्रिकटुक काढ़ेमें अच्छी तरह
पोंडे । इसका बाद उसमें आठ गुना जल शाक कर
त्रिकटुक काढ़ में सिख करना होगा । सिख करने करते
ब्रह्म आदयों नाम जल रह जाय, तब इन नीचे उतार लें ।
पाँटे किरस त्रिकटुक काढ़ेमें मर्दन करे और एक सी
बार अथरक रसमें मिगा कर रत्ता भरका गांठा बनाय ।

इसका अनुपान तुलसीपत्रका रस है। यह औषध सेवन करनेके बाद शिर पर लगातार जल छोड़ना होगा और यदि दाह उपस्थित हो, तो जल, दूध और अन्न मिलाना होगा। इस औषधके सेवनसे सभी प्रकारके सन्निपातिक ज्वर निवृत्त होते हैं।

(भैषज्यरत्ना० ज्वरोगधि०)

रसल (सं० वि०) जिसमें रस हो, रसवाला।

रसलीन—एक मुसलमान कवि। इन्होंने १८वीं सदीमें कविता की थी। हरदोई जिलान्तर्गत विन्गराम नामक एक कसबा है जो मल्लायेंसे पाच कोसकी दूरी पर स्थित है। विलगराममें बहुत दिनोंसे बड़ बड़े विद्वान् मुसलमान होते रहे हैं और अब भी वर्त्तमान है। यह स्थान विद्या और गुणोंके लिये इतना विख्यात है, कि लोग विलगरामा होना एक महत्त्व-सूचक उपाधि समझते हैं। यह उपाधि रसलीनके समयमें भी श्रद्धाभाजन समझी जाती थी, कारण उन्होंने अपनेको विलगरामा करके लिखा है। आपने अपनेको वाकर पुत्र कहा है।

शिचसिंहसरोजमें इनका उल्लेख इस तरह है,—ये अरबी, फारसीके आलिम फाजिल और भाषाके बड़े निपुण कवि थे। रसप्रबोध नामक ग्रन्थसे इनकी कविताका पूरा परिचय मिलता है। इनके कुतुबखानेमें पांच सौ जिल्द भाषा कायकी थीं।

सम्भवतः इनका जन्म संवत् १७४६ ई०में हुआ था। इन्होंने अपना पूरा नाम 'श्री हुसैनो वासती विलगरामा सैयद, वाकर सुत सैयद, गुलाम नबी रसलीन' लिखा है। इनका बनाया दो ग्रन्थ 'अंगदर्पण' और 'रसप्रबोध' मिलता है। प्रथम ग्रन्थ 'अंगदर्पण' १७६४ ई०में रचा गया था। इसमें १७७ दोहे हैं जिनमें नायिकाके नम्रजिह्वा वर्णन है। यह वर्णन बड़ा ही मङ्गलीला है। इसमें उपमायें, रूपक और उत्प्रेक्षायें चमत्काररूपसे हैं। द्वितीय ग्रन्थ 'रसप्रबोध' एक बड़ा ग्रन्थ है। इसमें ६१५३ दोहों द्वारा रसोंका विषय विशदरूपसे और प्रशंसनीय रीतिसे सागोपांग वर्णित है। इसमें अलंकारोंका विषय विलकुल नहीं कहा गया है। रसोंका वर्णन भावोंके पिना अच्छा नहीं कहा जा सकना इस कारण रसलीन महाशयने भावभेद भी बहुत

विस्तारपूर्वक कहा है। रसलीनने कहा है, कि यदि कोई यह ग्रन्थ ध्यानपूर्वक पढ़े, तो उसे रसोंका विषय जाननेके लिये किसी दूसरे ग्रन्थके पढ़नेकी आवश्यकता न रहेगी। उक्त ग्रन्थ १७६६ संवत्में समाप्त हुआ।

रसलीनने मुसलमान होने पर भी ब्रजभाषा बहुत शुद्ध लिखी है। उसमें फारसीके भी शब्द आये हैं। इनकी तथा किमी ब्राह्मण कविका भाषाओंमें कुछ भी अन्तर नहीं है। यह इन्हींका काम था, कि फारसीके पारगामी हो कर भी ये ऐसी ठेठ ब्रजभाषामें कविता करनेमें समर्थ हुए। इनकी कविता सराहनीय होती थी। इनकी गणना तोप कविमें है। इनकी एक ब्रजभाषाकी कविता उदाहरणार्थ नीचे देते हैं,—

"मुकुत भये धर छाव के कानन रेंडे जाय।

वर खोवत है बीरकी कोडे कीन उपाय ॥

कत देखाय कानिनि दई दामिनिको यह बाँध।

यरधराति वी तन फिरै फरफराति घम माँह ॥

कहु खानति निकित कुनुम बहु दोहापति बाय।

कहु विद्यापति चांदनी मधु श्रुतु दावी जाय ॥

कुमठि चन्द प्रति चौव बदि मास मास कदि आय।

तुव सुख मधुराई लखै फीरो परि वटि जाय ॥

बृद्ध कामिनी काम वे सून वाम में पाय।

नेवर कमकावति फिरै देखके दिग जाय ॥

निय सैख जोवन मिले भेद न जान्यो जात।

प्रात समै निशि दीखके दुवी भाव दरसात ॥"

रसलेह (स० पु०) रसान् अपरान् घातून् लेहोति, लिह-पचाद्यच्। पारद, पारा।

रसवत (हि० पु०) रसिक, प्रेमी।

रसवती (हि० स्त्री०) रसांजन, रसौत।

रसवट (हि० पु०) वह मसाला जो नावके छेदोंमें इसलिये भरा जाता है, कि उनमेंसे पानी अंदर न आवे।

रसवत् (सं० वि०) रसो विद्यतेऽस्य (साविभ्यश्च। पा १।२।६५) इति मत्तुप् मस्य च। १ रसविशिष्ट, जिसमें रस हो। (पु०) २ वह काव्यालङ्कार जिसमें एक रस किसी दूसरे रस अथवा भावका अंग हो कर आवे।

रसवत (सं० स्त्री०) १ स्त्रीत देखो। २ दावश्चिदा देखो।

रसपता (स० खी०) १ सम्पूर्ण जातिकी एक रागिण्या जिसमें सब शुद्ध स्वर जगते हैं । २ रसोद्धार । (जि०)
३ रसाली, रसपूर्ण ।

रसपत्ता (स० खी०) रसपत्तो भाषा; तन्म-रूप । १ रस युक्त होनका भाष या धर्म, रसोभाषण । २ रस । ३ मोक्षार्ण, सुम्भरता । ४ माधुष्यम मित्रास ।

रसपत्र (स० जि०) द्विमम रस ही, रस भरा ।

रसवशा (स० पु०) भाष्यादनम्भात्वाय, स्थाव जेनकी रक्षा नही ।

रसपत्रक (सं० पु०) वैद्यक अनुसार अनारका फूल, दाकाका फूल, कुसुमका फूल, माल, इनकी, मज्जाह आदि कुछ विविध द्रव्य जिसस रंग निकरता है ।

रसपत्नी (हि० खी०) एक प्रकारका गन्ना जिसे रस उका मो कहत हैं ।

रसपह (सं० जि०) रसबाहिरीत ।

रसपहकातस् (सं० स्त्री०) आ सब धमनी रस बहन कर ले जाता है । (भरक वि० ५ म०)

रसबाह (हि० खी०) पहले पदम ऊप्य पेटके समय दोनधासी कुछ विविध रसियां या व्यवहार ।

रसवाद् (सं० पु०) १ रसकी बात प्रेम या भावन्की बातचीत । २ मनोरञ्जनक लिपि कहा सुनी, छेड़छाड़ । ३ बकपाद् ।

रसवान् (सं० पु०) यह पदार्थ जिसमें पेसा गुण या शक्ति हो, कि जब उस पदार्थके कण रसनासे संयुक्त हो उस समय किसी प्रतिष पक हनुक न रहनेस विधेय प्रकारका अनुभव हो ।

रसवास (सं० पु०) दगणके पहल मेरुकी स ड़ा ।

रसवास—भूपान राज्यका एक नगर ।

रसवाहिनो (स० खी०) वैद्यक अनुसार काये हुए मोहनस बम साद पदार्थको फेनानवाहा नाडा ।

रसविषय (स० पु०) मधविषय, शराब पेयना ।

रसविषयिन (स० पु०) मधविषयकारो, शराब बेचन-वाला ।

रसपिडू (स० जि०) रसड ।

रसपिरोप (स० पु०) उत्प्रेर रस ।

रसबिरोप (स० पु०) रसस्व बिरोधः । १ सुभूतक

अनुसार कुछ रसका ठाक मेव न होना । जैसे, तोत और मोठेव, नमकीम और मोठेमें कत्रुए और माठेमें रसपिरोप है । २ माहित्यमें एक ड़ा पयमें दो प्रतिकूल रसोंकी स्थिति ।

रसबोधरूप (स० पु०) सोमसता ।

रसबोधक (स० स्त्री०) लण, सोमा ।

रसप्रेम—बडबक भन्तगत एक प्रसिद्ध स्थान ।

रसगानू (स० पु०) स्तित्कारोगका औषधियेय ।

यह रसगानू, महारसगानू और गृहत्तरसगानू लक भेजसे तीन प्रकारका है । प्रस्तुत प्रवाली—मधरक, तांबा, छोहा, मैनसिख पारा, गंधक, सोहागा यवक्षार, हरीतकी आमकका, बहेडा प्रत्येक एक तोला; मरीचका पूर्ण ४ तोला, गोमा भद्रूस और पान प्रत्येकके रसमें सात बार भाषना इ कर छः रसोंकी गोली बनाये । इस औषधका सयन करनेस स्तित्का, ज्वर, कास, शोथ आदि स्त्रीरोग दूर होते हैं । महारसगानू लक बनानकी प्रस्तुत विधि—मधरक, तांबा, सोमा, गंधक, पारा, मैनसिख, सोहागा, यवक्षार, हरीतकी आमककी और बहेडा ८ तोला; बारबोनी रसायनी, शंखपत्र जैनी, लवङ्ग जटा मांसी ताकजपल, सर्पमांसिक और रसायन प्रत्येक ४ ताम्बा, पान और गोमाक रसमें सात बार भाषना इ कर रसमें मरिचपूर्ण मिलाये । परिमाण भीर अनुपान रोगक बसाबक अनुसार स्थिर करना होगा । इस औषधका सयन करनेस विविध स्तित्कारोग, ज्वर, दाह, वमि, ज्वम आतिसार, भनिमाम्, मर्बवि आदि गर्मिवातोग दूर होते हैं ।

गृहत्तरसगानू—पारा एक भाग भार गंधक दो भाग में कर काश्क बनाय । पाठे उसमें मधुधानु एक एक भाग ड कर मिलाये । प्राक्षाणाक, जयश्री, सभालु, मुन्डेता, पुनणवा नामुका, सरराजिता, आकम्, कृष्ण चद्रु पुराकभा भद्रूस, काश्मावो प्रत्येक द्रव्यक रस में सात सात बार भाषना इ कर ठाम बार रसोंकी गोली बनाये । इसका अनुपान गरम इत है । इस औषधका सयन करनेस स्तित्का समन्वयाय सनी रोग विनष्ट होते हैं । (लम्बकमन० पृष्ठिकमध्यापि०)

रसगानू (स० स्त्री०) रसायनशास्त्र ।

रसशेखर (सं० पु०) रसोपधविशेष । प्रस्तुत प्रणाली—
पारा २ रत्ती, अफीम १२ रत्ती, इन दोनोंको लोहेके बरतन-
में नीमके हृत्थेसे तुलसीके रसमें घोंट कर २ रत्ती हिंगुल
मिलावे । पीछे फिरसे तुलसीके रसमें घोंटे । बादमें
जैती, जायफल, पोरसासानी अजवायन और आकरकरा
प्रत्येक ३२ रत्ती, कुल मिला कर जितना हो उससे
दूना खैर मिलावे । इसके बाद तुलसीके रसमें फिरसे
घोंट कर चनेके बराबर गाली बनावे । प्रतिदिन शाम-
को दो गोली करके सेवन करनेमें उपद्रव आदि रोग
शान्त होने हैं ।

रसशेष (सं० पु०) खाया हुआ वह द्रव्य जो जीर्ण होनेसे
रस-रूपमें परिणत होता है ।

रसशेषाजीर्ण (सं० क्ली०) रसशेषके लिये अजीर्णरोग-
भेद ।

रसशोणितसम्भव (सं० क्ली०) मांस धानु ।

(वैद्यकी०)

रसशोधन (सं० क्ली०) रसः शोध्यतेऽनेनेति शुध-णिच्
ल्युट् वा रसं पारदं शोधयत्यनेनेति वा । १ टड्डण,
सोहागा । २ पारदशुद्धि, पारेको शुद्ध करनेकी क्रिया ।
पारद शब्द देखो ।

रससंरक्षण (सं० क्ली०) रसस्य संरक्षणं । पारेको शुद्ध
करना, मूर्च्छित करना, बाधना और भस्म करना ये
चारों क्रियाएँ ।

रससंस्कार (सं० पु०) पारेके मूर्च्छन, बाधन, मारण
आदि अठारह प्रकारके संस्कार । (वैद्यक)

रससम्भव (सं० क्ली०) सम्भवत्यस्मात्, रसस्य सम्भवः ।
रक्त, लहू ।

रससागर (सं० पु०) पुराणानुसार सात समुद्रोंमेंसे
एक । कहते हैं, कि यह पृथ्वी द्वीपमें है और ऊँखके
रससे भरा है ।

रससाम्य (सं० स्त्री०) शारीरिक रसका न्यूनाधिक्य-
निर्णय । चिकित्सकको चाहिये, कि वे रोगनाशक औषध
और पथ्यादि देनेके पहले रोगीकी अवस्था और रोगका
बलाबल तथा शरीरमें रससञ्चारका तास्तम्य देख कर
औषधका प्रयोग करे । कुछ परीक्षा द्वारा चिकित्सक
आसानीसे प्रकृतरोगका निर्णय कर सकते हैं ।

मुखसे राल निकलना, हृत्लास, वधुदेशकी अशुद्धि,
धवचि, तन्द्रा, आलस्य, खाये हुए पदार्थका अपरिपाक,
मुखवैरम्य, गात्रभार, क्षुधानाश, अधिक परिमाणमें मूत्र-
निःसरण, स्तम्भता और प्रचल ज्वर दिखाई देनेसे उसे
आमज्वर समझ कर औषधादिका प्रयोग न करे । क्योंकि
आमायस्थामें औषधका सेवन करनेसे ज्वर और भी
बढ़ जाता है ।

ज्वर घटने पर ज़रूर कुछ हल्का होता जाता है
तथा वायु आदिके अपने अपने पथसे सञ्चालित होने
और मलमूत्रादि प्रकृतरूप निकलनेसे रसका परिपाक
हुआ जान कर औषधादिकी व्यवस्था करना उचित है ।

सात दिनके बाद यदि रसका परिपाक न हो तथा
मलमूत्रादि ठीक तौरसे होता हो, तो रसके साम्यजन्य
पाचनकी व्यवस्था करे । फिर यदि मलमूत्रादिके प्रव-
र्त्तिक रसका परिपाक होता हो, तो दोषोपशमनक
औषधका व्यवहार करना होगा । मलमूत्रादि निःसरण
और रसका परिपाक नहीं होनेसे कभी भी ज्वरघटन
औषधकी व्यवस्था न करे ।

जल पीनेके बाद, उगवासके दूसरे दिन, क्षीणावस्था-
में अजीर्ण होने, भोजन करके तथा व्यासके समय
संशोधक अथवा अन्यप्रकारका औषध सेवन कराना
उचित नहीं । अन्नहीन औषधसे वायु बढ़ता है । इससे
रोगके शीघ्र ही दूर होनेकी सम्भावना है ; किन्तु बालक,
बृद्ध, युवती और मृदु प्रकृतिके मनुष्यके लिये यह
व्यवस्था उत्तम नहीं है । क्योंकि इससे उन्हें ग्लानि
होती है और उसीसे बलक्षय होता है ।

औषधजीर्ण होनेसे वायु अनुलोम होती है तथा
स्वास्थ्य, क्षुधा, तृष्णा, प्रसन्न चित्तता, देहकी लघुता,
इन्द्रियोंकी निर्मलता और उद्गारकी शुद्धि होती है ।
औषधके अच्छी तरह जीर्ण होनेसे ही भोजन करने
अथवा खाये हुए पदार्थके अच्छी तरह पचनेके पहले
औषध सेवन करनेसे पीडाकी शान्ति नहीं होती, वरन्
अन्यान्य रोग उत्पन्न होते हैं । यदि औषधका अच्छी
तरह परिपाक न हुआ हो, तो क्लान्ति, दाह, शरीरकी
अवसन्नता, वमनेच्छा, शिरमें दर्द, बेचैनी और बलक्षय
आदिके लक्षण दिखाई देते हैं । खानेके कुछ पहले

भीषण खेवन करनेस यह शरीरमें बहुत कायदा पहुँचाता है। क्योंकि यह पेटमें जाये हुए बनाजसे एक जाता जिससे मुह हो कर नहीं निकलने पाता है। वृद्ध, शिशु, मोह भौर, सुकुमारो रमयिषोके लिये यही वायव्या कामजन है। शेष, अग्नि, वन, भवस्था, वायु, प्रकाश और कोष्ठशुद्धिको विषेषता कर भीषण देनेके बहुत नाम पदु बना है।

समी प्रकारके उवरोमें कफविल वायु भीर धामशेष क नाशक लिये पमिषे भीर परबलक पराका काड़ा विषा जाता है। यातिक उवरोमें, पित्तउवरोमें कफउवरोमें वातपैतिक उवरोमें पित्तउवरोमें भीर वातउवरोमें उवरो में रसका प्रकोप दूर करनेके लिये उपायादि पानकी वायव्या है। (भैषज्यर० अ००)

रससार (सं० पु०) १ मधु, शहद । २ अहद ।

रससिन्दूर (सं० बसो०) रसजात सिन्दूर । एक प्रकारका रस । इसको प्रस्तुत प्रयाम्ना—पाच ८ ताता, गंधक ८ ताता, इसको नियमपूयक कसलो बना कर पराङ्कुरके काड़ेमें तीन दिन भापना है। पीछे उस बोलनमें भर कपड़े भीर मशुका छेप बसाय भीर बालुसे पूर्ण है। दोमें एक कर बार पहर तक भाँव देत रहे। इनसे तस्या कणसन्निभ रससिन्दूर उत्पन्न होता है। अनुपामक साथ इसका सपन करनेस विविध रोगोंको शान्ति हाता है।

दूसरा तरोका—पारा, गंधक, मिसादम भून भीर क्लृष्टिक बराबर बराबर भाग ले कर कागजो नोचूक रसम एक पहर तक मर्दन करे। पाच उस बोलनमें भर कर मुह बंद कर दे। अन्तर कपड़ में मिसा बुई मिशुका छेप चढ़ा कर उस एक घेस छंदहार मिशुके बलनमें रख छोड़े, जो गन्ना तक बालुस भर हुआ है। इसक बाद धामा भाँवमें उस पाक करे। उहा होम पर बोलनके मोष जमा हुआ रससिन्दूरका प्रयोग करना होगा। यह त्रिदोषनाशक माना गया है। (रससंग्रह०)

रससू (सं० पु०) रसपातु, रस ।

रसपञ्चर (सं० पु०) रसपातुगत पंचर । अर देव ।

रसस्वान (सं० बसो०) रसा स्थानमाधार उवरोस्थान ।

यस्य, रसस्य पारदस्य स्थानमित्येक । १ हिंदुन, रिंग एक । २ शरीरका रसस्थल । ३ रसका आधार ।

रसबाण (सं० बसो०) मधुवैत, अमलपत्र ।

रसा (सं० स्त्री०) माधुर्वातिको विविधो रसोऽस्यस्य मिति (भर्गु मादिन्मोऽन् । पा ४।२।१२७) इति मधु, रसति शब्दायत इति वा रस मधु याः । १ वृष्यो, जमीन । २ रसबा जौम । ३ पाठा, पाड़ । ४ अदकमी, मछली । ५ द्राक्षा, शाल । ६ काकोनो । ७ रसातल । ८ मदा । ९ रामना । १० बंगला नामका मोटा अन्न । ११ मेदा । १२ लिखारस, सोडवान । १३ आम ।

रसा (हिं० पु०) तरकारी मादिका भोल जोरवा ।

रसाङ्गन (हिं० पु०) रसाङ्गन देना ।

रसाङ्गो (हिं० पु०) १ रसायनविद्या ज्ञानबाला । २ रसायन बनानेवाला, कीमियागर ।

रसार (फा० स्त्री०) पदु फनेको क्रिया या भाव, पदु न ।

रसाङ्गन (सं० पु०) ननतीति अन् विवरे मधु, रसाया भूमः पत्तः । कुङ्कुट, मुर्गा ।

रसाप्रज्ञ (सं० बसो०) रसानामप्रज्ञ इत्यस्य अमे जायत इति वा ज्ञन ड । रसाङ्गन, रमीत ।

रसाप्रज्ञ (सं० बसो०) १ रसाङ्गन, रमीत । २ पारद, पाच ।

रसाङ्गक (सं० पु०) भीषेष्ट नामक सुगन्ध काष्ठ, पूष साङ्गका ट्टन ।

रसाङ्गान (सं० बसो०) आस्थाबुभेद, भोजन करने पर भी उसक रसका अनुभव न करना ।

रसाङ्गन (सं० बसो०) रसजातमङ्गन इति प्रव्यवदलोपि कमधारया । रसजात मङ्गनविशेष, रमीत । यह बार प्रकारके मङ्गनमें एक है। फार्ड फार्ड इसक कपक हो हो भेद बतलात है, सोतोऽङ्गन भीर रसाङ्गन । पर्याय—रसगन्ध, तास्वीरुज, रसोद्भूय, रसाप्रज्ञ इतक, पाक नेवन्थ, शर्षोकाधोद्भूय, रसराज, रसाङ्गन, रसनामं भीर अग्निमार । यह हिम, तिक्, बसुका दितकर, मयुर भीर कटु, रक्षिण्य, विष, सदि, शिवा भीर अस्फार रोग नाशक माना गया है। (उपनि०)

रसाङ्गनका गोपन कर व्यवहार करना होता है। इसका

शोधन किये बिना व्यवहार करनेसे वह विपके समान अनिष्टकारी है।

शोधनप्रणाली—रसाञ्जनचूर्णको जंवीरी नोचूके रसमें भिगो कर एक दिन धूपमें सुखा लेनेसे यह विशुद्ध होता है। (रसेन्द्रसार०)

रसाञ्जनादिचूर्ण (स० षली०) ज्वरानिसारमें औषध विशेष। प्रस्तुत प्रणाली शुद्ध रसाञ्जन, अनीस, इन्द्रजाँ, कूटजमूलकी छाल, धवला फल, सोंठ, मर्वाका वगवर बराबर भाग चूर्ण ले। अनुपानदांपके बलाबलके अनु-सार स्थिर करता होगा। इस औषधका सेवन करनेसे ज्वरानिसार रोग दूर होता है। (सर०) रक्तातिसारमें चावलका पानो और मधुका अनुपान ही उत्तम है।

(मैषज्यर० अतिषा०)

रसाढ्य (स० पु०) रसनाढ्यः युक्तः। आम्रातक, अमडा। रसाड्या (सं० स्त्री०) रासना।

रसातल (स० स्त्री०) रसायांः तल। निम्नभागस्थ लोकविशेष। पुराणानुसार पृथ्वीके नीचेके सात लाकामें से छठा लोक।

“अतल वितलश्चैव नितलञ्च तलातलम्।

महातलञ्च सुतल वसतश्च रसातलम् ॥

पातालमेदाः सर्वे च नामतः कीर्त्तिना अमी।

तत्र पातालमेकैक दशसाहस्रयोजनम् ॥” (शब्दमात्रा)

भगवान् हरि अखिल वेदशास्त्र ग्रहण कर रसातलमें गये थे। (महाभारत १२।३४७।१६) देवीभागवतमें लिखा है, कि इसको भूमि पथरोली है और इसमें दैत्य, दानव तथा पणि नामके असुर इन्द्रके डरसे निवास करते थे।

(देवीभाग० पार० अ०)

रसात्मक (स० त्रि०) रस आत्मा स्वरूपो यस्य कन्। रसस्वरूप।

रसादान (सं० स्त्री०) रसानामदानं ग्रहणं। १ रसशोषण। रसाया दानं। २ भूमिदान।

रसादार (हिं० वि०) जिसमें भोल या शोरवा हो, शोरवे-दार।

रसाधार (स० पु०) रसाना जलानां आधारः रसा पृथिवीं धरति आकषणेनेति वा धृ अण्। १ सूर्य। २ रस-का आधार।

रसाधिक (सं० पु०) रसाय स्वर्णादीना द्रवीकरणाय अधिकः प्रबलः। १ दृक्कण, सोहागा। २ अधिक रस। रमाधिका (सं० स्त्री०) रसेन अधिका। किशमिश।

रमाधिपत्य (स० स्त्री०) रसातलका शासन।

रमाध्यक्ष (स० पु०) प्राचीनकालका एक राजकर्मचारी जो मादक द्रव्योंको जाच, पडताल और उनकी बिक्री आदिकी व्यवस्था करता था।

रमानुग (स० त्रि०) १ रसदृषक, रसको पचाव करने-वाला। २ रसानुसारी।

रसानुप्रदान (स० स्त्री०) जलीय कृणाधिकीरण। यास्कने इन्द्रको ही इस कार्यका नेता कहा है।

रसान्तर (स० षली०) १ भिन्न रस। २ सांगीतादिमें एक रससे दूसरे रसको अवतारणा।

रसापति (स० पु०) पृथ्वीपति, राजा।

रसापायिन् (स० पु०) १ जिहा द्वारा पानकारी, वह जो जीभसे पीता हो। २ कुम्कुर, कुत्ता।

रसाभास (सं० पु०) रस इव आभासते इति भास-अच्। अनौचित्यरसविशिष्ट रस। साहित्यमें किसी रसको ऐसे स्थानमें अवतारणा करना जो उचित या उपयुक्त न हो।

“अनौचित्यप्रवृत्तत्वे आभासा रसभावयो।” (साहित्यद०)

रस शब्द देखो।

रसामग्न (स० षली०) धोल नामक गन्धद्रव्य।

रसाभ्रगुग्गुल (स० षली०) रसौषधविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—पारा ४ तोला, लोहा ४ तोला, गंधक ८ तोला, अवरक ८ तोला, गुग्गुल १ सेर, गुलञ्च २ सेर और पाकार्थ जल १६ सेर, शोष ४ सेर। इन दोनों काढ़े-को एक साथ मिला कर उसमें पारदादि द्रव्य पाक करे। पीछे गाढा होने पर उसमें त्रिकटु, त्रिफला, दन्तिमूल, गुलञ्च, गोपालककंदीका मूल, विडङ्ग, नागेश्वर, निसोध-का मूल प्रत्येक दो तोला मिलावे। मात्रा एक तोला और अनुपान गुलञ्चका काढ़ा बताया गया है। इसका सेवन करनेसे गलित, स्फुटित, कठिन वातरक, कुष्ठ और अन्यान्य नाना रोग आरोग्य होते हैं।

रसाभ्रगुडिका (सं० स्त्री०) ग्रहणीरोगाधिकारमें औषध विशेष। प्रस्तुतप्रणाली—पारा ८ तोला और गंधक

८ तोला इसका कड़वी बना कर उतना ही भरकर मिखाये। पाउ खेजूर, भृङ्गराज, सम्भ्रातु, चिन्ता, जामा, जयश्री, मंग, श्वेत अषट्कान्ति और पान कुल्ल रम मिला कर ८ तोला तथा मरिचका चूर्ण ४ तोला और सुहागा मन्त्राञ्जल ४ कर इकट्ठक बराबर गोली बनाये। इसका सपन करनेसे कास, श्वास, क्षय बात, अतिसार और प्रह्वणी भादि रोग अति जोष दूर होत है।

(रत्नरत्नसं० महर्षीरामाधि०)

रसाधमण्डुर (सं० ३३०) रसोपधिपियेष। बनानका तराका—पाप, गंधक, भरकर प्रत्येक ४ तोला, पोषित मण्डुरचूर्ण २ पल, इरातकोच्यूर्ण २ पल शिलाजित २ तोला, कान्तनीद १ तोला एकल पास कर भीमराजका रस २ सेर, क्युरियाका रस २ सेर तथा आर्द्राकर ज्योषीगी सम्भ्राम् माणसूल और भरकर, इन सबका रसमें माषला के पीछे धूपमें सुभा कर कुछ गाला रहन लिङ्गदु, लिङ्गजा, यह और मोषा प्रत्येकका चूर्ण २ तोला मिखाये। शत्रुमें मच्छी तरह पास कर भाष ताया का घोली बनाये। अनुपान घो और मधु है। सपन करनेके बाद फिरसे काकूतै यषध्दार डाल कर पान करे। इससे गोषाधि नामा प्रकारक रोग नष्ट हो कर मणि और बन्धकी वृद्धि होती है।

रसाधमण्डुर (सं० ३३०) रसाधमाधिकारमें औषधिपियेष। प्रस्तुत प्रणाली—पाप और गंधक ८ ताता छे कर कड़वा बनाये। पाउे इसमें कसर, भृङ्गराज सम्भ्रातु, चिन्ता गामा, जयश्री म ग, श्वेत अषट्कान्ति और पान का रस ८ तोला मिखाका चूर्ण ४ तोला और धात्रा साहागा, इन्ह एक साथ मिला कर इकट्ठक बराबर गोली बनाये। यह सब प्रकारक रोग उर और प्रह्वणाका नाश करता है। (रत्नरत्नसं०)

रसाधमण्डुर (सं० ३३०) रसोपधिपियेष।

(विद्वत्सं० १०१)

रसाधमण्डुर (सं० पु०) रक्तविधाधिकारमें रसोपधिपियेष। प्रस्तुत प्रणाली—पाप एक भाग, गंधक, माक्षिक, जिनाजित, कन्द, गुठप, हाप, मीरकून, धनिया, म्त्रज, कूटजको पाल, नामका पला, धरका कून, मुन्डा और शान्ति प्रत्येक हा भागको एक साथ पीस कर २ तासका

गोली बनाये। कुछ गाल चूपके साथ इस औषधका सपन करना हाता है।

रसाधम (सं० ३३०) रसाधमाकोऽप्यु यत्न। १ वृक्षासु, जिवापिठ। (रात्रि०) २ बन्ध। (माषम०) (पु०) ३ अणुपेतस, अमनयेन।

रसाधम (सं० पु०) तृणविशेष एक प्रकारको घास।

रसाधम (सं० खी०) पकाशा नामका लता।

रसाधम (सं० पु०) रस रसएव मयति प्राप्नोति इति मय-पणुल। तृणविशेष, एक प्रकारको घास।

रसायन (सं० ३३०) रसा नुर्यं धपनं, सूक्ष्मं पस्पति। १ तक्, मङ्ग। २ कदि, कमर। रसा रसरत्काव्य इत्येत माप्यग्नेऽभनति इत्युद। ३ जराभ्याधिनाशक औषध। इसका लक्षण—

ब्रह्मरत्नाः शक्तिशक्ति वयस्तम्भकर तथा।

पाण्डुत्व दृढत्व तृष्णमग्नं तदवमनम् ॥

रसायनका लेख—

दीर्घनायुश्चमृत्पुंमेषामातमर्षं तद्वयं वषः।

इहेन्द्रवत्तं कान्ति नः। निन्दित्वायम् ॥

न्यक्षेणुप्रखरीरस्य पुस्ता रताम्ब विधि।

म भाति शक्ति शिबे ॥ रत्नगो इत्यदिता ॥ (माषम०)

जिसका सपन करनेसे बुद्ध्या और रोग नष्ट हो कर ज्ञान और मज्जत हाता, शुद्धका वृद्धि होता और भाँधकी उपाति पड़ती है उस रसायन कहते हैं। रसायनका सपन करनेसे परमाणु क्षरणशक्ति, मधा, आरोग्य, बह और इन्द्रियको पटुता तथा शरीरको कान्ति बढ़ती है और ज्ञानोका सा उमङ्ग हाता है। पमप पिरचनादि द्वारा शरीर धापन द्विप बिना रसायनका सपन नहा करना चाहिये। जैसे कपड़में रंग चढ़ानेसे जिस प्रकार यह सुन्दर दिखाई पढी हाता, उसी प्रकार अयोपित शरीरमें रसायनका प्रयोग करनेसे काइ फल नहा हाता। (पाव०)

नेत्ररत्नरसायनाम लिखा है, कि जिस औषध द्वारा जरा और पाषाण नष्ट हाता है उस रसायन कहते हैं। यह ज्ञानाका शुद्धम वा भाँधिरमें सपन किया जाता है। रसायन मयनक पहल पिरचनादि द्वारा कष्टका नाश कर अना उचित है। शरीरका कष्टका मल निष्कास बिना

रसायनका सेवन करनेसे उपकारके बदले अपकार होता है।

सुश्रुतमें लिखा है, कि देवगण जिस प्रकार संताप शून्य हो स्वर्गमें विचरण करते हैं, रसायन सेवन करने वाले भी पृथिवी पर देवताओंकी तरह नीरोग और बलवान् हो कर विचरण कर सकते हैं। इसका सेवन करने से आयु, स्मृतिशक्ति, मेधा, कान्ति, बल, स्वर आदिकी वृद्धि होती है तथा उस पर कोई रोग आक्रमण नहीं कर सकता।

निम्नोक्त व्यक्ति रसायनका सेवन नहीं कर सकते, यदि करें, तो कोई लाभ नहीं होगा :—अनात्मवान्, दरिद्र, प्रमादी, क्रीडासक्त, पापकारी और भेषजापमानो। इनके रसायन नहीं सेवन करनेका कारण है अज्ञानता, अनारम्भ, अस्थिरचित्तता, दरिद्रता, अनायत्तता, अधार्मिकता और औषधकी अप्राप्ति।

रसायनका प्रकारभेद—सबेरे जलकी नास लेनेसे रसायन होता है। इससे पीनस, स्वरविकृति और काग-रोगका उपशम होता तथा दृष्टिशक्ति बढ़ती है। सूर्य उगनेके पहले भरपेट जल पी लेनेसे वातज और पित्तज रोग नष्ट हो कर मनुष्य दीर्घायु होता है। नाक द्वारा जल पान करनेसे तो और भी उपकार होता है। इसे ऊपापान रसायन कहते हैं। अजीर्णरोगमें ऊपापान बहुत उपकारी है।

असगंधका चूर्ण चवन्नी भर ले कर पित्तप्रधान धातुमें दूधके साथ, वायुप्रकृतिमें तेलके साथ, वातपैतिक प्रकृतिमें घीके साथ तथा वातश्लेष्मिक प्रकृतिमें उष्ण जलके साथ १५ दिन सेवन करनेसे रसायन होता है तथा शारीरिक कृशता नष्ट होती है। विडङ्गकी जड़को चूर्ण कर शतमूलीके रसमें ७ दिन भावित करके आध तोला मात्रामें घीके साथ एक महीना सेवन करनेसे बुद्धि, मेधा और स्मरणशक्ति बढ़ती है तथा बलिपलितादि निवारित होते हैं। वर्षाकालमें सैन्धवके साथ, शरत्कालमें चीनीके साथ, हेमन्तमें सोंठके साथ, शीतमें पीपलके साथ, वसन्तमें मधुके साथ और ग्रीष्ममें ईखके गुड़के साथ हरीतकी (हरें) सेवन करनेसे विविध रोगोंकी शान्ति हो कर उत्तम रसायन बनता है। इसका नाम

हरीतकी-रसायन वा ऋतुहरीतकी है। पहले हरीतकी चूर्ण चवन्नी भर सेवन करे, यदि सख्त हो तो २ तोला तक क्रमशः बढ़ा सकते हैं। सैन्धव, सोंठ और पीपल अल्प परिमाणमें हरीतकीके साथ सेवन करना उचित है। अन्यान्य अनुपान हरीतकीके बराबर लेना होगा।

क्रमागत एक वर्ष तक घीके साथ ५, ६ वा १० पीपल सेवन करनेसे रसायन होता है। कुछ पीपलमें पन्नाशकी राक्षको जलमें भावना दे कर पीछे उसे घीमें भून ले। प्रतिदिन छानेके पहले घी और मधुके साथ तीन तीन करके सेवन करनेसे श्वास, काग, शय, शोष, हिक्का, अर्श, प्रवृणो, पाण्डु, शोथ, विपमज्वर, स्वरभङ्ग, पीनस और गुल्म आदि पीडा दूर हो कर आयु बढ़ती है। पहले दिनका छाया हुआ पदार्थ अच्छी तरह पच जाने पर सबेरे एक हरीतकी, भोजनके पहले दो बहेड़ा और भोजनके बाद ४ आमलकी मधु और घीके साथ एक वर्ष तक प्रतिदिन सेवन करनेसे शरीर नीरोग होता है और आयु बढ़ती है। नये लोहेके बरतनमें त्रिफलाका चूर्ण लेप कर एक दिन और एक रात छोड़ दे। पीछे वह चूर्ण मधु और जलके साथ सेवन करे, तो उत्तम रसायन बनता है। आमलकी, कृष्णतिल और भुङ्गराज समान भाग ले कर एक साथ पासे और नियमितरूपसे बहुत दिन तक सेवन करे, तो बाल काले होते, इन्द्रिया सबल होतीं, शरीर नीरोग होता और आयु बढ़ती है। प्रतिदिन सबेरे घी और मधुके साथ हस्तिकर्ण और पलाशकी छालका चूर्ण सेवन करनेसे बल, इन्द्रियशक्ति और आयुकी वृद्धि होती है।

सर्वोपघातशमनाय रसायन—त्रिगुण और विशुद्ध देहवाले व्यक्तिके लिये युवा वा मध्यमावस्थामें रसायनका व्यवहार करना उचित है। अविशुद्ध देह अर्थात् रक्त व्यक्तिके लिये उचित नहीं है। दोषज वा मानसिक कोई भी उपघात उपस्थित हो, तो उसका प्रतिकार तुरत करना चाहिये। पीछे रसायनका प्रयोग हितकर है। शीतल जल, दूध और घी इनमेंसे एक, दो, तीन वा सभी पूर्व-वयसमें (५० वर्षके पहले) पान करके वयःस्थापन करना होता है।

विडङ्गरसायन—विडङ्ग तण्डुलका चूर्ण और मुलेठी

उद्वे जलक साथ यथासाध्य समय करके उद्वे जलका अनुपात करता जाता है। इस प्रकार एक मास तक प्रति दिन सवन करे; अथवा उक्त चूर्णको मधुमि मिला कर मिलाचक काढ़े वा मधु घोर नाचके काढ़े अथवा आमलकीक रस वा गुरुचके काढ़क साथ सेवन करे। पिष्टकृतपुष्पमूलाका इन्ही पाच प्रकारसे प्रयोग किया जाता है। औषध जोर्ण होने पर मूग और भायतेका जूस बिना नमकके तैयार करके उसक साथ घृतमुक भाजन करे। इसमें समी प्रकारक अणके काड़ विगद हो कर धारणाशक्ति बढ़ता है। इस प्रकार प्रति मास सवन करना उचित है।

विष्टकृतपुष्प—एक श्रोत्र परिमित पिष्टकृत तण्डुलको विष्टक पाचका तरह सिद्ध करे। पाक सिद्ध होने पर काथको भवन कर वे, कवक सिद्ध तण्डुलको पास। पीठ मोहक एक मज्जवत बरतनमें इस मधु और जलके साथ मिला कर वर्षाक चार मास तक मसमराशिक मध्य रखना होगा। वर्षा सीतमें पर उस बरतनको बाहर निकाल ल। पहले गरीरको नोषित कर प्रतिदिन सधरे उपयुक्त मात्राम सेवन करना होगा। इस प्रकार एक मास तक सेवन करनेसे गरीरक सभी उद्वेगके कीड़े बाहर निकल आयेगे। दूसरे मासमें पिपासिका तासरेमें अमृत निरुसत, चाँपेमें जल नव और रोम नार्ण हो जात, पाँचघेमें व सब फिरसे प्रालस गुण और मक्षयपिण्ड हा कर अमृत लन है। उस समय शरीर धमानुषिक लक्षणयुक्त तथा सूर्यक समान चमकन लगता है, दूरभयन और दूरदृष्टानकी शक्ति उत्पन्न होता है। मन्त्रका उच्चस्वमोगुण तिरोहित हो कर सत्त्वगुण प्रयत्न होता है। भुजिघर मधुवर्णत्वादा, हाथोक समान बसवान् काढ़के समान वेगवान्, मत्पावर्तित वावन और मी वषके अचिक परमायु होता है। इस अवस्थामे अम्यद्रुक लिये अणुनेत्र, चिन्नपनक लिपे अक्षकण्डपाव, स्नानक लिये साबार वा वृषाङ्क और अनुसपनक लिपे चन्दन काममें माला बाधिये। महातरकक विधानानुसार बाहार का परिस्पात करना उचित है। निष्कुनीद्वत काननर्ष फलका क्वन भा इसा तरह है, परन्तु हममें गयन और भाजनका नियम पूरपन् नही है। एक गुणक साथ

भाजन करना जाता है, इसका फल भी पहलेक जैसा जानना होगा।

बलाकल्प—आधमगृहके मध्य रह कर आच पल वा एक पल अतिबलाका मूल दूधमें आलोडित करके पान करे। ओषे हान पर दूधके साथ घृतात्मन भोजन करना होता है। इस प्रकार बारह दिन सेवन करनेस बारह वष और सी दिन सेवन करनेस सी वषकी परमायु होती है।

इसा प्रकार अतिबला, मागबला और गृतापरोहा चूर्ण भी सवन करे। पिशेषता अतिबलाके काढ़के साथ शशमूलोका चूर्ण पूर्वोक नियमानुसार सवन करनेस भी पहलेक जैसा फल होता है। ये सब रसायन बलकामे, योग्यिनवमनकारी वा नापितबिरेचनशील ब्यक्तिक लिये उगमजनक है।

बराहकल्प—घण्टामाता मूलका एक तोला खुण संमह करे। उस खुणका प्रतिदिन यथासाध्य परिमाणमें मधुके साथ दूधम मिला कर पान करे। ओष होने पर दूध और आक साथ भाजन करना उचित है। इसमें नी पहलेका तरह भाहार और आचारका नियम पालन करना जाता है। इसमें परमायु सी वर्षकी हाती है। इस खुणका दूधक साथ पाक कर उंडा होन पर अच्छी तरह धीरे और घृत मधुके साथ भाजन करे। ओष होन पर दूध और पीक साथ भाजन करना उचित है। इस प्रकार एक मास सवन करनेस सी वर्षका परमायु होती है।

दुष्टिकामा और ब्राह्मिनामिसाया ब्यक्ति मातुलुङ्गसार और अग्निनगधके मूलका एकल काटा बना कर इसमें एक मस्य उडक पाक करे। पाक सिद्ध होन पर चिन्नक मूलका एक अण परिमित कन्क उममें डाल है। पीठे पनुर्ष भाग औषडके रसमें पाक करके नीचे उतार ल। परिपाक हान पर मयपका परिस्पात कर मूग और चाँवके क जूनक साथ घृतमुक अम अथवा दूधके साथ अमन भोजन करे। तीन मास इस नियमका अवसम्यन करनेस सुपर्णका तरह दुष्टि हानो है। स्त्रासदूधसे भा शरीर कमजोर महा जाता तथा सी वषकी परमायु हानी है। वनकनथ दूधम सिद्ध कर दूधक साथ कानेस गरीर नार्ण महा जाता है।

मेघा और आयुष्कामीय रसायन ।

सफेद सोमराजके फलको वृषमें मुखा कर अच्छी तरह चूर्ण करे । पीछे यह चूर्ण गुडके साथ थालोडित कर स्नेहकुम्भमें भर दे और सात रात तक धानकी ढेरमें रख छोडे । बादमें उससे निकाल कर प्रतिदिन सूर्योदय-कालमें गोलाकार पिण्ड बना उष्णोदक अनुपानके साथ सेवन करना उचित है । औषधके परिपाक होने पर म्लान्तकके विधानानुसार अपराहकालमें शीतल जलसे शरीर सिक्त कर शालि वा साठी धानके भात, दूध, गकर और मधुके साथ खाना होता है । छः मास तक इस नियमका अवलम्बन करनेसे उसके सभी पाप दूर हो जाते तथा वह बलिष्ठ, श्रुतिधर, नीरोग और सौ वर्षकी आयुवाला होता है । कुष्ठरोगी, पाण्डुरोगी वा उदररोगीक चाहिये, कि वह सबेरे सूर्यकी लालिमा दूर होने पर इसके आध पलका पिण्ड बना काली गायके दूधके साथ पान करे । जीर्ण होने पर अपराहकालमें लवणवर्जित आमलक जूसके साथ घृतयुक्त अन्न खाना होगा । एक मास तक इस नियमका अवलम्बन करनेसे मेघावी और नीरोग होता है तथा परमायु सौ वर्षकी होती है । चित्रक-मूलका सेवन करनेमें भी यही नियम है, फर्क सिर्फ इतना ही है, कि इसमें दूध और चित्रकमूलका दो पल पिण्ड सेवन करना होता है । दूसरे दूसरे नियम पहलेके जैसे हैं ।

पहले अन्नका परित्याग कर मण्डरूपी रस जहा तक परिपाक कर लके उनना ही ले कर दूधके साथ पान करे । जीर्ण होने पर दूध वा तिलके साथ जो मक्षण करे । इस समय भी दूध ही अनुपान होगा । जीर्ण होनेके बाद घृतयुक्त अन्न खाना होता है । तीन मास इस नियमका पालन करनेसे ब्रह्मनेत्रोविशिष्ट और श्रुतिनिगाद्यो तथा सौ वर्षकी आयु होती है ।

पहले अन्नका परित्याग कर ब्राह्मी रस जहा तक पी सके, पीवे । जीर्ण होने पर लवणवर्जित जीका मांड पीता होता है । जिम्मे दूध पीनेकी आसत हो वह दूधके साथ उक्त यथागू पीवे । इस नियमका सात रात पालन करनेसे ब्रह्मनेत्रोविशिष्ट और मेघावी होता है । फिर दूसरे सात रात इस नियमका पालन करनेसे अभि-

लपित ग्रन्थमें व्युत्पत्ति होती है और कोई हुई स्मृति फिर आ जाती है । तीसरी सात रात इस नियमका पालन करनेसे दो बारके कदनेसे एक सौ बात तक स्मरण रखनेकी शक्ति आ जाती है । इस प्रकार इक्कीस रात नियमका पालन करनेसे अलक्ष्मी दूर होती है, वाग्देवी मूर्त्तिमती हो कर उसके शरीरमें प्रवेश करती है तथा उसे सभी पूर्वस्मृति उपस्थित होती है । वे श्रुतिधर होते तथा पाच सौ वर्ष तक उसको परमायु होती है । ब्राह्मणस दो प्रस्य, घृत एक प्रस्य, विटङ्ग तण्डुल एक कुडव, वच २ पल, विटु दो पल, हरीतकी, आंवला और विमांतकी प्रत्येक १२ पल, इन सब चूर्णको तथा उक्त रस और घीको पफत्र पाक कर इलमें भर कर मुंह बंद कर दे । पीछे पूर्वोक्त विधानानुसार यथासाध्य परिमाणमें सेवन करे । जीर्ण होने पर दूधके साथ घृतयुक्त अन्न भोजन करे । इसके द्वारा शरीरके ऊर्ध्व, अव और तिर्यक् भागसे कीडे निकलते हैं तथा इससे अलक्ष्मी नाश, स्थिरयौवन, श्रुतिधर और तीन सौ वर्ष परमायु होती है । कुष्ठरोग, विषमज्वर, अपस्मार, उन्माद, विष, भूतग्रह और महाप्राधि आदि रोगोंमें यह रसायन प्रयोज्य है ।

हैमवती वचका आंवलेके बराबर पिण्ड बना कर दूधके साथ पान करे, जीर्ण होने पर दूधके साथ घृतयुक्त अन्न खाना होगा । बारह रात सेवन करनेसे स्मृति-शक्ति बढ़ती है, कोई विषय दो बार अभ्यास करनेसे ही हृदयङ्गम हो जाता है । ४८ दिन सेवन करनेसे यह सभी पापोंसे मुक्त होता, गरुड़-सी उसकी दृष्टि और सौ वर्ष परमायु होती है । हैमवती वचको छोड अन्य प्रकारका वच होनेसे उसका दो पल ले कर काढा बनाना होगा । यह काढा दूधके साथ पीना चाहिये । भोज-नादिका नियम और फल पहलेके जैसा जानना होगा ।

द्रोणपरिमित घृतको वचके साथ एक सौ बार पाक करके सेवन करनेसे परमायु पाच सौ वर्षकी होती है । यह रसायन गलगण्ड, अपची, श्लोषद और स्वरभङ्ग आदि रोगोंमें बहुत उपकारी है ।

विल्वपुष्पसे हजार बार हवन करके स्वर्णसहित घी मधुके साथ प्रतिदिन मन्त्रपूत करके चाटे । यौवनकाल-

में एक वर्ष तक रसायनका नियम पालन करना होता है। प्रातःकाल स्नान करके बेचका जड़का छिलका और बाड़ा दूधक साथ सवन करे। चित्तसंयम करके इस नियमका अवलम्बन करनेसे हृत्कार वर्षको आयु होती है। सुवर्ण, पद्मयोग, मधु, माष और सिर्गु एकत्र करके गायक दूधके साथ पान करनेसे अत्यन्त दूर होता है। मोमोत्पलकका मषाघ सुवर्ण और तिलपत्रक गायक दूधके साथ पान करनेसे अत्यन्त दूर होता है। गायका दूध, सुवर्ण, मधुपिष्टक और मासिक सौ हृत्कार बार हवन करके इन्ह एक साथ पान करे। बच्च, पूत और विद्वच्छूर्णका एकत्र पर सवन करनेसे मेषा, भायु धारोप, पुष्टि और सीमागवधी सिद्ध होती है। तुला परिमित मधुसक मूलका काड़ा बना कर नेत्रमें पाक करना होगा। हृत्कार बार हवन करके यह तन सयत करनेसे मेषा और भायुका पुष्टि होती है। पद्म और वाओत्पलक काड़ेमें मुष्टिकाके शूर्णक साथ पूत पाक करके सुवर्ण सहित सेपन तथा इन सब द्रव्योंके साथ गुग्गु पाक करके पान करे। इन सब रसायनके भी और सीमाग्य बढ़ता है। हाथाक समान बस और मनुष्य इष्टगुण होता है। नर्गशा मध्यपन, उम विषयका बाड़ा नुवाद् और अम्याम्य गार्कोकी आलोचना, आषास्यसवा इन्से भी बुद्धि और मेषा बढ़ती है। शोर्ण हान पर भाजन, मलमूलका वेगधारण नहो करना, प्रद्वर्ष, अहिता और बुभ्साहमिक कर्षक परिष्कार इन सबके भी आयुका बुद्धि होती है।

लाभार्थिक श्लेषद्विषेयकोष रक्षण ।

पूर्वकालमें प्रद्वार्थि हवताओनि जरामृतयुतागक सिष सोम नामक रसायनको सुष्टि हो पो। इसक सवनका विषय गात्रने इस प्रकार लिखा है,—

यह सोम रूपाय, नाम, भास्वति और वायक भेदके २४ प्रकारका है, जैस—अशुमान, मुद्धमान, पद्मप्रम, रजतप्रन शूर्ण, सीम कजावान, रवेनास, कनकप्रन, प्रताकपाय, तामगुण, करपोर म गयान, लवण्य, महासाम, गदहा हन, मावना शैष्टुम्, पाठक, जागठ, गाम्द, म न घाम, रवेत, मावना और श्नुगति। ये सब सोम यशक साम कहलाते हैं।

उनमेंम क्रिमा एक प्रकारका सोम सवन करनेमें एक भाधमयूह बनाता होता है। पहले शरीरको संतोषन कर लेने में अशुमान, ल कर भाधमयूहन नामक रसायन अत्यन्त भविषेवन और हवन करने होता है। अत्यन्त दूर उस सामकन्दको नामका गुग्गु अत्यन्त सामक वरत्तनेमें मन्त्रिण परिर्तन। उसका दूध अत्यन्त दूर। यह दूध आसा शान्त करके एक ही साथ पा जाना होगा। भाधमन क बार बधा लुधा दूध उतम फक रना होता है। अनन्तर यम नियम द्वारा मन और पाकको संचित कर भाधमके भातर अपने दोस्त मित्राक साथ विहार करे। रसायन पार्थक गद्द वायुगुग्गुस्यवानम पयिक हृदयसे विचरण करे, पर मूषस भा ग सोध ।

यह सोम रसायन यदि सार्वकालमें सवन किया जाय ता कुशागप्याक रूपर कृष्णाग्नि विद्या कर इसी पर मो रह, उस समय उमक मित्रोंका भी यहाँ रहना आवश्यक है। प्यास लगने पर थोड़ा पाना गो सकेने है। पाछे प्रातःकाल बिछावन परम उठ गामिनिवाषय ध्रषण करके गाल्यश करना होगा।

सोमरसायन शोर्ण होने पर यमन होने लगता है। शोचिताक कृमिमिधित यमन होनेसे शामको पाक क्रिया हुआ ठंका दूध पीना हाता है। सोसरे दिन कृमिमिधित विरचन होता है। इससे शरीर समो पोषोस मुक्त हो विगापित हाता है। पीछे गामका स्नान करके पहले की तरह दुग्ध पान तथा गज्या पर रोगो वल्ल विद्या कर गपन करना होता है। अनन्तर पाँचे दिन शरीर सूत्र भाता है उस समय मवाङ्गस काडे निकलन हैं। इस दिन पागु निर्दोषी गंधरा पर सोना उचित है। फिर गामको पहलेका तरह गुग्गुपान करना होता है। पाँचवें उठ दिन भा रसो विषयका पालन करना चाहिये। परन्तु प्रमेद रतना हा है कि इसमें पदतको तरह शोर्ण गाम दूध पाना होता है। सातवें दिन रह मासहोम, त्यक और अरिष्यमार हाता है। इस दिन कुष्ठ गरम दूधन रह परिषयन, तिल मुक्तडा और चन्दनका धनु उतम तथा गुग्गुपान करना हाता है। आठवें दिन सवरे इदम गुग्गुपरिषयन, चन्दनगुग्गु भात गुग्गु पान

करके पाशुंशय्याका परिन्याग करे और विस्तृत गय्या पर सोवे। इसके बाद मासृद्धि होने लगती है, दन्त, नख और रोम गिर पड़ते हैं। नवें दिनमें अभ्यङ्गमें अणुतैल और परिपेचनमें सोमवज्र (सफेद गैर) का व्यवहार करे। बारह दिन तक इस नियमका पालन करना होता है। इसमें त्वक्की स्थिरता होती है। तेरहवें दिनसे ले कर सोलहवें दिन तक इस नियमका पालन करना होना है। इसमें त्वक्की स्थिरता होती है। तेरहवें दिनसे ले कर सोलहवें दिन तक केवल सोमवज्रका कृपाय परिपेचनके काममें लाना होगा। अनन्तर सत्तरहवें दिन वा अठारहवें दिन मणिमुक्ताके सदृश मजबूत दान निकल आते हैं। पच्चीसवें दिन तक चावल सहित दूधमें यदागू पाक करके सेवन करे। पच्चीसवें दिनके बाद दूधके साथ भात खाना होगा। इससे लाल नाखून और चिकने तथा काले बाल निकलते हैं। चमड़ा कमलके जैसा चमकने लगता है। एक मासके बाद केशको मुड़ा कर पसलसकी जड़, चन्दन और कृष्णतिल शरीरमें लगाना तथा दूधसे स्नान करना होता है। पीछे सात रातके बाद औरके समान चिकने, काले, घुघराले बाल निकलते हैं। उसके तीन रातके बाद आश्रमके प्रथम आवरणसे निकल कर क्षण भर वहा ठहर फिरसे प्रवेश करना होगा। इसके बाद उला तैल अभ्यङ्गमें, पिष्ट यव उद्धर्तनमें, कुल गरम दूध परिपेचनमें, शालवृक्षका कृपाय उत्पादनमें, सौवीर वा कूपोदक स्नानमें, चन्दन अनुलेपनमें, आमलकरस-मिश्रित यूप या सूप तथा पृष्टिमधुके साथ कृष्णतिल सिद्ध आवचारणमें प्रयोज्य है। इस नियमसे एक मास तक चलना होता है। इस समय दर्पणमें मुंह देखना मना है। पीछे और भा द्वा दिन क्रोधादिका परित्याग कर सभी प्रकारके भोजन कर सकते हैं।

वल्लीप्रदान और क्षुप या लता, इन सब आकारका सोममक्षण उत्तम है। इस सोमरसायन सेवनका परिमाण साढ़े तीन मुष्टि बताया गया है। अंशुमान् सोम स्वर्णपात्रमें तथा चन्द्रमा रजतपात्रमें अभिपेचनपूर्वक सेवन करना होता है। इससे अष्टैश्वर्य और ईजानतवलाभ होता है। बाकी सभी प्रकारका सोमरसायन

ताम्र वा मृण्मय पात्रमें भक्षण करना उचित है। शूद्रको छोड़ कर बाकी तीनों वर्ण सोमपान कर सकते हैं। यह रसायन पान कर चौथे महानेमें पूर्णमासां निधिको पवित्रस्थानमें ब्राह्मणोंकी अर्चना कर आश्रमगृहमें निकलना होगा।

औषधोंके राजा सोमरसायनका सेवन करनेसे द्वा हजार वर्षकी परमायु हांती है। अग्नि, जल, विप, शास्त्र वा और किसीमें भी उनका आयुक्षय नहीं होता। हजारों हाथीका बल उनमें आ जाता है। वह अप्रतिहत, क्रन्दपके समान और चन्द्रमाके समान रूप कान्तिविशिष्ट होता है। उसका दर्शन करनेसे मनुष्योंका मन प्रमथ रहना है। साङ्गोपाङ्गविशिष्ट निमित्त वेद उसके आयत्त होते हैं तथा वह व्यक्ति देवताके समान अमोघ-सकल्प हो कर अखिल जगत्में विचरण करता है।

सभी प्रकारके सोममें पन्द्रह पत्ते होते हैं। वे सब पत्ते शुक्रपक्षमें उत्पन्न होते और कृष्णपक्षमें ऋद्ध जाते हैं। शुक्रपक्षमें प्रति दिन एक एक पत्ता करके उत्पन्न हो कर पूर्णमासीके दिन पन्द्रह पत्ते पूरे होते हैं तथा कृष्णपक्षकी प्रतिपत्से प्रति दिन एक एक पत्ता करके ऋद्ध कर कृष्णपक्षके शेषमें केवल लता रह जाती है।

अंशुमान् सोम घृतगधविशिष्ट और रजत प्रभ क्रन्दविशिष्ट है। इस क्रन्दका आकार कदलीके जैसा होता है। यह मुञ्जमान् लहसुनके जैसा पत्र-विशिष्ट, चन्द्रमा कनकके समान आभायुक्त और सर्वदा जलमें उत्पन्न होता है। गरुडाहत और भ्येताम्र देखनेमें दोनों ही सापके के चुल जैसे मालूम होते हैं तथा वृक्षके आगे लम्बे हो जाते हैं। अन्य सभी प्रकारके सोम विचित्र वर्णके मण्डलसे चित्रित होते हैं। सभी प्रकारके सोमोंमें पन्द्रह पत्ते रहते हैं।

हिमालय, सह्य, महेंद्र, मलय, श्रीपर्वत, देवगिरि, देवसह, पारिपाल और चिन्ध्य इन सब पर्वतों पर तथा देवसुन्द नामक हृदमें, वितस्ता नदीके उत्तर जो पर्वत है उस पर ये सब सोम पाये जाते हैं। चन्द्रमा नामक सोम सिन्धु नामक महानदमें बहता है। यहाँ मुञ्जमान् और अंशुमान् भी पाये जा सकते हैं। काश्मीरमें क्षुद्र मानस नामक जो दिव्य सरोवर है उसमें गायत्री,

सौष्ट्य, पाक, जाग्रत और गच्छत तथा मर्याम्य साम मी पाये जाते हैं। अपार्थिक हृत्पन्न, बैद्यरोपी वा शेष प्राण्यजैषी ये सब मनुष्य नान नहीं देख पाते।

निवृत्ततासीन रक्षणम्।

श्रेयगण जिस प्रकार सन्तापयुग्मव हो स्वर्गमें विचरण करते हैं निम्नोक्त औषध रसायन निम्नमस मनुष्य भी उसी प्रकार वृषिषी पर विचरण कर सकन हैं।

रासायनिक औषध ये सब हैं—श्वेतकापोती, कृष्ण कापोती, गोगसी, पाराही, बभ्या, छत्रा, मनिषत्रा, करेणु, मन्ना चक्रका भास्वियार्णिनी श्लक्षुबर्धक, ध्रायणा, महाभाषणी गोकुलोमी मन्त्रलोमा महावेगपती, ये भद्राह्र सोमहृत्त्व्य पीयै-विशिष्ट महीषय नहसाले हैं। माधममं प्रियुषो हो कर क्षी युक्त औषध पत्र साय पान करना होगा। जो सब औषध क्षीरहान मूलविशिष्ट हैं उनके प्रशैशिमी प्रमाणके लीन काष्ट्रु भाने होंगे। श्वेत कापोतीका मूल और पत्ता ममन पाना होता है। गोनसी, मन्त्रगरी और कृष्णकापोती इन्हे मा खण्ड चष्ट्रु करके सनक्ष मुषिप्रमाणमं प्रणय कर रूपमं सिद्ध करता होगा। पीछे रूपका स्नायित कर एकही समय पान करना उचित है। चक्रकार युग्म सिर्फ एक बार पीना होता है। श्लक्षुबर्धका सात रात सयन किया जाता है।

ये सब रसायन संघन करनेमें शरीर युवाकं सङ्ग, सिद्धिविद्वान्त तथा मनोहर होता तथा परमायु देा मी वर्षका होती है।

ये सब रसायन औषध निम्नोक्त सङ्गण द्वारा स्थिर किये जाते हैं। कपिलधर्मक विचित्र मरुदसविशिष्ट पञ्चपत्र सर्वाकार तथा पञ्च भर्तृप्रमाणय तक भेजे होते हैं। इनका नाम भद्रगरी है। ओ निष्पन्न, कनककी तरह भासाविशिष्ट, शैः अगुल पतिमित मूल सर्वक जैसा भाकार और मन्त्रमाग सेहितर्षण होता उसे श्वेतकापोती कहते हैं। द्विपत्ते, मूत्रजाता, मन्त्रवर्षण, कृष्णपण मरुदसविशिष्ट, र्शुः भर्तृप्रमाण हीर्षा और गोलम सा भाकृतित हानेसे इस गोलमी, मन्त्रोरी, रोम युक्त, सूत्रो और इक्षुरमको तरह रसविशिष्ट होनेसे उस कृष्णकापोती, चक्रपत्रा, महापीपै, मन्त्रप्रमा, चष्ट्रु

जाता और श्वेतकापोतीमें संस्थिता होनेसे इस छत्रा और अतिच्छत्रा कहते हैं। इन दोनोंके बक्षय एकसे होते हैं। इनके द्वारा चक्र और मृग्यु भाने नहीं पाती। मयूक्ता पूछका तरह सुम्बर बारह पत्र विशिष्ट, कन्द् जात और स्वर्णवर्ण क्षीरविशिष्ट हानसे उस कम्पा, द्विपत्ते, हस्तिकर्णा, पत्तानक जैसे पत्रयुक्त, मधुर क्षीर विशिष्ट और गन्नाकृति कन्द् होनेसे उसे करेणु, मन्नाके स्तनक सङ्गण कन्द्, सक्षीरा, चष्ट्रु वा शङ्कु जैसा सफेद और छोटे पृक्षकी भाकृतितविशिष्ट होनेसे उस भद्रा, श्वेतवर्ण, विचित्र पुष्पविशिष्ट तथा काकावनीकी तरह छैटा गुल होनेसे उसे चक्रका कहते हैं। भास्विय पर्णिनी—मूलविशिष्ट कामक, रक्तपण पञ्चपत्रविशिष्ट और सर्वदा सूर्यकी अनुपत्तिनी भर्षात् जिस और सूर्य रहते हैं उसी और कुकन कनक सौ भासाविशिष्ट, सक्षीर और श्वेतनेम पद्मिनीकी तरह तथा जैा वर्षक वायु उत्पन्न होती और पारो और फील जाती है उस प्रक्षुबर्धकना कहते हैं। भर्तृप्रमाण वृक्ष, शैः अगुल पतिमित पत्र, नोक्षैत्यक सङ्गण पुष्प और मन्त्रसमिभन फल जिसका पत्ता है उस ध्रायणी, ये सब लक्षणयुक्त, कनकवर्ण विशिष्ट और पाष्ट्रुवर्ण होनेसे उसे महाभाषणी कहते हैं। गोकुलोमी और मन्त्रलोमी रोमविशिष्ट और कन्द् सम्भूता जाती है। ये ज्वरी बहती ईसपदी मत्ताकी तरह इसमें पचे हात वेकनमें यह सापके क सुखमा जाती और यषाक मन्त्रम उगता है।

ये सब रसायन औषध पवित्र हो कर निम्नलिखित मन्त्रसे उद्घात होत हैं। मन्त्र इस प्रकार है—

"मन्त्रेश्वरान्कृष्णायान्नां मन्त्रयन्त्रानामपि।

तन्ना तन्ना वापि मन्त्रमन्त्र विगाय व ॥'

(बुधव कल्पत्था ३१ प ५०)

भद्राहोम, भक्षस, हृत्पन्न और पापी ध्यक्ति ये सब औषध द्धने नहीं पात।

शैयसुम्भ नामक इक्षुमें, सिग्यु नामक महाइक्षुमें और पर्षाक मन्त्रमें यह औषध पाया जाता है। उनक बासमें प्रक्षुबर्धका पढता है। उक्त दानों मन्त्रम हमन्त्रक शयन भास्वियपर्णिना मार यषाक प्रारम्भम गानसा मिसला है। काममात्प्रदेशमें क्षुद्रमानस नामक विध्वन सरोपयं करेणु,

छत्वा, अतिलज्जा, गोलोमी, अजलोमी और महाश्रावणी पाई जाती है। वहा वसन्तकालमें कृष्णवर्ण नामक गोनसी भी देखनेमें आती है। कौशिकी नदीके दूसरे किनारे पूरवकी ओर तीन योजन भूमि तक बलमीक फैला हुआ है। बलमीकके ऊपर श्वेतकापोती उत्पन्न होती है। मलय और नलसेतु नामक पर्वत पर वेगवनी नामक औषध देखनेमें आता है। कार्मिक पीर्णमासी निधिमें उपवास करके इस रसायनका सेवन करना उचित है।

(सुश्रुत कल्पस्था० २६-३१ अ०)

भावप्रकाशमें इसका विषय यों लिखा है—मधुके साथ बंशलोचन वा सैन्धवके साथ पीपल अथवा चीनीके साथ त्रिफला सेवन करनेसे रसायन होता है। आध पाव रक्त पुनर्णाचा पीस कर दूधके साथ १५ दिन पान करनेसे बूढा भी जवान होता है। भृङ्गराजका रस मोथेके साथ एक मास पान कर पीछे दुग्धपान करनेसे बल-वीर्यसम्पन्न हो एक सौ वर्ष जीवित रहता है। शतमूली, मुण्डीरी, गुलञ्च, हस्तिकर्णपलाश और तालमूली इन्हें पीस कर घी और मधुके साथ चाटनेसे मरणापन्न मनुष्य भी बलवीर्यसम्पन्न होता है। पित्ताधिक्य व्यक्ति असंगंध का चूर्ण दूधके साथ, वातपित्ताधिक्य व्यक्ति घृतके साथ, वाताधिक्य तेलके साथ और वातकफाधिक्य उष्ण जलके साथ पन्द्रह दिन सेवन करे, तो उसके बल और वीर्यकी वृद्धि होती है। जलसिञ्चन द्वारा जिस प्रकार शस्यवृद्धि होती है उसी प्रकार उसका शरीर परिपुष्ट होता है। लोहा आध पाव, गुग्गुलु डेढ पाव, त्रिफला १ सेर इन सब चूर्णको एक साथ मिला कर प्रतिदिन २ तोला करके चाटनेसे दीर्घायुलाभ होता है। (भावप्र०)

जो विविध रसायनका सेवन करते, वे केवल दीर्घायु ही लाभ नहीं करते वरन् देवर्षिनिषेवित अक्षर ब्रह्मपदकी भी पाते हैं।

मैषज्यरत्नावलीमें रसायनका विषय इस प्रकार लिखा है, अन्नादि परिपाकके बाद एक हरीतकी, भोजनके पहले २ वहेडा और भोजनके अन्तमें ४ आमलकी घी और मधुके साथ खानेसे रसायनक्रिया साधित होती है जो यह त्रिफला रसायन एक वर्ष तक सेवन करता, वह जरा और व्याधिसे मुक्त हो कर सौ वर्ष तक वचता

है। एक मास यथायोग्य मात्रामें भृङ्गराज रस और दूध पान करनेसे बल, वर्ण और आयुकी वृद्धि होती है। दूधके साथ मुलेडोका चूर्ण, मूल और पुष्पके साथ गुलञ्चका रस तथा चोरकंकोलीका कदक, यह रसायन आयुप्रद है। यह रोगनाशक तथा बल, अग्नि, वर्ण और स्मरणशक्तिवर्द्धक है। पन्द्रह दिन तक दूध, घी, तेल वा गरम जलके साथ असगंधका काढ़ा पीनेसे देहकी पुष्टि होती है। आमलकी और तिलकी भृङ्गराजके रसमें पीस कर सेवन करनेसे बाल काले हो जाते, इन्द्रियां निर्गल होती, सभी प्रकारके रोग नष्ट होते तथा आयु बढ़ती है। विडङ्गके मूलचूर्णको शतमूलोके रसमें ७ बार भावना दे कर २ तोला मात्रामें घीके साथ सेवन करनेसे बुद्धि और मेधाकी वृद्धि होती तथा बलिपलितादि नष्ट होते हैं। हस्तिकर्ण पलाशकी छालका चूर्ण घी और मधुके साथ प्रतिदिन सवेरे खानेसे बल, वीर्य, इन्द्रियशक्ति और आयुकी वृद्धि होती है। आमलकीचूर्ण ८ सेर, घी ८ सेर, मधु ८ सेर, पीपल १ सेर, चीनी २ सेर इन्हें एकत्र मिला कर राखने रखना होता है। पीछे उसमेंसे निकाल कर शरत्कालमें सेवन किया जाता है। उपयुक्त मात्रामें सेवन करनेसे बलिपलितादि नष्ट होता तथा बलवीर्यादिकी वृद्धि होती है। गुलञ्च, अपाङ्गमूल, विडङ्ग, चोरकंकोली, वच, हरीतकी, सोंठ और शतमूली प्रत्येकका समान चूर्ण ले कर घीके साथ सेवन करनेसे स्मरण शक्ति बढ़ती है। इसके सिवा ऋतुहरीतकी, निर्गुण्डीकदक, भृङ्गराजादि चूर्ण, श्रीमृत्युञ्जयतन्त्रोक्त अमृतवर्तिका, श्रोसिद्धमोदक, वसन्तकुसुमाकर, अष्टावक्ररस, त्रैलोक्यचिन्तामणि, पूर्णचन्द्ररस, श्रीमहालक्ष्मीरस, आदि औषध रसायनमें बहुत उत्तम है।

(मैषज्यरत्ना० रसायनाधि०)

रसेन्द्रसारसंग्रहमें लिखा है,—

“सुस्थस्योजस्करं किञ्चित् किञ्चिदार्त्तस्य रोगनुत् ।

यज्जराव्याधिविध्वंसि मेघजं तद्रसायनं ॥”

(रसेन्द्रसारस०)

नीरोग व्यक्तिके ओजस्कर और रोगीके रोग निवारक तथा जराव्याधिनाशक औषधोंको रसायन कहते

हैं। उन औषधोंक नाम ये हैं—भ्राम्मणधरस, महेम्बर रस, पूष्यचन्द्ररस, कार्द्वीहरमीह जङ्गमाविभासरस, भोक्रामदेवरस, अनङ्गसुन्दररस, हेमसुन्दररस, ममृता-णवरस, चन्द्रोदयरस मकरध्वज, वसन्ततिलक वसन्त कुसुमाकररस, मोलङ्गण्डरस। ये सब औषध रसायनों बहुत प्रशस्त और आशुफलप्रद हैं।

(रत्नेन्द्रतरस० रत्ननाथि०)

घरकसहिताने रसायनका विषय विलुप्त भावमें आच्छिन्न हुआ है, पर यहाँ संक्षेपमें दिया जाता है। नीसोगीक भोजनरस और रोगीके रोगनिवारक मन्स औषध हो प्रकारका है। इन दोनों प्रकारके औषधोंमें जो औषध मुख्य ब्यक्तिक भोजनरस है उसके भी दो भेद हैं, पूष्य और रसायन। दोनों ही भोजनरस औषध रोग-निवारक हैं। किन्तु रसायन औषध प्रैसा सभी रोगों को भाग्य करते हैं वेसा यह नहीं करता। पूष्यमें रोग भाग्यकी बहुत थोड़ी शक्ति है।

मनुष्य रसायन सवन द्वारा दीर्घायु, स्मृति, मेधा, आरोग्य, ठरुणावस्था, प्रमा, वर्णहरकी पुष्टि, देह और हृत्प्रका बल याकसिद्धि, मज्जा और कामि ये सब काम करते हैं। प्रशस्त रसादि घातुओंका अयन अर्थात् सामोपाय है, इसीसे इसका रसायन नाम हुआ है। भ्रमरोंका जिस प्रकार ममृत था, भोगवान्को जिन प्रकार सुधा था, महर्षियोंका उसी प्रकार रसायन था। रसायन सेवन करनेवाले अर्थात् सेवा हृत्कार वर्ष जोते थे। इतने समय उन्हें किसी प्रकारका रोग नहीं सताता था। रसायन सवन करनेसे कवन दीर्घायु हो काम होता है, सा नहीं, चिधिपूर्वक प्रै रसायनका सवन करते, ये देवर्षि निवेदित शुभगतिका प्राप्त हाते हैं तथा निर्वाण मुक्ति साम करते हैं।

रसायन सेवनके साधारणतः दो भेद कइ गये हैं,— कुडीप्राथेनिक प्रयोग और वातप्रतिक प्रयोग। वायव्य पित्त परका कुडीपद कइते हैं।

कुडीप्राथेनिक विधि जहाँ किसी प्रकार भयकी भाग्य न रहे, यहाँ वैद्यादि रदनक निध एक सुन्दर घर बनाना होगा। जहाँ रसायनप्रयोगा समा उपकरण निज सकते हैं, यहाँ पूर्व और उत्तर दिशामें अच्छी जमान

वृक्ष कर एक कुटी बनानी होगी। यह कुटीगृह अन्ना और ऊचा तथा जिनमें रहे। (घरके भातरका घर, उसक भा भीतरका घर फिर उसक भी भीतरका घर जिनमें कहलाता है) घरके ऊपरों मागमें छोटे छोटे फरोले रहने चाहिये। नीयें मजबूत रहे तथा घर जैसे स्थानम बना रहे जहाँ मानो सभी श्वेतुओंम सुखजनक, परिष्कार परिष्कार और मनो हर हों। अशुभकर शब्दादि माना उसमें घुसने न पाये। यहाँ शिवोंका माना वर्जित कर दे। अनिमपित्त उपकरण सामग्री तथा वैद्य औषध और प्राण्य सर्वदा बिद्यमान रहे।

इस प्रकार सर्वाङ्ग सुन्दर घर बना कर उत्तरायणमें, शुभपक्षमें, प्रशस्त तिथि, मज्जा और करणयोगमें, क्षौर कर्म करके, मनका विकार दूर कर और सभी प्राणियोंमें एक सा भाष रचत रूप पहले गणेशादि देवपूजा और पीछे प्राण्योंकी पूजा करे। अनन्तर प्रशिक्षण करके इस कुटीगृहमें प्रयोग करना होगा। कुटीगृहमें प्रवेश करनेक पहले वमनबिदेवनादि द्वारा विशुध हो फिरसे ताकत जानक सिधे रसायनका सवन करना उचित है।

जो सामर्थ नातोग, धोमाद, संयत्ताहमा, क्षमावान् और धन जनादिस साम्य है उन्हीके लिये कुडीप्राथेनिक रसायनविधि विवकर है। दुम्बरेक लिये वातातपिक रसायनविधि उपकारक है।

रसायनविधिका पालन न कर सकनेस यदि कोई रोग श्पयन्त हों, तो रसायनका रथाग कर उन्ही रोगकी चिकित्सा करना उचित है।

सरयवादा, अग्रध, मयमेंशुनयित महिहाक, भ्रम रहित प्रशान्त, मियवादा, जप और शीज्यपरायण, धार, शान्तोस, तपस्वा इत्या, गाम्राह्यण भाचार्यादिकी सधाम निरत सर्पदा आशुर्ह्यपरायण, काकल्पवत्ता, नातिजगण्य और नातिनित्रादीन्, दुग्धपूतजोमे, दश कानप्रमाणक, युक्तिक, अनह एत इत्यादि गुणांस युक्त ब्यक्ति है। रसायनसवनक अधिकारी है। उक्त सभी गुणांस युक्त हो जो रसायनका सवन करत है व रसायनका सभी फल पात है। शापारिक भार मानसिक

दोप दूर क्रिये विना जो रसायन सेवन करते हैं, वे कभी भी रसायनके यथोक्त गुण पा सकते।

स्नेह और स्वेद द्वारा स्निग्ध और खिन्न हो हरीतकी, सैन्धव, आमलकी, गुड, वच, विडङ्ग, हरिद्रा, पीपल और सोंठ इनका चूर्ण गरम जलके साथ पीना होगा। इसके द्वारा शरीर सशुद्ध होनेसे पेयादि क्रमसे पथ्य देना होता है, पीछे भूख लगने पर तीन दिन, पाँच दिन वा साताह तक अर्थात् जब तक कोष्ठ साफ न हो तब तक पुराना यवागू घीके साथ पान करना होगा। इसके बाद कोष्ठ साफ हो गया है, ऐसा माल्टम हो जाय, तो अचस्था, प्रकृति और सात्त्व्य (बल)-के अनुसार जिसके लिये जो रसायन उपयोग हो उसे वही रसायन देना होगा।

ब्राह्मरसायन -शालपर्णी, बृहती, पिठवन, कंटकारी और गोखरू, वैलकी छाल, गनियारीकी छाल, गंमारोकी छाल, पडहारकी छाल, पुनर्नवा, मूँग, उडद, विजवंद और रेंडीका मूल, जीवक, ऋषभक, मेदा, जीवन्ती, शतमूली, शरमूल, ईलका मूल, कुणमूल, काशमूल और शालिमूल, प्रत्येक मूल १० पल करके कुल ५० पल लेना होगा। हरीतकी १ हजार, नया आवला ३ हजार इन्हें दश गुने जलमें सिद्ध कर दशमाश रहते उतार ले। हरे और आवलेकी गुठलीको फेंक कर उसे अच्छी तरह पीसे और काढ़ेमें घोल दे। पीछे उसमें ३२ सेर तिलतैल और ४८ सेर गायका घी मिला कर तावेके वरतनमें धीमी आँचमें पकावे। आसन्न पाकमें दन्तिमूल, पीपल, शखपुपी, कैवत्तमोथा, विडङ्ग, रक्तचन्दन, अगुरु, मुलेठी, हल्दी, वच, नागेश्वर और छोटी इलायची प्रत्येकका चूर्ण चार पल और मिसरीका चूर्ण ११ सौ पल डालना होगा। गाढ़ा होने पर उतारना होता है। पीछे ठंडा होने पर उसमें ४० सेर मधु मिला कर घीके घड़ेमें रखना होगा।

यह रसायन अच्छी तरह तैयार कर ऐसी मातामें सेवन करना होगा जिससे इसका सेवन करनेसे आहारमें किसी प्रकारका व्याघात न पहुँचे। पीछे औषध परिपाक होने पर दूधके साथ साठी धानका भात खाना होगा। वैद्यानस, बालखिल्य और अन्यान्य तपस्विनी

इस रसायनका सेवन करके अपरिमित आयु उत्तम तृणावस्था प्राप्त की थी। आयुष्काम ध्यकि इस ब्राह्मरसायनका सेवन कर दीर्घायु, गीतातपसहिष्णु, यौवन और अमिलपित कामना लाभ करते हैं।

पूर्वोक्त गुणान्वित एक हजार आवलेकी दूधकी भापमें सुसिद्ध करना होगा अर्थात् एक बड़ी हाडीमें दूध रख कर उस हाडीका मुह कपडे से बंद कर दे और कपडेके ऊपर आवला रख कर हाडीके नीचे आच दे। आच देते देते दूधकी भापसे आवला सिद्ध हो जायगा। पीछे उस आवलेकी गुठली फेंक कर छायामें सुखा कर चूर्ण कर ले। अनन्तर दूसरे आवलेके रसमें उस चूर्णको ७ वार भावना दे। बादमें शालपर्णी, पुनर्नवा, जीवन्ती, गोखरू, आलकुशी, मण्डूकपर्णी, शतमूली, शंखपुष्पी, पीपल, वच, विडङ्ग, गुलञ्ज, रक्तचन्दन, अगुरु, मुलेठी, मौलसरीका फूल, नोलोटपल, पद्म, मालती, श्रियंगु और जूही, इन सबका चूर्ण आवलेके चूर्णका आठवा भाग ले कर उसमें मिला है। कुल चूर्णको गोखरूके रसमें भावना दे कर छायामें सुखा लेना होगा। इसके बाद उसमें दूना घी और मधु मिला कर बेरकी गुठलीके बराबर गोली बनानी होगी। ये सब गोली घीके घड़ेमें रख कर जमीनके अंदर गाढ़ दे और ऊपरसे राख ढक दे। एक पक्षके बाद उस वरतनको निकालना होगा। अनन्तर उस औषधमें अष्टमांश विशुद्ध स्वर्ण, रोष्य, ताम्र, प्रवाल और लौहचूर्ण मिला कर अग्निके बलानुसार पहले दिनके औषधका परिमाण स्थिर कर प्रतिदिन एक तोला वा उससे कम बढ़ावे। प्रातःकालमें यथाविधान सेवन करना होगा। औषध परिपाक होने पर दूध और घीके साथ साठी-धानका भात खाना होगा। इस रसायनका सेवन करनेसे पूर्वोक्त सभी गुण पाये जाते हैं।

हरीतका-रसायन—हरीतकी, आमलकी, विभोतकी, पाँच प्रकारके मूलका काथ, पीपल, मुलेठी, मौलफल, कंकोली, क्षीरकंकोली, अलकुशीका बीज, जीवक, ऋषभक, क्षीरविदारो इन सब द्रव्योंका कलक, भाठ गुने दूध, ६४ सेर भूमिकुम्भाण्डका रस। यथाविधान इस घीका पाक करना होगा। अग्निके बलानुसार इस घीका सेवन करे। पीछे घी परिपाक होने पर घी और दूधके साथ

साठो धानका मसत जाना होगा। अनुपात गदम अन्न बढ़ाया गया है। यह रसायन खेती करनेसे जरा, ब्याधि, पाप मनिवार और मय दूर होते, शरीर बलिष्ठ होता और बुद्धि तथा इन्द्रियकी शक्ति बढ़ती है।

श्री ४ सेर, हरीतकी, आमकको, विमीठकी हरिद्रा, शालपत्री, पिङ्गु, गुडक, सोंठ, मुन्डेकी, पीपल और सफेद खैर, इन सब द्रव्योंका माप १६ सेर और चूर्ण १ सेर, इनका पचाविधान पाक करना होगा। घृतपक होने पर उसमें मधु और चीनी एक सेर मिलाये। आमककीचूर्ण ली पक, इसीके रसमें मारित कर उसका चूर्ण और अक्षय चतुर्थांश मारित होखे चूर्ण भी उसमें मिलाये। यह रसायन प्रतिदिन सबेरे दो तोला करनेसे सेवन करे। शामको मूत्रके अंस या दूधके साथ घृतसंयुक्त साठो धानका भात खाये। यह रसायन तीन वर्ष सेवन करनेसे ली वर्ष तक बुढ़ापा नहीं आवेगा और जो एक बार सुना जायगा वह हमेशा बाद रहेगा तथा रोग दूर होने और शरीर पथरके समान मजबूत होगा।

एक हजार बाँधका और एक हजार पीपलको अर्द्धमें मिगो कर छापामें सुखा डे। गुठकी उसमेंसे के क देनी होगी। पीछे उस भाँधके भीर पीपलको चूर्ण कर उसमें श्रीधर भाग चीनी मिलाये। अन्ततः घृतमारित पाकमें इसी रस कर ६ मास तक अमोक्तक अन्तर गाड़ रखे। बाँधमें इस रसायनको निहाल कर सबेरे मलिके पका अनुसार सेवन करे। मीषज जीर्ण होन पर मध्याह्नकाळ में सारम्भ भोजन करना होगा। अपराह्नकाळमें भोजन विषय है। इस रसायन सेवनका फल पहलेके जैसा है अर्थात् ली वर्ष तक बुढ़ापा माने नहीं पाता।

नागयस्य-रसायन—शुधि और संवत हो कर स्वस्ति बाचन और ईशान्यनायक माप और फलानुग मासके शुभ मुहूर्तमें अच्छी भूमिसे उत्पन्न शुभयुक्त नागयस्यका मूत्र उखाड़े। पीछे उस मूत्रको अर्द्धमें जो कर एक पत्र या दो तोला इसका छिछका डे कर अच्छी तरह पीसे। अन्ततः गावके दूधके साथ प्रतिदिन सपेरे ब्याविधान सेवन करे। मीषज जीर्ण होन पर दूध और पीके साथ नाठ जाना होता है। एक वर्ष तक सेवन

करनेसे सत्ता अयान ली साकत बनो रहती है। नागयस्य निम्नोक्त गुण सम्पन्न भूमिसे उखाड़ना होता है। जो स्थान जाहूक और कुशभास हो, जहाँ की मिट्टी चिकना, मधुररसवाली, काली अथवा सुल हकी हो, जो विगदोष, दासुकोष, अक्षयोष, अमिहोष और श्यापहक उपद्रवसे वरिष्ठ हो तथा जो स्थान कर्पण, वध्मीक, पपपाक, चैत्य और साररवदरहित हो, जहाँ पापु और धूप अच्छी तरह माता जाता हो वही ली नागयस्य उखाड़ना होता है।

कल्पवितोय रसायन—माघ फाल्गुन मासमें अपने हाथसे कुछ परिपुष्ट आमनको तोड़ कर इसकी गुठकी के क डे। पीछे उसे सुखा और चूर्ण कर भाँधके रसमें २ बार भावना डे। बाद उसे फिरसे सुखा कर चूर्ण कर डे। ऐसा चूर्ण ८ सेर, शोषणीय, वृहणीय, स्तन्यजनक, शुकवदन और ब्यास्थापनगोक्त द्रव्य समूह संमिश्र करना होगा। इसके बजावा रक्तवन्धन, मधु, पत्र, खैर, शीशम और अमल, इनका सार, हरीतकी, बदेड़ा, पीपल, चर, चिठा और पिङ्गु इन्हें अलग अलग कटना होगा। पीछे यह शोषणादि द्रव्य समूह, रक्तवन्धनादि द्रव्यसमूह और हरीतकीवादि द्रव्य समूह, कुछ मिठा कर ८ सेर ले कर १६ सेर अर्द्धमें पाक करना होगा। १६ सेर अन्न रखते उसे उतार कर छान डीना होगा। इस काढ़में पूर्वोक्त आमककीका चूर्ण ८ सेर मिला कर गोइठकी भाँधसे पकाना होगा। पाकके समय इस बात पर विशेष ध्यान रहे, कि चूर्ण अन्न म साथ भयात् कुछ काड़ा रहते ही उसे उतार डेना होगा। बाँधमें उस चूर्णकी लोहेके बरतनमें फैला कर सुखा डे। अच्छी तरह सुल जाने पर छप्पसार मृग-धर्मके ऊपर एक शिला रख कर उसी पर अच्छी तरह चूर्ण करे। इसके बाद लोहेके बरतनमें उसे डक कर रचना होगा। मलिका बलाबल लोच विचार कर उप युक्त मात्रामें यह चूर्ण तथा उसका भातर्भा भाग लोह चूर्ण मिला कर पी और मधुके साथ खाये। प्राचीन काळमें वशिष्ठ, कश्यप, अत्रि, प्रमद्वि, मन्त्राज, भृशु आदि ऋषिजीने इस रसायनका सेवन किया था। इसके प्रभावसे वे लोग बलिष्ठ हो कठिन तपस्या करनेमें समर्थ

हुए थे। इस रसायनका सेवन करनेसे जराब्याधिरहित हो दीर्घजीवन लाभ करता है।

लौहरसायन, हेमरसायन और रजतरसायन—चार अंगुल लंबा और तिलके समान वारीक कान्तलौहका एक पत्तर बना कर अग्निमें तपावे। जब वह एकदम लाल हो जाये, तब त्रिफलाके काढ़े, गोमूत्र, यवक्षारके जल, लवणके जल, इंगुदीक्षारके जल और किंशुकक्षारके जलसे बुझावे। अञ्जनवर्णका हो जानेसे उस पत्तरका चूर्ण करे। मधु और आमलकीके रसमें मिला कर उसे लेहवन् करे। पीछे घृतभावित कुम्भमें उस चूर्णको रख कर जाँके ढेरमें एक वर्ण रख छोड़े। वह लेहवत् लौहचूर्ण महीने महीने एक एक बार आलौडन करके उसमें थोड़ा मधु और आमलकीका रस मिलाना होगा। इस प्रकार एक वर्ण बीत जाने पर उसे अग्निके बलावलानुसार उपयुक्त मात्रामें प्रतिदिन मधु और घीके साथ सेवन करे। औषध जोर्ण होने पर सात्व्य भोजन करना होता है। इसी प्रणालीसे सोने और चांदीका रसायन बनाना होता है। यह रसायन आयुका प्रकर्षकारक और सर्वरोगनाशक है। इसका सेवन करनेसे अभिघात, रोग, जरा वा मृत्यु द्वारा अभिभूत नहीं होना पड़ता। एक वर्ष तक इस रसायनका सेवन करनेसे हाथोंके समान बलिष्ठ, अतिबलेन्द्रिय, धीमान्, यशस्वी, वाक्सिद्ध और श्रुतिधर होता है।

आमलकरसायन—एक वर्ष तक ब्रह्मचारी (मैयुन रहित) जितेन्द्रिय और केवल दूध पी कर दिनरात वेदोक्त ब्रह्मगायत्री जप कर गोगणके मध्य वास करे। वर्षके अन्तमें तीन दिन उपवासी रह कर पीप, माषी वा फाल्गुनी पूर्णिमा तिथिमें आंवलेके धनमें प्रवेश करे और फलसे परिपूर्ण एक बड़े आवलेके पेड़ पर चढ़ कर कुछ आवला तोड़े। जब तक उसे तोड़े हुए फलमें अमृत न आ जाय, तब तक ब्रह्मप्रणव जप करना होगा। ब्रह्मनिष्ठ पुरुषके ब्रह्मप्रणव जप द्वारा थोड़े ही समयमें उसमें अमृत आ जायगा। जब देखे, कि वे सब फल मृदु, स्नेह और शर्करा मधुतुल्य स्वादिष्ट हो गया है, तब जानना चाहिये, कि उनमें अमृत आ गया। भर पेट वह आवला

फल खानेसे मनुष्य अमरके समान कान्ति लाभ करता है तथा स्थिरयौवन हो कर हजार वर्ष जीवित रहता है। लक्ष्मी स्वयं आ कर उसका आश्रय लेती हैं, वेद उनके कंठस्थ हो जाते हैं और स्वरस्वती मूर्त्तिमती हो कर उनके समीप उपस्थित होती हैं।

इसके सिवा च्यवन-प्राशरसायन, हरीतकी रसायन, आमलकघृतरसायन, आमलकाबलेहरसायन, आमलकी-चूर्णरसायन, विडङ्गाबलेहरसायन, आमलकाबलेह, मल्लातकक्षीर, मल्लातकक्षौद्र, मल्लातक तैल, ऐन्द्ररसायन, मेधाकररसायन, पिप्पलीरसायन, चर्द्धमान पिप्पलीरसायन, त्रिफलारसायन, शिलाजतुरसायन, इन्द्रोक्त रसायन, द्रोणीप्रावेशिकरसायन और आचाररसायन ये सब रसायन सेवन करनेसे पूर्वोक्त फल होते हैं। इन सब रसायनका विषय और प्रणाली चरकमें वर्णित है।

समस्त शरीर दोष प्राग्भ्य आहारसे उत्पन्न होते हैं। अम्ल लवण, कटु, क्षार, शुष्कशाक, उडद, तिलकक, पिष्टान्न, अंकुरित और नूतन शूकशमी धान्यकृत अन्न, विशुद्ध, असात्म्य, रुक्ष, क्षार, अभिग्न्यन्दो द्रव्य, क्लिन्न, गुरु, तथा पूति, पथ्युपित, अन्न, विपनाशन, अध्यशन, नित्य दिवानिद्रा, खीसङ्गम और मद्यपान, विषय वा अत्यन्त व्ययाम द्वारा शरीरमें तरह तरहके दोष उत्पन्न होते हैं। इन सब प्राग्भ्य विषयका सेवन करनेसे वात, पित्त और कफ विगडता, शरीरका मांस शिथिल हो जाता, सन्धिया विश्लिष्ट होतीं, रक्त विदग्ध होता, मज्जा अस्थिमें संहित होती और शुक् प्रवृत्त नहीं होता तथा ओजक्षयको प्राप्त होता है। इन सब कारणोंसे प्राग्भ्य व्यक्ति ग्लानियुक्त, अवसन्न, निद्रा, तन्द्रा और आलस्ययुक्त और निरुत्साह होता तथा थोड़े ही परिश्रममें वे हाफने लगते हैं। वह शारीरिक और मानसिक कोई भी कार्य नहीं कर सकते, उनकी स्मरणशक्ति बढती और कान्ति विनष्ट होती है। वे लोग रोगोंके आश्रय-स्थान हैं तथा परिमितायु भोग करनेमें समर्थ नहीं होते। इन सब दोषोंसे बचनेके लिये अहितकर आहार-विहार छोड़ दे तथा जितेन्द्रिय शुद्धाचारी हो कर पूर्वोक्त रसायनका सेवन करे। इससे सभी प्रकारका सुखसौभाग्य प्राप्त होता है। रसायन सेवनके सिवा शारीरिक दोष नष्ट करनेका और कोई

उपाय नहीं है। अतः जो व्यक्ति पुष्टिमान् और शोचार्थु होना चाहे उसे रसायनका अध्ययन सेवन करना चाहिये। (बरक, थिन्कटात्वा०—आत्मवि०)

चरक, पाण्डु अदि वैद्यक ग्रन्थोंमें रसायनाधिकार में रसायनयोग वर्णित है, विस्तार हो जानेके मयसे यहां कुछ नहीं लिखा गया।

रसायनः सप्तमया वज्रातीया हरिताडिकादिभ्यः भयम माध्यम उपायो यस्य तन् ३ स्वर्णादि करण। पारे को जो स्वर्णादि धातुमें परिणत किया जाता है उसे रसायन कहते हैं। इत्यादिग्रन्थके १३वें पटलमें इसका विस्तृत विवरण लिखा है,—

एक कासा सायं पकड़ कर उसके मुहमें शिव पीप (पारा) भर दे। पीछे उसका मुह बंद करके मट्टीके एक नय बरतनमें रख मट्टीसे लेपन करना होगा। मनस्तद्वम निर्गम स्थानमें सबेरेसे शाम तक उसमें भाँच देना होगा। इसक बरतनका मुह बोज कर इसमेंसे केवल पारा निकाल ले। सर्पका मूत्र न निकाले। पीछे एक तोसा ताँबा गसा कर उसमें रत्नों भर पावा छोड़ देनेसे ही वह सोनेमें परिणत हो जायगा। यह तैयार करनेमें पहले शिवकी पूजा करनी होती है। (रसायनसंज्ञानाम नाम १३ म०)

इस प्रकार साने और खाँदी भादि धातु बनानेकी अनेक प्रकारकी विधि बनाइ गई हैं। रसायनगुणके मभावसे एक धातु दूसरी धातुमें परिवर्त होती है।

(पु०) ४ गदह। ५ धापविहङ्ग, विहङ्ग। ६ विष, अहर। ७ पंशपल हरिताल। ८ पश्चायोंके तर्कोंका ज्ञान। ९ धातुविद्या जिसमें धातुओंकी मरुम करने या एक धातुका दूसरी धातुमें बदल देने भादिकी क्रियाका बणन रहता है।

रसायनज्ञ (सं० जि०) रसायन क्रियाका ज्ञानमेवाज्ञा, जो रसायनविद्या ज्ञानता हो।

रसायनतन्त्र (स० झी०) रसायनाधिकार।

रसायनकला (स० श्री०) रसायन कठिष्ठ या फल अथ, ट्यूप। हरीतकी, हरे।

रसायनपर (स० पु०) सगुन, सहसुन।

रसायनपत्र (स० श्री०) १ कंठू, कंम्लो। २ कारुजंघा।

रसायनविद्यान (स० पु०) वैधानिक उपायसे तर्कोंका ज्ञान। इसका अंगरेजी नाम Chemistry है। प्राचीन भाष्यं हिरण्यमोक 'रसायन' शब्दके व्युत्पत्तिगण अर्थके साथ पाश्चात्य समयजगत्के Chemistre शास्त्रका वस्तुगत अनेक सादृश्य रहने पर भी दोनोंमें प्रमेय देख कर वैधानिकीमें पर्याप्तान अंगरेजी रसायनशास्त्रको उसी शब्दके अनुकरण पर किमिया विद्याकर्ममें प्रकाशित किया है।

प्राथम्य किमियाविद्या मन्वेतन (Organic) और अद्रु पदार्थ (Inorganic bodies)के मेलस बनो है। सोने भादि अद्रु धातुमें बुझादि अतन पदार्थका घोड़ा भी संयोग होनेसे यह मन्मावतः ही रसायनको प्राप्त होती है तथा उसके साथ साथ गुणमें भी परिवर्तन देखा जाता है। इस वैधानिक समाधिशास्त्रका नाम रसायन है। जिन शास्त्र द्वारा मिश्रित द्रव्यका गुणागुण और बनावल ज्ञाना जाता है, यहा रसायनशास्त्र है।

प्राचीन आयुगण भीषध और धातुकी वस्तुगतिकी परीक्षा करने उसकी उपकारिता मान्य करते थे। फिर दो वा बत्से अधिक विभिन्न धातु या मेषधादि मिला कर उसक गुणका भी पना लगा लेते थे। कुछ निर्दिष्ट नियमक अनुबन्धी हो ये सब मिश्रित भीषध यस्मादिकी सहायतासे बनाये जात थे। इस प्रकार वैधानिक प्रक्रियासे प्रस्तुत भीषध रसायनशास्त्र पुष्टिसाधक और व्यापिकाशक होता है इस कारण आयुर्वेदमें उसका रसायन नाम रखा है।

आयुष्पियोने रसायनशास्त्रकी उन्नति करनक जिष विन सब पन्नादिका भाषिष्कार किया था, उसका विरोध विवरण ज्ञानलेक्य कोइ उपाय नहीं है। धाप-सम्पत्ताके विस्तारके साथ साथ प्राचीन आयुगण जो मनुष्यके उप योगा रसायनादि बनाये लग गये थे उसका आभास हम जोग शब्देहमें कर जगद देखत हैं। दोनों अश्विनीकुमारके देवभैषज्यमें भाविर्माय होनेका प्रमत्त शब्देहक भारम्में ही देखनेमें आता है। सोमरस उस समय पुष्टिकर रसायन साम्ना जाता था। श्वक् १३।२३ मन्त्रमें सिधा है 'हे रुद्रवरमन्, अश्विष्य। मिश्रित सोम रस अश्विपुन हुआ है, तुम दोनों भायो। यह मिश्रित

सोमरस Chemical Combination वा liquid mixture के सिवा और क्या हो सकता? सोमरस दान घक्तिका औषधस्वरूप है, इसीसे वेदमें उसको रोगारोग्य-कारो देवता कहा है। पतञ्जल उक्त महाप्रन्थके १.०।६७ ६-७ मन्त्रमें लिखा है, कि जिस देशमें ओषधियों-का संगमन होता है उस देशके ब्राह्मण भिषक् कहलाते हैं। वे यदि अश्वत्थतो, ऊर्जयन्तो, सोमावतो और उदोजस् आदि प्रधान औषधियोंका संग्रह कर सकें, तो वे रोगोका रोग दूर कर उसे आरोग्य कर सकते हैं। उक्त सूक्तके १८वें मन्त्रमें सोमको औषधिका राजा बताया है। फिर २०वें मन्त्रमें रोगियोंके लिये औषधि खनन और उससे द्विपत् अर्थात् पुत्र भृत्यादि, चतुषष्ट अर्थात् गो-महिषादि जावसङ्घके आरोग्य होनेकी बात लिखी है।

इसके सिवा ऋक्-संहिताके ५म मण्डलके १६, २७, ३०, ३३, ५२, ५३, ५४, ५५, ५७वें सूक्त तथा दृष्ट मंडल-के २, २७, ४६, ४७, ४८वें सूक्तकी आलोचना करनेसे स्पष्ट मालूम होता है, कि उस समय आर्यऋषियोंने धातु गला कर, मुद्रा चला कर, लोहेका कलस बना कर, सुरा तैयार कर तथा अग्नि, रुक्म, खादि और हिरण्य जिप आदि स्वर्णालङ्कार गढ़ कर तथा ऋषि, वंशी, धनुष, इष्ट, निपट्ट, हिरण्य कवच, वर्म और लोहेके अस्त्रादि बना कर यथेष्ट उत्कृष्टता प्राप्त की थी। उसी सुप्राचीन समयसे भारतवर्षमें रसायन-विज्ञान (alchemy) का सूत्रपात हुआ था। वे लोग रासायनिक सङ्करण और विकर्णन जाने बिना कभी भी इसकी उन्नतिमें हाथ नहीं लगाते थे।

आश्वर्षणीय युगमें ऋषिगण भेषजादिके गुण और रोगनाशक शक्तिके विषयसे अच्छी तरह जानकार थे। उन सब औषध्यादिके उत्तोलनकालमें अथवा उसकी शक्ति बढ़ानेके उद्देशसे उन्होंने मन्त्र-पाठादि द्वारा भौतिक क्रियाका धारण कर दिया था। इन्हीं सब कारणोंसे हम लोग अथर्ववेदमें रोग और उसकी रसायन-समष्टिकी परिस्फुट तालिका देख पाते हैं। अथर्ववेदके ४।२७।२ मन्त्रमें अधामार्गको (Achyranthes aspera) रोग-शान्तिकी मुख्यकर्त्री तथा अन्यान्य औषधिकी ईश्वरी

वता कर आवाहन किया गया है। एक दूसरे स्तोत्रमें सोमरसको अमृत (ambrosia) और बलकर बताया है। वे लोग सौ वर्ष आयु बढ़ानेवाला रसायन (औषध) बनाना जानते थे, उसका आमास उन मन्त्रमें पाया जाता है। उक्त प्रन्थके १।२३।२ मन्त्रमें कुष्ठरोग और बुढापेके कारण वालोंका पकना दूर करनेके लिये एक प्रकारकी काले औषधका परिचय है। ६।१३।२-२ मन्त्र पढ़नेसे मालूम होता है, कि वालोंकी जड़ मजबूत करने तथा उसे पकनेसे रोकनेके लिये काक-माची आदि औषधियोंकी प्रशंसा की गई है। वे लोग पलितकेशकी रक्षाके लिये रासायनिक औषध बनाते थे। उसके प्रमाणस्वरूप निम्नोक्त मन्त्र उद्धृत किया गया है—

“यस्ते केशोवप्येत समूहो यत्र वृश्चते ।

इदं तं विश्वभेषन्याभिपिञ्चामि हि वीरुषी ॥”

(६।१३।२)

अथर्ववेदमें भूत वा प्रेतयोनिके समावेशसे उत्पन्न रोग और साधारण पीडाको अच्छा करनेके लिये जिन सब मन्त्रों और औषधोंकी व्यवस्था है वह अंश 'भेष-ज्यानि' कहलाता है। फिर जहाँ ऋषियोंका दीर्घजीवन स्वास्थ्यकी कामनासे बलकर रसायन बनानेकी ओर ध्यान गया है वह 'आयुष्यानि' नामसे परिचित है। वैदिक आयुष्यानि और संस्कृत रसायन तथा अङ्गरेजी किमियाविद्या (Alchemy) तीनों एक हैं। उक्त प्रन्थमें एक जगह मुक्ता, सीप और सोनेके आवाहनका प्रसङ्ग देखनेमें आता है। इन तीनों द्रव्यका नाम रसायन है ४ ।

वैदिकयुगके बाद आयुर्वेदीययुगमें चिकित्साशास्त्रकी उन्नतिके साथ साथ विभिन्न प्रक्रिया द्वारा औषधादि बनानेकी व्यवस्था हुई। महर्षि सुश्रुत और चरकने रसायन प्रस्तुत करनेकी विशद प्रथा दिखलाई है। अग्निवेश, मेल, जालुकर्ण, पराशर, हारित, क्षीरपाणि आदि आयुर्वेदशास्त्रकी विशेष उन्नति कर गये हैं। पीछे दृढ़-बल, वाग्भट, चक्रपाणि आदिने उसकी पुष्टि की।

परकसहिताका सूत्र स्थान २१वां अध्याय पढ़नेसे ज्ञात होता है, कि एक समय हिमाद्रयपथ धिक्करवतनीं मजिबुज पुनर्बन्धु, भद्र काय, शाकुन्तेय माह्वज, मीन्द्रज्य, पूर्णाक्ष, क्रीनिक हिरण्यशर, कुमारशिष्य भद्राज्ञ, राजपि पामौषिद्रु, बिनेहराज निमि, कामार्गव कडिस और वाहिक वैशीय मिणवर काङ्कयन भादि स्थियोंने एकत्र हो कर पञ्चभूतारमक रस और आहार्य पदार्थों को प्रष्टन भयस्या और प्रयोजनीयताका निरूपण किया।

रसायनशास्त्रके भादिमें पार्थिव पदार्थका मडन और गुण तथा उसका आणविक विरूपण भाङ्गोचित हुआ है। महर्षि कणादन वैशेषिक सूत्रसे, कपिलने सांख्यसूत्रसे गौतमने न्यायसूत्रसे तथा हिमन्दिन भादि प्राक दार्शनिकोंने एक स्रस्ते पञ्चतन्मात्रसे इष्टमन पाञ्चमीतिक पदार्थका आणविक विश्लेषण स्थाकार कर लिया है। यह आणविक संयोग वा वियोग झोकार नहीं करतेसे रासायनिक-प्रक्रियामात्र किस्ते मो बस्तुका गुण परिवर्तन वा रूपान्तर नहीं किया जा सकता।

आयुर्वेद्यो वैद्यिक युग और अपेक्षाकृत आधुनिक वैद्यकयुगको छोड़ पत्रि वैद्यकयुगके इतिहासको आलोचना को ज्ञाय, तो मो भौषि और रसायनका उल्लेख देखनेमें आता है। कृष्णाञ्जन, क्षोताडञ्ज, रसाञ्ज भादि प्रयोगोंकी उपकारिता और रोगादिको चिकित्सा तथा औषधका विषय महाशय, विमपपिटक, औषक-कोमारभन्ध भादि बीजप्रयोगोंमें विशदभाषमें लिखा है। बीजदास्यविद्रु रिस इ बिडन और मोरुडनधर्गके मतसे विमपपिटक ३५०-४० ई०सम्के पहले सङ्कलित हुआ था। अतएव पाश्चात्य जगतमें हिरोके रिसके जर्म सेनेसे बहुत पहले हिन्दू लोग शरीररसविज्ञान (Humoral Pathology) नामक आयुर्वेदशास्त्रसे अच्छी तरह अवगत थे।

बीजयुगके परवर्ती आधुनिक वैद्यकयुगमें अर्थात् ७वीं सदीमें हम लोग देखने दे, कि योनरायिमात्रक इत्सि भारतमें आ कर वैद्यशास्त्र पढ़त थे। इत्सिके दूतात्त भयना हर्षवर्ति-परिचित राजपेठ रसायनके प्रसङ्गमें हम काय कयम आयुर्वेद और मेवज्ञादिका उल्लेख देखने दे, किन्तु उस समय रसायन (Metallic salts) का विशय प्रचार था या नहीं कह नहीं सकते।

वाग्भटके समयसे रासायनिक घातय औषधोंका प्रचार हुआ। इसके बाद दून्ध भोग चरुयमित उसको परिपूर्ण को। इस समय मारुतमन नगम्भ प्रभाव देना हुआ था, इनमे उद्दान भरने भान प्रथम रसा यमाधिकारमें औषधिको अभिमन्त्रण करनेके लिये मंत्रयोगनी ब्यन्स्था को थी। चक्रपामिने दून्धका पदार्थ सरण किया। इन्वने माघमकरके निदानको मूकमिति बत कर अपने ग्रन्थका रचना की। उता निदानग्रन्थका मुख्यधायिप अलीकाफ भावेमने भरलो मायामें अनुवाद हुआ था।

अरबदेशी विषयान परिउत मन्वयोदया जब भारत पय भाये, तब उन्होंने हिन्दुओंके गुरु रसायनशास्त्रका पूर्ण प्रभाव देखा था। उन्होंने लिखा है, कि वे लोग इने गोपनीय भाषमें रक्षते थे किस्कोको भा इस गुण रहस्यका मर्म मालूम नहीं होत हैत थे। हम ज्ञारण भारतोप आयुर्वेदशिक्षोम धे मा यह विधा साध न सके। उन्होंने हिन्दुओंके अग्नियोगसे पुत्रपाक (sublimation) ज्ञारण, मारण वा भस्म (Calcination) पृथकीकरण वा सार प्रष्ट (Abstraction) तथा शानक (Waxing of ale) प्रस्तुतविधिका अनुपाधन करके स्पष्ट अनुमान लिया था, कि वे लोग प्रधानता धातुसम्बन्धीव रसायनको भाङ्गे यमामें छोडे रहते थे।

पहले ही कहा जा चुका है कि नासिकयुगमें उपासना पद्धतिके साथ साथ जटोरको रक्षाक लिये आयुर्वेदक रसायनका प्रारंभ हुआ था। ११०० ई० १३०० ई०में तास्त्रिक प्रभाव जब भारतवर्षमें तमाम फैला हुआ था उस समय बन्द और शैवभाह्वज बुद्ध तथा शिपको एक दृष्टि-स देखत थे। यही कारण है, कि हम लोग बीजक मध्य महाकाळतन्त्र और रसदत्ताकर तथा शैवोंके मध्य रसा ज्ये, रसहृदय, रससिद्धान्त भादि तन्त्रशास्त्रका प्रचार देखते हैं। उन सब प्रयोगोंमें देह और आस्पररक्षाके लिये तो मत्र रासायनिक प्रयोग निविषय हुआ है, यह बहुत मूल्यवान् सामग्री है। रसहृदयमें पारेका महारुप का पीत्र और मरुतको पार्थिताका बीज बताया है। गाबिन् मणयन, सर्वेश्वरमेंभर भादिन विजदृश्यत पारे का गुणागुण वर्णन किया है। पार्व विज्ञान जो कयन

रसायनशास्त्रका आलोचन विषय और धातुशास्त्रके नियोजित हैं, सा नहीं, देहवेध द्वारा इससे परम प्रयोजनीय मुक्तिहीभी साधना की जा सकती है। रसायनविज्ञान लिखा है—

‘जोहवेधस्त्वया देव यद्वत् परमेशितः ।

त दक्षेधमात्रेण येन स्यात् खेचगी गतिः ॥

यथा लोहे तथा देहे कर्त्तव्यः सूतकः सत्वा ।

समान कुन्ते वेवि प्रत्यय देहलाह्योः ।

पदं लोहे परीक्षेत पश्चाद् दे प्रयोजयेत् ॥’ इति

इस पारदविज्ञानकी परिपुष्टिके साथ साथ भारतीय आयुर्वेद जगत्में एक युगान्तर उपस्थित हुआ। मिककोने नेपञ्चतत्त्वकी आलोचनाके साथ साथ तन्त्रोक्त पारद, लौह, ताम्र आदि धातुजान रसायनका यथार्थ तत्त्व जाननेके लिये कोई कसर उठा न रखी। इस समयको आयुर्वेदीय रसयुग (Iatro-chemical period) कहा जा सकता है। तन्त्रकार वा योगीगण श्वरक, पारे, लोहे, हरिताल आदि रासायनिक प्रक्रिया द्वारा प्रस्तुत औषधादिसे यद्यपि मृत व्यक्तिको जिला न सकते थे, तो भी यह आयुर्वेदोक्त रोगारोग्यका उपयोगी औषध समझा जाता था। इस युगके चिकित्सकोंने चरक और सुश्रुतके औषधादिके साथ साथ पहले रसप्रयोग की व्यवस्था की।

रसायन और रसरत्नमुच्चयकार तान्त्रिकगण अनन्त जीवन और मोक्षकी कामनासे जब रसधातुसे उत्कर्षमायक रसायनके आविष्कारमें लगे हुए थे, प्रायः उसी समय रोजर बेकन (१२६४ ई०) पल्लाट्स मैगनस, रेमण्ड लाली, अर्णाण्डल मिलानोमेनस आदि प्रियोत्साहियाका ध्यान क्रिमियाविद्याकी उन्नतिकी ओर दीडा। रोजर बेकनने निःसङ्काचचित्तसे कहा था, कि पारस-पत्थर (Philosophers Stone) अपरापर धातुओंको सेना बना सकता है तथा पूर्वोक्त रससिद्धों (Alchemists)-ने इन्में सर्गरोगहर भैषज बतलाते हुए एक खर-से कहा है, जिसके पास यह सर्गरोगनाशक (Panacea) पदार्थ रहेगा वह ५ सौ वर्ष तक वा उससे भी अधिक जागित रह सकता है।

१३वीं या १४ वीं सदीके पहले भारतमें फलित-

रसायन (Practical Chemistry) का पूर्ण प्रचार था। उस समय यूरोपवासी रसायनविद्यासे विलकुल अनभिज्ञ थे। वे लोण तृत्तिया (Blue vitriol) माक्षिक (Pyrites) आदिसे ताम्रकी संयोग प्रणाली जानते थे सही, पर धातुगोधनका तरीका उन्हें अच्छी तरह मालूम न था। पारासेलसस (१४६३-१५४१ ई०) ने पारेका भैषज गुण जानकर उसके आभ्यान्तरिक प्रयोगकी व्यवस्था की थी। लिवाभियस (१६१६ ई०में) पारासेलससके दोषगुण पर विचार कर रसायनशास्त्रके उत्कर्षसाधनमें अप्रसर हुआ। प्रसिद्ध वसिल वल्लेण्टाइनके समय (१६०० ई०में) यूरोपमें अरिष्टल और अरबदेशीय रस-विद् (Alchemists) गणके मतानुसरणके सिवा और किसी नवीन मतका आविष्कार नहीं हुआ। १६ वीं सदीके यूरोपीय, रसायनकी उन्नतिके सम्बन्धमें अध्यापक स्केर्लेमर (Prof. Schorlemmer) ने लिखा है, कि १६ वीं सदी तक यूरोपीय रसायनविदोंकी सारी चेष्टा “फिलजाफर्स प्लेन” की खोजमें रही। किन्तु अभी रसायनशास्त्र दो नये और सम्पूर्ण विभिन्न पथके अवलम्बन पर उन्नति कर रहा है। एत्रिकोलाने धातुविज्ञान (Metallurgy) और पारासेलसस आयुर्वेदीय रसयोग (Iatro-Chemical) के सम्बन्धमें गहरी आलोचना कर धातव रसायनविज्ञानकी उन्नतिका पथ परिष्कार कर दिया है। यूरोपीय समाजमें ये लोग रसायनके प्रतिष्ठाता समझे जाते हैं। गालेन और अमिनेन्नाके मतविरुद्ध पारासेलसस और उनके छात्रवर्ग बड़े अध्यवसायसे रासायनिक प्रक्रिया द्वारा धातव औषधादि बनानेमें लगे हुए थे। इसके बहुत पहले भारतवासी नागार्जुन और पतञ्जलिको पारदादि धातुका व्यवहार मालूम था। हम लोग कमसे कम १० सदीके पूर्ववर्ती समयमें ‘पर्पटिनाम्रम्’ और ‘रसामृतचूर्णम्’ (Black Sulphide of mercury) नामक रसौषधमें पारेके आभ्यन्तरिक प्रयोगकी व्यवस्था देखते हैं।

१५६६ ई०को पेरिस नगरकी आयुर्वेदीय महासभा (Th. Parliament and the Faculty of Medicine) की विवरणमें पारासेलसस द्वारा आविष्कृत विषजनक औषधोंका व्यवहार निषिद्ध हुआ था। यूरोपमें उस

समय रासायनिक प्रक्रिया द्वारा बनाये गये ऐसे पार
वादि पात्रव भीषणोंका यदि प्रचार रहता तो कभी भी
यह जनसाधारणके निरुद्ध उपेक्षित नहीं होता। इन सब
आनुवंशिक प्रमाण द्वारा यह स्पष्ट मान्य होता है, कि
पारासेलससुद्धी पूर्वदेगसे अपनी रासायनिक प्रघासे
प्रस्तुत औपचारिका यह मया मत समझ कर यूरोपमें
इसे प्रचार करानेकी चेष्टा की थी।

तास्किन शरिफ नामक हकीमीग्रन्थमें लिखा है कि
भारतीय वैद्य सैंकी या सिमुसह्यार (white oxide of
arsenic), पारद-झोह, आदि औषधोंमें व्यवहार कर
पियेय उपकारिता मान करते हैं, किन्तु यूनानी हकीम
कभी भी इन सब औषधोंका आभ्यन्तरिक प्रयोग नहा
करते। प्रघातकाले लय एक जगह इसके वाह्य प्रयोग-
की व्यवस्था भी दी थी पर इससे कोई विशेष फल
न निकला।

उपरोक्त प्रमाण द्वारा यह सिद्ध हुआ है, कि भारत
वासी आर्यहिन्दुओंने ही सबसे पहले पारेकी सुररोग
इत्यत्र शक्तिका पता लगाया था। चीनका प्राचीन
इतिहास पढ़नेसे मालूम होता है, कि मरकबासो द्वारा
रसायनविद्या यूरोपमें माह जलनेके पहले जानबाली
'तान सा' (हिगुम या रससिन्धूर = Red bisulphuret
of mercury) नामक रसायनके व्यवहारसे भयगत
थे।^७ चरक, सुभूत और पतञ्जलिके योगसूत्रमें रस
विभागकी विस्तृत व्याख्याना देख कर हिन्दुको रसा
यनशास्त्रके उद्गायक कह सकते हैं। लघु भस्मविरुदान
शेषिसस्य नागाशुनकी एक प्रसिद्ध रससिद्ध कहा
है।^८

मध्ययुगमें जब सारा यूरोपभरउ भ्रमणरूपी भ्रम्य
कारस आरुद्रग्न था तथा भौक्यातिका प्राचोन विद्या
गौरव धारे धारे लोप होता जा रहा था, जब कुछ भौक
साधु पश्तका गुहाम बैठ कर ज्ञानका धाम कर रहे थ

इस युगशाके दिन अर्थात् उस प्रोफेसर्सुद्धिके भवनति
काळमें मरबौन पूर्व दिशास गणितार्थि विज्ञानशास्त्रका
ज्ञानभांडार उके कर पाश्चात्य जगत्में स्थापित किया था
यहो विमल ज्ञानज्योति परिष्कात हो कर आज सारे
यूरोपको उजाळा कर रही है।

अरबवासी परिष्कृत विज्ञानविषयकी उन्नतिमें भारत
वासी हिन्दुभौक जो श्रेणी थे, उसक चितने प्रमाण
उनके ग्रन्थमें ही मिलते हैं। १०वां सदीके मध्यभाग
में अबुल फरोज महम्मद विन इसाक द्वारा विरचित
किताब डक फिहिरिस्त ग्रन्थमें तथा हाजा बछाफा और
इब्न भाय ठैरिजिया (१३वें सदीके प्रारम्भमें) के विष
रूपस ज्ञाना ज्ञाता है, कि पछीका हादम अरु रसीद्
और मनसुरक आदगास हिन्दुक आयुर्वेद्योय मैयजातस्य
निदान आदि प्रघातक अनुपाद् हुआ था।^९ फुजोउने
लिखा है, कि मङ्ग नामक एक भारतीय वैद्यने हादम अरु
रसीद्का कठिन रोगसे बचाया था इस कारण राजाने
उन्हें राजकीय भातुरालयका प्रधान चिकित्सक बनाया।
उक्त चिकित्सकने लडाकाफा आवेशसे सुभूत और चर
कादि शास्त्रका भरबा भाषामें अनुवाद किया था। हाजो
बछोफाने लिखा है, कि उक्त वाग्शास्त्र हिन्दुक
ज्योतिषशास्त्र, योजगणित और आयुर्वेदका प्रचार करते
के लिये हिन्दु परिष्ठतोंको राजदरबारमें गिहृकरूपमें
नियुक्त किया था। जर्मन प्रकृतस्यविद् हायज इस
सम्बन्धमें हिन्दुको प्रमाणता और प्राचीनताको भस्वी
कार करते हुए मुसलमान द्वारा मनक आयुर्वेद्योय ग्रन्थों
के अनुवादकी बात लिख गये हैं। अध्यापक मूरने
उन्के मतको खरखन करते हुए लिखला दिया है, कि
चरक और सुभूत मित्र उन्हाँने निदानका और भारत
वासी साताक (सनक) फ्त भसाकुार (भद्यङ्ग)
नामक विष विज्ञानविषयक ग्रन्थका भी मरबा भाषामें
अनुवाद किया था। डिट्ज (Dietz) ने भयन 'पना
जेन्ट मडिफा' ग्रन्थमें लिखा है, कि मोड साग हिन्दुका
आयुर्वेद्योदान ज्ञानते थे इससे स्पष्ट मान्य होता है
कि एक समय हिन्दुका आयुर्वेद और रसायनशास्त्र

* Béal & Buddhist Records, II 30

† Buddhist Records, II 212 210 & India.

मुसलमानों द्वारा यूरोपमें भी लाया गया था।

सनस्कृते (*Sanat the Indian*) ग्रन्थमें खाद्यद्रव्य-मिश्रित विषयकी जो परीक्षा है उसके साथ चरक (चिकित्सा० २३ अ० २६ ३० श्लोक) और सुश्रुतका बहुत कुछ मेल देखा जाता है। रासेज (*Rases*) ने सनस्कृतके मतका उद्धार कर जौंरुका जो वर्णन किया है उसके साथ सुश्रुतके विवरणका बहुत सामञ्जस्य है। यह 'सनस्कृत' सुश्रुतके अपभ्रंश जैसे प्रतीत होते हैं। क्योंकि अरबी अनुवादकके हाथ यदि चरक अपभ्रंशसे सरक, सुश्रुतसे सुल्लुद, निदानसे वदन और अष्टाङ्गसे असाङ्कर हो सकता है तो रासेज कथित सनस्कृतको सुश्रुत माननेमें कोई अत्युक्ति न होगी।

इस्लाम-धर्मके अभ्युत्थानके पहले भी पश्चिम जन-पदवासी आधुनिक विज्ञानचर्चाके लिये भारतवर्ष आया करते थे। साशनीयराज नशिरवानके समय (५३१-५७२ ई०में) वजौयेह नामक एक व्यक्तिने भारतवर्ष आकर विज्ञानशास्त्रका अध्ययन किया था। M Berthelot आदि पाश्चात्य पण्डितोंने गेवार, रासेज, आमिलेन्न, युवाकर आदिके गवेषणापूर्ण विवरणकी आलोचना कर प्रोफेसोको यूरोपीय रसायन और आधुनिकशास्त्रके उद्भावयिता तथा अरबोंको मध्य यूरोपखण्डमें उसका प्रवर्तक और परिपोषक बताया है। किन्तु पूर्वोक्त प्रमाणपरम्पराकी आलोचना करनेसे यह स्पष्ट जाना जाता है, कि वे लोग भारतवासियोंके ही ऋणी थे। क्योंकि, ७५० से ८५० ई०के मध्य ही अरबी साहित्यने नाना विषयोंसे परिपुष्ट और अलंकृत हो अच्छी उन्नति की थी। अल-विस्नीके अनुवादक सायुने लिखा है, कि उस समय भारतवासी विज्ञानभारण्डारमें जो कुछ दान करते थे वही संस्कृतसे पालो वा प्राकृतमें और पीछे इराणमें पारसी-भाषामें अनुवादित हो कर खलोफाके अधिकारमें आता और अरबी भाषामें प्रचारित होता था। इस प्रकार नाना स्थानोंमें नाना भाषामें उलट फेर होनेके कारण उसका नाम भी बदलता गया था। इसी कारण खलीफा मनसूरके शासनकालमें जब एक राजदूत सिन्धुदेशसे वगदाद आया, तब वह अपने साथ कुछ पण्डित भी लाया था। उन पण्डितोंके साथ ब्रह्मगुप्तके ब्रह्मसिद्धान्त

और खण्डखाद्यक नामक दो ग्रन्थ थे। वे दोनों ग्रन्थ यथाक्रम सिन्दहिन्द और अरखन्द नामसे अरबी-भाषामें प्रचारित हुए।

जिस अरबके निकट यूरोपवासी ऋणी थे और जो अरब भारतका ऋणी था, उस भारतके निकट यूरोपीय-गण सर्वतोभावमें ऋणी थे, इसमें सन्देह करनेका कोई कारण नहीं रह जाता। अध्यापक मैकडोनल्डने इसे मुककण्डसे स्वीकार करते हुए लिखा है,— 'in science-too the debt of Europe to India has been e on- siderable ** During the 8th & 9th centuries the Indians became the teachers in arithmetic and algebra of the Arabs and through them of the nations of the west Thus though we call the latter science by an arabic name, it is a gift we owe to India **

भारतीय आर्योंने रसायनशास्त्रको किस प्रकार पृथक् भागमें संगठित किया था, उसका असल विवरण लिपिवद्ध करना कठिन है। आधुनिक यूरोपीय रासायनिकोंने जिस प्रकार उन्नत रसायनशास्त्रका संगठन कर लिया है ठोक उसी प्रकार आर्यरसशास्त्र आलोचित होता था वा नहीं इसका पता नहीं चलता। परन्तु पौर्वापर्य अवलम्बन कर यदि आलोचना की जाय, तो यही मालूम होगा, कि भारतीय आर्यजगत्में वैज्ञानिक उन्नतिके साथ साथ रसायनशास्त्रका भी एक स्तर उद्घाटित हुआ था।

महर्षि कणादके पञ्चतन्मात्रसे पञ्चमहाभूत, सूक्ष्म और स्थूलदेह, क्षितिकी आणविक समष्टि तथा अणु, द्व्यणुक, त्र्यसरेणु और स्थूलाणु (Single binary, tertiary and quaternary atoms) आदिके संयोग; द्रव्यके रूप, रस और गंध, आपेक्षिक गुणत्व, लघुत्व, तारत्व, घनत्व और शब्दादि गुणका विषय विचारनेसे रसायनशास्त्रकी प्राथमिक भित्तिकी कल्पना की जाती है। अतएव ईसाजन्मसे ६ सदी पहले दर्शनशास्त्रकी उत्पत्तिके साथ साथ भारतवर्षमें रसायनशास्त्रके आणविक विश्लेषणका आभास प्रस्फुट हुआ था।

परकारि वैद्यकक मतसं पार्थिव पदार्थ प्रधानता प्रकाशका है—जोषज, उज्ज्वल और क्षितिज । फिर ये भी मयुर, मन्त्र, लघण, कटु, तिक्त और कषाय रस युक्त हैं । मधु, गोवसन्तरस, मलमूत्र, पोष, शरीर रस, पिच्छ, वसा, मस्तिष्मज्वा, रक्त, मांस, चर्मा, शीर्ष, अस्थि, शृङ्ग, नख, हृत्, गोरीबला, सुगनाभि आदि पदार्थ जोषज । कर्ण, टीव्य, ताम्र, सोसा, टंगा और लोहा (मयवा उनका रासायनिक मसम) बालुकायुग्म, सैन सिल, गेष्मदी, सीरोबाजन, मणिरत्न लघण आदि औषध क्षितिज है ।

उक्त प्रथममें औषधक, सौम्य, बिदु, धौज्जिर और सामुद्र नामक पांच प्रकारक लघणका उल्लेख देखनेमें आता है । ये पांच लघण पांच विभिन्न गुणोंसे युक्त हैं । क्योंकि उनका रासायनिक संयोग भी विभिन्न है । बकरे, मेढ़े, गाय, मैन, हाथो, ऊद, घोड़े और गधे आदिका मूत्रद्वारा स्वतन्त्र है ।

हार प्रस्तुत करनेमें पहले छोटे पत्थानपुष्पको टुकड़ टुकड़े करके सुखा घना होता है । पाछे उसे अडा कर टाकको छः गुन अरुमें बुधा कर सुतो कपड़ेमें २१ बार छान लेनेछ हारजक (Laxium) पाया जाता है । फिर उस प्रथम लोहबयो, मज्जन मुकापूर्ण, लोह, लघा और टीव्य द्वारा प्रस्तुत बखकर औषधादि बनानेको प्रथा भी लिखो है ।

सुभूतक स्वस्थान ११वें अध्यायमें धारपाक और उसके प्रयोगकी विधि लिखी है । छेवन, मेढ़ने और लिखनेक काम करनेवाले समान शक्तो का अपेक्षा हार बहुत कुछ काम करनेवाला है । क्योंकि इससे रक्तपीप निष्कम आता, फोड़े कुद जात और वातादि निक्षेप शान्त होते हैं । सफेद होनेक कारण यह सौम्य नाम से प्रसिद्ध है । पाश्चात्य रसायनमें भी Silver nitrate को Lunar caustic कहत हैं । सौम्य होने पर भी इसम बदन, पथन और विदारण शक्ति है । उष्णबीयको आपचियाँ इसमें अधिक परिमाणमें संयुक्त रहनेक कारण यह कटु, उष्ण और तीक्ष्णगुणविशिष्ट हो गया है । इसके द्वारा पाथन, बिडपन, शोषन, रोषण, शोषण, स्तम्भन और अक्षनिका सम्पन्न होती है तथा इसका संयन

करनेसे हृमि, कुष्ठ, कफ, विप भीर मेढ़का क्षय होता है । अधिक परिमाणमें सेवन करनेसे पुल्पत्व गह होता है ।

प्रतिसारणीय (डेपनयोग्य) और पात्राय मेढ़से क्षार दो प्रकारका है । कुष्ठ, क्रिमि, वृष्टु, क्लिास, मण्डक, मण्डूर अशुद्ध, कुष्ठप्रण नाश्रीमण चमकीक, तिक्त कारक, न्यच्छ, बज्ज, मशक, पाह्यप्रण, हृमि, विप और मरी तथा उपजिहा अपिजिह, उपकुश, हस्तवैर्दम और तीन प्रकारके रोहिणीरोगमें प्रतिसारणीय क्षार विशेष है । इन सब मुखरोगमें क्षार शक्ति समान काम करता है । गलेक गुन्म, उदररोग अमिमाम्ब, अश्रीर्ण, अरधि, आनाह, शर्करामरी, अन्तर्मण, हृमि, विपक्षेय और अश्रीरोगमें पानीय क्षारका प्रयोग करना उचित है । बासक वृक्ष, दुर्धक और पिच्छप्रकृतिविशिष्ट तथा रक्तपिच्छ, उधर, श्रम, मसला, मूच्छा और तिमिर रोगमें क्षारका आम्बन्त रिक्त प्रयोग हितकर नहीं है ।

इस क्षारको अम्बान्य क्षारको तरह आविन कर लेना होगा । सूत्र, मध्यम और तीक्ष्णक मेढ़से क्षार तीन प्रकारका है । इसके बनानेके नियम—शरत्कालक उत्तम दिनमें यद्यतीत उपवास करके पवित्र चित्तस पर्यंतके नोचे अच्छे जमानमें उष्ण मन्थोले अकार और अकहड मोक्षा नामक पेड़का पड़े अपिवास करे । वृसैर दिन मस पद कर उसे उधाड़े । अन्तर रक्तपुष्प और स्पेठपुष्प द्वारा होम करके उस प्लको कण्ड करके कर वायुशुष्क स्थानमें सत्रा रखे । पाछे उसके ऊपर सुषोयकैर रख कर तिलगुलके काष्ठ द्वारा दग्ध करे । भाग बुभु ज्ञाने पर वृष्ट और शर्करा-मसमको अलग अलग रखे । इसी प्रकार कूटज, पलाज, मन्धकण पवाय, पामितामदार, बहड़ा, अमरतास औष, आकम्ब, पूहरका बाय, मपाङ्ग पड़ार, उदरकरज, बाकस, कदली, चिता, नाटाकरक, अलुंनरुह, काष्ठमहिा, करवीर, गणिकाय, कृष्ण और चार प्रकारकी घोषा, इनमेंसे किसी एक पृष्ठ का क्षार प्रस्तुत करनेमें उसके फल, मूक, पत्र और शाखा एवं पकन कर पूर्वक विधानसे दग्ध करे ।

द्राव परिमाण (३२ सत) मसमका छः गुन अरु मयवा गोमूत्रम भासादन कर कपड़ेसे २१ बार छान ले । पाछे बड़े कड़ाहमें शाल कर भांघ दे । यह अरु

जव निर्मल, लाल, तीक्ष्ण और पिच्छिल हो जाय, तब असार भागको छान कर फेंक दे और परिष्कृत जल फिरसे आग पर चढ़ावे। पीछे नाटावीज, पूर्वोक्त शर्करा भस्म, सीप और शङ्खनाभि प्रत्येक ८ पल ले कर लोहेके वरतनमें रखे और तपा कर आगके समान लाल बना ले। इसके बाद उसमें थोडा क्षारजल मिला कर अच्छी तरह पीसे और ६४ सैर क्षारजलमें उसे डाल दे। अनन्तर स्थिर चित्तसे उस क्षारजलको हाथसे सञ्चालन करके पाक करता होगा। जव वह गाढा हो जाय तब उतार कर लोहेके वरतनमें मुंह बंद कर रखे। यही क्षार कहाता है। सीप आदि डाले बिना जो पाक अच्छी तरह सञ्चालित कर लिया जाता है उसे मृदुक्षार कहते हैं।

मृदुक्षारजलमें इन्तीगृक्ष, चिद्वक, लाङ्गलिका, नाटा-करञ्ज, प्रवाल, मुरामासी, विट्कवण, सजी मट्टी, स्वर्ण क्षीरी लता, हिंगु, वच और शृङ्गिविप प्रत्येकका २ तोला चूर्ण डाल कर पाक करनेसे वह फोडे आदिको जल्दी पका देता है। यही तीक्ष्णक्षार है। कमजोर व्यक्तिको मृदुक्षारोदक सेवन करानेसे बलकी वृद्धि होती है।

क्षारका गुण विचार बहुत तीक्ष्ण वा बहुत मृदु न होना, श्वेतवर्ण, निर्मल, पिच्छिल, द्रवकारी, बलकर और शरीरके मध्य शीघ्र घुस जाना ये आठ प्रकारके गुण हैं, तथा अत्यन्त मृदु, अत्यन्त शीतल, अति प्रवेशकारी, बहुत घना, अपक और द्रव्यहीनता क्षारके दोष हैं।

पीडित स्थानमें क्षार लगानेसे काला दाग पड़ जाता है। घृतमधु संयुक्त अम्लवर्गका प्रलेप देनेसे दग्धजनित ज्वाला निवृत्त होती है। यदि निवृत्त न हो, तो अम्ल-वर्ग, काञ्जिक, जीवन्तीबीज, निल और मुलेठीको एकत्र पीस कर प्रलेप दे। मुलेठी और घृतसंयुक्त पीसे हुए तिलको उष्णवीर्य और तीक्ष्ण अम्ल रसके साथ मिला कर प्रलेप देनेसे क्षत स्थान भर आता है।

अम्लको छोड कर सभी रसोंमें क्षार है। कट्टररसमें यह सबसे अधिक और लवण रसमें उससे कम है। यह लवणरस अम्लरसके साथ मिलनेसे मधुर होता है।

चरक और सुश्रुतादि आयुर्वेदशास्त्रोंमें रागे, तावे, लोहे और सोनेकी मारण विधि, क्षार प्रयोगविधि, सैन्धव, सामुद्र, विट, सौवर्चल, वामक और उज्ज्व

लवणादिका प्रयोग; पथरीरोगमें यवक्षार, सर्जिका और सुहागेका आभ्यन्तरिक प्रयोग तथा उपटंशादि चहिःश्वत-रोगमें तूतिया, हीराकसीस, मैनसिल, हरताल, फिट-करी, गेरुमिट्टी, रसाजन, रोध्र, गोपीचन्दन आदि धातव औषधोंका व्यवहार, मिट्टीके तेल और क्षारतेलका प्रयोग, कासरोगमें हरिणके सोंगका घूमसेवन; सफेद बाल काला करनेके लिये तूतिये, लोहे और हरीतकी तैलका संयोग तथा पारदादि योगमें रसायनाधिकारोक्त रसायन और रसौषधकी प्रस्तुत प्रणालीको आलोचना करनेसे भारतीय रसायनशास्त्रका एक बड़ा इतिहास बन सकता है। उन सबका संक्षिप्त विवरण रसायन शब्दमें लिखा जा चुका है, इस कारण यद्वा पर नहीं लिखा गया है। रसायन शब्द देखो।

चक्रपाणिने पारदशोधनकी व्यवस्था करके उससे कजली (Black sulphide of mercury) वा रसपर्णटी आदि रसौषध बनानेके नियम निकाले हैं। अपनी ताम्रयोग (Powder of copper compound) नामक औषध बनानेको प्रणालीमें उन्होंने एक आवश्यकीय रासायनिक यन्त्रका भी आभास दिया है। पहले धाली जैसे चिपटे मिट्टीके वरतनमें नेपालजाता ताम्रपत्रको गन्धकके चूर्णमें रखे। पीछे उसी आकारके एक दूसरे वरतनसे उसका मुंह ढक दे इसके बाद उसे बालुका-यन्त्रमें रख कर ३ घंटे तक अग्निमें दग्ध करे। पीछे उस ताम्रको चूर्ण कर औषधादिके माथ रोगविशेषमें इसका प्रयोग किया जाता है।

लोहपारदादि धातुकी मारण, जारण और शोधन प्रणालीका विवरण ऊपरमें दिया जा चुका है।

आयुर्वेदिक युगमें रासायनिक प्रक्रियाके परिपोषक नाना यन्त्रादिका निदर्शन नहीं रहने पर भी हम लोग तत्परवर्ती तान्त्रिक युगमें (१२८०-१३०० ई०) धातव औषधादि बनानेके कितने रसायन-साध्य यन्त्रोंका उल्लेख देखते हैं। रसाणव और रसरत्नसमुच्चय नामक तन्त्रोंमें धातवादिके रसायनिक संयोगार्थ जिन सब उस समय प्रचलित यन्त्रोंका उल्लेख है यहां पर उनका संक्षिप्त विवरण दिया जाता है।

रसायनयंत्रों में प्रयोग कइत है, कि निम्नोक्त द्रव्य सभइ करके रसायन कार्य आरम्भ करना चाहिये।

- “आयसखोदानि वन कपिष्ठं मिडुम् ।
- धमनीकौहयन्त्रिय कन्यापापायसम् ॥
- कपिष्ठिका वक्रनाकञ्ज गामय सारिम्भम् ।
- मूनयानि य कन्यायि मूत्रकोषुक्तानि च ॥
- कङ्कलीनादर्यपत्तं मूत्रपापायाः कपयन्म् ।
- प्रतिमन्त्रानि च दुग्धा हृदनानि कपयन्त्रम् ॥
- च कन्यानी लौहनाडी मूत्रमनास्रतपीयी ।
- स्नानान्कषयघ्नानि पायसुपविपायि च ।
- एव सप्यम् सम्भार कम कागं ठमाफेत् ॥”

(रसायन च ४^थ परि०)

उपरोक्त इसी प्रकार भाषा प्राञ्जल जान कर यहां पर इसका अनुवाद नहीं दिया गया। इसी कथन पर शर्मा जी ने भी गरीबों की प्रतिपाद्यकी आलोचना करनेसे प्राण्य और प्रतोष्य रसायन सम्बन्धीय वस्तुगत व्यवहारका बहुत कुछ सामर्थ्य सहजमें माहित हो सकता है।

हसोस (green vitrol), सैण्य (rock-salt) मासिक (pyrites) सीबीर (stilbite), ब्योप (गोमनिर्षा, पीपल और सौंठ) गन्धक (sulphur), सौषध (saltpetre) इन्हे मिश्र मूलके रसमें सिक्त करनेसे बिड़ु हाता है। नूसरेक मतानुसार गंधक, हरिताम (orpiment), सिर्यूय (sea-salt, salt), शुद्धिका (sal ammoniac) और टकुय (borax) को क्षार और मूलमें सङ्गानेस उभाजामुक्त नामक बिड़ु तैयार हाता है। धमनी (a pair of bellows), कौहयन्त्रायि (iron implements), कन्यापापायसम् (stone pestle and mortar), कौष्टिक ११ उ गञ्जा धोड़ा और २ हाथ सभ्या यन्त्र है। इसक द्वारा धातुका मूल पदार्थ जैसे मबिडुय इस्ता (calamine) से बिशुद्ध इस्ता (Zinc) निकाल लिया जाता है। पकनास (mouth blow pipe), गोमय (गोहडा), साररन्धन, मृण्मय यन्त्र (earthen apparatus) — व्यासा इकती भादि) मूसल और मोसली, सङ्गसो, (a pair of tongs), मूत्रपात्र और भाषा इरोटक (earthen and iron vessels) प्रतिमात्रानि (weights) तताम् (balance),

वशनाडी और खोहनाडी Bamboo and iron pipes तथा स्नेह (lute), प्रम्य (acid) छयय (salts), क्षार (alkalies) और विष (poisons) तथा मय रक, सैकान्त मासिक, घिमल भद्रित या शिखाजोत, सस्यक या मयूर-सुन्ध, कपक, रसक, ये भाठ प्रकारक रस; गंधक, गेरिक कसोन, ठाडक, मैनिस्त्र ककुट और मङ्गलादि भाठ उपरस कपिन गीरोपापाय, नव माग कपई मगिनसार गिरिसिन्दुर हिगुल और मुहारउरुक नामक साधारण रस हैं। सीबीरि धातु, वल और रत्न भादि द्रव्य पकन कर रससिद्ध कपिक कार्योंमें प्रयुक्त हाये। इन सब संयुक्त द्रव्योंको एक साथ ले जमसे एक छोटी कर्मशाळा या रसशाळा (laboratory) बनती है। (रसतन्त्रमुषय)

इसके बाद उस रसशाळामें कौन कौन यन्त्र किस किस कार्योंमें प्रयोज्य व्यबहृत होता था उसका विवरण नीचे दिया जाता है।

१ दोक्यायत—एक बरतनमें माघा ठरक पदार्थ भर कर एक काष्ठरुद्ध सीपा कड़ा करे और उसमें रस पोटीको (कपडमें बंधी धीपयादि) लटका दे। पोछे उस पर एक दूसरा महीका बरतन उलटा कर डक दे। धोड़ी देर बाद देखेंगे, कि यह पोटीको भापसे तरावीर है।

(रसतन्त्रमुषय ६।१-४)

माघप्रकाशमें दाज्यायन्त्रका विवरण इस प्रकार है,— पारदसंयुक्त मीपको एक लिवल मोडपतसे छपेट कर पुटी बनाये। पोछे सुतेसे उस पाटीकोको एक लकड़ीमें मजबूतान बांध दे। बाधमें काञ्चिकादिस पूर्ण एक दूसरे बरतनक छपर यह लकड़ी इस प्रकार रखे कि उसमें बंधी हुई पोटीकी बरतनमें छटकती रहे। इसक बाद उसे माघ पर पड़ा कर पधापिधि पाक करे। कोई काइ इसे स्वेदनावययन्त्र भा कहते हैं।

“निवदमीपं हवं मूत्रं तत् प्रियुषाम्भरे ।

रसायनिकं कप्यं तद् कन्या गुयेन हि ॥

कन्यायुय कुम्भन्तः क्षात्रकन्यासुलिम् ।

नक्षत्रान्नादरेदमि तद्युक्तमय हि ।

शोणननिर्द्रेयि के लवनात्म्यं तद्व हि ॥”

(माघ. पूर्ण.)

२ स्वेदनीयन्त्र—एक जलपूर्ण मृत्पात्रका मुंह कपड़े से बांध कर उसके ऊपर पाष्य द्रव्य रखे । पीछे उसी आकारका दूसरा पात्र उस पर उल्टा रख कर लेपसे मुंह बंद कर दे । इसके बाट आँच पर चढानेसे नीचेके बरतनसे जो भाप उठेगी उससे कपड़े पर रखी हुई वस्तु भींग जायगी ।

"साम्युस्थानीमुखवद्रे यन्त्रे पाष्य निवेशयेत् ।

षिषाय पच्यते यत्र त्वेदनीयन्त्र मुच्यते ॥"

(रसरत्नसं २ अ०)

जारणयन्त्र—बारह उ गली लंबे लोहेके दो चोंगे बनावे । पत्रके पेटमें कुछ छेद रहेगा । छेदवाले चोंगेमें गंधक और दृमरमें रस भर कर मूषामें डाल दे । पारेके नीचे एक दूसरे बरतनमें जल रखे । पहले वह रस और गंधक चक्षुगालित रसोत्तर रसमें बड़ो सावधानीसे मिला कर उससे बरतन भर दे । इसके बाद उस यन्त्रको एक मृत्पात्रके मध्य रख कर ऊपरसे दूसरा पात्र ढक दे । दोनों पात्रके संयोग स्थल को कपड़े और मिट्टीसे इस प्रकार बंद कर दे, कि कहीं भी छेद रहने न पावे । अनन्तर उसे गौशुंठीकी आगमें तीन दिन जलानेके बाद गरम जलमें मर्दन करें ।

"लौहमूषाद्वयं कृत्वा द्वादशगुण क्षमानत, ।

ईषच्छिद्रा द्विप्रमितामेका गन्धकसयुताम् ॥

मूषाया रसयुक्तायामन्यस्या तां प्रवेशयेत् ।

वाय स्यात् सवस्त्र्याव ऊर्ध्वार्धां बट्निदीपनम् ॥

रसोत्तरस मद्रो यत्नतो वस्त्रगालितम् ।

दाषयेत् प्रचुर यत्नादाप्लाव्य रसगवको ॥

स्थास्त्रिकाया निधायोर्ध्वं स्थालीमन्या दृढा क्रुत् ।

खन्वि विलेपयेद्यत्नान्मृदा वस्त्रेण चैव हि ॥

स्थाल्यन्तरे कपोताख्य पुट क्रपाग्निना सदा ।

यन्त्रस्थावः करीपाग्निं दद्यात् तीव्राग्निमेव च ॥

एव तु त्रिदिनं कुर्यात् उत्ततोये विमर्दयेत् ।

न तत्रक्षीयते सुतो न च गच्छति कुशचित् ॥

ऊर्ध्वं वह्निरधश्चापो मध्ये तु रस-सग्रहः ।

मूषायन्त्रमिदं देवि जारयेद्गं वक्रादिकम् ॥" (रसार्णव)

गर्भयन्त्र—४ उ गली लंबा, ३ उ गली चौड़ा आर १ उ गली गहरा एक मूषा बनावे । पीछे लवण २० भाग

और गुग्गुलु १ भागको अच्छी तरह चूर्ण कर उसे जलसे मले । इसके बाद उसमें तिलपिष्ट डालना होगा, बादमें भूसीकी आगमें दग्ध करनेसे तीन रातमें पारा (पिष्टिक) भस्म हो जायगा । इस यन्त्रसे विना भेषजादिके पारद, जारण और रञ्जन किया जा सकता है ।

"गर्भयन्त्रं प्रवक्ष्यामि पिष्टिका भस्मकारकम् ।

चतुरगुनदीर्घाच्च गुणिका मृषमयी दृढाम् ॥

अगुनमव्यविस्तारं वचुर्ज्जं कारयेन्मुत्तम् ।

लोणस्य विंशतिर्भागो एकभागस्तु गुग्गुत्ताः ॥

मुश्रद्वन पेषयित्वा तु तत्र दद्यात् पुनः पुनः ।

मूषालेपं तत, कुर्यात् तिलपिष्टं च निक्षिपेत् ॥

कुर्यात् त्रिगुणं भूमौ च मृदुत्वेदं तु कारयेत् ।

बहोरात्रं शिरात्रं वा रत्नं भस्मता प्रचेत् ॥

जारणे सारणे चैव रसराजस्य रञ्जने ।

यन्त्रमेव परं कर्म यन्त्रविद्यामहावता ॥

ओषधिरहितश्चायं हठात् यन्त्रेण वध्यते ।

तस्माद् यन्त्रवत् चैकं न विद्वद्व्य विज्ञानता ॥"

(रसार्णव)

हंसपाकयन्त्र—सिक्ताकार एक ग्नपरैल बना कर उसे बालूसे भर दे । पीछे उसके ऊपर एक दूसरी खपरैल रख कर पञ्चशर, सूत्र, लवण और विडङ्गके साथ औषधादि पाक करें ।

"खपरं सिक्ताकारं कृत्वा तस्योपरि न्यसेत् ।

अपर खपरं तत्र शनैर्मृदग्निना पचेत् ॥

पञ्चशरैस्तथा मूषैर्लवणैश्च विडैस्ततः ।

हंसपाकः सविज्ञातो यन्त्रतत्त्वाथंकोविदैः ॥" (रसार्णव)

मूषा—मूषा, भाण्ड, स्थाली आदि रासायनिकके आवश्यककीय मृदुयन्त्र बनानेके लिये काली, लाल, पीली और सफेद मिट्टी कही गई है । इनमेंसे काली मिट्टी ही उत्तम है । चुलाईके वक्र नल आदि बनानेमें कुछ कड़ो मिट्टीकी जरूरत होती है । इसीलिये तुपदग्ध, बलमीकी मिट्टी, अज और घोड़ेका मलदग्ध, लोहमण्डूर और वृक्षविशेष दग्ध अङ्गार उसमें मिलाया जाता है ।

अधमूषायन्त्र—भूसीकी राख २ भाग, मण्डूर १ भाग, सफेद पत्थरका चूर्ण १ भाग, बकरीका दूध २

भाग तथा मनुष्यके बाह्य इन्हें एक साथ पोस कर गो स्तनके व्याकरण एक पात्र बनाता होता है। इसीका नाम मूया है। मूया सूक्ष्मे पर उसमें पाएवादि पदार्थ रक्त ऊपरसे वृत्तरा बरतन ढक दे। दोनोंके मुठ पर मूया बनानेवाले उपादानसं छेप चढ़ाये। इसकी मध्यमूया पन्नक कहत है। किसी किसीके मतसे यह बज्रमूया भी कह्यता है।

“कृम्या रक्षा च पत्ता च शुष्कवत्या च मृत्तिका ।
 भाया च वा कनिद्या च मय्या मध्या भाया च
 दारुषान्मृपोषेया मृत्तिका काष्ठकरिका ।
 बन्नाकृते वापि क्लृप्तं मुत्तुन्दरि ॥
 गोरा दग्धा तथा दग्धा दग्धा-बभ्रीकमृत्तिका ।
 नवात्तना मर्द्धं दग्धं दग्धाम् कृष्यता गता ॥
 वातकृत्स्व च परप्रिय बभ्रीकृत्स्व मूया ख ।
 पत्रवेदिकोमेन जनेन बज्राता गम्भ ॥
 यहं पितृ वेन बन्नीयान्प्रकनासं च कीष्टकम् ।
 गोरा दग्धा तथा दग्धा दग्धा बभ्रीकमृत्तिका ॥
 निरामहारकः किहू बज्रोप्यपि न भित्ते ।
 दग्धाहारस्व पाहू भगता ममोका कृष्यसुसिका ॥
 किरमहारकः किहू बभूम्या मर्द्धसिवा ॥
 गुणदग्धवमा दग्धमृत्तिका चतुरधिक्रिका ।
 क्लृप्तमर्धपानाव्यसुक्ष्म बभूम्या मर्द्धसिवा ॥
 मकाहावान्कमूया च प्रकृतिविधिवा स्मूया ।
 प्रकाममूया वेवेदि धरताकरतनुया ॥
 इत्यमृतोद्दृष्टो वा च वेदिचैः गुणकल्प्ये ॥
 मध्यमूया ॥ कर्त्तव्या गोलेनान्तरालिन्या ।
 पिचामकृषमसुक्ष्म क्रिष्टिबुधानमस्तका ॥
 परलेप तथा रक्षे इहमं धातुके तथा ।
 सेन क्षिप्रान्विता मन्दा मन्मीरा वरत्तारिका ॥
 मोषकारस्व मागी ह्ये इहकांशमन्विता ।
 मज्जागत्याप्युत्सर्ज्युक्त्वा बर्यादिनि ॥” (रत्नायन)

विद्याधरपन्नक—एक बरतनमें पात्र रक्त कर उसका ऊपर तक वृत्तरा ब्रह्मपूर्ण बरतन धैठायि तथा दोनोंके संयोग स्थलको मिट्टीसे छेप दे। बाधमें सूजे पर रक्त कर पाँच पहर तक धोचं है। ऊपरक बरतनका ब्रह्म अब गरम हो जाय, तब उसे फेंक कर फिर उसमें शीतक

ब्रह्म डाले। ऐसा करनेसे नीचेकी हाँडूका परा घीरे धीरे ऊपरवाको हाँडूके पेंदमें ब्रम जायगा। पाक श्रेय होने पर उसमेंसे पात्र निकाल ले। पारवक ऊर्ध्वपूर्ण पातल क्रियामें इस यन्त्रका व्यवहार होता है।

“अथ स्वात्पा एतं क्षिप्रया निरूप्यात्कृन्मुक्षमि ।
 स्वात्प्रोमूर्ध्वमुखीं वय्यक निरव्यन न कुमुत्स्वया ॥
 ऊर्ध्वस्वात्पा जलं क्षिप्रया सूषामाराप्य कल्पतः ।
 मयस्ताम्नबातवदग्नि वातव् प्रहरपन्नकम् ॥
 स्वात्प्रोत्तं कटा क्कनद्वयपीषात्रकमुचमम् ।
 विद्याधरान्निन य नमवत्तम्न बराहम् ॥”

(भाष्य० पूर्व०)

रसरत्नसमुच्चयम इसीकी हिशुआकृतिविद्याधरपन्नक का है।

मूयपरपन्नक—एक ब्रह्मपूर्ण क्लृप्तको जमीनके नीचे गाड़ कर एक वृत्तरा क्लृप्त जिसका मातर भीषण छिप्त रहे उसका ऊपर रक्त दे। संयोगस्थलको मिट्टीसे छेपसे अच्छी तरह ढँक कर दे। पीछे ऊपरके क्लृप्तमें ऊपरसे हाँ माँचनेमें उसका भीषण नीचेक ब्रह्मपूर्ण क्लृप्तमें गिर पड़ेगा। यह पारैको मयःपतनक्रिया करनेमें विशेष साहाय्यक है।

माधप्रकाशमें वृत्ते प्रकारके मूयपरपन्नका ब्रह्मं का है—मूयाक मध्य पात्र रक्त कर वह मूया बावूसे ढक दे। पीछे उसके चारों ओर गोइटा सज्जा कर भाग ब्रह्मणि।

‘ बावुकाभिः समस्ताः गर्भे मूया रताम्बिता ।

रीन्दोन्वाः संशुद्धाद्गन्ध मन्जामकम् ॥” (भाष्य०)

बावुकायन्त्र—एक हाँडूमें कबचीपन्नक सर्पात् भीषण-पूर्ण भीर सृष्टिधाकित एक बोतल पैठा कर उसके मझे तक बभू मर दे। पीछे उस हाँडूमें भाँच दे कर भीषण को पूँचकाये। यह यन्त्र रससिम्बूट, मकरध्वज भादि भीषण बनानेमें व्यवहृत होता है।

‘रसरत्नसमुच्चयमें छिन्ना है—एक काचक बोतलमें जिसका गळा कम्बा हा महुा भीर कपड़े ढका ऊपरसे न्य चढ़ा कर उसमें पाएवादि भीषण रत्ने। पीछे बिकल मर पहर एक माधइम यह बोतल रक्त कर इस का विहाइ भाय बाद्धसे भर दे। भन्तरर उसके ऊपर एक वृत्तरा माएक उल्टा कर मुक्कसन्धिको महासे छेप

तेन पत्राणि कृत्त्वानि हवान्युक्तविधागतः ॥

* * * *

गन्धालकशिलानां हि कञ्जल्या वा मृताहिना ॥

धूपन स्वर्णपत्राणां प्रथम परिकीर्तितम् ।

तारार्थं तारपत्राणि मृतवन्धेन धूपयेत् ॥”

(सरत्न २।७०-७६)

इन सब यन्त्रोंकी सहायतासे ट्रायक (acids) तथा आसच और मद्यादि (medicated wines) चुआया जाता है। जारण, मारण और पुटपाक द्वारा धातु और रसादि विशुद्ध तथा अधिक गुणयुक्त होता है। *

विशेष विवरण उन्हीं सब शब्दोंमें देखो।

यूरोपीय रसायन।

श्रुति आदिका पाञ्चभौतिक पदार्थका संयोजन (synthesis) और विश्लेषण (analysis) धर्मका कारण निर्णय करनेके लिये सम्प्रदाय विशेषकी चेष्टासे किमियाचिद्याकी उत्पत्ति हुई है। ११वीं सदीमें स्वीडम (Svadas) के अभिधानमें प्रथमतः Chemistry शब्दका प्रयोग देखा जाता है। उन्हींमें स्वर्ण और रौप्यकी प्रस्तुत प्रणाली के अर्थमें इस शब्दका व्यवहार किया है। उसी ग्रन्थमें दूसरी जगह लिखा है, कि इजिप्तवासी इस विद्याके प्रभावसे आगे कहीं शत्रुता न ठान दे, इस भयसे डावक़ि सियनने स्वजातीय रसायन विषयक सभी ग्रन्थोंको आगमें जला दिया। वह विद्या प्राचीन आर्गोनटिकके अभियानकालसे प्रचलित थी। ५वींसे लेकर १५वीं सदी तक ग्रीक लोग सोने और चांदी बनानेकी विद्याके पक्षपाती थे। इटली, फ्रान्स, जर्मनी और इङ्ग्लैण्डवासी दार्शनिक ११वींसे १५वीं सदी तक गहरी खोजसे रसायनशास्त्रका अनुशीलन करते रहे थे।

Isaacus Hollandus, Roger Bacon, Raymond-Lully, Basil Valentin, John Price, George Rippel, Geber आदि मनीषियोंने गन्धक, स्वर्ण, रौप्य, ताम्र, पारद, बद्ध, रद्ध, पिचल आदि धातुओं तथा उपधातुओंका भेदगुण और मनुष्यके शरीरमें उसकी उपयोगिता उपलब्ध की थी।

* Dr P. C. Raya's Hindu Chemistry देखो।

१६वीं सदीमें एक दल नवीन रसायनविद् (Spagyrist)-का उद्भव हुआ। उन लोगोंने पूर्वकथित रससिद्ध लोगोंकी तरह पारस पत्थरकी तलाश न करके रासायनिक प्रक्रिया द्वारा प्रस्तुत औषधादिके उद्भावनमें अपनी सारी शक्ति लगा दी थी। Paracelsus (१४६३-१५४१ ई०)ने लिखा है,—“The true use of chemistry is not to make gold, but to prepare medicines.” वे Galden-के मतकी उपेक्षा कर अपना मत स्थापन करनेमें बद्धपरिकर हुए। इस समय Thurneysser (१५३१-१५६६), Bodenstein Taxites, Dorn, Sennert, Duchesne आदि उनके पृष्ठपोषक हो उस कार्यमें लग गये। इसके बाद १७वीं सदीमें विख्यात अंगरेज-चिकित्सक Dr Willis (१६२१-१६५७ ई०) तथा Lefebvre और Lemery नामक दो पारसी पण्डित उक्त मतकी अच्छी तरह पुष्टि कर गये हैं।

पारासेलसके समय जर्मनदेशमें एग्रिकोला (१४६४-१५५५ ई०) नामक एक धातुविद् विलकुल स्वतन्त्रभावमें धातुविज्ञानकी आलोचना करते थे। उनके बनाये हुए 'De Re Metallica' नामक ग्रन्थमें फलित रसायनसम्बन्धीय अनेक आवश्यकीय विषयोंका सिद्धान्त है। लिवाभियस (१६१६ ई०से कुछ पहले) पारासेलस और अरिस्टलके मतका अनुसरण कर रसायनशास्त्रकी बहुत उन्नति कर गये हैं।

इस समयके कुछ वाद J. B. Van Helmont (१५७७-१६४४ ई०), Francis de la Boe Sylvius (१६१४-१६७२ ई०) तथा Glauber (१६०४-१६६८ ई०) आदि विद्वान रसायनविज्ञानकी उन्नतिमें लग गये। ग्लौबर sulphate of sodium नामक यौगिक पदार्थके आविष्कर्त्ता थे, इस कारण वह पदार्थ आज भी Glauber's salt नामसे रसायनशास्त्रमें प्रसिद्ध है। इस प्रकार जब एक पक्षने रसायनकी उपकारिता दिखलाते हुए उस विज्ञानकी उन्नतिके लिये अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया था, तब Robert Boyle (१६२७-१६९० ई०) coming (१६०६-१६८१ ई०), Sydenham (१६२४-८६), Pitcairne (१६५२-१७१३ ई०) और उनके शिष्य Boerhaave (१६६८-१७३८) आदि मनीषिलोग आयुर्वेदीय

रसायन (Intro-chemistry) की असायंछता साबित करनेमें अब गये। किन्तु De Blegay Borrichius, Viridet, Vieussens और F Hoffmann आदि रसायनिकोंने जब बड़े धोरसे आत्मपशुका समर्थन किया, तब रसायन विद्वेषित्व उनको उन्मत्तिपर्यन्त जाता भी थापा न पड़ जा सका।

Kunckel (१६३०-१७०३) अपने मध्यरसायने रसायनशास्त्रार्थमें प्रथम रससञ्चय कर गये हैं। यौगिक पदार्थके रसायनिक प्रमाय और संयुक्त दोनों वस्तुओंकी त्रिप्रायिका विषय Becher (१६३५-१६८२ ई०) ने सबसे पहले रसायनशास्त्रमें विषयय किया। तापके संयोगसे कुछ वस्तु तो थोड़े ही समयमें जल जाती थीं और कुछ अधिक ताप मगने पर भा नहीं उबलती बल्कि रसायन विद्व Stahl (१६६०-१७३४) ने इसका कारण दिखलाने हुए एक शीपक पदार्थ (Phlogiston) की कल्पना की। इस शीपकीय तत्वका अनुसरण कर पूरकचित Hoffmann, Jomberg (१६५२-१७१५ ई०), E F Geoffroy (१६७२-१७३१ ई०), Neumann (१६८३-१७३७ ई०), J H Pott (१६६२-१७३३ ई०) Marggraf (१७०६-८२ ई०), Macquer (१७१८-८४ ई०), Beaumur (१६८३-१७५३ ई०), Hellot (१६८५-१७६५ ई०) Dalmela Monceau (१७००-८२ ई०) आदि रसायन विद्वोंने बहुत शोध करके रसायनशास्त्रका विरोध्ण्य भाषि पकार दिया। (Macquer) आर्सेनिक पसिडक उद्धारक कर कर जनसाधारणमें परिचित थे। बहुत फल है, हे नि, रस i biogistic युगमें Robert Hooke (१६६५-१७३५), Masow (१६४५-१६७१), Dr Stephen Hales (१६७५-१७३१ ई०) Dr Black Dr J Priestley (१७३३-१८१०), Henry Cavendish (१७३३-१८१० ई०) आदि Phlogiston तत्त्वानुमन्धिरसु रसायन विद्वोंने रस विज्ञानशास्त्रका समर्थ्य धारण की थी।

जो यूरोपीय वैज्ञानिक एक समय जल, लवण, अम्ल और वायुको भूत पदार्थ मानन थे तथा एक स्रोत पदार्थ कुछ श्रापक acids) और धार (Alkalies) निघ यौगिक पदार्थके सम्बन्धमें जिनका अधिका ज्ञान न था, उन स्रोतके शोधनरथक अन्वयणमें व्यापृत हो उठयायू

को तब शीपकका भी (Phlogiston) एक मौलिक पदार्थ माना था। यह कहते थे, कि यह शक्ति या पदार्थ शून्यके अगोचर होने पर भी काय द्वारा हम खोग उसका अस्तित्व अनुभव कर सकत हैं। पदार्थमात्रको अस्थि मज्जामें यह कुछ न कुछ रहता हा है। किसी उपाय द्वारा मूल पदार्थसे उसका मलग कर सकनेस हो तापक आलोकाका उत्पत्ति हो सकता है।

१७३६ ई०में फामेरिडसनने उद्जनयापकका भाषिपकार किया। इस पाययाय पदार्थको तापके संयोगसे जलत वृक्ष वैज्ञानिकोंने शीपकका कायकारित्व हा उसका प्रथान कारण स्थिर किया था। उनके मतसे दूसरे दूसरे पदार्थमें शीपक जिस प्रकार निचिडुभायमें मिश्रित रहता है, उद् जनतय शीपक उस प्रकार इड संक्षिप्त न हो कर बहुत कुछ मुकायस्थान रहता है। यहा मुकशायक उद्जनक उद्धानमें समर्थ है।

१६वा सत्रके भारतमें फरासा-राष्ट्रियतयकी प्रथम बाइसे जब सारा यूरोपभर उधोस्य हो नय मायमें संगठित हा रहा था, उस समय वैज्ञानिक विषयकी प्रथम उररूस अथ विज्ञानका कितनी श्रापा प्रगाथाओं का नायं भा बैठ गइ थी। पाछे नइ प्रजाकास उंस फिर लडा करनेका भापोजन हुआ। जल, लवण, अम्ल, वायु और शीपकको मौलिक पदार्थ मान कर प्राचीन वैज्ञानिकोंने रसायनशास्त्रको प्रतिष्ठा की थी। मधीन वैज्ञानिकस्यक भाषिपकार फलस प्राचान रसायनशास्त्रको यह पाञ्चमौलिक निधि उभड़ गइ। नय भागाने पराधा द्वारा स्थिर किया कि मट्टे, जल और वायु मौलिक पदार्थ नहीं हैं उन्हे सहजमें विस्त्रिण किया जा सकता है। रामायनिक विश्लयणस यह सब प्रत्यक्ष हय कर लागीका शीपक सम्बन्धमें सम्बद्ध हाने लगा। इसी समय बहुत शास्त्रक ज्ञानप्राप्ति मिष्टने भाषिसजन पाण्यका भाषि पकार किया। इससे सर्वेहको माना और भी दूता बड़ गइ। मिष्टन शीपकका ही अक्षिरजनकी शक्तिकारित्वका कारण बताया था। किन्तु उस नूतन पाययाय पदार्थ द्वारा शीपकका अस्तित्व साबित करनेमें विरोध सुविधा दींगा पहले मिष्टका ध्यान इस धार न शीका।

जब नय भाषिपटन अक्षिसजनका शक्तिकारित्वका

कारण निर्णय ले कर वैज्ञानिकोंमें तुमुल आन्दोलन चल रहा था, उन समय फरासी परिंडत L Lavoisier (१७४३-१७९४) अपनी रसशालामें वैठ अक्सिजन सम्बन्धीय गवेषणामें रत थे। वे पूर्ववैज्ञानिकोंको तरह दीपक पदार्थको मभी रासायनिक कार्यका साधक नहीं मानते थे। परीक्षा द्वारा जब उन्होंने देखा, कि अग्निशिखाके स्पर्शसे अक्सिजन जल जाता वा रूपान्तरित होता है, तब उन्होंने यह सावित किया, कि एकमात्र इस अक्सिजन द्वारा ही वे सब रासायनिक कार्य हो सकते हैं। इस मीमांसाको प्रत्यक्ष करके निरपेक्ष व्यक्तिगण काल्पनिक दीपक पदार्थकी उपयोगिता अग्राह्य करने लगे। इस प्रकार नव्य वैज्ञानिक सम्प्रदायके प्रधान लाभोसियरने अक्सिजनकी महायतासे अपने छोटे परीक्षा घरमें यूरोपीय रसायनशास्त्रकी प्रकृत भित्ति स्थापन की थी।

धीरे धीरे लाभोसियरके शिष्योंसे यह नवीन तत्त्व फरासी राज्यके चारों ओर फैल गया। जगद्विष्यात तापतत्त्वविद् मि० बलाक, जलके गठनोपादाननिर्णायक अध्यापक रदरफोर्ड आदिने भी उनके मतको समर्थन किया था, केवल अक्सिजनके आविष्कर्त्ता प्रिष्टले स्वयं नूतन सिद्धान्तके जन्मदाता होने हुए भी पुराने दीपक सिद्धान्तसे विच्युत न हो सके थे। उनकी मृत्युके साथ साथ प्राचीन रसायनशास्त्रका दीपक-सिद्धान्त भी विलुप्त हो गया।

वैज्ञानिक लाभोसियर अक्सिजनके गुण-धर्म-प्रकाश द्वारा रसायनकी पुरानी नीच उखाड़ दी सही, पर नई प्रयाके रसायन-शास्त्रका संगठन भार १९वीं सदीके नवीन वैज्ञानिकोंके ही ऊपर रहा। Fourcroy (१७५५ १८०६ ई०), Monge (१७४६ १८१८ ई०), Guyton de Morveau (१७३७-१८१६ ई०) और Bertholet (१७१८ ४८२२ ई०) आदिने उनके मतकी पोषकता कर एक नया मार्ग निकाला। इस समय जान डालटन (१७६६ १८४४ ई०) नामक एक प्रसिद्ध वैज्ञानिकने मेघ, वृष्टि और जलीय वाष्पके सम्बन्धमें आलोचना करने समय १८०३ ई०को यह प्रचार किया कि सूक्ष्म जलकणको विश्लेषण करनेसे उसमें अक्सिजन और

उद्जनके अनेक सूक्ष्म कण देने जाते हैं तथा दो कण उद्जन और एक कण अक्सिजनको तापके साथ मिलनेसे एक जलकणकी उत्पत्ति होती है। किन्तु उक्त दो पदार्थ विभिन्न परिमाणमें मिलनेसे जलकणकी उत्पत्ति न हो कर दूसरे पदार्थका सृष्टि होती है। इस आलोचनाके फलसे उन्होंने यह निर्णय किया, कि जल, स्थल, वायु और अग्नि मूल पदार्थ नहीं है। उद्जन और अक्सिजन ही प्रकृत मौलिक पदार्थ हैं। इनके परमाणु विभिन्न परिमाणमें सयत हो कर विचित्र पदार्थ उत्पन्न करते हैं सही, पर उस अवस्थामें उनका निजस्व लोप नहीं होता। वैज्ञानिक प्रयासे यदि वह यौगिक पदार्थ विश्लेषित किया जाय तो उसके गठन उपादनका वह मूल पदार्थ आपसमें विच्छिन्न हो निजत्व प्रकाश करेगा। इसके अतिरिक्त परीक्षाकालमें उन्होंने उद्जन और अक्सिजनके वजनके अनुपात द्वारा तथा परिमाणु संख्याके अनुपातकी सहायतासे गणना करके प्रत्येक अक्सिजन परमाणुका गुरुत्व स्थिर किया। उनके मतसे हाइड्रोजन परमाणुके गुरुत्वकी अपेक्षा अक्सिजन परमाणुका वजन ५।० गुण अधिक है। फिर उन्होंने और भी २५ पदार्थका पारमाणविक गुरुत्व स्थिर कर १८०४ ई०में उसके आविष्कारकर्त्ता Mr. Thomson को सूचित किया और एक वैज्ञानिक सभामें वह प्रयत्न पढा। एकत्रित परिंडतमण्डली उनकी परीक्षाका परिचय और पारमाणविक सिद्धान्त (Atomic composition of bodies) पा कर विस्मित हो गई। सच पूछिये तो उसी दिनसे नूतन रसायन शास्त्रकी प्रतिष्ठा हुई थी।

इस आविष्कारके बाद Dr Wollaston, Gay Lu, ssac Avogadro, Berzelius A, Von Humboldt, Williamson, Nicholson and Carlisle, Faraday, Bunsen और प्रसिद्ध वैज्ञानिकोंने वर्त्तमान रसायन-शास्त्रकी नाना शाखा प्रगाढाओंकी उन्नति की है।

पदार्थविज्ञान।

इन्द्रियग्राह्य सभी वस्तु पदार्थ हैं। यौगिक पदार्थ-को आणविक संयोजन और विश्लेषण द्वारा मूल पदार्थकी अवस्थाका निर्णय करना ही रसायनका उद्देश्य और

प्रतिपाद्य है। साधारणतः यह पदार्थ दो भागोंमें विभक्त हैं—रूढ़ वा मौलिक (Element) और यौगिक (Compound)। जिस पदार्थको किसी दूसरे पदार्थमें परिणत नहीं किया जा सकता, उसे मौलिक कहते हैं, जैव—सोना चांदी आदि। जब ये सब रूढ़पदार्थ एकसे अधिक लक्ष्यमें रासायनिक संयोग द्वारा नूतन धर्म विशिष्ट पदार्थ उत्पन्न करत हैं, तब उन्हें यौगिक पदार्थ कहा जाता है, जैसे गंधक और लोहेके संयोगसे उत्पन्न 'फेरस सल्फेट' नामक पदार्थ।

वैज्ञानिक गवेषणा द्वारा कमसे कम ७२ रूढ़ पदार्थ स्थिर हुए हैं। वे सब पदार्थ तीन प्रकारको अवस्थामें रहते हैं, जैसे—लोहादि कठिन, जल और वातावरण तथा भूवायु धातु। यह रूढ़ पदार्थ फिर धातु (Metals) और अधातु (Non-metals वा Metalloids)के भेदसे दो प्रकारका है। जो सब पदार्थ स्वकीके तथा उष्णता और बिजुआदि शक्ति ग्रहण करनेमें समर्थ होते उन्हें धातु तथा इसके विपरीत धर्मविशिष्ट पदार्थको अधातु कहते हैं। कमी कमी इन रूढ़ पदार्थोंको Electro-positive और Electro-negative कहा जाता है।

इन सब पदार्थोंमें कुछ साधारण धर्म हैं जैसे—गुरुत्व, स्थानव्यापकत्व, अविनाशरक्षक, विस्तारशीलत्व विमान्यत्व इत्यादि। वातावरण जल और कार्बोनेट प्रायः पोटाशको मिखा कर कांचकी एक बुगी (test tube) में रखनेसे कुछ समय बाद सबसे नीचे वातावरण के ऊपर यथाक्रम कार्बोनेट भाव पटाछ, जल और तैल देखनेमें भावगा। उसमें द्रव्यविशेषका गुरुत्व स्पष्ट मान्य होता है। कांचकी बोटलमें पोटाश लकड़ी जलानेके बाद माग्नेसियमका पतला तार जला कर जलमिश्रित सल ब्युरिक पॉसिड हालनेसे कोयलेकी कड़ा ऊपरमें भस्मे ढगेगी। इससे भयभीत रहते मान्य होता है, कि पदार्थ परिवर्तनशील होने पर जो द्रव्यविशेषके संयोगसे कमी मो मात्राको प्राप्त नहीं होता। यमी जगनेसे प्रत्येक पदार्थका आकार बढ़ जाता है। इसी कारण Retort-सं बाष्पका उत्थरण होता है। Permanganate of Potash को हज्जार में जल जलानेसे इसके एक में नमो ००१ में नमो वह जलप विघाट होता है। उसके १

में नमो फिरसे यदि १० हज्जार में नमो जलमें मिखाया जाय, तो पमाबूनेड भाव पोटाश मो १० हज्जार भागमें विभक्त होगा।

इस प्रकार किसी द्रव्यका परमाणु कहनेसे अविमान्य शोयांश समझा जायगा। किन्तु एक अणुरूप कलसे कमसे कम दो परमाणुरूप समझना उचित है। यौगिक पदार्थके सम्बन्धमें परमाणु शब्दका प्रयोग नहीं किया जाता। क्योंकि उनका अविमान्य शोयांश मो विविध परमाणुके भेदसे बना है। इस कारण यौगिक पदार्थके अविमान्य शोयांशको अणु तथा रूढ़ पदार्थका दो परमाणु जानना चाहिये।

पदार्थोंके ससूह गुरुत्व है। हिसाब करके वह गुरुत्व निर्दिष्ट अणुके गुरुत्वके जैसा मान्य होता है। क्योंकि, उसीके योगसे पदार्थका आकार है। प्रत्येक पदार्थके परमाणुका गुरुत्व एक-सा नहीं है। यद्यपि यह विचार नहीं होता और न मन ही मन हम लोग उसका अवयव ही विचार कर सकते, तथापि वैज्ञानिक सिद्धांतको सुविधा के लिये इत्थन बाष्पको निर्दिष्ट भावतममें तैल कर एक परमाणु माने तथा उस अवस्थामें और उच्च भावतमके अन्त्यांश रूढ़पदार्थोंका गुरुत्वनिरूपण करके जो फल पाया जाता है उसीको रसायनशास्त्रमें रूढ़पदार्थका पारम्परिक गुरुत्व कहा है। निम्नलिखित तालिका में पदार्थोंका विभाग, सांकेतिक चिह्न और भ्रमात्मिक गुरुत्व दिया गया है—

धमके नाम	चिह्न	गुरुत्व
आलुमिनियम (Aluminium)	Al	२७
एन्टिमनी (Antimony)	Sb	१२२
आर्सेनिक (Arsenic)	As	७४
बेरियम (Barium)	Ba.	१३६
बिसमथ (Bismuth)	Bi	२०७
कैडमियम (Cadmium)	Cd.	११२
कैल्सियम (Calcium)	Ca	४०
क्रोमियम (Chromium)	Cr	५२
कोबाल्ट (Cobalt)	Co	५८
कूपर (Copper)	Cu	६३
डायडिमियम (Dysodium)	Di	१४०

धातुके नाम	चिह्न	गुणत्व	उपरोक्त पदार्थों को छोड़ कर गत १२वों मदीमें और		
गोल्ड (Gold)	Au.	१९६-७	भी कितने पदार्थ आविष्कृत हुए हैं। रसायनकार्यमें उन-		
आयन (Iron)	Fe	५५-६	का विशेषरूपमें प्रचार न रहनेमें तथा उसका गुण अच्छी		
लेड (Lead)	Pb	२०६ ४	तरह मान्य न होनेके कारण वे सब वर्तमान रसा-		
लियथियम (Lithium)	Li	७ ०१	यनविज्ञान आलोचित नहीं हुए। नीचे उनके नाम		
मागनेसियम (Magnesium)	Mg	२३ ६४	और गुणत्वादि लिखे गये हैं।		
मन्गानिन (Manganese)	Mn,	५४ ८	कैसियम (Caesium)	Cs	१३२ ४
मर्करी (Mercury)	Hg.	१६६-८	सिरियम (Cesium)	Ce	१४१
मोल्डिब्डिनम् (Molybdenum)	Mo	६५ ८	एरबियम (Erbium)	Er.	१७० ५
निकेल (Nickel)	Ni	५८ ६	ग्लुसिनम (Glucinum)	G.	६३
पालाडियम (Palladium)	pd	१०६-२	डेमियम (Dysium)	Da	१-५४
प्लेटिनम् (Platinum)	Pt	१९६ ७	बेरिलियम Beryllium)	Be	६-२
पोटैशियम (Potassium)	K	३९ ०४	गैलियम (Gallium)	G.	६९ ८
सिल्वर (Silver)	Ag	१०७-६६	स्कैण्डियम (Scandium)	Sc	४४
सोडियम (Sodium)	Na	२३	इण्डियम (Indium)	In.	११३-४
स्ट्रॉन्शियम (Strontium)	Sr	८७ २	जर्मैनीयम (Germanium)	Ge,	७२-७५
टिन (Tin)	Sn	११७ ८	इरिडियम् (Iridium)	Ir,	१९६ ७
टिटैनीयम (Titanium)	Ti	४८	लन्थानम् (Lanthanum)	La,	१३ ६
टंग्स्टेन (Tungsten)	W	१८४	न्युबियम (Niobium)	Nb	९४
ऊरेनियम (Uranium)	U	१८०	ओसमियम (Osmium)	Os,	१९८-६
ज़िंक (Zinc)	Zn.	६४ ८	रोडियम (Rhodium)	Rh,	१०४-१
अथातु—			रुबिडियम (Rubidium)	Rb,	८५-२
बोरण (Boron)	B	११	रुथेनियम (Ruthenium)	Ru,	१०१ ५
ब्रोमिन (Bromine)	Br	७९-७५	टैंग्टालम (Tantalum)	Ta,	१८२
कार्बन (Carbon)	C	११-२७	थैलियम (Thallium)	Th.	२०३-६४
टेल्लुरियम (Tellurium)	Te,	१२८	थोरियम (Thorium)	Th	१७८-५
क्लोरीन (Chlorine)	Cl	३५-३६	वानाडियम (Vanadium)	V.	५१ २
फ्लोरिन (Fluorine)	F	१९ १	इट्रियम (Yttrium)	Y.	८९ ५
उदजन (Hydrogen)	H	१	ज़िर्कोनियम (Zirconium)	Z	९०
आइयोडन (Iodine)	I	१२६-५३	इसके अतिरिक्त वैज्ञानिक-सम्प्रदायने सामेरियम		
नाइट्रोजन (Nitrogen)	N	१४-०१	(Samarium), इट्टरबियम (Ytterbium), गडोलि-		
अक्सीजन (Oxygen)	O	१५-६६	नियम (Gadolinium), प्रसिबोडिमियम (Praseody-		
फस्फोरस (Phosphorus)	P.	३० ६६	mium), न्युडिमियम (Neodymium), मिक्वोरियम		
सिल्वेनियम (Selenium)	Se	७६	(Victorium), आर्गॉन (Argon), हेलियम (He-		
सिलिकन (Silicon)	Si.	२८	lium), नियॉन (Neon), कृपटन (Krypton), जेनन		
सल्फर (Sulphur)	S	३२ ६८	(Xenon) आदिने और भी कई पदार्थोंका अस्तित्व		

म्नोकार किया है। रसायनमें उतका बिरोध व्यहार न रहनेसे यहाँ मनायत्रयकाय ज्ञान कर उतका उल्लेख नही किया गया।

पहले लिखा जा चुका है, कि पदार्थमात्र हा परमाणु के मेलसे बना है। परमाणुओंका इन संयोग वा बियोग प्रक्रि (atomicity)के कारण पदार्थबिरोधमें लतम्भता दिखाई देती है, इस कारण ही अणु, द्वाणुक, वासरेणु आदिका जिन प्रकार नामकरण हुआ है। पार्श्वरूप रसायनशास्त्रोंमें भी उसा प्रकार Monad Diad Triad Tetrad आदि परमाणु-संयोगनिर्भवक पद हैं। परमाणुकी यह संयोगप्रक्रि दृष्ट कर वैज्ञानिकोंन उसी अनुसार कई पदार्थोंका एक बिनाय इन प्रकार निर्णय किया है—

१ मनाइल—इंद्रज्व फ्लुरिन, क्लारिन, ओमिन आर्भाइजिन, कोसियम, सियिडियम, पोटानियम सोडियम, मिथियम और सिलिकम। २ त्रयाइल—अभिसमन, बेरियम, प्लुसियम, काब्रमियम, मगनेसियम, जिन्डु बेरिलियम, कार्बमियम, मर्करी और क्वाड। ३ द्वायइल—बोरन, गोडद, पामियम, इरिडियम लखनम यट्रियम, सरवियम, विसियियम, सामारियम और रुकायइयम। ४ टेट्राइल—जायन, सिलिकन, टिकािनियम जिर्कोनियम, टिनयोेरियम, गालियम, प्लुमिनियम सिरियम, स्ट्रोनियम, इरिडियम पालेडियम, टाडियम और लेड। ५ पेंटाइल—नाट्रोजन, फमफोरस पनडियम वा मनाडियम आसोनिक नात्रियम, पबिडयोिनियम, टाप्पेडम पिशमथ और डिडिमियम। ६ हेक्साइल—सेन्कर, मिसियियम हेसिउरियम, उेरनियम, टाण्ड्रेण, मल्लिगडिनम, ओमियम, मड्डानियम, भायरथ, कोबाल्ट और निफन।

उपरोक्त पानु अभिसमनक साथ भयपा गणक वा भार किछी प्रकारका सावर्णिक भयफणम रहता है। पानुका जा प्रकार पौगंड मरकथाम हागा उस बिचार कर काम करनेस अभिसमनआदि संयुक्त पदार्थका बियोग हो पानुमुक्त होगा। जिन सासका अडूसाइड (I^{no}), इसकी मत्रग करमे वा अभिसमन निकानन में कमी कमा कथल उतापका हा प्रकल हाता है। कमा

तो उताप कोइ रूप हो नहीं करता। इस समय कोयसे की प्रकल होती है। माकुंरियस भयमाइडमें उताप जगलसे पारा पानुमुक्त होता है। फिर पद्वि सोसेका भाविसमनघटित पौगंड कोयलेके रूपर रत्न पर नलो स स्थिरित लेण वा गैस शिवाक उतापल गनाया जाय तो कायलेक साथ सिमूरेका अभिसमन कार्यनिक भनहारहाइड्रजममें परिवर्तित हो सासकी पानुमें परिवान होता है। उतापनिक प्रक्रिया द्वारा पानुके पौगंड पदार्थोंका जिन प्रकार विभिन्न करक मूल पदार्थ प्रदण किया जाता है उसा प्रकार फिर मून वा पियु पानुमें अरुमाइड, ड्योराइड मोमाइड भाइयोहाइड सनफाइड, कपट्टर, कार्बनड, सेनाइड फरिलेनाइड टालिक एसिड, एमिड सलफेट, पमटिक एसिड फस्फेट आदि द्रव्यमिश्रित करके नाना प्रकारक औषध बनाये जान है। द्रव्यबिहागक विज्ञानस यह विमि गुण मुक्त हो जाता है।

अधिक जम मिश्रित नाइड्रिक एसिडमें पारेकी मिग रखनेस माकिंडरम नाइड्रेट बनता है। किन्तु पारेक अधिक परिमाणमें व्यवहार करनेस Basic Nitrate उत्पन्न होता है। बेसिक नाइड्रेट और स्वाभाविक नाइड्रेटका पद्विज्ञानक विषये उसमें ममक मिन्वाला हागा स्वाभाविक नाइड्रेटमें कार्बोमेन तथा पेसिडमें कार्बो मेड और काला मकिंडरम अरुसाइड पाया जायगा विस्तार हो जानक मयल पानुओंका पौगंड प्रकल पिरून नायम भासाबिन नहीं किया गया, दूमरी जग उमका मंझिम विपरण किया गया है।

उत्तर, पा. १, तथा गीन भाई उर १११

पौगंड पदार्थ जव किमा शारकक साथ मिमाय जाता है, तब यह उस शारकका गुण वा धर्म बिमगुन मर कर हाइला दे और एक मय पदार्थकी सृष्टि करत है। इसकी वेस (Base) कहन है पानुका मर साइड मरसर पस कथमाता है। शार इसी धेण क मग्युंन है।

पार्श्वरूप विज्ञानमें मा नाना प्रकारक शारक उल्लेख रहन है। पट्टासियम, माडियम, पमानियम, कामसियम तथा परियम अभिसमनक साथ जिन क

क्षतकारी क्षार (Caustic alkalis) उत्पादन करता है। वह क्षार शरीरके किसी स्थानमें अधिक देर तक रपनेसे वहा फोड़े निकल आते हैं। यह क्षार जलमें पिघल जाता है। पोटैसियम, एमोनियम और सोडियम नामक तीनों धातु क्षारधातु (alkali metal) कहलाती हैं। बेरियम, स्ट्रोनियम, कालमियम और माग्नेसियम नामक चार धातुको मृदुक्षार (metals of alkaline earths) कहते हैं। जिन्हे, मग्नेसियम, प्लुमिनियम और लोहेसे उत्पन्न क्षार पूर्वोक्त क्षारोंको तरह क्षतकारी नहीं हैं। ये जलमें नहीं पिघलते। इन्हें अंगरेजी रसायनशास्त्रमें बेस कहा है।

द्रावकसे जो उत्पन्न होता वह क्षारमें और जो क्षारसे उत्पन्न होता वह द्रावकमें नष्ट हो जाता है। अतएव द्रावक और क्षार दोनों ठोक विपरीत गुणावलम्बी हैं। किसी द्रावकके साथ किसी क्षारका द्रावण (Solution) मिलानेसे एक नया गुण-विशिष्ट पदार्थ उत्पन्न होता है। उसमें क्षार या द्रावक किसीकी भी प्रतिक्रिया नहीं देखी जाती अर्थात् नीला लिटमस कागज डुबानेसे वह लाल अथवा लाल लिटमस नील वर्णमें परिणत नहीं होती।

खनिज (mineral) और जैव (organic) के भेदसे द्रावक दो प्रकारका है। लवणद्रावक (Hydrochloric acid) यवक्षारद्रावक (Nitric acid) और गंधक-द्रावक (Sulphuric acid) आदि खनिज तथा टार्टारिक एसिड (Tartaric acid) और साइट्रिक एसिड (Citric acid) आदि जैव पदार्थसे उत्पन्न हुए हैं। इस द्रावककी सहायतासे प्रायः सभी पदार्थ गलाये जाते हैं और सभी द्रावक भी जलमें गलने लगते हैं। परीक्षाके समय द्रावकके साथ जल मिलाना उचित है।

द्रावकका गुण—खादमें लक्षा मालूम होता, Blue litmus paper नामक कागज डुबानेसे वह लाल हो जाता, कार्बोनेट मिलानेसे फोड़े निकलते, फिनल थालिन (Phenolphthalein) द्रावणमें क्षार मिलानेसे जो बैंगनी रंग होता है द्रावक मिलनेसे वह विलुप्त हो जाता तथा मिथिल आरेंज (Methyl orange) द्रावणके संयोगसे गुलाबी रंग धारण करता है।

जो क्षार भी नहीं, द्रावक भी नहीं, ऐसे नये गुण-विशिष्ट पदार्थको रसायन-विज्ञानमें लवण या लावणिक द्रव्य (Salt) कहा है। यह लवण हम लोगोंके आद्योप-योगी लवण नहीं हैं। क्षार और द्रावकके आपसमें मिलनेसे जो भौतिक पदार्थ उत्पन्न होता है उसीको रसायनमें लवण कहा है। चुन और कार्बोनेट एसिड मिलनेसे चा-पट्टिको उत्पत्ति होती है। अतएव चा पट्टि लावणिक पदार्थ है। इसके सिवा सुहागा, फिट-करी, नूतिया, हीरा कसीस, यवक्षार आदि भी एक एक लवण हैं। स्वाद ले कर लवण नाम रपा गया है, सो नहीं, उनकी उत्पादनक्रिया देख कर ही ऐसा नामकरण हुआ है। ये लवण तीन प्रकारके होते हैं, जैसे—१ प्रकृत लवण (normal salt), २ उदजनयुक्त लवण (acid salt), अकसाइड मिश्रित लवण (Basic salt)।

उदजन प्रायः सभी पदार्थोंका एक उत्पादन है। द्रावकके हाइड्रोजनका स्थान सम्पूर्णरूपमें धातु द्वारा अधिकृत हो कर जो लवण उत्पन्न होता है उसीका नाम असल लवण है। किसी धातुका लवण प्रस्तुत होनेके समय द्रावकस्य उदजनका स्थान उक्त धातु द्वारा अधिकृत हो जाता है, जैसे $Zn + H_2SO_4 = ZnSO_4 + H_2$, यहा सलफ्युरिक एसिड स्थित हाइड्रोजनका स्थान जिन्हे धातु द्वारा अधिकृत होनेसे जिन्हे सलफेट नामक एक प्रकृत लवण बनता है।

द्रावकमें उदजनका स्थान आंशिकरूपमें अधिकृत हो जो लवण उत्पन्न होता है उसको हाइड्रोजनयुक्त लवण या acid salt कहते हैं। Bicarbonate of soda इसी श्रेणीका एक लवण है। इसका सांकेतिक चिह्न है $NaHCO_3$, यहाँ पर सोडियम धातु (Na) ने कार्बो-निक एसिड (H_2CO_3) से हाइड्रोजनको आंशिकरूपमें अलग कर दिया है। हाइड्रोजनको विलकुल हटा देनेसे कार्बोनेट आव सोडा (Na_2CO_3) नामक प्रकृत लवण बनता है।

किसी धातुके लवणके साथ उक्त धातुका अकसाइड मिश्रित रहनेसे उस लवणको Basic salt कहते हैं। सब नाइट्रेट आव लेड उसका एक उदाहरण है। इसमें नाइट्रेट आव लेड नामक सीसक धातुके लवणके साथ

उस धातुका भस्काइह मिमा रहता है । इन सब व्ययोंको विस्तृत करने Base और acids लिख्य करना ही फलित रसायनका कार्य है ।

बिज्ञानविज्ञानमें औपचारिक प्रस्तुतकरणमें धातु भादिका सोधन, मात्रण वधया उसका परिमाण जानने के लिये तथा सूक्ष्म, पीप भादिकी परीक्षा द्वारा रोगका निर्णय करनके लिये हम लोग जिस रसायनविज्ञानकी महापता लेते हैं उसे वैज्ञानिक रसायन (analytical chemistry) कहते हैं । वैज्ञानिक रसायनमें पृथिवीके सभी पदार्थोंको अपने अधिकांशमें कर लिया है । इसी कारण हम लोगोंके जाय, वसन, विज्ञानसामग्री, शिष्य लोग्य भादि प्रत्येक द्रव्यमें इस रसायनको सहायतासे प्रतिदिन कितनी उन्नति होती है उस कह नहीं सकते । इस शास्त्रमें सुरत पारदर्शी होना बहुत कठिन है । इसके एक एक अंश वा शाखाभासको (जिस Food analysis, Pharmaceutical Chemistry) भाजोचनार्थ सारा जोयन जगा देनेस भी शिक्षा पूरी नहीं होती ।

यह प्रयातना ही मागींमें विमल है । रसा गुण निर्णयक (qualitative) अर्थात् जिसका द्वारा पदार्थ का गुण जाना जाता है और २रा परिमाणनियक (quantitative) अर्थात् जिसका उपार्थोंका परिमाण निर्दिष्ट हो सकता है । फलित रसायन करनेस वैज्ञानिक रसायनका प्रथम अंश ही समझा जाता है । रसायनिक विश्लेषण कायमें जितन यन्त्र प्रपायता व्ययवृत्त होत है उनको संक्षिप्त तालिका माथे वा गर है —

- १ Test tube—एक मुह पंज कांचका नल । इसमें तरल पदार्थ डाल कर परीक्षा करनी होती है ।
- २ Test tube stand—इक कांचक नल धैठानक लिये सजिद्र काष्ठनिर्मित आधार ।
- ३ Test tube holder—काष्ठका इत्या सगा धुभा पातलका विमल । किसी पदार्थको जलन डाल कर धांचे वन समय इसका कांचका नल पकड़ा जाता है ।
- ४ Test glass—कांचका बला धुभा एक बरतन । परीक्षाधोन तरल वा ठोस पदार्थ इसमें रखा जाता है ।

५ Funnel—धारादि कागज वा फिल्टर पेपरकी छतनी इसके ऊपर रख कर द्रावणादि रासायनिक द्रव पदार्थ छाया जाता है ।

६ Pipette—शीनों मुह खुसा धुभा कांचका पतला नल । किसी बरतनसे थोड़ा थोड़ा करके तरल पदार्थ उठानेमें यह काम आता है ।

७ Green rod—वेगिसका तरल गोलाकार पतला कांचका दण्ड ।

८ Glass plate—कांचका छोटा टुकड़ा ।

९ Porcelain dish—सफेद चीनका व्याला ।

१० Spirit lamp—स्प्रिटि द्वारा जलती हुई बत्ता ।

११ ग्रामिम धातुका पत्तर । सब कार्य वस्तु भागमें जलानी होती है, तब इसी पर रख कर जलाई जाता है । एक कण्ड Mica plate अर्थात् भबरकक टुकड़ेस यह कार्य सम्पादित हो सकता है ।

१२ Flask—कांचका एक बरतन जिसका आकार बोलत-सा होता है ।

१३ platinum loop—एक कांच दण्डक अग्रभाग को तथा कर यह तार जड़ दिया जाता है । सुहागेका वस्तु बनानेमें इस तारकी अकरत होता है ।

१४ Charcoal—एक खरड काठका कायला ।

१५ Mouth Blow pipe—माथी ।

१६ Brass tongs—पीतलका विमल ।

१७ Wash bottle—एक मायत मुहवाली कांचकी बोलतमें दो छेद करके दो छेदे कांचक नल धुसा दे । बातलमें जल भर कर छोटे नलस हया देनेस उसके मांतरका जल दूसरे नलके मुहस निकल पड़ता है ।

इसका सिवाय मुडिमोमिटर बैररी रिट्ट, धातुपात्र यन्त्र, तापमात्रक यन्त्रि यन्त्र भी प्राप्यादिक विश्व यन्त्रक समय व्ययवृत्त होत है ।

विरलय्य शक्ति ।

पदार्थमानका हा दो तरहस परीक्षा की जाती है, एक द्रवपराक्षा (Wet reaction) और दूसरा यन्त्रि परीक्षा (Dry reaction) । द्रव्यविशेषका परीक्षा सुधारकपस करनके लिये तथा उसका पस सुसिद्ध

हुआ है वा नहीं इसे जाननेके लिये रसायनशास्त्रमें कुछ परिचायक (Re-agent) और निर्देशक (Indicator) पदार्थोंका उल्लेख है। जो सब मूल वा यौनिक पदार्थ परीक्षाधीन पदार्थके साथ मिला कर उमका उपादान निरूपण करते हैं उन्हें रि-एजेंट कहते हैं। हाइड्रो-क्लोरिक एसिड परीक्षाधीन पदार्थमें मिलानेसे यदि सफेद चांदी, सीसा वा चूर्ण पदार्थमें जम जाय, तो वह पदार्थ पारेका अणु है, ऐसा जानना होगा। जो परिचायक एक प्रक्रिया द्वारा सभी पदार्थोंको भिन्न भिन्न श्रेणीमें विभक्त करते हैं उन्हें साधारण परिचायक तथा जो परिचायक किसी एक द्रव्यका विशेष विशेष गुण उद्घाटन करते हैं उन्हें विशेष परिचायक कहते हैं।

इस परिचायकके साथ पदार्थके रासायनिक परिवर्तन वा परस्पर संयोगके समय वह परिवर्तन वा संयोजन रूप हुआ। जो सब पदार्थ वर्ण उत्पादन द्वारा कार्य फल निर्देश करते हैं निर्देशक (Indicator) कहते हैं। कार्यके समय निर्देशक पदार्थोंका प्रकृतिगत कोई परिवर्तन नहीं होता। अथवा उनकी अवस्थितिके कारण रासायनिक प्रतिक्रियामें भी किसी प्रकारकी विलक्षणता वा प्रतिबन्धकता नहीं देखा जाता। प्रधानतः द्रावक और द्रावपदार्थके मध्य विभिन्नता दिखानेके लिये ही निर्देशकका व्यवहार होता है।

लिटमस, फिनलवालिन, मिथिल आरेड, टार्टरिक आदि निर्देशक पदार्थ हैं। इनमेंसे शरा वा शरा सुरा सार वा जलके साथ द्रावणरूपमें तथा शरा और श्या सुरासारमें पिघल कर उसमें व्हाट्टि कागज निपिक और पीछे सुखा कर निर्देशकरूपमें व्यवहृत होता है। इसके सिवाय Lead paper strach paper वा श्वेत सार मण्ड आदि कुछ धातुव यौगिक भी निर्देशकरूपमें व्यवहृत होते हैं।

जल वा द्रावकमें परीक्षाधीन पदार्थको तरल कर उस द्रावणमें भिन्न भिन्न पदार्थ मिलानेसे जो रासायनिक प्रतिक्रिया संघटित होती है उससे उक्त पदार्थका उपादान सम्भवा जाता है, इसे द्रवपरीक्षा कहते हैं। फिर उष्णता लगनेसे परीक्षाधीन पदार्थका परिवर्तन

देख कर उससे उसके गठनोपादान निर्णय करनेका नाम अग्निपरीक्षा है।

पदार्थ विश्लेषणकार्यमें यह अग्निपरीक्षा ही उत्तम। प्लेटिनम वा अवरकके पारेके ऊपर परीक्षाधीन पदार्थ रफ़र गैस वा सिलिट्रिड लेम्पकी गरमी देनेसे यदि वह पदार्थ जाला हो कर जल जाय, तो उसे अद्भूत द्रव्य कहना चाहिये।

एक टुकड़े काठके कोयलेके ऊपर थोड़ा गड्ढा बना कर उसमें परीक्षाधीन पदार्थका चूर्ण रफ़र नलसे फूंक कर जलानेसे सीसा, चांदी, एष्टिमनि, विसमथ आदि धातु लवणत्रियुक्त हो मूत्रधातुमें परिणत होती है। चार भाग कार्बोनेट आव सोडा और एक भाग नाथनाइट आत्र पोटेशियम, इन्हें एक साथ मिला कर उमका चौथाई भाग परीक्षाधीन पदार्थमें मिश्रित कर पूर्वोक्त प्रणालीसे यदि ताप दिया जाय, तो मूल धातु अति जीव पृथक् हो जाती है। वसन्तकालमें जब किसी धातुमें इस प्रकारका उष्णता लगना, तब वह लवणसे पृथक् नहीं होता, केवल कोयलेके ऊपर भिन्न भिन्न वर्णका चाप (incrustation) उत्पादन करती है। उक्त अवस्था में सीसेसे हल्दी रंगका, एष्टिमनिसे नीलापन लिये सफेद रंगका, विसमथसे पाटल वर्णका, काडमियमसे लाल वर्णका और दस्तेसे कुछ हरिद्रावर्णका प्रकाश निकलते देखा जाता है। प्लेटिनम तारके अग्रभागमें सुहागा रफ़र कर सिलिट्रिड लेम्पकी शिवासे उष्णता करने पर लावा बनता है। पीछे नलसे फूंक कर जलानेसे वह काचके जैसा सफेद गोलाकारमें परिणत हो जाता है तथा उसी भावमें सलग्न रहता है। इसके बाद परीक्षाधीन लवणके द्रावणमें वह गोल सुहागा डुबो कर फिर नलसे गरमी देने पर विभिन्न वर्ण हो जाता है। जैसे कोबाल्ट गाढ़ा नीला, निकेल कुछ लाल, तांबा कुछ नीला, क्रोमियम पीला लोहा पीलापन लिये हरा और मैङ्गानिज वै गनी रंग लिये लाल होता है, इत्यादि।

रसायनशास्त्रोक्त धातुव पदार्थकी वैज्ञानिक प्रक्रिया से यथासम्भव इतिहास लिपिवद्ध कर अभी अथातव पदार्थोंका पूर्वापर्य निर्णय करके हम लोग वर्तमान रसायनशास्त्रकी ऐतिहासिक भित्तिको मजबूत कर सकते

है। किस प्रकार जब और किसके द्वारा ये सब क्या तथा भौतिक पदार्थ विश्लेषणप्रक्रिया द्वारा आविष्कृत हो रसायन-जगतमें प्रसिद्ध हो गये हैं, जोये उसकी एक संक्षिप्त ताखिका दी गई।—

१७८१ ई०में कामेरिङ्गस् साहबने इन्जन (Hydrogen) नामक नई पदार्थका आविष्कार किया। १७७४ ई०की जैनी भगवतको महामति मिष्टने द्वारा अक्सिजन नामक नई पदार्थ आविष्कृत हुआ। यद्यपि मिष्टने साहब ने सबसे पहले क्लोरायडामें अक्सिजन पाया था, तथापि उसके डूमेरे वर्ष सोल साहबने इसीको आविष्कार किया। मिष्टने और सोल द्वारा अक्सिजन आविष्कृत होने पर भा १७७८ ई०में लामोसिपर अक्सिजनको तृतीय बार आविष्कार करके जनसमाजमें उसे निर्विवाद प्रचार कर गये।

१८१८ ई०में वेनार्ड साहबने हाइड्रोजनसिद्ध आविष्कार किया। पीछे १८५० ई०में प्रोडो और सेनवेन बिगार्कपसे उसके घर्मादि समझा गये।

१७७२ ई०में एल्फोर्ड साहब द्वारा नाइट्रोजन आविष्कृत हुआ। इसके पांच वर्ष बाद अर्थात् १७७७ ई०में सोल और लामोसिपरने उसे साबित कर दिया गया। १७७७ ई०में लामोसिपरने निर्दिष्ट परिमाणकी वायुमें निर्दिष्ट तौलका पारा उलस कर भाज रंगका यौगिकबिद्ये प्राप्त किया तथा जो माप बच गई उसे पांच भागका पार भाग उलसया। इसके बाद पारेक यौगिकको फ्लिड उलस करनेसे जो माप पाई गई उसका परिमाण एकपञ्चमांश हुआ था। प्रथमोक्त बायु नाइट्रोजन और गैसोक्त अक्सिजनका है। भूवायुस्य नाइट्रोजन और अक्सिजनका परिमाण बिधर करनेमें युक्तिगो मीटर नामक लक्षका व्यवहार करना उचित है।

१७७० ई०में पूएडेने अमोनिया वायु आविष्कार किया। अमोनिया (Sal-ammoniac) नाम अरबोंका रखा हुआ है। उन्होंने जो सबसे पहले कृपितर सामान वेबमन्दिरेके भासपासके स्थानोंसे पड़ी और ऊट भादि जन्तुओंकी विद्यादि बुझा कर इस पदार्थको पैवार किया था।

१७७७ ई०में पूएडे साहबने समझा था, कि वायुके भीतर हो कर तड़ित्के आने जानेसे नाइट्रिक एसिड उत्पन्न होता है। जनवरी १७८५ ई०में कामेरिङ्गस्ने अनुमान किया, कि वायुमें उद्भवन जवानेसे जो मन्त्रपरमविद्या यौगिक पदार्थ पाया जाता है वही नाइट्रिक एसिड है, किन्तु प्रोडि टमसन, गे लुसाक आदि रासायनिक नाइट्रिक-एसिडके मूल तत्त्वका खोज करके उसका पायाचर्च निर्याप कर गये हैं।

१७७६ ई०में पूएडेने नाइट्रस अक्साइडका आविष्कार किया तथा १८०३ ई०में डेमी साहब गहरी भाजोथन द्वारा इस तत्त्वकी निष्पत्ति कर गये। पायावस्थामें इसे सू पनेसे भंगक न्यूनी तरल ईसो भाती है, इसीसे इसका नाम Laughing Gas रखा गया।

१७७२ ई०में हेजस साहबन नाइट्रिक अक्साइडका आविष्कार किया था। यह भाजोथिन नाइट्रिसिड वा नाइट्रोजन जार अक्साइड नामसे प्रसिद्ध था। डेमी साहब पहले नाइट्रिक परक्साइड और १८७८ ई०में डेमिडि साहब शुष्क नाइट्रेट भाव सिद्धमर और क्लोरिन द्वारा नाइट्रिक भाजोथिनका प्रस्तुत कर गये।

१७७७ ई०में सोल साहबको सबसे पहले क्लोरिनका अक्सिडन मालूम हुआ था सही, पर १८१० ई०में डेमी द्वारा बस्तुता इसका कवल्प निकलित हुआ। हाइड्रो जनके साथ क्लोरिनका एक यौगिक सम्बन्ध है जिसका नाम हाइड्रोक्लोरिक एसिड है। अति प्राचीन कालसे इसका प्रचार रहने पर मो १७७२ ई०में पूएडेने इसका आविष्कार किया था। हाइपोक्लोरिन अमहाइड्राइड नामक यौगिक पदार्थ का नाम बालार्ड साहब द्वारा रखा गया है। हाइपोक्लोरिन अमहाइड्राइडको जलके साथ मिश्रणसे हाइपोक्लोरिन, एसिड बनता है। इस एसिडसे जो सब छवण पैवार होते हैं, उन्हें हाइपोक्लोरिन कहते हैं। काब्रिसियम हाइपोक्लोराइड कपड़ेको सफेदकी करनेके लिये बहुत उपयोगी है। यह बाजारमें Bleaching powder नामसे बिकता है।

१८७२ ई०में मिशम साहबने क्लोरिन अमहाइड्राइड, १८१५ ई०में डेमीने क्लोरिक परक्साइड और १८०५ ई०में सेनेनीने क्लोरिक एसिडका आविष्कार किया।

१८१४ ई०में गैल्वसक क्लोरिक एसिडका धर्मादि बता गये हैं।

१८२६ ई०के अगस्त मासमें वालडे साहबने थ्रोमिन नामक रूढ़-पदार्थ आविष्कार किया। यह रूमी भी मुक्ता वस्थामें नहीं रहता। समुद्रजलस्वित सोडियम क्लोराइड वा सलफेट तथा मैगनेसियमके सलफेटादि लावणिक पदार्थके साथ यह मिला हुआ पाया जाता है। हाइड्रो-थ्रोमिक एसिडमें हाइड्रोक्लोरिक एसिडके जैसा गुण है, किन्तु यह हाइड्रोजनके साथ सम्मिलित नहीं होता। एक ॥ आकृतिके काचके नलकी दाहिनी ओर बकस्थानमें ४० ग्रेन फोस्फरसके साथ कांचका चूर्ण और जल मिला कर बाईं ओर बकस्थानमें २४० ग्रेन थ्रोमिन रखे और एक छिपपीसे बाईं ओरका मुँह बंद कर दे। पीछे थ्रोमिनसंयुक्त कोणमें गरमी देनेसे वह वाष्पाकारमें ऊपर उठ कर फोस्फरसके साथ मिलता जिससे आवश्यकीय रासायनिकका परिवर्तन होता है। इससे मैटा हाइड्रो-थ्रोमिक एसिड भी बनता है। औषधादिमें इसका बहुत व्यवहार होता है।

१८१२ ई०में फ्रान्सकी राजधानी पेरिसके रहनेवाले कुर्त्त नामक एक सावुन बेचनेवालेने समुद्रसे उत्पन्न उद्भिज्जमस (Kelp)-के परित्यक्त अंशमें एक प्रकारका विशेष गुण देखा था। वह उसका मर्म न समझ सका और क्लिमेण्ट नामक रासायनिकके पास ले गया। क्लिमेण्टने परीक्षा द्वारा उसमेंसे एक नया पदार्थ बाहर किया, किन्तु सच पूछिये, तो डेभी और गेरसाकने ही इसका आइयोडिन् नाम रखा था।

सीसा-निर्मित रिटर्ट कालसियम फ्लुराइड चूर्ण तीव्र सलप्युरिक एसिडके साथ उक्त करनेसे हाइड्रोफ्लुरिक एसिड पाया जाता है। नील साहब इस यौगिक पदार्थके उद्भावक हैं। १८१२ ई०में डेभीने उसे तडित् द्वारा विकृत करके फ्लुरिन पाया था। किन्तु एक स्वतन्त्र पात्रमें रख कर वे उसके धर्मादि की परीक्षा न कर सके थे। उनके बाद नफस, मे, फिपसन आदि कितने रासायनिकोंने इसकी परीक्षा की है। यह कालसियममें मिलानेसे कालसियम फ्लुराइड तथा सोडियम और अलुमिनियम मिलानेसे काइयोलाइट कहलाता है।

अद्धार (Carbon) नामक रूढ़पदार्थका व्यवहार बहुत प्राचीनकालसे लोगोंको मालूम है। इस अद्धारमें अक्सिजन-घटित कुछ यागिक पदार्थ हैं। पृथले साहबने बन्दूककी नलीमें चा-बडिको उक्त कर कार्बनिक अक्साइड नामक यौगिक पदार्थ पाया था। किन्तु दुर्भाग्यवशः उसको दाहनशीलता देन कर उसे हाइड्रोजन समझ लिया था। १८०३ ई०में काकसेडू और फ्लेमेण्ट आदि रासायनिकोंने इसका प्रकृत तत्त्वरूपण किया। १७७५ ई०में लामोसियेने हीरेको जला कर कार्बनिक अनहाइड्राइडका पना लगाया। इसे लोग कार्बनिक एसिड भी कहते हैं। Methane, Light Carbonated hydrogen और Fire damp आदि नामोंसे प्रचलित अद्धार-मिश्रित उद्जन-वाष्प (marsh gas) १७७८ ई०में मर्या साहब द्वारा सबसे पहले पराक्षित हुआ था। विस्तृत विवरण अद्धार शब्दमें देखो।

१७६५ ई०में ओलन्दाजने देशीय रासायनिक सुरा और सलप्युरिक एसिड द्वारा प्रस्तुत ओलिफायेण्ट गैसका आविष्कार किया। अद्धार और उद्जन तडित् द्वारा उक्त होनेसे दोनों मिल कर आसिटिलिन नामक यौगिक पदार्थ उत्पादन करते हैं। पवरिया फोयलेको लौह रिटर्टमें उक्त करनेसे कोलमैस निकलता है। इत वाष्पको उत्पत्ति कई पदार्थोंके मिलनेसे होती है।

मेयर साहबने सबसे पहले सलप्युरेटेड हाइड्रोजन निकाला। किन्तु १७७७ ई०में सील साहबने उसके धर्मादिका अनुशीलन किया। हाइड्रिक पारसलफाइड, सलफाउरस अनहाइड्राइड, सलफर ट्राइ, मक्साइड, सलप्युरिक एसिड (वेसिल भालेण्टाइनने हीराकसीसको परिष्कृत करके इसे बनाया), हाइपोसलप्युरस वा थाइयो-सलप्युरिक एसिड, वाइसलफाइड आव कार्बन आदि यौगिकपदार्थ गंधकके योगसे उत्पन्न होने हैं।

गंधक देखो।

सिलिनियम और टेलुरियम नामक रूढ़ पदार्थोंका कोई व्यवहार नहीं होता तथा ये बहुत दुर्लभ पदार्थ हैं। ये गंधकके समान धर्मविशिष्ट तथा उसीकी तरह यौगादिकी भी सृष्टि करते हैं।

१६६६ ई०में ब्राएड नामक एक रासायनिकने मूत्रसे

फोस्फोरसको भाविष्कार किया। १७८६ में अस्विघसे यह कड़ पदार्थ तैयार हुआ तथा १७९६ में सोल साहबने अस्विघ फोस्फोरस प्रस्तुत प्रयाजीकी उन्मत्ति की। मुक्तावस्थामें फोस्फोरस चिन्नकुल नहीं मिलता। यह वीगिकरूपमें पाषिच, ज्ञात्म्य और उज्जिस विभागमें रहता है।

१७८३ में गानजेन्ग साहबने हाइड्रोजन फोस्फा इड वा फोस्फोरन नामक वीगिक पदार्थ का उद्भावन किया। पाण तरल और कठिन मेइसे फोस्फोरुटेड हाइड्रोजन तीन प्रकारका है। कल्पक देखा।

१८०८ में गी-सुमर द्वारा बोरन नामक कड़पदार्थ भाविष्कृत हुआ। मोहागा कहनेसे जो समझ जाता है यह बोरसिक एसिडका लक्षण है। बोरसिक एसिड बोरन नामक कड़पदार्थके अक्सिजन-युक्त वीगिक है। अक्सिजन मिलानेसे बोरन बोरिक अत हाइड्राइड नामक एक वीगिक पदार्थ उत्पन्न होता है। एक अणु बोरिक अतहाइड्राइड तीन अणु अम्लमें मिलनेसे बोरसिक एसिड बनता है। बोरसिक एसिडक लक्षणकी बोरेट कहने हैं। मोहागा देखा।

१८०७ में डेमी साहबने सिलिकनका भाविष्कार किया। यह मुक्तावस्थामें कसा भी नहीं पाया जाता। अक्सिजन मिलानेसे सिलिकाकल्पमें यह पाषिच रूपमें तरल तरलकी अवस्थामें विद्यमान रहता है। सिलिकन का अक्सिजन युक्त वीगिक सिलिका कहलाता है।

विशिका देखा।

इन सबकी आमोचना करनेसे स्पष्ट मान्य होता है, कि रसायनविज्ञानी केवलसे १८वीं सदीके शेष भागसे १९वीं सदीके मध्य भाग तक रसायनविज्ञानकी पधेय उन्मत्ति हुई या तथा तनीस रसायनशास्त्रकी उच्च मजदूर हो गई।

आहारीक खगमन।

अहूर, उद्भन आदि कुछ कड़ पदार्थोंके संयोगसे अम्लव्य प्रकारके वीगिक बनते हैं। इससे रसायनविज्ञानमें इस वीगिक विभागकी अत्यन्तव्यवसे आलोचना करनेकी व्यवस्था की है। अहुरेजामें इस Organic Chemistry कहने हैं। परन्तु रासायनिकोंका विश्वास था,

कि पाषिच वा अनाहारीक (inorganic) पदार्थ अहुरिक तथा अहारीक अर्थात् उज्जिस और ज्ञात्म्य पदार्थोंके वीतम्पशक्ति (Vital force) द्वारा उत्पन्न, यक्षित और घासिच होत हैं। इसी कारण उन्होंने उज्जिस वा ज्ञात्म्य भेजोरा वीतम्पशक्तिसे उत्पन्न रसायन वीगिकको अहारीक रसायनमें शामिल किया है। उस मतक अथक शिष्योंका कहना है, कि अहारीक पदार्थ प्रत्यक्ष (Direct) और परोक्ष (Indirect) नामक दो भेजियामें विभक्त व। उज्जिस और ज्ञात्म्य वेदजात गर्भरा नामक अथ प्रत्यक्ष अहारीक तथा यह शर्कराजात सुरा या यह सुराजात प्रसेडिक एसिड परोक्ष अहारीक पदार्थ हैं। १८२८ में भूवर साहबने उक्त मतका अहुरन कर परोक्षा द्वारा यह साबित किया है, कि विना वीतम्पशक्तिसे विशुद्ध अनाहारीक पदार्थोंसे रासायनिक सम्मिलन और उनके परमाणुओंका अवस्थांतर संघटन करा कर अहारीक वीगिक प्रस्तुत किया जा सकता है। युरिया (Urea) नामक अहारीक पदार्थ मुक्ता एक उपादान है। यह औपदेहसूय और वीतम्पशक्तिसे उत्पादित होनेके कारण अहारीक पदार्थ भेजोमें गिना गया है। युरियामें (CH₂N₂O) अहूर, उद्भन, नाइट्रोजन और अक्सिजन है। ये सभी अनाहारीक पदार्थ हैं तथा इन सब पदार्थोंसे रासायनिक परिवर्तन द्वारा कृत्रिम युरिया प्रस्तुत हो सकता है। कार्बनर आण पोटास और अगारकी उमा कर नाक बना करके नाइट्रोजनमें मिलानेसे सायनाइड आय पोटासियम और कार्बनिक अम्लसाइड उत्पन्न होता है। इस सायनाइड आय पोटासियमके साथ सेह अहुरसाइड गलानेसे यह सायनाइड सायनर होता है तथा सोसेका आकार धारण करता है। अनाहारीक पदार्थोंसे भी अब अहारीक वस्तु उत्पन्न होगी है, तब वीतम्पशक्ति प्रस्तुत होनेके कारण अहारीक और अनाहारीक पदार्थोंके मध्य वृषक वा वृषकता दिखलाता उचित नहीं है।

लॉरे (Laurent) साहबके निर्दिष्ट सूक्ष्मनाम अहारीक रसायनन अहूर और उसका वीगिकवृत्त सम्बन्धोय समझा जाता है। क्योंकि अहारीक पदार्थोंकी गठनादिकी आलोचना करनेसे ममो अहुर अहारीकी

प्रधानता ही दिखाई देती है। लीवेग साहबका कहना है, कि वह आण्विक राडिकैलोंके रसायनको ही निर्देश करता है। Radicals जवसे एकसे अधिक रुड़ पदार्थका आणविक संयोग सम्भवा जाता है। यह अनेक परमाणुके सम्मिलनसे उत्पन्न होने पर भी एक पदार्थकी तरह घर्मविशिष्ट होता है तथा उसी अवस्थामें यौगिकविशेषमें उद्भूत है। यौगिकके विकृत होने पर भी राडिकैल विकृत नहीं होता। आण्विक यौगिक राडिकैल द्वारा संगठित होने पर भी अनाण्विक यौगिकमें भी राडिकैलका सम्बन्ध है। जैसे हाइड्रोसिल राडिकैल और नाइट्रसिल राडिकैलके सम्मिलनसे नाइट्रिक एसिड उत्पन्न होता है इसी कारण बहुतेरे राडिकैलको आण्विक रसायनका कारणस्वरूप नहीं मानते।

फ्रान्कलैण्ड साहबने इनको मोमांसामें कहा है, कि एकसे अधिक आणविक मिलानेमें एक वा अधिक परमाणु अणु तथा उनके एक वा अधिक वायु मुक्त रहते हैं। अणु टेट्राड पदार्थ है। उसके एक परमाणुमें चार परमाणु उद्जन मिलनेसे सम्पूर्ण यौगिक संगठित होता है। जैसे Marsh gas = CH_4 । यदि CH_4 की जगह CH_3 वा CH_2 अथवा CH हो, तो अणुके एक दो वा तीन वाहु मुक्त हैं, ऐसा जानना होगा। ये मुक्त वाहुके संख्यानुसार नये नये यौगिक उत्पन्न करनेमें समर्थ हैं। क्योंकि CH_3 एक Radical तथा Monovalent अर्थात् उद्जनकी तरह एकसंख्यक पदार्थ है। यह मनाइ श्रेणीका एक दूसरा रुड़ पदार्थ है। कारण, एक परमाणु उद्जन वा क्लोरिनके साथ मिलनेसे वह सम्पूर्ण हो जाता है। CH_2 = Bivalent तथा CH = Trivalent अर्थात् इनके दो वा तीन मुक्तवाहु हैं तथा उनमें उतने ही परमाणु क्लोरिन मिलानेसे एक दूसरे पदार्थका संगठन किया जा सकता है।

सभी राडिकैल राडिकैलके साथ संयुक्त होते हैं। CH_3 राडिकैल Methylene नामसे प्रसिद्ध है। इस प्रकार एक मिथिलके साथ एक दूसरा मिथिल संयुक्त होनेसे जो यौगिक उत्पन्न होता है उसे इथेन (Ethane) वा डाइमिथिल (Di-methylene) कहते हैं। इथेनका एक परमाणु उद्जन विच्युत करनेसे C_2H_5 अवशिष्ट रहता

है। यह इथिल (Ethyl) राडिकैल है। इथिल मनो-मालेण्ड है।

रासायनिक प्रक्रियासे मिथिलके साथ इथिलका संयोग हो सकता है। यह इथिल-मिथिल वा प्रोपन कहलाता है। इसी प्रकार राडिकैलके साथ राडिकैल संयुक्त हो नाना प्रकारके नये नये पदार्थोंकी सृष्टि करने आण्विक रसायनकी पुष्टि करता है। यद्यपि राडिकैल द्वारा आण्विक विभाग अनाण्विकसे पृथक् किया जाता है, तथापि इनका यौगिकयुद्ध ले कर विचार करनेसे देखा जाय, कि इन दोनों श्रेणियोंके यौगिकादि एक ही नियमके अधीन हैं। सभी धातु जिस प्रकार उद्जनके साथ हाइड्रोजन, अक्सिजनके साथ अक्रमाइड और एसिड राडिकैलके साथ लवणादि प्रस्तुत होता है, आण्विक राडिकैल भी उसी प्रकार सम्मिलित हो इथिल हाइड्राइड, इथर नाइट्रिक, इथर-हाइड्रोसिलपयुरिक, इथिल हाइड्रेट वा अलकोहल आदि उत्पादन करते हैं।

रासायनिक लोग आण्विक पदार्थोंका एक श्रेणी-विभाग इस प्रकार करते हैं।

१म—अणु और उद्जनके विविध प्रकारके यौगिक। इन्हें Hydrocarbon कहते हैं।

२म—अलकोहल (Alcohol), इस यौगिकमें अक्सिजन हाइड्रोजनसोप-रूपमें रहता है। अलकोहलमें राडिकैल विशेषके साथ हाइड्रोजनसिल मिला हुआ है।

३म—एक परमाणु अक्सिजनसे अलकोहलके दो परमाणु उद्जन बाहर हो जानेसे जो यौगिक पदार्थ रह जाता है, उसे अलडिहाइड (Aldehyde) कहते हैं।

४म—अलडिहाइड अक्सिजनप्रस्त होनेसे जिस रूपमें परिणत होता है, उसे एसिड कहते हैं।

५म—जब आण्विक एसिडसे हाइड्रोजनसिल हाइड्रोजन राडिकैल द्वारा स्थानच्युत होता है, तब उसे कियोन (Ketone) कहते हैं।

६म—अलकोहलका हाइड्रोजनसिल स्थानच्युत होनेसे इथर (Ether) उत्पन्न होता है।

७म—हालोजेन धत्त यौगिकमें हाइड्रोजनसिलके स्थानमें हालोजेन (Halogens) प्रविष्ट होता है।

९—एसिडका उद्भवन आन्तरिक रासिकेस द्वारा स्थानच्युत होनेसे जो अणु बनता है, उसे इथिलियस सायन या इथर (Ether) कहते हैं।

१०—एमीनिवाके तीनों उद्भवन आन्तरिक रासिकेस द्वारा स्थानच्युत होनेसे जो यौगिक उत्पन्न होता है उसका नाम एमीनिया डेरिवेटिव (Ammonia derivatives) या अमोन (amines) है। जैसे इथिल अमोन कोइलका रासिकेस एमीनोका एक उद्भवन स्थानच्युत करनेसे इथिलामोन (Ethylamine)। दो परमाणु उद्भवनको जगह दो इथिल प्रविष्ट होनेसे Diethylamine तथा तीन परमाणु उद्भवनका जगह इथिल अचिदार का अधिकार होनेसे Triethylamine उत्पन्न होता है।

१०म—सायानोडन अर्थात् अन्नर और नाइट्रोडनका यौगिकसमूह। जैसे—हाइड्रोसियायिक एसिड (HCN)।

११—फिनल (Phenol), अलकोहलमें जैसे OH का रहना विशेष लक्षण है, फिनलमें भी वैसे ही OH रहता है।

१२—आन्तरिक पदार्थका दो परमाणु स्थान दो परमाणु अक्सिजन द्वारा अविच्छेद होने पर Quinon भेदीक यौगिककी उत्पत्ति होती है। जैसे—बेन्जिनक (Benzene) C_6H_6 दो परमाणुके बड़े O_2 प्रयोग करनेसे उस $C_6H_4O_2$ —Quinon कहते हैं।

१३—आन्तरिक पार्थिव (Organo-mineral) यौगिक। अनान्तरिक यौगिकमें एसिडका भाग आन्तरिक रासिकेस द्वारा स्थानच्युत होनेसे इस श्रेणीका यौगिक उत्पन्न होता है। जैसे—जिंककोपरसका क्लोरिडकी जगह इथिल प्रविष्ट होनेसे जिंकएथर (Zn($2H_5$) $_2$) कहते हैं।

१४—छा परमाणु या उसके गुणधर्मिक अन्तरक साथ उच्चक गुणधर्मिक सम्बन्ध रहनेसे carbohydrate कहलाता है।

१५—जो सब पदार्थ विच्छेद होनेसे श्राक्षमार्कंग (Grape Sugar) उत्पादन करते हैं, उनका नाम Glucose है। जैसे साखरिसिन (Sachris)।

१६—अभ्रुमिड (Albuminoid) और

जिडेरिन (Gelatinoid) अर्थात् जिन सब आन्तरिक यौगिकमें अन्ना, उद्भवन, नाइट्रोडन, अक्सिजन, स्वल्प परमाणुमें गंध और फोस्फोरस रहता है।

पूर्व इथिल Hydrocarbon श्रेणी पत्र उद्भवेयों में विभक्त है। प्रत्येक उपश्रेणीमें फिर अनेक प्रकार के स्वल्प यौगिक रहे गये हैं। जैसे—Paraffin Olefines Acetylene Turpene Benzene. Cinnone आदि।

पिट्रोसियन कूपस मिथेन, एथेन आदि वाष्प निकलते हैं। इस तैलमें कुछ एथेन मिश्र रहता है। उत्पादको कमो-बे-गीके अनुसार उन तलसे यथाक्रम एथेन, प्रोपेन और ब्यूटेन वाष्प परिष्कृत होता है। उसको गाया करनेसे Cymogene नामक तरल पदार्थ गाया जाता है। ७६ सेप्टिमा उत्पादको मोथे पेपेटेन और हेक्सेन परिष्कृत होता है। यथा Petroleum Spirit या Ether कहलाता है। इथिलवा-रबड़को गलायमें इसका व्यवहार होता है। ७६ से०क उत्पादसे एपेन परिष्कृत होता है, उसीको Kerosene कहते हैं। १५० से २३० से० तकके उत्पादसे मोनेन और डाइबेन परिष्कृत होता है, यही सुमसिख Lubricating oil है। इसक ऊर्ध्व उत्पादसे हेक सोडिडन तथा अल्पवाष्प अन्तराचिखण्डक हाइड्राकारिक पदार्थ पाये जाते हैं। व सब कोमक पदार्थ हैं। Vaseline या मोमका तरल कठिन पदार्थको पाराफिन कहते हैं। पाराफिनस रसा बनता है। पाराफिनकी तालिका दो ग—

Methane— CH_4 , मिथेनको मिथिक रासिकेसका हाइड्राइड कहते हैं। दो अणु मिथिकक योगस एथेन उत्पन्न होता है।

उपरोक्त तालिकामें मिथेनक १ परमाणु अन्तर और ४ परमाणु उद्भवनस निम्नलिखित प्रत्येक पदार्थक क्रमशः एक परमाणु अन्तरके साथ वा परमाणु उद्भवनका श्रृंखला है। इस प्रकार एक श्रेणीगत पदार्थको Homologous कहते हैं। उक्त तालिकायुक्त श्रेणीगत पदार्थका रसायनशास्त्रमें Primary paraffin कहा है। उसके प्रथम तीनको छोड़ कर ब्यूटेनस इसक निम्नस्थ पदार्थोंकी आणविक

गठन का दूसरी अवस्थामें ला कर स्वतन्त्र धर्मयुक्त नाना पदार्थों की सृष्टि हुई है। ऐसे पदार्थों को Isomers कहते हैं। Isomerism शब्दसे पर्यायविशेषण परमाणुओंमें कोई परिवर्तन नहीं सम्भवा जाता, वे परिमाण और संयोग सम्बन्धमें समान भावमें ही रहते हैं। किन्तु धर्म एक सा नहीं रहता। आइसोमेरिकल Polymers और Metamers के भेदसे दो प्रकारका है।

पदार्थोंकी सभी संख्या समान रहती है, किन्तु आणविक गठन असमान होनेसे उसे 'पलिमार' कहते हैं। Cyanogen और Paracyanogen नामक दो पदार्थ उसके दृष्टान्त हैं। सायनोजनमें १ परमाणु अणु और १ परमाणु उदजन है, किन्तु पारासायनोजनमें उनकी संख्या अधिक है। इसमें सैकड़ों पाँछे अणु ४५.१५ और नाइट्रोजन ५३.८२ है। क्लोराइड भाव सायनोजनमें सैकड़ों पाँछे अणु १६.५१, नाइट्रोजन २२.७७ और क्लोरिन ५७.७२ भाग है।

सभी संख्यासमान और आणविक गठन समान है ऐसे पदार्थोंको मेटामर कहते हैं। जैसे यूरिया $(2 \text{ (NH}_2\text{)CO})$ और एमोनियम सायनेट $(\text{CN (NH}_4\text{O)})$ —इन दो यौगिकमें अन्तमान परमाणु नहीं है। इनमें सैकड़ों पाँछे अणु २०.००, उदजन ६.७६, नाइट्रोजन ४६.६१ और अक्सिजन २६.६७ है।

पहले कहा जा चुका है, कि मिथेन CH_4 एक सम्पूर्ण यौगिक है। यह मिथिल राडिकलका हाइड्राइड CH_3H है। दो अणुमिथिलके संयोगसे इथेनकी उत्पत्ति होती है। इथनसे एक परमाणु उदजन निकाल लेनेसे (C_2H_5) इथिल पाया जाता है। इस राडिकलके साथ और एक अणुमिथिल मिलानेसे Propane बनता है। प्रोपेनका एक परमाणु उदजन छोड़ देनेसे C_3H_7 बनता है। इसे Propyl कहते हैं। प्रोपिलके साथ एक और अणुमिथिल मिलानेसे Butane उत्पन्न होता है। ब्यूटेनमें अणुका परमाणु ऊर्ध्वसंख्याके दो अणु परमाणुके साथ संयुक्त रह सकता है। किन्तु आइसोमेरिकलके मतसे एक अणु परमाणु दो तीन अणुका ऐसा परिवर्तन

दो स्थानमें होना सम्भव है। प्रन्तिम वा मध्यके अणुके साथ मिथिल संयुक्त होनेका आइसोमर कहते हैं।

अणुका संख्या जितनी बढ़ेगी, आइसोमेरिक पदार्थोंकी संख्या भी उतनी ही बढ़ती जायगी। आइसोमेरिक परिवर्तनसम्भूत यौगिक चार श्रेणियोंमें विभक्त हैं, जैसे—

१, प्रत्येक अणु परमाणुका दूसरे दो अणु परमाणुके साथ सम्बन्ध रहनेसे उसको प्राइमरी वा तर मैल पागाफिन कहते हैं। २, एक अणु परमाणु तीन अणु परमाणुके साथ यदि सम्बद्ध रहे, तो वह आइसो कहलाता है। ३, एक अणु परमाणुके तीन अणु एक पदार्थमें दुनी मात्रामें रहनेसे उससे Meso-paraffin कहते हैं। ४, एक अणु परमाणु चार अणु साथ संयुक्त हो परमाणुके परमाणुके साथ सम्बद्ध होनेसे वह पदार्थ Meso-paraffin कहलाता है।

हालोजेन द्वारा मिथेन वा इथेनका उदजन स्थानच्युत होनेसे एक श्रेणीका यौगिक उत्पन्न होता है। मिथेनका चार परमाणु उदजन चार परमाणु क्लोरिन, ब्रोमिन, अथवा आइयोडिन द्वारा स्थानच्युत हो हालोजेड यौगिक वृन्दकी सृष्टि करता है। जैसे (CHCl_3) = ट्राइ-क्लोरो-मिथेन वा क्लोरोफार्म (Chloroform) इत्यादि। १८३१ ई०में लॉवेग और सोवेरन साहब द्वारा क्लोरोफार्म आविष्कृत हुआ तथा १८३५ ई०में डूमर द्वारा इसकी बनावट स्थिर की गई।

क्लोरीन द्वारा मिथेनका तीन परमाणु उदजन स्थानच्युत होनेसे जैसे क्लोरोफार्म उत्पन्न होता है जैसे हो आइयोडिन द्वारा तीन परमाणु उदजन स्थानच्युत होनेसे आइयोडोफार्म (Iodoform) बनता है। आइयोडोफार्ममें $(\text{C}_3\text{H}_3\text{I}_3)$ एक भाग आइयोडिन, एक भाग अलकोहल, दो भाग कार्बोनेट श्राव सोडा और दश भाग जल रहता है। ये सब कुल मिला कर ७० हैं। ८० से० उच्चापसे पीले दाने पर आइयोडोफार्म पृथक् हो जाता है। कार्बोनेट भाव सोडाके बदलेमें कस्टिक सोडाका व्यवहार भी किया जाता है।

ओमिफिन (Oltmes) धेयोके मो इपिमिन या इपिन, मोपिमिन भादि यौगिक हैं। वाराफिन ध आक भनकोइसका जन मलपयुक्त पसिड द्वारा निकाल केनस इपिन पाया जाता है। इन ओमिफापरर गैस मो कहते हैं। अरुके साथ गिमिमिरिन उल्लस करनेसे प्रापिमिन निवार हाता है। ओमिफिन धेयोके यौगिक में वाराफिन धेयोके यौगिकका अपेक्षा वा परमाणु उद् जन कम हेले जाते हैं। इपिन आइप्रोमाइड अमकाइ मिक कएिक पोटासक साथ उल्लस करनन इपारन (Ethnic) बनता है। ओमिमिन ओमिमिमिन भादि इसाक अम्लमुंके हैं। यह वाराफिन, ओमिफिन और ओसिटिमिन धेयोके यौगिक GH_2 द्वारा बड़ता है। इसा कारण इनको इमोलागस कहते हैं। प्रत्येक धेयोके में बरा बर अणुआक रहने तथा दो परमाणु उद्जन द्वारा परस्पर प्रमेर होमसे h homologous भा कहलाते हैं।

रॉपिन (Turpene) धेयोके नामा प्रकारक तेल, कपूर, पूना, पूनायुक्त गोंद (Gum-resins), तीलाक पूना (Oleo-resins) बससन, इडिइवा-रबड, गाटापर्चा भादि पदार्थ अम्लमुंके हैं। देबहाय (Pitch) आठिक पुराक निर्यासका रॉपिन कहते हैं। इसे पुमानिस सेकड़े ३२ स १० माग तक पूना तथा २५ स १० माग तक तन पाया जाता है। शुभाये शुप रॉपिनका Spirit of Turpentine कहते हैं।

रबड १२० स १०० उष्णताय विघन जाता है। अधिक उष्णता मगनस यह विटन हा Isoprene और h outchup उत्पन्न करता है। इन दोनों पदार्थों व इडिइवा-रबड विघनता है। इसमें सेकड़े पाठे हा तीन भाग रॉपक मिश्रणस Volcanised India Rubber बनता है। भारमात्याण्डा पाकक कुम्पयन् निवासका सुदायिम गाटापर्चा (Guttapercha) पाया जाता है।

भारोमाठिक धेयोके उष्णतायविरोधस अमकहतत शुभा कर h Benzene h h Naphthalene h Anthracene h भादि प्रस्तुत किये जाते हैं।

हाइड्रोकार्बिक पदार्थोंका एक वा एकन अधिक उद् जन परमाणु अर्थात् हाइड्रोजनिक द्वारा स्थानकयुत होने स उनको अम्लकाइल कहते हैं। यदि अर्थात् हाइड्रक सिल द्वारा एक परमाणु उद्जन स्थानकयुत हा, तो यह ममोहाइड्रिक कहलाता है। दो परमाणुकी उगद आइहाइ डिक और तीन परमाणुका उगद द्राइ हाइड्रिक अमको हस उत्पन्न होता है।

ममो हाइड्रिक अमकाइलक मध्य Ethylic धेयोका हो विशेष उल्लेखनाय हैं। इपिमिन धेयोके अमकोहमका नाम मिथिन ह। मिथिन अमकोहलका वृसरा नाम carbual भा है। कार्बिनका १, २ वा ३ संक्यक उद्जन परमाणु GH_{2n+1} संक्यक उपादान सयुक्त हाइड्रोकार्बिक राइडकन द्वारा स्थानकयुत होमेल प्राइमरी, मकण्ठो भा टॉसिपारी अमकोहस उत्पन्न होता है।

शानकी धोना, स्वतसारा, पायन और मासू भादि क पदार्थविशेष (Starch) से हा साधारणता मय बनता है। साधारण धाना वा धावलको कबम मिमा देने हो उससे मय नहीं बनता। अमौर (Yeast) क साथ उरसेधन (Fermentation) क्रिया द्वारा यहल हागकी धाना बनती है और पीठे यहा विटन हा कर पुरा उरपायन करतो है। अमकोहलक साथ उल्ल मिमा खन स उसका भापवन-संकोय हाता है मयान् १०० भाप तन अलमिधित अमकोहल बनानमे ५३ स भापतम अम कोहन और ४२ स भापतन उलको अकरत होतो है। इस मिध ३० भापतन अमकोर् हा जाता है। येस उल मिधित अमकाहनको h root spirit करते हैं।

धोना गुड वा धायनादिक उरसेधन द्वारा परि पडिन हानक बाइ उध शुमानस मय हाता है। उध समय यह अमक साथ मिडा रहता है। पूना या कार्पेठ भाप पोटास भादि अमकायक पक्षय उमन मिमा कर शुमानस Ketthal spirit पाया जाता है। इसमें सेकड़े पाठे उध भाग अमकाहन रहता है। इसका उष्णताय मय वृन भादि द्राध बार बार परि प्युन करनेस उल विनकुन् उद् जाता है। यह अम विधान शुप हा अमक मजकाइल है। रेक्टिफायेड

स्पिरिटमें प्रायः १६० प्रूफ स्पिरिट रहता है। अतएव १६० प्रूफ कहनेसे १०० रेक्लि-स्पि + ६० जल समझा जाता है। ykc's कृत हाइड्रोमीटर नामक यन्त्रकी सहायतासे सुरादिका परिमाण निरूपित होता है। सैकडे पीछे ४६ भाग अलकोहल रहनेसे उसको प्रूफ कहते हैं। उससे अधिक रहनेसे over proof और कम रहनेसे under proof कहलाता है। ८०° Under proof कहनेसे सैकडे पीछे २०° Proof Spirit समझा जायगा।

Amidobenzene वा Aniline तथा Nitrous acid-के योगसे Phenyl Alcohol वा carbolic acid बनता है। वेजिन और सलपयुरिक एसिडको उत्तप्त करनेसे Benzen Sulphonic acid उत्पन्न होता है। उसको caustic potash मिला कर विकृत करनेसे phenol वा phenylic alcohol पाया जाता है। तेल और चर्वीमें अनेक प्रकारका एसिड है। नारियलके तेलमें Caproic, Caprylic, Ricinoleic, Lauric, Myristic, Palmitic और oleic, रेंडीके तेलमें Ricinoleic तथा भेंडी और गायकी चर्वीमें Stearin और Margarin आदि एसिड रहते हैं।

मनुष्य जीवनकी उन्नतिके लिये अर्थात् आयुर्वृद्धि और रोगनाशके लिये इस रसायनशास्त्रकी उत्पत्ति हुई है। पाश्चात्य वैज्ञानिक-सम्प्रदायने इस उद्देश्यकी सिद्धिके लिये अनाङ्गारिक और आङ्गारिक रसायनकी जो उन्नति की है उसके लिये आधुनिक शिक्षितसमाज ऋणी है। भारतीय आर्य ऋषियोंकी रसायनपद्धतिमें औषध बनानेकी जो सब प्रक्रियायें लिखी गई हैं, वे पाश्चात्य रासायनिकोंकी रसायनप्रणालीसे नहीं मिलने पर भी किसी अंशमें उससे कम नहीं है। पाश्चात्य शिक्षापट्ट वृत्तमान बङ्गाली वैज्ञानिक डा० प्रफुल्लचन्द्र राय, Dr Sc ने आयुर्वेदोक्तआर्य-रसायनशास्त्रकी आलोचना करके पारदघटित कुछ रसौषध (Mercurial compounds) को फल और बलका पता लगाया। सम्यक् पाश्चात्य वैज्ञानिक प्रथासे उसका विश्लेषण करके वे उस शास्त्रकी स्वतःसिद्ध सिद्धान्त पर

पहुंच गये थे। भारतीय प्राचीन-भित्तिका द्वारा-दुघाटन करके उन्होंने सम्प्रति उस पारद-सम्बन्धीय कुछ अभिनवतत्त्वका मौलिक परिचय पाश्चात्य वैज्ञानिक-समाजमें प्रदान किया है।

पारेके ऊपर यवक्षारसे उत्पन्न डावकके क्रियासम्बन्धमें Lefort, Gerhardt और Maignac आदि यशस्वी रसायनवित् पण्डितोंने गवेषणा की थी। इन दो पदार्थोंके सम्मिलनसे उन्होंने कितने यौगिक-पदार्थका आविष्कार किया था सही, पर उनमेंसे कोई भी इसका प्रकृत तथ्य निकाल न सके। १८६५ ई०में प्रफुल्लचन्द्र राय नामक एक प्रसिद्ध बंगाली अध्यापकने पीतवर्ण दानायुक 'मार्किउरस नाइट्रोइट' नामक पदार्थका आविष्कार और स्वरूपनिर्णय कर इस विषयमें जो कुछ ज्ञातव्य था उसे साफ साफ बतला दिया। जिस विषयमें इतने मनस्वी यूरोपीय रसायनवित् कृतकार्य न हो सके, उसी विषयमें अध्यापक राय महोदय जो पारग हो गये हैं, वह हम लोगोंके लिये कम गौरवकी बात नहीं है।

पारदसे उत्पन्न इस नूतन यौगिक पदार्थको मूल-स्वरूपमें अवलम्बन करके अध्यापक रायने अनन्यमनाः हो कर जो सभी मिश्र (Complex) पदार्थोंका आविष्कार किया है वह बड़ा ही आश्चर्यका विषय है।

आजसे करीब १२५ वर्ष हुए वे उतापके संयोगसे नाइट्राइटोंके विश्लेषणविषयमें गवेषणा करते थे। इसी धीच क्षार पदार्थके, क्षार-मृत्तिकाके और पारेके नाइट्राइटोंके विश्लेषणविषयमें कुछ प्रबंध इङ्ग्लैण्डकी रसायन-मभाकी पत्रिकामें प्रकाशित हुए। १८६५ ई०से अध्यापक रायने इङ्ग्लैण्ड और जर्मनदेशीय रासायनिक पत्रिकामें प्रायः १५।१६ मौलिक गवेषणा सम्बलित प्रबंध प्रकाशित किये।

रसायनशास्त्रकी आलोचनामें अध्यापक राय जैसे धन्य हो गये हैं, वैसे ही पदार्थविद्यावित् बङ्गसन्तान अध्यापक जगदीशचन्द्र वसुने तड़ित (Electricity) के नावा तत्त्वोंका उद्गाहन करके सारे वैज्ञानिक जगत्में अद्भुत कीर्ति स्थापन कर भारतकी गौरवरक्षा की है।

रसायनधेय (सं० पु०) रसायनेषु भयः । पारव, पाप ।

रसायनामृतजोह (सं० ज्ञी०) गुन्माधिकारोक श्रीयथ विधेय । इसको प्रस्तुत प्रणाली—शोनी ११ पल, पाकार्य मित्रा ह्रमा त्रिकणा २ सर डळ १६ सर, येव ४ सर, बिजौर नोबूका रस १६ पळ, इनका यथाधिधान पाक करना होगा । पीछे गाढा होम पर त्रिकण, मोधा, पिङ्गु, शोरा, मंगरेळा मज्जयापन, वन मज्जयापन, चिरामता, त्रिसोप, शक्तिमूल, नीमको छान, सेन्धव और भररक प्रत्येक २ तोला ; बेहा २ पळ, बी ४ पळ, इनका प्रक्षेप मच्छो तरह भाजोडून कर जेना होगा । रस श्रीयथका संयन करनेसे पांच प्रकारके गुन्म रोग, वरुण, शोहा, पाण्डु और कमला आदि रोग नाश होते हैं ।

(भेषजव्यवस्था)

रसायनिक (सं० त्रि०) रसायनिक रसा ।

रसायनी (सं० स्त्री०) रसाय तैलादीन् अपते प्राप्नोतीति भवन्त्यु कोष् । १ यह श्रीयथ जो सुकूपेकी रोधती या नूर करती हो । २ गुहूषो गुहूष । ३ काकमाथा, मकोव । ४ महाकरज । ५ गोरक्षगुण्य, अमृतसंजीवनी, गोरखदुग्धा । ६ मांसरोहिणी । ७ मश्रिण, मजोठ । ८ कर्पूरकोटा, कनकोडा नामकी लता । ९ शुक्रशिम्ली, की ल । १० शुद्ध जिवृता, सफेद तिसाय । ११ शंख पुष्पी, शंखापुष्पी । १२ नाडा । १३ कन्द गुहूषी, कन्द गिहाय ।

रसाय्य (सं० त्रि०) १ रसयुक्त, रससं मय ह्रमा । २ सुमिष्ट, सुखात् ।

रसारण्य (सं० त्रि०) रसस्य घर्णय इव । रसका समुद्र, रसका सागर ।

रसान (सं० ज्ञी०) रसम् आसति भावनातीति आ ङ क । १ सिद्धक, जिह्वारस । २ शाम नामक गन्धद्रव्य । (पु०) ३ रसु, ङक । ४ भात्र, आम । ५ पलस कटहल । ६ कुम्भर मूत्र । ७ गोधूम, गेहू । ८ मन्त्रजैस अमल बेन । (वैपक्य) (त्रि०) ९ मयुर, मोठा । १० रमोला । ११ सुन्दर, मनोहर । १२ लादिष्ट । १३ मारित्र, मूत्र ।

रसाय (सं० पु०) ताम्रस्य, चिराम ।

रसायगङ्ग—बम्भर प्रदेशके रत्नगिरि तिलिके लेह उप विभास्यार्थ एक गिरिदुर्ग । उसरकी पर्यतशुद्धाके सिपाय यहां प्रवेजना दूसरा कोई साहज उपाय नहीं है । दुर्गके प्रथम प्राकारके द्वारपथके सामने वृक्ष तथा प्राचीर गात्रमें गोळा आदि फे कनेका रण्य है । इसके प्रायः ८० गज पीछे द्वितीय प्राकार और दुर्गद्वार है । यहां वास्तुकार, वैद्यमन्दिर, पुष्करिणी आदि स्थापित हैं । सनावास प्रासाद आदि अन्याय्य भट्टाधिकार्य दुर्गके मोतर बनाइ हुए हैं ।

रसायगिरि—एक कवि । ये मैत्रपुरीके रहनेवाले आदि गिरिक शिष्य थ । इन्होंने पैद्यप्रकाश और स्वरोद्य प्रण्य लिखा । ये स म्यासी हो कर मयुरा चले गये ।

रसामय (सं० पु०) १ रसका निर्दिष्ट स्थान, यह स्थान जहां अनेक प्रकारके रस आदि बनत हैं । २ यह स्थान जहां आमोद्-प्रमोद् किया जाय । ३ आमका पेड़ । ४ शक्तिविधेय ।

रसानार्कटा (सं० स्त्री०) गन्ध या ङकक रससे बनाइ हुए चीनी ।

रसानस (सं० पु०) कीर्तुक ।

रसानसा (सं० स्त्री०) रसन मलसा । १ नाकी । २ पीडा, गन्धा । ३ गोधूम, गेहू । ४ कुङ्कुम नामकी घास ।

रसाना (सं० स्त्री०) रसान् भावति भावनातीति आ सा-क, शप् । १ रसना, जीम । २ दूर्वा, वृष । ३ विदारो । ४ द्राष्टा शक्य । ५ शिकरिणी । पर्याय—मारित्र । ६ कामोद्दीपक पानीय विधेय । प्रस्तुत प्रणाली—कुछ खटा मात्रा रूही ८ सर, शोनी २ सर, मयु १ पळ, यो ५ पळ सौंड ४ मागा, इसायको ४ मागा, मिर्च २ तोला मयुङ्ग २ तोला, इह एकल मित्रा कर सफेद कपड़ेमें छान ल । पीछे सुपनामि चन्दनरस और अगुह द्वारा सुझावदम उल रक कर कुछ कपूर द्वारा सुगणित कर ल । यह रसाना पान करनेसे ध्वजमङ्ग-रोगीको उत्तेजना बढ़ती है ।

रसना तटादा—वडा रूहा ८ सर, शोनी २ सर, यो ५ पळ, मयु १ पळ मिषयुष्म ४ तोला, सांडका शूय १ गाढा इरकोना तेजपत्र, इसायको और नागेश्वर प्रत्येक १ तोला । दिसा सुन्दरी ज्येष्ठाक चामळ हाथमें इसे

प्रमद्वित और कर्पूरादि द्वारा सुवासित करके एक मट्टी-के बरतनमें रखे । यह रसाला बलकर, पुष्टिकर, स्निग्ध और रुचिकर होती है । (भैषज्यर० अरोचकाधि०)

भावप्रकाशके मतसे इसकी प्रस्तुत प्रणाली—पहले जलविहीन और अम्लरसयुक्त मैसका दही १६ सेर, परिष्कृत चीनी ८ सेर, एक साथ मिला कर साफ सुथरे कपड़े में धीरे धीरे डाल दे । पीछे उसमें ३२ सेर दूध मिला कर नीचे रखे हुए बरतनमें उसका रस चुआवे । अनन्तर उस रसके परिमाणानुसार इलायची, लवङ्ग, कर्पूर और मिर्च डाल दे । भोजनप्रिय भीमसेनने यह तरकीब निकाली थी । यह रसाला श्रीकृष्णकी बहुत रोचक थी । वसन्त ऋतु छोड़ कर अन्यान्य ऋतुओंमें जो प्रतिदिन इसका सेवन करते उनकी वीर्यवृद्धि और इन्द्रिया सबल होती है । जो ग्रीष्म और शरत्कालके आतपसे उच्चत वा प्रमत्ता खोसम्भोगसे खिन्न अथवा पथश्रमसे थक गया हो, वे यदि इस रसालाका सेवन करें, तो उनका शरीर शीघ्र पुष्ट होता है । रसाला शुकवर्द्धक, बलकारक, रुचिजनक, वायु और पित्तनाशक, अग्निदीपक, शरीरका उपचयकारक, स्निग्ध, मधुर रस, शीतल, सारक तथा रक्तपित्त, पिपासा, दाह और प्रतिश्यायविनाशक है । (भावप्र०)

रसालात्र (सं० पु०) महारोजात्र, वट्टिया कलमी आम ।
रसालिका (सं० स्त्री०) १ सतला, सातला । २ अंबिया, छोटा आम । (त्रि० स्त्री०) ३ मधुर, मृदु, सरस ।
रसालिन् (सं० पु०) १ कृष्णचणकक्षुप, चनेका पौधा ।
२ पौंढा, गन्ना ।

रसालिहा (सं० स्त्री०) पृथिनपर्णी, पिठवन ।

रसाली (सं० स्त्री०) रसान् आलाति या आलाक, टीप् । पौंढा, गन्ना ।

रसालु—सियालकोटके एक राजा, शालिवाहन शकारि-चिक्रमादित्यके पुत्र । इन्होंने अपने भुजबलसे सियालकोट राजधानी पुनरुद्धार कर राज्यशासन किया । इसके शासनकालका ऐतिहासिक विवरण मालूम न होने पर भी वहाँके लोगोंसे जैसा सुना जाता है उससे मालूम होता है, कि ये बड़े धीरे योद्धा थे । परन्तु अपने अंतिम मॉचनमें इन्होंने गकर-राज हुडीसे परास्त हो कर अपनी

कन्या उन्हें ध्याह दी । इसके एक भी सन्तान थी, इस कारण मरनेके बाद उनके दाहिने राजसिंहासन पर बैठे । फिर किसीका कहना है, कि रसालुके मरने पर उनके संन्यासी-भाई पूरणने इस राज्यके प्रति अभिसम्पात प्रदान किया । तभीसे दुर्भिक्ष और डकैतोंके उपद्रवसे वह समृद्ध सियालकोट राज्य छार छार हो गया ।

रसालेक्षु (सं० पु०) पौंढा, गन्ना ।

रसाव (हि० पु०) १ खेतको जोत कर और पाटेसे बराबर करके कई दिनों तक यों ही छोड़ देना । २ रसनेकी क्रिया या भाव ।

रसावर (हि० पु०) रबीर देखो ।

रसावल (हि० पु०) रबीर देखो ।

रसावा (हि० पु०) ऊखका कच्चा रस रखनेका मिट्टीका बरतन ।

रसावेष्ट (सं० पु०) श्रीवेष्ट नामक सुगन्धिद्रव्य, गंधा विरोजा ।

रसाश (सं० पु०) मद्यपान, शराव पीना ।

रसाशिन् (सं० त्रि०) मद्यपायी, शराव पीनेवाला ।

रसाशिर (सं० त्रि०) दुग्धमिश्रित, दूध मिला हुआ ।

रसाश्वासा (सं० स्त्री०) पलाशी नामकी लता ।

रसाष्टक (सं० स्त्री०) पारा, ईंगुर, कांतिसार, लोहा, सोनामक्खी, रूयामक्खी, वैक्रान्त मणि और शंख इन आठ महारसोंका समूह । (वैद्यकनि०)

रसाश्वाद (सं० पु०) रसस्य आश्वादः । रसका आश्वाद, रस चखना । अस्त्रएड वस्तुका अनवलम्बन द्वारा चित्त-वृत्तिकी सविकला समाधिमें आनन्द आश्वादनका नाम रसाश्वाद है । (वेदान्तसार)

रसास्वादिन् (सं० पु०) रसम् आस्वादयितुं शीलमस्य आस्वाद पिनि । १ भ्रमर, भौरा । (त्रि०) २ स्वाद लेनेवाला, रस चखनेवाला । ३ आनन्द या मजा करनेवाला ।

रसाह (सं० पु०) रस आह्वा आख्या यस्य । गन्धा विरोजा ।

रसाह्वा (सं० स्त्री०) १ शतावर । २ रासना ।

रसिआउर (हि० पु०) १ ऊखके रस या गुडके शर्बतमें पका हुआ चावल । २ एक प्रकारका गीत जो विवाहकी

एक रीतिमें गाया जाता है। जब वह बहू हवाइ कर भारी है, तब वह ऊँचके रस या गुड़के शब्दोंमें आवल पका कर भगने पवि तथा ससुराकाके झोंगोंके परीस कर किंसाती है। उस समय किर्यां के गीत गाती है, इसे भी 'रसिभाउर' कहते हैं।

रसिभावर (हि० पु०) रसिभावर देवा ।

रसिभाषम (हि० पु०) रसिभावर देवा ।

रसिक (सं० पु०) रसेऽस्त्यस्यात्तेति वा रस-कन् ।

१ सारस पक्षी । २ सुन्दर मोड़ा । ३ हस्ती, हाथी ।

४ एक प्रकारका छन्द । (हि०) ५ जो रस या स्वाद

केना हा, रस जेनेवावा । ६ जिसे रस सम्मन्वी

शारतमें विशेष भामन्व भाता हो काव्यमर्मज्ञ, साहस्य ।

७ छोड़ा श्राद्धिका प्रती, मानन्वी रसिया । ८ जो किसी

विषयका अन्ध झटा हो मर्गज्ञ । ९ प्रेमो, मक्क, भाबुक ।

रसिक—एक कवि । इनका बनाया जो मेल्य मोके वसुधुत

करता है—

(१)

“हामा खम बदन राज सेके

नवन मोहनी सैन जोती गुणामणीय रग नठ मेरे ।

भारत मझ नञ्च निष्ठि जगो भरे किनाइ भयार विशेषे ॥

मूष्य बन्धुमण्डिन हावमकी क्षणिक नवन कनकर क्षुभरे ।

रसिक कुशल निरक्षर बह सुख

उपहार सुख ठार विशेषे ॥”

(२)

“भावत कुञ्जये” तिन प्यारी ।

अधि रत भरे उर्मिनि नाना रूपणि सुकुमारी ॥

मूष्य स्थन मय न व राखत क्षणिक कनमन्व भगते ।

रसिक कुञ्जय करत रत बरख एने कुञ्जिघारी ॥

रसिक भकी—एक साधारण धोणीके कवि । इनकी

कविता प्रशंसनीय है। ये मिथिलाविहार, मध-धाम हेतरी

भादि बना गये हैं। मिथिला विहारमें रामचन्द्रजीका

जनकपुरमें कामसन और इनका योमाका वर्णन विविध

छन्दोंमें है। इनकी कविताका परिचय निम्नलिखित

छन्दोंसे मिलता है।

“भार्य पन गरजन कस्य सुहार्थ ।

नन प्रगोइ मतनकी होय बहूँ पियि कन हरिभार्य ।

“रिमि निरमि करत रमकत हाकिनी पन अविधारी छर्षे ॥

किन्तो रत भायक रत कप्रिष्ठ दिनदिन कुइक मचार्य ।

करतम बनुक रताछ करवन जोमा रति अविधारी ।

करी पीठ प्यारी अके बनिदका बहिय नग

कगमा भाधि मानु भादि उत्रिधारी है ।

रतन किरीड एअँ राखन युञ्जान सोच

उरित निरिध कप्रि वरन तमारी है ॥

दाग्नि उरन पन विरन पिठार्थ हाउक

नीक पीठ बजनि बहिय किन्तारी है ।

रसिक भकी न, प्यारे एअँठ किंगार कुइ

सुकमा भाधि सुख भादि मोरकारी है ।

रसिककल्प—एक कवि । इनकी कविता उद्यम अँ गोकी

होती थी। उदाहरणार्थ एक नोके देते हैं—

“काइ ती ताहे छात्र न भाव ही रावतार तू भाव ।

एरी जोखे मरकी माली नवन न ठैन नचने

विना ही कहे राम भावत गावत नाना रंग उपजाने ।

रसिककल्पके रत बह कर खीरो धारीका किय पाने ॥”

रसिक गोविन्द—एक भाषा कवि । इनका बनाया सुगुञ्ज

रसमाधुरी नामक ग्रन्थ मिलता है जो बड़ा विशय है।

इसमें २०१ छन्दों द्वारा दृश्यावन तथा राधा कल्पका

वर्णन है। इनको कविता परम मनोहर और मर्मोद

होती थी। इन्होंने मैतर्गिक सुप्रसार्थोका भी अष्टका

वर्णन किया है। इसके मतिरिक्त इन्होंने अष्टदश भाषा,

गाविन्दात्मन्धन, कञ्जियुगदासो, विगलप्रस्य, सप्तम-

प्रबन्ध, भोरामायणसूचनिकाकी रचना की। इनकी

कविताका नमूना—

“वैकिच निरमख नीर निरक अमुया बहि भार्य ।

मनु नीच मनि भाख विपिन पीरे सुकदाई ॥

मवन नीच किय पीठ कस्य कुइ छूले छूजनि ।

बनु वन पीरे रंग रंके सुरंग सुकुमनि ।

इलीवर कहर क्रेकनर बहुमनि भोमा ।

मनु अमुया हाग करि कनेक निरकत वन होमा ।

किन मयं मरत परमा प्रभा क्षणिक बीरिठ न हाउति ॥

निरक भकी निधि रीमि रमा मनु वन पर बरति ॥

करत सुगुण्य परग कने मनु मनुप गुञ्जमय ।

मनु सुकमा क्षणिक रीमि परजुवर बुजव उचारत ॥

सुञ्जिन पथिन विपिन पिय निरिध बह मन्की ।

रचित कनक मनि खचिन लसति अति कोमल कमनी ॥”

रसिकता (सं० स्त्री०) रसिकस्य भावः तलुटाप् ।

१ रसिक होनेका भाव या धर्म । २ परिहास, हंसी ठट्ठा ।

रसिकदास—एक भाषा-कवि । ये निम्न लिपितग्रन्थ बना गये हैं,—वानी, प्रसादलता, मक्सिद्धान्त, पूजाविलास, एकादशी माहात्म्य, रसकन्द, रसमणि ।

रसिकरङ्ग—एक कवि । इनकी कविता नीचे उद्धृत होती हैं,—

“कैसेके समझाऊ अपने सावल नु ज्यों ज्यों

बोलावू त्यों रसो रसा जाय ।

रसिकरङ्ग पिया मनके भयन वाबुल

विन जिय तरसाय ॥”

रसिकविहारो (सं० पु०) श्रोकृष्णका एक नाम ।

रसिकविहारो (वनी ठनीजी)—एक स्त्री कवि । ये महाशया महाराज नागरोदासजीकी उपपत्नी थीं और उनके साथ श्रीगृन्दावनमें वास करती थीं । इनकी कविता मरस और मक्तिभावसे पूर्ण है । वह व्रजभाषा और राजपूतानी मिश्रित भाषामें है । इनकी गणना साधारण श्रेणीमें की जाती है । इनके पद नागर समुच्चयके अन्तमें संग्रहीत हैं । किसी किसीने रसिक विहारो नाम होनेसे इन्हें भ्रमवश पुरुष माना है । इनका कविता काल सवत् १७८७ समझना चाहिए, क्योंकि ये नागरोदासजीके साथ थीं । उदाहरणके लिये इनकी एक कविता नीचे देते हैं,—

“फागुणियारो बुमडि रखो छैप्याल ।

कु ज भूमि लो लाल हुई हुआ लाल तमाल ॥

उडि गुलालकी लाल धुँधरि मे मलकै बैया भाल ।

सखी लाल अब लाल निराल रसिकविहारो लाल ॥

भजनके विर सेहरा फाग रगम मे वेस ।

भाव रही मे चलत दोउ लैगलि सुलस सुदेस ॥

भोजे केसरि रंग सौ रंगे अरुन पर पीत ।

डोले चारु चौक मे गहि बहिया दोउ मीत ॥”

रसिक सनेहो—एक कवि । इनका बनाया धनाश्री धमार नाचे देते हैं,—

“भाई री कैसे बसिये याहु नगरमे होरी खेला नगरमे ।

चार मुते कोतवाल हसे डर नाही नगरमे ॥

एक ही रंगमें रङ्ग है पुरजन नेक न शका सगरमे ।

रसिक सनेही मानत नाही बड़ी डिठाई लगरमे ॥”

रसिकसुमति—एक साधारण श्रेणीके कवि । ये ईश्वरदासके पुत्र संवत् १७८५ में हो गये हैं । इन्होंने दोहोंमें अलकारचन्द्रोदय नामक ग्रन्थ कुचलयानन्दके आधार पर बनाया । इनकी कविता साधारण है । इनके बनाये कुछ दोहे नीचे देते हैं ।

“साहत जुगुल किशोरके मधुर सुधासे नैन ।

वदन चन्द सम करत है निरलत सोतल नैन ॥

प्रत्यनीक अरि सौ न बस अरि हित्ति दुख देय ।

रवि सौ चले न कजकी दीपति सवि हरिलेय ॥”

रसिका (सं० स्त्री०) रसिक-टाप् । १ सिखरन, दहोका शरवत । २ इक्षुरस, ईषका रस । ३ रसना, जीम । ४ मैना पक्षी । ५ शरीरमेकी धातु, रस ।

रसिकाई (हिं० स्त्री०) रसिकता देखो ।

रसिकेन्द्र—नोलाचलके सामन्त अच्युतानन्दके पुत्र और वैष्णवश्रेष्ठ श्यामानन्दके शिष्य । उड़ीसा मलभूमक अन्तर्गत सुवर्णरेखा तटवर्ती बहिणी ग्राममें इनका जन्म हुआ था । कवि गोपीवल्लभदास कृत ‘रसिकमङ्गल’ ग्रन्थ इन्हींकी जीवनीके अवलम्बन पर रचा गया है ।

अच्युतकी छोटी पत्नीका नाम भवानी था । इसी भवानीसे रसिकानन्द उत्पन्न हुए, रसिकका जन्माब्द १५१२ शक (१५६० ई०) कार्तिक रविवार प्रतिपद तिथि है ।

जैसे इनका नाम रसिक था, वैसे ही ये रसिक भी थे । प्रामके छोटे बड़े सभी इनके स्नेहपात्र थे । पांच वर्षकी उम्रमें इन्होंने पढ़ना लिखना आरम्भ कर दिया । इनकी प्रतिभा और स्मरणशक्ति अलौकिक थी । एक बार पढ़ लेनेसे ही वह सुखस्थ हो जाता था । कहते हैं, कि गुरु महाशय एक दिन किसीको मीमांसा शास्त्र पढ़ा रहे थे, रसिकका कान उसी ओर था । घर आने पर पाठशालामें जो कुछ सुना था सभी सूत्र वे अपने पितासे धडाधड सुनाने लगे । पुत्रकी विलक्षण बुद्धि देख कर पिताने कहा था, कि यह कुमार मनुष्य नहीं किसी देव-अंशमें उत्पन्न हुआ है ।

इसके बाद वे बलभद्र सेनके निकट व्याकरण पढ़ने

मने। पीछे उन्होंने कुछ दिन अनुष्ठान चक्रवर्ती और कविकेन्द्रसे और कुछ दिन यदुनन्दनसे व्याकरण पढ़ा था।

हिजलीके मधिकारों बलमदरके इच्छाप्रैषी नामक एक परम सुखीके कन्या थी। रसिकका विवाह उससे हुआ। विवाहक कुछ दिन बाद ही विविध प्रकारसे वे मरिक्का अनुष्ठान करने लगे; कभी बैष्णवोंको खिलाते, कभी संकीर्तन करते और कभी भागवत पाठ किया करते थे। इसी समय श्यामानन्द प्रभु मीठाबाबूक पधारे। भागवत प्रकाश हुआको सहायतासे धर्म उठनी है, श्यामानन्दक साथ रसिक भी इसा प्रकार मरिक्काहमें शीघ्रवेश हुआ था।

श्यामानन्द रसिकानन्दको शोषा दे कर श्यामन भाये। भव रसिकेन्द्र कब बैठनेवाले थे उम्हेंने गुड़का पीछा किया। कुछ दिन बाद वहाँसे लौट कर उम्हेंने मीठाबाबूके राजा प्रजा समीके कृष्णप्रभ प्रदान किया। उनक शिष्यमेंसे मयूरमन्त्रके प्राचान राजा वैद्यनाथ एक थे। रसिकको मरिक्में ऐसी आकर्षणो शक्ति थी कि करण कुसोन्नय होने पर भी सेकड़ों शब्द कुसोन्नयन प्राद्ययोंने उनका शिष्यत्व स्वीकार कर लिया था। रसिकक मुसलमान शिष्य भी मनेक थे। उनमेंसे भद्रमदर बेग एक था। भद्रमदर बेग बहुत भयवालो था। यहाँ तक, कि राजासामें मिलने राजे से सबको मरान इतने ठोकरफोड़ बासा था तथा सभी भुइवा राजे इसक उरसे धरधर काँपते थे।

एक समय भद्रमदरके बासस्थान याजपुरमें एक लंगला हाथी बहुत ऊँचम मचला था। जब रसिक किसी एक मुसलमानक साथ बातचीत कर रहे थे उसी समय संयोगवश वह हाथी वहाँ आ पड़ु था। भद्रमदरने रसिकक कहा, "यदि भाप इन मतपान्ने हाथीका इमन कर सके, तो मैं भापक काममें जरा भी छेड़छाड़ न करूँगा, भाप वे रोकरोक सब काम कर सकते हैं।" रसिक भागे बड़े। इधर हाथीने उम्हें देख कर डारने बियाड़ मारा और सूँड़ समेट कर उनकी ओर दौड़ा। किन्तु मरिक्की शक्ति मंत्रिय है इरिनामका क्या ही अद्भुत महिमा है। यह वनसा हाथी रसिकक समीप

आ कर मंझमुपकी तरह झुड़ा हो गया और उनक मुणस निकले हुए इरिनामको मुणसे जगा।

यह अद्भुत घटना देख कर वहाँ हजारोंकी भीड़ जग गई और सभी रसिककी महिमा गाँने लगे। इस समय मीठाबाबू, शूद्र, मोघ, मुसलमान मगाने उनकी प्रशंसा को। धारे धारे रसिकक सेकड़ों मुसलमान शिष्य हो गये।

इतिहासमसिद्ध गारसुत्रा यह श्लाघ्य सुन कर रसिकका प्रभाव देखनेक छिपे इरिनामनित्त हुए थे। इस प्रकार रसिक मीठाबाबूके धीरे धीरे सबको पूजनीय हो गये। उम्हेंने ही कि रसिकेन्द्रम प्रेमी कृष्णमरिक्की थी, कि इसक प्रभावसे ब्रह्मना बाप भी उनक निकट हिमा भूज जाता था, मरिक् मुक्त जानो थी और बुधो बुद्ध नाथ बाहर निकल भाता थी।

केवल मयूरमन्त्रक राजा ही नहीं रसिकके प्रभावसे बाहुदर हो शेरकरेगाचिपति भी उनक शरणागत हुए थे।

रसिकक तीन पुत्र थे राजानन्द, कृष्णगति और राधाकृष्ण। रसिकने १२ वर्षकी उमरमें श्यामानन्दसे शोषा भी और २० वर्ष तक उनकी सेवा का थी। २८ वर्ष तक वे उत्कलमें धर धर वैष्णव धर्मका प्रचार करते रहे।

रसिकका जन्म १५१२ शकमें शुद्ध प्रतिपदकी और इशान्त ६२ वर्षकी उमरमें १५७४ शककी फागुन शुद्ध प्रतिपदकी हुआ। मृत्युक पहले उम्हेंने रेमुनाक गोपाक मन्त्रिके समीप अपनी छात्र गाढ़ने कहा था। वहाँ रसिककी समाधि आज ना मीसूँ है।

रसिकेन्द्रवैद्य—भागवताष्टकके प्रणेता। इनका दूसरा नाम रसिकानन्द गोस्वामी।

रसिकेश—इनका जन्म सन् १६०१ में हुआ था। भाप कुछ समय वैरागी हो कर भयोप्यामें कनकनवनक महत्त हो गये और भवना नाम ज्ञानकीप्रसाद रखा। वैरागी होनेक पहले भाप पन्नामें शीवान थे। भापने रामरसायन काव्य, सुभाषर, इषक भद्रायथ, अजुतग विरहविषा कर, रसकीमुद्रा, सुमतिपथीमी सुयमकरुम कानून मज्जुमा, रागबन्धुलो, स प्रवृत्तिवली, प्रममंजन, सगुदीत स प्रदी, गुणवचसो भादि २६ म्पथ रचे हैं। रामरसायनमें रामायणका कथा है और काव्यसुभाषरमें

छन्द, रस, भाव, अलंकार आदि काव्यांगोंका अच्छा वर्णन है। थोड़े ही दिन हुए हैं, ये सुरधाम पधारे हैं। आपका काव्य चामत्कारिक है। इन्होंने उर्दू मिश्रित भाषामें भी रचना की है। इनकी रामायण भी अच्छी है।

उदाहरणः—

“कूर्म हैं चहुँ वा गजराजसे रसाल भ्रूमे ।
भ्रूमे है समीर तेज तरल तुरंग ज्यों ।
किमुक गुलाब कचनार और अनारनके
प्यारे भाति भाति लसै सहित उभंग त्यों ।
क्याई नव बल्ली छटा छहरि रही है धनी
तेई रथ राजें मोर भ्रमत अभंग त्यों ।
रसिक विहारी राज साजि श्रुतुराजआयो
क्यायो वन वाग सेना लोन्हे चतुरंग यों ॥”

रसिकेश्वर (स० पु०) रसिकानां रसज्ञानामीश्वरः ।
श्रीकृष्ण ।

रसिकोत्तंश—प्रेमपत्तनिकाके रचयिता ।

रसित (स० त्रि०) १ ध्वनि करता हुआ, बोलना हुआ ।
२ रसयुक्त । ३ बहता हुआ, थोड़ा थोड़ा टपकता हुआ । ४ जिसके ऊपर मुलम्मा चढ़ा हो । (पु०)
५ ध्वनि, शब्द । ६ द्राक्षासत्र, अंगूरकी शराव ।

रसितृ (स० त्रि०) रसयिता, स्वाद लेनेवाला ।

रसिया (हि० पु०) १ रस लेनेवाला, रसिक । २ एक प्रकारका गाना जो फागुनके मौसिममें ब्रज और बुन्देलखण्ड आदिमें गाया जाता है ।

रसियाव (हि० पु०) गन्नेके रसमें पका हुआ चावल ।
रसो (हि० स्त्री०) १ एक प्रकारकी सज्जी जो विहार और स युक्त प्रान्तमें बनती है । (पु०) २ रसिक देखो ।

रसीद (फा० स्त्री०) १ किसी चीजके पहुँचने या प्राप्त होनेकी क्रिया, प्राप्ति । २ वह पत्र जिस पर व्योरेवार यह लिखा हो, कि अमुक वस्तु या द्रव्य अमुक व्यक्तिसे अमुक कार्यके लिये अमुक समय पर पाया, किसी चीजके पहुँचने या मिलनेके प्रमाणरूपमें लिखा हुआ पत्र । प्रायः जब किसीको कोई चीज या धन ऋणके रूपमें ऋण चुकानेके लिये अथवा और किसी मामलेके सम्बन्धमें दिश्रा जाता है, तब पानेवाला एक प्रमाणपत्र लिख कर देनेवालेको देता है, जिसमें यदि पानेवाला

कभी उस चीज या धनकी प्राप्तिसे इन्कार करे, तो उसके विरुद्ध प्रमाणके रूपमें यही रसीद उपस्थित की जाय ।
३ पता, खबर ।

रसील (हि० वि०) रसीला देखो ।

रसीला (हि० वि०) १ रसमें भरा हुआ, रसयुक्त ।
२ स्वादिष्ट, मजेदार । ३ भोग विलासका प्रेमी, धसनी ।
४ रस लेनेवाला, आनन्द लेनेवाला । ५ वाँका, छत्रीला ।
रसीलापन (हि० पु०) रसीला होनेका भाव या धर्म ।

रसुन (स० पु०) रस-उनन् । लशुन, लहसुन ।

रसूम (अ० पु०) १ रसमका बहुवचन । २ वह धन जो राज्यको कोई काम करनेके बदलेमें राजकीय नियमोंके अनुसार दिया जाता है । ३ वह धन जो किसीको किसी प्रचलित प्रथाके अनुसार दिया जाता है, नेग, लोंग । ४ नियम, कानून । ५ वह धन जो जमींदारको किसानोंकी ओरने नजराने या भेंट आदिके रूपमें दिया जाता है ।

रसूम अदालत (अ० पु०) वह धन जो अदालतमें कोई मुकदमा आदि दायर करनेके समय कानूनके अनुसार सरकारी व्ययके रूपमें दिया जाता है । इसे अंगरेजीमें court fees कहते हैं । भिन्न भिन्न कामों या मुमदमोंकी मालियतके लिये धनकी संख्या कानूनके द्वारा निर्धारित होती है और मुकदमा दायर करनेवालेको उतने धनका सरकारी कागज या स्टाप खरीदना पड़ता है तथा उसी कागज पर अपना दावा दायर करना होता है । वैनामा या दानपत्र आदि लिखनेके लिये भी इसी प्रकार रसूम अदालत लगता है ।

रसूल (अ० पु०) वह जो अपने आपको ईश्वरका दूत कहता हो और सर्वासाधारणमें माना जाता हो, पैगम्बर ।
रसूलपुर—मेदिनीपुर जिलेमें प्रवाहित एक नदी । यह हलदीसे मिल कर गे'ओखालीके निकट भागीरथीमें आ गिरी है ।

रसूलपुर—अयोध्याप्रदेशके फैजाबाद जिलेके अन्तर्गत एक नगर । यह घाघरा नदीके तट पर अवस्थित है ।
रसूलावाद—युक्तप्रदेशके कानपुर जिलान्तर्गत एक तहसील । भू-परिमाण २२६ मील है। यहाकी भूमि बहुत उर्वरी है। रिन्द, छोया, सियारी और पाण्डू जामकी

शाकाभो तथा फाल नीर अनाभूमि मायिक जन्मसे हो
यहाँके छोटीका जन्मानाच दूर होता है।

२ ठठ जिडेके अन्तर्गत एक बड़ा गांव नीर तह
कीसका विचार-सदर। यहाँके महाप्राणीय शासनकर्ता
मोचिन्वराय पण्डित १७५६ स १७६२ के बीच रसुजा
बाद् नगरमें बुरा बना गये हैं। इस बुरामें अभी तह
सोझी कचहरी है।

रसुजाबाद्—अयोध्या प्रदेशके उत्तम जिजास्तर्गत एक
नगर। यह अक्षा० २६ ५०' उ० तथा देशा० ८० ३०
पूर्वके बीच पड़ता। जर्ण नीर जहरतक कामके बिधि
यह स्थान बहुत कुछ प्रसिद्ध है।

रसुजाबाद्—मध्यप्रदेशके बर्धा जिडेकी भाषां तहसांठके
अन्तर्गत एक बड़ा गांव।

रसुजी (अ० खो०) १ एक प्रकारका गहू। २ एक
काजी मिठा। ३ एक प्रकारका जी। (वि०) ४
रसुज समन्धी, रसुजका।

रसेन्द्र (सं० पु०) रसानी धातुरसानी इन्द्रा भ द्वा।
१ पारद्, पारा। २ राजमाय, कोबिया। ३ एक प्रकार
की रसोपय जो जोर, चनियां, पोपक शहब, जिकुडु
भीर रससिन्धूरके योगसे कर्ती है।

(मेषमरणा० दर्शपि०)

रसमृगुडिका (सं० स्त्री०) पद्मप्रायोगिकारोक्त औषध
विशेष। यह दो प्रकारका है—रसेन्द्रगुडिका और
हृदयसंमृगुडिका। रसेन्द्रगुडिकाकी प्रस्तुत प्रणाली—
ईरके चूर्ण भाँडिसे महित २ तोला रसका जयन्ती और
अदरकके रसमें मर्दन कर पिण्डबद्ध बनाये। पीछे उस
मजकुरां भीर काकमावाक रसमें भमग मज्जा मायना
है। पश्चात् मृद्गरात्ररसमें मारित नवनीताख्य गंधक
चूर्ण १ पलका उस पारेके साथ मिला कर कञ्जको
बनाये। अनन्तर २४ पल बकरीके दूधको उस कञ्जकी
के साथ मर्दन कर सिद्ध उद्धरक समानगोली बनाये।
अनुपान बकरीका दूध या मनु भीर अजूसके पत्तीका
रस है। चाया हुआ मूल जब अण्डो तण्ड पत्र ज्ञाप,
तब यह औषध जाना चाहिये। पथ्य दूध और मौसका
शोरवा बताया है। औषध सधन करनेसे क्षय, फस,
रक्त, पित्त, अदधि और अनुपित्त रोग नष्ट होत है।

पृथ्वसेन्द्रगुडिकाकी प्रस्तुत प्रणाली—४ तोला पात
के कर चूकनारीका रस सरसोका चूर्ण, हरिद्रा, इर
का चूर्ण भीर अदरकका रस, इन सब द्रव्योंसे पृथक्
पृथक् मर्दन कर मोटे कण्डुमें छान से। पीछे जयन्ती,
भीर काकमावा प्रत्येक रसमें मायना दे कर घूममें
सुखाये। अनन्तर मृद्गरात्र रसमें शोषित गंधक १ पल
मिर्च, सोपाना, सोनामन्थनी, तुलिया, हरिताळ अदरक
प्रत्येक ४ तोला इह अदरकके रसमें पीस कर २ रसो
की गोली बनाये। अनुपान अदरकका रस है। यह
औषध सधन करनेके बाद दूध और मौसका शोरवा
पीना उचित है। इसके क्षय, फस, खास और पाण्डु
भाँडि रोग अति शीघ्र नष्ट होते हैं।

रसेन्द्रयेमक (स० स्त्री०) जर्ण, सोना।
रसेभर (स० स्त्री०) रसोपयविशेष। प्रस्तुत प्रणाली—
रस ८ तोला, गंधक १८ तोला, तांबा २ तोला, हरिताळ
२ तोला, सोना २ तोला, इन सब द्रव्योंके चिटाके रस
में तीन दिन मायना दे कर भीर मर्दन कर उसमें सोड
हवां साथ विध मिलाये। पीछे फिरसे बकरे मायिके
पिठमें मायना दे कर २ रसोकी गोली बनाये। अनु
पान अदरकका रस, चिटाका रस और जिकुडुका चूर्ण
है। इसमें भी पइछेके बीसा त्वचि भीर अन्न भाँडि
पथ्य २ पथा रोगोका उडे जन्म स्थान कराये।

रसेन्द्र (स० पु०) पौंड़ा, गन्ना।
रसस (वि० पु०) १ रसिकशिरीराम्य, भीरुख्य। २ पारा।
रसेभरदर्शन—दर्शनशास्त्रमेव। यह दर्शनशास्त्र छः प्रकार
दर्शनके अन्तगत नहीं है। माधवाचार्यने सप्रेदर्शन
संप्रदायमें इस दर्शनका रूप्य मर्मार्थ लिखा है। तबनुसार
अति सक्षित भाषणमें उसका विषय यहाँ पर लिखा जाता
है। इस दर्शनका प्रत्यभिज्ञानदर्शनके साथ एक मत
देकनेमें आता है। प्रत्यभिज्ञानदर्शन हैना।

प्रत्यभिज्ञानदर्शनमें पारिका की उल्लेख नहीं है, किन्तु
इस दर्शनमें यह विषय अत्यन्त तरह लिखा है। दोनोंमें
पृथक्ता है, तो बस इतनी ही भीर किसी विषयमें नहीं।
प्रत्यभिज्ञानदर्शनमें मद्भेद परमेभर तथा जोषारमा भीर
परमात्माको एक बनाया है। इस दर्शनमें भी मही मत
समर्थित हुआ है अर्थात् मद्भेद ही परमेभर तथा

जावात्मा परमात्मा है, यह स्वीकार किया है। किन्तु इस दर्शनके अवलंबी प्रत्यभिज्ञादर्शनोक्त एकमात्र प्रत्यभिज्ञा ही परमपद मुक्तिकी साधना है, इसे विश्वास न करके परममुक्तिके प्रापक किसी दूसरे पथका अवलम्बन करते हैं। इस दर्शनमें दिखाया है, कि पहले मुमुक्षु ध्यक्तिको अपना शरीर स्थिर रखना चाहिये। पीछे योगाभ्यास करते करते जब ज्ञानोदय हो जाय, तब उसी समय मुक्ति होती है। अन्यान्य दर्शनशास्त्रोंमें जिस प्रकार जीवकी मुक्ति ही एकमात्र प्रधान लक्ष्य है, इस दर्शनका मत भी वही है। अन्यान्य दर्शनमें यद्यपि मुक्ति साधनाका एक एक पथ दिखलाया गया है तथा उन सब पथोंके अवलम्बनसे भी मुक्ति पानेकी सम्भावना है, तो भी उन सब पथके अवलम्बनमें विशिष्ट मनुष्योंकी प्रवृत्ति उत्पन्न नहीं हो सकती। क्योंकि अन्यान्य दर्शनोक्त पथका अवलम्बन करनेसे भी देहनाशके वाद मुक्ति होती है। अतएव वे दर्शनोक्त मुक्ति पिशाचकी तरह अदृष्टचर है। अदृष्ट-विषयमें कभी भी किसी ध्यक्तिको विश्वास नहीं होता। जिसका जिस विषयमें विश्वास नहीं होता, वह कभी भी उसके लिये कोशिश नहीं करता।

यदि सर्वकल्याणकर सहजसुहृद-स्वरूप देहत्याग नहीं करनेसे मुक्ति न हो, तो ऐसी मुक्तिके लिये कष्ट-दायक योगादि करनेकी जरूरत ही क्या? किन्तु यदि पारदरस द्वारा देहका स्थैर्य सम्पादन करके क्रमशः योगाभ्यासमें आसक्त हो सके, तो परम कारुणिक परमेश्वर परितुष्ट हो कर पारितोषिकस्वरूप सर्वप्रधान मुक्तिपद देते हैं। इसीलिये मुमुक्षु ध्यक्तिका जो पहले देहस्थैर्य सम्पादन करना होता है, इसे और कहनेकी आवश्यकता ही क्या।

देहको स्थिर रखनेमें पारिके सिवा और कोई भी पदार्थ नहीं है। इस पारिके रससे किस प्रकार देहका स्थैर्य सम्पादन करना होता है। अन्यान्य दर्शनमें उसका उल्लेखमात्र भी नहीं है। किन्तु जब इस दर्शनमें उसका सविस्तार उल्लेख है, तब इसे मुमुक्षुके लिये विशेष आवश्यक और श्रेयस्कर कहनेमें कोई अत्युक्ति न होगी।

पारदरस द्वारा देहका स्थैर्य सम्पादन करनेसे मुक्ति

होती है इस कारण यह जीवन्मुक्तिपदवाच्य है। इस पर कोई कोई आपत्ति करते हैं, कि यदि पारदरस द्वारा देहस्थैर्य तथा जीवदवस्थामें ही जीवकी जीवन्मुक्ति होती, तो अवश्य ही किसी न किसी समय कमसे कम एक भी आदमी स्थिरदेह सम्पादन करके जीवन्मुक्त हो सकता था। किन्तु जब ऐसा होते देखते तथा किसी शास्त्रमें भी उसका उल्लेख नहीं पाते, तब पारदरस द्वारा स्थिरदेह तथा जीवदवस्थामें मुक्ति होती है, इसे किस प्रकार विश्वास कर सकते? इस आपत्तिके उत्तरमें यह शास्त्र कहता है, कि जो इस प्रकारकी आपत्ति करते, मालूम होता है, उन्होंने रसेश्वरसिद्धान्त आदि प्राचीन ग्रन्थ नहीं देखे हैं। यदि देखे होते, तो कभी भी ऐसा आपत्ति न कर सकते थे, क्योंकि उन सब ग्रन्थोंमें लिखा है, कि महेश्वर आदि देवगण, काव्य आदि दैत्यगण, वालखिल्य आदि ऋषिगण सोमेश्वर आदि राजगण और गोविन्द भगवत् पादाचार्य, गोविन्द नायक चर्गादि, कपिल, व्यालि, कापालि, कन्दलायन आदि सिद्धगण, पारदरस द्वारा दिव्यदेह धारण कर जीवन्मुक्त हो यथेच्छ विचारण करते थे। इस प्रकार प्रकार जब देखते हैं, कि देहका स्थैर्य सम्पादन करनेसे जीवन्मुक्ति होती तब यह मुमुक्षुके लिये बहुत श्रेयस्कर है, इसमें सन्देह नहीं।

इस दर्शनमें किस प्रकार देहका स्थैर्य सम्पादन करना होता है उसीका विषय विशेष रूपसे आलोचित हुआ है। जीवन्मुक्ति ही इस दर्शनका प्रधान उद्देश्य है, यही स्पष्ट-रूपसे दिखाया गया है। इस पर कोई कोई आपत्ति करते हैं, कि सच्चिदानन्दस्वरूप परमतत्त्वकी स्फूर्ति होनेसे ही तो मुक्ति हो सकती है। इसलिये मुक्तिके लिये इस शास्त्रके अवलम्बन करनेकी आवश्यकता ही क्या? किन्तु उनको यह आपत्ति युक्तिसंगत नहीं है। क्योंकि परमतत्त्वकी स्फूर्ति होनेसे ही मुक्ति तो होती है, पर वह परमतत्त्वकी स्फूर्ति बिना समाधिके सम्पन्न नहीं होती; समाधि भी बहुकाल साध्य है। वह इस देहसे निष्पन्न होना कठिन है, पहला कारण यह कि देह श्वासकासादि नाना रोगोंका आश्रय, विनश्वर तथा समाधिका क्लेश-सहनेमें असक्त है। दूसरा वात्यावस्थामें धीशक्ति उत्पन्न

नहीं हाथों, योगभावस्थामें विषय रसास्वादिमें व्यय हो पार काष्ठके सिधे धनकास्य भी चिन्ता नहीं करते तथा पूजा बस्थामें द्विविध्यात्मिक नहीं रहती। उसके बाद वैदपाठ होता है। अतएव इस बेटसे समाधि विषयान् नहीं हो सकती। इसीलिये पहले पारवत्स द्वारा द्विभवेदके सम्पादन करना होता है। इससे धीरे धीरे योगाम्यासादि द्वारा परमतरुणकी स्फूर्ति हो सकती है। नहीं तो इस अन्धिर देहमें कभी भी परमतरुणकी स्फूर्ति होनेकी सम्भावना नहीं। इस लिये ही इस वर्णनमें देहस्थोपका साधनवय विधाया गया है।

इस पारवत्सके सामान्य धानुकी तरह समझना उचित नहीं। क्योंकि स्वर्ण भगवान् महादेवके भगवतोसे कहा था कि, 'पारवत्स मेरा लक्षण है। यह मेरे प्रत्येक भङ्गसे उत्पन्न हुआ है और यह मेरे ही शरीरका रस है इसीसे रसको रस कहते हैं। यह पारवत्स संसारका समुद्र को घन्ट्यासे पार कर देता है इसीसे इसका पारव नाम पड़ा है। पारव मेरा और अरुण तुम्हारा (भगवतीका) भाज्य है। इन दोनों योगोंका मिश्रण कर सकनेसे मृत्यु और वायुप्रस्थाना एक ही समय शुरू होती है।'

यह पाठ फिर कई प्रकारका है। प्रत्येक पारमें एक एक सप्ताधारण गुण है। सूचित त पारसे व्याधि नष्ट होती है, मृत पाठ जोचित रहनेकी तथा वक्षपाठ द्रव्य मार्गमें गतिरात्मिक प्रदान करता है। जो पाठ निच निच रंगका विचार है तथा जिसमें घनता और तरुणतादि धर्म नहीं रहता, उसको सूचित; जिस पारमें आश्रय, प्रवृत्त, तेजसिता, शुद्धता और वक्षतादि गुण हैं उसे मृत तथा जो पाठ महत्त्व, निर्मल, तेजसो और शुद्ध होता तथा बहुत जल्द पिघल जाता है उस वक्षपाठ कहते हैं। अधिक बया, एकमात्र पारा हो व्यर्थ धर्म काम और मोह को नश्वारामा है तथा सभी विधा और सुखलक्षणताका आधारलक्षण इस शरीरको अजर अमरक जैसा बनाये रहता है। इस छोड़ कर देह की निस्पृहा सम्पादन करनेवाला और और पदार्थ हो नहीं है। इसका वर्णन, स्पर्शन, महोज, स्मरण, पूजन और दामसे अनाहकी सिद्धि होता है।

पूजनी पर केशापादि जो सब गियात्मिक हैं उनका
Vol LIX 67

व्यय करनेसे जो पुण्य होता है, वह एकमात्र पारवत्स ही से मिलता है। काशो भादि लोथोंमें जो सब झिङ्ग हैं उन सबकी पूजा करनेकी अपेक्षा एक पारवत्सनिर्मित शिवलिङ्गपूजा श्रेयस्कर है। क्योंकि उससे सभी विषयोंका भोगसाधन आद्योम्य तथा अमृतपद प्राप्त होता है। जिस किसी प्रकारसे पारवत्सकी निष्ठा सुनने से भी पाप होता है। इस कारण जो पारवत्सकी निष्ठा करते हैं उनका संसर्ग नहीं करना चाहिये।

पारमें ये सब गुण विद्यमान हैं, इस कारण पारवत्स अन्धबन्ध रसोंसे उलभ है। इसीसे इसको रसेन्द्र वा रसेभर तथा रसेभरका गुण निर्दिष्ट होनेके कारण वर्णनको रसेभरवर्णन कहते हैं। (भाष्यान्तर्गत)

रसोद्भा (हि० पु०) रसोद् बनानेवाला भोजन बनाने वाला।

रसोद् (हि० पु०) रसोद् रसो।

रसोद् (हि० पु०) १ पका हुआ चायपदार्थ, बना हुआ भोजन। २ यह स्थान जहाँ भोजन बनता है, पाकघाटा।

रसोद्धाना (हि० पु०) रसोद् रसो।

रसोद्धार (हि० पु०) यह स्थान जहाँ भोजन पकाया जाता है, पाना बनानेकी जगह।

रसोद्धार (हि० पु०) यह जो रसोद् बनानेका काम पर नियुक्त हो, रसोद्धार।

रसोद्धारो (हि० स्त्री०) १ रसोद् करनेका काम, भोजन बनानेका काम। २ रसोद्धारका पद।

रसोद्धारवार (का० पु०) भोजन के जानेवाला, भोजन वाहक।

रसात् (हि० स्त्री०) रसोत् रसो।

रसोत्तन (सं० पु०) रसेपु उत्तमम बड़ा रस उत्तमोत्तम्य। १ सुदृग् मृग। २ भेषु रस। ३ पारवत्स पारा। (झो०) ४ रसाञ्जन, रसीत। ५ पुत धी।

रसोत्पत्ति (सं० पु०) १ शारीरिक रसकी परिपत्ति। २ कामोद्देक, कामकी परिपत्ति। ३ द्रव्यविशेषके योगमें मांसे रसका उद्भव।

रसोद् (सं० झो०) हि गुण, क्षिराणक।

रसोद्भव (सं० झो०) रसात् पारवत्सोद्भववतीति इद्

भू अच् । १ द्विज्जुल, शिगरफ । २ रसाञ्जन, रसौत ।
३ मुक्ता । (त्रि०) ४ रसजात, रससे उन्पन्न ।

रसोद्भूत (सं० क्लो०) रसाञ्जन, रसौत ।

रसोन (सं० पु०) रसेनेकेनानः । (Allium sativum)

स्वनामख्यात कन्दशाक, लहसुन । इसे महाराष्ट्रमें पाण्ड-
राणसुनु, कलिङ्गमें विलिषवेळ्लुलि, तैलगमें तेलवुलि
और तामिलमें वलई पाण्डु कहते हैं । इसकी उत्पत्ति-
का विषय इस प्रकार लिखा है—जब पक्षीन्द्र गरुड देव-
राज इन्द्रसे अमृत चुराये आता था, तब उसमेंसे एक
बुंद जमीन पर गिर पड़ी थी, उसीसे लहसुनकी उत्पत्ति
मानो जाती है । विशेष विवरण लहसुन शब्दमें देखो ।

रसोनक (सं० पु०) रसोन-स्वार्थे कन् । लसुन, लहसुन ।

रसोनपिण्ड (सं० पु०) आमवाताधिकारमें औषधविशेष ।

यह रसोनपिण्ड और महारसोनपिण्डके भेदसे दो
प्रकारका है । रसोनपिण्डकी प्रस्तुत प्रणाली—
लहसुन १२॥० सेर, निस्तुपतिल ॥० सेर, हींग,
त्रिकटु, यवक्षार, साचिक्षार, पञ्चलवण, सोयां,
कुट, पीपलमूल, चितामूल, वनयमानी, यमानी और
धनिया प्रत्येकका चूर्ण १ पल, इनके चूर्णको किसी
घीके वरतनमें रखे । पीछे उसमें तिलतैल १ सेर और
कांजी १ सेर डाल कर १६ दिन धानका ढेरमें रख
छोडे । इसकी मात्रा आध तोला और अनुपान जल
वा मद्य है । इस औषधका सेवन करनेसे आमवात, अप-
स्मार, खांसी और वातव्याधि आदि रोग दूर होते हैं ।

महारसोनपिण्डकी प्रस्तुत-प्रणाली—लहसुन १००
पल, तुपरहित तिल ५० पल, मट्टा १६ सेर, त्रिकटु,
धनिया, चई, चितामूल, गजपीपल, वनयमानी, दार-
चीनी, इलायची, पीपलमूल, प्रत्येक एक एक पल, चीनी
८ पल, मिर्चा १ पल, कुट ४ पल, मंगरेला ४ पल, मधु
४ पल, अदरक ४ पल, घो ८ पल, तिलतैल ८ पल, कांजी
२० पल, सफेद सरसों ४ पल, लाल सरसों ४ पल, हींग
२ तोला, पञ्चलवण प्रत्येक २ तोला, इन्हें एकत्र कर
बड़ी धूपमें सुखा ले । पीछे घीके वरतनमें रख कर धान-
की ढेरमें १२ दिन रख छोडे । सवेरे यथायोग्य मात्रामें
सेवन करना होता है । अनुपान सुरा, सौवीरक और
दूध है । इस औषधके सेवनकालमें दधि और पिष्टक

छोड़ कर और सभी वस्तु खा सकते हैं । एक मास
तक इस औषधका सेवन करनेसे नाना प्रकारके वायुज,
पित्तज और कफज रोग नाश होते हैं । यह आमवात
रोगकी एक अक्षीर दवा है । आमवात, अर्श, वात-
व्याधि आदि रोगोंमें यह बहुत लाभ पहुँचाता है ।

(भैषज्यरत्ना० आमवात०)

रसोनादिकपाय (सं० पु०) कपाय औषधविशेष । प्रस्तुत-
प्रणाली—लहसुन, सांठ और समाल तीनोंका समान
ले कर काढ़ा पान करनेसे आमवात नष्ट होता है । आम-
वाननाशक इस प्रकारका औषध अति दुर्लभ है ।

(भावप्र० आमवात०)

रसोनाष्टक (सं० क्लो०) वातव्याधि रोगाधिकारमें औषध-
विशेष । प्रस्तुत-प्रणाली—कुछ लहसुनका छिलका
और भीतरका अक्षर फेंक दे । पीछे उसकी कड़ी मद्य
दूर करनेके लिये दहीमें रात भर छोड दे । पीछे उसे
अच्छी तरह धो डाले और सुखा कर चूर्ण करे, सौवीरक,
यमानी, भूनी हींग, सैन्धव, त्रिकटु और जीरा इनका लह-
सुनके चूर्णका पांचवा भाग तथा तिलतैल उसका चौथाई
भाग, सभीको एक साथ मिला कर पीसना होगा । यह
औषध २ तोला अथवा रोगके दोष वा बलावलानुसार
स्थिर करके सवेरे सेवन करना होता है । यह औषध
सेवन करनेसे सर्वाङ्गगत और एकाङ्गगत वात, अर्दित,
अपनन्तक, अपस्मार, उन्माद, ऊरुस्तम्भ आदि रोग
अति शीघ्र आरोग्य होते हैं । यह औषध सेवन करके प्रति
दिन शराव, मांस, अम्ल, (अनार और आवला) खाना
उचित है । औषध सेवनकालमें परिश्रम, राँद्रसेवन,
क्रोध, अत्यन्त जलपान, गुडाहार और खीसंसर्ग विशेष
निषिद्ध है । औषध सेवनके बाद भेरेण्डके मूलका क्वाथ
अनुपान करना होता है ।

अतीसार, प्रमेह, पाण्डु, अरुचि, सूच्छा, अर्श, रक्तपित्त,
शोष, यक्ष्मा, वमि इन सब रोगग्रस्त तथा गर्भिणी स्त्री-
को इसका सेवन नहीं कराना चाहिये । पैत्तिकरोगमें
पथ्य भोजनके साथ सेवन कर पीछे विरेचक द्रव्य खावे,
नहीं तो उसे कुष्ठ और पाण्डुरोग हो सकता है ।
बालककी यदि अरुचि देखे, तो उसे स्तनदुग्धके साथ
पान कराना चाहिये । (भावप्रकाश वातव्याधिरोगाधि०)

रसायक (स० ह्यो०) रसवत् पारक इव इषकं । नीलिक, मैला ।

रसोद्वास (स० पु०) १ शारीरिक रसका अन्वेषण । २ भाठ सिद्धियोंमेंसे एक सिद्धि । ३ रासनाका विकाराश । ४ कामोद्दीपन काम उपजना । ५ भाठोद्घातो दृष्टि । रसौन (हि० स्त्री०) रसोत्प्रेषण ।

रसोक्त् (स० ह्यो०) रसपान, अन्नमपहण ।

रसोत् (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी प्रसिद्ध भोग्यिधि । यह वाक्यवृत्तीकी मङ्गु और लकड़ोका पानोमें औटा कर और उसमेंसे निकले हुए रसका गाढ़ा करके तैयार की जाती है । इसके लिये पहले वाक्यवृत्तीका काढ़ा तैयार करते हैं और तब उसमें उसके बराबर दो गी या बचरोका दूध डाल कर दोनोंका पका कर बहुत गाढ़ा अम्लेह तैयार करते हैं । यही अम्लेह अन्न कर बाजारोंमें रसोत्के नामसे बिक्रता है । रसोत् का अपान लिये भूरे रंगको हाती हैं और पानोमें सड़कमें पुल जाता है । इसका अम्ल कड़ुया होता है और इसमें एक विशिष्ट गंध निकलती है, जो मफोमको गन्धसे कुछ मिलती सुखती होती है । इसका अम्लबहार प्रायः आर्शों पर लगाने और पायोंका विकार दूर करनेमें होता है ।

बैद्यकमें यह शरीरपट, गटम, रसायन कड़ुवी, शीतल तोषण, शुक्रजनक, मैलौक लिये अत्यन्त हितकारी तथा कफ, बिय, रक-पिच वमन, हृषिकी, श्वास और मुल रोगको दूर करनेवाली मानी गई है । इसका संस्कृत पर्याय—रसगर्भ, ताक्ष्मरौक, रसोद्भूत, रसाप्रज, कृत्क बाष्पनीपत्र, रसराम, अभिसार, रसनाभि ।

रसोत्ता (हि० पु०) रसोत्प्रेषण ।

रसोत्ती (हि० स्त्री०) भ्रामकी यह बोभाई जिसमें जेत जेत कर वर्षा शैलेस पहले हो बोज डाक दिया जाता है ।

रसोद्वन (स० पु०) मांसक रसमें पके हुए चावल । यह भ्रमादिश्वरमें हितकर माना गया है ।

रसिर (हि० पु०) ऊकक रसमें पके हुए चावल ।

रसोड (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी बड़ी कंदोको छता । यह कीरी और बहदाइक अंगुलीमें बहुत अघिफतासे होती है और दक्षिण भारत, बंगाल तथा बरमानों की पाई जाती है । यह गरमीक दिनोंमें फूलती और अङ्गु

में फूलती है । इसकी पत्तियाँ और कड़ियाँ भोग्यि रूपमें मो काम भाती हैं और उनसे चमड़ा भी सिन्धवाया जाता है । इसकी पत्तियाँ कट्टी होती हैं इसलिये इनको चट्टी मो बनाई जाती है । इसे पेला मो कहते हैं ।

रसोडो (हि० स्त्री०) एक प्रकारका रोग जिसमें भाँके ऊपर मँवोंके पास बड़ी गिखटी निकल जाती है ।

रसोडो—अयोध्याप्रद्वगक बारायको जिजाखर्गल एक नगर । यह नवाबग जैसे बार मील पूर्वमें अवस्थित है । यहाँ प्राचीन मुसलमान कौंसिक बहुतसे निर्द शल हैं ।

रस्ता (हि० पु०) रास्ता बेलो ।

रस्तावगी—उत्तर पश्चिम-मन्वेद्यमें रहनेवाली बनिया जातिकी एक शाखा । इनमें अमेठी इन्प्रति और मोहारिया नामक तीन थोक हैं । इनका कहना है, कि अमेठीमें इनका आदिवास था । कार्यवशता वहाँसे थक कर इन्होंने नाना स्थानोंमें वास किया है । सिपाहो विद्रोहके बाद दिल्लीसे एक थोक मिर्जापुर आया । इस थोकोकी खिया लामोकी बनाई हुई रस्तोई नहीं जाती । इत्येथ काल, महाबोर या पाँच पीरके अवासक लोग परस्परमें आदान प्रदान नहीं करते हैं । बहुतरे रामानन्दी सम्म वायमुक्त हैं । गीङ्गीय प्राणज लोग इनको पात्रकता करते हैं । इनमें बहुविवाह प्रचलित है, किन्तु विधवा विवाह निषिद्ध है । ये न तो मांस खाते और न शराब हो पीते हैं ।

रस्तोमी (हि० पु०) पैरोंकी एक जाति ।

रस्त (सं० ह्यो०) रस (शुष्कपितृधन्या भिन् । उष् १।१२) इति न प्रत्ययः । प्रथ, चीड ।

रस्त (सं० स्त्री०) १ मेडजोक, बरठाव । २ रिवाज, परिपाटी ।

रस्त (सं० ह्यो०) रस्तात् सुकाभाविपरिपाकात् भागतमित्ति रस-यत् । १ रक्त, छद्म । २ शरीरमेंका मांस । (हि०) ३ रसयुक्त ।

रस्ता (सं० स्त्री०) रसाय हिता रस यत् यप् । १ राक्ष । २ पाठा, पाठो ।

रस्ता (हि० पु०) १ बहुत मोटी रस्ता जो कद मोटे तागों

को एकमें बट कर बनाई जाती है। जिनका प्रयः जहाजों आदिके लिये तथा और बड़े कामोंके लिये लोहेके तारोंके भी रस्मे बनने लगे हैं। २ जमीनका एक नाप जो ३५ हाथ लम्बा और ३५ हाथ चौड़ा होता है। इसीको बीघा कहते हैं। ३ घोंघोंके पैरका एक बीघारा।

रस्ती (हि० खी०) १ नदी, सन या इनी प्रकारके नार रोगोंके सूनी या घोंघोंकी एकमें बट कर बनाया हुआ लंबा पाट जिसका व्यवहार चाँदीकी धारों, हूपसे पानों पीचने आदिमें होता है, डारो, गुण। २ एक प्रकारका सत्रो।

रस्मीबाट (हि० पु०) रस्मी बटनेवाला, डोगा बनाने वाला।

रहकटा (हि० पु०) १ एक प्रकारकी दूधकी माया। २ तोप आदिकेकी माया। ३ रहकले पर लड़ी हुई छोटी तोप।

रहचटा (हि० पु०) प्राणिकी चाह, मनोरथ निश्चिती बन लाया।

रहट्ट (हि० पु०) कूपसे पानी निकालनेका एक प्रकारका यन्त्र। इसमें हूपसे ऊपर एक डौना रहता है जिसमें मोथाबोच पहिपके आधारका एक गोला चरवा लगा होता है जो कूप के टीक बीचमें रहता है। इस चरमे पर प्रडों आदिकों एक बहुत लम्बी माला, जिसे 'माउ' कहते हैं, टंगी रहती है। यह माला नीचे कूपके पानी तक लटकती है और इसमें बहुत सी हाँडिया या बाल्टिया बंधी रहती है। जब पानीके चक्र से चरवा घूमना है तब जलसे बरी हुई हाँडिया या बाल्टिया ऊपर जा कर उलटती हैं जिससे उनका पानी एक मालोंक द्वारा नीचे में चला जाता है और पाली हाँडिया या बाल्टिया नीचे कूपके पानीमें चली जाती और फिर नर नर ऊपर आती हैं। इस प्रकार बोडे परिश्रमसे अधिक पानी निकलता है। पश्चिममें इसकी बहुत चाल है।

रहटा (हि० खी०) मृत जाननेका चर्चा।

रहटी (हि० खी०) १ काम ओटनेकी चरवा। २ रुपया उधार देनेका एक ढंग जिसमें प्रतिमास कुछ रुपया समूल किया जाता है। इसे संयुक्त प्रालमें हुडी कहते हैं।

रहचटा (हि० पु०) १ लडा देवी।

रहचट्ट (हि० खी०) निर्दिष्टीका पाटना, महचहादट।

रहटा (हि० पु०) १ लडा देवी, गीतके सूनी घुंटा, बालिया।

रहण (हि० खी०) १ निर्धनमे केंटना। २ महकूपण, माप छोटना। ३ मन्वस्, नियोजन, मिली हुई पम्पुषीकी प्रयोग करना।

रहन (हि० खी०) १ रहनेका दिया या भाग। २ रहनेका दम, व्यवहार।

रहनमदन (हि० खी०) जीवत निर्वाहका एक ढंग, गुडर-वमरवा नवीका।

रहना (हि० खी०) १ स्थित होना, अवस्थान करना, टहरना। २ स्थान न छोड़ना, प्रस्थान न करना, रहना। ३ विना किसी परिश्रम या मदिरा एक वा स्थितिमें अवस्थान करना। ४ निवास करना, बसना। ५ हिमा राममें टहरना, हाँड काय करना यह करना। ६ विद्यमान होना, उपस्थित होना। ७ ८ ३ दिनोंके लिये उड़ना या टिकना, अवस्थावाकामे निवास करना। ८ चलना चंड करना, रहना। ९ चुपचाप समय बिताना, हुटन करना। १० नीचरा करना, साम काउ करना। ११ समागत करना, मेलन करना। १२ बनना, फूट जाना। १३ स्थित होना, स्थापित होना। १४ जीवित रहना, जीना।

अवस्थान मुख्यक इस क्रियाका प्रयोग बहुत व्यापक है। प्रधान क्रियाके परिष्कार वह और क्रियाओंके साथ संयुक्त हो कर भी जानी है। जैसे — आ रहा है; जा रहने है।

(पु०) १५ शेर, पाप आदिके रहनेका स्थान। बनका वह विभाग जहाँ शेर, बाले आदिके रहनेकी मादें हों। इसे 'रमना' भा कहते हैं।

रहनि (हि० खी०) १ आचरण, चाल ढाल। २ प्रेम, प्रीति।

रहनी (हि० खी०) रहने देना।

रहम (हि० पु०) १ करुणा, दया। २ अनुकम्पा, अनुग्रह। ३ गर्माजय।

रहमत्तुहा—मुसलमान साधु मालिक मोमरकी जीवनोंके

लेपक । बहरास्य नगरमें उक्त साधुका समाधिमन्दिर
भीभूत है ।

रहस्यतन्त्र—दक्षिणात्यक महिसुरराज्यके कोका त्रिसाम्भ-
गत एक बड़ा शैल । यह मन्त्रा० १३ २१ तथा वेगा०
७८ ४० पू०के बीच पड़ता है । समुद्रतीरसे यह ४२२७
फुट ऊँचा है । स्थानाम किंबदन्ती है कि पञ्चपावडयमं
से एक इस पयतक लोके स्थापित है । अगरेजराज्यके
मन्त्रिपुरां वक्ष्य करनके बाबू टीपू सुनतामने इस शैलमें
गुर्ग बनानेका संकल्प किया था, किन्तु उगकी भागा कायम
परिप्लव न हुए ।

रहमत (अ० स्त्री०) कृपा, मेहरबानी ।

रहमान (म० वि०) १ बड़ा व्याप्तु । (पु०) २ परमात्माका
एक भाग ।

रहक हिं० स्त्री०) छोटी देहाती गाड़ी जिसमें किसान
जोग घांस या काबू होता है ।

रहकड़भाव (सं० पु०) १ संसारके भगड़ोंका छोड़ कर
पञ्चम स्थानमें निवास करना । २ वह जो इस प्रकार
संसारको छोड़ कर पञ्चममें निवास करता है ।

रहैय (हिं० पु०) मरहत्के सुले डठल, कड़िया ।

रहम (अ० स्त्री०) एक विशेष प्रकारकी छोटी बीचा
जिस पर पढ़नके समय पुस्तक रखी जाती है । हममें हा
छोटी छोटी पटरियां बोकमें एक दूसरोका काटो धुरं
नगी रहती है मार इष्टमनुसार मोली या बंद की जा
सकती है । इनका आकार X हो जाता है ।

रहपाज (फा० स्त्री०) घोड़े की एक पास ।

रहस् (सं० स्त्री०) रम तस्मिन् रह (रह इप्) उप
११११५) इति भसुन इकारश्चभ्रताङ्गा । १ निज्जैन,
पञ्चम स्थान । पर्याय—विधिक, विज्ज, छप, नि
गञ्जाक, उपांगु । २ गुप्त भेद छिपी बात । ३ मानस,
सुख । ४ योग, तन्त्र या और किसी मन्त्रशास्त्रकी गुप्त
बात, गुह्य तत्त्व ।

रहस (सं० पु०) १ समुद्र । २ लार्ग ।

रहसमन्त्र (सं० पु०) एक मसिब वेवाहरन ।

रहसना (हिं० स्त्री०) भानमिन्त होना, प्रसन्न होना ।

रहसबधाया (हिं० पु०) विवाहकी एक राति जिसमें
नवविवाहिता दम्पकी पर अपने साथ जनवासमें जाता

है । वहाँ सब गुरुजन उस समय बपूका मुख देखते हैं
और उम्मे पक्ष, भूयभादि उपहार बते हैं ।

रहसू (सं० स्त्री०) अग्निचारिणी स्त्री बक्ष्यजन भीरत ।
“भारे मत्कसैरहसूरियागा” (अक्ष २१६१) ‘रहसूरिय
रहस्यम्यैरहमने प्रक्ये सुपत इति रहसूर्यमिचारिणी, सा
पथा गम पायित्वा कुरदेरो, परित्पञ्जति’ (ताम्य)

रहस्वर (सं० स्त्री०) रहस्य कार्यकार, इ सरी ठगू करने-
वाला ।

रहस्य (सं० स्त्री०) रहसि भवं रहसू विगादित्वाप् पत् ।
१ योगयोग, सबकी न बतानेयोग्य । २ निज्जैनमय, जो
पञ्चानामे हुआ हो । (स्त्री०) ३ गुरुतत्त्व यह जिसका
तत्त्व सद्व्रममें या सबको समझमें न भा सक । रहस्य
तीन प्रकारका है । यथा—धमरहस्य, अथरहस्य और
कामरहस्य । ४ गुप्तभेद, यह बात जो सबको पतलाइ न
भा सकता हो । ५ मम या चेट्की बात, मोतटकी छिपी
हुइ बात । ६ पवित्रासकीतुक्त, ईसी ठगू, मजाक ।

रहस्या (स० स्त्री०) रहस्य टाप । १ महाभारतके भन्तु
मार एक प्रधान नरोका नाम । २ रास्ता । ३ पाठ,
पाढ़ी ।

रहस्यु (म० पु०) पञ्चविंग्रामाश्लोक एक व्यक्ति ।
(व्यक्ति० १५११७)

रहस्यध (स० स्त्री०) १ निज्जैनमें अवस्थित । २ एकक,
विना सायोक्त ।

रहाइ (हिं० स्त्री०) १ रहनेका क्रिया या भाष । २ कल,
धेन ।

रहाऊ (हिं० स्त्री०) गाठमेंका पहसा पर, देह । यह
उभय अधिपुत्र पञ्चममें बाला जाता है ।

रहाट (स० पु०) १ रह जो किसी प्रकारका सलाह
रहा है । २ परामशदाता या माहा । ३ प्रेतारमा ।
४ प्रत्यय, भरना ।

रहा महा (हिं० वि०) बसा गुबरा, बधा बधाया ।

रहित (म० स्त्री०) रह क । यिञ्जित विना बगैर ।

रहिया (हिं० पु०) पना ।

रहोभूत (स० स्त्री०) १ निज्जैनमें अवस्थित । २ कार्यादिस
बका हुआ ममग ।

रहीम (अ० वि०) १ रहम करनेवाला, कृपालु । (पु०)
२ ईश्वरका एक नाम ।

रहीम—इस नामके भापाके दो कवि । ये दोनों बड़े निपुण कवि थे । २ रहीमके दोहे प्रसिद्ध हैं । परन्तु इसका पता लगाना अत्यन्त कठिन है, कि कौन कविता किस रहीमकी बनाई हुई है ।

रहीम उद्दोच वख्त (मीर्जा)—दिल्लीश्वर शाह आलमके पौत्र । ये भारनेश्वरी विकीरियाके मध्यम पुत्र ड्यूक आव आडिनवराकी सम्बद्धना करनेके लिये १८७० ई०में बनारससे आगरा गये थे ।

रहीमत्पुर—बम्बईप्रदेशके सतारा जिलान्तर्गत एक नगर । यह अक्षा० १७° ३५' ३५" उ० तथा देशा० ७४° १४' ४४" पू० तक विस्तृत है । यहा म्युनिस्-पलिटी है । इसलिये नगरकी पूर्णसमृद्धिका हास नहीं हुआ है, प्राचीन कोर्चियोंमेंसे बीजापुर सेनापति रनदुल्ला जाँकी मसजिद आदि ही देखनेके योग्य है । रनदुल्ला जाँ बीजापुरके सप्तम राजा महमूदके राज्यकालमें (१६२६-१६५६ ई०में) बड़े प्रसिद्ध हो उठे थे । मसजिदके दक्षिण पूर्वमें हाथीकी मूर्त्तिका फुहारा, ५० फुट ऊँचा एक गुम्बज तथा फुहारेके जलको दवा देनेके लिये पश्चिममें कुछ ढालू मैदानका निर्माण-कौशल आदि पर लक्ष्य करनेसे चमत्कृत होना पडता है । यहा आज भी वाणिज्यका पूरा प्रभाव है ।

रहीमनगर—अयोध्याप्रदेशके लखनऊ जिलान्तर्गत एक नगर । यह नदीके दाहिने किनारे पर अवस्थित है । यहाँ पांडे ब्राह्मण ही अधिक वास करते हैं । बलूचगढ़ नामक गावके रहनेवाले पठान लोग कहने हैं, कि यह स्थान दिल्लीश्वरने उनके पूर्वपुरुषोंको जागीरस्वरूपमें दिया था । पीछे नवाब सैयद अलीने उनसे बलपूर्वक यह सम्पत्ति छीन ली और ब्राह्मणोंको दान कर दी ।

रहीम वेग—बखजां सुयारा नामक काव्यके प्रणेता ।

रहीया—इस्लामधर्मके पृष्ठपोषक एक मुसलमान अध्यापक । बदर युद्धमें स्वयं उपस्थित न रहने पर भी ये एक धर्मप्रतिष्ठा कह कर गण्य थे । स्वयं महम्मद इन्हें सर्गीय दूत जत्रिल नामसे सम्बोधन करते थे ।

(सं० पु०) १ ऋग्वेदके अनुसार आङ्गिरस

गोत्रीय एक वंश या गण । रहगण ऋषि ऋग्वेदके ६वें मण्डलके ३७ और ३८ सूक्तके मन्त्रद्रष्टा थे, गीतम ऋषिने इसी वंशमें जन्मग्रहण किया था । २ इस वंशका मनुष्य । भागवतमें लिखा है, कि सिन्धुसौवीरके देगाधिपति राजा रहगण तत्त्वज्ञिशासु हो कर शशुमती नदीके किनारे कपिलाश्रममें गये थे । (भाग० ५।१०।१)

रहूडी—बम्बईप्रदेशके अहमदाबाद जिलान्तर्गत एक उपविभाग । भू-परिमाण ४६७ वर्गमील है । मूला और प्रवरा नामक गोदावरीकी दो शाखा तथा ओम्भाकी खाल और लाख खाल यहा बहती हैं इससे यहाकी चेतोवारीमें बड़ी सुविधा हुई है । इसकी दक्षिणी सीमा पर बड़ी शैलमाला है जिसका सबसे ऊँचा शृंग गोरक्षनाथ समुद्रपीठसे २६८२ फुट ऊँचा है । धोन्ड और मान गढ़ रेलपथ इन उपविभागके बीच हो कर चला गया है जिसने यहाके वाणिज्यकी बड़ी सुविधा हुई है ।

२ उक्त जिलेका एक नगर और उपविभागका विचार-सदर । यह अक्षा० १६° ३०' उ० तथा देशा० ७४° ४२' पू०के मध्य मूला नदीके उत्तरी किनारे पर अवस्थित है । यह नगर बडा ही समृद्धिशाली है ।

रहोगत (सं० लि०) निर्जनमें स्थित, वह-स्थित ।

राऊड (हि० खी०) एक प्रकारकी भूमि जिसमें बहुत कम अन्न पैदा होता है । ऐसी भूमि बहुधा कंकरीली और ऊँची नीची हुआ करती है ।

राग (हि० पु०) रागा देखो ।

रागड़ी (हि० पु०) एक प्रकारका चावल जो पंजाबमें पैदा होता है

रागा हि० पु०) एक प्रसिद्ध धातु जो बहुत नरम और रगमें सफेद होती है । विशेष विवरण रङ्ग शब्दमें देखो ।

राची—विहार और उड़ीसाके छोटानागपुर विभागके अन्तर्गत एक जिला । यह अक्षा० २२° २०' से २३° ४३' तथा देशा० ८४° ०' से ८५° ५४' पू०के मध्य अवस्थित है । इसके उत्तरमें पलामू और हजारीबाग, पूर्वमें मानभूम, दक्षिणमें सिंहभूम और गाङ्गपुर राज्य तथा पश्चिममें यशपुर और सुरगुजा राज्य हैं । भूपरिमाण ७१२८ वर्गमील है । इसके उत्तर-पश्चिममें बहुत-से छोटे छोटे पहाड़ हैं । इनमेंसे बड़े पहाड़का नाम सार

है। यह समुद्रतटसे ३६१५ फुट ऊंचा है। जिलेकी प्रधान नदी सुवर्णरेखा है जो रांची शहरसे १२ मील पश्चिम हो कर बह गई है। यहाँ मार्च मासमें ७६.५ मिमीमें ८५ और मईमें ८८ इंचगरो गरमी पड़ती है।

ओरिसागणपुरका इतिहास चार प्रसिद्ध युगोंमें विभक्त है। पहला युग मुल्का लोगोंका है। उस समय इसका नाम 'कारकट्ट' था। दूसरा युग नागवंशी युग कहलाता है। इस वंशके प्रथम राजाका नाम था फलि मुंडर था। इनकी उत्पत्ति ब्राह्मणकन्या पारती और सर्प राज पुत्रकरोकसे हुई थी। इस वंशमें १५८५ ई० तक राज्य किया था। तीसरा युग मुसलमानों का युग है। सत्राह अरब बरने एक बड़ सीमा भेज कर कोकराठके राजाको परास्त किया। आठे समय वे लोग शकुनवासि प्रभुर मणि मुका उठा के धवे थे। पीछे जहाँगीरने विहारके शासक एलाहिम चौक अधीन लेना भेजी। इन्होंने नागवंशके ४५वें राजा नुजानशाहको कैद कर दिल्ली और दिल्लीसे काश्मिर भेज दिया। यहाँ से १२ वर्ष तक कैदमें रहे गये थे। इसके बाद मराठोंने यहाँ लूटपाट मचाया और राजाधोस कर घसुका दिया था। अन्तमें १४ इन्द्रिया कम्पनीको अब बंगालकी सीमाया मिली, तब यह स्थान १७५५ ई०में उन्हीके अधिकारमुक्त हुआ। यूनिवर्सल टर्म्सके शासनकाकर्म यह जिम्मा दिन पर दिन बढ़ति कर रहा है।

इस जिलेमें रांची, कोइरठगा मुन्दू बीर पारुकांड नामक ४ शहर मीर ३१.७३ ग्राम छगठ हैं। जनसंख्या ११ लाखसे ऊपर है। जिल्लूकी संख्या सैकड़ों पीछे ४०, जंगलीकी ४६, मुसलमानकी ३५ और ईसाईकी संख्या सैकड़ों पीछे १०३ है। धान यहाँकी प्रधान उपज है। धानके असावा मजुभा, उड़द, और गुभार मी उपजता है। काहका यहाँ जाटों काबार होता है। इसक सिधे जिलेमें १२ कारखाने हैं। प्रधान कारखाना रांची शहरमें है। काहके कोड़ पखाज हल और कुसुम पर पाके जाठ हैं। लोहउद्योग ताम और पीतलका कारखाना है। सूती कपड़ा जिले भरमें तैयार होता है। यहाँसे दूसरे दूसरे दिशांमें धान, तम-हन, खमड़े काह और चायकी एतनी तथा दूसरे

देशोंसे गेहूँ, तमाकू, गुड़, चोना, कम्पन और मिट्टी तेल को आयातकी होती है।

शासनकार्यकी सुविधाके लिये १६०२ ई०में यह जिल्ला जो उपविभागोंमें बांटा गया, रांची और गुमला। १८०५ ई०में खुम्बो नामक तीसरा उपविभाग स गठित हुआ। रांचीमें जिवरो कमिश्नर, उनक अधीन एक उपाइक्टर और पांच जिवरोमजिस्ट्रेट कमिश्नर रहते हैं। गुमला उपविभाग एक उपाइक्टर और खुम्बो एक डिप्टीमजिस्ट्रेट कमिश्नरकी देखरेखमें है। यहाँ फौजदारी मीर बीरानी दोना अहालत है। जिवरो कमिश्नरकी कुल मुकदमा फेजला करनका अधिकार है। वे केवल मुदतु दण्ड नहीं दे सकते।

विद्याशिक्षण यह जिल्ला बहुत पीछे पड़ा हुआ है। १८०१ ई०में तो सिर्फ २७ मनुष्य एके सिधे मिलते थे, पर अभी कुछ उन्नति देनी आयी है। किलहाल प्राइ मरी, सेकण्डरी और स्पेशल स्कूल लगा कर हजारों ऊपर होंगे, कम नहीं। इनमेंसे जिन्ना स्कूल, आर्गन हनु मेडिकल सुपेरन मिशन (German By Angellistle Lutheran Mission) हाई स्कूल, तथा धेनीका ट्रेनिंग स्कूल और गवर्मेन्ट शिल्प स्कूल है। रांची शहरमें अभी एक सिधे भी एक वास्त स्कूल है। स्कूलके अलावा १० अस्पताल भी है।

रांची शहरसे ४० मील दक्षिण पश्चिम कोइरठा नामक एक नगर है। यहाँ १८वीं सदीमें महाराज राय महादेव और उनक गाई और गाण्डगाण सहीवर्षके बहुतत सुन्दर महल बनवाये थे जिन्का पण्डित भाग भी देवनेमें आता है। इसक सिधा यहाँ महादेव और गणोणक छा मीर मी है। रांची शहरस पूरब यूनिवा नामका मंदिर देवने जायक है।

२ उक्त जिलेका एक बड़ा उपविभाग। यह अक्षा० २२ ३१' स २३ ४३' उ० तथा देशा० ८४ ०' से ८५ ८४' पू०क मध्य अवस्थित है। पहलें भूपरिमाण ३,०७७ वर्गमील और जनसंख्या ८ लाखक कराय थी। १९०५ ई०में तुल्ला उपविभागका हा जामल इलाका एकवा २,३३५ वर्गमील कर दिया गया जिसस जनसंख्या भी ४४४५५ कर ५ लाखक करीब हो ग। इत उपविभागमें रांची

और लोहरडंगा नामक दो शहर और १४१७ ग्राम लगते हैं।

३ उक्त जिलेका प्रधान नगर तथा विदार और उडीसाकी राजधानी। यह अक्षा० २३' २३' ३० तथा देशा० ८५' २०' पू०के मध्य अवस्थित है। समुद्रपृष्ठसे इसकी ऊँचाई २१०० फीट है। जनसंख्या २६ हजारके लगभग है। यहाँ फौज भी रहती है। शहरमें डिप्टिकृ जेल है जिसमें २१७ कैदी रखे जाते हैं। इसके अलावा जिला स्कूल, मिशन स्कूल, हिन्दी शिक्षकका ट्रेनिङ्ग स्कूल, शिल्प स्कूल और एक अन्ध-स्कूल भी है।

राटा (हि० स्त्री०) चारोंका साकेतिक माया।

राड (हिं० वि० स्त्री०) १ जिसका पति मर गया हो और पुनर्विवाह न हुआ हो, विधवा। २ रंडी, बेइया।

राई (हिं० पु०) एक प्रकारका चावल जो बंगालमें अधिकतासे होता है।

रांता—रांगेका बना हुआ पत्र (leaf-tin)। त्रुपु और रङ्ग शब्दमें मूलधातुका संक्षिप्त विवरण दिया गया है। टिन कहनेसे अक्सर रांगेसे आवृत लोहेकी चादरका ही बोध होता है। वस्तुतः तापके वरतनमें कलाई करनेके लिये इसका अधिक व्यवहार होता है। देवप्रतिमाके अलङ्कारादि बनानेमें रातेका ही विशेष प्रचार है।

Tin-Stone और Stream tin नामक दो प्रकारका यौगिक राग जमीनके अन्दर पाया जाता है। पहले खनिज टिनके यौगिकको चूर्ण कर जलके द्वारा सिलेफेट बाहर करते हैं। इस अवशिष्ट टिनको वायुमें दग्ध करनेसे वह आर्सेनिक और गंधकविहीन हो जाता है। इस अवस्थामें लोहा अफसाइड और सलफाइड सलफेटरूपमें परिणत होता है। यदि सभी सलफाइड सालफेट आव कपारमें परिवर्तित न हो, तो उक्त दग्धावशिष्ट पदार्थके साथ जल मिला कर कुछ दिन वायुमें रखना होगा। सालफेट आव कपारको जलमें गला कर फेरिक अफसाइड जलके द्वारा धो डाले। इस प्रकार अन्यान्य बाह्य पदार्थ पृथक् होनेसे अफसाइड आव टिन अवशिष्ट रहेगा। इसके साथ कुछ कोयलेका चूर्ण मिला कर आव देनेसे टिन धातु मुकाबस्थामें पाई जाती है।

राग देखनेमें सफेद होता है। पीट कर उसे इच्छा-

नुसार घटा बढ़ा सकते हैं। १००° से० उष्णसे इसका तार प्रस्तुत हो सकता है। २००° से० उष्ण लगनेसे मड मड शब्द करता है।

वायु लगनेसे इसमें कोई परिवर्तन नहीं होता। जलमिश्रित नाइट्रिक एसिड द्वारा मेटाएनिक एसिड और एमोनिया उत्पन्न होती है। नाइट्रिक एसिडके साथ अधिक जल मिला कर रागा ढालनेसे Stannous और Stannic nitrate उत्पन्न होता है। हाइड्रोक्लोरिक एसिडके साथ Stannous chloride बनता है तथा उदजनवाष्प निकलती है।

रासायनिक प्रयोगसे रांगेसे Stannous hydrate, S oxide, S. iodide, S Sulphide और S Sulphate तथा Stannic hydrate, Stannic oxide, metastannic acid, Stannic acid, Stannic Chloride, Stannic Iodide, Stannic sulphide वा Mosaic gold और Stannic sulphate आदि गुणप्रधान औषध बनते हैं।

औषधादिके सिवा रांगेसे तापके वरतनमें कलाई होती तथा वनावटी जेवर, दुर्गादि देवप्रतिमाके साज तथा चांदीकी तरह सफेद खिलौने बनाये जाते हैं। इसे पीट कर पतला पत्तर बनाया जाता है। रांगेका पत्तर चांदीका काम करता है। Sal ammoniac के साथ रांगेका चूर्ण उच्चत पात्रके ऊपर रख कर सूती कपड़े वा रुईसे घिसने पर दाग पड़ जाता है। पीछे बालू अथवा राखसे घिस कर पालिश की जाती है। इसीको कलाई करना कहते हैं।

सुनहली और रूपहली दो प्रकारके रांगेका पत्तर बाजारमें विकता है। पत्तर कई कामोंमें आता है।

रांध (हिं० पु०) १ निकट, पास। २ पड़ोस, पार्श्व।

रांधना (हिं० क्रि०) भोजन आदि पकाना, पाक करना।

रांधी (हिं० स्त्री०) पतलो खुरपीके आकारका मोचियोंका एक औजार जिससे वे चमड़ा तराशते, काटते और साफ करते हैं।

राँभना (हिं० क्रि०) गायका बोलना या चिल्लाना।

रा (सं० स्त्री०) रा सम्पदादित्वात्, क्विप् । १ विभ्रम।

२ शान । ३ काञ्चन । ४ भो । (पु०) रा वामे (उपडे) ।
उष् २५३ इति ई । ५ धन । ६ शम्भ ।

राह (हि० पु०) छोटा राजा, राव ।

राहता (हि० पु०) राहता देवो ।

राहण्ड (अ० स्त्री०) घोड़ेवार धनुक, बड़ो बन्दूक ।

राई (हि० स्त्री०) १ एक प्रकारकी बहुत छोटी सरसों ।

२ बहुत थोड़ी मात्रा या परिमाण ।

राउ ड रेवुव कान्करेंस (अ० स्त्री०) वह समा या सम्मेलन जिसमें एक गोष्ठ मेजबाने धारो धोर राउपक्ष तथा देशके मित्र मित्र मतीं धीर दमोके लोग बिना किसी मेदमाबके बैठ कर किसी महत्वक विषय पर विचार करें ।

राहस (हि० पु०) राहस ।

राहसगद्दी (हि० पु०) कर्बब नामको पेड़ और उसको जड़ । यह पत्राह, सिन्ध, गुजरात और सिहखमें पाइ जाती है । इसको जड़ भोवधिके काममें मातो है । इसके खानेसे रक्त और के होतो है । यमीके रोगीको इसका रस पिन्नाया जाता है और गठिवाके रोगीको गांठ पर इस का लेप चढ़ाया जाता है ।

राहसताल (हि० पु०) तिथतमें केसासके उत्तर धोरकी एक भोमका नाम । इसे रायणका हृद् धीर मान लखाई मो कहते हैं ।

राहसपत्ता (हि० पु०) जंगली कुंवार जिस काएउठ धीर बहुर मा कहते हैं ।

राहसिमी (हि० स्त्री०) राहसो, निशाचरो ।

राहा (सं० स्त्री०) रा-दाने (इन्द्रावाएभिर्गन्ध्या कः । उष् ३१०) इति क. बहुलवचनादेव न हलाः । १ नदी विशेष । यह शालजोशोपके धन्तर्गत है । (भावस ५१२०१०) २ पुरुजकीका रोग । ३ नक्षत्रतरजा र्जो, यह स्त्री जिसको पहल पहल रजाईरन हुआ हो । रायते शीतले देवन्तो द्विपदस्यां । ४ नम्रुंभु निधि, पूर्णिमा । ५ पूर्णिमाको रात । ६ चन्द्रमा । ७ महामारकके अनुसार एक राहसोका नाम । यह अर धीर धूर्पंजलाको माता था । (भा० ३१२०११८ म०) ८ भङ्गुरा और स्मृतिको कन्या । ९ भङ्गुरा और भ्रजाकी कन्या ।

१० चान्की पत्नी और प्रातरकी माता । ११ सुमाखीकी एक कन्याका नाम ।

राकावम्भ (सं० पु०) राकापाङ्कवम्भ । पूर्णिमाका चन्द्रमा ।

राकानिशा (सं० स्त्री०) पूर्णिमाको रात ।

राकायति (सं० पु०) चन्द्रमा ।

राकारयण (सं० पु०) पूर्ण चन्द्रमा ।

राकाविमाचरो (सं० स्त्री०) राकारज्जो, पूर्णिमाको रात ।

राकानशाङ्क (सं० पु०) पूर्णिमाका चन्द्रमा, राकाशशी ।

राकिणी (स० स्त्री०) देवीकी शक्तिविशेष, योगिनीमेद ।

राकिण्य, हाकिना, काकिनी आदि द्वा भगवतोकी शक्तियां हैं । ये जीसत योगिनीक धन्तगत हैं । दुर्गा पूजाक समय 'रां राकिणांभो नमो' इस मन्त्रसे राकिणियोंकी पूजा करतो होती है ।

राकेश्वर बन्धु (सं० पु०) पूर्ण चन्द्रमा ।

राकेश (सं० पु०) राकायाः इशः । १ पूर्ण चन्द्रमा । (भा० १०२५१२१) २ शिवमूर्तिमेद ।

राक्य (सं० लि०) राका अभिमताऽस्य (शक्तिवदित्यो रूपः । वा १३५२) इति ऋ । राका निय पूर्णिमा जिस का इच्छा हो ।

राहस (सं० पु०) रक्षयस्मात् रासः राह एव राहसः । निरुचर, दैत्य, असुर । पर्याय—कौजय, कन्याह, कन्यात्, अक्षय, भाजर, राबिअर, राबिचर, कम्भूर, निरुपारमत्र यातुपान, पुण्यजन मैर्द्धत, यातु, राहस, सन्ध्यावल, क्षपाट, रजभोचर, कोकापस, वृवहस नकअर, पला शिम्, पलाज, भूल, भोकाभर, कदमाप, कद्यू भगिर, कोमाभपस, नराधिपत्य । (अयस्क)

राहसमेंकी उत्पत्तिके विषयमें रामायणम इस प्रकार लिखा है,—प्राचीनकालमें पद्मयोगिने लक्ष्मण प्राजियोंकी रक्षाक लिये कुछ जोगोंका सृष्टि की । ये सब मूख प्यास से व्याकुल हो प्रजापतिक पास गये धीर उनल बोडे, 'प्रमो ! हम लोगोका कर्त्तव्य क्या होगा, स्थिर कर शोधिये ।' तदनुसार प्रजापतिन उन्हे मनुष्योंकी रक्षा करने का हुकुम दिया । उनमस कुछमे धुमुद्विस्तसत्य 'राहाम' तथा इउने भधुमुद्विस्तसत्य 'पहाम' देसा कहा था, इस

लिये प्रजापतिने उससे कहा, कि 'रक्षाम' कहनेवाले राक्षस और 'यक्षाम' कहनेवाले यक्ष होंगे।

इस राक्षसकुलमें हेति और प्रहेति नामक दो भाई उत्पन्न हुए। हेतिने कालके पास जा कर उसकी बहनसे विवाह किया। उस स्त्रीसे हेतिके विद्युत्केश नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। पीछे हेतिने सध्यानाम्नी राक्षसीके सालकटङ्कटा नामक कन्याके साथ अपने पुत्रका विवाह किया। यथासमय सालकटङ्कटाके गर्भ रहा, पर वह गर्भ गिरा कर स्वामीके साथ फिरसे विहार करने लगी।

इधर हरपार्वतीने आकाशमें परिभ्रमण करते समय पृथ्वी पर जातबालकके रोनेकी आवाज सुनी। रुद्रने पार्वतीके अनुरोधसे उस राक्षस संतानको अमरत्व प्रदान किया तथा उसकी उमर माताके बराबर बना दी। उसपुत्रका नाम सुकेश रखा गया। पार्वतीने भी गन्धर्वके वरदानकालमें कहा था, कि 'मेरे वरमें निशाचरीगण सद्योगर्भ त्याग करेगा, सद्य ही पुत्र प्रसव करेगा और सद्य ही उस संतानकी उमर माताके समान होगी।'

ग्रामणी नामक एक गन्धर्वने सुकेशको बर पाया देख कर उसके साथ अपनी कन्या देववतीको ग्याह दिया। उनसे माल्यवान्, सुमाली और माली नामक तीन पराक्रमी पुत्र उत्पन्न हुए। ये तीनों भाई कठोर तपस्या द्वारा ब्रह्माके वरसे अजेय हो गये थे। उनकी प्रार्थनासे विश्वकर्माने दक्षिण समुद्रके किनारे त्रिकटु और सुवेल गिरिके मध्य रमणीय लङ्कापुरी बना दी थी। तीनों भाई एक साथ उस स्वर्ण लङ्कापुरीमें रहने लगे।

उसी समय नर्मदा नामकी एक गन्धर्वीने अपनी सुन्दरी, केतुमती और वसुधाका विवाह ज्येष्ठादिकमसे माल्यवान्, सुमाली और मालीके साथ कर दिया। सुन्दरीके गर्भसे वज्रमुष्टि, विरुपाक्ष, दुर्मुख, सुसप्त, यज्ञ-क्षोप, मत्त और उन्मत्त नामक अग्निसूक्सात पुत्र तथा अनला नामक एक कन्या; सुमालीकी पत्नी केतुमतीके गर्भसे प्रहस्त, फालिकामुख, दण्ड, अकम्पन, धूम्राक्ष, विकट, सुपाश्र्व, प्रवस, भासकर्ण और संह्राद नामक दश राक्षस तथा राफा, कुम्भीनस्ती, पुण्डोत्कटा और कैकसी नामक चार कन्या एवं मालीके अनल, अनिल, हर और

सम्पत्ति नामक चार पुत्र उत्पन्न हुए। मालीके चारों पुत्र विभीषणके अमात्य थे।

इस प्रकार बड़े प रवारसे परिवृत हो माल्यवानादि सुकेशवंशधरगण सुरपुर जा कर अजेय सुरगणको विध्वस्त और स्वर्गच्युत करने लगे। इस पर देवताओं और तपस्वियोंने महादेवकी प्रार्थना ली। महादेवने विष्णुके ऊपर सुकेशका वंशध्वंस करनेका भार सौंपा। राक्षसोंको यह संवाद मालूम होने पर वे बड़े उत्तेजित हो समरक्षेत्रमें कूट पड़े। विष्णुके युद्धमें माली मारा गया, माल्यवान् और सुमालीने दलबलके साथ भाग कर लकामें आश्रय लिया। पीछे वे सब डरके मारे लंकाका परित्याग कर पत्नीपुत्रके साथ सालकटङ्कटावंशीय सुमालीके यहाँ रहने लगे।

जब विष्णुके भयसे प्रपीड़ित राक्षसश्रेष्ठ सुमाली पुत्रप्राप्तके साथ रसानलमें रहता था उस समय धनेश्वरको लकामें राज्य करनेका हुकुम मिला। भगवान् रामचन्द्रने पुलस्त्य-वंशीय जिन सब राक्षसोंको मारा था उनमेंसे माल्यवानादि सभसे बलवान् थे। ये पुलस्त्य-वंशीय किस प्रकार राक्षस हुए थे उसका विवरण नीचे दिया जाता है :—

प्रजापतिके पुत्र ब्रह्मापि पुलस्त्य मेरुगिरिके समीप राजर्षि तृणविन्दुके आश्रममें तपस्या करते थे। उसी समय राजर्षिकन्या, ऋषिकन्या, नागरुन्या और अप्सरायें उस रमणीय आननमें आ कर नाच गान करने लगे। महातेजस्वी पुलस्त्यने तपमें बाधा डालनेवाली रमणियोंको ध्राप दिया, कि "जो मेरी दृष्टि पर पड़ेगी उन्ने उसी समय गर्भ रह जायगा।" राजर्षि तृणविन्दुके कन्याको इसकी कुछ भी खबर न थी, सो वह एक दिन वेदपाठ सुननेकी इच्छासे पुलस्त्यके आश्रममें गईं। वेदपाठके बाद मुनिवरकी दृष्टि उस ओर पड़ते ही राजनन्दिनी गर्भवती हो गईं। राजर्षिको ध्यानयोगसे कन्याके गर्भ रहनेका कारण मालूम हुआ। उन्होंने उसे ऋषिके समर्पण किया। राजनन्दिनीकी परिधयांसे सतुष्ट हो पुलस्त्यने उसे बर दिया, "देवि! आज तुम्हें आत्मसम्भव पुत्र प्रदान करूंगा। वह पुत्र पीलस्त्य नामसे विख्यात हो पिता और माताका वंश फैलायेगा।

तुमसे वैश्वविभूत होनेके कारण उम्का एक नाम विभवा भी होगा। इस विभवाके गुण पर मुष्प हो भरद्वाज मुनि अपनी देववर्षिनी नामकी कन्या उसे ब्याहिये। उनम उत्पन्न पुत्रका नाम वैश्ववर्ष रखा जायगा।"

वैश्ववर्षने तपस्या द्वारा लोकायतामह ब्रह्माको प्रसन्न कर निवीरुह्य प्राप्त किया। ब्रह्माके वरसे वे चतुर्षु लोकाबाहू हुए तथा व्यवहारक कारण उन्हें पुण्यकविमान मित्रा। वर पानैक बाहू धनेशाने पितासे जा कहा कि मेरे रहनेके लिये एक स्वतन्त्र मकान चाहिये। तबतुलार उन्हें राक्षस परित्रुष्प लङ्कापुरीमें ही रहनेको कहा गया। धनाधीश पुण्यकविमान पर चढ़ कर लङ्कापुरी गए।

जिस समय वैश्ववर्ष लङ्कामें रहत थे, उस समय एक दिन सुमाम्नी राक्षस रसातलसे अपनी कन्या कीकमीको साथ ले मर्त्यलोक प्राया। वह धनेश्वरको पुण्यकरण पर भाङ्ग एक उजब लगा तथा किस प्रकार राक्षसगण फिर समुद्रसम्पद हो सक उसकें लिये कीह उपाय हूँ इने लमा। उसने कीहसासे कहा, 'पुत्रि! मुम पुत्रस्त्वनम्बन् मुनिवर विभवाक निकट जा कर उनकी लो होनेकी कोशिश करो, क्योंकि इससे धनश्वरक समान तुम्हारे एक तेजस्वा पुत्र उत्पन्न होगा।' पिताको बात मान कर कीकसा संभवाकालमें विभवाक यहा गए। अम्बिहोत्र समाप्त करनेक बाद मुनिवरने राक्षसकन्याको अपने सामने उपस्थित देखा भीर ध्यानयोगसे उसका मनोनिर्वाय जान कर उससे कहा, 'भद्रे! तुम शक्य समयमें भइ हो हम कारण तुमसे कर्कमा राक्षसपुत्र उत्पन्न होगा। अनन्तर वह राक्षसकन्या मुनिवरक चरणों पर डाल गए और उलम पुत्रक लिये प्रार्थना करने लगे। मुनिने कहा तुम्हारा छोटा बच्चा मेरे घंशा नुरूप धर्मांतरा होगा।' इसके कुछ समय बाद कीकमीने पधाकम दगाकन्य, कुम्भकर्ण, शूर्पनखा और विमोषणको प्रसन्न किया।

इस समय एक दिन धनश्वर वैश्ववर्षको पुण्यकरणसे पिताकें समीप जात देक राक्षसी कीकसीने दगाप्राबको बुमा वर कहा "अपने भाह वैश्ववर्षको देखो। वह किम अभिमानस रथ पर जा रहा है। तुम उससे नहीं इति

हो। इसलिये कोशिश करो किमसे तुम भी उसीके समान वैश्वर्षनाली हो सरो।" यह सुन कर राक्ष्यको बहुत क्रुध हुआ और उसने घोर तपस्या छान हो। उसी तपस्याकें फलसे उनम नङ्कापुरी प्राप्त की, सीताकी हर लाया तथा भीर लो कितने दुष्कर्म किये। रामायणके उत्तरकाण्डमें इसका विवरण विशदरूपसे दिया गया है।

राज्य, विमोषण, कुम्भकर्ण भादि कर्म देखो।

यं राक्षसगण प्रायाची बहुकृपाधारी, कामगामो भीर योदा ये। रामायणीय युगमें राक्षस जातिके विशेष प्रमुखता परिलक्ष्य पाया जाता है। महाभारतीय युगमें हम भोग भोगकलुषक यक, क्रिमोर् भीर द्विजिम्बा राक्षस का निषम तथा द्विजिन्याका पाणिप्रद्वय देख पाते हैं। महाभारतिय भीमसेनक भीरसस द्विजिन्याके एक भीर पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम घराटकन था। (वनपर्व)

येनैव ब्राह्मणका २।७ अथैव पङ्केसे मातृम होता है, कि उस समय राक्षसोंकी यज्ञभाग (धष्पपयुका रक्ष इत्यादि) देनेकी विधि थी। इसका वाक्य कर्कमा भीर उष्पधनियुक्त होनेके कारण नीतिजनक था। एक कथन का 'रक्षासि न कोर्त्तयेत्' यह देख कर माध्यकारने लिखा है—'जातिविशेषानपेक्ष्य वस्तुचक्षननिर्देशा। राक्षसायान्तरात्रोयानां मध्ये राक्षसम्, असुरं पिशाचं वा न किञ्चिदपि कार्त्तयेत्। जातिविशेषाः भस्वस्तेरैस्त्वै द्वयोपप्रास भूयन्— देवा मनुष्याः पितरस्तेभ्यत भासन्सुरराक्षसि पिशाचास्तेऽन्यत।"

वशिष्टपुराणमें इस राक्षस जातिको रजोमालात्मक, विकर भीर प्रसन्न कहा है—

"रजोमालात्मिकमये कताऽन्मो जहइ तनुम्।
ततः बुद्धुष्यया नावा नः कोयाभवापयता ॥
शुल्कामान्नाकाकापंरक्ष एऽप्युनद्रगवास्तवः।
विष्वा। रमभुषा नतास्वइत्यथाकन्व तं प्रनुम् ॥
नेत्रं भी रक्षन्तन्त्रं तंरुड रज्जुधस्तु व ॥" (कश्किपु०)
मत्स्वपुराण आदिमार्गक कथ्यवाक्य नामक ईडे अध्यायमें इनकी उदरचिह्न विवरण और प्रकारसे दिया गया है।

"रजोगय क्पवद्वम्ब लनामनमजीकनम् ॥
रक्षिम्वा द्विभुव वप" भीमकनारक्षन् वपम् ॥"

पञ्चपुराण-सृष्टिखण्डके १५वें अध्यायमें सूर्यशोकसे नाचिकी और इनके विचरणका स्थान बताया है,—

“अत्र कर्द्वर्षं हि विप्रेन्द्र राक्षसा ये कृतैनसः ।

तेतु सुपांढयः सर्वे विहरन्त्युर्ध्ववर्जिताः ॥”

वामनपुराणके ३६वें अध्यायमें क्षुद्रकीटादि उत्पन्न, उच्छिष्टाश्रित, केशावपन्न, अश्रुत, मारुतस्वासवत् इत्यादि वृणिन अन्न राक्षसका साथ पदार्थ हैं। इसलिये विद्वानोंको वे सब पदार्थ नहीं खाने चाहिये। केवल यज्ञाङ्गभूत मांसमक्षण विधिमिद्ध है, दूसरे दूसरे मांसको राक्षसीय भोजन कहते हैं। मनुके मतमें राक्षसीय भोजन नहीं करना चाहिये। (मनु १।३२) मन्वादिमें रात्रिकालके श्राद्धादिको राक्षसी श्राद्ध कहा है। (मनु ३।२८०)

२ आठ प्रकारके विवाहके अन्तर्गत विवाहविशेष। युद्धमें कन्याको हरण कर जो विवाह किया जाता है उसे राक्षस-विवाह कहते हैं।

“आतुरां प्रविष्णादानाद्गान्धर्व्यं, समान्मिथ, ।

राक्षसो युद्धहर्यात् प्रैशचः कन्यमच्छलात् ॥”

(उद्गाहस्त्य)

मनुमें इसका लक्षण यों लिखा है,—

“दृत्वा दित्वा च मित्वा च क्रोशन्ती बदती यद्वात् ।

प्रसह्य कन्याहरया राक्षसा विविस्वयवे ॥”

(मनु ३।२३)

कन्यापक्षाय लोगोंका हनन, छेदन और उनका घर में कर 'हा मुझे नारा' इस प्रकार रोती हुई कन्याका बलपूर्वक हरण कर जो विवाह किया जाता है, उसे राक्षसी विवाह कहते हैं। यह विवाह क्षत्रियके लिये उत्तम है। गान्धर्व और राक्षस-विवाह पृथग्भावमें अथवा मिश्रण-भावमें जिस किसी तरहसे क्यो न हो क्षत्रियके लिये दोनों ही धर्मजनक हैं।

यह विवाह क्षत्रियके लिये धर्मजनक होने पर भी इससे जो सन्तान उत्पन्न होते वे क्रूरकर्मा, मिथ्यावादी और वेदविद्वेषी होते हैं। इसी कारण इस विवाहको निन्दनीय बताया है।

“इतरेषु च शिष्टेषु रजसावृत्तवादिन, ।

जायन्ते दुर्विवाहेषु ब्रह्मधर्मद्विषः सुता, ॥

अनिन्दितैः स्त्रीविवाहरनिन्द्या भवति प्रजा ।

निन्दिते निन्दिता नृष्या तस्मान्निन्द्यान् विवर्जयेत् ॥”

(मनु ३।४१:४२) विवाह शब्द देखो ।

(पु० श्लो०) ३ साठ संवत्सरोमसे उनचासवा संवत् ।

४ कुबेरके धनकोशके रक्षक । ५ कोई दुष्ट प्राणी ।

६ वैद्यकमें एक रस जो पार और गन्धकके योगसे बनता

है। यह रस पेटकी वादी दूर करता और मूत्र बढ़ाता

है। ७ जैनमतानुसार आठ प्रकारके अन्तरोमसे एक।

८ एक ऋषि। लोग इन्हें राक्षस परिंडन कहा करते थे।

९ तीस मुहूर्त्त ।

राक्षसग्रह (सं० पु०) उन्माद रोगभेद ।

राक्षमता (सं० स्त्री०) राक्षसस्य भाव तद्गुणः । राक्ष

मत्त्व, राक्षसका भाव या धर्म ।

राक्षसी (सं० स्त्री०) राक्षस स्त्री । १ कौणयो । २ दंष्ट्रा ।

३ चण्डा, चोर मामक गन्धद्रव्य । ४ सायाहू वेला,

सन्ध्याकाल । इस राक्षसी समयमें सभी काम निन्दनीय

हैं ।

“प्रातःकालो मुहूर्त्तौ स्त्रीन् सद्गमस्तावदेव तु ।

मध्याह्नं त्रिमुहूर्त्तः स्यादपराहस्तनः परम् ॥

सायाह्नं त्रिमुहूर्त्तः स्यात् श्राद्धं तत्र न कारयेत् ।

राक्षसी नाम सा वेदा गहिता सर्वधर्मम् ॥” (तिथितत्त्व)

राक्षसेन्द्र (सं० पु०) राक्षमानामिन्द्रः । १ रावण ।

२ राक्षसपति मान्न ।

राक्षा (सं० स्त्री०) लाक्षा जलयो रेषयात् रत्वं । लाक्षा,

लाक्ष ।

राक्षोघ्न (सं० त्रि०) १ रक्षोहन् सम्प्रन्धीय । अगस्त्य

और अग्निने राक्षसकी हत्या की थी इसलिये उनके

सम्पर्कीय मन्वादि 'अगस्त्यस्य राक्षोघ्नम्' 'अग्ने राक्षो-

घ्नम्' नामसे प्रसिद्ध हैं । २ दो साम ।

राक्षोऽसुर (सं० पु०) राक्षस और असुर ।

राख (हि० स्त्री०) किसी विलकुल जले हुए पदार्थका

अवशेष, मसम, फाक ।

राखना (हि० क्रि०) १ रक्षा करना, बचाना । २ पेड़ या

फसलको जानवरों या चिडियोंके खाने या लोगोंके

लेनेसे बचाना, रक्षवाली करना । ३ आरोप करना,

बताना। ४ छिपाता, कण्ठ करना। ५ रोक रकना, जामे न देना। ६ रकना 'को।

राको (हि० स्त्री०) १ वह मंगल सूत्र जो कुछ विशिष्ट अक्षरों पर बिखरता धातवी पूर्णिमाके दिन ब्राह्मण या भीर लोग अपने यज्ञमार्गों अथवा भारमोचक कहिने हाथकी कलाई पर बांधत है, रक्षाबंधनका डोरा। २ राक्ष देखो।

राकोपूर्णमा—प्रसिद्ध धातवी पूर्णिमा। इस दिन उत्तर पश्चिमाञ्चलक मनुष्य भाषणमें सौहाय्य पुत्रिके लिये राको बांधते हैं। रक्षा देखो।

राम (सं० पु०) रघुमति रघुनन्दनति या रघुसुमादे करये वा प्रम्। (पति व मावकरयेः।) पा ३।१।२०) इति न ङोपः। १ मास्सर्प। २ लोहितानि। ३ कञ्जादि। ४ अनुदा। ५ मीह। ६ गान्धादि। ७ नृप्य। (भेदिनी) ८ चम्पू। ९ सूर्य। (कम्पत्ता०) १० जाक्षानि। ११ एक मल्लिक् १२ रत्न। १३ मोति, प्रेम।

१४ अमिमत् विपयामिजाय। यह पाठब्रह्मके पांच प्रकारके केशोंके अन्तर्गत एक केश है। इसका उच्चारण है—'सुखानुसयो राग' (पाठ० २०) 'सुखमनुस्यते इति सुखानुसयो सुखकर्म्य सुखानुस्यूतिपूर्वकसुखसाधयेषु तुष्याकयो गर्द'। रागसङ्घः केशेः। (भाष)

सुखानुसय तुष्याका कहते हैं। सुखयोगी व्यक्तिके सुखका अनुसरण होने पर सुखसाधन कार्यमें चित्तकी भासक होती है। यह भासक ही 'राग' का नामसे कहा जाती है। अविद्याक आत्मजन्ते ब्राह्मण्य हो कर मनुष्य कर्म सुखलाससके केशमें पड़ते हैं। सुख और दुःख इन दोनों प्रकारके साधन-विषयमें अमिजाय होना राग है।

१५ सङ्गोत्थाका राग। १६ अक्षक। १७ सिम्भूर। राय (संघोत्थाकाव)—मद्वत और विद्वतक मेषसे पङ्क भादि उनीस सर और बर्षोस अर्द्धरुत जा अविशिष्टेय मानवोंके बिच रक्षित करती है, उच राग कहत है।

मस्तादि मुनिवैद्या कहता है, कि बिजगत् वासो जनोंका चित्त जिसके द्वारा रक्षित होता है उसीको राग कहा जा सकता है। अथवा जिसे सुलत हो जनसाया

एकके विलसत अनुरागका सञ्चार होता है, वही राग है। क्योंकि सब लोगोंका रक्षण करना है, इसीसे उसका नाम राग पड़ा है।*

*गोपीभर्मीविमलप्रदनेकेऽं कृष्णसंधिपी।

तन वातानि रगाणां सहस्रानि तु यद्ब्रह्म ह
रागमु येयु परभिरां रगा अगति विभ वा।
कालक्रमेण तथापि हास एव व हरवते ॥
मनोवचरता पूर्व पश्चिमे वक्षिणे तथा।
धनुस्त्रकाम रे रैराक्षपाभीपां प्रथमत्वा ॥”

(वङ्गीतबामोहर)

श्रीकृष्णके समस्त गोपियोंन एक एक करके गीत गाना आरम्भ किया तो योद्धा सहस्र रागोंको उत्पत्ति हो गई। इन सब रागोंमें इस अगत्तम उत्तम राग प्रसिद्ध है बावमें काककमस फिर उसमें भी संख्या घट गई है। सुमेरुके उत्तर, पूर्व, पश्चिम और दक्षिण तथा समुद्रके अपकर्ममें जितने भी देश हैं, वहाँ ये सब राग बिध मात्र हैं।

वर्ण ।

सर-समूहकी यथाविधि पानेका नाम वर्ण है। वर्ण बार हैं—नधापी, आदाही अथवाही और सञ्चारो।

कथाया—पङ्कजादि नरोंमें जो कोई सर रद्द रह कर अर्थात् देर देरसे रागदिमें उचारित होता है, उसे अथवा जिस सरमें राग कुछ देर तक टहरता है, उसे स्थायी कहते हैं।

आरोहो—स्वरोंको क्रमोद्ध गतिको अर्थात् पङ्क, अथम, गान्धार, मध्यम, पञ्चम, चैवत और निषाद इस प्रकारसे नरोंके क्रमोच्चारणको आरोहो कहा जाता है।

अवरोहो—स्वरोंके क्रमशः अयोगतिको अर्थात्

* "वाजं अनिधिरोक्तु स्ववर्णविमलितः।
रत्नका अनविधाना व रागः कथिता बुधैः ॥
रेस्तु चतसि रज्जत कमिठकासिनम्।
ते राया इति कृष्णते दुर्निर्मितादिभिः ॥
अपराय । इत्ये अथमोक्षेय रज्जते कफसः प्रभा ।
तर्वागुन्मन्त्रोद्ध तालैःन राग इति स्पृष्टिः ॥”

निपाद, धेनत, पञ्चम, मध्यम, गान्धार, ऋषभ और पडज इस नियमसे क्रमशः ऊँचेसे नीचे लानेको अवरोही कहते हैं।

सञ्चारी—स्वायी, आरोही और अवरोही इन तीनोंके संमिश्रणसे स्वर-सञ्चार करनेको सञ्चारी कहने हैं।

रागादिमें प्रयुक्त स्वरोंके प्रकारभेदसे स्वायो आदिकी तरह ग्रह, न्यास और अंश ये तीन नामान्तर निर्दिष्ट किये गये हैं।

ग्रह—जो स्वर गोतादिके प्रारम्भमें ही स्थापित होता है, उसे ग्रहस्वर कहते हैं।

न्यास—जिस स्वरमें गोतादिकी समाप्ति होती है, उमे न्यास कहते हैं।

अंश—जो स्वर रागादिमें बहुतायतसे प्रयुक्त होता है अर्थात् जिस स्वरके विना रागकी मूर्त्ति स्पष्टरूपसे प्रकट नहीं होता, उसका नाम अंश है। इसे 'जाम' भी कहते हैं। (संगीतदर्पण १६०-१६३)

अ ग ।

रागोंके चार अङ्ग हैं—रागाङ्ग, भाषाङ्ग, क्रियाङ्ग और उपाङ्ग।

रागाङ्ग—रागका छायामात्रके अनुकरण करनेको रागाङ्ग कहते हैं।

भाषाङ्ग—भाषाको छायामात्रका आश्रय लेना हा भाषाङ्ग है।

क्रियाङ्ग—रागादि गानमें उतसाहको क्रियाङ्ग कहा जा सकता है।

उपाङ्ग—रागाङ्ग, भाषाङ्ग और क्रियाङ्ग इन तीनोंका अति सामान्यमात्र अनुकरण करना उपाङ्ग कहलाता है। (संगीतदर्पण, रागाध्याय २९३)

रागके भेद ।

रागादि गाते समय काण्डारलाकी विशेष आवश्यकता है। अति उच्च स्वरोच्चारण से शीघ्रता और कौशल पूर्णक विविध गमक अर्थात् स्वरकम्पन द्वारा रागादिका विभूषित करनेका नाम काण्डारला है।

मतङ्गके मतसे राग—शुद्ध, छायालग और सङ्कोर्ण इस तरह तीन प्रकारके होते हैं।

शुद्ध—रागोंका शास्त्रोक्त नियमानुसार विशुद्धभाव-

ने अर्थात् अन्य किसी रागके आश्रयके विना एक एकको पृथक् पृथक् गाना चाहिए। इस प्रकार गाये हुए राग शुद्ध राग कहलाते हैं।

छायालग—निरागोंमें अन्य किसी रागकी छाया पाई जाय, वे छायालग कहलाती हैं।

सङ्कोर्ण—जिन रागोंमें बहुतसे रागोंका समिश्रण रहता है, उन्हें सङ्कोर्ण कहते हैं।

ये तीन प्रकारके राग औडव, पाडव और सगपूर्ण इन तीन भागोंमें विभक्त हैं।

औडव—जिन रागोंमें पडजादि सप्तस्वरोंमेंसे केवल पाच स्वर व्यवहृत होते हैं, उनका नाम औडव है।

पाडव—उहाँ स्वरोंमें गाये जानेवाले राग पाडव कहलाते हैं।

सगपूर्ण—जो राग पडजादि सातो स्वरोंमें प्रयुक्त होते हैं, उनकी गिनती सगपूर्ण रागोंमें है।

रागात्पत्ति ।

सभो सङ्गीतशास्त्रोंके मतसे महादेव और पार्वती इन दोनों देवदेवीके संयोगसे रागकी उत्पत्ति हुई है। महादेवके पाँच मुद्रोंसे पाँच और भगवतीके मुखसे एक, इस तरह छह राग ही पहले उत्पन्न हुए थे। देवदेव महादेवके सद्योजात मुखसे श्री, वामदेव मुखसे वसन्त, अधोर मुखसे भैरव, तत्पुरुष मुखसे पञ्चम और ईशान-मुखसे मेघ तथा गिरिजाके मुखसे नटनारायण इस प्रकार छह रागोंकी उत्पत्ति हुई।

किसी समय जगदम्बाने महादेवसे कहा,—“हे देव ! यदि मुझ पर आप प्रसन्न हुए हैं, तो अनुग्रहपूर्वक बतलाइये कि कौनसे तो राग हैं और कौन सी रागिणी ? और उन रागरागिणियोंमेंसे कौन कौन सी किन किन ऋतुओं और किन किन दिनोंमें गाना विधेय है तथा स्वरविन्यास और मूर्त्ति किस प्रकार है ?” महादेवने भगवतीके प्रश्नके उत्तरमें कहा था—“श्री, वसन्त, भैरव, पञ्चम, मेघ और नटनारायण ये छह राग हैं और ये पुरुष कहलाते हैं। इन छहोंकी प्रत्येककी छह छह स्त्रिया कल्पित हुई हैं और वे रागिणी कहलाती हैं। मालश्री, त्रिवणी, गौरी, कंदारी, मधुमाधुरी और पहाडिका ये छह श्रीकी स्त्रिया हैं। इसी तरह देशी, देवकिरी, वरटी,

तोड़िका, छबिता और हिनोको ये छः पसलकी; सैयी
 गुर्दो, रामकिरी, गुणकिरी, बङ्गली और सैयको ये
 छः सैरबकी; विनापा, भूपावी कर्पाटी, पङ्क सिंका
 माळकी और पटमडरी ये छः पञ्चमकी; मन्थारी सीढी,
 सावेरो, काँशिकी, गान्धारी और इरगुङ्गारा ये छः मेष
 की तथा कामोदी, कल्याणी, मामोरी, सारङ्गुनी और
 महाराजोरा ये छः महाराजपत्र रागकी लिपि हैं।

(शब्दीवर्ण्य)

भीरण ।

भीरण प्रहाशन्दास पङ्कजे विष्णुवित है, सम्पूर्ण
 ज्ञातीय, नामा गुणयुक्त और प्रथमा (उत्तरमन्त्रा)
 मूर्च्छनाविशिष्ट होता है। और कोइ प्रहाशन्दास पङ्कजे
 बरसे श्रवणका नाम इच्छेक कर गये है।

स रि ग म प ध नि स रि ग म प ध
 नि स रि ।

मूर्च्छि—त्रिभू मूर्च्छिचारी विकासवेशी भीरण लिपि
 के साथ प्रमोद कानवर्षि विहारके छिद्र प्रवृत्तचय बनन
 कर रहा है।

मासभी—भीरागकी पत्नी मासभी भीरागकी तरह
 पङ्क प्रहाशन्दासा रागाइसे परिपूर्ण उत्तरमन्त्रा,
 मूर्च्छनायुक्त और शृङ्गाररसमखिञ्जला अर्थात् शृङ्गार
 रसमें गाने योग्य कहो गये है।

स रि ग म प ध नि स ।

मूर्च्छि—श्रीवर्गि, मासभा, आनन्दरसके लीये बँठ कर
 एक एककमाल हाथमें लिपे उस सुगाठी हुई मन्त्र मन्त्र
 ह स रही हैं।

त्रिषयो—त्रिषयो श्रवण और पञ्चमहीन श्रीङ्क
 ज्ञातीया है, इसका प्रहाशन्दास स्वर चैवत है।

प नि स ग म प ।

मूर्च्छि—मति पीतवर्णा, उज्ज्वला और हारसे सुशो
 निव त्रिषयी अपने कान्ठके साथ रम्यावकके लीये बैठो
 हुई है।

गौरी—श्रवण और पञ्चम हीन श्रीङ्कज्जातीय गौरी
 का प्रथम श और न्यास पङ्क है; इसमें उत्तर मन्त्र
 मूर्च्छनाका प्रयोग होता है।

स ग म ध नि स ।

मूर्च्छि—पूर्वोक्तपङ्कजा और मति सीमापवती गौरी
 गङ्गुकाके हार और प्रकृत कुसुममालासे सुशोभित
 और मय्युष्णसे बन हुए मलकाटीमें मल्लरुत तथा नाना
 प्रकारके मनुष्येय प्रथ्य हाग विहित हो कर मति मनो
 हर बश धारण क्रिये हुए है।

क्यारो—क्यारोको शास्त्रोंमें श्रवण और चैवत
 रहित श्रीङ्कज्जातीय निपाद् प्रहाशन्दासयुक्त काकडी
 स्वर चिम्बुक्ति और मार्गोमूर्च्छनाविशिष्ट कहा गया है।

स ग म प नि स ।

मूर्च्छि—क्यारोके मस्तक पर श्रवणार, माथेके लीच
 बन्धकपङ्क और गलेमें सपको उत्तरोय शामा पा रही है।
 ये योगीपीठ पर बैठ कर सर्वेश्वर देवदेव महादेवके ध्यान
 में मन रखतो ह।

मधुमाधवी मधुमाधवीके प्रह, अश और न्यास
 पङ्क है; इसमें उत्तर मुद्रा मूर्च्छनाका प्रयोग हुआ
 करता है; मधुमाधवी, गान्धार और चैवत हीन श्रीङ्क
 ज्ञातीया है।

स रि म प नि स ।

मूर्च्छि—मधुमाधवीके नेत्रयुगल प्रकृत नीलोत्पलके
 समान हैं, अ ग क्य और नासबन्ध पहने हुए हैं। ये
 भस्मपतिप्रता है, सर्वेश्वर तमाकवृत्तके लीये शिरी पर
 अशस्थान करतो है।

पहाडा—पह श्रवण और पञ्चमहीन श्रीङ्कज्जातीय
 है। पहाडाका मूर्च्छि न्यास स्वर पङ्क है, यह रागिणी
 सुननेमें कुछ कुछ शैलकृद्देशीय रागके सङ्ग है।

रि ग म ध नि स रि ।

मूर्च्छि—मति गौचङ्गी । ऐश्वर्यमें मति मनोहर
 शुकपक्षीकी पृष्ठसे बन हुए बल पहने हुए हैं। सर्वेश्वर
 रसपूर्ण बिचा रखतो हैं तथा देशो सुप्लोरसुका लो कर
 निद्रित कान्ठको नाना छत्रोंसे प्रबोधित कर रही हैं।

शैवगिरी—शैवगिरीमें बह्यमान सारङ्गीके समान
 स्वरत्रिभयासादि विद्यमान है।

स रि म प नि स ।

मूर्च्छि—मदमत्त शैवगिरी कारुणिकके समान श्यामाङ्गी,
 धवधव उत्तम गोळाकार, स्तन पीनोत्तम, मयनयुक्त मत्त
 चकोर लुप्य भस्मपत मनोहर और ओष्ठयय पके विम्ब

फलके समान लोहित, गलदेश अत्यन्त सुन्दर हार-
लतासे सुशोभित है, देखनेमें अत्यन्त मनोज्ञ मालूम
होती है ।

चराटी—चराटी सम्पूर्णजातीया है, इसका प्रह,
अंश और न्यास स्वर पडज है, इसमें उत्तर मन्द्र मूर्च्छना-
का प्रयोग देखनेमें आना है । यह रागिणी गायककी
कीर्त्ति बढ़ाती है ।

स रि ग म प ध नि स ।

मूर्त्ति—चराटी सुकेगी, अति चराङ्गना, हाथमें कङ्कण
और कानोंमें पारिजातकुसुम लिए चामर ढाल कर
पतिको प्रमोदित कर रही है ।

तोड़ी वा नोडिका—यह सम्पूर्णजातीया, इसका प्रह,
अंश और न्यास स्वर मध्यम है । इसमें सौवीरी
मूर्च्छनाका प्रयोग होता है । कोई कोई पड्ज स्वरको
तोड़ीका प्रह, अंश और न्यास कहते हैं ।

म प ध नि स रि ग म अथवा स रि ग म प ध नि स ।

मूर्त्ति—तुपार वा कुन्दकुसुमके समान उज्ज्वल
श्वेतवर्णा है, काश्मीर देशके कर्पूरसे विलिप्त हो कर
चनमें घोणा बजाती हुई हरिणोंको विनोदित कर रही है ।

ललिता—ऋषभ पञ्चमहीना औडवजातीय है । इस
प्रह, अंश और न्यास पडज स्वर है इसमें शुद्ध मध्य
मूर्च्छनाका प्रयोग होता है । कोई कोई इसे सम्पूर्ण-
जातीया भी कहते हैं ।

स ग म ध नि स अथवा स रि ग म प ध नि स ।

मूर्त्ति—स्तन भरसे नताङ्गो ललिता प्रफुल्ल सुवर्ण-
वर्ण पड्ज और सप्तवर्ण पुष्पकी मालासे सुशोभित हो
कर आलस्यसे आँखें मीच कर प्रातःकाल घरसे निकल
रही है ।

हिन्दोलो—ऋषभ और धैवत हीन औडवजातीय
हिन्दोलीका प्रह, अंश और न्यास स्वरकाकली पड्ज है,
इसमें शुद्ध मध्या मूर्च्छनाका प्रयोग होता है ।

स ग म प नि स ।

मूर्त्ति—हिन्दोलो अत्यन्त कृशाङ्गी, देखनेमें अति
रमणीया, विशुद्ध भावोंसे परिपूर्णा और मत्तस्वभावा
है । इनका वर्ण कपोतके समान और कण्ठ स्वर
अति मधुर है । ये स्वामीके मुखके ओर दृष्टि किये हुए
बैठी है ।

भैरव—यह ऋषभ पञ्चमहीन औडवजातीय है और
इसका प्रह, अंश और न्यास स्वर धैवत है । इस राग-
में विकृत धैवतादि मूर्च्छनाका प्रयोग होता है ।

ध नि स ग म ध ।

मूर्त्ति—जिनके मस्तक पर गङ्गादेवी सर्वदा कुलु
कुलध्वनि कर रही हैं, ललाट पर चन्द्रमण्ड तिलकके
समान शोभा पा रहा है, तीन आँखें हैं, सपँके भूषणसे
विभूषित हैं, शुक्लवर्ण गजचर्म पहने हुए हैं तथा एक
हाथमें जाञ्जल्यमान तिशूल और दूसरे हाथमें नरमुण्ड
है, वे ही रागराज भैरव हैं ।

भैरवी—वे सम्पूर्णजातीया हैं और इनका प्रह, अंश
और न्यास स्वर मध्यम है । भैरवीमें सौवीर, मूर्च्छना
और मध्यम ग्रामका स्वर ही व्यवहृत होता है । किन्हीं
किन्हीं पण्डितोंके मतसे भैरव रागके स्वर ही भैरवीक
अंग हैं ।

स रि ग म प ध नि स । अथवा ध नि स ग म ध ।

मूर्त्ति—पीतवर्णा विशाललोचना भैरवपत्नी भैरवी
अत्यन्त रमणीया हैं, और कैलासपर्वत पर स्फटिक-
मणिके पीठ पर बैठी हुई बीच बीचमें घटा बजाती हुई
प्रफुल्ल कुसुमों द्वारा महादेवको पूजा कर रही हैं ।

वङ्गाली—ऋषभ धैवतहीन औडवजातीय वंगालीका
प्रह, अंश और न्यास पड्ज है । किन्तु कल्लिनाथके
मतसे ये मध्यमयुक्त और सम्पूर्णजातीया हैं । इस
रागमें उत्तर मन्द्रा मूर्च्छनाका प्रयोग होता है ।

स ग म प नि स । अथवा म प ध नि स रि ग म ।

मूर्त्ति—ये काञ्चीदाम-विभूषिता पुष्पपात्रहस्ता और
दीर्घनयना हैं, इनके वाये हाथमें उज्ज्वल तिशूल है । ये
तरुणा वरुणवर्णा, जटामण्डित तथा सर्वाङ्गमें मसम लेान
करके भी अपने रूपसे दशों दिशाओंको उज्ज्वल कर
रही हैं ।

सैन्धवी—सैन्धवी सम्पूर्णजातीय हैं । किन्हींके मतसे
ऋषभहीन पाड़वा हैं और इसमें उत्तर मन्द्रा मूर्च्छनाका
प्रयोग होता है । सैन्धवीका प्रह अंश और न्यास
स्वर पड्ज है, यह रागिणी अकसर वीररसमें प्रयुक्त
होती है ।

स रि ग म प ध नि स । अथवा स ग म प ध नि स ।

मूर्ति—शिवनाथिकमठी सैम्बत्री रत्नमन्त्र पहने हुए, एक हाथमें त्रिशूल और दूसरे हाथमें एक इन्धुनि पुत्र सिद्ध प्रोमित है । यह रागिणी म्प्लव कोपनत्वभावा है और अधिकतर और रममें प्रयुक्त होती है ।

रामकिरी—उत्तमन्त्रा मूर्च्छनासे शोभित सम्पूर्ण-जातिवा रामकेनेका प्रह, भ श और म्वास स्वर पङ्क है । यह कबजरनाश्रीगिका है । किसीक मतसे यह रागिणी श्रपमधैरतहीन ओङ्कवजातीय है । किसीके मतसे पञ्चमहीना पाङ्कव जातीय है । इस प्रकार रामकिरी रागिणी ओङ्कव, पाङ्कव और सम्पूर्ण तीनों ही प्रकारकी होती है ।

स रि ग म प ध नि स अथवा स ग म प नि स ।

मूर्ति—यह स्वर्णकी प्रमायुका भूपणीसे विमुषिता नाकाम्परवारिणी, मधुत्मापिनी और मानमोय है । समीपपत्नी पतिकी मोर वृष्टि किय हुए है ।

गुर्गरी—गुर्गरी सम्पूर्णजातिवा है और इसका प्रह, भ श और म्वास स्वर श्रपम है । इसकी मूर्च्छना पोरणी है और इसमें कुछ कुछ बंगाम्बाका सामास पाया जाता है ।

रि ग म प ध नि स रि ।

मूर्ति—श्रवामधर्मा, मन्मथमावयुका, प्रेमामिजापिणी गुर्गरी विविध विचित्र पुष्पाञ्जित मधु पत्तनों पर बैठी हुई है ।

गुणकिरी—उत्तमो मूर्च्छनायुक्त श्रपमधैरतहीन ओङ्कवजातीय मैरवपत्नी गुणकिरीका प्रह, भ श और म्वास स्वर निपाद है । काह काह इसे पङ्कव प्रहैरक म्प्लव मा कदा करत है ।

नि स रि ग म प नि अथवा स ग म प नि स ।

मूर्ति—गुणकिरी पतिक बिरहस अल्पस्त शैका मिमृता हो कर अनपराध शानक कारण मंके साह हो गई है, भूमि पर सोटागैम गरीर पर पूछ छा गए है और कपोररगधनका बोन कर कठजापूर्ण नत वृष्टिसे देख रही है ।

पञ्चम उम ।

पञ्चमराग—पञ्चमहाज, पाङ्कवजातीय और गृगार ०५, ३।X. 71

रसपूर्ण है । इसका प्रह, भ श और म्वास स्वर पङ्कव है । इस रागमें उरत्तमन्त्रा मूर्च्छनाका प्रयोग होता है । किसी किसाने इसे सम्पूर्ण जातीय माना है ।

स रि ग म ध नि स अथवा स रि ग म प ध नि स ।

मूर्ति—ये मति मनश्ची कोकिन्के समान मधुर भापी श्री विजासो, शृङ्गाएरिप और पिशाक भरण नेत्रयुक्त हैं तथा सषदा रत्नमन्त्र पहने रहना पसन् करते हैं ।

विभावा—विभावाके प्रह, भ श, म्वास और मूर्च्छना भावि कलिताके समान होत हैं ।

स ग म प ध नि स ।

मूर्ति—ये विजासधेशस विभूषित, रसभाय युक्त श्री-पु-रूपमें धनुरक्त हैं, और समस्त रक्ति सुरतसुखसे निता कर निद्राक भावस्वस कातर हो कर प्रातःकाल शय्या स्थाय रही है ।

भूपाळा—सम्पूर्ण जातीय म्वाळीका प्रह, भ श और म्वास स्वर पङ्कव है और उरत्तमन्त्रा मूर्च्छनाका प्रयोग होता है । ऊह कोई कहते हैं, कि यह पञ्चमहीना ओङ्कवजातीयमें गिनो गई है । इस रागिणीका अधिकतर शान्तिरसमें मो प्रयोग होता है ।

स रि ग म प ध नि स अथवा स ग म प नि स ।

मूर्ति—गौराङ्गा, पानाम्भवपमोघरा, चन्द्रमुको, कुङ्कुम सेपे हुए मनीहारिणी शान्तिरसयुक्ता भूपाळी पतिक विरहस कातर होकर उनकी चिन्तामें मग्न है ।

कर्णारी—कर्णारीका प्रह भ श और म्वासस्वर विरह निपाद है, इसमें मार्गी मूर्च्छनाका प्रयोग होता है । कर्णारी धोताको म्प्लव सुख पङ्कव जाती है ।

नि स रि ग म प ध नि ।

मूर्ति—ये मयूरके कण्ठके समान मति पिचिजाङ्गा, मकार पर इन्दुकरक पारण किये हुए, मति परिष्कृत शुभ यज्ञ पहन हस्तिरन्ध निर्मित कर्णामुपजस भूषित हो कर मधुरस्वरम सुरणायिका मन हरण कर रही है ।

बङ्गुर्हीसिका—इसके स्वरराम भावि कर्णारीका सगुण है ।

नि स रि ग म प ध नि ।

मूर्ति—मृदु मन्द हास्यमुखी, मनोहर चञ्चलदृष्टि, पतिके सङ्गोत्सवमें दृष्टचिन्ता, विलासमें रोमाञ्चिनाङ्गी वङ्गहंसिका सर्गत्र प्रसिद्ध हैं।

मालवी—ऋषभ पञ्चमहीना औडवजातीया मालवीका प्रह, अंश और न्यासस्वर निपाद है। मालवीमें रजनी, मूर्च्छनाका प्रयोग होता है।

नि स ग म ध नि

मूर्ति—निर्गल-गौराङ्गी, अति कामातुरा मालवीने विरह वेदनासे कातर और पाण्डुवर्ण हो कर पतिके धनमें चित्त समर्पण करके निद्रा त्याग दी है।

पटमञ्जरी—पञ्चमांशप्रह-न्यास-युक्ता पटमञ्जरी सम्पूर्ण जातीया हैं और रसिकोंकी अत्यन्त प्रिय है। इसमें हृष्यका मूर्च्छनाका प्रयोग होता है।

प ध नि स रि ग म।

मूर्ति—पटमञ्जरी विरह-यन्त्रणासे म्लानमुख और नयनजलसे सर्गाङ्गुष्ठाघित करके अति दीन भावसे बहुत देरसे पतिकी चिन्तामें निमग्न रह कर चारवार दीर्घ निश्वास ले रही है।

मेघराग।

शृङ्गाररसोद्दीपक सम्पूर्ण जातीय मेघरागका प्रह, अंश और न्यासस्वर धैवत है। इसमें उत्तरायता मूर्च्छनाका प्रयोग होता है।

ध नि स रि ग म प ध।

मूर्ति—विहारशील, प्रगाढ़-नीलदेह, गम्भीरनिनादी, पिङ्गलनेत्र और कामातुर मेघराग कामनियोंकी अत्यन्त प्रिय है।

मन्दारी—ये पङ्क पञ्चम-हीना औडवजातीया हैं। इसका प्रह, अंश और न्यासस्वर धैवत है। इसमें पौरवी मूर्च्छनाका प्रयोग होता है। यह रागिणी वर्षा ऋतुमें अत्यन्त सुखप्रदा होती है।

ध नि रि ग म ध।

मूर्ति—गौराङ्गी, अतिकृशा, कोकिलके समान मनोहर कण्ठस्वरयुक्ता, यौवनकृत मदनके सन्तापसे सन्तप्त-चिन्ता, अति मलिन-वेशिनी मन्दारी गीतके जलसे अपने पतिका स्मरण करके वीणा वजाती हुई रो रही है।

सौरदी—ऋषभहीना पाडवजातीया सौरदीका प्रह

अंश और न्यासस्वर पञ्चम है। किसी किसीने पञ्चमके स्थानमें पङ्कको ही प्रहांश न्यास-स्वर माना है।

प ध नि स ग म प अथवा स ग म प ध नि स।

मूर्ति—कन्दर्पके समान सुचारु गौरवर्णा, सौरदी पीनोन्नतपयोधरोंसे गोभिता, हारवल्लीसे विभूषिता और कर्णोत्पलसे लगे हुए त्रमरकी ध्वनिसे विलग्नचिन्ता हो कर स्वामीके पास जा रही हैं और उसके आवेशमें बाहु लताएं अत्यन्त शिथिल हो गई हैं।

सावेरी—पञ्चमहीना, पाडवजातीया, धैवतबहुला और करुणारसप्रधाना सावेरीका प्रह, नक्षत्र और न्यास-स्वर पङ्क है। इसमें मन्द्रमन्त्रमका प्रयोग होता है।

स रि ग म ध नि स।

मूर्ति—विचित्रवसना, अतिकोमलाङ्गी, गौरवर्णा, नाना अलङ्कारोंसे विभूषिता, मेघाङ्गना सावेरी गलेमें गजमुकाका हार पहने और हाथमें एक मयूरपुच्छ धारण किये हुए अत्यन्त प्रसन्नतासे हास्य कर रही हैं।

कौशिकी-बंगालीसे ही कौशिकीका जन्म है; पङ्क इसका प्रह, अंश और न्यासस्वर है। इसमें गमकके साथ मन्द्रगान्धारका प्रयोग होना है। इस रागिणीका हास्य और करुणरसमें ही अधिक प्रयोग होता है।

स रि ग म प ध नि स।

मूर्ति—श्यामाङ्गी, सुवेशधारिणी, कोमलाङ्गी, रक्तनयना, स्वेदविन्दुसे गोमित मुखचन्द्रमायुक्त, स्वामीके विच्छेदसे भोग कौशिकी सर्वदा पतिके साथ घूमती रहती है।

गान्धारी—पौरवीमूर्च्छनायुक्ता गान्धारीका प्रह, अंश और न्यासस्वर पङ्क है। यह रागिणी रात्रि-दिवसमें यामार्द्धके समय गाई जाती है।

स रि ग म प ध नि स।

मूर्ति—जटा-विभूषिता, पवित्तभावसे मुद्रितलोचना नीलाम्बरधारिणी, मेघपत्नी गान्धारी गलेमें योगपट्ट धारण किये हुए शान्त और सन्नतभावसे आसन पर बैठी हुई है।

हरशुङ्गारा—सम्पूर्णजातीया हरशुङ्गाराका प्रह, अंश और न्यासस्वर धैवत है। इसमें उत्तरमन्द्रा मूर्च्छनाका प्रयोग होता है।

घ नि स रि ग म प ध ।

मूर्ति—गीराङ्गे, कामोद्दिपिवा, भक्ति प्रियवादिनी, मेघपङ्का हरशुङ्गारा नामा ज्ञातीय गीत मीर नृत्पादि कौसठ कलाभूमिं निपुण है ।

नक्षत्रपञ्चम वा नर ।

सम्पूर्णज्ञातीय नट्टगारापञ्चका प्रह, भ श मीर म्यास स्वर पङ्कज है । इसमें बहुविध गमकाण्डित प्रथमा भर्षात् उत्तरमन्त्रा मूच्छनाका प्रयोग होता है ।

स रि ग म प ध नि स ।

मूर्ति—स्वर्णक समान गीरवर्ण, पोद्दुवेनपाटा, भक्ति प्रतापी, नटराग शङ्क शोषितसे रक्षण चारण क्रिये हुए भाव पर चङ्क कर रणमूर्तिमें विचरण कर रहा है ।

कामोद्दी—पङ्क प्रदागन्यासा कामोद्दीका म्यासस्वर मन्त्र पङ्कज है । यह रागिनो प्राया कछम और हास्य रसमें प्रयुक्त होती है तथा यामाङ्ककान्तम गाइ जाती है ।

स रि ग म प ध नि स ।

मूर्ति—हेमवर्ण, कामोद्दी पतिक साथ ब्रह्मकीड़ा कृत समप पङ्ककी सुगन्धसे प्रमोदित हो कर प्रफुल्ल पत्तीको ठोड़ रहा है ।

कल्याणी—सम्पूर्ण ज्ञातीय कल्याणीका प्रह, भ श मीर म्यासस्वर पङ्कम है । इसमें सीबोटी मूच्छना और काम मन्त्राका प्रयोग होता है ।

व ध नि स रि ग म प ।

मूर्ति—गीरवर्ण, कौमङ्गांगी, विलासप्रिया, काम्ता नुरका, भक्तिमृनुभाषयुक्ता, बटाङ्कना कल्याणी मनवरत धारों मीर विवासिल नयनोंसे देख रही है ।

कामोद्दी प्रहाङ्ग भादि समस्त विषय कल्याणाक समान कह गय है ।

प ध नि स रि ग म प ।

मूर्ति—प्रकटित धम्यक कुसुमक समान मनोहर गीरवर्ण, हस्तसञ्जावमस शब्दायमान ककुब्जोसे विभू पिता, कामोद्दी कान्दमाक समान शुद्धवर्ण गङ्गमुक्ताको माना पहले भाङ्कठ पर्वतक निचर पर बैठी है ।

नाटिका—बहुविध गमकाण्डित सम्पूर्णज्ञाताया नाटिकाका प्रह भ ७ मीर म्यासस्वर पङ्कज है । इसमें उत्तर मन्त्रा मूच्छनाका प्रयोग होता है ।

स रि ग म प ध नि स ।

मूर्ति—विचित्र लनाभरपौस मूर्ति, भक्ति उत्कृष्ट मनोहर वस्त्र पहने हुए, दयाङ्गी नाटिका गीत और तालना मीर मन दिये रङ्गाङ्गयमें मूख्य कर रही है ।

सारङ्गो—गाम्भार मीर पैबतहोमा भीङ्कजज्ञातोया सारङ्गोका प्रह, भेश मीर म्यासस्वर पङ्कज है । इसमें सीबोटी मूच्छनाका प्रयोग होता है ।

स रि ग म प नि स ।

मूर्ति—रङ्गप्रिया, सारङ्गो दृङ्गतासे कबरोबन्धन मीर हाथमें बीणा लिये एक सन्धिक साथ कल्पतरुके नीचे बैठा है ।

दाम्यारी—सम्पूर्णज्ञातीय दाम्यारीका प्रह, भ श मीर म्यास स्वर पैबत है । इसमें पीरबी मूच्छनाका प्रयोग होता है ।

घ नि स रि ग म प ध ।

मूर्ति—श्यामाङ्गी नट्टामिता दाम्यारी पुण्य तोङ्गे को तैवार हो कर एक सन्धिक हाथ पङ्क कर इस प्रकारसे विचरण कर रही है कि सहसा ईशनेसे मालूम होता है माना नृत्य कर रही है । (लोकोत्पत्ताकर)

नारदतीर्थाक मन्त्रे रग रमिणी ।

मानव मन्त्रार, भी, पन्तल, हिन्दोड मीर कर्माड ये छः राग हैं ।

धानसी, मासतो रामद्विदि, सिर्युङ्गा, भाशाबरी मीर मीरपी ये छह माङ्कपरागकी स्त्रियां हैं । बेसा बळी, पुरवा कताङ्गा, माधवी कोङ्गा और केदारिका ये छह मन्त्रकी पत्नियां हैं । गाम्यारी, सुमगा, गीरी, कौमारो, बन्वारी मीर वैरागी ये छह भीरायकी मायां हैं ; तुङ्गे, पंचमो जडिता, पञ्चमञ्जरी, गुञ्जरी मीर विनावा ये छह बसन्तकी रुहिनियां हैं, मानवी, वीरिषक, देवकारो, गादिङ्गा, बराङ्गी मीर मरदहा, ये छह हिन्दोसकी सङ्घर्षियां हैं तथा नाटिका, मृगालो, रामकली, गङ्गा, कामोद्दी मीर कल्याणी ये छह कर्माडका जाया कही गइ हैं ।

मानव मूर्ति—सुन्दरी प्मगियों द्वारा शुभितपक्व, शुङ्कपशाक समान श्यामवर्ण, कुण्डलपाटा, पुरधारोंसे

शोभित और अति प्रमत्त मालवराग प्रदोष कालमें सङ्गोत शालामें प्रवेश कर रहा है।

धानसी—श्यामाङ्गी, सुकेशी, क्षीणकटी, अम्बुजवत् रमणीयवक्षता और नीलोत्पलके समान नयन-विशिष्टा धानसी ईपत् हास्यके साथ कानोंमें नीलोत्पल धारण कर रही है।

मालसी—विचित्राङ्गी मालसी गलेमें सुन्दर मुक्ताहार पहने दोनों हाथोंमें दो पद्म लिये हुए मनोहर दृष्टिसे देख रही है।

रामकिरी - चन्द्रानना, तपे सोनेके समान वर्णयुक्ता, कमलकर्णावतंसा रामकिरी एक हाथमें पुष्पधनु और दूसरे हाथमें अनेक पुष्पशर धारण किये हुए हैं।

सिन्धुडा—इन्द्रनीलमणिके समान सुन्दरवर्णा, अम्बुजाक्षी, विचित्र रत्नाभूषणोंसे भूषिता, सुकेशी सिन्धुडा प्रियतमके समीप बैठी हुई कपिलाश नामक यज्ञ वजा रही है।

आशावरी—जवाकुसुम सदृश रक्तवस्त्र पहन कर नाट्यशालामें आई हुई अतिरसिका आशावरी दोनों हाथोंमें नीलोत्पल धारण किये हुए शोभित हैं।

भैरवी—पूर्णचन्द्रमाके समान मनोहर प्रभा विशिष्ट मृगोके समान सुचारुनयना कोकिलके समान मधुर स्वरसे लोगोंका मन हरण कर रही है।

मन्दार—विहारशोल, सुन्दर, योपित्प्रिय, अति धार्मिक, सुस्थभाषयुक्त, अत्यन्त कामातुर, पिंगल नेत्र, सुवेशप्रिय मन्दारराग सबके लिये प्रिय।

बेलावली—विचित्र आभूषणोंसे विभूषित, बाला बेलावली कवरीमें चम्पक-प्रसून माला धारण किये हुए प्रियतमके समागमकी आशासे सङ्केतित प्रफुल्ल-कुसुम मौरभसे आमोदित लता-कुञ्जमें अवस्थान कर रही है।

पुरवी—दूर्वादलके समान श्यामवर्णा, सकामा पुरवी एकान्तमें बैठी हुई कुचकुम्भ युगल पर अति कमनीय पतावली रच रही है।

कानडा—तन्वी, विभूषितागो कानड़ापतिके विरहसे कातर हो कर मस्तक पर जटायुक बेणी धारण किये वास्पाकुल नेत्रोंसे अशोचवृक्षके नीचे मानो हेमलता-सी पड़ी हुई है।

माधवी—विजलोके समान प्रभायुक्त, चञ्चल नयना, अति सुन्दरी पति-सुहागिनो माधवी माधवीलनाकुञ्जमें मत्तमातंगोकी तरह कान्तका मुख चूम रही है।

कोडा—अति सुन्दरी, स्त्रीनृत्यकलामें निपुण, अति पवित्रदेहा, कुटिलनेत्रा, विहारगे अति दक्षा कोडा पतिके वाई ओर बैठी हुई है।

केंदारिका—नीलवर्णा, सुवृत्तपयोधरा केंदारिका स्नान करके आर्द्र वस्त्र धारण किये हुए हैं और केशोंसे मनोहर जलविन्दु पड रहे हैं।

श्रीराग—मूर्त्ति पूर्ववत्।

गान्धारिका—अति विचित्राङ्गी, सुगन्धप्रिया, नृत्य गीतमें अनुरक्ता गान्धारिका प्रदोषके समय एक हाथसे गलेसे लिपट कर दूसरे हाथसे वीणा धारण किये हुए है।

सुभगा—कविताके रसको समझनेवाली सुभगा अनेक प्रकारके रसमय पदार्थों द्वारा कौतुक कर रही है।

गोरी—श्यामा, दिव्यरूपा रमवती, प्रसन्नचित्ता, शिवकी सीमत्तिनी गोरी कोकिलकी भांति काकली-स्वरसे विविध प्रकारके गान गा रही हैं।

कौमारिका—विचित्राङ्गी राज-विलास-वेशधारिणी कौमारिका निर्मल कौमुदीके आलोकसे अत्यन्त दृष्ट-चित्ता हो कर भगवतीकी पादसेवा कर रही है।

बल्लारी—बेणी बांधे हुए उत्तम अंगवाली, पीले रंगके वस्त्र और चोली पहने हुए, तपे सोनेकी कांची और हार पहने हुए बल्लारी सिन्धु लावण्यसे लोगोंका चित्त-विनोद कर रही है।

वैरागी—मनस्विनी वैरागी मनस्तापसे सन्तप्त हो कर एक दृष्टिसे देखती हुई बारबार दीर्घान्निश्वास लेती हुई वैराग्यके लक्षण प्रकट कर रही है। सूक्ष्मबुद्धि पण्डितोंने वैरागीकी मूर्त्ति इसी प्रकार बतलाई है।

वसन्तराग।

इसकी मूर्त्ति—रत्नाकर-वर्णित मूर्त्तिके समान हैं।

तुडो—जवाकुसुमके समान रक्तवर्णा, अति सुशीला तुडो गलेमें मुक्ताहार और दोनों हाथोंमें दो चुतांकर धारण करके मनोहर नृत्य कर रही है।

पञ्चमी—पञ्चम्याया, पञ्चम येवमं अर्थात् गान्धर्व्यं वेदमं
अभिन्न पञ्चमी पैरौं नूपुर पहने नृत्य करनेकी इच्छासे
स गीत-समामें मायकीके साथ गम्भीरतापूर्वक बैठा है।

छन्दिता—चन्द्रानना, अद्वितीयप्रमेया, बरांगना, श्रीङ्गा
भीर रतिके समय प्रति चोरभावा छन्दिता प्रातःकाल
ठठ कर क्लम सम्हाल रही है।

पटमञ्चप—श्यामा सुवेशो पीनस्तनी सुरूपा पर
मञ्जरी पतिक विरहस अत्यन्त दुःखित हो कर भूमि पर
शयन करनेके कारण सखियोंके समस्त परिहासास्वप्न ही
रही है।

गुर्जरौ—मृत्युनक्षत्रमें अभिन्न गुर्जरौ प्रदोषके समय
स्वामिके पास जानेकी उत्सुक हो कर कर्णोत्पन्नसे
मनो हुए मधुमत्तका मनोहर मयुर गुञ्जन् भवषण कर
रही है।

विभाषा—अति मनोहारिणी स्वर्णहारौसे भूषिता
भीर समस्त भावाभोगें कुञ्जविभाषा अत्यन्त विधे
कनाके साथ अपने शिष्योंकी सहोदरगायत्री शिक्षा है
रही है।

हिन्दोल—झींझा विन्नासस भूमि पर पड़ा हुआ भीर
रक्षी समय सखियों द्वारा उडाया हुआ हिन्दोल राग
गीत-रससे विरह्य रसिकों का मन मोहित कर रही है।

मयूरा—मयूरी रागिणी मयूरका कोकरक सुननेके
छिय उत्सुक और मयूर देख कर अति आनन्दिता हो कर
मयूरोंके साथ सबदा नृत्य करना पसन्द करती है।

दोषिका—रक्षपुराका माञ्जस सुशोभिता भीर अक्षय
पक्ष पहने हुए दोषिका सोमन्तमें सिन्धूर लगा कर
सम्पन्नाके समय प्रदोष हाथमें छिय घटमें प्रवेश कर
रही है।

देशकारी—देशकारी सखियोंके साथ एकान्तमें बैठी
दूर दृष्यमें अपने स्वर्णों पर लगे हुए नारजुनका हाग देख
रही है।

पाहिङ्गा—पाहिङ्गा पतिके विशेष-अमनका बात सुन
कर प्रेमानुपगत अत्यन्त कातर हा कर पतिक अत्य
युगल पकड़ कर उनसे विद्वेज ज्ञानका मन्त्रा कर
रही है।

बराङ्गी—पतिके विरहस अति हृष्टाया, अधुपूर्ण

लोचना, दुःखित बराङ्गी मौस पक्ष पहन कर जमीन पर
खोद गई है और पतिक मनुराय-मरे पक्षोंका स्मरण
कर रही है।

माखटौ—मारहटौ श्रीङ्गाक समय पतिक सहसा
रूप हुए प्रथम अपरध पर मानिना बननेकी इच्छा
होने पर भी अत्यन्त सरलतासे अभिमान न कर के
केवल रोदन कर रही है।

क्याट राम।

भ्रंतमुकुट भारी, मयूरकण्ठक समम सुन्दर शरीर
कामिचिन्त्रिण कर्णाट राग घोड़े पर सवार हो कर
तत्र तत्रवार हाथमें सिधे शिकारक सिधे जा रहा है।

रामकञ्जोकी मूर्त्ति—अति जावणपयती, कठुणाभ्रिन्त्रिण,
अनेक सुगन्धित पुष्पों द्वारा इष्टदेवका पूजार्थ निरल राम
कञ्जो सर्षदा 'भी राम राम' इस महामन्त्र का
रही है।

गङ्गाकी मूर्त्ति—श्लोणकटी, पृहभित्तम्या, पीनस्तनी,
नृत्यगीतादि कलाभोगें विपुला गङ्गा नृत्यगीतादि द्वारा
सबसे मनको विमोहित कर रही है।

कामोदोत्री मूर्त्ति—इतका वर्णन पहले किया जा
चुका है, इसलिये यहाँ फिरसे लिखना व्यर्थ है।

कल्याणीकी मूर्त्ति—शरीरके सावण्य और झींझासे
अत्यन्त सुशोभना कल्याणी भगन घटमें नृत्य कर रही है
और इससे अङ्गमें पहने हुए कपूर नूपुर और शु गङ्गा
का अत्यन्त मनोहर चरनि निकल रही है।

इन्मन्मथानुसार राग रागिणियोंका वर्णन किया
जाता। अण्णाय सङ्कोतक विद्वानने उह राग भीर
उनका छह-छह रागिणियों इस तरह कुछ राग-रागिणियों
की संख्या ४२ बताइ है। परन्तु इन्मन्मथानुसार छह राग
भीर प्रत्येककी पाँच पाँच रागिणियों कल्पित हुए हैं। इस
छिय उनक मतसे राग-रागिणियोंका संख्या ३६ होती है।

उनक नाम इस प्रकार हैं—मैरव मालय कीर्तिक, हिन्दोल,
दोषक, भी भीर मेघ ये छह पुरुष राग, तथा मध्यमारी,
मैरवी, यगावी, बराटिका भीर सैन्धवी ये पाँच मैरवीकी,
तोड़, अम्पायवी, गीरी, गुणकरा और ककुभा ये पाँच
कीर्तिककी धैर्यायवी, रामचिरी, देगाव्या, पटमञ्जरी और
सविता ये पाँच हिन्दोलकी; कदाटी, कामका, देगा,

कामोदी और नाटिका ये पाच दीपककी, वामन्ती, मालवी, मालती, धनामिका और आशावरी ये पाँच श्रोकी तथा मन्दारी, देशकारी, भूयाली, गुजरी और टट्टा ये पाँच मेघ रागकी खिया हैं।

मेख ।

मैरव—मैरवके स्वरग्राम आदि पूर्ववत् हैं।

मध्यमादी—सम्पूर्णजातीया मध्यमादीका ग्रह, अंश और न्यास स्वर मध्यम है। इसमें मध्यमादी मूर्च्छनाका प्रयोग होता है। ऋषभ-धैवतहीन औडव जातिमें इसकी गिनती हो सकती है।

म प ध नि स रि ग म अथवा म प नि स ग म ।

मूर्त्ति—स्वर्णवर्णा, कमलापताक्षी, कुंकुमलितवेहा मध्यमादीका स्वामी उसे प्रसन्नताके साथ गाढरूपसे आलिङ्गन करके चुम्बन कर रहा है।

मैरवी, बंगाली, वराटी और सैन्धवीके स्वरग्रामादि पूर्ववत् हैं।

मालव-कौशिक ।

सम्पूर्णजातीय मालव-कौशिकका ग्रह, अंश, न्यास-स्वर पङ्क है। इसमें उत्तर मन्द्रा मूर्च्छनाका प्रयोग होता है।

स रि ग म प ध नि स ।

मूर्त्ति—अतिवीर, वीरसमाजमें वीर्यप्रकाशक, वीर-पुरुषोंसे परिचेष्टित, लोहितवर्ण मालव कौशिक रागके हाथमें एक लाल रंगकी यष्टि और गलेमें शत्रुओंके मुण्डोंकी माला शोभित है।

तोड़ी—तोड़ीके स्वरग्राम आदि और मूर्त्ति पूर्ववत् है।

खम्बावती—पञ्चमहीन पांडवजातीय खम्बावतीका ग्रह, अंश और न्यासस्वर धैवत है। इस रागिणीमें पौरवी मूर्च्छनाका प्रयोग होता है।

घ नि स रि ग म ध

मूर्त्ति—सौन्दर्य और लावण्यसे परिपूर्णा, कौंकिल-के समान मिष्टभाणिनी, प्रियवादिनी, गानप्रिया अति रसवती मालव-कौशिककी पत्नी खम्बावती श्रोताओंको अत्यन्त आनन्द पहुँचाती है।

गौरी—स्वरग्रामादि पूर्ववत् ।

मूर्त्ति—श्यामा, अति मधुर-मृदुभाणिनी गौरी अति रमणीय आम्र-मुकुल द्वारा कर्णभूषण बना रही है।

गुणकिरी—स्वरग्रामादि और कौतुहलपूर्णा श्रेष्ठ मूर्त्ति पूर्ववत् ।

ककुमा—ग्रह, अंश और न्यासस्वर धैवत है। यह रागिणी शृङ्गाररसमें ही गाई जाती है और इसमें उत्तरायता मूर्च्छनाका प्रयोग होता है।

ध नि स रि ग म प ध ।

मूर्त्ति—पञ्चकदाम पहने हुए, देखनेमें अत्यन्त सुन्दरी मनोहारिणी, चन्द्रानना, अतिदानशीला, रतिचिह्न-मण्डिता और अति परिश्रुतदेहा ककुमा इतस्ततः चञ्चल कटाक्ष पात कर रही है।

हिन्दोल ।

हिन्दोलके स्वरग्रामादि पूर्वोक्त हिन्दोलिकाके समान हैं।

मूर्त्ति—खर्वाकार, कपोतयुति, कामुक हिन्दोल सुन्दरी रमणियों द्वारा आन्दोलित झूलनेमें बैठ कर क्रीड़ा सुखका अनुभव कर रहा है।

बेलावली—वीररस-प्रधान सम्पूर्णजातीया बेलावलीका ग्रह अंश और न्यासस्वर धैवत है। इसमें सौवीरो मूर्च्छनाका प्रयोग होता है।

घ नि स रि ग म प ध ।

मूर्त्ति—नीलसरोजके समान वर्णयुक्ता, विशाल-नितम्बा बेलावली सम्पूर्ण आम्रपर्णोंसे भूषित हो कर पतिको सङ्केत करके विलास गृहमें विठा कर इष्टदेवताके समान कन्दर्पका वारम्बार स्मरण कर रही है।

रामकिरी—इसके स्वरग्राम आदि तथा मूर्त्ति पूर्ववत् है।

देशाख्या—ऋषभ-वर्जिता पांडवजातीया देशाख्याका ग्रह, अंश और न्यासस्वर गान्धार है। इसमें हारिणाश्वा मूर्च्छनाका प्रयोग होता है। कोई-कोई इसे सम्पूर्णजातिमें शामिल करते हैं।

ग म प ध नि स ग अथवा ग म प ध नि स रि ग ।

मूर्त्ति—अतिदीर्घाकारा अत्यन्त कोपनस्वभावा वीररससे रोमाञ्चित चन्द्रानना देशाख्या मस्तक पर हाथ रक्खे हुए खड़ी है।

पटमञ्जरी—पटमञ्जरीके स्वरग्रामादि पूर्ववत् हैं।

मूर्ति—पतिव्रत विरहसे विधुरा, अविह्वला, मास्य धारिणी, मूर्च्छितराज्ञी पद्यभङ्गाको प्रियसङ्गिनीयण नामा प्रकारसे आभ्यासन हे रही हैं।

भङ्गिता—श्रवण पञ्चमहीन भोजवजातोया छङ्गिता का प्रह, भग और न्यासस्वर पङ्क है। इसमें शुद्ध मध्य मूर्च्छनाका प्रयोग होता है। कोर-कोर इस सम्पूर्णजातिमें शामिल करते हैं। सम्पूर्णजातिपादिकीं क मतसे इसके प्रहृदि पङ्क न हो कर घेयत है।

स ग म प नि स मधमा घ नि स रि ग म प प ।

मूर्ति—प्रकृत सप्तम्यद् मास्यशोभिता, अत्यन्त गौर वर्णा, सुलोचना, विलासवेशधारिणी, पुषती भङ्गिता प्रभातक रामय सहसा शय्या त्याग कर शीघ्रनिभ्यास छोड़ रही हैं।

शोण ।

सम्पूर्णजाताय शोषका प्रह, म श और न्यासस्वर पङ्क है। गायकगण इसे शुद्धमध्या मूर्च्छनासे न्यास करते हैं।

स रि ग म प घ नि स ।

मूर्ति—शक्ति का टपनीसे रम्येच्छुक शोषक छद्मा वश विभा बुका देने पर भा रम्य करते समय शङ्का पत्र कोक सेनसे इससे शिरोभूषणको मणिके आठोकल अण्यकार दूर हो जानेसे वह अत्यन्त छद्मित हो रहा है।

कङ्करिकाके स्वरप्रामादि और मूर्ति पूर्ववत् है।

कानड़ा—सम्पूर्णजाताया कानड़ाका प्रह, म श और न्यासस्वर विकृत निपात् है। इसमें मार्गी मूर्च्छना का प्रयोग होता है। कानड़ा रागिणी सुननेमें अति मयुर होता है।

नि स रि ग म प घ नि ।

मूर्ति—अतिसुन्दरी कानड़ा एक हास्यमें कृपाय और हृदयमें गदगद जिये हुए रङ्गमें अवस्थित सुर चरणी द्वारा स्तूपमान हो रही हैं।

देवी—देवीके स्वरप्रामादि और मूर्ति पूर्वोक्त वत् है।

कामोदी—पीरकी मूर्च्छनायुक्त सम्पूर्णजातोया कामोदीका प्रह, म श और न्यासस्वर घेयत है। यह

रागिणी प्रायः मन्सारके पास ही पास गाई जाती है।

घ नि स रि ग म प घ ।

मूर्ति—अतिसुन्दरी, कान्ठानुसारिणी पीतवस्त्र पहने हुए कामोदी बनम झा ऊर पतिको म देख और कीर्तिक को ध्वनि सुन अत्यन्त सुखित और मयदीत मनसे दशों विशाभोका निरीक्षण कर रही हैं।

नादिका—नादिकाय स्वरप्रामादि पूर्वोक्तवत् है।

मूर्ति—सुशेना नादिका पतिक विरहसे अति विह्वल हो कर समीपस्थ एक काकस बड़े स्नेहके साध विदे शस्य प्रियतमकी कुशलवार्ता पूछ रही हैं।

श्रीराग ।

भोरगके स्वरप्रामादि पूर्वोक्तवत् है।

मूर्ति—मठारक बर्षकी भवस्था, कर्षके समान मनोहर मूर्ति, अति धीमन्कृति, रक्तवस्त्र पहने हुए, राजा के समान भङ्ग साँझवयुक्त भोरग कान्ठमें पय पङ्कवोक्त वन हुए मूषण धारण कर रहे हैं।

बासन्तो—उत्तरमन्त्रा मूर्च्छना विशिष्ट सम्पूर्ण जातोया बासन्तोका प्रहभ श और न्यास स्वर पङ्क है।

स रि प म घ नि म ।

मूर्ति—श्रीधरश्यामवर्णा, अति सुन्दरी पासन्तो भाङ्गमुकुटोच्च कान्ठकी सुशोभित चिप बैठी हैं और इसविध कान्ठो पर ध्रमर गूँध रहे हैं।

माडवी—शुद्धके समान घृतिधुक्त, कुम्भ और कुसुममाकाभो स सुशोभित, प्रमत्तमाया माडवी प्रक्षोप के समय पति द्वारा चुम्बित हो कर सङ्केतशालामें प्रवेश कर रहा है।

माडव धो—माडवभाक स्वरप्रामादि और मूर्ति पूर्वोक्तवत् है।

घानभी—श्रवणहीना, पाङ्कवजातोया घानभीका प्रह, म श और न्यासस्वर पङ्क है। इसमें उत्तरमन्त्रा मूर्च्छनाका प्रयोग होता है। यह रागिणी प्रायः धार रसमें प्रयुक्त होता है।

स ग म प घ नि स ।

मूर्ति—नयनूचक समान मनोहर श्यामवर्ण घानभी पतिके विरहसे कातर हो कर अश्रुशायित भव

स्थामें बैठो हुए नेत्रजलसे वक्षःस्थलको प्रावित्र करके पतिका चित्रपट अंकित कर रही है।

आशावरी—करणरस निर्भरा, ऋषभ गान्धार-हीना औडवजातीया आशावरीका ग्रह, अंश और न्यासस्वर धैवत है। किसीके मतसे पञ्चम-हीन पाडवजातीया आशावरीका ग्रह अंश और स्वर मध्यम है, किंतु न्यास धैवत है।

ध नि स म प ध अथवा
म ध नि स रि ग म।

मूर्त्ति—शिषिपुच्छ निर्मित अति सुगोभन वस्त्र पहने हुए, गजमुकाके हारसे गोमित, आशावरी श्रीपण्डशील-के शिषर पर बैठ कर चन्दनवृक्षसे सर्प पीच कर हाथमें वलयके समान धारण किये हुए हैं।

मेघ।

मेघके स्वरग्रामादि पूर्वोक्तवत् हैं।

मूर्त्ति—नोलोत्पल श्यामल कान्ति, चन्द्रमदूश मुख-श्री, पीताम्बर पहने, पीयूषवत् मन्द मन्द हास्यवक्त्र, वीररसप्रधान, युवा मेघराग तृपित चातक द्वारा जलकी याचना होने पर घनघटाके मध्य विराज रहा है।

मल्लारी—मल्लारीके स्वरग्रामादि पूर्वोक्तवत् हैं।

देशकारी - सम्पूर्णजातीया देशकारीका ग्रह, अंश और न्यास स्वर पडज है। इसमें उत्तरमन्द्रा मूर्च्छनाका प्रयोग होता है। यह रागिणी प्रायः वैराटीके साथ मिश्रित रहती है।

स रि ग म प ध नि स।

मूर्त्ति—यौवनके प्रभावसे सर्वाङ्गपरिपूर्णा, पीनस्तनी, चन्द्रमुखी, कमलायताक्षी, सुकेशी और सुवर्णचर्णा देश-कारी पतिके साथ नाना केलिकलारसमें मग्न है।

भूपाली—भूपालीके स्वरग्रामादि और मूर्त्ति पूर्णवत् है।

गुर्जरी—स्वरग्रामादि पूर्वोक्तवत्।

मूर्त्ति—श्यामा सुकेशी गुर्जरी चंदनपल्लव-रचित अति कोमल शय्या पर बैठ कर वीणा द्वारा श्रुति और स्वरका विभाग कर रही है।

टङ्का—सम्पूर्णजातीया टङ्काका ग्रह, अंश और न्यास-

स्वर पडज है। इसमें उत्तरमन्द्रा मूर्च्छनाका प्रयोग होता है।

स रि ग म प ध नि स।

मूर्त्ति—तपे काञ्चनके समान पीतवर्णा, वियोगिनी टङ्का नलिनी दल निर्मित शय्या पर लेटी हुई अत्यन्त विषण्णभावसे पतिकी आराधना कर रही है।

रागार्णवके मतसे रागके राग और रागिणी इस प्रकार पुं-स्त्री भेद नहीं हैं, सब राग ही कहलाते हैं। उसके मतानुसार रागोंके नाम दिये जाते हैं। यथा :—मैरव, पञ्चम, नाट, महार, गौडमालव और देशाख्य ये छह प्रधान राग हैं। बङ्गाली गुणकिरी, मध्यमादी, वसन्त, और धानश्री ये पांच राग मैरवके आश्रित हैं, ललिता, गुर्जरी, देशी, वराडो और रामकिरी ये पांच पञ्चमके आश्रित हैं, नटनारायण, गान्धार, सालग, केदार और कर्णाट ये पांच नाटाश्रित हैं; मेघ, महारिका, माल-कोशिक, पटमञ्जरी और आशावरी, ये पांच महारके आश्रित हैं; हिन्दोल, त्रिवण, गान्धारी, गौरी और पट-हंसिका ये पांच गौडमालवके आश्रित हैं; भूपाली, कुडारी, नाटिका और वेलावली ये पांच देशाख्यके आश्रित हैं।

अब सङ्गीतनारायण धृत सङ्गीतसारके मतानुसार रागकी व्याख्या की जाती है। यथा—श्री, नट, कर्णाट, वेदगुप्त, वसन्त, शुद्ध मैरव, बङ्गाल, सोम, आम्रपञ्चम, कामोद, मेघ, द्राविडगौड़, वराटी, गुर्जरी, तोडी, मालवश्री, सैन्धवी, देवकी, रामको, प्रथम-मञ्जरी, नट्टा, वेलावली और गौडी, इत्यादि राग सम्पूर्ण जातीय हैं। आदि पदमें नाटादि और भी कुछ राग शामिल किये जाते हैं।

श्री—श्रीरागका ग्रह, अंश, न्यासस्वर पडजग्रामका पडज है। यह वीर और शृङ्गाररसमें गाया जाता है और इसमें मध्यमका भाग थोड़ा ध्ववहत होता है।

स रि ग म प ध नि स।

श्रीरागकी मूर्त्ति पूर्वोक्तवत् है।

नट—नटके प्रहाशादि श्रीरागके समान है, किन्तु इसमें श्रीरागके समान स्वल्पमध्यम नहीं लगता तथा

मन्द्र निषाद, तार स रि भीर उरुट गमरुका प्रयोग होता है।

नदकी मूर्ति पूर्वोक्तयत् मठभारापयक समान है।

कपाट—कपाटका प्रह भ ग, स्वासस्वर निषाद है,

किन्तु अन्वय विषयोंमें कुछ कुछ धारागक समान है।

कपाटको मूर्ति पूर्वोक्तयत् है।

बेधगुम—बेधगुम वद्वज् श्रयम और मध्यम वे गान्धर अन्वय मठोका अवेष्टा भषिष्णाम प्रयुक्त हात हैं तिसमें श्रयम प्रह और भ ग तथा मध्यम स्वास हुआ करता है। यह बीररस-प्रधान रागोंमें गिना जाता है।

रि ग म प च नि स म।

मूर्ति—भति गीरकान्ति, बेधगुम रतिक्षिप्पा भीर रतिधमने दोषनिश्वास छात्रनी हुह अपना सामन्तिनी को मगना गार्धमें मुला कर पत्राञ्जल द्राघ बवार कर रहा है।

वमल—वमलक मरपामादि भीर मूर्ति पूर्वोक्त यत् है।

गुदमेरव—गुदमेरवका प्रह भ ग, ग्रास स्वर चैवत है। इसमें गमरुके साथ मन्द्र गांधारका प्रयोग होता है। इस रागका मध्याह्नक पहल गाना विधेय है।

च नि स रि ग म प च।

मूर्ति—नालकट, रानिगेवर् त्रिवाचन, भति प्रचरुमूर्ति, गुदमेरव अनेक पदातिवोंस घटित हा कर हाथमें हान और तलवार धारण किये हुए है।

बहुान—कीर्तिधम उपघ बगानका प्रह भ ग ग्रासस्वर पद्वज् है। इस गमरुक सहित मन्द्र गांधारक साथ कल्प और हाकररसमें गाना बाहिय।

स रि ग म प च नि स।

मूर्ति भति प्रचरुमन्वय अन्वयक, वृत्तमें अन्वय मन्वर, हास्वमुग बंगान कटामें मनाहर चंद्रहार धार गन्धमें पुष्पामावा पहन हुए ताभित है।

सोम—सोमरागका प्रह, भ ग स्वासस्वर पद्वज् है। इस रागमें ताद, निगद् और श्रयम है, पञ्चम बहुतायतस प्रयुक्त हाता है। सोमराग पंचोक्त मारम्भमें धाररसमें पाया जाता है।

Vol. XII. 73

स रि ग म प च नि स।

मूर्ति—अमृतक समान पाण्डुपर्ण, भति कामुक सोमराग सुरतके धमस कमितहस्त धामस्वपूर्णोचन हो कर माता पहन कर अपना कान्ताको अपनी छातीसे पर सुखा कर सुतेक काममें रत है।

आन्नपञ्चम—मध्यम प्रामगोवर आन्नपञ्चमका प्रह, भ ग, स्वासस्वर गांधार है।

ग म प च नि स रि ग।

मूर्ति—कारिंकयक समान मुन्वर, सर्पगिमें चदन छपन किये हुए आन्नपञ्चम बोणाक साथ गान करके श्रेष्ठ राग स्मृको पत्रिष्ठ कर रहा है।

कामोद्—बहु गमकान्धर कामोद्का प्रह, भ ग, स्वासस्वर पद्वज् है। यह राग वामार्धक समय कदम और हास्वरसमें पाया जाता है।

स रि ग म प च नि।

मूर्ति—भूगन्धमें पहल हुए कामोद् ग गाके कितारे बैठ कर हाथमें वटारामाता मिये हुए इक्ष्मल उप रहा है।

मघ—चैवत प्रहांग्वासयुक्त मघराग पर्वक भाग मम गाना जाता है। इसमें मन्द्रस्वरका प्रयोग होता है।

च न स रि ग म प च।

मूर्ति—पीताम्बर पहन हुए, घन मेघक समान मोल पर्ण नाता आभूषणोंस विभूषित मघराग अपना प्रण विनोक साथ पर्वकु पर बैठा हुआ प्रेमासाय कर रहा है।

द्रविडु माड—द्रविडुगीडका प्रह, भ ग, स्वासस्वर निषाद है। परंतु इसमें पद्वज् और पञ्चमका बहुतायत स प्रयोग हाता है। यह राग भषिष्णर रातिको वार म्ठ गाररसमें हा गाया जाता है।

नि स रि ग म प च नि।

मूर्ति—विषुम्भान्न गुणक द्रविडुगीडका वर्ण चन्द्रमा क समान मनाहर है, कुञ्जिकन गंधे तक मन्धित है, गन्धमें पुष्पहार है हाथमें एक समूचाभ अरविन् ताभा पा रहा है।

पराटा—पराटाका प्रह भ ग स्वासस्वर पद्वज् है।

एक प्रहरके मध्य इमकी गानविधि है । मूर्त्ति पूर्वोक्त-
वत् है ।

गुर्जरी—गुर्जरीके स्वरग्रामादि और मूर्त्ति पूर्वोक्तवत्
है । विशेषतः यह रातको शृङ्गाररसमें गाई जाती है ।

तोडिका—तोडिकाका प्रह, अंश, न्यासस्वर मध्यम
है । यह मध्याह्नके समय शृङ्गार और वीररसमें गाई
जाती है ।

म प ध नि स रि ग म ।

मूर्त्ति—प्रफुल्ल पङ्के रहके सदृश लोचनयुक्ता तोडिका
गलेमें नीलकमलकी माला पहन कर मृगनाभि हाथमें
लिये हुए वनके निकटवर्ती प्रदेशमें भ्रमण कर रही है ।

मालवश्री—मालवकौशिकसे उत्पन्न मालवश्रीका
अंश, प्रह, न्यासस्वर पडज है । यह मगधतीकी प्रीति-
वर्द्धन क्रिया करती है ।

स रि ग म प ध नि स ।

मूर्त्ति—श्यामा, कशाक्षी, मृदुस्वभावा, मालवश्री
विल्ववृक्षके नीचे बैठकर कुछ नीलपद्मोंके दल हाथमें
लिये झोड़ा कर रही है ।

सैन्धवी वा सिन्धुडासैन्धवी पञ्चमसे उत्पन्न हुई
है । इसका प्रह, अंश और न्यासस्वर पञ्चम है । यह
रागिणी मध्याह्नकालके बाद कचण और शृङ्गाररसमें
गाई जाती है ।

प ध नि स रि ग म प ।

मूर्त्ति—इन्दीवरश्यामा, आकर्णतयना, सुकेशी और
नाना अलकारोंसे विभूषिता सैन्धवी प्रियतमके पास
बैठी हुई कलास नामक एक यन्त्र वजा रही है ।

देवकी वा देवकृति—देवकृतिका प्रह, अंश, न्यासस्वर
पडज है । यह सर्ग श्रुतुओंमें सब समय गाया जाता है ।

स रि ग म प ध नि स ।

मूर्त्ति—श्यामा देवकृति उद्यानमें एक सखीका हाथ
धामे हुए पुष्प चयन कर रही है ।

रामकी—रामकीके स्वरग्राम आदि तथा मूर्त्ति पूर्वोक्त
रामकीके समान है ।

प्रथममञ्जरी—इसके स्वरग्रामादि तथा मूर्त्ति पूर्वोक्त
पटमञ्जरीके समान है ।

नट्टा—इसके स्वरग्रामादि तथा मूर्त्ति पूर्वोक्तवत् है ।

वैलावली—स्वरग्रामादि और मूर्त्ति पूर्वोक्तवत् ।

गौडी—गौडीका प्रह, अंश और न्यासस्वर पडज है ।
इसके समस्त स्वर प्रायः गमकयुक्त होते हैं और यह
वीर एवं शृङ्गाररसमें प्रयुक्त होता है ।

स रि ग म प ध नि स ।

गौरवर्णा गौडी रतिके साथ कामदेवकी हरिचन्द्रनादि
विविध उपचारोंसे पूजा कर रही है ।

नाट—नाटके स्वरग्रामादि तथा मूर्त्ति पूर्वोक्त नटके
सदृश है ।

घण्टारव—इसका प्रह, अंश और न्यासस्वर वैवत
है । यह राग सब समय गाया जा सकता है ।

ध नि स रि ग म प ध ।

तप्त काञ्चनके समान वर्णयुक्त घण्टारव तुरङ्गम-
स्कन्ध पर सवार हो कर सुवर्णनिर्मित शरासनको
उलाध कर अति भीषण घण्टारवसे शत्रुकी सेनाको
दलित करके रङ्गभूमि पर विचरण कर रहा है ।

नट्टनारायण—इसका प्रह, अंश और न्यासस्वर
वैवत है । यह राग दिनके समय गाया जाता है ।

ध नि स रि ग म प ध ।

नवोन युवापुरुष नट्टनारायण स्त्रीके वेशमें सङ्कोत-
शास्त्रमें भ्रान्तमतका निरास करके विशुद्ध ताल और
लयसे मनोहर गान कर रहा है ।

भूपति—भूपतिका प्रह, अंश और न्यासस्वर मध्यम
है । यह राग दिनमें करुणरसमें गाया जाता है ।

म प ध नि स रि ग म ।

श्यामाङ्ग भूपति मन्त्रियोंसे परिवेष्टित हो कर सिंहा-
सन पर बैठा हुआ है, दोनों ओर दो किङ्कर खड़े खड़े
श्वेतचामर बुला रहे हैं, पीछे एक किङ्कर छत्र धारण
किये हुए हैं ।

शङ्कराभरण—शङ्कराभरणका प्रह, अंश और न्यास
स्वर निपाद है । यह राग रातिके समय वीररसमें गाया
जाता है ।

नि स रि ग म प ध नि ।

शङ्कराभरण व्याघ्रचर्म पहने हुए, शरीर पर सर्पके
आभूषण धारण किये हुए और सर्वांगमें भस्म लगाये
शोभित हो रहा है ।

पाङ्कजाति—गौड़, कर्णाटगौड़, देशी, पञ्जासिका, कोलाहल, कल्लारो देशाववा शेकरी, सुस्वावती, हर्षपुरी, माघवादि, इतिहा इत्यादि राग पाङ्कजातिमें शामिल हैं। इत्यादिमें भोजपट्ट, भोम्बी, तारा, माधव गौड़, गुद्यामीरी मयुक्ती छाया और नोसोत्पन्न इन रागों को प्रत्यक्ष करना चाहिए। पाङ्कजराग गानसे संभाममे विभ्रय, भावपयकी वृद्धि और सपन्न गुणकीर्तव्य होता है।

गौड़—पञ्चमहाग पाङ्कजातीय गौड़का प्रह, अश और न्यासस्वर निपाद् है। इसमें अथम अल्पस्त स्वर मात्रामें प्रयुक्त होता है। यह राग दिनक अश्विन माग में और और शृङ्गाररसमें गाया जाता है।

नि स रि ग म प ध नि।

द्विजकुम्भोज गौड़ शुद्ध बल्य पहने हुए विभ्रय भासन पर बैठ कर गङ्गात्रल और नोसोत्पन्न द्वारा देव-देव महादेवको पूजा कर रहा है।

कर्णाटगौड़—पञ्चमहीन कर्णाटगौड़का प्रह, अश और न्यास स्वर निपाद् हैं तथा अन्त्याय विषयोंमें यह कर्णाटक समाप्त है।

नि स रि ग म प ध नि।

स्वर्णप्रम, विशालनयन, कलाकीशरमें अमिन्न, विद्वान् अति धमरमा कर्णाटगौड़ कर्णाटमात्रासे इष्टमन्त्रका जप कर रहा है।

देशी—विषगुप्तोज्ज्व विचरपरिचित देशीका प्रह, अश और न्यासस्वर अल्पम है। यह रागिणी एक प्रहरके मध्य शान्ति और कठपरसमें गाई जाती है।

रि ग म प नि स रि।

गजेन्द्रगमना, हरिपनयना, नोसोत्पन्नबर्णा, अतिप्रयुक्त नितम्बा भुजङ्गवदुर्बेणोबदा, अतिह्लासगी और पीत कुसुमराग देशी अल्पस्त मयुक्तमात्रसे हास्य कर रही है।

पञ्जासिका—शुद्ध कौमिकजाता, अल्पमबन्धिता पल्लासिकाका प्रह और अशस्वर पङ्कज है तथा न्यास कर मध्यम। यह रागिणी सब समय और और शृङ्गार रसमें गाई जा सकती है।

स ग म प ध नि स।

मनोहर न्यासमनु, बाळिका, अतिनिपुणा पल्ला सिका एक बिभ्रफलयक पर अपने प्रियतमकी मूर्ति अंकित

कर रही है, किन्तु मन्त्रु जलसे बहस्यजको प्वावित कर रही है।

कोलाहल—पञ्चमहीन कोलाहलका प्रह, अश और न्यासस्वर पङ्कज है। इसमें मन्त्र मध्यम और चैवलका प्रयोग होता है, जिसमें गमः शिवत मध्यमका प्रयोग अधिक पाया जाता है, यह रागिणी कलहके समय ही गाई जाती है।

स रि ग म प ध नि स।

मूर्ति—उत्कृष्ट पुष्कोदिकके समान सुकण्ठयुक्त, कल्याण, बंशोष्पनि सुमनिक सिप इरसुक, तथय कोडा हल नास्वरसे कल्पगुण गा रहा है।

बल्लारो—चराटीकी उपान्कस्वरूप, अल्पमहीना, मन्त्र चैवत-भूषिता बल्लारोका प्रह अश और न्यासस्वर पङ्कज है। यह रागिणी शृ गाररसमें अधिकतासे प्रयुक्त होती है।

स ग म प ध नि स।

मूर्ति—श्यामा, युवक पतिसे कृडा बल्लारो सखियों द्वारा प्रकोपित हो कर भी कान्तकी तरफ पीठ किये हुए बैठे हैं।

देशाक्य—अल्पम वर्धित, तार गाभार भूषित देशाक्य का प्रह अश और न्यासस्वर पङ्कज है।

स ग म प ध नि स।

मूर्ति—बाहुयुद्धमिप, विशालबाहु, अल्पुष्पदेह लर्ण-पर्ण अतिवर्धस्वी देशाक्य राग वाहबाही पानिके कारण रोमाञ्चित हो बडा है।

शाबेरी—पञ्चमहीन शाबेरीका प्रह और अशस्वर मध्यम है, न्यासस्वर चैवत है। यह रागिणी मन्त्रमध्यमा और स्वरपङ्कज है। यह कठपरसमें गाई जाती है।

म ध नि स रि ग म।

मूर्ति—उदयवल्गर्णा गजमुक्ताका हार पहने हुए शाबेरी भोजवज पर्यायक शिखर पर बैठ कर चम्पनपूरसे मुर्वग षोच कर हाथोंमें वलयकी तरङ्ग पहन रही है।

सुस्वावती—गमकयुक्त गान्धार मध्यमान्वित पञ्चम-हाला सुस्वावतीका प्रह, अश और न्यासस्वर चैवती है। यह रागिणी रात्रिके समय शृङ्गाररसमें गाई जाती है।

ध नि स रि ग म प ध ।

मूर्त्ति—कुन्दकुमुम-सदृशा, सुन्दरदगना सुन्धावती ग्रन्थकालीन मेवके समान शुभ्र वस्त्र पहने हुए ब्राह्मणी-की सेवामे निमग्न है ।

हर्षपुरी—मालव-कौशिकमे उत्पन्न पञ्चमवर्जित हर्षपुरीका प्रह, अंश पडज है तथा न्यास ध्रैवत । यह रागिणी विजयके समय गाई जाती है ।

स रि ग म य नि ध ।

मूर्त्ति—विलेपनद्वयसे ढूढ़ अमुराग रखनेवाली, सुध्रस्वभावा, मनोहरमूर्त्ति, प्रौढ़ा हर्षपुरी रात्रिके अन्त-मे रमण करनेके बाद पतिके मुंहकी तरफ टकटकी लगाये देख रही है ।

माधवादि—धैरतहीन माधवादिका प्रह, अंश और न्यासस्वर पञ्चम है । इसमें मन्द्रमध्यमका प्रयोग होता है और यह मैवाच्छन्न त्रिचममे गाया जाता है । कोई कोई इसे मल्लारी कहते हैं ।

प नि स रि ग म प ।

मूर्त्ति—कमनीय मूर्त्ति-विशिष्ट गौरवर्णा । वृद्ध माधवादि राग कृष्णाजिन आसन पर बैठ कर नारद और तुम्बुरु गन्धर्वाके साथ सङ्गीतालाप कर रहा है ।

हुञ्जिका—पञ्चमवर्जित हुञ्जिकाका प्रह, अंश और न्यासस्वर ध्रैवत है । इसमें गमकयुक्त पडज और मध्यमका प्रयोग देखा जाता है । यह रागिणी तृतीय प्रहरके बाद गृह्णारसमे गाई जाती है ।

ध नि म रि ग म ध ।

मूर्त्ति—नवदूर्वादल-श्यामल हुञ्जिकाका पति बल दिखा कर हुञ्जिकाको विवस्त्रा करके अपनी जट्टा पर बैठा कर दाहिना हाथ गलेमे डाल बायें हाथमे कुच मर्दन कर रहा है ।

श्रीकण्ठिका—गान्धारहीन श्रीकण्ठिकाका प्रह, अंश और न्यासस्वर ध्रैवत है । यह रागिणी वीररसमे गाई जाती है ।

य नि स रि ग म प ध ।

मूर्त्ति—श्याम, स्त्री श्रीकण्ठिका पतिके माजे हुए केश अपने हाथसे हिला कर सुन्ना रही है और उससे हाथके सुवर्णवलय सुमधुर ध्वनि कर रहे हैं ।

मौली—पञ्चमहीन मौलीका प्रह, अंश और न्यास-स्वर गान्धार है । यह रागिणी प्रातःकालके समय देव-स्तुतिमें गाई जाती है ।

ग म ध नि स रि ग ।

मूर्त्ति—मनोहारिणी मौली रात्रिके समय अपने पुत्रको पतिका गोडमें बार बार देती हुई नाना प्रकारके मधुरालापसे आमोद कर रही है ।

नारा—मध्यमवर्जित नाराका यह अंश और न्यास-स्वर निषाद है । यह रागिणी युद्धके समय दिन रात गाई जा सकती है ।

नि स रि ग प ध नि ।

मूर्त्ति—तद्वित्सम अरुणवर्णा वस्त्र पहने हुए ताग नाट्यमन्दिरमे संतानोंको नृत्यके विषयमें नाना प्रकारके हाव भावादिकी शिक्षा दे रही है ।

मालवगौड़—पञ्चमहीन मालवगौड़का प्रह, अंश और न्यासस्वर मध्यम है । यह राग वीररसमे प्रयुक्त होता है ।

म ध नि स रि ग म ।

मूर्त्ति—विप्रकुलोद्भव, श्यामवर्णा, युवा मालव गौड़ वीणा हाथमें लिये हुए नारदसहिताकी नाना कथाओंको आलोचना कर रहा है ।

आभीरी—ऋषभहीन आभीरीका प्रह, अंश, न्यास और स्वर ध्रैवत है । यह रागिणी शोकके समय गाई जाती है ।

ध नि स ग म प ध ।

मूर्त्ति—गोपवल्गुमा आभीरी दक्षिमन्धन कर रही है, जिससे उसकी मेखला और कङ्कण अस्फुटध्वनि कर रहे हैं तथा उसके मुखारविन्दसे स्वेदाम्बु भर रहा है ।

मधुकिरी—गान्धारहीन मधुकिरीका प्रह, अंश और न्यासस्वर ध्रैवत है ।

ध नि स रि ग म प ध ।

मूर्त्ति—मधुकिरीका सर्वांग पुष्पोंसे आच्छादित, चक्षु अर्द्धमुद्रित, वर्ण चम्पक सदृश, करतल अति रमणीय और सुलकमल पर मधुके लोभसे भ्रमरनिचय मत्त हो कर मधुरध्वनि कर रहे हैं ।

छाया—मध्यमरहित छायाका प्रह, भ श भीर न्यास स्वर पङ्कज है। यह रागिणी गृ गार भीर बाररसमें गाई जाती है।

स रि ग म प ध नि स।

मूर्त्ति—नासात्पल इच्छामा, मुककजा, द्विगम्यरा सूर्यमिया छाया मलेमें सुयकान्तमणि धारण किध हुए भलि प्राण्य भाकार धारण किध हुए है।

मध्यमादि महार, इगपाकी, मानव हिम्बोज, भैत्य, नागध्वनि, गीम्वकिरो, ललितता, छाया चेलावली, प्रनाप सैन्धवी इत्यादि राग रागिणियों भीड़व जातिमें गामिम है। धादि पदस मुककगोत्र, गांध्यार पुनिम्दी भीर मपरंगिका प्रहम को वर है। व्याघिनाद, गङ्गाग भय नाग, प्रहगालि भीर भघ उपागनके मिधे भीड़व राग गाना बादिप। इसमस प्राया समाक स्वरप्रामादि पहल मिधे जा युक्त हैं हा, जो महो मिले गय उनका विवरण नाथे दिया जाता है।

नागध्वनि—इन्द्रादेवास उत्पन्न अथवा पञ्चमहोन नागध्वनिका प्रह भ श भीर न्यासस्वर पङ्कज है। यह दिनको गाया जाता है।

स ग म प ध नि स।

मूर्त्ति—द्विगुणक समान कोहितवर्ण, शुद्ध यत्र पहल हुए, गङ्गापिजेता युवा, गङ्गाकुमाङ्गय मतमात गण्डे समान गभीरनादी नागध्वनि सुननेमें धनि सुकनायक इना है।

गोम्वकिरो—अथम-पेयतहोन गोम्वकिराका प्रह भ श भीर न्यासस्वर पङ्कज है। यह प्रातःकालमें गृ गार रसमें गाया जाता है।

स ग म प ध नि स।

मूर्त्ति—श्यामाङ्गो गोम्वकिरो रमयात्सुका हो कर भलि कोयल पुत्रगण्या पर वेडा हृद कास्तक भागमनकी यमोक्षामे तल्लता इदि दाहा रहा है।

तुलसीगीड़—अथम पञ्चमहोन तुलसीगीड़का प्रह, भ श भीर न्यासस्वर निपाद है। यह राग वार भीर शू माररसमें गाया जाता है।

नि स ग म प ध नि।

मूर्त्ति—भद्वचवर्ण तुलसीगीड़ सर्पाङ्ग पामन हृद हुए
Vol. 5/2, 74

तथा मस्तक पर उन्नीव धारण क्रिये हुए पाठ पर सवार हो कर गङ्गाध्वनि कर रहा है।

गांध्यार—पङ्कज-पञ्चमहोन गांध्यारका प्रह, भ श भीर न्यासस्वर मध्यम है। यह राग कृष्णरसमें ही प्रयुक्त होता है।

म प ध नि रि ग म।

मूर्त्ति—अलि धावगुदेर गांध्यार मस्तक पर ऋटा धारण क्रिये हुए, गीरकवमन पहल हुए, गसमें योगपट्ट शाळ कर तपसोक घसमें मालि मूव कर ध्यानमें मन् है।

पुनिम्बिका—गांध्यारपञ्चमहोना पुनिम्बिका प्रह भ श भीर न्यासस्वर पङ्कज है। यह रागिणा सप्तस्त रसोंमें गाई जाती है।

स रि म प ध नि ध।

मूर्त्ति—इन्द्रावरुणि पुनिम्बिका मुकाभीस धिभू पित भीर पृष्णमसपोस भाष्यरहित हा कर करकात्त-योवा बजा रही है।

मेघरङ्गो—अथमपेयनयगिता मपरङ्गोका प्रह, भ श भीर न्यासस्वर पङ्कज है। यह रागिणा दिनको भीररसमें गाई जाती है।

स रि ग म नि स।

मूर्त्ति—मेघरङ्गो उपचमने जा वर नूतन कर्णिकार पुष्पीक कर्णभूयण भीर पङ्कजपुष्पीका ममा धारण करक काशा पहनका एक नारिकाको ध्यान हाथमें लिप हुए उस धम नाम सिला रहा है।

इस सब राग रागिणियोंके संबोधन भनस मिध राग-रागिणियोंके अथम हुए है, जिनमें कुछ मिध राग-रागिणियोंका यहाँ उल्लेख किया जाता है।

मिधराग भीर रागियो।

इन्द्राध्या भीर मत्तारोक संवागत सौरठी, नर भीर मत्तारके महयोगन नरु मलिका युञ्जरा भीर इन्द्राकी मिधयन रामध्या, तोड़ा भीर पत्तासिकाक संवागत वाररु, इन्द्राध्या भीर भागापराक योगल पन्कार, धा भीर नरके महयोगल गौरा, नर धार कर्णाटक मिलनन कल्याणी, कपाट भीर नरयक पागन कर्णाटिका मन्मारा, खैन्धवी भीर ताङ्गाक महयोगन भागापरा तथा सैन्धव

और तोड़ीके संयोगसे सुखावतो इत्यादि मिश्रराग और रागिणियोंकी उत्पत्ति हुई है ।

रागोंके गानेका समय ।

सङ्गीतदर्पणके मतसे दिनमें जिस समय जो राग गानेका विधान है, उसका वर्णन किया जाता है । मधु-माधवी, देशाख्या, भूगली, भैरवी, वेलावली, मल्लारो, वल्लारो, सोमगुर्जरी, धानश्री, मालश्री, मेघ, पञ्चम, देश-कारो, भैरव, ललिता, वसन्त ये राग रागिणियां प्रातः कालसे ले कर दिनके एक प्रहर तक गाई जाती हैं । गुर्जरी, काँशिक, शिवरी, पटमञ्जरी, रेवा, गुणकिरी, भैरवी, रामकिरी, सारिटी ये रागिणियां दिनके एक प्रहरके बाद दूसरे प्रहरके मध्य गानी चाहिए । वैराटी, तोड़ी, कामोदी, कुडारिका, गान्धारी, देशी, शङ्करामरण ये राग रागिणियां दिनके दूसरे प्रहरके बाद तीसरे प्रहरके मध्य गाई जाती हैं । खो, मालव, गौरी, त्रिचना, नटकव्याण, सारङ्गनट, नाट, केदारी, कर्णाटी, आभीरी, वड्डाँसी, पहाडी ये राग रागिणियां दिनके तीसरे प्रहरके बाद आधी रात तक गाई जा सकती हैं । परन्तु राजाकी अनुमतिसे सभी रागरागिणियां सब समय गानेमें कोई दोष नहीं ।

पञ्चमसारसप्तद्विनाके मतसे विभाषा, ललिता, कामोदी, पटमञ्जरी, रामकेलि, रामकिरी, वराडी, गुर्जरी, देशकारी, शुभगा, आभीरी, पञ्चमी, गडा, भैरवी, कौमारी ये पन्द्रह रागिणियां पूर्वाह्नमें, वराटी, मालवी, केन्द्रा, रेवती, धानश्री, वेलावली, मरहटा ये सात रागिणियां मध्याह्नके समय, गान्धारी, दीपिका, कल्याणी, प्रवारी, वरी, आशावरी, कान्दुला, गौरी, केदारी, पाहिडा ये रागिणियां सायाह्नमें गाई जाती हैं । परन्तु रात्रि दश दण्डके बाद सभी राग गाये जा सकते हैं । उसमें कोई दोष नहीं ।

दक्षिणात्योंके मतसे देशाख्या, भैरवी, देवरक्तदंशी, माहुसा, नक्करञ्जिका इन रागिणियोंकी प्रातःकालमें जो व्यक्ति गाता है, वह अत्यन्त सुखी होता है । सायंकालमें इनका गाना अति निन्दित है और शुद्धनट्टा, सारङ्गी नट्ट, वराटिका, छाया, गौडी, ललिता, मल्लारिका, गौरी, तोड़िका, गोड, मालवगौड, रामकिरी, कर्णाट, वंगाली ये रागिणियां चन्द्रसे उत्पन्न हैं, प्रातःकालमें इनका गान

करना अति निन्दित है, सायंकालमें गान करनेसे महती लक्ष्मी प्राप्त होती है ।

कामुदीके मतसे श्रीपञ्चमीसे लेकर दुर्गापूजा तक वसन्तराग दिनमें किसी भी समय गाया जा सकता है, कोई दोष नहीं । प्रमातमें भैरवादि, मध्याह्नमें वराटि आदि और सायंकालमें कर्णाट आदि गाना उचित है ।

इस प्रकार सङ्गीतशास्त्रके आचार्योंने गानकालका बहुविध समय निर्णीत किया है । जिस देशमें जिस प्रकार विधि बतलाई गई है, विल व्यक्तियोंकी चाहिए कि उसी प्रकार कार्य करें ।

अकालगानका दोष ।

जिस रागरागिणीका जो समय निर्दिष्ट किया गया है, उसका उल्लंघन करना सर्वनाशका मूल है । हा, श्रेणी-यद्द हो कर राजाकी आज्ञा वा रङ्गभूमिमें समबोल्लघन करनेमें दोष नहीं ।

दोषका परिहार ।

यदि कोई लोभ वा मोहवश समयका उल्लंघन करे, तो अन्तमें गुर्जरी रागिणी गानेसे समस्त दोषोंका छेड़न हो जाता है । किसीका मत है, कि अकालमें कोई राग गाने वा सुननेसे जो दोष लगता है, वह महादेवकी पूजा करनेसे दूर हो जाता है ।

ऋतु-विभाग ।

सभार्य श्रीराग शिशिर ऋतुमें, सख्खर वसन्त वसन्त ऋतुमें, सपत्नीक भैरव प्रोषम ऋतुमें, सदा पञ्चम शरत्ऋतुमें, ससहधर्मिणी मेघ वर्षा ऋतुमें तथा सपत्नीक नट्टनारायण हेमन्त ऋतुमें गानेका विधान है । सर्वदा इसी नियमके वशीभूत हो कर चलना होगा, ऐसा कोई बन्धन नहीं है । सभी राग सब ऋतुओंमें इच्छानुसार गाये जा सकते हैं । हां, इतनी बात जरूर है, कि उक्त नियमानुसार गानेसे श्रोताओंको अधिकतर आनन्द मिलता है । (सङ्गीतशा०)

रागखाडव (सं० पु०) त्नाद्यद्रव्यविशेष, खानेकी चीज ।

रागपाडव देखो ।

रागजाण्डविक (सं० पु०) रागपाडवादि प्रस्तुतकारी मोदक ।

रागचूर्ण (सं० पु०) १ कामदेव । २ खदिरवृक्ष, खैरका

वेष्ट । ३ फल्गुपूर्व, काकतुम्बरका पूर्व । ४ साहायस, काकका रस ।

रागच्छम (सं० पु०) रागेन छम्भ । १ कामर्ष्य । २ रामचन्द्र । (जि०) रागेन छम्भ । ३ राग द्वारा भाष्यम् ।

रागद (सं० पु०) रागं वृत्ति वा-क । १ तैत्तरीयुप । २ रायवाता, राग हेनेबाळा । ३ श्लेषोद्दीपक, गुस्सा उपशान्तिबन्ध ।

रागद्वि (सं० पु०) रागदा रागप्रदा भाञ्जि पक्तिः इ । मसूर ।

रागद्वय (सं० पु०) भाषिक्य ।

रागद्वय (सं० स्त्री०) रत्नद्वय, रग ।

रागद्वय (सं० स्त्री०) मूल्यवान् प्रस्तरमेव, एक प्रकारका बहुमूल्य पत्थर ।

रागद्वय (सं० पु०) रागविशिष्ट रक्तवर्णपुष्पं यत्न । १ बन्धूक, गुडनुपहरिया । २ रक्तम्बान ।

रागद्वय (सं० स्त्री०) रागयुक्तं पुष्पं यस्याः शोष । बवा ।

रागद्वय (सं० पु०) रागयुक्तः रक्तवर्णः प्रसवा पुष्पं यत्न । १ बन्धूक, गुडनुपहरिया । २ रक्तम्बान ।

रागद्वय (सं० पु०) १ अनुरागका चिह्न । २ संगीतके अनुसार योगका समन्वय ।

रागद्वय (सं० पु०) १ एक विद्यापरका नाम । २ श्लेषका अपमोक्ष, कोपको हदाना या दूर करता ।

रागद्वय (सं० स्त्री०) एक भाषिकका नाम ।

रागद्वय (सं० स्त्री०) १ शोहितवर्णयुक्तं काञ्च रंगका । २ प्रिय, प्यारा ।

रागद्वय (सं० स्त्री०) रागोका समूह ।

रागद्वय (सं० पु०) रागेन युज्यते इति युञ्-क्तिम् । भाषिक्य ।

रागद्वय (सं० पु०) रागो रज्जुरियं यत्न, नायकयोः परस्परानुरागवद्वेदाच्छयात्वं । कामर्ष्य ।

रागद्वय (सं० स्त्री०) रागस्य वनिता ज्ञेय । कामर्ष्य-को श्या रति ।

रागद्वय (सं० स्त्री०) बन्धु भादिका चिह्न या रेखा ।

रागद्वय (सं० जि०) रागो विषयेऽस्य राग मनुष्य-मस्य च । रागयुक्त, रागविशिष्ट ।

रागद्वय (सं० पु०) रागका ज्ञान ।

रागद्वय (सं० पु०) गाञ्जो गञ्जो इ ।

रागद्वय (सं० पु०) रागस्य वृत्त इव । कामर्ष्य ।

रागद्वय (सं० पु०) भाष्य द्रव्यविशेष, एक प्रकारका भाष्य पदार्थ । यह बनार और वाकसे बनता है । इसका गुण बधिकारक, छत्रुपाक वात, पित्त और कफनाशक माना गया है । (राजव०)

सुभूतक मतस—अमु, वृक्ष, वृक्ष, वृक्ष, रोचन और शोषन तथा मृष्या मूर्च्छा, ज्वर, छद्म और धमनाशक । (द्रुपुठ शब्द० ३०)

२ एक प्रकारका भाष्य, कामका सुरक्षा । इसके बनानेका तरीका—इसके मामको भीमें घोड़ा भुन कर गुड़में उस पाक करे । पाक सिद्ध होने पर उत्तार के भीर उसमें मिर्च भीर इलायची डाळ दे । इसका गुण पुष्टिकारक, बन्धुप्रद पित्त, वात अक्ष और अदक्षिताराक, स्निग्ध, शुक्र और तर्पण । इसको रागबाधक या राग-कारक भी कहते हैं ।

रागद्वय (सं० स्त्री०) मगानिजा, मैगसिका ।

रागद्वय (सं० स्त्री०) रागयुक्त रक्तवर्णं लुङ् । १ तुलाचून्, रक्तं लुङ् । २ पद्मलुङ् गौमका लुङ् ।

रागद्वय (सं० स्त्री०) रागविशिष्ट भङ्ग पत्स्या ऊर्ण । मञ्जिष्ठा, मञ्जीठ ।

रागद्वय (सं० स्त्री०) रागेण भाङ्ग्या, मञ्जिष्ठा, मञ्जीठ ।

रागद्वय (सं० जि०) रागका अनुगामी ।

रागद्वय (सं० जि०) श्लेषान्ध, भारी श्लेष ।

रागद्वय (सं० जि०) १ कञ्जु किञ्च श्लेष हो । २ जिस राग या धर्म हो ।

रागद्वय (सं० जि०) जो किसीको कुछ धर्मकी भाशा यथा कर मो न दे उस रागाक कहते हैं ।

“भासां बधवती रत्ना वा इति विदुषो जना ।
उ जैतशोभि रगाधर्ष्या वासस्तु वापरि इ”

(सध्वमन्त्रा)

रागद्वय (सं० पु०) स गातशास्त्रके अनुसार राग समूहो का भाषाय ।

रागाशनि (सं० पु०) रागेषु विषयवासनासु अशनिरिव ।
बुद्धदेव ।

रागिन् (सं० स्त्री०) रज्ज (संपृचानुसंधति । पा ३।२।१४२)
इति तच्छोलादिषु घिणुन्, यद्वा रागोऽस्यास्तीति राग-
इति । १ अनुरक्त, विषयवासनामे कंसा हुआ ।

इस संसारमें जीव दो श्रेणियोंमें विभक्त है, रागी
और विरागी । फिर इन दो मानवोंके चित्त भी दो
प्रकारके हैं । उक्त रागी मूर्ख और चतुर इन दो भागोंमें
तथा विरागीज्ञात, अज्ञात और मध्यम इन तीन भागोंमें
विभक्त हैं ।

संसारमें जिनका अनुराग है वही रागी कहलाने हैं ।
उक्त रागियोंके वार वार विविध सुख और दुःख हुआ
करते हैं । स्त्री, पुत्र, धन, पान और अभ्युदय आदि
जो कुछ पानेसे ही रागियोंके सुख आँग उन्हें न पानेसे
ही क्षण क्षणमें मरी दुःख होता रहता है । जिस उपायसे
देहिरे सुख प्राप्त हो, उसी सुखसाधन उपायसे रागियों-
को काम करना उचित है । सुतरा जो व्यक्ति सुखविघ्न-
कारी है, उसीको शत्रु और जो सुख देनेवाला हो उसी-
का मित्र समझना चाहिये । उनमेंसे चतुर रागी किसी
हालतसे भी मुग्ध नहीं होते । मूर्ख रागी ही सर्वत्र
विमुग्ध होते हैं । (वेदीभाग० १।३३ अ० २ रक्तवर्णविशिष्ट,
लाल रंगका । ३ लाल, सुर्खा । ४ रज्जनकारो, रंगनेवाला ।
(पु०) ५ तृणधान्यविशेष मडुवा या मरुरा नामक
कद्द्र । पर्याय—लाडून, बहुतरकणिश, गुच्छकणिश ।
इसका गुण तिक्त, मधुर, कषाय, शीतल, पित्तास्रनाशक
और बलकर माना गया है । राजनि० ६ छः मात्रावाले
छन्दोंका नाम । ७ अशोकवृक्ष ।

रागिणी (सं० स्त्री०) रागोऽस्त्यस्या इति राग इति डोप् ।
१ विदग्धा स्त्री । २ पुराणानुसार मेनाकी बड़ी कन्याका
नाम । ३ जयश्री नामकी लक्ष्मी । ४ संगीतमें किसी
रागकी पत्नी या स्त्री । विशेष विवरण राग शब्दमें देखो ।

रागी (सं० पु०) रागिन् देखो ।

राघव (सं० पु०) रघोरपत्यमिति रघु षण् । १ रघुके
वंशमें उत्पन्न व्यक्ति । २ श्रीरामचन्द्र । ३ अज । ४ दश-
रथ । ५ समुद्रजात महामत्स्यविशेष, समुद्रमें रहनेवाली
एक प्रकारकी बहुत बड़ी मछली ।

“अस्ति मत्स्यस्तिमिनीम शतयाजनयिस्मृतः ।

तिमिङ्गिलगिजोऽन्यस्ति तद्गिजोऽप्यस्ति राघवः ॥

(कलापव्याकरण कृद्वृत्ति १ पा० दुर्गट्टिह)

राघव—१ गणेशस्तुतिके रचयिता । २ विरहिणोमनो-
विनोदटीकाके प्रणेता । ३ वैद्यविलासके रचयिता ।

राघव आचार्य—१ इन्दिराभ्युदयकाव्य और उत्तरचम्पू-
रामायणके प्रणेता । २ तर्करत्नार्वणके रचयिता । ३ शुद्धि
दीपिका-प्रकाश नामक ज्योतिर्न्यके प्रणेता । ४ एक
विख्यात नैयायिक तथा न्यायरत्नके प्रणेता रघुनाथ
पठानीकरके गुरु ।

राघव चक्रवर्ती—कार्त्तिकीपटल, जातकसारसंग्रह और
सूर्यसिद्धान्तरहस्यके प्रणेता । सम्भवतः १५६२ ई०में
उन्होंने शोकेक प्रथम समाप्त किया ।

राघवचैतन्य—कविकल्पलता और महागणपति-स्तोत्र-
के प्रणेता ।

राघवचैतन्य (सं० पु०) एक प्रसिद्ध संस्कृत कवि ।

राघवदेव—पद्धतिकार शाङ्गधरके पितामह और गोपाल-
के पिता । ये राजा हम्भोरकी सभामें विद्यमान थे । इनके
बनाये कुछ श्लोक मिलते हैं ।

राघवदेव—गणेशशिष्य लघुचिंतन नामक मीमांसाग्रंथके
प्रणेता ।

राघवनन्दन—पञ्चपक्षा टीका नामक ज्योतिर्न्यके रच-
यिता ।

राघवपञ्चानन भट्टाचार्य—आत्मतत्त्वप्रबोध नामक न्याय-
ग्रंथके प्रणेता ।

राघवभट्ट—१ कालीतत्त्वग्रहस्य, दुर्गातत्त्व और पदार्थादर्श
नामक शारदातिलकटीकाके रचयिता । तन्त्रसारमें इनका
उल्लेख है ।

२ शाङ्गके पुत्र और महादेव सर्वज्ञ वादीन्द्रके
शिष्य । इन्होंने १२५२ ई०में न्यायसारविचार प्रणयन
किया ।

३ अर्थोद्घोतनिका नाम्नी अभिज्ञान शकुन्तलकी
टीका, उत्तररामचरितटीका और मालतीमाधवटीका
नामक तीन ग्रंथके रचयिता । ४ विख्यात वैष्णव
पण्डित । श्रीनिवासाचार्यकी सहायतासे इन्होंने ब्रज
धामका उद्धार किया ।

राजपरम्य—हस्तज्जायकोके रचयिता ।

राजपरम्य—नवद्वीपके एक राजा तथा स्मार्तसंन्यासार्णव के प्रणेता रघुनाथके प्रतिपालक । नरहीन देवा ।

राजवामन्—१ एक राजमन्त्री । उनके बगये मारुका को इकोक साहित्यदर्पण (७:४६) में उद्धृत हुआ है ।
२ सिद्धान्तकौमुदी नाम्नी सिद्धान्तसंग्रहटीकाके रचयिता ।

राजवामन्मुनि—परमार्थसारटीका और विद्यान्वैतनमन्त्री के प्रणेता ।

राजवामन्पति—पाठशुद्धरस्यके रचयिता ।

राजवामन् शर्मन्—विद्यपतीरिपि नामकी ज्ञातकपद्धति के टीकाकार ।

राजवामन् सरस्वती—छन्दोबन्धुसिद्धिकाशिकाके प्रणेता रामानन्द सरस्वतीके गुरु । ये राममद्रक भी गुरु थे ।

राजवामन् सरस्वती—यद्गुणान्तके सिष्य । इन्होंने तर्कार्थ या तस्यायुगप्रकाशिनी नामकी सांख्यतत्त्वकौमुदी की टीका, भाष्यार्थवन्त्रिका, मीमांसास्तवक, विद्यायुगवर्षिणी तथा मीमांसासूत्रदीपिति या न्यायायसौदीपिति नामके कई ग्रन्थों की रचना की ।

राजवेन्द्र—जयतीर्थकृत कर्मनिर्णयपदीकाटिप्पण, जयतीर्थकृत तत्त्वोपदेयविषयणकी टीका, जयतीर्थकृत तत्त्वप्रकाशिका नामकी भाष्यार्थार्थक प्रज्ञासूत्रभाष्यकी तन्त्रदीपिका नामकी टिप्पणी, व्यासतीर्थकृत तात्पर्यवन्त्रिका की टिप्पणी, जयतीर्थकृत न्याससुधाकी परिमञ्ज नामकी टीका, भाष्यार्थार्थकृत विष्णुतत्त्वनिर्णयकी भाष्यार्थ नामकी टीका, तर्कतात्पर्यटीकाका न्यायदीप नामक टिप्पण तथा भाष्यार्थार्थकृत प्रज्ञासूत्रभाष्यकी जयतीर्थकृत टीकाके भाष्यरूप नामक टिप्पण भाषिक रचयिता ।

राजवेन्द्र—१ अमरकोषभाष्यके प्रणेता । इनके पिताका नाम था कल्पमह । २ महाभारतदीप और रामप्रकाश नामक दो प्रथम रचयिता तथा काशीनाथके पुत्र और भवानन्द सिद्धान्त बागाजके छात्र । ये शतावधान नामके समर्थ कथात थे ।

राजवेन्द्र भाषार्थ—निपचयना नामकी परिमार्थनुवीकरणकी टीका, प्रमा नामका शब्दकोशसुमकी टीका, विपना नामका शब्दनुसारका टीका और राजवेन्द्रीय नामक

एक व्याकरणके प्रणेता । १८५५ ई०में इनकी मृत्यु हुई ।

राजवेन्द्रमुनि—वैश्वानरसिद्धान्तसंन्यासो और उसकी टीकाके रचयिता ।

राजवेन्द्रपति—१ सुषोम्नपतिके शिष्य एक प्रसिद्ध संस्कृत वाङ्मनिक । ये तन्त्रदीपिका नामक प्रज्ञासूत्रभाष्य, भगवद्गुणार्थ विवरण तथा ईश, केन, काठक छान्दोग्य तैत्तिरीय, पृथ्वारण्यक, माण्डूक्य आदि उपनिषद्की भाष्यकी रचना कर गये हैं । इसके अन्वाया जयतीर्थकृत कर्मनिर्णयकी टीका, जयतीर्थका तत्त्वोपदेयविषयण, भाष्यार्थार्थरचित प्रज्ञासूत्रभाष्यके ऊपर जयतीर्थने जिस तत्त्वप्रकाशिका नामकी टीका लिखी उस टीकाकी टीका, न्यायदीप नामक तर्कतात्पर्यकी टीका, व्यासतीर्थकृत तात्पर्यवन्त्रिकाकी टीका, परिमञ्ज नामक जयतीर्थकी न्यायसुधाकी टीका आदि प्रथम भी राजवेन्द्रके बनाये हैं । फिर किसीके मतसे शेषोक्त प्रथम रचयिता राजवेन्द्र राजवेन्द्रपतिसे भिन्न हैं ।

राजवेन्द्र शतावधान—१ ब्राह्मणके एक अद्वितीय भूतिधर पण्डित । इनके पिताका नाम काशीनाथ और माहक नाम राजेन्द्र और महेश था । विश्वकोशतरङ्गिण्योक्त रचयिता रामदेवचिरञ्जीव इनके पुत्र थे । इनके गुरुका नाम था भवानन्द सिद्धान्तबागोस । इन्होने मन्तार्थदीप और रामप्रकाशकी रचना की ।

राजवेन्द्र सरस्वती—सिद्धान्तशिरोमणि नामक वैदिकान्तक प्रथम रचयिता ।

राजवाम्बुद्वय (सं० पु०) एक प्रसिद्ध संस्कृत मारक ।
राजवामन (सं० ज्यो०) राजवल्द रामस्य खरिताम्बर्त भयन शास्त्र । रामायण ।

"सतिशिवपुण्यनि उपमाभनमारत् ।

वनासिपिद्वान्त्र वन्ति वानि भुवनि वे ॥" (भगिनपु०)

राजवीर्य (सं० ज्यो०) राजवका तथा हुआ ग्रन्थ ।

राजवेम्बर (सं० ज्यो०) शिवसिद्धमेह ।

राहुज (सं० पु०) पृथ्वारण्यका गाछका कवि ।

राहुज (सं० ज्यो०) रङ्गी मय रंजु (प्यारमन्वेज्ज्यु),
पा १०२१००) भगि भण् । १ सुगजोमजात यज्ञादि,
सुगौक रोप स बना हुआ रूपका आदि । २ पशुम, भरम

ऊन । (पु०) ३ गामि, गाय । (त्रि०) ४ राङ्कवाकृति, गायके जैसा मुखवाला ।

राङ्कचक (सं० पु०) मनुष्य ।

राङ्कचायण (सं० त्रि०) रकुसे जात या आगत ।

राङ्गण (सं० क्ली०) पुष्पविशेष, एक प्रकारका फूल ।

राचना (हि० त्रि०) १ रचना, बनाना । २ रचा जाना, बनना । ३ रंगा जाना, रंग पकडना । ४ लीन होना, मग्न होना । ५ जोभा देना, मला जान पडना । ६ प्रसन्न होना । ७ प्रभावान्वित होना, सोचमें या चिन्तामें पडना । ८ अनुरक्त होना, प्रेम करना ।

राछ (हि० पु०) १ कारीगरोंका औजार । २ जुलाहोंके करघेमें एक औजार जिससे तानेका तागा नीचे उठता और गिरता है । यह दो नरसलोंका होता है जिसके बीचमें ऊपर नीचे तागे बंधे होते हैं और जिनके बीचसे तानेके तागे एक एक करके निकाले जाते हैं । ३ बरान, जलूस । ४ लकड़ीके अदरका पक्का अंग, हीर । ५ लोहारका बड़ा हथौडा । ६ चक्कीके बीचका खूँटा जिसके चारों ओर ऊपरका पाट फिरता है ।

राछबंधिया (हि० पु०) वह जुलाहा या आदमी जो राछ बंधनेका काम करना हो ।

राज (हि० पु०) १ देशका अधिकार या प्रबंध, प्रजा-पालनकी व्यवस्था, हुकूमत, शासन । २ पूरा अधिकार, खूब चलती । ३ उतना भूमिमान जितना एक राजा द्वारा शासित होना है, एक राजा द्वारा शासित देश । ४ देश, जनपद । ५ अधिकारकाल, समय । ६ राजा । ७ वह कारीगर जो ईंटोंसे दीवार आदि चुनना और मकान बनाता है, राजगीर, थवई ।

राज (फा० पु०) रहस्य, भेद ।

राजक (सं० क्ली०) राजा समूह; राजन् (गोत्रोक्तोऽत्रे रश्-राजिति । पा ४।२।३६) इति बुञ् । १ राजाओंका समूह । २ कृष्णामुक्त, काला अंगर । राजन् स्वार्थे कन् । (पु०) ३ राजा । (त्रि०) ४ दीमिकारक, चमकनेवाला ।

राजकथा (सं० स्त्री०) राजाध्यायिका, इतिहास ।

राजकदम्ब (सं० पु०) कदम्बानां राजा, राजदन्तादित्वात् परनिपातः । कदम्बविशेष, एक प्रकारका कदंब जिसके फूल बड़े और स्वादिष्ट होते हैं ।

राजकन्यका (सं० स्त्री०) राजः कन्यका । राजकन्या, राजाकी पुत्री ।

राजकन्या (सं० स्त्री०) राजः कन्या । १ केशिकापुष्प, केवड़ेका फूल । २ नृपसुता, राजाकी पुत्री ।

राजकर (सं० पु०) राजप्राह्यकरः । वह कर जो प्रजासे राजा लेता है, राजाको मिलनेवाला महसूल ।

राजकरण (सं० पु०) १ न्यायालय, अदालत । २ राज-नोति ।

राजकर्कटी (सं० स्त्री०) चीनाककंठी, एक प्रकारकी ककड़ी ।

राजकर्ण (सं० पु०) हस्तीका शृणु, हाथीका सूँड़ ।

राजकर्ता (सं० पु०) राजकर्त्तृ देखो ।

राजकर्त्तृ (सं० पु०) १ वह व्यक्ति जो राजगद्दी पर बैठने समय राजाकी सहायता करना है । २ जो पुरुष दूसरेको राजसिंहासन पर बैठाता है, किसीको राजगद्दी पर बयेच्छ बैठाने और उतारनेकी शक्ति रखनेवाला पुरुष । राजकर्मन् (सं० क्ली०) राजः कर्म । राजाका कार्य, वह काम जो राजाके कर्त्तव्य हो ।

राजकलश (सं० पु०) काश्मीरके एक राजा ।

काश्मीर देखो ।

राजकला (सं० स्त्री०) चंद्रमाकी सोलह कलाओंमेंसे एक कलाका नाम ।

राजकशेष (सं० पु०) करेरूपा राजा, राजदन्तादित्वात् पर निपातः । भद्रमुस्ता, नागरमोथा ।

राजकार्य (सं० क्ली०) राजः कार्य । राजाका काम ।

राजकार्श (सं० क्ली०) शालवृक्ष, सखुआका पेड़ ।

राजकाष्ठ (सं० क्ली०) पतङ्गचंदन, वक्रम नामक लकड़ी ।

राजकिनेय (सं० पु०) रजकीका पुं अपत्य ।

राजकीय (सं० त्रि०) राज इदं राजन् (राजःकच । पा ४।२) इति छः, ककारश्चान्ता देशः । राज सम्बन्धीय, राजा या राज्यसे सम्बन्ध रखनेवाला ।

राजकुंअर (हि० पु०) राजकुमार ।

राजकुमार (सं० पु०) राजः कुमारः । राजपुत्र, राजाका लड़का । कविकल्पलतामें लिखा है, कि राजपुत्रमें निम्नोक्त गुण रहने चाहिये । यथा—शस्त्र, शाल, श्री-

समूह, बन, गुणसमूह, धारागडो, सुखी, राजमणि और शुभगति भादि ।

‘कुमार कनकश्रीकण्ठ गुणानुषुधः ।

बाधापी सुखी राजमणिः शुभगतायः ॥”

(कविकल्पता)

राजकुमारिका (सं० स्त्री०) राजकन्या, राजाकी पुत्री ।
राजकुल (सं० स्त्री०) राजा कुल । राजवंश, राजाधीका
कामदान ।

राजाकुल (सं० पु०) पटोससता परबन्धकी कता ।
राजकुलमडू (सं० पु०) १ राजसमापण्डित । २ राज
मातृ, यह जो राजाकी कुलमजालि बर्णना करता है ।
राजकुलाण्ड (सं० पु०) वाताकी, पैगन ।
राजकुल (सं० पु०) राजकर्तृ कता ।
राजकुल (सं० स्त्री०) राजा कता । राजा द्वारा मनुष्ठित जो
राजा द्वारा किया गया हो ।

राजकुल (सं० स्त्री०) राजा कता । राजका काम ।
राजकुल (सं० पु०) राजकर्ता ।

राजकोट—बनभ्रमदेशके काठियावाड़के हस्तस विभागके
अन्तर्गत एक देश सामन्तराज्य । यह अक्षां० २२ ३'
से २२ २७' ३०" तथा देशां० ७० ४६' से ७१ २' पु०के
मध्य स्थित है । भूप्रमाण २८३ वर्गमील और जन
संख्या ५० हजारसे ऊपर है । यहांकी जमीन ऊँची
नोची है । जो दो इस राज्यमें कितनी नहीं बढ़ती है, पर
जन केवल अमीरी और अन्नपनमें ही बाधों महोत्ता
रहता है । धान, गेहूँ ईक और कपास यहांकी प्रधान
उपज है । जलवायु स्वास्थकर है । इसमें राजकोट
नामक एक शहर और ६० गाँव छानते हैं ।

काठियावाड़का राजकोट २५ भेष्ठीका सामन्तराज्य
समन्ना जाता है । यहांके अधिपति बयानगर राजवंश
की शाखा और न्यायका राजपूतवंशीय है । राम राजकु
ल परपोत अजोराके छोटे अङ्क कुर्बे विनोगी राज्यके
स्थापयिता माने जाते हैं । वर्तमान राजाका नाम है
एच, एच, डाऊट साहब सर अजोरा राज साहब के, सी,
भाई इ । इन्हे गोद सेनेका अधिकार है तथा ६ सत्तामी
तोपें मिलती हैं । राज्यकी भाषा कर्बे हीन शाककी है
जिसमेंसे इच्छा गवर्नेट और अजगढ़के नयाव शेरोंकी

मिला कर २१३२१) व० करमें दून होन हैं । सेरस धरा
३३६ है । राजधर्म ३ म्युनिसिपलिटो, २५ स्कूल और
३ अस्पताल है ।

२ राजकोट सामन्तराज्यकी राजधानी । यह अक्षां०
२२ १८ उ० तथा देशां० ७० ५०' पू०के मध्य अवस्थित
है । जनसंख्या करीब चालीस हजार है । हिन्दूकी
संख्या सबसे ज्यादा है ।

यहां नुरी और काठियावाड़ पब्लिकल एजिस्ट्री
प्रधान कचहरी है । देशीय सामन्त-राजकुमारोंकी शिक्षा
के लिये यहां एक विश्वविद्यालय है । इसके सिवा शिखर-
विद्यालय उच्च अगरीको विद्यालय डाकघर, तारघर,
गिरजा जैन, डाकबंगला, धर्मशाखा और माकानगर
गण्डाल रेलवेका स्टेशन है । शहरमें म्युनिसिपलिटो
भी है ।

राजकोट (सं० पु०) राजबंदर, वड़ा बेर ।
राजकोटाहम (सं० पु०) स गीतमें धानके साठ मुक्क
मेर्मांस एक ।

राजकोटावत (सं० स्त्री०) मिठा फल, एक पत्तारका
मनुभा जो बहुत बड़ा होता पीया तरोई ।

राजकोटावती (सं० स्त्री०) राजप्रिया कोटावती । पीत-
पीया, पीया तरोई । स हस्त वर्णव—इस्तिपणिका,
धामान, कर्बुका, महाजाली, सपीतक । इसका गुण—
शीतल उबरातायक, कफनाशक । (भरतमिहोद)

राजकप (सं० पु०) सोमकप सोम करीवना ।
राजकपती (सं० स्त्री०) सोमकप-कारली, सोम कपो
मेवाको स्त्री ।

राजकिया (सं० स्त्री०) राजकर्तृ, राजाका काम ।
राजसर्व (सं० पु०) राजसर्व, बड़ा तार ।

राजकजरी (सं० स्त्री०) राजप्रिया कजरी । श्रेष्ठ
कजरी, पिबलजूर ।

राजगढ़—मध्यभ्रमदेशके अन्तगत भूराज पब्लिकल
एजिस्ट्रीके अधीन माकवका एक सामन्तराज्य । यह अक्षां०
२३ २७' से २४ ११' उ० तथा देशां० ७१ ३६' से ७४
१४' पू०के मध्य अवस्थित है । भूप्रमाण ६६२ वर्गमील
है । इसके उत्तरमें काठियावर और कोटा राज्य स्थितमें
व्यामियर और देवासराज्य, पूरुबमें भूराजराज्य और

पश्चिममें किलचौपुर राज्य है। मुगलप्रभावके अधः-पतन पर ओमत राजपूतोंने इसका कुछ स्थान दबल कर लिया। तभीसे उस अधिकृत जिलेका ओमतवार नाम हुआ है। १४४८ ई०में ओमतवारके सरदारने 'रावन' की उपाधि पाई। राजगढ़के सामन्त आज भी उसी उपाधिका व्यवहार करते हैं। इस वंशके लोग मौज-राज और विक्रमादित्यसे अपना कुलपरिचय देने हैं। १६८१ ई०में उस समयके राजपुत्र पिताके दीवान या मन्त्री थे। उन्हींकी चेष्टामें राजगढ़पति अपना राज्य बांट देनेकी वाञ्छा दृष्ट। दीवानके अंगमें जो भूमान पडा, उसका नाम 'नरसिंहगढ़' और रावनके दफ्तरी जो भूभाग रहा, उसका नाम 'राजगढ़' रखा गया। महाराष्ट्र अभ्युदयकालमें नरसिंहगढ़ होलकरका और राजगढ़ सिन्धियाका मरत हुआ।

१८११ ई०में राजगढ़पति रावन मतिंसिंहने मुमल-मानोधर्ममें दीक्षित हो अपना नाम 'महम्मद अबदुल रसीद खाँ' रखा। १८१२ ई०में ब्रिटिश गवर्मेंटने उन्हें 'नवाब'की उपाधि तथा ११ सलामी तोपें मिली। १८८० ई०में उनकी मृत्यु हुई। पीछे उनके लडके भक्तावरसिंह गद्दी पर बैठे। १८०८ ई०में भक्तावरके मरने पर उनके लडके बलबहादुरसिंह 'रावन' हुए। उस समय ये बहुत बच्चे थे। पितामहकी तरह इस्लाम धर्ममें दीक्षित नहीं हुए। सिंहासन पर बैठने ही उनके आत्मीय सरदारोंने फिरसे उन्हें ओमनराजपूत कह कर ग्रहण किया। पीछे बन्नेसिंह १६०२ ई०में राजसिंहासन पर अधिरूढ़ हुए। इनकी वंशपरम्परा उपाधि थी 'हिज हारनेस' और 'राजा'। १६०८ ई०में उन्हें के, सी, आई, ई, की उपाधि मिली। वर्त्तमान सामन्त-का पूरा नाम है पच, पच, राजा रावत सर चोरेन्द्रसिंह साहब बहादुर के, सी, आई, ई। इन्हें भी ११ तोपों की सलामी मिलती है।

इस राज्यमें राजगढ़ और थोरा नामक दो शहर और ६१२ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या ११ हजारसे ऊपर है। हिन्दूकी संख्या ज्यादा है। वार्षिक राजस्व करीब ५ लाख रुपये है जिसमेंसे नल्लियान जिलेके त्रिये सिन्धियाकी ८५१७२ रु० और कालीपीत परगनेके लिये

अलवारपतिकी १०००) रु० करमें देन होते हैं। अफीम और धान यहाँकी प्रधान उपज है। ज्वार, सुन्दरी, चना और गेहूँ भी कम नहीं उपजता। राजगढ़ शहरमें सेन्द्रलजेल, तीन एट स्कूल और आठ प्राइमेट स्कूलके सिवा दो अस्पताल भी हैं।

२ उक्त राजगढ़ राज्यकी राजधानी। यह अक्षा० २४° ७' ३० तथा देशा० ६६° ४४' ५० तैवाज नदीके बाँध किनारे अवस्थित है। जनसंख्या पाँच हजारसे ऊपर है। १६४० ई०में रावन मोहनसिंहने इसे बनाया था। शहरमें सामन्त राजगढ़के अतिरिक्त एक सराय, एक स्कूल और अस्पताल तथा पोष्ट और डेलिप्रॉफ आफिस हैं।

राजगढ़—मध्यप्रदेशके डिपटी मील एजेन्सीके अधीन एक छोटा सामन्तराज्य। उर्केनी और चम्पारणीके त्रिये पहले यह स्थान बहुत मजहूर था। यहाँके नील आदि जंगली जानि निकटवर्ती राज्यमें जा कर बहुत ऊँचम मचाती थी। इन्लिये अपने अपने सीमान्तप्रदेशकी रक्षा करनेके लिये होलकर और धारराजने यहाँके सरदार वा भूमिया (भुँइया)को यह स्थान छोड़ दिया तथा ज्ञान्तिरक्षाके लिये कुछ रुपये भी दिये। १८११ ई०की १८वीं मार्चकी ब्रिटिश गवर्मेंटने यहाँके भूमिया-को राजगढ़ और धाल इन दो ग्रामोंकी सनद दी।

राजगढ़—पञ्जापके समूँरराज्यके अन्तर्गत एक दुर्ग। यह अक्षा० ३०° ५२' ३० तथा देशा० ७७° २३' ५०के मध्य अवस्थित है। दुर्ग चौकोन है। चारों कोनमें चार बुर्ज हैं। बुर्जकी ऊँचाई ४० फुट और घेरा २० वर्गफीट। १८१४ ई०में गुरखा लोगोंने दुर्गमें आग लगा कर उसे नष्ट कर डाला था। अभी उसका पुनः संस्कार हुआ है। समुद्रतहसे यह ७११५ फुट ऊँचा है।

राजगढ़—मध्यप्रदेशमें चान्दा जिलेके अन्तर्गत मूल तह-सीलका एक परगना। भूपरिमाण ४४७ वर्गमील है। इसमें सौलो और मूल नामक दो शहर और १४० ग्राम लगते हैं। पहले यह स्थान वैरागढ़के गोंडराजवंशके अधिकारमें था।

राजगढ़—राजपूतानेके अलवार राज्यके अन्तर्गत राजगढ़ तहसीलका एक सहर। यह अक्षा० २७° १४' ३० तथा

देगा० ३६ ३८ पू०के मध्य मलयार शहरसे २२ मील
दक्षिण भवस्थित है। जनसंख्या ११ हजारसे ऊपर है।
मलयार-राज्यके स्थापयिता प्रतापसिंहने १३३३ ई०में इस
बसाया। शहरकी दीवार और काष्ठ महाराज राजा बन्यो
सिंहने बनवाया है। शहरमें एक डाकघर, एक चैतन्यो
यर्नाच्युनर स्कूल और एक अस्पताल भी है।

राजगढ़— राजपूतानके पौकानर राज्यका एक शहर। यह
भारत० २८ ३६ ३० तथा देगा० ७५ २४ पू०के मध्य
बाकानेर शहरसे १३५ मील पूरब और उत्तर पूरबमें भव
स्थित है। जनसंख्या ४१३६ है। महाराज गजसिंहने
१३३६ ई०में इत्ने बसाया था। १३वींके नाम पर इसका
नामराज हुआ है। यहाँ एक चैतन्य-यर्नाच्युनर स्कूल
एक डाकघर और एक अस्पताल है।

राजगरी (हि० खो०) १ राजसिंह शासन, राजाक बैठने
का भासन। २ राजपाधिकार। ३ राज्याभिषेक राजवा
रोहन।

राजगया (स० खो०) गायकी जातिकका एक पशु।
राजगामिन् (स० खि०) राजानं गच्छतीति गम् पिति।
राजसंग्रहा, राजाका।

"भूतव्य कमुल्के च राजगामि च वैशुनम्।
गुप्तभारतीकनिष्पन्ना वनाति ब्रह्मस्पया ॥"

(मनु ११ न०)

जिसका कोई उत्तराधिकार न रहे, उसका पद राज
गामी अथवा राजाक अधिकारमें बना जाता है।

राजगिरि (स० पु०) १ मगधदेशक एक पर्वतका नाम।
२ गार्कभेद, बहुमा साथ। यह साग स्थूल और सूक्ष्म
भक्ष हो सकता है। पचाप—राजासि, राजजाकिने,
राजजाकिना, इसका गुण रजिषद, पित्तनाशक और
शोथना तथा स्तम्भका गुण भाति शातक और अतिशय
दक्षिण माता गया है। (राजनि०) ३ राजघर इत्यादि।

राजमार (हि० पु०) मन्थन बनानवाका कारोवार राज।

राजगारा (हि० खो०) राजगारका कार्य या वह।

राजगुह (स० पु०) राजाका पुत्र राजाका उपदेश।

राजघर (स० पु०) राजजागार, राजमवन।

राजघर—यूपभारतकी सुनावाज राजधानी। इस स्थान
का हिन्दू, जैन, बौद्ध सभी पवित्र स्थान है। महा

भारतमें इस स्थानको गिरियत्र कहा है। कुशासन
बसुने गङ्गा और गोमनकाक सङ्गमस्थान पर पहले पहल
इस नगरको बसाया। यह एक पौठ प्ररासम्भके समय
यहाँ मगधकी राजधानी थी। पानुदेश जब आतक प्राद्वण
वेगमें प्ररासम्भका वध करनेक लिये भीम भद्रगक साथ
गिरियत्रमें जा रहे थे, तब इन्हीने इस स्थानका पौ धणन
क्रिया है—

"हं पार्यं ! इत्था मगधराज्यका महानगर केसा गोमना
है। उत्तम उत्तम भूतानिकाभोस सुशोभित यह महा
नगरी सुखला निरुपद्रवा और गयानिम्ब पूर्ण है। पैदार,
बराह, वृषभ, श्रुतिगिरि तथा चैत्रक ये पौषी शैल मानो
समिमलित हो कर गिरियत्र नगरकी रक्षा कर रहे हैं।
गुणित गान्धार सुगन्धपूर्ण मनोहर मोक्षवनराजिन उन
शैलीका मानो घुटा रवा है।" (भाग० २१ म०)

महाभारतमें जिस प्रकार पञ्चरीमवेष्टित गिरियत्रका
उन्त्येक द, वायुपुराणोय राजगृहमाहात्म्यमें भी इसी
प्रकार पैमार, विपुल रत्नकूट, गिरियत्र और रवाचल इन
पौष शैलीसं पश्चिम राजगृहका उन्त्येक रूपमें जाता है।
(राजघरना० ११२२ १९) महाभारतमें गिरियत्रका राज
धानी, परंतु राजगृहमाहात्म्यमें उस एक शैल बताया है।
इसके निचा एक पञ्चरीमका भा नामान्तर रूपमें जाता
है। उममेंस महाभारतमें जो गिरि पैदार नामसे उल्लि
खित है, राजगृह माहात्म्यमें यह पैमार तथा पश्चिमान
कालक पानिप्रथमें यही 'पैमारो' नामसे पक्षित हुआ
है। इस पैमार शैलका सप्तपर्वी गुहामें ५४० ई०सन्क
परल बौद्धक गुहा था। रवाचल ही पानपत्तियाक
काहियाल भीष्मर गुहा (Fig. tree cave) बसा कर
वर्णन कर गये है। इसा गुहामें बुद्ध भोजन करनेक बाद
प्यानस्थ हुए थे। पानिप्रथमें इत्याका पारउपशैल और
महाभारतमें श्रुतिगिरि कहा है। बर्तमान विपुल पानि
प्रथमें यह 'यनुता' और महाभारतमें बेलक नामसे
प्रसिद्ध है। राजगृहमाहात्म्यमें जो गिरियत्र है, महा
भारतमें वहा वराह तथा पलमानकाउमें उमाका गुह
में गिरियत्र उदगाता है। आज भी किन हिन्दू, जैन
और बौद्ध तार्थीवामी तार्थीवकक्षमें उक्त पञ्चरीम रूपन
जात है।

-वर्षी हिन्दूके निकट यह राजगृह तीर्थस्थान समझा जाता है, परंतु प्राचीनकालमें भारतीय आर्योंके निकट इस प्रकार समझा जाता था वा नहीं स्पष्ट है। पुराण और महाभारतमें इस स्थानको पूर्वभारतकी सुदूर और सुरभ्य राजधानी बतलाया है सही, पर ब्रह्मवर्चवासी आर्यगण बुरी दृष्टिसे ही यह स्थान देखते थे। पञ्चशैलके मध्य गिरि-एक वा गिरिव्रजमें ही संभवतः जरासन्धका प्रमोदभवन अवस्थित था। आज भी वह स्थान 'जरासन्धकी बैठक' कहलाता है। गिरि-एक शैलके पार्श्ववर्ती गिरि-एक नामके निकटस्थ शैल पर भी सुप्राचीन राजभवनानादिका ध्वंसावशेष देखा जाता है। इसके निवा रत्नगिरिके दक्षिण और उदयगिरिके पार्श्वमें तीर्थयात्री जरासन्धका राजभवन देखने जाते हैं। वर्तमान वैभारगिरि, विपुलगिरि, रत्नगिरि, उदयगिरि और सोनागिरि इस पञ्चशैलके मध्यवर्ती सभी स्थानोंमें उक्त प्राचीन राजधानी विस्तृत थी। इसीके मध्य उत्तर हंसपुरद्वारसे ले कर पश्चिम रङ्गभूमि तक, दक्षिण रङ्गभूमिसे पूरव नेकपाइवाघ तक दीवार खड़ी थी। दीवारके मध्यवर्ती यही भूखण्ड प्राचीन राजगृह कहलाता है।* चार्हद्वयवंशीय राजे यहां रहते थे। इस भूखंडके उत्तर मनियारकूप और उसके पास ही बहुत लंबा चौड़ा ईंटोंका टीला पड़ा है। महाभारतमें इसी स्थानको मणिनागका बालय कहा है।† महाभारतमें लिखा है, कि चैत्यकगिरिशृङ्गको भेद कर श्रीकृष्ण भीमार्जुनके साथ राजगृह गये थे।‡ जिस स्थानसे श्रीकृष्णने जरासन्धपुरमें प्रवेश किया था, बहुपरवर्तीकालमें वहां विष्णुपद अङ्कित था। हिन्दू लोग उसीको पवित्र पुण्यक्षेत्र समझते थे।

* महाभारतमें भी इस राजगृहका उल्लेख है—

“वज्रागारे स्थापयित्वा राजा राजगृह गतः ॥” (सभाप०)

† “अर्जुनः शत्रुवापी च पन्नगौ शत्रुतापनी ।

स्वस्तिकत्याक्षयश्चाथ मणिनागस्य चोत्तमः ॥

अपरिहार्यं मेघना मागधा मनुना कृताः ।

कौशिको मयिमांश्चैव चक्रते चाप्यनुगृहम् ॥”

(महाभारत० सभाप० २१।६-१)

‡ “चैत्यकस्य गिरेः शृङ्गं भित्त्वा किमिह दृग्गना ।

अक्षरेण्य प्रविष्टाः स्थ निर्भया राजकिन्वित्वात् ॥” (२१।४५)

प्राकारविशिष्ट राजगृहके पश्चिम रणभूमि और पञ्चपाण्डु नामक स्थान है। कर्तते हैं, कि उक्त रणभूमिमें ही भीमके साथ जरासन्धका द्वन्द्वयुद्ध हुआ था। यहाँका शैल लाठ पत्थरोंसे आच्छादित है। लोगोंका विश्वास है, कि जरासन्धके रक्तमें इस स्थानका पत्थर लाल हो गया है। इसके पास ही चित्रलिपिकी तरह पहाड पर खोदित बड़ी बड़ी शिलालिपि देखी जाती है। भारतमें जितने प्रकारकी लिपियोंका आविष्कार हुआ है उनमें यही लिपि सर्व प्राचीन समझी जाती है। उस लिपि परसे जो मन्त्रों आ जाने हैं उससे कितने अक्षर मिट गये हैं। दुःखका विषय है, कि आज तक कोई भी उम लिपिका पाठोद्वार न कर सके हैं।

वसुसे ले कर श्रेणिक विम्बिसार तक सभी पराक्रान्त क्षत्रिय राजे उक्त प्राचीन राजगृहमें रह कर ही पूवभारतका शासन करते थे। पीछे राजा विम्बिसार, तैभार और विपुलगिरिके उत्तर सरस्वतीनदीके पूरव तथा उष्ण प्रखण्डसे कुछ दूर नये राजगृहनगरमें जा कर बस गये।

प्रतनत्त्वचित् कनिहमने चीनपरिव्राजक फाहियन और युपनचुवंगके विवरणानुसार प्राचीन राजगृहका पर्यवेक्षण कर लिखा है, कि इस प्राचीन राजधानीका परिमाण ८ मीलसे कुछ कम है। इसके चारों ओर जो दीवार खड़ी थी आज भी उसका कुछ अंश देखनेमें आता है। वह दीवार ३३ फुट मोटी थी। युपनचुवंगके हिसाबसे गिरि-एक तक राजगृहकी सीमा पड़ती है, किन्तु कनिहम इसे खोकार नहीं करने। हम लोग जब गिरि-एकमें राजा 'जरासन्धकी बैठक' तथा प्राचीन राजगृहके पृष्ठसे गिरि-एक तक पहलेकी तरह दीवारका भग्नावशेष देखते हैं, तब गिरि-एक (गिरिव्रज) तक पूरव समय राजगृहकी सीमा रही होगी, इसमें स्पष्ट नहीं। महाभारतमें भी इसीलिये गिरिव्रजको राजगृहके सीमान्त पञ्चशैलका अन्यतम बताया है।

फाहियनके मतानुसार विम्बिसारके पुत्र अजातशत्रुने नया राजगृह बसाया। किन्तु हिन्दू और जैनके प्राचीन ग्रन्थानुसार श्रेणिक विम्बिसारके समय यह नया राजगृह स्थापित हुआ। ७वीं सदीके मध्यभागमें चीनपरि-

मात्रक युपनसुवंग जब राजगृह देखने भाये उसो समय बाहरपासी दीवार टूटी फूटी हासतमें पड़ी थी, किन्तु मोतरकी दीवार कुछ अच्छी थी, उस समय इसका घेरा प्रायः ३॥ मीटर था । भूमो जो बिड़ रह गया है वह भी ३ मीटरस कम नहीं होगा । ब्रह्मिणोशमें पहाड़की तरफ मड़ू था । उसका प्राचीन भाग भी ज्योंका त्यों बड़ा है । भेजिङ्ग-अभिष्ठित नगराग्रगृह भूमो 'राजगिरि' नामसे हो प्रसिद्ध है । राजगृहक उत्तर 'राजगिरि' नामक एक मया प्राप्त है ।

जैनप्रभाव ।

भौगिक चित्रितारक समयसे ही राजगृहमें जैनप्रभाव विस्तृत हुआ । अश्लिम तीर्थंकर महावीर स्वामीन वहाके पिपुजास्थल पर कुछ समय रह कर मगधपति भेजिङ्गको जिनतत्त्वका उपदेश दिया था । प्राचीन जैनपुराण भी भङ्गसे ज्ञाना जाता है, कि भेजिङ्गराज महावीर स्वामीके एक कट्टर भक्त थे । उन्होंने समय सैकड़ों व्यक्तिके यहाँ निर्गन्ध वा जिनधर्म प्रहण किया । महावीर स्वामीक रहनेके कारण राजगृह जैनोके निकट एक महायुपपक्षेत्र समझा जाने लगा । उनके समय बुद्धदेवका अमृत्युवय तथा परवर्षोवासमें राजगृह भीर पञ्चरीजमें तमाम बौद्धप्रभाव विस्तृत होने पर भी यहाँके शैलशिखरसे जैनसाधुसंन्यास दूर नहीं हुआ । महावीरकी अभिष्टान भूमि पिपुजागिरिके अन्तर्गत स्वर्णाश्रम (सोनागिरि), रत्नाश्रम, वैमार भीर इवगिरिमें भी सुप्राचीन जैन कालियोंके अनेक शिखरों पड़े हुए हैं । बिपुजागिरि शिखर पर पोक्ष्यनाय मूर्तिके बाद देशमें जो खोजित शिलालिपि हैं उससे मान्य होता है, कि ८वीं वा ९वीं सदी तक यहाँ जैनसमागम था । पीछे यहाँ ब्राह्मणोंक अमृत्युवय भीर अन्तमें मुसलमानोंक अत्याचारसे यहाँसे जैनसंन्यास विद्वङ्गल जाता रहा । यहाँ तक कि १०वीं सदीके बादसे छे कर १०वीं सदी के शेष तक हम लोग जैनसंन्यासका एक भी प्रमाण नहीं पाते । १८वीं सदीमें मुसलमानप्रभाव जब बिलुप्त हुआ, तब राजगृहके पञ्चरीजके ऊपर फिर जैन-तीर्थ पाणिनीयका समागम होने लगा । जैनधर्मकुवेरोंके पत्नस पुत्र पञ्चरीजके तुङ्गशिखर पर नावा जिनाश्रम प्रतिष्ठित

तथा प्राचीन जैन कालियोंका शीर्षोदार होने लगा । इस प्रकार श्रीबोसवा तीर्थंकरमूर्ति भीर तीर्थंकरोंकी पापुका प्रतिष्ठित हुई । १८वीं भीर १९वीं सदीकी जैन कालिं हो मनी दर्शकोंको दृष्टि पर पड़ी हुई है ।

बौद्धप्रभाव ।

जैनप्रभावके साथ साथ बौद्धप्रभाव भी देखा जाता था । महावीरके कुछ समय बाद ही बुद्ध शाक्यसिंह वैमाररीज पर भाये । उनका प्रमोददेश सुननेके लिये मगधपति बिम्बिसारस छे कर राजगृहवासी सभी मनुष्य वहाँ उपस्थित हुए थे । बुद्ध शैलशिखर पर रहते थे । उनके दर्शनकी जिनको इच्छा होती थी, वे बड़े कष्टसे दुरारोहपथ पार कर उनके निकट पहुँचते थे । पीछे बिम्बिसारन जिससे दूरामासिकायोकी किसो प्रकारका वृद्ध न हो, पहाड़ काट कर परवरको सीढ़ी बनवा वा थी । श्रीमपरिप्राज्ञक युपनसुवंग जब राजगृह देखन भाये तब उन्होंने जिन्ना दे, कि यहाँ बिम्बिसार बुद्धके दर्शनार्थ पर्यटनप्रान्त पर भवतरण करते थे यह स्थान 'एवावतरण' नामसे प्रसिद्ध था । मगध पतिमें बुद्धदेवके स्मरणार्थ कुछ स्तूप भी बनवा दिये थे ।

राजगृहके पञ्चरीजके ऊपर किस प्रकार बौद्धप्रभाव फैला था, चीनपरिप्राज्ञक फाहियन भीर युपनसुवंगके भ्रमणवृत्तांतसे हम लोग इसका बहुत कुछ परिचय पाते हैं । फाहियनन ५२२ सदीमें आ कर नवराजगृहमें ये सब देखे थे,—ये सङ्घाराम, नगरक पश्चिम दरवाजेसे कुछ दूर राजा अजातशत्रु निर्मित एक ऊँचा कुम्भ (यहाँ बुद्धका देहावशेष रखा हुआ है), नगरके पश्चिम फाटक से प्रायः आध कोस दूर पञ्चरीजकेछिद्र उपत्यकाके मध्य जनमानसमूर्त्य बिम्बस्त प्राचीन राजगृह, बुद्धदेवका विनाश करनेके लिये निर्गन्धने जो मणिकुण्ड बनाया था वह मणिकुण्ड नगरसे उत्तर पूर्व आछगाडोक उपान्तके मध्य जोषक वैधनिर्मित बिहारका मत्पावशेष (यहाँ बुद्धदेव १२५० शिष्योंके साथ निमस्मित हुए थे) उपत्यकासे गिरिमाका नाम कर प्रायः २॥ कोस दूर गृध्रकूटीज उससे भी आध कोसकी दूरी पर ब्रह्मिण मुञ्जी गुरा (यहाँ बुद्धदेव ध्यावरूप रहते थे), उसके पास

ही एक शैलकुटी । (यहां आनन्द ध्यान करते थे*), उसी जगह अर्हतकी ध्यानगुफा, इस प्रकारकी और भी सैकड़ों गुफा, शैलके उत्तर भग्नावशिष्ट दरदालान (यहां बुद्धदेव धर्मोपदेश देते थे), प्राचीन नगरके उत्तर बौद्धाचार्य सेवित करण्डवेणुवनविहार, वहासे थोड़ी ही दूर उत्तर महाश्मशान, दक्षिणशैल लाय कर कुछ पश्चिम आनेसे बुद्धका मध्याह्न आहारके बाद ध्यानस्थान 'विप्लव गुहा', वहासे करीब डेढ़ पाव दूर पहाड़के उत्तर चेति नामक गुहा (बुद्ध निर्वाणके बाद यहा ५०० अर्हत धर्मपुस्तक संग्रहार्थ सम्मिलित हुए थे), तथा पुराने नगरसे उत्तरपूर्वमें देवदत्तकी जिलाप्रयोग कुटी ।

फाहियानके दो सौ वर्ष बाद यूननसुवज्जने जा कर यहा बौद्धकीर्तिका इस प्रकार दर्शन किया था,—

बुद्धशृङ्गोमित शैलशिखरके ऊपर बुद्धवनमें जिला गृह*, बुद्धवनसे प्रायः दो कोस पूर्व यष्टिलतासे आकीर्ण यष्टिवन, तथा उसके मध्य अशोकराज-निर्मित स्तूप, यष्टिवनसे प्रायः तीन पाव दक्षिण महाशैलकी वगलमें मर्वारोगहर जो उष्ण प्रस्रवण और उसके समीप बुद्धाधिष्ठानस्मारक स्तूप, यष्टिवनसे दक्षिण-पूर्व प्रायः आध कोस दूर महाशैलके पश्चिम एक स्तूप ; (वर्षाकालमें बुद्धदेव देवमानचक्रो यहा धर्मतत्त्वकी शिक्षा देते थे), उक्त महाशैलसे कुछ उत्तर व्यासाश्रमका टूटा फूटा पत्थरका घर, उसके उत्तर पूर्व डेढ़ पावका रास्ता तय करने पर एक छोटा पहाड़, उस पर हजार लोगोंके बैठनेके लिये लिये एक पत्थरका बड़ा घर (यहा बुद्धदेवने तीन मास तक धर्मप्रचार किया था), इस बड़े घरके ऊपर प्रसिद्ध सुगन्धमय पत्थर (यहा देवराज शक्र और ब्रह्माने गोशीर्ष-चन्दनसे बुद्धदेवको चर्चित किया था), बड़े

* मारने गृध्ररूप धारण कर यहां आनन्दको भय दिखाया था । बुद्धके प्रभावसे उसकी माया व्यर्थ गई । तभीसे इस गिरिका नाम 'गृध्रकूट' पडा । यहां पर फाहियानके गृध्रपत्नीका चिह्न देखा था ।

† प्रवाद है, कि यहां इन्द्र और ब्रह्माने गोशीर्ष चन्दनसे बुद्धदेवको चर्चित किया था । यहा की शिक्षा पर आज भी वह गंध पाई जाती है । (यूननसुवज्ज)

पत्थरके घरके दक्षिण पश्चिम कोणमें एक उष्ण गुहा यहां पहले अमुरका राजभवन था), उस बड़े घरकी वगलमें विम्बिसार राजनिर्मित १० पाद चौडा और प्रायः डेढ़ पाव लम्बा काठका पुल और नदीके किनारे पत्थरका गंध । वहासे पूर्वकी ओर प्रायः साढ़े चार कोस आने पर मगधराज्यका केन्द्र और पूर्वतन राजधानी कुशागारपुर*, (इसका घेरा प्रायः १० कोस और मध्य-वर्त्तापुरकी अवशिष्ट प्राचीरभित्तिका घेरा प्रायः २ कोस) राजगृहके उत्तर द्वारके बाहरमें एक स्तूप, उसके बाहरमें उत्तरपूर्वमें और भी एक स्तूप (यहां शारिपुत्रने अर्हत्त्व लाभ किया था), उस स्थानसे उत्तर कुछ दूर जानेसे एक गहरा दुर्ग-पाई, उसीकी वगलमें श्रीगुप्तका स्तूप, दुर्ग पाईसे उत्तर पूर्व नगरके बाहर जीवकवैद्य निर्मित बुद्धदेवका वस्तुनागृह और जीवकगृहका ध्वंसारोप, उसके पास ही एक पुराना स्तूप, राजगृहसे एक कोस ऊपर उत्तरपूर्व जानेसे गृध्रकूटशैल (इस पर्वत पर बुद्धदेव अधिक काल ठहरे थे), उस पर चढ़नेके लिये विम्बिसार-निर्मित पत्थरकी सीढ़ी, बीच रास्तेमें 'रथा-वतरण' और 'जनविमुक्त' नामक स्तूप, शैलके ऊपर पश्चिममें पूर्वाद्वारी बुद्धका प्रमाणमूर्त्तिशोभित एक विहार, विहारके पूर्व बुद्धके पदरजसे पवित एक बड़ा पत्थरका पाण्ड, उसके समीप ही बुद्धका वध करनेके उद्देशसे देवदत्तका प्रस्तरनिक्षेपस्थान, उसके दक्षिण एक स्तूप । यहा बुद्धने 'सद्धर्मपुण्डरीकसूत' प्रकाश किया , विहारके दक्षिण बुद्धका समाधिस्थान एक बड़ा पत्थर-घर, उसके उत्तरपश्चिम और सम्मुखभागमें गृध्ररूप चिह्नित एक अपूर्व प्रस्तरपाण्ड, विहारकी वगलमें शारिपुत्र और बहुतसे अर्हत्तोंके समाधिस्थान कुछ पत्थरके घर, शारिपुत्रके घरके सामने एक सूखा कूप, विहारके उत्तर पूर्व पहाड़ों सोतोंके मध्या बुद्धका वस्त्र सुखनेका समतल

* प्राचीन राजगृहका नामान्तर । चीनपरिव्राजकके वर्णनानुसार यहा सुगन्धित कुशतृण पाया जाता था । इसीसे इसका 'कुशागारपुर' नाम हुआ है । जैनग्रन्थमें कुशागारपुर और कोपागारपुर ये दोनों ही नाम देखे जाते हैं ।

प्रस्तरखण्ड, उमोके समोप शैलके ऊपर बुद्धका पद्मचिह्न, गिरिगिर्भूपुरके उत्तरी फाटकेके परिषम विष्णुसिद्धि, गिरि के उत्तरपार्श्वके दक्षिणपदिन्म पार्श्वदेशमें १० उष्ण और शीतल प्रक्षयण, कोइ कोइ उष्ण प्रक्षयण सिंहमुख, कोइ श्वेत हस्तिमुख भादि भाकारके पत्थरसे बंधा हुआ, मोके सरोवरके ऊँसा पत्थरका बंधा हुआ अक्षपाद, गरम सोतीके दाहिने भाग बाए किनारे बहुत स्तूप और विहार तथा चार गतबुद्धके स्तुतिचिह्न गरम मातोके पश्चिम विष्णु नामक पत्थरका पर, उम भरका दोपारके पास गुहाकार मसुरका प्रासाद (यहाँ स नाग, सर्प, सिंह भादि बौध बौधमें निकलते थ), विष्णुगिरिके शिखर पर स्तूप (यहाँ बुद्धसे पराध्वार किया था) यहाँ बहुतसे त्रिप्रश्नोंका जितल समागम स्थान, इस पत्थरके परके पूरब विपटे पत्थरखण्ड पर रत्नचिह्न, गिरिगिर्भूपुरके उत्तर कोयस प्रायः माय पाथ रास्ता तै करन पर करहठवेणुबन यहाँ पूर्वाशारी विहारका भग्नावशेष, करहठवेणुबनके पूरब अज्ञातशाह राजनिर्मित स्तूप (यहाँ राजा अज्ञातशाही बुद्धका देहाश्रयण रखा था, इस भरस अयुं भ्रमोके निकलता है), इस स्तूप के पास भान्णुका देहाश्रयणयुक्त अज्ञातशु निर्मित और मो एक स्तूप, इसके समोप ही शारिपुत्र और मुद्गलपुत्र का अविष्टानस्त्वनिष्ठापक स्तूप, दक्षिण शैलके उत्तर एक बड़ा वेणुबन, उनमेंसे अज्ञातशाह एक पत्थरका पर (बुद्धनिर्माणके बाद दशदिशे काश्यपने ११६ अर्हंतोंके विरहजपका उच्चार करनके लिये इस घटमें एक समा की थी) ; इसके उत्तर भान्णुका समाधिस्थानभावक एक स्तूप यहाँसे पश्चिम उड़ कोस जाने पर अज्ञोकराज-निर्मित स्तूप (यहाँ सिपिटक तुर्कनिकाय और पारसी विरहका उच्चार करनके लिये काश्यप परित्यक्त छाक निक्षुकीका महासङ्ग हुआ था) ; (करहठ) वेणुवन विहारके उत्तर करहठइका चिह्न, यहाँसे पाथ भरका दूरो पर १० फुट ऊँचा अज्ञोकराज निर्मित स्तूप, उसक पास हा स्तूपनिर्माणका विषयवामुलक धारित सिपि और हस्तिमुपयुक्त ५० ऊँचा पत्थरका स्वम्भ, स्वम्भस उत्तर पूर्व ओड़ा हा दूर पर बिम्बस्त राजपूत मगरा०,

राजमवनके दक्षिण-पश्चिम कोणमें हो छोटे सङ्काराम, उसके उत्तर पश्चिममें एक स्तूप और मगरके दक्षिण फाटकेके बाहरमें रागुडका दोहास्त्वितुबुद्ध एक स्तूप था ।

गोधमें बौद्ध वास्तुशास्त्रोंके ज्ञाननकाजमें भा पूर्वोक्त बौद्धकारिणोंके दर्शन करनेके लिये देशविदेशसे तीर्थ-याता माने थ । बौद्धपाठराजमण ताम्रिक थे । उनके समय मो राजपूतमें ताम्रिक बौद्ध-देवो मूर्ति प्रतिष्ठित हुए थी । उनमेंसे विष्णुगिरिमें 'ये धर्महेतु प्रमथा' इत्यादि प्रसिद्ध धर्मसूत्रवियदा धर्ममुद्रा पत्र काराही मूर्ति और धर्ममैरव (भनो यदुक्त मेरव नामसे प्रसिद्ध) को मूर्ति देवानम भाता है । उस समयकी निर्मित तथा उक्त धर्मसूत्रयुक्त मुगमहवर (मुरखहीन) बुद्धमूर्ति प्राची सरसतीके उत्तरी किनारे देखी जाती है । जिस प्रसिद्ध सतपर्णागुहामें बुद्धनिर्माणके कुछ बाद ५४० ई०सन्क पहरे १म धर्मनंगाति हुआ था, अनो ओ 'सोमभारदार' कहलाती है उस गुहामें १००० सन्कके बौद्ध-कीर्ति सिपि पाए गए है । मणियार मठमें आज भी वह सुभाबोल अज्ञोकराज विद्यमान है, नवराजपूतके दक्षिण उपत्यकामें पावरराजामोंके बौद्ध-सङ्कारामका निर्दशन मात्र भी देखनेमें जाता है । ब्राह्मण्य धर्मक अन्त्युदय पर लोगोंको बुद्धि यद्यपि पवट गए थी, तो भी पूर्ववर्षित बौद्धकीर्ति बिन्दुकुल परित्यक्त हुई । परन्तु मुसलमानी जमलमें काळशा विभ्रविद्यमय द्वाद

कुछगार वा प्राचीन गिरिगिर्भूपुरमें हो भनो राजधानी बनी थी । किन्तु पर पर पर रहनेके कारण इरमें भाग मकर हवा करती थी बिलत लोगोंका भावे मुकलन होता था । दक्षिण मध्याक्षिण बर नियम निकलता, बिलक परमें अमा छतेनी, उठाको बुझनी पड़गी । संदागब मध्याक्षिण ही परमें भाग धनो । उन्होंने अपने तपस्वी रक्षाके लिये वेद्यमयमें भावभ लिया । वेगजीराजको जब मारतु हुआ, कि राजा बनवाओ है, दर ब भाग भाउन माने । रक्षाके लिये गोपन्त बास्कोम दुर्गविष्णुयुक्त एक नया मगर बना दिया । राजा भिन्विगार परते परत परी रहन व, हकीके इतका राजगुरु नाम हुआ ।

• पूरवुद्धने जिया है, कि राजा विभ्रजनन पहल
Vol. I, 17, 77

दिया गया तथा श्रवणोंके सहित बौद्धगण राजगृहतीर्थ-से भगा दिये गये ।

ब्राह्मण-प्रभाव ।

गुप्तचुवंगके वर्णनसे मालूम होता है, कि मगधपति अशोक पहले ब्राह्मणभक्त थे । इस समय उन्होंने समूचा प्राचीन राजगृह ब्राह्मणको दान किया । सच पूछिये, तो इसी समयसे राजगृहमें ब्राह्मण प्रभावका सूत्रपात हुआ । उस समय राजगृहमें जिस जिस स्थानको मीश्वरप्रद समझ कर बौद्ध लोग दर्शन करने आते थे, ब्राह्मण लोग उस उस स्थानमें हिन्दू तीर्थयात्रियोंकी भक्ति ब्राह्मण करनेके लिये पौराणिक देवदेवीके अधिष्ठानकी कल्पना करने लगे । इधर कुछ दिन बाद ही सम्राट् अशोकके धर्ममतपरिवर्तन और उनसे बौद्धधर्मप्रचारके साथ यहाके ब्राह्मण भी अपने अपने उद्देश्य साधनमें समर्थ न हुए । सैकड़ों वर्ष बाद जब शुद्धमित्तवंशका अभ्युदय हुआ, तब पाटलिपुत्रमें ब्राह्मण-अभ्युदयके साथ यहाके ब्राह्मण भी पौराणिक धर्म स्थापनमें अग्रसर हुए थे । इसी समयसे पुरातन बौद्धकीर्तिलोकका आयोजन और उसके साथ हिन्दूतीर्थ स्थापनका सूत्रपात हुआ था । मगधके सिंहासन पर ब्राह्मणभक्त गुप्तसम्राटोंके बैठनेसे यहा हिन्दू-तीर्थ स्थापनकी भी विशेष सुविधा हुई थी । किन्तु ६ठी सदीमें उनके अधःपतन और फिरसे बौद्ध धर्माभ्युदय होनेसे ब्राह्मणधर्ममें धक्का पहुंचा । इस कारण ७वीं सदीके मध्यभागमें जब चीनपरिव्राजक यहा आये थे, तब उन्होंने ब्राह्मणोंकी अधिक संख्या रहने पर भी कोई हिन्दू देवालय नहीं देखा था । ८वीं सदीमें कन्नोजमें यशोवर्मा और गौडमें आदिशूरके अभ्युदयके साथ फिरसे ब्राह्मण-प्रधानता स्थापित हुई । इसके बाद बौद्ध पालराजाओंका अभ्युदय हुआ । वे लोग तान्त्रिक और ब्राह्मण विरोधी न थे, इस समय देवमूर्तिप्रतिष्ठाका प्रसार होनेके कारण राजगृहके ब्राह्मण नाना तीर्थ और देवालय स्थापन करनेमें अग्रसर हुए । कालचशतः बौद्धगौरव रवि जब मगधसे सदाके लिये अस्त हो गये, तब यहांके ब्राह्मणोंने हिन्दू तीर्थयात्रीके लिये वायुपुराणीय राजगृहमाहात्म्य प्रकाश किया । जो जो स्थान बौद्ध और जैन लोगोंके निकट पुण्यस्थान समझा जाते

था, अभी वहा हिन्दू देवदेवी प्रतिष्ठित तथा हिन्दूतीर्थ कल्पित होने लगा । इस प्रकार कितनी बौद्धकीर्तिलोक ब्राह्मणने हिन्दूकी बता कर अपना लिया । अभी--

“कीर्तयेतु गया पुण्या नदी पुण्या पुनःपुना ।

च्यवनस्याश्रम पुण्यं पुण्यं राजगृह वनम् ॥” (११२४)

मगधमें गया, पुनपुन नदी, च्यवनका आश्रम और राजगृहवन यहाँ सब पुण्यप्रद हैं, ऐसा स्थिर हुआ । इस समय समूचा राजगृह जगलसे ढका था । राजगृह-माहात्म्यमें बहुतसे तीर्थयात्रियोंको पंडा लोग आज भी वे सब तीर्थ देखाते हैं । नीचे स्थानमाहात्म्य वर्णित तीर्थोंका संक्षिप्त परिचय दिया जाता है—

१ सरस्वती—यह पहाड़ी छोटी नदी पुण्यारण्यसे निकल कर वैभार और त्रिपुलंगिर होती हुई बहती है । सरस्वतीमें स्नान करनेसे सभी पाप दूर होते हैं । यह सरस्वती ब्रह्ममूर्ति है तथा इसका उत्तरांग प्राची सरस्वती समझा जाती है ।

२ गोमती—ज्वालादेवीके निकट प्रवाहित एक छोटी नदी ।

३ मार्कण्डेयक्षेत्र—प्राची-सरस्वतीके पश्चिम वैभार पर्वतके नीचे । यहां गङ्गा यमुना नामक दो गरम सोते हैं । †

४ माधवालय—प्राचीके उत्तरी किनारे माधवका आलय । यहा स्नान करनेसे भी सभी पाप होते हैं । (राज०मा०) अभी यह स्थान त्रेणीमाधव कहलाता है । यह मूर्ति देखनेसे ही पद्मपाणि बुद्धमूर्ति सी मालूम होगी ।

५ शालग्रामतीर्थ—प्राची सरस्वतीका उत्तरांग,

* “आजन्म संक्षिप्तं पापं शानाज्ञानकृतञ्च यत् ।

तत्सर्वं विलयं याति सकृत् स्नात्वा सरस्वतीम् ॥१११५

गङ्गा विष्णुमयी मूर्तिः ब्रह्ममूर्ति सरस्वती ॥” ११२१

(राजगृ० मा०)

† “प्राच्यास्तु पश्चिमे भागे मार्कण्डेयक्षेत्रमुत्तमम् ॥११२६

तत्र स्नात्वा महादानात् प्राप्यते नव्यालये ।

कालिन्दी पश्चिमा यत्र गङ्गा चोत्तरवाहिनी ॥” ११३०

(राज०मा०)

रखनेके निकट । यहां पञ्चमिषदिक्रम है । इनमेंसे
 आठमासके पूर्वमें विमापञ्चक, उत्तरमें जु ममर्दन, पश्चिम
 में कर्णक, दक्षिणमें वरतमोक्षण और मध्यस्थानमें
 मर्मभर अक्षिपित पा० । सभी प्राकारके निकट कबज
 मर्मभर विद्यमान है और सभी बिलुप्त हो गये हैं ।

३ वानरोतरण—प्राची-सरस्वतीक दक्षिण बैमारके
 दक्षिणमें शमशानक निकट । यहां स्नान करनेसे प्रश्न
 आधुम्य क्षाम होता है । वज्रताराका मूर्ति जैसी यहां
 एक ठूठी फूटी बीजदेवीमूर्ति पड़ी है ।

४ प्रश्नकुण्ड—वैमारतीकके नाथे सप्तपिंडुण्डकी बगल
 में प्रसिद्ध इय घाट । यह देवकीमें बहुरणके जैसा है और
 उत्तरसे बंधा हुआ है । ऊपरमें बमकीके पत्थर मड़े हुए
 हैं । राजपुत्रके सभी कुण्डोंकी भेषजा इसका एक गरम
 है । राजपुत्रमाहात्म्यमें लिखा है कि प्रश्नके पञ्च बाव
 गणक यह कुण्डसे पातागण्डा भाविभूत हुए । पाछे
 यहां प्रश्नकुण्ड नामसे प्रसिद्ध हुआ । इस प्रश्नकुण्डमें
 स्नान करनेसे प्रश्नहत्याका पाप भी नष्ट होता है । गयामें
 पात्र करनेसे जो फल होता है यहां अत्र करकेसे भी
 वही फल प्राप्त होता है । इस पञ्चकुण्डके मध्य मैथिल
 कीयमें ईसतोर्ष है । यहां स्नान और दान करनेसे सभी
 पाप दूर होते हैं । प्रश्नकुण्डके उत्तर पक्षिणी नामक

क्षेत्र है । यहां बहिष्णोकी पूजा करनेसे प्रश्नहत्याका
 पाप भी जाता रहता है । (रात्र मा०) यथाथमें एक क्षेत्र
 पूर्वतन बीजक्षेत्रक जैसा ही मान्य होता है । प्रश्न-
 कुण्डके पश्चिम वाराहक्षेत्र है । यहां वराहपूजा पूजा
 करनेसे निर्वाणकी प्राप्ति होती है । (प०मा० २ न०)

८ सप्तपिंडुण्ड—वैमारगिरिक मध्यसे सात गरम
 स्रोत निकल कर एक जलाधारमें पतित होते हैं । उसी
 बिलुप्त जलाधारका नाम सप्तपिंडुण्ड है । राजपुत्र
 माहात्म्यमें लिखा है, कि महापिं व्यास यह करकेके विधि
 इसी राजपुत्रणमें थाय । पञ्चके बाव प्राधान्यमोजन करने
 के छिपे उन्होंने मुनियोंको बुलाया । सोमन कर चुकने पर
 मुनियोंमें गङ्गा, यमुना और नर्मदाका जल पीना चाहा ।
 तब व्यासने तपोबलसे गङ्गा, यमुना और नर्मदाको बर्हा
 हाजिर कर दिया । पीछे उन तीनों बहिष्णोका तीर्थजल
 मार्कण्डेय व्यास, ब्रह्मन्नि, भद्राज्र बिभ्रामिक, गीतम,
 दुर्वासा पशुप और भवन्स नामसे विषयात हुआ । इन
 नाक मध्य वैमारतीकके नीचे सप्तपिंडुण्डके दक्षिण
 पश्चिममें मार्कण्डेय और व्यासकुण्ड है । सात कुण्ड
 एक जेते हैं । बावू तोतारामने सप्तपिंडुण्डके घाटों
 और दोबार बजो उठा की है । राजपुत्रमाहात्म्यमें लिखा
 है, कि मार्कण्डेयकुण्डके दक्षिण कामाक्ष्यादेवी है । किन्तु
 अभी वह देवी विचार नहीं देती ।

६ पञ्चनद—प्रश्नकुण्डके पूरव एक प्रक्षिणके मध्य
 यह घाट बहती है । यह पञ्चनद काशीके पञ्चनदके
 समान पुण्यस्थ है । उपरोक्त मथान तीर्थके अलावा
 राजपुत्र माहात्म्यमें और भी अनेक तीर्थोंका उल्लेख है ।
 जैसे—

प्राची सरस्वतीक पूर्वमें गणेश, सोम, सूर्य और
 सीतातीर्थ तथा रत्नाचल उनक मध्य द्वारकेश अथ
 शूङ्गातीर्थ यहां पश्चिम दिग्, अथशूङ्गाके पूरव प्रायसी
 तीर्थ और निर्गरीभर, अथशूङ्गाके पूर्वदक्षिण पर्वत पर
 गणेश और प्रश्नकुण्ड । गिरिमन्थके पर वैकुण्ठपट्ट,
 उसक उत्तर कण्ठेश्वर । प्रश्नकुण्डके दक्षिण बन्धारकुण्ड
 और देवनाग, देवार्कुण्डके दक्षिण कुण्ड दूर मानस विष्णु
 पद कदारकुण्डके समीप वैमारती उ पर संघ्याइया, संघ्या
 देवीसे शूलोस पश्चिम सोमेश्वर, प्रार्थकुण्डके दक्षिण और

- १ "शमशानमापनुर्दिशु पश्चिमपश्चिमपश्चिम ।
 - पूर्व विमापञ्चक नाम धापर जु ममर्दनम् ॥ ११० ॥
 - कर्णकश्च शक्यतां दक्षिणे मज मोक्षयम् ।
 - मन्वे कर्मक्षरं किञ्चि उत्तरा मर्मभरं त्रयम् ॥ १११ ॥
- (रात्रमा०)

- १ "यन्नास्तु दक्षिणे भ्रमे वानरोतरण स्थम् ।
 - तत्र स्नानं नष्ट कुर्वन् प्रश्नकुण्डमाप्तुं नृणां ॥"
 - २ "पञ्चकुण्ड समुद्रात् पश्चिमे प्रसरति ।
 - पाताञ्जलात्सर्वेभ्यः कर्वाण्य विमलोदकम् ॥ ५ ॥
 - मन्मथपुत्रविधिं कर्वातं विपु क्षामेभ्यु पावति ॥ ३ ॥
 - भद्राग्निं यान्तां रथि स्नान्तां पात्राञ्जलात्सुमे ॥ १४ ॥
 - प्रश्नकुण्डेत्पावन्ता विमुक्त्य तापितं तत्कुण्डम् ॥"
- (इत्यादि २ ५०)

वाणगङ्गाके पश्चिम मणिनाग, मणिनागके समीप गीतमचन, अहल्याहृद और गङ्गोद्भवेद, मणिनागसे आध कोस पूर्व दक्षिणमें व्यासाश्रम, व्यासाश्रमके दक्षिण धौतपाथ और तपोवन, धौतपापवनमें त्रिकोटेश्वर, उसके दक्षिण अग्नितीर्थ, अग्नितीर्थके पश्चिम वाणगङ्गा, मणिनागके पश्चिम कौशिकाश्रम और तपोवन, मणिनागके उत्तर कण्वतीर्थ, शिवनदीसे कौशिकाश्रम तक अग्नितीर्थ; उससे कुछ दूर सीताकुटी, यहा सीताकाननमें शक्रतीर्थ, हरनदी, बहुला और गोमतीतीर्थ, जाम्बवतीनदी और सीताहृद। विस्तार हेा जानेक समयमें सविस्तार माहात्म्य नहीं लिखा गया। राजगृ के पंडा राजगृह माहात्म्य हाथमें ले कर तीर्थयात्रीको आज भी वे सब तीर्थ देखाते हैं।

राजगृह माहात्म्य वर्णित उक्त तीर्थोंको छोड कर गणेशकुण्डके उत्तर रामसीताकुण्ड (राजा निजयेजमिहने यह कुण्ड बंधवा दिया है, यहाकी उत्कीर्ण लिपिमें इसका पता चलता है।), तथा सूर्यकुण्डके नवप्रहकी मूर्त्ति है। सीताकुण्डके उत्तर एक नये शिवमन्दिरके सामने ध्यानीबुद्ध है। उसके उत्तर पंडा लोग एक प्राचीन शिबलिङ्ग दिखलाने हैं जो किसी बुद्धमूर्त्तिके उत्तमाङ्गके जैसा प्रतीत होता है। उसीके सामने ब्रह्मचूडके नीचे एक चवतरे पर अर्द्धाङ्ग बुद्धमूर्त्ति है। केदारकुण्डके समीप जो विष्णुपद है, वह श्रीक बुद्धपदके जैसा मालूम होता है। गणेशकुण्डके समीप भी विष्णुपद है। किंतु इस विष्णुपदमें 'सं० ८६४। आपाढ यदि १२ सोमवार श्रीबुद्धचरण युगल' इत्यादि खोदित रहनेसे बुद्धपद माननेमें कोई उज्र नहीं।

पहले लिख आये हैं, कि ७वीं सदीमें लिखित चीन-परिव्राजकके वर्णनसे जाना जाता है, कि अशोकराजने हजार ब्राह्मणोंको राजगृह दान किया था। राजगृह-माहात्म्यमें भी देखा जाता है, कि पुराकालमें वसु नामक एक राजाने राजगृहवनमें अश्वमेध यज्ञ किया। उस उपलक्षमें उन्होंने ७,५०० दक्षिणात्य ब्राह्मणोंको निमन्त्रण किया था। उसके बाद उन्होंने उन सब ब्राह्मणोंमेंसे वत्स, उपमन्यु, कौण्डिन्य, गर्ग, हारित, गीतम, शाण्डिल्य, भरद्वाज, कौशिक, काश्यप, वजिष्ठ, वात्स्य, सावर्णि और

पराशर इन चौदह मोक्षज्ञ ऋषेदो आश्वलायन-शाखा-ध्यायी ब्राह्मणोंको राजगृहपुर तथा अविगीत्यों गिरिव्रजमें वैकुण्ठपदके निकट ब्राह्मण शासन दक्षिणास्वरूप दान किया था। (राजगृहमा० २ अ०) बडे आश्चर्यका विषय है, कि आज भी राजगृहमें केवल ब्राह्मणोंका वास कहनेमें कोई अत्युक्ति न होगी, अन्य जातिकी संख्या बहुत बंडी है।

मुसलमान प्रभाव।

महम्मद इ खलियारके विहार विजयके बादसे हा यहा मुसलमान प्रभावका आरम्भ हुआ। सुखस्वाम्भयमय राजगृहका अवस्थान देख कर बहुतसे मुसलमान साधु यहा आ कर रहने लगे। उनमेंसे पीर मकदुमशाहका नाम विहारप्रान्तमें मशहूर है। मकदुमशाह ऋष्यशृङ्गकुण्डमें आ कर रहने थे। यहां उन्होंने बडी बुजुर्गी दिखा कर जनसाधारणको मोहित कर लिया था। विपुलाचलके पारददेशमें अवस्थित ऋष्यशृङ्गतीर्थ तहासे मकदुमकुण्ड फहलाता है। आज भी दूर दूर देशके भक्त मुसलमान मकदुमकुण्ड देखने आते ह। यहाका प्रस्तरमय कुण्डावास बहुत मनोरम और चित्ताकर्षक है। यहा एक गुप्तघर और दो प्रकट उष्ण प्रस्त्रवण हैं।

राजगृहका जलनायु बहुत अच्छा है। स्वास्थ्यान्त्रेपी और रोगग्रस्त व्यक्ति यहाके उष्ण प्रस्त्रवणोंमें स्नान करने आते ह। ऐसा सुना जाता है, कि यहांके प्रस्त्रवण के गरम जलमें स्नान करके बहुतेरे असाध्य रोगसे मुक्त हो गये हैं।

राजगृह—पटना जिलेकी एक गिरिमाला। यह अक्षा० २४° ५८' ३०" से २५° १' ३०" उ० तथा देशा० ५८° २५' से ८५° ३३' ३०" पू०के मध्य विस्तृत है। इसका पत्थर आग्नेय स्वभावविशिष्ट है।

राजगृहक सं० त्रि०) राजगृहसम्बन्धी।

राजगृह (सं० क्ली०) राजमचन, राजयासाद।

राजग्रीव (सं० पु०) राजने इति राज-अच्-राजा-दीप्ति-शालिनी ग्रीवा यस्य। मत्स्यविशेष, एक प्रकारकी मछली।

राजघ (सं० त्रि०) राजानं हन्तीति हन् (राजघ उप-संख्यान। पा ३।२।१५) इत्यस्य वार्त्तिकोक्त्या क प्रत्ययेन

साधु । १ राजहत्या, राजाको मारनेबाधा । २ वीर्य, तेज ।

राजचन्द्र—रेश्मिचन्द्र नामक अभिधानक प्रणेता ।

राजचक्र (सं० पु०) पुष्पाग पुष्प, सुन्दरता वा चम्प्य ।

राजचिह्नक (सं० ह्रा०) चिह्नानां स्त्रीषु विभाजकानां राज्ञा

राजद्वारादित्यात् परनिपातः । उपत्य, निरयन ।

राजचूडामणि (सं० पु०) सगोत्रक अनुसार राजक सात मेरुमिसं पद ।

राजचूडामणि दक्षिण—कूर्पर्यासिक नामकी गण्ड दक्षिणाको टोका, काथर्वण तथा मोमांसास्त्रका तन्त्र शिक्षामणि नामक टोका भादिक रचयिता । इनके पिता का नाम था सत्यमङ्गल उल्लट धानियास दक्षिण ।

राजचन्द्र (सं० पु०) चन्द्रानां राजा, राजद्वारादित्यात् चन्द्राण्य परनिपातः । १ विश्वचन्द्र, विश्वेश्वर । २ महाचन्द्र, बड़ा जामुन, करेदा ।

राजचन्द्र (सं० पु०) यस्मिन् पृथक् टोकराज्यस्य यस्या यक्ष कश्चि भक्तः स्यादि तासुसिसि वि मन् चवर्गानुयादितिरत्येक तथा अक्षमसहस्रनयोरित्यस्य रूपम् । क्षययोग । बरन्, राज्यरन् और क्षययोग देण ।

राज जामुन (हि० पु०) जामुनका आतिका एक प्रकार का मसोखे भाकारका वृक्ष । यह इंदरावुन, भवप और गोरपुत्रक जङ्गलोंमें पाया जाता है । इसकी छाल पीजापन बिषे मूत्रे रंगकी और दुरदुरी होता है । यह गरमोंमें फूलता और बरसातमें फलता है । इसकी पत्तियोंका प्यषहार औषधमें होता है और फल काये प्राय है । इसकी एकही इमातक सामान और लोकोक भीजार बनानेक काममें आती है ।

राजमोरक (सं० स्त्री) मोरकसं पद प्रकारका ओप । राजत (सं० स्त्री) राजतस्य विकाराः (प्रथितरन्वादिभ्रान्-ष्म् । पा ३।१।१५४) इति मण् । १ राजतनिर्मित, चाँदीका । (स्त्री०) २ राजत, चाँदी ।

राजतनय (सं० पु०) राजा तनय । राजपुत्र । राजतर्कियों (सं० स्त्री०) बहमस्त कश्चमोरका एक प्रसिद्ध इतिहास ग्रन्थ । यह संस्कृतमें है और इसमें पीछे कई परिवर्तनों द्वारा बड़ाया । यह इतिहास ११४८ ई०का सिधा है । इसकी रचना भवतक होती जाती है । बृहस्प और चार्यर १५

राजतरणी (सं० स्त्री०) पुत्रादियोग, एक प्रकारका फूल । इसको राजतरणी भी कहते हैं ।

राजतरु (सं० पु०) तद्वर्णा राजा राजद्वारादित्यात् परनि पातः । १ कर्मिकारका वृक्ष, कमियाटा । २ भारवप, ममलतास ।

राजतण्डुली (सं० स्त्री) राजा तरुणीस सीन्वर्पातिशय्य परशात् । पुत्रादियोग, एक प्रकारका कृत्रक या सफेद गुन्ना, इसका फूल मयतासे बड़ा होता है और इसका जला रङ्गियों पर चढ़ाई जाती है । फूलोंका रंग मद् और मोठी होता है । इसका पत्तिय—महासहा, पर्ण पुष्प, क्षयान, अन्नातक, सुगुणा, सुवर्णपुण । वैद्यकमें इसका गुण कषाय, कफकारक चक्षुष्य, हर्मपद, हृष्य, सुखि और मुखपल्लव माना गया है ।

राजता (सं० स्त्री०) राजा भावाः तन्त्रात् । १ राजा होमका भाव, राजतण्डुली । २ राजाका पद ।

राजताल (सं० पु०) राज स्यालस्य । गुणाकपुष्ट सुगरोका पेड़ ।

राजतिमिरा (सं० पु०) सुखाग, तरबूज । राजतिलक (हि० पु०) १ राजसिंहासन पर किसी नये राजको बैठनेको रीति, राजवामिके । २ नये राजाक गद्दी पर बैठनेका उत्सव ।

राजतार्थ (सं० ह्रा०) एक तार्थका नाम ।

राजतुङ्ग (सं० पु०) राष्ट्रकूटराजमेव ।

उत्पत्तयत्न न देखा ।

राजतेमिप (सं० पु०) राजतिमिजा तरबूज ।

राजत्व (सं० स्त्री०) राजा भावाः त्व । १ राजता, राजाका भाव या कर्म । २ राजाका पद ।

राजदण्ड (सं० पु०) राजो दण्डः । १ राजशासन । २ यह दंड जिसका विधान राजाक शासनक अनुसार हो, वह दंड जो राजाको आज्ञाक अनुसार दिया जाय ।

राजदण्ड (सं० पु०) कर्तानां राजा (राजद्वारादियु पर । पा ३।१।११) इति परनिपातः । द्वाताका पंचिक बोधका यह दण्ड जा और दातास बड़ा और चौड़ा होता है । येन दंत ऊपर और सोबेकी पंचिकोंकी बीचमें हाति है । कोर काइ ऊपरकी पंचिक सामनेक दा बडे द्वाताकी भी राजदण्ड मानत है पर अन्य लोग द्वाता पंचिकोंकी बीचक दा दो दाताको राजदण्ड कहत है, चीका ।

राजदन्ति (सं० पु०) राजदन्त ।

राजदर्शन (सं० क्ली०) राक्षः दर्शनं । राजाका दर्शन, राजाको देवना ।

राजदार (सं० पु०) राजः दाराः । राजपत्नी, राजाकी स्त्री ।

राजदुहिता (सं० स्त्री०) राज्ञः दुहिता । राजाकी पुत्री ।

राजदूत (सं० पु०) वह पुरुष जो एक राज्यकी ओरसे किसी अन्य राज्यमें सन्धि या विग्रह सम्बन्धी अथवा अन्य नैतिक कार्य संपादन करनेके लिये या किसी प्रकार का संदेश दे कर भेजा जाता है । चाणक्यका मत है, कि मेधावी, चाकपटु, शीर पर चित्तोपलक्षक तथा यथोक्त-वादी पुरुषको राजदूत नियत करना चाहिए । प्राचीन-कालमें आवश्यकता पड़ने पर ही राजदूत एक राज्यसे दूसरे राज्यमें भेजे जाने थे, पर पश्चिमी देशोंमें यह प्रथा है, कि मित्त राज्योंमें राजाओंके राजदूत परस्पर एक दूसरेके यहां रहा करते हैं और उन्हींके द्वारा सारा कार्य सम्पादित होता है । दो राज्योंके बीच युद्ध छिड़ने पर दोनों एक दूसरेके यहांसे अपने अपने राजदूत बुला लेते हैं ।

राजदूर्वा (सं० स्त्री०) एक प्रकारकी दृव जिमकी पत्तियां, फांड आदि स्थूल और बड़े होते हैं ।

राजदृषद् (सं० स्त्री०) जाना, चक्की ।

राजदेव—एक आभिधानिक ।

राजदेशीय (सं० पु०) राजासे कुछ कम, राजाके तुल्य, राजकल्प ।

राजद्रुम (सं० पु०) द्रुमाणां राजा राजादन्तादित्वात् पर-निपातः । आरम्भवृक्ष, अमलतास ।

राजद्रोह (सं० क्ली०) राजा या राज्यके प्रति किया हुआ द्रोह, वह कृत्य जिससे राजा या राज्यके नाश या अनिष्ट की संभावना हो ।

राजद्रोहिन् (सं० त्रि०) राजद्रोह करनेवाला, वागो ।

राजद्वार (सं० क्ली०) १ राजाका द्वार, राजाकी ड्योढी । २ विचारालय, न्यायालय ।

राजधत्तूरक (सं० पु०) धत्तूरकाणां राजा, राजदन्ता-दित्वात् परनिपातः । १ वृद्ध-स्तूरक वृक्ष, एक प्रकारका धतूरा जिसके फूल कई आचरणके होने हैं । २ कनक धतूरा ।

राजधर्म (सं० पु०) राज्ञो धर्मः । १ राजाका कर्त्तव्य कर्म । राजनीतिके अनुसार प्रजापालन करनेसे राजधर्म वचता है । मनु आदि शास्त्रोंमें राजधर्मका विशेष विवरण वर्णित है । २ महाभारतके शान्तिपर्वके एक अंशका नाम जिसमें राजाके कर्त्तव्योंका वर्णन है ।

राजधर्मन् (सं० पु०) महानारतके अनुसार कश्यपके एक पुत्रका नाम जो सारसोंका राजा था ।

राजधान (सं० क्ली०) धोपनेऽत्रेति धा ल्युट्, ततः कन्, राज्ञो धानकं नगरं । राजपुर ।

राजधानी (सं० स्त्री०) धीयतेऽन्यामिति धा अधिस्करणे, ल्युट् टोप् राज्ञा धानी नगरी । वह प्रधान नगर जहां किसी देशका राजा या शासक रहता हो, किसी प्रदेशका वह नगर जहां उस देशके शासनका केन्द्र हो । पर्याय—कोट्ट, राजधानक, स्फुन्वावार ।

"तो दम्पती स्थां प्रतिराजधानीं प्रस्थापयामास वशी वशिष्ठः ।"

(श्रु २।५०)

राजधान्य (सं० क्ली०) राजप्रियं धान्यं । राजभोग्य हैमन्तिक धान्यविशेष । २ श्यामा धान्य, श्यामा धान ।

राजधामन् (सं० क्ली०) राजप्रासाद ।

राजधुर (सं० पु०) राज्यभार, शासनका भार ।

राजधुस्तूरक (सं० पु०) धुस्तूरकाणां राजा राजदन्ता-दित्वात् परनिपातः । १ वृद्ध-स्तूरक, एक प्रकारका धतूरा जिसके फूल बड़े और कई आचरणके होते हैं । पर्याय—राजधूर्त्त, महामठ, निस्त्रैणगुण्यक, भ्रान्त, राज-स्वर्ण । २ कनक धतूरा ।

राजन् (सं० पु०) राजने शोभते इति राज-कणिन् (युव-यित्किराजीति । उष् १।१५६) इति कणिन् । १ प्रभु, स्वामी, मालिक । २ नृपति, किसी देश, जाति या जल्येका प्रधान शासक । पर्याय—राज, पार्थिव, क्षनाभृत्, नृप, भूप, मही क्षिन्, नरपति, पार्थ, भूपाल, भूभृत्, महीपति, नाभि, नाराज, भूमिन्द्र, नरेन्द्र, नायकाधिप, प्रजेश्वर, भूमिप, इन्, दण्डधर, अचनीपति, स्कन्द, स्कन्ध, भूभुज, अर्धापति ।

(जटाधर)

प्रजाओंको रज्ज कराने, इस कारण नरपतिको राजा कहते हैं । भूपति अनुरक्त हो कर स्वर्गजनक राजसिक

कर्मामुद्धारण करने समी प्रायिषीकी रक्षा करते हैं, इसी कारण राजा नाम पड़ा है।

सबसे पहले 'पुण्य' राजा'-को बराधि पाई थी।

(पद्यु० मूखपत्र २१ म०)

अब जोरपाखके अशर्म राजा जन्म लेते हैं। मनुष्य सिखा है, कि जगतके भराजक होनेसे समी प्राणी मयसे व्याकुल हो जायेंगे, इस कारण उनको रक्षाके लिये इन्द्र, वायु, यम, सूर्य, अग्नि, बरुण, चन्द्र और कुबेर इन अष्ट विरुपालोंके अशर्म ईश्वरन राजाको सृष्टि की है।

राजप्रणमय अग्नि, वायु, सूर्य, चन्द्र, यम, कुबेर, बरुण और महेश्वरके समान हैं। राजा यदि जानक हो तो भी उन्हें सामान्य मनुष्य मही समझना चाहिये। वे देवता हो कर मनुष्यरूपमें अवस्थान करते हैं, ऐसा ममभन्ता चाहिये। प्रयोजनोप कार्य कल्याण, लक्ष्मीय शक्ति एवं विश्वात्मकी सम्यक् पर्याप्तोक्तना करके राजा कर्मामु-रोषस समी प्रकारके रूप धारण करते हैं। (मनु० ७ म०)

बराहपुराणमें लिखा है, कि पितृयुद्ध मयवहुमकपिरा यण व्यक्तिको राजाका मय नहीं जानना चाहिये यदि मय वा जोमप्रयुक्त हो जायें तो वे नरक जाते हैं। इस पापबिमुक्तिके लिये उन्हें प्रायश्चित्त करना होता है।

(बराहपुराण राजाप्रमयण नामक प्रायश्चित्तप्राम्ना)

प्रायश्चित्तप्राम्नामें लिखा है, कि राजाप्र कामसे लज्जकी क्षमि और शूद्राप्र कामसे प्रक्षयण क्षमि होती है। यह बिधान प्रायश्चित्तके लिये जानना चाहिये।

महामारतसे पता चलता है, कि पहले मनुष्योंमें न तो कोई शासक और न कोई दस्युवर्ता। समी मनुष्य हिल मिळ कर रहते थे और आपसम एक दूसरेका रक्षा करत थे। इस प्रकार उन्हें न तो किसी शासनकी जरूरत होती थी और न शासक का। किन्तु यह सुनियम बहुत दिनों तक न रह सका। समयने पलटा जाया। लोगोंके अचितमें विकार उत्पन्न हो गया जिससे वे कर्मव्य पावन-में शिथिल हो गये। उनमें सहाभुम्बुति न रही और लोम, मोह भादि कुवासनाओंने उन्हें घेर लिया। समी मनुष्य विषय-वासनामें रत हो गये और वैदिक कर्म कारुण्यका जोष हो गया। फल यह हुआ कि कर्मव्य वैष व्याकुल हो कर प्रजाश्रीके पास गये। प्रजाश्रीने उन्हें

आश्वसन दिया और मनुष्योंके शासनकी व्यवस्थाके लिये एक छात्र अर्थात्प्रायः एक वृहत् प्रमथ बनाया। देवगण उस प्रमथको ले कर विष्णुके पास पहुंचे और उनसे प्रार्थना की, कि आप किसी ऐसे पुरुषको आज्ञा दीजिये जो मनुष्योंको इस शास्त्रानुसार सजावे। विष्णु भगवान्ने उस शास्त्रके अनुसार शासन करनेके लिये राजाकी सृष्टि की। किसी किसी पुराणका मत है, कि देवसत मनु और किसीके मतसे कर्ममयके पुत्र अङ्ग मनुष्योंके पहले राजा हुए। पूर्वकालमें मनुष्योंको इतनी अधिकता न थी और न उनको इतनी घनो वसतिपाई थी। एक वंशमें उत्पन्न लोगोंको संख्या ज्यों ज्यों बढ़ती गई त्यों त्यों बहुतसे मृत्ये बनते गये। वह शासक प्रजापति कृष्णता या भीर श्रेय लोग प्रजा अर्थात् पुत्र। देवर्षि नरत, जमदग्नि, कुशिक भादि जातिवोंके नाम भाये हैं जिनमें पृथक् पृथक् प्रजापति थे। इनमेंसे अनेक जातियां पंजाब भादि प्रायोंमें बस गई और जैतीबारी करत लगी। पहलेसे तो उनमें अलग अलग प्रजापति थे, परन्तु धीरे धीरे जनसंख्या बढ़ती गई और अनेक देश जनपूर्ण हो गये। ऐसे भायोंको शान्तिन कहा है। फिर उनमें प्रजापतिवोंसे काम न चलता और मिन्न मिन्न देशोंमें शांति स्थापित करत और दूसरे देशोंके आक्रमणसे अपनी रक्षा करनेके लिये प्रजापतिसे अधिक शक्तिशाली एक शासकको नियुक्तिके आवश्यकता हुई। पहले पहल यह प्रथा मरतजातिमें लगी थी; इसीलिये राजस्य-यज्ञ में "भोगे मारताः अयं या सर्वेषां राजा" कह कर राजा को राजसिंहासन पर बैठाया जाता था। पहले यह राजा प्रजाओंके द्वारा प्रतिष्ठित होता था। यदि यह प्रजाका अनिष्ट करता तो लोग उसे तलक परसे उतार देते थे। बेशु भादि राजे इसी प्रकार पदभ्रष्ट हुए थे। जब उन शान्तिनैम वर्णव्यवस्था स्थापित हो गई, तब राजाका पद वैकुण्ठ हो गया और उसका शक्ति जबरदस्त मानो गई। मनुने राजाको अग्नि, वायु, सूर्य चन्द्र, यम, कुबेर, बरुण और महेश्वर या इन्द्रकी मात्रा या न शसे उत्पन्न किया है और उसे चारों वर्णोंका शासक कहा है। ज्यों ज्यों प्रजाओंको शक्ति प्राप्त हुई त्यों त्यों प्रजाका अधिकार संपादित होता गया और अन्तमें वह

देश या राज्यका एकाधिपति स्वामी हो गया। दूसरे वर्गके आर्योंमें जो इधर उधर दल बाध कर चलते फिरते थे और जिन्हें द्रात्य कहने थे, प्रजापतिकी प्रथा बनी रही और यही प्रजापति गणनाथ बन गया। ऐसे आर्योंमें न तो वर्णकी ही व्यवस्था थी और न उनमें राजाका एकाधिपत्य ही हुआ। उनमें प्रजापति राजा तो कहलाने लगा, पर वह सभी काम गणकी सभ्रतिसे करता था। ऐसे द्रात्य आर्य क्रोशल, मिथिला और विहार आदि प्रान्तोंसे आ कर बसे थे और उपनिषद् या ब्रह्मविद्याके अभ्यासी थे। मिथिलाके राजा जनक इन्हीं द्रात्य आर्योंमें थे। इनसे लिच्छवि लोगोंमें गणकी प्रथा महात्मा बुद्धदेवके काल तक प्रचलित रही, इसका पता त्रिपिटकसे चलता है।

राजनय (सं० पु०) राष्ट्रः नयः। राजनीति।

राजना (हि० त्रि०) १ विराजना, उपस्थित होना। २ शोभित होना, सोहना।

राजनाथ—अच्युतरामाभ्युदयकाग्र्यके रचयिता।

राजनापित (सं० पु०) नापिताना राजा राजनापितः राजदन्तादित्वात् परनिपातः। नापितश्रेष्ठ, इज्जामोंमें श्रेष्ठ।

राजनामन् (सं० पु०) राज्ञोनाम नाम यस्य। पटोल, परचल।

राजनारायण मुखोपाध्याय—तुलसीचन्द्रिकाके रचयिता।

राजनारायण वसु—कायस्थकुलोद्भव बंगालका सुकृती सन्तान। आपने कलकत्तेके हिन्दू-कालेजमें शिक्षाप्राप्त किया था। आप डेरोजिओकी छात्रमण्डलोंमें विशेष सुशिक्षित थे। राजा राममोहनराय द्वारा प्रतिष्ठित आदि ब्राह्मसमाजका पृष्ठपोषक हो कर उसकी उन्नतिमें आप बहुत दिनों तक रहे। अन्तमें बुढ़ापा होने पर आपने वैद्यनाथमें रहनेकी इच्छा की और वहा चले गये। १६वीं सदीके शेषभागमें आपकी जीवनलीला शेष हुई।

राजनि (सं० पु०) रञ्जनका अपत्य।

(तैत्ति० आ० ५।४।१२)

राजनिवेशन (सं० स्त्री०) राजप्रासाद।

राजनीति (सं० स्त्री०) राश्ट्रा नीतिः। वह नीति जिसका

अवलम्बन कर राजा अपने राज्यकी रक्षा और शासन दृढ करना है। इसके प्रधान दो भेद हैं—एक तन्त्र और दूसरा आवाय। वह नीति जिसके द्वारा अपने राज्यमें सुप्रबन्ध और शान्ति स्थापित की जाय, तन्त्रनीति कह लाना है और जिसके द्वारा परराष्ट्रोंसे सम्बन्ध दृढ किया जाय, वह आवाय कहलाता है। स्वराज्यमें प्रजाओंका समाचार और उनकी जातिका पता देनेके लिये राजाको चरसे काम लेना पडता है और परराष्ट्रोंमें स्वराष्ट्रके स्वत्व, वाणिज्य, व्यापारादिकी रक्षा तथा उनकी गतिरिक्तिका पता देनेके लिये दूत रहने हैं। इन दूतों और चरोंसे राजा स्वराष्ट्र और परराष्ट्रकी गति, चेष्टा आदिका पता लगा कर अपनी शक्ति और स्वत्वकी समुचित रक्षा करता है। प्राचीन ग्रन्थोंमें आवायके छः मुख्य भेद किये गये हैं जिनको पट्टगुण भी कहते हैं। उनके नाम ये हैं—सन्धि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीकरण और संश्रय। ये पट्टनीतिके नामसे भी प्रसिद्ध हैं। राजनीतिके चार और अंग कहे गये हैं—साम, दान, दण्ड और भेद।

राजनीतिक (सं० त्रि०) राजनीति सम्बन्धी।

राजनोल (सं० स्त्री०) मरकत मणि, पन्ना।

राजन्य (सं० पु०) राज्ञोऽपत्यमिति राजन् (राजभ्युत्पत्-यत्। पा ४।१।१३०) इति यत्। १ क्षत्रिय। "ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।" (ऋक् १०।६०।१२) २ राजपुत्र। राजति दीप्यते इति राज (राजेभ्यः। उण् ३।१००) इति अन्य। ३ अग्नि। ४ क्षौरिकावृक्ष, खिरनीका पेड़।

राजन्यक (सं० स्त्री०) राजन्याना श्रुतियाणां समूह राजन्य (गोश्रोत्रोत्प्रेरभ्रराजन्येति। पा ४।२।३६) इति युञ्। १ क्षत्रियोंका समूह। २ क्षत्रियोंके वेश और देश।

राजन्यत्व (सं० स्त्री०) राजन्यस्य क्षत्रियस्य भावः त्व। क्षत्रियका भाव या धर्म, क्षत्रियका कार्य।

राजन्यवन्धु (सं० पु०) राजन्यस्य वन्धुः। १ राजकुटुम्ब। २ राजवन्धु अवज्ञासूचक प्रयोग। ३ क्षत्रिय।

राजन्यवत् (सं० त्रि०) राजपुत्रादिके साथ सम्बन्ध रखनेवाला।

राजन्वत (सं० त्रि०) राजा अस्ति अस्य अस्मिन्निति वा राजन् प्रशंसाया मतुप् (राजन्वान् सौराज्ये। पा ८।२।१४)

इति निपातनात् नखोपः । सुराग्रपुच्छदेश, प्रजापालन भाद्रि क्षधर्मपरपण्य राजयुक्त देश ।

राजपंती (हि० पु०) राजर्षिस ।

राजपटोळ (सं० पु०) पटोळानां राजा परनिपाताः । मयुर पटोळ, एक प्रकारका परपत्र जिखक फळ बड्डे होते हैं । फागुन चैतक महीनेमें इसको जाडियाँ काट कर खेतों में बो दो हाथको दूरी पर पकियोंमें नाखा खोद कर गन्धार् जातो है और उभमें पातो दिया जाता है । यह वैशाख अत्रसे फूलने लगता है और इसको फसक सर्पा धरुके मध्य तक रहती है । फळ देकनेमें कच्चे, बड्डे और खानेमें कुछ कम स्वादिष्ट होते हैं । इसे प्रति वर्ष केला में लगानेको भावस्पकता होती है । बिहारप्रान्तमें इसको खेती अधिक होती है । इसे पूरबी या पन्नेका परपळ भा कहते हैं ।

राजपटोळी (सं० खो०) राजमिया पटोळी । मयुर पटोळी या परपळ ।

राजपट्ट (सं० पु०) राजमिया पट्ट इव । मणिबिणय, कुम्भक परपट्ट । पर्याय—बिराज्य ।

राजपट्टिका (सं० खो०) खातक पत्ती ।

राजपति (सं० पु०) राजा पति । सभाद, राजाभोंका राजा ।

राजपत्नी (सं० खो०) राजा पत्नी । १ राजमहियो, राजाकी स्त्री, रानी । २ पिच्छ वीतक ।

राजपथ (सं० पु०) राजा पथ्या (शुकुप्रभ्यः पममानपथे । या धीमन्व इति म । राजमार्ग, यह चौड़ा मार्ग जिस पर हाथी, घोड़े, रथ भादि सुगमतासे चळ सकते हैं ।

राजपद्धति (सं० खो०) राजा पद्धति । १ प्रधान पथ, राजपथ । २ राजनीति ।

राजपंती (सं० खो०) प्रसारिणी नामकी लता ।

राजपण्ड्य (सं० पु०) पञ्चापबुजा राजा, राजपन्ताहिल्यात् परनिपाता । रक्षकर्ण पण्ड्य, शाख व्याज । पर्याय—अर्धनेप, नृपाह्वय, राजमिय, महामूक, क्षीरपत्र रोक, नृपेय, नृपकण्ठ, महाकण्ठ, नृपमिय, रक्षकण्ठ, राजीय । गुण—क्षीतक, पित्तकफनाशक, क्षीपन तथा अतिशय तिद्रा जनक ।

राजपाडा—बम्बई प्रसिद्धताके काठियावाड़ विभागक गोहेमबाड़ प्रांतका एक सामन्तराज्य ।

राजपाळ (सं० पु०) राजानां पाळपति रक्षति । १ यह जिमसे राजा या राज्यकी रक्षा हो खेला भादि । २ राज विरोध ।

राजपिण्ट (सं० पु०) राजाका पिता ।

राजपिण्या—बम्बई प्रदेशके रेवाकास्ता पोळिरिफळ पत्रिस्तोके अन्तमुक्त एक देशी सामान राज्य । यह मझा २१-२३' सं २१ ५१' ३० तथा दशा० ७३ ५' से ७४ ५०'क मध्य विस्तृत है । भूपरिमाण १,१६० वर्गमील है । इसके उत्तरमें नर्मदा नदी और रेवाकास्ताका मेहवासी राज्य, पूर्वमें खानदेश जिखेका मेहवासी राज्य, दक्षिणमें बरोदा राज्य और सूरा जिखा तथा पश्चिममें प्रोच जिखा है । यह राज्य उत्तरसे दक्षिण ४२ मील लम्बा तथा ३० मील चौड़ा है ।

सतपुरा परतमाळाकी एक शाखा इस राज्यमें तामा फौजा हुई है । उस शाखाका नाम है राजपिण्या गौळ माना । पहाड़ी मंगलमें तराह तराहके वृक्ष लगते हैं । यह तमाफू, ईक भादिको खेती होती है । सतपुराके निकट कोहे मीर मूल्यवान परपट्टको खान है । करजन नामक यशो नामक शीलसे मिच्छ कर राज्यके मध्य होती हुई नर्मदामें गिरी है ।

यहांके सरकार उच्चपिनीराज सदाभवके पुत्र सोका रायाके बंजपर बतकाते हैं । इनका कहना है, कि जोकाराणा पिताके साथ लड़ाई भगडा करके पिपुखामें भा कर बस गये । जोकाराणा पर्यार्येक्षीय राजपूत थे । प्रेमगड्ड (बर्तमान पति) निवासी गोहलबंशीय राजपूत मखेरराजके साथ इनकी एकमात्र कन्याका विवाह हुआ । मखेरराजके दो पुत्र थे, दुहुवादी मेमारसिंहजी । दुहुवाखाने भाइतरद स्थापन कर राज्यकी परिवारकता की तथा मेमारसिंहजी पितृसम्पत्तिके अधिकारी हुए । प्रायः १४० ई०से यहां गोहलबंशीय राजाभोंका शासन विस्तृत हुआ ।

महमशाहाजके मुसलमानराजस परास्त होनेक बाद यहांक सरदारोंने कबूल किया, कि वे अकलत पड्डे पर राजस्वरकारकी १००० प्याति और ३ सौ अम्बारोही सलासे मद्द पड्डे चायगे । १५३३ ई०म अकबर शाह शाह गुजरात विजय तक पही व्यवस्था रही । अकबर

शाहने सैन्य-साहाय्यके बदले वार्षिक ३५५५०) रु० कर स्थिर कर दिया। मुगल बादशाह औरंगजेबके शासन-काल तक (१७०७ ई०) उन्होंने राजकर दिया था। बाद-में मुगलशासनकी विशृङ्खला होने पर सरदारोंने राजकर भेजना बंद कर दिया। १८वीं सदीके आग्रिमं दामाजी गायकवाडने इसका बहुत कुछ अंश जीत लिया। उन्होंने पहले वार्षिक ४८०८०) रु० ले कर वह स्थान राजाकी छोड़ दिया। पीछे वह रु० ६२०००) रु० तक बढ़ा दिया गया है।

इस छोटे सामन्तराज्य पर गायकवाडका वार वार अत्याचार और गृहविवाद देव कर अंगरेजराजने बीचमें पड़ कर मेल करा दिया। तदनुसार १८२१ ई०में वैरि-सालजी राजसिंहासन पर बैठे। १८६० ई०में अंगरेज-की सलाहसे वैरिसालजीके पुत्र गम्भीरसिंहजी राजा हुए। १८८७ से १८९७ ई० तक राज्यशासनकी वागडोर अंगरेजोंके हाथ रही। वर्तमान सामन्तका नाम है पच० पच० महाराजा श्री विजयसिंहजी उत्तसिंहजी। इन्हें गोद लेनेका अधिकार है तथा ११ सलाही तोपें मिलती हैं।

इस राज्यमें नानदोद नामक एक शहर और ६५२ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या लापसे ऊपर है। गुजराती यहाँकी मुख्य भाषा है। जूआर, बाजरा, धान, रुई और चना ही राज्यकी प्रधान उपज हैं।

शासनकार्यकी सुविधाके लिये राजा कई परगनोंमें विभक्त है। एक एक परगना एक एक थानेदारके अधीन है। सामन्तको मृत्युदण्ड भी देनेका अधिकार है। इसमें पोलिटिकल एजेण्टकी भी सलाह नहीं लेनी पड़ती है। राजाकी आय ८ लाख रुपयेसे अधिक है। राजाके एक हाई स्कूल और ८१ प्राइमरी स्कूल हैं। स्कूलके अलावा एक अस्पताल और पांच चिकित्सालय हैं। नानदोदमें एक मवेशी-अस्पताल भी है।

२ उक्त राजाकी प्राचीन राजधानी। यह प्राचीन नगरभाग देवसला नामक पर्वतकी चोटी पर बसा हुआ है। यहाँ एक दुर्ग भी है। उस गिरिदुर्गमें यहाँके सरदार १७३० ई० तक रह गये हैं। इसके बाद उन्होंने करजन नदीके समीप पर्वतशिखर पर राजपिपलाकी एक नई

राजधानी बसाई जिसका नाम नानदोद रखा गया।

राजपोलू (सं० पु०) राजप्रियः पोलुः । महापोलु नामका वृक्ष ।

राजपुत्र (सं० पु०) राजप्रचरय पुत्रः । १ राजनन्दन, राजाका पुत्र । पर्याय—युवराज, कुमार, भर्तृदारक । (५मर) २ वर्णमकर जानिविशेष । ज्येष्ठके औरस तथा वैश्वानर्याके गर्भमें इस जातिकी उत्पत्ति हुई है ।

“वैश्वानर्यज्येष्ठ्याया राजपुत्रस्य जन्मः ।”

(ब्रामरखंडी)

पुराणके मतसे यह जाति क्षत्रिय पिता और कर्ण मातासे उत्पन्न हुई है। ३ राजाकी औरसे मिला हुआ एक पद या उपाधि, सरदार । गुर्तोंके नमयमें यह पद युद्धमचारोंके नायककी दिया जाता था। ४ युध्वर । ५ महाराजचुन, बड़े आमका एक नैद । ६ तौरिकावृक्ष, गिरनोका पेड़ ।

राजपुत्र—एक कामशास्त्रके प्रणेता । दामोदररत्न इट्टनो-मतमें इसका उल्लेख है ।

राजपुत्रक (सं० पु०) १ राजकुमार । २ राजपुत्र श्रेणी ।

राजपुत्रा (सं० स्त्री०) राजा पुत्रों यस्या । राजाकी माता, वह स्त्री जिसका पुत्र राजा हो ।

राजपुत्रिका (सं० स्त्री०) राजपुत्रों संज्ञाया क्व । १ शरारि नामक पक्षी । २ राजकन्या । ३ शुद्ध यूर्थिका, सफेद जूही । ४ पित्तल, पीतल ।

राजपुत्रो (सं० स्त्री०) राजः पुत्रोऽथ । १ कट्ट तुम्बी, कट्टु-आ रुद्धू । २ रेणुका । ३ जाती, जाही फूल । ४ राज-रीति । ५ कुशुन्दरो । ६ मालती । ७ राजकन्या ।

राजपुत्रीय (सं० त्रि०) राजपुत्रसम्बन्धीय ।

राजपुर (सं० स्त्री०) राजः पुरं । राजाका पुर, राजपुरी । राजपुर—बम्बईप्रदेशके रेवाकान्ताके अन्तर्गत एक सामन्त-राज्य । यहाँके सरदार बडोदाके गायकवाडको कर देते हैं ।

राजपुर—बम्बई-प्रदेशके काठियावाड़के भालावार विभागके अन्तर्गत एक सामन्तराज्य । यह बम्बई बडोदा रेलवेसे बडोदा स्टेशनसे १॥ कोस दूर पड़ता है ।

राजपुर—बङ्गालके २४ परगना जिलेके अन्तर्गत एक शहर । यह अक्षा० ३०° २४' ३० तथा देशा० ७८° ६' पू०

क मध्य विस्तृत है। जनसंख्या ३ हजारके करीब है। यहाँ तीन भोजनालय, एक पुस्तक स्टेशन, कारखान और एक मरुताल है। १६०२ ई०में यहाँ एक काँचका कार खाना खोला गया है।

राजपुर—पञ्जाबके पतियाळा राज्यके अन्तर्गत पिबौर निजामतकी एक तहसील। यह अक्षा० ३० २२' स ३० ३६' ३० तथा रेखा० ७६ ३३' स ७६ ४६' ५०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १४१ वर्गमील और जनसंख्या ५५ हजारस ऊपर है। इस तहसीलमें १४६ ग्राम लगते हैं।

राजपुर—गुजरातके वैहराट्टन जिलेका एक नगर। मुसाराक स्थास्थानिवास इसी स्थान हो कर जाना पड़ता है।

राजपुर बलो—मध्य भारतक भोपावर एजेन्सीक अन्तर्गत एक सामन्तराज्य। यह नर्मदा और विन्ध्यपर्वतके मध्य स्थानमें अवस्थित है। भूपरिमाण ८३७ वर्गमील है। यहाँके सरदार उदयपुर-राजवंशधर और शिशोदिया कुल सम्भूत हैं। महाराज पणप साहब-भाऊप्रभूक समय इसी पहाड़ी राज्य हो कर गये थे, पर वे कुछ भी भलिष्ठ न कर सके थे। गृहित सरकारके साहबमें कर्तृत्व स्थापन करनेके कुछ पहले राणा प्रतापसिंह यहाँकी मस नद पर बैठे थे। उनके लड़के यशोवन्तसिंहके १८१० ई०में मले पर बड़े लड़के गङ्गदेव राजवाधिकारी हुए। गङ्गदेवकी राज्य चलानेमें अक्षय देव अ गरीबराजने कुछ समयक लिये शासनभार अपने हाथ लिया। १८७१ ई०में गङ्गदेवकी मृत्यु हुई। पीछे उनके छोटे भाई रूप देव राजसिंहासन पर बैठे। १८८१ ई०में रूपदेवके स्वर्गा यास होने पर उनके पुत्र सारो सम्यक्तक अधिकाारी हुए। किन्तु उनका नाबाजिंगी तक गृहित-सरकारके इसकी देखरेख की।

राजपुरव्य (सं० पु०) राजा पुण्या। राज्यका कोई अक्षर या राज्यकर्ता, राजदर्मचाप।

राजपुरव्यवाह—नीपायिक मतके विचार करनेकी एक प्रणाली। गोपालताताचार्य इस सम्बन्धमें एक ग्रन्थ बना गये हैं।

राजपुरण (सं० पु०) पुण्याका राजा, राजदन्तादिस्वात् पर

निपातः। १ नागडेगरका पेड़। २ कनकप्रिया। राजपुरणी (सं० स्त्री०) राजमित्र पुत्रमत्याः कोप्। १ कदम्बी का पुत्र। यह कौंकुपमें होता है। २ वनमलिका। ३ जाती पुष्य।

राजपूजित (सं० पु०) ये श्रेष्ठ ब्राह्मण जिनका सरकार राज्यकी औरस होता हो और जो अधिका भाविके लिये प्रजावर्गक भाषित न हों।

राजपूज्य (सं० स्त्री०) १ स्वर्ण, सोना। (लि०) राजा पूज्या। २ राजाका पूजनीय।

राजपूत—राजपूतनायासी क्षत्रिय वर्णात्मक जातिविशेष। इस जातिके राजे भयभी घोरता और उदारता गुणसे भारतमें जो अक्षयकोटि स्थापन कर गये हैं वह इतिहासमें स्वर्णसरम जिन्ना है। राणा प्रतापको अक्षय मरि, बिस्तोर राजकुम्भद्विपी पधिनो भाद्रिकी सतीत्व कहाना राजपूत जीवनका उद्गुन रूपगत है।

ये राजपूतगण भारतीयसंभवमें आ कर अपनेको सूर्यवंश अश्वर्यश और भनिकुल-समुद्भूत बतलाते हैं सहा पर पथायमें प्राचीन भाषाक्षत्रियवंशमें उत्पन्न नहीं हुए हैं। ऐतिहासिक अनुसन्धानसे जाना जाता है, कि एक समय शाकद्वीपवासी (Scythia) शक राजोंने भारत सीमान्तको जोत कर शक प्रचलता स्थापित की। ये शक जोग क्षत्रिय थे। मनुसंहिताके १०।४३ ४४ श्लोकमें लिखा है, कि ब्राह्मणके भमायमें ये पूषकस्वकी प्राप्त हुए थे। हरिश्चंद्र और पुराणादिके मतानुसार सगले ऋषिद्वीका विनाश कर पितृहत्याका वृत्ता लिया, तब शक जोग बहिष्ठक शरणमें पहुँच। बहिष्ठक कहनेसे सगले शकीक शिर मुड़वा कर छोड़ दिया। किन्तु सुभूर शाकद्वीपवासी धामुधर्व समाजमुक शकक्षत्रियगण इस प्रकार सताये न गये। ये बहुत समय बाद भारतमें प्रवेश कर भारतीय क्षत्रियोंके साथ विवाहादि संबंध स्थापन करनेमें समर्थ हुए थे।

योगीका विश्वास है, कि मन्वादि-वर्णित चतुर्वर्णके अन्तर्गत दूधप क्षत्रियवर्ण मध्यम और नहीं है। किन्तु ब्राह्मणोंका सहायक हो कर जो सब शक वा वाहिक भारतवर्षमें पुसे थे उनकी सुवर्णनि कुशलता देख कर ब्राह्मण लोग बड़े प्रसन्न हुए और उनके प्रति क्षत्रियत्व

आरोग्य कर क्षत्रियका आसन प्रदान किया। इसी कारण उन्होंने सूर्य और चन्द्रवशकी तरह शकोंका वैदिक उत्पत्तिदृष्टांत लिपिबद्ध न करके अग्निसे ही इस क्षत्रिय कुलकी उत्पत्ति स्वीकार कर ली है।

राजपूत इतिहास-लेखक सुभसिद्ध टाड साहबने लिखा है, कि जिट (जाट), तक्षक और असि आदि जाकगण ईसा-जन्मके ६०० वर्ष पहले भारतवर्ष आये थे। भारतीय हिन्दुओंके सख्तपद पड कर वे लोग धीरे धीरे हिन्दू-भाषापन्न हो गये। यहा तक, कि वे अपने पूर्वतन संस्कारको परित्याग कर हिन्दूके पर्वोदिका अनुकरण करने लगे। उन्होंने महाक्षत्रप आदि उपाधियोंमें अपनेको हिन्दूक्षत्रिय बतलानेकी बड़ी कोशिश की थी।

कनिष्क, हविष्क, वासुदेव आदि शककुपणवंशीय कोई कोई राजा 'देवपुत्र' उपाधिको व्यवहार करने थे। वह 'देवपुत्र' आगे चल कर 'राजपुत्र' हो गया। जायद उमरीसे शाकद्वीपीय क्षत्रिय-राजोंके राजपूत नामकी उत्पत्ति हुई है। शकराजाओंके खरोट्टी अक्षरमें उत्कीर्ण मुद्रा पर 'र' परित्यक्त तथा संस्कृत 'राजपुत्र' की जगह 'रजपूत' शब्द प्रयुक्त हुआ है। आज भी राजपूतानेके लोग अपनेको रजपूत कहते हैं।

ऐतिहासिक टाडका कहना है, कि राजपूतानेमें आनेसे पहले राजपूत लोग जाबुलखान और गान्धारमें राज्य करते थे। वे लोग शकवंशसम्भूत होने पर भी हिन्दूक्षत्रिय कहलाते थे। ६५६ ई०में भौगोलिक मसूदी कन्दहार (गान्धार) को राजपूतका राज्य बतला गये हैं। भारतीय इतिहास पढनेसे मालूम होता है, कि किदार-कुपणवंशीय शाहिराजने हूणोंको परास्त कर गान्धार अधिकार किया। १०वीं सदी तक गान्धारराज्य कुपण-वंशके अधिकारमें था। अल्विरुनीने किदारवंशीय राजोंको कनिष्कराजका वंशधर बताया है। फिर उन्होंने राजतरङ्गिणीकार कहणके मतसे इस केदारवंशको तुरुक-वंशोद्भव तथा काबुलका हिन्दूराजा कहा है। ५वीं सदीकी एक शिलालिपिसे टाड साहबने दिखाया है, कि शकराजपूतगण यादव-कन्याका पाणिग्रहण कर क्षत्रिय कहलाने लगे हैं।

गान्धारके अन्तिम किदारराजके मन्त्री कल्लट ब्राह्मण

थे। उन्होंने स्वयंके बलसे किदारराजके हाथसे गान्धार-राज्य छीन लिया था। पीछे किदारवंशने फिरसे प्रबल हो कर गान्धारराज्यका उद्धार किया। १०२६ ई०में इन राजवंशका अधःपतन होने पर मुसलमानोंका अभ्युदय हुआ। इस राजवंशके साथ साथ काश्मीरके क्षत्रिय-राजोंकी रिश्तेदारो थी। काश्मीरकी अनेक राजमहिषी इसी गान्धार राजवंशकी हैं। यह गान्धार-राजवंश जम्जुद राजपूत भी कहलाता था। टाडने कहा है— गान्धारको शकवंशीय राजपूत-शाखाके राजपूतानेमें अपना आधिपत्य फैलाया।

ये शकगण पहले सूर्योपासक थे। मगाचार्य जरथुस्त द्वारा जब अग्निपूजा प्रचार हुआ और पारस्वाधिपति उसके पृष्ठपोषक हुए, तब सौर शकगण अग्निपूजक हो गये। भारतवर्षमें जो सब शकमुद्रा पाई गई हैं उनमें सूर्योपासना और अग्निवेदीका चित्र देखा जाता है। भारतमें भी वे लोग पहले सौर और अग्निपूजक समझे जाते थे। यही कारण है, कि उनके वंशधर राजपूतगण पूर्वांगुष्पको क्षीणस्मृतिके परिचायकस्वरूप अपनेको भी सूर्यवंशीय और अग्निकुलोद्भव कहते हैं।

भारतवर्षमें जब शकका आधिपत्य फैला, उस समय बौद्ध और जैनधर्म बहुत बढ़ा चढ़ा था। ब्राह्मणोंके मध्य शिवोपासना तब भी विलुप्त नहीं हुई थी। ब्राह्मणोंके प्रभावसे शकोंसे बहुतेरे हिन्दूधर्म ग्रहण कर शैव हो गये थे। पीछे कनिष्कके समयसे ही इस वंशमें बौद्ध और जैनधर्मके प्रति लोगोंका अनुराग और विश्वास बढ़ गया।

भारतीय क्षत्रियप्रभावसे बौद्ध और जैन धर्मका अभ्युदय हुआ। उन क्षत्रिय प्रभावको विलुप्त करनेकी इच्छासे नीतिकुशल ब्राह्मणोंने अभ्यागत शकराजाओंका आश्रय लिया। शकराजगण धीरे धीरे नितान्त गोब्राह्मण भक्त हो गये। उधर ब्राह्मण लोग भी उन्हें विशुद्ध क्षत्रिय कहनेसे बाज नहीं आये। इन सब राजाओंको सहायतासे ब्राह्मणधर्मका पुनः अभ्युदय हुआ।

ब्राह्मणोंके साहाय्यसे जब शकराजवंशीयगण क्षत्रिय कहलाने लगे, तब उनकी भारतीय उत्पत्ति और विशुद्ध क्षत्रियत्व प्रतिपादन करनेके लिये ब्राह्मण और

महकविपौने उगिष्ठ करुं क मन्ति कुलोत्पत्ति कदातो का प्रचार किया । पीछे वहा कदातो राजपूत समाजमें प्रवृत्त विवरण समझी जाते जागी । मन्त्रिय पुराणमें भी देखा जाता है, - "मन्त्रिणास्या मया प्रोक्ताः सोमजस्याः शिक्षातया" अर्थात् शास्त्रीयोप मगमय मन्त्रिसे इत्यत्र द्रुप है । इसी प्रकार शाक द्रापीय ब्राह्मणो की तच्छ क्षत्रिय ना अपनेको मन्त्रिकुलक बतलाते है । अब राजपूतगण अपनेको "कश्यप गोप नहीं कहते । महात्मा राहने अनरु प्रकारक प्रमाणस दिखाया है, कि आज्ञा सो राजपूतो के आचार व्यवहार, रात्रिभोवि और उरमवादिमें शक्यमात्र विद्यमान है ।

उक्त लेख ।

उक्त "गिर्यैवार्यगाली राजपूतजातिने आगे धम कर अपने मुञ्जबखसे उत्तर-भारतका अधिकांश स्थान जीता था और वहाके सरदाररूपमें प्रचुर सम्पत्ति अर्जन का थी । उन सब प्राचीन सरदार्य शस राजपूतजातिके एक शाखा कल्पित हुए है । ये लोग हा अभी भारतीय प्राचीन क्षत्रियजातिके वर्तमान प्रतिनिधि समझे जाते है । युक्तप्रदेशमें इनका भुखविद्यापिशासक कह कर तमाम आवर है तथा ये राणा ठाकुर, क्षत्रि भादि उपाधिसेस भूषित है । इन सब राजे वा राजपुत्र शक उत्पत्ति सम्भवमें भिन्न भिन्न आकषापिका माटक मु हसे सुनी जाती है । यास्थेता राजपूताने यमुना और नर्मदा तीरबसी जिन विस्तोर्ण मूनायमें राज्य किया था वह राजबाहु, राजस्थान वा राजपूताना नामस प्रसिद्ध है ।

प्रजातस्वविदु कर्मइतने प्राचीन राजपूतानेके तीन विभाग किये है । एक पश्चिम विभागमें राठोराण्य जगत शासित बीकानेर और मारवाड़प्रदेग यमुन ती महि परिष्कारित अयमसमोर राजा, कच्छबाहाका जयपुर और शेकावाठी प्रदेश तथा श्रीहान-सम्भारका अजमेर राज्य, पूष विभागमें लडक-कच्छयाहीका अजमेर राज्य, ज़ाटराजाओका भरतपुर और दोमपुर, यादवोंका करीमा राजा, इनके सिया चहूरेजापिहल गुजरात, मयुरा और बावा जिला तथा म्हालिपरराज्यका उत्तरीग एक समय राजपूतोंक अधिकारमें था । यादान-नाका तामरगढ़, कच्छबाहगढ़, माहीरगढ़ जिचिबाड़ भादि ।

नाम आज गो उसको गयाहा देता है । इतिव्यविभाग में श्रीदानाका अधिष्टन बूढ़ो, कोटा, मेवार और माख राज्य है ।

राजस्थानक प्राचीन इतिहासको आखोचना करनेस मान्य होता है, कि भखवारकी आराधनासे गैलमाता और यमुनाके मध्यवर्ती भूभागक पश्चिममें भरख्य, पूर्व में मूरसेन और दक्षिणमें बशाणाराज्य था । वर्तमान भखवार, जयपुर, भरखपुर, पैराट और माबातो प्रदशक अन्तर्भूक तथा कर्णान मयुरा और वयानामर्दन मूरसेन क अन्तगत था । इसक पूर्वमें अन्तर्बेदो और रोहिल एवज ल कर पञ्जाबराज्य संयुक्त था । ये मूरसेनगण यादव या यवुव शा कहनात थे । मूरसेनोंक अधिष्ठन विस्तोर्ण राज्यका कुछ अश आज भी करीबीक यादव राजाक शासनाधान है । यादवगण पहले मगधक मीयराजक शक पकानत हुए । इसक बाद मारवाय शक क्षत्रय राजपूत और इनक ऊड़क सौदासेस यादवोंका परास्त कर अपना आधिपत्य फैलाया । गुजरातय शक अन्तर्भवस यादवय शोप राजपूतगण बहुत कमजोर हो गये । ६३५ ईमें धानपरिमात्रक यूपमयुधमें मयुराधि पतिको मूर्युव जोड़क बताया है । कुछ सदी बाद यादव राजपूताने वयाना भार मयुराको पुन जीत कर पीरे पीरे राजपूतानक पूर्णविभागमें राज्य फैलाया ।

कमोजराज हर्षवर्द्धनको मूर्युव बाद (६०७-६५० ईमें) दिल्लीमें तामरांन, कन्नुराहुमें युज्य लोनि, चित्तोरमें जिजोदियामे नरवार और म्हालिपर्य कच्छयाहीमें गिर उठा कर राजपूतराजिका जेयसत प्रमान वाठो और जैसा दिया । इसक बाद मुसलमाना क साथ युद्धमें पराजित हो राजपूत लोग भिन्न स्थानमें जानको पाध्य हुए । राजपूतजातिक इस उपनिषदस ज्ञानव विभिन्न कुल वा जल्यको स्पष्ट हुए है ।

मूर्धवजा राजपूतोंक मध्य गहलोत, राठौर और कच्छबाह नामक तीन जल्य है । गहमातय शकी २४ मालय है जिनमें जिगादिपाकुव विख्यात है । वणा व जयर इयपुरके राणा इसी व शक है । राठौरगण अपनेको कुजाके वंशधर बतलात है । इसमें भा २४ गाबा क्या जाती है । पोधपुरक राजपूतराज इसी

व शके हैं। कच्छराहगण कुशको अपना आदिपुरुष कहते हैं। जयपुरके राजा इसी वंशके हैं। इनके मध्य १२ घर हैं। चन्द्रवंशी यदुको ही अपना आदिपुरुष मानते हैं। इनके मध्य भी ८ शाखा देखी जाती हैं। कच्छप्रदेश और जयशलमीरके क्षारेजा और भट्टिगण वड़े प्रतापशाली ह।

अनिकुलके मध्य परमार, परिहार, चालुक्य और चौहान नामक चार जत्ये ह। प्रत्येक जत्येमें यथाक्रम ३५, २, १६ और २४ शाखा हैं। छत्तीस क्षत्रिय कुलोंके मध्य उपरोक्त जत्योंको छोड़ कर और भी कितने जत्योंका उल्लेख देखनेमें आता है। नीचे उनके नाम दिये जाने हैं—

चौरा वा चावड, तक्षक, जाट, हूण, काठी, वट्ट, भालामकहन, गोहिल, सर्वय वा सरि, अप्स, जटवा, कमरी, दवि, गोर, दोद, गडवाल, चन्देला, बुन्देला, वडगुजर, सेनगार, शिकारवाल, वाई, दहिया, जोहिया, मोहिल, निकुम्भ, राजपति, दहिरिया, दहिमा आदि।

ऊपरमें अनिकुलका उत्पत्ति-विचरण लिखा गया है। चाहमान वा चौहानकुलमें हर, शनि युव, विर्चा और ध्वरा श्रेणी प्रसिद्ध हैं। दिल्लीश्वर पृथ्वीराजने चौहानकुलका मुख उज्ज्वल किया था। प्रतीहार वा परिहारोंकी मन्दाचरमें राजधानी थी। एक समय यही मारवाड़के प्रधान नगररूपमें गिना जाता था। पीछे राठोरोंने मारवाड़में आधिपत्य फैलाया। चालुक्य वा शोलङ्किगण तथा परमार राजगण एक समय भारतके इतिहासपट पर जो वीरत्वचित्र अङ्कित कर गये हैं वह राजस्थानके इतिहासपाठकसे छिपा नहीं हैं।

चालुक्य, चौहान, परिहार और परमार देखो।

विक्रम-संवत्के प्रारम्भसे ले कर १२वीं सदी तक राजपूतोंने अतिहत प्रभावसे उत्तर पश्चिम भारतका शासन किया। अजमेर और दिल्लीके अधीश्वर पृथ्वीराज जब शाहदुद्दीन घोरी द्वारा ११९३ ई०में परास्त हुए, तभीसे यथार्थमें राजपूतका प्राधान्य जाता रहा तथा मुसलमानोंका अभ्युदय हुआ।

ग्रीक इतिहासकारके वर्णनसे मालूम होता है, कि माकिदनवीर अलेक्सन्दरकी भारत-चढ़ाईके समय

पञ्जाबके पहाड़ी प्रदेशके कनोचजातीय राजपूतोंका वास था। फिरिरतानका कहना है, कि वे लोग कोटकाङ्गडामें राज्य करते थे। ७११ ई०में खलीफा वालिदके राज्यकालमें अरबोंने सिन्धुप्रदेश पर चढ़ाई कर वहाँके अधिवासी मुहल और सुमरावंशीय राजपूत राजाओंको परास्त किया था। परवर्त्तिकालमें इस राजपूतवंशके कितने इस्लामधर्ममें दीक्षित हुए। आज भी बलुचिस्तानके मध्यवर्त्ती भालवन प्रदेशमें राजपूतजातिका वास है।

महम्मद घोरी द्वारा परास्त होनेके पहले राठोरगण कन्नौजमें, शालङ्की अनहलवाड़में चौहान अजमेरमें, कच्छवाड जयपुरमें, शिशोदिया उदयपुरमें, गहलोतवंश मेवारमें पूर्ण प्रतापसे राजशासन करते थे। कागड़ाराज तथा जम्भूराजके अधीन दूसरे दो बल राजपूतोंका इरावती और जनद्रुके मध्यवर्त्ती पहाड़ी प्रदेशमें वास था। शेषीक राजपूतगण जम्भुवाल नामसे पसिद्ध थे।

राजपूतानेमें राणा सङ्ग, प्रतापसिंह आदि शिशोदिय वीरोंने मुगल बादशाह बाबर, अकबरशाह आदिके विरुद्ध अस्त्र धारण कर जैसा वीरता दिखाई है, वह इतिहास पढ़नेवालोंको अच्छी तरह मालूम है। मुगलराजसंस्कारमें भी मानसिंह, जयसिंह आदि राजपूतगण वीरताकी पराकाष्ठा दिया गये हैं।

महाराष्ट्रकेशरी शिवाजी अपनेको राजपूतवंशधर वतलाने थे। तञ्जौर और कोडापुरमें इस वंशकी शाखा आज भी विद्यमान है। १७५६ ई०में किसी राठोरसरदार द्वारा आमन्त्रित हो महाराष्ट्रीयदल अजमेरमें घुसा। इस समयसे राजपूतानेकी शासनभित्ति शिथिल होने लगी। १८०३ ई०में राजपूतानेका अधिकांश मराठोंके हाथ आया। सेनापति बेलसिली और लेकके साथ उत्तर भारतमें सिन्देराजका युद्ध हुआ। इस युद्धसे महाराष्ट्रशक्ति जब कमजोर हो गई तब उन्होंने अंगरेजोंके कहनेसे राजपूत राजाओंके प्रति अत्याचार करना छोड़ दिया। इसके बाद १८१४ ई०में पिंडारी उकैतसरदार अमोर खाँके उपद्रवसे राजपूतानेका कुछ भंश तहस नहस हो गया। इस समय उदयपुर राजकुन्याके साथ विवाह ले कर जयपुर और योचपुरराजके मध्य

शुद्धता हो गई। मराठो और पठानो न दोनों दख्खो सहायता पहुँचा कर राज्यको विध्यस्त कर आजा। भाजिर राजकुमारको विष बिछा कर मार आजा जिससे दोनों पक्षमें फिर मेळ हो गया। १८१७ ई०में माजिस भाव हरि स हाय भमीर खाँ बजोभूत होने पर राजपूत राजगण भयभङ्गकी अधीनता स्वीकार करनेका बाध्य हुए। राजपूतगण धर्मनीति, राजनीति और समाजनाति को रक्षा करनेमें बड़े यत्नवान् थे। उन्होनें प्राणियों की मूर्ति दान ही, देवमन्दिरकी प्रतिष्ठा को तथा पर्वोत्सव के भावसमें मिळ कर मनाते थे इस कारण 'दोना दखमें गाढ़ा मिळता हो गई। आज भी प्रधान प्रधान देवालयोंमें राणाप्रदत्त मूर्तियोंको छोड़ कर प्राण्य लोग पणिकु और हथको से कुछ कुछ दान भी पाते हैं। इस दानका नाम है 'माया' अर्थात् पण्यप्रदका निर्दिष्ट मश। पणिकुम्बर और नाथजी वा नाथद्वारामन्दिर में प्रधान हैं। वैष्णवधर्म पशुमायायें द्वारा सबसे पहले नाथद्वारमें नाथजीकी मूर्ति प्रतिष्ठित हुए। उस समय उन्होंने और भी छ। बिमद का कर नाथद्वारमें स्थापन किये। हिन्दु पार्वतीकाममें उनके पीछे गिरिघारीने उन सात विप्रदो का अपने सात कर्णको दे दिया। उनके अचराधिकारिण्य ही अभी उन सब मूर्ति पूजाके मधि कारी हैं। नाथद्वारमें नाथजीका छोड़ कर दूसरी दूसरी मूर्तियों विभिन्न स्थानमें पड़ी हुई हैं। जैसे मधुरानाथ—कोठामें शारकानाथ—कडुरीखीमें, गोकुळ नाथ वा बन्धु—झयपुरमें, यदुनाथ—सूरतमें बिडुळनाथ—कोठामें और मन्वमोहन—झयपुरमें। इस मतबिम्बकी प्रतिष्ठाके साथ साथ राजपूतोंमें छम्पूजाका प्रचार हुआ। वैष्णवधर्मका आश्रय ले कर राजपूतोंने पीरे पीरे वसुमायायें प्रवर्तित मन्वकृत महोत्सव प्रचलित किया। राजपूतजातिका प्रधान पर्व बसन्तपञ्चमी है। इस पञ्चमी तिथिसे छे कर ४० दिन तक राजपूत लोग एक ही जमाद मूर्ति धारण करते हैं। वसन्तपञ्चमीके दो दिन बाद ही भाजुससना होती है। इस दिन के लोग सूर्यदेवकी उपासना करते हैं। इसके बाद कलिसिद्धे करका शिवरात्रि उत्सव है। सर्व राणाको देवताके धरें छेस गिरम्बु उपवास करना होता है। फागुनमासमें

महोरिया नामक वीर पर्वोत्सव होता है। राणा सामन्त वर्गोंसे परिहृत तथा वासन्ती पक्ष पहन कर बड़े प्रसन्न स शिकारको निकलने हैं। इसके बाद फल्गुत्सव बड़ी पूनधामसे मनाया जाता है। इस समय धे गिना, माता, मारि, बहन को समी मज्जा परिहार कर खे प्छालुसार मयोर खेलते हैं तथा सङ्गीत और भन्नीज पाषाणोंका प्रयोग कर राजपूत बरिद्धका विचित्र चित्र उपस्थित करते हैं।

वैशाखासकी प्रतिपदा तिथिमें पितृभोक्तो पूजा, शुक्ल त्रयोयाको राजनीतिक उत्सव अधीतिथिकी शीतळा वैशीका पर्वोत्सव, राणाका जन्मतिथि उत्सव, नववर्षारम्भ, फुलबोळ वा पुष्यात्सव, भन्नपूर्जापूजा वा गंधार, भजोकाद्यमी, रामनवमी, मन्वमहोत्सव, सावित्रीमठ, रम्भाका जन्माह, भारण्यपछी, गौरीपूजा, नागपञ्चमी, रात्रीपूर्णिमा जन्माद्यमी, नवरात्रि, पञ्चगस्थापन, वराहवा वा समरोत्सव, जयतोरण्य, गजदेवतापूजा, अष्टापूजा, गङ्गाजन्म कार्त्तिकपञ्चम, अश्विमेध उत्सवपूजा, वीणा न्विता, भ्रातृद्वितीया और कार्त्तिकमासकी शुक्लाद्वादशा तिथिमें उष्यपुरका जन्माहा पर्व उत्तुबधीय है।

राजपूत लोग जन्मतोय रजयिणोंको बड़ी भक्तिकी दृष्टिसे देखते हैं। इस गारोजातिके भारतगौरवक्षणा-मिळाय, मसोम पतिभक्ति, उच्चदृष्टता, माहस, प्रत्युत्पन्नमतिस्व भादिको भाळोवना करनेसे बसकृत होता पड़ता है। सर्वोत्तरसाक किये आलोत्सगी करनेमें हिन्दुमणियोंमें धे अतुजनीया है। चित्तोरराजमहिषी पक्षिने देयोका चित्तोरदोष्य इसका उबल्लत दृष्टान्त है।

मुसलमानी मनसून ही यह राजपूतजाति माना देशोंमें जा कर बस गई है। भारतमें समी जगह, भक्त गानिस्तान और भारत-महासागररूप हिन्दूप्रधान वासि धीपमें राजपूतजातिका उपनियेय स्थापित हुआ है। वर्षानात समयमें माना हिन्दु सम्प्रदाय अपनी सामाजिक मयस्या उन्नत दिखानक किये अपनेको राजपूत म धर बतजाते हैं। वाक्षिणात्यक अरर सरकारका रायचूड़ जाति अपनेको राजपूत जातिकी एक शाखा कहते हैं। छोटानागपुर विभागके मन्तगीत कुछ सामन्तराज और मयवास भादि जो अभी सम्भवा सोपान पर चढ़े हुए

हैं। लोगोंके सामने राजपूत कह कर अपना परिचय देते हैं। छोटानागपुरके राजा नागवंशी हैं तथा पचेटराज वंशधर अपनेको गोवंशीराजपूत बतलाते हैं।

जो नागवंशी आज अपनेको राजपूतजातिमें गिनना चाहते हैं, उनकी स्त्रियां उस पालकी पर कदापि नहीं चाहती जिसे मुण्डा लोग होते हैं। वे लोग मुण्डाको भासुरका वंश कहते हैं। इसके सिवा आजकलके ग्वाला, वामन, गोड़, बसाई, सूंडो, कुर्मी आदि अपनेको राजपूत बतलाते हैं।

बघेल, वाई, मट्टि, वडगुजर, बुन्देला, चाहिरा, चन्देल, कच्छवाह, ठहिया, दहिरिया, दोगरा, भड्डेजा, जोहिया, मचेरो, मोहिल, निकुम्भ, राजपाली, शिकारवाल और गिर्वाँ आदि राजपूतजातिका विवरण बयासान पर लिखा जा चुका है, इसी कारण यहां पर कुछ नहीं लिखा गया।

राजपूताना—भारत-साम्राज्यके अन्तर्गत राजपूत-जातिका वासभूमि। युक्तप्रदेश, पञ्जाब, सिन्धु और बम्बई प्रदेशके मध्यस्थलमें अवस्थित है। अंगरेजाधिकृत अजमेर मैरवाडा और २० विभिन्न सामन्तराज्य ले कर यह संगठित है। भूपरिमाण १३०४६२ वर्गमील है। यह अक्षा० २३° ३' से ३०° १२' ३०" तथा देशा० ६६° ३०' से ७८° १७' पू० के मध्य विस्तृत है।

इस विस्तृत भूखण्डमें अवस्थित सामन्तराज्योंका भौगोलिक अवस्थान और भूपरिमाण नीचे दिया जाता है—

पश्चिमोत्तरमें अवस्थित —	वर्गमील।
जयशालमीर राज्य	१६४४७
मारवाड वा थोधपुर	३७०००
बोकानेर	२२३४०
उत्तरपूर्वमें अवस्थित—	
अलवार	३०२४
शेखावाटी	जयपुरके अधीन
पूर्व और दक्षिण पूर्वमें अवस्थित—	
जयपुर	१४४६५
भरतपुर	१६७४
ढोलपुर	१२००

पश्चिमोत्तरमें अवस्थित—

	वर्गमील।
करौली	१२०८
बूंदी	२३००
कोटा	३७६७
भलावर	२६६४
दक्षिणमें—	
प्रतापगढ़	१४६०
वांसवाड़ा	१५००
डूंगरपुर	१०००
मेवार या उदयपुर	१२६७०
दक्षिण-पश्चिममें—	
सिरोही	३०२०
मध्यभागमें—	
अजमेर	२७११
किशनगढ़	७२४
शाहपुरा	४००
टोङ्क	१२५०६
लावा	१८

आरावली पर्वतमालाके मनोहर दृश्यके सिवा यहां और कोई भी सुन्दर दृश्य नहीं है। पश्चिम और उत्तर का कुछ अंश मरुमय होनेके कारण इस स्थानको पुराणादिमें मरुस्थली वा मरुदेश कहा है। यह आरावली पर्वतके उत्तर-पश्चिम कोणसे ले कर दक्षिणपश्चिम कोण तक विस्तृत है। इसके दक्षिणमें आनू शिखर है। प्रवाद है, कि यहां वशिष्ठ ऋषिने अग्निपञ्च किया था।

इस मरुभूमिमें थोड़ी ही वृष्टि खेतीबारीके लिये काफी है। लोनीनदीके सिवा यहां और कोई भी नदी नहीं जिससे जलका प्रबन्ध हो सके। कूपका जल थोड़े ही समयमें खारा हो जाता है। सारे देशकी अवस्था मरुमय और वनमालाविभूषित होने पर भी राजधानी नगरादिकी अवस्था उतनी खराब नहीं है। राजपूत या मालव रेलपथ आरावलीके उत्तरसे चला गया है जिससे स्थानीय वाणिज्यमें बड़ी सुविधा है।

इसके दक्षिण-पूरवसे बहुत-सी शाखानदियां विन्ध्य-पर्वतसे निकल कर वनाश और चम्बल नदीमें मिली हैं। पूर्वाकी ओर झालरा-पाटनके उत्तर ऊंचा पयरीला

स्थान है। इसीके ऊपर कोटाराज्य बसा हुआ है।

कोतो, पाणगङ्गा, बभाय, पम्बल, पार्वती, शावत्पता, मादो, सोम भादि नदियां हो प्रधान हैं। जयपञ्चसूप्य सम्बद्धवक सिद्धा (मिथारराज्यमें) भीर भी कितने कृत्तम हुए देखे जाते हैं। १३८१ ई०में राजा जयसिंह द्वारा निर्मित देवार भीर कंकटोको नामक नगरों दो हुए हैं। प्रथमोक्त जनान्तर 'जयसुन्दर' नामसे प्रसिद्ध है। उसका भेदा ३० मीलसे कम नहीं होगी।

मुसलमाना जमानेके पहले राजपूत जातिका इतिहास अच्छे तरह लिखिये न था। भद्र कवि लोग राजपूताना वासी राजवंशघरोंकी जो कीर्तिकहानी रतने दिनोंसे गाते आते हैं उसीका अवलम्बन करके कर्मन राज राजस्थानका धारावाहिक इतिहास लिखनेको अभसर हुए हैं। वर्तमान समयमें राजपूतजातिकी कीर्तिमण्डपसे मात शिवाभित्तसे राजपूत राजोंके काठ भीर पंशभारा की जो साक्षिका पाइ गई है उसकी आलोचना करनेसे राजपूत आख्यायिकाका एक मया संस्करण पानेकी आशा की जाती है।

मुसलमाना भ्रमसक पहले कनोजसिंहासन पर एक मात्र राजोराराजगण हो बैठे थे तथा गुजरातके मनहस बाहुमें राजधानी स्थापन कर आलुक्करराजपूत सारे दक्षिण राजपूतानेका शासन करते थे। इस समय भीर भी कितने राजपूत राजवंशने जिय रक्षया। ११वीं सदा में जब मज्जनीपति महम्मूद भारत विजयमें आये, तब मनहसबाहुमें जोकाङ्गा वंशोध, अजमेरमें चौहान भीर कनोजमें राजोरराज्य भारतवर्षके राज्यों बड़े बड़े थे। इस समय गङ्गातटबंधन मेवार (इधपुर सिंहासन पर भीर कच्छबाहुमें जयपुर राजघामांमें रह कर राजपूत-नीरप की नाथं मज्जत करकेमें काह करन न रको थी।

महम्मूदने भारतवर्ष आ कर जोखकियोंको परास्त हो कर दिया, पर उनकी शक्ति यह विजङ्कण हुआ न कर सका। इसके बाद ही राजपूतोंके यन्त्र गृहनिवाह शुरू हो गया। जोखकियों और चौहान राजोंने भापसम छड़ कर अपने पैरों कुन्दाहा मारा। फिर कनोजके राजोर सरदार जयवंदकी कन्याके स्वयम्बरम जयवंदके साथ चौहानपति पृथ्वीराजका जोर विरोध उपस्थित हुआ। यही विवाह भारतके सर्वनाशका मूल कारण था।

राजा जयवंदने जातिशत्रुको भयमानसे उल्लेखित हो शाहजुहोन जोरोंको बुझाया। इधर पृथ्वीराजने कम्बेक राज पत्तहिंदेवको परास्त करमहोवा पर दखल किया। महम्मद स्वराज्य सीमान्वासी विषमों शत्रु दिल्लीस्वरही बढती देख कर दखलके साथ भारतकी भीर बना। ११३३ ई०में विजोरोकी छड़ारोंमें मुसलमानोंके हाथस भारतको भद्रपक्षिण बद्ध गर। दूसरे वर्ष कनोज अधिभूत हुआ। मुसलमान प्रतिनिधि कुतुबुद्दीनने भा अजमेर भीर मनहसबाहुमें स्थापना बाकी। भारतकी राजधानी दिल्ली नगरमें मुसलमानोंका राजघार प्रतिष्ठित हुआ।

१३वीं सदामें माळवराज्य दिल्लीके अधिकायमुक्त हुआ। १४वीं सदाके मारम्भम भङ्गाउरोन खिलजीने गुजरातके राजपूतोंके विरुद्ध युद्ध करके उन्हें समूह विध्वस्त कर बादा। तुगलकवंशके भवसान पर माळव में स्थापित मुसलमानराज्यही प्रतिष्ठा हुई। इन मुसलमान राज्योंमें दिल्लीस्वरके बड़े कर कठोर शासन द्वारा राजपूतोंको सताया। १५वीं सदामें मुसलमान भीर राजपूतमें प्रमसान युद्ध बना था।

१६वीं सदाके शुरूमें कुछ समयके लिये राजपूतशक्ति फिर उठ खड़ी हुई थी। दिल्लीके मन्दिम अफगान राजवंशकी शासन विभ्रङ्गना तथा गुजरात भीर माळवके मुसलमान सुभतानोंका परस्पर विरोध देख कर मेवारके शिशोदियार्थसपर राणा सङ्ग हिन्दूकी बिरय-वैजयन्ती फहरानेको चेष्टा की था। इन्होंने कम्बेरीराज मेदिनी राजको महायतास माळव भीर गुजरातके विरुद्ध भीर संभाम करके उन्हें परास्त किया था। १५१६ ई०में मानघराज वनके हाथ कन्यो हुए तथा १५२६ ई०में गुजरातशक्तिके साथ मित्रता स्थापन करके इन्होंने माळव राज्य अधिकाय किया। इस समय राणा सङ्ग संभाम) ही यथार्थम सारे राजस्थानके अधिपति हो गये थे।

माळवजयक कुछ बाद ही मुगल सम्राट् बाबरशाहने दिल्ली पर दखल किया। १५२७ ई०में फतेपुरसिकरीमें राजपूतके साथ मुगलका विपुन संभाम टिङ्ग गया। युद्धमें राणाकी विपुल बाहिनीके पराजित होनेसे राजपूतशक्ति निराशास्त्रोत्तम बह गर। दूसरे वर्ष मेदिनी राजने

अपने चन्देरी राज्यकी रक्षाके लिये बहुतसे राजपूत वीरोंको ले कर मुगलपतिका मुकाबला किया। बाबरशाहने उन्हें परास्त कर नगरको लूटा। राठोरपति मालदेव रावने मुगलोंकी अधीनता स्वीकार की थी। गुजरातके मुगलराजोंके साथ तथा दिल्लीश्वर शेरशाहके विरुद्ध वार वार युद्ध करके दुर्द्धर्ष राठोर कमजोर हो गये थे। अकबरशाहने साम, दान, भेद और डंड द्वारा राजपूत जातिको पदानत करनेकी चेष्टा की थी। योधपुरराजने उनके हाथसे पराजित हो मुगलका दासत्व स्वीकार किया, किंतु गिशोदियावंशके प्रतापसिंहने उनकी अधीनता विलकुल स्वीकार न की। उन्होंने अकबरशाहकी विपुल-दाहिनेके विरुद्ध हल्दीघाटमें जो युद्ध किया था, वह इतिहासमें ज्वलन्त अक्षरोंमें लिखा गया है।

अकबर शाह और उनके लडके जहागीरने राजपूत रमणीका पाणिग्रहण किया था। शाहजहान् वचनसे ही राज्यके बाहर रहने थे। जब तक वे राजतल्ल पर नहीं बैठे, तब तक उदयपुरके राणाके आश्रयमें ही रहे थे। अकबरके समय जो राजपूत अपनी स्वाधीनताको अक्षण रखनेमें बद्धपरिहर हुए वे ही १६वीं सदीके अन्तिम समयमें मुगलवादशाहके साथ मित्रतापात्रमें आवद्ध हो मित्रराजरूपमें गिने जाने लगे।

औरङ्गजेबके राज्यारोहणकालमें मुगलोंके बीच गृह विवाद उपस्थित हुआ। उस समय सभी राजपूत-सेनापतियों और राजपूत राजकर्मचारिने दाराका पक्ष लिया, तथापि औरङ्गजेब राजपूत सेनादलका अद्भ्य साहस और वीरता देख कर उनके पक्षपाती हो गये। उन्होंने काबुल पर शासन करनेके लिये राजपूत प्रतिनिधिको भेजा तथा दक्षिणात्यमें राजपूत सेनानायक द्वारा युद्ध-विग्रह ठान दिया। दुःखका विषय है, कि जो राजपूत-सेनापति उनके दाहिने हाथ थे उन्हें वे एक एक कर यमपुर भेजने लगे।

औरङ्गजेबकी मृत्युके बाद गिशोदिया, राठोर और कच्छवाह राजपूत स्वाधीनता-प्रयासी हो मुगल साम्राज्यके विरुद्ध उठ खड़े हुए। नादिरशाहके उत्तरभारतमें लूटपाट करनेके बाद उन्होंने फिर एक वार मस्तक उठाया। किन्तु उनमें जो सन्धि हुई थी उस शर्तमें लिखा था, कि

कच्छवाह राजाओंकी गिशोदिया स्त्रीसे जो पुत्र जन्म लेगा वही सिंहासनका अधिकारी होगा, यह ले कर दोनोंमें मनमुटाव हो गया। इसी मनमुटावसे उनकी एक भी चेष्टा फलीभूत न हुई।

१७५६ ई०में मराठोंने अजमीर जंता। तभीसे राजपूतानेमें घोर विशृङ्खला उपस्थित हुई। इस समय पठान और मराठा दलके उपद्रवसे राजपूतजातिको अधःपतित मुगलसाम्राज्यके साथ ही साथ अवनति हो गई। यहां तक, कि छोटे छोटे मरदार दस्युशक्ति द्वारा स्वजातीयके प्रति अत्याचार करनेमें भी बाज न आये।

१८०३ ई०में सच पूछिये तो सारा राजपूताना मराठोंके हाथ आया। होलकर और सिन्देराजने राजपूतानाको जीत कर तहस नहस कर दिया था। अंगरेज सेनापति वेलसिली और लेकके शुभागमनसे राजपूतजातिने कठोर करभारसे लुटकारा पाया। सिन्देराजने परास्त हो १८०५ ई०में राजपूतानेके अधिभूत प्रदेश छोड़ दिये।

लाड वेलसिली जब विलायत गये, तब राजपूतानेका शासनभार सामन्तराजाओं पर ही सौंपा गया। उकैत सरदारोंने सुयोग पा कर फिरसे अत्याचार करना शुरू कर दिया। यहां तक, कि अंगरेज-शक्तिको भी परवाह न कर उन्होंने दश वर्ष तक अविश्रान्त अत्याचार और आक्रमणसे राजपूतराज्यको मथ डाला था। १८१४ ई०में पिण्डारी उकैतदल अमीर जाँके अधीन हो गया।

पिण्डारी देखो।

उदयपुरकी राजनन्दिनीके विवाहके उपलक्ष्यमें जयपुर और योधपुरराजका अन्तर्विवाद तथा दोनोंको उच्च जात करनेके लिये मराठा और पठानदलका परस्पर साहाय्यदान राजपूतजातिके जातीय गौरवनाशका कारण था।

१८११ ई०में नावालिग राजपूतराजने उकैतोंका उत्पीडन सहन न करके दिल्लीश्वर और अङ्गरेज प्रतिनिधि सर चार्ल्स मेटकाफसे सहायता मांगी। तदनुसार १८१७ ई०में मार्किस आव हेण्टिसके आदेशसे अंगरेजीसेनादलने पिण्डारियोंको परास्त किया। सरदार अमीर जाँको अंगरेजराजने टोडूका शासनकर्त्ता बनाया। १८१८ ई०के

अन्तिम समयमें भारतपुरको छोड़ कर और सभी राजपूत राजोंने अंगरेजोंकी अयोग्यता स्वीकार का। सिन्धुपरान्त अंगरेजोंके हाथ अजमेरका शासनमार सीया। तमासे छे कर १८५३ ई०क गवर तक यहाँ भीर किसी प्रकारकी विद्युत्पुन न हूइ। इस सत्त्व कोयमें विद्रोहियुद्धने अंगरेजोंके बिरुद्ध हथियार उठामा। १८५८ ई०में कोटा अंगरेजोंके हाथ छगा।

राजपूतानेमें जेा सोमर भोज है उसमें प्रतिवर्ष ४०००००० मग नमक पैदा होता है। इस समय इस भोजको विद्या-सरकारने अपन अधिकारमें कर लिया है और जेाधपुर तथा अजमेर राज्योकी इसक बख्से नियत करम साज्जाना ही जाती है।

राजपूतानका अलबायु सामान्य रूपस आरोग्यप्रद माना जाता है। रैगिस्तानी प्रदेश अर्थात् जोधपुर, जैसलमेर, बीकानेर और शेखाबादी आरोग्यक बिचारसे पियेय उचम है। राजपूतानेक अल्प विभागोंकी अनेछा रैतोडे प्रदेशोंमें शीतकायमें अधिक सर्दी और उष्णकाल में अधिक गर्मी रहती तथा नू और भाषियां भा बहुत थकती हैं।

राजपूतानेक पश्चिमी रैगिस्तानी विभागमें पूर्वी विभागको अनेछा वर्षा कम होती है। भायू पर अधिक ऊँचाईक कारण वहाँकी भीसत ५७ और ५८ इञ्चक बीच है। रैगिस्तानबाडे प्रदेशमें रैता अधिक होनेसे पियेय कम एक हा फसल अरोफकी होता है और रन्कोकी बहुत कम। पहाड़ोंके बाबकी मूमिमें जहाँ पानी मर जाता है, पानकी खेती भी होती है। राजपूतानकी मुख्य उद्योग गेहूँ, जेा जून्परी, बाजरा, मीठ, सूग, उड़ुह, लना, धान, तिक, सरसों, अन्नसो, छुम्भ, जोरा खंर, तमाकू आर लकीम है। उच्च पैदावारको बोजेमिसे यद, अकीम, तिक सरसों, अन्नसी आर सुभा बाहर जात है तथा गज्जर, गुड़, कपडा, तंबाकू, सीता, चाँदी छोहा, ताँबा, पोतम भादि बहुत सी अरुकी बीसे बाहरस जाती है। राजपूतानेमें जोहा, ताँबा, इस्ता, चाँदी, सीसा, स्फटिक, तामड़ा और कोपलेकी काने हैं। लोहकी जान उद्यपुद, अजमेर और अजमेर राज्यो मं, चाँदी और अस्तकी जान उद्यपुद राज्य अजमेर स्थानमें, सीसेकी जान अजमेरके

पास और तबेहा अजमेर राज्यमें केतकोके पास सिंघाये मं है। ये सब काने पहले जारो थो, परन्तु बाहरस भागेबाजी इन इन धातुओक सन्तपनके कारण अब ये सब बर्ह, कयक उद्यपुद राज्यक योगीद गाँवमें कुछ जोहा अग तक मिताजा जाता है। मेहाकूमें पिरोह गढ़, कुसभगढ़ और मांभनगढ़; मारवाडमें जोधपुर और नागौर, अजमेरमें रणधमोर बीकानेमें माउनेर और अजमेरमें तारागढ़क प्रसिद्ध किले हैं। इनक सिवा छोट बड़े गढ़ बहुतसे हैं। राजपूतानेमें रैजकी सङ्के छोट और बड़े होनो नाप का है, परन्तु अधिक प्रमाण में छोट नापकी ही है जिनमें मुख्य 'बम्ब' बङ्गौरा पण्ड सण्डक इण्डिया रैजमे' है। यह महामहाबादसे भाक्टोइ, अजमेर, कुज्जेट चाँदी कुइ होती हूइ विज्ञो तक थला गइ है। इसमें १२८ शहर और २३३०१ ग्राम लगते हैं। जनसंख्या प्रायः १०३३६५५५ है।

राजपूतानेक साथ अंगरेजोंका सम्बन्ध होनेके पूर्व यहाँ पर विधाका प्रचार बहुत ही कम रह गया था। गाँवोंमें पढ़ाईका प्रबंध कुछ भी न था। अब तो अंगरेजो राज्यक प्रभावसे नये ह गयो एवं अंगरेजोकी पढ़ाई सारे देशमें होने लगी है। अजमेर, अजमेर और जोधपुरमें कावेज बने कर वर्ष हो चुके। हाई स्कूल तथा मिडिल और प्रारम्भिक शिक्षाकी पाठशाळाए तो कई थक रही हैं। पर राज्यां तथा अजमेरके इलाकेमें लड़कियोंकी प्रारम्भिक शिक्षा भा होता है। उच्च कोटिकी विधाक छिडे अजमेरराज्य सर्वोपरि है। वहाँके सर्गावासी महाराज रामसिंहने विधाप्रमो होनेक कारण अपने राज्यमें अंगरेजो, हिन्दी उर्दू और संस्कृतकी पढ़ाईका उचम प्रबंध किया। संस्कृतकी भाषायेक परीक्षा तकका अध्ययन कौबक अजमेर हीमें हाता है। उक्त महाराजने विधाक साथ कला कौशलका भी प्रचार अपनी प्रजाक करनेके छिडे अजमेरम एक अच्छा आर्टस्कूल (कला मयल) बोजा। प्रारम्भिक और माध्यमिक शिक्षाके छिडे राजपूतानेमे भाजायाज्जराय्य सर्वोपरि है।

राजपौरव्य (सं० ह्यो०) राजपुत्रव्यवस्था (अनुतिथिपरी नाथ। प। ७। १। २०) इति भाषायां दृष्टि। राजपुत्रव्य सम्बन्धी।

राजप्रकृति (सं० स्त्री०) राज्ञः प्रकृतिः । १ राजपुरुष ।
२ राजाकी प्रकृति या स्वभाव ।

राजप्रिय (सं० पु०) १ राजपलाण्डु । २ करुणोका फूल
जो कौकणमे उत्पन्न होता है । (त्रि०) राज्ञः प्रियः ।
३ राजाका प्रियपात्र ।

राजप्रिया (सं० स्त्री०) १ राजप्रिय देखो । २ निलवासिनी
शालि, एक प्रकारका धान जो लाल रंगका होता है और
जिसका चावल सफेद तथा स्वादिष्ट होता है । ३ राज-
पत्नी, राजाकी स्त्री, रानी ।

राजप्रेम्य (सं० पु०) राजप्रेमिण व्यक्ति । १ राजा या
राज्यका नौकर, राजकर्मचारी । (क्ली०) राजा द्वारा
नियोग ।

राजफणिङ्गक (सं० पु०) राजते इति राज अच् राजः
दीप्तिशाली फनिङ्गकः । नागरङ्ग वृक्ष, नारंगीका पेड़ ।

राजफल (सं० स्त्री०) राजाभिधेयं फलं । १ पटोल, पर-
वल । २ राजान्न, बड़ा आम । ३ राजादनी, गिरनी ।

राजफला (सं० स्त्री०) राजप्रियं फलमस्याः । जम्बू,
जामुन ।

राजफल्गु (सं० पु०) कृष्णोदुम्बरवृक्ष, कटूमरका पेड़ ।

राजवदर (सं० स्त्री०) राज्ञो वदरमिव प्रियत्वात् । १ रक्ता-
मलक, लाल आवला । २ लवण, नमक । (पु०) वदराणां
राजा राजदन्तादित्वात् परनिपातः । ३ उत्तमकोलि, पैवंदी
या पेड़दी वैर । पर्याय—नृपश्रेष्ठ, नृपवदर, राजवल्लभ,
पृथुकोल, तनुवीज, मधुरफल, राजकोल । इसका गुण—
मधुर, शीतल, दाह, पिपासा और वातनाशक, वृष्य,
वीर्यवृद्धिकर, श्लेष्म और श्रमनाशक । (राजनि०)

राजवशा (सं० स्त्री०) प्रसारिणी लता ।

राजवलेन्द्रकेतु (सं० पु०) बौद्धभेद ।

राजवाडी (हिं० स्त्री०) १ राजाकी वाटिका । २ राज-
भवन, राजमहल ।

राजवान्धव (सं० पु०) राज्ञः वान्धवः । राजाका वन्धु ।

राजवाहा (हिं० पु०) प्रधान या बड़ी नहर जिससे अनेक
छोटी छोटी नहरे खेतों को सींचनेके लिये निकाली
जाती हैं ।

राजवीजिन (सं० त्रि०) राजा वीजी कारण यस्य । राज-
चंश्य, राजचंशोद्भव । (अमर)

राजब्राह्मण (सं० पु०) राजा ब्राह्मण (राजा च । पा
६।२।५६) इति कर्मधारये प्रकृतिवद्भावः । राजा अथच
ब्राह्मण ।

राजभक्त (सं० स्त्री०) १ नृपभोज्य अन्नपानादि, राजाका
अन्न । राजा जो अन्नपानादि भोजन करे, उसे वैद्य
अच्छी तरहसे देता है । चरक और मुश्रुत आदिमें
इसका विषय विशेषरूपसे वर्णित है । (त्रि०) २ राजा
का भक्त, जिसमें राजा या राजपुत्रके प्रति भक्ति हो ।

राजभक्ति (सं० स्त्री०) राज्ञः भक्तिः । राजा या राज्य
के प्रति भक्ति या प्रेम ।

राजभट (सं० पु०) राज्ञः भटः योद्धा । राजसैनिक ।

राजभट्टिका (सं० स्त्री०) एक प्रकारका जल पक्षी, गो-
मंड़ीर ।

राजभद्रक (सं० पु०) १ पारिभद्रक वृक्ष, फरहदका पेड़ ।
२ निम्बवृक्ष, नीमका पेड़ । ३ कुष्ठ, कुडा । ४ कुन्दुरुक,
कुंदरु । ५ राजाकं, सफेद आक ।

राजभय (सं० पु०) राज्ञः भयं । राजभयानि, राजाका
भय या डर ।

राजभवन (सं० स्त्री०) राज्ञः भवन । राजप्रासाद, राजा-
का महल ।

राजभाण्डार (सं० पु०) राजकाश, राज्य या राजाका
खजाना ।

राजभूय (सं० स्त्री०) राज्ञो भावः राजन्-भू-क्यप् । राजत्व,
राज्य ।

राजभृत (सं० पु०) राज्ञा भृतः वेतनादिभिः नियुक्तः ।
राजाका चेतनभोगी भृत्य ।

राजभृत्य (सं० पु०) राज्ञः भृत्यः । राजाका नौकर ।

राजभोग (सं० पु०) १ शालिवान्यविशेष, एक प्रकारका
महीन धान जो अगहनमें होता है । २ राजाका भोग ।
राजा जिन सब उत्तम वस्तुओंका उपभोग करने है वही
राजभोग कहलाता है ।

राजभोगीन् (सं० त्रि०) १ राजभोगके योग्य, राजाके
भोजनके उपयुक्त । २ उत्तम भोजन करनेवाला ।

राजभोग्य (सं० त्रि०) भुज्-ण्यत् कुत्व, राजा भोग्यं ।
१ राजाके भोजनयोग्य । (स्त्री०) २ जातीकोप, जावितो ।
(पु०) ३ प्रियाल, चिरौंजी । ४ एक प्रकारका धान ।

राजभोजन (स० स्त्री०) राजा भोजनं । राजाका भोजन ।
 राजघात (स० पु०) राजाः घाता । राजाका मार ।
 राजमणि (स० पु०) मयोनो राजा, राजवन्तादित्वात्
 परनिपाताः । मयिभ्योऽ, मूष्ययान् मणि ।
 राजमण्डल (स० पु०) देसे राजासोका राज्य ओ किलो
 राज्यके भास-पास हो किलो राज्यके भास-पास या
 कार्ये ओरके राज्य । नातिशास्त्रमें बाह्य प्रकारके राज
 मण्डल मान गये हैं—भरि, मित्र, उदासान बिजिगीपु,
 पार्ष्णिमह, चाक्रण्य, बिजिगीपुका पुरासर और पश्चादर्थी,
 पारिमहस्यार, माक्रण्यमार, मरिमम, मित्रसम और
 मन्प्यम ।
 राजमण्डक (स० पु०) मण्डकानां राजा, राजवन्तादित्वात्
 परनिपाताः । वृहज्जे क, एक प्रकारका मेड़क सो बहुत
 बड़ा होता है । पर्याय—महामण्डक पीताङ्ग, पीतमण्डक,
 कर्वापोष, महारण्य । (राजनि)
 राजमन्दिर (स० स्त्री०) राजाः मन्दिर । राजगृह, राज-
 मन्चन ।
 राजमण्डक (स० पु०) राजहस ।
 राजमण्ड (स० पु०) राजा मन्त्रा । राजासोका मन्त्र
 या मान । पर्याय—इतिहास, इन्द्र ।
 राजमण्ड—मित्रपादक एक हिन्दु-राजा तथा कुम्भके पुत्र ।
 ये उपरतिमिरमास्करके मनेठा चामुण्डकायन्धके प्रति
 पाषण्डके थे ।
 राजमहल (हि० पु०) राजाका महल, राजमासाह ।
 राजमहल—विहार और उड़ीसाके सन्ध्याल परगनेका एक
 इपनिभाग । यह अक्षा० २४ उ०'स २४ १८'उ० तथा
 देशा० ८७ २७'स ८७ ५७'पू०के मध्य अवस्थित है ।
 भूपरिमाण ७४१ वर्गमाइल और जनसंख्या तीन लाखके
 करीब है । इसमें शाहबगञ्ज और राजमहल नामके दो
 अहर तथा १२१२ ग्राम समेत हैं ।
 २ उक्त विभागका एक नगर । यह अक्षा० २५ ३
 उ० तथा देशा० ८७ ५० पू०के मध्य अवस्थित है ।
 पचीसवां नगरके पश्चिम प्राचीन मुसलमान नगरका
 ध्वंससामर्थ्य है । यह प्रायः ४ मील तक जगजसे हका
 दूध्या है । मुगल बादशाह अकबरकाहक सेनापति महाराज
 मानसिंह १५१२ ई०में उड़ीसा ओत कर जब खीट रह थे,

तब उन्होंने राजमहलको ही बङ्गालकी राजधानी पसन्द
 किया था । मानसिंहके जना मसजिद, सुन्दतान सुमा
 का प्रासाद, बङ्गेभर मीर कासिम मञ्जीका वासमन्च,
 कुलवाको और कोसिस्तम्म यहाँकी भवित स्मृतिको
 घोषणा करते हैं । बङ्गालकी ओत गविका बार बार
 परिवर्तन होते रहनेसे यहाँका बाणिज्यमन्त्र साहबगञ्ज
 उठ कर चला गया है ।

राजमहल—सन्ध्याल परगना जिल्लके अन्तगत एक पहाड़ा
 भूभाग । मुसलमान इतिहासमें यह दामन इ-बेग नामसे
 प्रसिद्ध है । यह प्रायः १२६६ वर्गमाइल स्थान अधिकार
 किये हुए है । किन्तु कदा ना इसकी ऊचाइ समतलभूमि
 स २ हजार फुट न होगी । पहले यह पर्यटकोंका मध्य
 भारतके विन्धवगिरिकी एक मात्रा समझा जाती थी ।
 भारत गवर्मेंटके मूलस्व परिक्षीक M V Balle-ने
 इसका प्रस्तरपत्थर देख कर स्थिर किया है, कि यह
 दिग्भ्यस विचकुम्भ अतन्त्र उपादानोंसे संगठित है ।

राजमहिल (स० स्त्री०) एक नगरका नाम ।
 राजमहद्रोर्य (स० स्त्री०) एक वाघका नाम ।
 राजमहेश्वरी—राजमहेश्वरी देवा ।
 राजमातृ (स० स्त्री०) राजा माता । राजाकी माता ।
 राजमात्र (स० स्त्री०) आ नाममात्रका राजा हो ।
 राजमानस्य (स० स्त्री०) राज्ञः शानस्य तस्य मायः । दोष्य-
 मानस्य दाति ।
 राजमानुष (स० पु०) राजाः मानुषा । राजपुत्र्य, यह
 मनुष्य सो राजाके अर्थात् हो । (याज्ञवल्क्य २५२)
 राजमग (स० पु०) राजो मर्गाः । राजपथ, चौकी सड़क ।
 राजपथ पर सीप निर्माण करनेवाले व्यक्ति हजार वर्ष
 तक इन्द्रलोकम प्राप्त करते हैं ।

‘राजमर्म घोष्युक्त या रूपि पितृते ।
 कर्पायामुप घोषि कर्पायक महीते ॥’
 (अश्वमेध मन्त्रिक २४ म०)

आ व्यक्ति अनागशुकायमें राजपथ पर मकमूजादि
 त्वाग करन है, राजाको चाहिये, कि वे उन्हे दो कार्पा
 पथ वृद्ध है और वह विद्या उन्हींस साक कर ले ।
 यदि कोई विपद्में पड़के तथा पूज, गमिणी या

वालक ऐसा करे, तो उन्हें केवल डाट डपट दे और वह विष्टा साफ करा ले ।

राजभाष्य (सं० पु०) मापाणा राजा श्रेष्ठत्वात् राजदन्तादित्वात् परनिपातः । वर्ध्वद, बडा उरद जा नीले या काले रंगका होता है । पर्याय—नीलभाष्य, नृपोचित, नृयभाष्य । वैद्यकमे इसे खचिकर, वातकारक, बलदायक, सारक, शुक्र और अम्लपित्तनाशक, स्वादु, रक्ष, कषाय और लघु लिखा है ।

वैष्णव शास्त्रके मतमे विष्णुकी शयनावस्थामें राजभाष्य नहीं खाना चाहिए । पानेसे चंडाल होता है । इनमेसे कार्त्तिक मास तो और भी निषिद्ध है । यदि कोई कार्त्तिकके महानेमें राजभाष्य भक्षण करे, तो प्रलयकाळ तक वह नरकमे रहता है ।

राजभाष्य (सं० त्रि०) राजभाष्यस्य योग्यम् । वह पित्त जिसमें भाष्य बोया जाता है, मसार ।

राजमुकुट—लघुस्तवटीकाके रचयिता ।

राजमुद्ग (सं० पु०) मुद्गाना राजा, राजदन्तादित्वात् परनिपातः । मुकुष्टक, एक प्रकारका मूंग । यह सुनहले रंगका होता है और पानेमें अधिक स्वादिष्ट होता है ।

राजमुनि (सं० पु०) राजा चासौ मुनिश्चेति । राजर्षि ।

राजमृगाङ्कुरस (सं० पु०) यक्ष्मरोगाधिकारका औषध-विशेष । प्रस्तुत-प्रणाली—रससिन्दूर ३ भाग, सोना एक भाग, चांदी एक भाग, मैन्सिल, गंधक, हरिताल प्रत्येक २ भाग इन्हें एकत्र कर कौडीमें भर दे । पीछे इसमें बकरीके दूधसे सोहागा जला कर मट्टीके बरतनमें भर मुंह बंद कर देना होगा इसके बाद गजपुट देना होगा । ठंडा होने पर वह औषध ग्रहण करना होता है । इसका परिमाण ४ रत्ती और अनुपान पीपल तथा मधु वा घृत और मिर्च है । इसका सेवन करनेसे राजयक्ष्मरोग निरुत्त होता है ।

(रसेन्द्रसारसं० यक्ष्मरोगाधि०)

भैषज्यरत्नावलीमें इसकी प्रस्तुतप्रणाली और प्रकारसे लिखी है । पारा ४ तोला, सोना १ तोला, तांबा १ तोला, मैन्सिल २ तोला, हरिताल २ तोला, इन्हें एक साथ पीस कर बड़ी बड़ी कौडीमें भर दे ।

पीछे बकरीके दूधमें सोहागाका मुंह बंद कर मट्टीके बरतनमें रखे और ऊपरसे लेप चढ़ाये । पश्चात् लेप सूख जाने पर गजपुटमें पाक करे । ठंडा होने पर उस औषधको चूर्ण कर ले । मात्रा ४ रत्ती और अनुपान घृत और मधु वा १० पीपल वा १६ मिर्च है । इसके सेवनसे सब प्रकारके क्षयरोग प्रशमित होते हैं ।

(भैषज्यरत्ना० यक्ष्मरोगाधि०)

राजयक्ष्मन् (सं० पु०) राष्ट्रचन्द्रस्य क्षपकारको यक्ष्मा, राजा चासौ यक्ष्मा चेति वा । क्षयरोग, यक्ष्मकास । यह रोग सभी रोगोंकी पान और राज है ।

चरकमें इस रोगके निदानादिका विषय इस प्रकार लिखा है । क्रोध, ज्वर, रोग और दुःख इसका पर्याय शब्द है । नक्षत्रराज चन्द्रमाको सबसे पहले यह रोग हुआ था, इसीसे इसका नाम राजयक्ष्मा हुआ है ।

नक्षत्रराज चन्द्रमाकी यक्ष्मा अश्विनीकुमार द्वारा मनुष्य लोकमें लाई गई और वक्ष्यमाण चार प्रकारका हेतु लाभ कर वह मनुष्यके शरीरमें घुस गई । चार प्रकारके हेतु ये हैं, अयथावलारम्भ (बलके अतिरिक्त व्यायामादि शारीरकमें), मलमूत्रादिका वेगधारण, धातुक्षय और विषमाशन । ये चारों ही इस रोगके कारण हैं ।

अयथा-वलारम्भहेतु—बलसे ज्यादा युद्ध, अध्ययन, भारबहन, लड़कन, सन्तरण, उच्चस्थानसे पतन, अभिघात और दूसरा दूसरा साहसका कार्य । अयथा वलारम्भ द्वारा वक्षके विक्षत होनेसे वायु विगड़ जाती है । वह विगड़ी हुई वायु शिरमें घुस कर शिरःशूल, गलेमें घुस कर कण्ठोद्गंस, कास, स्वरभेद और अरुचि, पंजरेमें घुस कर पाशर्गशूल, गुदानाडीमें घुस कर मलभेद, सन्धिमें घुस कर जृम्भा और ज्वर तथा उदरमें घुस कर उरःशूल उत्पन्न करती है । कासवेगमें छातीमें बहुत दर्द होता और लेहू मिला हुआ कफ थूकमें निकलता है । ऊपर लहे गये साहसका कार्य करनेसे जब राजयक्ष्मा होता है तब यह शिरःशूलादि ग्यारह प्रकारके लक्षणयुक्त हो जाते हैं । अतएव आत्मवान् व्यक्तिको कभी भी उक्त प्रकारका साहसका कार्य नहीं करना चाहिये ।

वेगधारणहेतु—लज्जा वा घृणावशतः अथवा भयके

उत्क्रिष्ट श्लेष्मा थूकके साथ आती है। मांसके विरुद्धत्व के कारण रक्त-मांसादिमें नहीं जा सकता, वह आमाशय-में ही जमा रहता है। पीछे बहुत परिमित और उत्क्रिष्ट हो कर गलेमें आ जाता है, इसीसे थूकके साथ रक्त निकलता है।

जिह्वा और हृदयस्थित चातादि दोष पृथक् पृथक् भावमें वा मिलितभावमें राजयक्ष्मारोगीको अरुचि उत्पन्न करता है। चातज अरुचिमें मुपमें कृपाय रस, पित्तज अरुचिमें तिक्करम और श्लेष्मज अरुचिमें मधुर रस आता है।

अंस और दोनों पार्श्वमें वेदना, हाथ पैरमें जलन, तथा रसरक्तादि सर्वाङ्गगत उग्र ये तीनों ही राजयक्ष्मा-के प्रधान लक्षण हैं।

अभ्यङ्ग, उत्त्मादन, स्नान, अवगाहन, बहिर्माज्जन, दुग्ध और घृत द्वारा वस्ति, मांस, मांसरसके साथ अन्न, हितकर मद्य, मनोहर गंधसेवन, ऋतुके अनुरूप स्नान, अनुपहत प्रियवसन, सुहृद्गण तथा सुन्दर लोके दर्शन, श्रुतिसुखकर गीत और वाद्यध्वनि, सर्वादा हर्ष और सर्वादा आश्वास वचन, गुरु लोगोंकी उपासना, ब्रह्मचर्य (मैथुनत्याग), दान, तपस्या, देवतार्चन, सत्य आचरण, मंगल कर्म, अहिंसा और ब्राह्मणवैद्यकी अर्चना इन सब कर्मों द्वारा राजयक्ष्मारोग आरोग्य होता है। (चरक राजयक्ष्मरोगाधि०) इस रोगकी चिकित्सा और अन्यान्य विशेष विवरण यक्ष्मरोग शब्दमें लिखा जा चुका है।

यक्ष्मरोग देवो ।

राजयक्षिण् (सं० लि०) राजयक्ष्मा अस्ति अस्य इति ।

राजयक्ष्मरोगी, जिसे राजयक्ष्मा हुआ हो ।

राजयज्ञ (सं० पु०) राजकृत यज्ञ, वह उपहार जो राजा द्वारा देवताके उद्देश्यसे दिया गया हो ।

राजयान (सं० स्त्री०) १ पालकी । २ वह सवारी जो राजाके लिये हो । ३ राजाकी सवारीका निकलना, राजाका जलूस ।

राजयुध्वन् (सं० पु०) सेनादल, वह जो अनुचर या रक्षीके रूपमें राजाके साथ रणक्षेत्रमें गमन करे ।

राजयोग (सं० पु०) योगाना राजा श्रेष्ठत्वात् राजदन्ता-दित्वात् पूर्वाभिपातः । ज्योतिषोक्त योगभेद । यह योग

रहनेसे मनुष्य राजाके समान धनशाली होता है, इसीसे इसको राजयोग कहते हैं । इसका विषय बहुत संक्षेपमें लिखा जाना है ।

प्रहोंके अवस्थान द्वारा राजि देख कर राजयोगादिका शुभाशुभ निश्चय किया जाता है । संयोगसे विप भी अमृत और अमृत भी विप होता है, उसी प्रकार प्रहोंके परस्पर संयोगसे राजयोग भी दारिद्र्ययोगादि हुआ करता है ।

ज्योतिर्विद्व यवनेश्वरके मतसे पापग्रह अपने सुतुङ्ग स्थानमें रहनेसे जातवालक पापिष्ठ राजा होता है । जीवशर्माके मतसे पापग्रह यदि उच्चस्थानमें हो, तो राजा नहीं होता, पर राजाके समान धनशाली अवश्य होता है । मङ्गल, शनि, रवि और बृहस्पति ये चार ग्रहके उच्चाश रहनेसे जिनका जन्म होता, वह राजा होता है ।

प्रथमतः राजयोग सोलह प्रकारका है, जैसे—चन्द्र स्वक्षेत्रगत अर्धात् कर्कट राशिमें रहनेसे यदि उस समय पूर्वोक्त चार ग्रहोंमेंसे कोई दो वा एक सुतुङ्गस्थ हो तथा तुङ्गलग्नमें किसी बालकका जन्म हो, तो वह बालक राजा होगा ।

मेघके दशमागमे रवि, कर्कटके पञ्चमाशमें बृहस्पति, तुलाके विंशाशमे शनि और मकरके २८ अंशमें मङ्गल रहे और उस समय मेघ, कर्कट, तुला और मकर इनमेंसे किसी एक लग्नमें जन्म हो, तो जात बालक राजा होता है ।

जन्मके समय चन्द्रमा लग्न वा वर्गोत्तम में रहे और उस पर यदि चन्द्र भिन्न रवि, मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक और शनि इन छः ग्रहोंकी अथवा किसी चार या पांच ग्रहोंकी दृष्टि पड़ती हो, तो जात बालक राजा होता है । कुम्भराशिमें शनि, मेघमें रवि, वृषमें चन्द्र, मिथुनमें बुध, सिंहमें बृहस्पति और वृश्चिकमें मङ्गल रहनेसे जो बालक जन्म लेगा वह राजा होता है । अथवा तुला राशिमें शनि, वृषमें चन्द्र, कन्यामें रवि और बुध वा तुलामें शुक, मेघमें मङ्गल और कर्कटमें बृहस्पतिके रहते समय यदि तुला वा वृष लग्न हो, तो राजयोग होता है ।

मकरमें मङ्गल, धनुमें रवि और चन्द्र तथा जन्म-लग्नमें शनि रहे अथवा मकरमें मङ्गल और चन्द्र तथा

धनुराशिमै रवि और मकर रवि लग्न हो, तो राजयोग होता है। वृषमें चन्द्र, सिंहमें रवि, बृशिसकमें वृहस्पति और कुम्भमें जनि रहनेसे रवि वृष जन्मलग्न हो तो श्रेष्ठ राजयोग होता है। मकरमें शनि, मीनमें चन्द्र, मिथुन में मङ्गल कन्यामें बुध और धनुमें वृहस्पति रहे तथा मकररवि लग्न हो, तो राजयोग होगा। धनुराशिमै चन्द्र और वृहस्पति, मकरमें मङ्गल, मीनमें शुक्र और कन्यामें बुध रहे तथा कन्या वा मीन जन्मलग्न हो, तो राजयोग हुआ करता है।

मीन जन्मलग्न हो तथा इसमें चन्द्र, कुम्भमें गनि, मकरमें मङ्गल, सिंहमें रवि रहे तथा कर्कट जन्मलग्न हो और इस कर्कटमें वृहस्पति और म्यारहवें स्थानमें चन्द्र, शुक्र और बुध तथा मेषमें रवि रहें, तो राजयोग होगा। रवि मकरमें शनि, मेषमें मङ्गल, कर्कटमें चन्द्र, सिंहमें रवि, मिथुनमें बुध और तुलामें शुक्र रहे तथा मकर जन्म लग्न हो; बुध रवि अपने उच्च स्थानमें भर्धातु कन्या लग्नमें रहे तथा मिथुनमें शुक्र, मीनमें वृहस्पति और चन्द्र, मकरमें जनि मङ्गल रहते हों तथा कन्या जन्मलग्न हो, तो प्रबल राजयोग होता है।

उक्त राजयोग जिसका रहेगा, वह राजकुलोद्भव नहीं होने पर भी राजा होगा। राजयोगके मध्य उक्त योग ही श्रेष्ठ राजयोग है। जिसका उक्त प्रकारका प्रह संस्थान क्षेत्रमें प्रापंगा उसका प्रकृत राजयोग सम कता चाहिये।

सामान्य राजयोग—जो काह तीन वा चार प्रह बल वन हो कर अपने अपने उच्च स्थानमें या मूलसिंहासने रहे, तो राजवंशोद्भव पुत्र्य राजा होता है। दूसरे ५, ६ वा ७ प्रह बलवान् हो कर अपने उच्चमबल वा मूल सिंहासने रहनेसे अल्पकुलोत्पन्न व्यक्ति राजा होता है। प्रहगण बलवान् न हो, तो मानव राजा नहीं होता, पर राजाके समान बलवान् होता है।

सिंहमें रवि, मेषमें चन्द्रमा, मकरमें मङ्गल, कुम्भमें जनि और धनुमें वृहस्पति रहनेसे तथा मेष वा सिंह जन्मलग्न होनेसे राजपुत्र, राजा तथा अल्पवंशोद्भव व्यक्ति बनवान् होता है।

जन्मलग्न कुम्भ, वृषमें शुक्र, तुलामें चन्द्र तथा मय

शिष्ट प्रह यथासम्भव कुम्भ, मेष वा धनुमें रहनेसे मयवा जन्मलग्न कर्कट, तुलामें शुक्र, मीनमें चन्द्र तथा मय्यास्य प्रहगण यथासम्भव कन्या कर्कट और वृषगण होनेसे राजपुत्र, राजा तथा दूसरे व्यक्ति बनवान् होते हैं।

रवि जन्मकालमें वृषप्रह बलवान् हो कर लग्नमें रहे तथा दूसरा एक शुभप्रह भर्धातु वृहस्पति वा शुक्र बलवान् हो कर नवम स्थानगत हो तथा मवर समी मह द्वितीय तृतीय, पष्ठ, नवम, दशम और एकादश स्थानमें रहे तो राज्यकुलोद्भव राजा और दूसरे व्यक्ति धनी होते हैं। वृषमें चन्द्र, मिथुनमें वृहस्पति, तुलामें शनि, मीनमें रवि, मङ्गल, वृष और शुक्र रहे तथा वृष रवि जन्मलग्न हो वा ज्ञातवाक्य राजा होता है। लग्नमें शनि, धनुषमें वृहस्पति, दशममें सूर्य और चन्द्र, एकादशमें मङ्गल, बुध और शुक्र रहनेसे राजकुलोत्पन्न राजा तथा अन्य पनवान् होंगे।

दशममें चन्द्र, एकादशमें शनि, लग्नमें वृहस्पति, द्वितीय स्थानमें बुध और मङ्गल, चतुर्थ स्थानमें शुक्र और रवि मयवा लग्नमें शनि और मङ्गल, धनुषमें चन्द्र, सप्तममें वृहस्पति, नवममें शुक्र, दशममें रवि और एका दशमें बुध रहनेसे राजकुलोद्भव राजा तथा दूसरेमें पन्थान् होता है।

कमरुध मयवा कमरुध प्रहके मयवा उक्त प्रहके मध्य भी प्रह बलवान् है इसके अष्टदशाकालमें राजयोगज्ञात व्यक्तिके राज्य काय होता है। लग्न और दशम स्थानमें कोई प्रह नहीं रहनेसे जन्मकालमें जो कोई बलवान् रहेगा, उसके अष्टदशाकालमें राज्यप्राप्ति होती है। धनु और मीच प्रहगत महकी अष्टदशाके समय राज्यप्राप्त व्यक्ति राज्यसुप्त होता है।

जिस्तके जन्मकालमें लग्नमें बुध, वृहस्पति और शुक्र व तीन प्रह हों तथा सप्तममें शनि दशममें रवि रहें, तो यह व्यक्ति मोगवान् होता है भर्धातु धन नहीं रहने पर भी जिस किसी उपायसे सुखपूर्वक काह्यापन करेगा हो। जिसके जन्मलग्नमें लग्न, धनुषस्थान सप्तमस्थान और दशमस्थान शुभप्रहका क्षेत्र हो तथा पापप्रहके क्षेत्रमें बलवान् पापप्रह रहे, तो वह व्यक्ति ध्याय और बड़ेपौका धर्षियति होता है। (हरजलक)

बुध और शुक्र, द्वितीयमे रवि और चन्द्र, चतुर्थमे शनि, सप्तममे बृहस्पति, दशममे राहु और एकादशमे मङ्गल हों। १८, यदि मेघमे रवि, धनुमे बृहस्पति, सप्तममे चन्द्र और शनि एकत्र रहें। १९, यदि कुम्भमे शनि मिथुनमे बुध, पृथिव्यकर्म में मंगल, सिद्धमें बृहस्पति तथा बुधमें चन्द्र रहे तथा यह बुध राशि लग्न हो। २०, यदि चतुर्थ और दशम अघिपति, पञ्चम वा नवम अघिपतिके साथ किसी शुभग्रहमें पास करे। २१, यदि लग्नाघिपति, चतुर्थाघिपति और नवमाघिपति अस्तमित न हो कर दशममे तथा दशमाघिपति लग्नेमे रहे और उनका प्रति शुभग्रहकी दृष्टि पड़ती हो। २२, यदि तुला लग्न, कुम्भमे बृहस्पति, सिद्धमें शनि और राहु तथा दशमाघिप नवममे रहे। २३, यदि मकर लग्न तथा उस लग्नेमे शनि और चन्द्र, मङ्गल, बुध और बृहस्पतिके तुला, पशु, नवम वा द्वादशमे रहते हों। २४, यदि लग्नेमे रवि, चन्द्र और मङ्गल, मिथुनमे बुध, तुलामे शुक्र तथा मकरमे शनि रहे। २५, यदि पृथिव्यकर्म रवि और चन्द्र तुलामें बुध, द्वितीय में मङ्गल और शुक्र एवं दशममें बृहस्पति हों। २६, यदि मङ्गल और बृहस्पति तुलसी हो, शनि एकादशमें तथा लग्नाघिपति दशममें रहे। २७, यदि लग्नेमे बुध और शुक्र, धनुमे चन्द्र और बृहस्पति तथा मकरमे मङ्गल रहे। २८, यदि कन्यालग्न हो तथा उस लग्नेमे बुध, चतुर्थमे चन्द्र, बृहस्पति और शुक्र तथा पञ्चममे मङ्गल और शनि रहे। २९, यदि मीन लग्न हो और उस लग्ने में चन्द्र, कर्कटमे बृहस्पति तथा मकरमें शनि हो। ३०, यदि लग्नेमें चन्द्र और शनि सिंहायमें रवि और बृहस्पति तथा दशममें मङ्गल रहे। ३१, यदि सिंह लग्न हो और उस लग्नेमे बृहस्पति और शुक्र, पृथिव्यकर्म मङ्गल तथा मिथुनमें शनि रहे। ३२, यदि कर्कटलग्न हो और उसमें बुध तथा शुक्र रहते हो। ३३, कन्यालग्न हो और उसमें बुध, पञ्चममें मङ्गल और शनि, सप्तममें चन्द्र और बृहस्पति तथा दशममें शुक्र रहे। ३४, यदि सिंहमें रवि, मकरमें मङ्गल, धनुमें बृहस्पति, कुम्भमें शनि और लग्नेमें चन्द्र रहे। ३५, यदि बुध वा तुलालग्न हो और उस लग्नेमें शुक्र, नवममें चन्द्र तथा लग्न वा तुलायमें दूसरे दूसरे ग्रह

हों। ३६, यदि बज्रवान् बुध लग्नेमें तथा अन्यशुभग्रह बज्रवान् हो कर द्वितीय, नवम दशम वा एकादश स्थान में रहे। ३७, यदि पूषलग्न हो और द्वितीयमें चन्द्र, पशुमें बृहस्पति तथा एकादशमें शनि रहे। ३८, यदि मेघमें मङ्गल और बृहस्पति तथा कर्कटमें चन्द्र रहे। ३९, यदि कर्कटलग्न हो और उस लग्नेमें बृहस्पति, सप्तममें शनि दशममें रवि तथा एकादशमें काश शुभग्रह रहे। ४०, यदि मकरमें शनि तथा राक्षसिय मेघ कर्कट वा तुलामें रहे।
उक्त ४० प्रकारकी व्यवस्थामें राजयोग होता है। इस योगका फल निश्चय नहीं होता। जिसकी कोष्ठोंमें ये सब राजयोग देखनेमें भाये, वे राजा, राजपुत्र वा धन शाली होते हैं।

साधारण राजयोगमङ्गल - ग्रहोंके निम्नलिखित स्थान में रहनेसे राजयोगमङ्गल होता है। १, यदि लग्न, चन्द्र और दशम स्थान पर किसी प्रशुकी दृष्टि न पड़ती हो। २, यदि दशमाघिपति नीचस्थ तथा दशममें शुभग्रहको दृष्टि न पड़ती हो शनि चतुःस्यथा मङ्गल और केतु रहे। ३, यदि तोन ग्रह विरोधतः रवि, मङ्गल और शनि नीचस्थ हो तथा अरुण योग प्राप्त न हो। ४, यदि रवि, मङ्गल, चतुर्थस्थान अथवा चतुर्थाघिपति शनि और केतुयुक्त हो। ५, यदि चतुर्थ स्थानमें पशु, अशुभ और द्वादशाघिपति रहे तथा चतुर्थाघिपति शत्रुयुक्त हो कर अशुभ ग्रहमें रहे। ६, यदि शनि चतुर्थाघिपति हो कर नीचस्थ हो एवं उसके द्वितीय और द्वादशमें पापग्रह रहे। ७, यदि चतुर्थाघिपति शनि हो एवं वह चतुःस्युक्त हो कर द्वितीयमें तथा चतुर्थ स्थानमें अन्य पापग्रह रहे। ८, यदि पांच ग्रह अस्तमित और शुक्र, बृहस्पति हो तथा किसी शुभग्रह केन्द्र में न रहे। ये सब योग राजयोगके मङ्गलकारक हैं। ये सब योग रहनेसे उसका राजयोग फलप्रद नहीं होता। इसी कारण इन सब मङ्गलयोगोंके प्रति विशेष उद्योग रख कर राजयोग स्थिर करता उचित है।

(दूरबालक, परावर०)

धृगु मन्वृति संहितामें तथा अस्यात्म ज्योतिष ज्येष्ठी राजयोगका विशेष विवरण लिखा है। जो सब राज योग और मङ्गलयोग सिद्धे गये उनका फल मन्वृत्त देखनेमें आता है।

२ प्राणायामादि रूप योगभेद, अष्टाङ्गयोग, हठयोग, नेतियोग, अतियोग आदि नाना प्रकारके योग हैं । इन सब योगोंमें अष्टाङ्गयोग श्रेष्ठ है, इसीसे इसके राजयोग कहते हैं । विशेष विवरण योग शस्त्रमें है ॥

राजयोग्य (सं० त्रि०) राजो योग्यः । १ राजाहै, राजाके योग्य । (स्त्री०) २ चन्द्रन ।

राजयोपित् (सं० स्त्री०) राजो योपित् । राजयोगी, राजाकी पत्नी ।

राजरत्न (सं० स्त्री०) राजयोग्य रत्नं । राजत, नाना ।

राजरथ (सं० पु०) राजधान, राजाका रथ ।

राजराज (सं० पु०) १ राजाकीका राजा, अधिराज । २ चन्द्रमा ।

राजराज (सं० पु०) राजागण राजा रनाभिराजान् । (राजाहः सविभ्यटच् । पा ७।१।२१) इति टच् । १ पुं० । २ स्त्री० । ३ मुञ्जफर, चन्द्रमा ।

(मीमांसा)

राजराजेश्वररम (सं० पु०) १ राजाकीका राजा, अधिराज । २ एक रत्नोपग्रहा नाम । इसके पनामें नाना रत्ना- पारं, मन्थक और हरतालके साथ तांबेका मिट्टा हर भगईवाके रसमें एक दिन गरल करके उममें त्रिकला, गुडूच, बकुची समभाग मिट्टा कर देा देा रत्नोमी गोश्री बनावे और देा तोला मधु या घीके साथ पाये । इसका प्रयोग दाद, कुष्ठ आदि रोगोंमें होता है ।

(खेन्द्रगारम० कुण्डलिनः)

राजराजेश्वरी (सं० स्त्री०) १ दश महाविष्णुगणोंमें एकका नाम, भुवनेश्वरी । २ राजराजेश्वरकी पत्नी, महाराणी ।

राजराजता (सं० स्त्री०) १ साम्राज्य । २ सम्राट्का पद ।

राजराज्य (सं० स्त्री०) राजराजता देशो ।

राजरानी (हि० स्त्री०) राजी, राजमहिषी ।

राजरीति (सं० स्त्री०) पित्तलविशेष, कासा । पर्याय — पाकतुण्डी, राजपुत्री, महेश्वरी, ब्रह्माणी, ब्रह्मारीति, कपिला, पिङ्गला । इसका गुण—तिक्त, शीतल, लवण, शोधन, पाण्डु, वात, कृमि, प्लीहा और पित्तनाशक ।

राजरीग (हि० पु०) १ रोग जो असाध्य है । जैसे—यक्ष्मा, श्वास इत्यादि । २ राजयक्ष्मा, क्षयरोग ।

राजर्षि (सं० पु०) राजा ऋषिर्षि अष्टमन् । स्वर्णर्षि राजा, वह ऋषि जो राजसूत्र या अथर्व ब्रह्मसंहिता जैसे—राजर्षि विन्वाग्नि ऋषि नाम प्रकारके ऋषि गये हैं—वृषर्षि, अश्विर्षि, महर्षि, परशुर्षि, राजर्षि, काश्रिर्षि और अतर्षि । इनके नाम हैं चंद्रके द्रष्टा हैं ।

राजसूत्र (सं० पु०) एक प्रकारका ग्रन्थ जो भगवान् परम कर्मकाटने योग्य होता है ।

राजसूत्रम् (सं० स्त्री०) राजसूत्रम् । सानुष्टिकके अनुसार ही इसका लक्षण है। इसके इतिमं अनुसार राजा होता है ।

राजसूत्रम् (सं० पु०) राजसूत्रम् निर्दिष्टम् । १ राजर्षि, राजाकीके निर्दिष्ट । २ सुनिर्दिष्ट । त्रि० ३ । ३ ममे मानु- द्विके अनुसार राजाकीके लक्षण ही राजसूत्रम्में युक्त । राजसूत्रम् (सं० स्त्री०) राजसूत्रम् । १ राजसूत्र, राजसूत्रम् । २ राजाका प्रणय ।

राजसूत्रम् (सं० स्त्री०) राजसूत्रम् । राजसूत्रम् ।

राजसूत्रम् (सं० पु०) राजा राज । राजाका कुल, राजसूत्रम् ।

राजसूत्रम् (सं० त्रि०) राजसूत्रम् नयः पत् । राजसूत्रम्, राजाके यंत्रमें उपरन्त ।

राजसूत्रम् (सं० त्रि०) राजसूत्रम् धति । १ राजसूत्रम्, राजाके मतान । (सं०) २ राजसूत्रम् युक्त देश । ३ नृप- विनिष्ट । (भाव १।१।२)

राजसूत्रम् (सं० त्रि०) राजसूत्रम् सयुक्त ।

राजसूत्रम् (सं० पु०) राजसूत्रम् ।

राजसूत्रम् (सं० स्त्री०) १ राजसूत्रम् । २ राजसूत्रम् ।

राजसूत्रम् (सं० स्त्री०) राजा परम पन्थाः । राजसूत्रम्, अष्टौ और चौथा सङ्क । पर्याय—गण्डापथ, संसरण, धौ- पथ, उपनिषद्गण, उपनिषद्, महारथ ।

राजसूत्रम् (सं० स्त्री०) राजते गोभनं इति राज-अच्, राजा यन्ता इति कर्मधारयः । अश्वत्था, गन्धप्रसारिणी ।

राजसूत्रम् (सं० पु०) राजा यन्तम । १ राजादनी, पिरनी । २ राजाह, बडा आम । ३ राजसूत्र, बडा बेर ।

४ नारायणदास कचिराज कृत द्रव्यगुणप्रधविशेष । (त्रि०) ५ राजप्रिय ।

राजसूत्रम्—१ राजसूत्रचर्चकेकाके प्रणेता । २ भोजप्रबंध या भोजचर्चके रचयिता ।

उत्तरपल्लभरस (सं० पु०) रसोपनिषोप । प्रस्तुत
 प्रयागो—ज्रायफळ, जौंग ब्राह्मणी, इलायची, सोहागा,
 हौंग, जोरा, तैजपत्ता, भज्यायाम, सोंद, से धा नयक
 जोहा, भद्र, पारा, गंधक, मिर्च और क्वा प्रत्येकका १३
 तोळा, भांयसेके रसमें बाँट कर तीन रसोको गोळी
 बनाये । अनुपान दोषके बसाबलक अनुसार स्थिर
 करना होता है । इस औषधका सवन करलस शूल,
 गुल्म, आमवात, हृदशूल, पाथ्यशूल, नेत्रशूल, गिरधूल,
 कटोशूल, हृन्मोमक, प्रहृणा और अतोसार मादि रोग
 भति शान्ति पाकृत हात है । (सम्भारत ० महोपनिषत् ०)
 राजप्रवर्त्ती (स० स्त्री०) राजप्रिया पत्नी, करैसेका
 पेड़ ।
 राजप्रसवि (सं० स्त्री०) राजभवन, राजाका महल ।
 राजप्रार (स० पु०) राजद्वार ।
 राजप्राकपी (स० स्त्री०) एक प्रकारका मद्य । भक्षप्रकाश
 के अनुसार यह सोंद, पोपज, विपसामूल, भज्यायाम
 और काली मिर्चको उलकी लौकसे तिगुने भद्रुधर्म और
 चोगुने मधुजातीय और इष्टुजातीय रसमें मिला कर
 बो जा जाता है ।
 राजवाह (स० पु०) राजान बहसोति यह मण् । घोटक,
 घेडा ।
 राजवाहन (स० पु०) राजह सरपटका एक पुत्र ।
 राजवाह (स० पु०) राजा बाह्य । १ राजबाहक हस्ती,
 राजाका वाहक हाथी । पर्याय—उपबाह्य, पित्रयकुञ्जर ।
 (वि०) २ राजवाहनीय, राजाका पहलक योग्य ।
 राजवि (स० पु०) राजपक्षी मोलकवृत् ।
 राजविजय (स० पु०) सम्पूर्णजातिका एक राग ।
 राजविद्या (स० स्त्री०) राज्यशास्त्रोपयोगी विद्या राज
 नीति ।
 राजविद्रोह (स० पु०) राजविद्रोह, बगावत । उन्नीह बेलो ।
 राजविद्रोहिन् (स० पु०) यह औ राजा वा राज्यक प्रति
 विद्रोह करै, बागी ।
 राजविनीय (स० पु०) स गोवशास्त्रके अनुसार एक ताम
 का नाम ।
 राजविद्यार (स० पु०) राजाके पास करमे योग्य बीक्षा
 भ्रम ।

राजबाजी (स० स्त्री०) राजपयोग्य ।
 राजयोयो (स० स्त्री०) राजपय, चौड़ी सड़क ।
 राजरूक्ष (स० पु०) वृक्षाभा राजा राजवन्तादित्यात् पर
 निपातः । १ भारवध घृस, उरगाका पेड़ । २ पिपाकपुष्ट,
 पवारना पेड़ । ३ लक्ष्म्यापिपुष्ट, लंकाका मद्रुषूड नामक
 पेड़ । ४ श्योनाकपुष्ट, सांतापगुठी ।
 राजपुत्र (स० स्त्री०) राजा पुत्रः । १ राजाका पतिव्र ।
 २ स्वापपूर्वक भर्गाजन । ३ इसकी रक्षा करना और
 सत्पासकी दान इना ।
 राजवैश्वन् (स० स्त्री०) राजा वैश्व । राजपुत्र, राजाका
 भयन ।
 राजवैय (स० पु०) राजपरिषद राजाकी पोशाक ।
 राजराज (स० पु०) राजा शोभमानः शयः । पट्ट, गदसन ।
 राजशकर (सं० पु०) इण्डिगतरस्य हिनसा मधुमी ।
 राजशब्दोपजीवा गण (स० पु०) प्राचीनकालका एक
 प्रकारका गण या प्रजातन्त्र । कीदित्यन सिद्धा है कि
 जिप्सवि, वज्रिक, मद्रक कृताभास्य भावि गण राज
 शब्दोपजीवो हैं ।
 राजशब्दा (स० स्त्री०) राजा शब्दा राजाकी शब्दा ।
 राजशाक (स० पु०) राजप्रिया शाक, शाकानां राजा
 इति वा । वास्तुशाक, बधुमा । (उज्जिन०)
 राजशाकनिका (स० स्त्री०) शाकमेव बधुमा ।
 राजशाकि (स० स्त्री०) राजभयण माक्षिपाथ्यविशेष,
 एक प्रकारका जड़हन पान जिस राजमोक्ष या रायभोग
 भा कहत हैं । इसका चक्षुस बहुत महोन और सुगंधित
 होता है ।
 राजशाही—उज्जवाही शब्द ।
 राजशिशु (स० स्त्री०) श्वेतशिशु, एक प्रकारका सेम
 जो चौकी और गूदेरार होतो हैं । यह कानेमें लाविद्य
 होतो है । इस घोयासेम भी कहत हैं । इसकी दो जातियां
 होतो हैं—एक कालो और दूसरी सफेद । इसमें और
 सामान्य संभमें यह भेद है, कि यह उससे अधिक चौड़ी
 होती है और छम्बाने बहुत नहीं बढ़ती ।
 राजशासन (स० स्त्री०) राजा शासन । राजाका शासन ।
 राजशास्त्र (सं० स्त्री०) राजविद्या, राज्यशास्त्रोपयोगी
 नीतिशास्त्र ।

राजयुक्त (सं० पु०) युक्ताना राजा, राजदन्तादिन्वान् परि-
निपातः । पद्मिचित्रोप, एक प्रकारका तोता जो लाल
रंगका होता है । इसे जूरी कहते हैं । पर्याय—प्राज्ञ, जत-
पत्र, नृपप्रिय ।

राजशुभ्रज (सं० क्ली०) जालिध्यान्यभेद, एक प्रकारका पान ।
राजशुभ्रज (सं० पु०) १ मद्गुग्गुलुस्य, मंगुली मटली ।
(क्ली०) २ राजाका छत्र ।

राजशेखर—कई एक प्रसिद्ध जैन ग्रन्थकार । १ कान्यकुब्ज-
पति महेंद्रपालके शिक्षक एक प्रसिद्धकवि । इनके पिताका
नाम ऋद्धक और माताका शीलवती था । ईस्वीसन ६०६
से ६०७ के बीच उन्होंने बालरामायण, प्रचण्डपाण्डव या
बालभारत, विद्वशालभञ्जिका और कर्पूरमञ्जरी नामकी
संस्कृत नाटिका लिखी । रामायणके प्रारम्भमें उनके
वनाये छः संस्कृत ग्रन्थके नाम मिलते हैं । क्षेमेन्द्र,
मद्गु और अभिनवद्वय अपने अपने ग्रन्थोंमें राजशेखरका
उल्लेख कर गये हैं । २ एक विख्यात अलङ्कारशास्त्रके
रचयिता ।

राजशेखर मलधारिणच्छमण्डन—एक प्रसिद्ध जैन-आचार्य
और जैन-पेतिहासिक । ये १४वीं सदीके प्रारम्भमें विद्य-
मान थे । उनका 'प्रबन्धकोष पेतिहासिकके आदर्शोप
है । सद्गीतोपनिषद् और सद्गीतोपनिषद्सारके प्रणेता
प्रसिद्ध जैनाचार्य सुधाफलस राजशेखरके शिष्य थे ।

राजशेखर सूरि—एक जैन पंडित तथा श्रौतिलकके शिष्य ।
इन्होंने श्रीधररुत न्यायकन्दलीकी पञ्जिका लिखी ।

राजशैल (सं० पु०) राजगिरि ।

राजश्यामलोपासक (सं० पु०) धर्मसम्प्रदायभेद ।

राजश्री (सं० स्त्री०) राज्ञः श्रीः । १ राजलक्ष्मी, राजाका
ऐश्वर्य । २ राजाकी शोभा ।

राजसंसद् (सं० पु०) १ राजसभा । २ वह धर्माधि-
करण, जिसमें राजा स्वयं उपस्थित हो, स्वयं राजाका
दरवार ।

राजस (सं० स्त्री०) रजसो भवः रजस्-अण् । रजोगुणोद्भव,
रजोगुणसे जो कुछ होता है, सभी राजस है ।

“भारम्भरचिता वैर्यमसत्कार्यपरिग्रहः ।

विषयसेवा चाजल राजसं गुणलक्षणम् ॥”

(वामनपु० १२ अ०)

कर्मानुष्ठानशालता, अर्थय, असन्कार्य, परिग्रह और
सर्वदा विषयसेवा ये सब राजस लक्षण हैं ।

जगन्में रजोगुण प्रधान जो कोई कार्य किया जाता
है वही राजस है । राजस आहार—

“ऋद्धन्ततन्म्यात्युष्णतोन्नृणन्वविदासिनः ।

भाहारा राजस्येथा दुःपयोऽमयप्रदाः ॥”

(गीता १३ अ०)

फटु, अम्ल, लवण, अति उष्ण, तीक्ष्ण, रुक्ष और
विदाही आहार राजस आहार है ।

राजस यज्ञ—फलामिसन्धानपूर्वक द्रव्य दानने-
के लिये जो यज्ञ किया जाता है, वह राजस यज्ञ है ।

(गीता १७ अ०)

राजस तपस्या—मनुष्य जिससे साधु कहे, वेदनेसे
अभिवादन करे अथवा अर्थद्वारा सम्मानरक्षा करे, इस
कारण वा द्रव्यप्रदानके कारण ही जानेवाली अनियत
और क्षणिक तपस्याको राजस तपस्या कहते हैं ।

(गीता १७ अ०)

राजस दान—प्रत्युपकारको आशासे अथवा स्वर्गादि
फलोद्देशसे कष्टपूर्वक जो दान किया जाता है उसे राजस
दान कहते हैं । (गीता १७ अ०)

राजस त्याग—दुःखजनक होनेसे कायकेश और भय
प्रयुक्त कर्मपरित्यक्त होनेसे उसे राजस त्याग कहते हैं ।

राजस ज्ञान—जिस ज्ञान द्वारा सर्वभूतस्थित
आत्माको पृथक् पृथक् रूपमें नाना भावापन्न जाना जाता
है उसे राजस ज्ञान कहते हैं ।

राजस कर्म—अहद्वार वशतः कामामिलायी हो कर
बड़ी आसानोसे जो काम किया जाता है उसका नाम
राजस कर्म है ।

राजस कर्त्ता—अनुरागी, कर्मफलाभिलाषी, लुब्ध-
स्वभाव, हिसापरकृति, अशुचि, हर्ष और शोकयुक्त काम
करनेवाला हो राजसकर्त्ता है ।

राजस बुद्धि—जिससे धर्म, अधर्म, कार्य, अकार्य
यथार्थरूपसे जाना जाता है वही राजस बुद्धि है ।

राजस धैर्य—जिसके द्वारा मनुष्य धर्म, अर्थ और
कामको धारण करते हैं तथा तत्प्रसङ्गाधोन फलत्यागा-
कारुक्षी होते हैं, उसीको राजस धैर्य कहते हैं ।

विस्तृत है। भूपरिमाण २५६३ वर्गमील है। इसके उत्तर-में दिन्नाजपुर और बगुडा जिला, पूरवमें बगुडा और पावना जिला, दक्षिणमें गङ्गा और नदिया जिला तथा पश्चिममें मालदाह और मुर्शिदाबाद जिला है।

भूतत्त्व।—वर्त्तमान राजसाही जिलेका प्राकृतिक संस्थान देखनेसे ही डेल्टा सरीखा मालूम होता है। भूभागका अधिकांश नदी-गर्भ और जलसे आच्छादित है। साधारणतः जमीन उर्वरा है, किन्तु सभी स्थानोंकी जमीन और आचहवा एक-सी नहीं है। वर्षाकालमें तमाम जलसे डूब जाता है। नदी तीरवर्ती स्थान प्रधानतः स्वास्थ्यकर और वृक्षोंसे सुशोभित है। पद्मा नदीमें जब बाढ़ आती तब गावका गाव बह जाता है। १८३८ और १८६५ ई०की भीषण बाढ़ सर्वांत विख्यात है।

इस जिलेके दक्षिण और दक्षिण-पश्चिममें पद्मा, पश्चिममें महानन्दा, मध्यमें आत्रेयी, बडल, उसकी शाखा मूशा खाँ, मूशाकी शाखा नारद, पूरवमें करतोयाकी शाखा नागर, उत्तरमें वाराही और वागनई बहती हैं। इन सब नदियोंमें नावें वारहों मास आती जाती हैं। यहा छोटे बड़े बहुतसे बिल हैं जिनमें चलन-बिल सबसे बड़ा है। इसका विस्तार २१ मील है। सभी समय इसमें नावें चलती हैं। रकदह, मादा और सतीका बिल भी उतना छोटा नहीं है। जिसमें सर्वांत नदीके रहनेसे जलपथसे ही वाणिज्यकी सुविधा है।

सुलतानगञ्ज, गोदागाडी, गोविन्दपुर, लालोर, हति-वानदह, सापेल, आञ्चनकोट, गाङ्गेल, बरवाड़ा, बराइल, तेमुल, नौगांव, सिडा, सेरकोल आदि स्थानोंसे नाव द्वारा धान, चावल, तमाकू और पटसनका कारवार चलता है। यहा योरोधान, आमनधान, हल्दी, ईख, नील, शहतूत और गाजेजी खेती होती है। खेतीवारीसे ही लोग अपना गुजारा चलाते हैं। यहाका आम, रुटहल बहुत उमड़ा होता है और बहुतायतसे पाया जाता है। इस जिलेमें मछली बहुत मिलती है। बहुतोंका विश्वास है, कि अधिक मछली मिलनेके कारण ही यहाका "मत्स्य देश" नाम पड़ा है।

वाणिज्य।—एक समय यह जिला बख्त-व्यवसायके लिये बहुत मशहूर था। इष्ट इण्डिया कम्पनीके समयके

विवरणसे जाना जाता है, कि उस समय यहाकी आढतसे वर्षमें १४८१०० खंड बख्त यूरोप भेजे जाने थे। अलावा इसके लाखों मनुष्यका पहनावा भी यहीसे चलता था। किन्तु अभी वह दिन गया। मैनचेष्टरकी प्रतिवोगितासे यहाके जुलाहे बेकाम बैठे हुए हैं। अभी इसी जिलेमें अन्यान्य स्थानोंसे कपड़े, कपास, चीनी, घी, शाल लकड़ी, लवण और मसाले आते हैं, परन्तु धान, चावल, हल्दी, रेशम, नील, पटसन और गांजा भी यहासे दूसरे दूसरे देश भेजे जाते हैं।

नाम और जिलेकी पैदाइशका इतिहास।

बहुत लोगोंका यह ख्याल है, बहुत दिनों तक ब्रीड और हिन्दुओंके राजत्व करते रहनेके कारण मुसलमानोंके शासनकालमें इसका राजसाही नाम पड़ा। उससे बहुत समय पहले यह स्थान मत्स्यदेशके अन्तर्गत था। उत्तर-बङ्गके पांथ वीवी रेल-स्टेशनसे कोई १७ मील पूर्वा-दक्षिण कोने पर अवस्थित विराट नगर मत्स्यप्रदेशकी राजधानी थी। वहाके लोग इसी विराट नगरकी २ मीलकी दूरी पर विराटके सेनापति कीचकके मकानका परिचय देते हैं। फिर इसके निश्चय ही वह स्थान है, जहा शमी वृक्ष पर पांचों पाण्डवोंने अपने अस्त्रशस्त्र रखे थे इत्यादि प्रमाणोंके बल पर इस स्थानको ही महाभारतमें लिखे मत्स्यदेश मानते हैं, किन्तु महाभारतकी आलोचना करने पर इस स्थानको कभी वह मत्स्यदेश स्वीकार नहीं किया जा सकता। वह पुराने मत्स्यदेश राज-पुतानेमें है। आज भी विराटराजकी राजधानी वैराट नगर वहा अवस्थित है। मत्स्य और विराट देखो। राजसाहीका मत्स्यदेश बहुत इधरका है। इस समयके भूतत्वविदोंने भूतत्वकी आलोचना कर स्थिर किया है, कि राजसाही जिलेका बहुत अंश आधुनिक समयके नदीगर्भसे निकला हुआ है। बरीन्द अंशको छोड़ अन्य किसी स्थानको वैसा पुराना नहीं कहा जाता। इस स्थानको आत्रेयी और वाराही नदिया प्रवाहित करती है। इससे यह तीर्थक्षेत्र कहा जाता है। फिर भी, प्राचीन पुराण आदि ग्रन्थोंमें इसका उल्लेख नहीं है। मुसलमानोंके अभ्युदयकालमें जिन सब स्थानोंमें लोगोंका समागम हुआ था, उनमें माँदा,

कुशग्रहल, नीगांव, कामीतला, मबानीपुर और देवपाडे का नाम लिया जा सकता है। मान्यमें बौद्धकीरियों का निर्वाह और मयानीपुरमें देवीका पीठस्थान है। मुसलमान धम्मूदयमें बागा और ताहिरपुर तथा चैतन्य-भक्त परम बेप्यब नरोत्तमक धम्मूदयमें प्रेमतलीकी प्रसिद्धि हुई थी। किन्तु इस समयमें भी राजसारीका नामकरण नहीं हुआ।

नबाब मुर्शिदाबादों के समयमें उदितनारायण नामक एक जमीन्दार मयना जमीन्दारोंका शासन करत थे। उनको जमीन्दारोंका नाम 'जकका राजसारी' था। इस समयके मुर्शिदाबाद औरमूम, बख्तमान नदिया और सन्ध्याख परगनेके कुछ भग्न भागि स्थान उस समय के 'राजसारी जकका' के अन्तर्गत थे। इस समय भी मुर्शिदाबाद, धीरमूम जिलेमें राजसारीके परगने दिखाई देते हैं। उन समय बगुडा, पाबना और माखनद भागि जिलेके अधिवासी भी उदितनारायणको ही कर देते थे। किन्तु वे स्थान राजसारीके नामसे प्रसिद्ध थे या नहीं इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। और तो क्या यथा नदोके उत्तर किनारे बर्तमान राजसारीमें जो जककरपुर और ताहिरपुर परगने दिखाई देते हैं, वे जककरके समयमें सरकार बायका बाब तथा मुर्शिदाबाद और ईप इम्बिया कम्पनीके पहले समयमें मुर्शिदाबाद जिलेके अन्तर्गत थे। सन् १७५५ ई०में राजसारीके स्थानोंमें बड़े परिवर्तन हुए। उचित नारायणको जमीन्दारों माटोरके राजाके अधीन हुई थी। रामो मबानीके अधिष्ठत बहुत बड़ी जमीन्दारों राजसारीके नामसे प्रसिद्ध हुए। उनके समयसे सन् १७६० ई०के वशसाखा बन्धोवस्त तक राजसारी जिलेकी परिधि सीमा मागजपुर और पूर्वी सीमा डाका निर्दिष्ट था। सन् १७६३ ई०में बिरस्यायी बन्धोवस्तके समय राजसारी जिलेसे बहुत स्थान निकल गये। भव भी इसकी पूर्वी सीमा प्रयुक्त और परिधि भी भीमा गङ्गा है। इतना बड़ा सिद्धा एक मजिस्ट्रेटके शासनमें रहना उचित नहीं। येना समय कर १६ वर्षोंमें इसका ध्यापतन बहुत कम कर दिया गया है। अन्तमें लिखित १४ धानों और तोन मह कर्मोंके जे कर बर्तमान राजसारी जिलेका संगठन हुआ—

सन् महकमेमें—१ बांमालिया २ बारघाट ३ पूडिया,

४ गोदापाड़ी, ५ ठागेर और ६ बाघमारा ये छः धाने हैं। माटोर महकमा—१ नाटोर, २ छाकपुर, (विष्णुमारा), ३ बड़ाइ प्रम, और ४ सिजा—ये चार धाने हैं। नीगांव महकमा - १ पांचपुर, २ नीगांव, ३ महादेवपुर और ४ मांवा—ये चार धाने हैं।

विवरण।

पहले ही कह चुके हैं, कि वर्तमान राजसारी जिले में मुसलमानों जमातेस पहले कोई बड़ा नगर या राजधानी नहीं थी। जालेया बाटाही और करतोया के पुण्य तीर्थ होनेकी वजह यहाँ वाली बहुत भाया करते थे। इस तीर्थके कारण ही नदोके किनारेके स्थानोंमें हिन्दू और बौद्ध राजाके उद्योगसे देवालय और विहार बने थे। इनमें अधिकांश ही नष्ट हो गये हैं। इनमें गोदा गाड़ी धानेके अधीन देवपाडा प्राममें विजयसेनका शिलालेख मिला है। इससे बहाँके बहुत पुराने प्रभु-भार शिव तथा दूनके मन्दिरका उल्लेख पाया जाता है।

माटोरसे उत्तर पूर्व कोनेमें ३६ मीलकी दूरी पर मबानीपुर प्राम मौजूद है। बहुत दिन पहले यहाँ करतोया, जालेया और यमुनाका संगम था। इससे यह स्थान महातीर्थके नामसे प्रसिद्ध था। मबानीदेवोंके पीठस्थानके नामसे यह स्थान प्रसिद्ध था। यहाँके पुजारी कहा करते थे कि तत्कालपूर्वामणि-वर्णित मय-घटोका लय तथा बायां कान यहाँ मिला था। (१) मुसलमानोंके राज्यमें इस तीर्थका सोप हो गया। इसके बाद हुसैन शाहके जमातेमें मोहनमिथ नामक एक साधुने मधुरैय और मनोहर चक्रवर्तीके साहाय्यसे पहलके पीठ का उद्धार किया। इस समय रहमत का नामक एक मुसलमान सभापतिने देवोंकी कृपासे विपदस मुक्त होने पर यहाँ एक इमारत तय्यार कराई थी। सन् १२३२ फसलकी भूखोद्यम यह इमारत नष्ट हो गई। कहे हैं, कि मोहन मिथ नामक प्रख्यात देवोंकी आवास कुमुरा-नन्द चक्रवर्तीके कृपासे विवाह किया था।

भङ्गातकुञ्जतोड मोहन मिथके माघ कल्पका विवाह

(१) "करताया उ लय बसे नामनेरवा।

मययी देवता तन ब्यारुका कण्डरा ॥" (पीठमहा)

मठान्दरे— "कण्डोया तद पड़े राम कय रैर।

बामेज मेरवी देवी मययी वीर ॥" (मलकम्पकी भस्वाम)

करनेसे कुमुदानन्द समाजमें गिर गये। इसके बाद साधु मोहन मिश्रके असाधारण दैवशक्तिका परिचय पा कर वारेन्द्र-समाजपति राजा कंसनारायणने उनको और उनके ससुरको जातिमें उठा लिया। उन्हींसे ही वारेन्द्र ब्राह्मणसमाजमें भवानीपुरी पंथकी सृष्टि हुई। साँतैल की रानी शर्वाणा और रानी भवानीके यत्नमें इस पीठके संस्कार और यहाँकी देवसेवाका उचित प्रबंध किया गया था। साँतैल और उसके बाद नाटोरके राजवंश सदा इस पीठको देखने आया करते थे। उन्में थोड़े ही दिनोंमें इस पीठकी ख्याति राजसाहीमें हो गई। दूर दूरके यात्री साधु संन्यासी आया करते थे। यहाँके शूर-वंशीय कायरथ जमींदार आदिशूरवंशीय और भुलुयाके लक्ष्मण माणिक्यकी जातिके नामसे पुकारे जाने लगे।

ताहिरपुरराज ।

इस समयके राजसाही जिलेमें "राजा" उपाधि-वाले बहुतेरे जमींदार दिखाई देते हैं। किसी किसी पतिहासिकने लिखा है—ईसाकी १४वीं शताब्दीके प्रारम्भमें मुसलमान बादशाहको दमन कर जिन्होंने गौड-में कुछ दिनोंके लिये हिन्दू राजत्व स्थापित किया, वे राजा गणेश ही ताहिरपुर राजवंशके पूर्वपुरुष हैं, किन्तु कितने ही मुसलमान पतिहासिकोंने गणेशको दिनाज-पुरके राजा लिखा है। दिनाजपुरके राजा गणेशका राजत्व करना बहुतोंने स्वीकार किया है। ऐसी दशामें राजा गणेश द्वारा ताहिरपुरके राजवंशकी उत्पत्ति स्वीकार करनेमें सन्देह उत्पन्न होता है। विजयलङ्करसे ताहिर-पुरके राजवंशका उत्पन्न होना बहुतोंने स्वीकार किया है। पहले जमीन्दारोंका रक्षा करनेके लिये नवाबसे हुषम ले कर जमीन्दारोंको फौज रखनी पड़ती थी। इस तरह फौजाकी मददसे विशेष वीरता प्रदर्शित करने पर सम्राट्ने विजयलङ्करको पश्चिम दरवाजेका और सुसङ्ग के बुद्धिमत्त खोंको पूर्वके दरवाजेका जमादार नियुक्त किया। कुलप्रथममें भी सुसङ्गके राजा उद्याचल और ताहिरपुरके राजा अस्ताचल कहे गये हैं। सम्राट्ने विजय लङ्करको 'सिंह'-का खिताब और २२ परगने दिये। उनके अधीनमें बहुतेरे सैनिक रहते थे। रामगाममें चारों ओरसे खाई खुदवा कर और चहारदीवारी उठवा कर

राजधानी कायम हुई। विजयके पुत्र उद्यानारायण वारेन्द्र कुटीनोंमें निराचलि पंथके प्रथम स्रष्टा हैं। गंडेश्वर उनसे सब परगनोंको छीन लिया केवल ताहिरपुर परगना उनके पास रह गया। इन्हीं उद्यानारायणके पोता प्रसिद्ध वारेन्द्र-समाजपति राजा कंसनारायण हैं। यहाँ वारेन्द्रकुटीनके मूलाधार थे। (कुटीन और वारेन्द्र देखो) इनके परपोते लक्ष्मीनारायणकी पुत्रीके साथ नाटोरके राजा रामजीवनके शरसपुत्र कालिकाप्रसादका विवाह हुआ। इतिहासमें ये "कालू की दूर" के नामसे विख्यात हैं। इस वंशके अन्तिम राजा अपुत्रक हो मर गये। साथ ही इनकी विपुल सम्पत्ति इनके नाती विनोदराम रायने ले ली। ये विनोदराम ही ताहिरपुरके राजवंश के आदिपुरुष हैं। ये ताहिरपुरकी जमीन्दारोंके ॥३॥ के मालिक हैं। (कुटीन शब्दमें शायती देखो) विनोद-राम रायके परपोते ताहिरपुरके वर्तमान प्रसिद्ध राजा जगिशेखरेश्वर राय हैं।

साँतैल राजवंश ।

आत्रेयी और करतोया नदीके संगमस्थान पर साँतैल या साँतुल राजाकी प्राचीन राजधानीका ध्वंसा विशेष दिखाई देता है। इसके समीप ही साँतुलका विल मौजूद है। यह विल चलनविलके साथ सम्मिलित है। जिस समय राजा गणेशका अभ्युदय हुआ, उस समय साँतैलमें एक वारेन्द्र ब्राह्मण प्रचल प्रतापी हुए थे। तप्ये मातुडिया और इसके अन्तर्गत २३ परगने इनके अधिकारमें आये। मुसलमान नवाब भी उनकी खातिरदारो किया करते थे। किस तरह यह संघातराज्य विलुप्त हुआ, इसके सम्बन्धमें हमने एक कहानी सुनी है, वह इस तरह है—

जिस समय औरङ्गजेबका पीता आजिम उस्मान बङ्गाल, बिहार और उड़ीसाका शासक था, उस समय सीतानाथ साँतैलके राजा थे। इस समय इनकी उम्र बहुत हो चुकी थी। वे अपने छोटे भाई रामेश्वर पर सब कार्य भार छोड़ कर स्वयं पारमार्थिक तत्त्वालोचनामें समय बिताते थे। किन्तु रामेश्वरने कई अविश्वास-जनक काम किये। इससे इनके हृदयमें मार्मिक पीडा उत्पन्न हुई थी। इसी शोकसमयमें सीतानाथ परलोकगामी

हूय। रामेश्वरका भयमें ही राज्यशंका कारण हुआ। इनकी बहुतेरे पञ्चपातकी भी कथा करत थे। इस रामेश्वरका पुत्र राजा रामकृष्ण हूय। शताब्दरणोपा रामी शर्वाचो राम कृष्णको पत्नी हैं। राजसाही मिलेमें रामी शर्वाचोकी कीर्तिया कई स्थानोंमें विद्यमान हैं। कहते हैं, कि इन्हीं रामी शर्वाणाने बरतोयाक किनारे महापोतका भावि प्रकार किया था। वे देवीका स्तम्भ मन्थिर बनवा कर देवसंवामें प्रभुर धन कर्त्त क्रिया करती थी। इनकी कीर्तिया देखनेके लिये दूर दूरके यात्री आया करत थे। कोई १७१० ई०में रामी शर्वाचोकी मृत्यु हुई। इसके बाद इस जमीनारोका बारिस रामकृष्णक मतोके बन्धुत्तम थ; किन्तु नादोरके सुकतुर राजा रघुनन्दनन नवाबको यह समझा दिया, कि "बन्धुराम जग्गाश्व है और जग्गाश्वारी के काम संभालनेमें असमय है।" भाप मुझे दे जात्रिये। इस तरह उन्होंने नवाबसे सम्बोधन करके इनकी सारी जग्गाश्वारां अपने नामसे कत ली। इसीके साथ साथ साँचीका राज्य शंका भी खोप हो गया।

रामी शर्वाचोकी सब कीर्तियां उनकी मृत्युके बाद कुम्भबन्ध तथा जोर्षीशीर्ष हो कर लक्ष्मण हो गये। पीछे नादोरकी प्रातासमरणोपा रामी मवाचोने उन कीर्तियांकोका जोर्ष संस्कार करा अपने महारण्यका परिचय दिया था।

पुठियाका पञ्च ३।

बाह्यैरकुलीन प्राण्य सापु बागचोकी पञ्चह पीढ़ी मोधे श्वाधर पाठक उत्पन्न हुए। उनके पुत्र धरसाचार्य या धरसाचार्यसे ही इस राज्य शंका अन्तुदय हुआ। ११वीं सदीके मध्यभागमें बङ्गके सुबेदार दिल्लीके बादशाहका सम्बन्ध विच्छिन्न कर स्वतन्त्र बन गये। इसके बाद इनको हमल करनेके लिये दिल्लीके बादशाहने बहुतेरी फौजोंके साथ अपने सेनापतिको भेजा। यहाँ माने पर धरसाचार्यकी असाधारण वैभवाधिकारी बात मुगल सेनापतिको मालूम हुई। मुगलसेनापतिने इनको अपने जेनेमें बुझाया। धरसाचार्यने मुगल सेनापतिको वैभवाधिकारस्य युद्धमें विजय प्राप्त करनेके उपाय

भीर पण बताया था। विजय प्राप्त हुई। सेनापतिन युद्ध के बाद धरसाचार्यको जागीर दिखानेको बात कही, किन्तु धरसाचार्यने जेनेम इन्कार कर दिया। उन्होंने कहा कि मुझे विजयवासनाकी इच्छा नहीं। इस पर मुगलसेनापतिने बादशाहसे इनके पुत्र पोतान्मरको 'शहर मन्त्रक का खिताबो भीर सफरपुर परगना जगोरीमें दिखवाया। किन्तु पोतान्मर भी इन सम्पत्तिका अधिक दिनों तक सोच न कर सक। उनके छोटे भाई लोका मर इस सम्पत्तिके अधिकारी हुए। लोका मरके दो पुत्र हुए—रतिकान्त और धामन्मराम। पिताके अग्रियपात्र होनेकी वजह रतिकान्त अडे होने पर भी वैधिक सम्पत्तिक उत्तराधिकारी न हो सक। ठाकुरकी उपाधिये सिम्पित हुए। दूसरे पुत्र धामन्मरामने पिताकी जीविता बस्थाम हा विज्जोभरने राजाकी उपाधि प्राप्त कर ली।

रतिकान्तक पुत्र रामचन्द्रस पुठियामें "शाघागोयिन्" प्रतिष्ठा भीर उनकी निम्पसेवाका सुमण्य हू ग। इन रामचन्द्रके तीन पुत्र हुए—नरनारायण, वैपनारायण और जयनारायण। नरनारायण ठाकुरके कामनेमें नादोर राज्यके स्थापक रघुनन्दनके भाव कामदेव छफरपुरके अन्तर्गत बाह्यैरहाही ग्राममें तहसीलदार थे। वैपनारायणके समयमें रघुनन्दन पहलेसे इनकी पूजाके लिये कुम्भ तोड़ कर रजत थे। इसी सामान्यकार्यसे आरम्भ कर वे नवाबके दरबारमें पुठिया राजाकी बीरसे पकीछी मुज्जनारी करने लगे। इसके बाद वे भीर भी सीमामय शानी हुए थे।

काइ कनबाहिसके समयमें आनन्दनारायण छफरपुर परगनेके राजा हुए तथा उनके साथ जमी दारोका चिरल्पायी बन्धोवस्त हुआ। उनके उत्तराधिकारी राजेन्द्र नारायणको पुठिया सरकारस 'राजा बहानुर'-की उपाधि मिली थी।

इससे पहले पुठियाके राजा भुवनेश्वरनारायणने भी अपने वैदिक भ श छोड़ कर कितनी ही जमींदारियां कही लीं। उनके पुत्र जगन्नाथरायणने भी सन् १२१७ साब्दमें मैमनसिंह जिलेके पुकरिया परगना, राजसाही जिलेके काजोगांव, काजोसपा भीर काजीहाटा परगना भीर बिया जिलेके मधानम्दियर जरीद कर अपने पूरी

• इत मुगलसेनापतिके युद्ध जेनेने मन्त्रिण भीर कुम्भ धालोने उवा यशमन्त्रक इत्य किन्तु है।

रामजीवनने रसिकरायके पुत्र रमाकान्तको गोद लिया। इसके बदलेमें रसिक रायको राजसाही जिलेके चौगाँ और रङ्गपुरके इसलामावाद परगना मिले थे। रसिकके वंशधर चौगाँके राजा कहे जाते हैं।

पदाङ्कदूतके रचयिता प्रसिद्ध कवि और नैयायिक श्रीकृष्ण शर्मा राजा रामजीवनकी सभाके उज्ज्वल रत्न थे। सन् १७३० ई०में रामजीवनकी मृत्यु हुई। बालक रमाकान्त राजा हुए। उनकी नाथालिगी अवस्थामें दीघा-पतियाके दयाराम राय नाटोरके राजकार्य परिचालन करते थे।

सन् १७३४ ई०में राजा रमाकान्तने १८ वर्षकी उम्रमें स्वयं राज्यभार ग्रहण किया। इसके लिये उनको १८५३२५) दण्डिया कर देना पड़ता था। उनके समयमें १६४ परगना नाटोरराज्यके अधिकारमें आ गये; देखा गया है, कि रामजीवनके समय अपेशा रमाकान्तके समयमें २२ परगना अधिक हो गये थे। इससे राजा रमाकान्तकी विषय-बुद्धिका भी परिचय मिलता है। रामजीवनकी जोवितावस्थामें छतानी ग्रामनिवासी आत्माराम चौधरीकी कन्या भवानीके साथ रामकृष्णका विवाह हुआ। यह कन्या ही इतिहासप्रसिद्धा प्रातःस्मरणीया रानी भवानी हैं। राज्यप्राप्तिके बाद पहले पहल रमाकान्त अच्छी तरह राजकार्य चलाने लगे। इस समय भी दयारामके परामर्शसे राजाके सब काम होते थे। दयारामको वे दादा या भाई कहते थे। इधर कुछ बुरे आदमियोंका संग साथ हो गया। इस समय दयाराम और रमाकान्तमें परस्पर मनोमालिन्य हुआ। राजाके यहां नवाबका कर वाकी पड़ने लगा। इस समय अलीवर्दी खा बङ्गालके नवाब थे। दयारामने जा कर सब बातें नवाबसे कहीं और उन्हींके परामर्शानुसार नवाबने रमाकान्तको राज्य-च्युत कर रामजीवन रायके कनिष्ठ विष्णुरामके पुत्र देवी प्रसादको राजा बनाया। इस समय रमाकान्त रानी भवानीके साथ भाग कर मुर्शिदाबादके जगतसेठके यहां आ कर रहने लगे। जगतसेठकी चेष्टासे रमाकान्त फिर राजा हुए और दयाराम फिर उनके प्रधान मंत्री हुए।

सन् १७८४ ई०में राजा रमाकान्त रानी भवानी और पकमात कन्या ताराको छोड़ परलोकगामी हुए। ऐसे

बड़े राजा नाटोरका समूचा भार रानी भवानी पर आ पड़ा। रघुनाथ लाहिडीके साथ ताराका विवाह हुआ। रानी भवानीने दामादको राजाका कार्यभार सौंप देनेके लिये नवाबके दरवारमें आवेदनपत्र भेजा था। किन्तु १७८८ ई०में उस प्रिय दामादकी मृत्यु हो गई। इससे फिर राज्यका सारा भार रानी भवानी पर आ पड़ा। इस समय नाटोरराज्यकी उन्नतिको देख कर ग्राण्ट साहबने लिखा था :—

“Rajshahi, the most unwieldy extensive Zamindari in Bengal, perhaps in all India intersected in its whole length by the great Ganges or its lesser branches, with many other navigable rivers and fertilizing waters, producing within the limits of its jurisdiction at least four-fifth of all the silk, raw or manufactured used in or exported from the Empire of Hindustan, with a superabundance of all the other richest productions of nature and art to be found in the warmer climates of Asia, fit for commercial purposes, enclosing in its circuit, and benefited by the industry and population of the over-grown capital of Murshudabad, the principal factories of Kasim Bazar, Beaulah, Kumarkhali etc, and bordering on almost all the other great provincial cities, manufacturing towns, and public markets of the subah or Governorship.”

(Grant's Analysis of the Finances of Bengal 1786)

ग्राण्टकी समालोचनासे मालूम होता है, कि रानी भवानीके समयमें राजसाही केवल बंगालके लिये ही नहीं वर समस्त भारतवर्षमें एक बहुत बड़ी जमीन्दारी कही जाती थी। गङ्गा तथा अन्यान्य नदोके प्रवाहित होते रहनेसे यहाकी जमीन बहुत उपजाऊ थी। समग्र भारत साम्राज्यसे उत्तम रेशम जो देशमें बनता था या विदेश भेजा जाता था, उसका (सोलह आनेमें १३ आना) भाग राजसाहीसे ही पैदा होता था। बङ्गके उस समयके समृद्धशाली नगरोंमें जो कुछ खनिज पदार्थ या

बयसाय सामग्री उत्पन्न होती थी उसका अधिकारी रानी भवानीकी प्रमोन्नोदोस उत्पन्न होता था ।

हाइवेस साहबने भी लिखा है ।—

"At 'Attore about ten days' travels North East of Calcutta resides the family of the most ancient and opulent of the Hindu princes of Bengal, Raja Ramkanto who deceased in the year 1748 was succeeded by his wife named Bhabani Rani, whose dewan or minister was Dayaram they possess a tract of country about 85 days' travels and under a settled Government, their stipulated annual rent to the Crown was seventy Lakhs of Rupees the real revenues about one Crore and a half."

हाइवेसकी विवरणोंसे भी मस्तूम होता है, कि रानी भवानीका राज्य इतना भारी था, कि ३५ दिनमें चक्कर पूरा होता है । इसका राजस्व ७० लाख रुपये तथा भाय देड़ करोड़ रुपये थी ।

इस तरह बहुत चेरुर्ध्वशास्त्रिणी हो कर रानी भवानीने प्रशासिका विषयसुखमिदित्ता हुआ । वे श्रितने असाधारण बुद्धिमती घेसी ही चरमिद्वय, परतुल्यकातरा तथा मांडमरुप्या थी । लैकड़ों देव-प्रतिमाओंकी प्रतिष्ठा ब्राह्मण सम्मान लैकड़ों पोखरे ताळाबका खुद घाना तथा बाकों गरीब दुःखियोंको भक्षणपन वान उन की कीर्तियोंके परिचायक हैं । इस तरहका असाधारण अनुष्ठान बहूजमें कहे नहीं जाई देता । कियावान् ब्राह्मणोंकी रानी देव कर उगहने काशीधामस ३६० ब्राह्मणोंकी बुलवा कर बसाया था । इनकी यस्तीके लिये प्रत्येक पर ५० या ६० हजार रुपये लक्ष किया गया था । काशीधामका दुर्गामन्दिर इहाँ रानी भवानी की कीर्ति है । उनकी समूची सरकीर्तियोंका यहाँ परिचय देना कठिन है ।

रानी भवानीकी तरह उनकी पुत्री तारा भी एक विदुषी, बुद्धिमती और असाधारण दयसावण्यवती थी । पतिको मृत्युके बादसे उन्होंने भी ब्रह्मचर्यका पावन करना आरम्भ किया । उनके रूपजावण्यकी बात सुन कर उस समयके नबाब सिराजुद्दीनक उनको पानेकी कोष्ठि

की थी । रानी भवानीने सिराजुद्दीनकास अपनी पुत्रीकी रक्षा करनेके लिये ताराको महम्मदपुरमें रजां था । धारों भोरसे पिटी राजा सीतारामकी राजधानी अवीव दुर्गम थी । महम्मदपुरके रामसोताके महलमें ताराठाकुरानी रहती थीं । जिस महलमें वे रहती थीं वह महल इस समय नादोरके नायबकी कचहरीके नामस पुकारा जाता है ।

रानी भवानीके समयमें ही सप्तोत्तरमें दुर्गिष्ठ विचारों दिया था । इस समय रानी भवानीने अपनी प्रजाको बधकपसे बचानेके लिये अपना मरा दुग्गा राजकोय कामी कर दिया । उसी दुर्गिष्ठकी प्रचलन भूमिसे प्रजाको हाहाकार कल्ल देव ब्यामयी देवतुल्या भवानी का चित्त बिचलित हो उठा था । इपर वारन देहिद्वस्त का दुर्मयहार, देलमें शिष्यवाचिष्यकी भयनति, अपने प्रभुत्वकी शर्मता भाविकी देल कर उल्लोने अपने इत्तक पुत्र रामकृष्णके होव राज्यका मार दे कर गङ्गाबास किया । जिस दिन रानी भवानीने अपना राज्य छोड़ दिया उसी दिनसे राजसाहीकी भयनति होने लगी ।

महाराज रामदण्ड अपने पिताकी तरह परम धार्मिक और निष्ठावान् थे । बहुत समय देवाभेनामें ही बिताते थे । निरूप जप-नप करते रहनेसे उनके हृदयमें विषय पैरायका म कुर उत्पन्न हुआ । उनके सोमने भोग विद्यासकी सम्पत्ति भति तुष्ण थी । शर्मपियासु राज कर्मचारियोंन राज भनको लूटना आरम्भ किया । इपर कर्मको सरकारका कर बाकी पड़ने लगा । प्रपञ्चको-क कहनेसे राजा साहबको काशीहाटी परगनेको नङ्गाहल के काकीलजूर रायके हाथ बेच देना पडा । सन् १७६६ ई०में पशोहर कलेन्द्रामुक्त हयेबी, मक्तिमपुर, नसिच शाही, सातोर और बल्लो परगनोंकी इज्जतीने मोलाम करा किया । बिररवाधी वा पपका बन्नीबस्त होनेके समय नादोरराज पर अनेध्राकृत अधिक राजकर रजा गया । इपर राजा तो राज कर्ममें मन नहीं लगाते थे इपर राजकर भी बढ़ गया । कलला पद्मापङ्क परगने मोलाम पर बढ़ने लगी । इस तरह उनकी बहुत सम्पत्ति गप हो गई । उनके दीवान तथा पीछेके इजारेदार नङ्गाहलके काकीलजूर रायने बहुत

नभक्ति पराई ली। मैमनसिहके चीवरी, गोबरडालके नुबोप-शाय, कालीशङ्कर और गोपीमोहन ठाकुरने भी उनके कई परगने सारीद लिये थे। इस तरह योगी रामकृष्णके समयमें सारी नभक्ति नष्ट हो गई। अब हाथ में कुछ ही नभक्ति रह गई थी।

महाराज रामकृष्ण इतनी सभक्ति सों देने पर भी दुःखित न हुए। वरं इससे उनका विषयवन्धन और भी दाम होने लगा यह देख कर वे आनन्द प्रकट करने लगे। महायोगी रामकृष्ण आधी रातको श्मशानमें जा कर तान्त्रिक साधना करने थे। भवानोपुरमें उनका यज्ञ-कुण्ड, तपोवन और पञ्चमुण्डो आज भी विद्यमान है। नाटोरराज मठमें और बक्सरमें भी उनका तपस्या-स्थान दिखाई देता है।

वे शिवनाथ और विश्वनाथ नामके दो पुत्रोंको छोड़ कर परलोकगामी हुए। महाराज रामकृष्णके समयमें बहून-नी सभक्ति नष्ट हो चुकी थी, किन्तु देवोत्तर सभक्ति ज्योंकी त्यों थी। ज्येष्ठपुत्र विश्वनाथ पिताका वचा गुचा राजा और शिवनाथ देवोत्तर सभक्ति पा कर संचाहत राजा हुए। इस तरह जेठ पुत्रकी ओरसे बडतरफ और छोटे पुत्रकी ओर छोटतरफकी सृष्टि हुई।

नाटोर-राजवंश इतने दिनों तक शाक था, राजा शिवनाथने अपनी दोनों पत्नियोंके साथ वैष्णवधर्मका आश्रय लिया। किन्तु उनकी तीसरी रानी जयमणि शाक मत त्याग करनेमें असममत हो, वह मुर्शिदाबादमें जा करके बस गई। शिवनाथकी पुत्र पैदा न हुआ। इससे उनके आजानुसार बड़ी रानी कृष्णमणिने सन् १८१४-६ ई०में गोविन्दचन्द्रको गोद लिया। इसके बाद छोटी रानी जयमणिने भी एक गोदका पुत्र ग्रहण किया।

सन् १८३६ ई०में कुछ दिनों तक राजभोग कर गोविन्दचन्द्रने इहलौला संवरण कर ली। उनको मृत्युके बाद गंगा कृष्णमणिने राजकार्यमें मन लगाया। उनके राजमें कई तरहकी सुविधायें थीं।

गोविन्दचन्द्रके आजानुसार उनकी पत्नीने गोविन्दनाथ को गोद लिया। राजा गोविन्दनाथ बड़े विनयो और नम्रस्वभावके थे। फिर उनकी राज्यप्राप्तिके साथ साथ इन माना पुरमें मनमुटाव हो गया। इस पर रानी शिवे

श्वरीने गोदको धारिज करा देनेके लिये सरकारमें एक दरखस्त दी थी। इसमें भी दोनों ओरसे विशेष क्षति हुई थी आगिर प्रिवी कौन्सिलका फैसला अभी सुननेको ही था ऐसे समय गोविन्दनाथकी मृत्यु हो गई। रानी शिवेश्वरीके आजानुसार गोविन्दनाथकी विधवा पत्नीके जगदिन्द्रनाथको गोद लिया। महाराज जगदिन्द्रनाथ एक उच्च शिक्षित व्यक्ति थे। वे बङ्गालके छोटे लाटकी सभाके सदस्य हुए थे। वे ही नाटोरके वर्त्तमान महाराज हैं।

राजा शिवनाथकी भी पुत्र नहीं हुआ। उन्होंने आनन्दनाथको गोद लिया। आनन्दनाथके यत्न करनेसे देवोत्तर सम्पत्तिकी उन्नति हुई। उन्होंने रामपुर बेया-लियाके साधारण पुस्तकालयको दश हजार रुपये एक मूठसे प्रदान किया था। उस पुस्तकालयका नाम भी उन्हींके नाम पर हुआ—“आनन्दनाथ लायब्रेरी।” इस तरहके कामोंसे प्रसन्न हो कर ब्रिटिश सरकारने “राय बहादुर” तथा पीछे सी० आई० ई०को उपाधिसे उन्हें विभूषित किया। उन्होंने सन् १८६६ ई०में चार पुत्र और दो कन्यायें छोड़ कर परलोक गमन किया। इनमें ज्येष्ठ चन्द्रनाथ सुपरिडत और बुद्धिमान थे। उनको भी ब्रिटिश-सरकार द्वारा “राजा बहादुर” तथा फारेन आफिसको “आटची” पद मिले। वे दूसरे और तीसरे सहोदर भ्राता कुमुदनाथ और नगेन्द्रनाथकी अकालमृत्युसे शोक-सन्तप्त हो कर कालक्रवतिल हुए। उनके कनिष्ठ भ्राता योगेन्द्रनाथ कुछ दिनों तक छोटतरफका काम करते थे। याड़े दिनके बाद वे भी एक मात्र पुत्रकी अकाल-मृत्युके शोकसे जर्जरित हो कर मर गये। उनके एक-मात्र पीछे अब जोचित है।

दीवापतियाराज।

दयाराम रायसे दीवापतिया राजवंशकी उत्पत्ति हुई। वे नाटोरराज्यके राजा रामजीवन और रघु-नन्दनके दाहने हाथ थे। दयाराम उतना पढे लिखे न थे, फिर भी उनकी लोकचरित्त जाननेकी अपूर्व क्षमता थी। मनुष्यका चेहरा देख कर ही वे कह देते थे, कि यह कैसा आदमी है और इसका स्वभाव

हेसा है। इसी शक्तिके बल पर एक सामान्य भावना हो कर जो राजा रामजीवन रायक प्रधान मन्त्री हो गये थे। मुर्तिवाचार्थमें रखने समय मन्त्रावली द्वारा लैन्थका सेनापति बना कर उनको सीतारामक विषय युद्ध करनेके लिये भेजा था। उन्होंने कौरवसे राजा सीता राम पराजित कीर करे हुए। इस पर सन्तुष्ट हो कर मन्त्रावली उनको "रायराय" उपाधि और राजा राम जीवनक प्रति प्रतिनिर्देशन स्वरूप कई जमीनदारियां प्रधान की थीं। कह तो कह सकते हैं, कि जमीनी दया रामके सन्तुष्टिके और सन्तुष्टमन्त्रावलीसे राजा रामजीवन तथा द्युभवन प्रमुख सम्पत्तिके अधोभर हुए थे।

द्वारामन पहले परगना भातुडियाके भस्तीगत तरक मन्तुका, जिसे बोगडा और मैमनसिंहके भस्तीगत तरक कुमराह, जिन्हा यदोहरके भस्तीगत तरक मीनकाठना, पायना जिन्हेके भस्तीगत तरक सज्जोमपुर और राजा सीताराम रायक अधिकांश एक तरक प्राप्त किया। इससे इनकी छाबों रुपयेका भाग हो गई। जमसे मन्त्रावली जमीनदारोंको खरीद कर वे भी एक प्रधान जमीनदार और विपुल भयंशकी होने पर जो वे नाटोरराय सरकारका मैसिल्य नहीं छोड़ सकते थे। सोधमें हमकास्तस मनमुखाह हो जाने तथा उनके राज्यपूत होने पर उन्होंने मन्त्रीका काम छोड़ दिया था सही, किन्तु हमकास्तक फिर राजा हाथ हो फिर वे मन्त्री हो गये। इसके बाद रामो मन्त्रावलीक समयमें भी द्वारामन रामोके प्रधान परगनाहोता थे। रामो भवानो भी द्वारामनक बिना परगनाह लिये कोई काम करतो न थी। नाटोरराय पर द्वारामनका इतना प्रमुख था, कि वहाँसे हजारों प्राणियोंके मद्योत्तर सम्पत्ति की गई थी, उनके राजपक्षमें द्वारामनका ही इस्ताहरत और तो क्या, रामो भवानोके बिनाइके सम्भवमें भी द्वारामनका इस्ताहरत दिखाई देता है। सुना जाता है, कि द्वारामनके इस्ताहरत बिना नाटोरराय कोई शान हो प्रामाणिक नहीं माना जाता है।

द्वारामन अपनी उन्नतिके साथसाथ बहुततरी सस्ती लियोंका स्थापन कर गये हैं। महम्मदपुरके राजा सीता राम प्रतिष्ठित हम्प्यकम्पनी मूर्ति का कर अपनी राज

धानीमें उन्होंने प्रतिष्ठित करायो थी। सिवा इसके उन्होंने नै बिनोदगोपाल और हम्प्यकीकी मूर्ति स्थापित कर उनके लिये सेवा पूजाके लिये यथेष्ट सम्पत्ति दान किया था। उन्होंने बहुततरी पाठशाळाएँ स्थापित की थी और उनके लिये वे कक्षा दिया करते थे। सिवा इसके मोगोंके मलकरुद निवारणके लिये कई जगहोंमें गोखरे और वासाह लुखवाये थे और उस स्थानके प्राणियोंको मद्योत्तर सम्पत्ति भा दी थी।

द्वारामनकी मृत्यु होनेके बाद उनके पुत्र जग पाथ रायने छोड़े दिनोंके लिये राजमोग किया। उनके १६ सन्तानोंमें एकमात्र पुत्र प्राणनाथ हो बच गये थे। पिताकी मृत्युके बाद वे ही राजसिंहासन पर बैठे। उन्होंने बड़ी धूमधामसे पिताका श्राद्ध-कार्य सम्पन्न किया था। प्राणनाथको कोई सन्तान न थी। इससे उन्होंने प्रमत्तनाथको नावाङ्कितो मन्त्रावली ही प्राण नाथकी मृत्यु हो गई। इसके बाद उनके संपत्ति कोई भाग पाईसक अधीन नहीं गई। कितनी ही मन्त्रावली और दगाबाज पुरस म प्रेज उनके साथो बन गये। इनके कुमकुसे उनके बचिभ्रए हमेका उपक्रम हो चुका था। किन्तु कुछ ही दिनोंमें इन्धरको छपासे उनकी सैतम्य हुआ। उन्होंने तुरी संगतिको छोड़ सन्तानोंका मन्त्रावली किया। दीपावतियासे रामपुर, बोयासिया और बगुडा जगैयाके एक राजपथका उन्होंने संस्कार करवाया था। इसमें उनका इन्कार रूपा मय हुआ था। दीपावतियाके उन्धेने भ प्रेजो स्कूल तथा रामपुरबोयासिया विद्विस्तालयके लिये उन्होंने एक मूलेसे १ लाख रुपये दान किया था। दीपावतियाकी प्रसन्नकाकी उनके द्वारा ही प्रतिष्ठित हुई हैं। ये देवोंकी सेवाके लिये नित्य एक मन धानक तथा तनुपयोगी भन्त्याम उपकरण और रायको १०१५ प्राणियोंके मोजनका व्यवस्था कर गये हैं। सन् १८५५ ई०की ३०वीं प्रपेडको "राजा महादुर"की उपाधि उनको मिली। ये बड़े शिक्षारी थे। उनके साथ बड़े बड़े भन्तरेज तथा जमींदार निकार लेजने जाया करत थ। उनको पुत्र सन्तान न था। उन्होंने सुधी प्रमथनाथको गोद लिया।

सन् १८९१ ई०में राजा प्रसन्ननाथकी मृत्यु हुई।

कहना है कि आगे १-अक्षरोंके बाद तत्कालीन अमान्य सरकार विच्छेताचारक भ्रष्टगर्त वार्यकपुर भादि ११ महर्षीके राजसूत्रका वस्तुका विचार नहीं हो। इसके बाद ११३१ और ११५८ सालमें ६०० और ७२५ दणया अमा दिवाह देता है। यहा उस समयकी बुबलहायी अमी शाराका वया कर है। सन् १७६३ ई०में यहा बन्धोवस्तक समय यहाँके अमीशर कृष्णनाथ राय-धीधराक साथ वग्हाबस्त हुआ भीर जाइ कानयाजिसन कृष्णनाथस सासना १७६६५३) वस्तु करनका इकराजामा लिखाया। इसक बाद कृष्णनाथको पुन हा न हुआ। मरत समय रामा कयमशरीको गाइ सनेकी इजाजत व गये। उन्हीं राजा हरनाथ रायको गोइ लिया। १८५३ ई०में राज्य भार हरनाथन प्रहृष किया। राजा हरनाथको जेहासे अमी शारा बहुत बड गइ। अहोनि राजसहाको सिया बगुडा शोभाजपुर, भाहइ भादि जिसेव अमा शारो जराइ की। पहलें बुबलहायाका जे शैलकन था उसका हरनाथक अमानमें लीगुना बड गया था। उहाक धर्मसे राजसहामें नूनरा भयाका एक कालेज स्थापित हुआ। इसके सिध ५००० सासना भायका अमी शारो ३ शी था। सिया इसके व धर्मशाला सडक, योगालिया धर्म सभा और साधारणक हितकर कायनि छाळी रुपया दान कर गये थ। सन् १८२१ ई०में उनका मृत्यु हुइ। उनक शी पुन कुमार धनशानाथ राय धीधरा और कुमार लालुतियाथ राय धीधरो वलमान उल्लापिकारा है। दोमो ही बिधोरसाहा और शिस्त है।

ब धर्मभय ।

यारस्य धराधरक पुन येदास्ताथाय है। येदास्तक हा पुन हुप—हरिहर और सज्जीधर। इहाँ सत्साधरक धर्ममें भनम और रामनाथका अम हुआ। भनमस बनिशरराजवश और रामनाथस दिनहायाक राय धीधरो-बंदाकी उत्पत्ति है।

कुनमशयमें बडिहारका नाम कुनमहल लिखा हुआ है। भनम कुनमहलक एक भाइया कुन्नेन कहलात थ। भनमक परात मायास है। मायासक तान पुन हुन — कृष्णरप प्रायकृष्ण भार रामराम। रहुपुरक बाहिरवइ और नागरवम् परगमेका रामा सरवयतीकी बहनक साथ

कृष्णरपका विवाह हुआ। इसा संमयन रामा सरव यतीक राज्यमें दुइ कर प्रायकृष्ण और रामराम उनक प्रधान राजकमबारा बन गये। क्रमगत ये दोनो भाइयनि इस परगने पर अधिकांश अमा लिया। रामरामक वंश शुभ नामा भार प्रायकृष्णक वंश (शु) क मानिक हुप। इन प्रायकृष्णका धना बडिहार-राजपशक नामसे प्रसिध हुआ। ये निराबिन पडाक कुन्नेन है। इसी धर्मके राजेश्वरक साथ महाराज रामकृष्णका कन्याका विवाह हुआ। इस विवाहमें राजेश्वरके बहुत भूमशक्ति प्राप्त हुई। इहाँ राजेश्वर रायक पीत बडिहारक प्रसिध कृष्णरु बहादुर है। य कन्या और सरलशोक पूर्ण कृपापात थ। य प्रैस कुन्नेन धनमें और मानमें सम्मानित थे, येस हो कबि और सुमेवक भा थे। कुउ ही दिन हुआ इनका मृत्यु हुइ है। उपयुक्त बिभिध रामप शक सिया और नो कर छाटे छोटे राजाओंका वास राजमाहाम दिवाह देता है।

राजसिंह (राणा)—मबाडक राजपूत राणा तथा शिगोदिया य गसम्भूत राणा जगन्सिंहक पुन। सं० १७१० धि०में पिताकी मृत्युक बाद राजसिंहने शिखोर मिहासन पर भारोहृष किया। इसी समय बाणाह शाहजहानक पुन भारदुजेब खानाकीसे भयन बूडे बापका कैद कर रिहा क तफ्त पर बैठनेमें यसपात्र हुप। इस पर दाद भादि औरदुजेबक तानो माइ उनक बिकर पत्र हुप। मबाड पति राणा राजसिंहन इस समय शारका साथ दिया। येना कलेमें ईक औरदुजेबने राणाक साथ युध शान दिया। राजपूत फतेहाबादक युद्धसेनमें भारदुजेबक हाथ स परजित हुप। इसी हारक साथ-साथ भनागे शारा और राणाक भायबकका घुमाव नूनरो भारकी हो गया।

इसक कुछ दिन पहलें पाना राजवरोहणक कुछ दिन बाद राणा राजसिंह भ्रष्टमेरक भ्रष्टगर्त मानपुर नगर पर भावमय कर मुयनोंका इरा तथा उनक नगरका मूट कर भयन राज्यमें मोद भाये। इसा घटकास शिगोदियावोर पुनजोवित हा उडे। कस्तू प शाराक साथ इन पर औरदुजेबक अयक मानन हुप। इसी संमयमें राजपूत और

मुगल-संघर्ष पैदा हुआ। इस संघर्षने इन दोनोंको क्रमशः बलहीन बना दिया।

भारत-सम्राट् औरङ्गजेबने रूपनगरराजकी लावण्य-मयी कन्याके रूपसौन्दर्यकी बात सुनी। इस पर उस कन्याके साथ विवाह करनेका प्रस्ताव कर दो हजार सैनिकोंको भेजा। राजपूत-कुलललनाने इस विपमविपद्को सामने देख अपने विपदोद्धारका दूसरा मार्ग न देख राणा राजसिंहका आश्रय लिया। इसके अनुसार रूपनगर-राज्यके पुरोहितने रानीका लिखा एक पत्र ला कर राणाके हाथमें दिया। राणाने पत्र पढ़ कर बड़ा क्रोध प्रकट किया। उन्होंने उस अत्याचारी औरङ्गजेबके हाथसे रानीके उद्धार करनेकी प्रतिज्ञा की।

औरङ्गजेबके व्यवहारसे राणा पहलेसे ही उससे नाराज थे। इधर औरङ्गजेब भी अपनी उस पुरानी शत्रुताका बदला चुकानेका अवसर ढूँढ रहा था। राणा राजसिंह राजपूतकुलकलङ्क दूर करनेके लिये समरोत्साही राजपूत वीरोंको साथ ले कर आरावली पर्वतके पाददेशमें उपस्थित हुए। उन्होंने वहाँसे सेनाओंको रूपनगरकी ओर आगे बढ़ाया और सम्राट्की फौजोंको मार कर भगा दिया। इसके बाद रानीको चित्तोर ले आये। औरङ्गजेबको क्रोधाग्नि भभक उठी, किन्तु राजपूत सेनापति मारवाडपति यशवन्तसिंह और जयपुरनरेश जयसिंहके डरसे औरङ्गजेब उस अग्निमें लकड़ी डाल न सका। इन लोगोंको स्थानान्तरित करनेके उद्योगसे यशवन्तसिंहको काबुल राज्यमें और जयसिंहको दक्षिणात्यको भेज दिया।

यशवन्तसिंह और जयसिंह देखो।

मारवाडपतिका निधनसाधन करके ही वह शान्त न हुआ, किन्तु वह यशवन्तसिंहके छोटे छोटे कुमारोंको कैद कर लेनेकी चेष्टा करने लगा। राजमाता आने पुत्रोंकी रक्षाका दूसरा उपाय न देख राणा राजसिंहके शरणागत हुई। राणाके आज्ञानुसार युवराज अजितसिंहने मेवाडकी ओर यात्रा की। राहमें मुगल-फौजोंने उनको घेर लिया। राजपूत बालकोंके जरूररक्षक सैनिकोंने विशेष विस्मयके साथ राजपूतोंकी रक्षा की।

राणा राजसिंहने औरङ्गजेबके इस कुन्यवहारकी बात सुन उसको एक पत्र लिख भेजा। पहले रूपनगरकी राजकुमारोका आश्रयदान और मुगल-विरुद्ध युद्ध करनेके अपराधसे सम्राट् राजसिंह पर विशेष क्रुद्ध हुआ था। इस वार मुगलोंके शत्रु मारवाड राजकुमारको आश्रयदान और उसी कारणसे इस तरहके पत्र भेजनेसे सम्राट्का धैर्य छूट गया। उसने युद्धके लिये तैयार रहनेके लिये अपनी फौजोंको हुषम दिया।

इधर राणा राजसिंहने युद्ध अवश्यम्भावी जान कर आरावली पहाड़ी पर अपने राजपूत सैनिकोंको एकत्र कर रखा और वे राज्य और जातीय सम्मान रक्षाके निमित्त राजपूत वीरोंको उत्तेजित करने लगे। स्वयं राणा तथा उनके जयसिंह और भीमसिंह नामक दोनों पुत्र आरावली शिखर पर सेना रख कर विपक्षियोंके आगमनकी प्रतीक्षा करने लगे। यहाँ जान कर, कि मुगलोंके साथ भयङ्कर युद्ध होगा राणा राजसिंहने राजधानीको खाली कर पर्वतोंमें आश्रय लिया था।

सौभाग्यक्रमसे मुगल सैन्यने सकटमय गिरिपथ परित्याग कर दोआबी नामक स्थानमें आ कर उदयसागर तीर पर पडाव डाला। तैयार खाके आज्ञानुसार शाहजादा अकबरने उदयपुर राजधानी पर आक्रमण किया। वहाँ था ही कौन, उन्होंने बेरोक-टोक नगर पर अधिकार स्थापित कर लिया। मुगलोंके हृदयमें आनन्दका स्रोत प्रवाहित होने लगा। मुगलोंने शत्रुओंका आना असमय समझ निडर भावसे मौजसे दिन विताना आरम्भ किया। ऐसे समय अचानक युवराज जयसिंह शत्रुदल पर दूट पड़े। इससे मुगलोंमें घबराहट उपस्थित हुई। मागी हुई मुगल सेनाके गोलकुंडा पहुंचते न पहुंचते उसका रास्ता रोक दिया गया। मुगल-सेना इस प्रकार मोल सैन्य द्वारा अवरुद्ध हो किंकर्तव्यविमूढ़ हुई। पीछेसे जयसिंहने भी मुगलोंके सैन्यका द्वार बन्द कर रखा था। इस तरह राजपूतोंसे घिर कर मुगल सैन्य भूखों मरने लगा। ऐसी अवस्थामें युवराज अकबरने आत्मसमर्पण करना निश्चय किया। ऐसे समय मुगलोंकी दुर्दशा

देख कर बहार इत्य अर्थात्सिंहमित्रप्यार पदाङ्गी राहसे युधराजको माग जानेका मौका दिया ।

सम्राट्ने युधराजका देना शोकनीव समाचार पा कर उसक अन्तर्की कामनास विज्ञावर जाँकी सैन्यके साथ विसुदा नामक पदाङ्गीराहसे जानेका हुकम दिया । पढे कोइ भी उसको गति रोक न सका । किन्तु जब मुगल मैना दुर्गम गिरिपथमें पहुच गइ तब रूपनगरके राजा विक्रम घोसामाङ्गि और गोपीनाथ राठौर नामके राजपूतोंने भीमशेखर आक्रमण कर मुगलको का नाश कर दिया । इस आक्रमणके फलसे राजपूतोंको बहुतेरे भावश्यकोय सामान हाथ लगे ।

सम्राट् औरङ्गजेब आश्रिमके साथ रोधाको नामक स्थानमें विज्ञावर लौकी रणजको समाचारको प्रतीक्षा कर रहे थे । ऐसे समय विजयते राजपूतोंत सभ्राट् पर आक्रमण कर दिया । विजयत वीर दुर्गादासम अपने राठौर सैन्यके साथ इस तरह भीमशेखर सभ्राट् पर आक्रमण किया, कि सभ्राट् लय उस वेगको न सह सकनेके कारण अपनी हार मान कर भाग गये । सन् १६८२ ई०के मार्च महीनेमें यह युद्ध हुआ था ।

पराजित मुगल-सभ्राट् अपने बचो खुशी सेनाको छे चितौरकी बहाराजीकी निकट पहुचि तथो अपने पुत्र मुभाजिमको वासिष्णवत्यसे छोर जानेका हुकम भेजा । इस समय मुभाजिम महाराष्ट्र-कुचपति शिवाजीके साथ युद्धमें फँसा था । चिकरींयचिमुद्द सभ्राट्को उस समय शिवाजीका युद्ध बन्द कर राजपूतोंस दुर्ग मान हाजिका अन्तर करना उचित मान्य हुआ । अतएव पिताके हुकम पाते ही मुभाजिम राजस्थान लौटने पर बाध्य हुए ।

इपर जयमल्लके बंशपर सुबलदासने सैन्यको छे कर अजमेरके मुगल-सैन्यके साथ सभ्राट्का मित्रता बन्द कर देनेके उद्देश्यसे गह रोक दी । निरुपाय सभ्राट् अपने पुत्र भाजिम और भकर पर युद्धका भार सौंप कर प्राय छे भागे शरीर रक्षा सैनिकोंके साथ अजमेर गये और सुबल दासके विरुद्ध बाह्य हतार सैनिकोंको छे कर बहेसा जाँ की मानका हुकम दिया । मारवाड़ और राठौर कीजें

पुलकाल नामक स्थानमें मुगलोंको पराजित किया । शक्तिमत्त और बहादुरमय युवाय सत्ता और गर ।

जिस समय राणा राजसिंह सहयोगी राजपूत सरदारोंके साहाय्यसे मुगलोंको हरा कर ब्राह्मण कर रहे थे, उस समय उनक दुसरे पुत्र भीमसिंह अथ समय मर न कर गुजरात शरीर, वीरनगर सिद्धपुर, मयूरभ्य आदि नगरीको जोत और लूट कर पिताके हुकमसे छोर प्राये ।

एचर क्याय शाह भी मुगलोंके विरुद्ध बागी हो उठे । ये सभ्राट्के राजल पितायके एक कमचारी थे । इहाँसे नर्मदा और वेतया तक समूचे भूभाग पर आक्रमण किया । उन्होंने जाङ्गपुर हीवास, मायु, उच्चयिनी और चण्डी आदि प्रदेशको जोत और लूट कर किञ्च पर चला कहलाई । पित्रपोशासस उच्च क्यायशाह मेवाड़ के युधराजके साथ मिल कर चितौरके निकट सभ्राट् पुत्र भाजिम पर आक्रमण करनेके छिये अजमेर हुए । जिधौराज्य और राठौरसैन्य मेवाड़के सामन्तरूपसे नियुक्त हो कर राजपूतोंके वीरत्वको पराकाष्ठा दिखा दी । युद्धमें भाजिम द्वारा और भागा । सभ्राट्के पराजित सैन्यके भागत ही मेवारके जातीय समरका भव सात हुआ ।

इसके बाद राणा राजसिंहने मारवाड़के नाबाजिप राजा भजित्सिंहके साथेकी रक्षाक सिध मारवाड़ राजसेनाक साथ अपने सेना मिमा कर मनोरा पर आक्रमण कर दिया । यह स्थान गहवार प्रदेशमें है । मेवाड़ कुलखना बजित्को माता भी इस युद्धमें मर्मि छित हो कर समराज्यमें उतर पड़ी ।

राणा राजसिंहने युद्धमें अयजाम करनेके बाद मुगल सभ्राट् औरङ्गजेबको सिहासबन्धुत करनेके छिये कुमार भकरके साथ गुप्तरूपसे साजित की । विजयते राजपूत बाहिनिया शुभ क्षणमें अ कर भकरके साथ भा मिली । सभ्राट्को इनका पता लय गया । उसने इस साजिमको असफल करनेके छिये तुरन्त ही अपने पुत्र भकरके पास एक पत्र लिखा । गुप्तचरने सभ्राट्के भादेशानुसार यह पत्र राजपूत-सैन्यके अधिनयक दुर्गा दासके भेजमें छिय कर के छ दिया । दुर्गादास पत्रको पढ़ कर उसको मर्मको समझ गये । इन पत्रमें बार युद्ध

के समय अकबरके राजपूत-मन्त्रको पीछेमे आक्रमण करनेकी बात लिखी थी। यह समाचार पा कर राजपूतोंने अकबरका पक्ष छोड़ दिया। इधर उसके सहयोगी तैयार खाने सम्राट् को हत्या करने जा कर अपने ही प्राण गंवां दिया। इस समय मुआज्जम और आजमने सैन्यके साथ आ कर औरङ्गजेबको विपद्से उद्धार किया था। राजपूतोंने औरङ्गजेबकी कुटिलताका लक्ष्य कर लिया। इस समय अकबरको निर्दोषिताको समझ कर उसको मदद देनेके लिये वे तय्यार हुए। किन्तु पिताके मयसे अकबर फारस भाग गया। वीर दुर्गादास उसको पालघाट तक पहुँचा आये।

इस तरह राजपूतों द्वारा पराजित और महाराष्ट्र शत्रु शम्भाजाके निकट अकबरके जानेकी आशङ्कासे सम्राट् औरङ्गजेब राजसिंहके साथ सन्धि करने पर बाध्य हुए। सम्राट्के हुक्मसे दिल्लीके अशोकके एक राजपूत कर्मचारीने राजसिंहके यहाँ जा कर सन्धिके प्रस्ताव किया। उन्होने कहा—यदि दूसरा कोई सन्धिके प्रस्ताव करे, तो सम्राट् उस पर राजी होंगे। इसके अनुसार शूरसिंहने उपयुक्त राजकर्मचारी पद्मसिंहके द्वारा सन्धिके पैगाम भेजा। सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर कर सम्राट्ने चित्तोर और मारवाडके अधीन प्रदेशोंको छोड़ दिया। आहत राणा राजसिंहने यह सवाद सुननेके पहले ही सन् १६६१ ई०में यह लोक परित्याग किया। उनके द्वारा खुदवाया राजसमुन्द्र नामक जलाशय आज भी उनकी कीर्तिके गुण गान करता है।

राजसिंह—चौरवाडकी छवीसवां पीढ़ीका एक सरदार (१४४५ स०) राजा लक्ष्मणसिंहके पुत्र।

राजसिंह—गडादेशके एक राजा।

राजसिंह—गाङ्गवंशीयके कलिङ्गराज इन्द्रवर्माका दूसरा नाम।

राजसिंह (दूसरा राणा)—मेवाडके एक राजा। इनके पिताका नाम था राणा प्रताप (दूसरे)। ये सन् १७५२ ई०में मेवाडकी गद्दी पर बैठे। कुमार राजसिंह अम्बर राज जयसिंहके नाती थे। ये पिताकी मृत्युके बाद राजछत्तके नीचे आये। नाममात्र राजा रह कर इन्होंने

सात वर्ष तक राजत्व किया। इस समय स० १८१२ में राजा बहादुर, स० १८२३ में मल्हारराव होकर और विठ्ठल राव तथा स० १८१४में राणाजी बुर्चिराने मेवाडकी लूटा। सिवा इसके स० १८१३में सदाशिव राव, गोविन्द राव, फन्होजी यादव नामक महा राणनेताओंने तीन बार मेवाडकी लूट कर घनापहरण किया और इसी धनसे युद्धका व्यय-निर्वाह किया। इस तरह नाना अत्याचारसे मेवाड जर्जर और धनहीन हो गया। राणाने राठोरजातीयकी अधिनायक-कन्याके साथ विवाह कर अपनी हीनावस्थाको बदलना चाहा। वे इस समय ब्राह्मण करसंग्राहकोंसे अर्थसाहाय्य करनेकी प्रार्थना करने पर बाध्य हुए थे। वे अकालकाल कवलित हुए। इसके बाद स० १७६२ ई०में अरिसिंहने मेवाडकी गद्दी पर आरोहण किया।

राजसिंह—विक्रमपट्टन (उज्जयिनी) के एक राजा। उज्जयिनीके राजा गजसिंहके पुत्र। इनके दरबारी पण्डित कृष्णधूर्जटिने सन् १७१४ ई०में सिद्धान्तचन्द्रोदय नामक एक ग्रन्थकी रचना की थी।

राजसिंह—एक हिन्दू राजा। इनकी आज्ञासे महादेव पण्डितने राजसिंह सुधासिधु नामक ग्रन्थकी रचना की थी।

राजसिंह—(कच्छवाह) राजा उपाधिधारी एक राजपूत-सरदार, राजा विहारीमल्लके भतीजे और आरकरणके पुत्र। ये सम्राट् अकबर और जहाँगीरके अधीन सेना-नायकका काम करते थे। सन् १६१५ ई०में इनकी मृत्यु हुई।

राजसिंहासन (स० पु०) राजाके बैठनेका सिंहासन, राजगद्दी।

राजसिक (स० त्रि०) रजोगुणसे उत्पन्न, राजस।

राजसो (स० स्त्री०) रजस इयमिते, रजस्-अण्-डोप्। १ दुर्गा। (त्रि० स्त्री०) २ रजोगुणसम्बन्धिनो, जिसमें रजोगुणकी प्रधानता हो।

राजसी (हि० वि०) राजाके योग्य बहुमूल्य या भडकीला, राजाओंकी-सी शानवाला।

राजसुख (स० स्त्री०) राजाका सुख।

राजसुत (स० पु०) राज्ञः सुतः। राजपुत्र, राजाका लड़का।

राजसुता (सं० स्त्री०) राजकन्या, राजाकी लड़की ।
 राजसुन्दरगणि (सं० पु०) एक जैन परमाचार्य ।
 राजसुन्दरी—गाङ्गाबंगोय सुयमिध नरपति प्रथम राजराज
 की मन्थिनी । ये राजा राजेन्द्रवन्द्यकी कन्या और अन्नल
 पर्मा षोडशगुणेशकी माता थीं ।
 राजसू (सं० लि०) राजकर्ता, राजकारक ।
 रासु (सं० पु०) राजपुत्र, राजाका लड़का ।
 राजसूय (सं० पु०) राजा तत्कालका सोमः सूयते त्वि, सू
 मन्थिभरये षयप् राजा सोतव्या राजा या इह सूयते इति
 काशिका (राजदण्डन्यायि । वा ११।१।१४) इति निपातनात्
 शीर्षः । राजकर्तव्यं यन्त्रिशेषः । पद्व्याप—नृपाचर
 क्तुराज, क्तुत्तम । (उभरत्नलक्ष्मी)

अमरचरितने इस शब्दको श्लेषकित्ति छिन्ना है । पु
 और श्लेष इन दोनों कित्ती में इस शब्दका बहुत प्रयोग
 देखा जाता है ।

अन्नस राजा ही इस यज्ञको कर सकते हैं दूसरैका
 अधिकार नहीं । राजा इस यज्ञको पूरा कर सजा
 उपाधिधारण करते हैं । शतपथब्राह्मणमें इस यज्ञका
 विवरण दिया है तथा है । भावस्तम्भधीतसूत्रमें लिखा
 है, कि राजा अर्गकी कामनासे इस यज्ञका अनुष्ठान
 करते हैं ।

“राजा सर्वकामा सम्भवेन भवेत्” (भाष्यत्वन्भोतव०)

शतपथब्राह्मणक मतसे इस यज्ञका प्रधान भङ्ग
 इष्टि है, पशु, सोम और श्वेदाहाम; आगे पवित्र नामक
 सोमयाग, पीछे अग्निपेषनीय याग, इनके बाद इन्द्रयाग
 याग और केशवपनीय इसक बाद इन्द्रिय, फिर द्विराज
 और अन्तमें इन्द्रपुति नामक याग । इस भङ्ग अमरि
 का नाम राजसूय यज्ञ है ।

राजसूय और वाजपेय इन दो यज्ञों का एक आदमी
 नहीं कर सकता । भगवद्गीतेके वैतागसूत्रमें सप्तम
 अध्यायमें इस यज्ञके संक्षिप्तरूपसे विस्तार किया है “वीरी
 पूर्णमाके पहले पवित्र नामक सोमयाग, मासात्तरमें
 इष्ट संसूय नामक कार्य, मासीपूर्णिमामें अग्निपेषनीय
 याग, मरुत्त्वतोय नामक कार्यके बाद इहस्पति सब
 नामक याग, हविर्धान नामक मन्त्रयुक्त सम्भुष व्याघ्र
 चर्म (वाघाम्बर) स्थापन भादि ।”

इस राजसूययज्ञमें द्वाविहित हाम और बलिब्रामादि
 द्वारा देवताओंकी पूजा, घृतस्त्रिधा त्रिग्विजय और शुभा
 शेफीय उपाख्यान सुनना आदिसे । यह उपाख्यान
 ब्राह्मिदम् है । इस यागमें पञ्चविध सोमयाग भादि कर
 अनुष्ठान करने पड़ते हैं । अन्तः इस यज्ञक अनुष्ठानमें समय
 बहुत लम्बा है । पवित्र नामक सोमयाग इसका प्रथम
 भङ्ग है । इस सोमयागके पधाविहित सम्भल होमे पर
 आनुर्गोस्य वाय करना पड़ता है । इसके बाद पिका
 नामक इष्टिका अनुष्ठान और भरसि नामक होम करना
 विधिसंगत है । ये सब छोटे छोटे एक एक दल हैं ।
 इसके बाद अग्निपेषनीय नामक सोमयागानुष्ठान करना
 होता है । इस दिन ससुद्र, मय नरो पुष्य सरोवर, पुष्य
 इन्द्र (भाङ्ग) भादि पवित्र यज्ञोंको का कर उससे आर
 तरहक काष्ठमय पाखीका मन्त्रपाठपूर्वक प्रपूरित करना
 पड़ता है । पलाश, भीतुम्बर, पोपल और वट आर तरह
 की लकड़ियोंका पात्र होना चाहिये । यज्ञपूर्ण क्लृप्ता
 का आनुर्गोस्य समाक आरों और स्थापन करना चाहिये ।

समाके मध्यमें शैत या भीतुम्बर लकड़ियोंका मञ्ज होना
 चाहिये । इस मञ्जको व्याघ्रचर्मसे मड़ देना चाहिये । इस
 पर सामिका पीड़ा या शीकी रख कर उस पर सहक
 छिद्रकासा सोनेका एक पत्रा स्थापन करना चाहिये ।

इसके बाद ब्रह्मा पुरोहित (मतीविशेष) यज्ञमानको
 अन्वोत्र मन्त्रयुक्त बाहर ला कर कई मन्त्रोंका पाठ करना
 चाहिये । पधाविधान मन्त्रपाठ समाप्त होमे पर ब्रह्मा
 समाह्वय क्षत्रिय भादि व्यक्तिसमूहकी सम्बोधन कर कहते
 हैं—“भोः मारुताः नयं वा सर्वेषां राजा सोम भस्मार्क
 ब्राह्मणार्ता राजा” हे मारुतवासिने ! ये आप लोगोंके
 राजा हैं । किन्तु सोम हम समा ब्राह्मणोंके राजा है ।

पीछे त्रिग्विजयकी इच्छा राजा प्रकट करते हैं । उस
 समय सारे श्रुत्युक्त एकल हो कर यज्ञमानके सर्वात्त पक्षा
 और जयाजोवाहसूयक वैदिक कार्योंका अनुष्ठान करने
 हैं । पहले अग्नि भादि देवतानाक उद्देश्य होम, इसके
 बाद इनका प्रार्थना एवं आशीर्वाद और देवताओंके मय
 स्मृतानुषंगक कई वेदमन्त्र जप करना पड़ता है ।

इसके बाद यज्ञमान पक्षीके साथ पूर्वोत्सिद्धि स्नान
 करनेवाले पीड़े पर बैठता है । पाछे मध्यम्य भादि सभी

एकत्र हो कर पूर्वोक्त जलपूर्ण पात्र ले कर सहज छिद्र अभिषेकपात्र द्वारा उनकी अभिषेक करते रहते हैं। यथा-विधान अभिषेक समाप्त होने पर राजा अपने विमनके अनुसार बस्त्र, माल्य और आभरणसे भूषित हो यदि शत्रु हो, तो उसको पराजय कर अति समारोहके साथ फिर समागृहमें प्रवेश करते हैं। शत्रु न रहने पर युद्ध-यात्राकी आवश्यकता नहीं।

इसके बाद समाके चारों ओर पंक्तिरूपसे मन्त्र बनाये जाते हैं। बीचमें एक ऊँचा पीढा रखा जाता है। राजा इस सुवर्णमञ्च पर बैठते हैं। उस समय सभी राजाकी स्तुति और गुणगान करते हैं। इस समय जुआ खेलनेका काम होता है।

यह राजसूययज्ञ पवित्र नामक सोमयाग द्वारा आरंभ कर सौत्रामणि नामक और एक याग द्वारा समाप्त किया जाता है। साधारण सोमयागकी अपेक्षा इसमें विशेष यह है, कि अश्विनीकुमार, सरस्वती और इन्द्र इसके प्रधान देवता हैं। ऋग्वेदनिर्मित तीन सोमपात्र और मृत्तिका निर्मित तीन सुरापात्र रखे जाते हैं।

प्राचीनकालमें राजा इस यज्ञका अनुष्ठान कर अपने कृतकार्य तथा सम्राट् समझते थे। इस यज्ञमें अर्घ्या-हरण, समागत व्यक्तियोंका सत्कार, राजार्हणा आदि छोटे छोटे प्रत्यङ्ग भी हैं। इन सब अनुष्ठानोंकी भी विधि है। महाराज युधिष्ठिरने राजसूय यज्ञका अनुष्ठान किया था। उसका विशेष विवरण महाभारतके समापर्वमें लिखा है।

राजसूय यज्ञका मन्त्रादि वाजसनेय-संहिताके ६ अध्यायकी ३५ कण्डिकासे आरम्भ कर १० अध्यायमें संपूर्ण हुआ है।

राजसूयिक (सं० त्रि०) राजसूययज्ञसम्बन्धी।

राजसूयिन् (सं० पु०) राजसूय यज्ञ करनेवाला पुरोहित।

राजसूयेष्टि (सं० स्त्री०) राजसूययज्ञ।

राजसेन—रघुसारासूतके प्रणेता।

राजसेवक (सं० पु०) राजः सेवकः। राजकासेवक, राजाकी सेवा करनेवाला भृत्य।

राजसेवा (सं० स्त्री०) राजः सेवा। राजाकी सेवा।

राजसूयिन् (सं० पु०) राजभृत्य, राजाका अनुचर।

राजस्कन्ध (सं० पु०) राजः शोभाशाली स्कन्धो यस्य। घोटक, घोडा।

राजस्तम्ब (सं० पु०) एक ऋषिका नाम।

राजस्तम्बायन (सं० पु०) राजस्तम्बके गोत्रमें उत्पन्न पुरुष।

राजरतम्बि (सं० पु०) राजस्तम्बके गोत्रमें उत्पन्न पुरुष।

राजस्त्री (सं० स्त्री०) रानो, राजमहिषी।

राजस्थलक (सं० त्रि०) एक प्राचीन स्त्रीका नाम।

(पा० ४१११२०)

राजस्थली (सं० स्त्री०) एक प्राचीन जनपदका नाम।

राजस्थान (सं० पु०) राजपूताना।

विशेष विवरण राजपूताना शब्दमें देखो।

राजस्थानिक (सं० पु०) एक उच्च राजकीय पद, हाकिम। गुप्तोंके समय इस शब्दका विशेष प्रचार था।

राजस्थानीय (सं० पु०) राजस्थानिक वेत्ती।

राजस्र (सं० पु० स्त्री०) राजे देयं स्वधनं । १ राजभन, भूमि आदिका यह कर जो राजाको दिया जाय। २ किसी राजा या राज्यकी वार्षिक आय जो मालगुजारी, आवकारी, इन्कम टैक्स, कस्टम्स, यूरोपी आदि करोंस होती हो; मालगुजारी।

राजस्रर्ण (सं० पु०) स्वर्णाना घुस्तूराणा राजा राजदन्तादित्वात् परनिपातः। राजघुस्तूरक, राजधतूरा।

राजस्वामिन् (सं० पु०) विष्णु।

राजहंस (सं० पु०) हंसाना राजा श्रेष्ठत्वात् राजदन्तादित्वात् परनिपातः। १ हंसविशेष, एक प्रकारका हंस जिसे सोना पक्षी भी कहते हैं। यह प्रायः झुण्ड बाध कर उड़ता है और भौलोंके क्रिनारे रहता है। इसके अनेक भेद हैं। इसके पैर और चोंच लाल रंगकी होती है। यह अगहन पूसमें उत्तरीय भारतमें उत्तरके ठण्डे प्रदेशोंसे आता है। 'हंस' शब्दमें विस्तृत विवरण देखो। २ कलहंस। ३ नृपोत्तम। ४ मगधराजभेद।

राजहंस उपाध्याय—नागभट्टालङ्कारवृत्तिके प्रणेता। ये जिनतिलक सूरिके शिष्य तथा जिनप्रभा सूरिके शिष्य थे।

राजहत्या (सं० स्त्री०) राजाका निधन।

राजहर्म्य (सं० स्त्री०) राजप्रासाद।

राजहर्षण्य (स० झी०) राजानमपि हर्षयतीति ह्यपि च
 ल्यु । तगरपुत्र्य ।
 राजहस्तित् (स० पु०) राजो हस्ती । राजगज, राजाका
 हाथो । पर्याय—मारोत्र यात्रक गज, महोत्कृत ।
 (राजपत्नी)
 राजहार (स० पु०) सोमरस माहृत्यकारो, यह पुरुष
 जो यज्ञोंमें सोमरस छाता है ।
 राजहासाहू (स० पु०) राजानमपि हासयतीति ह्यपि च
 षुक् । मरुत्यविशेष, एक प्रकारको मछली जिस कतला
 कहते हैं । पर्याय—कातद, कातम राजोप ।
 राजह्वय (स० पु०) राजसर्पय राह ।
 राजा (स० पु०) राज कनिन् । १ मरपति । विशेष विवरण
 राजलक्ष्यमें देखा । २ छिक्किनीपुत्र, लफकिक्की नामक
 भास । ३ मेमपात्र मिय स्थिति ।
 राजा कुम्भरामन्- मद्रास-प्रदेशक तिल्लिवह्ता जिब्बेके अन्त
 र्गत एक नगर । यह अक्षा० ६ ३३ ३० उ० तथा देशा०
 ३३ ३० ३० पू०के मध्य विल्लुत है । यहाँ स्थानीय
 राज्यका विल्लुत कारोबार है ।
 राजाकोशक (स० जि०) राजाको गाडो इन या कोसने-
 वाहक, राजाको अनुचित अर्थोंमें आमोचना करनेवाला ।
 कीटिष्यमि इसके मिये क्रोम उवाङ्गुनैका दंड लिखा है ।
 राजागि (स० पु०) राजाका कोप ।
 राजाङ्गन (स० झी०) १ राजासासदाका भागन ।
 २ राजगृह ।
 राजाङ्गण—पञ्जाबप्रदेशक साङ्गेर त्रिजातर्गत एक नगर ।
 विन्न वारिद्वोरुध पात्र नगरके पास हो कर बहता है,
 इसीमें स्थानीय वाणिज्यके बड़े सुविधा होता है ।
 राजाङ्गा (स० लो०) राजा माङ्गा । राजाकी माङ्गा,
 राजादेश ।
 राजातन (स० पु०) राजानं मततीति मत सातत्यगमने
 (वागुत्पम्पनापि) । उच्य ५७८ इति युच । पिपात्रपुत्र,
 चिरौञ्जीका पेट् ।
 राजातनकलक (स० पु०) राजा धोरामचन्द्रकी बंशगीति ।
 राजात्यापर्वक (स० पु०) राजाचर्त् साङ्गधत् परधत् ।
 राजादन (स० झी०) राजमरिधत् इति अद् मङ्गणे कर्मणि
 षुद् । १ क्षौरिका, चिरनी । २ पिपात्र, चिरौञ्जी ।
 ३ किशुक, टेम् ।

राजादनकल (स० पु०) क्षौरिणी पुत्र, चिरनीका पेट् ।
 राजादनी (स० लो०) क्षौरिणी चिरनी । महाराष्ट्रमें—
 रायणी बम्बईमें—केर्ण, तामिळमें—पुह । इसका
 गुण—मपुद, पित्तघ्न, गुरु, तपेण, तृष्य, स्थोत्यकद,
 स्निग्ध भीर मेहनाशक ।
 राजाद्रि (स० पु०) १ राजगिरि । २ अङ्गिद्वमेह, एक प्रकार
 का अदरक ।
 राजाधिचारित् (स० पु०) विचारपति, यह जो म्यायामय
 में बैठ कर म्याय करता हो ।
 राजाधिष्ठ (स० पु०) १ विचारपति । (जि०) २ जो
 राजाके अधिकारमें भाग्य हो ।
 राजाधिप (स० पु०) सूर जातिका एक क्षत्रिय वीर ।
 राजाधिदेवा (स० स्त्री०) शूरसेनकी एक कन्याका नाम ।
 राजाधिराम (स० पु०) राजाओंका राजा शङ्करशाह ।
 राजाधिष्ठान (स० झी०) १ राजधानी । २ वह नगर जहाँ
 राजाका मासाह हो ।
 राजाध्वन् (स० पु०) राजा मध्या । राजपथ, भीड़ो
 सङ्क ।
 राजानक (स० व०) क्षुद्रराज, छोटा राजा ।
 राजानुजीविन् (स० जि०) राजा अनुजीवी । राजीय
 जीवी, जो राजकार्य करके अपनी जीविका चलाते हैं ।
 "वपानुर्वास्तिब् स्थान्मनो राजानुजीविना ।
 तथा व कर्मिष्यामि निनाथ सर्वथा मम ॥"
 (मत्स्यपु० २१६ म०)
 राजास (स० झी०) राजयोग्यं अन्नम्, अन्नानां राजा इति
 वा । १ अन्नप्रदेशीय शालिधिरौप एक प्रकारका शाब्द
 पान वा अन्नप्रदेशमें इत्यन्न होता है । पर्याय—गुपाध,
 राजार्ह, दीर्घशुक्क, धाम्यमेष्ठ, राजधाम्य, रासेष्ट, दीर्घ
 कुरक । इसका गुण—जिदोपघ्न, सुस्निग्ध, मपुद, अणु,
 दीपन, बलकारक, पच्य, क्षान्ति भीर दीर्घवर्द्धक ।
 (उज्जि०) राजा धन्तं । २ राजकामिक अन्न, राजाका
 अन्न । राजान्न भोजन नहीं करना चाहिए । मनुमें लिखा
 है, कि राजान्न भोजन करनेसे तेजको हानी होती है ।
 "राजानं तेज मादधे शूद्रानं ब्रह्मर्षिभ्यम् ।
 मनुः शुभ्रार्थपरम ब्रह्मर्षिभ्यर्क्षिता ॥"
 (मनु ५।१।८)

राजापल्लेयम्—मद्रासप्रदेशके तिमनेवल्ली जिलेके श्रीविह्लि-
पनुर तालुकके अन्तर्गत एक नगर ।

राजापुर—१ बम्बईप्रदेशके रत्नागिरि जिलेका एक उप-
विभाग । यह अक्षा० १६°३०' से १६°५५' ३० तथा देशा०
७३°१८' से ७३° ५२' पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरि-
माण ६१६ वर्गमील है । इसमें राजापुर नामक एक शहर
और १८ ग्राम लगते हैं । जनसंख्या डेढ़ लाखसे ऊपर है ।
इसके उत्तरमें रत्नागिरि और सङ्गमेश्वर, पूर्वमें कोवहा-
पुर, दक्षिणमें धिजय दुर्गकी खांडी और पश्चिममें अरव-
उपसागर है । सह्याद्रिशैलका अनसकुडा और कार्जिदा
नामक गिरिसङ्घट इस उपविभागमें अवस्थित है । जैता-
पुर बन्दर यहाँका प्रधान वाणिज्यस्थान है ।

२ उक्त उपविभागका एक शहर । यह अक्षा० १६°
३४' ३० तथा देशा० ७३° ३१' पू०के मध्य अवस्थित है ।
जनसंख्या ५ हजारसे ऊपर है । कोङ्कण राज्यके मध्य
ऐसा प्राचीन समृद्धिसम्पन्न नगर दूसरा देखनेमें नहीं
आता । अंगरेज-वणिक्-सम्प्रदायका प्रस्तरनिर्मित
प्राचीन भवन अभी गद्यमैण्डके दीवानखानेमें परिणत हो
गया है । नगरसे डेढ़ मील दूर कोदावली नदीके बांधसे
एक बड़ा बांध तैयार किया गया है । १३१२ ई०में जब
मुसलमानों सेनाने इस नगरको जीता उस समय यह
नगर जिलेका प्रधान नगर समझा जाता था । १६६०-
६१ और १६७० ई०में महाराष्ट्रपति शिवाजीने इन नगर
और अङ्गरेजकी कोठीको लूटा था । १७१३ ई०में अंग्रिया
के हाथ यहाँका शासनभार सौंपा गया । १७५६ ई०में
पेशवाने फिरसे यह अंग्रियासे छीन लिया । १८१८ ई०से
यह अंगरेजोंके दखलमें आया है । शहरमें दो सव जजकी
अदालत, दो अस्पताल और ८ स्कूल हैं ।

राजापुर—युक्तप्रदेशके बाँदा जिलान्तर्गत मौ तहसीलका
एक शहर । यह अक्षा० २५° २३' ३० तथा देशा० ८१°
६' पू० यमुनाके किनारे अवस्थित है । जनसंख्या छह
हजारके करीब है । रामायण प्रणेता धर्मात्मा तुलसीदास-
जीने अकबरशाहके समय इस नगरको बसाया । उन्होंने
यहाँ एक मन्दिरकी भी प्रतिष्ठा की थी । उनका साधु
चरित्र देव उस समय कितने लोग यहाँ आ कर वस गये
थे । उनका आदेश था, कि देवताका प्रस्तरनिर्मित गर्भ-

पीठ वा मन्दिर छोड़ कर यहाँ पक्काका मकान और कोई
भी नहीं बनवा सकता । यहाँके अधिवासी आज भी
उस आदेशका पालन करते आ रहे हैं । यहाँ तक, कि
धनी व्यक्ति भी पक्काका मकान नहीं बनवा सकते ।

यहाँ रुई का अच्छा कारवार होता है । वह माल
नांव द्वारा इलाहाबाद और कभी कभी कानपुर तक भी
लाया जाता है । यहाँके बहुतसे महाजनोंके करबी चले
जानेसे वाणिज्यमें भारी धक्का पहुँचा है ।

राजाभियोग (सं० पु०) राजाका अपनी प्रजा पर दवाब
डाल कर उसकी इच्छा न रहने पर भी उसे कोई काम
करनेके लिये बाध्य करना, राजाका प्रजासे जबरदस्ती
कोई कार्य कराना ।

राजाभिषेक (सं० पु०) राजाः अभिषेकः ६ तत् । राजाओं-
का अभिषेक । राजगण यथाविधान अभिषिक्त हो कर
राजदण्ड ग्रहण करते थे । यह अभिषेक बड़ी धूमधामसे
होता था । संक्षेपमें इसका विषय नीचे लिखा जाता है ।
रामायण, महाभारत आदिमें लिखा है, कि राजा राज-
दण्डग्रहण करनेसे पहले यथाशास्त्र अभिषिक्त होते थे ।
विष्णुधर्मोत्तर, अग्निपुराण और देवीपुराण आदिमें भी
यह अभिषेक-प्रणाली देखी जाती है ।

मनुमें लिखा है, कि ब्राह्मण लोग क्षत्रियोंको यथा-
विधान अभिषिक्त कर देते थे । यह अभिषिक्त क्षत्रिय
न्यायानुसार सभी प्रजाको देखभाल करता था । प्रजा-
पालन करना ही अभिषिक्त क्षत्रियका प्रधान धर्म है ।

'ब्राह्म' प्राप्तेन सस्कार क्षत्रियेण यथाविधि ।

सर्वस्यास्य यथान्याय कर्त्तव्यं परिरक्षणम् ॥' (मनु)

'ब्राह्म संस्कारं ब्राह्मणैः कृतमभिषेकं ।' (कुल्लुक)

अभिषेकका समय—यह अभिषेक उत्तम दिन देख
कर करना होता था । कुदिन वा कुक्षणमें यह अभिषेक
विशेष निषिद्ध है । विष्णुधर्मोत्तरमें लिखा है, कि यदि
हठात् राजाकी मृत्यु हो जाय और उसके बाद ही अभि-
षेकका उपयुक्त समय न रहे, तो जो राजसिंहासन पर
बैठेगे, उन्हें सामान्य तौरसे अभिषेक करना होगा ।

'मृते राशि न काष्णनियमोऽत्र विधीयते ।' (विष्णुधर्मोत्तर)

चैत्रमास, पौषमास, भाद्रमास, मलमास तथा वर्षा
ऋतुमें अभिषेक निषिद्ध है । शनि, रवि और मङ्गलको

छोड़ कर सिंग धारमें चतुर्वीं भीर नवमी सिंग तिथिमें तथा भयणा, मन्त्रिमां, पुषा और उषा नक्षत्रमें राज्यामिषक ब्रह्म है।

अमिषेककी सामग्री—मन्त्री, पुरोहित, ईश्वर और कई प्रजा, यज्ञोप वैश्वे, सुषण कञ्ज, चतुर्वैदिक पुरोहित ब्राह्मण, पहाड़ा मिट्टी, पत्नीक मिट्टी, गजदन्त मिट्टी, सरोवर, भोज ईश्वर, इन्द्राद्य, राजमाङ्गल, समुद्र सङ्गम, नदीस गम, नदीका किनारा, वैश्याहार, गज दन्तनस्थान, मन्त्रयन्त्रनस्थान, गोष्ठ और रथचक्र इन स्थानोंकी मिट्टी, पञ्चगव्य, मद्रासन, सुवर्ण उज्ज, तास नीर मिट्टीका बना घड़ा, इनमें यथाक्रम भी धूप, वही, नीर जल भर रखा चाहिये। मधु, कुशा एक हजार क्षिप्रबाणा घट सब प्रकारक सुगन्ध द्रव्य, सब तरह के बोज, पुष्य, मान्य फल, नवराज, नवोन्नत, सरोवरजल, कृपजल, वारों मोरके चार समुद्रका जल, इसी तरहका गङ्गाजल निम्बरजल, छत्रपारो, चामरपारो, बेजपारो, माता प्रकारक काजे, सर्वोपि महीपि, छीपीपुष्पी शाका, र्वीच, घृतकुमर, उष्णीय, शुद्धबल, तज्ज तरहके बलकुंजर और मन्त्र, विष्णु और ब्रह्मपूजाका द्रव्य, भय पट, यथादि सात तरहके पशु, मन्त्र, इस्ती, रथ, वागार्थ, माय, विज, ज्ञान, रीच, तुण्य, र्विच, घृत मोक्षक, महा शतका द्रव्य माङ्गलिक द्रव्य, वाय, मधु, बह्म और हीमकी सामग्री भादि अमिषेकके पहले ये सब चीजे मंगा डैनी चाहिये।

अपमिषेक "गोपय्याह्वान" में राजामिषक-पद्धति लिखी गई है—“अथ राजोऽमिषेकविधिब्याख्यास्यामो विवन् मयूतोऽसम्मरसम्मरत्सम्भृत्य पाञ्च कञ्ज-सान् योऽङ्गलित्तानि पत्नीरूप्य च मूलिकामित्यादि।” (गोपय्याः)। यौतायिक पद्धति ही वर्णित है।

पूर्वक सब चीजोंका आयोजन कर राधा शुभ दिन और शुभसुप्तमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य नीर शूद्र इन चारों प्रकारकी प्रजा द्वारा अमिषिक हो। अमिषेकका दिन निश्चित हो जाने पर सप्तस पहले किसी एक शुभ दिनको राजा बुतहितस येन्दी नामक शान्तिका अनुष्ठान करें। निम्नोक्त प्रजाओंके अनुसार येन्दी शान्ति करनी चाहिये।

पुरोहित अमिषेकसे पहले किसी एक शुभ दिनको यथाविधानसे मास, पक्ष और तिथ्यादिका निश्चय करे। राजाको पहले पहले 'राजामिषेकाङ्गभूतामैन्त्री' शान्ति मह करिष्यामि ऐसा संकल्प करना चाहिये। पाठे मज पतिकी पूजा कर, होता, भावाधर्म ब्रह्मा भीर सख्य इव चार प्रकारक ऋत्विग्ण्को वरण करना चाहिये। इसके बाद कई कुशाओं को छे 'भीयथात् वातु पर्भ' मन्त्रसे इस कुशाका मूलदेश त्याग कर किञ्चित ऊपरों भागको काटना चाहिये। इसके बाद 'भोधाम्ते भूमे वर्षीयि' इत्यादि मन्त्र पढ़ यथाविधान गृन्थीको प्रणाम कर वैश्वे का निर्माण करना चाहिये। वैश्वेमें कुण्ड या स्थण्डिल तयार कर इस वैश्वेक ऊपर भीर एक महावेशो तयार करने चाहिये। इस महा वैश्वेमें 'भोधास्ते भूमे वर्षीयि' इत्यादि मन्त्र पढ़ कर गड्ढा करना चाहिये। यह गड्ढा फिर यथाविधान मन्त्र पाठ कर दूसरो मिट्टीसे भर देना चाहिये।

इस महावेशो पर काण्ड फैला कर स्थण्डिल तयार करना होता है। यथाविधान इत्यादि जो च कर उसका स प्रकार करना चाहिये। यह सब कार्य वैदिक मन्त्र पाठ कर ही करना चाहिये। यथाविधानसे सब मन्त्रोंका उच्चारण नही किया गया। किसी किसी मन्त्रका प्रयोग उद्धृत कर दिया जाता है। पीछे इस स्थण्डिल पर अन्न संस्कार करे। इसके बाद प्रत्यक्षित अन्निके ईष्टाय कोतमें एक सोनेका वा चाँदीका तथा तबिका बना जल-पूर्ण कञ्ज रचना चाहिये। इस कञ्जमें गन्ध पुष्प, सर्वोपि, कृत्य, पञ्चपल्लव, पञ्चत्वक (पञ्चकपाय), पञ्च गन्ध, पञ्चामृत, सात तण्डुलो, सुत्तिका, फल, पञ्चरत्न, सुवर्ण और युगमन्त्र—इन सब वस्तुओंको डालना चाहिये। यह कञ्जसा पच जी) वा सरवा भावज पर रचना चाहिये। इसके सामग अन्निक पूर्ण भीर गोधर्म परिमित स्थान गोबरसे ढिप कर उस पर एक श्वेत वस्त्र बिछा देना चाहिये। इस पर पञ्चवर्ण गुच्छीसे अक्षतक पच मञ्जित करना होता है। इस पद्धति सुवर्णनिमित्त इन्द्रपतिमा प्रणिष्टा कर यथोपयुक्त उवचार डीरा गया विधान पूजा करने पड़ती है।

पूजा समाप्त होने पर यजमानको अमिष ब्रह्मण्डल

पञ्चाहुति दे कर ब्रह्मस्थापन करना चाहिये। ब्रह्मस्थापन-के बाद 'होताओ' को यथाविधान होम करना चाहिये। इस तरह शान्ति कार्य समाप्त होने पर राजा अपनी पत्नीके साथ और कुटुम्ब लोग उनको घेर कर बैठें। उस समय बैठे हुए राजाको पुरोहित शान्तिकालमस्थित जलसे अभिषेक और पीछे आशीर्वाद करेंगे। राजाभिषेकपद्धतिमें इस अभिषेक और आशीर्वादके बहुरे मन्त्र हैं, विस्तार हो जानेके भयसे यहाँ नहीं लिखा जाता। संक्षिप्तरूपसे लिखा गया।

राजाको 'अभिषेकके बाद सर्वाङ्गमें सर्वोपधि लेप कर पवित्र जलसे स्नान करना चाहिये। पीछे शुभ्रवस्त्र और शुभ्रमाल्य आदि पहन कर सपत्नीक हों कर आचार्य और पुरोहितों को नमस्कार और उनको विविध दानादि द्वारा पूजा करना होती है। इस समय नाना महादानका विधान लिखा है।

इस तरह ऐन्त्री शान्तिका अनुष्ठान कर यथार्थ दिनमें राजाभिषेकका अनुष्ठान करना चाहिये। राजाको अभिषेकके दिनके पहले दिनको उपवास करना होगा। पीछे अभिषेकके दिन राजाको प्रातःस्नान और सन्ध्या बन्दनादि कर अभिषेकमण्डपमें उपस्थित होना आवश्यक है।

राजा शुभ्रवस्त्र और माल्यादि द्वारा सुसज्जित हो पूर्वाकी ओर मुंह कर बैठें। इसके बाद देवता और ब्राह्मणको प्रणाम कर मास, पक्ष और तिथ्यादका उल्लेख कर "सषलराष्ट्रवश्यताकामः अहं साम्प्रत्सर-पुरोहिताभ्यामात्मानमभिषेचयिष्ये" इसी तरह सङ्कल्प करना-चाहिये। सङ्कल्पके बाद गणेशादि देवताओंकी पूजा कर साम्प्रत्सर (दैवज्ञ) और पुरोहित प्रभृतिको वरण करेंगे। इसी समय चतुर्वेदी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि प्रधान प्रधान व्यक्तियोंको मान और दानादि द्वारा सत्कार कर समीप बैठाना चाहिये।

पुरोहित वेदी पर बैठ कर जौ पर कलसे रख कर उसे तीर्था जलसे भर देना चाहिये। इसके बाद उन कलसोंमें सर्वोपधि, सर्वागन्ध, सर्गरत्न, सर्वा प्रकारके बीज, फल, क्षीरवृक्षकी शाखा और क्षीरवर्णा लताका पल्लव देना चाहिये।

इन नव कलसोंके समीप एक पञ्चगव्य तथा जलसे परिपूर्ण मिट्टीका कलसा रखना होता है। एक दुग्ध-पूर्ण चादीका कलसा दूसरा दहीसे भरा तावेका कलसा और मधुपूर्ण मिट्टीका कलसा, नदीजल, सरोवरका जल, कूपजल और चतुःसमुद्र जल ये सब कलसे भर रखने पड़ेंगे। इन कलसोंकी ऊंचाई १६ उंगल होना चाहिये।

इन सब वस्तुओंके समग्र करनेका आयोजन हो चुकने पर पुरोहित आचरण गृहोक्त प्रणाली अवलम्बन कर विधिपूर्वक होम करें। होमका शेष भाग इन कलसोंमें छोड़ दें। राजा पुरोहितके दाहनी ओर दैवज्ञ, सदस्य और मन्त्रीके साथ बैठें। होमके समय यदि कोई दुर्लक्षण दिखाई दे, तो उसको शान्ति कर देना चाहिये।

इसी तरह प्रधान होम समाप्त होने पर ऐन्त्री शान्तिमें जो सब होमकी विधियाँ हैं, उन्हीं सब होमोंका अनुष्ठान विधेय है। होम समाप्त होने पर राजा स्नानादि कर शुद्ध हो कर पूर्णरूपित स्नानशालामें जाय। पुरोहित और दैवज्ञ उस समय उनको निम्नाङ्कित प्रकारसे अभिषेक करें। पुरोहितोंको पहले राजाके मस्तकमें सहस्रशीर्षा इत्यादि मलसे पर्वतमृत्तिका प्रदान करना चाहिये। पीछे कर्णमें चर्मोक्तमृत्तिका, क्रमसे गरदन, हृदय, दोनों हाथ, बाह, पीठ, उदर, पार्श्व, कटि, उरुद्वय, जानुद्वय, जङ्घाद्वय, पदद्वय और अन्तमें सबसे पहले पूर्वाहृत मृत्तिका मन्त्रपूत कर लेपन करायेंगे।

इस तरह मृत्तिकास्नान समाप्त होने पर पूर्वस्थापित कलसोंके पञ्चगव्यमिश्रित जल द्वारा स्नान कराना चाहिये। इसके बाद राजा उस आसनको छोड़ कर पूर्वनिर्मित भद्रासन पर बैठें।

यह भद्रासन सोने, चाँदी, तावे या क्षोरिकाकाष्ठ द्वारा बना होना चाहिये। माण्डलिक होने पर भद्रासनकी ऊंचाई और चौड़ाई १ हाथ, राजा होने पर सपादहस्त और महाराज होने पर सार्द्धहस्त परिमाण करना होगा।

अभिषेक राजा भद्रासन पर बैठने पर पुरोहित पूर्व ओर खड़ा हो कर पूर्व ओर रखे घोंके कलसेसे अभिषेक करेंगे। पीछे क्षत्रिय जातीय अमात्य पूर्व ओर रखे दूध-

के कब्जेसे बेदप्रजातीय मन्त्री परिषद और चढ़े हो कर द्विपूज्य ताँबेके कब्जेसे सामवेदी अमात्य उत्तर और चढ़े हो कर मधुपर्ण सृष्टिका कब्जेसे अभियेक और उन्हे कुशाग्रपूर्ण सृष्टिकाकब्जेसे स्नान कराना चाहिये । सबोंका पयापय मंत्रपाठ कर इस अभियेक क्रियाका समाप्त करना चाहिये । इस तरह अभियेकका बाद पुरोहित सप्तमोंके अभिलेखार्थ 'यूपमनि परिरक्त भवम्' इस तरह अभिलेखाका भार धर्येण कर होम करणके समय जिसमें आहुतिका तथा धुंका उच्छिष्ट फेंका गया है, उस सीलका कब्जासे छेद राजसूयपत्रीके अभियेक मन्त्र उच्चारण कर अभियेक करना चाहिये ।

इसके बाद पुरोहित अभिक्रमिक समोप जाय । इस समय वैश्व प्राण्य मन्त्रासन पर बैठे राजाको शतछिद्र कुम्भके अक्षसं स्नान करना चाहिये । पाँचे मन्त्रपूज्य सत्वीपधि, मन्वीपेक, धीत्र, पुण्य, फल रत्न और कृञ्ज सस्य अक्षसं अभियेक करना होता है । कुछ लोगोंका कहना है, कि इस समय कुञ्ज, रूपाँ और वल्लभोंके अभियेक राजवेद मन्त्रित करना होता है ।

इसके बाद श्रम्वेदी प्राण्य गोरोचनयुक्त गन्धसं राजाके मस्तक और कण्ठको छिद्र दे । इस समय निम्नलिखित प्राण्य, क्षत्रिय वैश्य, ब्राह्मण और सप्तप्रजातीय प्रजा गङ्गा, यमुना आदि नदियोंके अक्षसं राजाका अभियेक करे । प्राण्य, क्षत्रिय और वैश्य मन्त्रोंका उच्चारण करे, ब्राह्मण वर्णके अंग मन्त्र पाठ न करे ।

इस समय प्रधान प्रयाग मन्त्री हाथमें छत्र धारण तथा वेत छे कर चढ़े होंगे । बाँधेबाँधे राजाये वैदिक प्राण्य वेदध्वनि करे और वैवाहिक स्त्रव पाठ करे ।

इसके बाद वैश्व मन्त्र कुम्भोंके अर्वाग्रिप अक्षको एक पङ्क्तिमें रख हाथमें कुञ्ज छे इस अक्षसं—'सुरास्त्वाम निविशन्तु प्रप्रियन्तुमहभ्यराः' । इसादि शान्तिमन्त्र द्वारा शान्ति शान करनेके बाद राजाको गन्धादि लेपन द्वारा शुद्ध अक्षसं स्नान करना चाहिये । पाँच मस्तकमें श्वेत अक्षोप, शरीरमें शुद्ध परिच्छिद्र और हाथमें अञ्जु या काद अक्षमात्र छे कर राजा स्वयं और पूनकुण्डलमें भगवन् प्रतिबिम्बको देखे । इस समय राजा पूनकुण्ड तथा सुवर्ण वक्षिणाके साथ प्राण्यका शान कर मातृसिक

वस्तुओंका स्वर्ण करे । इसी तरह मातृसिक जीर्णोंको छू कर प्राण्योंको पूजा करे ।

इस समय वैश्व राजाके कन्धाटमें यह और मस्तक में मकुट पहनायें । इसके बाद राजा मञ्ज या राजासन पर बैठे । यह मञ्ज या सामन ऊपरसे चर्म या वस्त्र द्वारा मापून रहना चाहिये । चर्ममें भी पहले यूपवर्ण (वैश्वका चर्मका), उस पर बिल्लोका चर्मका, उसके बाद तस्सु उम पर निहबम उम पर व्याघ्रचर्म, उस पर बहुमुख्य पत्र बिजा देना चाहिये । राजा इस सिंहासन पर बैठ कर सभी राजाओंके दर्शनके योग्य होंगे । प्रजा इस समय राजाको नम्र भ्यामत वेग करे । कोई भी जाणको हाथ राजाका दर्शन न करे ।

पीछे राजा अभिमन्त्रित व्यक्तियोंको पयापय्य समाहित कर मातृसिक प्रथा का स्वरा कर शान्तिविका काम करना चाहिये । पीछे राजाको धनुषबाण हाथमें छे कर यज्ञादिको प्रक्षिप्ता तथा नमस्य व्यक्तियोंको नमस्कार करना चाहिये । इसके बाद राजा एक महा बृष और सप्तसत्ता गोको चञ्चल कर उसको पीठ पर हाथ फेरें ।

इस समय पुरोहितको एक ही सुवर्णयुक्त उच्चम मन्त्र और एक महादस्ता छे कर उनको मन्त्रीधारण पूर्वक सत्वीपधियासे कन्धसं अभियेक करना चाहिये । इसके बाद राजा उनका पाठ न स्वर्ण करे । बाद उन पर राजा चढ़े । प्रधान मन्त्री, पुरोहित और वैश्व आदि भी तुरन्त हाथी पर चढ़ें । पाँचे सत्ता परत हो कर नाना प्रकारके बाजे और ममारोहक साथ नगर परिघ्रमण कर फिर नगरमें प्रवेश करें । इसी समय नाना प्रकारके मानस्योत्सव करना चाहिये ।

नवार्निविक राजा प्राण्य, क्षत्रिय, वैश्य, ब्राह्मण और मन्थान्य आमन्त्रित मन्थागतोंको सोहन कप कर शान चाहिये समुचित मरकार करे । शान दरिद्र, अनाथ और अन्ये लंगड अत्र आदिका पयागसिक शान देना चाहिये ।

राजा इसी प्रकार अभियेक हो कर पयागाल्य छे उवाधीसं प्रजापालन करे । (राजधर्मवक्यम्)

राजावेदश्री—१ मन्त्राञ्ज प्रथमक गोधापरा त्रिजालगीत एक ठालुक । यह अष्टा० १६ ५१ स १३ २३ उ०

तथा देशा० ८१° ३६' से ८२° ५' पू०के मध्य गोदावरीके वायं किनारे अवस्थित है। मुरारिप्राण ३५० वर्गमील और जनसंख्या डेढ़ लाखसे ऊपर है। इसमें २ गहर और ८५ ग्राम लगते हैं। यहाँकी प्रधान उपज धान, रबी, तमाकू और तेलहन है।

२ उक्त तालुकके अन्तर्गत एक प्रसिद्ध नगर। हिन्दू-राजाओंके समय यह राजमहेन्द्र नामसे प्रसिद्ध था। यह अक्षा० १७° १' ३० तथा देशा० ८१° ४६' पू०के मध्य विन्तृत है। जनसंख्या ३५ हजारके करीब है। हिन्दूकी संख्या ज्यादा है।

यह नगर बहुत प्राचीन है। किन्तु इस नगरको बसाया और कब्र, यह ले कर बहुत मतभेद है। कोई तो उन्कलराजको और कोई चालुक्यराजको इसके स्थापयिता बतलाते हैं। ७वीं सदीमें यहाँ कलिङ्गदेशकी राजधानी थी। १४७१ ई०में मुसलमानोंने इसे दखल किया। १५१२ ई०में कृष्णरायने इस नगरको पुनरुद्धार कर उन्कलपतिको लौटा दिया। इसके बाद ६० वर्ष तक यह हिन्दूके अधि-कारमें रहा। १५७१ और ७२ ई०में यह नगर लगातार दो धार आक्रान्त हुआ। आखिर मुसलमान सेनापति रफतू खाने इस पर दखल जमाया। डेढ़ सौ वर्ष तक यहाँ युद्ध चलता रहा था। अन्तिम युद्धमें यह गोलकुण्डाके हाथ आया। १७५३ ई०में यह स्थान फरासियोंको दे देना पडा। १७५४से १७५७ ई० तक इसी शहरमें फरासी सेना-नायक वूल्सीकी सदर कचहरी रही। १७५८ ई०में अङ्गरेज द्वारा जीते जाने पर भी यह फिरसे फरासीके अधिकारमें चला आया। किन्तु यहाँ रहना सुविधाजनक न देख कर फरासी लोग यहाँमें उठ कर चले गये। शहरमें जज और कलकृरकी कचहरी, डाकघर, तारघर, जादूघर, बहुतसे गिरजे और सुन्दर उद्यान हैं। इनके अलावा उच्चश्रेणीका कालेज, जिला स्कूल शिक्षकका ट्रेनिङ्ग कालेज और एक म्युनिसिपल अस्पताल हैं।

राजा (सं० पु०) आभ्राणां राजा श्रेष्ठत्वात्, राजदन्ता-दित्वात् परनिपातः। आभ्रविशेष, एक प्रकारका आम। यह सामान्य आमो से बड़ा होता है और इसमें गुठली छोटी होती है। इसके पेड़ोसे कलम उतारी जाती है जो छोटी होने पर भी अच्छे और बड़े फल देती है। इसके

फलपकने पर मीठे होने हैं और सामान्य आमोंकी अपेक्षा उनमें रेशा कम होता है। बंवाई, लंगडा, मालदह, सफेदा आदि इसी जातिके आम हैं। पर्याय—राजफल, स्मराभ्र, कोकिलोत्सव, मधुर, कोकिलानन्द, कालेष्ट, नृपवल्लभ। वैद्यकमें इसे पित्तघर्दक और पकने पर बल वीर्यमद् माना है।

राजाम्ल (सं० पु०) अमलाना राजा श्रेष्ठत्वात्। अम्ल वेतस, अमलवेत।

राजा रणधीरसिंह—ये शिरमौर जातिके क्षत्रिय थे तथा सिंगरामऊके रहनेवाले थे। इनके यहाँ कवियोंका बड़ा सम्मान था। 'भूषणकीमुदी' और 'काव्य-रत्नाकर' दो ग्रन्थ भी इन्होंने बनाये हैं। ये सिंगरामऊ-वालेके नामसे काव्य समाजमें बड़े आदरको दृष्टिसे देखे जाते हैं।

राजा राजवल्लभसेन—ढाकाके विख्यात वैद्यराजा। वैद्य-वंशमें राजा श्रीहर्ग बड़े प्रसिद्ध व्यक्ति थे। वीरभूममें सेनभूम जो परगना है, उसीके वे अधिपति थे। उनके दो पुत्र थे—कमल और विमल। विमलसेनके पुत्र विनायकसेन हुए। विनायकके पुत्र धन्वन्तरिसेन, धन्वन्तरिके पुत्र गाण्डेयो सेन और गाण्डेयोके पुत्र का नाम हिगुसेन था। विनायकसेनके और भी अनेक पुत्र-सन्तान थे। यह राष्ट्रीय शास्त्राके अन्तर्गत थे।

हिगुसेन राठ परित्याग कर यशोरके अन्तर्गत सेन-हाटी नामक ग्राममें आ कर रहने लगे। पहले इसका नाम था—छूँचहाटी। सेन महाशयने आ कर इस गाँवका नाम सेनहाटी रख दिया। हिगुसेन आदिके छः भ्राताओंमें केवल उन्होंने ही पैतृक कौलोन्म-मठ्यादा प्राप्त की थी।

“पयणां मध्ये हिगुसेनः कौलीन्ये ख्यातिमीयिवान् ॥”

राठं त्यक्त्वा सेनदृष्टनगरी मध्यवासकः ॥”

(कविकण्ठधारकृत कुलपञ्चिका)

हिगुसेनका पुत्र उचली, उमन, विकर्त्तन, बलभद्र, हल और कमलसेन। इन सब वंशोंमें कोई कुलोन और कोई मौलिक निर्णीत हुआ। बलभद्रवंशके लोग पीछे मौलिक ही कहलाये।

बलभद्रसे पष्ठस्थानीय यशचन्द्रसेन हुए। राजाने

इसको खाँची उपाधि दी थी। पीछे यह इतना नामक प्राममें जा बसे। पद्मचन्द्रके पुत्र गोविन्दसेन भीर गोविन्दसेनके पुत्र रामभद्र भीर वैश्वर्यमं हुए।

विद्याभ्यास करनेके लिये वैश्वर्यमं चिह्नपुर गये। पीछे ये वहाँ हो विवाह कर दायनोया प्राममें रहने लगे। पीछे धनोपाकरण कर उन्होने दायनोया, जयसद, मोक्षिन्दर आदि कई ग्राम खरीदे। वैश्वर्यमंके पहलू पुत्रका नाम नीचकम्बडसेन था। ये जयसदमें जा कर रहने लगे। इहाँ के व क्षमें जयसदके लाला बाबू भीर 'खीरी' उपाधिधारी व्यक्ति आबिर्भूत हुए। वैश्वर्यमंके दूसरे पुत्र भीष्मस्य सेन दायनोया प्राममें रहने लगे।

भीष्मस्यके बहुतेरे स्थानीय ह्यम्बोजवन मज्जुमदार, वैश्वर्यसेन वसुके अधीन डाकाके कानून-गो सिरिस्तेमें मुहरिर हुए। उनके धार पुत्र हुए—१ राजाराम २ धनोराम, ३ राजवल्लभ ४ रामराम। सन् १११८ ईमें राजवल्लभसेनका जन्म हुआ।

राजवल्लभ शैलबावस्थामें हो विपरीत हुए। उनका यह ज्योत्सवासी ऋति भाव्योंने बीबान ह्यम्बराम रायके घर रह कर विद्याभ्यास किया। पीछे राजाराम चिह्नपुर परगनाके तहसीलदार हुए भीर राजवल्लभ कानून गोक सिरिस्ताके मुहरिर हुए। यह सन् १०१७ ई०की बात है। सन् १०२४ ईमें मूर्तिचक्रुकी जाँ डाकेके नायब नाजिम हुए और पञ्चमत्त राय उनका शोवान हुए। इहाँ पञ्चमत्तक अनुग्रहसे राजवल्लभसेन नीरुके मुहरिर मुहरिर हुए। इसके बाद चौथे रजो बकि पुत्र मुएद डाकेके नायब सुवेदार हुए। उनके व्यवहारसे भयान्तुए हो कर पञ्चमत्त रायने काम छोड़ दिया।

सरफराज जाँक शासनात्ममें जब अमीरदों जाँ नवाब हुए, तब निवाइस महम्मद डाकेके नायब नवाब हुए। किन्तु ये मुक्तिदावादमें रह कर ही अपने प्रतिनिधि हुसैन कुलीसे शासनकार्य सन्भाल करते थे। इस मुएद अमीरक अनुग्रहसे ही राजवल्लभसेनके पद पर पहुँच गये।

इस समय डाकेमें हुसैनकुली जाँका प्रभाव फैल गया। उनके प्रिय पात्र गोकुलचार्द वेदकार (Co lcc

tor general and Commissary of the province of Dacca) हुए। किन्तु गोकुलचार्द अपने प्रभु हुसैन कुली जाँसे नाराज हो कर अमीरदों जाँसे शिकायत करने पर हुसैनकुली पदच्युत कर दिए गये। अन्तमें अमीरदोंकी ज्योत्सुको निवाइस महम्मदकी छो घलेटी बेगमका सहायतासे भीर प्रेमसे हुसैनकुली फिर अपने पद पर पहुँच गये। इसके बाद उसने हिताभमें गढ़बड़ी कर गोकुलचार्दका सर्वबाश कर दिया। गोकुलचार्दके पद पर राजवल्लभ नियुक्त किये गये।

हुसैन कुलीने राजवल्लभकी प्रतिभाका परिचय पा कर इनको अपने सहाकार पद पर नियुक्त कर मुक्तिदा बादसे रामोपाधि प्राप्त करा दी।

इसके कुछ दिन बाद नवाब अमीरदों जाँ अपने मृत्यु निकर समझ अपने प्रिय नाती भीर पोष्यपुत्र सिरासुहीकाको राज्यका उत्तराधिकारी स्थिर किया। हार घलेटी बेगमन अपने पोष्यपुत्र अकरम उद्दिसाको राज्यका उत्तराधिकारी स्थिर किया। सिरासुहीकाकी छोछासे घलेटी बेगमके प्रिय हुसैनकुलीकी हत्या की गई। इसके बाद हुसैनकुलीकी जगह निवाइस महम्मद बीबान हुए। निवाइस अपने जीवनके अधिकांश समय मुक्तिदाबादमें ही बिताते थे। अतएव इस समय इनके सहाकारो राजवल्लभ ही डाकेमें एक तरहसे सर्वे सर्वा थे।

प्रयोजन समझ कर हम यहाँ पर एक बातका उल्लेख करते हैं—भूमिका बदला कमी नहीं सत्य है, कि राजवल्लभ घलेटी बेगमके साथ अशेष प्रणयमें फँस गये थे। साएर मुतासिराजकारन हुसैनकुलीके संबंध ऐसा शोपाटोप किया था।

अब जे इतिहास खोजकोंने लिखा है, कि राजवल्लभ निवाइसके प्रतिनिधि या नायबरूपसे डाकेमें यथेष्ट प्रजा पीड़न तथा बिदेशी सैन्यागरीं पर घोर अत्याचार करते थे। यह सन् १०१४की घटना है। उन्होंने अगरेज और फ्रांसोसी बणिक्कोँसे जुलूम कर ४३००) हथपा वसूल किया। ७ थोड़े ही दिनोंमें उनका इतना प्रभुत्व बढ़ गया,

कि उनके पुत्र कृष्णदासको लोग 'नवाव' कहने लगे थे। इस समय मीर अबुनलवने कृष्णदासका नायब रह कर विदेशीय वणिकों पर यथेष्ट अत्याचार किया था। उनकी आज्ञासे एक हालेण्डथासी कैंद कर लिया गया था।

निवाइसकी मृत्युके बाद राजवल्लभ घमेटी वेगम के सब विषयोंके परामर्शदाता हो गये। इसलिये उनको मुर्शिदाबादमें रहना पडा। वेगमकी ओरसे युद्धका आयोजन चल रहा था। जब वेगमने देखा, कि अली-वर्दीके जीवनकी कुछ भी आशा नहीं, तो वह मुर्शिदाबादको छोड़ कर मोतीभीलके निकट एक फोस दक्षिण हट छावनी डाल कर दश हजार सैनिकोंके साथ रहने लगी।

यह उद्योग देख कर नगरके लोग कहने लगे, कि वेगम साहब की ही विजय होगी। राजवल्लभ युद्धविद्या जानते थे। यह वे अच्छी तरह जानते थे, कि जय-पराजय अनिश्चित है। उन्होंने लोगोंकी बात पर ध्यान नहीं दिया। उन्होने यह सोचा, कि यदि हार हुई तो दुर्गकी सारी सम्पत्ति सिराजुद्दौला जब्त कर लेगा। इस तरह उन्होंने यह सोच कर अपने मध्यम पुत्र कृष्ण दासको हुषम दिया, कि तुम सारी सम्पत्तिके साथ कलकत्तेमें डूक साहबके अधीन रहो। कृष्णदास जगन्नाथ-जीके दर्शनका वदना कर कलकत्ते चले आये। उस समय अंगरेज सामान्य व्यवसायी थे। किला बनवाने तथा सैन्य रखनेका अधिकार उनको न था। दक्षिणात्यमें फ्रान्सोसी गवर्नर डुल्ले प्रादेशिक राजा और सूबेदारोंके परस्पर गृह-विवादका अवलम्बन कर उनके राज्याधिकारका जो प्रयास कर रहे थे, उस समय अंगरेज-वणिक भी इसी ताकमें थे। बङ्गालके सूबेदारका गृह-विच्छेद देख कर अंगरेज किसी एक पक्षका साथ देना चाहते थे। ऐसे समय राज-वल्लभने काशिमवाजारकी कोठीके अध्यक्ष वाट्स साहबसे प्रार्थना की, कि आप मेरे पुत्रको आश्रय देनेके लिये कलकत्तेके डूक साहबको लिख दें। वाट्स साहब जानते थे, कि घमेटी वेगमका पक्ष ही प्रबल है। इससे उन्होंने डूक साहबको राजवल्लभके

अनुरोधकी रक्षा करनेके लिये एक पत्र लिखा। इस समय डूक साहब वायुसेवनके लिये चालेश्वर गये थे। किन्तु कौन्सिलके अन्यान्य सदस्योंने कृष्णदासको आश्रय देना निर्धारित किया था। उसके कई दिनोंके बाद ही कृष्ण दास कलकत्ते पहुँचे। अमीचांदने बड़े आदरके साथ उन्हें अपने घरमें स्थान दिया। कलकत्तेमें कृष्णदासको अङ्गरेजोंके आश्रय देनेकी बात सिराजुद्दौलाको मालूम हुई। इस समय भी अलीवर्दी खानकी मृत्यु हुई न थी। काशिमवाजारकी कोठीके डाक्टर फर्थ साहब उनकी चिकित्सा कर रहे थे। फर्थ साहबके सामने ही अली-वर्दी खाने सिराजने कहा, "पितः! अङ्गरेजोंने वेगमका पक्ष लिया है। फर्थ साहबने इस बातको विलकुल नामञ्जर किया। सिराजने फिर कहा, कि जो मैंने कहा है, उसका मैं प्रमाण दे सकता हूँ। जो हो, अलीवर्दी खाने अंगरेजोंके उस समयकी सैन्यमंडला, कोठी, या दुर्ग, युद्ध जहाज, फ्रान्सीसियोंके साथ युद्धकी सम्भावना आदि कई विषयोंमें कई प्रश्न फर्थ साहबसे पूछ कर तथा उनके जवाबको सुन कर सिराजुद्दौलासे कहा, कि तुम्हारी बात पर मैं विश्वास नहीं करता। फर्थ साहब वहासे चले गये। अलीवर्दी खाने सिराजसे कहा, कि तुम विदेशी वणिकोंका दमन न कर सको तो तुम्हारा यह राज्य स्थायी नहीं हो सकता। सबसे पहले अंगरेज वणिकोंका दमन करना तुम्हारा प्रथम कर्त्तव्य है। इस घटनाके कुछ दिनोंके बाद अली-वर्दीकी मृत्यु हो गई। इसके बाद सिराजुद्दौलाने बङ्गाल की राजगद्दी रखिनयार की। सिराजुद्दौलाने गद्दी पर बैठने ही मेदिनीपुरके राजा और दीत्यविभागके अध्यक्ष रामगमसिंहके भाईको पत्र दे कर कलकत्तेके डूक साहबके पास भेजा। पत्रमें लिखा था, कि कृष्णदासको पत्रवाहकोंके हाथ सौंप दो।

सन् १७५६ ई०की १६वीं अप्रैलकी वे कलकत्ते पहुँचे। कृष्णदासको इन सबोंके हाथ सौंपा जायगा या नहीं—इसके लिये कौन्सिलकी एक बैठक हुई। अमीचाद भी इसमें उपस्थित थे। अमीचांदने कौन्सिलमें यह बात युक्तिप्रमाणके साथ कही, कि नवावकी बातोंकी अवहेला करने पर बहुत बड़ी विपद्में फंसना

हाया । सिराहुरीलाके साथ बेगमके षण्णके उस समय तक भी निरवका नहीं हुआ था । इसलिये भग देजोन बेगमका पक्ष लिया था । भगदेजोंने देखा, कि इससे ही उनका हितसाधन हो रहा है बेगमके बसा बस तथा युद्धमें जय-पराजयकी बात न समझ कर कल्प-हासको साहसा सौंप देना उन्होंने उचित नहीं समझा । नयाबके भेजे भावमियोंको साहकोने विभ्रान्त नहीं किया, कि ये नयाबके भेजे हुए हैं । यद्यपि ये बड़े सम्प्राप्त पुरुष थे । उन्होंने इनका भवमान कर नहींसे मगा दिया । साहब जानत थे, कि इस कल्पसे सिराहुरी शोधित होगा । यह जान कर उन्होंने यादस् साहबको पक्ष लिया, कि नयाब टंड हो कर हम लोगों का कुछ नुकसान न पहुँचा सके, — इसके लिये भाप पलवान् रह । सिराहुरीको सब बात मानूँ हो गए । इस समय भा उनका बेगमके साथ कुछ समझौता नहीं हुआ था । सुतराँ सामान्य बणिक्सम्बन्ध द्वारा अपव्यय और भवमानित होन पर भी उन्होंने पूँ तक न किया ।

कुछ दिनों के बाद मन्हीवहीं खाँकी पिपवा बेगमके पक्षत घलेटा बेगमके साथ सिराहुरीलाका समझौता हो गया । इधर फ्रांसिसियोंके साथ भीग रेजो का युद्ध होना मनियाप्य हो गया । भगदेजो बेजो के साथ दिल्लीकी मरमत् करनेकी भावश्यकता पहुँची । सिराहुरीलाके सफलताको इमान करनके लिये पूर्णिया की यात्रा का । रास्तेमें ही मन्हीवहींके किछकी मरमत् की बात उनका माण्डु हुए । इस पर सिराहुरीलाके डेक साहबकी विध भेजा, कि किसकी मरमत् नहीं की जा सक्तो । किस्मै जो भग मधिक बनवाया गया है । यह गिरा दिया प्राय और साथ ही कल्पदामको भरे हाथ सौंप दिया जाये । डेक साहबने शीघ्र ही किसकी मरमत्की भावश्यकता बतला कर नयाबके पक्ष का उतर भेजा । १७वीं मईकी नयाबको डेक साहबका पक्ष मिला । उन्होंने मन्हीवहींको इमान करनके लिये कसकतेका यात्रा का । मन्हीवहीं गान्त हुए । कल्पदाम और भनाबाद् नयाबके मायन भाये गये । किन्तु अन्तर्गत काय उतर नयाब पर भाये ।

सिराहुरी दुर्भाग्यस नया उनके प्रजात राजद्वारे ।

पाराको बन्धनितोत्त नयाब गोड़े हो दिनोंमें भयने राज्यसे हाथ धो बैठे ।

मकीमको मीरजाफर बङ्गालके सिंहासन पर बैठे । व राजवल्हमको यतुर और कार्यदक्ष जानते थे । इसी लिये उनको उन्हींने मन्ही तथा उनके पुत्र कल्पदासको हाथका शासक नियुक्त किया ।

इसी समय सम्राट् (शाहभादुर)-ने राजवल्हमको मुगैरका सुबेदार बनाया और उनको "महापञ्च राज पद्वन्ध रायरायरा सखारजङ्ग बहादुर" इपाधिसे सम्मानित किया । साथ ही एक तख्तवार पुरस्कारमें भेजा ।

इस तरह कल्पदाम हाथके शासनकार्यमें और राजवल्हम मुगैरका सुबेदारो पद पर नियुक्त हो कर सुचारुव्यसे काम करने लगे । पीछे मीरजाफरल कल्प दासको "राजा बहादुर" इपाधि प्रदान कर मन्ही पद पर नियुक्त किया । कुछ दिनोंके बाद राजा रामनारायण कमध्युत हुए । मीरजाफरल इस पदको राज्यवल्हमके तीसरे पुत्र गङ्गादासको दिया ।

मीरजाफरके शासनकालमें घेहराज राजवल्हमको बहुत कुछ प्रतिपत्ति हुए थी । राजवल्हम गुप्त मन्थनाथ एक मागोहार थे । उस समयके एक कागजमें यह बात विव्याह देतो है, कि राजा राजवल्हम और मीरजने भङ्ग-रेजोको भारतस मगा देनेके लिये सात्रिस की थी । जो हो, नयाब मोल्कासिमकी मन्थिम भयस्वामिं राजवल्हम एक तरहसे मुगैरमें तख्तवन्ध थे ।

मीरजासिमने भयेडूँ सैम्यके साथ मित्र जानेका विचार किया और सम्मिलित होमेत पहले ही वे राजा राजवल्हम और उनके पुत्र कल्पदास और अन्याय किदियों की बाध कर किसी पक्षमें गले तक बाधु भर कर उगह गङ्गाजोमें छोड़या दिया । इस तरह इनकी मायएडकी किया समाप्त हुई ।

इस तरह राजा राजवल्हमन १५ वर्षकी अवस्थामें पुत्रके साथ सन् ११३० सालमें भायप मदाना सामयार का मन्थनाका मुगैरके निकट मागोरपामें प्रायस्वाम किया ।

राजवल्लभकी मृत्युके बाद उनके पांच पुत्रोंमें जमींदारों बंट गई। जमींदारोंकी आय १४ लाख रुपये सालानेकी थी।

राजवल्लभके प्रथम पुत्र रामदास और चतुर्थ पुत्र रतन कृष्ण उनकी जीवितावरधामें ही मर गये। इस लिये उनके गोदके पुत्रोंको हिस्सा नहीं मिला। केवल उनके भरणपोषणके लिये प्रत्येकको ५०० महौनेकी वृत्ति मिलने लगी।

राजा कृष्णदास ग्हाटुरके तीन पुत्र (राजकृष्ण, हृद्य-कृष्ण और रमणकृष्ण) को जमीन्दारीका एक अंश मिला। प्राणकृष्ण निःसन्तान अवस्थामें परलोकगामी हुए। उनकी विधवा पत्नीने जिन काशीचन्द्रको गोद लिया था, उनको भी हिस्सा नहीं मिला। रानियों और पोष्यपुत्रोंके पेंसन देने तथा मामला मुकदमोंमें जा खर्च हुआ, उसमें जमीन्दारीका अधिकांश भाग नीलाम हो गया।

द्वीवान रामदासके चरित्रके सम्बन्धमें आज भी ढाकेमें कई बातें सुनी जाती हैं, किन्तु राजकार्य तथा लोक-हितकर कार्योंमें उनकी बड़ी प्रशंसा होती है। उन्होंने तालतलाके निकटवर्ती मेघनासे विरूमपुरके बीच हो कर प्राचीन कालांगड़ा तक एक नहर खुदवा कर सर्वसाधारणका यथेष्ट उपकार किया। तालतलेकी काली भी उन्हींके द्वारा प्रतिष्ठित हुई जान पड़ती है।

राजवल्लभकी मृत्युके बाद उनके तीसरे पुत्र गङ्गादास कुछ दिनों तक राजत्व कर मृत्युमुखमें पतित हुए। राजाके पाँचवें पुत्र गोपालकृष्णने राजकार्यका भार लिया। इसी समय कार्तिकपुरकी जमींदारीको दखल करते समय वहाके मुंशी-पान्दानके मुसलमानोंसे एक युद्ध हो गया। एक हजारसे अधिक आदमी युद्धमें मारे गये थे। राजपक्षने जयी हो कर जमींदारीको दखल कर लिया। कहते हैं, कि इसी अपराधमें अंगरेजोंके राजत्वमें राय गोपालकृष्णको ढाई घण्टे कैदकी सजा हुई थी।

जयलभके वंशका अधःपतन होने पर नौरारके द्वीवान राय मृत्युञ्जयवंश राजनगरमें प्रबल हो उठे। प्रकृत

इसी वंशने राजनगरके मानसम्भ्रमकी रथा की थी। राय मृत्युञ्जय कुराशी ग्राममें बहूनेरे शिवलिंग, मठ प्रतिष्ठा और तालाब खुदवाये थे। कार्तिकनाशानदीके किनारे पड़ जानेके कारण राजनगर लिये विच्छिन्न हो गया। 'राजवल्लभके वंशज पाल' धानेंग और राय मृत्युञ्जयके सन्तान कुराशी ग्राममें आ कर रहने लगे।

इसी समय दायनीया ग्राममें कई सौ अट्टालिकायें निर्मित कर और सरोवर खुदवा कर इस ग्रामका नाम राजनगर रखा गया। नवरत्न राजवल्लभके पिताके समय शतरत्न राजवल्लभके समय और एकुशरत्न राय गोपालकृष्णके समयमें निर्मित हुआ।

सिवा इसके राजसागर, महासागर, रानीसागर आदि नौल राजवल्लभ द्वारा, कृष्णसागर तत्पुत्र कृष्णदास और शुकसागर उनके भतीजे राय मृत्युञ्जय द्वारा खुदवाया गया था। राजा राजवल्लभने अग्निशोम, वाजपेय आदि यज्ञानुष्ठान किये थे। यह निर्णय करना कठिन है, कि इन कार्योंमें कई लाख रुपये खर्च हो गये।

राजवल्लभ वैद्यवंशमें एक श्रेष्ठ भागवान् व्यक्ति थे। अठारवीं शताब्दी या इसके बाद इस वंशमें वैद्य मनुष्य जन्म नहीं हुए। राजवल्लभ समय बङ्गालके वैद्य-समाज पति थे। श्रीखण्डके भूतनाथदेवका मन्दिर उनके द्वारा निर्मित हुआ था। बनारसके बङ्गालों शैलमें उनकी कोठी आज भी विद्यमान है। उनके द्वारा ब्रह्मोत्तर, देवोत्तर तथा वृत्तिशा दी गई थी। राजवल्लभकी प्रायः अधिकांश जमींदारी लक्ष्मीनारायणके नामसे थी। चासुदेवके नामसे मा कितने तालुक थे।

वाखरगञ्ज जिले बोजेरगो परगने उमेदपुर और सलेमावादके ॥३॥ हिस्सा आगाखाखरके जमींदारी थी। चिट्रोहके अपराधमें उनकी और उनके भाईकी जमीन्दारी जप्त हो गई। इसके बाद वाजेरगो, उमेदपुर और सलेमावाद राजवल्लभके हाथ आया। सिवा इसके कार्तिकपुर, सुजावाद, विक्रमपुर और ढाके जलालपुरमें भी कई स्थान उनके अधिकारमें आये। इसी तरह सक्कर राजस-

को छोड़ कर नौ भाप रुपयेकी सम्पत्ति उनके हाथ माह । राजवल्हम परिश्रमयोग्यक भा थे । हृत्पद्वेय विद्या बागीमा, कृष्यशास्त्र मिश्रात्मक और कवि राजवल्हम मज्जुम राट भादि उनके समासद्वय हुए । उनके द्वारा बहुदेयता को प्रतिभाष्य प्रतिष्ठित हुए थे । राजवल्हमकी देवसेवाके लिये कुछ देयत्व सम्पत्ति रख गये थे । उनका द्वारा धाम्म ओ संभाष्यता ही रहा है ।

राजा राजवल्हम एक कर्मठ, बुद्धिमान और विचक्षण व्यक्ति थे । सहज ही वृत्तरेक मनको भाक्यवित्त करनेकी उता गतता था इसा गुणसे वे एक सामान्य सुद्विरेर ही कर भा पर तगहस हायेक अभाभर हो गये थे । उनका राजधाना राजवल्हम ही था । हममें समूह नहीं कि उनका द्वारा निर्मित साम्राज्य और विशाल्य भादि कीर्तियां एक वृत्तगाय वस्तु हाता, यदि गन्ना उम्हें लगने गर्भमें न ले जातो । बहुतीका कहना है कि राजा राजवल्हमकी कीर्तियोंका नाम कर पदाने अपना कीर्तिलागा नाम बहक लिया है ।^७

राजा राजवल्हमकी वसाधारण उपतिके साथ उनको समाजसंस्कारमें भी दखि अधिक थी । उस समयके ऐतिहासिक पाठ साहचर्य सिखा है, कि राजा राज वल्हमन कर स्थानीके प्राधायिकी व्यवस्थात अपने समाजम यज्ञावपीत स स्कारका प्रवर्धन किया था ।^८ इसकी लिये मुनिद्वाराक मकानमें एक गृह्य परिश्रव समा एकत्र हुए थे । समाजका उन्नतिका सिधान कर वे पूर्ववक्तके समाजके समाजपति हुए थे । सुना जाता है, अपनी एक भासविषया कल्याणो दुरवस्था देख कर उन्होंने समाजमें अस्तव्योति बन्धविषयाके पुनर्निवाहकी रीति प्रवर्धित की थी । इस प्रवर्धनमें उन्होंने परिश्रवों की सम्पत्ति और व्यवस्था का । अथहायक राजा हृत्पद्वेय चम्पू उनके विरोधी हो गये, इसीस य हम कामम सकल नहीं हो सके ।^९

राजा राजवल्हम सेन—दक्षिणराष्ट्रीय कायन्धर्पशीय एक महामान्य और प्रसिद्ध व्यक्ति । वे बहुतायके नायक सुवेदार महागत्र ज्ञानकीरामक पीठ और उकीसाक अन्वयत सुवेदार कुम्भमगमक पुत्र थे । सिराजक राज सिहामन जगमक पूर्व उन्होंने प्रथम सुवेदारका 'परमो (Paramater-General of the force) पत्र प्राप्त किया । इसके बाद सिराजपुरीकाक समय वे 'रायदाय' (Financial minister) और आससाक मुद्राधिकारा (Comptroller general) पत्र पर नियुक्त हुए । इसके लिये सिराजपुरीका द्वारा मुनिद्वाराक जिळे म उनका प्रागीर मिळा था । ऐह इच्छिया कम्पनीके सर्वप्रथम जगमक बन्धोवस्त करमम राजवल्हमने जाई क्हाएक्य बधेए साहाय्य किया । पञ्जासीयुद्धक बाद राजवल्हम कलकत्तेके बागबाजारमें भा कर रहने लगे । बागबाजारमें जहा वे रहने थे, यहा उनका बहुत बड़ा मकान था । उस जगहको इस समय 'राजवल्हम पाक' कहा करत हैं । उनके नामस राजा राजवल्हम पाट और राजवल्हम पीट भाज भी विषयमन है ।

ऐह इच्छिया कम्पनीक नामा कार्यामें सहायता देनेक लिये नाइ क्हाएयन उनको उपयुक्त पारिष्ठापिक देवेकी इच्छा यद्धत की था । किन्तु उन्होंने अपनी पदमर्त्याका प्यान कर अस्वीकार कर दिया । उनके समयमें राष्ट्रीय कायन्धर्प समाजमें वे ही गण्यमान्य थे । राजा नयहृत्पद्वेय बहादुरक मातृभाजमें बहुतायके सब प्रवाल प्रवाल राजाओं और जमोद्वारोंके उपस्थित रहने पर भी भाज-समाजमें महापत्र उदयव्ययका ही भूत भासन मिळा था ।

सन् १७५५ सालमें राजवल्हमकी मृत्यु हुए । उसके तीन पय पहले उनका एकमात्र पुत्र राजा मुकुन्दचन्धमकी विषया पकी रामी जयमजिन राजा गीरवल्हमकी गोद लिया । १७६१ गीरवल्हमक पुत्र हर्षिमणोरथम था । राजा राजवल्हम राय २० लाखको सम्पत्ति छोड़ गये थे । उनका मृत्युक बाद अंगरेजोंने उनका जामोद जम्प कर का और उनके उत्तरधिकारा राजा गीरवल्हम की कपल एक साध दयया सामानाका वृत्ति था । इसके बाद मानका मुकुन्दमाक कारन इनका सब धन लहा हा

७ वारधम, इराएय और नोपाके कीर्तियोंका कीर्तियोंका नाम कर पदाना कीर्तिलाग मनुभा है ।

† Warle on Hindoo.

९ अद्वैतक लियेकोई अन्वय न बहक व वद्धन न हुए ।

गया। अब इस समय उनके सन्तानकी अवस्था सोचनीय है।

राजाराज—महाराष्ट्रपति जिवाजीके पुत्र और प्रभुमार्जाके वैमात्र भाई। महाराष्ट्र और मातारा शब्द देना।

राजाराज—१ श्रौतसिद्धान्तके प्रणेता। २ आचार्यकामुर्दाके रचयिता। ३ सप्तशतीदर्शोद्धारके प्रणेता। इनकी उपाधि भट्ट थी।

राजा रामपुर—दिनाजपुर जिलान्तर्गत एक नगर। यहाँ बहुतसे देवालये हैं।

राजार्क (सं० पु०) अर्काणा राजा श्रेष्ठवान्। श्वेत, शं, वृक्ष, सफेद फूलका आरु। पर्याय—वमुक, अरु, मन्दार, गणरूपक, काष्टील, मदापुत्र, अटक, प्रतापस।

राजार्ह (सं० क्री०) राजानमर्हतीति अर्ह अण। १ अगर्, अगर्। २ कर्पूर, कर्पूर। ३ जम्बूवृक्ष, जाम्बुनता पेड़। ४ जालिघान्यविशेष, जालिघान। (त्रि०) ५ राजाके योग्य।

राजार्हण (सं० क्री०) १ समग्रममूचक उपहार, भारी उपहार। २ राजाका शान।

राजालावू (सं० स्त्री०) अलावूना राजा, राजदन्तादित्यात् परनिपातः। स्वादुतुम्बी, एक प्रकारका लोआ या रुद्धू जो आकारमें बड़ा और खानेमें मीठा होता है। पर्याय—महातुम्बी, मधुरालावुना, जाफालावू, तुम्बक, मधुपालावु, अलावुनी, मिश्रतुम्बी। इसका गुण—रूय, कफपित्तहर और गुरु। (मदनविनोद)

राजाली खाँ फर्दखी—फारसदेशके एक सुसलमान शासनकर्ता। सन् १५७६ ई०में अपने भ्राता दूसरे मीरन महम्मद खाँकी मृत्युके बाद वे सिंहासन पर बैठे। इसी समय मुगलसम्राट् अकबर जाहने समय आर्यावर्त देश पर शासनदण्ड परिवर्धित किया था। राजा अली खाँने सम्राट् अकबर शाहके दौर्दण्ड प्रतापको लक्ष्य कर वंशकी सम्मान चर्चक राजोपाधि परिव्राम कर दी और सम्राट्का आनुगत्य स्वीकार कर उनके अधीन हुए। इस समय उन्होंने मुगल-सम्राट्को बहुत धनरत्न उपहाररूप रूप दिया। अहमदनगरराज २रे बुर्हान निजाम शाहकी मृत्युके बाद सन् १५६६ ई०में सुबराज मीर्जा मुराद और चैरम खाँके पुत्र मीर्जा खानखाना दक्षिणात्य विजयमें

यात्रा करने पर राजाली खाँने उनके अधीन रह कर युद्ध किया था। अहमदनगर-सेनापति सुहिल खाँके साथ पान खाँके युद्धके समय बाकूदके वरतनमें आग लग जानेके कारण सन् १५६७ ई०में २२वीं जनवरीको उनकी मृत्यु हुई।

राजालुक (सं० पु०) जालूना राजा ततः न्यार्थे कन्। महाकन्द, मूली।

राजावर्त्त (सं० पु०) राजान आवर्त्तयति आनन्दयतीति आ वृत्त णिच्-अण्, यद्वा राजः शोभमान आवर्त्त यत्। १ उपरत्नमेद, लाजवर्द नामक रत्न। पर्याय—नृपावर्त्त, राजाव्यावर्त्त, आवर्त्तमणि, आवर्त्त। इसका गुण—मृदु, स्निग्ध, जिजिर, पित्तनाशक। यह मणि धारण करनेसे बहुत कल्याण होता है। २ विराट् देशजात हीरक या हाग। पर्याय—विराटप, राजपट्ट। गुण—कटु, तिक्त, जिजिर, पित्तनाशक, प्रमेद, छर्दि और शिफानिवारक।

(नावप्र०)

राजावलि (सं० स्त्री०) १ राजवशवली। २ राजतिहास, राजाकी कहानी।

राजावासा—सिंहभूम जिलान्तर्गत एक बड़ा गाव।

राजावोराडी—मध्यप्रदेशके होमन्नावाद जिलेके दक्षिण एक वनप्रदेश। यह पूर्वमें साँलीगडने पश्चिममें कालीनी और मकराई तक विस्तृत है।

राजाशासो—पञ्जाब प्रदेशके अमृतसर जिलान्तर्गत अजनाल तहसीलका एक नगर। १५५७ ई०में राजा संशोजादने इस नगरको बसाया। तभीसे यह उर्दूके नाम पर चला आता है। उनके भाई कीर्त्ति और रणजित्सिंह सिंधियानवालिया मिजलके पूर्वापुत्र थे। आज भी यहाँ उस सिंधियानवालिया वंशका वास है तथा उर्दूके यत्नसे नगरकी श्रीवृद्धि हुई है। सिखशासन कालमें इस वंशका प्रताप बहुत बड़ा चढ़ा था। तभीसे यहाँके सरदारवंश ३६ ग्रामोंको जागीर भोग करते आ रहे हैं। सरदारको अपनी जागीरमें डिपटी कमिश्नरके जैसा अधिकार है।

राजाश्व (सं० पु०) वैदिकयुगका प्रसिद्ध तेजस्वी मन्व-विशेष।

राजासन (स० झी०) सिंहासन, राजाओंके बैठनेका आसन।

राजासन्नी (स० खो०) काठको चौकी या पीढ़; जिस पर यशोमें सौम रखा जाता था।

राजाहि (स० पु०) महोत्सवों राजा राजप्रवृत्तादिस्थान पर निवाता। द्विमुपसर्प, दो मुद्रा सौं। पचाप—त्रिमुखादि विष्णुवासी, विष्णुयुध, महोरथि।

राजाह (सं० झी०) १ कर्णिकार कन्। शिवायं टापु। २ राजाद्वारा रूस, विरमोका पैड़। ३ श्वनार्कंरुस सफेद साकका पेड़।

राजि (स० खो०) राजने इति राज (बतिभस्मिभिराश्रीणि। उष् ११२४) इति इज्। १ भयो, पंक्ति। २ रेषा, मकीर। ३ मर्षयं राह। (पु०) ४ ऐकं पाल भीर नायु कं एक पुत्रका नाम। (माल १३११२५)

राजिका (स० खो०) राजल या राज प्लुम्, राय भग इत्यं। १ कनाद, पयो। २ राजसर्प राह। ३ रेका, खकीर। ४ पंक्ति, राजि। ५ एकमर्षयं, लाल सत्सों। इसका पचाप—शुभ क्षुधामित्रमन, भाग्युरी क्षुधामित्रमन असुरो। इसका गुण—कटु तिक्त, उष्ण पात, पचाहा शून, कण, गुनन, कृमि भीट प्राणनाशक। इसका तलका गुण—नीहज वातादिदोषनाशक, शातक, यूरु भीर कण्डुष्य, कजवर्षक भार शयक्षोपनाशक। इसके पतका गुण—कटु, उष्ण, कृमि, पात, कण भीट कण्ठा मयनाशक, सादु भीर भनिषयक। (राशि) ३ परि माथविशेष एक परिमाण। ७ कृष्णोद्गम्य, कटगुणर। ६ मधुभा। ६ एक प्रकारका शुद्धरोग। इसमें सरसोंके बराबर छोटा छोटी कुसियां निकलती हैं। यह राग अचिद धूर मगमि भीर गर्मोंके कारण हा जाता है।

राजिकाकन (सं० पु०) राजिकाया कननिभ कन्मरुय। गौरसर्प लाल सरस।

राजिकाहा (स० खो०) राजिका नामक क्षुद्ररोगमेह। घाग भीट श्वद भादिस गगरमें जा छोटी छोटी कुसियां निकलती हैं। यह बहुत घना भीर पक्ष्णामुक्त होता है। इन कुसियांका रंग भीट भारति राजिका कथान् सरसों का तरह होती है, इसमें इसका नाम राजिकाहा है।

राजिचिन्न (स० पु०) राजिमच्छपविशेष, एक प्रकारका सांव जिसका ऊपर सरसोंकी तरह छोटी छोटी बुदियां होती हैं।

राजित (स० जि) १ भो शोभा दे रहा हो, कबला हुआ। २ विशाखा हुआ मीमूद।

राजिफना (सं० खो०) राजाभूतानि भेषियरागि कनानि यस्य।। शोभा कर्ण्टी, शोभा ककरो।

राजिमन् (स० पु०) १ मीमलपमेह, एक प्रकारका सांव। (वापद उरर १६ भ०) (जि०) २ राजविशिष्ट।

राजिल (सं० पु०) राजो रे मस्त्वस्वेषि राजिसिधना दिस्थाम् लघ, यद्वा राजि ज्ञाति ला क। कुबहु, मसप, एक प्रकारका सांव जिसका ऊपर सावा रैकाय होती हैं।

राजिलकला (स० खो०) यर्वाककमेह एक प्रकारका परवृक्षा या ककरो।

राजो (सं० खो०) राजि ठुक्कारादितं टापु। १ निच्छिद्र पक्ति। २ राजिका, राह। ३ रकार्णसर्पयं जाल मरसा।

राजो (सं० वि०) १ कोह कटा मुह हात माननेको तैवार, भनुहुन। २ लीरोग, बंगा। ३ गुण प्रसन्न। ४ सुखी। (खो०) ५ राजासंयो, भनुकृपता।

राजोह (स० पु०) ज्ञातिविशेष।

राजोनामा (फा० पु०) १ यह खेक जिसका द्वारा भमियागो भीट भमियुक्त या वादी भीर प्रतिवादी परस्पर एकमत या मनुकृष हा कर भमिवोग या वादीको स्वावानवस उहा सें भधवा एकमत हो ज्ञाप भीर तदनुसार हा म्नावाक्यको स्वयवरा धमक द्वियं इसम प्राधना करें। २ स्वाधरपल।

राजोकन (स० पु०) राजोभूतानि भेषियरागि कनानि यस्य। १ परोल, परयम। २ तिक्त पराल, ताता पर रल।

राजोमता (स० खो०) सिद्धनाशरागका उपद्रवविशेष।

राजोल (स० पु०) राजमर्षयं राह।

राजोय (स० खो०) राजोद्वय भेषियरागि कनानि यस्य (भन्वन्व. 5६) इत्यं । या १२१२०६) इत्यं यानि चापस्या य। १ पत्र कमन।

"उधानर्याण्यद्वयमि वयान् मनुनराजोयमिवाहमन्"।

(कुमार ११५५)

२ नील पद्म, नील कमल । (पु०) ३ हरिणभेद । जिस हरिणकी पीठ पर धारियाँ होती हैं उसे राजीव कहते हैं । ४ वृहत् मीनभेद, एक प्रकारकी बड़ी मछली । मनुमें लिखा है, कि यह मछली ह्य्यकर्मणो पानिका विधान है ।

“पाठीनरोहितायाया नियुक्ता ह्य्यकर्मणोः ।

राजीवान् मिहनुषडाश्च मश्लकारश्चैव सज्जगः ॥”

(मनु १।१६)

५ हस्ती, हाथी । ६ सारसपक्षीकी एक जाति । (त्रि०)

७ राजोपजावो । ८ जिम पर धारियाँ हों, धारीदार ।

राजीवगण (स० पु०) एक प्रकारका मान्त्रिक छन्द । इसके प्रथम चरणमें अठारह मात्राएँ होती हैं और नौ मात्राओं पर विराम पड़ता है । इसमें तुकान्तमें शुद्ध लघुका कोई विशेष नियम नहीं है । इसे माला भी कहते हैं ।

राजीवलोकन (स० ति०) राजीव इव लोचने यस्य । पद्मचक्षु, कमलकी तरह आँखोंवाला ।

राजीवलोकन मुण्योपाध्याय—महाराज कृष्णचन्द्रचरितके लेखक । १८११ ई०में यह ग्रन्थ लड़नमें छपा था । इसमें विष्णुल बंगला है अंगरेजी लेखमात्र भी नहीं है ।

राजीविनी (स० स्त्री०) कमलिनी, एक प्रकारका कमल ।

राजुक (स० पु०) मौर्यकालका एक राजकर्मचारी जो एक प्रान्तका प्रबन्ध करता था, कायस्थ ।

राजुदल (स० पु०) एक प्रकारका वृक्ष ।

राजू (हि० स्त्री०) रज्जु देखा ।

राजेन्द्र (स० पु०) राजसु इन्द्र इव श्रेष्ठत्वान् । १ राज-श्रेष्ठ, राजाओंका राजा । २ मण्डलेश्वरसे दश गुना अधिक राजा ।

“चतुर्थोऽनपर्यन्तमधिकारो नृपस्य च ।

यो राजा तच्छतगुणः स एव मण्डलेश्वरः ।

तस्माद्दशगुणो राजा राजेन्द्रः परिकीर्तितः ॥”

(ब्रह्मवैवर्तपु० ८ अ०)

३ राजगिरा नामक साग । ४ राजगिरि नामक पर्वत ।

भोजप्रबन्धमें इनका उल्लेख पाया जाता है ।

राजेन्द्र—एक कवि ।

राजेन्द्र गोसाईं—ब्रह्मचर्यावलम्बी संन्यासि-सम्प्रदायके एक प्रधान आचार्य । वे सदा दिगम्बर वेशमें सब जगह

त्रुमा करते थे । उनके शिष्य भी उनका अनुकरण कर त्यागी हुए थे और सभी अपने आचार्यको देवता जानते थे । ये नागा संन्यासिदल मुविधा पाने पर देश लूटने तथा लड़ाई करनेमें कुण्ठित नहीं होते थे । मुगल सम्राट् अहमद जाहाने नवाब सफदरजुङ्गको बजीर पदसे च्युत कर दिया । मन्त्रिवरने इस काममें संन्यासि दलका साहाय्य ग्रहण किया था । सन् १७५३ ई०में २०वाँ जूनको सम्राट् सैन्यके साथ युद्ध करने समय राजेन्द्रकी मृत्यु हुई ।

राजेन्द्रचोल—(उपाधि मधुरान्तक परकेजरीचर्मन्) सूर्य-वंशीय एक विस्थात दिग्विजयी राजा तथा सूर्यवंशीय प्रथम राजराजका पुत्र । सन् १००२ ई०में इन्होंने सिंहासन पर आरोहण किया था । तिरुमल आदि नाना स्थानोंसे आविष्कृत प्राचीन द्राविड भाषामें मुद्रां गिला-लिपिमें मालूम होता है, कि इन्होंने १२वें राज्याङ्कके पहले इङ्गितुर, वनवामी, कोलिपाक, मन्नेकटकम, इड-मण्डल (चेड वा पाण्ड्यराज्य), चालुक्यपति जयसिंहको पराजित कर इडट्टपाडि, नवनेत्रिकुलके शील, विक्रमवीर-के अधिकारभुक्त शंकरकोटम, मडुरामण्डल वेङ्गिलैवारेमें पञ्चपल्ली, चन्द्रवंशीय धीरतरको पराजय कर माशुनिदेज, ओडुविषय, ब्राह्मणसमवेत कोणलदेज, धर्मपाटको पराजय कर दण्डभुक्ति रणशूरको पराजय कर सर्वदिकप्रसिद्ध दक्षिणराट्ट, गोविन्दचन्द्रको पराजय कर वङ्गाल, सङ्गकोट्ट (कोटिवर्ष या देवकोटक) मही-पालको पराजय कर रणदुर्मद हस्तिर्यो (हाथियों) और उत्तरराट्ट तथा नाना तीर्थ परिशोभित गङ्गा तक जय किया था । पूर्वचालुक्यराज प्रथम राजराजे उसके दामाद थे । इनका कन्याके गर्भसे महानीर राजेन्द्रकुलोत्तुङ्ग चोलदेवने जन्मग्रहण किया । इनके पित्रुव्यसाके साथ चालुक्यराज विमलादित्यका और इनकी बहनके साथ पल्लवराज चन्द्रदेवका विवाह हुआ । कई शिलालिपियोंसे इनके जैन होनेका अनुमान किया जाता है ।

राजेन्द्र तर्कवागीश भट्टाचार्य—ललितारहस्य नामक तन्त्र-ग्रन्थके पणेता ।

राजेन्द्रदशावधान भट्टाचार्य—पिङ्गलतत्त्वप्रकाशिकाके रचयिता ।

राजेन्द्रदास—महाभारतके भाषिपरमर्षके पद्यानुवादक।

इन्होंने प्राया तीन सौ वर्ष पहले यह ग्रन्थ बनाया था।
मनुवाद भावपूर्ण और प्राञ्जल है।

राजेन्द्र पाण्डव—वाक्सिपात्यके पाण्डववंशीय दो राजे।

गायकपर्णके दो।

राजेन्द्रकाक मित्र (राजा)—ब्रह्मके एक प्रसिद्ध परिव्रत।

२४ परमनेके अन्तर्गत सु झा नामके विचयात मित्रवंशमें
इनका जन्म हुआ था।

गौडराजको समामें भाये हुए कामिन्दास मित्रसे
१४ पौड़ी नाथे सत्यनाम मित्र उर्फिसामें था कर वस
गये। इसके बाद इन वंशको एक शाखा हुआकी जिसेके
अन्तर्गत कोमनगर प्राममें बसो गए। राजेन्द्रनामके
पूर्वपुरुष बर्हासे पहले कजकनोक गोविन्दपुरमें और पीछे
मधुभावाशरसे सु झामें बसे गये।

इपरेके सत्यनामके पीछे रामधाम मित्र मुनिवावाइके
नवाबके यहाँ बोधाम थे। उनके मरने पर उनके छोड़के
भयोप्यारामने उस पद पर रह कर रायबहादुरकी उपाधि
पाई। भयोप्यारामके पीछे पोताभर मित्र दिल्ली हर
बारमें भयोप्यारामके नवाब यश्वरकी ओरसे बकील थे।
पोछे बाइशाइके भयोप काम करके इन्होंने रायबहादुरकी
उपाधि तथा तीनहजारो मनसबवारका पद पाया।
केवल यही नहीं—दोभाबके अन्तर्गत कजा प्रदेश भी
इन्हें जागीरमें मिला। १७४४ ई०में काशीके राजा जित
सिंह जब बागो हुए तब उनका वमन करनेके लिये पोता
भर मित्र अगरेख सेनापति पामर की सहायतामें बर्हा
मेरु गए। रामनगर मुर्गेके अधिकारकारकेमें वे रज
सैनमें उपस्थित थे। १७८७ ई०के मध्य कलकत्ता
कीट कर इन्होंने वेण्यवधर्म प्रहण किया। १८०६ ई०में
उनके पत्नीक सिंघारले पर उनके पुत्र पून्नावनचन्द्रने
पिताके पनरक और उपाधिको पाया।

दिल्लीहरवारसे नौकरी छोड़ते समय इनका पाबना
६ लाख रुपया था, सुजा उद्दीलान कुछ बुका दिया।
महापद्म-युद्धके समय उनको दो लाख बोन इजार रुपय
की कजा जागीर हाथसे जाती रही। पून्नावनचन्द्र पीछे
पीछे पितृसम्पत्ति का कर करके कलकत्तीके बंधाम हो
गये।

रामनगर लूटनेके समय राजा पोताभर कुछ संकल
भीर पारसी ग्रन्थ ले कर कलकत्ते भाये। ये वेण्यवधर्म
प्रहणके बाद कलकत्ता मधुभावाशरका बासभवन परि
त्याग कर सु झाकी उद्यानवाटिकामें रहने लगे। पून्वा
वनचन्द्रके यथेच्छ रूपसे पितृसम्पत्ति यहाँ तक कि
मधुभावाशरका मकान भी नष्ट हो गया। उनके बड़े
सङ्कट अन्तमेत्रय मित्रने पितृसम्पत्तिमेंम कुछ हस्त
लिखित संकल और उर्दूके ग्रन्थ पाये जिन्हें पढ़ कर
उन्हें बहुत कुछ ज्ञान हो गया था। उन्होंने अपने भण्य
पसायस कई ग्रन्थ लिखे और प्रकाशित किये। Dr
Shanibrel नामक एक फण्डितसे इन्होंने सबसे पहले
किमिय-विद्या पढ़ी। इसके पहले और किसी भी वंशाली
न किमिय विद्या नहीं पढ़ी थी।

अन्तमेत्रयके तृतीय पुत्र राजेन्द्रकाठका १८२४ ई०को
१५वीं फरवरीको जन्म हुआ। पाँच वर्षोंका उमरमें इन्हें
पहले पढ़क उर्दू वर्णमाळा सिखाई गई। इसके बाद
इन्होंने राजा पैदावाथ रायके पारिवारिक गुरुके बहूना
माया सोबी। तीन वर्ष बगुला और उर्दूभाषा सीख
कर ये पधुरिपाचारके जेम्बसुके स्फूर्द्धमें अगरेखी पढ़ने
लगे। इस समय इनका अधिकारिण समय पितृव्यसाके
हो बरमें व्यतीत हुआ था। जब इनकी उमर प्यारह वर्ष
की हुई तब ये भीरांगदुर मित्रके पुत्रने मकानके समीप
गोविन्द वसाक विद्यालयमें मर्हो हुए। १८३८ ई०के
अक्टूबरसे जगायत १८३६ ई०के अक्टूबर तक ग्रीहा और
कासलैंगुलउबरसे प्रपंडित हो इन्होंने पढ़ना निज्जता बंद
रखा। उसी सालके नवम्बर महोत्तमें जब इनकी उमर
पन्द्रह थी तभी चिन्दिशाशास्त्र पढ़नेके लिये कर्ककला
मेडिकल कालेजमें प्रवेश किया। इस समय भी इन्हें
घर पर सि० कामरेसे पढ़नेमें सहायता मिलती थी।
कालेजमें इन्हें प्रति वर्ष पारितोषिक मिलता था। प्रखर
बुद्धि देख कर १८४१ ई०में शारकामाय डाक्टरने इन्हें
चिन्दिशाशास्त्रमें सुपण्डित करनेके लिये इन्क्रेडिट मेडना
धाहा। किन्तु राजेन्द्रनाथके पिताने यह खबर पात ही
बिधायत यान्त रोक दी। जबक रोक ही नहीं दी, वरन्
इसके बरहलक विद्यालयसे नाम भी कटवा दिया।

अनन्तर राजेन्द्रकाक बड़े बुकित हो कर बकाबत

पढ़ने लगे। बंगालत पास करने पर इन्हें कलकत्तेकी सदर अदालतमें बंगालती अथवा मुनसफफा काम करनेका हुकुम मिला। किन्तु किसी पदकी चाह न करते हुए इन्होंने जजोकी परीक्षा दी। दुर्भाग्यवशतः इनकी लिखी परीक्षा काफी खो गई तथा दूसरे नर्गसे वह परीक्षा भी बंद हो गई जिससे इनका उद्देश सिद्ध न हो सका। पीछे इसके लिये इन्होंने फिर कभी कोशिश भी नहीं की। अब इन्होंने साहित्यचर्चाकी और ध्यान दिया।

इसके बाद घरमें रह कर इन्होंने संस्कृत, पारसी, हिन्दी और उर्दू भाषामें अच्छी व्युत्पत्ति प्राप्त की। पीछे १८४६ ई०के नवम्बर मासमें ये कलकत्तेकी एशियाटिक सोसाइटीके सहायक सम्पादक तथा प्रन्थरक्षकके पद पर नियुक्त हुए। इस समय इनकी उमर सिर्फ २३ वर्षकी थी। इस पद पर ये १० वर्ष तक रहे। १८५६ ई०के मार्च मासमें आप गवर्मेण्ट वार्डके डियरेक्टर हुए।

मेडिकल कालेजमें पढ़ने समय सत्तरह वर्षकी उमरमें इनका विवाह हुआ। किन्तु पाच वर्ष बीतने न बीतने लोका देहान्त हो गया। पीछे ३६ वर्षकी उमरमें इन्होंने फिरसे दूसरा विवाह किया।

डा० राजेन्द्रलालने किसी भी सरकारी स्कूलमें नहीं पढ़ा था। घरमें रह कर इन्होंने अङ्ग्रेजी, बङ्गला, संस्कृत, हिन्दी, उर्दू और पारसी भाषा पढ़ी थी। मेडिकल कालेजमें रहते समय इन्हें फारसी, लाटिन, ग्रीक और एशियाटिक सोसाइटीमें जर्मनभाषाका भी अच्छा ज्ञान हो गया था। Journal of the Asiatic society of Bengal नामक पत्रिकामें १८४७ ई०को इन्होंने सबसे पहले अंगरेजी प्रबंध लिखना आरम्भ कर दिया। १८४६ ई०में इन्होंने संस्कृत 'कामन्दकीय नीतिसार' और १८५१ ई०में 'विविधार्थसंग्रह' नामक एक सचिव मासिकपत्र तथा 'रहस्यसन्दर्भ' नामक एक दूसरा मासिकपत्र निकाला था। १८७५ ई०में इनका उड़ीसाका पुरातत्त्व (Antiquities of Orissa) प्रकाशित हुआ। उस ग्रन्थके सम्बन्धमें स्वयं ग्रन्थकर्त्ताने ही लिखा है, "Some relics of the past weeping over a lost civilization and extinguished grandeur" इसमें स्थापत्यविद्या, धर्म और भारतके प्राचीन इतिहासका यथेष्ट प्रमाण लिपि-

बद्ध है। इसके तीन वर्ष बाद इन्होंने 'युद्धगया' नामक ग्रन्थका प्रचार किया। इसमें भी इन्होंने गवेषणापूर्ण गुक्तिवत्से धारावाहिक इतिहासका काल निर्णय करनेमें विशेष चेष्टा की थी। भग्नमन्दिरादिका निदर्शन, गिला लिपि और प्रस्तरनिर्मित प्रतिमूर्त्ति आदिके भी वे अनेक परिचय दे गये हैं। उनके अध्यक्षताय और अनुसन्धित्साके प्रबल अनुरागके सम्बन्धमें ब्रिटानिकाके जीवनी लेखकने जो लिखा है उसका आशय इस प्रकार है,—“भारतीय प्रतत्त्वके सम्बन्धमें उनका गवेषणापूर्ण प्रवृत्त पढ़ कर यूरोप और अमेरिकाके पण्डित उनका यथेष्ट सम्मान करते थे। डा० माक्समूलर, गार्सिन डि टासी, अध्यापक फ्रसे, अध्यापक कुह्न, मेयरडेर, वेरर, बोथलिङ्क, होम्बो, राफू, गुवानेथी, गोल्डस्मिथ, एग्लिं, जन मुरर, आमरो, हर्मनब्रूक्स, कौपल, एडवर्ड डामम, हिल्ले, डोशन, ऑफ्रेकू, डा० स्पेडर, डा० रोथ, ब्रायन, हजमन, डा० वूलर, डा० किलहार्ण और डा० युर्णल आदि प्राच्यप्रतत्त्वानुसन्धित्सुओंके साथ इनके भारतीय पुरातत्त्वके सम्बन्धमें बहुत लिखा पढ़ी हुई थी।”

पहले लिखा जा चुका है, कि इन्होंने सरकारी विध्व-विद्यालयमें शिक्षा नहीं पाई थी और न इन्हें कलकत्ता युनिवर्सिटीसे विद्याविशेषकी पारदर्शिताके लिये कोई पारितोषिक ही मिला था। उनकी यह असामान्य ज्ञान-ज्योति देव कर कलकत्ता युनिवर्सिटीने स्वतः प्रवृत्त हो कर इन्हें L. L. D की उपाधि दी थी। १८७८ ई०के दिल्ही दरबारमें लार्ड लीटनने राजकीय उपाधि घोषणाके समय डा० राजेन्द्रलालको 'राय बहादुर'की उपाधिसे विभूषित किया था। १८६१ ई०से वे कलकत्तेकी एशियाटिक सोसाइटीके सहकारी-सभापति पद पर नियुक्त थे। १८६५ ई०के दिसम्बर मासमें वे हंगेरीकी वैज्ञानिक सभा (Academy of Sciences) के वैदेशिक सभ्य बनाये गये। बुडा-पेष्ट नगरीकी सण्डे न्युज' नामक पत्रिकामें इन्हें Honorary member of the Royal Asiatic Society of Great Britain, Corresponding member of the German and American Oriental Society, Honorary member of the

Imperial Academy of Vienna Fellow of the Society of Northern Antiquities of Copenhagen और Corresponding member of the Berlin Anthropological Society भाद्रि समाजके सदस्य भी थे। और भी गौरवका विषय यह कि इन्होंने फरासी प्रयातनकी समाहसे क्रान्तराज्यक राजकीय शिक्षा विभागसे *Palmelet* और *Diploma* पाया था।

इसके बाद १८८५ ई०में इन्होंने पश्चिमाटिक सासा इत्येके समापतिका पद पाया। आ० राजेश्वरका सभी उपाधियों और सम्मानका अयेहा विद्वत्समाज इस सम्मानको गुरुतर और अधिक धुल्यवार्य समझने थे। उनका इस कामकासे प्रसन्न हो तथा उनका भावि ज्ञात्य देय कर मयमें रहने इन्हे C I E और पीछे राजा की उपाधि दी थी। यूरोपीयगण्य मुककण्टसे इन्हे प्राचीन भारतीय इतिरुत उद्याका मुकपात्र लाकार कर गये हैं।

उनका साख्य उतना अच्छा नहीं था। इस कल गरीबके छे कर ये जिस भूम्य उसाहसे महाकाथमें सगे हुए थे उसका क्याम करनेसे वज्जीय जीवनक काम और बुद्धिाधिकी तीक्ष्णताका पूरा पूरा पता लगता है। इस प्रकार साहित्यसेवामें अपना सुदुर् जीवन बिता कर राजेश्वरका १८९१ ई०की २१वीं सुभाईको इस छोकरस चर बस।

नकी ब्याहित म्प्यावजो।

भङ्गरेको—

- १ उडासाका पुणतल्ल—दो भाग।
- २ सामवेदक अन्तर्गत छात्रोग्य उपनिषद्का अनुवाद।
- ३ १८७१ १८७७ ई०में प्राप्त संस्कृत ग्रन्थकी विवरणी।
- ४ पश्चिमाटिक सोसाइटीके ज्ञान्पुष्पों संघुहीत मारतीय विस्मयघोतक पत्रार्थोंको विवरण सहित ताजिका (Catalogue)
- ५ पश्चिमाटिक सोसाइटीके पुस्तकाखयको ताजिका।
- ६ संस्कृत व्याकरणोंको समानोचनापूर्ण ताजिका।
- ७ पश्चिमाटिक सोसाइटीको पत्रिकाक १९ २४ भाग का सुधोपन।
- ८ बुद्धगया।

Vol. I/X, 83

- १ यूरोपीय वैज्ञानिक शब्दकी परिभाषा।
- १० भार्यहिनू (Indo Aryan) दो भाग।

संस्कृत—

- १ पञ्चवैदान्तगत तैत्तिरीय ब्राह्मण १८५४—१८६१,
- २ " " भारण्यक १८७२।
- ३ " " प्रातिशाख्य १८७२।
- ४ अथर्ववेदान्तगत गोपध्याह्नय १८७२।
- ५ कामम्बकीय गीति १८७६।
- ६ शीतमयधन्वोदपनाटक १८८४।
- ७ छत्रितयिस्तर १८५४ १८७७।
- ८ भग्निपुराण १८७३-७८।
- ९ पेत्ररेय भारण्यक १८७३।

बङ्गला—

- १ विवचारसंग्रह (१८५०—५३ ई०), २ खल्लय सन्तर्भ (१८५८ ई०), ३ माकृतिक मूगोळ (१८५७), ४ पत्रकसुखी (१८६३), ५ व्याकरणप्रवेश (१८७३), ६ शियाजीकी जीवनी (१८७२) मवाङ्कका राज इतिहास (१८७३) इसके सिवा इन के यकसं मात्तवर्षका बङ्गला, नागरी तथा पारसी मानचित्र; पश्चिमाका पारसी मानचित्र; स्कूलमें काम आन लायक बहुतसे छोटे बड़े मानचित्र; भौतिक मानचित्र (Physical chart) भाद्रि सम्पादित हुए थे।

नीकरीसे भङ्ग होने पर इन्हे ५ सौ रुपयेकी मासिक रुचि मिलती थी।

राज्य (सं० पु०) पदेक, परबख।

राजेश्वर (सं० पु०) राजप्रभू, राजाभौका राजा, महा राज।

राजेश्वर—पाण्ड्यवंशीय एक राजा। पाण्ड्यन क देवो।

राजेश्वर (सं० श्लो०) १ शूपात्र नामक धान। २ राजभोग्य। (पु०) ३ राजप्रमाण्यु, माक व्याज।

राजेश्वर (सं० श्लो०) १ काकीपुत्र, कडेका वेङ्ग। २ विरह कश्चर पिंडकश्चर। (वैष्णविक०)

राजेश्वर जनसंगक (सं० पु०) राजेश्वर जन इति संज्ञा यस्य इति कर्म। श्वाङ्क्यारुष, भावजनवानका वेङ्ग।

पर बैठनेके समय या राजसूय यज्ञमें राजाका अभिषेक जो वेदके जल और ओषधियोंसे कराया जाता है।
२ किसी नये राजाका राजसिंहासन पर बैठना या बैठाया जाना, राजगद्दी पर बैठनेको राति।

राज्याश्रममुनि (सं० पु०) राजा, नरपति।

राज्येश्वर (सं० पु०) राज्यस्य ईश्वरः। राज्यका ईश्वर, राज्याधिपति।

राज्यैश्वर्येण (सं० अश्र०) राज्यके एक देशके सिवा।

राज्यैश्वर्यं (सं० स्त्री०) राज्यमेव ऐश्वर्यं। राज्यरूप ऐश्वर्य।

राज्योपकरण (सं० स्त्री०) राज्यशासनोपादानसमूह, राज-चिह्न।

राट (सं० पु०) १ राज, वादजाह। २ श्रेष्ठ व्यक्ति, सरदार।
३ किसी बातमें सबसे बड़ा पुरुष। इस शब्दका प्रयोग प्रायः यौगिक शब्दोंके अन्तमें होता है।

राटि (सं० पु०) राटयति परस्परमाह्वयत्यनेति रट णिच्-इत्। १ युद्ध, लड़ाई। राटयतीति रट मक्षणे स्वार्थे णिच्-इत्। २ शरारिपक्षी, टिट्टिहरी नामकी छोटी चिड़िया।

राटिका (सं० स्त्री०) हरिणका चीत्कार या शब्द।

राट्ट (सं० पु०) एक आचार्यका नाम।

राट्टल (हि० पु०) वह बड़ा तराजू जो लट्टा गाड़ कर लटकाया जाता है और जिसमें लोहा, लकड़ी आदि चीजें मनोंकी तौलमें तौली जाती हैं।

राठ (सं० पु०) मदनवृक्ष, मयनाका पेड़।

राठ (हि० पु०) १ राज्य। २ राजा।

राठ—१ युक्तप्रदेशके हमीरपुर जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २५° २८' से २५° ५६' उ० तथा देशा० ७६° २२' से ७६° ५५' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ५७४ वर्गमील और जनसंख्या डेढ़ लाखके करीब है। इसमें राठ नामक एक शहर और १७६ ग्राम लगते हैं। इसके पश्चिममें धसान, उत्तरमें चेतवा और पूर्वमें विरमा है।

२ उक्त तहसीलका एक नगर। यह अक्षा० २५° ३६' उ० तथा देशा० ७६° ३४' पू०के मध्य हमीरपुरशहरसे ५० मील दक्षिण पश्चिममें अवस्थित है। जनसंख्या दस हजारसे ऊपर है। राठौरराजपूतोंके रहनेके कारण इस

स्थानका राठ नाम हुआ है। १२१० ई०में सरफउद्दीनने इस नगरको बसा कर अपने नाम पर इसका सरफावाद नाम रखा। अभी वारिणज्यपथके बदल जानेसे वारिणज्यमें बहुत धक्का पड़चा है। यहां बहुतसा मस्जिद, मन्दिर और प्राचीन कीर्तियोंके निदर्शनस्वरूप पुष्करिणी देखी जाती है। नगरके दक्षिणभागमें प्राचीन चन्देलराजवंशके महलोंका मण्डप पड़ा है। जैनपुर और चरवारी राजों द्वारा प्रतिष्ठित दो दुर्ग अभी अन्तर्गतमें पड़े हैं। मस्जिदोंके, शिल्पाकलकमें और दूजेयके शासनकालकी तारीख लिखी हैं। चोगदादके अवशुल कादर जिलाधीके विख्यात मद्रवरेने एक ईट ला कर उसीके ऊपर यहांके 'बड़े पीर का मकबरा' पड़ा किया गया है। १८५७ ई०के गदरमें यहांके तहसीलदार और कानूनगो विद्रोहोंके हाथ मारे गये थे। स्थानाय प्रजा विद्रोहीदलमें जानिल न थी। १८६७ ई०में यहां म्युनिस्पलिटि स्थापित हुई है। गहरमें अनाज, चने और चीनोंका कारखाना होता है। यहां अमेरिकन मिशनकी एक शाखा, अस्पताल और एक स्कूल है।

राठवर (हि० पु०) राठौर देखो।

राठौर—मारवाडवासी राजपूत जातिकी एक शाखा। शाहजुहोन थोरोंके भारतविजयकालमें १२६३ ई०की कनोजराज जयचंद्रके समय इन लोगोंने ज्ञानीय गौरवसे ऊंचा स्थान दखल किया था।

मारवाड, राजपूत और राठकूट शब्द दखा।

राडि (सं० स्त्री०) शरारिपक्षी, टिट्टिहरी।

राठ—वर्तमान चन्द्रशका पश्चिमाश। किसीके मतसे यह शब्द संस्कृत 'राट्र' शब्दका अपभ्रंश है। फिर कोई 'लाट' से 'राठ' देशकी उत्पत्तिकी कल्पना करने हैं। हम लोगोंके विचारसे 'राठ' शब्द संस्कृत-मूलक नहीं है, यह शुद्ध देशी शब्द है। संथाली भाषामें 'राठो' शब्द देखा जाता है जिसका अर्थ है नदीगर्भस्थ शैलमाला वा पथरोली जमीन। इसी संथाली शब्दसे शाब्द इस 'राठ' शब्दकी उत्पत्ति हुई हो।

ईसाजन्मसे पहले २री सदीमें मागधो भाषामें रचित जैन अद्भुत 'राठ' देशका उल्लेख है। ५वीं सदीमें रचित सिंहदके पालिमहावंशमें इस स्थानका 'लार' नामसे,

इसो सभोमें उरकीर्य धर्मपाठक संस्कृत ताम्रशामनमें 'काट' नामसे, ११वा सभोमें ताम्रप्रथमावामो उरकीर्य एकेन्द्रबोधकी शिलाविषयि 'काट' नामसे तथा उस समयसे संस्कृत प्रबोधबन्धोदय नाटकमें 'राडा' नाम से उल्लेख देखा जाता है ।

सुतिहासार्थ जिह्मेके उत्तर इहाँ भागोरथो इन्द्रियमुक्तो बुरि है, इहाँस के कर हावड़ा जिह्मे तक भागो। थोका सभो पत्रिचर्मास एक समय 'राड़' कहलाता था ।

१२वो सभोमें प्रसिद्ध मुसलमान पेशिहासिक मिन-हाज-न सिराहने छद्मपावती राज्यका परिषय देने समय जो बर्णन किया है वह इस प्रकार है,—“यज्ञाके हीनों किनारे छद्मपावती राज्यके दो पंच हैं। (यज्ञाक) परिषय मोर 'रास' (राड) है एनी मोर छकनार गगत है । पश्चिम (या उत्तर पार) बरिम् (वरैत्र) कह लाता है । यहाँ देवकीट नगर स्थापित है ।” ० मिन हाजके वर्णनमें मान्य होता है, कि उस समय छद्मपावती थी और उसक चारों मोर बर्षस्थित राजनगर (यात्र पुर वा उत्कलका उत्तरांश) वज्र कामरूप मोर भिदबुत (मिथिला) ये सभ देश मिला कर 'गोड़' कहलात थे ।

मिनहाजके वर्णनस यह भी ज्ञाना जाता है, कि राजा छद्मपलसेनके समय परांगमान बारमूम बर्दमान चक्रुका, संधाळ परगना और दुगला मिला 'राड' नामस ही प्रसिद्ध था तथा 'कानोरा' वा छद्मपलनगरमें राड़देग की राजधानी थी । यह छद्मपलनगर प्रमो कीरपूमके मध्य कवक 'नगर' नामसे प्रसिद्ध है ।

राड़पत्रका विशेषता यह है कि यहाँकी मिट्टी बहुत कड़ी और ठेकनेमें विरूत वा रकाम होता है । उसमें मूला और सीढ़ पषसाह मिला है, बाघ बीघमें क कर है भागोरथो गर्म तक बोधकका रोगा लड़ा है, बहुत-सी पहाड़ो नविषोके बहुत हुए भी जमीन उरतो उपजाऊ नही है और भविर्काल जमीन ऊँचा लीची है । राड़का अन्न यहाँ बहुत देर नहीं उहरता । राड़मूमकी यह विशेषता पीरमूमसे छोरागागपुरकी शैकमाका तक विभूत

है । इस कारण मूलव्यविषोके निरुद्ध भी यह विस्तीर्ण भूभाग 'राड़' कहलाता है । बाह्यर्षका विषय है, कि भागोरथोके पश्चिमपार अर्थात् राड़ भूभागकी जैसी विशेषता है भागोरथोके पूर्वापार अर्थात् बगड़ी भूभाग की जैसी नहीं है । यहाँकी जमीन उपजाऊ है और राड़के अटले सहजमें हुए जाता है । पूर्णवज्रके उप जाऊ भूभागके साथ बगड़ीभूभागका सम्पूर्ण सादृश्य देखा जाता है ।

शामनको पैसो विशेषता देखा कर ही पूर्वकालमें बरैत्र, राड़ और वज्र विभाग कल्पित हुआ था । इस प्रकार जमीनकी विशेषताके अनुसार भागोरथोके पश्चिम तीरसे राड़ और पूर्वतीरसे असन्न वज्र आरम्भ हुआ । जलिसगमतम्बम यह राड़ भूभाग हो 'अन्न' नामसे वर्णित है । जैसे—

‘व क्षणम् एतारम्भ सुशेयन्तम् विभ ।
ताम्रकाभिषा देवा पाशावां नहि कुम्भते ॥

इस कठिन मूलिकामय गिरिनदीनमाकुञ्ज स्वाल्प-कर स्थानमें ही शायद मति प्राचीन कालसे भार्य उप निवेश रहा होगा । मिहलके महाय शर्म जिह्वा है, कि बुद्धजन्मस पहले इस राड़में सिहवाहु राजा करत थे । सिहपुरमें उनको राजधानी थी । उजने पुत्र विजयसिंह स सिंहसर्ग राड़ोप सन्पत्ता विस्तृत हुए । महाय शर्मे मतसे विजयसिंहस 'सिंहल' शोपका नामकरण हुआ । जैन भाषाएराहुसुवर्गमें जिह्वा है, कि मन्तिम तीर्थंकर महा बार लामो यहाँ बारह वर्ष रह कर अज्ञको आठिमें भी परांगत्वका प्रकार किया था । अश्वमेधोपरादायके प्रकृतिकाश्चमें (१३ म०) जिह्वा है, कि “राड़ो और बाम्नेय वीरोंने शङ्खुवृक्षकी भारसे पुत्र किया था ।”

राड़क (स० पु०) लनामकथात देग ।
“मन्था ममावशापो व वात्स्योगीडराडुकाः ।”
(न्योविस्तर)
राड़ा (स० खो०) १ शभा, क्षत्रि । २ कालि, क्षाति । ३ एक पुरोका नाम ।

• मिनहाज वरकान् इन्द्रविती इहम् ॥
† वृषभ इन्द्रो १०।८।
Vol XIX, 94

‘गोड़’ उच्यतेतुसर्ग निरुत्तमा एषापि एरापुरी ।
भूरिर्भेच्छिन्नामधामसर्गम तथा लामा भाः सिता ।”
(महाभारत)

तुङ्गी, नक्त, दोषा, वासतेर्या, तमा, क्षमा, गताशो, क्षणिनी, निगिथ्या, चक्रमेदिनी, गर्वारी, शय्या, वासुरा, निपद्वरी, वसति, वायुरोषा, निगोथ, निट्, यामवती, तारा, भूया, ज्योतिप्रती, तारकिणी, काला, कलापिनी ।

वैदिक पर्याय—श्यावी, श्रपा, गर्वारी, अमन्तु, ऊर्मा, वास्या, यस्या, नस्या, दोषा, नक्ता, तमस, रजस, असिक्ती, पयस्वती, तमस्वती, वृताची, गिरिणा, मोकी, शोकी, उधस, पयस, हिमा, वस्वी । (वेदनि० १।७)

“यदा दिञ्चु च अशानु मेरोर्मू गोलकोट्टवा ।

छाया भवेत्तादा रात्रिः स्वाञ्च तद्विरहादिनम् ॥”

(भस्मिपु० गणभेदनामाव्याय)

जब अष्टमिक भावमें सुमेरुकी भूगोलकोट्टव छाया पडती है, तब उसे रात्रि कहते हैं । ज्योतिषशास्त्रके मतसे पृथ्वी सूर्यके चारों ओर घूमती है । घूमने समय उसका जो भाग सूर्यके ओर रहता है वहाँ दिन और जो भाग अंधकारसे ढका रहता है वहाँ रात होती है । मृकशा (Ecl pic) विषुवरेखा (Equator) के ऊपर चक्रभावमें रहनेके कारण पृथ्वीके स्थानविशेषमें रात्रिकी वृद्धि और क्षय होते देखा जाता है । सूर्यके उत्तरायण रहनेसे दक्षिण गोलार्द्धमें कहीं कहीं केवल रात्रि ही रहती है, दिनकी अपेक्षा रात्रिका भाग ही अधिक होता है । पृथिवी देखो ।

पितृ और देवताओंकी रात्रि—मनुष्योंका एक महोना पितरोंका एक दिन तथा कृष्णपक्ष उनका दिन और शुक्लपक्ष रात्रि होती है । देवताओंका एक दिन बराबर है मनुष्योंके एक वर्षके । उत्तरायण दिन और दक्षिणायन रात्रि होती है ।

(ब्रह्मवैवर्त्तपु० प्रनृनिख० ५१ अ०)

स्मृतिमें लिखा है, कि पूर्वोक्त दिवाभागमें जो सब नित्य और नैमित्तिकादि कर्म करने कहे गये हैं, वे यदि प्रमादवशतः न किये जायं, तो रात्रिके प्रथम प्रहर तक उन्हें कर सकने-हैं, इसमें कोई दोष नहीं होता ।

“पूर्वाह्नविहितं कर्म न कृतं तत् प्रमादतः ।

रात्रे स्तु प्रहरं यावत् तत्कृत्वायं वयोक्तवत् ॥

दिवोदितानि कर्माणि प्रमादात् पतितानि च ।

उर्वर्त्याः प्रथमं यामं तानि कुनोदतन्द्रितः ॥” (रत्नाकर)

तीन प्रहर रात्रि, रात्रिका प्रथम और शेष चार षण्ड दिनमें गिना जाता है, इसीसे रात्रिका एक नाम त्रियामा भी है ।

“त्रियामा रजना प्राहुस्त्यक्त्वायन्त्रचतुष्टयम् ॥”

रात्रिकालमें कुलपूजा करना होती है ।

“रात्रावेव महापूजा कर्त्तव्या वीरवन्दिते ।

न दिने सर्वथा कार्या शान्तानामम नुवते ॥” (तन्त्रधार)

रोहिणीव्रत अर्थात् जन्माष्टमी व्रतको छोड़ कर और चाहे जो व्रत हो उसमें वारण नहीं करना चाहिये । किन्तु रोहिणी व्रतमें रातको पारणका विधान रहने पर भी महानिशामें कदापि पारण न करे ।

“न रात्रौ पारणं कुर्यात् मृते वै राह्मिणीव्रतात् ।

तत्र निरयपि वै कुर्याद्ब्रजं पित्वा महानिशाम् ॥”

(तिथितत्त्व)

रात्रिकालमें श्राद्धकर्म कभी भी न करे । रात्रिमें गङ्गास्नान किया जा सकता है ।

रात्रिकालमें एक पहरके भीतर निर्दिष्ट परिमाणसे कुछ कम भोजन करना उचित है । उस समय दुग्धप्राप्य वस्तु भी खाना उचित नहीं ।

“रात्रौ च भोजनं कुर्यात् प्रथमप्रहरागमे ।

किञ्चिद्गुणं समन्वायात् दुर्जरन्तश्च वर्जयेत् ॥” (भावप्र०)

फलितज्योतिषके मतसे,—चन्द्रमा, मङ्गल और शनिप्रहर रात्रिकालमें ही बलवान् होते हैं । रात्रिके तृतीय याममें रवि, बुध, गनि और चन्द्रमा बलवान् हुआ करते हैं । ज्योतिर्विदाभरणमें रात्रिलग्न निरूपणका विषय लिखा है । आकाशस्थ नक्षत्रोंके अवस्थानसे मेघादि लग्नका भुक्त और भोग्यषण्ड स्थिर किया जा सकता है ।

वित्तृत विवरण लग्न शब्दमें देखो ।

३ कौञ्च द्वीपकी एक नदीका नाम ।

(मत्स्यपु० १२२।५७)

रात्रिक (सं० पु०) वृश्चिकभेद, एक प्रकारका विष्णु ।

रात्रिकर (सं० पु०) रात्रि करोतीति क-ट । १ चन्द्रमा ।

२ कर्पूर, कपूर ।

रात्रिकाल (सं० पु०) रजनी, रात ।

रात्रिकृत्य (सं० त्रि०) रात्रिमें आचरणीय विषय, वह काम जो रातमें किया जाय ।

राधिवर (सं० पु०) राक्षी चरताति (सं० १।२।११) इति २ । तथा इति विभाय । पा १।२।१२) इति पथे मुमुक्षाया । १ राक्षस । (जि०) २ रातकं समयं चित्र रनेषाका । क्षिप्रां कोप ।

“४ विपर्ययं कृतपापयत्नां पान्त वने राधिनरो इहोके ।”

(अहि २।२१)

राधिषर्पा (सं० स्त्री०) राक्षेष्पया । रातकं समयं कर्त्तव्यं कर्म । भाद्रिकृतवर्षमें धीर वै०५५में राधिषर्पाका विषाण निर्दिष्ट हुआ है ।

राधिवाते (सं० पु०) राधिवर देवा ।

राधिञ्ज (स० ब०) नक्षत्र तारे भाद्रि ।

राधिमन् (स० स्त्री०) राक्षेञ्जिन । कुम्भटिका, कुहरा ।

राधिजागर (सं० पु०) राक्षी जागतीति भाष्य भष् । १ कुम्भकृत, कृता । (जि०) २ रातमें जागने वाला ।

राधिजागरण्य (स० स्त्री०) राक्षी जागरण्य । रातमें जागना । रातमें नोइ मही भाने तथा जागे रहनेस वायु कुपित हो जातो है इसलिये राधिजागरण्य वैद्यकमें निषिद्ध कहा है । निद्रा रता ।

राधिजागरत् (सं० पु०) राक्षी जागरं जागरणं वृत्तति वा क । मशक, मच्छाड ।

राधिञ्जर (सं० पु०) राक्षी चरताति चर-ञ् (यर्ष) कृते विभाय । पा १।२।१२) इति मुम् । राक्षस ।

राधिञ्जरा (सं० स्त्री०) राक्षसी ।

राधितरा (सं० स्त्री०) गमोरा रजना, गहरा रात ।

राधितिति (सं० स्त्री०) शुक्लपक्षको रात ।

राधिदिगाम् (सं० भ०) दिन भीर रातक बोधम ।

राधिरोष (सं० पु०) रातमें होनवाले अपराध । जैसे—षोटा ।

राधिनाशन (सं० पु०) सूयं ।

राधिर्मिय (स० स्त्री०) राधिस्य द्विया य । दिन भीर रात ।

राधिपरिधिष (स० स्त्री०) राधिसूक्त ।

राधिसूक्त देता ।

राधिपर्याय (स० पु०) यह पाप्य ओ अतिरात्रक योगसे कहा गया है । यह यथाक्रमस तान बार उच्चारण करना होता है ।

राधिपुष्य (स० स्त्री०) राक्षी पुष्यनि विकाराते इति पुष्य भष् । उत्पन्न कमल ।

राधिपूजा (स० स्त्री०) रातकी पूजा । जैसे—श्यामा पूजा ।

राधिवक्ष (स० जि०) राक्षी बक्षं यक्ष्य । १ राक्षस । (जि०) २ रातमें बक्षयान् ।

राधिमुष्क (स० स्त्री०) जैनोंके भजुसार छठी प्रतिमा को राधिके समय किसी प्रकारका मोहन भादि प्रदण्य महा करतो ।

राधिमोहन (स० पु०) रातमें पाना ।

राधिमट (स० पु०) राक्षी भट्यताति भट् भष् (यर्ष) इति विभाय । पा १।२।१२) इति मुम् । १ राक्षस । (जि०) २ रातमें गमन करनेवाला ।

राधिमणि (स० पु०) रातमें पिरिय । चन्द्रमा ।

राधिमरण्य (स० ब०) राधिके योगमें मरणा ।

राधिमन्य (स० जि०) राधिकाकथिषेचना, राधिकाज ।

राधियोग (स० पु०) राधिका भागमन ।

राधिरक्षक (स० पु०) राधिकाका प्रहरी, रातका पहरा ।

राधिराग (स० पु०) भयकार, भयेरा ।

राधियासस् (सं० स्त्री०) राधेर्वासः यक्षमिव । १ भयकार, भयेरा । २ रातके समय पहननेका वस्त्र । सबेरे उठ कर राधिवास छोड़ देना होता है । दिनमें राधिवास पहननेसे अलक्ष्माकी कृपा होती है ।

“उन्नजन्मभार य राधिराग दिने तथा ।

भ्रामन्तरं कुषक्य वरमिन् शुष्कभावनम् ॥”

(अरधोषीय)

राधिबिगम (सं० पु०) राधिविगमो यत् । प्रभाव, सबेरा ।

राधिविन्द्यपगामिन् (सं० पु०) राक्षी विश्वं विश्वं गच्छतीति गम गिति । १ चक्रपाक, यक्षया । (जि०) २ राधिकातमें बिच्छेयमात्र ।

राधिधेय (सं० पु०) राधि राधिरोषं वैशयति रथेणेति विद् विष् भष् । कुम्भकृत, मुर्गा ।

राधिर्पाद् (सं० पु०) राधि राधिर्यं धेययति स्वरेण विद् विष् गिति । चक्रकृत, मुर्गा ।

राधिसामन् (सं० स्त्री०) सामभेय । (उ० ११।१०१)

राधिसूक्त (स० ब०) श्यपयत्क एक सूक्तका नाम ।

ऋग्वेदका १०।१२७।१-८ तक रात्रिसूक्त है। प्रथम सूक्त यथा—

“रात्री व्यख्यदायती पुत्रा देव्यन्तभिः।

विन्वा अधिभियो अधित ॥” (ऋक् १०।१२७।१)

रात्रिहास (सं० पु०) रात्रेर्हास इव शुभ्रस्यात्, रात्री हासो विकासो यस्य इति वा। कुमुद, कूर्ई।

रात्रिहिण्डक (सं० पु०) रात्रौ हिण्डति अन्तःपुरमध्ये भ्रमतीति हिण्ड-गतौ ण्वुल्। राजाओंके अन्तःपुरका पहरेदार।

रात्री (सं० स्त्री०) रात्रि रुदिकारादिति डीप्। १ निशा, रात। २ हरिद्रा, हलदी। राधि देखो।

रात्राट (सं० पु०) रात्रौ अटतीति अट्-अच्। १ राक्षस। (त्रि०) रातमें घूमनेवाला।

रात्रान्ध (सं० त्रि०) रात्रौ अन्धः। १ जिसे रातको न दिखाई देता हो, जिसे रातोंधीका रोग हो।

देवदारुके चूर्णको बकरीके दूधमें इक्कोम बार भावना दे। पीछे उसे नेत्रमें लगायेसे रात्रान्धरोग दूर होता है।

“धेवदारुभ वै चूर्णमजामूलेण भावयेत्।

एकविंशति वै वारमक्षिणी तेन चाख्येत्।

रात्र्यन्धता पट्नता नश्येदिति विनिश्चयः ॥”

(गर्बुपु० १८६ अ०)

भावप्रकाशमें लिखा है, कि दूषित कफ जब नेत्रके तृतीय पटलमें आश्रय लेता है, तब रात्रान्धता होती है। दिनके समय कफ प्रायः नहीं रहता, इसी कारण रोगीको दिनमें दिखाई देता है। (भावप्र० नेत्ररो०)

चक्षुरोग और नेत्ररोग देखो।

२ वे पक्षी और पशु जिन्हें रातको न दिखाई देता हो। जैसे,—कौआ, बन्दर।

“दिवान्धा प्राणिनः केचित् रात्रान्धास्तथापरे।

केचिद्दिवा तथा रात्री प्राणिनस्तुल्यदृष्टयः ॥”

(चण्डी १ अ०)

रात्रान्धता (सं० स्त्री०) रात्रान्धरोग, रातोंधी।

रात्राङ्कूपार (सं० षली०) सामभेद।

राधकारिक (सं० त्रि०) रथकार-ठक् कुमुदादिभ्यष्टक्।

पा ४।२।८०) १ रथकारयुक्त देश। २ रथकारका अदूर-भव। ३ रथकार द्वारा निवृत्त।

रथकार्य (सं० पु०) रथकारस्य अपत्यं पुमान् रथकार (कुर्वादिभ्यो ण्यः। पा ४।१।१५१) इति ण्य। वह जो रथकार ऋषिके गोदमें उत्पन्न हो।

राधगणक (सं० षली०) रथगणकस्य भावः कर्म वा, (प्राणभृज्जातिवचनोद्गात्रादिभ्योऽञ्। पा ५।१।१२६) इति रथ-गणक अञ्। रथगणकका भाव या कार्य।

राधजितेय (सं० त्रि०) रथजित् नामक अस्त्ररागणभेद, विभ्रजयीवृद्धिके विरागविशेषका उत्पादन करनेवाला।

“रथजिता रथजितेयीनाम्परसामयं सरः।”

(अथर्व० ६।१३०।१)

राधन्तर (सं० त्रि०) १ राधन्तर साम सम्बन्धीय। २ राधन्तरका गोत्रापत्य। छिया डीप्। ३ स्त्री आचार्य भेद। (बृहद्धर्मपुराण ५।२८)

राधन्तरायण (सं० पु०) रथन्तरका गोत्रसम्भव।

राधप्रोष्ठ (सं० पु०) असमातिका गोत्रापत्य।

राधीतर (सं० पु०) रधीतरस्य गोत्रापत्यं रधीतर (अभ्युपानन्तर्यं विदादिभ्योऽञ्। पा ४।१।१०५) इति अण्। रधीतरके गोत्रमें उत्पन्न पुरुष।

रधीतरायण (सं० पु०) रधीतर (हरितादिभ्योऽञ्। पा ४।१।१००) इति फक्। रधीतरके गोत्रमें उत्पन्न पुरुष।

राध्य (सं० त्रि०) रथ्य वा रथ सम्पर्कीय।

(ऋक् १।१५७ इ)

राद्ध (सं० त्रि०) राध सिद्धी क। १ पक्, राधा हुआ। २ सिद्ध, ठीक किया हुआ।

राद्धान्त (सं० पु०) राद्धः सिद्धः अन्तः निर्णयो यस्मात्। सिद्धान्त, उसूल।

राद्धान्तित (सं० त्रि०) सिद्धान्तीकृत, न्यायसूत्र परम्परा द्वारा प्रतिष्ठित।

राद्धि (सं० स्त्री०) सिद्ध होनेका भाव, सफलता।

राध (सं० पु०) राधा विनाला तद्धती पौर्णमासी राधी सास्मिन्नेस्तीति राध (सास्मिन् पौर्णमासीति। पा ४।२।२१) इति अण्। १ वैशाख मास। २ धन, सम्पत्ति।

राध (हिं० स्त्री०) पीव, मजाव्।

राधगुप्त (सं० पु०) वीरसम्राट् अशोकके मन्त्री।

राधन (सं० ङ्गी०) राध-व्युट्। १ साधना, साधनेकी किया। २ प्राप्ति, मिलना। ३ तोप, तुष्टि। ४ वह वस्तु जिससे कोई कार्य किया जाय, साधना।

राधनपुर—बन्धुमैत्रीकी पाखनपुर एजेन्सीका एक राज्य यह अक्षा० २३ २३' से २३' ५८ उ० तथा देशा० ७१ २८' से ७२ ३' पू०के मध्य अवस्थित है। भूप्रमाण ११५० वर्गमील है। इसके उत्तरमें मोरबाद और तरवाड राज्य, पूर्वमें बड़ोदा, दक्षिणमें अहमदाबाद जिन्हा और जिनपुरबाद तथा पश्चिममें पाखनपुरके अधोल भागही राज्य है।

राधनपुरराजा अभी बाबीरंशकी एक शाखाके अधिकारमुक्त है। बाबीरंशके भाविपुत्र्य हुआपू के साथ भारतवर्ष आये थे। शाहजहाँके समय बहापुर की बाबी पराङ्क फीजवार बनाये गये। उस समय शाहजादा मुराद गुजरातमें शासन करते थे। उनकी सहायतामें बहापुर कीका छड़का शेर की बाबी मेजा गया। १६६३ ई०में शेर कीका छड़का जाफल की मपनी बुद्धिमत्तासे राधनपुर, समी, मन्नपुर और तरवाङ्क फीजवार हुआ। उस समय उसमें अपना नाम सफरद की रखा। १७०४ ई०में यह बोजापुर्का और १७०६ ई०में पारभरा गवर्नर बनाया गया। उसके मरने पर उसका छड़का की महान् या श्रीजी कनि प्रधान मुण्ड कीकी उपाधि पाई। वह राधनपुर, पाटन, बड़नगर, विशाल नगर, बोजापुर् और जेराम्बूका गवर्नर था। पीछे उसका छड़का कमाजउद्दीन की रीरकुजेबके मरने पर अहमदाबादका गवर्नर हुआ। इसके समय बाबीरंशकी एक शाखामें जूनागड़ और वाकासिनर पर एकज अमाया। १७५३ ई०में रघुनाथ राव पेशवा और दामाजी गायक बाबुमें अहमदाबाद पर चढ़ाई करे। कमाजउद्दीन की शहर छोड़ देनकी बाध्य हुए। १८१३ ई०में सिन्धकी मेरासल जातिन राधनपुर पर आक्रमण किया। नवाबन वृष्टि सरकारसे सहायता पा कर उन्हें गुजरातसे मार मयाया। १८२० ई०में मेजर माइसके साथ राधनपुरके नवाबकी एक सन्धि हुए। यहाँ यह ठहरे, की नवाब अपने राजामें वृद्धि-सरकारक शत्रुको आशय नहीं दे सकत और अदालत पढ़ने पर उन्हें वृद्धि-सरकारसे मर्द मिळ सकता है। वर्तमान नवाबका नाम है पच, पच, श्री अक्षानुद्दीन कीकी बाबी नवाब साहब। इन्हें

११ तोपोंकी सखामी मिळती है और गोड जेनका मो अधिकार है।

इस राज्यमें राधनपुर नामक एक शहर और १५६ ग्राम छगते हैं। जनसंख्या ६० हजारसे ऊपर है। यह और गेहूँ यहाँका प्रधान उपज है। राज्यकी भाय चार जात उपपेसे जगदा है।

२ एक राजाकी राजधानी। यह अक्षा० २३ ४६' उ० तथा देशा० ७१ ३६' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या म्यारह हजारसे ऊपर है। शहरके चारों ओर १५ फुट ऊँची और ८ फुट चौड़ी दीवार बनी है। चारों कोनोंमें चार बुरज और भाठ फाटक हैं। नगरके मध्य-स्थलमें नवाबका दुर्ग और मासाब अवस्थित है। गुजरात, कच्छ और भावनगरक साथ यहाँका बाणिय व्यवसाय चलता है। फते की बखोबके यशहर राधन कांसे नगरका नामकरण हुआ है।

राधन (स० स्त्री०) १ वाचप। २ कपल।

राधना (हि० कि०) १ आराधना करना, पूजा करना। २ काम निष्काटना, साधना। ३ सिद्ध करना, पूरा करना।

राधरङ्ग (स० पु०) १ आङ्गल, हल। २ घोड़ी वृद्धि या पाखा गिरना।

राधरङ्ग (स० पु०) शीकर, मोस।

राधस (स० स्त्री०) अनुग्रह, कृपा, सहायुभूति।

राधस्वति (स० पु०) धनाधिपति, धनाध्य स्वति।

राधा (स० स्त्री०) राधोति साधपति कायांजाति राध भव-दापु। १ पत्नियोंका निजमन्। (वाचस्पत १ यह) २ यिराशा नक्षत्र। ३ मामलकी, भाँसल। ४ विष्णु कस्ता। ५ विद्युत्, बिजली। (शैली) ६ सूत अधिपकी परनी। अधोरघकी परनी राधामें कुन्तीके पर्मसे उत्पन्न कर्णको पाखा पोसा था, इसी कारण कर्ण राधा सुत भी कहलाते थे। (मत्स्य १।१।१५ १६)

● गोविन्दिय, श्रीराधिका, श्रीकृष्णकी वामभागशा शक्ति।

श्रीमद्भागवतमें राधिकाका कोई उल्लेख नहीं है। उन्हें कंसक हृष्य मत्त एक प्रधान सखी बताया है। मन्न येबर्न, श्रीमामयत और पञ्चपुत्र्य आदिमें राधिकाका

विवरण पाया जाता है । उसे यहा पर संक्षेपमें लिखते हैं ।

ब्रह्मवैवर्त्त (ब्रह्मवैवर्त्त ५ अ०)-में लिखा है—
गोलोकके रासमण्डलमें भगवान् श्रीकृष्ण देवताओंके साथ रहते थे । इसी समय उनके वाम पार्श्वसे एक कन्या उत्पन्न हो उनकी पूजा करने लगी । रासमण्डलमें यह कन्या उत्पन्न होते ही श्रीकृष्णके पास दौड़ी थी, इसीसे देवताओंने उनका नाम राधा रखा । यह श्रीमती राधा श्रीकृष्णके प्राणकी अधिष्ठात्री देवी तथा प्राणसे उत्पन्न होनेके कारण उनके प्राणसे भी बढ कर प्रियतमा थी ।

देवी राधा उत्पन्न होते ही मोलह वपको, रूप रीचनसे सम्पन्न, अत्यन्त उज्ज्वल वस्त्रधारिणी, हंस-मुखी और मनोहारिणी हुई । यह देवी अत्यन्त कोमल-लाडूी तथा जगत्की सभी सुन्दरीसे सौन्दर्यवती थी ।

श्रीराधा इस प्रकार आविर्भूत हो श्रीकृष्णसे प्रेम-लाप करने लगी और उनका कोमल शरीर देखते देखते प्रफुल्ल चित्तसे रत्नसिंहासन पर बैठ गई । इस समय श्रीराधिकाके सभी लोमकूपोंसे रूप और वेशरचनामें ठीक उसी तरहकी गोपाङ्गनाप आविर्भूत हुई । इन सब गोपियोंकी संख्या लाख करोड़ थी । उधर श्रीकृष्णके लोमकूपोंसे भी उसी तरहके गोपगण तथा रगविरंगकी गायें उत्पन्न हुई ।

गोलोकमें इसी प्रकार श्रीमती राधिकाकी उत्पत्ति हुई थी ।

यही गोलोकान्द्रवा राधा वृन्दावनधाममें अवतीर्ण हुई थी । वृन्दावनधाममें अवतीर्ण होनेका कारण ब्रह्म-वैवर्त्तपुराणमें इस प्रकार लिखा है,—

एक दिन भगवतीने महादेवसे श्रीराधिकाकी उत्पत्ति, नामनिरुक्ति और ध्यानादिका विषय पूछा था । देवदेव महादेवने अति गोपनीय श्रीमतीके जन्मादिका वृत्तान्त इस प्रकार कहा था,—

एक दिन इच्छामय श्रीकृष्णने गोलोकमें वृन्दावनके रस्यवनमें रहलनेकी इच्छा प्रकट की । इच्छामयकी इच्छा होती ही देवदेवी राधा उत्पन्न हुई । इस समय श्रीकृष्ण दो रूप हो गये । दक्षिणाङ्गमें उन्होंने श्रीकृष्णमूर्ति और

वामाङ्गमें राधाका रूप धारण किया था । परम रमणीया राधिका देवीको रासमण्डलमें रासविहारीके साथ रमण करनेकी इच्छा हुई । श्रीकृष्णकी भी रमणोत्सुक जान कर वे उनके पास दौड़ी थी, इसीसे वे राधा कहलाई । भक्तगण 'रा' शब्दके कहनेसे मुक्तिपद और 'धा' कहनेसे हरिपद पाते हैं, इसीलिये भी उनका राधा नाम हुआ । श्रीमती राधा सुदामाके शापसे वृन्दावनमें अवतीर्ण हुई थी ।

किसी एक समय राधानाथ, गोलोकमें वृन्दावन-स्थित शतशृङ्गपर्वत पर विरजा नाम्नी एक गोपिकाके साथ विहार करते थे । राधिकाकी चार दूतोंकी यह हाल मालूम हो गया सो उन्होंने राधाके पास जा कर कुल वृत्तान्त कह सुनाया । यह सुनते ही राधाके क्रोधका पारावार न रहा और जहाँ श्रीकृष्ण विहार करते थे वहाँके लिये वे रवाना हो गईं । श्रीकृष्णके साथी सुदामाने श्रीराधाका भागमन-कोलाहल सुन कर श्रीकृष्णको सावधान कर दिया और आप गोपगणोंके साथ भाग चले । भगवान् कृष्ण भी प्रेममयी राधाके प्रेमभङ्गभयसे विरजाको छोड़ भागे । विरजादेवी श्रीराधाके भयसे प्राण विसर्जन कर वहाँ नदीरूपमें रहने लगी । राधिका जब वहा पहुँची, तब किसीको न पा कर वापस आई ।

पीछे श्रीकृष्ण अष्ट-शब्दोंके साथ राधाके पास गये । राधाने उन्हें सूव फटकारा । किन्तु सुदामाकी कृष्ण-निन्दा सुन कर रहा न गया सो उन्होंने भा दो चार बातें सुनाई । इस पर राधाने अत्यन्त क्रुद्ध हो सुदामाको शाप दिया, कि 'तुम क्रूर असुरयोनि लाभ करो ।' सुदामा भी कब चुप रहनेवाले थे, उन्होंने भी शाप दिया कि, 'तुम भी गोलोकसे भूलोऊ जा कर गोप गृहमें गोपकन्या-रूपमें जन्म लोगी; सो वर्ष तक असह्य कृष्णविरहदुःख भोग करोगी और भगवान् भृगुहरणके लिये अवतीर्ण हो तुम्हारे साथ मिलेंगे ।' सुदामाके शापसे राधाने गोकुलमें जन्म लिया और राधाके शापसे सुदामा शङ्ख-चूड़ नामसे असुरयोनिको प्राप्त हुए ।

राधा बराहकल्पमें राधिका गोकुल नगरमें वैश्रवण वृषभानुकी कन्यारूपमें अवतीर्ण हुई । वृषभानुकान्ता कलावतीने वायुगर्भ धारण किया था और यथा समय

उसके पापुप्रसव करने पर भयोनिस्मृत भौराधा रूप में हुए । बाह्य वर्षकी उमरमें वृषभानुने राधाप वैश्वक साथ भौराधाका स्वाह करा दिया । भौराधा वृषभानुमुताम अपना छाया रख कर अस्तित्व हो गई था । उसी छायाक साथ राधापका विवाह हुआ था । चौदह वर्ष बात जाने पर भगवान् रूप्य कंससमयक बहाने बाह्यकल्पमें गोकुल भाय । राधाण रूप्यजननी यज्ञादा क माह भीर गोकुलमें भोरुप्यक म शलरूप थे । मत्त पय राधाण सम्पत्तमें भोरुप्यक मामा हुए । ऋगत्भेद पुण्यसम भोरुप्यजनक पतनमें भोरुप्यराधाका सोळा विहार होता था ।

गोर्पाका लजमें भी भौराधाका रूप दर्शन नहीं हुआ था । भौराधा स्वयं भोरुप्यक गाईमें तथा राधापन घर छायाकल्पमें रहती थी । प्रह्लाद भौराधाक चरणदर्शन को कामनास ३० हजार वर्ष पुण्यरतीपम कटोर तपस्या की थी । पाँछे भगवान् जब वृष्योका भार दूर करनेक छिपे भारतवर्षमें नन्दगोपक घर ऋम लिया तब प्रह्ला को भौराधाक चरणकमलका दर्शन हुआ था । भोरुप्यने पुण्य वृन्दावनधाममें भौराधाके साथ श्रवणदास विनास किया था । पाँछे सुदामाक शापस राधाक रूप्य का बिच्छेद हुआ । इसक बाद वृषभानु, नन्द और गोपगोपी सबके सब भौराधाक रूप्यके साथ गोकुलधाममें गये । भौराधाका यह उपाख्यान पापनाशक भीर पुत्र पोसाधिकमसे अशय मङ्गलदायक है ।

भोरुप्य विभुज और चतुर्भुज दोनों रूपमें विभक्त हैं । विभुज भोरुप्यका सर्वोत्तमा भौराधा ही पत्नी हैं तथा चतुर्भुज रूप्यक चार मियतमा हैं,—महाभक्तनी सरलती, गङ्गा और तुलसी ।

परिहतीकी चाहिये, कि ये पहले भौराधाका नाम से कर पाँछे रूप्यका नाम डे । रूप्यनामक बाद राधा का नाम डेनेसे प्रह्लादस्याका पाप होता है । हरि कार्तिकी पूर्णिमाके रासोत्सव उपलक्षमें गोकुल-रासमण्डलमें रासोत्सवकी पूजा करके राधाकचय गले भीर बाहुमें पहनते हैं । इस समय भौराधा ऋगत्पति रूप्यकी और रूप्य भी भौराधाकाकी पूजा करते हैं ।

(मङ्गलवैश्वपु मङ्गलिक ५८५० म०)

राधिकके सोनह नाम थे हैं,—राधा, रासेश्वरी, रासवासिनी, रसिकेश्वरी, रूप्यप्राणाधिका, रूप्यमिया, रूप्यलक्ष्मिणी, रूप्यवामांशसम्भूता, परमात्मलक्ष्मिणी, रूप्यमा, वृन्दावती रूप्य, वृन्दावनविनोदिनी, चन्द्रावली, चन्द्रावली भीर शतचन्द्रनिमानना । भोमती राधिक क ये सोनह नाम सबसे श्रेष्ठ तथा पापनाशक हैं ।

इन सब नाम निरुक्तिका विषय इस प्रकार लिखा है—'रा' का अर्थ दान और 'धा' का अर्थ निर्वाणमुक्ति हैं । जो भक्तोंको निर्वाणमुक्ति प्रदान करते हैं वही राधा है । ये रामेश्वर भोरुप्यकी पत्नी हैं इसलिये रासेश्वरी तथा रासमण्डलमें वास करता है, इस कारण रास वासिनी कम्मा है । ममा रसिकेश्वरियोंकी ईश्वरी होनेके कारण परिहतीने इनका रसिकेश्वरी नाम रखा । ये परमात्म भोरुप्यके प्राणसे भी बड़ कर प्यारी हैं, इससे रूप्यप्राणाधिका और भोरुप्यकी अतिशय प्रिया गन्ता होनेन रूप्यमिया हुए । ये भवलोकाकमसे रूप्यक विधान इन्में समर्थ तथा सर्वां गीमें भोरुप्य सङ्गशी हैं इस कारण रूप्यलक्ष्मिणी कहलाए । रूप्य क नाम भ गसे उत्पन्न होनेके कारण रूप्यवामांशसम्भूता और स्वयं मूर्धिमता परमात्मराशि होनेक कारण ये परमात्मलक्ष्मिणी नामस प्रसिद्ध हुए । 'रूप्य' का अर्थ मोक्ष, पाकारका अर्थ उरठह और माकारका अर्थ दान बोधक है । ये उरठह मोक्षदायिनी हैं, एमसे रूप्य हुआ है । वृन्दाका अर्थ सखी और माकारका अर्थ अस्ति-बोधक है, उनको सखियां विद्यमान हैं, इस कारण वृन्दा कहलाए । विनोदका अर्थ ध्यान है जो उनके वृन्दावनमें सम्पूर्णरूपसे विराजित है इससे उन्हे वृन्दाविनोदिनी कहते हैं । राधिकका मुक्तमन् और नयचन्द्रावली निरन्तर विद्यमान होनेके कारण चन्द्रावली नाम पड़ा । उनको मुक्तमन् अन्तमाक समान है इससे चन्द्रावली और मुक्तमन्दल सौ चन्द्रमाके समान शोभता है इससे ये शतचन्द्रनिमानना कहलाती हैं ।

जो लिमरूप्या राधिकके ये सोनह नाम उपरि हैं ये इस लोकमें राधामाधयक चरणकमलमें मल्लि काम कर परलोकमें अविनादि सिद्धि पात हैं तथा उनके वास्य कार्यमें नियुक्त हो सबदा उनक साथ काजपापन करते हैं । (मङ्गल-भाष्यकमन्व-१० म०)

ब्रह्ममास शुक्लपक्ष पुष्यानक्षत्रयुक्त नवमो तिथिको ।
 भाषो रातमें पद्यिनो देवो विविध कर्मकरजनोंसे पारितो
 मित काश्मिरीजलमें मायामय द्विम्बरूपमें भाषिमूँत
 हुए । महाभाषा कास्वयायधो वह असौम्य तस्रोत्रय द्विम्ब
 ले कर काश्मिरीके किमारी जपपरायण गृहकमानुषे समीप
 उपस्थित हो बोझें, 'वस्तु ! तुम्हारी पत्नीको भक्तिसे मैं
 बहुत प्रसन्न हूँ, उसे कन्यारूप प्राप्त होगा।' यह कह कर
 वे भस्माहित हो गए । गृहकमानुषे यह द्विम्ब अपनी स्त्री
 को दिया । वे बड़े आनन्दसे देखता था कि इसी समय
 द्विम्ब दो भागोंमें बंट गया । उसके बीचमें भुवनमोहिनो
 विद्युच्छताकार सीमायवर्षिनो कन्या देख कर वह
 बहुत विस्मित हो गए । मनन्दर गृहकमानुषे अपनी पत्नी
 कीर्तिदाके साथ मिला कर कन्याका राधिका नाम रखा ।

'रक्षयिष्यत्यमा देवो वत्त मन्दाय शुचिभिरत् ।

कस्यस्य उचिभ्य नाम तर्षणाक्यु गीयते ॥'

(राधाकान्त ७ पद्य)

वह देवो रक्षयिष्यत्यमा धारण करतो था उस
 कारण सभी लोकमें बड़े राधिका नामसे प्रसिद्ध हुए ।
 वह पद्यिनो दूसरे वर्ण रूपको पानेके क्षिप्य दोहशोष
 धारसे प्रकाशकक्षयिणी महाकालीकी पूजा करने लगे ।
 राधावस्त्रमें कुछ भीरु तपसे लिखा है—

विष्णुबल्लभा मृगनपत्न्या राधा ही महाभाषा जग
 श्रावण, सिपुरा भीरु परमेश्वरों हैं । पद्ममग्नियो ही उन
 की वृत्ती हैं, ये ही रूपमन्दा भीरु रूपबल्लभा हैं ।
 गृहकमानुषो ब्रह्मभक्तिसे आरुह्य हो उदगेनि उनकी कन्या
 रूपमें जन्म लिया । ये ही निर्जन वनवेष्टित यमुनाके
 जलमें पद्ममण्डपका आश्रय कर महाकालिका महामन्त्र
 जप रही हैं । उदगेनि ही फिर दूसरी राधाकी सृष्टि की
 थी । यही दूसरी राधा गृहकमानुषदक्षिणता अन्ध्रावमी
 है । पूर्वोक्त राधिकामें जो जो गुण हैं पद्यिनोमृष्ट राधा
 में भी बहो सब गुण देखे जाते हैं । इस प्रकार तीन
 राधिका निर्दिष्ट हुए हैं ।

'राधिका विविधा प्राजा कन्या नु पद्यिनी तथा ।

न पश्यन् परमेष्ठानि पन्ध्रयन् सुचिद्विस्मये ॥

मनवानो महेशानि वपकस्यां हि का कथा ।

भारमयापर्व इत्या पद्यिनी पद्यमर्षिता ।

विपुरायां मदेवानि पद्यिनी अनुचारिणी ॥'

(पद्म पद्य)

एन तीन राधामोंमें गृहकमानुषदक्षिणता राधा ही
 छत्रिमा भीरु अयोनिसम्मन्ना पद्यिनो ही पराश्वरा हैं ।

(पद्म पद्य)

८ वैष्णवकी पूर्विया ६ ; प्रीति, अनुराग । १० एक
 वृत्तका नाम । इसके प्रत्येक चरणमें राग्य, तराग्य, मगण्य,
 यगण्य भीरु एक गुठ मिला कर १३ अक्षर होते हैं ।

राधाकपच—धारणीय मन्त्रीयध मेद ।

राधाकान्त (सं० पु०) राधायाः कान्तः । धोहृष्ण ।

राधाकान्त तर्षणागोश—पुराजार्णवकाशक प्रयेता ।

राधाकान्तदैव—प्रायश्चित्तबन्धिकाक रचयिता ।

राधाकान्त देव—अपद्रिक्त्वात् जम्बूद्वीपत्रुम नामक संस्कृत
 भूमिपानके प्रयेता । इन्होंने प्राचीन संस्कृतक श्लोका
 कारमें निबिद्ध शब्दोंको वर्णानुक्रमसे सजा कर अक्षरैत्री
 शब्दकोषके आधार पर सबसे पहले यह काव्य सङ्ग्रह
 किया । इसमें प्राचीन हिन्दू जगत्के अनुष्ठेय धर्मोक्त
 सम्बन्धोप पद्यित, पौराणिक उपासमान प्रतर्कन तथा
 गणित, विज्ञान, सङ्गीतशास्त्र, दर्शन, वैशाख भादि सभी
 विषय उद्भूत हैं । इस संस्कृत भूमिपानसे कवक इन्हो
 का नहो, परिश्रमप्रधान समस्त पङ्कमूिका ही मुक्त
 उज्ज्वल हुआ है ।

कलकत्तेक विख्यात शोभाबाजार-राज्य गर्में १७०५
 शकका रक्षा वीरकी (१२वो मार्च १७८५ ई०) रा ।
 कान्तका निमलार्थं मामाक पर जन्म हुआ । वे महा
 राज नवहृष्णके पौत्र तथा उनका पोष्यपुत्र गोपीमोहन
 दैवक पुत्र थे । १७१७ ई०म महाराज नवहृष्णके मरने
 पर उनका पुत्र राजा राजहृष्णक साथ गोपीमोहनका
 विषयविभाग ले कर तकरार खड़ा हुआ । कलकत्ता
 सुपीमकोटक विचारसे दोनों को समान सम्पत्ति मिली
 इस समयसे गोपीमोहन पुराने महलमें रहने लगे ।

बचपनसे ही राधाकान्तका विद्याशिक्षण विशेष
 अनुराग था । उन्होने योद्धे हो समयमें संस्कृत भरवो
 फारसी और अक्षरैत्रीभाषा सीक ली थी । उनका गमीर
 ज्ञान और जिज्ञाको प्रकट्या देव कर बिसोप द्बदरने
 सिखा है —"He (Radhakanta Dava) is an young

man of pleasing countenance and manners, speaks English well and has read many of our popular authors, particularly historical and geographical'. रिवाडर्सकी भारतीय विवरणोंमें उनकी मानसिक उन्नतिको यथेष्ट परिश्रम पाया जाता है।

महाराज नवकृष्णने वडो धूमधामसे प्रसिद्ध गोष्ठी-पतिव्रंशोय गोपीकान्त सिद्धचौधराकी कन्याके साथ राधाकान्तका विवाह दिया। इस विवाहके प्रभावसे राधाकान्तने दक्षिणराष्ट्रीय कायस्थ कुलीन समाजका १३वाँ गोष्ठीपतित्व लाभ किया।

अपने पितामह जोर पिताके जैसे वे राजभक्त थे। ब्रिटिश सरकार जब कोई काम करनेकी इच्छा प्रकट करती थी तब राधाकान्त उसे कर डालनेके लिये कोई कसर उठा न रखते थे। विद्योन्नतिके विषयमें सभी समय उनका आग्रह दिखाई देता था। १८१६ ई०में वे सर एडवर्ड हाइड इष्टके साथ मिल कर हिन्दू-कालेजकी प्रतिष्ठाके लिये तैयार हो गये। ह, द, विलसनकी सहायतासे उक्त विद्यालयकी उन्नतिके लिये इन्होंने बहुत चेष्टा की। ३४ वर्ष गवर्मेण्टनिर्वाचित कलकत्ता संस्कृत कालेजके परिदर्शक रह कर इन्होंने संस्कृत भाषामें अच्छी उन्नति कर ली थी।

कलकत्तेकी स्कूलेयुक्त सोसाइटी स्थापित होने पर देशी हिन्दुओंने यहाँ अनुमोदित और मुद्रित ग्रन्थावली का पाठ्यरूपमें व्यवहार करना चाहा। उन्होंने अकारण संदेह किया था, कि इस सभाके सम्पादित ग्रन्थोंमें हिन्दूधर्मविरुद्ध कोई न कोई विषय लिपिबद्ध रहेगा ही। जनसाधारणका यह अमूलक संदेह दूर करनेके लिये राजा राधाकान्त उस सभाके सहकारी सम्पादक हुए। इस सभामें पड़ कर वे देशीय विद्यालय और सभाओंकी शिक्षाविषयिणी उन्नतिमें उत्साह दिखाने लगे। पोछे उस सभाके परिणत गौरमोहन विद्यालङ्कारकी उत्साह दिला कर इन्होंने 'स्त्रीशिक्षाविषयक' नामक स्त्रीशिक्षाकी परिपोषक एक पुस्तकका प्रचार कराया। १८२० ई०में बङ्गला भाषामें सर्वप्रथम नीतिकथा और अङ्गरेजी हंग पर Spelling Book निकाली गई। इस प्रकार पुस्तक प्रचार

करनेके कारण ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंडकी रायल एशियाटिक सोसाइटीने इनकी बड़ी तारीफ की। स्त्री-शिक्षाके पृष्ठपोषक हो इन्होंने स्वयं प्रबन्ध लिख कर जनसाधारणका चित्त आकर्षण किया था। इस विषयमें इनका विशेष अध्यसाय देख कर वेयुन साहबने इन्हे स्त्रीशिक्षाकी प्रधान बताया है।

Agricultural and Horticultural Society-के सहयोगी सम्पादक हो इन्होंने उक्त सभाकी उन्नतिके लिये बड़ा प्रयत्न किया। इस समय वे Roy, As-Soc of Great Britain and Ireland सभाके सदस्य, लिप-जिककी German Oriental Society और वाल्डिनके Roy, Academy of Sciences, कोपेनहेगनकी Roy, Soc of Northern Antiquaries, सेण्टपिटर्सबर्गके Imp. Academy of Sciences, बोएनके American Oriental Society और भियेनाके Kaiserlichen Academy-के सभ्य हुए। वे समय समय पर उन सब सभाओंकी पत्रिकादिमें भी प्रबंध लिखा करते थे।

जिस कार्यके लिये राधाकान्त समस्त जगद्वासीके निकट परिचित हुए हैं, वह जगद्द्विषयात 'शब्दकल्पद्रुम' नामक गृह्यत संस्कृत अभिधान है। उन्होंने १८२२ ई०में उसका प्रथम भाग मुद्रण कर प्रचार किया। प्रायः ४० वर्ष परिश्रमके बाद १८५८ ई०में उसका अष्टम वा अन्तिम भाग प्रकाशित हुआ। यह महाग्रन्थ उन्होंने भारतीय पंडित-मण्डली तथा यूरोप और अमेरिकाके संस्कृतभाषाभिन्न सभी सुधियोंको उपहार दिया था। संस्कृत साहित्या-नुरागी किसी भी व्यक्तिके प्रार्थना करने पर वह उन्हें खाली हाथ लौटने नहीं देते थे। इसके सिवा प्रत्येक साहित्यसभाको भी उन्होंने निज संकलित एक एक शब्दकल्पद्रुम प्रदान किया था। उनका दिया हुआ ग्रन्थ पाठकर यूरोप और अमेरिकाके प्रत्येक शिक्षित सभाने ही उसे Honorary और Corresponding member रूपमें ग्रहण किया। यहा तक कि, रूसपति जार और डेन्मार्कके राजा ७म फ्रेडरिकने उन्हें सम्मानार्थ एक पदकसम्बलित स्वर्णहार भेजा। उस चैनके प्रत्येक दानमें F.V.II अङ्कित था। विलायतके कोर्ट आव डिरेक्टरके हाथसे वह हार उनके पास आया था।

संरक्षित और बहुतसा साहित्यकी भावोचना और
 इत्मतिमें रातदिन लग रहने पर भी उन्होंने समाजनाति
 और राजनीतिका परिचयवाग नहीं किया था। पक्षी
 खोगीकी मसालेके लिये बहुतस काम कर गये हैं। १८३५
 ई०में प गवर्मेण्ट द्वारा अफिस भाप दि गेस और राज
 धानोक मन्टेरा प्रिन्टिण्ट नियुक्त हुए। ५३ वर्ष तक
 इन्होंने इस कार्यमें मा विशेष कुशलता दिखाई थी।

१८५१ ई०में पुटिया-इन्डियन समाजकी प्रतिष्ठा हुई।
 सम्पूर्ण आर्यपूर्णक इन्ह समापति निर्वाचित किया।
 इस पद पर वे जोपनके अन्तिम दिन तक रहे।

१८३७ ई०में इनके पिताकी मृत्यु हुई। इस समय
 भारत-गवर्मेण्टने इन्हें राजा बहादुरकी उपाधि और
 जिल्दत दी। १८५८ ई०में जम्हूकरज्जम्ह अन्धियान
 समाप्त होने पर इन्होंने भारतभरती विक्टोरियाकी यह
 प्रथम उपहारमें मेजा। महाराजोंने उस उपहारके प्रसन्न
 हो कर इन्हें विशेष राजानुग्रहके निदर्शनस्वरूप एक गवक
 मेजा। उस पदककी एक पीठ पर महाराजकी उच्चमाङ्ग
 और दूसरी पर From Her Majesty Queen Victoria
 to Raja Radha Kanta Bahadur खुदा हुआ
 था। उस पदकके साथ भारतसचिव सर चान्सलर कहने
 इन्हें महापणीके आदेशानुसार एक पत्र इस प्रकार दिया
 था—“I have laid before the Queen your letter
 with copy of the Sadrakalpadram forwarded
 by you for presentation to Her Majesty and I
 am commended to acquaint you that Her Ma-
 jesty has received the work very graciously
 and fully appreciating the spirit of loyalty
 in which you have transmitted it has direc-
 ted me to forward me to you the accompan-
 ying medal.”

इस प्रकारके वरत इन्हें विद्वन्मन्त्रालयमें ऊचा
 भासन मिलने पर भी उसमें उनक आधित परिहर्तोंका
 ना परिभ्रम र्था जाता है। वे एक सुकवि भी थे।
 उनका रचित पद ‘राजाकान्त-पञ्चमकी में मुद्रित हुआ
 है। अभी यह प्रथम नहीं मिलता। उन वर्तों इनक
 इत्यनिरहित, धमनायकी प्रतिष्ठाया दिया जाता है।
 प जोपनके छेप समयमें संसारभ्रमका श्याम कर र्थ्या

बन गये भीर लही उन सब पदोंकी रचना करते थे।
 उन्होंने जिस हरफमें अपनी पुस्तक छपवाया थी, वह
 कुछ समय तक ‘राजाका हरफ’ नामसे प्रथकित था।
 क्योंकि उस समय भीर कोइ पुस्तक इस अक्षरमें नहीं
 छपी थी।

१८५८ ई०में विद्ययात सिपाहोविद्रोहमें विजयी
 म गरेजो सेवाने अब दिहोका पुनरुद्धार और सचनऊका
 उद्धार किया, तब इन्होंने राजभक्तिके निदर्शनस्वरूप
 अपने शोभाबाजार प्रासादमें म गरेज गवर्मेण्टके प्रधान
 अधिकियोंको एक Ball और भोज दिया था। इस
 समयक समारोहकी बातका अक्षेप करते हुए Over
 land Englishman नामक पत्रिकाने लिखा है, कि
 एक सदा पहले पलाशो-रूपप्रयो ह्लास्य और उनके
 सापियोंको से कर महाराज नवहृत्पने शोभाबाजार
 प्रासादमें जो विजयोत्सास मनाया था, उन्ही के राजभक्त
 पीनन ‘प्राचोन इन्डियन’ के प्रति वीर्यो हो अद्वा रपते
 हुए अपने पंजकी भक्तिपराकाया विखलाए हैं।

१८६० ई०को भारतपर्यमें अब शान्ति स्थापित हुई,
 तब पाररोटेदतिक मदर्शनोंके अभ्यसोंको इन्होंने एक मोड
 दिया। उस समय शोभाबाजारका राजमासाद् जिस
 भावमें सजाया गया था उस सम्बन्धमें इङ्ग्लिज मैनुपल
 न लिखा है—“The tout ensemble of the Raja's
 mansion was almost like a dream of the
 Arabian Nights and the large sheet of water
 with its stone terraces and the lights gleam-
 ing on its surface was no like the least of
 Belshezzar as anything, that Martin has
 ever drawn उसी साल माननीय Ashley P
 (पीछे बहुतबहु छोटो छान) मारि महोदयोंके ^{अगिसे} दू बिलपद
 राजाका एक बड़ा तैलचित्र प्रस्तुत हुए”

पश्चात्तिक सोसाइटीमें र्था हुई संसारका मायाबाह
 १८५४ ई०को ८४ वर्षको ^{दुःखायनधाममें} भा कर रहने
 तांड हिभूक पवित ^{१९वीं नवम्बर १८६६ ई०को} भारत
 संगे। यहाँ रहने ^{मोगल नगरमें} दकीबड़ा दरवार देठया
 प्रतिनिधि ^{प्राकाशत निस्पृह हो निर्गत स्थानमें} इत्यरकी
 गुवा ^{जामें} मल थ। राजाके आदेशसे इन्हें उस समामें

आमन्त्रण कर भारत-प्रतिनिधिने K. C. S. I. की उपाधि, २१ पार्क्सकी विलअत तथा सम्मानार्थ हाथी घोड़े दिये थे। कहते हैं, कि जब राजाने दरवार-मण्डपमें प्रवेश किया, तब भारत प्रतिनिधिने उनका स्वागत करने के लिये अपना आसन छोड़ दिया था। उसके साथ

साथ अन्यान्य राजोंने पडे हो कर उनका गौरव बढ़ाया था। स्वयं भारत प्रतिनिधिने राजाके कण्ठस्थित महाराणी विक्रोरिया और ७म क्रोडरिक्का दिया हुआ मृत्युवान् कण्ठहार बडे नाचमें देगा था।



राधाकान्त देव ।

१८६७ ई०की १६वीं अप्रिलको वृन्दावनधाममें पञ्चत्वको प्रातः हुप सुना अपने आत्मीय और भृत्योंको कर्त्तव्य विषयमें दे

कर मृत्युके दो घटे पहले दो तले मकान परसे नीचे उतरे और अपनी कुञ्जाटिकाके मध्यस्थित तुलसी कुञ्जाकी धूली पर लेट माला जपते जपते स्वर्गधामको सिधारे।

उनका मृत्युसंवाद सार द्वारा कलकत्ता पहुँचाया गया। वहाँ उनके देशीय बन्धु बापबोंत १८६० ई०की १३वीं मईको वृट्टिया इरिडियम परोसियम हाइड्रेट के एक समान की। उस समय चर्चमें जितना खपया उठा था उस से इनकी एक भावना प्रतिवृत्ति और वैज्ञानिक प्रस्तुत हुआ। प्रतिवृत्ति इरिडियम हाइड्रेट और वैज्ञानिक वृट्टिया इरिडियम समावृत्त रखा हुआ है। इसके सिवा और कुछ रूपसे गवर्मण्ट संसदकेकाजिजकी बी, ए, परोसिजेके पहिले संसद परोसिजे उद्योग प्रथम छात्रकी एक कर्ण पत्रके हमेकी व्यवस्था की गई।

भाषके सुपुत्र कुमार राजेश्वरनारायण वसने १८६६ ई०का ३०वीं अप्रिलको 'राजाबहादुर' की उपाधि पाए। राजेश्वरनारायणके पुत्र कुमार गिरिश्वरनारायण देव अशाहद मजिस्ट्रेटके पद पर सुगोमित थे।

राधाकान्त शुर्म्भन—वस्तुतत्त्वक रचयिता।

राधाकान्त (सं० पु०) १ राधा और कान्त। २ चातुरक्षा पक्षोंके प्रजेता।

राधाकान्त—एक प्रथमकार। १ अथवासरामायणरहस्यक प्रजेता। २ भोजिनामावली, कोयमप्रह और निषण्डक रचयिता। ३ जोरपञ्चाशिकाकी टीकाके प्रजेता। ४ जगन्नाथनवरत्न और जगन्नाथस्तोत्रके रचयिता। ५ प्रतिष्ठापत्रक और शिवालयप्रतिष्ठा नामक दो प्रथमके प्रणयनकर्ता। ६ रामायणसारसंग्रहक रचयिता। ७ वर्ष तन्त्रके प्रजेता। ८ राधाकान्तकायक रचयिता।

राधाकान्त गोस्वामी—अध्यापक नामक व्याकरण और वैषाकरणसर्वस्यसूत्रिक रचयिता।

राधाकान्तदास—भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्रके फुफिरे माह। बाबू राधाकान्तदास भारतभुका कुमा गैगानोबीक दूसरे पुत्र थे। इनके पिताका नाम कल्याणदास था और बड़े भाईका नाम ज्ञानदास।

इनका जन्म धावप सुवि पूर्णिमा सं० १६२२ में हुआ था। इनकी उम्र कथक दश महानकी अवस्था थी, तब ही इनके पिताका सर्वापास हो गया। तदनन्तर पाँच दिनोंक बाद इनके बड़े भाई मा चले वस। अतः बाबू हरिश्चन्द्र १२६ अयने पर युवा लिया, और ये ही इनका छासन पासन करने लग। इनका शिक्षाका भी

प्रथम स्वयं भारतेन्दुन हा किया था। हिन्दी और उर्दू की साधारण शिक्षा हो जाने पर ये स्कूलमें पढ़नेके छिपे बैठे गये। सर्वादा रोगाक्रान्त रहनेके कारण इनकी अच्छी शिक्षा तो नहीं हो सकी, तथापि सत्रह वर्षका अवस्थामें इन्होंने एनट्रेंश हास तकका अभ्यास कर लिया। बगला धीरे गुजराता मायाभोंका भी ज्ञान इन्होंने सम्पादन कर लिया था। कुशिकी बाइ, निःसहाय हिन्दू, महारानी पधावता, प्रताप नाटक भादि कोर पचीस पुस्तके इन्होंने हिन्दीमें लिखी हैं। बाबू राधाकान्तदास काशी नागरोप्रचारिणी समाजे मुख्य सञ्चालकोंमेंसे थे। ये अथन एक दिवके साय डेजेवारी के काम करत थे। बीकान्ना बनारसमें इनकी एक वृत्तान्त भी है। ४२ वर्षकी अवस्थामें इनका देहांत हुआ।

राधाकान्त वैदान्त्यानाश—एक प्रसिद्ध परिहृत। ये सिद्धान्तसम्प्रिकाके प्रजेता शिवचन्द्रके गुरु थे।

राधाकान्तशर्मा—संक्षितसार व्याकरणकी चातुरक्षावलीके रचयिता। १७६४ ई०में यह प्रथम समाप्त हुआ।

राधाकरण कवीन्द्रचक्रवर्ती—भक्तिकालीस्तुन टीकाके प्रजेता तथा युवावनसम्प्रके पिता। ये भी एक प्रसिद्ध परिहृत थे।

राजाजगन्नाथमी (सं० का०) १ राजाकी जगन्नाथमी। राधान जिस भद्रमीमें जन्मग्रहण किया था उसे राधा जगन्नाथमा कहते हैं। २ प्रतियोग्य, राधाधर्मागत।

राधाधमी देखो।

राधातन्त्र (सं० क्री०) एक तन्त्रका नाम जिसमें मन्त्रों भादिक अतिरिक्त राधाकी उत्पत्तिका भी रहस्यपूर्ण वर्णन है।

राधातन्त्र (सं० पु०) राधावाः सर्वपरम्यास्तनय, तथा पांडित्यवात् तथात्थ। कर्ण।

राधाशामोदर—बहुतरे प्रसिद्ध परिहृत। १ कृष्णतन्त्रक वर्णनक प्रजेता। २ उन्मत्तकीस्तुमक रचयिता। ३ वैदान्त स्यमन्त्रक नामक वैदान्तप्रथक प्रजेता। ये उदासामें रहत थे और वेतस्यस्यप्रदाययुक्त थे।

राधातगर—१ त्रिपुरा राजधानी भागवतका उपकरण स्थित एक प्राचीन नगर। २ प्राज्ञभूमिके अन्तर्गत

होती तब तक मैं भी किसी हालतसे प्रसन्न नहीं हो सकती मेरा लास्य वार नाम जपनेसे, जो फल होता है, सिर्फ एक बार राधाकृष्णका नाम लेनेसे उससे कहीं अधिक फल होगा। जो स्त्री यह व्रत करती है वह इस लोकमें अनेक प्रकारका सुख भोग कर परलोकमें राधाकृष्णके चरणोंमें स्थान पाती है।”

राधासुत (स० पु०) राधायाः सुतपत्न्याः सुतः । कर्ण ।

राधि (स० स्त्री०) धनी ।

राधिक (स० पु०) राजा जयसेनका पुत्र ।

राधिका (स० स्त्री०) राधा, प्रजामण्डलेश्वरी और श्रीकृष्णकी प्रेमभिन्नारिणी। पौराणिक राधाका तथा रूपसनातन गोखामी और जयदेव आदि ऋचिवर्णित राधाका रूप इच्छामयकी इच्छासे उत्पन्न है। व्रजकी राधा वृषमानुदुहिता और रायानवनिता हैं। राधिकाने कृष्णकी प्रेमाकाक्षिणी हो कर वृन्दावनके प्रति कुञ्जकी नयनजलसे प्लावित कर दिया था।

ब्रह्मवैवर्त-प्रकृतिकण्डके २५^१ अध्यायमें राधिकाका रूप इस प्रकार लिखा है,—ये श्रीकृष्णकी वामार्द्ध अमूल्यरत्नाभरणा, कोटिपूर्णशशिप्रभा, तप्तकाञ्चनवर्णा, तेजोमयी, सस्मितानना, शरत्पद्मनिभानना, मालतीमाल्यमण्डिता, गङ्गाधारानिमशुभ्र-मुक्ताहारशोभिनी, सुमेघगिरिसन्निभा, कस्तूरीपत्रचित्रिता, मङ्गलार्हन्तनयुगशालिनी, नितम्बश्रोणिभारार्त्ता और नवनीवनसंयुक्ता है। उधर जयदेवकी राधा सम्रीड-ईक्षितसखीवदना, दन्तचचिकौमुदीयुक्ता, स्फुरदधरसीधुशालिनी, कमलमुखी, धरनयनशरवातवर्षिणी, तन्वी, नीलनलिनाभलोचना, कुचकुम्भोपरिहित मणिमयहारा, अलकरस रञ्जित स्थलकमलगङ्गिपदयुगला है। इन दोनों वर्णनमें श्रीकृष्णका रमणोत्सुकत्व रहते हुए भी स्वर्गीय और मत्स्येभावकी पृथक्ता स्पष्ट देखी जाती है।

श्रीराधा-प्रकरण ६८ और ७८ श्लोक ।

उक्त पुराणके श्रीकृष्ण जन्मखण्डके १३वें अध्यायमें राधा शब्दकी व्युत्पत्ति इस प्रकार लिखी है :—

“रेफा हि कोटि जन्माद्य कर्मभाग शुभाशुभम्।

आकारा गर्भनासञ्च मृत्युञ्ज रोगमुत्सृजेत् ॥

वकारमायुषो हानि माकारो भयवन्धनम् ।

* * *
रेफा हि निरचलां भक्तिं दास्य कृष्णपदाम्बुजे ।

सर्व्वं प्लित्त सदानन्द सर्व्वसिद्धीषमीश्वरम् ॥

वकारः सद्गुणसञ्च तत्तुल्यकाममेव च ।

ददाति पार्ष्णिण साकष्य तत्त्वज्ञान ह्येः सयम् ॥

आकारस्तेनसो राशिं दानशक्तिं हरी यथा ।

योगशक्तिं योगमतिं सर्व्वज्ञानहरिस्मृतिम् ॥”

गोपाङ्गना राधा वृन्दावनके निधुनिकुञ्जादि वनमें आ कर श्रीकृष्णके साथ लुकछिप कर लीला करती थीं। पुलिन-टापूमें रास विहार होता था। रायान घोषको जब यह मालूम हुआ, तब वह वृत्त विगडे। जटिला कुटिलाकी गङ्गना, राधाकी मानरक्षार्थ कृष्णका कालीमूर्त्तिका धारण और राधा द्वारा उनकी पूजा, राधाके सतीत्वकी परीक्षार्थ जटिला द्वारा सहस्र छिद्रपूर्ण कलसीमें जल लानेके लिये आदेश, राधाका जल लाना और उस जलसे कृष्णकी रोगमुक्ति, चन्द्रावलीके कुञ्जमें श्रीकृष्णके जानेसे कृष्ण प्रेमोन्मादिनी राधाका दुर्जय अभिमान, नयनजलसे मानसरोवरकी उत्पत्ति, कंस निधनार्थ कृष्णके मथुरा जानेसे राधाका विरह, राधाका मथुरागमन और कृष्ण-सम्भेलन आदि वृन्दावनात्मक रसाश्रित घटना वैष्णव-कवियोंकी भक्तिप्रेमोद्दीपक अपूर्व रचना हैं। वृन्दावनेश्वरी श्रीराधिकाका कृष्णप्रेमसम्बलित व्यापारविशेष वैष्णवोंके सख्यभावका चूडान्त दृष्टान्त है।

भक्तमालप्रन्थमें भी राधाकी माताका नाम कीर्त्तिका लिखा है। पितामह महाभानु और मातामह विन्दू ये। पितामहोका नाम सुयदा और मातामहोका मुखरा था। रत्नभानु और सुभानु उनके ताऊ थे। रुद्रकीर्त्ति, महाकीर्त्ति और कीर्त्तिचन्द्र मामा, मेनका मामा, भानुमुद्रा पोसी और कीर्त्तिमती मौसी थी। उनके मौसेका नाम काश और पोसेका कुश था। लवङ्गमञ्जरी, रूपमञ्जरी, गुणमञ्जरी, रतिमञ्जरी, रसमञ्जरी, विलासमञ्जरी, रागमञ्जरी आदि दासियाँ और ललितादि आठ श्रेष्ठ सखिया थी।

उज्ज्वलनीलमणिके श्रीराधाप्रकरणमें राधाके वारह आभरणोंका उल्लेख है। उस नवीन युवतीने किस प्रकार

हरिका मन बुध जिया या उसका परिषय वैष्णवग्रन्थमें विद्यदक्षय स्रिषा है ।

पद्मपुराण उत्तरकाण्डक राधाप्रमोदतमाहात्म्यमें लिखा है, कि महर्षि नारदन जब देवादिदेव महादेवसे राधाश्रममाहात्म्य सुननेकी इच्छा प्रकट की, तब सदा शिव इस प्रकार कहने लगे—“राधा भूपमानुकी महिषी महाकल्पोलरूपा शीवती शोकीर्त्तित्वात्म हो वृन्दावनेश्वरी भीराचिका नाम्नात्मकी शुभगाएमी लियिको गुम बापक मध्याह्न समयमें उत्पन्न हुए । राधा अमोदसकपा पूजन, भजन, ध्याय और कर्त्तव्यानुष्ठानादि कइता है, सुनो ।

“धन दा पश्मिद्वार भीराधा कृष्णमन्दिरे ।
 पञ्चसप्तद्वारसुखवास्तोरथादिभिः ॥
 नाममुमङ्गलप्रभैव वादिभि म्वर्षते ।
 मुनईकवगन्धफुर्षैर्ष्वेभ्य भूवितैष धन ॥
 मन्थ पञ्चार्थ भूर्धर्मयज्ञं सधरोकइम् ।
 मुणोइउरइकारं त्व निमाय यज्ञतः ॥
 दिष्वाकने पञ्चमन्थ पश्चिमाग्निमुनीं सिताम् ।
 भीरुममृषि क्पातवा पञ्चनारादिभिः जनात् ॥
 मर्कः सः सजातीयेः शम्भानुनारकलुभिः ।
 क्लृप्तः पूजनेः क्लृप्ता वा क्वा त्वयतिरिच्यः ॥”

इस प्रकार भक्तको चाहिये, कि वे सामर्थ्यानुसार पूजाका मापोजन कर संयतेन्द्रिय हो पूजा करें । पूजा काइका ध्यान इस प्रकार है—

“हृन्मन्दिरेऽन्तितमङ्गलता भीमशम्भनाह्नं ।
 त्रिस्वामिर्ष्वसितादिभिः परिदृष्ट भीष्मीयोजान्तरम् ॥
 नानामृष्यमृष्याह्वयत् केवलसर्षं मुगं ।
 यन्त्रोर्जनमन्थय सुखकर्मिर्त्तव्यं त्वयस्य भव ॥”

गान्धाममें मधया साक्षात् त्रिस्वामिर्त्तुमिं युगळ मूर्त्तिका ध्यान कर इनकी मर्षना करे । पीछे उस युगळ मूर्त्तिका सम्मुखप्रसन्न पादादि द्वारा मङ्गलपूजा करना कर्त्तव्य है । कम इस प्रकार है,—पश्चिमक पीठपर्णद्वार पर अक्षिता, बाईं ओर गुरुदेव पर चन्द्रावती, बायु-कोणके कृष्णदेव पर श्यामलादेवी, उसके वाम भागमें, गुरुपर्णद्वार पर चित्तेरेबा, उत्तरमें रक्तपर्णद्वार पर श्री मती, उसके वामपार्श्वमें नीलपर्णद्वार पर चन्द्रा, दशान

में रक्तपर्णद्वार पर धोहरिमिया, उसके वामरूप गुरुदेव पर मङ्गलसुन्दरी, पूरवमें पीठपर्णद्वार पर विशाखा, उसके वामभागमें शुक्लपर्णद्वार पर प्रिया भस्मिकोणमें श्याम वर्णद्वार पर सख्या, उसके वाम पार्श्वमें शुक्लपर्णद्वार पर मधुमती, दक्षिणमें रक्तपर्णद्वार पर पद्मा, उसके मी वाममें नीलपर्णद्वार पर शशितेबा, मध्यंतमें रक्तपर्णद्वार पर मद्रा, उसके वामपार्श्वमें शुक्लपर्णद्वार पर रसमिया की पूजा करना होगी ।

इन कृष्णप्रिया श्रीराधाकी प्रिय सङ्गिनियोगिस प्रत्येकका व्याग पृथक पृथक है पर विस्तार हो जानेके मयसे यहा नही लिखा गया । (पाप उवाचाप्यगीश्रमाहा-त्म्यमें १२-१३ म०)

मन्थ महादेवने कहा है, कि जो पुरुष भयया श्री राधाकृष्णपरायण हो वृन्दावनवासो होंगो वे ही प्रजवासी हैं तथा कर्त्तव्यका राधाकृष्णक दर्शन होंगे । जैसे व्यक्तिके साथ आलाप करनेसे समी पाप नष्ट होत हैं । जो व्यक्ति मुदास राधा राधा कहने राधानाम स्मरण करत राधा राधा हा जिनकी पूजा निष्ठा और जवना है वे बड़े भाग्यवान् हैं तथा भक्त श्रीवृन्दावणमें राधाकी सह चरा होती हैं ।

पृथिवी धर्म है, जहाँ पर वृन्दावनपुरी विद्यमान है और जिस मनोरम पुरीमें मुनियोंकी आराध्य सती राधा पिहार करती हैं । जो प्रदार्थिकी भी महाराध्या है सुरगण जिनकी मूरत सेवा वरत है, वे देवों । मैं मी इनकी मजन फरता हूँ । जो मनुष्य कृष्ण सहित राधा नाम कीर्त्तन करत हैं, उनके माहात्म्यका श्रेय मही मैं मी उत नहीं बतजा सकता ।

“न गहता न गत्वा न त्रिष्य न हित्वा न धरल्लवी ।
 कर्त्तव्येषु विमुक्त्वा सर्वैर्दोषैश्चक्रवरा ॥
 सर्वैर्दोषैर्षवी राधा सव श्रव मयो पुना ।
 कर्त्तव्यैर्ष्विष्टया क्लरमीने भवशु वराहये ॥
 वत्सादव १८त् कृष्णो रावना सह नारद ।
 राधाकृष्णैवि कर्त्तव्यं तरेत्त् म्ठमुचमम् ।
 ६१६ देवमन्थी कर्त्तव्यं च भोलेवरिम् त्”

पद सुन कर नाट्य मुनिन राधाका मन हो मम प्रणाम क्रिया और गोष्ठाराममें उनको पूजा आरम्भ कर

दी जो व्यक्ति राधाजन्माष्टमीकी व्रतकथा सुनते हैं, वे धनी, मानी, सुखी और सर्वगुणान्वित होते हैं। धर्मार्थी, अर्थार्थी, कामार्थी और मोक्षार्थी यदि भक्तिपूर्वक राधाका जप, पाठ वा स्मरण करे, तो उन्हें अभीष्ट वस्तु प्राप्त होती है। राधा और राधाष्टमी देखो।

राधिकाविनोद (सं० पु०) राधाविनोद।

राधेय (सं० स्त्री०) राधाया अपत्यमिति राधा (स्त्रीभ्यो-ढक् । पा ४।१।१२०) इति ढक् । कर्ण ।

राधेश (सं० पु०) श्रीकृष्ण।

राधेश्वर (सं० पु०) श्रीकृष्ण।

राधोगूर्त (सं० त्रि०) धनद, धन देनेवाला।

राधोदेय (सं० स्त्री०) उनके साथ दान योग्य उपहार।

(ऋक् ४।१।१३)

राध्य (सं० त्रि०) राध यत् आराधनीय, स्तुति करनेके योग्य।

रात्रेवकि (सं० पु०) इस नामके ऋषिका गोत्रापत्य।

(संस्कारकौमुदी)

रान (फा० स्त्री०) जंघा, जाँघ।

रानडे—इनका पूरा नाम था महादेव गोविन्द रानडे एम० ए०, एल, एल, बी, सी, आई, ई,। ये बम्बई हाईकोर्टमें जज थे। इनका जन्म सन् १८४२ ई०की २०वीं जनवरीको महाराष्ट्र ब्राह्मणकुलमें हुआ था। इनके पिताका मृत्यु सन् १८७७ ई०में बम्बईमें हुई थी। महादेव गोविन्दने बम्बईके एलफिनस्टन कालेजमें शिक्षा पाई थी। इसी कालेजसे इन्होंने सन् १८६२ ई०में बी, ए, परीक्षामें विश्वविद्यालय भरमें सर्वोच्च स्थान पाया था और सन् १८६५ ई०में एम, ए, परीक्षा पास की तथा उसी उपलक्षमें इन्हें स्वर्णपदक भी मिला। सन् १८६६ ई०में ये एल, एल, बी, परीक्षामें प्रथम वर्गमें उत्तीर्ण हुए। विश्वविद्यालयकी परीक्षाओंमें सर्वोच्च स्थान प्राप्त करनेके कारण ये उपाधिधारियोंके राजा (Prince of Graduates) कहे जाते थे। सन् १८६६ ई०में ये शिक्षाविभागमें मराठी भाषाके अनुवादक बनाये गये। तदनन्तर ये सोलापुरके अस्थायी जज नियत हुए। पुनः सन् १८६८ ई०में ये एलफिनस्टन कालेजमें अंग्रेजी साहित्यके अध्यापक नियुक्त हुए। इस पद पर रानडेने सन् १८७१

ई० तक काम किया। इसी वर्षमें ये हाईकोर्टकी "एड-वोकेट" परीक्षाके प्रथम वर्गमें उत्तीर्ण हुए। यह परीक्षा विलायतकी वारिस्टरी परीक्षाके समान समझी जाती है। इस परीक्षाके पास करनेके अनन्तर रानडे १० वर्ष तक अनेक स्थानोंमें सब जजका काम करते रहे। सन् १८८४ ई०में इनका एक हजार ६० मासिक वेतन हो गया, और ये छोटी अदालतमें जजका काम करने लगे। सन् १८८६ ई०में ये 'भारतीय आय ध्यय-समिति' के मेम्बर हुए। कई बार ये बम्बई व्यवस्थापक सभाके सभ्य हुए थे। सन् १८९३ ई०में ये हाईकोर्टमें जज नियत हुए थे। ये मरने तक इसी पद पर काम करते रहे। सन् १९०१ ई०में इनकी देहांत हुआ। इन्होंने अंगरेजीमें कई एक ग्रंथ लिखे हैं जो ये हैं, (१) विधवाविवाहकी शास्त्रीयता ? (२) महाराष्ट्रीय जातिका इतिहास। (३) खजाना कानून सम्बन्धी पुस्तिका। (४) राजा राममोहन रायकी वक्तृता।

ये ब्राह्मधर्मके उत्साही मेम्बर थे और बम्बई विश्वविद्यालयकी 'सिण्डिकेट' सभाके भी सदस्य थे।

रानतुरई (हि० स्त्री०) कड़ुई तराई।

राना (हि० पु०) राणा देखो।

रानापति (हि० पु०) सूर्य।

रानी (हि० स्त्री०) १ राजाकी स्त्री, राजाकी पत्नी। २ स्वामिनी, मालकिन। ३ स्त्रियोंके लिये आदरसूचक शब्द।

रानीकाजर (हि० पु०) एक प्रकारका धान।

रानीखेत (रानीक्षेत्र) युक्तप्रदेशके कुमायून् जिलान्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २०° ३४' ३०" तथा देशा० ७६° २६' ५०" के मध्य अवस्थित है। यहां बृटिशसरकारके यूरोपीय सेनादलका एक स्वास्थ्यनिवास है, इस कारण इसकी दिनो-दिन उन्नति होती जा रही है। हिमालय पहाड़ पर जितने स्वास्थ्यनिवास हैं उनमेंसे यही सबसे उत्तम है। समतलक्षेत्रसे ऊपर चढ़नेमें लोगोंको जरा-सी दिक्कत नहीं होती। अङ्गरेज लोग प्रोत्सुकालमें यहां आते हैं। एक समय सिमला शैलसे सामरिकसदर (Military head-quarter) यहां पर उठा लानेका प्रस्ताव हुआ था, पर कई कारणोंसे मंजूर नहीं हुआ।

रानीगञ्ज—अजयपुरकीक मन्तगंत एक पर्वतशिरार ।
रानीगञ्ज—बिहार और उड़ीसाके पूर्विमा त्रिजाम्तगंत
एक नगर । यह भग्ना० २५ ५३ उ० तथा देशा०
८७ ५३ पू०के मध्य कमळा नदीके किनारे अवस्थित
है । यहां चावल, तिल, पाट और तंबाकूका खोरो कार
बार चलता है । म्युनिसिपलिट्या होनेके कारण नगर खूब
स्वाक सुपरा है ।

रानीगञ्ज—१ बङ्गालके पर्वमान त्रिजाम्तगंत एक उप
विभाग । यह भग्ना० २३ २३ से २३ २२ उ० तथा
देशा० ८६ ५० से ८७ ३७ पू०के मध्य अवस्थित है ।
भूपरिमाण १३१ वर्गमास है । रानीगञ्ज, भासनसोड
और ककसा थाना इस उपविभागके अन्तर्गत है ।

२ एक त्रिलेके पर्वमान पर्वमान त्रिजाम्तगंत
यासनसोड उपविभागका एक शहर । यह भग्ना०
२३ ३६ उ० तथा देशा० ८७ ६ पू० दामोदर नदीके
उसरी किनारे अवस्थित है । जनसंख्या १५ हजारसं
ऊपर है । कोयलेकी खान बाविकार होनेके बादस हो
यह समृद्धिसम्पन्न हुआ है । इष्ट-रिपब्लिया ऐन्वे कम्पनीने
कोयलेके बाणिज्यके लिये यहाँ एक स्टेशन खोला । ऐक
कापनोके कार्याचारियोंके रहनेसे यह नगर कमशा
भङ्गरेजोंका एक प्रधान भग्ना हो गया है । ककसकेकी
मार्किटप्लेस वार्न कम्पनीने यहाँ मिट्टीके बरतन (Pottery
works) का कारखाना खोला है । यहाँकी टाकी
बहुत मशहूर है । शहरमें एक कुद्याभय, अमाधातय
भार एक स्कूल है ।

रानीगञ्ज—पर्वमान त्रिलेके अन्तर्गत एक बहुत बड़ा
खोड़ा मैदान, भूपरिमाण ५ सौ वर्गमास है । यहाँकी
जानामें कायला पाया गया है । बहुतोंने तो बाणिज्य
का भासास इस स्थानके कोव कर खोयला निकालने
की व्यवस्था की है । भग्ना ७०१८० कम्पनी जमीन इजारा
के कर जानस कोयला निकाल रहा है । यात्रो और
संघान्त लोग अकसर जानम काम करने हैं ।

रानीगञ्ज नगरसे पूरबस कर ४५कर नदीके
परिचय तक इस कोयलेका क्षेत्र विस्तृत है । पूरब
परिचयमें इसको सम्प्रा ३१ मील और उत्तरपश्चिममें
खोड़ा मयः १८ मील है । दामोदर और अजय नदीके

मध्य भागका कोयलेका स्तर ही सबसे खोड़ा है ।
रानीग्राम—बम्बहप्रदेशके गोरेनवाड़ प्रान्तके एक छोटा
राज्य ।

रानीघाट—पञ्जाबप्रदेशके पेशावर जिलेका एक प्राचीन
गिरिपुरा । यह लाचीन खुजुकेल शैलमाळा पर अवस्थित
है । पहले यहाँ एक नगर था । भग्ना उसका निर्वाहन
तक मो न रह गया है । १८४८ ई०में डा० कनिहमने
मीग्रामसे ८ डीस उत्तर-पश्चिममें अवस्थित सेषपल्ली
के निम्नस्थ रानीघाटका विस्तृत पुरा देख कर उसे
प्रीक भौगोलिक भारियन प्रायो, रियावोरस बाहि
वर्षित Aornos कहा है । किन्तु रानीघाट पार्की
ऊँचाई १००० फुट और भारियनकी ऊँचाई ६६७४ फुट
होनेके कारण उनका क्याल गलत निकला । १७५६ ई०में
पेतिहासिका द्वारा वर्षित Aornos कह कर स्वीकार
किया है । किन्तु यह सब देख कर भाविक कनिहमने
प्रमाण द्वारा फिर रानीघाटको ही एकमात्र निर्वाहन कह
कर साबित किया है । इस पुराके उत्तरकीपमें जो ठण
पर्वतखूड़ा देखो जाता है उस पर राजा बरको महिपी
प्रति दिन बैठा करते थे । मात्र जो यह स्थान देखनेमें
आता है । पत्वार देखा ।

रानीतळा—उड़ीसाके अन्तर्गत एक प्राचीन नगर ।
रानीघर—तीरमुक्तके अन्तर्गत एक स्थान ।
(मलि० प्रसन्नपठ)

रानीनूर—उड़ीसा प्रदेशके पुरा त्रिजाम्तगंत अरबगिरि
शैलस्थित एक गुहामन्दिर । अरबगिरि और उसके
पाश्चरसी उत्पगिरिमें जितने गुहाय देखी जाती हैं उन
मेंसे रानीनूरका गुहा सबसे पीछेकी बनी है । जो सब
गुहामन्दिर विराजित हैं, प्रकृतस्वपिदोंका अनुमान है, कि
वे सब बौद्धधर्मके सर्वप्रधान निर्देशन हैं । अथवा उन्हें
भारतवासा मानवजातिका प्रथम वासमयन मा मान
सकत है । रानीनूरका गठन और शिल्पकार्य देख कर
उन्होंने कहा है, कि २०० ख्रिष्टपूर्व १०० ख्रिष्ट तकके
भीतर व सब गुहाय कोदो गई हैं ।

यह दो तल्ले गुहायुद्धधेणास सुरामित है । गुहा
धेणोके सामने बरामडा और उसके सम्मुख भागमें
माहूण है । दोनों बगल दोवार पर बुद्धाकार वर्मपातो

प्रस्तर प्रतिमूर्ति पहरू रूपमें लड़ी हैं। उस प्राङ्गणभूमि-के दक्षिण खुला मैदान है तथा वामपार्श्वमें रन्धनगृह और जनसाधारणका भोजनालय है। इन सब गृहोंके सम्मुखस्थ विस्तृत वरामदोंकी छत स्तम्भसे पत्थरके ब्राकेट द्वारा सुरक्षित हैं। उन सब ब्राकेटका शिल्प-नैपुण्य देखने लायक है। ऊपर तलेमें सिर्फ ४ कोठरी हैं। प्रत्येककी लम्बाई १४ फुट ६ इञ्च है। बाहरवाला धरामदा ६० फुट लम्बा, ७ फुट ऊँचा और १० फुट चौड़ा है। हर एक कोठरीमें दो दो दरवाजे हैं। दोनों दरवाजों पर पत्थरकी सिंहरूपिणी है।

ऊपरवाले वरामदेके चारों ओर जो शिल्पचित्र है वह स्थापयिताकी जीवनी ले कर ही बनाया गया था। पहले चित्रमें भारतीय किसी प्राचीन राजवंशके विवाहसंबंध स्थापनके पहले उपद्वीकन भेजा रहा है। दूसरे चित्रमें प्रणयीका शुभागमन, तीसरेमें राजपुत्र और राजकन्याका प्रेमालाप, चौथेमें युद्ध, पाचवेंमें राजकन्याको ले कर राजपुत्रका भागना, छठेमें शृगया, सातवेंमें सिंहासनोप-विष्ट राजा और रानी तथा नर्तकीदलका नाच होता है। ऊपरमें राज्यसुख भोगसम्बन्धमें और भी कितने चित्र विराजित हैं। उनमें राजा, रानी और राजपरिवारवर्गके सभी लोग संसाराश्रमका त्याग कर वानप्रस्थका अवल-म्बन करते हुए मठाश्रममें आ जीवन विताते हैं। क्षयकारी काल और जलवायुका उत्पीडन सह्य न कर सकनेके कारण इस खोदित रानीप्रासादकी रानीकी उपाख्यान धीरे धीरे मिट गया है।

रानीपुर—युक्तप्रदेशके भाँसी जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २५° १४' ३० तथा देशा० ७६° २०' ५०के मध्य अवस्थित है। यहाँ खेरवा और कसबी नामक मोटे कपड़े का विस्तृत कारवार होता है। स्थानीय व्यवसायी महाजन जैनधर्मावलम्बी हैं। यहाँका जैनमन्दिर देखने लायक है। ऊर्छाराज पहाड़ीसिंहजीकी रानी हीरादेवीने १६७८ ई०में यह नगर वसाया था।

रानीपुर—बम्बई-प्रदेशके खैरपुर जिलान्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २७° १७' ३० तथा देशा० ६८° ३१' ५०के मध्य हैदराबादसे रोहरो जानेके रास्ते पर अवस्थित है।

निम्नसिन्धुके अन्तर्गत ठट्टाराज्यके जामदरिया खी नामक

एक राजा जब युद्धमें मारे गये तब उनकी स्त्री शत्रुके भयसे राज्यत्याग कर यहाँ भाग आई थी। तभीसे यह नगर रानीपुर कहलाता है। यहाँ सूती कपड़े का कारवार होता है।

रानीपेट—१ मन्द्राजके उत्तर आर्कट जिलेका उपविभाग।

२ उक्त उपविभागका एक शहर। यह अक्षा० १२° ५६' ३० तथा देशा० ७६° २०' ५० पालर नदीके उत्तरी किनारे अवस्थित है। जनसंख्या ७ हजारसे ऊपर है। १७७१ ई०में नवाबसेयद-उद्दाला खाने गिज़िराज देसिंहकी विधवा पत्नीके सम्मानार्थ आर्कटनगरके दूसरे किनारे यह ग्राम वसाया। सरकारी सेनानिवास होनेके कारण दिन पर दिन इसकी उन्नति देखी जाती है। यहाँका 'नयलाज' नामक आम्बकानन बहुत प्रसिद्ध है।

रानीवेन्नूर—बम्बईके धारवाड जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० १४° २४' से १४° ४८' ३० तथा देशा० ७५° २७' से ७५° ४६' ५०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४०५ वर्गमील और जनसंख्या लाखसे ऊपर है। इसमें ३ शहर और ११६ ग्राम लगते हैं।

२ उक्त तालुकका एक शहर। यह अक्षा० १४° ३७' ३० तथा देशा० ७५° ३८' ५०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या १४ हजारसे ऊपर है। १८५८ ई०में म्युनिस्-पलिटो स्थापित हुई है। रई, सूती और रेशमी कपड़ेके लिये यह स्थान बहुत मशहूर है। १८०० ई०में कर्नल वेलसिलो (पीन्डे ड्यूक ऑफ वेल्डिन) ने मराठा लूटेरे धुँटिया वाघका पीछा करके इस नगरको अधिकार किया। १८१८ ई०में जनरल मनरोके अधीनस्थ सेनादल-ने फिरसे इस नगर पर चढ़ाई की थी। शहरमें १ अस्पताल और ७ स्कूल हैं।

रानीसराय—मैदिनीपुर जिलान्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। यह नारायणगढके दक्षिणमें अवस्थित है।

रान्धम (सं० पु०) इसी नामके ऋषिके गोत्रमें उत्पन्न पुरुष।

रान्धिया—बम्बई प्रेसिडेन्सीके गोवेलनाडु प्रांतका एक छोटा सामन्तराज्य।

रापरझाल (सं० पु०) एक प्रकारका नृत्य।

रापी (हि० खी०) चमारोंका रापी नामका बीजार जिनसे वे चमड़ा साफ करने और कारने हैं।

रापुर—१ मद्राज़ प्रदेशके मिल्नूर जिलेका एक उपविभाग। यह अक्षा० १४ ३' से १४ ३१' ३०" तथा देशा० ७६' २१' से १६ ५१' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ५६६ बर्गमील और जनसंख्या ७० हजारसे ऊपर है। यहां कम्बुई और केल्डव नामक दो छोटी नदियां बहती हैं। इस तालुकके पश्चिममाग अर्थात् पूर्वघाट पर्यंतमाछाके झालू देशसे छे कर पूर्वकी ओर समतल क्षेत्र तक प्रायः ६ मील स्थान घने जंगलसे ढका है।

२ एक जिलेका एक नगर और रापुर तालुकका बिहार सहर। यह अक्षा० १४ ११' ३०" तथा देशा० ७६ ३६ पू०के मध्य विलुप्त है। यहांकी जमीन काली और पथ रोखी है, इस कारण उपज अच्छी नहीं लगती। जोजम, राखी कम्बु, धान, तमाकू और छाकमिर्च यहांकी प्रधान उपज हैं।

राप्ति—युक्तप्रदेशमें प्रयागके एक नदी। यह अक्षा० २७ ४६ उ० तथा देशा० ८२ ४४ पू०के मध्य विलुप्त है। एक पर्यतशिकरको श्रेयण कर पहले दक्षिणकी ओर ४० मील और पीछे उत्तर-पश्चिमकी ओर ४५ मील तक चली गई है। बाढ़में यह अयोध्या प्रदेशके चंद्रगढ़ जिलेमें भा गिरी है। यहांसे मोरवा जिला, वस्तो जिला और गोरखपुर जिला होती हुई पश्चिममें मिली है। गोरखपुर नगरसे छे कर प्रमदा-सङ्गम तक इसमें बड़ी बड़ी नारियें आती जाती हैं। वस्तो जिलेमें भा कर इस के दो सोते हो गये हैं। दोनों सोते पर्याप्ततुकी छोड़ और सभी श्वेतुओंमें सूष जाते हैं। इस नदीको अम्बा ४ सी मील है।

रापी—युक्तप्रदेशके मैनपुरी जिलान्तर्गत सिकोहाबाद तहसीलका एक बड़ा ग्राम। यह अक्षा० २६ ५४' उ० तथा देशा० ७८ ३६' पू०के मध्य विलुप्त है। मैनपुरी शहरसे इसकी दूरी ४४ मील है। जनसंख्या हजारके करीब होगी। यहां हिन्दू और मुसलमानके अनेक मन्दिरन मन्दावस्थामें पड़े हैं। स्थानीय प्रचल है कि राज ओटावर सेन उर्फ रापर सेनने इस नगरको बसाया। उनके बंशधर ११६४ ईमें महम्मद घोरीके विरुद्ध युद्ध

करके मारे गये। मुसलमानों अघिकारके बाद यहां अनेक मसजिद और मठबने बनाये गये थे तथा कितने बड़ाशय और कूप भी बने गये थे। यहांकी किसी मसजिदमें सुबतान अहमदशाह जिलेजोके जमानेमें २२कोर्भ जिल्लाखिपि पाइ गई है। शेखाह और जहाँ गीरके बनाये हुए बस्तुसे महलों और प्राचीन महलोंके फारसीका अन्वयशेष आज भी देखने में आता है। यहां से रेजियेस्ट्रेसन सिकोहाबाद और सरिस्तागढ़में वाणिज्य प्रथम अ जामेक लिये पक्की सड़क बनी गई है। यमुनाके दूसरे किनारे बड़ेअर जामेक चिये ताबडा एक पुल बना है।

राप्प (सं० लि०) राप्पन इति रप् (मातृपुत्रपरिपोषि । पा १।१।२२६) इति पपत् । कपनोप, कदने योग्य ।

राब (हि० खी०) १ भाँच पर भौंटा कर लूब गाढ़ा किया हुआ गन्नेका रस जो गुड़से पतला और शीरेसे गाढ़ा होता है। इसीको साफ करके चाँद बनाए जातो है। २ नाबम यह बड़ा ऊकड़ा जो उसकी पेशीमें छमर्काल बख एक सिरसे दूसरे सिरे तक होती है। पहले यह ऊकड़ा लगा कर तब उस परसे अहार बढाते हैं।

राबकी (हि० खी०) भौंटा कर गाढ़ा किया हुआ लूब, बसौंधी ।

राबना (सं० लि०) जेतमें काढ़ बनेकी एक विशेष प्रजाती । इसमें पहले जेतमें, ज़ाव सूखी पत्तियां और टहनियां भादि रक कर अला दैत हैं । फिर उनको राख समेत जमीनकी एक बार जोत दैत हैं। बही राप जेतमें काढ़ का काम हैतो है ।

रामस्य (सं० खी०) १ प्र, त गति, ठेक थाख । आमाह, इठ । ३ आनन्द, मजा ।

राम (सं० लि०) रमते इति रम्-ष्वा, रम्पते जैनेति र्म्-प्रभ वा । १ मनोक, सुन्दर । २ सित, सफेद । ३ असित कामा । (पु०) रम कीड़ायां (अथिठिक-ठनेभ्या षा । पा १।१।२४०) इति ण । ४ परशुराम । ये भगवान् पिण्ड अशाभतर माने जाते हैं। इन्होंने जेतानुगके मारुतमें अमर्दिनि मुनिके पुत्ररूपमें अग्रमहण किया था। परशुपम देवा । ५ सुचंशोय महा

राज दशरथके पुत्र जो दश अवतारोंमें एक माने जाते हैं। रामचन्द्र देखो। ६ कृष्णके बड़े भाई बलराम या बलदेव। इन्होंने अनन्तदेव, विष्णुके अंश, यदुवंशी, छापारयुगके शेष भागमें यदुवशी वसुदेवके पुत्ररूपमें जन्मग्रहण किया था। बलराम देखो।

राम शब्दसे श्रीराम, बलराम और परशुराम इन तीनोंका बोध होने पर भी साधारणतः दशरथपुत्र राम समझे जाते हैं।

“अघोरश्राथ वाणश्र महाकालो प्रकीर्त्तितो।

भार्गवो राघवो गोपन्नयो रामाः प्रकीर्त्तिताः ॥”

(अग्निपुराण)

रामशब्दकी व्युत्पत्ति—

“राघब्दे विश्ववचनो मन्त्रापीश्वरवाचकः।

विश्वानामीश्वरो यो हि तेन रामः प्रकीर्त्तितः ॥

रमते रमया सार्द्धं तेन रामं विदुर्बुधाः।

रमाणां रमणस्थानं रामं रामविदे विदुः ॥

रा चेति लक्ष्मीवचनो मन्त्रापीश्वरवाचकः।

लक्ष्मीपतिं गतिं रामं प्रवदन्ति मनीषिणः ॥”

(ब्रह्मवैवर्त्तपु० श्रीमृष्याजन्मपु० '११ अ०)

रा शब्दका अर्थ है विश्व ब्रह्माण्ड और म-शब्दका अर्थ ईश्वर है। जो इस विश्वके ईश्वर है वही राम है अथवा वे रमा लक्ष्मीके साथ रमण करते हैं इसीलिये उन्हें राम कहा जाता है। फिर रा-शब्दका अर्थ लक्ष्मी और म-शब्दका अर्थ ईश्वर है अतएव जो लक्ष्मीपति है वही राम है। ७ वरुण। ८ घोटक। घोडा। ९ पशु-मेद। १० अशोकका पेड। रम-भावे घञ्। ११ रति।

(छी०) १२ वास्तूक, वयुआ। १३ कुष्ठ। १४ तमाल

पत्र, तेजपत्र। १५ नैज अन्धकार। (ऋक् १०।३।३)

राम—१ शृङ्गवेरके एक राजा। ये नागेशके प्रतिपालक थे। २ देवगिरिके एक राजा। ३ कौडग्रामके एक सामन्तराज।

राम—इस नामके कई प्रसिद्ध अध्यापकों और ग्रन्थकारोंके नाम मिलते हैं। १ जाङ्गुयनमहाव्रत-टीकाके प्रणेता गोविन्दके एक आचार्य। २ कुसुमाञ्जलिग्रन्थके रचयिता त्रिलोचनदेवके गुरु। ये नवद्वीपके रहनेवाले थे। ३ मधुसूदन सरस्वतीके गुरु। ४ कसनिधन-

काव्यके प्रणेता। ५ कुण्डमण्डप-सिद्धि ग्रन्थके रचयिता। ६ प्रायश्चित्तदीपिकाके प्रणेता। ७ मामिनी-विलासके टीकाकार। ८ मञ्जीर नामक ज्योतिर्ग्रन्थके प्रणेता। ९ वैद्यरुसार और शृङ्गाररूप नामक वैद्यक ग्रन्थके रचयिता। १० श्यामाकल्पनाके प्रणेता। सोमकर्मप्रदीपिका (सोमकर्मपद्धति) नामक ग्रन्थकार। ये विद्याधरके गिष्य थे। १२ एक विद्याधर ज्योतिर्विद्। इन्होंने १६०१ ई०में काशीधाममें रह कर मुहूर्त्तचिन्ता-मणि और उसकी प्रमिताक्षरा नामकी टीका तथा १६१४ ई०में रामविनोदकरण या पञ्चाङ्गसाधनोदाहरण नामक ग्रन्थोंकी रचना की। इनके पिताका नाम अनन्त और पितामहका नाम चिस्तामणि था। बहुतांकी धारणा है, कि करणकशोरीन्, यवनीय रमलशास्त्र, रमलपद्धति, रमलशास्त्र लघुपद्धति, समरसारखरोदय आदि ग्रन्थ इन्हींके बनाये हैं। १३ चन्द्रचिन्तामणिटीकाके प्रणेता मधुसूदनके पुत्र। १४ पुत्रस्वोकारनिर्णयके रचयिता। ये चत्सगोतीय और विश्वनाथके पुत्र थे। १५ गीतिगिरिश-के प्रणेता श्रीनाथके पुत्र। १६ एक राजकवि, उलभट्टके पुत्र। इन्होंने १००२ ई०में चन्देलराज धृङ्गदेवकी प्रशस्ति लिखी। १७ एक दूसरे राजकवि धृङ्गवके पुत्र। इन्होंने त्रिगर्त्ताधिप जयचन्द्रके राज्यकालमें कौरग्रामके राजानक लक्ष्मणचन्द्रके समय दो प्रशस्तियोंकी रचना की। १८ रामदेवल्हाटाटीकाके रचयिता। ये श्रीराम नामसे प्रसिद्ध थे। १९ अनुवेदान्तके रचयिता। इनकी उपाधि शास्त्री थी। २० एक छन्दःशास्त्रकार। २१ एक नैयायिक। न्यायसारविचारमें राघवने इनका उल्लेख किया है। ये रामभट्ट नामसे परिचित थे। २२ अमर-कोष टीका, उणादिकोष और उसकी टीका, मुग्धबोध टीका और मुग्धबोधपरिशिष्टके प्रणेता। इनकी उपाधि तर्कवागीश थी। २३ अशौचादि निर्णयके रचयिता। दैवज्ञ इनकी उपाधि थी। २४ कविदर्पणनिघण्टुके प्रणेता। इनकी उपाधि शोकरोपाध्याय थी। २५ उज्ज्वित-मदालस नामक नाटकके प्रणेता। य भट्टराम नामसे प्रसिद्ध थे। २६ चौरपञ्चाशिका-टीकाके रचयिता। इनकी उपाधि तर्कवागीश थी। २७ ज्योतिष-प्रदीपके प्रणेता। २८ तर्कवादावली, चाररत्नावली और

जलहीरोक प्रयेता । ये जाम्बोकी उपाधिमे विख्यात
ये । २१ कीमुकमोलावता, त्रिगच्छोकाध, दक्षिण
काठिकाभित्तपुत्रानुपदति और प्रातङ्गिनापदति,
प्रक्रियाकीमुदीटाका प्रक्रामृत, रामकल्पद्रुम, रामधो
ध्वजमित्रका, संक्षिप्तक्षेमप्रकार, साविण्डमिषय धन
भागधिरक (भोभायक पुत्र), बानरलाकर (विभवाध
क पुत्र और मुद्गन मङ्ग होसिद्रुके पीत । राजा भूप
सिंहकी मया ना कल पर इक्षोमे वे सब प्रथ स क्यन
रूपे), विश्वम्भरोपिभो नामक सारस्वत प्रक्रियाकाकाके
प्रयेता (भ्रमप्रहरीय नरसिंहके पुत्र और मधुर्माधरके
पिता, इक्षान तोरमुक्तिपति राजा रूपनारायणका
उत्तमे कृपा दे) भादि बारह पदिकत । इन भोगीका
उपाधि मङ्ग शो । ३० पुण्याधर्ममूर्च्छके प्रयेता,
उपाधि उधीतिपिह । ३१ योरसिद्धमित्तोदयक रव
पिता । ये क्रांतिचिह्न उपाधिभारा थ । ३२ निगाय
सारक रचयिता । ये मङ्गपादा उपाधिस जनसाधारणमे
परिचित थ । ३३ वृक्षचमन्द्रिका रचयिता । ये राम
पदिकत कह कर क्याय थ । ३४ रहस्यत्रयरोका और हनु
मत्पृथक प्रयेता । ३५ द्रव्यायन यमक रोकाके प्रयेता ।
३६ वैशालसिद्धागत तथा शास्त्रातिनककी रोकाके प्रयेता,
वर्षित उपाधिभारा शो प्रथकार । ३७ मध्यमभोरना
नामक मध्यसिद्धान्तकीमुदीरोकाक रचयिता । इक्षोमे
निगानम् मङ्ग कहनेम इन प्रथका रचना को ।
३८ वादपुत्रनिवहोपिकाक रचयिता । ३९ वैशालार्थ
संमङ्ग सन्नुनयिता । ये राजा रामचन्द्रके भाषित थे ।
४० सिद्धास्तचन्द्रिका नामक वैशाल प्रथक प्रयेता । इन
का उपाधि संयमा शो । ये राममङ्ग सूरिक गिण्य थ ।
४१ विष्णुमिलयभूषण नामक ध्याकरथक प्रयेता, विष्णु-
सूरिक पुत्र । इनकी भा उपाधि सूरि था । ४२ रामदेव
संहिताकी टाकाक प्रयेता । ४३ मयालमाजारक रच
यिता । ये मङ्गोपाधिक थ ।

रामय और (का० छा०) पाकरूप, पकरिया ।

राम भाषाये—१ व्यासतापहन व्यापामुन प्रथका व्याया
भूतलर्षिपुत्रा नामकी टाकाक रचयिता । २ सप्तम
निरामयिक रचयिता और आज इत्तर्धत्त सदाचार
श्रुतिकी टाकाक प्रयेता । ३ मत्स्यनामा परिणय काथक

रचयिता । ४ राममद्विजस्तोत्र नामक प्रथकता ।
५ तर्कतरङ्गियोके रचयिता । ६ मत्स्यपिपदतिक प्रयेता ।
७ मत्स्यरोचतामका (१०८७ ई०में मृत) तथा सत्यसंघ
तोर्षका (१०६५ ई०में मृत) पारिवारिक नाम । ये दोनों
हो प्रसिद्ध पदिकत थे ।

राम उपाधयाय—मेघवृत्तरोकाक प्रयेता ।

रामश्रुति—नकोदयटाकाक रचयिता ।

रामक (सं० पु०) १ जलापामार्ग । २ राम देना ।

रामककरा (हि० पु०) एक प्रकारका धान जो बगहनमें
तेवार होता दे ।

रामकण्ठमङ्ग (राजानक)—भारमाध्युजापदति, नाद
कारिका अरेधपरीक्षापदाङ्ग, मगवदुगीतामाप्य, मतङ्ग-
पुलि स्यन्पुलि, स्यन्कारिकायिषरप, स्यन्सर्षभपिप
रण परमाश्रुनिरासकारिका गति और मोक्षकारिकापुलि
नामक नई प्रथीक प्रयेता । सर्षभक्षानसंमङ्गक शैवदर्शन
में इनका उल्लेख है । ये नारायणवंशके पुत्र और इत्यल
यक गिण्य थे ।

रामकपाम (हि० छा०) देवकपाम भरमा । नत्मा देना ।

रामकरूर सं० पु०) रामः रमणीय करूर । स्वनामक्यात्
पुण ।

रामकला (सं० ग्यो०) एक रागिजा । यह मीरथ रागकी
रनी मामी जानी है । इसके गानका समय सुबेरे एक
दृष्टसे पांच दृष्ट तक है । यह सम्पूर्ण ज्ञानिकी रागिणी
है और इसमें स्वयम तथा निवार कोमल लगन है ।

रामकपत्र (सं० ज्ञा०) तन्त्रोक्त कथयविषय । यह कथक
परमेसे अथेय प्रकारका संगल हाता है । यह कथक भोज
पत्र पर कुटुम और गोरोचन भादि द्वारा लिख कर
जिजा, व हिनो मुञ्जा और गलेमें पहनना होता है ।

रामकवि—१ मन्त्रगोपाल विश्वरथ नामक भाषक रच
यिता । २ वृक्षचामार्माकाके प्रयेता ।

रामकवि—इनका नाम रामरथस था । ये राजा निरमौरक
वरदारम थ । इनका बन्नाया "रमसागर" नामक एक प्र थ
माया साहित्यमें उत्तम है । इक्षान मरमर्षकी टाका नी
लिखा है ।

रामकाया (हि० पु०) एक प्रकारका बभूक ।

रामकाल (रामकर्मि)—मानवद्वि जिनास्य प्रावान गीतृ

राजधानीके आसपासका एक बड़ा गांव। यह सागर-दिगी नामक बड़ी दिगीके किनारे आसिधत है। यहां हर साल ज्येष्ठ सक्रान्तिमें एक मेला लगता है। इस समय महानमामोहने श्रीकृष्णकी पूजा होता और भोग लगता है। पाच दिन तक यह मेला रहता है। मेलेके लिये यहां बहुतसे घर बनाये गये हैं। गौडेश्वर हुसेन जाह (१५१५ ई०) क मंत्री रूप और मनातन गोस्वामी संसारा शम छोड कर वैरागी हो गये थे और इसी निज्जंनमें रहते थे। इसी उपलक्ष्यमे मेला लगता है। बहुतरे वैष्णव यहां आ कर विवाह करते हैं।

रामकाण्ड (स० पु०) रामशर तृण, एक प्रकारका नरसल या सरकडा। रामशर देखो।

रामकान्त—१ धातुरहस्य और धातुसाधन नामक व्याकरणके प्रणेता। रामलीलोदयके रचयिता। ये वाणेश्वरके पुत्र थे।

रामकान्ततनय— आगमसंग्रहमें एक जटाकवचके रचयिता। रामकान्त मुंशी—यशोहर समाजभुक्त गुहवंशीय एक प्रसिद्ध बङ्ग कुलीन कायस्थ। १८०१ ई०में इनका देहांत हुआ।

रामकान्त वाचस्पति—शान्तिशतकव्याख्यातरङ्गिणोके प्रणेता। ये चट्टवशीय और न्यायवागीशके पुत्र थे।

रामकान्त विद्यावागीश—शब्दरहस्यके रचयिता तथा श्यामसुन्दर चक्रवर्तीके पुत्र।

रामकान्तराय (राजा)—नाटोरके एक प्रसिद्ध राजा रामजीवनके पुत्र। इनकी पत्नी जगन्-विख्याता रानी भवानी थी। राजसाही शब्दमे नाटोर राजव श देखो।

रामकिङ्कर—ग्रहचारटीकाके रचयिता।

रामकिङ्कर सरस्वती—आशुवोध नामक व्याकरणके प्रणेता।

रामकिरि (स० ली०) रागिणीविशेष, रामकली।

रामकिशोर शर्मन् न्यायालङ्कार—दीक्षातत्त्वप्रकाश और मुद्राप्रकाश नामक दो ग्रन्थके प्रणेता रुद्रनारायणके पुत्र।

रामकीर्त्ति—एक राजकवि तथा जयकीर्त्तिके शिष्य। इन्होंने चालुक्यराज कुमारपाल देवकी १२०७ संवत्में शिला-प्रशस्ति लिखी।

रामकुण्ड—एक तीर्थका नाम। (सभादि० २।१।२६)

रामकुमार (सं० पु०) लव और कुश।

रामकुमार मिश्र—गड्ढरविजयडिण्डिम (१७६६ ई०) के प्रणेता धनपतिके पिता तथा वेदान्तपरिभाषावैदीयिकाके रचयिता शिवदत्त मिश्रके पितामह। एक अद्वितीय वैदांतिक थे।

रामकृष्ण (स० पु०) बलराम और श्रीकृष्ण।

रामकृष्ण—एक प्रसिद्ध संस्कृत ग्रन्थकार। १ अद्वैत-त्रिवेकके रचयिता। २ अधिकरणकामुदी और पञ्चदर्शा-टीकाके प्रणेता। ये विद्यारण्यके शिष्य थे। ३ आख्यात-वादटिप्पणीके रचयिता। ४ आगमकौमुदी और आगमचन्द्रिका नामक तन्त्रकार। इन्होंने १७२६ ई०में शेषोक्त ग्रंथ बनाया। ५ काव्यप्रकाश-भाचार्यके प्रणेता। ६ कुण्डमण्डपसंग्रहके सङ्कलयिता। ७ तर्क-चन्द्रिकाके रचयिता। ८ देवीमाहात्म्यटीकासंग्रहके प्रणेता। ९ नामलिङ्गाख्या कौमुदीके रचयिता। १० न्यायदर्पणकार। ११ पीठचिन्तामणि नामक तन्त्रग्रंथके प्रणेता। १२ पुष्पाञ्जलिस्तोत्रके रचयिता। १३ मीमांसा-सूत्रकी प्रकाशिका नामकी वृत्तिके प्रणेता। ये अहोवल शास्त्री (वोद्यानन्द घन)के शिष्य थे। १४ प्रायश्चित्त-प्रकरण और श्राद्धप्रभाके रचयिता। १५ भगवद्गीता-टीकाके प्रणेता। १६ भागवतकौमुदी और मन्त्रकौमुदी नामक दो ग्रन्थके रचयिता। १७ मार्गचम्पूके प्रणेता। १८ मुद्रार्णव नामक तन्त्रके रचयिता। १९ लीलावती तत्त्वचिन्तामणिदीधिति टीकाकर्ता। यह ग्रंथ अधिदी-धितिभावार्थ नामसे भी प्रसिद्ध है। २० विजयविलासके प्रणेता। २१ विवेककौमुदी और व्रतोदयापनकौमुदी नामक दो ग्रंथके रचयिता। २२ वैद्यरत्नाकर भाष्यके प्रणेता। २३ शङ्कराभ्युदय-काव्यके रचयिता। २४ शर-भार्थनपद्धतिके प्रणेता। २५ सपिण्डनिर्णयके रचयिता। २६ सिद्धान्तशिरोमणिके त्रिप्रश्नाधिकारके टीकाकार। २६ संस्कारगणपति नामक पारस्करगृह्य-सूत्र-विचरणके प्रणेता, कोणके पुत्र। २७ श्राद्धगणपति नामक श्राद्धसंग्रहके सङ्कलयिता। ये कोण्ड-भट्टके पुत्र और प्रयागभट्टके पौत्र थे। २८ दुर्गा-विलास महाकाव्यके प्रणेता। ये गोपाल आचार्यके पुत्र और शिवनाथके पौत्र थे। ३० एक टीकाकार।

इन्होंने १८४८ ई०में ज्ञानकीचरणचामर नामक काव्यकी टीका लिखी। इनका वृत्त नाम था काकापाम। ये विद्यारामके पुत्र थे। ३१ उद्भवल्लत तत्त्वचिन्तामणि प्रकाशकी न्यायशिक्षामणि नामक टीका, अपने पिता चर्माटात्र अथर्वतोम्बुकी बहाइ वेदान्तपरिभाषाकी वेदान्तशिक्षामणि नामक टीका और वेदान्तसार टीका नामक तीन टीकाके प्रणेता। ३३ रसगङ्गाशङ्कर नामक वैद्यकग्रन्थके प्रणेता, मुद्ररत्नके पुत्र। ३३ वीरवपित प्रबोधक रचयिता। ये कल्पमणक पुत्र और मूर्तिहके पौत्र थे। ३४ भगवतीपद्युष्पीकृतिके प्रणेता तथा धोपतिके पुत्र।

रामकृष्ण आचार्य—१ कर्मविपाकके रचयिता। २ न्याय सिद्धांतके प्रणेता।

रामकृष्ण गौसाई—जगन्मोहिनी नामक वैष्णवसम्प्रदायके प्रवर्तक। प्रवाद है, कि इच्छलके चिस्ती रामानन्दी वैष्णवसे उपदेश ग्रहण कर जगन्मोहनने मेरुघारण किया। साम्प्रदायिकों का कहना है, कि जगन्मोहन गौसाईने इस धर्मका सूत्रगत किया, किन्तु रामकृष्णके समय यह मत बहुत कुछ प्रचलित हुआ। जगन्मोहनके शिष्य गोविन्द गौसाई, गोविन्दके शिष्य शास्त्रगौसाई तथा शास्त्रके शिष्य रामकृष्ण गौसाई थे। रामकृष्ण बंगालमें मुसलमानाधिकारके समय विद्यमान थे।

ये साम्प्रदायिक निर्गुणक उपासक हैं। मुद्रकी हा साहाय्य परमेश्वर मानते हैं। मुद्र ही मूर्तिमान् ईश्वर और ज्ञानोक्त का भावकर्ता हैं। वाक्पाठालमें 'गुप्त सरय' कह कर मुद्रको परमदेवता समझ इनसे ब्रह्मनाम लेन और इनको उपासना करत हैं। धर्मसंगीत हा इनका एकमात्र अथलम्यन है जो निर्वाणसंगीत नामसे परिचित है।

रामकृष्ण दोह्रित नाहामाह—धन्विद्योमपदति धनि धोम-प्रयोग, वेदाहिक सन्नप्रत्यपदति यद्वात्सप्रदनाथ्य, चयनपदति, छन्दोगाहिकपदति, ज्योतिषोमोदुवाणुपदति पुण्यसूत्रोप, प्रकृत्यपदति, साहायन सूत्रनाथ्य, वाङ्मयेप पदति, पाँचहठीरुपदति और सामसम्प्रदाय नामक कई ग्रन्थोंके प्रणेता। इनके पिताका नाम था वासोदर। १८६१ ई०में याटापसीधाममें अपने व्यवहारार्थ लिख्य कोसलु पत्रकी नकल की थी।

रामकृष्णदेव—भास्कराचार्यकृत खीखावती ग्रन्थके मनो रत्न नामक टीकाकार।

रामकृष्णदेव (परमहंस)—कच्छरसेके उत्तर उपकण्डवासी एक प्रसिद्ध हिन्दू साधु। वेदान्त मतानुयायी म्द्वैत वा मध्यात्मधर्मकी उपासना ही उनकी अनुमोदित और अभिप्रेत थी। गङ्गातीरबासी इन महात्माने प्राचीन लोगों का मत भास्कर्य कर अथम ज्ञानधर्म उपदेश द्वारा किस प्रकार इस धर्मविद्भवके समय नवधर्मतत्त्वका परिवर्तन किया था इसकी भावोचना करनेसे आश्चर्याम्यित होना पड़ता है। उनका सुप्रसिद्ध शिष्य आमा विवेकानन्दन अथ्य उस्ताहसे अमेरिकामें भी रामकृष्णका मत खड़ाया तथा यहांक अधिवासियोंको मन्त्रमुग्ध कर हिन्दू धर्ममें अनुत्क किया। आज मा रामकृष्णमिश्रन अमेरिकामें रह कर पत्रपरिहर हो कार्य करता हैं।

पूर्वपाद् रामकृष्णदेवने १७५१ शककी १०वीं फाल्गुन शुद्धदशका त्रितीया तिथिमें जन्मग्रहण किया। उनके पिताका नाम सुबिराम खट्टोपाध्याय था। बुगली जिलेके कुमाण्डुकर ग्राममें इनका घर था। रामकृष्णदेव खुदो रामकृष्ण उपासक पुत्र थे।

रामकृष्णके जन्मसम्बन्धमें एक अलौकिक किम्वदन्ती प्रचलित है।—रामकृष्णदेवन जब मातृगर्भमें प्रवेश किया, उस समय द्युविराम नशाधाममें थे। ये सर्वदा ईश्वरसे यहा प्रार्थना किया करत थे, कि उनके एक परम धार्मिक पंच तुल्य साधुपुत्र उत्पन्न हो।

इस देशमें रामकृष्णकी माता एक पड़ोसिनक साथ पासबाडि एक त्रिबाहयमें पूजा करत गह। इसी समय एक बच्चा शिशु मन्दिरको भोरत धया और उनका उद्गम हुआ गया। बच्चेर पुत्रनेको बात ग्राम फल गह। कोई उसे भूत, कोई प्रेत और बायुक्षय रोग बताते छगा। किन्तु यथार्थमें उसी दिन उनके गर्भसञ्चार हुआ। इस समय रामकृष्णकी माताकी उमर आठवींमछ ऊपर थी। अमा तक उनका रामेश्वर और रामकुमार नामक दो उपयुक्त पुत्र और कन्याएँ हो चुकी थीं। श्रीदायस्थामें पूर्वधर्म देख कर पढ़ास खिया तरह तरहकी बातें उडान लगे। आखिर सतीने यही स्थिर किया कि प्रवृत्तये हो इस बार गर्भमें पुत्रा है।

खुदिराम जब घर लौटे, तब सभी बात उन्हें मालूम हुई। स्त्रीकी अवस्था देख कर उनके रोंगटे खड़े हो गये। आखिर उन्हें पूरा विश्वास हो गया, कि इस गर्भसे कोई महापुरुष उत्पन्न होंगे। उचित समय पर एक पुत्र भूमिष्ठ हुआ। पुत्रको देव सर्वोंने उनके अवतारत्वकी कल्पना की।

जिसका जैसा संस्कार होता है, वह वचनसे ही दिखाई देता है। लिपना पढ़ना देवपूजामें अनुरक्ति अथवा खेलना, दूसरेकी चीज चुराना आदि किसी किसी बालकमें मानो जन्माजित फलके जैसा अनुमान होता है। रामकृष्णदेव कोई भी खेल नहीं जानते थे। वे अपने ठाकुरको सजाना पसन्द करते तथा पड़ोसके बालकोंको साथ ले कर मैदानमें, निज उद्यानमें बैठ कृष्णलीला, रामलीला वा गौराद्वलीला किया करते थे। इस प्रकार लीलामें कभी कभी वे चेहेश हो जाते थे। ईश्वरविषयक मधुरसङ्गीतसे ये सभीका मन चुरा सकते थे। तत्त्वदर्शी मनुष्य उन्हें 'ठाकुर समझते थे।

कुमारपूकुरमें लाहा उपाधिधारी एक सम्भ्रान्तवंशका वास था। उनकी अतिथिशालामें प्रतिदिन अनेक साधु संन्यासी आया करते थे। वे लोग रामकृष्णको तिलक-चन्दनादि लगा कर अपने अपने भोजनमेंसे पहले उन्हींको थोडा थोडा करके खिलाते, बादमें आप खाते थे। साधु महात्मा जिस बालकको भोजन करा कर तृप्त होते थे, क्या उसे सामान्य बालक कह सकते ?

रामकृष्णदेवको जब खुदिरामने पाठशाला भेजा। तब इन्होंने हंस कर कहा था, 'अर्थकरी विद्याकी मुझे जरूरत नहीं। इससे तो चावल केला मिलता है, मैं यह विद्या नहीं पढूंगा।' फिर वे लोगोंको मूर्ख होनेका भी उपदेश नहीं देते थे उनका कहना था, कि बुद्धि ही शुद्धि-हेतुकी शिक्षा है। जिस विद्यासे बुद्धिका उत्कर्ष साधित होता है, जिस विद्यासे बुद्धि भगवान्के पास दौड़ती है उस विद्याका—उस ब्रह्मविद्याका आजोवन अभ्यास करना ही सभी नरनारियोंका कर्तव्य है।

गैरिकवस्त्र धारण कर संन्यासी वा भिक्षुकाश्रमावलम्बी होना उनकी इच्छा न थी। वे कहते थे, कि कमण्डलु ले कर, गैरिकवस्त्र पहन कर, लोगोंको ढग कर

आत्मसुखभोग करना संन्यासिधर्म नहीं है। भगवान्के प्रति जिनका मन वीडता है उसकी सभी विषयोंमें उदासी देनी जाती है। यह भाव उनके हृदय पर अच्छी तरह पड गया था। रासमणिके देवालयमें पुजारी रख कर इन्होंने कुछ दिन तक रूपया कमाया। जब इनकी अवस्था कुछ अच्छी हुई, तब इन्होंने पूजादि करना छोड़ दिया। इस अवस्थामें उनका सभी पक्ष मन्दिरसे चलता था। शम्भुचन्द्र मल्लिक और रासमणिके जमाई मथुर बाबूने उनकी नित्यसेवाके लिये एक नया प्रवचन करना चाहा। लेकिन इन्होंने कहा था कि, 'चला जाता है, नये प्रबंधकी जरूरत क्या?' मथुर बाबू इन्हें जो वाराणसीकी चेली पहनने देते थे उसे ये मन्दिरके कीर्तनियों वा यात्रावालोंको दे दिया करते थे। इन्होंने जो स्त्रीकाञ्चनकी माया छोड दी थी उसके कितने दृष्टान्त मिलते हैं।

वचनमें ही इनके पिता परलोकको सिधारे। माता के प्रति इनकी यथेष्ट भक्ति थी। रामकृष्णदेव जब रासमणिके कालीभवनमें काम करते थे उस समय तथा उसके बाद भी माता उनके पास ही रहती थी। भाई भगोजे, बहन चहनोई सर्वोंके साथ इन्होंने सम्बन्ध रखा था। हुगली जिलेके रहनेवाले रामचन्द्र मुत्तोपाध्याय की कन्या शारदा सुन्दरीसे इनका विवाह हुआ।

विवाहके बाद फिर इन्हें कभी स्त्रीसे भेंट नहीं हुई। यद्यपि बीच बीचमें ससुराल जानेकी इच्छा होती थी, पर कार्यवशतः नहीं जा सकते थे। जब इन्होंने जवान्की कदम बढ़ाया, उस समय चाण्डालकी और इनकी विलकुल दृष्टि न थी। वे हमेशा ईश्वर-चिन्तामें निमग्न रहते थे, किसीके साथ बातचीत भी नहीं कर सकते थे। यहा तक कि अपने शरीरकी ओर भी इनकी दृष्टि न थी। वे स्वयं खा पी नहीं सकते थे तथा मलमूत्रादि त्याग करनेका समयज्ञान भी उन्हीं नहीं रहता था। फलतः सर्वोंसे इनका दैहिक सम्बन्ध टूट गया। इस समय इन्होंने अपनी स्त्रीकी तन्त्रमतसे पूजा की थी। साधारण भावमें हम लोग स्त्रीको जैसा समझते हैं, वे वैसा न समझते थे। वे केवल अपनी स्त्रीकी ही नहीं, वरन् स्त्री-जातिको माता कहा करते थे। वे कहते थे, कि एक दिन गणेशने भगवतीके ललाट पर क्षत चिह्न देख कर पूछा, 'मा ! तुम्हारा

कपाळ कटा क्यों हैं ?' भगवतोने उत्तर दिया, 'ब्रह्म ! एक पुत्र जन्मने ई द फेंक कर बिड़ासका शिर फोड़ दिया था। मैं समी जगह प्रकृतिरूपमें विराज करतो हूँ, इस कारण बिड़ासको आघात करना मानो मुझे ही आघात पहुँचाया।' यह सुन कर गणेशने समझा, कि जब ऐसा ही तब समा मेरी माता हैं इसलिये मैं विवाह नहीं कर सकता।' माता पिताके कहने पर भी गणेशन विवाह नहीं किया था। रामकृष्णदेव मां गणेशकी तरह समाको माता समझन थे।

रामकृष्णदेव इसी कारण विवाह करने स्त्रीको साथ रख कर भी उनके साथ स्त्रीका-सा व्यवहार नहीं करते थे। सर्वसाधारणको ये उपदेश दे गये हैं, कि स्त्रीके निकट रहनेसे पशुभावका उद्रेक होता है, उसको फिर दूसरे भावमें रज कर दिन यापन करना कोई कठिन बात नहीं है।

अभी यह प्रश्न ही मफता है, कि रामकृष्णदेव क्या सबमुख त्रितंत्रिय पुरुष थे। उनका कहना था,—

"कामरु क परमें फेठा लयान शब

बुद्ध बुब लो पर लगे।

सुबतोकी ताप केरता लयान शब,

याज्ञ काम जलो पर जलो।"

यहाँ पर ये जो लयं त्रितंत्रिय हुए थे, उसका प्रत्यक्ष प्रमाण क्या ?

रामकृष्णदेवने कभी भी बीवभावस्थामें स्त्रियोंका संसर्ग नहीं किया। भीर तो क्या, स्त्रीका मुह तक भी उन्हीं नहीं देखा था। जिस समय ये पहली बार स्त्रीके पास गये थे, उस समय पौडुशीरूपसे इनकी पूजा की थी। इनके मूठ मनका माध जाननेके लिये अनेक बार बहुतेने उनको परीक्षा भी की थी। एक बार ठाकुरबाड़ी में कोई देखा उनके पास मेझी मह थी। उसने जगा ठार कई दिनों तक अपनी मादिना जाल फेड़ाया, पर त्रितंत्रिय रामकृष्णन मासामनेस उस जायका पौडु दिया था। कृताञ्जलिपुत्र हा इन्होंने वक्ष्यास कहा था, 'देवा ! तुम मेरा भान वसया माता हो, मैं तुम्हाए सत्तान हूँ।' परंतु यह कामानुषा रुब माननेबाकी थी। काञ्

मना करने पर भी जब उसने अपना झाल नहीं समेटा, तब रामकृष्णने सिहनाद करते हुए उसकी भीर कटाछ फेरा और तब वह प्राण ले कर भागा।

उस समय मधुमा-बाजारमें कम्पनाबाई नामक एक वेश्या रहती थी। उसके साथ सनाह करके एक मद्र पुष्य रामकृष्णको वहाँ ले गये थे। रामकृष्णदेवकी उस समय बहुती जवानी थी। वेश्याके घर उन्हीं छोड़ कर वह मद्रपुष्य चम्पत हो गये। कस्मीबाईने प्रायः १५१ ई. युवतियोंको कुछ नंगी हाकठन पैठा कर तथा परकी भी सुग चित प्रथोसे सुधासिद्ध कर रखा था। उसने सोचा था, कि जिस मोहिनीके फनेमें महायोगी, महाशक्ति तक भी फंस गये हैं, जिस मोहिनीका रूप देख कर हृदय परा शर तक भी ठहर न सके थे, आज इसी मोहिनीमूर्त्तिका बाजार मेंने जगाया है। यह समझ कर कस्मी रामकृष्ण का बिल सुटनेक लिये बहुत कोशिश करने लगी। पर मैं सुसते ही रामकृष्णने कृताञ्जलिपुत्र हो 'मा भानवमयि' कह कर सबोंको प्रणाम किया और उनके बीच अपना भासन जमाया। बीचमें उन्हीं पैठा देख कर वेश्यामने सोचा, 'अब देखें, तो ये किस प्रकार भागते ? हम स्त्रीयों ने बहुतों सापुष्पा देखा है, बहुतों भद्रको देखा है, बहुतों सम्प महात्माका देखा है, पर ये तो उन डोगोंसे कहीं हान हैं। वावू बड़े मूर्ख हैं। इनके साथ समास करनेमें विशेष आयोजनका प्रकार न था। सबमुख यह काम हम डोगोंका बैसा हा हुआ है जैसा मच्छक पर तोप खजाना।' रामकृष्ण देवने बाँबे फाड़ कर एक एक बार सबोंकी भोर देखा। प्रत्येकको 'मा भानवमयि' कहते उनका जाभ ठाकुमें सटन लगी। कस्मीने तिरछी नजर फेर कहा, 'बाह साधु महाराज, माप शटाब भी पीते। रामकृष्णदेव कीन शटाब सेवन करते थे, वह मूद्र देखा केा क्या मात्तम। कस्मीने नंगी हो कर ज्यों ही बाँह बड़ाह, रामकृष्ण देव त्यों ही हाथ जोड़ कर उसके प्रति एक डुरिले 'काकी काकी' कहते हुए समाधिस्थ हो गये। उनक शरीरसे शक्ति निकलने लगी। वह ज्योति देख कर वक्ष्यायें शर गा और अपना अपना कपड़ा पहन कर उन्हे हया करने लगीं। कोइ जळ जाने बीड़ी, कोइ हाथ मीड़ गसेमें म बळ डाळ चरपानि शिर परकने

लगी और कोई अज्ञानकृत अपराधके लिये बार बार क्षमा मागने लगी ।

शक्तिके उपासक ही रामकृष्णने कालीकी साधना की थी । पीछे तलादिमत साधनके अलावा उन्होंने स्वयं सभी साधनाओंको सम्पन्न किया था । ऊर्ध्वामुण्डसे तलकी साधना बहुत भयानक है, साधारण मनुष्य उसे कर सकते, संदेह है । किन्तु वे ब्राह्मणोंकी सहायतासे उसमें भी कृतकार्य हुए थे ।

वैदान्तिक मतसे वे गुप्तसंन्यासी ही शङ्करका शाखा-विशेष पुरी श्रेणीके अंतर्गत तोतापुरी नामक एक नंगे साधुसे दीक्षित हुए और पीछे निर्विकल्प समाधिलाभके लिये प्रवृत्त हो गये । उस साधनाके बल वे तीन दिनमें कृतकार्य हुए थे । इस साधनाके पहले ही वे कुम्भकादि योग प्रक्रियामें नियुक्त थे । तोतापुरी रामकृष्णकी समाधि देख कर अवाक हो गये । उन्होंने रामकृष्णके विशेष अनुरोध करने पर तीन दिन वहा डहरना स्वीकार किया था । किंतु उसके बाद लगातार ग्यारह मास तक दूसरी जगह जानेकी उनकी विलकुल इच्छा न हुई । इतने दिन रहनेका कारण यह था, कि जिसे कभी कोई नहीं कर सकते, जिसके लिये उन्होंने चौआलिस वर्ष विताया था उस दुःसाध्य निर्विकल्प समाधिको रामकृष्णने तीन दिनके अंदर किस प्रकार कर डाला । इसका कारण जाननेकी उनकी उत्कट इच्छा थी । रामकृष्णको न समझ कर वे आपिर गंगामें डूब मरने गये थे, किंतु दुर्भाग्यवश वहा उतना जठ नहीं था जिससे वे पुनः लौट कर रामकृष्णके पास आये और अपनी आत्मदुर्बलता स्वीकार कर चल दिये ।

रामकृष्णने वैदिक मतसे पञ्चवटी तथ्यार करके ध्यानादि किये थे । आज भी कलकत्तेके उत्तर दक्षिणे-श्वरके कालीमन्दिरमें उस पञ्चवटी और तान्त्रिक साधनके पञ्चमुण्डो और वेरतलाका निदर्शन पाया जाता है ।

उन्होंने राममन्त्र साधन करनेके लिये हनुमानका अवलम्बन किया था क्योंकि हनुमान जैसे विशुद्ध भक्त बहुत थोड़े थे ।

क्षणोपासनाके समय वे कभी गोपिका और

कभी श्रीमती राधिकारके भावमें रहते थे । इस प्रकार सभी धर्मभावसाधनके प्रक्रियानुसार वे जा कर रामात्, निमान्, बौद्ध, नानकपयी आदि सम्प्रदायविशेषके साथ मिले और पहलेकी तरह तीन तीन दिन करके हर एककी साधना की । आश्चर्यका विषय यह कि तीसरा दिन बीतते ही एक दूसरे सम्प्रदायके सिद्धपुरुष आ कर पडे हो जाते थे । जब प्रकाश्य मतके कार्यादि शेष होने पर आये, तब वे गुप्त मतकी साधनामें प्रवृत्त हुए । इस समय भी पहलेकी तरह सिद्धपुरुष आने लगे । रामकृष्णने उन लोगोंसे उपदेश पा कर तीन दिनके हिसाबसे सभी पथाओंका चरमभाव आयत्त कर लिया ।

हिन्दुमतके प्रकाश्य और अप्रकाश्य मतोंका निदान निरूपण करनेके बाद इन्होंने महन्दीयधर्ममें दीक्षित होना चाहा । भावमयकी यह अभिनव मानसक्षेत्रमें अद्विष्ट होते ही गोविन्ददास नामक एक व्यक्ति वहा सहसा पहुच गये और मुसलमानोधर्ममें उन्हें दीक्षा दी । इस साधनामें भी उन्हें तीन दिनसे अधिक समय न लगा था ।

मुसलमानोधर्मसाधनाके समय वे ठीक मुसलमानोंकी तरह लुंगी पहनते और शिर पर टोपी रखते थे । इस समय भूल कर भी वे काली अथवा राधारुष्ण अथवा और किसी देवदेवीका नाम नहीं लेते थे ।

पीछे ईसाधमग्रहण करनेकी इनकी इच्छा हुई । इस समय कोई सिद्ध ईसाई न थे । इसलिये एक दिन वे युटुलाल मल्लिकके उद्यानमें टहलनेके लिये गये और वहा मैरीकी गोदमें एक सोते हुए ईसाईके चित्रकी देख कर भावमें विभोर हो गये । पीछे यीशुकी विमल ज्योति पा कर पुलकित हृदयसे वही भावप्रकाश करने लगे । इस समय इन्हें ऐसा मालूम होता था, कि वे मानो गिरजामें खडे हैं । इसी भावमें इन्होंने तीन दिन विताया सब प्रकारके वैधधर्मसाधनके बाद वे ब्राह्मणोंके साथ मिले । इन्होंने पहले आदि ब्राह्मणसमाजके आचार्यप्रवर देवेन्द्रनाथ ठाकुर महाशय, पीछे भारतवर्षीय ब्राह्मणसमाजके प्रवर्तक केशव चंद्रसेन और अन्तमें साधारण ब्राह्मणसमाजके गोस्वामी और शाखा महाशयके साथ आनन्द लूटा था ।

रामकृष्णदेवकी विधेय शिक्षा यह थी, कि भयनेमें सीमाविहित धाम रख कर मगस्र एकाकार मानूम कर सकनेसे विवाह मिर जाता है। मर्यात् भयना भाष कायम रहना भीर यह भाष एक अद्वितीय भायमयका समग्र लेना शैया। जिस प्रकार समाको एक प्रमुहा भूस्वभाव, एक राजाका प्रजाधान रहनेस मुनीय वा राजाका ज्ञम नहीं होता, मुनीय वा राजा जे कर परस्पर विवाह नहीं समता, उसा प्रकार एक अद्वितीय परमेश्वर सबके उपास्य है, यह ज्ञान हो जानेसे कोइ विवाह रहने नहीं पाता। रामकृष्णदेव इस आध्यात्मिक तत्त्वको प्रकट करनेके लिये भवतर्णां हुए थे, येसा ही उनक पिण्यों और मर्कौका विश्वास था।

सबम पहल एक ब्राह्मणको भयतार बनजाया था। रामकृष्णदेवकी साधनावस्थामें यह स्त्री बहो पदु थी थी। उस स्त्री कर रामकृष्ण बहुत प्रसन्न हुए थे। ब्राह्मणो बंगाला स्त्रीका जैमी थी। वह किसको खा थी, किमका कन्या थी, कहा रहती थी किसको भा मानूम न था। पुतापत न और समी साथ भावि उसके भावस थे। वह रामकृष्णके साधनकार्यमें महावता पदु खाना थी। ब्राह्मणोके साथ रामकृष्णका गोपाल भास था। वह कभी कमी पगोडा की तरह पैशभूया पहन कर भण्यार्य विविीक साथ बांदीको पाळोमें घोर मखल जे कर गोपाल पियसक गीत गातो हुए रामकृष्णक पर आतो थी। घरक पास पहुंचत हा उस मूर्च्छां भा जाता था। इस समय उसक कामोंमें अब तक गोपालका नाम नहीं उधारण किया जाता तब तक उस होन नहीं होता था। कालोके सामन अब कमी बज्जिदान पड़ता तब यह उन दरिपरस रम्मादिको तरावोर कर भा संता थी। बहुतरे उस ब्राह्मणोकी काखीका स्वरूप मानत थे। रामकृष्णक साथ यह ध्यारद बस थी। इस ब्राह्मणान अब रामकृष्ण देवको भयतार कह कर वापित किया तब मधुर बाबू यह ज्ञानके लिये कनकसेस एक परिहृत वैष्णवधरम को साथ ले इक्षिपेभर गये। इस समय बंगालक एक अद्वितीय दिग्विजयो गीरा नामक परिहृत भा बहो मीरुप थे। वैष्णवधरमको देवने हा रामकृष्णदेव भाषक भावेनमें हीके और उनक रूपे पर भङ्ग गय।

वैष्णवधरम रामकृष्णदेवके मपूर्व महाभावके छद्मण देख कर उनका स्वय करने लगे। अब ब्राह्मणोकी बात पर उह पूरा विश्वास हो गया तथा उहें और भीतीके रामकृष्णको भयतार माननेमें उरा भी संदेह न रहा।

रामकृष्णदेव इस समय परिहृत और रामकृष्णकोके साथ रहा करत थे। वे एक भाव्युपकरण थे यह बात अब भी जनसाधारणको मालूम न थी। परन्तु भारत धवके साथ और मक उहें अच्छी तरह जानत थे। बहुमीने गुप्तभावमें उहें भयतार मान लिया था। जन साधारणके सामन भयना प्रच्छन्न भाष दिखजानेके लिये ब्राह्मणोने उहें तंग किया। इस पर रामकृष्णने बिरक हो उमे बहोसे ख न जानकी कहा।

कनकयम्रसेनने रामकृष्णदेवके भावेनसे प्रचार काय भाटम्म कर दिया, उनका भाषपूर्ण अपदेश केशव बाबू कमी कमी समाचारपत्रमें मो निकाल बते थे। इसन छागीका ध्यान इनकी भीर धोड़े ही समयमें आरुप हो गया। नरविधान देका।

केशव बाबू भीर उनक मतावलम्बी अब रामकृष्ण क पास भाषा करत थे, उस समय वे भयना भाष अच्छी तरह प्रकट नहीं करते। इसी कारण कोइ उनके निर्दिष्ट उपासक भा नहीं हुए। उहोंने उस समय भी भयना भाष उतरा रखा था, मालूम नहा। पीछे १८७६ ई०म उनक निर्दिष्ट उपासक धारे पीरे दनपुप हों अभा भारतवर्षमें तमाम फैल गय ई और उनका कार्य करते हैं।

इसके बाद उहोंने इक्षिपेभरमें कुछ दिन बिताया। यहाँ उनक गलेमें एक रोग हो गया। उनको चिकित्सा क लिये उपासकपुत्र उहें कनकका ले भाये। सुवि क्यत हामिपोपैथिक डॉ० महेश्वरमान सरकारने बङ्गे यलस चिकित्सा का, पर रोग नहीं छूट। इसी समय काकोपुत्राका दिन भा पदु था। उस दिन सपेरे उहोंने एक मकको बुना कर कहा भात्र महाभाषाको पूजाका दिन है, तुम सांग पूजाका आयोजन करो। मकोने येसा हा किया। संज्याकाळके बाद पूजा स्वनेके बहुरसे भावना भाष। पूजा समांत करके मगन महा भाषाका प्रसाद खाया। जिन कण्टसे हुए तक मो

नहीं' पी सकते थे अर्ज वडी आसानीसे वे कठिन वस्तु भी खा गये ।

इस घटनाके कुछ दिन बाद ही उन्हें कलकत्तेसे काशीपुरके उद्यानमें लाया गया । यहाँ वे आठ मास थे । काशीपुरमें रहते समय इन्होंने बहुत सी तत्त्व कथाओं का उपदेश दिया था ।

इतने दिन बीत गये पर रोग जरा भी न हटा । यह देख एक दिन कुछ भक्तोंने हाथ जोड़ कर उनमें निवेदन किया, 'प्रभु ! आपने क्यों ऐसे रोगका बहाना किया है ? हम लोगोंनि यह रोग दूर करनेके लिये कोई कसर उठा न रखी, पर जरा भी फायदा नहीं देखते हैं । इससे अब हम लोगोंकी अच्छी तरह मालूम हो गया, कि जब तक आप स्वयं इसकी व्यवस्था न करेंगे, तब तक यह रोग दूर भी नहीं हो सकता है ।' उत्तरमें रामकृष्ण ने कहा, व्याधिका पता तुम लोगोंको अब तक भी न लगा, प्रत्येक कार्यका फल है । सत्कार्यका सुफल और असत्कार्यका कुफल है कार्यानुसार ऐसे फलाफटका भोग करना होता है । तुम लोगोंनि जो असत् कार्य किया है, जैसा पाप किया है, यदि तुम्हें उसका फल भोगना पड़े, तो तुम्हारा भविष्य बहुत भयानक हो जायगा । किन्तु कार्यका फल भोग करना भगवान्का नियम है अतएव तुम्हारे उन पापोंको मैंने हाथ पमार कर ले लिया है । जिस दिन तुम लोगोंनि बकलमा दिया है उसी दिनसे तुम्हारा पूर्वसञ्चित पाप नष्ट हो गया है । पापके दूर हुए बिना शरीर शुद्ध नहीं होना और न भगवान्के साथ सम्बन्ध ही हो सकता है । मानवदेहमें पापका भोग भुगतना होता है, इसीलिये मेरे शरीरमें रोग हुआ है । मेरे इस रोग द्वारा तुम लोगोंके पाप दूर हुए हैं तथा जो कोई मुझमें आत्म-समर्पण करेगा, वह भी मुक्त होगा और उसका भी पाप मुझे भुगतना होगा । इस समय ताना प्रकारके चिकित्सक, साधु और जनसाधारण रामकृष्ण देवको देवने आते थे । कभी तो वे नारोग हो उद्यानमें टहलने जाते थे और कभी गलेमें जो ब्राह्मण हो गया था, उससे कलसी कलमी जोणित बमन करते थे । आश्चर्यका विषय तो यह था, कि चिकित्सक जिस दिन जिस उपसर्गके प्रतिकारके लिये जो औषध देते थे, उन

दिन वही उपसर्ग बढ जाता था उनके शरीरमें हामियो पैथी औषध तक सख नहीं होता था । एक दाना सेवन करनेसे समूचा शरीर त्रिस्त हो जाता था । इस कारण कोई भी चिकित्सक औषध प्रयोग करनेका साहस नहीं करते थे ।

भक्तोंके निकट उस प्रकार नाना भावोंकी लीला कर १८०८ गुरुका ३१वीं श्रावण मृगशिरसा प्रतिपद तिथि का सञ्चार होते ही इन्होंने लीला रत्नमित्री यवनि'का गिरा दी ।

प्रभुकी लीला शेष होने पर उनकी दृष्टि एक सप्ताह तक काशीपुरके आगेमें रगी गई । पाँडे जन्माष्टमीके दिन माहुडगाछोंके उद्यानमें गाँवों गई थीं । वहाँ आज भी नित्य पूजादि होता है तथा प्रतिवर्ष हर प्रातःपद तिथिस ले कर जन्माष्टमी तक उदा विषय पूजन तथा अन्तिम दिन प्रभुके नित्याविर्भाव तिथिसर रामकृष्णोन्मय होता है । रामकृष्णदेवने यद्यपि मानवलीला सम्भरण की है, पर वे जा कुछ कह गये हैं वह कार्यमें परिणत होता है । इन्होंने कहा था, कि 'मुझसे मेरा नाम बडा है—नामसे ही सभी काम पूरे होंगे । उस समय 'रामकृष्ण' नामकी जो महिमा है उसे उनके शिष्य-सम्प्रदायने अच्छी तरह समझ लिया था तथा जो यथार्थमें प्रम-पियासु थे वे भी नामका माहात्म्य समझ कर आत्महारा हा गये हैं ।

वर्तमान समयमें उनके शिष्य सम्प्रदायके यत्नमें कलकत्तेसे उत्तर काशीपुरके दूसरे किनारे गङ्गातीरवर्ती चेलुडग्राममें श्री श्री रामकृष्णदेवका मठ प्रतिष्ठित हुआ है । यहाँ और दक्षिणेश्वरके मन्दिरमें प्रतिवर्ष उनके उद्देशसे एक बडा मेला लगता है ।

रामकृष्ण देवज्ञ—१ तत्त्वप्रकाशिकाकी भास्वती नामकी टीका और भास्वतीचक्रश्रमुदाहरण नामक ग्रन्थके प्रणेता । २ नृसिंह देवज्ञके पुत्र । इन्होंने १३३६ ई०में गणितामृतलहरी नामक एक लीलावृत्ति लिखी । अलावा इसके बनाये तांत्रिककीर्तुम और नलिक्वा'धपद्धति नामक दो आर ज्योतिर्ग्रंथ मिलते हैं ।

रामकृष्ण परिचय—धर्मनिबन्धके रचयिता । २ एक दूसरे परिचय । ये शिवदत्तवीधके प्रणेता यादव परिचय-

के गुरु थे। ३ भविष्यीचिंतिमाध्याय नामक न्यायग्रन्थके रचयिता।

रामकृष्णपुर—कन्नड़सेका गंगातट पर अवस्थित एक नगर। यह ईष्ट इण्डिया रेलवेके प्रसिद्ध हावड़ा स्टेशनके दक्षिण अवस्थित है। यहाँ चायबग बिल्डिंग कार कार है।

रामकृष्ण मठ—इस नामके बहुतनेरे परिचय मिलते। १ अश्व्यानि नामक व्याकरणके प्रणेता। २ कोटिद्वीम शतमुखादिप्रयोगपद्धतिके रचयिता। ३ गणपाठ मीर शब्दशोधप्रक्रियाक प्रणेता। ४ प्रयोगशोधिकाक रचयिता। ५ मध्यतन्त्रचषेराप्रयोग नामक ग्रन्थके प्रणेता।

६ रामकीर्तुहृदय नामक सङ्ग्राहसारोद्धारके रचयिता।

७ भाभक्त्यायन गृह्योक्त यास्नुनाम्तिके रचयिता।

८ विभागतत्त्वविचार नामक शोधितिकार। १ व्ययहार वर्णपत्रक प्रणेता। १० वैषाकरणनिश्चयान्तररत्नाकर नामक सिद्धान्तकीमुद्दीरीकाके प्रणेता।

ये विद्यमल मठके पुत्र और वेङ्गुरके वीर्य थे। ११ अनन्तप्रतोदुपायन प्रयोग, शोधसुविद्यक कर्त्तव्यनिर्णय, मासिक धात्रनिर्णय मीर शिष्यसङ्गमतिप्रणानिधि भादि ग्रन्थके रचयिता। ये नारायण सूरिके पुत्र तथा कनकाकरके पिता थे।

१२ रसम्प्रकल्पद्रुम नामक वैद्यकग्रन्थके रचयिता।

ये मीरकण्ठ मठ (मार्तण्ड) के पुत्र थे। १३ तीर्थरक्षा कर या राममसङ्ग प्रतापमण्डित तथा निश्चान्तबन्धिका या युक्तिस्नेहप्रपूर्णा नामक शास्त्रप्रयोगकी एक शोकाक प्रणेता। इन्होंने १५३३ ई०म बाराणसी धाममें शैवोक्त ग्रन्थ समापन किया था।

रामकृष्ण महाध्याय—१ शूद्रपाणिजन प्रायश्चित्ततत्त्व विवेककी प्रायश्चित्तकीमुद्दी नामकी शोकाके प्रणेता।

२ संकल्पकीमुद्दी (मोमासा), सांख्यकीमुद्दी सांख्य सार मीर स्मृतिर्षीमुद्दी नामक कई ग्रन्थोंके रचयिता।

रामकृष्ण महाध्याय ब्रह्मसर्षी—सुविख्यात नैवायिक शिरो मणि महाध्याय (रघुनाथ) के पुत्र। इन्होंने रघुनाथ कृत किरणायनीगुणप्रकाशशोचिंतिकी शोका, न्यायव्यक्तिका मीर न्ययकोशावतीप्रकाश नामक ग्रन्थ लिखे।

रामकृष्ण मिश्र—एक प्रसिद्ध पण्डित। ये सिद्धान्त बन्धिकाकार शिवचन्द्र सिद्धान्तके गुरु थे।

रामकृष्ण राय—नाटोर राजवंशके एक राजा। विख्यात राजा भवानीने इन्हे गीर् लिखा था। सम्राट् शाह आसमने इन्हे 'महाराजाधिराज पृथ्वायति बहादुर' की उपाधि दी थी। साई कानधार्मिकसक दशसाहा चम्पू बस्तके समय इष्ट इण्डिया कम्पनीके व्यवस्थापनुसार जब नाटोरके अधीनरथ तासुकरारो की गजराजा देने कहा गया तब इन्होंने अपना क्षमता हास होतो देख बहुत ठेङ्गछाफ की। इस गोकमाजमें तथा धर्मकर्ता में अधिक निष्ठाके कारण राजा रामकृष्ण अच्छी तरह राजकार्य न थका सक। उनके अधिभूत कितने परमन भिक गये। इन समय राजा भवानी नाटोर सम्पत्ति की रक्षाक लिये फिर एक बार शासनकी बागडोर अपने हाथ ली। रामकृष्णकी श्यामापूजाम ऐकाग्तकी भक्ति रहनेके कारण इन्होंने विषयकामनास भक्ष्य होता थाहा। इनका फल यह हुआ, कि भनेक सम्पत्ति श्यापायतिपाके द्वापराम तथा तशारकक काशीशुद्ध रायके हाथ लगे। कुछ सम्पत्ति गोयरबंगके जेठाराम मुको पाच्याय मीर कन्नड़सेके गोपीमोहन ठाकुरने लीरीदी। रामकृष्ण साधक मीर सिद्धपुत्र थे। इस सम्बन्धमें अनेक किंवदन्ती भी सुनी जाती हैं। १७१५ ई०में वे परलोकको सिपार।

रामकृष्ण वर्मा—एक ग्रन्थकार। इनके पिता हारासाल जहाँ सन् १८४० ई०में पञ्जाबस पैरुस कागी भाये। यहाँ भा उन्होंने परखूनको नूकान बाजी मीर ५० वर्षको अवस्थामें आत्ममग्नमें उन्होंने अपना ब्याह किया जिस से रामाकृष्ण, जयकृष्ण मीर रामकृष्ण नामके तीन पुत्र उत्पन्न हुए।

बाबू रामकृष्ण वर्माका जन्म सन् १८५६ में हुआ था। ६० वर्षकी अवस्थामें इनके पिताका देहांत हुआ। उस समय इनके बड़े भाईकी अवस्था केवल १६ वर्षकी थी और इनकी अवस्था केवल एक वर्ष एक महानेकी। भ्रतयव इनका माता पर इन तीनों पुत्रोंके पालनपोषणका भार पडा।

कुछ बड़े होने पर वे गुरुक यहाँ हिंदी पढ़ने लगे। जब एरोंने हिंदी लिखना पढ़ना सीख लिया, तब वे जयनारायण काठेग्रामें भ भ्रजे पढ़नेके लिये बैठाये गये। पढ़नेमें

इनका मन खूब लगता था। वाइविलको परीक्षामें ये सदा प्रथम रहा करते थे। उक्त कालेजमें एण्ट्रेंस पास कर लेने पर इन्होंने किस कालेजमें नाम लिखवाया और वहां इन्होंने बी० ए० क्लास तक पढ़ा। ये घर पर एक पंडित से संस्कृत पढ़ा करते थे। वाइविल पर इनकी अधिक श्रद्धा देख कर इनके अध्यापकने अपने धर्म पर इनका अनुराग दृढ़ किया।

छात्रावस्थामें श्रुतान करके अपना निर्वाह करते थे। पढ़ना छोड़नेके बाद हरिश्चंद्र स्कूला में अध्यापक रूप, परंतु वहां थोड़े दिनों काम करनेके पश्चात् इन्होंने उक्त पदको त्याग दिया। तदनंतर आपने पुस्तकोंको एक छोटी-सी दुकान कर लो। बाबू हरिश्चंद्र तथा गोपालमंदिरके महाराजकी इन पर विशेष कृपा थी, क्योंकि ये कुशाग्रबुद्धि और हिदी भाषाके म्वाभाविक कवि थे। इनकी किताबोंको दुकान अच्छी चली, उसमें इन्हें लाभ भी हुआ। सन् १८८४ ई०में इन्होंने एक प्रेस खरीदा। इस प्रेसमें पहले पहल "ईमाई मत-काण्डन" नामकी एक पुस्तक छपी। उस पुस्तककी बड़ी बिक्री हुई, शीघ्र ही इनका छापाखाना प्रसिद्ध हो गया। इसी सालके मार्च महीनेसे "भारतजीवन" नामक पत्र निकालना इन्होंने प्रारम्भ कर दिया।

ये जतरत्र खेलनेमें बड़े प्रवीण थे। अतएव इन्होंने पंडित अम्बिकादत्त व्यासकी सहायतासे कर्चारी गलीमें "चेसक्लब" स्थापित किया था। ताश खेलनेका इन्हें अभ्यास था। सन् १८८१ ई०में इन्होंने ताशकौतुक पर्चीसी नामकी एक पुस्तक लिखी और छपवायी थी। लोगोंने उसे बहुत पसंद किया और उसकी बिक्री भी खूब हुई।

यों तो इन्होंने हिन्दी गद्यमें अनेक पुस्तकें लिखी परंतु इनका सबसे बड़ा काम "कथासरित्सागर" का अनुवाद है। इसके इस भाग आपने अनुवाद किये थे, परंतु पुनः अधिक अवलम्ब होनेके कारण ये उस कार्यको आगे नहीं कर सके। सन् १९०५ ई०में जलोद्भ्रम-से इनका शरीरगत हुआ।

मनुष्यमें कितनी शक्ति होती है, उसके उपयोग करनेसे क्या क्या कर सकता है बाबू रामकृष्ण इसके आदर्श थे।

रामकृष्ण वैद्यराज—कनकसिंहप्रकाश नामक वैद्यक ग्रन्थके रचयिता। इन्होंने बिहार प्रदेशके अन्तर्गत चांगेश्वरके अधिपति कनकसिंहके आश्रयमें रह कर यह ग्रन्थ बनाया था।

रामकृष्णदीप—रामकर्मजीवनी नामक अमरुगतकके टीकाकार।

रामकृष्णानन्द—प्रत्यक्षस्वप्रकाशिकाके प्रणेता।

रामकृष्णानन्द—महामाध्यमटीकाके रचयिता।

रामकृष्णानन्द तीर्थ—रामात्मकप्रकाशिकाके प्रणेता सत्प्रज्ञानानन्दतीर्थ पतिके गुण।

रामकेला (हि० पु०) १ एक प्रकारका बढिया केला। इसके पेड़का तना, फूल आदि गहरे लाल रंगके होते हैं। इसका फल कुछ पतला और प्रायः एक बालिशत लम्बा होता है। यह उमई प्रान्तकी और अधिकतासे होता है और यमालके केलासे आकारमें बिलकुट भिन्न होता है। २ एक प्रकारका बढिया आम जो बंगाल और मिथिलामें होता है।

रामकेशवतीर्थ (सं० कृ०) पुराणानुसार एक तीर्थका नाम।

रामकोट—अयोध्याप्रदेशके सोतापुर जिलान्तर्गत एक परगना और उसके अन्तर्गत एक बड़ा गांव। प्रवाद है कि रामचन्द्र वन जाने समय यह नगर बसा गये थे। यहां तालुकदारगण जानवरवंशोय राजपूत हैं। १७०९ ई०में इस बंगके आदिपुरुष किसी सरदारने कच्छोंको हरा कर यह स्थान दखल किया था।

रामक्षेत्र (सं० कृ०) पुराणानुसार दक्षिण देशका एक प्राचीन तीर्थ। (ताम्रिल० ७३ अ०)

रामण्ड—सह्याद्रि शैलके अन्तर्गत एक प्राचीन तीर्थ और देवक्षेत्र। यह स्थान अति पवित्र है।

(सहाद्रि० २।४।३७)

रामदुर्गा—बम्बई प्रेसिडेन्सीके गोहेलवाड़ प्रदेशस्य एक छोटा सामन्त राज्य। यह भाऊ नगर-गोण्डाल रेलपथके ढोला जंक्शनसे साढ़े तीन कोस उत्तरमें अवस्थित है। यहांके ठाकुर लोग बड़ोवाके गावकवाड और जूना-गढ़के नवाबको कर देते हैं।

उमगढ़ा (पूर्व)—मुकप्रदेशक कुमायून् जिलेमें प्रवाहित एक नदी। यह हिमालय-पुच्छे ६००० फुट ऊंचे स्थानसे निकल कर दक्षिणका ओर ५५ मील बढ़ता हुए रामेश्वर सड्डममें सरयू नदीके साथ मिली है। पीछे दोनों नदियां रायगढ़ी नामसे बहती हुई काका नदीमें गिरती हैं।

उमगढ़ा (पश्चिम)—कुमायून् और रोहिलखण्डविभागमें तथा मुकप्रदेशमें प्रवाहित एक नदी। यह हिमालय पर्वतके अक्षा० ३० १' ३० तथा देशा० ७३ २० पू०स निकल कर गढ़वाल और कुमायून्को सीलमाळा होती हुई १०० मील वास्ता ले कर बिजनौर जिलेके काठगढ़ सामन्तक्षेत्रमें गिरा है। यहाँसे १५ मास दक्षिण जा कर काह नामक खोतखिनाक साथ मिलती और भवि राम गतिसे मुरादाबाद जिलेके मध्य होती हुई मुरादाबाद नगरसे दक्षिण बँकी जिलेमें भाई है। पीछे बदायुन, गजब्रह्मनपुर, बसालाबाद, कामपुर भादि स्थानोंको नतिक्रम कर मयोधवा प्रदेशके हरबाह जिलेमें भाई है और कधीकडे बूसरे किलारे गङ्गानदीमें मिला है। कोशी, शम्भू, देवबा वगैरा नामक तीन शाखा नदियां इसके कडेबरेकी बँहाती हैं। पहाडों अधित्यकामूमिमें प्रवाहित होनेके कारण इसका खोतगति कहीं कहीं बहुत मयावक हो गई है। इसका गतिपरिवर्तन जा कभी कभी देखा जाता है उसका यहाँ कारण है।

रायगढ़—१ मध्यप्रदेशके मरवाडजा जिलान्तर्गत एक उप विभाग। मूलविभाग २६७३ वर्गमास है।

२ उक्त जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २२ ४३' ३० तथा देशा० ८१ पू०के मध्य एक पर्वतक शिखर पर अवस्थित है। इस पर्वतके नाचे बुरहन नदी बहती है। रायगढ़क नुसरे किलारे अमरपुर ग्राम है जहाँ अगरेजोंसना पड़ती है।

१६८० ई०में राजा नरैन्द्र शा मुसलमानोंकी सहायतासे अपने भाई द्वारा राज्यहथ लिये। पाछे एक सामन्तसे सहायता वा कर इहाँसे मुसलमानोंकी हराया और नहराज्यका उद्धार किया। उस सामन्तकी इच्छासे राजाकी उपाधि ६ कर रायगढ़राज्य बान किया था। राजा नरैन्द्र शाके उक्त सरदार पर जो वार्षिक राजस्व कर

दिया था, १८१८ ई०में अङ्गरेजों अधिकारमें आनेक बाद अगरेजराज भी यही कर लेने धा रहे थे। १८५७ ई०में गङ्गा मरवाडके गंधाराप्रबंधपर राजा शङ्कर शाह बिभ्रोंहा हुए। अगरेजक विचारसे उन्हें फाँसीकी सजा हुई। पाछे उनकी रानी अपने उम्मादुल्ल अमान सिंहके लिये रायगढ़ पर अधिकार कर बैठी। यह छे कर अगरेजोंके साथ उनको कई छोटी छोटी लड़ायाँ हुई। रानी अपना वलबल ले कर स्वयं रणक्षेत्रमें कूद पड़ी थी।

युद्धमें हार ला कर रानी भाग बची। अगरेजों सना उनको पीछा करनी धा रही है, जान कर उन्होंने अपने छोटीमें तख्तपार चुलङ्क दी। उसी अवस्था में ये अङ्गरेज शिविरमें लाय गए थे। यहाँ कुछ समय बाद ही उनके प्राण पछेक उड़ गये। भगवानसिंह और उनके हा मुजाने अङ्गरेजोंके हाथ आत्मसमर्पण किया। पाछे अङ्गरेजराजने उनका राज्य और राजोपाधि छीन कर प्रासिक वेतन दिए कर दिया।

रायगढ़—मध्यप्रदेशके भोपाळ प्लेजसीके अधीनस्थ एक छाहुरात सम्प्रदाय। यहाँके छाहुर जिन सब प्रमाणकी रक्षा करते हैं उसके लिये रोजे विभिन्न सामन्तसे रूपये मिकते हैं। वह तनकाह ये पौरमिदिकल पञ्चदकी मार फल पाते हैं।

रायगढ़—राजपूतानके जयपुर राज्यान्तर्गत शेखावाटी जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २८ १०' ३० तथा देशा० ७४ ५६ पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या ११ हजारसे ऊपर है। नगर बहुत समृद्धिशाको है। यहाँ शाकपद, टैलियाक प्राक्सि और १० लहसु है।

रायगढ़—विहार और उड़ीसाके छोटानागपुरक सर मुजा राज्यान्तर्गत एक गणेशीन। यह अक्षा० २२ ५३ ३० तथा देशा० ८२ ५५ पू०के मध्य विस्तृत है। पर्वतके उत्तर नाचे उत्तरनेका वास्ता है। नाचे उत्तर कर एक नुसरे पर्वतशिखर पर आठोहण किया जाता है। यहाँ प्रायः २६०० फुट ऊंचा एक पत्थरका दरवाजा है। उस दरवाजेके ऊपर एक गर्भेश्वरमूर्ति दक्षमने माती है। उस पर एक नुसरा दरवाजा भी है जो हिन्दूजातिक भास्करशिखरकी पदाकाशा सूचित करता है। पर्वत पर

बहुत सी गुहायें, मन्दिर और उनमें अस्पष्ट शिला-फलक देखे जाते हैं। मन्दिरमें दशभुजा दुर्गा और हनुमान् आदिकी मूर्ति टूटी फूटी अवस्थामें पड़ी है। इसके उत्तर हातपोड नामक सुरङ्ग (Tunnel) देखने लायक है।

रामगढ़—हजारीबाग जिलेके अन्तर्गत एक प्राचीन गण्ड-ग्राम और वहाँकी कोयलेकी खान। दामोदरकी उपत्यका भूमि पर प्रायः ४० वर्गमील स्थान तक यह खान फैली हुई है। इस स्थानकी भूगर्भ पर्वतमाला समाकीर्ण होनेके कारण कोयलेकी तहका पता लगाना कठिन है। यहाँ कहीं Iron-stone प्रस्तरकी तहमें कार्बन मिला हुआ लोहा पाया जाता है। यहाँके कोयलेमें कार्बन अधिक होनेके कारण वह लोगोंके कामलायक नहीं है।

रामगढ़—राजपूतानेके अलवार राज्यके अन्तर्गत रामगढ़ तहसीलका एक शहर। यह अक्षा० २८° ३५' ३० तथा देशा० ७६° ४६' ५०के मध्य अवस्थित है और अलवार शहरसे १३ मील पूर्वमें पड़ता है। जनसंख्या ५ हजार से ऊपर है। शहरमें एक डाकघर, वर्नाक्युलर स्कूल और एक अस्पताल है। १७४६ ई०में नराकू राजपूत पद्मसिंहने जयपुरसे यह जागीरमें पाया था। उन्होंने यहाँ एक किला भी बनवाया। पीछे उनके लडके सरूपसिंह अलवारके प्रधान सरदार प्रतापसिंहके विरुद्ध लड़े हुए और बड़ी बेरहमीसे मारे गये। १७७७ ई०में शहर अलवारके अधीन हुआ।

रामगति न्यायरत्न—'बङ्गलाभाषा और बंगलासाहित्य विषयक प्रस्ताव' नामक बंगलाभाषाके एक इतिहास-लेखक। ये हुगली जिलान्तर्गत त्रिचेणीवासी हलधर चूडामणिके लडके थे। बहरमपुर कालेजमें पढ़ाने समय उन्होंने अपने प्रिय छात्र रामदाससेनके पुस्तकालयमें बैठ असीम अध्ययनसे उक्त ग्रन्थ सङ्कलन किया था। इसके बाद वे हुगलीके नार्मलविद्यालयमें अध्यापक नियुक्त हुए थे। १२३८ सालमें इनका जन्म और १३०१ सालको २४वाँ आश्विनमें देहान्त हुआ था।

रामगतिसेन—एक बंगाली कवि। इन्होंने 'बङ्गलाभाषामे मायातिमिरचरन्द्रिका और संस्कृतमें योगकल्पलतिका' नामक एक किम्बदन्तिका लिखी। विक्रमपुरनिवासी सुप्रसिद्ध लाला रामप्रसाद

इनके पिता थे। माताका नाम सुमतीदेवी था। लाला रामगति पिताके उद्योग पुत्र थे। लाला रामप्रसाद देखो।

५० वर्षकी उमरमें रामगति धर्मभावमें विभोर हो गये। योगानुशीलनके लिये वे पहले कलकत्ते कालीघाटमें और पीछे काशीधाममें गये थे। ६० वर्षकी उमरमें काशीधाममें इनका देहान्त हुआ। सहधर्मिणी भी उन्हींके साथ सती हो गई। उनकी विदुषी कन्या आनन्दमयीने अपने चचा जयनारायणसे कुछ सहायता ले कर हरिलोला-काव्य लिखा था।

रामगायत्री (सं० स्त्री०) रामस्य गायत्री। रामचन्द्रकी गायत्री। जो रामोपासक अर्थात् रामचन्द्रका मन्त्रग्रहण करते हैं वे रामगायत्री जप करते हैं। तन्त्रमें इसका मन्त्र और गायत्री आदि विशदरूपसे वर्णित है।

रामगिरि (सं० पु०) रामाश्रितो गिरिः रामो रमणीयो गिरिर्वा। पर्वतविशेष, नागपुर जिलेका एक पहाड़। इसका वर्णन कालिदास जीने अपने मेघदूतमें किया है। आज कल इसे रामटेक कहते हैं। कुछ लोग चित्रकूटकी राजगिरि मानते हैं, पर मेघदूतमें जो स्थिति दी हुई है, उससे वह नागपुर होके पास होना चाहिये।

रामगिरि—दाक्षिणात्यके महिसुर राज्यके बङ्गलूर जिला न्तर्गत एक बड़ा शील। यह अक्षा० १२° ४५' ३० तथा देशा० ७७° २२' ५०के मध्य अर्गावती नदीके बाएँ किनारे अवस्थित है। इसके ऊपर दुर्ग आदिका भग्नावशिष्ट निदर्शन है। १७६१ ई०में अंगरेजराजने यह दुर्ग बखल किया था। १८०० ई०में क्लोजपेट नगर स्थापित होनेसे स्थानीय मनुष्य वहाँ जा कर रहते हैं। रामगिरि इस समय जनशून्य है।

रामगिरि (सं० स्त्री०) रामकली देखा।

रामगीता (सं० पु०) एक मातृक छन्द। इसके प्रत्येक चरणमें ३६ मात्राएँ होती हैं।

रामगीतोपनिषद् (सं० स्त्री०) एक उपनिषद् का नाम।

रामगोपाल—रसकल्पवलीके प्रणेता एक वैष्णव कवि। ये रघुनन्दनके शिष्य चक्रपाणि चौधरीके प्रपौत्र और गङ्गा-रामके पुत्र थे। १६४३ ई०में इन्होंने उक्त पुस्तक लिखी। इसी रामगोपालके पुत्र पीताम्बर दासने रसमञ्जरी प्रणयन की थी।

रामगोपाल घोष—एक बंगाली वणिक् और सुविश्व राज मीतिक। हुगली ब्रिटेनके वागाद प्राममें इनका पैतृक-यासस्थान था। इनके पिता गोविन्दचन्द्र घोष व्यवसाय-वाणिज्यमें मित रह कर कलकत्तेमें आ कर बस गये। वे कोषविहार महाराजके कलकत्तेके एजेण्ट थे। इसी कलकत्ता-राजधानीमें १८१५ ई०के अक्टूबर मासमें राम गोपालका जन्म हुआ।

बाल्यकालमें प्राथमिक भ गरीबी शिक्षाके लिये राम-गोपाल मि० सेक्टरनेक स्कूलमें भर्त्ता हुए। १३ वर्षकी उमरमें ये कलकत्ता हिन्दूकालेजमें पढ़ने भाये। यहां अध्यापकमबर ह, ल, प, हिरोत्रियोक शिक्षाभोन रह कर व भसाधारण प्रतिभावसे घोड़े ही समयक अन्तर अङ्ग्रेजाशिक्षामें सम्यक् पारदर्शी हो गये। किन्तु पिताकी अपस्था अन्धो न था, इस कारण कालेजमें और अधिक न पढ़ सक। मनस्तर बेमिन्न होवके आमह करने पर मि० जोसेफ नामक एक पढ़ुरी वणिक्ने इन्हें अपने वाणिज्य-कायामें सहकारोपमें नियुक्त कर लिया।

रामगोपालने घोड़े ही समयमें परिश्रम और अध्य-पसायस अपने मालिकको सतुष्ट कर दिया। कर्त्तव्य कर्मक प्रति इनका अनुराग और स्थिर लक्ष्य देख कर जोसेफको इन पर बुढ़ विस्वास हो गया। इस समय रामगोपालने बङ्गालक कृषिज्ञात और शिल्पज्ञात धर्मोकी तालिकाक साथ एक विवरणी तय्यार कर मालिककी दी। भ गरीबीनामों रामगोपालका शिल्पनेतृप्य देख कर जोसेफ साहब बड़े प्रसन्न हुए। इनके मन्त्र ब्यव-हार और कर्मकुशलतासे परितुष्ट हो जोसेफ साहब इङ्ग्लैण्ड जाते समय अपने भाक्सिका कुछ मार इन्हीं पर छोड़ गये थे। रामगोपालने बड़े साधधानी और बिलक्षणताक साथ अपने मालिकका काम करके वाणिज्य व्यापारमें इच्छता दिखड़ा दी।

इसके कुछ समय बाद मि० क्लेसल जोसेफक हिस्से-दार हुए और रामगोपाल उनक Assistant हो कर रहें। जोसेफके कामकाज छोड़ कर विनायत जाने पर मि० क्लेसलने रामगोपालको हिस्सादार बना लिया। उमा समयसे इस भाक्सिका नाम पड़ा 'Messrs. Kelsall and Ghose'। १८३६ ई०में शान्तिक बीच मनमुटाप हो

गया जिससे रामगोपाल २ लाख रुपया छे कर अपना हिस्सा छोड़त हुए थले भाये।

इस समय कलकत्तेमें छोटी भवालयके २५ अक्षका पद-पालो था। मधमेंएजे रामगोपालको वह कार्य ग्रहण करनेका अनुराग किया, लेकिन रामगोपालने 'कम्पनोका मरक नहीं आऊ गा' कह कर उसे भलोकार कर दिया।

उसके बाद इन्होंने आराकन देशका पायल बरीब कर एक आइत बीघो। आकायब और रङ्गुनाम उसकी शाला कायम हुई। इस व्यवसायमें इन्होंने बहुत धन कमाया था। इस समय यूरोपीय वणिक् समाजमें इन की ऐसी प्रतिष्ठा थी कि १८५० ई०की २३वीं नवम्बरको उन्होंने रामगोपालको बङ्गाल चेम्बर माय कामर्सके सम्य पद पर नियुक्त किया। १८५४ ई०में मि० फिन्च उनके हिस्सेदार हुए।

१८६६ ई०में किसी नमायनीय क्षतिसे कलकत्तेका वणिक् सम्प्रदाय नष्ट हो गया। यहां तक, कि इस समय बहुतोंने मानसम्भ्रमकी रक्षा न कर सकते हुए काम बंद कर दिया। रामगोपालके किसी किसी मित्र : न इन्ह बेनामी करके वाणिज्यव्यवसाय करैकी सजाह : दी। उत्तरमें इन्होंने कहा, यूरोपनीसे लोगोंकी ठगनेके बड़े अपना कपरा बेच कर आता अन्ध्र ही । इससे स्पष्ट प्राना जाता है कि रामगोपाल व्यापार, बुढ़ प्रतिष्ठ, सरलहृदय और कर्मों व्यक्ति थे। उनक जैसे ऊँचे बशामबाके व्यक्तिके लिये प्रतारणा या प्रवञ्चना नितान्त घृणाका विषय था।

रामगोपालकी यह दृक्चिन्ता इन्हें उचितके पपसे ल खली। इङ्ग्लैण्डक बैकरोमें कमी इनसे ठगे जानेकी आशा न का था। इनका मेजा हुआ B.A. वे लोग बड़े सम्मानक साथ ग्रहण करते थे। इस कारण इन्हे उस विपद्में विशेष कष्ट उठाना नहीं पड़ता था। इनकी व्यापारता नैतिक बल और सरलताने इन्हें धन-सम्मानसे पूर्ण कर दिया था। इस समय ये कामारदादी का उदानवाटिकाम यास करते थे तथा बंधुबंधक छे कर नित्य आमोद-मनोव्रन समय बिताते थे।

इस प्रकार वाणिज्यव्यवसायमें लित रहते हुए मा इन्होंने धानवर्षाका परिस्वाग नहीं किया। इन्होंने

'Civis' उपनाम ग्रहण कर 'भारतीय पण्यके शुक्र'के सम्बन्धमें ज्ञानान्वेषण पत्रिकामें कई प्रबन्ध लिखे। 'दर्शक' (Spectator) नामसे इन्होंने एक अङ्गरेजी समाचारपत्र भी निकाला तथा जार्ज टम्पसनके साथ मिल कर British Indian Society स्थापन की। विद्योन्नतिके विषयमें इनका विशेष ध्यान था। डेभिड हेयरके साथ मिल कर यह कभी कभी हिन्दू कालेजके छात्रोंको उत्साहित करनेके लिये अर्धादान वा पारितोषिक दिया करते थे। मेडिकल कालेज स्थापनके समय इन्होंने बड़ा उत्साह दिखाया था। चार बालकोंको चार विभिन्न विज्ञान विषयमें सुशिक्षित करनेके अभिप्रायसे द्वारकोनाथ ठाकुरने इङ्ग्लैण्ड भेजनेकी व्यवस्था की। रामगोपालने भी उनका समर्थन करके यथासाध्य साहाय्य प्रदान किया था।

१८४५ ई०के सितम्बर मासमें महात्मा वेथुनकी प्रार्थनासे इन्होंने शिक्षासभा (Council of Education) का आसन ग्रहण किया। इन्हींकी वक्तृताके फलसे बङ्गालकी 'प्राण्ड इन एड' प्रथा प्रवर्तित हुई। इसके सिवा वे उस समयके सभी आन्दोलनोंमें शामिल थे। वेथुनको व लिका-विधालय खोलने, डा० मोयटको युनिभरसीटियाकी प्रतिष्ठा करने, रेलपथ खोलने, विधवाविवाह तथा राजनैतिक अपरापर विषयोंमें वे अपना मत व्यक्त कर बहुत आनन्द लाभ करते थे। जिससे ये सब विषय-कार्यमें परिणत हो इसके लिये इन्होंने कोई कसर उठा न रखी थी।

लाडू हार्डिञ्जकी प्रतिमूर्त्ति प्रतिष्ठाके लिये कलकत्ता-वासीकी जो सभा हुई उसमें रामगोपालने कलकत्तेके तार्कालिक वाग्मी वैरिष्ठर टाटन, डिक्वेन्स और ह्यूमकी वक्तृताका प्रतिवाद करते हुए अपनी ओजस्विनी भाषासे जनसाधारणको मुग्ध किया और प्रतिष्ठाप्रस्ताव को सभामितसे पास करा लिया था।

इसके बाद १८५३ ई०के जुलाई मासमें टाउनहॉलमें Charter meeting में वक्तृताके समय इन्होंने जिस ओजस्विनी भाषाका व्यवहार किया था उसका लक्ष्य कर टाइम्स पत्रिकाने Masterpiece of oratory कह कर इनकी तारीफ की है। विक्टोरियाके भारतेश्वरीत्व-

घोषणाकालमें (Queen's Proclamation) इनकी वाग्मिता देख कर इण्डियन फिल्डके सभादक M. Humने लिखा है, कि रामगोपाल वायू अङ्गरेज होते तो, उन्हें महाराणीसे सम्मानसूचक 'नाइट' की उपाधि अवश्य मिलती। आपको Black act की वक्तृताने इन्हें अङ्गरेज-समाजमें चिरस्मरणीय बना रखा है।

केवल राजनैतिक ही नहीं, हिन्दूके सामाजिक आचारादिकी ओर भी लक्ष्य रखा कर रामगोपाल नाना विषयोंमें उन्नति कर गये हैं। इस समय वर्त्तमान प्रथाके बदले भारत गवर्मेंटने कलकत्तेमें कलसे शवदाह करनेका प्रस्ताव किया। इसके लिये कलकत्तेके शान्ति-विधायक विचारकोंकी (Calcutta Justices' meeting) एक सभा हुई। हिन्दूसमाजमें इस आन्दोलन पर बड़ी बड़ी सनसनी फैला और सर्वोंने मिल कर सभा समिति द्वारा रामगोपालको उक्त सभाका प्रतिनिधि निर्वाचन किया। सुनते हैं, कि इस संवादसे विचलित हो रामगोपालकी वृद्धा माताने पुत्रको बुला कर कहा, "राम! क्यों तुम्हारे रहते मैं मुर्दोंकी ढेरों जलाई जाऊंगी" रामगोपालने माताका दुःख दूर करनेके लिये हिन्दूसमाजकी नीवं मजबूत करनेके लिये उस सभामें वक्तृता दी। उनकी वक्तृताके बलसे वृटिश सरकारको वह प्रस्ताव वापस करना पड़ा। सभामें रामगोपालने चादके लिये प्रस्ताव किया। लोग खुशोसे चन्दा देने लगे। बहुत रुपया जमा हुआ। कलकत्ता म्युनिसिपलिटिकी देखरेखमें निमतल्लेका वर्त्तमान श्मशान-घाट बनाया गया था। कहते हैं, उसका आधा खर्च रामगोपालने दिया था। इस महान् कार्यके लिये हिन्दू-मात्र ही इनको प्रेतात्माकी मङ्गलकामनाके लिये आशीर्वाद देते हैं। निमतल्लेमें ही सबसे पहले श्मशानघाट बनाया गया है।

रामगोपाल बङ्गाल लेजिश्लेटिव कौन्सिलके सभ्य, कलकत्तेके आन्तरि मजिस्ट्रेट और जस्टिस आव दि पोस, कलकत्ता युनिवर्सिटीके फेलो, वृटिश इण्डियन एसोसियनके सभ्य और डिप्टीक्वैरेटिवल सोसाइटीके सभ्य थे। एनड्रिग वे १८४५ ई०में पुलिस कमिटी, १८५० ई०में स्मालपोषस कमिटी, १८५१ ई०में लण्डन-

प्रदर्शनों में प्रेम्बार्म शिवाग्रभयसंभ्रमिका, १८५५ बी०
-१८७० ई०में वैंरे प्रदर्शनों तथा १८६४ ई०में बङ्गाळ परि
कषचरळ प्रदर्शनोंक उबोका हो कर भयनी कर्मतल्य
रताका यधेध परिषय रे गये हैं। मन्नेदोंके इनक गुण
का गुञ्जक अछी तरह मान्म था। माननोय प्रसन्न
कुमार ठाकुले सब महामति यियोहर विवेकसकी यिदाय
मोक्ष दे रहे थे, तब रामगोपालको निमन्त्रण सेनक विषय
प्रसन्नकुमार ठाकुले विवेकस साहसे अनुमति मांगी
थी। रामगोपालके साथ राजनैतिक विषयमें विवेकस-
की घोर शत्रुता रहते हुए भी उन्होंने मोक्षके समय बड़े
भाङ्गसे सबने पहल रामगोपालका आस्वयपान करके
एक क्षणार्गमें पकवृता हो। इन्होंने रामगोपालके संबंध
में कहा था कि, He was the only man fit to take
the position of the leader of the Hindu Commu-
nity

रामगोपाल स्वभावतः ही ब्यालु थे। धृत्युकासमें
इन्होंने इन्द्र मनुष्योंके लिये राजतुल्य बान किया था।
वेही लोगोंकी विद्याशिक्षाकी सुविधाके लिये भाप
भयने बिलमें कलकत्ता युनिवर्सिटीमें ४० हजार, हि०
वेस्टिन्ड सोसायटीमें २० हजार, अणप्रस्त र्थुयोंकी
अणसे मुक्त करनेके लिये ४० हजार तथा अन्याय
विषयोंमें भी अनेक रुपया लिख गये हैं। १८६८ ई०की
२५वीं जनवरीकी इनका स्वर्गवास हुआ।

रामगोपाल शर्मान्—यणमैवतम्नके प्रणेता। ये राम
नाथक पुत्र और उष्मीनाटापणके पीछे थे।

रामगोविन्द—उष्माभितरिके रचयिता। इनके पिताका
नाम यणनाटापण चक्रवर्ती था।

रामगोविन्द चक्रवर्ती—स्ववस्थासारसंभ्रमके रचयिता।
रामगोविन्द गोर्ध—एक प्रसिद्ध पत्रिकत। ये सांभवधद्रि
का भाद्रि पुस्तकके प्रणेता नाटापण गोर्धके गुरु तथा
गोविन्द गोर्धके गिष्य थे।

रामगोविन्दगोर्ध (सं० पु०) एक भाषायज्ञा नाम।

रामग्राम (सं० पु०) जनपदमें दे।

रामचक्र (सं० पु०) २ मन्त्रारमक चक्रविषय। (उष्मत्पना०)

२ बरा नामक पदपान जो उड़की पीठोच बनता है। ३
बड़ो और मोटा रोखे जो किमान लोग खाते हैं, लिहा।

रामचन्द्र—१ एक हिन्दू-राजा। रामपुरमें इनका राजधाना

था। इनकी समाधि यह कर १४५० ई०में रामचन्द्रने नैमि
पत्थ कुपडाकृति लिखी।

२ अणपणमहसुत स्वनामक्यात एक कवि। इस कवि
ने मयोध्यानगरमें रसिकरत्न नामक एक काव्य बनाया
जिसका प्रत्येक श्लोक दो अर्थ है। इसके एक अर्थमें
शुद्धार और दूसरेमें वैराग्य वर्णित हैं। इन्होंने इस
काव्यकी ओका भी लिखी। इस काव्यका भाद्रि श्लोक—

'गुमारम्नेऽरम्ने महितमदिरिम्नेऽह्वरष
मयित्स्वन्मे रम्ने षण्णकुञ्जकुम्ने परियत्तम्।
मनास्वन् षन्ने पक्षिपक्षिस्वन्मभित्तुष
तनास्वन् स्वन्ने वरनस्वन्मभित्तुष ॥'

(रसिकरत्न १११)

कवि रामचन्द्रने रोमान्छोगतक भाद्रि भी प्रत्ययुष
किया है।

रामचन्द्र (सं० पु०) रामचन्द्र इस भाङ्गाकटवाए।
अयोध्याके राजा इत्याकुब शीय महाराज दशरथके बड़े
पुत्र जो शम्बर या विश्वामगपायक मुख्य अवतारोंमें माने
जाते हैं। इहोका सापुत्ररिख छे कर भाद्रिकवि
बाबुमोकिने मारतक भाद्रि महाकाव्य यमायणकी रचना
की है। यो तो परचर्चीकासमें नाता अलकुनर द्वारा बहुतां
ने इन असाधारण महापुढपकी जीबनी छे कर रामायण
रचे हैं, पर बाबुमोकिने जिस भावमें इन पुस्तकसिंहकी
अङ्कित किया है पहले हम लोगोंकी यही बूझता चाहिये।
महर्षि बाबुमोकिन रामचरित इन प्रक्यर वर्णन किया
है—

सूर्यसंघमें घर्मक राजा दशरथने अग्रमहय किया।
उस समय इनक जेसे वीर वीर प्रभायशाही कोइ भी
नहो थ। पुत्र न रचनेके कारण ये हमेशा भिन्तत रहा
करते थे। पुषेधि यह करनेके लिये मन्कीने उह सहाह
दी। अण्णरत्न यह करनेके लिये अहुरेरास बुझाये गये।
सरयूक उठती किनारे यमूमि बनाई गई। ऐजलो
अण्णरत्न पुनेधि यह भारम्न कर दिया। उनका यहा
पराय चक्र का ३२ दशरथकी तीन प्रधान महिषी गमधती
हूँ। यहसमासिक बार छः अणु बोतने पर बड़ी राजी
कीउष्याके मर्नसे धैर्यमासकी शुक्लापयमी पुनर्वसु मसुत
ककटवर्णम दिव्यमसुतसम्यं रामचन्द्र उल्लघ हुए।
उत्क अग्रमकासमें रथि मेव राशिमें, मङ्गल मकर प्रविष्टि,

शनि तुलाराशिमें, बृहस्पति और चन्द्रमा कर्कटराशिमें, तथा शुक्र मीनराशिमें थे। इसके बाद कैकेयोके गर्भसे मीन लग्न पुण्यानक्षत्रमें भरतने तथा सुगिताके गर्भसे कर्कट लग्न और अश्लेषा नक्षत्रमें लक्ष्मण और शत्रुघ्नने जन्मग्रहण किया।

दशरथके चारों पुत्र वेदज्ञ, शौर्यसम्पन्न, सभी लोगों के हिताकाङ्क्षी, विद्वान् और क्षत्रियोचित सभी गुणोंमें विभूयित थे। इनमेंसे राम अधिक नेत्रवी, सत्यनिष्ठ पराक्रमी, सर्वजनप्रिय, धनुर्वेदरत, पितृसंवापरायण तथा हाथी, घोड़े और रथ पर चढ़नेमें दक्ष थे। राम लक्ष्मणको और भरत शत्रुघ्नको बहुत प्यार करने थे।

रामचन्द्रका वक्ष विशाल और दोनों स्कन्धका स्थितिस्थल मांसल था, इस कारण कविने उन्हें 'गूढजनु' की उपाधि दी है। वे बड़ी बड़ी भुजावाले, सुन्दर, महागुणशाली, आश्रितके प्रतिपालक, स्वजन और स्वधर्मके रक्षक नित्य-संघर्षमें थे। पृथ्वीके समान क्षमाशील, फिर क्रुद्ध होने पर देवताओंके भी भीतिदायक, वाग्मी और मिष्टभाषी थे। शीलवृद्ध, ज्ञानवृद्ध और वयोवृद्धके प्रति वे विशेष भक्तिभ्रष्टा दिखलाते थे। जब कभी वे नगरसे बाहर जाते और फिर वहासे लौटते थे, तब प्रायः सभी पुरवासी उनके पास दौड़ते और कुशल समाचार पूछते थे। सभी पुरवासी-उनके भक्त और अनुरक्त थे।

धीरे धीरे चारों माईने युवावस्थामें कदम बढ़ाया। इस समय एक दिन महर्षि विश्वामित्र दशरथकी सभामें पवारे। उन्होंने दशरथसे प्रार्थना की, कि यज्ञमें राक्षसगण बहुत बाधा डालते हैं, इसलिये दश दिनके लिये रामचन्द्रजीको दें। राजा दशरथ रामको अपने प्राणसे भी अधिक चाहते थे, इस कारण पहले राजी नहीं हुए। इसके बदले उन्होंने दश अश्वीहिणी सैन्य देना चाहा; किन्तु महर्षिकी सकोष मूर्त्ति और अपनी प्रतिष्ठा भङ्ग होनेके डरमें बाखिर रामचन्द्रको विश्वामित्रके साथ जानेकी अनुमति दे दी। विश्वामित्र रामको ले कर चले, लक्ष्मण भी साथ हो लिये। चलते चलते वे सरयूके किनारे आये पर अयोध्यासे छः कोस दूरी पड़ती है। यहाँ विश्वामित्रने रामसे कहा, 'बच्चा! बहुत थक गये होंगे, अब यहा थोड़ा विश्राम करो। पीछे

आचमन कर मुझसे बला और अतिबला नामकी दो दीक्षा तथा अन्यान्य मन्त्र लो। इस विद्याबलसे तुम कभी थकावट नहीं मालूम करोगे, बाहुबलमें पृथिवीके मध्य कोई भी तुम्हारे समान नहीं होगा तथा राक्षस तुम्हें पराजय नहीं कर सकेगा।' उस समय रामने विश्वामित्रको आचार्यरूप वरण कर उनसे बला और अतिबला विद्या सीख ली। वह रात तीनों सरयूके किनारे तृणशय्या पर बिताई। राजकुमार राम ही यह प्रथम तृणशय्या था। सवेरे तांनों गन्ना और सरयूमत्सम पर गये। यहा मुनियोंने उनका बहुत आदर सत्कार किया। उस रातको वे लोग अनन्त-आश्रममें रहे।

दूसरे दिन गन्नाके दक्षिण हो कर ताड़कावन आये। विश्वामित्रने घोररूपिणी ताड़काकी मारनेका हुकुम दिया। राम छोड़त्याके विरोधी थे, किन्तु उनके पताने कह दिया था, 'विश्वामित्रका आदेश अनश्रय पालन करना चाहे वह कैसा हाथों न हो।' विश्वामित्र का आदेश पालन करनेके लिये उन्होंने घोररूपा ताड़काका वध किया। ताड़कावधमें सतुष्ट हो महर्षिने राम चंद्रको नाना प्रकारके अमोघ और अर्थ अन्न प्रदान किये। अनन्तर सिद्धाश्रममें आ कर विश्वामित्रने यज्ञानुष्ठान किया। यहा रामचंद्रने मारोचकी पराजय और सुबाहु राक्षसको मार कर विश्वामित्रके यज्ञस्थलकी रक्षा की। यहा महर्षि विश्वामित्रसे राजा जनकके यज्ञ और सुनाम नामक अपूर्ण शिवधनुका हाल मालूम हुआ। विश्वामित्र दूसरे दूसरे मुनियोंके साथ राम लक्ष्मणको ले कर राजर्षि जनकका यज्ञ देखने चले। राहमें विशालाधिपतिने आ कर उनका सत्कार किया। विशालामें एक दिन रह कर वे मिथिला आये।

मिथिलाके उपवनमें सभी गौतमके परित्यक्त आश्रम में उपस्थित हुए। यहीं पर वर्षोंसे भूखी तपःप्रभव सम्पन्ना महाभागा पापाणमयी गौतमपत्नी अहल्या पड़ी हुई थी। रामचंद्रके वरणकमलस्पर्शसे उनका अभिजाप जाता रहा और वे स्वशरीर धारण कर खड़ी हो गईं। इसके बाद रामलक्ष्मणने विश्वामित्रके साथ मिथिलापुरीमें प्रवेश किया। राजर्षि जनकने विश्वामित्र आदिका यथोचित सत्कार किया। विश्वामित्रने रामचंद्रका

परिचय देते हुए राजर्षि जनकसे कहा, "भापके घरमें जो श्रेष्ठ धनुष है उसे देखनक लिये व दोनों माइ भाये है।" जनकने मा उनसे कहा, 'मैंने प्रतिज्ञा की है, कि जो व्यक्ति इस श्रेष्ठधनुषमें स्या चढ़ायगे और उसे लाऊ जामेंगे, उसीको अपना भयोमित्रा कन्या सोता समर्पण करूंगा।' पोछे रामचंद्रको जनकसे यह मा मामूम हुआ, कि दश हौंकर राजे महाराजे उस धनुषमें उया चढ़ान भाये थे, किन्तु कोइ भी चढ़ा न सक। इसके बाद विश्वामित्र और जनककी अनुमति से कर रामने उस धनुषमें उया चढ़ाई। मड़ मड़ जन्म करता हुआ धनुष तान मागोंमें दूट गया। उस जन्मसे विश्वामित्र, जनक और राम ससम्बन्धको छोड़ कर और सभी मोहामिभूत हो गये थे।

यह शुभ संवाद उसी समय भयोध्या पहुँचाया गया। राजा वाराह पुत्र अनाज्य और स्त्रियोंके साथ मिश्रित भाये। रामका विवाह स्थिर हुआ। विवाह समाप्तमें महर्षि ऋषिपुत्र द्वारा स्तुत्यका और राजर्षि जनक द्वारा अपना पूर्ववर्णनाका कीर्तन होनेके बाद राम के साथ सीताका, ससम्बन्ध साथ अमिताका और कुजा चन्द्रको दो कन्या मायययो और भुवनेश्वरके साथ मरुत और जलमूत्रका विवाह हुआ। विवाहके बाद राजा दशरथने पुत्र और पुत्रधनुषोंके साथ बड़ी धूमधामसे राजधानीका यात्रा का। इस यात्राकासम रामचंद्रन परशुरामका दर्प पूर्ण किया था।

इसके बाद महाराज दशरथने रामचंद्रको गुणराज बनाना चाहा। भूमिपदसंवाय सुन कर रामचंद्र बड़े प्रसन्न हुए थे। इस समयसे रामरा भद्रिनीय शक्ति विकास आरम्भ हुआ। महाशक्ति बालनीचिने उरउभय यंत्रोंमें जो महाशक्ति चित्रित किया है यह हम प्रकार है।

प्राकाशमें सुमन्तन रामचन्द्रसे जा कहा, कि राजा दशरथ आपका कैकयाक परत बुनात है। रामचंद्र और सीता दोनों भूमिपद संज्ञामें रातको उयायाता थे। रामचंद्रन सीतासे कहा, 'मात्र मरा भूमिपद होगा पिता कैकयो माताके साथ मिल कर मरे मद्रुर्षाध अनुष्ठान करेंगे, इसलिये उन्होंने मुझे बुनाया है। तब तक

तुम सजियोंके साथ यहाँ पर रहो', इतना कह कर ये कैकयोके घर गये।

रामचंद्र जब चार लख घोड़ोंके व्याघ्रचर्मसे भाष्या वित्त सुन्दर रथ पर आ रहे थे, तब राक्षसमें उन्होंने देखा, भूमिपदका विपुल भायोत्रण हो रहा है। ऐतानी परत पहन भूमिपदप्रतीकसुक राजकुमार बड़े आनंदसे कैकयो के घर पुत्र और पिताको प्रणाम कर पुतलीकी तरह लड़े हो रहे। राजा सुामनुषसे कैकयाकी बगलमें बैठे थे। वे 'राम' उच्चारण कर मन्तककी तोषा किये रोने लगे। कश्कण्टमें बोली महो निजकन लगी। डबडबी भाँसोल उन्हें रामको दूषनका साहस नहीं हुआ।

इस प्रकार राजा महाराज संस लेत थे, मिलास भविष्यक भभुपारा बहती थी। रामचंद्रने दृष्टावलि हो कैकयोसे कहा "मां! पिताजी क्यों रोते हैं, क्या उन्हें किसी बातका दुःख है? मरत और जन्मन दूर है, क्या उन्हें सधा मेरा मातामोमेंसे किसीको कुछ हुआ ता नहीं है? क्या आपने तो कुछ नहीं कहा, जिससे ये ऐसे दुःखित हुए हैं?"

कैकयोने निन्दुर हो कर उत्तर दिया—"राजाकी कोइ रोग नहीं हुआ है और न उन्हें किसी बातका दुःख हो है। उन्होंने एक बातकी प्रतिज्ञा की है, पर सुभारे वरस ये प्रकाश नहा करते तुम उनक भविष्यकर मिय हो, तुम्हें भविष्य बचन कहनेमें उनके मुन्तल बोली नहीं निकलती। शुभ हो, पाह भगुम हो, तुम यदि राजाका आज्ञा पालन करो, तो कहूँ नहा तो बटनेकी क्या उकलत।"

राम दुःखित हो बामे, स्त्रिय! भापकी येसा पचन मुभक करना उचित नहीं। मैं राजाका आज्ञा भनी पालन करनेको तैयार हूँ। यदि वे भन्निमें कृतम कह तो कूटूंगा पिय जान कहें तो पाऊंगा और समुद्रमें वृषन कहे, तो नी कूटूंगा। भाप दिख कोठ कर कहें, कि यह कीन सा भूदेगा है।"

उन भूमिपदसङ्गनामें उपजामी पवित्र पदपत्र परमं तदन गुणकका कैकयोने प्रकृष्टिगन्धितस वनयास को प्राज्ञा सुनाह 'मरत हम धनपास्याजिता भयोध्या का राजा हागा। तुम्हारे लिये साथ गये भूमिपदक

अपराधोंमें उनका अभिप्रेत होगा और तुम्हें आज ही चौरास और जटा पहन कर चौदह वर्षके लिये वन जाना होगा। राजाने यही दो वर अभी मुझे दिये हैं, इस कारण वे इतने दुःखित हैं।"

पर मर्मच्छेदी मृत्युतुल्य वचन सुन कर रामचन्द्र कुछ समय निश्चल हो रहे और पीछे अचिन्तचित्तसे बोले "देवि! वैसा ही होगा। मैं जटाचौर धारण कर अभी वन जाता हूँ। इस समय मेरा पूछना केवल इतना ही है, कि महा राज पूर्ववत् मेरा आदर करने हैं वा नहीं? देवि! मैं आपके प्रति भी अपमान नहीं। इस छोटी सी गतके लिये पिताजी इतने दुःखित क्यों हैं। उन्होंने भरतको युवराज बनानेको बात मुझे पहले क्यों नहीं कही? भरतके लिये मैं राज्य, धन, प्राण सभी दे सकता हूँ। देवि! आप पिताजी आश्वत्थमन दीजिये, पिता व्यथे ममत्त नोच्य किये अध्रुह्याम कर रहे हैं। तेज पुत्रमपार दूर्तेरीं अभी भरतको लानेके लिये ननिदाह भेजिये।" इस वचनके कैकेयी सतुष्ट तो हुई, पर पीछे राम अपना मन न पलट ले अथवा दशरथके सुंरमे बोला मुने पिता वन जाय इस आज्ञासे उसने फिर रामको कहा,—

"राम! लज्जाके मारे राजा कुछ बोलने नहीं, इसके लिये दुःख मत करो। अब वन जानेके लिये तैयार हो जाओ, जब तक तुम इनसे बिदा ले कर वन न जाओगे, तब तक मैं स्नान भोजन कुछ भी नहीं करूँगा।" कैकेयीका यह निदाहन वचन सुन कर महाराज दशरथ वज्राहतका तरह अठान हो पृथिवी पर गिर पड़े। सांभ्य मूर्ति और धनस्पृहाहीन रामचन्द्रने उन्हें पकड़ कर उठाया और कैकेयीकी गद्दा देव दुःखित और दृढ स्वरसे कहा,—

"देवि! स्वार्थी हो कर पृथिवी पर रहनेकी मेरी इच्छा नहीं। मुझे स्वर्गियोंके समान विमल धर्माश्रित जानो। पिता चाहें न भी कहें पर आपकी तो आज्ञा है, मैं उसे शिगार्याय कर चौदह वर्षके लिये अवश्य वन जाऊँगा। माता कीजलिया और सोताही बुला कर कहने में कितना समय होगा उतना देर और आप उहगिये।" इतना कह कर संजाहीन पिता और कैकेयीकी संज्ञा कर

रामचन्द्र धीरे धीरे जाने लगे। चार घोड़ोंका रथ उसे वन पहुँचा आनेके लिये तैयार था, लेकिन राम उस राहसे नहीं गये। उत्कण्ठित नगरवासी जिस पथसे उनकी वाट जो रहे थे, उस पथको भी उन्होंने छोड़ दिया। अभिप्रेतगालाके पास जब गये, तब उन्होंने आँखें मूँद ली। मिद्धपुष्पकी तरह उनके चेहरे पर जरा भी उदासी न थी। वे मनका भाव मन हीमें रख कर धीरे धीरे मातृ-मन्दिरकी ओर बढ़े;

जननीके पास जानेसे उन्हें दम भर आया। वे कम्पितकण्ठसे कहने लगे, 'देवि! क्या आपको मालूम नहीं, रगमें भग हो गया। मुझे मुनियोंकी तरह कषाय कन्दफलमूल खा कर जीवन धारण करना होगा। आपके लिये हुए भोजनकी अब मुझे जरूरत नहीं। मैं कुशासनके योग्य हूँ, इस बहुमूल्य आसन पर अब बैठनेका मुझे अधिकार नहीं।' कैकेयीकी आज्ञा सुनाते हुए रामचन्द्रने वन जानेके लिये मातासे विदा मांगा। शोकाकुला माता फूट फूट कर रोने लगी और बोली, 'राम! स्त्रियोंका प्रधान सुप पतिकी स्नेहसम्पद् है, वह मेरे भाग्यमें वृद्धा नहीं। कैकेयीने मुझ पर वज्राघात किया है। मेरी सेवामें नियुक्त परिचारिकागण कैकेयीके परिजनकी देखनेसे डरती हैं। वच्चा! मैं केवल तुम्हें देख कर सब सहती आई हूँ। तुम्हारे वन जाने पर मुझे कहां ठौर मिलेगा। देखो, गायें धनमें अपने बच्चोंका पोछा करती हैं, इसलिये मुझे भी अपने साथ ले चलो।" यह सब मर्मच्छेदी कातराकि सुन कर राम माताको सान्त्वना देने लगे और अध्रुसुधी शोकोन्मादिनी माताके निकट अपने अध्रुकी रोक कर वार वार वन जानेकी अनुमति मांगने लगे। जब लक्ष्मणको यह घटना मालूम हुई, तब वे क्रोधसे अधीर हो गये और लाल आँखें कर धनुष हाथमें लिये पागलकी तरह गरज उठे, 'अभी मैं कैकेयीके प्रेममें आसक्त पिता की हत्या करता हूँ।' रामचन्द्र लक्ष्मणका हाथ पकड़ कर उनका क्रोध गान्त करने लगे। उन्होंने बड़े मीठे स्वरमें लक्ष्मणसे कहा, 'सौमित्रे! मेरे अभिप्रेतके लिये जो आयोजन हुआ है वह मेरे अभिप्रेतको निश्चितके लिये होवे। गिनृभक्त विषय निस्पृह कुमारके स्निग्ध किन्तु अटल संकल्पसे इस महागोक और क्रोधके

ममिमपक्षमें एक असामान्य और घोरतहकी भी जग मगा उठी। कौशल्याने कहा, 'राजा तुम्हारे जैसे गुद हैं मैं भी बैसे ही गुद हूँ। मैं तुम्हें वन नहीं जाने दूंगी। मातृ भाषाका उल्लङ्घन कर तुम किस प्रकार वन जाओगे। कर्मण्य बोले 'कामासक्त पिताका भादेश पालन करना अधर्म है।' रामचन्द्रने अविचलित भावमें बिनोत स्नेह पूरितकण्ठसे माताको कहा, "रूपेण श्रुतिने पिताके भादेशसे योहत्या की थी। मेरे कुलमें सगरक पुत्रगण पिताके भादेश पालन करनेमें मारे गये थे। परशुरामन पिताके भादेशसे अपनी माता रैणुकाका शिर काट जाता था। पिता प्रत्यक्ष देवता है,—वे श्रेष्ठ, काम या किसी भी मनुषिमें मां कर जाते जो वान कर चुके हों, उसका पिचार मुझे नहीं करना चाहिये उसका विचार करने' योग्य मैं नहीं हूँ। पिताका यह भादेश मैं मबद्ध पावन करूँगा।' इतना कह कर ये रोती हुई मातासे वन जानेके लिये बार बार अनुमति मांगन लगे। रामका आश्चर्य साधुसुकुम्भ्य हैक ऊर कौशल्याने घोरतह बांधा और सैकड़ों आशोवाक् दे कर अभुसिककण्ठसे प्राणमिय पुनका धन जानेकी मनुमति दे दी।

अब रामको सोतास मिथना झरती था पर धे किस मुहसे यह निदावण संवाद उन्हे सुनाये जाते। उनके हृदयमें आशाकी झता सहस्रहा रही थी। रामकी मन्वस्त डुकृता शिथिल हो जाए। अब यह अविष्टत सौम्यभाव नहीं। उनको मुष्ममी विवर्ण हो जने। उनक सुन्दर श्याम-कण्ठ पर दुश्चिन्ताकी रेखा चिहार्न बने लगी। सीता रामचन्द्रका देपने हो समझ गई कि कोई घोर भ्रमर्ण हुआ है। बगकुल हो उन्हेनि पूछा, 'आज अनि पकके मुहूर्त्तमें चेहरे पर ऐसी उदासो क्यों ?' बार बार पूछने पर रामचन्द्रने सोताको महापरीक्षाकी उपयोगिनी बनानेके लिये अपनी महत् संशकीर्तिका स्मरण करा दिया।

वनवासकी बात सुनते ही साताने भी उनके साथ जानेकी इच्छा प्रकट की। रामचन्द्रने बहुत कुछ ममभाषा पर पठितमाता सोता कब माननेवासी था। रामचन्द्रका निपण करना था मय दिखाना कुल व्यर्थ गया। साताने साथ जानेके लिये यहां तक डुक संकल्प कर लिया कि उस साथ नही के ज्ञानस यह आत्महत्या कर लेगी।

सीताक कोमल कपोल हो कर मधुविन्दु धीरे धीरे बहने लगा।

अनन्तर रामचन्द्रने अधूर्णानपना सुन्दरी साथों लीके गलेमें हाथ डाल स्निग्ध और करुणकरवले कहा, 'देवि ! तुम्हारा दुःख देख कर मैं स्वर्गकी भी इच्छा नहीं करता, मैं तुम्हारी रक्षामं किसीसे भी नहीं करता, साक्षात् रुद्रका भी मुक्त कर नहीं। तुम कहती हो, कि विवाहके पहले ब्राह्मणोंने कहा था, 'तुम स्वामीके साथ वन आओगे'—अगर वन जानेके लिये ही तुम्हारी सुधि हुए हो तो तुम्हें छोड़ जानेकी मेरी सामर्थ्य नहीं।' जिस लक्ष्मणने 'वक्ष्यतां वक्ष्यतामपि' कह कर राजाको बांधनेके लिये यहां तक कि विनाश करनेकी व्यवस्था की थी, जो धनुषबाण हाथमें लिये मकडे भीरामचन्द्रके शत्रु, कुल का मित्र बननेके लिये उताव हो गये थे वे सभी रामकी अत्यन्त प्रियता और वन जानेका उद्योग द्वा कर बासककी तरह रोते रोते मार्गके चरणोंमें गिर पड़ और धाके, 'तुम्हारे नहीं रहते यदि मुझे लैलावपका भी ऐश्वर्य क्यों न मिले, तो मां मैं उस पर स्वात माऊ।' अधूर्णानपत्न्य पवतकपतित परमस्नहास्पद कर्मण्यको रामने भावपूर्वक उठा कर गले लगाया और अपने साथ वन चलनेको कहा। कर्मण्य बड़े प्रसन्न हुए और भाव्य पोंछ कर बनवासोपयोगी अस्त्रशस्त्र ले वन जानेकी तैयार हो गये। रामचन्द्रने मरत मधया कैकयोके प्रति किसी विद्वेषपूर्वक धाकवका प्रयोग नहीं किया। उन्हेनि सोतासे कहा—

'अन्त और शुभ्र मरे प्राणसे भी बड़ कर प्यारे हैं। स्नेह और शुभ्रपामें मेरे प्रति सभी माता समदर्शिने हैं।' जात समय रामचन्द्र द्वाशरपके पास गये। महिषियोंस धिरे हुए द्वाशरप रामका मुक्त देख कर बिलका वेग रोक न सके। शोककद कण्ठसे उन्हेनि रामचन्द्रको एक दिन और उन्हेनेका मनुरोध किया तथा बहुत अनुनय विनय कर कहा, 'आज मैं तुम्हें मांओं पर रक्त कर एक साथ मोक्षण करूँगा। रामचन्द्र बोले, 'आज ही वन जाऊंगा येना बचन दे चुका हूँ। अत्यय ऐसे दाक नहीं सकता।' सम्मम और विनयके साथ उन्हेनि फिरसे कहा, 'प्रधाने जिस प्रकार अपने पुत्री की तपस्या

करनेकी अनुमति दी थी, आप भी उसी प्रकार शोकका परित्याग कर हम लोगोंको वन जानेका आदेश दीजिये।" यह सुनते ही दशरथका शोक बढ़ने लगा, वे विह्वल हो उठे। सुमन्त्र, महामातृ सिद्धार्थ तथा गुरुदेव वशिष्ठ कैकेयीके साथ विवाद करने लगे। आत्मीय सुहृद् और स्वजनोकी उत्तेजित कण्ठध्वनिसे राजभवन गूँज उठा। उस कोलाहलके पराजित कर त्यागशील राजकुमारकी अपूर्व वैराग्य और धर्मभावपूर्ण कण्ठध्वनि स्वर्गीय शुभवाणीकी तरह सुनाई देने लगी। कृताञ्जलिबद्ध हो रामचन्द्र पितासे बार बार कहने लगे—

"आप बिना किसी बातका दुःख किये यह राज्य भरतको दे दें। मैं अपने जीवनमें सुख, सम्पद, राज्यैश्वर्य यहा तक कि स्वर्गकी भी कामना नहीं करता। मैं सत्यबद्ध हूँ और आपका सत्य पालन करूँगा। पिता देवताओंसे भी बड़ कर पूज्य हूँ। उस पितृदेवताकी आज्ञा पालन करनेमें मैं जरा भी कष्टका अनुभव नहीं करता। चौदह वर्ष बाद लौट कर मैं फिर आपके श्रीचरणकी बन्दना करूँगा।" माताओंकी ओर देख कर राजकुमारने कृताञ्जलिपुट हो कहा—"मुझसे भ्रमवशतः अथवा अज्ञानवशतः यदि कोई अपराध हुआ हो, तो आज मुझे क्षमा करें।" दशरथका जो अन्तःपुर वीणाकी मधुर भक्तकारसे परिपूर्ण रहता था, आज वह शोकार्त्त रमणियोंके आर्त्तनादसे गूँज उठा।

राम, लक्ष्मण और सीता ये तीनों भिखारीके वेशमें कौपीन और चीर पहन कर घरसे निकले। उस समय अन्तःपुरमें बहुत जोरसे आर्त्तनाद उठा, तमाम सञ्चारा छा गया। राजमहिपियां बेसुध हालतमें जहा तहा पड़ रही। प्रजामण्डलीमें गंभीर परितापसूचक हाहाकार ध्वनि होने लगी। उस मर्मविदारक शब्दसे उन्मत्त हो वृद्ध राजा दशरथ और कौशल्यादेवी दोनों नंगे पाँवसे धूलमें लेटाते हुए अपने अपने कपडेको बिना संभाले हाथको बढ़ाये हुए रामचन्द्रको आलिङ्गन करनेके लिये दौड़ पडे। राजाधिराज दशरथकी प्रधान महिषीकी यह अवस्था देख कर प्रजा व्याकुल हो उठी। रामचन्द्रने कहा, "सुमन्त्र ! जोरसे रथ चलाओ, मैं अब वह शोकावह दृश्य देखना नहीं चाहता।" प्रजा सुमन्त्रसे विनय पूर्वक कहने लगी,—

"हे सारथि ! घोड़ोंकी लगाम मजबूतीसे पकड कर धीरे धीरे रथ हाको, जिससे हम लोगोंको रामचन्द्रका मुख अच्छी तरह दिखाई दे। फिर अब इनके दर्शन करनेका हमें सौभाग्य प्राप्त न होगा।" रामने स्नेहार्द्रकण्ठसे प्रजाओंसे कहा—

"अयोध्यावासियो ! तुम लोगोंका मेरे प्रति जो सम्मान और प्रीति है उसे मेरी प्रीतिके लिये भरतमें अर्पण करना।" अयोध्याके बाहर सर्गशास्त्रज्ञ ब्राह्मणोंने रथके समीप जा कर कहा, "हम लोग यह हंसशुभ्र केशयुक्त मस्तक मूलुण्डित कर प्रार्थना करते हैं, कि हम लोगोंको भी साथ ले चलो।" रामचन्द्रने रथ परसे उतर कर उन्हें प्रणाम किया।

गोमती पार कर रामचन्द्र सरयूका नदी उत्तीर्ण हुए। अयोध्याके वृक्ष आदि श्यामान आकाशप्रान्तमें नीलमेघकी तरह अस्पष्ट दिखाई देते थे। रामचन्द्रने एक बार विपामित नेत्रोंसे उस चिरस्नेहजडित जन्मभूमिके प्रति दृष्टि डाल कर गद्गद कण्ठसे सुमन्त्रको कहा, "सुमन्त्र ! न मालूम फिर कब इस सरयूमें लौटूँगा ?"

रामचन्द्र गङ्गाके किनारे आ कर विशेष प्रफुल्लित हुए। सहसा यह विशाल तरङ्गिणी देख कर दोनों राजकुमार और सीताके मनमें प्रीतिका सञ्चार हुआ। वे इगुदीवृक्षकी छायामें विश्राम करनेका उद्योग करने लगे। निपादराज गुहक चिविध प्रकारकी खाद्य सामग्री ले कर रामका स्वागत करने आये। उन्होंने कहा, "इस संसारमें रामसे बड़ कर मेरा प्रियतम और कुछ भी नहीं है।" रामचन्द्रने गुहकका आतिथ्य यह कह कर ग्रहण नहीं किया, कि क्षत्रियको धर्मशास्त्रानुसार दान लेना उचित नहीं है। वह रात तीनोंने इगुदीवृक्षके नीचे तृणशय्या पर ही बिताई।

दूसरे दिन सुमन्त्र वहांसे विदा हुए। वृद्ध सचिवने रोते हुए कहा, 'खाली रथ ले कर मैं किस मुंहसे अयोध्या लौटूँगा ? जब उन्मत्त जनता सैकड़ों कण्ठसे मुझे पूछेगी, तो मैं क्या उत्तर दूँगा ? हे सेवकवत्सल ! मुझे भी साथ ले चलिये। बारह वर्षके बाद मैं इसी रथ पर आप लोगोंको चढा कर बड़े गौरवसे अयोध्या लौटूँगा।" रामचन्द्रने वृद्ध मन्त्रीको नाना प्रकारके प्रबोधवाच्य

द्वारा सीट जानेकी बाध्य किया और बड़े कुशिल हो कर कहा, 'अब तक तुम नीट नहा आभागे, अब तक माता कीदमीकी दिग्गस नहीं होगा, कि मैं बन गया हूँ।'

सुमम्बरकें ज्ञाते समय रामने कहा था, 'तुम्हारे समान और कोई सुहृद् मुझे नष्टर नहीं आता। तुम इन लोगों के हितचिन्तक हो, इसलिये रक्षण, राजा इत्यरूप मेरे लिये कोई चिन्ता न करें।' लक्ष्मण कुन्दरसे इत्यरूपके फायदेकी निश्चय करन लगे। रामने सुमम्बरको समझ कर कह दिया, "राजा गृह और कवच स्वभावक हैं तथा हम लोगोंकें यनवासकें कारण बड़े ही कुशिल हैं, इस लिये ये सब लक्ष्मणकी कृती बार्ते रह्ये न सुनाता, नहीं तो ये शोकसे प्राणत्याग कर सकत हैं।"

सुमम्बरने रोते रात वहाँसे लौकी रण हाँका। इपर पल जंगलमें दोनों राजकुमार और मादरकी रामचणु धीरे धीरे भागे बड़ी। अब तक मा पतिव्रता सीताके सुकी मन चरणामें जो महापद लगा था, वह मलिन नहीं हुआ था। दिख प्रभुओंकी दरारपनी पत्नी सुन कर ये राम चण्डकी बाह पकड़ कर चलती थी। महेन्द्रप्रथम सद्गुण रामचण्डकी बाहु हो भाङ्ग इन्धुनिभाननाका एकमात्र अब सम्पन था। रात बितानेके लिये ये एक गृहकें नोचे पड़ रहे। इस घोर भरण्यामें प्रथम राक्षिपासका कण्ड सन्धुच इनकें लिये दुःसह था। रामचण्ड लक्ष्मणके निकट बहुत अनुनाप करने लगे। उनका प्रशान्तचित्त असह्य कण्डसँ भजागत हो उडा। उन्होंने कहा "भरत राम्य पा कर भयक्ष्य सुका होमा, इसमें सँदेश नहा। राजाकी मक्षय मनोकण्ड दोठा होगा। कि तु जो धर्म स्थाप कर कामसधा करते हैं उद राजा इत्यरथकी तरह दुःख होता है। मेरा अन्नाभाय्य माता आज नोकसागर में डुबी होगी। लक्ष्मण! क्या कमी सुना है, कि बिना मपरायके खाकी बातमें पड़ कर मेरे जैसे उन्नानुपसीकी भा किसेभी परिस्थाग किया है, जो कुज हो, इस कडोर वन्धुजोपनमें तुम्हारा प्रयोजन नहा। मैं सीताके साथ यनवासका दण्ड भोग करूंगा। तुम सीट जाओ। बिन्दुर नाच प्रहृतिकी कीदमी जगय् मरो माताकी विप पिडा कर मार न है। तुम पर जा कर माताकी रक्षा

करता। पेसा न समझना, कि मैं अपोभ्या मयवा सारी पृथिवीकी अधिकार नहीं कर सकता। केवल अयमें और परलोकके मयसे मैंने मयवा भूमियेक नहीं किया।" इस प्रकार बहुतबिबाप करके उस बुद्धे यमोर भरण्या प्रज्ञमें सीताकी दुरयस्था और अपने जीवनकी भावी दुगतिकी कल्पना कर सुकुमार राजकुमार रामचण्डने मधुपूय' मैत्रोस तथा क्षुभ चित्तसे मौनमायमें सारी रात बैठ कर बितार्ह।

इस प्रथम राक्षिक महाक्रुशके बाह यनवास धीरे धीरे अल्पस्त होने लगा। चिन्तकूट पयतके नोखे पुण्य क नोखे लरे हुए पेड़ देख कर ये धनस्त हो गये। सीता कहलहाती यनतयरात्रि देख कर यनोम्मादिनी हो गह। वह धु बराडे और धने लम्बे केडोंकी पीठ पर बटका कर रामचण्डका हाथ पकड़ खाक भयो षका पुण्य पुनने लगा। सामने चिन्तकूट पयत है। उसका शिखर भाङ्गश सुम्न कर रहा है। कहीं गुहापूर्व मिमिङ्ग वनराज्यकी मनोहर होमा है। कहीं बडुकण्ड पाभ्य' पली शैलमाका विकार देती है। इस चिन्तकूटके कण्ड पर निर्मल मुक्ताका कण्डोकी तरह मन्दाकिनो रह रही है। सहसा इस उदर मधुपूय' प्राकृतिक सभुतिके निकट जा कर रामचण्डने महरी साँस मर कर कहा -

"राज्यनाग और सुहृदियह भाङ्ग मेरे दुष्टिमें बाधा नहीं डालता। यह महासीन्धुमें मैं मच्छी तरह उपभोग करनेमें समर्थ हूँ। यनवास भाङ्ग मेरे लिये शुभकर प्रतीत होता है। इससे मेरे दोनों फल सिद्ध होते हैं। एक तो मैंने पिताकी भस्तरपसे रक्षा की और दूसरा भरतका भारो वपकार हुआ।" सीताके साथ मन्दाकिनो जलमें स्नान कर रामचण्ड कमल तीरने और सीतासे कहते हैं, 'इस नदीका स्निग्ध सम्मापण तुम्हारी सखियोंके सभान है। मन्दाकिनोकी सरयू कह कर समझना।'

यहाँ इन्धुनीका दुग्ध मधुरच कमरा मधुरतर हो उत्रा है। कुसुमित लताने भाभय गृहकी मञ्जुतासे पकड़ा है,—रामचण्डने कहा, 'क्या हो सुम्बर! तुम परिभाल हो कर जिस प्रकार मर आभय किता हो उसी प्रकार यह दिवार दता है।' हाथाक वृत्तच उलाड़े हुए मञ्जल गुरुक रूखके देख कर मन्ती बहुत कुचित हुए। शैल

माला पर जंगली कायल कुहकती थी और भौंरे गुनगुन गव्व करते थे। उसं सुन कर राम आदिकी थकावट दूर होती थी और वे धीरे धीरे आगे बढ़ते जाते थे। नील, पीत, लोहित वा किसी वर्णका जां फूल थच्छा लगता था, उसे रामचन्द्र पल्लव सहित तोड़ कर सीताके हाथमें देते थे। मनःशिलाके ऊपर जलसिक्त उगली घिस कर सीताकी मागमें सिन्दूरका तिलक लगाते थे। केशरपुष्पको सीताके बालोंमें खोस कर रामचन्द्रने वडे आदरसे कहा, 'तुम्हारे साथ रहनेसे मुझे अयोध्याके राजपदकी स्पृहा नहीं होती।'

चित्तकूटके मनोहर शैलमाला-परिवृतप्रदेशमें गाल, ताल और अश्वकर्ण वृक्षके पत्तों और काण्डोंसे लक्ष्मणने मनोरम पर्णशाला बनाई। रामचन्द्र उस भोपडामें भाई और स्त्रीके साथ आनन्दसे रहने लगे।

इसी समय बड़ी भारी सेना और आत्मीय सुदृढ़ोंसे परिवृत्त हो भरत रामचन्द्रको अयोध्या लौटा लानेके लिये आ रहे थे। शालवृक्ष परसे भरतका चिरपरिचित-कोविदार ध्वजाङ्कित पताका-परिवेष्टित अयोध्याकी विशाल सेना देख कर लक्ष्मणने समझा, कि भरत हम लोगोंका वध करनेके लिये आ रहे हैं। इस धारणासे उचेजित हो उन्होने भरतका निधन करनेका सद्बुद्ध किया और रामचन्द्रको युद्धके लिये उभाडा। किन्तु रामचन्द्रने स्नेहाट्टकण्ठसे कहा, 'भरत यदि सचमुच सेना ले कर आ रहा है, तो आने दो, हम लोगोंको युद्ध करनेका प्रयोजन ही क्या? पितृसत्यका पालन करने हम लोग वन आये हैं। ऐसी हालतमें यदि हम लोग भरतको युद्धमें मार डालें, तो क्या अक्षय कीर्ति प्राप्त हो सकती? भ्रातृरक्तकलङ्कित ऐश्वर्यसे हम लोगोंको प्रयोजन नहीं। भाई और आत्मीयवर्गके सुखके सामनेमें अपना सुख बहुत थोडा समझता हूँ।' इससे बाद भरत जिस उद्देश्यसे आ रहे हैं वह अनुमान कर उन्होंने कहा, भक्त मेरे प्राणसे भी बढ़ कर प्यारा है। मेरे वनवाससे वह शोकसतप्त हो मुझे अयोध्या ले जानके लिये आ रहा है न कि हम लोगोंसे युद्ध करने।'

इधर नगे पाँवसे जटाचीर पहने अनुगत भृत्यकी तरह वापस्कण्ठसे चिरवत्सल भरत आ कर

रामचन्द्रके चरणों पर गिर पड़े। भरतका मुग्न सूना, लज्जा और मनस्तापमें शरीर दुबला और कुम्भ हो गया था। रामचन्द्रने श्रुपूर्णा नेत्रोंसे स्नेहकी पुतली भरतको गोदमें ले लिया और स्नेह मम्मापणमें उनका मस्तक सूँघा। भरतने देखा कि सत्यजन रामचन्द्रके शरीरसे दिव्यज्योति निकल रहा है, फिर भी उनका शरीर मानो पवित्र यज्ञाग्निकी तरह देदीप्यमान है।

इन देव सद्गुण बड़े भाईके चरणोंमें पड़ कर आर्त्ता रमणिकी तरह भरत फूट फूट कर रोने लगे। रामचन्द्र भरतके मुखमें पितृधियोगका सवाद सुन कर कुछ समय अधीर हो रहे। पीछे मन्दाकिनिके किनारे इ'गुदीफटसे पितृ-पिण्ड बना ज्यों ही वे पिण्ड देने नैवार हुए त्यों ही लवो साम भरी और पृथिवी पर लोट कर रोने लगे। किन्तु थोडे ही समय बाद वे चित्तसयम कर संसारकी अनित्यता और धर्मकी मारवत्ताके सम्बन्धमें भरतको उपदेश देने लगे, "मनुष्यका सुन्दर शरीर जरावशीभूत हां शक्तिहान और विरूप हो जाता है। जिस प्रकार पके अनाजके गिरनेका मय नहीं, उसी प्रकार मनुष्यको भी मृत्युके लिये निर्भय हो प्रतीक्षा करना उचित है। क्योंकि मृत्यु झुच है। जो प्रमोदमयी रजनो वीत गई है, वह फिर लौट कर नहीं आता। यमुनाका जो प्रवाह समुद्र में मिल गया है, वह फिर लौटेगा नहीं। उसी प्रकार आयुका जो अंश वीत गया है वह फिर लौट नहीं सकता। जब जीवित व्यक्तिका मृत्युकाल हो आसन्न और अनिश्चित है, तब मृतके लिये पश्चात्ताप न करके अपने लिये पश्चात्ताप करना ही उचित है। जब देह ढीली पड जायगी और बाल सफेद हो जायेंगे, तब जराप्रस्त जीवमें क्या कोई प्रभाव रह जायगा? जिस प्रकार समुद्रमें गिरे हुए दो काठ जब दैवशसे एक साथ मिलने और फिर स्रोतवेगसे अलग अलग हो जाते हैं, उसी प्रकार स्त्रीपुत्र और श्रातिवर्गके साथ मिलना दैवाधीन है, उनका वियोग कब होगा, निश्चय नहीं है। हम लोगोंके पिता नश्वर मनुष्यदेहका त्याग कर ब्रह्मलोक गये हैं उनके लिये शोक करना वृथा है। धर्मपालन करते हुए पितृ-आशाको शिरोधार्य कर उसका पालन करना ही अभी हम लोगोंका कर्त्तव्य है।" सुदृढ़ भरतमें गभीर शोक-

को जोड़ कर भीरामचन्द्र प्रकृतिस्थ हो गये। मरने के बिस्मृत हो कर कहा, "भाप जैसे इस संसारमें कोई व्यक्ति देखनेमें नहीं आते जो सुखमें सुखी भीर दुःखमें दुःखी न हो।"

मरत रामको साथ ले जानेके लिये प्राणपथसे जेष्टा करने लगे। वशिष्ठ, ज्ञानाश्रम आदि कुम्भपुरोहितोंने रामको भयोप्या लीटनेके लिये बहुत भनुरोध किया पर रामने एक ना न सुना। भक्तिर ज्ञायासीने एक मन्त्रुत तर्ककी प्रवृत्तारण्या की,— 'ज्ञाव पृथिवी पर भकेका भाता और भकेमा हो जाता है। भनपव कीन किसका पिता और कीन माता है ? यह माता है यह पिता है, ऐसी बुद्धि उगमच और मूर्ख मनुष्यको ही होती है। यथार्थमें शुक्र शोणित और बीज ही हम जोगोंक पिता हैं। वभरप्य तुम्हारे कोइ नहीं ये, तुम भी उन क कोइ नहीं हो। पिता के लिये भाद आदि किया जाता है, यह केवल भभ्रादि नप करना है। क्योंकि मृत व्यक्ति आहार नहीं कर सकता। यदि एक मादमो भोजन करे और दूसरेके शरीरमें उसका संचार होता हो, तो किसी परदेगी व्यक्ति के उहेँशसे किसीको भोजन करा कर देखो, क्या यह पर देखो तुम होता है ? शास्त्रादि केवल लोगोको वशामृत करनेके लिये बनाये गये हैं। भनपव है राम ! परजोड सापनपम नामक कोइ परार्थ नहीं है, ऐसा तुम जानो। तुम प्रत्यक्ष भनुष्ठान और परोक्षक भनुसम्भानमें लग जाओ तथा भयोप्याके सिहासन पर भविष्ठित हाओ। भयोप्या भगतो एकप्रेणीपय हो कर तुम्हारे भागभनको पतिष्ठा करती है।"

रामचन्द्र पिताको प्रत्यक्ष देवता और देवताक देवता समझते थे। ज्ञायाओको इस उक्ति पर वे भागवतसे हो गये और बोले,— "भापको बुद्धि वेद विरोधितनी है, भापसे अच्छे अच्छे ब्राह्मणोंने निष्काम हो शुभकार्य किये हैं तथा भाज भी बहुतेरे अहिंसक, तप और यज्ञ आदिका भनुष्ठान किया करते हैं। वे हा सचमुच पूजनीय हैं। भाप जैसे धर्मज्ञ और नास्तिक व्यक्तिके साथ ब बात चीठ तक भा नहीं करते। मरे पिताने जो भापको याज्ञकस्थमें मद्रप किया था मैं उनके इन कायको पोर निम्ता करता

हूँ।" इस वाक्यानुवादमें वशिष्ठने बीचमें पड़ कर राम चन्द्रके लोपको शाश्वत किया।

रामचन्द्रने जब जाना, कि मरत किसी भी हाजतसे उनकी पदच्छाया परित्याग कर न जायगे, वे भी पन बासी होगे, तब उन्होंने मरतको छीट जानेके लिये बहुत भनुरोध किया। इस पर योकार्थ मरतने इठ पकड़ा, कि यदि राम न लीरेंगे, तो मैं निराहार रह कर प्राणत्याग करूँगा। इतना कह कर उन्होंने कुटीके द्वार पर घरना दिया। मरतका क्रोध रामचन्द्रजो सह न सके। उन्होंने अपने बाजूक दे कर मरतको छीट जानके लिये बाध्य किया। मरत भी वह पवित्र बाजूक ले कर भयोप्याको चळ लिये।

धर रामचन्द्रजीने सोचा, कि बिजकुट भयोप्याके बहुत कीर है। भयोप्यास हमेशा जोग भाते जाते रहेंगे, इसलिये वे छद्मप्य और सोठाके साथ बिजकुटका परि त्याग कर घारे घारे इक्षिणकी ओर बढ़न लगे। श्रपियो के भनुरोधसे रामचन्द्रने राक्षसो का उपद्रव रोक्नेका मार अपने हाथ लिया। इस उपलक्षमें रामचन्द्रजीसे सोठान कहा, "वीन कार्य पुष्यके वर्तनीय हैं, फूड रोखना, पणइ लीके साथ भनन करना और अकारण किसीसे शङ्कता डानना। भापमें पहले वो दोष तो नहीं है, पर बिना कारणके राक्षसो के साथ जो शङ्कता करते हैं, उससे मुझे डर होता है।" रामचन्द्रने कहा, 'इससे जो ज्ञाप करता है वही क्षत्रिय है। श्रपि जोगोने राक्षसो के भन्याचारसे तंग आ कर मेरी शरण लीं हैं। उनमेंसे बहुतेरे निरोह और धार्मिक श्रपियो को राक्षसो ने मार डाला है। उन्होंने विपद्में पड़ कर मुझसे भाभय मांगा है। मैं भी उनकी रक्षा करनेका वचन दे चुका हूँ। अनो राक्षसोके साथ मेरा युद भवश्यम्भावी है। मुझ पर आइ कौसी हो विपद् क्यों न आ पड़े, राज्य यहां तक, कि तुमने भी मेरा बियोग क्यों न हो जाय, पर मैं सत्यज्ञ नही हो सकता।'

शोतशत्रुके भारभमें ही रामचन्द्र उभ पिण्णलोगघसे परिभ्रात यमदेश भतिक्रम कर पञ्चवटी पशु को। यहां वे कुटी बना कर रहने लगे।

पञ्चवटीमें शूर्यपलाके नाक कान काटे जानेके बाद

रामचन्द्रसे राक्षसोंका घोर युद्ध हुआ। खरदूषणादि चौदह हजार राक्षस रामचन्द्रसे मारे गये। रावणको जब यह मालूम हुआ, तब वह परिव्राजकके वेशमें सीताको हर ले गया।

मारीच राक्षसने मृत्युकालमें जो 'हा लक्ष्मण हा लक्ष्मण' कह कर पुकारा था उसीसे रामचन्द्रको राक्षसोंको एक दूरभिसन्धिकी आशा हो गई थी। लक्ष्मणको अकेला आने देखा राम भयसे विह्वल हो पड़े। उनका प्रजान्तचित्त क्षुब्ध समुद्रकी तरह चञ्चल हो उठा। उनके शोकके और भी दूसरे दूसरे कारण थे। रामचन्द्रने जब वन जानेका सङ्कल्प किया और यह बात सीताको मालूम हुई, तब उन्होंने 'कुशकण्ठकमें कदम बढा कर आपके आगे आगे जाऊंगी' यह कह कर प्रफुल्लितसे राजमहलका त्याग किया और भिखारिणीवेश सजाया था। अयोध्याकी सुरभ्य अट्टालिकाओंका उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा था कि, 'इन सब अट्टालिकाओंकी छायासे आपकी पदच्छाया मेरे लिये कहीं अच्छी है। मृगीवत् प्रफुल्लनयना भीरु सीताको वनमें जब किसी बातका डर होता, तब वह अपनी भुजलतासे रामचन्द्रकी बाहु पकड़ती थी। तेरह वर्ष चित्रकूट और पञ्चवटी तरकी छायामें गद्गदनादी गोदावरीके किनारे मन्दाकिनीकी सैकतभूमिमें,— जंगली कंदमूल और कपायफल खा कर बड़े आदरसे लालिता सोहागिनी राजबधू स्वामीकी पार्श्ववर्तिनी हो कर रहना ही जीवनका श्रेष्ठ सुख समझती थी। रामचन्द्र भी जब उन्हें लिये आते थे, तब उन्होंने कहा था, "तुम्हें साथ ले जानेमें मुझे किसी बातका डर नहीं। साक्षात् रुद्रसे भी मैं नहीं डरना।" यह अभय दे कर वे पद्मपलाशाक्षी सीताको साथ लाये थे। अभी वह उनकी रक्षा न कर सके। यह सब सोच कर राम बहुत व्याकुल हो उठे। लक्ष्मणको अकेला आने देख वे कातर-करण स्वरसे बोल उठे, 'दण्डकारण्यमें जो मेरे साथ साथ आई थी मेरी उस वन-संगिनी दुःखसहायाको कहां कहां रख आया, जिसके बिना मैं क्षण भर भी नहीं रह सकता उसे तुम कहां छोड़ आया?'

अनन्तर वे बड़ी तेजीसे लक्ष्मणके साथ कुटीकी

ओर चले। गहमें उन्हें तमाम अंधकार सा दिपार देता था। चारों ओर अशुभ लक्षण देण कर उनका सुन्न सूख गया। कुटीके समीप आ कर उन्होंने देखा, कि हेमंतमें शुष्क पत्तदलकी तरह सीताविहीन श्रीहीन मलीन कुटी खड़ी है। उसका सौंदर्य विलकुल चला गया। वन-देवता मानों पञ्चवटीसे दिवा हो गये, समूचा वन सीताके बिना मानो सूना दिखाई देता है, पञ्चवटीके वृक्ष डालियोंको झुका कर रो रहे हैं, पञ्चवटीके पत्नी अपनी मधुर बोला भूल गये हैं; डालियों पर फूट मुरझा गये हैं। मृगचर्म और बल्ललादि कुटीकी रस्सीमें बंधे हैं। यह अवस्था देखा कर रामचन्द्र पागल हो गये। आखीसे अज्ञान आसू बहने लगे और आँखें लाल लाल हो गईं।

इस समय उन्हें तरह तरहकी भावना होने लगी,— क्या सीता कहीं पन्न तोड़ने तो नहीं चली गई है? क्या मेरी परीक्षा करनेके लिये कहीं छिप तो नहीं रही है? इसके बाद वे गिरि, नदी और दुर्गम स्थानमें उन्हें खोजने लगे। जब कहीं न मिली, तब वे व्याकुल हो कदम्बवृक्षसे पूछने लगे। विजयवृक्षके निकट हाथ जोड़ कर; लतापल्लवपुष्पसे लदी हुई वनस्पतिके पास जा कर कातरकण्ठमें सीताका हाल पूछा। पत्र-पुष्प-समाच्छन्न अशोकके पास जा कर उन्होंने कहा, 'हे अशोक! मेरा शोक दूर करो, सीता कहां चली गई, मुझे बता दो।' पोंछे कनियार पुष्प देख पागल हो उन्होंने सीताके श्रोमपकी कर्णशोभाका स्मरण किया। वन वनमें उन्मत्तकी तरह भ्रमण कर रामचन्द्रने मृगयूयके निकट मृगशावाक्षीका हाल पूछा। सहसा क्षिप्तवत् छायासीताको देख वे व्याकुल कण्ठमें कहने लगे,—

"हे प्रिये! वृक्षके फीटरमें क्यों छिपी हो? मैंने तुम्हें देख लिया। मुझसे बोलती क्यों नहीं? ऐसी हंसी तो तुम कभी भी मेरे साथ नहीं करती थी,— ठहरो, कहीं माग न जाना, क्या मेरे प्रति तुम्हें जरा भी दया नहीं?"

इतना कह कर राम सीताके ध्यानमें निमग्न हो कठपुतलीकी तरह खड़े रह गये।

कुछ समय बाद जब ये होश हवाशमें भाये, तब फिर साताका कोजमें निरुद्धे । सीताको कोर हर कर ले गया है, यह रामचन्द्र जो स्वप्नमें सो रहा सोचत थे । उनका क्याल था, कि सीताको राक्षसमण मिल कर था गये है । उनके घुघराते बाज, सुन्दर पूर्णचन्द्रमाको तरह मुकामरकल सुबांध नासिका और सुन्न भाण्ड रामसक भवसे मन्दिन और सूच गये थे । उनको पक्षयक समान बाहु सुन्दर भयद्वार समी राक्षसीके पेटमें बले गय होगे, यह सोच कर रामचन्द्र पलकहीन उम्माद-नृपिसे भाकाशका और ताकत जात थे । कमो ता बहा सजा से कमो घोर घारे पागलका तख न न नदी और निर्भरिजास परिपूर्ण गिरिप्रदाम नमन करते थे । उरहोने लक्ष्मणसे कहा, 'महमण ! पञ्चरत्नाकीर्ण, गोदा परोकी सैकत भूमि, कन्दर और निम्बरपूर्ण गिरिप्रदाम भादि समी स्वानो में प्राणाधिका साताको कोजा, पर ये कहा न मिली ।' इतना कह जोकसे अघोरहा रामचन्द्र गृष्णा पर चक्रासे गिर पड़े और गहरा सांस भरने लगे ।

कुछ समय बाद रामन लक्ष्मणकी भयोध्या कीट जानेक छिपे अनुरोध किया और कहा, 'मे कौन-सा मु ह के कर भयोध्या लीटू गा विरहराजकुहिता सीता कहाँ गए, भोग जब एतेमि तब मैं क्या जवाब दूंगा । मरतको भाङ्गिद्रम कर मेरो धोरसे कहना, 'कि बिर दिन पही भप्या तख राम्य करे । माता कैकेय, सुमिता और कौशल्या भादि माताभोका मेरो हामत कह कर बहे पक्षस उनका पालन करना ।'

लक्ष्मणने अनक उपदेश-पाष्य द्वारा रामकी साम्प्रवना हा । किन्तु ये फिरसे कहन लगे, 'मुझे खान तुष्य पिमल पराभिधत जानवा ।' येना जिसने कहा था, जिसे रावणनाश और मित्र विरह भनिमून न कर सका, जिसक पिता 'राम राम' कहन इस लोकास थल बने और यह विन्शाकिस जरा मो विद्वन न हुआ भाज यह येकसे उमरत हो रहा । रामचन्द्रने फिर लक्ष्मणसे कहा, लक्ष्मण ! धाडो देर उरहो, तब भयोध्या जाना, एक शर गोहायराक हिमारे सीताका योज भाभो, यह बहाँ कमल सानक सिधे न गर हो । लक्ष्मण गोहा

परोक हिमारे सीताकी लकाशमें निरुद्धे, चारो ओर घिसा थिसा कर पुकारने लगे । पेंतवनकी प्रतिध्वनिके सिवा और किसीने कुछ उत्तर न दिया । ये दुःखित हो साँटे और रामचन्द्रसे बोले 'कृशनाशिनो वैश्वेदी मालूम रहा कहाँ चला गए, तमाम बुद्धा, पर पता न लगा ।'

लक्ष्मणकी बात सुन कर शाकाकुन रामचन्द्र स्वय गाशपरोक हिमारे गये ।

राम और लक्ष्मणने दक्षिण दिशामें पर्यटन करन करत एक जगह सीताका भङ्गभूपन कुसुमशाम पड़ा रत्ना । तब अभुपूण नेताँसे रामचन्द्रन कहा, 'पृथिया, सूर्य और धानुन इन पुष्पोंकी रक्षा कर भाज मेरा कुछ कुछ दूर किया ।

कुछ दूर और भाये बढ़ कर उरहोने रत्ना, कि जमीन क ऊपर राक्षसका बड़ा पद चिह्न भङ्गित है, पासकी जमान बहुत तटाबोर है । वहाँ साताका उलटापलकलिन कनकचिन्दु गिरा है, पास होम एक पुष्पका लाश और विशाण कयच तथा गुदरथ चक्रहान हो पड़ा है और इसमें जो पताका लगी है, यह बहुत और कीचकूच भोग गरी है । यह दृश्य देख कर रामचन्द्रकी पूव माशङ्का यह मून हो गए अर्थात् उ होने कहा था कि सीताकी राक्षस का गया है यह बात टाक निकली । राक्षस लोमोमि हो यह लागा जनक विष भ-पसमं पुत्र किया है—यह उसी का निवृत्तन है । रामकी भांगे कोपल साक हो गए । उनक भोज फडकड़ाने लगे । पीठ पर नरकतो दुई जटा को उरहोने संमाला और बलकूच मृगधर्म भादि भप्यो तरह बांध लिये । अनन्तर लक्ष्मणक हापसे तार धनुष ले कर बाजे, 'जिस प्रकार जरा मुरमु और पिपाताका श्लेष भनियार्य है, उन्ना प्रकार भाज मुके मो काह रोक रहा लज्जा । सामने जो कुछ मिलेगा उस धनुषुर भेज कर सीता पिनाशका बरना बुझाऊ गा ।' बड़े साईका इस प्रकार उमरत भाष रका कर लक्ष्मणने उरहे बहुत उपदा दिया । उनक उरदाका राम पर भप्या भतर पटा । कुछ दूर जब ये योग और भाये बढ़े, तब उरहोने 'गोपिताश्र' पूरईह सुपुषु जरापुको रत्ना । उम रत्ना हा रामने "यहा राक्षन सीताका बाा चर निवृत्तनमायमं पड़ा है ।" यह कर उस मारनेक सिधे तार धनुष उदाया ।

झोलाभिमय होता होगा ? सीताके विरहसे आज यह बर्षके समान उन्हा वायु भागकी जपड़-सा मादूम होती है। यह विशाल पुणसम्मर आज मेरे निकट वृथा है। अयोध्या जीट कर मैं बिहृराजस क्या कहूँगा ? लक्ष्मण, तुम झौट जाओ, मैं सीताक विरहसे प्राणघातय नहीं कर सकता।"

लक्ष्मण रामचन्द्रको यह उमसना देख कर डर गये और उम्हें अनेक प्रकारसे समझाने बुझान लगे। किन्तु रामचन्द्रकी व्याकुलताका जरा भी हास न हुआ। कभी तो यह अयसन्न हो जात और कमा मज्ज भानू बहाते हुए उमसकी तरह प्रकाय करते थे। इसी समय सुमोघ ने हनुमानकी वहाँ भेजा। हनुमानक लिंगय भनिमन्त्रन से लक्ष्मण हृदयका आवेग न रोक सक। सुमोघने हनुमानक हाथ दोनों आर्योंकी कहला भेजा था, "भायके भायत तथा सुदृच महाभुज परिधक समान है। भाय प्रगल्भा शासन कर सकत है तो फिर भाय दोनों भाई वनचरी क्यों हुए ? भाय लोगोंकी अपूर्व बहकान्ति सय प्रकारक आभूषणका योग है, पर एक भी भूषण नहीं दियाई देता सो क्यों ?" लक्ष्मणन रामचन्द्र तथा अपने हाटक संक्षेपमें कह सुनाई और सुमोघस आश्रय देने कहा,—"जो पृथ्वी-पति हैं सभी लोगोंको शरण देन-पाले मेरे गुठ और मज्ज—ये रामचन्द्र आज सुमोघ की शरण चाहत हैं। इसलिये तुमसागरमें पतित रामचन्द्रकी आज बानराधिपति आश्रय व कर उनकी रक्षा करे।" इतना कहते न कहत लक्ष्मणका भाँपे बच उपा भाई। जिहोने सर्वदा चित्तबेगना दमन किया है। रामचन्द्रका कष्ट देख कर जिनका चित्त कातर हो गया है, वह लक्ष्मण आज रोते रोते मौनो हो गये।

रामचन्द्र जोकानुर हो आज तक कवक कर्ष कष्ट पाते थे, किन्तु अभी वे जिन काममें अगे हुए हैं, वह कदा तक सुकियुक्त और भोतिमूलक है कह नहीं सकने। काञ्चिब बड़ा हा उद्विग्न समस्या थी। कर्षघन मृत्यु कालमें सुमोघक साथ मित्रता करने कहा था। अभी रामचन्द्रन सुमोघक पास जाते और उनसे विपद्काशमें सहायता माँगनका इच्छा प्रकट की। अन्धिका साक्षी।

कर उम्होने भायसमें सौहाय्य स्थापन किया। सुमोघने कहा,—

'यदि मेरे जैसे बानरक साथ भाय मित्रता करना चाहते हैं, तो हाथ बढ़ाता हूँ, अपने हाथसे मेरा हाथ पकड़ें।' रामचन्द्रने वैया हो किया। किन्तु सुमोघ कवक मित्र हो नहीं थे, वे भी उम्ही के जैसे बुद्धित थे। उन का मो स्त्री बड़े भारी द्वारा हरण की गई था। वे बालीक भयसे श्रृण्यमुक्त गर्भत पर रहते थे, स्त्रीविरहसे बड़े करसे ज्ञान बिताते थे। जब रामचन्द्रको यह हास मादूम हुआ, तब रामचन्द्रन उन पर बढ़ा कृपा बरसाई। जिसकी स्त्री बुरसेल खुद ही गई उसक समान हतमाया संसारमें और कौन है। हतमागेके साथ हतमागेकी मित्रता कवक हाथ पकड़नेस ही नहीं हुई, हृदयकी गभीर सहानुभूति द्वारा यह बरमून हो गई। सुमोघ जब भरभी स्त्रीका हरण पृथान्त रामचन्द्रस कह रहे थे, उस समय उनक नेत्रोंस अचिरक अभुषात बहती थी। किन्तु रामचन्द्रक सामने सुमोघने धैर्य धारण कर अभुषैगकी राक निवा। येस समनुशा व पुत्रको वा कर रामचन्द्र मयता अभुषलिन मुक्त कवक कर्षघनस पाछेंगे, इसमें आश्चर्य हो क्या ? सीतान श्रृण्यमुक्त पबंध पर अपने भूयपाहि गिरा दिये थे। सुमोघ उम्ह बड़ पससे रबा था। रामने उसे बेकाना बाहा, सुमोघने उसी समय उनक सामन ला कर रबा दिया। ये उस उच्छरीय और भूयणकी छातो पर रबा कर रेंनि छगे और रायणका कार्य स्मरण कर बिमर्सेके सापिकी तरह कूट हो निम्बास छाडन लगे।

सुमोघ और रामचन्द्रक साथ मित्रता हा पर। बालीका बय करनेके लिय उम्होंने लज्जुन्य किया। किन्तु एक प्रतापशाली वेशाधिपतिकी पृष्टकी भाइस तीर फेंक कर मारना क्षत्रियोचित कार्य है या नही यह सोचाने क लिये मन्त्रम होता है उन समय उनकी बुद्धि ठिकाने न थी। बालीकी रामचन्द्रने कहा था 'छादे भाइकी या कन्याक ममान है, जो प्यक्ति उअ हरण करेगा मनु क दिधानानुमार यह मृत्युदण्डस इच्छित होगा।' बालान कहा, 'मनुक मृत्युदण्ड देनक लिये क्या तुम हा भाये हो ? बालीक हम प्रकार बार बार छलकारन

पर रामचन्द्रने कहा, 'यह सशैलवनशालिनी धरित्री इक्ष्वाकुवंशीयके अधिकारमे है। भरत उस व शके राजा हैं। हम लोग उनकी आज्ञाके अनुसार पापीको पापका दण्ड देनेमें नियुक्त हैं। जिसको दण्ड देना होगा, उसके साथ क्षत्रियोचित सम्मुखयुद्धका प्रयोजन नहीं।' मालूम होता है, उन्हें 'आर्यजातिका युद्धनियम पालन करनेका यथेष्ट कारण न मिला।

रामचन्द्रने अपने पराक्रमका परिचय देनेके लिये सुग्रीवके सामने एक शर फेंका जो सात ताड़के पेड़को छेदता हुआ निकल गया। किन्तु जब देखते हैं, कि वृक्षकी आड़से भाईके साथ मलयुद्धमें नियुक्त वालीके प्रति गुप्तभावसे शर फेंक कर रामचन्द्रने उसका वध किया, तब वे सब पराक्रम दिखानेकी कोई आवश्यकता ही न थी।

ऋष्यमुख पर्वतकी गुहाको काट कर दुर्गम शैलसंकुल प्रदेशमें वालीका राज्य था। अब वालीके मारे जाने पर सुग्रीव विजयमाला पहन कर सिंहासन पर बैठे। माल्यवान् पर्वतके पास ही चित्रकानना किष्किन्धाका गीति-वादित्रनिर्घोष सुनाई देता था। रामचन्द्र माल्यवान् पर्वत पर भाईके साथ रह कर उसे सुन सकते थे। किष्किन्धा नगरी बड़े आदरसे आमन्त्रित होने पर भी उन्होंने नगरमें प्रवेश नहीं किया। वनवासकी प्रतिज्ञा पालन कर वे पर्वत पर रहते थे। रामचन्द्रको रातदिन नींद नहीं आती थी। उदित शशिलेखाको देख कर विधुमुखीका स्मरण हो आता था। चन्द्रोदय देख कर भी वे निद्रा-सुखका अनुभव नहीं करते थे। वर्षाका समय था। अचिरल जलधारा देख कर राम समझते थे, कि उनके चिरहसे सीता अश्रुत्याग कर रही है। नोल मेघमें प्रस्फुरित विद्युत् देख कर रावण द्वारा सीता-हरणका चित्र उनके सामने जाता था। वर्षाकालमें रामचन्द्रका सीताशोक दूना बढ़ गया। वर्षाका चार मास उनके लिये सौ वर्षके समान था। सीताके शोकमें इस समय वे बड़े कष्टसे दिन बिताते थे। धीरे धीरे शर्वभृत्तुने पदार्पण किया। मेघका नामनिशान न रहा। सप्तच्छद तरुकी शाखा शाखामें पुष्प खिल गये। पुष्करिणीके किनारे जंगल और नदीतटमें रामचन्द्र घूम घूम

कर मृगशावाक्षीका स्मरण करने लगे। सीताके बिना उन्हें कहीं चैन नहीं पड़ता था।

रामचन्द्रने कहा, 'सुग्रीवने प्रतिज्ञा की थी, कि वर्षा-ऋतु बीतने पर वे सीताकी खोज करेंगे। अब शर्वभृत्तु भी आ गई पर उनका कहीं पता नहीं। मैं प्रियाविहोन दुःखार्त्ता और हृतराज्य हूँ, सुग्रीव राज्य स्त्री पा कर विलकुल भूल गये। मुझे अनाथ, राज्यभ्रष्ट, प्रवासी और शून्यप्राथी समझ कर शायद सुग्रीव हम लोगोंकी उपेक्षा करते हों। लक्ष्मण! तुम उनके पास जाओ और कहो, कि क्या वह मेरी वाणाग्निकी प्रभा फिर देखना चाहता है? जिस पथसे वाली गया है वह पथ संकुचित नहीं हुआ है। उसे समझा कर कहना, कि अपनी प्रतिज्ञाका पालन करे जिससे उसे वालीके पथसे न जाना पड़े। फिर उन्होंने लक्ष्मणसे यह भी कहा, कि सुग्रीवकी मीठी मीठी बातें कहना, रुखी बातका कदापि व्यवहार न करना।

सुग्रीव सन्नमुच तारा, रुमा और दूसरी दूसरी ललनाओंसे परियुक्त हो आनन्दसागरमें मग्न था, मदविह्वलित ताङ्ग और पानारुणनेत्रसे दिनके समान रात और रातके समान दिन बिता रहा था। यहा तक, कि लक्ष्मण और वानरोंने जब दरवाजे पर जा कर शोरगुल मचाया, तब भी उसकी नींद नहीं टूटी, आखिर अङ्गदके समझाने पर सुग्रीवने कहा, 'मैंने तो को कुव्यवहार नहीं किया, तब फिर लक्ष्मण क्यों क्रोध करते हैं? मैं लक्ष्मण अथवा रामसे जरा भी नहीं डरता, पर हा वन्धुविच्छेदसे अवश्य डरता हूँ। मिलना सर्वत्र ही सुलभ है, मिलना की रक्षा करना कठिन है।' किन्तु हनुमान्ने जब उसकी भूल सुझा दी, तब उसने अपना अपराध स्वीकार किया और कृताञ्जलि हो लक्ष्मणसे क्षमा मांगी।

सुग्रीवने उसी समय वानरोंको भिन्न भिन्न दिशामें सीताकी खोजमें भेजा। कुछ समय बाद वे सभी लौट आये, पर सीताका कहीं पता न चला। आखिर हनुमान् विशाल समुद्र पार कर लङ्कामें सीताको खोजने आये।

हनुमान्ने अशोक वाटिकामें सीताको देख पाया। कुल समाचार कह कर वह बहासे लौटा। आते समय

सीताने उसे चिह्न स्वरूप भयभीत म गूठी है ही। हनुमान् उस म गूठीको छे कर समुद्रके किनारे वहां बंदर उसकी बाट ओहलत ये वहां पहुंच गया। सब बंदरोंके भानन्द का पाठपार न प्ठा। वे सबके सब भानन्दसे उछलते हुदते पहले रामचन्द्रके पास न जा कर सुमीयके विशाल मधुवनमें पुले। उस वनमें दधिमुक्त नामक एक पहाड त्रियुक्त था। उसने बन्दरोंको वनमें पुसनेसे मना किया, पर भानन्दसे उग्रमत्त बन्दर सब उसे सुननेयाखे ये। भाबिर दधिमुक्तने वसपूर्वक उन्हें मार मगानेकी कोशिश की, पर वह मकंठा कब तक उदर सरुठा था। बंदरोंने मिळ कर उसे खूब पाटा और मधमटा कर छाड़ दिया। दधिमुक्त रोठा हुआ सुमीयके पास गया। इधर मधुवन से भाभीहित और वीचनके मन्से उग्रमत्त बन्दर आपसमें मधुर गान गाते, पर वृक्षरेकी प्रणाम करते, इस प्रकार भानन्दोत्सव मनाते ये।

सुमीय राम लक्ष्मणके पास बैठे हुए थे। दधिमुक्त बहो गया और वाक्यविपतिका पांथ परकू कर रोने लगा। सुमीयने ममप दे कर रोनेका कारण पूछा। दधिमुक्तसे सारी बरुना सुन कर सुमीय बोले "बानर समग्रयाय तो सीताका पता न लगा सकीक कारण बड़ा ही दुःखित है, तब फिर मकरमातृ यह क्या हो गया ? मन्सु होता है उन्होंने जोइ शुभसंवाद्य बकर छाया है शायद सीताका पता लगा लिया है।" इसी समय बानर गज यहां पहुंच गये। "सीताका संवाद्य पा कर रामचन्द्र के मामंदका पाठपार न रहा।

मन्सर हनुमान्से साताका दो हुई म गूठी रामचन्द्र को दे कर कहा "जमीन पर सीते सीते सीताका रूप कुरूप हो गया है, वे शीत क्लिषा नखिनीकी तरफ मखिन हो गई हैं।" राम उस म गूठीको छातोमें लगा कर बाजककी तरफ रोने लगे। पीछे ये भाडे, वछड़ा देखनेस जिस प्रकार गायक स्तनसे दूध जाये माप गिरने लगता है इसी प्रकार इस मथिके दूरानसे मेरा इदप लोहा गुर हो गया है। छातामें जब इस लगता हू, तब पेसा ही मानूम होता, कि सीता मेरे अङ्गमें लिपट गई है।" वे बडे ही मातुर हो हनुमान्छ बाब बार पूछने लगे। "मेरो मामिनोने मधुर करउल क्या कहा है, मुझे कहे।

मीय मिननेसे रोगी जिस प्रकार जोबन लाम करता है, साताका वचन भी मनी मेरे लिये पैसा ही है। कठिन से कठिन दुःखमें पड़ कर सीता किस प्रकार जीवन धारण करती है।"

हनुमान्से कुछ समाचार माळूम कर रामचन्द्र बोले, 'यह शुभ संवाद्य तुमने जो सुनाया, इसके लिये मैं तुम्हें क्या पुरस्कार दू ? पुरस्कार योग्य तो मेरे पास कुछ ही नहीं। मेरा एकमात्र धायस पुरस्कार है—तुम्हें भाङ्गिज्जन देना। यह कह कर अशुपूर्वनेहींसे रामचन्द्रने हनुमान्का भाङ्गिज्जन किया।

किन्तु हनुमान्ने लङ्कापुरीका जो वर्णन किया, वह बड़ा ही मोतजनक है। 'विशाल लङ्कापुरी चारों ओर ऊ की वीथारहे घिरी है। उसमें चार फाटक हैं। हर एक फाटक पर मन्त्र रने हुए हैं। माधीर पार करनेसे मय दूर भाई मिळती है। उस बाईमें कुम्भीर भाङ्गि रहते हैं। उस पर चार य जनिर्मित सेतु हैं। शङ्खसेना जब उस सेतु पर चढ़ती तब य सबकुसे ये भाईमें के क की जाती हैं। बंकीशकुसे ये सब सेतु इच्छानुसार उठये जा सकत हैं। उनमेंसे एक सेतु सबसे बडा है। उसके कुछ मंश सोनेसे मड़े हुए हैं। चिन्नकर परंतके ऊपर यह लङ्कापुरी भयङ्गित है। वहा देवता लोग भी नहीं जा सकत। सैकड़ों यिकराज, शैक भीर शूकचारी राक्षस सेना उस विराट माचार भीर परिवार्क इरबाडे पर पहरा वेता है। इसक बाद लङ्कापुरी पड़ती है। वहां जो वीर राक्षस पहरा देते हैं उनके पराक्रमके विषयमें तो कुछ कहना ही नहीं। उनमेंसे किसीने तो पैराबतके बांठ उभाडे हैं, किसीने मयपुरीमें पैरा डाड कर मय राजका हमम किया है। इस मुर्चिगम्य लङ्कापुरीसे सीता का उदार करना होगा। शङ्खगज हम लोगीसे लङ्कने के लिये पहल हीस तप्याती कर रहे हैं।" हनुमान्से लङ्कापुरीके मयकथा सुन कर रामचन्द्र जरा भी विचलित न हुए। ये सुमीयकी सेनाक साथ पहाड़ी रास्तेस समुद्रक किनारे जाने लगे। राहमें बडे बडे दृष्ट फलक बाकसे गिर मुझाये हैं। रामचन्द्रन सबीकी सायधान कर दिया था, कि बिना मथ्या तरह मथि कीर फल न

पाना । कहीं रावणके गुप्तचरोंने उनमें विष न मिला । दिया हो । इसी समय बड़े भाईसे अपमानित विभीषणने आ कर रामचंद्रकी शरण ली । इस पर सर्वोंने प्रतिवाद किया, कि शत्रुपक्षीय किसीको भी अपने शिविरमें आश्रय न देना चाहिये । किंतु रामचंद्रने शरणागतको लौटा देना अच्छा न समझा ।

समुद्रके किनारे पहुंच कर विशाल सेना असीम जलराशिकी अनन्त प्रसारित क्रीडा देखने लगी । समुद्र आकाशमें और आकाश समुद्रमें मिला हुआ था । अब सभी सोचने लगे, कि किस प्रकार यह भीषण महासमुद्र पार किया जाय ?

समुद्रके किनारे रामचंद्र कुश पर शयन कर महाबाहुको तकिया बना कर तीन रात और तीन दिन अनसनवन अवलम्बन कर मौनभावमें पड़े रहे । चौथे दिन 'आज मैं समुद्र पार करूंगा, नहीं तो प्राण दे दूंगा' इस प्रकार संकल्प कर सेतु वाधनेके उद्देशसे वे समुद्रकी उपासना करने लगे । रक्तमात्याम्बरधर, किरीटच्छटादीप्त शुभकुण्डल समुद्र कृताञ्जलि हो रामचंद्रके निकट उपस्थित हुए और उन्होंने सेतुबंधका उपाय बतला दिया ।

तदनुसार अपार समुद्रध्यायी विशाल सेतु बनाया गया । सेतु जिससे टेढा न होने पावे, इसलिये कोई सूता और कोई मानदण्ड पकड़ कर पड़ा रहता था । शिला और वृक्ष आदि उपादानोंसे नीलने थोड़े ही समय में पुल बना लिया । रामचंद्र सभी सेनाओंके साथ उसी पुलसे समुद्र पार कर गये । अब लङ्कापुरी पहुंच कर वे सीताके लिये बहुत व्याकुल हुए और विलाप करने लगे, "जो वायु सीताको स्पर्श करती है, वह मुझे भी स्पर्श कर पवित करे । जो चंद्रमा मुझे देखता है, उस चंद्रमाको सीता भी देख कर उन्मादिनी होती होगी । दिन रात मैं सीताकी विरह-अग्निसे दग्ध होता हूँ । ऐसा कव सौभाग्य प्राप्त होगा, कि उनके सुचारु दन्त और अधरयुग्म, पद्मवत्य सुन्दर मुख उठा कर देखूँ ।"

इसके बाद युद्ध आरम्भ हुआ । रावणके मंत्रियोंने उन्हें नाना प्रकारकी सलाह दी । किसीने कहा, "एक

दल राक्षस सेना मनुष्यसैन्यका वेश धारण कर रामचंद्रके पास जा कर कहे, 'भरतने आपकी सहायतामें हम लोगोंको भेजा है' इस प्रकार रामकी सेनामें घुसनेसे ग्रीव ही उनका विनाश किया जा सकता है ।" रावणने सुग्रीवको ससैन्य अपने दलमें लानेके लिये उन्हें तरह तरहका प्रलोभन दिया था । लेकिन उसका यह भी उद्देश्य सिद्ध नहीं हुआ । रावणके गुप्तचर नाना प्रकारका छद्मवेश धारण कर रामचंद्रकी सैन्यसंख्या और व्यूहप्रणाली देखने जाते थे । जब कभी वे पकड़े जाते, तब बंदर उन्हें अच्छी तरह पीटने और पकड़ रखते थे । पीछे रामचंद्र उन्हें छोड़ देते थे । सुग्रीव और विभीषण उन्हें जानसे मार डालनेका सलाह देने थे । उनका कहना था, कि ये सब दूत नहीं, गुप्तचर हैं इसलिये इनका बंध करनेमें कोई दोष नहीं । किंतु रामचंद्रको क्या आता और उन्हें मुक्त कर देते थे । एक दिन एक गुप्तचरको दण्ड देनेके लिये रामचंद्रजीके पास लाया गया । उसने रामचंद्रको शरण ली । रामने उसे कहा था, 'तुम हमारी सैन्यसंख्याको अच्छी तरह देप जाओ । तुम्हारे मालिकने जिस उद्देशसे तुम्हें भेजा है उस उद्देशको पूरा करनेमें मैं स्वयं उसकी मदद करता हूँ । तुम मेरा व्यूहसंस्थान, छिद्रादि जो कुछ हैं, देख जाओ । यदि स्वयं न समझ सकते या देप सकते हो, तो मेरे कहनेसे विभीषण तुम्हें सब कुछ समझा बुझा देगा ।' इस प्रकार रामचंद्रने नीतिका अवलम्बन कर धर्मयुद्धमें राक्षसोंको मारा था । एक दिनके भीषण युद्धमें रावण विलकुल हतथ्र हो गया था । लक्ष्मणको विध्वस्त और रामकी सेनाको नष्ट कर आकर रामचन्द्रसे परास्त हुआ उसका किरीट फट कर जमीन पर गिर पड़ा । हेमच्छत्र जो मस्तक पर पहनता था छिन्न-विच्छिन्न हो गया । रामके शरोंसे घायल हो वह भागनेका कोशिश करने लगा, पर भागनेका कोई रास्ता न मिला । इस समय रामचंद्रने कहा था, 'राक्षस ! तू मेरी सेनाको नष्ट कर युद्ध करते करते थक गये हो । मैं थके शत्रुको कष्ट देना नहीं चाहता, इसलिये आजकी रात घर लौट जाओ और विश्राम करो । कल सबल हो कर फिर युद्ध करने आना ।'

नरमय रावणक रोषस मूर्च्छित हो पड़े। रामका किसी भी सनकाको यह हृदयमेदी रोष उठानका साहस न हुआ। भाविर रामचन्द्रने उमे उठा कर चूर चूर कर दिया और छद्मपणको बचाया। इसा समय रावणक हठातेँ तार उनको पीछेँ चुमने लगे, पर स्यातुवरसय रामने उसको जरा भा परबाह न की।

इन्द्रजित्से सोताका बधसंवाद् सुन कर रामचन्द्र बे-हो-ग हो गये। सेना उन्हेँ चारतेँ मोरसे येर कर पद्म गण्डयुक्त स्निग्ध जलपाटा धागा उगह होगमेँ छानेका प्रयत्न करने लगे। इसा समय विभाषणने आ कर उन क कामोम क्हा, "वह सीता मायासोता था,—प्रकृत साता नहीं। सीता भगोइक पममेँ मच्छी तरहसे ई।" यह सुन कर राम बोले, 'मैंने कुछ भी नहीं समझा, क्या कहत हो, मोरसे कहे' इतना क्हा कर राम मीनक साथ साथ कहल इच्छिस विभीषणकी भोर ताकने लगे।

भीषणयुद्धमेँ राक्षस एक एक कर पमपुर सिंघारा। अतिक्रम जिगिरा, नरात्मक, देवान्तरक, महापाप्य, महोदर भद्रमान, कुम्भकण, इन्द्रजित् भादि महारायिण्य समराङ्गणमेँ खेल रहे। दो बार रामचन्द्रने इन्द्रजित्की युद्धम परास्त किया था। किंतु देवबलसे दोनों बार बच गया था। इस युद्धमेँ राक्षसोने रामचंद्रकी क्रमो भी तुलामद् नहीं की। तुलामद्को बात कृत्वासास, तुमसीशम भादि कथियोने अपन अपने रामायणमेँ लिखा है, पर पाश्चात्तिक मूलकाय्यमेँ वह नहीं है।

रावणके साग जो अस्मित युद्ध हुआ, यह बड़ा ही भयभूत था। दोनोंको दामास जो तोर निकलत ये उन स दिग्महेश्वर आनोचित होता था तथा भद्रमुक्त रूप युद्धस पृथिवा काँव उठता था। रामचंद्र जब रावणका बध न कर सक, तब कुछ समय तक ये चित्तपट की तरह निष्पन्न हो रह। इस समय भगवत्य ऋषिक उपदेशानुसार रामचंद्रन सूर्यदेवके स्तवमूचक मन्त्रका ध्यान करने लग, "हे तमोस्य, हे हिमस्य हे सुभुज्य, हे श्योति-पति, हे सोकसासि, हे व्योमनाय," इस मन्त्रार मंत्र रूप करते करते उनक हठोरमेँ नर शक्तिका सञ्चार हो भाया।

रावण मारा गया। ३। रामचन्द्र साताक लिये

इतने दिना तक उग्रतयाय ये मात्र रावणयिनाशक बाह उनको यह म्हाकुपता हठान् बूर हो गह। उन्हीने रावण का सरकार करनेके लिये विभीषणस कहा। बंहन भीर भगवकी लकड़ासे राक्षसाधिपतिकी देह जगाइ गइ। इसक बाद रामन विभीषणको छद्मू राज सिंहासन पर अमिषिक किया।

इसके बाद रामचंद्रने अपने मित्र अनुषर हनुमान्को भगोरुचनमे भेजा। दूत साताकी छाने नहीं गया, केवल उन्हेँ यह संवाद् देनेक लिये कि ये रावणको मार कर ससैन्य कुचलसे ई। जाते समय उन्हीने हनुमान्क कह दिया था, 'भगोरुचनमे प्रयत्न करनेसे पहल विभीषणकी अनुमति ले लना।

हनुमान्से गुमसवाद् सुन कर सीता रतनी गद्गद्गद् हो गइ कि कुछ समय उनके मुहसे एक बात भी न निकल सक। उनक दोनों नेत्रोमेँ भाँव भर भाप। भास समय हनुमान्क कहा, कि क्या भापकी कुछ कहना मा है? दोनहोना जनकसुता बाका, 'गुमन जो यह गुम संवाद् सुनाया, संसारमेँ ऐसा कोइ धनरत्न हो नहीं जिस तुम्हेँ पुरस्कारमेँ दे कर भानंद लाभ कक गो।' जिन सब राक्षसियोने सीताको तरह तरहकी पत्नया दो घो, हनुमान् उन्हेँ मार डालनेक लिये तैयार हुए, केकिन सीतान रोक दिया भीर कहा, "एन जोगोने माझिकके वाच्य करनेस हमेँ जो कष्ट दिया है, इसके लिये वे बपडाह नहीं है।" ज्ञाने समय सीताने हनुमान्ने कहा मेजा, कि ये स्त्रीकी पूर्णच द्रामन देवनेकी अमि षाधिणे है। रामक पास पहुँच कर हनुमान्ने कहा 'सीतादेवा विप्रपवार्ता सुन कर बहुत प्रसन्न हुई भीर भापका बचना चाहता है।" यह सुन कर रामचंद्रके नेत्रसे एक बुद्द भाँव टपक पड़ा। ये लक्ष्य इच्छि लिये पड़े रह। अतः उन्हीने एक गहरो साँस भर कर विभाषणक कहा, 'सीताका अचउ मच्छ पत्र भादि पहना कर मरे पास जानेकी अनुमति दोलिये। मैं उन्हेँ देखने की इच्छा करता हूँ।'

विभाषण लय सीताक पास गय भीर रामका अमि प्राप उन्हेँ कह सुनाया। अमुपूर्व नेत्रोस सीता बोली, "मैं अनो जिस अवस्थामेँ हूँ उसी अवस्थामेँ स्वामीस

मिलूंगी।" लेकिन विभीषणने कहा, 'रामचन्द्रजीने जैसी अनुमति दी है, उसीके अनुसार कार्य करना आपको उचित है।'

अनन्तर बहुत दिनोंके बाद वालोंको सन्हाल कर, दिव्य अस्त्र पहन कर सुन्दर भूषणादिसे भूषित हो अलोक सामान्या श्रीशालिनी सीतादेवी पालकी पर चढ़ कर स्वामीसे मिलने आई। सीताको देखनेके लिये सेरुओं वानर और राक्षसोंकी गीड़ लग गई। विभीषण उन्हें वेंतसे मार कर अलग करने लगे। परन्तु रामचन्द्रने क्रुद्ध हो कर विभीषणसे कहा, "विपत्त कालमें, युद्धमें तथा स्वयम्बरके स्थानमें पुराङ्गनाका दर्शन दूषणीय नहीं है। सीता जैसी विपद्वापना संसारमें और कौन ? उन्हें देखनेमें कोई रोक टोक नहीं। सीताको पालकी परसे उतर पैदल मेरे पास आने रुदिये।" उस विशाल सैन्यमण्डलीके मध्य होती हुई सीता देवी कम्पिन कलेवरसे रामचन्द्रके सामने उपस्थित हुई।

सीताको देख कर रामचन्द्रने कहा, "आज मेरा श्रम सफल हुआ। जो व्यक्ति अपमानित हो कर प्रतिशोध नहीं लेता उसे धिक्कार है वह पौरुषशून्य है। आज हनुमानका समुद्रलङ्घन, सुग्रीव, विभीषण और सैन्यशुल्का परिश्रम सार्थक हुआ।" यह सुन कर सीतादेवीके नेत्रोंमें आंसू भर आये। कर्णाल लाल हो गया, हृदय कापने लगा। किंतु लोकनिंदाका भय रामचन्द्रके हृदयमें आघात पहुंचाने लगा। वे बड़े कष्टसे हृदयका आवेग रोक कर बोले, "मैं मानसम्भ्रमका आकाक्षी हूँ। रावणने मेरा अपमान किया। इसीसे मैंने उसका बदला चुकाया। पवित्र इक्ष्वाकुवंशके गौरवकी रक्षाके लिये मैंने युद्धमें राक्षसको मारा है। किंतु तुम राक्षसके घर थी, इसलिये तुम्हारे चरित्र पर मुझे सदेह होता है। तुम मेरी आखोंकी प्रीतिकर सामग्री हो। किंतु नेत्र रोगी जिस प्रकार दीपकी ज्योति सह नहीं सकता, तुम्हें देख कर मैं भी उसी प्रकार कष्ट पाता हूँ। ऐसा कौन पौरुषहीन व्यक्ति है जो शत्रुके घर लाई गई स्त्रीको फिर पा कर सुखी होवे। रावणने तुम्हें अपने अंगमें लिपटा लिया था, अपनी दोनों

आँखोंसे देखा था। तुम्हें यदि घर ले जाऊ तो मेरे पवित्र घरमें कलङ्कका धब्बा लगेगा। मैंने जो मिलोंके बाहु-बलसे इस युद्धमें विजय प्राप्त की, वह तुम्हारे लिये नहीं, अपने वंशकी गौरव रक्षाके लिये। तुम अब जहा चाहो जा सकती हो। अथवा लक्ष्मण, भरत, सुग्रीव या विभीषण इनमेंसे जो पसन्द हो उसीको आत्मसमर्पण कर सकती हो।"

रामके ऐसे वचन सुन कर सीताको बहुत दुःख हुआ। लज्जामें उन्होंने गिर झुका लिया। इतनी लज्जा हुई कि वे मानो अपने ही शरीरमें दुस्मनेको कोजिग करने लगीं। किंतु वे शत्रिय रमणो था, अप्रितम तेजस्विनी थीं। आम्बुओंको एक हाथमें पोंछतां हुई वह गद्गद् कण्ठसे बोली, "आप मुझे ऐसी श्रतिष्ठार प्राते क्यों कहते हैं ? ऐसी कठोरोक्ति तो नीच घरकी स्त्रियोंके प्रति कहा जा सकती है। देववशतः मुझे गान्तसंस्पर्श दोष हुआ है, पर इसके लिये मैं अपराधिनी नहीं हूँ। मेरे हृदयमें सर्वदा आप विराजित ह। यदि आपने यह निश्चय कर लिया था कि मुझे ग्रहण न करेंगे, तब पहले जो आपने इनुमानका लका भेजा उस समय यह बात क्यों नहीं कहला भेजा थी ? उस समय यदि भेज दी होती तो उसी समय आपस परित्यक्त दस जीवनका मैं परित्याग कर देती। तब फिर आपका और आपके मिलोंको इतना कष्ट उठाना न पड़ता।"

इतना कह कर सजलनयना शोकविह्वला सीता-देवी लक्ष्मणकी ओर दृष्टि उठा कर बोली, "लक्ष्मण ! चिंता अभी सजा दो, देर न करो। मैं अब क्षण भर भी इस अपवाद-कलङ्कित जीवनकी वहन न कर सकती।" लक्ष्मणने रामकी ओर देखा, पर असम्भतिके कोई लक्षण न पाया। चिंता बनाई गई। सीता रामचन्द्रकी प्रदक्षिण कर जलती हुई आगमें कूद पड़ी। अग्निप्रवेशके समय सीताने कहा था, "मैंने रामके सिवा और किसी हृदयको अपने हृदयमें स्थान नहीं दिया। हे पवित्र सर्वसाक्षी हताशन ! मुझे आश्रय दो। मैं शुद्ध चरित्रकी हूँ, लेकिन रामचन्द्र मुझे ब्रथा बतलाने हैं। अतएव हे वरि ! मुझे स्थान दो।"

अभिनें वर्णप्रतिमा विद्योत हो गए। रामचन्द्रकी इस समय मारो कुछ हुआ। उसी समय अभिने सेता विकर रामके पास पहुँचा दिया। देवगण खगसे नीचे है। उन्होंने सेताका निरक्षण बतलाते हुए रामसे प्य करने कहा। पीछे से रामचन्द्रको 'चम्पारी नारा' रूपमें स्तुति कर जर्न भले गये। रामचन्द्र भी ताको पुनः प्राप्त कर बड़े प्रसन्न हुए और बोले, सेता शुद्धचरित्रा है। उन्होंने सतीत्वको प्रभावसे उत्सृष्टा की है। अभिने-परोक्षा ही इसका साक्षात् गम्य है।"

इसके बाद अश्वमेध और साताके साथ पुत्रकामिनामः खड्क कर रामचन्द्रने भयोष्ठाकी यात्रा कर दी। इन साथ विभीषणपुत्र राक्षसचन्द्र और सुयोधमपुत्र गरुडचन्द्र भी आते थे। राक्षस सेताके बहनेसे विद्वेषाका पुरस्कारको भी रथ पर बिठा दिया गया। इसी रामचन्द्रको डे कर पुण्यकरण भाष्यशय्यागर्धमा। रामचन्द्र सेताको रथ परसे चिरपरिविष्ट एककारण्यका मित्र तिर स्थान दिखाये और पक्षको रथ दिखाये जाते थे।

बन-गमनके ठीक बीसह वर्ष बाद रामचन्द्र मरद्वाजके अधर्ममें पहुँचे। वहाँ उन्होंने सुना कि भरत उनके आकाशक ऊपर रात्रिपक्ष लगा कर प्रतिनिधि स्वरूप स्त्रीप्राममें रामस्थासन करते हैं। मरद्वाजक भाष्यसे रामचन्द्रने हनुमान्को उपदेशमें भरतके निकट भेजा। इसमें शत्रुघ्नपुरके अधिपति गुहक मिले। रामचन्द्रने उन्हें भागमन संवाद के कर भरतके पास जाने कहा। हनुमान्को रामने कहा था, "जब भरतक पास पहुँचाने, तब मैं हम शोभोका युद्धबलात्, सेता ब्रह्मर तथा विभीषण और सुभीषण विरत मैत्रेयके साथ भयोष्ठा शाना बाधि पुरात कह सुनाया। सुनातेक बाद उनके मुकमरद्वक गीर कर दूबना, कि वे हम शोभोके भाग (मस पुत्रिचित तो नहीं हुए हैं। यदि उनमें किसी भी तरह भयोष्ठिपक्ष आय दिखाएँ, तो तुम्हें मुझसे भास करहना। मैं तब भयोष्ठा न जा कर भरतको हा तम्पप्रदान करूँगा।

हनुमान् वहाँसे लौट कर भयोष्ठा आय जो भयोष्ठा

से क्रोस भरत हुए पड़ता था। वहाँ जा कर देखा, कि भरत होन, कुछ भीर भाष्यमवासी हैं। उनका शरीर भयार्थित मीर मखिन है। सादृश्याके वे बड़े विपण्य हैं। उनके शिर पर बड़ी बड़ी जटा है और पहनेमें धरुक्त और युगधर्म है। वे सबैवा आत्मविपयक ध्यानमम तथा प्रक्षयिणी सख्य तेजयुक्त है। पातुकाको प्रयाम कर धसुष्पयका शासन करते हैं। हनुमान्ने उनके पास जा कर कहा, "दयकारण्यवासी चोरजटाधर। भाप जिस माईके लिये चिंता कर रहे हैं वे कुशलसे भा रहे हैं और भापका कुछ खारहे है।" रामका भागमन-संवाद सुनते ही भरतके नैसासे अधुपारा वह खड़ी। भोग विद्वानका परित्याग कर उन्होंने सितके लिये इतने दिन कठोर परिमाम्यका पाठक किया है जिन्हें रामके विभोग विरहसे रतका हृदय विक्षोर्ण हो गया है, इस लक्ष्मण वर्धभावा कठोर व्रतपालनक फलरूपक वे रामकी भाव और रहे हैं, यह संवाद सुन कर उन्होंने हनुमान्को गले लगाया और अधुपकसे अभिपण किया। पीछे बहुमूल्य वस्तु पुरस्कारमें पा कर हनुमान् वहाँसे बिदा हुए।

समस्त लक्ष्यपुत्रके परिवृत हो भरत रामचन्द्रके मिलने लगे। उनकी जटा पर रामचन्द्रकी पातुका और पातुकाके ऊपर छत्रधर विशाख, पीतलक शोभा देता था। भरत बड़ा धूमधामसे रामका भयोष्ठा सौदा जाये। वहाँ अपने हाथसे उन्हें पातुका पहना कर कुछ रात्रिमार सौंप कर छोटाप हुए।

रामचन्द्रका शुभ दिनमें राम्यानिपेक हुआ। सुश्रीष को वैतुष्ण्य और चन्द्रकान्त मणिकचित महार्थ करडी उपहीकनमें दो। चन्द्रको मुक्ताहार मिला। सेतासे नामा प्रकाशक रूपक और पछाधि पाये। उन्होंने अपने गल्ले महामूल्य कच्छदार मिलाक कर बानरसेनाकी मोर एक बार दुषिपात किया। रामचन्द्रने कहा, "तुम जिसको बाड़े यह उपहार से सकती हो। सेताके यह हार हनुमान्को दिया।

रामचन्द्रका उपसंहार भाग वा बरकराएकका अन्तिम रूपक हृदयविदारक है। रामचन्द्रको जब मातृम हुआ कि पुरयासी सेताकी बड़ी मित्वा करते हैं, तब

उन्होंने सीतापरित्यागका सकल किया। वे अपने भाइयोंके पास गये और सीताके चरित्रके बारेमें बात चीत करने लगे। आखिर उन्होंने सीताको वाल्मीकिके आश्रममें छोड़ आनेका हुकुम दिया। लक्ष्मण सीताको वनवास देनेके लिये चले। वे वृक्षमालासे गोभिन सुन्दर गङ्गाके टापूमें आ कर लक्ष्मण वचनोंकी तरह रोने लगे। लक्ष्मणका रोना सुन कर सीता विस्मित हो गई। इस सुन्दर गङ्गाके किनारे आ कर लक्ष्मणको किस वानका दुःख हुआ। सीता समझ न सकी। उन्होंने दुःखित हृदयसे लक्ष्मणसे कहा, "तुम्हें दो रातसे रामचन्द्रके मुखारविन्दका दर्शन नहीं हुआ, क्या इसी लिये तो नहीं रोते हो?" यह सुन कर लक्ष्मण उनके चरणों पर गिर पड़े और बोले 'आज यदि मेरी मृत्यु हो जाती, तो अच्छा होता।' सीताके इसका कारण बार बार पूछने पर लक्ष्मणने रामचन्द्रका कठोर आदेश कह सुनाया। सीतादेवी ठक सी रह गई।

गङ्गाके किनारे खड़ी रह कर पायाणपतिमाकी तरह सीताने दुःसह संवाद सह लिया। कुछ समय बाद उन्होंने लक्ष्मणसे कहा, 'लक्ष्मण! रामचन्द्रके साथ जो वनवास आनन्दपूर्वक सहन किया था, आज विना रामके उसे किस प्रकार सहन कर सकूंगी?' उनके कपोल हो कर अजस्र अश्रुधारा बहने लगे। वे आसूको विना पोछे बोली, 'ऋषिगण जब मुझे पूछेंगे, कि क्यों वनवास हुआ तब मैं क्या उत्तर दूंगी।' मुझे निर्दोष जानते हुए भी इस विपद्-समुद्रमें धकेल दिया। आज यह गङ्गागर्भा ही मेरी शान्तिका एकमात्र स्थान रहेगा। किन्तु आज मैं गर्भवती हूँ। मेरी इस हालतमें आत्महत्या करना उचित नहीं।

गङ्गाके किनारे खड़ी रह कर वह मौन हो आसू पोछने लगी और अंतमें बोली, 'पति ही नारियोंके देवता, वन्धु और गुरु हैं। उनका कार्य मेरे प्राणसे भी बढ़ कर प्रिय है।' इसके बाद उन्होंने लक्ष्मणको बुला कर अश्रु-रुद्ध गद्गद् स्वरसे कहा, "लक्ष्मण! इस दुःखिनीको छोड़ जाओ, राजाका आदेश पालन करो।"

सीताको तपोवनमें छोड़ कर लक्ष्मणके चले आने पर मूर्ध्नि वाल्मीकि उन्हें अपने आश्रममें ले गये। यहाँ

वे ब्रह्मचारिणी हो कर पर्णशालामें रहने लगीं। जिस रातको शत्रुघ्नेने वाल्मीकिके आश्रममें आ कर सीता-देवीके चरण दर्शन किये, उसी रातको सीताने यमज पुत्र प्रसव किया था, मुनिवाकको ने आधी रातको शुभ प्रसव संवाद वाल्मीकिमें जा कहा। मुनिपरने वक्ष जा कर दोनों कुमारको देया। उन्होंने 'कुशलेदन द्वारा' उनका भूतनाशिनो रक्षाविधान किया था, इस कारण बड़ेका नाम कुश और छोटेका नाम लव रया। शत्रुघ्न यह शुभ समाचार सुन कर फूले न समायें थे।

इसी समय अयोध्या नगरमें एक ब्राह्मण कुमारकी अकाल मृत्यु हुई। वेचारा ब्राह्मण पुत्रशोकमें अघोर हो उस मृतपुत्रको छातीमें लगाये श्रीरामचन्द्रके पास आये और कहने लगे कि रामराज्यमें पाप नुस गया, नहीं तो कभी भी ऐसी घटना न होती। रघुनन्दन राम ब्राह्मणको शोकगाथा सुन कर बड़े दुःखित हुए और वशिष्ठादि ऋषि, ब्राह्मण, नेगमगण तथा मन्त्रिगणको ले कर इस विपत्तिका विचार करने बैठे। नारदने कहा, कि इस त्रेतायुगमें कोई मूर्ख शूद्र आपके राज्यमें तपस्या करता है, इसी कारण इस बालककी अकाल मृत्यु हुई है। अतएव आप इसका पता लगायें और उसे उपयुक्त दण्ड दें।

रामने अपने भाई लक्ष्मण और भरतके हाथ राज्य-शासनका भार सौंप दिया और आप पुष्पकविमान पर चढ़ इसका पता लगाने चले। विन्ध्यपर्वतके दक्षिण एक सरोवरके किनारे पहुंच कर देखा कि शम्बूक नामक एक शूद्र उग्र तपस्या कर रहा है। रामने उसके मुँहसे आत्मपरिचय पा कर अपना खड्ग निकाला और शूद्र तपस्वीका शिर धड़से अलग कर दिया। अनन्तर राज-घानो लौट कर उन्होंने राजसूय यज्ञ करनेके लक्ष्मण और भरतके साथ परामर्श किया। अश्वमेध यज्ञ आरम्भ हुआ। रामने लक्ष्मणके ऊपर यज्ञीय अश्वका रक्षा-भार अर्पण किया। भगवान् वाल्मीकि शिष्योंके साथ यज्ञ देखने आये। लवकुश भी उनके साथ थे। उन्होंने यज्ञ-स्थलमें रामायणका गान किया। रामचन्द्रजी गान सुन कर बड़े प्रसन्न हुए और उन्हें सुवर्णादि पारितोषिक देना चाहा। बालकोंने अपनेको ब्रह्मचारी बतला कर

वह उपहार प्रदत्त नहीं किया। इसके बाद जब राम चन्द्रको मान्दुन हुआ, कि ये दोनों कुमार सीताक गर्भ प्राप्त सम्मान हैं जब उन्होंने समाके मध्य श्रुतीको बुझा कर कहा, 'महर्षि वाल्मीकिके पास ज्ञानो और उनसे कहो, कि यदि सीता शुद्धचरित्रा हो, किसी प्रकारके पापन उनको हृदयमें भाष्य न किया हो, तो उनका स्वागत है। इस विषयमें महर्षिसे मो पूछना कि उनको क्या सम्मति है। साथ साथ सीताका भी मनोगत अभिजाप ज्ञान लेना।' राजाका आदेश पात ही दून वहाँसे चका और महामुनिके पास पहुँच कर उन्हें राजाका आदेश कह सुनाया। महर्षि वाल्मीकिने उत्तर दिया, 'महाराजसे कहना कि सीता भरो समामें शपथ करेगा, रामचन्द्रने मो समामें जितन महर्षि और राजे महाराजसे ये सबोंको यह बात सुन कर उस दिनके लिये दिया किया।

दूसरे दिन सबेरे रामचन्द्र मुनिगें, भग्याम्प राजे और समासदाके साथ यज्ञस्थलमें उपस्थित हुए। इसी समय सीतादेवी वाल्मीकिकी भनुपरिणतो हो कर समास्थलमें आई। महर्षिके सीताचरित्रका साधुवाद कोशल करने पर महाराज रामचन्द्रन परीक्षाके लिये सीताको बुलाया। द्विज कर्षेववसना कदवाभयो मुनिगो साताने शपथ ओड़ कर कहा, 'मैं यत्सुन्दर। यदि मैं कायमनोवाक्यस पतिकी मजाना करती रही हूँ, तो मुझे अपन यर्मि स्थान हो।' सीताके पातासप्रयत्नके बाद एक दिन महाकाकके साथ रामका कथापरुपण हुआ। इसी समय दुर्वासो शपथे यहाँ आय और रामचन्द्रसे मिलनेके लिये मन्त्रजापुष्टमें प्रयाग करने लगे। द्वार पर लक्ष्मण पहुँच गये। उन्होंने मुनियरका मोरत प्रवेश करमसे मना किया। इस पर मुनियर बड़े विषयके और उन्हें धाप देनेके लिये तैयार हो गये। मन तर मन्त्रजापुष्टमें प्रवेश कर मन्त्रमनं श्रुतिरके धानेकी खबर रामके द्रष्टे सुनाई। रामने इसलिये गृध्रविभ्रतिके अनुसार सलमण का परिषयाग किया। तत्सुसार लक्ष्मणके सत्पूत्रममें धारमबिसज्जन करने पर राम बड़े दुःखित हुए। अनंतर प्रयागके बचनसे उन्होंने मो सत्पूत्रसमें दूर कर महा प्रस्थान किया।

महामुनि वाल्मीकिने द्वाजानववध नामधय रामायण

महाकाव्यमें रामचरित जैसा वर्णन किया, वही रूपमें लिखा गया। उत्तरकाण्डको रामचन्द्रकी जीवनोका उप सहाय-भाग पौराणिक अद्विष्टताए विवक्षित है। राम जीवनकी ऐतिहासिकता युद्धकाण्डमें हो समाप्त हुई है। वे उदार, स्वार्थत्यागी, पितृभक्त, साहसी और अद्वितीय धीर थे। भारतवासी उन्हें पूर्ण प्रशन्नारावणका भवतार सम्झे हैं। रामायणके उत्तरकाण्डमें और इसके संवाचित अष्टमें, पद्मपुराणके पातासप्रयत्नमें, ब्रह्मपुराण में, देवामागयत धीमन्नागयत और महाभागवतमें तथा दूसरे दूसरे पुराणोंमें भी रामचन्द्रकी भवताररूपा लिखी है। विस्तार हो जानेके मयले यहाँ कुछ नहीं लिखा गया। शैला, रामायण, दुर्गा, वाल्मीकि आदि कई रच्ये।

जैनके निरुद्ध रामचन्द्र पद्य नामस परिचित हैं। य जैन तीर्थपुर पद्यमस भवयप सिध हैं। ६७८ ई०में रविपेल-रचित पद्मपुराणमें दूसरे प्रकारसे रामचरितका बणन किया है। जैन लोग रामचन्द्रकी किस दृष्टिसे ब्रह्मते हैं वह एक पद्मपुराणसे अच्छी तरह जाना जाता है। जैनोके पद्य वारपके पुन, सभमण भयत और शम्भुप्रभे नाह, सीताके स्वामी और रावणके मिहन्ता कहे जाये पर मो जैन रामका कीर्तिक्रमाप वाल्मीकि भयथा दि दू पौराणिक-वर्णित रामचन्द्रके साथ नहीं मिलता।

पुण्य और जैन पद्मपुराण रत्ना।

बौद्धपुराणमें तो रामचरित कुछ और प्रकारसे लिखा है। उसमें सीताको रामका बहन और लो बानो हा बतलाया है। रघुव और शैला रच्ये।

रामचन्द्र—द्वैगिरिके एक राजा तथा महादेवके मतीजा। हेमाद्रि इनके प्रधान मन्त्रा थे। इन्होंने १२६१ ले ले कर १३०३ ई० तक राज्य किया था। मारवराज्य उ रच्ये।

रामचन्द्र—१ गङ्गाद्वाराधिपति। २ रायपुरके कसबुकी पंजीय एक राजा। ये सिंहदेवके पुन और महाराजा पिराज हठिष्णुदेवके पिता थे। अद्यायतो (खट्टरी) नगण्य इनकी राजधानी थी।

रामचन्द्र—कई एक प्रयकारिक नाम। १ पद्यामृततर निष्णापून एक कवि। ये अयोध्याके रामचन्द्र नामसे परिचित थे। २ एक भासद्वारिक। पामनद्वय काया कट्टारकी रोकमें महेश्वरने इनका नामोन्मूल्य किया है।

ध्वनिरेचनके रचयिता । ४ अञ्जुनाथनरुद्रपलता, जनुनाच्चारिजात, तन्त्रचूडामणि, तन्त्रामृत, पुरश्च नदीपिका और सुभगाचरित्र आदि पुस्तकोंके प्रणेता । मितभाषिणी नामकी अविरोधप्रकाशटीकाके रचयिता । धानन्दलहरीकी टीकाके प्रणेता । ७ आर्याविज्ञप्ति नामक काव्यके रचयिता । ८ ईशावास्योपनिषद्ग्रहस्य-वृत्तिके रचयिता । ९ कार्त्तवीर्यादीपदानविक्रिके प्रणेता । १० काव्यप्रकाशसारके रचयिता । ११ कुण्डो-धेके प्रणेता । १२ कृष्णचिन्मय नामक अलङ्कारग्रन्थके प्रणेता । १३ ग्रहणप्रकाशिका नामक ज्योतिषग्रन्थके रचयिता । १४ चक्रदत्त नामक ग्रन्थ रसप्रदीप, रसेन्द्रचिन्ता-णि आदि ग्रन्थके प्रणेता । ये गुरुवंगीय थे । १५ चन्द्रोनामविचारणाके प्रणेता तथा लक्ष्मीपतिके शिष्य । १६ तिथिचूडामणिकामधेनु नामक ज्योतिषग्रन्थके रचयिता । १७ धर्माध्वबोधके प्रणेता । १८ निर्भयमीम नामक व्यायोगके प्रणेता तथा हेमचन्द्रके शिष्य । १९ रामपुरुषप्रार्थनामञ्जरीके रचयिता । ये आनन्दतीर्थके शिष्य थे । २० प्रणयामृतपञ्चाशकके प्रणेता । २१ प्रति-सारके रचयिता । २२ ध्याल्लयानन्द नामक मट्टि-काव्यके टीकाकर्त्ता । २३ भक्तुहरीशतकटीकाके रचयिता । २४ भोजचम्पूव्याख्याके प्रणेता । २५ मन्त्रमुक्तावलीके रचयिता । २६ मार्त्तण्डशतकके प्रणेता । २७ रघुवि-षय नामक नाटककार । ये जैनधर्मावलम्बी थे । २८ रामचन्द्र चतुःसूतीके रचयिता । २९ रामार्याके प्रणेता । ३० कृष्णमणीपरिणय नाटक और सरसकविकुलानन्द नामक भाणके रचयिता । ३१ वसन्तिका नामकी टिकाके प्रणेता । ३२ पाणिनिके अष्टाध्यायीके वृत्तिसंग्रह नामक टीकाके प्रणेता तथा नागोजीके शिष्य । ३३ वेङ्कट-ेश्वरचतुर्भद्रिकाके रचयिता । ३४ वैधचिन्तामणिके प्रणेता । ३५ शब्दार्णव नामक व्याकरणके रचयिता । ३६ शारीरकभाष्यकी टीकाके प्रणेता । ३७ शृङ्गारतिलक नामक भाणके टीकाकार । ३८ सांख्यसूत्रवृत्तिके रचयिता । ३९ सिंहासनवृत्तिसूत्रके प्रणेता । ४० चाग्-मण्य काव्य और उसकी टीका तथा हनुमदष्टकके रचयिता । ४१ तिथिनिर्णयसंग्रह या अनन्तभट्टदीपिका नामक अनन्तोपाध्यायकृत तिथिनिर्णयका एक संक्षिप्त

चिवरण, प्रक्रियाकौमुदी और वैष्णवसिद्धांतदीपिका आदि ग्रन्थोंके प्रणयनकर्त्ता । ये गोपाल आचार्यके छात्र थे । इनके पिताका नाम था कृष्ण और पितामहका नृहरि । ४२ राधाविनोदकाव्य और उसकी टीकाके रचयिता एक कवि । ये जनार्दनके पुत्र और पुरुषोत्तमके पौत्र थे । ४३ स्मृतिसारसप्रहरणव्याख्याके प्रणेता तथा नारायणके पौत्र । ४४ प्रत्याहारमण्डन नामक व्याकरणके प्रणेता तथा मुरारी पाठकके पुत्र । ४५ संख्यामुष्ट्यधिकरणा-क्षेपके प्रणेता । ग्रन्थकारने अपना अधिकरणकालके अंशस्वप्नमें यह पुस्तक लिखी । बम्बई प्रेसिडेन्सीके फोल्हापुरमें ये रहते थे । इनके पिताका नाम था वेङ्कट । ४६ एक प्रसिद्ध टीकाकार तथा सिद्धेश्वर योगिवरके पुत्र । इन्होंने १८१७ ई०में प्रतिज्ञासूत्र टीका तथा १८२८ ई०में वाजसनेयिप्रातिशाख्यकी ज्योत्स्ना नामकी टीका लिखी । इनकी उपाधि पण्डित थी । ४७ खेट-भूषण, पाटोलीलावतीभूषण, यन्त्राध्यायविवृति और खान-जातक नामक चार ज्योतिषग्रन्थके प्रणेता । ये हंसराजके पुत्र थे ।

रामचन्द्र—श्रीधर्ममंगलके प्रणेता एक वंगाली कवि ।

रामचन्द्र आचार्य—१ एक संन्यासी । संसाराश्रम त्याग करनेके बाद ये सत्यप्रियतीर्थ नामसे प्रसिद्ध हुए । १७४५ ई०में इनकी मृत्यु हुई । २ शारीरकभाष्यटीकाके प्रणेता ।

रामचन्द्र अलङ्कार - राजनीतिप्रकाश और सावधान साहित्य नामक वेदान्तग्रन्थके प्रणेता ।

रामचन्द्र कवि—१ ऐन्द्रतानन्द नाटक और कलानन्द-नाटकके प्रणेता । १७६५—१७८८ ई०में तजोरराज तुलाजीके आदेशसे इन्होंने उक्त दो नाटक लिखा ।

रामचन्द्र कविभारती—बुद्धशतकके रचयिता सिंहलवासी एक प्रसिद्ध कवि । पराक्रमबाहुके राज्यकालमें ये राष्ट्र-देशसे सिंहल चले गये ।

रामचन्द्र कविराज—एक विख्यात वैष्णव पदकर्त्ता । ये परम भागवत श्री चैतन्यसहचर चिरञ्जीव सेनके पुत्र, पदकर्त्ता गोविन्ददास कविराजके जेठे भाई और चिरञ्जीव श्रीखण्डवासी नरहरि सरकारके शिष्य थे । उनका घर कुमारनगरमें था । ये कवि दामोदरकी कन्या

सुनन्दासे व्याह कर भावद्वयवामो हुए थे। पहले उनके दो पुत्र वैशुक वासस्मि कुमारनगर चले गये; किन्तु शाकीके सताने पर वह देग छोड़ कर उन्होंने तेजिया-कुपरिमें आ कर घर बनाया।

रामचन्द्र कविराज नरोत्तम ठाकुरके सुहृद् और स्वयं सुप्रसिद्ध संस्कृतक कवि थे। पदकल्पलतिकामें इनका बनाया रंगबा पद मिलता है। इसका अज्ञाया स्मरण वर्णन और धगद्वय नामक उनके दो पद्यग्रन्थ हैं। उन्होंने सुकलित संस्कृत कविताओंकी रचना तो की सही, पर भावक समान प्रतिष्ठित न हो सके। १५३७ ई०में श्री अरुणमें गोविन्दका जन्म हुआ। अतएव इस समय उनको पिपमाननाको रचना का आ सकता है।

रामचन्द्र चित्रविपत्ति—दुर्गास्तयचन्द्रिकाके रचयिता।

रामचन्द्र गणेश—गणेशप्रह्लादविषयके रचयिता।

रामचन्द्र अरुवर्त्तो—१ कलापपरिशिष्टप्रबोधक प्रयेता।
२ वृत्तयाम्त्रिकाके प्रयेता। ३ पूज्यापनयमरुकी टीका क रचयिता।

रामचन्द्र अष्टोपाध्याय—एक प्रसिद्ध पदकर्ता। ये वीणा श्रिताकाव्यक प्रयेता यज्ञोवदनक पीठ और चैतन्यदास क पुत्र थे। १३३४ ई०में इन्होंने जन्मग्रन्थ किया तथा १६८१ ई०के माघ मासकी कृष्णपूर्णीया तिथिमें अमरक हुए। रामचन्द्र आह्लादादेशिक शिष्य थे और बुधुरीक निरुद्धर राघानगरमें तथा बाभपाड़ामें ध रहत थे।

रामचन्द्रार्थ—१ अष्टवर्त्तनाभ्युदयको रचयिता।
२ बासुदेश्यक शिष्य। इन्होंने दुर्गाप्रदपदरत्नटीका, महापावनरत्नवाचकी और वाक्यसुधाकी टीका लियो।
३ मध्यसम्राट्यक एक साधारण। इनका पूर्वनाम माधय शाली था। वागाशुतार्थके बाद इन्होंने साधारणका पद ग्रहण किया था। १३६७ ई०में इनको जीवन लोका धैर हुआ। सागण धर्म इनके गिण्यपरम्पराका विवरण लिखा है।

रामचन्द्रवृष्टिद्वन्द्व—त्रैमिनिप्लसका नामक त्रयोविद्यायके रचयिता।

रामचन्द्रशास—पद्याधनापृत कविविशय।

रामचन्द्र (द्विज)—१ दुर्गासूक्त, धर्मसूक्त और गीता-

बिनासके प्रयेता। २ त्रैमिनिमारुतके व गानुवाकक, तीन सौ वर्षके प्राचीन कवि।

रामचन्द्रशोभित—१ उपाधिमण्डिपीपिका और शम्भुभेष्ट निरूपण नामक अरुणकुरशाकके रचयिता। २ केल्ला मरण नामक भाणके प्रयेता।

रामचन्द्रशैव—उड़ीसाके एक हिंदू नरपति। उत्कल देखो।

रामचन्द्र न्यायवागोश—अभिधावावचिचार, भाससि-रहस्य, योग्यताचिचार, विरोधिचिचार और अम्बुनित्यता चिचारके प्रयेता।

रामचन्द्रप्रभ—एक महाराष्ट्र सेना-नायक तथा शिवजीके प्रधान मंत्रीके पुत्र। इन्होंने पहले मुझिमदार और पीछे मंत्रीका पद पाया था। दुर्ग पर चढ़ाई करनेमें, सनासचिधेशमें और युद्धप्रदमें इन्होंने अद्भुत कौशल दिखाया था। १३७१ ई०में शिवाजी द्वारा ये मसीपद्म स च्युत कर दिये गये। तदनन्तर जनार्दन पतिको मृत्युके बाद १६१८ ई०म पुनः उक्त पद पर प्रतिष्ठित हुए थे तथा इन्होंने विशालगढ़ आदि दुर्ग दख कर किया था।

रामचन्द्र परमहंस—वृत्तयिन्तु और राजयोगम धक प्रयेता।

रामचन्द्र पाठक—प्रत्याहारकवृत्त नामक व्याकरणके प्रयेता।

रामचन्द्रपुण्ड्र—१ मास्त्राजप्रदशके गोदापरी जिजाभसर्गत एक उपविभाग। मूपरिमाण ४०० वर्गमोड है। यह गोदापरी डेन्डा भूभाग के कर गठित है। २ उक्त तानुका प्रधान नगर और विचारसदर। इसके दक्षिण मरडपेडा बाल बहती है।

रामचन्द्र वाचस्पति—१ महिष्काव्यकी सुबोधिनी नामकी टीकाके प्रयेता। २ शैवीमाहुरात्म्यकी विद्वन्मनोरमा नाम की टीकाके शेषार्थ रचयिता। गीतौपर शर्मान उक्त टीकाका पूर्वार्थ सम्पादन किया।

रामचन्द्र वाचस्पेयी—रत्नपुरराज रामचन्द्रकी समामें स्थित एक परिवृत, सूर्यशासक पुत्र और शिष्यशासके पीठ। इन्होंने कर्मावधिना नामकी पद्यति, शाङ्खापन गृह्यावृत्ति, कात्यायनवृत्त शुद्धपरिशिष्टकी टीका, शुद्ध यासिक, समरसार तथा इसको टीका, समरसारसंमह,

कुण्डोक्ति और उसकी टीकाकी रचना की। १४८६ ई०-में शैशोक पुस्तक लिखी गई थी। आधानपद्धति, चयन-पद्धति, ज्योतिष्टोमपद्धति, राजपेयपद्धति और सुपर्ण-चित्तिपद्धति नामक छहप्रथम कर्मदीपिकाके अन्त-गंत हैं।

रामचन्द्र भट्ट—बहुतेरे संस्कृत-प्रथकार। १ आचारार्क, कालनिर्णयदीपिका, कृत्यरत्नावली, प्रायश्चित्तमुक्तावली, और श्राद्धचन्द्रिकाके प्रणेता। ये तरसत्वंशीय विट्टलके पुत्र और बालकृष्णके पौत्र थे। २ धर्मई-वासी एक प्रसिद्ध कवि। इन्होंने तैलङ्गराजके काङ्कडवाड गावमें १४८७ ई०में जन्म लिया था। ये लक्ष्मण भट्टके पुत्र और बल्लभाचार्यके छोटे भाई थे। इन्होंने गोपाललीला-काव्य, रामलोलाशतक, कृष्णकुन्तूलकाव्य (१५२० ई०-में) तथा रसिकरञ्जनकाव्य और उसकी टीका (१५२४ ई०में) अधोच्या नगरमें लिखी। ३ रामविनोदवारण या पञ्चाङ्गसाधनोदाहरणके प्रणेता। ये नीलकण्ठके छोटे भाई और अनन्त भट्टके पुत्र थे। १६१४ ई०में इन्होंने सुलतान अकबरके मन्त्री रामदासके आदेशसे उक्त ग्रन्थ लिखा। ४ स्मृतिसंस्काररहस्यके प्रणेता। ५ विधिवाद नामक मोर्मासाशास्त्रके रचयिता। ६ वात्स्यायनकृत न्यायसूत्रभाष्यकी टीकाके रचयिता। ७ तत्त्वाभरण नामक वेदान्त ग्रन्थके प्रणेता। ८ निम्बार्क सम्प्रदायके एक आचार्य। उपेन्द्रभट्टके वाड तथा वामन भट्टके पहले ये आचार्य पद पर अधिष्ठित हुए।

रामचन्द्र भट्टाचार्य—१ दशश्लोकोटीकाके रचयिता। २ समासवादके प्रणेता।

रामचन्द्रभट्टाचार्य सार्वभौम—प्रमाणरत्न, मौक्षेवाद और विधिवादके रचयिता।

रामचन्द्रभट्टाचार्य—वाग्भाषणकाव्य और उसकी टीका, सभ्याभरणकाव्य तथा मन्मथमाला नामकी सभ्याभरण-पञ्चिकाकी टीकाके प्रणेता।

रामचन्द्र मिश्र—विदग्धवैश्याकरणके प्रणेता।

रामचन्द्र मुन्सी—हुगली शहरके निकटस्थ देवानन्दपुर-निवासी विष्णुदास मुन्सीवंशके एक धनाढ्य कायस्थ। अनुमान होता है, कि १७२६ ई०में कवि भारतचन्द्र राय छोड़ कर उनके शरणपानने हुए थे। उन्होंने विशेष

यत्नके साथ भारतचन्द्रको पारसी भाषाकी शिक्षा दी थी। उन्हींके घरमें सत्यनारायण पूजा-उपलक्ष्यमें पंद्रह वर्षके बालक कवि भारतचन्द्रने 'सत्यपीरकी कथा' रचना कर पाठ किया था।

रामचन्द्रयञ्जन—शास्त्रसिद्धान्तेशुद्धी-प्रकाश और समयप्रकाशिका नामक ग्रन्थके प्रणेता।

रामचन्द्रयतीश्वर—बौद्धमतदूषण-ग्रन्थके प्रणेता।

रामचन्द्रराय—चन्द्रद्वीपके एक राजा। ये योगेश्वर प्रताप-दित्यके जामाता थे। प्रणपादित्य और गरभूषा देवों।

रामचन्द्रशर्मन्—तत्त्वचिन्तामणिदीधितिके टीकाकार।

रामचन्द्रशेप—भाष्यद्योतनिका नामकी नैपथीय टीकाके रचयिता शेषनारायणके शिष्य।

रामचन्द्र सरस्वती—१ अष्टोत्तरशतमहाकर्णिक और गीतातात्पर्यपरिशुद्धिके प्रणेता। २ कुक्षेत्रतोर्यनिर्णयके रचयिता। ३ पद्योजन नामक वेदास्तशास्त्रके प्रणेता।

४ शङ्कराचार्यकृत बालबोधिनिकी भाष्यप्रकाशिका नामकी टीकाके प्रणेता। ये नारायण पण्डितके छात्र तथा

रघुनाथके शिष्य थे। ५ गंगाधरकृत साराज्यसिद्धिकी टीकाके प्रणेता और कैवल्यकण्ठ-मन्त्र (१८२३ ई०में) के

प्रणेता गंगाधर सरस्वतीके गुरु।

रामचन्द्र सरस्वती—आसामदेशीय एक कवि। इन्होंने आसामी भाषामें महाभारत बनाया था।

रामचन्द्र सरस्वती यतीन्द्र—एक संन्यासी। इनका आवि नाम सत्यानन्द था। ये महाभाष्य-विचरणके प्रणेता ईश्वरानन्दके गुरु थे।

रामचन्द्र सिद्ध—सिद्धत्रय नामक योगशास्त्रके प्रणेता।

रामचन्द्र सूरि—वीरविक्रमादित्यचरितके प्रणेता।

रामचन्द्र सोमयाजी—समरसार और स्वरशास्त्रसारके रचयिता।

रामचन्द्राश्रम (सं० पु०) १ सिद्धान्तचन्द्रिका नामक सरस्वतीसूत्रकी टीकाके रचयिता। (बली०) २ एक तीर्थका नाम।

रामचन्द्रेन्द्र सरस्वती—एक प्रसिद्ध पण्डित। ये गंगाधरेन्द्र सरस्वती और आनन्दबोधेन्द्र सरस्वतीके गुरु थे।

रामचर (सं० पु०) बलराम।

रामचरण—एक एक प्रणयकार । १ कर्पू सिद्धास्तपञ्चरी
 नामक व्याकरणके प्रणेता । २ कुण्डरभौकप्रकाशिकाके
 रचयिता । ३ तर्पणधर्मश्रुति और पञ्चमधनुषाके
 प्रणेता । ४ वृत्तकीमुद्रिकी रचयिता । ५ सात्स प्रदेके
 प्रणेता ।

रामचरण—एक कवि । ये गणेशपुर जिला बाराबङ्गोके
 रहनेवाले ब्राह्मण थे । संस्कृत और भाषाके ये निपुण
 कवि थे । संस्कृतमें इनका बनाया "कायस्थधर्मदर्पण"
 नामक प्रथम भाषाके मी 'कायस्थधर्मदर्पण' नामक
 प्रथम एहोंने लिखा है । इनकी रचना ऐसी भीरु विषय
 प्रतिपादनके ढंग मनोज्ञे होते थे । भाषाकी कवितामें
 भद्रुप्रास लक्ष पाये जाते हैं ।

रामचरण्य तर्कवागीश—रामविद्यासकाव्य तथा साहित्य
 तर्कगणुषिके रचयिता । १७११ ई०में एहोंने शेषोक्त प्रथम
 बनाया ।

रामचरण्य महन्त—रामसनेही धर्मसंध्यायके प्रतिष्ठाता
 एक वैष्णव । ये बैरागी-सम्प्रदायके थे । १७११ ई०में
 जयपुरराज्यके अन्तर्गत एक बड़े गाँवमें इनका जन्म
 हुआ । एक भीरु कर्मी एहोंने पिताका धार्मिक धर्मकर्म
 छोड़, इसका कोर विवरण नहीं लिखा ।

एक समय एहोंने पौष्टिक उपासनाको निम्ननीय
 कह कर घोषित किया । इस पर देवमूर्तिपूजक ब्राह्मण-
 सम्प्रदाय बड़े विगड़े और इन पर तण्डुल तण्डुल भत्या-
 पार करने लगे । इस प्रकार मूर्तिपूजकोंसे तंग आ
 कर वे भाबिर १७५० ई०में अपनी सम्मूर्तिका परि-
 हार कर उदयपुर-राज्यके भीड़बाड़ा नगरमें बसे जाये
 और दो वर्ष बड़ा ठहरे । इससे बाद देवपूजक पुरोहित
 सम्प्रदायके एहें तंग करनेके लिये राणा भीमसिंह इको
 उभाड़ा ।

राणाके राज्यमें रहना असम्भव हो कर वे बहुत
 जन्म यहाँसे भागे । नाना स्थानोंमें भटक कर भाबिर
 १७५७ ई०में एहोंने शाहपुराके सरदारके राज्यप्राप्तके
 आश्रय लिया । किन्तु यहाँ भी वे कई कार्योंसे दो
 वर्षसे ज्यादा न ठहर सके । पदार्थमें उसी समयसे इन-
 के धर्ममतप्रचारका भार बढ़ा हुआ । १७६८ ई०को
 ३१ वर्षकी अवस्थामें ये इस लोकसे चले गये । इनकी

काथा जलार गढ़ और राज शाहपुराके प्रसिद्ध मन्दि-
 रको गढ़ है ।

रामचरण्य एक मत्त गायक थे । इनके बनाये हुए
 प्रायः ३६२५० मञ्ज भाङ्ग भी लिखे हैं । प्रत्येक मञ्ज
 ५से ११ पंक्तिका है । इनके तिरोपामके बाद इनके बाद
 शिष्योंने प्रथम शिष्य रामज्ञान सम्प्रदायके आचार्य
 हुए । १२ वर्ष गढ़ी पर बैठ कर ये इस लोकसे चले
 गये । उनका भी बनाये हुए प्रायः १८०० स्तोत्र वा पद-
 पाये जाते हैं । बुद्धराम १८२४ ई०में मृत्युकाठ पर्यन्त
 शाहपुरा मठक महन्त थे । उनका बनाये ७ हजार पद-
 वा ब्रह्मगीति हैं तथा ४ हजार कविताओंमें विभिन्न
 संप्रदायके साधुओंको जीयनी लिखी है । उनके बाद
 छत्रदास गढ़ी पर बैठे । १८३१ ई०में उनको मृत्यु हुई ।
 उन्होंने १००० पद लिखे थे । बुद्धका विषय है, कि वे
 सब पुस्तकाकारमें लिखिये नहीं हुए । अन्तर नाटयय
 दास १८५३ ई०में गढ़ी पर बैठ कर आचार्यका कार्य
 करते थे ।

रामचरित (सं० बन्दी) दशरथारमत्र रामचन्द्रकी
 जीवनी ।

रामचक्रिया (हि० स्त्री०) एक प्रकारका जल-पक्षी ।
 यह मछलियाँ पकड़ कर खाता है । इसे मछरंगा भी
 कहते हैं ।

रामच्छेदनक (सं० पु०) राम मनोकल्प छर्चपति छर्चि-
 ल्यु, कायें कन । मन्त्रबुद्ध, मैतफलका पेड़ ।

रामत्र (सं० पु०) रामपुत्र ।

रामजन्नी (सं० स्त्री०) रामस्य जन्नी । १ बलदेवकी
 माता । २ रामचन्द्रकी माता, कौशल्या । ३ ऐशुका ।

रामजना (हि० पु०) १ एक संकर जाति । इसको
 कन्याप वैश्या-वृत्ति करती है । कई बातोंमें यह जाति
 गन्धर्व जातिसे मिलती गुमयी है । लेकिन साधारणता
 उससे लोकी समझी जाती । इस जातिके लोग प्रायः
 राजपूताने, संयुक्तप्रान्त तथा बिहारमें पाये जाते हैं ।
 २ यह जिसके माता पिता न हो, वर्षसंकर ।

रामजनी (हि० स्त्री०) १ रामजना जातिकी स्त्री ।
 २ जिसके पिताका पता न हो । ३ वैश्या, रंडी ।

रामजपानी (सं० पु०) एक प्रकारका बहुत वारीक चावल ।

रामजयन्ती—देवीकी एक मूर्त्तिका नाम । इनकी पूजाका विचरण रामजयन्तीपूजाग्रंथमें लिखा है ।

रामजामुन (हि० पु०) मझोले आकारका एक प्रकारका जामुनका पेड़ । यह प्रायः सारे उत्तरो और पूर्वी भारत तथा बरमा और सिव्बलमें होता है । इसके फल बहुत बड़े बड़े और स्वादिष्ट होते हैं । इसकी लकड़ी यद्यपि साधारण जामुनकी लकड़ीके समान उत्तम नहीं होंती, तो भी इमारत तथा खेतके काममें आती है यह छोटी नदियोंके किनारे अधिकतर होता है ।

रामजित्—नवनीतनिघन्धके प्रणेता ।

रामजीवन (सं० पु०) राजा रुद्ररापके पुत्र ।

रामजीवन—सूर्यव्रतपाँचालीके रचयिता ।

रामजीवन तर्कवागीश—महिम्नःस्तवटोकाके रचयिता ।

रामजीवनपुर—बङ्गालके मेदिनीपुर जिलान्तर्गत धाटाल उपविभागका एक शहर । यह अक्षा० २२' ५० उ० तथा देशा० ८७' ३७' पू० के मध्य अवस्थित है । जनसंख्या दश हजारसे ऊपर होगी । १८७६ ई०में म्युनिसिपलिटि स्थापित हुई है ।

रामजीवनराय—नाटोर राजवंशके प्रतिष्ठाता और रघुनन्दनके बड़े भाई । १७०४ ई०में इन्होंने राजाकी उपाधि पाई थी । १७०६ ई०में दिल्लीश्वर बहादुरशाहने इन्हें राजा बहादुरकी उपाधि दे कर खिलअत दी । दोनों भाई अपने अपने उपार्जित राज्यका शासन करते थे । दोनोंके कोई सन्तान न रहनेके कारण रामजीवन की खीने गोद लिया था । राजवाही देखो ।

पदाङ्कूतके प्रणेता कृष्ण सार्वभौम १७२४ ई० में इनकी सभामें मौजूद थे ।

रामजीसेन—ज्योतिःश्लोकसञ्चयके प्रणेता ।

रामजी (हि० पु०) एक प्रकारकी जई । इसके दाने साधारण जौसे कुछ बड़े होते हैं ।

रामचोल (हि० ख्रा०) पाजेक, पायल ।

रामटेक—१ मध्यप्रदेशके नागपुर जिलेकी एक तहसील । यह अक्षा० २१' ५' से २१' ४४' उ० तथा देशा० ७८' ५५' से ७६' ३५' पू०के मध्य विस्तृत है । भू परिमाण ११२६

वर्गमील और जनसंख्या डेढ़ लाखसे ऊपर है । इसमें रामटेक और चाप नामक २ शहर और ४५१ ग्राम लगते हैं । सतपुरा पहाडके उत्तर इस तहसीलका कुछ अंश पर्वत और जंगलसे ढका है । दक्षिणभागकी जमीन उपजाऊ है । गेहूँ और कूई बहुतायतसे उपजती है ।

२ उक्त तहसीलका एक नगर । यह अक्षा० २१' २४' उ० तथा देशा० १६' २०' पू०के मध्य विस्तृत है । नागपुरसे इसकी दूरी १२ कोस है । जनसंख्या प्रायः ८७३२ है । म्युनिसिपलिटिके अधीन रहनेके कारण नगर बहुत साफ सुथरा है तथा दिनों दिन उन्नति कर रहा है । यह पर्वतके दक्षिणपादमूलमें अवस्थित है इससे यहाँका दृश्य देखने लायक है ।

यह स्थान दक्षिणात्यका एक पवित्र तीर्थस्थान समझा जाता है । यहाँ पर्वतके दोनों बगलमें हेमाडपन्थ के प्राचीन मन्दिर हैं । पर्वतके पश्चिम विषयात् रामचन्द्र जीका मन्दिर है । नगरके फाटके इस मन्दिरका शिखर बहुत ऊँचा है । मनसरसे जो रास्ता रामटेक होता हुआ अम्बाला गया है, उसके किनारे सूर्यवंशीय किसी राजाका दुर्गप्रामाद दिखाई देता है । वह रास्ता पर्वतके दक्षिण ओर घूम कर एक विस्तृत बांध तक चला गया है । रघुजी श्मने उस बांधको बुर्जा आदिसे मजबूत कर दिया था । उस बांधके मध्य अम्बाला नगर और हद है । हदके किनारे प्रत्येक सम्भ्रान्त महाराष्ट्र-वंशका निर्मित एक एक मन्दिर और घाट है । हदके पश्चिमी किनारेसे आध मील तक सीढ़ी चली गई है । इसी सीढ़ीसे आ कर यात्री लोग मन्दिरमें पूजा करते हैं । सीढ़ीके ऊपर दक्षिण पार्श्वमें एक विस्तृत बावली और धर्मशाला है उसके बाईं ओर नारायणकी नरसिंह मूर्त्तिसे प्रतिष्ठित दो प्राचीन मन्दिर हैं । इसके विपरीत दिशामें मुगल सम्राट् औरङ्गजेबके सभासद द्वारा निर्मित एक मसजिद है । यहाँसे कुछ सीढ़ी नीचे आने पर नगरके बहिर्द्वार पर पहुँचते हैं । इसके भीतरी भागमें नारायणमूर्त्ति प्रतिष्ठित कुछ मन्दिर हैं । वामभागमें परवारोंके कई देवमन्दिर देखनेमें आते हैं । कार्तिक मासमें हदके किनारे एक बड़ा मेला लगता है जिसमें लाखसे ऊपर आदमाँ इकट्ठे होते हैं ।

द्वितीय प्राचीरकी सीमामें जहां सिंहपुरदार भवस्थित है, वहां पहल मराठोंका शस्त्रागार था। यह भूमि मन्नावस्थामें पट्टा है और किसी स्तूप शीघ्र राजाका कारिण समझा जाता है। मीरजदारके बीच हो कर तृतीय प्राङ्गणमें आते हैं। इस स्थानका बुजुं और प्राकारदि मराठोंके पक्कसे उद्दिष्ट है। अन्तिम प्राङ्गणमें मन्दिर के साथै रहते हैं। इस प्राङ्गणमें गोकुल द्वार है। इस द्वारसे गणपति मीर हनुमानके बड़े मन्दिरमें जाना होता है। उसके पीछेमें एक शैलस्तूपके ऊपर राममन्दिर मन्दिर है। इस अन्तिम प्राङ्गणसे एक सीढी हो कर रामदेव मगदमें आते हैं। महाराष्ट्रशासिकों पहलो अन्तमें वहां हो बाघकी घों। जहलमें एक निखिल स्तूप, बाहिका स्तूप और एक अल्पवाह है।

रामदेवी (सं० स्त्री०) एक प्रकारकी रोगिणी। इसमें गांधार कोमल और शेष सब लव शुद्ध लगते हैं।

रामद (सं० स्त्री०) रम्यउपमेति रम (नेहृदिभ । उष्य ३।१०३) इति षड् गृह्यिष्य आतोः । १ दिग्यु, हींग । (पु०) २ अङ्गुठ पक्ष, अक्षोदका पेड़ । ३ इहसहिताके अनुसार एक देश जो पश्चिममें है । (इत्स्य १०।५) ४ उस देशका निवासी । ५ मदनकल मैनकल । ५ भया मार्ग विचङ्गा ।

रामडो (सं० स्त्री०) गह्यु, हींग ।

रामण (सं० पु०) १ गिरिनित्य, बकायन । २ तिन्युक्त, तैदूका पेड़ ।

रामण (सं० पु०) रामणक गोत्रमें उत्पन्न पुत्रय ।

रामणीयक (सं० स्त्री०) रामणीय पत्न्य भावः धर्म वा रामणीय (श्याक्वृत्स्मोत्तमाङ्गु । वा ५।१।२२) इति कुम् । १ रामणीयत्व, मनोहरता । (बि०) २ रामणीय सुन्दर ।

रामतन्त्री (सं० स्त्री०) रामा मनोहरा तन्त्रीय । १ तन्त्रीय पुष्य, सेवती । २ साता स्त्री ।

रामतरोह (दि० स्त्री०) मित्रो नामक कथी जिसकी तरकारी बनता है ।

रामतर्बागोश—एक प्रसिद्ध घेवाकरण तथा मुग्धघोषक टोकाकार ।

रामठ (सं० स्त्री०) रामक गुण्य, राम पत्र ।

रामतापमोय (सं० स्त्री०) एक उपनिषद्का नाम। यह प्राचीन उपनिषदोंमें नहीं है बल्कि एक साम्प्रदायिक पुस्तक है।

रामतारक (सं० पु०) रत्नत्रोटा मन्त्र जो रामोपासक लोग जपते हैं। प्रथा है, कि जो लोग काशमें मरते हैं उन्हें शिवजी इसी मन्त्रका उपदेश करते हैं जिसके प्रभावमें उनकी मुक्ति हो जाता है। यह मन्त्र इस प्रकार है,—रां रामाय ममः ।

रामतारण चूडामण्यि—माधुरी नामक गीतगीतियम् टोकाक प्रमेता ।

रामतिल (सं० पु०) एक प्रकारका तिल ।

रामतीर्थ—मैत्रु पत्तिपदाधिकारक रचयिता ।

रामतीर्थ—हिन्दू का एक तीर्थ । रामतीर्थमाहात्म्यमें इसका विशेष विवरण लिखा है। रामदेव देखो ।

रामतीर्थ यति—पद्मोज्ज्वला नामकी उपदेशसाहस्रिकी डाका, सुरेश्वरकृत मानसोत्तमवृत्ततिलकानामक टोका, चस्तुतकप्रकाशिका, पाषाणार्थ रूप्य और विद्वन्मनोरञ्जिनी नामकी वद्वान्तसारटोका, संक्षुपशाणेरकष्याख्या और स्तुतिरत्न टोका भादि प्रयोगे रचयिता । ये कृष्णतीर्थके पुत्र और शिष्य तथा पुत्रयोत्तम मिथके गुरु थे ।

रामतुन्डी (सं० स्त्री०) रामतुलसी देवा ।

रामतत्रपात (दि० पु०) तत्रपात जगत्तिका एक प्रकारका युद्ध। यह पूर्वी बंगाल, इत्या और अहमन बापू में अधिकतासे होता है। इसके पक्षोंका व्यवहार तत्रपक्षके समान होता है और एकट्टी सङ्घ तथा तक्षके भादि बनायेके काममें आती है।

रामतोषण शर्मा—प्रापतोषिणीतम्बके सङ्ग्रहयिता । इन्होंने १८२१ ई० में ऋष्यदहवासी बिक्रपात चली प्रापहृष्य विभासके उद्योगसे यह पुस्तक संकलन की ।

रामतप (सं० स्त्री०) रामका भाव वा धर्म, रामता

रामदत्त—मिथिलाराज शुद्धिक मन्त्रा । ये पौड्य महा दानपत्रनिक प्रमेता भापशर्माक प्रतिपादक थे ।

रामदत्त—मदनवाह गणकमूपजटोका मकरन्दसारिणी, मुद्गर्षमूपजटोका लम्बादा, लघुज्जातटोका, मायाव त दिण्य, भोपतिपदादिका, पौड्ययोगटोका, समरसार

टीका और सहस्रचन्द्रिका आदि ज्योतिषग्रन्थोंके प्रणेता ।
२ गीतगोविन्दटीकाके रचयिता । ३ पाण्डुसुधामर्दन
के प्रणेता । ४ विवाहपद्धतिके प्रणेता । ये मिथिला
राजमंत्रोंके पौत्र थे ।

रामदास (मंत्री) — मिथिलाराजमन्त्री । यज्ञवेदोप-
नयनपद्धतिके प्रणेता । ये विश्वेश्वरके भतीजा और
गणेश्वरके पुत्र थे ।

रामदास—१ लौकिकन्यायसंग्रहके प्रणेता, रघुनाथ
वर्माके गुरु । २ ज्योतिषोक्त 'करणग्रन्थ'के प्रणेता ।
३ वृत्तिचन्द्रिकाके रचयिता ।

रामदल (सं० पु०) १ रामचन्द्रजीकी वंदरोंवाली सेना,
जिसके नाँचे लिखे १८ मुख्य यूथप थे,—१ लक्ष्मण,
सुग्रीव, नील, नल, सुखेन, जाम्बवन्त, हनुमान, अंगद,
कंगरी, गवय, गवाक्ष, गज, विभीषण, द्विविद, तार, कुमुद,
शरभ और दधिमुख । २ फौई बड़ी और प्रबल सेना जिसका
मुकाबला करना कठिन हो ।

रामदाना (हि० पु०) १ मरसे या चौलाईकी जातिका
एक गोध्रा । इसमें सफेद रंगके एक प्रकारके बहुत छोटे
छोटे दाने लगते हैं । ये दाने कई प्रकारसे खाये जाते
हैं और इनकी गिनती फलहारमें होती है । पहाड़ों-
में यह वैशाख जेठमें बोया और कुआरमें तैयार हो जाता
है लेकिन उत्तरी, पश्चिमी तथा मध्यभारतमें यह जाड़ेके
दिनोंमें भी होता है । कहीं कहीं बागोंमें भी शोभाके लिये
इसके पौधे लगाये जाते हैं । २ एक प्रकारका धान ।

रामदीन त्रिपाठी—एक मीया कवि । ये टिकमा पुर जिला
कानपुरके रहनेवाले थे । ये अच्छे कवि थे । महाकवि
मतिरामके वंशज थे । चरखारोके राजा रतनसिंहके
यहाँ ये प्रायः रहते थे । एक बार राजा रतनसिंहकी सभा
में ये बैठे थे, उस समय और भी जागीरदार सरदार,
कवि आदि दरबारमें उपस्थित थे । राजा रतनसिंहकी
स्वयं उपस्थितिमें इन्होंने अपनी ओर राजाकी विरक्ति बख
कर कहा,—

“जा बाँधी लक्ष्मण ज हृदयवाहि जगतेश ।

परिपाटी छूटे नहीं महाराजा रतनेश ॥”

रामदास (सं० पु०) १ हनुमान । २ एक प्रकारका धान ।

रामदास—१ सुलतान अकबरके मंत्री । इनके आश्रयमें

रह कर पण्डितवर रामचन्द्रने १६२४ ई०में 'रामविनोद
करण' लिखा था । २ एक कवि । ३ अर्घ्यादीपकके
प्रणेता । ४ कात'लव्याख्यासारके रचयिता । उज्ज्वल-
वत्त और रायमुकुटने इनका उल्लेख किया है । ५ भीम-
रूपिस्तोत्रके प्रणेता । ६ रासमञ्जरीके रचयिता । ७ राम-
सेतुप्रदीपके रचयिता । ये उदयराजके पुत्र और चण्डी-
रायके पौत्र थे और अकबरकी सभामें रहते थे । ७ मुहूर्त
गणपतिके प्रणेता ।

रामदास—पञ्जाबप्रदेशके अमृतसर जिलान्तर्गत अजनला
तहसीलका एक नगर । यह अक्षा ३१° ५८' ३०
तथा देशा० ७४° ५८' ५०के मध्य अवस्थित है । सिखगुरु
बाबा नानकके प्रिय शिष्य बाधाने इस नगरको बसाया ।
पीछे गुरु रामदासके नामानुसार यह प्रसिद्ध हुआ ।
यहाँ एक सुन्दर सिखामन्दिर है ।

रामदास—सिख सम्प्रदायके चतुर्थ गुरु । १५७४ ई०में
तृतीय गुरु अमरदासके मरने पर उनके जमाई रामदास
गुरुपद पर बैठे । लाहौरमें इनका जन्म हुआ था ।
दारिद्र्यवशतः उनके मातापिता स्वदेशका परित्याग कर
गोविन्दवालमें आ कर बस गये थे । वे लोग सोधि-
शाखाभुक्त छत्रि थे ।

यहाँ रामदास अनाजकी खरीद बिक्री करके पिता-
माताका पालनपोषण करते थे । उनकी कार्यतत्परता
और बुद्धि देख कर उनके मालिक चमत्कृत हो गये थे ।
वे शान्त, निर्विरोध, दयावान्, धार्मिक, उचितवक्ता,
चाभी और उद्यमशील थे ।

जब अमरदासने अपने नाम पर बड़ी बाघलीकी
प्रतिष्ठा की उस समय बहुतसे लोग वह स्थान देखने आये
थे । बालक रामदास भी उनमेंसे एक थे । अमरदासकी
कन्या मोहिनी युवकके रूप पर मोहित हो गई और
आखिर दोनोंमें विवाह हो गया ।

खरीदबिक्रीमें लगे रहने पर भी इन्होंने पढ़ना लिखना
छोड़ा नहीं था । कविता बनानेकी इनमें अद्भुत शक्ति
थी । सिखोंके ग्रन्थमें यह अपना धर्ममत कवितामें प्रकट
कर गये हैं ।

इनके समय सिख-सम्प्रदायने अच्छी उन्नति की थी ।
शिष्योंके दिये हुए उपहारसे वे राजाकी डाटवाटमें

रहते थे। साहोर नगरमें एक समय इनके साथ मुयम सप्राद् मकबरकाहकी मुभाकात हुए। सप्राद्मै इनकी उच्चसिद्धा और विद्यायत्तासे प्रसन्न हो इन्हें कुछ जमीन प्रदान की थी। यह जमीन गोसाकार थी, इस कारण भागे षड कर 'चक्र रामदास' नामसे प्रसिद्ध हुए। उस भूमिके मध्यमें एक प्राचीन पुष्करिणी था जिसका सम्बन्धसे संस्कार कर इन्होंने 'अमृतसर' नाम रखा। उसमें ठीक बीचमें इन्होंने हरमन्दिर (हरिमन्दिर) भी बनवा दिया था।

पुष्करिणीके तट पर फकीरोंके रहने लिये छोटी छोटी कुटो और मन्दिर भी थे। उनके शिष्य और अनुचर यहाँ आ कर रहते थे। इस समय इस नगरका नाम था 'गुरुका थक' 'पोछे' इन्होंने इसका नाम बदल कर 'अमृतसर' रखा।

एक बार साहोर नगरमें सप्राद् मकबर दूधबद्धक साथ बहुत दिनों तक ठहरे थे। उससे जापगार्थका मोक्ष दूना बड़ गया। रामदासने सप्राद्से मिल कर कहा था कि यदि आप यहाँस जेमा उठा छे जाय तो मनासका मोक्ष कम हो सकता है, नहीं तो बेचारे प्रजाकी जाल पर बोलगो। आपको यह भी उचित है, कि गरीब प्रजाका कजाना एक वर्षका माफ कर दें। सप्राद्ने सिद्ध-गुरुकी दया और सहायुमूर्तिकी बात सुन कर इसा समय एक वर्षका कजाना माफ कर दिया।

अब उनको इस इच्छा और दयालुताकी बात चारों ओर फैली, तब सभी सिद्ध-गुरुक प्रति आकृष्ट हो गये थे। यहाँ तक, कि जाट और भण्णाय सरदारोंने उनके बसमें शामिल हो कर उनका यश और शक्ति बढ़ानेका यथासाम्य बंधा की। अमृतसर नगर स्थापन करके वे साधो सिद्ध-जातिकी उन्नति-केन्द्र स्थिर कर गये हैं। यहाँ सिद्धसम्प्रदायने धर्मार्थ इच्छे हो कर ज़ातीय परकता की मुद्द करनेका प्रयत्न किया था।

भरदासकी कन्याक गमस इनके तीन पुत्र हुए। बड़े महादेव फकीर हुए थे, मन्थले पुण्योदासन संसारभ्रमका अवलम्बन किया और छोटे मधुनमल गरीब पर बैठे। इस समयसे सिद्धोंका गुरुपद पंशगत हो गया। वे लोग इन गुरुकी परमाज्ञा पारितिक मङ्गल

के उपदेश समझ कर उनकी पूजा करने लगे सी नहीं। उन्हें मर्यादागुरुके प्रभु और बुद्धोंके शासनकारी राजा भी समझते थे। भागे चल कर गुरुको अधिनायकतामें परिष्कृत सिद्धसिद्धित्री जो इतनी उन्नति हुए थी इसका कारण पढ़ी था।

१५८६ ई०के मार्च मासमें रामदास परलोक सिधारे। विद्याशा नदीके किनारे उनकी स्मृतिरसाके लिये समाधि मन्दिर बनाया गया उनके ज्योतेजो १५८१ ई०में मनुज न गरी पर बैठे थे। बाळक मधुन पिताकी तरह फकीरों पोशाक नहीं पहनते, पितामाताके सामने राजपुत्रके जैसा परिष्कृत पहनते थे। धोड़े, हाथी भादि राजकीय बखकी रक्षा करते इन्होंने यथाार्थम सिद्धसम्प्रदायकी प्रतिष्ठाता भाष्योन्नत किया था।

रामदास केवर्ष—'भगवदिमङ्गल' नामक धर्मकाव्यके रचयिता एक बंगाली कवि। ये १६६९ ई०में विद्यमान थे। इनके पिताका नाम प्युनम्य भावक था। वे दक्षिणपट्टीय कैवलयेशीश्रय थे। इनका पूर्वनिवास हुयजो मिथीके भारामबाग धानके अधोन हायतपुर नाममें था। पोछे उसी धानके अर्धगत वाङ्गाग्राममें आ कर बस गये।

रामदास हीसिद्ध—प्रबोधसमूहोदयप्रकाशके प्रणेता थे। विनायक मङ्गके पुत्र थे।

रामदास मित्र—रासबिखासके रचयिता।

रामदाससाधु—गुरुपतके द्वारकाबासो ९६ साधु। यह एक निष्ठावान् वैष्णव थे। एकादशीव्रतपरायण हो ये यहाँके रणछोड़छोक मन्दिरमें प्रति एकादशीकी रातकी जग कर हरिगुणकीर्तन करते थे। दयाबन्ध्यामें विविध रोषेन इन पर आक्रमण किया जिससे हरिगुणगान करनेकी विलङ्घन शक्ति न रही। इस कारण बड़े मानसिक कष्टस समय बिताने छगे। यह देख भगवान्की दया भाइ। इन्होंने रामदाससे कहा, कि मुझारे यहाँ आनेकी कीड उबरत नहीं। मुझे अपने घर छे बजो, यही मैं सुनसे रहू गा।

प्रमुका भावेन पा कर रामदास मन्दिरके पिछले दरवाज पर गाड़ी बाये और उसी पर शेषोमूर्तिकी विद्या बड़ी तजोस छे चले। पुझारी मन्दिरमें आ कर देवमूर्तिकी न देव विस्मित हो गया। यह बात विज्ञानके समान तमाम फैल गई। इसा समय एक भावेनी आ कर

कहा, कि कोई वैरागी गाड़ी पर चढ़ा कर मूर्त्तिको ले जा रहा है। सबोंने गाड़ीका पीछा किया और रामदासको दूरमें देख पाया। किन्तु रामदासने प्रभुके कथनानुसार उस प्रस्तरकी मूर्त्तिको तुर्ग निकटस्थ पुष्करिणीमें गाड़ दिया। पुजारी लोगोंने दूरसे देख लिया और रामदासके पास आ कर उन्हें ग्यूस पीटा जिससे शरीरमे रक्त बहने लगा। अनन्तर जलमेंसे मूर्त्ति निकालने पर उन्होंने देखा, कि देवशरीरसे भी रुधिरधारा बह रही है। यह देख वे सबके सब अत्राक् हो रहे और रामदासके चरणोंमें गिर कर क्षमा मागने लगे। देवमूर्त्ति भी उन्होंने रामदासको लौटा दी थी। (भक्तमाल)

रामदास सेन—बहरमपुरवासी एक कायस्थ जमींदार। इनके पितामह दीवान कृष्णकान्त सेन मुर्शिदाबाद जिलेके एक गण्यमान्य व्यक्ति थे। पिता लालमोहन सेन विशेष विद्योत्साही और दयालु व्यक्ति थे। बङ्गालाभाषा और बङ्गला-साहित्यविषयक प्रबन्ध लेखक पण्डित रामगति न्यायरत्न इनके पारिवारिक पुस्तकालयसे बहुत सहायता पाते थे। रामदास बचपने पिताके यत्नसे उक्त पण्डित-प्रवरके निकट उपयुक्त शिक्षा पाई थी। पढ़ना समाप्त कर वे पैतृक पुस्तकालयसे पौराणिक ग्रन्थ और पाश्चात्य जगत्में आविष्कृत भारतीय प्रतनतत्वविषयक ग्रन्थ पढ़ने लगे। इस प्रकार थोड़े ही समयमें वे बहुदर्शी हो गये। इस समय पण्डित रामगति न्यायरत्नको अपने पुस्तक संकलन-कार्यमें रामदास बचपसे बहुत सहायता मिली थी।

रामदास बहुत विनयी, निरहङ्कार, प्रियभाषी और धार्मिक थे। विद्यानुशीलन ही उनका एकमात्र लक्ष्य था। उन्होंने विलापतरङ्ग, कवितालहरी और कवता कलाप नामक तीन पद्यपुस्तकोंकी रचना की। वे सर्वदा प्रधान सामयिक पत्रोंमें खरचित प्रबन्ध लिखा करते थे। वे अपने पुस्तकालयकी बहुत उत्पत्ति कर गये हैं। उस समयके सम्स्कृत और बङ्गलाके जितने ग्रंथ मिलते थे वही उस पुस्तकालयमें रखे जाते थे।

रामदास बचपने गद्यपणाका फल प्रबंधकी तौर पर दर्शनपत्रिकामें निकाला करते थे। कुल प्रबंध लिखे जाने पर वह 'ऐतिहासिक रहस्य' नामसे प्रकाशित हुआ।

इसके सिवा उन्होंने 'रत्नरहस्य' और 'भारतीय रहस्य' नामक प्राचीन भारतके कुछ शातय्य विषय विभिन्न प्रबंधमें रच कर उन्हें पुस्तकाकारमें प्रचार किया।

रामदास बचपने अंगरेजीका भी अच्छा ज्ञान था। लण्डन नगरकी Oriental Congress समारंभ ३० मोक्ष-मूठरने रामदास बचपने ऐतिहासिक रहस्य तथा Antiquary पत्रिकामें उनके लिखे प्रबंधादिकी बड़ी प्रशंसा की है।

इनका बौद्धधर्मप्रतनतत्त्वान्वेषण नामक प्रबन्ध पढ़ कर नेशनल मैगजिन पत्रिकाके सम्पादकने उनकी गभीर अनुसन्धितसाक्षात् उल्लेख किया है। वे एशियाटिक सोसाइटी, एशियाटिकल चरल सोसाइटी आब एण्डिया, सस्कृत टेबल्ट सोसाइटी आब लण्डन, ओरियेंटल कांफ्रेस और फ्लोरेंसके एकाडेमिया ओरियेंटल आदिके सभासभ्य हुए थे।

इनका जन्म १२५२ सालकी २६वीं अगहन और देहान्त १२६५ सालकी ३री भाद्रकी हुआ था। उनके अन्तिम ग्रन्थ 'बुद्धदेव' का छपना आरम्भ ही हुआ था, कि वे इस लोकासे चल बसे।

रामदास स्वामी (समर्थ रामदास)—दाक्षिणात्यके एक विख्यात स्वदेशहितैषी, धर्मप्रचारक और ग्रंथकार।

१५३० शक (१६०८ ई०) में रामनवमीके दिन गोदावरी तीरस्थ जम्बूक्षेत्रमें जन्मदिनगोत्रीय ब्राह्मणवंशमें रामदास स्वामीने जन्मग्रहण किया। इनके पिताका नाम सूर्यजि पन्त और माताका राणुबाई था। नारायण इनका आवि नाम था। जब इनकी उमर बहुत ही थोड़ी थी, तभी इनके पिताका देहांत हुआ। अतएव संसारका भार राणुबाईको लेना पड़ा। नारायण परम रामभक्त हुए। लोग कहते हैं, कि जब वे आठ वर्षके थे, उस समय भगवान् श्रीरामचंद्रने मनोहर वेशमें उन्हें दर्शन दे कर कहा था, 'धर्मकी बुद्धिशा हो गई है तथा शास्त्र लोप होता जा रहा है, अतएव तुम कृष्णानदीके किनारे जा कर धर्मका पुनः स्थापन करो और म्लेच्छको दमन करनेके लिये शिवाजीको मदद दो।' उसी समयसे वे 'रामदास' नामसे प्रसिद्ध हुए। धीरे धीरे उनके वैराग्योदय हुआ। राणुबाई यह देख कर उनके विवाह-

का बर्णन करने लगी; कि तु रामदास विवाह करनेको राजी न हुए। भाँपिर बहुत समझने युक्ताने पर उनका मन पकड़ गया। विवाहका दिन स्थिर हुआ। विवाह में मज्जापाक पकृत समय पुरोहितने रामदासको यह बड़ा सावधानीसे उच्चारण करने कहा। रामदासने पूछा, 'रसका मर्म क्या'। शिष्य तुम्हारा मज्जा करै,' पुरोहित बोले। 'तुम सावधान हो जाओ। आज तक भक्तमां था, अभी तक बच्चा मारो बोध तुम पर रखा जाता है।' यह यह सुनते हो रामदास समापकपत्र माने। कहाँ गये उस दिन कोई भी पता न लगा सका।

रामदास भाग कर नासिक जिलेके अस्तगत ताकड़ी नामक स्थानमें गये। वहाँ एक पर्वतकी गुहामें उपासना करने लगे। वे दो पहर तक पुरस्चरण करते और बाण पञ्चबटा जा मोक्ष मांग कर शापक भाँदि जाते थे। रसाह तप्यार होने पर पहले श्रीरामचन्द्रजीको निवेदन करते पीछे भाग जाते थे। उनका अवशिष्ट समय व्याख्या, भजन और कीर्तन करनेमें व्यतीत होता था। यहाँ उदय नामक एक बालक उनका शिष्य हो गया। यहाँ उन्होंने द्वादशवर्षभ्यापे पुरस्चरण ठान दिया। समाप्तिके कुछ पहले आरामचन्द्रन उन्हे दर्शन दिए और वे बोले, पहलको बात याद करो, छुपना कदाक दिनारे शिवाजीकी सहायतामें तुम्हें जाना होगा, अब पुरस्चरण समाप्त हुआ, अब रामदास तोर्यपर्यन्तको निकले। सारे भारतवर्ष और सिंहलद्वीप हाते हुए पञ्चबटो साठ। वहाँ वहाँ वे गये वहाँ उन्होंने धर्मव्याख्या का और कहीं भा रामचन्द्र तथा हनुमानकी मूर्ति स्थापित कर हिन्दूधर्म का प्रचार किया इसके बाद वे अम्बुल्ले गये और अपना माता तथा बच्चा भाँसि निकले। उनका जन्मपदुषाण्ट सुन कर वे सब बड़े प्रसन्न हुए। पीछे रामदास उदयको ले कर कम्पानकी ओर बढ़े। १५५३ शक (१३३४ ई०)-में रामदास स्वामी पधुपरासे चले। वहाँमें कुछ प्रसिद्ध तार्किकानोंको दर्शन करत हुए वे माडुको पकड़ कर और यहाँ कुछ समय तक ठहरे। यहाँ दिनमें वे स्थान और पूजा करत तथा पठका अरावहा नामक पर्वत पर जा कर भगवान्के ध्यानमें निमग्न रहत थे।

इस प्रकार नाना धर्मों, गिरिगुहाओं और नदीके

किनारे ध्यानचारणमें वे जीवन बिताने लगे। इस समय शिवाजी रायगडमें रहते थे। रामदास स्वामीकी सुख्याति उनके कानोंमें पहुँचा। इन साधु पुरुषको देखनेको इनकी बड़ी इच्छा हुई। अतः उनके दर्शनके लिये वे चापड़ा नामक स्थानमें भाये। इस समय चापड़ा के देवमन्दिरेमें भूषणरत्नकी कथा होती थी। शिवाजीने समझा था, कि स्वामीजी यहाँ पर होंगे, पर उन्हे वहाँम नहीं हुए, वे वहाँ गे नहीं। जो कुछ हो, राजा धूम बरिखको कथा सुनने लगे। शिवाजीको विश्वास हुआ, कि सब गुरुसे अब तक मंत्र न लिया भाय, अब तक धर्मसाधन हाँ ही नहीं सक्रत। तभीसे वे बहुत व्याकुल हो गये, मनमें अरा मो शांति नहीं। कथा समाप्त होने पर वे चापड़से प्रतापगड भाये। यहाँ महिषमर्दिनी देवीका एक मन्दिर है। मन्दिरेमें देवीके सामने वे छोड़ रहे और किसी साधुपुरुषके शरणागत होनेके लिये प्रार्थना करते लगे। इसी अवस्थामें उन्हें नींद आ गई। स्वप्नमें उन्होंने देखा, कि देवी उनसे कह रही है, कि रामदास स्वामीके निकट जानसे उनका मनोरथ सिद्ध होगा। देवीने यह कहा कि उन्हींका उपकार करनेके लिये वे महापुरुष धराधाममें भवतार्ण हुए हैं। शिवाजी सपेरे उठ कर फिरसे चापड़ा गये। इसबार भी स्वामीजीका पता न लगा। वे पुनः प्रतापगड जाँटे, पर उनके मनमें अरा मो शान्त नहीं। मिथ मिथ स्थानमें उन्होंने व्यादमी भन्ना, पर कोर ना स्वामीजीका पता न लगा सका। शिवाजीन फिरसे देवीके सामने जरना दिया। कुछ समय बाद उन्हें मित्रा भाई। पीछे स्वप्नमें देखा, कि एक महा पुरुष उनके मस्तक पर हाथ रख कर आशीर्वाद देते हुए कह रहे हैं, 'वरस। मेरा निवास गोवापरीके किनारे है, किन्तु तुम्हारे कल्याणके लिये मैं देवताके आदेशसे कल्पना नहीं किनारे ठहरा हू। मुझे धाये यहाँ बहुत दिन हुए, पर तुमन कोर पकर न का। जो कुछ हो, मैंने सुना है, कि देवताके प्रति तुम्हें भक्तता भक्ति है। अभी तुम्हारा कर्तव्य यह कि जिस प्रकार पञ्चकाम करत हो उसी प्रकार करो; किन्तु धर्मक प्रति वृष्टि रहो। अभी आर्धधर्मोका धति होनापस्था है। जिससे उसकी उन्नति हाँ उस मोर विद्येय ध्यान रखना होगा।' इतना कह कर

महापुरुष अन्तर्हित हो गये। निद्रा टूटने पर शिवाजी स्वप्नका हाल मन ही मन सोचने लगे। उन्होंने समझा कि यही महापुरुष रामदास स्वामी हैं। इसके बाद वे स्वामीकी खोजमें निकले। आखिर चापडके देवमंदिरमें ही उनके दर्शन हुए। बहुत सोच विचारके बाद शिवाजीने स्वामीजीसे मंत्रप्रहण किया। इस उपलक्षमें स्वामीजीने आध्यात्मिक धर्मके सम्बन्धमें राजाको अनेक उपदेश दिये। इसके बाद शिवाजी रामदास स्वामीसे आजीर्वाद् ले कर प्रतापगढ़ लौटे।

रामदासस्वामीके साथ शिवाजीके प्रथम साक्षात्के सम्बन्धमें एक और प्रवाद इस प्रकार है—एक दिन राजा शिवाजी आखेटको बाहर निकले। आखेट करते करते जहाँ स्वामीजी रहते थे वहाँ आ पहुँचे। गरका शब्द सुन कर सभी पशुपक्षीने स्वामीजीका आश्रय लिया था। उन्हीं पशु पक्षीका पीछा करते हुए शिवाजी स्वामीके पास आये थे। यहाँ वे क्या देखते हैं, कि महापुरुष ध्यान में मग्न हैं और पशुपक्षी पास ही खड़े हैं। यह दृश्य देख कर उनके मनमें वैराग्यका उदय हो आया। वे अपनेको धिक्कारते हुए कहने लगे, 'हाय मैं कैसा अधम हूँ! मैं इन निर्दोष पशुपक्षियोंका वध करनेके लिये उतारू हूँ। मेरे जैसा पाखंडको देख कर इन सबोंने डरके मारे स्वामीजीकी शरण ली है। राजा स्वामीजीके सामने कुछ समय खड़े रहे। किन्तु जब उनका ध्यान नहीं टूटा, तब वे यहाँसे चल दिये। नदीके किनारे आ कर उन्होंने देखा, कि कितावके कुछ पन्ने जलमें बह रहे हैं। वे कुछ पन्नोंको ले कर पढ़ने लगे। जितना ही वे पढ़ते गये उतना ही उनका आनन्द बढ़ता गया। वे सब पन्ने श्लोक, अष्टम और अमङ्गल परिपूर्ण थे। वह श्लोक और सङ्गीत पढ़ कर उच्चमावने उनके मनको ऐसा ह्योहित कर डाला कि उनकी दोनों आँखोंसे प्रेमधारा बहने लगी। राजा इन सब पत्रोंको ले कर अपनी राजधानी सातारा चले गये। वहाँ उन्होंने एक लेखकसे उन सूत्र-पत्रोंमें लिखित श्लोक और सङ्गीत अच्छी तरह लिखवा लिये। तबसे वे रोज कृष्णा नदीके किनारे जाते और जो कुछ पत्र मिलते उन्हें ले कर घर लौटते थे। यहाँ उनके श्लोक और सङ्गीत वे स्वयं दूसरे कागज पर

लिख लेते थे। सध्याकालमें उसे पढ़ कर वे बड़ा ही आनन्द अनुभव करते थे। इसके रचयिता रामदास हैं, यह शिवाजीकी अच्छी तरह मालूम हो गया। अब महापुरुषके दर्शन करनेके लिये राजाका मन विचलित हो उठा। अनंतर प्रयाग अमात्य पर राज्यभार सौंप आप साधुदर्शनको चल दिये। बहुत दिन भटकनेके बाद वे स्वामीजीके आश्रममें पहुँचे। स्वामीजीने राजाको देख कर अपने पास बुलाया। राजाने उन्हें साष्टाङ्ग-प्रणाम किया और मनकी बात कह सुनाई। इसके बाद राजाने स्वामीजीसे मंत्रप्रहण किया। इस उपलक्षमें स्वामी जीने राजाको उपदेश दिये थे, वे इस प्रकार हैं—“जीव-हिंसा मत करो। सभी भूतों पर दया करो। साधु-सेवा करो। प्रतिदिन विष्णुपूजा करो। सर्वदा हरिनाम लो। एकादशीव्रत पालन और नित्य मारुती देवदर्शन करो।” राजाने सभी उपदेश गिरोवार्य कर लिये और स्वामीजीके आदेशानुसार राजधानी लौटे। १५७१ शक (१६४६ ई०) के ज्यैष्ठमासमें राजा शिवाजीने मंत्रप्रहण किया था।

राजघासाटमें रहना शिवाजीको अच्छा नहीं लगता। वे बीच बीचमें राजधानीका परित्याग कर स्वामीजीके पास जाया करते थे। रामदास स्वामीको यह अच्छा नहीं लगा। उन्होंने एक दिन राजाको बुला कर कहा, “राजकार्यकी अपेक्षा करना आपको उचित नहीं। मैंने सुना है, कि पत्रोंमें लिखे, अमङ्गल आपके हाथ लगे हैं। अतएव मैं सलाह देना हूँ कि आप उसीको रोज पढ़िये। इसीसे आपको मेरे दर्शन होंगे। बीच बीचमें मैं भी आपकी राजधानी जा कर आपको धर्मकथा सुनावा रहूँगा।” राजा स्वामीजीके आदेशानुसार कार्य करने लगे।

माहुलीमें रहते समय रामदास स्वामी बालकोंके साथ खेलते थे। कभी पेड़ पर चढ़ते और कभी उनके साथ दीड़ते थे। बालक भी उनके निकट आना पसन्द करते थे। एक दिन एक ब्राह्मणने उनसे पूछा, कि आपका बड़ा ही विचित्र स्वभाव देखाता हूँ। बालकोंके साथ क्या बूढ़ोंका खेलना अच्छा लगता? उत्तरमें रामदास स्वामीने कहा था, “जो बड़े हैं वे भारी

बुध होते हैं, यह दृष्टारसे उनका हृदय मरा रहता है। बाह्यक हा कर रहनेसे स्वभाव नष्ट होता है, एक रूप नही रहता, इसी कारण मैं बाह्यको बहुत चाहता हूँ।"

यहाँ विष्णुमन्दिरमें रामदास स्वामी प्रति रातको कृपा और कीर्तन करते थे। दूसरे समय कितने भोग उनके पास तस्वकथा सुनने आते थे।

कुछ दिन बाद रामदास स्वामी राजासे मिलनेके लिये सातारा गये। स्वामीजीका भागमनषार्त्ता सुन कर राजा नगरके बाहर गये और बड़े सम्मानके साथ उन्हें राजमासाह जाये। वहाँ तीन दिन रह कर स्वामीजीने कीर्तन किया। उनका कासन सुन कर सभी मोहित हो गये थे। धोतामौका भस्ताकरण मगबाहके मल्लि रसमें गोठा खाने लगा। इन तीन दिनोंमें स्वामीजीको बहुत ही मध्मी मध्मी चीज मिली थीं, पर उन्होंने एक भी न खा और चुपके रातको मिठाको भीड़ी छ कर वहाँसे चलत हुए। राजा स्वामीजीको न देख पासक हो गये। थं अपने मार्ग-मार्गमें जरा भी न रुक सक, तुरत इनको जोड़में निकले। एक कोस जाने पर स्वामीजीके साथ ने ट हुए। स्वामीजीके साथ राजा का कपोपकथन होने लगा। पीछे स्वामीजीने शम्भ केभर तार्य जानेको इच्छा प्रकट की। राजा तीर्थका कर्षं देने लगे, पर स्वामीजीने कहा, कि जो संन्यासी हैं उन्हें दण्डका अकारण ही क्या? शिवाजाम समझ कर कहा, कि जो राजगुरु कह कर तमाम प्रसिद्ध हैं, तीर्थमें कर्षं नहीं करनेसे उन्हें भयपत्र होगा। बहुत अनुरोध करने पर स्वामीजीने कुछ रूपय ले लिये, यह भी अपने हाथ नहीं। राजाने एक कार्जुनकी स्वामीजीके साथ लगा दिया और तीर्थमें कर्षं-कर्षंके लिये उसीक हाथ मान रूपया दे दिया। इसक सिवा कुछ आर्जुनियोंके साथ नामा प्रकारके मून्यवान् द्रव्य भी भेज। राजा स्वामीजीके साथ बहुत दूर तक गये थे। पीछे रामदास स्वामीके अनुरोध करने पर ये राजधानी छोटे।

स्वामीजीने जहाँ जहाँ विधाम किया था वहाँ वहाँ राजाके लिये धनका जिलाया तथा धान व्यक्तियोंको धन और भक्षण बाँटा था। आप उसमेंसे कल्पमात्र भा अपने काममें कहाँ लाते। आप निष्ठा प्राणत और उसास भयना

कर्म करताये। रात्रिको रामगुण गान करते लोगोंको मंत्रगुण कर देते थे। आते जाते थे शम्भक पञ्चुके। नासिकस शम्भक प्रायः दश कोस दूर है। इस स्थान के एक पर्वतसे गोदावरी नदी निकळी है। शम्भकेभर महाद्वय यहाँ पर स्थापित है। रामदास स्वामीने देव दर्शनादि किये तथा राजप्रसन्न समो धन दीन-मुग्धियोंको बाँट दिये। शम्भकसे स्वामीजीने पञ्चवटीबनकी यात्रा की। वहाँ कोर्तनादि करके ये लोगोंको परिपुत्र करने लगे। पञ्चवटीके दर्शनस उनके मनमें धोपाम च द्रुका मान उदय हो भाया। रामम ममें विह्वल हो वे नाच करने लगे। पञ्चवटीके पवित्र भावने उन्हे ऐसा मोहित कर दिया कि वहाँसे जानेको उनकी जरा भी इच्छा नही होती थी। इसलिये कुछ दिन वहाँ ठहरना पड़ा। जब तक वहाँ रहें तब तक रामगुण गा कर और मध्मा मध्मा उपदेश दे कर लोगोंको परिपुत्र करते रहे थे। यहाँ पर इन्होंने जो उपदेश दिया है उसका मर्म इस प्रकार है—

"अत आदि परमही अकरुण नहीं। मल्लिभावसे राम नाम जनेसे हो मुक्ति होती है। रामनामका कैसा प्रभाव है, उसे वाक्य द्वारा व्यक्त नहीं किया जा सकता। देखो! महादेवने विपयान करके स्निग्ध होमके लिये क्या नहीं किया। मरुतक पर गङ्गादेवीको धारण किया पर गङ्गाका जल भी उरह शीतल न कर सका, कपाल पर चम्पूमाको रखा, शशोका शीतल कर भी उरहे स्निग्ध न कर सका। पीछे जब उन्होंने हरिनाम लिया, तब वे परमदम स्निग्ध हो गये—उखाळा मन्कवा सभी दूर हो गई।"

पञ्चवटीसे स्वामीजी पाकड़ी नामक स्थानमें गये। वहाँ तीन दिन रह कर जगू भाये। जगूम भयनो माता और भाइको देख कर बड़े प्रसन्न हुए। वहाँ कुछ दिन रहनेक बाद सातारा छोटे। माता और भाइ भी उनके साथ सातारा भाये थे। यह संवाद जब राजाके कामोंमें पडु वा, तब उनके भामन्कका पाठवार न रहा। ये सबोंको बड़े भावसे अपने महकर्म ले भाये। रामदास स्वामी एक मास यहाँ रहें थे। प्रतिदिन धम ध्याक्या और कश्चनान्दि करके लोगोंको तृप्त करन थे।

एक मासके बाद स्वामीजीकी माता और भाई अपने घरको लौटे। राजाने यथोचित सम्भाषण कर और उपहार दे कर उन्हें विदा किया था। रामदास स्वामी माहुली जा कर रहने लगे।

इसके बाद रामदास स्वामीने पण्डरपुरकी यात्रा की। वहाँ इन्होंने कुछ अभङ्गकी रचना की थी। उनमेंसे एक विठोवा देवमूर्तिके सम्यक् धर्म रचा गया था। कुछ दिन यहाँ रह कर स्वामीजी इनके निकटवर्ती गरुडपार नामक स्थानमें चल दिये। यहाँ कई दिनों तक कीर्त्तनादि होता रहा। अधिवासी हरिगुण गान सुन कर मोहित हो गये। तुकाराम बाबा, जयराम गोस्वामी आदि साधुगण भी कीर्त्तन सुनने लगे। गरुडपार स्वर्गरूपमें गिना जाने लगा। कीर्त्तन आरम्भ करनेसे पहले रामदासने दो अभङ्ग गाये थे।

इसके बाद स्वामीजीने वाल्मीकि मुनि तथा अजा मीलका वृत्तान्त वर्णन कर श्रोताओंको हरिनामका माहात्म्य समझाया। इस प्रकार कीर्त्तन कर और उपदेश दे कर रामदास स्वामी पण्डरपुर होते हुए माहुली गये। यहाँ कुछ दिन ठहर कर नाना स्थानोंमें जा कर वे लोगोको धर्मोपदेश देने लगे। बहुतेरे उनके शिष्य हो गये। स्वामीजी विना परीक्षा किये किसीको भी शिष्य नहीं बनाते थे। शेषपुरमें आकावाई नामक एक विधवाते स्वामीजीके साथ धर्मकी आलोचनामें दिन वितानेकी इच्छा प्रकट की। उसके धर्मभावकी परीक्षा करनेके लिये स्वामी जी उसके घर घुसे और द्रव्यादि नष्ट करने लगे। यह देख कर आकावाई सिर्फ हंसने लगी। अनंतर स्वामीजीने आकावाईसे कहा, 'यदि तू धर्मपथका अवलम्बन करना चाहती हो, तो तुम्हारे पास जो कुछ है उन्हें उपयुक्त पात्रको दान कर दो।' आकावाईने वैसा ही किया। पीछे स्वामीजीने उसे भील मांगनेको कहा। आकावाई बड़े आनन्दसे स्वामीजीकी आज्ञाका पालन करने लगी। इसके बाद कावाड नामक स्थानमें वेनूवाईने स्वामीजीसे प्रार्थना की, कि आप मुझे भी अपने साथ रहनेकी अनुमति दीजिये। उस समय उसकी उमर बीस थी। इस कारण स्वामीजीने उसे घरमें रह कर धर्मसाधना करने कहा, किन्तु घरके लोगोंके अत्या-

चारसे उसे स्वामीजीके निकट जाना ही पडा। स्वामीजीके साथ धर्मालाप करके वेनूवाईका अन्तःकरण धीरे धीरे उन्नत होने लगा। वह भजन और कीर्त्तन करने लगी। उसका कीर्त्तन सुन कर लोग मोहित हो जाते थे।

इस समय रामदास स्वामीने 'दासबोध' नामक एक ग्रन्थ लिखना आरम्भ कर दिया। कहते हैं, कि स्वामीजी जो मुखसे कहते थे, उनके शिष्य कल्याणस्वामी उसे लिखते जाते थे। शिवाजीका ध्यान जब राजकार्यकी ओरसे हट गया, तब उन्हें उलभनेके लिये ही यह ग्रन्थ रचा गया था। इसके सिवा इन्होंने 'मनाचे प्रलोक' अर्थात् मनके प्रति उपदेश, 'श्लोकवद्ध रामायण' अर्थात् श्लोकवर्णित रामायण, गुरुगीता, आत्मराम और पञ्चीकरण भी लिखे थे। राजा शिवाजी प्रतिदिन बड़े गौरवसे 'दासबोध' पढ़ा करते थे। मराठीभाषामें ग्रन्थ प्रकाशित करना उस समयके पण्डितोंकी इच्छाके विरुद्ध था। गङ्गा पण्डित राजवाडामें पुराण पढ़त थे। उन्होंने राजाको 'दासबोध' पढ़नेसे मना किया। किन्तु राजाके नहीं सुनने पर उन्होंने पुराण पढ़ना बंद कर दिया। वामन नामक एक दूसरे विधवात पण्डित भी मराठीभाषाके प्रति वीतराग थे। किन्तु रामदास स्वामीने उन्हें समझाया, कि संस्कृत जाननेवाले व्यक्ति बहुत ही थोड़े हैं, इस कारण भाषामें लिखित पुस्तक प्रकाशित करके जनसाधारणका उपकार करना उचित है। इस पर वामन पण्डितका मत पलटा। उन्होंने निगमसार आदि ग्रन्थ भाषामें प्रकाशित किया।

अनन्तर रामदास स्वामी आलन्दो आदि स्थानोंमें भ्रमण करते हुए चापड पहुँचे। कहते हैं, कि यहाँका श्रीरामचन्द्रका मन्दिर इन्होंने अपने हाथसे बनाया था। इनके शिष्य पत्थर लाते और आप जोड़ते जाते थे। क्रमशः रामनवमी पहुँची। इस उपलक्ष्यमें यहाँ भारी उत्सव हुआ था। उत्सवके बाद स्वामीजी नाना स्थानोंमें पर्यटन करते हुए माहुली पहुँचे। अनन्तर वे फिर चापड चले गये।

इस समय भारतवर्षके नाना स्थानोंमें धर्म प्रचार करनेकी इनकी इच्छा हुई। इस कारण इन्होंने अपने

शिवापेक्षे कदा, कि तुम लोग मित्र मित्र स्थानमें जा कर भजन और कीर्तन द्वारा लोगोंके मनमें धर्माभाव उद्दीपन करो। उन्होंने शिष्योंसे यह भी कहा था "तुम लोग दिनको भोक्त मांगना और उसीसे भ्रजनपारण्य करना। कसो भा कुछ सञ्चय न करना। जिस दिन जो मित्र उस दिन उमीचे काम चलाता। राजिम रामगुण गान और भजन करना। इस प्रकार सारा धन बिठा कर रामनवमीसे पहले सीर भाना।" रामदासस्वामीके भावानुसार उनके शिष्य धर्माप्रचार करने लगे दिये।

इधर रामदास स्वामी पण्डरपुर आये। रातमें जहाँ उठते थे वहाँ उन्होंने भजन और कीर्तन द्वारा लोगोंक मनमें संभावका उद्दीपन कर दिया था। आन्ध्र पण्डरपुर ना कर ये पवित्र स्थानोंका दर्शन करने लगे। राजा भी उनका अनुसन्धान करने करने वहाँ तक पहुँचे। जहाँ जहाँ उनके शिष्य गये थे वहाँ वहाँ स्वामीजी उनसे मिलने लगे। एक जगह उन्होंने देखा कि तुकाराम बाबा कीर्तन भारण्य कर दिया है। स्वामीजी बड़े आनन्दसे सुनने लगे। कीर्तन समाप्त होने पर उन्होंने भोताभोंको सम्बोधन कर कहा, 'माइयो ! मत्पत्न सोजनका फल मत्पत्न लराय है। मतिरिक्त जो कुछ सोजन किया जायगा उसे पेटमें रहनेका स्थान नहीं मिलेगा। इन्दी हो कर वह बाहर निकल जायेगा। किंतु हरि नामामृत पान करनेसे किसी भी इन्द्राकी मायाका नहीं। अितना ही पान करोगे, उठना ही और पान करनेकी इच्छा होगी। मन उठना ही आनन्दसागरमें गाथा गाता जायेगा। इस भ्रममें किसीकी भी भ्रमण नहीं होती। यह भ्रमन्त भाषिक परिमाणमें पान करनेसे अनिष्ट होनेकी बात तो बुर थी और भी कितने मजूक होत हैं। मत्पत्न माइयो ! मगकी साय कर हरिनामामृत पान करो। दूसरे दिन रामदास स्वामाने कीर्तन किया।

इसके बाद स्वामीजी पण्डरपुरका परिषयाग कर चापड छोटे। पहा पर उनके शिष्य जो धर्मप्रचार करनेके छिय मित्र मित्र स्थानमें गये थे उनसे भा मिष्ट। उन सबोंको छे कर ज्ञानाज्ञाने बड़े आनन्दसे राम नवमीका वरसव मनाया। अनन्तर ये नामा स्थानोंमें प्रमय कर संकीर्तनादि द्वारा धर्मप्रचार करने लगे।

रामदास स्वामीके जो हमेशा दर्शन नहीं होते थे इस कारण शिष्याजी बड़े दुःखित रहते थे। उनकी इच्छा हुई कि राजधानीके पास ही किसी स्थानमें स्वामी जो रहे। परीक्षा परीक्षित भवमन्त्रिणमें उनका पास स्थान दिखर हुआ। १५०२ शक (१६५० ई०)-से स्वामी जो वहा रहने लगे। तभीसे यह स्थान सखनगढ नाम से मशहूर हुआ।

कुछ समय बाद रामदासकी माताका अन्तिम समय पहुँचा। यह सुन कर स्वामीजी अश्रुक्षेप जा कर उनसे मिले। माताजी मृत्युक बाद ये परीक्षीमें छोड़ कर ध्यान धारण और रामगुणकीर्तनमें दिन व्यतीत करने लगे। एक दिन ये भीषाकी भोला कचे पर राय भीष मांगते मांगते राजमवम पहुँचे। राजाको एक सिपाहीने शरर ही कि स्वामीजी शिक्षाक सिधे आये हैं। यह सुनते ही राजाने एक कागडके टुकड़े पर "समूचा राज्य रामदास स्वामीको अर्पण किया", जिन्हा कर सिपाहीने कहा, कि इसे स्वामीजीको भोजीमें हाक देना। सिपाहीने वैसा ही किया। स्वामीजीने यह कागड पढ कर राजाकी बुझाया और कहा कि, 'तपस्या करना प्राणायाम तथा राज्यमारग्रहण और प्रजापालन करना सुनिश्चयका कर्म है। अतएव मिश्रापुत्रि भवजनन करना उम्हे उचित नहीं। फिर जब मापने मुझे राज्य शान कर दिया तब मेरे प्रतिनिधिरूप हो कर माप राज्यप्राप्तन करे।' राजा स्वामीको भावा डाल न सके और उनकी बाड़ाके छे कर उन्हाक नाम पर राज्य प्राप्तन करने लगे। संस्थापको राज्य देनेके कारण राजपताकादि गौरिकवर्णमें रंगाए गए। उसी समयसे मराठोंक मध्य गैरिक पताका प्रचलित हुई।

कुछ समय बाद राजाने मन ही मन विचार कि रामदास स्वामी तो राजधानीमें रहे नहा, एसछिये तुकाराम बाबाको जाना चाहिये। यह सिधर करके उन्होंने एक काकुँनक हाथ उनक पास निम भणपल भेजा। उन्हे जानक छिये अन्धादि भी भेजी गयीं। तुकारामने निम भण स्वीकार नहीं किया और राजाक पत्रका उत्तर दिया। पत्रमें निम भण प्रहण नहीं करनेका कारण दिखायाया था और राजाको कुछ अनुप-

देश भी दिये थे। राजाने उपदेश वाक्य पढ़ कर अत्यंत आनन्दलाभ किया था। उनका मन तुकारामके प्रति ऐसा आकृष्ट हुआ, कि वे लोहागाता नामक ग्राममें उनसे जा कर मिले।

१६०२ शक (१६८० ई०) में शिवाजी ज्वराकात हुए। रोग धीरे धीरे बढ़ने लगा। उनके जीवनकी कुछ भी आशा न रही। इसी समय रामदास स्वामी वहां गये और धार्मिकता सुनाने लगे। इसी शकाब्दक चैत्र-मासमें शिवाजीने भवलीला संवरण को। पीछे उनके लड़के शम्भाजी पितृसिंहासन पर बैठे। रामदास स्वामीने सुना, कि शम्भाजीका स्वभाव उद्धत और उनका चरित्र अच्छा नहीं है। इसलिये अविचेकी राजाको कुछ उपदेश देना उचित समझ कर स्वामीजीने एक सदुपदेश-पूर्ण पत्र उनके पास लिख भेजा। पत्रके उत्तरमें उन्होंने कहा था, कि यह अमूल्य उपदेश पा कर वे कृतार्थी हुए हैं तथा उन्हींके अनुसार वे कार्य करनेकी चेष्टा करेंगे।

कुछ समय बाद रामदास पीड़ित हुए। धीरे धीरे अन्न जलका त्याग कर देवताके सामने पड़ रहे। शिष्यगण उनकी अवस्था देख कर रोने लगे। स्वामीजीने उन्हें सान्त्वना देते हुए कहा, 'व्यर्थ रोते हो, किसने कहा, मेरी मृत्यु होगी, मैं जीवित रहूंगा, केवल शरीर बदल जायगा।' यह सुन शिष्यगण बोले, 'अभी जिस प्रकार आपके दर्शन और उपदेशग्रहण कर हम लोग तृप्त होते हैं, उस प्रकार शरीर परिवर्तन पर तो नहीं हो सकते।' इस पर रामदासने कहा 'मेरे लिखे दासबोध और आत्माराम ग्रन्थ पढ़नेसे तुम लोग मानो मेरे ही दर्शन लाभ करोगे।' इस समय रामदास स्वामीके पादुका स्थापन करनेकी बात उठी। स्वामीजीको आशङ्का हुई, कि कहीं वे लोग श्रीरामचन्द्रको भूल कर मेरी ही पूजा करने न लग जायें। इस डरसे उन्होंने शिष्योंसे कहा, कि एक गह्वरमें उनकी खड़ाऊं रख कर उसके ऊपर श्रीरामचन्द्रका मन्दिर बनवा देना। शिष्योंने इसे स्वीकार कर लिया। पीछे भजन और कीर्तन होने लगा। स्वामी जी बड़े आनन्दसे सुनने लगे और आपने भी कुछ अभङ्ग गाये।

कहते हैं, कि कुछ अभङ्ग गाये जानेके बाद श्रीराम-

चन्द्रने घनश्याम मूर्तिमें रामदास स्वामीके सामने आ कर उन्हें आशीर्वाद किया तथा स्वामीजी उनका सारूप्य लाभ कर 'जय जय रघुवीर समर्थ' कहने हुए स्वर्गधामको सिधारें। १६०३ (१६८२ ई०) के माघमासमें स्वामीजीका देहान्त हुआ था।

राजा शम्भाजी यह सवाद पा कर बड़े दुःखित हुए थे। उन्होंने स्वामीके आदेशानुसार परेलीमें एक श्री-रामचन्द्रका मन्दिर बनवाया और उसके नीचे रामदासकी खड़ाऊं रखी। प्रतिवर्ग यहा रामदास स्वामीके स्मरणार्थ मेला लगता है।

सन्यासियोंके मध्य रामदास स्वामीमें एक विशेष भाव देखा जाता है। यों तो कितने महापुरुष ऐसे हैं जो ईश्वरके ध्यानमें जीवन विताते हैं और लोगोंको ओर नजर नहीं उठाते। वैसे महापुरुषका पवित्र भाव हृदयङ्गम कर मनुष्य उन्नत तो हो सकते हैं पर वे (संन्यासी) जो मनुष्यका संसर्ग नहीं करते उनके घर पर क्षणकाल भी नहीं ठहरते, इससे सभी उन्हें देख नहीं पाते। अतएव उनसे जनसाधारणका उपकार नहीं हो सकता। रामदास वैसे नहीं थे। वे अपनी आध्यात्मिक उन्नतिके लिये जैसे मन ही मन निर्जन वनमें अथवा पर्वत के ऊपर रह कर ईश्वरके ध्यानमें जीवन विताते थे, जनसाधारणके लिये उनका वैसा ही यत्न भी था। वे एक-देशदर्शी नहीं थे। वे जिस प्रकार सामान्य ध्यक्तिको उपदेश देते थे उसी प्रकार राजा शिवाजीको भी उद्बोधित किया करते थे। प्राचीन कालके ऋषियों की तरह उनका आचरण था। वे लोग जिस प्रकार कभी कभी नगरमें आ कर राजाओंको नाना प्रकारका उपदेश दे जाते थे, रामदास स्वामी भी उसी प्रकार सातारा आ कर शिवाजीको, क्या राजनैतिक क्या धर्मसम्बन्धीय सभी प्रकारका उपदेश प्रदान करते थे। क्योंकि वे जानते थे, कि राजाके कर्त्तव्यपरायण होनेसे प्रजाका मङ्गल होता है। राजाकी उन्नतिके लिये वे यहा तक दखवान् थे, कि उनके लिये उन्होंने 'दासबोध' नामक एक सदुपदेश पूर्ण ग्रन्थ भी लिख डाला था।

हम लोग देखते हैं, कि पार्थिव पदार्थोंको तुच्छ जान

कर बहुतेरे महापुण्य उपमहान हो जाते । परन्तु राम वास स्वामीका भाव बेसा नहीं था । एतेपकारसाधन उनक जीवमका मृत था । इसक लिये य स्वयं शांतिरिक्त परिधम किया करते थे । उनके यकस कितन स्थानों में श्रीरामबन्धुके मन्दिर प्रतिष्ठित हुए थे ।

रामदीन बिपात्रो—एक भाषा-कवि । ये शिकमापुर जिम्मा कानपुरके रहनेवाले थे और कवि मन्तिरामक वंशज थे । अरबातीके राजा रतनसिंहके यहाँ य भाषा रहते थे । एक बार राजा रतनसिंहकी सभामें य बैठे थे, उस समय और भी आगीरदार सरदार कवि आदि दरबारमें उपस्थित थे । स्वयं राजा रतनसिंह भी दरबारमें इन्होंने अपनी ओर राजाकी बिरकि देख कर कहा,—

“जा बाबा छपभास न हारमसाहि अगतह ।

परिपामी हूरे नही महराजा खनेक ॥”

रामदुर्ग—रामदम्भदेशक दक्षिण महाराष्ट्र भूमिकाकी पानि दिक्क वक्षिणी द्वारा परिचालित एक देशी सामग्री रज्य । इसके उत्तरमें कौन्जापुर राज्यका योगस उपविभाग, दक्षिणमें धारवाड़ जिल्हेका नरगुण्ड, पूर्वमें बाजापुर जिल्हेका बन्नामी ठाणुक और पश्चिममें धारवाड़ जिल्हेका नवजगुण्ड तालुक हैं । इसमें दो शहर और ३७ ग्राम सगठ हैं । जनसंख्या ४० हजारके करीब है । यहाँका मिट्टा काकी और जर्बरा है । खड़, गेहूँ, जौ, जना, जुमार यहाँकी प्रधान उपज है । मासप्रभा नदी इस राज्यक मध्य हो कर बहती है जिसस खेतीबासीमें बड़ी सुविधा हो गई है । यहाँ एक प्रकारका मोटा सूतो कपड़ा निपात्र होता है ।

कपीरक दुर्गकी तरह यह भी एक दुर्गदुर्ग समझा जाता है । महाराष्ट्र-अभ्युदयानके मारममें ही यह दुर्ग मराठोंके हाथ लगा । पीछे पेशवाओंने इसे वर्तमान दुर्गाधिकारीके किसी पूर्वपुरुषके हाथ सौंप दिया । १७५३ ई०में राज्यस्वक परिभाषानुसार यहाँके सरदार महाराष्ट्र-सरकारका ३५० पुङ्कसभार सनासे मद्द करने के लिये बाध्य थे । १७७८ ई० तक य इसी प्रकार मद्द रह भाये । पीछे हैदर अलाने दुर्गकी अधिकार किया । १७८४ ई०में रोपू सुखठाकने पूर्ण नियमको मजू कर

साहाय्यकारा सैन्यसंख्या बढ़ा देने कहा । किन्तु दुर्गा अधिकारान नहीं माना । इस पर गोखार्यर्षण द्वारा उसने दुर्गकी फतह किया और ७ मास अथरोपक बाद नवगण्ड दुर्गके अधिपति वेणुदरायकी कीर् कर लाया । १७६० ई०में श्रीरङ्गपुत्रके अभावतक बाद वेणुदरायने मुक्ति लाभ किया और पेशवा द्वारा दुर्गका अधिकार पाया । अगस्त रामराय १६००० य० आयकी जमी बारी दे कर रामगढ़ दुर्गके अधिकारता हुए ।

१८१० ई०में पेशवाने वेणुदराय और नारायण राव नामक रामरायक दो पुत्रोंक बीच एक सम्पत्तिका नया बँदीबस्त कर दिया । १८१८ ई०में पेशवा शकिका अब विशकुल हास हुआ तब एक दूसरे उपायस उनका अधिकार मसुण्ड रखा गया था । १८८१-८२ ई०में यहाँके प्राध्याप्य शांतीय सरदार-पुत्र नाथाकिन थे, इस कारण शासनकार्य अङ्गीरोंके हाथ रहा । वर्तमान सरदारका नाम है मेहरवाण रामराव वेणुदराय या रायसाहब भाबे । ये बाह्यिणास्थविभायमें एक प्रथम भेषीक सरदार समझे जाते हैं । इनका राज्य दो लाख रुपया है । सैन्यसंख्या ५० है । सरदारकी गोद खेनेका अधिकार है । राज्यमें २ म्युनिसिपलिटो, १७ स्कूल और दो अस्पताल हैं ।

२ उक्त राज्यका राजधानी । यह अक्षांश १५ ५' ३०" तथा देशांश ७५ २' पू०के मध्य अवस्थित है । जनसंख्या दश हजारके करीब है । कहते हैं, कि यहाँका रामदुर्ग और नरगुण्ड दुर्ग शिवाशो द्वारा बनाया गया है । शहरमें एक प्रकारका मोटा कपड़ा तम्परा होता है । यहाँ एक अस्पताल भी है ।

रामबुवास राय (शोबान) एक साधकमक । सिपुराके अन्तर्गत काकीकण्ठ नाममें १७८५ ई०को इनका जन्म हुआ था । इनकी कुलोपाधि मन्दी यो । कुछ दिन तक ये नोभायान्तोके कन्नूर हेडिडे साहबक सिरैस्ते दार थे । पीछे सिपुरा महाराजके शोबान हुए । इनके रथ साधना सङ्गोठोंमें बिपात्र, विराग और मत्तिका पूर्ण आभास है ।

रामबुवास सरकार—कडकतापासो एक धनी व्यक्ति । कडकतेक अन्तर पूर्व समदमाक निकटपत्ती रोज्ञानी ग्राम

में इनका जन्म हुआ था। ये देवशीय कायस्थ थे। इनके पिता बलराम सरकार वहाँकी ग्राम्य पाठशालाके शिक्षक थे।

१७५१-५२ ई०में वगीं उपद्रवसे उत्पन्न हो कर बलराम वासभूमिका परित्याग कर स्त्री समेत भागे। उस समय स्त्री गर्भवती थी। राहकी थकावटसे उसे प्रसव वेदना उपस्थित हुई। कालवगतः निर्जन मैदानमें वृक्षके नीचे रामदुलालका जन्म हुआ।

रामदुलाल बचपनमें ही पितृमातृहीन हुए। उनकी मातामही बालकका लालन पालन करने लगी। एक समय उनकी मातामहीको कभी भीख मांग कर, कभी उपवास कर और कभी दासीका काम कर जीवन धारण करना पडा था। अन्तमें वह कलकत्ता निमतल्ला वासी विख्यात वणिक् मदनमोहन दत्तके घर पाचिकाका काम करने लगी। धनीके अतुल ऐश्वर्यके मध्य पाचिकाके साथ उसके दंडित रामदुलालको भी आश्रय मिला। इतने दिनोंके बाद भगवान्की कृपासे उनका अन्नकष्ट दूर हुआ।

मदनवावूने अपने पुत्रोंके साथ बालक रामदुलालको भी शिक्षाका बन्दोबस्त कर दिया। पढ़ने लिखनेमें रामदुलालका अव्यवसाय देख पिताके निकट लाञ्छित होनेके भयसे मदनवावूके लड़के उनके साथ बुरा व्यवहार करने लगे। मदनवावूको यह बात मालूम हो गई। वे तभीसे अनाथ बालकको अपने साथ आफिस ले जाते और वही शाम तक रखते थे। इस समय इन्हें अङ्गरेजीका थोडा थोडा ज्ञान हो गया था। आफिस जानेसे इनका भाग्य खुल गया।

आफिस जानेसे इनका सर्वोसे परिचय हो गया। लोग इनके व्यवहार पर मुग्ध हो गये। मदनवावूने बेकाम बैठे रहनेके बदले मासिक ५ रु० वेतनके विल-सरकारके पद पर उन्हें नियुक्त किया। पीछे उनके कामसे प्रसन्न हो कर १०) रु० कर दिया गया। इस समय इन्हें एक वार किसी विशेषकार्यके लिये अपने मुनीवकी ओरसे Messrs Tulloh & Co के नीलाम घरमें उपस्थित रहना पडा था। इस समय एक जल-मन्न जहाज नीलाम होता था। रामदुलालने बिना

समझे वृद्धे उसे १४ हजार रुपयेमें खरीद लिया। उन्हें कुछ भी मालूम नहीं, कि इस कार्यमें लाभ होगा वा हानि। लडकपनीके जोशसे इन्होंने जो यह काम कर डाला उसीसे इनकी भाग्यलक्ष्मी चमक उठी।

जिस समय रामदुलाल नीलाम घरसे निकल रहे थे उसी समय एक अंगरेज आया और उसने जहाज खरीदनेवालेका नाम जानना चाहा। उसे जहाजका मूल्य तथा उसके भीतरके माल असवावका हाल अच्छी तरह मालूम था। रामदुलालको परोदार जान कर वह अंगरेज उसके पास गया और उन्हें सामान्य व्यक्ति देख कर सामान्य लाभका लोभ दियाया। आगिर लाग रुपयेमें साहबने जहाजको खरीद लिया। रामदुलाल कुल रुपये ले कर मदनवावूको देने चले। क्योंकि वे जानते थे, कि पूंजी मुनीवने दी थी इस कारण इसमें जो कुछ लाभ हुआ वह उन्हींका होगा, मेरा नहीं। मालिकके सामने पहुँच कर रामदुलालने थैली आगे रख दी और अपने किये हुए कामके लिये क्षमा मांगने लगे।

मदनवावू रामदुलालकी सरलता, सत्यवत्ता और ज्ञानवत्ता देख कर बड़े आनन्दित हुए और वह लाख रुपयेकी थैली उन्हें ही पुरस्कारमें दे दी। वह रुपया ले कर अमेरिकावासी वणिक्को एजेण्ट स्वरूप काम चलाने लगे। इसी रुपयेसे इनकी भावी-समृद्धिका सुत्रपात हुआ। धीरे धीरे इन्होंने एक कर्मगृह (Firm) स्थापन किया वह कर्म पीछे "Messrs Ashutosh Dey Nephew" नामसे प्रसिद्ध हुआ।

अनंतर रामदुलाल News fairlie Fergusson & Co के वेनियन हुए। इस समय इनका भाग्य खूब चमक उठा था। लोग इनका यथेष्ट सम्मान करने लगे। इनकी उदारता और दया अनुलनीय थी। अतुल सम्पत्तिके अधिकारी होते हुए भी इन्होंने कभी अपने प्रभुवंशका अपमान नहीं किया। दुर्गात्सवके समय जब प्रतिमा विसर्जन करने जाते थे तब निमतल्लेकी दत्तवाडी हो कर ही जाते थे। उतनी दूर तक वे नंगे पांव चलते थे। केवल एक वार नहीं, जीवन भर इन्होंने कृतज्ञता और प्रभुभक्ति दिखा लाई थी।

मंत्राजके बुभिक्ष पीडित लोगोंकी सहायताके लिये

कनकचरोके टाउनहाऊमें जो समा हुए उसमें इन्होंने नगद एक छात्र रुपये और हिन्दू-कावेरकी प्रतिष्ठाके समय ३० हजार रुपये दिये थे। ये स्वयं इन्द्रिय थे इन्द्रिय मन्त्रके विषये जैसा कष्ट पाते हैं उन्हीं मन्त्रों पर मन्त्रमय था। इन कारण गुरुदे हाथसे ये इन्द्रियोंको मन्त्रदान कर गये हैं। इन्होंने अपने वासमयनमें और बेडगाछियाके उद्यानमें मतिविद्याशास्त्र प्रतिष्ठा की थी। इसके सिवाय उनके घर पर इन्द्रिय, अनायपुष्प कन्याविवाहव्ययद्विष्ट वा कन्यामार-प्रस्त व्यक्तिसाक्ष हो भाषिक सहायता पाते थे। भाषिस में इन्द्रियोंको देनेके लिये इन्होंने प्रतिदिन ७० रुपये दान करनकी व्यवस्था कर दी थी। २ छात्र २२ हजार रुपये तक कर इन्होंने काशीधाममें तेरह शिवमंदिर बनवाये हैं। ये सब मंदिर आज भी तुलसीभर-मंदिर नामसे प्रसिद्ध हैं। इतना बड़ा बाणिकी काशीधाममें और कहीं भी नहीं है।

१६ वर्षकी उमरमें ये पक्षाघात रोगसे आक्रमण हुए। कुछ दिन बाद ही मारोग्य हो गये पर ज्ञापयिक शक्ति का हास हो जानेसे आरोग्य बिलकुल खराब हो गया। आधिर १८२५ ई०की १३ी मसिहको ये ७३ वर्षकी उमरमें इस जोकसे चक बसे। उनके दो लड़के भाग्य बाद और प्रमदनाथने पांच छात्र रूपया चक कर पितृ धार्य किया। पिताके जैसे वृत्तों माह वानशील थे, इस कारण उन्हीं बाद-को उपाधि मिली थी। रामगुलाबके दो पत्नी थीं बड़ीके कोइ सन्तान न थी, छोटीके गर्भसे उपरोक्त दो पुत्र और पांच कन्याने जन्मग्रहण किया था। भाग्यवीर सन्तोष और सितार बजानेमें बड़े निपुण थे। मृत्युकाळमें रामगुलाब १ करोड़ २३ लाख रुपये छोड़ गये थे।

रामवृत (सं० पु०) रामस्य मृतः । अनुमानश्री ।

रामवृती (सं० श्री०) रामस्य वृतीष विष्णुमियत्वात् । १ तुलसाविशेष, एक प्रकारकी तुलसी । पर्याय—पर्वपुष्पे, विश्रन्वा, भागम्लिका, काइरञ्जो, घुल्लपत्री, मयान्याहा, कथिञ्चक्रा । २ नायवृत्ती, नायवृत्ता । ३ भाग्यपुत्री ।

रामद्व (सं० पु०) १ रामचन्द्र । २ एक सम्प्रदाय जो

राजपूतानेमें प्रचलित है और जिसके अधिकांश अनुयायी चमार भादि भक्त्युप्य जातियोंके लोग हैं ।

रामदेव—१ धाराधिपति भोजदेवके समावर्णित । मोक्ष प्रदन्तमें इनका परिचय है। २ गुजरातके शुद्ध-सम्पदायके १२वें आचार्य । ३ तत्त्वबोधिकाके प्रणेता । ये शम्भूके पुत्र और कामोदर तीर्थके शिष्य थे। ४ योग वाशिष्ठके बीकाकार ।

रामदेव बिरञ्जीय—काठविज्ञान माधवचम्पू, निरुमोद तरङ्गिणा, वृत्तरत्नावली और शुद्धरत्निनी भादि ग्रन्थोंके प्रणेता । ये राधेदेवके पुत्र और काशीनाथके पीछे थे।

रामदेव न्यायालङ्कार—रामगुणाकरके रचयिता ।

रामदेव मिश्र—१ तत्त्वकौमुदी नामकी वासववृत्ताकी बीकाके रचयिता । २ एक धैर्याकरण । माधवोपपातु पृथिवी इनका उल्लेख है ।

रामदेव राय—विजयनगरके एक राजा । इन्होंने अपने भाइ बेंकटपति तथा बेंकटाद्रि और तिवमल नामक दो सामंतोंके साहाय्यसे नाना स्थानोंको जीता और गोल कुलवापयिकी पराजित किया था ।

रामदेव वीर—विजयनगरके एक राजा । इन्होंने १३७२ से १३७६ ई० तक राज्य किया था ।

रामदाशरी (सं० श्री०) श्रेष्ठ मासका शुक्ला द्वादशो तिथि ।

रामचतुप् (सं० पु०) इन्द्रचतुप् ।

रामचर (सं० पु०) वासववृत्ता वर्णित एक नायक ।

रामधाम (सं० पु०) साकेत जोक जहां मगधाम् लिख रामरूपमें विराजमान माने जाते हैं ।

रामनगर—१ मयोषामदेशक वाराणसी जिल्लाका एक परगना । सूरिमाम्य ११२ बर्गमील है। यहाँके प्रधान जमादार देवयादुबंशीय राजपूत हैं । उक्त पंशमें राजा सर्वजित् सिंह (१८८४ तक) एक गुजराती स्थित हो गये हैं। यहाँके बहरमघाट तक जो,पथकी सबूक लकी गई है उससे बाणिज्य व्यवसायमें बहुत सुमोता है।

२ उक्त जिल्लाका एक नगर । यह मस्य २७ ५' उ० तथा देशा० ८१ २३ ५०'के मध्य स्थित है। यहके यहां ठहरावकी कचहरी था, पीछे फतपुर उठ कर चली गई है।

रामनगर—१ मध्यप्रदेशके रेवाराज्यकी एक तहसील। यह अक्षा० २३° १२' से २३° २३' उ० तथा देशा० ८० ३६' से ८२° १६' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण २७५ वर्गमील और जनसंख्या २ लाखसे ऊपर है।

२ उक्त तहसीलका एक नगर। यह अक्षा० २४° १२' उ० तथा देशा० ८१° १२' पू०के मध्य अवस्थित है। जनसंख्या ढाई हजारसे ऊपर है।

रामनगर—मध्यप्रदेशके मण्डला जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २२° ३६' उ० तथा देशा० ८०° ३३' पू०के मध्य मण्डला नगरसे ५ कोस पूरव नर्मदा नदीके किनारे अवस्थित है। चौरागढ़ युन्देलाओंके अधिभूत तथा देवगढ़की गोंड राजशक्ति तथा मुगल-साम्राज्यका प्रभाव देख कर गड़ा-मण्डलाके राजोंने गड़ा वा चौरागढ़की अपेक्षा अधिकतर दुर्गम स्थानमें जा कर राजधानी बसानेकी इच्छा की। तदनुसार १६६० ई०में राजा हृदय शा रामनगरमें राजपाट उठा ले गये। यहा ८ पोढ़ी तक राज्य करनेके बाद राजा नरेन्द्र शाने फिरसे मण्डला-में राजधानी स्थापन की।

गोंडराजाओंके समय यह स्थान खूब बढ़ा चढ़ा था। राजा हृदय शाके मन्त्री भगवत् रावके वासभवन और राजप्रासाद तथा अन्यान्य श्रृंगारिकाओंका ध्वंसावशेष बहुत दूर तक फैला हुआ है। यहांके एक छोटे मन्दिर में संस्कृत भाषामें लिपी हुई शिलालिपि है। उसमें ४१५ सम्बन्धे लगायत राजा हृदय शाके राज्यकाल तक प्रायः १३वीं सदीके गोंडराजवंशके राजाओंके नाम अंकित हैं।

रामनगर—युक्तप्रदेशके वाराणसी जिलान्तर्गत चन्दौली तहसीलका एक नगर। यह अक्षा० २५° १६' उ० तथा देशा० ८३° २' पू० गङ्गाके दाहिने किनारे अवस्थित है। जनसंख्या दश हजारसे ऊपर है। यहां वाराणसी राजाका प्रासाद और प्राचीन दुर्ग है। राजा चैतसिंह द्वारा प्रतिष्ठित एक सुन्दर मन्दिर, पुष्करिणी और तत्संलग्न उद्यान असंस्कृत अवस्थामें पड़ा था। १८८४ ८५ ई०में उसका अच्छी तरह संस्कार किया गया। यहा अनाजका अच्छा कारवार चलता है।

रामनगर—पञ्जाबके गुजरांवाला जिलान्तर्गत वजीरा

वाद तहसीलका एक नगर। यह अक्षा० ३२° २०' उ० तथा देशा० ७३ ४८' पू०, चनाबके बाएँ किनारे अवस्थित है। जनसंख्या ७ हजारसे ऊपर है। १८वीं सदीके आरम्भमें नूरमहम्मद नामक एक छद्मवंशीय सरदारने इस नगरका वसाया। उस समय इसका नाम रसुलनगर था। मुसलमानों अमलमें इसको धीरे धीरे उन्नति होती गई। आगिर महाराज रणजिन् सिंहने यहांके छद्म सरदार गुलाम महम्मदको युद्धमें परास्त कर नगर जीत लिया। सिधोंने मुसलमानों नाम उठा कर इसका रामनगर नाम रखा। छद्मवंश ही चलतेके समय यहा बहुतसे सुन्दर सुन्दर महल बनाये गये थे। उनका पंडहर आज भी देखनेमें आता है। द्वितीय सिधयुद्धके समय अंगरेज-सेनापति लार्ड गफने यहां (१८४८ ई०) शेरसिंहके अधीनस्थ सिध-सेनाओं पर आक्रमण किया। प्रतिवर्ग अप्रिल मासमें यहां एक मेला लगता है। १८६७ ई०में म्युनिस्पलिटो स्थापित हुई है। शहरमें एक वर्नाक्युलर मिडिल स्कूल और एक सरकारी अस्पताल २।

रामनगर—बङ्गालके २४ परगना जिलान्तर्गत एक बड़ा गाव।

रामनगर—चम्पारन जिलेके अन्तर्गत एक बड़ा गाव। यह अक्षा० २७° २' उ० तथा देशा० ८४° २२' पू०के मध्य अवस्थित है। रामनगरके राजाका प्रासाद होनेके कारण नगरको दिनों दिन उन्नति देखी जाती है। इस राजवंशके प्रति प्रसन्न हो कर १६७६ ई०में मुगल बादशाह औरङ्गजेबने राजाको उपाधि दी थी। १८६० ई०में ब्रिटिश-सरकारने भी उसे मंजूर किया था। जङ्गल-भाग ही राजाकी सम्पत्ति है।

रामनगर—युक्तप्रदेशके परैली जिलान्तर्गत औनला तहसीलका एक ग्राम। यह अक्षा० २८° २२' उ० तथा देशा० ७६° ८' पू० औनलासे ८ मील उत्तरमें अवस्थित है। इसके आस पासमें बहुतसे प्राचीन निर्देशन पड़े हुए हैं।

रामदुर्ग—मान्द्राजप्रदेशके चैलरी जिलान्तर्गत सम्भूरराज्य का एक शैलावास। यह अक्षा० १५° ६' उ० तथा ७६° ३०' पू०के मध्य विस्तृत है। १८४६ ई०में मान्द्राज

पर्वमें पहले समुद्रके सरदारसे यह स्थान पा कर वहाँ रोगप्रन्थ सेनाइके पक्षेका लाश्यावास बनाया । रामकुंठ वर्यतको अधिरपकाभूमि पर यह अवस्थित है । समुद्रपृष्ठसे इसकी ऊँचाई प्रायः ३५० फुट है ।

रामननुभा (हि० पु०) १. बोया । २. अद्भुत, लीकी । रामनवमी (स० श्लो०) रामस्व जन्मतिथिकका नवमी, मध्यपञ्चमी कर्मधारयः । चैत्रमासकी शुक्ल नवमी तिथि । चैत्र पक्षसे चान्द्र चैत्र समभन्ना होता । चान्द्रचैत्र को शुक्ल नवमी तिथिमें रामचन्द्रका जन्म हुआ था, इसी कारण इस तिथिको रामनवमी कहते हैं । इस नवमी तिथिमें यदि पुनवस्तु मङ्गलका योग हो तो वह तिथि अत्यन्त पुण्यजनक होती है । यह तिथि भनीश्वरायिनो है । अतएव इस तिथिमें मङ्गलपूर्वाक रामकी पूजा करनी चाहिये । नवमी अष्टमीविद्या होनेसे यज्ञोत्थोपा है । नवमी तिथिमें उपवास करके ब्रह्ममीमें पारण करना होता है । (तिथितल)

यह नवमी अष्टमीविद्या होनेसे निम्ननीया है । इस अष्टमीविद्या नवमीमें यदि पुनर्वसु मङ्गलका योग हो, तो भी यह दिन यज्ञोत्थोपा है, मङ्गलका अति भावर होने पर वह निम्ननीया है । यह विद्यान वैष्णवोंके लिये जानना होगा ।

अवैष्णवोंके लिये अष्टमीविद्या होनेसे उसमें उपवास साहि होगा । मङ्गलयोग वा अयोगमें कोई क्षति नहीं होगी ।

“सर्वाङ्ग श्रेष्ठान्तरः शुद्धावा न विद्यायां, अतएव अष्टमी-विद्या नवमी सनस्रहापि तोषोप्या । यदा तु परदिने पञ्चदश्यां दशमा पारण्योप्या तथा दशमोयुका नवम्युपोष्या । अवैष्णवस्तु अष्टमीविद्यैव प्राह्या, यदा तु पूर्वादिने अष्टमीविद्या नवमा परतो दशमायुता नवमी एकादशीदिने च न पारण्योप्या दशमी तथा मङ्गलयोगयोगेऽप्यष्टमीविद्यैव प्राह्या, परदिने दशम्यामेव पारण्यम् ॥”

(तिथितल)

यदि पूर्वादिने अष्टमीविद्या नवमी तथा दूसरे दिन दशमोयुका नवमी और एकादशाके दिन पारण्ययोग्य दशमी न रहे, तो अष्टमीयुक्त नवमीमें अथ उपवास चाहिये ; पुराणके मतसे जो व्यक्ति श्रीरामनवमीके दिन

उपवास और प्रतापि नहीं करते हैं उन्हें कुम्भीपाक भरणमें जाना होता है । इस कारण बाळ, वृष और भागुरकी छोड़ कर वह अथ सबकी करना चाहिये ।

“माते श्रीरामनवमीदिने मर्या विमुक्तनी । उपायत्वं न कुरुते कुम्भीपास्तु पञ्चत ॥ बन्धु रामनवम्यन्तु मुरच्छं वाहादिमुत्तुपी । कुम्भीपाकेयु भ्रंशे, पञ्चते नात्र संशयः ॥” (तिथितल) श्रीरामनवमीके दिन शाकपाम शिक्कापर तुळसी पत्र द्राप रामचन्द्रका पूजा करनेसे कोविद्युष्य फल प्राप्त होता है ।

“शाकपामशिक्कापाम तुळसी वक्रार्चिता । पूजा श्रीरामचन्द्रलक्ष्मिः कर्मिण्युपायिका ॥” (तिथितल) रामनवमीमेव (सं० श्लो०) प्रथम विशेष । अश्विमेजकी शुक्लनवमीमें यह मठ करना होता है । रामनवमीके दिन सबेरे प्रातःहस्तादि करके पहले अस्तित्वाचमपूर्वाक सङ्कल्प करना होगा । इसके बाद घर या शाकपाम शिक्कादि पर श्रीरामचन्द्रको पूजा की जाती है । पूजा विधानानुसार सामान्य अर्घ्य, अक्षतशुद्धि और पण्येयादि वैश्वपूजा करके रामचन्द्रकी पूजा करनी होती है । इस मठके प्रभावसे इस लोकेमें सत्ता प्रकारका सुखसौभाग्य और परलोकमें परमपद प्राप्त होता है ।

रामनाथ (स० पु०) रामचान्द्र ।

रामनाथ—हर्ष एक सुपरिहर्षके नाम । १. अर्द्धे ठभान-सर्वाङ्ग भादि प्रपथके प्रपेता मुहूर्त्त मुनिके गुरु । २. कारिकावकीटिण्य, तर्कस प्ररिपण्य, न्यायसिद्धांत मुकावकीटिण्य और मङ्गलबाइटिण्य नामक प्रथोके रचयिता । ३. मरपतिप्रथर्षाकी टीकाके प्रपेता । ४. मुकावकी नामक मेघवृत्तके टीकाकर्ता । ५. वीधमहोत्सवकीका और वैद्यविनोदटीकाके रचयिता । ६. रामचन्द्रके प्रपेता । ये रचनाय वैद्य पुत्र ये ।

रामनाथ चठवला—काठभङ्गपुतिप्रथोच नामक व्याकरण की टीकाके प्रपेता ।

रामनाथ चौबे—पृष्ठेष्टेष्टुशेकरका टीका, पृष्ठेष्टेष्टेष्टुशेकरका सिद्धान्तमूययकी टीका और पृष्ठेष्टेष्टेष्टुशेकरका मञ्जुपाकी टीका भादिके रचयिता । इन्होंने मिश्रपुर के प्रसिद्ध चौबेवंशमें जन्म लिया था ।

रामनाथ तर्कसिद्धान्त—बंगालके नवद्वीपवासो एक प्रसिद्ध नैयायिक । 'बुनो रामनाथ' नामसे इनकी प्रसिद्धि थी । रामनाथके असाधारण पाण्डित्यका परिचय पा कर दूर दूर देशके छात्र उनके निकट पढ़ने आने थे ।

रामनाथ नितान्त दृष्टि और निरावलम्ब थे । उनमें ऐसी शक्ति नहीं, कि वे छात्रोंको खर्च दे कर पढावे । यह बात उन्होंने छात्रोंसे खोल कर कह भी दी थी । परन्तु छात्रगण उनके शिक्षाकीशलसे इस प्रकार मुग्ध हो गये थे, कि वे अपने खर्चसे उनके टोलमें पढ़ने लगे । उम समय नवद्वीपके प्रधान प्रधान अध्यापकमाल ही राजा कृष्णचन्द्रसे वार्षिक वृत्ति पाते थे । उन्होंने रामनाथसे भी राजाके निकट जाने और वार्षिक वृत्ति लेनेके लिये प्रार्थना करने कहा । शिक्षालब्ध अर्थसे जीविका निर्वाह करना अत्यन्त अपमानजनक समझ उन्होंने कभी किसी से कोई वस्तु जाँचना न की । नगरके भोगविलासमें कही उनका खर्च न बढ़ जाय, इस आशङ्कासे वे नवद्वीपमें बाहर एक भाँपड़ी बना कर रहने लगे थे । उनकी सरला पतिप्राणा सहधर्मिणीको जब तरकारी दाल आदि नहीं मिलती, तब इमलीके पत्तोंको ही सिम्हा कर मातके साथ स्वामीको खाने देती और आप भी खाती थी । महाराज कृष्णचन्द्र रामनाथका असाधारण पाण्डित्य और सांसारिक असच्छलता मालूम कर एक दिन स्वयं उनकी कुटी पर पधारे । राजाने नैयायिक जीसे प्रार्थना की, कि मैं आपकी वार्षिक वृत्ति स्थिर कर देता हूँ आप उसे स्वीकार करेंगे । किन्तु रामनाथ वृत्ति लेनेसे इन्कार चले गये । आखिर नवद्वीपपतिने रामनाथकी पत्नीसे प्रार्थना की । ब्राह्मणोंने उस समय राजासे कहा था, 'बच्चा ! मुझे तो किसी वस्तुका अभाव नहीं । मेरे पहननेका कपडा है, वरमें इमलीका पेड है । जब मेरे स्वामी हैं तब अभाव किस चीजका ?' जब ब्राह्मणोंको भी प्रलुब्ध न कर सके तब वे राजाके पास आये और उन्हें बहुत अनुनय विनय करके दान लेनेके लिये वाध्य किया । राजा कृष्णचन्द्रको छोड कर रामनाथने और भी कितने राजाओं और महाराजाओंका दान अप्राप्त किया था । वे सगल, विनयी और विद्यानुरागी थे । अहङ्कार तो उन्हें छू तक भी न गया था ।

रामनाथ विद्यावाचस्पति—एक विख्यात टीकाकार । उन्होंने अभिज्ञान शाकुन्तलटीका, काव्यप्रकाशरहस्यप्रकाश, स्मृतिरत्नावली, दायभागविवेक या दायरहस्य तथा १६२३ ई०में संस्कारपद्धतिरहस्य नामक भवदेवमृतसंस्कारपद्धतिकी टीका और १६२३ ई०में विक्राण्डविवेक नामक अमरकोषकी टीका लिखी । इस श्रेयोक्त ग्रन्थमें उन्होंने कातन्तररहस्य, काव्यरहस्य, लीलावतीरहस्य, ज्योतिषरहस्य, समयरहस्य आदि ग्रन्थ उद्धृत किया था ।

रामनाथ सिद्धान्त—पट्टचक्रकर्मदीपिका नामक पूर्णानन्द कृत पट्टचक्रकर्मकी टीकाके रचयिता ।

रामनाथ होयसलाधोश्वर—देवगिरिके एक राजा । १२१३ से १३१० ई० तक इन्होंने राज्य किया था । ये सामवेद-भाष्यके प्रणेता भरतस्वामीके प्रतिपालक थे । इनका दूसरा नाम रामचन्द्र था । यादवराजवंश देखो ।

रामनाथ—मान्ड्याजके मदुरा जिलेका एक उपविभाग । इसमें रामनाथ और शिवगङ्गा राज्य पडते हैं ।

रामनाथ—१ मान्ड्याजप्रदेशके मदुरा जिलान्तर्गत एक भूसम्पत्ति । यह अक्षा० ६°६' से १०°६' उ० तथा देशा० ७९°५६' से ७६°१६' पू०के मध्य अवस्थित है । भू-परिमाण २१०४ वर्गमील और जनसंख्या ७ लाखसे ऊपर है । इसके उत्तरमें शिवगङ्गा और तिरुमङ्गलम, पूर्वमें तञ्जौर और पारुप्रणाली, दक्षिणमें मन्नार उपसागर और पश्चिममें तिन्नेवली जिला है ।

यहाँके सरदार मरावर जातिके पूज्य और प्रधान है । वर्त्तमान पोक्लूर ग्राममें उनकी राजधानी थी । १८वीं सदीमें रामनाथमें राजधानीके चले आनेसे पोक्लूर नगर श्रोहीन हो गया । १८वां सदीमें सरदारोंने रामनाथमें आ कर परिखा, प्राचीर और दुर्गादि द्वारा नगरको सुरक्षित किया । वह प्राचीर मिट्टीका बना है तथा २७ फुट ऊँचा और ५ फुट चौडा है । अभी वह प्राचीर टूट फूट गया है तथा खाई भी भर दी गई है । दुर्गके भीतर राजप्रासाद था ।

१६५६ ई०में राजा तिरुमलके मरने पर दक्षिणात्यमें विश्टङ्कलता उपस्थित हुई । रामनाथके सेतुपति राजगण इस समय वे रोकटोक राज्य करते थे । १८वीं सदीके आरम्भमें यहाँ कई वार दुर्भिक्ष पडा जिससे

राज्य नीपट छग गया । इसके बाद धरविषयाइने राम
नादराज्य छार कर होने पर मा गया । पाछे १७२६
६०में यह राज्य दो भागोंमें बट गया । प्रथम उत्तराधि
कारिको $\frac{3}{5}$ अर्ध और एक विद्रोही सस्तानको $\frac{2}{5}$ अर्ध
मिखा । सामन्तराजका नाम गिबपद्रुपज था । १७६२
६०की संचिक अनुसार मार्कटके अधीनस्थ पन्निगाटोको
अद्रुदेओ अधिकांशमें खानेक निये अद्रुदेओ-सनापति कर्नल
मार्टिन रामनाद कोठने और राजक निर्धारण करने गये ।
१७६५ ६०में विद्रोही राजाको तबत परस उतार उर्द
गन्धीभायमें मान्द्राज भेज दिया गया । १८०३ ६०में अ ग-
रेकोन उक्त राजाको बड़ा बहनक हाथ राज्यभार सौया ।
काठगारमें ही सेमुपतिको मृत्यु हुइ यो । १८०३ ६०में
रामनादके अन्तिम राजा सिंहासन पर बैठे । उनकी
नापालकी तक राज्य कोट भाय बाइसको बेधरेधमें रहा ।
इस समय कृषिको उत्पत्ति करनेमें सवा भाठ लाय और
श्रष्ट युक्तानमें १४ लाख रुपये बर्बा हुमा । १८८१ ६०में
उन्होंने बानीग हा कर शासनकार्य अपने हाथ लिया ।
उस समय राज्यकी भाय ५ लाखस ६ लाख रुपये तक
हो गइ यो । करोब चार लाख रुपये जमा मा था । पांच
वर्ष बाद मगद रुपये तो बिलकुल बर्बा हो गया, साथ
साथ राज्य पर श्रष्ट भी हो गया । वर्तमान राजा बाबा
निग हैं । द्वितीय शासनकार्य परिचालित हाता है ।

२ उक्त जमीन बाराकी एक तहसील । जनसंख्या
लाखसे ऊपर है । इनमें रामनाद, कोलकताय और रामे
शयरन नामक तीन गढ़ सगत हैं । यहाँकी जमान
उपजाऊ न होनेके कारण कम फसल लगती है ।

३ उक्त राज्यका एक प्रधान शहर । यह अक्षा० ६
२२' उ० तथा देशा० ७८ ५१ पू०के मध्य अवस्थित
है । जनसंख्या १५ हजारक करार है । रामेश्वर जानक
याज्ञिको क निये यहाँ बसा है । यहाँक राजाओ की
उगति सनुपति है अर्थात् वे लोग हा रामेश्वर-सनुबन्ध
क एकमात्र अधिकांश हैं । १७३२ ६ में अबरक निमधने
इस मगरको अधिकार किया था । यहाँका ठांदाकोट
अओ मजबूतधामें पड़ा है । युगक मोतर राजमदन
था ।

रामनामग्रत (सं० ह्यो०) रामनाम पद्य ग्रंथ । रामनामरूप
ग्रंथ, सिर्फ रामनाम ग्रंथ करना ।

रामनामो (हि० पु०) १ यह चारद, पुपट्टा या घोडी भादि
जिस पर 'राम राम' छपा रहता है और जिसका व्यय
हार रामक अक्ष लोग इसलिये करते हैं जिसमें रामका
नाम हरवम भांशोंक सामने रहे । इसी प्रकार कुछ
कपड़ों पर कल्प या गिबका नाम मा छपा रहता है ।
२ गलेमें पहननाका एक प्रकारका हार । यह प्रायः सोम
का होता है । इसमें छोटे छोटे कई चिकड़े या पान
भादि होते हैं जो भायसमें एक दूसरेके साथ ज जोरके
रुई छोटे छोटे टुकड़ों या लकड़ोंसे जुड़ होते हैं । इसके
बोचमें प्रायः एक पान होता है जिसमें राम शब्द, किसी
देवताको मूर्ति अथवा चरणचिह्न अंकित होता है और
जो पहनने पर छातो पर लटकता रहता है । इसीसे
इसे रामनामो कहते हैं ।

रामनारायण (सं० पु०) वैद्याकरग्रन्थ ।

रामनारायण—१ अनुमितिकिरण तक्षरोप, तक्षवानु
सम्भानदीका, पञ्चदीवीका, मगयदुगीताप्रकाशिनो,
पनमाडिकोसिन्धुनोमासा विधाननौकाटाका, सफळ
पुत्ति, सर्ववैद्यार्थनिर्णयटीका भादि ग्रन्थक प्रमेता । २ गुद-
चन्द्रोद्यकीमुनीक रचयिता । ३ प्रमिताक्षरा नामक
मुद्रुत्तचित्तामणिक टीकाकार ।

रामनारायण (राजा)—पटनाक एक हिन्दू शासनकर्ता ।
नयाब अजोबर्दा याँके जमानमें १७५३ ६०की राजा
जानकीरामकी मृत्यु होने पर नयाबन उनक चार पुत्रोंको
विजमत दे कर समवेदना प्रकट की । उर्दाल इस समय
राजा पुर्नारामको सत्तापरिचंबपाका शायानीमें स्थापि
मायसे निपुक्त किया तथा राजा रामनारायणको मायिय
माजिम बनाया ।

विहारक नायब नामिम राजा रामनारायण सिराजु
इलाक विरुद्ध कमी काड़े नहीं हुए । प्रतिपादक अना
पदों याँका नाम स्मरण कर थ हमेजा नयाबके नातीकी
भनाइ बाहन थे । पनामो गुडक कुछ पढ़के मिराज
द्वारा भेज गये करारमो मनापति सा तब उनम सिद्धे, तब
पटनामें राष्ट्रियद्वयकी आशुदास मारजाकरन ह्वाएक

साथ मलाह कर मेजर कूटको बहा भेजना चाहा । राम-
नारायणने विवाद मिटानेके लिये अंगरेजी सेनाके पहु-
चनेने पहले ही फगसी सेनादलको अयोध्या नवाबके
राज्यमें भेज दिया । रामनारायणके साथ बचेडा खड़ा
कर उन्हें छल बलसे राज्यच्युत करना ही स्थिर हुआ
था । कूटको भी वैसे ही करने कहा गया था । किन्तु
रामनारायणने अधीनता स्वीकार कर ली जिससे सब
गोलमाल मिट गया ।

सिराजके शासनसे तंग था कर मीरजाफर और
राजा दुर्लभरामने आपसमें मेठ कर लिया था, परन्तु
दोनों ही अपने अपने स्वार्थसाधनमें लगे हुए थे । इस
कारण मीरजाफरको जो सिंहासन मिला उससे कोई लाभ
न देण कर दुर्लभराम मन्त्रणाजाल फैलाने लगे । एक
तो रुपयेका अभाव, दूसरे दुर्लभरामका पडयन्त्र, इससे
कोई आशाप्रद फल न देख मीरजाफर बचावका रास्ता
दृढ़ने लगे । इसी समय अंगरेजी गुप्तचरके हाथ अलो-
वर्दी बेगमने जो पत्र रामनारायणके पास भेजा गया था
वह संयोगवश मीरजाफरके हाथ लगा । उस पत्रमें
अयोध्याके नवाबके साथ रामनारायणका एक योग हो
कर मीरजाफरको निकाल भगानेका प्रस्ताव था ।

बादसके कहनेसे मीरजाफर राजा दुर्लभरामके साथ
फिरसे मेल कर विहार जानेकी तैयारी करने लगे । राज-
महलमें आनेसे आपसका मनमुटाव दूर हो गया और
मीरजाफरने पटना जानेका प्रस्ताव किया । क्लाइव भी
मौका देख कर पूर्णप्रतिश्रुत रुपयेका दावा कर बैठे ।
क्लाइवके विशेष आग्रह करने पर मीरजाफर दुर्लभरामको
बुलानेके लिये वाध्य हुए । क्लाइवका अनुरोध पत्र पा
कर दुर्लभराम दलबलके साथ पहुंचे । अंगरेजोंके
प्राय २३ लाख और परवर्तियों किस्तके १६ लाख रुपयेके
लिये उन्हें कहा गया । इस समय कलकत्तेके दक्षिण
कम्पनीकी जमींदारीके लिये भी फरमान निकाला गया ।

रामनारायणको पदच्युत कर अपने भाई मोरकाजम
खाँको विहारका नायब-नाजिम बनाना ही मीरजाफरका
उद्देश था । किन्तु दुर्लभरामके परामर्शानुसार क्लाइव-
ने नवाबको समझाया, कि रामनारायणके पास भी
थोड़ी सेना नहीं है, फिर वे अयोध्याके नवाबसे भी

सहायता पानेके लिये प्राणपणसे चेष्टा कर रहे हैं और
यदि मराठोंसे भी सहायता मिल गई, तो आप भारी
मुश्किलमें पट जायगे और यदि फरासीदल वा पहुंचा,
तो अंगरेजी सेनाको आत्मरक्षाके लिये कलकत्ता लौटना
पड़ेगा । अनपत्र इस समय मेरे ख्यालसे आपसमें
मेल कर लेना ही अच्छा है । मीरजाफर भी उनकी बात
मान ली ।

इसके बाद मीरजाफर ससैन्य पटनाको चल दिये ।
आगेमें दलबलके साथ क्लाइव, बीचमें दश हजार सेनाके
साथ राजा दुर्लभराम और सबसे पीछे ४० हजार सेना,
इस प्रकार सज्जज कर मीरजाफर पटना पहुंचे । राम-
नारायण पहले ही से आत्मरक्षाके लिये तय्यार था ।
क्लाइवका मिलनात्मक पत्र पाते ही वे पहले क्लाइव और
पीछे वाट्सके साथ आ कर नवाबसे मिले । इस समय
मराठा द्वारा भेजे गये लोगोंने पटनेमें आ कर २० लाख
रुपये बंगालके चौबट्टे लिये दावा किया । नवाबका
हाथ खाली था, इस कारण वे रामनारायणसे मेल करने-
को वाध्य हुए । रामनारायणने नवाबके रोममें पहुंच कर
उचित सम्मान दिखाया था । पटनेमें मीरजाफर खाँका
दरवार बैठा । मीरन नाम मात्रका नवाब हुए । राम-
नारायणने डिपटी नवाब पद पर स्थायी रह कर नवाबसे
बहुमूल्य खिलअत पाई । इस उपलक्षमें वाकी रुपये आदिके
लिये उन्हें ७ लाख रुपये देने पड़े थे ।

१७५६ ई०में शाहजादा बद्दाल पर चढ़ाई करनेकी
इच्छासे विहारकी सामा पर आ धमके । उन्होने
फरासी सेनापति ला-को छात्रपुरसे सहायतार्थ बुलाया ।
विहारके डिपटी नवाब रामनारायण अभी भारी ऊहा-
पोहमें पड गये । नवाबी सेना वा अंगरेजी सेना उस
समय भी मुर्शिदाबादसे आई नहीं थी । नवाबकी जीत
होनेसे उनके हकमें अच्छा न होगा, इस आशङ्कासे
रामनारायणको शाहजादाके साथ मिलनेका साहस न
हुआ । किकर्त्तव्यविमूढ़ हो वे पटना-कोठीके अध्यक्ष
आमियटसे सलाह लेने गये । वहां यही स्थिर हुआ,
कि अङ्गरेजी सेना जब तक लौट न आवे, तब तक शाह-
जादासे मेल कर रहे, पीछे सेना आने पर जैसा अच्छा
समर्थन वैसा करे । तदनुसार वे शाहजादाके खेममें

जा कर उनकी मजबूतता स्वीकार करना हो चाहत थे, कि शाहजादाकी सेनाने पटनाको घेर लिया। रामनारायण कोइ उपाय न होकर दरवाजा बंद कर नगरकी रक्षा करने लगे।

एकर सन्धिपत्र प्रस्ताव करने लगा। बंगालस सहामुखाई सेना पहुच गइ। बस सब बया था, राम नारायणने बड़े उत्साहित हो शाहजादा शाह आसमक साथ युद्ध ठान दिया। शाही सेना युद्धम पीरता न दिख सकी। शाहजादा मनो अर्धमायस विपन्न थे। सेना भी उम्ह छोड़ भागा जा रही थी। उम्होंने झाबर को एक पत्र लिखा कि यदि रामनारायण मनो कुछ रुपये दें, तो मैं यह प्रदेश छोड़ कर चला जा सकता हू। तद्नुसार मोरनको मुका कर पटना भेजा गया और झाबर तथा रामनारायणन अमीरातों, साथ कुछ इतजाम ठीक कर लिया। शाहजादाके पास १० हजार रुपये भेजे गये। अनन्तर सब समतमत करके १६५१ ई०के सुन मासमें झाबर कखकला लाटे।

१६५० ई०में शाहजादम दूसरी बार बङ्गाल पर आक्रमण करनेकी तैयारी करते लगे। जियटो नवाब रामनारायणको मालूम हुआ कि अन्दरूँ सेनाक साथ पङ्गोप सेना भा रही है, तब उम्हें कुछ दाइस हुआ और आश्चर्यका लिये अपनी सेनाको भी पुष्टि करनी मग। १६५१ जनवरीको पङ्गोपसेनाके शुकड़ीगलीमें पहुचने पर नवीन बाइगाह पटनाक करीब करीब भा गये। राजा रामनारायण भी बड़े वृध्तास कार्य कर रह थे। ये उमी शारोंकी सलैम्य बुना कर और नया सेनादूक संभ्रम कर पटनाक बाहर युद्धके लिये इट गये। कवच नवाबके आदेशानुसार पङ्गोप सेनाके आगमन तक ठहरै हुए थे। किन्तु छाटो छोटी झड़ा प्रति दिन चल रही थी। खीम जी रोहिताक अथा नरथ भ्रमगामी पङ्गोप घुड़मवार इन राजाक साथ मिल गया। राजा रामनारायणन (या) फरवरीको मसिमपुरक विस्तोर्ष मैदानमें अपनी सेनाको आगे बढानका हुकुम दिया। घमसान युद्ध बाइ रामनारायण परास्त हुए।

शाह आसमक पक्षमें दोसरा जी और भासास्त जी मारे गये। जमा बार पक्षमाल सिंह तथा दो एक और

पहुँचे हा बाइशाहक हथमें मिल गये थे। खीम जी और राजा मुस्लीपर कामगार नाके बिसय युद्ध करके बन्दी हुए। कामगारने बँहेंसे रामनारायणको पायल कर दिया था। युद्धकी शोवाबस्थामे बसान बकम भादि कई अङ्गरेज सेनापति जी राजाको सहायतामें आगे बढ़े थे, युद्धक्षेत्रमें घेत रहे।

युद्ध अयके बाद बाइशाहने जितने भाइयो मरे थे उम्हें बन्न देनेका हुकुम दिया। रामनारायण यद्यपि पुरो तरह घायल हुए थे, तो भी ये नगरकी मन्थी तरह रक्षा करते थे। उम्होंने सचिका प्रस्ताव करके राजाके पास दूत भेजा। उम्होंने यह भी कहा कि पायल होनेके कारण ये बाइशाहके निकट जानेमें बिककुल असमर्ण हैं। बाइशाही सेना पहले नगरके बाटो और लूट पाट कर पीछे नगरकी लूटने लगा। इस बार पहलेसे नगररक्षाका पूरा प्रबध था जिसमें शाही-सेना कुछ न कर सकी। पीछे पङ्गोप सेनादूकके साथ युद्धमें शाही सेना परास्त हुए।

नवाब मोरकासिमन बङ्गालको मसनद पर बैठ कर राजकर्मचारियोंसे अर्ध संभ्रम करना शुरू कर दिया था। रामनारायणक अनुम पेम्बयकी बात सुन कर नवाबकी अर्धपिवासा बढ़ गइ। व उनका बजाना भवनानेका उपाय सोचने लगे। बाइशाहके खल जनि पर मोरकासिमन रामनारायणस विहायपदका कुछ हिसाब मांग भेजा। राजमहलमन सोचा, कि यदि रामनारायण तबब परसे उत्तारे कार्य, तो नवाबो-पर उम्होंकी मिल सकता है। रन मायास इम्होंने नवाबकी खुशामद कर क कामअपन्न अधनका मार भयने हाथ लिया। फूट नातिथ राजा रामनारायण हिसाब देनेमें राजमहलमन करने लगे। उभर दो अंगरेज-सेनापतिको भयने इलमें जाने की भी उनकी कोशिश थी। झाबरक साथ बन्गुल्ल स्मरण करके भागिसट टैंमें बर्नस फूटकी पटना जात समय हिसाब किताबक प्रति बन्गुल्ल राजका दूह दिया था। दोनों सेनापतिन रामनारायणको नवाबक दररो इनस बधानकी सहायता की थी।

एकर मोरकासिमने अंगरेज-नयनेरके पास राम-

नारायणकी खुगली छाई कि "रामनारायण सरकारी रूपया बहुत हड़प कर गया है और सरकारी खजाना मनमाना खर्च करता है। अतएव मेरा विचार होता है, कि उससे कुल रूपया खुगाया जाय।" भान्सिस्टार्टने रूपयेके लोभमें पड कर नवाबकी बात पर विश्वास कर लिया। भान्सिस्टार्ट और उनके मतावलम्बियों तीन सदस्य नये नवाबका पक्षसमर्थन करनेमें जैसे अभिलाषी थे उनके प्रतिपक्षदल भी वैसे ही नये नवाबके दाय निष्ठा करनेमें लगे थे। दोनों पक्षमें मतभेद हो जानेसे रामनारायण हिमाव न दे सके। अंगरेज सेनापति और नवाबके बीच ईर्ष्यानि दिन पर दिन घघरती ही गई।

शाहशालमके लौटने पर नवाब पटनादुर्गमें वाद-शाहके नाम खुतवापाठ और मुद्राका प्रचार करेंगे, इस प्रकार सलाह कर उन्होंने अंगरेजसेनापतिसे कहा, कि दुर्गद्वार परसे सिपाही और अंगरेज पहरेवालोंको अलग कर रहे हैं। कूटने तदनुसार कार्य न कर कहला भेजा, 'ये लोग नवाबकी सेना हैं नवाबकी आज्ञा पालन करनेको हमेशा तय्यार हैं।' नवाबने इस अपमानजनक अवस्थामें दुर्गमें प्रवेश कर खुतवा पढ़ना वा मुद्राप्रचार करना अच्छा न समझा। रामनारायणकी ओरसे सेनापतिको समझाया गया है, कि नवाबने पटना पर बलपूर्वक अधिकार करनेका सङ्कल्प किया है। नवाबके गहरी रातको कुछ सिपाही ले कर दूसरी जगह चले जानेसे सेनापतिका संदेह और भी मजबूत हो गया। वे बड़ी सावधानीसे नवाबकी गति विधिका पर्यवेक्षण करने लगे। कूटके व्यवहारसे मोर कासिमने अपनेको अपमानित समझा। उन्होंने सेनापतिके दुर्व्यवहार और रामनारायणकी बातको रजित कर भासिस्टार्टको विचलित कर दिया और यह लिख भेजा, कि रामनारायण बिना नवाबकी अनुमतिके सिका डालता और उसका प्रचार करता है। अतएव सूचेदारी पद यदि मुझे मिले, तो मैं रामनारायणको पदच्युत कर उससे हिसाब किताब जल्द ले सकता हू।

गवर्नर भासिस्टार्टके आदेशसे पटनाकोठीके अध्यक्ष मगधरकी देखरेखमें तथा कप्तान कार्टेयरकी अधिनायकतामें एक दल अंगरेजी-सेना और रख कर कूट और

कर्नाक कलकत्ते आये। अंगरेजी-सेनाके पटनासे जाते ही मोरकासिम कागजपत्रका हिमाव देनेके लिये रामनारायणको तंग करने लगे। हिमाव साफ साफ न दे सकनेके कारण रामनारायण कैद किये गये। पीछे तरह तरहका कष्ट दे उनके घरसे ७ लाख रूपयेकी सम्पत्ति ले ली। आखिर राजाके बंधुवाधियोंकी भी उन्होंने परेजान किया और फिर भी उनसे ७ लाख रूपये वसूल किये। जिन्होंने कुछ भी रामनारायणको मदद पहुंचाई थी उन पर जु्रम किया गया। रामनारायणके मित्र जागोरदार राजा सुन्दरसिंह और दीवान गद्दाविण्णु, रामनारायणके भाई धोराजनारायण तथा चराध्वश राजा मुरलोधर अशेष यंत्रणा पा कर बन्दिवेगमें मुर्शिदाबाद भेजे गये। पटनेके कौतवाल ईशा खँ और प्रधान कोठीवाल मनसाराम गाहू तथा सभी धनी नागरिकोंका धरतन नवाबके हाथ लगा। इतभाग्य रामनारायण पटनेमें बन्दी हुए और उनका सर्वस नवाबने छीन लिया।

अधुआनालाके दिनारे जब अंगरेजोंके हाथ मोरकासिम परास्त हुए उसके कुछ दिन पहले १७६३ ई०के अगस्त मासमें नवाबने रामनारायणके-गलेमें बालूसे भरा घडा बांध कर गद्दामें डुबा देनेका हुकुम दिया। उसके साथ साथ और भी कितने व्यक्ति नवाबकी फ़ौर दण्डाज्ञासे यमपुर सिधारे थे।

राजा रामनारायण एक विशेष शिक्षित मनुष्य थे। पारसी भाषामें उनका अच्छा दबल था। उनकी बनाई पारसी और उर्दू कविता आज भी पाई जाती है। कवित्वशक्तिके परिचयस्वरूप उन्होंने 'मौजुन' की उपाधि पाई थी।

रामनारायणजीव—एक राजाका नाम।

रामनारायण तर्कपञ्चानन—नवद्वीपके रहनेवाले एक प्रसिद्ध नैयायिक।

रामनारायण तर्करत्न—एक वैदिक ब्राह्मण। कलकत्ताके दक्षिण २४ परगनेके हरिनामि ग्राममें १७४५ शकको इनका जन्म हुआ था। रामधन शिरोमणि इनके पिता थे। कुछ समय इन्होंने ग्रामस्थ चतुर्पाठीमें संस्कृत पढ़ा। पीछे वे कलकत्तेके संस्कृत कालिजमें भर्त्ती हुए। घडा

पढ़ना समाप्त कर दो वर्षोंक भातर ही उसा विद्यालयमें शिक्षकका काम करने लगे। १८८५ ई०में इनका वैशाल्य हुआ।

तर्कराम महाधर्मने कालेजमें पढ़ते समय १८५२ ई०में पतिप्रतीपाष्याय तथा विद्यालय धर्मोद्देशके एक वर्ष बाद भर्षात् १८५४ ई०में कुञ्जीनकुञ्जसर्वस्वका रचना की। इसक बाद इन्होंने क्रमशः रत्नावली, वेर्णासहार, शकुन्तला तवनादक, मानसीमाधय और स्वमणाहरण नामक छह नाटक बनाये हैं जो आज तक प्रकाशित नहीं हुए हैं।

प्रतिप्रतीपाष्याय, कुञ्जीनकुञ्जसर्वस्वनाटक और नवनाटक किसी प्राचीन पुस्तकके भाषार नहीं किये गये हैं, ये सब उनके स्वकपोककल्पित हैं। प्रथमोक्त प्रबंध और द्वितीय नाटकको रचना कर इन्होंने रङ्गपुरके अमी वारस पाठ्याधिकार पाया था।

रामनारायण महाधर्म—कारिकावली नामक व्याकरणक प्रणेता तथा कल्पद्रामके पुत्र।

रामनारायण शर्मा—सारस्वतप्रक्रियारीकाके रचयिता। रामनिधि राय—एक विख्यात कवि। १७४१ ई०में पाण्डुभा के पास बंषावा गाँवमें इनका जन्म हुआ। पाछे ये कलकत्तेमें रहने लगे। १८३४ ई०में उनको मृत्यु हुई। इनक बनाये संगीत निघण्टु ग्रन्थ नामक प्रसिद्ध हैं।

निधिराम गुप्त रत्ना।

रामनिधि शर्मा—प्रार्थनाशतकक प्रणेता तथा बछराम शर्माके पुत्र।

रामभूपति (सं० पु०) रामभद्र।

राममौमी (हि० स्त्री०) रमनवनी रत्ना।

रामपति—सद्भावार्थकक रचयिता।

रामपर्दा—बम्बई प्रेसिडेन्सीके आठवापर प्रांतक अमृतगंत एक छोटा सामन्तराज्य।

रामपा—मन्दाज प्रदेशके गोदावरी जिलेके अन्तर्गत एक पहाड़ी भूभाग। यह अक्षा० १७ १६ से १७ ४६ उ० तथा देशा० ८१ ३२ से ८१ ५८ पू०के मध्य विस्तृत है। भूपरिमाण ८०० वर्गमोड है।

यह पहाड़ी प्रदेश गोदावरी नदीके उत्तरी किनारे राजमहेश्वर १० कोस उत्तरसे ढ कर सिद्धे मन्दी तक फैला हुआ है। इस पर्व प्रदेशके पृथिव्यसरकारकी अमी

१२३८) व० राज्यल मिळता है। पहले यह स्थान किसी मनसबदारको जागीरमें दिया गया था। उसे शासन कार्य चलानेमें असमर्थ देख प्रजा बागी हो गई। १८५८ ई०स लगायत १८३२ ई० तक विद्रोहीजन घोर अत्याचार करना आरम्भ कर दिया। अ गरैम-राजसे मनसबदारकी सहायतामें एक दल सेना भेजी। १८७६ ई०में यहाँ विद्रोहको पुनः सूचना हुई। १८८० ई०के दिसम्बर मास तक विद्रोहिय दल स्थानोंमें अत्याचार करता रहा। आखिर दलपति वेन्ट्रियाके मारे जाने पर विद्रोहिय दल वितर बितर हो गया। मनसबदार बन्दी हो कर गोपालपुर भेजा गया। उसकी जागीर अ गरैमने जप्त करली।

स्थानीय शैलमाकाकी ऊ चाइ प्रायः ४ हजार फुट है। सबसे ऊँची चोटी दमकोरडा समुद्रके तटसे ४४७८ फुट ऊँची है। यहाँ कोया नीर रेड्डी आठिका बास है। तेलगू और कोइ उनको भाषा है।

रामपारली—मध्यप्रदेशके मालवा राजमन्त एक नगर। रामपाठ (हि० पु०) मोक्षकी आठिकी एक प्रकारकी भाङ्गी। यह आसाम देशमें होती है और इसकी पत्तियो तथा छात्रस बहोके लोग रंग बनाते हैं।

रामपाळ—पूर्वबङ्गकी प्राचीन राजधानी। बङ्गके सेन वंशयोग राजा बहाससेन यहाँ राज्य करते थे। प्राचीन बिक्रमपुर सरकार या वर्तमान ढाका जिलेक अमृतगंत मुख्यालय महकमेसे २ कोस पश्चिम अवस्थित है औ अक्षा० २३ ३८ उ० तथा देशा० ९० ३२ १० पू० मध्य पड़ता है। अमी यह नगर एक छोटे गाँवमें परिवर्त हो गया है, प्राचीन ससुधि अब न रही। केवल रामपाळ विमो और कुछ विध्यस ईदो की मोवार बस प्राचीन कीर्तिका घोषणा कर रही हैं। उन सब प्राचीन मीनारों से लोग ईंटे छा कर घर बनाते हैं।

बङ्गाधिप बहाससेनने रामपाळमें राज्य किया था। विष्णु गौडपति बहाससेन और उनके पुत्र जयजयसेन गौडनगरमें, तथा परचरी राजगण नदिया राजधानीमें आ कर राज्य करते थे। विस्तृत विषय बहाससेन और देवराजके ग्रन्थमें हेको।

अमी रामपाळ और उसके उपकण्ठस्थित अबनुद्धा

पुरमें जो सब ध्वंसावशेष पड़े हुए हैं उनमें स्थानीय हिन्दू-राजाओंके कीर्तिविषयक कितने प्रमाण मिलते हैं। स्थानीय एक बड़ी मीनार बल्लालसेनका प्रासाद कहलाती है। रामपालनगर और उसके सीमांतवर्तों अपरापर ध्वंसराशि खोद कर यदि वहांकी ईंट और दीवार आदि देखो जाय, तो मालूम पड़ेगा कि, एक समय यहां बहुत बड़े बड़े महल थे।

अभी जो सब ध्वस्तप्राय कीर्तिराशि स्थानके पूर्व गौरवकी घोषणा करती है उनमें मुसलमान फकीर बाबा आदमकी मसजिद उल्लेखनीय है। वह बादशाह फतेहशाह बिन सुलतान महमूदके जमाने (१४७५ ई०)में बनाई गई थी। मसजिदमें दो बड़े बड़े पत्थरके खंभे हैं जिन्हें लोग बल्लालसेनकी गदा कहते हैं। उसकी गठन प्रणाली देखनेसे अनुमान होता है, कि वह हिन्दूमन्दिरकी तोड़ फोड़ कर बनाई गई है। मसजिद अभी टूटी फूटी अवस्थामें पड़ी है।

बाबा आदमके सम्बन्धमें एक प्रवाद इस प्रकार प्रचलित है। अबदुल्लापुरके निकट कमाई-चट्टग्राममें एक मुसलमान रहता था। उसे कोई संतान न होनेके कारण वह हमेशा दुःखित रहा करता था। एक दिन एक फकीर उसके यहाँ माँग माँगने आया। उसने यह कह कर लौटा दिया, कि अल्लाहने मुझे एक भी संतान नहीं दिया है, इसलिये मैं किसीको भिक्षा नहीं देता। अल्लाहकी निन्दा सुन कर फकीरने उसे आशोर्वादि दिया, कि तुम्हें एक पुत्र होगा। जाते समय वह यह भी कह गया था, कि पुत्र होने पर अल्लाहके उद्देशसे एक बैलकी बलि देनी होगी।

कुछ समय बाद उसके एक पुत्र हुआ। जब वह बैलकी बलि देनेको तैयार हुआ, तब गावके लोगोंने उसे रोका। आखिर गावके बाहर एक जंगलमें जा कर उसने बलिदान दिया। जानेयोग्य मांस ले कर वह घर लौटा। राहमें आते समय एक चोलने भ्रष्टा मारा और वह मांस ले कर बल्लालसेनके महलके सामने गिरा दिया। राजा बल्लालको जब कुल हाल मालूम हुआ, तब उन्होंने गोदत्याकारीके पुत्रका वध करनेका हुकुम दिया। मुसल-

मान पुत्रको ले कर रातेरात भागा और मकामें हजरत आदमके सामने आ कर अपना दुखड़ा रोशा।

विधर्मोंके अत्याचारसे प्रपीडित इस्लामधर्मावलम्बियोंकी रक्षाके लिये हजरत आदम ६७ हजार शिष्य ले कर रामपाल आये। बल्लालसेनके साथ फकीरका घोर युद्ध हुआ। युद्धमें फकीरकी हार हुई। युद्ध आरम्भ होनेके पहले बल्लालने अपने घरके सामने एक अग्निकुण्ड खुदवा कर राजकुलाङ्गनाओंसे कहा था, "मेरे निकटसे यह कबूतर यदि तुम लोगोंके पास आवे, तो जानना कि मैं युद्धमें मारा गया। उस समय तुम सभी अग्निकुण्डमें कूद कर अपने सतीत्वकी रक्षा करना।" बल्लाल फकीरको मार कर ज्यों ही छान करनेको पुष्करिणीमें पड़े, त्यों ही उनके कपड़ेमें लपेटा हुआ कबूतर उड़ गया। कबूतरके राजमहलके सामने पहुँचते ही राजपुरकी कुलाङ्गनाओंने अग्निकुण्डमें कूद कर प्राणत्याग किया। घर लौट कर जब बल्लालसेनने देखा, सभी गृहस्थकुलनारियोंने प्राण विसर्जन कर दिये हैं, तब आप भी उसी अग्निकुण्डमें कूद कर भवसागरसे पार उतरे। वही हजरत आदम पीछे बाबा आदम नामसे प्रसिद्ध हुए। उनके मकबरेके ऊपर वर्तमान मसजिद खड़ी है। लोग आज भी उस गड्ढेको बल्लालका अग्नि-कुण्ड बतलाते हैं। इस उपाख्यानके बल्लाल सेनवंशीय गौडाधिप बल्लालसे भिन्न हैं।

रामपालदिग्गोको लंबाई २ मोल और चौड़ाई करीब ५०० गज है। सुना जाता है, कि बल्लालसेनके माताके निकट प्रतिश्रुत हो कर यह पुष्करिणी खुदवाई थी। फिर किसोका कहना है, कि उनके मामाके नाम पर इस पुष्करिणीका नामकरण हुआ था। बहुतेरे पालवशीय किसी राजाके नामानुसार ही इस पुष्करिणीका नामकरण स्वीकार करते हैं। कोदालधोआदिग्गोको लंबाई सात सौ हाथ और चौड़ाई पांच सौ हाथ है। राजा हरिदचन्द्रकी दिग्गो प्रायः सूखी रहती है। माघीपूर्णिमाके दिन उस पुष्करिणीमें जल रहता है। रामपालदिग्गोके किनारे अक्षय गजरियावृक्ष हैं। बहुत दिनोंसे वह वृक्ष एक ही भावमें खड़ा है। हिन्दूलोग उस वृक्षको पुण्यमय अक्षय वटके समान समझते हैं। प्रवाद है, कि एक

फकारले पूरक गुरुद्वारा भवना कर उसकी एक अर्ध काट जाती थी इससे रक्तवमन हो कर उसकी मृत्यु हुई। प्रतिवर्ष चैत्र शुक्लपक्षको यहाँ एक मेला लगता है और लोग पुस्तक नीचे पूजा करते हैं।

बाबा आदमकी मसजिदके पास ही अजीको मसजिद है। उस मसजिदके बरामदे पर बहुत सी हिन्दूदेव देवियोंका मूर्ति लगी है।

रामपुर (सं० पु०) १ लग, पैकुलड। २ मवोष्वा।

रामपुर—युद्धप्रद्वारा रोहिद्वारा विभागक अन्तर्गत एक रेशी सामन्तराज्य। यह अक्षा० २८ २५' स २१ १०' उ० तथा रेखा० ७८ ५२' स ७१ २१' पू०क मध्य मव स्थित है। भूपरिमाण ८६३ वर्गमील है। इसके उत्तरमें निनाताल जिला, पूरबमें बरेला, दक्षिणमें बदाउन और पश्चिममें मुताबाबाद है।

यह स्थान समतल और उर्बरा है। कोठिया और बाहक नदीस अरुका काम चलता है। दक्षिण रामगङ्गा नदी बहती है।

शाहआलम और हुसैन खाँ नामक दो माई पहले इस प्रदेशमें आ कर बस गये। १७था सदीक आदिल में मुगलराजसरकारमें नौकरा करक इनका माम्य कामक उठा। शाह आलमक पुत्र शऊर खाँ महााराष्ट्रमें बड़ी धारणा दिखाई थी। पुरस्कारमें उसे यदाउरक निकट एक जागीर मिली। उसक दत्तकपुत्र अजी महम्मद १७१६ ई०में नवाबकी उपाधिक साथ साथ रोहिद्वाराक अधिकांश स्थान जागाररुकरूप पाया था।

अजीमहम्मदका बहुती पर अयोध्याका सूबादार नवाब सफरजङ्ग अजने लया। किसी कारणपर नवाब भी उसस अयसम्भ रहत थे। इस कारण १७४६ ई०में उसको कुछ जागीर छान जो गई और उस छह मास दिहाँमें कैद रखा गया। इसक बाद यह सरहिन्दका शासन करता हो कर वहाँ गया। म्दमद अबादजाने इसा समय रोहिद्वारा पर बंदी कर दो। राज्यशासन फिरहुन हो गया। अष्टा मीरान देव कर वह रोहिद्वारा भाया और मनो धार अमा कर यहाँका शासन करने लगा। सम्राट् महम्मद शाहक पुत्रने उस अकितामा जान मक कर लिया और उस उस प्रदेशका राजा स्थाप्य किया।

अजी महम्मदकी मृत्युक बाद उसके लड़कोंने रोहिद्वारा इराज्य आपसमें बाँट लिया। छोटे लड़क फौजदारा को रामपुर काटेराका जागीर मिली। महााराष्ट्रसेनारुके आक्रमणसे तंग आ कर रोहिदा सरदारोंने अयोध्याके नवाब यशसे सहायता माँगी। पोछे ४० लाख रुपये छे कर नवाबयशसे सहायता का। रोहिदा सरदार एक बारमें कुछ रुपये न दे सके, इस कारण दोनोंमें अनहन हो गया। आदिल यशसेने रोहिद्वाराके विरुद्ध युद्धपोयना कर दो। शाहआलमपुर जिलेक अन्तर्गत मोरन कटरा नामक स्थानमें दोनोंके बीच मुठभेड़ हुई। रणक्षेत्रमें रोहिदा सरदार हाफिज खमत काँके मारे जाने पर बरकगान हार करुल कर नौ दो ग्याद हुए। अन्तमें १७७४ ई०में अङ्गरेजोंने बीचमें पड़ कर मेल कटा दिया। शत यह ठहरो, कि नवाब फौजदारा काँको रामपुर राज्य आपस मिछे और वह यशसेको अकरत पड़ने पर सेनास सहायता करे। अयोध्याधिपतिने पोछे सेम्य साहाय्य लेके बचेमें नगद १५ लाख रुपये छे लिपे। फौजदारा मरने पर १७६३ ई०में उसके दोनो पुत्र राज्याधिकार ले कर भरफूने लगे। पाछे छोटा माई बड़ेका सुपके काम तमाम कर जागीरो मसनद पर बैठा। इसके बाद अङ्गरेजराजने अयोध्याके नवाबका सेम्यसाहाय्यमें राजा लनपानेको उग्रयुक्त रूप दे कर मृतके पुत्र महम्मद अजी काँको रामपुर राज्यमें प्रतिष्ठित किया।

१८०१ ई०में रोहिद्वाराक अङ्गरेजोंको सुपुर्त किया गया। १८५७ गदमें यहाँके नवाब महम्मद युसुफ अजी काँके अङ्गरेजो के प्रति पिरोय राजमन्तिक दिखलाई थी। इस पुरस्कारमें उन्हें १२८५२०) ६० भायकी एक जागीर सम्मानसूचक उपाधि और सत्तामी तोपें मिलीं। १८६४ ई०में युसुफ अजीक पुत्र नवाब महम्मद कलब अजी खाँ जी, सो, पस आह, सी, भाह, ई उपाधिक साथ राजा हुए। दिहाँ-बरवारमें उन्हें अष्य छन और सत्तामी तोपें मिलीं था। उनको मृत्युक बाद मुस्तक अमा १८८७ ई०में तत्क पर बैठा। उन्होंने अयल दो वर्ष राज्य किया था। वर्तमान नवाब हमाम् अजी काँ बहा नुर है। १९०८ ई०में ६९) जी, सी, आर्ग, ई, की उपाधि मिली थी।

इस राज्यमें ६ शहर और ११२० ग्राम लगते हैं। जनसंख्या पांच लाखसे ऊपर है। मका, गेहूँ, धान और ईस्र वहाँकी प्रधान उपज है।

विद्याशिक्षामें यह राज्य बहुत पिछड़ा हुआ है। पर आज कल लोगोंका ध्यान इस ओर आरुष्ट हुआ है। यहाँ एक अरबी कालेज (Arabic college) भी है जो राज्यके खर्चसे परिचालित होता है। इस कालेजमें भारतवर्षके दूर दूर देशोंसे यहाँ तक, कि मध्य एशियासे भी छात्र पढ़ने आते हैं। रामपुर शहरमें अङ्ग्रेजी स्कूल और शिल्प स्कूल हैं। स्कूलके अलावा १५ अस्पताल भी हैं।

२ उक्त राज्यकी राजधानी। यह अक्षा० २८° ४६' ३०" तथा देशा० ७६° २' ५०" कोशी या कोशिलाके बाएँ किनारे अवस्थित है। जनसंख्या ८० हजारके करीब है। मुसलमानकी संख्या सबसे ज्यादा है। यहाँके महलोंमें नवाबका महल, जुमा मसजिद, सफ़दरगञ्ज उद्यान, दीवान ई-आम, खुर्शिद मजिद, मच्छी-भवन और जनाना उल्लेखनीय हैं। जुमा मसजिद नवाब कलब अली खाने बनवाई थी। कहते हैं उसके बनानेमें तीन लाख रुपये खर्च हुए थे। शहरमें जेल, पुलिस स्टेशन, हाई स्कूल, तहसीली मर्त और जनाना अस्पताल हैं।

यह नगर विशेष समृद्धिशाली और वाणिज्यप्रधान है। यहाँका खैश नामक रेशमी बरत भारतवर्षके भिन्न भिन्न स्थानोंमें जाता और अधिक मोलमें विक्रता है।

रामपुर—युक्तप्रदेशके गृहारानपुर जिलेके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २६° ४८' ३०" तथा देशा० ७७° २८' ५०" गृहारानपुरसे दिल्हो जानेके रास्ते पर अवस्थित है। जनसंख्या ८ हजार है। हिन्दू और मुसलमानकी सख्या करीब करीब समान है। राजा रामने इस नगरको बसाया। उन्हींके नामानुसार नगरका रामपुर नाम हुआ है। पीछे सैयद सलार मसाउदने इस नगरको जीता। यहाँ नाना शिल्पपरिपूर्ण एक जैनमन्दिर है। मुसलमान साधु शैख इब्राहिमके मकबरेके नजदीक हर एक साल जेठके महीनेमें एक मेला लगता है। यहाँके जैन-महाजन सरागी कहलाते हैं।

रामपुर—युक्तप्रदेशके पटा जिलान्तर्गत एक बड़ा गाँव।

अलीगञ्जसे ४१० मील उत्तरमें होनेके कारण यह स्थान एक वाणिज्यकेन्द्ररूपमें गिना गया है। राठोरवंशीय कर्नाज-राजवंशधर राजा रामचन्द्रने १४५६ ई०में यह नगर बसाया। ये राजा रामसहायसे १० पीढ़ी नीचे थे।

रामपुर—पञ्जाबप्रदेशके बुम्हरी जिलान्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० ३१° २७' ३०" तथा देशा० ७७° ४०' ५०" के मध्य विस्तृत है। जनसंख्या हजारमें ऊपर है। नगरके चारों ओर पर्वत हैं, इस कारण यहाँ बहुत गर्मी पड़ती है। रामपुरके राजा शीतकालमें 'यहाँ' आ कर रहते हैं। प्रसिद्ध 'रामपुरी चादर' नामक एक प्रकारका रेशमी कपड़ा इसी शहरमें बनता है। गुरगाओंके आधिपत्यकालमें इस नगरकी बड़ी क्षति हुई थी। अंगरेजोंके देखलमें आनेके बाद इसकी उन्नति हुई है। नगरके उत्तर-पूर्व कोणमें राजप्रामाद अवस्थित है। समुद्रपृष्ठसे इसकी ऊँचाई ३३०० फुट है।

रामपुर—मध्यप्रदेशके सम्बलपुर जिलान्तर्गत एक भू-सम्पत्ति। भूपरिमाण १६० वर्गमील है। सम्बलपुरके राजा छल शाने १६३० ई०में प्राणनाथ नामक एक राजपूतको यह जमींदारी प्रदान की। १८३५ ई०में सुरेन्द्र शा और उदयन्त शा नामक दो भाईयोंने राजा नारायण सिंहके कुछ आदिमियोंको मरवा डाला था। इस कारण वे याव-ज्यौवन कारादण्डसे दण्डित हो हजारीवागमें भेजे गये। १८५७ ई०में विद्रोहोदलने उद्योजित हो कर इन्हें मुक्त कर दिया। इस समय समस्त सम्बलपुरमें विद्रोहकी सूचना हुई थी। दरियास सिंह अपनी सेना ले कर सुरेन्द्र शाके साथ विद्रोहमें मिल गये। इस कारण अङ्गरेजोंने उनकी अधिकृत सम्पत्ति जब्त कर ली। पीछे अङ्गरेजोंकी अधीनता स्वीकार करने पर उन्हें सम्पत्ति लौटा दी गई। १८७० ई०में उनका देहांत हुआ। पीछे उनके पीले मकावर सिंह तरत पर बैठे। रामपुरग्राममें सरदारका वासभवन और विद्यालय आदि प्रतिष्ठित हैं।

रामपुर—अयोध्याप्रदेशके प्रतापगढ़ जिलान्तर्गत एक परगना और बड़ा गाँव। चिसेन क्षत्रियवंशीय रामपुरके राजा और दान्हपुरिया क्षत्रियवंशीय काश्यलराज यहाँके अधिकारी हैं।

रामपुर—१ बम्बईके महोकायके अर्थात् एक छोटा राज्य ।
२ बम्बईके रेवाकायके अर्थात् एक छोटा सामन्त राज्य ।

रामपुर-भारतपुर—युक्तप्रदेशके गोरखपुर जिल्लाभर्गत दो प्राम ।

रामपुर बोयाखिया—१ राजसाही जिल्लेका एक उपविभाग । यह अक्षा० २४ ७' स २४ ४३' उ० तथा देशा० ८८ १८' से ८८ ५०' पू०क मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण ६१० वर्गमील और जनसंख्या ३ लाखक करीब है । इसमें रामपुर बोयाखिया नामका एक शहर और २२७१ ग्राम अवस्थित हैं । प्रति वर्ष खेतरीमें एक बड़ा मेला लगता है ।

२ उक्त उपविभागका एक शहर । यह अक्षा० २४ २२' उ० तथा देशा० ८८ ३६' पू० पश्चात् उत्तरी किनारे अवस्थित है । जनसंख्या दोस हजारसं ऊपर है । हिन्दूकी संख्या सैकड़ों पाछे ५१ मुसलमानको ४८ और ईसाईकी १ है । १८वीं सदीके आरम्भमें ब्रोज्जन्वाडोने यहां भा कर कोठी खोली । पीछे अंगरेजोंने यहां अपनी गोठो अर्थात् । उन्नतारी रेल ।

रामपुर मानपुर—मध्यप्रदेशके इन्दौर राज्यका एक जिला प्राचीन जिला रामपुर और मानपुर से कर यह जिला बना है । यह अक्षा० २३ ५४' स २५ ७' उ० तथा देशा० ७४ ५७' से ७६ ३६' पू०के मध्य विस्तृत है । १७वींसे १९ वीं सदी तक यहां बौद्ध प्रभाव अनेकों फैला था । घमनार, पोलादीनगर और खोलबीमें बौद्धगुहा आज भी देखनेमें आती है । १६वीं से १८वीं शताब्दी तक यह स्थान पर मार राजपूतोंके अधिकारमें रहा । उस समय यहां बहुतसे जैनमन्दिर बनवाये गए थे । १५वीं सदीमें यह मालवाके मुसलमानोंके हाथ लगा । भरुवरके समय इस जिलेका कुछ अंश मालवाक सूबा और कुछ अजमेरके अधीन था । पाछे अजमेरके डाकुटोने इस पर कब्जा किया । ये उपपुरके रण्य राहुपके बूसे अहले चन्द्रके वंशधर थे । १७२६ ई०में अजपुरके सयाह अयसिंहके त्रितीय पुत्र माधो सिंहको संपूर्ण किया गया । १७५२ ई०में यह होल्करके हाथ मगा । यशोवन्तराय होल्करने महारवरसं अपनी राजधानी उठा कर कर वही पर लाये ।

इस जिलेमें ४ शहर और ८६८ ग्राम हैं । इनमेंसं

रामपुर शहर सबसे बड़ा है । जनसंख्या डेढ़ लाखसे ऊपर है ।

२ उक्त जिलेका एक प्रधान शहर । यह अक्षा० २४ २८' उ० तथा देशा० ७५ २७' पू०के मध्य अवस्थित है । समुद्रपृष्ठसे इसकी ऊंचाई १३०० फुट है । जनसंख्या ८ हजारसं ऊपर है । मीर सरदार रामसे रामपुर नाम पड़ा है । १५वीं सदीमें राम अजमेरवंशके डाकुर शिव सिंह द्वारा मारा गया था । रामके वंशधर भाइ भो अपने पूव भाषिपत्यके विद्वलरूप अजमेर वंशके सरदारके कपासमें रोक लगाते हैं । कुछ दिनों तक यह शहर अजपुरके राजाके अधिकारमें रहा । पीछे १५६७ ई०में अकबरके सेनापति आसफ खाने इस पर कब्जा अर्थात् । महाद्वार अजमेरके समय यह यशोवन्तराय होल्करके हाथ आया । यहां बाबीको अच्छी अच्छी खोज तथा तलवार बनाई जाती है । शहरमें स्टेड डाकघर, जेब पुलिस-स्टेशन, स्कूल और एक अस्पताल हैं ।

रामपुर मपुरा—अयोध्या-प्रदेशके सीतापुर जिल्लाभर्गत एक नगर । यह बीका और गोरा नदीके सङ्गमस्थल पर अवस्थित है । नगर बहुत समृद्धिवादी है ।

रामपुरहाट—१ धोरभूम जिल्लाभर्गत एक उपविभाग । यह अक्षा० २३ ५९' से २४ ३५' उ० तथा देशा० ८० ३५' पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण ३४५ वर्गमील और जनसंख्या साठे तीन लाखसे ऊपर है । इसमें रामपुरहाट नामक एक शहर और १३३६ ग्राम अवस्थित हैं ।

२ उक्त जिलेका एक नगर और उपविभागका विचार सब्द । यह अक्षा० १८ ४३' से १९ ३८' उ० तथा देशा० ६३ ३०' से ६३ ५६' पू०के मध्य अवस्थित है । जनसंख्या ४ हजारक करीब है । हाथड़ा-स्टेशनसे यह १३३ मील दूर है । यहां सरकारी अदालत और छोटा कारागार है जिसमें सिर्फ १८ कैदी रके जाते हैं । १४ एडवाय रेलेवेका स्टेशन हो जानेसे दामिन्धकी बड़ी सुविधा हो गई है ।

रामपुरा—राजपूनाके टोडू राज्याभर्गत एक प्राञ्चालेखित नगर । यह अक्षा० २५ ५७' उ० तथा देशा० ७६ ७' पू०के मध्य अवस्थित है । अभी यह अजमेर-रामपुरा

कहलाता है। १८०४ ई०में अंगरेजराजने इस नगरको अधिकार किया। १८०५ ई०में यह होलकरराजको दे दिया गया। पीछे १८१८ ई०में टोडराराजवंशके प्रतिष्ठाता अमीर खाँको दान किया गया।

रामपुरा—बम्बईप्रदेशके रेवाकान्थके अन्तर्गत एक छोटा सामन्तराज्य।

रामपुरा—राजपूतानेके उदयपुरराज्यके पश्चिम सीमान्त-वर्ती एक प्राचीन नगर। यह रुद्रगिरिसिद्धके ऊपर अवस्थित है। यहां दो प्राचीन और प्रसिद्ध जैनमंदिर विद्यमान हैं। लगभग १४४० ई०में राणा कुम्भके समय धर्मशेठ नामक एक वणिकने पारशनाथ मूर्त्तिकी प्रतिष्ठा के लिये ७५ लाख रुपया खर्च करके वे दोनों मन्दिर बनवाये थे। उनमेंसे एक मन्दिर बड़ा और एक छोटा है। बड़े मन्दिरकी लम्बाई २६० फुट और चौड़ाई २४४ फुट है। उसके चारों ओर जो दीवार खड़ी है उस पर ४६ देवमूर्त्ति सन्निवेशित हैं। पारशनाथ मूर्त्तिके सामने अच्छी तरह चित्रित एक बड़ा गुम्बज है। उसमें इन्द्रादि बारह देवमूर्त्ति इस प्रकार संलग्न हैं, कि देखनेसे मालूम होता है, कि वे छत परसे झूल रही हो। नीचे एक गणेशकी मूर्त्ति है। बीचमें भास्करशिल्पनैपुण्य ४२० स्तम्भके गोल चवूतरे हैं। उसके एक एक कोणमें एक एक पार्श्वनाथ-प्रतिमूर्त्ति खोदित है। इसके सिवा यहां जगह जगह अनेक पार्श्वनाथमूर्त्ति पड़ी देखी जाती हैं।

प्रतिवर्ष चैत्र और आश्विनमासमें मंदिरके सामने मेला लगता है। उसमें १० हजारसे ऊपर मनुष्य इकट्ठे होते हैं।

रामपूग (सं० पु०) रामः रमणीयः पूगः। गुवाकविशेष, चिकनी सुपारी। पर्याय—कामोन्, मुनिपूग, सुरेवट।

(त्रिका०)

रामपूर्वतापनीय (सं० क्ली०) रामतापनीय उपनिषद्का पूर्वांश।

रामप्रसाद—तिथिनिर्णय, यज्ञसिद्धान्तसंग्रह और रत्नाकर-दीधितिके रचयिता।

रामप्रसाद तर्कालङ्कार—वैषम्यकामुदी नामक अमरकोषकी टीकाके प्रणेता।

रामप्रसाद तर्कवागीश (सं० पु०) एक विख्यात पण्डित।

रामप्रसादराय (लाला)—बङ्गालके एक प्रतिष्ठापत्र चैय-सन्तान। इनके पिताका नाम कृष्णराय था। रामप्रसाद मुशिदावादके नवाबके यहां पेशकार थे। इस समय इन्होंने 'लाला' की उपाधि पाई थी। पीछे ढाकाके नवाबके दीवान और मन्त्रिसभाके सदस्य राजवल्लभने इन्हें अपना पारिषद् बनानेकी इच्छासे नवाब-सरकारके यहासे अलग कर अपना मन्त्री बनाया था।

वाखरगञ्जके अन्तर्गत मेहन्दिगञ्ज और मधुपुर-बन्दर लाला रामप्रसादके अधिकारमें था। रेलके प्रधान मानचित्रमें ये दो स्थान बड़े बन्दररूपमें दिखाये गये हैं। इसके सिवाय मादारीपुरके निकट परगनेमें सेलापट्टी और भालकाटीके समीप मधुपुरका बड़ा बंदर और विक्रमपुर आदि तालुक इन्होंने अधिकारमें था। बङ्गालके बीजेरगो उमेदपुरके अन्तर्गत होसनावाद वा जीलसा ग्राममें तथा मेहन्दिगञ्ज अन्तर्गत बहादुर ग्राममें वे दो देवमूर्त्ति स्थापन कर गये हैं। वे बड़े दानी और प्रतिष्ठित थे।

रामप्रसाद विद्यालङ्कार—एक पण्डित। इन्होंने अपने पिता रामनारायणकी बनाई कारिकावलीटीका लिखी। इनके पितामहका नाम था कृष्णराम।

रामप्रसादसेन—वैद्यवंशोद्भव एक बंगाली कवि। ये पहले एक शक्तिमंत्रका साधक कह कर विख्यात थे। १७१८ ई०में हाली-शहरके अन्तर्गत कुमारदृष्ट गांवमें इन्होंने जन्म लिया था। इनके पिताका नाम था राम-राम सेन। इन्होंने कालीकीर्त्तन, विद्यासुन्दर आदि बंगला कविता बनाई। १७७५ ई०में उनकी मृत्यु हुई। कविरत्न रामप्रसाद देखो।

रामफल (हि० पु०) सीताफल, शरोफा।

रामवंटाई (हि० स्त्री०) वह विभाग जिसमें आधा एक व्यक्ति और आधा दूसरे व्यक्तिको मिले, आधे आधकी वंटाई। यह न्याययुक्त होती है इसीसे इसे रामवंटाई कहते हैं।

रामवृक्ष (हि० पु०) गुजरात, भंग और झेलममें अधि-कतासे होनेवाला एक प्रकारका वृक्ष या कीकर। इसकी डालियां सरोकी डालियोंकी तरह तनेसे सटी रहती हैं।

इसकी छक्की कम मजबूत होती है। इसे काबुकी कीकर भी कहते हैं।

रामर्षीस (हि० पु०) १ एक प्रकारका माटा बौंस जो प्रायः पाककीके बड़े बगानके काममें आता है। २ केसकी या कंधके जो आठिका एक पीया। इसके पते मोछे और छोड़ेकी तरह दो हाइ हाय छम्बे होते हैं। यह सारे भारतमें या तो भापसे भाप होता है या कहीं कहीं बोया जा आता है। इसकी पत्तियां फूट कर एक प्रकारका रेशा निकला जाता है जो रस्से और रस्सियां भादि बनानेके काममें आता है। इन पत्तियोंमें एक प्रकारका तेजारी रस होता है जिसके हाथमें छगमेसे छाले पड़ जाते हैं। इसलिये पत्तियां फूटनेके समय कहीं कहीं हाथोंमें एक प्रकारके इस्ताने पहन लेते हैं। इसकी अड़ भार पत्तियां भोपधिके रूपमें भी व्यवहार होती हैं। यह भकसर रैडकी सड़कीके किनारे लगाया जाता है।

रामबाल (हि० पु०) १ एक प्रकारका नरसुख, रामशर। उमर देखा। २ रामबाय बलो।

रामबिजास (स० पु०) एक प्रकारका घान।

रामप्रदानम् स्वामी—तत्त्वसंस्मरणमायणके प्रणेता।

राममल (स० लि०) १ रामचंद्रका उपासक। (पु०) २ हनुमान्।

रामभद्र (सं० पु०) राम एक मद्रः मद्रुजबकत्वात्। धीरामचन्द्र।

राममद्र—१ मिथिलाके एक राजा तथा राजा रूपनारायणके पुत्र और हरिनाटायणके पीत। ये भ्रातृकल्पके प्रणेता भावस्वति मिश्रके प्रतिपादक थे।

२ दुमरे एक हिन्दू-राजा। ये शूद्रजातके प्रकाशके प्रणेता महारथके प्रतिपादक थे।

रामभद्र—बहुतरे प्रसिद्ध परिद्धत और प्रगणकार। १ हाय भागसिद्धान्तकुमुदचन्द्रिकाके प्रणेता। २ पुनःक्रमवापिका के रचयिता। ३ प्रद्युम्नसुचिकार। ४ श्रुतारतर्तुको नामक भाष्यके रचयिता। ५ श्रुतारतिसक नामक भाष्यके प्रणेता। ये कौरिहन्वर्षीय थे। ६ पड़तुंग सिद्धाभसंस्मरणके प्रणेता। इन्होंने तर्कोपति शाशुदा

(शाहजी)के भारदेशसे उक्त ग्रन्थ संकलन किया।
७ सिद्धान्तसार नामक न्यायशास्त्रके रचयिता।

राममद्र गोस्वामी—संस्थानारयण पंचाङ्गके लेखक एक प्राचीन कवि। लगभग तीन सौ वर्ष पहले ये जीवित थे। रामचन्द्रके पिताका नाम था विक्रपाप्त गोस्वामी। ये तन्मतसे महासायक थे। उन्होंने तपस्यासे नायिका का दर्शन किया था। "भाषायम्" नामसे प्रसिद्ध उनका जो भासन है उसकी पूजा आज भी उनके पंशघर करते हैं। उनका पृथ्वीवास काठोवाके समीप धामनकन्हा गांवमें था। बाबमें वे सिद्धीसे दो मोख दक्षिण सिंगुर गांवमें भा कर रहने लगे। यही कवि रामदासका जन्म हुआ। रामचन्द्रके पंशज आज भी सिंगुर गांवमें रहते हैं। महाधाय उनका उपाधि है।

राममद्र दक्षिण—१ दक्षिणात्ययासो एक प्रसिद्ध परिद्धत। प १०वीं सदीके श्यमागमें और १८वीं सदीके पहले तंजोर नगरमें विद्यमान थे। इन्होंने सोप्येवृत्त परिभाषासुचिको टीका लिखी। २ रामकर्णायुक्तके रचयिता। ३ ज्ञानकोपरिणयनाटक और पठसुचिचरित नामके काव्यके प्रणेता। इनका दूसरा नाम चौखनाथ और पिताका नाम यशराम था। लोडकवृत्तध्वनि, कीरड मौलिपिक, बाळकृष्ण भादि इनके समसामयिक थे।

राममद्र न्यायासकुमार—१ शम्बाबला नामक व्याकरणके प्रणेता। २ उद्गाहध्वयस्था, मूय्यबोधको और विद्यो स्मादिना नामके रघुवंशकी टीकाके रचयिता तथा रघुनाथके पुत्र। ३ भीनावाचार्यके पुत्र। ये भीमूतवाहनद्वय हायभागके टीकाकार थे।

राममद्र बाजपेयी—कौमुदचन्द्रोपद्वय एक कवि।

राममद्र मद्र—न्यायसिद्धान्तमुक्तावलीप्रकाशकी टीका और मोखकण्ठपूत तर्कसंश्रुतिवापिकाप्रकाशकी टीकाके रचयिता।

राममद्र मद्राचार्य—एक प्रसिद्ध नैवायिक और परिद्धत। ये तत्त्वचिन्तामिसिद्धीचिन्त्याख्याके प्रणेता जयरामके गुरु थे।

राममद्र मिश्र—१ भामन्दकहरोटीका और तत्त्वसारके रचयिता। २ रघुवीस्तोत्रटीकाके प्रणेता।

रामभद्र महाप्रहोपाध्याय—अभिज्ञानकुन्तलचिद्वृत्तिके प्रणेता ।

रामभद्र यति—संन्यासाश्रमावलम्बी एक प्रसिद्ध पण्डित ।

ये सिद्धान्तचन्द्रिकाके प्रणेता रामसंयमोके गुरु थे ।

रामभद्र यजुन्—एक प्रसिद्ध पंडित । ये सिद्धान्तचन्द्रिकाके प्रणेता श्रीनिवास दीक्षितके गुरु थे ।

रामभद्र सरस्वती—राघवानन्द सरस्वतीके शिष्य और रामानन्द सरस्वतीके गुरु ।

रामभद्र सिद्धान्तवागीश—नवद्वीपवासी एक प्रसिद्ध नैयायिक । इन्होंने जगदीशकृत शब्दशक्तिप्रकाशिकाकी शब्दशक्तिप्रकाशिकावैधनी नामकी टीका लिखी ।

रामभद्र सार्वभौम—नवद्वीपवासी एक नैयायिक । इन्होंने कुसुमाञ्जलीकारिकाथाख्या, गुणरहस्य नामक किरणावलीके द्वितीय परिच्छेदकी टीका, न्यायरहस्य नामक न्यायसूत्रकी टीका, पदार्थाखण्डनटिप्पणी आदि ग्रंथ लिखे ।

रामभद्र सार्वभौम भट्टाचार्य—नानात्ववादतत्त्व और समासवादतत्त्वके रचयिता ।

रामभद्राश्रमा—रघुनाथभुदयकाथ्यके प्रणेता ।

रामभद्राश्रम—१ भानुजो दीक्षित । याग मार्गावलम्बनके वाद ये इस नामसे परिचित हुए । २ अद्वैतचन्द्रिकाके प्रणेता नरसिंह भट्टके गुरु ।

रामभोग (सं० पु०) १ एक प्रकारका चावल । २ एक प्रकारका आम ।

राममणि (रामी)—एक बंगालिन कवि । यह जातिकी धोविन थी । किन्तु कवित्वकी असाधारण शक्तिसे भारतीय स्त्री-कविसम्प्रदायभुक्त हो अक्षयकीर्ति अर्जन कर गई है । यह बंगालके नारदूर ग्राममें कविचर चण्डीदासकी विशालाक्षी देवीके मन्दिरमें सेविका नियुक्त थी । किसीका कहना है, कि तारा धोविन इनका असल नाम था । इन्होंने कवि चण्डीदासके हृदयमें अभिनव प्रेमका सञ्चार किया था । इनके कवित्वगुण और प्रेमसे वशीभूत हो कर चण्डीदासने अनेक पदावलीकी रचना की थी । रामी चण्डीदासको दिलसे चाहती थी ।

राममन्त्र (सं० पु०) रामस्य मन्त्रः । रामचंद्रका मंत्र । रामतारक देखो ।

राममोहन राय (राजा)—बंगालके एक अद्वितीय महापुरुष । जिम अथर्वसायसे इस महात्माने अपनी उन्नतिकी मार्ग साफ करके ससारमें सर्वत्र अपनी महत्त्व फैलाई थी, यह बात उनके जीवनकी पहली प्रतिष्ठासे ही ज्ञान हो जाती है । आप एक ब्रह्मकी उपासनाका प्रवर्तन करके जो अद्वैत धर्ममतका प्रचार कर गये हैं, वह अब भी भारतमें “ब्राह्मसमाज” के नामसे और इंग्लैंडमें उसीके अनुकरण पर ‘Unitarian Church’ नामसे स्थापित है । धर्मनीतिके सिवा राजनीति और समाजनीतिके सकारके विषयमें भी आपने साधारणके अप्रणोवन कर अद्येय यज्ञ प्राप्त किया है ।

दुर्गली जिलेके अन्तर्गत खानाकुल कृष्णनगरके निकटवर्ती राधानगरमें १७७८ ई०में राममोहन रायका जन्म हुआ था । इनके अतिवृद्ध पितामह औरतूजेव वादशाहके राज्यकालमें धर्मकर्म त्याग कर जमींदारीके काममें लित हुए थे । प्रपितामह कृष्णचन्द्र बन्दोपाध्याय नवाबसरकारमें नौकरी करते थे और उन्हें “राय” उपाधि मिली थी । मुर्शिदाबाद जिलेके अन्तर्गत शाँकासा ग्राममें उनका आदिवास था, बादमें वहासे राधानगर चले आये । कृष्णचन्द्र परम वैष्णव थे । नवाबके आदेशसे जब ये खानाकुल कृष्णनगरके चौधरियोंकी जमींदारीका बन्दोवस्त करने आये थे, तब इन्होंने अभिराम गोस्वामी द्वारा प्रतिष्ठित गोपीनाथका विग्रहके निकटस्थ राधानगर ग्राममें अपने रहनेका निश्चय किया था ।

उनके तीन पुत्र थे,—अमरचन्द्र, हरिप्रसाद और ब्रजविनोद । ये ब्रजविनोद राय मृत्युके समय जब गङ्गातीरस्थ हुए, तो श्रीरामपुरके चातरा ग्रामनिवासी श्यामाचरण भट्टाचार्य मिश्रार्थी हो कर इनके सामने आये । ब्रजविनोद रायने उनकी प्रार्थना पूरी करनेके लिये वचन दिया, इस पर भट्टाचार्यने इनके पञ्च पुत्रको कन्यादान करनेके लिए कहा । श्याम भट्टाचार्य शाक्त और मङ्ग कुलीन थे, इसलिए परम वैष्णव और कुलीन रायवंश इस प्रस्ताव पर सहजमें राजी न हो सकता था, किन्तु ब्रजविनोदने गङ्गाके किनारे वचन दिया था, इसलिए उनके पञ्चम पुत्र रामकान्त रायने श्याम भट्टाचार्यकी कन्या तारिणी देवीका पाणिग्रहण किया । तारिणी

देवी अपने गुणोंसे परिवारमें सबके साथ 'दुःख-ठाकु-रानी' नामसे परिचित हुए। उनके गर्भसे जगमोहन और राममोहन दो पुत्र उत्पन्न हुए। जिस वर्ष राममोहन रायने जन्मग्रहण किया, उसी वर्ष भारतमें पहले पहल सचौशिसन गणगंर जनरलको नियुक्ति और सुप्रोम कोर्टकी व्यवस्था हुई थी। मुसलमान शासनका अन्त सात और अनेकी शासनके आरम्भका यह प्रथम वर्ष था।

राममोहन राय पहले ही पिताके समान सुविदा बाहकी नवाब सरकारमें काम करते रहे। पीछे गङ्गबड़ उपस्थित होने पर वे काम छोड़ कर अपने देशकी सीट आये। यहां आ कर उन्होंने कईमानके राजासे अपना कुल-उत्पन्नता भावि कुछ मामोंका इजाजत ले लिया। इसी मामलेमें कईमानके राजाके साथ इनका विवाद हो गया। राजाके असहनीय व्यवहारसे विरक्त हो कर वे जमींदारोंके कामसे उदासीन हो गये और सपरिवार लॉग्सपाड़ा ग्राममें जा कर रहने लगे।

यूवकवयससे ही राममोहनका धर्ममें बड़ अनुशासक था। यूद्धवेवता राधागोविन्दकी मूर्तिके साथ पूजा करके तथा मागवतका एक अध्याय पढ़ कर तब वही व्याप उद्यमग्रहण करते थे। सुनते हैं, आपने बहुत धर्मव्यय करके बाइस बार पुस्तकखरीद करवाया था।

बाल्यावस्थामें पश्चिमतकी पाठशाळासे ही इनकी मेधा और बुद्धिशक्तिका पथेय परिचय पाया जाता है। बचपन हीमें आपने फारसी पढ़ ली। इनकी स्मृतिशक्ति इतनी तीक्ष्ण थी कि फारसी भाषामें उन्नति और अरबी भाषाको शिक्षाके लिए पिताने इन्हे भी ही वर्षकी उमरमें पटना भेज दिया। वहां दो तान वर्षक अन्तर ही इन्होंने अरबी भाषामें धूमिल और आरिष्टके प्रथम पढ़ लिये। इन दो प्रणयोंके पढ़ लेनेसे उनकी सुतोक्ष्ण बुद्धिशक्ति सम्माजित और तर्कशक्ति विकसित हो गई थी। कुतल पढ़ते समय मुसलमान तीर्थजियोंके संस्कारोंमें आ कर उनके हृदय पर एकेभ्रवात्का छाप पड़ी। उसके बाद हाकिम, मौलाना कमी, सामाज ताम्रोडा भादि सूफा कवियोंके प्रथम पढ़ कर उनका मन पर एकप्रकारका प्रभाव पड़ गया था। सुफियोंके मतान्, जेदी और वेदात्मक मतने उनके मध परिवर्तनमें सहायता दी थी।

पटनामें फारसी और अरबीकी शिक्षा समाप्त होने पर, हिन्दुधर्मका मर्म-ज्ञान करानके उद्देशसे बारह वर्षके राममोहनको उनके पिताने संस्कृतशास्त्र अध्यायन करानेके लिए काजा भेजा। वहां थोड़े ही दिनोंमें उन्होंने वेदादि शास्त्रोंका भाष्यार्णवप्रणय ज्ञान लाभ किया था। पर छीट कर उन्होंने निरन्तर धर्मसम्बन्धी भाषोचना करना आरम्भ कर दिया। शास्त्रोंमें लिखे हुए धर्मके साथ प्रचलित धर्मके पाद्यव्यय दूज कर उनके मनमें अन्तः खोतर सम्बन्ध उपस्थित हुआ करता था। मुसलमान धर्मका एकेभ्रवात् और प्राचीन हिन्दुशास्त्रोंका प्रत्यक्षान् उनके मत-परिवर्तनका एकमात्र कारण है। इस विषयमें पिताके साथ इनका तर्क हुआ करता था। पिता पुत्रके इस परिवर्तित विचारसे बड़े मुक्तित थे।

इसी समय सोलह वर्षकी अवस्थामें राममोहनने हिन्दुओंको "सूर्यपूजा प्रयाजी" के नामसे सूर्यपूजाके विरुद्ध एक पुस्तक लिखी। उनके पिता इन पर बहुत नाराज हुए और अन्तमें उन्हें घरसे निकाल दिया। सोलह वर्षकी अवस्थामें घरसे निकाले जा कर राममोहनने मातृके नामा स्थानोंमें घूमन किया। इस समय उन्हें अगरेजीका बिल्कुल भी ज्ञान न था।

विभिन्न प्रदेशोंमें घूमन करते समय उन्होंने वहांके धर्मप्रणयोंका अध्यायन करनेके लिये वहांकी विभिन्न भाषाय सीखी। मातृवर्षके नामा स्थानोंमें घूमन करते हुए अन्तमें आप तिमरत पड़ गये। वहां कुछ दिन रह कर उन्होंने बौद्धधर्मका मर्मोनुसन्धान किया। तिम्रतवासियोंके साथ मूर्तिपूजा पर इनका आक्षेप ही गया। वहांके लोगोंने इस कुतर्कके लिये उन्हें बंधु बना आहा, किन्तु यहांको सत्त्वप्रकृति प्मणियोंने इन्हे बचा लिया।

उन्होंने हिमाचलके उत्तरवर्ती और भी एक स्थानमें घूमन किया था, परन्तु उसका कोई विशेष विवरण नहीं पाया जाता। प्राइसमाजकी प्रतिष्ठाके बाद उन्होंने "संवाद-कीमुदी" नामको एक पत्रिका निकाली थी, जिसमें उन्होंने अपने बाल्य घूमनके विषयमें कई एक लेख लिखे थे।

बाइस वर्षका उमरमें पिताके मेज हुए आर्मीके साथ आप घर वापस आये। इसके बाद पिताके हुमा।

पहली स्त्रीकी मृत्युके बाद उन्होंने एक स्त्रीके रहते हुए दूसरा विवाह किया था। इनकी दूसरी सुसराल बड़मान जिलेके कुडमन-पलासी ग्राममें थी। छोटी स्त्री उमादेवीका मायका भवानोपुरमें था।

विदेशसे आनेके बाद आप फिरसे संस्कृत शास्त्रके अध्ययनमें प्रवृत्त हुए। हिन्दूशास्त्र सिन्धु मन्थन करके आपने अमूल्य ब्रह्मज्ञान प्राप्त किया था। अबकी बार फिर पितासे उनका शास्त्रार्थ हो गया। पिता रामकान्त पुत्रकी दशा देख कर हताश हो गये। उन्होंने प्रचलित धर्मके विरुद्ध खड़े होनेवाले पुत्रको फिर घरसे निकाल दिया, किन्तु कुछ कुछ आर्थिक सहायता देते रहे।

पहले लिखा जा चुका है कि रामकान्त रायने अपने पुत्र राममोहनको नवाब सरकारमें काम करने योग्य हो जाय, इस ढंगकी शिक्षा दी थी। कारण अंगरेजी-शिक्षाका प्रभाव उस समय अधिक विस्तृत न हुआ था। सुप्रीमकोर्ट स्थापनके साथ ही अंगरेजीकी चर्चा शुरू हुई। राममोहनने २२ वर्ष तक अंगरेजी जरा भी न जानते थे। उस समय शिक्षा आरम्भ होने पर भी उस तरफ उनका ध्यान न गया था। संस्कृत, फारसी और अरबीके अध्ययनमें ही वे विशेष मग्न थे। सत्ताईस-अठ्ठाईस वर्षकी उमरमें वे सिर्फ वातचीत करना मात्र सीख गये थे। परन्तु अंगरेजीमें लेख न लिख सकते थे।

इस समय आपने रंगपुरके कलकुर जन डिग्गी साहबके नीचे क्लर्कके लिए दरखास्त पेश की। साहब जब उन्हें अपने नीचे नियुक्त करना स्वीकार कर लिया, तो आपने उनके सामने यह प्रस्ताव किया कि निम्नोक्त आशयके एक पत्र पर हस्ताक्षर कर देने पर वे कार्यग्रहण करेंगे—“जब वे काम करने उनके सामने आये, तब उन्हें आसन दिया जाय और साधारण भ्रमणोंके समान उन पर हुकूम जारी न किया जाय।” डिग्गी साहबने उनकी बात स्वीकार कर ली और उक्त आशयके पत्र पर हस्ताक्षर कर देने पर राममोहन रायने भी काम करना शुरू कर दिया। धर्मानुगत आत्म-सम्मानका उन्हें ज्ञान था और उन्हें साधनता-प्रियता काफी थी। उनके जीवनमें

ऐसी अनेकों घटनाएँ हुई हैं, जिनसे यह भाव साफ साफ उपपन्न है।

राममोहन राय ऐसे उत्साह और तत्परताके साथ कार्य सम्पादन करने लगे कि साहब उन पर दिनों-दिन अत्यन्त सन्तुष्ट होने लगे। कुछ दिन बाद ही राममोहन रायको दीवानका पद मिल गया। डिग्गी साहबकी ज्यों ज्यों राममोहन रायकी विद्याबुद्धि, कार्यक्षमता और कर्मठताका परिचय मिलने लगा, त्यों त्यों वे इनके प्रति आगुष्ट होने लगे। राममोहन राय भी डिग्गी साहबकी भद्रता और अन्यान्य सद्गुणोंके कारण उन्हें यथेष्ट श्रद्धाकी दृष्टिसे देखने लगे। क्रमशः परस्परमें गाढ़ी मित्रता हो गई। मृत्यु पर्यन्त यह मित्रता कायम रही। ये दोनों अंगरेजी और देशी साहित्यके अनुशीलनमें परस्पर एक दूसरेकी सहायता पहुंचाया करते थे।

रंगपुरमें जमींदारीके कामसे रहते हुए भी वे अपने जीवनके प्रधान कार्यको भूल न थे। शामके बाद अपने मकान पर धर्मालोचनाके लिए सभा किया करते थे, जिसमें मूर्तिपूजाकी असारता और ब्रह्मज्ञानकी आवश्यकता पर लोगोंको समझाया करते थे। वहांके मारवाड़ी वणिकोंमेंसे बहुतसे इस सभाके सभासद थे। इन मारवाड़ियोंने उन्हें कल्पसूत्र आदि जैनधर्म-सम्बन्धी ग्रन्थोंका अध्ययन कराया था। शीघ्र ही उनके प्रतिद्वन्द्वी आ जुटे। उनका नाम था गौरीकान्त भट्टाचार्य। वे स्थानीय जज अदालतके दीवान थे और फारसी तथा संस्कृत-भाषाके अच्छे विद्वान् थे। इन्होंने राममोहन रायके विरुद्ध “ज्ञानाज्ञान” नामकी एक पुस्तक लिखी, जो सशोधित हो कर १८३८ ई०में कलकत्तेसे प्रकाशित हुई। इस पुस्तकसे मालूम होता है, कि राममोहन रायने रंगपुरमें फारसी भाषामें छोटी छोटी पुस्तकें लिखी थीं और वेदान्तके कुछ अंशका भी अनुवाद किया था। बहुतसे लोग गौरीकान्त भट्टाचार्यके अनुयायी थे। वे उन सबको राममोहन रायके विरुद्धाचरण करनेके लिये परामर्श देते थे। परन्तु इसमें उन्हें सफलता नहीं मिली।

राममोहन रायने अपने रचे हुए वेदान्तसूत्रके भाष्य और केनोपनिषद्के चूर्णकका अंगरेजीमें अनुवाद प्रकाशित किया था। डिग्गी साहबने उसका सम्पादन

क्रिया था। माइहने उक्त पुस्तककी भूमिकामें राममोहन रायके विषयमें लिखा था—बाइस वर्षकी उमरमें आपने पहले पहल भद्रो जीकी सेवा की। परन्तु मनोयोग-पूर्वक शिक्षा न करनेके कारण, पांच वर्ष बाद जब मेरे साथ उनका परिचय हुआ तब साधारण विषयोंमें अंगरेजी भाषामें बात कहने पर वे समझ लिया करते थे। परन्तु अङ्गरेजी भाषा वे शुद्ध न लिख सकते थे। जिस जिल्लेमें मैं इस इण्डिया कम्पनीकी सिविल सर्विसमें पांच वर्ष तक कलेक्टर था, वहां वे अन्तमें दीवान बर्पात कर-संमह सम्बन्धी कार्योंमें प्रधान देवी कर्मचारी नियुक्त हुए थे। मेरे पत्नीदि पढ़ कर तथा यूरोपीय सधनोंके साथ एक व्यवहार और वास्तुशास्त्र करके उन्होंने अंगरेजी भाषामें अच्छा ज्ञान बढ़ा लिया था और वे अच्छी तरह शुद्ध अंगरेजी लिख बोल सकते थे। उक्त भूमिकामें लिखा ही साइहने यह भी लिखा है, कि यूरोपीय समाचारपत्र पढ़ने का उन्हें अभ्यास था। वे फ्रांस आदि देशोंकी राजनैतिक घटनाएँ लूब विरुध्त्वीके साथ पढ़ते थे। निचो जियन बोनापाट की शक्ति और बीरताकी अत्यन्त प्रशंसा करते थे और उनका पठन होने पर वे अत्यन्त दुःखित हुए थे। परन्तु ओह है, कि पहले वेगळ निरुद्ध जानै पर उनके मनका भाव परिपरित हो गया। अन्तमें उन्होंने कहा था कि नेपोलियनकी पहले जितना प्रशंसा करता था, अब उनमें वैसी भद्रा नहीं रही।

राममोहन रायने १८०० ई०से १८१३ ई०तक गयमेंबट की नौकरी की थी। जिसमें १० वर्ष रंगपुर, भागलपुर, रामगढ़ इन कई जिल्लेमें कलेक्टरके अधीन दीवान रहे। रामगढ़ जिल्लेमें वे शहरकी भांडीमें रहते थे। छोटा नागपुर जिल्लेके अन्तर्गत बाठरासे गया जानेके रास्तेमें यह भांडी थी। अन्तमें इस कार्यसे उन्होंने अचरस प्रद्वय किया।

कार्य छोड़नेके बाद वे मुर्शिदाबाद जा कर रहने लगे। यहां आपने फारसी भाषामें दोहफतुख मोहदीन (बर्पात समस्त जातीय मूर्च्छिपूजाका प्रतिवाद) नामक एक ग्रंथ लिखा। इसकी भूमिका अरबी भाषामें लिखी थी। इस पुस्तकका अण्डन किसीने प्रकाशित नहीं करवा परन्तु बहुतसे लोग इसके ज्ञान हो गये थे।

राममोहन राय १८१४ ई०में जामोस वर्षकी उमर में कलकत्ते आ कर रहने लगे। सबसे ही पद्यार्थ रूपसे उनके जीवनका कार्य प्रारम्भ हुआ समझना चाहिए। यहां उन्होंने अपना सारा समय और धर्म, शरीर और मन, अन्तर्मुखिक हितके लिए समर्पित कर दिया। जितने दिन जीवित रहे, उन्हें दूसरा कार्य और दूसरी चिन्ता न थी।

धर्मसंस्कार, समाजसंस्कार, राजनैतिक संस्कार और बंगला-साहित्यकी उन्नति आदि सर्व प्रकारके शुभ कार्योंमें उनका पूरा पूरा हाथ था। इसके लिए वे दिन रात परिश्रम किया करते थे।

राममोहन रायने कलकत्ते आ कर मानिकगछामे लोभर सरकुबर रोड पर एक मकान बनवा और उसे अंगरेजी ङ गले सजा कर उसीमें रहने लगे। उन्हें भाशा थी, कि जर्मनीदेशके कामसे लूहो पा कर जातिके उद्धारके लिए जीवन बर्पात करेंगे। यहां उनकी यह चिरपोषित भाशा पूर्ण हुई। मूर्च्छिपूजा और सर्व प्रकार के उपयमोंके विरुद्ध राममोहन रायका अनिर्व्यक्त ठक और विचारका आन्दोलन चलने लगा। कलकत्तेमें धूम मच गई। सिपाय कर्मकरों हीमें क्यों, समस्त बंगालमें आन्दोलनकी तरङ्ग बहने लगी। बाबुओंके बैठकखानेमें, महाचार्योंकी अतुप्याठोंमें, गांधोंके अण्डीमण्डपोंमें, वहां देखो वहां राममोहन राय अन्तःपुरोंमें भी आन्दोलनका स्रोत बहने लगा।

उनमें आह्वलध्वजक शक्ति थी, उनकी गमीर विद्या और मधुर व्यवहारसे कुछ सम्भ्रात व्यक्ति उनके प्रति आकृष्य हो गये। जैत—गोपीमोहन ठाकुर, वैद्यनाथ मुकीपाध्याय (वे अस्तिस् अनुकूल मुकीपाध्यायके पिता हिन्दूकाछेडके एक संन्यायक और उक्त काछेडके प्रथम मसी थे), अण्डरमण सिंह, काशीनाथ मल्लिक, पृथ्वीनाथ मित्त (वे राजा पीताम्बर मित्तके पुत्र और डाकुर राजेन्द्र नाथ मित्तके पितामह थे), गोपीनाथ मुग्शी, राजा धरन चन्द्र राय (वे राजा नरसिंहके रिश्तेदार थे), रघुनाथ

० मन्त्रालय नं० ११३ है। फिजहाल उस मन्त्रमें लिखा श्रेयका स्थान है।

शिरोमणि, हरनाथ तर्काभूषण, द्वारकानाथ मुन्शी आदि। वे अकसर इनके पास आया करते थे।

चन्द्रशेखर देव (वर्द्धमानके राजाकी राजकार्य-निर्वाहक सभाके सदस्य), ताराचाद चक्रवर्त्ती (वर्द्धमान राजकार्य निर्वाहक सभाके सभासद) आदि अनेक लोगोंका एक राजनैतिक दल था। वह दल ताराचाद बाबूके संस्वरके कारण तत्कालीन शिक्षित समाजमें 'Chakrawarti Faction' के नामसे परिचित था। नन्दकिशोर वसु (राजनारायणवसुके पिता), भैरव चन्द्र दत्त, निमाई चरण मित्र, ब्रजमोहन मजूमदार, राज नारायण सेन, रामनृसिंह सुप्पोपाध्याय, हलधरचन्द्रवसु, मदनमोहन मजूमदार, अन्नदाप्रसाद वन्दोपाध्याय, टाकोके जमींदार राय कालीनाथ चौधरी आदि कितने ही सज्जनोंने उनका उपदेष्टा ग्रहण किया था।

इसके सिवा साइट बोर्डके दीवान और ज्ञानरत्नाकर ग्रन्थके संप्रहर्कता नीलरतन हालदार, खिदिरपुर भूकैलासके राजवगीय राजा कालीशङ्कर शोपाल, द्वारकानाथ ठाकुर, प्रसन्नकुमार ठाकुर आदि सुप्रसिद्ध व्यक्तियोंका भी इस तरफ यथेष्ट अनुराग हो गया था।

वे दो तीन पण्डितोंके साथ सर्वदा समय व्यतीत करते थे। उनके एक अनुगत शिष्यका कहना है कि— "राममोहन राय जब शक सं० १७३४ में रंगपुरकी जमींदारीका काम छोड़ कर एक ईश्वरकी उपासनाप्रचारके लिये कलकत्ते आये, तब हरिहरानन्द तीर्थस्वामीको अपने साथ लाये थे। तीर्थस्वामीने देश भ्रमण करते हुए रंगपुरमें था कर राममोहन रायके साथ बैठ की थी। राममोहन रायने उनकी शास्त्रवर्चा और उदारभावसे सन्तुष्ट हो कर उन्हें सम्मानपूर्वक अपने यहां रखा और तीर्थस्वामी भी उनके प्रेमवाशमें बद्ध हो कर छायावत् उनके साथ रहे। वे तन्त्रोक्त साधक, धामाचारमें रत और महानिर्वाणतन्त्रके अनुसार ब्रह्मोपासक थे। अद्युताश्रम ग्रहण करनेके पूर्व उनका नाम नन्दकुमार था। ब्राह्म-समाजके सुपरिचित प्रथम आचार्य रामचन्द्र विद्यावागीश इन्हींके कनिष्ठ भ्राता थे। हरिहरानन्द तीर्थस्वामीने विद्यावागीश महाशयको राममोहन रायके हाथ सौंप दिया था। धारे धीरे विद्यावागीश उनके एक

प्रधान सहयोगी हो उठे।* राममोहन रायके पास शिवप्रसाद मिश्र एक उत्तर-भारतीय ब्राह्मण रहते थे। उन के साथ वे उपनियतकी आलोचना करते थे।"

जिन व्यक्तियोंका नामोल्लेख किया गया है, वे सब धर्मानुसन्धानके लिए ही उनके पास आया करते थे, सो बात नहीं। जमींदारीके विषयमें पगमर्ग लेनेके लिये भी कोई कोई आते थे। मूर्त्तिपूजाके विरुद्ध राममोहन राय प्रबल प्रतिवाह करने थे, इसलिए उनमेंसे किसी किसीने आना बंद भी कर दिया था। द्वारकानाथ ठाकुर, राजा कालीशंकर शोपाल और गोपीनाथ मुन्शीने उनका साथ कभी नहीं छोड़ा।

बंगाल भरके लोग उनके विरोधी हो गये। बहुतसे लोग तो नाना प्रकारसे उनका अनिष्ट करनेको उतारू हो गये थे और इस बातकी कांशिश भी करने लगे। बहुतसे ऐसे थे, जो राममोहन रायके सामने तो मित्रता प्रकट करते थे और पीछे छिपी तीरसे उनके अनिष्ट करने पर तुले हुए थे।

धर्मप्रचारके लिए राममोहन राय चार उपाय अवलम्बन किये थे। प्रथम—कथोपकथन और तर्कवितर्क; द्वितीय—विद्यालय स्थापित करके तथा अन्य प्रकारसे शिक्षादान, तृतीय—पुस्तक-प्रचार और चतुर्थ—सभाएं स्थापित करना।

राममोहन रायने जब देखा कि पुस्तकप्रकाश सत्यधर्म प्रचारका एक प्रकृत उपाय है, तब उन्होंने धीरे धीरे ब्रह्मज्ञानप्रतिपादक ग्रंथ अपने व्ययसे मुद्रित कराने के विनामूल्य वितरण कराना शुरू कर दिया। शक सं० १७३७में उन्होंने पहले पहल बंगला भाषामें वेदान्तसूत्रका माध्य प्रकट किया था।

राममोहनरायका सुप्रशस्त हृदय केवल बङ्गभूमिमें आवद्ध न था। वह सारे भारतके लिये क्रन्दन कर रहा था। इसलिए वेदान्तसूत्रका बंगला अनुवाद समस्त भारतवासियोंके समक्षमें न आयेगा, ऐसा समझ कर उसका हिन्दीअनुवाद भी प्रकाशित कराया। पीछे

* ये मालपाडा गांवमें रहते थे। पीछे संस्कृत कालेजमें स्मृतिशास्त्रके अध्यापक हुए।

१८१६ ई०में भाषने भक्तियोंो भनुवाद प्रकाशित किया।

भाषने पहले जो वेदान्तसूत्र और उसका भनुवाद प्रकाशित किया था, यह ग्रन्थ विस्तृत और कठिन होनेके कारण साधारणकी समझमें न जाता था, इसलिए भव उसे अल्पसंख्यक भाषाओंमें लिखा। पीछे, सब कोइ इतने बड़े ग्रन्थको पढ़ना चाह या नहीं, इस कारण आपने उसका सार संक्षेप करके "वेदान्तसार" नामका एक ग्रन्थ प्रकाशित किया। यह किस संवत्में पहले प्रकाशित हुआ था, ठाढ़ पता नहीं। १८१६ ई०में इसका यमंत्रो भनुवाद प्रकाशित हुआ था। इसाई धर्मके प्रचारके साहचर्यसे इसे एक कर भाष्यपर्यन्त आ गये थे और रचयिताका परिचय यूरोपमें प्रचार किया था।

'वेदान्तसूत्र' और 'वेदान्तसार' प्रकाशित करनेके बाद भाषने पाँच उपनिषद्, बङ्गला भनुवाद सहित मुद्रित और प्रचारित किये। इनमें सामवेदके अन्तर्गत तद्धकार उपनिषद् प्रथम प्रकाशित हुआ था। नमस्कृतका दूसरा नाम केनोपनिषद् है। यह पुस्तक शक सं० १७३८ के आषाढ मासमें पहले पहल प्रकाशित हुई थी। इसी समय इन्होंने यजुर्वेदीय शोपनिषद् या ब्राह्मसमेय संहितोपनिषद् प्रकाशित की थी। भाषने वेदान्तसूत्रकी तरह इसकी एक भूमिका और अनुष्ठान किया था। भूमिकामें भाषने शास्त्रीय प्रमाण और युक्ति द्वारा प्रामाण्यित किया था, कि ब्रह्मोपनिषद् ही श्रेष्ठ साधन और मुक्तिका एकमात्र कारण है।

बंगला सं० १२२४ के माघ मासमें यजुर्वेदीय कृतापनिषद् बंगला भनुवाद सहित प्रकाशित हुई थी। इसमें भी एक छोटी सी भूमिका है। इसका बाद सुषुक्ल उपनिषद् प्रकाशित हुई। इसका मूल अलग और बंगला भनुवाद अलग प्रकाशित हुआ था। 'भायकी धर्म' नामक और एक पुस्तक १८१८ ई०में प्रकाशित हुई। इसकी भूमिका और ग्रन्थ पृथक् पृथक् दो भागोंमें विभक्त हैं।

गृहस्थ व्यक्ति यदि ब्रह्मोपासक हो, तो शास्त्रानुसार उनका किम प्रकार आचरण होना उचित है, 'प्रश्ननिष्ठ गृहस्थका धर्म' नामक पुस्तकमें यही बात लिखी गई है। १८२१ ई०में यह पहले पहल छपी थी।

'गायत्राचार्योपासनाविधानम्' नामक पुस्तक १८२७

ई०में प्रकाशित हुई। इस पुस्तकका मर्म यह है, कि वेद पाठके सिवा केवल गायत्री उप द्वारा भी ब्रह्मोपासना होती है। इसमें अनेक शास्त्रीय प्रमाण दिये गये हैं। यह संस्कृत और बंगला दोनों भाषाओंमें लिखी गई है। इसी साठ इसका एक अंग्रेजी-भनुवाद भी प्रकाशित हुआ था।

इसको 'भनुष्ठान' नामक पुस्तकमें अष्टतरणिकाके नामसे एक भूमिका है, जिसमें १२ प्रश्न और उनके उत्तर दिये गये हैं। इसमें ब्रह्मोपासनाविधान और शास्त्रानुसार आहारव्यवहार पणाला आदि लिखी है। यह पुस्तक १८२६ ई०में छपी थी।

'ब्रह्मोपासना' नामकी पुस्तक शक सं० १७५० (१७२८ ई०में) प्रकाशित हुई थी। इसमें ब्रह्मोपासनाको एक पद्धति बताई गई है, जिस देव कर कोई कोई समझ सकत है, कि राममोहन रायके समयमें यह ब्राह्मसमाजमें प्रचलित होती थी, किन्तु शास्त्रधर्ममें यह बात न थी। उस समय समाजमें कवच उपनिषद्का पाठ, व्याख्या और सङ्गीत होता था।

उनकी 'प्रार्यमापन' नामक पुस्तक शक सं० १७४५ (१७-सं० १८२३) में पहले पहल प्रचारित हुई। इसमें श्रद्धातोष और पित्रातोष समस्त धर्म-सम्प्रदायोंके प्रति उदार ब्राह्मण प्रकट किया गया है।

राममोहन रायने श्रीमत् शाङ्कराचार्य-प्रणीत 'आत्मा आत्मविशेष' की वंगानुवाद सहित प्रकाशित किया था। वे भाषुनिक इसाई-सम्प्रदायका तरह अष्ट विषय प्रतिपादनार्थ एक एक बीर्भावत कागज पर मुद्रित करके बंद बाया करत थे, जो बादमें 'हृदयपत्र' के नामसे मुद्रित हुआ था।

प्रश्नरुगांत राजा राममोहन रायकी एक भनु उनीय कीर्ति है। अन्धत्व अनेक विषयोंके समाप्त बंगलाभाषा में अष्टसप्तमोत्तके सुचिह्नार्थ है। उन्होंने अपने तथा मित्रोंके रचे संगीत पुस्तकाकारमें प्रकाशित किये थे। उनके समयमें ही इसके दो तीनों संस्करण हो चुकें थे।

शास्त्रीय विचार और अन्धत्व विषयमें बहुत-सी पुस्तकें इन्होंने बंगला में लिखी थीं। 'कायस्थोंके साधन विधान विषयक विचार' नामक पुस्तकमें उन्होंने गृहस्थ

लिए सुरापानकी शास्त्रविरुद्धता और ब्राह्मण आदि जातिके लिए मद्यपानका अधिकार सिद्ध किया है। इस के सिवा 'पथ्यप्रदान' नामक पुस्तकके सातवें परिच्छेद-में आपने इस मतका समर्थन किया है।

उनके एक शिष्य ब्रजमोहन मजूमदारने १८३२ ई०में धर्मतन्त्राके यूनिटेरियन प्रेससे 'मूर्त्तिपूजा मुखचपेटिका नामक एक पुस्तक निकाली थी। लोगोंका विश्वास है, कि यह पुस्तक राजा राममोहन रायकी ही लिखी हुई है।

श्रीरामपुरके एक ईसाई पादरीने वेदान्त, न्याय, मीमांसा, पातञ्जल, सांख्य, पुराण, तन्त्र आदि शास्त्र तथा योनिप्रमण, जन्मान्तरीण फलभोग आदि मतके विरुद्ध ईसाईयोंकी 'समाचारचन्द्रिका' नामक पत्रिकामें १८२१ ई०की १४वीं जुलाईकी एक पत्र प्रकाशित किया था। राममोहन रायने इसका उत्तर लिख कर उक्त पत्रके सम्पादकके पाम मेजा, किन्तु उसने उसे छपा नहीं। इसलिये राममोहन रायने 'ब्राह्मणावधि' नामक पत्रिका प्रकाशित करके उसका उत्तर दिया। उसमें उनके जातीय भाव और जातीय शास्त्रोंके प्रति अनुरागको विशेष झलक थी। इस उत्तरमें ईसाई धर्मके विरुद्ध कुछ अलखण्डनीय युक्तिया थीं।

पिता परमेश्वर पुत्र ईसा और होली गोष्टको ले कर प्रसिद्ध विशय बटलरके साथ तर्क करनेके बाद उन्होंने विशेष भावसे ईसाई धर्मकी आलोचना प्रारम्भ की और विशेष यत्नके साथ वाइविल ग्रन्थका आधोपान्त पाठ किया। परंतु अंगरेजी अनुवाद पढ़ कर उन्हें तृप्ति न हुई। प्रोक्त-भाषा सीख कर नवीन वाइविलका मूलग्रन्थ और हिब्रू भाषा सीख कर वाइविलका मूलग्रन्थ पढ़ा। उन्होंने एक यहूदी शिक्षक रख कर छह मासके अन्दर हिब्रू भाषा सीखी थी। इससे भाषा-शिक्षाके विषयमें उनकी असाधारण शक्तिका परिचय मिलता है। अरबी भाषामें भी वे काफी व्युत्पन्न थे। इसलिए मुसलमान लोग उन्हें 'मौलवी राममोहन राय' और 'जवरदस्त मौलवी' कहा करते थे। अरबीके साथ हिब्रूका अति निकट सम्बन्ध है। इसलिये हिब्रू सीखना उनके लिए सहज था। राममोहन रायने इस समय पादरी पेडम

और येट साहबके साथ मिल कर 'ईसाई सुसमाचार' नामकी चार पुस्तकोंका अनुवाद किया। येट साहबने नाराज हो कर यह कार्य छोड़ दिया। शायद, ईसाई धर्मके विषयमें राममोहन रायसे उनका मतभेद हा गया होगा।

इस समय राममोहन रायने वाहविलसे ईसाका उपदेश सकलन करके Precepts of Jesus, Guide to peace and happiness अर्थात् ईसाका उपदेशसुख और शान्तिपथका परिचालक है, नाम दे कर एक पुस्तक निकाली (१८२० ई०)।

ईसाके उपदेशोंका सग्रह प्रकाशित करने पर भी क्रिस्तीने उनके उदारभावको न समझा। स्वदेशवासियोंकी बात जाने दीजिए। बहुतसे ईसाई भी उनसे नाराज हो गये थे। श्रीरामपुरके सुप्रसिद्ध मार्समैन साहबने 'फ्रेण्ड-आव-इण्डिया' नामक समाचार पत्रमें उक्त ग्रन्थकी निन्दा की थी। उनके प्रतिवाद करनेका कारण यह था, कि ईसाका ईश्वरत्व उनको अलौकिक क्रिया और उनके रक्तसे पापोंकी मुक्ति इत्यादि मत-पोषक वाइविल-वृत्तके वाक्य उसमें नहीं दिखे गये थे।

उपदेश संग्रह पुस्तकमें सग्रहकर्त्ताका नाम न था। परन्तु सर्वसाधारणसे लेखकका नाम छिपा न रहा। मार्समैन साहबकी समालोचनाके उत्तरमें राममोहन रायने सत्यका मित्र (A Friend to truth)के नामसे 'An appeal to the Christian Public' शीर्षक एक पुस्तक लिखी (१८२० ई०)। उसमें आपने सिद्ध किया कि ईश्वरका तित्व, ईसाके रक्तसे पापका प्रायश्चित्त इत्यादि बातें वाइविलमें नहीं मिलतीं मिशनारियोंने वाइविलका यथार्थ नहीं समझा इसलिए उनका ऐसा विश्वास है।

मार्समैन साहबने पुनः आक्रमण किया। राममोहन रायने दूसरी बार अपने नामसे 'Second appeal to the Christian Public' प्रकाशित की। मार्समैन साहबने इस बार भी उसका उत्तर दिया। राममोहन राय भी तीसरी बार उत्तर देनेको तैयार हुए, किन्तु अबकी एक बाधा पड़ गई। अब तक उनकी पुस्तकें वैपटिष्ट मिशन प्रेसमें छपा करती थीं। अब प्रेसवालोंने इस पुस्तक-

को इसाई धर्मकी विरोधक समझ कर छापनेसे इनकार कर दिया। परन्तु राममोहन राय सहजमें छोड़नेवाले न थे। उन्होंने दाक्षिणात्य नाम रखा 'यूनिटेरियन प्रेस'। इसका काम अक्सर बैंगी भाषामें होता जाता था। १८२७ ई०में इस प्रेससे उनके नामसे Final Appeal नामक तीसरी पुस्तक निकली। इस पुस्तकमें उनके पाण्डित्य और तर्कशक्तिका यहाँ तक परिचय मिला कि लोग दंग रह गये। मार्समैन साहबने अपने मतके समर्थनके लिए अङ्गरेजी बाइबिलसे अनेक प्रमाण उद्धृत किये। राममोहन राय अङ्गरेजी अनुवाद सहज ही न थे, अतएव उन्होंने प्रीक और हिन्दू भाषामें लिखित सूत्र बाइबिलसे प्रमाण उद्धृत करके उसका अर्थ अङ्गरेजी अनुवाद करने सिद्ध किया, कि मार्समैन साहबकी बात उनके धर्मशास्त्रके अनुकूल नहीं है। आखिर मार्समैन साहबको पराजित होना पड़ा।

१८२७ ई०में एक और भागोद्भवक तर्कसूत्र हुआ। एक और डा० डाइरर साहबके आई। (हिन्दूकाकेअके अर्थवत्तम अर्थवत्तक) और श्रीरामपुरके मिशनरी लोग ये भी दूखरी और राममोहनराय। सुप्रसिद्ध 'हरकर' और 'द्वैत माच इण्डिया' नामक दो पत्र दोनोंके अचलम्यन थे।

'हरकर' पत्रमें डाइरर साहबन पहले राममोहन राय पर आक्रमण किया। इस पर कल्पित नाम 'रामदास' रख कर हिन्दूमात्र पारण करके राममोहन रायने उन्हें ऐसा उत्तर दिया कि "राममोहन राय मूर्खिपूजक हिन्दू और अतिवादी इसाई दोनोंके परम शत्रु हैं; वे ईश्वर बहुत्व और अयतारवाद दोनों ही प्रतिपादो हैं और ये दोनों ही मत हिन्दू तथा अतिवादी इसाई दोनोंके मूल मत हैं। इसलिये आभो, हम लोग (हिन्दू और इसाई) मित्र कर अपने साधारण शत्रु, राममोहन राय पर आक्रमण करे।" यह उत्तरपत्र कहाँस आया किछोको मरुम न हुआ। एक पृथिव मूर्खिपूजक इसाईयोके साथ साधारणमूर्खि पर पड़ा होता आहता है, यह बात डाइरर या अन्य इसाईयोकी सन्न न हुए। उन्होंने बड़ी तादात्म्यके साथ रामदास' क पत्रको उत्तर दिया,

"इसाई धर्म और हिन्दूधर्ममें तुलना करना बहुत ही अत्याचार्यकर्म है, दोनोंकी साधारण मूर्ख एक नहीं हो सकती।"

'रामदास' ने लिखा कि अतिवादी इसाईधर्म और मूर्खिपूजक हिन्दूधर्मकी मूलमिथि एक ही है—अयतारवाद और ईश्वरका बहुत्व। इसाईधर्मको धेड़ता सिद्ध करनेके लिए डाइरर साहब और उनके पक्ष-समर्थक इसाई लोगोंने इसाईकी अर्थवत्तक क्रिया, इसाई धर्मकी अतिवादीकी पूर्ण होना इत्यादि बातोंको सिद्ध करना चाहा। 'रामदास' ने भी हिन्दूशास्त्रोंसे ऐसे अनेक प्रमाण उद्धृत किये। अनेक प्रत्युत्तरके बाद 'रामदास' ही की जीत रही। दोनों पक्षके पत्र वाच्य पुस्तककार्यमें मुद्रित हुए थे।

इसी समय विजियम आडम नामक एक अतिवादी वैपदिष्ट इसाई मिशनरी भारतमें आया। राममोहन रायके साथ उनका परिचय हुआ। वे राममोहन रायको इसाई धर्ममें दोषित करनेकी कोशिश करने लगे। परन्तु फल उलटा हुआ। राममोहन राय तो इसाई हुए नहीं, उलटे वे आडम साहबको अपने धर्ममें लौट जाये। उन्होंने उन्हें समझा दिया कि परमेश्वरका अतिवादी ईश्वरत्व और उनके एकसे पापीका उदार इत्यादि मत बाइबिलके विरुद्ध है। १८२९ ई०में आडम साहब राममोहन रायके उपदेशसे 'यूनिटेरियन' हो गये। आठों तरफ शोर मच गया। कबूर इसाई लोग आडम साहबकी "Second fallen adam" कह कर इसी उड़ाने लगे अर्थात् शैतानके चक्रमें आ कर प्रथम मनुष्य आडम का जैसा पतन हुआ था उसी तरह राममोहन रायके पक्षमें पड़ कर आडम साहबका दूसरी बार पतन हुआ।

१८१५ ई०में वे कलकत्ता-नियासी हुए और एक वर्ष बाद ही अपने मानिकत्वका-बाड़े मकान पर उन्होंने अत्यन्त समान कायम की। दूसरे वर्ष यह उनके सिमला पाठे मकानमें स्थानांतरित हो गई थी, किन्तु उसके बाद फिर उहाँको तहाँ वापस आ गई। सत्ताहमें एक बार समा होती थी। शिवप्रसाद मिश्र उस समामें पैदावाड करते थे और गोविन्द मास अक्षरज्ञोत गाते थे। शारकानाथ डाक्टर, अजमोहन मरुमवार आदि

नियमित रूपसे उक्त सभामें शामिल होने थे, किन्तु जय-कृष्ण सिंह आदि बहुतसे लोगोंने निन्दाके उरसे उनका साथ छोड़ दिया।

इसो समय उनके भतीजोंने उन्हें पत्रिक सम्पत्तिले-वञ्चित करनेकी आशासे उनके विरुद्ध मुकदमा दायर कर दिया। नाना साम्प्रतिक ऋगडोंमें पड़ जानेके कारण वे नियमितरूपसे सभाका कार्य न चला सकने थे, इसलिए कभी बुन्दावन मिश्रके मकान पर, कभी मू कैलासके राजा कालीशङ्कर घोपालके मकान पर, कभी रुईके बाजारमें विहारीलाल चौबेके मकान पर सभा होने लगी। कुछ दिन इस तरह आत्मीय सभाके चलनेके बाद १८१६ ई०में विहारीलालके मकान पर एक महा-सभा हुई। उस सभामें राममोहन रायके साथ विचार करनेके लिये तत्कालीन प्रधान प्रधान पण्डितोंके साथ राजा राधाकान्त देव उपस्थित हुए। अनेक तर्क-युक्तियोंके बाद सुब्रह्मण्य शाल्मीको राममोहन रायके मतप्राधान्यको माननेके लिए बाध्य होना पड़ा था।

नाना साम्प्रतिक ऋगडोंमें उलझे रहनेके कारण अब तक राममोहन रामब्रह्मोपासनाके प्रचारके लिए एक समाज स्थापित न कर सके थे। धर्मविचारमें मूर्ति-पूजा मतका खण्डन करनेके बाद तथा उक्त मुकदमेमें जय प्राप्त करनेके बाद वे आनन्दित हृदयसे अभीष्ट सिद्धिका उद्योग करने लगे। वे सरलहृदय आडम साहबके सहयोगसे विशेष उत्साहके साथ एकेश्वरवादके प्रचारमें प्रवृत्त हुए। ब्राह्मणमात्र देखो।

इस समय राज-पुरुषों अन्दर सतीप्रथाको रोकनेके लिए घोर आन्दोलन चल रहा था। लार्ड वेलिंग्टन, लार्ड कनवालिस, सर जार्ज वॉलॉ, मर्कुइस आब हेष्टिंग्स आदि गवर्नर जनरलोंने सतीदाह निवारणके लिए अनेक उपाय किये थे, किन्तु धार्मिक भावों पर आघात पहुँचेगा इस भयसे वे ज्यादा कुछ न कर सके थे। यहा तक कि ईसाई पादरी भी इसके विरुद्ध कुछ बोलनेमें असमर्थ थे।

१८१० ई०में राममोहनरायके रंगपुरमें रहने हुए उनकी बड़ी मौजाई (जगन्मोहनकी द्वितीय स्त्री), पतिके

साथ सहमृता हुई। इस घटनासे राममोहन रायके हृदयमें सती दाहको बंद करनेकी आकांक्षा बलवती हो उठी।

सतीदाहके आनुपङ्गिक अत्याचारोंको दूर करनेके लिये निजामत अदालतने जो कठोर नियम बनाये थे, उसको तोड़ देनेके लिए कट्टर हिन्दुओंने गवर्नर-जनरल हेस्टिंग्सके पास आवेदनपत्र भेजा। १८१८ ई०में राममोहन रायने उसके विरुद्ध एक आवेदन भेजा। यह पत्र 'Asiatic Journal' नामक पत्रिकामें प्रकाशित हुआ था। उसी साल ३० नवम्बरको आपने सतीदाहके सम्बन्धमें पहली पुस्तकका अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित किया। सतीदाहप्रथाके विरुद्ध आपने 'प्रवर्तक और निवर्तकका प्रथम सवाद', 'प्रवर्तक और निवर्तकका द्वितीय सवाद' तथा 'विप्रनाम' और 'सुप्रबोध छात्र' नामक दो व्यक्तियोंके उत्तरमें तीसरा ग्रन्थ प्रकाशित किया। दूसरी पुस्तकका १८२० ई०में अंग्रेजी अनुवाद हुआ। यह अनुवाद हेस्टिंग्सकी सहधर्मिणीको समर्पण किया गया था। उसके सिवा सतीदाहके सम्बन्धमें आपने 'संवादकौमुदी' में एक लेख लिखा था। १८३० ई०में उनका 'सहमरण विषयक तृतीय प्रस्ताव' और उसका अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित हुआ।

इसी समय लार्ड विलियम बेन्टिक भारतके बड़े लाइट हुए। राममोहन रायको सतीप्रथाके विरोधी जान कर तथा वह न्याय और शास्त्रके विरुद्ध है, यह बात पुस्तकमें पढ़ कर बेन्टिकको राममोहन रायसे मिलनेकी अभिलाषा हुई। दोनोंको मुलाकात हुई और सतीदाहनिवारण-सम्बन्धी बहुत परामर्श हुआ। १८२६ ई०में ४थी दिसम्बर को बेन्टिकने यह कुप्रथा भारतसे दूर कर दी। १८३० ई०में १६वीं जनवरीको बड़े लाइटके प्रति कृतज्ञता जाहिर करनेके लिये राममोहन रायने टाउन-हालमें एक सभा की। टाकीके सुप्रसिद्ध जमींदार कालीनाथ रायचौधरीने उस सभामें बगला भाषामें लिखित अभिनन्दनपत्र और हरिहर दत्तने उसका अंग्रेजी अनुवाद पढ़ कर सुनाया था। उक्त अभिनन्दनपत्रमें द्वारकानाथ ठाकुर, कालीनाथ राय और तेलिनीपाडाके प्रसिद्ध जमींदार अन्नदाप्रसाद बन्योपाध्यायके सिवा और किसी सम्भ्रान्त व्यक्तिने हस्ताक्षर न किये थे। इस कारण राममोहन

रायने उक्त भविष्यत्प्रसङ्ग मन्त्रमें साधारण जनतासे क्षमा प्रार्थना करन हुए लिखा था :—

'That your Lordship will condescendingly accept our most grateful acknowledgement for this act of benevolence towards us and will pardon the silence of those who, though equally partaking the blessing bestowed by your Lordship have through ignorance or prejudice omitted to join us in this common cause.'

देशवासी जिससे संस्कृत और फारसीके सिवा अङ्ग्रेजी भी पढ़ सके, इनके सिधे भाषने बिदेय भाव प्रकट किया था। १८२३ ई०में आपने सञ्जीवित्वा वङ्गे छात्र भावहृत्के काङ्ग्रेज स्थापन करनेके सिधे एक प्रार्थनापत्र लिखा। इसमें आपने लिखा था कि अंग्रेजों बिना सिन्धुपे इस देशके खोगीक कुसंस्कार दूर न होंगे। फारसी या संस्कृत शिक्षासे विरोध खाम न होगा। इसलिधे संस्कृत-काठेजके बङ्गे एक अंग्रेजी विध्यालयकी प्रतिष्ठा करनी चाहिये। आपने बैदिक शिक्षाके सिधे एक वैद विध्यालय खोजा था। ७४ नं० मासिकतल्ला पृष्टमें यह विध्यालय था।

१८५० ई०में ईसाइ धर्मके प्रचारक महात्मा उक्त कलकत्ते आये। राममोहन रायके साथ मुलाकात करके उन्होंने इस देशके बालकोंका शिक्षाके सिधे एक अंग्रेजी विध्यालय स्थापित करनेकी भासना प्रकट की। अंग्रेजों शिक्षाके पक्षपाती राममोहन इस पर बङ्गे ही प्रसन्न हुए और उक्त साहबकी विध्यालय स्थापनाके आह्वान-समाजका मकान छोड़ दिया। पाँछे अपने बनाये हुए नये मकानमें समाज स्थापित होने पर आपने कमल वसुधा मकान ४०) किराये पर स्वीकृतके सिधे छे लिया। स्कुलमें छात्रसंख्या बढ़ानेके सिधे आपने काकी परिभ्रम किया था। इसके सिवा स्वयं उन्होंने भी एक अंग्रेजी स्कुल खोजा था। द्धन्त्रनाथ ठाकुर ने इस स्कुलमें पहले पढ़य अंग्रेजी अध्यापन किया था। और भी अनेक भद्र मीर सम्प्रदायपंथाय बालक उस स्कुलमें मर्ती हुए थे।

सचसाधारणके सिधे पाठ्योपयोगी बंगला पुस्तकें

का सबसे पहले आपने ही प्रचार किया था। १८६० ई०में ही आपका प्रथम गद्य रचनाका समय है, किन्तु उससे मुद्रित और प्रकाशित न होनेसे जनता उससे अपरिचित रही। १८६५ ई०में उन्होंने साधारण पाठ्य पुस्तक (गद्यकी) प्रकाशित की।

आपने पहले पढ़ाऊ अपने प्रथम कामा, सेमिकोडन भाषिका व्यवहार किया था। उस जमानेमें गद्य पढ़नेमें क्रोय भन्व्यस्थ थे। कौसे पुस्तक पढ़नी चाहिये, इसकी प्रजाकी आप स्वयं लिख गये हैं।

१८२६ ई०में अंग्रेजोंको बंगाला भाषा सीखनेमें सहायता प्रदुवानेके उद्देशसे आपने अंग्रेजों भाषामें एक बंगला व्याकरण लिखा। बादमें आपने उस व्याकरण के आधार पर अगया उसका अनुवाद करके एक 'गौडोय व्याकरण' रचा। इसे अच्छा समझ कर सर्वसाधारण ने खूब मगनाया। इसके सिवा आपने बंगलामें ज्याग्राही (अंग्रेजी Geography) नामसे भूगोल, खगोल (Astronomy) और ज्यामिति (Geometry) भी लिखी थी। परंतु खेद है, कि अब ये प्रथ मिळते नहीं।

पहले लिख आपे हैं, कि एक समय राममोहनकी माताने उन्हें सपुत्र घरसे निकाल दिया था। उन्होंने पहले राधानगरके समीप रघुनाथपुर जा कर एक घर बनवाया। पीछे वे कलकत्ता आ कर रहने लगे थे। रघुनाथपुरमें रहते समय उनके छोटे पुत्र रामप्रसादका जन्म हुआ। उस समय बङ्गे खङ्गे राधाप्रसादकी उमर २० वर्षकी थी। माताके साथ इनका बहुत दिन तक असंजय न रहा। कुछ समय बाद उनकी माताने साती जमी दारी राममोहन, जगमोहन और रामसोचनके पुत्र पीसादिमें बाँट दी और आप जगधाय जा कर रहने लगे। वहाँ एक वर्ष रहनेके बाद उनकी मृत्यु हुई। इसके कुछ समय बाद ही राममोहनकी मध्यमा स्त्री भीमता देवीका लग्नवास हुआ। स्त्रीकी बीमारोका हाथ सुन कर उन्होंने बङ्गे खङ्गे रघुनाथपुरको ठग्यनगर भेजा और कइ दिया था, कि यदि मृत्यु हो जाय, तो मुझे खबर देना, भविस एकार कमा न करना। मृत्यु स पाद पा कर अ कृष्णनगर गये और वहाँ परकीकगया

पत्नीकी चिन्ता पर दाम्पत्यप्रणयके दिनर्शनस्वरूप एक स्तम्भ बनवा दिया।

बहुत दिनोंमें राममोहन रायकी विलायत जानकी इच्छा थी। इस समय सांसारिक विपर्यायने इनका चित्त बहुत अग्रान्त हो उठा। वे विलायत जानके लिये तैयार हो गये। राममोहनका विलायत जाना सुन कर देशमें बड़ा भारी आन्दोलन उठा। इसके पहले कोई भी हिन्दू जहाज पर चढ़ कर विलायत नहीं गये थे।

केवल यूरोपका प्राकृतिक सौन्दर्य वा वहाका वाचार व्यवहार, धर्म और राजनैतिक अवस्था आगोमे देवनेके लिये ही यूरोप जाना चाहते थे, सो नहीं। उनका इस समुद्रयात्राके और भी कई कारण थे। उष्ट इण्डिया कम्पनीकी नई सनदसे भारतवर्षके भावी राज्य-शासन और भारतवासियोंके ऊपर गवर्नरके व्यवहार बहुत दिनों तक कायम रहेगा, सोच कर वे इस विषयमें आन्दोलन करने तथा सतीदाह निवारणके विरुद्ध प्रिमिकॉन्सिलमें अपील सुनानेके लिये विलायत जाना चाहते थे। इसी समय उक्त इष्ट-इण्डिया कम्पनीने दिल्ली सम्राटके कुछ अधिकार छीन लिये थे। इस कारण सम्राटने अङ्गरेज कम्पनीके अन्याय वात्याचारकी बात इङ्ग्लैण्डके राजकर्मचारियोंके निकट सुनानेके लिये राममोहन रायकी ही दूतरूपमें विलायत भेजना चाहा। दिन्कीके सम्राटसे सहायता पा कर वे प्रफुल्ल चित्तसे १८३० ई०के नवम्बर मासमें विलायतके लिये रवाना हुए। वादशाहने उन्हें सनद द्वारा राजाकी उपाधि दी और अपनी ओरसे आवेदन करनेकी उपयुक्त क्षमता दे कर आने जानेका कुछ खर्च दिया था। वादशाहसे यदि सहायता न मिलती तो सम्भव नहीं, वे विलायत जा सकते थे।

उसी साल १५ नवम्बर सोमवारको वे अपने पालित पुत्र राजाराम, रामरत्न मुखोपाध्याय और रामहरिदासको साथ ले आलबियन नामक जहाज पर चढ़े। अपने हाथसे रसोई आदि करनेकी कुल सामग्री तथा एक दुधारिण गाय भी साथ ले गये थे। जब जहाज नेटाल बन्दरमें लंगर डाले हुए था, उस समय एक फरासी

जहाज स्वाधीनताकी पताका फहराये जा रहा था। राममोहन राय उसे देखनेके लिये बड़ा तेजीमें ज्यों ही आगे बढ़ रहे थे, कि जमीन पर गिर पड़े जिससे एक पाव टूट गया। पीछे बहुत उपाय करते पर भी विलकुल अच्छा न हुआ। विलायतमें ये लपटा कर चलते थे।

१८३१ ई० ८वीं अप्रिलको जहाज लीवरपुठके बन्दरमें पहुँचा। राममोहनकी क्याति पहले हीसे इङ्ग्लैण्डमें फैली हुई थी। लण्डननगरमें मुद्रित इनके लिये अङ्गरेजों भाषाके ग्रन्थ कर पढ़ बतुतोंने इन्हें देवनेकी उद्कट इच्छा थी। जब ये विलायत पहुँचे, तब विलियम रायगोनेने अपने प्रोन्वैट्टु नामक भवनमें ठहरनेके लिये इनसे बहुत अनुरोध किया। किन्तु फिर्माके यद्वा रहनेकी अपेक्षा वे स्वामीन भावमें रहना पसन्द करते थे। इसलिये वे राउलिस होटलमें जा कर रहने लगे। यहा मुप्रसिद्ध पण्डित विलियम रस्का और प्रकतरचविदु पण्डित स्परजिमके साथ इनकी मित्रता हुई।

पार्लियामेण्ट महासभामें रिफार्म बिल और भारतोय सनदके सञ्चन्यों तर्कवितर्क सुननेके लिये इन्होंने शोध ही लण्डनकी यात्रा कर दी। यहाँ आते समय रस्कांने लार्ड ब्राउहमको राममोहन रायका पूर्ववृत्तान्त और इङ्ग्लैण्ड आनेका उद्देश्य सक्षेपमें सुना कर उन्हें पार्लियामेण्ट महासभामें गैररीके नाँचे एक स्थान देनेका अनुरोधपत्र दिया।

लीवरपुलसे चल कर वे मैन्चेस्टर शहरमें कल आदि देवने आये। वहाके ख्या और पुरुष कुलों भारतवर्षके राजा आये हैं, सुन कर राममोहनरायको देवने दौड़े। रेलपथसे लण्डन नगर आ कर आडेलफी होटलमें पहुँचे। यहाँ जेरमी वेन्थमके साथ इनका परिचय हुआ।

दिल्लीके वादशाहने जो इन्हें राजाकी उपाधि दी थी उसे इङ्ग्लैण्डकी गवर्मेण्टने स्वीकार कर लिया। इङ्ग्लैण्डपतिके राज्याभिषेककालमें विदेशीय दूतोंके साथ इन्हें भी एक आसन मिला था। लण्डन नगरके सेतुनिर्माणके उपलक्षमें जो जलसा हुआ था उसमें इङ्ग्लैण्डके राजाने इन्हें भी निमन्त्रण किया था। वोर्ड आव कन्ट्रोलके सभापति सर जे, सी, ह्वहाउस उन्हें इङ्ग्लैण्डेश्वरके

पास छे गये। उन्होंने राममोहनके सम्मानार्थ London Tavern नामक मङ्गलमें एक शोध दिया था।

सर्वहन मगके एमिरेरिपन इत्यादिमें उनक प्रति सम्मान दिखानेके लिये एक प्रकाश्य समा की। उस समामें चैम्पनिशर रिन्गु नामक पत्रिकाके सुप्रसिद्ध सभारक्ष सर जान वाउरिगन अपना वक्तव्यनामें कहा था— "मैंतो या सकोरिस, मिडलन या ग्युडन यदि इष्टम् भा यों ता मनमें जैसा भाव उत्पन्न हो सकता है, उन्ही भावसे धर्मभूत हो कर मात्र मैंने राजा राममोहन राय की सम्पूर्णता करनेके लिये हाथ बढ़ाया है।" उनक बाद अमेरिकाके युकरायपके हार्मोड विन्विघियान्यके समापति डा० काफ्लएरने कहा था, "अमेरिकावासी राजा राममोहन रायके विषयकी चिन्ता करते हैं। ये लोग अमेरिका जानेके लिये उनका आगत करते हैं।" वेदेगिकके ऐसे भाष्य और महानुभवतामें राममोहन रायको उच मानन मिला।

१८३१ और ३२ ई०में एक इण्डिया कम्यनाक नर सनइ पानेके उपलक्षमें भारतउपकी शासनप्रणाली निरूपण करनेके लिये पार्लियामेंट महासभासे एक कमिटी नियुक्त हुई। इस दृष्टक यूरोपाय पत्रिकों और राजकीयारिवांन कमिटीके सामन गयाहो ही था। राजा राममोहन रायन भा अनुकूल हो कर उस कमिटीके निकट गवर्नमेंटके राजस्व विभाग, विचारविभाग और प्रजासाधारणकी सम्बन्धके सम्बन्धमें साक्ष्य प्रदान किया था। कमिटीके सामन इन्होंने भारतवासियोंकी परोपतिक सम्बन्धमें बहुत-सी बातें कही थीं।

राजा राममोहन रायन सङ्गशा नवाइके लिये इङ्ग्लैण्डमें रहत समय राजनीति और धर्मके सम्बन्धमें बहुतस प्रश्न लिखे थे। पार्लियामेंट कमिटीके सामने उनका साक्ष्य १८३२ ई०के फरवरी मासमें निम्नलिखित नामस प्रकाशित हुआ।

"An essay on the Rights of Hindoos over ancestral Properties according to the Law of Bengala with an Appendix containing Letters on the Hindoo Law of Inheritance and Remarks on East Ind a Affair comprising the Evidence

to the Committee of the House of Commons on the Judicial and Revenue systems of India, with a dissertation on its ancient Boundaries, also Suggestion for the Future Governments of the Country illustrated by a Map and further enriched with Note

उसी सालके मितभर मासमें Monthly Repository नामक पत्रिकामें उनक लिये धीर जी दू प्रयोग का उल्लेख हुआ जाता है जो इस प्रकार है—

1 Exposition of the practical operation of the Judicial and Revenue Systems of India

2 Translations of several principal books, passages and texts of Veds and of some contemporary works on Brahmical Theology.

उनक पत्रक गणराजमें राममोहन राय प्रातःस्मरणीय देवर माहबके माहको साथ ले कर फ्रांस देन देलने गये। फ्रांस राज्यमें जा उनका वधेष्ट भाइर हुआ था। सर्व सम्राट् लुइ फिलिपन इनका सम्मानके साथ आगत किया था। यहाँ तक कि, उन्होंने राममोहन रायका निमन्त्रण कर एक साथ भोजन किया था। यहाँकी मोसाइकी एगिप्टिक नामक समाके इष्ट मभा सह बनाया। एक दिन उन्होंने पेरिस मगके क्रिमी होटलमें सुप्रसिद्ध रुचि सर रामस मूरके साथ भीहार किया था। रामस मूर उनके गुर व्यपहार पर मुग्ध हो गये थे। यहाँ फरासी भाषा सीधनेके लिये इन्होंने कठिन परिश्रम किया था।

१८३३ ई०के आरम्भमें ये इङ्ग्लैण्ड सेंट कर देवर माहबके माहके पर उदरे। इङ्ग्लैण्डका सम्मान्य मन्त्र समात्र इष्ट धर्याका वृष्टिस दक्षता था। कुमारी लूसी एडिनन सुप्रसिद्ध डा० वेमिडो जा सब पत्र० लिखे उन्हे पढ़नस स्पष्ट माहूम होता है कि राममोहन रायक प्रति उनकी कैसा धर्या और भक्ति था। ऊँस—

Just now my feelings are more cosmopolite than usual I take no personal concern in

Memoirs Miscellaneous and Letters of late J. J. A. K. M.

a third quarter of the Globe, since I have seen the excellent Ram mohon Roy "

फिर दूसरी जगह उन्होंने राममोहन रायके सम्बन्धमें कहा है—

'He is indeed a glorious being—a true sage, as it appears, with the genuine humility of the character, and with a more fervour, more sensibility, a more engaging tenderness of heart than any class of character can justly claim "

उन्होंने जो रेमेरेण्डाडि डेभिसन एम ए साहब पर अपने पालित पुत्र राजारामका शिक्षा-भार सौंपा था उनकी सद्बर्तमानिने राममोहनके सम्बन्धमें लिखा है, "ऐसे विनयी मनुष्य शायद ही कहीं मिलेंगे। जैसे सम्मानके साथ वे मेरे प्रति व्यवहार करते थे, उससे मैं लजा जाती थी। यदि मैं अपने देगकी महारानी होती, तो भी मेरे पास आने और विदा होनेके समय कोई भी इससे बढ कर सम्मान न दिखलाता।"

इसके बाद राममोहनने वृष्टल जानेकी इच्छा प्रकट की। सुपरिचित मिस कार्पेण्टरके पिता डाकूर कार्पेण्टरने कुमारी कासेल तथा उनकी मामी और अभिभाविका कुमारी किडेलके साथ लण्डन नगरमें राममोहनका परिचय करा दिया। वृष्टलमें इन्होंने प्लेपल्टन प्रोम नामक उद्यानवाटिकामें किडेल और कुमारी कासेलके यहां अतिथिरूपमें रहना चाहा।

१८२३ ई०के सितम्बर मासमें वे वृष्टल आये और उक्त कुमारीके यहां ठहरे। उनके साथ उनके नौकर और कर्मचारी रामहरिदास और रामरतन मुखोपाध्याय तथा पालित पुत्र राजाराम भी आये थे। लण्डनसे उन्हें वहा कहीं आनन्द मिलता था। अधिकांश समय वे डा० कार्पेण्टर और सुप्रसिद्ध प्रबन्धलेखक रेमेरेण्ड जान फष्टरके साथ वित्ताते थे। कुमारी कार्पेण्टरके साथ इनकी बातचीत हुई। उन्ही बातचीतसे कुमारीके हृदयमें भारतकी हितसाधनेच्छा जग उठी थी।

१९वीं सितम्बरको प्लेपल्टन प्रोम भवनमें राजा राममोहन राय सेकथोपकथन करनेके लिये बहुसंख्यक सुशि-

क्षित व्यक्ति इकट्ठे हुए। उनका स्वागत करनेके लिये जो सभा हुई उसमें भारतवर्षको धर्मनैतिक और राजनैतिक अवस्था तथा भविष्य उन्नतिके विषयमें विचार किया गया था। सुप्रसिद्ध डा० फष्टर और अन्यान्य प्रधान पण्डितवर्ग राममोहनको असाधारण तर्कशक्ति देव कर चमत्कृत हो गये थे। राममोहन रायने करीब ३ घंटे पढ़े रह कर उपस्थित पण्डित मण्डलके कठिन प्रश्नों का यथावय उत्तर दिया था। जिस असाधारण प्रतिभा का उन्मेष देव कर एक दिन इनके पिता माता तथा गावके लोग विस्मित हो गये। जिस प्रतिभासे हिन्दू, मुसलमान, ईसाई आदि धर्म सम्प्रदायके प्रधान प्रधान पण्डित उनसे परान्त हुए थे, जिस प्रतिभावलसे उन्होंने विभिन्न भाषा और विविध शास्त्रमें व्युत्पत्ति लाभ कर असामान्य ज्ञानड्योति प्राप्त की थी, उस असाधारण प्रतिभाका परिचय पा कर वृष्टलनगरमें आये हुए पण्डितवर्ग स्तम्भित हो गये। किन्तु दुःख है, कि यह कार्य उनके जीवनका श्रेय कार्य था। इसके बाद वे मनुष्यके एक भी हित हर कार्यमें शामिल न हो सके। उस दिनकी सभाके कार्यमें अत्यन्त परिश्रमके बाद उन्हें फिर कभी विश्रामका अवसर न मिला। डा० कार्पेण्टरके उन्हें विश्रामके लिये अनुरोध करने पर भी वे बन्धुवर्गका आतिथ्य उपेक्षा नहीं कर सकते थे। जो सब मनुष्य उनसे मिलने आते थे, उन्हें वे विमुख नहीं लौटाते, उपयुक्त उत्तर दे कर संतुष्ट कर ही देते थे। इसके सिवाय वे उपासना घर जाने और अन्यान्य स्थान देखनेसे भी वाज नहीं आये थे।

१९वीं सितम्बरको इन्हें थोड़ा-सा ज्वर आ गया। चिकित्सक प्रवर एसलिन, पिचार्ड और कैरिकने इनकी चिकित्सा की। दो दिन तक चिकित्सा होती रही, पर कोई फल नहीं दिखाई दिया। आखिर १८२३ ई०की २७वीं सितम्बरकी रातको ढाई बजे चादनी रातमें राजा राममोहन राय इस लोकसे चल बसे। उनकी मृत्यु पर इङ्गलैण्डवासियों और भारतवासियोंने आंसू बहाया था। उनकी शुश्रूषा करनेवाले इङ्गलैण्डवासी पुष्य और कुमारियोंके आग्रहसे उसी समय राजाके मस्तर और मुखाकी एक प्रतिमूर्ति बनाई गई थी।

पोछे उनके लड़कोंको कहीं मन्गलिका हिस्सा न मिले, इसके लिये उन्होने पहले हासे मरने यूरोपीय बंधुओंको कह रखा था, कि इसार्योंके मकबरमें, मधवा इसार्यों की अन्वेषिकाकी पत्रिकके अनुसार उह न बनना कर किसी अर्धरूप स्थानमें गाड़ दिया जाय। क्योंकि, हि मूया भीर भाइएके अनुसार इससे उनकी आति नष्ट न होगी। उनके मृत गार पर मा यक्षोपवीत प्रेषा गया था। उनके कथनानुसार उनका मृतदेह खेपलउन प्रोमकके एक निर्जित उद्यानमें युगवाप १८वीं अक्टूबर को गाड़ने गइ थी। उनके मित्त हारकागाय ठाफुरल इन्वैस्टिगटिग का कर imosa vale नामक स्थानमें उनकी प्राजा ला कर उसके ऊपर एक सुन्दर मकबर बनवा दिया था।

राममोहन बन्धोपाध्याय—नरिया जिन्नान्तर्गत मागोत्पी पूर्ववर्ती मिरेटी प्रामनिवासी एक बंगाली कवि। इनके पिताका नाम बलराम बंधोपाध्याय था। अपने पिताके कहनेसे उन्होंने अपने घरमें बड़ी धूमधामसे मलिकपूर्वक सोठारामकी मूर्ति स्थापित की थी। यह अपने कृतित्व के निरक्षणकर रामायण बंगला पद्यमें अनुवाद कर गये हैं। इनका पद्य कृत्तियासकी तरह शास्त्रक नहीं होने पर भी कविको प्रतिभाका परिचायक था।

रामयन्त्र (सं० श्लो०) तन्त्राक पन्त्रिंशत् ।

रामयज्ञस्—श्रीमन्त्रक समसामयिक एक कवि। भारत मन्त्रोत्तम इनका उल्लेख है।

रामरक्षा (सं० पु०) रामरक्षाका एक स्तोत्र। इसके कर्ता विश्वामित्र मान जात हैं। कहते हैं कि इस स्तोत्रके मन्त्रोंसे अभिमन्त्रित किया हुआ व्यक्ति विद्येय रूपसे सुरक्षित रहता है।

रामरूपचम—भारो राज्यके अन्तर्गत एक प्राचीन नगर। (मन्विष्य मन्त्रपत्र १५१)

रामरत्न (सं० श्लो०) एक मन्त्ररक्षी गाला मिहो जिसका वैष्णव लोग तिष्ठक लगते हैं। यह मध्यप्रदेशमें नरियों के किनारे बहुत मिलता है।

रामरत्न (हि० पु०) चन्द्रमा।

रामरस (हि० पु०) १ नमक। २ पानी या बना हुई मंग।

रामरत्नो (हि० श्लो०) एक प्रकारका ऊँच जो कनारामे पैदा होती है।

रामरहस्योपनिषद्—एक उपनिषद्का नाम।

रामराज—शक्तिवाक्यके विद्यमानवररूप एक राजा। ये शक्तिवाक्यके मार मुसलमानराज राजाओंके विरुद्ध युद्ध कर निहत हुए थे। १५१५ ई०के अन्तवरो महोत्तमके कृप्या नदीके किनारे पोर युद्ध हुआ था। इस युद्धमें राम राजके साथ जाल हिन्दू-सत्ता खेत रही थी। लड़ाई अन्तम होनक बाद रामराज निजान हुसनेके सामने जाये गये। उन्नी समय उन्होंने उनका शिर काट डालनेका हुक्म दिया। हुक्म पाठे ही निजानसे उनका शिर काट कर उपस्तम्भरूप बोजापुर भेजा गया।

विष्णुमत्तर देखो।

रामराज—साधारणक एक महाबाहु-नरपति। २५ शाहजाहक बाद १७४८ ई०में ये राजसिंहासन पर बैठे। ये तारा बाइक गैर और शाहजाहके वृत्तक थे। महापत्य देखो।

रामराज—स्थावत्यरिद्यापियरूप धके प्रथेता।

रामराज्य (सं० पु०) १ रामचन्द्रका शासन जो प्रजाके लिये अत्यन्त सुखदायक था। २ यह शासन जिसमें रामचन्द्रक शासनकाक जैसा सुख हो, अत्यन्त सुख दायक शासन। ३ महासुर युग।

रामराम (हि० पु०) १ प्रणाम, नमस्कार। इस पक्षका प्रयोग हिन्दुओंमें परस्पर अभिवादनके लिये होता है।

(श्लो०) २ मंत्र, मुनाकाठ।

रामराम—नाशोप्रकाश, रक्षार्थिका और रसरत्नमदीयक रचयिता।

रामराम—एक भाषायाका नाम।

रामराम न्यायालयार—पोषद्वयहन कविकल्पद्रुमकी टीका बनानवाले।

राम राय (मुक)—एक सिद्ध मुक। युक्तप्रदेशके देहरादून जिल्लाक देहरादूनक स्थानों हो बसाया था। य १७५० सहाय्येयमागमें मुन मानक स्थानमें जा कर बस गये। स्थानों जा एक मन्दिर बनवाया था उसको बनारस बहुत कुछ जहांगीरक मकबरें सो था। ऐसा मन्दिर नगर भरमें और कहीं नहीं है।

रामराय जय किता करजयजयनः सिधधाम्नायस कनग भार पंजाबसे निकलन दिये गये, तब सप्राट औरङ्गजेबन मद्रासक राजासे इनका परिचय करा

दिया । राजाने इन्हें रहनेके लिये जो स्थान दिया था, वह आज भी गुरुद्वार वा देहरा कहलाता है । वहा राम रायकी अशौकिक शक्ति देख कर सैरुडों आदमी इनके शिष्य हो गये । राजा फने शा इनके प्रतिष्ठित पूर्वोक्त मंदिरके खर्चावर्चाके लिये जागोर दे गये हैं ।

रामराय योगाभ्यास द्वारा अनामान्य कार्य कर सकते थे । यहा तरु, कि अपनी आत्माका दूसरे शरीरमें चालित करना जानते थे । एक दिन इन्ही प्रकार अपनी आत्माको दूसरेके शरीरमें परिचालित करनेके वाद् वे निरूपित समयमें लौट कर न आ सके और इनकी मृत्यु हुई । जहा पर इनकी देह मृतावस्थामें पडी थी वहा इनके शिष्योंने एक समाधिमंदिर बनवा दिया है ।

रामराय—एक हिन्दी कवि । इनकी कविता बडी मधुर होती थी । उदाहरणार्थ एक नोत्ते देते हैं ।

“सावसे कहियो मोरी ।

सीस नवाय चरया गहे लीजा कर मिनती कर जारी ॥

कहा ऐसी चूक परी हरि भोस प्रीत पाछानी तोरी,

सुरल न लीनी मोरी ॥

भूपण बसन सभी हम त्यागे खान पान मिसरोरी ।

भभूत रमाव योगन हाय बैठी तेरा हा ध्यान बरारी वेग,

क्यों न आवो किशारी ॥

रोम रोम मद छाव रहो मत मेरी पैर परोरी ।

बारे करेज राम राय दयो है थर मे ऐसी करारी,

थोर नहिं जात धरारी ।

रामरायका—चम्पारण जिलेमें प्रवाहित एक नदी । यह रामनगरसे तीन कोस उत्तर हो कर दक्षिण पूर्व बहती है । मशान और बलौरा नामकी दो शाखा इसमें आ मिली हैं ।

रामराव चिचोलकर—छतीसगढ़-निवासी एक महाराष्ट्र-ब्राह्मण । इनका जन्म संवत् १६२० और देहांत १६६० में हुआ था । इन्होंने ३६ ग्रंथ लिखे हैं । कुछके नाम नीचे दिये गये हैं,—शतक, शिक्षावली, नीतिशतक, नीतिचंद्रिका, आर्णधर्मचंद्रिका, वसंतचंद्रिका, भारत-विलाप, ऋतुविनोद, पुरानी लकीरके फकीर, शिव-सम्पतिविजय इत्यादि ।

रामरी—१ दक्षिणप्रहरेके समुद्रोपकूलस्थित एक छोटा द्वीप ।

यह अक्षा० १८ ४३' से १६' ३८' उ० तथा देशा० ६३' ३०' से ६३' ५६' पू०के मध्य अवस्थित है और आराकानविभागके कर्पोरुप्यु जिलेमें पडता है । रामरी और कर्पोरुप्यु नामक शहर (Township) ले कर यह बना है । यह द्वीप ५०० मील लम्बा और २० मील चौडा है । इस द्वीपके चारों ओर पर्वतनाला नजर आती है जिसको ऊंचाई समुद्रकी तहसे ५०० से १५०० फुट है । सबसे बडी चोटी ३००० फुट ऊंची है । यहा धान, नील, लवण, चीनी और उहादुरी लकड़ी बहुतायतसे पाई जाती है । कहीं कहीं लोहे और चुन-पत्थरकी पान भो है । पहले रामरी और चेटुवा ले कर रामरी नामक एक स्वतंत्र जिला संगठित था । अभी वह पूर्वोक्त कर्पोरुप्यु जिलेमें मिला दिया गया है ।

२ उक्त जिलेका एक उपविभाग । भूपरिमाण ४२६ वर्गमील है । रामरी नगर इसका विचारसदर है ।

३ उक्त जिलेका एक प्रधान नगर । यह अक्षा० १८' ४३' से १६' २२' उ० तथा देशा० ६३' ४०' से ६४' २' पू०के मध्य विस्तृत है । भूपरिमाण ४४६ वर्गमील और जनसंख्या १६०० है । इसमें २४७ ग्राम लगते हैं ।

१८०५ ई०में यह नगर वाणिज्यसमृद्धिसे परिपूर्ण था । उस समय यहाके लोग वंगाल, बर्माई और ताभय आदि स्वान्तोंमें वाणिज्यव्यवसाय करते थे । क्याइन-ब्राणके विद्रोह और ब्रह्मवासीके अत्याचारसे आगे चल कर यह नगर श्रीहान हो गया । क्याइनब्राण और उसके साथीके परास्त होने पर राजाने वहुतोंको मरवा डाला और जो बच गये उन्हें राज्यसे निकाल दिया गया ।

प्रथम अंगरेज ब्रह्मके युद्धकालमें यह स्थान बडी आसानीसे अंगरेज सेनापति मारुवोनके हाथ लगा । अंगरेज सेनापतिसे आराकान अधिकृत होनेके वाद्से ले कर १८५२ ई० तक रामरी नगर उसी नामके जिलेका विचारसदर था । पीछे आन् और रामरी नगर जब मिला दिया गया, तबसे यह कर्पोरुप्यु जिलेका प्रधान नगर गिना जाता है ।

रामरुद्र न्यायवागीश—अमरशतकटिप्पणीके रचयिता ।

रामकृष्ण मठ (सं० पु०) एक प्रसिद्ध है। इसका बनाव १८८० ई। रामकृष्णमठ नामका टीका मिलता है।

रामकृष्ण मठ—रामकृष्ण नामक व्यासप्रथ, तत्र रामकृष्ण नामका व्यास, प्रथम, दिनकरकृत मठपाठका टीका मधुसूदनाचार्यका और रामकृष्ण नामक व्यासनामक प्रथम।

रामकृष्ण शक्ति—एक नाम है। इसका जन्म पूष व गौतम हुआ था। सगणक एक अच्छे उपाध दानक कारण य प्रसंगमात्र ही उक्त है। इसका बनाव हुआ गान सु मपुर नाम था, रमनिव बहुरी भाग्यप्र नरन भयं इतने गानक निय संत है।

रामनि—नरुहरिगतकटाका, पूनावमहाप्रकाश और १६०८ ईमें रविचंद्रन नारायणकाक रमनिता। ये पूजासक पुत्र तथा निम्नारिण और हरिधरक नाम है। काइ काइ इह रामकृष्ण ओ कदा करत है।

रामन (सं० पु०) १ राजतरङ्गिणीवर्णन एक श्लोक। (पत्र१०० ८१२१०) (सि०) २ रामनसंघी रामकथा।

राम २३।

रामकथन (सं० पु०) राम कथनार्थ संपन्न। गाम्भिर्य कथन, रामक कथक। पर्वण—रामक, वाइवास्थाक रमन्व। (पञ्चमहा)

रामकान्त—विज्ञावरक रमन्तान एक हि तृणिव। इनके बनाव हुए मठ ये मठ है—अमरकटक और भगता काका मन्नि महापाठ नू का ताता रामराम धा प्रथमागत भाइ नयका। रमन्तान इनका कविता सधरनाव हाता था। उदाहरण यं एक नाम हा यं है—

मठ का नाम व इह का नाम २३।
पर इहका नाम यं २३।
इह नाम व न यं २३।
इह नाम व न यं २३।

रामनिष्ठ (सं० पु०) रामकथा।
रामनिष्ठ—१ विदुषाचार्य का नाम था। २ रामकथाप्रकाशक का नाम।
रामनिष्ठकृत (सं० पु०) का नाम है।
रामनिष्ठ (सं० पु०) का नाम है।

रामकृष्ण नामक परितोका अभिनव। २ एक मात्रिक पुत्र। इसका प्रत्येक परचम २४ मासाय होता है और महत्तम 'अणव' का हाता मापयक हाता है।

रामकथा (सं० पु०) राजकथाप्रमेह। (पत्र१०० १२६५)
रामनामन पाठ (रामान)—कनकसाधना एक काव्यक सन्तान। ये गान हृद्यिगुणका पद्या संघे हृद्यिगुणक मुग्धो है। मनन भासा और सामिनाक विवगत राम मोहन भोटे हा दिनां विद्यान यह वर परिचित हुए। राजासा बन्धुवस्त्रक समय उद्गीत भवता कृतिय दिवा कर उग समयव बह सारकी बहा मनुष्य क्रिया तथा वस्तु म गांव और गणालि हाथम कर लो यो।

रामकथा—१ महाप्र प्रकाशे वनू ल जिनका एक गानुक। २ गणिमान ३३४ वर्षमाय है। ३ उक्त तालुक का एक नगर भाट विद्यार सद्ध।

रामकथा इकरण—महात्मक पाठनाव कथयविद्ये। दिष्टवगजसंहिताम इका विषय वर्णन है।
रामकथन (सं० पु०) काश्मीरक एक राजा।

(पत्र१०० ११२६)

रामकर्म—अध्यात्मरामायणसु रामगीताका और रामायणविवरणक रचयिता। ये हिमातिवर्माक पुत्र और कर्मकरक निय है।

रामकथन (सं० पु०) राम कथनार्थ संपन्न। १ रचयिता रचयिता। (सि०) रामकथ संपन्न। २ रामकथन।

रामकथन नामा—पूनावमठके वर वरका मठवर्तिना नामका टीका और पूनावमठके धर्मविद्वानकाक प्रथम। य परमेश्वरक अमर्तन वरमगुप्तम रत्न है।

रामकथना—पेष्वावमठवाविद्युत कलाभकाका एक गाथा। रामकथनाय भाद्रिका गुद वा कर्ता न नाम कर वरगाथा (रामनाक अमर्तन वरमगुप्ता नाम) क पुत्र मागेन रामक—ना नामक एक गाथा कथावन है। रामकथन गुजरात और भासाय गुवापालाव एक प्रथम है। इन गाथायक नामन रामकथन नामक एक कथाका प्रकाश कर विषयकथना नाम। तानुमा दे वरमर्तन वर विषयकथनाक दिन गांव पठ अमर्तन वरमर्तन इहोना एक उदाहरण प्रकाश है।

वे लोग सभी शास्त्रोंको तथा सभी शास्त्रोक्त देवताको एक समान मानते हैं। इस कारण उत्सवके समय भगवद्गीता, कुरान और वाइविल ग्रन्थ पढ़े जाते हैं। वहाँ 'परमसत्य' नामक एक चेटी है। सभी जातिके लोग वहाँ एकत्र भोजन करते हैं। वे ईसा, महम्मद और नानरुके उद्देशसे भोग चढाने हैं। सुनते हैं, कि गोमासादि भी भोगमें दिया जाता है।

सभीको समान जानना और विनया होना उचित है, परन्तु और परस्त्रीहरणकी बात तो दूर रहे, उसके स्पर्शन वा दर्शनसे भी पाप है, यही उनका साम्प्रदायिक मत है। किन्तु उन्हें अपरापर नियम, जास कर व्यभिचारवर्जनचिपयक प्रतिज्ञाका पालन करते नहीं देखा जाता।

रामवसु—एक बगालो कवि। वचनसे ही इन्हें कविता बनानेका शौक था। उस समय टूटी फूटी जो कुछ कविता बनाते थे, उसे वे केलेके पत्तेमें लिप लिखा करते थे। धीरे धीरे ये एक अच्छी कवि हो गये। इनकी कविता बड़ी ओजस्विनी होती थी। ४२ वर्षकी अवस्थामें इनका देहान हुआ।

रामचाजपेयी (सं० पु०) एक पद्यतिकार। कुण्डमण्डप-सिद्धिके रचयिता विद्वल दीक्षित और शूद्रधर्मतत्त्वके प्रणेता कमलाकर भट्टने इनका नामोल्लेख किया है।

रामवाण (सं० पु०) रामस्य वाण इय सफलत्वात्। १ औपध्विशेष। इसकी प्रस्तुत प्रणाली—पारा, विप, लौंग, गंधक प्रत्येक १ तोला, मिर्च २ तोला, जायफल आधा तोला एक साथ इमलोंके रसमें मिला कर उड़द भरकी गोली बनावे। रोगीके दोपका बलावलके अनुसार अनुपान स्थिर करना होता है। इसका सेवन करनेसे शीघ्र ही जठराग्नि प्रदीप्त होती है तथा संग्रहणी आदि नाना रोग प्रशमित होता है।

(भैषज्यरत्ना० अग्निमान्याधि०)

२ एक प्रकारकी ऊख। (त्रि०) ३ जो तुरंत उप-योगी सिद्ध हो, तुरंत प्रभाव दिखानेवाला।

रामवीणा (सं० स्त्री०) रामा रमणीया वीणा। वीणाविशेष, एक तरहकी वीणा।

“कृषी च कच्छपी वीणा वीणा तुम्बु नारदी।

सारसती केलिकला रामवीणा कलाधिता ॥”

(रन्दरत्ना०)

रामवतिन् (सं० पु०) १ रामवतधारी, वह जो रामवत करता हो। २ धर्मसम्प्रदायभेद।

रामशङ्कर—१ शूद्रविद्येके प्रणेता। २ यन्त्रचिन्तामणि-टीका और समरसारविवरणके रचयिता।

रामशङ्कर राय—दीक्षासेतु और सारात्संग्रहक नामक दो तन्त्रके प्रणेता।

रामशङ्कर व्यास—हिन्दी गद्यके एक अच्छे लेखक। आपका जन्म संवत् १११७में हुआ था। आपने कई वर्ष कवि-वचनसुधा और आर्यमित्तका सम्पादन किया। आप भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्रके अंतरंग मित्रोंमेंसे थे और उन्हीं वह उपाधि पहले इन्होंने ही दी थी। आपने जगोल-दर्पण, वाक्यपंचांगिका, नैपोलियनकी जीवनी, वानकी करामात, मधुमतो, देनिसका बाँका, चंद्रास्तनूतन पाठ और राय दुर्गाप्रसादका जीवन चरित नामक ग्रंथ रचे हैं।

रामशर (सं० पु०) रामस्य शर इव। १ शरशुभेव, एक प्रकारका नरसल या सरकंडा। यह ऊखके खेतोंमें आप ही आप उगता है और ऊख हीके आकार-प्रकार और रूप-रंगका होता है। अंतर सिर्फ इतना ही होता है, कि इसमें कुछ भी रस नहीं होता। पर्याय—राम कान्त, रामवाण, रामेषु, अपूर्वादन्त, दीर्घ, नृपप्रिय। वैद्यकमें इसके मूलका गुण कुछ उष्ण, रसिप्रद, अम्ल-रस, कषाय, पित्तकारक और कफनाशक माना गया है। २ रामचन्द्रका वाण।

रामशर्मान् (सं० पु०) उणादिकोपक रचयिता।

रामशरणपाल—कर्त्ताभिजामतप्रवर्त्तक। आउलेचादके वाद ये तहत पर बैठे। कर्त्ताभिजा देखो।

रामशास्त्रिन्—नरहरितीर्थके संन्यासाश्रम ग्रहण करनेके पहलेका नाम। १२१४ ई०में इस पण्डितवरकी मृत्यु हुई।

रामशास्त्री—एक महाराष्ट्रीय पण्डित। इनकी उपाधि पूर्वणी थी। सानाराके निकटवर्ती महौली ग्राममें इनका जन्म हुआ था। संस्कृत शास्त्रमें पारदर्शी होनेके लिये

वे काशी भाये। यहाँ शास्त्रालोकनामें ही इनके जीवनका अधिकांश समय बीत गया। अन्तमें १७५६ ई०को पूना नगरमें परिश्रम पालनकृष्ण शास्त्रीके मरने पर वे काशीसे पूना भाये। यहाँ पेशवा भाषणवचनके कहेसे राजकार्य देखने लगे। राजदरबारमें जितने शास्त्री थे सबोंमें वे श्रेष्ठ थे। पेशवा राजकार्यमें अनेक समय इनसे सहाय लिया करते थे।

माधवराव किसी सुविज्ञ ब्राह्मणसे योग सोक्त थे। एक दिन वे योगमग्न हो कर बैठे हुए थे, इसी समय राम शास्त्री वहाँ पहुँचे। उन्हें बिल्वकुशजितोत्पत्त्यक योगासन पर बैठे दृष्ट रामशास्त्री वहाँस बहने भाये। दूसरे दिन सबेरे वे पेशवाके पास गये और बोले, 'मैं काशी ज्ञाना ब्राह्मण हूँ, इसलिये कुछ दिनके लिये भयकाय कीजिये।' माधवरावने अपना भयराव लोकार करते हुए उनसे प्रार्थना की और कहा, 'मैंने ऐसा कौन अनुचित कार्य किया है जिससे भाव अप्रसन्न हुए हैं।' शास्त्रीजीने जवाब दिया, 'मैं ब्राह्मण शास्त्रानुमोदित क्रियाकारणसे भयस्त हो कौशिकसे राजसिंहासन पर बैठे हैं, उन्हें विषय दे, कि वे पुनःके समान प्रज्ञापात्रक करें। यही इनका उपयुक्त प्राप्तिवचन है। यदि आप ऐसा करना नहीं चाहते हैं, तो हमी प्रसन्न परसे उतर जायें और धर्मधर्ममें जीवन उत्सर्ग कीजिये। शास्त्री जो कुछ शिक्षा देते हैं मैं भी उसका अनुमोदन करता हूँ।' उसके बाद माधव रावने परामर्शदाता भूमिपथ पर रामशास्त्रीके कहनेका तात्पर्य समझ कर योगाभ्यास छोड़ देनेका सङ्कल्प किया।

रामशास्त्री अपने पेशवासेकी उपतिके लिये जो सब काम कर गये हैं उसका एक बार स्मरण करनेसे मनमें भाये भाप भय और मकिकका उद्वेग होता है। सम्प्रान्त और जगो व्यक्ति मा करार काम करल पर उनसे उरतीं थे। उनके वाक्यकी शुद्धता और सारबत्ता सपरिनि भ्रष्टो तरह समझ ली थी। बहुरीति उन्हे धनके जोममें लुभाने की कोशिश भी की था, पर वे एस उदार प्रवृत्तिक भावमी थे, कि कमी भी जिसास उरुनि एक कीड़ी तक मो नहीं ली था। इनक धान पाने और पहननका कोई मो प्रवर्ण नहीं था। उसक बिप उन्हीन कमी कुछ नहीं भोग।

जो कुछ मिल जाता था, पही वे खुशीसे खाते थे। खाने के लिये एक दिन पहले मो कुछ सज्ज कर नहीं रखते थे। शास्त्रमें प्रकृत ब्राह्मणके जो सब नियम वतलाये गये हैं उन्हीके पाठनामें वे अपना अधिकांश समय बिताते थे। मशरूप ६को।

रामशिका (सं० श्री०) गयाकी एक पहाड़ी जिले लोग तीर्थ मानते हैं। स्कम्प्युराजके मानसबण्डके राम शिन्नामाहास्यमें इसका बिस्तृत विवरण है।

रामशिष्पु—तीर्थीयोपनिषद्ब्रह्मसूत्रिकाके रचयिता।

रामशौच—सत्यामरणदीपिकाके प्रणेता।

रामशीतला (सं० श्री०) भारामशीतला, पयशाकविशेष।

रामश्री (सं० पु०) एक प्रकारका राग। इसे कुछ लोग हिन्दुके रागका पुनः मानते हैं।

रामभोपाद् (सं० पु०) एक भाष्यार्थका नाम।

रामपद्मस्तम्भराज (सं० पु०) म ज्ञेय।

रामसंका (हिं० पु०) एक प्रकारकी घास जिससे रस्सी या बाघ बनाते हैं, काँस।

रामसंपत्ति (सं० पु०) एक विद्यात्रय एक रचयिता।

रामसबा (सं० पु०) रामस्य सबा (शबाहस्त्यधिन्यम्पु। पा ५।५।६१) इति ट्। सुग्रीव।

रामसक्ति—एक हिन्दी कवि। इन्हें कविता करनेकी शक्ति थी। इनके छन्द भी मनोहर होते थे। जैसे—

“नमस्तु भक्त्या ब्राह्मणे वीर्ये रत्नमहस जगो।

सुख रतनार नैन येनेके सत पगे ॥

तनके मत जगमगत सुदमर्षक मनों।

धिरिपनेके सुपुष्टत मार मनो जनों ॥

कतपात कमठत ठरुषरी बहूँ भारे।

उमग नाथो भानन्द तर कुण्ड बहूँ जारे ॥

यदि उदार छवि अवार कौन वे कहि जाय।

शम्भु शेष करारा नहीं निगम पार पाय ॥

शेवता यदि मधुरे बैन यदि मुखावन छागे।

रामसक्ति रायतीका भावत सब त्याग ॥”

रामसूत्रे—हिन्दीके एक कवि। इन्होंने दानकोजा, यानो, दोहायजो, मंगलशतक, पद्मावली, रामनामा और पद्म नामक ग्रंथ लिखे हैं। वे साधारण भेदिक कवि थे। इनकी एक कविता नाथे दो जाती है,—

“संभा आवनि पिपकी जावनि देवो
भावनि अवध गली चन्नि ।
मृगया मेघ हरित चरना तन
अरु वन कुसुम रजं गुर्ज अलि ।
लिये कर कुशी नुरग कुदामत
उत्तर्क छूटी पै न हिए वन्नि ।
रामसने यह छन्नि पूजै अब

नेह गेह कुल छान भाज दन्नि ।”

रामसनेही—अयोध्यप्रदेशके वाराणसी जिलातर्गत एक तहसील । भूपरिमाण ५८८ वर्गमील है ।

रामसनेही—एक वैष्णव धर्मसम्प्रदाय । इस सम्प्रदायकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें इस प्रकार एक विवरण मिला है ।

१७७६ सम्बत्में जयपुरके अन्तर्गत मुरसेनग्राममें राम चरण नामक एक रामान् वैष्णवने जन्मग्रहण किया । वे प्रतिमापूजाके विरुद्ध मत प्रचार करते थे, इस कारण ब्राह्मणोंने उन्हें बहुत सताया । आखिर वह देगत्याग कर उदयपुरके अन्तर्गत भीलवाडा ग्राम चले गये और वहा दो वर्ष ठहरे । यहां भी ब्राह्मणोंके परामर्शसे राजा भीमसेन उसका अनिष्ट करने तुल गये । अब वह यहांसे भी भागे । इस समय शाहपुरमें भीमसिंह नामक एक दूसरे राजा राज्य करते थे । उन्हें रामचरणके दुःख पर दया आई, सो उन्होंने अपनी राजधानीमें उन्हें आश्रय दिया । राजाकी छायामें रह कर रामचरण अपना धर्म प्रचार करने लगे । प्रायः १८२६ सम्बत्में यह धर्मसम्प्रदाय प्रवर्तन कर १८५५ सन्वत्में रामचरण परलोक सिधारे । उनका मतानुवर्त्ती शिष्यसम्प्रदाय रामसनेही कहलाने लगा । वह जो पद वा शब्द (३२ अक्षरात्मक श्लोक) रच गये हैं उसे रामसनेही वेदमन्त्रवत् समझा है ।

रामचरण महन्त देखो ।

रामचरण अपने सम्प्रदायके मध्य कुछ नियम बना गये हैं । उसी नियमके अनुसार रामसनेही चलते हैं ।

इस सम्प्रदायके महन्त ही सर्वप्रधान हैं । महन्तकी गद्दी मिलती है । प्रथम महन्त रामचरण थे । रामचरण के शिष्य रामजन २य महन्त हुए । शीर्षान ग्राममें उनका जन्म, १८२५ सवत्में दीक्षा, १८५५ सम्बत्में महन्त पद पर अभियेक और १८६६ सन्वत्में शाहपुरमें

देहान्त हुआ । उनके भी रचित पद प्रचलित हैं । ३य महन्तका नाम दुलदराम था । वे हिन्दू और मुसलमान साधुओंकी माहात्म्यसूचक प्राय ४००० जापो लिख गये हैं । १८८१ ई०में उनकी मृत्यु हुई । ४था महन्त छतदास थे । १८८८ सम्बत्में वे इस लोकसे चल बसे । उनके भी १००० पद प्रचलित हैं । ५वें महन्तका नाम नारायण दास था ।

महन्तका पद पाली होने पर इस सम्प्रदायके उदासीन और विपयियोंकी एक बैठक होती है । वे गुणवान् और ज्ञानवान् किसी व्यक्तिको महन्त पद पर अभियेक करते हैं । इस उपरक्षमें वैरागी नगरके राममेरो नामक मन्दिरमें नगरवासियोंकी एक भोज देते हैं । पदशून्य होनेके १३ दिन बाद अभियेकक्रिया सम्पन्न होती है । महन्त प्रायः शाहपुरमें ही रहते हैं । कभी कभी शारीरिक कष्टका अभ्यास करनेके लिये देशभ्रमणमें निकलते हैं ।

इस सम्प्रदायके धर्मयाजक वैरागी वा साधु कहलाते हैं । उन्हें बहुतसे कठोर नियमोंका पालन करना होता है । वे लोग कभी विवाह नहीं करने । परदारगमनमें पराङ्मुख रहना, जो कुछ खानेको मिले उसीसे संतुष्ट रहना, अल्पनिद्रा, वाक्यसंयम और शारीरिक सद्दिणुता तथा सर्वकामना परित्याग कर दया, आर्जव और क्षमा-धर्मका अनुष्ठान करना और निरन्तर शास्त्रानुशीलनमें लगा रहना, काम, क्रोध, लोभ और कलह करना, स्वार्थपरता होना, कपटव्यवहार करना, झूठ बोलना, चोरी करना, कठोर वनना, शराव पीना, जूआ खेलना, खड़ाऊं पहनना, दर्पणमें मुंह देखना, नस लेना, अलट्टार पहनना तथा भोगविलासकी सामग्रीका व्यवहार करना दान लेना, जांवहिसा करना और निर्जन स्थानमें रहना ये सब कार्य इन लोगोंके लिये निषिद्ध हैं । किन्तु विपयी शिष्य गुरुके लिये दूसरेके दिये हुए रुपये लेते हैं । नृत्य-गीतादि नाना आमोद, धूमपान, अफीम सेवन वा दूसरे दूसरे मादक द्रव्यका व्यवहार निषिद्ध है । ज्वरकी हालतमें अथवा चिकित्सकके कहने पर यदि मादकवस्तुका व्यवहार किया जाय, तो कोई दोष नहीं होता ।

रामसनेही गलेमें माला पहनते और ललाटमें एक सफेद लम्बा पुण्ड्र धारण करते हैं । साधु लोग गेरु वस्त्र पह-

नते भीर कमरमें भी बांधते हैं। वे काठके बरतनम अन्न पोते भीर मिट्टी वा पत्थरके बरतनमें खाते हैं। जोबहिंसा महापाप समझ कर वे क्षीपशिकारमें रुपड़ा जपते देते हैं। इससे पठुङ्गादि जोड़े नहीं गिरते। राहमें पैरुस कहीं कीड़े न मर जाँव इसलिये वे बड़ी सावधानीसे चलते हैं। भावाङ्गमासके शेषार्धसे छे कर कार्तिकके प्रथमाह तक (चातुर्मास्यक समय) बिना विद्येय प्रयोजनके बाहर नहीं निकलते।

सम्प्रदायप्रवर्तक रामवरणके १२ शिष्य थे। उनका मध्य क्लिष्टा भी पद् बाबा होने पर वे साधविद्येकी उस पद् पर बभिमिक करते थे। भाङ भी वही नियम थसा म्यता है। इन्हीं बाह्य शिष्यों पर मठका कुछ मार सुपुर्दा है। जो कौतवाह हैं, वे मठशिष्य शस्य भीर क्षीपशिकार रफ़ा करते हैं और महन्तकी अनुमति से कर मठवासियोंको वैदिक भोजन देते हैं। इस सम्प्रदायके विषयो तथा अन्त्याय मनुष्योंसे साधुओंको जो कपड़ा मिलता है, कपड़ापाट' उसकी देखरेख करते हैं। पृथिव शिष्यका काम है, साधुओंके आचार-व्यवहार और ऐतिहासिकी भोर कल्प रचना। शीघे शिष्य साधुओंको पाठशिक्षा भीर पाथी शिष्य सिपिशिक्षा देते हैं। छठे शिष्य लमतावन्नयो विचारियोंको लिखना पढ़ना सिखाते हैं। इन बाह्य शिष्योंमें जो प्रवीण भीर शिष्ये मित्र हैं वे ही शिष्योंकी उपयुक्त उपदेश दे सकते हैं।

साधुओंमेंसे जो निपिद कर्म करते, उत्तिष्ठित मठ कर्मचारो सात शिष्योंमें कोई तीन और बाको पाँच महंत मिळ कर उसका विचार करते हैं।

जो इस संप्रदायमें भागा चाहता है वह अपना पहला नाम बद्ध खेता और शिष्या छोड कर समूचा महन्तक मुकुवाता है। इस उपखसमें मठसंक्रान्त मास्को बहुत आमवनी होती है।

जो सब साधु नंगे रहते वे बिरेही कहलते हैं। शिनकी वागिमिष्य बगोभूत नहीं होता वे कड बर्ष तक 'मोहिना' भेषीमुक्त हो मीनामताधारी रहते हैं। पीछे कलाकरवके बजोभूत होने पर वे फिरसे वाक्याढाय करनेमें मयूत होते हैं।

पहस्य साधुओंको भी महन्त पद् पानेका अधिकार है,

किन्तु उपरोक्त बिरेही वा मोनो भेषीमुक्त होमेका नियम नहीं है। शिष्या भी धर्मयात्रिका उसी हाडतमें हो सकती हैं, जब कथापुत भीर स्वामिका साथ छोड़ वे।

सभी हिन्दू इस सम्प्रदायमें प्रविष्ट होनेके अधिकारी हैं। शाहपुरस्य मन्दिरके प्रधान अध्यक्ष ही सबोंको सम्प्रदाय मुक्त करते हैं। वैरागी मित्र मित्र स्थानसे वाक्षायीको ढाते हैं। मठके प्रधान अध्यक्ष उन लोगों की भखा भीर भक्ति जाँचने तथा रामसनेही मठका सम्पत्क उपदेश देनेके लिये उन्हें पूर्वाक बारह साधोंके पास भेजते हैं। परीक्षामे उत्तीर्ण होने पर वे सम्प्रदायमें लिपे जाते हैं।

रामसनेही अपने उपास्य-देवताको राम कहते हैं। उनके मतानुसार राम सर्वाशुक्तिमान् तथा सृष्टि स्थिति भीर लयके एकमात्र कारण हैं। शीवात्मा राम रूपो परमेश्वरका एक अंश है।

प्रतिमागिर्माण भीर प्रतिमापूजा इन ज्योमि निपिद हैं। वे जोग प्रातः, मध्याह्न और सायंकालमें परमेश्वर की उपासना करते हैं। जो विषयो हैं, वे विषयकर्ममें लगनेके कारण समयानुसार मन्दिरमें नहीं आ सकते। किन्तु मजनाके समय पक्षु च जानसे वे जब तक उपासना शेष नहीं होती तब तक रहनेके लिये वाध्य हैं। वे जोग दो पहर रातको बिछावनसे उठ कर देवालय जाते हैं और प्रातःकालमें 'मामाह' पर्यन्त उपासनामें निपुक्त रहते हैं। इसके बाद विषयी जोग वहां जा कर ४।५ वृष्ट तक उठरते हैं। अन्तमें शिष्योंके दो स्तोत्र गाने पर प्रातःकालकी उपासना समाप्त होती है। बाह्य पहरक समय माध्याह्निक उपासना आरम्भ होती है। सायंकालीन उपासना केवल पुरुष ही करते हैं। यह उपासना १ घंटा तक होती है। औपुष्यके एक साय बैठने वा एक साय गानेका नियम नहीं है। जब मन्दिरमें कोई नहीं रहता है, तब ही साधुगण उपास्य देवताका ध्यान करते हैं। कमी मासाह्य भीर कमी मुकसे रामनाम उच्चारण करते हैं। रातकी वे केवल अन्न पी कर रहते हैं।

उनको उपासनास्थानका नाम रामद्वार है। रात्रो वाङ्के मध्य शाहपुरका मन्दिर ही स्वर्धभेष्ट भीर शिष्य

नैपुण्यसे युक्त है। इसके सिवा जयपुर, जोधपुर, मर्वा, उदयपुर, चित्तोर, जागोर, भीलवाडा, टोंक, वूंदी, कोटा आदि स्थानोंमें भी बहुतसे रामद्वार विद्यमान हैं।

हिन्दूके दशहरा, दीवाली, होली आदि किसी भी उत्सवमें रामसेनही शामिल नहीं होते। फाल्गुनमासके अन्तिम ५६ दिन इन लोगोंका फूलदोलपर्व होता है। इस समय भारतके विभिन्न स्थानोंसे लोग आते हैं। वैरागी यदि किसी कारणवशतः एक वर्ग मेलमें न आ सकें, तो दूसरे वर्ग उन्हें अवश्य आना पड़ेगा। वैरागी स्वसम्प्रदायभुक्त गुरुतर अपराधियोंको अपने साथ ला कर महन्तके सामने हाजिर करते हैं। महन्त दुल्हाराम यह नियम कर दिये गये हैं, कि जो वैरागी विपरी लोगोंके चरित्र विषय पर दृष्टि रखनेके लिये ग्राम वा नगरमें रहते हैं उनमेंसे कोई भी एक जगह लगातार दो वर्षसे अधिक नहीं रह सकता। क्योंकि ग्रामवासीके साथ बहुत दिन रहनेसे उसका भी चरित्र दूषित हो सकता है। फूलदोलके समय वे स्थान परिवर्तन करते हैं।

इस फूलदोल उपलक्ष्यमें उदयपुर, जोधपुर, जयपुर, वूंदी, कोटा आदि स्थानोंके राजे भिन्नधर्मावलम्बी होते हुए भी इस उत्सवमें २०१२ हजार रुपया भेज देते हैं। इन लोगोंको वहा मिष्टान्न भोजन कराया जाता है।

सम्प्रदायभुक्त कोई व्यक्ति जब भारी अपराध करता है, तब वहाका शुभाशुभकर्मका तत्त्वावधारक वैरागी फूलदोलके समय उसे शाहपुर लाता है। वह अपराधी मन्दिरमें घुसने या एक पंक्तिमें बैठ कर भोजन करने नहीं पाता। आठ साधोंके विचारसे उसका दोष प्रमाणित होने पर उसकी माला छीन ली जाती और उसे सम्प्रदायसे बाहर निकाल दिया जाता है। छोटा छोटा विचार स्थानीय वैरागी और दण्डविधान महन्त करते हैं।

गुजरात और राजवाडाको छोड़ कर बम्बई, सुरत, हैदराबाद, पूना, अहमदाबाद आदि पश्चिमभारतके नाना नगरो और उसके आसपासके स्थानोंमें रामसेनेहियोंका वास है। फाणीधाममें भी इस सम्प्रदायके लोग देखनेमें आते हैं।

रामसरस् (स० कृ०) एक प्राचीन तीर्थका नाम। इस-

के पवित्र जलमें स्नान करनेसे पाप क्षय होता है।

(तापीप० ३३।२।२२)

रामसहाय दास—एक हिन्दी कवि। इनके पिताका नाम भवानी दास था। इनका नाम सूदन कविकी नामावलीमें नहीं है। इससे अनुमान होता है, कि ये सूदनके पीछेके हैं। इन्होंने वृत्ततरंगिणी, सतसई, फकहरा, रामसतगतिका और वाणीभूषण नामक चार ग्रंथ लिखे हैं।

इन्होंने अपनी कविताकी प्रणाली विलकुल बिहारीलालसे मिला दी है, इनको बनाई 'रामसतसई' से 'शृङ्गारसतसई' इतनी मिल गई है, कि यदि बिहारीके दोहे सब लोगोंको इतना याद न होते और ये चाँदहीं सी दोहे मिला कर रख दिये होते तो बिहारीके सात सौ दोहे छात्रनेमें दो सौ दोहे तक इस कविके भी छूट आते, बिहारीकी समता करनेमें और कोई भी कवि इतना कृतकार्य नहीं हुए है। बिहारीके केवल उत्तमोत्तम दोहे इस कविके आगे निकल जाते हैं, परन्तु उनके शेष दोहे इमके दोहोंसे बढ कर नहीं हैं। रामसहायके दोहोंकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। आपने अपनी सूक्ष्मदर्शिताका अच्छा परिचय दिया है। सुकुमारताका भी आपने अच्छा वर्णन किया है।

सब प्रकार से बिहारीके पैरो पर पैर रखा कर आपने बिहारीको चोरी नहीं की है, केवल बिहारीकी छाया कुछ छन्दोमें आ गई है।

रामसिंह—कोटेके एक राजा। इनके पिताका नाम था किशोरसिंह। रामसिंहने अपने पिताके साथ दक्षिणके युद्धमें बड़ी रयाति पाई थी। पिताके मरने पर रामसिंह सिंहासन पर बैठे। इनके बड़े भाईका नाम किशनसिंह था। न्यायसे कोटे राज्यका अधिकार उन्हींको मिलना चाहिये था। परन्तु पिताकी आज्ञा पालन न करनेके कारण पिता उनसे असंतुष्ट रहा करते थे। इसी कारण उन्हींने बड़े लड़केको राज्यसे वञ्चित कर दिया था। सम्राट औरङ्गजेबके मरनेके बाद उत्तराधिकारियोंमें गद्दीके लिये झगडा हुआ। उस समय रामसिंहने दक्षिणात्यके प्रतिनिधि कुमार आजिमका पक्ष ले कर बड़े शाहजादे मोआजिमके विरुद्ध यात्रा की। संवत् १७६४ में जाजब नामक स्थानके युद्धमें ये मारे गये।

रामसिंह—बूढ़ीके राजा । इनके पिताका नाम बिगान सिंह था । १८२१ ई०में ये ११ वर्षकी उमरमें बूढ़ीके सिंहासन पर बैठे । बचपनसे ही इन्हें जिज्ञासु और जिज्ञासु बना हुआ था । इन्होंने छोटी अवस्थामें पहले ही पहले सुभक्त गिज्ञासु बना था । इनकी माता कृष्णदेवीका राजकुमारी थी । महाराज राजा बिगानसिंह अपने पुत्रका अभिभावक बनकर राज साहबकी बना गये थे ।

महाराज बिगानसिंहके मरने पर कृष्णराम नामक एक पुत्रिमात्र मनुष्य बूढ़ी राज्यके मंत्री बनाये गये । जब तक कर्नल टाड शहादतके पृथिवी पदोत्थर रहे, तबतक कृष्णराम राजकीय मामलोंमें उनसे सलाह लिया करते थे । टाड साहबके अग्न वेदोंमें चले जाने पर भी कृष्णरामने अपनी स्वामिभक्ति ही का परिचय दिया । इनके सुप व पस बूढ़ा राज्यकी प्रजा अल्प त सुखी हुए । कर्नल स्पानिसनर सिखा है कि कृष्णरामके शासनसे बूढ़ी राज्यकी समस्त अल्प सुख गया । बिना बिना नियमपूर्वक बना गया । उन्होंने राजकार्यके प्रत्येक विभागकी अवस्था सुधार दी थी । सनाकी समय पर वेतन मिल जाया करता था । सकिन एक घटनासे उन्हें अपने प्राणसे हाथ धोना पड़ा था । यह घटना इस प्रकार हुई थी,—महाराज रामसिंहका पिताह जोधपुरकी राजकुमारीके साथ हुआ । महाराजने जोधपुरकी राजकुमारीके साथ बड़ी पुरी तरह पेश आते थे । दोनोंके मनमुटापकी दूर करनेके लिये जोधपुरसे कुछ साम त बूढ़ा भाय । भावके तीसरे ही दिन उनमसे पदन म की कृष्णरामकी मार जाका । इससे यहांके महाराज बड़े क्रोध हुए । उन्होंने बहका सुकानका संस्कार किया । जिस लोगोंने यह क्रोधमें किया था वे मागत समय पकड़े गये और उन्हें प्राणवृद्धका खाजा मिली । इनके सिपाय और भा कितने सामंत यमपुर भेजे गये थे ।

एल सब कारणोंसे दोनों राज्यों परस्पर युद्ध होने की सम्भावना थी । परंतु गवर्मेण्टने अपने एजेण्टकी पक्ष भ्रष्ट कर दोनोंमें मेल कर दिया ।

रामसिंह राज्य और स्वाधीन शासन थे । इनके समयमें बूढ़ा राज्यका सुख मयतिमें काह हेतकेर नदा हुआ ।

रामसिंह—जोधपुरके एक महाराज । इन्होंने १८३३ ई०में जन्मग्रहण किया था । महाराज जयसिंह इनके पिता थे । पिताके मरने पर रामसिंहकी उमर सिर्फ दो वर्ष की थी उस समय ये राजसिंहासन पर बैठाये गये । उस समय जयपुर राज्यकी अवस्था अल्पत शोचनीय हो गई थी ।

महाराज रामसिंहकी नायाबगोमें जयपुर राज्यका शासन कार्य पंच प्रधान सामर्थ द्वारा परिचालित होता था और वे वृद्धि पोलिटिकल एजेण्ट अघोन रहे गये । इन समय राज्यकी अराजकता दूर हो गई थी । महाराजकी निष्ठाके लिये ही उचित प्रबंध था । पण्डित शिवाभारायण महाराजके शिक्षक नियुक्त हुए ।

१८४९ ई०में महाराज बन्धीग हुए और उन्हें राज्य शासनका कुछ मार मिल गया । परन्तु महाराजकी अनुभव म होनेके कारण उन्हें पोलिटिकल एजेण्टकी सम्मति छहर काम करना पड़ता था । महाराजने बर्बाद अपने पूर्व मन्त्रीकी हटा कर उस पर अपने माह अल्पसिंहकी रखा । राजसिंहासनाके मन्त्री पण्डित शिवाभारायण नियुक्त हुए । परन्तु महाराजने उसी मन्त्रि मण्डलकी सहायतासे राज्यका शासन किया ।

इसी समय गवर्मेण्टकी एक बड़ी भारी विपत्तिका मुकामका करना पड़ा था । जिस समय महाराज रामसिंहकी शासनका मार मिला इसी वष भारतमें सिपाही गद्दर हुआ था । गद्दरमें महाराज रामसिंहने गवर्मेण्टकी जाना सहायता पकू चाह थी । पुरस्कारमें इन्हें गवर्मेण्ट से काटा कासिम परगना मिला था ।

महाराज रामसिंहके समय राजधानीकी बड़ी उप्रति हुई थी । ये गवर्मेण्टके बड़े गैरकवाह थे । इनकी योग्यतासे जयपुर राज्य पर बार पुनः सुखी हो गया । १८८० ई०में अल्पका अगवाह हुआ ।

रामसिंह—जोधपुरके महाराज । इनके पिताका नाम महा राज जयसिंह था । जयसिंह निर्भारताके नामसे प्रसिद्ध थे । अक्षरके समय जिस प्रकार रामसिंहने प्रतिष्ठा पाई थी, उसी प्रकार औरतुल्यके समय महाराज जयसिंहका प्रतिष्ठा थी । जयसिंह उभरवाते मनसब दार थे । परन्तु रामसिंहकी यह म मिला । ये बार् शाहकी आवास भासाम निवासिया के साथ युद्ध करने

गये थे और वही मारे गये। यह घटना १७४६ ई०में हुई थी। महाराज मानसिंहके विशनसिंह नामक एक पुत्र था।

रामसिंह—जोधपुरके एक राजा। इनके पिताका नाम था अभयसिंह। रामसिंह बड़े क्रोधी और उग्रस्वभावके मनुष्य थे। पिताके मरने पर रामसिंह जोधपुरके सिंहासन पर बैठे। इनके अभिषेकोत्सवमें इनके चचा वखतसिंहको छोड़ कर और सभी सामन्त उपस्थित हुए थे। वखतसिंहने अपनी धायको भेज दिया था। धायको देख कर रामसिंह आगवबूले हो गये। उन्होंने कहा, 'धाय चचा साहदने हमें बन्दर समझा है जो उन्होंने हमारे अभिषेकमें इस डाकिनको भेजा है।' क्रोधके आवेशमें उन्होंने एक बड़ी कड़ी चिट्ठी वखतसिंहको लिख भेजी तथा सेनाको भी तैयार हो जानेकी आज्ञा दी।

प्रधान प्रधान सामन्त तथा मंत्रोके समझाने पर भी इन्होंने नहीं माना, युद्ध ठना ही दिया। वखतसिंहने उनके प्रधान सामन्तको अपने पक्षमें मिला लिया। युद्ध में रामसिंहकी हार हुई। इस समय सभीने रामसिंहका पक्ष छोड़ दिया था। परंतु राजपुरोहितने रामसिंहको उग्रस्वभावके जानते हुए भी न छोड़ा। राजपुरोहितने मराठीसेनासे मिल कर उसे अपने पक्षमें कर लिया। पर उस समय राजनीतिज्ञ वखतसिंहने ऐसा प्रवचन कर लिया था जिससे मराठी सेनाका उत्साह जाता रहा। लेकिन आमेरको महारानीकी चतुरतासे वखतसिंहका काम तमाम किया गया। रामसिंहका पक्ष अपेक्षाकृत कुछ निष्कण्टक हो गया सही, पर उनके सभी कण्टक दूर नहीं हुए। वखतसिंहके पुत्र विजयसिंह और रामसिंहके युद्धसे मारवाड़ राज्य तहस नहस हो गया।

वखतसिंहके मारे जाने पर रामसिंहने राज्यप्राप्तिका पुनः उद्योग किया। मराठी सेनाको सहायतासे रामसिंहको जोधपुरका सिंहासन कुछ दिनोंके लिये मिल गया। परंतु उनके सहायक महाराष्ट्र सेनापति जय अर्पा वही खेत रहे, इससे मराठीका संदेह राजपुतों पर बढ़ गया। उन लोगोंने रामसिंहका पक्ष छोड़ दिया।

इसके बाद विजयसिंहने रामसिंहको मारवाड़

राज्यके अधीन साँभर प्रदेशका राज्य दे दिया और वे भी उसीसे संतुष्ट हुए।

रामसिंहदेव—मिथिलाके एक राजा। मृच्छकटिकाके प्रणेता पृथ्वीधर इनकी सभामें मौजूद थे।

रामसिंहदेव—एक हिंदू राजा। इन्होंने सरस्वतीकण्ठाभरणकी रत्नदर्पण नामकी टीका लिखी। रत्नेश्वर इन्हींके आश्रयमें प्रतिपालित हुए थे।

रामसिंह मुन्सी—गुलसनआजायब नामक ग्रंथके प्रणेता। इन्होंने १७१६ ई०में उक्त ग्रंथ लिखा।

रामसिंह चमन—जयपुरके एक राजा। धातुरत्नमञ्जरी नामक ग्रंथ इन्हींका लिखा हुआ है।

रामसिंह सराई (२५)—जयपुरके राजा। राजा जयसिंहकी मृत्युके बाद १८३४ ई०में ये राजगद्दी पर बैठे। जयपुर देखो।

रामसीता (हि० पु०) सीताफल, शरीफा।

रामसुंदर (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी नाव।

रामसुन्दर विद्यावागीश—वस्तुतत्त्वके रचयिता।

रामसुत्रहाण्य शास्त्री—मतचतुष्टयपरीक्षा तथा विष्णुतत्त्व-रहस्य और उसकी टीकाके प्रणेता।

रामसूक्त (सं० स्त्री०) रामस्तोत्र।

रामसेतु (सं० पु०) दक्षिण भारतकी अन्तिम सीमा पर रामेश्वरतीर्थके पास समुद्रमें पड़ी हुई चट्टानोंका समूह। इसके विषयमें विख्यात है, कि यह वही पुल है जिसे रामने लङ्काकी चढ़ाईके समय बंधवाया था। अङ्ग्रेजीमें इसे Adam's bridge कहते हैं।

रामसेन—रससारासूत्रके रचयिता। इन्होंने अपने ग्रंथमें शालिनाथ, नित्यनाथ और गहनानन्दनाथका मत उद्धृत किया है।

रामसेनक (सं० पु०) १ भूनिम्ब, चिरायता। २ कटुफल, कटहल।

रामसेवक (सं० पु०) रामचन्द्रका उपासक।

रामसेवक—तिथिप्रदीपिकामञ्जरीटीका, यज्ञसिद्धान्तविग्रह और युद्धचिन्तामणिके रचयिता।

रामस्तुति (सं० स्त्री०) रामस्य स्तुतिः। रामस्तोत्र श्रीरामचन्द्रका स्तव।

रामस्वामिन (स० पु०) कारमोर्त्तं पविष्ठित भोषामबन्धु की मूर्त्तिभेद। (राज्य० ४२७५)

रामस्वामो—१ अमरकोषटीकाके प्रणेता। २ एक वैयाकरण। भाष्ययोग्यानुसृष्टिमें इनका उल्लेख देया जाता है।

रामहरि—१ पाठिञ्जात व्याकरणके प्रणेता। इन्होंने १८१८ ई०में उक्त ग्रन्थ बनाया। २ पृथञ्जातके रचयिता।

रामहृदय (स० पु०) रामहृदय हृदय। अथवास्वामिनामका एक परिच्छेद। यहाँ रामका आध्यात्मिक तत्त्व विवृत हुआ है।

रामहृत् (स० पु०) पुत्रानुसार एक पुण्यग्रह तोर्त्तिका नाम। (भाष्यव १०८२।१०)

रामा (स० स्त्री०) रमते रमयतीति या रम उपजादि स्वात् ल, डाय् रमतेऽरमयेति करणे घञ् वा। १ इच्छुः शोचिषाय, सुन्दर स्त्री। २ गानकजातिमें प्रयाण स्त्री। ३ हिन्दु, ही ग। ४ नक्षी। ५ हिन्दु, ईशुर। ६ भेत्तकण्डकारी, सकेन्द्र मरुट्टैया। ७ शिवल। ८ अशोक। ९ पीडुमार। १० गोरोबन। ११ सुगन्धकाजा। १२ गेरिक, गेरू। १३ तमाकूपक, तमाकु। १४ कायमाया लता। १५ लक्ष्मी। १६ सीता। १७ बलिमयी। १८ राधा। १९ आठ भस्मर्तिका एक पूत। इसके प्रत्येक चरणमें लवण, पगण और ही कण्डू पण होते हैं। २० इन्द्रपत्नी और उपेन्द्रपत्नी के मेलसे बना हुआ एक उपजाति पूत। इसके प्रथम यो चरण इन्द्रपत्नीके और अन्तिम दो चरण उपेन्द्रपत्नीके होते हैं। २१ भायों उम्बका १७३१ भेद जिसमें ११ शुक्र और ३५ अणु पण होते हैं। २२ कासिकी वस्त्र ११ का विधि। रामामित्र—भाष्यवत् अन्तर्गतव्याख्याके प्रणेता।

रामाचक (सं० पु०) चर्मपिद्दिका आभाषयमेद।

रामाचार्य (सं० पु०) एक आचार्याका नाम।

रामारङ्गर—भाष्यवत् अन्तर्गतव्याख्याके एक टाकाके रचयिता। ये रामानिबन्ध नामसे परिचित थे। निर्णय सिधुमें कर्मकाण्ड और भास्कर मिथन इनका मत उद्धृत किया है।

रामात्—उत्तरमात्प्रसिद्ध वैष्णवधर्मग्रन्थग्रन्थभेद। रामा नन्द इसके प्रवर्तक थे, इस कारण खोम इस रामा

नदी मो कहते हैं। इस सम्प्रदायके लोग रामचन्द्र, सीता, लक्ष्मण और हनुमान्की उपासना करते हैं। सम्प्रदाय प्रवर्तक रामानन्द रामानुजके शिष्य थे, वेसा बहुलौका करना है, परन्तु यह युक्तिसंगत प्रतीत नहीं होता। क्योंकि उनको शिष्यपरम्पराके मध्य रामानन्दका स्थान चौथा पड़ता है, जैसे—रामानुजके शिष्य देवा नन्द, देवानन्दके शिष्य हरिनन्द, हरिनन्दके शिष्य राघवा नन्द और राघवानन्दके शिष्य रामानन्द०।

११वीं सदीके प्रथम भागमें रामानुज स्वामी विद्यमान थे। इस हिसाबसे १३वां सदीके प्रारम्भमें रामानन्दका अस्तित्व प्रमाणित होता है। किन्तु उनके शिष्य महात्मा क्यार जब सिकन्दरजाह सोनीके समसामयिक थे, तब किसा प्रकार १३वां सदीमें इनका होना संभव कर सकते हैं? क्यार-पश्चिमोंके मतसे क्यार १२०५ से १५०५ सम्मत् तक जायित थे। फिर (मुमनमान धेति हासिक इह १५४४ ई०का भाष्यो बतलाते हैं। अतः रामानन्द कब विद्यमान थे, इसका ठीक ठीक पता लगाना कठिन है और इसमें भी सन्देह है, कि ये रामानुजके शिष्यपरम्परामुक्त थे। पर हाँ, इतना कहा जा सकता है, कि रामानन्द रामानुज स्वामीके महापुरुषों में और महात्मा क्यार माँ पूज्यवाद् रामानन्दके महा नुसारो हुए। क्यार वसो।

पद्या है, कि रामानन्द दशममण्डक बाद जब मठ लीये, तब उनके सतीषीने कहा था, 'मोज्य और मोजन किया गुनभावसे करना रामानुज-मतायलम्बीका पक्षान्त कर्त्तव्य है। किन्तु स्रम्यकासमें शायद तुमन इस नियम का पालन नहीं किया होगा, इसलिये तुम्हें भसग मोजन करना उचित है। गुद राघवानन्दने भी इसका समर्थन किया। इस पर रामानन्दन अपनेकी अपमानिता समझ कर उनका साथ छोड़ दिया और अपने नाम पर वैष्णवसम्प्रदाय प्रवर्तित करनेका संकल्प किया।

इसके बाद रामानन्द शारण्यसाक प्रथमद्वारापाद भाष्य। यहाँ इनके शिष्यसम्प्रदायका एक मठ पविष्ठित

० भाष्यशाक मन्थ—१ रामानुज, २ दत्तात्रेय, ३ उपेन्द्र, ४ रामानन्द।

हुआ। आगे चल कर मुसलमानोंने उसे नष्ट कर दिया। उसके पास ही पत्थरकी जो वेदी है उस पर रामानन्द-का पदचिह्न अङ्कित है। इसके सिवा काशीमें इस सम्प्रदायके और भी कितने प्रसिद्ध मठ स्थापित हैं। इस सम्प्रदायको शृङ्खलित रखनेके लिये रामानन्दियोंकी एक पञ्चायत है। उसी पञ्चायतके ठहरावके अनुसार रामानन्दीसम्प्रदायके काम होते हैं।

अन्यान्य सम्प्रदायकी तरह रामानन्दी सम्प्रदायमें भी विषयी और धर्मव्रतीके भेदसे दो विभाग देखे जाते हैं। धर्मव्रती उपासकके भी फिर दो भेद हैं—उदासी और गृही। इनमें उदासी ही प्रधान है।

उदासी तीर्थपर्यटन कर भिक्षा अथवा वाणिज्य द्वारा गुजारा चकाते हैं। स्वान स्थानमें प्रत्येक सम्प्रदायका मठ, अस्थल वा श्रवाडा है। न्रमणकालमें जब कोई मठ पड़ता है, तब वे वहा कुछ दिनके लिये ठहर जाते हैं। वृद्ध उदासी मृत्यु पर्यन्त मठमें आश्रय लेते हैं तथा स्वयं एक मठ स्थापन कर वहा आयुःशेष करते हैं।

मठ वा अलाडा वैष्णवसम्प्रदायी गुरुओंका आवास-स्थान है। यहाँ एक विग्रहमन्दिर, मठ, प्रतिष्ठाता वा प्रधान गुरुकी समाधि तथा महन्त और उनके साथ रहनेवाले शिष्योंके कुछ मकान रहते हैं। इसके अलावा तीर्थयात्री वा उदासीनोंके रहनेके वास्ते उसमें एक धर्मशाला भी है। वहाँ किसीका भी जाना निषेध नहीं है।

एक प्रदेशमें एक सम्प्रदायसकान्त भिन्न भिन्न अनेक मठ हैं। वहाके अध्यक्ष मठमें किसी उदासीको प्रधान मानते हैं। फिर जो मठ सम्प्रदायस्वामीके नामसे प्रतिष्ठित है, सभी प्रादेशिक मठके अध्यक्ष उसको सर्व-श्रेष्ठ समझते हैं। शेषके मठके महन्त, उनके अभावसे किसी प्रसिद्ध मठके महन्त उस समाजके सरदार समझे जाते हैं। परलोकवासो महन्त शिष्योंमें जो परीक्षोतीर्ण हो सकते हैं उन्हींको आचार्यके पद पर अभिषिक्त किया जाता है। इन सब मठोंके खर्चावर्चके लिये कुछ कुछ देवोत्तर है।

श्रीरामचन्द्र रामानन्दोंके अभीष्ट देवता हैं। रामोपासनाकी प्रधानता स्वीकार करनेके कारण ये लोग

रामायत कहलाते हैं। ये लोग विष्णुकी अन्यान्य मूर्त्तिकी कल्पना करते हैं। रामानुजोंकी तरह ये लोग रामसोताकी मूर्त्तिकी आराधना करते हैं। इसके सिवाय ये लोग दूसरे दूसरे वैष्णवसम्प्रदायकी तरह तुलसी और शालग्राम-शिलाकी भी भक्ति करते हैं। काशीमें इस सम्प्रदायके दो मन्दिरोंमें राधाकृष्ण मूर्त्तिकी उपासना होती है।

इस सम्प्रदायमें किसी कठोर नियमका पालन नहीं करना पड़ता। रामानुजसम्प्रदायके अनेक बंधनोंको इन्होंने शिथिल कर दिया था। पाने पीनेके सम्बन्धमें इन्होंने कोई कठिन नियम न रखा। सभी अपनी रुचि के अनुसार वा लौकिक व्यवहारके अनुसार खा पी सकते हैं। पाने पीनेके विषयमें इस सम्प्रदायभुक्त वैरागियोंके वर्ण और जातिविचार नहीं है। इसी कारण वे लोग कुलातीत और वर्णातीत कहलाते हैं।

श्रीराम उनके नौजमन्त हैं। 'जयराम जय श्रीराम वा सीताराम' उनके अभिवादनवाक्य हैं। तिलकसेवा श्रीसम्प्रदायोंकी जैसी है। किन्तु कोई कोई अपनी रुचिके अनुसार ऊर्द्धपुण्ड्रकी मध्यवर्ती रेखा कुछ छोटी कर अङ्कित करते हैं।

रामानन्दस्वामी बहुतने शिष्य बना गये ह। उनमें आशानन्द, कवीर, वशदास, पीपा, सुरसुरानन्द, सुखानन्द, भवानन्द, धन्ना, सेन, महानन्द, परमानन्द और प्रियानन्द प्रधान हैं। कवीर जुलाहा (ताँत), वशदास चमार, पीपा राजपूत, धन्ना जाट और सेन नाई थे। ये सभी उपासकसम्प्रदायविशेषके प्रवर्त्तयिता है।

इस सम्प्रदायके तथा रामानन्द स्वामीके प्रसिद्ध शिष्य गाङ्गदोणके राजा राजपूत जातिके पीपा, सुरसुरानन्द, धन्ना, नरहरि वा इर्यानन्द, भक्तमालके प्रणेता नाभाजी, सुरदास, तुलसीदास, सुललित गीतगोविन्दपदके रचयिता जयदेव आदि रामानु श्रेणिके वैष्णव थे। भक्तमाल ग्रंथमें इनके सम्बन्धमें अनेक अलौकिक उपाख्यान लिखे हैं।

रामानन्द स्वामीके धर्ममतका संस्कार कर परवर्त्तिकालमें और भी कितनी रामायत सम्प्रदायकी शाखा

भक्तमालमें अन्य प्रकारसे हैं।

निकासी गद् । कबीरसे कबीरपगयी दाजुसे दाजुपगयो, कीकसे बाकी (शरीरमें मिटो जा मरुम सेपनेबाछे), मुलुक्दासस मुलुक्दासी, बइदाससे बइदासी वा रप-दासी, सेनसे सेनपगयो, रामबरणस रामसेनहो बादि विभिन्न रामानुज प्रचारित हुए थे ।

रामानन्दके शब्द रघुनाथ गद्दी पर बैठे । ये भाशा नन्द नामसे परिचित हुए थे । यद्यपि रामानन्द स्वामी का बनाया हुआ कोह मो प्रथम अमो नहीं मिळता; तो भी उनके मठानुवर्ती वैष्णवोंने भागे चढ कर बहुतेस प्रथम सङ्गुलन किये । वे सब प्रथम देखो मापामें जिंजे हैं, इस कारण सभी उन्हें आसानीसे समझ सकते हैं । उन सब प्रथमोंमें रामानन्द स्वामीके मठोंका संग्रह है ।

रामानुजकी (सं० श्री०) वह मुळसी जिसके डंडळका रंग सफेदी जिये हटा होता है काला नहीं होता ।

रामादेशी (सं० श्री०) अर्थदेवकी माता ।

(गीतयोगिनन्द १२।३०)

रामाक्षय—कैदास्तकीमुक्तीके प्रवेता तथा अक्षयधामके पुत्र ।

रामाधार—एक व्याख्याकार । रामायणका अर्थोप्याकारण इन्होंने अन्वय द्वारा गद्यमें व्याख्या की ।

रामानन्द—एक वैष्णव धर्मप्रचारक साधु । इसका १३०० समके आरम्भमें प्रयागमें कान्यकुब्ज प्राङ्गणक घर एकका जन्म हुआ । भक्तमालक मतसे रामानुजक शिष्य देवा चार्य, देवाचार्यके शिष्य राघवाचार्य और राघवाचार्यके शिष्य रामानन्द हैं । रामानन्दके भी अस्तक्य शिष्य थे । जिनमें अनान्तानन्द और कबीर प्रधान थे । (भक्तमाल १०।१५) रामानुज स्वामी ११वीं सदीमें तथा कबीर १४वीं सदीके मध्यभागमें प्रीणित थे । रामानुज और कबीर देवा । इस हिसाबसे भक्तमालके अनुवर्ती हो कर रामानुजकी शिष्य पटम्परामें रामानन्दका स्थान चौथा आना सोकार नहीं किया जा सकता । शायद भक्तमालके रचयिताने रामानुज और रामानन्दके मध्यवर्ती कुछ गुरुओंके नाम छोड़ दिये हों ।

रामानन्द कल्पवृक्ष दो स्वायाम प्रकृतिरु आश्वासना य । एक समय वे तपवासा करन बाहर गये हुए थे । मारत के नाना स्वामीनें घूम कर शव दे अवन मठमें भाये, तब

उनके सतीर्थोंने कहा कि, "दूसरेके सामने मोहन करना रामानुजसम्प्रदायकी रीतिके विरुद्ध है । तुमन देशपिद्वेषमें इस नियमका पाळन न किया होगा, इसलिये तुम्हारे साथ हम लोग एक पंक्तिमें बैठ कर मोहन नहीं कर सकते ।" गुरु राघवाचार्यने मो इस बातको पुष्ट किया । रामानन्द अपनेको अपमानित समझ कर काशीधाम चले भाये । यहाँ पञ्चगङ्गाघाट पर रह कर इन्होंने अपने नामा अनुसार वैष्णव-संप्रदाय प्रवर्तित किया । वे रामानन्दको अपना इष्टदेशता समझते थे । उनके मठानुवर्ती रामानुज या रामानुज-संप्रदाय इसी कारण रामानन्दको इष्टदेशता समझ कर उनकी पूजा करते हैं ।

रामानन्द वाराणसीके पञ्चगङ्गाघाटमें बर्हा रहते थे उनके शिष्योंने बर्हा एक मठ बनवा दिया था । पीछे किसी मुसलमान राजाने उसे तहस नहस कर डाला । अभी वहाँ एक परचरकी वेदी मौजूद है । उस वेदी पर रामानन्दका पक्खि मङ्कित देखा जाता है ।

रामानन्दके अनेक शिष्य थे, जिनमेंसे भक्तमालमें कुछ प्रधान शिष्योंके नाम ये सब जिंजे हैं,—अनंतानन्द, कबीर, सुबा, सुर, पद्मावती, महिमा, विजय, नरहरि, पीपा, मयानन्द, रघुदास, घना, योगानन्द, गणेश, करमचौद, अष्टा पयहारी, सारी, रामदास, श्रीरङ्ग और गुणाकर । रामानन्द जातिनेद नहीं मानते थे । युक्तमदेशमें आज भी हजारों मनुष्य रामानन्दके मठानुवर्ती हैं ।

इन शिष्योंमेंसे कह प्राङ्गणोत्तर जातिके भी थे । वे सभी वर्णक मनुष्योंकी अथर्वज्ञातिका अधिकारी समझते थे । परंतु अणुव्यवस्था वैसा ही मानते थे जैसा कि वैदिक ऋषि मानते हैं । उन्होंने प्राङ्गणोंके अधिकारको अर्थात् सुरक्षित रखा है । प्राङ्गणों ने ही शिवरत्न-संन्यास देते थे, दूसरेको नहीं । इतना होने पर भी वे बड़े उदार थे । हिन्दू और मुसलमान सबके लिये उन्होंने धर्मद्वार खोल रखा था । वह बड़े पराक्रमी और शास्त्रमर्मज्ञ थे । उन्होंने जिनियों और मुसलमानोंसे कह आत्मार्य किये हैं । अन्धे तवादीयोके साथ भी उनके आत्मार्य हुए हैं । उनका सम्प्रदाय धासम्प्रदाय अथवा रामानन्द-सम्प्रदाय कहा जाता है । रामानुज देवा ।

रामानन्द—कई एक प्रसिद्ध पण्डित । १ वाक्यसुधाकी टीकाके प्रणेता ब्रह्मानन्दभारतीके गुरु । २ वृत्तदर्पणके प्रणेता जानकीमण्डलके पिता और गोपालके पुत्र । ३ न्यायामृतव्याख्या वा न्यायामृततरङ्गिणीके रचयिता । ये रामाचार्य नामसे भी परिचित थे । ४ गृह्यसूत्रोपपुराणकी टीका और गृह्य सूत्रयामलकी टीकाके प्रणेता । ५ रामा चर्चनपद्धतिके प्रणेता । ६ वैष्णवमताञ्जभास्करके रचयिता । ७ शिवरामस्तोत्रके प्रणेता । ८ शूद्रकुलदीपिकाके रचयिता । ९ हरिवंशटीकाकार । १० काशीमण्डलकी टीकाके प्रणेता । इन्होंने वासुदेवके अनुरोधसे यह ग्रन्थ संकलन किया । पीछे इस ग्रन्थकी पुनः "गङ्गासहस्रनामटीका" लिखी । इनकी बनाई वालवोधिनी नामकी एक और पुस्तक मिलती है । ये मुकुन्दप्रियके पुत्र और रामेन्द्रचन्द्रके पोत्र थे । पहले अपने पितामह और पीछे चतुर्भुज नामक एक पण्डितसे ये पढ़ते थे ।

रामानन्द आचार्य—मुग्धबोधटीकाके रचयिता । दुर्गादास और मट्टिकाव्यमें भरतसेनने इनका मत उल्लेख किया है । रामानन्द तीर्थ—एक अद्वितीय पण्डित और साधु । ये तीर्थस्वामी या रामानन्दयति नामसे भी परिचित थे । ये प्रसिद्ध पण्डित अद्वैतानन्दके गुरु थे । इनके बनाये निम्नोक्त ग्रन्थ मिलने हैं,—

अङ्कसंज्ञा, अद्वैतनिर्णयसंग्रह, अद्वैतप्रकाश, अद्वैतरहस्य, अध्यात्मविन्दु, अध्यात्मरामायणटिप्पणी, अध्यात्मसारटिप्पणी, अन्तर्यजनाङ्कटिप्पणी, आत्मतत्त्वटिप्पणी, आत्मबोधटिप्पण, आनन्दकुसुम, कातन्त्रसंग्रह, कादिसहस्रनामकला, कुण्डलत्त्रप्रकाशिका, कोमलकोपसंग्रह, गीताटीका, गीतादिसारटीका, गीताशय, चक्रटीका, चण्डीविचरण, ज्ञानवैभवतन्त्र, ज्ञानारणितन्त्र, तत्त्वसूत्र और तत्त्वसूत्ररत्न नामकी टीका, तत्त्वार्णवटीका, तत्त्वावबोधटीका, तन्त्रसार, दर्शनकलिका, देवीसूक्तटीका, नाममाला संग्रह, नृपभूषणी, परमामृत, प्रबोधचन्द्रोदयसंग्रह, प्रागुद्भयसंग्रह, प्रेमभक्तिस्तोत्र और उसकी टीका, भगवद्गीताभाष्यव्याख्या, भागवततत्त्वसंग्रह, भागवतवृहत्संग्रह, भागवतमञ्जरी, भागवताशय, भावार्थदीपिकाक्रमसंग्रह (भागवतपुराण), भावार्थदीपिकासंग्रह (श्रीधर), अन्वर्थसार, महिम्नास्तवटीका, मोहमुद्गरटीका, यतिभागवत,

यतिभूषणी, यथार्थमञ्जरी, योगचन्द्रटीका, योगविवेकटिप्पण, योगसूत्रटीका, योगावली, राजभूषणी, रामकाव्य, रामतत्त्वप्रकाश, रामायणकूटटीका, रुद्राध्यायटीका, लोकाभिधान, वासिष्ठसार और वासिष्ठसारगुद्गार्थ, विचारार्कसंग्रह, विष्णुसहस्रनामव्याख्या, विष्णुसूक्तटीका, वेदमातृटीका, वेदस्तुतिलगूपाय, वेदान्तसारटीका, वेदान्तसूत्ररत्नटीका, शक्तिवादकलिका, शाक्तसर्वस्व, शान्तिशतककी दो टीका, शास्त्रसार, संक्षेपाध्यात्मसार, संगीतसिद्धांत, सत्तत्त्वविन्दु, संध्याविधिमंत्रसमूहटीका, सहस्रनाममालाकला, साध्यपदार्थांगाया, सातत्यचतुष्कटीका, स्वर्पाद्वैतप्रकाश, हठप्रदोपिकाटीका और हठयोगाधिराजटीका ।

रामानन्द राय—एक वैष्णव और परम भक्त । ये उड़ीसाके विख्यात राजा प्रतापरुद्रके प्रधान कर्मचारी थे । भक्तिपरायणतामें ये वैष्णव समाजमें परम वैष्णव कह कर मशहूर थे । स्वयं चैतन्यदेव इनके असामान्य गुण पर आकृष्ट हो कर इनको देखनेको इच्छासे विद्यानगर पधारे थे । ये अपने प्रभुको आज्ञासे प्रतिभापूर्ण 'जगन्नाथवल्लभ' नाटक लिख कर अपनी असाधारण कविताका परिचय दे गये हैं । इनको बनाई एक और शान्तिशतककी टीका मिलती है । १५३४ ई०में इनका जीवनाभिनय शेष हुआ । पद्यावलीमें इनकी बनाई कविता उद्धृत हुई है ।

रामानन्द वसु—कुलीनग्रामवासी मालाधर वसुके पोत्र । इन्होंने श्रीचैतन्यदेवके साथ द्वारका नगरीसे नीलाचल तक परिभ्रमण किया था । रामानन्द चैतन्यदेवके परम प्रियपात्र थे । चैतन्यदेव इन्हें मित्र कहा करते थे ।

रामानन्द वाचस्पति—नवद्वीपके रहनेवाले एक विख्यात पण्डित । इन्होंने नवद्वीपाधिपति राजा कृष्णचन्द्रके अनुरोधसे आह्निकाचारराजकी रचना की थी ।

रामानन्द सरस्वती—बहुतसे प्रसिद्ध पण्डित । १ शुकाष्टकटीकाके रचयिता गंगाधरेन्द्र सरस्वतीके गुरु । २ ब्रह्मसूत्रभाष्यरत्नप्रभा नामक ब्रह्मसूत्रभाष्यकी तथा योगमणिप्रभा नामक सूत्रकी टीकाके प्रणेता । ये गोविन्दानन्द, गोपाल और शिवराम सरस्वतीके शिष्य थे । ३ ब्रह्मामृतवर्षिणी नामकी ब्रह्मसूत्रकी टीकाके रच-

पिता । ये मुकुन्द गोविन्दक शिष्य थे और रामकिन्दुर नामसे परिचित थे ।

रामानन्द सरस्वती यति—एक संन्यासी और प्रसिद्ध परिश्रित तथा रामभद्र सरस्वतीक शिष्य । इन्होंने पञ्ची करणतात्पर्यचंद्रिका, छत्रुसाक्ष्यवृत्तिप्रकाशिका, वाक्य सुघाटीका, विवरणोपन्यास (शत्रुघाचार्यकृत शारोरेक सूत्रभाष्यको टीका) और वेदांतसिद्धांतचंद्रिका आदि प्रथम प्रणयन किये ।

रामानन्द स्वामी—१ तत्त्वसंग्रह रामायण और मुक्तिरत्नके रचयिता । २ विद्यामूषणके प्रणेता ।

रामानन्द्वी—रामापासक सम्प्रदाय । इस सम्प्रदायमें राम ही विष्णुस्वरूप माने जाते हैं । इस संप्रदायके प्रवर्तक रामानंद हैं, इस कारण यह रामानंदी सम्प्रदाय नामसे परिचित होता है । इस सम्प्रदायमें किसी कठोर नियम का पाठन नहीं करना पड़ता । मकमाक नामक ग्रन्थमें रामानंदी सम्प्रदायके विषयमें यह बात लिखी हुई है, "रामानन्द सभी जातिके मनुष्योंको शिष्य करते थे । जातिभेद नष्ट करनेके लिये उनका विशेष प्रयत्न था । उनके मतसे मछ और मधुवायमें कोई भेद नहीं है । जय मगवान् होने मरस्य, कूर्म, बघाह आदि गोचर योगियोंमें जन्म लिया, तब मछ भी गोचर योगियोंमें जन्म कें इसमें संदिह ही क्या है । इसी कारण वे सभी जातिके मनुष्योंको शिष्य करते तथा मन्त्रोपदेश दिया करते थे ।

विशेष विवरण रामानन्द ग्रन्थमें देखो ।

रामानन्दशोध—रामानंद प्रणीत वेदांत विषयक एक प्रसिद्ध ग्रंथ ।

रामानुज (सं० पु०) १ रामचंद्रके छोटे ३॥ जन्मनाम । २ वैष्णव मतके एक प्रसिद्ध आचार्य और भीषेष्णव सम्प्रदायके प्रवक्तृक । रामानुजलामी देखो ।

रामानुज आचार्य—वेदाह—रामायणके रचयिता ।

रामानुजदर्शन—रामानुजमत प्रतिपाद्य दर्शनशास्त्र । माधवाचार्यने सर्वदर्शनसंग्रहमें इस दर्शनका संक्षिप्त विवरण दिया है । रामानुजने इस दर्शनमें पहले आर्हंतमतका ब्यवहन किया है । ये कहते हैं, कि आर्हंतमत प्रति ज्योतिषी और अश्रद्धाके हैं, इसी कारण बुद्धिमान् मनुष्य यह मत ग्रहण नहीं करते । क्योंकि अतमें पञ्चतत्त्व,

सततत्त्व और नवतत्त्वादि नामा विषय उल्लिखित हुए हैं, कोद एक स्थिर सिद्धान्त नहीं है । इसलिये लोगोंको यह संदेह होता है, कि सततत्त्व, पञ्चतत्त्व वा नवतत्त्व इनमेंसे किस मतके ऊपर वे निर्भर करेंगे ? तथा ऐसा भ्रम्यवस्थित मत अवलम्बन करनेकी आवश्यकता ही क्या ? विचार कर लोग इस मतको ग्रहण नहीं करते । क्योंकि संक्षिप्त विषयमें किसी भी बुद्धिमान्की प्रवृत्ति नहीं होती । जलता आर्हंतमतसे प्रवर्तकने इसे भ्रम्यवस्थित विषय बतलाते हुए अपने भी भ्रम्यवस्थित विश्वत्तका परिचय दिया है । आर्हंतके मतसे देहके परिमाणानुसृत जीवका परिमाण है, किन्तु यह शाश्वत वा युक्ति किसी भी प्रमाणके अनुसार नहीं हो सकता । कारण देहके परिमाणानुसृत जीवका परिमाण होनेसे घटादि अङ्क वस्तुकी तरह जीव भी परिमित हो सकता था । परिमित वस्तु कभी भी एक समय नामा शयानोंमें नहीं रहती । अतएव जीवका भी एक समय नामा शयानोंमें रहना असम्भव है, किन्तु योगी लोग योगके बखरी कायस्थूहकी रचना कर एक समय नामा शरीरमें बस स्थित करते हैं । किन्तु जैन लोग इसे लोकार नहीं करते । उनका कहना है, कि योगी भी तो जीव हैं, तब फिर किस प्रकार वे एक समयमें नामा शरीरमें अवस्थान कर सकते । शास्त्रमें कहा है, कि अपने कर्मावशता मनुष्यजीवको भी जन्मांतरमें गच्छपिपीलिकादि शरीर धारण करना पड़ता है । यह भी किस प्रकार संकृत हो सकता ? क्योंकि मनुष्य वेदपरिमित मनुष्यजीव कभी भी बड़े शरीरमें अर्थात् हाथोंमें नहीं रह सकता । जिस प्रकार छोटे शरीरमें जलाशयका सभी अङ्क तथा छोटी थोपड़ीमें हाथो नहीं समा सकता उसी प्रकार छोटी पिपीलिकाके शरीरमें किसी हाथसे मनुष्यजीवका समावेश नहीं हो सकता ।

यहाँ पर पेसी भी सम्भावना नहीं, कि जिस प्रकार दीपके आलोकसे छोटा और बड़ा घर समान तौर प्रकाश होता है, उसी प्रकार जीवके सन्तोच और विक्रममायमें छोटे और बड़े सभी शरीरमें उसका समावेश हो सके । किन्तु इससे जीव अनित्य हो जाता है । क्योंकि जिसके सन्तोच और विक्रममाय है उसके विचार भी है ।

विकारो होने होसे अनित्य होता है। दीपालोक ही इसका दृष्टान्त है। जीवकी अनित्यता भी स्वीकार नहीं की जा सकती। क्योंकि जीवके अनित्य होनेसे 'कृतप्रणाश' और 'अकृताभ्यागमन' ये दोनों दोष होते हैं। जैसे, जिस व्यक्तिने जैसा कर्म किया है उसे उस कर्मका भोग अवश्य करना होता है। अभुक्त कर्मका कभी भी विनाश नहीं होता। जीवात्मा यदि अनित्य हो, तो उसका विनाश भी स्वीकार करना होगा। ऐसा होनेसे जीवात्माका स्वकृत कर्मका भोग हुए विना ही विनाश हुआ। अतएव भोक्ताके अभावमें उसका वह कर्म अभुक्त हो कर भी विनष्ट हुआ। ऐसा होनेसे ही कृतप्रणाशका दोष हो उठा। क्योंकि अभुक्त कर्मके प्रणाशको कृतप्रणाश कहते हैं।

जो व्यक्ति पुण्य वा पापकर्म कुछ भी नहीं करता है, उसे उस कर्मके फलस्वरूप सुख वा दुःखका कभी भी भोग नहीं करना होता। किन्तु जीवात्माकी अनित्यता स्वीकार करनेमें अकृतकर्मके फलभोगस्वरूप 'अकृताभ्यागमन' स्वीकार करना होता है, नहीं तो इस मतसे अभिनवजात कुमारके सुख वा दुःख कुछ भी नहीं हो सकता। क्योंकि उस समय उसमें पुण्य वा पाप कर्म कुछ भी नहीं है। किन्तु जीवात्माकी नित्यता स्वीकार करनेमें ऐसा दोष नहीं होता। कारण, वाल्यावस्था में पूर्वजन्मकृत पुण्य वा पापके फलस्वरूप सुख वा दुःखका भोग होता है। यह जीवात्माकी नित्यताके मतसे अनायास ही स्वीकार किया जा सकता है। अतएव जीव कभी भी देहपरिमित नहीं है। इस प्रकार जब आर्हतमतके प्रधानभूत जीवपदार्थका निर्णय दोषपूर्ण और भ्रान्तिसंकुल प्रतिपन्न होता है, तब उस दर्शनमें अन्यत्र भ्रम वा दोष नहीं है, यह किस प्रकार संभव हो सकता है।

अद्वैतमतप्रवर्त्तक शङ्कराचार्यके मतावलम्बियोंका कहना है, कि एकमात्र ब्रह्म ही सत्य और श्रुतिप्रतिपाद्य है। जगत्प्रपञ्च कुछ भी सत्य नहीं है, सभी मिथ्या है। जिस प्रकार भ्रमवशतः रस्तीसे सांपका भ्रम होता है और जब यह मालूम हो जाता है, कि यह रस्ती ही सांप नहीं, तब उस सांपका भ्रम भी जाता रहता है उसी प्रकार

अविद्या द्वारा यह जगत्प्रपञ्च ब्रह्ममें कल्पित होता है। ब्रह्मज्ञान होनेसे ही उस अविद्याकी निवृत्ति हो कर जगत्प्रपञ्चको भी निवृत्ति होती है।

अविद्या भाव पदार्थ है, किन्तु वह सन् वा असन्पदार्थ नहीं है। इसलिये विद्याको सदसदनिर्वचनीय कहते हैं। विद्या अर्थात् ब्रह्मज्ञान होनेसे उस अविद्याकी निवृत्ति होती है। किन्तु इस विषयमें जो उपनिषद्-वाक्य और अनुभव प्रमाणरूपमें अद्वैत मतावलम्बियोने उद्धृत किया है उससे उल्लिखित भावस्वरूप अविद्या सिद्ध हो नहीं सकती। कारण श्रुतिमें जो अनृत शब्द है उसका अर्थ सांसारिक अल्पफलजनक कर्म है और जो माया शब्द देया जाता उसका अर्थ विचित्र सृष्टिजनक त्रिगुणात्मिका प्रकृति है। अतएव जिन सब श्रुतियों द्वारा वे अविद्याको सिद्ध करके ऐसे सिद्धान्त पर, पङ्क्ति हैं, निरपेक्षभावमें विचार कर देखनेसे वह अविद्या बिलकुल सिद्ध नहीं होती। कारण 'मैं नहीं जानना' ऐसे अनुभव द्वारा भी ज्ञानभावका ही बोध होता है, भावरूप अविद्याका बोध नहीं होता। फिर उसे युक्तिसिद्ध कह कर भी अङ्गीकार नहीं कर सकते। क्योंकि ब्रह्मज्ञानस्वरूप है, अतएव किस प्रकार उनका आश्रय कर अविद्यारूप अज्ञान रहेगा? आलोकके आश्रयमें क्या कभी अन्धकार रह सकता? इसलिये यह मत नितान्त युक्तिविरुद्ध है, ऐसा प्रतीत होता है। अतएव भावरूप अविद्या पदार्थ जो अलीक और युक्तिविरुद्ध है इसमें और सदेह ही क्या रह गया? इस प्रकार शङ्कराचार्यने जब युक्तिविरुद्ध विषयकी अवतारणा की है, तब विद्वानोंकी उस ओर किसी हालतसे प्रवृत्ति हो नहीं सकती।

सभी दर्शनशास्त्रोंमें जिस प्रकार एकमात्र दुःखनिवृत्तिको उपाय निर्धारित हुआ है, रामानुजदर्शनमें वह विशेष रूपसे आलोचित हुआ है। रामानुजविशिष्टाद्वैतवादी थे। उन्होंने इस दर्शनमें तीन पदार्थ स्वीकार किये हैं—चित्, अचित् और ईश्वर। इनमेंसे चित् जीवपदवाच्य, भोक्ता, असंकुचित, अपरिच्छिन्न, निर्मलज्ञानस्वरूप और नित्य तथा अनादि कर्मरूप अविद्यावेष्टित है। भगवदाराधना और तत्पदप्राप्ति आदि

जायका स्वभाव है। केशाप्रको सी भागो में विनक कर पाठे उस एक भागको फिर सी भागो में विनक करनेस त्रितना सूत्र होता है जोब भी उतना हा सूत्र है।

अचित् पदार्थ मोक्ष्य और दुःख्यपदार्थक है, अचेदन स्वरूप अकारक अर्थात् है तथा भोगत्यभिकारास्वत्त्वादि स्वभावशांता है। यह अचित् पदार्थ फिर तीन प्रकार का है,—भोग्य, भोगोपकरण और भोगायतन। जिससे भोग किया जाता है उस मोक्ष्य, जैसे, अन्नपानोपादि; जिसस भोग किया जाता है उसे भोगोपकरण; जैसे भोजनपात्रादि और जिसमें भोग किया जाता है उसे भोगायतन कहते हैं, जैसे शरारादि।

इभर परमात्मा हरि है। ये सबो क निवामक है। सबोंके कर्ता उपादान, और अन्तर्धामो तथा अपरिच्छिन्न ज्ञान, वेधय, पाप शक्ति, तत्र भादि गुणास्वत्तास्व स्वभावशांता है। चित् अचित् समो बस्तु उनके शरारस्वरूप है तथा पुरुषोत्तम और वासुदेवादि उनकी संज्ञा है। ये परम कारकिक है तथा सकलत्सज उपा सबोंका यथोचित फल इनके त्रिये पांच प्रकारको मूर्ति पारक करते हैं।

उनकी पांच प्रकारको मूर्ति ये सब हैं,—प्रथम अर्थात् अर्थात् प्रतिमादि द्वितीय रामादि अथवा स्वस्वयमिभ, तृतीय वासुदेय सद्गुण, प्रचुन्न और अनिरुद्ध इन चारो का स्पृह, वस्तुर्ष सूत्र और सम्पूर्ण पद्गुण वासुदेय नामक परब्रह्म और पञ्चम अन्तर्धामो समी शोधीके निवन्ता। भगवान्का इन पांच प्रकारको मूर्तियोंमेंस पूजको उपासना द्वारा पापक्षय हानस उच्चो चरको उपासनामें अधिकार होता है। पहले प्रतिमादिको पूजा करके विश्वगुडि और भगवद्गुडिक हानसे पीछे रामादि अथवास्वयमिभ उपासना करना होता है। इस प्रकार करत करत शुभनिर्गुडिक भोग होता है।

इस मतमें उपासना भा पांच प्रकारको है,—अभिगमन, उपादान, कथा अध्याय और योग। ईशमन्त्रिक मारान और अनुनयन आदिका अभिगमन, गंधपुष्पादि पूजोपकरणक आवाहनक उपादान, पूजाक इत्या, अथानुसंधानपूर्वक मन्त्र और स्तोत्रपाठ नामसंकीर्तन

और तस्वप्रतिपादक शास्त्राभासका स्वाध्याय तथा देवतानुसंधानको योग कहते हैं।

इस प्रकार उपासना प्राप्त यिज्ञान ज्ञान होनेस कठणासिधु भगवान् अपने मर्कोंके तिर्यपद् प्रदान करते है। यह पद् मिलनेसे भगवान्को यथार्थरूपमें जाना जा सकता है तथा पुनर्गमादि कुछ मो नहा होता। इसका तात्पर्य यह कि पाब प्रकारको उपासना से धीरे धीरे भक्ति नामक धाम आविर्भूत होता है। अरमोस्कार्य अयस्थामें जब भद्रकुरादि विलुप्त होते हैं, तब मन्त्रब्रह्मसंभयवान् उस भावुसिंहित अपना परमात्मधाम प्रदान करत है। यही रामानुज मतस मोक्ष है। ध्यानादिक साध को यह भक्ति द्वारा ही भगवत्स्व क दर्शन होत है, दूसरे उपायस नही। भगवत्स्वका साक्षात्कार तस्वमंसि भादि पापय सुननस नही होता।

रामानुजन और भी कहा है, कि एकमात्र भक्ति ही भगवत्प्राप्तिका उपाय है। भक्तियान विशेषज्ञानका सार या फल है। यह शतशैतुष्पकपिपी है। भगवान् को छोड़ कर और समी जब देय मालूम हांतें हैं, तब जो अन्तर्धाम या अन्तर्धामिकि पिकाशमाना होता है, वही भक्ति भक्ति है। बिना वैराग्यक वैसी भक्ति ही नही होती तथा वैराग्य भी सस्वगुडिक बिना नही होता, सस्वगुडि आहारादिको मुखिस धीरे धीरे प्राप्त हातो है।

पहले ठिका जा बुझा है, कि रामानुज विशिष्टाद्वैत पारो थे। व इस मतको मुक्ति और प्रमाणादि दिया कर समर्थन कर गये हैं, कि चित् और अचित्क साग इभर का भेद यहा तान है। जिस प्रकार विभिन्न स्वभावशांती पशु और मनुष्यादिमें भेद है, उसी प्रकार पूर्वाक स्वभाव और स्वस्वक वैदसुष्पकशता। चित् और अचित्क साग इभरका मो भेद स्वाकार करना होगा। फिर जिस प्रकार 'मै सुम्नर ई मैं स्पून हुं' इत्यादि व्यपहारसिद्ध भौतिक शरीरके साध जाधारमाका भेद देवा जाता है, उसी प्रकार चित् और अचित् समो पशुधोंके साध भेद मो है, कइना होगा। फिर जिस प्रकार एकमात्र मिहा हा विभिन्न पदके दहन भादि नामा रूपोंमें मोदू है जिसस पदके साध मिहोका भेदाभेद प्रताठ होता है

उसी प्रकार एकमात्र परमेश्वर चित् और अचिन् नाना रूपोंमें विराजमान हैं, इसी कारण चिदचित्के साथ उनका भेदभेद भी है, संदेह नहीं। क्योंकि ईश्वरके आकार स्वरूप चिदचित्का परस्पर भेद ले कर तथा दोनोंके साथ ईश्वरके शरीरात्मभावमें अभेदव्युत्पत्ति: भेदाभेद हुआ है। जिसका जो अन्तर्यामी होता है, वही उसका शरीर समझा जाता है। जिस प्रकार भौतिकदेहका अन्तर्यामी जीव होनेके कारण भौतिकदेह जीवका शरीर है, उसी प्रकार जीवका अन्तर्यामी ईश्वर हैं, इसलिये जीव भी ईश्वरका शरीर है। अतएव जिस प्रकार 'मैं सुन्दर हूँ, मैं स्थूल हूँ' इत्यादि व्यवहार द्वारा भौतिक शरीरमें जीवात्माके शरीरात्मभावमें अभेद प्रतीत होता, उसी प्रकार 'तत्त्वमसि श्वेतकेतो' अर्थात् हे श्वेतकेतो! तुम ईश्वर हो, इत्यादि श्रुतियोंमें भी जीवात्मा और ईश्वरके शरीरात्मभावमें अभेद निर्दिष्ट हुआ है। फलतः उससे वास्तविक अभेदप्रकृति नहीं होती। अतएव इस श्रुति द्वारा जीवात्मा और परमात्मामें एकता स्वीकार करना तथा जगत्प्रपञ्चको मिथ्या कहना केवल मूर्खों का काम है, इसमें जरा भी संदेह नहीं।

श्रुतिने जहां निर्गुण कहा है, वहां उसका तात्पर्य है—प्रकृतजनकी तरह रागद्वेषादि गुण ईश्वरमें नहीं होना। फिर जहां पदार्थका नानात्वाविषय निषेध किया है, वहां उसका तात्पर्य यह, कि ईश्वर चिदचित् सभी वस्तु ईश्वरात्मक हैं। ईश्वरसे पृथक् कोई भी वस्तु नहीं है।

(रामानुजद०)

रामानुज स्वामीने ये सब मत संस्थापन कर चेदान्तदर्शनके ब्रह्मसूत्रका एक भाग्य प्रणयन किया है। उस भाग्यमें इन सब मतोंका विशेष विवरण लिखा है।

रामानुज स्वामी देखो।

रामानुजदास—गण्डमारुत, तत्त्वत्रयरत्न और वेदान्त विजयके प्रणेता।

रामानुज दीक्षित—तत्त्वचिन्तामणिदर्पण और तत्त्वचिन्तामणिसारके प्रणेता।

रामानुज सम्प्रदाय—रामानुज मतावलम्बी वैष्णवधर्मसम्प्रदाय। भीष्मप्रदाय देखो।

रामानुज स्वामिन्—चरद्वारा जन्तवटोंका और सारास्वादिनी नामक टोकाके रचयिता।

रामानुजस्वामी—एक अद्वितीय दार्शनिक और साधुपुरुष, विशिष्टाद्वैतवादमतके प्रवर्तक। यतिराज इनकी उपाधि थी। इनके पिताका नाम केजव त्रिपाठी था। भगवान् रामानुजाचार्य १०१७ ई०में जिस क्षेत्रमें भूमिष्ठ हुए, वह ग्राम वडा प्राचीन है और उस पवित्र स्थान पर अश्वमेधादि विविध यज्ञानुष्ठान हो चुके हैं। इस समय वही स्थान श्रीपेरैम्बधूरम नामसे प्रसिद्ध है। यह स्थान मान्द्राजहातेके चेन्नलपत जिलेके अन्तर्गत है और वर्त्तमान मान्द्राज नगरोसे छत्तीस मीलके फासले पर अवस्थित है। मान्द्राज रेलवेके त्रिमेलोर स्टेशनसे दश मील दूर श्रीपेरैम्बधूरम ग्राम पूर्व दक्षिणके कोनेमें अवस्थित है। अब इस स्थान पर इसके नगर होनेका कोई भी चिह्न विद्यमान नहीं है। चारों ओर नयनप्रसन्नकारी शस्यश्यामला भूमि है। नारियल, ताल, खजूर, सुपारी, वट, पोपल, पुन्नाग, नागकेसर आदि अनेक प्रकारके वृक्षोंसे सुशोभित यह एक छोटा सा ग्राम है। दूरसे इस ग्रामको देखनेसे मन आनन्दसे परिपूर्ण हो जाता है। रेलवे स्टेशनसे उतर कर इस ग्राममें प्रवेश करनेके लिये एक चक्रदार सड़क पर चल कर वहां पहुंचना होता है। इसी सड़कसे कुछ दूर आगे बढ़ कर आचार्यका जन्मक्षेत्र है। पहले स्वामाजी महाराजका जन्मस्थान मिलता है, उसके बाद उनके उपास्य देव श्रीकेशवजी के मंदिरमें जाना होता है। उसके पास ही उनके भतीजे क्रूरेशस्वामीका मकान है। उसके सामने एक बड़ा लम्बा चौड़ा तालाब है। अन्ततसरोवर उस तालाबका नाम है।

भगवान् रामानुजाचार्यका जन्म हारीत गोत्रीय ब्राह्मण वंशमें हुआ। किन्तु वैदिक श्रौतसूत्रमें ब्राह्मणोंके जो अष्टाविंशति गोत्र वतलाये गये हैं और जिनका उल्लेख धनञ्जयकृत धर्मप्रदीपमें पाया जाता है उनमें हारीत गोत्रका नाम नहीं मिलता। किन्तु स्वामीजी ब्राह्मणवंश हीमें उत्पन्न हुए थे, इसमें संदेह करनेका कारण नहीं।

रामानुजस्वामीके पिता केशव त्रिपाठी एक अद्वितीय परिश्रम थे। पिताके निकट हो उन्होंने १५ वर्ष तक वेदाध्ययन किया था। पिताके मरने पर वे सपरिवार त्राविकूर देशकी राजधानी काञ्चीनगरी बढे गये उस समय काञ्चीनगरी विद्या भीर घर्नचर्वाके छिपे वृद्धि प्रान्तमें बहुत गसिय थी। यादवप्रकाश नामक एक येदाठी संन्यासी उन दिनों वहीकी परिश्रम प्रशंसकोंमें बढे भेद्य थे। श्रीरामानुज स्वामी उन्ही के निकट अध्ययन करने लगे। अध्ययन इनके सौर्द्धमें प्रविभा भीर वाक्पानुगुरो देख सुन कर मुग्ध हो जात थे।

जिन दिनों श्रीरामानुज स्वामी यादवप्रकाशक पास पढ़ने जाते थे, उन्ही दिनों वहाँके राजाकी क्रम्या पर एक प्रह्लादससने मधिकार जमाया था। राजाने राजसकी हत्याके छिपे यादवको बुझाया। यादव श्रीरामानुज प्रमुख अपने शिष्यो को ले कर वहाँ गये। उनके बनेक पन्थ करने पर श्री राज राक्षस महा हत्या, तब श्रीरामानुज स्वामीने क्रम्याके मस्तक पर अपना चरण छुझाया भीर उसकी प्रह्लादसवापा हूर कर दो। राजाने प्रसन्न हो कर स्वामीजीको बहुत धन दिया। इस पर यादवप्रकाश जलनेसे लगे। इतनेमें स्वामीजीके मीसेरे भाई गोबिन्दाचार्य भी यादवप्रकाशकी पाठशाळामें स्वामीजीके साथ पढ़नेके छिपे भाये।

एक दिन यादवप्रकाश येदास्त पढ़ा रहे थे। उन्होंने "सर्वे कवित्वं ब्रह्म, निह नास्तिक चिदान्त" की व्याख्या इस प्रकार की। यह जगत् ब्रह्म है, ब्रह्म मित्र कुछ भी नहीं है। हम लोग जो मित्र मित्र पदार्थ देखत हैं वे मायामात्र हैं, यह चिन्तन्य भर्ष सुन कर रामानुज स्वामी का मन बिरद-सा हो गया भीर उनस न रहा गया। उन्होंने कहा, 'महानुभाव! आप भुविही व्याख्या न कर अप्याख्या करते हैं। उसकी व्याख्या इस प्रकार होनी चाहिये,—यह सारा जगत् ईश्वर श्राध भविष्ठित है। प्रत्येक पदार्थमें ईश्वर विराजमान है। ईश्वर जगत्की आत्मा है, उससे पूषक हो कर कोइ भी वस्तु उदर नहीं सक्तो।" यह भर्ष सुन कर यादवप्रकाश श्रेयसे कापने लगे भीर उन्होंने दो चार बार्ते, स्वामीजीको सुनाई।

स्वामीजीने इस अपमानको सुनवाप सह लिया। किन्तु उनके मनमें बड़ा खेद उत्पन्न हुआ भीर यादवप्रकाशसे पढ़ना बंद करक अपने घर हो पर येदात तपस्वी गम्भीर आलोचना स्वर्ष करते लगे।

यादवप्रकाश सुप बैठे न थे, येरका बढका छेनका उपाय सोचा करते थे। एक दिन उन्होंने अपने शिष्यों को बुला कर कहा, 'तुम लोगोको अच्छी तरह मालूम है, कि काञ्चीके परिश्रतोंमें मेरो कीर्ती प्रतिष्ठा है। रामानुज शिष्य होने पर भी मेरा शत्रु हो रहा है। इस दिन राजा के सामने उसने मेरा नारो अपमान किया है। उसकी बुद्धि बड़ी तोहण है, यदि यह कुछ दिनों भीर धीला रहा, तो अर्द्ध मतका मूखोच्छेद कर हैत मतको पुष्ट कर देगा। अतएव इस शत्रुको किसी उपायसे मार जाकना चाहिये।' शिष्योंने कहा, "गुरुदेव! आप युक्ति न हों। भवसर मिलते ही हम लोग रामानुजका प्राणनाश करके आपको निष्कपत्रक बना ठेये।" यह सुन यादवप्रकाश कहते लगे, 'मिने उसके प्राणनाशका एक उपाय सोच रखा है। वह यह कि हम लोग उसे साथ ले कर स्वानार्थ प्रयागको लेंगे। वहाँ सब मित्र कर मागीरपीके प्रबल प्रवाहमें उल बुझे है। ऐसा करके उसे उसकी सहृणति होगी भीर हम लोगोको भी प्रहृहत्याजनित पापमें छित न होना पड़ेगा।' इस प्रकार पढ़ पन्थ रच कर श्रीरामानुज स्वामीके शार्तोंमें भुका यादव उनके साथ के शिष्यमंडली सहित प्रयागकी ओर चल दिये। शिष्यमंडलीमें श्रीरामानुज स्वामीके मीसेरे भाई गोबिन्दाचार्य भी थे।

विन्ध्याचलकी तराईमें जब वे सब पहुँचे, तब अक्सर ईश्वर गोविन्दाचार्यने साथ हाक श्रीरामानुजसे कह दिया। श्रीरामानुजने उसी समयसे इन बुद्धोका साथ छोड़ा भीर रास्ता छोड़ उस चिकट वनमें प्रवेश किया। इपर यादवप्रकाशने जब देखा, कि रामानुज साथमें नहीं है, तब उन्होंने बहुत पुझवाया पर क्यो पता न लडा। अब यादवप्रकाशने समझ लिया, कि किसी कनेके बन्धुने उन्हें का डाका। यह विचार कर वह मन ही मन बह प्रसन्न हुए।

इपर श्रीरामानुज स्वामीके भगवान् बरदारज भीर

जगज्जननी लक्ष्मीजीने बहेलिया और बहेलिनका रूप धारण कर काञ्ची पहुँचाया। काञ्चीमें पहुँच कर स्वामी जीने अपना सारा हाल अपनी मातासे कहा। माता कान्तिमतीके आदेशानुसार स्वामोजीने शालकूपसे जल ला कर भगवान् वरदराजकी सेवा करने लगे।

श्रीरङ्गनाथके कृपाभाजन श्रीयामुनाचार्य बड़े पंडित थे। उनके पास अनेक शिष्य वेद-वेदाङ्गकी शिक्षा प्राप्त किया करते थे। एक दिन उन्होंने अपने शिष्योंसे कहा, 'शिष्यगण! तुम लोग घूम फिर कर एक ऐसे व्यक्ति का पता लगाओ जो सुलक्षण कान्तियुक्त नवयुवक हो, सर्व-शास्त्र पारदर्शी, मधुरभाषी, सदाचारी और भगवद्भक्त हो। शिष्यगण जैसे व्यक्ति का अनुसन्धान करते करते काञ्चीमें पहुँचे। वहाँ श्रीरामानुज स्वामीको देख और उनके सम्बन्धकी सारी घटनावलीको सुन वे श्रीयामुनाचार्यके पास लौटे और उनसे सारा हाल कहा। वे श्रीयामुनाचार्यजीको देखनेके लिये उत्सुक हुए। परन्तु अचानक बीमार हो जानेके कारण वे स्वयं काञ्ची न जा सके।

उधर यादवप्रकाशने लौट कर जब स्वामीजीके सकुशल काञ्ची लौट आनेका समाचार सुना। तब वह दुष्ट मन ही मन लज्जित हुआ और लोगोंको धोखा देनेके लिये उसने फिर श्रीरामानुज स्वामीसे मिल कर लिया। स्वामीजी भगवान् वरदराजकी सेवा करते हुए फिर उसके पास विद्याध्ययन करने लगे। कुछ समय बाद गुरु शिष्यमें फिर झगडा हुआ। इस वार गुरुने कलिके प्रभावसे विवेकभ्रष्ट हो श्रीरामानुजस्वामीको वहाँसे निकलवा दिया।

रामानुजस्वामी उसी समय श्रीयामुनाचार्यके दर्शन करनेके लिये श्रीरङ्गजीकी ओर पूर्णाचार्यके साथ चल दिये। जब वे पुण्यतोथा कावेरीके तट पर पहुँचे, तब श्रीयामुनाचार्यके परम पद प्राप्त होनेका समाचार सुन घड़े दुःखित हुए।

कुछ दिनों बाद काञ्चीपूर्ण स्वामीके कथनानुसार दीक्षा ग्रहणार्थ श्रीरामानुज स्वामी पूर्णाचार्यके पास श्रीरङ्गक्षेत्रके महाक्षेत्रका शून्य आसन देख आग्रहपूर्वक

पूर्णाचार्यके श्रीरामानुज स्वामीको साथ ले आनेके लिये काञ्ची भेजा। रास्तेमें मदुराके पास उन दोनोंको भेंट हुई। दोनोंने एक दूसरेसे अपनी अपनी यात्राका कारण कहा। अन्तमें श्रीरामानुजचार्यने पूर्णाचार्य स्वामीसे संस्कार करनेके लिये प्रार्थना की। पूर्णाचार्यकी इच्छा नहीं रहते हुए भी श्रीरामानुजस्वामीके बार बार आग्रह करने पर पूर्णाचार्यने उनके संस्कार वही किये। महा-पूर्णस्वामीने महापण्डित श्रीरामानुजस्वामीको श्रीहरिके दास्यसाम्राज्यका नायक बनाया और कहा, "इस लोकमें श्रीयामुनाचार्य श्रीवैष्णव जगत्के गुरु थे। उनके तिरोभाव होने पर अब तुम उनके स्थानको सुशोभित करा तथा प्रच्छन्न वीर्योंके सम्प्रदायको समूल उन्मूलित करके श्रीवैष्णवोंको बचाओ।" इसके बाद गुरु समेत वे काञ्ची लौटे।

एक दिन कौशलपूर्वक श्रीरामानुज स्वामीने अपनी स्त्रीको मायके भेजा और आप अपनी जन्मभूमि भूतपुरी को चल दिये। वहाँ घर द्वार वित्त आदि सब पार्थिव सम्पदको छोड कर श्रीरामानुजस्वामीने कमण्डलु और कपाय वस्त्र धारण कर अनन्त सरोवरमें स्नान किये और आदि केशवकी सन्निधिमें संन्यास ग्रहण किया। फिर वे काञ्ची लौटे। वहाँ उन्हें उस आश्रममें देख काञ्ची-पूर्णको बड़ा आनन्द हुआ। उसी समयसे उनका नाम "यतिराज" पड़ा।

कुछ दिनोंके बाद श्रीरामानुज स्वामी देशाटनको निकले और वेङ्कटगिरि होते हुए उत्तरको चले। दिल्ली, बदरिकाश्रम आदि स्थानोंमें श्रीसम्प्रदायका प्रचार करते हुए वे अष्टसहस्र नामक ग्राममें पहुँचे। वहाँ उन्होंने वरदाचार्य और यज्ञेश नामक अपने ही शिष्योंकी मठाधिपति नियुक्त किया। फिर हस्तिगिरिमें पूर्णाचार्यादिके मिलनेके अनन्तर वे कपिलतीर्थको गये। वहाँके राजा विठ्ठलदेवको उन्होंने अपना शिष्य बनाया। राजाने तोंडीर-मण्डल आदि अनेक ग्राम उनको भेंट किये।

फिर बोधायनवृत्ति संग्रह करनेके लिये वे कूरेश सहित शारदापीठको गये और वहाँके पण्डितोंको शास्त्रार्थमें परास्त किया। यतिराजने भगवतोवीणा-पाणिकी स्तुति कर उन्हें प्रसन्न किया। फिर बोधायन

पुस्तिका से वे रत्नकोठी की ओर चले गये। किन्तु कर्मवीरों
परिचरितोंको उस पुस्तकका इस प्रवेष्टमें आना अच्छा न
मालूम पड़ा। इसलिये रास्त हीमें वे यतिराजसे उस
पुस्तकको छीन कर ले गये। इस घटनासे स्वामीजीको
बड़ा दुःख हुआ। उन्हें कुन्नी देव कूटने कहा, 'प्रभो !
आप कुम्भित न हों। मैंने उसे अच्छी तरह आघोषाल
देख लिया है। आपकी कृपासे यह सगुण प्रथम मेरे
मुकस्य है।' यह सुन स्वामीजी बहुत प्रसन्न हुए।

इसके बाद यतिराजने बहुतसे शिष्योंको साथ
ले चोलाप्रदेशक पाण्ड्यप्रदेशक, कुरुक्षेत्र आदि देशोंमें
उत्तमोत्तम एवं मायावाकियोंको परास्त कर उन्हें अपनी
शिष्य बनाया। कुरुक्षेत्रके राजाको दीक्षित कर उन्होंने
केरलदेशके कट्टर वैष्णवोंको परास्त किया।
यहाँसे वे कन्नड प्रदेश, मयूर, कांगे, भयोष्य, बद्र
रिक्कभम, नैमिषारण्य आदि ठीकोंमें हो कर काश्मीर
पहुँचे। यहाँके परिचरितोंको भी परास्त किया। काश्मीरके
नरेश जनका नाम सुन उनसे पास गये और उनके शिष्य
हो गये। यहाँके परिचरितोंको यह बात अच्छी न लगी।
उन्होंने स्वामीजी पर भ्रमिचार प्रयोग किया। शिष्योंने
इसका समाचार श्रीस्वामीजीको दिया। स्वामीजी उदा
सी विचलित न हुए। परिचरितोंका साथ परिभ्रम कार्य
हो गया और वे पागल हो गये तथा सड़कों पर गाड़ियाँ
बकन हुए घूमने लगे। राजाको दया भाव और उन्होंने
स्थामोसे निर्दिष्ट कर उनका पागलपन दूर कराया।
फिर वे सब परिचरित यतिराजके शिष्य हो गये। स्वयं
विद्यावाच्य सरस्वतीन उनका भाष्यको प्रस्ता कर उन्हें
'भाष्यकार' को उपाधि प्रदान की।

यहाँसे स्वामीजी शारदा गये। फिर कांगी
हो कर वे पुष्कोत्तमदेशक पहुँचे। यहाँ भी वे परिचरितोंको
परास्त कर वे धोरामानुज मठमें रहने लगे। भाष्यकारन
बाह्य, कि यहाँ जगद्गुरुके मधनपिपासमें कुछ वैदिक
तेत्या इत्केर किया जाय, पर जगद्गुरुको अच्छा न देख
वे बेभूत्तगिरि पर पहुँचे। फिर कोन्नट्टके कर्मिचरित
राजाने उन्हें शास्त्रार्थके लिये बुलाया। यतिराज उसका
पास जात थे, कि मागमें चेला बलाम्या भी उसका
पतिको क्षुण्ण किया। फिर अनेक बीड़ोंको उन्होंने

परास्त किया। इस प्रकार कुछ दिन वे भक्तोंके मयों
में रहे। यहाँ स्वयं देवनेसे इन्होंने यादवाच्य
पर जा कर यहाँकी छिपी हुए भगवान्की मूर्तिको
निकाला और शाक १०१२ में उस मूर्तिको यहाँ प्रतिष्ठा
की।

एक बार यतिराजने विष्णुमें जा कर तत्कालीन
मुसलमान बादशाहके महलमें एक विष्णु मूर्तिको
निकाला था।

श्रीरामानुजस्वामीके ७४ शिष्य बड़े प्रसिद्ध हो गये
हैं। इनमें अन्नपूर्णाकी बड़ी महिमा है।

इस प्रकार यतिराज भाष्यकार श्रीरामानुज स्वामीने
श्रीधरारियोंके प्रति कृपा विधानके लिये इस धराधाम
पर एक सी बीस वर्ष तक वास किया। इस अवस्था
का भाषा समय अर्थात् साठ वर्ष तक ही उन्होंने काञ्चा
वेङ्कटगिरि, यादवाचल आदि अनेक देशोंमें विगिबन्ध
करनेके लिये पर्यटन किया। अनन्तर उन्होंने अपनी
आयुका शेष भाषा भाग धीरङ्गनाथजीकी सेवामें व्यतीत
किया। सेतुबन्धसे हिमाचल तक और पश्चिम समुद्रसे
पूर्व-समुद्र तक देसा कीह स्थान न था जहाँ पर यति
राजके शिष्य न हों।

रामानुजका मठ।

रामानुजने श्री विशिष्टाद्वैतवाद प्रचार किया, उसका
मूळतत्त्व बहुमाचीन मतसे ही लिया गया है। उन्होंने
जिस मतका प्रचार किया, वह उसके बहुत पहले बोधा
पन और भ्रमिज्ञाचार्य लिपिबद्ध कर गये थे। रामानुजकी
भोमाष्य और धूतप्रकाशिका नामकी टीका होते
इसका पता चलता है। भासप्रदेशके प्रसिद्ध आचार्य
भोनिवासने अपनी पताम्प्रवर्दीपिकामें लिखा है, कि
१म व्यास, २म बोधापन, ३म गुहर्ष, ४म भास्वि, ५म
प्रधानन्दी, ६म भ्रमिज्ञाचार्य ७म श्रीपराकृष्णनाथ, ८म
यामुनाचार्य और ९म यतीभर वा रामानुजने यथाक्रम
इस मतका प्रचार किया। पूर्वजन्तों भाषायोंका संक्षिप्त
मत एक प्रकार पितृसत्ता ही गया, रामानुजका सुविस्तृत
आलोचनायुक्त मत अभी तमाम प्रचलित है।

बहुत पहले भारतवर्षमें जा पश्चिम या भाग्यत मत
प्रचलित था, रामानुजने एक प्रकारसे उसी मतकी
घोषणा की। पश्चिम वर्षमें विष्णु विशय देखा।

अध्यापक रामकृष्णगोपाल भाण्डारकरके मतसे पञ्चरात्र वा सात्वतधर्म क्षत्रियमूलक है । रामानुजने उसी सात्वतमतके अवलम्बन पर वैदान्तिक विशिष्टा द्वैतवाद स्थापन किया है ।

प्रधानतः १ जीव, २ ईश्वर, ३ उपाय (ईश्वरको पानेका पथ), ४ फल वा पुरुषार्थ, ५ विरोधी अर्थात् (ईश्वर प्राप्तिका प्रतिबंधक) यह अर्थपञ्चक ले कर रामानुजमत प्रतिष्ठित है । उनके मनसे जीव पांच प्रकारका है,— नित्य, मुक्त, केवल, मुमुक्षु और वद्ध । ईश्वरका स्वरूप भी पांच प्रकारका है,—पर, व्यूढ, विभव, अन्तर्यामी और अर्चा । उपाय भी पांच प्रकारका है,—कर्मयोग, ज्ञानयोग, भक्तियोग, प्रपत्तियोग और आचार्याभिमानयोग । पुरुषार्थके भी पांच भेद हैं,—धर्म, अर्थ, काम, कैवल्य और मोक्ष । मोक्षविरोधीके भी पांच भेद हैं, स्वरूपविरोधी, परस्वरूपविरोधी, उपायविरोधी, पुरुषार्थविरोधी । रामानुजदर्शन शब्द देखो ।

द्राविड, तैलङ्ग, मारवाड़ और गुजरातमें रामानुजमतावलम्बी बहुतसे लोग देखे जाते हैं । श्रीसम्प्रदाय देखो ।

निम्नलिखित ग्रंथ पण्डितप्रवर रामानुज स्वामीके लिखे मिलते हैं,—

अष्टादशरहस्य, ईशावास्वरोपनिषद्भाष्य, कण्टकोद्धार, कूटसदोह, गद्य और गद्यतय गुणरत्नकोष, चक्रोद्घास, दिव्यसूरिप्रभाषदीपिका, देवतापारम्य, नायकरत्न नामक न्यायरत्नमालाटीका, नारायणमन्त्रार्थ, नित्यपद्धति, नित्याराधनविधि, न्यायपरिशुद्धि, न्यायसिद्धान्त, पञ्चपटल, पञ्चरात्ररक्षा, प्रश्नोपनिषद्ब्याख्या, भगवद्गीता भाष्य, मणिदर्पण, मतिमानुष, मुण्डकोपनिषद्ब्याख्या, योगसुखभाष्य, रत्नप्रदीप, रामपटल, रामपद्धति, रामपूजापद्धति, राममंत्रपद्धति, रामरहस्य, रामायणव्याख्या, रामाश्वापद्धति, वार्त्तामाला, विशिष्टाद्वैतभाष्य, विष्णुविप्रहशंसनस्तोत्र, विष्णुसहस्रनामभाष्य, वेदान्ततत्त्वसार, वेदान्तदीप, वेदान्तसार, वेदार्थसंग्रह, वैकुण्ठगद्य, शतदूषणी, शरणागतिगद्य, श्रीभाष्य, श्रीरङ्गराजस्तोत्रव्याख्या, श्वेताश्वतरोपनिषद्ब्याख्या, सकल्पसूर्योदयटीका, सच्चरित्ररक्षा और सच्चरित्ररक्षासारदीपिका नामक उसकी टीका और सर्वार्थसिद्धि ।

रामानुष्टुम् (सं० स्त्री०) रामस्तोत्रविशेष ।

रामप्रिय (सं० पु०) दारचोनी ।

रामाभ्युदय (सं० पु०) रामचन्द्रका अवताररूपमें प्रकटन ।

रामायण (सं० स्त्री०) रामस्य चरितान्वितं अयनं शास्त्रं । वाल्मीकि रचित भारतवर्षका आदि काव्य । इसका दूसरा नाम रघुवरचरित, दशगिरिवध वा पौलस्त्यपद्यकाव्य है ।

रामायण आदिकाव्य समझा जाता है, पर पाश्चात्य पण्डितोंके निकट यह नाना भावोंमें गृहीत हुआ है । जर्मन-पण्डित वेबर (Weber)ने लिखा है । रामायणकाव्य दक्षिणापथमें आर्यसभ्यता विशेषतः कृषि-ज्ञान-विस्तारविषयक एक रूपम्भोज है । सीता किसीका नाम नहीं है, सीता ही हलपद्धति और रामायण हलधर बलराम है । महाभारत-वर्णित युद्धपर्वके बहुत पीछे रामानुज सङ्कलित हुआ है । यहाँ तक, कि बौद्धोंके दशरथ जातकके कितने श्लोकोंके साथ रामायणके श्लोकोंका मेल देख कर उन जर्मन-पण्डितने प्रमाणित किया है, कि दशरथजातकके मूल उपाख्यानका अवलम्बन कर वाल्मीकीय रामायण रचा गया है ।

इसके सिवा कोई कोई पाश्चात्य पण्डित यह भी कहते हैं, कि हिन्दू और सिंहलस्थ बौद्धोंके परस्पर विवाद-विसम्वादविज्ञापक रूपक ले कर रामोपाख्यानकी सृष्टि हुई है । फिर किसीने लिखा है, कि रामायण होमरकृत ग्रीक-काव्यका ही अनुकरण है । इस प्रकार रामायणके सम्बन्धमें कितनी ही अश्रुत अभूतपूर्व कथाएँ सुनी जाती हैं । परन्तु उन सब कथाओंके मूलमें कुछ भी सार है, हम लोग खोकार नहीं करते ।

रामायण और महाभारतके वर्णनसे भारतवर्षका विभिन्न समाजचित्र पोया जाता है । उस समाजचित्रसे रामायण और महाभारतमेंसे कौन प्राचीन काव्य है उसका सहजमें पता लगा सकते हैं । रामायणके समय दक्षिणात्यमें आर्यसभ्यता प्रतिष्ठित नहीं हुई । इस समय दक्षिणात्यका अधिकांश जंगली जानवरोंसे

मरु पक्षा था, केवल किष्किण्यार्थी-बानरोंका एक सुरम्ब राज्य था। किन्तु महाभारतके समय दक्षिणात्यमें जाना बर्षाओंमें भार्य उपनिवेश स्थापित हुआ है। उस समय करमण्डल उपकुलमें अर्जुनके श्वसुर मणिपुत्रपतिका अग्रविहृत शासन था। गुजरातके डे कर समस्त मरु वार उपकुलमें राज्य करते थे। दक्षिणात्यकी दक्षिणी सीमामें भी उस समय पाण्डवोंका अधिकार था। यहाँ तक कि महाभारतके समय दक्षिणात्यमें किष्किण्यका बानरराज्य—बानरप्रमावकी स्मृतिका जोष हो गया। इस प्रकार दोनो प्रयोगोंकी आडोबना करनेसे हम लोग कहते हैं, कि दक्षिणात्यका यह राजनैतिक और सामाजिक परिवर्तन जोड़ें दोनोंका काम नहीं है। समस्त दक्षिणात्यमें भार्याधिकार प्रतिष्ठित होनेमें नौकड़ों वर्षों लगे थे। इस हिसाबसे मूख रामायण मूख महाभारतसे सैकड़ों वर्ष पहलेका है, इसमें जरा भी संशय नहीं। महाभारतके आदिपर्वमें "जाना देशमापायका प्रप्यन्ते" इत्यादि प्रमाण सूत्रानुसार उस समय भी भार्यसमाजमें जाना शैल भाषा प्रचलित और म्लेच्छ भाषा परिज्ञात थी अस्वभाव प्रमाण मिळता है। किन्तु रामायणके समय भार्यसमाजमें संस्कृत भाषाका ही कथित भाषारूपमें प्रचार था। रामायणके अरण्यकाण्डमें लिखा है—

"भारतम् आर्यम् स्मिन्निवसः संस्कृतं वरुन ।
 बाल्यवति स्थिर उ आर्यप्रवृत्त निर्गुणाः ॥" (११/१६)

अर्थात् निम्न स्वभावके इन्वयमें आर्यजनका रूप धारण कर अब भाव्य करना आहा, तब उसमें संस्कृतमें एक लिख कर आर्योंको निमग्नण किया था।

दूसरी जगह यह भी देखा जाता है, कि हनुमान् जब सङ्गुपुत्रोंमें पुंसे, तब वे सीताके साथ मिळनेके अनिर्णय से इस प्रकार सोच रहे हैं,—

"नहं द्रविणशुभैर्ब बानरम् विप्रोत्तमः ।
 बाल्यन्वीराहर्भ्यामि मानुषीभिर्ह संस्कृतान् ॥

• आदिपर्व १४६ मन्वांसस मरुम्ब होता है, कि विदुरसे म्लेच्छभाषाका व्यवहार किया था जिसे पाण्डव समझ गये थे ।

बदि बानं बहिष्वाभि द्विजातिरिव संस्कृतम् ।
 एवयं मन्वमन्ता मां वीता मोता मविष्पति ॥
 बरवमेव बल्यम् मानुष्य वाचनमपर्वत् ।
 मया संस्कृत्यि तु कस्या मान्ययेकमनिम्बिता ॥"

(सुभरकाण्ड १०/१७-१८)

अर्थात् मैं तो छोटा हूँ, उस पर भी बानर हूँ। जो कुछ हो मानुष्यके जैसा हो संस्कृतमें बोलूँगा। द्विजाति अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य (विशुद्ध) की तरह संस्कृत बोलनेसे सती मुझे रावण समझ कर डर डार्यगे। इसलिये साधारण आत्मीकी तरह कभी मुझे बोलना उचित है नहीं तो उन्हें किसो प्रकार साहस्यना नहो दे सकता।

हनुमानकी उक्तिसे स्पष्ट ज्ञाना जाता है, कि रामायणके रचनाकाळमें जनसाधारण संस्कृत भाषाका ही व्यवहार करते थे। इसक सिवा महाभारतके वनपर्वमें रामके शर्मसे डे कर उनके राज्याभिषेक तक सभी रामचरित वर्णित हुए हैं।

रामचरित वर्णनके समय भारतकारने कहा है—

"शशु राजन् । यत्पृथग्विदिहास पुरातनम् ।" (७/२७/१६)

इस उक्तिसे भी महाभारतके रामचरित अशकी रचनाके समय जनका प्राचान इतिहास प्रचलित था, साबित होता है। और तो क्या, उस वनपर्वमें "रामायण" और द्रोणपर्वमें बास्मादि रचित गीतोंका भी उल्लेख भाषा है—

"अथि पाय पुतमीवः रणोको बल्यमीक्षिता सुधि ।"

अतएव बास्मीकिका रामायण भी महाभारतके सैकड़ों वर्ष पहले रचा गया है, इसमें जरा भी संशय नहीं।

अब यह प्रश्न उठा है, कि रामायण कितने वर्ष पहलेका है ?

रामायणकी भाषातत्त्वकी आडोबना करनेसे देखा जाता है, कि इसके बोध बोधमें भार्यप्रयोगकी जैसी भर मार है, कीकिक किन्नी भी प्रथममें वैसी नहीं बनी जाती। उदाहरणस्वरूप भादि और अयोध्याकाण्डसे उद्धृत कर दियाया जाता है,—

आर्षप्रयोग	स्थान	लौकिकमं सिद्धरूप
प्रमुमोद आदि	१।८५	प्रमुमुदं
अनपायिनम् "	१२।६	अनपायि
करुणवेदित्वात् "	२।१४	करुणा वेदित्वात्
हन्यात् "	२।२६	हनवान्
प्रणस्तवार्ता "	४।१७	प्रणस्तवार्थी
सोच्यता "	६।२१	स उच्यतां
आश्रमपदः "	१०।१५	आश्रमपदं
पुत्रिया "	१६।६	पुत्रियां
अर्हयन् "	१७।३४	अर्हयन्
ततोत्थाय "	१६।२१	तत उत्थाय
व्यपीदत "	"	व्यपीदत
करिष्येति "	२।१८	करिष्य इति
प्रणासति "	२।१३	प्रणास्ति
दुराक्रामान् "	२।१६८	दुराक्रामान्
तप्यतां "	१३।६	तपतां
वसते "	२३।८	वसति
अभिरञ्जयन् "	२३।२०	अभ्यरञ्जयन्
अभिपूजयन् "	२६।२७	अभ्यपूजयन्
अभिजायत "	२७।१८	अभ्यजायत
सममिजायत "	३८।२३	समभ्यजायत
अनुगच्छथ "	३६।१४	अनुगच्छत
करिष्यामि "	४०।६	करिष्याम.
निवर्त्तत "	४०।११	निवर्त्तन्व
समुपासत "	४४।१	समुपास्ते
अनुव्रजत् "	४३।१५	अनुव्रजत्
उप्य "	४८।६	उपित्वा
दृश्य "	४८।११	दृष्ट्वा
स्मरतां अयोध्या	१।३	अस्मरतां
सपत्नि "	८।२६	सपत्नी
अभिदधुषी "	१६।२१	अभिध्यायंती
गच्छती "	३।१८	गच्छन्ती
मेघलीनां "	३२।२१	मेघलिना
जिज्ञासितुं "	३२।४२	ज्ञातुं
नपाययन् "	४।१६	नापाययन्
ततोवाच "	५।१८	तत उवाच

आर्षप्रयोग आदि	स्थान	लौकिकमं सिद्धरूप
वत्स्यामहेति "	५।२।२८	वत्स्यामह इति
प्रणमत् "	५।२।७६	प्राणमत
आनयामास "	५।५।३६	आनिन्धे
अभिवाद्यन् "	५।६।१६	अभ्यवाद्यन्
उच्चर "	६।३।५२	उच्चर
संचदन्तोप- तिष्ठन्ते	६।७।२६	संचदन्त- उपतिष्ठन्ते

केवल दो काण्डोंसे कुछ आर्षप्रयोग उद्धृत हुए। इस प्रकार दूसरे दोसरे काण्डोंसे भी किनने आर्षप्रयोग उद्धृत किये जा सकते हैं। जो आर्षप्रयोग हुए हैं, उसका कारण क्या ?

मनुकी टीकामें कुछ्लूकमट्टने लिखा है, 'ऋषिर्दत्तम मन् आर्षो धर्मोपदेशो वा वैदिकः।' (१२।१०६) ऋषिका अर्थ वेद है अर्थात् वेदसे जो उत्पन्न है वही आर्ष है अर्थात् जो वैदिक है वही आर्ष है। अतएव वाल्मीकि रामायणमें आर्षप्रयोग नामसे जो भूर भूरि प्रयोग देखा जाता है, वही वैदिक प्रयोग अर्थात् लौकिक व्याकरणके अनुसार वे सब प्रयोग सङ्गत नहीं होने पर भी वैदिक व्याकरणके अनुसार वे सिद्ध हैं। रामायणके रामानन्द आदि टीकाकारगण 'प्रमुमोदति छान्दस परस्मैपद' इत्यादि व्याख्या द्वारा आर्षप्रयोगोंको वैदिक व्याकरणके अनुसार साध्य स्वीकार कर गये हैं। रामायण लौकिक काव्य है, एक महाकविका रचा हुआ है, तब फिर ऐसे आर्ष वा वैदिकप्रयोगका कारण क्या ? कालिदास, भवभूति आदि महाकविगण कितने काव्य लिख गये हैं, पर उन्होंने तो अपने ग्रन्थमें कहीं आर्षप्रयोग नहीं किया। पाश्चात्य पण्डितोंका विश्वास है, कि वे सब आर्षप्रयोग व्याकरणदुष्ट अशिष्ट प्रयोग हैं। तब क्या वाल्मीकि मुनिने जान बूझ व्याकरणमें ऐसी भूल की है? जो भारतवर्षमें आदि कवि कह कर पूजित हैं, जिनका वनाया हुआ काव्यग्रन्थ आज तक जगतमें प्रकाशित हुआ है, जिनके अपूर्व सौन्दर्यसे सुललित वाक्य-विन्याससे और अद्वितीय चरित चित्रणसे देशी और विदेशी कोविदमाल ही विमुग्ध हैं उन्होंने क्या जान बूझ कर ऐसा अशिष्ट प्रयोग किया है ?

पहले कह भाये हैं, कि वास्तविक भाद्रि कवि कह कर प्रसिद्ध है। जीविक मायामें उन्होंने सबसे पहले रामायण काव्य ही रचना की। जिस समय वैदिक रीतिका परित्याग कर शौकिक रीतिसाहित्यरचनाका सूत्रपात होता था, वास्तविकता मूल रामायण उसी समयका प्रथम है। एक ओर सुभाषण वैदिक रचनाका प्रभाव और दूसरी ओर नवोदित शौकिक रचनाकी शक्तिने रामायणको प्राचीन सम्प्रदायके साथ अनिश्चय सौम्यपैसे अमूर्च्छित किया था। सामन प्राचीन रीतिके रहन कोइ भी सहजमें उसका प्रभावमें बाधा नहीं डाल सकता। वास्तविक अनिश्चय शौकिक रीतिले काव्यरचना करनेके लिये तैयार था तथा उनके असाधारण पात्राकिप्रभावसे उनका उद्देश बहुत कुछ सुप्रसिद्ध भी हो गया था, फिर भी वे पुत्रने प्रभावको रोक न सक। उनका भाद्रि शौकिक काव्यमें भाव्य या वैदिक प्रयोगका जो वाहुल्य रखा जाता है उसका यही कारण है। इस भाव्यप्रयोग बहुत सख और सुकठित रचनासे ही उनके प्रथमको प्राचीनता प्रतिपन्न हो सकती है। यद्यपि पर्यन्त किसी किसी काव्य और नाटकमें प्राचीन रीतिके आधार पर ही एक भाव्यप्रयोग देखे जाते हैं किन्तु तब जिस प्रकार अन्तमें मिलना नहीं चाहता, उसी प्रकार परबर्त्ता काव्यनाटकका भाव्यप्रयोग अपने गाम्भीर्यको रक्षा करके उसी प्रकार सख भावमें नही मिल सकता दोनों रचनाका प्रयुक्तता आसानीसे पहचानमें आ जाती है। किन्तु रामायणके भाव्यप्रयोगसे स्वभावसुमन गाम्भीर्यको रक्षा हुई है। उन सब भावप्रयोगके साथ मूल श्लोकका रचना बलिष्ठ सम्भव है, कि वे सब प्रयोग उदा अनसे मूल रचनाको अङ्गुहानि होगी। साहित्य और सम्यक् नष्ट होगा, इसमें संदेह नहीं। हमारी यव शक्ति पर बल, पर कोइ भी भाद्र ठक भाव्यप्रयोगका परिवर्तन न कर सके है।

पहले लिखा जा चुका है, कि रामायण-रचनाका अन्तमें संदृष्टका ही कथित भाषाकरण प्रचार था। इसी समय शौकिक काव्यरचनाका सूत्रपात हुआ। अतएव रामायण अति प्राचीन काव्यका प्रथम है यह सबको स्थापित करना पड़ेगा। किन्तु यह जिस समय रचा गया है

इसका ठोक ठोक भाद्र तक पता नहीं चला है। जैन साधुकर भीर बुद्धदेवके भाद्रिभाषाकारमें 'मागधी' भाषाका प्रचार हुआ था। इसी कारण प्राचीन जैन और बौद्धधर्मग्रन्थ मागधी या अर्ध मागधी भाषामें रचे गये हैं। १० सन्के ३३३ यथ पहले जैन साधुकर पाश्चात्ताय स्वामीने निष्ठाव्ययमान किया। उन्होंने जो धातुप्राप्त धर्म प्रचार किया वह भी मागधी भाषामें प्रथित रखा जाता है। इस हिसाबसे उनके पहलेसे मागधी भाषा जनसाधारणकी बोलचालका भाषामें गिनो जाती थी, इसमें और संदेह हो क्या रह गया? अतः वसुधै-मी सैकड़ों वर्ष पहले मर्यादा मागधी भाषाका अत्र विकसित प्रचार न था, उस समय संदृष्ट भाषा ही भारतीय भाव्यसनातनमें प्रचलित थी तथा उसी समय मूल रामायण रचा गया।

रामायण प्रायः अनुष्टुप् नामक प्राचीन सरल छन्दमें रचा गया है। इसके सिवा इन्द्रधनुष, उपेन्द्रधनुष, पंजास्यधनुष और तीम छन्दोंका मिश्रण रखा जाता है। उसकी भाषा सरल, रीति और भावसुष्ठु तथा मनुष्यवित्त विमलकियिच्छि है। नैय्यादि धातुबिन्दु काव्य का तब हीम छन्द, कृत्तम भाव, उत्कट वर्णना तथा शब्द और अनुप्रासका आह्वार नहीं है,—ये सब भाव्य स्वरोप प्रभाव भी रामायणकी प्राचीनता साबित करते हैं।

अभी जो सप्तकाण्डात्मक रामायण मिलता है, यह क्या उम्दा भाद्रि कथिका रचा हुआ है? प्रचलित सप्त काण्डात्मक रामायणका आलोचना करनेसे क्या ऐसा मर्मरुत नहीं होता? जिन सब प्राचीन छन्दोंकी बात लिखी गई, उन सब छन्दों का छाड़ कर प्रचलित रामायणमें ही एक अग्रह अर्थात्, यद्यपि मनुष्यप्रयास, साहित्य, मृगेन्द्रमुक्त, शक्तिर, बसन्ततिलका वैश्वदेवी इत्यादि अमाचीन छन्द ना दिये गये हैं। इसका सिद्धा प्रचलित रामायणके भाद्रिकाव्यसे कुछ अन्त तथा ममस्त उत्तरकाव्यकी आलोचना करनेसे उसे मूल रामायणके अन्तमुक्त नहीं कर सकते। यहाँ तक, कि जिन्होंने अयोध्यासे लङ्काकारणका प्रथमंश और ममस्त उत्तरकाव्य उनका रचा हुआ है, ऐसा कभी भी लोकार

नहीं कर सकते। रामायण की उपरगणिका जिम भाषामें रची गई है, उसे पढ़नेमें मालूम होगा, कि एक दूसरे कवि आदिकवि वाल्मीकि और उनके काव्यका परिचय देते हैं। इसी जगह उत्तरकाण्डप्रसङ्गमें लिखा है—

“तच्चकारोत्तरे काव्ये भगवान् वाल्मीकिर्ऋषिः।”

वाल्मीकि अपनेको ‘भगवान्’ कहेंगे, ऐसा कभी विश्वास नहीं कर सकते। यह प्रयोग वाल्मीकिभक्त किसी दूसरे कविसे किया गया होगा। इस प्रकार एक विषयका वर्णन एक काण्डमें जैसा है, उत्तरकाण्डमें यह भिन्न रूपसे दिखलाया गया है। इससे सहजमें अनुमान होगा, कि अति प्राचीन रामायणके मध्य परवर्ती नाना कवियोंके हाथसे अनेक नये विषय और नई रचना सन्निविष्ट हुई हैं। बीच बीचमें जो अनेक प्रशिक्षित श्लोक घुस गये हैं उन्हें भी रामायणके टीकाकार स्वीकार कर गये हैं।

रामचन्द्रका आदर्शचरित्र-वर्णन ही मूल रामायणका उद्देश्य है। उनके देवत्व वा अवतार-वादकी घोषणा करना मूल रामायणका मूल उद्देश्य नहीं है। इसी कारण रामायणके जिस जिस स्थानमें रामचन्द्रको विष्णुका अवतार बताया है उस उम अंशको बहुतेरे प्रशिक्षित कह कर विश्वास करने है।

महाभारतके वनपर्वमें रामचन्द्रके जन्मसे ले कर उनके राज्याभिषेक तक का हाल लिखा है। उत्तरकाण्डके राम सम्बन्धीय विवरण महाभारतमें नहीं दिये गये हैं। आश्चर्यका विषय है, कि यवद्वीपसे कविभाषामें रचित जो रामायण आविष्कृत हुआ है उसमें भी उसी प्रकार रामचन्द्रके राज्याभिषेक तकका हाल लिखा है। यवद्वीपका रामायण बहुत बड़ा ग्रंथ होने पर भी उसमें काण्ड-विभाग नहीं है, आद्योपान्त अध्याय विभाग है। कविभाषामें उत्तरकाण्ड पाया गया है सही, पर वह मूल रामायणमें नहीं गिना जाता, स्वतन्त्र ग्रंथ समझा जाता है। उक्त प्रमाणसे भी जाना जाता है, कि वाल्मीकिने जिस आदि रामायणकी रचना की, उसमें काण्डविभाग

* अयोध्याकाण्डके १०८ और १०९ सर्ग (रामजावा-सिंहवाद) को बहुतेरे प्रशिक्षित और आधुनिक बताया है। १०९वे सर्गमें ‘शुद्धतथागत’ शब्द तक लिपिवद्ध हुआ है।

नहीं था तथा उत्तरकाण्ड मूल रामायणसे बहुत पीछे दूसरे कविसे रचा गया था और वह स्वतन्त्र ग्रंथ समझा जाता था। प्रायः ५वीं सदीमें मूल रामायण यन्त्रोपममें लाया गया। अतएव उस समयके बाद भारतवर्षमें ब्राह्मण्य-धर्मका प्रभाव फैला तथा संस्कृत साहित्यके बहुत प्रचारके साथ साथ मूल रामायण उत्तरकाण्ड सहित सात काण्डोंमें विभक्त हो प्रचारित हुआ। रामचन्द्रका भवतार-वाद उस समयसे प्राचीन होने पर भी उस समय मूल रामायणमें प्रविष्ट और आधुनिक छान्दात्मक श्लोक प्रशिक्षित हुए।

वर्तमानकालमें भारतवर्षमें तीन प्रकारके वाल्मीकीय रामायण पाये गये हैं। वे उदीच्य, दक्षिणात्य और गौड़ीय रामायणमें गिने जाने योग्य हैं। जैसे—

उदीच्य वा उत्तरपरिचम-भञ्जलमें प्रचलित मूल रामायणमें,—

वालकाण्डमें	७७ सर्ग
अयोध्याकाण्डमें	११६ ”
आरण्यकाण्डमें	७६ ”
किष्किन्ध्याकाण्डमें	६७ ”
सुन्दरकाण्डमें	६८ ”
युद्धकाण्डमें	१३० ”
उत्तरकाण्डमें	१२४ ”

दक्षिणात्य रामायणमें

वालकाण्डमें	७७ सर्ग
अयोध्याकाण्डमें	११३ ”
आरण्यकाण्डमें	८० ”
किष्किन्ध्याकाण्डमें	६४ ”
सुन्दरकाण्डमें	६८ ”
युद्धकाण्डमें	१३० ”
उत्तरकाण्डमें	१११ ”

गौड़ीय रामायणमें—

आदिकाण्डमें	८० सर्ग
अयोध्याकाण्डमें	१२७ ”
आरण्यकाण्डमें	७६ ”
किष्किन्ध्याकाण्डमें	६७ ”
सुन्दरकाण्डमें	६५ ”
युद्धकाण्डमें	११३ ”
उत्तरकाण्डमें	११५ ”

घोड़ा गीर कर देखनेसे मालूम होगा, कि उदीच्य और बाह्यपाल्य रामायणमें विषय वा सर्ग संख्यामें उतना प्रमेय नहीं है। किन्तु गौडोय रामायणके साथ दोनों धेयोका बहुत प्रमेय देखा जाता है।

गौडोय रामायणकी केवल लोकनायकी 'महोरमा' नामी टीका मिलती है, किन्तु शेष दो धेयोको क्येक टीकाये प्रयत्नित है। जैसे—

१ इम्बरदीक्षित कृतटीका २ उमाप्रहेश्वरकृतटीका, ३ कृतटीका, ४ गोविन्दपाण्डित शृङ्गारतिलकाख्यटीका, ५ चतुर्थदीपिका, ६ इन्द्रव्यकथनशास्त्र धर्मकृत, ७ देव राममहकृतटीका, ८ लमीशरचितटीका ९ मृत्सिंहकृत टीका, १० महेश्वरदीक्षित रामायणतत्त्वदीप, ११ रामायणतिलक वा रामायणकृतटीका, १२ रामानुजकृत रामायणव्याख्या, १३ रामाभनाकार्यकृतटीका १४ रामायण विरोधपरिहार, १५ रामायणतात्पर्यविरोधमञ्जरी, १६ रामायणसंस्तु, १७ बरबरकृत विधेयकृतिक, १८ बाल्मीकिवृद्धटीका, १९ विद्यानाथकृतटीका, २० पिङ्गमहोरमा, २१ विमलधोषकृतटीका, २२ विश्वनाथकृत बाल्मीकि तात्पर्यटीका, २३ शिवरामसंन्यासिकृत टीका, २४ शृङ्गारसुपाकर, २५ सर्वज्ञकी टीका, २६ सुशोचिनी, २७ उपमीवशास्त्रिकृत रामायणसप्तविम्ब, २८ हरिपरिहृतकृत रामायणटीका।

पद्यपुस्तकके पाठाङ्कणमें अयोध्यामाहात्म्यवर्णित तीर्थाभय वणन प्रस्तावसे रामायणकी श्लोक-संख्या ज्ञानके द्विधे रामायणके सुविख्यात टीकाकार नागेभरतमहोने निम्नोक्त श्लोक उद्धृत किये हैं,—

“इत्याख्या इति कृत्ये प्राथमकम् ।
 प्राणव बन्धनं क्वा वनप्रत्य युम्हृत्यः ॥
 न निघरा व बं धना मूपाश्चुं मागवः ।
 पस्व धरधनेनेव सुराक्षयस्व नमिष्यति ॥
 एतुस्त्वा व उमाध्यायु म्रच्छां, वनात्मनः ।
 वरा वषय कामाथ रायव धन्यकोटिभिः ॥”

उसकी टीकामें ये कहते हैं,—‘कोटिभिः शतकोटिभिः। चरितं एतुमायस्य शतकोटिपरिस्तर मित्यस्यश्लोकाः। तत्र सम्पूर्णं प्रष्टव्यं इत्येतिहम्। इह तु कृत्यवधोपदिशा चतुर्षि शतिसाहस्रोत्पन्नम्।’

इसका प्रमाण रामायणके बालकाण्डसे ही मिलता है। शब्दकाण्डके द्वितीय सर्गमें लिखा है—

“शृङ्गारचरितं मुनिप्रयोगं वचनिरसरव बंधं निशामयन् ॥”
 चतुर्थ सर्गमें—

“प्राथ उन्मत्त्व रामस्व वाक्श्रीर्म्म गवन् श्रुतिः ।
 बभूव अरिं कृतं विविक्तमर्चनम् ॥ १
 शृङ्गारचरितं रक्षाकर्ममुक्तान् श्रुतिः ।
 तथा कर्मगतान् पञ्चदशपिपिहानि तथासाम् ॥” २

तानो वचनका भाषोचना करनेसे मालूम होता है, कि महर्षि बाल्मीकि प्रणीत वंशाननबधारेक रामचरित महाकाव्यमें २४ हजार श्लोक और ५०० खी सर्गसंख्या है।

रामायणकी २८२३ टीका निम्नो है तथा भारतके सभी प्रसिद्ध स्थानोंसे मूल रामायणके दो एक प्रथम पाये भी गये हैं, पर भास्कार्मका विषय है, कि किसो स्थानके दो प्राचीन प्रयोग विद्वक्तुके समानता नहीं देखा जाते। यहाँ तक कि कोह कोह सर्ग मिला कर देखनेसे भाषमें एक होने पर भी भाषा में एक नहीं है। भाषा सिध मिलन कथिके शेषकी मालूम होती है। प्रायः सभी श्लोक एक दर्जेके हैं। शब्दका पाठान्तर इतना अथाह है, कि दो प्रयोगके पाँच श्लोक कभी एक स नहो मिलेये। शब्दमें इस प्रकार पाठान्तरबाहुल्य रहन पर भी मूल विषयमें उतना प्रमेय नहीं है। रामायणकी इतनी टीका रची जाने पर भी भी एक प्राचीन टीकाको छोड़ कर अधिकांश टीकाकारोंने ही बहुतसे प्रथम संग्रह कर प्रकृत पाठोद्धारकी चर्चा की थी, ऐसा मालूम नहा होता। इन लोगोंका टीकाओं पर अच्छी तरह भाषोचना करनेसे मालूम हागा, कि कितने स्थान सामञ्जस्यरहित और असंलभ हैं तथा कितने स्थानोंमें पूर्वाकर सङ्गतिका अभाव है।

इस देशमें मुद्रित सटीक रामायणकी अपेक्षा इतनी मं मुद्रित गौडोय रामायणको सामञ्जस्य और विषय सङ्गति है तथा पुनरुक्तिरोग निघारित है यह दोनोंको भाषोचना करनेसे ही मालूम हागा।

अनेक पुराय और रामायणके टीकाकारोंको उक्तिसे ज्ञाया जाता है, कि बाल्मीकि रचित रामायणके पहले

मी रामचरित प्रचलित था। रामानन्दने 'अग्निवेश्य-रामायण' और विमलबोधने 'वीधायनका रामायण' उल्लेख किया है। अग्निवेश्य और वीधायनका रामायण वाल्मीकिके पहलेका है वा नहीं, कह नहीं सकते। पर हां, वाल्मीकि रामायणके पीछे महाभारतीय रामचरित, पद्मपुराणीय पातालखण्डवर्णित रामोपाख्यान, अध्यात्मरामायण, योगवाशिष्ठरामायण, अद्भुतरामायण, आनन्दरामायण आदि रामायण रचे गये हैं, इसमें सदेह नहीं।

सैकड़ों वर्ष बीत चले वाल्मीकिरामायणका अवलम्बन कर भारतकी सभी देशों भाषाओंमें रामायण रचे गये हैं। भारतवर्षमें अंगरेजोंके आनेके पहले जो सब देशों रामायण मिलते थे, उनको संख्या थोड़ी नहीं है। मराठीभाषामें ८, तैलङ्गभाषामें, ५ तामिलभाषामें १२, उदकलभाषामें ६, हिन्दीभाषामें ११ और बङ्गभाषामें २५ व्यक्तियोंके रचित रामायण पाये गये हैं। इनमेंसे कम्बनका रचित तामिल-रामायण १५वीं सदीमें और तुलसीदासका भारतप्रसिद्ध हिन्दीरामायण १७वीं सदीमें रचा गया है।

रामायणके आलोचित विषय सहजमें हृदयङ्गम होंगे, समझ कर वाल्मीकि रामायणको विषयसूचो यहा उद्धृत को गई है :-

आदिकाण्ड—१म सर्गमें नारद ऋत्विक् रामचरित-वर्णन, २ तमसानदीके किनारे व्याधऋत्विक् क्रौञ्चका विनाश देख वराधके प्रति वाल्मीकिका धमिशाप, ३ महामुनि वाल्मीकिकी रामायण-रचना, ३ कुशीलवका रामायणगान, ५ अयोध्यापुरी वर्णन, ६।७ राजा दशरथकी राज्यगासनप्रणाली, ८ पुत्रके लिये राजा दशरथके अश्वमेधयज्ञकी कल्पना, ९ ऋष्यशृङ्ग विवरणकीर्त्तन, १० ऋष्यशृङ्गकी लानेके लिये दशरथके प्रति सुमन्तका उपदेश, ११ दशरथका ऋष्यशृङ्ग मुनिको लाना, १२ सरयू नदीके किनारे अश्वमेध यज्ञभूमि बनानेके लिये दशरथका आयोजन, १३ निमन्त्रित राजाओंका अयोध्यामें आगमन और यज्ञारम्भ, १४ अश्वमेध यज्ञ और दशरथके दानादिकी कथा, १५ रावणका वध करनेके लिये देवताओंका

परामर्श और दशरथकी यज्ञभूमिमें विष्णुका परामर्श, १६ नारायणका दशरथके पुत्रत्वप्रहणमें स्वीकार और दशरथका यज्ञ और महिलाओंका गर्भाधान, १७ वाली, सुग्रीव और इनुमाज आदि वानरोंकी उत्पत्ति, १८ गाम, लक्ष्मण, भरत और जन्वुवनका जन्म और यज्ञविध्वंस-कारो राक्षसोंका दमन करनेके विश्वामित्रका अयोध्या आना, १९ दशरथका विमर्ष, २० विश्वामित्रको राम देनेमें दशरथकी असममति, २१ विश्वामित्रके साथ रामको भेजनेमें दशरथका स्वीकार, २२ विश्वामित्रके साथ राम और लक्ष्मणका जाना तथा उनका बला और अतिबला नामक मन्त्रलाभ, २३ राम और लक्ष्मणके साथ विश्वामित्रका रात विताना, २४ ताडकाका वध करनेके लिये रामके प्रति विश्वामित्रका आदेश, २५ ताडका और मारीचका जन्मविवरण, २६ रामऋत्विक् ताडकावध, २७ रामको विश्वामित्र द्वारा संहार अखदान, २८ गृहीत अह्लादिका आमन्त्रण प्रकारादि, २९ सिद्धाश्रम और शमनावतारका वर्णन, ३० सुवाहुवधके बाद विश्वामित्रका यज्ञशेष, ३१ विश्वामित्रसे रामलक्ष्मणका कर्त्तव्य पूछना, ३२ कुगवंशविवरण, ३३ कुगनाभऋत्विक् ब्रह्मदत्तको कन्या-सम्प्रदान, ३४ कुगनाभका पुत्रलाभविवरण, ३५ विश्वामित्रऋत्विक् गङ्गाका उत्पत्तिविवरण, ३६ गङ्गाके त्रिपथ-गात्रिणी होनेका कारण, ३७ कार्त्तिकेय जन्मादि विवरण, ३८ राजा सगरके ६१ हजार पुत्रलाभ, ३९ सगरके पुत्रोंका पृथिवी छोटना, ४० ऋषिलमुनिके हुद्दारसे सगरवंश ध्वंस, ४१ यज्ञसमाप्तिके बाद सगरका स्वर्ग जाना, ४२ भगीरथके ब्रह्मवरलाभ, ४३ गङ्गाका पाताल जाना और सगरके पुत्रोंका उद्धार, ४४ भगीरथऋत्विक् पितामहोंका तर्पण, ४५ समुद्रमन्थनका हाल कहना, ४६ इन्द्रऋत्विक् दितिका गर्भच्छेद, ४७ विश्वामित्रका सुमतिपुर-प्रवेश, ४८ अहल्या और इन्द्रका शापविवरण, ४९ अहल्याका शापविमोचन, ५० रामलक्ष्मणका राजर्षि जनककी यज्ञभूमिमें जाना, ५१ विश्वामित्रका पृथिवी परिभ्रमण और वशिष्ठाश्रममें आगमनविवरण, ५२ वशिष्ठके आश्रममें विश्वामित्रका निमन्त्रण स्वीकार, ५३ विश्वामित्र और वशिष्ठका कथोपकथन, ५४ विश्वामित्रऋत्विक् शबलाहरण, ५५ विश्वामित्रके सौ पुत्रोंका दाह, ५६ वशिष्ठके

साथ युद्धमें विभ्रामितकी पराजय, ५७ विभ्रामितकी तपस्या, ५८ तिर्यकुकी चरबाजत्वप्राप्ति, ५९ विभ्रामित-
क पास तिर्यकुका आना, ६० विभ्रामितका दूसरी सृष्टि
करनेमें सङ्कल्प, ६१ अमरतीय राजाका यथीय पशुहरण,
६२ अमरतीयके यज्ञकी फलप्राप्ति, ६३ विभ्रामितक
श्रवित्वल्लाम, ६४ रम्भाकी शैलीमात्र प्राप्ति, ६५ विभ्रामि-
तके श्राद्धलत्वल्लाम, ६६ जनकका हरधनुमासिबिबरण,
६७ रामकपूक हरणनुर्मङ्ग, ६८ वशरपके पास वृत्तका
आना, ६९ वशरपकी मिथ्यायाज्ञा, ७० जनकके पास
कुशध्वजका आगमन, ७१ जनकका मातमन्शराजकी कथन,
७२ भरत और शत्रुघ्नकी कुशध्वजका कम्पादान स्वीकार,
७३ रामचन्द्रादिका विवाह, ७४ वशरपकी भयोध्यायाज्ञा
और राहमें पशुपुत्रका दर्शन, ७५ राम और परशुपुत्र
संवाद, ७६ पशुपुत्रका वर्ष पूर्ण, ७७ पुत्रपथके साथ
वशरपका भयोध्याप्रवेश और भरतका भविष्यत्व ज्ञान ।

भयोध्यायाज्ञा—१ रामकी सुभराज बानेनेके छिये
वशरपका सङ्कल्प, २ वशरप और मिमन्वित राजाओंका
कथोपकथन, ३ वशरपके निकट रामचन्द्रका आना, ४
रामका मन्दापुर जाना, ५ राम और वशरपके निकट
धशिष्ठका जाना, ६ रामकी विष्णु उपासना, ७ पात्राके
मुचसे मन्धराका भयोध्यामें भूषणाम करनेका कारण
सुनना, ८ कैकेयी और मन्धराका कथोपकथन, ९ कैकेयी
का कोपमन्धनमें प्रवेश, १० कोपमन्धनमें वशरपका प्रवेश,
११ कैकेयीका रामके वनयास और भरतके राज्यमि-
थेकके छिये घर मांगना १२ वशरपका विज्ञाप, १३ वश-
रप और कैकेयीका कथोपकथन, १४ रामकी बुझानेके
छिये कैकेयीका भावेश, १५ सुमन्त्रका रामके समीप
जाना, १६ सुमन्त्रके प्रति वशरपका भावेश, १७
रामका पिताके समीप जाना, १८ रामसे कैकेयीके परका
हाल कहना, १९ उत्तमपथके साथ रामका भाताके
समीप जाना, २० रामके वन जानेका हाल सुन कर
कौशल्याका विज्ञाप, उत्तमपथका श्लेष और रामके प्रति
कौशल्याका वनगमननियेय, २२ कौशल्या और उत्तमप-
थको रामका धर्मोपदेश, २३ भरतके प्रति उत्तमपथका श्लेष,
२४ राम और कौशल्याको उक्ति प्रत्युक्ति, २५ कौशल्या
का मङ्गलाचरण और रामका निव्रपुत्रोंमें जाना, २६ ३०

रामचन्द्रके साथ वन जानेके छिये सीताके भावेशल्लाम,
३१ उत्तमपथका भी वन जानेके छिये भावेशल्लाम, ३२
प्राङ्गणोंको घनवितरण, ३३ पितृवरीनके छिये रामका
ज्ञाना, ३४ रामकी वृक्ष वशरपका विज्ञाप, ३५ कैकेयीके
प्रति सुमन्त्रकी मन्सना, ३६ कैकेयी और वशरपकी उक्ति
प्रत्युक्ति, ३७ रामचन्द्र, उत्तमपथ और सीताका वृक्षक
परिचान, ३८ वशरपका विनापयाचण, ३९ रामकी मुनिके
वेशमें वैश कर वशरपका विज्ञाप, ४० वनयाज्ञाके समय
पुरवासियोंका विज्ञाप, ४१ अन्तःपुरनिवासियों क्षिपोंका
विज्ञाप, ४२ कैकेयीकी निम्ता करते हुए वशरपका
विज्ञाप, ४३ कौशल्याविज्ञाप, ४४ कौशल्याके प्रति
सुमन्त्रका आश्वासनाचण, ४५ पुरवासियोंसे अपने
मनने घर छोड जानेके छिये रामचन्द्रका अनुरोध,
४६ तमसाके किलारे रामका रात बिताना, ४७ पुरवा-
सियों का छोडना, ४८ पुरवासियों का विज्ञाप, ४९ राम
का कौशल्याप्रवेशप्रारम्भमें जाना, ५० रामका गृहकके साथ
साहाय, ५१ गृहक और उत्तमपथका कथोपकथन,
५२ रामके दूसरे किलारे जाना, ५३ रामका जेह और
उत्तमपथका आश्वास वान, ५४ रामका मन्दापके समीप
जाना, ५५-५६ रामका चित्तकूट और वास्मीकिके समीप
जाना, ५७ सुमन्त्रके मुचसे रामका वृत्तान्त सुन कर
वशरपका विज्ञाप, ५८-५९ वशरपका पुनर्विज्ञाप,
६० कौशल्याविज्ञाप, ६१ वशरपके प्रति कौशल्याकी
कठोरुक्ति, ६२ वशरप कपूक कौशल्याका मासाइसाधन,
६३ ६४ वशरपका श्रविकुमारवपवृत्तान्त वर्णन, ६५
वशरपकी मृत्यु और उसके छिये रामियी का विज्ञाप,
६६ तैजस्रोणोंमें वशरपकी मृतदेह रचना, ६७ प्राङ्गणोंकी
राज्याभियेककी विन्ता ६८ भरतकी जानिके छिये वृत्तों
का जाना, ६९ भरतका स्वप्नदर्शन और उसका वृत्तान्त
कथन, ७० भरतकी भयोध्या-याज्ञा, ७१ भरतका निव्र
पुत्रोंमें प्रवेश, ७२ पिताकी मृत्यु सुन कर भरतका विज्ञाप,
७३ ७४ कैकेयीकी भरतका फरहात्ना, ७५ कौशल्याके
साथ भरत शत्रुघ्नका कथोपकथन, ७६ ७७ भरतका
पितृवृत्तकार्य, ७८ कुम्भका मारना और कैकेयीकी
निम्ता करना, ७९ राज्यप्रधानमें भरतका मञ्जीकार, ८०-
८१ रामकी सौदा सानेके छिये भरतका भावेश, ८२

८३ रामके दर्शनके लिये भरतकी सेनाके साथ वनयात्रा, ८४-८८ भरत और गुहक चण्डालका कथोपकथन, ८६ भरतका ससैन्य नदी पार करना, ९०-९१ भरद्वाजके समीप भरतका जाना, ९४-९५ चित्तकूट पर सीता और रामका कथोपकथन, ९६ ९७ भरतकी सेनाका शब्द सुन कर राम लक्ष्मणमें तर्क वितर्क, रामके दर्शनके लिये भरतका प्रवेश, ९९ रामको देख कर भरतका खेद, १०० भरतसे रामका कुण्डल पूछना, १०१-१०२ रामचन्द्र और भरतका कथोपकथन, १०३ पिताके मृत्युसंवाद पर रामचन्द्रका विलाप, १०४ रामके साथ कौशल्यादिका साक्षात्, १०५-१०७ राम और भरतका राज्यविषयक कथोपकथन, १०८ रामके प्रति जावालिकी वरमकथो, १०९ जावालिके प्रति रामकी उक्ति, ११० १११ वशिष्ठ कर्तृक लोकोत्पत्ति कथा, ११२ भरतको रामका पादुका देना, ११३ भरतका लौटना, ११४ गुहको राज्यभार प्रदान, ११५ भरतका नन्दीग्राममें जाना, ११६ चित्तकूट पर राम और कुलपति की कथा, ११७ ११९ अत्रिमुनिके आश्रममें जाना ।

आरण्यकाण्ड—१म सर्गमें रामका दण्डकारण्यमें प्रवेश, २ विराध राक्षसकी गोद पर सीताको देख कर लक्ष्मणका क्रोध करना, ३ राम लक्ष्मणके साथ विराधका घोर युद्ध, ४ विराधवध, ५ शरभद्र का अग्निमें प्रवेश, ६ ऋषियोंकी राक्षसवधके लिये प्रार्थना, ७ राम लक्ष्मणका सुतीक्ष्णाश्रममें जाना, ८ सुतीक्ष्णसे रामचन्द्रका दण्डकवन जानेका आदेश लेना, ९ राम लक्ष्मण और सीताका दण्डकवनमें प्रवेश, १० रामका राक्षसवध करनेके लिये कहना, ११ रामके समीप सुतीक्ष्णमुनिका सरोवर विवरण कहना, इल्वलम्बा-तापिकया और अगस्त्यका माहात्म्यकीर्तन, १२ अगस्त्यके साथ रामचन्द्रका साक्षात् और उनसे अल्वलाभ, १३ रामचन्द्रके साथ अगस्त्यकी कथा, १४ रामचन्द्रके साथ जटायुका साक्षात्, १५ पञ्चवटी वनमें रामका वास, १६ लक्ष्मणपत्नी हेमन्तवर्णन, १७ रामके साथ राक्षसी शूर्पनखाकी वातचीत, १८ लक्ष्मण कर्तृक शूर्पनखाका नाक कान कटना, १९ रामलक्ष्मणका वध करनेके लिये खरका चौदह राक्षसीको मेजना, २० चौदहों राक्षसका मारा जाना, २१ खरके प्रति शूर्पनखाका तिरस्कार,

२२ खरका युद्धयात्राका उद्योग, २३ रामके निकट खरका संहार, २४ खर दूषणके मारे जाने पर रावणका जाना, २४ युद्धके लिये रामका जाना, २५ २६ दूषण और राक्षससेनाका वध, २७ त्रिशिरावध, २८-३० खरका महाक्रोध, ३१ रावणका मारीचाश्रममें जाना, सीताहरणकी कल्पना और मारीचा द्वारा मना किये जाने पर भी रावणका फिरसे जाना, ३३ रावणको शूर्पानखाका ललकारना, ३४ रावणका क्रोध, ३५ मारीचके आश्रममें रावणका फिरसे जाना, ३६-३९ मारीच कर्तृक रामचन्द्रका विरुमप्रकाश, ४० सीताहरणके सम्बन्धमें रावणका उभाड़ना, ४१ रावणके प्रति राक्षस मार्गचकी निन्दा, ४२ रावणके कहनेसे मृगका रूप धारण कर मारीचका दण्डक वनमें घूमना, ४३ ४४ मृगरूपी मारीचका वध करनेके लिये रामचन्द्रकी यात्रा, ४५ सीताकी कर्तृक पर रामके उद्देशसे लक्ष्मणकी यात्रा, ४६ सीताके समीप छत्रवेणो रावणका अतिथिरूपमें आना, ४७ ४८ सीता-देवीको रामका प्रलाभन दिखाना, ४९ रावणकर्तृक सीताहरण, ५० ५१ रावण और जटायुका युद्ध, ५२ रावणके रव परसे सीताका अलङ्कार गिराना, ५३ रावणके प्रति सीताकी क्रोधोक्ति, ५४ अशोकवनमें सीताको रख रावणका अन्तःपुर जाना, ५५-५६ रावणके प्रति सीताकी फटकार, ५७ मारीचका वध कर रामका कुटीर लौटना, ५८-५९ कुटीरमें सीता-देवीको न देखना, ६० ६४ राहमें सीताका फेका हुआ चिह्न देख कर रामका विलाप, ६५-६६ रामके प्रति लक्ष्मणको सान्त्वना, ६७ ६८ मरणासन्न जटायुके मुखसे रामका सीतावृत्तान्त सुनना, ६९ ७३ रामलक्ष्मण कर्तृक ऋष्यका वाहुद्वय कर्त्तन, ७४ राम लक्ष्मणका पम्पा सरोवरमें जाना और शवरीसे मुलाकात, ७५ ऋष्यमूक पर्वत पर जानेके लिये लक्ष्मणके साथ रामकी मन्त्रणा ।

किष्किन्ध्याकाण्ड—१म सर्गमें रामका वसन्तवर्णन और प्रियाविच्छेद पर विलाप, २ राम लक्ष्मणसे मिलनेके लिये मन्त्रियोंके साथ सुग्रीवका परामर्श, ३ भिक्षुके वेशमें रामके साथ हनुमान्का मित्रता, ४ रामलक्ष्मणको पीठ पर बैठा कर हनुमान्का सुग्रीवके पास आना, ५ सुग्रीवके निकट हनुमान कर्तृक रामका परिचय-दान, ६-१० सीता

का उदार करनेके लिये सुग्रीवकी और बाळिबध करने के लिये रामको प्रतिष्ठा, ११ रामका बुद्धिमि राक्षसका हथी फेंकना और सप्ततामकी मेदना, १२ बाळीके साथ सुग्रीवका युद्धयात्रा, युद्धमें हार का कर भागना, १३-१४ सुग्रीवकी फिरस युद्धयात्रा, १५ ताराका बालोको युद्ध करनेसे रोकना, १६ बालो और सुग्रीवका मुमुक्षु युद्ध, १७ रामक बाणस चिख हो बालीका पतन १८ बालीके प्रति रामका उपदेश, १९ २० बालोका प्राणत्याग, २१ ताराका खेद, २४ राम अक्षयण और सुग्रीवका रोद, २५ बालोका ऊर्ध्वार्द्धिक क्रिया समापन, २६ सुग्रीवका राज्याभिषेक, २७ रामका विनाय सुन कर अक्षयणकी इनक प्रति साहस्यना, २८ सीताके विरह पर रामका विनाय, २९ सुग्रीव कर्णक मोक्षक प्रति सेव्यसंहारका भावदेश, ३० शारदोया राशि देण कर सीताविच्छेद पर रामका विनाय और शयदर्शन, ३१ सुग्रीवक निरुद्ध अक्षयणके भागेका संवाद मेजना, ३२ अक्षयणको मृत्यु देण कर सुग्रीवका विन्ता, ३३ अक्षयणके पास ताराको मेजना, ३४ सुग्रीवको अक्षयणको मर्त्सर्ना, ३५ अक्षयणक प्रति ताराको साम्भयना, अक्षयणके गान्त होने पर उनके साथ सुग्रीवका कथोपकरण, ३७ मनासंहारके लिये सुग्रीवका मृत मेजना, ३८ अक्षयणक साथ सुग्रीव का रामदर्शनके लिये जाना, ३९ रामक निरुद्ध बानर सनाका समागम, ४० ४३ चारों और सीताकी योजमें मृतकी मेजना, ४४ हनुमान्को रण्यका भमिदानागुरोपक दान, ४५ समा बानरोंक प्रति सुग्रीवका भावेश, ४६ राम के पास सुग्रीवका पुणियागृहान्त वर्णन, ४७ ४८ सीता का सम्भान न पा कर बानरोंका खीटना, ४९-५१ हनु मत् भाद्रिका मयदानपकी मागमें विमोहित हो बिलक मध्य तपस्विकाके साथ साक्षात्, ५२ हनुमानादिका बिल से निक्रजना, ५३-५५ सीताका संघान न पा कर मनु- शार्दिका मायोपयजन, ५६ बानरोंक साथ सम्प्राति पक्षी का साक्षात्, ५७ ६३ सम्प्रातिक निरुद्ध सीताका संघान ग्राम, ६४ समुद्रके दिनारे बानरोंका जाना, ६५ बानरों का भयना विरहवर्णन, ६६ जाम्बवान् कर्णक हनुमान् का अमरुत्तागठकपन, ६७ हनुमान्की अग्निपरतयि ।

शुनर-अम्भ-१म सममें महेश्वरिपरस हनुमान्का

शुनना सिद्धिकाका उदर फाटना और नितफूट तब पर गिरना २५ हनुमान्का राक्षसो रूपधारिणा लङ्कपुरीके साथ युद्ध, ३१ ११ रावणके अन्त्यागुरमें हनुमान्का प्रवे शारि १२ १३ मञ्जीकपनमें हनुमान्का सीताक्षीका भस्येयन, १४ १५ रामकथित चिह्नानुसार हनुमान्का सीताक्षीक निरुद्ध जाना, १६ १७ सीताकी मृतपत्या देण कर हनुमान्का पीछे सप्ताका रावणवर्णन, २० सीताक प्रति रावणकी उक्ति, २१ रावणकी बात पर सीताका प्रत्युत्तर, २२ रावण और सीताकी उक्ति और प्रत्युक्ति, २३-२४ सीताका राक्षसियोंका उपदेश देना और कट्टवचन कहना, २५-२६ राक्षसियोंकी मर्त्सर्नासे सीताका परिद्वन, २७ सिन्नटा राक्षसोका लप्रदृशान्तकपन, २८ ३९ सीताका शेषीकी सहायतासे अम्भयनका उद्योग, ३० सीताकी वैसी मयस्या देण कर हनुमान्को चिन्ता, ३१ ३२ सीताके साथ हनुमान्का साक्षात्, ३३ ३८ सीता से अनिदान मणि से कर हनुमान्क जानेको रोपारो, ३९ ४० उस समय हनुमान्से सीताका फिर कहना, ४१ हनुमान्का प्रनोवकनमज्जन ४२ हनुमान्के साथ राक्षसों का घोरतर स प्राम, हनुमान्कर्णक चेत्यमासाक्षण स, ४४ जाम्बवानका युद्ध और मृत्यु ४५ मन्त्रिसुताक साथ युद्ध और इनकी मृत्यु, ४६ विश्वाहादि पांच सेनापति का युद्ध और मृत्यु, ४७ भक्षयकुमारका युद्ध और मृत्यु, ४८ एम्भजित्क साथ युद्ध और इससे बांधे जान पर हनु मान्का रावणकी समामें जाना, ४९ ५१ हनुमान्का बध करनेक लिये रावणकी आशा, ५२ रावणक प्रति विमो पनका उक्ति ५३ हनुमान्की पूछ प्रक्षानेक लिये रावण का भावेश, ५४ हनुमान्कर्णक लङ्कागप, ५५ ५६ मनु- शार्द कर सीताका साथ हनुमान्का फिरस मिन्तना, ५७ हनुमान्का महेश्वरपंत पर जाना, ५८ ६० बानरोंक निरुद्ध हनुमान्का ममरुत्तागठ कहना, ६१ ६३ बानरोंसे मधुपन ध्य स, ६४ ६८ रामकमृतक निरुद्ध हनुमान्कर्णक आनकोमरुत्क भमिदानादि दान ।

शुनर-अम्भ-१म सममें हनुमानस सावाका गृहान्त सुन कर रामकमृतका विनाय, २ समुद्रअम्भक लिये रामक प्रति सुग्रीवका उपदेश, ३ हनुमानकर्णक लङ्काका युगादि वर्णन, ४ राम, अक्षयण और बानरोंका समुद्र

दर्शन, ५ रामका विलाप, ६ रावणकी उक्ति, ७-
 १० दुर्मन्त्रियोंकी नाना रूप दुर्मन्त्रणा, विभीषणकी
 मन्त्रणा, रावणकी गर्वाहित, ११-१३ रावण और
 प्रहस्तादिकी उक्ति-प्रत्युक्ति, १३ विभीषणकी उक्ति,
 १५ इन्द्रजित् और विभीषणकी कथा, १६ विभीषणका
 रावण त्याग, १७ विभीषणका रामके पास जाना,
 १८ विभीषणके सम्वन्धमें सुग्रीव और रामका कथोप-
 कथन, १९ राम और विभीषणका मिलन, २० रावण
 कर्त्तृक वानरसैन्यके मध्य शुक नामक दूतके भेजना,
 २१-२२ रामका सेतुबंधनादि, २३ रामका मुनिर्मित्त
 दर्शन, २४ शुककी मुक्ति और रावणकी सभामें यात्रा,
 २५ शुक और सारणका लुक छिप कर वानरकी सैन्य
 संख्याका पता लगाना, २६-३० रामकी सैन्यसंख्या जानने
 के लिये रावणका फिरसे दूसरा दूत भेजना, ३१ रावण-
 कर्त्तृक सीताकी माया द्वारा रामका मुण्ड और धनु-
 रादि दिखाना, ३२ रामके मायामुंडादि देख कर सीताका
 विलाप, ३३-३४ सरमा और सीताकी वातचीत, ३५ रावण
 माल्यवान्का हितोपदेश, ३६ लङ्कापुरीके रक्षाके लिये
 प्रहस्तादिके प्रति रावणकी उक्ति, ३७ रामचंद्र कर्त्तृक
 सेनासमावेश, ३८ रामका सुवेल पर्वत पर चढना,
 ३९ रामचंद्रका सुवेल पर्वत परसे लङ्का देखना, ४०
 सुग्रीवका रावणके साथ युद्ध, ४१ ससैन्य राम कर्त्तृक
 लङ्कावेष्टन, ४२ युद्धारम्भ, ४३ वानर और राक्षससेनाके
 साथ युद्ध, ४४ अङ्गद कर्त्तृक इन्द्रजित् विजय, ४५ इन्द्र-
 जित् कर्त्तृक रामलक्ष्मणका बंधन, ४६ वानर-
 सैन्यका विषा, ४७-४८ त्रिजटाके साथ विमान पर चढ़
 कर सीताका रामकी अवस्था देखना, ४९ लक्ष्मणकी
 अवस्था देख कर रामका विलाप, ५० गरुडके स्पर्शसे
 रामलक्ष्मणका नागपाशबन्धनसे मुक्तिलाभ, ५१ धूम्राक्ष-
 की युद्धयात्रा, ५२ धूम्राक्षवध, ५३-५४ वज्रदंष्ट्रीकी युद्ध-
 यात्रा और उसका वध, ५५-५६ अकम्पनकी युद्धयात्रा और
 उसका वध, ५७ प्रहस्तकी युद्धयात्रा, ५८ प्रहस्तवध, ५९
 रावणकी युद्धयात्रा और पराजय, पीछे अन्तःपुरमें प्रवेश,
 ६० कुम्भकर्णका निद्राभङ्ग, ६१ रामके निकट विभीषण-
 कर्त्तृक कुम्भकर्णका परिचय देना, ६२ रावण और कुम्भ-
 कर्णका कथोपकथन, ६३ रावणके प्रति कुम्भकर्णकी

निन्दा, ६४ सहदेवकी संरम्भोक्ति, ६५ कुम्भकर्णका युद्ध-
 में जाना, ६६ कुम्भकर्णका सुग्रीवको ले कर लङ्काप्रवेश-
 कालमें सुग्रीवकर्त्तृक उसका नासिका छेदन, ६७ कुम्भ-
 कर्णका फिरसे युद्धमें प्रवेश और रामकर्त्तृक कुम्भकर्ण-
 का वध, ६८ कुम्भकर्णके मारे जानेसे रामका विलाप,
 ६९ नरान्तक वध, ७० देवान्तक, महोदर और त्रिशिरादि
 का वध, ७१ अतिकाय वध, ७२ लङ्कापुरीकी रक्षाके
 लिये रावणकी विशेष सज्जा, ७३ इन्द्रजित्का युद्धमें
 जाना और जयलाम, ७४ हनुमानका औपधका पहाड़
 लाना, ७५ वानरोंसे लङ्कादाह, ७६ अकम्पनादिका
 विनाश, ७७ निकुम्भका विनाश, ७८ मकराक्षकी युद्धयात्रा
 ७९ मकराक्षका वध, ८० इन्द्रजित्कर्त्तृक मायासीता-
 वध, ८१-८२ निकुम्भिला यज्ञके लिये इन्द्रजित्का लङ्का-
 पुरी प्रवेश, ८३ हनुमानके मुखसे सीतावधका हाल सुन
 कर रामका विलाप, ८४-८५ लक्ष्मणकर्त्तृक इन्द्रजित्
 वध, ८६ रामके निकट लक्ष्मणादिका जाना, ८७ इन्द्रजित्
 वध सुन कर रावणका विलाप, ८८-८९ लङ्कापुरमें
 स्त्रियोंका विलाप, ९०-९१ लक्ष्मणका शक्तिशैल, ९२
 हनुमानका औपधि पर्वत लाना तथा लक्ष्मणका शैल-
 मोचन और मोहनाश, ९३-९४ रावणका फिरसे युद्ध
 में जाना तथा राम और रावणका महायुद्ध, ९५ राम-
 जयसूचक निमित्तका प्रादुर्भाव, ९६ राम और रावणमें
 रथ-युद्ध, ९७-९८ ब्रह्मास्त्र द्वारा रामकर्त्तृक रावण-
 वध, ९९ विभीषणका विलाप, १०० मन्दोदरीका
 विलाप, १०१ विभीषणका राज्याभिषेक, १०२ हनुमानके
 मुखसे सीताका युद्धजयका संवाद सुनना, १०३ रामचंद्र-
 के निकट शुभसंवाद लाभ, १०४ सीताके प्रति रामकी
 कठोर उक्ति, १०५ सीताकी अग्निपरीक्षा, १०६ ब्रह्मादि
 कर्त्तृक सीताकी विशुद्धिताका कथन, १०७ रामका
 सीतादेवीको फिर ग्रहण, १०८ महादेवकर्त्तृक दर्शित
 दशरथके साथ रामका कथोपकथन, १०९ इन्द्रकर्त्तृक
 अमृतसिञ्चनसे वानरसैन्यका पुनर्जीवन, ११०-१११
 पुष्पकविमान पर चढ़ कर रामकी अयोध्यायात्रा, भर-
 द्वाज और गुह आदिके साथ फिरसे भेंट ।

उत्तरकाण्ड—१२ सर्गमें रामका राज्याभिषेक और
 पीछे ऋषियोंके साथ कथोपकथन, २-३ कुवेरका जन्म,

तपस्या, ब्रह्मगौरवज्ञान और अङ्गुलिमें बास, ४५ अयस्य कर्त्तुं कृ राक्षसोऽथा उत्पत्तिवियय कथन, १८ श्वशाभोका महादेवके निकट जाना, महादेवके आदेशसे वेद्यशाभोका विष्णुके समीप जाना, राक्षसोंकी सुरकोठमें युद्धयात्रा, सुमाञ्छोस हार का कर माल्यधानका पाताळ भागना, १ सुमाञ्छोकी कन्याका विद्याबाण पास जाना और उसके गर्भसे रावणवदिका जन्म, १० रावणवदिकी तपस्या ११ वर पा कर रावणका अङ्गुलिग्रहण, १२ रावणका राम्याभियेक और इन्द्रवित्तका जन्म, १३ कुबेरके साथ युद्ध करनेके छिये रावणका जाना, १४-१६ कुबेरकी पराजय, १७ रावणके प्रति वेदवतीका भविष्यवाणी, १८ रावणका संवर्णके पास जाना, १९ रावणकी भगवत्पत्निका भविष्यवाणी प्रदान, २०-२२ नारदके उपदेशसे पत्नके साथ रावणका युद्ध, २३ वसातकमें प्रवेश कर रावणका युद्ध, २४ रावणका बलिके निकट जाना २५ रावणका घुर्णकोठमें अथवागम, २६ रावणका मात्स्याताके साथ युद्धमें मिस्रतास्थापन, २७ रावणकी पितामहकी उक्ति और बरवान, २८ रावणका पाताळमें कपिअर्चन, २९ रावणका अङ्गुलिग्रहण और पत्निके शोकसे संतप्त घुर्ण पक्षके प्रति दृष्टकारणमें जानेका आदेश, ३० इन्द्रवित्तकी रावणका दर्शन, रावणका मधुवन जाना और मधुके साथ मिस्रता करना, ३१ रावण कर्तृक रमापर्जन, ३२-३४ इन्द्रकी छे कर इन्द्रवित्तका अङ्गुलिग्रहण, ३५ इन्द्रकी मुक्ति और महात्म्याका वृत्तान्तकथन, ३६ ३८ रावण और अङ्गुलिका युद्धवदिकथन ३६ बासाके साथ रावणका मैत्रीकरण, ४० ४१ इन्द्रवदिका जन्मवृत्तान्त कथन, ४२ बाबाकी और सुमीरिका जन्मवृत्तान्त कथन, ४३ ४५ रामके प्रति रावण सनतकुमारका संवाद कथन, ४६ रावणका श्वेतद्वीप-गमनकथा, ४७ रामका राजसंघर्ष कथन, ४८ ४९ राजामोका अपने अपने राज्यमें जाना, ५० बानर और राक्षसोंका अपने स्थान जाना, ५१ पुण्यकरणका जाना, ५२ सीता और रामका अयोध्याविहारवर्णन, ५३ ५५ सीताका अथवाद सुन कर अस्मयक प्रति सीताकी यत्नमें छोड़ जानेके छिये रामका आदेश, ५६ ५८ बाल्मीकिके तपोवनमें अस्मयका सीताकी छोड़ जाना, ५९ बाल्मीकि भाषणमें सीताका जाना, ६० ६१ सुमंत

और अस्मयका कथोपकथन, ६२ रामके समीप अस्मयका जाना, ६३ ६४ कार्यापी प्रकृति भाविके बुझानेके छिये अस्मयक प्रति रामका आदेश ६५ ६७ अस्मयसे रामका निमि वशिष्ठ वृत्तान्त कथना, ६८ ६९ यथाति उपाख्यान कथना, ७० ७१ रामके समीप सारमेयका जाना, ७२ युद्ध अङ्गुलिका अथवाहार, ७३ ७५ शङ्खुप्रके प्रति रामका अर्चन कथायें आदेश, ७६-७७ शङ्खुप्रका भविष्येक, ७८-७९ बाल्मीकि भाषणमें सीताका प्रसव, बाल्मीकि कर्तृक कृत्य और अथका नामकरण, ८० मात्स्याताका उपाख्यान, ८१ ८२ शङ्खु कर्तृक लवणकथन, ८३ मधुराराज्य स्थापन और शासन, ८४ ८५ बाल्मीकि भाषणमें शङ्खुप्रका रामचरित अथवा, ८६-८७ वृत्तपुत्रके साथ किसी ब्राह्मणका रामके समीप जाना, ८८ ९१ रामकर्तृक तपोवत् शूद्रसङ्घकका शिष्यवृत्त, ९२ ९५ वृत्तोपाख्यान कथन, ९६ ९७ अथमेय यज्ञका प्रस्ताव ९८ ९९ वृत्तकथन, इन्द्राभ्यमेयवर्णन, १००-१०३ इन्द्रोपाख्यान, १०४ १०५ रामका मैत्रियारण्यमें जाना, १०६ रामयज्ञमें सशिष्य बाल्मीकिका जाना तथा कुशीखणका रामायण पान, १०७ १०८ कुशीखणकी सीताका पुन जान कर सीताकी छानेके छिये वृत्त भेजना, १०९ ११० रामकी समीप सीताका जाना और सीताका पाताळप्रवेश, १११ महाकी प्रति रामकी सन्तोषवदिका, ११२ कौशल्यावदिका वैशल्याण, ११३ ११४ रामके समीप युष्माजितपुरोहित गर्गाका जाना, ११५ अङ्गुल और अम्बुकेतुका रावणभियेक, ११६ ११७ रामके निकट तापसकथन काजका जाना, ११८ दुर्वासका जाना, ११९ रामका अस्मयवर्णन, १२० कुशीखणका भविष्येक, १२१ १२३ बानर, राक्षस और वीरवदिके साथ रामका सरपुष्पवेश, १२४ रामायण-माहात्म्य ।

रामायणोप (सं० लि०) १ रामायण सन्तुषी, रामायण का । २ जो रामायणका विशेषरूपसे ज्ञानकार और परिचित हो । ३ रामायणकी कथा कहनेवाला ।
 रामायण (सं० पु०) रामायण दत्त ।
 रामायुष (सं० पु०) यजुव ।
 रामाय्य (सं० पु०) धर्मोपदेशक एक भाषार्थका नाम ।
 रामाभिज्ञानकाव्य (सं० पु०) रामायणमाभिज्ञानस्य काव्यो-

अमिलायो यस्मात् । रक्ताञ्जान, एक प्रकारका फूलका पीथा ।

रामावक्षोजोषम (सं० पु०) रामावक्षोजयो. स्त्रीस्तन-यो रूपमा यत् । चक्रवाक, चक्रवा ।

रामावत (सं० पु०) त्रैलोक्य-आचार्य रामानन्दका चलाया हुआ एक प्रसिद्ध सम्प्रदाय । इसके अनुसार मनुष्य ईश्वरकी भक्ति करके सासारिक संकटों तथा आवागमनसे वच सकता है । यह भक्ति रामकी उपासनासे प्राप्त हो सकती है और इस उपासनाके अधिकारी मनुष्य मात्र हैं । जाति-पातिका भेद इसमें किसी प्रकारका अवरोध उपस्थित नहीं कर सकता ।

रामाचामाङ्घ्रिवातक (सं० पु०) अशोकका पेड़ ।

रामाश्रम—१ अमरकोषटीकाके प्रणेता । २ तत्त्वचन्द्रिका और ब्रह्मसूत्रवृत्तिके रचयिता । ये नृसिंहाश्रमके शिष्य थे । ३ दुर्गामाहात्म्यटीकाके प्रणेता । ४ दुर्जनमुख-चपेटिकाके रचयिता । ५ प्रभाकरपरिच्छेद नामक व्याकरणके प्रणेता ।

रामाश्रम आचार्य—रामायणटीकाके रचयिता ।

रामास—बम्बई प्रदेशके महीकांथा विभाग के अन्तर्गत एक सामान्तराज्य । यहाँके सरदारगण मुसलमान हैं जो बड़ोदाराजको कर दिया करते हैं ।

रामाश्वमेध (सं० पु०) १ रामकृत अश्वमेध । २ पद्मपुराणका एक अंश ।

रामि (सं० पु०) रामका गोलापत्य ।

रामिन् (सं० पु०) वह जिसे रमणकरनेमें प्रमोद हो ।

रामिया-विहार—अयोध्याप्रदेशके खेरो जिलान्तर्गत एक बड़ा गांव । यह कौरियाला नदीके एक प्राचीन गडढेके किनारे अवस्थित है । अभी यह गड्डा तालाबके रूपमें परिणत हो गया है । गांवके पूर्व और पश्चिम सुन्दर दृश्य उपवनराजि रहनेके कारण स्थानीय दृश्य बड़ा ही मनोरम हो गया है ।

रामिल (सं० पु०) १ रमण । २ कामदेव । ३ स्वामी, पति ।

४ प्रणयपात्र, वह जिससे प्रेम किया जाय ।

रामिल सौमिल—दो प्राचीन कवि । इन दोनोंने एक साथ 'शूद्रककथा' नामक काव्य रचा । कालिदासने मालविकाग्निमित्रमें इनका उल्लेख किया है ।

रामो (सं० स्त्री०) रात्रि, अंधकार ।

रामो (हिं० स्त्री०) कौस नामक घास ।

रामुप (सं० स्त्री०) एक देशका नाम ।

रामुसी—भारतके पश्चिम उपकूलमें रहनेवाली एक जाति ।

इस जातिके लोग अरब सागरको पार कर पश्चिम देशसे भारतउपकूलमें आ कर बस गये हैं । ये तुराणोष वंशोद्भव हैं और इनका आचार व्यवहार नीच जातिके हिन्दू और मुसलमानोंसे मिलता जुलता है । प्रधानतः ये लोग चोरी डकैती कर अपना जीविका चलाते हैं । आज कल बहुतरे चौकीदारमें मर्ती हो गये हैं । ये हठे कट्टे, मजबूत और युद्धकुशल होते हैं । इनकी भाषा तेलगु और मराठी है ।

रामेन्द्र यति—विवेकसारके रचयिता ।

रामेन्द्र योगिन्—जगन्निध्यात्वदीपिकाके प्रणेता ।

रामेन्द्रवन—एक विद्यात पण्डित और संन्यासी । ये काशीखण्डको टीकाके प्रणेता रामानन्दके गुरु थे ।

रामेन्द्र सरस्वती—बालबोधिनी भावप्रकाशके रचयिता ।

ये रघुनाथ और गोविन्द सरस्वतीके शिष्य थे ।

रामेग भारती—ब्रह्मसूत्रोपन्यासवृत्तिके प्रणेता ।

रामेश्वर—कई एक प्रसिद्ध संस्कृत-ग्रन्थकार । १ अद्वैत तर्कशिणीके प्रणेता । २ अज्ञीचरितक और उसकी टीकाके रचयिता । ३ गृह्यपद्धति और पौडगसंस्कारसेतुकके प्रणेता । ४ जातकसारके रचयिता । ५ पञ्चपक्षीकी टीका,

सिद्धान्तमुद्रा, खोजातकटीका और हिल्लान्नव्याख्या नामक बहुत-से ज्योतिर्ग्रन्थके प्रणेता । ६ पिष्टपशुतिरस्कारिणीके रचयिता । ७ वेदान्तशास्त्राम्बुधिरत्नके प्रणेता ।

८ शुद्धाशुबोध नामक व्याकरणके रचयिता । ९ सूत्रार्थ नामक व्याकरणके प्रणेता । १० सोमाग्यादय नामक परशुरामसूत्रवृत्तिके रचयिता । ११ रामकुतूहलकाव्यके प्रणेता । ये गोविन्दके पुत्र और अङ्गदेवके पौत्र थे । इनके पुत्र नारायणने वृत्तरत्नाकर लिखा । १२ आयुर्वेद-

सिद्धान्तसम्बोधिनीके प्रणेता तथा नरेन्द्रके पुत्र ।

रामेश्वर—मन्नाज प्रसिडेन्सीके मडुरा जिलेके रामनाद तहसीलके अन्तर्गत एक द्वीप और नगर । यह अक्षा०

६° १७' ३० और देशा० ७६° १६' ५० में अवस्थित है । यह द्वीप बालुकामय और मन्नारके उपसागरके पास है ।

रामेश्वर—मन्नाज प्रसिडेन्सीके मडुरा जिलेके रामनाद तहसीलके अन्तर्गत एक द्वीप और नगर । यह अक्षा०

६° १७' ३० और देशा० ७६° १६' ५० में अवस्थित है । यह द्वीप बालुकामय और मन्नारके उपसागरके पास है ।

इसको सम्भार ११ मील और चौड़ा ३ मील है। यह किसी समय भारतके दक्षिणप्रान्तकी सीमा थी पाछे समुद्रके श्रोतके कारण विच्छिन्न हो गया है।

यह स्थान हिन्दुओंका एक प्रधान और पवित्र तीर्थ समझा जाता है। सेतुबन्ध-रामेश्वर तीर्थमें द्वाज करके भारतवासी हिन्दुमान अपनेको धर्म समझते हैं। प्रवाद है कि रघुवीर रामचन्द्र साताका बोजमें सेतु बन कर संका गये थे। पीछे रावणको श्रोत कर सीताके साथ खीरते समय ये उस सेतुको छोड़ते गये। अब उस टूटे हुए सेतुका एक एक अन्न एक एक क्षीप बन गया है। यहाँ जो रामेश्वरकी मूर्ति स्थापित है, लोगोंका विश्वास है कि उस मूर्तिको अर्घ्य रामचन्द्रने प्रतिष्ठा की थी।

रामचन्द्रकी सेतायुगल कीर्ति समय कर श्लाघियों से लैकड़ों हिन्दू भर-भारी मात्र तक इन देवतीधर्म समागत होते हैं। प्रत्येक तीर्थवासीको रामनाथमें आ कर पहले समुद्र उदरण करना पड़ता है। यह सेतुबन्ध तीर्थ बहुत दिनोंसे रामनाथके सारदारक हाथमें है, इस लिये वे ही तीर्थवाजियोंको गमन क्लेशसे अपनेके लिये समुद्रपथके परिवर्तक बनते हैं और इस कारण ये 'सेतु पति' कहलाते हैं।

इस क्षीपमें बहुत और नारियलके पेड़ सेगुमार पैदा होते हैं। किसी उद्यानमें बड़ा काशिशंख दूसरे पेड़ की पैदा होते देखे गये हैं। यहाँके अधिकासीगण प्रधानता ब्राह्मण हैं। ये मन्दिरके पण्डे अथवा पुरोहित हैं। उनके अधीन और भी अनेक जेठ हैं। मन्दिरके दक्षिणमें ३ मील पिल्लन एक द्वीप है। उसका मीठा पाना सब कोई पाते हैं।

दक्षिणार्धका यह सर्वांगेष्ट पुण्यतीर्थ बहुत प्राचीन काजस मसिद्ध है। उस समयसे ही उत्तर भारतके तीर्थवाला वैदिक इस तीर्थको यात्रा किया करते थे। अब भी साधु संन्यासी जोग वैदिक आना तीर्थमें प्रमत्त करन हुए यहाँ आते हैं। कियहाल रेल हो ज्ञानसं यात्राकी कठिनाईयाँ हूट हो गई हैं। बहुतसों प्रत्येक वर्ष काश्यामें विश्वेश्वरका पूजा करके गहाल गंगाजल ल कर रामेश्वर पहुँचते हैं और यहाँ रामेश्वरनाथका एका दशरथी गङ्गादेकानियेकादि बरत है।

रामेश्वर ज्ञानेन पहले मधुरा जाना पड़ता है। यहाँ वैगनरीके किनारे अनेक छत हैं। यहाँ पण्डोंक मादमी हैं, जो बड़े यत्नसे यानियोंकी सेवा शुभूया करन हैं और मधुराके सुन्दरस्वामीके दर्शन करा कर वे उनके पण्डियोंके बन कर रामेश्वर जे जात हैं।

मधुरास रामनाथ ज्ञानेक लिय मोङ्गागाड़ी या बैलगाड़ी मिळती है। मोङ्गागाड़ीसे ज्ञानमें १७ १८ घंटे जगते हैं और बैलगाड़ीसे ज्ञानमें ३ ४ दिन जग जाते हैं, क्योंकि बैलगाड़ी रातने सिवा चलती नहीं। मार्गमें मान मधुरा पराणगुटी और पञ्जवर ये तीन धर्मशाळाएँ हैं। मञ्जवर तक पथको सड़क है, उसके बाद कच्छी और कठिन रास्ता है।

रामनाथ सेतुपति-राजाओंको राजधानी है। ये किसी समय मल्लप्रदेशके शासनकर्ता थे। अब अबस्था क फेरसे अमीरमाल रह गये हैं। मनु विजय रघुनाथ सेतुपतिके समयमें धर्मशयन और रामेश्वरके मन्दिरका बहुत कुछ भीष्टि हुई थी और राजवरगके किनारे किनारे क्व एक ऊँच निर्मित हुए थे। रामनाथमें इस राजधर्मशाळा प्रतिष्ठित कीइएउ रामेश्वरामा, विश्वनाथस्वामी, वाणशहूरी मोलकण्डा और राजराजेश्वर देवीका मन्दिर तथा जसोपुरमें बाळसुप्रणय मुत्तुरामकिङ्कस्वामी और मरि भम्मा देवीका मन्दिर ही प्रधान हैं। रामनाथके पास ही लक्ष्मीपुर है। यहाँ लक्ष्मी-सरोवरक किनारे एक छत है। इस स्थानसे १० मील पूरुमें दक्षिण समुद्रके किनारे देवीपुरका मयपापाशतीर्थ है और ७ मानके अन्तरमें कुछ परिवर्तमें समुद्रके किनारे धर्मशयन तथा दक्षिणमें २२ मीलकी दूरी पर विहल मयद्वय है।

देवीपुरका नाम देवीपञ्चन है। सेतुमाहात्म्यमें इसकी उत्पत्तिके लियेवने किखा है, कि देवीकी प्राङ्गनासे महिवा सूर अन्वयोपाय हो कर दक्षिणसागरक तट पर अवस्थित दशवीज्रनथ्याये धर्मपुष्करिणीमें पुस गया था। श्रीगन्धर्क उक्त पुष्करिणीका अज विहङ्गुल पी सैन पर देवीने महिषकी मार जाला और उक्त पुष्करिणीक उदर भागमें दक्षिणसागरक किनारे 'देवीपञ्चन' स्थापित किया।

सेतुमाहात्म्यके मतानुसार धर्मपुष्करिणीका दूसरा नाम चक्रतीर्थ है। प्राचीनकालमें धर्म यहा महादेवकी तपस्यामें निरत हुए थे। उन्होंने स्नानके लिए उक्त सरोवरको खोदा था। पीछे महामुनि गालव इस पुष्करिणीके किनारे विष्णुकी आराधना करते रहे। एक दिन वशिष्ठके शापसे ऋषि राक्षसरूपी 'दुर्गम' ने आहारके लिए स्नान-निरत गालवको ग्रहण किया। विष्णुके क्रकें प्रभावसे विष्णुके चक्रने आ कर राक्षसको मार डाला और गालवका उद्धार किया, तबसे इस स्थानका नाम चक्रतीर्थ पडा है। इन्द्र द्वारा छिन्नपक्ष कोई कोई पर्वत इस चक्रतीर्थमें गिर पडा था, जिससे इसका गर्भ भर गया है। इसलिये दर्भशयन और देवीपत्तन इन दोनों स्थानोंमें दो चक्रतीर्थ बन गये हैं। यह चतुर्विंशति सेतुतीर्थोंमें प्रधान है।

रामचन्द्रने सेतु निर्माण करते समय देवीपुरमें जा नवपापाणकी प्रतिष्ठा की थी, वह भी पुण्यतीर्थ है। रामेश्वरके यात्रिगण रामनादसे देवीपत्तन जा कर नवपापाणकी पूजा, चक्रतीर्थमें स्नान और सेतुनाथकी पूजा किया करते हैं। सेतुमाहात्म्यके ७वें अध्यायमें लिखा है:—

नवपापाणतीर्थ सेतुके मूलमें स्थापित हैं। इसलिये तीर्थयात्रियोंको चाहिये कि यहाँ सप्तकुण्ड पापाण दान करके सागरके जलसे स्नान करें। उसके बाद विशुद्धात्मा हो कर देव, ऋषि, मनुष्य और पितृपुरुषोंके लिए तर्पण करनेसे वे तृप्त होते हैं। सेतु-मूल, घनुष्कोटि और गन्धमादनपर्वत ये तीन स्थान राम द्वारा निर्मित और पितरोंको तृप्तिप्रद है। श्रीरामचन्द्रने लड्डा जानेके लिए दर्भशयनसे नवपापाण तक परिसरयुक्त जो सेतु निर्माण किया था, उसकी विस्तृति २६ मीलसे अधिक नहीं है। रामायणको वर्णनसे इसमें बहुत भेद पाया है।

नवपापाणके दर्शन, पूजा और सागरस्नान रामेश्वर तीर्थयात्रियोंके लिए प्रधान कर्तव्य हैं। वैशाखसे कार्तिक मास तक, जब कि दक्षिणपूर्व मौसुम वायु चलता है, अनेक तीर्थयात्री जहाज पर बैठ कर नग्न पत्तनसे नवपापाण हो कर पम्बाम जाते हैं।

भगवान् रामचन्द्रने वानरकटकके साथ समुद्रके

किनारे पहुंचते ही सामने नक्रव्यालशकुल उत्ताल तरङ्गपूर्ण योजनव्यापी सागर देखा। उन्होंने सागर पार होनेको इच्छासे वरुणकी सदायता पानेकी आशासे जिस स्थानमें दर्भके ऊपर शयनपूर्वक प्रायोपवेशन किया था, प्रवाद है, कि वह स्थान दर्भशयनतीर्थके नामसे प्रसिद्ध हुआ।

विट्टलमण्डप एक प्राचीन स्थान है। यहां कुछ प्राचीन मन्दिर और मण्डपका मनावशेष मौजूद है। मण्डपोंके कारण यह स्थान विट्टलमण्डपके नामसे प्रसिद्ध है। दक्षिण भारतका यह एक छोटा सा बन्दर है। यहांसे पम्बामके लिए जहाज जाते हैं। भारतीय-कुलसे पम्बाम बन्दर ४ मील दूर है।

पम्बाम एक छोटा-सा द्वीप है, इसको लम्बाई ११ मील और चौड़ाई ६ मील है। रामेश्वर इस द्वीपके उत्तर दिशामें तथा पम्बाम बन्दरसे ८ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। बन्दरसे मन्दिर तक रास्ता है। रामेश्वरको प्रधान मन्दिरके सिवा यहां सेतुमाहात्म्यमें वर्णित और भी २४ तीर्थ हैं, जिनके दर्शन किये जाते हैं उन तीर्थोंके नाम इस प्रकार हैं—१ चक्रतीर्थ। २ वेतालवरदतीर्थ। ३ पापविनाशनतीर्थ। ४ सोतासरतीर्थ। ५ मङ्गल तीर्थ। ६ अमृतवापिका। ७ ब्रह्मकुण्ड। ८ हनुमत्कुण्ड। ९ अगस्त्यतीर्थ। १० श्रीरामतीर्थ। ११ श्रीलक्ष्मणतीर्थ। १२ जटातीर्थ। १३ श्रीलक्ष्मीतीर्थ। १४ अग्नितीर्थ। १५ चक्रतीर्थ (२य)। १६ श्रोत्रिवतीर्थ। १७ शङ्खतीर्थ। १८ यमूनातीर्थ। १९ गङ्गातीर्थ। २० गयातीर्थ। २१ कोटितीर्थ। २२ साध्यामृततीर्थ। २३ मानसाख्य सर्वातीर्थ। २४ घनुष्कोटितीर्थ।

इन तीर्थोंकी उत्पत्तिके विषयमें उक्त ग्रन्थमें बहुत-सी बातें लिखी हैं, जो नीचे लिखी जाती हैं।

वेतालवरदतीर्थ—समुद्रके तट पर चक्रतीर्थके दक्षिणमें और गन्धमादनके उत्तरमें अवस्थित है। इस तीर्थमें संकल्पपूर्वक स्नान करके वेदविद् ब्राह्मणको विसदान देनेसे लोग जीवन्मुक्त होते हैं।

गन्धमादन पर्वत—वर्तमान पम्बाम और रामेश्वरके बीच सेतुमाहात्म्यका गन्धमादन है। पापविनाशनसे लगा कर मानसाख्य सर्वातीर्थ तक २४ तीर्थ इस पर्वत

पर भवस्थित है। रामेश्वरमें भा कर सागरमें संकल्प पूर्वक स्नान करके गन्धमादनम गिएद्वान करनेसे विरुग्य भुष्ट होत है। यहाँकी वायु भङ्गमें लगनेसे कोटिब्रह्महत्या और अगम्यागमनादि अज्ञित पातक भष्ट हो जाते हैं। (सतुमा० १०६ १६)

पापविनाशनतोष—गन्धमादन पयत पर भवस्थित है। इसके स्मरणमात्रसे गर्भबास भष्ट हा जाता है और इसमें स्नान करनम वैकुण्ठम पास होता है।

(१०१२० २२)

सोतासरनीध—मन्धमादन पर्यंत पर भवस्थित है। यह पञ्चपापविनाशक है। यहाँ स्नान करनेसे ब्रह्म हत्याके पातकसे मुक्त हो कर मनुष्य देवलोका जायेंमें समर्थ होता है। (११ म० १४ ७६)

मङ्गलतोष—गन्धमादनक एक तरफ भवस्थित। इस तोषमें स्नान करनेसे मनुष्य मन्धमायत होता है।

(१२ म० ७६ ६)

भ्रमृतपापिका—गन्धमादन पर्यंतस्थ रामनायकेमें भवस्थित है। यहाँ स्नान करनेसे मरुतोका शत्रुको मसात्रसे मुक्तिमान करता है। पुराकाकमें रामचन्द्रने मन्मथ, पिनीपथ और हनुमानके साथ समुद्रके किनारे भ्रमृतपापिकाके समीप बैठ कर रावणवधकी मन्त्रणा की थी।

मङ्गलकुण्ड—प्राचीनकालमें ब्रह्माने इस स्थानमें यज्ञ किया था। यज्ञकालमें ब्रह्मर्षीहो कर यह एक वृहत् इन्द्रका आदार धारण करता है। प्रायश्चरुमें यह सूत्र जाता है। सूत्र माने पर इसका जो मन्त्र निकलतो है, यह मङ्गलकुण्डमन्त्र कहलाता है। यहाँ स्नान करनेसे वैकुण्ठ प्राप्त होता और मरमन्त्रेण वा त्रिपुण्ड्रक धारण करनेसे किन्त्य प्राप्त होता है। (१४१२-२२)

हनुमन्कुण्ड—मङ्गलकुण्ड उत्पन्न रावणकी मार कर रामचन्द्र अपितबिष्ट हुए और उम्होंने पाप विमोचनार्थ मुनिवीर उपदेशस मावतिको त्रिभुवृत्ति नामक सिध किया स मेजा। मावतिके पूछमें मयपर कर त्रिभुवृत्त नाम पर यह इस कुण्डके किनारे प्रतिष्ठित किया गया। भव मो एक जिना पर इस बातका उल्लेख पाया जाता है और मावतिवृत्ति तथा पूछमें निपट हुए त्रिभुवृत्तको विष

भङ्गित है। इस कुण्डमें स्नान करनेसे महापातक भष्ट होता है। स्नानके बाद उसके तीर पर पुलेष्टि-याग करनेसे सत्पुत्रकी प्राप्ति हातो है। पितरोंके त्रिप धार्य तर्पण करनेसे मवयन्त्रवासे मुक्त हो कर शिवकोईमें गमन हा सकता है। (४११५ ७५)

मगलस्तोष—मगलस्तोषविने विरुग्यात्रिको निग्रह करके इक्षिण मन्धुविक किनारे भा कर गन्धमादन पर यह पुण्यतोष बोहा था। यह सुखमोक्षफलदायक और सर्वाभोगफलमष्ट है।

रामतोष—रामकुण्ड, रामसर वा त्पुनायसरके नामसे कहा गया है। इन मूत्रपुविनाशक, महासिद्धिकर, पातकनाशक, मुक्तिमुक्तिकलमष्ट, मरकथमन्त्रालाशक और संसार उच्छेदकारक तोष और महाशक्तिकी राम चन्द्रन स्वयं प्रतिष्ठा की थी। यहाँ स्नान करके त्रिभुवृत्तिके इरांन करनेसे मनुष्यको मुक्ति प्राप्त होती है।

लक्ष्मणतोष—यहाँ लक्ष्मणेश्वर नामक शिवलिङ्ग विद्यमान है। सेतुमाहात्म्यक मतसे इस तोषमें स्नान करनेक बाद उक्त महाशक्तिका अर्चना करनेसे मनुष्य शक्तिशाली, रोग और ब्रह्महत्याके पापसे विमुक्त होता है। भद्रुवृत्तक व्यक्तिको आयुष्मान्, गुणवान् और विद्वान् पुत्रकी प्राप्ति हातो है।

जटातोष—प्रयाग है, कि रावणकी मारनेके बाद रामचन्द्रने यहाँ जटागोधम किया था। (१०१२४)

यह तोष ब्रह्ममूत्रपुत्ररास्तक और मङ्गलनाशक है। उः सहस्र वर्ष गङ्गास्नानका जो फल है, वृहस्पति सिंहस्थ होने पर, सहस्र बार गोमतामें स्नान करनेसे जो फल हाता है, एकमात्र जटातोषक इरांनसे उतना फल प्राप्त होता है। स्नानसे अस्ताकरणको शुद्धि और प्रान्जामके कारण मुक्ति प्राप्त हातो है। इसक किनारे श्वेतपिण्ड-दान करनेसे गयाभाद्रक समान फल प्राप्त हातो है।

सङ्गीतोष—सतुमाहात्म्यके २१वें अध्यायमें इस का विवरण लिया है। स कल्पपूर्वक इसमें स्नान करनेसे मनकामना सिद्ध हातो है। इन समय यह समुद्रके अन्तर् है।

मनिनोष—सतुमाहात्म्यके धनुसार रावणके

मारनेके बाद अशोकवनले सीताको ला कर अग्निपरीक्षाके समय जिस स्थान पर अग्नि आग्निर्भूत हुई थी, वही अग्नितीर्थके नामसे प्रसिद्ध है। यह पूर्वोक्त लक्ष्मीतीर्थसे लगभग ५ सौ फुटकी दूरी पर है। अब यह समुद्रके अन्दर है। (२ अ०)

चक्रतीर्थ—इसका दूसरा नाम मुनितीर्थ है। महर्षि अहिवुधन गन्धमादनके मुनिकुण्डमें सुदर्शनकी उपासना करते थे। राक्षसों द्वारा मुनिके तपमें विघ्न डाले जाने पर भक्तकी रक्षार्थ सुदर्शनने आ कर राक्षसोंको मार डाला। अहिवुधनकी प्रार्थना पर विष्णुचक्रके मुनितीर्थमें अवस्थितिके बादसे यह स्थान चक्रतीर्थके नामसे प्रसिद्ध हुआ। इस तीर्थमें एक बार स्नान करनेसे राक्षस पिशाचादिकी पीडाका नाश होता है। अन्ध, मूर्ख, बधिर, कुब्ज, ऋज, पंगु, अङ्गहीन, छिन्नहस्त, छिन्नपद आदि विकृताङ्ग मनुष्य सङ्कल्पपूर्वक इसमें स्नान करे तो अङ्गपूर्णाता प्राप्त होती है। (२३ अ०)

शिवतीर्थ—महादेव द्वारा यह तीर्थ निर्मित हुआ था। इसमें एक बार स्नान करनेसे ब्रह्महत्यादि जनित पातक नष्ट होते हैं। (संतुभा० २४ अ०)

शङ्खतीर्थ—शङ्ख मुनिने नित्य स्नानार्थ कल्पना द्वारा इस तीर्थका निर्माण किया था। इसमें स्नान करनेसे कृतघ्न भी मुक्तिको प्राप्त करता है और माता पिता और गुरुके अपमानादि-जनित पाप भी दूर हो जाते हैं।

गङ्गा, यमुना और गवा तीर्थके प्रसङ्गमें सेतुमाहात्म्यमें २६वें अध्यायमें लिखा है, कि रेवत नामक महर्षि गन्धमादन पर्वत पर तपस्या करके दीर्घायुको प्राप्त हुए थे। वाङ्मयके कारण गाड़ी पर चढ़ कर तीर्थोंमें स्नान करनेमें असमर्थ होनेसे उन्होंने गङ्गादि तीर्थमें स्नान करनेकी इच्छासे योगबलसे उन्हें आह्वान किया था। वे भूमि भेद कर जहाँ जहाँ मुनिके समोप उपस्थित हुई थीं, वे स्थान एक एक तीर्थरूपमें परिगणित हुए।

कोटितीर्थ—रामचन्द्रने रावणाका वध करनेके कारण ब्रह्महत्याके पापसे मुक्त होनेकी आशासे रामेश्वरलिङ्गकी प्रतिष्ठा की। उस लिङ्गके अभिषेकके लिए विशुद्ध जल न मिलनेसे उन्होंने अपने धनुःकोटिके अग्रभागसे धरणा-

को छेद कर गङ्गाका स्तव किया, जिससे पृथ्वीमेंसे पुण्यतोया जाह्नवी निकल आई और उसके जलसे स्वप्रतिष्ठित लिङ्गका अभिषेकादि किया। अनन्तर रामने अयोध्या लौटने समय अन्तिम बार इसमें स्नान किया था। तभीसे सब तीर्थयात्री कोटितीर्थमें स्नान करके अवशिष्ट पापसे मुक्त हो कर गन्धमादनकी छोड़ने हैं। (१७ अ०)

श्रीसाध्यामृततीर्थ—शक्तिमुक्तिप्रद और सर्व पापोंसे मुक्त करनेवाला है।

सर्वतीर्थ—इसका दूसरा नाम मानस है। भृशु-वंशोद्भव सुचरित ऋषिने सर्वतीर्थ-स्नानके लिए अभिलाषी हो कर देवाधिदेव महादेवकी स्तुति की थी। महादेवने उनके स्तवसे सन्तुष्ट हो कर कहा—

"अस्य तीर्थस्य तीरे त्व वसन मुचरित द्विज।

स्नानं कुरुष्व घतत स्मरन् मा मुक्तिदायकम् ॥

देवान्तरौपतीर्थेषु मा मज ब्राह्मण्योत्तम।

अस्य तीर्थस्य माहात्म्यं मामन्ते प्राप्स्यसि ध्रुवम्।

अन्पेपि षेऽन लास्यन्ति वेऽपि मां प्राप्नुयुः द्विज ॥"

धनुःकोटितीर्थ—रामेश्वरसे २४ मीलकी दूरी पर अवस्थित है। लङ्का-विजयके बाद अयोध्या लौटते समय रामचन्द्रने विमोषणकी प्रार्थना पर अपने धनुःकोटि द्वारा सेतु तोड़ा था, इस कारण इस स्थानका नाम धनुःकोटि पडा। जो व्यक्ति रामकृत धनुःकोटिकी रेखा देखता है, उसे फिर कभी गर्भवासको यत्नाना नहीं सहनी पडती। यहां सरूप पूर्वक स्नान करनेसे दक्षिणावहुल अग्निष्टोमादि यज्ञकी अपेक्षा भी अधिक फल होता है। (३०।७४-६३)

सूर्य पूर्ण मकरस्य होने पर अर्थात् माघ मासकी सक्रान्तिमें शिवरात्रिकी रात्रिकी उपवास करके रामनाथकी पूजा करके उसके बाद महोदय और अर्द्धोदय योगमें तथा चन्द्रसूर्योपरागमें इस तीर्थमें स्नान करना सर्वतो-भावसे प्रशस्त है।

उपरोक्त तीर्थके सिवा रामेश्वरमें और भी कई उपतीर्थ हैं, जिनके विषयमें सेतुमाहात्म्यमेंसे संक्षेपमें कुछ लिखा जाता है।

श्रीरस वा श्रीरकुण्ड—देवीपुरके पश्चिममें जिस

स्वामसे रामचन्द्रने संतुष्टयन प्रारम्भ किया था, यह पुण्यदिन कृतप्रामक निरुद्धस्य महापातकनाशन क्षीरसर तीर्थ है।

कवितोर्धं—मनु जय करनेके बाद श्रीदेवै समय धीरामके कवियेमाने इन तीर्थको शोभा था। पीछे कवियोंकी मार्चना पर और धीरामके बरसे यह तीर्थ महापातक, वरिद्रता और यमपौडामात्रक हो गया।

(१० न०)

गायत्री और सरस्वतीतीर्थ—मनु होन सरस्वती और गायत्रीने गन्धमादनमें आ कर रामनाथकी तपस्या की थी। उनके स्नानक लिये जो कूप खोदा गया था, यही महानैयके बरसे तार्थरूपसे घोषित हुआ।

(सुभा० ४०।४१ म०)

इसके सिवा ४२वें अध्यायमें श्रवणमोचनतीर्थ, पाण्डवतीर्थ, देवतीर्थ, सुमोवतीर्थ, मञ्जतीर्थ, बाळतीर्थ, गवाक्षतीर्थ, भङ्गवतीर्थ, गङ्ग-नद्यय शरम-कुसुवतीर्थ बिनीपलतीर्थ, ब्रह्महत्या बिनीपलतीर्थ, नागवञ्जितोर्थ आदि कल्पसि और उनकी पापनाशकताका वर्णन किया हुआ है। उपाध्यायके प्रसङ्गमें इन उन स्थानोंमें एक एक देवमूर्ति भी स्थापित है।

इस प्रथमके ५०वें अध्यायमें सेतुमाधवतीर्थका उपाध्यायन किया है। मधुरापुराके राजा सोमधरशौन्य पुण्यनिधिने रामसेतु जा कर संवत्सर्वे रामनाथकी पूजा और महाक्रुत सम्राट्ण किया था। उनके इस कर्षसे समुद्र हो कर भगवान्ने मच्छिपायमें बन्द हो कर इन्हे दर्शन दिये और उनसे उनके साथ उनके निरुद्ध निगङ्गायय हुए थे। राजा ने तृतीय अर्धमें नारायणक इस प्रकार कवकी देव कर दूसरे दिन प्रातःकाल समा पाथं ना की थी। भगवान्ने इनसे कहा कि तुमने मेरे बनाये हुए सेतु पर मुझे निगङ्गाबन्ध किया था इसलिये मैं तुम्हारे मच्छिक वश आयय हो कर यहाँ अयस्थान कर्षगा। तदनन्तर पञ्चमे निगङ्गाबन्ध सेतु माधव मूर्तिको शास्त्रिक विधाना नुसार प्रतिष्ठा करके पूजाका प्ररथ्य कर दिया। सेतु पर नारायणकी मूर्ति स्थापित होनेके कारण यह सेतुमाधव कहलाता है। ४४व अध्यायमें रावणययके बाद

सोताकी मच्छिमुदि और ब्रह्महत्याप्रमित पाप ह्रासनार्थं विङ्गावैणक मिय रामचन्द्र द्वारा इनुमानको कैलास शैलनेका वर्णन किया हुआ है।

उपरोक्त तार्थों और उदतीर्थोंमें लगभग सर्वत्र विङ्ग-मूर्तियाँ बिद्यमान हैं, जिनमें रामेश्वर मारुतेश्वर जानकी श्वर, लक्ष्मणेश्वर, सुमोषेश्वर, नलेश्वर, भङ्गेश्वर, जाम्ब-विक्र, बिनीपणेश्वर और इत्यादि देवी-कृत विङ्ग ही प्रधान हैं। कुछ नाम नीचे दिये जात हैं। १ सुमोवतीर्थमें—सुमोषेश्वर। २ भङ्गवतीर्थमें—भङ्गेश्वर। ३ इसके पास ही एक छोटास मन्दिर मारुतेश्वर हैं। यह इनुमण्डल मारुतेश्वरसे भिन्न है। ४ मञ्जवतीर्थमें—श्रावणविङ्ग (सुमाहात्म्य न० ४४) ५ जळताथमें—नलेश्वर। ६ नोळ तोथमें—नीलेश्वर। ७ वलरेश्वरमाय धीवैष्णव अमरवास छन सुमिष जळपूर्ण सुपुङ्ग कूप पर्यतगङ्गा है और रामनाथके राजमहलके पास पञ्चतगङ्गाकी मूर्ति है। ८ उष मूनिगर पाथंता-परमेश्वरकी मूर्ति है। यही वर्ध-मानमें गन्धमादन है। सेतुमाहात्म्यके गन्धमादन नहीं। ९ अमरवास कृत इनुमानजीका मन्दिर और उसके सामने बाळ भङ्गेश्वरका मन्दिर है। १० सौ कुटकी ऊँचाइ पर मरुतेश्वरके ऊपर रामचरोला है, उसके ऊपर पुमञ्जला मन्दिर है और नीचेके मञ्ज पर राम पातुका है। ११ पाण्डवतीर्थमें—पञ्चपाण्डवोंके नामसे ५ छोटे छोटे अलायय हैं। चर्मतीर्थके किनारे चर्म-राज द्वारा प्रतिष्ठित पाण्डवेश्वरविङ्ग है। १२ ब्रह्मकुण्डके पश्चिमतीरके पुराने मञ्जगमें नगराजिमें रामेश्वरदेव धा कर रखत हैं। इरुके बीचमें सो एक क्षुद्र मरुडप है। इस के पास बिभूति-मूर्तिका पार्श्व जाती है, जो ब्रह्मकुण्डकी बिभूतिक नामसे प्रसिद्ध है। १३ ब्रह्मकुण्डके दक्षिणमें श्रीपद्मी नामका अलायय है। १४ मद्रकाळीका मन्दिर माकोन है और न्यूना परधरसे बना हुआ है। इसमें ७ मकोष हैं। मन्दिरके सामने दो द्वारपाण्डकी भार १०८ बाहनोंकी मूर्तियाँ हैं। गर्भगृहकी ईवीमूर्ति अष्टभुजा और महिषमर्दिनी है। पुजारी गरवजातीय है। पामाधार मठसे पूजा करत हैं। किरपपूजाके बलि मन्त्री होता। मञ्जुन और शुद्धवारको छागकडि और उरुवादिमें मद्रिय पति होता है। पाण्मासिक

ध्वजारोहण उत्सवमें पार्श्वती-परमेश्वरकी मूर्ति यहा लाई जाती है। तब ब्राह्मण आ कर अभिषेकादि करते हैं। १५ प्रस्तरसे वेष्टित चतुर्कोणाकृति हनुमत् कुण्ड है। इसके किनारे एक छोटी-सी हनुमान्जीकी मूर्ति है और उनको पूँछमें लिङ्गमूर्ति वेष्टित हैं। यह प्रर्ति एकादश श्रेष्ठ लिङ्गोंमें एकतम है। १६ अगस्त्यतीर्थ प्रस्तर वेष्टित पुष्करिणी है। यहा अगस्त्येश्वर लिङ्ग विद्यमान है। १७ लक्ष्मीतीर्थ समुद्रका एक घाटमात्र है। १८ अग्नितीर्थ वैदेहीकी अग्निपरीक्षा और अग्नि देवके आविर्भावका स्थान है। यह भी समुद्रतीरवर्ती एक स्नानका घाट है, घाटके ऊपर महाकाली और हनुमान्जीका मन्दिर है। इन दोनों मूर्तियोंका विवरण सेतुमाहात्म्यमें नहीं है। मन्दिरके प्राङ्गणमें बहुतसे कूप हैं और वे सभी महातीर्थ समझे जाते हैं। १९ महालक्ष्मीतीर्थ है और उसके पूर्वमें लक्ष्मी मन्दिर है। इसके वगलसे पार्वती परमेश्वरका मन्दिर है। २० गायत्री, सावित्री और सेतुमाधवतीर्थमें स्नान किया जाता है। सेतुमाधवतीर्थके किनारे पूर्वकथित सेतुमाधव की मूर्ति है। २१ एक प्राङ्गणमें नल, नील, गय, गवाक्ष और गवय इस प्रकार पाच तीर्थकूप हैं। प्रत्येक कूपके पास एक छोटेसे मन्दिरमें लिङ्गमूर्ति है। ये नल-नील-तीर्थ पूर्वोक्त नल-नीलसे पृथक् हैं। २२ गङ्गा, यमुना और गयातीर्थ तथा ब्रह्महत्याविमोचतीर्थ, एक एक पक्का कूप मात्र है। २३ दूसरे एक भागमें शङ्खतीर्थ, चन्द्रतीर्थ और सूर्यतीर्थ है। शेषोक्त दो तीर्थोंका उल्लेख सेतुमाहात्म्यमें नहीं है। २४ शङ्करभूषकृत शङ्करतीर्थ, २५ चक्रतीर्थ, शिवतीर्थ और साध्यामृततीर्थ एक एक कूपमात्र हैं। इन सब तीर्थोंकी पूजा और तर्पण दानादि करके अन्तमें रामेश्वरका अभिषेक और पूजा की जाती है।

द्वीपके उत्तराशमें १००० फुट लम्बे और ३५७ फुट चौड़े सुविस्तृत स्थानमें रामेश्वरका मन्दिर बना है। इसकी ऊँचाई १२० फुट है और प्रवेशद्वार वा गोपुरकी ऊँचाई १०० फुट। इसकी सुवृहत् गुम्बज, स्तम्भश्रेणी, द्वेषालोंके शिल्प और प्रतिमूर्तियोंको देख कर आश्चर्य होता है। यह द्राविडी शिल्पका चरम निदर्शन है। स्थानीय प्रवाद है, कि काञ्चीपतिने सिंहलसे प्रस्तर

मंगाकर उस पर पालिस कराके यह मन्दिर बनवाया था। परन्तु मन्दिरके देवनेसे मालूम होता है, कि उसका श्रेष्ठतम शिल्पनैपुण्ययुक्त चूनापत्थर (Limestone) का बना हुआ अंश उससे भी प्राचीन है। मधुराके एक नायकने धर्मप्रवृत्तिके लिए इसका अभ्यन्तर-प्राकार निर्माण कराया था। उसके बाद दो सेतुपति राजाओंने बहुत अर्थ व्यय करके बाहरका विचित्र चित्रपूर्ण शिल्प-मय मण्डप बनवाया था। उन्होंने जिस धूसरवर्ण पत्थरसे यह मण्डप बनवाया था, समुद्रका नमक लग कर घसक जानेके भयसे उन्होंने उस पर मोटा पलस्तर लगवा दिया था। इसका खच समुद्र तीरके बन्दरोंसे लिये हुए शुल्कमें-से हुआ था। इस मन्दिरके गठन-कार्यमें और भी एक आश्चर्यकी बात यह है, कि इसका द्वारपथ और चंदोबा ४० फुट लम्बे एक पत्थरसे बना हुआ है और गर्भगृहके चारों ओरकी स्तम्भश्रेणीयुक्त विस्तीर्ण आगन उससे भी बड़ कर आश्चर्यजनक है।

इस देवालयकी गठन-प्रणाली सम्पूर्ण द्राविडी ढंगकी है। अन्यान्य देवालयकी भांति क्रमशः अङ्गपुष्टि न हो कर समस्त नक्शोंको प्राप्ति एकत्र स्थिर करके किसी समय इसका निर्माण हुआ था। इसका वहिःप्राकार २० फुट ऊँचा और ४ गोपुरयुक्त है। पश्चिमका गोपुर सम्पूर्ण बना हुआ है और अन्य तीन असम्पूर्ण अवस्थामें पड़े हुए हैं। प्राकार और वरामदे इस देवालयके प्रधान गौरवके विषय हैं। इसकी लम्बाई लगभग ७०० फुट और चौड़ाई ४०० फुट है। लम्बाईका सारा अंश खुला हुआ है, चौड़ाई वा परिसरकी ओर स्तम्भों पर छत है। छत जमानसे ३० फुट ऊँची है। यहाके स्तम्भोंका कावकार्य चिदम्बरके पार्वती परमेश्वरकी कनकसभाकी स्तम्भावलीके शिल्पसे किसी भी तरह कम नहीं है। प्रत्येक स्तम्भ पर नाना प्रकारकी देव-देवी और प्राचीन राजाओंकी मूर्तियां खुदी हुई हैं। ऐसा उत्कृष्ट कार्य दक्षिणदेशमें और कहीं भी नहीं है। गर्भगृहके सामने जो वरामदा है, उसके एक तरफ रामनादके राजाओंकी मूर्तियां खुदी हुई हैं। पुरातत्त्वविदोंका अनुमान है, कि ईसाकी १६वीं शताब्दीके अन्तिम भागमें वा १७वीं शताब्दीके प्रारम्भमें मधुराके पेरुमल नायकने जब

सुन्दरेश्वरके मन्दिरका पुनः संस्कार और उसके भाय तन को पुदिकी धो, सम्मन्ताः सेतुपतियोंसे इसे देल कर हा रामेश्वरके मन्दिरका यह बड़ा बरमदा, मख्यप और माकार बनाया था। इसक बनानमें कमस कम पचास वर्ष लग होने।

देवालयकी भामिनोसे रामेश्वरके बहुतसे धार्मिक उत्सव हुआ करते हैं, जिनमें १० प्रधान ये हैं—

१ वैशाखमासकी शुद्धा पक्षीसे लग कर ब्रह्म दिन बसन्तोत्सव।

२ उषेष्टमासकी शुद्धा ब्रह्मोकी प्रतिष्ठोत्सव।

३ माघमासके मरणी नक्षत्रमें देवीका प्रथम प्योत्सव।

४ भाद्रपदमासमें उत्तर फाल्गुनी नक्षत्रमें पांच दिन तक कल्याण (विवाह) उत्सव।

५ भाद्रपदमासकी प्रतिपदासे छे कर ब्रह्मो तक मघराशोत्सव।

६ कार्तिकमासकी कार्तिकी पौर्णमासीकी प्रथोत्सव।

७ अग्रहायण मासके मरणी नक्षत्रमें देवीका द्वितीय प्योत्सव और शुद्धा कपोलीकी जहादीपोत्सव।

८ पौष-पूर्णिमाका उत्सव।

९ माघमासमें पञ्चविषस व्यापी माघोत्सव और शिवराशोत्सव।

१० फाल्गुनमासमें महामिपेकोत्सव।

रामेश्वर अक्षरसुधापत्र—हरिहरारतभवाध्यके प्रणेता।
रामेश्वरस—वैद्याभक्तिक्रिया नामकी चदान्तसूत्रवृत्तिक प्रणेता।

रामेश्वरनन्दी—एक कवि। ये काशीवासकी तरह महा भारतका पद्यानुवाद करके कवि जगत्में कीर्तिमान कर गये हैं। कवि भारतचन्द्रका तरह इनकी पद्धति रचना ईश्वर कागीदासके परवर्ती कवि-सा बोध होते हैं।

रामेश्वरन्यायवागाश—मन्मथमन्त्री नामक भ्रमरकोषकी टीकाके रचयिता।

रामेश्वर मङ्ग—१ रसराजलक्ष्मी नामक चौथक ग्रन्थके प्रणेता तथा विष्णुक पुत्र। २ विवेकमार्तण्ड नामक

योगशास्त्रक रचयिता। इन्होंने सुखतान गयासुहीनके भामहसे एक ग्रन्थ लिखा। ३ पद्मार्थादर्शके प्रणेता। ४ धर्मरत्नाकरक रचयिता। ५ सोमप्रणयन वर्णित एक कवि।

रामेश्वर मङ्गलार्थ—एक सायक बङ्गाकी ब्राह्मण। इन्होंने शिवायन, कविकामन्दन सत्यनारायण भाङ्ग बनाये। ये बाक्सिड पुस्तक कह कर जनसाधारणमें परिचित थे। इनके प्रतिपामहका नाम नारायण, पितामहका गोवर्धन तथा पिताका लक्ष्मण और माताका नाम रूपवती था। घांटाकके निकटवर्ती बरदा परगनेके अन्तर्गत यक्षपुरमें इनका जन्म हुआ।

यक्षपुरमें रहत समय इन्होंने 'सत्यपीरकी कथा' लिखी। इसके बाद मैदिनीपुरके अन्तर्गत कर्णगढ़के राजा रामसिंह और उनके लड़के पशोषन्तसिंहके समा सद्द हा वहाँ जा कर रहने लगे।

फिर किसी किसीका कहना है कि यह पशोषन्त सरकराज खाँके प्रतिनिधि धार्मिक मन्त्रीके साथ १७३४ ई०में झांझके लोभाने हो कर गये। वीवान होनेके पहले इन्होंने मुर्शिदाबादके अयोधमें भी बड़ी प्रतिपत्ति पाई थी।

राजाके आदेशसे यं कांसाई तीरपत्ती भ्रमने ननिहाळ कपाशदिकरी गाँवमें रहने लगे। इसी कंसावतो तटकी इन्होंने कीर्तिश्री तट नामसे वर्णन किया है। यहाँ और कर्णगढ़के अन्तर्गत महामाया धर्माम्बिकमें इनका पञ्च मुण्डी योगालन था। बहुत्यागक बाद मन्दिरके पास इनकी समाधि हुई और उसकी बगलमें पशोषन्त सिंह की भी समाधि हुई थी।

रामेश्वरमास्ती—लिङ्गच्छोकी भामकी दीपितिक रचयिता।

रामेश्वर मैथिल—मिथिलावासी एक प्राचीन कवि।

रामेश्वर योगीन्द्र—मयार्णवपद्धति नामक तन्त्रग्रन्थके प्रणेता।

रामेश्वर शर्मन्—१ तन्त्रप्रमेदके रचयिता रामेश्वरके पुत्र। २ शम्भुमाळा नामक अभिपानक प्रणेता।

रामेश्वर शास्त्री—१ सुवर्णाकान्तप्रभाक प्रणेता। २ बिहार वापी नामक मोमोसा ग्रन्थके रचयिता। ये सुप्रणयक

पुत्र ये । उक्त ग्रन्थमें माधव सर्वदका उल्लेख है ।
३ अद्वैततरङ्गिणोंके प्रणेता ।

रामेश्वरशिवयोगिमिश्रु—मीमांसार्थसप्रहकौमुदी और
शिवाष्टमूर्ति तत्त्वप्रकाशके प्रणेता । ये सदाशिव सरस्वती
के शिष्य थे ।

रामेश्वर शुक्ल—दत्तकचन्द्रिका टीका, दीक्षाविनोद और
दीक्षाविवेकके रचयिता ।

रामेषु (सं० पु०) १ रामगर, सरगंडा । २ रामचन्द्रका
वाण । ३ श्शुमेद, एक प्रकारकी ईध ।

रामोत्तरतापनीय—रामतापनीयोपनिषद्का द्वितीय खण्ड ।

रामोद (सं० पु०) एक प्राचीन ऋषिका नाम ।

(पं० ११११२०)

रामोदायन सं० पु०) रामोदरके गोतमें उत्पन्न एक
पुरुष ।

रामोपनिषद् (सं० खी०) अथर्ववेदके अन्तर्गत एक
उपनिषद्का नाम ।

रामोपाध्याय (सं० पु०) एक आचार्यका नाम ।

रामोपासक—राममन्त्रोपासक सम्प्रदायभेद । रामात् देखो ।

राम्म (सं० पु०) रामस्य विकारः रम्म । पत्ताशादिभ्यां वा ।
पं ४११८४१ इति अण् । व्रतमें बाँसका बनाया हुआ
दण्ड ।

राम्या (सं० खी०) १ रमणके लिये लाई गई । “स
इयान् उपसो राम्या” (ऋक् २।२।८) ‘राम्या रमणहेतु-
भूता ।’ (रायण) रात्रि, रात ।

राम्य (सं० पु०) १ राज । २ छोटा राजा या सरदार,
सामन्त । ३ सम्मानसूचक उपाधि । ४ रायवंश देखा ।

५ भाट, वंशज । गन्धर्वोंकी उपाधि ।

राम्य (फा० खी०) सम्मति, सलाह ।

राम्य—बम्बई प्रेसिडेन्सीके ठाना जिलेके शालसेट उप-
विभागान्तर्गत एक बन्दर । यह घोर बन्दर परमिटके
अन्तर्भूक है ।

राम्य—१ पञ्जाब प्रदेशके शियालकोट जिलेकी एक तह-
सील । यह इरावती नदीके दोनों किनारों तक विस्तृत
है । भूपरिमाण २७६ वर्गमील है ।

२ उक्त तहसीलके अन्तर्गत एक गण्डग्राम और
विचारसदर ।

राम्य—आसामप्रदेशके गारो पहाड़ जिलान्तर्गत एक बड़ा
गाव । यह सोमेशरी नदीके तट पर अवस्थित है ।
यहा पुलिगकी फाड़ो है । इस गांवमें मजुशीकी ही
संख्या अधिक है ।

राम्यका—बम्बई प्रदेशके रेवाकान्या विभागान्तर्गत एक
छोटा सामन्त राज्य । यह वर्तमान दो सरदारोंके
अधिकारमें है । ये बड़ोदाके गायकवाडकी वारह हजार
रुपये कर देने हैं ।

राम्यकोट—पञ्जाबप्रदेशके लुधियाना जिलेकी जगरायन
तहसीलके अंदर एक नगर । यह अक्षा० ३०° ३६'
३० तथा देशा० ७५° ३६' पू०के मध्य अवस्थित है । जन-
संख्या १०१३१ है । पहले यहा एक सामन्तराज्यकी राज
धानी थी । इस नगरमें इतिहास प्रसिद्ध राम्यकोटके
राम्यराज्य करने थे । ये जातिके राजपूत थे । पीछे
इन्होंने इस्लामधर्म ग्रहण किया । १४वीं सदीमें
इनकी शौर्यवीर्यकी ख्याति चारों ओर फैल गई ।

१२२३ ई०में इस वंशके प्रतिष्ठाता तुलसीदास
नामक एक राजपूत जयशालमौरसे फरिदकोट आ कर
रहने लगे । पीछे इस्लामधर्ममें दीक्षित हो कर
इन्होंने अपना नाम शेर चाच्छू रखा । इन्होंने वंशधर
शाहजहानपुर और तालबन्दी नगर बसा कर अपना
प्रभुत्व विस्तार कर गये । सम्राट् अलाउद्दीनने (सैयद-
राज १४४५से १४७४ ई०) उन्हें राम्यकी उपाधि दी ।
१६२० ई०में उन्होंने लुधियाना अपने कब्जेमें कर
राज्यशासन फैलाया । १८वीं सदीमें उनकी राज्य-
सौमा शतद्रुके दोनों पार तक फैल गई ।

सिख शक्ति हास हो जाने पर भी यहांके राम्यराजे
१६वीं सदीके प्रारम्भकाल तथा अपना राज्याधिकार
अक्षुण्ण रखनेमें समर्थ हुए थे । इसी समय इन्होंने
हरियानाके विख्यात वीर और सौभाग्यन्वेषी अंगरेज-
युवक जार्ज टामसकी सहायता ली थी । १८०२ ई०में
यहांके शेर खाधीन राजा राम्यपलायस इस लोकसे
चल बसे । इसके बाद इनकी माता नूर-उल्-निसार
के हाथ राज्यशासनका भार पड़ा ।

१८०६ ई०में महाराज रणजित् सिंह नामा और किन्द-
पतिको पतियालाराज्यके विरुद्ध सहायता करनेके लिये

शतशु पार कर रायकाट जा पहुँचे। उन्होंने रातो नूर-उम्सिसाको हरा कर उनका राज्य अपने और सहायकोंके बीच बाँट दिया। नूरउम्सिसाको रायकोट तथा भगवा पर राजवंशधरतोंकी बहुत थोड़ी जागीर मिली। १८३१ ई० में नूरउम्सिसाके मरने पर राय एभावसका विधवा परानो बचो गुधा सम्पत्तिको उत्तराधिकारिणी हुई। १८५४ ई०में जब उनकी मृत्यु हुई, तब अगरेज राजकी आज्ञा अनुसार बृहत् पुत्र इमामबख्त खानों रायकी उपाधि और इत्क सम्पत्ति मिली। रायकोट और मामा राजन्वक भक्तिरिक्त थे अगरेज-गवर्मेन्टन साज्जाना हो हज्जार रुपये पाते थे।

यहाँ एक बर्नाम्सुकर हाई मिडिल स्कूल है जिसका एक म्युनिसिपलिट्यास चखता है। मलावा इसके यहाँ एक गवर्मेन्ट अस्पताल भी है।

रायकोट—माम्नामसे सिरेम्सके सामेक जिमेक हृष्य गिरि शालुइके अन्तर्गत एक गव्दप्राम। यह भूभाग १२ ३१' ३०" तथा ५३' ५' ५०" बीच पड़ता है। १८७३ ७८ ई०के बुमिष्ठतक पेनसन पायेवाले सेनाबिभाग के बड़े बड़े कर्मचारी यहाँ सुखमय स्वास्थवास बना कर रहते थे। पीछे मद्रासरोक भयल भाषेस अधिका अधिवासी घट भादि छोड़ कर भाग गये।

इस नगरके उत्तर रायकोट गिरिदुर्ग है जो वार मइम दुर्गका एक है। आज कल उन्में अगरेज सैन्य रखे गये है। इसी दुर्गके समीप ल्बनामकवात गिरि सङ्घ है। १७६१ ई०में साई बर्नाम्सिसाकी विधवात दासिवास्त्यासाक समय मेजर पायदान इस पर बृहत् जमान्या। १७६२ ई०की सन्धिसे अनुसार यह अगरेजोंके अधिकास्में आया। १७६६ ई०में आन्ड्रुपत्तन मन्निपाल कावमें जिनरल हारिसक अधीनस्थ अगरेज सनाबुमने दुर्गके पास छावना उभायो। समुद्रका तलसे २४५६ फुट ऊँचा इस दुर्गका पथ साययेव आज भी मौजूद है। रायकोट (दि० पु०) बड़ा कर्तेश, इसके एक छोटे बेटके बराबर, सफ़ेद और गुलाबी रंग मिल बहुत सुन्दर होत है।

रायकवास (दि० पु०) येश्वीकी एक जालि।

रायगढ़—दिनाजपुर जिलामार्गत एक नगर। यह भूभाग

२५ ३७ ३० तथा देगा० ४४ ६ पू०के बीच कुलिक नदीके तट पर अवस्थित है। जनसंख्या १०१ है। यहाँ चावल, पाट और मिश्र मिश्र अन्न आदिका विस्तृत कारखाना है। अधिकतर यहाँकी उपजकी रपतली नदी द्वारा ही जाती है।

रायगढ़—मध्यप्रदेशके सम्बलपुर जिलामार्गत देशी सामन्तवाय्य। यह भूभाग २१ ४३' ३०" से २२ ३३' ३०" तथा देगा० ८२ ५७' से ८३ ४८' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १४८६ वर्गमील है। इसके उत्तरमें छोटानागपुरके अन्तर्गत मरगुजा और गाङ्गपुर राज्य, दक्षिणमें महानदी, सम्बलपुर जिला कोदापागा जमीनदारी और गाङ्गपुरका कुछ अन्न और पश्चिममें चम्पूर और शकटो पड़ता है।

दक्षिणम महानदी तक विस्तृत स्थानमें उत्तमरूपसे खेतोबारा होती है। उत्तर और पूर्ण पहाड़ों और पत्तोंस भिरा हुआ है। इन पत्तोंमें अधिक शावक पेड़ पाये जाते हैं। कदा कही शैलमक काड़, छाल और धूना उगता है। महानदी तथा उसकी तटों, छाल और खेतु नामकी तीन शाखा स्थानाय जलसरयराहका एकमात्र उपाय है। चावल, इन्क, कपास, सरसों, गेहूँ और धना यहाँका प्रधान उपज है। कपास और सरसस यहाँ एक लच्छका उपजा तैयार होता है। यहाँ कोह और कांसक बरतनीका सामान्य कारदार भी है। बंगाल नागपुर रेलवेका सड़क इस सामन्तराज्यके बीचो बीच हो कर बीड़ गई है।

यहाँका सरदार-वंश गाँड़ जातीय है। कहत है, कि इस वंशके ठाकुर दरियावालिह नामक एक व्यक्तिने मराठोंका प्यासा मन्द्द पशु बाह धो जिसस इन्ह पञ्जा की उपाधि मिली। यहाके वर्तमान सरदार भूपद्वय सिंह है। इनका जन्म १८६३ ई०में हुआ था तथा १८९४ ई०की गद्दी पर बैठे।

रायगढ़के सामन्तराज्यके अध्याम और भा वार सरदार हैं उनमेंस अन्नकार सिंह १२, ममर सिंह ५, ठाकुर रघुनाथ सिंह ३० तथा ठाकुर परमरपदसिंह ३० गाँव का गायन करत है। ये सबके सब राजाके भारतीय हैं। जनसंख्या १७४६२६ है। इस सामन्तराज्यमें राम

गढ़ नामका एक शहर और ७२१ गांव लगने हैं । यहां कुल मिठा कर २४ स्कूल हैं जिनमें इंग्लिश और वर्नाकुलर मिडिल स्कूल और दो कन्या पाठशाला हैं । यहां एक अस्पताल है जिसका चर्चा चर्चा रायगढ़ शहरसे चलता है । प्रतिवर्ष यहां ३७०००से अधिक रोगियोंकी चिकित्सा हुई थी ।

२ उक्त राज्यका प्रधान नगर । यह अक्षा० २१° ५४' ३० तथा देशा० ८३° २४' ५० के लो नदीके किनारे अवस्थित है । जनसंख्या ६७६४ है । यह कलकत्तेसे ३६३ मील दूर बंगाल नागपुर रेलवे लाइन पर पड़ता है । इस नगरमें तसरका कारवार जोरों चलता है । यहां एक अंगरेजी स्कूल, एक प्रायमरी स्कूल, एक कन्या पाठशाला और एक अस्पताल है ।

रायगढ़—बम्बई-प्रेसिडेन्सीके कोलावा जिलान्तर्गत एक एक नगर और गिरिदुर्ग । यह अक्षा० १८° १४' ३० तथा देशा० ७३° २७' ५०के मध्य पूनासे तीस मील दक्षिण-पश्चिम पड़ता है । इसकी छोटी समुद्रपीठसे २४५२ फुट ऊंची है । लोग इसे रायरी कहते थे । अंगरेजोंने इसका नाम Gibraltar of the East रखा । महाराष्ट्रकेशरी शिवाजीने अपने राज्यकालका शेष सोलह वर्ष (१६६४-८०) इसी दुर्गमें रह कर बिताया था । उस समय रायगढ़ राजधानी नाना श्रोसमृद्धिमें भूषित थी ।

सहायिके उत्तरघाटशैलके एक टूटे फूटे खड पर दुर्ग स्थापित है । इसकी अधित्यकाभूमि और मूल पर्वतकी छोटी दो मीलके फासले पर है । जहां यह दुर्ग अधिष्ठित है उसकी अधित्यकाभूमि पूर्व पश्चिम डेढ़ मील लम्बी और उत्तर-दक्षिण एक मील चौड़ी है । भीतर जानेके लिये पश्चिम और दक्षिणमें सिर्फ दो दरवाजे हैं । इसके सिवा दुर्गमें घुसनेका और कोई रास्ता नहीं है । दुर्गका दक्षिण और पूर्व पर्वतगाढ इतना सीधा और ऊंचा है, कि उसे पार कर ऊपर उठना मुश्किल है । इन तीन दिशाओंके रक्षणार्थ किसी प्राचीर और परिखेकी आवश्यकता नहीं पड़ती । दक्षिणात्य और समुद्र उप-कूलमें जाने आनेकी सुविधा रहनेसे यह दुर्ग पहले हीसे मसिद्ध था ।

१२वीं सदीमें रायरीमें एक महाराष्ट्र सामन्तवंशका राज्य प्रतिष्ठित था । १६वीं सदीमें यहांके सरदारोंने विजय-नगराधिपकी वशता स्वीकार कर ली । १५वीं सदीके मध्यभागमें द्वितीय बाल्लणोर राज अल्लाउद्दीन शाहने रायरी सरदारोंसे कर वसूल किया था । १४७६ ई०में यह नगर अहमदनगरके निजामशाही राजाओंके दखलमें आया । १६३६ ई०में मुगल-सेनापतिने अहमदनगरसे राजाकी पराजित कर रायरी राज्य बीजापुरके आदिल शाही राजाओंके हाथ सौंप दिया । जब बीजापुरराज-वंशके अधिकारमें यह स्थान आया, तब इसका नाम इस्लामगढ़ हो गया । उन्होंने इस सामन्तराज्यका शासन-भार जंजिराचासी सिद्धियोंके ऊपर दिया । उस समय यहां एक दल मराठो सेना रफी गई ।

१६४८ ई०में रायरी शिवाजीके हाथ आया । उन्हें जब कोई उपयुक्त स्थान न मिला तब उन्होंने यहीं राज-धानी कायम की और इसका नाम बदल कर रायगढ़ रखा । उन्हींके यत्नसे यहां राजभासाद, पजाना, राजकीय कार्यालय, टकसाल, शस्यभाण्डार, अखागा, बाकू-खाना, सेनावास आदि तीन सौ पत्थरकी अट्टालिका बनी थी । इन्होंने अपनी पहाड़ी प्रजाओं और कर्म-चारियोंके खान-पानकी सुविधाके लिये एक बड़ा बाजार और जलकी सुविधाके लिये बहुतने तालाब बनाये थे । जब यह स्थान धन और जनसे पूर्ण हो गया, तब उन्होंने इसकी सुरक्षाका बन्दोबस्त कर दिया ।

१६६४ ई०में शिवाजीने सूरत लूटा और उसी लूटके धनसे अपना सजाना भरा तथा बहुतसे कामोंमें रुपये खर्च कर रायगढ़ जगजग राजधानीको उपयुक्त समृद्धि-शाली बना दिया था । उक्त वर्षमें जब इनके पिताकी मृत्यु हुई तब ये रायगढ़ आये और राजाकी उपाधि ले कर इन्होंने अपने नामका सिक्का बनवा कर प्रचार किया । १६७४ ई०में इस रायगढ़में इन्होंने बड़े समारोहके साथ स्वाधीन भावसे राज्याभिषेक सम्पन्न किया था ।

१६६० ई०में औरंगजेबने रायगढ़ जीता, पर मुसल-मानोंका शक्ति हास हो जाने पर वह फिर मराठोंके हाथ आया । अमिल महीनेमें अंगरेजसैन्यन रायगढ़ पर

इमसा किया। कानाकाह गिरिधरपुरसे १८ दिन तक अनवरत गोला बरसानेके बाद यह दुर्ग भू गरेजोके हाथ आया था। इस दुर्गके भवसाबधेयमें पाँच लाख रुपये मिळे थे।

रायगढ़—अयोध्यादेशके प्रतापगढ़ जिलास्तर्गत एक नगर। यह विहारसे छ। मील दूर पड़ता है। यहाँ तीन हिन्दूमन्दिर और एक मसजिद है।

रायगढ़—मन्द्राज प्रेसिडेन्सीके विशाखपत्तन जिलेके जयपुर जमींदारोके सन्तगत एक गाँव ग्राम। यह अक्षा० १६ १' ४०" उ० तथा देशा० ८३ २७' ३०" पू० तक विस्तृत है। जयपुरके राजाका एक मासाद यहाँ था। अभी राजा यहाँ नहीं रहते। यहाँ मात्र कुछ उत्कल ब्राह्मणों की ही वास भविक है।

रायचटो—१ मन्द्राज प्रेसिडेन्सीके कड़ापा जिलास्तर्गत एक तालुक। यह अक्षा० १३ ५०' से १४ २०' उ० तथा देशा० ७८ २५' से ७९ १०' पू०के बीच पड़ता है। मूरिमाप ६६८ वर्गमील है। इस उपविभागका अधिकांश स्थान ही पर्यतमय है। तालुकमें रायचटो नाम का एक शहर और ८७ गाँव जगते हैं।

२ एक उपविभागका सवर और जिलेका एक नगर। यह अक्षा० १४ ४ उ० तथा देशा० ७८ ४६' पू०में माएरकी नदीके उत्तर किनारे अवस्थित है। यहाँ हर साल रथयात्रा उत्सवमें मेला जमता है जिसमें जगमग छाड़जार मनुष्य जुटते हैं।

रायचूड़—देवरावाड़के सन्तगत ५० जिला। यह अक्षा० १५ ५०' से १६ ५४' उ० तथा देशा० ७६ ५०' से ७८ १५' पू० तक विस्तृत है। मूरिमाप ३१०४ वर्गमील है। इस जिलेमें दो सब मुन्ष शहर हैं—रायचूड़, गढ़बाज, कोपाज, मुन्नज, देवदुर्ग, कछूर और मानमी। जनसंख्या ५०१२३१ है। जिसमें हिन्दूकी संख्या सैकड़ों पीछे १० है। यहाँकी भाषा टेङ्गू कणाडा और उर्दू है। रायचूड़ विजापटाका कन्द्र है। यहाँ सुता रूपड़े और माळमपुर तालुकमें सतर जो और तरह तरहके रंगीन रूपड़े तैयार होते हैं। यह जिला तान सब जमीनजमीं विभक्त है।

रायचूड़—दक्षिणात्यके निजामअधिष्ठित देवरावाड़का एक नगर और दुर्ग। यह अक्षा० १६ १२' उ० तथा देशा०

७७ २१' पू०में कृष्णा और मुगमत्ता नदीके बीच बीचमें अवस्थित है। जनसंख्या २२१६५ है, जिनमें हिन्दूकी ही संख्या सबसे अधिक है, नगरके बीच दुर्गकी शोभा बड़ी ही सुन्दर है और बहो उल्लेखके योग्य है। दुर्गके पश्चिम द्वार छोड़ी दूर पर प्राचीन राजमासादका टूटा फूटा खंड हर पड़ा है जो अभी कारागारमें परिणत हो गया है। दुर्गके पूरब नगर और बाजार है। नगरका पथ घाट और भट्टाजिका मादिकी गडन बडी ही सुन्दर है। काठके तख्त और मसुप सुल्पासके जिपे यह स्थान बड़ा मशहूर है। प्रेसिडेन्सियल पेनिसुडार और मन्द्राज रैलवे-स्टेशन नगरसे भाग जोस पड़ता है।

रायज (७० वि०) मिसका रथाज हो, जो प्यापारमें आ रहा हो, चकलसार।

रायजाक—उत्तर बंगमें प्रवाहित एक नदी। यह मूदान पर्यंतसे निकलती है और पश्चिम द्वारके बीच होती हुई जलपाईगोड़ी और मुन्नजकुडीक समीप हो कर कुचविहार में घुसती है।

रायज (सं० इंडी०) १ पोडा। १ कन्व, रोना। ३ चोत्कार।

रायकेन्द्र सरस्वती—ग्रन्थोपनिषदाप्यकी भाष्यविवरण नामक टीकाके प्रणेता। ये कैवल्पके शिष्य थे।

रायवा (हि० पु०) दूरो या महु में बुबा हूभा साग, कुम्हडा, जीभा या बुदिया मादि जिसमें ममक, मिष, शोटा मादि मसाजे पड़े रहते हैं।

रायपुरा—१ मन्द्राज प्रेसिडेन्सीके पेशुरी जिलास्तर्गत एक तालुक और उपविभाग। यह अक्षा० १४ २४' से १५ ४ उ० तथा देशा० ७६ ४७' से ७७ २१' पू० तक विस्तृत है। जनसंख्या ८२७८१ है। इस तालुकमें सिर्फ एक शहर रायपुरा और ७१ गाँव जगते हैं। यहाँकी जनसंख्या और सब तालुकोंसे जाँ इस जिलेमें है, कम है। भाषे स अधिक मनुष्य टेङ्गू और बाँकी कणाडी भाषा बोलते हैं। यहाँके लोग बिलकुल मनपढ़ हैं। इस तालुकमें बहुत कुप और भरने हैं जो साल सालमें कोद कर निकाले जाते हैं। बहुत जमीन रहनेस खोबी जमी है इससे धान बहुतायतसे उपजता है। कुछ जमीन उत्तर भी है।

२ बेलुरी जिलेका एक नगर। यह अक्षा० १४ ४२ उ० तथा देशा० ७६ ५१ पू०में अवस्थित है। जनसंख्या १०४८८ है। यह नगर साफ सुथरा सुन्दर तौरसे सजा हुआ और दुर्ग द्वारा सुरक्षित है। पास ही एक गिरि-दुर्ग है जिसकी ऊंचाई १२०० फुट है। इस पर्वतकी दक्षिण दिशा सरल और दुरारोह है। नाँचे केला परिखा प्राचीर और वप्रोदिसे सुरक्षित है। यहांसे पहाड काट कर एक संकीर्ण पथ निकाला गया है जो केला तक चला गया है। पथके बीच बीचमें एक एक भीतर घुसनेका द्वार है और प्रत्येक द्वारके बाद ही दुर्गकी सुरक्षाका स्वतन्त्र बन्दोबस्त है। इस पथका आधा आने पर पलेगार-सरदारोंका प्राचीन प्रासाद दिखाई पड़ता है। साधारणका विश्वास है, कि १६वीं सदीके प्रारम्भमें वह प्रासाद बनाया गया था। राजप्रासादके समीप ही राम और कृष्णके दो सुन्दर मन्दिर हैं। इसके अलावा पर्वतके ऊपर अनेक अट्टालिका और उद्यान आदिका ध्वंसावशेष पड़ा हुआ है। अभी वहां कोई नहीं रहता।

रायदुर्गके प्राचीन पलेगारगण 'रोया' कहलाते हैं। इस वंशके जग नामक एक सरदारने उपरोक्त दुर्ग और राज प्रासाद बनवाया था। १६वीं सदीके अन्तमें विजयनगरराजके पदच्युत किसी प्रधान सेनापतिके वंशधरने यहांके पलेगार सरदारको गद्दीसे उतार दिया और निकटवर्ती कोण्डेरपि दुर्ग जीत कर दोनों जगह अपना आधिपत्य फैलाया। १७३६ ई०में शीरा अवरोधके समय पलेगारोंको हदरअलीने सहायता पहुंचाई और आप राजा हो कर पलेगार सरदारको यह स्थान उपहारमें दिया था, तथा उक्त सम्पत्तिका राजस्व पचास हजार रुपये धार दिये। इसके बाद पलेगार-बेड्कटपति नायबोने टांपू सुलतानको अदोनीकी चढ़ाईमें सहायता देना नामंजूर कर दिया, जिससे टांपूकी क्रोधान्निधक उठी और रायदुर्ग पर हमला कर पलेगार सरदारोंको श्रीरङ्गपत्तनमें बन्दो कर ले आये। यहां बेड्कटपति उनकी आज्ञासे श्रमपुर भेज दिये गये। इसके कुछ काल बाद ही लार्ड कर्नवालिसने राय-दुर्ग पर चढ़ाई कर दी और दुर्ग ब्याप्त कब्जेमें कर लिया।

१७६६ ई०में बेड्कटपतिके भांजे गोपाल नायक श्री-

रङ्गपत्तनसे कारामुक्त हो कर राय दुर्ग भाग आये और ग्रीव ही एक दल सेना इकट्ठी कर रायदुर्ग अधिकार करनेमें लगे। इसी समय निजामने रायदुर्गका सुशासन और बन्दोबस्त करनेके लिये महम्मद अमीन पाँको भेजा। निजामकी सेना ओर गोपालमें मुठभेड हुई। गोपाल हार पा कर बन्दोरूपमें हदरावाद भेजे गये। अंगरेजोंके हाथमें आनेके बाद गोपाल गूदांमें नजरबन्द रहे। उनके जीते तथा मरने तक भी अंगरेज राजने उनके परिवारको मासिक दरमाहा दिया था।

रायदुर्ग—बगालके इतिहासमें प्रसिद्ध एक कायस्थ राज-पुरुष। इनका असली नाम महाराज दुर्गाभराम सोम था। ये दक्षिण-राष्ट्रीय कायस्थ थे।

मिरजा महम्मदके दो पुत्र थे—हाजी अहमद और मिरजा महम्मद अली। मिरजा अहमद अली छोटे थे। इन्होंने पीछे सूबा बगालकी गद्दी पर अधिकार कर लिया था और 'अलीवर्दी मुहम्मद जग' उपाधि धारण की थी।

सुजा उद्दीन पाँके अनुग्रहने अलीवर्दी असुरेश्वर नामक उडिष्याके एक परगनेके तहसीलदारोंके काम पर नियुक्त हो कर जानकीराम सोम नामक एक उच्चवंशके कायस्थको अपने नीचे पेशकार नियुक्त किया। जानकीराम थोड़े ही दिनोंमें अपनी कार्याकुशलता, बुद्धिमत्ता और विश्वस्तताके कारण अलीवर्दीके विशेष प्रियपात्र हो गये। अलीवर्दीकी पदोन्नतिके साथ-साथ जानकीरामकी भी पदोन्नति होने लगी, क्योंकि अलीवर्दी जानकीरामको सर्वदा अपने पास रखना पसन्द करते थे।

मुर्शिदाबादके निकटवर्ती गडिया नामक स्थानमें सरफराज खाँके पराजित और मारे जाने पर अलीवर्दी बगाल, विहार और उडिष्याके सूबेदार हुए। अलीवर्दी जानकीरामको कभी अपनेसे दूर न रखते थे। जानकीराम मुर्शिदाबादकी निजामतके सब कामोंके मुफ्तार नियुक्त हुए। थोड़े ही दिनोंमें अलीवर्दीने उन्हें कर विभागका दीवान बना दिया।

१७२० ई०में दिल्लीके बादशाह महम्मदशाह दक्षिण-प्रात्यकी 'चौध' देनेका वचन दे कर प्रवल पराक्रान्त मराठों

के साथ सन्धि करनेको बाध्य हुए थे। चौप देना ओंकार करते पर भी बाबशाह मराठोंको पूरे रुपये न दे सके। इसर भन्नीबर्दोनि भी बाबशाह ही अनुमतिके बिना सूबा बनाऊ पर अधिकार कर दिया था इस बिधे बाबशाहने ३ गाछस चौप वसूल करने और भन्नीबर्दोको हमन करनेके लिए मराठोंको अनुमति दे दी। इस चौप वसूलोके बर्दाने इन्होंने ३ गासकी प्रजा पर बस्थाकार करना और लूटना शुरू कर दिया। भन्नीबर्दो का उचित उपायले इसका प्रतीकार न कर सके और इसलिये उन्होंने भस्त्र उपाय अवलम्बन करनेकी ठान ली। उन्होंने सन्धिज्ञा प्रस्ताव करके जानकीरामको महाराष्ट्र संभापति भास्कर परिब्रतक सिधिरिमें भेजा। जानकीरामके वापस आगलसे मुग्ध हो कर भास्कर परिब्रत भन्नीबर्दो काँले संधिकी बातचीत तय करनेके लिए उनसे साक्षात् करनेको तैयार हो गये। दोनों पक्षोंकी सम्मति से वर्दमाब सिद्धिके नामकर नामक स्थान साक्षात्क लिये तय हुआ। मराठोंकी भयने वस्तुमें या कर किस तरह उन्हें मार डालना होगा इस बातका इत्तजाम भन्नीबर्दोने पहलेसे ही ठीक कर रखा था। उन्होंने जानकीराम, मुस्तफा भाँ और मिरजा इकीम-शैय काँ के सिवा यह बात किसोको जाहिर नहीं की थी। वस्तुमें प्रवेश करते ही मुस्तफा काँ और नवाबके आश्रय सेनापतियो ने पारो तरफसे मराठो पर आक्रमण किया। भास्कर परिब्रतका मस्तक भन्नीबर्दो काँके सामन पेश किया गया। संभापतिकी मृत्युसे मराठा सेना काँतोभा छाड़ कर भाग गई। जानकीरामकी मस्तकापट्टासे कुछ समयके बिधे भन्नीबर्दो कति मराठो के उपद्रवसे निस्तार पाया। इस कारण जानकीरामको "दीवान व ठन" की उपाधि प्रदान की गई और कुछ ही समय बाद उन्हें समरविभागका प्रभाव दायाल बना दिया गया।

उस समय सिराज उद्दौलाको उमर उपादा न थी। भन्नीबर्दो काँ उस तदवपयसक युधकको रटना बड़ा राज्य सौंप कर निश्चल न थे। उन्होंने अपने प्रभाव बिभ्रल कर्मचाय और प्रिय मन्त्री जानकीरामको विहारका नायब सूबेदार नियुक्त किया। जानकीरामको

इस उपलक्षमें सम्मानसूचक भास्कर पालकी मीर मौबत प्राप्त हुई। यद्यपि जानकीराम सिराज उद्दौलाके भयान थे, तथापि राज्यशासनका मार भसलमें उन्हीं पर था।

जानकीरामने इस उधे पक्ष पर नियुक्त हो कर बिरोध प्रस्तावक साथ कार्य चलाया था। उन्होंने नवाबप्य जमीनदारोंका बर्धम किया था और तहसीलक्य भ्रष्टा इत्तजाम करके कर भ्रष्टी तरह वसूल करने लगे। बिहारमें बाबशाहके दरबारके उमरावोंकी भी आयशाह था, इसका लगान उन्हें न मिलता था। जानकीराम सब तहसील वसूल करके निपमितरूपसे दिव्ती भेजने लगे। इससे उमराव उन पर बहुत खुश थे और मौका पाते ही बाबशाहस उनको कार्यभरताकी प्रस्ताव करते रहते थे। बाबशाहने जानकीराम पर प्रसन्न हो कर उधे महाराज बहादुरका बिस्ताब और "उद्दौलारी" मनसबदारों तथा भास्करदार पालकी, मौबत, फडम, शमरोर, दास और धामर इत्यादि व्ययहार करनेका आदेश दिया। बुर्जैमराम इन्हीं महाराज जानकीरामके ही उपद्रवुक्त थे।

बुर्जैमरामने योग्य पिताकी देखरेकमें घोड़ी ही उमरमें छतकाशीन राजनैतिक विपदीमें अनिच्छता प्राप्त कर ली थी। नवाब भन्नीबर्दो महाराज जानकीरामके पुत्रों को इन्हेला स्नेहकी दुषिसे देखते थे। इस बात पर भी नवाबका लक्ष्य था, कि वन सबको पक्षोचित कार्य सिद्धे। जानकीरामके कीशससे मराठोंके उपद्रवसे देशकी रक्षा होने पर नवाबने बुर्जैमरामको बङ्गियाका सूबेदार बनानेका अनिमाय मरूठ किया, किन्तु उस समय बुर्जैमराम उक्त पक्ष ग्रहण करना न गोकार नहीं किया। ये भन्नी बर्दोके प्रिय बङ्गियाके सूबेदार मन्बुस सुमानके शीवान् हो गये। दोड़े दिन बाद मन्बुस सुमानकी मृत्यु होने पर बुर्जैमरामको "राजा"की उपाधि दे कर बङ्गियाका सूबेदार बना दिया गया (१७३३ ई०)। इसके कर मास बाद ही नागपुरसे मराठा सेनाने मा कर भस्करमात्र बङ्गिया पर आक्रमण कर दिया। बुर्जैमराम शीवार न थे। तथापि ये अन्धी अन्धीमें कुछ सेना समझ करके आत्मच्छाके लिए प्रस्तुत हो गये। परन्तु भवर्कित आक्रमणकी रोकनेमें वे, सफल न हुए। मराठा सर

वार उन्हें कैद करके नागपुर ले गये। वहाँ ये कुछ समय तक कारागारमें बंद रहे। दुर्लभराम एक अच्छे गायक भी थे—कारागारमें कैदी हालतमें भी वे जी खोल कर गाना करते थे। एक दिन सरदारकी स्त्री उनका गाना सुन कर मुग्ध हो गईं और सरदारसे बोली—'जो आदमी जेलखानेमें रह कर भी मौजसे गाना गाता है, उसे कैद रखनेसे क्या लाभ?' सरदारने उसी दिन दुर्लभरामको छोड़ दिया और साथ ही इस बातका भी इस्तजाम कर दिया, कि जिससे उन्हें कोई तकलीफ न हो। इसके बाद बीच बीचमें दुर्लभराम सरदारको गाना सुनाया करते थे। खैर जो हो, नवाब अलीवर्दीने मराठा-सरदारको तीन लाख रुपया भेज कर तथा बंगालकी चौथके बड़े उडिष्याकी आमदनी छोड़ देनेकी स्वीकारता दे कर दुर्लभरामको अपने यहाँ बुला लिया। दुर्लभरामके मुशिदावाद आने पर उन्हें दीवानकी निजामत पर मुकर्र किया गया।

१७५३ ई०में अलीवर्दीके विश्वस्त मित्र महाराज जानकीरामकी मृत्यु हुई। नवाबने चारों पुत्रोंको शोककी खिलवात दे कर समवेदना प्रकट की। जानकीराम कई लाख रुपया खर्च करके दक्षिणराष्ट्रीय कायस्थसमाजके गोष्ठीपति हुए थे। पिताकी मृत्यु होने पर राजा दुर्लभरायने पदोचित सम्मानकी रक्षार्थ समस्त दक्षिणराष्ट्रीय समाजको निमन्त्रण दे कर बड़े समारोहके साथ पिताका आद्यश्राद्ध किया। कहते हैं, कि ऐसे समारोहके साथ श्राद्ध कायस्थसमाजमें पहले कभी नहीं हुआ था। खयं नवाब और समस्त बंगालके राजा लोग श्राद्धसभामें उपस्थित हुए थे।

राजा दुर्लभराम पिताके नाम पर खालसा और दीवान प-तनका कार्य चलाते थे, अब वे ही स्थायिरूपसे उक्त श्रेष्ठ पद पर नियुक्त किये गये। रामनारायण महाराज जानकीरामके अधीन दीवान थे, अब दुर्लभरामकी कृपासे वे भी बिहारके नायब सूबेदार हो गये।

नवाब अलीवर्दी खाने मृत्युसे कुछ समय पहले अपने प्रिय दीहित सिराजउद्दौलाको बंगाल, बिहार और उडिष्याका नायब सूबेदार बनाया था, परन्तु उस समय उक्त तीनों प्रदेशोंका राजकीय कार्यभार सब राजा

दुर्लभरामके ही हाथमें था। सिराज नाममात्रके लिए सूबेदार होने पर भी कुचक्रियोंके परामर्शमें आ कर उन्होंने खर्च करनेकी चेष्टा की थी। यहाँ तक कि दुर्लभरामको मारनेके लिये अलीवर्दीके विरुद्ध विद्रोहाचरण करनेमें भी कोई कसर न छोड़ी थी। परन्तु इस समयकी नवाबी सेना दुर्लभरामके अधीन थी और खयं नवाब उनके अनुकूल थे, इसलिये सिराज उनका कुछ कर न सके।

१७६६ ई०की २५ अप्रैलको अलीवर्दीका देहान्त हुआ और सिराज बंगाल, बिहार और उडिष्याके नवाब हुए। सिराजने एकाधिपत्य प्राप्त करके सबसे पहले दुर्लभरामकी क्षमता घटानेकी तरफ ध्यान दिया। परन्तु सहसा उद्देश्य सिद्ध न हो सका। इसी समय अङ्गरेज कंपनीने भी अपना सिर ऊंचा करना शुरू किया। दाक्षिणात्यमें अङ्गरेज और फरासीसियोंमें युद्ध होनेको सम्भावना थी। अङ्गरेजोंने फोर्ट विलियमके किलेको मजबूत करनेकी तैयारियां कर दीं। यह समाचार शीघ्र ही सिराजके कर्णगोचर हुआ। उन्होंने इस समय दुर्लभरामको नाराज करना उचित न समझा और उन्हें अङ्गरेजोंको कलकत्तेका दुर्ग बनानेसे रोकनेका आदेश दिया। अंग्रेजोंके इतस्ततः करने पर उन्होंने दुर्लभरामको ३००० सेनाके साथ कासिमबाजारकी कोठी पर अधिकार करनेके लिए भेजा और खुद भी २ली जूनको सेना सहित कासिमबाजारकी तरफ खरवाना हुए। बाद साहब आ कर दुर्लभरामके शरणापन्न हो गये। ४थी जूनको दुर्लभरामके हाथ कासिमबाजारका दुर्ग सौंप दिया गया। इस बात पर दुर्लभरामने लक्ष्य रखा कि अङ्गरेजों पर किसी तरहका अत्याचार न होने पावे।

सिराज जिस समय नायब सूबेदार थे, उस समय मोहनलाल नामका एक साधारण कायस्थ उनका मुन्शी था। पीछे वह दुर्लभरामके नीचे नायब नियुक्त हुआ था। सिराजने सूबेदार होनेके थोड़े दिन बाद ही अपने प्रियपुत्र मोहनलालको नायब सूबेदार बना कर उन्हें महाराजा बहादुरका खिताब दिया और सातहजारी मनसबदार बना दिया। मोहनलाल दीवान-प-मुदार

इन्-मोहन अर्थात् सर्वप्रधान मन्त्री नियुक्त हुए। मीर जाफरको पक्षपुत्र करके उनके स्थान पर मीरमन्त नामक एक मामूली अल्पमोका प्रधान सेनापतिका पद दिया गया। इस प्रकारके ऊपरटोप कार्य इन्हें कर मन्त्रीबर्तोक अमानिक राजपुत्रगण बड़े नाराज हुए। बाद कर दुर्लभराम और मीरजाफरको बहुत घुप मानूम हुआ। जो व्यक्ति उनके अर्थात् ये, ये सब उससे ऊपर बैठेगे और उन पर कुसूम करिये इस बातका अति मानो दुर्लभराम और मीरजाफर उपेक्षा न कर सकें।

सीकृतजंगके मनोगत अतिप्राय ममत्प्रेमके छिप राजा दुर्लभरामके कनिष्ठ भ्राता रासबिहाराको पहले होस धोरनगर और गोम्बोदाका फौजदार बना कर भेज दिया गया था। अब (१७१६ ई० नवम्बर) सिराज अर्थ महाजनान मीरजाफर दुर्लभराम आदिके साथ सेना सहित सीकृतजंगके बिकर अगसर हुए। दोनों पक्षमें घमसान युद्ध हुआ। इन समय श्यामसुन्दर नामक एक ब गाजा कायस्थने गोमन्दा सेनाके सेनापतिके रूपमें सीकृतजंगको तरफसे ऐसी धोरता थी कि प्रधान प्रधान मुसलमान सेनापतियोंके सिर फुक मये थे। कुछ भी हो, इस युद्धमें विजय सिराजका ही तरफ रहा, और मोहनलासके पुत्रको सीकृतजंगके पद पर पूर्णिया का नायब सुबेदार नियुक्त हुआ। पहले रायदुर्लभके छोटे भाई रासबिहारीको यह पद देनेकी बात थी, अब उनका भाक परपाद न की गई। जिससे दोनों भाई मनहा मन बड़े नाराज हुए। इस समय भी दुर्लभराम मुसलमान दरबारमें ब गाजाके हिन्दुओंके नना समझे जाते थे। अब उस अल्पयुध सम्मान पर अघात पहु करनेकी भावना से दुर्लभराम कुछ सावधान हुए और ऐसे उपाय करने लगे कि जिससे युद्ध नपाव उनका कुछ बिगाड़ न सकें। इस समय ब गाजाके समस्त राजसखियाग और सम्पूर्ण राजकीय उम्होंके अघात था, सेनाका ठमका तय करनेका भार भी उम्हों पर था।

सीकृतजंगका अमर्जा पूरे तरहसे मित भी न पाया था, कि सिराजको खबर लगे कि मन्तूरेजोंने (जयपुरी, १७, ३ ई०) मालिकर्षदकी मगा कर क्लकसेके तुरा पर मधिकार कर लिया है और उसका दृढ़तासे रक्षा करने

की तैयारी भी कर रहे हैं। शीघ्र ही उम्होंने दुर्लभराम और सेना-सामन्तोंके साथ क्लकसेको तरफ कुछ कर दिया। २० फरवरीको ये क्लकसे आ पहुँचे। सिराजको विषुम सेना देख कर झारख सन्धि करनेकी अप्त हो उठा और इसके छिप दुर्लभरामकी शरण आया। यास और स्काफरम प्रतिमिधिक हीर पर नयावक शिबिरमें आये। मन्ता दुर्लभराम उनकी तलाशी ले कर कि उनके पास रिस्तील या और कोई अस्त्र है या नहीं, उन्हें नवाबक सामने ले गये। उन लोगोंने दुर्लभरामके हाथ सन्धिकी अस्त्री बाकिल की। नयाबने उन लोगोंकी राजा दुर्लभरामके शिबिरमें जा कर सन्धिके छिपयमें कदाप्य स्थिर करनेके छिपे भावेश दिया। बादमें दोनों अ प्रेसवृत्त अब बाहर आये, तो मनोचक्रे सु ह सुना, कि ममी तक नयाबकी तोपें न आ पाए हैं। शीघ्र ही झारखकी इस बातका पता लग गया। तुरंत ही अ प्रेसवृत्ति उस अ धेतो रातमें अरुस्तमात् नयावक शिबिर पर हमला कर दिया। अकस्मात् रातिके आक्रमणसे सिराज कुछ पिचलित हो गये। कुछ मा हो, दोनों पक्षोंमें तुमुक युद्ध हुआ। अ प्रेसवृत्तों ही आबिर हादे, छेकिन उरपीक नयाबने सन्धि करना ही ठीक समझा। श्यों फरवरीको दोनों पक्षोंमें सन्धि हो गई। इस सन्धिके अ गतेजोंके तरफस कर्गल क्लाशने और नयाबकी तरफसे प्रधान सेनापति मीरजाफर और मन्त्री दुर्लभरामने हस्ताक्षर किये।

इसके बाद अ प्रेस भीर फरासासियोंमें युद्ध शुरू होने पर अ प्रेसोंके सन्धनगर पर आक्रमणके छिप अगसर होनेका समाचार पा कर सिराजने फरासीसियोंका मदद के छिप राजा दुर्लभरामको सेना-सहित भेजा। हुगलीसे १० कोस उत्तरीं दुर्लभरामके साथ हुगलीके फौजदार मन्तूरेजको भेज दूहा। मन्तूरेजने उनक यह कह कर कि—“सहायता पहु बगेस पहले ही फरासीसा लोग धारम-समर्पण कर देंगे, अब जानेका अकलत नहीं”— उन्हें जाने न दिया। बहुताका ऐसा कहना है कि अ प्रेसोंस रिभ्यट ले कर मन्तूरेजने ऐसा अनुचित काय किया था और इसके छिप प शीघ्र ही पक्षपुत्र भी कर दिए गये थे।

फरासडागा पर अंग्रेजों का कब्जा होनेके बाद सिराज दलदल-सहित मुर्शिदाबाद लौटे। राजा दुर्लभरामने मुर्शिदाबाद आ कर देखा, कि मोहनलाल सिराजकी अत्यधिक कृपासे उनकी क्षमताका परिचालन कर रहे हैं और उनके कार्य पर भी हुकूम चलाने हैं। मोहनलालकी इस ज्यादतीका वे किसी भी तरह सह न सके और इसलिये वे नगरमें न रह कर सेना सहित कुछ दूरमें रहने लगे। अब जगत्सेठके मकान पर इस बातकी मंत्रणा होने लगी, कि किस तरह सिराज और मोहनलालका अग्रपतन किया जाय। इस पडयंत्रमें राजा कृष्णचंद्र, मीरजाफर और सिराजकी मानुस्वसा घसिटी वेगम भी शामिल थीं। नवाबके अश्व सेनानायक यार लतीफ खाँको जगत्सेठकी तरफसे उनके स्वार्थकी रक्षाके लिए कुछ कुछ वृत्ति मिलती थीं। इन्होंने अमीचंदके द्वारा वाट् साहबको कहला भेजा कि "सिराज शीघ्र ही पटना जाने वाले हैं। वहासे लौट कर वे इस देशसे अंग्रेजोंको दूर कर देंगे, ऐसी उन्हेने प्रतिज्ञा कर ली है। नवाबकी अनुपस्थितिमें मुर्शिदाबाद पर अधिकार करनेका अच्छा मौका है। मुझे नवाब बनानेसे राजा दुर्लभराम, जगत्सेठ आदि हमारे साथ रहेंगे।" इस शुभ प्रस्तावको अंग्रेजोंने बड़े आदरके साथ ग्रहण किया। कलकत्तेमें अंग्रेजोंकी एक गुप्त सभा बैठी। इधर नवाबने अंग्रेजोंके व्यवहारसे सदिग्ध हो कर राजा दुर्लभरामको उनके अधीनस्थ समस्त सेनासहित पलासीमें तैयार रहनेकी आज्ञा दी। इससे भी नवाबको सन्तोष न हुआ। उन्होंने पचास हजार सेनाके साथ मीरजाफरको भी वहां जा कर सहायता करनेकी सलाह दी।

इसी समय पेशवा वाजीरावका एक दूत गोविंदराम डूके साहबके नाम पत्र ले कर हाजिर हुआ। पत्रमें लिखा था, कि अंग्रेजोंकी सम्मति हो तो पेशवा एक लाख बीस हजार अश्वारोही भेज कर बंगालको लुटवा सकते हैं। सुचतुर क्लाइवने इस पत्रको नवाबके पास भेज दिया। इस पत्रको पा कर अंग्रेजों पर नवाबका जो सन्देह था, वह दूर हो गया। वास्तवमें नवाब यह न समझ सके कि उन्हेने कितना बड़ा धोखा खाया। कुछ भी हो, नवाबने मराठोंकी गति रोकनेके लिए दुर्लभरामको

सेना-सहित पलासी रल कर मीरजाफरको सेना सहित पलासीसे वापस चले आनेका आदेश दिया।

इधर पलासीसे मीरजाफरका आदमी कलकत्तेमें अंग्रेजोंकी गुप्त सभामें पहुंचा। प्रभूत वित्त प्राप्तकी आशासे अंग्रेजोंने १८ मईकी गुप्त सभामें मीरजाफर को ही नवाब बनानेका निश्चय किया। ३०वीं मईको मीरजाफर और उसके वाद ३री जूनको राजा दुर्लभराम सेना सहित मुर्शिदाबाद लौट आये। जगत्सेठके मकान पर गहरी रातको (३री ही तारीखको) पडयन्त्रकारियोंकी एक गुप्त बैठक हुई। दुर्लभरामने अंग्रेजोंकी असंगत मांगों पर कहा कि जितने रुपये वे मांगते हैं, उतने तो नवाबके कोषागारमें भी नहीं हैं, इसलिये मैं ऐसी असंगत बात पर सम्मति नहीं दे सकता। हाँ, यह हो सकता है कि राजकोषमें जितना हो, उसे मीरजाफर और अंग्रेज मिल कर आधा आधा बाँट ले सकते हैं। वाट् साहब इस पर राजी न हुए। अन्तमें निर्णय हुआ कि दोनों तरफसे दुर्लभरामको निर्दिष्ट रूपोंमेंसे ५) पाच रूपया सैकडा दिया जायगा, उनकी देखरेखमें राजकोष रहेगा और वे ही रूपयोंका भाग कर देंगे। ४थी जूनको मीरजाफरने उस गुप्त सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर कर दिये। आश्चर्य है कि सिराज को इस बातका ज्ञान भी पता न लग पाया, फिर भी उन्हेने मीरजाफरको पदच्युत कर दिया और उनके स्थान पर खोजा हादीको प्रधान सेनापति नियुक्त किया।

इधर १३वीं जूनको अंग्रेजोंकी सेना दी सी नाचों पर सवार हो कर चन्दननगरकी ओर चल दी। यह संवाद सिराजके पास भी भेजा गया। नवाब सेना सहित पलासीके मैदानमें दिखाई दिये। दुर्लभराम अपनी १० हजार शिक्षित सेनाके साथ रणक्षेत्रमें उपस्थित हुए। नवाबने दुर्लभरामके द्वारा पहलेसे निर्दिष्ट किये हुए प्रान्तमें ही शिविर कायम किया। शिविरके सामने आमका बाग था और परिखाके भीतर मीरमदन और मोहनलालकी सेना, उसके दक्षिणकी ओर फरासीसी सेना-नायक सिनम्फेके गोलन्दार्जोंका दल, बाईं तरफ परिखाके उस पारसे ले कर करीब करीब पलासी ग्राम तक दुर्लभराम, यार लतीफ और मीरजाफरकी सेना—इस प्रकार

नवाबकी तरफ जगमग ३५ हजार पियाये, १३ हजार पुङ्गसवार भीर ४० तोपें थीं; भीर अंग्रेजोंकी तरफ कुछ ३१ सौ माख सना थी। २३ जूनको युद्ध आरम्भ हुआ। बुर्जमराम भीर पाटसन्तोक मीरजाफरका तरह सेना सहित 'रजपपीथिकी सहरे' गिन रहे थे। प्रमुख मीरमदन अन्धमक चापबंद हो गये भीर मर गये। सभा पथिको इस तरह अकस्मान् मूर्युमे नवाब विचलित हो गये, मीरजाफरको बुझा कर बङ्गो धरज् बिनतीक साथ यहाँ तक कि पैरों पर अथवा मुकुट रख कर चढ़ाया—“भायक सामन में आरमसमर्पण करता हू, भाय किसी ठरद मेरे सम्मान और जीवनका रक्षा कीजिये।” उस समय मोहनलाल भीर बिक्रमके साथ अंग्रेजों पर आक्रमण कर रहे थे, भीर कुछ देर तक युद्ध जा रहता तो अंग्रेज ही नवाबकी विजय हो जाती। परन्तु मीरजाफरके परा मणसे सिराजान मोहनलालको युद्ध बन्द करनेका भावे भेज दिया। पहले मोहनलालने उनकी बात पर ध्यान नहीं दिया था, अन्तमें बारबार भावेज पाने पर ये क्रमता पोछे हट भाय।

मातजाफर नवाबकी सर्वमाजकारी परामर्श है कर भयने शिबिरकी नीट भाये। नवाबने राजा बुद्ध भराम का बुना कर परामर्श लिया। मन्ताने छोटा से भीर भाय राजधानी भेजे जायें। अब यहाँ रहना उचित नहीं। सिराजाने बुर्जमरामका परामर्श मान लिया। एपर मोहनलालका सीटन देख सेनाका साहस टूट गया और वह भागनकी युक्ति सोचने लगे। अङ्ग्रेजोंन मी इसी समय मातजाफरकी पहलसे गुप्त समाचार पा कर ज़ारोंस नवाबकी सभा पर धावा बोल दिया। इस प्रकार कीजगम मुझे मर सना डे कर बन्नाइय पनासी विधेता बन बैठा। बुर्जमराम भीर मीरजाफरक प्रयत्नोंस बंगामका मायतिपि परिधित हो गइ। २५ जूनको राजा बुर्जमराम भीर मातजाफर राजधानीकी लीटे। साथ साथ पाटम् मीर बन्नाइयका सकेरता काल्स् मी भावा भीर इन भागान अंग्रेजोंकी तरफम दरयोकी मांग वेग की। बुर्जमरामन कहा कि स्वोछत २,००,०००) रुपये राजानेमें नहीं है। अंग्रेजोंन प्रस्ताव दिया कि तो अंग्रेजदरत कोजिया जाय। राजान कहा कि कतीइ

रपया देनेकी इमनें सामर्थ्य नहीं। इस बात पर बुर्जमराम पर उनका सन्देश हुआ। इसक बाद ही अरु पाह फैलीका कि बुर्जमराम, मोहन भीर प्वादिम हुसेन बन्नाइयको मारनेका पङ्कयन्त्र कर रहे है। इसखिय प्रसापने दो दिन तक कासिबबाजारमें रह कर भयने व्यर्थ संभ्रहको दूर कर मुजिहाबादमें प्रवेश किया।

२६ जूनको बरबार हुआ। बन्नाइयने मीरजाफरका हाथ पकड़ कर उन्हे सिंहासन पर बिठाया। राजा बुर्जमराम 'महाराज बहादुर' की उपाधि-सहित नवाब मीरजाफरके 'दोवान प घासा' (प्रधान मन्त्री) हुए।

दूसरे दिन बन्नाइय, मीरजाफर बुर्जमराम भीर पाटसन्त जगत्सठके मकान पर गये। यहाँ दोनों तरफसे अंगरेजों भीर फारसा सन्धिपत्र पत्रित भीर स्वोछत हुए। यह भा तय हुआ कि स्वोछत १ करोड़ ११ लाख रुपयेका भाषा इसी समय देना होगा, भीर भाषा तीन पयमें भरा कर देना होगा। परन्तु महाराज बुर्जमराम उक्त कुल रकममें ५) लैकडू कासीगल काट लेगे, यह भी तय हुआ। सब तय हो गया, पर उस दिन रुपये नहीं दिये गये। बन्नाइय मुजिहाबादमें ही बैठा रहा। सबतुर बुर्जमरामने एक साथ भाषा रुपया भी हाथस निकाल देना ठोक न समझा। नवाब इरबारमें उनका प्रयुत्पका मितमा मनाय था, उस पूरा करक तथा अंगरेज भीर मुसलमान दानोंकी मोरस बंगालक हिल्स-समाजक सय प्रयाण मेता बनेके बाद उगहोने है जुसाइ की ३२,३१,३३३) रुपये अंगरेजोंका दिया। पीछे अनेक भावति करनेके बाद ६ तारोबकी फिर १३,५५,४८०) रुपये दिया। फिर मी स्वोछत भाषा मश न युक्त पर अंग्रेज सांग कुछ कुछ हो उठे। इस समय (१५ जुनाइ) अंग्रेजोंक बाबिन्यायिकार सम्बन्धमें साधारण परवानकी घोषणा करके बुर्जमरामने उन्हें सम्नुष्ट कर दिया। अन्तमें ३० जुलाईका सभा, जवाहरात भीर मिळा सब मिल कर १५,६६,३३३) रुपये इ कर अंग्रेजोंका विशा दिया। इस तख अंग्रेज कल्पनोंकी बुर्जमरामस १,३५,०००) रुपये (मर्धान् निधि घ माधे रुपये मेंस १०,३३,३३३) रुपये) मिले; फिर मा ५८,६६,०००) रुपये बाकी रहे।

मीरजाफर अपने प्रियपुत्र मीरनके परामर्श पर चलने लगे। राजा दुर्लभरामके अपरिसीम प्रभुत्वके मीरण चिह्न ही हो गये। साथ ही मीरजाफरका भी मन फिर गया। अब वे स्वयं सर्वेश्वर हो गये। एक एक करके सभी शत्रुओंको उन्होंने हटा दिया। यद्यपि दुर्लभराम उनके मित्र समझे जाते थे, किन्तु वे मित्र धर्मबलम्बो थे और विशेषतः समस्त बंगालकी हिन्दू प्रजा उनके प्रभावसे प्रभावान्वित थी। जिस काँग्रेससे उन्होंने सिराजको पदच्युत करके मीरजाफरको गद्दी पर बिठाया है, इसी तरह किसी दिन वे अपनी कूटनीतिसे मीरजाफरको उतार सकते हैं। इस अमूलक विश्वास पर पिता-पुत्र मिल कर दुर्लभरामका प्रभाव घटानेकी कोशिश करने लगे। कुछ दिन बीत गये, लगभग सभीने मीरजाफरकी अधीनता स्वीकार कर ली, किन्तु उस समय भी बिहारके नायब नवाब राजा रामनारायण और मैदिनीपुरके राजा रामसिंहने मीरजाफरकी अधीनता स्वीकार न की। वे दोनों ही दुर्लभरामके परम मित्र समझे जाते थे। दुर्लभरामने नये नवाबके साथ प्रकाश्यरूपमें सद्भाव रखनेके लिए राजा रामसिंहकी आनेके लिए अनुरोध किया। परन्तु स्वयं न आ कर उन्होंने दो आत्मियोंको भेज दिया। नवाबने दोनोंको कैद कर लिया। शहर पूर्णियाके पूर्वतन कर्मचारी अचलसिंहने मोहनलालके पुत्रको कैद कर स्वाधोन भावसे सारे देश पर अधिकार जमा रखा था। राजा रामनारायण भी एक प्रकारसे स्वाधीन हो गये थे और अपना बल बढ़ा रहे थे। चारों तरफसे हिन्दू अभ्युत्थानको लक्ष्य करके मीरजाफरने दुर्लभरामको ही इसका मूठ कारण मान लिया। दुर्लभराम उस समय भी अलीचढ़ी-बेगमके प्रति सम्मान प्रदर्शन करनेके लिए कभी कभी प्रासादमें जाया करते थे।

राजा रामनारायण अयोध्याके नवाबकी सहायतासे मीरजाफरको भगा देनेकी कोशिश कर रहे थे, अलीचढ़ी-बेगमकी ऐसी एक पड़यन्त्र लिपि भी पकड़ी गई। इस-लिए मीरजाफरकी धारणा भी पक्की हो गई, कि दुर्लभरामकी ही ये कार्यवाहियाँ हैं। कुछ भी हो, चाट्सको कोशिशसे दोनोंका मौखिक मिलन तो हुआ, परन्तु उस-

के बाद ही मीरजाफरके बिहार जाने समय दुर्लभरामने अस्वस्थताका बहाना करके सेना सहित उनके साथ शामिल न हुए। मीरजाफरके चले जाने ही मीरनने यह अफवाह फैलाई, कि राजा दुर्लभराम अंगरेजोंकी सहायतासे सिराजके भतीजे मिर्जा मेहदीको नवाब बनानेकी कोशिशमें हैं। राजा रामनारायण अयोध्याके नवाब और फरासीसी नायक 'ला' को साथ ले कर दुर्लभरामकी सहायताके लिए आ रहे हैं। गोत्र ही मीरनके घातकोंके हाथ मेहदी मार डाला गया। मीरनके अन्यान्य आचरणोंसे दुर्लभराम भी उनसे बहुत नाराज हो गये। उन्होंने कासिमबाजारका कोठीके अध्यक्षको सब बातें कही। स्काफ्टनकी मध्यस्थतामें मीरन और दुर्लभराममें फिर सुल्ह हो गई। अब मन्त्री दुर्लभरामने कुछ सेनाको नवाबके गिरिमें जानेकी आज्ञा दी। शहर मीरजाफरसे मिलनेक ठिए क्लाइव भी दलबल-सहित मुर्शिदाबाद आ पहुँचा। यहाँ आते ही सुना कि राजा दुर्लभराम मराठा-सरदार जानोजीके साथ पड़यन्त्र कर रहे हैं। परन्तु दुर्लभरामके भेंट होने पर उनका संदेह दूर हो गया। फाँड़े दुर्लभरामको तसल्ली दे कर क्लाइव राजमहल जा कर मीरजाफरसे मिला। यहाँ आते ही उन्होंने मीरजाफरसे कहा—“राजा दुर्लभरामके बिना राजकोषसे रुपये या आज्ञापत्र मिलना असम्भव है, इसी लिए राजाको खुरपना निहायत जरूरी है।” क्लाइवने भी दुर्लभरामकी हिम्मत दे कर आनेके लिए लिखा। कारण दुर्लभराम केवल प्रधान मंत्री ही न थे, अर्थसचिव भी थे। वे क्लाइवके पत्रानुसार आ गये। उस समय अंगरेजोंके २३ लाख रुपये बाकी थे। दुर्लभरामने आधा रुपया राजकोषसे तथा बाकी आधा रुपया वसूल कर लेनेके लिए बर्द्धमान और कृष्णनगरके राजा तथा हुगलीके फौजदारके नाम आज्ञापत्र दिया। इस समय कम्पनीकी जमींदारोंके लिए फरमान मिला। इस फरमानमें नवाब मीरजाफर तथा प्रधान मंत्रीकी हिसियतसे महाराज दुर्लभराम और हुजूरनवीस (Chief Secretary) की हिसियतसे उनके पुत्र राजा राजवल्लभके हस्ताक्षर थे।

पहले ही कहा जा चुका है, कि राजा रामनारायण

दुर्लभतामकी अनुकूलतासे बिहारके सुवेशर हुए थे। वे हमेशासे दुर्लभतामका सम्मान करते थे। मीरजाफरके सेना-सहित उनके विरुद्ध भय पारण करने पर दुर्लभतामके परामर्शसे उन्होंने नवाबके सिबिरमें भा कर अपनी नती खीकार कर ली।

मीरजाफर और दुर्लभतामके मनोमास्त्रिक्यके समय नन्दकुमार भा कर दुर्लभतामके सहायरी या बाहसाके पेशकार नियुक्त हुए थे। मीरजाफरके बिहार जाठ समय बं भी दुर्लभतामके विरुद्ध नवाबके काम भर कर अपने सम्भावका परिचय देते रहे। बिहारसे छोट भागके बाद नवाबके राजकीयमें मर्घामाय हो गया। नन्दकुमार नवाबको समझाया कि उन्हें पूरी समता मिलने पर वे सब रुपये वसूल कर सकते हैं, दुर्लभतामके द्वारा यह काम कमी न होगा। मीरजने कहा, कि न गरीब कोम रुपयेके बंधन, काफी रुपये न मिलने पर वे हमारे शुक बन जायेंगे। इसी तरह नन्दकुमारने सेठिकों की समझाया, कि भाप लोग दुर्लभतामके साथ प्रिया मित्र जोड़ रख रहे हैं, यह भाप लोगोंके हिय अच्छा नहीं है। भाप लोग रुपयेके हिय जमानतदार हैं। दुर्लभताम यदि राजकीयमें रुपये न दे सके, तो न गरीब लोग भापको ही पकड़ेंगे। इसलिये भाप लोगोंका साथघाल हो जाना चाहिये। इस समय मीरजने वैधराज राज वल्लभको बोधान नियुक्त किया और हाका विभागके कागजात उन्हें सौंप देनेके लिये दुर्लभताम पर भाहा जारी की। जयपुरसे इस समय तक दुर्लभतामके मिल थे। उन्होंने दुर्लभतामको बुला कर उन्हें समझाया कि भापके विरुद्ध पकड़ने चले रहा है मीर भाप यहाँ रहने लो हिन्यरी भी लो बैठेंगे, ऐसी भावका है। जो नन्दकुमार उनका कृपासे बाहसाके पेशकार नियुक्त हुए थे, जिन्हें उन्होंने बिम्बास करके राजसविभागका साप रखस्य समझा दिया था, अब यहाँ प्राह्वण उनके विरुद्ध पत्रयंत्र कर रहे हैं, सुन कर वे शोभ ही कलकत्त जानेको प्रस्तुत हो गये। परन्तु मीरजने उनका कलकत्ता जाना रोक दिया। राजाने पकड़ हो वे सब बाँटे झाइय को लिख हो यो। उनका पत्र भा कर झाइयने नवाबका कलकत्ते आनके लिये निमन्त्रण दिया। इसलिये इच्छा न

होते हुए भी नवाबको कलकत्ता जाना पड़ा। इस समय मीरजने अपनेक रक्षकसेना भेज कर दुर्लभतामका प्रासाद घेर लिया था, परन्तु झाइयके अनुरोधसे (सितम्बर १७५८ ई०) दुर्लभताम भी परिभार सहित कलकत्ते चले गये। मीरजके शोभकी सीमा न रही।

इस समयके कम्पनीके कागजातमें पाया जाता है कि मीरजाफरके स्वागतके लिये इष्टादिबयन कम्पनीका काफी खर्च हुआ था, जयपुरसे मीर दुर्लभतामके स्वागत में मो काफी खर्च हुआ था।

कलकत्ते भा कर महाराज दुर्लभताम कुछ दिन निरा पद हुए। यहाँ वे प्राह्वण परिणतोसे शास्त्राचार्य सुन कर और दान दान करके समय बिताते थे। सिर्फ कमी कमी राजकीय कागजातमें हस्ताक्षरकी जरूरत पकड़ने पर हस्ताक्षर कर दिया करते थे। झाइय और औरिसल के सङ्घर्ष मकसर उनके प्रासादमें भा कर मामीव-प्रमोद किया करते थे।

दुर्लभताम सरीखे शक्तिशाली राजनीतिकके राजधानीसे दूर रहनेसे सम्भवता राज्यका कार्य सुचारु रूपसे न चलता था। कुछ दिन बाद सम्राट् झाइयाकम बगावतविषयके लिये भाये। राजा रामनाथयणने पहले दुर्लभतामके पयमर्शसे नवाबकी भोजनता खीकार कर ली थी। अब मुशिहाबादकी राजनीतिक भवस्थाको समझ कर वे मीरजाफरके विरुद्ध बाइशाइसे मिल गये। मीरजाफरने भारी संकट भाया ज्ञान कर झाइयको शरण लो। आखिर अहमदशहीकी सहायतासे इस मरतबा मीरजाफर बच गये। उम्मापणव देको।

६ जुलाई १७६० ई०को बन्धाघातसे नवाबके पुत्र मीरजकी मृत्यु हो गई। इस मौके पर मीरजाफरके बामाव् मीरजासिम ससुरके समर्पनाशके लिये भागे भाये। इधर दुर्लभताम मीरजाफरको मकसमण्यताका परिचय दे कर अहमदशहीको हस्तगत कर रहे थे। पूर्वतन नायब सुवेशर और प्रधानमन्त्री दुर्लभतामकी विरक्तिसे मीर मीरजासिमसे अधिक धन पानेके लोभसे अहमदशही मीरजाफरको गद्दीसे उतार देनेका निश्चय किया।

दुर्लभतामके परामर्शसे ही शकसेवन झाइयाकमसे बगावतकी बोधाना प्राप्त करनी कल्पना को

यी। इस समय दुर्लभरामने अङ्गरेजों को जो पत्र दिया था, उसमें लिखा था—“कम्पनीको सूवेदारी, दीवानो वक्सीगोरी अपने नाम पर ले कर मीरजाफरको नायव-नाजिम और मीरकासिमको नायव दीवान बनाना चाहिए। मैं अब राजस्व-सचिवका पद नहीं चाहता, कम्पनीके अधीन नायव-वक्सी (Commander of the Bengal forces) का पद पा कर ही मैं सन्तुष्ट होऊंगा। शाहजादेके मन्त्रियोंको लिख कर मैं इन सब बातोंकी व्यवस्था कर देनेको तैयार हूँ।” अंग्रेजोंने इस समय मीरकासिमसे बहुत धन पानेके लोभसे इस रूपना-की त्याग दिया। १४ अक्टूबर १७६० ई०को गवर्नर वन्सीटार्टने मुर्शिदाबाद जा कर मीरजाफरको राज्य-च्युत किया और मीरकासिमको नवाबीका पद ऊंचे मूल्य पर बेच दिया। इस समय नन्दकुमार और वैद्यराज राजवल्लभ ही मुर्शिदाबादमें सर्वे सर्वा हो गये। तब भी महाराज दुर्लभरामको अङ्गरेजों द्वारा बंगाल, विहार और उडिष्याके नायव-सूवेदारका सम्मान प्राप्त था। नन्दकुमार इस प्रयत्नमें थे, कि किसी तरह उनका यह सम्मान नष्ट हो जाय, उनका सर्वनाश हो जाय। थोड़े ही दिनों बाद मीरकासिम और अङ्गरेजोंके साथ वाद-शाह शाहआलमका युद्ध छिड़ गया। दुर्लभरामको किसी तरह कौशलजालमें फंसा लेनेसे मीरकासिमको भी धन मिल सकता है और उनका भी उद्देश्य सिद्ध हो सकता है, इस विचारसे नन्दकुमारने हरकराके हाथ एक जाल चिढ़ी निकवाई। उस पत्रसे यह भाव प्रकट होता था, कि महाराज दुर्लभराम और जगत्सेठके घरानेके रामचरण शाहआलमके शिचिरस्थ एक सेनापतिके साथ मीरकासिम और अङ्गरेजोंका सर्वनाश करनेके लिए पडवन्त कर रहे हैं। दुर्लभराम पर अंग्रेजोंका अटल विश्वास था, इसलिए उन लोगोंने सहसा उस पत्र पर विश्वास न किया। शाहआलमके साथ भगडा वै हो जानेके बाद मालूम हुआ कि यह नन्दकुमारका अमीम प्रभुत्व था, इसलिए ऐसे भीषण अपराध पर भी अङ्गरेजोंको नन्दकुमारके विरुद्ध आचरण करनेका साहस न हुआ।

मीरकासिम भी मीरजाफरकी तरह हिन्दू-विद्वेषी थे।

नये नवावका इधर काफ़ी ध्यान था कि पूर्वातन हिन्दू कर्मचारी अब फिरसे सिर न उठा पावें और सब तरहसे उनकी क्षमता घट जाय। खास कर हिन्दुओंकी समस्त उच्चाधिकारोंसे वञ्चित करनेसे किसी समय राजस्व वसूलो तथा अन्यान्य कार्योंमें गड़बड़ होनेकी सम्भावनासे ही वे अपनी अभिरुचिके अनुसार हिन्दू-जमींदारोंके अर्थ-शोषणपटु नये नये आदमियोंको उच्च पद देने लगे थे।

वैद्यराज राजवल्लभको विहारका नायव सूवेदार बना कर भी उन पर वे विश्वास न कर सके। कुछ दिन बाद जब उन्होंने देखा कि राजा राजवल्लभसे जितनी उन्हें आवश्यकता थी उतनी पूर्ति हो गई। अंगरेजोंकी ध्वंस करनेके लिए उन्होंने जो जाल फैलाया है, उसमें वैद्यराज राजवल्लभ उनके अन्तर्गत हो सकते हैं,—तब राजवल्लभसे उन्होंने नायव-सूवेदारी छीन कर उन्हें मुंगेरके किलेमें कैद कर रखा। अन्यान्य हिन्दू-जमींदारोंको भी बादमें उन्होंने उसी जगह कैदमें रखा था। नन्दकुमार भी जाली पत्र बनानेके अपराधमें मुर्शिदाबादके कैदमें डाल दिये गये।

इसके बाद ६ जुलाई १७६७ ई०को अंग्रेजोंकी सभामें मीरजाफरको फिरसे नवाव बनानेका निश्चय हुआ। नन्दकुमार कैदसे छूट कर मीरजाफरके दीवान हुए। अंगरेजोंके अनुरोधसे महाराज दुर्लभरामको पान और खिलअत दे कर निजामतमें फिरसे बहाल किया गया; परन्तु निजामतके अधीन हुजूरनवीसी (सनद आदि देने और उसकी नकल रखनेका कार्यालय), जागीरों और नवावके निज कोपागारकी द्रोणा, मुस्तफी-पद (पदच्युत कर्मचारियोंके हिसाबनिकासका कार्य), तथा पटना, भागलपुर और जागीरोंसे तहसील वसूलिका काम, मुन्शीखाना (Secretariat) और दीवानखानेकी मुसरफी, ये सब उच्च कार्यालय जो पहले दुर्लभरामके अधीन थे, निजामतसे अलग करके नन्दकुमारको सौंप दिये गये। निजामत भी एक प्रकारसे पालसाके अधीन हो गई। (१७६४ ई०)

१७६५ ई०के जनवरी महीनेमें मीरजाफरका देहान्त हुआ। फिर ऊंचे मूल्य पर नवाबीका पद बेचनेके अभि-

प्रायसे भ गरेजों की कीर्तिपत्रके चार सङ्ख्य मुर्शिदाबाद पहुँचे। शुभ्य राजकीयसे २० लाख रुपये के कर मोरजाफरके बाजिग पुत्र नजमउद्दीनको नवाब बना दिया गया। नायब नवाबके पक्षकी भाशासे इस समय राजा मन्सूरुमार और महम्मद रेजा खाँ मन्सूरुजोंको उपयुक्त पूजा करनेके लिये तैयार हुए। अन्तमें अधिक धन पा कर महम्मद रेजा खाँकी ही नायब नवाबकी पद दिया गया। तन्नाम राजधानी बलानेक लिये महम्मद रेजा खाँके साथ महाराज दुर्गमराम और जगन्सेठ कुशाब्धनकी एक मन्त्रिसभा गठित हुई। जून महोत्समें बहादुर बाबशाह और सुझाउद्दीनके साथ सन्धि दृढ़ करनेके लिये उल्ट-पल्लिममें गया। वहाँ भी वह अपने पूर्व मित्र दुर्गमरामको न भूला था। उसने दिल्ली-दरबारसे दुर्गमरामको उनकी कारभारकी प्रशंसा करने 'महाराज महीन्द्रका लिताब' दिखाया और विहारके अस्तगत मोतपुर परगना (धार्मिक १८७५०० आमदनीको) जमीन देखा। उसने बाद कम्पनीके लिये 'दोवानी' प्राप्त होनेके बाद इन्हींके परससे महाराज दुर्गमरामने ६ लाख रुपयेकी आमदनीकी रंगपुरकी पैदाबन्ध दीवार कागोर पाई थी।

१७६५ ईमें २८ जुलाईको नवाब नजमउद्दीनके ५३६८१३१सिद्धों (७५०) की धार्मिक वृत्ति पर कम्पनीके प्रस्तावानुसार महम्मद रेजा खाँ महाराज दुर्गमराम और जगन्सेठ पर सम्पूर्ण राज्य मार छोड़ दिया। उनके शासनसे मन्सूरुजोंको विशेष सम्बुद्ध हुए। १७६८ ईमें कोर्ट भाव डिक्रेटने उनके कार्यका प्रशंसा करते रेजा खाँकी ६ लाख, राजा दुर्गमरामको २ लाख और सिताब रायको १ लाख धार्मिक धेतन देना निश्चित किया था। १७७० ई तक महाराज दुर्गमरामको ठक पद पर अधिकृत पाते हैं। इस वर्ष २१ मार्चके संघिषण पर नवाब मुबारकउद्दीनके माधिम, इष्ट इच्छिया कम्पनीने दोवानी और नवाब मानाउद्दीनके साथ महाराज दुर्गमराम और जगन्सेठने नायब-नाजिमकी हस्तियतसे हस्ताक्षर किये थे। इसी वर्ष महाराज दुर्गमराम महीन्द्रका देहाल हुआ। उनकी मृत्युके बाद अल्प बड़े छात्र साहब हेंद्रि पस्ने मुर्शिदाबाद जा कर उनके पुत्र महाराज राजबन्धम

बहादुरको ३ सूबेका कुल्लेका दीवान बनाया। बादमें नूबा बगल्ल जब ४ सिद्धोंमें विभक्त हुआ, तो प्रत्येक सिद्धमें एक एक कब्जत और महाराज राजबन्धमकी तरफसे एक एक दीवान नियुक्त हुए। बंगला सन् १२०४ में राजबन्धमकी मृत्यु हुई।

महाराज दुर्गमराम बंगपासियोंमें अग्रज येश्वर-शाही हो गये थे। उस समय उनके विषयमें "स्वर्गमें इन्द्र, मन्सूरमें महीन्द्र" ऐसा प्रवाद प्रचलित हो गया था। पिताके समान उनके पुत्र राजबन्धम भी बंगालियोंमें श्रेष्ठ व्यक्ति समझे जाते थे और उनकी अर्थात् सम्मान था। राजा राजबन्धम सेम देखो।

रायन—राजपूतानेके मोतपुर राज्यके अस्तगत एक नगर। यह अक्षा० २३ ३२ उ० तथा देशा० ७४ १४' पू०के बीच अवस्थित है। जनसंख्या ४५७४ है। यहाँ एक गण्ड शौकके ऊपर समतलशौकसे प्रायः २०० फुट ऊँचा रायन का गिरिदुर्ग विराजित है।

रायनगढ़—पञ्जाबप्रदेशके केवल्यम राज्यके अस्तगत एक दुर्गशोभित नगर। अक्षा० ३१ ७' उ० तथा देशा० ७७ ४८' पू०के बीच पावर नदीके बाये किनारे एक निज्जिन शौकमास्तमें बसा हुआ है। नदीको पार कर दुर्गमें जानेके लिये एक कालका पुल है। गोरना-आक्रमणके पहले यह बसहर सामन्तराज्यके अधीन था। पीछे १८१५ ईमें भ गरेजोंके हाथ आया। अन्तमें वर्तमान 'सिमखाशौक' लिखेकी कुछ भूमि छे कर उसके बन्धुमें भ गरेज सरकारने यह स्थान केवल्यमराजको दे दिया। यहाँ दो मन्दिर हैं जिसकी गठनपण्याकी बहुत ही सुन्दर है। उस मन्दिरके अधिकांशी कइ एक प्राङ्गण हैं। समुद्रपृष्ठसे यह दुर्ग ५४०८ फुट उँचा है।

रायनरसिंह परिश्रुत—वर्तमानमहीन्द्रिकाप्रकाशके प्रणेता। रायना—वर्तमान जिजामस्तगत एक गण्ड प्राप्त। यह अक्षा० ३२ ४' २०" उ० तथा देशा० ८७ ५३ ४०" पू०के बीच अवस्थित है। जनसंख्या पाँच हजारसे अधिक है।

रायपाटी—बिजामके अस्तगत एक स्थान। (मन्सूरुज० ख० ५०१४१) रायपुर—मध्यप्रदेशके भ गरेजापिठल एक जिजा। फोक कमिश्नरके शासनके अधीन है। यह अक्षा० १९ ५०' से

२०° ५३' ३० तथा देशा० ८१° २५' से ८३° ३८' पू० तक विस्तृत है। इसके उत्तरमें विलासपुर, दक्षिणमें वस्तार, पूर्वमें सम्बलपुर जिलेका सामन्तराज्य और पश्चिममें चांदा और बालाघाट हैं। छुईपादन, कनकर, चैरागढ़ और नन्दगाव सामन्तराज्य इसीके अंदर हैं। कुल मिला कर भूपरिमाण ११७२४ वर्गमील है।

पूर्वतन छत्तीसगढ़ राज्यका दक्षिण भाग ले कर यह जिला गठित है। इसका अधिकांश स्थान महानदीके उत्तर स्रोत और उसकी शाखाओं परिल्लावित है। स्थान-स्थान पर पर्वत गात्रवाहिनी शाखा नदीसमूहके उत्पत्ति-स्थानसे गण्डशैलमाला दिखाई पड़ती है। समूचा जिला विन्ध्यपर्वतसे निकली हुई शैलशाखाकी फैली हुई अधित्यका है। उत्तर, पूर्व और दक्षिण भूभाग वनोंसे समाकीर्ण है। उत्तरकी अधित्यकाभूमि क्रमशः विलासपुरकी ओर समतलक्षेत्रमें मिल गई है। जंगल काट कर रहनेके लिये और खेती वारीके लिये बहुतसे स्थान निकाले गये हैं।

रायपुर जिला दो खरस्रोता नदीविधौत है। यह दो पार्वत्यस्रोत पीछे मिल कर महानदीरूपमें बह चला है। पूर्वोक्त दो पार्वत्य स्रोताओंमें शिवनाथ प्रधान है। वह चांदापर्वतसे निकला है। प्रायः १२० मील उत्तर पूर्व बह कर हाम्प नामक शाखा नदीने उसका कलेवर पुष्ट कर दिया है। इस प्रकार कर्करा, तेन्दूला, कावण और खोसी नदी इसके दाहिने किनारे तथा गुमारिया, आम, सूरी, गाराघाट, योगवा और हाम्पशाखा इसके बायें किनारे आ मिली हैं, जिससे इसकी जलधारा बड़ी ही तीव्र हो गई है। महानदी इस जिलेके दक्षिण-पूर्वसे निकल कर पश्चिमकी ओर और पीछे उत्तर पूर्व बहती हुई शिवनाथमें आ मिली है। पाइरी, सुन्दर, केशो, कोगर और नाइनी आदि शाखाने महानदीका अङ्ग पुष्ट किया है। किन्तु बरसा वीतने पर नदीका जल एकदम सूख जाता है। नदीके अलावा इस जिलेमें स्थान स्थान पर बड़े बड़े तालाब हैं, जो किसीसे बनाये नहीं गये हैं। पहाडसे जो पानी निकलता है उसको रोकनेके लिये बांध बाधा गया है। बाँजारोंने गाय चरानेके लिये जंगलके बीचमें तालाब या गड्ढा खोदा था।

यहाकी शैलमाला साधारणतः पन्द्रह सौ फुट उंची है सिर्फ गौरगढ़ अधित्यका तथा दक्षिणमें शेहरासे वस्तार और कनक पर्यन्त विस्तृत शैलश्रेणी उससे ऊंची है।

गण्डाई गावके पश्चिमदिकस्थ शैलगहरमें और लोहारा राज्यके दिहा नगरके समीप लोहेकी खान है। गण्डाई और ठाकुरनोला नामक स्थानमें प्रचुर गेरू मिट्टी मिलती है। जंगलमें शाल, तेन्दु और महुआ पेड़ ही मुख्य हैं।

यहाका प्रकृत प्राचीन इतिहास नहीं मिलता। गोंड जातिकी कहावतसे पता चलता है, कि पहले यहाँ अर्ची किक बलशाली और प्रभावान्वित राजसजातिका वास था। गोंड-वीरोंके साथ युद्धमें हार खा कर वे यहाँसे भाग गये। काश्मकल्पित इस पौराणिक पन्नतत्त्वविदुगण गोंड जातिके साथ भूजिया और कोलेरिय जातिका युद्ध-विग्रह मानते हैं। महानदीके पूर्वांशमें भूजिया और विजवारोंने बहुत दिनों तक शासन किया था। कोलेरियगण सोनाखान पर्वतसे दल बांध कर समतलक्षेत्रमें उतरते और उपद्रव किया करते थे। महानदीतीरवर्ती भगदुर्ग आज भी इसकी गवाही देता है।

इतिहास पढ़नेसे मालूम होता है, कि यह जिला रत्नपुरके हैहयवंशीय राजाओंके अधिकारमें था। इस वंशके २०वें राजा सुरदेव जब सम्भवतः ७५० ई०में गद्दी पर बैठे उस समय छत्तीसगढ़-प्रदेज दो भागोंमें बँट गया। शूरदेव पैतृकराज्यका उत्तरांश शासन करते थे तथा उनके छोटे भाई ब्रह्मदेवने रायपुरमें राजपाट स्थापन कर दक्षिण-विभागका शासनदण्ड परिचालित किया। इस समयसे छत्तीसगढ़में दो राजवंश राजत्व करते थे। अन्तमें नवीं पीढ़ीमें ब्रह्मदेवका वंश निर्वंश होने पर रत्नपुर-राजवंशकी दूसरी शाखा राजा जगन्नाथसिंह देवके पुत्र देवनाथ सिंहने शायद १३६० ई०में रायपुरमें आ कर राजछत्र धारण किया। इस समयसे महाराष्ट्र-अभ्युदय पर्यन्त उनके वंशधर बिना किसी विघ्न बाधाके रायपुर राज्यशासन करते रहे।

रायपुरके राजवंश स्वतन्त्ररूपसे राज्यशासन करने पर भी रत्नपुरके हैहयवंशीय राजे छोटी शाखाको सामन्त-राज्यमें गिनते थे। राजिमके देवमंदिरस्थ ७६६ संवत्

(१७० ई०) के निजालेखमें सामन्तराज जगत्पालकी विजयवालीके प्रसंगमें लिखा है, कि रघुपुरके राजा सुदेवके पुत्र पृथ्वीदेवने उक्त सामन्तराजकी वैवाहिक सम्बन्धसे भावद किया था। सम्भवतः इसके कुछ समय बाद ही रामपुरके राजवंशकी दृढ़रूपसे प्रतिष्ठा हुई थी।

वे ईद्वयंशी लोग किसी भी प्रकार सामाजिक उन्नति न कर सके, इसलिये पीछे उनकी राजवृत्तिकी अव्यवस्था हो गई थी। गौड़ जातिमें ज्ञानोपताका चिह्न मात्र भी न था। ऐसी अवस्थामें महाराष्ट्रीय इज्जत बिना किसी भगवत्के उनका राज्य अधिकार कर लिया।

१३३१ ई०में महाराष्ट्रीय इज्जते सबसे पहले छत्तीसगढ़ पर आक्रमण किया था। उस समय नागपुरराज्यके सेनापति मास्कर गण्डवतने बगाल विजयके लिए मगध सर हो कर वाम्बेमें रघुपुरके राजा रघुनाथसिंहको पराजित कर उनकी राज्य छेड़ लिया। नागपुरके राजा रघुजी (१३) ने इस नये जोते हुए छत्तीसगढ़ राज्यका शासनभार मास्कर गण्डवत और मोहनसिंह पर सौंप दिया था। उन दोनोंने पहले रामपुरके राजा अमरसिंहके शासनाधिकारके विषयमें कोई विचार नही किया, परंतु पांच वर्ष बाद उन्हें पदच्युत करके उनके बर्षके हिए ३ हजारका कर लगा कर रात्रिम, पाठन और राघुपुरप्रदेश उन्हें जागीरके बतौर दे दिया। महाराष्ट्रीय विजयके कारण नाना प्रकारके परिवर्तन होकर बाद १८२२ ई०के नये बन्दोबस्तके अनुसार अमरसिंहके पीत रघुनाथसिंहके लिए बड़गाँव, गीयिन्द्र, सुरवेना मन्गाँव और बासभर ग्राम निष्कर छोड़ दिये गये। महाराष्ट्रीय अधिकारमें आनेसे पहले ही रामपुर नगर अत्यन्तकी खरम सीमा तक पड़ चुका था। बिर्याजी और उनकी मृत्युके बाद उनकी विधवा रानी आनन्दाबादेने १७८३ ई०में इस नगर के किन्तों किसी मन्त्रकी उन्नति का था।

आनन्दीबाईके बादके शासनकालामोंके समयमें यहाँ का राज्यभार सुपाहाके बिन्दुन दियाकरके हाथमें था, इसलिये राघुपुरप्रदेशम महाराजकी पैदा हो गई। तब अत्याचार और बन्दोबस्त अनुचित कर पञ्च शतकके सिवा राज्यशासनका और कोई नाति ही अव्यवस्था न

थी। इस मामूल अद्यावत्तकके समय भी सोनासानक विजयपारोने या कर इस जिलेका पूर्वांग नष्ट कर देनेने कोइ करत न रकी।

१८१८ ई०म अग्रा साहबके राज्यच्युत होने पर राजा रघुजी (१५)के नाबाबिम अवस्थामें मगधेजोने नागपुरराज्यका शासनकार्य अपने जिम्मे छे लिया। १८३० ई०म १५ रघुजीके सिंहासन पर बैठने तक नागपुर राज्य कमल पम्प्यूक शासनापोन रहा। उस समय रामपुरकी समृद्धि उत्तरोत्तर बढ़ती गई। १८५४ ई०में नागपुर राज्य मन्त्रेजोके अधिकारमें चले जानेके बाद भी छत्तीसगढ़ राज्य कर्मन पम्पू दाटा पञ्जाद हुए सूबे हारो प्रयाके अनुसार शासित हुआ था। उक्त प्रयाके अनुसार ऐसा सुन्दर बाल राजकार्य पछा था कि १८१८ ई०में सारै छत्तीसगढ़का जा कर था, १८५५ ई०में केवल रामपुर विभागका कर उससे उवादा पञ्चक होता था। इस समय कसाम इलियट छत्तीसगढ़ और बस्तारके शासन कार्यमें नियुक्त थे। १८५६ ई०में यह पमतारी और रामपुर तथा १८५७ ई०में बुर्ग इन तीन तहसीलों में विभक्त हो गया। १८५१ ई०में विजासपुर विभाग इससे मलग करके इस एक सतत जिला बना दिया गया और सिमगा तहसील रामपुरके अन्तर्गत कर ही गई। १८५७ ई०के मगधमें यहाँ विशेष कोई गड़बड़ी नही हुई, केवल सोनासानके पिछार सरदार नारायण सिंहकी उत्तेजनासे कुछ भाद्रमियोंने उपद्रवकी सूचना दे कर कुछ मन्त्रेज कमचारियों पर अत्याचार शुरू किया था। १८५८ ई०म मन्त्रेजोके विचारानुसार नारायण सिंहकी फाँसी हुई थी और उनकी जायदाद जप्त कर ली गई थी। उस समयसे पूर्वविभागमें पार्षत्य जातिया का तटफसे त्दर परीह हो गई और यह जन्मपन्नाप कमगाः जनहुल ही गया।

गौड़ लोग ही यहाँके आदिम अधिवासी हैं। बहुत से तो हिन्दू राजाओंके आधिपत्यमें हिन्दुओंके सम्बन्धसे हिन्दुमायापन्न हो गये हैं। बाकीके बहुसमें ख्रिस्तन लोग भव भी जगजा अवस्थामें पाये जाते हैं। परन्तु पञ्चमगा पुतने पगंडा छेड़ते हुए सम्बन्धीका अनुकरण कर रहे हैं। ये लोग बुद्धाई और मून्दाईका

प्राचीन सियार (नाथद्वार) नामक स्थानमें शिविर बना कर राणाको युद्धके लिये तैयार होनेको समाचार भेजा । राणाको मुसलमानके आनेकी बात पहलेसे ही मालूम हो गई थी । वे भी युद्धके लिए आगे बढ़े । उनके अधीन मेवारके अधीनस्थ सरदार और सेनापतिगण तथा गिरनारके दो सामन्त आ कर शामिल हो गये । रायमल्ल अपने परम मित्रोंको सहायतासे बलवान् हो कर ५८ हजार घुडसवार और ११ हजार पियादे ले कर रणक्षेत्रमें अवतीर्ण हुए । शोपमल्ल और सूरजमल्ल विपम विक्रमके साथ युद्ध करके भी पिताके सिंहासनका उद्धार न कर सके । दिग्गोके बादशाह इस भीषण युद्धमें पराजित होनेके बाद ऐसे शक्तिहीन हो गये थे, कि वे मेवाड पर फिरसे आक्रमण करनेका उद्यम न कर सके ।

युद्धमें दोनों भतोजोंकी विशेष वीरताका परिचय पा कर राणा रायमल्ल उन पर अत्यन्त सन्तुष्ट हुए थे । कई बार उद्यम करने पर भी जब दोनों बालक नष्ट सम्पत्तिका उद्धार न कर सके, तब उन्होंने उपायान्तर न देख चचासे क्षमा प्रार्थना की । वीरचेता रायमल्लने भी उनका सब दोष क्षमा कर दिया और उन्हें अपने परिवारमें मिला लिया । शोपमल्ल और सूरजमल्ल ने राणा जयमल्लकी तरफसे मालवराज गवासुद्दीनके विरुद्ध युद्ध करके विजयलक्ष्मी प्राप्त की थी । पराजित मालवपतिने भी सन्धिस्मृतमें आवद्ध हो कर विरुद्धाचरण न किया था ।

रायमल्लके तीन पुत्र थे । जिनमें बाबरशाहके प्रतिद्वन्द्वी सग (संग्राम) और पृथ्वीराज ही प्रसिद्ध हैं । छोटे जयमल्ल अमिताचारके दोषसे अकालमें कालके प्राप्त बन गये और बड़े तथा मध्यम पितृ-सिंहासनके उत्तराधिकारके विषयमें परस्पर विरोधी हो गये जिससे पिताके स्नेहसे वंचित हुए । सगने अपने जीवन नाशकी आशाकासे छिप कर रहनेके लिए विवासन व्रत धारण किया और मध्यम पृथ्वीराजके अन्याय आचरणसे उत्तेजित हो कर उन्हें उत्तराधिकार-च्युत करके निर्वासित कर दिया ।

पितृ-परित्यक्त पुत्र पृथ्वीराजके सिर्फ पांच घुडसवारके

साथ पितृ भवन छोड़ कर चले जाने पर पिता रायमल्लने उन्हें सम्बोधन कर कहा, "बेटा ! तुम वीर हो, अपने भुज बलसे और साहससे अपने जीवनका पोषण और रक्षण कर सकोगे ।" पृथ्वीराज देवा ।

सङ्ग छिपे हे, पृथ्वीराज निर्वासित हैं और जयमल्ल मर गये, यह देख कर सूरजमल्ल अपनेकी चचाके सिंहासनका प्रकृत उत्तराधिकारी समझ कर तथा नादरा मुग-राकी चारणोद्देवीके मन्दिरकी सेनाधिकारिणीकी सत्य समझ कर आश्वस्तचित्त हो कर राणाके विरुद्ध पशु-यन्त्रमें शामिल हुए । इस समय लाक्षारणाके अन्यतम वंशधर शार्ङ्गदेव भी उनके साथ शामिल हो गये । ये दोनों ही सहायता पानेका आशासे मालवके सुलतान मुजफ्फर खानके शरणागत हुए और मुसलमान सेनाकी सहायतासे इन्होंने दक्षिण-सोमान्तस्थित साद्री, बनूर और नाईसे लगा कर नीमच तक अपने कब्जेमें कर लिये । इस तरह क्रमशः विजय प्राप्त करते हुए वे चित्तोरके पास पहुँचे । विद्रोहियोंके दमनार्थ राणा रायमल्लने गाम्भीरी नदीके किनारे शत्रुको सेना पर आक्रमण किया । परः सामान्य सेनापतिको तरह राणा रणक्षेत्रमें उपस्थित रह कर वाईस अस्त्राघातोंके बाद पृथ्वीराज अश्वारोहियोंको ले कर बहा आ पहुँचे । फिर घोर-तर युद्ध शुरू हो गया । सूरजमल्ल पृथ्वीराजके अस्त्राघातसे विशेषरूपसे आहत हुए । किसी पक्षोंको भी विजय न प्राप्त हुई । अन्तमें दोनों सेना सहित शिविरको लौट गये । इसके बाद दोनोंमें और भी कई बार खण्डयुद्ध हुए । अन्तमें पृथ्वीराजने शठतापूर्वक सूरजमल्लको मारनेका निश्चय किया, परन्तु वे अपनी कल्पनाको कार्यरूपमें परिणत न कर सके । सूरजमल्ल मेवाडसे कान्धालके जंगलमें भाग गये और वहाँके अरण्यवासियों आदिम जातियोंको वशमें कर देवला नगर स्थापन करके वहाँका शासन करने लगे ।

जयमल्लको हत्या और संग्रामसिंहके भाग जानेके कारण चित्तोर राजसिंहासनके उत्तराधिकारीका अभाव हो गया, इससे राणा रायमल्लने वीरहृदय और प्रजा-वत्सल पुत्र पृथ्वीराजके पहलेके अपराध क्षमा कर उन्हें फिरसे वापस आनेकी आज्ञा दी । पृथ्वीराजने उस

आदेश पर ही बिसोरमें प्रवेश किया था। मार्गमें पितृ शत्रु सूरजमल्लको राजसिंहासनके लिए प्रयासों देख कर वे पुनः युद्धमें जित हुए। परन्तु बहुत कोशिश करने पर भी वे सिंहासन प्राप्त न कर सके। बिपाताने उनके भाग्यमें राज्यछात्र न लिखा था। उन्होंने किसी समय भगिनोको निर्वातन करके अयराधमें अपने साठे भावपतिको वृद्ध किया था। पिताको छया प्राप्त करने के बाद, बिसोरमें रहते हुए वे साठे उनके विद्वांस भाजन हो गये और अन्तमें विप-मयोगडे उन्होंने अपने भगिनोपतिको मार डाला था।

पृथ्वीराजकी अक्राड मृत्यु पर मन्तव्य हो कर राय मल्ल भी शर्म हो मर गये। इन्होंने पूर्वपुरुषोंकी भाँति जिस बीरताके साथ शिशोहीय वंशकी गौरवरक्षा का थी, उनका योग्य वंशधर संभने भी उसी वीरताके साथ बादशाहको विपुल मुगल-सेनाको आम्रमय किया था।

संतापसिंह रेवो।

रायपावता—२४ परगनेके अन्तर्गत एक नदी।

मावका रेवो।

रायमुकुन्द—एक प्रसिद्ध योद्धाकार। इन्होंने पद्मभित्तिकाके नामसे अमरकोपकी प्रसिद्ध डाका लियो थी। १७३१ ई०में ये विघ्नमात्र थे। इनकी बुद्धिको तोहमता देख कर पिताने इनका नाम 'वृद्धस्पति' रखा था। रायमुकुन्द पदवि नामक इनका एक अलंकार स्मृतिग्रन्थ भी लिखता है। रघुनन्दनने भाद्रपदपूर्वमें इसका उल्लेख किया है। गौपकुसुमोम होने पर भी अमरकोपयोद्धाके इन्होंने अपने को 'कुञ्जोनामको' लिखा है।

रायमुनी (दि० लो०) छाल नामक पक्षीकी मादा, सविया।

रायराजोड (शेड्ढाकोड)—मध्यप्रदेशके सम्बलपुर जिलेके अन्तर्गत एक छोटासा सामन्तराज्य। यह अक्षा० २० ५१' से २१ २४' उ० तथा देशा० ८३ ५६' से ८४ ५१' पू०में अवस्थित है। इसके उत्तरमें बामड़ा, पूर्वमें बाळमन्जिहक और अगूळ, दक्षिणमें सोनपुर और पश्चिममें सम्बलपुर जिला है। इसका भू परिमाण ८३३ वर्ग मील है। जनसंख्या २१४४४ है। जाम पाकी और टिकिच नामकी दो नदियाँ यहाँ

प्रवाहित होती हैं। अंगुलिमें शम्भ, पूना, मोम और काम पैदा होती हैं। अगह अगह उत्कृष्ट कोहेकी काम हैं। सम्बलपुरसे जो रास्ता अगूळ हो कर कटकको गया है, वह इस राज्यके भीतरसे जानेके कारण यहाँका देशी व्यापार उसी मार्गसे कटकमें ही चलता है।

पहले रायराजोड बामड़ाके राजाके अधीन था। करीब सौ वर्षसे भी अधिक पहले परनाक राजाओं द्वारा यह स्वाधीन हो कर गङ्गात महलक अन्तगत हो गया है। इस राज्यमें ३१६ ग्राम लयत हैं।

रायराज्य—इस्तरत्नाबलीके प्रजेता।

रायराज्य (फा० पु०) १ राजाओंके राजा राजाधिराज। २ मुगलोंके समयको एक उपाधि जो गाया रहती अर्थात् वारों और राजकर्मचारियों आदिको दी जाती थी।

रायरी (बेड़ी)—पम्बह प्रेसिडेंसीके रत्नगिरि जिलेके अन्तर्गत एक बुरा। यह बाजिज्य-ग्रन्थ से जानेवाली नावोंके जाने आने योग्य एक छोटी नदीके मुहानेके पास पहाड़के ऊपर अक्षा० १५ ४५' उ० तथा देशा० ७३ ४५' पू०में अवस्थित है। इस बुराका वषार्थ नाम वरावन्त गढ़ है। महाराष्ट्रकेशरी शिवाजी महाराजने १६३२ ई०में इसे बतथाया था। बादमें इस पर साबन्तबाजीके राजाओंका कब्जा हो गया। क्रमशः उन वस्तु-मूलिके सरदारोंके अत्याचारोंसे यह स्थान वस्तुताका दुर्भेद्य कोष्ट हो गया था। १७०५ ई०में अंग्रेजों सेनाने जा कर इस पर कब्जा जमाया, परन्तु दूसरे ही वर्ष अंग्रेजोंको उसे वापस दे देना पड़ा। १८१२ ई०को सन्धिसे अनुसार १८१६ ई०में रायरी बुरा अंग्रेजोंका हाथमें फिर चला गया और १८२० ई०में अंग्रेजोंका प्रमुख विस्तृत हुआ।

इस बुराका कुछ अथ पर्यतके ऊपर और कुछ अथ वारों तरफकी समस्त भूमिपर अवस्थित है। इसकी वस्तु-सीमामें असमान प्राचीर है। प्राचीर पर अगह अगह २० फुट ऊँचे बुरा हैं जिन पर तोपें लगी हुई हैं। एक बुरासे दूसरे हुआ तक छेदोंवाली दीवाल है। उन छेदोंमेंसे बन्दूकें छोड़ कर आम्रमयकारी शत्रुओंके ऊपर गोली चलाई जा सकती है। पहले प्राचीरके प्रवेशद्वारसे एक सीपी सड़क पर्यत परकें दूसरे दरवाज़ा हावी हुई मूलबुराके वारों तरफके भागमें अः कर निकल गई है।

यहाले कुछ सीढ़ी तै करके ऊपर चढ़ कर तीसरे ढारसे प्रवेश कर मूलदुर्गमें जाया जाता है। इस दुर्गकी दीवाल बाहरकी चहारदीवारीसे १५ फुट ऊंची है। इसीके नीचे पर्वतको विदीर्ण करती हुई २४ फुट चौड़ी और १३ फुट गहरी एक खाई है। दक्षिण-पश्चिम और दक्षिण-पूर्व कोणमें खाई न होनेसे दुर्गके मोतरकी सेनाको रक्षाथ वह स्थान शत्रुसेनाके गोलोंसे बचनेके लिए अत्यन्त दुर्भेद्य बनाया गया था। दुर्गके सबसे ऊंचेकी मजिलकी दीनालका परिसर १२ फुट है। ऊपरके प्राचीर पर हर ६० फुटके अन्तरमें तोपें लगी हुई हैं और एक एक अर्द्ध गोलाकार बुर्ज हैं।

इस दुर्गके पास ही हस्तदोलगढ़ पहाड़ है। उसके सामने परधर काट कर गुफाप बनाई गई हैं। ये गुफाप हजार वर्ष पहलेकी काटी हुई हैं। स्थानीय लोग इन्हें पवित्र मानते हैं।

रायल (अ० वि०) १ राजकीय, शाही। २ छापनेका कलों तथा कागजकी एक नाप जो २० इंच चौड़ी और २६ इंच लम्बी होती है।

रायलचेरू—मन्द्राज प्रेसिडेन्सीके उत्तर आर्कट जिलेके अन्तर्गत एक गण्डग्राम। यह अक्षा० १३° ३०' ५" उ० और देशा० ७६° २७' ३०" पू०में अवस्थित है। विजयनगरके राजा कृष्णदेव रायलू द्वारा निर्मित प्रसिद्ध बाघके कारण ही इस स्थानकी प्रसिद्धि है। आधी मीलके फासलेमें दो पहाड़ोंमें बाँध दे कर यह दिव्यो बनाई गई है। इसकी विस्तृति १२० फुट और ऊँचाई ७० फुट है। तिरुपतिसे काञ्चीपुर जानेवाले वाणिगण यहा ठहरा करते हैं।

रायलसा—मन्द्राजप्रेसिडेन्सीके विशाखपत्तन जिलेके अन्तर्गत एक पर्वत और घाटी। यह अक्षा० १८° १५' उ० और देशा० ८३° ७' पू०में अवस्थित है। इस रास्तेसे कासिमकोटसे गल्लिकोण्डका परित्यक्त स्वास्थ्य निवास पार कर जयपुर पहुँचा जा सकता है। विजयनगरके प्रहाराजकी यहाँ काफीकी खेतीका स्टेट है। यह स्थान समुद्रसे २८५० फुट ऊँचा है।

रायवरेली—१ युक्तप्रदेशके अयोध्या-विभागके अन्तर्गत एक विभाग। इसका शासन गवर्नरके अधीन कमिश्नर

द्वारा होता है। यह अक्षा० २५° ३४' से २६° ३६' ५" उ० तथा देशा० ८०° ४४' से ८२° ४४' पू०में अवस्थित है। रायवरेली, सुलतानपुर और प्रतापगढ़ जिले इसके अन्तर्भूक्त हैं। इसके उत्तरमें बाराबंकी और फैजाबाद, पूर्वमें आजमगढ़ और जौनपुर, दक्षिणमें झाहाबाद और फतेपुर तथा पश्चिममें उन्नाव और लखनऊ जिले हैं। इसका भू परिमाण ४८८१.०७ वर्गमील है।

२ उक्त विभागका एक जिला। यह युक्तप्रदेशके गवर्नरके अधीन है। यह अक्षा० २५° ४६' से २६° ३५' उ० तथा देशा० ८०° ४४' से ८१° ४०' पू०में अवस्थित है। इसके उत्तरमें लखनऊ और बाराबंकी, पूर्वमें सुलतानपुर और दक्षिणमें प्रतापगढ़ हैं। दक्षिण पश्चिममें गङ्गा नदी और पश्चिममें उनाव जिला है। इसका भू परिमाण १७३८ वर्गमील है। बरेली गहर इनका विचार सदर है।

इस जिलेका पृथक् कोई इतिहास नहीं है। अङ्गरेजोंके अधिकारमें आनेके बाद १८६६ और १८८१ ई०में इसके आयतनमें परिवर्तन हुआ था। सारा जिला क्रमोच्च-निम्न समतलक्षेत्र है। जगह जगह मधुमा और आमके धाग हैं। गङ्गाके किनारे बरूल, पीपर आदिके पेड़ हैं। गङ्गा और साई यहाँकी मुख्य नदियाँ हैं। इनके सिवा लूना, बसाहा और नाइया नामकी तीन शाखानदियाँ हैं। १८६४ ई०में इस नगरमें साई नदीके ऊपर पुल बना था।

३ उक्त जिलेकी तहसील। भू परिमाण ३७११० वर्ग-मील है। प्रसिद्ध साईं क्षत्रियवंशके महानुभव तिलकचंद्र यहाँ राज्य करने थे।

४ उक्त जिलेका प्रधान नगर और विचार-सदर। यह अक्षा० २६° १०' ५०" उ० और देशा० ८१° २६' २४' पू०में साई नदीके किनारे पर अवस्थित है। बुद्धर्ष भरजाति द्वारा इस नगरकी प्रतिष्ठा हुई थी और प्रतिष्ठाताकी जातिके नामानुसार इसका नाम भरौली और पीछे अपभ्रंश हो कर बरेली पडा। किम्बदन्ती है कि, इसके पास राहि (राई) नामका एक ग्राम है, इसलिये इसका नाम रायवरेली पड गया है। एक दूसरा प्रवाद प्रचलित है जिसने मालूम होता है, कि यहाँ पहले राय उपाधिधारी किसी कायस्थका आधिपत्य था। रायोंकी वासभूमि भरौली (भर-रुत) नगरमें परिणत होने पर दोनोंके योगसे रायवरेली पड गया।

इसको १५वीं शताब्दीके प्रारम्भमें जीमपुरके राजा
 इन्द्रादिन खर्कनि नरदायिको भया कर इस स्थान पर
 अधिपकार किया था। समीचे यहाँ मुसलमानोंका प्रभाव
 फैला है। मुसलमान राजा इन्द्रादिन सरुनि यहाँ एक
 छोटा सा दुर्ग बनवाया था। इस दुर्गको इटोंकी लम्बाई
 २' x चौड़ाई १। x और ऊँचाई १ फुट है। प्रसन्नस्य
 विद्वोंका अनुमान है, कि मुसलमानोंने सम्भवतः किसी
 प्राचीन दुर्गकी इटोंके यह दुर्ग बनवाया होगा। दुर्गके
 बीचमें एक २२३ हाथ परिधिकी बाबली है। अब तो
 इसका अधिकांश टूट फूट गया है।

प्रथा है, कि मुसलमान राजा दुर्ग बनायात समय
 दिन नर मितना चुनवाते थे, रातको किसी भ्रमावलीय
 कारणसे उतना सब बह जाता था। उत्तरोत्तर येसो
 दुर्घटना होने पर राजान जीमपुर निवासी मल्बुम सैयद
 जाफरी नामक मुसलमान साधुसे प्रतिकारक छिपे
 प्राधना की। वहनुसार राजाकी अमिषाया पूरी करनेके
 छिपे उक्त साधु उसके चारों तरफ घूम फिर गये। फिर
 कोई उपद्रव नहीं हुआ। दुर्गकारके पास उक्त साधुकी
 समाधि विद्यमान है। अन्वयात् महात्मिकाओंमें राज
 प्रासाद, मुगल-सम्राट् और कुतुबके अचीनस्य शासनकर्ता
 नवाब इब्राहिम खान समाधिभूय और ४ मसजिदों हैं,
 जिसमें एक गुम्बज-रहित और मकब्रको काबा मसजिदके
 अनुकरण पर बनाई गई है, येसो प्रसिद्धि है। सार नदीका
 पुक स्थानोय ज़मा शतके व्यवस बना है।

रायरायिनी (स० टी०) १ इम प्रकृति, २ फल समाय ।
 २ मधुपत्रा और कर्मप्रिया रमणी ।

रायरायिनी—बम्बईप्रदेशके आलापार प्राग्वह्य एक पुत्र
 सामन्तराज्य। यहाके अधिपति म गरीज राजको और
 ज़नागढ़के नयाबको पद दिया करते है।

रायरोधर—एक वैष्णव पदाबलीकार। इनका प्रथम नाम
 था राशिरोधर। बड़ मान जिसके पद्मानाश्रममें इनका
 जन्म हुआ था। ये भोकरबहासा स्तुतम्न गोलामो-
 के शिष्य और नित्यात्मन्के पंशज थे। गोविन्दरायके
 पत्ने इस्तीम बंगवा पद बनाया। कार कीद इन्ह २ प्रयोकर
 दहा करत है।

रायसा (दि० पु०) पद पाव्य जिसमें निसा राजाका
 आसनचरित्र वर्णित है, रासो ।

राय साहब (का० पु०) एक प्रकारकी पद्यो का भाव
 की म गरीजी सरकारको भोरस खसो और राजकर्म-
 चारियों भादिको से थातो है।

रायसिंह—बैचकसारस प्रह वा राजसिंह होतस्य नामक
 वैष्णवग्रन्थके प्रणेता ।

रायसेन (रायसिंह)—म०वभायके मोवाल राज्यके मन्तर्गत
 एक गिरि दुर्ग। यह अक्षा० २३ २०' ३०" और देशा०
 ७३ ४०' ५०"में समुद्रस १६५० फुटकी ऊँचाई पर एक
 छोटी पहाड़ी पर अवस्थित है। यहाँसे भायलप्रसिद्ध
 साँबाका शीखकोसि १० मीलकी दूरी पर है। होयजू
 बाइस सागर शानका रास्ता इस स्थानके पासम गया
 है। यह दुर्ग दुर्गपंथा और गठननेपुण्यमें इतिहासप्रसिद्ध
 था। १५४३ ई०में शेय्याहल इस दुर्गको घेरा और जीता
 था। इसको १८वां शताब्दीके मध्यभागम मराठा
 सेनाल इस पर कब्जा किया था किन्तु इसके कुछ हो
 समय बाद १७७८ ई०में भोपाळके नयाबने इस मराठोंसे
 छीन लिया था। १८१८ ई०में उक्त दोनों राजा थे प्रेसो के
 साथ सम्पिषुर्तमें उकड़ गये थे।

रायस्काम (स० लि०) धनकाम, धनकी इच्छा करने
 याका ।

रायस्वीय (स० पु०) १ धमपुष्टि, काफा धन। (लि०)
 २ धनपुष्ट, धनवान् ।

रायस्वोपक (स० लि०) धमपुष्टियुक्त काफा धनवाका ।

रायस्वोपश (सं० श्लो०) धमपुष्टिदायिना, काको धन
 देनेवाली ।

रायस्वोपशयन् (सं० लि०) धन या जीभाग्यवाली ।

रायस्वोपशयनि (सं० लि०) सोने चाँदा बनेजासा, काकी
 धन दनवान् ।

रायाव—वृन्दावन-बासा एक गोप । रम्य-भावा यज्ञोहाके
 भाई। छम्पप्रिया भ्राधिकाके साथ इनका विवाह हुआ
 था। म्दधेयशत्रुपानमें लिखा है, कि गोवर्द्धम विरजा-
 पितारमें प्रवृत्त इन्को देख कर रायाने उग्रद फटकारा
 था। इस समय उग्राने छम्पके पास बैठे हुए तुलामाका
 नी तिरस्कार किया था। तुलामाके जापस राया गोप
 कन्याके दरमें पूवमानु धैर्यका पत्रो असायतीके पापु
 गर्भमें आविर्भूता हुए थे ।

नवयौवना राधाकी वारहवीं साल वीत जाने पर सूर्यमानुने राधान वैश्यके साथ अपनी कन्याका विवाह करना स्थिर किया। तब राधा उस देहमें छायामात्र रख कर अन्तर्धान हो गई और छायাকে साथ राधानका विवाह हो गया। राधान कृष्णांश-सम्भूत और गोलकके गोप थे। मर्त्याधाममें आ कर वे नानेमें कृष्णके मामा हुए। राधाकी अवस्था जब चौदह वर्षकी हुई, तब कृष्ण कंसके भयके वहाने गोकुलमें लाये गये।

(ब्रह्मव वर्तपुराण प्रकृतिलेख० ४६ ध०)

मतान्तरसे ऐसा है, कि राधानने पूर्वजन्ममें लक्ष्मीको प्राप्त करनेकी आशासे तपस्या की थी। नारायणके वरसे उन्हें लक्ष्मी प्राप्त होने पर भी लक्ष्मीके आदेशसे वे नपुंसत्वको प्राप्त हुए थे। लक्ष्मीके अनुरोधसे भगवान्ने कृष्णावतारमें उन्हें पुनः ग्रहण किया था।

रायाणनीय (स० पु०) एक आचार्याका नाम।

रायेकवाड़ (रायकवाड़)—राजपूत जातिकी एक जाति। ये सूर्यवंशी कहलाते हैं। १४१४ ई०में तुगलकवंशके अधःपतनसे हिन्दुस्तानमें घोर अराजकता उपस्थित होने पर प्रताप शा और दण्डो जा नामक दो सूर्यवंशी राजपूत भाइयोंने काश्मीर राज्यमें रायका ग्रामसे मड़ौचमें, फिर वाराणसी जिलेके रामनगरमें आ कर बसे थे। इनके वंशधरोंने १४५० ई०में किसी भरराजको पराजित कर उनकी विस्तृत सम्पत्ति प्राप्त की थी। प्रताप शाके अधःस्तन पञ्चम पुत्रप राजा हरिहरदेव मुगल-सम्राट् अकबरके समसामयिक थे। उनके राज्यमेंसे कोई मुगल-राजकन्या सैयद सालरकी समाधि देखने गई थी। राजाने इसके लिये कर लिया था, जिससे अकबर शाह द्वारा वे तिरस्कृत हुए थे। पीछे राजा हरिहरदेवने सम्राट् की तरफसे काश्मीरके राजद्रोही शासनकर्त्ताको दमन किया और इसके लिये उन्हें पुरस्कार-स्वरूप नौ परगने प्राप्त हुए। इस राजवंशके साथ उनाव-राजवंशकी कुटुम्बिता है।

रामनगर और बौन्दी-राजवंशके प्रतिष्ठाताके भैरवानन्द नामक एक भाई थे। उनके भतीजेने भविष्यवाणी कह कर अपने चचासे निवेदन किया कि आपके आत्मोत्सर्गसे हमारे वंशका माहात्म्य चिर-दिन अक्षुण्ण

रहेगा। तदनुसार भैरवानन्दने चन्दाशिहली ग्राममें एक कूपके पास चतूतरा बनवा कर उसके ऊपरसे कूपमें गिर कर प्राण त्रिसर्जन कर दिये। तबसे वह स्थान पवित्र तीर्थ समझा जाता है। रायकवाड़ लोग प्रतिवर्ष यहा आया करने हैं।

स्थानभेदसे ये विभिन्न श्रेणियोंके राजपूतोंके साथ आदान प्रदान करने हैं। रायवरेली जिलेमें ये विषेण और घर्घरायामी वारियोंकी लडकी लेने और अमेठिया, पनवार तथा वारियोंकी लडकी देने हैं। वरेलीमें वाचाल और गौतमके घर लडकेका विवाह करते हैं। फरुखावादी लोग घागिप्रगोत्री और सोमवंशी, राठोर और चौहानके घर कन्या देते हैं। ये लोग पुत्रका विवाह और सर्वोंके घर कर सकते हैं।

रायेन (रायन)—उत्तर-पश्चिम भारतमें रहनेवाली एक जाति। किसानों और मालीका काम करना इनका जातीय रोजगार है। रोहिलखण्ड और मेरठ विभागमें हिन्दू और मुसलमान दोनों प्रकारके रायेन रहते हैं। पञ्जाब प्रदेशमें ये 'अरायेन' कहलाते हैं। सिरसा, रानिया और दिल्लीवाल रायेन हिन्दू और राजपूत तथा लाहौर-प्रतिष्ठाता राजा लवके पौत्र राय जाजके वंशधर हैं, ऐसी प्रसिद्धि है। ईसाकी १२वीं शताब्दीमें साहव-उद्दीन गोरीके राज्यकालमें ये इस्लामधर्ममें दीक्षित हुए थे। जालन्धरवासी रायनोंका कहना है, कि वे राजा करणके ५म पुत्रप अधस्तन राजा भूतके वंशधर हैं। उच्छप्रदेशमें उनका वास था। गजनी-पति महमूदने उन्हें मुसलमान बनाया था। उच्छ-पतिने वसन्ती नाम के किसी रायनकी कन्यासे पाणिग्रहणके लिये कहा, तो उन्होंने खोकार नहीं किया, जिससे नाराज हो कर राजाने उन्हें राज्यसे निकाल दिया। तब वे सिरसा और पञ्जाबके नाना स्थानोंमें जा कर रहने लगे। इस विषयमें उनमें एक किम्बदन्ती है—

"उच्छ मा दिवे भूतिष्ठां, चाता वसन्ती नार।

दागा-पानी चूक गया, चावन मोती हार ॥"

हिसारके रायनोंका कहना है, कि पहले वे राजपूत थे, मुसलमान होनेके बाद उनका जातीय सम्मान जाता रहा और समाज-व्रष्ट हो कर खेतोंका काम करना पड़ा।

रुममें अब भी ब्रिरोहा, चौहान और माटो भादि राज पूतो के मोर प्रचलित पाये जाते हैं। जिनमें कटमा मोर हो रायन आदि का भादि मोर है।

सिरसाक रायन कहते हैं, कि शम्भो द्वारा उच्छसे मगाये जा कर वे मुलतान भा कर रहे और सेनिक-पूति छोड़ कर इतिपूति करनको बाध्य हुए। 13१५ ई०के बुमिंक्षमें वे घाघर नदीके किनारे भा कर माटनसे फतेहाबादक तोहाना तक घाघर उपत्यका पर अधिकार करके यहाँ सेतो-बारा करने रहे। इन समय लुटेरे मडियो के उपद्रयस शक्तिहीन हो कर प बरैने, पाली भात और रामपुर भादि स्थानोंमें जा कर रहने लगे।

रायोबाज (सं० पु०) एक अविद्या नाम।

रायोबाजोय (सं० लि०) सामनेद।

रा (हि० पु०) ? अगड़ा टंटा, बुद्धत। (खी०) २ राज सेतो।

राय (सं० पु०) १ सीन्धु। २ आलोक, रोशनी। ३ उयोति।

राख (सं० पु०) १ सज्जतक। (Mimosa Ratunculis) पूनाका पेड़। २ सखरस, साखरसका निर्वास, पूना। पर्याय—साख, कनककोन्दय सखन, साखनिर्वास, सुर पूष पक्षपूष, भग्निपक्षम, कख, कखकख। गुण—शीतल, स्निग्ध, कषाय तिक्त, स पाहक तथा पातपिच, स्फोटक, कण्डु और मयनाशक। (राजनि०)

राख (सं० पु०) १ राखका एक प्रकारका सफ़ निर्वास या गोंद। जो तख गोंद उसमें एक जाता है उस Gum Resin कहते हैं। इसमें राख और तेस बहुतायतसे होता है। एकमाल तेस और राख मिळ हुए गोंदका नाम Oleo Resin है। जो सब कठिन और कोमल गोंद का भादिक साध व्यवहृत होता है यही True Resin या राख कहलाता है।

राख पूषका भाया इधनेमें गोंदको तख होता है। भागमें पकानेस यह गल जाता और थोड र्ने पर चूर्ण होता है। यह अक्षम नहीं गलता। इपर पानी एक कोदकमें मिसानेस द्रव होता है। इनमें अधिक मात्रामें कार्बन और कम मात्रामें भादिसज्जन रहता है। नाटो उन नाममात्रका मो नहीं रहता। सिनामिक और पैन्

जोयिक एसिड, मन्ड्यइक भायेकके भतिरिक्त इसमें Cellulose tannin भादि एख रहते हैं।

साखमें राज मिळानेसे पात और बटन (Shellac और Button Lac) तैयार होता है। जो सब साखके किस्मों बाजारमें बिकते हैं उनमें अधिक भाग राख ही है। वट भादि पेड़के कण्डे भाटेमें राख गला कर चिड़िया मारनेवाला चिड़िया पकड़नेके लिये एक प्रकार का भाटा बनाता है। पर्याय—साख, कनककोन्दय, सखन साखनिर्वास, वेधेध, शीतल बहुरूप, साखरस, सज्जी निर्वासक, सुरभि सुत्पूष, यक्षपूष, भग्निपक्षम, कख, कखकख। रसका गुण—शीतल स्निग्ध, कषाय, तिक्त, संभाहक, वातपिच, स्फोटक, कण्डु और मयनाशक माना गया है। (राजनि०)

राख (हि० पु०) १ एक प्रकारका कंवल। (खी०) २ यह पतला लसकार पूष जो प्राय बयो और कमी कमी बुद्धको मु हुसे भापसे भाप बहा करता है। वौतो की पोड़ा भादिमें कोड कोड दवा लगाने पर मो यह मु हुसे निकल कर गिरने लगता है, सार। ३ बीपारोका एक रोग जिसमें उन्हें काँसो भाती है और उनके मुँहसे पतला लसकार पानो गिरता है।

राखकार्य (सं० पु०) राखस्य साखरसस्य कार्यं पक्ष साखका पेड़।

राखी (हि० खी०) एक प्रकारका बाजरा। इसके दाने बहुत छाने होन हैं। यह प्राय संयुक्तप्राप्त और पुष्पेकसरबमें होता है। यह फागुन व्रतमें बोया जाता है और वेदाखमें तैय्यार होता है।

राय (सं० पु०) रयामिति रुच्यनी यम्। शब्द, प्यलि।

राय (हि० पु०) १ राजा। २ सखार, इरासी। ३ धोमस्त, यनाय्य। ४ माय, बदायन। ५ कच्छ और राजपूनामक कुछ राजाओंकी एक पत्नी। ६ छाने भाकार का एक पेड़। इसकी लकड़ी कुछ लसाइ लिये चिड़नी और मज्जत होता है। यह हिमान्यकी तराईमें इजारे और सिमलस मृदान तथा शिकिम तक होता है। इसकी लकड़ीको प्राय छिड़िया बनाई जाती है।

रावचाव (हि० पु०) १ नृत्य गीत आदिका उत्सव, राग रंग । २ प्यार, लाड, दुलार ।

रावजो मोडक—नोतिमुकुलके प्रणेता ।

रावट (हि० पु०) राजभवन, महल ।

रावटी (हि० स्त्री०) १ कपडे का बना हुआ एक प्रकारका छोटा घर या डेरा । इसके बीचमें एक बडेर होती है और इसके दोनों ओर दो ढालुपं परदे होते हैं । यह बड़े खेमों के साथ प्रायः नौकरों आदिके ठहरनेके लिये रखी जाती है, झौलदारी । २ वारहदरी । ३ किसी चीजका बना हुआ छोटा घर ।

रावण (सं० पु०) रवणस्यापत्यमिति रवण (शिवादिभ्या-
ञ्ण् । ४।१।१२) इति अण्, यद्वा रावयति भीषयति
सर्वानिति रुणिच्-ञ्यु । १ मुहूर्त्त । २ लङ्काधिपति ।
पर्याय—पौलस्त्य, रक्षस्, लंकेश, दशकन्धर, दशकण्ठ,
निक्रपात्मज, गक्षसेन्द्र, पण्डिक्रवीच, दशानन, लङ्कापति,
दशास्य । (जटाधर)

इसकी नामनिश्चि—

“यस्माल्लोकभय चैतद्द्रावित भयमागतम् ।

तस्मात्त्वं रावयो नाम नाम्ना वीरो भविष्यसि ॥”

(रामायण)

इससे तीनों लोक द्रावित और भयभीत होता था । इस कारण इसका रावण नाम पडा । राक्षसाधिपति रावणकी उत्पत्ति और निधनादिका विषय रामायणमें इस प्रकार लिखा है—

ब्रह्माके पौत्र पुलस्त्य, पुलस्त्यके पुत्र विश्रवा और विश्रवा हीका पुत्र रावण था ।

लङ्कामें राक्षसगण रहते थे । इन राक्षसोंके साथ भगवान् विष्णुका घोर संग्राम हुआ । युद्धमें हार खा कर राक्षसगण पाताल भागे । इनमेंसे सुमाली नामक एक राक्षस था । सुमालीके कैकसी नामक एक सुन्दर कन्या थी । सुमाली रसातलमें कुछ दिन रह कर कन्याके विवाहके लिये उसे साथ ले रसातलसे निकला । रास्तेमें वह मन ही मन सोचता जाता था, कि इस कन्याके गर्भसे जो सन्तान उत्पन्न होगी वह यदि विष्णु-का दमन कर सके तो हम लोगोंका दुःख दूर होवे ।

सुमालीने कन्याका घर मन ही मन स्थिर कर

कन्यासे कहा, 'बेटी ! तुम प्रजापतिकुलसे उत्पन्न पुलस्त्य-के पुत्र विश्रवाके पास जाओ और उसे अपना पति बना कर अत्यन्त तेजस्वी शत्रुका दमन करनेमें समर्थ ऐसे एक पुत्रके लिये प्रार्थना करो । कैकसी पिताके आदेश पा कर जहां विश्रवा नपस्या करते थे, वहाँ गई और उन्हें प्रणाम कर रहने लगी ।

एक दिन विश्रवाने इस अनवद्या कुमारीको देख कर कहा, 'भद्रे ! तुम किसकी कन्या हो ? कहासे और क्यों यहा पर आई हो ? कैकसी लज्जासे गिर भुकाये वाली, 'मुनिवर ! मैं पिताके कहनेसे यहा आई हूँ, कैकसी मेरा नाम है । किस लिये मैं यहाँ आई हूँ सो आप स्वयं तपके प्रभावसे जान सकते हैं ।'

विश्रवाने तपके प्रभावसे कुछ विषय मालूम कर कैकसीसे कहा, 'भद्रे ! तुम एक पुत्रको कामनासे यहाँ आई हो । मुझसे तुम्हारे जो एक पुत्र होगा वह कर ब्राह्मणोंका प्रिय, क्रूरस्वभाव, भयङ्कर और क्रूर-कर्मा होगा ।' कैकसी मुनिका वचन सुन प्रणाम कर वाली 'भगवान् ! आप ब्रह्मवादी हैं, मुझे दुराचारी पुत्रकी जरूरत नहीं, मैं एक उत्तम पुत्रके लिये प्रार्थना करती हूँ ।'

विश्रवाने कैकसीका वचन सुन कर कहा, 'तुम्हारा छोटा लडका मेरे वंशानुरूप धर्मशील होगा ।' कुछ समय बाद कैकसीने विश्रवासे एक सुदारुण वीमरस राक्षस प्रसव किया । उस राक्षसके दश मस्तक, केश-कलाप-प्रदीप्त, ओष्ठ लोहित, दन्त विशाल, चाहुवीर और वर्ण घोर काला था । पुत्रके उत्पन्न होते ही नाना प्रकारका भयावह उत्पात होने लगा । दशश्रीव होनेके कारण पिताने उसका दशश्रीव नाम रखा ।

पीछे कैकसीके गर्भसे कुम्भकर्ण और विभीषण नामक दो पुत्र और सूर्पनखा नामक एक कन्या उत्पन्न हुई । धनेश्वर कुबेर भी विश्रवा-नन्दन थे । उस समय वे लङ्कामें रहते थे । एक दिन वैश्रवण धनेश्वर पितासे मिलने आये । कैकसीने दशाननसे कहा, 'बेटा ! अपने भाईको देखो, यह विपुल धनका सम्पत्ति और तेज सम्पन्न है । तुम्हें भी अपने भाईके समान ऐश्वर्य और तेजस्वी होनेकी कोशिश करनी चाहिये ।'

दशाननने माताको बात सुन कर कहा, 'मैं आपके निकट प्रतिज्ञा करता हूँ, कि अपने तपक प्रभावसे माइ के समान भयवा उनसे बड़ कर ठेगल्लो होऊँगा। आप इस छोटी सी बातके लिये चिन्ता न करें।' इसके बाद दशानन अपने माइपौके साथ घोर तपस्या करने लगा। इस प्रकार हजार वर्ष बीत गया। रावणने अपना एक मस्तक काट कर भस्मिर्न भाङ्गुति की। इस प्रकार वह ६ हजार वर्ष तक कठोर तपस्या करता रहा, पर कोई फल नहीं निकला। पीछे एक एक कर उसने ६ मस्तकों की भाङ्गुति दे जाकी ता मी कोई फल नहीं। दश हजार वर्ष बीतने पर दशमीवन वृक्षां मस्तक काटना चाहा। लोकोपितामह उसकी तपस्यासे प्रसन्न हो वहाँ आय मीर देखे, 'दशानन! अब तुम्हें दशवां मस्तक काटना नहीं पड़ेगा, तुम्हारी तपस्यासे मैं संतुष्ट हुआ, जो इच्छा हो कर ली।'

दशाननने प्रज्ञाको प्रणाम कर कहा 'प्रह्वन्! यदि आप प्रसन्न हैं, तो यही वर दीजिये, जिससे मैं अमर होऊँ।' वसी कि माणिकी मृत्युका मय ही हमेशा हुआ करता है, वसुद मय नहीं। विशेषतः मृत्युके समान और और शत्रु नहीं है।'

प्रज्ञाने कहा, 'पृथिवी पर कोई भी अमर नहीं हो सकता। इसलिये तुम अमरकी छोड़ कर वसुदे अरके लिये प्रायना करे।' रावण बोला, 'ममवन्! यदि सब मुख अमर कर देना न चाहत है, तो यही वर दीजिये जिससे मैं देव, दानव, देव्य, पक्ष रक्ष, नाग और सुपर्ण से मारा न जाऊँ। मनुष्य आदि प्राणियोंका मैं तप के समान जानता हूँ उनका उर मुझे उरा मी नहीं है। प्रज्ञा 'तथास्तु' कह कर सब लिये। जाते समय उन्होंने कहा था, 'तुमने जिन सब मस्तक की भस्मिर्न भाङ्गुति की है, वे सब मस्तक फिर उसी प्रकार हो जायिगी और तुम आ चाहाने, यही तुमके मित्र जायगा।' पिछा मइके इस प्रकार कहते ही भस्मिर्नसे सती मस्तक फिर निकल भाये।

सुमाली राजसका जब रावणदिके दरबामका हान मालूम हुआ, तब उसका कुछ मय जाता रहा। उसने अनुचरोंके साथ रसातलसे बाहर निकल कर रावणके

कहा, 'वत्स! तुमने प्रज्ञासे उत्तम वर पाया है। हम लोगोंने इत्थम यह माया बहुत दिनेसे खगी हुई थी ममी माणवयत यह पूर्ण हुई। हम लोग जिस लिये खड्गका परिष्कार कर पाताहमैं आ कर रहते थे, वह मय आज हम लोगोका वर हुआ। बिलुके मयसे हम लोगोंने इस स्थानका छोड़ा था। पहले कड्डा मगरी रासुलैके अधिकारमें थी। ममी तुम्हारा माइ कुबेर वहाँ रहता है। तुम चाहे जिस किसी क्वायसे हो, खड्ग मगरी पर अधिकार करो इससे रासुलैका बजा मारी उपकार होगा। पीछे हम लोग तुम हीको खड्गका राजा बनार्ये।'

रावण मातामह सुमालीका वचन सुन कर रासुलैके साथ खड्ग गया और कुबेरकी खड्गपुरी छोड़ देनेके लिये कहका भेजा। कुबेरने रावणके वसुसे कहा, 'यह रासुलैशून्या खड्गपुरी पिताजीने मुझे दी थी। मीने उसी लिये वहाँ पुरा बसाई है। मेरा यह राज्य और पुरी तुम्हारी ही है। मतपत्र तुम भक्तपत्र राज्य मोग करो। मुझे इस राज्य और जनकी कुछ भी अकरत नहीं है।'

कुबेर इस प्रकार वृत्ता विदा कर पिताके पास गये और उग्रे कुछ वृत्तान्त कह सुनाया। विभवासे कुबेर से कहा, 'पुत्र! दशाननने मां मुझसे यही कहा, केकिन मीने उसकी बहुत फटकारा। पीछे मीने कुछ हो कर 'तुम ध्वंस होग' इस प्रकार भस्मिर्न मी दिया। तुमने रावण करके प्रभावसे हिताहितकामभूम्य हो गया है। इसलिये तुम ममी खड्गका परिष्कार कर मनुष्यों के साथ कैजाम-पर्यत पर चले जाओ और यही रहनेके लिये पुरी निर्माण करो।'

कुबेरने खड्गपुरीका त्याग कर दिया है, तुन कर रावण अनुचरोंके साथ खड्ग गया और वहाँ रहने लगा।

खड्गराज्यमें भस्मिर्निक हो रावणने मयदानवकी कन्या मन्वोदरीसे श्याह किया। कुछ दिन बाद मन्वोदरी के गर्भसे मधनाद उत्पन्न हुआ। रावणने प्रज्ञाके वरसे बलवान् हो लाग, मर्य और पाताल लोनों लोकेकी जीता। इन्द्र, यम आदि दिक्पाल भी हार का कर रावणके

आज्ञानुसार कार्य करनेको बाध्य हुए। उस दुर्बलते पहले कुबेरकी पराजय कर उनका पुष्पक विमान छीन लिया। अब पुष्पक विमानकी सहायतासे वह क्षण भरमें स्वर्ग, मर्त्य और पाताल आने जाने लगा।

दुष्ट रावण राहमें देवकन्या, दानवकन्या, राजकन्या और ऋषिकन्याकी हरण करने लगा। वह जिसको रूपवती देखता उसके आत्मीयको विनाश कर उसे हरण कर लेता था। कोई भी उसे लडाईमें जीत नहीं सकता था। इस प्रकार रावण बर पा कर गर्वित और दुर्बल हो गया।

एक दिन रम्भा नामक एक अप्सरा नलकुबेरको अपना पति बर कर उनके पास जा रही थी। राहमें सयोगवश रावणके साथ उसकी भेंट हो गई। रावण उसे देख बलपूर्वक हर ले गया। रम्भा निरुपाय हो बड़ी विनतीसे उसे कहने लगी, "आप मेरे गुबजन हैं, आप मेरे स्नूपा हैं। अतएव मैं आपकी कन्या सदृश हूँ। मुझ पर इस प्रकार बलात्कार न करें।" रावण कामके मदसे उन्मत्त था, उसकी बात पर कुछ भी कान न दिया, बलपूर्वक शिला पर पटक कर सम्भोग किया।

रम्भा नितान्त अपमानित और धर्मव्रथा हो रोती हुई नलकुबेरके पास गई। नलकुबेर उसकी अवस्था देख कर और कुल वृत्तान्त सुन कर आगबवूला हो गये। उन्होंने रावणको शाप दिया, 'यदि रावण फिर कभी अकामा स्त्रीके साथ संभोग करेगा, तो उसका मस्तक उसी समय सात टुकड़ोंमें बट जायगा।'

रावण नलकुबेरके शापसे फिर कभी भी अकामा स्त्रीके साथ संभोग नहीं कर सकता था। स्त्रीको हरण कर छल, बल, कौशल वा प्रलोभन आदिसे उसे सकामा बना कर तब संभोग करता था। इस पर भी जो नहीं लुभाती थी उसे वह तरह तरहका कष्ट देता था।

रावण सहस्रबाहु अर्जुनके पराक्रमकी बात सुन कर उसके साथ लड़ने गया और परास्त हुआ। अर्जुनने उसे कारागारमें बंद रखा। पुलस्त्यको जब यह मालूम हुआ, तब वह अर्जुनके पास आया और उसे छोड़ देनेके लिये प्रार्थना की। अर्जुनने रावणको छोड़ दिया और उससे मित्रता कर ली।

इसके बाद जब रावणको वानरराज वालाके पराक्रमका हाल मालूम हुआ, तब उससे युद्ध करने गया। उस समय वाली समुद्रके किनारे संध्यावन्दनादि कर रहा था युद्धके लिये रावणको आया देख उसे अपनी पृच्छसे बांधा और चार समुद्रमें धुमाया। पीछे संध्यावन्दनादि कर अपने घर लौटा। रावणने नितान्त क्रिष्ट और व्यथित हो हार स्वीकार की और पीछे वालीसे मित्रता कर ली। इस प्रकार बहुत दिन बीत गया। रावणके भयसे देवगण भी नितान्त भयभीत हो रहने लगे।

स्वर्ग, मर्त्य और पाताल यह विभुवन अत्यन्त उत्पीड़ित हो उठा। रावण देवदानव आदिका अवध्य था, इसलिये कोई भी उसके विरुद्ध खडा नहीं हो सकता था।

भगवान् विष्णुने विभुवनको नितान्त उत्पीड़ित देख भूमारहरणके लिये दशरथके बर नररूपमें अवतार लिया। नर मर्त्य हैं, अतएव उससे मृत्युकी सम्भावना नहीं है, इस कारण नरका अवधत्त्व बर रावणने ग्रहण नहीं किया। भगवान्का नररूप धारण करनेका यही एक कारण था।

भगवान्के अवतार रामचन्द्र पितृमत्यका पालन करनेके लिये निर्वासित हुए और सीता और लक्ष्मणके साथ दण्डकारण्यमें रहने लगे। इस दण्डकारण्यमें शूर्पनखा रहती थी। उसके साथ खरदूषण भी था। शूर्पनखा राम और लक्ष्मणको देख कर कामपीड़ित हुई। उसने अति कमनीय रमणीवेशमें रामलक्ष्मणको मोहित करनेकी चेष्टा की। राम लक्ष्मणने उसकी ओर दृष्टि तक भी नहीं उठाई। शूर्पनखाने भी उनका पीछा नहीं छोड़ा। इस प्रकार तंग आ कर लक्ष्मणने उसके नाक-कान काट डाले और उसे मार भगाया।

शूर्पनखा नितान्त अपमानित हो रावणके पास गई और उसने सीताके अलोक-सामान्य सौन्दर्यका विषय उससे कहा। रावण सीताके रूपलावण्यकी बात सुन कर उन्हें हर लानेके लिये मारीचके पास गया। मारीचने रावणका अभिप्राय जान कर रामके बलवीर्यका परिचय दिया और ताड़कावधका वृत्तान्त कहा। रावणने उसकी बात पर कान नहीं दिया और मारीचको साथ ले दण्डकारण्य गया। मारीच सुवर्णमय मृगका रूप धारण

कर सीताके समीप घूमने लगा। सीताके भजुरोच करने पर रामचन्द्र उठ पकड़ने गये। मायामुग कीश्रुतसे राम चन्द्रको बहुत दूर छे गया। पीछे रामके शरसे बिदर हो अमीन पर गिर पड़ा और 'अस्मय कस्मय' कह कर प्राण त्याग किया।

यह पाष्य सुन कर ज्ञोताने समन्ध कि रामचन्द्र विपद्में पड़े हैं, सो उन्होंने अस्मयकी उन्की मदरमें जाने कहा। सीताको भरहिता भयस्थामें छोड़ जाला अस्मयने भयछा गही समन्ध। परन्तु सीताके चन्द्र पाष्य करने पर अस्मय ज्ञानैके छिये पाष्य हुए।

राघव सीताको पर्येकुटोरमें मनेकी देव मतिगिके वेधमें वहाँ भाया और सीताको हर छे गया। राघव सीताको हर कर छे जा रहा है, जान कर मयायु राघव पर दूर पड़ा। दोनोंमें पनपौर युद्ध हुआ। युद्धमें राघवने जटायुका पंख काट खासा जिससे वह अमीन पर गिर पड़ा। राघव सीताको छे कर निरापवत्स छोड़ छे गया।
उम और सीता देखो।

रामचन्द्रको जब मालूम हुआ कि राघव सीताको हर छे गया है, तब उन्होंने सुमीवच मेळ कर छिया और वाकी का बच किया। सुमीवकी सहायतासे रामचन्द्र समुद्रको बांध कर पार गये और अङ्गुपुरो पहुँचे। विभीषणने राघवसत् सीता छोटा देन कहा, किन्तु राघवने उसको बात पर जान नहीं दिया और उन्टे उसका अपमान किया। विभीषणने रामचन्द्रका पक्ष लिया। राम विभीषणसे सहायता पा कर प्रवळ विक्रमसे राघवके साथ युद्ध करने लगे। राघव रामचन्द्रका मुकाबला न कर सका और उसने अकाळमें कुम्भकर्णकी नोढ़ तोड़ी। कुम्भकर्ण भी रामचन्द्रके साथ युद्ध कर मारा गया। पीछे मेघनाद भावि राघवके पुत्र और पीताह्वि सबके सब यमपुर सिपारे। पुत्र पीताह्वि और सेनाके मारे जाने पर राघव बह्मिनी हो गया।

राघव इस युद्धमें मृत्यु निश्चय कर प्रवळ विक्रमसत् रामचन्द्रके साथ युद्ध करने लगा। दोनों दोनोंमें तुम्हल सप्राम बळने लगा। यह युद्ध देव देवता, दानव, यक्ष, पिशाच भादि वहाँ उपस्थित हुए। सात रात युद्ध चलता रहा पर कोर मां किसोको पराजय न कर सका।

इसके बाद देवराजने रामचन्द्रकी मदरमें मातलीको भेजा। मातलीने रामचन्द्रसे भा कर कहा, 'श्व! मात्र इसका बिनाशकाळ बा पण्डु था, किसी भस्मसे इसका निपन नहीं होगा। भाप इसके बचके छिये प्रयास के किये।' रामचन्द्रने मदरमें अगास्थका दिया हुआ अमोष प्रक्षुप्त भस्म उठाया। उस भस्मके धेगमें पवन, फलकन हुताशन और तपन, सर्वाङ्गमें अग्ना, गुदस्थमें मेघ और मन्वरके अग्निप्राणी देवता रहते थे। रामचन्द्रके यह भस्म के कने पर राघव पञ्चाहत पृथकी तरफ रथ परसे अमीन पर गिर पड़ा और पञ्चत्वको प्राप्त हुआ।

राघवके मारे जाने पर अन्तरीक्षमें शुभसूचक शिव कुम्भुनि बहने लगे। नमोमण्डलसे देवगण पुष्पवृष्टि करने लगे। इस प्रकार पृथिवीका मार दूर हुआ और सभी प्राणी सुखसे रहने लगे। (उमपण्य)

राघव—१ अर्धमकाश नामक वैद्यकग्रन्थके प्रणेता।
२ श्रुत्येधमाथ्य और औसूकनास्थके रचयिता। ३ साम वेदभाष्यकार।

राघवगङ्गा (सं० स्त्री०) राघवने उठा गङ्गा। पुराणा अनुसार सिंहकडीपकी एक नदीका नाम।

(गणपु० ७० म०)

राघवचंडी—पश्चिम बंगालमें रहनेवाली एक शक्ति।

राघवशर्म—वर्षहृत्पके रचयिता।

राघवहस्त—एक प्रकारका बाजा जिसमें तार लगा रहता है।

राघवहृद (सं० पु०) हिमाचलके उत्तरका एक हृद। यह पुष्पतीर्थ मानसरोवरके पास ही है। इसीसे शतद्रु मद्र निच्छा है।

राघवगारि (सं० पु०) राघवस्य गरिः शत्रुः। राघवको मारनेवाळ, रामचन्द्र।

राघवि (सं० पु०) राघवस्थापत्यमिति राघव्य (ऋ इत्)। गण० (१५५) इति इत् । १ राघवका पुत्र। २ अमनाथ।

राघव (हि० पु०) १ छोटा राजा। २ सामन्त, सख्तार। ३ शूर, वीर। ४ सेनापति, बहा योद्धा।

राघव (सं० लि०) राघोति रा हाने यमिप् । भावुति और वक्षिणा इनेवाळा। "भाद्व राघवसि" (शुभचक्र० ११०) 'वाघसि रा दाने राघोति रा या यमिप्, भावुतीना

दक्षिणानाञ्च वाता भवसि ।' (वेददीप)

रावन (स० पु०) रावण देखो ।

रावनगढ़ (हि० पु०) लंका ।

राव वहादुर (फा० पु०) एक प्रकारकी उपाधि जो भारतका अङ्गरेजी सरकार प्रायः दक्षिण भारतके रईसों आदिका देती है ।

रावर (हि० वि०) १ भवदीय, आपका । (पु०) २ रनिवास, अन्तःपुर ।

रावरखा (हि० पु०) एक प्रकारका बहुत बड़ा और ऊँचा पेड़ । यह हिमालयमें तेरह हजार फुटकी ऊँचाई तक होता है । इसकी छाल बहुत सफेद और चमकीली होती है और इसकी लकड़ियोंसे पहाड़ी मकानोंकी छतें तथा छालसे भोपड़ियाँ छाई जाती हैं । इसकी पत्तियाँ प्रायः चारेके काममें आती हैं । इसे बुरूल भी कहते हैं ।

रावरा (हि० सर्व०) रावर देखो ।

रावराना कवि—चरखारीके रहनेवाले एक बन्दीजन । सवत् १८६१ ई०में इन्होंने जन्मग्रहण किया था । राजा रतनसिंहके दरबारमें इनका खूब मान था । इनका वंश बुन्देलोंका प्राचीन कवि है ।

रावल (हि० पु०) १ अन्तःपुर, राजमहल । २ राजा । ३ प्रधान, सरदार । ४ एक प्रकारका आदरसूचक संबोधन । ५ मयुराके पासके एक गावका नाम । प्रवाद है, कि यहाँ राधिकाका जन्म हुआ था । ६ श्रीवदरी-नारायणके प्रधान पंडेकी उपाधि । ये सभी मलवारवासी नम्बूरी ब्राह्मण हैं । ७ राजपूत सामन्तोंकी एक उपाधि । राजपूत-प्रसिद्ध मेवाड़के राजे भी पहले यह सम्मान-सूचक उपाधि ग्रहण करते थे । पीछे वे राणा शब्द व्यवहार करने लगे । मारवाड़के राजे आज भी महारावल उपाधिसे सम्मानित होते हैं । दङ्गपुरके अहेरिया-वंश, भावनगरके राजवंश तथा जयशालमोरके यदुवंश सभी गौरवज्ञापक रावल उपाधिसे भूषित हैं । यह उपाधि सम्भवतः शक जातिकी थी । पहले शक-सरदार लोग ही यह उपाधि धारण करते थे । (Tod l p 213)
रावल गणपति—मुहूर्तगणपति और सम्बन्धगणपतिके प्रणेता । ये रावल हरिश्चन्द्र सूरिके पुत्र थे ।

रावलपिण्डी—पंजावप्रदेशके अन्तर्गत एक विभाग । यहाँका कार्य छोटा लाडके शासनाधीन और विभागीय कमिश्नर द्वारा परिचालित होता है । यह अक्षा० ३१° ३५' से ३४° १' ३० तथा देशा० ७१° ३९' से ७४° २६' पू० तक विस्तृत है । भूपरिमाण १५७३६ वर्गमील और जनसंख्या २७६६३६० है । जिनमें मुसलमान सैकड़ों पीछे ८७ हैं । यह विभाग पांच जिलों—रावलपिण्डी, भेलम, गुजरात, शाहपुर और अटक ले कर गठित है । इसके उत्तरमें हजारा और पेशावर जिला, पूर्वमें काश्मीर-राज्य ; दक्षिणमें भंग, गुजरानवाला और सियालकोट जिला तथा पश्चिममें कोहट, वन्नु और देरा इस्माइल खाँ जिले पड़ते हैं ।

इस विभागके रावलपिण्डी, भेलम, गुजरात, पिण्ड-दादन खाँ, मेरा और जलालपुर नगर ही प्रधान हैं । इसके अलावा यहाँ और भी १८ नगर लगते हैं ।

२ उक्त विभागका एक जिला । यह अक्षा० ३३° ४' से ३४° १' ३० तथा देशा० ७२° ३४' से ७३° ३६' पू०के बीच पड़ता है । भूपरिमाण २०१० वर्गमील है । हिमालय पर्वतका वहिःप्रदेश, लवणशैल और सिन्धु-नदीका मध्यभाग स्थान ले कर यह जिला गठित हुआ है । इसके उत्तरमें हजारा जिला, पूर्वमें भेलम नदी, दक्षिणमें भेलम जिला तथा पश्चिममें सिन्धुनद अवस्थित है । सिन्धुनदने पेशावर और कोहटसे रावलपिण्डीको अलग कर रखा है । यह जिला सात उप-विभागोंमें विभक्त है,—पिण्डदेव, अटक फतेजंग, गुजरखाँ, रावलपिण्डी, मडि और कतूहा । रावलपिण्डी जिलेका विचारसरदर है ।

यह जिला हिमालयके उच्च और निम्न सानुदेशकी शिखरमालासे पूर्ण है । वह क्रमशः सिन्धु-सागर अन्तर्वेदीके सामने है । चारों ओर इस तरहकी पर्वतश्रेणों घिरी रहनेके कारण जिलेका सर्वात् ही तराईरूपमें परिणत है । इस पर्वतका मध्यवर्ती समतलक्षेत्र नाना प्रकारके सौन्दर्यसे पूर्ण है । कहीं श्यामल शस्यक्षेत्र, कहीं निविड वनमाला और कहीं तराईसे भरने निकल कर कलकल नाद करते हुए वह चले हैं जिसका दृश्य ऐसा मनोहर है, कि देखनेसे चित्त भड़क उठता है । कहीं

पर्वतके सुन्दरपङ्क्तिमें सुन्दर मसजिद उच्च शिरे पर वृण्वाय मान है जो निर्गत मास्तबासो खोजीको धर्नाका प्रभाव प्रापन रही । स्वभाव सौन्दर्यका ये सब याम्नीर्ण येव कर सिद्ध और पञ्जरजातीय सत्प्रायोंका भाषणाकार गिरिचूर्ण समुत्पन्न शैलशिखरमें अमरस्थित है । उसे देखने से बोध होता है मानो वहाँके राजाओंका प्रभाव राज श्वड उस सुन्दर पार्श्वपर्वतमें भी अनुभवमात्रसे प्रतिष्ठित था । सीमान्त शम्भूकी उपद्रव हमन करनेके लिये ही उन्होंने पर्वतप्रान्तमें युग बनवाया था । केवल दक्षिणी सीमा समतल क्षेत्रमें परिणत है ।

स्थानविशेषसे प्राकृतिक सौन्दर्य जैसा पृथक् है । उनके पूर्व और पश्चिम अंशमें भी वैसा ही प्रस्तुतपार्श्वक्य भी अक्षिप्त होता है, मानो स्वभावसुन्दरी बननेकीने अपने हाथसे देखा जो वा कर प्राकृतिक सौन्दर्यके साथ साथ प्रकृता विपर्याय भी बिरुपण कर दिया है । विप्रासा नदीके समतल पर विस्तृत मरिगिरिधियोनीमें आठ हजार कुट्टक भा स्वास्त्यावास है । वहाँ अनेक किस्मके पेड़ हैं । यह शृंग कम्पना हजारा जिलेमें प्रभावित होता है और काश्मीरके तुयात्मपिडित पर्वत पर जा कर मिश्र गया है । अतएव स्वास्त्यावासको और नजर शौहानेसे बिचल पार्श्व-चित्र सामने पड़ता है ।

सिन्धुनदीके उस पारमें पश्चिम-पार्श्वक्य भूभाग है जो सिन्धुनदीकी शाखा प्रशाखा द्वारा परस्पर विच्छिन्न हो कर मानो विस्तीर्ण प्राण्तरके स्थान स्थानमें एक एक छोटी पहाड़ी इधर उधर फैली हुई हैं । यह स्थान सूखा और अर्ध है । यहाँ बहुत ही कम अजित् आदि जगते हैं ।

इस जिलेकी जनसंख्या ५५८६६६ है । पहाड़ी अधिवासी एक जगह बसवद हो कर बास करते हैं । अधिकांश संख्यामें पास करनेसे गाँव भी सुबुहव उपनिवेशक समान मालूम पड़ता है । कारण इस प्रकार ऊपर पहाड़ी भूमिमें विभिन्न पाँचमें निबद्ध हो कर बास करना पक्कम अनुपयोगी है । पश्चिम भिमापकी पर्वतराजिके बीच पहाड़का नाम उल्लेख करनेके योग्य है । यहाँ मूलस्वक बहुत से प्राचीन निद्रयेन मिलते हैं । पर्वतके शिखर पर युग आदिसे परिशोभित अदक नगर सिन्धुके किनारे हैं ।

यहाँके सब नद् और नदियोंसे सिन्धुनद् प्रधान है । सामान्य पहाड़ी स्रोतोंके रूपमें हजारा जिलेके बीच बहता हुआ यह पाच और पृथुकत्रके उर्वरत्वाम्भमें करीब डेढ़ मील तक फैल गया है । अटकसे तीन मील दक्षिण इस नदीको पार करनेके लिये रेलवे पुख है, फेल्म या बितरुना नदी इस जिलेकी पूर्वी सीमामें बहती है । सोहन नामक नदी मरिखीलसे निकल कर गमीर उपत्यकाके बीचोबीच बह जाती है । अन्तमें कर्पूरके समीप ध्वस्तप्राय गकरदुर्गके आस-पास देशक समतलक्षेत्रमें गिर कर नदीकी चारा दक्षिण पश्चिम हो गई है । रायक पिण्डो नगरसे तीन मील दक्षिण इस नदी पर एक दूसरा पुख है । अन्त्याके अक्षाया समी समय यह नदी नाब पर पार हो सकते हैं । हजाराजिलेका अखमबाह ही हारो नदी कहलाता है । वह पश्चिमकी ओर भा कर अदकसे छः कोस दक्षिण सिन्धुनद्में मिश्र गया है । इसका खोलेवैग स्थानाय कर मैदानके ऊर्ध्व संघाटन शक्ति बढ़ाता है । पहाड़ी बनमागमें नाना प्रकारके पेड़ और अनेक जातिके जीवजन्तु देखे जाते हैं ।

विस्तृत विवरण हिमालय अन्तमें देखा ।

यहाँ अनिजपदार्थका अभाव नहीं है । कावापद्म तैलमें भाषयो नामका मरमर पत्थर मिलता है जो छोटे कटोरे भादिके बनानेमें काम आता है । रायकपिण्डो नगरके उत्तर पूर्व ओहरा गाँवमें गंधक तथा रूहोतर और सायकक गाँवमें मिट्टो तेज मिलता है । कद एक कोयले की भी खान हैं । सिन्धुकोतमें बालुक कणके साथ बहुत थोड़े सोनेके भी कण मिलते हैं । जिपसम, जिगनायद और पश्पासायद नामक किमती पत्थर पार्श्वक्य-भूमामें कुछ कुछ दिखाई पड़ता है ।

भारतके अन्त्याम्य जिलेकी अपेक्षा इस जिलेका प्रकृत प्राचीन इतिहास कुछ अधिक मिलता है । महा भारतीय युगमें यद्यपि वाष्पारराज्यके उल्लेखमें इस स्थानका कोई विशेष विवरण लिखा नहीं है, ताँ भी भाकिवृन्वीर अक्षैकसम्पत्के अमियानकाळमें बहुत सी ऐतिहासिक घटना यहाँके मिश्र मिश्र नगरमें विशेष भाषय मिली हुई हैं । फिनि और भारियनकी विवरणोंमें यह सब स्थान ऐतिहासिक तत्त्वका पीठकल्प है ।

अलेक्सन्दरके परवर्तों इतिहास लेखकोंके विवरणसे पता चलता है, कि सिन्धुसागर दोआबमें बहुत प्राचीन कालसे तक्ष नामक जातिका वास था। कहते हैं, कि उन्होंने ही तक्षशिला नगरी बसाई थी। अलेक्सन्दरको सिन्धु और वितस्ताके मध्यवर्ती स्थानमें पेसा विस्तृत बहुजनपूर्ण और विशेष समृद्धशाली नगर उस समय पञ्जाब प्रदेशमें और न मिला था। उस समय यह तक्षशिला राज्य मगधराज्यके अधीन था। यहाँके अधिवासियोंके राजद्रोही होने पर युवराज अशोक उन्हें दमन करनेके लिये पञ्चनद जा पहुँचे। पीछे सम्राट् अशोकने बौद्धधर्म ग्रहण कर यहाँ बौद्धसंघाराम निर्माण किया। विख्यात चीनपरिव्राजक फाहियान और यूपनचुवंगने ईस्वी सन् ४वीं और ७वीं शताब्दीमें यह स्थान परिदर्शन कर जिन सब बौद्धविहार और मठ आदिका उल्लेख किया है, उससे अनुमान होता है, कि मुसलमान द्वारा भारतविजयके पूर्वार्ध पर्यन्त यहाँ स्थान बौद्ध और हिन्दूधर्मका पवित्र केन्द्र समझा जाता था। आज भी इस जिलेके बहुत स्थानोंमें प्राचीन हिन्दूमन्दिरका टूटा फूटा खंडहर और गौमयुद्धका जीवन-इतिहास मिलता है।

अलेक्सन्दरके समयसे ले कर ११वीं शताब्दी तक पश्चिम-भारतसीमान्तका इतिहास जो अंधकारसे ढका था, मुसलमान आक्रमणसे ही सबसे पहले उनका उन्मोचन हुआ। मुसलमानों-इतिहास पढ़नेसे हम जान सकते हैं, कि उक्त सदीमें तक्षशिलाके चतुःपार्श्ववर्ती भूभागमें गङ्गर जातिके लोग रहते थे। फिरिस्ताने लिखा है, कि ये वर्चर और बसभ्य हैं तथा भ्रूणहत्या और बहुस्वामिक वृत्ति आदि नाना प्रकारके जघन्य कार्य करते हैं।

१००८ ई०में गजनीपति महमूद जब ससैन्य भारतमें घुसे और चाच् तराईकी समतलभूमि पर पहुँचे, तब राजपूत-नेता पृथ्वीराजके अधीन कई एक राजपूतसामन्त

* इस जिलेके मर्गाष्ठा गिरिशङ्कटके उत्तर शाहदरि या डेरिशान नामक स्थानमें जो विस्तृत टूटा फूटा खंडहर पडा है, वह प्राचीन तक्षशिला राज्य प्रतीत होता है।

महमूदके विरुद्ध खड़े हुए। उस समय प्रायः तीस हजार गङ्गरसैन्यने भीमवेगसे हमला कर मुसलमान सेनादलको नहस नहस कर डाला था। किन्तु आश्रिकार राजपूतगण मुसलमानोंके हावसे पराजित हुए और क्रमशः सभी उत्तरवासी विजैताने मुसलमानोंकी वश्यता स्वीकार की। इसके बाद महमूद गङ्गोंको पार्यन्त निभृत निकुञ्जमें स्थायीनभावसे वास करनेको अनुमति देने हुए आप अपेक्षाकृत उर्वर और शस्यसमृद्धिपूर्ण जनपद पर कब्जा करनेके लिये आगे बढ़े।

१२०५ ई०में मशहूर ख्वारिजम-युद्धमें साहब-उद्दीन घोरीकी पराजयवात्ता सुन कर जयौन्मत्त गङ्गरजाति मुसलमानोंके विरुद्ध खड़ी हुई तथा लाहौर राजधानीके प्रवेशद्वार तक समूचे पंजाबप्रदेशमें उपद्रव मचा दिया। यह खबर जब मुसलमान सुल्तान साहब-उद्दीन घोरीको लगी, तो अचानक वे भारत पहुँचे और वागो गङ्गोंको दल दलमें निहत कर चैरनिर्यातनकी पराकाष्ठा दिखा दी। इससे भी तृप्त न हो कर उन्होंने जीवननाशका भय दिखाते हुए गङ्गरजातिको इस्लाम-धर्ममें दीक्षित किया।

साहब-उद्दीन गङ्गरजातिको इस्लामधर्ममें दीक्षित कर कुछ विशेष लाभ उठा न सके। कारण सिन्धुनद पार कर अपने पाश्चात्यराज्यमें लौटते न लौटने रात्रिके घोर अन्धकारमें छिपके एक दल गङ्गरने उनका पीछा किया और उन्नी घोर रात्रिमें सिन्धुनद तैर कर सोये हुए साहब-उद्दीनको जानसे मार डाला। परवर्ती मुसलमान राजाओंकी अमलदारीमें जब गङ्गोंने शासन-विशुद्धला या शैथिल्य देखा था तब सुयोग जान कर राजद्रोहिताचरणसे वे वाज नहीं आये।

मुगल-सम्राट् बाबर शाहने गङ्गरकी राजधानी कर्वाला पर चढ़ाई कर दी। वे अपने हाथकी लिखी आत्मजीवनीमें इस युद्धका विवरण इस प्रकार लिख गये हैं,—यह नगर पर्वत पर बसा हुआ है। गङ्गर-सरदार हाती खाने विशेष वीरत्वके साथ नगरकी रक्षा कर जब जाना, कि मुगल-युद्धमें और कोई उपाय नहीं है तथा मुगलवाहिनी एक तरफका द्वार तोड़ कर नगरमें घुस रही है, तब उन्होंने दूसरा कोई उपाय न देख

दूसरे दरवाजे हो कर शहरसे बाहर निकल गये। १५२५ ई०में हाती काँचो उनके सम्पर्कीय भाई सुकतान सारंगने जहर दे कर मार डाला। उक्त सुकतान सारंग बाबरव्याहकी अपोमता स्वीकार करने पर सम्राटसे उन्हें पुनः राज्य उपहारमें मिला। उसी दिनसे गहल सरदारगज मुगलराजवंशके साथ धिरेवन्मुखत्वमें बंध गये। देखाह और हुमायूँमें अब घमसान युद्ध चल रहा था उस समय गहलपतिने हुमायूँ को बासी सहायता पहुँचाई थी।

दिल्ली-साम्राज्यमें मुगलराजकेवल अब सर्वाथ वात्या लोहित हुए थे, उस समय सारङ्गके वंशधर वंशधरप्रदेश में अपने पूर्वपुरुषोंका भाइत राज्य सम्भारके महित भोग करने थे। किन्तु उस मुगलसाम्राज्यकी केन्द्रशक्तिका अवसाध होने पर वे वंशधर पार्श्ववर्ती सामन्तराजाओंके हाथके बिलीने बन गये। सर्वप्राप्ती सिखोंने अन्तमें पञ्जानववासी अम्याग्य राजाओंकी तरह इस सु-वाचीन गहलराजको भी अपने कब्जेमें कर लिया था।

१७५५ ई०में मुगल साम्राज्यपतिम शिपिल हो गई और सिख सरदार गुजरसिंह मन्नीने काहीसे दखबलके साथ बाहर हो कर शीघ्र लापीत गहलपति महराय पाँ पर आक्रमण कर दिया। महराय सिखसम्यके हाथ गुजरात-नगर माधीरके बहिर्भागमें परास्त हुए और बितस्ता नदीके दूसरे किनारे जान ले कर गये। वहाँ इसके लज्जतोप जङ्गलमें बड़ी निष्फुलता मार डाला और उसकी सम्पत्ति लूट कर आपसमें बाँट ली। किन्तु उस समय आपसमें मनमुटाव हो जानेसे वे तितर बितर हो गये। सरदार गुजरसिंहने भवसर पा कर एक पक्षको परास्त किया।

सिखोंने अपनी धिरेप्रसिद्ध अर्धगुजुताके साथ रायसपिण्डीका शासन किया था। वे माहगुजराती बड़ी सक्तीसे उगाहते थे। प्रजा त ग व ग भा गद थी। सरदार गुजरसिंहके बाद उनके लड़के साहबसिंहने १८१० ई० तक इस प्रदेशका शासन किया। पीछे वह पञ्जाब केराते महाराज रणजित्सिंहके हाथ लगा।

माहजसिंह नामक एक दूसरे सिख-सरदारने रायसपिण्डी नगरके चारों ओरका स्थान जीत कर वहाँ

अपना शासनवन बनाया। उस समय यह स्थान एक सामान्य ग्रामरूपमें गिना जाता था। अरुगान जाति के बार बार आक्रमण और गहल जातिके विप्लवावा रहते हुए भी उसने चौकू हो समयके अन्तर प्राय ३ लाख रुपये आयका एक छोटा राज्य अधिकार किया। १८०४ ई०में माहजसिंहकी मृत्यु हुई। उनके लड़के जीधनसिंह पितृसम्पत्तिके अधिकारी हुए। १८१४ ई०में महाराज रणजित्सिंहने सरदार जीधनसिंहका अधिकार कायम कर एक सन्ध हो। किन्तु जीधनसिंहकी मृत्युके बाद यह सम्पत्ति छाहोर राजसरकारने अन्त कर ली। मरि और अम्याग्य पहाड़ी प्रदेशमें गहलजाति बहुत दिनों से अपनी लापीनताको रखा करती आ रही थी। किन्तु १८३३ ई०के भीषण युद्धमें सिखोंने गहल जातिको परास्त कर वह पहाड़ी प्रदेश अधिकार किया। इस युद्धमें सिख के हाथसंग गहल जाति प्रायः निर्मूल हो गई तथा सारा पहाड़ी प्रदेश जनशून्य मकमूमकी तरह दिखाई देने लगा।

१८४६ ई०में अम्याग्य सिखराजके साथ रायसपिण्डी भी अङ्ग्रेजोंका शासनके अधिकारयुक्त हुई। १८५३ ई०में यहाँ विद्रोह दिखाई दिया, फिर भी गहरके समय यह स्थान बिलकुल शांत था, किन्तु सिख और गहल जाति का आन्तजातिक फलक तब मो दूर नहीं हुआ था। जनशून्य पहाड़ी कस्बोंमें दृष्टि शासन बिस्तृत होने पर भी न गहरराज यहाँ राजकोय प्रमाथ अतिविहृत रक्षामें समर्थ नहीं हुए। १८५७ ई०के पर्वमें न गहरराजकी शक्तिका परिचय पा कर मरिगौडवासी पहाड़ी गहल जाति पहिलेके कलहसूत्रके उत्तेजित हो कर राजविद्रोही हो उठे तथा इसने वहाँक अङ्ग्रेजक महलों पर आक्रमण करनेका सङ्कल्प किया। अङ्ग्रेजोंको किसी देशीय बिम्बस्त अनुचरके मुकसे पहिले ही यह हाल मालूम हो गया था। इसलिये वे यूरोपीय क्रियोंकी दूसरो अगह रण कर अङ्ग्रेजके भागमनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। विद्रोही दखने समझ था, कि अङ्ग्रेजोंको उन लोगोंके भागमन का सवाह मालूम न होनेके कारण शत्रुपक्षके आक्रमणसे वे तितर बितर हो जायँगे, लेकिन फल उम्भ हो निकल। विद्रोहिकके सामने भाते न भाते ससन्नित

अंगरेजी-सेना गोला बरसाने लगी। अस्मात् गोला-पातसे आततायी छत्रभङ्ग हो गये। कुछ समय युद्ध करके वे सबके सब चमरत हुए। तभीसे वे फिर कभी दलबद्ध न हो सके। किन्तु जब कभी छोटा दल बांधनेका मौका मिलता, तभी वे अंगरेजों पर दृढ़ पड़ते थे।

रावलपिण्डी, पिण्डिघेव, हाजरो, फतेजद्ग, आटक, मोखाद्ग, मरि और काम्बेलपुर आदि नगर अपेक्षाकृत समृद्धशाली हैं। उनमेंसे रावलपिण्डी, अटक, मरि और काम्बेलपुरमें अंगरेजोंका सेनानिवास है। लाहौर, पिण्डिदादन खां, मूलतान, पेगावर, खात, लक्ष्मणभूला और मरि आदि स्थानोंके उत्पन्न द्रव्योंकी आमदनी ले कर ही यहांका कारवार चलता है। रावलपिण्डी और हाजरो नगरको छोड़ कर और कहीं भी वीसा वाणिज्य नहीं चलता। १८६० ई०में मरि शहरमें यूरोपीय वाणिज्य पुङ्गवोंके यत्नसे एक शराबका भट्टा जोला गया है। इसके अलावा प्रायः प्रत्येक नगर और ग्राममें देगी घुती कपड़े तथा फतेजद्ग और पिण्डिघेव नगरमें पशमोने कम्बल बनानेका कारवार है। यहांकी प्रधान उपज गेहूं, यव, जुआर और वाजरा है। यहांके सैकड़े पीछे ६८ अधिवासी खेतीवारी कर अपनी जीविका चलाते हैं।

३ उक्त जिलेकी उत्तर-पूर्व तहसील। यह अक्षा० ३३' १६' से ३३' ५०' उ० तथा देशा० ७२' ३४' से ७३' २३' पू०के बीच पड़ती है। भूपरिमाण ७६४ वर्ग मील और जनसंख्या २६११०४ है। इस तहसीलमें रावलपिण्डी नामका एक शहर और ४४८ गांव लगते हैं।

४ उक्त जिलेका प्रधान नगर और विचारसदर। यह अक्षा० ३३' ३६' उ० तथा देशा० ७३' ७' पू०के मध्य लेह नदीके उत्तरी किनारे अवस्थित है। दक्षिणी किनारे गौरावाजार (Cantonment) है।

नगरके चारों ओर जो ध्वस्त निदर्शन पड़े हैं, उसे देखनेसे मालूम होता है, कि यहां नया नया नगर बसता गया और कालचक्रसे विलय होता गया था। प्रत्नतत्त्व-विद् डा० कनिहमने वर्तमान गौरा वाजारके निकटवर्ती प्राचीन निदर्शन और अट्टालिकादिका भग्नावशेष देख कर स्थिर किया है, कि वह भट्टिजातिकी प्राचीनतम राजधानी गजिपुर वा गजनीपुर है। ईसा जन्मके पहले

यह नगर विशेष समृद्धिसम्पन्न था। यवन और गफ आदि दूसरो दूसरो प्राचीन जातिया यहां पूर्ण प्रतापसे राज्य कर गईं हैं। आज भी उसके निदर्शनस्वरूप यहांके एक निर्दिष्ट स्थानमें उक्त राजाकी प्रचलित मुद्रा शहर उधर मिट्टीमें गाड़ी देखी जाती है।

पेतिहासिक युगमें यह स्थान फतेपुर बायरी नामसे प्रसिद्ध था। १४वीं सदीमें मुगल आक्रमणके समयमें यह स्थान तहम नहम हो गया। गफ़ सरदार भन्ना-खाने जीर्ण संस्कार द्वारा इस नगरकी श्राद्ध की। उन्होंने इसका नाम बदल कर रावलपिण्डी रखा। सिन्धोर सरदार मालकामिहने १७६५ ई०में यह नगर अधिकार किया। उन्होंने शाहपुर और फेलमसे वाणिज्यको ला कर अपने राज्यमें बसाया था। उनोंने घारे घारे इस नगरको उन्नति होनी गई।

१६वीं सदीके प्रारम्भमें काबूलके पञ्चयुत अमीर शाहसुजा और उनके भाई जमान शाहने इस नगरमें आ कर आश्रय लिया। १८वीं सदीके मध्यभागमें जहा गफ़सरदार सुलतान मकराव खाने युद्ध किया था, वहां देशी सेनादलका बासभवन बनाया गया है। यहां १८४६ ई०का १४वीं मार्चको गुजरात युद्धमें पराजित हो सिन्धसरदार उत्तसिंह और शेरसिंहने अश्रुत्याग किया था। अंगरेजोंके अधिकारमें आनेके बाद नगरकी अच्छी उन्नति हुई। पहाड़ी शत्रुदलसे देशका रक्षा करनेके लिये गौरा वाजार और पीछे विभागीय विचारसदर प्रतिष्ठित हुआ था। इसके बाद पञ्जाब-नदरन एट रेलवे खुल जानेसे स्थानीय वाणिज्यमें बड़ी सहायता मिली है।

लेह नामक छोटी नदीके दूसरे किनारे एक प्राचीन हिन्दूराजधानीके ऊपर वर्तमान गौरावाजार प्रतिष्ठित है। १८६८ ई०में यहां ६३५८ देशी और अङ्गरेजीसेना रखी गई थी, अन्तिम अफगान चढ़ाईके समयसे अंगरेजराजने यहांके सेनानिवासकी प्रयोजनीयता समझ कर उसकी उन्नतिके लिये विशेष ध्यान दिया। १८८१ ई०में यहां प्रायः २७ हजार सेना रखनेका बन्दोबस्त हुआ। १८८३ ई०में अस्त्रागार स्थापित हुआ था। यह सेनानिवास लम्बाईमें तीन मील और चौड़ाईमें प्रायः दो मील है। यहां एक दल देशी घुड़सवार और पदातिक तथा दो

कमानवाही सेनादल रहता है। शीतकालमें यहाँ भीर मी तीन कमानवाही पहाड़ों सेनादल का कर रखा जाता है। शीत्यके समय ये मरिचोके उचरो पहाड़ पर बसे जाते हैं।

राज साहब (फा० पु०) एक प्रकारकी उपाधि जो भारत तथा अंगरेजों सरकारको भारले वृहत्तम-भारतक रईसों भादिको दी जाता था।

राबिन् (सं० हि०) १ मेघनिर्घोष, मेघनुन्मुमि। २ गभीर निनादकारो घोर शब्द करनेवाला।

रावी—वेदावप्रदेशमें प्रवाहित पञ्चनदके अन्तर्गत एक नदी। पुराणादि संस्कृत शास्त्रमें इसे इरावती कहा है। मरियमने इसका *Hydraotes* नाम रखा है। यह कांगड़ा जिलेके कुलु उपनिगमसे निकल कर अन्ना राज्यके बीच हो कर बह गइ है। पीछे दक्षिण पश्चिमकी ओर गुरु बामपुर जिलेके सीमा तक बहती हुई जालपुरके निकट मूलपरतको छोड़ दिया है। वहाँसे अम्मु पयस्य इसका तट अन्तशा भाषा हो कर भाषा है। मधुपुरके पास 'बड़ो दोआब केनड' इसकी अन्तराशि द्वारा परिपूर्ण होता है। इसके बाढ़ इस नदीके दोनों किनारे पश्चिमय समतल उपत्यकाभूमि दिखाइ पड़ती है। इससे समय समय पर बन्ध्याका अन्न उठ कर येभूमि विषीत करता है। १८१० ई०में इस नदीकी प्रखर धारामें दूरा-मालक य निकटवर्ती ताखिसाहिब नामक सिकोंका पवित्र तीर्थ अन्नगर्भमें निमज्जित हो गया था। अनन्तर इरावती सिंधाखंडीट और समूतसर जिलेके बीचो बीच हो कर दक्षिण पश्चिम बहती है। पीछे अन्तशाः तीव्र वेगमें आहोर नगर अतिक्रम कर लाना शाखामें बट गइ है। सुन्तान और मण्डोगोमरी जिन्ना अन्नसिद्ध कर अन्तमें यह नदी (शाखाओंके साथ अन्त० ३० ३१ उ० तथा देशा० ७१ ५१ उ० पू०) अन्तमागा नदीमें आ मिली है।

बड़ो दोआब और हासडीबाछमें अन्न अमा रहनेके कारण इसकी अन्नघाटा घीमी होने पर जो इस नदीवक्ष में नाव द्वारा वाणिज्यमें उदनी सुविधा नही है। कारण मुक्तान जिलेके कुलुअन्तान सरावसिन्धु तकके स्थानोंको छोड़ इसकी गति और बही भी सीधी नही है।

रावेड़—बम्बई में सिन्धेसीके आनदेश जिलेके शयदा उप विभागागत एक नगर। यह अन्त० २१ १५ उ० तथा देशा० ७१ ७ ३० पू० तक विस्तृत है। जी, भाद, पी, रेशपय नगरसे एक कास दूर हो कर गया है। यहाँसे नगर पर्यन्त पक्की सड़क है। सीमेका बाटीक तार तथा अड़ोके फूयदार या बुटोदार कपड़ेके छिपे यह स्थान बहुत कुछ मशहूर है। बाजारसे दुर्ग तक जो बीड़ा रास्ता है इसके दोनों तरफ अद्भुतकल्प मितक और समुबमाग काडकी शिखागलन भादि द्वाप सुशो मित है। १७६३ ई०में निजामने यह नगर पेशवाको अर्पण कर दिया। पीछे पेशवानी भी उसे होकरके हाथ सौंप दिया था।

रावेड़—मध्यदेशके निमार जिलान्तर्गत एक गण्डप्राम। यह नर्मदा नदीके किनारे अवस्थित है। दूसरी दूफे उत्तर-भारत पर बड़ाइ करनेके छिपे जब पेशवा बामोठय भाये, उसी समय यही ठन्हीं सीवकोडा संवरण की। यहाँ लाना बिबिध बर्णके पर्यटोले उनका समाप्तिस्वम निर्मित हुआ जो एक सुन्दर धर्मशाखाके बीच स्थापित है। नदीवक्षक त्रिस स्थानमें उनकी अल्पेष्टि किन्ना हुई, यहाँ पक्कीका एक खोरस्ता बनाया गया था। दुर्नाम्यका विषय है कि, बन्ध्यामें यह मन्नाबस्थामें पड़ा है।

राबौट (सं० ह्री०) भारतीय प्राचीन राजर्षि भेद्।

(रत्नमेप)

राशि (सं० पु०) राशते इति राश-शब्दे इत्, यद्वा अस्तुते व्याप्नोतीति स्मू व्याप्ती। (मक्षिप्याप्ना इङ्गस्मूकी व। उप० ५।१२२) इति इन इङ्गप्रमश्च। १ धाम्यादिका समूह। पर्याय—पुञ्ज, उरकर, कूट, समुच्चय, समाहार। (अन्तर) अस्तुते व्याप्नोति इति राशि अमूम् व्याप्तिर्लक्ष्यो रित्यस्मात् नाम्नोति इम्, निपातनाप्रेकायामः। (भय)

"न कसु न कसु नाय लक्षित्येऽवयस्मिन्।

यद्वि मृपयरी त्वपवाभिवानिः ॥" (बहुवचसा)

२ ज्योतिषकका द्वावशांग। राशिचक्र बारह भागों में विभक्त है, इन बारह भागोंका एक एक भाग राशि कहलाता है। प्रहलय इस राशिचक्रमें परिचलण करते रहते हैं। राशि बारह है, यथा—मघ, मृग, मिथुन, कर्कट,

सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धन, मकर, कुम्भ और मीन ।

राशि स्वरूप ।

मेघ—पुरुष, चर, अनिराशि, दृढाङ्ग, चतुष्पद, रक्तवर्ण, उष्णस्वभाव, पित्तप्रकृति, अत्यन्त शब्दकारी, पर्वतचारी, उग्र, पीतवर्ण, दिवाभागमें बलवान्, पूर्ण दिशाका अधिपति, विषमलग्न, अल्प-स्त्री प्रिय, अल्प सन्तान, रक्षरपु, क्षत्रियवर्ण और समान अङ्ग ।

वृषराशि—स्थिर, स्त्रीप्रकृति, पृथ्वीराशि, शीतल-स्वभाव, रक्षरपु, दक्षिणदिगाधिपति, शोभन, भूमिचारी, वायुप्रकृति, रात्रिकालमें बलवान्, चतुष्पद, श्वेतवर्ण, अत्यन्त शब्दकारी, विषमराशि, मध्यम-स्त्रीसङ्गप्रिय, मध्यमरूपसन्तान, शुभराशि, वैश्यवर्ण और शिथिलाङ्ग ।

मिथुन—पश्चिमदिगाधिपति, वायुप्रकृति, हरितवर्ण, द्विपद, पुरुष, द्वात्मक, त्रिमूर्ति, उष्णस्वभाव, मध्यरूप-स्त्रीसङ्गप्रिय, मध्यरूप सन्तान, वनचारी, शूद्रवर्ण, रात्रि-कालमें बलवान्, उत्तर दिगाधिपति और शिथिलाङ्ग ।

कर्कट—बहु-स्त्री प्रसङ्ग-प्रिय, बहु सन्तानयुक्त, बहुपद, चर, स्त्री-स्वभाव, श्वेतरक्तमिश्रवर्ण, शब्दहीन, शुभराशि, कफप्रकृति, चिक्रण, जलराशि, जलचर, विप्रवर्ण, रात्रि-कालमें बलवान्, उत्तरदिगाधिपति और शिथिलाङ्ग ।

सिंह—पुरुष, स्थिर, अनिराशि, दिनमें बलवान्, रक्ष-शरीर, पित्तप्रकृति, उष्णस्वभाव, पूर्णदिशाका स्वामी, दृढाङ्ग, चतुष्पद, समराशि, अत्यन्त शब्दकारी, अल्प-स्त्रीसङ्गप्रिय, अल्पसन्तति, पर्वतचारी, क्षत्रियवर्ण, उग्रस्वभाव और धूम्रवर्ण ।

कन्या—पिङ्गलवर्ण, द्विपद, स्त्रीराशि, द्वात्मक, दक्षिणदिगाधिपति, रात्रिवली, वायुप्रकृति, शीतलस्वभाव, समराशि, भूचर, असम्पूर्ण भापी, पृथ्वीराशि, वैश्यवर्ण, रक्ष, अल्प-स्त्री-सङ्गप्रिय और अल्पसन्तान और सौम्यराशि ।

तुला—पुरुष, चर, नानावर्ण, सम, उष्णस्वभाव, पश्चिम दिगाधिपति, वायुप्रकृति, चिक्रण, वनचारी, अल्पस्त्रीसङ्ग-प्रिय, अल्पसन्तान, शूद्रवर्ण, उग्रस्वभाव, दिवावली, द्विपद, समान और शिथिलाङ्ग ।

वृश्चिक—स्थिर, श्वेतवर्ण, स्त्रीस्वभाव, जलराशि,

उत्तरदिगाधिपति, निशावली, रवशून्य, कफप्रकृति, सम, जलचर, बहुस्त्रीप्रसङ्गप्रिय, और बहुसन्तानयुक्त, सौम्य, मनोहर शरीर और विप्रवर्ण ।

धनुः—पुद्गपराशि, सुवर्ण-सदृशवर्ण, पर्वतचारी, समराशि, अत्यन्त शब्दकारी, दिनवली, पूर्व-दिक्-स्वामी, दृढाङ्ग, रक्षशरीर, पीतवर्ण, क्षत्रिय, पित्तप्रकृति, अल्प-सन्तान और अल्प स्त्रीप्रसङ्गप्रिय, द्वात्मक, द्विपद, अनि-राशि और उग्रस्वभाव ।

मकर—चरराशि, भूचर, अर्द्धरवयुक्त, दक्षिण-दिक्-स्वामी, स्त्रीराशि, पिङ्गलवर्ण, रक्षशरीर, सौम्य, पृथ्वी-राशि, जलचारी, शीतलस्वभाव, अल्पअपत्य, अल्पस्त्री-सङ्गप्रिय, वायुप्रकृति, रात्रिवली, विषमराशि और वैश्य-वर्ण ।

कुम्भ—पदहीन, पुंराशि, दिनवली, मध्यमरूप-स्त्री-सङ्गप्रिय, मध्यमरूप सन्तति, स्थिरराशि, मिश्रवर्ण, वन-चारी, वायुराशि, चिक्रण, उग्रस्वभाव, ऋण्डस्वर, वात-पित्त कफप्रकृति, शूद्रवर्ण, पश्चिमदिक्-स्वामी, विषम-राशि, उग्रस्वभाव और शिथिलाङ्ग ।

मीन—पदशून्य, स्त्रीराशि, कफप्रकृति, जलराशि, रात्रिवली, अल्पशब्दयुक्त, पिङ्गलवर्ण, द्वात्मक, जलचर, चिक्रण, बहु स्त्री-प्रसङ्गप्रिय, बहुसन्ततियुक्त, विप्रवर्ण, शुभ, उत्तरदिगाधिपति, विषमराशि और शिथिलाङ्ग ।

राशिओंका स्वरूपज्ञान और संज्ञा ।

मेघ—द्वादश राशिचक्रोंमें मेघ प्रथम राशि और समान शरीर है । कालपुरुषका मस्तक, छाग और मेघको सञ्चारभूमि है । इससे गुहा, पर्वत और चौरोंको वासभूमि, अग्नि, धातु, आकर और रत्नभूमिका बोध होता है ।

वृष—वृषके समान आकार, वक्त्र, कण्ठ, ग्रीवा-देश, वन, पर्वत, गोशाला और रूपकोंको आवासभूमि-का ज्ञान होता है ।

मिथुनसे—वोणा और गदाधरी, स्कन्ध, भुज, स्त्री, नृत्य और गीतस्थान, शिल्पकार्य, क्रीड़ा, रति, गुह्यदेश, पाशकादि क्रीड़ास्थान और विहारस्थान समझा जाता है ।

कर्कटसे—कर्कटके समान आकृति, चलचर, रक्ष-

स्थान, सरोवर, पुष्पिन, क्षेत्र, देवता, स्त्रीप्राति नीर रमणीय विहारस्थान समन्धा जाता है।

सिंहसे—पर्वतचारी, हृदय, वन, दुर्ग, गुहा पर्वत नीर दुर्गम प्रदेश समन्धा जाता है।

कन्यासे—प्रतीपहस्ता, मौक्यावस्थिता उच्च अक्षुण्णवर्णिका, ज्ञानी, उदर, बहुतर लक्षणयुक्त मूमि, रति नीर शिक्षामय मूमिक्य बोध होता है।

तुलासे—वज्रधर पुण्य, अद्याङ्ग, नामि, करि, बलित देश, घोषो, देशमापा, विन्द्यस्थान, नगर, पथ, शुद्धवर्ण, घनाभार, पर्वतपार्श्वे वा पर्वतस्यूङ्गा, मृगयास्थान नीर उच्चमयायुका ज्ञान होता है।

वृश्चिकसे—हृदिबली भाति भाकृतिविशिष्ट जिह्व नीर गुह्यप्रदेश, गुह्य, अपरिष्कृतस्थान, गर्भ, प्रस्तद, पिप, कापगाद, वक्रीक, कोर, भङ्गार नीर सर्पो की वासमूमिका बोध होता है।

धनुसे—धनुर्विशिष्ट, पुण्यकार, पश्चात्तगमे घोट काकर, ऊर्ध्वदेश, उच्चनीचमूमि, घोटक, बसमान् भस्त्र घातो पुण्य, पङ्क, रथादि नीर सम्भस्थान समन्धा जाता है।

मकरसे—मकरने समान भाकारयुक्त, जानदेश, नदी, निबिडवन, सरोवर, उच्चप्रायित देश नीर गर्त समन्धा जाता है।

कुम्भसे—स्वप्नासकहस्त, पुण्याकार, उक्त, उष्ण बस्तु, उष्णधार, पक्षी, स्त्री शीतलक, पश्चातिक नीर नीरका निवासस्थान समन्धा जाता है।

मीनसे—मत्स्यप्रपयुक्त भाकार, पुण्य, देवता, द्विज, तीर्थ नीर भायासस्थान, नदी, समुद्र नीर उष्णधारका बोध होता है।

मेघ—मोक्ष, विषम, चर, क्रूर, पुण्य, पुण्य, विद्या बली, अद्वयवर्ण, कुञ्जक्षेत्र, मङ्गलका मूलतिलकोष, रविका उच्चतुङ्गस्थान, शनिका नीचस्थान, पूर्वादिक्स्वामी, मेघ प्रचारमूमि, गुहा पर्वत, नीरका स्थान, घातु, रत्न, मूमि, भाकर।

वृष—युगम, सम, स्थिर, सीम्य, स्त्री, पृष्ठोदर, पुण्डर, निशाबली, शुद्धवर्ण, शुभक्षेत्र, जम्बूका मूलतिलकोष नीर उच्चस्थान, दक्षिणदिक्स्वामी मूमिचर, वन, पर्वत, गाद्यादि तथा कृपामोपयुक्त मूमि।

मिथुन—मोक्ष, विषम, दुष्पारमक, क्रूर, पुण्य, वायु, शीर्षोदर, पुण्य, दिनबली, हरितवर्ण, सुषसेन, पाङ्कका उच्चस्थान, केतुका नीचस्थान, पश्चिमदिक्स्वामी, वन चर, मूल्य गीत, शिष्य, स्त्रीप्राति मूमि।

कर्कर—युगम, सम, चर, सीम्य, स्त्री, उच्च, पृष्ठोदर, निशाबली, पाङ्कवर्ण, जम्बूका क्षेत्र वृहस्पतिका उच्च स्थान, मङ्गलका नीचस्थान, उत्तरदिक्स्वामी, वनचर, क्षेत्र, सरोवर, पुष्पिन देवताका स्थान नीर विहारमूमि।

सिंह—मोक्ष, विषम स्थिर, क्रूर, पुण्य, मलि, शीर्षोदर, दिनबली, धूमवर्ण, रविका क्षेत्र, केतुका मूल तिलकोष, पूर्वादिशाका स्वामी, पर्वतचर, वन, दुर्ग, गुहा, व्याघ्र, भवनी नीर दुर्गमस्थान।

कन्या—युगम, सम, द्वापरमक, सीम्य, स्त्री, पृथ्वी, शीर्षोदर, पुण्डर दिनबली, पाण्डुवर्ण, वृषका क्षेत्र, मूलतिलकोष नीर उच्चतुङ्गस्थान, शुक्रका नीचस्थान, दक्षिणदिक्स्वामी, पूर्वादिक्स्वामी, मूमिचर, रति नीर शिष्य।

तुला—मोक्ष विषम, चर, क्रूर, पु, वायु शीर्षोदर, पुण्य, दिनबली, विचित्रवर्ण, शुक्रका क्षेत्र नीर मूल-तिलकोष, शनिका उच्चतुङ्गस्थान, रविका नीचस्थान, पश्चिमदिक् स्वामी, वनचर, तीर्थस्थानाधिप, वायवी, निम्नपृष्ठ नीर उन्नत मूमि।

वृश्चिक—युगम, सम, स्थिर, सीम्य, स्त्री, उच्च, शीर्षो-दर, पुण्डर, दिनबली, सुवर्ण बुहस्पतिका क्षेत्र नीर मूलतिलकोष, केतुका उच्चतुङ्ग, राङ्कका नीच, पर्वतचर, घोटक, दूर, भङ्गमूठ, पङ्क नीर भङ्ग।

मकर—युगम, सम, चर, सीम्य, स्त्री, पृथ्वी, पृष्ठोदर, निशाबली, क्यू रवर्ण, शनिका क्षेत्र मंगलका उच्चतुङ्ग-स्थान, वृहस्पतिका नीचस्थान, दक्षिणदिक्स्वामी, मूमि चर, नदी, वन, सरोवर, उच्चप्रायित देश नीर गर्त।

कुम्भ—मोक्ष, विषम, स्थिर, क्रूर, पु वायु, शीर्षो-दर, पुण्य, दिनबली, शनिका क्षेत्र नीर मूलतिलकोष, राङ्कका मूलतिलकोष, पश्चिम दिशाका स्वामी, वनचर, उष्ण, उष्णधार, पक्षी, शीतलकाक्षय नीर घूत।

मीन—युगम, सम, दुष्पारमक, सीम्य, स्त्री, उच्च, शीर्षोदर, पुण्य, दिनबली, स्वप्नवर्ण, वृहस्पतिका पुण्य

क्षेत्र, शुक्रका तुल्यस्थान, बुधका नीचस्थान, उत्तर दिशाका पति, जल, पुण्यभूमि, ब्राह्मण, तीर्थ, नदी और समुद्र ।

राशियोंकी इन संज्ञाओंसे नाना प्रकार गणना हो सकती है । नष्टवस्तुकी प्रथमगणनासे उक्त वस्तुएँ किस स्थानमें हैं, इस बातका ज्ञान तथा उक्त राशियोंका जैसा स्वरूप-विभाग है, उन उन स्थानोंमें प्रहोंकी अवस्थितिके कारण व्रणादिके चिह्न तथा ग्रहोंके बलाबलमें उन उन अंग प्रत्यङ्गोंकी हानि वा दुर्गलता आदिका बोध होता है ।

राशियोंके अधिपतिदेवता ।

मेयके देवता मेयाकार, वृषके देवता वृषाकार, मिथुनके देवता ल्योपुरुषाकार, मत्स्य, घटी, वीणा और गदा धारी, सिंहके देवता सिंहाकृति, कन्या कन्याकृति और जलजलसधारिणी; तुला तुलादण्डधारी पुरुष, वृश्चिक वृश्चिकाकृति, धनु जङ्घा तक अश्वके समान और अविष्ट धनुषधारी नरके समान, मकरके देवताका आकार मृगमुखके समान, कुम्भके देवता कुम्भधारी पुरुष और मीनके देवता मीनके सदृश हैं । द्वादश राशियोंके द्वादश अधिपति उक्त रूप आकृतिविशिष्ट हैं इसीलिए राशिचक्रमें उक्त राशियोंके आकार उक्त प्रकार लिखे गये हैं ।

राशि भोज, युग्म, विपम और समके भेदसे चार प्रकारकी हैं । इनमें मेय, मिथुन, सिंह, तुला, धनु और कुम्भ भोजोराशि हैं । वृष, कर्कट, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीन युग्मराशि हैं । मेय, मिथुन, सिंह, तुला, धनु और कुम्भ विपम राशि हैं । इसके सिवा राशिके चर, स्थिर, दुध्यात्मक, क्रूर और सौम्य आदि विभाग देखनेमें आते हैं । मेय, कर्कट, तुला और मकर चर राशि हैं । वृष, सिंह, वृश्चिक और कुम्भ स्थिर राशि हैं । मिथुन, कन्या, धनु और मीन दुध्यात्मक राशि हैं ।

मेय, मिथुन, सिंह, तुला, धनु और कुम्भ ये क्रूर-राशि हैं तथा वृष, कर्कट, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीन सौम्य राशि हैं ।

राशियोंकी द्विपदादि संज्ञा ।

कन्या, तुला, मिथुन, कुम्भ और धनुके प्रथम अर्द्ध-भागकी द्विपद संज्ञा है । धनुके शेष अर्द्धभागकी तथा

मकरके पूर्वार्द्ध और वृष, मेय और सिंहकी चतुष्पाद संज्ञा है ।

मकरके शेष अर्द्धांग तथा कर्कट, मीन और वृश्चिक इनको कीटसंज्ञा है । किसी किसीके मतसे वृश्चिककी सरीसृप संज्ञा है ।

मिथुन, तुला, कुम्भ, कन्या और धनुके पूर्वांगकी वृषसंज्ञा है । मकर और धनुके शेषार्द्ध तथा वृष और मेयकी अवयव संज्ञा है ।

मिथुन, तुला, कन्या, धनु, वृश्चिक तथा रात्रिमें वृष और मेयकी प्राम्यसंज्ञा है । मकरके पूर्वार्द्ध भाग और सिंहकी तथा दिवसमें मेय और वृषकी अरण्यसंज्ञा है । कर्कट, मीन और मकरके शेषार्द्ध भागकी जलज-संज्ञा है । किसी किसीके मतसे कुम्भराशिकी भी जलज-संज्ञा है ।

मेय, वृष, कुम्भ और मीन, ये ह्रस्व हैं । मिथुन, कर्कट, धनु और मकर, ये सम हैं तथा सिंह, कन्या, तुला और वृश्चिक दीर्घ हैं ।

मेय, सिंह और धनु, पूर्वादिशाके अधिपति हैं । तुला और कुम्भ पश्चिम दिशाके अधिपति हैं । कर्कट, वृश्चिक और मीन उत्तर दिशाके अधिपति हैं ।

जिस ग्रहकी जो राशि उच्चस्थान होती है, उससे सातवीं राशिको उसका नीचस्थान समझना चाहिये ।

राशिचक्र द्वारा मानव-शरीरका विभाग ।

मेयराशि मानवका मस्तिष्क है, इसी प्रकार वृष गल-देश और पश्चाद्भाग है, मिथुन हस्त है, कर्कोट हृदय, स्तन और पेडू है, सिंह पूष्ठभाग और अन्तःकरण है, कन्या पेट और नाडी है, तुला कटि है, वृश्चिक गुहा स्थान है, धनु ऊरुदेश और जङ्घा है, मकर जानु है, कुम्भ गुल्म और मीन पद है ।

राशिचक्र द्वारा मानवशरीरकी इस प्रकार कल्पना की गई है । ये सब स्थान ग्रहोंके शुभाशुभके कारण शुभाशुभ होते हैं ।

मानवके किस किस अंशमें किस किस राशिका अधिकार है ।

कर्कट कपालका उपरिभाग है, धनु दक्षिण चक्षुका भ्रू है । धनु दक्षिण चक्षु है । तुला दक्षिण कर्ण है । कुम्भ वामचक्षुका भ्रू है, मिथुन और मेय वामकर्ण है ।

पुत्र कपातका मध्यस्थक है, मकर ओढ़ी है, पृथिविक नासिका है, कन्या दाहना गात्र है और मोन बायीं गात्र इन सब स्थानोंसे राशिज्ञान होता है। राशिज्ञान होनेसे भाटति और स्वभावज्ञान होता है।

जातकको जन्मसे ढाढ़रा राशिगृहमें यथाक्रमसे मस्तकादि ढाढ़रा भग कल्पित होते हैं। जन्म जन्ममें मस्तक, जन्मसे दूसरी राशिमें मुख, तृतीय राशिमें बाहु द्वय, चतुर्थ राशिमें ब्रह्मरूप्य, पञ्चमराशिमें उदर, छठी राशिमें घटि, सातवीं राशिमें परित, भाटवीं राशिमें सिङ्गुग्रह, नौवीं राशिमें ऊरुद्वय, दशवींमें ज्ञानुग्रह, ग्यारहवांमें अङ्गुल्य और बारहवींमें पादद्वयकी कल्पना की जाती है।

जन्मकाजन्में जिस जिस राशिमें धृतेबाछे जिस जिस भ गमें पापमह रहेगा, उन पापमहोंके दणामोक्त समय उस उस भ गमें उपघातादि होगा तथा गुणमह होने पर पुष्टि और शुभकल्पना करनी चाहिये। राशिपौकी दोषता और ह्यन्ताक अनुसार तथा ह्यन् और दोषसंज्ञक ग्रहोंकी योग वा वृष्टिक वश भ गोंकी दार्यता और ह्यन्ता हुआ करतो है।

राशिपौका व्रतारण्य।

मेवादि द्वापत्र राशिपौं अपने पति, उनके मित्र, शुभ मह भयवा अकल्प्य गुणामुममह, इसक अत्यतम ज्ञात युक्त वा वृष्ट होने पर बलवान् हुआ करतो है। उक्त पति भादि ग्रहोंके सिवा अन्य ग्रहों द्वाप युक्त वा वृष्ट होने पर अल्पबली होती है। पति भादि मह और शुभग्रह द्वाप युक्त वा वृष्ट हान पर मध्यबला हातो है और किसी मा मह द्वाप युक्त वा वृष्ट होने पर हानबल होती है।

जातकपरिजातमें कहा गया है कि द्विपद्-राशिपौं कल्पद्रुप हो कर दिनमें बलवान्, चतुष्पद् राशिपौं कल्पद्रुप हो कर रात्रिकी तथा कीटराशिपौं कल्पद्रुप हो कर सन्ध्याकाजन्में बलवान् हुआ करतो है।

गर्भका मत है, कि अन्ध्राभित राशिपौं पूर्णबल पचकपभित राशिपौं मध्यबल और भाषाबिलमस्थित राशिपौं होनबल होती है।

राशिपौका मन्व-उत्थम।

मेघ, ध्रुव और सिंह महानिशामें, कर्कट, मिथुन और कन्या मध्य दिनमें; तुला और पृथिविक पूर्वाह्णमें, धनु और मकर अपराह्णमें तथा कुम्भ और मोन दोनों सन्ध्यामें अन्धेरी हो ज्ञाना करतो है।

राशिपौकी विशेष उक्त।

मय, मज्ज बलत, प्रथम और ऋषय—इनसे मेघराशि का बोध होता है। इससे प्रकर ध्रुव, मोक्ष, गो ताडुरि और शुक्लसे ध्रुवरा; शीघ्र, मृगुम और जितुमसे मिथुनका चान्द्र और कुन्नेसे ककरका, कर्पास और मयसे सिंहका; पाथोन, पद्यो, भ्रका और त पीसे कन्याका; नूक, शम्पिकू, सतम और तीलसे तुलाका; कीर्ण, मध्यम, कीर्ण और अलिस पृथिविकका; शैव धनु, सौमिक और चापसे धनुका; भाकोर, दाम और चन्द्र से मकरका; हनुयोग कुम्भ और धरसे कुम्भका तथा मान अथ अन्तितम, शिक और अन्त्यमसे मोनराशि का ज्ञान होता है।

राशिपौका बलत्वस्य।

सिंहराशिक अतिरिक्त अन्य समस्त चतुष्पद् राशिपौं द्विपद्-राशिपौंके पञ्चाभूत होता है, जन्मराशिपौं द्विपद्-राशिपौंकी अल्प है। और चतुष्पद् राशि और जन्म राशिक सिवा सब द्विपद् और चतुष्पद् राशिपौं सिंह राशिक बशीभूत हुआ करतो है।

विवाहक समय इस राशि-बशरताको भाषयकता हातो है। विवाहमें परका राशिके साथ कन्याका यद्यत्ता दूषो जाती है। परकी राशि कन्याको राशिक यद्यत् हान पर, वह पुत्रपत्न्य होता है और कन्याकी राशि बरका राशिके यद्यत् होने पर यह कन्या पतिपरायणा होती है।

उद्योगमें इन बारह राशिपौंका १ भागमें बाँटा गया है, उन १ भागोंको पञ्चम कहते हैं। पञ्च—शेन, होरा, त्रेधाव, नयानि, द्वाष्टांश और शि शान्ति।

पदापि महाराज ढाढ़रा राशिपौंमें परिचय करत है, फिर भा किसी किसी राशिमें स्थितिकारणमें उनका प धि राशिपौं तथा तद्व्युत्पन्न नक्षत्रयोग और अन्त्याय कारणोंमें विशेष विशेष रूपसे बलवान् होती है। इनको

आकर्षादि शक्तिको वृद्धि होनेसे उन उन राशियोंमें उन उन ग्रहोंके क्षेत्रनामसे उल्लेख किया गया है।

मेघ और वृश्चिकराशि मंगलका क्षेत्र है, वृष और तुला शुक्रका क्षेत्र है, मिथुन और कन्या बुधका क्षेत्र है, सिंह रविका क्षेत्र है, धनु और मीन बृहस्पतिका क्षेत्र है, मकर और कुम्भ शनिका क्षेत्र है।

राशिके अर्द्धांशका नाम होरा है, जिसमें विपमराशिका प्रथम अंश सूर्यका होरा, द्वितीय अंश चन्द्रका और समराशिका प्रथमांश चन्द्रका और द्वितीयांश सूर्यका होरा है।

राशियोंके तीन भागोंमेंसे एक भागका नाम द्रोक्याण है। जो ग्रह जिस राशिका अधिपति है, वह उस राशिके प्रथम द्रोक्याणका अधिपति है, तथा उस राशिसे पञ्चमराशिका अधिपतिग्रह द्वितीय द्रोक्याणका अधिपति और उसका नवम राशिका अधिपति तृतीय द्रोक्याणका अधिपति होता है।

नवांश—राशिको ६ भागोंमें विभक्त करनेसे उसके एक एक भागको नवांश कहते हैं। मेघ, सिंह और धनु इन तीन राशियोंकी मेघावधि करके नवांश निरूपण किया जाता है। इन तीन राशियोंके प्रथममें मेघका अधिपति मङ्गल है, अतएव प्रथम नवांशका पति मंगल है। द्वितीय वृष है, उसका अधिपति शुक्र है इसलिये द्वितीय नवांशका पति शुक्र हुआ। तृतीयांश मिथुन है, उसका अधिपति बुध है, इस कारण तृतीय नवांशका पति बुध है। इस प्रकार मेघादि ६-राशियोंके अंश क्रमसे जिन जिन राशियोंके जो जो ग्रह अधिपति हैं, वे उन उन अंशोंके अधिपति हैं। इसी प्रकार मकर, वृष और कन्या इन तीन राशियोंका मकरादि करके तथा तुला, कुम्भ और मिथुन इन तीन राशियोंका तुलावधि करके, कर्कट, वृश्चिक और मीन इन तीन राशियोंका कर्कटावधि करके नवांशका निरूपण किया जाता है।

द्वादशांश—राशिका द्वादश भाग करनेसे एक एक भागको द्वादशांश कहते हैं। जिस राशिका द्वादशांश कारन है, उसका अधिपतिग्रह प्रथम द्वादशांशका अधिपति है। पाँचे क्रम. राशिका अधिपतिग्रह अंशका अधिपति होता है।

त्रिंशांश—राशिको ३० भाग करनेसे उसके एक एक भागका नाम त्रिंशांश है। विपमराशि अर्थात् मेघ, मिथुन, सिंह, तुला, धनु और कुम्भका प्रथम पञ्चभाग मंगलका त्रिंशांश है। उसके बादका पञ्चभाग शनिका, उसके बादका अष्टभाग बृहस्पतिका, उसके बादका सप्तभाग बुधका और उसके बादका पञ्चभाग शुक्रका त्रिंशांश है। समराशि अर्थात् वृष, कर्कट, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीन इन राशियोंका प्रथम पञ्चभाग शुक्रका त्रिंशांश है, उसके बादका पञ्चभाग बुधका, तथा अष्टभाग बृहस्पतिका, उसके बादका सप्तभाग शनिका और उसके बादका पञ्चभाग मंगलका त्रिंशांश है।

इस प्रकार राशिका पञ्चवर्ग किया जाता है।

विशेष विवरण उन्हीं शब्दों में देखो।

द्वादशराशि और सत्ताइस नक्षत्र।

पृथिवी सूर्यके चारों ओर परिभ्रमण करती है, परन्तु हम उस गतिके स्वाभाविक नियमानुसार अर्थात् जैसे किसां चालित वस्तुमें आरोहण करके हम अचल वस्तुको चालित देखते हैं, उसी प्रकार हम सचल पृथ्वी पर आरूढ़ हो कर सूर्यको भ्रमण करते हुए देखते हैं। इस नियमसे प्रातःकाल हम सूर्यको पूर्व दिशामें उदित होते और सायंकालमें पश्चिमदिशामें अस्त होते देखते हैं। जिस मार्गसे हम सूर्यको आकाशमण्डलसे जाते-जाते देखते हैं, वह वास्तवमें भूकक्ष अथवा अयनमण्डल है। वह चक्राकार है, किन्तु सम्पूर्ण गोल नहीं है। बीच बीचमें कुछ टेढ़ा मेढ़ा है। उसके उत्तर-दक्षिणमें कुछ दूर तक एक और कल्पित चक्र जो उसे घेरे रहता है, उसे राशिचक्र कहते हैं।

राशिचक्र और अयनमण्डल दोनों द्वादश भागों और ३६० अंशोंमें विभक्त हैं। उक्त द्वादशराशियोंका नामकरण द्वादश नक्षत्रोंके अनुसार हुआ है।

६६ ताराओंसे युक्त जो एक मेघाकार नक्षत्रपुञ्ज नभोमण्डलमें देखा जाता है उसका नाम मेघनक्षत्र पुञ्ज है। यह नक्षत्रपुञ्ज जिस भागमें अवस्थित है, खगोलवेत्तागण उसे मेघराशि कहते हैं।

इसी प्रकार आकाशमें १४१ ताराओंयुक्त वृषाकार नक्षत्रपुञ्जका नाम वृषनक्षत्रपुञ्ज है, यह जिस भागमें अवस्थित है, उसे वृषराशि कहते हैं।

नवोमपदसंस्थित ८५ तारकायुक्त ओषुक्वाकार नक्षत्रपुञ्जका नाम मिथुननक्षत्रपुञ्ज है, यह नक्षत्रपुञ्ज राशिचक्रके दोनो ओर अवस्थित है, इसे मिथुनराशि कहते हैं ।

८२ तारायुक्त कर्करक भाकारा जो नक्षत्रपुञ्ज है उसका नाम है कर्करक नक्षत्रपुञ्ज, यह राशिचक्रके जिस भागमें अवस्थित है, उनका नाम कर्करराशि है ।

८५ तारकायुक्त सिंहाकार नक्षत्रपुञ्जका नाम सिंह पुञ्ज है इसीस्य सिंहराशि; ११० तारकायुक्त शरप ओर अनधपारिणी कन्याकार नक्षत्रपुञ्जका नाम कन्यानक्षत्र पुञ्ज, इसीस्य कन्याराशि; ५१ तारकायुक्त तुलापदकाकार नक्षत्रपुञ्जका नाम तुलानक्षत्रपुञ्ज है इसीस्य तुलाराशि; ४४ तारकायुक्त वृषिककाकार नक्षत्रपुञ्जका नाम वृषिकनक्षत्र पुञ्ज, इसीस्य वृषिकराशि; ६१ तारकायुक्त ऊरुधर्मादं नराकार, तिमार्ध घोडकाकार, घनुबाराके समान नक्षत्र पुञ्जका नाम घननक्षत्रपुञ्ज है; ५१ तारकायुक्त मकराकार, छागवर्णके समान नक्षत्रका मकरनक्षत्रपुञ्ज है इसीस्ये मकरराशि; १०८ तारकायुक्त बटपारो मानपाकार नक्षत्र पुञ्जका नाम कुम्भनक्षत्रपुञ्ज है, इसीस्य कुम्भराशि ११३ तारकायुक्त परस्पर पुष्कामिमुक्त मानाकार विशिष्ट नक्षत्र पुञ्जका नाम मोननक्षत्रपुञ्ज है, इसीस्य उसके स्थानको मोनराशि कहते हैं ।

राशिचक्रमें ये सब राशिवां भेदसे बामावर्त्तमें अवस्थित हैं । उक्त द्वादश नक्षत्रपुञ्ज अथक कहलाते हैं । किन्तु उनको छगमग तीन विह्वलके हिमावसे एक वार्षिक गति है ।

भाकाशमपदसंके मध्यमपदमें राशिचक्र अवस्थित है । उस चक्रके उत्तरदक्षिणमें भीर भी अवस्थित होते हैं । किन्तु ज्योतिष मध्यमें सप्तर्षि और ध्रुव भादि कई नक्षत्राके सिवा मध्य किसी नक्षत्रका उल्लेख नहीं मिलता । इसका कारण शायद यह होगा कि उन सब नक्षत्रोंको अनुक्रमणीय वृत्तिके कारण मानवशरीरमें उनकी क्रिया स्पष्ट बोधगम्य नहीं होती ।

इसके अतिरिक्त चार्य ज्योतिर्विदोंने असामान्य बुद्धिकथक साथ २० नक्षत्रपुञ्जों द्वारा राशिचक्रका भीर भी सूत्ररूपसे विभाग किया है । नक्षत्रोंका परि

माण १३ अश और कला २० अश है । इसीस्य सपत् (सवा) नक्षत्रपुञ्जसे एक एक राशि होती है ।

उक्त राशिचक्रके २० नक्षत्रपुञ्जोंमें चिशावा, ज्येष्ठा, पूर्वाषाढा, अश्विना, पूर्वमात्रपद, अश्विनी, ज्येष्ठा, मृग शिरा, पुष्या, उत्तरफाल्गुनी और चिन्ना—इनसे द्वादश नक्षत्र वैशाखादि द्वादश मासोंके नाम निर्दिष्ट हुए हैं । राशिचक्र बारह भागोंमें विभक्त है, इसीस्य बारह मास हुए हैं । ३० अशोंमें एक एक राशि है, इसीस्य ३० दिनका एक एक मास हुआ है ।

राशिचक्रका वाक्य और नियम यह ।

चक्रका भादि और अन्त नहीं है, हाँ, किसी किसी विशेष निर्दिष्ट स्थानसे उसका आधत्त निकलित होता है । राशिचक्र मथवा अयनमपदसंकेका मा उसी प्रकार भादि अन्त नहीं है तथा उसका मा किसी निर्दिष्ट स्थानसे भादि अन्तका निकलपन किया जाता है । यूरोप और अमेरिकामें वास्तविक क्रांतिपातसे तथा इस देशमें अश्विनी नक्षत्रके प्रथमांशसे राशिचक्रका आरम्भ निकलित होता है । गृष्मीके निरस्तवृत्तको भांति राशिचक्रके मध्यभागमें पूर्व-वर्षिचक्रमें व्याप्त एक सीधी रेखा कल्पित होती है, उसका नाम है विपुवरेखा । प्रति वर्ष अयनमपदसंकेके त्रिन दो स्थलोंमें विपुवरेखा मिलित होती है, उसे क्रांतिपात कहते हैं । वहाँ सूर्यके भाग मत्तस दिन और रात्रि समान होती है । आश्रकक वैश मासमें एक बार और आश्विन मासमें दो बार क्रांतिपात होता है, इसीस्य उन दोनो दिन दिन रात समान होती है ।

१३८१ वर्ष पहले वैश और आश्विन मासमें ३० या ३१ दिनमें अश्विना नक्षत्र मध्यमांशमें और चिन्ना नक्षत्र के पश्चात् ४० कलाओं में उक्त दो क्रांतिपात होता था, अर्थात् उक्त दो नक्षत्रोंके उल्लिखित अशोंमें विपुवरेखा अवस्थित करता था तथा उक्त दोनों स्थलोंमें उनके साथ अयनमपदसंकेका संयोग होता था ।

मार्ग-ज्योतिर्विदुगण अश्विनीनक्षत्रके प्रथमांशमें जो क्रांतिपात होता था, सूर्य वहाँ जाने पर उसे महाविपुव संकेचित और चिन्ना नक्षत्रके उक्तांशदिमें जो क्रांति पात होता था, सूर्य वहाँ उपस्थित होने पर उसे अश

विद्युत्क्रान्तिके नामसे निर्देश करते थे। अब भी वही नियम चला आ रहा है। परन्तु इस समय राशिचक्रके उक्त दो स्थलोंमें विषुवरेखाके साथ अयनमण्डलका सम्मेलन नहीं होता।

यूरोपीयों के मतसे प्रतिवर्ष ५० विकला, १५ अनुकला, और आर्य ज्योतिर्विदों के मतसे ५४ विकला अयनमण्डलके पश्चिमभागमें हट जाती हैं, अर्थात् इन परिमाणमें प्रतिवर्ष विषुवरेखाका संचालन कल्पित हुआ है।

अब बंगला तारीख ६ या १० चैत्रको राशिचक्रके अश्विनीनक्षत्रके प्रथमांशसे लगभग २१ अंशके अन्तरमें जो स्थान इस देशमें मीनराशिका ६ अंशमुक्त माना जाता है उस स्थानमें वासन्तिक क्रान्तिपात होता है, तथा सूर्य उस दिन उक्त क्रान्तिपातमें उपस्थित होने पर दिन और रात्रि समान हुआ करती है।

इस देशमें चैत्रमासके ३० वा ३१ दिनमें सूर्य अश्विनी नक्षत्रके प्रथमांशमें उपस्थित होने पर उक्त अंशसे मेघराशिका प्रारम्भ समझा जाता है।

आर्योंमें शेषोक्त मत प्रचलित रहनेका कारण यह है, कि सायणके मतसे किसी एक अपरिवर्तनीय स्थानसे मेघराशिका प्रारम्भ नहीं होता, प्रतिवर्ष उमका प्रारम्भ स्थानान्तरसे होता है। इस विषयमें निरयणका मत उक्त है, कारण अचल अश्विनीनक्षत्र मेघ सक्रान्तिकी गणना होनेसे एक ही स्थानसे मेघका प्रारम्भ गिना जाता है। फलतः उक्त दोनों गणनाओंमें प्रमेद यह है, कि जिस सायण मतसे अभी जिस दिन मेघ संक्रान्ति होता है, उसके लगभग २१ दिन बाद निरयणमतसे उक्त संक्रान्ति होती है। सायण मतसे अब जिस स्थानमें मेघराशिका प्रारम्भ होता है, निरयण-मतसे वहाँसे लगभग २१ अंश बाद होता है। सायण मतसे वासन्तिक क्रान्तिपात अयनमण्डलसे कितनी ही दूर पश्चिममें हट कर प्यो न हो, वहाँसे मेघराशिका प्रारम्भ निर्दिष्ट होगा। अतएव उक्त मतसे मेघादि द्वादश राशिओंकी सीमा कालक्रमसे परिवर्तित होती रहती है। यहाँ तक, कि अब जिस स्थानको सायण मतावलम्बी मेघराशि कहते हैं, १३००० वर्ष बाद उन्हींकी गणनासे वह स्थान तुलाराशिके अन्तर्गत हो जायगा।

निरयण मतसे द्वादश राशिओंमें कोई परिवर्तन नहीं होता। पुराकालमें मेघादि द्वादश नक्षत्रपुञ्जोंके अधो-नस्थ जो मेघ आदि द्वादश राशिया निर्धारित हुई थीं, अब भी वे राशिया उन्हीं स्थानोंमें मौजूद हैं।

अतएव पक्षपातशून्य हो कर विशेष विवेचनापूर्वक देवने पर यह अवश्य ही स्वीकार करना पड़ेगा, कि सायण और निरयण इन दोनों मतोंमें राशिकी स्थिरता के विषयमें निरयणका मत ही उत्कृष्ट है, किन्तु राशिपंसे जो फल उत्पन्न होता है, उसका यथार्थरूपमें निर्णय करना ही, तो सायणका मत प्रष्टण करना ही श्रेय है। निरयणके मतसे नक्षत्र घटित फलका व्यत्यय नहीं होता, किन्तु राशिघटित फलोंमें विभिन्नता पाई जाती है।

वस्तुतः आर्योंके राशिचक्रको वास्तवमें नक्षत्रचक्र कहा जा सकता है और यूरोपीय ज्योतिर्विद् भी उसे इसी नामसे कहा करते हैं। अतएव, यद्यपि सायणचक्र परिवर्तनशील है, तथापि वही वास्तवमें राशिचक्र है, इसमें सन्देह नहीं। प्राचीन ज्योतिर्विदोंने ऋतुके अनुसार राशिचक्रका विभाग किया था, वे वसन्तऋतुके आविर्भावसे मेघराशिका प्रारम्भ निर्धारण करते थे, तथा उस नियमके अनुसार ही सायणमतसे वासन्तिक क्रान्तिपातसे राशिचक्रका आरम्भ होता है। इस देशमें भी किसी समय उक्त मत प्रचलित था। प्राचीन कालमें जब कृत्तिका नक्षत्रमें वासन्तिक क्रान्तिपात होता था, तब उस नक्षत्रसे ज्योतिर्विद्गण राशिचक्र वा मेघराशिका प्रारम्भ मानते थे। पीछे जब उक्त क्रान्तिपात अश्विनो नक्षत्रमें हटने लगा, उन्ही समयसे मेघारम्भ अश्विनो नक्षत्रसे गिना जाने लगा। परन्तु अब उक्त क्रान्तिपात उत्तर मारुपवनक्षत्रके ६ अंशमें हट जानेके कारण राशिचक्रके पुनः संस्कारकी आवश्यकता आ पड़ी है।

वर्तमानमें इस देशमें केवल दिनमान और रात्रिमान तथा मेघादि द्वादश राशिओंका लग्नमान निरूपण करनेके लिए सायण-मतसे गणनाकी आवश्यकता होती है।

निरयण गणनामें एक भी सुविधा है, वैशाखादि द्वादश मासोंमें रविका मेघादि द्वादश राशिओंमें पर्याय-क्रमसे अवस्थितिमें कोई परिवर्तन नहीं होता। यथा—

वैशाख मासमें रवि मेघ राशिमें रहेगा, ज्येष्ठ मासमें बुध राशिमें, इसी प्रकार पर्यायक्रमसे शैशमासमें मीन राशि में भवस्थान करेगा। इस प्रकार बाह्य मासोंमें मेघसे छे कर मीन तक बारह राशियोंका भोग करता है।

इस प्रकार सौरमास स्थिररुद्ध होनेसे वैशाखादि क्षाय मासमेंसे कोई एक मास उल्लिखित होने पर उस मासमें रवि जिस राशिका भोग कर रहा हो उसीका शोध होगा, तथा किसी राशिका उल्लेख करने पर तत्सम्बन्धो सौर मासका भी संकेतम् उल्लेख हो जाता है। जैसे वैशाखमास कहने पर उस मासके अधिपति मेघ राशिका शोध होगा, इसी प्रकार मेघराशि कहनेसे उसके अधोत्तर वैशाखमासका ज्ञान होगा।

पहले ही कहा जा चुका है कि पृथ्वीके निरक्षरबृहत्के समान राशिचक्रका भी एक निरक्षरबृहत् माना गया है और उसका नाम है बिजुवरेखा। इस रेखाके उत्तर दक्षिणमें २३ अथ २८ कक्षाके अन्तरमें दो बिन्दुओंकी कल्पना की गई है। उनमेंसे एक उत्तरायणम् बिन्दु अर्थात् सूर्यके उत्तरमें जानेकी शेष सीमा है और दूसरा दक्षिणायणम् बिन्दु अर्थात् सूर्यके दक्षिण दिशामें जाने का शेष सीमा है। राशिचक्रके इन दोनों बिन्दुओंके मध्य जो एक रेखा कल्पित हुई है, उसका नाम अयनाश्रयवृत्त है। सूर्य जिस मार्गसे उत्तर दिशाको जाता है, उस उत्तरायण और जिस मार्गसे दक्षिण दिशाको जाता है, उसे दक्षिणायन कहते हैं।

१३८१ वर्ष पहले माघ और धावणमासके प्रथम दिनमें अयन परिवर्तित होता था अर्थात् माघके पहले दिनमें सूर्यका मकरराशिमें प्रवेशसे छे कर म्यापक अन्तमें सूर्य मिथुनराशिमें प्रवेश तक उत्तरायण कहलाता था। अर्थात् पहले दिनमें सूर्यका कर्कराशिमें प्रवेशसे छे कर मेषके अन्तमें सूर्यका धनुराशिमें चले जाने तक दक्षिणायन कहलाता था। परन्तु आजकल उक्त निविष्ट समयसे लगभग २१ दिन पहले अयन परिवर्तित हो जाता है। अतएव धनुराशिसे लगभग ६ अथ ७ अंशों में आरम्भ हो कर मिथुनराशिसे लगभग ६ अथ ७ अंशों उत्तरायण समाप्त होता है और दक्षिणायन मिथुनराशिसे उक्त अंशों में आरम्भ हो कर धनुराशिसे ६ अथ ७ अंशों में हो जाता है। अतएव इस

देशकी पञ्चिकामें उत्तर और दक्षिणायनका आरम्भ और शेष जिस समय बतलाया जाता है, वह ठीक नहीं है। इस समय राशिचक्रमें बहुत कुछ परिवर्तन हो गया है।

पहले ही कहा जा चुका है, कि महर्ग्य राशिचक्रमें परिभ्रमण कर रहे हैं। जिनमें रवि और अश्लेषके शोधगति है, राहु और केतुकी वक्रगति है, और अन्य पांच ग्रहोंकी सीपी, शीघ्र, मन्द, वक्र, अतिवक्र, अतिचार और महातिचार सात प्रकारकी गति निर्दिष्ट हुई है।

समस्त ग्रह राशिचक्रमें वामावर्त अर्थात् मेघसे वृष और बुधसे मिथुन इस प्रकार पर्यायक्रमसे भ्रमण करते हैं, किन्तु राहु और केतु उसके विपर्यायक्रमसे अर्थात् मेघसे मीन, मीनसे कुम्भ इस प्रकार गतिक्रिया सम्पादन करते हैं।

राशिचक्र ३६० अंशोंमें विभक्त है। रविचक्रको ३६५ दिन १५ वृष्ट ३१ पक्ष ३१ विपक्षमें यह राशिचक्र मतिक्रम करता है। यही रविकी वार्षिक गति है, और ५६ कक्षा, ८ विक्रमा, १० अनुकक्षा इसकी दैनिक गति है। परन्तु राशिचक्रकी वक्रिमाके कारण सूर्यकी गति कभी अधिक शीघ्र और कभी मन्द हुया करती है, इसविषय उक्त गतिको मध्यगति कहने हैं। रविकी दैनिक शीघ्रगति १ अथ १ कक्षा ५ विक्रमा है और यह एक मास तक प्रत्येक राशिका भोग करता रहता है।

अश्लेष—अश्लेष २७ दिन १६ वृष्ट १० पक्ष ४२ विपक्षमें रविचक्र परिस्रमण करता है और १३ अथ १० कक्षा १४ विक्रमा उसकी दैनिक गति है। राशिचक्रकी वक्रताके कारण सूर्यकी भाँति इसकी गतिमें भी कभी कभी गत्याधिकता होता रहती है। अश्लेषके प्रत्येक राशिका भोगक्रम सवाव (सवा) दो दिन मात्र है। इसविषये सवा दो महत्त्वमें एक राशि होती है।

मंगल—दो उपग्रहसमन्वित मंगल ६८६ दिन ५८ वृष्ट ६ पक्ष २० विपक्षमें राशिचक्र परिस्रमण करता है। उसकी दैनिक शीघ्रगति ४६ कक्षा १८ विक्रमा, मन्दगति ४ कक्षा और मध्यगति ३१ कक्षा २३ विक्रमा है। मंगल ८० दिन तक और ४ दिन स्थिर भावसे रहता है। मंगल वक्र माघको प्राप्त न हो, तो १ मास १५ दिनक हिंसावसे प्रत्येक राशिका भाग करता है।

पुरुष और स्त्री इस प्रकार पर्यायन्त्रयसे बिभक्त हैं, अर्थात् मेघराशि विषम दिशा और पुरुष है ; एकराशि सम, राशि और स्त्री है, शेष राशियाँ भी क्रमवार इसी प्रकार की समक सेमी चाहिये ।

प्रधान मेघराशिमें उत्पादन राशि और पुरुषराशिमें धारण वा प्रवृत्तगति रखते हैं । उसके बादकी राशियों क गुण भी क्रमवत् इसी प्रकार समक जेमी चाहिये । छा पुरुषराशि कही गई हैं, इनमें सन्तान उत्पन्न होने पर वह पौरुषवान् होती है और छा स्त्री राशियोंमें कन्या उत्पन्न होने पर कोमलकन्यावा होती है, इसके विपरीत होने पर विपरीत कर्म होता है अर्थात् स्त्रीराशियोंमें पुत्र होने पर वह भीक और पुरुषराशियोंमें कन्या होने पर वह अत्यन्त प्रवृत्ता होती है ।

बाह्य राशियोंके चर, स्थिर, प्रशासक, भूमि, पृथ्वी, धान्य, जल, पूर्वादि दिक्, द्विपद्म और अमुष्यद्म भादि विभाग हैं, जो कि राशियोंकी विशेष सङ्घके प्रकरणमें लिखे गये हैं । उच्चान्तर और मुख्य राशियोंके नामानुसार उन्हीं वष क्रमोंमें रत्ना ।

सत्तारस मन्त्रांशमें जो सया दो पाद मन्त्रांशमें एक राशि होती है, नाथे उसको लिखा ही जाती है,—
मेघराशि—१ अश्विनो, २ मरणो और ३ कृत्तिका-मङ्गल का प्रथम पद पाद ।

शुक्रराशि—३ कृत्तिकाके शेष तीन पाद, ४ रोहिणी, ५ मृगशिराके प्रथम दो पाद ।

मिथुनराशि—५ मृगशिराके शेष दो पाद, ६ मार्या, ७ पुनर्वसुके शेष तीन पाद ।

कर्कटराशि—७ पुनर्वसुका शेष पाद, ८ पुष्या, ९ भरणीया ।

सिंहराशि—१० मघा, ११ पूर्वफल्गुनी, १२ उत्तर फल्गुना ।

कन्याराशि—१२ उत्तरफल्गुनीके शेष तीन पाद, १३ हस्ता, १४ चिन्ताका प्रथम पाद ।

तुळाराशि—१४ चिन्ताके शेष दो पाद १५ आश्वी, १६ विशाखाके प्रथम तीन पाद ।

वृश्चिकराशि—१६ विशाखाका शेष पाद, १७ मनुष्या, १८ ज्येष्ठा ।

धनुराशि—१६ मूला, २० पूर्वाषाढा, २१ उत्तराषाढाका प्रथम पाद ।

मकरराशि—२१ उत्तराषाढाके शेष तीन पाद, २२ भरण्या, २३ चनिष्ठाके प्रथम दो पाद ।

कुम्भराशि—२३ चनिष्ठाके शेष दो पाद, २४ जनमिषा, २५ पूर्वमात्रपदका प्रथम पाद ।

मीनराशि—२५ पूर्वमात्रपदका शेष पाद, २६ उत्तर मात्रपद, २७ रैवती ।

इन सत्तारस मन्त्रांशमें पूर्वोक्त विभागक्रमसे राशि चक्र बनता है । राशिचक्र लेता ।

राशिक (स० बि०) राशिचिह्नराशि । जैसे,—श्रीराशिक ।

राशिचक्र (स० द्वी०) राशीनां चक्र । मेघ, शूय, मिथुन आदि राशियोंका चक्र या मंडल, प्रदोंके चक्रनेका मार्ग या वृत्त । इसे मचक्र या ज्योतिषचक्र मो कहते हैं ।

"सप्तविंशतिर्भूयोविष्णुक स्थितिश्चानुगाम ।

उदकां शो मन्त्रार्चिर्नवर्षपर्यायिणः ॥" (दीपिका)

शिशोव विवरण्य राशि क्रममें लेवो ।

तन्त्रसारमें लिखा है, कि शुद्ध सिष्यको मन्त्र देते समय राशिचक्र बना कर मन्त्र स्थिर करे मयादि राशि चक्र भङ्गापदि भङ्गपदिस्थास कर स्थिर करे । इसका विधान इस प्रकार लिखा है,—अ, भा इ, ई, मेघ । उ, ऊ, श्र शूय । मर, ल, रू, मिथुन । य, दे कर्कट । को, मौ सिंह । म, भा, श य, स, ल श्र कन्या । कपर्ग तुला । चवर्ग वृश्चिक । टर्गर्ग धनु । तर्गर्ग मकर । पवर्ग कुम्भ । यवर्ग मीन ।

इस प्रकार मन्त्रपदिस्थाससे बाह्य राशि कन्वित होती है । मन्त्रवण और राशिचरण अनुकूल होनेसे यहो मन्त्र प्रवृत्तिय है । राशि और मन्त्रवर्ण प्रतिकूल होनेसे पद पद पर बिम्ब डुष्या करता है ।

शिष्यका यदि जन्मसमय स्थिर न हो, इससे भगर उसकी राशि जानो न जाय, तो उसका निद्रामङ्गनाथ नामप्रवृत्त करके हुए उस नामका भादि मन्त्र ले कर राशि स्थिर करनी होगी ।

पद, अक्षर और शब्द सुस्थान है । मन्त्रा इस राशिमें मन्त्रप्रवृत्त करना युक्तिसयत नहीं । इसी शब्दरा राशिका मन्त्र, धन, स्रता, वस्तु, शत्रु, कर्म, मरण, धर्म, भाव और अथ नाम पढ़ा है ।

इसी द्वादश राशिके बीच लग्नराशिस्थ मन्त्र लेनेसे सिद्धि, धनराशिमें नाना प्रकार सुखभोग, भ्रातुराशिमें मातृवृद्धि, पुत्रमें पुत्रवृद्धि, वन्धुमें वन्धुवृद्धि तथा शत्रु-राशिमें शत्रुवृद्धि, कलत्रमें मध्यम, अष्टममें मृत्यु, नवममें धर्मवृद्धि, कर्ममें सब तरहकी सिद्धि, आयमें धनादि वृद्धि तथा व्ययराशिमें सञ्चित धनका क्षय हुआ करता है। अतएव इस प्रकार द्वादश राशिकी विशेषरूपसे विवेचना कर गुप्त शिष्यको मन्त्र देवें। राशियोंके शत्रु मित्र भी देखने होंगे। शत्रुराशिमें मन्त्रग्रहण करनेसे शत्रुकी वृद्धि और मित्र होनेसे मित्रता होती है।

Aies, Taurus, Gemini, Cancer, Leo, Virgo, Libra, Scorpio, Sagittarius, Capricornus, Aquarius, Pisces

लेट्रोन, आइडेलर, लासेन आदि पाश्चात्य प्रतनतत्व-विद्वगण एकमतसे स्वीकार करते हैं, कि भूचक्रके निर्दिष्ट मृगशिरा आदि २७ नक्षत्र ले कर सबसे पहले कालदीय या राविलोनोय ज्योतिर्विदोंने आकाशमण्डलके बारह बराबर भाग कर १२ राशि और राशिचक्रकी कल्पना की थी। उनके मतसे ग्रीक ज्योतिर्विदोंने सम्भवतः ईस्वीसन् ७००के पहले वाविलोनियोसे बारह राशिबिभाग सीखा था। किन्तु दुःखका विषय है, कि इन द्वादश राशिके नाम और आकृतिचित्र वाविलोनोयगण संप्रद करनेमें समर्थ हुए थे तथा ग्रीकगण ही या वे सबके सब उनसे प्राप्त हुए थे या नहीं, उसका कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता। ग्रीक-इतिहास पढ़नेसे पता चलता है, कि ई०सन् ४६६के पहले तेनेदोसवासी क्लिओपट्राटस् द्वारा नक्षत्रमण्डलका बारह विभाग प्रवर्तित होने पर भी यथार्थरूपसे ३८० ई०सन् पहले यूदोषससके समय तक ग्यारह राशि निरूपित हुई थी। कारण उस समय तुला-राशिके कुछ अंशमें वृश्चिकका डंक आ पड़ने पर उसकी गणना एक राशिमें होती थी। यहां तक, कि Aratus, Hipparchusके समय तक (१५० ई०सन्) वे भूलोकमें पृथक् राशि कह कर स्वीकार नहीं करते। ईस्वीसन् पहली शताब्दीके प्रारम्भमें Geminus और Varro सबसे पहले इन दोनोंको पृथक् पृथक् राशिमें निर्देश कर गये हैं।

इस घोर समस्यामें पड़ कर परिणतघर लेट्रोनने मिस-रीय राशिचक्रचित्रका (Zodiacal representations) - किंवदन्ती मूलक प्राचीनत्व विलोप करना चाहा। इनके मतसे जिस किसी स्तम्भमें या प्राचीन पुस्तकमें पृथक् तुलाचिह्न (Balance) देखे जाते हैं, वे सब किसी हालतसे भी ईस्वीसन् १ली शताब्दीके पूर्ववर्ती नहीं हो सकते। अध्यापक मोक्षमूलरका कहना है, कि मिस्र हो या भारत उस देशका ज्योतिःशास्त्र प्रत्यक्षरूपसे या परोक्षरूपसे ग्रीक ज्योतिःशास्त्रके ऋणी हैं।

यदि प्राचीन वाविलोनियोंके लिखे ग्रंथ अथवा अष्टालिका आदिका ध्वंस न होता, तो निःसन्देह ही वह समुन्नत प्राच्य जातिका ज्योतिर्विज्ञान-विषयक कीर्त्तिस्तम्भ वर्त्तमान जगत्में अभिनव आलोक दे सकता था। द्रावोकी लेखनीसे जाना जाता है, कि उस देशके धर्मयाजकगण ज्योतिःशास्त्रानुशीलनमें जीवन भतिवाहित कर गये हैं। यूदोरस् सिक्कुलस् ने अपने इतिहासमें (Biblioth Histor, 11, 3,) लिखा है, "वाविलोनियोने बारह देवताओंके नाम पर बारह मासोंके नाम तथा बारह पशुओंके नाम पर एक और क्या संकलन किया था।" यह शेषोक्त सम्भवतः राशिका बारहवां विभाग या राशिचक्रके बारह चिह्नोंकी मङ्कित जीवाकृति समझी जाती है।

वाविलोनियोंके अष्टालिका-गात्रस्थ शिलाफलकमें जो सब ज्योतिषिक चिह्न (Astronomical monuments) खोदे गये थे, उसके कितने टुकड़ोंमें नक्षत्रपुंजके विशेष विशेष अंश प्रतिफलित देखे जाते हैं। वागदावके भास-पास किसी स्थानके भीतरकी मिट्टीसे उपरोक्त चित्र सम्बलित जो सब पत्थरके टुकड़े मिले हैं उनमेंसे एकमें ससर्प-सूर्यमण्डल खोदित है। यह चित्र शायद उत्तर-गोलाद्धके Ophiuchus नक्षत्रपुंजका तथा कालदीय राशिचक्रके चित्रफलक (Planisphere) का एक अंश-मात्र है।

एक एक मासमें सूर्यदेव जितना पथ तै करते हैं, पहले वही अंश निरूपणार्थ राशिचक्रका बारह भाग कल्पित होता है। पीछे Geminus इस एक एक विभागको २८ अंशमें विभक्त कर चन्द्रमाकी स्वाभाविक

दैनिक पति धारण करता है। प्रथमोक्त विभाग मिश्र-
वासी, प्रोक और पशियाकी अपरापर सम्भ आदिमाकने
हो प्रथम किया है तथा येपोक विधान पारस्य, अरब,
हिन्दू और चीनवासी अनुसरण करते हैं। ये २८ अंश
अन्तर्माके गेह (Station या abode) कहलाते हैं।
अन्तर्मा एक एक गेहमें सिक एक दिन रहते हैं।

१६६८ ई०में फरासोसियोने जब मिश्र पर आक्रमण
कर दो, उस समय सेनापति दे से (General Desaix)
ने डेप्येरा (प्राचीन Tentyra) के बड़े मन्दिरके कक्षकी
छत पर बहुतसे मास्कर-शिल्पविज्ञान जोड़े हुए देखे।
M Jollois और M Derivillerने यह चित्र पुं जानुपुं क
छपसे पर्याख्यान करते करते पांच फुट व्यासयुक्त एक
पृथके बोध समूचे 'नक्षत्र जगत्' (Celestial globe)
का एक पूर्ण चित्र देखा। वर्तमान समय हम लोग
राशिचक्रमें तथा प्रहमनक्षत्रादिमें जैसी भाकति देखते हैं,
वैसी ही उस चित्राकक्षमें मीथ्रजन्तुकी भाकति प्रति
कनित है। कुछका विषय है, कि इस नक्षत्रचक्रका
चित्र देख कर जगोसमें उस उस नक्षत्र भाकिका समा
वेद्य निर्णय करना कठिन है। फरासो वैज्ञानिक
M Biot इसी कक्षकगोष्ठस्य चार नक्षत्र पद्यास्थानमें
संक्षिपेयित है अनुमान कर इसी अक्षका मीथ्रिक्स्थ
अपपारण करतेको अग्रसर होते हैं। ये इसी चौंसठ
नक्षत्रक समीप कितनी मनुष्यमूर्ति और मिसरीय
अज्ञात लिपिक समावेश देकर बड़े आमतकृत हो गये
और इसका प्रियेयव अनुपादनके लिये बहुत अनुशीलन
कर सिद्धान्त किया, कि राशिचक्रकी जिस राशिके पास
ये नक्षत्र हैं उनके नाम Fomalhaut Antares, Ar
cturus और Pegasi हैं। उन्होंने गणितके सहारे
कक्षकक उक्त चौंसठ तारोंमें अक्षस्थान और जगोसक
उस उस तारो की स्थिति सामञ्जस्य कर दिखाया है,
कि हस्कीसन इती या ७वीं में यह कक्षक जोड़ा गया था।

उपरोक्त डेप्येरा मन्दिरकी छतमें, पसने-नगरक दो
मन्दिरक बिसानमें, पशोरस सिकुससक ग्रन्थमें
संक्षिप्त होसिमादिपसके स्वर्णचक्रमें तथा Scalliger
हय Notes on Manilius नामक ग्रन्थ पणित मिसरीय
कक्षकमें और M Bianchini कर्तृक Memoires de l

Academic des Science (1708), नामक पत्रिकामें
प्रकाशित स्वतन्त्र स्वतन्त्र कक्षकविपरणामें नक्षत्रमण्डलके
तथा राशिचक्रके निर्दिष्ट प्रस्तावोंका जो प्रतिफलित जोहित
है वह सब समान नहीं है। इसका कारण यही है, कि
मिथ्रवासी प्राचीन ज्योतिर्विद्दोंने इस परिदृश्यमान
आकाशगवहके नक्षत्रपुञ्जमें सब जैसी भाकति देखी थी,
सम्भवतः उस समयमें वैसी प्रतिफलित ही संकित कर
रखा था, दो एक जगह प्रोक-राशिचक्रकी कितनी कितनी
राशिका अधिकर चिह्न दिया गया था। मुसों विधानविमो
कथित कक्षकमें राशिचक्रके बाहर ३३ भागोंमें विभक्त और
एक बंधनी है। इस धरपनीके बीच ३३ धरोंमें ३३ देवता
मोंकी मूर्ति संकित हैवी जाती है और प्रत्येक पर
मगोसकी १० शिमीका माना जा सकता है।

एन सब मिथ्र मिथ्र कक्षककीका पर्यवेक्षण कर पाश्चात्य
परिचरोंने सिद्धान्त किया है, कि प्राचीन मिस्र वासी
और काब्रियोगय जगोसमें दृश्यमान प्रसिद्ध नक्षत्रपुञ्ज
को प्रतिफलित अपने अपने उपास्यदेवताकी प्रतिमूर्ति
अथवा किमूर्ति या उनम से जो महापुरुष अपने कर्मों
द्वारा समाजमें प्रतिष्ठित हो उठे थे, सम्भवतः उनके
समान भाकति होन होस संगठित करते रहेंगे। किन्तु
उनके राशिचक्रमें नक्षत्रपुञ्जकी जो प्रतिफलित संकित
या नाम दिये गये हैं ये सूर्यकी प्रवृत्त गति, कृपिचिपयक
भ्रम, अथवा विभिन्न क्षुभमें उत्पन्न द्रव्यक प्रति छस्य
करके ही बाहर राशियों के नाम संकथित हुए थे, येसा
अनुमान किया जाता है। माकोवियसने लिखा है, कि
जिस समय सूर्यदेव दक्षिणायनके विपुपरैकाकी ओर
बढ़त हैं उस समय जिस नक्षत्रपुञ्जके पास ये रहत
हैं उसकी मकराक्षरितसे मकर नाम पड़ा है।

मयगय भूमिक या पर्यवेक्षके ऊं थे २४ ग पर बढ़ सकत
है। सूर्यदेव बैशाखस भायाङ्क तक प्रकर किरणजाल विस्तार
करते रहत कमशा उत्तरमुख उठत है। इस ऊर्ध्वामें उठने
की शक्ति और प्रचण्ड तन्त्रको छस्य कर मेष और पुष
नाम तथा यथाकी कोमल स्निग्ध वलपारा मियुनक साथ
तुलनामें लिखी रहगी। इस प्रकार कर्त्तव्यगय पर्याप्त
गमनकुशल, सूर्यदेव जब और उत्तरायणमें उठ नहीं सकत
ता पुनः दक्षिणायनमें नीचे गिरत है उसी जगह उनको

अवस्था कर्कटकी तरह होती है इल्लिये उक्त नक्षत्रोंके स्थानका नाम कर्कटराशि तथा धायनगतिका वह अंश कर्कटक्रान्ति नामसे विख्यात है। भाद्रके निदाखण प्रोष्पके साथ सैहके प्रभावको तुलना की जा सकती है। कन्याके यौवनोद्गमकी तरह शस्यपूर्णा वसुधरा साधारणका लक्ष्य होती है इसलिये आश्विनकी सूर्यागतिको कन्या, कात्तिक को श्वेतजात शस्यादि नाप करनेको सूचना होनेसे उसे तुला, अप्रहायणमें सूचीविद्वत् शीतका प्रादुर्भाव उद्बोधन करनेसे उसे वृश्चिक, पौषमें शीतका प्राख्यं तोरका अप्र-सूचीविद्वकी तरह यन्त्रणादायक होनेसे उसे धनु, माघमें शीत उद्गमनशील है इसलिये प्रवाहवाही मकर, फाल्गुनमें वसन्तागम-जल सुप्तशीतल होता है इससे कुम्भ ही उसका निदर्शन, चैत्र श्रौष्पकी सूचना-वासन्तिक वायु सेवनके लिये विहारशील प्रणयीयुगलका चिह्नस्वरूप एक सूत्रवद्ध मत्स्ययुग्म होता है। प्रकृतिका मास और ऋतुका ज्ञापक इन सब पार्थिव निदर्शनके अनुकरण पर ही द्वादश राशिचित्र प्रतिपादिन हो सकता है, ऐसा विश्वास है।

फरासीपरिडत M. Dupuis मिथ्यासासीको राशिचक्रस्थ नक्षत्रपुञ्जका सर्गप्रथम उद्भावक अनुमान कर गणना द्वारा स्थिर करते हैं, कि ईसाजन्मसे पन्द्रह हजार वर्ष पहले राशिचक्र आविष्कृत हुआ था। पीछे वे अपना वह भ्रम निराकरण कर कहते हैं, कि ईस्वीसन् चार हजार पहले वह अस्ततः पक्षमें निष्पादित हुआ था।

पाश्चात्य मनीषिमण्डलीके अपनी अपनी गवेषणा द्वारा राशिचक्रका उद्भावन काल विभिन्न समयमें निरूपित करने पर भी वह समीचीन और सर्गवादि सम्मत नहीं समझा जाता। ऐतिहासिक तत्त्वसममुद्भूत ग्रीक-जोतिका राशिचक्र साधारणतः ईसाजन्मसे ६७०से ७०० तकके बीच संकलित हुआ है। किन्तु प्रत्येक राशिगत नक्षत्रोंका नामकरण तथा उसका चित्रसम्पादन यथार्थरूप से कब और किस जातिके द्वारा निष्पादित हुआ था उसका कोई ठीक विवरण नहीं मिलता।

देखा जाय, भारतीय आर्य ऋषि सूर्यकी गति, वर्ष आदि निर्णय करनेके लिये राशि और उसके नक्षत्र आदिके सम्बन्धमें आलोचना कर किस

प्रकार सिद्धान्तमें उपनीत हुए थे। ये नक्षत्रतत्त्व पहलेसे जानते थे क्या नहीं? अथवा उन्होंने वैदिककालसे ग्रहण किया है, इस विषयमें मीमांसा करनेके लिये हमने ऋग्वेद-संहितासे कुछ मन्त्र उद्धृत किया।

ऋक्संहिताके (१०।८५।१३) मन्त्रमें अर्जुनो (दो फल्गुनीनक्षत्र) और अया (नवा) नक्षत्रका तथा उसके प्रसंगमें चन्द्र और सूर्यको ऋत्वात्मकगतिका उल्लेख है। अन्यत्र बारह परिधि, एक चक्र और तीन नामि तथा यह चक्र तीन सौ साठ संपद्यक चलाचल अरविशिष्ट (ऋक् १।१६।५६८) देव कर वह मास, वर्ग, प्रोगम, वर्षा और हेमन्त नामक प्रधान तीन ऋतु तथा ३६० दिन समझा जाता है। यास्कने उसे अयन कह कर प्रति-पन्न किया है। (निरुक्त ७।२८) ऋग्वेदमें देवयान (ऋक् १।७२।७) और पितृयाण (ऋक् १०।२।७) शब्दका प्रयोग देखा जाता है। इस देवयान और पितृयाणसे देवलोक या पितृलोकगमनके पथक्रमें ही समझा जाता है। बृहदारण्यकमें (३।२।१२) और छान्दोग्यउपनिषद्में (४।१।५) देवलोक शब्दका अर्थ इस प्रकार लिखा है,— जो छः मास सूर्य उत्तरमें प्रकाश देते हैं वही दिन, मर-लोकके देवलोकमें जानेका वही प्रशस्त समय है, सूर्य जो छः मास दक्षिणमें रहते हैं वह धूममय रात्रि है। सुतरां वह देवताके विपरीत है। वाजसनेय संहितामें (१६।४७) अग्निने मरलोकके दो पथ निर्देश किए हैं। ऋक् १०।२।८।२ मंत्रमें पितृयाण अर्थात् यमराज-का पथ देवयानके विपरीत तथा ऋक् १०।६।८।२ मंत्र-में अग्निने ऋतु द्वारा देवयान समझा था। ऋक् (१।२२।७) और (१।१६।४।४८) कृष्णवर्ण या गाढ़ अन्धकारमय और शुक्ल या ज्योतिर्मय दिनका तथा ऋक् ६।६।१ मन्त्रमें सूर्यका दक्षिणापथावर्त्तनमें कृष्णवर्ण दिन या रात्रिका विशेषत्व उल्लिखित होनेसे वह स्पष्टतः साधारण दिवा और रात्रिसे पृथक् समझा जाता है। यह छः महीने देवताओंकी रात्रि है। जिस प्रकार रातमें कोई यज्ञ अनुष्ठित नहीं होता, उसी प्रकार देवताओंका रातमें भी उनके उद्देश्यसे कोई यज्ञ उत्सृष्ट करना उचित नहीं। (ऋक् ६।५।१) अतएव यह छः मासम्बापी देवयान या पितृयाण जो उत्तरायण और दक्षिणायनके

समान वर्षका वषमास-विभाग मात्र है, इसमें कोई सम्बन्ध नहीं। उत्तरायण जो वैशखीकर्म गणनाका प्रथम समय है वह महाभारतमें महादेवजी भीष्मदेवके मृत्यु प्रसङ्गमें एक हुआ है। श्रवणदेके १२५८ मन्त्रमें बारह मासविभाग और १२४८ मन्त्रमें वरुण द्वारा सूर्यका यतिपथ निर्माणका उल्लेख तथा १८३७, ११ १२ मन्त्रमें सत्यात्मक भावित्यका द्वादश अरविशिष्ट एक सूर्यके चारों ओर बार बार घूमना करता है और अद्वैत जगत्प्रसन्न नया होता। हे भगिनि! इस चक्रमें पुनरुत्पत्ति सात सी बोट मियुन पास करती है। पञ्चपाद् और द्वादश भावित्यशिष्ट भावित्य अब धूमकेके उत्कृष्ट मन्त्रमें रहते हैं, तब कोई कोई उन्हें पुरोपा कहते हैं और अब वे दूसरे मन्त्रमें अवस्थित रहते हैं, तब कोई कोई उन अरविशिष्ट सप्तवक्रयुक्त (१५में) द्योतमान् या भावित्यको भाषित वतकाते हैं।

वरुणके विषय तथा श्रवणदेके १४१४ १११०१२, ५४५७८, १०८५१ राशियक अयनवृत्त, विपुनवृत्त, क्षन्तिपात तथा विपुनदे या विपुन दो सन्तानिकी भासोक्ष्मा करनेसे तीन नदी कहेगा, कि श्रवणदेवीयुगके भावित्यपि द्वादश राशिसे जानकार थे; किन्तु वे मेवादि नाम कल्पना न कर शायद नक्षत्रादिना सूक्ष्मता विभाग के कर सूर्यके राशिस क्रमणकी गणना करते थे।

ब्राह्मण और उपनिषद् युगमें इस प्रकार नक्षत्र देख कर राशिस क्रमणकी व्यवस्था बनी थी। इसलिये मुक्त कण्ठसे कहा जा सकता है, कि श्रवणदेके पहले हीसे श्रवण डोग राशिस क्रमण तथा उत्तरायण और दक्षिणा यनके बारेमें सम्यक् रूपसे जानकार थे।

वर्तमान समयमें गणना द्वारा विवर हुआ है, कि श्रवणदेवीय युगके मृगशिरा नक्षत्रका भावित्यकारका ४००० २५०० चू २५० तथा ३००० ४००० चू २५० है। अतः बोध होता है, कि भावित्य डोग इसी समय कभी राशियकवृत्त ब्रह्मसाधारणमें प्रगट कर गये हैं।

सूत्रेंद रको।

सहिता और ब्राह्मण-युग भतिक्रमण कर हम डोग काव्य और सूक्तयुगमें भा कर उपस्थित हों। महर्षि बाल्मीकिके रथे रामायणके पाठकाएक अठारह अध्याय

भोरामचन्द्रके जन्मतिथि प्रसङ्गमें लिखा है, 'उनके जन्म काळमें रवि मेघराशिमें, मङ्गल मकरराशिमें, शनि तुला राशिमें तथा शुक्र मीनराशिमें थे।' इससे ज्ञाना जाता है, कि रामायण प्रणयकाळमें ज्योतिषिणा और मेवादि राशि तबके श्रवण डोग अच्छी तरह जानते थे।

रामायण देखो।

बीषायनचन्द्रयुगमें मीन, मेघ, पूष भादि राशिका उल्लेख है। सायणाचार्यने अपने भाष्यमें लिखा है— "अथात् श्रुतानामेव मीमांसा। असन्त ब्राह्मणोऽग्निनाद् योत प्रोक्ते राजस्य। शरदि वैश्वो वर्षासु रथकार इति। आपस्तम्बस्तु हेमन्तं वा शरदि वैश्वस्य शिशिरं सार्धं वर्णिक इत्याह।" (५१।१२५ २०) अथो कस्तु पदवैर्न

अज्ञोपनमेवपावृत्तौ सैवास्वर्जिरिति। अत्र असत्ताद्य सौराश्वाग्रन्तेति द्विधा भयन्ति। मेघयुगमी सौरी असत्ता। मीनमेयी वा। मेवादि राशिक्रमणानुसोभात् पदवर्तथा स्या शिशिरौ असत् इति वचनात्। अत्र पाथत् भावित्ये मीनमेघोस्तिष्ठति तावत्काको असत्ता। एव ह्यभाविद्वन्द्वे पु क्कनादमीष्वर्षाग्रन्तेमन्तशिशिर।"

भारतीय ज्योतिषिणोंमेंसे हम पहले भायमन्दको ही द्वादश राशिका उल्लेख करते देखते हैं। बराहमिहिरने बौद्धज्योतिषी सत्य मन्द और वाट्टायणका उल्लेख किया है। इसलिये वे दोनों ही उनके पूर्वजनों थे। ज्योतिषिबामरणमें इस सत्य और वाट्टायणकी राजा विक्रमादित्यका समसामयिक बताया है। बराहमिहिर रचित पृथ्व्यातकरीकामें उत्पन्नमें सत्यका पञ्च उद्धृत किया है। उसमें राशिका चिह्न इस प्रकार दिया है—

"मेघोपनमो नीषागादावरं मिश्रमन्मयि कुम्भीर।

विहः गेष्टे कन्या नीकस्या रीयणस्यकृप ३ १

पुष्कलसुसाधरं शुभिकेडस्य क्कनी नते ह्यनन्त्यार्धः।

मकृत्तर्धं युग पूर्वं कुम्भी पुष्कल्य मीनकल्पी।" १

वाट्टायणने ब्राह्मणे शरीरके साथ द्वादश राशिका इस प्रकार मिश्रण किया है—

"मेघः शिशिरस्य बर्धनं ह्युपमो विषयः

वका मनेन्वमिधुनं ह्यर्धं कुम्भीर।

विहस्तयोहरमथो पुष्कतः कर्मिन्

वस्तित्युद्धाधरप मंशनम्यमा स्यात् ॥

धन्वी चात्योऽयुगं मकरो जातुद्वयं भवति ।

जन्मादित्यं कुम्भः पादौ मत्स्यद्वयं चेति ॥” २

वाद्रायणके श्लोकमें मेघ ब्रह्मका मुखस्वरूप वर्णित देख तथा मेघराशिमें वर्षारम्भ जान कर अध्यापक मोक्ष-मूलरने लेसनका पदानुसरण करते हुए वाविलन या ग्रीक्-संकाशमें भारतीय राशिचक्रशिक्षाके सम्बन्धमें जो सिद्धान्त किया, स्वर्गीय पं० वालगद्गाधर तिलक उसे उल्लेख कर लिख गये हैं, कि तब चिन्ताको चरन् प्रजा-पतिका शिर मान सकते हैं। कारण तैत्तिरीयसंहितामें चित्रा-पूर्णमामें वर्ण आरम्भ होनेका प्रमाण है। ३४ उनका कहना है, कि प्राचीनकालमें इस तरह विभिन्न उपायसे पञ्जिकाकी गणन चलती थी। अध्यापक मोक्षमूलर जो मेघ दिखा कर ग्रीकज्योतिर्विद्याका अनुकरण साध्यस्त करेगे, वह किसी प्रकार समीचीन सा प्रतीत नहीं होता।

उसके बाद यवनेश्वर और गर्भको राशि तथा सपाद दो नक्षत्रमें उसका विभाग करने देखा जाता है।

(रघुनन्दन ज्योतिस्तत्त्व)

बराहमिहिरने स्वयं इस प्रकार राशिविभागका निर्देश किया।

“मत्स्यो घटी मृगशिरसोऽस्य सवीथ

चापी नरोऽश्वत्थमो मकरो मृगात्यः ।

तौली सशस्यदहना ध्रुवा च कन्या

शेषाः स्वनामसदृशाः स्वचराश्च सर्वे ॥” ५

किन्तु उन्होंने बृहज्जातकका अन्य एक जगह राशि-चक्रके सम्बन्धमें निम्नोक्त श्लोक लिखा है,—

“क्रियतावृत्तिरिजितुमकुक्षीरलेयपार्थजुक्कौर्पाख्याः ।

तौष्टिक भाकोकेरो हद्रोगश्चान्त्यभं चेत्यम् ॥” ८

इस वचनमें द्वादश राशिका उल्लेख करने तथा इन सब शब्दोंके साथ ग्रीकराशियोंका शाब्दसम्बन्ध रहनेसे पाश्चात्य पण्डित लोग कहा करते हैं, कि भारतीय ज्योतिर्विदोंने राशिचक्रका विषय यवन अथवा वाविलों-नियोंसे लिया है। किन्तु जब हम लोग जगत्का आदि ग्रन्थ ऋग्वेदसंहितामें द्वादश राशिका विभाग तथा रामा-

यणमें और वीधायनकल्पसूत्रमें उनके मेघादि नाम पाते हैं, तब हमलोग किस तरह मान सकते हैं, कि वह हमारी मौलिक वस्तु नहीं है? तब एकमात्र स्वीकार किया जा सकता है, कि जब भारतके उत्तर पश्चिम प्रांत-में यवन-प्रभाव विस्तृत था, तब यवनपद्धतित आर्यगण यावनिकभावामें अभ्यस्त हुए थे, उस समय ज्योतिर्विद्याके उन्नतिपरायण राजाओंके उरसाहस तथा जनसाधारणके बोधगम्य करनेके उद्देशसे ज्योतिर्विदु पण्डितगण उस समयके प्रचलित प्राञ्जल यावनिक शब्द ज्योतिषिक परि-भाषारूपमें संस्कृतशास्त्रमें ग्रन्थन कर राजभक्तिका परि-चय दिया करेगे।

१७९२ ई०को Philosophical Transactions नामक पत्रिकामें चातुर्कोणाकृति राशिचक्राङ्कित एक शिला लेखका उल्लेख है। वह दक्षिणात्यके मदुरा राज्यान्तर्गत वेर्वापट्टा नगरकी एक पगोडा छतके नीचे गड़ा हुआ था। उसके मिथुनके घरमें दोनों हाथमें दालघारी पुंमूर्ति, कन्याके घर वैठी हुई नंगी रमणीमूर्ति, मकर-स्थानमें एक मेघ और मत्स्यमूर्ति, ये दोनों एक साथ अवस्थित हैं, सही पर वर्त्तमान राशिचक्रकी निदिष्ट-मूर्ति की तरह एकदेही नहीं है। वृश्चिक स्थानमें जो मूर्ति दी गई है उसे निर्णय करना कठिन और दुर्लभ है। कुम्भमें सिर्फ एक कलसी तथा मीनमें केवल एक मत्स्य चित्रित है। प्रतन्तत्त्वविदोंने इस प्रसिद्ध फलकको मकर राशिकी मेघ और मत्स्यमूर्ति परस्पर स्वतन्त्र देख कर उसकी प्राचीनताका सिद्धान्त किया है।

सर विलियम जोन्सने Asiatic Researches नामक पत्रिकाके दूसरे भागमें ज्योतिर्विदु श्रीपतिवर्णित प्राचीन राशिचक्रका विवरण लिपिवद्ध किया है। उनके चित्र-फलकमें मेघ, वृष, कर्कट, सिंह और वृश्चिक राशि उसी जीवमूर्तिमें अंकित है। मिथुन गदाधारी पुंमूर्ति और वाणावादिनी स्त्रीमूर्ति, कन्या नौकारोही रमणी-मूर्ति, उसके एक हाथमें प्रदीप और दूसरे हाथमें धान्य-शीर्ष है। तुलामें तुलादण्डधारी एक मनुष्य है। वह उसके एक पात्रमें भार दे कर तील डीक करता है। धनु एक तीरन्दाजकी मूर्ति है। उसके दोनों पैर घोड़ेके खुरके समान हैं। मकरमें मृगमूर्ति है। कुम्भमें एक

व्यक्ति कंधे पर अन्नका चढ़ा एक कर इसका अन्न गिराता हुआ जाता है। मीनराशिमैं एक मत्स्यकी पूछमे एक वृत्तवा मत्स्य है। भीषतिने राशिचक्रको बारह भागोंमें और प्रत्येक भागको ३० अंशमें बांटा है। पीछे उस चक्रका फिर २७ भाग कर चन्द्रका गेह स्थिर कर दिया है।

मिथु, मीरु, वाचिजोमोय अथवा भारतीय अर्ध क्षत्रियोंके ये विभिन्न प्रकारके राशिचक्रभिन्न ही वर्षा कोचना करनेसे स्पष्ट प्रतीयमान होता है, कि प्राचीन ज्योतिषिद्वयमे अपने अपने अष्टवत्सामसे तथा परस्परमे स्वतन्त्रतावसे जिस जिस राशिगत नक्षत्रको जैसी भाङ्गति भाङ्गिष्ठ करलेमे समर्थ हुए थे, वही थे अपने अपने प्रथोमे पूषक्, पूषक् रूपसे विधिवत् कर गये हैं। मीरु राशिचक्रके पहलेसे मेघराशि तथा भारतीय वत्सर गणना पहले मेघराशिसे भारत्य देश तत्र कभी मो मीरुका अनुकरण मान नहीं सकते। कारण प्राचीन वैदिक युगमे देशमेघ और ऋतुमेघसे वत्सरगणनाका अतन्त्र नियम था, उसी पर ठक हुआ।

और अगत् शब्दमे क्लृप्त विकल्प देखो।

राशिग्रह (सं० झी०) ठीक राशिकी गुणात्मक अ कसंज्ञा विशेष। नैतिक देखो।

राशिनामन् (सं० झी०) नामकरणके समय राशिके अनुसार जो नाम होता है उसे राशिनाम कहते हैं। यह राशिनाम शतपञ्चमनुसार होता है। राशिनाम द्वारा नक्षत्र तथा उसका किसी पार्श्वमें जन्म और किसी ग्रहको दृष्टा जानी जाती है। कहते हैं, कि राशिनाम सबके भागे करना शक्य नहीं सबके राशिनाम और उपनाम होते हैं। धर्म कर्मादि कार्यमें सिर्फ राशिनाम भ्रमकृत होता है, साधारणतः उपनाम होसे वृत्तरा कार्य भादि होता है। शायद् राशिनाम समन्वये यदि मारवादि करे, इसविषये उसे उपानेका नियम प्रचलित है। ज्योतिः शास्त्रके मतसे इस नामकरणकी प्रथाकी इस प्रकार निर्दिष्ट हुई है।

सवा दो पार्श्व नक्षत्रसे एक एक राशि होती है, एक एक नक्षत्र चार पक्षोंमें विभक्त है, नक्षत्रमान स्पृताधिक १० वर्षमें होता है। इसका चार भाग करनेसे १५ वर्ष

में एक एक पार्श्व होता है। नक्षत्रके इत पार्श्वके अनुसार राशिनामका भादि प्रसर होता है।

म इ उ ए कृत्तिका, मर्धात् कृत्तिका नक्षत्रयुक्त मेघ राशिमैं तथा कृत्तिका नक्षत्रके किस पार्श्वमें जन्म हुआ है वह पहले ही स्थिर करना होता है। प्रथम पार्श्वमें जन्म होने पर अकारादि, द्वितीयपार्श्वमें इकारादि, तृतीयपार्श्वमें उकारादि तथा चतुर्थपार्श्वमें एकारादि नाम होगा। इस तरह अन्यान्य नक्षत्रके संश्लेषमें जानना होगा।

मो य वो रोहिणी। ये वो क की मृगशिरा। कु य रु छ भाद्रा। के को ह हि पुनर्वसु। कु हे हो य पुष्या। हि कु डे हो अश्लेषा। म मि मु मे मघा। मो उ रि कु पूर्णमासु। टे रो य पि उत्तरफल्गुनी। पु य ण ठ हस्ता। वे पो र रि चित्रा। उ रे रो त स्वाती। ति तु ते तो विशाखा। न नि नु ने मजुराषा। मो य बि यु ज्येष्ठा। पे मो म मि मूना। भू य फ ड पूर्वाषाढा। मे मो अ जि उत्तराषाढा। तु ये हो क अमिन्त्रि। जि मु खे खो भवषा। ग गि गु ने धनिष्ठा। गो ग शि शु शत मिषा। शे शो द दि पूर्वाभाद्रपद। कु य फ म उत्तर भाद्रपद। दे दो व पि वैशती। शु य यो क मन्थिनी। डि डु डे डो भरणी।

इस प्रकार नक्षत्रके पदानुसार नाम होता है।

इसके अलावा निम्नोक्त प्रकारसे भी राशिनाम स्थिर किया जाता है। यथा—

म म ईप। उ उ पूष। क छ मिथुम। उ ह ककर। म उ सिंह। प ध कन्या। र त तुला। न य पिशा। य म धनु। य य मकर। ग श कुम्भ। व ख मीन।

यह स्थूल होता इस नामसे सिर्फ राशि जानी जाती है, नक्षत्रका बोध नहीं होता। किन्तु शतपञ्चमनुसार राशिनाम रखनेसे राशि, नक्षत्र तथा नक्षत्र का किस पार्श्वमें जन्म हुआ यह जाना जाता है।

राशिप (सं० पु०) किसी राशिका स्वामी या अधिपति श्वेत।

राशिभ्यबहार (सं० पु०) राशेर्यायहार। शस्त्रराशिपरि माय-शापक म क। जिस म कसे शस्त्रराशिका परि माय जाना जाता है उसीको राशिभ्यबहार कहते हैं।

राशिभाग (सं० पु०) किसी राशिका भाग वा अंश, मन्था।

राशिभागानुबन्ध (सं० पु०) भग्नाशका संकलन या जोड़ ।

राशिभागापवाह (सं० पु०) भग्नाशका व्यकलन या बाकी निकालना ।

राशिभोग (सं० पु०) १ किसी प्रहका किसी राशिमें कुछ समय तक रहना । २ उतना समय जितना किसी प्रहको किसी राशिमें रहनेमें लगता है ।

विशेष विवरण राशि शब्दमें देखो ।

राशिस्थ (सं० त्रि०) राशौ तिष्ठतीति स्था-क । राशिमें अवस्थित ।

राशौ (सं० स्त्री०) राशि देखो ।

राशौ (अ० वि०) रिशवत खानेवाला, घूसखोर ।

राशीकरण (सं० स्त्री०) स्तूपीकरण, जमा करना ।

राशीकृत (सं० त्रि०) पुञ्जीकृत, इकट्ठा किया हुआ ।

राष्ट (फा० पु०) फारसी संगीतमें १२ मुकामोंमेंसे एक ।

राष्ट्र (सं० पु० स्त्री०) राजते इति राज् (सर्वधातुभ्यः ष्ट्) । उण् ४।१५८ इति ष्ट् ऋञ्चि ति षः । १ राज । २ देश, मुल्क । ३ प्रजा । ४ वह वाधा जो सम्पूर्ण देशमें उपस्थित हो, इति । ५ पुराणानुसार पुरुरवाके वंशज काशीके पुत्रका नाम । (भागवत ६।१७।४) ६ वह लोक समुदाय जो एक ही देशमें बसता हो या जो एक ही राज्य या शासनमें रहता हुआ एकताबद्ध हो, एक या सम भावा-भाषी जनसमूह ।

राष्ट्रक (सं० त्रि०) १ राष्ट्र-सम्बन्धी, राष्ट्रका । (पु०) २ राज्य । ३ देश ।

राष्ट्रकर्षण (सं० स्त्री०) राजा या शासकका प्रजा पर अत्याचार करना ।

राष्ट्रकाम (सं० त्रि०) राज्य पानेकी इच्छा करनेवाला, राज्याभिलाषी ।

राष्ट्रकूट—खनामप्रसिद्ध दक्षिणात्यका क्षत्रियराजवंश । वर्तमान समयमें इस वंशके राजपूत-राजगण राठोर हैं । प्राचीन गुफाके लेख और शिला लेखोंसे पता चलता है, कि भोज और रट्टो वा राष्ट्रक- ने राज्य करता था । इन रट्टो के समय विशेष प्राधान्य प्राप्त कर दक्षि-

णात्यके उत्तर विभागमें महाप्रभावशाली सुविस्तृत महाराष्ट्र राज्य स्थापित किया था । वे अपनेको 'रट्टे' गौरवके साथ महारट्टी कहते थे । उन्हींके वंशधर पीछे मराठा नामसे प्रसिद्ध हुए ।

बादमें दक्षिण मराठ राज्यमें रट्टो वा रट्ट नामके और भी दो एक सामन्तराजका उल्लेख मिलता है । इस रट्टो जातिके कुछ वंश एकश्रेणीबद्ध हो कर सम्भवतः तथार्थपरिचायक 'कूट' शब्दके अपभ्रंशमें रट्टकूट नामसे प्रसिद्ध हुए । बादमें यह देशी भाषामें 'राठोर' और संस्कृतमें राष्ट्रकूट नामसे अभिहित हुआ । अथवा प्राचीन रट्टजातिकी किसी एक शाखाने दक्षिणात्य भू-भागमें फैल कर कालान्तरमें राष्ट्रकूट नामसे प्रसिद्धि पाई होगी, कारण अन्धभ्रूत्य और शक-क्षत्रियोंका प्रभाव हास होने पर ये रट्टवंशीय सरदारगण आमीरजातिके स्वाधीनता स्थापनमें समर्थ हुए थे । जेवुर और मिरजके शिलालेखसे मालूम होता है, कि चालुक्यवंशके प्रतिष्ठाना जयसिंहने राष्ट्रकूटवंशी राजा नरसिंहके पुत्र इन्द्रको पराजित करके दक्षिणात्यमें आधिपत्य विस्तार किया था । इस चालुक्यवंशने ईसाकी ६ठी शताब्दीके प्रारम्भमें प्राधान्य प्राप्त किया था, इसलिए ईसाकी तीसरी शताब्दीके अन्तसे ले कर ६ठी शताब्दीके प्रारम्भ तक राष्ट्रकूटवंशका प्रभावकाल ऐसा अनुमान किया जाता है ।

वर्तमानमें आविष्कृत शिलालेखों और ताम्रलेखोंकी आलोचना द्वारा इस राष्ट्रकूटवंशका जो इतिहास संकलित हुआ है, उसे देखनेसे साफ मालूम होता है, कि बहुत प्राचीन समयसे इस राजवंशने दक्षिण-भारतमें प्रतिष्ठा पाई थी । खरे-पाटन, आंगली, नवसारी और वर्धाके शिलालेखसे मालूम होता है, कि राष्ट्रकूटगण यदुवंशी और यदुकुलोत्तम सात्यकीके मूलवंशज हैं । इस वंशमें रट्ट नामके एक राजा हुए थे । उनके पुत्र राष्ट्रकूटसे ही इस वंशका नाम राष्ट्रकूट पड़ा है । शिलालेखके कहे हुए पौराणिक नाम विलकुल काल्पनिक मालूम होते हैं । इससे तो इतिहासप्रसिद्ध महाराष्ट्र-राज्यकी प्रतिष्ठा करनेवाली रट्ट नामक विशाल क्षत्रिय जातिके लिए राष्ट्रकूट नाम ग्रहण ही अधिक सम्भवपर मालूम

होना है। कारण मौर्यराज श्मशानके समयमें भी महा राष्ट्रकूटस्यमें इस वंशकी प्रतिपत्ति थी। राष्ट्रकूटगण यद्यार्थमें इस देशके राजा थे। वे कभी कभी सात बाहन और चालुक्यव शीघ्र नरपतियों द्वारा विपर्यस्त हो कर उनको वधयता सोकार करनेको बाध्य हुए थे, किन्तु विजयकृष्ण शक्तिहीन नहीं हुए थे।

शिवाजेजमें ऐतिहासिक घटनासे सम्बन्ध रखनेवाले जो राष्ट्रकूट राजाओं के नाम मिलते हैं, उनमें १म गोविन्द ही सर्वश्रेष्ठ थे। इन्होंने वरपत्तार गुहा मन्दिरे कि साजेकेसे मान्दम होता है, कि उनका पिताका नाम इन्द्रराज और पितामहका नाम वृत्तिवर्मा था। रचिकोचिं देशोक्तके सिद्धासेजमें सिद्धा है, कि राजा १म गोविन्दने चालुक्यराज २य पुष्यकेशीके राज्य पर चढ़ाई की थी और पीछे उनके साथ मित्रता हो गई थी। उनके पुत्र कर्कन ब्राह्मणों के द्वारा अनेक वैदिक यज्ञोंका अनुष्ठान किया था। उनकी मृत्युके बाद उनके पुत्र २य इन्द्रराज सिंहासन पर बैठे।

इन्द्रराजने चालुक्यराजकी कन्यासे विवाह किया था और इस तरह दोनों में सन्नाह स्थापन हुआ था। उनके पुत्र विजयो वृत्तिवर्गन मुहूर्त भर सेना ले कर काशी, केरल, कोज, पाण्ड्य तथा भद्रत और भार्यावश के अधिपति भोईर्ण भाद्रिकी पराजित करनेवाले कर्णारक सेना-इजको पराजित किया था। कर्णारक सेनाके परामयसे चालुक्यव शक शीघ्र क्षापीन राजा २य कीर्तिवर्मा (वह्मन)-का गर्भ चूर करके राजा वृत्तिवर्गने समग्र इक्षिण-भारतमें एकाधिपत्य स्थापन किया था। उन्होंने उज्जयिनी नगरमें बहुत-सा सुवर्ण और श्याहरात हान किया था। कोन्डापुर सिद्धेके रामनगढ़ नगरमें प्राप्त उनके एक शिवासेजमें उनका राज्यकाल ६७५ शकाब्द जिला हुआ है।

राजा वृत्तिवर्ग के अपुत्रक अवस्थामें मृत्यु होने पर उनके चचा कृष्णराज राजा हुए। बहोदानमें प्राप्त एक ताडसेजमें उल्लेख है, कि कृष्णराजने अपने धर्मक किसी राजाका उच्छेद किया था इससे बहुतोंका अनुमान है कि सम्भवतः अपने मतीजे वृत्तिवर्गको मार कर ही ये सिंहासन पर बैठे थे। परन्तु काबा और तवसाटोके

लेखमें वृत्तिवर्गकी मृत्युके बाद सिर्फ कृष्णराजके सिंहासन प्राप्तिके बात लिखी है। वंशशीतलवदक महाप्रभाव शाली महाराज वृत्तिवर्गका राज्यस्रष्ट किया जाना था मारा जाना ठीक नहीं मान्य होता। जहाँ तक सम्भव है, यह हो सकता है कि वृत्तिवर्गके पुत्र अथवा उस वंशके दूसरे किसी उत्तराधिकारीको हत्या कर कृष्णराजने सिंहासन अधिकार किया होगा। वरदाके लेखमें वृत्तिवर्गको जो अपुत्रक सिद्धा गया है यह विश्वासयोग्य नहीं। कारण वह लेख ही सौ वर्ष पीछेका तुलना हुआ है।

कृष्णराजने शुभतुङ्ग और अकावर्षय उपाधिसे विभूषित हो कर वृत्तिवर्गके पदानुसरण पर राज्य शासन किया था। उन्होंने चालुक्योंको सम्युपेक्षसे पशो मूत करके तथा राहण नामक एक प्रयत्न पराजित नरपतिकी पराजित कर राष्ट्रकूटोंके गौरवको बढ़ाया था। ये राहण किस देशके राजा थे कुछ मान्य नहीं हो सकता। राजा कृष्णराजने अनेक अधिपत्य करके हठापुर (इजोरा)-में पर्यंत फटा कर कैवास पर्यंत और उस पर शिव-मन्दिरे निर्माण कराया था। इन्होंने ६७५से ७०५ शकाब्द तक राज्य किया था।

तदनुसर उनक पुत्र २य गोविन्दराज सिंहासन पर बैठे थे। राजा गोविन्द वैश्वकर्षमें मत्त जो कर विशेष रूपसे इन्द्रिय सुखमें मग्न हो गये और उस समय उनके छोटे भाई भ्रुय निरुपम राजकार्यकी इजमाज करते रहे। इन्होंने बादमें कौशजसे भाईस राज्य छीन लिया। राजा गोविन्दने बादमें पार्श्ववर्ती सामन्त राजाओंकी सहायतासे भ्रुयके विरुद्ध अल्लधारण किया परन्तु युद्धमें वे पराजित हो गये। उसक बाद भ्रुय निरुपमने ही राष्ट्रकूट सिंहासन पर बैठ कर राज्य किया था।

मिनसेन-द्वारा ७०५ तकमें विरचित 'जिन-इरिषण' के अन्तमें लिखा है, इक्षिणात्य भूमिगर्भ कृष्णपुत्र भी पहलम नामक एक राजा राज्य करत थे। कर्णार और पैदासमें गात प्रवृत्तिले मान्य होता है कि राजा कृष्णके पुत्र २य गोविन्दका अपर नाम यज्जम और भ्रुयका अपर नाम कर्कवज्जम था। [सचिप एक शक-संवत्सरे]

३५ गोविन्दको सिंहासन पर बैठा मान लेनेमें कोई आपत्ति नहीं।

राजा ध्रुव एक विप्यात योद्धा थे। निरुपम, कलि-वल्लभ और धारावर्ण ये उनके विरुद्ध थे। इन्होंने काञ्ची-के पल्लवराजको पराजित करके करस्वरूप उनसे अनेक हाथ लिये थे। उसके बाद उन्होंने चेरराज्यके गंग-वंशीय राजाको युद्धमें पराजित करके शृंगल्लाघट्ट किया था। फिर वे अपनी सेनाके साथ उत्तरकी ओर जा कर गौड़विजयी वत्सराजोंकी राजधानी कांशास्त्रीपुरी पर अधिकार करके कोशलराज्यके अधीश्वर हुए। राजा ध्रुव निरुपमने अमितीविरुद्धसे राज्य प्राप्त और वृद्ध न किया था, किन्तु वे अधिक समय तक राज्य न कर सके थे; कारण शिलालेखोंसे पता लगता है कि शक सं० ७०५ में उनके भाई वल्लभ सिंहासन पर अधिष्ठित थे और उनके पुत्र ३५ गोविन्द ७२६ शकमें पितृसिंहासन पर अधिष्ठित हो कर पैदान-प्रशस्ति दे रहे हैं।

युवराज ३५ गोविन्दके बलवीर्य और साहसका परिचय पा कर राजा ध्रुव निरुपम पुत्रको शासन-भार अर्पण कर स्वयं वानप्रस्थ अवलम्बन करना चाहते थे, किन्तु पिताके रहते हुए राजसिंहासन पर बैठना भृष्टता समझ कर उन्होंने पितासे निवेदन किया कि 'युवराजके पदसे ही मैं यथेष्ट सम्मानित हूँ'।

पिताको मृत्युके बाद गोविन्द जगत्तुंग (१५) नाम ग्रहण करके वे सिंहासन पर बैठे। उनकी अधीनतामें राष्ट्रकूटकी सेना अद्वितीय रणशिक्षा पा कर रणदुर्मद हो गई थी। सिंहासनाधिकारके बाद ब्रह्म सामन्तराज विद्रोही हो कर एक साथ उनके विरुद्ध उठ पड़े हुए। उन्होंने अकेले ही उन विरुद्धाचारियोंकी युद्धमें परास्त करके अशेष वीरताका परिचय दिया था। उन्होंने बन्दीभूत गंगवंशीय चेरराजको मुक्त किया था, परन्तु उक्त राजाते अपने देशमें पहुँचते ही उनके विरुद्ध अन्न धारण किया था। राजा ३५ गोविन्दने पुनः उन्हें युद्धमें परास्त और बन्दी करके अपने राज्यमें ला कर उन्हें कैद रखा।

इसके बाद गुर्जर और मालवके राजाको पवान्त करके वे विन्ध्यपर्वत की तरफ सेना सहित बढ़े। वहाके

राजा माराशर्वाको परास्त करके उनसे यथेष्ट उपदौकन लिया। इस समय वर्षामृतु आ जानेसे कुछ समय तक वे श्रांभवन नामक स्थानमें ठहरे रहे। उसके बाद तुङ्गभद्रा नदीके किनारे पहुँच कर पल्लववंशीय काञ्ची-पति वृन्तिदुर्ग तथा पूर्ण चालुक्यवंशीय वेङ्गोराजको युद्धमें परास्त करके उन्हें अधीनता शृंगल्लमें आपन्न किया था। तुङ्गभद्राके तट पर शिविर लगाते समय उन्होंने पत्निल रामेश्वरतीर्थवासी शिवधारी नामक एक व्यक्तिको कुछ भूमि दान की थी।

राजा गोविन्द ३५ने अपने भुजप्रलसे उत्तरमें मालवमें ले कर वृक्षिणमें काञ्चीपुर तक विस्तृत भूभाग एकच्छा-धीन कर लिया था। उन्होंने मही और तातोका मध्यवर्ती लाट प्रदेश अपने भाई इन्द्रको दे दिया था। तबसे उस प्रदेशमें राष्ट्रकूटवंशकी दूसरी एक शाखा राज्य कर रही है। राजा गोविन्द भ्रमन्वर्ण, पृथ्वीवल्लभ, श्रीवल्लभ और जगन्नुङ्ग उपाधिसं विभूषित थे। उन्होंने मयूरखण्डो (वर्त्तमान मोरखण्ड) नगरमें राजधानी स्थापन की थी या नहीं, नहीं कह सकते। परन्तु शक सं० ७३० के वनिदिण्डोरी और राधनपुरके शिलालेखमें लिखा है कि वे उस समय मयूरखण्डोमें विद्यमान थे।

राजा गोविन्दकी मृत्युके बाद उनके पुत्र अमोघवर्ण राजा हुए। उनका यथार्थ नाम जर्वा था। वीरनारायण, राजराज, नृपतुङ्ग और वल्लभ आदि उनकी कई उपाधियाँ थीं। मान्यपेट नगरमें उनकी राजधानी थी। उन्होंने वेङ्गोके चालुक्यराजोंको युद्धमें परास्त करके उन्हें यमपुरी भेज दिया। कोट्टणके शिलाहारवंशी सामन्तराज पुलशक्ति और उनके पुत्र कपर्दि के ७७५ और ७६६ शक संवत्के शिलालेखसे मालूम होता है कि वे राष्ट्रकूटपति अमोघवर्णके अधीन सामन्तरूपसे उक्त प्रदेशका शासन करते थे।

धारवाड़ जिलेसे मिले हुए शिलालेखमें ७८८ शक उनके राजत्वका ५२वां वर्ष लिखा गया है, अतएव हम शिलाहार-लेखके ७६६ शकका उनके राजत्वका ६३वां वर्ष समझ सकते हैं, इस हिसाबसे उनका राज्याभि-काल ७३७ शक होगा।

राजा अमोघवर्ण दिगम्बर जैनधर्मके प्रपुत्रोपक थे।

वे प्रसिद्ध जैनधार्मिक जिनसेनके भक्त थे। महात्मा जिन सेनने अपने 'पार्श्वान्मुद्रय' नामक काव्य प्रथममें राजाके सिप सुवार्ध रावणशासनका आशीर्वाद दिया है। जिन सेनके शिष्य गुणभद्राचार्यक उत्तरपुराणमें तथा बीरा चार्धकृत सारसंग्रह नामक जैनगणित-ग्रन्थमें भमोचवर्ष की शक्ति और धर्मप्राणताका उल्लेख है। 'अथधवळ' नामक जैन-ग्रन्थमें लिखा है,—७५६ शक-संवत् बीत जामे पर राजा भमोचवर्षके राज्यमें उक्त ग्रन्थ समाप्त हुआ। इन सब मानुषश्लोक प्रमाणों द्वारा सिद्ध होता है, कि भमोचवर्ष मृगश्रुत जैन-धर्मावलम्बी थे। वे स्वाहात् सिद्धांतका पोषण कर गये हैं।

अहोमि प्रभोत्तर रत्नमाळा नामक एक संस्कृत काव्य रचा था। विद्यम्बर सभप्रदायक रत्नमाळिका ग्रन्थमें उसका कर्त्ता भमोचवर्ष बतलाया गया है। राजाके मनमें वैराग्योद्भव होनेसे वे राजसिंहासन अपने पुत्रको अर्पण कर सर्व स सारासक्तिस निवृत्त हो गये थे।

भमोचवर्षके बाद उनके पुत्र भद्रकालवर्ष पितृसिंहासन पर अर्पित हुए। उनका यवार्ध नाम कृष्ण (२५) और उपाधि वल्लभ थी। उन्होंने द्वैधवर्षशी बेदिराज कोकणकी राजकन्यासे विवाह किया था। उक्त कन्याके गर्भसे जयसु ग नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। पुत्रोत्पन्न नामक एक सामन्तराज द्वारा ७६७ शकमें जैन मन्दिरकी प्रतिष्ठाके उपलक्ष्यमें उत्कर्षोर्ण गिराजेकाके पङ्कनेसे जात होता है, कि इस समय कृष्णराज सिंहासन पर अधिष्ठित थे, इससिप ७६६ शकमें भमोचवर्ष के अर्पित रहने पर भी उनके द्वारा वैराग्य बध राजसिंहासनका त्याग देना असम्भव नहीं मान्य होता, क्योंकि जैनधर्मावलम्बी राजाभोम प्रायः यह बात पाह जातो है कि वे धृष्टावस्था में राज-पाद त्याग कर धार्मिक जीवन वितारते थे। उनकी अनुपस्थितिमें सम्भवतः कृष्णराजने उक्त दो वर्ष तक पिताके प्रतिनिधि रूपमें राज्य चलाया था। ८२४ शकमें बिर्कार्य बेश्यने जैनमन्दिर प्रतिष्ठा की थी, उस मन्दिरके मूर्तगुहके शिखारेखसे मान्य होता है, कि राजा कृष्णवर्धन अमितविक्रमशाळी थे, उनके मयसे गुर्गराज्य सशोक थे, साठ प्रदेशके रहनेवाले पदान्त थे, गौड़गण बशीभूत थे, समुद्रोपकूलघासी शास्त्रिज्ञ थे,

और भग, कलिङ्ग, गङ्ग एवं मगधदेशाधिपतिगण उनकी अधीनता लोकार करनेकी बाध्य हुए थे। उनके राज्य कासमें (पिङ्गळ संवत्सरके ८२० शकमें) गुणभद्राचार्य के शिष्य कोकमेन द्वारा जैनमाविपुराण या महापुराणकी शेर्याई रचना समाप्त हुई थी।

भद्रकालवर्षके पुत्र जयसु गने अपने मामाकी कन्या जस्मीदेवीके साथ विवाह किया था। उनकी राज्याधिकारसे पहले ही मृत्यु होनेके कारण उनके पुत्र इन्द्र (३५) पितामहके सिंहासन पर बैठे। राज्यधिकार के बाद इन्होंने नित्यवर्ष उपाधि धारण की थी। माण्य-केट नगरमें उनकी राजधानी थी। अपने राजशासिकके उपलक्ष्यमें इन्होंने तातोके दिनारे कुकम्बक नगरमें (वर्ष मान कुर्बोर्दमें) भा कर 'पद्मभ्योत्सव' सम्पन्न किया था। इस समय अहोमि गुजापुरप्रदान, २० लाख द्रम मुद्रा वितरण और बहुत प्राय दान किये थे। अग्निपेक क समय प्रामदानके प्रसङ्गमें कहा वे जो शासन-क्षिपिया प्रचारित की थीं, वे ८६६ शकमें सुद्वार गय थी। इस क्षिप बही एक अग्निपेकका समय है, ऐसा अनुमान किया जाता है। नयसारो लिखेके तन्म और गुमरा धामादिके दानस अनुमान होता है, कि राजा भद्रकालवर्षके समयमें संभवतः काठपञ्च अर्थात् राष्ट्रकूटव श की अत्यन्त शाखा माण्यकेट राज्यशके अधीन हो गई थी।

इन्द्रराज (३५) ने द्वैधवर्षशी बेदिराज भन्नु नगुळ नगकूटवकी कन्या अम्बा (विजम्बा)के साथ विवाह किया था। अम्बाके गर्भसे गोविन्द (४४) नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। कैरपाटनकी प्रशस्तिसे मान्य होता है कि राजकुमार गोविन्द भमोचवर्षके कनिष्ठ सहोदर थे। अधिकतर यही सम्भव है, कि युवराज २५ भमोचवर्ष ही पहले पितृसिंहासन पर बैठे थे। गोविन्दने किसी उपायसे स्पेष्टताका भमोचवर्षको मार कर सर्व पितृसिंहासन हस्तगत किया था। २५ भमोचवर्षने केवल एक मासमात्र राज्य किया था।

राजा ४४ गोविन्द प्रभुवर्ष नाम ग्रहण करके ८४१ शकमें सिंहासन पर बैठे। उनकी सुवर्णवर्ष और साहसराज उपाधि थी। उन्होंने वेङ्गीके पालुबय राजाभो-

को बार बार युद्धमें पराजित किया था। ८५५ शकमें उन्होंने मान्यखेटके राजसिंहासन पर बैठ कर राजकाय चलाया था।

राजा ४४ गोविन्दके बाद उनके चाचा वद्विग (राजा जगत्तुङ्गके द्वितीय पुत्र) अमोघवर्ग ३५ नाम धारण करके राजसिंहासन पर अधिष्ठित हुए थे। ये वयोवृद्ध, झानी और साधुतुल्य थे। सामन्तोंकी प्रार्थनासे उन्होंने राजप्रभार ग्रहण किया था, किन्तु वे स्वयं परमार्थसेवा छोड़ कर विपयवृत्ति और भोगसुखमें लिप्त नहीं हुए थे। उनके पुत्र युवराज कृष्णने अपनी महती शक्ति द्वारा दन्तिग, वप्पुग और विट्रोही गङ्ग-राजोंको पदानन किया था। उत्तरमें हिमाचलसे ले कर दक्षिणमें सिंहल तक तथा पूर्व और पश्चिम समुद्र-बीचका समस्त भारतवर्ष उनके प्रभावसे काय उठा था। गुर्जरराज उनके भयसे कालङ्गर और चित्तकूट दुर्गकी विजयवासनाको विसर्जित कर भाग गये थे। युवराज कृष्णने अपने राज्यमें एक आर्य उपनिवेश स्थापन किया था।

वृद्ध अमोघवर्ग (३५)ने अत्यल्पकाल मात्र राज्यशासन किया था। उनके मरनेके बाद अमितविक्रम वीराग्रगण्य ३५ कृष्णराजने अकालवर्ग नाम धारण करके राष्ट्रकूट-सिंहासन अलङ्कृत किया था। ८६२ शकमें उत्कोर्ण शिलालेखमें उनके लिए श्रीवल्लभ उपाधिका प्रयोग पाया जाता है। उनके राज्यकालमें उत्कोर्ण ८६७ शकाब्दके एक शिलालेखके देखनेसे अनुमान होता है, कि राजा ४४ गोविन्दके राज्यकालमें ८५५ शकके शिलालेखसे बारह वर्ष बाद सम्भवतः कृष्णराजदेव मान्यखेटके सिंहासन पर अधिष्ठित हुए थे। अतएव उक्त दो वर्षके भीतर ३५ अमोघवर्गका राज्यकाल और कृष्णराजका सिंहासनाधिकार सघटित हुआ था। शिलालेखके प्रमाणसे ८७८ शक तक उनका राज्यकाल पाया जाता है, परन्तु जैनाचार्य सोमदेवकृत 'यशस्तिलकचम्पू' नामक जैन-काव्यग्रन्थके समाप्ति-वाक्यमें ८८१ शकमें ग्रन्थ समाप्तिके प्रसंगमें राजा कृष्णराज-देवके शासनकालका उल्लेख है। इस ग्रन्थमें लिखा है कि राजा कृष्णने अप्रतिहत प्रभावसे राज्यशासन करके

पाण्ड्य, सिंहल, चोल, चेर और अन्यान्य नरपतियोंको अधीनतापाशमें बांध लिया था।

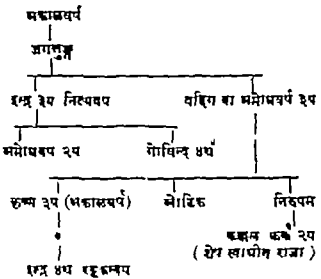
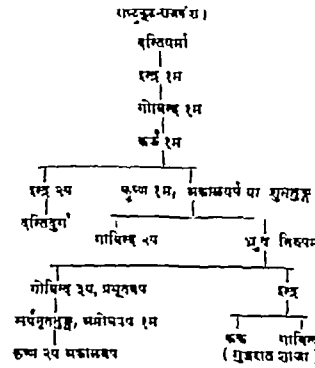
कृष्णराजदेवकी मृत्युके बाद उनके कनिष्ठ भ्राता खोट्टिगदेव (खटिक) सिंहासन पर बैठे। ये युवराज देवकी कन्या कन्दकदेवीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे।

खोट्टिकके बाद उनके भ्राता निरुपमके पुत्र कङ्कल राजा हुए। वे कर्क २५ वा ४४ अमोघवर्गके नामसे परिचित थे। राजा कर्क अद्वितीय योद्धा होने पर भी चालुक्य-राज तैलपसे युद्धमें पराजित हुए थे और इन्हींके समयसे दक्षिणात्यका राष्ट्रकूट साम्राज्य चालुक्यराजके हाथ चला गया। ८६६ शकके शिलालेखसे मान्यम होता है कि उक्त शकसंवत्में महाराज कङ्कल राष्ट्रकूट-सिंहासन पर अधिष्ठित थे। उस वर्ष अथवा उसके एक वर्ष पहले चालुक्यराज तैलपने राजदण्ड धारण किया था। इसलिये इसके कुछ समय बाद सम्भवतः चालुक्य राष्ट्रकूट-युद्धमें राष्ट्रकूट-राजलक्ष्मी चालुक्यराजवंशकी गोदमें चली गई थी।

उत्तर-चालुक्यवंशी राजा तैलप वा आहवमल्लने अपने भुजबलसे हूण, गुर्जर और पाण्ड्य राजविजेता २५ कर्कको युद्धमें पराजित करके गुजरातके अतिरिक्त समग्र राष्ट्रकूट साम्राज्य पर अधिकार कर लिया था। उन्होंने मान्यखेट राजकुमारी जाकलदेवीका पाणिग्रहण करके धीरे धीरे अधिवासियोंके अन्तःकरणमें चालुक्य प्रभाव फैलानेकी कोशिश की थी। उस समय युवराज इन्द्र रट्टकन्दर्प वा ४४ इन्द्रराज (३५ कृष्णके पुत्र)ने पश्चिमगङ्गवशीय सामन्तराज पेर्मानडि मारसिंहकी सहायतासे अपने पैतृक राष्ट्रकूट सिंहासनको पुनः प्राप्त करने की काशिश की थी, किन्तु लगातार कई बार युद्धमें परास्त हो कर अन्तमें वे व्यर्थमनोरथ हो गये। इस राष्ट्रकूट-राजवंशने ७४८ ई०में राजा दन्तिदुर्गके राज्यकालसे ले कर राजा २५ कर्कके राज्यकाल ६७३ ई० तक दोर्हण्ड प्रतापसे दक्षिणात्य भूमि पर राज्यशासन किया था। शेषोक राजाको राज्यलक्ष्मी भ्रष्ट हो जाने पर राष्ट्रकूटोंकी स्वाधीनता सदाके लिए लुप्त हो गई। गुजरातकी अन्यतम शाखा इससे पहले ही विच्छिन्न हो चुकी थी। इस राजवंशके राजकालमें जैन और बौद्धधर्मने

जैसी स्थापना पाई थी, वैसे दिग्विजय भी परिपूर्ण हुआ था। इलोराक पथ तममें गुफा काट कर मठबिहायवि निर्माण करा कर जैसे थे बौद्धधर्मका महादाम्य कोर्णन कर गये हैं, उसी प्रकार पौराणिक देवदेवीकी मूर्ति भी मन्दिर प्रतिष्ठा करा कर दिग्विजयका गौरव बढ़ा गये हैं। फासलवमें यह देखा जाय, तो विगम्बर जीन धर्मायकम्बो थे।

राष्ट्रकूटगण विघोत्साही थे। वे प्रसिद्ध कवियों को आशय धर कर प्रत्यादि रचनाके लिए उन्हें उरसा हित करत थे। उनके शिलाश्रेय तटकाकीन कवित्वो ररूपक परिचायक हैं। राजा अयोधयर्षदत्त प्ररनेतर रसमासिका और गुणमत्र भावि जेनाचावीकी जिनपुराज और ररानाविकी रचना राष्ट्रकूट राजाओंकी पुष्टगोप रता का चरम निदर्शन है। इन प्र चीमें सामयिक राष्ट्रकूट राजाओंकी महिमा गाई गई है। इसके सिया कविधेष्ठ हमागुपने अपने कवित्वरूपमें सोमव ज-भूपज राष्ट्रकूट कुमोजर दसियावाधाधिपति कल्पयका उरुके किया है। विघोत्साही न होनेसे कवि कमी भी उनकी गुणा यलोको प्रजा सा न करतें। इसाकी १०वीं जताभूतिक मरव जयजकारिमें "यहम" उपाधिपारी इन भारतोप राष्ट्रकूट गी राजाओंका "बसहता" शम्भस उरुके किया है।



जिनायेकीका अनुसरण करनैस इन गुजरात प्रदेशमें राष्ट्रकूटव गकी हो विभिन्न शाखाये पाते हैं। प्रथम शाखाके प्रतिष्ठाता ककराज १म, उनके पुत्र भूषणराज और पौत्र गोविन्दराज हैं। गोविन्दन नागवर्माकी कन्याके साथ विवाह किया था। उनके धौरसमात पुत्र २य ककराज ३य शकमें विद्यमान थे।

द्वितीय शाखाकी बात हम पहले ही कह चुके हैं। महाराज भूषण निरुपमके पुत्र गोविन्द ३य न ८०० ई०के लगभग मन्ना बरामर शेत कर मध्यगुजरात वा लार प्रदेश अपने भाई इन्द्रका अर्पित किया था। इन्द्रके प शन लगभग एक सी वर्ष तक यहाँ राज् किया था।

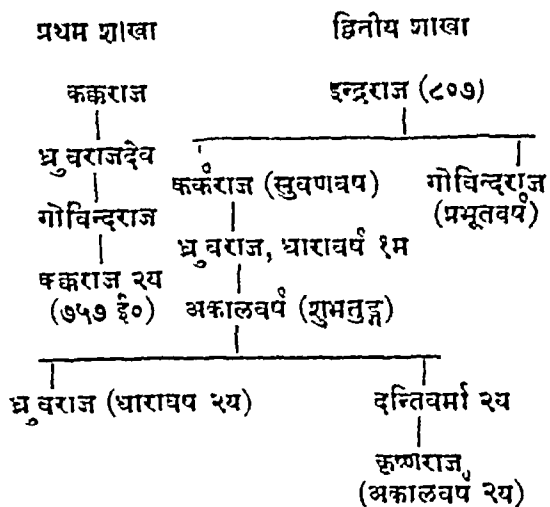
इन्द्रराजके पुत्र कर्कराज (सुययण्यर्ष) बाईमें राजा हुए। परन्तु उनके कनिष्ठ भ्राता गोविन्दराज प्रमूतवर्षन उन्हें राज्यभ्युत करके सिंहासन अधिकार कर लिया। इसके बाद ककराजन मध्यकालके राजा अपने प्राति ज्ञाता धर्मोपरावकी सहायतास मरु राज्यका पुनरुद्धार किया था। उन्मुकिरूप भी सामन्तराज बुद्धयर्ष गोविन्दराजके अधीन थे।

गोविन्दराजका राज्यकाळ समाप्त होने पर कर्कराज के पुत्र भूषण निरुपम धारावर्ष (प्रथम) राजा हुए। एहोंने यहम नामक एक राजाकी रथमें परालन किया था, किन्तु रथप्रेजमें धामात-धात हो कर पही उनकी मृत्यु हो गई। उनकी मृत्युके बाद उनके पुत्र अकाल वर्ष शुभशुक्ल ८५० ई०में सिंहासन पर बैठे।

अकालवर्षके पुत्र भूषणराज निरुपम धारावर्ष (२य)ने

पिताके सिंहासन पर बैठ कर अणहिलवाडके चात्रड़ जातिके अधिपति वल्लभ और मिहिर नामक राजाको परास्त किया। उसी वष संभवतः उनकी मृत्यु हो गई। कारण उक्त वषमें ही उनके नामसे उत्कीर्ण शिलालेख मिलता है। दन्तिवर्माके बाद उनके पुत्र कृष्णराज अकालवष राजा हुए।

गुजरातका राष्ट्रकूट-राजवंश।

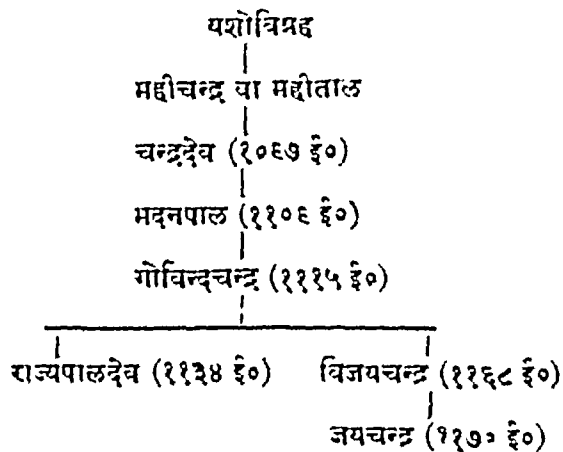


कालान्तरमें यह राष्ट्रकूटवंश सहाय-सम्पत्ति और वलवीय-हीन हो कर भारतके नाना स्थानोंमें विच्छिन्न हो गया। ये कहीं कहीं सामन्तराजके रूपमें रह रहे थे। दक्षिणात्यके चालुक्यराजके हाथसे राष्ट्रकूट-राजाओंका प्रभाव नष्ट होने और साम्राज्य चले जानेके बाद यह राजवंश पुनरुत्थान करनेमें समर्थ नहीं हुआ।

कई शताब्दी बाद हम कन्नोज-राजसिंहासन पर गहरवाडवंशी राठोर राजाओंको उपविष्ट देखते हैं। ११५४ संवत्में मदनपालदेवकी ताम्रलिपिमें लिखा है, कि कन्नोजके राठोरवंशके प्रतिष्ठाता गहरवाड-कुलतिलक राजा चन्द्रदेव उनके पिता थे। पितामह महीचन्द्र और प्रपितामह यशोविप्रह थे। राजा चन्द्रदेवने (प्राचीन कुलपञ्जीमें चन्द्रकेतु कहे गये हैं) मालवराज भोज और चेदिपति कर्णको मृत्यु-जनित राज्यविभ्रष्टाला दूर करनेके लिए सुशासनकी व्यवस्था की थी। इस वंशके शेष राजा जयचन्द्र मुसलमान आक्रमणकारी सुहम्मद गौरीके साथ समरमें परास्त और निहत हुए थे। आश्चर्यका विषय है, कि १२५३ संवत्में खुदे हुए

कन्नोज-पति राजा लक्ष्मणदेवके शिलालेखका प्रचार मुसलमान-विजयके तीन वर्ष बाद होने पर भी उसमें राठोर-वंशके पराभवका उल्लेख तक नहीं है।

कन्नोजका गहरवाड वा राठोरवंश।



(ये ११६४ ई०में मुसलमान-सेनाके हाथ मारे गये थे।)

राजपूतानेमें अब भी यह राठोरराजवंश राज्य कर रहा है। मारवाड़के प्रसिद्ध योद्धा और अधिवासिवृन्द तथा जोधपुर-राजवंश इसी राठोरवंशके हैं। किस समय, किस घटनास्रोतमें इन राठोरोंने राजपूतानेमें प्रतिष्ठा प्राप्त की, इस बातको जाननेका कोई उपाय नहीं है।

राठोरजातिका इतिहास घोर कुम्भट्टिकाजालमें आच्छन्न है। 'राठोरकुलतिलक'-के मतसे रामचन्द्रके पुत्र कुशके वंशधरगण ही इस वंशके आदिपुरुष हैं। गाथाकारोंके मतसे सूर्यवंशी काश्यपके किसी वंशधरके औरस और दैत्यकुमारीके गर्भसे राठोर जातिकी उत्पत्ति हुई है।

गाधीपुर (कन्नोज) इनकी आदि वासभूमि है। भट्ट ग्रन्थमें है कि ईसाकी ५वीं शताब्दीके प्रारम्भमें कन्नोजके सिंहासन पर बैठ कर राठोर राजगण राज्य करते थे। खेद है कि भाटकी यह बात इतिहास-संगत नहीं है।

जब सक्कगीन प्रमुख तातारजातिने भारतके सीमान्त-में आ कर पेशावर प्रदेश हड़प लिया था, तब दिल्ली, अजमेर, कालंजर और कन्नोजके राठोर-वीर तातार सेनाके विरुद्ध लम्घन रणक्षेत्रमें घोरतर युद्धमें लगे हुए थे हिन्दू-नेता लाहौरपति जयपाल इस युद्धके प्रधान उद्योका थे।

इस समय भारतीय विभिन्न राजाओंमें जैसा सङ्घर्ष और प्रेम था, वो हाताभ्यो बाह् उस कुशाळ भवस्थायें बहुत कुछ परिवर्तन न हो गया था। तब समय पश्चिम भारत सभनाशकारी युद्ध-कालसे जड़ीमूल हो गया था। भारतमें एकाधिपत्य और स्वाधीनता प्राप्त करनेके इच्छुक कन्नोडराज सहायतासे दिल्लीके तोमर और कौशिक तथा अणहदवाड़के राजाओंके साथ और पुत्रविग्रहमें लगे हुए थे। दिल्लीभर पूर्वीराजके सर्भनाशके विषय समुपगत हो कर उन्हींमें महम्मद गौरी केा भादुरके साथ भारतमें बुझाया था, ११६३ ई०में तिरौरीके लक्ष्मणमें पूर्वीराजके अयापतनके दूसरे हो भर्ष महम्मद गौरी द्वारा उनका अयापतन हुआ। वना इसक युद्धमें मुसलमानों द्वारा पराजित हो कर अपत्य गंगामें डूब कर मर गये। तबसे गंगा-यमुनाके बीचमें स्थित राठोरराज्य विरुद्ध हो गया।

राठोरराज अथव इके अयापतनके बाद उनके पुत्र राज्यपन्न शिवाजीने (मताम्वरसे पौत्र वा सातपुत्र) द्वारकामें दीर्घभ्रानकी अग्निबापासे मारवाड़के अन्तग ल पाकी नगरमें भा कर विभ्राम किया उस समय एक लक्ष हाजू आ कर वहां उपद्रव कर रहे थे। राजकुमार शिवाजीने वहांके अधिकांसियों और साधियोंको प्राण रक्षाके विषय अपनी राठोर सेनाको सहायतासे उन्हे बर्हास भगा दिया। इससे वहांके ब्राह्मणोंने इसल उनके प्रतिपादककल्पमें रहनेके विषय अनुरीय किया। ब्राह्मणोंकी प्रायतानुसार वे वहां रहने लगे। तभीसे मारवाड़में राठोर राजबर्हासकी प्रतिष्ठा हुई।

राठोरोंमें कर्मीजसे मारवाड भ्रानके बाद ३ शताब्देके मीतर ही लगभग ८० हजार वर्गमील स्थान अधिका कर लिया था। अनेक पुत्रविग्रह, दुर्निष्ठ और महामारी आदिसे राठोरवंश क्षयप्राप्त होने पर भी कर्नल टाडके समयमें राठोरजातिकी आनुमानिक संख्या लगभग ५ लाख थी। १८३१ ई०के प्रारम्भको मजुमदारोंमें समय राजपूतानमें राठोरकी संख्या १७३०६ निश्चित हुई है। मुगल बर्दाशमें प्रभुव शक्तिसम्पन्न राठोर वीरोंकी कानों छळ्यारोंकी सहायतासे उनका भाषा साभ्राज्य जय किया था। इस विषयमें एक किम्बदन्ती

है—“जाब तसबार राठोरान।” इसविषय, इसमें सम्बेह नहीं रहता कि उस समय राठोरोंकी संख्या बहुत अधिक थी। यह राठोरकुट सब समेत २४ शाखाओंमें विभक्त है, जिनमें चरबल, मरडक, चाकित भादि कई प्रसिद्ध हैं।

राजस्थानस प्राप्त प्राचीन राज विवरणसे काव्य कुत्रके राठोर राजाओंकी जो बंश-ताकिता मिलती है, वह संक्षेपमें यहां हो जाती है—

राजा मयनपाखने सं० ५२६में कन्नोड जय करके कामध्वज उपाधि धारण कर राजपाट स्थापन किया था। उनके दो पुत्र हुए—पदरत और पुत्र, पुत्रके धर्म विन्ध, मानुज औरमद्र, अमरविजय, सुजनयिनोद, पथ महिहर, वरद्वं, उममसु, मुकामान, भारत, अर्धकुल और चाँद नामक ठेरह पुत्रोंसे कामध्वज उपाधिधारी १३ महाशाखाओंकी उत्पत्ति हुई। कथना यह बंश शाखा प्रशाखाओंमें विभक्त हो कर चारों तरफ फैल गया। कन्नोड पति धर्मविन्धके वंशमें जयल वृकी और इनके बंशपर शिवाजी द्वारा मारवाड़राजबर्हासकी प्रतिष्ठा हुई।

मारवाड और कन्नकुल देखो।

मारवाड़वासी राठोरोंके कि बन्तो है—कि ऊवयुगमें मनसादेवी ही इस वंशकी कुलदेवी थी। नेतामें वे राष्ट्रसेना नामसे पूजे जाती थी। द्वारमें पद्मायी और कञ्जियुगमें भागनेशी नामसे उनको प्रसिद्धि है। इस प्रवादके प्रारम्भमें वे पद्मा और मायाके प्रसंगमें जगतकी सृष्टि कल्पना करके मनसादेवीकी सृष्टिशक्तिकी भाधारभूता बतलाते हैं। राठोरजातिका वयमान दिया था, इसविषय उनका राष्ट्रसेना नाम पड़ा। राठोरराज्य बड़े उरसाइके साथ इनको पूजा किया करते हैं।

राठोरपति शिवाजीके पौत्र व्हरने मारवाड़के सिद्धासन पर बैठते ही अपने पृथ्वसुखों द्वारा शासित कर्नाटक राज्यमें जा कर वहांसे राष्ट्रकुट राजबर्हासो कुलदेवी राष्ट्रसेनाकी प्रतिमूर्ति बना कर अपने राज्यमें प्रतिष्ठित करनेका विचार किया। प्रतिमूर्तिके साथ गाढ़ीमें बैठ कर जब वे मारवाड़के मायप्राममें पहुँचे तब गाढ़ीका पहिया जमीनमें पंसा घुस गया कि उसका निक्कलना मुशकिल हो गया। राजांने तब वैश्वीकी ‘भर’ समय कर उसी प्राममें

वह उपाय जिसके द्वारा किसी शुद्ध राजाके राजामें
बदलाव या विद्रोह बढ़ा किया जाता है।

राष्ट्रवर्द्धन (स० पु०) १ राज्यकी वृद्धि। २ राजा
वराह कीर रामचन्द्रके एक मन्त्रीका नाम।

राष्ट्रवासी (स० पु०) राष्ट्र वसतीति वस-णिनि।
१ राष्ट्रवासी, राष्ट्रमें रहनेवाला। २ परदेवी,
बिदेरी।

राष्ट्रविद्युव (स० पु०) राष्ट्रस्य विद्युव। राजामें होने
वाला विद्युव, विद्रोह, बहकावा।

राष्ट्रान्तपात्र (स० पु०) १ सीमान्तपात्र। २ बदलाव।

राष्ट्रान्तपात्रक (स० लि०) राज्यकी सीमाकी रक्षवाली
करनेवाला।

राष्ट्रि (स० स्त्री०) राजी, राज्यभरती।

राष्ट्रिक (स० लि०) १ राष्ट्रसम्बन्धी, राष्ट्रका। (पु०)
२ राजा। ३ प्रजा। राष्ट्रकूट देखो।

राष्ट्रिका (स० स्त्री०) राष्ट्र इत्यस्यैवाग्रतयेनास्त्व
स्या, इति राष्ट्र-उन्-स्यप्। १ कश्चकापी, मटकटैया।
राष्ट्रपासी। ३ राष्ट्रपति। (हरिवं० १८५१२७)

राष्ट्रिन् (स० लि०) राज्याधिकारी, राज्यका शासन करने
वाला।

राष्ट्रिय (स० पु०) राष्ट्रघटिता राष्ट्र (राष्ट्रनगरात्
भवति। पा ५।३।३) इति च, यद्वा राष्ट्रं जातः (तत्र बला।
५।१।१५) इति च। १ नाट्योक्तिमें राज्याय, प्राचीन
लक्षित नाटकोंकी भाषामें राजाका साक्षा। २ राष्ट्रा
ध्यक्ष, राज्यका अधिकारी।

राष्ट्री (स० स्त्री०) १ राजी, राजा। २ राजनशीला।
(शक्य) (पु०) ३ राज्यवत्। (शू० ६।५।५ शक्य)

राष्ट्रीय (स० पु०) राष्ट्र मव इति राष्ट्र-इच्।
१ प्राचीन नाटकोंकी भाषामें राजाका साक्षा। (लि०)
२ राष्ट्रसम्बन्धी, राष्ट्रका।

रास (सं० पु०) रासनामिति रासहेऽप्रेति वा रास
शब्द भावे अधिकरणे वा घञ्। १ कोलाहल, शोरमुज,
हल्ला। २ ध्वनि, गूज। ३ नावाभ्युत्थक। ४ योपिया
की एक झोड़ा। (देवतो) ५ विहास।

'मस्माद्दशस्र मन उन्नयन्तीविनाधि'।

महर्षि उक्तमुपादिशतः ॥' (भाग० ५।१।२)

१०५ A. X. 145

'एके मधुपञ्चामा रासविधाया।' (लायी)

३ किया। (भाग० ५।१।१७)

मगवान् छप्पने जो गोपियोंके साथ झेड़का को यो,
उसे हो रास कहते हैं।

कोह कोह इस रासकी कल्पतरु-पात्रा कहा करते हैं।
कार्तिककी पूर्णिमाके दिन विमवाजुसार रासपात्रा
विधान होता है। इस दिन नृत्य, गीत और वाद्यनि
नामाकूप उत्सव होता है। जो इसका अनुष्ठान करते
हैं, वे इहलोकमें विविध सुखभोग कर मन्त्रकाळमें विष्णु
छोकमें गमन करते हैं। कार्तिककी पौर्णमासीके दिन
मगवान्ने रासझेड़का को यो, इसलिये उसी दिन रासझेड़का
करना उचित है। उस दिन रासपात्राका पत्रविके अनु
सार भाषी रासकी पूजादि करके उत्सव किया जाता है।

(उत्कलकविकारा)

भागवतमें लिखा है कि कार्तिकमासमें पूर्णिमाके
दिन निर्माळ गगनमें पूर्ण शशधरके उदय होने पर मग
वान् पिप्पुने योगमाया अवलम्बन कर विहार करने की
इच्छा की। शरत्काळ, आकाश भनि निमळ और उस
पर पूर्णचन्द्रका उदय ऐसे समयमें मगवान् छप्पने
यामलोचनार्दिभोंके छिपे विमोहनकारा मधुर गीत गाना
प्रारम्भ कर दिया। प्रज्ञकी कामिनियां इस कामवर्द्धक
संगीतको सुन कर अत्यन्त आह्वय हुए। तब वे
कि कतव्यविमुक्ता हो कर, जो जहाँ जिस अवस्थामें यो,
सब उसी हावतमें काम छोड़ छोड़ कर भोठुण्यके निकट
पहुँची। काह दूध दुहते पुहते रुठ जड़ी हुए तो कोह
सन्तानको दूध पिलाने विनात सब हीं, तो कोह पतिको
सेवा छोड़ कर दंडी। उनके पतियोंने अपनी अपनी
भङ्गनामोंकी यहाँ आनेकी प्रताप की, किन्तु वे छोटी नहीं।
वे ऐसी यिमुण्या हो कर जान लगीं कि उनके बसनादि
तक इधर उधर पसिक गये और उन्हें इस बातका ज्ञान
न हुआ।

कोह कोह गोपा पति और पुतों द्वारा रोक ली गईं
जिससे वे छप्पक पास न जा सकीं, इस कारण उन्होंने
निमाळित लोचनस धाठुण्यका-ध्यान करते हुए शरीर
त्याग दिया। परन्तु बाहरस भोठुण्यको न पाया तो
बवा, मनमें उन्होंने मगवान् धाठुण्यको पाया और उन्हें

के चरणोंमें अपनेको समर्पित कर दिया—उनकी मुक्ति हो गई।

दर्शनादि शास्त्रोंमें मीमांसा की गई है, कि पाप पुण्यका ध्वंस विना हुए मुक्ति नहीं हो सकती, फिर इन सब गोपियोंकी मुक्ति किस प्रकार हो सकती है? जिनको ऐसा संशय है, वे जरा ध्यानसे विचार कर देखें, तो उन्हें मालूम हो जायगा कि गोपाङ्गनाओंकी मुक्ति उनके पाप-पुण्य ध्वंस होने पर ही हुई है।

इन गोपियोंका चित्त पहले हीसे एकमात्र श्रीकृष्णके प्रति अनुरक्त था। अब वे वहा न जा सकनेके कारण यहींसे केवल उनका ध्यान करने लगीं। उस समय उन्हें अपने प्रियतमके विरहानलसे जो सन्ताप हुआ, उसीसे उनका अशुभ क्षय हो गया, अतएव पापका भोग हो गया, और बादमें उन्होंने चिन्तायोगसे भगवान् अच्युतको प्राप्त कर आलिङ्गन किया, जिससे उन्हें शुभ सम्भोग हुआ, इस शुभ सम्भोगसे उनके पुण्यका नाश हुआ। यद्यपि श्रीकृष्णको वे उपपत्ति समझती थीं, तथापि उस परमात्माको प्राप्त करनेसे तत्कालीन सुखदुःख द्वारा अशेष कर्मक्षय हो कर देहत्याग करते ही उनकी मुक्ति हो गई।

गोपीगण कृष्णको परमकान्त समझती थीं। उन्हें ब्रह्म समझती हैं, सो बात नहीं। फिर किस प्रकार उनकी संसारविरति हुई इस प्रकारके संशयका भी निराकरण किया गया है। भगवान् कृष्णमें, शत्रु मित्र जो जिस रूपमें तन्मय हो सके, उनकी उसीमें कार्य सिद्धि होती है। जब कि शिशुपाल आदि भगवान्से शत्रुता करके भी मुक्त हुए थे, तो जब उनके प्रिय हैं, उनका क्या कहना?

ब्रजाङ्गनाओंके भुएडके भुएड श्रीकृष्णके पास उपस्थित होने पर भगवान् कृष्णने उन्हें वाक्चातुरीसे विमोहित करके कहा,—‘हे महाभागगण! तुम लोग सुखसे आईं हो तो? मैं तुम्हारा क्या द्रष्ट साधन करूँ? ब्रजमें सब कुशल है न? यह रजनी अत्यन्त घोर है, भयङ्कर हिंस्र पशुगण इतस्ततः विचरण कर रहे हैं, इसलिये तुम लोग शीघ्र ही ब्रजको लौट जाओ, यहा रहना उचित नहीं। तुम्हारी माताएँ, पिता, पुत्र और

पतिगण तुम्हें न पा कर खोजते होंगे, शीघ्र ही तुम लोग घरको लौट जाओ।’ तब गोपिकाएँ कुछ प्रणयकोपमे दूसरी तरफ दृष्टि फेरने लगीं।

भगवान् कृष्ण उनके इस प्रकारके भावको द्रष्ट कर उनसे कहने लगे,—कुसुमित कानन पूर्ण शशधरकी रजत किरणोंसे रञ्जित हो गया है। यमुनानिलकी लीला गति द्वारा कम्पमान तरुपल्लव इसकी शोभा है, तुम लोग यदि इन सबको देखने आईं हो, तो अब सब देख चुकी, अब तुम घरको लौट जाओ, देर मत करो। तुम लोग सती हो, घर जा कर अपने अपने पतियोंकी सेवा करो। बालकगण रो रहे हैं, उन्हें दूध पिलाओ। और यदि लोग मेरे प्रति स्नेहसे चित्त वशीभूत होनेके कारण ही यहा आईं हो, तो उसमें भी कोई दोष नहीं क्योंकि मेरे प्रति समस्त प्राणी प्रीति करते हैं। अब घर जाओ। हे कल्याणीगण! तुम लोगोंको चाहिए, कि अकपट भावसे स्वामी और उनके, वन्धुओंकी सेवा तथा सन्तानोका पोषण करो। यही रमणियोंका परमधर्म है। पति दुःशील हों, दुर्भाग हों, वृद्ध हों, जड़ वा निर्धन हों, सद्गतिकामनाकारिणी नारियोंके लिए उनका त्याग करना विधेय नहीं है। कुलकामिनियोंके लिए जारका सेवन उनकी स्वर्गच्युतिका प्रधान कारण है। यह कार्य तिनन्दनीय, भयावह और सर्वत्र यशका नाशक है।

मेरा नाम सुननेसे, मेरा ध्यान करनेसे और गुण गानेसे जैसी प्रीति होती है, मेरे पास आनेसे वैसी प्रीति नहीं होती। इसलिए तुम सब घरको लौट जाओ।

गोपाङ्गनाएँ श्रीकृष्णकी इस अप्रिय बातको सुन कर भग्नमनोरथ और विषण्ण मनसे दुर्वार चिन्तामें मग्न हो गईं। शोकके कारण उनकी घनी घनी साँसें चलने लगीं, तो किसीके विस्वाधर सुख गये। जो रमणिया स्वामी पुत्रादि सर्वांख परित्याग कर श्रीकृष्णके सङ्ग लाभके लिए यहा आईं थीं, उन्होंने जब दृष्टान्तके ऐसे-निष्ठुर वाक्य सुने, तो वे कुछ कुपित हो उठीं,—कोपके कारण उनका कण्ठरोध हो गया। तब वे अश्रुसिक्त-लोचनोंको पोंछती गद्गदवाक्यसे कहने लगीं—विभो! ऐसे निष्ठुर वाक्य कहना तुम्हें उचित नहीं। हम सब अपना समस्त विषय विभव छोड कर तुम्हारे चरणोंमें

भाह हैं। जैस आदिपुरुष मुमुक्षुओंको प्रहय करते हैं, वैसे ही तुम भी हम लोगोंके प्रहय करे।

पति, पुत्र और बन्धुओंकी सेवा करना ही स्त्रियोंका स्वपम है, तुमने जो यह उपदेश दिया है, हम उसीका पालन करेंगी; कारण हम यदि तुम्हारा सेवा करे, तो वह हमारे पतिपुत्रादिका ही सेवा होगी। कारण तुम्हीं शरीरियोंके त्रिपत्य बन्धु, भासना और निस्वमिप है। शास्त्रकृत्य व्यक्तियत् तुम्होमें प्रेम किया करते हैं।

पतिपुत्रादि दुःखदायक हैं। हम लोग उन्हें छे कर बचा करेंगी ? इ परमेश्वर ! हम पर प्रसन्न होओ। बहुत दिनों से भाशा लगते हैं, इस तप न करो। हम लोगोंके जो चिन्त, क्षा हाथ अब तक लब्धन्व ही कर पद-पर्यमें रह थे, अब तुमने उन्हें हरण कर लिया है। तुम्हारे पादमूकसे हमारे चरणयुगल एक डेग भी नहीं हटते। अत्यय मन्त्रको छोट कर क्या करेगी ? यदि तुम हमारे प्रति प्रसन्न न हुए, तो ध्यानयोगस हम तुम्हारे पादमूक प्राप्त करेंगी। इ भन्मुत्राह ! तुम्हारा पत्रतक कमजा को भानम् अत्यन्त करता है, तुम्हारे उस पदतकको अब तक हम स्वयं क्रिप हुए हैं, और अत्ययमें तुम अब तक हम लोगोंको मानवित करते रहोगे, तप तक हम वृत्तरेक पास नहीं रह सकतो। हम लोग तुम्हारी उपवासानाके जिय भाह हैं। तुम्हारे सुन्दर रहस्यका निरोक्षण करके हमारा कामान्ति बढ़ोपित हो गई है, हम लोग उससे सताह हुए हैं। हे पुरुषभेष्ट ! हम लोगोंको दासा होन हो। त्रिकोटमें ऐसी कामिनी ही जो तुम्हारे मयुर पदरूप भन्तुतमय ऐजुजोफ मोहित हो कर विचलित न हो जाय ? तुम्हारे इस त्रिकोण्य मोहनरूपको देख कर गी, पद्मे, एसे और सुगम्य भी रोमाञ्चित हो जाया करते हैं। तिस प्रकार आदिपुरुषदेवदेवको रक्षक ही कर भवतीर्थ हुए थे, उसा प्रकार तुमन मन्त्रको पीड़ा हरनेके त्रिप जन्म लिया है हम तुम्हारे चिरहमें क्षय भर या नहीं जो सकती।

मगवान् ह्यन्त मन्त्रकी कामिविधियोंके मुह यह बात सुन कर उन्हें छे कर लोड़ा करने लगे। उस समय मगवान् ह्यन्त इन मन्त्रानुनाओंके बीच तारकामण्डलोसे घिरे हुए उग्रपराक समान शोभा पावे लगे। भीष्म

शत बनिनोंमें यूयपति हो कर कभी स्वप गाने लगे, कभी गान सुनते लगे और कभी वैश्रवणोमान्ना धारण करके पनको जोनित करते हुए पिबधरण करने लगे। काञ्चिन्तो का वह उपोस्त्रान्गित पुञ्जिन, शीतल बालुका स परिपूर्ण था, कुमुदकी सुगन्ध सुशीतल पवनके साथ बह रही थी। भीष्मह्य उस मनोहर पुञ्जिनमें प्रवेश कर गोपाङ्गनाओंके साथ बाहुप्रसारण पृथैक भाञ्जित्कन करने लगे। उनक कर, मसक, ऊह, नीचि और स्तन स्पष्ट करने लगे। उनके साथ पवित्रास, य गीं पर लक्ष्मप्रपात, कोड़ा, कटासगत और हास्य करके मन्त्रको बढ़ोपित कर उन्हें बिहार कराने लगे।

उस समय मनासकचित्त मगवान्के द्राप पेसा मान प्राप्त करके गोपिकाय अत्यन्त मानिनी हो उठी और अपनेको संसारकी समस्त क्षिपोंस श्रेष्ठ समझने लगी। स्वहारी मगवान् उनक सौभाग्यपव और भनिमानको देख कर उसको स्वप और शास्त्र करनेक जिये उस स्थान से तिरोहित हो गये।

गोपिकायोंने सहस्रा भीष्मह्यको मन्त्रिर्दित होसे देख कर, यूयपतिके अश्रीबस चरिणीग्य जैसे प्याकुल हो जातो हैं, वे भी वैसी हो प्याकुल हो कर उन्हें दू कुने लगी। गति, भनुराग, हास्य, विन्नमदुष्टि, मनोरम भाकाय, विव्हास और विन्नमद्वारा प्रमदाभीक चित्त भाङ्ग हो गये थे इनछिपे थे तारात्म्य प्राप्त हो गई थी। अब वे भीष्मह्यको न पा कर मगवान् ह्यको विविध वैशाओंका अनुकरण करने लगी।

मियकी गति, हास्य, विव्हाकन और भाकायादि स प्रियोंकी मूर्ति भाविष्ट हो गई थी, अत्यय उनका बिहार और विन्नम धारणको मर्ति हो हुआ। इसजिय सभी कोइ ह्यकारिमका हो कर गरस्वरमें ही हो 'ह्यन्त' हूँ, पेसा कहन लगे। इसके बाद् वे मिळ कर ऊह करके गान पातो हुए। अन्धेपजमें उन्मत्तकी मर्ति बननिं ज्ञयन करने लगी। और जो भाकाशक समान प्रावियोंक पाञ्च और अन्धेपजमें अवस्थित हैं, उन परम पदुयको बात बनस्पतियोंसे वृणने लगे—'हे अन्धेप ! हे ज्ञान ! हे ग्योप ! भीष्मके कन्तन, येम और हास्य विव्हासित कटास द्राप हम लोगोंक चित्तको हरण करके

भाग गये हैं, तुमने उन्हें देखा है? हे कुहवक ! हे नाग ! जिनका हास्य मानिनियोंके मनको हरण करता है, वे रामा नुज क्या धरसे गये ?" इत्यादि प्रकारसे वे प्रत्येक वृक्ष और लतासे अति करुणभावसे कृष्णकी टोह लगाने लगीं । परन्तु कहीं भी श्रीकृष्णका सन्धान न मिला ।

तब वे श्रीकृष्णकी खोजमें अत्यन्त विह्वल हो कर उनकी विविधक्रीड़ाओंका अनुकरण करने लगीं । एक गोपी कृष्ण वनी और दूसरी गोपी पूतना बन कर उसे स्तन्य पान कराने लगी । एक शकट वनी, दूसरी कृष्ण बन कर उसे पदप्रहार करने लगी । इस प्रकार गोपिकागण वृन्दावनमें भगवान्की समस्त प्रकारकी लीलाओंका अनुकरण करने लगीं ।

गोपिकाएं कृष्णके विरहसे उन्मत्तप्राय हो कर कभी हंसने, कभी रोने और कभी स्तव करने लगीं । इसी समय हास्यमुख पीताम्बर वनमाली कृष्ण उनके सामने आविर्भूत हुए ।

गोपिकाएं प्रियतमको सामने देख कर आनन्दित हुईं । उनके नयनकमल प्रफुल्ल हो उठे । तब उन्हें मानो पुनर्जीवन मिल गया । वे सब श्रीकृष्णसे नाना प्रकारकी मनोव्यथाएं प्रकट करने लगीं । जैसे मुमुक्षुओंको ईश्वरकी प्राप्ति होनेसे उनके संसारका ताप दूर हो जाता है, उसी प्रकार केशवके दर्शनसे गोपियोंका विरह-सन्ताप दूर हो गया ।

भगवान् कृष्ण विधूतपापा उन गोपियोंसे परिवृत्त हो कर सत्वादि गुणोत्सेवेष्टित परमात्माकी भाँति अत्यन्त शोभाको प्राप्त हुए । तब मदनमोहन उन गोपिकाओंके साथ कालिन्दीके सुखकर पुलिनमें जा कर क्रीड़ा करने लगे । श्रीकृष्णके दर्शन पा कर गोपियोंकी मनोव्यथा दूर हो गई । श्रुति-समूह जैसे क्रमकाण्डमें परमेश्वरको न देख सकने पर क्रमके अनुगमनपूर्वक मानो अपूर्णकामकी भाँति हो जाता है, पीछे ध्यानकाण्डमें परमेश्वरको देख कर आह्लादसे पूर्णकाम हो कर कामानुबन्ध त्याग देता है, उसी प्रकार श्रीकृष्णके दर्शनसे गोपियोंका काम पूर्ण हो गया । उन लोगोंने कुछ-कुछ मरञ्जित अपने अपने उत्तरीय वसन द्वारा अन्तर्यामी भगवान्के आसनकी रचना कर दी ।

योगेश्वरके हृदयमें जिसका आसन विछा हुआ है, आज वे ही भगवान् श्रीकृष्ण गोपियोंकी सभामें आ कर उनके साथ उस आसन पर बैठ गये । त्रैलोक्यमें जितनी शोभा है, वे उतनी शोभाके एकमात्र आधार बन कर गोपिकाओंमें सम्मानित हो कर शोभा पाने लगा । तब गोपिकाओंने कृष्णको वेष्टन करके कहा—सखे कृष्ण ! कौन व्यक्ति दोनोंमेंसे किसीकी भी भजना नहीं करते ? कृपा कर एकके भजना करने पर उसकी भजना करते हैं ? कौन व्यक्ति इसके विपरीत करते हैं और कौन व्यक्ति इस विषयको समझाये ।

गोपियों द्वारा ऐसा प्रश्न किये जाने पर श्रीकृष्णने कहा, सखीगण ! जो स्वार्थसाधन करनेमें लगे हुए हैं, वे ही परस्पर एक दूसरेकी भजना किया करते हैं । उसमें धम वा सौहाद नहीं है । स्वार्थ उसका उद्देश्य है, इसके सिवा और कुछ नहीं । परन्तु जो भजना नहीं करते, उनकी जो भजना करते हैं, माता-पिताके समान वे दो प्रकारके हैं,—एक दयालु और दूसरे स्नेहमय । उक्त भजना द्वारा दयालु व्यक्तियोंको निष्कृतिधर्म और स्नेहमय व्यक्तियोंको सौहार्द प्राप्त होता है । यहाँ अनिन्दित धर्म और सौहाद, ये दो ही हैं । सखीगण ! जो मेरी भजना करते हैं, मैं उनको भजना नहीं करता, क्योंकि, ऐसा होनेसे वे निरन्तर मेरी ही चिन्ता करते रहेंगे । जैसे निधन व्यक्ति धन प्राप्त करके फिर यदि धन खो दे, तो वह उसी धनकी चिन्तामें लगा रहेगा—दूसरी चिन्ता भूल जायगा, उसी प्रकार तुम लोग भी मेरे निमित्त धर्माधमका विचार न करके लोक और ज्ञातिकुटुम्बकी परित्याग कर निरन्तर मेरी ही चिन्ता कर रही थीं, इसी-लिए मैं अन्तर्हित हुआ था । और तुम लोग देख न सके, इस तरहसे तुमलोगोंकी भजना की थी । अतएव हे प्रियागण ! प्रियके प्रति दोषारोप करना तुम्हें उचित नहीं । तुम दृढ़तर गृहशृङ्खलको तोड़ कर हमसे आ मिलो हो, मैं तुम्हारे इस ऋणको नहीं चुका सकता ।

गोपियोंने भगवान् श्रीकृष्णके इस प्रकार सान्त्वनावाक्य सुन कर पूर्णकामा हो कर विरहके सन्तापको दूर किया । परमानन्दसे परस्परको परस्परने बाहु द्वारा वाहवन्धन किया । श्रीगोविन्दने इन सब स्त्रियोंसे वेष्टित हो कर रासलीला प्रारम्भ की ।

मगवान्का इस प्रकार रासोत्सव प्रारम्भ होने पर गोपीमण्डलसे मण्डित हो कर योगेश्वर श्रीकृष्ण की ओर गोपिकाओंमें प्रवेश कर उनका रुठ धारण किया। इससे प्रत्येक गोपिकाको मान्द होने लगा, कि श्रीकृष्ण मेरे ही पाम हैं। रास प्रारम्भ होते ही मनोमण्डल रेखाओंके बिनामेंसे स्वास हो गया। भाकांमें दुग्धमि बजने और पुण्यदृष्टि होने लगे। तब सखीक गन्धधगण श्रीकृष्णके निमल पशोयाममें प्ररुठ हुए। रासमण्डलमें प्रियसङ्गता कामिनियोंके बज्य, नूपुर और किङ्किणीकी धनकारसे ग गोर शब्द होने लगे।

मगवान् श्रीकृष्ण इन गोपिकाओंके बाब लयबण मणियोंसे मण्डित मरकटमणिके समान भयस्थ शोभा को प्राप्त हुए। पद्म्यास, भुजकम्पन, सहास्य झूबिहास, धूमि कठिन, कम्पित कुचमण्डल, विरलस्त वसन और गण्डस्थलोंमें हेतुन्यमान कुण्डलो द्वारा कृष्णकामि निभोके बदनकमल पसीनेसे छद्बद् हो गये। उनकी कवरी और कञ्ची विधिय हा गई। वे कृष्णका गुणमान करते करते मेघचक्रमें तड़ित् माझा की भांति शोभित मान्दने लगे। नाता रागोस रजितकण्ठ गोपिकाय नृत्य करते करते श्रीकृष्णके मङ्गलशश आनन्दित हो कर उच्छ्वाससे गान गान लगी, और उस गानने प्रह्लादपरिपूर्य हो गया। कृष्णने किस प्रकार राम और सरसे गान गाया था, गोपिकाय भी वेसा ही गाने लगे। श्रीकृष्ण इनका इन प्रकार गान सुन कर लय विमोहित हो गये।

इस प्रकार गोपिकाय रासश्रीका करते करते अब परिभाल हो गईं, तब उनको मण्डिकाय शिष्य हो गई। किसीने बाहु द्वारा माधयका रुद्ध धारण किया किसील गलेसे जियट कर उच्छ्वास भांति सुगन्धिबन्धन खचित श्रीकृष्णका करकमल सु घ कर रोमाञ्चित हो कर सुभन किया। नृत्य करते करते कामिनियोंके कुण्डल झुञ्जने लगे। इन कुण्डलोंकी आमस मगवान्का मण्ड स्थल शोभित हान लगे। इस प्रकार मनक भायसे विशुद्ध तान-सय युक्त स्वर-सहस्रीस देव, गन्धक और मानधोका विस्मयास्वाद्क नृत्य और गान हाने लगे।

बाबक जिन प्रकार अपने प्रतिबिम्बसे भाय श्रीका करने लगता हैं, उसी प्रकार मगवान् व्यापति नाता प्रकारसे भाङ्गिजन, करमदन, स्निग्धकञ्जहापाठ तथा उद्दामयिहास और हास्य द्वारा मङ्गलसुन्दरियोंके साथ श्रीका करने लगे। उनके मङ्गलसङ्गसे जो भयस्थ आनन्द प्राप्त हुआ, उससे मङ्गलसुन्दरियोंकी रमित्र्यां भाङ्गुञ्जित हो उठी।

मङ्गलनायण आनन्दमें उमल हो गईं, उनके गलेसे मान्द बिसरक गई। आनन्द उतर पड़ने लगे, केट बिलर मये दुग्ध और कुचपट्टिकाकी पूर्ववत् धारण न कर सकी। श्रीकृष्णके विहारकी देव कर लेबर कामिनियां कामवापसे पीडित हो उठी। चन्द्रमा भी तारकाओंके साथ विस्मित हो कर भगनी भयगो गति भूत गये। इनसिप रजनी भयस्थ शीर्ष हो उठी और विहार भी बहुत देर तक चला।

मगवान् भास्माराम हो कर भी जितनी गोपियां थी, खोलाकमसे उनने ही लय बण कर उनके साथ श्रीका करने लगे। बहुत देर तक श्रीका करल करते अब वे भास्य हो गईं तब मगवान्ने इनके मुककमल पीछ दिये। उसक बाद वे इन कामिनियोंके साथ यमुनाके जलमें नाता प्रकार जलफेकि करने लगे। इस प्रकार मगवान् कृष्णने सुरतकीड़ाको टोक कर रासलीला की थी।

शुक्रद्वने पराङ्गितको रासलीलाकी वात सुनाह, तो उम्ह महान् संशय उपस्थित हुआ, इससिप उम्होंने शुक्रदेवसे इस प्रकार प्रश्न किया—मङ्गल। धर्मकी संस्था पन और धर्मका ह्दयविधान करनेके सिप जगदीश्वर मगवान् पृथ्वीमें प्रवर्तनीय हुए हैं। उम्होंने धमसेतुक पञ्चा, कर्त्ता और रक्षक हो कर किस प्रकार परत्रीक साथ सम्भागरूप धर्मका अनुष्ठान किया था ? मगवान् कृष्ण भास्मात्पम हैं, उनका इस प्रकार करनेका धमिप्राय क्या है ? मेरे इन संशयको दूर काजिये।

तब शुक्रदेवन कर्त्ता—इभरोंमें धर्मतिक्रम और साठस नहीं होया जाता तज्जिवियोंको इनने वीर नहीं होता। मनि जिस प्रकार सब कुछ मोडल करती हैं उसी प्रकार इभरको किमी पिययमें वीर नहीं लगता।

जो ईश्वर नहीं है, वे कभी भी ऐसा आचरण नहीं करते। रुद्रके सिवा अन्य कोई व्यक्ति यदि मूढन वश विष पान करे, तो मृत्युका प्राण वन जायगा। ईश्वरका वाक्य सत्य है और उनका आचरण भी कभी कभी सत्य होता है। अतएव वे जो कहते हैं 'जिनके बुद्धि है, वे वही करेंगे। वे जो करते हैं, उसका अनुकरण करना विधेय नहीं'।

जो गोपियोंके, उनके स्वामियोंके तथा समस्त शरीरधारियोंके अंतरमें विराजमान रहते हैं और जो विद्यादिकी साक्षी हैं, वे क्रीडाके छलसे इस प्रकार देह धारण करके विविध क्रीडाएं करते हैं। जो व इन सब बातोंको सुन कर उनके प्रति भक्तिमान् हो सकते हैं।

भगवान्की यह रासलीला परम गद्गभुत और सकल पापोंकी नाशक है। जो भक्तिपूर्वक इस रासलोलाके विषयको सुनते हैं, वे इहलोकमें सुख सम्पत् प्राप्त करके अन्तमें विष्णुलोकमें जा कर भगवान्में परमाभक्ति प्राप्त कर शीघ्र ही कामरूप मानसिक पीडासे मुक्त होते हैं।

(भागवत १०म स्कन्ध, गणपञ्चाध्याय)

ब्रह्मवैवर्तपुराणमें भगवान् रूपने श्रीमती राधिकासे जिस प्रकार रासलीला की थी, उसका वर्णन लिखा है, जो संक्षेपमें यहां दिया जाता है:—

ब्रह्मकल्पमें भगवान्ने समस्त सृष्टिकार्यको समाप्त करके गोलोकमें रासमण्डप निर्माण किया। यह रासमण्डप अति कमनीय कल्पवृक्षोंके बीच मण्डलाकृति, सुस्निग्ध, समतल और सुविस्तीर्ण तथा चन्दन, अशुक्र, कस्तूरी, कुंकुम आदि नाना सुगन्धित द्रव्योंसे सुसंस्कृत है। इसके किसी स्थानमें दधि, किसी स्थानमें लाज, शुक्लधान्य आदि माङ्गलिक द्रव्य धिन्यस्त है। वह पट्टसूत्र की प्रथि-विशिष्ट तथा उपरिभागमें दौदुल्यमान नूतन नूतन चन्दन पल्लवोंसे परिशोभित, चारों तरफ रम्भा तट्टोंसे परिवेष्टित है।

रासमण्डप उत्कृष्ट रत्नोंसे निर्मित तीन कोटि मण्डप द्वारा अत्यन्त शोभित था, इसमें सर्वत्र रत्नदीप प्रज्वलित रहते थे। उन रत्नदीपोंकी स्निग्धोज्वल किरणोंसे अंधकार नष्ट हो गया था। पुष्प और धूपदिकी सुगंध इतस्ततः विकीर्ण होनेसे सबकी घ्राणेन्द्रिय अत्यन्त परि-

तृप्त हो गई थी। इस स्थानमें नाना प्रकारकी मोगसामग्रियां और मनोहर जय्याएं निरन्तर प्रस्तुत रहनेसे अलौकिक शोभा हुई थी। भगवान् इस प्रकार रासमण्डपका निर्माण कर देवोंके साथ वहा गये। तब भगवान्के पार्श्वदेशमें एक कन्या आविर्भूता हुई, जिनका नाम राधिका था। राधिका वेनी।

राधिकाके आविर्भूत होने पर भगवान् विष्णुने उनके साथ रासक्रीडा की। पीछे भगवान्के विरजाके साथ क्रीडामें रत होने पर राधिकाका यह वात मालूम पडी और वे वहा उपस्थित हुईं, भगवान्ने पहलेसे ही जान कर विरजाको वहासे स्थानान्तरित कर दिया। राधिकाने इम पर ऋद्ध हो कर विरजाको शाप दिया, विरजाने भी उन्हें मानवी हो कर जन्मग्रहण करनेका अभिशाप दिया। राधिकाने उनके शापसे वृन्दावनमें जन्मग्रहण किया। पीछे श्रीकृष्णने अवतीर्ण हो कर राधिकाके साथ रासक्रीडा की थी। (ब्रह्मवै० ब्रह्मस० ७।१०)

वृन्दावनमें भगवान्ने जो रासलीला की, उसका वर्णन उक्त पुराणमें इस प्रकार किया गया है। एक दिन मधुमासमें शुक्ला त्रयोदशीकी रात्रिकी पूर्ण जगधरका उदय होने पर श्रीकृष्णने वृन्दावनमें जा कर देखा, कि वृन्दावन यूथिका, माधवी, मालती और कुन्दादि पुष्पोंकी परिमलवाही सुगन्धितवायु द्वारा सुवासित और भ्रमरोके मधुर गुन गुन शब्दसे अति मनोहर शोभा-सम्पन्न हो रहा है। वनप्रदेशमें नवपल्लवयुक्त पुंसकोकिलगण मनोहर कूहध्वनि कर रहे हैं। यह स्थान रासक्रीडाके लिए उपयागी नूतन क्षीम वसनसे परिध्यात हो कर मनोहर शोभा सम्पादन कर रहा है, और नाना प्रकार भोज्य सामग्री, मनोरम शय्या, नाना प्रकार सुगन्धि द्रव्यादिके परिशोभित हो रहा है।

भगवान् रूपने इस रासमण्डपको देख कर कीर्तु-वश गोपियोंके कामवर्द्धनके कारण भूतविनोद मुरलीध्वनि की। राधिका उस मोहन मुरली ध्वनि सुन कर कामाचीन-चित्त हो कर उसी क्षण मोहित हो गईं। उनका मन उस तानलयमें लीन हो गया। वे तब निश्चलभावसे वृक्षके समान खड़े रहों, क्षण भर वाद

वैतन्य होने पर पुनः मुखीकी ध्वनि उनके कामों में पहुँची । तब वे लोकायता और मयकी त्याग कर वंजी ध्वनिक अनुसार गमन करने लगी । परंतु उस समय उनके मनमें भीहृत्पदात्पद्य ही सर्वथा जागरित थे, तथा उनके शरीरकी भासा और समुद्रके सात्वत मूलको की हीतिसे घाटों मोट भासोकित हो गया ।

इसके बाद रात्रिकाकी ३३ सखियाँ भी वाँसुरीकी ध्वनिसे आकृष्ट हो कर कामधन मोहित हो कर निर्मल चित्तसे कुञ्जधर्म त्याग कर शीघ्र ही धरम निकल कर धन ही । रात्रिकाका सभी सखियाँ रूप बेश, उमर और गुणमें रात्रिकाके समान थी ।

एक सखियों में सुतोकाके साथ १६ हजार, रुशिककाके साथ १४ हजार, चंद्रमुक्तके साथ १३ हजार, माषपोके साथ ११ हजार, कदम्बमाळके साथ १३ हजार, कुन्ताके साथ १० हजार, जमनाके साथ १४ हजार, आडबाके साथ १४ हजार, गुमाके साथ १४ हजार, पद्माके साथ १३ हजार, दुर्गाके साथ १४ हजार, मङ्गलाके साथ १३ हजार और सरलतोके साथ १३ हजार गोपियाँ भी सब ही ।

एक गोपियोंमें एकल हो कर भोमती रात्रिकाका मनो हर बेश बना दिया । भोमती रात्रिकाने समस्त सखियाँ के साथ गुणधनमें भीहृत्पदके पादपयो का ध्यान करते करते इस रासमण्डलमें प्रवेश किया । तब भीहृत्पदने देखा, कि सखियों से परिचयित हो कर रात्रिका उनके पास आ रही है । देखा रखाऊँतुरसे विभूषित और मनोहर पल्ल पहले हुए हैं, नयनयुगल इतने बलिष्ठ हैं, गजेश्वरगामिनी हैं तथा मुनियों के भी मन हरण करनेमें समर्थ हैं । भोमती नवीन मयस्था और नवीन रूपस अत्यन्त मनोहारिणी हैं, उनके नितम्ब और भोषियुगल अत्यन्त स्पृश होनेसे दुर्बल हो उठे हैं, वे चाकरधर्मक वर्ण हैं, उनका महन्मण्डल शारदीय पूर्णकद्रुक समान है । उन्होंने मासतोमालायुक्त कश्चीमार धारण किया है ।

तब भोमती रात्रिकान को देखा कि रत्नामरनसे विभूषित, कोटि कर्णको सावण्यलोलाके आचारस्वरूप नभवीबल सम्पन्न, किठोर श्यामसु हर उन्हे प्रायापिका समन्व कर उनके प्रति कटाक्ष दुष्टिसे देख रहे हैं । भोमती

ने उन परमाव्युत्त अनुपम रूपवान् विचित्र वेशधारी धो हृत्पदके बहिष्कृत नयनीसे पुनः पुनः देख कर लज्जासे भ्रमन द्वारा मुक्त भाव्यादन किया और उठी क्षण काम पापसे पीड़ित हो कर पुच्छित अटोरेसे मुच्छितकी भाँति वैतन्यगुण्य हो गई । इस प्रकार श्रीवा-स्तोममुख हरि को कटाक्षरूप कामवापसे पीड़ित हो कर मुच्छितमाय से स्थाणुके समान निश्चलमायमन जड़े रहे । उनके हाथ से सुरली घोंट उज्ज्वल श्रीवाकमल स्वञ्जित हो गया, शरीरसे पीतपद्मा और शिखिपुच्छ विच्छिन्न हो कर जमीन पर गिर पड़ा । क्षण भर बाद वैतन्य प्राप्त होने पर भीहृत्पद रात्रिकाके पास पहुँचे और उन्हे छातीसे छगा कर उनका मुख सुमन तथा भाञ्जित किया । भीमती भी भीहृत्पदके संस्पर्शसे वैतन्य प्राप्त हो उन्हे गाढ़रूप से भाञ्जित और पुनः पुनः सुमन करने लगी ।

भगवान् भीहृत्पदने इस प्रकार उपाक साथ नाना प्रकार श्रीवादि करने बाद शयन किया । इस सुरतके समय कामातुर हृणने अपने धनु-प्रस्पङ्गों द्वारा कामु कियोंक भङ्ग प्रस्पङ्गोंसे चुकावह भाञ्जित किया । दोनों ही कामशास्त्रमें पारदर्शी थे, सुरतकीर्णमें वृष्ट थे ।

इस प्रकार रात्रिका-रमण नाना मूर्ति धारण कर प्रत्येक पक्षमें गीवाङ्गनामोंके साथ सुरम्य रात्रमण्डलमें रमण करने लगे । हृत्पद गृहके मोतर सुरत-श्रीवा करके बाहर गीपिकाओंके साथ बन्ध्याय श्रीवा करने लगे । रात्रिकाकी नौ ज्ञाक गोपिका सखियों थीं, तब हृत्पद ने नौ छात्र रूप धारण किये । सब मित्र कर अठारह साज गीप और गीपिकाओं का समावेश हुआ । ये सभी मुक्तकथ, विच्छिन्नमूल्य, छिन्न मित्र घंश और कामधन मय और मुच्छित थे । इस स्थानमें केवल कङ्कण, किम्पिणी, वक्षय और विद्युत् रत्नपुर भाद्रिकी मनोहर श्रव्य होने लगे । भगवान् हृणने उनके साथ इस प्रकार पियेष श्रीवाप करके यमुनामें जा कर बहों असकीड़ा का ।

रासमण्डलमें इस प्रकार पूर्ण रासकीड़ा भाकर होने पर सुरागण अपने कञ्ज और अनुकरणोंके साथ सुषर्ण रथमें आरोहण कर गगनमार्गमें समागत हुए । इस कीड़ाका देख कर उनके सर्वाङ्ग पुच्छित हो गये ।

वे भी कामवाणसे पोडित हुए। इस प्रकार वहा ऋषि, मुनि, सिद्ध और पितृगण तथा विद्याधर, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस और किन्नरगण सभी कोई आनन्दमें आ कर अपनी अपनी पत्नियोंके साथ उपस्थित हुए और उस क्रीडाके देखने लगे। ब्रह्मा, महादेव और इन्द्रादि देवता भी आ पहुँचे और वे रासलीलाके देप्र कर विमोहित हो चन्दन और पुष्पोंकी वर्षा करने लगे।

पूर्णब्रह्म सनातन कृष्ण इस प्रकार गोपिनियोंके साथ जल और स्थलमें नाना रूप रासक्रीडा करने लगे। गोपिकाएँ लीलामें हरिके साथ रासमण्डलमें क्रीडा कर समस्त मनोहर निजन प्रदेशोंमें तथा किसी समय पुष्पोद्यानोंमें, कभी रमणीय नदीतट पर, कन्दरोंमें, नदीके पास, कुञ्जवनमें तथा चम्पकादि तैत्तीस काननोंमें नाना प्रकारसे उनके साथ क्रीडा करने लगीं।

इस प्रकार तीस दिन तक दिन-रात रास होता रहा, फिर भी कामिनियोंकी तृप्ति न हुई। देवगण तब इस आश्चर्यजनक क्रीडाको देख कर अपने अपने स्थानको चले गये। भगवान्की इस लीलाको जो श्रवण करते हैं, वे इहलोकमें सुखसम्पद और अन्तकालमें श्रीकृष्णके पादपद्मोंमें शरण पाते हैं। (ब्रह्मवै० श्रीकृष्णज० १८ अ०)

हरिवंशमें विस्तृतभावसे कृष्णचरित्र विर्णित हुआ है, किन्तु उसमें रासक्रीडाका कोई उल्लेख नहीं है। भागवतके मतसे कार्तिककी पूर्णिमाके दिन रास होती है और ब्रह्मवैवर्त्तपुराणके मतसे मधुमासकी शुक्ल त्रयोदशोके।

पूर्ववर्णित रासलीलाके रहस्यके सम्बन्धमें—गौड़ीय वैष्णव पण्डितगण जो अभिमत प्रकट किया करते हैं, वह नीचे लिखा जाता है:—

लीलारसभय श्रीकृष्ण भक्तोंके प्रति अनुग्रह दिखलानेके लिए-भक्तोंके चित्त-विनोदके लिए आत्माराम और आत्मकाम हो कर भी विविध लीला करते हैं। उनके सुखकी उक्ति यह है।

“यद्रक्तानां विनादार्थं करोमि विविधाः क्रियाः।”

(१३पुराण)

श्रीरूप गोखामीने श्रीकृष्णामृतमें लिखा है—

“प्रकृत्यप्रकटी चैति लीला संय द्विधोच्यते ॥”

अर्थात् प्रकृत और अप्रकृत, इस प्रकार लीलाके दो भेद हैं। श्रीकृष्ण लीलामय रूपसे सर्वत्र क्रीडा कर रहे हैं। वे भक्तोंके प्रति अनुग्रहपूर्वक प्रपञ्चों द्वारा प्रकटित हो कर जो लीला विस्तार करते हैं, उसका नाम प्रकृतलीला है। अप्रकृत लीला प्रपञ्च के प्रत्यक्ष-बहिर्भूत है। श्रीकृष्णकी लीला नित्य और अनन्त है। इन अनन्त लीलाओंमें ऋषिगण और प्रेमिक भक्तगण सर्वैरसमाधुर्यमयी रासलीलाके ही सार समझते हैं। यदा तक, कि रसिकेन्द्र मालि स्वयं श्रीकृष्णने भी रासका माहात्म्य कौत्स न किया है—

“वन्ति यद्यपि मे वाज्या लीला स्मास्ता मनोहरा।

नहि जाने स्मृते रासे मनो मे कीदृश भवेत् ॥”

यद्यपि मेरी लैकडों मनोहर लीलाएँ हैं, किन्तु रासकी बात याद आते ही मुझे भाव आ चेरता है, कि मैं उसे स्वयं नहीं समझ सकता। तोपिणियोंके दोकाकार श्रीपाद सनातन गोखामीने भी श्रीमद्भागवतकाल रासपञ्चाध्यायके एक श्लोककी व्याख्यामें इस उक्तिका अनुसरण किया है। वह श्लोक यह है:—

“अनुग्रहाय भक्ताना मानुष देहमाधित।

भजते तादृशी क्रीडा याः श्रुत्वा तत्परा भवेत् ॥”

इस श्लोकके “तत्परो भवेत्” वाक्यको टीका इस प्रकार की गई है:—

“तस्मात्तादृशीः क्रीडा भवो भजते या श्रुत्वापि स्वयमपि तत्परा भवेत् यदा यदा शृणोति तदा तदासक्तो भवति ॥”

अर्थात् वे ऐसी लीलाएँ प्रकट करते हैं, कि जिनकी बात सुनते ही और की तो बात ही क्या, वे स्वयं भी तत्पर हो जाते हैं। इसलिये रासलीला सर्वलीलाओंकी चूडामणि है, यह बात इन वाक्योंसे स्पष्ट हो जाती है।

विष्णुपुराण, ब्रह्मवैवर्त्तपुराण और श्रीमद्भागवत आदि पुराणोंमें रासलीलाका वर्णन है। श्रीमद्भागवतकी रासलीला ही सर्वत्र सुप्रसिद्ध है। इस महापुराणमें रासलीलाका वर्णन पाच अध्यायोंमें किया गया है। समग्र भारतमें इस रासपञ्चाध्यायका समादर देखनेमें आता है। महाभारतसे जैसे उसका सार श्रीमद्भागवत-गीतामें विभिन्न ग्रन्थकारों द्वारा खींचा गया है और बर्ही

अन-समाहर्षे प्रबलित भीर पठित हो रहा है, उसी प्रकार रासपञ्चाध्याय भी प्रबलित है। भीपाइ समा-
नन गोस्वामीका कहना है कि मनुष्यके शरीरमें जैसे इन्द्रियां अधिकतर आवरकी वस्तु हैं, उसी प्रकार भीमज्ञा-
गयत प्रत्यक्षमें यह रास-पञ्चाध्याय हो पांच इन्द्रियोंके
समान है। हम पञ्चेन्द्रियों द्वारा जैसे ज्ञागतिक पदार्थों
का प्रत्यक्ष अनुभव करते हैं, उसी प्रकार रास-पञ्चाध्याय
रूप अद्भुत पञ्चेन्द्रियों द्वारा भीमगणनाकी परम प्राप्ति
मयो सर्भ भवतकारिणी रासजीवाका प्रत्यक्ष होता है।
भीमज्ञागयतोक रासजीवामें क्या क्या वर्णित हुआ है,
इस विषयकी भीपाइ समाहर्षेमें एक स्त्रीक द्वारा कहा
है—

“व शीर्षमभ्यन्तमुत्तं रासपञ्चमिन्द्रियैः ।
प्रादुर्भूयात्तन्मिन्द्रियं प्रत्यक्षोपरम्भ ।
नृशोच्यतेः पुनरपि रहाकीर्णं शारिलेखा
कृष्णारपणे निरुपमिति भीमो रज्ज्वला ॥”

(तोषिणी)

अर्थात्—पंशीष्यनि, भीरुष्ण और गोपाङ्गुमाओंका
कथोपकथन, रमण, भीरापाक साध अन्तर्प्राणकेसि,
भीरुष्णका प्रादुर्भाव, गोपिओं द्वारा विप हृप पसन पर
उपदेशन, गोपिओंके पूर कृत प्रश्नका उत्तर ज्ञान, नृत्यो
ज्ञास, रज्ज्वलीका, अक्षकेसि, यमुनाक लपोवनमें वनविहार
इन सब विषयोंका वर्णन रासजीवामें किया गया है।

रास किस कहते हैं। साधारणतः बहु नर्तकियोंका
नृत्य बिद्येय ही रास कहा जाता है। भीमगणनामें भी
मज्ञागयतका दोकामें यही बात कही है—“रासो नाम
बहुनर्तकोमुपते नृत्यबिद्येयः।” रासका ज्ञानीय जलप
पर है—

“नरेवं हितक्यठोनां अन्वेषणावच्छिन्नात् ।
नर्तकानां पवहलां मयङ्गीमूपा नर्तनम् ॥

अर्थात्—मठोंमें जिनका कण्ड ग्रहण किया है और
जो एक दूसरेका हाथ पकड़ कर कर शोभा बिस्तारूपमक
नृत्य करती हैं, ऐसी नर्तकियोंका मयहलाकार नृत्यका
नाम हो रास है।

भीपाइ विश्वमङ्गलमें रासका जो वर्णन किया है,
भीपाइ गोस्वामान मननो तादृशो दोकामें उस बद्ध
Vol. XIX, 147

करके उसको परिस्तुत व्याख्या की है, यह पद्य य है—

“मङ्गलामङ्गलामन्तर माषो
माष माषं पान्थेनाम्नना ।
इत्यनाकथितमपहलं मन्थाः
संश्रयो वेत्तुया शक्यमन्वना ॥”

अर्थात्—एक एक मङ्गलानाके अन्तरमें एक एक
माष और एक एक माषके अन्तरमें एक एक मङ्ग-
लाना, इन प्रकार मण्डलबद्ध हो कर देखकान्तून वेत्तु
बजाने लगे ।

कृष्णकी मियतमामण कवरो भीर काञ्चीकी प्रन्धी
दुङ्गतासे बांध कर पत् पित्वास, करवासन, सस्मित
भू विहास, देहके मध्यभागके अक्षक करती हुई नृत्य
करने लगे इसत कुचपट अक्षक और गण्डस्थलके
कुचकल दोनुल्लेमान होने लगे छोटे छोटे मोतियोंकी मांथि
पलेयकी बूँदे मुपकमलके शोभित करने लगे । मेपके
शरीर पर बिजलीकी रैबाकी मांथि गोपीमण शोभाको
प्राप्त हुए । यही रासनृत्य है।

भीमज्ञागयतके अन्तमन रोकाकार भोजविभवाय
अकवर्तमें लिखा है—

“नृत्यगीतसुम्भनाकिङ्गनायोनां रासामां समूहो रास
स्तम्भयो या कीडा सा रामकीडा ।”

इससे मालूम होता है, कि नृत्यगीत, सुम्भन, घामिङ्गन
आदि रससमूह ही रास है। अन्तुविद्वजके अमरकवि
भीमपदेषेने रासका जो चित्र दिया है, वह भी इसी
प्रकारका है। यथा—

“अतस्तथाकथयन्मन्थानिधित कथित कथननन के ।

रकरते तद्वत्पनर हरियाः पुनवी प्रप से ॥

निम्नरति कामपि कुम्भति कामपि कामपि रम्यति रामम् ॥

पस्थि तस्मिन् वासररामनुगच्छति रामम् ॥”

यद्यपि इन समस्त वाक्य और पदों द्वारा रास शब्द
की व्याख्या की गई है, किन्तु जो रासका उत्कर्ष और
माहात्म्य शारिबक पुराणोंमें वक्तानसे उन्वोपित हुआ
है, जो रासनेका धार्याराम मुनिगणों एवं सहस्र सहस्र
भमजाग्या परमहंसोंकी नियत पाठ्य और नित्य ध्येय
है, उसका अर्थ अत्यन्त नृत्य विशेषमें ही पर्यवसित होनेसे
साधारणक विचारमें अतः हा एक प्रकार सङ्केहका उद्भेद

होता है। इस प्रकार नृत्यकी इतनी महिमा क्यों गई गई? और उस महिमामें आकृष्ट हो कर गृहत्यागो उदासी संन्यासी तक रासलीला सुननेके लिय इतने व्यग्र क्यों होने हैं तथा उसे परम साध्य क्यों समझने हैं? इससे तो यही मालूम होता है कि यह नृत्य ऐसा वैसा नृत्य नहीं है। जिस नृत्यके मधुर स्पन्दनसे यह विशाल विश्वब्रह्माण्ड माधुर्य तरंगोंसे संकीर्तित हो रहा है, नील आकाशमें चन्द्रमा हंस रहा है, वसन्तके कुसुमकाननमें सुषमाकी केलिनिकेतन कुसुमफलिकाएँ प्रस्फुटित हो रही हैं, वायु मधुर बहन कर रही है, सिन्धुसमूह मधु क्षरण कर रहा है, औषधिवर्ग मधु प्रदान कर रहा है, दिवस और रजनो मधुमय अनुमित हो रही है, आकाश मधुमय मालूम हो रहा है,—रास-नृत्य ऐसा नृत्य है—उस प्रेमरसमयका नृत्य है—आनन्द-चिन्मय रससे प्रतिभावित अपनी आनन्द-शक्ति-स्वरूपिणियोंके साथ प्रेमरसानन्दघन श्रीकृष्णका नृत्य है। इसीसे श्रीपाद सनातन गोस्वामीने 'रासोत्सव' शब्दकी व्याख्यामें रास शब्दकी जो व्याख्या की है, इस प्रकार है—

'रासः—परमरसकदम्बमयो व्यापारविशेषः ।'

दूसरे स्थान पर लिखा है—

'रासः—प्रेमरसपरिपाकविक्षासविशेषात्मकः क्रीडाविशेषः ।'

शास्त्रोंमें अनेक स्थलों पर अनेक प्रकारसे रस शब्दकी व्याख्या देखनेमें आती है। पदार्थविज्ञान, वैद्यकशास्त्र, साहित्य और धर्मशास्त्रमें सर्वत्र ही इस शब्दका बहुल प्रयोग पाया जाता है। धर्मशास्त्रमें निहित रस शब्दके वाच्यपदार्थकी व्याख्या होनेसे अन्याय्य सभी शास्त्रोंके रस शब्दकी व्याख्या व्यञ्जित हो जाती है। व्याकरण कहता है—'रस्यते आस्वाद्यते इति रसः ।' इस प्रकार व्युत्पादन आस्वादन अर्थका द्योतक है। कटु, अम्ल, मधुर आदि पदार्थ इसके वाच्य हैं। व्याकरण और भी एक प्रकारसे रस शब्दकी व्युत्पादन करता है—'रसतीति रसः ।' अर्थात् ये रसयुक्त करते हैं, इस अर्थमें रस।

अकिरसामृतसिन्धुमें रतिरसादिका विचार किया गया है। उसमें शृङ्गार वा उज्ज्वल रसको श्रेष्ठतमता

कीर्त्तित हुई है। इस उज्ज्वल रसको ही श्रीपाद सनातनने परमरस कहा है। यह उज्ज्वल रसमय व्यापार-विशेष ही रास है। शृङ्गाररस वा उज्ज्वलरस अप्राकृत है, यह जडजगत्में, धानमय जगत्में वा विज्ञानमय जगत्में असम्भव है। साक्षात् चिन्मयतत्त्वमें भी उज्ज्वलरसका लेशमास देखनेमें नहीं आता। मधुर भजनमें जो भक्त सिद्ध हो गये हैं, उन्हींके चित्तमें इस परमरसकी स्फूर्ति होती है। इसलिए भगवान्की रासलीलामें उन्हें ही माधुर्यका स्वाद मिलता है। अतएव प्रेमरस परिपाकमें प्रेमरसमय श्रीभगवान् अपनी हादिनी शक्ति स्वरूपिणी आनन्द चिन्मयरस-प्रतिभविता अपनी प्रतिविम्ब स्थानीया गोपियोंके साथ निलास-विशेषात्मक जो क्रीडाविशेष प्रकट करते हैं, उसीका नाम रास है। श्रीभागवतीय रासपञ्चाश्यायके एक पद्यकी टीकामें श्रीपाद सनातनने उक्त प्रकारकी व्याख्या की है। वह पद्य यहा दिया जाता है—

'प्रेमे रमेशो ब्रजसुन्दरिभि-

र्यथाभेकः स्वप्रतिविम्बविभ्रमः ॥'

शिशुगण जिस प्रकार अपने प्रतिविम्बके साथ खेला करते हैं, रमेश और ब्रजसुन्दरियोने भी उसी प्रकार रमण किया था। उक्त पद्यकी टीकामें सनातन गोस्वामीने लिखा है—

'असौ प्रेमवगतास्वभावेनतन्मयक्रीडासकः सन् स्वरूपशक्तित्वेन स्वप्रतिमूर्त्तित्वात् प्रतिविम्बस्थानीयाभिस्ताभिः सह रमेः ।'

अर्थात्—लीलारसमय श्रीकृष्ण स्वभावतः ही प्रेमवश हैं, इसलिए वे सर्वदा ही प्रेमक्रीडामें अनुरक्त रहते हैं। वे प्रेमभावसे अपना स्वरूपशक्ति द्वारा अपनी प्रतिमूर्त्तिसे उद्गुत प्रतिविम्बस्थानीया ब्रजसुन्दरियोंके साथ रमण करते हैं।

इसीसे समझा जाता है, कि रास शब्दका गूढमर्म प्राकृत जगत्में व्याख्यात होनेका नहीं—यह इस जगत्की क्रीडा नहीं—इस जगत्का भाष्य भी नहीं, वह तो आनन्दमय जगत्की ही प्रेमानन्दमय अतिचमत्कार क्रीडा-विशेष है। यदि ऐसा न होता, तो क्या आत्मा-

रास मुनिगण रासबीजा भवष्य करनेके लिये उरहसिद्ध होत ।

रास शब्दका और मो एक निगूढ़ मर्म है । शास्त्रोंसे छिपा नहीं है, कि रसभूति नामक एक भूतियाँ हैं । रस ही परम्य है, यही उन भूतियों का भूमिप्राय है ।

पूर्वप्रज्ञ सनातन रसलक्ष्य है, ये पूर्वप्रज्ञ सनातन लक्ष्य भीकल्प्य हैं । भोक्तृत्व ही मन्त्रिक रसासुलमूर्त्ति हैं । इस रसरज रसिकरोपर रसपरमप्रज्ञको प्राप्ति के लिये विद्वानन्दरसमयो ओ श्रीज्ञाविद्ये दे, बहो रास है । इसीलिये रास नाटापनके नामसे उत्पन्न प्रज्ञाक लिये मो दुर्लभ है, यहाँ तक, कि रास-रस-रसिकेन्द्र मोडिकके हृदयमें मियत विहार करनेवाली साक्षात् छफ्ती मा रासकी मधिकारिणी नहीं है । इसीसे इस बातका आभास पाया जाता है, कि रासकीका किस रश्मि तत्त्वमें प्रतिष्ठित है । इसीलिये सुष्मदर्शी मन्त्रमवर भीमागपत व्याख्याता भाज विभवाप चक्रवर्तिने लिखा है—

“रासभूतिविषयकारैरपिपुर्ममभीकृते ।
गोपीनीं रतातरोऽप्य वेधमनुगतकिंता ।”

अर्थात्—रास आमन्त्रिभ्रमपरस प्रतिभायिता गोपियोंके लिये रसावर्ता है, उनको समस्त प्रकार मनु मत्वियों के सिवा शास्त्रभूति और विवेकादि द्वारा रासका मर्म अन्य कुछ भा नहीं समझा जा सकता ।

रासप्राप्तयाग ।

कारिणिको पूर्णिमाके दिन दसका अनुष्ठान किया जाता है । पूर्णिमाक एक दिन पहले हृदिय्याम मोजन करना चाहिए, बादमें पूर्णिमाके दिन रासिको कल्पयुक्तका

निर्माण कर उत्तर मुख हो बैठ कर ही बार भावमन करना चाहिए । परन्तु स्वस्तिनाचमन करके “सूर्यं सीमो” इत्यादि मंत्र पढ़नेके बाद संकल्प करना चाहिए । यथा— “विष्णुर्देव तत्सर्वस्य भगुने मासे शुद्धे पक्षे वीर्णमासयो तिथौ विष्णुबोधाधिकरणककुल संहितामेवमानस्यकामा भीराघाष्ट्यापूजारसोत्सवकर्माहं करिष्ये ।” परन्तु संकल्पसूक्त पढ़ कर सामाम्यार्थ, आसन-शुद्धि और भूत शुद्धि तथा स्वध्यादिन्यास करना चाहिए ।

मन्तरत मनेशादि देवताओंकी पूजा करके मूल पूजा आरम्भ करनी चाहिए । कूर्ममुद्रा द्वारा पुत्र प्रदय करके भीकृष्णका ध्यान करना चाहिए । ध्यान करनेके बाद मानसोपधारस पूजा, उसके बाद शङ्खसे विशेषार्थ संस्थापन करके पोठपूजा करनी चाहिए ।

पोठ-देवता इस प्रकार हैं—भाषारशक्ति, प्रकृति, कूर्म, अनन्त, पूषियो, क्षीरसमुद्र, भूतेशीप, मणिमहदम, कल्पयुक्त, मयिर्वयिका, रत्नासहासन, धर्म, ज्ञान, वैराग्य, वेधर्म, मधर्म, मज्जन, भवेराम्य, अनेभ्यर्ष, मन्तर, पं पद, म सूर्यमण्डल द्वायशकशात्मन, उ सोमण्डल पोड्यशकशात्मन, मं वहिमण्डल वराकशात्मन, सं सत्त्व, रं रजसु, रं तमस, मां आत्मन, पं परमात्मन, ह्रीं ज्ञानात्मन, विमला, उत्कर्णो, ज्ञाना, क्रिया, योगा, सत्या इशाना, अनुग्रहा । इन शब्दोंके भावित्वें ‘उ’ और मन्तमें ‘ममा’ शब्द तथा शब्दोंमें ऋतुर्षो विमलिक जोड़ कर पूजा करना चाहिए । जैस—“ॐ भाषाशक्ये ममा” इत्यादि । परन्तु “ॐ मगवते विष्णवे सर्वं मृतात्मने पातुदेवाय सर्वमन संयोगयोगपादात्मने ममा” पद कर पूजा की जाती है । पुनः ध्यान करके भाषाहन मन्त्र पढ़ कर भाषाहनी इत्यादि ६ मुद्राय विधावी चाहिए ।

मन्तरत हस्ताङ्गलि ही कर करना चाहिए कि “भाष रण ते पूजयामि” इस प्रकार अनुष्ठान प्रदय करके भाष रण क्षपताओंकी पूजा करनी चाहिए । यथा—पेणु, कीस्तुम, पनमाका, मन्तरकुण्डल, भीकृष्ण, पातुदेव, नाटापन, देवकीमन्दन, पतुभेष्ट, यामन, राघव, मनु रासक, नारादाही और धर्मसंस्थापक । इन सब भाषरय देवताओंकी “मयवादि मनोऽन्त” मन्त्र द्वारा पूजा की

• येभी पाठारण्य करते हैं।—
“पूजोचिपुद्ग्याय रश्मरय विन्दति ।”
भीमदत्तन गोदाने करते हैं।—
“उपवासमनु कर्तव्यम् ।”
एक विरा भूति और भी करते हैं।—
“रासा वे राः एव स्र्वायं स्र्वात्मन्मो मन्त्रि ।”

जाती है। उसके बाद श्रीमती राधिकाका ध्यान करके उनकी पूजा करनी चाहिए।

पश्चात् मानसोपचारसे पूजा और शङ्खसे अर्घ्य स्थापनादि करके पुनः ध्यान करो। फिर यथाविधान भावाहनादि करके षोडशोपचारसे पूजा करो। पूजाका मन्त्रः—“ॐ ह्रीं राधिकायै नमः।” राधिका-पूजाके षोडशोपचारके अलग अलग सोलह मंत्र है।

इसके बाद प्रणव द्वारा पुष्पाञ्जलि दे कर अष्टसखियोंकी पूजा करनी चाहिए। आठ सखियाँ ये हैं— १ मालावती, २ रूपमाधवी, ३ रत्नमाला, ४ सुशीला, ५ शशिकला, ६ पारिजाता, ७ पद्मावती और ८ सुन्दरी। इन अष्ट सखियोंकी पूजा करनेके बाद स्तवपाठ और होम करना चाहिए।

अनन्तर उम कल्पवृक्षके स्थान पर कृष्णकी प्रतिमा और राधाकी प्रतिमा स्थापन करके श्रीमद्भागवतोक रासपञ्चाध्यायका पाठ करना चाहिए।

पश्चात् दक्षिणाके बाद अच्छिद्रावधारण करके नाना प्रकारका उत्सवोंमें रात्रि व्यतीत करनी चाहिए। इन सब उत्सवोंमें भगवान् श्रीकृष्णने जो लीलाएँ की थीं, उन्हींका अनुष्ठान होना चाहिये।

रास (अ० खी०) घोड़ेको लगाम, बागडोर।

रास (हि० खी०) १ ढेर, समृद्ध। २ ज्योतिषकी राशि। राशि देखो। ३ जोड़। ४ नोद, दत्तक। ५ चौपायोका झुंड। ६ एक छन्दका नाम जिसके प्रत्येक चरणमें ८+८+६ के विरामसे २२ मात्राएँ और अन्तमें सगण होता है। ७ एक प्रकारका धान जो अगहनमें तैयार होता है। इसका चावल सैकड़ों वर्षों तक रखा जा सकत है। ८ सूद, ध्याज। ९ अनुकूल, सुआफिक।

रासक (सं० पु०) हास्यरसोद्दीपक एक प्रकारका नाटक। यह नाटक एक अंके सम्पूर्ण होगा। इसके अभिनेता पाँच व्यक्ति होंगे। यह नाना प्रकारकी भाषा तथा भारती और कैशिकी रीतिसे वर्णित होगा। इसमें सूत्रधारको आवश्यकता नहीं पड़ेगी। यह नाटक वीथि, अड्ड और कलायुक्त होगा। नान्दी शिष्टार्थ युक्त, नायिका विख्यात तथा नायक मूर्ख होंगे। किसी किसीका कहना है, कि इसके प्रति मुयमे सन्धि रहेगी। 'मिनकाहित' नामसे

एक संस्कृत रासकका नाम साहित्यदर्पणमें आया है। (साहित्यदर्पण ६।५४८) नाटक शब्द देखो।

रासचक्र (सं० पु०) राशिक्रक देखो।

रासताल (सं० पु०) १३ मात्राओंका एक ताल जिसमें ८ आघात और ५ खाली होती हैं।

रासधारो (सं० पु०) वह व्यक्ति या समाज जो श्रीकृष्णकी रासक्रीड़ा अथवा अन्य लीलाओंका अभिनय करता है। ये लोग एक प्रकारके व्यवसायी होते हैं जो घूम घूम कर इस प्रकारके अभिनय करते हैं। इनके नाटकमें गीत, वाद्य, नृत्य और अभिनय आदि सभी होते हैं।

रासन—युक्त प्रदेशके वान्दा जिलान्तर्गत एक बड़ा गाव। यह एक गण्डशैलके पादमूलमें अवस्थित है। पर्वतकी तराईमें एक प्राचीन दुर्गका ध्वंसावशेष दिखाई पड़ता है। इस दुर्गके बीच एक पुराना मन्दिर पड़ा हुआ है। अभी इसमें लिङ्गमूर्ति नहीं है इसलिये कोई यहाँ पूजा करने नहीं आते। इसकी गठन और प्राचीन शिल्पविद्या प्रशंसाके योग्य है। गांवके चारों तरफ बड़े बड़े स्तूप इधर उधर पड़े हैं। स्थानीय लोग कहते हैं, कि यहाँ प्राचीन राजवंशी नगर विद्यमान था।

१५वीं सदीमें बलभद्रदेव जीव नामक एक राजवंशी-राजने दिल्लीश्वरके सेनादलके साथ लडाई की थी। युद्धमें जब राजा हार गये, तब पठानोंने नगर लूटा और घरो में आग फूंक दी जिससे समूचा गाव छार-खार हो गया। इसके बाद रामकृष्ण नामक एक व्यक्तिने प्राचीन राजवंशी दुर्ग और नगरके पास रासन गांव बसाया। सम्राट् अकबर शाहके समय यह स्थान एक परगनेका सदर गिना जाता था।

रासन (सं० खी०) १ स्वादिष्ट, जायकेदार। (पु०) २ आस्वादन, स्वाद लेना।

रासनशीन (फा० खी०) गोद बैठायी हुआ, दत्तक।

रासना (सं० पु०) रासना नामकी लता जिसका व्यवहार औषधिके रूपमें होता है। रासना देखो।

रासनृत्य (सं० पु०) गतिके अनुसार नृत्यका एक भेद।

रासपूर्णिमा (सं० खी०) मार्गशीर्षकी पूर्णिमा। इस दिन श्रीकृष्णने रासक्रीड़ा आरम्भ की थी।

रासम (सं० पु०) रासने उपशयते इति रास- (यद्विभक्ति
भ्याम् । उष् १।१-२) इति भ्रमच् । १ गडम, गया ।
मार्कण्डेयपुराणमें लिखा है, कि प्रयाग के दोनों पादोंस
रसकी उत्पत्ति हुई है ।

“पद्माभाजनं स्यात्तद्गन्धं एतन्मन्त्रं यद्गन्धं भूमन्त ।
उष् १।१-२ इति भ्रमच् । १ गडम, गया ।
मार्कण्डेयपुराणमें लिखा है, कि प्रयाग के दोनों पादोंस
रसकी उत्पत्ति हुई है ।

(मार्कं पु० ४८२१)

२ अश्वत्थ, उष् ८ । (मन्त्र १।१-२) ३ एक शैल्य
त्रिसे प्रकटे तासबनमें बस-रुब्रामां मारा था । यह
गर्भमक रूपमें हो रहा करता था ।

रासमपूसर (सं० त्रि०) गणेश समान रंगवाला ।

रासमयस्त्रिनी (सं० त्रि०) भरभदेशका जूही फूल ।

रासमसन (सं० पु०) एक रासिका नाम ।

रासमाकन (सं० त्रि०) गणेशके समान महत्प्रवर्ण या
माम् ।

रासमी (सं० स्त्री०) रासम लिपों कोप् । गर्भमी, गणो ।

रासमूर्ति (सं० स्त्री०) यह स्थान जहां रासकीड़ा होती है,
रास करनेका स्थान ।

रासमरुडल (सं० स्त्री०) रासस्य मण्डल । १ भ्रोकृष्णके
रासकीड़ा करनेका स्थान । २ रासकीड़ा करनेवालोंका
समूह या मंडल । रास करनेवालोंका पूजाकार समूह ।

३ रासपारियोंका समाज । ४ रासपारियों का भूमिनय ।

रासमरुडनी (सं० स्त्री०) रासपारियोंका समाज या
रोमी ।

रासपात्रा (सं० स्त्री०) रासस्य पात्रा उत्सवा । १ पुराणा
नुसार एक प्रकारका उत्सव जो कार्तिकेय पूर्णिमाको
होता है । कार्तिकेय पूर्णिमामें भ्रोकृष्णने रासकीड़ा का
यों इसलिये इस तिथिमें उनका उद्देश्यसे उत्सव करना
होता है । एतद्दशा ।

शक्ति-विषयमें रामपात्राका विधान देखनेमें आता है ।
पैतृ-बीजमातोर्न परमात्पात्राशक्ति-देवाद्या रासपात्रोत्सव
करनेका विधि है ।

रासमण्डल नैवाट कर नैरवो नैरवको एक साथ पूजा
थपा उर्है एकत्र कर कुम्हारक बाहुका लक्ष्य पुमान्,
हागा । इस समय भागा प्रकारक बाज बजा कर उत्सव
करना होता है । (एतद्दशा ४४ पदम्)

२ श्रावणका एक उत्सव जो शक्तिके उद्देश्यसे शैतकी
पूर्णिमाको होता है ।

रासकीना (सं० स्त्री०) । यह श्राद्ध या नृत्य जो कृष्णने
योगियों के साथ से कर उत्सव पूर्णिमाकी माघी रासके
समय किया था । २ रामपारियों का कृष्णकीला सम्बन्धी
भूमिनय ।

रासकिनास (सं० पु०) रासकीड़ा ।

रासविहारो (सं० पु०) भ्रोकृष्णचन्द्र ।

रासावन (सं० त्रि०) रसायनसम्बन्धी, रसायनका ।

(लापन रत्ना ।

रासायनिक (सं० त्रि०) १ रसायन शास्त्रसम्बन्धी । २
रसायनशास्त्रका ज्ञाता ।

रासायनिकशास्त्र (सं० स्त्री०) यह विद्या जहां रसायन
शास्त्र सम्बन्धी परोक्षप या प्रयोग होते हैं ।

रासि (सं० स्त्री०) रासि रेशा ।

रासो (हि० स्त्री०) १ तासरो बार खीचो हुई शराब जो
सबसे निष्ठुर समझी जाती है । २ सद्यो । (वि०) ३
नक्षत्रों या खराब ।

रासु शृसिंह — जो रंगाली पद्मोजन । ये दोनों माह एक
साथ मिल कर कविका गान या कर एक नामसे प्रसिद्ध
हुए थे । कणकसांगाक अन्तर्गत गोम्बनपाड़ामें ये
खतें थे ।

रासरस (सं० पु०) रासे कीड़ाविशेष जो रसा भलुक
समाना । १ गोष्ठो । २ रासकीड़ा । ३ शृ गार । ४ रस
सिद्धि । ५ पण्डोशागरका । ६ रसायास । ७ उत्सव । ८
परिहास, हसी मन्त्राक ।

रासश्वरी (सं० स्त्री०) रासस्य इश्वरी । राषा ।

(अथर्व वेदीपु० भाष्यम् अन्तः १० म०)

रासो (हि० पु०) जिसकी रासिका पद्यमय ज्ञापन-चरित्र,
विशेषता वह ज्ञापन-चरित्र जिसमें उसका युवा भीर
योक्ता भाद्रिका पणन हो ।

रास (का० वि०) १ साधा मरुड । २ मनुहुक, मुना
बिड । ३ सदा, दूरस्त । ४ उन्मिष्ठ वासिब ।

रासवो (का० वि०) सच बातनवाला सत्यवक्ता ।

रासवाराज (का० वि०) मन्था, निरुदय ।

रासवाराज (का० स्त्री०) सबादा, सत्यवा ।

रास्ना (फा० पु०) १ मार्ग, राह । २ उपाय, तरकीब ।
३ प्रथा, रीति ।

रास्ना (सं० स्त्री०) रस्यने इति रस आस्नात्ने (रास्ना-सास्ना
स्थ्या-वीष्वा । उष् ३।१५) इति नप्रत्यनेन साधुः । १
खनामापान लताविशेष । पर्याय—नाकुली, सुरमा,
सुगन्धा, गन्धनाकुली, नकुलेश, भुजङ्गाक्षी, छनाकी,
सुवहा, रस्या, श्रमती, रमना, रसा, सुगन्धा, मूला,
रसाञ्ज्या, अतिरसा, द्रोणगन्धिका, सर्पगन्धा, सर्पाक्षी,
पलङ्क्या । (जटाधर)

इसके देशों नाम हिन्दी—सरहाती, बंगला—गन्ध-
नाकुली, रास्ना, तामिल—किरि-पुरन्दर, तेलगू—चेट्ट,
यवद्वीप—वाजो उलार, सिंगापुर—दाल राटिया, वेरिया,
मैरिड । यह लता आसामप्रदेशके दो हजार फुट ऊँचे
स्थानमें, एसियाशेल, सिंहल, यवद्वीप, सुमात्रा तथा
अज्ञातान और निकोबर द्वीपमें बहुतायतसे उगती है ।

इसका गुण गुह, तिक्त, उष्ण, विष, वात, अस्त्रक्षीप,
कास, शोक, कम्प, श्लेष्मनाशक तथा पाचन माना गया
है । राजनिघण्टुके अनुसार रास्ना तीन प्रकारकी है,
मूल, पत्र और तृण । उनमेंसे मूल और पत्र श्रेष्ठ और
तृण रास्ना मध्यम समझी गई है । (राजनि०)

राजवल्लभके मतसे रास्ना शोथ, आम और वातनाशक
तथा मावप्रकाशके मतसे सर्प, लृता, वृश्चिक और विष,
ज्वर, कृमि और व्रणनाशक समझी गई है ।

औषधविशेष, पलापर्णी नामकी औषधि ।
पर्याय—पलापर्णी, सुवहा, युक्वला । इसका गुण
तिक्त, गुह, उष्ण, कफ और वातनाशक, शोथ, श्वास,
वायु, अस्त्रक्षीप, वात, शूल, उदर, कास और ज्वरादि-
नाशक माना गया है । (भावप्र०) ३ रशाना, जीम । ४
कट्टपर्त्तियोमिसे एक । (रघुवै० १।६ १३)

रास्नाका (सं० स्त्री०) छोटी बन्धनी ।

रास्नागुगुलु (सं० स्त्री०) वातव्याधि रोगकी एक औषधि ।
इसके बनानेका तरीका—रास्ना ८ तोला तथा गुगुलु १०
तोला, इनको एक साथ पीस कर घीसे गोली बनानी
होती है । इसका सेवन करनेसे वातव्याधि रोगाधि-
कारमें गृध्रसी नामक रोग बहुत जल्द प्रशामित होता है ।

(भावप्र० वातव्याधिरोगाधिकार)

रास्नानैल (सं० स्त्री०) तैलोपध्वेद । (चरकचि० २८ भ०)
रास्नादशमूल (सं० स्त्री०) वातव्याधि रोगाधिकारमें कषाय
औषधविशेष । इसके बनानेका तरीका—रास्ना, सोंठ,
वायविडंग, रेडीकी जड़, त्रिफला, दशमूल तथा काला
अनंतमूल, इस सबको एकत्र कर काढ़ा बनावे । इसका
सेवन करनेसे वातरोग, शिरोरोग तथा ऊरुस्तम्भ आदि
वातव्याधि दूर होती है । (भावप्र० वातव्याधिरोगाधि०)

रास्नाविक्राव (सं० पु०) काशीव्यविशेष । यह दो प्रकारका
होता है—मध्यम रास्नादिकाथ तथा महारास्नादिकाथ ।

मध्यमरास्नादिकाथ ।

इसकी प्रस्तुत प्रणाली—रास्ना, रेडीकी जड़, शत-
मूली, भिंडी, दुरालभा, अडूस, गुलंच, देवदार, अति-
विषा, हरीतकी, शठी, नागरमोथा, सोंठ, इन सबको मिला
कर २ तोला, आध सेर पानीमें सिद्ध कर जब आध पाव
पानी बच जाय तो उतार ले और रेडीके तेलके साथ
पीवे । इससे आमवात, वातवेदना, कफर तथा पीठ
और जांघकी वेदना जाती रहती है ।

महारास्नादिकाथ ।

इसके बनानेका तरीका—रास्ना, रेडीकी जड़, अडूस,
दुरालभा, शठी, देवदार, नागरमोथा, सोंठ, अतिविषा,
हरीतकी, गोबरू, मीरों, धनिया, पुनर्णवा, अश्वगन्धा,
गुलच, पिप्पली, वृद्धदारक, गतमूर्त्ती, बच, भिण्टी, चव्य,
गृहतो, कंटकारी, इन सबको का प्रत्येक सम भाग, रास्ना
दो गुनी, यह काढ़ा आठ भाग कर दोष और रोगके
अनुसार सोंठचूर्ण, वावलादिचूर्ण मिला कर पान करे ।
इससे सब तरहका वातरोग, आनाह, शरीरका कापना,
पक्षाघात आदि समस्त वातरोग अतिशोघ्न छूटते हैं । इसके
अतिरिक्त धोनिष्ठायत, शुक्रक्षीप, पुरुषोका मेढगतदोष
और स्त्रियोंका बन्ध्यादोष दूर होता है । इसके सेवनसे
स्त्रियोंका रजोदोष शान्त होता और वे गर्भ धारण करती
हैं । राजर्षि प्रजापति इस औषधके आविष्कर्त्ता हैं ।

(भावप्र० वातव्याधिरोगाधि०)

रास्नादिलोह (सं० स्त्री०) राजयश्मरोगाधिकारमें औषध-
विशेष । इसकी प्रस्तुत प्रणाली—रास्ना, अश्वगन्धा,
कपूर, भैकपर्णी, शिलाजतु, सोंठ, पीपल, मिर्च, हरीतकी,
आमलकी, बहेड़ा, चिता, मुता, विडंग, इन सबको बराबर

बराबर भाग ले कर छोड़ा छोहा मिला कर यह मीपप बनाना पड़ता है। इसका सेवन करनेसे उपश्र्मी पक्षमा, कास, स्वरमद्ध, क्षण, क्षय भादि बहुत अस्व विवृत्ति होत हैं। (रसन्त्रकारसं. रासबरमसोपाधि०)

रास्नापञ्चक (सं० पु०) कायोपचमेद्। बनानिका तरोका— रास्ना, गुर्लक्ष, रेङ्गोका मूल वैशदाह भीर सौंठ, सबो को मिला कर २ तोळा भाष सेर पानोमें सिख करके अब भाष पाय पानी बच रहे तो उठार डेना होता है। इस काढ़े का सेवन करनेसे समूचे शरीरका आमयात छूटता है। (भाष्य० नावभ्रापिठोगाधि०)

रास्नाव (सं० लि०) १ धेरिल घेरा हुआ। २ बन्धनयुक्त। (स्त्री०) ३ बन्धन।

रास्नाससङ्ग (सं० पु०) कायोपचमेद्। प्रस्तुत प्रणाली— रास्ना गुर्लक्ष वैशदाह, योकर, रेङ्गोको अङ्ग भीर पुनर्गवा, इसके काढ़ेमें सो ठकी बुकनी झाड़ कर पोनेस अङ्ग, अक्ष, पाश्य, बिक भीर पृथगूल भय होते हैं।

(भाष्य० नावभ्रापिठोगाधि०)

रास्निका (सं० स्त्री०) रास्ना।

रास्य (सं० स्त्री०) १ प्राचीनकालका एक पाल जिसमें पङ्के समय धो रक कर दान किया जाता था। २ लुह, पलायको सङ्गोका बना हुआ एक अर्द्ध चन्द्राकार यह पात्र।

रास्विन (सं० लि०) तारलरमें मग सायाभय प्रयोग करने-वाला।

रास्विर (सं० लि०) होमानिमें इविवानार्थं जुहुषारी।

रास्य (सं० लि०) १ रासके योग्य। (पु०) २ आकृष्य।

राह (सं० पु०) राहु रेता।

राह (फा० स्त्री०) १ मार्ग, पथ। २ नियम, कायदा। ३ प्रथा, रीति। ४ कोण्डूको ताडो। ५ तेहू रखा।

राहस्रति (सं० पु०) रहस्रतका गोत्रापत्य।

राहस्रर्ष (फा० पु०) ऋतौ ज्ञानेकं समय रास्रमं होनयाञ्च ऋषं, मागाभ्यय।

राहपीठ (फा० पु०) मार्ग चखनेवाला, मुसाफिर।

राहपलटा (हि० पु०) १ रास्ता चखनेवाला, पथिक। २ कोर साधारण या तोसरा मनुष्य जिसका प्रस्तुत विषयस कोर सम्बन्ध न हो, भनप्रयो।

राहबीरंगो (हि० पु०) बीसुहामा।

राहजन (फा० पु०) डाकू, छूटेरा।

राहजनी (फा० स्त्री०) डकैती, लूट।

राहङ्गी (हि० पु०) एक प्रकारका घटिया कंबल।

राहत (सं० स्त्री०) भारता, सुख।

राहवारा (फा० स्त्री०) १ राह पर चलायिका महसूख, सङ्कटा कर। २ खु गो, महसूख।

राहरोति (सं० स्त्री०) १ राह-रस, खन-खन। २ ज्ञान पहचान, परिचय।

राहा (हि० पु०) मिहका यह वपूतरा जिम पर बन्नीके नीचेका पाठ जमाया रहता है।

राहित्य (सं० स्त्री०) मुक्त, विमुक्त।

राहिन (सं० पु०) रेहन रखनेवाला बचक रखनेवाला।

राहो (फा० पु०) राहमार, मुसाफिर।

राहु (सं० पु०) रा-स्यागे बहुलवचनात् उप्। १ स्याग।

राहित्ये प्रोक्त्वा स्वयंति चन्द्रमिति राह उप्। (उप् १।२)

२ राहविशेष, राहुग्रह। पर्याय—तम, समान्ति, सै हिकय, विपुनुर, भस्मगिराच, प्रहकल्लोख, सै हिक, उपप्लथ, शोपक, उपराय, सिहिकावृत्त, कृष्णवर्ण, कबन्ध, मस्त, मस्तुर।

विमचिचिक भीरस भीर सिहक गर्भसे राहुका जन्म हुआ है। सिहिकाक चौहद पुत्रोंमेंसे राहु सबसे बड़ा, बज्रिष भीर चन्द्र सूर्यको प्रमर्दन करनेवाला है।

“सिहिकामपल-पल विमचिच रावतुर रा।

कन्वा इन्द्रजगामर चन्द्रजगामरपथे च ॥

राहुर्गण्डन तथा वै चन्द्रसूर्यप्रमर्दनः।

इत्येव सिहिकापुत्रा रेव रपि कुतसदाः ॥”

(भास्वो० प्रथमविनायक उपाध्याय)

धो मज्जागवतमें लिखा है,—

राहु वैषसनासे छिप कर मस्तुत पाल करता था।

चन्द्र भीर सूर्यमें यह देख लिया भीर विष्णुको खबर दी।

मगवान् विष्णुने सूर्यदेवके द्वारा उसका मस्तक काट

झाका। पोछे मस्तुत शरीरसे उजाधित हो कर गिरनेसे

यह मस्तक अमर हुआ था। चन्द्र भीर सूर्य विष्णुसे

कह दिया था, इस कारण राहु अर्द्ध प्रास करता है।

(भाषयत ८।६ अ०)

पुराणमें लिखा है,—राहु आ कर चन्द्रमाको प्राप्त करता इससे ग्रहण लगता है। यह राहु स्कन्धच्युत दैत्यके गिररूपमें कल्पित है। इस पौराणिक उपाख्यान के साथ वर्तमान वैज्ञानिकतत्त्वका समावेश करनेसे स्पष्ट हो जाना जाना है, कि पुराणज्ञ ऋषियों और आर्य ज्योतिर्विदोंने राहुके सम्बन्धमें जो अभिव्यक्ति प्रकाश की है, उसे किसी मतसे ही विज्ञानभित्तिने उलट्टन नहीं किया है। हम लोग जिसको राहु और केतु कहते हैं, पञ्चिका-में वह राक्षसमुख और फणधर सपेक्षमें चित्रित है। पाश्चात्य वैज्ञानिकोंने उसीको Nodes कह कर उल्लेख किया है। Nodes शब्दका अर्थ ग्रन्थि है।

जिस विन्दुमें ग्रहों या धूमकेतुओंकी कक्षा (Orbit) सूर्यकक्षा (Ecliptic) को अतिक्रम करती हुई जाती है, अर्थात् और भी गूढ अर्थ लगानेसे जहा किसी प्रधान ग्रहकक्षाके ऊपर उसकी उपग्रह कक्षा काटती है, उसे Node कहते हैं।

जब कोई ग्रह उत्तरामिमुख गति हो कर इस प्रकार ग्रन्थिपात करता है, उसे Ascending node या Dragon's head कहते हैं तथा पाश्चात्य ज्योतिर्विदुगण ७ इस प्रकारके सांकेतिक चिह्नसे वह प्रकाश किया करते हैं। सुतरा हम लोगोंके राहु और पाश्चात्य वैज्ञानिकके Ascending node जो एक है, वह चिह्न और विवृतिसे प्रमाणित होता है। फिर जब कोई ग्रह दक्षिणकी ओर मुंह करके चलता है, तो वह Descending node Dragon's tail कहलाता है। वह ७ इस प्रकार सांकेतिक चिह्न द्वारा प्रकाश किया जाता है। इसलिये वह सर्पाकृति केतुचिह्नके साथ उतना असामञ्जस्य बोधक नहीं है।

प्रत्येक ग्रह ही एक समय सूर्यकक्षाकी द्वादश राशिके बीच आवर्तनकालमें राहु और केतुका पातसम्बन्धीय संयोग बतलाता है तथा समूचे खण्टके चारों तरफ एक बार आवर्तन करता है। सौरजगत्का ग्रह उपग्रह आदि विभिन्न स्थानोंमें रहता है इसलिये राहु और केतुके विशेष वैपरीत्यका एकमात्र कारण है।

सूर्यकक्षा या दूसरी ग्रहकक्षाके साथ दूसरे किसी ग्रह या उपग्रह कक्षाका पतन होनेसे निर्दिष्ट ग्रन्थिस्थान में जब इन्द्रिय ग्रह उसी संयोगविन्दु पर आ कर उपस्थित

होता है, तब उसके समसूत्रसे दूर देशमें अवस्थित दूसरे ग्रहमें छाया पड़नेसे ग्रहण लगता है।

ग्रहण शब्दमें सूर्य, चन्द्र तथा उपग्रहविभिन्न ग्रहणविधि आदि ग्रहों और ग्रहणका विवरण ज्ञात है। यह सूर्य और चन्द्रमाका ग्रहण यन्त्रपेध द्वारा जान लिया जाता है। ग्रहण देखो।

ग्रहयोगतत्त्वमें लिखा है, कि—राहु मलयपर्णातजात, शूद्रवर्ण, वारह अंगुल परिमाण, काला वस्त्र पहना हुआ, सिंहवाहन, चतुर्भुज, खड्ग, शूल और चर्मधारो, सूर्यास्थ है। इसके अधिदेवता काल, प्रत्यधिदेवता सर्प हैं। राहु चण्डालजाति, सर्पाकृति, असिधस्वामी और नैर्ऋत-दिग्धिगपति है।

नवग्रहस्तोत्रमें इसका रूप इस प्रकार देखनेमें आता है—

“अर्द्धकाय महापौरं चन्द्रादित्यविमर्दकं।

सिद्धिकायाः सुतं रौद्रं त राहु प्रणमान्यहम् ॥”

(नवग्रहस्तोत्र)

अर्द्धकाय, भयंकर आकृति, चन्द्र और सूर्यको पांडा देनेवाला तथा सिद्धिकानन्दन है।

राहु पापग्रह है। कोई कोई राहुको ग्रहोंमें नहीं गिनते। राहु जिस ग्रहसे मिलता, उसीके अधीन हो कर उसी फलकी अधिकता करता रहता है। फिर साधारणतः राहुका फल अशुभ है।

किसी किसीका कहना है, कि राहु और केतु कोई ग्रह नहीं हैं। पृथ्वी और चन्द्रकक्षाके उत्तर और दक्षिण संलन स्थानको राहु और केतु कहते हैं। चंद्र के घवासमयमें उक्त दो स्थानोंमें उपस्थित होनेसे पृथ्वी पर बड़ी शक्ति प्रकाश करते हैं, इसलिये वे ग्रहोंमें गिने गये हैं। राहु पापग्रह और अमङ्गलकारक है, लेकिन सिंहराशिमें तथा दशवे या ग्यारहवें घरमें शनियुक्त होनेसे पेश्वर्य और राज्यकारक समझा जाता है। दुःख और चन्दन राहुके प्रिय है। राहुग्रह विरुद्ध होने पर उसकी शांतिके लिये गोमेदमणि धारण या दान प्रशस्त है। इसके अलावा गोमेदरत्न, अश्व, नीलवस्त्र, कम्बल, काले तिलका तेल, लोहेके बरतनमें काला तिल, यह सब वस्तु वस्त्र और दक्षिणाके साथ दान करनेसे राहुका दोष जाता रहता है।

राहुग्रहकी दृष्टिके संबंधमें मित्र मित्र मत्त देखा जाता है। किन्तु राहुका सिर्फ इतनी विरोधता है कि मेघसे छे कर कन्या तक जिस किसी राशिमें वह रहता है वह शुभफल होता है। राहु जिस राशिमें जिस भ शमें रहता है उससे अधिक भ शमें उसकी पञ्चाङ्गदृष्टि पड़नेसे वह शुभ तथा धाढ़े भ शमें सम्मुख दृष्टि पड़नेसे वह अशुभ होता है।

व्याधि द्वादेशमाघमें राहु रहनेसे निम्नलिखित फल होता है। मेघसे छे कर कन्या पर्यंत इन छः राशियोंके बीच किसी राशिका कन्य होने तथा वहां राहुके रहनेसे जातक अन्य ग्रहदृष्टिसे मुक्तिमान करता है। इसके विपरीत होनेसे राहु अशुभफलप्रद होता है।

घनस्थानमें जब राहु रहता है तथा उसके प्रति उसके अधिपतिकी दृष्टि पड़ती है, तो अन्य जन्मेवाला प्रचुर घन उत्पादन करता है। या नहीं तो फलून वर्षासे उसका भव नष्ट हो जाता है।

सुतोय स्थानमें राहु रहनेसे जातकका माह मरता है। किन्तु यही राहु यदि तु गा हो, तो मनुष्य पराक्रम शाली, पूष्य, भातिविरोधी और घनधान होता है।

जन्मकालमें राहु तुल्यस्थान गत हो कर चतुर्थस्थान रहनेसे मनुष्य उत्तम घरमें बास करता और अच्छी सभारी पाता है। यदि यही राहु ठक घरका मासिक दूधे, तो वह व्यक्ति मित्रकी सहायतासे स्थावर सम्पत्ति हासिल करता है। पञ्चम स्थानमें जब राहु रहे, तो जातकका सन्तान बिनष्ट होता है। परन्तु यही राहु तुल्यघर और अधिपतिग्रह द्वारा देखे जाने पर सन्तान अशुभ रहता तथा मातृव बुधिमन् और सौभाग्यशाली होता है। षष्ठ स्थानमें राहु रहनेसे जातक शत्रु अथी और सुखमोयी होता है। किन्तु प्राया इसकी पहिछो रती मर जाती है। सप्तम स्थानमें अगर राहु रहे तो प्राया उसकी ली मरती या वह हमेशा रोगस पीड़ित रहती है। अष्टम स्थानमें राहुके रहनेसे मनुष्य रागार्त, क्रूर कर्मरत तथा विपक्वपन्न होता है।

मेघसे छे कर कन्या तक इन छः राशियोंमेंसे कोई राशि नपमस्थान होने तथा इसमें राहु रहनेसे मानस परम सौभाग्यमाहा, भोगा और अनियत कर्मानुरक्त

होता है। नवमस्थ राहु शुभक्षेत्रमें रहनेसे उसके अधिपति द्वारा देखने पर भी अशुभा फल होता है।

दशम स्थानमें राहु रहनेसे जातक कामुक, कर्तु-स्वामिमानो तथा हम राशिके अधिपति द्वारा दूष्ट होने पर मान्य और उष्णपद्मास होता है, या नहीं तो पद पद पर कर्मदान और कलक होनेकी सम्भावना रहती है।

एकादश स्थानमें अगर राहु रहे तथा उस राशिका अधिपति इस स्थानको देखे, तो जातक बहुमिलयुक्त और नाश उत्पाय द्वारा घनसञ्चया होता है। द्वादश स्थानमें राहु रहनेसे जातक वामस्वस्वपबिहीन, अपभयपी, शत्रुयुक्त और विनिश्चित होता है।

राहुका गोचरफल—राहु प्रायः डेढ़ वर्ष तक एक एक राशिका भोग कर दूसरी राशिमें जाता है। यदि यदि ग्रह प्रायः प्रायः प्रथम करता रहता है, किन्तु राहु इसके विपरीत अर्थात् दक्षिणार्धमें प्रथम करता। केतु इस के लोक सातवें में रहता है। राहु और केतु बन्धनति द्वारा दक्षिणार्धमें १८ वर्ष ७ मास, १८ दिन, १५ वृत्तमें राशिचक्र परिभ्रमण करते हैं। इनका दैनिक गति ३ कला ११ चिह्नका है। ये प्रतिवर्ष १६ अक्ष, १६ कला, ४४ चिह्नका राशिचक्रमें हट जाता और १ वर्ष ३ महीने, २० दिनमें एक एक राशि ले करते हैं।

राहु जन्मराशिमें उपस्थित होनेसे रोग और दुर्भाग्य, द्वितीयमें अर्पनाश, तृतीयमें सम्मान, चतुर्थमें पक्षहानि और दुर्भाग्ययुक्त, पञ्चममें मन्त्रज्ञेय और कार्पाहनि, षष्ठमें शत्रुनाश और सुखदृष्टि, सप्तममें अशुभ, शत्रुअथ, क्षोभ, पीडा, अष्टममें दोगाकाल और विपद्मस्त, नवममें प्रयास, दशममें सम्मान और पददृष्टि तथा एकादशमें मित और अर्पनाश और द्वादशमें रोग, शोक, पथवन्धन और भय होता है।

राहुका अथवादि द्वादेशमाघ ।

जन्मकालमें राहुके अथवात्वात्वात्वा रहनेसे नाश प्रकार का अशुभ तथा जन्म समयमें मिथुन, सिंह, कन्या अथवा पूष राशिमें रहनेसे उच्च फल न हो कर शुभ होता है।

राहुके उपविष्ट भागमें रहनेसे कुष्ठारि रोग और घन क्षय, मेषपाजिमाघम रहनेसे जन्मरोग, अर्धमिक्त, दूष, बहुमाया तथा शैशवकालमें रोगाकाल होता है।

नेत्रपाणिभावस्थ राहु लग्नमें या सप्तममें रहनेसे सब प्रकारका दुःख होता रहता है।

राहु जब प्रकाशनभावमें रहे, तो धनवान्, धार्मिक, नियत विदेशवासी, उत्साहान्वित, मात्त्विक तथा राज-कर्मचारी होता, किन्तु प्रकाशनभावस्थ राहु कर्कट किंवा सिंह राशिमें रहनेसे गिरश्छेदकर योग होता है।

राहुके गमनेच्छाभावमें जिसका जन्म होता है, वह आदमी बहु पुत्रविशिष्ट, अतिशय धनवान्, परिउत, गुणवान्, दाता तथा पुरुषोंमें श्रेष्ठ गिना जाता है।

राहुके गमनभावमें जन्म होनेसे जातक किसी जीवका दण्डाघात चिह्नविशिष्ट, अतिशय क्रोधी, खलस्वभाव, परनिन्दुक, सर्पभीत तथा दुर्द्वेष होता तथा नाना प्रकार के रोगोंके लिये उसका धन नष्ट होता है और उसका स्त्री, बन्धु और धनक्षय होता है।

राहुके सभावसतिभावके समय अगर किसीका जन्म हो, तो वह कृपण, धनवान्, गुणी, धार्मिक, परिउत तथा विशुद्धाचार होता है और उक्त भावापन्न राहु लग्नमें अर्थात् पञ्चम या दशमें रहनेसे उसकी भार्या, पुत्र और धननाश तथा उसकी प्रकृति बड़ी ही चंचल होती है।

राहुके अगमनभावके समय जन्म लेने पर जातक सर्वोका दुःखदाता होता तथा उसको मित्तनाश, ज्ञातिनाश और तरह तरहका क्लेश हुआ करता है।

राहुके भोजनभाव समय जन्म होनेसे जातक अतिशय लोभी, मन्दान्निगुक्त, दुःखित, कृपण, क्रूर तथा कलहप्रिय होता है। यदि लग्नमें या दशमें राहु उक्तभावमें रहे, तो उत्तम कुलमें जन्म होने पर भी पतित हो कर मशहूर होना पडता है। लग्नसे ले कर सप्तम या दशम गृहमें यदि राहु इस अवस्थामें रहे तो उसका अवश्य ही पत्नीनाश तथा धर्मकर्ममें पद पद पर बाधा पडती है।

जन्मके समय राहु नृत्यलिप्साभावमें रहनेसे जातक पञ्च तथा कुपुत्र्यादि आदि रोगान्कान्त, चक्षुहीन और दुर्द्वर्ण हो कर रहता है। जन्म समय नृत्यलिप्साभावान्ति राहु लग्नमें न रह कर अगर अन्यगृहमें रहे, तो मानव धनवान्, बहुसम्पद्गुक्त, नानाविध गुणान्वित, देा स्त्री तथा बहु सन्तानविशिष्ट होता है।

राहुके कौतुकभावमें रहनेसे जातक समस्त गुणोंका आभार, धनवान् तथा पित्तशूलरोगमें आक्रान्त होता है। लग्नमें पञ्चम, सप्तम अथवा दशम स्थानके अलावा दूसरे स्थानमें राहु कौतुकभावमें रहनेसे मानव स्त्रीपुत्रादि से रहित हो कर नाना प्रकारका दुःखभोग करता है। किन्तु यही राहु तुङ्गी या अपने गृहमें होनेसे अनेक प्रकारका शुभफल होता है।

राहु जब निद्राभावमें रहे और उस समय यदि किसीका जन्म हो, तो जातक शोकदुःखसे अभिभूत, नाना स्थानवासो, धनहीन और पुत्रसे वंचित होता है। पञ्चम या सप्तममें यदि राहु निद्राभावमें रहे, तो सर्व गुणान्वित पुत्र और स्त्रीविशिष्ट होता है। नवम या दशम स्थानमें ऐसी अवस्थामें रहनेसे तीर्थमृत्यु तथा द्वितीय, एकादश या द्वादश स्थानमें रहनेसे मानव दारिद्र्य दोगमें अभिभूत हो कर समस्त भूमण्डल परिभ्रमण करता है।

राहुविष्ट।

जातवालकका लग्न, चतुर्था, सप्तम और दशम स्थानस्थ राहु पापग्रह द्वारा दृष्ट होनेसे जातवालकका रिष्ट या मंगल होता और १० या १६ वर्षके अन्दर प्राणत्याग करता है। १६ वर्ष तक इसका रिष्टकाल जानना होगा।

राहुका शुभफल।

जन्म समय सिंह, वृष, कन्या या कर्कट राशिमें राहु रहनेसे मानव अतिशय लक्ष्मीवान्, राजराजाधिपति, घोटक, हस्तो, मनुष्य, नौका तथा मेदिनीमाण्डलका अधिपति होता है। राहु स्वीय उच्चगृहमें रहने पर भी उक्त समस्त फलभोग तथा दीर्घायु होता है।

राहुका दशानिर्णय।

अष्टोत्तरी मतमें राहुकी दशा १२ वर्ष और स्थूल-दशा भोगका समय १२ वर्ष है, जिनमेंसे निजान्तर्दशा १४ मास है। राहुकी दशा अशुभ दशा है, इस समय नाना प्रकारकी विपद् होती रहती है। फिर जन्मके समयका राहु उत्तमभावस्थ होनेसे कुछ शुभ होता है। इस दशाके बीच फिर प्रहकी अन्तर्दशा है जिसका विभाग इस प्रकार निर्दिष्ट हुआ है।

रा, रा १४ मास । रा, शु २४ मास । रा, र ०८ मास । रा, च १८ मास । रा, म ०१० मास । रा, पु ११०२० दिन । रा, श ११११० दिन । रा, व २५ १११० दिन ।

वे सब कुल १२ षण् ई । १३ पमिप्रा, २४ शत मिपा तथा २५ पूर्वमात्रपदमक्षरमें अक्षम होनेसे राहुकी दशा होता है । इसके प्रति नक्षत्रमें ४ वर्ष प्रति नक्षत्रके पावमें १ वर्षमें प्रति दशक्रममें २४ दिन तथा प्रति पक्षमें २४ दृष्ट भोग होता है । यह जो भोगकाल लिखा गया, वह ६० दृष्ट नक्षत्रका परिमाण होनेसे होगा, नक्षत्रको कमी बेसी होनेसे इन कालको माग कर नियत समय ठोक करना होता है ।

विशोक्तके मतानुसार राहुकी दशा १८ वर्ष ई । मात्रा, स्वाति या शतमिपा नक्षत्रमें प्रथम होनेसे राहुको दशा होती है । इस मतसे प्रत्येक नक्षत्रमें ही राहुकी दशा हो कर १८ वर्ष भोग होता है । फिर नक्षत्रक भोगानुसार इसका भी भोग जानना होगा ।

मन्दरशामिभग ।

रा, रा २८१२ दिन । रा, व २४१२४ दिन । रा, श २१०६ दिन । रा, पु २४११८ दिन । रा, के ११०१८ दिन । रा, शु ३००० दिन । रा, र ०१०१२४ दिन । रा, च ११६० दिन । रा, म, ११०११८ दिन ।

विशोक्तके मतसे इस प्रकार प्रत्येक दशा होगी । विशोक्तके मतानुसार शुभाशुभका कलाफल विचार कर स्थिर करने होता है ।

राहु (हि० पु०) रोह मण्डली ।

राहुप्रसन्न (सं० ह्री०) सूर्य या चन्द्रमाके राहुका प्रसन्न, प्रह्व ।

राहुमल (सं० जि०) राहु द्वारा पूत या मलिन ।

राहुप्रह्व (सं० ह्री०) राहु द्वारा मास ।

राहुमास (सं० पु०) प्रह्व, उपराग ।

राहुमाह (सं० पु०) राहु माहो प्रह्व यक्ष । प्रह्व ।

राहुषक (सं० ह्री०) राहोषक । रवि माहि सात बारोंमें अश्वगति द्वारा वामावर्त्तमें यामाद्य मास हो कर सातों दिवस राहुका गमन या जामा । विमलानके अश्वमागका मत यामाद्य है । यामाद्यमें अश्वगति

क्रमसे राहु प्रतिवारमें प्रमण करता है । रविवारके भाष्यपाममें पश्चिममें, सोमवारके भाष्यपाममें मन्तिकोपाममें, मंगलवारको पायुकापाममें, बुधवारके उत्तरम, बृहस्पति वारमें दक्षिणमें, शुक्रवारको नैऋतमें और शनिवारको इगानकापाममें रहता है । धृत्तकोङ्काम, युवमें, विषादमें या यामामे शुभफलकी इच्छा करने पर सम्मुखस्थित राहुका परिष्पाग करना चाहिये । इसके राहुका प्रमणषक कहत है । (लक्ष्मणमुखावली)

शरीरमें राहुका जामनकका उल्लेख है । पाशा कालमें इस चक्र द्वारा यामाका शुभाशुभ निर्णय होता है ।

राहुका शरीर जो च कर मुख, हृदय, उदर, गुह्य, पूछ और मस्तक, इन सब स्थानोंमें नक्षत्र विन्यास करना होगा । यह नक्षत्र अश्विनो माहि क्रमसे न्यापित करना होता है । मुखमें एक, हृदयमें सात, उदरमें छ, गुह्यमें एक, पुच्छमें छ, मस्तकमें सात यह सब नक्षत्र इन सब स्थानोंमें कल्पना करनी होती है । राहुका अक्षरस्थित नक्षत्र तथा प्रह्व किस नक्षत्रमें है, यह विचार करके फलनिर्णय करना होता है । (नरपतिस्वरुच)

राहुच्छत्र (सं० ह्री०) अक्षरक, मादा ।

राहुकी—१ बम्बई प्रेसिडेन्सीके महामदनगर जिन्नागतागत एक उपविभाग । मूपरिमाण ४६० वर्गमील है । इस उपविभागका अधिकांश ही समतल है । मूला और प्रथम नामकी गोदावरीकी दो शाखा इसी हो कर बह जाती है । यहाँ पहलेकी कोह बनमाना नहीं है । सिर्फ नदीके किनारे गाँवोंके घास पास आमका बगीचा एपर उपर दबा जाता है । स्थानीय गोरेखानापत्तौक समुद्रकी तहसे २६८२ फुट तथा राहुजोक समतलक्षेत्रसे १२०० फुट ऊँचा है । यहाँका घेतो बारोंमें कोह विशेष सुविधा नहीं होती । ओपरजातसे ४ मील तथा काक कातसे १७ मील इस महकुमाके बीच रहनेसे स्थानीय मयिबासियोंको जलकी सुविधा हुई है ।

२ उक्त उपविभागका विचार सहर और एक नगर । यह अक्षा० ११ २३' उ० तथा देशा० ७४ ४२' पू०के बीच मूला नदीके उत्तरो किनारे अवस्थित है । इस नगरसे डेढ़ कास पूरब प्थान् मतमाह-पेटे रूखका एक स्थान है ।

राहुदर्शन (सं० क्ली०) राहोर्दर्शनं यत् । राहुका चाक्षु-
ज्ञान, ग्रहण । ग्रहणके समय राहुको सम्यक् ज्ञान होता
है इसीसे उसे राहुदर्शन कहने हैं । (तिथितत्त्व)

राहुप—मेवाड़के एक राणा । ये राजपूतकुलतिलक भरतके
पुत्र थे । राणा समरसिंहके पुत्र कर्ण पिताकी गद्दी पर
जब बैठे, तो उनके चचेरे भाई भरतने शत्रुके कुहकमे पड
कर चित्तोर छोड दिया और सिन्धुप्रदेशमें आ कर वहाँके
मुसलमान शासनकर्त्तासे अरोर नगरका शासनभार
पाया । उन्होंने युगलके मट्टिवंशीय राजकुमारीसे विवाह
किया था । उसी कन्याके गर्भसे राहुपका जन्म हुआ ।

भरतपुत्र राहुपके राज्यकालमें मेवाड़ राज्यमें घोर
विश्रुद्धला उपस्थित हुई । कर्णके जमाई शनिगुरु सरदारने
नीच विश्वासघातकसे चित्तोरके प्रधान प्रधान गहलोतो-
के नियंत्रण कर अपने पुत्र रणधवलके सिंहासन पर
बिठाया । चित्तोर सिंहासन चौहानकुलके हस्तगत तथा
निकम्मे राहुपके राज्योद्धारमें एकदम अक्षम देख एक
कुलपाठकाचार्यने यह खबर भरतको दी । तदनुसार
भरत पैतृकराज्यका उद्धार करनेकी इच्छासे अपने सिन्धु-
देशीय सेनादलके ले कर मेवाड़ पहुँचे । चित्तोरके
अनुगत सरदारोंने भी उनका साथ दिया । उन्होंने पत्नी
नामक स्थानमें वागी शनिगुरु वंशियोंको परास्त किया
और आप चित्तोरके सिंहासन पर अधिष्ठित हुए ।

इसके कुछ दिन बाद राहुप पिताकी गद्दी पर बैठे ।
पीछे थोडे ही समयके बाद इन्होंने नागौर नामक
स्थानमें मुसलमान सेनापति सामसुद्दीनको हराया ।
उनके शासनकालमें मेवाड़के गहलोतवंशीय राजपुरुष-
गण शिशोदीय कहलाने लगे तथा वाष्पा-प्रवर्त्तित वंशो-
पाधि रावलके बदले वक्ष्यमाण 'राणा' शब्द प्रचलित
हुआ ।

राहुपने परिहारराज मोकलराणाको परास्त कर
अपने नगरमें कैद कर लाया । राणा मोकलने मुकि-
लासकी प्रत्याशासे राहुपको अपने अधिकृत गद्दवार
प्रदेश और जयके पुरस्कार-स्वरूप राणाकी उपाधि दी ।
राहुपने बड़ी दक्षताके साथ ३८ वर्ष तक राज्य किया
था ।

राहुभेदिन् (सं० पु०) राहुं भिनत्तीति भिद्-णिनि । विष्णु ।

राहुमाता (सं० स्त्री०) राहुकी माता, सिंहिका ।

राहुमूर्द्धमित् (सं० पु०) राहोर्मुर्द्धाण भिनत्तीति भिद्-
किच् । विष्णु ।

राहुमूर्द्धहर (सं० पु०) विष्णु ।

राहुरत्न (सं० स्त्री०) राहुप्रिय रत्नं राहो रत्नमिति वा । गोमेद-
मणि जो राहुके दोषका शमन करनेवाली मानी जाती है ।

राहुल—बुद्धदेवका पुत्र । गोपाके गर्भसे इसका जन्म
हुआ था । इसके जन्मके सातवें दिन बुद्धदेवने संसार-
त्याग किया । सात वर्षकी अवस्थामें राहुल बुद्धदेवके
समीप जा कर बुद्धसङ्गमें सम्मिलित हुआ और बौद्ध
वर्णकी अवस्थामें दौद्धमिश्रु बन गया ।

राहुलक (सं० पु०) एक प्राचीन कवि ।

राहुलसू (सं० पु०) सूते सूक्तिप । बुद्धदेव ।

राहुवृहस्पतियोग (सं० पु०) राहुणा वृहस्पतेर्योगः मेलनं
एक राशिमें स्थित गुराराहु । जब राहु वृहस्पतिके साथ
एक राशिमें अवस्थान करता है, तब उसे राहुवृहस्पति-
योग या गुरुवाण्डालियोग कहते हैं । वृहस्पति जब
राहुके साथ एकराशिस्थित होने दे, तब अकाल पडता
है । इसलिये गुराराहुके कारण अकालमें विवाह और
वतयज्ञादि शुभकर्म करना निषिद्ध है । कोई कोई इसका
प्रतिप्रसव इस प्रकार मानते हैं । कर्णाट, लाट, अद्र तथा
कलिङ्गदेशमें यह गुराराहुयोग विरुद्ध है, इसके अलावा
और किसी देशमें यह निषिद्ध नहीं है । वृहस्पति राहुके
साथ रहनेसे बडा लज्जित होते हैं; कारण वृहस्पति
ब्राह्मण हैं और राहु चण्डाल । ब्राह्मणके साथ चण्डाल-
का रहना जैसा है, राहुक साथ वृहस्पतिका योग भी वैसा
ही है ।

जातकके जन्मके समय राहु और वृहस्पति जब साथ
रहते हैं, तो जिस अवस्थामें वे रहते हैं, उसी अवस्थाका
अनिष्ट होता है । वृहस्पतिके साथ राहुका योग अनिष्ट-
कारक है ।

राहुसंस्पर्श (सं० पु०) राहुसंग्राम, चन्द्र वा सूर्यग्रहण ।

राहुसूतक (सं० स्त्री०) उपराग, ग्रहण ।

राहुस्पर्श (सं० पु०) राहोः स्पर्शां यत् । उपराग, ग्रहण ।

राहुहन् (सं० पु०) राहुं हन्ति हन्-किच् । विष्णु ।

पहुगण (सं० पु०) १ रहुगणोंका भयस्थ । २ गोतमका गोतापरथ ।

राहुगण्य (सं० पु०) रहुगणोंका गोतापरथ ।

राहुचिष्ट (सं० पु०) राहुचिष्टः । बभ्रुन जहसुन ।

राहेल (यहू० पु०) यहूदियोंकी एक उपजातिका नाम ।

रिंग (म० स्त्री०) १ भगुडो, छत्ता । २ किसा प्रकारकी गोळ बड़ो सूड़ी । ३ पेय, मंडल ।

रिंगो (हि० स्त्री०) एक प्रकारकी उबर जो मध्यप्रदेशमें होती है ।

रिंगना (हि० कि०) १ रंगनेकी क्रिया करना, रंगाना ।

२ घुमाना फिराना, ढोड़ाना । ३ धीरे धीरे चलाना ।

रिंगल (हि० पु०) एक प्रकारका पहाड़ी बरस जो शरदि ऋतुमें होता है ।

रिंगिन (म० स्त्री०) यह रस्ती जिससे जहाजके मस्तक सादि बांधे जात हैं ।

रिंद् (फा० पु०) १ यह व्यक्ति जो धर्मविषयमें बहुत ही सख्ख् भीर उदार विचार रखता हो, धार्मिक बंधनों को न माननेवाला पुंस्य । २ मनमौजी भावनी, सख्ख् पुंस्य । (सि०) ३ मतबाझा, मस्त ।

रिंदा (फा० वि०) निरंजुजा, उदुड ।

रिफ (सं० स्त्री०) ज्योतिषक अनुसार एक संज्ञाका नाम । ज्योतिषमें जातकके सनस ले कर बाह्य स्थान तकको रिफ कहत हैं ।

रिफना (हि० पु०) एक प्रकारका फोकर, रोभा ।

रिफायत (म० स्त्री०) १ वह अनुभवपूर्ण व्यवहार जो साधारण नियमों का ध्यान छोड़ कर किया जाय, कोमल भीर व्यापूर्ण व्यवहार । २ म्युनता, कमी । ३ कयाक, ध्यान ।

रिफया (म० स्त्री०) प्रजा ।

रिफयल (हि० स्त्री०) एक मोक्षपर्यार्थ जो उर्दूका पाठी और अरबके पत्तोंसे बनता है । अरबके पत्तोंको बारीक काट कर उर्दूका पीठाक साथ मिलाय तब ही और फिर उसीके गुळगुळैस पा या तलमें छान लेते हैं ।

रिफला (म० स्त्री०) एक प्रकारकी छोटा गाड़ी जिसे आरमा मोचन है और जिसमें एक या दो आरमी बैठते हैं ।

रिफाय (फा० स्त्री०) रफाय देना ।

रिफायो (फा० स्त्री०) रफा देना ।

रिफ (सं० स्त्री०) रिफ-क । १ इन म गळ । (सि०) २ शून्य, खाली । ३ निर्धन, गरीब ।

रिफक (सं० स्त्री०) रिफ कम् । शून्य, खाली ।

रिफकुम् (सं० स्त्री०) ऐसी माया जो मनकमें न आवे, गड़बड़ बोली ।

रिफकृत (सं० स्त्री०) खाली किया हुआ ।

रिफता (सं० स्त्री०) रिफकृत माया रिफकृत-टाप । शून्यता, रिफ या खाली होनेका भाव ।

रिफतारिफ (सं० स्त्री०) रिफा पाजियैरुप । रिफकृत, जिसक हाथ खाली हो । माह्यण, राजा और स्त्री इन लोगोंको खाली हाथसे देखना नहीं चाहिये ।

(भारत १।७८७ई अक्षक)

रिफमाएड (सं० स्त्री०) १ शून्यपत्र, खाली बरतन । (सि०) २ माण्डपिहान । ३ सुखिशून्य, जिस अक्ष न हो ।

रिफमति (सं० स्त्री०) शून्यमन, बिस्मान्धन ।

रिफकृत (सं० स्त्री०) खाली हाथ, जिसके हाथमें एक भी पैसा न हो ।

रिफा (सं० स्त्री०) रिफ-क टाप । १ तिथिनेह, जगुणों, नवमी और जगुणोंकी तिथिको रिफा तिथि कहते हैं ।

"जगुणों नवमी येर रिफा प्रोखा जगुणोंकी"

(आदिशार०)

रिफातिथि मनो कार्योंमें निम्नमाय है, विषादादि संस्कार और विचारमार्ग शून्यमाय ही रिफा तिथि में नहीं चलना चाहिये ।

"न रिफा तर्कर्मनु" (आदिशार०)

शास्त्रमें लिखा है, कि रिफा तिथिमें विषाह होनेसे कन्या विधवा होता है । किन्तु इसमें एक विशेषता है, यह यह कि शनिवार दिन यदि रिफा तिथि पड़े, तो उस दिन विषाह होनेस शून्य होता है । (दीक्षा)

इसक सिवा शुकवारकी यदि रिफा तिथि हो तो अमृतपान और यदि शनिवारकी हो, तो सिद्धियोग होता है । यह अमृत और सिद्धियोग यज्ञाई बहुत उत्तम है । (शिपरी०)

रिफाई (सं० पु०) यह रिफा तिथि या रफियारकी पड़े,

रविवारको होनेवाली चतुर्थी, नवमी या चतुर्दशी ।
रिक्थ (सं० क्लो०) रिङ्क्ते वहिर्गच्छति नश्यतीति रिक्-
(पात् तु दिव वचि रिचिसिचिभ्यस्यक् । उण् २।७)
इति थक् । उत्तराधिकार या वरासतमें मिला हुआ धन
या सम्पत्ति । (मनु ८।२०)

रिक्थग्राह (सं० त्रि०) धनग्रहणकारी, धन लेनेवाला ।
रिक्थज्ञात (सं० क्लो०) मृत व्यक्तिकी सभी सम्पत्ति ।
रिक्थभागिन् (सं० त्रि०) रिक्थं भजते भज-गणनि ।
धनभागी ।

रिक्थभाज् (सं० त्रि०) रिक्थं भजते भज-णिव । धनभागी ।
रिक्थहर (सं० पु०) हरतीति ह-अच् । रिक्थस्य हरः ।
धनहारक, धनभागी । (मनु ८।१५५)

रिक्थहार (सं० पु०) धनाधिकारी, वह जो धनका अधि-
कारी हो ।

रिक्थहारिन् (सं० त्रि०) रिक्थं हरतीति ह-णिनि ।
१ धनहारी, जिसे उत्तराधिकारमें धन या सम्पत्ति मिले ।
(पु०) २ मातुल, मामा । डुम्बरका वोज ।

रिक्थाद (सं० पु०) पुत्र, उत्तराधिकारी ।
रिक्थिन् (सं० त्रि०) रिक्थमस्यास्तीति रिक्थ इनि । धन-
हारी, जिसे उत्तराधिकारमें धन या सम्पत्ति मिले ।

रिक्थीय (सं० त्रि०) उत्तराधिकारी-सम्बन्धीय ।
रिक्थन् (सं० पु०) स्तेन, चोर । (नैघण्टु ३२४)
रिक्ष (हि० पु०) ऋक्ष देखो ।

रिक्षपति (हि० पु०) ऋक्षपति देखो ।
रिक्षा (सं० स्त्री०) १ लिखा, लीख । २ त्रिसरेणु ।
रिङ्गण (सं० क्लो०) रिङ्ग-व्युट् । १ फिसलना, लडखड़ना ।
२ विचलित होना, डिगना ।

रिङ्गण (सं० क्लो०) रिङ्ग-व्युट्, १ रेंगना । २ फिसलना,
सरकना । ३ विचलित होना, डिगना ।

रिङ्गि (सं० स्त्री०) गति, चाल ।
रिचा (हि० स्त्री०) ऋचक देखो ।
रिचीक (हि० पु०) ऋचीक देखो ।

रिच्छ (हि० पु०) भालू ।
रिजक (अ० पु०) रोजी, जीविका ।
रिजर्व (अ० वि०) किसी विशेष कार्यके लिये निश्चित
या रक्षित किया हुआ ।

रिजर्विस्ट (अ० पु०) वे सैनिक जो आपत्कालके लिये
रक्षित रखे जाते हैं, रक्षित सैनिक । रिजर्विस्ट सैनिक
कमसे कम तीन वर्ष तक लड़ाई पर रह चुकने पर छुट्टी
पा जाते हैं । जिस पदतनमें ये भर्ती होते हैं, रिजर्विस्टों ।
या रक्षित सैनिकमें नाम रहने पर भी ये उस पदतनके
ही बने रहते हैं । केवल दो दो वर्ष पर इन्हें दो दो
महीनेके लिये सैनिक-शिक्षा प्राप्त करनेके वास्ते अपनी पल्-
टनमें जाना पडता है । २५ वर्षकी सैनिक सेवाके बाद
इन्हें पेंशन मिल जाती है ।

रिजल्ट (अ० पु०) परीक्षा फल, इतदानका नतीजा ।
रिजाली (फा० स्त्री०) रज्जोलपन, निर्वाजना ।

रिजिया (सुलतान रजिया)—दासवंशी दिल्लीभर सुल-
तान अलतमासकी कन्या । ये अपने भाई सुलतान यकन-
उद्दीन् फिरोज शाहकी मृत्युके बाद दिल्लीके सिंहासन
पर बैठी थी । ये ज्ञान, बुद्धि, विनय, न्यायपरायणता,
महोदयता आदि सद्गुणोंसे भूषित थी । प्रजाकी रक्षा-
के लिए इन्होंने स्वयं युद्धक्षेत्रमें उपस्थित हो कर जैसी
वीरताका परिचय दिया था, वैसे ही अदम्य उत्साहके
साथ भारतमें राजदण्ड धारण कर आपने पक्षपातशून्य
विचार और दया-दाक्षिण्य द्वारा आर्याचर्चिवासी प्रजाका
हृदय आकर्षित किया था । उनकी वीरता और राज्य-
परिचालनशक्तिने उन्हें भारत इतिहासमें सम्राज्ञी ही
कहा गया है । आप रमणीकुलभूषण होने पर भी
"सुलतान रजिया" के नामसे प्रसिद्ध हुई थीं । पिताकी
गुणावली इन्हींमें अधिक विकसित हुई थीं ।

सुलतान सामसुद्दीन् अलतमास रजियाकी माता-
की ही अधिकतर प्रेम करने थे । खुश्कफिरोजी
नामके प्रधान प्रासादमें उनका वासभवन था । सुलतान
प्रधान महिषीके पास इसी प्रासादमें आ कर ही निरन्तर
उनसे साक्षात् क्रिया करते थे । इस कारण पिताके प्रति
कन्याका स्नेहातिशयतावश रजियाके लाड़की मात्रा
अधिक बढ़ गई थी । वे पिताके जीवितकालमें ही
अत्यन्त दाम्भिकताके साथ अपनी प्रभुत्व-शक्ति संचा-
लन करनेमें काफी आगे बढ़ी हुई थीं ।

अन्तःपुरमें रहनेवाली इस बाल विहङ्गिनीमें अत्यन्त
शैशवावस्थासे ही राजोच्चत उच्चाकाक्षा परिष्कृत होने

छगा पो। उनके ललाट-पत्र पर बीरता और राजनैतिक का पूर्ण रंजित उद्भासित देख कर सुनतानने मन-ही-मन इस राजकुमारोको सिंहासनकी उत्तराधिकारिणी बनाने का निश्चय किया।

उमरके साथ साथ रिजियाक रूपका बाधपप जैसे जैसे बढ़ता गया, वैसे वैसे उसका राज्यासमभोग और बुद्धिपुत्ति मो परिल्लुटित होने लगी। सुनतान म्बाधिपरके युद्धमें विजय प्राप्त कर प्रकुञ्जधिसने दिल्ली कई, तो उम्हेंनि अपनी स्नेहमयी कल्पामें एक भवपूर्व राजमायका समावेश देख कर राजसन्धिष ठाड उठ मानिक महमूदको बुलवा कर आदेश दिया कि राज इफ्तारमें छिन्न रको कि यह मङ्करी हो मेरो एकमात्र उत्तराधिकारिणी ह और मेरो मृत्युके बाद यही सिंहासन पर बैठेगी। इस विषयमें राजाका कल्पान प्रजाहित होनेसे पहले सुनतानके मिय अमात्यबर्गमें उनसे बहुत अनुभव-विषयके साथ पूछा, कि दो दो उपयुक्त राजपुत्रों क होने हुए राजकन्याको गद्दी पर बैठायेका विचार उभ का कैसे हुआ। इस पर सुनतानक कहा कि मेरे दोनों पुत्र महम्मद है, सुल्तय्यो और इम्त्रियासक है, इसद्विय ये राज्य नहीं बना सकत। मेरो इस जङ्करीके सिवा दिल्ली-साम्राज्यको कीर् और रहा न कर सकेगा। तब साधारणके परामर्शसे रिजिया ही राज्यकी उत्तराधिकारिणी हुए। परन्तु अम्याम्य सुसममान पेटिहासिकोंका कहना है कि रिजियाने अपने माइ उधर उद्दीपको मृत्युक बाद सिंहासन अधिकार किया था। इतनपमुता का कहना है, कि दरुनइहानके माइ जाने पर सताने रिजियाको ही राज्येश्वरी घोषित किया था।

सुनतान रिजियाक सिंहासन पर बैठनेक बाद दिल्ली राज्यमें पुनः शान्ति और पूर्णवत् सुशासनको व्यवस्था हो पर। परन्तु प्रधान बञ्चोर निजाम इस मुल्क तुनाइहोने राजनन्याका पक्ष ग्रहण नहीं किया। उम्हेंनि माझिक ज्ञानी माझिक कीर्तो और माझिक इउद्दीहोन महम्मद साकार के सहयोगसे सुखताम रिजियाके विरुद्ध अम्युत्थित हो कर दिल्ली नगरक प्राकोट्टार पर घोरमण कर दिया। इस स्थानमें बहुत दिनों तक दोनों धोरसे धोर युद्ध हुआ। इस समय अयोध्याक शासनकर्ता मानिक

मशोरउद्दीहोन ताबासी मुरजी अपनी सेनाके साथ दिल्लीश्वरीको सहायताके लिए दिल्लीकी तरफ अग्रसर हुए। साहोरमें सुशासन ल्यापन कर सुयताना रिजिया शोभप्रतिसे अयोध्यापतिके साथ मिलनेके लिए भागे बढ़ी, पर सु धे यमुना पार भी न कर पाइ कि बञ्चोरके पक्षके बिरोधी सेनापतिपेनि असोरउद्दीहोनको युद्धमें परास्त कीर बन्पी कर लिया।

सहायकको पराजित कीर शत्रुके हाथमें पड़ुष जानेस उपायकर न देख सुनताना रिजिया उक्थोर पर अरोसा करके नगर छोड़ कर बाहर निकल पड़ी। यमुनाके किनारे शिबिर लगाया गया। इस समय दोनों पक्षों में घोरतर युद्ध चल रहा था। अन्तमें चित्तोहो दलपति मानिक महम्मद साकार कीर मानिक कबोर खां फिर सुखतानाकी तरफ भा मिसे कीर अम्याम्य विपक्षी लोग भाग गये। उस समय सुनतानाको अम्बारोही सेनाने उनका पोछ दिया। सेनानायक मानिक कीर्तो और उनके भाइ फकरउद्दीहोन तथा मानिक जानो मारे गये और बञ्चोर निजाम उक्त मुल्क तुनाइहो सिरमूर गद्दीको भाग गये।

राज्यसे शत्रुसोक इस प्रकार भाग जान पर रिजिया ने उक्त घञ्चोरप्रवरक सहकारोको निजाम उक्त मुल्क उपाधि दे कर मन्तो पक्ष दिया। मानिक सैकउद्दीहोनको आइदक बहुदुस्वय खांकी उपाधि और सेनापतिकी पद मिजा। कबोर खां साहोर प्रदेशक शासनकर्ता नियुक्त हुए। समग्र पठान साम्राज्यमें शान्ति बिराजने लगी। उत्पन्नापतो जे कर विषल तक सुदूर राज्य बासो राजन्यवर्ग और सामन्त तथा अमात्यगण रिजिया क बसमें हो गये। ७

* 'अभिषेक उक्त अमठार नामक इतिहासमें लिखा है, कि लखतहीन मऊजानकी परसुफ बार उखूप् लं, कल्लूप ली, लक्रे लं, मरबक खिगार, नूरक्य और मुयबरेग आबामी नामक कई एक क्वीतराओन अपने माझिकोंके प्रति कृतज्जता मन्त्र कर विहाइ किया था। १२२१ ई०में उन खायोम नुसतान के अग्रपुत्र बञ्चोरउद्दीहोनक दूर कर सुखताना रिजियाको सिंहासन प्रदान किया था। उत्पुष खां राज्यक प्रधान लनिष कीर राजन-दरबखिनाता थे। इनकी उद्दुपकी कन्याक साथ रिजियाक दूजे भाई नकारउद्दीहोन विहाइ हुआ था।

सेनापति अइवक बहनुकी मृत्युके बाद मालिक कुतबउद्दीन हसनगोरी प्रधान सेनापति हुए। इस समय हिन्दुओंने मुसलमानोंके अधिकृत गणतन्त्र दुर्ग घेर लिया। रिजियाके आदेशसे हसनगोरीने उक्त दुर्गमें घिरे हुए मुसलमानोंकी रक्षा करके दुर्गको नष्ट कर डाला।

इसी समय रिजियाके अनुग्रहसे मालिक इफ्तियारउद्दीन इतिगीन राजप्रासादके परिदुर्गमें और अमीर जमालउद्दीन याकूत अथ और इस्तिशालाके परिदुर्ग तथा उनके पार्श्वचर नियुक्त हुए। तुर्क सेनापति और अमान्यगण राजेश्वरीके इस अनुग्रहको देप्र कर उनसे विशेष ईर्ष्या करने लगे। उनके द्वारा राज्यमें विद्रुहला होने देख सुलताना रिजियाने रमणोको वेगभूया और अग्रगुण्डन दूर किया और पुरुषके वेगमें राजदरवारमें बैठने लगीं। उन्होंने सिर पर राजमुकुट धारण किया और अंगरखा कावा पहनना शुरू किया। साथी रणको अपनी गाम्भीर्यमयी मांइन मूर्त्तिसे मुग्ध और भयविह्वल करनेके लिए वे प्रतिदिन एक बार हाथों पर सवार हो कर राजधानीमें घूम आया करती थीं।

राजदरवारमें बैठ कर उन्होंने ग्वालियर आक्रमण लिए सेना भेजी। ग्वालियरके राजा दिल्लीश्वरके विरुद्ध बाधा पहुंचानेमें समर्थ न हुए, बल्कि वे सन्धि करनेको बाध्य हुए और मिनहाज मिराज और मजहूल उमरा जियाउद्दीन जुनाइदीको १२३८ ई०में दिल्ली भेजा। सुलतानाने उनके इस आचरणसे खुश हो कर मिनहाजको मासिरीय विद्यालयको अध्यक्ष और ग्वालियरका काजी बना दिया।

१२३६ ई०में लाहोरके शासनकर्त्ता मालिक इज्जुद्दीन कवोर जॉ विद्रोही हो कर दिल्लीकी अधीनता हटानेके लिए आगे बढ़े। रिजिया इस संवादके पाने ही सेना सहित लाहोरके लिए रवाना हो गईं। स्वयं विद्रोही शासनकर्त्ता सुलतानी सेनाके समान पराजय स्वीकार कर भाग गये। रिजियाने सेनासहित उनका पीछा करके उन्हें कैद कर लिया। कवोर जॉने रिजियाके चरणोंमें प्राण-मिक्षा मांगी और उनकी वश्यता स्वीकार की। उन्होंने भी उन्हें सुलतानका शासन-भार सौंप दिया।

इस प्रकार विद्रोह दमन और शासनकी व्यवस्था करके राजा रिजिया १२४० ई०के अप्रैल महीनेमें दिल्ली राजधानीकी लौटो। यहाँ जाते ही उन्हें संवाद मिला कि तबरहिन्दके शासनकर्त्ता मालिक अलतुनिया कुछ सीमान्तवासों राजपुत्रोंकी उत्तेजनमें आ कर राजद्रोहिताका मूलपान कर रहे हैं। तदनुसार रिजियाने एक विस्तृत सेनाके साथ तबरहिन्दकी तरफ प्रस्थान किया। वहाँ पहुचते ही प्रसिद्ध हवसो-याद्ला अमीर जमालउद्दीन याकूतको मारनेवाले राजद्वेषी तुर्क-सेनापतियोने उन पर आक्रमण किया। कई दिन घोरतर युद्ध होनेके बाद सुलताना बन्दिना हो कर तबरहिन्द-दुर्गमें कैद कर लो गईं।

तबरहिन्द-दुर्गमें कैद सुलतानाकी दुर्दशाका अनुभव कर मालिक अलतुनियाने हृदयमें उसके प्रति दयाका उद्रेक हुआ। दिल्लीश्वरके इस प्रकार अपमानके वे सह न सके। उनकी दुर्दशाके अंगभंगी हो कर वे पुनः दिल्लीको उत्तमंग सेनाको इकट्ठा करके दिल्ली राजधानीके उद्धारके लिए अग्रसर हुए, कारण रिजियाके कैद होनेके बाद होसवने मुश्जउद्दीनको सिंहासन पर अभिषिक्त कर दिया था।

रिजियाके राज्योद्धारकी बात सुन कर सुलतानाने अपनी सेनासहित विपक्षियोंका सामना किया। युद्धमें सुलताना रिजिया और मालिक अलतुनिया पराजित हो कर कैवलकी तरफ भाग गये। अनुगामी सेनाने आधी दूर तक उनका पीछा किया, फिर उनका साथ छोड़ दिया। वे इस प्रकार गुनरूपसे चलने चलते हिन्दूके हाथमें पड़ गये। १२४० ई०के अक्टूबर मासमें सुलताना रिजियाने तीन वर्ष छः दिन राज्य करनेके बाद हिन्दूके हाथसे भवयन्त्रणा समाप्त की।

तज्जियत उल-अमसके मतसे उलूघ खाने सुलताना रिजियाको मार कर अपने जमाई नसीरउद्दीनको सिंहासन पर विठाया था। पीछे उलूघ खाने अपने जमाईको

* इन्हीं उस सियारके मतसे तबरहिन्द और फिरस्ताके मतसे भावियथा।

मार खयं गयासउहोन बुकवन नाम रख कर सिंहासन पर बैठे थे।

इसन बन्तुलाके नारखसमज-बुलासमें क्रिया है, कि सुखलान शम्सउदीन अकबामासकी मृत्युके बाद उकन उहोन सिंहासन पर बैठे। उहाँ अपने सीतेके माई सुदरउहोनकी मरया बाका, जिससे उनकी खोदुप मगिनो रिजियाने उम्हे तिररुहत और छाडिअत किया। इस पर उम्होने रिजिया पर अत्याचार करना शुरू कर दिया। इस अत्याचारकी मात्रा क्रमशः यहाँ तक बढ़ती गई कि रिजियाका जीवन तक कठरेमें पड गया। रिजिया अ्येष्ट ब्राताका पदुयम्न समन्त गए। एक दिन शुक्रवारको जब सुलतान उकनउहोन प्रार्थना करने मसजिद जा रहे थे, तब उम्होने प्रासादके शिखर पर चढ़ कर कठणमममेदी कण्ठसे उपस्थित राजपुखोंसे आत्मबेचना कही। तब इकडे हुए भोतामपबखीने राज कम्पाकी विनाश प्रायनामे उचैजित हो कर उकनउहोन को मसजिदमेंसे निकाल कर साधारणके सामने उम्हो निष्टुरमावसे मार बाका। नसीरउहोन तब नाबाखिम थे, इसलिये सर्वसाधारणको प्रार्थनानुसार रिजिया हो साक्षात्की मयीभरी बनाई गए।

राजसिंहासन पर बैठ कर उम्होने पूर्ण प्रभावसे छगमग ४ वर्ष तक राज्यशासन किया। रमपी होने पर मा पुदपके समान भनुप-बाप, तुणोर, तखवार, बरखा भादि धारण करतो थी और घोड़े पर सवार हो कर तथा अनेक पारिपदीसे वेष्टित हो कर राजधानी का रणभेदमें परिश्रमज किया करती थीं। उम्होने कमी मी अपना मुह परदेसे ढका नहीं रखा। इसी जालिके अपने एक क्रीतवासके साथ अवेध प्रणयमें आसक होनेक कारण ममारयोने सभेहपूर्वक इम्हें सिंहासनसे उतार दिया और एक आलोपक साथ इनका विबाह कर दिया। इनके बाद इनके छोटे भाइ नसीरउहोन सिंहासनक अधिकारते हुए।

रिजु (हि० वि०) मृत्तु बेलो।

रिफाना (हि० क्रि०) १ किसीको अपने ऊपर प्रसन्न कर देना किसीका अपने ऊपर तुल्य करना। २ अपना बचाना, लुभाना।

रिग्याप (हि० पु०) किसीके ऊपर प्रसन्न होन या रोन्गाने का भाव।

रिजिनींग अफसर (म० पु०) यह अफसर जो निर्वाचन-के समय लोडो या मतो गिनता है और कानून अधिक थोड मिळनेसे नियमानुसार निर्वाचन हुआ इसकी घोषणा करता है।

रिवायर (म० वि०) जिसने कामसे भवसर प्रद्वय कर लिया हो, जिसने पेशाम ले ली हो।

रिटि (स० स्त्री०) १ जलती हुई अग्निका एक शाब्द। २ धातुयन्त्रमेव, एक प्रकारका बाधा। ३ कृष्णलक्षण, काळा नीमक।

रिपीनगर (स० स्त्री०) एक प्राचीन नगरका नाम।

रिज (स० क्रि०) रम्की, गालेबाका।

रिजु (हि० स्त्री०) मृत्तु देखीं।

रिजुपतो (हि० स्त्री०) राजसत्ता आ।

रिज (स० क्रि०) एक, रो या हुआ।

रिजि (हि० स्त्री०) मृत्ति देखीं।

रिजिसिजि (हि० स्त्री०) मृत्तिदिशि देखो।

रिजम (स० पु०) १ कामदेव। २ यस्तव।

रिज (हि० पु०) मृत्तु देखीं।

रिजबो (हि० पु०) कर्मदार, श्रमी।

रिजिमाँ (हि० वि०) जिसने श्रम किया हो, कर्मदार।

रिजिमाँ (हि० वि०) रिजिमाँ देखीं।

रिजो (हि० वि०) जिसने श्रम किया हो, कर्मदार।

रिज (स० पु०) १ श्रमी। २ रिजु, शकु। ३ हि सा।

रिपन (George Frederick Samuel Robinson)—रिपन का १म मार्च १८३१, बर्किंगमसायरके ४४ मसकी कन्या श्रीमतो साराके गर्भ नीर रिपन १म अर्बके भीरसे सन्तन नगरमें २४ अक्टोबरको जन्म हुआ था। १८४१ ई०में आपके राजनीतिक संज्ञकका स्तुपात है। उस वर्ष आप प्रसेकसमें विशिष्ट इन्स्पेक्टरमें (Attache) नियुक्त हुए। १८५३ ई०में वे इर्र्सफिन्डके भीर उसके बाद यकसायरक वेष्ट राइजिंगस पार्कमिन्डके सहाय्य जुने गये। १८५६ ई०के जनपरो मासमें इम्हें पिवाकी उपाधि मिली और उसी वर्ष नवम्बरमें पिटुम्बकी उपाधि का उपाधिभार प्राप्त हुआ।

पालार्मिन्टमें प्रवेश होनेके कुछ ही दिन बाद आप युद्ध-विभागमें अएडर सेक्रेटरी हुए। उसके बाद १८६१ ई०के फरवरी महीनेमें भारतवर्षके लिए अएडर-सेक्रेटरी (Under secretary for India) हुए। उसके बाद १८६३ ई०में युद्ध-विभागके प्रधान सेक्रेटरी और १८६६ ई०में सेक्रेटरी गान दी स्टेट (Secretary of the State for India) नियुक्त हुए। १८६८ ई०के दिसम्बर मासमें महामति ग्लेस्टोनके शासनारम्भमें लार्ड रिपन मन्त्रिसभाके सभापति (Lord President of the Council) नियुक्त हुए थे। उसके बाद १८७३ ई०में उदारनैतिक दलका शासनाधिकार दूर होने पर आपने भी खेच्छासे उक्त पद छोड़ दिया।

१८६६ ई०में इंग्लैण्डकी महाराणीने आपको Knight of the garterकी उपाधिसे सम्मानित किया। इसीके दो वर्ष बाद अलावामासत्त्वके सम्बन्धमें वासिन्गटनमें जो सन्धि हुई, उसके गुस्तर कार्य-निर्वाहके लिए लार्ड रिपन दोनों राज्योंकी तरफसे सन्धि समितिके प्रधान सभापति (Chairman of the High Commission) चुने गये थे। दक्षताके साथ उक्त कार्यको समाप्त करनेके बाद आप मार्कुइस जैसे उच्च पदसे सम्मानित किये गये थे। १८७८ ई०में आपने रोमन काथलिक मत ग्रहण किया। इस कारण आपको फ्रीमसनके श्रेष्ठ उपदेष्टा (Grand-master of the English Free-mason)-का पद त्याग देना पड़ा। १८८० ई०में महामति ग्लेडस्टोनको पुनः प्रधान मन्त्रीका पद मिला।

उस साल पालार्मिण्टमें उदारनैतिक मन्त्रियोंका प्राधान्य हो गया, जिससे बड़े लाट लिटनको इस्तीफा दे देना पड़ा और मार्कुइस आफ रिपन बड़े लाट हो कर भारत आये। उनके शुभागमनसे भारतवासियोंके हृदयमें शान्तिरूपी जलका सिंचन हुआ। सामान्तके भगडा मिटानेका सुयोग आया। लार्ड लिटनकी राज्य-विस्तार नीतिका कारण भारतके उत्तर-पश्चिम प्रान्तमें दाखल समरानलकी सूचना हो चुकी थी। शान्तिप्रिय और प्रजारुद्धक लार्ड रिपन भारतमें आते ही भारत-सीमाके बाहर स्थायिरूपसे सेना रखनेके घोर विरोधो हो गये।

उन्होंने प्रथम ही दोस्त मुहम्मदके पौत्र अमीर अब्दुर रहमनको काबुलके सिंहासन पर बिठाया। अमीर शेर अलोंके पुत्र निर्वासित आयुव खाँका हीराटमें लानेकी अनुमति दी गई। परन्तु आयुव खाँके यहां आते ही बहुतसे गाजी उनके अनुयायी हो गये। युद्धकी सम्भावना देख कर अङ्गरेज-सेनापति जनरल वारो शत्रुसेनाके विरुद्ध मैकन्द रणक्षेत्रमें उपरिधत हुए। परन्तु संख्यामें कम होनेके कारण अङ्गरेजीसेना बहुसंख्यक गाजी और पठान-सेनाके आक्रमणको न सह सकी। अधिकांश अङ्गरेज सेनापति और सेनानाने असाधारण वीरता दिखा कर भीषण युद्धमें प्राण विसर्जन किये। कुछ थोड़ीसी सेनाने कन्दहारमें भाग कर प्राण बचाये। अन्त में प्रधान सेनापति लार्ड राबर्टने बहुसंख्यक सेना सहित जा कर आयुव खाँको परास्त करके ब्रिटिश गवर्नमेंण्टके सम्मानकी रक्षा की। इसके कुछ ही समय बाद रूस-सेनापति स्कोविलेफ जिओफ-रेपेने आक्रमण किया और इसके साथ ही रूसकी लोलुप दृष्टि कन्दहार पर पड़ी। भारतीय अङ्गरेजगण भी इससे विचलित हुए। परन्तु दूरदर्शी लार्ड रिपनको इसमें किसी तरहकी आशंका नहीं दिखाई दी। उनका विश्वास था कि भारतीय प्रजाको सुखी रखनेसे अभावके समय उनके उपयुक्त सहायता देनेसे, भारतमें अकाल न पड़नेसे तथा प्रजाके गवर्नमेंण्टके पक्षमें रहनेसे वैदेशिक आक्रमणको कोई भी आशङ्का नहीं। पहले लार्ड मेओ निश्चय करने पर भी जिसे कार्यरूपमें परिणत न कर सके थे तथा रक्षणशील बड़े लाटोंकी लापरवाहीसे जो अब तक साध्य न हो सका था, अब लार्ड रिपनने प्रजाकी सुविधाके लिए १८८२ ई०की अप्रीलको राजस्व और रूपि विभाग पुनः प्रतिष्ठित किया। दुर्भिक्ष-समिति (Famine commission)-के प्रस्तावके अनुसार दुर्भिक्ष-पीडित प्रजाके अभाव दूर किये और जमीन सम्बन्धी कर निर्धारणके लिए ही उक्त विभागकी सृष्टि की। उन्होंने निश्चय किया था कि गवर्नमेंण्टकी इच्छानुसार किसी जमीनका कर बढ़ाया नहीं जा सकता। जमीनकी कीमत बढ़ने, खेती बढ़ने और गवर्नमेंण्टके व्ययसे जमीनकी उन्नति होनेसे ही

मान्यशासक बड़ाई या सक्नो है। ऐशिकी नाना विषयो को उचित और प्रज्ञाके हितको तरफ मारतीय द्विप विभाग (The Agricultural Department of India) दृष्टि रखेगा। इसके लिए जरायु प्रज्ञा-वचन, जलवायु की गति निर्धारण, पशुचिकित्सी-विद्याका प्रसार और भस्त्राजिकीके बहसूर सुषो तैयार करणो। दुर्मिष्ठ वा दूग्ध्यके समय जिससे यतब प्रज्ञाको विरीय कर न पहुँचे, इसके लिए दुर्मिष्ठ-अपहार Famine Fund स्थापित हुआ और प्रति वर्ष १५ लाख रुपये उस अर्थकार्यमें जमा रखने की व्यवस्था की गई। चीन भाूमियों पर उक्त मण्डारका मार दिया जायगा, जिनमें एक सरकारी और दो गैर-सरकारी भाइयो होंगे, गैर-सरकारमें एक भारतीय होना चाहिये। इसके बाद लार्ड रिपनको दृष्टि महिसुर राज्य पर पड़ी। उन्होंने देखा कि उक्त राज्य ५० वर्षसे ब्रिटिश गवर्नमेंटके हाथमें है। परन्तु धर्मता और न्यायका विचार किया जाय तो उस देशका शासन वहाँक राजाके अधान होना चाहिये। इस कारण भावने महिसुरके राजाको उनक पूर्वपुत्रका राज्याधिकार सौंप दिया। १८८१ ई०से ही अफगानिस्तानके मिथिलसेना इत्यादि केनेकी व्यवस्था हुई थी। कोयटा और कुतम उपत्यकासे अगरेजी सेना इत्यादि चलाई-सी देशो सेना वहाँ रची गई। सुप्री कोटान्त से पाइवार गिरिसकट तककी रक्षाका मार वहाँक पहाड़ा सरदारों पर सीया गया। इस तरह थोड़े ही दिनोंमें सोमान्त्र प्रदेशमें शान्ति हो गई थी।

सुदूर भारत साम्राज्यके राजसूय और शासन विभागकी कमशा एक कम्प्रीमूत करने और उसके लिए स्थानीय गवर्नमेंटके सुशासनकी पूर्ति करनेके लिए स्थायक शासनका विस्तार करना लार्ड रिपनका प्रयत्न उद्देश्य था। भारतवासियोंमें प्रजासत्त्वक शिक्षा विस्तारके लिए बोर्ड ऑफ़ बिरोकुतोने १८५३ ई०में जो सुधारोंके मन्तव्य प्रकट किया था, अब तक उसक अनुसार उपयुक्त कार्य बजावकी कोई सख्योपजनक व्यवस्था न हुई थी। शिक्षा विभागकी असमूख धार्मिक कार्य विवरणीस ही उसका कुछ कुछ परिचय निजता था। अब लार्ड रिपनने स्थायक शासनक ही प्रसारको सुविधा

के लिए शिक्षाविभाग संस्कार और भारतीय शिक्षा पद्धति का उपयुक्त व्यवस्था करनेके लिए सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक डाक्टर हन्टर (Dr W W Hunter) साहबकी अध्यक्षतामें एक Educational Commission बिजाया। शिक्षाको का शिक्षाविभाग, विद्यालयों का परिदृश्य, पारदर्शितानुसार चेतननिर्धारण और को शिक्षाका विस्तार करना, कमोशनका प्रयत्न लक्ष्य था। इस शिक्षा कमोशनका फल १८८४ ई०में प्रकाशित हुआ था।

लार्ड रिपनका एक और प्रधान कार्य देशो मुद्रा यन्त्रको स्थापना देना था। लार्ड रिपन देशो समाचारपत्रों का राजदूतोंको ज्ञान उनका स्थापनाता बंद कर गये, जिससे देशो प्रायः सभी सवाक्ष्यक बंद गये। १८८२ ई०में लार्ड रिपनने देशो प्रेस सम्मन्धोय सब भाइन उठा दिया कि देशो क्या यूरोपीय समो समाचार पत्र सम्पवादनाजल हो इसके ही बाद २५वीं जुलाईको दम्भकता गवर्नमेंट हाउसका सुप्रसिद्ध मर्गेर-हाऊसमें उद्घोषके पत्रस को इत्कार लगा था वह भी उल्टे नाय है। इसी दिन इत्कारमें काबुलका राजदूत और भारतके सम्मन्धित कटोब रेड इत्कार मज्जुय झुटे थे। इसी इत्कारमें बहवलयपुरके नयाव 'नाइट प्राण्ट कमा एडर' के रूपमें महोद्य राजसम्मानस सम्मानित हुए थे और उपयुक्त निजसम्पत्त मिळी थी। इस दिनके बेश मूया, भद्र कायदा और मज्जुबि देण कर येदेशिक वृत समस्त हो गया था।

लार्ड रिपन भारतवासो और अङ्गरेज प्रजाओंको एक नजरसे देखत थे। उनक पास गोरे कालेका कोई भेद न था। इन्होंने शासनविभागमें और समो विषयमें सुविचार की भाशासे फीजदारो बहवविधिका संस्कार कराया। यही १८८३ ई०का पलवट बिज नामस प्रसिद्ध हुआ। इस भारतके उपससमें लार्ड रिपनने प्रकाश किया था, कि ये देशो क्षेत्र यूरोपियोंको तरह विचार विभागक सब उद्य कार्य करत हैं। अब ये यूरोपियोंकी मति सिमितियन होत आवे हैं, तब यूरोपाय विचारपत्रिको तरह देशो विचारपत्रि समान अधिकारक योग्य हैं। अङ्गरेज विचारपत्रि जिस प्रकार देशो और अङ्गरेज दोनोंका

विचार करनेके अधिकारी हैं, देशी विचारपति भी उसी प्रकार अङ्गरेजोंका विचार कर सकेंगे।

न्यायपर समझीं रिपनका अभिप्राय व्यक्त और अलबर्ट-विल पास होनेसे अङ्गरेजोंके बीच दारुण भ्रम-भेदी विद्वेषभाव जाग उठा। काला आदमी गोरोंका विचार करेगा, समान क्षमता पायगा, यह ले कर आधे से अधिक गोरों राजपुरुषोंको कष्टकर हुआ। दूसरी तरफ सभी भारतवासी और देशी संवादपत्र प्राण जोल कर लार्ड रिपनका सुख्याति-गान गाने लगे। जो धो, लार्ड रिपनके उच्च राजनीति और महदुद्देश्य स्वीकार करने पर भी स्थानीय गवर्मेण्ट और अङ्गरेज राजपुरुष गण यूरोपियोंकी सम्भ्रमरक्षाके लिये उक्त दण्डविधि परिवर्तन और परिवर्द्धनके लिये सबके सब परमत हुए। दोनों पक्षोंमें बहुत वाद-विवाद चलनेके बाद इस प्रकार मेटमाट हो गया कि सिपा उपयुक्त और विगिष्ट देशी मजिस्ट्रेटके हाथ सम्पूर्ण अधिकार रहेगा, यूरोपीय अप राधा यूरोपीय मजिस्ट्रेटके यहा अपील या पुनर्विचारके लिये उपस्थित हो सकेगा। इस प्रकार १८८४ ई०में सङ्गोहित दण्डविधि कायम रही।

देशी प्रजा और जमींदारोंके बीच स्वत्व सम्बन्धमें बहुत दिनोंसे मनमुटाव चल रहा था। प्रजारजक लार्ड रिपनने प्रजाओंकी स्वार्थरक्षाके लिए प्रजास्वत्वविषयक आईनका खसडा बनवाया था। वही खसडा परिचर्चित और परिवर्द्धित हो कर लार्ड उफरिनके समय Bengal Tenancy Act of 1885 नामसे विधिवद्ध हुआ।

लार्ड रिपनके सुशासनकालमें ही १८८३ ई०में कलकत्तेमें आन्तर्जातिक प्रदर्शनी हुई और राजकुमार ड्यूक आव कनाट स्त्री-सहित भारतवर्ण पधारे। उसके पहले भारतवर्णमें वैसी प्रदर्शनी और नहीं हुई थी। लार्ड रिपनकी कोशिशसे भारतके प्रत्येक जिलेसे भारतीय शिल्प और देशसे उत्पन्न सब तरहको उत्तम वस्तु प्रदर्शनार्थ भेजनेका बन्दोवस्त हुआ था। उन्होंने खुद राजकुमार कनाट और प्रधान प्रधान राजपुरुषोंको ले कर प्रदर्शनी खोली थी।

भारतीय रमणियोंके पक्षमें परपुरुष द्वारा चिकित्सा यो अस्पतालमें रहना रीतिके विरुद्ध है। इस कारण

उन्होंने देशी रमणियोंमें चिकित्सा विधि-प्रचलनकी व्यवस्था कर दी तथा देशी रमणोंके चिकित्साधीन अस्पताल करनेका आयोजन किया। इसलिये कितनी देशी रमणिया चिकित्साशास्त्र सीखनेके लिये इङ्ग्लैण्ड और अमेरिका भेजी गईं।

१८८४ ई०में रूस मार्मने आक्रमण किया। उसी समय अफगानसीमा निर्धारणके लिये रूस और अङ्गरेज गवर्मेण्टकी तरफसे परराष्ट्रविन्, सामरिक और वैज्ञानिक बहूतरे मनुष्य नियुक्त हुए। इसी वर्ष श्री दिसम्बरके मार्किस आव रिपनने नये बडे लाट उफरिन के हाथ शासनभार सौंप विलायतकी यात्रा की। उनके विलायत जानेके पहले सिमन्दा-शैलसे जब वे कलकत्तेको लौटे आ रहे थे, उसी समय इस देशकी जनताने उनकी जैसी आन्तरिक भक्ति और कृतज्ञताके अभ्यर्थना की थी वैसी और किसी बड लाटकी देशी-जनतासे सम्मान और आदर पानेका सीभाग्य न हुआ। जब वे विलायतके लिये रवाने हुए, उस समय बहुतोंने सड़कके किनारे पडे हो कर उनके लिये आनन्दका आसू बहाया था। भारतवासीके हृदयमें जमा हुआ है, कि रिपन भारतवासीके अतिप्रिय थे। रिपनके समान भारत-हिनेपी कोई नहीं आये और कोई आयंगे वा नहीं सन्देह है।

लार्ड रिपनके विलायत जाने पर बहुतेरे अङ्गरेज राजपुरुष उनकी शासननीतिकी कठोर समालोचनामें प्रवृत्त हुए। कर्मवीर रिपनने भी अपनी शासननीतिका पडा समर्थन कर इङ्ग्लैण्डके नाना स्थानोंमें हृदयोन्माद-कर वक्तृता दी थी। १८८६ ई०में ग्लाडस्टोनके तीसरी बार प्रधान मन्त्रित्वकालमें लार्ड रिपन नौसेनाविभागके सर्वप्रधान कर्त्ता हुए थे। १८६२ ई०में उदारनैतिक-दलके प्राधान्यकालमें वे औपनिवेशिक मन्त्री (Colonial Secretary) हुए। रक्षणशील दलके अभ्युदयसे उन्होंने १८६५ ई०में उक्त पद परित्याग किया। ये लिड्सकी "यार्कसायर कालेज आव साइन्स" नामक सभाके सभापति तथा ओयेष्टराइडि प्रादेशिक मन्त्रि सभाके बहुत दिन तक सभापति रहे।

रिपु (सं० पु०) भक्ति रचनाति एष पाधि, (११ रि०वा
 १८८८ । उच्यते । २) इति कुः इकाराद्यधीपवायाः रिफ
 इत्यनुत्पत्तिरिति मन्त्रानु (एतः रिपि । उच्यते । ३१४)
 इति वाचस्पतिप्रत्ययः । १ गण्ड, दुस्मन् । गरीरक एतः
 रिपु एतद्—काम, मोघ, मोह, मोह मह भौर मारमर्ष ।
 २ चोरक नाम गण्डध्वज । (परमि०) ३ उग्रमण्डलाभि
 तन्मग एता स्थान । पवाय—गृहकोष, रिपुमन्त्र ।
 ४ उग्रक वाज भौर दिवदिक् पुत्रका नाम । (हरिग
 २४ १८) ५ वृषक पुत्रका नाम । (भा० १३ ६३३१०)
 रिपुपातिन् (सं० वि०) रिपु इत्याति इन् चिनि । अनुपाता,
 अनुभोदा नाम करनगाला ।

रिपुपातिना (सं० द्वा०) रतापिपेर ।
 रिपुन् (सं० रि०) गमुहला, वा सन् भोदा नाम करन
 नाम ।
 रिपुश्च (सं० पु०) १ राजपुत्रभेद, रिपोद्दाम । (स्मृत्पुत्रोप)
 २ सुपोदका पुत्र । (भा० ६ । ३१ । २६) ३ रिपुश्च पुत्र
 का नाम । (रिपुश्च ६८) दृष्टप्रथगोप राजा पिथ्विजिष्णु
 पुत्रका नाम । (भा० ६ । ३१ । ६०)
 रिपुता (सं० द्वा०) रिपामायाः क्त उच् । गण्टा,
 दुस्मन् ।
 रिपुता (सं० पु०) राजभेद । (अ० ३० १ । २२२)
 रिपुतास (सं० पु०) १ रिपुश्च तास । २ इन्भेद,
 एत हाषाका नाम । (इत्यन एतए १२ । २२३)
 रिपोरं (सं० द्वा०) १ द्वितीया एता या एत गण्डिका
 एतन् वा द्वितीया गुपना इनेक तिपे द्वितीया आय ।
 २ द्वितीया गण्डु वा एतदिक सम्मन्धका ज्ञानन पाय
 राजाका एता । ३ द्वितीया गण्डु कादिक वाकाका
 विष्णु विवरण ।
 रिपोरं (सं० पु०) १ द्वितीया समावाहक गण्डाद्गोप
 विभागका एत कादिका द्वितीया काम तव प्रचारक
 एतान्पे समावाहो भौर परमाभोदा गण्डु कर उग्र
 दिक् कर गण्डाद्गोप इता भार भवन एतक तिपे
 मार्भत्रिक सत्, गमिदि, इत्यन भादिका विवरण
 दिक् कर सत्, गण्डाद्गोप इता गण्डाद्गोप समा सम्मन्धन,
 इत्यन सत् भादिका इत्यन पर का कर एताका सत्
 उग्र कर इतका भौर द्वितीया द्वितीया दिक् कर

महत्त्वक सापञ्चनिक प्रत्नो पर उनका मन ज्ञानना होता
 है । २ वह जा द्वितीया समा या समितिका विवरण भौर
 व्याख्यान निगता है । ३ वह जा सरकारका मारले भरा
 मन या द्वितीया समा, गमिति या कौसिलको कारणा
 भौर व्याख्यान निगता है ।
 रिफ (सं० द्वा०) मात्रक जन्मस त् कर बाह
 स्थान ।
 रिपि (सं० रि०) राकू धवज (गण्डका इत्यन पुत्र
 का इत्यन पुत्र (निगता) उच्यते । २४२८) इति र, पाताङ्ग सः
 प्रत्ययस्त्वा पुत्र । अथम पाय । "गुभ्याति ट्पिर्मपरस्य
 ताया" (गृ० ६ । ५ । १) इतिमनुवाक्येन वापञ्च
 (११८)
 रिपुगह (सं० रि०) पायपादक, द्वितीय पाय वा पातक
 का नाम इता दा ।
 रिपु (सं० रि०) इण्डुमिण्डुः सन् सन्, सन्नागु ।
 भारम्भ करमं इण्डुः, त्रिभुक् करमं प्रमिकाया ही ।
 रिताम (सं० पु०) दोषो वा सृष्टियोका दूर द्वितीया ज्ञाना,
 द्वितीया स एता वा विभागं परित्यजन् द्वितीया ज्ञाना ।
 रितामं (सं० पु०) एत जा धार्मिक, सामाजिक वा
 राज्यात्मिक सुधार वा उन्नतिक तिपे प्रत्यन वा भाव्ता
 मन इता है ; सुधारक ।
 रितामंटा (सं० द्वा०) एत स एता वा स्थान जहाँ
 वासक ईया एत ज्ञान ही भौर उग्र भौवागिक जिज्ञा हो
 ज्ञानो ही द्वितीय ये गहोम बाहुर निद्वज कर ज्ञानिका
 निरादि कर सत् भौर नत् मानस कम कर एत, चरित्र
 स ज्ञानात्मिक ।
 रितामंटा इत्यन् (सं० पु०) रितामंटा एत ।
 रिशाक—प्राचिक भन्मते एत प्रसिद्ध स्थान । एत
 ताक करनका विसृत कारणा है ।
 रिपु (रि० पु०) मृदु एत ।
 रिपि (रि० पु०) १—गु (द्वा०) २८ २०५ ।
 रिपिन् (रि० द्वा०) १ एता एता वृत्तिका लताका
 विरता, इतका कृता परता । (रि० वि०) २ वृत्तको
 एता एता वृत्त ।
 रिन्दर (रि० पु०) इन् ।
 रिपिका (रि० द्वा०) इता विपिका एता ।

रिमेद (सं० पु०) अरिमेद, विट्प्रदिर ।

रियासत (अ० स्त्री०) १ राज्य, अमलदारी । २ रईस होनेका भाव, अमोरी ।

रियासी—काश्मीरराज्यके जम्बू विभागान्तर्गत एक दुर्गाधिष्ठित नगर । यह अक्षा० ३३ ५' ३० तथा रेखा० ७४' ५२' पूर्वके मध्य चन्द्रभागा नदीके बायें तट पर हिमालय पहाड़के दक्षिण ढालूदेगमे अवस्थित है । एक शैलकी चोटी पर दुर्ग स्थापित है ।

रिरंसा (सं० स्त्री०) रन्तुमिच्छा रम सन् रिवंस अ, टाप् । रमण करनेकी इच्छा ।

रिरंसु (सं० त्रि०) रन्तुमिच्छुः रम् सन्-सन्ननादुः । रमण करनेमें इच्छुक, रमणामिलायी ।

रिरक्षा (सं० स्त्री०) रक्षा करनेकी इच्छा ।

रिरक्षिषा (सं० स्त्री०) रक्षितुमिच्छा, रक्ष-सन् रिरक्षिष अ-टाप् । रक्षा करनेकी इच्छा ।

रिरक्षिषु (सं० त्रि०) रक्षितुमिच्छः रक्ष-सन्-उ । रक्षा करनेका अभिलाषी, रक्षा करनेकी इच्छा रखनेवाला ।

रिरक्षु (सं० त्रि०) रक्षा करनेकी इच्छा रखनेवाला ।

रिरमयिषु (सं० त्रि०) रम-णिच्-सन्-उ । रमण करनेमें इच्छुक ।

रिरिक्षु (सं० त्रि०) रेष्टुमिच्छु, रिश्-सन्-उ । हनन करनेमें इच्छुक, जिसे मारनेकी इच्छा हो ।

रिरो (सं० स्त्री०) पिच्छल, पीतल ।

रिल्हण (सं० पु०) काश्मीरका एक राजपुरुष ।

रिहक्षण द लो ।

रिलोफ (अ० पु०) वह सहायता जो आर्त्ता, पीड़ित या दीन दुःखी जनोंको दी जाय, सहायता ।

रिवाज (अ० पु०) प्रथा, रस्म ।

रिवाह्यर (फ० पु०) एक प्रकारका तमंचा जिसमें एक साथ कई गोलियाँ भरनेकी जगह होती है और गोलियाँ लगातार एकके बाद दूसरी छोड़ी जा सकती हैं ।

रिव्यू (अ० स्त्री०) १ किसी नवीन प्रकाशित पुस्तककी परीक्षा कर उसके गुण-दोषोंको प्रकट करना, आलोचना । २ वह लेख या निबंध जिसमें इस प्रकार किसी पुस्तककी आलोचनकी गई हो, समालोचना । ३ किसी निर्णय या फैसलेका पुनर्विचार, नजरसानी । ४ वे सामयिक

पत्र पत्रिकाएं जिनमें राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, वैज्ञानिक आदि विषयों पर आलोचनात्मक लेखोंका संग्रह रहनेके साथ ही नवीन प्रकाशित पुस्तकोंकी भी आलोचना रहती हो । जैसे—“माडर्न रिव्यू” “सेटरेडे रिव्यू” ।

रिश् (सं० पु०) हिंसाकारी, मारनेवाला ।

रिशाद्स् (सं० त्रि०) हिंसाकारी, मारनेवाला ।

रिष्ता (फा० पु०) नाता, सम्बन्ध ।

रिष्तेदार (फा० पु०) सम्बन्धी, नातेदार ।

रिष्तेदारी (फा० स्त्री०) रिष्ता होनेका भाव, सम्बन्ध ।

रिष्तेमद् (फा० पु०) सम्बन्धी, नातेदार ।

रिश्य (सं० पु०) रिश्यते हिंश्यते इति रिश्-ष्यप् । मृग ।

रिश्यत (अ० स्त्री०) वह धन जो किसीको उसके कर्त्तव्यसे विमुक्त करके अपना लाभ करनेके लिये अनुचित रूपसे दिया जाय, भ्रूस ।

रिश्यतग्रोर (फा० पु०) वह जो रिश्यत लेता हो, भ्रूस खानेवाले ।

रिश्यतखोरो (फा० स्त्री०) रिश्यत खानेका काम, भ्रूस लेनेका काम ।

रिय (सं० त्रि०) क्षतिकरण, हानि पहुंचाना ।

रियाण्यु (सं० त्रि०) हिंसक, मारनेवाला ।

(शब्द १, १४, १५ वाक्य)

रियम (हि० पु०) मृपम श्रेष्ठा ।

रियि (सं० पु०) मृपन्ति ज्ञानसंसारयोः पारं गच्छतीति श्रययः, मृयो गर्ती नाम्नोति कि रिपिहसादिश्च, विद्या-विद्यधर्मतयो रिययः प्रसिद्धाः । (अमरटीका-भरत) मृपि ।

रियाक (सं० त्रि०) १ हानि पहुंचानेवाला । (पु०) २ शिव ।

रियाकार (सं० स्त्री०) रिय-क । १ श्रेम, कल्याण । २ अशुभ, अमङ्गल । ३ अभाव, न होना । ४ नाश । ५ पाप ।

(पु०) ६ खड़्ग, तलवार । ७ फेनिल, लाल सहिजनका पेड़ । ८ पापशुक्र । ९ नष्ट, वरवाद ।

रिए (हिं० वि०) १ प्रसन्न । २ मोटा ताजा ।

रिएक (सं० पु०) रिए पव स्थायें कन् । रकशिप्र, लाल सहिजन ।

रिएताति (सं० त्रि०) श्रेमद्वर, सीमाव्यशाली ।

रिद्धमन्त्र (स० लि०) ममकृन्मभएडम । रिद्धि देता ।

रिद्धि (स० पु०) शेषित हिमस्ताति रिपु किष् । १ अङ्गु, लटपार । (शैवितो)

(स्तो०) रिपु-किन् । २ अशुभ, ममकृन् । रिद्ध या रिद्धि, ज्ञातवाक्यकी पहले रिद्धि ठोक करके फिर भायुर्वाय गणना की जाती है । अब तक २४ वर्ष म शीत ज्ञाय, तब तक रिद्धिकाम होता है । इस समय के मोतर रिद्धिका विचार कर उसका शुभाशुभका निर्णय करना चाहिए ।

ज्योतिषन, ज्ञातकक नक्षत्रपिण्डके किसी किसी निर्दिष्ट समयमें जन्म होनेसे भयया पाप वा शुभमन्त्रके दण्डमें जन्म हो कर तन्ममें उसी मन्त्रका शेष रहने से उनके अशुभवापक होने पर ज्ञातकका रिद्ध होता है । रिद्ध तीन प्रकारका है—योगज, नियत और अनियत और वैसे यह बहुत प्रकारका है—गण्डभोगरिद्ध, पताकिरिद्ध, द्वाएजन्मरिद्ध, महीका योगजरिद्ध इत्यादि । ज्योतिषमें जिन रिद्धोंका विशेष रूपसे लिखा हुआ है, उस दम यहाँ स श्रेयमें देने हैं ।

रिद्ध निर्णय करनेसे पहले गण्डरिद्धका निश्चय करना चाहिए । बाक्यका जन्ममात्र ही पहले देखना चाहिए कि उसमें किसी प्रकारकी रिद्धि है या नहीं । अब देखे कि किसी प्रकारकी रिद्धि नहीं है, तो उसके अन्याय विषयोंकी गणना करना चाहिए, अन्यथा अन्य फल-गणना व्यय है ।

गण्डरिद्ध—अश्विनी, मघा और मूल नक्षत्रके प्रथम तीन दृष्ट और ज्येष्ठा, रेवती और अश्लेषा नक्षत्रक शेष ५ दृष्ट गण्डरिद्ध कहलाता है । परन्तु यबनाचार्य प्रथमोक्त दो नक्षत्रोंक शीत दृष्टकी गण्ड ५ दृष्ट सेत हैं । इस समयक मध्य किसीका भी जन्म हो, तो उसका गण्ड रिद्धमें जन्म समझना चाहिए ।

दिवस, सन्ध्या और रात्रिदृष्ट—ज्येष्ठाक शेष पांच दृष्ट और मूलाक भादि तीन दृष्ट, दिवसम इतनेस दिवागण्ड समझना चाहिए और इसी प्रकार अश्लेषाक शेष पांच दृष्ट और मघाक प्रथम तीन दृष्ट रात्रिमायमें होनेसे रात्रिगण्ड, तथा रेवतीक शेष पांच दृष्ट आर अश्विनाके प्रथम तीन दृष्ट सन्ध्याकाठमें इतनेस सन्ध्या गण्ड होता है ।

गण्डरिद्धका फल—सन्ध्यागण्डमें जन्म होनेसे बाक्यकी मृत्यु, रात्रिगण्डमें होनेसे माताकी मृत्यु और दिवागण्डमें होनेसे पिताकी मृत्यु होती है । परन्तु इसमें इतना विशेष है कि दिवागण्ड नक्षत्र रात्रिमें तथा रात्रिगण्ड नक्षत्र दिवसमें और सन्ध्यागण्ड नक्षत्र दिवस वा रात्रिमें होनेसे उक्त गण्डरिद्ध नहीं होता ।

गण्डरिद्धका भोग काल देखती नक्षत्रमें जन्म हो कर दृष्टशेष होनेसे उसका रिद्धिकाल बढाई वर्ष अश्विनी नक्षत्रमें दश मास, ज्येष्ठामें दश वर्ष, मूलामें छः वर्ष, मघामें चार वर्ष और अश्लेषामें एक वर्ष रिद्धिकाल होता है । इस समयके अन्तर हो अशुभ हुआ करता है ।

गण्डयोगमें ज्ञात शिशुका विधान—उक्त गण्डरिद्धमें जिसका जन्म होता है, उसे परित्रयाम करना ही उचित है, भयया ३ मास उत्तीर्ण बिना हुए पिताके उसे देखना न चाहिए ।

गण्डरिद्धिमन्त्र—यदि दिवागण्डमें किसीका और रात्रिगण्डमें पुत्रका जन्म हो, तो उन दोनोंमेंस किसीको भी गण्डशेष नहीं होता । अर्थात् ज्येष्ठाक शेष पांच दृष्ट और मूलाके भादि तीन दृष्ट, ये मात दृष्ट दिवागण्ड है, इनमें किसी कन्याका तथा अश्लेषाके शेष पांच दृष्ट और मघाके भादि तीन दृष्ट रात्रिगण्ड है, इनमें पुत्रका जन्म होनेसे उनके गण्डरिद्ध नहीं होती । दिवागण्ड नक्षत्र रात्रिमें और दिवसमें होनेसे भी गण्डशेष नहीं होता ।

गण्डविधि-विधि—प्रतिपद, अमावस्या, पक्षी, वधमी और द्वादशा व गण्ड तिथियाँ हैं, इस लेख इन्हे विधिविधि कहा गया है । इन तिथियोंमेंस जिस किसी तिथिम जन्म होन पर ज्ञातक इन्के समान होन पर भी जीवित नहीं रह सकता ।

गण्डरिद्धिमं जन्म होनस विधानक अनुसार उसकी शान्ति करना मायश्यक है । शान्तिका विधान इस प्रकार है—ऊँ ह्रम, अन्म, ऊँ अथवा गोरोचनाका बोके साथ मिठा कर चार करसोंमें रवा तथा सहज्राक्ष मन्त्र पढ़ कर उन त्रयीस बाक्यका स्नान कराना । दिनमें जन्म होने पर पिताक माय तथा रात्रिका माताक साथ और सन्ध्याका जन्म होन पर पिता और माता

दोनोंके साथ स्नान करना चाहिए। उसके बाद घृतपूर्ण कांस्य पात्र, धेनु और हिरण्यदान तथा नवग्रहकी पूजा करना उचित है।

गण्डरिष्टि ठीक करके उसके बाद पताकिरिष्टिका निर्णय करना चाहिए। पताकिरिष्टि बालककी विशेष रिष्टि है। पताकिरिष्टि होनेसे बालक किसी भी तरह नहीं बच सकता। पताकी देखो।

गण्ड जात बालक यदि कहीं दैवात् बच जाय, तो वह अशेष ऐश्वर्यमाली होता है।

पताकिरिष्टिके बाद नवग्रह-रिष्टि स्थिर करनी चाहिए।

रविरिष्टि—यदि पापग्रहणकेन्द्र वा त्रिकोणमें हों और शुभग्रह लग्नसे षष्ठ, अष्टम और द्वादश राशिमें हों तथा सूर्योदयके समय जन्म हो, तो जातक उसी समय मर जाता है। इसको रविरिष्टि कहते हैं।

चन्द्ररिष्टि—पापग्रह इष्ट चन्द्र लग्नको छठे, आठवें वा बारहवें राशिमें बालकका जन्म होनेसे वह उसी समय मर जाता है और उसमें शुभग्रहकी दृष्टि होनेसे ८वर्षमें तथा शुभाशुभकी दृष्टिमें चार वर्षोंमें मृत्यु होती है।

पापयुक्त चन्द्ररिष्टि—लग्न, पंचम, सप्तम, अष्टम और द्वादश स्थानके किसी एक स्थानमें चन्द्रके पापयुक्त हो कर अयस्थान करनेसे तथा बुध, बृहस्पति और शुक्र इनमेंसे किसी एक ग्रहकी दृष्टि वा संयोग न होनेसे बालककी अकाल मृत्यु होती है। परन्तु इनकी दृष्टि नहीं हो, तो नहीं होती।

दो पापोंके मध्यगत चन्द्ररिष्टि—यदि चन्द्र दो पाप ग्रहोंके मध्यमें रह कर लग्नके चतुर्थ, सप्तम वा अष्टम स्थानमेंसे किसी एक स्थानमें रहे, तो देवता द्वारा रक्षित होने पर भी बालकका जीवन नाश होता है।

लग्नक्षीण चन्द्ररिष्टि—यवनाचार्यके मतसे क्षीण चन्द्र लग्नमें वा परमग्रहके साथ किसी केन्द्रमें अथवा अष्टम स्थानमें पापग्रहके साथ मिलित होने पर अवश्य ही जातकको अकाल मृत्यु होती है।

मङ्गलरिष्टि—यदि लग्नमें मङ्गल रह कर शुभग्रह द्वारा इष्ट न हो, अथवा छठे या आठवें स्थानमें शनिके

साथ युक्त हो, अथवा सप्तम स्थानमें शनि मङ्गल पकृत हों, तथा शुभग्रह द्वारा दृष्ट न हो, तो जातककी उसी वक्त मृत्यु हो जाती है।

बुधरिष्टि—यदि कर्कटराशिमें बुध हों, तथा वह यदि लग्नके छठे वा आठवें स्थानमें हों, तथा चन्द्र द्वारा वह बुध यदि दृष्ट हो, तो जातककी चार वर्षोंमें मृत्यु हो जाती है।

बृहस्पतिरिष्टि—बृहस्पति यदि मेष वा वृश्चिक राशिमें रह कर किसी लग्नके आठवें स्थानमें हों तथा वह बृहस्पति यदि रवि, चन्द्र, मंगल और शनि द्वारा दृष्ट हो और शुककी दृष्टि न रहे, तो जातककी तीन वर्षों बाद मृत्यु होती है।

शुक्ररिष्टि—शुक्र यदि सूर्यके वा चन्द्रके प्रथम हो और वह स्थान लग्नसे षष्ठ, अष्टम वा द्वादश हो, तथा शुक्र यदि पापग्रह द्वारा दृष्ट हो, तो जातककी ६ वर्षोंके भीतर मृत्यु हो जाती है।

शनिरिष्टि—शनि लग्नमें रह कर पापग्रह द्वारा दृष्ट होनेसे १६ दिनके भीतर, लग्नमें केवल शनि रहनेसे एक वर्षके भीतर और पापग्रहयुक्त हो कर लग्नमें रहनेसे एक मासके भीतर जातकको मृत्यु हो जाती है।

राहुरिष्टि—राहु यदि केन्द्रस्थानमें रहे और पापग्रह द्वारा दृष्ट हो, तो किसीके मतसे दश और किसीके मतसे सोलह वर्षोंमें जातककी मृत्यु होती है।

केतुरिष्टि—जिस नक्षत्रमें केतुका उदय होगा, उस नक्षत्रमें किसी बालकका जन्म होनेसे यदि जन्ममूहूर्त्त राहु या सर्पमूहूर्त्त हो, तो जातककी अकाल मृत्यु होती है।

इस प्रकार नवग्रह रिष्टि स्थिर करनी होती है। उसके बाद वह देखना आवश्यक है, कि द्वादश लग्न रिष्टि है वा नहीं। द्वादश लग्न रिष्टि निम्नोक्त प्रकारसे जानी जाती है।

मेषलग्नरिष्टि—मेष लग्नमें जन्म हो कर लग्नमें चन्द्र और मङ्गल तथा मकरको छोड़ दूसरी किसी राशिमें शनि और रवि रहे, तो जातक तीन दिनोंके अन्दर मर जाता है।

वृषलग्नरिष्टि—यदि वृष लग्नमें जन्म हो तथा यह

जान गृहस्वपति या शनिसे पट्ट स्थानमें स्थित हो अर्थात् शनि गृहस्वपति धनु राशिमें और मङ्गल अष्टम स्थानमें रहे, तो चौदह दिनोंमें अग्न खेनेवाला परलोकवासी होता है।

मिथुनलग्नरिष्टि—मिथुन लग्न हो कर कर्कटमें शनि तथा धनुमें रवि रहे, तो चौदह दिनोंके अर्द्ध जातक की मृत्यु होती है।

कर्कटलग्नरिष्टि—अग्न लग्न कर्कट होने तथा बुध में या कुम्भ राशिमें गृहस्वपति रह कर मङ्गल और राहु कर्कटके द्वय होनेसे जातक चौदह दिनोंमें मृत्युमुक्तमें पतित होता है।

सिंहलग्नरिष्टि—यदि सिंहा लग्नमें अग्न हो और चन्द्र लग्नमें अथस्थिति करै तथा मकर मिथुन अथ राशिमें शनि और रवि रहे, तो पिताके साथ जातककी मृत्यु होती है।

कन्यालग्नरिष्टि—कन्यालग्नमें अग्न होत तथा इस लग्नमें चन्द्र गृहस्वपतिके चन्द्रमें शनिक रहनेसे माताके साथ जातककी मृत्यु होती है।

तुलालग्नरिष्टि—यदि तुला लग्नमें अग्न हो और पट्टमें शुक्र तथा लग्नमें चन्द्र रह, तो बीस दिनोंके भीतर जातक करालकालके मुषमें पतित होता है।

वृश्चिकलग्नरिष्टि—वृश्चिक लग्नमें यदि अग्न हो तथा कर्कटमें यदि चन्द्र रहे, तो दिनोंमें अग्न खेनेवाला रातमें और रातमें अग्न खेनेवाला दिनोंमें मरता है।

धनुलग्नरिष्टि—यदि धनु लग्नमें अग्न हो तथा गृहस्वपति इस लग्नमें रहे, मङ्गलके गृहमें अर्थात् मय या वृश्चिक राशिमें शनि रहे, तो बीस दिनोंके भीतर जातक की मृत्यु होती है।

मकरलग्नरिष्टि—मकर लग्नमें अग्न होते समय यदि मेषमें चन्द्र और सिंहा में रवि रिष्टि हो तो जातक सोलह दिनोंमें मर जाता है।

कुम्भलग्नरिष्टि—कुम्भ लग्नमें अग्न हो कर अशुभमें चन्द्र तथा कन्या नुनामें शुक्रके रहनेसे जातककी मातुलके साथ मृत्यु होता है।

मानलग्नरिष्टि—यदि मान लग्नमें अग्न हो और इस स्थानमें चन्द्र तथा वृश्चिकमें शनि रहे, तो बारह

दिनोंके अर्द्ध जातक गृहखोरको छोड़ परलोक सिधा रता है।

पञ्चलग्नमें रिष्टिका विषय इस प्रकार वर्णित हुआ है—

यदि राहु चन्द्रके धरने रह कर चन्द्रके साथ कि या सूर्यके साथ रहे और शनि तथा मङ्गल लग्नको देवे, तो रिष्ट होता है और इस रिष्टके होनेसे जातक एक पक्षमें प्राणत्याग करता है। पट्टमें चन्द्र सप्तममें मङ्गल और नवममें शनि रहनेसे जातकका माताके साथ मृत्यु होती है। लग्नमें शनि, तुलायमें गृहस्वपति और अष्टममें चन्द्र रहे, तो जातकका अमङ्गल होता है। सप्तममें शनि, नवममें ध्रुव, एकादशमें शुक्र और शुक्र रहनेसे रिष्ट होता है और इस रिष्टिके फलसे जातक एक मासमें मर जाता है। लग्नमें शनि और मङ्गल, पञ्चममें चन्द्र तथा द्वादशस्थानमें बुध रहनेसे रिष्ट होता है। लग्नमें शनि और मङ्गल, अष्टममें चन्द्र या गृहस्वपति रहे, तो जातकका अयोग व्यर्थ होता है। रवि और चन्द्र पट्टमें रहनेसे रिष्टि होती है। अष्टम स्थानमें पाप ग्रह तथा द्वादश स्थानमें बुध, पट्टमें या अष्टममें चन्द्र तथा सप्तममें शनि रहनेसे जातक पिता और माताका मृत्युकारो तथा आप मा एक मासमें मृत्युमुक्तमें पतित होता है।

यदि शुभ अर्थात् सौम्यराशि लग्न हो तथा इस लग्नसे अष्टमस्थानमें चन्द्र तथा अशुभमें शनि रहे, यदि जातकके लग्नमें रवि, शुक्र और शनि तथा द्वादशमें गृहस्वपति, लग्नमें रवि सप्तममें मङ्गल तथा चन्द्रमें शनि, लग्नमें चन्द्र और शनि तथा द्वादशमें रवि और मङ्गल तथा कोइ शुभग्रह लग्नको न देवे लग्नमें मङ्गल, अशुभ में राहु और द्वादशमें शनि तथा लग्नमें शनि, अष्टममें चन्द्र और द्वादशमें शुक्र, लग्नमें समस्त पापग्रह, द्वादशमें समस्त शुभग्रह, सप्तम या अष्टम राहु रहे, वह दो स्थान चन्द्र या सूर्यका गृह हो तथा शनि और मङ्गल लग्नको देवे, तो इन सब पापोंके कारण रिष्टि दोपसे जातकका अविवाह मृत्यु होती है।

मातृरिष्टि—दिनोंमें अग्न होनेसे शुक्र तथा रातमें अग्न होनेसे चन्द्र काजकका माता होत है अर्थात् इन

दो ग्रहोंकी अवस्थानुसार माताके शुभाशुभका विचार करना होता है। यदि दिनमें जन्म हो और शुक्रग्रह पापग्रहके साथ रहे अथवा उससे दृष्ट हो, तो जातककी मातृरिष्ट होती है। यदि शुक्र पापग्रहके घरमें रहे तथा शुभग्रह द्वारा दृष्ट न हो, तो जातकका मातृरिष्ट होती है। यदि रातमें जन्म हो तथा पापग्रहके घरमें चन्द्र रह कर बहुत पापग्रहोंके साथ मिले, हो तो उसका मातृरिष्ट होता है। यदि क्षोणचंद्रको समस्त पापग्रह देखे तथा यदि किसी शुभग्रह द्वारा दृष्ट न हो, यदि अष्टम या षष्ठस्थानमें चन्द्र और सप्तममें मङ्गल पापग्रहयुक्त हो, यदि मङ्गल चन्द्रके अष्टममें तथा यह स्थान यदि लग्नका षष्ठ हो, तो मातृरिष्ट होता है। और मों यदि शुक्रग्रहको मंगल देखे, लग्न या लग्नसे चतुर्थ स्थानमें बलवान् पापग्रह रहे, लग्न और चतुर्थ स्थानस्थितग्रह द्वारा तथा चतुर्थाधिपति ग्रहके अवस्थान द्वारा मातृरिष्ट स्थिर करना होता है।

यदि चन्द्र शनि और मङ्गलका मध्यवर्ती हो अथवा रवि और मङ्गलके साथ मिला रहे, तो मातृरिष्ट होता है। यदि केन्द्रस्थानमें पापग्रहके साथ चन्द्र पापग्रह केन्द्र और त्रिकोणमें रहे तथा पापग्रहयुक्त शुक्रके चतुर्थ पापग्रह रहे, यदि चन्द्र पापग्रह द्वारा अवलोकित हो तथा षष्ठमे पापग्रह रहे, यदि लग्नके सप्तम स्थानमें सूर्य उच्च या नीच राशिमें अवस्थान करे, तो जातकका मातृरिष्ट होता है। इन सब मातृरिष्टोंसे जातकका मातृविनाश होता है।

पितृरिष्ट—दिनमें सूर्य और रातमें शनि जातकका पिता होता तथा रातमें रवि पिताका भाई और दिनमें शनि पिताका भाई होता है। लग्नसे षष्ठ और अष्टम स्थानमें रवि अवस्थान कर शनि और मङ्गल द्वारा अवलोकित हो तथा बृहस्पति और शुक्र यदि न देखे, तो जातकका पितृरिष्ट होता है। द्वितीय स्थानमें राहु और शुक्र, अष्टम स्थानमें चन्द्र और शनि, मङ्गल मित्त-ग्रहमें लग्नसे चतुर्थ स्थानमें अवस्थान करे, यदि लग्नसे अष्टम स्थानमें मङ्गल द्वादशस्थानमें दो या तीन पापग्रह रहे तथा उस पर शुभग्रहकी दृष्टि न पड़े, यदि रवि अष्टम स्थानमें किंवा राहुके साथ मिल कर जन्मलग्नमें रहे, तो पितृरिष्ट होता है।

लग्नसे षष्ठमें चन्द्र, सप्तममें मङ्गल तथा दशममें शनि रहे, यदि चंद्र शुभग्रह द्वारा दृष्ट या युक्त न हो कर तीन पापग्रहोंसे दृष्ट हो जानेसे चतुर्थस्थानमें मङ्गल रहे, चन्द्र या मङ्गल पापग्रहयुक्त हो कर अष्टम स्थानमें रहे, सप्तममें मङ्गल तथा अष्टममें शनि और रवि रह कर यदि शुभग्रहसे दृष्टि न हो, सूर्य जिग राशिमें रहे, उसी राशिसे सप्तम राशिमें शनि और मङ्गल रहे अथवा अन्य किसी राशिमें शनि और मङ्गलके बीच रवि रहे, तो यह सब योग जातकका पितृरिष्टकारक होता है तथा इसके होनेसे शीघ्र जातकका पितृविधाय होता है।

त्रातृरिष्ट—धनस्थानमें शनि और मङ्गल तथा तृतीयस्थानमें राहुके रहनेसे जातकका त्रातृरिष्ट होता है।

लग्न और राश्याधिपतिरिष्ट—लग्नाधिपति और राश्याधिपतिग्रह अस्ममित हो कर लग्नके षष्ठ, अष्टम और द्वादश राशिमें रहनेसे यथाक्रम षष्ठ, अष्टम और द्वादश वर्षके मध्य जातककी मृत्यु होती है।

शुभग्रहरिष्ट—शुभग्रहगण अशुभ और वक्रग्रह द्वारा दृष्ट हो कर लग्नके षष्ठ या अष्टम अथवा दोनों स्थानोंमें रह कर कोई शुभग्रह द्वारा दृष्ट न होनेसे एक मासमें जातकका मरण होता है।

पापग्रहरिष्ट—कोई एक बलवान् पापग्रह शुबुदृष्ट और शत्रुग्रहस्थित हो कर लग्नके अष्टम स्थानमें रहनेसे जातक मृत्युमुखमें पतित होता है।

पहले इन सब रिष्टोंका विचार कर उसका शुभाशुभ निर्णय करना होता है। रिष्ट होनेसे हो जो उसकी मृत्यु ठीक करनी होगी, वह नहीं। रिष्टभङ्ग है क्या नहीं, वह भी देखना होगा।

रिष्टभङ्गयोग—यदि केन्द्र स्थानमें तथा त्रिकोणमें अर्थात् नवपञ्चममें एक भी शुभग्रह रहे और वह ग्रह अस्तमित न हो कर उदितवस्थामें रहे, तो जातकका सब दोष नष्ट होता और उसे दीर्घायु और पीड़ारहित करता है। शुभग्रहगण सम्पूर्ण बलवान्, पापग्रहगण दुर्बल तथा शुभग्रहके क्षेत्रमें लग्न हो कर शुभग्रह द्वारा दृष्ट होनेसे जातक समस्त आपत्तोंसे लुप्तकारा पाता है।

पूष्यचन्द्र शुभग्रहके क्षेत्रमें रह कर शुभग्रहके सर्वांगम
रक्षित रिष्ट भङ्ग होता है। विशेषतः चन्द्र यदि शुक्र
द्वारा दृष्ट हो तो सब प्रकारका दोष एकबारगी नष्ट हो
जाता है। जिस प्रकार गवय समस्त सर्पकुलको नाश
करता है, उसी प्रकार शुभग्रहका मध्यबन्धों चन्द्र बाधक
का समस्त रिपुक्षोप नष्ट करता है।

यदि पूर्णचन्द्र अपनेसे उच्च या अपने धरमें अथवा
मिथ शुभग्रह या अपने पञ्चगममें रह कर शुभग्रह द्वारा
दृष्ट हो तथा पापग्रहयुक्त किंवा पापग्रह अथवा ठाटका
मिथ शुभग्रह द्वारा दृष्ट न हो, तो दिनपति यानो स्य
जिस तरह हिमराशि नष्ट करता है, उक्त चन्द्र मो उसी
तर्ह सभी रिपुक्षोप विनाश करता है। चन्द्रच पक्ष, सप्तम
बीर भद्रम राशिमें पापग्रह न रह कर शुभग्रहमें रहनेसे
सफल रिष्ट भङ्ग होता है।

यदि शुक्रपक्षका रातमें तथा कल्पपक्षकी विनमें
जन्म हो तथा शुभाशुभ ग्रह द्वारा भवकोकित चन्द्र पक्ष
या भद्रम स्थानमें रहे, तो उक्त चन्द्र शिशुको बिनाश न
कर उसकी सब क्षोषोंसे रक्षा करता है।

तुला, धनु बीर मीन राशिमें से कोई एक राशि जन्म
क्षण होनेसे यदि उसमें शनि रहे, तो समस्त रिष्टक्षोप
नष्ट होता है, किन्तु अन्य राशि जन्म हो कर उसमें शनि
रहे, तो मृत्यु होती है। जन्मके प्लोय, पक्ष या एका
दश स्थानमें यदि राहु रहे तथा यह राहु यदि शुभग्रह
द्वारा दृष्ट हो, तो रिष्टभङ्ग होता है।

मेघ, वृष अथवा कर्कराशिमें राहु भवस्थान करनेसे
रिष्टभङ्ग होता है। शनि बीर राहु एक साथ मिथ कर
यदि सिंह राशिमें अवस्थान करे, तो जातकका समस्त
रिष्टभङ्ग होता और वह भूपति या राजा होता है। यदि
सममें बुध, सप्तममें शुक्र तथा कर्कराशिमें वृहस्पति
रहे, शुक्र अपने धरमें तथा पापग्रहगण गायक्षेत्रमें रह कर
शुभग्रह द्वारा दृष्ट हो, चन्द्र, बुध, शुक्र या वृहस्पतिके
द्रेकक्षोपमें द्वाब्जगाममें रहनेसे किंवा अनाधिपतिको
प्लोय, चतुर्थ, पक्ष, द्वाय या एकादशमें हो कर शुभग्रह
होनेसे सफल रिष्टक्षोप विनष्ट होता है।

(वातकच-स्वोक्तिस्तम्भ०)

जातकका इस प्रकार रिष्ट और रिष्टभङ्ग विवर

करना होता है। जिस जातकक रिष्ट रहता है उसका
शुभाशुभ निर्णय करना होता है।

रिष्क (सं० झी०) जन्मसे बाह्य स्थान।

रिष्य (सं० पु०) रिष्यने इति रिष्य-क्यप्। मृगशिरस्य।

रिष्यमूठ (सं० पु०) वृत्तिभक्ता एक पर्वत अर्था रामजीसे
सुभोयको मित्रता हुए थी। मृत्पूक रेखा।

रिष्य (सं० सि०) रिष्य क्षये (सर्वनिपुणरिष्वादि। उख् १।१।१३)
इति यत् प्रत्ययेन साधु। बधक, पातक।

रिस (दि० झी०) क्षोभ, गुस्ता।

रिसान (हि० पु०) तामिके प्लोको कैया कर इनको साफ
करनेका काम।

रिसाना (हि० कि०) किसी पर क्रुद्ध होना, विषमना।

रिसाल (का० पु०) राजकर जो मुफ्तसलसे राजधानी
भेजा जाता है।

रिसालवार (का० पु०) १ पुण्डसवार, सेनाका भक्तसर।

२ रिसाल या राजकर से जाने यात्रोका प्रधान संबालक,
चक्रवर्तार।

रिसाला (का० पु०) पुण्डसवारोको सेना, अन्धारोको सेना।

रिसिभाना (हि० कि०) क्रुद्ध होना, कुपित होना।

रिसिक (दि० झी०) रिषिभाना देखो।

रिसोइ-वेदारराजक थासीम जिम्नलभोत एक प्रधान
नगर। यह अक्षां १६ ५८ ३० उ० तथा देशां ७३
५१ पू० तक विस्तृत है। इसका प्राचीन नाम 'अपि
यल्लीन' था। १८५८ ५२ इ०में हीराबाद संभारकके एक
विभागने इस नगरके उपकच्छरिष्य विभन्ना गाँवमें एक
बृह रोहिला दस्युको धारतर युद्धके बाह् अपने कक्षमें
किया।

रिष्क (म० झी०) भोका, अबाबदेही।

रिष्टवाच (अ० झी०) कन्नाह पर बाँयेकी घड़ी।

रिष्य (सं० अर्थ०) जेहनकरण, काटना।

रिष्यनाना (का० पु०) यह लेख जिसमें किसी पक्षके
रक्षण रखे जाने और उसका सम्बन्धकी शर्तोंका
अर्थ हो।

रिष्यल (अ० पु०) १ नाटकक अभिनयका अभ्यास।

जो किसी कार्यको ठीक समय पर करनेसे पहले किया
जाय।

रिहल (अ० स्त्री०) कानकी वनी हुई केँचीनुमा चौकी जिस पर रख कर लोग पुस्तक पढ़ते हैं और जिसका आकार इस प्रकारका × होता है।

रिहा (फा० वि०) १ बंधन आदिसे मुक्त, छूटा हुआ।
२ किसी बाधा या सकटसे छूटा हुआ।

रिहाई (फा० स्त्री०) छूटकारा, मुक्ति।

रिहाण (सं० पु०) १ सेवा करना। २ पदलेहन, पैर चाटना। ३ आनुगत्यस्वीकार करना।

रिहावस् (सं० पु०) १ दस्यु। २ स्वैन, चोर।

(नैषध० ३१४)

रिहलन—काश्मीरका एक राजपुरुष। (राजन० ७१६३८)

रिहन (सं० पु०) चौर।

रीधना (हिं० क्रि०) तैयार करनेके लिये खाद्य पदार्थको तलना, उवालना या पकाना, रींधना।

री (सं० स्त्री०) री-क्विप्। १ गति। २ रव, शब्द।
३ वध, हत्या।

री (हिं० अन्त्य०) सन्धियोंके लिये सम्बोधन, अरी।

रीगन (हिं० पु०) एक प्रकारका धान जो भादों या कुआँरोंमें तैयार होता है।

रीछ (हिं० पु०) भालू।

रीछराज (हिं० पु०) जामघत।

रीजे ट (अ० पु०) वह जो किसी राजाकी नावालगा, अनुपस्थिति या अयोग्यताकी अवस्थामें राज्यका प्रबन्ध या शासन करता हो, राज-प्रतिनिधि।

रीजेँसी (अ० स्त्री०) रीजेँटका शासन या अधिकार।

रीज्या (सं० स्त्री०) १ घृणा, नफरत। २ भला बुरा कहना, लानत, भलामत, निन्दा।

रीभ (हिं० स्त्री०) १ किसीके ऊपर रीभनेकी क्रिया या भाव, किसीकी किसी बात पर प्रसन्नता। २ किसीके रूप, गुण आदि पर मोहित होनेका भाव।

रीभना (हिं० क्रि०) १ किसी बात पर प्रसन्न होना।
२ मोहित होना, मुग्ध होना।

रीठ (हिं० स्त्री०) १ तलवार। २ युद्ध। (वि०) ३ अशुभ, खराब।

रीठा (हिं० पु०) १ एक बड़ा जंगली वृक्ष। यह प्रायः बंगाल, मध्यप्रदेश, राजपूताने तथा दक्षिण भारतमें पाया

जाता है और देखनेमें बहुत सुन्दर होता है। २ इस वृक्षका फल जो बेरके बराबर होता है। इसको लोग सुपा कर खाते हैं। इसे पानीमें भिगो कर मलनेसे फेन निकलता है जिससे कपड़े धोये जाते हैं। काश्मीरमें जाल आदि प्रायः इसीसे साफ किये जाते हैं। यह रेशम तथा जवहिरात धोनेके काममें भी आता है। इसे फेनिल भी कहते हैं। ३ यह भट्टा जिसमें चूना बनानेके लिये कंकर फूँके जाते हैं।

रीठाकरञ्ज (सं० पु०) खनामप्यात वृक्ष, रीठा।
वम्बईमें—रिवा, तामिलमें—पिञ्जान तोट्टई, तेलङ्गमें—

रीठाकरञ्ज, मनेचट्टु। संस्कृत पर्याय—गुच्छक, गुच्छ-पुष्पक, गुच्छफल, अरिष्ट, मङ्गल्य, कुम्भवीजक, प्रकीर्य, सोमवल्क, फेनिल। इसके फलका गुण—तिक, उष्ण, कटु, स्निग्ध, वात, कफ, कुष्ठ, कण्डूनि, विष और विस्फोटनाशक। (राचनि०)

रीठो (हिं० स्त्री०) रीठा देखो।

रीडर (अ० पु०) १ वह जो पढ़े, पढ़नेवाला। २ वह जो लेख या पुस्तकोंके प्रूफ पढ़ता या संशोधन करता है, संशोधक। ३ कालेज या विश्वविद्यालयका अध्यापक या व्याख्याता। (स्त्री०) ४ पाठ्य, पुस्तक।

रीडिंगरूम (अ० पु०) वाचनालय देखो।

रीठ (हिं० स्त्री०) पीठके बीचोबीचकी वह खड़ी हड्डी जो गर्दनसे कमर तक जाती है और जिससे पसलियाँ मिली हुई रहती हैं, मेरुदण्ड। यह वास्तवमें एक ही हड्डी नहीं होती, बल्कि बहुत-सी हड्डियोंकी गुरियोंकी एक शृंखला होती। इसे शरीरका आधार समझना चाहिये। इसका सीधा लगाव मस्तिष्कसे होना है और बहुतसे संवेदन-सूत्र इसमेंसे दोनों ओर निकल कर फैले रहते हैं।

रीठक (सं० पु०) पृष्ठवंश, मेरुदण्ड। रीठा देखो।

रीठा (सं० स्त्री०) रिह-वन्वे औणादिका क्तः। अवज्ञा, अपमान।

रीण (सं० त्रि०) री-क्त, ओदितश्चेति न। १ छून-जलादि। २ क्षरित।

रीत (हिं० स्त्री०) रीति देखो।

रीतना (द्वि० क्रि०) १ खाको होना रिक्त होना । २ खाको करना, रिक्त करना ।

रीता द्वि० वि०) जिससे भ्रष्टर कुछ न हो, घाबी ।

रीति (सं० स्त्री०) रो-टिच्-टिन्त् या । १ कोइ कार्य करनेका हुय प्रकार । २ परिपाटी, रीयाज । ३ नियम, कायदा । ४ बीहविन्त् कोइडी मैल, मण्डूर । ५ दग्ध स्पर्णादि मख, जैसे हुए सोनेको मैल । ६ भारकूक पीतल । ७ सोसा । ८ गति । ९ समाप । इसका पर्याय—रूप, कसण भाव भावना, प्रकृति, सद्गुण रूप तस्य धर्म, समै निरुती शाक, सतस्य, ससिदि । १० स्तुति, प्रशंसा । "महोय रीतिः शयसासत्त्वं पूषन्" (ऋ ३२२५१५) 'महोय रीतिः महती स्तुतिरिय' (वाग्वय) ११ काव्यकी भावना । एक एक रीतिके अनुसार काव्य बणित होता है, इसलिये यामल रीतिको काव्यको भावना कहा है । यह रति मोडा, प्रसाद और माधुम्यायके मेवस गीत, वैद्वर्मी और पाञ्चाल तोन तरहकी है ।

(कल्पवृक्षिका)

साहित्यपर्यायमें लिखा है, कि परसंपरनाका नाम रीति है । यह इसको उपकारिणी है । यह रीति चार प्रकारका है,—वैद्वर्मी, गीतकी, पञ्चाकी और नारी । जहां माधुम्यब्रह्म वर्ण द्वारा सुखनित परदरना करने पर भी यह भ्रष्टि या भ्रष्टिचिपुक्त रहती है, उसे वैद्वर्मी, जहां मोडाप्रकाशक वर्ण द्वारा पर रचना होता है तथा यह पर समासबहुल होता है, उसे गीतकी और जहां वैद्वर्मी तथा गीतकी इन दो रीतिके अन्वाचा अन्य पर्यायद्वारा समास युक्त पांच या छ पर द्वारा सुखनित रचना होता है, उसे पाञ्चाकी रीति कहते हैं ।

वैद्वर्मी और पाञ्चाकी रीतिको मध्यस्था जो रति है, उसे नारी कहते हैं अर्थात् जहां वैद्वर्मी मा नारी तथा पाञ्चाकी भी नारी है और यही दोनोंको मध्यपरिचीनी है, यहां आया रीति होती है । (काश्यपपर्याय ६ परि)

रीतिक (सं० स्त्री०) पुष्पाञ्जन, एक प्रकारका मञ्ज ।
रतिका (सं० स्त्री०) १ कुसुमाञ्जन, अस्तेका मस ।
२ पिच्छ, पीतल ।

रीतिपुत्र (सं० स्त्री०) रीतेः पिच्छस्य पुत्रमित्य तदा एतित्यात् । कुसुमाञ्जन, अस्तेका मस ।

रीम (अ० स्त्री०) १ कागजका वह गूना जिसमें पास बूत्ते होते हैं । २ मवाय, पोष ।

रीर (सं० पु०) शिष्य, महादेव ।

रीर (द्वि० स्त्री०) रीर रेखा ।

रीरो (सं० स्त्री०) पिच्छ, पीतल ।

रीस (द्वि० स्त्री०) १ स्थि रेखा । २ ग्राह । ३ स्पर्शा, बरषटा ।

रीसना (द्वि० क्रि०) मूष करना, कफा होना ।

रीसा (द्वि० स्त्री०) एक प्रकारकी भाङ्गी जिसकी छालके रेशोंसे रसियां बनती हैं । यह भाङ्गी हिमाचल और आसिया पहाड़ों पर होती है । इसे बन करकोरा या बनरोहा भी कहते हैं ।

रीहा (द्वि० स्त्री०) गेठा व बो ।

रीज (द्वि० पु०) एक प्रकारका बाजा ।

रीव्याना (द्वि० क्रि०) पैरोंसे कुचलना, रौंदावना ।

रीधवा (द्वि० क्रि०) १ मार्ग न मिलनेके कारण अटकना, रुकना । २ अस्मन्ता, फस जाना । ३ रोह या रक्षके छिपे ऋतार भाङ्गीसे चिन्ता या छाता, घेर जाना । ४ किसी काममें लगना ।

री (सं० पु०) शम्भ ।

रीकी (द्वि० स्त्री०) कूटी बनी हुए एक प्रकारकी पोकी बत्ती या पूनी जो शिवां धरपे पर सूत कातनेके लिये एक निरकी पर अयेर कर बनाती है, पूना पीनी ।

रीमाघास (द्वि० स्त्री०) १ एक प्रकारकी बहुत सुगन्धित पास जो लैक आदि वासनक काममें आती है । २ इस घाससे बासा हुआ तेल ।

रीमाव (सं० पु०) १ पाक, रीक । २ मय डर, बीक ।

री (द्वि० स्त्री०) एक प्रकारका छोटा पेड़ । यह हिमाचल का तराई काश्मीरसे पूष दिनामें होता है । इसकी छाल और पत्तियां रगाइके काममें आती हैं ।

री (द्वि० स्त्री०) री वटा ।

रीरस्त (सं० पु०) कुस्तामें छाती या बगलके पाससे हाथ भङ्गा कर निकालना ।

रीरार (द्वि० वि०) रीरार रेखा ।

रीराम—रघुनाथो या रघुनाथो मामक वैष्णव धर्मसम्बन्ध वापक प्रसिद्ध । धर्मस्य वैष्णव साधक यमानस्य

स्वामीके शिष्य थे। कहते हैं, 'मि नमारीके बीच इतना अपना धर्मगत प्रचार किया। दूसरे दूसरे साधु शिष्य इनके मतानुचरि नहीं हुए। किन्तु शिष्योंके यदि ग्रन्थमें इतका खिदास नाम था। इनके उपाधि किन्ती किन्ती ग्रन्थमें अनुमान होता है, कि एक समय ये सड़े प्रसिद्ध हो उठे थे। मात्र जो जाजाके रहनेवाले मित्र जो स्वर-सनात गाते; पर शिष्याज ही हरिदासका बनाया हुआ है।

सकलालग्रन्थको छोड़ उक्त महापुरुषकी-नामनाके सम्बन्धमें और फोड़े पेंनिदासिक प्रमाण नहीं मिलता। उक्त ग्रन्थमें लिखा है,— रामानन्दस्वामीकी शिष्य अर्थात् में एक उपाधारी था जो भगवानकी भोजनमात्रा दत्त करकेके लिये प्रति दिन नाग नागा करना था। एक दिन महलमें जा कर यह एक अनियेके पदा पढ़ाया और उससे जो कुछ मिला, वह अपने गुरुके हाथ दे दिया। क्रमाप्यवश यह बलिया लैनिहो हो साथ सामग्री येनता था।

रामानन्दस्वामी जिनके लगाने समय जगन्नाथकी मीठूद न देग मनमें सोचने लगे,—जायद नोगकी मानम्रीमें कुछ महल पहुंचा है। तदनुसार उर्दोंने प्रजाचारीको बुलाया और पूजा, कि तुमने आज भोगकी सामग्री कहासे लाई है। प्रजाचारीने साफ साफ बतला दिया। उस पर वे दुःखित हुए और कहा, 'हा चमार'। गुरुवाष्य लंघन होनेकी नहीं। ब्रह्मगारीने देह त्याग कर चमारके घर आश्रय लिया। जातकर्मके बाद उनका हरिदास नाम पडा।

शिशु हरिदास पूर्वजन्मके सद्गुरुके आश्रय और सावुसंगमके कलसे पूर्वजन्मकी बात न भूलने हुए जातिस्मर हुए। गुरुदेवसे अपना शिशुपुत्रा जात ये व्याकुलतासे रोने लगे। एक रूंद भी दूध नहीं पीत। शिशुका पेसा मात्र नग जनकजननी उत्कण्ठित हुई और अपने पुत्रके जीवनकी आशंका, जान शुभ कामनासे रामानन्दस्वामीके निकट पहुँची और सारी कहानी कह सुनाई। स्वामीजी उनके साथ ही लिये और हरिदासको देखने आये। गुरुका दर्शन पाने ही शिष्य फूला न समाया।

रामानन्दस्वामीने इनके नाममें महात्म्य दिया। मन पानेमें शिशुने लक्ष्यमान किया तथा उपाधः ब्रह्मा दत्ता शिशुपुत्रने ही लीन रहा। पर उपर शिष्य हो गई, तर हरिदास अपना जामिनावाँ नग स्थान दलेलमें और जा मिलना उनमें (प्रायः) नेग किया करने ये। एक दिन भगवान्, शिष्यारूपमें इनके घर पचाए और स्वशासित था। शिशुपुत्रके हरिदासने उपा गुरुन नहीं किया।

इसके बाद अनेक जहोने बाद शिशु भगवान् फिर अपने जहोने देखने लये। स्वामीजी प्रवृत्त न किया (एक दिन अर्धने अर्धमा पराशा लैनेके लिये किन्ती वह महलमें गयाकी कुछ नर्तमुद्रा किए ही। हरिदास इनके पर भी नानी नरक भोजन और शिष्यासमे शिष्य शिष्य न हुए और शिष्यके प्रशंसनने सड़े शिष्यकी इसी समय यह स्थान छोड़ नरक लड़े गये। यह भगवान् शिष्युने मनके मनोज्ञासमे परदेन जानकार ही स्थानमें हरिदासकी उर्दने दिया और कहा, 'वह धन तुम अपने नाममें अथवा देखने लगे लगी हों।' हरिदास अपने शरीर प्राय इत प्रचार अनुकूल ही यह धन पा हाँचन ले आये और उसमें एक मन्दिर बनवा कर उसमें एक मालप्रामशिला स्थापित हो जाग गुरु उस मन्दिरके अध्यक्ष हुए।

ब्राह्मणोंने शिष्यपयजयकी ही कर राजाकी कहा, 'महा-राज आपके राज्यमें एक चमार मालप्रामकी पूजा करना है तथा सनी नर-नाशियोंको प्रसाद वाटना है। इससे जातिच्युतिहा उपकन हो गया है।' राजाने ब्राह्मणोंकी धान मुन कर उसी क्षण उस चमारकी बुलाया और उसने मालप्राम छोड़ देनेकी कहा। राजाका दुःखम प्रति-पादित करने हुए हरिदासने एक निर्दिष्ट जानत पर मालप्रामकी स्थापित कर उनकी रक्षा की। ब्राह्मणोंने वहाँसे भी मिलाकपी नारायणकी उठानेकी काजिश की, पर न उठा सके।

इसी समय चित्तोर-राजमहिषी कालीने हरिदाससे दीक्षा गृहण किया। राज्यके रहनेवाले ब्राह्मण लोग राजपदोंके इस आचरण पर क्रुद्ध हो विद्रोही हो उठे और वे सबके सब गुरुके शरणमें पहुँचे। भगवा

शिष्याको मनोपाश्र्ठा पूरो करनेके लिये दरहास घोड़े की समपमें निचोरे भा कर उपस्थित हुए। बाद् उसके उसके परामर्शसे एक दिन राजप्रधाने प्राहाण्योको निमन्त्रण भेजा। प्राहाण्य भोग राजप्रासाद भाये भीर मोहनको पकिर्में विद्यय गये। मोहनके समय ये सब क्या ब्रह्म हैं, कि हो हो प्राहाण्योके बीच एक एक दरहास बैठा है। तब ये बड़े मोचकमें पड़ गये और सबमें भक्तिविह्वलचित्तसे उनका शरणागत हो निष्पत्य प्रहय किया।

दक (सं० नि०) बहुप्रद, बहुत देनबासा।

दकनउद्दीन वधोर-सामायक आतकिया नामक ग्रन्थके रचयिता। इस ग्रन्थमें भगवानुका और सुसलमान फकी रोंका माहारूप तथा अज्ञीकिक कार्यका विवरण लिखा है।

दकन उद्दीन (शेख)-एक सुसलमान फकीर जो अयुक्तक नामसे परिचित थे। ये मुल्तानवासी मशहूर सुसल मान फकीर शेख बहाउद्दीन अकरियाके पीर और शेख सद्दरउद्दीन अरिफोके पुत्र थे। १३१० ई०में सुल्तान अकबरउद्दीन सिकन्दर सागाक राज्यकाल तक ये जीवित थे।

दकनउद्दीन फिरोज (सुलतान)-दिल्लीके हासरयो राजा सुल्तान सामसउद्दीन अलसुमासके पुत्र। पिताको मृत्युके बाद १२३६ ई०को राजी मरुको थे राजगद्दी पर बैठे; किन्तु अपनी नाजायदीसे छः ही महानक अ दर मन्त्रियों द्वारा गद्दीसे उतार दिये गये और कैद किए गये। इसी वषकी १२५१ नवम्बरको जनताकी रायसे सुल्ताना रजिया राज तक्त पर बैठा थीं। दकनउद्दीनन कैदखानमें ही अपना खेय जीवन बिताया।

दकनउद्दीन मसादद् मसादि-आपिताम् उन् इलाक नामक अरबी भाषामें एक हकामा ग्रन्थके प्रणेता। ये एक अफ्ट कवि थे और १५८५ ई० तक जीवत् थे।

दकनउद्दीला पानुकाव् लो-इस्लामीक रहनवासे एक सुसलमान। इनका मरुन नाम था महम्मद मुराद्। मुगलसम्राट् फरुखसियरको माता साहिबा निजवामने इहाँ जन्म लिया था, यहाँ दकनउद्दीनका जन्मभूमि थी। इसलिये मङ्कुरपन होस दोनोंमें जान पहचान था।

अब ही सैयद् भार्योंके जुम्मस फरुखसियर बङ्ग पिरक हो गये थे, तभी उनको मातामें अपने सङ्कुरपनका

शौस्ती मुरादक साथ युवकी बतला हो थी। मैं इन दो सैयद् भार्योंके हाथस सम्राट्को मुक्त कर दूंगा तथा बिना युद्ध किये ही दोनों भार्योंको यमपुर भेज दूंगा, इस प्रकार आभासवाक्यस और तोयगोस्ते सम्राट् फरुखसियरको बनीमूल कर ये राज्यके एक उच्च कर्मचारी के पद पर नियुक्त हुए। धीरे धीरे इन्हे सम्राट्को कृपासे दकनउद्दीनका उपाधिक साथ साथ साथ द्वार मनसब बारका पद और उसके अनुसार जागीर मिला। सम्राट्के प्रजासनन मुग्य हो कर ये पहले अपनी सत्ता बढ़ाने लगे। सम्राट्ने निजाम उलमुल्कसे मुरादाबाद् छोड कर अग्यान्य भूमिस्थितके साथ एक बड़ी सुबेहारी इकट्टीको और इसका रक्षणमार दकनक हाथ सुपुर् किया। इसी पर बहुतेर फरुखसियर पर चिङ्ग गए। दोनों सैयद् भार्योंमें १७१६ ई०म सम्राट् फरुखसियरको गद्दीस उतार दिया और दकन उद्दीलाको अछिनाके भाय कैद कर रखा। अन्तमें तरह तरहका कुञ्ज बे कर उनका गुप्तपन जान लिया था। सम्राट् महम्मद शाहके राज्यकालमें दकन उद्दीलाको मृत्यु हुए।

दकनकाशी (दकीम)-एक विख्यात मुसलमान कवि और राजहकीम। ये प्रसिद्ध गुरुस्थिति महारमा नाह अरबास के निवसत अनुसर थे। किसी कारणत पारस्यपति इन पर चिङ्ग गये। पीछे इन्होंने अपनी जन्मभूमि परि ह्याग कर भारतमें आगमन किया। यहाँ भा कर ये मुगल सम्राट अकबरशाहके अघीन रह और यथाक्रमसे इहाँ गोर और गजबजान शब्दाहके राज्यकाल तक बड़ी प्रसिद्धिके साथ राजकार्यको देखनाड करत रहे। शाह अहानक समय बुढ़ापेमें ये मर्रा गये। यहाँस कीटने पर कुछ दिनक बाद हा १६४६ ई०में ये मृत्युमुखम पठित हुए। इनका बनाया प्रायः काख यथान् मिळता है।

दकना (हि० टि०) १ भाय भादि न मिलनक कारण उदर जाना भाग न बढ़ सकना। २ अपनी इच्छसे उदर जाना, भाग न बढ़ना। ३ किसी कार्यका हाथमें हो पंद् हाना, काम भाय न होना। ४ धार्गगत न होना, स्कासित न होना। ५ किसी कथमें भाग न चयना, किसी कथमें सोध विचार या भागा पीछा करना। ६ किसी अन्यत क्रमका पंद् होना, निमसिता भागे न चयना।

बृहत्पुरी निर्माण कर उसीमें रहने लगे। उक्त पुरी भोज-
कट नामसे प्रसिद्ध हुई।

इधर प्रभु कृष्णने बलदेव और वृष्णिजनोंके साथ
द्वारकामें पहुँच कर रुक्मिणीका पाणिप्रदण किया।
रुक्मिणी श्रीकृष्णकी प्रधाना महियो थीं। रुक्मिणीके
गर्भसे श्रीकृष्णके चारद्वेषण, सुद्वेषण, महावध, प्रभुमन,
सुषेण, चारुगुप्त, चारुवाहु, चारुविन्द, सुचारु, भद्रचारु
और चारु ये दश पुत्र और चारुमती नामकी एक कन्या
उत्पन्न हुई। बहुत समय व्यतीत होनेके बाद रुक्मिणी
ने अपनी दुहितानेके विवाहके लिए स्वयंवर-सभा आह्वान
की थी। इस स्वयंवर-सभामें श्रीकृष्णके पुत्र प्रभुमन
की रुक्मिणीकी दुहिता सुभाङ्गीने बरमाला पहनाई थी।

(हरिश्च ४)

रुक्मिणी स्वयं लक्ष्मीकी अवतार थीं। पहले हेम-
कूट पर्वत पर जव देवीने पकड़ हो कर अवतारकी
कल्पना की थी उस समय उन्होंने पहले ही लक्ष्मीसे
कहा था—“लक्ष्मी ! तुम पहले मर्यालोकमें पतिके साथ
अवतीर्ण होओ। वहाँ कुण्डिन नगरमें भोग्यक पत्नीके
उदरमें जन्मग्रहण कर जेठवके लिए प्रतीक्षा करो।”

(हरिश्च १०८)

रुक्मिणी स्वर्ग विहारिणी स्वयं लक्ष्मी और श्रीकृष्ण
पूर्ण ब्रह्म हैं।

श्रीमद्भागवतमें भी रुक्मिणीका विवरण लिखा है,
बाहुल्यके मयसे यहाँ नहीं दिया जाना। २ स्वर्णश्रीरी।

(राजनि०)

रुक्मिणीव्रत (सं० क्ली०) एक प्रकारका योगिद्वयन।
वैशाख मासकी शुक्ल द्वादशोकी इसका अनुष्ठान किया
जाता है। चार वर्ष तक इस व्रतका अनुष्ठान करके
प्रतिष्ठा करनी चाहिए। हेमाद्रिके व्रतखण्डमें इस व्रतका
विधान इस प्रकार लिखा है—व्रतके पूर्व दिन हवि
ष्यादि करके रहना चाहिए। व्रतके दिन प्रातःकृत्वादि
करके स्वस्तिवाचन-पूर्वक संकल्प करना चाहिए। संकल्प
इस प्रकार है—“विष्णुरीम् तत्सद्य वैशखे मासि
शुक्ले पक्षे द्वादश्यान्तिथौ अमुकगोत्रा श्री अमुकी देवी श्री
विष्णु प्रीतिकामा पुत्रपीताद्यवच्छिन्नसन्ततिधनधान्य
सौभाग्यादिप्राप्त्युत्तरविष्णुलोकप्रातिकामा अचारभ्य

वर्गचतुष्टयं यावत् रुक्मिणीव्रतमष्टं करिष्ये” इस
प्रकार संकल्प करके तूब पाठ करना चाहिए। पश्चात्
पञ्चमथ और पञ्चामृत द्वारा विष्णुकी स्नान करा कर
पुरुष सूक्त द्वारा स्नान करना चाहिए। उसके बाद
सामान्याद्या, आमनशुद्धि, भूतशुद्धि और मानृकाम्या-
सादि, पश्चात् गणेशादि पञ्चदेवता, नवग्रह और दश
दिग्बालोंकी पूजा करके श्रीकृष्णका ध्यान करनेके बाद
यथाजकि पायादि उपचार द्वारा उनको पूजा करनेकी
चाहिए।

इस प्रकार विष्णुकी पूजा करनेके बाद
यथाजकि जप और जप समापन, स्तवपाठ और
प्रणाम आदि करना चाहिए। पश्चात् लक्ष्मीके आवर-
णादि देवताओंकी पूजा करके मोक्षोत्सर्ग करना और
कन्या सुनना चाहिए।

व्रतप्रतिष्ठाके विधानानुसार चार वर्ष तक इस
व्रतकी प्रतिष्ठा की जाती है। इस व्रतका विधान
पूर्वमें परसूते जीनको इस व्रतका उपाख्यान सुनाया
था। व्रतकालका नारायण इस प्रकार है—आमूल देव-
यानी शर्मिष्ठा संवाद, शर्मिष्ठा द्वारा देवयानीका कूपों
निक्षेप, शुकका अग्निगाप और वृषपर्वाणन्दिनी, शर्मिष्ठा
देवयानीका दासीके रूपमें ययानि राजाके निकट रहना
तथा रुक्मिणीव्रतके प्रभावमें राजाकी प्रणयपाती हो
कर व्रतमें उनको प्रधाना महियो होना। अशोकवनमें
सोताने सरमाके साथ इस व्रतका अनुष्ठान करके रावण-
की सवश नाश करके पुनः रामचन्द्रको प्राप्त किया था।
टोपदीने इस व्रतको करके पाण्डवोंको प्राप्त किया था।
रमादेवीने जामदग्न्यने पहले पहल इस व्रतको प्रदण
किया था। पश्चात् उन्होंने इस व्रतके प्रतापसे पति
और पुत्रके साथ तसानगर पृथ्वीकी अघोश्वरी हो कर
अन्तकालमें परम पद प्राप्त किया था। इस व्रतके
प्रभावसे इदकालमें सौभाग्य और परलोकमें स्वर्ग प्राप्त
होता है। (कल्किपु० ३१ अ०)

रुक्मिण्यर्प (सं० पु०) रुक्मिणी भोग्यकपुत्रे दर्पा यस्य,
सः तस्य रुक्मिण्यर्पकृत्यात्। बलदेव।

रुक्मिण्यर्पिन् (सं० पु०) रुक्मिणीं दारयतीति दूणिच-
णिनि। बलदेव।

द्विचिन् (स० पु०) रश्मि वर्णविशेषोऽल्पवयस इति ।
 विदर्भ इत्येक राजा भोज्यकका यज्ञ पुत्र भीर द्विचिन्पौत्रा
 भाई । जिस समय भ्रातृपुत्र इसका बहस द्विचिन्पौत्रो
 हर से चले थे, इस समय इसका साथ उनका पार युद्ध
 हुआ था । इन्होंने प्रतिज्ञा की थी, कि जब तक मैं भी
 कृष्यको मार न डालूँगा तब तक घर न छोड़ूँगा । क्रिष्ण
 युद्ध में ये भोक्तृपुत्र परास्त हो गये थे । अतः सौंद कर
 कु डिननपर गहो गये और विदर्भमें ही भोज्यद नामक
 एक दूसरा नगर बसा कर रहने लगे थे ।

द्विचिन्मिन् (स० पु०) द्विचिन्मिन् मिन्मिन् मिन्मिन् ।
 वल्लभेव ।

रश्मिपु (स० पु०) राजभेद ।
 (भागवत ६।२।३३ और हरिव ४)

रक्षुसद्रुमन् (स० स्त्री०) मल ।
 रस (स० लि०) वह भौणादिक स । १ अग्नेय, विना
 प्रेमका । २ अचिकित्, जिसमें चिकित्साद न हो सका ।
 ३ जिसका तब चिकित्सा न हो उखड़ कावड़ । ४ मोरस,
 विना रसका । ५ शुक्र, मूत्रा । (पु०) ६ रस, वेड़ । ७ नर
 कट नामको घाम ।

रक्षदा (स० स्त्री०) रक्षाइ रूपायन ।

रक्ष (का० पु०) १ कपोल, गाल । २ मुष, मुह । ३ चहर
 का भाव, आहृति । ४ हृष प्रुष्टि, मेहरवालीका नर ।
 ५ सामन वा भागीका भाग । ६ मनकी इच्छा औ मुखको
 आहृतिसे प्रकट हो चक्षुस प्रकट इच्छा वा मत्तो ।
 ७ शत्रुका एक मोहरा जो डोक सामने, पाछे, बाहिने
 वा शर्म चक्षुता है तिरछा रहा चक्षुता । इस रूप,
 दिक्षी और बायीं भी कहत हैं । (वि०) ८ तरफ, मोर ।
 ९ सामने ।

रक्ष (दि० पु०) १ रश्मि । २ एक प्रकारकी घास
 जिस परक लुप कहत हैं । रुपा देखा ।

रक्षक—रश्मिमी स न्यासि-सम्प्रदायभेद । भीषडुमतक
 प्रतिष्ठता अष्टगिणि अपने वेगिगुड गारधुनापसे मखक
 अलासा कर्णकुण्डलादि कर एक चिह्न वाया और यह
 ७७होंने शुक्र, कृष्ण, सुकृष्ण आदिक शाय बांठ दिया था ।
 किसी शिष्यके मरने पर दण्ड सोय अल्पेष्टिक्रिया
 संकल्प वाचतीय कर्म हो करते हैं । ये शत्रुदरकी

स्नान करा कर, विमृति लगा कर भीर बख पहना कर
 समाधि रहत हैं और पीछे उनको सम्पत्ति अपने कष्टेय
 कर छत हैं ।

य सोग गेकमा वरु भीर दोना कानोंमें तंये भीर
 पोतरका नृपडल पहनत हैं । इस कुण्डलको ये खेचते
 मुन्ना कहत हैं । ये कण्ठमें घूप जला कर भोज मागत फिरते
 हैं और जो मिच्छता उसे इसी कण्ठमें रचत हैं । इस
 सम्प्रदायक ओ संन्यासी शराब पीते भीर मांस खाते हैं,
 ये उखड़ कहलाते हैं ।

रक्षार (का० पु०) जा घट रहा हो ।

रक्षसत (अ० स्त्री०) १ आभा, परयागनी । ३ रयानगी,
 कूप, विशाह । ३ कामसे सुद्री, भयकाना । (वि०)
 ४ डी कही स चल पड़ा हो जिससे प्रस्थान किया हो ।

रक्षसताना (का० पु०) वह इनाम जो किसीका रक्षसत
 होनेक समय राजा वा रक्ष आदिके पहलसे सत्कारार्थ
 दिया जाता है, बिना होनेक समय दिया जानेवाला धन,
 विशाह ।

रक्षमतो (अ० वि०) १ जिसे सुद्री मिली हो । (स्त्री०)
 २ विशाह विद्येयतः बुद्धिदिकी विशाह । ३ विशाहसे
 समय दिया जानेवाला धन, विशाह ।

रक्षमार (का० पु०) कपोल गान ।

रक्षार (दि० स्त्री०) १ रश्मे होमकी क्रिया वा भाष,
 रूपायन । २ शुक्रता पुत्रकी । ३ व्ययहारकी कटोरता,
 शासना स्थाय ।

रक्षाना (दि० स्त्री०) १ बद्धरगंधा खेसिका एक भीमार
 जो प्राय एक बालिश संवा हाता है । इसका भाग्य
 मिरा पारदार होता है और पीछेकी और लकड़ीका
 दन्ता लगा होता है जिस पर हथोड़ा या बल्ले आदिसे
 खोद रगा कर लकड़ा छानो वा काटी जाती है अथवा
 उममें बड़ा छेड़ किया जाता है । २ खाइया प्राय एक
 बालिश लया एव भीमार जिसमें काठका दन्ता लगा
 हाता है और जिसका महापलास लो मपना धानो
 चनात है । ३ रूगन रागीका यह रौकी जिसका व्ययहार
 प्राय माठ कामोंम हाता है ।

रक्षार (दि० स्त्री०) रक्षार देखा ।

रक्षार (दि० स्त्री०) रूपायन, रक्षार ।

रुखिता (हि० स्त्री०) वह नायिका जो रोप या क्रोध कर रही हो, मानवनी नायिका ।

रुगुरी (हि० स्त्री०) बहुत छोटा पौधा ।

रुगन्धित (सं० लि०) रुग्ण अन्वित इति । पांडा-युक्त ।

रुग्दाह सन्निपातञ्जर (सं० पु०) एक प्रकारका उर जो बीस दिनों तक रहता है । इसमें रोगी व्याकुल होता और वक्रता है । उसमें शरीरमें जलन होती है, पेटमें दर्द होता है और उसे बड़ी प्यास लगती है । यह बहुत कष्टमाध्य माना जाता है ।

रुग्मेपज (सं० स्त्री०) रुग्णः मेपज । रोगकी ओपत्रि ।

रुग्ण (सं० लि०) रुग्ण क्त, ओदितश्चेति नः । १ रोगग्रस्त, जिसे कोई रोग हुआ हो । २ टूटा हुआ । ३ झुका हुआ, नमित । ४ त्रिगुडा हुआ ।

रुग्णता (सं० स्त्री०) रोगी होनेका भाव, बीमारी ।

रुग्णी (सं० पु०) जैन हरिवंशके अनुसार जम्बूद्वीपके एक पर्वतका नाम । (जैनशरि० ५।१५)

रुग्निश्रवय (सं० पु०) रुग्णः विनिश्रवयः । रोगका निर्णय ।

रुच् (सं० स्त्री०) आलोक, ज्योतिः ।

रुच (सं० लि०) उज्ज्वल, दीप्तिमान् ।

(शुक्लयजुः ३।१२०)

रुचक (सं० स्त्री०) रोचतेऽनेनेति रुच (बहुलमन्वत्रापि । उण् २।३७) इति कृन् । १ सज्जिकाक्षार, सज्जोपार । २ अश्वामरण, घोड़ोंका गहना या साज । ३ माल्य, माला । ४ सौवर्चाल, सौंघर नामक । ५ माङ्गल्यद्रव्य । ६ उत्कट । ७ रोचना । ८ वायुचिह्नं । ९ लवण, नमक । १० दक्षिणदिक्, दक्षिण दिशा । ११ वास्तुविद्याके अनुसार ऐसा घर जिसके चारों ओरके अलिङ् (चतुर्था या परिक्रमा) में से पूर्वा और पश्चिमका सर्वाथा नष्ट हो गया हो और उत्तर-दक्षिणका समूचा ज्योंका त्यों हो । इसका उत्तर द्वारा अशुभ और शेष द्वारा शुभ माने गये हैं । (पु०) १२ वीजपूरक, विजौरा नोवू । १३ प्राचीन कालका सोनेका निष्क नामक सिक्का । १४ दन्त, दाँत । १५ कपोत, कबूतर । १६ पुराणानुसार सुमेरु पर्वतके पासके एक पर्वतका नाम । (विष्णुपु० २।२।२६) १७

समचतुरस्र स्तम्भ, वह पंजा जो गोल न हो बल्कि चौकोर हो । (वृत्त्य० ५।३।२८) १८ यदुचशीय एक राजाका नाम । रामनाथ देवा । १९ हरिवंशके एक पर्वतका नाम । (जैनशरि० ५।१।२६) २० मङ्गलप्रदमें उत्पन्न होनेसे रुचक होता है । (त्रि०) २१ स्वादिष्ट, जायकेदार ।

रुचना (हि० कि०) रुचिकं अनुकृत होना, अच्छा जान पड़ना ।

रुचा (सं० स्त्री०) रुच् क्तिप् पक्षे टाप् । १ दाँत, प्रकाश । २ शोभा । ३ इच्छा, प्यासिह । ४ शारिका शुक्रवायुः । मैना, बुलबुल, तोते आदि पक्षियोंका बोलना ।

रुचि (सं० स्त्री०) रुचयते इति रुच (शुभ्यात् क्तिप् । उण् १।२६) इति इन् सच क्तिप् । १ प्रसन्न, तबोयत । २ अनुराग, प्रेम । ३ आमक्ति । ४ स्पृहा । ५ गमन्ति, किरण । ६ शोभा, छवि । ७ बुभुक्षा, खानेकी इच्छा । ८ स्वाद, जायका । ९ गोरोचन । (राजनि०) १० काम-शास्त्रके अनुसार एक प्रकारका आलिङ्गन जिसमें नायिका नायकके सामने उसके घुटने पर बैठ कर उसे गलेसे लगाती है । ११ एक अप्सराका नाम । (लि०) १२ शोभाके अनुकूल, फवता हुआ ।

रुचि (सं० पु०) रोचने शोभने इति रुच इन् सच क्तिप् । प्रजापतिविशेष । ये युयुत्सु या यज्ञ रोच्यमनुके पिता थें । इनकी पत्नीका नाम आकूति था । (मार्कण्डेयपु० ६५ अ०) रोच्य दंत्तो ।

रुचिकर (सं० लि०) करोतीति कृ-अप्, रुचिः कर्त्ता । १ प्रीतिकर, अच्छा लगनेवाला । (पु०) २ केजयके एक पुत्रका नाम । ३ नारंगी नोवू ।

रुचिकारक (सं० लि०) १ रुचि उत्पन्न करनेवाला, रुचिकर । २ स्वादिष्ट, बढ़िया स्वादवाला ।

रुचिकारिन् (सं० लि०) १ रुचिकारक, रुचि उत्पन्न करनेवाला । २ स्वादिष्ट, अच्छे स्वादवाला । ३ मनोहर, अच्छा लगनेवाला ।

रुचित (सं० लि०) रोचने इति रुच् (रुचिवचि-कुचि-कुटिभ्यः क्तिप् । उण् ४।२८५) इति क्तिप् । १ मिष्ट वस्तु, मोठी वस्तु । रुच क । २ अभिलषित, जिसे जो

बाह्य हो। (श्री०) ३ क्व माये-क्। ४ इच्छा, चाह।
दक्षिणवत् (स० लि०) इच्छाके अनुकूल।

दक्षिणा (स० स्त्री०) दक्षेर्माया तल दाया। १ दक्षिणा माय
या धर्म, रोचकता। २ अनुदाय, प्रेम। ३ सुन्दरता, गूढ
सूती। ४ अतिश्रमवती वृत्तिका एक भेद।

दक्षिणतः—अपविषेधनके प्रयेता। इनकी उपाधि महा
महोपाध्याय थी। २ मनुस्मृतिसाक्षाके रचयिता। ३
देववन्दके पुत्र तथा जक्षिणस्य और मोतिदक्षके ग्राह। ये
अपविष परिश्रमके गिण्य थे। कुसुमाञ्जलिप्रकाशमकरम्
तत्त्वचिन्तामणिप्रकाश तत्त्वपाद तर्कसार और रघुरेण
हृत् पद्माञ्जलिप्रकाश व्याख्याकी मकरन्द नामकी टीका भावि
इन्होंने लिखी। अत्राया इसके इन्होंने श्रीर मी उगमय
प्रश्नक, उपाधिपूर्वाग्रहप्रश्नकी टीका तर्कप्रश्नकी टीका
कृतोप चन्द्रार्चिसंज्ञकी टीका, द्वितीय चन्द्रार्चिसंज्ञकी
टीका द्वितीय स्थलज्ञापकाका पद्मापूर्वपक्ष प्रश्नकी
टीका, पद्मा सिद्धान्तप्रश्नकी टीका प्रश्नसार, पल्पक्षा
द्वितीयाय, प्रथमप्रश्नप्रश्नकी टीका, बाधाम्, विरह
पूर्वपक्षप्रश्नकी टीका, विरहसिद्धान्तकी टीका व्यासा
नुगमकी टीका, सध्यामिन्वार पूर्वपक्ष प्रश्नकी टीका,
सामान्यनिदक्षिणकी टीका तथा दक्षिणतः नामक ग्रन्थों
की रचना की थी।

दक्षिणैय (स० पु०) कथासंरिस्तागत-परिणित एक नायक।
(११०१२२३)

दक्षिणाम् (स० स्त्री०) सुर्ष। (त्रिशुण्णक २।११)

दक्षिणाय मिथ—एक विख्यात भाष्यकारिक। इनका
बनाया अनन्तरात्माका बचन रसप्रदीपन प्रमाहर तथा
भार्यासत्ताताम्रं अनन्त उद्भूत कर गये हैं।

दक्षिणति—वैश्वेन्द्रिय प्राप्तनिवासी एक विख्यात पण्डित।
इन्होंने अथन प्रतिपालक नरसिंहके पुत्र राजा मौर्यसिंह
के आदेशसे अनघतपत्रका टीका लिखी।

दक्षिणवर्त (स० पु०) महामातृक अनुसार एक पात्र।
(भाष्यशास्त्र)

दक्षिणश (स० स्त्री०) मधुर्दक्षिणा, कुश्ककी।

दक्षिणम (स० पु०) महामातृक अनुसार एक देवताका
नाम।

दक्षिणक (स० स्त्री०) दक्षिणतः फल। अमुनाह, नास
पाती। (रामनि०)

दक्षिणम् (स० पु०) १ सूरी। २ स्वामी, मामिक।
(लि०) भ्रान्तपक्ष नक्षत्रा, विमक द्वारा भ्रान्तपक्ष
पृथि होती हो।

दक्षिणती (स० स्त्री०) उग्रवेनकी रानी और देवकीकी मत्ता
औ धीरुणाकी रानी थी।

दक्षिण (स० स्त्री०) रोचने इति क्व (इति परिशुद्राणि। उष्
१।२२) इति द्विरथ। १ मूलक, मूनी। २ कु कुम, बेसर।
३ लपट्ट, सीम। (उच्यते) ४ रोच्य चादी। (पु०)

५ सनक्षिणके एक पुत्रका नाम। (हरिच २०।११)

६ सहायिपरिणित एक राजाका नाम। (उष्ण २७।१०)

७ शिष्यपुत्र, सहि अमक पेट्ट। (श्री०) ८ मोरोचना।

(लि०) ९ सुन्दर, अच्छा। १० मिथ, मोठा।

दक्षिणेतु (स० पु०) एक शोचिमत्त्वका नाम।

दक्षिणत (स० लि०) सुन्दर दौतोवाला।

दक्षिणैय (स० पु०) एक राजाका नाम।
(कथासंरिस्तागत १०।१)

दक्षिणो (स० पु०) पुत्रानुसार एक राजाका नाम।
(विष्णुपुराण)

दक्षिणमायसम्माय (स० पु०) एक नगरका नाम।

दक्षिणकथा (स० स्त्री०) कुश्क।

दक्षिणपश्च (स० लि०) मुञ्जप्रोथपथ, सुन्दर मु ह्यामा।

दक्षिणवाक (स० लि०) धामो अच्छा बोजनवाला।

दक्षिणवृत्ति (स० पु०) मत्तका एक प्रकारका संहार।

दक्षिणभाग (स० पु०) एक शोचिमत्त्वका नाम।

दक्षिण (स० स्त्री०) रोचत इति क्व (इति परिशुद्राण्यु।

१ एक प्रकारका छम्द। इसके पहल मोट कीसरे पदोंमें

१६ तथा दूसरे और चौ पदोंमें १४ मात्राय तथा मन्त्रमें

को गुण होता है। २ एक वृत्तका नाम जिसके प्रत्येक

धरत्तमें अ, म, स, ज, ग हात हैं। ३ रामायणक अनु-

सार एक नदीका नाम। (पका १।४।१०) ४ गारोचन।

५ कुट्टु म, बेसर। ६ मूलक, मूनी। ७ लपट्ट, सीम।

दक्षिणान (स० पु०) दक्षिण सुम्बुकी उद्भवा। शोभाश्रव,

सहि अम। (उच्यते)

रुचिरापात्री (सं० स्त्री०) सुन्दरतयनविशिष्टा स्त्री, वह स्त्री जिसकी आँखें सुन्दर हों।

रुचिराश्व (सं० पुं०) रुचिरः सुन्दरोऽश्वो यस्य । १ एक राजाका नाम । ये देवापिके समुद्र थे । (ऋत्विजपुं० १८ अ०) २ सेनाजित्के एक पुत्रका नाम । ३ सुन्दर घोटक, बढिया घोडा ।

रुचिरासुत (सं० पुं०) पालकायिका गर्भजात तनय ।

रुचिररुचि (सं० स्त्री०) पद्म प्रकारका साम ।

रुचिवद्धक (सं० त्रि०) १ रुचि उत्पन्न करनेवाला । २ मूष बढ़ानेवाला ।

रुचिवह (सं० त्रि०) आलोक आनयनकारी, प्रकाश लाने वाला । (पा० ६।२।१२२ वार्तिक)

रुचिष्य (सं० त्रि०) रुच्यते इति (रुचिभुजिभ्या क्रियन् । उण् ४।१७८) इति ऋच्यन् । १ मिष्ट वस्तु, खानेका मीठा पदार्थ । २ अग्निप्रेत, चाहा हुआ ।

रुचो (सं० स्त्री०) रुचि कृत्कारादिति टोप् । रुचि, चाह ।

रुच्य (सं० स्त्री०) रुच्यते इति रुच्य (राजभुवर्षमृपात्रेति । पा ३।१।११४) इति कप् प्रत्ययेन निपातितः । १ सौवर्चल, सेंधा नमक । (पुं०) २ कतकवृक्ष, रीठाका पेड । ३ शालि धान्य, जड़हन । ४ पति, स्वामी, (त्रि०) ५ सुन्दर, खूब-सूरत । ६ रुचिकर ।

रुच्यकन्द (सं० पुं०) रुच्यः कन्दो यस्य । शूरण, ओल । (राजनि०)

रुच्यवाहन (सं० पुं०) हव्यवाहन, अग्नि ।

रुज (सं० स्त्री०) १ भङ्ग, भांग । २ क्षत, घाय । ३ वेदना, कष्ट । (अथर्व १६।३।२) ४ प्राचीनकालका एक प्रकारका वाजा जिस पर चमड़ा मढ़ा होता था ।

रुजप्रस्त (सं० त्रि०) जिसे कोई रोग हो, रोगप्रस्त ।

रुजस्कर (सं० त्रि०) १ पीडादायक, दुःख देनेवाला । २ रोगकारक, बीमारी पैदा करनेवाला ।

रुजा (सं० स्त्री०) रुज-क्रिय पक्षे टाप् । १ रोग, बीमारी । २ भङ्ग, भांग । ३ पीडा । ४ कुष्ठ, कोढ़ । ५ मेपी, मेडी ।

रुजाकर (सं० स्त्री०) रुजां रोगं करोतीति कृट । १ कर्मरत्नफल, कमरख नामक फल । (पुं०) व्याधि, बीमारी । (त्रि०) ३ व्याधिकारक, बीमारी पैदा करनेवाला ।

रुजापह (सं० त्रि०) रुजा अपहन्ति अप-हन-क । पीडा नाशक, दुःख दूर करनेवाला ।

रुजाली (सं० स्त्री०) रोगों या कष्टोंका समूह ।

रुजावत् (सं० त्रि०) रुजा विद्यतेऽस्य मनुप् मस्य च । पीडायुक्त, पीडित ।

रुजायिन (सं० त्रि०) रुजा विद्यतेऽस्य (बहुव छन्दसि । पा १।२।१२२) इति यिनि । पीडित, पीडायुक्त ।

रुजासह (सं० पुं०) रुजां सहते इति सह-अच् । धन्यव गृह्य भ्रामिनका पेड ।

रुजिन् (सं० त्रि०) जिसे कोई रोप हुआ हो, असस्थ ।

रुजू (अ० वि०) १ जिसकी तबीयत किसी ओर झुकी या लगी हो, प्रवृत्त । २ जो ध्यान दिये हो ।

रुक्नी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी छोटी चिडिया जिसकी पीठ काली, छाती सफेद और चोंच लम्बी होती है ।

रुठ (हिं० पुं०) क्रोध, अमर्ष, गुस्सा ।

रुठना (हिं० क्रि०) रुठना देना ।

रुठाना (हिं० क्रि०) किसीको रुठनेमें प्रवृत्त करना, नाराज करना ।

रुणा (सं० स्त्री०) सरस्वती नदीकी एक शाखा जिसका उल्लेख महाभारतमें है ।

रुणित (सं० त्रि०) शब्द करना हुआ, भनकारता हुआ ।

रुण्ड (सं० पुं०) कवन्ध, जिसका हाथ पैर छिन्न हो ।

रुण्डक (सं० स्त्री०) अगुरुकाष्ठ, अगर नामक लकड़ी ।

रुण्डिका (सं० स्त्री०) रुण्डः कवन्धोऽस्त्यनेति रुण्ड-ठन् । १ युद्धभूमि, लड़ाईका मैदान । २ द्वारपिण्डिका, ल्योढी । ३ विभूति, बहुतायत ।

रुण्डी (सं० स्त्री०) कुन्दुरु ।

रुत (सं० स्त्री०) १ पक्षियोंका शब्द, कलरव । पर्याय—वाशित, चासित । २ शब्द, ध्वनि ।

रुत (हिं० स्त्री०) ऋतु देना ।

रुतवा (अ० पुं०) १ दरजा, मर्तवा । २ इज्जत, प्रतिष्ठा ।

रुद् (सं० स्त्री०) क्रन्दन, रोना ।

रुद्ध (सं० पुं०) रोहिति रुद्ध रोद्धे (रुद्विदिभ्या कृत् । उण् १।१।१६) इति अथ सच डित् । १ कुषकुर, कुत्ता ।

२ शिशु, छोटा बच्चा ।

रुद्र (स० श्लो०) रोनेकी क्रिया रुद्रन् ।

रुद्रन्तिका (स० श्लो०) रुद्रन्ती रता ।

रुद्रगता (स० श्लो०) रोद्रं रुद्रं मति वम्पने अच डोए ।
१ रुद्र रुद्रपत्निये, एक प्रकारका छोटा सुपु । पर्याय—
रुद्रगता, सप्तोषधी, अमृतप्रदा, रामाश्रिका, महामासी, वषपती, सुपाशवी । इसका गुण—कटु तिक्त, उष्ण, कषाय, रुचि, रक्त, पित्त, कफ, श्वास और मोहनशक्त । (पत्रनि०) (श्लो०) रोद्रगताञ्च, सो रोता हो ।

रुद्राक्षी—एक वारसीरुचि और प्रसिद्ध गर्भवा । ये जन्म से ही अघा घे, तो भी इन्होंने सगीतयिद्या और रुचिरकलामें सम्पत्क पारदर्शिता पाई थी । राजा अश्वत्थ समानोके पुत्र अमीर नगरके राज्यकालमें इनकी प्रतिभा राष्ट्र हो उठी । इनकी इस अद्भूत पेशोगिकिक क्रिये राजा और राजदरबारके प्रत्येक अमीर उमराव इनका बड़ा सम्मान करते थे । राजा नगर इनकी ऐसी प्यार करते थे, कि बिना रुद्राक्षोके वे कदा अकेला नहीं जाते थे । राजाकी कृपासे ये अनेक सामाजिक अधिकारी हुए और इनकी गिनता श्रेष्ठ इमारतोंमें हान जगी थी । इनकी सेवाके क्रिये दो सौ शीकर नियुक्त थे तथा अब ये अपने प्रभुके साथ रणक्षेत्रमें जाते तब इनका अदारी अस्त्राव करीब पार भी ऊँचों पर जाद कर जाता था । इन्होंने १२५ ई०में भरवी भाषामें मनु द्वित विद्याकी उपरुपाभासा कारसी बरिताने लिखी थी । राजा नगरने इस कविताक उपहारमें ११५ चासीम हजार इन्द्रममूद्रा से थी । इसक अलावा इनका बनाया एक होषाम भी मिलता है ।

इनका प्रथम नाम था कटि मातृ अथवृत्ता । इनका जन्म समरकण्ड या बोबारा प्रदेशक रुद्रक नामक स्थानमें हुआ था, इसलिये वे रुद्राक्षी नामसे विख्यात हुए । १५४ ई०में इनकी मृत्यु हुई ।

रुद्रित (सं० श्लो०) रुद्र क । १ रुद्रन्, रोना । (श्लो०) २ रोद्रनाश्रिण, रोता हुआ ।

रुद्राक्षी—अथाप्याश्रयके पाठपरका त्रिनाश्रित एक मर और रुद्राक्षी पालनेका विषय-महर । यह अष्टा० २६ उ० ५६ उ० तथा अष्टा० ८१ ४३ २० पू० तक विस्तृत है । वदत है, कि रुद्रमल नामक एक मर

जातीय सरदारने यह नगर बसाया । वहाँ स्थानीय द्रव्यका विस्तृत कारवार है ।

रुद्र (सं० श्लो०) रुद्रक । १ जो जिसी जोइसे घेर कर रोका गया हो, घेरा हुआ । पर्याय—वेष्टित, बन्धित, संघोत, ब्याधत । २ त्रिजनेमें कोई जोइ अथ वा फ स ग हो मुदा हुआ । ३ जिसकी गति रोक ली गई हो ।

रुद्रक (सं० श्लो०) लपप मम । रुद्रक रौता ।

रुद्रगुह (सं० पु०) निरुद्रगुह नामक एक प्रकारका रोग ।

रुद्रमूत्र (सं० पु०) मूत्ररुच्छ नामक रोग ।

रुद्र (स० पु०) रोद्रगताति रुद्र विच् । (राशेनि सुष्टव । उष् २५२) ति रुच्येद्वय सुच् । १ गणपतिपत्निये । ये गणपतिवता अग्निमूत्रि है । (श्रिपि०स)

अग्नूकी सृष्टि करत समय प्रझाके छू युगलक मध्य मागने क्रायकूपमें रुद्रदेवकी उत्पत्ति हुई थी । भूत, प्रेत और पिशाच भादि रुद्रकी सृष्टि है । महारके समय ये ही सब कुल महार करते हैं । रुद्रोंकी संख्या ११ हैं, यथा—१ मज २ परुगान्, ३ भरिभजन, ४ पिशाची, ५ अयराजित ६ रुद्रमज्ज, ७ महभ्यद, ८ रुद्राकवि, ९ गम्भु, १० हरप, और ११ इभर । (मंगलप)

गुरुपुत्राणके इडे अध्यायमें लिखा है—
मडेप्राद् भद्रियम्, रुद्रा, विरुद्राहृ, बहुरा, भारुक भाराजित, रुद्राकवि, गम्भु, कपर्दी और रैवत ये ११ रुद्र हैं । अग्निपुत्राणमें क्वचन त्यराक स्थानमें श्वेतियासका नाम पाया जाता है ।

कूर्मपुत्राणक मतन प्रझान सृष्टिक क्रिये रुद्रक तपो अनुष्ठान किया था, परन्तु किसी भी प्रकार व सृष्टि करनमें समर्थ न हुए । इसलिये बहुत दिन बाद उगहे अलग्ग श्रेष्ठ हुआ । उनक कूच होने पर उनक नेत्रसे लामु बिन्दु गिरा और उस अमृबिन्दुन मूलरैतादिका उत्पत्ति हुई । उसक बाद प्रझाक सुखल प्रापणप रुद्र आविर्भूत हुए, जो महेश्वर सूर्य और गुगान्दधनीन अभिक सामान तैजावयथ । ये रुद्र आविर्भूत हावे ही म्बलन्त रोद्रन भरन लग । इनका रोत देव प्रझाने "मारोदा" अर्थात् 'राओ मठ' कहा, और यह मा कहा कि, मुन रुद्रप होते

ही रोने लगे, इसलिए तुम जगत्में रुद्रके नामसे प्रसिद्ध होओगे ।

'रुद्रोद सत्वरं घोर देवदेवः स्वयं शिवः ।

रोदमानीं तदा तन्ना मारदीत्यभापत ॥

रोदनात् रुद्र इत्येव लोके ख्याति भविष्यति ॥”

(कूर्मपु० १०)

ब्रह्माने यह कह कर इसके अन्य सप्तनाम, अष्ट स्थान और स्त्री-पुत्रादिका विषय इस प्रकार निर्देश किया था—भव, शर्व, ईशान, पशुपति, भीम, उग्र और महादेव ये सा नाम, सूर्य, जठ, मही, अग्नि, वायु, आकाश, ब्राह्मण और चन्द्र ये आठ मूर्त्तियां तथा सुवर्चला, उमा, त्रिकेशा, शिवा, स्वाहा, दिशा, दीक्षा और रोहिणी नाम की स्त्रियां तथा शनैश्चर, शुक्र, लोहिताक्ष, मनोजा, सुन्द और वुग्र ये सब इनके पुत्र हैं । जे: रुद्रदेव की पूर्वोक्त अष्टमूर्त्तियोंमें रुद्रदेव आराधना करते हैं, सन्तुष्ट हो कर उन्हें परमपदप्रदान करते हैं । (कूर्मपु० १० अ०)

पद्मपुराणमें रुद्रदेवकी उत्पत्तिके विषयमें इस प्रकार लिखा है—

ब्रह्माके अत्यन्त क्रुद्ध होने पर उनके मू-मध्यभागसे रुद्र आविर्भूत हुए । ये आविर्भूत होते ही रोने लगे । तब ब्रह्माने उनसे कहा—‘हे पुत्र ! तुम किस लिये रोते हो, बताओ, मैं अभी उसकी पूर्त्ति करूंगा ।’ तब रुद्रने कहा—‘मेरा नाम, स्थान और भार्या पुत्रादि निर्देश कर दीजिए तो मैं नहीं रोऊंगा ।’ ब्रह्माने उनकी बात सुन कर कहा—‘तुम उत्पन्न होते ही रोने लगे, इसलिए तुम्हारा नाम रुद्र, इसके सिवा ऋतध्वज, मनु, मन्यु, उग्ररेता, शिव, भव, काल, महिनस, वामदेव और धृत व्रत ये सब तुम्हारे नाम होंगे । तुम्हारे वासस्थान ये हैं—इन्द्रियसमूह, असुहृद्, श्याम, वायु, अग्नि, जल, मही, तपस्या, चन्द्र और सूर्य तथा धृति, धो, असिलोमा, नियुत्, सर्पि, विलम्बिका, इरावली, स्वधा और दीक्षा ये सब तुम्हारी पत्नी होंगी । पुत्र ! तुम इन सब पत्नियोंके साथ प्रजाकी सृष्टि करके जगत्को पूर्ण करो । ब्रह्माके ऐसा कहने पर रुद्र भूत-प्रेतादि और विकृताकार भैरवादिकी सृष्टि करने लगे । ब्रह्माने जगत्त्रिधावकारो इस प्रकार सृष्टि देख कर रुद्रसे कहा—‘जगत्ध्वंसकारक ऐसी

सृष्टिसे विरत होओ और अब तुम विष्णुकी आराधना करके यथेच्छा विचरण करो ।’ यह कह कर ब्रह्मा तिरोहित हो गये । जो रुद्रदेवकी उक्त नामों वा उक्त स्थानोंमें पूजा करने हैं, वे भूतादिके भयसे रहित हो जाते हैं ।

(पद्मपु० स्वर्गपु० ८ अ०)

विष्णुपुराणके प्रथम अंशमें ८वें अध्यायमें रुद्रसर्गाका विषय वर्णित हुआ है, जो बाहुल्यभयसे यहाँ नहीं दिया जाता ।

विष्णु और रुद्रको यदि कोई भेदबुद्धिसे देखे, तो उसे नरक प्राप्त होता है । अनेकबुद्धिसे देखनेसे मुक्ति प्राप्त होती है । (कूर्मपु० १३ अ०)

पुराणादिमें रुद्रकी उत्पत्ति और मूर्त्तिके सम्बन्धमें जो वर्णन मिलता है, उसकी आलोचना करनेसे मालूम होता है, कि वे जगत्के आदिदेव महादेवकी प्रकृतिभेद मात्र हैं । कभी वे शान्तिमूर्त्तिवर सदाशिव, तो कभी विश्वनाशकारी रुद्रमूर्त्ति धारण कर मनुष्योंके समक्ष प्रकट होने हैं । जगत्के आदिमतम वे ही महापुरुष पोछे लष्टा, पाता और लयकर्त्तारूप ब्रह्मा, विष्णु और शिव मूर्त्तिधृत त्रितयमें रूपान्तरित होते हैं । पुराणान्तरमें भी महाेश्वरके आदित्य और सर्वकर्त्तृत्व स्वीकृत हुआ है ।

पौराणिक रूपक पठ उन्माचन करनेसे मालूम होता है, कि जगत्-सृष्टिके आदिभूत रूपतन्मात्र तेजोरूपो महाभूतमें रूपान्तरित हो कर सृष्टिकर्त्ता रुद्रतेजके परिचायक हुआ है तथा उसी पेशी ओजघातुकी अग्निमय मूर्त्तिकी कल्पना करके मनुष्य उनकी पूजा करते हैं ।

शिवपूजापद्धतिमें कहे हुए “रुद्राय अग्निमूर्त्तये नमः” वाक्यमेंसे मूर्त्तितत्त्वकी प्रकृत अवस्था हृदयङ्गा हो सकत है । जगत्के आदिपिनाकी रुद्रमूर्त्ति अग्निमय थी, सुतरां इसके द्वारा सिद्धान्त हो सकता है, कि सृष्टिप्रकरणोक्त रूपतन्मात्रका तेजोभाव ही विश्वलष्टाकी रुद्रमूर्त्तिकी अवान्तर कल्पनामात्र है ।

अब देखना चाहिये, कि प्राचीन संहिता युगमें आर्यगण प्रकृतिमेंसे किसी वस्तुकी रुद्रके नामसे उपासना करते थे । ऋक्संहिताके १म मण्डलके २७वें सूक्तमें १०वें मन्त्रके “जरावीध तत् विविडडि विशेविशे यज्ञियाय । स्तोमं रुद्राय दृशीकं ।” वचनसे स्पष्ट मालूम

होता है कि यद् ही भस्मि और यद्मानुषानामर्षं पद्मम् प्रवेशकारी है । ०

पास्कने एक श्रद्धा सम्बन्धमें 'अग्निरपि यद् उच्यते' और सायणन 'यद्राय क्रूपाय भगवो' लिखा है । १।१६४ मन्त्रमें मरुद्वृषको "यद्रासा" कहा गया है । सायणाचार्यने "यद्रासा अर्घे यद्रपुत्रः मरुता" लिखा है । ऐसी दृशमें वे मरुद्वृषके पिता हुए । १।४।१५ मन्त्रमें यद् को अतीवपर्यन्तकारा, महत् यक्षपादक, इन्द्रकृप औरपि युक्त, सृष्टके समान शोषिमान्, हिरण्यक समान बरज्वल, देवीमें धेष्ट कदा गया है । इसक सिवा यद् पातुका प्रकृत अर्घं शब्द या गज्रंन करता है, उससे यद्को अग्नि रूपी, दूनालक उज्ज्वलित्वा जगद्वायमान देव तथा ज्योति मय और तप वक्रतो देवता (श्रुक् २।३३ और ४।४१ सूक्त तथा ६।४।१०) माना जाय, वे भी स्पष्ट बात होता है कि आदिम अर्घसे यद्शब्दका अग्नि या वज्रके लिए प्रयोग हुआ था । श्रुक् ६।२।८ और १०।२५।३ मन्त्रमें भी उनकी सर्वसं वारिस्व शक्तिका परिचय है ।

इसक अतिरिक्त श्रुत्येवक १।४।१, १।४।२, १।८।१, १।१।१।३।१, १।१।२।१, १।२।३।५।१।३, २।३।१, २।३।२, ३।२।५, ४।३।१ ५।३।३, ५।४।२।१, ५।५।१।३, ५।५।२।३, ५।५।३।८, ५।६।०।५, ६।५।३, ६।७।१।०, ६।९।०।४, ६।६।१।४ आदि मन्त्रोंक पदमेंसे यही मालूम होता है, कि यद् मरुद्वृषके पिता और अग्नि ही थे । श्रुक् ७।१।०।४, ०।४।३, ७।३।५, ७।४।५, ७।४।१, १०।१३।५ आदि मन्त्रोंमें यद्को अग्नि, यद् मित्र वदय अश्विन, मय, पून्द् दृष्टवति और सोम नामक विभिन्न देवताओंक रूपमें प्रह्व किया है । श्रुक् १०।१२।५ और अर्घ्यं ४। ३०।५ मन्त्रमें यद्को संहारक मूर्तिकी उपासना पाइ जाती है । श्रुत्संहिताक १।१।३ सूक्तक १ म और ७ म मन्त्र में है—

केन्द्रिन् शब्दमें जैसे रश्मियुक्त सूर्य वायु या भग्निका बोध होता है, उसी प्रकार वृषरे पक्षमें सुधीर्षं केन्द्र या जटा विशिष्ट पुद्गलका भी ध्यान होता है । ये अग्नि, अन्न तथा धुंकोक और भूकोक पारण क्रिये हुए हैं । और वे ज्योति द्वारा सर्वव्रगतको प्रकाशमान क्रिये हुए हैं । इस लिए सायणके मतसे ये यद्मानुषाय अग्नी दृश्यमान मरुद्वृष जन्म ज्योतिक सिवा और कोर नहीं है । वैश्वितीय संहितामें ५।४।३१ मन्त्रमें यद् शब्दका प्रयोग वैद्युत्वाग्निके अर्घमें किया गया है ।

अग्नी वायु मण्डित अन्न (विप)को यद्के साथ पाण करते हैं । इस प्रसंगस समुद्रमण्डन और यद्का विपगान तथा शोडकण्डनाम कर पीठानिक उपायान संगठन किसो प्रकारसे असामंभय नहीं मालूम होता ।

वाक्समेवसंहिताके ३।५।५ सूक्तमें यद्का विवरण है, यहाँ वे अम्पिकाके ज्ञाता और एक म शुभामगो हैं । लिपोंके साथ म शुभामगो होनसे वे भी कामक नामसे (मृतपथ २।३।२।३) कहे जाते हैं, परन्तु वेदवीपकारने लिखा है कि 'शोषि अम्पकानि मेकाणि यस्य तादृग देव मेव लिनकोऽयं देव इति ।' इसलिये यद्को लिनैव और अम्पिकाके म शुभामगो वा पति बनानेमें पुराणकारों को विरोध कष्ट नहीं उठाना पडा । श्रुत्संहिताके ७।५।१२ मन्त्रके भाष्यमें सायणने कामक शब्दक मूल शब्दार्थके साथ ऐसो पीठानिक व्याख्यान भी लिखा है— 'मत्र शोभक । शिरान् निरसोऽप्येव अर्घ्येत् पायस चक । उताहुतिर्गर्त पूर्णं सुद्रुपाच्छ सितयतः समुद्दिश्य महाद्वयं तान्त्रकं तान्त्रके तुष्या । पतत्ययदन्तं दृत्वा ज्ञायत् यर्षर्गतं सुषो ।' (अग्ने ० २।२०) "मैत्रवाणं प्रक्षपिल्यु यद्गामामरक पितरं यजामह इति शिष्यसमाहितो यशितो यवीति ।' इत्यादि ।

श्रुत्येवमें ओ कामक शतवर्ष परमायुवाता यक्षेभ्यर और मृत्युयग्धन-मोचनकारो हैं, शुम्भयसुर्षेवमें य हो यद्, सर्वशोके निवर्ता, वायुपाशो और सर्वव्यसकारो (१।१।१।५) तथा अश्वयेवमें मेघवापिच नाब्रह्मिण्यर, कर्मयद् और मय, उर्ध, अग्नि, पशुगति, अर्धमा, महा

० महारथ पदके अर्थकारी है । इपयवने लताक बंदे रबानके बाद महार बने अथ उलाह कर यद्युक्ति पारण की थी । अत्यध श्रद्धा का निवर्तक है । ऐसी पीठानिक कल्पना होगी है ।

देव, वरुण आदि नामसे पूजित हुए हैं।* पुराण और महाभारतमें पाशुपत अस्त्रका उल्लेख है, वह अथर्ववेदके १४।५।६ मन्त्रमें पूर्णरूपसे परिस्फुटित है।

इसके अलावा शतपथब्राह्मण १।७।३।८, ६।१।३।७ १६, ६।१।१।१, ६।१।१।६ और शाङ्खायनब्राह्मण ६।१।६ तथा श्वेताश्वतर उपनिषद् ३।१-३ आदिकी आलोचना करनेसे ज्ञात होता है, कि रुद्र अग्नि और कार्तिकेयके पिता समझे जाते थे। वे शतशीर्षयुक्त, शतचक्षु-विशिष्ट और शतवाणधारी थे। वे इस प्रकार वीभन्स-मूर्त्ति धारण करके जीवोंके भयके कारण वन गये थे। श्वेताश्वतर उपनिषद्में वे ईशान, महेश्वर, महादेव, अनन्त, प्रणव, सर्वाध्यापी आदि उपाधियोंसे भूषित हुए हैं।

अथर्वाशिरसोपनिषद्में रुद्रको ईशान, महेश्वर, इन्द्र, वरुण, यम, मृत्यु, विष्णु और ब्रह्माके नामसे कहा गया है। उक्त ग्रन्थमें 'देवा इ वै खर्ग' लोकं आगमन्। ते देवा रुद्रं अपृच्छन् को भवान् इति। सोऽब्रवीद् अहं पत्रः प्रथमं आसन् वर्त्तामि च भविष्यामि च नान्यः कश्चिद् मत्तो व्यतिरिक्त इति। सोऽन्तराद् अन्तरं प्राविशद् दिशश्चान्तरं सम्प्राविशत्। सोऽहं नित्यानित्ये ध्यक्ता-ध्यक्तोऽहं ब्रह्माब्रह्माहं प्राञ्जः प्रत्यञ्जोऽहं दक्षिणाञ्च उदञ्जोऽहं अधश्चोद्दञ्च दिशश्च प्रतिदिशश्चाहं पुमान् अपुमान् स्त्री चाहं साचित्त्र अहं गायत्र अहम् त्रिष्टुब् जगत्य अनुष्टुप् चाहं छन्दोऽहं गार्हपत्यो दक्षिणाग्नि-राह्वानीयोऽहं सत्योऽहं गौर अहं गौर्य अहं ज्येष्ठोऽहं वरिष्ठोऽहं आपोऽहं, तेजोऽहं ऋगयुजःसामायर्वाङ्मि-सोऽहं" इत्यादि वाक्योंसे रुद्र निखिलपति जगन्नियन्ता ही प्रतीत होते हैं। देवगण उनके अक्षय वीरत्वको देख कर उनके ध्यानमें निमग्न हुए थे। इस ग्रन्थमें उनका ईशान, महेश्वर और महादेवके नामसे वर्णन किया गया है।

कैवल्योपनिषद्में आश्वलायनने ब्रह्मासे ब्रह्मविद्या

* अथर्ववेद २।२७।६, ५।२१।११, ६।६३।१, ७।८७।१, ८।२।७, ८।५।१०, १०।१।२३, ११।२।१३१, १२।४।१७, १३।४।४ और १५।५।१७ देखो।

पूछी, इस पर उन्होंने शिवका ही माहात्म्य कीर्तन करते हुए कहा था—“जगत्पाता परमेश्वर उमासहाय (उमा-पति), आदिमध्य अन्तविहोन, सर्वजीवप्रभु, त्रिलोचन, नीलकण्ठ, प्रशान्त, समस्त साक्षी इत्यादि—” अपिच—“स ब्रह्मा स शिवः सेन्द्रः सोऽक्षरः परमः स्वरः, स एव विष्णुः स प्राणः स आत्मा परमेश्वरः। स एव सर्वथदभून् यच्छ भयं सनातनम्। ज्ञात्वा तं मृत्यु अत्येति नान्यं पन्थाः विमुक्तये। + + यः शतरुद्रीयं अधीतेसोऽग्निपूतो भवति स वायुपूतो भवति” इत्यादि।

नीलरुद्रोपनिषद् ग्रन्थके प्रारम्भमें लिखा है—“अपश्यन् चावरोहन्तं दिवितः पृथ्वीमयः। अपश्यं अपश्यन् तं रुद्रं नीलप्रीवं शिखण्डिनम्।”

रामायण और महाभारतमें तथा अन्यान्य पुराणादि में रुद्रके यथेष्ट उपाख्यान पाये जाते हैं।* कामदेवभस्म, वक्ष्यज्ञनाश, उमाका विवाह, गङ्गाका विवाह आदि यथास्थानमें वर्णित हुए हैं। शिव देखो।

२ विश्वकर्माके एक पुत्र। (विष्णुपुं ११५।१२)
३ स्वनामख्यात एक कवि। ये विद्याविलासके पुत्र तथा भावविलासके प्रणेता थे। ये कवि मानसिंहके पुत्र भावसिंह राजाके समयमें विद्यमान थे। ४ ग्यारहकी संख्या। ५ मदारका पेड़, आक। ६ रौद्र रस। ७ प्राचीनकालका एक प्रकारका वाजा। (लि०) मयंकर, डरावना।

रुद्र—कई एक प्राचीन ग्रन्थकार और सुपरिचित। १ कवि। ये धर्माधिकारणिक रुद्रके नामसे परिचित थे। २ ज्योति श्चन्द्रार्क, प्रश्नरत्न-टीका, मेघमाला और स्फुटविवरणके प्रणेता। ३ त्रैलोक्यसुन्दरीके रचयिता। ४ युद्धकौशल के प्रणेता। ५ रुद्रकोप नामक कोशके रचयिता। मेदिनी-कर और मल्लिनाथने इनके वचन उद्धृत किये हैं। ६ स्मरदीपिकाके रचयिता।

* रामायण—१।१४।१, १।२५।१०, १।३६।२०, १।७।५।१४, ५।४।४।७, ५।४।४।४६ और ६।११।६।१ तथा महाभारत शान्तिपर्व देखो। इसके विवा ह्यशीर्षपञ्चरात्र १२८ अ०, सिद्धपुराण ५।२१, ६।१३, २६।२३, बराहपुं १३।८, शिव वायवीय १२।१ आदि ग्रन्थोंमें रुद्रका विल्लुत वर्णन है।

रुद्र—१ वैवाङ्मके एक राजा । वे वैपादके अन्य विभागक राजा भीमवृष और सखीकामके समसामयिक थे । २ भीरुवृषके काकरीपर्वशी एक राजा मोच-राजके पुत्र । वे प्रतापवृष (म नामसे भी परिचित थे) । ३ एक हिन्दू राजा वे तैलङ्गाधिपति थे तथा वैश्वगिरिक राजा भीमपाद से परास्त हुए थे ।

रुद्र भावार्थ—शक्ति (आकरके) अनुसार एक ताग्निक भाव का नाम ।

रुद्र (सं० पु०) १ एक बीजका नाम । (अभिधित्पर) २ महाभक्तवृष, बड़ा भगस्तका पेड़ ।

रुद्रकमल (सं० पु०) रुद्रास ।

रुद्रक रामपुत्र (सं० पु०) एक बीजका नाम ।

रुद्रकलस (सं० पु०) एक प्रकारका कलस जिसका उप भाग महीं भादिकी शान्तिक समय होता है ।

रुद्रकवच (सं० स्त्री०) रुद्रस्य कवचम् । रुद्रका कवच । कैसर गौराचल भादि द्वारा सोमपत्र पर यह कवच लिख कर पञ्चगव्य पञ्चाभूत भादिसे स्नान तथा क्यकयोगन की प्रयागीके अनुसार शोधन और पूजा करनी होती । पीछे हाथ धूप या गलेमें यह कवच पहनना होता है । इस कवचके पहननेसे पुत्रार्थके पुत्र, धनार्थके धन, विद्याार्थके विद्या तथा मोक्षकामीके मोक्षलभ होता है ।

(चन्द्रशर)

रुद्रकवि—वायुमानचरित्रके रचयिता ।

रुद्रकबीरु (सं० पु०) एक कवि । समह राजा ।

रुद्रकाशी (सं० स्त्री०) शक्ति या दुर्गाकी एक मूर्तिक नाम ।

रुद्रकाशी—इमाका नाम रुद्र । भीरुवृष सायमिस कर जब उमाने वृषका पक्ष नष्ट किया उसी समय इनका नाम रुद्रकाशी पड़ा ।

रुद्रकुरुड (सं० पु०) मञ्जक एक तोषका नाम ।

रुद्रहोत्रि (सं० स्त्री०) एक प्राचीन तीर्थका नाम । यह महापवित्रुके निकट एक गणेशजीके ऊपर स्थापित है । (स्कन्दमें नागल० १०२३)

रुद्रगण (सं० पु०) रुद्रस्य गणाः । पुराणानुसार त्रिविक पारिवृत्त । इनकी सख्या एक करोड़ और किसी किसीक मतसे ३६ करोड़ है । कहेते हैं, कि ये सब अज्ञा पारण

विधे रहते हैं । इनके मस्तक पर अश्वत्थ रहता है । वे बहुत बलवान् होते हैं और योगियोंके योग साधनमें बड़नेवाले विघ्न वृत्त करते हैं ।

रुद्रगर्भ (सं० पु०) अग्नि ।

रुद्रगीत (सं० स्त्री०) भगवत्स्य ऋषीक रुद्रस्तव ।

रुद्रगीता (सं० स्त्री०) भगवत्स्य रुद्रस्य पाद ।

रुद्रचण्डी (सं० स्त्री०) रुद्राचण्डी । रुद्रयामकोक देवी-माहात्म्य । जिस प्रकार मार्कण्डेयपुराणमें देवीमाहात्म्य चण्डी नामसे क्यात है, उसी प्रकार रुद्रयामकाम देवीके चण्डिकाका जो माहात्म्य वर्णित है उसे रुद्रचण्डी कहते हैं । यह रुद्रचण्डी पहने या सुननेसे सभी बिघ्न विद् रित होते हैं । रविवारमें इस रुद्रचण्डीका पाठ करनेसे तथा शनिवारके फल काम होता है । इसी प्रकार सोमवारको पाठ करनेसे सहस्रावृत्तिकरु म गणधारमें शतावृत्तिकरु, शुभ, वृहस्पति और शुक्रवारमें साक्ष भावृत्तिकरु तथा शनिवारमें करोड़ भावृत्तिकरु काम होता है । इस चण्डी वाङ्क कलस धन, धान्य और आरोग्यार्थ काम होता है ।

रुद्रचन्द्र (सं० पु०) एक प्राचीन हिन्दू राजा ।

रुद्रचन्द्रवृष—इडोसा राज प्रतापरुद्रका नामान्तर ।

प्रतापराज देखो ।

रुद्रचन्द्रवैष—ऊपाशोपाध्यायिका और यथातिथरित नाटकके प्रणेता ।

रुद्रबाहू—कुमारूके चार्द्वर्णशोय एक राजा । १५६६ ई०में वे विद्यमान थे ।

रुद्रचण्डल (सं० पु०) काश्मीरका एक राजपुत्र ।

रुद्रज (सं० पु०) रुद्रावृत्त इति ज्ञान ङ । पारव, पारा ।

रुद्रमन्त्र (सं० स्त्री०) रुद्रस्य मन्त्र । १ तीस बार हाथ ऊँचा एक प्रकारका श्रुप । इसक पठे मयूरसिकाके पक्षीके समान होत है । इसक पठे पदके ता बड़े होते हैं पर ज्यों ज्यों श्रुप बढ़ता जाता है त्यों त्यों वे छोटे होत जात हैं । इसमें अन्न रंगक बहुत सुन्दर फल लगत हैं जिसका आकार पापः बराबर समान हुआ करता है । इनक बीज भरसाक बीजोंके समान काठे भीर कामहीसे हाते हैं । वैद्यकमें रुद्रमन्त्र कटु और श्यास, कास, हृदय रोग तथा मूत्र प्रेतकी बाधा वृत्त करने

वाली मानी गई है। पर्याय—रीट्टी, जटा, रुद्रा, सौम्या, सुगंधा, सुवहा, वना, ईश्वरी, रुद्रलता, सुपत्ता, सुगंध-पत्ता, सुरभि, शिवाहा, पत्तवल्ली, जटावल्ली, रुद्राणो, नेत्रपुष्करा, महाजटा, जटरुद्रा । २ मधुरिका, सौंफ । ३ ईसरमूल, इसरील ।

रुद्रजप (स० पु०) रुद्रका उद्देशक स्तवविशेष ।

रुद्रजपन (स० क्ली०) ग्रामे स्वरमें रुद्रस्तव पाठ करना ।

रुद्रजापक (स० त्रि०) रुद्रस्तवपाठकारी, रुद्रस्तव पढ़ने-वाला ।

रुद्रजापिन् (स० त्रि०) जो रुद्रस्तव पाठ करे, रुद्रस्तव-पढ़नेवाला ।

रुद्रजाप्य (स० क्ली०) वह स्तव जो रुद्रके उद्देशसे वाज-सनेयसहिनामं कहा गया है ।

रुद्रज—साहित्यके एक प्रसिद्ध आचार्य । इनका बनाया हुआ काव्यालंकार ग्रन्थ बहुत प्रसिद्ध है । ये रुद्रभट्ट और शतानन्द भी कहलाते थे । इनके पिताका नाम भट्ट वामुक था ।

रुद्रतनय (सं० पु०) जैन-हरिवंशके अनुसार तीसरे श्री-कृष्णका एक नाम ।

रुद्रताल (सं० पु०) मृदंगका एक ताल । यह सोलह मात्राओंका होता है । इसमें ११ आघात और ५ ङाली होते हैं ।

रुद्रतैज (सं० पु०) स्वामि कार्तिक, कार्तिकेय ।

रुद्रतैल—घात और श्लेष्मानाशक तैलोपध ।

रुद्रत्व (सं० क्ली०) रुद्रस्य भावः त्व । रुद्रका भाव या धर्म ।

रुद्रदत्त (सं० पु०) एक वैद्यग्रन्थके प्रणेता ।

रुद्रदत्त—१ आपस्तम्बश्रौतसूत्रभाष्य और आपस्तम्बीयश्रौत प्रायश्चित्तभाष्यके रचयिता । २ रुद्रदत्तीय नामक न्याय-ग्रन्थके प्रणेता ।

रुद्रदत्त पन्त—अलमोरा-वासी एक पण्डित । इन्होंने कुमार्युक्तके चौद्विंशतीय राजाओंकी आख्यायिका लिखी ।

रुद्रदामन्—शकजातीय एक प्रसिद्ध राजा । ये विख्यात खहरात (खगारात) कुलतिलक महाराज चण्डनके पौत्र थे । चण्ड नमालवके अधीश्वर होने पर भी केवल क्षत्रप उपाधि से परिचित थे । इन्होंने सातवाहनोंके अधिकृत नगरोंको जात कर महाक्षत्रप उपाधि पाई थी । उनके पुत्र जय-

दामके राज्यशेषमें सातवाहनकुलतिलक गोमतीपुत्र शात-कर्णिके (सम्भवतः १२३ पू० पू०) ग्रहरातवश ध्वंस कर दक्षिणापत्यमें फिर सातवाहनवंशगौरवकी प्रतिष्ठा की । उनके प्रभावसे राजपूतानेने समस्त दक्षिणापत्य भूमि तथा पश्चिम भारत आन्ध्रवंशका प्रकृष्टतप राज्य एकच्छततलमें समानोत्त हुआ था । अधिक सम्भव है, कि उसी समय दक्षिणापथसे शातकर्णिके हावसे परास्त पद्मगतवंशी शकसैन्यदलने मालवपतिकी शरण ली । उसी सेनादलके साहाय्यसे बलवान् हो कर जयदामके पुत्र रुद्रदाम पुनः पश्चिम भारतमें शकोंका अधिकार विस्तार करनेमें समर्थ हुए थे ।

गिर्नरसे आविष्कृत रुद्रदामके बड़े शिलाफलकमें लिखा है, कि उन्होंने पूर्व और पश्चिम आकारावन्ती (मालव प्रदेश), अनूर, नोपुद्र, आनर्त्त, सुराप्प, सन्न, भक्कच्छ, सिन्धु, सौंधीर, कुकुर, अपरान्त, निपाद आदि जनपद अपने बाहुबलसे जीता था । इन्होंने दक्षिणापथाधिपति शातकर्णिकेकी बार बार जीतने पर भी उनके नजदीकके नातेदारोंकी राज्यभ्र्युत नहीं किया । योधियगण उनसे अच्छी तरह विपर्यस्त हुए थे । इन्होंने एक एक कर पराजित राजाओंको पुनः अपने अपने राज्यमें अधिष्ठित कर बड़ा यश लूटा था । धर्म और कीर्ति फैलाने तथा बहु वर्ण गो ब्राह्मणके लिये इन्होंने अत्यन्त सुन्दर एक सेतु निर्माण कराया ।

उक्त प्रमाणसे स्पष्ट जाना जाता है, कि इन्होंने पञ्च-नदसे कोट्टण तकके भूमियोंको अपने अधिकारमें कर लिया था । दक्षिणापथपति शातकर्णिके साथ उनकी नजदीकी रिश्तेदारी थी ।

गौतमीपुत्र शातकर्णिके जो सब जनपद अधिकार किया, सम्भवतः उनके वंशधर उस विस्तीर्ण राज्यकी रक्षा नहीं कर सके । महाक्षत्रप रुद्रदामने दक्षिणापथस्थित जनपदके सिवाय सुराप्प आदि जनपदोंको अपने

४. गौतमीपुत्र शातकर्णिके अस्मिन्, अरमक, मुक्क कुकुर, अपरान्त, अनूर, विदर्भ, आरु अरवन्ती, विन्ध्यावत्, पारियात्र, सन्न, कृष्णागिरि, मच श्रीस्तन, मलय, महन्द्र, ओष्ठगिरि और चकौर पर्वत जीता था ।

वस्त्रेणै क्रिया या । कारण यह सब उनपर उनके कुटुम्ब शाठकृणितराजके अधिकारमें था । महाराष्ट्र कागिण्डापुर पुनोमायोने १३० स १५४ ई० तक भीर गौतमोपुत्र परब्रह्मो शाठकृणिते १५४से १७२ ई० तक राक्षस क्रिया था तथा गिण्डालिपि और मुद्रामो की मानोचना करनेसे मान्य होता है, कि १३० से १७० ई० तक वे नरन पर बैठे थे । इस प्रकार उक्त दो शाठकृणिक साथ उनका सम्बन्ध था ऐसा बोध होता है । किन्तु गिण्डालिपिक पढ़नेसे पता चलता है, कि महाश्वरप कन्यासे शाठकृणिक राजाके प्रियपुत्र यागिण्डपुत्र शाठकृणिक (चतुरायण) का विवाह हुआ था । इससे ज्ञाना जाता है, कि रुद्रनामके गिण्डा फलकीक शाठकृणिक परब्रह्मो शाठकृणिक होंगे । अधिक सम्भव है, कि उन्होंने महाश्वरप वरुणामके साथ युद्धमें हार खा कर रुद्रनामकी दुहिता मद्रयोके साथ अपने पुत्र यागिण्डोपुत्र चतुरायणका विवाह किया था तथा उसी सम्बन्धसूत्रस सम्भवता रुद्रनामने वृषिनायक पर हस्त श्रेय महा किया । उक्त रुद्रराज कन्याका पुत्र (मद्रतोपुत्र) गच्छेन नामसे विचरात हुआ ।

रुद्रश्रेय (सं० पु०) यथातिथिकके रचयिता ।

रुद्रत्व—१ भार्यापरांक एक राजा । राजा समुद्रगुप्तने इलाहाबाद ३५० में इन्हें विहृत किया । २ मेघाळके एक राजा ।

रुद्रश्रेय—१ कौतुकचिन्तामणिक प्रणेता । २ ज्योतिष्वम्बरा पदचिन्तामणिक और ज्योतिषचन्द्रिकाके रचयिता । ३ पैवाकरपसिद्धान्तभूषणटीकाके प्रणेता । ४ प्रताप मारसिंह नामके शोधितिक रचयिता । ये प्रतिष्ठान पुस्तिकासा तातोभावात्तयक पुत्र और भनरतक शिष्य थे । उक्त प्रथम इन्होंने अग्निहोत्रहोम अष्टपष्टिकाय, भाष स्तम्भादिक, पाक्यधर्मकाग, वृष्ट्यकाश, यतिलकार, समवासरवति और शोषायनीय सामप्रयोग आदिकी मामांसा का । ५ गुण्यता नामका प्रयोगश्चास्त्रावकी टीकाके रचयिता ।

रुद्रधर—१ रुद्रधरचन्द्रिका, पिपादचन्द्रिका और धाद चन्द्रिकाके रचयिता षण्ठेश्वरके शिष्य । २ पुमानाका

रचयिता । ३ यतपदतिके प्रणेता । ४ भाष्यनिवेक, शुद्धि विवेक भीर उद्युक्तधर नामके शोधितिके रचयिता । रघुनन्दन, कनकाकर भीर लोकाकृष्टने इनका मत ग्रहण किया है । ये लक्ष्मोधरके पुत्र तथा इनपरके छोटे भाद थे ।

रुद्रधरमद्र—शाङ्गधरसंहिताकी टीकाके प्रणेता ।

रुद्रनन्दिन्—एक प्राचीन कवि ।

रुद्रनाथ—पैवाकरपसिद्धान्तभूषणटीकाके रचयिता ।
रुद्रनेव बने।

रुद्रनाथ—हिमाळयके एक शैवतीर्थका नाम । भाष कळ यह स्थान रुद्रगढ़ नामसे प्रसिद्ध है ।

रुद्रनिधि हिमालयके एक वैद्यस्थानका नाम ।
(दिग्मन् ६५७)

रुद्रन्यायवाचस्पति—गुण्ययनविनोदकाय और भाष विद्यासकायके प्रणेता । ये अपने प्रतिपादक मानसिंह पुत्र और मगधवासवील राजा मायसिंहकी गुण्ययणकी कारण कर भाषयिणास मलयन किया ।

रुद्र न्यायवाचस्पति मद्राचार्य—पैवाकरवासी एक विख्यात पण्डित । ये पिपातियाम मद्राचार्यके पुत्र और भया नन् पण्डितके पील थे । ये जनसाधारणमें न्यायवाच स्पति नामसे परिचित थे । अधिकरणचन्द्रिका, कारक परिच्छेद, कारकव्या करकम्पूक, तत्त्वचिन्तामणिकीपिपित टीका, कुसुमाद्रिककारिकाभाष्य तथा न्यायसिद्धान्तमुक्ता यलाटीका, पादपरिकेड विधिकवणिकरण, शब्द परिकेड तथा धनुर्मतिटीका, भाषवावाह्यावधा, उवाहरणलक्ष्यटीका, उपनयलक्ष्यटीका, उपाधिपूर्व पक्ष प्रणयोका, केवद्वारया मयका, चिन्तयवाह्या, तत्त्वप्रथोका तुनीय चक्रवर्तिसंक्षयटीका, तुनाय प्रगल लक्ष्यटीका, द्वितीय चक्रवर्तिसंक्षयटीका, त्रितीय संक्षयटीका, पक्षतापूपप्रणयटीका, पक्षतासिद्धान्तप्रण टीका, प्रतिज्ञाभूषणटीका, प्रथम चक्रवर्तिसंक्षयटीका, विद्वत् पूर्वपक्षप्रणयटीका, विद्वत्सिद्धान्तप्रथयटीका, विद्वत् वादोका, यामानुगमटीका, सरततिपक्षपूर्वपक्ष यटीका, मध्यनिवार पूर्वपक्षप्रथयटीका, सद्यनिवारसिद्धान्तप्रण टीका और सामान्यनिकटिटीका आदि कई एक न्याय प्रणय और धनु इनके बनाये हैं । इनके मताया इन्होंने

पितामह भवानन्द-विरचित कारकाचार्यनिर्णय नामक एक टीका तथा द्रव्यकिरणावलीपरीक्षा और गुणप्रकाश विवृतिभावप्रकाशिका नामकी रघुनाथरुद्र किरणावलीकी टिप्पणी लिखी थी।

रुद्रपरिडित (सं० पु०) रुद्रहरि देखो।

रुद्रपति (सं० पु०) शिव, महादेव।

रुद्रपत्नी (सं० स्त्री०) रुद्रस्य पत्नी। १ दुर्गा। (भारत ३८३।२५८) २ अनसी, आलसी स्त्री।

रुद्रपत्नीय खरतरशाखा—एक जैन-सम्प्रदायका नाम। पञ्चचंद्रके गुरु जिनशेखर सूरिने रुद्रपत्नीमें इस शाखाकी प्रतिष्ठा की। किसी किसोके मतसे पञ्चचंद्र ही इस शाखाके प्रवर्तक थे।

रुद्रपाल (सं० पु०) राजभेद।

रुद्रपीठ (सं० पु०) तात्विकोंके अनुसार एक पीठ या तीर्थका नाम। (योगीनीतन्त्र १७)

रुद्रपुत्र (सं० पु०) बारहवें मनु रुद्रसावर्णिका एक नाम।

रुद्रपुर (सं० स्त्री०) एक जनपदका नाम।

(द्विग्विजयप्रकाश)

रुद्रपुर—युक्तप्रदेशके गोरखपुर जिलान्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० २६° २६' ४०" उ० तथा देशा० ८३° ३६' २५" पू०के बीच चधुशानालाके किनारे अवस्थित है। यहा भारजातिके एक विस्तृत दुर्गका ध्वंसावशेष पडा है। गुड़ और स्थानीय शस्यका यहा कारवार चलता है इसलिये यह स्थान प्रसिद्ध है।

रुद्रपुर—युक्तप्रदेशके तराई जिलेके अंदर एक गण्डग्राम। यह अक्षा० २८° ५८' उ० तथा देशा० ७६° २६' ६६" पू० तक विस्तृत है। यहा बहुत-सा ध्वस्त मन्दिर और प्राचीन मसजिद हैं जो यहाके प्राचीन हिन्दू और मुसलमान राजाओंकी शासनसमृद्धिका परिचय देती है। इस ग्रामके पासही एक बड़ा आम्रकानन है।

रुद्रपूजन (सं० स्त्री०) रुद्रस्य पूजन। रुद्रदेवकी पूजा।

रुद्रप्रताप (सं० पु०) राजा प्रतापदत्त देखो।

रुद्रप्रमोक्ष (सं० पु०) पुराणानुसार वह स्थान जहासे शिवजीने त्रिपुरासुर पर बाण चलाया था।

रुद्रप्रयाग—हिमालयके एक तीर्थका नाम। यहां मन्दा-

किनीके साथ गंगा आ मिली है। (हिमवत् ५।१०४)

उत्तर-पश्चिम प्रदेशके गढ़वाल जिलेमें आज भी रुद्रप्रयाग तीर्थमें देवमन्दिर आदि विद्यमान हैं। इस समय मां केदारनाथ और बदरीनाथ त्रैलोक्यपरिवर्धित-कारिणी मन्दाकिनी नदी कलकल नादसे पहाड़ी अधित्यक्त भूमिमें उतर कर यहा अलकानन्दाके साथ मिल रही हैं। यह पञ्चप्रयागमेंसे एक है। हिमालयतीर्थयात्रिगण यहा आ कर कुछ दिन विश्राम करते हैं। मन्दाकिनी अलकानन्दा सगमसे छ. मील दूर पर्वतवक्षमें एक गुफा है जा भीमका चूल्हा कहता है।

रुद्रप्रिया (सं० स्त्री०) रुद्रस्य प्रिया। १ हरौतकी, हरे। २ पावती।

रुद्रभद्र (सं० पु०) पुराणानुसार एक नदका नाम।

(हिमवत् १८।१७)

रुद्रभट्ट—१ जगन्नाथविजयनाथके रचयिता। २ रुद्रभाष्यके प्रणेता। ३ शृंगारतिलक अलकार शास्त्रके रचयिता। पद्यावलीमें इनका उल्लेख है।

रुद्रभट्ट अयाचित—एक संस्कृतशास्त्रज्ञ परिडित। ये अच्छावक्रप्रयोगके प्रणेता याज्ञिक रघुनाथके पिता थे।

रुद्रभट्ट कवोन्द्र—एक प्राचीन कवि। ये पदार्थमाला आदि ग्रन्थके रचयिता लीलाक्षि भास्करके पितामह थे और लीलाक्षि रुद्रभट्ट नामसे भी परिचित थे।

रुद्रभट्ट वैद्य—सन्निपातकलिका और वैद्यजीवनटीकाके रचयिता। इनकी वनाई और भी चार ग्रन्थोंकी टीका मिलती है। ये कोणेर भट्टके पुत्र और विष्णुभट्टके पात्र थे।

रुद्रभाष्य (सं० स्त्री०) अज्ञेयल-रचित एक प्रसिद्ध भाष्य।

रुद्रभू (सं० स्त्री०) रुद्रस्य भू स्थान। श्मशान, मरवट।

रुद्रभूति (सं० स्त्री०) १ रुद्राहायणोका गोत्रापत्य। २ उनके वंशके एक आचार्य।

रुद्रभूमि (सं० स्त्री०) १ ज्योतिषमें एक प्रकारकी भूमि। २ श्मशान, मरवट।

रुद्रभैरवी (सं० स्त्री०) दुर्गाकी एक मूर्त्तिका नाम।

रुद्रमणि—चण्डीपर्यायरुप और लक्ष्मीपूजाविवेकके प्रणेता।

रुद्रमणि त्रिपाठी—प्रश्नशिरोमणि नामक ज्योतिषग्रन्थके

रचयिता । ये कमलेश्वरप्रकाशक प्रमेता धार्मिक कविके पिता थे ।

द्वय देवकुमार—ममरुशतकटोकाके प्रमेता ।

द्वयमय (स लि०) द्वयलक्ष्मणे मयट । द्वयलक्ष्मण, द्वयक समान ।

द्वयमहेश्वरी (स० स्त्री०) राजा गोविन्दचन्द्रकी महिषी ।

द्वयमावेशी—घोरद्वन्द्वके काकतीय घंशोप एक राणी । वह अपने स्वामी (क्रिसके मठसे पिता) गणपतिकी मूर्तयु होनेके पीछे सिंहासन पर बैठी । मार्को पोलो जब यह प्रदेश परिस्रमजमें भाये, तब १२५७ ई०में वही राक्षसी पर बैठ कर राज्यकी देवमात्र करत थे । ये प्रायः ६८ वर्ष राज्य कर २५ प्रथापरद्वन्द्वकी सिंहासन छोड़ गये ।

द्वयमाय्य (स० पु०) विश्वप्रसूत देवका पेरू ।

द्वयमूर्ति (स० पु०) १ द्वयका रूप या आकृति । (इपथीर्ण ४५५५१) २ श्लेषको पूर्ण प्रतिरूपि । ३ प्रथमक मुखक कृति ।

द्वयपत्र (स० पु०) एक प्रकारका पत्र जो द्वयके उद्देश्यस क्रिया जाता है ।

द्वयपामक (स० स्त्री०) ठासिकोंका एक प्रसिद्ध म प जिस में नैरव और नैरवीका संवाद है ।

द्वयपाय (स० पु०) मन्मथीयके एक हिल्कू-राजा ।

नरहीन र लो ।

द्वयपति (स० पु०) शिवाजिपियर्णिक एक वेदक प्राण्य ।

द्वयैषा (स० पु०) पारव, पारा ।

द्वयैश्वर्य (स० स्त्री०) स्वर्ण, सोना । -

द्वयैश्वर्य (स० स्त्री०) कार्तिकेयको एक मातृकाका नाम ।

द्वयैश्वर्य (स० स्त्री०) द्वयलताविशेष । द्वयैश्वर्य नामका धूप ।

द्वयैश्वर्य (स० पु०) १ शत्रुको बासयूमि । २ सिवकोक ।

(पिनकन्द० १ ११)

द्वयैश्वर्य (स० स्त्री०) एक तीर्थका नाम । इसका सम्बन्ध महाभारतमें है । (मात ३५०६२ श्लोक)

द्वयैश्वर्य (स० स्त्री०) शत्रुसे परिशेष्य (शैथिल्यक)

द्वयैश्वर्य (स० स्त्री०) १ द्वयगणोंके युक्त । (पु०) २ इन्द्र ।

(ऐनेरका० २२०) ३ मणि । (विग्रह० २११२५१३) ४ साम ।

द्वयैश्वर्य (स० पु०) १ महादेशके पांच मुक्त । (लि०) २ पांचवी संख्या ।

द्वयैश्वर्य (स० स्त्री०) एक प्रसिद्ध धर्माधि । इसकी मयना विश्वीयधर्म वर्गमें होती है । यह प्रायः सारे भारत में और विशेषतः इण्डिया प्रदेशोंकी बहुत अमीनमें बड़ा धर्मोंके पास और समुद्र तट पर अधिकतासे होती है ।

इसके श्रुप प्रायः हाथ मर ऊके हाते हैं और देवनेमें नरके पौषोंके से ज्ञान पकते हैं । इसके पले भी धर्मके पत्तोंके समान ही होते हैं, शत्रु शत्रुमें जिनमेंसे पानीकी बूँद टपका करती हैं । कावे, पीले, लम्ब और सपेद फूलोंके नेत्रसे यह धार पकारकी होती है । पौषकके अनुसार यह धरपरी कडवी, गरम, रसायन मन्त्रिकक, धर्मिकक और श्वास, इमि, एकपित्त, कफ तथा प्रमेह को दूर करनेवाली होती है । इसका पर्याय—लपतोया, सजावनी, भन्तलक्ष्मी, रोमाञ्जिका, महामांसी, अजकलनी, सुधाक्ष्मी, मधुक्ष्मी ।

द्वयैश्वर्य—महास प्रसिद्धरसीके भक्तार्थ एक प्राचीन नगर । यहाँ बहुत से शैवमन्दिर विद्यमान हैं ।

द्वयैश्वर्य (स० पु०) १ कठिन पथ । २ स्तुतिमार्ग ।

द्वयैश्वर्य (सि० वि०) शत्रुप देवो ।

द्वयैश्वर्य (स० स्त्री०) श्रु शैवताका विशिष्ट । प्रमथ भावि साठ संघरसरो या वर्षोंमेंसे मन्त्रिम बोस वर्षोंका समूह । इसे शत्रुभीती भी कहते हैं ।

द्वयैश्वर्य (स० स्त्री०) श्रु शैवताका विशिष्ट । प्रमथ भावि साठ संघरसरो या वर्षोंमेंसे मन्त्रिम बोस वर्षोंका समूह । इसे शत्रुभीती भी कहते हैं ।

द्वयैश्वर्य (स० स्त्री०) श्रु शैवताका विशिष्ट । प्रमथ भावि साठ संघरसरो या वर्षोंमेंसे मन्त्रिम बोस वर्षोंका समूह । इसे शत्रुभीती भी कहते हैं ।

द्वयैश्वर्य (स० स्त्री०) श्रु शैवताका विशिष्ट । प्रमथ भावि साठ संघरसरो या वर्षोंमेंसे मन्त्रिम बोस वर्षोंका समूह । इसे शत्रुभीती भी कहते हैं ।

द्वयैश्वर्य (स० स्त्री०) श्रु शैवताका विशिष्ट । प्रमथ भावि साठ संघरसरो या वर्षोंमेंसे मन्त्रिम बोस वर्षोंका समूह । इसे शत्रुभीती भी कहते हैं ।

द्वयैश्वर्य (स० स्त्री०) श्रु शैवताका विशिष्ट । प्रमथ भावि साठ संघरसरो या वर्षोंमेंसे मन्त्रिम बोस वर्षोंका समूह । इसे शत्रुभीती भी कहते हैं ।

द्वयैश्वर्य (स० स्त्री०) श्रु शैवताका विशिष्ट । प्रमथ भावि साठ संघरसरो या वर्षोंमेंसे मन्त्रिम बोस वर्षोंका समूह । इसे शत्रुभीती भी कहते हैं ।

द्वयैश्वर्य (स० स्त्री०) श्रु शैवताका विशिष्ट । प्रमथ भावि साठ संघरसरो या वर्षोंमेंसे मन्त्रिम बोस वर्षोंका समूह । इसे शत्रुभीती भी कहते हैं ।

द्वयैश्वर्य (स० स्त्री०) श्रु शैवताका विशिष्ट । प्रमथ भावि साठ संघरसरो या वर्षोंमेंसे मन्त्रिम बोस वर्षोंका समूह । इसे शत्रुभीती भी कहते हैं ।

द्वयैश्वर्य (स० स्त्री०) श्रु शैवताका विशिष्ट । प्रमथ भावि साठ संघरसरो या वर्षोंमेंसे मन्त्रिम बोस वर्षोंका समूह । इसे शत्रुभीती भी कहते हैं ।

कर्ममार्थ र लो ।

द्वयैश्वर्य (स० स्त्री०) एक प्राचीन तीर्थका नाम ।

द्वयैश्वर्य (स० पु०) श्रु शैवताका नाम । श्रु द्वारा श्रुति ।

श्रुसे जिनकी श्रुति श्रु ही वे श्रुश्रुति कहलाते हैं ।

श्रु देवो ।

द्वयैश्वर्य (स० स्त्री०) सामने ।

द्वयैश्वर्य (स० पु०) पुष्यपानुसार धर्मके मनुका

नाम । भागवतमें लिखा है, कि इस मन्वन्तरमें सुचा-
माद्य अवतार, ऋतधामा इन्द्र तथा हविरादि देवता,
तपोमूर्त्ति आदि सप्तर्षि, देववत् और उपदेवादि मनुके पुत्र
हुए थे । (भागवत ८।१३ अ०)

रुद्रसावर्णिक (सं० त्रि०) रुद्रसावर्णिके कालसम्भूत या
सम्बन्धीय ।

रुद्रसिंह—मिथिलाके खण्डवाल वंशोय एक राजा तथा
छत्रसिंहके पुत्र और महेश्वरसिंहके पौत्र । ये सुवोधिनी
और व्रताचारके प्रणेता रत्नपाणिके प्रतिपालक थे ।

रुद्रसिंह—आसामके अहोमवंशी एक राजा । ये रङ्गपुर
और जोरहाट नगर स्थापन कर गये हैं । इनकी प्रच-
लित मुद्रा सबसे पहले बंगला अक्षरमें खोदी गई थी ।

कामरूप देखो ।

रुद्रसिंह—एक हिन्दू नरपति । ये राघवपाण्डवोयदोकाके
प्रणेता कुमार वंशधरके पितामह थे ।

रुद्रसुन्दरी (सं० स्त्री०) देवीकी एक मूर्त्तिका नाम ।

रुद्रसू (सं० स्त्री०) रुद्रो तत्परमिति पुत्रं सूते सू-क्विप् ।
वह स्त्री जिसने ग्यारह पुत्र उत्पन्न किये हों, ग्यारह पुत्रकी
जननी ।

रुद्रसूरि—शब्दचिन्तामणि नामक व्याकरणके प्रणेता तथा
पुण्यनायकके पुत्र ।

रुद्रसृष्टि (सं० स्त्री०) रुद्रकृता सृष्टिः । रुद्रसर्ग, रुद्रकी
सृष्टि ।

रुद्रसेन (सं० पु०) महाभारत युद्धका एक घोडा ।

(भारत ७ पर्वा)

रुद्रसेन १म—पश्चिमक्षत्रपराजवंशके एक शक्रराज, रुद्र-
सिंहके पिता । २०० ई०मन्में 'ये विद्यमान थे ।

रुद्रसेन २य—एक शक्रक्षत्रप । २य दामजद्वीके बाद ये
मालवकी राजगद्दी पर बैठे । ये राजा वीरदामाके पुत्र
थे और २५० ई०सन्में विद्यमान थे ।

रुद्रसेन ३म, २य और ३य—दाक्षिणात्यके वकाटकवंशीय
महाराज । पाठाटक व देखो ।

रुद्रसोम (सं० पु०) ब्राह्मणभेद । (कथावर्त्ता० ६।४।११०)

रुद्रस्कन्दस्वामिन्—औद्गात्रसारस ग्रह नामक ब्राह्मण
श्रौतसूत्रभाष्य और ब्राह्मणयण्युद्गात्रवृत्तिके रचयिता ।
वीरराघवने इनका चचन उद्धृत किया है ।

रुद्रस्वर्ग (सं० पु०) रुद्रलोक ।

रुद्रस्वामिन् (सं० पु०) शिलालिपि वर्णित एक राजा ।

रुद्रहिमालय—हिमालयपर्वतकी एक चोटी । यह अक्षा०
३०' ५८' ३० तथा देशा० ७६' ५' पू०के मध्य चीनकी
और पूर्वी सीमा पर है और सदी बरफसे ढकी रहती है ।
यह समुद्रपीठसे २२३६० फुट ऊंची है ।

रुद्रहति (सं० त्रि०) १ स्तोत्रगण द्वारा स्तुत या स्तुति
किया हुआ । २ रुद्र ।

रुद्रहृदय (सं० पु०) एक उपनिषद्का नाम जो प्राचीन द्वा
उपनिषदोंमें नहीं है ।

रुद्रा (सं० स्त्री०) १ रुद्रजटा नामक क्षुप । २ नलिका
नामका गन्धद्रव्य कवितलता । ३ अदितिमंजरी, मुकवर्चा ।
४ हिमालयकी एक नदीका नाम । (हिमवत् ८।१६)

रुद्राक्रीडा (सं० पु०) रुद्रस्य आक्रीडा देवनं यत् । शमशान,
मरघट ।

रुद्राक्ष (सं० स्त्री०) रुद्रस्य अक्षि कारणत्वेनास्त्यस्येति,
अर्श आदित्वादच् । १ खनामख्यात वृक्ष बीज । (पु०)
२ खनामख्यात वृक्ष (Elaeocarpus Ganitrus) पर्याय—
तृणमेरु, अमर, पुष्पचानर । इसके फलके पर्याय—शिवाक्ष,
सर्पाक्ष, भूतनाशन, पानन, नीलकण्ठाक्ष, हराक्ष, शिवप्रिय ।
गुण—अम्ल, उष्ण, वात, कृमि, शिरोरोग तथा रुचिकर ।
(राजनि०)

रुद्राक्ष स्थूल प्रशस्त स्थूठ रुद्राक्ष और नामद शिव-
लिङ्ग क्षुद्र प्रशस्त है । (मेरुतन्त्र ६ अ०)

रुद्राक्षमाला धारण करके शिवपूजा करनी चाहिए । यदि
कोई रुद्राक्षमाला धारण बिना किये ही शिवपूजा करे,
तो वह पूजा निष्फल होती है । (लिङ्गपु०)

रुद्राक्षमाला, मस्म और त्रिपुण्डादि धारण बिना
किये शिवपूजा न करना चाहिए, ऐसा विधान है । परंतु
यदि कोई बिना धारण किये पूजादि करे, तो पूजाका
किञ्चिन्मात्र भी फल न होगा, यह बात नहीं, वैलक्षण्य
फलका अभाव होगा, इतना समझ लेना चाहिए ।

तन्त्रसारमें रुद्राक्षके माहात्म्यादिके विषयमें लिखा
है—मस्तक पर, चोटीमें, कण्ठमें और कर्णोंमें जो
रुद्राक्ष धारण करता है, वह व्यक्ति शिवलोक प्राप्ति
कर सकता है । साधकको चाहिए कि नववक्त्र रुद्राक्ष

शाम बाहुमें और चतुर्वैशमुख यद्वाश शिवामें धारण करे । एक वक्त्र यद्वाश साक्षात् शिवस्वरूप है, इसके धारण करनेसे अष्टहत्या ज्ञित पाप नष्ट होते हैं । त्रिवक्त्र यद्वाश इगोपेलरूप है, इसके धारण करनेसे गोहत्या-ज्ञित पाप नष्ट होत हैं । त्रिवक्त्र यद्वाश भूमिलरूप है, इसके धारण करनेसे लिङ्गभ्राजित पापराशि विनष्ट हो जाती है । चतुर्वक्त्र यद्वाश अष्ट स्वरूप, इसके धारण करनेसे नरहत्याज्ञित पाप नष्ट हो जाते हैं । पञ्चवक्त्र यद्वाश काकामिलरूप है और उसके धारण करनेसे भगव्यागमन तथा भगवन्महात्म्यज्ञित पाप क्षय होते हैं । षड्वक्त्र यद्वाश फांशिये-स्वरूप है और उसके धारण करनेसे गर्भहत्याज्ञित पाप विनष्ट होते हैं । सप्तमुख यद्वाश स्वर्ग भगवत् है, उसके धारण करनेसे सुवर्णस्त्रीयज्ञित पापा भ्रष्ट होते हैं । अष्टमुख यद्वाश साक्षात् गणपति है, उसके धारण करनेसे मिथ्याभावप्रलय ज्ञय पाप विधुरित होते हैं । नवमुख यद्वाश साक्षात् नैरत्यस्वरूप है उसके धारण करनेसे त्रिभ-सायुष्य, वृषवक्त्र यद्वाश विष्णु स्वरूप है, उसके धारण करनेसे भूत प्रेत-पिशाचादिका मय विनाश, एकदशमुख यद्वाशके धारण करनेसे माता प्रकाश पञ्चककी प्राप्ति, द्वादशमुख यद्वाश धारण करनेसे समस्त प्रकारकी कामता पूर्ण चतुर्दश मुख यद्वाशके धारण करनेसे पुत्रोंका उद्धार होता है ।

एक वक्त्रसे छे कर चतुर्वैशवक्त्र पर्यन्त यद्वाश अष्टोप प्रकार पाप-नाशक हैं । ऊपर जिन यद्वाशोंका उल्लेख किया जाता है वे निरिच्छ्र और सुपक होना चाहिये । अन्यथा मङ्गलजनक नहीं होगे । यद्वाशको पञ्चगव्य और पञ्चामृत द्वारा भूमिषिक कर लेना चाहिये । प्रसासको प्रतिष्ठा करते समय पञ्चाक्षरमन्त्र और ब्राह्मण कादि मन्त्र उच्चारण करने चाहिये । (ऊनगर)

भूषणकादि मन्त्र, यथा—ॐ ह्रीं भवोरे ह्रीं भोरे, हुं धोर भोरेरे ॐ हुं ह्रीं ध्रीं ये सवदा सर्वसर्वभ्यो भवोऽस्तु यद्विषये हुं हुं ॥

इस मन्त्र द्वारा प्रतिष्ठा करके धारण किया जाता है । एक मुख यद्वाशसे अ कर चतुर्वैशमुख पर्यन्त यद्वाश धारण करनेके क्रिय सबके अलग अलग मन्त्र हैं ।

उन मन्त्रोंको पढ़ कर धारण करना उचित है ।
मन्त्र इस प्रकार हैं—१ ॐ ॐ भूर्जी नमः । २ ॐ ॐ नमः । ३ ॐ ॐ नमः । ४ ॐ ॐ नमः । ५ ॐ ॐ नमः । ६ ॐ ॐ नमः । ७ ॐ ॐ नमः । ८ ॐ ॐ नमः । ९ ॐ ॐ नमः । १० ॐ ॐ नमः । ११ ॐ ॐ नमः । १२ ॐ ॐ नमः । १३ ॐ ॐ नमः । १४ ॐ ॐ नमः ।

एन श्रीवह मन्त्रोंसे क्रमशः चतुर्वैशमुख यद्वाश धारण किये जाते हैं ।

यदि कुम्भपुरके शरीरमें मृत्युकालमें भी यद्वाश मीथ्व रहे, तो वह कुम्भपुर भी यद्वाशको प्राप्त होना है । भोष्ठ मनुष्योंके सिप तो कबला ही क्या । मृत्युके समय मनुष्यकी देहमें यदि यद्वाश हो, तो उसे यद्वाशको प्राप्ति तो भवश्य ही होता, इसमें कोई सन्देह नहीं ।

२७ यद्वाशोंकी माळा बना कर उसे जो कोई कण्ठमें धारण करते हैं, वे कोरियुण फल पाते हैं । जो मनुष्य प्राण्यको पशुवक्त्रयद्वाश धारण करता है, उस पर यद्वाश समूह होते हैं और उसे भयना पद प्रदान करते हैं । यदि कोई व्यक्ति बिना मन्त्रके यद्वाश धारण करे, तो वह व्यक्ति चतुर्दश इन्द्र पर्यन्त नरकको गमन करता है ।

तन्त्रसारमें और भी १४ प्रकारके मन्त्र कहे गये हैं । प्रथमसे छे कर श्रीवह पर्यन्त यद्वाश उक्त मन्त्रसे धारण करना चाहिये ।

मन्त्र, यथा—१ ॐ ये । २ ॐ श्री । ३ ॐ प्रु प्रु । ४ ॐ ह्रीं हुं । ५ ॐ ह्रीं । ६ ॐ ये हो । ७ ॐ ह्रीं । ८ ॐ रु रं । ९ ॐ ह्रीं । १० ॐ ह्रीं । ११ ॐ श्री । १२ ॐ ह्रीं ह्रीं । १३ ॐ ह्रीं नमः । १४ ॐ तमं । इन १४ मन्त्रोंको पढ़ कर यद्वाश धारण करना चाहिये ।

जो व्यक्ति गलेमें वसोस, घोड़ीमें बाईस, दोनों कानोंमें छह छह बारह, दाहिने हाथमें बारह, बाये हाथमें सोलह और बल्लस्थलमें एक सी भाठ यद्वाश धारण करता है, वह समस्त पापोंको ध्वंस करके लोखकण्ठ हो जाता है । (ऊनगर)

विधितस्त्रमें इसकी उत्पत्ति और धारण भाषिका विषय निम्न प्रकार निर्दिष्ट हुआ है ।

रुद्राक्षकी नाम निरुक्ति ।

“त्रिपुरस्य वधे काले रुद्रस्याक्षयोऽपतस्तु ये ।

अश्रु यो विन्दवस्ते तु रुद्रान्ना अभवन् भुवि ॥”

(सवत्सरप्रदीपधृत तिथितत्त्व)

महादेवने जब त्रिपुरासुरको वध किया था, तब उनके नेत्रसे अश्रु विन्दु गिरा था, उसीसे रुद्राक्षकी उत्पत्ति हुई थी। रुद्रकी अक्षि अर्थात् नेत्रसे उत्पत्ति होनेके कारण इसका नाम रुद्राक्ष पडा।

तन्त्रादि शास्त्रोंमें एकसे चतुर्दश मुख रुद्राक्षका माहात्म्य कीर्त्तित हुआ है। इन सब रुद्राक्षोंमें पञ्चवधत् रुद्राक्ष सुलभ है, इसलिए प्रत्येकके लिए यथाविधानसे इस पञ्चमुख रुद्राक्षको धारण करना विधेय है। पञ्चमुख रुद्राक्ष स्वयं रुद्र-स्वरूप है, इसका कालाग्नि है। इसके धारण करनेसे अगभ्यागमन और अभक्ष्य भक्षण-जनिन पाप दूर होते हैं। इसे धारण करते समय “हुं नमः” इस मन्त्रका एक सौ आठ बार जप करके शिव निर्मा ल्योदकसे उसका प्रक्षालन करनेके बाद धारण करना चाहिए। (तिथितत्त्व)

एकादशीतत्त्वमें लिखा है कि वैदिक जप होमादि कोई भी कार्य क्यों न किया जाय, रुद्राक्ष धारण करके करना चाहिए, अन्यथा वह निष्फल होगा। ध्यानधारणा हीन हो कर भी यदि रुद्राक्ष धारण किया जाय, तो केवल इसके माहात्म्यसे परमगति प्राप्त होती है। (एकादशीतत्त्व)

देवीभागवतमें रुद्राक्षकी उत्पत्ति और गुणादिके विषयमें इस प्रकार लिखा है—एक दिन पडाननने कैलास पर्वत पर भगवान् रुद्रदेवसे रुद्राक्षके माहात्म्य आदिके विषयमें प्रश्न किया। इस पर उन्होंने इस प्रकार कहा था—“प्राचीन कालमें जब ब्रह्मादि देवगण त्रिपुरासुरसे पराजित और निपीडित हुए थे, तब मैंने देवोंके अनुरोधसे त्रिपुरका वध करनेके लिए अघोर नामक दिव्याह्वना स्मरण करके सहस्र वर्ण उन्मीलित नयनोंसे अवस्थान किया था, क्षण भरके लिए भी चक्षुके निमेष बंद नहीं किये थे। इससे मेरे नेत्रोंमें आवात पट्टा और अश्रु टपके थे, उसी अश्रुसे रुद्राक्षकी उत्पत्ति हुई थी।” यह रुद्राक्ष ३८ प्रकारका है। जिनमें सूर्यरूप नेत्रसे बारह प्रकार, पिङ्गलवर्ण चन्द्ररूप नेत्रसे सोलह प्रकार और

श्वेतवर्ण अनिरूप नेत्रसे दश प्रकारके कृष्णवर्ण रुद्राक्ष उत्पन्न हुए थे। रुद्राक्षके ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रके भेदसे चार प्रकारका भी है। जिनमें श्वेतवर्ण रुद्राक्षकी जाति ब्राह्मण, रक्तवर्णकी रुद्राक्ष क्षत्रिय, मिश्र-वर्णकी रुद्राक्ष वैश्य और कृष्णवर्णकी जाति रुद्राक्ष शूद्र है।

ब्राह्मणादि चार वर्णोंके मनुष्योंके अपने अपने वर्ण-वाले रुद्राक्ष धारण करना चाहिए। इसके विपरीत कभी न धारण करना चाहिए।

रुद्राक्ष अत्यन्त पूजनीय है। देवगण सर्वदा अत्यन्त यत्नसे इसकी पूजा करते हैं। रुद्राक्ष धारण करनेसे जीव को परमागति प्राप्त होती है। मस्तक पर २४, हृदयमें ५०, बाहुद्वयमें १६ और दो मणिवन्धमें १२ रुद्राक्षोंकी माला धारण करनी चाहिए। १०८, ५० और २७ रुद्राक्षोंकी माला बना कर जप करना चाहिए। इससे अश्वमेध यज्ञका फल और इक्कीस पुरुषका उद्धार होता है। अन्तकालमें शिवलोककी प्राप्ति होती है।

रुद्राक्षकी माला बना कर जप करना चाहिए, ब्रह्मा रुद्राक्षके मुख हैं, रुद्र विन्दु हैं और विष्णु पुच्छ हैं। यह रुद्राक्ष भोग और मोक्षफलका दाता है। रक्त, शुक्ल और मिश्रवर्ण पञ्चमुख पचीस रुद्राक्षों द्वारा गोपुच्छकी भांति क्रमशः सूक्ष्माकारे मुखसे मुख और पुच्छसे पुच्छ मिला कर माला बनाई जाती है। माला गूँथते समय ऊर्ध्वमुख मेरु रख कर उसके ऊपर गाँठ देनी चाहिए। इस प्रकार माला गूँथनेके बाद उसका शोधन करना चाहिए। मालाके पहले गन्धोदक और पंचगव्यमें स्थापन कर निर्मल जलसे धो कर मन्त्रपूत करना चाहिए। अनन्तर शिवके पडङ्ग मन्त्रके अन्तर्गत अखमन्त्र द्वारा स्पर्श करके “हुं” इस मन्त्रसे मालाओंको एकत्र करना होगा। पश्चात् उसके ऊपर मूलमन्त्रको जप कर ‘सद्योजात’ इत्यादि मन्त्र द्वारा सौ बार प्रोक्षण करना होगा। अनन्तर मूल मन्त्र उच्चारण तथा विशुद्ध भूमि पर रख कर उसके ऊपर शिवभगवतीका न्यास करना होगा। इस प्रकार मालाकी प्रतिष्ठा वा संस्कार करनेसे अभीष्ट सिद्धि होती है। जिस देवताका जो मन्त्र है, उसीसे उसकी पूजा करनी चाहिए।

कद्राक्षमाना मस्तक पर, मद्येन, कानोमें मधवा बाहुयुगलमें धारण करना उचित है। स्नान दान, जप, होम, पैम्बव्य, बलि देवपूजा, प्रायश्चित्त, धाख और शिक्षा समय कद्राक्ष धारण करना अत्यन्त आवश्यक है। बिना कद्राक्ष धारण किये इन सब अनुष्ठानोंको करने से वे निष्फल जात है।

कद्राक्ष धारणका फल त्रिलोक प्रसिद्ध है। कद्राक्ष क वर्षान्तें पुण्य, स्वर्गसे कोटिशुभ पुण्य, धारण करनेसे शनकोटिशुभ पुण्य और प्रतिदिन जप करनेसे छहकोटि सहस्र शुभ फल प्राप्त होता है। जो साक्षी हाथोंमें, वस्त्राभ्युक्त पर, गच्छें, कानों या बोटीमें कद्राक्ष धारण करता है, वह साक्षात् रुद्र लक्षण है। कद्राक्ष धारण करनेसे मनुष्य समस्त प्राणियोंका मन्व्य, महादेवके समान देवासुरक बन्धीय और समस्त प्रकार पातकसे रहित हो जाता है। परमात्म कद्राक्ष धारण करनेसे ज्ञापको जप और ध्यानादि विहीन होने पर मो इसके प्रभावसे परमात्मि प्राप्त होती है।

कद्राक्षकी महिमाके विषयमें निम्न प्रकार एक पीठाधिक उपाख्यान पाया जाता है—

कोजस वामे गिरिनाथ नामक एक धिद्वेदाङ्गणार गत ब्राह्मण थे। उनक गुणविधि नामक एक पुत्र हुआ। यह पुत्र कल्पके समान रूपवान् था। गुणविधि मरुत्त बुद्धि हो उठा। गुहके गृह्य मन्व्यपन करत समय यह गुरुपत्नी सन्त्रापत्नी पर आसक्त हो गया। पीछे उनन गुरुको विष देकर मार डाला और गुरुपत्नीको से कर स्वच्छन्द विहार करने लगा। मन्वमें पीर बुद्धि हो कर उसने माता पिताको भी मार डाला।

उनका आधावरक वही तक्र बिगड़ गया, कि यह पाप को पाप नहीं समझता था। उससे सब डरत थे। उसने सब पाप किये थे—झोहरत्या, प्रहारत्या गोहरत्या और सुपापन आदि कोइ भी पाप उससे बचा न था।

इस प्रकार पाप करता हुआ भ्रममें मृत्युका प्राप्त बना। तब उस तर्कक निर पमासपस सहस्र पमनूत और त्रिपात्रस्य कइ एक दूत भाषा। तब दोमोर्न बिबाद्द हुआ। पमनूतोने कहा गुणविधि महापापो है, तुम क्यों इस धम भाये। तब शिवदूतने कहा "अत्यन्त पापो है

माना, परन्तु गुणविधिकी अर्धां धृत्यु हुइ है, उस भूमिके दश हाथ भीये कद्राक्ष है। इसलिय कद्राक्षके प्रभावसे इसके पाप क्षय हो गये हैं। अतएव इस पर तुम लोगों का अधिकार नहीं है। मैं इसे शिष्यको ले जाऊंगा।" तब गुणविधिकी त्रिपदूत विमानमें पिठा कर शिबकोक ले गया। (३बीममनव ६।१६५०) रुद्रम्वपुत्राय, पद्म पुत्रान् भादिमें भी कद्राक्षका माहात्म्य विशेषरूपसे वर्णित है।

२ एक उपनिषद्।

कद्राक्षमाना (स० स्त्री०) यह माना जो कद्राक्षक बीजस बनाई गए हो।

कद्राक्षार्ध (स० पु०) एक प्रसिद्ध परिचित।

कद्रायो (स० स्त्री०) रुद्रस्य पत्नी। (इन्द्रवदथमव शर्षकंरुति। पा ३।१।४६) इति डोप्। १ रुद्रकी पत्नी, पार्वती। २ रुद्रजटा नामका अता। इसकी गच्छियों आदिका व्यवहार भीषणके रूपमें होता है। ३ एक प्रकार की रागियो। कुछ लोग इसे मेघ रागकी पुष्पवत् मानते हैं। पर कुछ लोग इस अथवी, छकित, पंचम और कोका पत्तीके मयसे बनी हुइ स कर रागियो भी क्रीकार करत है।

कद्राध्याय (स० पु०) १ रुद्रक उद्देश्य किया हुआ यज्ञोपवीत वृक्ष। २ धाख कापामें पढनोय प्रघांशुभेइ। यह पद्धि रेंदियोंके पुत्रोत्सर्गेमें पढ़ा जाता है।

कद्राध्यायिन् (स० लि०) रुद्रम्वपपाठकारी, रुद्रस्तव पढ़नेवाला।

कद्रायण (स० पु०) रुद्रकदेवाधिपति एक राजा।

कद्रारि (स० पु०) रुद्र धरिर्वस्य। कामर्दय।

कद्राधर्षी (स० पु०) महाभारतक अनुमार एक प्राचीन तीर्थका नाम।

कद्राधमूष (स० लि०) रुद्रकर्मक विमय, जिस रुद्रन मय जप कर दिया हा। (अधिव० ३।४।२)

कद्राधास (स० पु०) रुद्रस्य धापासा। कानो श्रेष्ठ। महादेव यहाँ सर्वेश्वर अस्थान करत है इसीसे इसे कद्रा धाम कहत है।

कद्रिय (सं० लि०) १ रुद्रस्यशब्द, रुद्रका। २ प्रसंता यादक, बड़ा करनजाम। ३ मानवरायक, प्रसन्नता

उत्पन्न करनेवाला । (क्ली०) ४ रुद्रशक्ति । ५ सुख ।

(सायण २११।३२)

रुद्री (सं० स्त्री०) १ एक प्रकारकी वीणा, रुद्रवीणा । २ वेदके

रुद्रानुवाक या अघमर्षण सूक्तकी ग्यारह आवृत्तियाँ ।

रुद्रैकाद्दिशिनो (सं० स्त्री०) रुद्रानुवाकोंकी या अघमर्षण सूक्तकी ग्यारह आवृत्तियाँ, रुद्री ।

रुद्रोपनिषद् (सं० स्त्री०) एक उपनिषद्का नाम ।

रुद्रोपस्थ (सं० पु०) पुराणानुसार एक पर्वतका नाम ।

रुधिमो (सं० स्त्री०) इन्द्र द्वारा पराजित एक असुरका नाम । (ऋक् २।१४।५)

रुधिर (सं० क्ली०) रुणाद्धि रुध्यते इति वा रुध (इपि-मदिमुदीति । उण् १।७२) रति किरच् । १ शरीरमेंका रक्त, लहू । पर्याय—रक्त, अस्त्र, त्वग्ज, कीलाल, क्षतज, शोणित, लोहित, अस्त्र, शोण, लोह, चर्मज । (राजनि०) रक्त देखो । २ कुङ्कुम, केसर । ३ गैरिक, गेरू । (पु०) ४ मङ्गल ग्रह । ५ मणिभेद, एक प्रकारका रत्न । ६ एक नगरका नाम । शोणितपुर देखो ।

रुधिरगुल्म (सं० पु०) स्त्रियोंका एक प्रकारका रोग । इससे पेटमें शूल और दाह होता है और एक गोला सा घूमता है । इसमें पित्तगुल्मके सब चिह्न मिलते हैं और कभी कभी इससे गर्भ रहनेका भी धोखा होता है । कहते हैं, कि गर्भपात होने पर अनुचित आहार विहार करनेके कारण ऋतुकालमें कायु कुपित होती है जिससे रक्त इकट्ठा हो कर गोला सा धन जाता है ।

रुधिरताम्राक्ष (सं० त्रि०) रक्तवर्ण चक्रविशिष्ट, लाल रंगका चक्रवाला ।

रुधिरपायिन् (सं० पु०) १ रक्तपानकारी, लहू पीनेवाला । २ राक्षस ।

रुधिरपित्त (सं० क्ली०) रक्तपित्त, नकसीर ।

रुधिरप्रदिग्ध (सं० त्रि०) रक्ताक्त, लहू लगा हुआ ।

रुधिरप्लावित (सं० त्रि०) रक्ताप्लुत, लहू लगा हुआ ।

रुधिरप्लीहा (सं० स्त्री०) प्लीहा रोगका एक भेद । वैद्यकके अनुसार इसमें इन्द्रियाँ शिथिल हो जाती हैं, शरीरका रंग बदल जाता है, अंग भारी और पेट लाल हो जाता है और त्रम, दाह तथा मोह होता है ।

रुधिररूपित (सं० त्रि०) रक्ताच्छादित, लहूसे भरा हुआ ।

रुधिरलेश (सं० पु०) रक्तचिह्न, लहूका दाग ।

रुधिरविन्दु (सं० पु०) लहूकी बूँद ।

रुधिरवृद्धिदाह (सं० पु०) वैद्यकके अनुसार एक प्रकारका रोग । इसमें रक्तकी अधिकतासे सारे शरीरमें धूआ सा निकलता है और शरीर तथा आंखोंका रंग ताँबेका सा हो जाता है और मुँहसे लहूकी गंध आती है ।

रुधिराक (सं० त्रि०) १ लहूसे तर या भोगा हुआ, खूनसे भरा हुआ । २ लहूका सा लाल ।

रुधिराख्य (रुधिराक्ष)—मूल्यावान् पत्थर वा एक प्रकारकी मणि । इस मणिको कोई उपरतन और कोई स्वल्प-मणि कहते हैं । वृहत्संहिता, अग्निपुराण और गरुड-पुराण आदि ग्रन्थोंमें इस मणिका उल्लेख देखनेमें आता है । वृहत्संहिता और अग्निपुराणमें इसके गुणागुणका विषय नहीं लिखा है, गरुडपुराणमें सामान्य मात्र है ।

इस मणिकी उत्पत्ति का विषय इस प्रकार लिखा है—अग्निदेवने यथाभिलषित दानवका रूप धारण कर नर्मदा नदीमें कुछ फेंका । फेंकते ही इन्द्रगोपकीटके चिह्न-विशिष्ट शुकचञ्चुतुल्य एक प्रकारकी मणि उत्पन्न हुई । इसका आकार पीलु फलके समान था । परिडतीने इसका नाम रुधिराख्य रखा । शिल्पिगण इस मणिमें तरह तरहकी कारीगरी दिखलाते हैं । इस मणिका मध्यसदृश विशुद्ध शुभ्रवर्णका और पार्श्वदेश इन्द्रके समान है । यह रत्न एक हाने पर वज्रवर्ण (हीरक) हो जाता है । जो इस मणिको धारण करते, उनके सुख, ऐश्वर्यादि नाना प्रकारके शुभ होते हैं । *

रुधिरानन (सं० क्ली०) मंगल ग्रहकी एक चक्र गति । जब मङ्गल किसी नक्षत्र पर अस्त हो कर उससे पन्द्रहवें या सोलहवें नक्षत्र पर चक्की होता है तब वह रुधिरानन कहलाता है । (बृहत्संहिता ६।४)

रुधिरान्ध (सं० पु०) पुराणानुसार एक नरकका नाम ।

* "हुतभुग्रूपमादाय दानवस्य यथेप्सितम् ।

नर्मदायां निचिक्षेप किञ्चिद्दीनादि भतले ॥

रुचिरामय (स० पु०) रुचिरनिर्गमरूप व्याधि, रक्तपित्त नामक रोग ।

रुचिराबिज (स० लि०) रक्तमय, बहुसे ठर या मरा हुमा ।

रुचिराशन (स० लि०) रुचिरं अशनं यस्य । १ रक्त हो त्रिमका आधार हो, रक्तपाल करके बोलैवाला । (पु०) २ कर राहुसका सेनापति जिसे भोरामचन्द्रने मारा था । ३ राहुस ।

रुचिराशित्र (सं० लि०) रक्तपाल करनेवाला, बहु पीन वाजा ।

रुचिरोद्धारिन् (स० लि०) १ रक्तवमनकारो, जिसे बहु ही होती हो । (पु०) २ पृथ्व्यतिके साठ स वत्सपत्तमें से सत्तावनवां संवत्सर ।

रुचुन (हि० स्त्री०) नूपुर । मंजोर ।

रुची हि० पु०) मोड़की एक जाति ।

रुचुकुचुक (हि० स्त्री०) नूपुर आदिका रुचुकुचुक शब्द ।

रुचुकुचुक (हि० पु०) नूपुर या चिकित्सी आदिका शब्द ।

रुचुज (हि० पु०) शिखर और हिमालयमें होनेवाला एक प्रकारका वेल जो जोड़क रूपमें होता है ।

रुचना (हि० लि०) १ रोपा ज्ञान, ज्ञानमें गाढ़ा या लगाया ज्ञान । २ इटन, भड़ना ।

रुचया (हि० पु०) १ भारतमें प्रचलित चांदीका सबसे बड़ा सिक्का जो सोह्य मानेका होता है । यह तीजमें बस मासका होता है । २ धन, सम्पत्ति ।

रुचयका (हि० वि०) चांदीक रंगका, चांदीका सा ।

रुचयका रंग (हि० पु०) मङ्गभाङ्गक कांटोंसे बचनेका संकत ।

रुचिका (स० स्त्री०) शुक, मदार ।

रुचाइ (म० स्त्री०) १ उड़ूँ या फारसीकी एक प्रकार की कविता जिसमें चार मिसरे होते हैं । २ एक प्रकार रगोम या जलता गाना ।

रुचाइ यमन (म० पु०) एक शास्त्रक राग जिसके साध कीवालीका डंका बजाया जाता है ।

रुचेरि (स० स्त्री०) १ कुञ्जरिक, कुड़ेसा । २ धूम, धूमा ।

रुच (स० पु०) श्वेत्येवके अनुसार एक व्यक्ति ।

(सूक्त ५१२)

रुचय (स० पु०) रुचामयके अनुसार बानर जो सी करौड़ वागरीका मूषपति था ।

रुचा (स० स्त्री०) १ शास्त्रीकिक अनुसार सुमोबकी पत्नीका नाम । २ ब्रिजिज जयणाकर, ममरुकी ज्ञान ।

रुचामय (स० लि०) रुचा नामक ममरुकी ज्ञानसे उत्पन्न ।

रुचास (का० पु०) रुचास रत्न ।

रुचासो (का० स्त्री०) १ एक प्रकारका संगोठ । इसमें कपड़ेके एक छोटि तिकोने कुकड़के दोनों मोर दो खन्ने बंद मीर तीसरे कोने पर जो मोथेकी मोर होता है एक खम्बी पतली पट्टी टंकी होती है । दोनों बंद कमरसे बंधेद कर बांध जिये जाते हैं और मोथेकी पट्टीसे आगेकी मोर इन्द्रिय डक कर उसे फिर पीछेकी मोर उखर कर खीस खेते हैं । प्रायः कुम्होबास छोय कसरत करते या कुम्हो कड़नेके समय इसे पहनते हैं । २ मुगदर हिमानका एक हाथ या प्रकार । इसका हाथ सिरके ऊपरसे मुगदरका तान हुए और फेर पीठके ऊपरके भाषे ही भाग तक होता है । इसमें अधिक वजली भावस्पकता होती है ।

रुचामय (सं० पु०) १ महाभारतके अनुसार एक क्षत्रिय नाम । २ सुप्रतीकक पुत्रका नाम । (कथावर्षिणा ११५४)

३ पुराणानुसार एक पयतका नाम । (प ५२१२२)

रुचाम्यान् (सं० पु०) रुचयत रेण ।

रुच (सं० पु०) रुच (चित्रित्यो रुचन्वावा । उष् २५१४) इति रुच् उपधायाश्च उत्पं । अदण ।

रुचयक—भीरुवृत्तपरितक प्रमेता मङ्गुके गुरु और राजानक विलकके पुत्र । ये १११५ ई०के पहले ज्ञापित थे । इनके बनावे अजुदारसर्पस ज्ञाह रुचकृत सोमपावविलासकी मङ्गुदारानुसारिणी नामकी टीका, काव्यप्रकाशसङ्केत, भीरुवृत्तस्तय, सहस्रपत्नीला साहित्यमीमांसा और हर्ष चरितवार्तिक मिलते हैं । इनका दूसरा नाम था पद्मा नक दणक ।

रुच (सं० पु०) रीताति च (दशासिन्वां रुच । उष् ४११३) इति भुन् । १ काला हिरण, कस्तूरी मृग । इसके मांसका गुण स्निग्ध, गुद, मध्यामिकारक और वलप्रद माना गया है ।

(गान्नि०) २ दैत्यभेद । भगवती दुर्गाणि इस दैत्यको मारा था । (कथावर्तिषा० ५३।१०१) ३ पुराणानुसार एक प्रकारक बहुत ही क्रूर जन्तु । यह सांपसे भी अत्यन्त क्रूर होता है । इसे भारशृङ्ग भा कहते हैं । ऐसा प्रसिद्ध है, कि इस लोकमें जो लोग हिंसा करते हैं उन्हें हिंसित प्राणी रुद्र हो कर रौरव नरकमें काटते हैं । (देवीभाग० ८।२२। १०-११ और भागवत ५।२६।११)

४ स्वनामख्यात मुनिविशेष । यह च्यवनके पौत्र और प्रमतिके पुत्र थे । कहते हैं, कि जब इनकी स्त्री प्रमद्वराका देहान्त हुआ, तब इन्होंने उसे अपनी आधी आयु दे कर जिलाया था । विस्तृत विवरण देवीभागवतके २।८ तथा महाभारतके १।५ अध्यायमें लिखा है ।

५ ऋषि प्रमतिके औरससे घृताची नाम्नी अप्सराके गर्भजाल पुत्रभेद । (भारत आदिपर्व) ६ विष्णुदेवाके अन्तर्गत देवताओंका एक गण । ७ सावर्णि मनुके सप्तपिंशोमसे एकका नाम । ८ एक मैत्रिका नाम । ९ एक फलदार पृक्षका नाम ।

रुद्रा (हि० पु०) बड़ी जातिका उल्लू । इसकी बोली बड़ी भयावनी होती है । कहते हैं, कि यह कभी कभी किसीका नाम सुन कर रटने लगता है और चढ़ आदमी मर जाता है । इसका बोलना लोग बहुत अशुभ मानते हैं ।

रुद्रक (सं० पु०) सूर्यवंशीय एक राजाका नाम ।

रुद्रक—एक राजकुमारका नाम । इनके पिताका नाम विजय था । ये राजा सगरके वंशज थे ।

रुद्रक्षाणि (सं० लि०) जिसकी ध्वंस करनेकी इच्छा हो ।

रुद्रक्षु (सं० लि०) चिकनाका उलटा, रुद्रा ।

रुद्रसु (सं० लि०) १ वन्धनेच्छु, जिसकी इच्छा केश आदि बांधनेकी हो । २ बाधादानेच्छु, जो विघ्न बाधा डालनेकी इच्छा करता हो ।

रुद्रियु (सं० लि०) रोदितुमिच्छुः, रुद्र सन्, नश्रन्तात् उ । रोनेमें इच्छुक ।

रुद्रमैरव (लं० पु०) तांत्रिकोंके अनुसार एक प्रकारके मैरव । इनका पूजन दुर्गाके पूजनके समय किया जाता है ।

रुद्रमुण्ड (सं० पु०) एक पर्वतका नाम इसे उरुमुण्ड भी कहते हैं ।

रुद्रशीर्षन (सं० लि०) मृगशीर्षयुक्त, मृगके जैसा शिर-वाला ।

रुद्राई (हि० स्त्री) रोनेकी क्रिया या भाव । २ रोनेकी प्रवृत्ति ।

रुद्राना (हि० क्रि०) १ दूसरेको रोनेमें प्रवृत्त करना । २ इधर उधर फिराना, नष्ट करना, मिट्टी खराब करना ।

रुद्रा (हि० स्त्री०) वह भूमि जिसकी उपजाऊ शक्ति कम हो गई हो और जिसे परती छोड़नेकी आवश्यकता हो ।

रुद्रा (हि० स्त्री०) रोहिणीकी तरहकी एक प्रकारकी वन-स्पति जो उससे कुछ छोटी होती है ।

रुद्रण्यु (सं० लि०) स्वर्णोय, शब्द करनेके योग्य ।

रुद्रव (सं० पु०) रौति रु (रुविदिभ्याङित् । उष् ३।११६) इति अय, सच डित् । रुद्रकुर, कुत्ता ।

रुद्राई (हि० स्त्री०) रुद्राई देखो ।

रुद्रु (सं० पु०) रुद्रु । १ परण्डवृक्षभेद, एक प्रकारकी रेंडीका पेड़ । २ रक्तपरण्ड, लाल रेंडी ।

रुद्रुक (सं० पु०) रुद्रुदेव स्वार्थे कन् । १ परण्डवृक्ष, रेंडीका पेड़ । २ रक्तपरण्ड, लाल रेंडी ।

रुद्रङ्गु (सं० पु०) एक प्राचीन ऋषिका नाम जो नृपङ्गु और रुद्रभो कहे जाते हैं ।

रुद्रद्वयशु (सं० लि०) १ दीप्त पशुयुक्त । २ प्रकाशित हवि । ३ प्रकाशित किरण ।

रुद्रदूर्मि (सं० लि०) दीप्त उवाल, जलती हुई अग्निशिक्षा ।

रुद्रद्रु (सं० लि०) १ रोचमान रश्मि, सुन्दर किरण । (पु०) २ रुद्रद्रु देखो ।

रुद्रद्रथ—पुराणानुसार एक राजा तथा तिलिक्षुके पुत्र । इनका दूसरा नाम रुद्रद्रय भी था । (भागवत ६।२३।३)

रुद्रद्वत्सा (सं० स्त्री०) दीप्तसूर्य जिसके वत्स या पुत्र हुए हैं ।

रुद्रात् (सं० लि०) रुद्र-गत । दीप्यमान, चमकीला ।

रुद्राना (सं० स्त्री०) भागवतके अनुसार रुद्रकी एक पत्नी का नाम । (भागवत ३।१२।३)

रुद्राम (सं० पु०) १ ऋग्वेदके एक जनपदका नाम । २ उस देशका आदमी ।

रुद्रामा (सं० स्त्री०) वेदके अनुसार एक व्यक्तिका नाम । इन्होंने 'हम दोनोंमेंसे कौन-शीघ्र पृथ्वीका परिभ्रमण

कर सकता है' यह कर इन्द्रसे विरोध किया था तथा
कीर्णकूप्यक पुण्यक्षेत्र कुण्डक्षेत्र के चारों ओर व्रजमण करके
हा त्रयक्षाम किया था। (धर्मनिर्णय १, ४१३३)

श्लोक (स० पु०) भागवतक मनुसार राजपुत्रमेव ।
(भाम० ६।२३।१०)

रग (स० पु०) रूपति रूप किये । श्लेष, गुस्ता ।
रगङ्ग (स० पु०) महाभारत वर्णित एक प्राणय ।
(भारत ६ पर्व)

रगुगु (स० पु०) रघुव शाय राजमेव । (विश्वरूपय)
रगद्—साहोक पुत्र और शत्रुबिन्दु का पितामह ।

रगा (स० श्लो०) रग विनय मागुत्तमिने राय । अमर्ष,
गुस्ता । पर्याय—श्लेष, मग्य कृपा क्रोध, प्रतिभ,
रुद्र, कुप्य ।

रघित (म० श्लो०) रूपति स्मेति रग क (रत्नमन्तर
प्रयत्नान् । प १२।२८) इति पक्षे इत् । १ क्रुय, भाराज ।
२ गुणो, रंभादा ।

रघर (स० श्लो०) १ भिस्वार्वा । २ कस्तूरी पृथे,
मेवरो ।

रघ (स० श्लो०) रग क । रोगमुक्त, कुणित ।
रघ्ना (स० श्लो०) रघ हामेका भाय, नाद्यज्ञया ।

रघपुत्र (स० श्लो०) रघुपुत्र दत्तो ।
रघि (स० श्लो०) रग किये । श्लेष गुस्सा ।

रघ्य (म० श्लो०) रोगमुक्त, कुणित ।
रघया (का० वि०) क्रिमको बहुत बन्तामी दो, निमित्त,
प्रमान ।

रघया (का० श्लो०) रगवा हानका भाय, भगमान भीर
दुर्गति ।

रघा (दि० श्लो०) १ रगा रग । (पु०) २ भद्रूभा देवा ।
रघूम (म० पु०) रग रगा ।

रघाम (म० पु०) १ फारसक एक प्रसिद्ध राजा । इति
हासमें प रघम राजाका तथा जायुत्रोक अधिरासो हा
कर परांक शासनकाल हुए थे । इमन्त्रिय प रघम जायुत्र
करताते थे । प नरामानक अत्रुक गामक पीय और राज
आरक पुत्र थे । वेसा अत्रिताय पार भार प्रसिद्ध रग
कुजाय पुत्र फारसमें भीर न हुआ । अयमानावर्णोय
उठे राजा शासनके विद्वत् नरुा कर रहने प्राय

विसन्न किये । एका समय ईसासे लगभग नी सी
पर्यं पहले माना जाता है । २ यह जो बहुत बड़ा शीर
हो ।

रत्नम अनी (मीथाना) सक्तीर-सपीर नामक कुरान
की शीकाके प्रयेता । ये कब्रोंके रहनेवाले अन्नो
अमगरके पुत्र थे । १७६४ ई०में ये परमोरुयासो हुए ।

रत्नमकाद् शोत्रियानी (क्याडा)—एक पिक्वान
फारसी कयि । ये युरासनपति सुमताम भीमरको
राज समामें १४०८ ई०में मीरूद थे ।

रत्नम अमान पौ—गुजरातक एक समापति । एका
मसल नाम था इत्यौर था । ये शैल अरबुल गुमानक
पुत्र थे । पहले यह गुजरातक शासनकर्ता नपाय मुवादिज
अनुमुनक सरयजम्प जांक मधीन काम करत थे । सन्नाद्
फर्कसियरने इम्ह उद्धारो मनसबदार बना कर रत्नम
अमानको उपाधि दी थी । सन्नाद् महम्मद शाहने
नयाय सरयजम्प जाको राज्यभुग करके राजा अजित
सिंह मारवाड़ोका गुजरातका शासनकर्ता नियुक्त किया
इसलिये शैनों दलमें घोर युद्ध हुआ । १७३० ई०में
विजयावन्तमीक दिन रजभूमिमें इत्यौर पानि अपनों
जोयनकोडा संवरण की ।

रद (स० श्लो०) रोश्नीति रद (रुग्धेति) । प १।१।१४)
इति क । १ बाल, उत्पन्न । २ भाकड़, बड़ा हुआ ।

रदक (स० श्लो०) छिद्र, युराक ।

रदा (स० श्लो०) रादति छिन्नायि पुनरुत्पन्ने इति रद
क टय् । १ दृष्टा दृष । २ अतिवसा, कब्रो । ३
मांसरोहिणी नामका सता । ४ अजायन्ता, सन्नन्त ।

रदिकदिका (स० श्लो०) रद इत् रदिकल्पिका रदिक
रदिका पुना पुनरुत्पन्न कायताति के क टय् । उत्कण्ठा ।
रदमपद—परिचयपद बना ।

रदना (दि० पु०) पदानाकी एक जाति जा पाया रादिन
अवहमे बना हुआ है ।

रदन् (स० पु०) रादताति रद (आर कृषि करोति) । उप्य
पा१२३) अयनिय् । पृष्ठ पङ् ।

रद्व (दि० पु०) रग रगा ।

रद्वङ् (दि० पु०) १ एक प्रकारक मिक्षुक । प इतिवां
नादियका अण्यर न कर 'मसस कइ कर भीय मांगन

हैं और कमरमें एक बडा-सा घुंघरू बाधे रहते हैं। इनका एक और भेद होता है जो गूदड़ कहलाता है। ये कहीं अड़ कर मिश्रा नहीं मांगते, केवल तीन बार 'अलख कह कर ही आगे बढ़ जाते हैं' २ रख देखो।

रूंगटा (हि० पु०) रौंगटा देखो।

रूंदना (हि० क्रि०) री दना देखो।

रूंध (हि० वि०) सका हुआ, अवसद्ध।

रूंधना (हि० पु०) १ किसी स्थान या वस्तुको बाहर-वालोंके आक्रमणसे बचानेके लिये उसके चारों ओर कंटोले भाड आदि लगाना, कंटोले भाड आदिसे घेरना। २ किसी पदार्थको चारों ओरसे इस प्रकार घेरना कि वह बाहर न जा सके, रोकना। ३ गमनागमनका मार्ग बंद करना।

रू (फा० पु०) १ मूँह, चेहरा। २ द्वार, कारण। ३ ऊपरी भाग, सिरा। ४ आगा, सामना। ५ आगा, उम्भेद।

रूई (हि० स्त्री०) १ वपासके डोड़े या कोशके अन्दरका घूसा। जब यह डोड़ा पक कर चिटक जाता है तब यह ऊनके लच्छेकी तरह बाहर निकलता है। इसके रेशे कोमल और घुंघराले होते हैं जो बीजके ऊपर चारों ओर लगे होते हैं और जिनके अंदर बीज लिपटे रहते हैं। रूई बहुत प्रकारकी होती है, कोई मोटी और कोई बारीक। बहुत-सी ऐसी रूइयाँ हैं जो जो रेशमकी तरह कोमल और चिकनी होती हैं। जब रूई ढँड या डोड़ेसे फूट कर बाहर निकलती है तब इकट्ठी की जाती है। पीछे सूख जाने पर लोग इसे ओटनीमें ओट कर बीजोंसे अलग करते हैं। ओटी हुई रूई धुनी जाती है जिससे उसमें जो बचे खुचे बीज रहते हैं वे अलग हो जाते हैं और उसके रेशे फूट कर खुल जाते हैं। इस रूईसे पेंडरी या पुनी बनाई जाती है जिससे सूत काता जाता है। धुनी हुई रूई गद्दे आदिमें भरी जाती है और उससे सूत कात कर कपड़े बुनते हैं। यह रासायनिक रीतिसे वारूद बनानेके काममें भी आती है। रूईको शोरेके तेजाव में गलाते हैं जिससे यह अत्यन्त विस्फोटक हो जाता है। इसे 'गनकाटन' कहते हैं और उत्तम वारूदमें इसका प्रयोग होता है। इस 'गनकाटन' को ईयर या ईयर मिले हुए अलकोहलमें मिलानेसे एक प्रकारका लेस बनता

है। इस लेसको 'कलोडीन' कहते हैं। अगर यह घाव पर तुरंत लगाया जाय तो फिलीकी तरह सूख कर जोड़ देता है। कलोडीनमें थोड़ी-सी माला त्रीमाइड और आयोडाइडको मिला कर शीशे पर लगा कर फोटोके लिये गोला 'प्लेट' बनाया जाता है। हिन्दुस्तानमें रूईके कपड़ेका प्रचार वैदिक कालसे चला आता है। ब्राह्मण और गृह्यसूत्रोंमें तो इसके यज्ञोपनीत और वस्त्रका विधान वर्णभेदसे स्पष्ट देखा जाता है, किन्तु यूरोपमें इसके कपड़ेका प्रचार कुछ ही शताब्दियोंसे हुआ है। सूतेके लिये उत्तम रूई वही समझी जाती है जिसके रेशे लंबे और दृढ़ होने पर पतले और चमकीले होते हैं। २ इसी प्रकारका कोई रोआं विशेषतः बीजोंके ऊपरका रोआं।

रूईदार (हि० वि०) जिसमें रूई भरी गई हो।

रुक (हि० स्त्री०) १ तलवार। (पु०) २ भूँगा, घलुआ। ३ एक प्रकारका पेड़ जिसकी पत्तियाँ औषधिके रूपमें काम आती हैं और पचपानड़ीके साथ मिल कर बिकती हैं।

रुक्ष (सं० त्रि०) रुक्षयतीति रुक्ष पाठग्ये पचाधच्। १ अप्रेम, जिसमें प्रेम न हो। २ अचिक्कण, जो चिकना या कोमल न हो। (पु०) ३ वृक्ष, पेड़। ४ वरक-तृण, एक प्रकारकी घास।

रुक्षगन्धक (सं० पु०) रुक्षो गन्धो यस्य कन्। गुग्गुलु, गुग्गुलु।

रुक्षण (सं० त्रि०) शुष्करण, सुखा करना।

रुक्षणात्मिका (सं० स्त्री०) १ कृष्णचणक वृक्ष, काले चनेका पौधा। २ लड्डा नामक शिम्बीधान्य।

रुक्षता (सं० स्त्री०) रुक्षस्य भावः तल-द्राप्। रुक्षत्व, रुखापन।

रुक्षदर्भ (सं० पु०) रुक्षः कर्कशो दर्भः। हरिदर्भ, सग्जा घोड़ा।

रुक्षपत्र (सं० पु०) रुक्षाणि पत्राणि यस्य। शाखोटवृक्ष, सिहोरका पेड़।

रुक्षपेपम (सं० अघ्य०) रुक्ष, पिनष्टि पिप-णमुल्। निर्व-यतासे पीसना।

रुक्षप्रिय (सं० पु०) रुक्षस्य प्रियः। ऋषभीपथ।

कस्तुराक्षर (सं० पु०) कस्तुराक्षर पत्रं यस्य । चम्पक
वृक्ष, घामिका पेड़ ।

कस्तुराक्षर (सं० स्त्री०) कस्तुराक्षरि कस्तुराक्षरम् । इन्द्रिय, म
डकी भाविका एक पेड़ ।

कस्तुराक्षर (सं० स्त्री०) कस्तुराक्षर, कस्तुराक्षर ।

कस्तुराक्षर (हि० पु०) १ कस्तुर, पेड़ । २ कस्तुराक्षर ।

कस्तुराक्षर (हि० पु०) १ कस्तुराक्षर । २ कस्तुराक्षर ।

कस्तुराक्षर (हि० पु०) १ जो विद्वान् न हो, अविद्वान् । २ जिसमें भी वल भावि बिचने पदार्थ न पड़े हैं । ३ जिस में रस न हो, सूखा । ४ जो घटपटा न हो, जो जानमें रुचिकर और स्वादिष्ट न हो । ५ जिसका ठक सम न हो, सुन्दर । ६ स्नेहवहित, जिसमें प्रेम न हो । ७ उगासीन, घिरक । ८ पर्यट, कठोर । (पु०) ९ एक प्रकारकी छेनी ।

कस्तुराक्षर (हि० पु०) १ कस्तुराक्षर भाग, कस्तुराक्षर । २ कठोरता । ३ उदासीनता । ४ सुन्दर, मोरसता । ५ ज्ञान हीनता ।

कस्तुराक्षर (न० पु०) एक प्रकारकी बुझी जिसे मक कर सोना काँची आदि पानुओंकी खोजों पर जिना किया जाता है । यह तृणिया या हीराकसीससे बनाया जाता है । यहके तृणिया या कसीसको भाग पर तपात है और जब यह मस जाता है तब उसे शोके पीस ठामत है । कमी कमी तृणियाकी पानोमें मस कर और नियार तथा पो कर फूँ कनेसे भी कस्तुराक्षर होता है । यह अहिर्योक्त काम आता है । कस्तुराक्षर भी मिमरुं आता है । कस्तुराक्षर और पार मिमरुंकर कस्तुराक्षर पर जिना या कस्तुराक्षर की आती है ।

कस्तुराक्षर (हि० स्त्री०) कस्तुराक्षरि कस्तुराक्षरि या माय, नाट जगो ।

कस्तुराक्षर (हि० कि०) किसीसे अपसप्त हो कर कुछ समय के लिये सम्बन्ध छोड़ना, भाग्य होना ।

कस्तुराक्षर (हि० स्त्री०) स्थान रेखा ।

कस्तुराक्षर (म० पु०) अम्प्रां या पिस्तार नापनेका एक माप जो ५ गजका होता है ।

कस्तुराक्षर (हि० वि०) भेद, उत्तम ।

कस्तुराक्षर (हि० वि०) कस्तुराक्षर ।

कस्तुराक्षर (सं० कि०) यह क । १ जात, उत्पन्न । २ प्रसिद्ध, प्रसिद्ध । ३ भाक्य, कदा हुआ । ४ गंधार, अजय । ५ कठोर, कठिन । ६ अविमान्य, कष्टका ।

(पु०) ७ प्रसिद्ध अर्थ, प्रकृति और प्रत्ययकी भेदना न करके शब्दबोधनक शब्द । जो शब्द प्रकृति और प्रत्ययकी किसी प्रकार भेदना न करके अर्थका बोध करात है उसे कस्तुराक्षर कहते हैं । शब्द तीन प्रकारका है, पौगिक, योगक और कस्तुराक्षर । इनमेंसे सङ्केतयुक्त जो नाम है उसे कस्तुराक्षर कहते हैं । इसका दूसरा नाम संज्ञा भी है । इस कस्तुराक्षरके फिर तीन भेद हैं—मैमिस्तिक, पारिभाषिक और भौषाधिक । (अभ्युत्थितम्)

किसी किसी परिच्छेदके मतसे जाति, द्रव्य, गुण और क्रिया इन चार प्रकारके धर्म द्वारा यह कस्तुराक्षर जन्म फिर चार प्रकारका है । गो गंधादि शब्द गोत्व गंधत्व आदि द्वारा सङ्केतित होता है इसी कारण यह कस्तुराक्षर हुआ है । अतएव यह 'जात्या कदा जाति द्वारा कस्तुराक्षर है । पशु और भाक्यादि शब्द, जागृक और घनादि द्रव्य द्वारा सङ्केतित होनेके कारण 'द्रव्येण कस्तुराक्षर' यह शब्द द्रव्यत्व कस्तुराक्षर हुआ है । चम्प और पिशुनादि द्रव्य पुण्य और द्वेषादि गुण द्वारा सङ्केतित होनेसे 'गुणेन कस्तुराक्षर' गुण द्वारा कस्तुराक्षर हुआ है । चम और चगनादि शब्द क्रिया द्वारा सङ्केतित होनेके कारण यह कस्तुराक्षर हुआ है । यही चार प्रकारका कस्तुराक्षर है ।

पारिभाषिक, मैमिस्तिक और भौषाधिकका जहान इस प्रकार है—

“जात्येवचिद्विषयकितवती मैमिस्तिकी वा ।
अतिमात्रे हि धकेतव्यं भाष्यं गुणुत्तरम् ॥
कनायनात्येवचिद्विषयकितवती वा ।

मैमिस्तिकी वा वा यथा गोभेदादि ॥” (अभ्युत्थितम्)

जो नाम जात्येवचिद्विषयक संकेतयुक्त है अर्थात् 'गो' यह शब्द उच्चारण करनेसे गोत्व जातित्व इसी शब्दमें पूर्वापर संकेतित हुआ है, अतएव गोत्व जात्येवचिद्विषयक गो शब्दको ही प्रतिपन्न कराता है तथा शब्दबोधकी भी कोई हानि नहीं होता, इसीलिये इसको मैमिस्तिक संज्ञा हुई है ।

जा संज्ञा उच्चारणसे चमाम्पिचिद्विषयक संकेतयुक्त है

उसे नैमित्तिक कहते हैं। जैसे—आकाश और डिस्थादि फिर जो शब्द अनुगत उपध्यवच्छिन्न संकेतयुक्त है उसका नाम औपाधिकरुद्र है। जैसे—भूत दूत आदि शब्द। योगरुद्र शब्द देखो।

रुद्रकी (रुद्रकी)—युक्तप्रदेशके शाहरानपुर जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २६° ३८' से ३०° ८' ३० तथा देशा० ७९° ४३' से ७८° १२' पू०के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ७६६ वर्गमील है। इसके उत्तरमें शिवालिक, पूर्वमें गङ्गा और दक्षिणमें मुजफ्फरनगर जिला है। यह तहसील रुरकी, उवालापुर, मङ्गलौर और भगवानपुर परगने ले कर बनी है। जनसंख्या तीन लाखके करीब है। इसमें ४२६ ग्राम और ६ शहर लगते हैं।

२ उक्त तहसीलकी एक समृद्धिशाली नगर। यह अक्षा० २६° ५१' ३० तथा देशा० ७९° ५३' पू०के मध्य विस्तृत है। जनसंख्या बीसहजारके करीब है। म्युनिसिपलिटि होनेके कारण नगर परिष्कार परिच्छिन्न और वाणिज्य समृद्धिसे परिपूर्ण है।

गङ्गाकी नहर काटी जानेसे पहले यह नगर एक छोटा सा गाँव था। १८४५ ४६ ई०में पर्वतको काट कर जब गङ्गाकी नहर लाई गई तब यहाँ नहर काटनेका कारखाना और लोहेका कारखाना तथा पीछे १८४७ ई०में देशी छात्रोंको स्थापत्यविद्या और इंजिनियरिङ्ग शिक्षा देनेके लिये The Thomson Civil Engineering College स्थापित हुआ था। इस श्रेणीका ऐसा बड़ा विद्यालय भारतवर्षमें और कहीं भी नहीं है। १८५३ ई०में यहाँ पहले पहल सेनादलकी एक छावनी डाली गई। पीछे १८६० ई०में एक गोरानजार स्थापित हुआ था। इसके सिवा जलवायुका परिमाण-निर्देशक यहाँ एक सुन्दर Meteorological observatory है।

रुद्रप्रणय (सं० लि०) रुद्रः प्रणयः। प्रगाढ़ प्रणय, अतिशय प्रेम।

रुद्रयौवन (सं० स्त्री०) बालरुद्रयौवना देखो।

रुद्रवंश (सं० लि०) रुद्रः वंशः। प्रसिद्ध वंश, मशहूर कुल।

रुद्रा (सं० स्त्री०) एक प्रकारकी लक्षणा, वह लक्षणा जो प्रचलित चली आती हो और जिसका व्यवहार

प्रसिद्धसे भिन्न अभिप्राय व्यंजनाके लिये न हो। रुद्रि (सं० स्त्री०) रुद्र किर। १ जन्म, उत्पत्ति। २ प्राबुर्भाव। ३ प्रसिद्धि, ख्याति। ४ चढ़ाई, चढ़ाव। ५ वृद्धि, बढ़ती। ६ उभार, उठान। ७ प्रधा, चाल। ८ विचार, निश्चय। ९ रुद्र शब्दकी शक्ति जिससे वह यौगिक न होने पर भी अपने अर्थका बोध कराता है। रुद्राद (फा० स्त्री०) १ समाचार, वृत्तान्त। २ विवरण, कैफियत। ३ टंगा, अवस्था। ४ व्यवस्था। ५ मुकदमेका रंग डग। ६ अशालतकी काररवाई।

रूप (सं० स्त्री०) रूपने कीर्त्यते रीतीति वा र (लण शिब्यशब्देति । उण् ३।२८) इति दीर्घश्च, रूपयतीति रूप-अच् वा । १ स्वभाव, प्रकृति । २ सौन्दर्य, सुन्दरता । ३ दशा, अवस्था । ४ वेप, मेस । ५ शरीर, देह । ६ तुल्य, समान, सदृश । ७ शब्द या वर्णका स्वरूप या उसका वह रूपान्तर जो उसमें विभक्ति, प्रत्यय इत्यादि विकारोंके लगनेसे धन जाता है। ८ भेद, विकार । ९ चिह्न, लक्षण । १० रूपक । १२ चाँदी, रूपा । १३ किसो पदार्थका वह गुण जिसका बोध प्रथाको चक्षुरिन्द्रिय द्वारा होता है, पदार्थके वर्णों और आकृतिका योग जिसका ध्यान आँखोंको होता है।

पदार्थोंमें एक शक्ति रहती है, जिससे उनका तेज इस प्रकार विकृत होता है कि जब वह आँखों पर लगता है, तब देखनेवालोंको उम पदार्थकी आकृति, वर्णादिका ध्यान होता है। इस शक्तिको भी रूप ही कहते हैं। दर्शनशास्त्रोंमें रूपको चक्षुरिन्द्रियका विषय माना है। सांख्यने इसे पंचतन्मात्राओंमें एक माना है। बौद्ध दर्शनमें इसे पांच स्कन्धोंमें पहला स्कन्ध कहा है। महाभारतमें सो ऋह प्रकारके रूप माने गये हैं जैसे—इक्ष्व, दीर्घा, स्थूल, चतुरस्र, वृत्त, शुकु, कृष्ण, नीलारुण, रक्त, पीत, कठिन, चिकण, शलक्षण, पिच्छिल, मृदु और दारुण। (महाभारत मोक्षधर्मप०)

रूपका लक्षण—

“अज्ञान्यभूपितान्येव केनचिद्रूपपण्यादिना।

येन भूपितवद्भाति तद्रूपमिति कथ्यते ॥”

(उज्ज्वलनीलमणिय)

अभूपित अङ्ग किसी भूषणादि द्वारा भूपित हो जब

शोभायमान होता है तब उसे रूप कहते हैं।

रूप गुणादि भेदसे अनेक प्रकारका है। नित्य और अनित्यके भेदसे इसके दो भेद हैं। अर्थात् परमाणुरूप नित्य है और सभी अनित्य हैं।

शास्त्रमें अत्यन्त रूपको लिम्बा की यह है। जो अत्यन्त रूपवान् हैं वे प्रायः बुद्धी होते हैं। वेीपुत्रायमें लिखा है, कि एक दिन अमाने महेश्वरसे पूछा 'अत्यन्त रूप सम्पन्न भारो माना गुणोंसे विभूषित हो कर भी क्यों वे बुद्धित और कायसीकथविबुद्धि होती हैं?' इस पर महादेवने उत्तर दिया था, 'अत्यन्त रूप हो बुद्धिका कारण है। इसीलिये सप्तपथ व्यक्ति रूपको इच्छा नहीं करते। पुत्र्य वा स्त्री यदि जो हो, मति रूप द्वारा अन्त्यायु वा बुद्धित होता है। दमवती और सीता बहुत रूप धरती थी, इस कारण उन्हें बहुत रूप उठाता पड़ा था। इसी रूपके लिये महत्या वध्या भीर तिळोत्तमा दासी हुए थी। अत्यन्त अतिरूप ही बुद्धिका कारण है।

(देवीपु० चन्द्रकृतप्रबन्धभाष्याय)

रूप शब्दका वैदिक प पाँच—निर्घिक, यधि वर्ण, सधु, अमति, रूपस, प्लु, मध्, पिप, पैग, कृत्तन, क्षर, अजैन, ताद्र, मरय, शिखर। (वेदवि० १ म०)

(नि०) १४ रूपक न, मूबसूरत।

रूप—निर्मल वा कीर्तकृष्णाके एक राजा।

रूप—एक नदीका नाम। यह अक्रिमत पर्वतसे निकली है। रूपक (सं० ह्री०) रूपयतीति रूपि ण्वुच्। १ यह काव्य की पारसी द्वारा केजा जाता है या जिसका मनिमय रूपा जाता है, दुस्य काव्य। रूपक नादेकादि भेदसे दश प्रकारका है। इसके सिवा उपरूपकके १८ भेद हैं। कुल मिला कर रूपक २८ प्रकारका है।

नाटक, प्रकरण, भाषा, व्यायीय, समयकाय, जिन, रहस्यमय अङ्गीरूप और प्रहसन यहाँ दश प्रकारके रूपक हैं तथा नाटिका, मोदक, गोष्ठी, सहक, नाट्यपासक, प्रस्थान, उद्घाट्यक, अग्न, प्रेक्षक, रासक संकायक, भीगवित, टिप्पणक, विज्ञापिका, दुर्भविष्यक, प्रकरण्यो, हल्कीश और भाष्य वे अठारह प्रकारके उपरूपक हैं। विशेष विवरण मध्य अधमें देखो। २ मूर्ति, प्रतिष्ठित।

३ काव्यासङ्गारसे, रूपक अङ्कुर। निरपह्व विषयमें

यहाँ रूपितका आरोप होता है यहाँ यह अङ्कुर हुआ करता है। प्रकृत विषय छिपानेका नाम निरपह्व है। यहाँ प्रकृत विषयको न छिपा कर अपनेयमें उपमाका आरोप होता है यहाँ पर यह अङ्कुर होता है। अर्थात् प्रतिषेधका अभाव हो कर यहाँ उपमाके अर्थमेंका आरोप होता है यहाँ यह अङ्कुर होगा।

यह रूपक अङ्कुर तीन प्रकारका है, परम्परित, साङ्ग और निरङ्ग।

यहाँ किसी वस्तुका आरोप दूसरी वस्तुके आरोप का कारण होता है यहाँ परम्परित रूपक होता है। यह परम्परिक रूपक शिष्य और शिष्यक निषण्णन कार प्रकारका है। (शास्त्रपर० १०६०१)

परम्परित रूपक केवल अशिक्षित तथा श्रेय द्वारा माका रूप और अश्रेय द्वारा माकाकार यह कार प्रकारका है।

यहाँ केवल शिष्य पक्ष द्वारा यह रूपक होता है यहाँ केवल शिष्य, अशिक्षित पक्ष द्वारा होनेसे केवल अशिक्षित तथा श्रेय द्वारा माकाकारमें वर्णित होनेसे शिक्षित माका रूपक तथा शिष्य नहीं होनेसे अशिक्षित माकाकारक होगा। उदाहरण—हे भोवृत्सिंह महीपाक। मुखके समर्थ जगतमें उन्नत राजमरहकमें (चन्द्रमयजलमें) राहुकर पाहुका अर्थात् तुम्हारा मङ्गल होवे।

यहाँ श्रेयमें राजाओंक बीच अश्रुविम्बका आरोप है तथा राजबाहु राहुत्वमें आरोपका कारण होनेसे यह अङ्कुर हुआ। श्रेय द्वारा आरोप होनेसे शिक्षित परम्परित रूपक हुआ। यह रूप यहाँ श्रेय द्वारा न होगा यहाँ अशिक्षित परम्परित रूपक होगा।

माताकेरूपका उदाहरण—

'मनोकरानन्व विद्यापन भीलपडविन हरिदन्वयाः।

विपत्रवि भ्योमवपुषोः कर्पूत्पुत्रमाम्निमुषिन् ॥'

(शास्त्रपर० १० पर०)

कर्पूत्पुत्रसङ्ग अश्रुमयजल विराजित है। यह अश्रु मरहक कामवपुषिके सितावपुषे है, दिग्गुणाका अश्रु तिलक है वा भाकाशुगङ्गाका पक्ष है।

यहाँ माताकेरूपमें मनोज्ञिके राक्षसादिमें काराव तथा अश्रुविम्बके सितावपुषादिमें आरोपका निमित्त होनेसे यह अङ्कुर हुआ।

साङ्ग रूपक—अङ्गके साथ अङ्गीका यदि रूपण अर्थात् आरोप हो, तो साङ्गरूपक होता है। इसके फिर दो भेद हैं, समस्तवस्तुविषय और एकदेशविवर्त्ति। अशेष आरोप अर्थात् उपमानका यदि शाब्दत्वमें आरोप हो, तो समस्तवस्तुविषय रूपक और जहां किसी आरोप्यमाण का अर्थरूपमें आरोप हो वहां एकदेशविवर्त्ति रूपक होता है।

निरङ्ग रूपक फिर दो प्रकारका है—केवल और माला-रूपक। जहां केवल एकमात्र अङ्गका रूपण अर्थात् आरोप हो वहां निरङ्ग रूपक होगा। (साहित्यद० १०६७६)

कहीं कहीं साङ्गरूपकमें भी आरोप्य विषय श्लेष देखा जाता है।

जिस रूपकालङ्कारमें वर्णन माधुर्यमें अत्यन्त विचित्रता देखी जाती है वहां अधिकारूढ वैशिष्ट्यरूपक होता है।

उदाहरण—तुम्हारा यह मुख कलङ्करहित चन्द्र है। चन्द्रमामें कलङ्क है, किन्तु इस मुखमें कुछ भी कलङ्क नहीं है। अक्षर सुधाधाराका आधार तथा चिरपरिणत विषय है। दोनों नेत्र शोभायुक्त नीलोत्पल हैं। शरीर लावण्यका समुद्र अर्थात् अत्यन्त सुखकर है।

यहां मुखमें चन्द्रमाका, अधरमें विष्वका, नेत्रमें कुवल्यका और शरीरमें लावण्यसमुद्रका आरोप हुआ है। ये सब आरोप होनेसे रूपाक तथा इस रूपकमें वर्णनाकी अत्यन्त विचित्रता रहनेसे अधिकारूढ वैशिष्ट्यरूपक हुआ।

रूपक और परिणामालङ्कारमें जो भेद है, वह इस प्रकार है—प्रकृत विषयमें किसी एक वस्तुका आरोप होनेसे एक और आरोप्यमाण वस्तु आरोप विषयके अभिन्नरूपमें अर्थ प्रस्तुत कार्यका उपयोगी होनेसे परिणाम अलङ्कार होता है। किन्तु परिणाम अलङ्कारमें जो आरोप होगा, वह वर्णनीय विषयका विलकुल उपयोगी होना चाहिये। किन्तु रूपकमें वह नहीं होगा। आरोप-माला ही रूपकालङ्कारका विषय है तथा जहां आरोप अभिन्नरूपमें प्रकृत अर्थाका उपयोगी होगा, वहां परिणाम अलङ्कार होता है। (साहित्य० १० परि०)

४ सख्याविशेष, एक परिमाणका नाम। ५ उपमान, वह वस्तु जिससे उपमा दी जाय। ६ रौप्य, चादी।

७ मुद्रा, रूपया। ८ सङ्गीतमें सात मात्राओंका एक दो-ताला ताल। इसमें दो आघात और एक खाली होता है। खाली ताल पर ही सम होता है। जब यह दृग्में वजाया जाता है, तब इसे तेवरा कहते हैं।

रूपकताल (सं० पु०) एक प्रकारका ताल।

रूपकरण (सं० पु०) एक प्रकारका घोड़ा।

रूपकर्त्ता (सं० पु०) रूपस्य कर्त्ता। विश्वकर्मा।

(रामा० ५:२३:२३)

रूपकातिशयोक्ति (सं० स्त्री०) एक प्रकारकी अतिशयोक्ति जिसमें केवल उपमानका उल्लेख करके उपमेयोंका अर्थ समझाया जाता है।

रूपकार (सं० पु०) भास्कर, वह जो मूर्त्ति बनाता हो।

(कथावर्तिष्ठा० ३७:६)

रूपकृत् (सं० स्त्री०) रूपं करोति कृत् कृत् तुम् च। १ त्वष्टा, विश्वकर्मा। (पु०) २ मूर्त्तिकर, वह जो मूर्त्ति बनाता हो।

रूपकान्ता (सं० स्त्री०) सत्रह अक्षरोंकी एक वर्णवृत्तिका नाम। इसके प्रत्येक चरामें जगण, रगण, जगण, रगण, जगण और अन्तमें एक गुरु और एक लघु मात्रा होती है।

रूपगढ़—वम्बई प्रसिद्धेन्सोके बडोदाराज्यके नवसरी विभागान्तर्गत एक दुर्ग। यह शोणागढ़नगरसे साढ़े सात कोस दक्षिणमें अवस्थित है। यहां भरनेके जलसे परिपूर्ण एक बड़ी पुष्करिणी है। यह दुर्ग भोलोंका विद्रोहदमन करनेके लिये बड़े काममें आया था।

रूपगर्विता (सं० स्त्री०) गर्विता नायिकाका एक भेद, वह नायिका जिसे अपने रूप या सुन्दरताका अभिमान हो।

रूपगोस्वामी—सुप्रसिद्ध वैष्णव आचार्य और एक कवि। श्रीचैतन्य महाप्रभुका शिष्यत्व ग्रहण कर ये वैष्णवधर्मके माहात्म्यकीर्त्तनमें बद्धपरिकर हुए। संस्कृत भाषामें इनकी अच्छी व्युत्पत्ति थी। इनके बनाये ग्रन्थ प्रेम और माधुर्यभावसे भरे हैं। ये महाप्रभुके परमभक्त और पार्श्वचर थे।

आप कर्णद्वाराज सर्वज्ञके वंशधर थे। सनातन रचित लघुतोपिणीसे इनकी एक वंशतालिका सङ्कलित हुई है।

ओ इस प्रकार है। सर्वप्रथम पुत्र भवियद्वय, भवियद्वय के पुत्र रूपेश्वर और हरिहर थे। रूपेश्वर राज्यताड़ित हो कर पौरस्त्यराज्यके अन्तर्गत शोकावराज्यम बस गये। उनके पुत्र पद्मनाभ नैहारी भाय। यहाँ पुण्योत्सव जगन्नाथ, नारायण, मुरारि और मुकुन्द नामक उनके पाँच पुत्र हुए। मुकुन्दके लड़के कुमार जाण्टा चन्द्र तीर्थके अन्तर्गत फतेवाबाद चले गये। उनके तीन लड़के थे, सनातन, रूप और चन्द्रम।

चतुर्दशिकाके मतसे,—सनातन सबसे बड़े, रूप मन्केसे और श्रीजाबगोलामोके पिता बल्लभ सबसे छोटे थे। कीह कीह खाकी सबसे बड़े तथा सनातन और अनुपमको इनके भाइ बतलाते हैं।

रामकेलिप्राममें इनका निवास था। श्रीरूपगोलामो बचपनसे ही कृष्णभक्त थे। विधि विधामें पारदर्शी हो कर पं गौड़ेश्वर सुखतान भवाइहान् हुसेमशाह (१४६४-१५२१ ई०) के वजोर हुए। हुसेनशाह हिन्दूधर्म सारियोंकी बड़ी मक्कि और भद्रा करत थे। वजोर श्री रूपने राजाका विभासमाजन हो कर प्रपान अमारय और साकर-महिष्मकी उपाधि पाई। मुसलमानके यहाँ नौकरी करते हुए मा थे कृष्णसेवास पराङ्मुख नहीं हुए थे। इन्होंने अपने मकानक समीप श्यामकुण्ड और राधाकुण्ड नामक दो प्रकाशय खुदवा कर उसके चारों ओर कदम्बकानन लगाया था। ये अपने बड़े भाईक साथ किसी निर्दिष्ट समयमें वहाँ जा कर श्री भोटापा कृष्णकी युगल मूर्तियोंकी उपासना करते थे।

प्रवाद है, कि एक दिन सपने मूयलघारसं यर्पा होती थी। उस दुर्विर्गमें दोनों भाइ राजाका आदेश पाकर कर राजदरबारमें जा रह थे। इसी समय उन्हें रास्तेकी बगलमें एक कुटीर कुछ अलसुद पाषम सुपाह दिये। एक मिश्रककी ली अपने सामास कह रही थी, "नाथ! सवेरा हुआ, उठिये, मिश्राकी बिकल्पिये, आज घरमें कुछ बाबल नहीं है।" एतन्मोक्ष वचन सुन कर एक मिश्रकने कहा, ममो सधरा नहीं हुआ है। ऐसी ओर धनपयामें मनुष्यका बाहर निकलना असम्भव है। शृगालादि कोष्ठप यमु भी इस समय अपने बिलसं बारह नहीं निकलते। एकमात्र श्रोतदास या श्रीकर ही अपने

मालिकके आदेशसे येने समयमें आहारनिद्राका परि त्याग कर घरसं बाहर निकलते हैं।'

वर्द्ध मिश्रकका वचन सुन कर श्रीरूपके चैतन्योद्य हो भाया। राजाका हासत्य शृगालादिये भी नीध है, समन्ता कर उठोंने नौकरी पर स्नात मारी। साथ साथ विवेकने भा कर उनमें भाध्य मिया। संसार और वैश्वर्ष्य उन्ह विषयके समाप्त मात्तम होने लगा। उसी दिन सुखतानके समोप जा कर उठोंने तीर्थयात्रा करवैके लिये भयकाश मांगी। बहुत भावतिके बाद राजाने इन्हे तीर्थयात्राकी अनुमति दे दी। वे भी प्रेमोन्मत्तसे विमोह हो बड़े भातन्वसे नृत्य करने लगे।

राजकार्णमें व्यापृत रहते समय एक दिन श्री रूपको मात्तम हुआ कि भोगीराज्ज महाप्रमुने तबशीपधाममें बहू तार जिया है। अब इनके दर्शनके लिये रूप छत्रपदागे लगे। मकयाभ्रजगल्लतठ मककी वासना पूरी करनेके लिये श्रीरूपनायन धाम जाते समय रामकलि प्राम देखने भाये। यहाँ विषयबिरागी रूपसनातनने प्रमुके चरण कमलका दर्शन किया। उसी समय रूप राजकार्णका परित्याग कर दीनवेशमें मीजाबल गये और प्रमुकी सेवा करने लगे। पीछे उन्हीके आदेशसे पूजावन जा कर रूपने छुन तीर्थोंका उदार, वैश्वकर्षर्णका प्रचार और अमूल्य वैष्णव प्रभोंका प्रपवन किया। उनके बनाये प्रथ ये सब हैं,—

उदयवन्नीकमपि, उदकलिहावल्लरी, उदयवृत्त, उपदेशामृत, कापेयमुद्गिका, कृष्णान्मतिधियिधि, गङ्गा एक, गोविन्दपिण्डावली, गौराङ्गसुरकल्पतठ, चैतन्या एक, कृष्णोदशवृक्षक वानकलिकौमुदी, भादकचन्द्रिका, पद्यायली, परमार्थसम्भं प्रतिस्तम्भं, प्रमेणु-सागर, मन्दिरसामुत्सिष्णु, मधुरामहिमा, मुकुन्दमुकारला बलीस्वीकरीका, यमुनाप्रकरसामृत, कञ्जितमायबनादक, विष्णुमाधव नाटक, विजायकुसुमाक्षि, जगन्निवास स्वव, शिशावृक्ष, संक्षेपामृत या संक्षेपभागवतामृत, साधनपद्धति, स्वधमात्रा इ सङ्कतकव्य, हरिनामासुत व्याकरण, हरेकृष्णमहात्मन्यार्थनिरूपण, सयुगमोद्देश दीपिका, पदप्रामोद्देशदीपिका, श्रीरूपचिन्तामणि, हरिमन्दिरसामुत्सिसिष्णुका चिष्णु, प्रमुकाव्यचन्द्रिका,

रागमयीकणा, तुलसी-अष्टक, वृन्दादेवी-अष्टक, श्रीनन्द-नन्दनाष्टक, वृन्दावनध्यान, चातुर्पुष्पाञ्जलि और प्रेमैन्दु-कारिका । १५४६ ई०में इन्होंने विद्यधामाभव और १५५० ई०में उदकलिकावल्लरीकी रचना समाप्त की थी । वैष्णवतोपिणीमें इनके बनाये दो रसामृतका उल्लेख पाया जाता है ।

१४११ शकमें इनका जन्म और १४८० शकमें अन्तर्धान हुआ । इन्होंने अपने जीवनका २७ वर्ष गृहस्थाश्रममें और शेष ४३ वर्ष वृन्दावनधाममें वैराग्यावस्थामें बिताया । वृन्दावनमें आप १८४ वनतीर्थोंका उद्धार कर वैष्णवजगत्में भगवान् श्रीकृष्णका एक विस्तृत लीलाक्षेत्र स्थापन कर गये हैं । सनातन गोस्वामी देखो ।
रूपग्रह (सं० त्रि०) रूपं प्राहयति ग्रह-अच् । रूपग्रहणवासी चक्षुः, जिसका रग-रूप सुन्दर हो ।

रूपघनाक्षरी (सं० स्त्री०) एक प्रकारका दण्डक छन्द । इसके प्रत्येक चरणमें वत्तीस वर्ण होने हैं । इसके अन्तमें लघु तथा आठ आठ वर्णों पर विश्राम होना आवश्यक है ।

रूपघात (सं० पु०) सूरत विगाडना, कुरूप करनेका अपराध ।

रूपचतुर्दशी (सं० स्त्री०) कार्तिक कृष्णचतुर्दशी । यह दीपमालिकाके एक दिन पहले होता है । इसे नरकचतुर्दशी भी कहते हैं । इस दिन लोग शरीरमें उबटन आदि लगाते हैं ।

रूपचन्द्र—रुद्रमञ्जरीनाममालाके रचयिता । ये गोपालके पुत्र थे । १५८८ ई०में इन्होंने उक्त ग्रन्थ लिखा ।

रूपचन्द्रमणि—एक प्रशिद्ध जैन-पण्डित ।

रूपज (सं० त्रि०) रूपेण जायते जन-उ । रूपजात, रूपसे उत्पन्न ।

रूपजीवनी (सं० स्त्री०) वेश्या, रंडी ।

रूपण (सं० स्त्री०) रूप व्युट् । १ आरोपण, आरोप करना । २ प्रमाण । ३ परीक्षा ।

रूपतत्त्व (सं० स्त्री०) रूपस्य तत्त्वं । शील, स्वभाव ।

रूपतम (सं० त्रि०) अतिशय रूपशाली, बड़ा खूबसूरत ।

(शत०ब्रा० ३३१/४२३)

रूपता (सं० स्त्री०) रूपस्य भावः नल् टाप् । रूपका भाव या धर्म । २ सौन्दर्य, खूबसूरती ।

रूपदर्शक (सं० पु०) १ प्राचीनकालका सिकोंका निरीक्षण करनेवाला राज-कर्मचारी । २ सराफ ।

रूपरीया—यशोहर जिलान्तर्गत एक बड़ा गाँव । यहा मध्यवर्ग रेलपथका एक स्टेशन है ।

रूपदेव—पद्यावली-धृत एक कवि ।

रूपदेव कवि (पण्डित)—सानन्दगोविन्द नामक गीत गोविन्दविवरणके प्रणेता ।

रूपधर (सं० त्रि०) रूपस्य धरः । रूपविशिष्ट, खूबसूरत ।

रूपधारिण (सं० त्रि०) रूपं धरतीति धृ णिनि । सौन्दर्य-विशिष्ट, खूबसूरत ।

रूपधृत् (सं० त्रि०) रूपं धरति धृ-क्विप् तुक्च । रूपवान्, खूबसूरत ।

रूपधेय (सं० स्त्री०) वाहारूप, वाहरी सौन्दर्य ।

रूपनगर—राजपूतानेके उदयपुर राज्यान्तर्गत एक नगर । यह आरावली शिखर पर देसुरी और सोमेश्वर गिरि-संकटकके बीच अवस्थित है । पूरव और उत्तर ओरका पहाड़ बड़ा ऊँचा है इससे इस पयसे शत्रु नहीं आ सकता ।

देसुरीके सोलाङ्की राजपूत द्वारा १७७२ ई०में यह नगर स्थापित हुआ । योधपुरराजने रूपनगरकी राजकन्यासे व्याह करनेकी इच्छासे यह नगर अपने अधिकारमें कर लिया ।

रूपनगर—राजपूतानेके किशनगढ़ राज्यान्तर्गत एक नगर ।

रूपनन्द—एक वीरका नाम ।

रूपनयन (सं० पु०) योगशतककी टीकाके प्रणेता ।

रूपनाथ—मध्यप्रदेशमें जव्वलपुर जिलान्तर्गत एक प्राचीन नगर । यहां अशोककी अनुशासनलिपि खोदी हुई थी । इस अनुशासनसे ज्ञेय होया है, कि एक समय यहाँ बहुतसे मनुष्य वास करते थे ।

रूपनाथ—आसाम प्रदेशके जयन्तीपहाडी विभागमें अवस्थित एक बड़ा गाँव । यहां हिन्दूकी एक तीर्थ है । प्रतिवर्ष सैकड़ों आदमी श्रीहट्टसे इस देवमन्दिरका दर्शन करने आते हैं । इसके पास ही बहुत-सी बड़ी बड़ी गुहाएँ

है। एक गुफा जमानके अन्दर बहुत दूर तक चली गई है। उस गुफामें किसीकी जालिका साहस नहीं होता। वहाँके लोगोंका कहना है, कि उस सुरंगसे एक समय बौधसना मालवधर्म पर आक्रमण करनेके लिये भाई यो। इससे गुफामें हिन्दू-देवममात्रका चित्र अंकित देखा जाता है।

रामनायण (सं० पु०) १ मक्षानामप्रयोगव्यतिकरे रक्षयिता। वायव्यवर्तिभक्षे इसका उल्लेख किया है। २ अथवा अमरकारदोषितिके प्रयेता। ये वाष्पमूत्रके पीन और मशानोदासके पुत्र थे। १५८० ई०में इन्होंने एक प्रथम समाप्त किया।

रामनायण—रघुनाथके पुत्रोंने जिनमें प्रयाहित एक नहीं। मेदिनीपुर जिनमें जो सिंहाह नहीं बहती है, वही शरि कम्बर नदमें मिलनेके बाद हुगली जिनमें इसी नामसे बहती हुई भागीरथीमें गिरा है। यह नदी मग्रा० २२ १३' ३० तथा देगा० ८८ ३' ५०के मध्य विस्तृत है। कीर्त्तनाथ नामक धारसे २ मील दक्षिण मेदिनीपुर हार डीकेकेकेनाथ इसका रूपर हो कर गई है। इस नदीका स्रोत बहुत ठंडा है। कभी कभी बाढ़के समय किर्त्तनाथ हुय जाता है। इसका किर्त्तनाथ २६ मील २३' ३३ फुट लंबा एक बांध तैयार किया जाता है सभी समय इस नदीमें अ्यार भाँटा जाता है।

रामनायण—मिथिलाके एक राजा। १४६५ ई०में ये विद्यमान थे।

रामनायण-रघुनाथ नाम—रामनायणसे रघुनाथ नहीं तक विस्तृत एक काठ। मेदिनीपुर जिनके दिखली विभागमें यह बहती है। रामनायण नदीके समीप काठ फट कर इसी तक चली गई है। यहाँ इसे 'बाँका काठ' कहते हैं। फिर इसी नदीके लियेकिया काठ का कर रघुनाथ नहीं मिले हैं। उक्त बातमें अ्यार भाँटा भाषा करता है।

रामनायणधर्म—एक प्रतिभाशाली बंगाली कवि। इन्होंने अन्धकवि भयानोमसाहक समयमें ही मारकरछेप चरती का बंगला अनुवाद किया। इनके पूर्वपुरुष मकरन्दधर्मके सहाय थे। प्योहर नयमें इस बंगला पास था। प्योहरमें अब राष्ट्रविष्णव उपरिपत हुआ, ठर इस पंगक

अगलाध और वाणीनाथ नामक दो मार भयनां बेश छोड़ कर सायिरुपक नामकाक माममें रहने लगे। वहाँके करवशांशय मीनिक कापस्य जमा करने कुञ्जोला यनी दोनों भाईयोंका अक्षय सत्कार किया और भयनी कम्पासे विवाह करने कहा। भाभिजात्य नाशके भयसे ये राजी न हुए और वहाँसे भाग चले। फिरतु बड़े पापी नाथ पकड़े गये और पचा नहींमें जुबो दिये गये। मरनेके पहले मो उम्हें विवाह करनेके लिये कहा गया था।

उठे मार अगलाधने कापी बड़े पामेक मोमसे मैपनकिह हाफला मामके अमो हार पाक्षेन्द्र यवकी कम्पासे विवाह किया। इसी अगलाधके वंशधर रूपनारायण थे। १६३० सहीके शेषमें इनका अंश हुआ था।

रामनायण सेन—सुपप्रवृत्कारक और सुपथ समाभूतसंभूत रक्षयिता। पयोपांथमें ये रहते थे। इन्होंने १४८० ई० में उक्त दोनों प्रपोंकी रचना की।

रामनाथन (सं० पु०) रूपस्य माशानम् अर्थर्शनं यत्। पेशक, अन्ध।

रूप्य (सं० पु०) १ पुराणानुसार एक भाषि। (मर्षयकेन पु० ५५, २०) २ सहाश्रिपरिचित एक राजाका नाम।

(तथाकि ३१, ४६)

रूपयति (सं० पु०) स्वया विभ्यक्तर्मा। (यव० भा० ११, ५१, १५)

रूपपुर (सं० श्लो०) एक नगरका नाम।

रामानुजस्य (सं० पु०) मूल दार्शनिक साथ भर्त्तागका जोड़ना।

रामानुजावाह (सं० पु०) किसी मूल राजिस भर्त्तागका घटना।

रामेश (सं० पु०) रूपर मेरुः। १ विमिष रूप। (श्लो०) २ त अमेरु।

रामहरी—श्रीरायिकाका एक सन्धो। यह दक्षिणके अथ विमानुकी कन्या थी। पावटमें इनका घर था। यह प्रियलक्ष्मणकी अोरुपमत्रो परमासुन्दरी और गोरो यनाकी तरह तर्पेविशिष्टा था। यह सर्वदा धारायिका के निकट रहती थी। अक्षिताक कुत्रक उत्तर इनका रूपो सासा नामक कुत्र था। इनके और भी दो नाम थे—

रङ्गमालिका और लवङ्गमालिका। इनकी उमर साढ़े तेरह वर्षोंसे तेरह दिन कम थी अर्थात् ये आध्यात्मिक जगत्की चिरयौवना थीं। इनके नित्यरूपका कभी भी विपर्यय नहीं हुआ। वैष्णवोंका कहना है, कि यही रूप-मञ्जरी गौराङ्गलीलामें श्रीरूप गोस्वामी रूपमें अवतीर्ण हुई थीं।

२ वैद्यक ग्रंथभेद।

रूपमती—एक गणिकानर्त्तकी। ये पीछे महाराज वाजवहादुरकी महिषी हुई। वाजवहादुर देखो।

रूपमय (हि० वि०) अति सुन्दर, बहुत खूबसूरत।

रूपमाला (हि० स्त्री०) एक मातृक छन्दका नाम। इसके प्रत्येक चरणमें १४ और १० के चित्रामसे २४ मात्राएं होती हैं। इसको मदन भी कहते हैं।

रूपमालिन (सं० पु०) सह्याद्रिबर्णित एक राजा।

(सहा० ३४।३३)

रूपमाली (सं० स्त्री०) एक छन्दका नाम। इसके प्रत्येक चरणमें तीन मगण या नौ दोषे वर्ण होते हैं।

रूपया (हि० पु०) क्या देखो।

रूपयौवन (सं० स्त्री०) १ रूप और यौवन। (त्रि०) २ रूप और यौवनविशिष्ट।

रूपराम—एक बंगाली कवि। इन्होंने श्रीधर्ममङ्गल ग्रणयन किया। ये दूसरे श्रीधर्ममङ्गलके प्रणेता धनराम चक्रवर्तीके सहपाठी थे।

रूपरूपक (सं० पु०) केशवके अनुसार रूपकालंकारके 'सावयवरूपक' भेदका एक नाम।

रूपवत् (सं० त्रि०) रूपमस्यास्तीति (रूपरसादिभ्यश्च । पा १।२।१५) इति मनुष्य, मस्य वः । १ आकारविशिष्ट, उत्तम रूप। २ सौन्दर्ययुक्त, खूबसूरत।

रूपवती (सं० स्त्री०) १ केशवके अनुसार एक छन्दका नाम। इसे छन्दोप्रभाकरमें गौरी लिखा है। २ चंपक माला वृत्तिका एक नाम, रूपमवती। ४ एक नदीका नाम। (वि०) ५ सुन्दरी, खूबसूरत स्त्री।

रूपवती—मालवराज वाजवहादुरकी महिषी। ये नर्त्तकीकी लड़की थीं। इनके सौन्दर्य पर मुग्ध हो कर वाजवहादुरने इनसे विवाह कर लिया। ये रूपमणि और रूपमती नामसे भी मुसलमान इतिहासमें प्रसिद्ध हैं।

इनके बनाये बहुत से गान हैं। वाजवहादुर देखो।

रूपवन्त (सं० त्रि०) रूपवत् देखो।

रूपवान् (सं० त्रि०) सुन्दर, खूबसूरत।

रूपवास—राजपूतानेके भरतपुर राज्यान्तर्गत एक नगर।

यह अक्षा० २६° ५६' ३० तथा देशा० ७७° ३६' ५० के मध्य भरतपुर शहरसे १६ मील दक्षिण पूर्वमें अवस्थित है। जनसंख्या २६८२ है। चित्तोरगढ़ राजवंशधर सफसिहने इस नगरको बसाया। इसी नगरमें वे रहते थे, इस कारण शहरका रूपवास नाम हुआ है। उन्होंने मुगलोंके ढंग पर जो प्रासाद बनवाया और दिग्गी खुदवाई थी, वह आज भी मौजूद है। नगरकी बगलमें बहुत-सी बड़ी बड़ी पत्थरकी मूर्त्ति स्थापित है। उनमेंसे एक मूर्त्ति बलदेवजीकी, दूसरी उनकी स्त्रीकी, तीसरी हस्तानपुराधिपति महाराज युधिष्ठिरकी और चौथी किसो बुद्ध वा जैनतीर्थङ्करकी है। इसके सिवा यहां दो स्तम्भ हैं। दोनोंमें खोदित लिपि है। शहरमें एक डाकघर, बर्नापयुलर स्कूल और एक अस्पताल है।

रूपवासिक (सं० पु०) एक जातिका नाम। इनका दूसरा नाम रूपवाहिक भी है।

रूपवाहिक (सं० पु०) जानिभेद।

रूपविपर्यय (सं० पु०) रूपस्य विपर्ययः। रूपके विपरीत।

रूपशस् (सं० त्रि०) रूपेण शालते शोभते शाल णिनि। सौन्दर्यविशिष्ट, खूबसूरत।

रूपशाही—बुन्देलखण्डवासी एक काव्यस्थ कवि। पर्णा या पन्ना नगरके निकटवर्ती बाघमहल स्थानमें ये रहते थे। इन्होंने पर्णाके बुन्देलजातीय महाराज हिन्दूपतिकी सभामें रह कर वहाको शोभा बढ़ाई थी। १७५६ ई०में इन्होंने रूपविलास काव्य रचा।

रूपशिखा (सं० स्त्री०) अग्निशिखा नामक राक्षसकी एक कन्याका नाम।

रूपश्री (सं० स्त्री०) सम्पूर्ण जातिकी एक संकर रागिणी।

इसमें ऋषभ कोमल और शोष सव स्वर शुद्ध लगते हैं।

रूपर्वि—लुम्पाक जैनोंकी नागपुरिया शाखाके प्रवर्त्तक। ये मालसावड़ गोत्रमें उत्पन्न हुए थे। इस शाखाके मत-विरोधी दूसरे एक सम्प्रदायके प्रवर्त्तक भी इसी नामसे परिचित थे किन्तु वे इन्द्रगोत्रीय थे।

रूपसपद (स० स्त्री०) रूपमेव सम्पद्। अक्षररूप, सुन्दरता।

रूपसद्य (स० स्त्रि०) रूपशाली, कावात्।

रूपसम्पत्ति (स० स्त्री०) सुन्दर कासम्पत्, वह जो देव नेमें लूब सुन्दर हो।

रूपसम्पत्ति (स० स्त्री०) रूपसंपद देखो।

५ पसा—सुन्दरता जिसेमें प्रवाहित एक नदी।

रूपसिंह—एक हिन्दू राजा। इन्होंने १६११ ई०में सज्जद शाहमगीरके पुत्र महम्मद मुभाजिमके साथ अपनी कन्याका व्याह कर दिया।

रूपसिद्धि (स० पु०) एक आधुमीका नाम।

(बनारसिका० १५११०)

रूपसी (स० स्त्रि०) सु वरी, लूबसूत।

रूपसेन (स० पु०) १ एक विद्याधरका नाम। २ राज गृहके एक राजा।

रूपस्थ (स० स्त्रि०) रूपयुक्त, रूपवात्।

रूपल्लिप्त (स० स्त्रि०) रूपान्तर, रूबसूत।

रूपहानि (स० स्त्री०) १ रूपका नाश। २ न्यायमते विधेयवाक्यविन्यासका एक प्रकार।

रूपा (स्त्री० पु०) १ चांदी। २ पत्थिया चांदी जिसमें कुछ मिश्रण हो। ३ लच्छ सफेद रंगका धोड़ा, लुफा। ४ वह वस्त्र जो विस्तृत सफेद रंगका हो। इस रंगके बैल मकबूत भीर उचिष्ठ्यु माने जाते हैं।

रूपा—सम्प्राप्तिपात्रसे निरस्त एक नदीका नाम।

(देहा० १६५/११२)

रूपाजीया (सं० स्त्री०) रूपेय सौन्दर्येय भाग्यवतीति भा जीव-मन्त्र टाप्। देव्या रंजी।

रूपाचिन्तोष (सं० पु०) वृष वस्तुका वह ज्ञान जो इन्द्रियां प्राप्त होता है।

रूपार—१ पक्षीके सम्पत्ता सिद्धिका एक उपविभाग। यह रूपार और अरार तहसील के कर बना है।

२ एक विभागकी एक तहसील। यह भग्ना० ३० ४५ से ३१ १३ ४० तथा देशा० ७१ १६ से ७३ ४४ पू०के मध्य विस्तृत है। भूपरिमाण २३० वर्गमील है। इसके उत्तरी सतलज नदी बहती है। जनसंख्या डेढ़ लाखके करीब है। इसमें १ शहर और ३५८ ग्राम लपत हैं।

३ एक तहसीलका एक नगर। यह भग्ना० ३० ५८ उ० तथा देशा० ७३ ३२ पू०के मध्य शतद्रु नदीके बाहिने किनारे अवस्थित है। यह नगर बहुत पुराना है। रूपनगर इसका पुराना नाम है। जनसंख्या ६ हजारके करीब है।

१०६३ ई०में हरिसिंह नामक एक सिख-सरकारने इस नगरकी जीत कर हिमाचलप्रदेशके एकके विस्तृत स्थानोंमें अपनी शासनशक्ति फैलाई। १७३२ ई०में सूर्यके पहले उन्होंने अपनी सारी सम्पत्ति मरतसिंह भीर देवसिंह नामक दो पुत्रोंमें बांट दी। मरतसिंह-रूपार नगर सिद्धा। १८४५ ई०में सिख युद्धके समय इस राज्य शने सिखशासिका पक्ष लिया। इस कारण मन्नेरराजने १८४३ ई०में एक सम्पत्ति ग्रहण कर ली।

यहां प्रति वर्ष दो मेले लगते हैं। प्रति वर्ष मास में शाहजहाँकी मकबरेके सामने बड़ी धूमधामसे साजु बरकी स्मृतिस्मार्थ उत्सव होता है। इस उत्सवमें यहां प्रायः ५० हजार दिव्य मुसलमान एकत्र होते हैं। कुमरा मेला शैलमासमें शतद्रु नदीमें स्नान करनेके उपलक्ष्यमें लगता है। इस समय साधुओं भावदो स्नान करने भाते हैं। हिमाचल पर्यटनवासी विभिन्न जातिके साथ बापिज्य करनेके लिये यहां एक बड़ी हार है। यहाँका बापिज्य द्रव्य शस्यादि, मोम, चोली, सूती चरम और छोड़िका करताव है।

रूपार—बम्बई प्रदेशके महीकाण्ड विभागके अन्तर्गत एक सामन्तराज्य भीर उसका प्रधान नगर। यहाँके सरदार बड़ोयके गायकवाड़ भीर इन्के राजाको कर देते हैं।

रूपाचर (सं० पु०) १ शीतमतेके अनुसार एक प्रकारके देवता। २ ध्यानकी एक मूर्तिका नाम। इसके प्रथम भावि श्वर मेव हैं। ३ चिन्तक एक मेव जिससे उपलोकका ज्ञान प्राप्त होता है। चिन्तको इस दृष्टिके कुशल, पिपाक, क्रियादि मेवके अनेक प्रकार माने जाते हैं।

रूपावली (स० स्त्री०) शम्भुकी विमलिकी वर्णना। रूपभय (स० पु०) सुन्दर पुत्र, रूबसूत आधुमी। रूपार (स० स्त्रि०) मात प्रकारके स्वभाववाला। रूपार (स० पु०) रूपमेय अथ यत्न। कामदेव।

रूपिका (स० स्त्री०) रूपमस्य अस्तीति रूप-ठन् ।
 श्वेताकं धृक्ष, सफेद फूलका आकका पेड़ ।
 रूपित (स० पु०) एक प्रकारका उपन्यास जिसमें ज्ञान,
 वैराग्यादि पात्र बनाये जाते हैं ।
 रूपिन् (स० त्रि०) रूपमस्यास्तीति रूप-इन् । १ रूप-
 युक्त, रूपवाला । २ तुल्य, सदृश । ३ सुन्दर; खूबसूरत ।
 रूपी (स० त्रि०) रूपिन् देखो ।
 रूपेन्द्रिय (स० पु०) रूपग्रहणोपयुक्तं इन्द्रियं । रूप-
 ग्रहणोपयोगी इन्द्रिय, चक्षुःइन्द्रिय, आँख । इस इन्द्रिय
 द्वारा रूप ग्रहण होता है इसलिये इसे रूपेन्द्रिय कहते
 हैं । (सुश्रुत)

रूपेश्वर (स० पु०) एक शिवलिङ्गका नाम ।
 रूपेश्वरी (स० स्त्री०) रूपानामीश्वरी । एक देवीका
 नाम । प्रभवादि साठ वर्षोंमेंसे इक्कीस वर्षमें इस देवी-
 की पूजा करनी होती है । इस देवीकी पूजा करनेसे सब
 अभीष्टलाभ होता है ।

“रूपेश्वरी प्रकर्त्तव्या वृषायुग्मव्यवस्थिता ।

जटानुकुटभारेन्दु त्रिशूलोरगभूषणा ॥

मणिमौक्तिकशोभाढ्या सितचन्दनचर्चिता ।

पूजिता कुसुमैर्हृद्यैः सर्वकामफलप्रदा ॥”

(देवीपु० सवत्सरदेवतापू०)

रूपोपजीवन (स० क्ली०) वह जो सुन्दर मूर्त्ति दिखा कर
 अपनी जीविका चलाता हो, बहुरूपिया ।

रूपोपजीविन् (स० त्रि०) रूपेण उपजीवयति जीव-णिनि ।

रूप द्वारा जीविका निर्वाह करनेवाला, बहुरूपिया ।

रूपोपजीविनी (स० स्त्री०) वेश्या, रंडी ।

रूपोश (फा० वि०) १ छिपा हुआ, गुप्त । २ जो दंड
 आदिसे बचनेके लिये भाग गया हो, फरार ।

रूपोशी (फा० स्त्री०) मुंह छिपानेकी क्रिया, गुप्ति,
 छिपना ।

रूप्य (सं० क्ली०) आहतं रूपं अस्यास्तीति रूप (रूपादाहत
 प्र शचयोर्षप् । पा ५।२।१२०) इति यप् । १ आहत स्वर्ण,
 रजत । २ धातुविशेष, चाँदी ।

रूप्य सुवर्णका मल है । पर्याय—शुभ्र, वसुध्रेष्ठ,
 रुधिर, चन्द्रलोहक, श्वेतक, महाशुभ्र, रजत, तत्तरूपक,
 चन्द्रभूति, सित, तार, कलधूत, इन्द्रलोहक, खज्जूर,

द्रवर्ण, श्वेत, रङ्गवीज, राजरङ्ग, लोहराजक, कलधौत ।
 गुण—स्निग्ध, कपाय, अम्ल, विपाकमें मधुर, वातपित्तहर,
 रुचिकर, वलिपलितनाशक । (राजनि०)

इसके नामकी उत्पत्ति और मारणादिका-विषय
 वैद्यकमें इस प्रकार लिखा है,—

महादेवने त्रिपुरासुरका वध करनेके समय क्रोधभरी
 आंखोंसे उसे देखा था । उस समय उनकी दाहिनी आंख-
 से आगकी जो चिनगारिया निकली, उससे तेजो-
 मय रुद्रकी और बाईं आंखसे जो अश्रुपात हुआ उससे
 रूप्यकी उत्पत्ति हुई । औषधके काममें यह जारण कर
 प्रयोगमें लाया जाता है । जो रौप्य भारी, चिकना, कोमल
 तपाने या काटनेसे सफेद दिखाई देता है, जो आघात-
 सह है अर्धान् पत्तर बनानेसे जो फटना नहीं, चन्द्रमा-
 के समान जो निपुल प्रभासम्पन्न और खच्छ है वही
 उत्तम रूप्य है । जो रौप्य फटिन, कृत्रिम, रुक्ष, रक्तवर्ण,
 पीतदलयुक्त, लघु है तथा तपाने, काटने और चोट करने
 से जिसका रंग बदल जाता है वही खराब समझा जाता
 है ।

गुण—शीतवीर्य, कपाय, अम्लमधुररस, मधुर,
 सारक, वयःस्थापक स्निग्ध, लेखनगुणयुक्त तथा वायु,
 पित्त और प्रमेह आदि रोगनाशक है ।

अशोधित रौप्य—सेवन करनेसे शारीरकताप,
 विवन्ध, बलवीर्यक्षय और देहपुष्टिका व्याघात तथा विविध
 रोग उत्पन्न होता है । अतएव रौप्यको शोधन कर
 काममें लाना चाहिये ।

शोधनविधि—रौप्यको पीट कर अच्छी तरह पत्तर
 बनाना होगा । पीछे आगमें गरम कर उष्ण अवस्थामें
 यथाक्रम तेल, मट्टा, काजी, गोमूल और कुलथी क्लायका
 काढ़ा, प्रत्येक द्रव्यमें तीन तीन बार डालना होगा । ऐसा
 करनेसे रौप्य शोधित होता है ।

मारणविधि—पहले चाँदीको पीट कर जितना पत्तर
 होगा उसके तिहाई भाग हरतालको अम्ल द्वारा एक
 पहर तक मर्दन करे । पीछे उस मर्दित हरतालको रौप्य-
 के पत्तरमें लेप कर उन पत्तरोंको एक मूषामें रखे और
 मुंह बंद कर दे । अनन्तर ३० वनगोइठेसे पुटमें पाक
 करना होगा । इस प्रकार क्रमशः चौदह बार हरताल लेप
 और पुटपाक करनेसे रौप्य भस्म होता है ।

भ्रतान्तर—पूहरके रूपमें सोनामक्की पीस कर उससे पहलेकी तरह पसलमें छेप करे, पीछे पूर्वोक्त विधानानुसार बीहड़ बार पुष्टमें पाक करनेसे दीप्य मसम होता है। (भाष०)

(त्रि०) प्रशस्त रूप! मस्यास्तीति कप-यत् । २ सुन्दर, सूबधृत । ३ उपमेय ।

कप्यक (स० पु०) दणया ।

कप्यकटा (स० स्त्री०) जिनके अनुसार हेरपयवत वर्षकी एक नदीका नाम ।

क्याभ्यष्ट (स० पु०) कुरूप कुर्ये वा अभ्यष्टा । नैचिक, टकसालका प्रपान अधिकारी ।

कैरकार (फा० पु०) १ सामने उपस्थित करनेका भाव, पेशी । २ साहायक, हुकुमनामा । ३ बह तत्रभोज या फेसका जो किसी कारखानमें हाकिम अदास्तक सामने लिखा जाय, अदास्तका हुजम । ४ कुछ पेशिया मयवषाओंमें किसीको अदास्त भादिमें उपस्थित होनेके लिये लिखा हुआ साहायक ।

कैरकारो (फा० स्त्री०) १ मुकदमेकी पेशी । २ मुकदमे की कारखान ।

कैरक (फा० लि० वि०) सम्मुख, सामने ।

कैरक (कसी० पु०) कसका चांदीका सिक्का यह प्रायः जो सिडिंग डेड वेगीके बराबर मूल्यका होता है ।

कैरक (स० पु०) एररररर, रेंडका पेड़ ।

कैम (फा० पु०) रकी या तकी रीशका एक नाम ।
धमताम्रानव रेवो ।

कैमाळ (फा० पु०) १ कपड़े का वह बीकोट कुकड़ा जो हाथ, मुद पीछनेके काममें आता है । २ बीकीना शास या बिक्रमका कुकड़ा । इसका चारों ओर बैज और बीचमें काम बना रहता है और यह तिकोना बौहर कर ओढ़नेके काममें आया जाता है । मुसलमानों समयमें इसे कमरमें भी बांधते थे । ३ टगीका ब्रताक जिसके एक कोनेमें चांदीका थक कुकड़ा बंधा रहता था । टगा भादि इसे चांदीमयी क गळमें अपेट कर चांदीक कुकड़े का उसका गले पर भारीके पास मगुटेसे इस प्रकार बंधते थे, कि वह मर जाता था । ४ पापजामेकी काटमें यह बीकोट कपड़ा जो दोनों मांहिरियोंकी छपिमें लगाया जाता है, मियानी ।

क्याखा (फा० स्त्री०) बमली रेवो ।

कमी (फा० वि०) १ कम देशसम्यन्धी, कमका । २ कमदेशमें उत्पन्न होवैयाका । ३ कमदेशमें रहनेवाला, कमदेशका निवासी ।

कर (सं० लि०) १ उतार, जो गलत हो गया हो । २ बलि दण्य, ब्रजा हुमा ।

करा (हि० वि०) १ प्रशस्त, छेष्ट । २ बहुत बढ़ा । ३ सुन्दर, मनोहर ।

कर (अ० पु०) १ निपम, कायदा । २ ककीर की बनेका बड़ा, ककर । ३ ककीर जो जिखावट सीधी रखनेके लिये कागज पर जो जो जाती है ।

कर (अ० पु०) १ ककीर या बनेका उंडा, शकाका । २ ककीर की बनेकी पटल पैमाना । ३ शासक ।

करक (स० पु०) कप्यतीति कय प्युक्त । वासक, बड़सा ।

करण (सं० स्त्री०) १ भूवित करनेका, सजाना । २ अनु-
खेपन । ३ भाषावचन

कचित (सं० लि०) कय क । कडित, दृष्ट हुमा ।

कस—यूरोपके पूर्व और एशियाके उत्तरका एक विस्तोर्ण राज्य । भूपरिमाण ८१६०००० वर्गमील अर्थात् सारी भूमण्डलका छठा भाग है । शतना बढ़ा रकबा होने पर भी जनसंख्याकी तुलना करनेसे यह बहुत कम होता है । १६०१ ई०का मनु मनुमारोमें यहाँ की जनसंख्या १३।० करोड़ थी अर्थात् यूरोपीकी जनसंख्याका बीहड़वाँ भाग । १८१८ ई०में इस साम्राज्यका भूपरिमाणमौर भी बढ़ गया था । उसी साल कस-सम्राट्ने चीनसम्राट्से ऐबिन्जी उपमागएव स्यापट उपग्रोप, अर्धर बन्दर, तखि एनचन, मिडटस्थ समुद्र और उसके उत्तर भागका भू भाग इजारा किया था । १८१६ ई०में कुछ भूमाम के कर कोपङ्गु तुङ्ग नामक एक स्वतन्त्र प्रदेश अर्माठल हुआ । उसका परिमाण १२२४ वर्गमील और जनसंख्या चारै लाखक करीब थी । १६०१ ई०की चीनमें बक्सर-युद्धके बाद सारा मधुरिया एक तरहस कस-सम्राट्के अधीन हो गया । इसका साथ साथ मगोलियामें भी कसममाय विस्तृत हुआ । कस साम्राज्यके युद्धमें मधुरिया कस सम्राट्के हाथसे जाता रहा ।

थोड़े ही दिनोंके मध्य जनसंख्या तथा नाना विषयों-
में रूस साम्राज्यके उन्नति की है। १८५६-१८५६ ई०में
जिस साम्राज्यकी जनसंख्या ७ करोड़ ४० लाख थी।
युद्धके पहले उसकी संख्या १८ करोड़ हो गई थी।
परन्तु १९२१की मनुष्यशुमारोमें कुल मिला कर १३
करोड़ हुई।

इतिहास ।

रूस देशका प्राचीन इतिहास नहीं मिलता। जो कुछ
मिलता भी है वह ६वीं सदीसे आरम्भ हुआ है। उसके
पहले रूस साम्राज्यकी कौसी अवस्था थी, मालूम नहीं।
हिन्दूके प्राचीन पुराणकी आलोचना करनेसे मालूम होता
है, कि यूरोपीय रूसिया और एशियाटिक रूसियाके मध्य
स्थान तथा वर्तमान कास्पियनसागरके दोनों पार्श्वसे
ले कर उत्तर समुद्र तक शाकद्वीप विस्तृत था। हिमप्रलय-
में शाकद्वीपके उत्तरांगका भू-स्थान विलकुल बदल
गया। हिमप्रलयके बाद पहले पहल आर्याजातिने शाक-
द्वीपमें आश्रय लिया था। पीछे वे लोग नाना स्थानोंमें
फँद गये। इस कारण कास्पियनसागरके किनारे बहुत
दिनों तक आर्यप्रभाव जक्षुण्ण रहा। ईसाजन्मके पहले ५वीं
सदी तक यहाँकी आर्यशाखासे उत्पन्न शाकोंके प्रभावसे
एक समय सारा एशिया और यूरोप काँप उठा था।
आखिर चीन और पारसिकोंके आक्रमणसे शाकगण
तितर बितर हो गये। बहुत पहलेसे ही इन शाकोंके
साथ भारतका सँघर्ष था। शाकद्वीप और भोजक ब्राह्मण
देखो। ज़रथुस्त मतावलम्बी पारसिकोंके अत्याचारसे
सौर शाकद्वीपोंकी बड़ी बुरवस्था हुई थी। इस समय
वे लोग राजहीन, समाजहीन और धर्महीन जाति समझे
जाने लगे।

पारसिक और चीन जातिके अभ्युदयमें भी रूसदेश-
की गठन वा 'रूस' नामकरण नहीं हुआ। उस समय भी
यह देश छोटे छोटे गाँवोंमें विभक्त था तथा एक एक
आदमी छोटे छोटे सामन्तके अधीन रहता था। पारसिक
प्रधानताके समय जिस प्रकार अग्निपूजाका प्रचार हुआ
था, चीनी प्रधानताके समय भी उसी प्रकार पहले कन-
फुची और पीछे बौद्धमतका प्रचार हुआ। किन्तु वहाँसे
कौग पहले हीसे उचित उपदेश और योग्य आचार्य न

मिलनेके कारण कुसंस्कारसे आच्छन्न थे। यहाँ तक कि
वे लोग जो पूर्वतन शाकजातिके वंशधर थे उसे भी
विलकुल भूल गये थे। यूरोपीय रूसके पश्चिम गलम
(Lav) नामक एक विस्तृत आर्यशाखाका वास था।
वर्तमान रूसगण अपनेको उन्हींके वंशधर बतलाते हैं।

रूस नाम कब और धर्याँ हुआ, इसका ठीक विवरण
नहीं मिलता। कोई कोई कहते हैं, कि रोस, रोसिया और
रोसियन (Rous, Rossia, Rossian) शब्दसे 'रूस'
शब्दकी उत्पत्ति है। फिर कोई रूखोलनी (Rhozolani)
नामक मेद (Medish) जातिकी एक शाखासे
रूस नामकी उत्पत्ति बतलाते हैं। आज कलके इतिहास
कारोंका कहना है, कि फिनिस भाषामें 'रीच' (Ruotsi)
कहनेसे सुइदिसोंका बोध होता है। फिर कोई कोई
पाश्चान्य परिदित अनुमान करते हैं, कि वह शब्द 'सुइदिस
रोपमेन' शब्दका (Rothmenn) शब्दका ही अपभ्रंश
है। 'रोपमेन' शब्दका अर्थ नाविक वा सामुद्रिक है।
वे लोग स्कन्दनाभदेशीय सामन्त थे। उन्होंने ही साम्राज्य
की प्रतिष्ठा की, किन्तु उनका पूर्व इतिहास विलुप्त हो
गया है। अरब और यहुदियोंके प्राचीन ग्रंथोंसे उसका
अस्पष्ट परिचय पाया जाता है।

६वीं सदीमें रूसवासियोंने यूरिक, सिनेउस और कवर
नामक तीन भाइयोंको उत्तरसे बुला मंगाया था। ८६२-
६०में वे तीनों भाई नवगोरोदमे आ कर रहने लगे। वे
'वरङ्गी' (Varangians) नामसे प्रसिद्ध थे। गोष्ठ-
मिसल नामक एक समाजपतिने ही तीनों भाइँको देश
शासन करानेके लिये बुलाया था। प्रवाद है, कि ररिक्
लुवरात नामक एक सुइदिसराजके पुत्र था। गोष्ठ-
मिसलकी कन्या उर्मिलाके साथ उसका विवाह हुआ।
पहले रूस और स्कन्दनाभगण पृथक् जातिके समझे
जाते थे। राजकुमार ररिक्के यत्नसे दोनों जाति
एक हो गई। तीन भाइँमेंसे ररिक् लादोगा, सिने-
युस विलो ओजेरोते तथा कवर इजवरस्क नगरमें प्रति-
ष्ठित हुए थे। दो भाइँके कोई सन्तान न रहनेके कारण
उनकी मृत्युके बाद ररिक् उनके विशाल राज्यके भी अधि-
कारो हुए। उन्होंने 'वैलिकि नियान' अर्थात् महाराजकी
उपाधि पाई थी।

करिक जब रूसदेश भावा, उस समय भास्कोलड् और विर नामक दो धीरे भी उनके साथी हुए थे। करिकने साथ दोनोंका विशेष हो गया जिससे वे अपनी भाग्य परीक्षा करनेके लिये क्रुस्तुनतुनिया भाये। रातमें उन्हे आश्चर्यातिथि निवास शक्यपूर्ण दिक् अनपद मिला। क्रिक नामक स्थानमें ही सेष्ट मानवने रूसोंके मध्य इसाचर्मका प्रचार किया। आस्कुडज् और विर दो सी युद्धब्रह्मज् के कर दो वर्ष बाद वासफोरस उपसागर पहुँचे और उन्होंने वीजन्ता (Byzantine) साम्राज्यकी राजधानी को लूटा। उस समय वीजन्ती राज्यमें ३५ मार्चक अधिपति थे।

पार्थवसी शब्दोंका परस्तर कर थोड़े ही दिनांक अन्तर करिकने विस्तार्य साम्राज्य स्थापन किया। ८३६ ई०में मले समय करिक मोडेय नामक एक प्रसिद्ध धार्मिकी वृक्षरेणमं अपने प्रियपुत्र इगोरकी राज्य सौंप गये। ८८२ ई०में मोडेगन पुत्रिविराज्यकी राजधानी स्मोलेनस्ककी कीता। जबक उस्ताहस उहीत हो उगाने भास्कुडज् और विरक अधिकांशुक क्रिक राज्य अंतने का सङ्घन किया। ये बाहक इगोर और इलबलके साथ डे शब्दम-व्यिकक वशमें क्रिक नगर भाये। मसकियाभ भास्कुडज् और विर उनक शिविरमें अम निरत हुए और पहा मार जाड गये। बड़ी भासातोस क्रिकराज्य इगोरके हाथ जगा। १०३ ई०में इगारने परकोवासिनी मोडेगा नामक एक सम्पन्न महिलास म्याह किया। प्रवाद है, कि मोडेगाक विधुबंध करिक के मनुष्यवक पहाते परकीयका शासन करत थे।

क्रिकमं शासनभङ्गला स्थापन करके मोडेगाल वीजन्ती अंतनेके लिये विपुल भायोजन किया। जब और स्पक दोनों भोरके क्रुस्तुनतुनियाक दारदेश पर भा घमके। उस समय दार्मानिक जिमा वीजन्तीके सम्राट् थ। वे मोडेगका मुभावका न कर सक। वीजन्ती बासी प्रोकोने कर दे कर सचिप करना चाहा। मोडेग का दूत सम्राट्क समीप पहुँचा। वीजन्ती सम्राट्ने बार बिल हू कर और कनपासायोन बचन (Jerem) और बस (Isaiah) वृक नाम पर शपथ या कर मापसमं मेड कर लिया। जब तक मोडेग जावित रह, तब

तक वे ही सर्वमय कर्ता थे। जनसाधारण उन्हे डाक डाकिनोसिड समझते थे। सापके काठनेके मोडेगकी मृत्यु हुई। अब इगारने पूर्ण भाधिपत्य प्राप्त किया। इस समय रूसके इतिहासमें पेचेनेग (Petcheneg) आतिका हाड मिला है।

१११ ई०में इगारने वीजन्ती अंतनेकी विपारी की। व पोम्बस, पफलागोनिया और विधानिया प्रदेश होते बसफोरस भाये। इस समय रूसोंके अत्याचारसे वे सब प्रदेश अनन्य हो गये थे तथा घर घरमें हाहाकार मच रहा था। ओ कुड हो वीजन्ती अंगोब्रह्मज् मसीम साहसस देशरक्षा करनेके लिये भ्रमसर हुआ था। इस युद्धमें इगार विशेष क्षतिग्रस्त हो सराज् अंटे। दूसरे ही वर्ष उन्होने क्षतिपूरण और नगरीय का उद्धार करनेके लिये बहुतसे सैन्यसामग्य ले कर वीजन्ती पर फिरसे भाकमण कर दिया। इस बार प्रोकोने युद्ध नहीं किया। वे सहजमें कर देनेके लिये राजी हुए। इसी समयस दोनों ज़ातमें मेड हो गया।

शालभजातिकी प्रेवकीय (Drevlian) नामक एक जाडा बहुत दिनों स इगारक शासनसे तंग भा गए थे। उन्होने मडे नामक एक राजकुमारकी नायक बना कर इगोरक विरुद्ध भक्षणारण किया। वृक्षके साथ इगोर उनस पराजित और निहत्त हुए।

इगोरक बाइकपुत्र लिमाडेस्काफन पियुटाय पाया। उनकी माता पीरमहिडा मोडेगा पुत्रकी अग्नि माधिकाके रूपमें राजकार्यं चलाय जयी। पतिहत्याका बदला लेना हो उसका पहला काम था। जहाँ जितने प्रेवकीय थे, उनका काम समाप्त करना हुकुम दिया गया। ज़ाका ऐसी ज़िमांसा कमी मो किसीने नहीं देया थी। बड़े बड़े गश्कुमें खेकड़ो प्रेवकीय अंत जी गाड़ दिये गये। इन लोगोंका राजधानी इसकोरोप्ट नगर बना दिया गया। मोडेगाने अन्तिम अवस्थामं इसाचर्म प्रहण किया। ये १५५ ई०में दोग्रित हुए थे। सम्राट् फनद्वारन पर्किरोजेनिबस उनक धर्मपिता हुए थे। क्रिस्तु उनक पुत्र लिमाडेस्काफन पियुटर्मका परित्याग नहा किया था और न उनको प्रजा हा इसाचर्मक मनुष्यों हुं थो। वे महावज्रत्या और योरुब

थे। उस समय पेचेनेग नामक मुगलजातिको हो एक गाँवा उन नदीके किनारे रहती थी। खियाटोस्लाफने उन्हें परास्त किया। उन्हींके समय रूसराज्य कई टुकड़ोंमें विभक्त हो गया। उन्हींनि यरोपोट्टु नामक एक पुत्रको किफ, थोलोग नामक पुत्रको नवजिन ट्रेवेलियोंका राज्य और व्जादिमीरकी नवगोरोद राज्य वांट दिया, पेचेनेगोंके साथ कई युद्धोंमें जयलाम कर उन्हींने वल्गा-नदीतीरवासी बुल्गेरिया पर आक्रमण किया। उस युद्धमें जयलाम करने पर भी जब वे लौट रहे थे, तब निपारनदीके जलप्रपातमें दलबलके साथ निहत्त हुए। बुल्गेरिया-राजकुमारने उस रूसराजके कपाल पर पानपात्र किया था।

रूसराजकुमारोंमें भी अनवनी थी जिससे राज्य चौपट लग गया था। इस समय उन्हें नाना धर्मविषयोंमें संदेह हुआ इस कारण उन्हींने यहूदी, मुसलमान और उम समयके विभिन्न सम्प्रदायके ईसाइयोंके पास दूत भेजा। दूतोंके मतसे विभिन्न सम्प्रदायका धर्ममत सुन कर उन्हींने प्रीक ईसामतको ही श्रेष्ठ समझ प्रहण किया। इसके बाद उन्हींने वैजन्ती सम्राट्के अधिकारभुक क्रिमियादेशस्थ चारसोनेसस नगरोको जात कर वहाँकी राज्यकन्यासे ब्याह करना चाहा। उन्हें कहा गया कि ईसाई होने पर वे राजकन्या पा सकते हैं। इसलिये वे कुस्तुनतुनिया जा कर ईसाधर्ममें दीक्षित हुए और पीछे उन्हींने वैजन्ती राजकुमारीका पाणिप्रहण किया। इसके बाद वे क्रिफे लौटे और अपने पितृपुत्रोंके उपास्य वज्रधर पेरुणदेवकी प्रतिमाको नदीके जलमें फेंक दिया। पीछे उन्हींने प्रजाको नदीके किनारे उपस्थित हो ईसाधर्ममें दीक्षित होनेका हुकुम दिया। राजाके आदेशसे सभी रूस ईसाधर्ममें दीक्षित हुए। मृत्युके समय रूसराजने अपने पाच पुत्रोंके बीच विस्तृत राज्य वांट दिया। उममें से चरोस्लाफको नवगोरोद, इजियास्लाफको पोलेत्स्क, चारिसको रोस्तोफ, ग्लेबको मुरोम, और खियाटोस्लाफ को ट्रेवेलीय तथा शेष पुत्रोंको दूसरा दूसरा प्रदेश मिला था। उन्हीं ही दिनोंके बाद उनके भतीजे खियाटोपोलकने चारिस और ग्लेबको मार कर उनकी राजधानी किफ पर अधिकार किया। यरोस्लाफ पोलोंकी सहायतासे

खियाटोपोलको भगा कर फिर कुछ दिनके लिये पितृ-सिंहासन पर बैठे। किन्तु कुछ समय बाद ही राज्यसे विताडित हो उन्हींने निर्वासनमें जीवन बिताया। यरोस्लाफ पेचेनेगोंके युद्धमें भी जयी हुए थे। उन्हींके यत्नसे सबसे पहले "रूसनीय प्रवच" अर्थात् रूसप्रबंध नामक रूसजातिका आदि धर्मशास्त्रनिबंध प्रकाशित हुआ। यरोस्लाफके बाद रूसराज्यमें नाना प्रकारके अत्याचार और अराजकताका सूत्रपात हुआ। रूसराज्य विभिन्न राजाके शासनमें रह कर नाना खण्डोंमें विभक्त हो गया। यरोस्लाफके पुत्र इजियास्लाफने बड़े कष्टसे अनर्घिद्रोहके मध्य २४ वर्ष तक राज्यशासन किया। १०७८ ई०के मृत्युकालमें दो पुत्र रहने हुए भी उन्हींने अपने भाई सेवोलोदको किफराज्य प्रदान किया। किन्तु १०९३ ई०में सेवोलोदकी मृत्यु होने पर इजियास्लाफके पुत्र खियाटोपोल राजा हुए थे। फिर जब उनका भी देहान्त हुआ, तब सेवोलोदके पुत्र (वैजन्तीसम्राट् कनस्तान्तिन मनमेरुजका दाहिने) व्जादिमीर मनमथने ११२२ से ११२५ ई० तक राज्य किया। वे 'पुकेनी' नामक एक उपदेश ग्रंथ लिख गये हैं। उस ग्रंथमें प्राचीन रूस-समाजका सरल आलेख्य देखनेमें आता है। उनकी मृत्युके बाद उनके पुत्रोंमें राज्य ले कर बहुत दिनों तक विवाद चलता रहा। आखिर ११६७ ई०में जार्जदोलगोवकी किफराज्य पर अधिकार कर बैठे। थोड़े ही दिनोंमें उन्हें राज्यच्युत करनेके लिये एक पड़ुयंत्र रचा गया। उन्हें भगा कर उनके दलपतिको राज्यसिंहासन पर बिठाया। ११६६ ई०में उक्त दोलगोवकीके पुत्र वेगालियो-उवस्किने उस दलपतिको भगा कर नगर पर अधिकार किया। इस समय किफराजधानीसे सभी पवित्र देवचित्र, श्रद्धा और गिर्जासे बड़े सब ले लिये गये थे। दोल-गोवकीकी किफ शहरमें राजपाटस्थापन करनेकी बड़ी इच्छा थी, पर पूरी न हुई। मुजदलमें उन्हींने राजधानी बसाई थी। किन्तु उनके पुत्र आण्डर दूसरी ओर राज्य फैलान चाहते थे। उन्हींने बड़े नवगोरोदमें अपने भतीजेको प्रतिनिधि नियुक्त किया। ११७० ई०में नवगोरोद शहर अधिकार करते समय इन्हीं बड़ी मुशौवत उठानी पड़ी थी। उनके बहुतों सैन्य सामन्त नवगोरोदियोंके हाथ

बन्दी हुए और हज़ारों लोगों को बेच दिये गये। ११४४ ई०में अपने सम्राट् को हारने के बाद ही मुसलमानों ने आरम्भ कर दिया था और मद्रास के बाद आठवाँ बड़ा उपयुक्त स्थान मद्रास के राज्य के कारों और सम्राट् के पक्ष में था। नवगोरोड, पल्नी और स्मोलेनस्कासी पक्ष में ही मद्रास के बाद आठवाँ १२२५ ई०में आरम्भ और युद्ध में परास्त किया। १२२० ई०में विजयनगर नगरी प्रतिष्ठित हुई और उसका शासनमार बौद्धिकविद्या के एक रोमन के हाथ सौंपा गया। किन्तु स्वादिमीर नामक एक दूसरा व्यक्ति इससे संतुष्ट न हो सिंहासन पर अधिकार कर बैठा। वह एक मीरान युद्ध के बाद उस रोकथामने सिंहासन छान किया था। उनके अत्याचार और कठोरतासे सभी प्रजा असन्तुष्ट थी। १२०५ ई०में ये मारे गये।

१२२४ ई०में मुगलों ने इस राज्य पर आक्रमण किया। इस समय पोडोवतोंने इनकी सहायता की थी। किन्तु इस बार मुगलों की विजय हो गयी थी। १२३८ ई०में ये फिरसे इस राज्य में आ गये। विजयनगर के किनारे फिलिस-युगेरियों की राजधानी बुधगरी को ध्वस्त कर दे दिया गया। यह नगर भी लूटा गया और विध्वस्त हुआ। सुब्रह्मण्य की विपुल धार्मिकता आ कर उन्हें रोकथाम नदी के किनारे कोलम्बा नामक स्थान में ये शोध में परामित हुए। पीछे मुगल लोग मोस्को, सुब्रह्मण्य यरोस्लवन तथा और भी जितने शहरों में आग लगा कर पैदाबिक काय कर ली गयी।

सुब्रह्मण्य ने महासामन्त युरीने नवगोरोड राज्य की सीमा रक्षा करने के लिये सीतनदी के किनारे छावनी डाली थी। ये भी मुगलों के साथ सम्मुख युद्ध में मारे गये। इस समय गाब्रियेल नामक इस राज्य के वाणिज्य करने आ कर मुगल पति बहुराज्य काय कर दिया। दूसरे वर्ष मुगल लोग लैरको जीत कर इसके अधिपति में लूट पाठ मन्थाने लगे। इसका बाद वेल्डिस नामक पौरुष किफ जीतने के लिये मद्रास हुआ। किफ को आधाबद्धपतिता प्राण के मरसे शहर छोड़ भाग बनी। समुद्रियाली प्राचीन नगर मुगलों से लूटा गया और इतना हुआ। नवगोरोड को छोड़ कर एक एक कर सभी इस राज्य मुगलों के

हाथ लगा। कुछ दिन बाद मुगल नायक बटु वज्रबल के साथ पूर्व की ओर लौटे। विजयनगरी के किनारे 'सर्पार' नामसे इसको राजधानी बसाइ गई। येनेनेग, पीछे ब्रह्मण्य भादि बर्बरता भी यहाँ आ कर मिले। इसके बाद इस बहुत दिनों तक अब सब पर्यटकों का कर रहा। १२३२ ई०में मुगलों ने इसका नाम धर्म प्रदान किया।

युरीने मुसलमानों के बाद उसके मारे यरोस्लफने सुब्रह्मण्य में प्रवेश कर देखा, कि राज्य छार छार हो गया, पूर्व समुद्रि जातो रही। उन्होंने पुनर्स्थापन करवाया। इस समय मुगल अधिनायकने इसे अपना राजधानी में हाकिम होने के लिये करवा भेजा। यरोस्लफ मानरक्षा के लिये आशय हो मुगलसमामें उपस्थित हुए। मुगलनायकने उन्हें उपयुक्त बिलमत्त और पूर्व उपधिपति कर सम्मानित किया। किन्तु लंबे सफरसे यरोस्लफका स्वास्थ्य बग़र हो गया। राहमें उनकी मृत्यु हुई। पीछे उनके बड़े भाई ने १२४९ ई०में १२५२ ई० तक सुब्रह्मण्य शासन किया। उनके दूसरे लड़के अलेक्जन्दर बड़े नवगोरोडमें राज्य करते थे। उन्होंने १२४० ई०में सुविदेशों को परास्त कर इससाम्राज्य में आक्रमण किया था। यहाँ तक कि इसीके लक्ष्य में अलेक्जन्दर नेबसिथो इतिहासिक देशों के मध्य महापुत्र्य समये गये थे। आज भी इसीमें अलेक्जन्दर नेबसिथो (Sant) के समान पूजित होते हैं। नवगोरोड के लिये उनके जीवित उत्तराग करने पर भी साम्राज्य के साथ विरोध होनेसे ये पेरिसास्कायक इतिहासिकमें लगे लगे।

१२०१ ई०में जर्मनों के अधिपति गोरग (German Sword-bearing knight) विद्योनिवामें आधिपत्य फैला कर इस पर वीरता गाढ़ाये थे। इस समय नगरवासी के बुद्धिमत्तों ने उनके आधिपत्य के लिये अलेक्जन्दर उपस्थित हुए। उन्होंने १२३२ ई०में पिपासहृदके किनारे शमुसीके परास्त कर विरस्थायी कीर्ति स्थापन की। यह युद्ध तुपारयुद्ध (Battle of the ce) नामक इतिहास में प्रसिद्ध है। अलेक्जन्दरके इस प्रकार उद्योग हो राजधानी लौटने पर भी ये मुगलों का प्रभाव कर्म-न कर सके, वर उन्हें मुगलराजधानी सदाहनामें आ कर मुगलनायकको वस्था स्वीकार करने पड़ी थी। नव

गोरोदवासी बहुत दिन तक स्वाधीनताकी रक्षा करने हुए भी १२६० ई०में मुगलाधिप खानकी अधीनता स्वीकार कर देनेको सहमत हुए थे। सराईसे लौटने समय अलेक्सन्दरकी राहमें मृत्यु हुई। पश्चिम रूस कई टुकड़ोंमें विभक्त था। सभी लिथुयानीय राजकुमारोंके छत्राधीन हुआ। विलनामे उनकी राजधानी बसाई गई तथा श्वेतरूसभाषा सभी जगह फील गई। कुछ दिन बाद पत्निय-राजकुमारीके साथ लिथुयानीय राजकुमार जगो-त्वयोका विवाह हुआ। इससे विस्तीर्ण भूभाग पोलण्डके अन्तर्गत हो गया।

पूर्वरूसियामें अलेक्सन्दरके पुत्र दानियलने १३०३ ई० तक राज्य किया था। देवदूत सेण्ट माइकलके गिरजामें उन्हें दफनाया गया था। पोटर दी प्रैटके समय तक उसी स्थानमें रूसराजगण दफनाये गये थे।

दानियलके बाद उनके दो लड़के यूरी और इवान क्रमशः पितृमिहासन पर बैठे। यूराने इन्दिलोविच मोस्को राज्य जीता। १३०६ ई०में उनकी मृत्युके बाद इवान कालिताके राजा हुए। उनके यत्नसे मोस्को राजधानी बहुत समृद्धशाली हो गई थी। उनके मरने पर उनके लड़के अहट्टारो सिमियस समस्त रूसोंके अधीश्वर हुए थे। मोस्कोकी प्रधानतारक्षामें उनका हाथ रहने पर भी उनकी मृत्युके बाद सुजदल ही फिर प्रधान हो उठा। उनके छोटे लड़के श्व इवानने १३५३ से १३५६ ई० तक राज्यशासन किया। उनके लड़के दोनस्कोई दमित्रीने १३८० ई०में मुगलाधिपति ममईके साथ युद्ध कर कुलिश्चौरणश्रेयमें विजय पताका फहराई। मुगलोंने उनके हाथसे पराजित हो तोकमिसरके सेनापतित्वमें कुछ दिन बाद रूसराज्य पर आक्रमण कर दिया। उन लोगोंने मोस्को नगरीको जला कर छारछार कर डाला। बहुसंख्यक अधिवासी मारे गये। दमित्रीके बाद उनके लड़के वासिलने १३८६से १४२५ ई० तक मोस्को और व्लादिमी राज्यका शासन किया था। पीछे १४६२ ई० तक अन्धवासिलने राज्य किया। उनके पुत्र श्व इवानने प्रवल-प्रतापसे ४३ वर्ष रूससाम्राज्यका शासन किया था। उन्हींके यत्न और वीरत्वसे रूसके सामन्त राज्य विलुप्त हुए तथा वे समस्त रूसके

पक्षधर अधिपति समझे जाने लगे। सिंहासन पर बैठते ही उन्होंने देखा कि उनके विस्तृत राज्यके पूरव पराक्रान्त लिथुयानिया राज्य, एक ओर रयजान और त्वेर नामक स्वाधीन राज्य, दक्षिणमें मुगलाधिकार तथा नवोगोरोद और पस्कोफमें उस समय भी साधारणतन्त्रका शासन चल रहा है। सबसे पहले रूसपति समुद्रिशाली नवोगोरोद नगर जीतनेके लिये आगे बढ़े थे। साधारण तन्त्रके मध्य दलबंदी हो जानेसे १४७० ई०में वे नगरको अधिकार कर बैठे। १४७८ ई०में वहां साधारण तन्त्रका चिह्नमात्र भी न रह गया। रूसराज्यके विद्वेषी मोस्कोभूभागमें निर्वासित हुए तथा उनकी घनसन्तति जयत कर ली गई। १४६५ ई०में रूसपतिने नवोगोरोदमें आये हुए जर्मन वणिकोंका पण्यद्रव्य छीन कर निर्युद्धिताका परिचय दिया। इस कारण प्रायः सभी विदेशी नगर छोड़ कर चले गये। इसमें नगरकी शोभासमृद्धि जाती रही। १४८६ ई०में पस्कोफका प्रधान शहर व्यतका रूसराजके अधिकारभुक्त हुआ। उसके साथ साथ साधारण तन्त्र भी विलुप्त हो गया। १५२४ ई०में रयजानके सामन्तको अपनी बहन सांग कर उन्होंने बड़े कौशलसे उनका सामन्तराज्य अपने अधीन कर लिया। इसी प्रकार त्वेर नामक सामन्तराज्यको अपने शासनाधीन कर उन्होंने रूसदेशसे सामन्तराज्यप्रथाको एक तरहसे विलुप्त कर दिया। किंतु रूसपति इवान वैजन्तो-सम्राटकी कन्याका पाणिप्रवण कर क्षिणी जयपताका फहराने थे, इस कारण रूसके चिरजलु मुगलोंके साथ उनका संघर्ष उपस्थित हुआ। मुगलपतिकी महाशक्ति चूर चूर कर डाली गई। उसीके ध्वंसावशेषके ऊपर काजान तथा सराई वा अछ्राखान साम्राज्यकी प्रतिष्ठा हुई। १४७८ ई०में मुगलपति अहमद खाने दूतके हाथ अपनी प्रतिष्ठति भेज दी। रूसपतिने पूर्व प्रयानुसार उस चित्रके निरुद्ध अपना मस्तक न भुका कर मुगलदूतके सामने उसे पददलित किया। यह संवाद बहुत जल्द मुगलपतिके कानमें पहुंचा। उसी समय युद्धकी घोषणा कर दी गई। दोनों पक्षकी सेना युद्धक्षेत्रमें उतरी। इवान अपने सामने बड़ी भारी मुगलसेनाको देख घबड़ा गये। साम्मुख युद्धमें प्रवृत्त हो उन्होंने भाग जाना ही

भण्डा समझा। इधर मुगलसेना भी किसी दिग्बुध्दरना से डर कर पीछे हटी। इस प्रकार दोनों पक्ष बिना युद्ध किये भयन भयने पर लौटे।

राजधानी लौट कर इयान पुनः परछाद्र ज़ोतेको सेवारो बनने लगे। १४७२ ई०में उन्ही ने प्रेरियवको फतह किया १४८६ ई०में प्यल्का सीर उनके राज वष बाद उत्तरमें वेजेरा तक अपना अधिकार फैलाया। इसक बाद पोल्डरराज भलेकसन्त्रके साथ उनका युद्ध हुआ। इस युद्धमें जयाजाम कर इयानने बेसना नदी तक विभिन्न भूभाग बखल कर दिया। पीछे क्षीनों राज्यांम सन्धि हुई। इयानन पोल्डरपठिके साथ अपनी कन्या इलेनका ब्याहा। शर्त यह रहा कि कसरराज कन्याके पमकर्मम पोल्डरपति किसी तरह हस्तक्षेप न कर सकेगे। आधिर इसी युद्धसे कसगठिके साथ पोल्डरराजका युद्ध हुआ। कामक समय पोल्डरके सामगठिके पोल्डरपठिको सहायता न की। बेदोसा युद्धमें पोल्डरराज भण्डा तरह परास्त हुए। जो ही, १५०१ ई०में इसलुके समीप निरज्जा रणक्षेत्रमें द्युरविक महासामन्ध दर्शनसे परास्त हो कसगण भाग गये थे।

पहले कहा जा चुका है, कि १४७२ ई०में पैसलो राजकन्या सोफियाके साथ इवानका विवाह हुआ। सोफियाके पिता रामस कनरवास्तान पाजिमोकोगहके गार्थ थे। क्रुस्तनुनिवाके पतनके बाद १४५३ ई०में रामस राम भाग भाये। कसरराजके साथ सन्धि स्थापित हो जानेसे बहुसंख्यक प्रोक वैद्वस्तीय भाषार व्यवहार से कसराम्यमें उपस्थित हुए थे। ये अपनी साथ बहुवच इस धर्मग्रन्थ पर राजधानी लाये थे। साथ साथ इतनाके चिन्ते स्थापित भी भायेये। उनमेंसे पोल्डनके आरिष्टन क्रिमोरावेन्ती नाम तमाम मसिख है। मोस्को नगरके मनक प्राधीर भीर महक टाहोक बनाप हुए हैं।

इयानन केवल पैरिडिकोंका भाद्र कर बसाया था सो नहीं, उन्हीने जर्मन, मिनिगाय, वेप आदि यूरोपीय राजगठिके साथ भी सम्बन्ध स्थापित किया था। १४६७ ई०में उन्हीने सुदूरविक भर्वात् प्राइन-पुलकका प्रचार कर कसराम्यमें गानन गुरुका स्थापन की थी।

उनके ज़ीते ज़ी उनके बड़े सङ्घकेका वैहासत हुआ। ये म्युस्कुकात्ममें अपने ज्येष्ठ पीछको राज्यभार न दे कर द्वितीय पुत्र वासिलका उत्तराधिकारी बना गये। वासिल इयानोविचने १५०५ से १५३३ ई०तक पितृमर्याद पया जुमरण पर प्रबल प्रतापसे राज्य किया था। १५१० ई०में उन्हीने पल्काककी साघानता विलुप्त कर दी थी। साथ साथ सखम आठिका साधारणतम्ब सङ्घके लिये बिल्तुस हुआ। इसके बाद रणजान भीर तथगीरोवसे रस्कि उनके शासनाधीन हुआ। इसके कुछ दिन बाद ही उन्हीने सिप्रिसमन्द्को परास्त कर स्मीजेनस्क पर क्रिस्से अधिकार किया। किन्तु उनके दुर्भाग्यवशता मुगलोंने कसराम्य पर धडाए कर दी। ये अपनी राजधानीकी रक्षा करनेके लिये मुगलका भाजुगल्प स्वीकार करने और कर देनेकी सम्मत हुए। जो कुछ ही मुगलों के जानेके बाद वे बड़ी निडरतासे राज्यशासन करने लगे। वैद्विक राज्यामोंके साथ उन्हीने सन्धि कर ली। जर्मन-राजपूत दरव्यघारन इस समयको कसर राजसत्ताको समृद्ध उम्भक मापायं वर्णन कर गये हैं। इसके बाद कस सिहासन पर प्रबल प्रतापी इयान भिमिक हुए। उस समयका कम विहास नप्योपिणतमें लिखा है। ३५ इयान वासिल भीर ४५ इयानने यथाक्रमसे १५३३ से १५८४ ई० तक शासन किया था। वासिल म्युस्कुकात्म अपनी बूझरी लो हेलेन गिलनस्काकी वृक्षरथ में इयान भीर रिडो नामक अपने दो पुत्रका उद्धार गये। यह ली राज्यशासनमें अपनी बुद्धिमत्ताका भण्डा परिचय दे गये हैं। कोई कोई कहते हैं, कि पञ्चवक्त्रकारीक विपमयोगसे १५३८ ई०में उस बुद्धिमती महिबाकी म्युस्कु हुए। दोनों बाबक राजकुमार गुरस्क भीर वेसलिक आदि के प्रजात राजपुत्रोंके पंसे पड़े। १५४३ ई०में तरह वर्ना का उत्पत्त ही इयानने इन पञ्चवक्त्रियोंका प्रमाय खप करनेके लिये कुषेस गुधलिकी देवकी टुकड़े टुकड़े करवा दिया। इस प्रकार साधोतवाका परिचय दे कर उन्हीने शम्भू मा का विचलित किया था। १५४७ ई०में आरकी उपाधि पा कर उन्हीने राजगुरुट्ट दिर पर चारण किया। इससे पहले नीर क्रिसोने भी आरकी उपाधि नहीं पाइ थी। आदिन सीजर (Caesar) अर्थात् के गरी शब्द

अपभ्रंशसे श्लम-भायामें जार वा तसार हुआ है। इस-
के बाद उन्होंने वीरमहिला अनास्कासिया रोमनोवरका
पाणिग्रहण किया। उसी साल मोस्को शहरमें भीषण
अनिकाण्ड हुआ था। जनसंघारणका विश्वास है,
कि इवानके मातुलवंश गिलनास्कियां द्वारा ऐसा अनर्था
हुआ था। इसी विश्वास पर उन्होंने गिलनास्कि-परि-
वारके एक प्रधान व्यक्तिसे मार डाला था। इसके
बाद रूसपति इवानने मिलभेष्टा और आलेस्किस आदा-
सेफ नामक डेा पुरोहितोंके परामर्श तथा अपनी मनोरमा
पत्नीके मन्त्रणा गुणसे राज्यकी सुखसमृद्धिकी ओर
ध्यान दिया। इस समय उनके यत्नसे अपने पितामह
द्वारा प्रचारित सुद्वेषणिक नामक आईन पुस्तकका नूतन
संस्करण और स्तोगलाफ अर्थात् शतअध्याय सम्बलित
आईन पुस्तक प्रकाशित हुई। १५५२में वे काजान
तथा दो वर्ष बाद अल्ताखानके अधिपति हुए।
मुगलराजगुक्ति उस समय प्रायः चूर चूर हो गई थी।
दक्षिण और पूर्वांमें इस प्रकार विजयलाभसे उदीप्त हो
उन्होंने पश्चिममें अपना अधिकार फैलाना चाहा। सुइ-
डिस और द्युटनिक सामन्तोंके साथ उनका युद्ध छिड़
गया। वैदगिक सूत्रधरको लानेके लिये जर्मनीमें
आदमी भेजे गये। किन्तु जर्मनोंके रोकने पर उन्होंने
युद्धकी घोषणा कर दी। १५५८ ई०में रूसवाहिनीने
लिवोनिया पर आक्रमण किया। बहुतसे नगर जीते गये।
जर्मनशासनकर्ता पोलण्डराज सिजिसमन्द अगष्टसके
साथ मिल गये। जब रूससेनादल विदेशमें इस प्रकार
युद्धमें लित थे, उसी समय रूसपति इवान सिलवेष्टर
और आदासेफके कामोंसे विरक्त हो उन्हें निर्वासित
किया। इस समय कुमार आनट्रु कुवस्किने पोलोंके
साथ युद्धमें परास्त हो राजाके भयसे पोलण्डमें जा कर
आश्रय लिया। पोलण्डपतिने इस कारण रूसपतिको फट-
कार कर एक पत्र लिखा।

१५६४ ई०के दिसम्बर मासमें इवान मोस्को नगरके
निकटवर्ती अलेकसन्ड्रोवस्क ग्राममें कुछ अन्तरङ्ग मित्त-
के साथ जा रहने लगे। उनके पुशामदी टट्टुओंने सोचा,
कि जायद राजा हम लोगको छोड़ कहीं चले गये। वे
लोग जा कर बहुत अनुनय चिनयसे राजाको राजधानी

लौटा लाये। रूसपति लौटे सही, परउन्होंने अपरिचनिक
नामक कुछ शरीररक्षक नियुक्त किये। उनके द्वारा रूस-
पति प्रजाके ऊपर अत्यन्त अन्याय व्यवहार और अत्याचार
करने लगे। इस समय मोस्कोके आर्चाविशुफ फिलिपकी
हत्या, उमकी भ्रातृवध अलेकसन्ड्राके प्राणदण्ड और नवैा
नोर्देनागरिकोंके ऊपर नृगम आचरणसे रूस विचलित
हो गया था। इसी समय उन्होंने मोस्को नगरमें मुद्रायत्त
सोला।

इवानके शासनकालमें अंगरेजोंके साथ रूसका संभव
हुआ : १३५३ ई०में इङ्ग्लैण्डपति चतुर्थ पडवर्डके शासन-
कालमें चीन और भारतवर्ष जानेका रास्ता निकालनेके
लिये वीलोवीके तच्चावधानमें तीन जहाज भेजे गये।
वीलोवी और उमके नाविकदलने तुपारके मध्य मानव-
लीला सम्भरण की। एकमात्र चानसेलर श्वेतसागर हो
कर निरापदसे रूसराजसभामें उपस्थित हुए। इवानने
उसका बडा सत्कार किया और रूसराज्यमें कोठी बोलने
तथा वाणिज्य करनेका अधिकार दिया।

इसके बाद इवान द्युटनिक सामन्तोंके साथ वाल्डि-
ट्टक प्रदेशमें अनवरत युद्ध करने लगे। उनके अत्याचारसे
प्रदेश मनुष्यशून्य और तरपिशाचकी रङ्गभूमि हो
गया था।

१५७१ ई०में क्रिमियासे मुगलोंने आ कर फिरसे रूस-
राज्य पर आक्रमण किया तथा मोस्को नगरमें आग लगा
कर उसे छारखार कर डाला। १५७२ ई०में पोलण्डपति
सिजिसमन्द अगष्टसकी मृत्यु हुई। उसके कोई वंशधर
न रहनेके कारण उत्तराधिकार ले कर भारी गोलमाल
बडा हुआ। इस समय इवान पोलण्डका अधिकारी
होनेकी कोशिश करने लगे। आखिर ष्टेफेन बटोरी
पोलण्डके राजपद पर निर्वाचित हुए। इवान उनके
विरुद्ध पडा न हो सके। वे लिवोनियाकी जयाशा छोड़
चले आये। इसके बाद घेरमाक नामक एक कसाक-
दस्युने साश्विरिया पर आक्रमण किया। रूसपति जब
उसे दण्ड देने आगे बढ़े तब दस्युपतिने उसके पैरों पर
गिर कर अपनी जयलब्ध सम्पत्ति छोड़ दी।

इवानने बहुतसे विवाह किये थे। सातवीं स्त्रीके मरने
पर उनके मित्रने इङ्ग्लैण्डकी रानी इलिजाबेथकी समासे

युवा किती सुखी महिलाके पाविप्रदणकी इच्छा प्रकट की। तदनुसार रुसराजकुलके साथ भारत माय हाकिम इनकी कन्या रुसराजपागोमें जाई गई। रुसराज उस कन्याके सीन्धुसे विमुक्त हो गये थे। उसके साथ रुस राजकुल विवाहका मो कुल ठीक ठाक हो गया था। किन्तु मगरेज कन्याके जय रुसराजके पारिकारिक भावपत्रका संवाद मिला, तब वह विवाह करनेसे इनकार चकी गई। १५६० ई०में रुसपतिने भाएतजो के किनसक हाथ पानी इकिजावयके निरुत एक मोठिक्रिपि मेजो। उस क्रिपिमें लिखा था, कि इज्जैरुड और रुस मापसमें मिळ कर शत्रुवतनमें लियुक्त रहेंगे। उक्त प्रतिक्रिपिसे मगरेजोंके पक्षमें ही बहुत कुछ सुविधा हो गई थी। उर्ध्व रुसराजमें वायिम्य करनेका अर्थात् भवसर मिला था। किन्तु रुसके पक्षमें कोई विधेय सुविधा न हुई। यूजाव स्थानमें इवानन एक दिन हडाव कुल का कोहसे उडिस बड़े लड़के पर भाषात किया। उसा भाषातस उसकी मृत्यु हुई। शीघ्र जब शांत हुआ तब ही युनगीरुसे विद्वय हो गये। रुसकरार और पद्वयनकारियोंके मयसे मय-मीत ही १५८४ ई०में वे इस जोरसे सख बसे।

इवानकी मृत्युके बाद उनके लड़के यिमोडर २७ वर्षके अवस्थामे सिंहासन पर बैठे। वे बड़े बुद्ध और कुल रुकाटाव थे। उनका पिता भी इतना कमजोर था कि वे गिरजा घरकी बंधवधनिती गणनाकी छोड़ और कोह मामोद प्रनोई नहीं कर सकत थे। मतएव राजकी शासनक्षमता पोरिस गजुनक नामक एक एक उषा मिलायी सांझे हो गई। वे धर्मका बहाना कर बनयती राज्यशासनस्पृहाको प्रच्छन्न रखते थे। किन्तु शासनप्रस्ताक गुणसे वे सनाकी वशामृत कर सकत थे। पोरिसके सिंहासन क्षामक पयम शुभलक्षिच यिमोडर और इनका छोरा भाई इमिलीका छोड़ और पेश कस्तक न था। इमिली पहले कियुजकमस पाएस्वय प्रेशुके उगडिप नगलमें भेजे गये थे। पोरिसके यह ध्येयवा कर ही थी, कि इमिली सिंहासनक विजयुन भनविहारा है। क्योंकि वह इवानका सातवी स्त्रीका लड़का है। कुछ दिन बाद १५९१ ई०का १५वी मईके इमिली उगडिप नगलमें गुप्त पातकके हाथ मारा गया।

उसके जाने पर उगडिपमें बड़ा सनसनी केकी। किन्तु पोरिसमें निरुदर व्यवहारसे सबका शासन तथा बहूतों को निर्वासित किया। १५६१ ई०में क्रिमियर यमि मोस्को नगर पर आक्रमण किया तथा छूट और मच्छत्यासे देश पासियोंको तंग ठाग कर डाला। भकर्मण्य सज्जद् यिमोडर केवल प्रतापविकी गणना कर समय बिताते थे। उन्होंने रुसको रक्षाके लिये युद्ध करेंगे।' पोरिस अपना पराक्रम दिखाने लगे। नगरके घातों मोर खार् लुधवा कर शत्रुओंके आक्रमणसे नगर रक्षाको व्यवस्था की गई। मुगल लोग पराजित हुए और बहूतों की मृत्युवरी हुई। पोरिसने नगर को रक्षाको सही, पर सर्वसाधारणके अनुरागानाशन न हो सक। लोग बहने लगे, कि उर्ध्वने इमिलीकी युद्धरतगण्य बुलपेय ककडुकाजिमाको इकनेके लिये मुगलों को बुलाया था तथा उन्हें मगा कर पारसे वे पशोलाभको भेड़ा करते थे। पोरिसकी बहम यिमोडरकी पत्नी रानी माइरिने इस समय एक कन्या प्रसव की। कुछ दिन बाद ही उस कन्याकी मृत्यु हुई। कहते हैं, कि पोरिसने अपनी माँको बिप जिजा कर मार डाला था। रानी इकिजावयने उक्त कुमारीकी चिकित्साके लिये इज्जैरुडसे एक विद्व चिकित्सकको मेम किया था। पोरिस पोरि घोरि राज्यशासनको शत्रु मजबूत करने लगे। स्मोडेनरक नगर सुरक्षित हुआ, मार्केडक पनाया गया तथा मुगलोंका आक्रमण रोकनेके लिये राज्यसीमा सुदृढ़करणसे रक्षित हुई। सुर्दिसगण्य नगलोंको भयाप गयी तथा यूरोपीय शक्तिपुत्रके साथ राजनीतिक भाजो बना रखने लगी।

इस समय भकर्मण्य सज्जद् यिमोडरकी मृत्यु हुई। उनका मृत्युसे रुसनामीव प्रूरिकरणका यिमोड हुआ।

१५८० ई०में सर्वसाधारणके निर्याचनस गजुनक पोरिस सिंहासन पर बैठे। वे अच्छी तरह जानत थे, कि उनक सिवा भीर कोई भी राज्य पानके कायक नहीं दे। इस कारण पहले उशेन सिंहासनप्रधानमें अनिच्छा दिखला कर एक मठमें वैराग्यका भवच्छमन किया। इस प्रकार मताह भीत गये। पीछे सर्वसाधारणकी प्रार्थनासे पोरिसने शासनमार प्रवृत्त किया।

... 1940 ...
... 1941 ...
... 1942 ...
... 1943 ...
... 1944 ...
... 1945 ...
... 1946 ...
... 1947 ...
... 1948 ...
... 1949 ...
... 1950 ...
... 1951 ...
... 1952 ...
... 1953 ...
... 1954 ...
... 1955 ...
... 1956 ...
... 1957 ...
... 1958 ...
... 1959 ...
... 1960 ...
... 1961 ...
... 1962 ...
... 1963 ...
... 1964 ...
... 1965 ...
... 1966 ...
... 1967 ...
... 1968 ...
... 1969 ...
... 1970 ...
... 1971 ...
... 1972 ...
... 1973 ...
... 1974 ...
... 1975 ...
... 1976 ...
... 1977 ...
... 1978 ...
... 1979 ...
... 1980 ...
... 1981 ...
... 1982 ...
... 1983 ...
... 1984 ...
... 1985 ...
... 1986 ...
... 1987 ...
... 1988 ...
... 1989 ...
... 1990 ...
... 1991 ...
... 1992 ...
... 1993 ...
... 1994 ...
... 1995 ...
... 1996 ...
... 1997 ...
... 1998 ...
... 1999 ...
... 2000 ...
... 2001 ...
... 2002 ...
... 2003 ...
... 2004 ...
... 2005 ...
... 2006 ...
... 2007 ...
... 2008 ...
... 2009 ...
... 2010 ...
... 2011 ...
... 2012 ...
... 2013 ...
... 2014 ...
... 2015 ...
... 2016 ...
... 2017 ...
... 2018 ...
... 2019 ...
... 2020 ...
... 2021 ...
... 2022 ...
... 2023 ...
... 2024 ...
... 2025 ...

मेका। इतनाम प्रमसान लड़ा छिड़। आर सेनाको हा पराजयदी सम्मानना थी। केवल पासमानोफकी पास्ता और रणकुञ्जवास इन बार कमपतिकी ओत हुए। इस शरण्य रूसराज्य उम्ह राजधानी को कर उध सम्मानस भूयित किया।

१६०५ ई०की २४ जनवरीको शहरना नागे रणक्षेत्रमें फिरस युद्धमें दमित्री पराजित हुए। उनका कुछ सना तो बन्दी हुए और कुछ राजसभाक हाथसे मारी गए। केवल कसाक पदातिकीके कीशलसे दमित्रीन पोलण्ड भाग कर मारमरशा का थी। वहाँ जा कर मा ये निरिच्य म थे। नाना कीशलस और नाना प्रलेभन विद्या कर उन्होंने बेरिसके कुछ प्रधान सनानापरको मवनो सुझाम कर लिया। विपप्रयोग द्वारा कमपनिका थप्रा की गए किन्तु पदपत्रकारियोंका कीशलस मध्य गया। इसके पात्र दमित्रीन बेरिसका स्ट्राना मजा, तुम मेरे राज्य पर प्रबलपत्तो अधिकार कर बैठे ह। यदि भयना भलाइ चाहते हो तो विहासम छोड़ दे। इस समय बेरिसका समय मो शर हा चला था। १६०५ ई०की १३वीं ममिपका मरिससमाके कमपति पिनम बार सिंहासन पर बैठे। इस दिन उन्होंने बहुतस सम्मान्य वैशेणिकोंका सादर स्वागत दिया तथा उध पधए भोजन कराया था। किन्तु अकस्मान उनके नाहीस गूम गिरल गया। धात्रे ही मनवर्म थे इस लोहसे धन बस। बहुतका विश्वास है, कि गुरुके कीनसस कमपति काळकबनमें पतिल हुए थे।

बेरिस मासाभारतय कायकारिका निवे पिकशत थ। पितर (Peter) ने कमर्म का संस्कार चक्रावा था, बेरिस हा उसको मार्य डाल गए थे। उद्वान मरुगाय मनक युद्धका को इन्नेरुमें गिरियिमान निहाक निवे मेजा था। प रूसको भूमि पर प्रभास्यस संस्थापन कर धम मापिया को फेडरासका सामास बहुत गुण उपतिके पथ पर जाय थ।

बेरिसका मृत्युके बाद मारकोनगरने उनके शवस्थ स्थितपान उनके १६ परके लड़के २५ पिमाउरको सम्राट् कह कर स्वाकार किया। तुसदिह और मदि स्टाविस्का तद्व आरका मद्द पदु जानके तिय मारका।

गय। पासमानक सैभ्याव्ययुता प्रवृण करनके जिपे मोरुको मेजा गया, किन्तु पिमोडरके पक्षमें सिंहासन सामको भ्राजा घोडो जान कर उन्होंने क्या मक्षमें दमित्री को सम्राट् बतला कर घोषित कर दिया। दमित्रीके कर्मस उसने राजधानीको मार कदम बढ़ाया। इधर पिमोडरने लोग सैभ्य ल कर कोमालन युगको रक्षा करन लग हवा उन्होंने उसा समय मोरुकोके निरुद यतीं धनगामा पनिकोंस पूर्ण कोमनोसाको मामक पद नगर पर माक्रमण करनेका सन्तुष्य किया। यह कार्य सहजमें किया गया। नगरयाता पनिकोंने मोरुको नगर जा कर सयोदा युगया मीर कहा, कि हम लोग दमित्रीको ही सम्राट् मानें।

पिमोडर और उनकी माता मार ज्ञासो गई। उनका मृतगारा नगर प्राधोरम बाहर ला कर दफनाया गया। बेरिसको मागु मी पती पर साह गई। पेलियम नामक एक तुस्रिस दूतने इन सब घटनाओ का सुन्कर विवरण निवियद किया है। ये कहते हैं, इस प्रकार मरुगाह फेसो, कि पिमोडर और उनका माताम आरमरहया को थी। किन्तु फासीका चिड माक माक दिग्गह बता था। किसी किसी सेपक तथा कमके प्राधान पतिहासिक युवा सकका कहता है कि बेरिसको लाभण्यपता कन्या जेतिया इसामउमें संग्यामिती हामके विवे पाध्य हुए थी। स्वेडिस दूत पेलियमने कहा है, कि यह बकपूयक विज्ञेताका अनुदहमा हुए था। जाला दमित्रीने सब देखा, कि सभा पिरन पापा नूर हो गई, तब १६०५ ई०की २०वां जुलका राजधानीकी यासा कर बा। उनका यासा जेता माडमरुपसमाराहम हुए था यह वर्षे मानोत है। दमित्रीने पहले पिकताके साथ प्रजाभीके प्रति सवृष्यवहार किया था तथा उनके पिता इयानके मृत्युन म्वादि भी परिपोष करनेकी प्रतिज्ञा का थी। उन्होंने आनमृपूर्वक भगता माताका महण किया। मातान भा इध यथार्थ दमिता कह कर स्वीकार किया। किन्तु पाण्ड ये इन सबन इनकार चक्र गये थ। मालूम होता है, कि उन्होंने मडमभ्ययतीं मन्वासिद्वनम उदार पानके मानम्लस पद्व स्वकार किया था।

दमित्री अपने प्रच्छन्न रोमकधर्ममनके प्रति अनुराग दिखलाते थे, इस कारण प्रजा उनसे असंतुष्ट रहा करती थी। दूसरे वर्ष मनिसजेहकी कन्या मेरिना (दमित्रीकी पूर्वपरिणीता) मोस्को नगर पहुंची। १८वीं मईको उनकी उद्वाहक्रिया सम्पन्न हुई। प्रचुर फलाहारका आयोजन हुआ।

किन्तु २६वीं मईको एक विद्रोह खड़ा हुआ। वासिलाई सुइस्कि—दमित्रीने जिसे प्राणदण्डसे बचाया था—इस विद्रोहके अधिनायक थे।

एक दिन रानको सेन्यका कोलाहल सुन कर जारकी नौद दूटी और उन्होंने उठ कर देखा, कि राजप्रासादको विद्रोहीसेनाने घेर लिया है। यह देख कर वे ३० फुट ऊंचे स्थानसे जमीन पर कूद पड़े जिससे उनके दोनों पाव टूट गये। वासमानफ उनकी रक्षा करने भागा और वह भी मारा गया। जाली दमित्रीकी लाश जलाई गई। बहुतेरे पोलण्डवासी निहत हुए। किन्तु मेरिना और उसकी सपत्नी बन्दिनी हुईं। इस प्रकार रूसके इतिहासमें इस अद्भुत शासनविभ्राटकी यवनिका पतित हुई। जातीय ऐतिहासिक इस शासनकालको विपन्नक काल वर्णन कर गये हैं।

दमित्रीके मारे जानेके बाद बोइआरों (Boiars) ने वासिलाई इवानोविच सुइस्किको सम्राट् बनाया। किन्तु अर्थ और बलके अभावसे बड़े फट पाने लगा। आखिर एक घोषणापत्र इस प्रकार प्रचारित हुआ, कि दमित्री जीवित हैं। इन सब जनरवका मूलोच्छेद करनेके लिये उनका मत परिवर्तन कर उगलिच नगरमें हतभाग्य राजपुत्रकी लाशके लिये आदमी भेजा गया। इसके बाद दूसरे दो व्यक्ति जो अपनेको दमित्री बतलाते थे, प्राणदण्डसे दण्डित हुए थे। रूसके इस दुर्दिनमें १६०६ ई०को पोलण्डवासियोंने रूस पर आक्रमण कर स्मोलैनेस्क नगरको घेर लिया।

सुइस्कि क्लुशिने नामक स्थानमें परास्त और बन्दी हुए। विद्रोही सेनाने उन्हें मटमे संन्यासी होनेसे बाध्य किया। आखिर वे सिजिसमन्दके हाथ सौंप दिये गये तथा वही आजीवन काराखद्द रह कर पञ्चत्व को प्राप्त हुए। रूसका राजसुकुट सिजिसमन्दके पुत्र

लेडिस्लसको पहनाया गया। इन्हींने दो वर्षों रूसका शासन कर मोस्को नगरमें अपने नाम पर सिक्का चलाया। साम्राज्यका दुरवस्थासे सभीको भविष्य धन्धकार दिखाई देने लगा। आखिर जितनी नवगोरोदवासी मिनिम नामक एक कसाईने रूसका उद्धार किया। यह व्यक्ति स्वदेशवाटसत्यके साधुमन्त्रने देशवासियोंको उत्तेजित कर राजकुमार पाभरसिस्केके साथ मिल गया। राजकुमारने सैन्याध्यक्ष पद ग्रहण की। मिनिमके हाथ राज्यशासनका भार सौंपा गया। पराक्रमशाली राजकुमारकी वीरता देख पोलण्डवासी रूसका परित्याग कर स्वदेश लौट जानेको बाध्य हुए।

१६१२ ई०में वैआरोंने एक दूसरा नया सम्राट् चुननेकी चेष्टा की। देशकी दुर्दशा दिनों दिन बढ़ती जाती थी। अग्निदाहसे मोस्को नगर धाक हो गया। केवल क्रैसिन और दो एक पत्थरके मकान बच गये। पोलोंने खजानेको लूटा।

इस समय अलिरियस नामक १७वीं सदीके एक पर्याटकने रूसका हाल लिखा था। उन्होंने कहा है, कि अन्यान्य बहुमूल्य द्रव्योंके साथ साथ युनिकर्ण नामक एक बहुमूल्य हरिणका सोग जो मणिमुक्तासे जडा था, पोलगण चुग ले गये थे। इसके लिये मोस्कोवासी सदा विलाप करते रहे थे। मष्टिस्लाविस्कि और पाभरसिस्के दोनोंने रूसका शासन करना छोड़ दिया। आखिर माइकल रोमानफ नामक एक १६ वर्षका युवक सिंहासनप्रार्थी हुआ। उसके पिता फिलारेट अत्यन्त सद्गुणशाली धार्मिक व्यक्ति थे। रोमानफ मातृपक्षमें यूरकवंशके साथ सम्बद्ध था। आनष्टिसिया रोमानवा भीमकर्मा इवान (The Terrible)की पहली स्त्री थी।

युवक रोमानफने सिंहासन पर बैठनेसे पहले जनसाधारणको कुछ माग पूरी करनेकी प्रतिज्ञा की थी। देशकी अवस्था इस समय बड़ी ही सङ्कटापन्न हो रही थी। सुइडिस और पोलोंने राज्यका अधिकांश अधिकार कर लिया था। कसारागण ग्रामादिको लूट कर अधिवासियोंको तंग कर रहे थे। उधर सिजिसमन्दके पुत्र लेडिस्लसने जारकी उपाधि भी नहीं छोड़ी थी।

१९०६ ई०में ये एक दस सेना छे कर मोस्को नगरके द्वार पर भा कर बंद गये । किन्तु पराजित हो १९१८ ई०की १ली दिसम्बरको सिहासनाका बाबा छोड़ दिया और १४ वर्षके छिये खंघि कर छो ।

१९१० ई०को साइोगाह्वरके निकटवर्ती एडरेडिओ नामक स्थानमें एक दुसरो संधि हुए थी । इसच कस गण राज्यका कुछ भाग सुरक्षितोको वैनेके छिये बाध्य हुए । रोमानाके पिता फिफारेट पहिलेसे ही पार्लै नगरमें कैद थे । अमो ये मुक्ति पा कर घर छोटे । ये १९११ ई०में मोस्को भा कर 'पेट्रियाका' या प्रयाण धर्माध्यक्ष नियुक्त हुए । पितापुत्र भापसमें बहूपुष्टि करने लगे । समस्त कामप्रपक्ष पुनःनामसे प्रचारित होने लगे । धर्माध्यक्ष वा पेट्रियाकाके स्वतन्त्र धर्माधिकरण थे भीर थे सर्वथा सम्राटके दाहिनी ओर बैठा करते थे । 'पोटर डी प्रेट' का महाजुमव पोटरके समय १०२१ ई०में यह पेट्रियाका पद छोड़ दिया गया । ये इङ्ग्लैण्डकी तरह अपनेका धर्मक्रिया भीर राज्यशासनका प्रयाण नापक रहने लगे । फिार ना देशकी उन्नति भीर सैम्यक संस्कारमें उनका पूरा ध्यान था । विदेशवाला रुसमें आने जान लगे । इस प्रकार रुसमें पारबाध्य सम्भवाका द्वार खुल गया । सुरभेनके गाद्यामस आउककसन भापसमें मर्द यहु थाने के छिये आरखे एक साथ एक नई सन्धि कर छो । तद्नुसार कस राजसभामें एक सुरक्षित नृतका भाविर्भाव हुआ । कमान भाधि बनानेके छिये मोस्को के कारवानोंमें ओल्डन्वाड भीर उगानशिष्वा नियुक्त हुए । इङ्ग्लैण्डके पणिङ्ग्ल बांध कर कस भाये भीर धार्मिक्य करने लगे । इकावसेना सैम्यककी पुष्टि करन लगे ।

१९४५ ई०में भाये वसस सिहासन पर बैठे । उन्हेनि सबसे पहले रुसके व्यवहारशास्त्रका सङ्कसन भीर संस्कार किया । उक्त भाइन ३५ भीर ४५ इषामके सशुद्धीय भाईनके भाषार पर निर्धारित हुआ । अनन्तर सम्राटके भादेशानुमार क्रिश्चि धर्माध्यक्षों भीर बिद्वानोंमें भाइनके परिषदों भीर परिषदोंकी ओर ध्यान दिया । राजकुमार भाओयेविस्की भीर ब्लकोनिस्का इस कार्यके सभाएक नियुक्त हुए । बाई मासके कठिन

परिग्रमस उक्त पुस्तक समाप्त हुई । यह पुस्तक भाज भा मोस्को नगरमें 'अरभेनिवा पाछडो' के मध्य रनी हुई है । ४५५ भासिकने बड़े व्यभिमानस कहा है, कि इस भाइनस यूरोपमें सबसे पहले प्रत्येक बालिकके स्वत्व भीर स्वाधीनताका साम्भवाद् प्रचारित हुआ । इस उदार नीतिको भवकमन करके ही १८वीं सदीमें यूरोपके व्यवहारशास्त्र संस्कृत हुए थे । कहत है, कि भाजेस्त्रिने समस्त भावेदनकारियोंको स्वयं राजाके समोप भानकी अनुमति दी थी ।

भाजेविससक मिय यासस्थान कोडोमेनस्को नामक प्राममें जहां वे सोते थे उसके बाहरके भरोसेमे रोन क एक बकस छटका रहता था । नीचे दृष्टन पर सम्राट् जब भरोसेके पान पडू थे, उसो समय समा प्रार्थी अपने भायेदनके साथ उपस्थित होते भीर उनका सम्मानपूर्वक स्मिबादन कर वरसमे भावेदनपत्र डाल देत थे । पोछे सम्राट् उसका विचार करते थे । भाफेन भीर कसाकोंका देश जीतवा उनके शासनकाछके मध्य एक सर्व प्रयाण घटना है । पण्डसम्रोयो नामक स्थानकी सन्धिसे रुसको नीपरदनको सोमागतवर्षों देश भर्वात् खोले नएक धार्मिकक, किफ भाधि स्थान मिळे थे । १५६१ ई०में पोखरके साथ लुथडिनको जो सन्धि हुए उसमें रुसके उक्त स्थान पोडोको मिळे । अमो रुसका उस पर कब्जा है । सिलेका मान घटानके छिये १६४८ ई० को मोस्को नगरमें एक विद्रोह बाड़ा हुआ । फिार प्रेज्जु रेजीर नामक एक कसाकने नृसरा विद्रोह बाड़ा कर दिया । भापसफोर्ड प्रस्थाप्यक भासमोक्षिपनसंप्रदमें इसका सुन्दर विवरण लिखा है । रेजिनै ३ वर्ष तक बल्गानकीके पारोँ ओरके प्रदेशोंका छारखार कर डाखा । भाजेविससने इसे पकड़ कर भी छोड़ दिया किन्तु उन्हेनि कारमुक्त हाथ हो फिारसे थि १६ पकड़ा कर दिया । "इनसाधारणके साम्य भीर स्वाधीनताकी संस्थापना करगे" इस प्रकार प्रमोमन दे कर उन्हेनि दो साल व्यक्तियोंकी अपने बखमें मिला लिया । धाद्रागन सहजमें उनके हाथ लगा तथा वे निरजनितपगारोदस ल कर काजान तक अग्रतिहत भायमें शासन करन लगे । उनक भत्या धारसे रुसगण पांडित हो उठे । भाखिर थे १९७१ ई०में

एकडे और मारे गये। सम्राट् आलेक्सिस १६७६ ई०को ४८ वर्षकी अवस्थामे इसलोकसे चल बसे। आर्डिन नासचोकिन उनके राज्यके सर्व-प्रधान मन्त्री थे। उनके यत्नसे एण्ड्रसजोवकी सन्धि मीमांसित हुई। आलेक्सिस उदार प्रकृतिके और सदाशय सम्राट् थे। उनके शासनकालमें रूस उन्नतिकी चरम सीमा तक पहुँच गया था। इसी समय से रूसका कई शताब्दियोंका सञ्चित अन्धकार दूर हुआ और यूरोपीय शक्तियोंमेंसे एक समझा जाने लगा। वोरिस गदुनफकी तरह आलेक्सिस रूसमें सब प्रकार की उन्नतिका सूतपोन कर गये हैं।

आलेक्सिसकी मृत्युके बाद उनकी प्रथमा स्त्री मेरिया मिलोस्लाविस्कियाके गर्भजात ज्येष्ठ पुत्र श्य थियोडोर सिंहासन पर बैठे। उन्होंने १६७६से ८२ ई० तक राज्य किया। उनका स्वास्थ्य उतना अच्छा नहीं था और उनके शासनकालमें कोई विशेष नटना नहीं घटी। इन्हीं के शासनकालमें न 'रोजरियाडनिगि' वा कौलीन्य संक्रान्त सभी ग्रंथ जला दिये गये। इस पुस्तकसे कुल मर्यादा और वंशगौरव ले कर राजसरकारमें अनेक गोलमाल खड़ा हुआ। कोई स्वभावकुलीन, कोई गौण वा मङ्गकुलीनके अधीन काम नहीं कर सकते थे। इस कारण राजकार्यमें बहुत अनिष्ट होता था। इसे दूर करनेके लिये थियोडोरने घोषणा कर दी, कि राजसभामें सर्वोंके कुलग्रंथका विचार होगा। यह सुन कर सभी कुल असली और नकली कुलग्रंथ राजसरकारमें समर्पण किये। थियोडोरने मन्त्रिश्रेष्ठ वासिली गलिटजिन और धर्माध्यक्षोंकी सहायतासे कुलीनमण्डलीके सामने उस पर्वतके समान ऊँची ग्रंथराशिमें आग लगा दी। इस प्रकार कुल ग्रंथ जल कर खाक हो गये।

थियोडोरकी मृत्युके बाद राज्यमें अराजकताका सूत पात हुआ। आलेक्सिसकी दो पत्नियोंमें बड़ी पत्नी मेरियाके थियोडोर और इवान नामक दो पुत्र तथा कई एक कन्याएँ तथा छोटी पत्नी नेटालियाके नारिस्किना, पीटर और नेटालिया नामक तीन संतान थे। सपत्नियोंके पृष्ठपोषकोंके हाथसे सारा राज्य तंग तंग आ गया। थियोडोरका छोटा भाई इवान बड़ा दुर्बल था, इस कारण

सर्वोंने पीटरको सिंहासन पर बैठाना चाहा। किंतु मेरियाकी कन्या सोफिया बहुत बुद्धिमती, कार्यकुशल और प्रगल्भा थी। उस समय रूसकी राजकुलललनाओंकी दुर्गतिकी सीमा न थी। क्योंकि राजपुत्रको छोड़ प्रजाके पुत्रके साथ उनका निवाह होना निषिद्ध था। इस कारण कितनी राजकुमारी आजीवन कुमारी रह जाती थी। सोफिया आलेक्सिसकी प्रियतमा कन्या थी। राज्यशासन करनेका उमे बड़ा गौन था। इस कारण दो एक सरदारोंकी सहायतासे उसने विद्रोह खड़ा कर दिया तथा विमाताके पक्षके कुछ लोगोंका काम तमाग किया। आविर उसने विमाताके दो भाइयोंको पकड़ कर काट डाला। पीछे जनसाधारणकी चेष्टासे इवान और पीटर दो वैपान्वेय भाई एकत्र सम्राट् हुए तथा राजकुमारी सोफिया उनही तावालिगी तक राज-प्रतिनिधि और अभिभाविका हुई। सोफियाने वासिली सलिटजिनको प्रधान सेनाध्यक्ष बनाया। उसने फौरन क्रिमिया मुगलोंके विरुद्ध युद्धघोषणा कर दी। १६८६ ई०में पीटरने यूटुकिया लोपुविना नामक कन्याका पाणिग्रहण किया। किंतु विवाहमें दासपत्यमुख जैसा होना चाहिये था वैसा न हुआ। इस खीसे पीटरके अलेक्सिस नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए। पहला पुत्र सिर्फ छः मास जीता रहा। दूसरा भी दुर्भाग्यके लिये आगे चल कर रूसके इतिहासमें प्रसिद्ध हुआ था। सोफिया और गलिटजिनके उभाड़नेसे पुनः विद्रोह खड़ा हुआ। कोई कहते हैं, कि पीटरका प्राण लेना ही इस विद्रोहका उद्देश्य था। अतमें पीटरके पक्षके लोग प्रबल हो उठे। विद्रोहियोंके निष्ठुरभावसे मारे गये और सोफिया सुसन्ना नामक मठके भीतर सदाके लिये संन्यासिनी हो कर रही। वहाँ १५ वर्ष जीवित रह कर वह ४६ वर्षकी अवस्थामें परलोकको सिधारी। इस प्रकार १६८६ ई०से पीटर (The great) का शासनकाल आरम्भ हुआ। उनका छोटा भाई इवान दुर्बलचित्त और रोगी था, इस कारण शासनकार्यमें शामिल न हो सका। इवानने पीछे विवाह किया। आगे चल कर उनके तीन कन्या हुई। उनमेंसे एक कन्याका विषय परवर्ती कालके इतिहासमें सम-

पीय है। श्वान नियुक्तमें औपन यापन करके १६१६ ई०के ३० वर्षोंकी अवस्थामें इस कोरसे बंद वसे।

श्वानामयसे महाजुनय पीटरका इतिहास संक्षेपमें लिखा जाता है। उन्होने १६८७ १७२५ ई० तक मर्यात् ३६ वर्ष राज्य किया। पीटरने पहले ही देखा, कि रूसमें बाणिज्य व्यवसाय करने सायद सुन्दर बन्दर और जहाज नहीं हैं। श्वेतसागरका बन्दर बरफसे हमेशा बन्ना रहता है। इस बन्दरको बंद करनेके लिये वे बूसरो जगह बन्दर बनानेका आयोजन करने लगे। उन्होंने पैतन दे कर एक पैदौयिक फौज रखी और तुल्य कर आक्रमण कर ज्ञान नदीके मुहाना आजकलागठमें बन्दर खोलनेका संकल्प किया किन्तु आत्मत्याज इजिप्टपर ज्ञानमेनकी विरशासपात कथामें पीटरका प्रथम आक्रमण व्यर्थ गया। अन्तमें १६९६ ई०को उनकी जीत हुई तथा उन्होंने विजयोत्साससे मोस्को नगरमें प्रवेश किया। दूसरे वर्ष पीटर कैफर तथा सेनापति गबोडिन और बसनिमजिनके साथ विदेशको निकले। उन्होने कुछ समय हावर्बर्गके डक वा पोताभय साधनमें कामें सोचा। पीछे वे इङ्ग्लैण्ड आ कर ३ मास रहे। इङ्ग्लैण्डसे लौटत समय वे प्रसिद्ध गिस्पी और इजिप्टियाँका भ्रमने साथ साथे थे। उन्ही गिस्पीके द्वारा वे क्लेको शिक्षित करने लगे। गिनिस आनेको उनकी विपत्ति हो रही थी, इसी समय उन्हें मास्को हुआ, कि राजधानीमें विद्रोह बढ़ा हो गया है। किन्तु उनके भानेस पहले ही परत तथा अन्याय सेनापतियों द्वारा विद्रोह शांत हो चुका था। पाटरके मोस्को पहुंचने पर वे वहाँ निष्पृष्टतासे विद्रोहियोंको वमपुर मेजबं लगे। १७०६ ई०में ज्ञान नदीके निकटवर्ती कसाकोमें तथा १७०९ ई०में मेरान्गना नामक स्थानके कसाकोमें १२वें घातककी शरण ली तथा उनकी सहायतासे वे सबके सब भागी हो गये। पीटर १७०० ई०की सरमाकी लड़ाईमें १२वें पानेससे अच्छे तरह परास्त हुए। इस कारण पीछे पीटरने युद्धका बड़ी तप्यात की। रूससेनापति सियमरेके सुदृष्टिसेनापति स्विडजिनवायको जिथैलिया तथा एक और युद्धमें हराया। नेवा जीतना ही पीटरका उद्देश्य था। उनका यह उद्देश्य सिद्ध हुआ था। इस युद्धमें सेनाकी बड़ी सुसोपत उन्नती पड़ी थी।

१२वें शालासने सभी पोतण्ड जीतनेका संकल्प छोड़ कर रूस पर हमला बन्द दिया। आर्ल्ट्सने बड़े भूमि मानने कहा था "रूसके सम्राट् मतीतमें मरे साथ संपि करंगे मर्यात् पराजित होगे।"

पीटरने उत्तरमें कहा "प्रिय श्राता द्विविजयी सिकन्दर की तरह भावण कर रहे हैं, किन्तु वे देखेंगे, कि मैं क्या युस नहीं हूँ।"

जेसना नामक स्थानमें सुदृष्टिस सेनाध्यक्ष जॉसेफ् जेसनेनाके साथ मयङ्क युद्ध किया। उस दिन उनकी विजय तो हुई, पर बहुतसी सेना युद्धक्षेत्रमें खेत रही। अन्तर १५वीं जूनको पकटेवाको लड़ाईमें मीपण युद्धका अन्तिय हुआ। युद्धके बाद सुदृष्टिसमण बुरी तरह परास्त हुए। आर्ल्ट्स अपनी रणनिपुणताके अभावे ही परास्त हुए थे।

इस युद्धयुद्धके साथ साथ कसाकविद्रोहियोंकी आधीनता सदाके लिये बिलुप्त हो गई। उनकी साधारण शासनप्रणाली अन्तर्हित हुई। वे लोग अभी मेस्की सम्राट् के अधीन हुए।

१७१२ ई०में पीटरने मार्था स्टाइनका नामक एक छपक कन्याका कथराइन नाम रख कर उससे विवाह किया। यह छपक-कन्या १७०२ ई०में मेरियनबर्गके एक रोपकासमें बन्धनी हुई थी। इसका पूर्ण रूपांत विच्छन्न अभाव था। कथराइन मीक धर्ममतमें शोधित हुई। पीटरने पहले ही अपनी स्त्री युवोकिमाकी रोमक धर्ममत और रक्षणशोकाकी पृष्ठपोषकताके लिये छोड़ दिया था।

अभी पीटरका रूसकी शोषुद्धिकी और श्वान कीड़ा। वे अन्याय यूरोपीय राज्योंके आदर्श पर रूसमें सम्पत्ता सोक फौजाने लगे। उन्होंने वे 'ट्रयार्क' शिप वा धर्मार्थ सताका पद उठा दिया तथा वे सम्प्राप्त और कुसोल पंथीय मद्रपुत्रोंकी शासन और सैम्यकशासक्यापति नियुक्त करने लगे। पीछे उन्होंने व्यवसायज्ञाकी बणिक्को-की नाना विभागोंमें विभक्त किया। किन्तु छपरीका शासनमात्र उस समय भी मीचूँ था।

पीटरके समयमें ही रूसका कुसकनागत प्राक्यमात्र दूर हो कर पाश्चात्य सम्पत्ताका प्रचार हुआ। इतने दिनों

तक रूसकी स्त्रियोंमें परदा प्रथा जारी था। पीटरके संस्कारसे स्त्रियां जो इतने दिनोंसे अंधकारमें पड़ी रही थीं, आज स्वाधोनताके बालोकमें पत्नीकी तरह आनन्दसे विचरण करने लगीं। पुरुष दाढ़ी मूँछ कटवा कर पाश्चात्य भावमें चलने लगे। यूरोपीय प्रथानुसार मैन्ग्दलका संस्कार होने लगा। १२वें चार्ल्स जब तक वेन्दरमें निर्वासित रहे तब तक पीटरने एासिस्लन लेसजिनस्किको पोलण्डसे निर्वासित किया तथा २५ अगष्टस फिरसे वासमें चले आये। पीछे पीटरने लिवो निया और पस्थोनियाको अधिकार किया। पोलण्डके अन्तर्गत कोरलैण्ड नामक स्थानको राज्यभुक्त करनेके लिये उन्होंने बड़े कौशलसे वहाके ड्यूकके साथ अपनी भतीजी अर्वाल्ड इवानकी कन्या अन्नाका विवाह कर दिया था। यहीं पीछे रूसकी सम्राज्ञी हुई थी।

इसके बाद पीटरने तुरकके विरुद्ध अभियान किया, किन्तु इस अभियानमें अक्षतकार्य हो वे आजफ तुरकोंको लौटा देनेसे बाध्य हुए। यह सन्धि १७११ ई०को गुथ नामक स्थानमें हुई थी। कहते हैं, कि कथराइनकी बुद्धिमत्ता और कौशलसे पीटरकी इस यातामें जान बची थी। इसके बाद उन्होंने कथराइनको धर्मपत्नी तथा सम्राज्ञीरूपमें ग्रहण किया। १७१३ ई०में पीटरने सुइडिसेको युद्धमें परास्त कर कुछ स्थान जीत लिये। १७१७ ई०में वे फिरसे देशभ्रमणको निकले और आखिर पेरिसनगर पहुँचे। इस वार कथराइन उनके साथ थी। राजा रानीका यह भ्रमणवृत्तान्त आश्चर्यजनक घटनासे पूर्ण था। १७२१ ई०में फिरसे सुइडेनके साथ पीटरकी सन्धि हुई। इस सन्धिमें उन्हें लिवोनिया, पस्थोनिया, फिनल और इंग्रिया आदि स्थान मिले। पीटरने १७०३ ई०से सेण्टपिटर्सबर्ग नामक राजधानी बनाना शुरू किया।

१७२२ ई०में वे नाव पर चढ़ बलगा नदीसे दक्षिण की ओर गये और कई प्रदेश अधिकार कर बैठे। इसके पहले उनके प्रिय पुत्र अलेक्सिसको मृत्यु हो गई थी। १७२५ ई०की २८वाँ जनवरीको महानुभव पीटरका देहांत हुआ। आप जैसे अद्भुतकर्मा सर्वांगुणसम्पन्न संस्कारक सम्राट् रूसके सिंहासन पर और कोई नहीं बैठे थे।

पीटरकी मृत्युके बाद रूसमें दो दलका आविर्भाव हुआ। एक दल विधवाने रानी कथराइनको सिंहासन देना चाहा। दूसरे दलने अलेक्सिसके पुत्रको सम्राट बनानेका सङ्कल्प लिया। पीटरके प्रियपुत्र मेनसिकफ इस समय अत्यन्त क्षमताशाली हो उठे। वे पहले मोस्को नगरकी गली गलीमें राटी वेचन थे। जो हो, उनके मन्त्रणाजालसे रूसमें पूर्ववर्ती साम्प्रत प्रथापद्धति अक्षुण्ण रही। कथराइन राज्यशासनमें क्षमताशालिनी न थीं। अतएव उन्हें दूसरेकी सलाहसे चलना पड़ता था। १७२७ ई०में उनकी मृत्यु हुई। वे अलेक्सिसके पुत्र द्वितीय पीटर तथा उसके अमांमें हल्टिनके ड्यूककी पहली स्त्री अन्नाको और एलिजाबेथ तथा उनकी कन्याओंको सिंहासनकी उत्तराधिकारिणी बना गईं। राजप्रतिनिधित्व एक मन्त्रणासभा द्वारा परिचालित होने लगा। इस सभामें सम्प्रश्रेणोका दो कन्या, हल्टिनके ड्यूक मेनसिकफ तथा अन्य ८ साम्प्रान्त व्यक्ति थे। यद्यर्थमें मेनसिकफ ही सर्वसर्वा थे। उन्होंने अपनी धन्याको द्वितीय पीटरके साथ व्याहर्णमें कथराइनसे सम्मति ली थी। किन्तु उलगगकिसकी प्रधानतासे उन ही पूर्व क्षमता विलुप्त होने लगी। वे पहले अपनी जग्मभूमि में गये, पीछे साइचिरियाके अन्तर्गत वेरेजफ नामक स्थानमें निर्वासित हुए। वहाँ १७२६ ई०में उनका देहान्त हुआ।

इस समय उलगगकिसदलकी प्रधानता हुई। सम्राट् इस वंशकी नेटालियाके प्रेममें फँस गये तथा उसे यह धार आश्वासन दिया कि वे उससे अवश्य विवाह करेंगे। नये सम्राट् २५ पीटरके कार्यसे स्पष्ट मालूम होने लगा, कि वे शीघ्र ही पीटर की प्रेटीकी संस्कारावलीका मूलोच्छेद करेंगे। तदनुसार सेण्टपिटर्सबर्गसे मोस्को नगरमें राजधानी उठा कर लाई गई। किन्तु १७३० ई०के जनवरी मासमें तरुण सम्राट् ने अकस्मात् वसन्तरोगसे प्राणत्याग किया। मृत्युके कुछ पहले वे अचिरमृता अपनी बहन नेटालियाका नाम ले कर कहने लगे, "गाडी तैयार करो, मैं बहनके पास जाऊँगा।" इनके शासनकालमें कोई उल्लेखयोग्य घटना न घटी। केवल सकसेनी प्रदेशके मारिसने कोरलैण्ड

प्रवेश हस्तगत करनेकी इच्छासे इच्छितकी विधवा डाबेलस अन्नासे विवाह करनेका संकल्प किया था।

२५ पीटरकी मृत्युके बाद सिंहासनके सिधे कई पायीं बड़े हो गये। किन्तु मन्त्री समाज भ्रष्टाकी ही सन्नाहों बुना। उन्होंने समझा, कि भ्रष्टा समी विपरीत में इनकी सहाय ले कर चलेंगे। इस कारण गुप्त मंत्री समाजके सम्पत्ति अन्नाको निम्नलिखित मर्म पर लागू करा किया—

१ यह मन्त्राणा समाज तथा परस्पर सम्झौत एकिक द्वारा संघटित होगी। (२) बिना इस समाजकी अनुमति बिधे रानी युद्धपोयना वा सम्पत्ति नहीं कर सकती भयथा न कोर कर ही निर्दायण कर सकती। (३) कुडीन वा सम्झौत सम्झौतके किसी व्यक्तिसे ये बिना उपयुक्त विचारके हठात् प्रायद्वन्द्वसे इच्छित भयथा इनकी सम्पत्ति अस्त नहीं कर सकती। (४) ये समाजकी सम्पत्तिको छोड़ पतिनिर्वाचन भयथा उत्तराधिकारको निर्णय नहीं कर सकेगी। इन सब नियमों का उक्त गुप्त करनेसे ये सिंहासन परसे उतार दी जायंगी। इन सब शर्तोंकी मंजूर कर अन्ना मोरको मारें। उन्हें यह ज्ञानमें है कि उक्त मन्त्राणा समाजके हाथमें कठपुतली रह कर ये अन्नासाधारणकी भयिमात्रण ही गई है। पद्यार्थमें ये सब सम्झौत लोगोंके अज्ञान ही गए थे। इसका बाद अन्नाने अपने पुत्रपापकी बुलाया और सबके सामने पूर्णक प्रतिज्ञापत्रकी पाठ आका। इस प्रकार मन्त्राणासमाजकी भी व उपायकी पर। अन्नाने अन्नी अमन-दीवीय एक मन्त्राणाकी सहाय परि आश्रित हो पूर्ण शत्रुओंके प्रति बहसा अनेक संरक्ष किया। इसमें फिर शुभकाल समय उपस्थित हुआ। अर्मनों द्वारा दण्ड लूटा जाने लगा। बहुतने रूस मन्त्रपुत्र्य मारें गये और साक्षिपरियामें निर्वासित हुए। प्रधान मंत्री मन्त्राणाकी १७४० ई०में प्रायद्वन्द्वकी सन्नाही गए। बाइरेनके कोपस हा उनका भयपतन हुआ।

इस समय पोंसपुत्र्य सिंहासन अन्नी होमेस आनिस्वसको वहाँ प्रतिष्ठित करनेकी चेष्टा हो रही थी। किन्तु इसकाय उनका विरुद्ध चढ़े हो गये जिससे उनको चेष्टा फलवती होने न पाए। ये बड़े कष्टसे आन्नाके

भाग चले। यह ले कर मुकुन्दक साथ रूसका एक युद्ध हुआ। यह युद्ध (१७३५-३६ ई०) चार वर्ष तक चल्ता रहा था। इस युद्धमें अन्निवावासी रूसके विरुद्ध चढ़े थे। रूससैन्यापत्तिने इस युद्धमें कर नगरीको जीता। अन्नामें अन्निवावाके साथ मुकुन्दकी विसमंज नगरमें सधि स्थापित हुई। उसी सधिके अनुसार १७३६ ई०में इस युद्धका अयसान हुआ। १७४० ई०में रानी अन्नाकी मृत्यु हुई। उन्हें ने अपने बहनके पति अर्थात् मेकलेन बर्गके डाबेलस कथारनके पुत्र इवानको उत्तराधिकारी बनाया। नापाकिगी तक बाइरेनने शासनकार्य चलाया। थोड़े ही दिनोंके मध्य बाइरेनका अधिकार छीन लिया गया और ये साक्षिपरियामें निर्वासित हुए। किन्तु इस पर शक्ति स्थापित न हुई। अर्मनों का कठपुत्र्य अग्निप कर समझ एक वजने पीटर की मंजूरकी कन्या पकिजा बेंचकी सिंहासन पर बिठाना चाहा। पकिजाबेंचने सेनाकी सुश करमेक सिधे उन्हें तरह तरहकी सुविधा दी। इन सन्नाहोंकी सहायताके पकिजाबेंचके बहन रात भरमें दूसरे बलके समी अग्निपको की केंद्र कर किया। अन्ना, उनका नामो तथा माथी बाइक साम्राज्य सबके सब कातरक हुए। पकिजाबेंच सिंहासन पर बैठी। इत इवान एकनुसायनके कारणात्में वही हुए। अन्नी पतिपुत्रक साथ निर्वासित हुई। यहाँ पर १७४६ ई०की उपाका देहात हुआ।

बाइरेनका निर्वासनसे पुनः रूस अन्नी का कुकुम हुआ। पकिजाबेंचने वेद्रेमभा (१७४१-१७६२ ई०) अमन प्रयुक्त परिरथाय कर समी रूस मन्त्रिणीको नियोग किया। सिंहासन पर बैठती ही पकिजाबेंचने अपने भाई इच्छितक इयुषाका बुलाया। उन्होंने पीटर दिवोवोराभिच नामसे बोरलैण्डका शासन किया था। ये प्रजा अर्मनतम दीक्षित हुए थे। १७७४ ई०में अन्ना ने राजकुमारो साक्रियास ब्याह किया। साक्रियाने दीक्षापालमें अन्ना नाम व धारण रखा। १७८३ ई०में अन्नाने सुइडेनको युद्धमें पराजित किया। इसमें अन्ने फिलिपेण्ड देग्ना बियायुमेन वहीके कठपुत्री समी भू भाग हाथ लगे थे। इसका बाद रूसके साथ अन्नेविक की मन्त्राणा युद्ध छिड़ा। (१७९१-९२ ई०) १७९७

ई०में आग्राकसिनने ८५००० रूससेना ले कर रूसके सीमान्तको पार कर प्रूसियाके पूर्वभाग पर अधिकार जमाया तथा आसजागोसडफ नामक स्थानमें लेवावडको परास्त किया। रूस-सेनापति जयलाम सुलम दस अत्याचारदि न कर वहाँसे लौटे। किन्तु १७५८ ई०में रूस सेनापति फामर जर्नडक नामक स्थानमें फ्रेडरिक द्वारा अच्छी तरह परास्त हुए थे। किन्तु दूसरे वर्ष १७५६ ई०को रूस सेनापति सालिट्स्कफने पाल्टजिन नामक स्थानमें प्रूसियोंको हराया। इस युद्धमें उनका ८०६० सेना और १७२ कमान नष्ट हुई थी। फ्रेडरिकने युद्धमें परास्त हो आत्महत्या करनेका संकल्प किया। १७६० ई०में रूस गण वालिन नगरमें घुसे तथा बहुसंख्यक नरहत्या और लूटमारका अभिनय करने लगे। फ्रेडरिकने यह देख दुःखके साथ कहा था, "वर्नार रूस हम लोगों पर कैसा भीषण अत्याचार कर रहे हैं। क्या तो उन्हें दू तक भी न गई है।" दूसरे वर्ष रूसोंने पमारेनिया पर अधिकार किया। फ्रेडरिक विनष्टप्राय हो गये, किन्तु १७६१ ई०में एलिजावेथकी मृत्यु होनेसे फ्रेडरिकका दोष कुछ हल्का हुआ। एलिजावेथ कुसंस्काराच्छन्न और आलसा थी। उसके नैतिक चरित्र अच्छा न था। वे प्रिय पार्लों द्वारा हमेशा चालित होती थी। पीटरकी मृत्युके बादसे एक भी उपयुक्त सम्राट् रूसके सिंहासन पर न बैठा। किन्तु एलिजावेथके शासनकालमें रूस धीरे धीरे उन्नति कर रहा था। १७५५ ई०में इवान सुवालफके यत्नसे रूसका प्राचीनतम विश्वविद्यालय मोस्कोमें प्रतिष्ठित हुआ। इस समय भापा और साहित्यकी अच्छी उन्नति हुई थी।

एलिजावेथकी मृत्युके बाद उनके भतीजे हलपिन गटार्प श्य पीटर उत्तराधिकारी ठहराये गये। जनताको पहले संदेह हुआ था, कि वे कहीं जर्मनोंके प्रति सहानुभूति न दिखलायें। किन्तु उनको कार्यावलीने जनसाधारणको खुश कर दिया था। पीछे जर्मनोंके प्रति वे अनुराग दिखाने लगे। आखिर १७६२ ई०में उन्होंने एक घोषणापत्र निकाला कि कुलीनोंको राजकार्यमें प्रवेश करनेसे वाध्य न किये जायगे तथा अभीसे गुप्त मन्त्रणासभा होने न पायेगी। ये प्रचलित धर्ममतका परित्याग कर लूथरके संस्कारमें पक्षपातिता दिखाने लगे। श्य

पीटरका आचार व्यवहार बड़ा ही पुराना था। वे सर्वादा जराबके नशेमें चूर रहते थे। और क्या, उन्होंने अनेक प्रतिभाशाली फरासीसियोंको देगले मार भगाया था। इन्हीं फरासीसियोंसे रूसकी उन्नति होती जा रही थी। श्य फ्रेडरिक जो रूससे हार खा कर त्रियमाण हो रहे थे, अभी रूसकी राजनीतिके प्रवर्तनसे उड़े आनन्द हुए। पीटर प्रूसीय सम्राट्के पतन स्तावक थे। फ्रेडरिक पूर्ण-प्रूसिया दे कर भी रूसके साथ सन्धि करनेका प्रस्तुत थे। किन्तु पीटरने उस ओर कोई ध्यान नहीं दिया। प्रूसियाने हतराज्यको लौटा कर फ्रेडरिकके साथ सन्धि कर ली। वे अपनी स्त्री कथराइनके साथ आनन्दपूर्णक नहीं रहते थे। अन्तमें उन्होंने कथराइनको छोड़ दिया और संकल्प किया, कि जीवन भर उसे संन्यासिनी कर गिरजामें रखेंगे। किन्तु रानी कथराइनने स्थिर चित्तसे भविष्यकी अपेक्षा की थी। आखिर वह एक पडपत्रमें शामिल हुई और पेंटरहफ नामका स्थानका आवाश-भवन परित्याग कर २०००० आर्मियोंकी अधिनायिका हुई। हतभाष्य राजाने रानीका युद्धोद्योग देख कर बिना सोचे विचारं राज्य और सिंहासन छोड़ दिया। किन्तु वे शीघ्र ही सेण्टपिटर्सबर्गके निष्पाटवर्त्तों स्थानमें गुप्तभावसे मारे गये। राजकुमारी घोमफाफने इस घटनाका हृदयप्राही विवरण लिखा था। उनके मुखसे सुन कर मिसेस उब्रयु आडफोर्ड नामका एक अंगरेज महिलाने १८४० ई०में वह कहानी प्रकाशित की है।

पूर्वोक्त प्रकारसे एक जर्मन-महिला बड़े कौशलसे रूसोंके कुसंस्कारके प्रति पक्षपातिता दिया कर विस्तीर्ण रूस-साम्राज्यकी अद्वितीय अधीश्वरी हुई। दो वर्ष बाद कारारुद्ध दृष्टे इवान रक्षिवर्गके द्वारा मारे गये।

इस समय सप्तवर्षीयापी युद्धका अवसान हुआ तथा यूरोपीय शक्तियां पोलण्डविभागमें बड़ा गोलमाल करने लगीं। १७६७ ई० फरासीसियोंके उफाडनेसे तुर्ककोने रूसके विरुद्ध युद्धघोषणा कर दी। पोलण्डके साथ रूसका सम्बन्ध अलग करना ही इस युद्धका उद्देश था।

रूस सेनाध्यक्ष गलिटजिमने प्रधान बजौर पर धावा बोल दिया तथा १७६६ ई०में खोटिन नगर पर कब्जा किया। दूसरे वर्ष रमाएजफने क्रिमिया खाँ और तुर्क-

५५के महयोगियोंको परास्त किया। १७७० ई०की कागुल नामक स्थानमें श्री युजु हुमा उसमें भी उनकी जीत हुए। १७७१ ई०में डाकगदकीन क्रिमिया दखल किया तथा आर्थेक्रीम अलफने अलफुयुमें परिषायांमाहर के निकट तुर्कोंको हराया। इस अलफुयुमें इसी सेना को अगरेत्र कर्मकारियोंस जासी मद्द मिली थी।

१७७४ ई०में कुयुक-केनाऊ नामक स्थानमें सखि पक्ष मजूर किया गया। तुर्कोंके सुलतानने क्रिमियाके मुगलोंको स्वाधीनता स्वीकार की। सुलतानने इसको क्रिमिया प्रदेश प्रदान किया। क्रिमिया कुछ दिन बाद इस साम्राज्यम मिटा किया गया। इसके सिवा कुछ ठानने जलनहीके मुहाने पर आज़फ़ा भीर नोपर नहीके मुहाने पर किमबर्ग नामक बन्दर और पोथाधप तथा क्रिमियाक अन्तर्गत समस्त सुरक्षित कुयु हसोंको प्रदान किया। १७७१ ई०में मोस्को नगरमें रोगका प्राकुर्माव हुआ जिससे हजारों मनुज्य कराककाक नामके पतित हुए।

मार्चविशेष अग्रेस अलसापणके स्वास्थ्यकी उन्नतिक सिप मरी समामे ही बात करनेके लिये जाड़े हुए। इसी समय उल्लेखित अलताने उनका काम तमाम किया। युगाथेक नामक एक कसाकी फौरन एक विद्रोह पड़ा कर दिया तथा अपनेको तुनीय पीटर घोषित किया। बहुतसे लोग उसके बन्धने मिल गये। क्रिमियाक मुगल भी इस विद्रोहमें शामिल थे।

एय कथराहनने [विद्रोहमनक लिये जो सब सेना प्रति मैत्र थे, ये सबके सब परास्त हुए। विद्रोहियोंने एकपाठ और तूटमारसे महाविभाषिका आरम्भ कर दी। युगाथेकने काज़ान भादि नगर भी अधिकार किये। यद्यपि यह बड़े बुद्धिमत्तास कार्य किये होते, ता कथराहनकी सिहासन मिलना पुन्यार होता। किन्तु इसक निन्दुर आचारणने स्वक सहयोगियोंको विरक्त कर दिया। आन्तर यह विविक्त द्राप परामित हुआ और तुबारक नामक स्थानम पकड़ा गया। यह जीह पिहलम बख हा कर मोस्का लाया और मार उठाया गया। इसके विद्रोही भी प्राणव्यस्य दृष्टित हुए। इस प्रकार कथराहनक यत्नस कसाकीका साधारणतम्

क्षेप हो गया। उनके समय स्प्यहारखोख सुकुमित भीर विधिपक्ष हुआ। ऐसे सभी लोग कसके भाएन संघट्टका उठा समय कहन हैं। किन्तु इस आलन स स्कारसे भी कथरास भीर ह्यकीका फीर विशेष उपहार नहीं हुआ। १७६७ ई०में एक घोषणापत्रमें प्रचारित हुआ कि वे अपने मालिकके विरुद्ध शिंखो भन्प्याय भीर अधिचारकी मादिना महा पार सकेंगे। मालिका अपने इच्छानुसार उन्हे साहचिरियामें निर्वासित मथया यथेच्छा स्प्यहार पर सकत हैं। बाज़ारमें गुजामोंका खरोदना बेचना ज़ोरों ज़ारो था।

विचार-कार्यकी सुविधाके लिये प्रत्येक प्रान्तमें माना उपविभाग या डिस्ट्रिक्ट खूबि हुईं। कथराहनने पाह रिपोंकी निष्कर भूमि ही तथा दासवासियोंका पेतन उनक कार्यानुसार स्थिर कर दिया। १७८३ ई०में क्रिमिया कसक इच्छामे माया। १७८७ ई०में तुर्कक के युद्धका फिरसे खूबपाठ हुआ। मोटोमन सुल्तानके युद्धाधोगहा यथेष्ट कारण था। रामो कथराहन सब दक्षिण खसमें अमपणक निष्काको तथा सम्राट् २५ जोसेफसे मिळा, इस समय सुलतानक बहुत सदेह हो गया था। स्वीडेनने भी सुयोग पा कर अपना ह्वरराय पुनः पानेकी आज़ासे उसी साल इसक विरुद्ध युद्ध का घोषण की। किन्तु २५ गाणमसभी युद्ध छद्मनेम असमर्थ हा पार सेरेटा नामक स्थानमें परलेकी तरह मींच कर को। तुर्कोंके साथ युद्धमें भी कथराहन ने अयलाम किया। सेनापतिने पोटेमकिन और पाकफ तथा तुवारकने खोरिन अधिहार किया। १७९१ ई०में सेनापतिने कज़ानो और रिमनिड नामक स्थानक युद्धमें अयलाम किया तथा १७९० ई०क एक भीषण युद्ध में इसमाइलको बन्दी किया। १७९२ ई०का जसको सखिसे कथराहन और आकफको याम और निपर मदीक मध्यपत्तो उपकूल भाग मिळा।

कुछ समय बाद कथराहनने फिरसे पोलेट्टक व्यापार में अपना हाथ ब डया। सरज़ामिका नामक सह पागियोंके पक्षपक्षकी पक्ष करनक लिये कथराहनने ८०००० रूस सेना और २०००० कसाक सेना पामरह भेजा। १७९४ ई०में तुवारकने पास युगका अधिचार

कर अधिवासियोंको मार डाला। दूसरे वर्ष ट्रान्सिल्वानिया-
ने अपना राजमुकुट उतार दिया तथा पोलैण्डमें तुनीय
विभाग उपस्थित हुआ। पोलैण्डका स्वाधीनता विल-
कुल हूब गया। पोलैण्ड मटेयर, डाइडारो आदि फरासी
विप्लवकारियोंकी सहानुभूति पा कर भी स्वाधीनताकी
रक्षा न कर सके। कथराइन फरासी विप्लवकी घोर
विरोधिनी थी। १७६६ ई०की १७वीं नवम्बरको हटात
उनकी मृत्यु हुई। वैज्ञानिक लेत्रकोंने उनके चरित्रकी
यथेच्छ समालोचना की है। उनका नैतिक चरित्र चाहे
जो महानुभव पीटरके बाद उनके समान प्रतिमा-
शालिनी उपयुक्त सम्राज्ञी रूसके सिंहासन पर और कोई
नहीं बैठा। आज भी कथराइनकी स्मृति रूसमें गई
जाती है।

पाल माताके जीते जी प्रायः निर्जनम वास करने
थे, इस कारण माता उन्हें घृणाकी दृष्टिसे देखती थी।
कहते हैं, कि कथराइनने एक विल द्वारा पालकी उच्चा-
धिकारी होनेसे वञ्चित किया था। उक्त विल पर
हस्ताक्षर भी हो चुका था। किन्तु पालके मित्र कुर-
फिनने कथराइनकी मृत्यु होते ही विलको ले कर फाड़
डाला था। पालकी शासन कहानी बहुत संक्षेपमें लिखी
जाती है। पालने तुर्कके साथ मित्रतास्थापन करके
फरासी-विप्लवके विरुद्ध चलनेका सकल्प किया।

मेरोनाके युद्धक्षेत्रमें सुवाफ रूस और अट्रिया-
सैन्यके सेनाध्यक्ष हुए। १७६६ ई०में उन्होंने फरासी
सेनानायक मोरोको अड्रा नदीके किनारे हराया और
ज्योल्लाससे मिलानमें प्रवेश किया। इसके बाद उन्होंने
मैकडोनाल्डके साथ ट्रेवियाके युद्धमें तथा उसी साल
नोभि नामक स्थानमें जुवाटके साथ जो युद्ध हुआ उसमें
विजयपताका फहराई। पीछे वे फरामियोंको स्वीजर-
लैण्डसे मार भगानेके अभिप्रायसे आल्पस पर्वत पार
कर गये। किन्तु अस्ट्रिया सेनाने उन्हें रोक जिससे
उनकी महती क्षति हुई। आखिर वे विफल मनोरथ हो
खदेश लौटे।

अभी पालकी राजनीति विलकुल बदल गई इन्-
लैण्ड और अस्ट्रियाकी प्रतारणा समझ कर उन्होंने
बोनापार्टकी शरण ली तदनुसार बोनापार्ट ने

भी पालकी अपने दलमें मिला लिया तथा समस्त
रूस-बन्धियोंको तारामुक्त कर उन्हें नई पोशाक
तथा अन्नगालने में मज्जिन कर पालके निकट भेजा।
इसके बाद भारतवर्ष पर आक्रमण करनेके लिये
कोशिश करने लगे। किन्तु १८०१ ई०की २३वीं मार्च-
को पाल गुप्तमावरी मार डाले गये। ग्रीटाजुरफ,
वेनिसेन और पहले ये तीनों ही इस गौचनीय घटनाके
मूल थे। पालने घरे घरे राजकोषको खाली कर दिया
था।

पालकी मृत्युके बाद उनके बड़े लडके १म अलेक-
सन्दर १८०१ ई०में सिंहासन पर बैठे। वे १८२५ ई०
तक रूसके सम्राट् थे। सिंहासन पर बैठते ही उन्होंने
इंग्लैण्ड और फ्रान्ससे सन्धि कर ली। किन्तु राज
नीतिका शीघ्र ही परिवर्तन कर लिया। १८५५ ई०में वे
फ्रान्सके विरुद्ध अप्रिया और इंग्लैण्डसे जा मिले।
पहले २ती नवम्बरकी अष्टरलिटज नामक स्थानमें भोयण
युद्ध हुआ। इस युद्धमें रूसकी २१००० सेना, १३३
कमान और ३० पताका नष्ट हुई। रूसोंका कहना है, कि
अप्रियासहयोगियोंको विश्वासघातकतासे उनका ऐसा
अनिष्ट हुआ था। जो कुछ हो, प्रेसवर्गकी सन्धिसे
दोनों युद्धका अवसान हुआ। पीछे १८०७ ई०में फ्रान्सके
साथ चौथी बार मुठभेड़ हुई। १८०७ ई०में नेपोलियनने
रूससेनापति वेनिसेनको आइला नामक स्थानमें युद्धमें
नियुक्त किया। घमसान लड़ाई छिठी, किन्तु किसी
पक्षकी जीत हार नहीं हुई। आखिर टिलसिटकी
सन्धिसे फिनलैण्ड युद्धका अवसान हुआ। इस सन्धि-
में प्रूसियाके सम्राट् फ्रेडरिक ३य विलियम अपना
आधा राज्य लो बैठे। पोलैण्डमें उनके अधिकृत जो
सब स्थान थे, वे रूससेना राजाके हाथ लगे। यूरोपीय
शक्तियां सोचने लगीं, कि नेपोलियन और अलेकसन्दरने
यूरोपको आपसमें बाट लेनेका विचार किया है। अलेक-
सन्दरके शासनकालमें फिनलैण्ड-विजय एक प्रसिद्ध
घटना हुई। १८०६ ई०की १७वीं सितम्बरको फ्रेडरिकने
स्याम नामक स्थानकी सन्धिमें स्वीडेन पूर्व बोथनियाके
साथ फिनलैण्ड रूसको प्रदान किया। किन्तु फिनोने
एक तरहसे स्वायत्तशासन पा लिया। जर्मिया पहले ही

रुस साम्राज्यभूक हो चुका था। यह से कर वारस्यक राय रुसका युद्ध लड़ा हो गया। किन्तु इस युद्धमें रुसको शिरपाय प्रवेश हाय लगा।

१८०३ ईमें नेपोलियनके विरुद्ध ५म संधय हुआ। मन्थिमतक अनुसार अलेक्जन्दर नेपोलियनको सहायता करनेके लिये बाध्य थे। अलेक्जन्दरने पहले पद रोक्नेकी बड़ी कोशिश की थी, किन्तु तुर्कके साथ गियान् है। ज्ञानस मिन्सो नामक सेनोपतिके अजीत पद इन रुससैनान तुर्क पर आक्रमण कर दिया। १८१२ ईमें बुकारेष्ट नगरको क्रांसेस ट्राय इस युद्धका अयसान हुआ। रुसने पूर्वापिटन मसडेनिया और याल्सासियाको छोड़ दिया। केवल जेरिग और वेल्हार उनक अधिकांशमें रहा। आन्धिर रुस और फ्रांसमें मनमुटाव हो गया। रुसको फ्रांसस में रुसने बड़ी मुसीबत उठाती पड़ी थी इस कारण उसने फ्रांसका पक्ष छोड़ दिया। नेपोलियन भी रुस पर सहाय करनेका वायोजन करने लगे। (१८१२ ई०)

१८१२ ईकी १५वीं मरको नेपोलियनने पेरिस नगरी स युं सडेनका याबा का। वहाँ उन्होंने १५८००० सना का संधि किया। उनमेंसे ३१२००० फ्रांसवासी सेना थी। इनका मुद्दाबला करनेके लिये रुसगन ३३२००० सेना छ कर लेवार हा गया। नेपोलियन बड़ी तजीस नीपर नदी पार कर स्मालेनस्क पहुँचे। युद्धमें रुससेना पराजित हुई। इसके बाद वेरोदिना नामक स्थानक भयङ्कर युद्धा रुससेना फिलस परास्त हुई। यहाँसँ माखियन मोस्को बल दिये। नगरवासियों पहले ही मोस्को छोड़ दिया था। मोस्काक नगरमें घुसत हो नगरज्यक्ष रोषपटिन नगरमें आग लगा दो। पांच दिन तक भाग जनती रहा। मोस्कोका अधिकांश बल कर वाक हा गया। नेपोलियन कि कर्षणपिसुड हा सगिय का भयेशा करने लगे। उन्होंने समझा था, कि अलेक्जन्दर सहज ही सगिय प्रन्त्याय पर सहमत होगे तथा वे भी अज्ञान मानसम्भ्रमको रसा करत हुए सन्तु सीरेंगे। किन्तु फरामापोर नेपोलियन रुसीकी क्रूरयुधि पर परम नम हो गये। आन्धिर १८वीं अक्टूबरका नेपोलियन अन्तिम पदत हुए मा रुद्धा साह। इस समय आधा

जोशे पड़ता था। फरासीसेनामे पहले ही राहमेंके प्राम और बाजार आधिकी विध्वस्त कर डाला था। अतपय नेपोलियनको क्रमागत तुपाराच्छ और जनशून्य प्राम मपर हो कर डौटना पड़ा। वही भी आगे पीनेको जोड़ न मिली। भारणप्रदेशमें छिपी हुई कमाकसेना फरसी सेना पर टूट पड़ी। १म प्रकार भूज और शीमके प्रकाय न नेपोलियनको हजारों सेना रोड मरने लगे। आन्धिर फरासीगण २१वा अक्टूबरकी वेरोसिना नदीके किनारे पहुँची। नदी पार करनेमें भी बहुतसी सेना यमपुरकी सिपाही। इस नदीके किनारेका युद्धक सामान भयङ्कर बिल इतिहासमें प्रायः देखा नहीं जाता। स्मिगिनी नामक स्थानमें नेपोलियन अपनी सेनाका परिखाय कर पेरिस जानकी बाध्य हुए। आन्धिर उस ६ लाख पिशाकसमा मेंसे केवल ८०००० सना नीमन नदी पार हुए थी। नेपोलियनका भीषण सेनाबल पूया आक्टूबरसे विनष्ट हुए।

इस समय प्रूसियाक सम्राट् फ्रेडरिक ३य पिनि यमन प्रूसियाको उन्नतिके लिये रुससे मेल कर लिया। १८१२ ईमें डेसडेनका युद्ध तथा उसी सालकी ११वीं अक्टूबरको जिपजिगमें जातीय युद्ध हुआ। १८१४ ईमें रुसन सहयोगियोंके साथ फ्रांस पर बड़ा कर ही। किन्तु पेरिस अ क्रमण-कालमें बहुतसी रुसीसेना मारी गई। घाटरतूके युद्ध तथा सेप्टेम्बेकालमें नेपो लियन ६ निर्वासनके बाद इतिवर्तिन स्वाभेन और लोरेन पर अधिकार जमाया। उसी ५य अक्टूबरकी शासन प्रथासोम बहुत हेरफेर हुआ तथा यहाँ रुसशासनकी जड प्रबलत हुई। १८२५ ईमें रुस-सम्राट् अलेक्जन्दरका शानतशोक मुहानक समीप यागतनगर नामक स्थानमें अइस्मात् देहात हुआ।

उनक समय रुसाम्राज्य घाटों और कैब गया था किननेरड, पोलेरड, देसार्पिया काकजसक अन्तर्गत देवास्थान, तिरयान, मिडुम लिया और इमारेगिया आदि स्थान रुससाम्राज्यभूक हुए थे। इनक शासनकालमें दास और धनश्रीवियों का अस्तित्व बहुत कुछ सुवरत गई थी। राष्ट्रनतिक का साथ फलपदार किया गया था विधासिधार्थ उन्नतिके लिये नामा प्रकारक उपाय

श्वलम्बित हुए थे। इस समय काजान, जाररूफ और सेण्टपिटर्सबर्गमें विश्वविद्यालय खोले गये। इन समय कार्योंमें राजमन्त्री स्पेरानिन्किने वादशाहकी बड़ी मददकी थी। पीछे वे कई कार्योंसे वादशाहने विरागमाजन हुए थे। इनके बाद नेत्र नितवगोरोदे और साइविरियाके शासनकर्त्ता हुए। स्पेरानिन्किने वाद मिस्रूफ, नवो-मिन्टजेफ और बरफ चीफ् इन तीन मन्त्रियोंने रूसका शासन किया था। किन्तु शेषोक्त दो लोकवक्त्र न हो सके। इस समय मुद्रायन्त्रकी स्थापनता बहुत कुछ जाती रही। अनेक उदारनैतिक अध्यापक विश्वविद्यालयसे निकाल दिये गये। इस समय सम्राट्को सभी विषयोंमें संदेह होने लगा और उन्होंने गुप्त समितिकी सृष्टि की। ऐसे साङ्गठनका समयमें सम्राट् इस लोकसे चूठ वसे। अनेक समालोचकोंने उनकी अच्छी समालोचना नहीं की है। नेपोलियनने उन्हें वैजन्ती श्रोकोंकी तरह कपटाचारी पाहा था। किन्तु सच पूछिये, तो वे वैसे नहीं थे। पर हां, उनके हृदयमें उतनी ताकत न थी।

कनसाम्राज्यके नियमानुसार सम्राट् पालके श्व पुत्र कनस्तान्ताइन प्रकृत उत्तराधिष्ठाती थे। यद्यपि अलेक सन्दरेके कोई सन्तान न थी। फिर उन्होंने अपने इच्छानुसार जूलिया नामक रोमन कैथलिक मतवलम्बितों पर पोलिस राजकुमारीसे ब्याह कर सिंहासनका स्वत्व छोट दिया था।

इस समय रूसकी प्रजा अपने देशमें साधारण तन्त्र परिचालित राजतन्त्र प्रथाको प्रचलित करनेकी विशेष चेष्टा कर रही थी। यह ले कर पचा विद्रोह तुरत खड़ा हो गया, किन्तु विद्रोही दलकी हार हुई। बहुत मृत्यु खराबोंके वाद विद्रोहका अवसान हुआ। पाच विद्रोही दूत तथा अधिकांश सेना साइविरियामें निर्वासित हुई।

इसके बाद कनस्तान्ताइनको भाई निकोलससिंहासन पर बैठे। उनके शासनकालमें उदारनैतिका शासन संकुचित हुआ। १८३० ई०में रूससाम्राज्यका सम्पूर्ण व्यवहार गाल्ज सङ्कलित हो विधिवत् और प्रकाशित हुआ। इस समय बड़े लडनेके राज्यप्राप्तिस क्रान्त नियम प्रचलित हुए। मुद्रायन्त्रका कठोर विधान रहने हुए भी इस समय उसकी उन्नति हो रही थी। निकोलस १८२६ २८ ई० तक

पारस्यके साथ युद्धमें व्यापृत थे। इस युद्धमें उनकी सम्पूर्णपसे जीत हुई।

एलिजाबेथपोल तथा जाभानयुलक नामका पचा स्थानमें पारमिश्रागण रसियन अच्छी तरह परास्त हुए। तुर्कामाचहे नामक स्थानकी सन्धिमें १८२८ ई०की २२वीं फरवरीको उक्त युद्धका अवसान हुआ। इस युद्धमें रूस सम्राट्ने युद्धके व्यव स्वरूप २ करोड दबल तथा परिचर और नाखिचेवान नामक स्थान पाये थे।

निकोलसने श्रोकोंकी स्थापनताके लिये यथेष्ट सहानुभूति दिलवाई थी। वे चाहते थे, कि प्राचीन मता-वलम्बी ईसाइयोंके ऊपर उनको धाक जमे। इस कारण तुल्यक श्रोकके साथ युद्धमें लिन हुए। इसमें इङ्ग्लैण्ड, फ्रान्स और रूसने बीचमें पड कर १८२७ ई०को लण्डनमें पचा संधि कर ला। इसी संधिसे १८२७ ई०की २०वीं अक्टूबरको नाभारिनोका युद्ध छिडा। इसमें उक्त महयोगियोंके गोलार्धनसे तुल्यक जंगी जहाज सबके सब हूब गये। पीछे निकोलस अच्छे तुल्यकके साथ युद्ध चलाने लगे। एशियामें पारसके विचने तुर्कसेनाको परास्त कर आर्जंदम अधिकार किया तथा यूरोपमें दिपविश्व प्राण्डवरीको हराया। रूससेना बल्कानकी पार कर आट्रियानेपालमें चुसी। यहां १८२६ ई०को पचा संधि स्थापित हुई। इसने तुल्यककी बड़ी अमु-विधा हुई थी।

१८३१ ई०में पोलगण फिरसे विद्रोही हुए। तदनुसार पारसके विचने वारस पर अधिकार जमाया। इस समय यहां महामारीका भारी प्रकोप था, इसीसे प्राण्ड ड्यूक कनस्तान्ताइनकी मृत्यु हुई। अभी पोलोंका भाग्य एकमात्र निकोलसके अनुग्रह पर निर्भर करता था। तदनुसार प्राचीनकालके पात्रासिसेटके आदर्श पर यहां शासनप्रणाली प्रचलित हुई। वारस, लुवलिन, लुक, रेडम, मडलिन इन सब स्थानोंमें पूर्वोक्त शासनका प्रचार हुआ। विलनाता विश्वविद्यालय जो मिक्विफज और लोर्लिवेल द्वारा सुप्रसिद्ध हो गया था, उठा दिया गया। १८३३ ई०को आङ्गियर स्केलेसी नामक स्थानमें तुल्यककी एक दूसरी संधि स्थापित हुई। इससे रूसको तुल्यकमें शासनका कुछ अधिकार मिला। १८४८ ई०के

विद्रोहके बाद निकोलास इट्टात्पिनने विद्रोह दमनके लिये सम्राट् फ्रांसिस जोसेफको पार्लेमेन्टसेनापतिके अधीन एक दस सेनाकी साथ भेजा। १८५३ ई०की क्रिमियाका युद्ध आरम्भ हुआ। इससम्राट् ने तुर्कको आपसमें बाँट देनेका सङ्कल्प किया। किन्तु इससे फ्रांस और इङ्ग्लैण्डने उनका पक्ष छोड़ दिया। इस स्मरणयोग्य युद्धकी घटनाके मध्य अन्तमा बाबाइलामा, इट्टार मय आदि स्थानोंका युद्ध तथा सिबाएगोस्का अश्वीय सबले प्रसिद्ध हैं। बाबाइयेनने सिबाएगोस्को अन्धो तरह सुरक्षित कर दिया था। उनके जैसे प्रतिमा राजाकी धीर सेनापति क्रिमियाके युद्धमें कीरे भी न थे। १८५५ ई०में रूसगण उक्तनगरके दक्षिण कुछ हिस्से को छोड़ फेराइ कर फिरसे उत्तरको ओर हटके हुए। इसी साल सम्राट् निकोलासका अकस्मात् देहांत हुआ।

निकोलासकी मृत्युके बाद उनके पुत्र २५ अग्रेष्ठ सन् १७ वर्षकी अवस्थामें सिंहासन पर बैठे। (१८५५-८१ ई०) सिंहासन पर बैठने ही वे युद्ध रोक्ने की कोशिश करने लगे। तबनुसार १८५५ ई०को पेरिस नगरमें संधि हुई। शर्त यह ठहरी, कि रूस कृष्णसागर में काहल गोंडराज नहीं रख सकत और प्राच्य ईसाईके ऊपर उनका आधिपत्य रह नसकता। इसी पेशकशिया के कुछ अंश तथा बेनिविय संधिद्विज प्रदेश छे कर रोमानियाकी संधि हुई। पीछे पार्लियमन्ट सन्धि द्वारा रोमानिया रूसके दे दिया गया था। सिबाएगोस्का फिर से बनाया गया।

अग्रेष्ठसन् २१ बाद ही १८६१ ई०में ममी वासोको छोड़ दिया। उनका यह काम सफल नही था। निकोलास इसका सूरपात कर गये थे। ममी उनके पुत्र द्वारा यह कार्यमें परिणत हुआ। १८६३ ई०में फिरसे पोलिस विद्रोह खड़ा होनेसे पोलैण्डकी स्वाधीनता बिलयुक्त जती रहा।

इसके समय तुर्किस्तान धीरे धीरे रूसके शासन अधीन हुआ। १८६५ ई०में तासकन्व जीता गया तथा १८६७ ई०में २५ अग्रेष्ठसन् २१ तुर्किस्तानकी शासन व्यवस्था सम्पन्न की। १८५८ ई०में सेनापति मुटामिकने चीनीके साथ एक संधि की। इससे बामुर नदीके वाय

किनारे बितने भूभाग थ ममी रूस साम्राज्यमुक्त हुए। पूर्व पश्चिममें प्लाविमपदक नामक एक मया इन्टर सीर पोताभय इस समय खोला गया। १८७७ ई०में रूस स्वाभेनिक ईसाइका पक्ष छे कर तुर्कके विरुद्ध लड़ा हुआ। छे मना नामका स्थानके मयदुर अश्वीयके बाद इसने क्रुस्तुनमुनिया तक अपना अधिकार फैलाया।

अनन्तर १८७८ ई०को मानसिफानोमें सन्धि हुई। इस संधिसे रोमानिया स्वाधीन हो गया, सर्गियाथा आपतन बढ़ा तथा तुर्कके अधीनस्थ प्रदेशोंमें स्वाधीन बुखारेिया राज्यकी सृष्टि हुई। पीछे पार्लियमन्ट संधि द्वारा उक्त शर्तमें बहुत हेरफेर हुआ। तबनुसार रूस पेशराबिया स्थानमें जो सब प्रदेश जो बैठे थे, ममी उन्हें मिल गये। अग्रेष्ठस पर्वत की ओर राज्यसोमा बढ़ाई गई। बुखारेिया को मार्गोंमें विभक्त हुआ। दक्षिण भागका नाम क्रमेनिया पड़ा। वहाँ एक ईसाइयासनकर्ता नियुक्त हुए। इस समय रूसमें निरिहियद वन फैला हुआ था जिससे यहाँ अग्निविद्रोहके लक्षण दिखाई देने लगे। निरिहियद या शूणवाश्रियेनि सम्राट्का काम तमाम करनेका पश्यन्य रथा। सम्राट्का शीयन संकटापन्न हो गया। १८६६ ई०को १६वीं अग्रेष्ठकी काराकोरफने सेस्वपीरसर्वगमें सम्राट्को देख कर उन पर गोली चलाई। पीछे अग्रेष्ठसन् २५ पेरिसमें २५ मेमोसियनसे मिलने गये, उस समय मी बेरेओस्कि नामक एक लोकने सम्राट् पर गोली चलाई थी। अनन्तर १८७१ ई०की १४वीं अग्रेष्ठकी मनोनिमफने फिरसे सम्राट् पर बार किया। इस समय मी ये बड़े कीगखसे बच गये। बादमें उनका मकान ज्वा देने तथा उनकी गाड़ी तप करनेकी कोशिश की गई थी। अन्तमें १८८१ ई०को १३वीं मार्चकी ओ पश्यन्य रथा गया उससे सम्राट्ने निस्तार नहीं पाया। पांच पश्यन्यकारी प्रावृष्टसे दृष्टित हुए। उनमें सेरफिया नामक एक स्त्री थी। इस प्रकार २६ वर्ष राज्य पर २५ अग्रेष्ठसन् २१ नामक निवार बने। उनकी स्त्री धीरे बड़े बड़के पहल्ले ही चमक बसे थे। इस कारण द्वितीय पुत्र ३५ अग्रेष्ठसन् २१ नामसे सिंहासन पर बैठे। एनका अन्त १८८५ ई०में हुआ था।

१८५५-१८८१ ई० तक २५ अलेकसन्दरके समय रूस-साम्राज्यमें ऐतिहासिक घटनापूर्ण जो सब परिवर्तन हुआ था, उसके बाद १८८२-१९०२ ई० अर्थात् दश वर्ष-के भीतर भी उसका सौ भागमेंसे एक भाग भी संस्कार नहीं हुआ। २५ अलेकसन्दर शासनविधि, जिल्द और कृषि, समाजनीति और शिक्षाविषयक संस्कार कर रूस के जातीय जीवनमें एक आमूल परिवर्तन कर गये थे।

प्रजावर्गका दासत्वमोचन, उन्हें भूमिका मध्य स्वत्वाधिकार दान, म्युनिसिपल और प्रादेशिक (प्रजा-सम्बन्धीय) स्वायत्तशासनविधि, उच्च और निम्न धर्माधि-करण, सुद्रायंतकी स्वाधीनता और साधारण शिक्षाका संस्कार कर वे इस बातको कोशिश करने थे जिससे यूरोपवासी पाश्चात्य जातियोंके साथ रूसनैतिक उन्नतिमें मुकाबला कर सके। किंतु मानसिक और नैतिक तथा शिल्प और वाणिज्य विषयमें कोई विशेष उन्नति न हुई। अधिकांश प्रजा मूल, अत्याचारी और दरिद्र थे। स्थानीय स्वायत्तशासन-सभा इन दुर्वृत्तोंका दमन करते थक गई थी। धर्माधिकरण न्याय और पक्षपातशून्य विचार दिखा कर तथा दुर्वृत्तोंको राजदण्डसे दण्डित कर जनताको प्रसन्न नहीं कर सकते थे। शिक्षाविभाग और शिल्पविभागमें किसी प्रकारकी उन्नति होने न पाई।

इनके समय कुछ ही दिन सुशासन चला था। धीरे धीरे वह सुखस्वप्न टूट गया। पूर्वतन अराजकता अच्छी तरह जग उठी। उदारनैतिकादल पहले राजतन्त्रके आ-मूल संस्कारके पक्षपाती थे, किन्तु वे भी बातकी बातमें राजविरोधी हो उठे। जातीय और सामाजिक स्वप्नेलास-से तथा राष्ट्रविप्लवकारी पड़यन्त्रसे वे लोग आकाश-को प्रतिध्वनित करने लगे। इस कारण रूसजातिकी उन्नतिको आशा निराशामें पलट गई। उनकी लहलहाती लता पर पाला पड़ गया।

शिक्षाविभागकी निम्न प्राइमरी शिक्षामें कोई विशेष फल न हुआ। विद्यालयके छात्र और छात्रिने शिक्षा विभागकी राजविधिका परिवर्तन करनेके लिये दल हंग-उन किया। किन्तु वे राजशक्तिके सामने कब तक उठर

सकते थे। उन्होंने जनताका आश्रय लिया। इस मिलित दलका उद्देश्य राजाके अनुग्रहमें बहुत कुछ सिद्ध हुआ था। किन्तु राजाने जब देखा, कि दुर्वृत्त प्रजा उनकी आशाका उचित रीतिसे पालन न कर रही है, तब वे सार्वजनिक राजद्रोहकी आशङ्का कर मर्वाको दण्ड देने अप्रमत्त हुए। पुलिसने मर्वाको पकड़ा और कैद किया, कुछ तो राज्य और जन्मभूमिसे निर्वामित हुए। जिन्होंने भाग कर जान बचाई थी, वे राजाके अन्याय विचार और पुलिसके अत्याचारकी बात स्मरण कर कठोर राज-ग्रह हो उठे। दिनदहाड़े सेण्टपिटर्सबर्गके प्रकाश्य राजपथ पर गल्लघारी पुलिसदलपति जेनरल मेजेण्टनोफ उन लोगोंसे मारे गये। इसके बाद ही उन्होंने सम्राट्-के प्राण लेनेका संकल्प किया। १८७६ ई०के अप्रिल मासमें सोलोमिफ नामक एक व्यक्तिने सम्राट्को देखा कर उन पर छः गोली चलाई। सौभाग्यवश सम्राट् बच गये। अगन्तर उसी सालके दिसम्बर मासमें मोस्को नगरके समीप राजकीय रेलगाड़ी (Imperial train) को ध्वंस करनेकी चेष्टा की गई। १८८० ई०में पड़-यन्त्रकारियोंने उनके शीतप्रासाद (Winter Palace) के भोजनागारके नीचे डिनामाइट रख कर सम्राट्के परिवारका संहार करनेकी कोशिश की। किन्तु इस-वार भी सम्राट् सपरिवार बाले बाल बच गये। केवल १० अनुचर निहत और ३४ घुरी तरह घायल हुए थे। आखिर १८८१ ई०की १३वीं मार्चको चिट्रोहियोंने दूसरा पड़यन्त्र रचा। सम्राट् अपने शीतप्रासादके समीप साम-रिक क्रीडाकौशल देख कर घर लौट रहे थे, इसी समय पड़यन्त्रकारियोंने उन पर बम फेंका। राजाके प्राण तो नहीं निकले, पर थोड़े सहित घायल हुए। इसी घायलसे वे कुछ दिन बाद ही परलोकको सिधारे।

२५ सम्राट् अलेकसन्दरकी मरनेसे पहले राजद्रोही प्रजाकी मनोवेदना अच्छी तरह मालूम हो गई थी। जब उन्होंने देखा कि पुलिसके कठोर शासनसे भी मर्म-पीडित प्रजा प्राणपणसे अपने पक्षका समर्थन कर रही है, तब वे क्याके वशवर्त्तों हो अपनी राजशक्तिका प्रभाव भूल गये। प्रजाकी कुछ भाग पूरी करनेके लिये उन्होंने जेनरल लोरी मेलिकफको मध्यविभागका सचिव

(Minister of the interior) बनाया। जिस दिन उनकी मृत्यु हुई उसी दिन सन् १८६१ न प्रथम प्रधान राजकर्मचारी और राज्यक गणसाम्य व्यवस्था की वे कर एक कमिशन से गठित करनेका आज्ञापत्र (Ukase) लिखा। उनके कथन अनुसार उस कमिशन या समझौते राज्यक समां विभागोंक शासनविधि से सहायता अधि कार मिला था।

विभाकी मृत्युके बाद उनके लड़के ३२ अक्टोबरसन् ६६सिंहसासन पर अधिबढ़ हुए (१८८१ १८९४ ई०)। वे उदारमैतिक-मत (Liberalism)के विशेष पक्षपाती थे। वे बहुत प्रजाकी बंध देनके लिये स्वयं इस उन्नतप्रथाक विपरीत कार्य करने लगे हो गये। उन्होंने अपने विपरीत प्रवर्तित से सत्य शासनगणानोकी विद्य कृत न बर्खा, कही कही उनका प्रभाव पड़ा दिया था।

प्राक राजकी शासनकार्यमें ग्राम नगरादिका स्थापकशासन जैसा विविधित हुआ था भगो उसका कर्तृत्वकार बंध राजकर्मचारीकी ऊपर सौगा गया। जमा शोरीक भयोनातागत मुक्त कर प्रजाको जा क्वापनतादान दिया गया था उस पक्षक कनकर मरिच हमने मशूर नही किया। उन छायाका क्वाक था, कि छाया मुक्त प्रजा अपना स्थापनताकी रक्षा न कर सकगे। जमा शूर लोग उम्हा मैले एक एकको प्रधान चुन के ग और वे ही प्रजाक ऊपर कसुट्ट कर मक गे। यूरोक भन्वाम्य राज्यां पार्मियामर-समाक आर्दी पर सन् १२ अक्टोबरसन् १९०० वहाँ जमप्रभो समिति स्थापित हुए थी। जिससे यह समा गृहशास समतागुमार काई कार्य न कर सक, उसकी भा ग्य क्या कीया। वहाँ तक कि म्मुनिमित्त समितिही समता मा प्रय की ग थी। क्वा साक्षात्में पुनः पूजन राजन क्वा उदय हुआ तथा उशक साथ साथ फिरसे विश्रादितका मानुभाव होन लगा।

प्रजासाधारणके गिसा भार शासन विपयक उन्नति करनेमें राजशोरीको इत क्वा जामोक्ताकी प्रजावृत्ति इन सगा तथा पदा निहितक्य और पना विंक्रम समन्वयक प्रय हा गया। मर्वांसमन्व

गिहित समन्वयको प्रय यह मान्य हुआ, तब प राज शोरीकी इयड इन मप्रसर हुए। पीछे अब उम्होंने देखा, कि जातीयता, धर्मविभ्यास और राजतन्त्र एक साथ प्रगहित न रहनेसे रूस साम्राज्यका कल्याण नहीं तब वे सुधमर्शी स्वाभोक्ति प्रतिपादित इस राजतन्त्रका अनुमरण करने पाछ्य हुए। सन् १९०३ अक्टोबरसन् १९०६के जिशागुद और परामर्शीवाता मि० पोलिडोनप्रसेकने राजाके मोतर यह आशावसा बनाय प्रवेश करा दिया। सन् १९०६ राजतन्त्रके पक्षपाती होने पर भी जातीयता और धर्मप्रथा नता मूले नही थे। उम्होंने समास कसकी विभिन्न जाति और धर्मसमन्वययुक्त व्यक्तियोंका कृष्ट गृह करनेकी चेष्टा की थी। शर्वाकि, कसके विभिन्न स्थानमें भाषा और धर्मकी पूषकता है,—फिनलैण्डपासी या फिनिस गो स्लाविन भाषा बोलत हैं। यह स्लोविस और फिनगण प्रांशर हर मतायजनी है। बाल्टिकप्रदेश पासियोंमें जमन छेड़ और पक्ष भाषा प्रचलित है। प लोग लूथर मतागुमार है। दक्षिण पश्चिम रूस प्रदेशपासी पोर्षीकी भाषा पाश्या है। प लोग रोमन कैथोलिक है। यह दिवांस भाषा विहित है। मध्य बङ्गा और क्रिमिया विगामवासा इस्लाम पमाउकनी मुसलमान छातर भाषाका व्यवहार करत हैं। काकजस प्रदेशक विभिन्न स्थानम विभिन्न जातिका बास है तथा उनको भाषा भी भिन्न भिन्न है। जिससे इन सब जातियोंकी भाषा, धर्म और पुनरपरम्परागत जातीय और स्थानीय शासन पद्धतिम प्रजा न पहुच उन भार बादशाहीका विरोध मध्य था। किन्तु अब जिन जनसमाजमें इस नई प्रथाका प्रभाव कैसा, तब वरीक अधिवासियोंमें प्रभाव जाति क्वाकी भाषा पम भार शासनपद्धति-विस्तारकी चेष्टा क्वा ग थी। सन् १९०६ मिकामस और २५ अक्टो- बरसन् १९०६ शासनकार्यमें यमी क्वा न हुए थी। विन्तु सन् १९०३ अक्टोबरसन् १९०६के अधिवास, रशिया और प्रमोनाय विना ज्ञान ही पाठपाठिकरण यह कार्य सम्पन्न किया था।

उनके अन्तगम उन सब स्थानोंका शासनपद्धतिवा कसके अनुकरण पर था। विधभाषागमन है ग थी। राजकीय शासनविधिमें, धर्मविपरीत, वहाँ

तक कि विद्यालयोंमें भी राजशासनका प्रचार हुआ।
 इससमयके विन्तारके लिये भी उन्होंने शिक्षाविभागमें
 नई विधि चलाई थी। राजशासनके अनुसार प्रायः
 धर्मशालाएँ अर्थात् इस्लामधर्म क़स्बमें फैली। किन्तु
 इसके सिवा अल्प धर्मप्रदण करना राजनियमसे विर-
 त्त निषिद्ध था। वैज्ञानिक अधिवासियोंको भूयधिकार
 देनेका अधिकार नहीं दिया गया। कहीं कहीं वैज्ञ-
 निकसे वृत्तपूर्वक जमीन छीन कर कट्टर क़स्बों देनेका
 नियम जारी था। यह कार्य समाप्त करनेमें स्थानीय
 राजकर्मचारियोंने राजका आदेश नहीं रहते हुए भी
 बहुत अत्याचार किया था। यहाँ तक, कि जब कहीं
 विरोधित्त राजकर्मचारोंके विरुद्ध खड़ा होना, तब
 वह राजद्वारमें दण्डनीय होता था। सभी जातिके मध्य
 बहृदियोंका कष्ट गुरुर हो गया था। क़स्बके पश्चिम
 और दक्षिण नज़रखानोंकी तरह वे लोग रहने थे। यहाँ
 धनी थे और गरीबोंको सहाता उनका व्यवसाय था।
 वे लोग शमाचप्रन्त राजकर्मचारियोंको वनसे वर्गी-
 भूत कर लेते थे। इस कारण शासनकर्ता उन पर
 नियमपूर्वक शासनविधिक प्रयोग नहीं कर सकते थे।
 इस राज्यशासनको शिथिलताके कारण सुदेवाके यहूदी
 प्रजाके प्रति मनमाना अत्याचार करते थे। सम्राट् ३य
 अलेक्जन्डरने यह संवाद पा कर राजविधिकी काममें
 लानेका कठोर आदेश निकाला। यहाँ तक कि उस
 आदेशसे यहूदियोंको शिक्षा और वाणिज्यका पय रक
 गया था।

उनके शासनकालमें वैज्ञानिकके साथ राजनैतिक
 संभवका बहुत परिवर्तन हुआ था। उनके पिताके
 राज्यकालमें सम्राज्यका मुख्य उद्देश्य था जर्मनीके
 साथ मित्रतामन्त्रमें आवद्ध रह कर आत्म सम्मान रक्षाका
 उपाय निर्धारण, गत क्रियाके युद्धमें दक्षिण-पूर्व क़स्बके
 जो सब प्रदेश ग़ल्लेके शय लगे थे, उनका पुनर्द्धार,
 सुखतानकी शक्तिकी चूर करना और नीच जलन जानि-
 केमन्य क़स्ब प्रभाव फैलाना तथा मध्ययुगमें धीरे-
 धीरे क़स्ब साम्राज्यका विस्तार।

वर्तित्त काट्टेसने विसमाक क़त्तूक नेटिपिटस-
 वर्गकी मन्त्रिमन्त्रीकी वक्त्रिचिन् राजनैतिक साहाय्य-

दानका प्रस्ताव तथा १८३६ ई०के अक्टूबर मासमें क़स्ब-
 की राज्यप्रयोग शक्तिकी खर्च करनेका उद्देश्य अष्टे जर्मन
 एलःएल्स निष्पादिन होते देव सम्राट् ३य अलेक्जन्डर
 सिंहासन पर बैठे। वे जर्मनीका वंशुत्व और संभव
 छेड देनेके लिये बाधर हुए। किन्तु फिरसे १८८१
 ई०की गोपनीय सन्धिमें संतुष्ट हो दोनों सम्राट् ने भेड
 कर लिया। दूसरे वर्ष डानज़िग नगरमें नवीन ज़ार और
 वृद्ध जर्मन सम्राट् आपसमें मिले जिससे उनका सींहाड
 और भी बड़ गया। १८८४ ई०की सिक्यानेमिड नगर-
 में तीन सम्राट्ने मिल कर तीन वर्षके लिये Three
 Superior League संगठन किया। इस प्रकार दोनोंमें
 एक बड़ो मन्त्रि तो ही गई, पर क़स्ब-सम्राट्के मनमें
 जर्मन सम्राट्के मैत्रतासम्बन्धमें धीरे असन्भाव रह गया।
 मन्त्रिपर विसमाककी वानसे उन्हें अच्छी तरह मान्य
 हो गया था कि क़स्ब साम्राज्यकी शक्तुता क़स्बना ही उनक
 मुख्य उद्देश्य था। इससे उनका संदेह और भी बड़
 गया। उन्होंने क़स्ब-साम्राज्यकी राजनैतिक स्वाधारक्षक
 लिये क़रासियोंका पराक्रम खर्च करना न चाहा। आपस-
 में भेड रचना ही उन्होंने अच्छी समझा। तभीसे वे जर्मन-
 सापेक्ष सामन्वयसाधक शक्तिपुत्रिणी (The Balance
 Power) प्रतिहायावलीके विरुद्ध चउते लगे। १८८७
 ई०में सिक्यापीनिकका सन्धिकेड बात जानने पर सम्राट्
 उसे भी फिर 'सिन्धु' करनेको राजी न हुए।

इसी समयमें वे धीरे धीरे क़रासी-राज्यके साथ
 मित्रता करने लगे। उन्होंने जर्मनी, अस्ट्रिया और इटली-
 की मिलित शक्तिके (The Triple Alliance) विरुद्ध तुल्य-
 शक्ति संगठन करनेका चेष्टा की। किन्तु वे फ़्रान्सके साथ
 शार्थतः किसी सन्धिसूत्रमें आवद्ध न हुए। क्योंकि फ़्रांस-
 गवर्मेण्टने अपने वन्धुत्वकी इततता खरू तथा जिससे
 यह वन्धुत्व स्यायी रहे, इसके लिये कोई उपयुक्त
 शक्तिस्वीकार (Require site guarantee) न किया।
 पाँडे जब क़स्ब सम्राट्की मान्य हुआ, कि दोनों शक्ति
 मिल कर युद्धकी तैयारी कर रही है, तब उन्हें अपनी
 अवस्था अच्छी तरह सूझ पड़ी। उनका ख्याल था,
 कि इस सन्धिवद्ध ग़ल्लेके साथ यूरोपमें यदि एक
 महासमर खड़ा हो जाय तो फ़्रान्सके साथ मिल कर

युद्ध कालक सिमा एव प्रयत्न शत्रुके हाथसे बचनेका कोइ उपाय नहीं। तबनुसार ये इस धमापका दूर करने के लिये सभसर हुए। १८१४ ई०में एक सामरिक सभा (military convention) संगठित हुई। इस और फरसोपसक सामरिक उद्यम कर्मधारियेनि परान हो कर दोनों पक्षकी मलाइक लिये युद्ध सम्पकीय माना विषयोकी मोतासा कर का। इस समय रूस और फरसो राज्यमें विरोध सन्नाय स्थापित हुआ था।

१८११ ई०में परल फरसा मोसेनापति जार्जिसक भयोन एक मोवादिनी कनयन नगरमें था बंधुयो। राजाके भाइएले उनका मच्छा स्थापत किया गया था। दो वर्ष बाद १८११ ई०के मन्सूर मासमें रूस सनापति भायजन पेरिस और टूलॉस नगर बंधने गये। यहाँ उनको मच्छो पातिर हुई थी। किन्तु फिर मो बेनी जारि क मध्य प्रकृत "Illiad" वा मिन्न शब्द सायकृताक साथ प्रयुक्त न हुआ। १८१२ ई०में रूस सम्राट ३य म्मेकनमूरकी मृत्युक बाद फरसो मन्सिसभाक प्रेसिपण्ट म० रियो (M Kabot) न दोनी राज्यकी मिन्नताके सम्भवमें ज्ञा भिमिप्राय प्रकट किया, उतस पृथक सन्धिका सुषय संदेह बिलकुल दूर न हुआ इसक बाद १८१३ ई०के मगस्त मासमें राजकीय कायक उद्देश M Felix Faure सद्यपितर्सवर्ग नगर भाय मोर दानी जारिमें मंड कर गये। इस समय फरसो प्रजा सभक सनापति और रूससम्राट् न कायसमें द्वेषा मन्कायक भिमिनमून पकृता पड़ो थी। तमोस दोनी राज्य "national allies" नामस पायिन हुआ।

सम्राट् ३य मलकसमूरन पश्चिम पूर्व पृतावमें अपना प्रमुख भयुण्य रबनेक लिय कृमयागरक चिनारे भवस्थिन कम मोवादिनाकी बंधुई की। १८१६ ई०में पार्लिमेन्की सन्धिका मम घोषित होनक बाद सम्राट् न भविष्य युद्धको आगुहास बाहुमनगरका बुगादि द्वात सुरक्षित कर रणा। यहाँ एक संदर काठा गया और तालना रान लगा। बलकान प्रायद्वीप क भविष्वासिताक कुगरहारम प परलत हा घोषित थ। किन्तु पायविषयमें मज्यहय दानेको इच्छा रखत हुए मो उन्हीन उल कर्बल भवना हाय भाय

किया। क्योंकि ऐसा करनेस सारे यूरोपमें एक भयदूर युद्ध होनका सम्भावना थी। राजकुमार म्मेकसमूर और पीछे म० फाम्पोलक सादरक भयोन कुकगेरिया गवर्मेण्ट रूस राजनीतिके विरुद्ध नई बार खड्डो हो गई थी। फिर मो सद्यपितर्सवर्गकी मन्सिसमान नाता उपाय दिखसते हुए उनका यह भयद्वारा दूर करनेकी कोशिश का। आखिर कुकगेरिया गवर्मेण्ट विरोहभाव छोड़ दनक लिय पाध्य हुए था।

उनके शासनकालमें रूससाम्राज्यको सोमो पश्चिपामें बहुत दूर तक फैल गई थी। उनक सिंहासन पर बैठत ही जेनरल स्क्वैडेक टेजेने तुर्कीमानियोंकी वासभूमि पर अधिकार किया। इसके बाद सम्राट् ने यह मदेश अपने साम्राज्यमें मिला लेनेका हुकुम दिया। १८७४ ई० में मय (पेशिस)को हस्तगत कर क्वासेना भफगा निस्तानको भोर पड़ा। रूससाम्राज्य और भफगा निस्तानको सीमाका निर्देश करना हा इस भमियानका उद्देश्य था। १८७५ ई०के मार्च मासमें पाश्चिमे नामक स्थानमें इसी युवक कम और भकमान-सैन्यमें घमसान लड़ाई उठो। रूससेनाके भकमान-सीमात्मके भविष्य भारतभमियानको सूचना समक कर मंगरेजराज बोचमें पड़ गय मीर रूससाम्राज्य निर्देश करनक लिय सेद्यपितर्सवर्ग-मन्सिसभाक साथ संधि करन गयो हुए। किन्तु उपरोक्त पाश्चिमे युद्धमें रूससनाको हारकावता देव कर मंगरेजराज निश्चित न रह सक। ये मिन्नराज्य अमीरक सम्मान और आतरनायका रक्षक लिय युवायें सेवार हुए। किन्तु हा वष बाद १८८३ ई०में रूससाम्राज्य को सामानिर्देशक सन्धि हो गई।

इसक बाद मप्रगामो रूससेना दीरदका परिस्थाग कर भसाम साहसत पूर्व-पश्चिपामो पामोत भविष्यकाको भोर वीको। १८१८ ई०का मंगरेज रूसक बीच हा सन्धि हुए थी उनक मनुमार रूपन पामोरेहा छोड़ दिया। सम्राट् ३य मलकसमूरक शासनकायम मध्य-पश्चिपामवर्धम कमराज्यसोमा ३२६८६५ पग क्वासितर बू गई था।

१८६४ ई० को एना नमूरकी सम्राट् ३य मलकसमूर परलाकका सिपाय, पीछे उनके लड़के ३य निकोलस

सिंहासन पर अभिषिक्त हुए । वे आन्ध्रगन्तरीण और वैदेशिक-कार्योंकी राजनीतिको अश्रुण करनेकी कोशिश करते थे । उनके शासनकालमें उदारनैतिक दलके प्रभावसे राजकीय शासनविधिमें बहुत हेर फेर होगा, जान कर उदारनैतिक दलपतियोंको जो आशा दी गई थी, त्वेर-प्रदेशीय लिबरलदलके आवेदन पर राजाके असम्प्रति-ज्ञापक प्रत्युत्तरसे उनकी वह आशा निर्मूल हो गई ।

२५ निकोलस अपने जीवनके मुख्य विषयमें पिता जैसे चरित्रवान् होने पर भी जैसे कूटनीतिविशारद नहीं थे । पिताकी तरह सारे रूससाम्राज्यको एकमात्र रूसजानिकी वासभूमि (Policy of Russification) बनानेकी इच्छा रहने पर भी इन्होंने यहूदी, धर्मान्तरविश्यासी और मिनन् धर्मों पर अत्याचार नहीं करनेका हुकुम निकाला । शिक्षित राजकर्मचारियोंके बड़े सम्मानके साथ अत्याचार निवारक राजाशाका पालन किया था । अतः विधर्मियों पर जो अत्याचार होता था वह बातकी बातमें रुक गया । पिताकी कूटनीतिको निकोलसने बिलकुल छोड़ दिया था सो नहीं । उन्होंने फिनलैण्डवासी मातृको ही पितृ-प्रवर्तित प्रथासे रूस बना लिया था । इसके विरुद्ध फिन-लैण्डवासीय फिन और अन्योन्य जातिका आवेदन अग्राह्य कर दिया गया था ।

वैदेशिक सास्त्रसे भी उन्होंने अपने पिताका पदानुसरण किया था । पीछे उन्होंने फ्रान्सके साथ बन्धुत्ववृद्धि, जर्मनीके साथ सन्ध्याव स्थापन और वालरून प्रायद्वीपकी राजनीतिक अवस्थाका परिवर्तन करना तथा शलभ-जातिके ऊपर आधिपत्य फैलाना चाहा । दक्षिण पूर्व यूरोपके सर्बिया, मोण्टेनिग्रो और बुल्गेरिया प्रदेशके अधिपतिके साथ इन्होंने फिरसे मेल कर लिया । क्योंकि बुल्गेरियापति राजा फार्दिनन्द एम्बोलोफको पदच्युत कर स्वयं रूससम्राट्के पास गये और बन्धुत्वसूत्रमें अ वद्ध हुए । रूसके पश्चिम देशवासी शत्रुसे दक्षिण-पूर्व यूरोपकी रक्षा करनेके लिये रूस-सचिव-मिन्स लोवानफ (Minister of foreign affairs)-ने तुर्क सम्राट् (Ottoman emperor)-के साथ मेल करना और उनका बल बढ़ाना चाहा ।

इस समय अंगरेज गवर्मेण्टने अग्निभियोंकी स्वार्थरक्षा

करनेके लिये बलप्रयोगकी व्यवस्था की, इससे रूसके साथ उनका विवाद खड़ा हो गया ।

मिन्स लोवानफकी मृत्युके बाद १८९७ ई०के जनवरी मासमें काउण्ट मुराभिफ उक्त वैदेशिका सचिव पद पर नियुक्त हुए । परन्तु वे लोवानफ प्रवर्तित पूर्ण रूसनीतिके अनुसार कार्य नहीं कर सफाने थे । उसी सालके अप्रिल मासमें प्रोकोके साथ तुर्कका युद्ध हुआ । सेण्टपिटर्सबर्गकी राजसारकारने दो दलमेंसे किसीको सहायता नहीं की । युद्ध शेष हो जानेने पर जार दोनों दलका स्वागत किया और बन्धुभाव दिखलाया । इसके बाद के टके उपयुक्त शासनकर्ता ले कर जब फिरसे विवाद खड़ा हुआ, तब जारने अपने भ्रातृसाम्प्रकीय प्रोको राजकुमार जार्जको ही उस पद पर नियुक्त करना चाहा । इस कार्यमें राजनैतिक सम्बन्धरक्षाके सिवा राजपुत्र जार्जकी योग्यताका विचार नहीं किया गया ।

सम्राट् २५ निकोलसके राज्याधिकारके बाद साइ विरिया हो कर रूसजानिके उद्योगसे एक बड़ी रेल लाइन खोली गई । इसमें जो कुछ खर्च हुआ उसका अधिकांश चीनराजकी देना पडा था । १८९५ ई०के चीन जापानी युद्धमें चीनराज पराजित हो सन्धि करनेके लिये बाध्य हुए । सिमोनोसकी सन्धिपत्रमें चीनराजने जापानके राजा मिकाडोको जो सब प्रदेश छोड़ देनेका वचन दिया था, रूसराजने मञ्जूरियामें अपना अधिकार बता कर उस पर आपत्ति की जिससे उस सन्धिफी शर्तें फिरसे संशोधित हुई । रेलपथ विस्तार, दुर्गनिर्माण आदि आर्थिक व्यवसाधन कररूस साम्राट्ने चीनसाम्राज्यके अन्तर्भुक्त अर्थरवन्दर और लियाओतङ्ग प्रायद्वीपमें अपनी राजशक्ति को जड मजबूत कर ली । साइविरिया देखो ।

रूससाम्राज्यकी सीमा बढ़ानेके लिये रूससम्राट्को दिनों दिन सेनादलकी वृद्धि करनी पडी थी । इस सामरिक प्रणालीके संस्कारमें जारके बहुत रूपये खर्च हुए थे । जातीय बल और अस्त्रशस्त्रकी वृद्धिके विषयमें शक्तिशाली राजाओं (The Great Powers)के साथ मेल करनेके सिवा बलरक्षाका कोई दूसरा उपाय नहीं है तथा राजाओंमेंसे एककी बलवृद्धि होनेसे बाकी सभी राजे मिल कर विरुद्ध खड़े हो सकते हैं, यह सोच कर

रूस सम्राट् ने अपनी वैदिकिकसचिप काउन्सल मुदासिमफ के द्वारा अपनी सेनाबलवृद्धि और वैदेशिक सम्पत्ति विषयक प्रस्ताव यूरोपीय 'शक्तियुद्ध' के पास भेजा। इस विषय पर विचार करनेक लिये होयानगरमें एक आन्त जातिरु वैठक हुए। किन्तु इस बैठकमें कोर डैनमार्क नहीं हुआ। इतिहासमें यह बैठक The Hague conference वा Peace conference नामस प्रसिद्ध है।

वर्तमान रूसकी शिल्पोन्नति और वाणिज्य तथा राजनैतिक और सामरिक विद्वेषका हाल लिखनेमें एक बड़ा योग्य बन साबिता है। उनसाधारणके मातृमक लिपि यहाँ पर केवल छोड़ो तो अष्टमाका उल्लेख किया गया।

पूर्व प्लादिमेट्ट बन्धनमें तथा सोमसामान्यके अन्तर्गत अर्धरत्नर आदि स्थानोंमें रसियनो का द्राव्य साधारण्य रखपथ मुक्त ज्ञानेन वाणिज्यकी वृद्धिके साथ साथ सामरिक अयोजनकी भी वषेय उन्नति हुई थी। इस प्रकार वाणिज्यके उद्देशसे हो या युद्धके उद्देशसे रूसशक्ति उन्नायामेव रखपथ बोल कर अफगाण सोमालयवासी हीरद नगरके सामने मुद्रक तक चली गई। भारतवर्षके साथ वाणिज्य करना ही रखपथ बोलनेका युद्ध उद्देश्य था।

यन सोमयुद्धके बाद जापानने देखा, कि रूसराज्यमें बड़ी आसानीसे तथा सोमसम्राट्को मित्रतासूत्रमें मुक्त कर संशु्रिया अचिह्नार कर लिया है। अर्धरत्नर में हुए रूसतुर्ग स्थापित हुआ। रसियन अपनी ताकत को मजबूत कर जोरे जोरे वाणिज्यविस्तारके बहानेन जापानके अचिह्नर कोरियाराज्यमें रखपथ बोलने अने रूसराज्यके इस अन्विचार प्रवेशि (Aggression मेस्यार) अपना युक्तसाम देन जापानवतिने रूस सम्राट्क पास प्रतिनिधि भेजा। रूसको मन्त्रिसमने जापानको मजबूत स्ख ज्ञान कर उनकी बात न सुनो। युद्ध अन्वपन्नावा हो गया। संशु्रियाके रूसराज्य प्रतिनिधि युद्ध आन्विकिक उन्नत जापानकी युद्धकी तैयारी देख कर चले। रूससम्राट्के आन्वस सनापति कुतोपादिकन रूसवाहिनीके नायक हो अशियाके पूर्व सोमाग (Far East) पर बड़ भाये।

१९०३ ई०में शितकाकके आरम्भमें जापानका अहू

अहाय अर्धरत्नरमें मरुत्मात्वा पाहु था। अमोक् प्रमोद्धमें मरु रसियन अन्वित आक्रमणसे मजबूत हो गये। जापानो गोळावर्षणसे इनके कितने अहाय अहमें हुए गये। मजमानित रूससेनापति राजाके भाईशते युद्ध में जापानियों की अविन वण्ड देखेके लिये अग्रसर हुए। काना युद्ध ऊपर युद्ध हुआ। सियाबुकु, शो-हो और मुकदनक युद्धमें रसियन सेना रुग तग भा गई। आन्व अर्धरत्नर जापानके हाथ लगा। अर्धर तुर्ग अन्व रूससेनापति प्रोयल रूससनाकी बात आह रहे थे, अतो ये निराश हो गये। तुर्गकी रसद भी पर चली। राजकी गोळावर्षणसे अपना बहसय वेन अहूने जापान सेनापति नोगीके हाथ आरमसमर्पण किया। अर्धर जापान सेनापति योगी प्रशाअ महासागरकी तरफ रूससनाकी राह रोकनेमें उट गये। अब रूस राजकी आन्विकवाहिनीने बड़ी सेजीसे भारत महा सागरकी पार कर भारतीय द्वीपयुद्धमें प्रवेश किया, तब अन्वियन दोगो यवशापके समीपवती समुद्रसे इनकी गति देख भागे बड़। देखत देखत रोडडेसमानदिक परिघाकित रूसनीवाहिनी जापान समुद्रके किनारे भा पहुची। नौसेनापति योगीने उपयुक्त समय देख कर सुसिमा अग्रसागरमें रूसवाहिनी पर आक्रमण कर दिया। गोळावर्षणसे रसियन सेना तितर बितर हो गई। ये छोण आन्विक विषय देख मजगीत हो गये। आत ताया जापानियों पर उस अहरी अन्वरे रातकी आन्व मज करनेकी अन् साहस न हुआ। रूससेनापतिने अपने अन्वीनय सेनाबन्धकी बहुत सजकारा, पर व निश्चय और अन्वा पड़े रहे। इसी समय योगीकी सेनाने अन्व घेर लिया। रूस अन्विक रोडडेस आन्विक आह और बन्दी हुए। अन्वके साथ साथ रसियनक कुट अ गोमहाय भी योगीके हाथ लगे।

इस प्रकार किन्कराअचिमुद्ध हो जाने कुतोपादिकनकी कीड भागका युद्धम दिया। उनकी अन्व सेनापति सिनेमिच निपुक्त किये गये। सिनेमिच भी जापानके साथ युद्धमें कोर विरोध फल न दिया सके। अन्वके आक्रमणस अहू पीछे हटना पड़ा था।

पोर्टअर्धर अन्वके बाद युद्ध कुछ दिन अन्वित रहा।

अनन्तर जापानियोंने फिरसे अपट्टत साघेलियन द्वीप पर चढ़ाई कर दी। इस समय अमेरिकाके युक्तराज्यके प्रेसिडेंट महामति रूजभेल्टके आग्रह और उद्योगसे तथा जापानपति मिकाडोकी वदान्यतासे सन्धिक्रा प्रस्ताव हुआ। रूस और जापानके पक्षमें अनर्थक राक्षसोचित जनक्षय और अर्थनाश नहीं करना ही इस सन्धिस्थापनका उद्देश्य था। सम्प्रजगत् स्वजातिके नृथा रक्तपातसे बड़ा ही दुःखित था, इस कारण दया और धर्मके आधारभूत महात्मा रूजभेल्टने दोनों पक्षको बहुत समझाया और १९०५ ई०के अगस्तके महीनेमें युक्तराज्य एक सभा की। जारकी ओरसे रूसराजसचिव म० विट (M Witte) और मिकाडोकी ओरसे वैरन कमुरा आदि आये थे। संधिकी शर्तें ले कर दोनोंमें खूब वादानुवाद चला। आखिर विजेता जापानपति अपना स्वार्थ त्याग करके भी सम्मानकी रक्षा की थी। ऐसा महानुभवताका परिचय बौद्धजीवनका उच्चतम निर्देशन है। उसी सालकी दृठी सितम्बर को दोनों पक्षने मेल कर संधिपत्र पर हस्ताक्षर किया।

सन् १९१४ से १९१८ ई० तक जो जगद्गायापी युद्ध हुआ था। उस समय और उसके पहले कई वर्षोंसे शासनतन्त्रकी परिवर्तनकी सूचना हुई थी। शिक्षित सम्प्रदाय और साधारण प्रजाके बीच असन्तोषका बीज अकुरित होने लगा। बाहरसे नई नई राजनीतिकी सलाह आने लगी। अब पुराने ढंगसे जारके इच्छानुसार शासन चलेगा या प्रजाके इच्छानुसार, सब कोई यही सोचने लगे। रूसकी अधिकांश प्रजा अशिक्षित थी, जो शिक्षित थी वह शासनका परिवर्तन चाहती थी। जारने बलपूर्वक पुरानी नीतिके अनुसार ही शासन चलानेका हुक्म दिया। इस विषयमें शिक्षित सम्प्रदायको बुला कर उनसे सलाह लेना जारने कोई प्रयोजन न समझा। यदि सलाह ले कर शासनतन्त्रका कुछ परिवर्तन किया जाता, तो रूस-साम्राज्य अर्थात् जार पर इस प्रकार विपदका पहाड़ टूट न पड़ता। लेकिन ऐसा हुआ नहीं। गवर्मण्टने प्रजाकी मांगकी ओर बिलकुल ध्यान न दिया। फलतः विद्रोह खड़ा होनेमें जरा भी देर न लगी।

इङ्ग्लैण्डमें जिस प्रकार निर्वाचनसे पार्लियामेंटमन्त्रि सभा संगठित है, उसी प्रकार रूसमें 'डूमा' नामक एक मन्त्रिसभा स्थापित की गई। उस सभाके प्रधान मन्त्री, जेनरल ट्रेपो (Trepot) ने शिक्षित सम्प्रदायसे मेल करना चाहा। किन्तु जेनरल रेगो एक सैनिक पुरुष थे। वे चाहते थे, कि सभी सैनिक पुरुषोंकी बात माने। इसलिये पहली डूमा बहुत दिन चली। पीछे (१९०६-१९१०) दूसरी डूमा संगठित हुई। पी, ए, टोलिपिन (P A Stolypin) नामक एक व्यक्ति उसके मन्त्री हुए। वे कभी राजपुरुषोंके मतानुसार चलते थे और कभी डूमाके मोडरेट (Moderate) सम्प्रदायसे भी सलाह लेते थे। इस कारण सभी लोग असंतुष्ट हो गये। कहीं कहीं कृषकोंने विद्रोह खड़ा कर दिया। दमननीतिकी जारी हुई। प्रजाके बीच असन्तोष दिनों दिन बढ़ने लगा। आखिर वह डूमा भी टूट गई और १९०७ ई०की शरी जूनको एक परवाना निकाला गया जिससे निर्वाचनप्रथा बिलकुल उठ गई।

इसके बाद शरी और ४थी डूमा गवर्मण्टके चुने हुए मेम्बरोंसे संगठित हुई। इसलिये गवर्मण्टके विरुद्ध एक भी प्रस्ताव उस सभामें नहीं उठता था। इस प्रकार जब सभामें कोई विरोध खड़ा नहीं होता था, तब बाहरवाले जानते थे, कि रूसमें शान्ति स्थापित हो गई। लेकिन देशमें असन्तोषका बीज जारों पकड़े हुए था। कारागारमें जो राजतन्दी थे उनपर भीषण अत्याचार होने लगा। यह देख स्कूल छात्र जगह जगह प्रतिवाद-सभा करने लगे। शिक्षाविभागके कर्मचारियोंने विद्यार्थियोंका दमन करनेके लिये नये नये कानून निकाले। स्कूल और फालेजमें लेकचरके समय मिलिटरी पुलिस मौजूद रहती थी। फलतः कितने प्रोफेसरों और लेकचरोंने नौकरी छोड़ दी। इस प्रकार मोस्को युनिवर्सिटीकी महती क्षति हुई। बुद्धिमान् विद्रोहि-नायकोंके कानमें जब समाचार पहुंचा, तब विद्रोहाग्नि और भी धधक उठी।

असन्तोषका प्रधान कारण था कृषकोंकी दरिद्रता। रूस कृषिप्रधान देश था, पर कृषकोंका अपनी जमीनके ऊपर कोई हक न था। ज्यादा हिस्सा जमीन गवर्मण्टकी

कास थी। - जमीदारके इन्कामें बहुत थोड़ी थी। इसके मन्दाया १८६१ और १८६२ ई०में जा गये नये कानून निकाले गये थे, उससे कृषकोंकी भयस्था बड़ी दीपवीय हो गई थी, साक्ष मर मेहमत करके भी थोड़ा थोड़ेसे अपना पैदा नहीं पाक सकते थे। यह देख १९०६ ई०को प्रजा भारतमें थोड़ा बहुत परिवर्तन किया गया। १९११ ई०के कानूनसे देवठोके जमीनमें कुछ कुछ हका मिळी। किन्तु इससे टकशा थोड़ा ही नहीं हुआ। पहले पहल प्रजा मूर्ख थी, अब शिक्षित सम्प्रदाय इस विषयमें उर्ध्व प्रान देने लगे। कानूनके मुताबिक काम होयस उन लोगोंकी भयस्था कुछ सुधर सकती थी, परन्तु कृषि विद्या सिद्धान्तके जिये विधासय या ठगानी ठगवके जिये भयस्था नहीं की गई। इसलिये कुछ भी तरकी न हो सकी।

इसी समय सोवियत साइबेरिया देशमें हुआ। पुराने सन्धि एम कोकोसो (Kokotsov) प्रधान मन्त्री हुए। उन्होंने टाकस बढ़ा कर और ब्यय घटा कर तीन वर्षके अन्दर राजकोषकी भर दिया। कास (Monopoly) भावकारी महालसे बहुत आमदनी होती थी। रसियन बड़े शराबी होत हैं। हुमाके केल्सिम नामक एक मेम्बर इस मोनोपोलीकी उठा देनेके लिये कोशिश करने लगे। बहुतसे लोगोंने उनका साथ दिया। परन्तु भावकारी महालसे सरकारकी बहुत आमदनी थी, अतः मर्षसन्धि उनके विरुद्ध चढ़े हुए और मोनोपोलीकी नहीं छोड़ा। अन्ततः १९११ ई०की रूसमें घोर बुर्जिस् उपस्थित हुआ। गरीबोंको मर्द्द देनेके लिये कोह माँ चढ़ा न था। रूस सरकारसे मर्द्द मिळना राज पुढेके ऊपर निर्भर करता था। इसलिये केवल पनी लोगोंकी कुछ सहायता मिळी, गरीबकी कीन पूछे। मूलसे बहुत भारती मर गये। असन्तोष भवपुर रूप धारण करने लगा। सेलिकुविसागके प्रधान माफ ड्यूक सज्ज मिखाइलोविच (Serge Mikhailovich) और आरपुस्तोके प्यार रासपुदिन (Rasputin) के ऊपर सभी भारती भयसघ थे। इन सब कारणोंसे ३री हुमाका भी अन्त हुआ।

अन्ततः ३थी हुमा संगठित हुए। इस समय सभी

प्रकारके वल गवर्मेण्टके विरुद्ध चढ़े हो गये। इस प्रकार हुमाके मेम्बर नेशनलका हो गये।

१९११ से १९१३ तक बाहरी देशोंसे नहीं गए बाते उठने लगी। पश्चिम यूरोपका सारा देश जर्मनीके विरुद्ध लड़ा हुआ। अष्ट्रियाके सन्तान्ने जर्मनीकी सहायतासे बोसनिया और हर्जगोमिना पर अधिकार जमाया। १९१२ ई०में बुल्गेरिया, सर्भिया और मोसले मिळ कर तुर्कीके विरुद्ध युद्धघोषणा कर दी और रसियनसे सहायता मांगी। आर निकोलस उन्हे सहायता देनेको राजी थे, क्योंकि बल्कनके छोटे छोटे राज्यों पर रूसका प्रभुत्व बहुत दिनोंसे चला आ रहा था और पश्चिम यूरोपसे उन्हे मर्द्द मिळती थी। सेरिन प्रधान मन्त्री साखोनन (M Saxonov) ने कहा था, कि हम लोगोंको इस युद्धमें भाग लेना उचित नहीं। जारने भी इसे समर्थन किया। रूससे मर्द्द नहीं मिळने पर भी बल्कनराज्योंने मिळ कर तुर्कीको परास्त किया। मध्य यूरोपकी राजशक्ति अर्थात् जर्मनी और अष्ट्रियाने सोचा कि बल्कनकी एकजिह शक्तिसे प्रबल होनेसे वे डेग पूरबमें अपनी गोटी न जमा सकते। अष्ट्रियाने सर्भिया को मर्द्द रिफ समुद्रकी तरफ बढ़ने न दिया। सर्भिया और मोल्दवियाने जा अटलिनियामें अष्ट्रिया पाया था वह छीन लिया गया। अब पश्चिम दिशासे पीछे हटना पड़ा, तब सर्भियागो (Serbs) ने पूरब मसिडोनियाका पश्चिम भाग इत्क करना चाहा। यह भाग पहले सर्भियाके इत्क नमें था, पीछे एक सन्धिसे अनुसार बुल्गेरियाके इत्कमें आ गया। रूसके मन्त्री एम सखोननने सोचा कि बल्कन शक्तियोंमें फूट होना अच्छा नहीं। अर्थात् आर निकोलसने इसका निपटेरा करनेकी कोशिश की। सेरिन बुल्गेरियाके राजा फर्दिनार्ड बड़े चतुर थे। वे मेळ करनेका राजी न हुए। अब सर्भियाके साथ टमानिया और मोसले मिळ कर बुल्गेरिया पर हमला किया, तब बुल्गेरियाका सन्धि करने वाप्य हुए। बुल्गेरिया सन्धिके अनुसार टमानिया को इत्कना (Dobrudja), सर्भियाको पश्चिम मसिडोनिया और मोसल घेस तथा हाकी मेनिडोनियाको दिया। बुल्गेरिया अब इस प्रकार चढ़े मार्गोंमें चर गया

और रसियनसे उन्हें कुछ भी सहायता न मिली, तब राजा फर्दिनन्दने जर्मनी और अष्ट्रियासे मेल करना चाहा।

अष्ट्रियाने सरविया पर घोर अत्याचार किया था। सर्वलोगोंने गुस्सेमें आ कर अष्ट्रियाके राजकुमार आर्चड्यूक फ्राञ्ज फारदिनन्द (Archduke Franz Ferdinand) को मार डाला। अष्ट्रिया और जर्मनी मिल कर सरविया पर चढ़ाई करनेकी वड़ी तैयारी करने लगे। पूर्व दक्षिण यूरोपकी शलभजाति पर मध्य यूरोपकी खून और ट्यूटोनिक जातिका जो आधिपत्य था अर्थात् उनके प्रति जो अत्याचार किया जाता था, वह शलभ जातिकी प्रधान शक्ति रसियनके लिये वड़ी ही लज्जाकी बात थी। डूमामें यह बात पेश की गई। काउण्ट वीटोने (Count Witte) जो एक बुद्धिमान् आदमी थे, कहा, "रसियनके कित्सीका भी पक्ष नहीं लेना चाहिये। कुछ नुकसानी भी क्यों न हो उसे वर्दास्त कर लेना उचित है।" परन्तु डूमाके कुल मेम्बर, लेटजाति (Letts), एस्थोनियन जाति (Esthonians) यहूदी (Jews) सर्वोंने एक खरसे कहा, कि स्वदेशके लिये हम लोगोंको मर मिटना चाहिये। पोलैण्ड और लिथुआनियाने कहला भेजा कि वे लोग भी उन्हें युद्धमें मदद पहुंचायेंगे। सभी जाति गवर्मेण्टकी ओरसे युद्धके लिये तैयार हो गईं। ऐसी सहायता प्रजा लोगोसे रूस-गवर्मेण्टको कभी नहीं मिली थी। उस समय जर्मनी पर रूस जनता ऐसी चिढ़ गई थी, कि उन्होंने St. Peter's burgh नामक ट्यूटोनिक भाषाका परिचालन कर स्लाभोनिक भाषामें राजधानीका पेद्रोग्राड नाम रखा। परन्तु कुछ सोसियालिष्ट इस युद्धके विरुद्ध थे। देशके अधिकांश मनुष्य लडाईके लिये खड़े थे। इसलिये उन लोगोंकी बात पर कान नहीं दिया गया। इस प्रकार रसियन लोग जगत्प्यापी युद्धक्षेत्रमें अवतीर्ण हुए।

इस समय रूस योद्धाओंकी संख्या सब मुक्तोंसे बड़ी चढ़ी थी। यदि रसियन गवर्मेण्ट यथेच्छाका परिचारा कर विचारके साथ सैन्यपरिपालन करती तो युद्धमें शान्ति स्थापित हो सकती थी। परन्तु राज-पुरखोंमें बुद्धिके अभावसे शान्तिके बदले अशान्ति आरम्भ हो गई।

युद्धके समय आबकारीका खास वंदावस्त उठा देना उचित था। क्योंकि ऐसा रहनेसे लोग मनमाना शराय पीते और नशेमें आ कर असीम साहससे युद्ध कर

सकते थे। लेकिन ऐसा हुआ नहीं, जिससे वे हमेशा असंतुष्ट रहा करते थे।

प्रधान सेनापति ग्रैण्ड ह्यूक निकोलसने पोलैण्ड-वासियोंसे सहायता मागते हुए कहा, कि यदि वे लोग जर्मनके विरुद्ध युद्धमें रूसको मदद देंगे, तो उन्हें स्थायत शासन मिलेगा। लेकिन जारकी तरफसे ऐसा हुकुम जारी न हुआ। गवर्मेण्टकी कमिटीमें इसकी बात उठी, पर पोलोको कुछ नहीं मिला। राजपुरख पहलेकी तरह पोलैण्डमें राज्यकार्य चलाने लगे। इसलिये पोलैण्डवासियोंकी आशा पर पानी फेर गया और वे लोग रसियन पर अविश्वास करने लगे। कोई कोई यहूदी शत्रुके गुप्तचरका काम करने लगा। युद्धमें भी बदनीति शुरू हुई। सैन्यदलमें एक भी उपयुक्त परिचालक न था। दक्षिण रूसके प्रधान सेनापति एलेक्सिस्व (Alexis) तथा रुझकी (Ruzsky), ब्रूसीलव (Brusilov) और रडकोमित्रोव (Radko Dimitriev) ये सब प्रथम श्रेणीके सेनापति थे। छोटे छोटे कर्मचारियों और योद्धाओंमें बदनीति घुस गई। वे लोग मनसे लडाई नहीं करते थे। एक दल सेनाको नष्ट होते देख दूसरा दल उसको मदद नहीं पहुंचाता था। क्योंकि सेनापतिसे उसे आशा नहीं मिलती थी। एक सेनापतिने रिश्वत ले कर अपनी तरफका नकशा शत्रुके पास भेज दिया। इसका परिणाम यह हुआ, कि सेनापति सीवर (Siver) को फौज शत्रुके जालमें फँस कर नष्ट हो गई। १९१५ ई०में मालूम हुआ, कि युद्धका सामान सभी जगह यथेष्ट परिमाणमें नहीं पहुंचता है। नाना प्रकारकी असुविधाओंसे लड़ कर एलेक्सिस्व पीछे हटते गये। आबिर भीना और निएर नदीके किनारे उन्होंने शत्रुको रोका। एलेक्सिस्वके बुद्धिकौशलसे जो सब सेना बच गईं उन्हें इस बातका दुःख हुआ, कि जिनके लिये हम लोग जान दे रहे हैं, वे हमारी बात पर कुछ भी ध्यान नहीं देते। गार्लिस् (Gorlice) और क्रास्नोएभ (Krasnostav) के युद्धमें जो परिणाम हुआ था, वह १९१७ ई०का विद्रोह है। जब गवर्मेण्टको उदास देखा, तब लोगोंने एक कमिटी बनाई। उस कमिटीसे अस्पताल आदि खोले गये जिसमें घायल सिपाहियोंका इलाज होने

क्या। इसलिये छोटे छोटे आफिसर कमिटीक भाजिकोले
मिशन संगे। अब तमाम कसमें देसा बदेवस्त हुमा
तब युव मन्त्री सुबोमिनोव (Sukbomlinov) वपास्त
किये गये और उनका विचार होने छया। प्रधानमन्त्री
गोरेमिकिन (Goremykin) को हस्तोका देना पडा।
उनकी जगह स्टुर्मर (Sturmer) मन्त्री हुप। ये सब
दिनसे जार परिवारकी खुशामद् किया करते थे। जार
पत्नी आलेक्जएण्ड्रा फोमोडोरोनाको उन पर बड़ी क्रुपा
रहती थी। जार-पत्नी साम्राज्यक समी काममें सधना
मत्त खजाने छगी। उनके इच्छानुसार बहुतसे मनुष्य
दरबारमें नियुक्त हुप। प्रेगये रासपुत्रिण नामक एक
छत्रक उनका बहुत प्यारा था। इसलिये तमाम पुनियामें
पेट्रोवका बुनान फौज गया। अब दरबारमें हुमा या
प्रजासाधारणकी बात न सुनो गइ, तब एक मेम्बरने
मन्त्रियोंसे कहा कि भाप लोगोका सुरा दिन भा भसा,
मय जातीय मन्त्रि सभा मन्त्रि को जाय। स्टुर्मरने प्रधान
मन्त्री पद् पानेसे पहिले एक बार पोलेवइको स्थायत्त
शासन देनकेलिये छुकापि की थी। इसलिये जार-पत्नीने
गुल्लेमें भा हर उन्हे बर्खास्त कर दिया भा। इसके बाद
जार पत्नी अपने इच्छानुसार एक दर कर सभा मन्त्रियों
को नियुक्त और कुछ दिन बन् मन्त्र्य करती गई। देश
के प्रधान प्रधान व्यक्तियों मपमोत हो कर एक देसा
के विन्नेट (Cabinet) या कर्मकारियों लिये मन्त्रिसभा
कायम करनेका प्रस्ताव किया कि मिस पर सब कोइ
विश्वास कर सक।

इस समय बहुतसे रैजनायक खड़े हुप। देश और
शासनतन्त्रकी रगति किस प्रकार हो सक्ती है यही
उन लोगोका उद्देश्य था। पहले पहल देशमें ओक्टोब्रिस्ट
(Octobrist) और कैडेट (Cadets) नामक दो सभ्य
द्वय जननायक थे। जकारक समय देशकी अन्यायका
उपाय नये नये ढंगसे खजने छया। विद्वान और बुद्धि
मान् लोगोंने पुपनी गवर्मन्टको बिकटुत्त बदल कर
प्रजासाधारणके मतसे नद गवम हट बाड़ी करनेक लिये
पिट्रोव उपस्थित करनेकी आवश्यकता देखी। तीन प्रकार-
के जननायक खड़े हुप। पहला दल चाहता था, कि यूरोप
क पश्चिम देशोंमें जकारक सामान और योजाओंक लिये

जैसा प्रबन्ध था, कसमें भा वैसा ही होना चाहिये। दूसरा
दल प्रजासाधारणका शिक्षा और उत्तेजना चाहता था।
यार्कडेन तथा और दूसरे दूसरे सुधारकोंने देशकी
आर्थिक रगतिके लिये जो उपाय सोचा था तीसरा
दल उसी राह पर खजना चाहता था। समाचार-पत्रमें
इन सब बातोंका आम्बोडन शुरू हुमा। १९०५ ई. के
विद्रोहके बादसे The messenger of revolutionary
Russia नामक एक समाचार पत्र विद्वानों तथा बुद्धि
मानोंको जकारमें साथ देनेके लिये हमशा उभाड़ता भा
रहा था। मय हयकोंको भी उन्हे मन्व पदुधानेक लिये
कहा गया। करगुडि, जापानके साथ युद्धमें कसको
जुद्धा और गवर्मन्टकी नियुक्ति तथादि बातोंका
प्रचार करना सोसियल डिमोक्रेटिक (Social Demo-
cratic) दलका प्रधान कार्य था। १९०० ई.से लेखिन
और मार्डम "लुका" (Lukin) नामक समाचार-पत्र
और जेरिया (Zona) नामक मासिकपत्रमें बहुत जगवा
थोड़ा प्रबन्ध लिखने भा रहे थे। र्जादिमिर सेनिन
(V Lenin) साहबका मत था, कि विद्वान और
बुद्धिमान् लोग एकट्ठे हो कर सकार करेगें और मन्त्र्य
जनसाधारण बिना किसी भाषणिक उस सुझावको
काममें लावे गा। डिमोक्रेटिक या प्रजासाधारण पक्ष
और विद्वान् सब किसोको सकारसे काम नहीं खजेगा।
इसो कारण उन लोगोंने फुड हो गइ जिससे दो दल हो
गये। पहला दल बाल्सेविक (Bolsheviks) था।
इसको संख्या मजिद (Majority) थी। दूसरे दलमें
कम लोग (minority) थे। मेनसेविक (Mensheviks)
उसका नाम रखा गया। खेकानो (Plekhanov)
बोमसेविक दलके और सेनिन मेनसेविक दलके प्रधान
हुप। दोनों दलमें कपक नामका ही मनेद था, मूल उद्देश्य
दोनोंका एक था। मार्श दुधेन चाहन थे, कि हर एक
शहरक महाजनोंको पकट करनेस खपेका मनाय नहीं
रहगा। सेनिन सभापत्रमें लिखत थे कि कसदेशमें
शहरोंका संख्या थोड़ी है, अधिकांश हयक हैं, य मी
देहातमें रहन हैं। कसमें विद्रोह बाड़ा करनेक लिये
हयकोके जगाना उचित है। १९१० ई.में सोसियल
डिमोक्रेटिक दल सेनिन और बोमसेविक दोनों दलमें

मिल गया। इस अवस्थामें रूसके जारने राजधानी, दरवार और डूमासे अलग हो कर पेट्रोप्राउ छोड़ दिया और अपनी रक्षाके लिये वे सेनाओंके बीचमें रहने लगे। जारपत्नी शहरमें रह कर सब काम देखती थी। वह पादरियोंसे सभी लोगोको बशीभूत करनेकी सलाह किया करती थी। इस प्रकार जारने शासनकार्यका कुल भार अपनी स्त्री पर छोड़ दिया। स्त्रीबुद्धिप्रलय-करती। उसके शासनसे सबके सब अप्रसन्न हो गये। जर्मनोसे लड़ाई बहुत ज़ोरों चल रही थी। सेनाका विरेप प्रयोजन था। युवकोंको बलपूर्वक ला कर कूच कवा-यद सिखलाई जाती थी। पहले जो सब आदमी लड़ाईमें गये थे उन पर गवर्मेण्टकी कुछ भी निगाह न थी, इस कारण लोग नई फौजमें भर्तों होना नहीं चाहते थे। बलपूर्वक नियुक्त किये गये योद्धाओंसे क्या काम हो सकता था? बड़े बड़े कारखाना या कोठियोंमें जो लोग काम करते थे उन्हें नेशनलिष्ट और सोसियालिष्ट दोनों दल तरह तरहकी सलाह देने थे। वह सलाह गवर्मेण्टके विरुद्ध थी। रूपकों पर लड़ाईके खर्चके लिये जो नया कर लगाया गया था, उससे वह तंग तंग आ गये थे। विद्वान और बुद्धिमान लोग गवर्मेण्टका परिवर्तन चाहते थे। राजदरवारमें उच्च कर्मचारीसे ले कर निम्न तक यही चाहते थे कि किस प्रकार जार, उनकी पत्नी तथा उनके यारोंको यमपुर भेज कर देशमें शान्ति स्थापन की जाय। परन्तु बाहरमें शत्रुओंसे युद्ध चल रहा था, इस हालतमें श्रन्तविप्लव पडा करना उचित न समझा गया। जब देशके आदमी भूख और बीमारीसे मरने लगे, तब विद्रोह फूटा उठ पड़ा हुआ। १९१७ ई०का १५वीं मार्चको जार श्य निकोलसनने अपने भाई माइकेलके लिये सिंहासन छोड़ दिया। माइकेल बुद्धिमान थे। उन्होंने देखा, कि जब तक देशके सभी आदमी मिल कर उन्हें गद्दा पर न बैठा दें, तब उनका बैठना उचित नहीं। बैठनेसे जान पर बीदेगो, इसीलिये उन्होंने सिंहासन पर बैठना नहीं चाहा। इस प्रकार एक सत्ताह के अन्दर रोमानोववंशकी राजशक्ति लोप हो गई जिससे लोगोंके आत्मन्दका पारापार न रहा। प्रोभिजनल (Provisional) गवर्मेण्ट या जब तक कोई पक्की गवर्मेण्ट

न बने तब तकके लिये एक नई गवर्मेण्ट बनाई गई। उस गवर्मेण्टकी जो कौंसिल वा मन्त्रिसभा बनी थी, उसमें स्थिर हुआ, कि जर्मनोसे लड़ाई करनेका प्रयोजन नहीं क्योंकि उनकी धारणा थी, कि जर्मनीमें जो सब सोसियालिष्ट हैं, वे सब विद्रोही हो कर राजशक्तिसे लड़ेंगे। डूमा भी उठा दो गई। लेकिन अधिवासी किसी को नहीं मानते थे। एकके बाद एक मन्त्री बदलता गया। पोले सोभियेट आव चोर्कमेन तथा सोल-जर्स (Soviet of workmen & soldiers) नामक एक दल खड़ा हुआ। उन्होंने भी कोई तरकीब न की। कुछ दिन बाद बोलसेविक दलपति लोग जो बाहरमें थे, पहुंच गये। लेनिन जर्मन केशरकी मददसे स्वीजर्लैंडसे जर्मनी होने हुए और ट्रोस्क (Trotsky) अमेरिकासे रूसमें आ धमके। युद्ध-मन्त्री ए, एफ, केरेन्स्की (A. F. Kerensky) विद्रोहिदलमें मिल गये। विद्रोहियोंने उन्हींको प्रधान बनाया। १९१७ ई०को १४वीं जूलाईको पेट्रो-प्राउकी एक फौज बागी हो गई। गवर्मेण्टने उसका दमन किया। लेकिन गवर्मेण्ट ही मयका कारण था, इस कारण ट्रोस्की आदि बोलसेविक दलपतिगण जो सब पकड़े गये थे विना दण्डके छोड़ दिये गये। लेनिन बाहर ही बाहर भाग गये थे। केरेन्स्की पहले युद्धमन्त्री थे, अब प्रधान मन्त्रीके पद पर प्रतिष्ठित हुए। वे रिमोल्ड्युशनरी गवर्मेण्ट बनाने लगे। मोस्कोमें एक कांग्रेस बैठी। उसमें रूसके प्रत्येक राज्यसे प्रधान प्रधान व्यक्ति बुलाये गये थे। लेकिन बोलसेविक लोग उसमें शामिल न हुए। केरेन्स्कीने उस सभामें केवल विद्रोहीके विषयमें जोर दिया, देशमें शान्ति लानेके प्रथम उपाय नीतिव्ययता (Discipline) के विषयमें कुछ भी न कहा। इस कारण वे कृतकार्य न हो सके। प्रधान सेनापति कर्निलव (Kerulov) उनके विरुद्ध सड़ें हुए और प्रधान होनेके लिये कोशिश करने लगे। लेकिन केरेन्स्कीने उन्हें हराया और स्वयं सेनापतिका पद भी प्रहण किया। १९१७ ई०के नवम्बर मासमें ट्रोस्की (Trotsky) ने एक सोभियेट मिलिटरी रिमोल्ड्युशनरी कमिटी स्थापित की। बालटिक की नौसेना भी उसमें मिल गई। केरेन्स्कीने मन्त्रि-सभामें कहा, कि उन लोगोंको दवानेका बंदोबस्त किया जा रहा

है, किन्तु यथाप्यमं उनके पास बहुत घोड़ा सेना थी; वे फ्रीड प्रुस्यकी थीर एक स्त्रीकी थी। ७वो नवम्बरको नोसबागतिने जीवघास (Winter palace) पर चढ़ाई कर ही। कुछ देर स्त्रीसैन्यसे लड़ कर उन्होंने स्त्रियोंको पकड़ा। करेन्सकी जा प्रयाग मन्त्रीकी थीर प्रयाग सेना पति थे, पहले ही ज्ञान से इत भाग गये थे। मोस्कोकी गवर्मेन्सकी भी पेशी ही बुझा हुआ। यहाँकी पञ्चमन मयने क्रितने मफसरीं थीर सेनापतियोंकी मार डाला था। सोमियट रसियाग जर्मनीकी थीर मद्रियाक साथ सन्धि करना चाहा। इसक विषये सभसे खबर हा गय। सांसिपलिष कोर्गोने एक संगठित समा (Constituent Assembly) क लिये निर्वाचनका प्रबन्ध किया। बीस वर्ष बान्जोकी चाह से पुकर हो या स्त्री मोट देना अधिकार दिया गया। प्रत्येक जिलेमें इस प्रकार निर्वाचन हुआ। संगठित समाक लिय कुल ६०० मन्त्र नियोजित हुए। लेकिन बोल्शेविक सोप इस महा चाहत थ। उक्त समाके सदस्योंने जय पेदोराउक होरोका भयवर्मे सेना करनेके लिये माना चाहा, तब बोल्शेविकोंम हथियारबंद हो उम् मार मगाया। पीछे १९१८ ई०की १८वो जनवरीकी उक्त समाकी फिरसे बैठक हुए। इस बार भी निर्वा एक दिन समा कर से पुना मगा लिये गये। इसक बाद दोनों मयवापन मिल कर जर्मनीक पास संधिका प्रस्ताव इन भाजय पर मेला कि कोर भा पक्ष एक नूसरेका राज्य बदा छे सद्धता थीरे न किसी को युद्धका चर्च ही मिल सध्या है। प्रेश्लिटो होरक (Brest Litovsk) नामक शहरमें सन्धिकी बैठक हुए। जेनरल होपमानन (Hollmann) थीर पैरन कुलमान (hulmann)ने मद्रिया थीर जर्मनीकी तरफस हावा दिया, कि पोलेण्ड थीर कुलेण्ड (Courland) उम् ट्राइ देना हागा तथा फिनलैण्ड, स्थानिया थीर छडे निपाका ल्याचीन राज्य मानना हागा। साथ साथ नोपर नदीक पानोकिनारेका उक्रेन (Ukraine) पर कसका अधिकार न रहगा तथा ३०० करोड़ रु२३ उम् क्षतिवक देन होंग। इन नव सन्धिपत्र पर दूतकम हस्तासत महा किया थीर प उठ कर चले गये। मन्तर जेनरल होपमान फ्रीड छे कर माय बड़े। सन्धिपत्रका मद्रुए हा

कर सन्धिपत्र पर हस्तासत करना पड़ा। लेकिनने कहा जब जर्मन रुसकी छाती पर चढ़ बैठा है, तब हम सेनेका उपाय करकर करना चाहिये। यदि उक्त सन्धिकी शर्त काममें लाई जाती, तो रुस जर्मनके विश्वकुल कधीन हा जाता। लेकिन फ्रांस, प्रेट मिरेन थीर युनाइटेडकेल मेस कर जब जर्मनी, मद्रिया थीर बुल्गेरियाका परासत किया, तब फलका हम मोटनेका मयसर मिला। बाहरक उम् मोंसे कसका पिरड ठा लुटा, पर मन्तर्विप्लव शीरों चहने लगा। तमाम पुन खपकी होने लगी। मउककटा फँस गए। जार, जार पत्नी थीर रामपरिवार साइबेरियामें निर्वासित हुए थीर वहाँ सबोकी हत्या की गय। (१९१८ ई० जुलाई)। १९१८ ई०के मोम्बकासमें वैश्विक राजपूत एक एक कर चले गये। बोल्शेविक विरुद्ध एक एक फौज बनी हुए। सन्धिपत्र उम् शक्ति उहा फौजके मद्र देता थो। फ्रांस कसके विरुद्ध पोलेण्ड थीर रुसा निपाका तथा प्रेश्लियेन डैटिमिया, स्थानिया थीर सिधुनिया, इन तीन बाम टिक राज्यको मधे खासिया ममेंनिया थीर मजरबैम इन तीन कके सियन राज्यको आधीन होनेके लिये मद्र देत थो। सायिरिया, मंशुरिया भादि नाना स्थानोंमें सेनापतियों ने प्रयाग हो कर पूयक, पूयक, गवर्मेन्स स्थापन करना आरम्भ कर दिया। यदि समो एक साथ मिल कर रासल कार्य कछात तो कस पुष्पोक मध्य मद्रिलोय शक्तिमें परियत हो सकता था। किन्तु बार बार मन्तर्विप्लवसे ऐसा होन महा पाया। बोल्शेविक गवर्मेन्सक मर्यादा थीर तथा कसकी मयमानजनक सन्धिक कारण बुद्धि मात्र कोपेग उनक विरुद्ध मयघातय किया। १९१८ ई०के जुलाई मासमें जर्मनीक राजपूतकी हत्या का गय। लेकिन या सोसियलिस्टों द्वारा बुरो तरह पायल हुए थे। उन्होंने मोस्का नगरकी बोल्शेविक गवर्मेन्सक मधेस करनेका संकलन किया था किन्तु इनकार्य न हो सक। इतिथ्य थीरसे फाल्जक, डैनिकिन भादि सेनाबायकगल वनबलक साथ मय्यरियाकी शरक मयसर हान लगा। मिटिशनापति जेनरल भायलसाइड (Hronside) फाल्जकसे मिले। पुर्गने रेड (Red) मधोत् रकडर्म पत्रपत्रो सेनाकल फिरसे संगठित किया गया। भाइय पम्पनका कडोर नियम जारी हुआ। भाइय पायल न करनसे मद्रुपुण्डका मयबधा हुए। इस सेन्यद्वकी

संख्या क्रमशः बढ़ने लगी। अपने विरोधी हाइट (Whites) वा श्वेतवस्त्रधारी सैन्यदलकी अपेक्षा इन लोगोंकी सैन्यशिक्षा प्रधान कारण यह था, कि बोलशेविकोंने जमींदारोंसे जमीन छीन कर कृषकोंको दे दी थी। इस कारण कृषकोंको पूरी धारण हो गई, कि हम लोग अपनी जमीनकी रक्षाके लिये युद्ध करने जा रहे हैं और श्वेतवस्त्रधारी जमींदारोंको जमीन वापस दिलानेके लिये लड़ रहे हैं। गवर्मेण्टके असन्तुष्ट कर्मचारियों तथा जमींदारोंने जो श्वेतदलका साथ दिया उससे कृषकोंकी धारणा और भी पक्की हो गई। कोलचक और डेमिस्किन एकाएक बहुतेसे देशों पर अधिकार कर बैठे। किन्तु वहाँके अधिवासियोंका वे अपना मूल उद्देश्य समझा न सके, आखिर कोलचक पकड़े गये और बोलशेविकके कर्त्तृपक्षसे उन्हें प्राणदण्ड मिला। तभीसे रेडगण प्रचल हो उठे। पश्चिम यूरोपकी मिलित शक्ति अर्थ और युद्धोपकरणसे श्वेतदलको मदद दे रही थी।

कुछ समय बाद श्वेतदल परास्त हुआ और रेडदलका मूलमन्त्र साम्यवाद—धनी और निर्धनको समान करना चारों ओर फैलने लगा। साम्यवादका प्रधान उद्देश्य इस प्रकार है—सभी प्रजाका समान अधिकार रहेगा, कोई भी किसीसे बड़ा छोटा नहीं। जिसके पास जो भूमिसम्पत्ति, धनरत्न वा अन्य द्रव्य है, वह सभी राजाका है। उस पर सबोंका समान अधिकार रहेगा। कोई अधिक धनी हो कर विलासितामें समय बितायेगा, कार्य कुछ भी न रहेगा और कोई अपने पेटके लिये रात दिन परिश्रम कर शरीरको सुखा देगा। बोलशेविकदल यह विलकुल नहीं चाहता है। इस कारण उन्होंने स्थिर किया, कि सभीको परिश्रम कर जीविकानिर्वाह करना होगा। जमींदार और महाजन इसके विरुद्ध खड़े हुए सही, पर कुछ कर न सके। कारण, जनसाधारणके हकमें यह बहुत अच्छा था, इससे बोलशेविक दलकी संख्या दिनों दिन बढ़ने लगी। मिलित शक्तिके सैन्यदलमें भी रेडदलका प्रचारकार्य चलने लगा। मिवाप्रोपोल और ओडेसा नगरके फरासी जहाजों पर रेड लोगोंकी पताका उड़ने लगी। इस कारण फ्रांसीसी लोग क्रिमिया और

दक्षिण-पश्चिम रूससे अपनी सेना उठा ले गये। फ्रांसके प्रतिकदल और रडिकल (Radicals) गण रूसके बोलशेविक सम्प्रदायके साथ सहानुभूति दिखाने लगे। १९१६ ई०के जनवरी मासमें ब्रिटेन, फ्रांस, इटली और युनाइटेड प्रेट प्रिकीपो नामक स्थानमें मिले और सभी उन लोगोंकी धम करना चाहिये, इस पर विचार करने लगे। किन्तु बहुमत हो जानेसे वह बैठक कार्यकारी न हुई। रूसके उत्तर-पश्चिम एस्थोनिया प्रदेशमें एक स्वाधीन राज्य स्थापन करनेके लिये इङ्ग्लैण्ड तब तक सहायता दे रहा था। किन्तु प्रधान मंत्री लायेड जार्जने रूसको मदद न पहुँचा कर अपनी सेना उठा ले जाना स्थिर किया। वाणिज्य द्रव्यके लोभसे तथा भारतवर्षकी ओर अग्रसर न होगा, इस प्रलोभनसे इङ्ग्लैण्ड और इटलीने रूससे सम्बन्ध छोड़ना न चाहा। किन्तु फ्रांस और युनाइटेड प्रेटने इस नृशंस गवर्मेण्टके साथ सम्बन्ध रखना अपना कर्तव्य न समझा।

इस समय १९१८ ई०के जुलाई मासमें मोस्को नगरमें सभी सम्प्रदायने मिल कर सोभियट कांग्रेसका प्रथम अधिवेशन किया। इस अधिवेशनका नाम कम्युनिट (Communist) रखा गया। इसके ११२२ मेम्बरोंमेंसे ७४५ बोलशेविक, ३५२ सोसियलिस्ट और बाकी अग्राण्य सम्प्रदायके लोग थे। इस कांग्रेसकी बैठक कमसे कम छः मासमें होना उचित था, किन्तु ऐसा नहीं हुआ। इस कारण २०० सदस्योंको ले कर एक कार्यनिर्वाहक समिति संगठित हुई। वही समिति अभी वृहत् रूस साम्राज्यका शासन करती है।

अभी रूसका नाम यूनियन ऑफ सोसियलिष्ट रिपब्लिक हुआ है। मोस्को शहरमें राजधानी उठा कर लाई गई और पूर्वा राजधानी पेट्रोग्राडका नाम बदल कर 'लेनिनग्राड' रखा गया है। युद्धके पहले रूसका आयतन २२०००००० वर्गमील था। इसमेंसे तीन हिस्सा एशियामें और एक हिस्सा यूरोपमें था। युद्धके बाद यूरोपमें रूसका आयतन घट गया। पहलेके रूस साम्राज्यसे कई एक छोटे छोटे राज्य निकल गये। फिनलैण्ड, एस्थोनिया, लैटविया, लिथुआनिया और पोलैण्ड स्वतन्त्र राज्य बन गया। फार्सप्रदेश तुर्कके और वेरुअरेविया रमानियाके अधिकारभूक हुआ। इस प्रकार रूससे ८ लाख ४ हजार वर्ग किलो-

मिटर आयतन बिक्रम गया। किन्हाल यूनियन माथ सोमियट सोसियलिष्ट रिपब्लिकके माधीन २ करोड़ १२ लाख वर्ग कि. मीटर मर्यात् ८१०८३८७ वर्गमील आयतन है। पहाके जनसंख्या १३ करोड़ ६० लाख है। वर्तमान कालमें छः स्लावीय रिपब्लिक मिळ कर यूनियन माथ सोमियाट सोसियलिष्ट रिपब्लिक बना है। उनके नाम नीर आयतन इस प्रकार हैं,—

नाम	व्यापकन
रूसियनसोमियेट किङडम सोसियलिष्ट रिपब्लिक	१६०००००० वर्ग कि.मी.
युक्रेनियन सो. सो. रिपब्लिक	४०००००० "
इस्टर्सियन सो सो रिपब्लिक	१०००००० "
ट्रांस कालेसियन सो कि. सो. रिपब्लिक	२०००००० "
उक्रेनिन सो सो रिपब्लिक	२०००००० "
बसवेग सो. सो. रिपब्लिक	१३१६००० "

एशियनरिफ एशिया काश्गिरिया एम्बरने रेला।
बर्ग।

इस विस्तीर्ण रुसराज्यमें भाषाकी अधिक होमेके कारण साम्राज्यिकता भी विशेषरूपसे प्रबल थी। मनुमनुमातीकी तात्त्विकके अनुसार वह विभिन्न साम्राज्ययुक्त जनसंख्या इस प्रकार बिक्रा है।

प्रकृत प्रोक्लसमाथ नीर इस मतके विरुद्ध सत्रय हायमुक्त व्यक्तिपोंकी संख्या प्रायः ६ करोड़ ६० लाख; मुबारेडेज कर्क और अर्मेनीय १३ लाख ५० हजार; रोमान कैथलिक १ करोड़ २२ लाख; प्रोटेस्टंट ६७ लाख ५० हजार; यहूदी ३० लाख ५० हजार; मुसलमान १ करोड़ २१ लाख ५० हजार तथा विभिन्न धर्मावलम्बी कुल मिळा कर २७ लाख है।

समूह रुससाम्राज्य ३४ धर्माचार्योंके धर्मशासन

(Bishopric)की सीमायुक्त है। धर्माचार्योंके अधिकारयुक्त येसे विभागमें ३ प्रधान धर्माचार्य (Metropolitans) नीर ६२ धर्मप्रायक (Arch-bishops and bishops) नियुक्त हैं। किन्हाल रुसके विस्तीर्ण धर्मसमाजमें मठकी संख्यामें बहुत हीर फेर हुआ है।

रुसका 'पब्लिक महापर्वसङ्घ' (The Holy synod) उन्मुखनीय है। इस धर्मासमाका धनसञ्चार नीर माथ विवरण सुननेसे चमत्कृत होता पड़ेगा।
अधिकांशी ।

रुसमें विभिन्न जातिका वास है। इनकी भाषा, धर्ममात्रा, सम्पत्ता नीर रीतिनीति अलग है। पहाके अधिकांशी अधिकांश कालेसीय पशुमूल हैं तथा सब शिष्ट मर्यात् सी भागमेंसे एक भाग अपनेको मुसल जातिका बशीरूय बतलाते हैं।

रुसको कालेसीय जातिके जो सब वंशपर विद्यमान हैं वे रूब्रमगीर, उरुदू या फिन, तुर्क या तातार, जर्मन यहूदी नीर प्रोक भादि विभिन्न नामोंसे पुकारे जाते हैं। अधिकांश धर्मप्रायक वंश भागमेंसे एक भाग रूब्रम नीय शाखासे उत्पन्न है। वे लोग फिर रुस, पोल, लियुपानीय, लिट्टे, बालासीय नीर सर्बिय भादि नामोंमें बिक्रम हैं। इनमेंसे रुसकी संख्या प्रायः ५ करोड़ है। ये लोग साम्राज्यके ठीक मध्यस्थमें निरुद्ध नीर बसना नवीके बीच वास करते हैं। इससे (सिवा उत्तर में पूरुब पर्वत नीर अन्तःसागरके मध्यस्थस्थाने तथा दक्षिण ज्ञान नीर मिटर नदीके मध्यस्थानी) यूनागमें रूसियन लोग रहते हैं। यह सुदृढ़ विस्तृत रुसजाति बड़े नीर छोटे नामक दो विभागमें बिक्रम है। उन्में प्रवेशमें ही छोटे वा लिट्टे-रुसका वास है। इन्की ये वंशपर इतिहास प्रसिद्ध "रूसाक" जाति है। इन लोगोंके बलवीर्य, साहस नीर मीरक्यका परिचय किसोके भी ठिया नहीं है। धीरे धीरे पोल, तातार नीर काकसमाक जाति मा कर इन लोगोंसे मिळ गए है। रुसाक बिक्रम लाधोन है। किसोके निकट उन्हीन लाधानता नहीं बेची है। उन्पर किसो सम्मानत ध्यनिक निकट भयवत् धार उपाधिधारी सम्मानत धर्मनीक निकट बड़े वा प्रेरुससाम्राज्यमेंसे बहुतनी

अपनेको वेच लिया है। ये लोग अपने इच्छानुसार कार्य नहीं कर सकते। सभी अपने अपने मालिकके आदेशानुसार कार्य करनेको बाध्य हैं। ये लोग Bondsmen कहलाते हैं।

पोल और रूसजाति एकत्र पोलैण्डप्रदेशके शासनाधीन वास करतो है। पोलोका आचार-व्यवहार रूसोंसे कहीं अच्छा है। ये लोग बहुत साफ सुधरे रहते हैं, किन्तु सभ्यजातिकी गौरवस्वरूप शिल्पविद्योत्पन्न द्रव्यका वाणिज्य है। यहां तक कि श्रमफललब्ध सभी श्रेणियोंके पण्यद्रव्यके वाणिज्यमें वे अपेक्षाकृत पराङ्मुख हैं।

विलना और मिन्सक प्रदेशमें लिथुयानीय जाति रहती है। इनकी प्रचलित भाषा साधारण श्लभनिक भाषासे बहुत फर्क पडती है। इसमें रूस भाषागत अनेक शब्दोंका मेल देखा जाता है। ये लोग सभी कृषिजीवी हैं।

लिथुयानियोंकी वासभूमिके उत्तर कुर्ल्याण्ड और लिबोनिया नामक स्थानमें लिट्ट जातिका वास है। इन लोगोंकी भाषा रूस अथवा लिथुयानियोंकी भाषासे एकदम विपरीत है। खेतीवारी करके ही ये लोग जीविका निर्वाह करते हैं। कुर्ल्याण्डवासी लिट्टेगण क्रूर नामसे प्रसिद्ध हैं।

ब्लाच वा बालचोयगण भूय और निपर नदीके मध्यवर्ती वेसारावियो नामक प्रदेशमें रहती हैं। लाटिन, ग्रीक, इटाली और तुर्की भाषाके मेलसे इनकी भाषा घनी है। ये लोग बड़े परिश्रमसे कृषिकार्य करते हैं। इनके मध्य कुछ सर्बिय वा रेजव'श आ कर मिल गया है। एकाटारिनो-श्लक विभागमें भी इस जातिका उपनिवेश देखा जाता है।

फिनलैण्ड उपसागरके दोनों किनारे फिन वा तसुदे जातिका वास है। इनकी छिपटी नाक और मुखकी आकृति देन कर जातितत्त्वविदुगण इन्हें मुगलवंश-सम्भूत बतला गये हैं। किन्तु छोटे छोटे बाल और नीली आँखें देन कर कोई कोई जातितत्त्वविदु उन्हे ककेशीय जातिके मध्य स्थान-देते हैं। फिनलैण्ड उप-कूलवासी फिनजाति कृषिजीवी और गो मेयादिके पालक

है। इन्हीं लोगोंकी एक शाखा लापलण्डर कहलाते हैं। ये लोग केवल हरिणका पालन करके ही अपना गुजारा चलाते हैं।

फिनलैण्ड उपसागरके दक्षिण भूभागमें एस्थिस वा एस्थोनोय जातिका वास है। एकमात्र कृषि ही इनका प्रधान अव्यवह्य है। इनकी प्रचलित भाषा बहुत कुछ फिनोंमे मिलती है। १८१८ ई० तक ये लोग स्थानोय सामन्त वा जमींदारोंके निकट दासत्वशुद्धमें आरब्ध थे। पीछे सम्राट् अलेक्सन्दरने इन्हें मुक्ति दी।

एस्थोनियोंकी वासभूमिके दक्षिण एस्थिस नदीके दोनों किनारे लिबि वा लिबोनोव नामक एक छोटी जातिका वास है। ये लोग कृषिजीवी हैं और फिन-भाषा बोलते हैं।

उपरोक्त तसुदे जातिकी पूर्वदिभागीय शाखा पश्चिम विभागसे विलकुल स्वतन्त्र है। कब और किस प्रकार ये लोग फिन जातिकी वासभूमि फिनलैण्डका परित्याग कर ५सौ मील दूर रूस जातिकी इस सुविस्तृत वास-भूमि पार कर यूरल पर्वतमालाके पश्चिम ढाले और मध्य बलगा नदीके किनारे आ बस गये हैं, उसे जाननेका कोई उपाय नहीं। इन लोगोंके मध्य सिरियाने शोमर, मोगुले, वोतियाके, चुवास, चेरिमिज, मोद्भाइन और टेपासियारे आदि कई देखे जाते हैं।

डुश्ना नदीकी शाखा वाचेग्दा नदी और काशमदीके मध्यस्थलमें विशेषतः वैचेग्दाके दोना किनारे और साइसोला नदीके मुहाने तकके विस्तृत स्थानमें सिरियाने शाखाका वास है। ये लोग रूसके पूर्वोत्तर सीमांतमें वनमालाच्छादित पहाड़ी भूभागमे विचरण कर इच्छानुसार जगली पशुका शिकार करते हैं तथा उसीसे जीविका चलाते हैं। इन दोनोंकी भाषा बहुत कुछ पारमियोंसे मिलती जुलती है।

वोतियाक जाति पारमियोंकी वासभूमिके पश्चिम विचरका और कामा नदीके उत्पत्ति-स्थान-सन्नहित प्रदेशमें रहती है। भाषा और शारीरिक गठनमें ये लोग फिनजाति समान हैं। ये लोग खेतीवारी तथा गो-मेयादि और म'गुमक्षिकाका पालन कर अपना गुजारा चलाते हैं। स्वजातिके मध्य द्रोप और अत्याचारका

विचार करनेके लिये ये लोग धरमैसे ही एक मरबल
-बुन लेते हैं। ये लोग ईसाधर्मावलम्बी हैं।

२. - बुधवास और चेरिमिजगण बरगा नदीके दोनों किनारे
कासाव नामक प्रदेशक निकट रहते हैं। ये सभी प्रोक
सुमात्रामुक्त इसाई हैं। बुधवासकी वासभूमिके पश्चिम
मोर्शि या मोक्षवाहन जातिका वास है। निजमो नबगो
रोव और कासाम-प्रदेशके मध्य प्रवाहित सुरनदीके
किनारे ये जेतीबटो कर जीविका निर्वाह करते हैं। य
सेमा इसाई है, इसा क रण इनका शारीरिक मदन र्चिन
यमोके जेसा है।

द्विप और बाण्डियप।

३. - यहाँके अधिवासी द्विपकार्य वा बाण्डियप व्यवसाय
करके अपनी अपनी जीविका चलाते हैं। भूत माग
मेंसे ७ भाग अधिवासी हूक चलाते हैं। स्थानविशेष
में जमीनकी व्यवस्था अच्छी न होने वयया व्यवस्त
भाड़ा पड़नेके कारण जेतीबाटीमें उतनी सुविधा नहीं
है। जितनीसे किय तुमा, रयजान, सिमबिस्क और
उका तक दक्षिण-पश्चिमसे पूर्वोत्तरमें एक रेखा खींचनेसे
दक्षिण और उत्तर इसकी जमीनकी व्यवस्था अच्छी तरह
जानो जा सकतो है। इस रेखाके दक्षिण अणुपालके
मोसक और उत्तर कच्छेशियाक प्रेदि-वास्तर तक प्रायः २०
करोड़ एकड़ जमीन काबो और मिट्टीसे भरते है। यहाँ
शुस्यक्षेत्र तुवाच्यद्वित प्रास्तर और पतमाळा विटाजित
है। बीच बीचमें वनारुदिके कारण फसल नहीं
उठेनी।

उत्तरदिमागमें तुपाअख द्विवित या तुपाचिसक
मिट्टीकी उत्पादनशक्तिके समायक कारण यहाँ अनाज
बहुत कम उपजता है। यहाँकी मिट्टी बलुई है, इस कारण
शस्योत्पादनोपयोगी बनानेमें अधिक खर्च देना पड़तो
है। पोखिया, मध्य कस, रयजान और उत्तर बरगा
प्रदेशकी मिट्टीमें फोस्फेटस वाया जाता है।

कसके दक्षिण पेरि पिमागमें चाम्पक्षेत्र और गोवा
रचमूमि है। इनके उत्तरपूर्वके मध्यरेखाके दोनों
-किनारे 'Auto-Steppe zone' है। यहाँ कवक पन है, कहीं
-कहीं शस्यक्षेत्र गडर आता है। इसके भी उत्तर तुण
पूर्वमें मैदान और वन तथा उससे मो उत्तर निचिड़ वन

माला है। यह वनमाळा Forest zone कहलाता है।

प्रस्पादिके भसाया यहाँ चीनीके लिये चिट
वासक नामक सागुकी जेतो पड़ुवापलते होती है। यह
चीनो और क्षेत्रजात परसकते रसती, तीसो भादि तैल
कर बीजसे तैल तथा बावसे शराय बना कर प्रसवासी
बेधते हैं। प्रतिवर्ष क्रममें ११११००० गैलन, कच्छेशिया
में १०००००० गैलन और मध्यपसियामें ११६०००
गैलन शराय बुमाई जाती है। यहाँके लोग मनुष्यकसे
मोम और मनु तथा रेयामकी गोटीसे कपड़े बुनने
कायक रेयाम तैयार करते हैं। इसमें मछली पकड़नेका
व्यवसाय है।

नावा विपयोंके कल कारणनेकी उन्वतिके साथ
साथ वाण्डियप व्यवसायके मध्य उपाय लक्ष्य
इसके भागा र्चानोंमें रेखे सादन खुस गई है। १८१५
१०में यहाँका विख्यात ट्राम्ससाइविरियाका रोजपथ
खोला गया। उस समय वैकाळ हड़के ऊपर रोजपथ
नही था। पीछे उसकी बगल सादन बीड़नेका संका
दिया गया। इस-ज्यावत युद्धके समय वैकाळ हड़का
वरफके ऊपर खान बँहाई गई थी। पीछे उस पर पको
सड़क बनाई गई है। ११०० १ १०में चीन-विदेश्यवृद्धि
श्रव बुक मह, इसने अब अर्धवत्पर पर अधिकार किया
तब राक्षरका और बाण्डियपके उपाय-लक्ष्य मंशूरियाके
हाविन और व्हादिमथकमें रोजपथ खोला गया था।

भूतल।

इसके भूगर्भके मध्य प्राचीन जयत्के निरर्चन गड़े
रहने पर भी इन दूसरे देशनिहित पदार्थकी तत्त्व इसमें
कोई सामायिक परिवर्तन नहीं हुआ। भूतलवृत्तियोंने
यहाँके प्राचीन स्तरोंका कीचड़, मार्ग (फूलकडो मिळो
हुई एक प्रकारकी मिट्टी) और बालुकास्तर सञ्चित मू
गर्भनिहित पदार्थोंकी भाजोचना कर स्थिर किया है,
कि उत्तर बेन्सक क्षेत्रे मस्तरमय हड़ पर्वत मनुष्यके
हिस समय उत्पन्न हुए थे, इराका उपरोक्त प्राचीन युगोव
बालुकास्तर मा इसी समय संगठित हुआ। इसमें
धोरकिसो मो स्थानके प्राचीन स्तरमें धानोपनिधि
स्थापित पातवस्तरका समायोज, नहा देया जाता।

केवल यूरल पर्वतमाला पर उस श्रेणीका प्रस्तर नजर आता है।

रूससाम्राज्यमें सिल्विउरीय स्तरकी प्रधानता रहने से कोयला कहीं भी होने नहीं पाता। ओनेगा उपसागर तथा यूरल पर्वतके पश्चिम ढालवें देशमें सेना पाया जाता है। किन्तु उक्त पर्वतकी साइविरिया सीमामें सेनेकी बहुत-सी खानें हैं। रूसमें चांदीकी खान कहीं भी नहीं है, किन्तु पार्ग बोरेननर्ग और वियता विभागमें तांबे और लोहेकी अनेक खान पाई जाती हैं, कहीं कहीं पारा, सेफोविप, निकेल, कोबाल्ट, सौवीराजन और विषमय भी देखनेमें आता है।

ओनेगा और लादोगा उपसागरकी उत्तरी सीमा पर उत्कृष्ट मर्मर और दानेदार पत्थरकी खान है। सेण्टपिटर्सबर्गकी अट्टालिका सेद्विलके विख्यात मर्मर पत्थरकी बनी है। उसका वर्ण ललाई लिये सफेद है।

ऊपरमें जो मैन्धव लवणका उल्लेख किया गया है, वह यहाँका एक प्रधान वाणिज्य उपकरण है। यूरल-पर्वतकी उबल्ली नामक स्थानमें प्रचुर लवण निकाला जाता है।

रूस साहित्य।

रूस-साहित्य प्रधानतः दो भागोंमें विभक्त है—कथित और लिखित। प्रथम भागमें 'चिलिनि' अर्थात् प्राचीन रूसकी ग्रन्थावली है। भ्रमणकारी भट्टकविगण वह प्राचीन गाथा तमाम गाते फिरते हैं। गत ६० वर्षके अन्दर रूस-साहित्यकोने उक्त प्राचीन गाथाको काला-नुयायो भागमें विभक्त किया है।

(१) प्राचीन वीरोंकी काव्य, (२) क्लिफके राजकुमार ग्लादिमिरका युग, (३) नवगोरोद युग, (४) मोस्को युग, (५) कसाक गाथा, (६) पीटरका युग और (७) आधुनिक काल। वर्त्तमान १६वीं सदीके प्रथम भागसे वे सब साहित्य सङ्कलित और मुद्रित होते हैं। १८०० ई०में माइरिल वा कूपदानिलफ नामक एक कसाकने सबसे पहले उस प्राचीन गाथाका सग्रह कर प्रकाश किया। १८१८ ई०को लिक्जिक नगरमें उन सब गाथाओंका जर्मन भाषामें अनुवाद हुआ। प्रथम

युगमें जिन सब वीरोंकी गाथा गार्द है, वे सब प्रकृति-पूजाके नामान्तरमात्र हैं। जैसे, भगला (हिन्दूकी गङ्गाकी तरह), भसेस्लावित, मिकुञ और स्विपाटोगर अर्थात् देशी नदी और पर्वत आदिके अधिष्ठात्री देवता इस युगमें पूजित हुए थे। गोरिनिक सर्ग, वासुकि वा अनन्तकी तरह इनके शिर पर मणि है और ये निधिरक्षक हैं। फिर नृसिंह अवतारकी तरह यहा माघा सांप और आधा मनुष्य पूजित होते थे। एक भीम-काय औदरिक देवताका वर्णन अत्यन्त भयङ्कर है।

द्वितीय युगका साहित्य क्लिफके राजकुमार ग्लादिमिरकी अत्याश्चर्य कहानीसे पूर्ण है। इनके समय रूसमें ईसा-धर्मका प्रचार हुआ। उपरोक्त साहित्यको छोड़ कर रूसमें तमाम धर्मसंक्रान्त नाना प्रकारकी प्राचीन गाथा प्रचलित है। उससे रूसके पौराणिक युग और देवतत्त्वका सुन्दर आभास पाया जाता है। रूसके देवतत्त्वकी आलोचना करनेसे मालूम होता है, मानो वह किसी वैदेशिक देवतत्त्वके ढंग पर ही कल्पित हुआ हो। विशेष गवेषणाके साथ इसके प्रकृततत्त्वका निर्णय तथा प्राचीन भारतीय देवतत्त्वके साथ उसका मिलान करनेसे मालूम होगा, कि भारतीय पौराणिक युगका सार्वजनिक देवसमाज सुदूर यूरोप प्रांतमें विस्तृत हुआ था, रूसका यह सधर्म (Comparative) देवसमाज इस अभिनव द्वारके प्रदुष्टाटनमें अच्छे उपयोगी हैं।

द्वितीय विभाग—लिखित साहित्य है। नवगोरोदके शासनकर्त्ता अस्ट्रोमिरके गादेशसे स्त्रिगोरोने सबसे पहले इन सबको लिपिवद्ध किया। १०७६ ई०में ग्रीक साहित्यसे सङ्कलन कर प्रथम रूसी भाषाका एनसाइक्लोपिडिया वा विश्वकोष सङ्कलित हुआ। आखिर नये और प्राचीन टेष्टामेण्ट ले कर रसियन साहित्यका २य युग आरम्भ होता है। थिओडिसियसके लेखसे रसियन मध्य युगमें भी प्राचीन पौत्तलिक भावका परिचय पाया जाता है।

फिडियाग नामक ग्रन्थकारने वैजन्ती लेखकोंके वागाडम्बरपूर्ण समासयुक्त वाक्यका व्यवहार किया। नेटरके इतिहासके साथ साथ रूसमें ऐतिहासिक

साहित्यका स्वरूप हुआ। पीछे किफ बघगोरोद, मछहिनिया भादि स्थानोंमें ऐतिहासिक साहित्य फैला। इन सब भाषीन इतिहासोंमें अनेक कीतुको-रोपक उपगयासका मूखसूत्र विद्यमान हैं।

११वीं और १२वीं सदीस ज्ञानप्रवृत्तान्तविषयक साहित्यको पुष्टि होती है। दानियाळ नामक एक व्यक्ति सबसे पहले तोषपर्यटन कर लखैश बाँटे। उनका लिखा हुआ पुस्तक ही इस साहित्यकी नींव है। पीछे भाषाने सिपस निकिदिन नामक यखर बगरका एक व्यक्ति १४७० ई०में भारतवर्ष आया। उसके ज्ञानप्रवृत्तान्तसे अनेक भारतीयतत्व ज्ञाना जाता है। उस सब पुस्तकों का अंगरेजोंमें अनुवाद हुआ है तथा हाफ्लुइड सोसाइटीने इसे प्रकाशित किया। ह्यारिमिर मोमोराय नामक एक भाषामाने अपने पुस्तोंको जो उपदेश दिया था उससे अनेक भाषण तत्व ज्ञाना जाता है। उसमें शास्त्रोक्त सभ्रात्योंकी दीनन्दिन जीवनी स्पष्टरूपसे लिखी है।

१२वीं सदीमें तुर्कक विजय भारतके धर्मोपदेश से धर्मसाहित्यको उन्नति हुई। किन्तु यह साहित्य वैश्वकी तट्ट अस्वकार्युक्त पाषणोंस भर है। अथि काश उल्मेहा और कपकसे पूर्ण है। इस साहित्यमें अनेक साधु-संन्यासियोंका जीवनचरित्र भी वर्णित है।

गण्य साहित्यमें इनके ही पहला स्थान पाया है। नवगोरोदके सिद्धवर्षी इसके राजकुमार पाषामरजेस नामक स्थानमें युद्ध करते गये थे। वह सब अशौकिक कहानी उपन्यासके ढंग पर उस पुस्तकमें लिखी है। यह पुस्तक कथाराजनकी पुस्तकालकीके मध्य पाई गई थी। इनके पुस्तकसे अनेक प्रतनतत्व और अभ्युत्थ ज्ञाने आ सकते हैं। प्राचीन सुखीरियाकी बहुत ही मह्योकी रसियन साहित्यमें स्थान दिया गया है।

उक्त किफको मुख्य कहानी उपन्यास साहित्यक एक स्मृतिस्तम्भ कहते हैं। इसकें विधा द्राकुलका उपन्यास अथि बिल्लु और हदवमाही पननसे भर हुआ है।

भारत-साहित्यक मध्य (१०१२-१०५४ ई०) नवगोरोदके इतिहासमें रसियन प्राचीन भारत संग्रह ही सर्वप्रथम ग्रन्थ है। यह संग्रह स्कन्दनामोय भारतके जैसा

है। इसस मतम होता है, कि कसकी सम्पत्ता अथ्याय्य यूरोपीय प्रदेशके साथ मुद्दाबन्ध करती थी। अगस्त १४२७ और १५५० ई०में भारतका संस्कार और परिचय हुआ। आलेखिसका भारत संग्रह भी एक मपूर्ण वस्तु है। इनके इच्छाविधि भारतमें लिखा है, कि अशौकी हत्या करनेवालोंको छोटे जो जमानमें गाड़ देना होगा। साक्षियोंसे सखी बात जाननेके लिये उन्हें तट्ट तट्टकी मस्सणा ही जाती थी। यद्यत्तके साक्षी बिना पायक हुए छोड़े नहीं पाते थे। मसामीकी अपेक्षा साक्षीको साम्प्रमा सी गुना अथिद्यो। जो तमाहू पीते थे उनकी नाक काट ली जाती थी। अन्तमें पीटर ही प्रदेशक समय यह कठोर भारत उठा दिया गया।

१५५३ ई०को सबसे पहले मोस्कोमें मुद्रायन्त्र स्थापित हुआ तथा १५५४ ई०में अथिद्य नामक पुस्तक सबसे पहले छापी गई। इयान पिगीकोरफ तथा पीटर मथिस्कांमरज नामक दो सर्वप्रथम मुद्राकरकी रचितके लिये कुछ दिन पहले दो बड़े स्मृतिस्तम्भ बनाये गये हैं। १५८१ ई०में सबसे पहले शास्त्रोक्त भाषिक मुद्रित हुई।

इयान विरेरिजके समय "गार्डेस्क आभार" नामक एक बड़ा पोषा छापा गया। पहले सिद्धनगर नामक एक नाथिने अपने पुत्रवपू देवाजियाको जो उपदेश दिया था वही धीरे धीरे जनसाधारणमें प्रचलित हो कर छप गया। इस पुस्तकमें रसियन जीवनका उन्नत चित्र विद्यमान है। यह पुस्तक पहलेसे स्पष्ट देखा जाता है कि पत्नी पर पतिका पूरा बहाव था। इच्छा करने पर यह पत्नीको सब तट्टकी सजा दे सकता था। स्वामीका आज्ञा पावन करना ही लोका एकमात्र कर्तव्य था। युगकों समयसे कसमें लियोंमें परदासितयम आरो हुआ। १९वीं सदीका कौडीन्यमर्शाके सम्बन्धमें एक बड़ा ग्रन्थ मुद्रित हुआ। १७वीं सदीमें बहुतसं ग्रन्थ मुद्रित हुए। उनमेंसे तोवसकक नगरवासी साक्षिपसका 'श्रीमोमाक' मपूर्ण ग्रन्थ है। इसमें पूर्वियोंकी सृष्टिसे छे कर १७वा सदी तक सभी घटनाओंका उल्लेख है। 'आजकहा अयोध' एक गद्यग्रन्थ है। यह

कादम्बरीकी तरह समासबहुल अलङ्कार वाक्योंमें लिखा है। पीछे प्रिगोरी कोटो सिचिनका रूस इतिहास नामक बड़ा ग्रन्थ लिखा गया। इसके पहले ऐसा एक भी बड़ा ग्रन्थ नहीं लिखा गया था। १८४० ई०में वह मुद्रित हुआ। उस ग्रन्थमें रसियन जीवनका समस्त सामाजिक चित्र अङ्कित देखा जाता है। पीछे क्रिश्चानिक नामक एक पण्डितने रूस भाषाओंका भाषा तत्त्व और व्याकरणका संकलन तथा १८६० ई०में रूस साम्राज्यका इतिहास प्रणयन किया। उस ग्रन्थमें ग्रन्थकारने अपना असाधारण पाण्डित्य दिखलाया है। इस समय धर्माधिकरण ले-कर सम्राट्के साथ पादरियोंका जो विरोध हुआ था वह डियानश्चैनसकी ओजखिनो चकतुतासे स्पष्ट जाना जाता है। मोस्को नगरमें उनका मकबरा और रमूनिस्तम्भ विद्यमान था। ये विशालकाय व्यक्ति थे। इसकी ऊँचाई साढ़े चार हाथ थी।

१६२८ से १६४० ई०के मध्य सुप्रसिद्ध ग्रन्थकार पोलोटिज्कोका आविर्भाव हुआ। उनके समयमें प्राचीन युग समाप्त हो कर रूस साहित्यमें नवयुगका आरम्भ हुआ। वे सम्राट् थियोडोरके शिक्षक थे। उन्हींके समय रूसमें पाश्चात्य शिक्षासभ्यताका उज्ज्वल आलोक साहित्यक्षेत्रमें विकीर्ण हुआ था। Garland of Faith वा भक्तिमालिका नामक एक बड़ा धर्मग्रन्थ लिख गये हैं। उनकी ऐन्ड्रियालिक लेखनीसे रूसमें युगान्तर उपस्थित हुआ। ग्रीक और इटली साहित्यका रूसभाषामें अनुवाद होने लगा। अनन्तर माइकल रोमानोसक नामक लेखक की अविश्रान्त लेखनीसे अनेक उपादेश ग्रन्थ लिखे जाने लगे। वे महाकाव्य, नाटक, उपन्यास, इतिहास आदि नाना विषयोंमें पुस्तक लिखने लगे। विज्ञान और दर्शनशास्त्रमें भी उनकी लेखनी समान चलने लगी। टाटिसटोफ नामक गजमन्ताने रूसका इतिहास लिखा। इसके बाद ट्रेंडिया कोविस्कीने नाना काव्योंकी रचना की। पीछे एलिजावेथके शासनकालमें रूस साहित्यमें फरासी-प्रभाव संक्रामित हुआ तथा अलेक्सन्दर सुमारोव्कफने काव्य, नाटक, आख्यान, इतिहास आदि फरासी आदर्श पर लिखे। उनके उद्योगसे १७५६-ई०को सेंटपिटर्स-

बर्गमें सवर्गमें पहले रङ्गालय प्रतिष्ठित हुआ तथा साइमन पोलोटिज्कीके धर्मविषयक नाटक खेले जाने लगे। अनन्तर माइकेल खेरासकफ नामक कविने दो प्रकार महाकाव्योंकी रचना की, वारह सर्गों विभक्त 'रोसियाडा' और १८ सर्गों विभक्त ब्लादिमिर। इसके बाद बोन्दोनोभिचने ध्युपिड और साइफीका वृत्तान्त ले कर एक महाकाव्य रचा। इनकी रचना बहुत मधुर और सुललित होती थी।

इवान खेमनिजरसे वर्तमान औपन्यासिक लेखकका आविर्भाव होने लगा। इन सब उपन्यासोंमें प्राच्यभावकी सम्पूर्ण छाया विद्यमान है। इन्हें प्राच्यग्रन्थका अनुवाद करनेमें भी अत्युक्ति न होगी।

खेमनिजर पहले जेलाटोका अनुवाद कर पीछे मौलिक ग्रन्थ लिखने लगे। उन्होंने पहले भिम्निन नामक नाटक ग्रन्थ लिखना शुरू किया था। रूससाम्राज्यका अनेक कुसम्कार और कुप्रथाको दूर करनेमें समर्पण हुए थे। उनका बनाया सुन्दर भ्रमणवृत्तान्त रूस साहित्यका एक अठडारस्वरूप है। इसके बाद सुकवि उरजाविनका आविर्भाव हुआ। ये कथराइनकी राजसभामें सामाजिक विवेक थे। इन्हें रूसका मिळटन कहा जा सकता है। इनका बनाया ईश्वरस्तोत्र समस्त यूरोपमें विद्यमान है। इस समय राडिमचेव्की और नोडिन्क उद्योगनापूर्ण काव्य लिख कर निर्वासित हुए थे।

अनन्तर अलेक्सन्दरके शासनकालमें निकोलस कारामजिन नामक सुप्रसिद्ध ग्रन्थकारका अभ्युदय हुआ। उनका रूससाम्राज्यका इतिहास रूस साहित्यका विष्ट स्मृति-स्तम्भ है। इसके सिवा वे कितने उपन्यास और काव्य भी लिख गये हैं।

इसके बाद प्लेटन दमिलिएफके समयसे रूस-साहित्यमें अंगरेज कवियोंका प्रभाव संक्रामित होने लगा। इस समय इवान क्रिडफ नामक सुप्रसिद्ध औपन्यासिकने देशी साहित्यको तरह तरहके अलङ्कारने सुशोभित किया। इनके उपन्यासमें रूसका जातीय जीवन अत्यन्त सुन्दर भावमें लिखा है। पीछे सुकवि फुकोभिसकी काव्य-क्षेत्रमें विशेष निपुणता दिखाने लगे। इनके समयसे 'रोमाण्टिक स्कूल, वा अलौकिक कहानोंका सुत्रयात हुआ। ये अनुवादमें बड़े सिद्धहस्त थे। १८०२ ई०में

इन्होंने भगवद्-रूपि प्रकाश एतन्मोक्षक रूपभाषामं स्तुवाद् किया। पोछे उन्होंने अर्जुन रूपि गोत्रे, शिखार, ऊदसीएक तथा स गरोत्र रूपि बारहम, मूर और सावित्री पदानुवाद् प्रचारित किया। उन्होंने बहुतेके वैदिक कथों की सुमन्त्रित कथिताका रूप भाषामें पदानुवाद् किया था। इसके सिवा नाटक, काव्य इत्यादि, प्रपञ्चादि सभी विषयोंमें उनका उद्यत् रूपवेदिनी प्रतिभा था। इसक बाद इहलगिप कवि प्रियमुक्ता परसन रचनामें अर्प्य प्रतिभाका परिचय दिया था। उनका "पौर अरु उमा" नामक प्रहसन यूरोपीय साहित्यको अर्प्य रचना है। इस समय कन्नडक नामक कविने स्वयं कवि बार्गासका 'सदरु आरु' कला-भाषामें अनुवाद् किया। ये कलाक मन्थरुपि कदाचित् थे।

पुत्रिकेका मूल्युक्त बाद सर्वप्रधान कवि (१८१४-१८३८) काव्यरचका भाषिर्माय हुमा। इनकी छेकनी विषोयान्त काव्यरचनामें शक्तिशालिनी थी। ये गद्यके कदाचित् उदात्त थे। उनका बनाया 'श्रेयस' वा शान्तरुकाय अति उपादेय है। पाठ्यिक दुष्टका धर्षन करनेमें ये अद्वितीय थे।

ममस्तर कव्यरचक और निकटिम नामक दो कवियों में गीति भाषामें विशेष प्रतिभाका परिचय दिया। इनक बाद शिवास्त्रिक नामक औपन्यासिकने श्रम व्यक्त किया। अनन्तर निकोलस गोगल नामक सुवसिद्ध औपन्यासिकने उक्तको धारण की। ये श्रम काव्यमें विशेष क्षमताशाली थे। ध्यान बनाये 'उम्मादकी स्मृति' नामक प्रथम है। उन्होंने अर्प्यरचना और रचनाशक्तिका जो परिचय दिया है वह अनुकूलोप है। उनका बनाया 'मैतारमा' अर्प्य काव्य है। गाननने भाषिर् पागलकी छन्द बनाया रचनापत्रामें अर्ध प्रदान का। ये १८२२ ई० की परलोक सिपारे। उनका समयस मासिक रूप उपन्यास बंद हा गया है।

भाषिर् एवान् यौनिक नामक मानुषिक औपन्यासिकने थाकारे और इहलक मध्य पर बहुते उपन्यास लिखे हैं। पाठ मलकस्यरु दार्शनिक नामक एक स्थापान छवकन "क हावा" नामक मूर्त उपन्यासकी रचना का था। साध्याविषयक निषय विषयोंमेंत हुए।

इसक बाद वस्तुमिषयक (१८८१ ई०) न 'द्विज्योक्त' और 'मैतुटीका पत्र' नामक दो अर्प्य उपन्यास लिखे। अनन्तर काउचर उद्यत् नामक विख्यात नाटककार हुए। उनके लिखे 'युद्ध और शक्ति' प्रथम बड़े हो अर्प्य हैं।

१८८१ ई०में एवान् यौनिको मूल्युक्त हुए। ये दो सबभेद औपन्यासिक थे। उनका 'मन्त्रोक्तका भाषास मवन' नामक प्रथम गूढ्याकी सुमस्त नापायोके मन्त्रद्वार स्वरूप होने योग्य है। उनका बनाया 'मार्जिन लेख' वा 'महन्त्यार्जुमि' अर्प्य प्रथम है। इस समय वेदिकमिष्ये नामक एक प्रसिद्ध समातोषकने श्रमप्रद्वय किया। काव्यमन्त्रिक समयस रूप साहित्यने बड़ी उन्नति की है। पत्रम हा रूप सामान्यका विस्तारो इतिहास प्रथम लिख गये हैं। ये वेदिकमिष्ये नामक पद्या रूप समाचारपत्रके सम्पादक और मामलोदके अनुवाद्क थे। इसके बाद 'सखानिपकने २३ भागोंमें विभक्त रूपका एक बड़ा इतिहास लिखा है। इस समय कन्नडमरुत नामक विषयात लेखकने यूरोपवृत्त' प्रथम और अनेक समालोचनापूर्ण प्रपञ्चकी रचना की। उद्दिष्टाकोकने पीरर हा प्रदेक समयका एक बड़ा इतिहास लिखा है। पोछे अनन्तर लेखकोंमें वैदिक इतिहास भी रचे हैं। अर्प्याक वेद्युक्तक दुष्मिमान रूप इतिहासकी उपानाम नामक पुस्तकका १२ भाग तक प्रकाश किया।

ममसं विपिनका शकभौतिक साहित्यका इतिहास उत्कृष्ट प्रथम है। इसके कवियोंमें वैदिक साहित्यिक और पाठ्यनिको भाषि प्रधान हैं।

इसक परिदृशान् शब्दविज्ञानमें बड़ी विपुलता दिखाई है। मण्डिक नामक अध्यापकने शकभौतिक भाषासहित्य नामक विराट् प्रथमकी रचना की। इसके सिवा अनेक अधिधान और शब्दकथय मौ लिखे गये। द्विकहरदिने ज्ञातिररक सम्प्रथम एक बड़ा प्रथम छन्दक किया है। निभायेक नामक अध्यापकने 'व्याप्त लख'क सम्प्रथम बहुत सा बर्ण लिखा है। धर्षानक रूपसाहित्यका कुछ इतिहास वही पर लिखता असम्भव है। एका लिखे सञ्चित परिचय दिया गया।

पुत्रिके और सामंस्याक परलोक युगक सर्वप्रधान कवि मन्त्ररुतका १८३३ ई०में दसम्ब हुमा।

१९वीं सदीके शेष भागमें उनके जैसे प्रतिभावाली और किसी भी कविने जन्म नहीं लिया। १८३५ ई०में आपुरस्टिन नामक गीतकविकी मृत्यु हुई। पीछे १८६७ ई०के मध्य आलोचन मैकक्र तथा पोलोनिसकी नामक दो प्रसिद्ध कवियोंका देहान्त हुआ। ये दोनों रूसके सर्वजनविदित कवि थे। वर्त्तमानकालके कवियोंमें एकरिमुफिस्कि, इवान बुनिम और कनस्तान्ताइन वेमोएस्केके नाम उल्लेखनीय हैं। शेषोक्त कवि अनुवादमें बड़े सिद्धहस्त थे। उन्होंने अद्भूत-कवि सेलीके काव्य रूस-कविताका अनुवाद किया।

ऐतिहासिक साहित्यमें रूस अभी बड़ी उन्नति कर रहा है। यहा पर उसका कुल हाल एक तरहसे असम्भव है। 'रसियन एनटिकोआरी' वा रूस प्रज्ञतत्त्व-समितिका प्रकाशित ऐतिहासिकतत्त्व अनेक घातव्य तत्त्वोंसे परिपूर्ण है। एतद्भिन्न केवल इतिहासक्षेत्रकी आलोचनामें बहुतसे समोचार पत्रोंका आविर्भाव हुआ है। १८६१ ई०में सेण्टपिटर्सबर्ग विश्वविद्यालयके इतिहास अध्यापक घेण्ट्सेफ लुमिन परलोककी सिधारे। वे ३२ वर्ष इस कार्यमें नियुक्त थे। उनके रूस-इतिहासका केवल प्रथम भाग और द्वितीय भागका प्रथमाद्ध प्रचारित हुआ है। सलोभिएक और कष्टोमारफ नामक दो ऐतिहासिकके मरने पर भी रूसकी इतिहासचर्चामें धका नहीं पहुँचा है।

इस समयके इतिहासकारोंके मध्य अध्यापक मिलि-उकफ रूस शिक्षा और सभ्यताका इतिहास लिख कर यशस्वी हो गये हैं।

विख्यात रूस-पण्डित मैकसिस कोभालेभस्की 'यूरोपमें अर्थनीति शास्त्रका इतिहास' नामक प्रसिद्ध ग्रन्थ लिख कर जगद्विख्यात हो गये हैं। पीछे मोस्को विश्व-विद्यालयके क्लिविचेभस्किने रूस इतिहासके सम्बन्धमें चक्रेताविषयक अनेक प्रबन्ध प्रकाशित किये हैं। इसके अतिरिक्त अध्यापक मिनोप्राभक "मध्ययुगमें इङ्ग्लैण्डका सामाजिक इतिहास" नामक प्रसिद्ध ग्रन्थ लिख कर यशस्वी हो गये हैं। किन्तु गोगल और टलएथ आदिके जैसे विख्यात औपन्यासिकने आज तक रूसमें जन्मग्रहण नहीं किया है। टलएथने वृद्धावस्थामें Resu-

rection वा पुनरुत्थान नामक प्रसिद्ध उपन्यास लिख कर अद्भुत प्रतिभाका परिचय दिया है। नये लेखकोंमें एचेवका नाम उल्लेखनीय है। तरुणावस्थामें ही उन्होंने लिपिकुशलताका अच्छे परिचय दिया है। इसके सिवा गोकॉ, आर्टेल, यासिनस्कि आदि लेखकगण गद्यरचनामें प्रसिद्धि लाभ कर गये हैं।

रूस (फा० री०) चाल।

रूसना (हि० खी०) रोपि करना, नाराज होना।

रुसा (हि० पु०) अडूसा, अरु-सा। अडूसा देखो। २ एक सुगन्धित घासका नाम। यह नेपाल, शिमला, अल-गोडा, काश्मीर, पंजाब, राजमहल, मध्यप्रदेशके पहाड़ी प्रदेशों, बम्बई और मद्राजके पर्वतोंमें होती है। इस घाससे गुलाबकी-सी सुगन्ध आती है और इसका तेल निकाला जाता है। इसकी प्रधान दो जातियाँ होती हैं। इसका फूल सफेद और दूसरीका फूल नीले रंगका होता है। जब यह घास नरम रहती है तब इसकी पत्तियोंका रंग नीलापन लिये होता है, पकने पर उनका रंग लाल हो जाता है। जब इसकी पत्तियाँ नरम होती हैं। तब इसे मोतिया कहते हैं और जब पक कर लाल हो जाती हैं तब वे साँफिया कहलाती हैं। सावन भादोंमें यह फूलने लगती है और कातिक अगहन तक फूलती है। इसी समय इसकी पत्तियाँ तेल निकालने-योग्य हो जाती हैं। जब घास फूलने लगती है तब काट ली जाती है और इसकी छोटी छोटी पूलियाँ बाध ली जाती हैं। तेल निकालते समय देगमें पानी भर कर ढाई तीन सौ पूलियाँ उसमें छोड़ दी जाती हैं। फिर देग भाग पर रख दिया जाता है और नालियोंका सिरा तावेके दो छेदोंके मुहसे लगा दिया जाता है जो पानीमें डूबे रहते हैं। इस प्रकार घासका आसव खींचा जाता है। जब आसव निकल आता है तब उसे एक चौड़े मुँहके बरतनमें उँडेल लेते हैं। इस बरतनमें रूसका भर्क थोड़ी देर तक रहता और तेल छोटे चम्मचसे धीरे धीरे ऊपरसे काछ लिया जाता है। यह तेल गुलाबके अतरमें मिलाया जाता है और इसमें ताडपीन या मिट्टीका तेल मिला कर सुगन्धित ऋण तैयार किया जाता है। मध्यप्रदेशके जंगलोंसे रूसका तेल

बहुत अधिक मात्रामें बाहर जाता है। पूरेप और धमेरेकामें इस ठेकका बहुत व्यवहार तथा व्यापार होता है। इसका पर्याय—रोहिय, गणधेवा, भूतय, कृतय, गणधुतय।

कसो (हि० पि०) १ कस देवाका रहनेवाला, कस देवका निवासी। २ कस देहमें उत्पन्न। ३ कस देवाका। (कसो०) ४ कसने शक्तो भाषा। ५ सिरके धमके पर जमा हुआ मूलीके सामान छिन्नका जो सिर म मजसे जम जाता है।

कह (म० कसो०) १ आठमा, जीपारमा। २ सच, सार।

कड़ (हि० कसो०) पुपको कड़ जो पढ़के किसी मोड़ने या विपामे भाविके रूपमें मरो रही हो।

कना (हि० कसि०) भाषेष्ठित करना, घेरना।

करो (हि० कसो०) एक प्रकारका पस जो हिमाचल पर्यटके नीचे टाकोनकीके पूर्वमें तथा मध्य भारत और मन्नात्र प्रायमें पाया जाता है। इसे कीरो और मामरो कहते हैं। इसकी छाक देठी औपचिपिके काममें जाती है और अड़ हांपक काठनेकी औपचि मानो जाती है। इसकी लकड़ी तीकमें प्रति फल कुछ २ सेर होती है। यह बहुत मजबूत और चिकनो होती है। रंग तेले और पानिया करीबे इस पर बहुत लफ्फी बमक जाती है। इससे मेज, कुर्सी, बनमारी और तलाकीरके जोखद बनाये जाते हैं। यह पस बीजके बरसातमें उपाया है। इसका संस्कारमें सहिगण्या करते हैं। इसकी पलिया उरोजक और कटु होती है। इसकी छाक पेटकी पीड़ा और अंतरिया उपलमें की जाती है। इसकी मात्रा ३ मासेसे ६ मासे तक है। यह मनुके क्षाय कुष्ठ रोगमें कानो सिवक साथ पीस कर विष्टुचिका तथा मलीसारो मो की जाती है। इसे वीच लोग ईशारमूत, बकमूत और कसोमूत कहते हैं।

कसोमूत (हि० पु०) कसो नामक पसकी छास और अड़, ईशारमूत। शिरोप विहाय कसो उपरमें रेजो।

कसका (हि० कसि०) १ मारदेका बोवना। २ घुरे इ मस गाफ।

कसका (हि० पु०) गदरेका यका।

रंगना (हि० कसि०) १ कीक्री और सरोसर्पोका गमप, प्यूरी भादि कीक्रीका बजना। २ धीरे धीरे बजना।

रंगनी (हि० कसो०) मटकटैया।

रेंद (हि० पु०) खेप्पा मिश्रित मज जो माकसे पियेयता कुकाम होने पर निकलता है, माकका मज।

रेंदा (हि० पु०) खिसोके का फल।

रेंदू (हि० पु०) १ एक पीसा जो ई-क हाथ क का होता है और जिसकी पेजो और खनी पोकी तथा मुजापम होती है। इसमें बारों और बड़ी बड़ी शापाय नहीं निकलती। सिर पर छोटी छोटी खणियां होती हैं जिनमें पसोकी पोकी कीकिया लगे रहती हैं। इन कीकियोंके छोरे पर बाजिस्त रेंदू बाजिस्तके बड़े गोख कटवदार ऐसे लगे रहते हैं। कदाप बहुत कम्मे ई और पसो तथा ख नियोके रंगमें कुछ मोजो भाई सो रहती है। फूल सफेद होत हैं और लख गोख गोख तथा कंठीके होते हैं। फलोंके लहर कई बड़े बड़े बीज होते हैं जिनमेंसे बहुत तेज निकलता है। यह तेज अजामि और औपचके काम में जाता है। यह हस्तापर होता है। मद्यति इसके बीज बहुत काममें होते हैं पर काने योग्य लख या छाया न होनेके कारण लोग इसे मिठय पेड़ोंमें गिनते हैं। २ एक प्रकारकी ईश जिसे रेंदू मो कहते हैं।

रेंदूकरवृत्ता (हि० पु०) पपोता।

रेंदूमका (हि० पु०) मजकाकुनी, रेंदू करवृत्ता, पपीता।

रेंदा (हि० पु०) १ एक प्रकारका घान जिसकी फसल कुमार काविकमें तैयार हो जाती है। (कसो०) २ एक प्रकारकी ईश।

रेंदू (हि० कसो०) भरंडो या रेंदूके बीज जिनसे तेज निकलता है और जो रेंदूक होमक कारण बनाव काममें आते हैं।

रेंदी (हि० कसो०) भरवृत्ता छोटा फल, ककड़ी या बर वृत्तको बतिया।

रेंदें (म० पु०) अमलने छड़कीक टोनेका शब्द।

रें (स० मय्य०) १ सन्धोपन शब्द। इस सन्धोपनसे भावरेका अभाव सूचित होता है और इसका मयोग अशोक प्रति होता है जिसके प्रति 'रू' सर्वनामका

व्यवहार होता है। (पु०) २ नृपम खर। जैसे,—स, रे,
ग, म, प, ध, नो।

रेउंछा (हि० पु०) रेँछा देखा।

रेउड़ा (हि० पु०) रेवड़ा देखो।

रेउता—ध्वजनभेद, हवा करनेका एक पंखा।

रेउती (रेवती)—युक्तप्रदेशके बलिया जिलान्तर्गत एक
नगर। यह अक्षा० २५°५१' उ० तथा देशा० ८४° २५' १३"
पू०के बीच पड़ता है। यह नगर बड़ा गढ़ा है। यहां
निडुम्म राजपूत लोग रहते हैं।

रेउतीपुर (रेवतीपुर)—युक्तप्रदेशके गाजीपुर जिलेके अंदर
एक नगर। यह अक्षा० २५° ३२' १६" उ० तथा देशा०
८३° ४५' १६" पू० तक विस्तृत है। सगडवाड भूमि-
हार यहांके प्रधान अधिकारी हैं।

रेक (सं० पु०) रेक शङ्काया वा रिच्-घञ्। १ शंका।
२ नीच। ३ विरेचन, दस्त लाना। ४ भेद, मेंढक।

रेकपल्ली—मन्द्राज प्रेसिडेन्सीके गोदावरी जिलेके अंदर
एक तालुक और उस नामका उपनिभागका एक नगर।
१८५८ ई०में यह तालुक और मद्राचलम् विभाग मध्य-
प्रदेशकी सीमाके अंदर कर लिया गया है। वह
वर्तमान गोदावरी जिलेके एजेन्सी भूभागमें परिगणित
है।

रेकनस् (सं० स्त्री०) रिणकीति रिच् (रिचैर्धनेधित् क्विच्च ।
उण् ४।१६८) असुन्, चात् प्रत्ययस्य नुट् घित्वात् कुत्वं ।
स्वर्ण, सोना।

रेका (सं० स्त्री०) रेक शङ्कायां अच्, स्त्रिया टाप् । सन्देह।

रेकान (हि० पु०) वह जमीन जो नदीके पानीकी पट्टीके
बराबर हो।

रेकाई (अ० पु०) १ किसी सरकारी या सार्वजनिक
संस्थाके कागजपत्र। २ कुछ विशिष्ट मसालोंसे बना
तबके आकारका गोल टुकड़ा, चूड़ी। इसमें वैज्ञानिक
क्रियासे किसीका गाना बजाना या कही हुई बातें भरी
रहती हैं। फोनोग्राफके संदूकके बीचमें निकली हुई
कील पर इसे लगा कर कुंजा देने पर यह घूमने लगता
है और इसमेंसे शब्द निकलने लगते हैं। विशेष विवरण
— फोनोग्राफ शब्दमें देखो। ३ अदालतकी मिसिल।

रेकु (सं० त्रि०) १ शून्य। २ स्वजनपरित्यक्त, कुटुम्ब

परिवारसे छोटा हुआ। ३ निर्जन। ४ गुप्त, छिपा हुआ।
रेकूर (अ० पु०) किसी संस्थाका विशेष कर शिक्षा संस्था
का प्रधान।

रेप (हि० स्त्री०) रेपा, लकीर। २ गिनती, हिसाब।
३ चिह्न, निशान। ४ हीरेके पाच दोगोंमेंसे एक जिसमें
हीरेमें महीन महीन लकीरें सी पड़ी दिवाई पड़ती हैं।
५ नई नई निकलती हुई मूले, मूलोंका आभास।

रेपता (फा० पु०) एक प्रकारका गाना या गज़ल। इसका
प्रचार पहले पहल मुसलमानों द्वारा अरबी फारसी मिली
हिन्दीमें हुआ था। इसीसे उर्दू की बहुत दिनों तक लोग
रेपता ही कहते थे।

रेपना (हि० त्रि०) १ रेपा चींचना, चिह्न करना। खरो-
चना, छेदना।

रेखांश (सं० पु०) द्राघिमांश, यामोत्तर वृत्तकी एक एक
चित्री या अंश।

रेखा (सं० स्त्री०) लिप्यने इति लिप्य विलेखने (लिप-
भिदादिभ्योऽङ् । पा ३।३।१०४) इति भिदादित्वात् अङ्
टाप्, रत्नयोरैक्यात् लरय रत्वं । १ अल्पक, थोड़ा कम।
२ छत्र, कपट। ३ आभोग, सुख आदिका पूरा अनुभव।
४ उल्लेख। यहां पर उल्लेख शब्दका अर्थ दण्डाकारलिपि
अर्थात् लकीर है।

मनुष्यके शरीरमें हाथ, पैर और कपाल आदिकी
रेखा देख कर उनके शुभाशुभका निर्णय किया जाता है।
गरुड़पुराण और सामुद्रिकमें इसका विशेष विवरण
लिखा है। यहां सक्षेपमें लिखा जाता।

“रेखाभिर्बहुभिर्दुःख स्वप्नाभिर्धनहीनता।

रक्ताभिः त्रियमान्तीति कृष्णाभिः प्रेष्यतां व्रजेत् ॥”

(सामुद्रिक)

करतल पर अनेक रेखा रहनेसे दुःखी और कष्ट रेखा
रहनेसे धनहीन होता है। वह रेखा यदि लाल होवे, तो
लक्ष्मीलाभ तथा काली होनेसे भृत्य होता है।

यदि हाथकी वृद्धागुलिकी मध्यरेखाके अन्तर्गत जीर्ण
चिह्न दिखाई दे, तो शुभ होता है। जिसके हाथमें अंकुश,
चक्र और छत्रका चिह्न रहे तो उसे नाना प्रकारका ऐश्वर्य-
लाभ होता है तथा सौ वर्षकी परमायु होती है। यदि
किसी स्त्री वा पुत्रके करतल पर धनुष, पद्म वा तोरणके

जैसा किह-जो, तो वह राज्य, अनेक प्रकारका वैध्व्यं तथा दोषांयुक्तान् करता है। जो रेखा कनिष्ठाङ्गुलिके मूलसे छे कर तर्जनीक मूल तक चली गई है तथा वह रेखा यदि छिन्न मित्र न हो, तो उसको परमायु सौ वर्षकी होती है। यदि आयुरेखा कनिष्ठाङ्गुलिके मूलसे नीचेसे जा कर मध्यमाङ्गुलिके मूलमें मिलती हो, तो उस मनुष्यकी भी आयु सौ वर्षकी होती है।

यदि किसीकी आयुरेखा कनिष्ठाङ्गुलिके मूलसे जा कर धनामिकाक मूलसे अग्रतमें मिलती हो, तो ५० वा ६० वर्षकी परमायु और यदि छोटी रेखा उस आयुरेखाको काटती हो, तो उसको मर्यायु होती है।

मित्र पुत्रकी कनिष्ठाङ्गुलिके नीचे द्वितीय रेखाय होगी उसे उतनी ही ली होगी। हाथके मणिकल्पसे जो रेखा निकल कर मध्यमाङ्गुलिके मूल तक चली गई है उसका नाम ऊर्ध्वरेखा है। यह रेखा रहनेसे अनेक प्रकारका सुख वैश्वर्याग्राम होता है।

जिसके असाठमें चार वक्राकार रेखा रहे, उसकी अस्सी वर्षकी परमायु तथा उसी तरहकी पांच रेखा रहनेसे सौ वर्षकी परमायु होती है। छिपोंके कट्टर में अनेक रेखा रहनेसे विषया और निर्दिष्ट रेखा नहीं रहनेसे दरिद्रा होती है।

करतलमें दो पितृ और मातृ का पुष्य-पुष्य है। मातृरेखा तर्जनीक मूलसे छे कर अंगुलक मूल तक आयुरेखाक निम्न दल हो कर सीपी चली गई है तथा पितृरेखा तर्जनी और अंगुलके मूलके मध्यभागसे निकल कर निम्न भाग तक विस्तृत रहती है। करतलमें जिसकी पितृरेखा पूर्णरूपसे मङ्गित रहती है उसने पिताके औरतसे अग्रग्रहण किया है और यह रेखा यदि अर्धरूपमें मङ्गित रह, तो नृपतेक औरतसे अग्र ग्रहण किया है, ऐसा जानना होगा।

करतलमें कनिष्ठाङ्गुलिके मूलसे रेखा निकल कर धनामिका और मध्यमाक मध्य भागमें संयुक्त होनेसे सौ वर्षकी परमायु होती है। अंगुलके मूलभाग तक जो कर रेखाय चली गई है वे रेखा यदि छोटी हों, तो परमायु मर्या तथा बड़ी होनेसे अनेक पुत्र प्राप्त होते हैं। (गणितिक)

गणितपुस्तकमें लिखा है, कि जिसके असाठमें तीन समाप्त रेखा रहे उसको परमायु ३० वर्षकी होती और यह पुत्रपौत्रादि माना प्रकारका सीमागय लाभ करता है। दो रेखा रहनेसे ४० वर्षकी और एक रेखा रहनेसे २० वर्षकी परमायु होती है।

“अष्टाद एव वरुणस्य तिस्रो रेखाः समिधाः।

मुखी पुत्रवधायुका स चन्द्रि नीरते मयः ॥

वृत्तारिष्य वपायि द्विरेवार्धनमयः।

विश्वस्वरेक्रेखा भाकर्णान्वाः उतसुपाः ॥

(गणित ३० ३० ३०)

ज्योतिष्शास्त्रमें छहसे मेरु पर्यन्त अर्थात् धाम्योत्तरमें अथवा महादिका स्थान निर्णय करनेके लिये गणित-सापेक्ष जो सब वक्राकार बिंदि कल्पनामें भू या ख पृष्ठ पर खड़े की गई हैं उसीका नाम रेखा है।

५ गणना गिनती। ६ माहति, भाकार। ७ होरेके शीघमें दिखाई पड़नवासी सञ्जीव जो एक दोष माना जाता है। रत्नपरीक्षामें रेखाय चार प्रकारकी कही गई हैं, सभ्य रेखा अथवा रेखा, ऊर्ध्वरेखा और क्षोणापिपि रेखा। इनमेंसे सभ्यरेखाको छोड़ कर और सबका फल अयुन माना गया है।

रेखाकार (सं० जि०) उँडीकी तरह भाकारवाला।

रथामणित (सं० पु०) रेखाय गणित प्रमाणलक्षणादि वत। गणितका यह विभाग जिसमें रेखाओं द्वारा कुछ सिद्धांत निर्धारित किए जाते हैं, देशसंप्रयोगसिद्धांत स्थिर करनेवाला गणित।

इस शब्दका प्रयोग पहले पहले परिश्रवण जग प्रायसे किया। ये महापठ धीरेधीरेके समाप्त किए गये। उन्ही की भाषामें जगन्नाथने 'इतिहास'के अर्थो मनुष्याका संकटमें मनुष्यादि किया। इसी कारण प्राचीन अग्निप्रागर्हिमें उक्त शब्दका व्यवहार नहीं है। शुभमूल हो अर्थात्मिति या उभयैरी शब्दका अर्थ प्रति गण ॥ पौराणिक Geo का अर्थ पृथ्वी और Meiry का अर्थ मिति है अतएव व्याप्तिके रहने भूमिति शब्द को ही रेखामणितका अर्थवाचक कह सकते हैं। किन्तु गुणमूल और ज्योतिष्शास्त्र इन दोनोंके अर्थमें की

फर्क नहीं है। शुल्बपति (वेधाः) पृथिवीं परिमाति इति शुल्बः (दुर्गादाय)।

पाश्चात्य पण्डितोंका विश्वास है, कि आर्याऋषिगण रेखागणितके रहस्यसे अग्रगत नहीं थे। किन्तु उनका यह विश्वास पण्डितोंका अज्ञानका है। क्योंकि यूरोपीय विद्वानोंके पण्डित बुर्नहने साफ अक्षरोंमें लिखा है, कि ब्राह्मणोंने इस जगत्में रेखागणितका रहस्य उद्गाहन किया था।

यज्ञीय वेदी बनानेके लिये ऋषियोंने शुल्बसूत्र निकाला था तथा उसी रेखागणितमें पीछे परिमिति और क्षेत्रतत्त्वकी उत्पत्ति हुई थी।

जगत्के प्राचीनतम साहित्य वेदके मध्य भारतीय रेखागणितका मूलसूत्र दिया गया है। शुल्बसूत्रमें सम्बन्धीय अनेक पुस्तक हैं। उनमेंसे वाँधायन, आपस्तम्ब, मानव, मैत्रायणीय और कात्यायन शुल्बसूत्र ही प्रधान हैं। यजुर्वेदान्तर्गत तैत्तिरीयसंहिता (५।४।१।१)में शुल्बसूत्रका मूलतत्त्व लिखा है। वे सब वेदके ऋषिसूत्रके अन्तर्गत हैं। इस शुल्बसूत्रका मूलतत्त्व माल्टूम होनेसे भूमि, क्षेत्र, कोठी, भुज, व्यास, व्यासाद् निकासे जाते हैं।

भारतवर्षमें यदि रेखागणितका मूलतत्त्व अविदित रहता तो ब्रह्मगुप्त, ब्रह्मसिद्धान्त और भास्कराचार्य लीलावतोंमें क्षेत्रतत्त्वका रहस्य प्रकट न कर सकते थे।

हम लोगोंका विश्वास है, कि जब आर्यासभ्यताका आलोक मिस्रदेशमें फैला था। उस समय आर्य अति-निवेशिकोंने रेखागणिततत्त्वकी मिस्रदेशमें पहले पहल शिक्षा दी थी। उसी कारण मिस्रके राजा सिसखिसके शासनकालमें जमीन नापके लिये रेखागणितका प्रचार हुआ था। पीछे वह ग्रीकदेशमें भी फैल गया।

न्यामिति शब्द देखो।

जो कहते हैं, कि भारतवर्षमें परिमिति (Mensuration) थी, रेखागणित नहीं था, वे भूल करते हैं, शायद अङ्गुशास्त्र वे नहीं जानते हैं। लीलावतीके टीकाकार मुनीश्वरका ग्रन्थ पढ़नेसे उनका संदेह दूर हो जायगा।

जगन्नाथ सम्राट्का रेखागणित किस ढंगका है, अभी पही देखना चाहिये। वाराणसी-संस्कृत कालेजके गणित

और ज्योतिषाध्यापक महामहोपाध्याय सुधाकर द्विवेदीने गणकतरङ्गिणो ग्रन्थमें लिखा है—“अरवीभाषाता संस्कृते जगन्नाथकृतो युक्तेदास्य ग्रन्थस्याप्यनुवादो रेखागणित नाम्ना प्रसिद्धोऽस्ति च तत्र पञ्चदश्याध्यायाः सन्ति। अस्य गणितस्य रेखागणितमिति नामकरणं प्रथमं जगन्नाथ-सम्राजैवाकारि * * *।” अर्थात् अरवीभाषामें युक्लिड का जो अनुवाद था उसी ग्रन्थसे जगन्नाथ पण्डितने उन ग्रन्थ संस्कृतमें अनुवाद किया। जगन्नाथ सम्राट्ने ही सबसे पहले इस गणितका रेखागणित नाम रखा।

जगन्नाथ तैलङ्गदेशीय ब्राह्मण थे। सम्राट् औरङ्गजेब उनकी बुद्धिमत्ता और पाण्डित्य देख कर बड़े मुग्ध हुए थे और उन्होंने पण्डितवरको दिल्लीमें बुला कर अपना सभा-पण्डित बनाया तथा अरबी और पारसी भाषाकी शिक्षा दी। पीछे जयपुरके राजा गणितज्ञ जयसिंह औरङ्गजेबके निकटसे जगन्नाथको प्रार्थना कर अपनी सभामें लाये। जयसिंहकी सभामें जगन्नाथने ज्योतिष और गणितके सम्बन्धमें अनेक ग्रन्थ लिखे। उन सब ग्रन्थोंमें रेखागणित और सिद्धान्त-सम्राट् ही प्रधान हैं। रेखागणित और सिद्धान्तसम्राट्के आरम्भमें जगन्नाथने लिखा है—

“अरवीभाषया ग्रन्थो मिजास्तीनामकः स्थितः।

गण्यमाना बुद्धेः धाय नीर्वाण्या प्रकटीकृतः ॥”

जो हो, जगन्नाथने ‘युक्लिड’के अनुवादका महाराज जयसिंहकी आज्ञासे संस्कृतमें अनुवाद किया, इसमें संदेह नहीं। फिर भी उन्होंने अपने रेखागणितमें उसको भारतीय उत्पत्तिकी बात लिखी है। दुर्भाग्यक्रमसे वे वैदिक पण्डित नहीं थे, यदि होते, तो समस्त तत्त्वोंको प्रकट कर सकते थे।

जगन्नाथने रेखागणितके आरम्भमें जो लिखा है, उनका अर्थ यों है,—जिन्होंने वाजपेययज्ञ और षोडश महायज्ञ किये हैं, ब्राह्मणोंकी गो, ग्राम, हस्ता और अश्वादि दान दिये हैं, उन जयसिंहको प्रसन्न करनेके लिये पण्डित सम्राट् जगन्नाथ रेखागणितकी रचना करते हैं। यह अपूर्व शास्त्र पढ़नेसे कोणज्ञानसे क्षेत्रतत्त्वमें गणितशास्त्रमें अच्छी व्युत्पत्ति हो सकती है। यह अपूर्व शिल्पशास्त्र ब्रह्मने विश्वकर्माकी सिखलाया था। पीछे परस्पर्यवशतः

यह शास्त्र मृत्युकोशमें आया। किन्तु अनेक कारणों से यह शास्त्र भारतवर्षसे उच्छिन्न या विमुक्त हो गया। इसके बाद महाराज जयसिंहजी भास्कर गणकोंक आमन्त्र के द्वारे में उस सुत शास्त्रको पुनः प्रकाशित करता है।

यह रेखागणित ग्रन्थ १५ अध्यायमें विभक्त है तथा इससे ४०८ सूत्र (Proposition) बर्णान् प्रतिष्ठा हैं।

उनमेंसे पहले अध्यायमें ४८, दूसरेमें ४, तीसरेमें १०, चौथेमें १६, पांचवें में २५, छठेमें ३३, सातवें में ३६, आठवेंमें २५, नवेंमें ३८, दशवें १०६, ग्यारहवें ४१, बारहवें १५, तेरहवेंमें २१, चौदहवेंमें १० और पंद्रहवें अध्यायमें ३ प्रतिष्ठा हैं।

किन्तु जयपुर प्रदेशमें जयभद्राधका ज्ञा रेखागणित ग्रन्थ छपा है उसमें १३ वें अध्यायमें १४१ नूतन भक्तिरिक्त प्रतिष्ठा तथा १६६ नूतन अनुशोचनो हैं। यदि ऐसा हो, तो प्रतिष्ठाको संख्या धीरे धीरे बढ़ जाती है।

मूल इतकबिन्दु, मित्रास्तो और जगन्नाथक रेखागणित को माओचना करनेसे उत्तरोत्तर उत्तम मालूम होता है। सुन्निश्चय ग्रन्थस मित्रा उद्भववेगके ग्रन्थमें बहुतसी नयी प्रतिष्ठा देखी जाती है। फिर जगन्नाथके ग्रन्थमें इससे भी अधिक उत्कृष्ट ध्वननमें आता है। इससे स्पष्ट मालूम होता है, कि जगन्नाथन कथन आसुरिक अनुवाद ही नहीं बल्कि उक्त शास्त्रका बहुत कुछ उत्कृष्ट साधन भी किया था। उन्होंने प्रथम अध्यायकी ४४वीं प्रतिष्ठा १६ प्रकारस उपपन्न की है।

उक्त रेखागणित लोकमणि नामक लेखक १७८४ संवत् (१६४६ शकमें) रविवार शुक्ल चतुर्थीको रात को अनुकल्पि को।

“यंगरसुतमूर्खसं सुविशुद्ध सुवतिषी खेरीरे।

अस्तिस्वयंभवापि किञ्च श्वाश्रमाश्रय पुत्रम्।”

जगन्नाथ परिव्रतका रेखागणित ग्रन्थमें लिखा है, किन्तु इसीकके आकारमें रचित ‘सिद्धान्तशुद्धामणि’ नामक दूसरा रेखागणित भी बना जाता है। जगन्नाथ के रेखागणितकी मुद्रणमें यह सिद्धान्तशुद्धामणि कहा गया है।

सुललित छन्दोंमें प्रथित सिद्धान्तशुद्धामणिकापाठ देखनेसे कभी भी यह अनुबाधक श्रद्धा प्रतीत नहीं होता

है। जगन्नाथने सब कहा है, कि रेखागणित भारतवर्षसे विमुक्त हो गया था—बार बार वैदेशिक आक्रमणसे भारतवर्षकी सभ्यता और सरलता दोनोंका भङ्गार हुआ गया था।

प्रोसदेशका रेखागणित पढ़नेसे मालूम होता है, कि पिथागोरसके समयमें ही प्रोसमें रेखागणित शास्त्र की यथेष्ट उन्नति हुई थी। उन्होंने प्रथम अध्यायकी ३२वां और ४४वो प्रतिष्ठाका उद्गायन किया। पिथागोरसके जीवनचरितमें स्पष्ट लिखा है, कि वे भारतवर्षमें घूमने आये थे। मालूम होता है, उस समय बर्णान् इसाग्रमके पहले छठी सर्गमें यहाँ रेखागणित शास्त्र का विशेष प्रचार था। क्योंकि उस समय बौद्धयुगके सर्गार्थे प्राण्यप शिष्यासम्पत्तामें बड़ा नया पर्वना था। उस समय भी प्राण्यपके छात्रागिनेशन भारतवर्षमें नभो शास्त्रोंका सम्पू्क अनुशोचन होता था। पीछे बौद्धविशुद्धस भारतोप प्रणय-सम्पत्ताकी बड़ी भवनति हुई थी।

आ हो, पिथागोरस जब भारतवर्ष आये थे उस समय भारतीय शास्त्रप्रचार उच्छिन्न या विच्छेद नहीं हुआ था। पिथागोरसने मरतवर्षसे छोट कर प्रचार किया कि “सिमुद्धमे तोनों कोय निष्ठ कर दो समकोयके तथा समकोयो सिमुद्धमें भुञ्जकोटीक परास्तेन, कर्षाङ्कित परास्तेनके समान होता है।” यह नया तत्त्व प्रोसमें अज्ञात था। इससे प्रोसमें क्षेत्रत्व और परिमितिकी उन्नति होन लगी।

इस भारतवर्षमें बौद्धविशुद्धस वैदिक क्रियाकारणं जुगसा हो रहा था। बौद्धयुगके बाद भारतवर्षमें सुसज्जमान आक्रमणसे भी सैकड़ों वर्ष तक वैदिकशास्त्र का कोई अनुशोचन नहीं हुआ। इसीद्वारे सभी समर्थ सक्त हैं, कि भारतमें रेखागणित उन्नतिकी सोचान पर पर्वो न चढ़ सका।

रेखागणिततत्त्वकी सूक्ष्मभावमें परासोचना करने से मन्तून होगा, कि इसका जन्म भारतीय अध्यायके मस्तिष्कसे हुआ है। कारण, सिमुद्धामुद्ध, कोटी और कर्षाङ्कितसे पहले अध्यायों में ही उद्गायन किया था। फिर प्रोसका इतिहास पढ़नेसे स्पष्ट मालूम होता

है, कि पिथागोरसके पहले ग्रीसमें रेखागणितकी उतनी उन्नति न थी। पिथागोरसने उपरोक्त तत्त्वके अलावा सरलपृष्ठ घनक्षेत्रविषयक अभिनव-तत्त्व ग्रीसमें सिखलाया था। उन्होंने ५४७ ई० सन्के पहले इटलीके टरेण्टम नगरमें अपने नाम पर एक विद्यालय खोला। वहा उन्होंने गणित और ज्योतिषके अनेक तत्त्वों की शिक्षा दी थी। आखिर 'पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है और तारे निश्चल हैं' यह उपदेश जब इन्होंने दिया, तब साधारण विद्वत्त्वर्गने इन्हें 'भूखों' रख कर मार डाला था। इससे यह अनुमान किया जा सकता है, कि वैदेशिकतत्त्वकी शिक्षा देनेके कारण ही उनकी यह दशा हुई थी।

पीथागोरसके बाद ग्रीकदेशमें रेखातत्त्वकी यथेष्ट समालोचना होने लगी। पीछे प्लेटोके शिष्यने ज्यामिति-का सूत्रपात किया। उन्होंने तथा मिनीकमस नामक रेखिकज्ञने शङ्खुच्छिन्नक्षेत्र (Geometry वा Conics)के अनेक तत्त्व आविष्कार किये। इस समय सूचीक्षेत्र पृष्ठफलनिर्णयका उपाय उद्भावित हुआ। शङ्खुच्छेद और सूचीक्षेत्र देखो।

किन्तु उस समय भी युक्लिडका जन्म नहीं हुआ था। मिनीकमसके बाद आर्कमिदिसने ज्यामिति वा रेखागणितकी बड़ी उन्नति की। २८७, ई०सन्के पहले उन्होंने रेखागणित, सम्बन्धीय पुस्तक रची। इसके पहले गोलघनफलका नियम ग्रीसमें अज्ञात था। आर्कमिदिसने उसका आविष्कार किया। आर्कमिदिसने अपने शिष्योंसे कहा था, "जो क्षेत्र अद्भुत कर मैंने-गोलघनका आविष्कार किया है, मेरो मृत्युके बाद समाधिस्तम्भमें वह क्षेत्र अद्भुत कर देना।" आज भी उनकी समाधिमें वह अद्भुत क्षेत्र उस अतीत कीर्तिकी घोषणा करता है।

आर्कमिदिसके बाद युक्लिडका आविर्भाव हुआ। वे आथेन्स नगरमें और अलेकजन्ड्रियाके विश्वविद्यालयमें रेखागणित शास्त्रके अध्यापक थे। उन्होंने उक्त शास्त्रका परिचर्जन कर एक मशहूर पुस्तकका प्रचार किया।

उस समय सारे सहरामें जिस रेखागणितकी आलोचना होती है, युक्लिडको उसका मूल कहनेमें कोई अत्युक्ति न होगी। रेखागणित शब्द युक्लिडके साथ

एकार्थवाचक हुआ है। युक्लिड रेखागणित शास्त्रके जन्मदाता नहीं होने पर भी इसके पिता अवश्य हैं। क्योंकि, रक्षण, पोषण, पालन आदि कार्य द्वारा वे ही रेखागणितके यथार्थ पितृपदवाच्य हैं।

युक्लिडके बाद रेखागणितकी और किसीने उन्नति नहीं की। उसी समय ग्रीसमें रोमकशासन प्रवर्तित हुआ था। रोमकशासनमें उक्त शास्त्र विलकुल निश्चल था। केवल वियियस नामक रोमक गणितज्ञने ग्रीक ज्यामिति-का अनुवाद किया था।

इसके बाद सैकड़ों वर्ष पृथ्वी पर रेखागणितकी आलोचना नहीं हुई। क्योंकि रोम-साम्राज्य ध्वंस होनेके बाद यूरोपखण्ड अज्ञान अन्धकारसे समाच्छन्न हो गया था। पीछे जब १६वीं सदीमें मुसलमानी शिक्षासम्पत्ताका उन्नत युग प्रवर्तित हुआ, तब बोगदादके समरकन्द नगरमें मिर्जा उलुगवेगने रेखागणितकी पुनः आलोचना की। इसके बाद १६वीं सदीको जब यूरोपमें शिक्षासम्पत्ताका नवभुग आरम्भ हुआ, तब यह शास्त्र फिरसे आलोचित होने लगा।

१५७० ई०को इङ्ग्लैण्डमें सबसे पहले युक्लिडका रेखागणित मुद्रित हुआ था। युक्लिडके बाद जिन्होंने रेखागणितका प्रसार किया। उनमेंसे रोमेर, भल, पासकल, केंपलर और देकार्टेके नाम उल्लेखनीय हैं। देकार्टेकी श्ववच्छेदक वा वैजिक ज्यामिति द्वारा संख्यागणित और रेखागणितके मध्य घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हुआ है।

युक्लिडके समय रेखागणितकी सीमा जितनी दूर थी, अभी उससे कहीं बढ़ गई है।

भारतवर्षमें जगन्नाथका रेखागणित मुद्रित और हिन्दी भाषामें अनुवादित हुआ है। शुल्बसूत्र देखो।

रेखान्तर (सं० क्लो०) द्वाधिमान्तर, किसी वेधशालाकी निर्दिष्ट याभ्योत्तर रेखाके पूर्व या पश्चिमका व्यवधान-स्थान।

रेखाभूमि (सं० क्लो०) रेखास्थिता भूमि। लंका और सुमेरुके बीचका देश। लङ्का और सुमेरुके बीच रेखाकी कल्पना कर अक्षांश स्थिर करता होता है। इस रेखाकी सीधमें जो सब देश पड़ते हैं वे रेखाभूमि (Equator) कहलाते हैं।

“बदला-बधिनीपुरीयरी कुन क्षेत्रविदेशान लुञ्ज
 लय मेवत्त पुषे निगदिषया वा मन्धरेवासुका ।
 भाती प्रमुदयोऽप्यन्विष्यते पन्थमिरेकोदयम्
 स्वात्सवस्तु किन्तु वरन्तरधुन क्षेत्रार्थं क्व कम् ॥”
 (शिवस्मृतिवैशेषिण्य)

रोहितक देश, मन्धरी देश तथा उनके पानक
 सारावर भीर कुम्होलेक इन सब स्थानोंको रेखाभूमि
 कहत हैं।

श्यामि (स० पु०) रेखायनके मोक्षमें उत्पन्न पुत्र्य ।
 शिम (स० वि०) १ शि वा तुभा, अ किस । मसका
 हुमा, फटा हुमा । ३ जिस पर रेखा या लकीर पड़ी
 हो ।

चिन् (स० लि०) रेखास्यास्तीति रेखा-इति । रेखा
 युक्त । जिस पर रेखा या लकीर पड़ा हो ।

ग (फा० स्त्री०) बानू ।

गिस्तान (फा० पु०) बालूका मैदान, मरुदेश ।

गुल्शन (अ० पु०) १ प नियम या कावरे ओ राज
 पुत्र्य मर्षी मधीन देशक सुशासनक छिपे बनात हैं,
 विधान, कानून । २ वे नियम या कावरे जो किसी
 विभाग या संस्थाक सुसंवाहन भीर मन्थनाके छिपे
 बनाये जात हैं, नियम ।

गुल्शतर (अ० पु०) किसी मशीन या कलका यह
 हिस्सा या पुर्जा जो उसकी गतिक नियन्त्रण करता
 है, यलनियामक ।

हेमूचीपहाड़-भासामण्डमे कछाड़विभागक अन्तर्गत
 एक गिरिभेया । यह लुसाई शैलमालाक उत्तरी
 ओर फैल गइ है । साबाह और पठेओरी तथा इसके
 दोनों ओर बहती है ।

हेमूमा-भासामण्डक भागा शैलमालाक अन्तर्गत
 एक गिरिभाग । यह अक्षां० २६ १५ स २६ ३० उ०
 तथा देशां० ६३ २४'स ६३ ४०' पू०क मध्य विस्तृत
 है । इस पर्वत पर देहमा जातिक लोग रहते हैं । प
 लोग नागा या मिहिर जातिको तरह असम्प नहीं हैं,
 किन्तु यादवित्त साहूदरमें काह पृथक्ता दिखाइ नहीं
 एवी । भागा जातिकी यह शाखा पनथी (पानथी)
 नशाक पूर्वदेशक पर्वत भाग है ।

रेङ्गन—(रेङ्गन) निम्नप्रदेशके पेरू विभागके अन्तर्गत
 अगरेजाधिरत एक जिला, बरमी लोग इसे त्यकुन
 या हाग्याबाओ कहते हैं । यह अक्षां० १६ से १७ उ०
 तथा देशां० ६५ से ६५ पू०के मध्य विस्तृत है । इसके
 पश्चिममें लुसि लीङ्ग और पूर्वमें शरावती नदीके
 दो वा चीनवकिमुहाला तक विस्तृत समुद्रतट से कर
 यह जिला संघठित है । भूपरिमाण ४२३६ वर्गमील
 है । इसका प्राचीन नाम बोकार देश है ।

इसक उत्तर धारापनी, श्व गिन जिला, पूर्वमें
 अंभे गिन तथा पश्चिममें धार्मगा भीर दक्षिणमें समुद्र है ।
 रंगून अथ जिला बनाया गया इस समय मायबगेक नदीस
 से कर लीगू पर्यन्त विस्तीर्ण पेरूयोमा शैलमालावली
 मायक नामक भूभाग इसके अन्तर्भूक्त था । १८५४
 ई०में यह लीगूक विभागमें तथा १८५६ ई०में अंभे गिनके
 शासनाधीन बनाया गया था । इसके बाद कबलिया धारा
 अंभे गिनमें, पोर्तुगैल धारा देखाएर तथा पश्चिमका कुछ
 अंश धार्मगा सहरमें मिला दिया गया है । पीछे १८८३
 ई०में पेरूहलायगु सिरियसनगर विभागकी रंगूनसे अलग
 कर नए पेरू जिलेमें शामिल किया गया था ।

इस जिलेका प्राकृतिक सीमार्थ विस्फुल नहीं है ।
 समुद्रोपकूलसे विस्तृत समतलक्षेत्र कमशा उन्नत होता
 हुआ उत्तरी और चला गया है । पेरूयोमा शैलका
 ऊंचा नीचा हात्पृथक् उसकी समताको मेढ़ कर मध्य
 स्थलीमें खड़ा है । पेरू नदीके दक्षिण किनारे उपत्यका
 तथा रेङ्गनक उत्तर किसी किसी स्थानमें समुद्रकी
 बाओ भूगर्भकी गूँद कर देशकी ओर खला गइ है । उसमें
 उचार भांश समान मायमें रहता है । गाँवें तथा, स्त्रीमरे
 इस जाकोमें हमशा भावी जावी रहती हैं । ३३ सत्र
 लाडियोंमें ११६, १५५५, पाठकेँडू और प-पशापिन
 (बेसिनकी छाड़ा) उपजेकनोप है ।

पेरूयोमा पर्वत इस जिलेक उत्तरसे पनशा दक्षिणकी
 ओर खला भाया है । यह दक्षिण-दक्षिणी शाखा दो भागा
 में विभक्त हो गइ है । पश्चिम शाखा दक्षिण पश्चिमकी
 ओर विस्तृत हो कर हैङ्ग और पगमून नदी प्रवाहित
 उपर-उपपट्टको विभक्त करती है तथा कमशा दक्षिण
 पूर्व या कर पेरू नदीके किनारे समतलक्षेत्रमें मिला गइ

है। उपरोक्त पश्चिमी शाखाके दक्षिण मुक्तिगात शिउ दामोन पगोडा विद्यमान है।

यहाकी नदियोंमें हैङ्ग वा जय प्रधान है। यही नदी रङ्गून नामसे समुद्रमें गिरती है। ओऊन, मगोयी, क्षुव्वा, लिपनगुन इसकी शाखानदी हैं। बवले, पानडैङ्ग आदि छाडियां इसके साथ इरावतीमें मिलती हैं। पेगुनडुन नदी पेगुयोमा शैलसे निकल कर पेगू नदीमें मिली है। इस पेगू नदीसे स्टोमर पेगूनगर तक जाता है।

यहाका प्राचीन इतिहास कुछ भी मालूम नहीं। तामिल और तेलगू उपाख्यानमालासे जाना जाता है, कि ईसाजन्मके कई सदी पहले तैलङ्गके अधिवासियोंने वाणिज्यके उद्देशसे समुद्रकी गह जा कर ब्रह्मोपकूलमें उपनिवेश बसाया। उन्होंने यहा आ कर मून् जातिको अधिवासिरूपमें देखा था। आज भी पेगुयानगण अपने को मून् जातिके बतलाते हैं। तैलङ्गके अधिवासी यहा कुछ समय रहनेके बाद तैलङ्ग कहलाये।

तालपत्रमें लिखित स्वानीय राजविवरणमें इस प्रकार लिखा है,—भारतमें गौतम बुद्धके साथ साक्षात् और फयोपकूलनके बाद दोनों भाईने यहा आ कर शिउ दामोन पगोडा स्थापन किया। वे दोनों भाई कौन थे, उसका कोई ऐतिहासिक विवरण आज तक नहीं मिला है। ऐतिहासिकतत्त्वकी आलोचना करनेसे मालूम होता है, कि तृतीय महाबोधिसङ्घके आदेशानुसार स्वर्ण और उत्तर बौद्धधर्मका प्रचार करनेके लिये सुवर्णभूमिमें गये। इससे स्पष्ट जाना जाता है, कि उस समयके डेल्टामें बौद्ध और ब्रह्मण्यधर्मावलम्बी मतविरोधियोंके मतका जंगल प्रचार था। प्रायः कई सदी तक ब्रह्मण्यधर्मसेवी प्रचारकोके साथ बौद्धप्रचारकोका भारत-वहिर्भूत प्रदेशमें विधाव चलता रहा था। आखिर ८वीं सदीके शेष भागमें जब ब्रह्मण्यधर्मकी भारतवर्षमें मोटी जमी, तब बौद्धोंने वे रोकटोक हो कर ब्रह्मराज्यमें अपना धर्ममत फैलाया था।

इस ब्रह्मण्य और बौद्धविरोधसे आगे चल कर राजाओंके मध्य धर्ममतस्वातन्त्र्यके कारण घर फूट हो गई। पीछे इसीसे पेगूनगरमें धर्मस्रोतप्रवाहके साथ

साथ नई राजधानीकी भी प्रतिष्ठा हुई थी। था तुन-राजके नाग (नागा) वंशीय महिषीके गर्भसे थमल और मल नामक दो पुत्र थे। पिताने दोनोंसे किसीको सिंहासन नहीं दिया। इस कारण उन्होंने दूसरा धर्म ग्रहण किया और पेगूनगर बसा कर दोनों भाई वही रहने लगे। थमल ने वहाके राजपद पर अभिषिक्त हो पूर्वकी ओर अपनी राज्यसीमा फैलाई। किंवदन्ती है, कि उन्होंने ही पीछे मर्चीवान नगर बसाया था।

उनकी मृत्युके बाद वि-म-ल राजसिंहासन पर बैठे। वे सिओङ्ग नगर बसा कर वही रहने लगे। इहाँके शासनकालमें ५६० ई०को विज न-गर न (विद्यानगर) राज्यके अधीश्वरने पेगू पर आक्रमण किया। इस युद्धमें वे पराजित हो कर स्वदेश लौटे। इस समयसे ले कर ७४६ ई०के मध्य इस वंशमें तेरह राजे हुए। शैोक वर्गमें जिन राजाने राज्य किया था, उन्होंने पश्चिममें आराकान पर्वतमालासे लगायत पूर्वमें सालविन नदी तक विस्तृत समस्त रामण देश तथा श्रीब्रष्ट था-तुन राज्यको अपने अधिकारमें कर लिया था। इस समय भी निम्न ब्रह्ममें बौद्धधर्म सर्वथादिसम्मतरूपमें ग्रहण नहीं किया था। १०वें पेगूके राजा पुन न-वीक (ब्राह्मण हृदय) तथा उनके पुत्र टेक था पीराणिक हिन्दूधर्मके प्रति ही विशेष आस्थावान् थे। टेक-थाकी मृत्युके बाद पेगूके ३य राजवंशका अन्त हुआ। प्रथम तीन राज-वंशने कब तक राज्य किया था तथा टेक-थाई किस समय परलोक सिधारे थे, वह मालूम नहीं। इसी कारण परवर्ती अराजकताका इतिहास अन्धकारसे ढका है।

१०वीं और १०वीं सदीमें यहा जो धर्मविप्लव हुआ, तैलङ्ग इतिहासिकोंने उस विवरणको छिपा रखा। इसीसे इस प्रदेशकी किसी ऐतिहासिक घटनाका उल्लेख नहीं पाते हैं। १०५० ई०में पगानराज अ नव-र हतने इस स्थानको जीता। पीछे प्रायः दो सदी तक यह बरमी लोगोंके अधिकारमें रहा। इसके बाद ब्रह्मराज्यमें गृहविवादके कारण बलक्षय होने पर भी मुगल सम्राट् कुवलाई खां (१२८३-८४ ई०) ने जब चीनसैन्यकी सहायतासे ब्रह्म-राजधानी पर अधिकार किया, तब ब्रह्मराज्य

आत्मरक्षाके लिये बेसिन प्रदेश भाग गये। तैकङ्गुने इनी म्बस्वर्गमें ल धोमता होनेकी चेष्टा की तथा वे सबके सब लुम्बपुत्रुण बागो हो गये। ब रि यू नामक एक व्यक्ति मर्चवाणके प्रहारातोय ग्रासनकर्त्तकी मार कर यहाँ अपना अधिकार जमाया। इस समय वेगूके विद्रोह दबपतितै मा धाम-बोम दबपडके साथ आ कर ब रि यू का साथ दिया। मिट्टि विद्रोहो सेनादलने प्रहारास सेम्बको पराजित कर प्रोमनगरके द्वाि प प-दीङ्ग नगर तक उम्ह लेया। इसके बाद तैकङ्गु सेनादल वेगूनगर छोडा। किन्तु कुछ समय बाद ही वानों दबपतिके बोध विवाह लडा हो गया। युद्धमें मा प्राम बोम (त ध प्य) मारे गये। पीछे जनसाधारणकी सहाहसे प रि यू समस्त जीते हुए प्रदेशके राजा हुए। कुछ समय बाद ही मा काम बोमके दो पुत्रोंने ब रि यूको गुप्तमापस मार डाला। १३०६ ईमें उनके भाइ राजपद पर बैठे। इन्होंने कंगड बार पप तक राज्य किया था।

१३८५स १४२१ ई तक रज क्षेत्रित सिंहासन पर मण्डियुन थे। उनके अधिकारकालमें बरमियोंने निम्न प्रदेश पर चढ़ाई कर दी थी। इन्होंने बाहुबलसे बलौ सेनाको परास्त कर १३८८ ईमें मर्चवान् और तल् पूय पत्तों प्रदेशों पर दबल जमाया। इस समय प्रहाराजक साथ युद्धके सिया रङ्गूके इतिहासमें और कोर उल्लेखयोग्य घटना न घरी।

राजा रज-दी रिदक शासनकालमें पुर्त्तगीज-यणिक् पदति पहल धरा माये। निकोसस कोरिद १४३० ईमें वेगूनगरमें रह कर यहाँकी सम्बिद्धा उल्लेख कर गये हैं। रज हा पितसे लोसे १०वो पीढ़ीमें राजा ये गुन रणके समय आण्डोमियो काररिवाल १५१३ ईमें मर्चवान्को सन्धि की। लमोसे सीमाप्राप्त्येपो पुर्त्त गीज सेनादलके साथ वेगूराजका विरोध सन्नाथ स्थापित हुआ था।

कदाप १५०८ ईमें तीङ्गुराज त विन भ्मे ति ने वेगूको दबल किया। पीछे मर्चवान् जेत कर ये वेगू कोर और राजसिंहासन पर अभिषिक्त हुए। राजछल धारणके उपलक्षमें इन्होंने श्ये-मन्ध और मिड बागोन पगोडाके ऊपर नया छत्र स्तान किया था। कुछ समय

बाद इन्होंने अपना अधिकार फैलाया। १५४३ ईमें स्वाम सातिको परवृत्तित कर इन्होंने राजकर देनेके लिये बाध्य किया था। १८५० ईमें सखि लीङ्गुके शासन कालमें बडे कीगडसे राजा त विन भ्मे तिका काम तमाम कर राजमुकुट धारण किया।

इस घटनासे राज्यमें और बिद्रुन उठ जडा हुआ। भाकिर जनसाधारणकी रायसे सिंहासनके प्रहारा उतराधिकारी मूरिन-नीङ्गु राजपद पर अभिषिक्त हुए। राजपद पर बैठते ही इन्होंने पहले तीङ्गुको अधिकार किया और १५५४ ईमें मादा राजधानीमें राज पताका फहराई। योङ्गे ही समयके मन्धर इन्होंने तेनासेयिसे माराकाम तथा समुद्रतटसे उतर शानराज्य तक अपना आधिपत्य फैला लिया था। १५८१ ईमें उनकी मृत्यु हुई। राजा मूरिन-नीङ्गु पिष्वात घोडा थे। इन्होंने राजधानीको माधोर मीर शुर्गसे सुरक्षित कर दिया। उनके बसाये हुए एक वृक्षरे नगरका ध्वस्त मिर्दाँन आज भी दृष्टिगोचर होता है। ये नहर धार्मिक थे। इन्होंने सिंहबराजसे गीतमबुद का स्मृतिचिह्न लगा कर उस पर पगोडा बाडा करवाया था। नद या अपदेनताकी प्रोतिके लिये जो धार्मिक उरलध होता था, इन्होंने उठा दिया।

राजा मूरिन् तीङ्गुकी मृत्युके बाद उनके लङ्गुके मन्धमूरिन् राजा हुए। प्रहाराजके सिया और समी राजा ने उनकी भयिनता स्वीकार की थी।

राजा मन्धमूरिन् प्रथपतिके येसे उदत्त आधरजसे क्रुड हो दबपडके साथ १५८४ ८५ ईमें उनके राज्यकी और अपसर हुए। प्रथपति मयमोत हो तथा उम्ह टोकने में अपनेकी भसमर्ध देख चीनराज्यमें भाग गये। राजा मन्धमूरिन्को उचर प्रथमें युद्धकार्यमें व्यापृत देख स्वाम पति बागो हो गये। राजान पद संवाद पाते हा उनके विरुद्ध बार बार सेना भेजी। घाटे बार उनकी हार हुई। भाकिर प भवमानसे उल्लेखित, क्रुड और विरुद्ध हो गये। क्रोधसे प इतने मरये हा गये थे, कि जो कोर उम्ह लङ्गो सहाह देता उसा परदे डूट पड़ते थे। पीरे पीरे ये घोर भ्रष्टाचारी हो गये। इस समय तैकङ्गु बीड पतिभोके साथ उनकी मन्धमूरिया हुआ।

फलतः वे सबके सब निर्वासित हुए। राजकोषमें पड़ कर कुछ यति प्राण तक भी विसर्जन करनेके लिये वाध्य हुए थे। इस सीपण हत्याकाण्डके बाद डेवटाविभाग बिलकुल जनशून्य हो गया तथा वहा अराजकता विराज करने लगी। इसी सुअवसरमें आराकन वासियोंने सिरियानको खल किया। १५६६ ई०में पेगू दूसरेके हाथ चला गया तथा राजा नन्दभूरिन् वन्दोकी तौर पर तेङ्गू भेजे गये। इस समय कुछ दिन तक अराजकता फैली रही थी।

आराकनपतिने अपने पुर्तगोज सेनापति फिलिप डि ब्रिटो पर १६०० ई०में सिरियसका शासन भार सौंपा। राजाका अनुग्रह रहने पर भी सेनापतिने दस्युजातिका स्वधर्म परित्याग किया। विश्वासघातकता करके उनसे गोआके पुर्तगोज राजप्रतिनिधिके साथ पडपन्त रचा। पीछे स्थानीय तैलङ्ग अधिवासियोंको अपनी मुट्टीमें करके शासनकर्ता ब्रिटोने पुर्तगालपतिके नामसे पेगू राज्यको जीता और स्वयं वहाका राजा हुआ।

सिंहामन पर चैठ कर ब्रिटोने सिरियन नगरकी श्रौवृद्धि की। उन्होने गिरजा और दुर्ग बनवाया। तौङ्गू और अराकानपति उसके विरुद्ध खड़े हुए थे, पर कुछ कर न सके। दोनों राजाके सेनापति रणक्षेत्रमें पीठ दिखा कर भाग चले। कुछ वन्दो भी हुए थे। इसके बाद फिलिप डि ब्रिटोने अपने परम शत्रु तौङ्गुराज और मार्त्तवानपतिके साथ मेल कर लिया। किन्तु कुछ समय बाद ही इसने सधि तोड़ कर तौङ्गू गुपतिके विरुद्ध फिरसे अल्लधारण किया। इस समय १६१२ ई०में ब्रह्म राजने उसे पकड़ा और कैद कर लिया। राजविचारसे शूलीकी सजा हुई थी। इसके बाद पुर्तगोज लोग फिर पेगू राज्यमें अपनी गोटी न जमा सके।

इस समयसे ले कर १७४० ई० तक पेगू ब्रह्मराजके अधीन रहा। इन्हींके समय अङ्गरेज वणिक् वाणिज्य करनेके लिये रङ्गून आया था। १६६५ ई०में सिरियामे कोठी खोलनेके लिये उन लोगोंने राजाके पास आवेदन पत्र भेजा। १७०६ से १७४३ ई० तक अंगरेज वणिक् वहां जा कर रहे थे। इधर उत्तर प्रदेशसे बार बार आक्रमण तथा गृहविच्छेदसे जर्जरित हो ब्रह्मराज्य धीरे धीरे कम-

जोर होता गया। १७४० ई०में पेगूवासी विद्रोही हो गये और उन्होने दो बार सिरियम पर हमला कर दिया। १७४३ ई०में विद्रोहियोंको जब अंगरेज वणिकोंसे राहायता न मिली तब उन्होने गुस्सेमें आ कर अंग्रेजी कोठीको जला कर धाक कर दिया। पिछे उन लोगोंने आवा दबल किया। किन्तु १७५३ ई०में मुत-पो घो-वासी मौङ्ग-गङ्ग-जय राजधानीको फिरसे हस्तगत कर स्वयं आलौङ्ग-पय (आलोम्पा) नामसे सिंहासन पर बैठे। इस वंशने १८८५ ई० तक राज्य किया था। आलौङ्ग-पय राज्याधिकार वर्णके अन्दर ही वे पेगू, तावय और मागुईको जीत कर श्यामराज्यकी ओर बढ़े।

१८२४ ई०में प्रथम अंगरेज ब्रह्मयुद्ध खड़ा हुआ। अंग्रेजोंसेनाने नदीमुखमें प्रवेश कर रङ्गून पर अधिकार किया। युद्धके बाद ब्रह्मराजसे संधि करके अङ्गरेजोंने ब्रह्मराजको पेगुराज्य छोड़ दिया। फिरसे वाणिज्यसंक्रान्त वाद विवाद ले कर अंगरेज ब्रह्मका युद्ध छिड़ गया (१८५२ ई०)। इस युद्धमें अङ्गरेजोंकी जीत हुई। यन्दूमन्विके अनुसार समस्त रङ्गूल जिला, पेगू, इरावती और तेनासेरिम विभाग अङ्गरेजोंको मिले।

इस जिलेमें प्रदत्तत्वके कितने अच्छे अच्छे निदर्शन देखनेमें आते हैं जिनमेसे निम्नोक्त निदर्शन उल्लेखनीय हैं। इन सब निदर्शनोंके मनोहारी शिल्पचतुर्षु और गठनप्रणालीको आलोचना करनेसे चमत्कृत होना पडता है। त्वान ते नगरका श्वे दागोन पगोडा बहुत प्रसिद्ध और आदरकी वस्तु है। इसके मध्यस्थलमें गौतम बुद्धका केशगुच्छ बड़े यत्नसे रखा हुआ है। श्वे मन्द पगोडा तलैङ्ग जातिकी गौरवकीर्ति है। उपरोक्त न्वान ते नगरके पास ही और भी कितने पगोडा विद्यमान हैं। उन्हे यहाके लोग प्राचीन साप्पाङ्गनगर और मिनशलादीन क्षव वि नगरकी अतीत कीर्ति बतलाते हैं। हैङ्ग और तानवू नगर अपेक्षाकृत आधुनिककालमें नूतन स्थान गठित होने पर भी प्राचीन ग्रंथादिमें उसे पुराना नगर कहा है।

यहां रेशमी और सूती कपड़े, मट्टीके बरतन, लक्षण,

पेंटाइ, भादिका जौती कारवार बढता है। नावकी राह से स्थानीय बाणिज्य विशेषरूपसे परिष्कारित होता है। इराकतो-भेको पेट रेलवे म्युम जानेसे केमेन्डियम, शीक तब, का ब गा, सूप वि, वनेटबुकु वीक-गो, पाकोन और मोन्डन नगरके बाणिज्यमें विशेष सुविधा हुए है। सिधुगुर रेलवे सारन वेगुसे लीङ्गू तक पकी ग ०।

२ निम्नप्रकारो राजधानी। यह भन्ना १६ ४६ ३० तथा वेष्टा १६ ११' पू०के मध्य डेङ्गू नदीके बाय किनारे अवस्थित है। जनसंख्या इय जाबाक कटोब है।

तलेङ्गू जातिको किबन्तो और उपाध्यायमासान मामूम होता है, कि पू भीर न-तप नामक दो भाइयोंनि ८८५ ई० सन्के पहले रंगून नगरमें पहले एक प्राय बसाया। भगवत्की ह्वासे उन्हे गौतम बुद्धके वरुन हुए जिसस उनक सब पाप जात र्द। पोछे पुत्रदेव प्रसन्न कशराजिबा छे कर दोनो भाइयोंमे उन्हीके भाइया जुसार भे-दगोन पगोजा बनाया और उसके बोधे बशुगुणको रया। ७७६ से ७७९ ई० तक राजा पुत्र न-टीक ने वेगु सिहासनकी अर्द्धकृत किया था। उन्हींमे इस नगरका जौरी संस्कार करके अयन नाम रखा और पोछे यह फिरसे द्वाोन कहलाने लगा।

तलेङ्गू विवरणोंमें १४१३ ई०को प्रथमय ज्ञात नगरा विकार, र्द जो रिष्क सङ्क भ्या स्या किन् ज्ञात जासन कर्तृत्व साम तथा १४६० ई०में उनका बहन सिमसनु द्वाय प्रासाद निर्माण भादि विपयोंका तुवासा काम दिया है। राजभगिनी सिमसनुक उद्देश्य यहाँ एक जातोय उत्सव मनाया जाता है। इन समयक बाग् ही द्वाोन नगरका समृद्धिका ग्तेष बर्ही मिलता। डेङ्गू तोरयलौ हा-सा नगर भीर पंगू तोरयलौ सिलियम नगर उस समय गृह तरकी कर र्दा था।

गासपार बरयो १, ३६ ८० ई०में ज्व वेगु नगर र्दमे भाये। तब उन्हीने द्वाोनके सार्वभूमि सिधा है, कि यहाँक घर काठकने है और उनमे सुनइलो हो यह है। चारों ओर मध्य अछुत उद्यान जोमन है। इन सब घरीमें तलेङ्गुणय र्दत है। ये लोग द्वाोनक पगोजाक परिदृशककमे नियुक्त है। द्वाोनके शासन कर्ता हो काठायल अङ्गरेज, पुर्तगोज और फारसियोंके

अपर कर्तृत्व करते थे। वेगूराज उस समय यर्कि सर्वेभर थे।

अथ और वेगूराजके बार बार युद्धसे द्वाोनका शासनभार विभिन्न व्यक्तिके हाथ सीया गया। १७१३ ई०में मन्नीकुपवने अथकी राजधानी भाबा नगरसे तलेङ्गू सेनाइकी मगा कर तलेङ्गूवास्य भविद्यार किया। उन्हींने द्वाोनमें भा कर स्थानीय वृहत् पगोजाका फिरसे संस्कार किया। इसके बाग् नगरकी शोभाको सब तर्द से बढ़ा कर उन्हीने इसका रणकुन (रणरोय) नाम रखा। तमोसे रङ्गून नगरमें उनके प्रतिनिधि र्दने लगे।

१७१० ई०में यहाँ फिरसे अथ और वेगूराजियोंमें युद्ध लड़ा हुआ। रङ्गून वेगूराजके द्वायमें र्दने पर मो अथराज बो-द पवने उन्हे परास्त कर नगराभ्यका उद्धार किया।

इसो समय अङ्गरेज-बणिको को रङ्गूनमें बाणिज्य व्यवसाय प्कानेक दिये कोठी बोलनेकी भाबा मिली। १७६४ ई०में अयकान और अङ्गुमाममें इष्टरिद्धया कम्पनीके साथ अथराज सरकारका विधाग् लड़ा हुआ। तद्नुसार दोनो में मैन कर्तानेके दिये कनक सारयस कम्पनीक गृहकपमें फिरत राजस्वार पङ्क्ये। इस समय अ नरेज-राजको १७६८ ई०को रङ्गून नगरमें एक अङ्गरेज रेसिडेण्ट रकनका अधिकार मिजा था।

१८२५ ई०में प्रथम अङ्गरेज-अथका युद्ध रोप हुआ। पोछे १८२७ ई० तक अङ्गरेजराज यहाँका शासन करते र्द। उसी साल यन्बुकी सगिपक अनुसार अ नरेजराजने इस स्थानका सार्व छेड़ा दिया। १८४१ ई०में राजा फून लीङ्गू-मिन (धयवता राजकुमार नामसे प्रसिद्ध) भोज क लाय नामक स्थानमें नगर उठा लाये। १८५२ ई०में द्वितीय अथयुद्धके बाग् रंगून अङ्गरेजक द्वायमें भाया। तमोस यह अङ्गरेजो के ही द्वायमें यत्ता धाता है।

रंगून नगरमें निम्नलिखित विद्यालय प्रपात हैं—
१८७४ ई०म स्थापित रङ्गून काउजेज और कासत्रियट रङ्गून, शारससन वासक रङ्गून। यह १८५४ ई०में स्थापित हुआ और इसमें क्यय अङ्गरेजक सङ्क पङ्कन है,

१८७२ ई०में स्थापित वैपटिष्ट कालेज, १८६४ ई०में स्थापित सेण्ट जोन कालेज; वालिकाके लिये सेण्ट जोन्स कौनभेण्ट स्कूल। यह १८६१ ई०में खोला गया है; तामिल लड़कोंके लिये १८७८ ई०में स्थापित लुथेरन मिशन स्कूल तथा १८६१ ई०में स्थापित सेण्टपावस स्कूल। इसके सिवा ३० सेकेण्ड्री स्कूल, १२० प्राइमरी स्कूल २१० एलिमेण्ट्री स्कूल तथा १६ ट्रेनिङ्ग और स्पेशल स्कूल हैं। अस्पतालोंमें रङ्गून जेनरल अस्पताल और डफरिन अस्पताल प्रधान हैं। सेण्ट्रल जेलके पास ही पागलखाना (Lunatic asylum) है।

रेच (सं० पु०) फुस्फुस वायुनिर्मुक्त करणरूप योग प्रक्रिधामेद, सांस छोड़ना।

रेचक (सं० पु०) रेचयतीति रिच्-णिच् ण्वुल् । १ यवक्षार, जवाक्षार। २ जयमालवृक्ष, जमालगोटा। ३ तिलकवृक्ष, तिलकका गाछ। ४ पिचकारी। ५ प्राणायाममेद। पूरक, कुम्भक और रेचकमेदसे प्राणायाम तीन प्रकारका है। खींचे हुए सांसको पुनः विधिपूर्वक बहार निकालनेका नाम रेचक है।

“प्राणस्य शोधयेन्मार्गं पूरकुम्भकरेचकैः” (भागवत ३।१८।६) विशेष विवरण प्राणायाम शब्दमें देखो।

(क्ली०) ६ कङ्क, प्रमृत्तिका। (त्रि०) ७ भेदक, जिसके खानेसे दस्त आवे, कोप्रशुद्धि करनेवाला।

रेचन (सं० क्ली०) रिच-त्त्युट् । मलभेदन। पर्याय-- प्रस्कन्दन, विरेक, विरेचन, रेक, रेचना। (शब्दरत्ना०)

सुश्रुतमें रेचन द्रव्यका विषय इस प्रकार लिखा है— मूला, छाल, तेल, खरस और क्षीर इन छः प्रकारका रेचनका व्यवहार होता है। इनमेंसे मूल-विरेचनके मध्य लाल निसोथका मूल, त्वक् विरेचनके मध्य लोघ्रकी छाल, फलविरेचनके मध्य हरीतकी, तेलके मध्य रेंडीका तेल, खरसके मध्य करेलेका रस और क्षीरके मध्य थूहरका क्षीर श्रेष्ठ है।

त्रिवृता, श्यामा, दन्ती, मूसाकानी, सप्तला, यवतिका मेदाशुद्धी, ग्वाल ककड़ी, विद्धङ्क, थूहरका बीज, स्वर्ण क्षीरिलता, चिता, अपाङ्ग, कुश, काश, लोघ, कास्मिलक, रम्यक, पटार, सुपारी, नीलिनी, रेंडी, पूतिका, महावृक्ष, सतच्छदा, अकवत और ज्योतिष्मती ये

सब रेचकवर्ग हैं। अर्थात् इन सब द्रव्योंका सेवन करनेसे विरेचन हो कर शरीरका मल दूर होता है। इन सब द्रव्योंमेंसे प्रथम पन्द्रह अर्थात् त्रिवृतासे ले कर काश तकका मूल लेना होता है। लोघसे पटार तकके द्रव्योंकी छाल तथा सुपारीसे रेंडी तकका फल किन्तु अमलतास और करञ्जका पत्र ग्रहण किया जाता है। इसके सिवा अर्वाशिष्ट द्रव्योंका क्षीर ग्रहणीय है।

(सुश्रुत सूत्रस्थान ४४ अ०) विरेचन शब्द देखो।

रेचनक (सं० पु०) रेचयतीति रिच्-णिच्-त्त्यु ततः स्वार्थे कन् । कम्पिलक, कमीला। (राजनि०)

रेचना (सं० स्त्री०) कम्पिल, कमीला।

रेचनी (सं० स्त्री०) रिचयतेऽनेनेति रिच्-ल्युट् ङीप् ।

१ कम्पिल, कमीला। २ कालाञ्जली। ३ दंती। ४ श्वेत-त्रिवृता, सफेद निसोथ। ५ वरपत्ती।

रेचनीय (सं० त्रि०) विरेचक, दस्त लानेवाला।

रेचित (सं० क्ली०) १ भेदित, परित्यक्त। २ घोड़ोंकी एक चाल। ३ नापनेमें हाथ दिलानेका एक ढंग।

रेची (सं० स्त्री०) रेचयतीति रिच्-णिच्-अच्, गौरादि-त्वात् ङीप् । १ कम्पिलक, कमीला। २ अड्डोट, अंकोल (राजनि०)

रेच्य (सं० पु०) १ प्राणायाममें बाहर छोड़ी हुई वायु। २ भेदक, जुलाव।

रेजस (फा० पु०) घोड़ोंका जुकाम।

रेजसछीमा (फा० पु०) रेजस देखो।

रेजा (फा० पु०) १ किसी वस्तुका बहुत छोटा टुकड़ा, सूक्ष्मखंड। २ सुनारोंका एक औजार जिसमें गला हुआ सोना या चांदी डाल कर पासेके आकारका बना लेते हैं। यह लोहेकी बनी नालीके आकारका होता है। इसे 'परघनी' भी कहते हैं। ३ नग, थान। ४ अंगिया, सीनावंद। ५ मजदूर लड़का जो बड़े राजगोरोंके साथ काम करता है।

रेजा खां—बंगालके नवाब जाफर अली खाकी मृत्यु होने पर जब नावालिग नवाब नजम उद्दौला बंगालकी राजगद्दी पर बैठा तब ये अंगरेज कम्पनीके आदेशसे १७६४ ई०में बंगालके प्रधान मंत्री हुए। महम्मद रेजा खां देखो। रेजिश (फा० स्त्री०) जुकाम।

रेजीमेंट (अ० पु०) यह मगरेजी राजकर्मचारियों को किसी देशी राज्यमें मगरेजी राज्यके प्रतिनिधिक रूपमें रखता है।

रेजीमेंट (अ० स्त्री०) सेनाका एक भाग, रिजमित।

रेणु (का० पु०) एक प्रकारका देश। यह मध्य (कपाड़ा भादि साफ करनेकी कृत्त) धरतीके लिये कड़कसेमें विद्यापतसे माता है।

रेणुशूश (अ० पु०) १ वह नियमित बाकायदा प्रस्ताव जो किसी व्यवस्थापिका समा या अन्य किसी समा संस्थाके अधिपेशनमें विचार और स्वीकृतिके लिये उपस्थित किया जाय, प्रस्ताव। २ किसी व्यवस्थापिका समा या अन्य किसी विषय पर नियम जो एकमत या बहुमतसे हुआ हो निर्णय।

रेट (अ० पु०) १ भाव, निर्णय। २ बाज, पति।

रेट-वेपर्स (अ० पु०) वह जो किसी म्यूनििसिपैलिटीको टेक्स या कर देता हो, करदाता।

रेडिपम (अ० पु०) एक मुख्य द्रव्य धातु। इसका पता वैज्ञानिकों को हाथमें ही लगा है। इनका कहना है, कि यह धातु अत्यन्त विरल है। इसे शकिका रूप ही समझना चाहिये यह उग्रक प्रकाशमान ही तो है। इसके मिश्रणसे परमाणु-संघर्षी सिद्धान्तमें बहुत परिवर्तन हुआ है। पहले वैधानिक परमाणुकी अयोगिक सूक्ष्म मानते थे पर अब यह पता चला है, कि परमाणु भी अत्यन्त सूक्ष्म विद्युत्कणोंकी समष्टि है।

रेडुबंश—राष्ट्रियतरपक कोण्ट्रोलिंग प्रदेशका एक सामन्त राजवंश। राष्ट्रीय मद्रा रेडुके पोस्त्रिय केमरेडु नामक एक पुत्र १३२८ ई०में अपने मुजबबसे इस राजवंशकी प्रतिष्ठा की। ये जनसाधारणमें प्रोक्त वा प्रोक्ष्य नामसे परिचित थे। इनके पाठे तथाकृतसे १३२९ ई०में मनवेम रेडु, १३३६ ई०में अक्षियकेमरेडु, १३८१ ई०में कामार गिरि केमरेडु, १३८५ ई०में कोमति वेडुारेडु और १४२३ ई०में राय केडुारेडु सिंहासनक अधिकारी हुए। इस श्रेणीक राजा राय वेडुारेडुके राज्यकालमें (१४२७ ई०में) मुसलमानोंने कोण्ट्रोलिंग पर बहाद कर ही जिससे इस राजवंशका पूरा अन्तगन्त हुआ।

रेडुबक—माओन लैङ्गुवासी कृषिजायी एक जाति। ये

रथ भेजीके मूढ और क्षत्रियाजायी हैं। एक समय इन्होंने अपनी सत्तासे राजत्व किया था।

रेडुकी व रेडुकी।

म्यजकृत इनमेंसे बहुतेरे सेनिक विभागमें मर्षों हो गये हैं। निजाम राज्यके अर्द्ध वनपति और महुवाक नामक स्थान क मूयधिकारी इसी वंशके हैं।

रेणो—बीकानेर राज्यके अन्तर्गत एक प्रसिद्ध बड़ा गाँव। यहाँ असाधारणके पत्थरका विस्तृत कारखाना है। यहाँ एक कि एक पत्थरका काम २०) टन तक है।

रेणु (सं० पु० स्त्री०) रिजातोवि रो गति रेपणयो। (भक्तिहीनो विन्धु। उष् १।३८) १ पूज्य। २ पर्यट। ३ रेणुका, बालू। ४ विह्वल। ५ पृथ्वी। ६ संमालोक्य बोज। ७ कृषिकर्म, मत्पस्त छत्र परिमाण। ८ अक्षमन्त्रद्वारा एक अविद्या नाम। (सूक् १।०० और १०।८६ सूक्) ९ विद्वानोंके एक पुत्रका नाम। (स्त्री०) १० विभ्यामिहकी एक पत्नीका नाम।

रेणुक (सं० स्त्री०) १ तथामक फलविषमैव। (शुभ्रु व अस्त्या २ ५०) २ रेणुकबोज।

रेणुक भाचार्य—पारस्करयुद्धकारिका और स्रष्टवृत्तिक रचयिता। ये महेशके पुत्र और सोमेश्वर शोधितके पीठ थे। इन्होंने १-१३ ई०में एक ग्रन्थ लिखा था। रेणुककाट (सं० लि०) घृष्टि आलोडन या अन्तगन्तारो, पूस मधमै या जोडवेवाला।

रेणुकर्म (सं० पु०) घृष्टिकर्म, एक प्रकारका कर्म।

रेणुका (सं० स्त्री०) रेणुका काफोतिहिके क टापू। १ मरिच की भाकृत्तिका गन्धद्रव्यविशेष। पर्याय—द्विजा, हरेणु, कौश्टी, कपिला, मसगन्धिमो, काम्ता, मदिनी, महिका, राजपुत्री, दिमा रेणु, हरेणुका, सुपयो, शिशिरा शाला, दुस्ता, घमिनी, पाण्डुपुत्री, कविजोमा, दीमपती, पाम्बु-पत्नी। गुण—ऊष्ण, शीतल, कष्टृति, तुष्या, बाह और विरनाशक तथा सुकषैरस्यघ्नक। (उजनि०) २ बालू, रत। ३ रज, पूव। ४ पुं०। ५ परशुमानकी माताका नाम। इनका विषय काठिकापुराणों इस प्रकार लिखा है—रेणुका विद्वैतराजकी कन्या और अमरनिनी स्त्री थी। इनके गर्भसे कृष्णबाण, सुखेन, पसु, विश्वावसु और परशुमान ये पाँच पुत्र उत्पन्न हुए।

एक दिन रेणुका स्नान करने गङ्गाजी गई। वहाँ उन्होंने देखा, कि उत्तम माला पहने, परम सुन्दर, तरुण राजा चित्तरथ सुन्दर स्त्रियोंके साथ जलक्रोडा कर रहे हैं। रेणुका वैसे राजाको देख कर कामातुरा हो गई। इसी समय उसके शरीरसे पसीना छूटने लगा। अब वह क्षण भर भी वहाँ न ठहर सकी अपनी मानसिक गति समझ कर घर लौटी। जमदग्निने रेणुकाका मनोविकार जान लिया और उसे बहुत फटकारा। पीछे उन्होंने रूप पत्र आदि अपने पुत्रोंको रेणुका विनाश करनेके लिये हुकुम दिया। किन्तु कोई भी पुत्र मातृहत्या करनेमें राजी न हुए। आखिर परशुरामने पिताके आज्ञानुसार रेणुकाका मस्तक काट डाला। जमदग्निने परशुरामके प्रति सन्तुष्ट हो कर उन्हें वर मागने कहा। परशुरामने माताके पुनर्जीवनके लिये प्रार्थना की। जमदग्निने वरसे रेणुकाने पुनर्जीवन पाया। (कालिकापु० ८२ अ०) परशुराम देखो।

६ सहायिका एक तीर्थ। स्कन्दपुराणोय सहायिकाखण्डके रेणुकामाहात्म्यमें इसका सविस्तर विवरण लिखा है।

रेणुका—सहायिके अन्तर्गत एक तीर्थका नाम। स्कन्दपुराणोय सहायिकाखण्डके रेणुकामाहात्म्यमें इसका विवरण विशद रूपसे लिखा है।

रेणुकाकच (सं० पु०) रुद्रयामलके अनुसार एक प्रकार का औषध।

रेणुकासुत (सं० पु०) रेणुकायाः सुतः। परशुराम।

“आर्चीकनन्दने रामा भार्गवो रेणुकासुतः।”

(भारत ३।६६।४३)

रेणुगर्भ (सं० पु०) १ ज्योतिषोक्त होरानिर्णायक यन्त्र विशेष। (Hour-glass) २ बालुकापूर्ण पात्रादि। ३ पुष्पादि।

रेणुत्व (सं० ह्री०) रेणोर्भावः त्व। रेणुका भाव या धर्म।

रेणुदीक्षित—एक परिणित और ग्रन्थकार।

रेणुप (सं० पु०) जातिविशेष।

रेणुपदवी (सं० स्त्री०) धूलिमय पद, वह राह जो धूलसे बरी हो।

रेणुपालक (सं० पु०) प्रवराध्यायोक्त एक ऋषिका नाम।

रेणुमत् (सं० पु०) रेणुके गर्भसे उतरा विश्वामित्रका पुत्र।

रेणुरूपित (सं० पु०) रेणुना रूगितः। १ गर्भ, गर्हा। (त्रि०) २ धूलि प्रक्षित, धूलमें मसठा हुआ।

रेणुवास (सं० पु०) रेणी परागे वासो यस्य। भ्रमर, भौरा।

रेणुगस (सं० अव्य०) धूलियुक्त।

रेणुमार (सं० पु०) रेणुरेवसारो यस्य। कर्पूर, कपूर।

रेणुसारक (सं० पु०) रेणुसार एव स्वार्थ कर्त्। कर्पूर, कपूर।

रेतःकुल्या (सं० स्त्री०) एक नरकका नाम।

रेतःसिन्धु (सं० पु०) इष्टकामेद, एक प्रकारकी ईंट।

(शं०या० १०।४।३।१४)

रेतःसिन्धु (सं० स्त्री०) शुकनिर्गमन, चीटाका निकलना।

रेत (हिं० पु०) शुक, चीर्य। २ पारा। ३ जल। ४ लोहारका वह औजार जिससे वह लोहेको रेतता है, रेतो।

(स्त्री०) ५ बालू। ६ बलुआ मैदान, मरुभूमि।

रेतकुण्ड (सं० पु०) १ रेतःकुल्या नामका नरक। २ कुमाऊंमें हिमालय परका एक तीर्थस्थान।

रेतज (सं० त्रि०) रेतोजात, पुत्र।

रेतजा (सं० स्त्री०) रेतमिव जायते इति जने ड, टाप, सर्वेसान्तो अदन्ताश्च इति न्यायात् अन्ताकारान्तरेतशब्दः। बालुक, पलुआ।

रेतन (सं० स्त्री०) शुक, चीर्य।

रेतना (हिं० स्त्री०) १ रेतोके द्वारा किसी वस्तुको रगड़ कर उसमेंसे छोटे छोटे कण गिराना जिससे वह चिकनी या आकारमें कम हो जाय। २ औजारसे रगड़ कर काटना, धीरे धीरे काटना। ३ किसी वस्तुको काटनेके लिये औजारकी धार रगड़ना।

रेतल (हिं० पु०) एक पक्षी। जिसका रंग भूरा और लम्बाई छः इञ्च होती है। यह युक्तप्रान्त और नेपालमें नदियोंके किनारे रहता है। किसी भाडी या पत्थरके नीचे बाससे प्यालेके आकारका घोंसला बनाता है और भूरे रंगके २ ३ अंडे देता है।

रेतला (हिं० स्त्री०) रेतिला देखो।

रेतसू (सं० स्त्री०) रीयते क्षतौति री क्षरणे (सुरीभ्यां

शुद्ध १। उच्य ५१२०१) इति भस्वन् तस्य शुद्ध च ।
१ शुद्ध, योग्य ।

‘श्रीषां रजोमयं देतो श्रीशामभिमित्रव मरे ।

- तस्यस्य संशोभतः पुत्रा ज्ञानेयं गर्भसम्पन्ना ।

मयमं इति रेतस्य उभोवात् फलकञ्च मरु इति ।

(शारीर कृतीरख्या १ प०)

शिवयोके राजको मी रीत कइते हैं । शुद्ध रेखा ।

२ पारत् पारा । ३ अक्ष १ ‘पृथिल्यानां कर्पा
देवानो रेतस्त्वाद्देते उच्यते । तथा श्रीपनिधनु, देवानो
रेतो बर्षानिति’ (निषण्ड ११२२)

रेतस (स० पु०) शुद्ध, योग्य ।

रेतस्य (सं० लि०) १ श्रीश-बहनकारी रज्जु होनेवाला ।

(पु०) २ बहिष्पवमान स्तोत्रका पहला श्लोक ।

रेतस्यत् (स० लि०) श्रीशयुक्त, गर्भित ।

रेतसिन् (स० लि०) उत्पादक शक्तिपूर्ण जिसमें
वत्पथ करनेकी शक्ति हो सोजायुक्त ।

रेतिन् (स० लि०) १ गर्भित गर्भवती । २ देतो
धारिणी, योग्य धारण करनेवाली ।

रेतिया (हि० पु०) रेतनेवाला ।

रेतो (हि० स्त्री०) १ रेतनेका श्रीशार जोहेका मोटा
फल जिस पर खुदरे बानेसे बमरे रहते हैं और जिसे
किसी बासू पर टगाइये उसके महीन कण छूट कर
गिरते हैं । इससे सतह चिकने भीर बराबर करते
हैं । नदीकी धाराके बीचोबीच उपकी तरहकी बलुई
जमीन जो पाने भयने पर निकल आती है, नदीका शीप ।
२ वही या समुद्रके किनारे पड़ी हुई बलुई जमीन, बासू
का मैदान जो नदी समुद्रके किनारे हो ।

रेतोका (हि० लि०) बालुकाभय, बलुभा ।

रेतोका—एक प्राचीन कवि ।

रेतोका (स० लि०) गर्भिणी, गर्भवती ।

रेतोपेव (स० स्त्री०) गर्भधारण ।

रेतोमहय (स० स्त्री०) शुद्धरूप भये द्रव्यमहय ।
मायविवस्तरूपमें इस प्रकार अनेक भये महयकी
धात्रायणविधि निबद्ध हुए हैं ।

रेतोमामे (स० पु०) शुद्धनिर्गमन पथ, बह छेद् या
पस्ता जिसस वीप निकलता है ।

रेत्य (स० स्त्री०) पिच्छ, पीतल ।

रेक (सं० स्त्री०) रोयते सरतीति रो-बाहुसकात् क । १ रेत,
शुद्ध । २ पीपूष, असूत । ३ पयसास । ४ घृतक, पारा ।

रेकी (हि० स्त्री०) १ वह वस्तु जिससे रग निकलता हो ।
२ वह अलगनी जिस पर रगरेज छोग कपड़ा रग कर
सूचनेकी डाकते हैं ।

रेकेष (मेजर जेम्स)—भारतवर्षका सर्वप्रथम अङ्ग्रेजी
इतिहास लेखक । इन्होंने अङ्ग्रेजीपिच्छत भारतका समस्त
विवरण समुच्चन कर एक भारतका इतिहास लिखा ।
भारतका भूतत्वात्त विवरण यूरोप समाजमें इन्होंने ही
पहले पहल प्रचार किया, इन कारण से वहाँके लोगोंसे
भारतीय भौगोलिकवस्तुके वितालकण प्रकृत हुए हैं ।

१७८० ई०में इन्होंने लन्दननगरमें ‘बङ्गाका मानचित्र’
प्रकाश किया । उसमें पूर्व-हिन्दुस्तानके वास्तव्य
अपकार और रणक्षेत्रका संक्षिप्त विवरण दिया गया है ।
पोछे १७८० ८१ ई०में बंगाल और विहारमें मानचित्र,
१७८८ ११ ई०में बङ्गा और विहारका गणनागणन
पथविवरण, १७८८ ई०में बङ्गा और प्रयागनदीके विषय
रूपके साथ हिन्दुस्तानका मानचित्र तथा बसका संक्षिप्त
इतिहास मुद्रित और प्रकाशित किया । उनही बगई
पुस्तक पश्चिम एशिया और भारतीय प्राचीन इतिहास
के सशस्त्रमें बहुत उपकारी हैं ।

रेप (सं० लि०) रेप्यते निम्नमे इति रेप सम् ।
१ निम्नित । २ कूर । ३ छपण ।

रेपही—१ मन्द्राप्रदेशके कृष्णात्रिकान्तर्गत एक तामुक ।
यह कृष्णा नदीके बहिष्प किनारे समुद्र तलसे मंगल
गिरि शैलमाका एक बिस्वृत है । भू-परिमाण ३४४
वर्गमील है ।

२ एक बिलैका एक नगर तथा रेपही तहसीलका
बिचार-सदर । यहाँ एक प्राचीन दुर्गका ध्वंसावशेष
पड़ा है जिसे स्वामीय मूर्त्यधिकारियोंके किसी पूर्वपुरुष
ने १३०५ ई०में बनवाया था ।

रेपस् (स० स्त्री०) रप् (रेपय एष । उच्य ५१२५) इति
भस्वन् मता पठ । १ अघध, अनिन्दनीय । (लि०)
२ अघम, मोक्ष । ३ कूर । ४ छपण, कूरस ।

रेफ (स० पु०) रिफ्यते इति रिफ्-घभ, यद्वा ‘रधि

फन्' इत्यनेन वर्णस्वरूपार्थे रशब्दादि फन् प्रत्ययः ।
१ रकार, र्वर्ग । २ रकारका वह रूप जो अन्य अक्षरके
पहले आने पर उसके मस्तक पर रहता है । ३ राग ।
४ शब्द । (त्रि०) रिफ (अवधावमाधमार् रेफाः कुत्सिते ।
उष् १।५४) इति अप्रत्ययेन निपातितः । ५ कुत्सित,
अधम ।

रेफरी (अ० पु०) वह जिससे कोई ऋगडा निपटानेकी
फहा जाय, पंच ।

रेफवत् (स० त्रि०) रेफयुक्त, जिसमें रेफ हो ।

रेफविपुला (स० स्त्री०) लन्दोमेद । रविपुला देखो ।

रेफस् (स० त्रि०) रिफतीति रिफ्-असुन् । १ क्रूर ।
२ अधम । ३ दुष्ट ।

रेफिन् (स० त्रि०) रेफ-अस्त्यर्थे इनि । रेफयुक्त ।

रेफयूज (अ० पु०) वह संस्था जिसमें अनाथों और
निराश्रयोंकी अस्थायी रूपसे आश्रय मिलता है ।

रेभ (स० त्रि०) १ कर्कश शब्दकारी, कठोर वचन
बोکنेवाला । २ स्तुतिवादक, स्तुति करनेवाला ।
३ वृथा वाधपट्या, फजूल बात बोलनेवाला ।

रेभ—१ वैदिक ऋषि । असुरोंने इन्हें एक कूपमें डाल
दिया था । दश रातों और नौ दिन बीतने पर अश्विनी-
कुमारोंने इन्हें निकाला था । (ऋक् १।११२।५, १।११६।२४)
२ वश्यपधंशिय एक दूसरे ऋषि । ये ऋक् ५।६७
सूक्तके मन्त्रद्रष्टा थे ।

रेभण (स० स्त्री०) रेभ शब्दे भावे व्युट् । गोध्वनि,
गायका बोलना ।

रेभसूनु (स० पु०) रेभ ऋषिके दो पुत्र । ये दोनों
ऋक् ६।६६-१०० सूक्तके मन्त्रद्रष्टा थे ।

रेमिल (स० पु०) एक नायकका नाम ।

(मृच्छकटिक ४।६)

रेमवा—मध्यप्रदेशके सम्बलपुर जिलान्तर्गत एक बड़ा
गाव ।

रेमि (स० त्रि०) रमणकारी, गमन करनेवाला ।

(पा० ३।२।१७१ वार्षिक २)

रेमुना—बङ्गालके बालेश्वर जिलान्तर्गत एक प्राचीन बड़ा
गाव । यह अक्षा० २१° ३३' उ० तथा देशा० ८६° ५८'
पू० बालेश्वर नगरसे ५ मील पश्चिममें अवस्थित है ।

माघ मासमें यहां क्षीरचोरा गोपीनाथ मूर्तिके उद्देशसे
एक बड़ा मेला लगता है । वह मेला १३ दिन रहता है ।

वैशाख और कार्तिक मासमें यहां बहुतसे यात्री
इकट्ठे होते हैं । देवमन्दिर पत्थरका बना है और उसमें
बहुतसे कामशास्त्रीय चित्र खुदे हैं ।

एक समय यह नगर बहुत समृद्धिशाली था । गङ्ग
वशीय राजाओंने यहां राजधानी बसा कर शासन
विस्तार किया था ।

रेरिवन् (सं० त्रि०) प्रेरयिता, भेजनेवाला ।

रेरिह (सं० त्रि०) जीभले बार बार चाटना ।

रेरिहाण (सं० पु०) १ शिव । २ असुर । ३ चौर,
चोर । (शब्दरत्ना०)

रेरुआ (हि० पु०) बड़ा उल्लू पक्षी, रुरुआ ।

रेरुवा (हि० पु०) रेरुआ देखो ।

रेल (अ० स्त्री०) १ सड़ककी वह लोहेकी पट्टी जिस
पर रेलगाड़ीके पहिये चलते हैं । २ भापके जोरसे
चलनेवाली गाडी, रेलगाड़ी ।

विशेष विवरण रेलवे शब्दमें देखो ।

रेल (हि० स्त्री०) १ वहाव, धारा । २ आधिष्ठय, भरमार ।

रेलङ्गी—मन्द्राज प्रेसिडेन्सीके गोदावरी जिलान्तर्गत एक
गण्ड ग्राम । यह अक्षा० १६° ४१' १०" उ० तथा देशा०
८१° ४१' ४०" पू०के बीच पड़ता है । यहां लगभग ५
हजार मनुष्य रहते हैं । यह स्थान समृद्धिशाली और
वाणिज्यसम्भारपूर्ण है ।

रेलठेल (हि० स्त्री०) रेलपेल देखो ।

रेलना (हि० स्त्री०) १ आगेकी ओर झोंकना, ढकेलना ।

२ ठसाठस भरा होना, अधिक होना । ३ अधिक भोजन
करना, हूस हूस कर खाना ।

रेलपेल (हि० स्त्री०) १ भीड़ जिसमें लोग एक दूसरेको
धक्का देते हैं । २ भरमार, ज्यादाती ।

रेलवे (Railway = रेलपथ)—लौहवर्त्म । परस्पर बरा-
बर दूरी पर रखी लोहेकी कड़िया या रेलपथ । यह
पंजिनके आनेके लिये बहुत उपयोगी है । रोज रोज
गाडियोंके चक्केके विसनेसे बचानेके लिये ही यह उपाय
रचा गया था । द्रामपथसे ही रेलपथका आविष्कार

हुमा है। मात्र कल एड्विन जिस रेसपथसे म्पाता जाता है, उसको पैदावार और मजदूती इतनेएडमें हुए थी।

उपर इतनीके उल्टापान्तमें पुराने जमानेकी इमारतोंक बरइइतोंको सुखवानेसे यहाँक प्रकृतएवके आनकारोंको एक नूसरी तपके रेसपथोंका नमूना मिला है। यह रेसपथ परपथोंसे जुड़ा कुछ चीड़ा और बराबर दूरी पर इजा परपथोंसे ही बभा है। इस पथका नमूना मात्र भी मौजूद है। किन्तु इसका प्रामाण नहीं मिलता, कि इस पथ पर एड्विनमें झुनी गाड़ियाँ हीड़ाए गए थीं या नहीं। किन्तु इस पथ पर गाड़ियोंके भाते जानेकी रणक मात्र भी विचार हैतो है। इससे स्पष्ट मालूम होता है, कि जब से लैकडों वर्ष पहले घरताके पुराने वासिन्द् परपथके बने रेसपथसे गाड़ियाँ हीड़ाते थे।

जो हो रेसपथके सम्बन्धमें और कीर पुराना हाक नहीं मालूम होता। इस समय जिस रेसपथसे पूर्वी मरठो जा रही है, जिसके द्वारा लोग हो दरममें वा महीनेकी राह तय करते हैं, जिसक कारण दूरी नञ्चिको में बचक गई है, उस रेसपथकी उत्पत्ति द्रामसे ही हुई है। सन् १६१६ ई०से पहले इसका कुछ भी नामोनिशान नहीं था। किन्तु कुछ लोगोंका कहना है, कि सन् १६०२ ई०से १६४६ ई०के बीच किसी समयमें द्रामका अविष्कार हुआ था। उस समय अधिक बोम्बसे सरी गाड़ियोंको एक जगहसे दूसरी जगह ले जानेमें बड़ी मसुबिधा होती थी। बोम्ब बोम्बेवासे पशु निपमित बोम्ब होनेक सिवा अधिक वेम हो नहीं सकते थे, इसल कारोबारमें बड़ी कठिनाई भेडनी पड़ती थी। इसी कठिनाईको दूर करनेके लिये उस समयके विख्यात कारोगतोंने न्यूजैमक नगरकी कोयलेकी कामसे दालन नदीके किनारे तक एक द्रामपथ तैयार किया। उसी समय नरदान्बरलैयक और इरहमकी कामसे नदीके किनारे तक दूसरा पथ जो तैयार हुआ था। यह पथ छकड़ाका बना था। अर्थात् समानान्तर पर एकी मात्र कल जैसी जोहेकी कड़ीकी जगह तकड़ोको पकड़ियाँ रकी गई थी। द्रामके बच्चाके गिरनेसे बघानके लिये तकड़ोकी पटरियों पर कुछ गहरा जोड़ा गया था जिसमें पकीका निकला हुआ मज उसमें घूस सक। पहले

पहल इस पथके बनानेमें घोकरुकी छकड़ाका इस्तेमाल हुआ था। इसके बाद छकड़ाको कड़ियाँ बिछाई गईं जो छकड़ीकी पटरियोंमें लम्बू या काँटेले जोड़ दी जाने लगी।

बच्चेको रणकसे रेल अब घिम जाती थी, तब उस बच्चे किया जाता था। धोरे धोर गाडो बमानेवालों ने घोडोंक जोड़ जोड़ बननेके लिये समानान्तर कड़ियों पर कुछ ऊँची रेल तैयार कर ली और रेसपथ पर मडो डाल कर वकी बड़ी कड़ियाँ तोप दी जाती थी। साधारण गाड़ियोंसे अधिक भारी बोम्ब इसके द्वारा लिये जाने लगा। दूसरे पथमें एक घोड़ा १० कार्टर मनसे भारी बोम्ब हो नहीं सकता था। किन्तु नये पथसे एक घोड़ा ४२ कार्टरका बोम्ब भनायास लाने लगा। बहुत दिन तक द्रामपथमें किसी तरहको उन्नति नहीं हो सकी। पीछे सन् १७६० ई०में कोसङ्कवेक जीव दम्पनीके इङ्गलियर मिटर रोनास्टकी सजाहसे छकड़ोको रेलकी जगह डकार जोहेकी रेल पतोसा करण स्पष्टत होने लगी। किन्तु उस समय भी किसीने लन्धमें भी भोबा न था, कि इस गाड़ी पर मनुष्य मो भार्ये जायेंगे। कोयलेकी कामसे कोयला होनेके लिये सब नदियों और समुद्रक किनारे तक द्रामें चलने लगीं।

पहले मोहेकी बनी रेल ५ फुट मरठी ४ इंच चौड़ी थी। १८३० मोटी होती थी। प्रत्येक रेलमें ३ छंर होत थे। इन छंरोंमें लम्बू या बट्टि डाल कर मोचेके छकड़ाको पटरोंमें रेल आक हो जाती थी। द्रामका पथ मद्रुरेजीक ४ पेचक आकारका होता था। अर्थात् शीनों कोरने बिचला माग कुछ गहरा होता था। इसलिये गाड़ोके बच्चे उससे गिरते न थे। किन्तु भीचो रेसपथमें कुछ विशेष मसुबिधा थी। सदा धूसि या कीचकसे भर जाती थी। इससे गाड़ियोंके आगे जानेमें बड़ी मज्बूत होती थी।

इस मज्बूतकी दूर दरमके लिये सन् १८८१ ई०में जेसक नामक एक इजीनियरने सबसे पहले अफरते नामक स्थानमें ऊँची रेलकी प्रतिष्ठा की। गाड़ोके बच्चे एक ओर बिचले भागसे कुछ ऊँच दिये गये।

इससे चक्के ऊंची रेलसे गिर नहीं सकते थे। ऊंची रेलें पहले ६ फीटकी होती थीं।

धीरे धीरे चिन्ताशील मनुष्योंने रेलोंकी उन्नतिमें चित्त लगाया। लिवरपुल और मानचेष्टरके बीच कारोवारके लिये जलका पथ मौजूद रहने पर भी जल्दी माल असवाव भेजनेमें वड़ी असुविधा थी। इस असुविधासे इन दोनों नगरोंसे केवल १२०० टन मन ही द्रव्य रोज आता जाता था। प्रत्येक टनमें १८ शिलिंग खर्च पड़ता था। जो है, सन् १८१० ई० तक सभी ट्रामें और रेलें छोड़ेसे चलाई जाती थीं और केवल एक गाड़ी ही चलती थी। अर्थात् बहुतेरी गाड़िया पकमें जोड़ कर चलानेकी प्रथा उस समय तक जारी नहीं हुई थी।

लोकोमोटिवकी सृष्टि।

सन् १८१० ई०में जेम्स वाटने भाप या वाष्पकी शक्तिसे परिचालित एंजिनका आविष्कार किया। उससे गाड़िया खिची जायंगी, यत वात उस समय तक किसो ने सोचा न था। ऊंचे दिमागके इंजीनियरोंने ४० वर्षों तक क्रमसे दिमागसे काम ले कर "लोकोमोटिव" वा गतिशील एंजिनका आविष्कार किया। वाट, सिमिंटन, श्रेविथिक, ब्लेस्किनसप, चापमेन, ब्राएटन आदि मनुष्योंने धीरे धीरे रेलपथसे एंजिन द्वारा गाड़िया खिची जानेके लिये एंजिनका आविष्कार किया। ये सभी जार्ज एंफेनके पहलेके या उनके समयके हैं। स्वयं चलनेवाली एंजिन सन् १८०२ ई०में ट्रेविथिक द्वारा पहले पहल उद्भावित हुए। उन्होंने लण्डन नगरके निकट अपने उद्भावित एंजिनको एक विराट् जनसमूहके सामने दिखलाया। वह विराट् जनसमूह उनके इस अद्भुत आविष्कारको देख विस्मित हो उठा। यही लोकोमोटिवकी भित्ति है। अन्तमें सन् १८०४ ई०में उन्होंने टिउविल रेलपथ पर एंजिन द्वारा रेलगाड़ी चलाई। पृथ्वीके इस सर्वप्रथम एंजिनमें १० टनका बोझ घण्टेमें ५ मीलके हिसाबसे खींचा जाने लगा। किन्तु उस समयके इंजीनियरोंने एंजिनकी कमीको पूरा करनेमें मन नहीं लगाया और सभी इसकी अधिक उन्नतिमें सन्देह करने लगे। सन् १८११ ई०में वाईलम रेलपथसे ट्रेविथिकका एंजिन व्यवहृत हुआ था।

सन् १८२१ ई०में एकटन और डार्लिंटन रेलपथ तय्यार करनेके लिये वहाकी सरकारने हुषम जारी किया। उससे पहले रेलपथसे केवल लड़े हुये माल के सिवा कोई मनुष्य उससे आता जाता न था। हुंटन रेलपथ पर ६० टनकी बोझाई गाड़ी घण्टेमें ४१ मीलके हिसाबसे आती जाती थी। फिलिंगवार्थ रेलपथ पर केवल ४० टन बोझाई गाड़ी घण्टेमें ६ मीलके हिसाबसे जाने लगी थी।

जार्ज एंफेनसन पहले एकटन और डार्लिंटन रेलवेपथके इंजीनियर नियुक्त हुए। इस समय सरकारने वाष्पीय शक्तिसे परिचालित गतिशील एंजिन द्वारा रेलपथसे गाड़ी चलानेका हुषम दिया। इसके मुताबिक ३८ मील लम्बा एक रेलपथ तय्यार हुआ। Fish belly या मत्स्योदर अर्थात् मछलीके पेटके आकार नया रेलपथ तय्यार हुआ।

इसी समय नटिंहमके रहनेवाले 'टामस ग्रे' नामक एक प्रतिभावान् मनुष्यने यात्रियोंकी सुविधाके लिये देशके सभी जगह रेलपथका प्रचार करना चाहिये—इस विषयमें अपने उद्भावित संकल्पको सरकारसे कहा। उन्होंने सन् १८२० ई०में "Observations on a general Iron Railway" अर्थात् 'साधारण लोहेके रेलपथके सम्बन्धमें मन्तव्य' नामकी एक पुस्तक प्रकाशित की। किन्तु उस समय भी वहांकी जनता ग्रेकी दूरदर्शिताको हृदयङ्गम कर न सकी।

इसके बाद सन् १८१२ ई०में लण्डनके रहनेवाले विलियम जेम्स नामक एक मनुष्य लिवरपुल और मानचेष्टरके बीच रेलपथ फैलानेके लिये चेष्टा करने लगे, किन्तु वे उसमें सफल न हो सले। अन्तमें सन् १८२४ ई०की २६वीं अक्टूबरको लिवरपुलके रहनेवाले जोसेफ सण्डार्स नामके एक मनुष्यने लिवरपुल और मन्चेष्टरके बीच रेलपथके सम्बन्धमें एक आदर्श प्रकाशित किया। जार्ज एंफेनसन इस पथकी पैमाईशके काममें नियुक्त हुए। अनेक वाद्-विवाद कर सरकारने अन्तमें इस प्रस्तावका अनुमोदन किया। किन्तु सन् १८३० ई०की १५वीं सितम्बरके पहले इस पथसे गाड़ी आती जाती न थी।

सबसे पहले प्रकृत्य धीरे डाब्लिन रेलवेपथ मनुष्य माने जाने लगे। सन् १८२५ ई०के सितम्बर महोत्तमें यह पथ खोला गया। इस दिन ३४ डबोंके साथ एक पंजिन ६० टन माछ ले कर इस पथसे चला था। पहले पहल इसकी गति घण्टेमें १० मीलस १२ मीलकी थी। लोगोंको सावधान करनेके लिये एक भाद्वाने पंजिनके भाग भाग बँधीता था। किसी किसी स्थानमें इसकी गति १५ मीलकी थी। किन्तु मासस लड़ो गाड़ो इनको ठगोने चलतो न था। गाड़ोके भीतर ६ और बाहर १५ याको ले कर दो घण्टेमें प्रकृत्यने डाब्लिन तक गाड़ो भाने जाने लगी। इतनी दूरीका किराया पहले १ शिलिंग निश्चित हुआ। प्रत्येक याको १४ पाउण्डस भधिक अपने पासमें ले कर चलने लहो पाता था। पहले मानका किराया प्रति टन प्रति मीलका ५ पेसस लगता था, किन्तु पाछे यह किराया भाषा पेसो कर दिया गया। इस लिये रेलपथके खुलनेके कुछ बाद ही कोयलेकी बर घट गई। पहले एक टन कोयलेका दाम था १८ शिलिंग। पर कर एक टन कोयलेका केवल ८ शिलिंग हुई।

एक टन रेलपथके भाद्वस पर सन् १८२६ ई०में एक छप्ट रेलपथ खुला धीरे बंस्टरबरो धीरे हीरपेवस भादि स्थानोंमें मो रेल लाइन खुलने लगी। किन्तु जब सन् १८३० ई०की १५वीं सितम्बरस लिये प्रकृत्य धीरे मञ्चेष्टरके रेलपथसे यानो भाने जाने लगी तब समोने यह सोचा, कि जगतमें मनुष्योंके लिये खान या गलिका युगान्तर उपस्थित हुआ है। सन् १८३८ ई०में सप्टेम्बर धीरे वर्मिं धागक बीच रेल खुल गई। इस पथकी लम्बाई ११५० मील था। पाबागाबो घण्टेमें २० मीलका गतिसे चलने लगी। ४५ वर्षके भीतर प्रेडिस्टेनमें धीरे धीरे बड़े बड़े रेलपथोंका भाद्वी प्रस्तुत हुआ। जोध हो १८०० मील समो एक रेल लाइनकी पैमाइत कतम हुए धीरे १० करोड़ पाउण्ड धन इन काममें लगाया गया। किन्तु यह रेलपथ जोध न बन सका। मरयोव्हाट्टनके रेलपथ बनानेमें धन बहुत बिधम्ब होन लगा। इसलिये "फ्राउडरम्ब" रेलका सृष्टि हुई। यह रेल पोछे "मिगनेस" नामस प्रसिद्ध हुई। इसठ

बाद् 'मिगनेस' नामक दूसरो तरहकी रेल व्यवहृत हुई थी। प्रेडिस्टेन नामक रेलपथ पर इसका व्यवहार भारत्तम हुआ। यह सारी रेलें लोहाके लकड़ीकी बड़ियों पर स्क्रूस जोड दी जाती थी। इस तरह भाड तरहकी रेल तैयार कर चुकनेके बाद रेल बम्पनी ने "डबल हेडेड" या "दो सीरे एक समान"-की रेलों का प्रचलन किया। पोछे इसी तरहकी रेल ही सब बगह व्यवहृत होने लगी। इस तरहकी एक गज रेलका पञ्जन ६२ पाउण्ड है। यह पोछे "बुलहेडेड" रेलके नाम म पुकारी जाने लगी। सन् १८४७ ई०में मिग्रे डबलहेड प्रिजेट भाडामसने दो रेलों को प्रया प्रचलित की।

इस तरह धारो धोर रेल फैलने लगी, तब भधिकारी रेल यार्डकी रफ्तारको बढ़ानेकी चेष्टा करने लगी। पंजिन बनानेको प्रतियोगितामें जार्ज प्रीफेलका 'रेकेट' नामका पंजिन प्रस्तुत हुआ। इससे एक जार्ज प्रीफेलको कम्पनीके डिरेक्टरोंने पुरस्कार दिया था। रकेटके दो यात्रालोंका ब्यास ८ इञ्च तथा चञ्चोका ब्यास ४ फुट ८ इञ्च था। कुल पंजिनका वजन ४ टन ५ ड्रॉटर् था। साधारणतः यह पंजिन लपकार प्रति घण्टेमें ११४ मीलस जलको १८४ घनफुट भाष्यमें परिप्यत करता था।

बहुत दिन तक इन दो तरहके पंजिनो स रेलगाड़ो चलतो रही। एक धार चक्केका बूसरा छः चक्केका पंजिन। इनके बाद कई प्रकारके पंजिन तैयार किये जा चुके हैं। इनमें १२ चक्केका पंजिन विख्यात है। सन् १८८५ ई० तक पंजिनकी बाम प्रति घण्टे ५० मीलकी थी।

सन् १८३० ई०के लिये प्रकृत्य धीरे मञ्चेष्टरके रेलपथ खुलनेके २५ वर्षके भीतर सन् १८५४ ई० तक ८०५३ मीलोंने रेलपथ फैल चुका था। इसका धीरे माग डबल जाइन धीरे बाकी सिङ्गल लाइन थी। इन धारे रेलपथोंके निर्माण करनेमें प्रति मील ३५००० पाउण्ड व्यय हुआ था। सन् १८७४ ई०में रेलपथकी लम्बाई १६४४२ मील तक पहुँच चुकी थी। इसक प्रत्येक मासमें ३७००० पाउण्ड लिये हुआ था। सन् १८८३ ई०के अन्त तक १८९८१ मील तक रेल फैल

गई । किसी किसी जगह तीन तीन, चार-चार रेल लाइनें वैठाई गई हैं । लण्डनसे रागवी तक ५० मीलके पथमें चार लाइनें हैं । दो लाइनोंमें अनवरत मालकी ढोवाई जारी रहती है । लण्डन और उत्तर-पश्चिम रेल कम्पनीके अधीनमें २८ मीलमें तीन लाइनें और ११४ मीलमें चार लाइनें हैं ।

सर्वसाधारणके यत्नसे जो सब रेलें तय्यार हुई हैं, उनमें इङ्ग्लैण्डके "ग्रेट वेष्टर्न रेलवे" सबसे बड़ी है । सन् १८८३ ई० तक यह २२६८ मीलमें फैल चुकी थी । इसके बाद लण्डन और नार्थवेष्टर्न, न्यूलैण्ड, नार्थव्रिटिश और कालिडोनिया रेलवेपथ क्रमसे १७६३, १५३४, १३८१, १००६ और ८७७ मील लम्बे हैं ।

सन् १८८३ ई० तक इङ्ग्लैण्डमें रेलपथ फैलानेके लिये ७८५०००००००० रुपया एकत्र हुआ था । इससे प्रति मील ४२०००० रुपया खर्च हुआ था । स्टेशन बनानेमें प्रति मील पहलेकी अपेक्षा बहुत ज्यादा रुपया खर्च हुआ था । जिस समय जोसेफ लक्व्राण्डने रेलवे निर्माण किया था, उसी समय यथार्थमें रेलपथकी सम्पूर्णता प्राप्त हुई थी । इसी पथके निर्माण समयमें वहुतेरे चौड़ी नदियों पर पुल और ऊँचे पर्वतोंमें सुरङ्ग खोदनी पड़ी थी । इसलिये प्रति मील ५३०००० रुपया खर्च हुआ था । यह पथ सब जगह समतल नहीं बना था । इस पथमें कई जगह गाडियोंको ऊँचे चढ़ना तथा नीचे उतरना पडता था । स्काटलैण्डके पहाडी प्रदेशोंको पार करते हुए इस पथके तय्यार करनेमें प्रति मील किसी किसी जगह ५०००००० रुपया खर्च करना पडा था । क्योंकि इन स्थानोंमें बड़े बड़े पहाडोंको काटना पडा था ।

पथ तय्यार करनेके सिवा दूसरे कामोंमें धन खर्च करनेकी जरूरत पडती थी प्रत्येक मील रेलपथमें—
व्यवस्था करनेवाली पार्लिया-

मेण्टका खर्च :—	२०० पाउण्ड
भूमि खरीदना और क्षतिपूरण करनेमें	७००० पाउण्ड
पथ स्टेशन आदिमें	१८००० "
लोकोमोटिव परिचालनमें	३०००० "
एकत्र रुपयाके व्याजमें	६००० "

कुल ३६००० पाउण्ड

सिवा इनके ड्रेनके डब्बोंके बनाने तथा कारखाने खोलनेमें भी बहुत ज्यादा रुपया खर्च करना पडता है । एक एंजिनमें कमसे कम १५४०० रुपया और एक डब्बेमें २७८० रुपया खर्च पडता है ।

रेलकम्पनीके कार्योंपयोगी सारी चीजोंको "रेलिफुक्त" या कार्यभण्डार कहते हैं । इन सब कारखानोंमें नई गाडिया तय्यार होती और पुरानी गाडियोंकी मरम्मत होती है । यात्री गाडी, मालगाडी, गाय आदि पशु चढ़ानेवाली गाडी भी तय्यार होती हैं । सन् १८८३ ई०में इङ्ग्लैण्डके रेलकम्पनीके कारखानोंमें १२१४४ एंजिन, ३७४७४ यात्री-डब्बे और ३२६६२२ मालके डब्बे मौजूद थे ।

रेलपथ न होनेसे पहले मज्जेष्टर और लिवरपुलके बीच नित्य २० से ३० तक घोड़ोंकी सवारी आती जाती थी । १८३६ ई० पोर्टारने अपनी जातीय उन्नति नामक पुस्तकमें लिखा है—ग्रेटब्रिटेनमें घोड़ोंकी सवारी नित्य ४२००० यात्री और वर्षमें ३००००००० यात्री आते जाते थे । इसमें प्रत्येक मनुष्यको ५ शिलिङ्ग खर्च होता था । किन्तु रेलसे ६००००००० यात्री प्रत्येक १॥ पेनीके खर्चसे आते जाते हैं ।

रेलपथ बनानेकी प्रणाली ।

पहले मानचित्र या नकशा देख कर ठीक किया जाता है । पीछे पैमाइश कर नकशा और पथका विवरण तैयार होता है । पथके भीतर जो सब नदियां और पर्वत या जलाशय पड़ते हैं उन सबों पर पुल बांधने तथा सुरङ्ग खोदनेके लिये पहले आदर्श तय्यार होता है । साधारणतः सभी जगह समतल भूमि तय्यार करनेमें किसी जगह नीची जमीनको भरना पडता है तथा किसी ऊँची जमीनको तराशना पडता है । किसी स्थानमें पहाडोंमें सुरङ्ग खोदना तथा नदियों पर पुल तय्यार करना पडता है । भूमि समतल हो जाने पर ईंट तथा पत्थरके टुकड़े फेंका जाता है । इसके बाद स्लीपर या लकडीकी पटरिया रखी जाती हैं । इस पर लोहे या लकडीकी कड़ियां मजबूतीसे जोड़ी जाती हैं ।

रेलपथ बनानमें जो सब बांध या Embankment बंधि गये हैं, उनमें लिबरपुल और मध्ये एर रेलपथ ४४ मांछ लम्बा बांध हो सधमेष्ट है। इसका नाम 'बाउमस' है। यह जल कपा कही १० से ३० फीट तक गहरा और पट्टमय है। इस पथमें ३०००००० घन गज बांध बंधि गये हैं। प्रेटमिटेनक रेलपथमें जो सारो सुरङ्गों तैवार हुई हैं, उनमें पश्चिमयर्ग और म्बासगोरेलके कावेएलर मिन्नकी सुरङ्ग सबसे बड़ी है। सारो सुरङ्ग अर्द्धवृत्ताकार है और इसका व्यासाश् एक मील है।

सिवा इसक नएडन और वर्मिचमके बीचकी फिज सवो नामक सुरङ्ग २३६८ गज लम्बो ३० फीट चौड़ी और ३० फीट ऊँची है। इसमें दो यायुकी नळे लगाइ गई हैं। इनका व्यास ६० फुट है। इसी सुरङ्गमें ३०००००००) कपवा खर्च हुआ था। मघात् प्रत्येक गजमें १२५) कपवा खर्च हुआ था। याघ और डिपेनहामक बीच सुरङ्ग समतलसे ७० फीट नीच है। इसकी लम्बाइ ३१२० गज या प्रायः एक कोस है। इसका फीटाघ ३१ वायुनळे हैं। डोबरक निऊत सधसपियर सुरङ्ग १४३० गज लम्बो है—यह सुरङ्ग स्तम्भों द्वारा सुरक्षित है। इङ्ग्लैण्ड देशके रेलपथोंम सुरङ्गोंका माघिस्य है। सन् १८५७ इ०में सारो रेलपथोंमें प्रायः ७० मील सुरङ्गका पथ था। सन् १८८५ इ० तक यह १०० मीलमें परिपल हुआ। उक्त सुरङ्ग सिवा मध्ये एर और डिपेनहापर रेलपथमें एक सबस बड़ी सुरङ्ग है। इसकी लम्बाइ तीन मील है।

रेलपथ निमाय कारमेस कई बड़ी बड़ी बंधियों पर पुन बांधना और दो पयतोंके बांध काइ पर मघडाण्टु था बड़ी साङ्कियां बनानो पड़तो हैं। यह बार जलस परिपूरित शहरोंस पथ तैवार करत समय साधारणक आने जानेका पथ मोध रख जोड़ों पर रेलपथ बनाना पड़ता है। इइ या परपरका जोड़ाइस पुन तैवार होता है। मध्ये एर और वर्मिचम रेलपथमें कसिडन नामक एक बड़ा मघडाण्टु है। यह भाया मीन लम्बा और परपतोंसे बना है। इसकी ऊँचाइ १०१ फुट है। इसक प्रति गज पथमें ११३) कपवा खर्च हुआ है। इस पथका

ई दो से बना डेन नामक मघडाण्टु ५२७ गज लम्बा और ८८ फुट ऊँचा है। इसमें ६३ फुट ऊँचा है। इसमें ६३ फुट व्यासके २३ जोड़ हैं। मिनाइ प्रपाळी पर जो पुन बना है, यह ११६ फुट लम्बा है और पानीकी सतह से १०४ फुट ऊँचा है। इसके प्रति गजमें ३७४) कपवा खर्च हुआ था। किन्तु इङ्ग्लैण्डकी फीर्ष नामक सोङ्कियां सबसे बड़ी और अद्भुत कारकार्यसम्पन्न है। का सफितो क निऊत एक बड़ी प्रपाळी पर यह पुन बंधा है। मि० आन फायलर और मि० वैज्जामिन वेकरके अद्भुत इति नियरिङ्ग कीशकसे यह सोङ्की बनी है। पुक्की लम्बाइ ११ मील है। इसके दो प्रयाण जोड़का व्यास १७०० फुट अर्थात् १७०० फुट पर स्तम्भ बने हैं। भयो कि मध्य अर्धो जलकी गहराइ ३०० फुट है। इसीनिघे दूर दूर पर स्तम्भ तैवार करना पड़ा है।

सिवा इसक ६७५ फुट व्यासयुक्त दो जोड़ और १६८ फुटके १५ जोड़ इसमें पिघमान हैं। पुन अवारके समय जल परसे १५० फुट ऊँचा और किसी किसी जगह ३६' फुट ऊँचा है। इसक चार प्रकाएड स्तम्भोका व्यास ५० फुट है। जलके मोधे ७० फुट तक मिट्टी खोड कर स्तम्भकी मिति कायम की गई थी। जल पर पथ बनाने पर ४४५०० टन फीटाइ खर्च करना पड़ा था। सोङ्कियोक फीलाय १२० फुट है। इन सोङ्कियोके बनानमें १६००००००) कपवा खर्च हुआ था।

रेलपथ पर स्टेशन या पिधाम स्थान बनानेकी जरूरत पडती है। यह कुछ ही दूरी पर बनाया जाता है। इन सब स्थानोंमें वहाके याता और माल भादि रेलस घाने जाते हैं। पथके बीच बीचमें इस तरहके स्टेशन बनाये जाते हैं। इङ्ग्लैण्डमें जो सब र्मिनिस स्टेशन हैं, उनमें प्रेटनर्भर्म, प्रेटेएल और साइथ वेर्ल स्टेशन विशेष प्रसिद्ध हैं और प्रथम घेफाकी गिनतामें हैं। प्रत्येक स्टेशनमें यात्रियोंके उतरनेके स्थानमें प्नादफार्ग बनाया जाता है। प्नादफार्ग रेल पथस कुछ ऊँचा होता है। इसस यात्रो भासानास रेल पर चड उतर सऊत हैं। सोमास्यक स्टेशनो में रेल पथो पर बड़ा बड़ी छय तैवार होती हैं। सन् १८४६

ई०से इङ्ग्लैण्डके स्टेशनोमें छत बनानेकी व्यवस्था हो गही है। इन समय लाइम प्लेट और लिवरपुल स्टेशनमें पहले पहल छत तैयार हुई। उक्त छत ३७४ फुट लम्बी और स्तम्भों पर जोड़के रूपमें अवस्थित है। चर्चि घमके न्यू प्लेट स्टेशनकी छत ८४० फुट लम्बी है। इङ्ग्लैण्डमें इतना बड़ा स्टेशन और नहीं है। चैयारिङ्गक्रस् रेडके केनेल प्लेट स्टेशनकी ऊंचाई ५० फुट है। उक्त स्टेशनमें १८६७ ई०में ८०००००० मनुष्य गाड़ीमें चढ़े उतरे थे। इस स्टेशनका प्लेटफार्म ७.२ फुट लम्बा है। इस स्टेशनसे ६ रेलपथ चारों थोरकी गये हैं। उक्त स्टेशनका क्षेत्रफल १५२६३२ घनफुट है। सिवा इसके इङ्ग्लैण्डम इस समयके वने स्टेशनोमें सेण्टपक्रस स्टेशन विशेष उल्लेखनीय है। मालके स्टेशनोमें क्रिसक्रस स्टेशन बहुत प्रसिद्ध है। इसी स्टेशनसे १२ रेलें चारों ओर माल ढो रही हैं। ६० एकड़ भूमिमें यह स्टेशन बना है। आलू और कोयला उतरनेके स्थानका क्षेत्रफल ८॥ एकड़ है। सम्रचा माल ढोनेके लिये सदा ८४ पंजिन तैयार और ११॥ मीलमें केवल कोयलेकी गाडिया तैयार रहती है।

उपर्युक्त स्टेशनके सिवा दो तान लाइनोंके जट्टुशन पर एक एक जट्टुशन स्टेशन बनाया जाता है। सिवा इनके गाड़ी और पंजिन बनानेके लिये बड़े बड़े कारखाने तैयार किये जाते हैं।

नागरिक रेलपथ।

बड़े बड़े जनाकीर्ण नगरोंमें रेलोंके फैलानेमें सबसे पहले सन् १८३७ ई०में विष्टर चार्ल्स पार्मनने विशेष चेष्टा की थी। इस तरहके रेलपथ बड़े बड़े स्तम्भों पर तथा भूमिमें सुरङ्ग खोद कर तैयार किये जाते हैं। पहले वहाऊं पारलामेण्टने इस तरहके रेलपथ बनानेका हुक्म नहीं दिया, किन्तु खूब सोच समझ कर पीछे सन् १८५४ ई०में पारलामेण्टने हुक्म दे दिया। इस तरह सन् १८६० ई०में इसका कार्य आरम्भ हुआ। जान फाउलर नामक एक विशेषज्ञ इंजिनियरके तत्त्वावधानमें सन् १८६३ ई०में पाडिंडन रास्तेसे फारिंडन रास्ते तक रेलपथ तैयार हुआ। अन्तमें सन् १८८४ ई०में 'इनर-सकल' नामक लण्डनके बीच रेलपथ बना। इस रेल-

पथकी लम्बाई केवल १३ मील है। पीछे यह बढ़ कर ४० मील हो गई थी। प्रत्येक आधे मील पर स्टेशन बना है। यह रेलपथ बनानेमें प्रत्येक मील पर ५०००००० रुपया खर्च हुआ है। भूमिमें सुरङ्ग खोद कर रेलपथ बनानेमें ही अधिक धन खर्च करना पड़ा था। कई जगहोंमें नदीके नीचेसे रेलपथ ले जाना पड़ा है। किसी किसी जगह ६ फुट धासके ढले हुए लोहेके नलमें यह रेलपथ तैयार हुआ है। इसी पथकी बनानेमें टेम्स नदीके नीचे विख्यात पुल बना था। यह पुल नदी तहसे १३ फुट नीचे, ७० फुट लम्बा और लोहेके खम्भों पर अवस्थित है। फिर कई जगह यह रेलपथ भूमिसे ६० फुट ऊंचे स्तम्भों पर बना है। किसी जगह ४२ गज नीचे ४२१ फुट लम्बी सुरङ्ग खोद कर यह पथ बनाया गया है। क्लार्कनवेल नामक स्थानमें ७२८ गज लम्बी एक सुरङ्ग है। ३० फुट गहरा पत्थर काट कर यह पथ तैयार हुआ है। किसी किसी जगह साधारण रास्ते पर ६० फुट ईंटकी ऊंचाईके जोड़ पर यह पथ तैयार किया गया है। मिष्टर फाउलरकी अपूर्ण प्रतिभाके बल पर ऐसा विकट पथ बना है। डम्बार्टन स्टेशनके समीप रेलपथ २॥ मील तक जमीनके अन्दरसे गया है। उक्त सुरङ्ग २७ फुटमें फैली हुई है।

नागरिक रेलोंमें अमेरिकाके न्यूयार्क शहरका ऊंचा रेलपथ बड़ा ही विस्मयजनक है। सन् १८७२ ई०में यह कम्पनी कायम हुई। जनाकीर्ण नगरके आदमियों और मोटर आदि सवारियोंका रास्ता सुरक्षित रख इस कम्पनीने १६ हाथ ऊंचा यह रेलपथ बनाया है अर्थात् बड़े बड़े द्विमञ्जिले इमारतोंकी छतोंके किनारोंसे यह रेलपथ निकला है। सन् १८८० ई०के प्रारम्भमें ३४३ रेलपथ तैयार हो चुके थे। इन पथोंसे नित्य २६५००० यात्री आते जाते थे। वहा दो मिनटके बाद यात्री-गाड़ी आती जाती है। जिनको चाहे जितनी ही दूर क्यों न जाना हो, उनकी ढाई पेनी ही महसूस देना होता है। यह ऊंचा रेलपथ ४४ फुट पर गड़े लोहेके स्तम्भों पर विद्यमान है। इस रेलपथके नीचे ड्रामवेका भी रास्ता है। इस रास्तेसे रोज रोज लाखों आदमी आते जाते हैं। इसके ऊपर प्रति दो मिनटमें

रेलगाड़ी जाती जाती है। नियमानुसार प्रबन्ध होनेके कारण कोई गड़बड़ नहीं होती। ऐसे ऊँचे पथ बनानेमें प्रति मीलमा ८१३७५) रुपया खर्च पड़ता है।

इन्डियनमें दो रेलोंका फैलाव ४ फुट ८ इंच है। इसको नगलज गज या आंशवी परिमाण कहते हैं। सिधा इसके सम्बन्ध गजको (Gauge) भी रेलें हैं। प्रेरवेष्टन रेलवेमें पहले ७ फुटका गज व्यवहृत हुआ था। इसका नाम था 'महजज' या बिस्तृत परिमाण और ४ फुट ८ इंचके गजका नाम 'म्पारो गज' या सभुर्ण परिमाण।

अमोनके भीतर सम्बन्ध रेलोंमें निम्नलिखित फिट रिश्तक अनुसार रेलों का परिमाण है :—

रेल और भार्य गज ।

इन्डियनका भार्यगज	४ ८
आयरलेण्डमें	५ ३
मध्ययूरोपमें	४ ८
रूसका भार्यगज	५ ०
नारवेदेशमें (२ तरह)	४ ३ ३
स्पेन और पुर्तगाल	५ ३
भारतवर्षका साधारण गज	५ ३
मिटर गज	३ ३ ६
काञ्चीपुरम् रेलवेमें	३ ३
आगाममें	३ ३
इत्रिल या मिक्से	४ ८ १
बनाङ्गेमें (३ प्रकार)	५ ३, ५ ८ १, ३ ३
मैसिकोमें (२ प्रकार)	४ ८ १, ३ २
युनाइटेडस्टेट्समें (३ प्रकार)	४ ३, ४ ३, ४ ०
अष्ट्रेलियामें (३ प्रकार)	५ ३, ३ ३, ४ ८ १, ५ ३
न्यूज़िलैण्ड (२ प्रकार)	३ ३, ३ ३

सन् १८७३ ईमें मिटर उन्नयु योथनने "भारतमें रेलपथका गज" नामक एक किताबलिख कर प्रथममें कौन गज सबसे उत्तम है, यह लिखलाया है। उसमें यह

स्वियर हुआ है, कि ५ फुटका गज दुगामी रेलवेके पथ में व्यवस्त सुविधाजनक है।

गत ४० वर्षकी रेलवेरिपोर्ट पढ़नेसे मालूम होता है, कि "उबल हेडेड" या धा सिरीको भार्या इस भाकारकी रेल सब जगह काममें लाई जा रही है। पहले एक रेल २५ वर्ष तक काम देती थी। किन्तु इस समय १० ही वर्षमें सराव हो जाती है। इन्डियनमें यानी गाड़ी तथा डाकगाड़ी की रेलिन हर परदेमें ४०से ३० मील तक जाती है। इन्डियनमें नवन रेलपथमें तेज चलनेवाली गाड़ी पिस कससे प्राहम तक १०५ मील पथ भविभ्रान्त धेगसे जाती है। यह रेलिन पथमें ५३ मील खज कर १ परदेमें और ५८ मिनटमें यह रेलपथ गमन करता है। प्रेरवेष्टन रेलपथमें चलनेवाली गाड़ी ५३ मीलकी खाजस जाती है। साधारण यानी गाड़ी ४० मीलकी खाजसे जाती है। जो गाड़ियाँ हरेक स्टेशनमें ठहरती हैं, यह १३से २८ मील परदेमें तथा माजगाड़ी परदेमें २५ मील जाती है।

इस समय विधानकी उन्नतिके साथ सा गाड़ियों की एकतामें भी उन्नति हुई। इस अमेरिका आदि देशोंमें पथसमोस या तेज चलनेवाले डाकगाड़ी परदेमें ५०से ८० मील तक जाती है इस विषयमें अमेरिकामें यूरोपकी पोछे जाळ दिया है यूरोप प्रथममें डाकगाड़ियाँ कर हजार मीलकी दूरी प करती हुई परदेमें (विधानका समय लं कर) ३० मी जाता है। किन्तु युनाइटेडस्टेट्स (अमेरिका) में १ मील प्रति घण्टे चलनेवाली गाड़ियाँ विधान स्थान कर ३ ३० मील पथ भविर्त जा सकती हैं। फिर डेनमिया और अस्ट्रालिया नगरके बीच रेलगाड़ी मिनटमें ५५ मील पथ तप करता है। आहमदेक गाड़ीकी सिपी खाज ६३ मील है। कितो कि स्थानमें घण्टेमें ७ मीलकी खाज है। इस समय इं प्रिटेनकी कोइ कोइ डाकगाड़ी ५३ मीलसे ६३ मील खाजस चलती है। फ्रांसमें डाकगाड़ी पेरिससे आ तक १२० मील १ परदे ५३ मिनटमें तप करती अमेरिका और जर्मनीक कितो कितो रेलपथमें पद

८० मील की चालसे कोई कोई डाकगाडी चलती है।

रेलवे संक्रान्त कानून।

इंग्लैण्डमें पारलिमेण्टका आज्ञाके विना कोई कम्पनी रेलपथ नहीं बना सकती है। सन् १८३२ ई०में पारलिमेण्टने एक कानून पास किया था। इसके अनुसार प्रति मीलमें प्रत्येक चार यात्रीसे आध पेनी महसूल लिया जाता था। सन् १८४२ ई०में इस कार्यका निरीक्षण करनेके लिये एक परिदर्शक नियुक्त हुआ। इसी समय रेलवे आइनका संस्कार हुआ और लिपिबद्ध हो गया। इसका नाम "बोर्ड भाफ ट्रेड" है। यह बोर्ड इच्छानुसार रेलकम्पनीके सभी कामोंका निरीक्षण करता है और महसूल वसूल किया करता है। सन् १८७३ ई०में रेलवेका नया कानून हुआ। उसमें कमिशनरोने नियुक्त हो कर रेलके विपरीत पर्यालोचना की। सन् १८८० ई०में "रेल-कर्मचारीका दायित्व" विषयक कानून विधिवद्ध हुआ। इसके अनुसार रेलवे मुसाफिर गाडी या गाडी चलानेवालोंके दोषसे हत या क्षति होने पर क्षतिपूर्ति करानेके अधिकारी हुए।

रेलगाडीकी उन्नति।

इंग्लैण्डमें साधारणतः निम्नलिखित गाडिया रेलपथसे आती जाती हैं :-

(१) पैसेज्जर ट्रेन या यात्री गाडीमें पहले, दूसरे और तीसरे दर्जेकी गाडी रहती है। सिवा इनके लगेज, ब्रेकभान, हर्सवक्स और केरेजद्रक आदि गाडिया भी हैं। (२) मालगाडी—इसमें सब तरहकी चीजोंके ढोनेकी गाडिया रहती है। छाई हुई या विना छाई हुई—इन दो तरहकी गाडिया इसमें व्यवहृत की जाती हैं। हाथी, घोडे, गे, भेडा, बकरा और मैसे आदि जानवरोंको ढोनेवाली गाडिया, कोयलेकी गाडी विविध प्रकार और आकारकी गाडिया इसमें जोडी रहती हैं।

पहले जो सब पहले दर्जेकी गाडी तैयार हुई थी, उसका वजन ३३ टन प्रत्येकका था। इसकी लम्बाई १५ फुट और चौड़ाई ६॥ फुट तथा ऊंचाई ४ फुट ६ इंच थी। यह गाडी तीन भागोंमें विभक्त थी। प्रत्येक कमरेमें ६ आदमियोंके बैठनेका स्थान रहता था। इस तरह पूरी गाडीमें १८ आदमियोंके बैठनेका स्थान था।

पहले प्रत्येक गाडीके चार चक्के होते थे। इस समय इसका बहुत परिवर्तन हो गया है। इस समय यह गाडी ३० फुट लम्बा और चार कमरोंमें विभक्त हैं। दूसरे और तीसरे दर्जेकी गाडियां भी सभी एक समान लम्बी होती हैं। किन्तु यह पांच कमरोंमें विभक्त होती हैं। पहले दूसरे दर्जेकी गाडीमें गद्दी या बिलौना न था। कभी कभी तीसरे दर्जेकी दो तीन गाडियां एकत्र जुड़ी रहती हैं। सन् १८५८ ई०में इंग्लैण्डमें दूसरे दर्जेकी गाडियोंमें गद्दियोंका प्रचलन हुआ। इस समय इंग्लैण्डके अधिकांश तीसरे दर्जेकी गाडियां भारतवर्षके दूसरे दर्जेकी गाडियोंके समान हैं।

अमेरिकाके वाल्टिमोर और ओहियो रेलपथमें जो तीसरे दर्जेकी गाडिया हैं, उनके वनानेमें बड़े आश्चर्यजनक कौशलसे काम लिया गया है। ये सभी गाडियां एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्त तक आती जाती हैं। यह पथ ठीक "करिडोर"के अनुसार दो फीट चौड़ी है। अमेरिकाकी गाडियोंमें जो विलास और स्वच्छताकी व्यवस्था है, वह अन्य किसी देशकी गाडियोंमें नहीं है। प्रत्येक चलनेवाली गाडीमें पीनेका जल, दफा और खाद्यादि सर्वदा मिलता है। पाखाना प्रत्येक उबैमें रहता है। जाड़ेके दिनोंमें गाडियां आग सुलगा कर गरम रखी जाती हैं। शीतातपमें मुसाफिरोंको जरा भी कष्ट नहीं होता। सिवा इसके प्रत्येक गाडीमें अधिक संख्यामें पुस्तक और समाचारपत्र रहते हैं। मुसाफिर चाई तो शौकसे पढ़ सकते हैं। ये सब गाडियां कई तरहके प्रकाशसे प्रकाशित रहती हैं। दूरके मुसाफिरोंके सोनेके लिये एक स्वतन्त्र गाडी रहती है। इस समय सभी जगह विद्युत् प्रकाशका ही व्यवहार होता है। इन गाडियोंके मुसाफिर स्वेच्छापूर्वक करिडोरमें घूम फिर सकता है और गश्ती दुकानदार चलती हुई गाडियोंमें नाना प्रकारकी चीजे बेचा करते हैं। फलतः कई सहस्र मील तक यात्रा करने पर भी मुसाफिरोंको गाडीसे उतरनेकी जरूरत नहीं होती और न यात्रा करते मन ही ऊबता है।

अन्यान्य देशोंका रेलपथ।

यूरोप महादेश—सन् १८२६ ई०में फ्रांसमें पहले

पहल द्रामका रास्ता बना। सन् १८३३ ई०में बर्हाकी सरकार रोजपय बनानेमें बड़ी यत्नवान् हुई थी। सन् १८४२ ई०में फ्रांसिसी सरकार रोजपयका भाषा लघु होने पर राजी हुई था। इसके अनुसार भाषा लघु बना कर रोज कम्पनियों को वर्क कर पड़े पर अपने अपने काम करने लगी। सन् १८५३ ई०में बड़ी बड़ी कम्पनियोंने प्यारों और रोजपय तैयार कर दिया। सन् १८८४ ई०में ३४००० मीलोंमें रोजपय तैयार हो गया।

सन् १८३० ई०से १८३३ ई० तक बेजब्रियम सरकार ने रोज निकालनेको चेष्टा की। सरकारने ३०० मीलोंमें पथ तैयार कर कई कम्पनियोंको रोजपय तैयार करनेका हुक्म दिया। इसके फलस्वरूप सन् १८३० ई० तक १४८० मीलोंमें रोजपय तैयार हुआ।

सन् १८४० ई०में हाकेन्डमे पहले पथ रोजपय तैयार हुआ और जर्मनीमें पहले पथ सन् १८३५ ई०में रोज खुली। प्रूसियाकी सरकार द्वारा उद्योग करने पर जर्मनीमें सो सन् १८३७ ई०में ५०८० मीलोंमें और म्यान्मार् कम्पनियों द्वारा ३००० मीलों में रोजपय तैयार हुआ। इसके बाद सरकारने बिलने हो रोजपयको बरोड़ किया। सन् १८५८ ई०में वहाँ १३००० मील सरकारने और १००० मील म्यान्मार् कम्पनियों का रोज पथ तैयार हुआ।

अफ्रिया और इण्डो प्रदेशमें सन् १८२४ २८ ई०में पहले पथ द्रामपथ प्रबलित हुआ। वहाँ १८३८ ई० तक सरकारने रोजपय बनानेके विषयमें ध्यान दिया। सन् १८३९ ई० तक वहाँ २००० मीलोंमें घेरेस रोजपे और ३००० मीलोंमें म्यान्मार् कम्पनियों द्वारा रोज पथ बना। इण्डोमें २००० मीलोंमें घेरेस रोजपे और म्यान्मार् कम्पनियों द्वारा ३००० मीलोंमें रोजपय तैयार हुआ। इस प्रदेशमें सन् १८८०से १८८३ ई० तक ५० रोज-कम्पनियों पदाङ्को रोजपयके बनानेके लिये सग जित हुए।

सन् १८८५ ई० तक सोडरलैण्डमें २००० मीलोंमें रोजपय बन चुका था। इनमें एक रोजपय सुरङ्ग जोड़ कर म्यान्मार् पदाङ्को छोड़ कर अफ्रिकाक साय मिली है। यूथनीम येसा बड़ा सुरङ्ग और कीर बड़ी है। इसकी लम्बाई १५ मील है।

सन् १८२० ई०से इटलीमें रोज फैलने लगी और प्रायः १८८० ई० तक प्रायः ८००० मील रोजपय तैयार हो गया। सन् १८४८ ई०में स्पेनमें पहले पथ रोज भारतमें हुए और सन् १८६० ई०में ५००० मीलोंमें रोजपय तैयार हो गया।

सन् १८५३ ई०में पहले पथ पुर्तगालमें रोज खुली। बर्हाकी अधिकार रोजे सरकारकी हैं।

स्वित्जरलैंड या स्वीडेन और नारवेमें रोज बड़ी सुस्ती से फैली थी। स्वीडेनमें ५००० मीलोंमें रोजपय तैयार हुआ।

सन् १८०३ ई०में रूसका रोजपय तैयार हुआ। सन् १८८० ई० तक वहाँ १५००० मीलोंमें रोजपय तैयार हुआ।

सन् १८१० ई०में यूरोपीय मुकोंमें रोज बननी शुरू हुई और १८८० तक वहाँ १२०० मीलोंमें रोजपय तैयार हो गया। इसके सिवा कमानियों १००० मीलोंसे अधिक स्थानोंमें रोजें हैं।

अमेरिकाके कनाडा प्रदेशमें सन् १८८३ तक ३११३ मीलोंमें रोजपय और ६०५ द्रामपथ तैयार हुआ।

सन् १८८२ ई०में वहाँ प्रोजेक्ट रोज नामका रोज पथ तैयार हुआ। इसकी लम्बाई २६०५ मील है। सन् १८८४ ई० तक मेक्सिको प्रदेशमें १२२० मीलोंमें रोज पथ तैयार हुआ था। प्रोजेक्टमें प्रायः १४०० मीलोंमें रोजपय हुआ। कोलेमें १३०८ मीलोंमें और पेक्में २०३० मीलोंमें रोजपय तैयार हुआ है। मिक्सिदेशमें प्रायः १००० मीलों में रोजगाड़ी चल रही है।

सन् १८३८ ई० तक कई प्रदेशोंमें मिगलिकित रूप से रोजपय फैला हुआ है—

र र	रोजपयकी लम्बाई
युनाइटेड किङ्गडम	२१५५६
„ घेरेस (साकारकको छोड़ कर)	१८३३३६
जर्मनी	३०००१
बेजब्रियम	३०८१
फ्रांस	२५८१८
यूरोपीय कम्पिया	२६४१४
अफ्रिया-इण्डो	२१८०५

देश	रेलपथकी लम्बाई
ब्रिटिश नाथे अमेरिका	१६८७०
अंग्रेजाधिकृत भारतवर्ष	२१४७६
न्यू साउथवेल्स	२६६१

सन् १८८५ ई०के अन्तमें पृथ्वी कुल ३०२८८७ मीलो में रेलपथ था। सन् १८६८ ई०में यह बढ कर ४६६५२४ मीलो में परिणत हो गया। अर्थात् १३ वर्षोंमें लैकड़ो ५४ मीलकी वृद्धि हुई है। इसमें अंग्रे-लियामें लैकड़ो ८० मील और भारतवर्षमें ८३॥ मील बढो है। केवल जापानमें आश्चर्यजनक रूपसे बढी है। अर्थात् लैकड़ो ६५ मील हैं।

प्रति वर्ष रूसके पब्लिक वर्क्स या पुर्त विभागसे मई-जून महीनेमें सारी पृथ्वीके रेलपथकी एक बहुत बडी फिहरिश्त तैयार हुई थी। जो सूक्ष्मत्व जानना चाहते हैं, उनको पाठ करना चाहिये। सन् १८७६ ई३ ई० तक चार वर्षोंमें युनाइटेड रेलपथोंमें (१०००००००००) रुपया खर्च हुआ। सन् १८६८ ई०-में निम्नलिखित रेलपथोंमें जो मूल धन था उसकी फिहरिश्त इस तरह है—

जर्मनी	५८०२२५०००	पीएड
अप्रिया	२३००५३०००	"
हङ्गरी	८४६७००००	"
युनाइटेड किङ्गडम	११३४४६८४६२	"
" " " " " "	२२२१४७००००	"
ब्रिटिश अमेरिका	१६३३४३०००	"
न्यू साउथवेल्स	३४४२४०००	"

सन् १८६६ ई०में उत्तर अमेरिकाके बीच एक सुदोर्ष रेलवर्तम निर्मित हुआ है। पहले इस पथकी लम्बाई १४०० मील थी।

सन् १८६८ ई० के अन्तमें निम्नलिखित कई रेल कम्पनीके कारखानेमें जिस तरह गाडिया मौजूद थीं, उनके जाननेसे रेलवेके फैले हुए कारोबारका विषय मालूम होता है।

देश	ए जिन	थायीगाडी	मासगाडी
युनाइटेड रेल-			
जर्मनी	३६२३४	३५५३५	१२६२५७६
ग्रेटब्रिटेनमें -	१६४७६	४४०५३	६६४८३३
फ्रान्समें	१०६११	२७१७६	२७६५३४
जर्मनीमें	१६८८४	३३६६४	३६१५०६
भारतवर्षमें	४५३८	१३२६३	८६१०८

निम्नलिखित फिहरिश्तमें १८६८ ई० तकके कई देशोंकी रेल कम्पनियोंका मूलधन लिखा गया—

देश	मूलधन—पीएड	(१५ वर्षों)
जर्मनी	५८०२२५०००	
अप्रिया	२३००५३०००	
हङ्गरी एंस्ट्रेल	८४६७००००	
फ्रान्स	६४०१८६०००	
ग्रेटब्रिटेन	११३४४६८४६२	
युनाइटेड स्टेट्स	२२२१४७००००	
ब्रिटिश अमेरिका	१६३३४३८००	
अंग्रे लिया	३८४२४०००	

संसारके जिन लम्बे लम्बे पथोंने बडे, बडे, महादेशों को पार कर भूमण्डलको सिराओंकी तरह अच्छादित कर रखा है, उनका संक्षिप्त विवरण यहां दिया गया है। सन् १८६६ ई०में एक लम्बा रेलपथ पहले अटलाण्टिक महासमुद्रके किनारे तक फैला हुआ है। यह पथ १८४८ मील लम्बा है। किन्तु इस पथमें हजारों मील तक मैदान पडता है, जहा वस्तीका नाम तक नहीं। इसी पथके बनानेके बाद सन् १८८१ ई० सान फ्रान्सिसकोसे न्यू अलिन्स तक दूसरा एक लम्बा रेलपथ तैयार हुआ है। इसकी लम्बाई २४८६ मील है।

इसके बाद कानाडिधान पैसिफिक रेलपथने अटलाण्टिक और प्रशान्त-महासागरके मध्यवर्ती लम्बे व्यवधानको पतला बना दिया है। यह रेलपथ अटलाण्टिकके किनारेके मण्ड्रल नगरसे प्रशान्त महासागरके किनारेके बड्डुवर तक फैला है। इसकी लम्बाई २६०६ मील है। यही सब रेलपथ संसारमें बडे, कहे जाते हैं। किन्तु सन् १८६१ ई०में साइबेरिया रेलपथ बन जानेसे इन सबोंकी लम्बाईमें कमी आ गई है। अर्थात् साइ-

बिरियाक रेखपथ सबसे बड़ा बना है। इस सरकारने एक छम्भा रेखपथ बना कर पश्चिमाके एक प्रांतको वृद्धे प्रांतमें जोड़ दिया है। इस पथकी छम्भाइ ४००३ मील है। यह रूसकी पुतानो राजधानी सेव्स्टोपियर्सवो नगर से १,०६६ मील दूर अवस्थित है और चेस्त्रियाचिनस्क नगरसे प्रशास्य महासागर तीरवर्ती भ्वाइचोपड तक फैला है। इसकी एक शाखा ५०० मील तक धीन सर कारके अन्तर्गत डालनो और आर्थर बन्धर तक फैली है। गत इस जापान युद्धके समय इस रेखपथको उप योगिता समीने अनुमत्त की। सन् १९०३ ईमें इस पथसे मास्को और वास्तो गाडियां चलने लगी। किन्तु वैकाङ्गभोखके दक्षिणी किनारे पर १०० मीलका रास्ता अत्यंत दुर्गम होनेकी वजहसे मास्को वहांका निर्माण कार्य अत्यंत गहरी हुआ। इस समय वास्की और मास्कोसे क्यो गाडियां स्त्रोमरोसे वैकाङ्गभोखको पार करती हैं। वैकाङ्गभोखकी चौड़ाइ ४० मील है और बीच बीचमें यह भोख बर्फसे आच्छादित रहती है। इसलिये मा स्कोन स्त्रोमरोसे पार होती है। इस सावितिया रेखपथ बनाने में इस सरकारने सैकड़ों नवियों पर बड़े बड़े पुन तैयार किये हैं। इनमें भव, रम, इयातिस, एवेनसो और सुङ्गारी श्कीके पुन अत्यन्त आश्चर्यजनक हैं और जो रैनपथ बनानाका स कबरा हुआ है। अफ्रीकाकी उत्तरी सीमा सुप्रेस गहरसे दक्षिणी सीमा उचमाशा अन्तरीप तक और दक्षिण अमरिकाकी दक्षिणी सीमा विउबस परिसस विन्डीइशक किनारेतक निम्नोक्त पथका निर्माण कार्य अत्यंत हो चला है केवल सुरङ्ग द्वारा अन्दिज पर्वत को पार करना बाकी है।

इस समय बड़े बड़े जनानीय नगरक बीच दूरसे आनिवाये वासियोंकी सुविधाके लिये उच्च रैनपथ निर्माण की प्रथा अनेक जगहोंमें जारी का गई है। सन् १८३१ ईमें न्यूयाकके प्रसिद्ध इन्डियनरल बहां सबसे पहले इस रैनपथका आरंभ तैयार किया। किन्तु पथाधर्म सन् १८३० ईसे इस पथमें रैड चलन लगी है। सन् १८७८ ईमें न्यूयाकमें इसी तरहक समांतर पर चार रैनपथ तैयार हुए हैं। जर्मनीक बर्लिन नगरमें भी यह प्रथा अत्यन्तवित्त हुए है। सन् १९०० ईमें बोचन नगर में यह प्रथा प्रारंभ हुई है।

यह समी बड़े बड़े रैनपथ जोहेक स्थलों या अत्यन्तकी गथाइ पर अवस्थित हैं। एक जर्मनेसे दुसरे जर्मने तक एक बड़ा गाड़ी जाती है। पाछे उस पर साधारण पथकी तरह सारा पथ ही सोहनी कड़ियोंसे तैयार होता है।

साधारण छपटन रेखये बन्धीन टेम्स नदीके नीचे जो तलवर्तमें तैयार किया है, वह अत्यन्त विस्मयजनक है। न्यूयाकके इन्डियनरल बीच और प्रेड्डेइ द्वारा यह भी निर्मित हुआ है। इसका विवरण सुरङ्ग शब्दमें किया गया है। प्रेड्डेइमें १० फुट ६ इंच व्यासयुक्त एक बड़े हुए जोहका तल अत्यन्त ऊपर भागमें ४० फुट नीचे स्थापित किया है। इस तरहकी दो सुरङ्गें तैयार हुई हैं। सन् १९०२ ईमें पारजोमेस्टने इसी तरहक सुर ग्वां रेखपथ तैयार करानेका प्रथम किया। इसके अनुसार १०००००००० रुपया मूल्यमें स गृहीत हुआ। इस धनसे जर्मनीस्त्रोमरोसे उचउमको पीरली हुई उत्तरी सीमा तक एक छम्भा सुरङ्गद्वारा रैड बनी है। इस पथकी चौड़ाइ १५ फुट है। प्रेड्डेइके आधारेके अनुसार सन् १८६३ ईमें अफ्रीकाके बुनायेस्त नगरमें इस तरहका सुरङ्गद्वारा रेखपथ तैयार हुआ है। सन् १९०२ ईमें ८ मीलका सुरङ्ग पथ तैयार हुआ था। इस पथसे घण्टेमें १५ मीनकी तन्वीय गाडियां जाती हैं।

साधारणता इन सब पथोंमें बिजलीकी रैड चलती है। फिर एक ट्रेन ही तलवर्तमेंसे उपरिस्थित रैड पथसे आ जा सकती है। ५०० गाज अन्तर पर एक एक स्टेशन बना है। ये सुरङ्गद्वारा रेखपथ साधारणता तोन प्रकारक हैं।

(१) गहरी जमीनक नीतार अवस्थित ज़ाहेक तल से बना रेखपथ। ये पथ इतन गहरे हैं कि नीचेके जलनम ऊपर उठानक लिये वासियोंको सिस्टेपर या कलसेउठानेवाके यन्त्रोंका व्यवहार किया जाता है।

(२) मूलधर्में कुछ ही गहराईमें बना रैनपथ। ये सब पथ १२ से १५ फुटसे अधिक गहरे नहीं हैं। इस निच वासियोंको चढ़ाने और उतारनेकी प्रकृत नहीं होती। येस पथोंमें यात्रा कर्ष सादियों द्वारा चढ़

उतर सकते हैं। किन्तु इस पथमें असुविधा इतनी ही है, कि नगरके भूगर्भस्थ जल, गैस, विप्रा और विजली के तल जालकी तरह जमीनों फैले हुए हैं। इससे ऐसे पथोंमें बड़ी असुविधा होती है।

(३) पहले साधारणके चलनेके लिये जमीनसे कुछ ऊंचा पुल बना कर नीचे रेलपथ तैयार करते हैं। ऊपर आदमी, घोडागाडी, मोटर आती जाती तथा नीचे रेलगाडी चलती है। कलकत्ता चिनपुरका पुल और रेलपथ तथा बम्बई, फैलडो और फ्रेंच पुल इसके उदाहरण हैं।

ऐसे सुरङ्गदार रेलपथ बनानेमें जो असुविधा भोग करनी पडती है, वह अकथनीय है। क्योंकि, जमीनमें कार्बनिक पसिड 'गैस' या अन्नारामु वाष्प, गन्धक वाष्प, जलीय वाष्प और विशुद्ध वायुके अभावके कारण समीको बडा कष्ट होता है। इन सब रेलपथोंमें विजलीका रेलगाडी चलती है। इन सब विजलीके पस्त्रिनोको शक्ति ६५० घण्टेको शक्तिके बराबर है।

ऐसे ऊंचे और नीचे रेलपथ बनानेमें बड़ा धन खर्च होता है। अमेरिकाके प्रत्येक ऊंचे रेलपथ बनाने में प्रति मील ३०००००० से ४००००००, लाउन नगरके १५ फुट ध्यासयुक्त तलपथमें प्रति मील २०००००० पाउण्ड खर्च हुआ है। सिवा इसके जमीनका मूल्य, स्टेशन बनानेका खर्च और अन्य खर्च अलग हैं। लण्डनके केतन प्रोटके रेलपथ बनानेमें प्रति मीलमें १००००००० पाउण्ड खर्च हुआ था। न्यूयार्कमें २२ मील नीचे रेलपथ बनानेमें ३५००००००० रुपया खर्च करना पडा है। न्यूयार्कमें ४० मील ऊंचा रेलपथ है। इस पथसे प्रतिवर्ष २२१००००००० मनुष्य आते जाते हैं। लण्डनके १०० मील ऊंचे और नीचे रेलपथसे प्रतिवर्ष १५०००००००० यात्री आते जाते हैं। सेण्ट्रल लण्डन रेलपथसे १६०० ई०की २६वीं अक्टोबरको एक दिनमें २२४६६१ यात्री आये गये थे। इसी रेलसे दक्षिण अफ्रिका युद्धक्षेत्रसे वालण्टियर या स्वयंसेवक लैटे थे।

वर्तमान समयमें यूरोपमें साधारण रेलपथोंमें विजलीकी रेलगाडी चलती है। सन् १९०५ ई०में भारत-वर्षके उत्तरी पश्चिमी प्रदेशमें प्रोट-रेलके लिये सरकारने

एक आदर्श विजलीकी गाडी मगवाई है। इस समय इसके चलानेकी परीक्षा हो रही है। इस विजलीकी रेलके प्रचलनसे घासे चलनेवाली ट्रामें बन्द हो रही हैं। २०वीं शताब्दीके आरम्भसे ही अमेरिका और यूरोप-में विजलीकी रेलें चलने लगीं। सन् १८६६ ई०में न्यूयार्कमें ५०६५८ विजलीके पस्त्रिन व्यवहृत हुए थे और १७६६६ मीटर पथ भी बना था। सिवा इसके वहां १६२१३ मीटर ट्रामपथमें ५८७३६ गाडी चल रही है। इसका मूलधन २०२३४१६६८६ पाँण्ड फिर यह मूलधन कम्पनीका कागज या जातीय ऋण ग्रहण कर एक वर्ष २०००००००० बढ गया। सन् १९०० ई० की ३०वीं जून तक न्यूयार्कमें रेल, ट्राम इत्यादि नाना तरहकी गाडियोंको कुल ४५३६०३१८ मील पथ तय करना पडा। इस वर्ष यूरोपमें ५०६२ मील पथमें विजलीकी गाडी चली। सन् १८६६ ई० तक निम्नलिखित देशमें विजलीके रेलपथ और मोटर गाडियोंकी फिहरिशत इस तरह है:—

ग्रेट ब्रिटेन	६००	२०००
जर्मनी	२३००	५४८०
अष्ट्रिया हङ्गेरी	१८०	२६१
बेल्जियम	१२०	२००
स्पेन	१६६	१४४
फ्रान्स	८००	१०००
इटली	२३५	३१८
स्वीजरलैण्ड	२५०	३३०

लाइट रेलवे।

सन् १८६६ ई०में पारलिमेण्टकी आज्ञासे ग्रेट ब्रिटेन-में विजलीकी छोटी रेलें चलने लगी हैं, तबसे नाना स्थानोंमें रेलपथ बन गया है। इस रेलका गेज ढाई फुट है। किन्तु फिर अनेक लाइट रेलपथ तैयार हुए हैं। यूरोपसे प्रायः सभी देशोंमें लाइट रेल फैल गई है। भारतवर्षके नाना स्थानोंमें भी ऐसी रेलें दिखाई देती हैं।

पहाडी रेलवे।

जो रेलपथ समतल भूमिसे पहाडके उच्च प्रदेश तक बनता है, उसे पहाडी रेलपथ कहते हैं। एक हजार फुट

पथ तय कर यदि काह रैनपथ ३० फुट ऊपर चढ़ना है, ता उस पहाड़ी रैन चढ़त हे चर्चान पैसी रैन प्रति हजार फुट पर ३० फुट ऊँचा चढ़ना है। यह रैनपथ मो होम मार्गोमें विभक्त है:—(१) कमल उध या क्रम न निम्नकास ऊपरका मोर वा उध स्थानक गाचका भार बना साधारण रैनपथ। इसको 'पेडहिलेन' रैन चढ़त है। (२) Rack रैनये अगान् चढ़ाण पथ शरारत शानदार कया रहता है। गाडोके चपकेम भा हाँत हाँत हैं। ऊपर चढ़नक समय गाडोके चपकका शान पथके हाँतमें मिल् कर गुड जाता और थुक जाता है। इस तरह पकक बाढ़ एक हाँत लगना जाता और सुटना जाता है। इस तरह रैनके ऊपर चढ़नेमें नाथ गिरनका उर नहीं-रहता है। रैनरैनपथ समतल स्थानोंमें साधा तरहस रैनका तरह मो बनता है। (३) Cable रैनपथ:—यह पथ कुड हाँतका तरह कया रहता है। एक छोट ट्रेड सोहक रूपमें हाँत कया रहता है पीछे उसीका तरह हाँतगुड चका हाँतोंमें मिल् कर ऊपर चढ़ता है।

जहाँ प्रति ४० फुट १ फुट उध पथ है, वहाँ रैन रैन थपहन होता है। रैनरैन १००० फुट पर २५० फुट ऊँचा चढ़ सकता है। इसमें अधिक उठना इस रैनका क्षमतास बाहर है।

माउण्ट वाजिट्टन और रिजा साइन नामक रैन रैनपथ बन जातक बाढ़ माना गयासोमै इसी कायुध पर रैन रैन नैवार हो रही है। कुछ रैनके हाँत पक्कावत बना है। किन्तु कमल लकार नैवारस नामक रैन रैनमें सीध हाँतका व्यवहार किया है। यह पथ गूटगोमें भूय स्थानाव है। इस पथ पर गाडो समझाव किन्तुयक कपका तरह यह भावक चढ़ता है अर्थात् यह पथ प्रत्येक १००० फुट पर ४८० फुट ऊँचा चढ़ता है। बिना किसी रैनपथमै हाँती और साधारण रैन बेडाा गर है। फिर भा, मध्यस्थानमें एक नया रैन रहता है। इसके ऊपर गाडो मजबूतान ऊपर चढ़ती है।

अबट (११) नामक रैनपथमें गाँडो गाडो हाँतके ऊपर चढ़ता है। इस रैनपथ पर ३ रैन

बिछाए रहता है। इसमें दो चिकनी और एक रैन पा गया रैन। रैन रैनपथमें सुरङ्ग गाँडो रहनेस बडो अनुविधा रहता है।

इस समय पहाड़ी रैनपथ पर बिजलीका मोटर बन् रहा है। सबसे पहले यार्मनक पार्थेय रैनपथ पर बिजलीकी मोटर गाडो चलन लगी। इस पथकी ऊँचाई प्रति सहस्र १८५ है। इसक बाढ़ माउण्ट नामक स्थानमें यह मोटर चलन लगी। इस समयकी ऊँचाई प्रति सहस्र २५० है। ब्राय्न नामका पहाड़ी रैनकी ऊँचाई प्रति सहस्र २५० है। इस पथस रैनगाडो उपरिस्थित बिजलीक तारक स योगस तबाल हाँडता है। कलकत्ती बिजलीकी ट्रान्जिस्मिटीय द्वारा बिजलीस स्वरा करत बनाया जाता है, उसी तरह प रैन भा चलाए जाती है। गूटगोमें जितना पहाडो रैन है उतनेमें ब्राय्न रैनपथ प्रति भङ्गुत तथा विस्मयजनक है। इसक अधिकतम पथ सुरङ्गवार है। प्रति हजार फुट पर २५० फुटकी ऊँचाईस आरम्भ कर यह ५००० मिटर या १ मील ऊँचाई तक गया है। यह पथ बीचमें १४ मील चित्तुवारको पार कर ऊपर गया है। इस पथके चारों ओर विमापिकामयी तुपारमयी मोवयेमस प्रगहित हो रही है। इस अन्वयमें नैवगिक विधायक शीन मनुष्यकालिं माना प्रतिक तुपाध्यय महदासका परिहास करतो हुए किमा अन्विश्य स कनास अन्तों का अन्वयतीक साथ न वाग करवक किये हीये है। इस सब पहाडो रैनो पर १० भावमान अधिक मात्रा नहीं चढ़ सकत और इस पर मात्र १ टनमें अधिक बाकार नहीं किया जाता। गाडो चढ़नेमें १मे ८ मील तककी रैनतारस जाता है। जहाँ रैनपथ बिजलुय चढ़ा है, वहाँ पक चपकम चित्रन ना लगाया जाता है।

रैन और कपम रैनपथ बनानमें बहुत व्यय चढ़ता है। एक हजार मत्र पथ बनानमें ३००० पाउण्डस ३२००० पाउण्ड तक व्यय हो जाता है। मत्र १८१७ १०क अन्वयमें मात्रा गूटगोमें ३१ मान तक हा रैन रैन पथ।

कपम या रैननाक महारे चलनवाता रैन हाँत तरह का है—

(१) लम्बी रस्सी द्वारा बराबर ऊँचे स्थानमें गाडिया चढ़ती है। अर्थात् रस्सीके दूसरे छोरमें मोटर एंजिनकी शक्तसे गाडिया नीचे ऊपर चढ़ती है।

(२) रस्सीके दोनों छोर पर गाडी सलग्न रहती है। एक उतरती रहती है और दूसरी ओर चढ़ती रहती है। इसी निम्नोक्त प्रणालीसे अधिकांश पहाड़ों पर केंचल रेलगाडी चरती रहती है।

पहले इन सब उद्घूर्णगामी गाडियोंके यात्री गाडी पर चढ़ने और उतरनेमें झिलने डोलने थे। अर्थात् कभी कभी गिर भी पड़ते थे। किन्तु इस समय गाडियां इस तरहके कौशलसे बनाई जाती हैं कि गाडीमें चढ़ने और उतरनेमें यात्री जरा भी विचलित नहीं होते। ठीक तौर पर बैठ सकते हैं।

केवल रेलपथकी ऊँचाई रेलरेलपथसे बहुत अधिक हुआ करती है। अर्थात् प्रति हजार फुट पर ६५० फुट ऊँचा होता है। इन गाडियोंमें ३२से ४८ यात्री बैठ सकते हैं। ऐसे एक हजार गज पथ बनानेमें १०००० पाउण्डसे ३०००० पाउण्ड खर्च हुआ करता है। किन्तु ये सब पथ बड़े ही विगलनक हैं। बीच बीचमें वेगवती तुपार नदीके चलाये बड़े बड़े पत्थरके ढोके गिर कर रेलपथ या रेलवे मुसाफिरकी नष्ट भ्रष्ट कर देते हैं। चिरनीदारह-सीमान्तवर्ती रेलपथोंमें विपद्की आशङ्का सबसे अधिक है। कई बार इस तुपारस्रोतसे रक्षा पानेके लिए बड़े बड़े इन्जीनियरोंने बड़ी बड़ी चहारदिवारिया उठाई थीं और जहा तुपारकी अधिक सम्भावना है, वहा पहाड़ोंमें सुरङ्ग खोद कर उसमें रेलपथ बनाया है। कोई कोई सुरङ्ग ३४ कोस लंबी होती है। इस प्रबल शिखरका सुरङ्गदार पथ चियुत् प्रकाशसे प्रकाशित किया जाता है। इस समय शिक्षा और सभ्यताके विस्तारके साथ साथ पहाड़ी रेलपथका फैलाव भी बढ़ रहा है। इस समय पृथ्वीके जिस जिस स्थानमें पहाड़ी रेल है उसका सक्षिप्त विवरण इस तरह है:—

आडहिसन लाइन या ऊपर चढ़नेवाली क्रमोच्च रेलपथ।

स्थानीय रेलका नाम	रेलपथकी लम्बाई	क्रमोच्चके अनुपात से फुट	प्रतिमील लम्बाई	प्रतिमील पर खर्च पाउण्ड
सिद्धलकी काडुगानव रेल	१२	१	४५	अज्ञात

सेण्टगथाड पार्वत्य रेल	३६	१	३७	६८८७३
दार्जिलिङ्ग हिमालय रेल	४०	१	२८	४५७५
वेनेजुइलर काराकस	२३	१	२७	२५०००
मेक्सिको रेल	१४	१	२५	अज्ञात
पेरु की रेल	१००	१	२५	३१६६०
स्वीजरलैण्डकी मूडस्त रेल	७	१	२५	१०४५३
लण्डन क्रोयार्ड	१३॥	१	२०	११५२०
भाउन कडकस	५	१	२२	अज्ञात
पेन्सिलवेनिया	१४	१	१६	अज्ञात
ब्रेजिलकी काण्टागेलो	६॥	१	१२	२००००

रेलपथकी फिहरिगत।

रेलपथकी

स्थानीय रेलका नाम	लम्बाई मील	क्रमोच्चके अनुपातका फुट	प्रतिमील पर खर्च पाउण्ड	
ब्रानसुईकी हर्ज रेल	४॥	१	१६	१०४५८
वोसनियामोष्टर	१७	१	१६	अज्ञात
प्राइरियर डसेनार्ज	६	१	२४	४५१६०
सुमात्राकी पाडा रेल	१६	१	१२	११४००
स्वीजरलैण्डके जर्गट	४	१	८	७१५०
इङ्ग्लैण्डके स्नोडेन	४॥	१	५॥	११५५०
कलोरडोपाइकसपीक	८॥	१	४	११४०६
स्वीजरलैण्ड रथन	४॥	१	४	१७६८४
मिजूहानरिश्न	४	१	४	२६२०६
अष्ट्रियाका सालजवर्ग	३॥	१	४	१६८४०
वेङ्गेरनाथप	१०	१	४	१००४०
अष्ट्रियाका स्काफवर्ग	३॥	१	२	अज्ञात

स्वीजरलैण्डदेशके आल्पस पर्वतमें सबसे अधिक याक (Rack) और तार (Cable) रेलपथ निर्मित हुआ है।

केवलरेलका नाम	लम्बाई गज	प्रतिहजार फीटकी ऊँचाई	समुद्रसे फीट	प्रतिमीलमें खर्च पाउण्ड
वीटनवर्ग	१७५०	४००	३६३६	१६४००
विपल्मागलिङ्गेन	१७७७	३२०	२८८४	१५३००
वदर्जेनष्टक्	६०४	५७५	२८८०	८६००
न्यूसाटेल	४०२	३७०	१८०८	६७००
जिसब्यच	३५०	३२०	२१७५	५०००

खुसार्न	१५५	५३०	१०००	२८००
खुसामी	११२०	११३	१५५५	१२१३००
खटाखुनेन	१३२०	६००	४८०२	२८४००
खुगानो	२६०	२३८	११०३	६४००
माझिखो	११०	३०२	१०७२	२०००
स्वानमरोर	१९४८	६००	२८६४	२२२००
खिनेक	१३४०	२६०	२२०५	११५००
रेटिरेटिगिडेन	६०५	५४०	२२६१	१०४००
जुरिचवर्ग	१०८	२६०	१४८०	३४००
रेगज	८३३	६०४	२३१६	८८००
पंजाहन	३३६६	६२०	३०६३	४०६००
कसोनेनाए	१३३४	१३०	२२२२	१५२००
सण्टगामेनमुखेक	३४०	२२८	२४३०	१००००
खसखारखुरिष	८८३	१०३	१०३४	११३०

उपयुक्त रेलवेय मनुष्योंक शिष्टाविधानक मजत कीचित्तमम है। पहाड़ी रेलवेयोंमें मुदेन नामक पथका जेपेठक या उपत्यकाक उपस्थित प्रस्तरप्रथित प्रकाश गथाई मजत शिष्टाकीर्तिका परिषय है। यह रेलगाड़ी प्रायः कई पहाड़ पर सीपी चढ़ जाती है। जाम्बोरकी बात पहले कहा जा चुकी है। सिवा इसके पिछारस, भूमिग भीड़ स्वाकनेदरक पर्यतगात्रमें ऊधुचगामी पथ चढ़े ही विस्मयजनक है। पृथ्वीमें ये मनुष्यनीय पथ हैं।

भारतीय रेलवेय।

सन् १८४५ ई०से पहले माछाप रेलवेयकी कल्पना किसी इन्जिनियरके मस्तिष्कमें नहीं उत्पन्न हुई थी। आधो शताब्दिमें ही रेलके प्रचारमें युगांतर उपस्थित हुआ है।

जा ही, प्रासंगिक और काञ्चिासका पुण्यकरय कल्पना कल्पमें निवास करे। अब भारतवासा रेलगाड़ी पर चढ़ कर पीथप्रसूत पुण्यीपचय क्षर्गमें जाते हैं। अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, काञ्चो, अमनिका, पुरो, धारवती मादि मोक्षदायक महातीर्थोंमें भारतवासी धनायास ही भा जा रहे हैं। रेलगाड़ी ४४ घण्टेमें कसकसेसे सिवाय पर्याय पर जा कर काञ्चनजङ्घा शिखर पर काञ्चनकायोका अर्पण दृश्य देख रहे हैं।

वङ्गोपसागरक निकटक कमकसेसे चल कर ४३ घण्टेमें अरकसागरक समोपके बर्मा नगरमें जोग पहुँच जात है। ३० घण्टेमें काक्यास कन्याकुमारी, ५० घण्टेमें लक्ष्मी या नदियासे मीमिधारण तक आया जाता है।

सात छोड़े रथ पर चढ़ सूयके उद्याचरस अस्ता चल जात न जात सात सौ घोड़ोंकी शक्ति रफनेवाही गाड़ी पर चढ़ कर पाखोपुन (पदने) से पुरोचाम जोग पहुँच जाते हैं। रेलवेयके छोड़ेका जाळ लू, लू, भोज, पर्यत और मरुमूमि वन, ज गज भादि समोकी पार कर भारत मरत फैल रहा है। कल्या गोदावरी, सिन्धु, कावेरी, सट्यू, सरलती यमुना, गंगा—लौहमयी मेलावा पहल कर मानो मर्मवेदगाकी पाठनाको कम करके छिये कळ-कळ ध्वनि तथा छल-छल मैत्रोस धारिनिधि पान करत खजे हैं। सुगहदय भारतवासी अगैरोंक विम्बहमबिदमित शिष्टाविधानक कक्षाकीसकका देख मन्त्रोयधियशरीर सपको तख बैठे हैं। मातूम होता है, कि मयदानयक पक्षपरोका बिजकुच निर्मूल हो गया है। पुरोवनका मो सञ्चाल नष्ट हो गया है। भारतीय कथियोमें भूमगम विम्बहमाकी गिरणशाकाकी खुरि को है। किन्तु भारतमें जोर झुकीपरप्रापैदा ही न हुआ, कि भारतीय को पाठानमें जानेका पथ बतजा देता। इसीछिये भारतीय फर्सीयपथसे बिच्युत हुए हैं। इसीसे ये वैदेशिक विम्बहमाकी शिल्पकछामें जा रहे हैं। इन्सैरइमें अब स्वामय, न्यूकामेन, ट्रेमिपिड, सेम्स वाइ और जाळ डीफेनशन भादि भुवन विषयात इन्जिनियर पृथ्वीमें युगांतर उपस्थितकारी पञ्चजनक कळ कीछाक अनुप्यानमें रत थे तब बयिमपुनित्वे कुशाकसे इष्ट इच्छिया कल्पनी काम गुणाकगिणी भारतभूमिकी सङ्कषारोमें वृहत्क छिये वर्षोंसे मनुसन्धान कर रही थी। सबसे पहले १८४१ ई०में सर मेकडोनाल्ड डीफेन शन नामक एक व्यक्तिके मस्तिष्कमें भारतमें रेलवेय प्रचलनका सङ्कल्प उदय हुआ था। किन्तु १८४४ ई०की २ती दिसम्बरके पहले उन्होने अपने छिके बिबरणमें प्रकाशित नहीं किया है। सन् १८४४ ई०की ८वीं मयम्बर को 'मिसरल इन्डर एण्ड बरैट' नामक एक बणिक् सम्प्रदाय ने 'मैट इन्डियन रेलवे कम्पनी' नाम रख कर पक्षिण

भारतमें बम्बईसे गोदावरीके किनारे करिष्ठा नामक स्थान तक रेलपथ विस्तारके लिये अंगरेज सरकारसे आवेदन किया। उनके संकल्पित रेलपथ बम्बईसे भारतके चारों ओर दौड़ेगी, ऐसी भी उसकी प्रार्थना थी। किन्तु इस कम्पनीकी प्रार्थना सरकार द्वारा स्वीकृत न हुई। इसके बाद ही मिष्टर मेकडोनाल्ड प्रीफेनशन और सर जी लपेट्टने अंगरेज-सरकारको समझाया बुझाया कि भारतमें रेलपथ न खोलनेसे भारतीय कामधेनुको दुहनेकी सुविधा नहीं हो सकती। वाणिज्यकी सुविधा के लिये ब्रिटिश-सरकारकी कुछ सभमत हुई।

सन् १८४४ ई०की २री दिसम्बरको मेकडोनाल्ड प्रीफेनशन इष्ट-इण्डिया रेलवे कम्पनी नामक नये प्रतिष्ठित सम्दायके कार्याध्यक्ष नियुक्त हुए और डिरेक्टरों को इस मर्मका पत्र लिखा, कि यदि आप लोग अन्ततः लैकडे ४) रुपया सूदकी गराण्टी या प्रतिभू हों तो रेल कम्पनी मूलधन संप्रद कर सकेगी। सन् १८४४ ई०की १३वीं दिसम्बरको उन्होंने पत्र लिखा, कि डिरेक्टरोंकी गराण्टी पाने पर सीदागर रुपया देनेमें कुण्ठित न होंगे। अतः शीघ्र ही रेलवे कार्य आरम्भ होगा।

अन्तमें १८४५ ई०में २०वीं जनवरीको इष्ट इण्डिया रेल कम्पनीकी नई प्रतिष्ठित कमिटीमें डिरेक्टरों ने इस मर्मका पत्र भेजा, कि हम लोग दश लाख रुपयेका ३) रुपया लैकडेके हिसाबसे गराण्टी देंगे। किन्तु रेलपथ पहले मिर्जापुरसे इलाहाबाद तक १४० मील तैयार होगा, इसके बर्चके रूपमें ३०००० पाउण्ड निश्चित रहेगा। डिरेक्टरोंके पत्रकी दो चार पंक्तियां नीचे उद्धृत की जाती हैं*।

अन्तमें १८४५ ई०की ७वीं मईको इङ्ग्लैण्डके डिरेक्टरों ने भारतवर्षके गवर्नर जनरलको रेल कम्पनीके सम्बन्धमें एक पत्र लिखा—“Which is the first official recognition of the desirability of railways for India” यही भारतमें रेलसंक्रान्त सरकारी पहला पत्र है। रेल कम्पनीके उस समयके विवरणमें

देखा जाता है, कि भारतमें चढ़नेवाले न मिलेंगे। मालसे ही जो कुछ लाभ हो सकता है, होगा। जो हो, पहले डिरेक्टरोंने इसका अनुसन्धान मिष्टर सिम्स सी, आई, ई० नामके एक सुदक्ष इन्जिनियरसे कराया, कि भारतमें रेल चल सकती है या नहीं। वे सन् १८४५ ई०की सितम्बर महीनेमें भारत पधारे। उन्होने अच्छी तरह जाच पड ताल कर डिरेक्टरोंके पास एक पत्र भेजा। पत्रमें लिखा गया—

“अङ्गरेज गवर्मेण्ट रेल कम्पनीको जमीन खरीद देगी। सरकार रेलवे आमदनी और रपतनी पर कर न लगायेगी। कलकत्तेसे दिल्ली तक रेलपथ तैयार करनेमें सात वर्ष लगेगे। रेलकम्पनी कम किरायेमें सरकारी डाक और अन्यान्य चीजें पहुँचाया करेगी। रेलकम्पनी एक आदर्श रेलपथ तैयार करेगी।” इसी तरह विस्तृत मन्तव्योंके साथ यह पत्र भेजा गया। सन् १८४६ ई०की द्वाँ फरवरीको यह पत्र इङ्ग्लैण्डमें पहुँचा। १३वीं मास को इन्जीनियरोंका विवरण सरकारके पास दिया गया।

इसके बाद मिष्टर सिम्स कप्तान वडलो एवं वेष्टन नामक इन्जीनियरोंने एकवाक्यसे गवाही दी, कि इङ्ग्लैण्डमें जिस तरहसे रेलपथ तैयार हुआ है, भारतमें भी उसी तरहका रेलपथ तैयार हो सकता है। इन इन्जीनियरोंने डिरेक्टरोंको युक्ति द्वारा उनकी आपत्तिका खण्डन किया और कलकत्तेसे मिर्जापुर तक रेलपथका एक आदर्श प्रस्तुत हुआ। इसी आदर्श पर रेलपथकी पूर्वो सीमाका स्टेशन कलकत्ता निर्दिष्ट हुआ था। इसके बाद यह निश्चय हुआ, कि रेलपथ गङ्गाके बायें किनारे होते हुए कुछ दूर जा कर बर्द्धमानके निकट गङ्गा पार कर दक्षिण किनारे हो कर सीधा काशी जायगा। वहाँसे मिर्जापुर जायगा। इसकी एक शाखा बर्द्धमानसे राजमहल, दूसरी शाखा गया, पटना और दानापुर जायगी। इसके अलावे दिल्ली और मिर्जापुरसे अन्य चार शाखाओंके खुलनेकी भी बात ठहरी।

१ कानपुरसे फर्रुखाबाद, २ आगरेसे अलीगढ़, ३ दिल्लीसे मेरठ और ४ करनालसे सिमला तक।

पीछे यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ कि पहले पहल कानपुरसे इलाहाबाद या वारिकपुरसे कलकत्ता तक एक आदर्शपथ तैयार किया जाय। उस समय लाडें हार्डिन्ग भारतके गवर्नर

* ‘To encourage the introduction of railways into India and on the condition that the bonus should be withdrawn when the railway net profit exceed 3 per cent upon the outlay of one million’

मैंर जमरळ और सर इर्वंड मेडक, कनरेबळ पफ, मिसेड और सी, एब कोमारन राजसखिब ये । उस समय भारतकी राजधानी कलकत्ता थी । इससे झांडे हाडिड कलकत्तेमें ही रहते थे; किन्तु भीष्मका समय होनेस ये उस समय कलकत्ते न थे, अतः सर मेडक रेखव म्पनी के प्रस्तावकी आलोचना करन लगे । पहले मिष्टर सिम्सने अपने सब प्रस्तावों की उक्त मन्त्रियोंके मनमें बैठकके लिये डिरेक्टरों के पास युक्ति प्रमापके साथ पत्र भेजा । उन्होंने ओइसी भाषामें दूर दृष्टि द्वारा लिखा दिया था, कि पहले परोक्षाके लिये रेख-कम्पनी ज़ीम ही बड़े पयका सूत्रगत करे । कम्पनी कमी भी इतिप्रव

न होगी । सन् १८४३ ई०की २५वीं मईकी मेडकका यह प्रस्ताव डिरेक्टरी के पास पत्र का और इसकी एक अनु लिपि सिमसा प्रवासी गवर्नर जनरलके निकट भेजी गई । झांडे हाडिडने मेडकके प्रस्तावको इवपने समपन दिया । उनक पहले कई पत्रिकां उद्युत की जाती हैं । उन्होने डिरेक्टरों को लिखा—भारतमें रन हो जानेसे कम्पनीके लिये सब तरहकी सुविधा और अङ्गरेभराज को नौव मजबूत होगी ।

सन् १८४१ ई०में इस विषयको छे कर पांडियामेबर में पीर आन्डोलन उठ कड़ा हुआ और अक्टोबर महोत्तमें डिरेक्टर-समासे निम्नलिखित मन्तव्य पढ़ द हुआ ।

डिरेक्टरोंका मन्तव्य ।

पयका शिष्टे विवरण ।

उत्तर ।

- | | | |
|--------------------------------------|---|---|
| (१) इष्ट इण्डिया रैल-कम्पनी | कलकत्तेसे मिर्जापुर तक पोछे दिल्ली तक विस्तार । | राजमहल, परना, दामापुर, काशी, कोयलेकी खान, मेरठ । |
| (२) ग्रेट इण्डिया पेनिनसुला | बम्बसे कर्गुा । | भीरङ्गाबाद, भागपुर, ईदराबाद । |
| (३) ग्रेट वेष्टर्न भाग बङ्गाळ | कलकत्तेसे राजमहल । | |
| (४) कलकत्ता डायमण्ड हारबर | कलकत्तेसे अजमेर तक विस्तार । | |
| (५) कलकत्ता और ग्रेट वेष्टर्न बङ्गाळ | कलकत्तेसे मुर्शिदाबाद और मगधान्गोळा । | माडबद, रङ्गपुर और दिनाजपुर तक विस्तार । |
| (६) कलकत्ता बारिकपुर | बम्बसे बारिकपुर । | |
| (७) इाईरैङ्ग-मार्शन | कलकत्तेसे मगधानगोळा । | राधाघाटसे कलारोपा, कृष्ण नगरसे कृष्णगञ्ज, काशीपुरसे बारासात । |
| (८) ग्रेट नार्थ इण्डिया | इलाहाबादसे दिल्ली । | मिरजापुर काशी, मेरठ नादि । |
| (९) दिल्ली लुधियाना | दिल्ली, मेरठ, लुधियाना । | |
| (१०) मन्नाज रेन-कम्पनी | मन्नाजस धान्नाजाधगर । | भाकंद, बेन्दूर, बङ्गळोद, मधिसुर, कङ्गापा, यिल्लारी, ईदराबाद, जिजिनापळी नादि । |
| (११) मन्नाज, बन्दूर और भाकंद | मन्नाजस बेन्दूर, कङ्गापा । | ईदराबाद । |
| (१२) मन्नाज, परिडचेरो | | भाकंद । |
| (१३) बरह, भागरा, दिन्नी | बम्बसे सूरत हो कर दिन्ना, बड़ोदा ग्यालियर, रम्बौर । | मिजापुर, इलाहाबाद, तमदासे भूरान, उज्जयिनीसे खानपुर, भांसा, फर्रुखाबाद । |
| (१४) बम्ब सूरत बड़ोदा | | |
| (१५) इतिप मन्नाज | | |

भागपइतस बाराघाट और काशीकर

सन् १८४६ ई०के अक्टोबर महीनेमें डिरेक्टर-सभासे गवर्नर जनरलके दफ्तरमें जो मन्तव्य आया था, उसीमें उपर्युक्त फिर्देशित दी गई है।

इन सब पथोंमें उधर ५० वर्षोंमें इष्ट इण्डिया कम्पनी-ने केवल १, ३, ८, ६—ये चार पथ तैयार किये हैं। ७वां पथ सन् १६०५ ई०में खोला गया। इष्टर्न बंगाल प्रेस्ट रेलवे इतने दिनोंके बाद उस पुराने प्रस्तावकी कार्यरूपमें परिणत कर सकी है।

उस समय बङ्गालके इञ्जीनियरोंमेंसे लेफ्टेण्ट कर्नल फर्नेस नामक एक प्रतिभाशाली व्यक्ति थे। उन्हींके प्रस्तावानुसार पहले कलकत्तेसे मिर्जापुरके बीच हो कर दिल्ली तक रेलपथ निर्माणकी व्यवस्था हुई। पहले डिरेक्टरोंने रेलकम्पनीको ८६ वर्षकी मीमांदा पर रेलपथ बनानेका हुक्म दिया। किन्तु उस हुक्मनामामें यह भी लिखा था, कि सरकार यदि सुविधा देखेगी, तो उसका अधिकार होगा, कि मीमांदा के मोहर भी क्षति पूर्तिकर किसी भी रेलपथको खरोद सकेगी और सेकडे, ४ रुपया सद् पर ५०००००० पाउण्ड ले सकेगी। यह भी स्थिर हुआ, कि प्रतिमील १५००० पाउण्डके हिसाबसे ३३३ मील पथ पहले बनेगा खर्च छोड कर जो लाभ होगा, उसे डिरेक्टर और रेल-कम्पनी आपसमें बाट लेंगे।

पीछे १८४६ ई०की १६वीं दिसम्बरको डिरेक्टरोंने यह मन्तव्य प्रकाशित किया और इस बातकी रचना इष्ट इण्डिया कम्पनी और ग्रेटब्रेष्टर्न रेलवे आफ बङ्गाल कम्पनीको दे दो। सन् १८४७ ई०में दोनों कम्पनियोंने एकमें मिल कर इष्ट इण्डिया कम्पनी नाम रख लिया। सन् १८४७ ई०की १८वीं अगस्तको इस कम्पनीने कलकत्तेसे दिल्ली तक रेलपथ बनानेका दृढ़ संकल्प किया।

इसी समय डिरेक्टरोंने मन्ट्राजसे अर्काट और बम्बई-से कल्याण तक रेलपथ खोलनेका हुक्म दिया। ग्रेट-इण्डिया पेनिनसुलार रेलकम्पनीके सभापतिने डिरेक्टरोंके आशानुसार कार्य्य करना निश्चित किया और उन्होंने सन् १८४८ ई०की ६ठीं जूनको डिरेक्टरोंके प्रस्ताव पर अपनी सम्मति प्रकट की। कुछ दिनोंके बाद इष्ट इण्डिया कम्पनीने ६०००० और ग्रेट इण्डिया

पेनिनसुलार रेलकम्पनीने ३०००० पाउण्ड डिरेक्टरोंके पास भेजा।

डिरेक्टरोंने इस तरह अनेक वादानुवादके बाद सन् १८४६ ई०की २६वीं जनवरीको रेल कम्पनियोंको विशेष सुविधा प्रदान की। अन्तमें १८४६ ई०की १७वीं अगस्तको इष्ट इण्डिया कम्पनीने और ग्रेट इण्डिया पेनिनसुलार रेल कम्पनीने डिरेक्टरोंके प्रस्ताव पर हस्ताक्षर कर दिया। पूरे साढे चार वर्ष बाद विवाद चलनेके बाद भारतमें रेल प्रतिष्ठाका पक्का बन्दोबस्त हुआ। दोनों कम्पनियां रेलपथ बनानेमें बद्धपरिकर हुईं।

उस समय सरकारी इञ्जीनियर कर्नल केनेडीने अपने पहलेके इञ्जीनियरोंकी भूलोंका संशोधन कर एक बड़ी पुस्तक लिखी। भारतकी रेलोंके इतिहासमें कर्नल केनेडीका नाम अमर रहेगा। उन्होंने जो प्रस्ताव किया, वही कार्यमें परिणत हुआ।

कर्नल केनेडीने पहलेके इञ्जीनियरोंकी भूल दिखाते हुए कहा, कलकत्तेसे राजमहलके पहाड़ोंके बीचसे बनारस तक रेल ले जाना कठिन है। इसके लिये गङ्गा नदीके साथ समान्तराल रूपसे रेलपथ निर्माण करना होगा और गङ्गाके बायें किनारे रेलपथ बना कर चितपुर सीमान्त स्टेशन बनानेकी अपेक्षा गंगाके दक्षिण किनारे सीमान्त स्टेशन बनाना युक्तिसङ्गत होगा। इस तरह पश्चिमकी तरफ रेलपथका विस्तार करना अच्छा होगा। उन्होंने ग्रेटइण्डिया पेनिनसुलार रेलकम्पनियोंकी भूलें दिखालाईं।

इष्ट-इण्डिया रेलपथ।

इस कम्पनीने पहले कलकत्तेसे रानीगञ्जको कोयलेकी खानि तक रेलपथ बनानेका दृढ़ संकल्प किया। यह स्थान कलकत्तेसे १२१ मील है। इस समयके गवर्नर जनरल लाड उलर्हीसी रेलकम्पनियोंको विशेषरूपसे उत्साह देने लगे। सन् १८४६ ई०के अगस्त महीनेमें कलकत्तेसे रानीगञ्ज तक रेलपथका डीका होने लगा। इस कम्पनीके प्रधान इञ्जीनियर मिष्टर टान चुल १८५० ई०के मई महीनेमें कलकत्तेमें आ पहुँचे। सन् १८५१ ई०में कलकत्तेसे श्रीरामपुर तक जमीनका दाम और पथका स्थान निर्धारित हुआ।

मिष्टर सिम्सने डिप्लोमरो से प्रस्ताव दिया था कि ब्रिदपुर ही सीमांत स्टेशन होगा और वहाँसे गङ्गाके किनारे किनारे फोर्ट विलियम तक एक रेलपथ बनेगा। किन्तु १८५० ई०के अग्रिम महानेमे उन्होंने य संकल्प त्याग कर इधरके सीमांत स्टेशन बनानका परामर्श दिया और कहा कि बारिदपुरके निकट परताबादके समीप हुगली नदी पर एक बहुत बड़ा पुल बनेगा। पीछे उन्होंने काशीपुरके निकट पुल बनानेकी राय आहिर की थी। मिष्टर सिम्सने इन्जीन्यरके 'ग्रैंड गेज' और 'स्पारो गेज'के मध्यवर्ती ५ फुट ६ इंचके एक नये गेजका प्रवृत्त हार किया था।

कांडा टहराहीसीमे सन् १८५० ई०में बर्मस कम्पनीकी रजिस्ट्रार नियुक्त किया। पीछे इस जगह पर डबल ट्रैक आरम्भन केबरे नियुक्त हुए। सन् १७५१ ई०के जनवरी महानेमें बजटकेसे पाण्डुमा तक ४० मीलकी पैसाहण कतम हुए। इस स्थानमे उस समय एक बहुत बड़ा झूझ था। ओ हो, बजटकेसे हुगली तक इन पथके बिघे ठीका होने लगा।

मैसर्स एच. प्रो. एच. पल्लमस्ले नामकी कम्पनीने इधरके हुगली तक २१ मील पथ बनानेके लिये ठीका लिया। मैसर्स बम एच. कम्पनीने हुगलीसे पाण्डुमा— इस १० मीलो और मेमारोम वर्द्धमान तक १२ मीलोके रेलपथ बनानेका भार था ठीका लिया। इस तरह इधरके रानीगञ्ज तक १२ मीलोका ठीका हो गया। इधरके पहले ७० मीलका पथ ८००० पाउण्ड प्रति मासके हिसाबसे बुका दिया गया। यह भी स्थिर हुआ, कि ठीकदार तीन वर्षों में अपना अपना काम कतम कर देंगे।

सन् १८५३ ई०के अगस्त महानेमें ई० भाइ० धार० कम्पनीके प्रधान इंजीनियरने किये गये कार्पोरका विषय प्रकाशित किया। उसमें देखा गया, कि उस समय २६०००००० इंचोंस कम रास्ता बनानेमें काम न बनेगा। पहले रास्तेमें जमीनस मिटा काट कर फेंकी गई थी। इसमें २४ एकड़ जमीनको मिट्टी खर्चा थी। इस तरह २५३०००००० घनफुट जमीन व्ययहृत हुई थी। वर्द्धमान जिल्लमें बाढ़का भी बड़ा प्रबोध रहता है। इससे थोड़ी

सैकड़ों फुट और गधाईके काम हुए थे। बामोकी नहर, वैगवती सरस्वती, मगरा और बांका नदी पर पुल बनाने पड़े थे। इन कार्योंमें बहुत अधिक धन खर्च हुआ था। १०२६ गजोंमें पुल बनवान पड़े थे। पहले सभी स्टेशन मामूली तीर पर बने थे। धौरामपुर, बन्धननगर, बख्तमान—इन प्रत्येक स्टेशनोंके बनवानेमें १८६००००० खर्च हुआ था।

रेलपथ बनवानेका काम तभीस करने लगा। सन् १८५१ ई०के जनवरी महानेमें कार्पोरत्म हुआ और सन् १८५४ ई०के सितम्बर महानेमें पाण्डुमा तक ६० मीलो का पथ तैयार हो गया। सन् १८५५ ई०के फरवरी महानेमें कांडा टहराहीसीमे इधरके रानीगञ्ज तक १२ मीलोका रेलपथ खोला। इसके उपरान्तमें बड़ी धूमधामसे बङ्गुरेजो की गाडोंनपाटी मध्या उधान भेज दिया गया। बङ्गुरेजो इधरके गाडो खुलनके समय वहाँ उपस्थित थे। विन्तु यह वर्द्धमान नहीं आ सके। इससे यह कहना अत्युक्ति नहीं कि यह दिन बङ्गुरेजोके बिघे खिरस्तरभोय दिन था। इस दिन हथकड़ा, धौरामपुर, बन्धन नगर, हुगली और वर्द्धमानमें हजारों की तापदाहमें लो-पुठप बड़े तमाशा देखने लगे थे। जारो और घण्टे और शङ्खका ध्वनि तथा महा जनसमागम के कोसहस्रसे घरती गूँज उठी थी। उस समय बङ्गुरेजोने बिस्मयके साथ इस कीर्तुकेमें निमल हो मंत्रमो की इस कीर्तुकी मुग्ध भेला से देखा था। पहले बहुतरे लोग गाडोमें बङ्गुरेजा साहस नहीं करते थे। पीछे अग्रिकसे अग्रिक यात्री इस गाडो पर बङ्गुरे जगे। यह परिहवा प्रपनो अस्साइलें कार्य करन लगी। जोम हो रिती तक रेलपथका रास्ता तैयार हुआ।

किन्तु बगासक इस पथके तैयार होनेसे पहले ही मद्राज तथा बम्बईका रेलपथ तैयार हुआ था।

भारतमें सघर्ष पहले सन् १८५३ ई०के अग्रिम महानेमें प्रेरणितया वेनिनसुझार रेलपथ पर बम्बईसे टोल तक रेलगाडो चली थी। भारतके रेलपथोंमें प्रेरणितयन वेनिनसुझार रेलपथने अत्यन्त आश्चर्य निमायकीनक प्रवर्धित किया गया है। इस पथके बनानेमें उक्त रेलकम्पनान जिस तरह बध्ययसाय और

कष्टसहिष्णुताका परिचय दिया था, वह अकथनीय है। इस कम्पनीने सन् १८४५ ई०में कायम हो कर पश्चिम घाट पर्वतके ऊपर और भीतर रेलपथ बनानेका संकल्प किया था और उसके लिये सन् १८४५ ई०के मई महीने में उसने बम्बई सरकारके पास आवेदन किया। इस वर्ष उक्त कंपनीके कार्याध्यक्ष मि० जान चपमान और इंजीनियर मि० क्लार्क बम्बई आ गये और बम्बईसे नागपुर तक रेलपथका छाका तैयार कर सरकारके पास भेजा। बम्बईके अर्थर वन्दरके समीप चाचापेट नामक स्थानमें उसका स्टेशन कायम हुआ। शीघ्र ही क्लार्क पश्चिमघाट पर्वतकी पैमाइश करने लगे। यह पर्वत २००० फुट ऊंचा और बीच बीचमें गहरे गड्ढों और खादसे परिपूर्ण था। पर्वत पर पथ बनानेमें प्रति १८ फुट में १ फुट ऊंचा करनेके सिवा और कोई उपाय न था। सन् १८५० ई०में जेम्स बर्कल भी इस पथके इंजीनियर नियुक्त हुए और सन् १८५२ ई०में उन्होंने इस पथका आदर्श तैयार कर लाड डलहौसी और कर्नाल केनेडीको दिखा दिया। सन् १८५३ ई०की १०वीं अगस्तको यह आदर्श गवर्नर जनरल द्वारा अनुमोदित हुआ।

इसके बाद कप्तान कूफोर्ड अस्तामान्य कौशलताके साथ पथ बनानेमें लग गये। बम्बईके उस समयके गवर्नर लार्ड एल्फिन्सटन कम्पनीको खूब उत्साहित करने लगे।

बम्बईके बूडी बन्दरमें सीमान्त स्टेशन बना। बम्बईके चारों ओर समुद्रकी शाखाएं हैं। इसलिये बम्बईसे कल्याण तक रेलपथमें १११ और १६३ गज लंबे दो बड़े भयङ्कट बनाये गये थे। ये भयङ्कट ज्वारके जलसे ३० फुट ऊंचे थे। सन् १८५४ ई०की अठारहवीं अप्रैलको बंबईसे टाना और महीम तक रेल रानी और सन् १८५४ ई०की पहली मईको कल्याण तक चलने लगी। कल्याणसे कसारा एवं कसारासे इगाटपुरः स्टेशन तक पहाड़ी रेलपथमें अपूर्व निर्माणकौशल दिखाया गया है। इस पथकी दो उपत्यकाके पुल १२४ और १४३ गज लंबे हैं। नीचेकी खाद १२७ और १३० फुट गहरी है। इसके ऊपरमें अपूर्व पत्थरोंकी नैयाई बनी हुई है। इसके सिवा ११७ काठमर्द तथा ३० फुट गर्वाई ४४ पत्थरके

पुल हैं। इसके बाद रेलपथ पर्वतोंको काट कर सुरङ्ग बना कर आगे बढ़ा है। पहली सुरङ्ग १३० गज लम्बी है। इसके बाद ही एक भयङ्कट १४३ लम्बा और ८४ फुट ऊंचा तथा दूसरा ६६ गज लम्बा और ८७ फुट ऊंचा है। यहा ४६० गज लम्बी एक प्रकाण्ड सुरङ्ग है— इसके बाद ३ सुरङ्ग २३५, ११३ और १२३ गज लम्बी और ६० फुट ऊंचा एक भयङ्कट है। इसके बाद एहिप्राम नामक अपूर्व भयङ्कट। यह २२० गज लंबा और उपत्यकासे २०० फुट ऊंचा है। इस बड़े पुलके बाद ४६० और ४१२ गज लम्बी दो लंबी सुरङ्ग और ७० और ५० गज लंबी दो सुरङ्ग बनी हैं। इसके बाद और भी ३ सुरङ्ग यथाक्रम २६१, १४० और ५८ गज लंबी हैं। इसके सिवा इस पहाड़ीपथमें और भी १५ पुल बने हैं। इसी तरह इस दुकह विपद्संकुल दुर्गम सहाद्रि-शिखर पर रेलपथ बना है। इन सारे सुरङ्गोंके बनानेमें १२४१०००० घनफुट पत्थरकी कटाई हुई है। इस पहाड़ी पथकी लम्बाई केवल ६ मील है। सन् १८६१ ई०की २२वीं जनवरीको इस सहाद्रिशिखरके सुरङ्गदार रास्तेसे पहले पहले वैलगाडी चली थी।

इसके बाद यह पथ भोशावाल जङ्गल तक जा कर एक शाखा नागपुर और अन्य शाखा तातो नदीको पार कर प्रकाण्ड खानदेशके बीचसे विन्ध्याचलके नीचे नीचे विशीर्णा नर्मदा नदीके किनारेके जबलपुर तक गई है। यहा यह लाइन इष्ट इण्डिया कम्पनीकी रेल-लाइनमें मिल गई है। सन् १८५५ ई०में इष्ट इण्डिया कंपनीने वर्द्धमानसे राजमहल तक रेलपथ बनाना आरम्भ किया। पहले वर्द्धमानसे मयूराक्षी नदीके किनारे तक ४५ मील की पैमाइश हुई। मिष्टर टार्नबुल इस पथके पहले इंजीनियर थे। उन्होंने शीघ्र ही राजमहलसे इलाहाबाद और इलाहाबादसे दिल्ली तक रेलपथकी पैमाइश की। यह पथ ६७॥ मील है। मयूराक्षी पर पुल बना। इसमें ५० फुट लंबे २४ स्तम्भ हैं। अजय नदके पुलमें २० फुट लंबे ३२ स्तम्भ हैं। सन् १८५६ ई०की २०वीं जुलाईको लिष्टर टार्नबुल पंजिन पर चढ़ कर अजय और मयूराक्षीको पार कर संधिया उपस्थित हुए और ३री सितम्बरसे पसिञ्जर (यात्री) लेने चलने लगीं। इसके बाद

झारका नदी पर ६० फुट लंबे ७ स्तम्भोंका एक पुन बना । इसका बाढ़ झाझपी नदी पर भी एक प्रकाश पुन बना । अन्तमें सन् १८६०के अक्टूबर महानेमें छाई कनिङ्क-क समयमें बहमानसे राजमहल तक गाड़ी जाती । कर्माख येकर भीर मिथर रनपुखका सोनका एक एक पक्क पुस्तकार मिला भीर दूसरे कर्माचारियो ने टीप्य पक्क पाया ।

राजमहलसे यह पथ भागमपुरकी भीर अमसर हुआ । छाई केनिङ्कके समयमें सन् १८५१ ई०के अक्टूबर महानेमें इन पथ पर रेलगाड़ी चली । इसका बाढ़ यह पथ मुहुर होते हुए पटना तक गया । इस स्थानमें मुहुरेक निहर ६०० फुट लम्बी एक सुरङ्ग खोदनी पड़ी है । इस सुरङ्गके अन्तमें बहुत समय लगा था । हर महानेमें केरन चर कुदकी खुदाई होती थी । यहासे बचन तक रेलपथमें गाँगाके अन्तयेक निवारणार्थ कुल २१०० स्तम्भ बन हैं । इस तरह पथ पटनेकी भीर अमसर हुआ । इस समय १८५७ ई०की १५वीं जूनकी बगानपुरका सिपाही विद्रोह हुआ । इस कारणको "सन् १८५७ का गहर कहत है ।" भारत में इन बरयेकी भाग यारों भार फैल चुकी थी । कु पर सिद्ध नामक एक आदमीने रेल कम्पनीको पिथर धृति पहुँचाई थी । उन्होंने कर्मनाशा नदी पर बने पुनका अधिक भाग टाड़ डाला था । इस कारणसे रेलकम्पनी का ४२०००० रुपयेका मुकसाग हुआ था । इसका बाढ़ ही प्रसिद्ध सोन नदीका बिठास पुन बना । यह उस समय पूष्कोमें अद्वितीय पुन गिना गया था । यह १५७७ गज अर्थात् प्रायः १ मास लम्बा है । १५० फुट लम्बे इसमें ३८ स्तम्भ हैं । पहले रेल कम्पनीकी सोन नदी पर पुन बानेका साइस नहीं होता था । पोछे मिथर रनपुख भीर बकरने इस खुदाईसिद्ध काममें हाथ लगाया । सन् १८५६ ई०का इस पुनका कार्य आरम्भ हुआ । इस पुन को नाथस रेलपथ ४३ फुट ऊँचा है । यह पुन ४७३१ फुट लम्बा है ।

अन्तमें सन् १८६३ई०के फरवरी महानेमें छाई एक विनने कलकत्तेस काशी तक ६१० मीलक रेलपथमें रेल खोदनेका आरंभ था । लैकड़ी बहानी दिव्य पन्थो, गया

बादि तोषीलोका दर्शन करने लगे । उपरके अंगोके छिये कलकत्ता माना सहज ही गया । सन् १८६६ ई०में १५ गाण्डियों अन्तपरत चलने लगी । प्रति घंटाईमें प्रति मील पर ६०० रुपयेका काम होने लगा ।

इस तरह रेलपथ क्रमशः यारों भीर फैलने लगा । इसका बाढ़ इलाहाबादका यमुना पुन बना । यह ६५७ गज लम्बे और १०५ फुट चौड़े १७ स्तम्भों पर अर्थास्थित है । यहाँ मङ्गल-यमुनाका पबिल सङ्गम है । इस पुनके एक एक छोड़ेकी कड़ियाँ २१६ फुट लम्बी हैं । सन् १८५९ ई०की रक्षा अगस्तको कलकत्तेसे रेलगाड़ी इस पुनसे भागरा तक चोड़ाई गई ।

इसका बाढ़ विसोमें पबिल-सखिजा यमुना पर ८२० गज लम्बा अर्थात् भाषा मील चौड़ा एक पुन बना । इसमें २०६ गज चौड़े १५ स्तम्भ द ।

सन् १८६५ ई०में बहमानसे अकोसराय तक काई लाया या सोबा रेलपथ बनानेका प्रस्ताव हुआ । पहलेका बना रेलपथ ३२७ मील ल बा है, किन्तु यह नया काई झारखी पथ २६० मील ल बा हुआ । यह झारख ३६ छोपडेकी अन्तोंक बोधस गई है ।

इसके बाढ़ इट इण्डिया कम्पनी यारों भार आबा प्रशासक रूपमें रेलपथका फैलाव करने लगे हैं । इस तरह भारतमें रेलका जाल बिछ गया है ।

इधर बंगाल रेलवे ।

छाई इलहीसीके प्रद्वारेण पर अधिकार करनेक बाढ़ यहाँ कलकत्त स रेल खनाई आनेकी संख्या होने लगी । सन् १८५२ ५३ ई०में इस आरंभका खूबवात हुआ । सन् १८५४ ई०में सेपलेण्डे मे उहड़ भाद, ६, कलकत्तेसे डाके तथा यहाँस चट्टग्राम भीर पहिले अकायाव तक पैसादा करने लगे । किन्तु बड़ी बड़ी नदियोंक खनसे रेलपथ बनानेमें बड़े बिन्न उपदिपत हुए । अन्तमें कलकत्तेसे डाक तक सीपी नहर योरमेका प्रस्ताव मो हो गया । किन्तु मिथर पावन नामक एक इन्जीनियरी कम्पनल न दुधिया तक रेलपथ तथा पन्ना पर पुनका आरंभ सरकारक पास भेजा । उस समय सन् १८५८ ई०की ३०वां जुलाईकी सरदनमें इधर बङ्गाल रेल कम्पनी संग ड्रिज हुए । सन् १८५८ ई०की ३१वीं दिसम्बरस कलकत्तेस

कुष्टिया तक रेलपथके लिये ठीके दिये जाने लगे।

बीवाजार ट्रोट जहा सरकुलर रोडसे मिल गया है, वहा ही सीमान्त स्टेशन बनने लगा। इस स्टेशनका क्षेत्रफल १४१ एकड़ था। इस स्टेशनके प्लेटफार्मकी लंबाई १००० फीट तथा चौड़ाई २७ फीट थी। इस समयका रेल स्टेशन २०० लंबा और ४० फुट चौड़ा और ऊँचा है। इस अष्टालिकाका आदर्श प्राचीन निनेभ नगरीके आदर्श पर तैयार हुआ। इस रेलपथमें कुमार और इच्छामती नदियों पर दो सुन्दर पुल बने हैं। इनमें ८० फुट चौड़े १२ स्तम्भ हैं।

यह रेलपथ पहले कुष्टिया तक फैलाया गया और पञ्जाका पुल अधिक व्यय पडनेकी सम्भावनासे रोक दिया गया। सन् १८६५ ई०में कुष्टियासे भ्वालन्दो तक रेलपथ बनना स्वीकृत हुआ। सन् १८६२ ई०में पहले पहल स्यालदहसे कुष्टिया तक गाड़ी चली थी। इसके बाद उत्तर-दार्जिलिङ्ग तक और दक्षिण मातला तथा डायमण्ड हारवर तक फैल गई। सन् १९०५ ई०में इसकी एक शाखा राणाघाटसे मुर्शिदाबाद तक खुली। इसके बाद अन्यान्य कई शाखायें और भी खुली हैं।

सन् १८५५ ई०के अप्रिल महीनेमें सरकारने बम्बई बडौदा और सेण्ट्रल इण्डिया कम्पनीको रेलपथ निर्माण करनेका हुषम दिया। पहले बंबईसे सूरत तक १८३ मील पथमें गाड़ी चली। इसके बाद सूरतसे अहमदाबाद तक ६४२ मील पथ प्रस्तुत हुआ। इस पथमें नर्मदा-ताप्ती परके बने दोनों पुल आश्चर्याजनक हैं।

इस वर्गमें सिन्धु और पञ्जाव रेलपथका कार्यारम्भ हो कर कराची बन्दरसे सिन्धुदेश तक १०८ मील पथ तैयार हुआ। इसके बाद मुलतानसे लाहोर तक और लाहोरसे अमृतसर तथा वहांसे दिल्ली तक पथ तैयार हुआ।

सन् १८४५ ई०में मन्द्राज रेल-कंपनी संगठित हुई थी। सन् १८४६ ई०के फरवरी महीनेमें पैमाइश होने लगी। मिष्टर सिम्स पहले इंजीनियर नियुक्त हुए। सन् १८४६ ई०की १७वीं अगस्तको यथार्थ प्रस्तावके अनुसार कार्य आरम्भ हुआ। मन्द्राजमें सीमान्त स्टेशन रायपुरम् नामक समुद्र तीरवर्ती स्थानमें बना। पहले

मन्द्राजसे वेपुर तक ४०६ मीलका पथ प्रस्तुत हुआ। पोछे चारों ओर फैला।

ग्रेट सदर्न रेलवे कम्पनी पहले नागपट्टमसे त्रिचिना-पल्ली तक ७८॥ मीलका पथ तैयार हुआ।

इस समय भारतवर्षमें जितनी रेलें बन चुकी हैं उनमें बङ्गाल नागपुर कम्पनी और आसाम बङ्गाल कम्पनी विशेष विख्यात हैं। नागपुर कम्पनीने रेलपथ तैयार कर बङ्गालको उड़ीसाके साथ जोड़ दिया है। इसलिये जगन्नाथधामका पवित्र क्षेत्र पुरीधाममें बङ्गालियों तथा अन्यान्य देवामियोंके आने जानेमें विशेष सुविधा हो गई है। इस पथमें रूपनारायण, महानदी और दामोदर इन तीन नदियों पर विख्यात पुल बने हैं। इसका विस्तृत विवरण यहां देना असम्भव है। खड्गपुरसे नागपुर तक पथ अत्यन्त पहाड़ जङ्गल मय है। इसलिये बहुतेरे जङ्गलों और पर्यटकोंका काट कर फेंक देना पडा है। यह रेलपथ मन्द्राज रेल और ग्रेट इण्डियन पेनिनसुलार तथा इष्ट इण्डिया रेलपथसे मिला हुआ है। इसका सीमान्त स्टेशन हथड़ेमें हो है। इस समय इष्ट इण्डिया और बङ्गाल नागपुर रेलकम्पनीने हथड़ेमें एक सीमान्त स्टेशन बनाया है।

आसाम-बङ्गाल रेलकम्पनीने चटगांवसे गौहाटी तक बडी कठिनतासे पथ तैयार कर सन् १८६५ ई०में पहले पहल रेल खोली। पहाड़ी रेलपथोंमें यह रेलपथ विशेष उल्लेखनीय है। इस पथमें ८१६ सुरङ्ग तैयार हुई हैं। इनमें माहुर नामक सुरङ्ग बहुत प्रसिद्ध है। यह ४०० गजसे अधिक लम्बी है। यह पथ कितने ही सुकठिन दुर्गम पहाड़ोंसे हो कर निकला है। वर्षात्में यह पथ विप्लवनक हो उठता है। जलस्रोतोंसे रेलपथ वह जाता है।

सन् १९०४ ई०में कालका नामक सीमान्त स्टेशनसे गवर्नर जनरलके ग्रीष्म आवास भवन तथा राजधानी सिमला तक एक पहाड़ी रेलपथ तैयार हुआ है। इस पथमें भी अति अद्भुत निर्माणकौशल दिखाया गया है। किन्तु यह पथ आज भी विपद्से मुक्त नहीं हुआ है। इस पथसे गाड़ी दार्जिलिङ्ग हिमालय रेलकी तरह सर्पकी चालसे पहाड़ पर चढ़ती है। पहाड़ पर चढ़नेके

समय बार्जिसिङ्ग पयको तरह भागे पोछे यी इञ्जिन मोड्ने जात है। बार्जिसिङ्ग रैख पय को अद्दुन घटना दर्शनीय है। इस पयके बनानेमें बहुत धन खर्च हुमा था। इस पयका निर्माण शत्रुघ्नी भी बन्ना हो विस्मयजनक है।

इस समयके बने पुकोंमें भागीरथीके किनारेके हुगली इष्ट इन्डिया रेलवे कम्पनीका यमाया सुयबोपुस सबसे अद्दुन है। यहाँ गङ्गाका पाठ एक हजार गजसे कम नहीं है। किन्तु गङ्गाके बीचमें बन्दरको स्तम्भों पर सारे पुसका मार है। इस पुकमें जोहोको कङ्को मितभी बङ्गी ब्यबहृत हुए है, उतना बङ्गी मारतके किसानों पुकमें ब्यबहृत नहीं हुए हैं। इसमें स्पेन ४८० गज लम्बा है। इसी पुकसे इष्ट इन्डियन और इरान बङ्गाक रेलपय नैहावीमें मापसमें मिक गये हैं। इन्डोनियर मिष्टर सेसली इस पुकके रचयिता हैं।

भारतीय रेलपयोंमें सरकारी रेल खडनेसे सन् १८६६ ई० तक ५७८११४७) ४० राजस्वको सति हुई थी। सन् १९०१ ई०से रेलपयसे सरकारको लाभ होने लगा। सन् १९०० ई०में सरकारने ८७२३६) ४० काम किया। सन् १९०१ ई०में ११५४११६) खपया काम हुआ। सन् १९०२ ई०में ३३१) विसभर तक भारतमें २५४२२६ मील रेल पय था। इसके बाद दो वर्षोंमें माया ४ हजार मील पय बढ़ गया।

मिस्रिजिन किहरिस्तस यह रूप्य मालूम हो जायेगा कि रेलपयके सुबनेकी तारीख, पयका लम्बाई और कम्पनीका मूलधन कितना था। (१९०४ ई०)

रेलपयका नाम	तारीख	पयकी लम्बाई	मूलधन-मातृपद
१ बम्बई बङ्गीरा और सपेद्रक इन्डिया	१८६०	११०५	१४५४८५४२
२ मद्रासरेलवे	१८५३	१३२४	१२८०७३२९
३ आसाम बङ्गाक	१९०५	३३५	१०४१०६४६
४ बङ्गाक-नाम्न वेधन	१८७५	१२८०	३३७३१३०
५ बङ्गाकसेपेद्रक	१८८२	१२५	१२६५४००
६ बङ्गाक नागपुर	१८८६	१८०१	२११२२३२६
७ प्रया	१८७०	११७३	११२२२२४०
८ दिल्ली अम्बाका काठका	१८६१	१३२	२६४५१४६

९ इष्ट इन्डिया	१८५४	२०३४	४६४४१४४२
१० प्रेड इन्डियनपयलि०	१८५२	१६६६	४२६८७२०४
११ इन्डियन मिडलएण्ड	१८६६	१३३६	१४४२५८७०८
१२ राजपूताना माडका	१८७३	१६७३	१५४३५४६२
१३ बहेकपयक कुमायू	१८८४	३२४	१३२३३६६
१४ साउथ इन्डियन	१८६१	१११०	८३४२१६०
१५ सदर्न मरठवा	१८८४	१५६२	१२८२५८८०

बैथिक और नेटिव स्टै रेलकम्पनी काठ थाकिल।

१६ निजाम स्टेट	१८७५	७४३	६०००४८०
१७ वेष्ट इन्डियापयुर्नगीज	१८८७	७४	१३३४२०२
पयकी लम्बाई)			
१८ इरान बङ्गाक	१८६२	११८६	१४७५६६७२
१९ नाथपेण्डन	१८६१	२०४३	५६५३२१६०
२० अयय बहेकपयक	१८६२	११३४	१४२५२६७३

रेवीयु स्टै रेलके ।

२१ मापनगर गणशाक	१८८०	४५५	२२५६४००
२२ पोषपुर बोकागेर	१८८२	७३६	२०५००२८

सन् १९२२ ई० तक भारतवर्षमें ३६००० मीलसे अधिक रेलपय फैला हुआ था। इसमें ५५० करोड़ खपय से अधिक मूलधन खर्च हुआ था। नायं वैदर्न स्टेट रेलवे एगन भारतवर्षमें सबसे बङ्गी है। इसकी लम्बाई ५००० मीलसे अधिक होगी। उसके बाद बम्बई, बङ्गीरा और सेपेद्रक इन्डिया रेलवे माया ४००० मील, प्रेड इन्डियन पेनिनसुलार रेलवे ३००० मीलसे अधिक, मद्राज और सदर्न मरठवा रेलवे ३००० मीलसे अधिक इष्ट इन्डियन रेलवे २००० मील और बंगाल नागपुर रेलवे २००० मील विस्तृत है। इसके अलावा रेलपय विन पर विन बढ़ता ही जाता है। भारतवर्षके रेलपयको सम्भवतः किहरिस्तस लोचने हो जातो है—

इष्ट इन्डियन रेलवे ।

फिकहाल यह गवमें उकी जास हो गर है। इसके अलावा भयष रोहिमकरइ रेलवे भी मिद्रिश गवमें उक मथोन है।

मेन धारन—इपङ्गा बिती—इबङ्गासे केन्नेक, धर्द माव,

लाम्प्रीनसे गौहाटी, छापारमुखसे सिलघाट शहर, मारि-
यानीसे नागिनोमारा, वदरपुरसे लालगढ, कलौरासे
सिलेट, टागीसे भैरववाजार होती हुई मैमनसिंह, नेल-
कोनासे मैमनसिंह, जारिया भंभेलसे श्यामगञ्ज जङ्ग-
शन, अखौरासे आसूगञ्ज, नहरकटियासे तिनसुकिया,
सिमालूगुडी जङ्गशनसे सीपन ।

दिब्रूगदिया रंजवे ।

अमोलापतिसे लेडो । गाकुम जङ्गशनसे साश्वुआ
घाट ।

जोरहाट-प्रोविन्सियल रेलवे—मरियानीसे कांकिल मुख ;
तितावरसे जोरहाट ।

तेजपुर-वालीपाड़ा रेलवे—तेजपुरसे वालीपाड़ा ।

बङ्गाल-नागपुर रेलवे ।

हवड़ासे नागपुर होती हुई बम्बई । हवड़ासे वालटेयर
होती हुई मन्द्राज । हवड़ासे पुरी । हवड़ासे वाराणाना
होती हुई राची । हवड़ासे आदरा और महदा होती हुई
गोमी । चक्रधरपुरसे आसनसोल ।

हवड़ासे खडगपुर होती हुई मेदिनीपुर । शालीमारसे
सातरागाछी । नागपुरसे कमटी होती हुई रामते
ग्रामदासे गुआ । भिजियानाग्रामसे पार्वतीपुरम्, फार-
सुगुदासे सम्बलपुर, विलासपुरसे कटनी, महदासे चन्द्र-
पुरा होती हुई दानिया, गण्डियासे जव्वलपुर, गण्डियासे
वालाघाट होती हुई कटनी, गण्डियासे चन्दाफोर, नाग-
पुरसे नागभीर, नैनपुरसे मण्डुलाफोर्ट, नैनपुरसे भिन्द-
वाडा, इटवारीसे भिन्दवाडा, इटवारीसे खप्पा, ताता-
नगरसे वादामपहाड, पुरलियासे राची होती हुई लोहर-
डंगा, रायपुरसे धमतारी और राजिम, बालटियरसे
विजागापट्टम, बव्वोलीसे सालूर, कटकसे तालचैर, अन्तु-
पुरसे विजुरी ।

परलाकीमेदी लाइट रेलवे—नीपादासे परलाकीमेदी ।

भोरभञ्ज-प्लेट-लाइट रेलवे—रूपसासे वारीपादा होती
हुई तालचन ।

बांकुडा-दामोदर-रीभर रेलवे—बांकुडासे रायनगर ।

नार्थ वेष्टर्न रेलवे ।

दिल्लीसे पेशाघर ; लाहोरसे करांचो, दिल्लीसे
भरिण्डा होती हुई लाहोर ; दिल्लीसे अम्वाला होती हुई

कालका, अम्वालासे सरहिन्दरूपर, कालकासे सिमला
सेकशन; गाजियाबादसे दिल्ली, भिन्दसे पानोपत; पानो-
पतसे रोहतक, नरवानासे कुश्नेत; राजपूतानेसे भटिण्डा
होती हुई समस्ता, बहवलनगरसे फकीरवाली, लुधि-
यानासे धूरी, भाकाल होती हुई हिस्सार ; मैकलियर्ड-
गंज रोडसे फिरोजपुर हो कर लुधियाना, लुधियानासे
लोहियानखास ; फिरोजपुर कैनटोन्मेण्टसे जलन्धर
सीटी ; जलन्धर सीटीसे होशियारपुर, जलन्धर सीटीसे
नाकोदर, जलन्धर सीटीसे राहोन जयजन दोआब,
जलन्धर सीटीसे मुकेरियन ; अमृतसरसे कसूर, पाक-
पत्तन होती हुई समस्ता, लाहोरसे अमृतसर होती
हुई पठानकोट, पठानकोटसे जोगिन्ट नगर ;
बतालासे कुआदिन ; अमृतसरसे डेरा बाबा-
नानक, नरोवाल होनी हुई श्यालकोट, लाहोरसे
चिचोकी, मालियन होती हुई सोरकोट रोड ; लाहोरसे
नरोवाल, चक अमरूसे नरोवाल ; लायलपुरसे जारन
वाला, चिनिओटसे लायलपुर, लाहोरसे सहादरा
होनी हुई संगला हिल, मालकवालसे सोरकोट रोड ;
सरगोधासे छिनोखीची, शाहपुर सीटीसे सरगोधा,
वाजिराबादसे लायलपुर होती हुई धानेवाल ; जम्भूसे
श्यालकोट होती हुई धाजिराबाद ; भाउनसे मान्द्रा,
लालामूसासे कुन्दियान होती हुई मूलतान, तक्षशिला
जङ्गशनसे हवेलियन ; कैम्बेलपुरसे कुन्दियन, बन्नुसे
दाऊदखेल ; देटा इस्माइल खांसे टोड्ड सीटी, रावल-
पिण्डीसे कोहट होती हुई थल, नौसेरासे मरदान होनी
हुई दरगाई, खैबरसे लंडिकोटल, खानपुरसे चाचरान,
कोतरीसे हँदराबाद होती हुई वादीन, रोहरीसे रूक होती
हुई कोतरी, जाकोवाबादसे कास्मोर, होदापुरसे सिर-
लाशहवादकोट होती हुई लरकाना, रूकसे कोयेटा होती हुई
चमन, कोयेटासे हरनाय होती हुई सीवी, कोयेटासे
दलबन्दिन होती हुई डजदप, खानाईसे हिन्दूवाग होती
हुई किला सैकुला ।

बम्बई-बडोदा और सेयटल इण्डिया रेलवे ।

बम्बईसे दिल्ली, बम्बईसे बडौदा होती हुई विरामगम,
सूरतसे अमलनेट, अनन्दसे काम्बे, अनन्दसे गोदरा ;
नगदासे उजयिनी, वीरियाबीसे भादतल, विरामगमसे

हरागोपा ; विपत्नेम्व देवगद्वर्षिवा ; राजविपत्तासे
मनुन्नेम्बर (राजविपत्ता घेट रेखणे) ; प्रोचसे उम्भूर ;
बभ्यानेरख सिधियाराजपुर हेतो हुरं पानोमाहल ; नरी
वाक्षे कगार्मंड ; घोषरास लुनाबादा ; अइमदाबादस
विही ; पाजनपुरस देसा ; कुलेरासे उचामनरोड ; गखी
इसाकसे फरदातगर विहीसे गुधुर्गांय ; अइमदा
बादस जेम्भदा ; अइमदाबादसे डोलका हातो हुर घण्टुका ;
कसीस घोवापुर ; मंसानासे पाघयन ; पाघयनसे
घाडुदरा हेतो हुर इल्पाद ; मंसानासे ल गाहिल ;
मंसानासे पाटन हेतो हुरं ककोसीमेहाना ; मनुम् रोडसे
घनसमा हेतो हुरं हरिज ; कसीससे मनुम् । अइमेरसे
कग्या ; फतेहाबादसे चम्प्रावतीगज हेतो हुर उजैन ;
इन्दारस मऊ ; अइमेरसे नसीराबाद ; रेवाडासे कुनरा ;
रेवाडासे फजिलका ; सिवाहसे माघेपुर अयपुर हाता
हुर भुनभुज (जयपुरघेट रैनवे) भागराफाटसे कामपुर ;
भागटाफाटसे बंकीकुर मधुरास पुम्बावन ; म्हा तस
मग्याना ; कल्याणपुरस ग्याळडोली ।

वेरकर-व्हेर रेखने—अमजोपपुरसे वेराबम्बर ।

उदबपुर विचारमद रेखने—विचारमदस नाथदार हाता
हुर उदबपुर ।

जामनम मीर हारिवा रेखने—राजकारने जामनगर
मीर हारिका हाता हुरं घोखा बम्बर ।

गोपदाक रेखने—घडासे अमजोपपुर ; विजादियासे
घारी ; अदलसरसे राजफोट ।

कड्ड व्हेर रेखने—कुड्डास अइर अइरसे गुना ;
अइरसे भूज ।

बाजपुर बारी-भार रेखने—डोळपुरसे बारा हेतो हुर
तंततुर ।

स्ताम् व्हेर रेखने—अदलसरसे वेरायड हाता हुर
प्राचरोड ; जुनागडस बिम्भार ; नुनागडस सरा
दिया ।

मरपी रेखने—पाघयानस राजकाट ; बकानरसे
मारभा ।

मघापी कार-रेखने—अघापी अजुननस अघापी
राजम ।

बलीं झार रेखने—कुर्दुवाकीसे कग्यापुर ; कुर्दुवाकी
से अट्टा, मिरजासे कग्यापुर ।

मनवर-व्हेर रेखने ।

मयनगरसे वादान ; सिहोरसे पळिठाना ; वेलासे
घागा ; भागसे मडुभा, वेलादसे धणकुडा, वेलादसे
जसदान ; मयनगरसे तलेजा सीरो (दामधे ट्रेन) ;
जिप्याने गघादा (दामधे ट्रेन) ; रज्यासे पोर्ट मल
वर्ट पिक्ट, सेवासे झारावर नगर (दामधे ट्रेन) ।

गायझाद-मरीर व्हेर रेखने ।

अमूसरसे व्हेर, व्हेरसे चांदी, व्हेरसे तिम्बा
रोड मिवांगांवेसे छेया उदबपुर, तंभानासे तुळपुर,
मिवांगांवेसे मानसर, मिवांगांवेसे केरळ, बिल्मारा
से कासाभा कोंगबासे जिकब, वेरळघसे मासे
वेरळेइसे मादपान ।

बीकनेर व्हेर रेखने ।

मातीइजास बिसे अजुनान, बीकनेरसे कोमापतडी,
बीकनेरसे रतनगड रतनगडसे सरदापहार, हिस्सारसे
सुजानगड, सूतगडसे हनुमानगड, अमूनगडसे सूतगड,
हनुमानगडसे तदसोजमाद ।

गोधुर-रेखने ।

हेराबादसे लुनी अजुनान, मीरपुरवाडसे पादरो
मीरपुरवांगे भूदे, मारयाड अजुनानसे मैला रोड,
बिसे अजुनान हातो हुर कुधामनरोड, वेलासरसे पांज
पतरा, जौपपुरसे फनेदी मैला रोडसे मैला सीरी
पापरौइसे बिनारा शिगामने सुजानगड हातो हुर
सडनूक, मकरनासे पपतनर सीरी ।

ग्याळियर-भार रेखने ।

ग्याळियरसे गिपपुरी, ग्याळियरसे मिम्ब ग्याळियर
से सेयपुर कसान, ग्याळियरसे जीवाजीपंड, मरार
कण्टामेटसे कम्बु कोडी ।

बट शिवरन पन्नमदुना रेखने ।

बम्बसे म्हागर हाता हुर विही, बम्बसे पूना हेतो
हुरं रायबर, कल्याणसे फरजल, तदम्हासे पुगुस मधे
रनसे मराल (मधरन घाम दामधे पोदस बधमठो, कर
अथम धोपोळा, पोदम मनमद, घापोसगांवेस पूसिया,
भीजबमम घमवनेर, भीजबनल नागपुर, असमधे गम

गांव, बदनेरासे अमरोती, इटारसीसे इलाहाबाद, गदर-
वाडसे गोविंदोरिया, इटारसीसे नागपुर, आमलासे पर-
सिया, बर्दासे बलहरशाह, मजरोसे राजपुर, मुरताजपुरसे
घोतमल, मुरताजपुरसे बलिचपुर, पुल्गावसे अरवी सेक-
शन, पचोरासे जमनेर, भूपालसे उज्जैन, यिनासे कोटा,
मानिकपुरसे भासी, भासीसे चिरगांव, भासीसे लखनऊ,
पेतसे कूंच, कानपुरसे वादा, आगरा कैनेटोन्मेण्टसे
आगरा सीटी, आगरासे वाह ।

मान्द्राज एयड सर्दन्-मराठा-रेलवे ।

मान्द्राजसे बालतेर, समलकोटसे कोकोनद, गुन्तूरसे
तेनाली होती हुई रिपटले, मान्द्राजसे रायचूर, मंद्राजसे
वङ्गलोर सीटी, वौरिङ्गपेटसे मरिक्कुप्पम, मन्द्राजसे बीच
विल्लीवक्कमसे बीच, मन्द्राजसे अवादी, तिमेलोर होती हुई
आरकोनम, पूनासे वङ्गलोरसीटी, भीराजसे कोल्हापुर,
भीराजसे संगली, वङ्गलोरसीटीसे गुनटाकल, लेण्डासे
मोरमूगाँव, वेल्लरीसे रयद्रु, होसपेटसे कचूर,
होसपेटसे समेहल्ली, गुण्टकलसे हवली, गुण्टकलसे
वेजवारा होती हुई मछलीपत्तन, गुडिवाडासे भीमावरम,
नीदादाभलूसे नर्सपुरम, काठपदीसे गुडर, गादाकसे
हातगी, पकालासे धर्मवरम, हवलीसे धारवार ।

साउथ इण्डियन रेलवे ।

मन्द्राजसे पोदानूर होती हुई मेत्तुपलाईयम्, मेत्तु-
पलाईयमसे उत्कामण्ड (नीलगिरि रेलवे), वङ्गलोरसे
पोदानूर, उलावाकोटसे पालघाट, सलेमसे सलेमटाउन,
पोदानूरसे दिन्दीगूल, पोदानूरसे उलावाकोट, पोदानूरसे
कोयम्बतूर, सलेमसे मेलुरदम, तिरुपत्तूरसे आलारपेट,
तिरुपत्तूरसे कृष्णगिरि, मुरापुरसे हासुर, सोरानूरसे
परनाकुलम्, मन्द्राजसे रामेश्वर होती हुई धनुष्कोठि,
बीचसे चिङ्गलपेट, चिङ्गलपेटसे अरकोनम्, मदुरासे
वदिव्याक्कनुर, मिलुपुरम्से कोठपही, मिलुपुरम्से
पोण्डिचेरी, मिलुपुरम्से त्रिचिनापल्ली, पदुकोट्टासे
त्रिचिनापल्ली, मायावरमसे आरनटंगी, मायावरम-
से तैट्टोश्वर, पेडालमसे कारिकल, तञ्जौरसे नागौर,
निदामङ्गलम्से मन्नारगुदी, त्रिचिनापल्लीसे इरोड, मादुरा
से ट्युतीकोरिन, तिरुतिरियापुण्डीसे अगस्तीअम्पल्ली,
मनियाचीसे कोयलन होती हुई त्रिवन्दुम्, त्रिनीमेलीसे

तिरुचेण्डूर, कुड्डालूरसे वुड्डाचलम्, विरुधूनगरसे सेन-
कोटा, सोरानूरसे निलाभर ।

महिसुर रेलवे ।

महिसुरसे वङ्गलोर सीटी, विरुड्डसे सिमोगा, चिक्क
जाजुरसे चित्तलड्रुग, महिसुरसे चमराजनगर, महिसुरसे
आरसीकेरी, वङ्गलोरसे वोरिङ्गपेट, नरसिंहराजापुरासे
तरिकेरि । (द्रामवे ट्रेन) ।

निजाम गवर्मेण्ट-ग्रेट रेलवे ।

वादीसे वेजवाडा, हैदरावादसे मनमद, दोरनाकलसे
कोठागुदाम, दोरनाकलसे सिगारेनी (मिनरल ब्राञ्च)
काजीपेट जंक्शनसे बलहरसा, पूर्णासे दिङ्गोली,
सिकन्दरावादसे ट्रोनाचेलम् ।

कुलशेखरपतनम् लाइट रेलवे ।

तिसिसनविल्लायसे तिरुचेन्दूर ।

सिंहल गवर्मेण्ट रेलवे ।

कलम्बोसे मतारा कलम्बोफोर्टसे वटुल्ला, कलम्बो-
फोर्टसे पुचालम्, कलम्बोसे तलैमन्नर होती हुई मेदा-
वच्चिसे वङ्गसेनतुराई, माहोसे केकिरावा, माहो जंक्-
शनसे गलवा होती हुई वेट्टीकलवा, काण्डीसे म तेल,
कलम्बोफोर्टसे ओपानेरु, अविस्सावेञ्जासे यतियनटोला,
नानुवासे रगल्ला ।

ब्रह्म रेलवे ।

रङ्गूनसे मण्डालय होती हुई मैतकैना, पेगूसे मौलमेन,
मौलमेनसे यी, पैनमनासे तोङ्गद्विङ्गी, तोङ्गद्विङ्गीसे नाथ-
मौक, रंगूनसे प्रोम, वेसिनसे हैजादा होता हुई लेतपदन,
हैजादासे क्रियाङ्गोन, धाजीसे मिङ्गआन, मण्डालयसे
लासियो, ताजीसे अङ्गवान् होती हुई हेहो, पेगूसे कायान
मण्डालयसे मदाया, सगइङ्गसे प्यू, नावा जंक्शनसे
काया, इनसिनसे वानेत् चाऊङ्ग, रंगूनसे थिनगंग्युन
होती हुई कैण्टोन्मेण्ट, रंगूनसे इनसिन ।

नेपाल गवर्मेण्ट रेलवे ।

अमलेक गञ्जसे रकसाँल ।

रेलपथकी उन्नतिके लिये आज कल विशेष प्रयत्न
किया जा रहा है । नया नया आविष्कार हो रहा है ।
फिलहाल त्रिघुञ्चालित रेलगाडीकी बडी ही उन्नति हुई

है। घृष्टोक्त माना स्थानोंमें समीप वैद्युतिक माध्यम पञ्चिन से रोपगाड़ी चलाने लगी है। भारत तक वैद्युतिक पञ्चिन चलानेमें अतिशय नियम निश्चय गये हैं उनमें डिसेल साहचर्यका व्यवस्था हो। (Diesel & system of electric Locomotives) सर्वोत्कृष्ट है।

इसके सिवा लोकोमोटिव इंजिनकी अभ्युत्थित, द्रुत गमनशक्ति, बलवान् युक्ति आदिकी विशेष उन्नति हुई है। नवन वैद्युतिक रेलवेके विषय अमरीकन लोकोमोटिव कारना न एक पात्राव रथ निकाला है। उस रथमें ३४ घण्टे हैं। १२ घण्टीके ऊपर कीचका रकबाका बड़ा डरवा है। गाड़ीका बलवान् जोर कीचका जगा कर १,३०० मीलघंटा ब्यादा है। इसकी ऊंचाई १६, ४' और लम्बाई १२, १' है। अन्तिकुण्ड २८, ६' लम्बा और ६, ३' है। कीचके डब्बेमें २२००० गैलन जल और २७ टन कीचका रखनेका जगह है। इससे समझ सकते होंगे, कि पल मान कासम इंजिनका कैसे उन्नति हो रहा है।

कण्ड यही नहीं, रेलवे लाइन बलान (Railway track) और रेलवे सपारी गाड़ी (Carriage), माख गाड़ी (Wagon) और ब्रेक (Brake) बलानके विषये नई नई तकनीक निकाली गई है। सिगनलकी उन्नतिकी ओर ध्यान देनेसे तो अमरकण्ड होना पड़ता है।

सन् १९२० से २६ ई०का दिशाव देवनेस मामूम होता है, कि इस समय रेलवे लाइनकी विस्तृति कमाया ठीक कर दूसरी जगह बहुत कम हुई है। इन कमायामें रेलवे लाइनका विस्तार बहुत दूर तक हुआ है। अधिक और वर्तमानमें भी कहा कहा इसका विस्तार है। किन्तु आश्चर्यका विषय है, कि युद्धपूर्वमें यद्यपि १९२२ ई०से रेलवेयका उद्योग चार विस्तृतिक सिधे बहुत रुपये खर्च हो रहा है, पर उससे कोई फल नहीं दिखाई देता। भारत और बास मायाका अधिकांशकारण एक तर्का महामुल (Single Fare) बड़ा और छोटीको महामुल (Return Fare) घटा दिया गया है। उससे तथा आनुमानिक नाना कारणोंसे ऐसा हुआ है।

ग्रेट ब्रिटेन और युद्ध पूर्वमें मुख्य पहले रेलवेय व्यवस्थापन था, पर युद्धके समय ययमें रहकर अयोग्य हा गया। फिर युद्ध समाप्त होने पर जामा इन्गोमें पड़नेका

हा व्यवस्था कायम रहा। इससे ग्रेट ब्रिटेनमें कुछ काम भा दिखाई दिया पर युद्धपूर्वमें कुछ मो नहीं। कमायामें कुछ समय नुकसान उठा कर आकर आशीय-व्यवस्थाका हा अपना लिया है। मुख्यके पहले जर्मन-रेलवेय गये मेल्लक हाथ था, किन्तु १९२० ई०में यह पानिपामिष्टक हाथ लगा। पहले पहले उसमें काम ली दिखाई देता था, सन् १९२३ ई०में कामकी अपेक्षा प्रायः ७ गुणा नुकसान हुआ। इस कारण १९२४ ई०में यह 'रोबस्तीसेनयन गलेनेसकेपेट नामक कपताक हाथ ४० वर्षके लिये लगा दिया गया है।

रेला (दि० पु०) १ लखसे पर महोत और सुन्दर बोला को बलानकी यति। २ पकमपका। ३ पकि, समूह। ४ अधिकाता, बहुतायत। ५ बलका प्रवाह, बहाव। ६ समूहमें बड़ा, पावा।

रेला—सिंहमूम सिखके अरु एक गांव। यहाँ एक प्रसिद्ध पीरके रहनेका स्थान है।

रेबंछा (दि० पु०) एक दिग्दर्शन अरु। इसको फलिया गोठ, पठली और कमगम एक बालिष्ण लबा होता है। इसका काम लंबोतरे, मोन उतल कुछ बड़े और रगमें बायामा होत है। इसको काम बाल खाते हैं।

रेवन्द (का० पु०) एक पहाड़ा पड़। यह हिमाचल पर व्यापक बारह हजार फुटका ऊंचाई पर होता है और काश्मीर, नेवाल, म्यान अर्थात् सिक्किमके पहाड़ोंमें पाया जाता है। इसको उत्तम जाति तिब्बतक वृत्तिय पूर्ण भागों और चीनक उत्तर-पश्चिम भागोंमें होतो है और देबद चीना कहमाता है। हिन्दुस्ताना देबद ऐसी अच्छी नहा होतो। उसमें महक भी ऐसी नहीं हातो जैसी चीनीको होता है। आशारायन इसको सूती जड़ और लकड़ा देबद चीनाक नामसे बिठता है और औषजक काममें जाता है। इसमें आरसोफानिक एसिड हाता है जिससे इसका रंग पोमा हाता है। आरसोफानिक एसिड हाकी बहुत मजती देता है। रघु चीना देबद होता है और पेटक दर्दका दूर करता है। यह पौरिक मो माना जाता है।

रबर (स० पु०) देवन इति देव बाहुमकात् अरथ।

१ शूकर, सूअर । २ वैष्णु, वांस । ३ वातुऋ, वावला ।

४ विषयैद्य । (क्ली०) ५ दक्षिणावर्त्त शङ्ख ।

रेवड (हि० पु०) मेड-वकरीका भुण्ड, लेंहडा ।

रेवडा (हि० पु०) पगी हुई चीनी या गुड़के लंबे लंबे टुकड़े जिन पर सफेद तिल चिपकाया रहता है ।

रेवडी (हि० स्त्री०) पगी हुई चीनी या गुड़की छोटी टिकिया जिस पर सफेद तिल चिपकाया रहता है ।

रेवण (सं० पु०) एक प्रसिद्ध मीमांसक । चरित्रसिंह इनका उल्लेख कर गये हैं ।

रेवणसिद्ध—रसरत्नाकरके प्रणेता ।

रेवत (सं० पु०) १ जम्बीर, जंवीरी नीबू । २ आरग्वध-वृक्ष, अमलतास । ३ अन्धक या अनन्तराजके एक पुत्रका नाम । ४ वर्षभेद । ५ रोहिणीपुत्र बलरामके श्वशुरका नाम तथा एक राजा । देवीभागवतके अनुसार ये आनर्चके पुत्र और शर्यातीके पौत्र थे । कुशस्वली नामकी नगरी इनकी राजधानी थी । इनकी कन्या रेवती बड़ी ही सुन्दरी थी । कन्याके युवती होने पर रेवत उसके योग्य वर ढूँढने लगे । बहुत दिनों तक कोई उपयुक्त वर न मिलनेके कारण ये स्वर्गमें लोकपितामह ब्रह्माके निकट गये । ब्रह्माके आदेशसे पृथ्वीमें आ कर उन्होंने अपनी कन्या रेवती बलरामको व्याही ।

रेवत—सह्याद्रि-वर्णित एक राजाका नाम ।

(सहा० २७।३०)

रेवत आयुष्मत्—एक वौद्धाचार्यका नाम ।

रेवतक (सं० स्त्री०) रेवत इव कायतीति कै-क । पारावत, परेवा । (राजनि०)

रेवति (सं० स्त्री०) कामदेवकी पत्नी । (त्रिका०)

रेवतिपुत्र (सं० पु०) रेवतीका तनय या लडका ।

रेवती (सं० स्त्री०) रेवतस्थापत्य स्त्री, रेवत-अणु न वृद्धिः डोप् । १ नक्षत्रभेद । यह नक्षत्र अश्विनी आदि सत्ताईश नक्षत्रोंमें अन्तिम नक्षत्र है । इन नक्षत्रोंकी संख्या २७ है । यह नक्षत्र मञ्जुलीके आकारका है और ३२ ताराओंके साथ है । इसकी अधिष्ठाती देवता पुष्यस्य है । इस नक्षत्रमें मीनराशि वास करती है । शतपद् धनानुसारं इस नक्षत्रमें नामकरण करनेसे दे, दो, च, ची

आदि अक्षरका नाम होता है । इसके चार पक्षोंके चार अक्षर हैं ।

इस नक्षत्रमें पैदा होनेवाला पुष्य अत्यन्त तीक्ष्ण बुद्धिसम्पन्न होता है । उसकी सुन्दर आकृति, वह शत्रु-नाशक, विद्वान्, नृपसेवक, विदेशवासी और शूरवीर होता है । (क०प०) अटोत्तरी मतसे इस नक्षत्रमें पैदा होनेसे शुक्रकी महादगा होती है । नक्षत्रका परिमाण ६० दण्ड धरनेसे एक एक नक्षत्रमें ५, ३ पाच वर्ष तीन मास काल भोग होता है । प्रति नक्षत्रके पादमें १ वर्ष ३ मास २२ दिन ३० दण्ड और एक दण्डमें १ मास १ दिन ३० दण्ड भोग होता है । नक्षत्रके परिमाणमें न्यूनाधिक हुआ करना है । ऐसी अवस्थामें दगाका भोग्य और भुक्त समयका निर्णय करने समत ५ वर्ष ३ मासका भाग कर स्थिर करना होता है । मीनराशि शब्द देखो ।

२ मातृकामेद । ३ स्त्री गर्वी । (अजयपाल) ४ दुर्गा ।

५ वालप्रहृदिशेष । वालक इस ग्रहसे पोषित होने पर इसकी पूजा करनी होती है । इसकी चिकित्साकी वाते सुश्रुत और भावप्रकाशमें इस तरह हैं—

अश्वगन्धा, अजशृङ्गी, श्यामलता, पूनर्नवा, मुगानि, मायाणि और भूमि कुम्भारण्ड इनका काथ, यव, अश्वकर्ण, अर्जुन, वातकी, तिन्दुक और कुष्ठ या सज्जरसमें पाक किया तेल अभ्यङ्गमें, काकोल्यादिके सयोगसे पाक किया घृत पान, कुलटय, शङ्खपूर्ण और सब तरहके सुगन्ध प्रदेह तथा गृध्र और उल्लुका त्रिष्टा, यव, यवफल और घृत इनकी आहुति साथ प्रातः देनेसे इस ग्रहकी शान्ति होती है ।

सादा फूल, धानका लावा, दूध, चावल और दहीसे गोसाईं घरमें वलि निवेदन कर और नदीसङ्गममें धाली और कुमाङ्गको स्नान करा कर निम्नोक्त मन्त्रसे स्तव करना होता है—

“नानाशत्रवरा देवी चित्रमाल्यानुलेपना ।

चलत्कृपडलिनी श्यामा रेवती ते प्रसीद तु ॥

उपासते यां सततं देव्यो विविधभूषणाः ।

लम्बा कराळा विनता तथैव बहुपुत्रिणा ॥

रेवती शुष्कनासा च तुभ्यं देवी प्रसीद तु ॥”

(सुश्रुत उत्तर० ३१ अ० और भावप्र० मन्व्य० ४र्थ भाग)

६ बलदेवकी पत्नी, रेवतकी कन्या । राजा रेवतने

प्रजाकी भाङ्गासे बजरामके साथ देवतीका विवाह कर दिया। स्वयं दको।

० रवत मनुकी माता। रवतमनु देखो।

रवती—युक्तप्रदेशके बलिया जिलेमें एक नगर।
रेवती देखो।

रवता—मैसूर राज्यके अन्तर् एक बड़ा गांव।

रवतीश्रीप—वाक्षिपत्यका एक प्रसिद्ध जनपद। पूर्व चालुक्यवाराज मंगळीयमें ५६१ ई०में यह स्थान जीता था।

रवतीपुर—युक्तप्रदेशके गाजोपुर जिलान्तर्गत एक नगर।
रेवतीपुर देखो।

रवतीमण (सं० पु०) १ रवतीकाठ, रवतीस उत्पन्न।
२ शक्ति।

रवतीराम (सं० पु०) रेवत्याः राम्याः। १ बजराम।
२ शक्ति।

रवतीश (सं० पु०) रेवत्या इत्याः। बजराम।

रवतीसुत (सं० पु०) रवत्यम्येऽ।

रवत्य (सं० त्रि०) १ प्रसिद्ध, मशहूर। २ सुन्दर, कूट सुन्दर।

रेवत्य (सं० पु०) सूदांके पुत्र। व गुह्यज्ञके अधिपति हैं। इनकी उत्पत्ति सूदांकी बहवा रूपयारिणी संज्ञा नामकी परलोस हू है। काविकापुराणमें लिखा है, कि राज लोग ठौरब्रह्मन्तमें प्रतिभा या चट्टमें सूदपूजाके विधानानुसार रेवत्यके पूजा करेंगे। इसका अर्थ—

“सूर्यपुत्र महाबाहु विभुः कन्यास्यकथम्।
कन्यत्वं शुद्धस्रय केनात्त निदत्त वातवा ॥
कतः कामभरे प्रियङ्गुकेवे इ क्त्वा पुत्रा।
वाङ्ग न्यत्वा वरादीवर्ष विवरेत्पारस्विम् ॥”
(काविकपुराण ० ८५ अ०)

कोशगरी पूर्वमाकी रातकी सब कथामपूजा होती है उससे पहले शरक समोप भांडके साथ रेवत्यकी भी पद्याविपाल पूजा कर्ती होता है। (विषयस्वर)
रेवत्यमनुसू (सं० को०) रेवत्य मनुसू सूत सूक्ति। संज्ञा।

रेवत्य (द्वि० पु०) एक प्रकारकी ईंध।
रेवट्ट (अ० पु०) पादरिक्तकी सम्मानसूचक उपाधि।

रेवा (सं० स्त्री०) रेवते उत्प्लुत्य गच्छतीति रेव-अच्-टाप्। १ कर्मदा नदी। बराहपुराणमें लिखा है, कि रेवा नदीमें शिवलिङ्गकी उत्पत्ति होती है। (बराहपुराण) नर्मद देखो। २ कामकी पत्नी रति। ३ नौकीसूक्ष्म, नौकाका पीषा। ४ दुर्गा। (देवीपुराण ५५ अ०) ५ एक प्रकारका साम। ६ हीरक रागकी एक रागिणी। ७ एक प्रकारकी मछली जो नदियोंमें पाई जाती है।

रेवा—मध्यप्रदेशके वधेलखण्ड पञ्चसरोके अन्तर्गत एक देशी राज्य। यह मसू० २२ ३६ से २५ १२' ३० और बेगा० ८० ३६ से ८२ ५१' पूर्वके बीच पड़ता है। भूपरिमाण १०००० वर्गमील है। इसकी नद्यो सीमा पर बाँदा इलाहाबाद और मिर्जापुर जिला, पूर्व मिर्जापुर जिलेका कुल अंश और छोटागापुरके अन्तर्गत देशो सामन्त राज्य, दक्षिण अतोरागढ़ मयबजा और जयजयपुर जिला और पश्चिम वधेलखण्डके अन्तर्गत मैहूर, नागोड़ सोहावाड और कोठा नामक देशो सामन्त राज्य अवस्थित हैं। इस राज्यके पश्चिम और पश्चिमोत्तर भागमें गङ्गाकी बपत्य कावे से कर लमावार तील अधिस्थकामोंमें शोभित गिरि माळा, इसलके उत्तर पूर्वाशमें विन्ध्यापर्वत और पश्चिमो अधिस्थका छोड़ इसकी समरेषा पर फैल गिरि पर्वत ऊपर उठो है। इस राज्यका एक-तृतीयांश फैल गिरिमाळाके दक्षिण पूर्वाशमें शीत नदीको अवधारिका पर अवस्थित है। शीत नदी इस राज्यकी दक्षिणो सीमासे प्रवेश कर राज्यके बीचो बीच उत्तर पूर्व सीमा पार कर मिर्जापुर तक बसा गया है। इसकी प्रधान शाखा महानदी है। राज्यके दूसरे अंशमें समसा नदी बघेर, चित्तनू आदि शाखा प्रशाकाके रूपमें फैल कर इलाहाबाद जिल तक बनी गई है।

यह राज्य अतिब सौर जनजात अल्पसंख्यक परि पूर्व है। यहाँ रामनगर प्रगर्भमें इमरिया प्रामम उत्कृष्ट कोयलेकी खानि मिली है। यहाँस कोयला इतर उधर से आनेके लिये विभासपुर इत्यावा रेनवे कटनो-इमरिया शाखा खोजी गई है। यहाँकी जोबिला नदीकी उपत्यकामें और सोहागपुरमें मो अस्तुरकृष्ट कोयला मिला है।

यहाँ कई तरहकी मिट्टी देखी जाती है,—मैड या काकी मिट्टी, 'सेङ्गवन' या श्वेतान्त, 'दोपाड' अर्थात् मेड

और सेङ्गवन मिली हुई, 'भाटा' या लाल सूपा हुई खराब मिट्टी है। रेवाके वनमें शाल, सैर, सर्ज, तिण्डु आदि बड़े बड़े वृक्ष, लाय, महुआ, बुडा, रजन और गँद अधिक पाये जाते हैं।

इस राज्यके अधिवासी अधिकांश हिन्दू हैं, इनमें ब्राह्मण, श्रतिय और कुर्मी ही अधिक हैं। इसके बाद गोंड, कोल आदि आदिम जातिया भी बसती हैं। मुसलमानोंकी सख्या यहाँ उतनी अधिक नहीं है। यहाँकी उत्पन्न वस्तुओंसे अधिकांश राजस्व बमूल होता है। मोट आय प्रायः २२ लाख रुपये हैं। यहाँ ई० आई० रेलवेका सतना और दभौरा स्टेशन प्रसिद्ध है और राज्य के बीच दक्षिण जानेका एक बड़ा रास्ता है।

इतिहास—रेवाका वर्त्तमान राजवंश व्याघ्रदेवके वंशज हैं। व्याघ्रदेवने गुजरातसे आ कर गोन नद और तमसाके किनारेके जनपद पर अधिकार कर लिया। इसक पहले यह प्रदेश चन्देल, चेदो या कलचुरी, चौहान, सेङ्गर और गोंड राजाओंके अधिकारमें था। रेवाके राज-भाटोंके मतानुसार सं० ६८०में व्याघ्रदेव दलवलकी ले कर कालङ्गरके १२ मील उत्तर-पूर्व मर्फा नामक दुर्गमें आ कर रहने लगे। मर्फाके १५ मील उत्तर वाघेलमवन और १२ मील दक्षिण-वाघोलन ग्राम व्याघ्रदेवकी पूर्व स्मृतिकी घोषणा आज भी कर रही है। किन्तु भाटोंने जो संबन्ध निश्चित किया है, वह प्राचीन मालूम नहीं होता।

पियावन और अरहाघाटसे जो शिलालेख प्राप्त हुए हैं, उससे मालूम होता है, कि ईसाकी ११वीं शताब्दीमें यह समूचा प्रदेश वहाँके चेदिपति गाङ्गेयदेवके अधिकारमें था। उनके वंशज डहालीय राजा नरसिंहदेवने सं० १२१६में और उनके भाई विजयसिंहदेवने सं० १२३८ में राज्यका शासन किया था। और तो क्या वे लोष्यवर्मादेवके ताम्रशासनसे मालूम होता है, कि सं० १२६७ (१२४० ई०)में वे तमसा-तोरका उपत्यकाका शासन करते थे। ऐसी अवस्थामें इन स्थानोंमें व्याघ्र-देवका प्रभाव विस्तृत हुआ था, ऐसी बात मनमें नहीं आती। व्याघ्रदेव और उनके वंशधरोंके आधिपत्य विस्तारके साथ इस प्रदेशने वघेलवण्ड नामसे प्रसिद्धि लाभ की।

भाटाकी पुस्तकोंमें व्याघ्रदेवका नाम सिद्धराज जय सिंह लिखा है। उनकी पुस्तकोंमें उनके वंशजोंके भी कितने ही नाम मिलते हैं। जैसे—कर्णदेव, सोहागदेव, गाङ्गादेव, विशालदेव, नानुदेव और विहनदेव आदि। अन्तिम राजा विहनदेवके पुत्र दलकेश्वरदेव सन् १२४० ई०में सिंहासन पर बैठे। वे और उनके कनिष्ठ भाई मलकेश्वर मिनहाजका "तवकातई नसारी" नामक इतिहासमें "दलकि व मलकि" नामसे विख्यात हैं। ऐसी दशामें उनकी आठवीं पुश्तके व्याघ्रदेवको हम ईसाकी ११वीं शताब्दीके पुरुष कह सकते हैं। चेदिराजोंके प्रतापसूर्य अस्त होने पर उनके वंशके किसी राजाने इस प्रदेश पर अधिकार कर लिया था।

सन् १२०३ ई०में कुतुबुद्दीन वेगने कालङ्गरके किले पर आक्रमण किया था। उस समय यहाँ चन्देलपति अधिष्ठित थे। कुतुबुद्दीनकी मृत्युके बाद चन्देलराजको कालङ्गरके किले तथा अपनी पूर्व अधिकृत वस्तियों पर दखल जमा लिया।

मुसलमानों इतिहाससे हम यह भी जानते हैं, कि इसके बाद सन् १२३४ ई०में दिल्लीके राजा वयाना, कर्नाज, ग्वालियर आदि स्थानोंसे बहुसंख्यक सैन्यसंग्रह कर कालङ्गर और जंबू पर आक्रमण करनेके लिये अप्रसर हुए। 'जंबू' कहाँ है, इसका कुछ भी उल्लेख मुसलमानों इतिहासोंमें नहीं मिलता। केवल यही मालूम होता है, कि यह स्थान 'जंबू' ग्वालियरसे ५० दिनका रास्ता है। इससे यह मालूम होता है, कि यह स्थान रेवा-राज्यका बन्धोगढ़ है। ऐसा होने पर देखा जाता है, कि उस समय चन्द्रात्रेयगण जैसे कालङ्गरमें, वैसे वघेलगण बन्धोगढ़में अधिष्ठित थे। इसके बाद सन् १२४७ ई०में दिल्लीपतिने उलूख खां (पीछे जो सम्राट् वलवन नाम से विख्यात हुआ)के अधीनमें कालङ्गरपतिको जीतनेके लिये बहुत ही फौजे भेजीं। इस बार मुसलमानों फौजोंने कालङ्गर पर अधिकार कर राणाके हाथ सौंप दिया। मुसलमान-इतिहासमें वे दलकि मलकि नामसे प्रसिद्ध हैं। कालङ्गर या मालवपतिका उन पर कोई दबाव न था। उनकी सैन्यसख्या भी जैसे असंख्य थी, वैसे धनरत्न भी अतुलनीय था। उनके सभी दुर्ग सुरक्षित

भीर सुदृढ़ थे। उनका राज्य नामा अङ्गुलों तथा देकी मेड़ा गिरिमानाओंसे विद्य है। इससे पहले कीर् मुसलमान सैन्य इस राज्यमें घुस न सकी थी। जब मुसलमानों की उग्र प्रयातनोंमें पहुँची, तब राजा बड़ी साधन धनीसे विदेशको छोड़ राजनीति प्रगाढ़ अर्थकारणमें मगन परिवारक साधन दुर्गम गिरिप्रदेशमें बल गये। पहले इस दुर्गम गिरिप्रदेश पर कोई मुसलमान सैन्य चढ़नेको सोचो न हुआ। अतः साधन उरसाइयाकरसे रक्षा भीर मन्त्रियोंकी सहायतासे ऊपर चढ़ गये। राजा सपरिवार कीर् कर लिख गये। इस समय मुसलमानोंने जो लूट पाट की थी उससे अर्धव्य धनरक मिले थे। मुसलमान इतिहासकारोंने जिस राजाकी कृष्ण विष मन्त्रि नामक राजाका उल्लेख किया है, वह एक मनुष्य नहीं। बल्कि मङ्गलपोक कृष्णेश्वर भीर मसकेश्वर नामके ही राजकुमार हैं।

कृष्णेश्वर भीर मसकेश्वरक बाद बरियादेय, इसके बाद बहादुर राजा हुए। मङ्गलक मन्त्रिक अनुसार यह बहादुरदेय शिरोभर लूट राजको साहाय्य करनेक सिधे चढ़े सम्मानित हुए थे। इसी समय उन्होंने सन्मार्गसे पड़ विद्वान तथा कामधुरकिला पाया था। अङ्गुलोंकी पुस्तकमें जो समय निर्धारित हुआ है, यह विद्वान् हा मान्य योग्य नहीं। अनुलफ़्तकी भावना मन्त्रिकोंसे मालूम होता है, कि सन् १२७७ ई०में शाहीबहादुर १२ म मङ्गलक बुधमस उद्भूत वी मारे जानेके ५० वर्ष बाद अराबहादुर मुसलमान विद्वान् मन्त्रिकों पर आक्रमण किया था। इसका आक्रमण अर्ध ही गया था। इस समय बघेलराजक प्रभावसे शिरोभर राजा भी विपन्नित हो उठे थे। मुसलमान इतिहासकार जियामन् बहादुर विपन्नित मालूम होता है, कि सिद्धेश्वर शाहाक समय माटक राजा (अङ्गुलोंकी पुस्तककी अनुसार) भीरन मित्रापुरक समाप काम्ति तब राज्य विस्तार किया था। माया सन् १४१२ ई०में उन्होंने भीरपुरक शासक सुभारक वी पर आक्रमण किया

भीर उसको कैद कर लिया। चौड़े दिनके बाद उन्होंने सुभारकको छोड़ दिया। इसी समय सुलतान सैन्यके साथ काम्ति तक पहुँच गया। राय भीरने जा कर उससे मुलाकात की। सुलतानने भी अधीनता स्वीकार कर उनका जितमत पक्षी। किन्तु बघेलराज मगने प्राणक मयस सन् १४१५ ई०में माग भाये। सिद्धेश्वरने उनको बख्त इनेके अमिप्रायस उनके राज्य पर आक्रमण किया। जानघाटी या गिनी (कपीली) नामक स्थानमें राजकुमार दोस्तसिंहदेवने ससैन्य अस्थित हो सुलतानकी गतिको रोका। किन्तु मुसलमानोंने घोरतर युद्ध आरम्भ हुआ। सुलतान शीघ्र ही बन्धोगढ़ पहुँचा। राजा भीर सरगुजाको भीर मागे। राहमें ही उनकी मीत हो गई। सुलतान बन्धोगढ़स दान कोस उत्तर काकुन्द नामक स्थान तक भागे बह गया था किन्तु रसदकी कमाक कारण उसको लीट भागा पड़ा।

चौड़े ही समयक बाद भीरपुरक बुखेनशाहने सिद्धेश्वरक विरुद्ध अग्रधारण किया। इस समय बघेल राजकुमारने सुलतानकी सहायता की थी। शायद इसी कारण शिरोभरने भीर की उरपात न कर बघेलराज्य छोड़ दिया हो। इसके कुछ समय बाद सुलतान सिद्धेश्वर लोधीने बघेल राजकुमारोंसे ब्याह करना आह्वान किया। बघेलपति शशिवाहन राजा न हुए। मुसलमान पति शासक फरिस्ताने लिखा है, कि १०४ दिवस (१४१८-१४१९) में शशिवाहनन उष मयने बहनको देना न चाहा, तब सिद्धेश्वरन किरसे माट पर चढ़ाई कर दी। उसकी दृष्ट प चलाने बुद्धि बन्धोगढ़को जेत किया। सिद्धेश्वर समस्त राजकी तदस महस भीर जनभूम्य कर भीरपुर लीटा।

शशिवाहनक बाद योर्धसिंहदेव राजा हुए। योर्धसिंहक बाद उनक पुत्र वाटभानुदेवन राजसिंहासनको सुशोभित किया। राजमाट अग्रजान योर्धभानुक समयमें ही प्रकार किया है,—

पिराँक शिक तारा मन्त्रबहादुर,
राजा एव उमराव जमाने निगल मनो।
बदन बेधती बरी किङ्क न घर वाद,
क्यायद घाटा गूठ ताभे प्यगल मनो।

शेरशाह सजित प्रलेयको बढो अञ्जेश,
बृद्ध हुमायुनके महा ही उत्पात भयो ।
वस-हिन बालक अकबर बचाइये को,
वीरभानु भूपति अजेवटको पात भयो ।”

अर्थात् दिल्लीके सरदार, मनमवदार, राजा, राव, उमराव सभीका निपात हुआ। अभागिनो वेगम (हुमायूँ-को खो) को कही भी आश्रय न मिला। आखिर सुदृढ़ बन्धोगढ़में उसने आश्रय लिया। अञ्जेश कहते हैं, कि पीछे शेरशाहकी तूती बोलने लगी। यद्यपि हुमायूँने जलमें डूबनेसे रक्षा पाई थी, तो भी उन्हें 'कितनी मुसोवते' उठानी पड़ीं। वीरभानुरूप अक्षयवटका आश्रय कर बालक अकबरने रक्षा पाई थी।

सचमुच शेरशाहके अत्याचारसे हुमायूँ जब राज्य च्युत हुए तब अकबरकी माता बच्चेको ले कर बन्धो गढ़ भाग गई। यहां भी प्रवाद है, कि वीरभानुदेवने अपनी सेना दे कर बालक अकबरकी सहायता की थी। अकबरके सिंहासन पर बैठनेसे पहले ही वीरभानुके पुत्र रामचन्द्रदेवने पितृराज्य पाया था। अकबर जब दिल्लीकी मसनद पर बैठे, तब वे बचेरराजका उपकार रूमो भी न भूले। अकबरके शासन कालके इतिहासमें राजा राम चन्द्र का नाम भी मशहूर है।

१५५५ ई०में रामचन्द्र राजा हुए। उसी साल सिकन्दर शूरके पुत्र इब्राहिमने आ कर रामचन्द्रका आश्रय किया। गङ्गातीरस्थ करामामने रामचन्द्रका ताम्र-शासन निकाला गया है। वह शासनपत्र 'अकबरशाह गाजी'के ३रे वर्ष अर्थात् १५५७-५८ ई०का लिखा हुआ है। भारत-प्रसिद्ध गायक तानसेन पहले इन्हीं रामचन्द्र-की सभामें गान करते थे। अकबरने अपने सातवें वर्ष (१५६२ ई०)में रामचन्द्रके पास आदमी भेज कर तानसेनही मगा लिया था। तानसेनके चचे जाने पर रामचन्द्र बड़े दुःखिन हुए थे। जब आसफखान गङ्गा जीतने गया, तब रामचन्द्रने उसे रोकनेके लिये अख्यधारण किया। आखिर पराजयकी संभावना देख कर वे अकबर की अधीनता स्वीकार करनेको बाध्य हुए। अकबरके १४वें वर्षमें रामचन्द्रके हाथसे कालञ्जर दुर्ग जाता रहा। इस कारण अपमानके भयसे स्वयं न जा कर रामचन्द्रने

अपने पुत्र वीरभद्रको दिल्ली-दरवारमें भेजा। इससे अकबर रामचन्द्र पर बड़े असंतुष्ट हुए थे। उनके २८ वर्षा शासन करनेके बाद जब वे शाहाबाद जा धमके, उस समय उन्होंने भाटकी ओर अपनी सेना बढ़ाई थी। इस समय वीरभद्रने अकबरको बहुत समझा बुझा कर ठंडा किया था। पीछे रामचन्द्र स्वयं अकबरके निकट हाजिर हुए। किन्तु अकबरने बड़े सम्मानके साथ उनका स्वागत किया था।

रामचन्द्रके बाद उनके पुत्र वीरभद्र राजा हुए। दिल्लीसे अपनी राजधानी लौटने समय वे पालकी परसे गिर पड़े थे जिससे उन्हें सधन चोट लगी थी। इसी चोटसे उनकी मृत्यु हुई। वीरभद्रके राठोर-राज कल्याण मलकी कन्यासे वीरभद्रका विवाह हुआ था। वह राजकन्या सती होना चाहती थी, किन्तु दिल्लीश्वर अकबरने उनके छोटे छोटे बच्चोंकी ओर देण कर सती होनेसे रोक दिया।

वीरसिंहकी अकस्मात् मृत्युसे बन्धोगढ़में विशृङ्खला उपस्थित हुई। इस समय विक्रमादित्य वा विक्रमजित् नामक राजसम्पत्तिके एक युवक बघेल सिंहासन पर बैठे। ये ही वर्तमान देवानगरीके प्रतिष्ठाता हैं। श्वर अकबरने विक्रमजित्को पकड़ लानेके लिये इस्माइल कुली खां तो दलवलके साथ बन्धोगढ़ भेजा। विक्रम-जित्ने मुगलसेनापतिके पास आदमी भेज कर राजधानीमें घेरा डालनेसे मना किया। अकबरने उनकी बात पर कान नहीं दिया। आठ महीना घेरा डालनेके बाद अकबरके ४२वें वर्षमें बन्धोगढ़ मुगलोंके अधिकारभुक्त हुआ।

अकबरने अपने ४७वें वर्षमें रामचन्द्रके पीत दुर्योधनको भाटराज्य पर अभिषिक्त किया। उन्होंने उपयुक्त खिलअत भेज कर भी दुर्योधनका सम्मान किया था। पीछे जहांगीरके शासनकालमें रामचन्द्रके दूसरे पीत अमरसिंह दिल्ली दरवारमें सामन्त गिने गये थे। किन्तु शाहजहानने अपने राज्यके ८वें वर्षमें रतनपुरपति का दमन करनेके लिये अबदुल्ला खां वहादुरको सम्यैय भेजा। अमरसिंहने बिना युद्धके उनकी अधीनता स्वीकार कर ली। अमरसिंहके बाद उनके पुत्र अनुपसिंह राजा हुए।

शाहजहाङ्गके २४वें वर्षमें मनुपसिंहके बीरागङ्गके जमींदार
 ब्यायामको सामर्थ्य दिया था, इस कारण बीरागङ्गके
 जागीरदार पहाड़सिंह बुन्देलाने मनुपसिंह पर खड़ा
 कर दी। मनुपसिंह युद्धमें हार का कर सपरिवार रैवा
 राजधानीकी छोड़ गौड़नामा पर चले गये। इसके ५ वर्ष
 बाद रत्नाहाबादके शासनकर्ता सैयद सद्दाबत् का मनुप
 सिंहको दिल्ली-नूरबाग ले गये। वहाँ उन्होंने मुमखमान
 फर्मा प्रहण किया। दिल्लीमेंउत्ते उम्हें पांचहजारों मन
 सब्जारका पत् दे कर बन्धु तथा भास पासके देवोंका
 शासनकर्ता बनाया। मुसलमान इतिहासकार वृद्धकेभर
 से मनुप तक बघेलराजोंका जैसा परिचय दे गये हैं, वही
 संक्षेपमें किया जाता है। मनुपक परबर्षों बघेल राजाओं
 के सम्बन्धमें मुसलमान इतिहासकारोंने कुछ भी नहीं
 लिखा है। अतन्तर मङ्ग प्रथमें मानुसिंहका नाम मिलता
 है। वे मनुपसिंह एक पुत्र थे वा नहीं, उसका भाइ तक
 कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता है। पर हाँ मङ्ग कवियोंने
 मानुसिंहको हिन्दू बतलाया है। मानुसिंहको बाद अमि
 रुद राजा हुए। अमिरुदकी जब मृत्यु हुई, उस समय
 इनका छद्मक मनुपुत्तसिंह का महोत्सव था। यह
 स याद था कर पञ्चाराज छत्रगुप्तके पुत्र हृदयशाहने
 १७३८ ईमें रैवा पर हमला कर दिया। मनुपुत्तसिंहको
 ले कर उसकी माता प्रतापगढ़ भाग गई। हृदयशाहकी
 मृत्युके बाद मनुपुत्तसिंह पितृसिंहदासन पर बैठे।
 उन्होंने १७७५ ई तक राज्य किया था। पीछे उनका
 लड़का अजितसिंह राजा हुए। १८०६ ईमें उनका
 मृत्यु होन पर उनका लड़का जयसिंहदेवने राज्याधिकार
 प्राप्त किया। १९वीं जयसिंह एक शासनकाळमें रैवाराज्य
 में वृष्टि प्रमाव फैला था। १८१२ ईमें जयसिंहने वृष्टि
 गजमेंस्टेड साध मन कर लिया। १८४७ ईमें वहाँसे
 सर्गाहाह प्रया उठ गई। पीछे जयसिंह एक पुत्र विष्णुनाथ
 पितृसिंहदासन पर बैठे। कुछ महोने राज्य करने उन्होंने
 १८५४ ईमें पुत्र रघुराजसिंह एक किये सिंहासन छोड़
 दिया। १८८० ईमें रघुराजसिंहका मृत्यु हुए। १८५७-
 के गजमें वृष्टि गजमेंस्टेडको मरुद् देने के कारण उम्हें
 जागोर, गोद जनका अधिकार तथा १६ खनामी तोप
 मिली। उनका मजे पर पुत्र येष्टेष्टारमण सिंहासन पर

अधिकतः हुए। इनका जन्म १८७६ ईमें हुआ था।
 १८९७ ईमें उम्हें जी, सो एस, भाईकी उपाधि मिली।
 इनके वर्णवासी होन पर पुत्र गुडाबसिंहकी बहादुर
 राजसिंहासन पर बैठे। ये ही वर्तमान राजा हैं। १७
 तोपोंको इष्टे सखामी मिलती है।

नाथे रैवा राजाओंकी ताखिका की गए हैं—

नाम	अभिषेककाल	मन्तव्य
१। ज्यामदेव	११०० ई०	
२। कर्णदेव		
३। सोहागदेव		साहागपुरके स्थापयिता
४। शार्ङ्गदेव		
५। विद्याजदेव		
६। मानुदेव		
७। मनोकदेव		
८। विहण्यदेव		
९। वृद्धकेभर	१२४० ई०	मुसलमान इतिहासमें ये दोनों वृद्धकी और मखका नामसे मशहूर हैं।
१०। मखकेभर		
११। बरियारदेव	१३०० ई०	
१२। बल्लाजदेव	१३३० "	
१३। सिंहदेव	१३६० "	
१४। सैरवद्व	१३९० "	
१५। नरहरिदेव	१४२० "	
१६। भीरदेव	१४५० "	
१७। शाखियाहमदेव	१४६४ "	
१८। वीरसिंहदेव	१५२० "	वीरसिंहपुरके प्रतिष्ठाता
१९। वीरमानुदेव	१५४० "	
२०। रामचन्द्रदेव	१५५४ "	
२१। वीरमद्र	१५६१ "	
२२। विक्रमादित्य	१५६९ "	रैवा नगरीके प्रतिष्ठाता
२३। सुयोधन	१६०१ "	
२४। अमरसिंह	१६२० "	
२५। मनुपसिंह	१६७५ "	
२६। मानुसिंह	१६७७ "	
२७। अनिरुदसिंह	१६९५ "	
२८। मनुपसिंह	१७२५ "	

- २६। अजितसिंह १७७५ ई०
 ३०। जयसिंहदेव १८०६ ”
 ३१। विश्वनाथसिंह १८२५ ”
 ३२। रघुराजसिंह १८५४ ”
 ३३। वेङ्कटेश्वरमण १८८० ”
 ३४। गुलाबसिंहजी १९१० ” (वर्तमान राजा)

राज्यकी आमदनी कुल मिला कर करीब १४ लाख की है। राजाके पास ११४० पदाति, ५७४ अश्वारोही और १३ फमान हैं। रेवाके राजा बहुत दिनोंसे हिन्दी और संस्कृत भाषाके प्रेमी हैं। १८६६ ई०में ग्वालियरके प्रधान मन्त्री दिनकररावने यहा अङ्गरेजी स्कूल खोलनेकी चेष्टा की थी, पर उन्हें सफलता प्राप्त न हुई। भूतपूर्व राजा वेङ्कटेश्वरमणके समय यहा बहुतसे स्कूल खोले गये। आज राज्य भरमें दो हाई स्कूल जो इलाहाबाद विश्वविद्यालयसे संयुक्त हैं, ५१ ग्राम्य स्कूल और २ बालिका स्कूल हैं। स्कूलके अलावा १७ अस्पताल हैं।

रेवा—वघेलखण्डके अन्तर्गत रेवाराज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा० २४° ३२' ३० तथा देशा० ८१° १८' पू०के मध्य इलाहाबादसे १३१ मील दक्षिण पश्चिममें अवस्थित है। जनसंख्या २५ हजारके करीब है। यह नगर तीन दुर्गप्राकारसे सुरक्षित है। अन्तिम प्राकारके मध्य रेवा राजका प्रासाद अवस्थित है।

रेवाउतन (हि० पु०) हाथी। पुराने समयमें नर्मदाके किनारे हाथी बहुत पाये जाते थे।

रेवाकान्था (रेवा अर्थात् नर्मदाका कण्ठ वा किनारा)—वम्बई गवर्मेण्टके अधीन एक पोलिटिकल एजेन्सी। ६१ छोटे बड़े मिला वा करद राज्य ले कर यह एजेन्सी बनी है। इन ६१ राज्योंमेंसे ३को कर नहीं देना पडता है, ५ ब्रिटिश गवर्मेण्टके करद (इनमेंसे तीन बड़ौदा गायकवाड़को कर देते हैं), १ उदयपुरके अधीन और बाका बड़ौदाके गायकवाड़के अधीन करद हैं। ये सब राज्य अक्षा० २१° २३' से २३° ३३' ३० तथा देशा० ७३° ३' से ७४° २०' पू०के मध्य विस्तृत हैं। भूपरिमाण ४६७२ वर्गमील है। इसके उत्तरमें झुंजरपुर और बांसवाड़ाका मेवाड़ राज्य, पूर्वमें भालोद उपविभाग, पश्चिमहलका

दोहद, खाम्देश जिला और भूपार एजेन्सीका अली राजपुर और बहुतसे छोटे छोटे सामन्त राज्य, दक्षिणमें बड़ौदाराज्य और सूरत जिला तथा पश्चिममें भरौच, बड़ौदाराज्य, पाचमहल, खेड और अहमदाबाद जिला है। उत्तर दक्षिणमें इसकी लम्बाई १४० मील और पूव-पश्चिममें चौड़ाई १०से ५० मील है। इस भूभागके दक्षिण राजपिपला गिरिमाला और मध्यभागमें विन्ध्याद्रि प्रसारित है। यहा कई जगह खनिज पदार्थकी खान पाई जाती है। जंगलमें महुआ, महुगनी, शीशम, इमली, तरह तरहके आम, अर्जुन, वेर, खैर आदिके पेड़ पाये जाते हैं। जीव जन्तुओंमें बाघ, चीता, भालू, जंगली सूअर, शांभर हरिण, चितमृग, नील गाय और जंगली भैंस तथा पक्षिजातिमें नाना प्रकारका हंस, कारण्डव, तीतर और जलचर पक्षी देखा जाता है।

८वींसे १०वीं सदी तक रेवाकान्था कोल और भीलसरदारोंके शासनाधीन था। ११वीं, १२वीं और १३वीं सदीमें मुसलमान लोग जब राजपूत सरदारोंको बहुत तकलीफ देने लगे, तब वे यहा आये और कोल तथा भीलको परास्त कर उनके राज्य पर अधिकार कर बैठे। उनमेंसे राजपिपलाके राजा ही सर्वप्रधान थे। १६वीं सदीमें अहमदाबादके सुलतानोंने रेवाकान्था पर अधिकार जमाया। १६वीं सदीमें इस भूभागमें मरठोंका प्रभाव फैला था।

यहाके सरदारोंके कनिष्ठवंश कभी कभी नया राज्य अधिकार कर लेते थे। उन्हींके वंशधर अभी छोटे छोटे जमींदार कहलाते हैं। मराठोंके लूटपाटसे यह प्रदेश तंग तंग आ गया था। बड़ौदाके गायकवाड़ने जब इस ओर कुछ ध्यान न दिया, तब गवर्मेण्टने शान्तिस्थापनके लिये इस प्रदेशमें अपना हाथ बढ़ाया। १८२१ ई०में ब्रिटिश गवर्मेण्टके साथ गायकवाड़की संधि हुई। इससे गायकवाड़के अधीनस्थ सभी करदराज्य ब्रिटिश शासनाधीन हो गये। १८२५ ई०में पाण्डुमेवसके सरदार ब्रिटिश गवर्मेण्टके अधीन हुए। इसी समय सिन्धियाके अधिकार भुक्त पाचमहलका राजनैतिक कर्त्तृत्व ब्रिटिश गवर्मेण्टके हाथ सौ पा गया। १८२६ ई०में रेवाकान्थाकी पोलिटिकल एजेन्सी संगठित हुई। १८२६ ई०में वह एजेन्सी

उठा वो गर भीर सरदारके हाथ हा उसका शासनमार सोंपा गया। पाछे १८४२ ईमें फिरसे एजन्सो स्थापित हुइ तथा सरदारोंका अधिकार निर्दिष्ट कर दिया गया। ६१ राज्योंमे राजपिपळा हा सर्वप्रधान है भीर प्रथम भेणोका सरदार समन्व्य जाता है। छोटा उदयपुर, बारिया, सूड़, मूनाबाड़ा भीर बासासिमोर ये सब द्वितीय भेणोके ह। एह अपनी अपनी प्रजाको मृत्युदण्ड तक भी देनेका अधिकार है। बाकी ५५ राज्योंमे नकेइ मवासक मघोन २६, पाण्डुमेवासक मघोन २२, बोरका मवासक मघोन ३ है तथा निरकर कदाना भीर संजेली राज्य ३५ भेणोके समन्व्य जान है।

एह एजन्सोकी भाव कुल मिसा कर १२२४००८ ५० है जिनमेंसे १४०८०५ ५० वर्द्धाक गायकबाइका कर देना पड़ता है। इसमें ३४१२ प्राय लगत है। जनसंख्या ५ लाखके करीब है। सारो एजन्सोमें ४ म्युनिसिपलिटि, १४५ स्कूल १५ बायिका स्कूल, छः पुस्तकालय भीर १ छायाला है।

देवायस—सौराष्ट्रक मन्तर एक पहाड़का नाम।

देवायस—बम्बेप्रदेशक कोजाबा जिलाक मन्तगत एक नगर भीर दामिज-बन्दर। यह अक्षा० १८ ३३' उ० तथा देशा० ७२ ५४' पू०क मध्य मकोबाग सहरसे ३ कोस दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है।

यहां पुस्त गोत्र जातिकी जनक कीर्ति है। यवोंके एक समय यह पुरागोत्राधिष्ठत कोङ्कराज्यक मध्य अन्तिम उपनिषेठ था। यहाँका कीर्तिपुर्त भीर नगर प्राचीर देवने मायक है। कोङ्कडिका नको मुद्रानेक बन्द्ये नाप जहाज भादि रते जा सकत है। यहाँका जन प्राय ३५ कुट गहरा है। शहरमें टैमो कपड़े का मच्चा कारबार चलता है।

देवारी—पञ्जाबप्रदेशक मुक्यांय जिलाभगत देवारी नामक स्वामबासा बसिय जातिकी एक गाछा। ये लोग प्रधानता मूला कपड़े बना करत है। गया नगरमें इन लोगोंका कुछ वास देखा जाता है। राजपूताना भीर हिन्दुस्तानक दूसरे दूसरे स्वामीमें भी इन लोगोंका पास है। यहाँ ये लोग ऊट, बकरे, भैंसे भादि पाल कर जीविकापनिर्वाह करत है। अधिकांश मनुष्य हिन्दूधर्मा

यखन्यो है, कबो कबो इस्लाम धर्मायसम्या देवारी भी द्ये जाते हैं। राजपूतानके हिन्दू देवारी बड़े बसुर तथा भट्टि मयरा वाङ्गपुत्रोंकी तरह बुदांस्त वस्यु है। ये लोग दूसरेक बल बांध कर विषयक कल्पेपाळ ऊँट भादि पशुको इस प्रकार बुरा डेते हैं, कि उस भीर स्वाम करनेसे कमरठत होना पड़ता है। पहले उनमेंसे एक भादमी बड़ो तेजीसे पशुखमें घुम कर उस पशुको बर्छा मारता है जिसकी मजूर पहले उस पर पड़ जाती है। जब क्षतस्थानसं लक्ष मिळनेमे मयला है तब यह बछे'क मु हमें कपड़ा बांध कर लक्ष पीछ डेता है। पीछे यह लक्ष-स तराबोर कपड़ा छे कर घूमता हुआ जाता है। लक्षकी गंधस मोहित बसुरा पशु उवो भी उसका पीछा करता है स्त्री ही समो पशु उसके पीछे चलने लगते हैं। इस प्रकार ये उन सब पशुओंको किसी निवृत्त स्थानमें ले जा कर भापसमें बाँट डेते हैं।

मुद्रातक देवारी अपने अपने ऊट बकरे भादिको छे कर एकर उपर विषयक करत है तथा उनका दूध भीर पत्राम धेख कर मुद्रारा चलाते हैं।

देवारी—पञ्जाबप्रदेशके मुक्यांय जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २८ ५ स २८ २६' उ० तथा देशा० ७६ १८ स ७६ ५२' पू०क मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण ४२६ वर्गमांल है। उक्त जिलक उत्तर पश्चिम पहाड़ो प्रदक्ष कि कर यह उपविभाय बना है। यहाँकी मिट्टी बजुड होमे पर मी स्थानोय महोर अधियासिपोंक यत्नन जमीन बहुत उधरा हो गर है। उदयपुर नामक पहाड़स बजुन-सा छोटी छोटी नदियाँ इस उपविभागमें बहती हैं। उन नदियोंमेंसे ह सपता भीर साहबी नदी ही प्रभाग हैं। इसमें देवारी नामक एक शहर भीर २६० प्राय लगते हैं। जनसंख्या इह लाखसे ऊपर है। यह तहसील १८२४ ईमें गृहिया शासनस्थान हुई।

२ उक्त जिलका एक नगर भीर तहसीलका पिपार मन्तर। यह अक्षा० २८ १२ उ० तथा देशा० ७६ २८ पू०क मध्य विहाल उदयपुर ज्ञानक रास्त पर अवस्थित है। यहाँ रिवाज कितानपुर भीर राजपूताना मानवा रिकरपडा एक उकजन है।

यह नगर बजुन पुचना है। भाज भा पाठन बरतन

का कारवार यहाँको प्राचीन समृद्धिका परिचय देता है। अंगरेजों के दखलमें आनेके बाद यह स्थान पहलेसे और भी उन्नत हो गया है। म्युनिस्पलिटीके अधीन रहनेके कारण यह स्थान बहुत साफ सुधरा दिखाई देता है। वर्तमान नगरके पूर्वप्राचीर पार्श्वमें बुधिरैवारी नामक स्थान ही प्राचीन रेवारी नगरके ध्वंसावशेषका निदर्शन है। यहाँके लोगोंका कहना है, कि किसी समय राजा कर्मपालने इस नगरको बसाया था। राजा रेवने अपनी रेवती नामक कन्याके नाम पर इस नगरका नाम रखा। यहाँके देशीय सामन्त राजोंने मुगलके जमानेमें प्रायः अर्द्ध स्वाधीन भावसे राज्य किया था। उन्होंने इस नगरप्रान्तवर्ती गोफानगढ़ नामक स्थानमें एक दुर्ग बनवाया। वह दुर्ग अभी भग्नावस्थामें होने पर भी उनकी राजशक्तिका परिचय देता है। वे लोग जो स्वाधीनभावसे राज्य कर गये हैं वह उनके चलाये सिक्केसे अच्छी तरह जाना जाता है। उन सब राजाओंका चलाया हुआ सिक्का आज भी गोलकसिका कहलाता है।

मुगल साम्राज्यके अधःपतनके बाद यह नगर पहले मराठोंके हाथ और पीछे भरतपुरके जाट राजाओंके हाथ लगा। १८०२ ई०में दिल्लीप्रदेश अंगरेजोंके हाथ आने तक यह भरतपुरराज्यके अधीन था। पीछे १८०५ ई०में रेवारी परगना जब अंगरेजोंके दखलमें आया उस समय इस नगरमें विचारसदर स्थापित हुआ था। १८१६ ई० तक सदरके निकटवर्ती भरावास नामक स्थानमें एक सेनानिवास और गोरावाजार खोला गया। उसके नसीरा बाद उठ कर चले जानेसे स्थानीय विचारसदर भी गुरुगांव नगरमें चला गया था। अंगरेजोंके कठोर शासनसे डकैतोंका जो लोगोंको भय था वह जाता रहा। आसपासके सामन्त राज्योंसे दलके दल वणिक्गण यहाँ आ कर बस गये। धीरे धीरे नगरकी श्रीवृद्धि भी हो गई।

अङ्गरेजराजने १८०६ ई०में यह नगर भरतपुरराजके हाथसे छान कर तेजसिंह नामक एक सरदारको इजारा दे दिया। उनके वशधर सिपाहीविद्रोह तक पूर्ण प्रतापसे यहाँका शासन करते रहे। किन्तु गृहविवाद, यथेच्छचारिता और अमितव्ययिता दोषसे इस सामन्त पशकी महती क्षति हुई थी।

१८५७ ई०में विद्रोहवाहि धधकते ही तेजसिंहके पौत्र राव तुलारामने स्वयं स्वाधीनतासे रेवारीका शासन-भार ग्रहण किया। वे राजस्व सप्रह कर कमान ढालने लगे। थोड़े ही समयके मध्य उन्होंने सेनादल सप्रह कर दुर्द्धर्ष मेव जातिको वगीभूत कर लिया। सब पूछिये तो वे अङ्गरेजोंकी उपेक्षा करके ही ये सब काम किया करते थे। धीरे धीरे विद्रोहीदलमें शामिल हो कर उन्होंने अङ्गरेजोंका सर्वनाश करनेके लिये अपना आन्तरिक अभिलाष प्रकट किया। किन्तु वे अङ्गरेजोंसे डरते थे, इसमें संदेह नहीं। दिल्लीसे अङ्गरेजी सेना उनका दमन करनेके लिये जब आगे बढ़ी, तब वे और उनके भाई गोपालदेव अङ्गरेज-शिविरमें आ कर उनकी वश्यता स्वीकार न करके पलातक वेशमें इधर उधर आश्रय खोजने लगे। इसी अवस्थामें दोनो भाईकी मृत्यु हुई।

नगरभाग पार्श्ववर्ती समतल क्षेत्रकी अपेक्षा निम्न स्तरमें स्थापित है। इस कारण कभी कभी पहाड़ी नदियोंसे बाढ़का जल आ कर नगरको प्लावित कर देता है। १८७३ ई० साहबो नदीमें इतनी बाढ़ आई थी कि ७ मील दूर तकका स्थान डूब गया था। यहाँका पथघाट परिष्कार परिच्छिन्न है। नगरके दक्षिण पश्चिम में राव तेजसिंह द्वारा प्रतिष्ठित बड़ो दिग्गो है। उसमें पत्थरकी सीढ़ियां लगी हुई हैं। उसके चारों ओर देवमन्दिर हैं। नगरवासी उस दिग्गोमें स्नान कर प्रतिदिन देवमन्दिरादिके दर्शन करते हैं। दिग्गोके दो बगल बड़े बड़े उद्यान हैं। जनसाधारण प्रतिदिन वहाँ वायुसेवन करने आते हैं। रेल स्टेशनके पास पेसी एक भी सुन्दर दिग्गो नहीं है। चारों ओर मसजिद भी शोभा देती है।

पीतल और रांगा धातुके पात्रादिके लिये यह स्थान मशहूर है। इसके सिवा यहाँ अच्छी अच्छी पगड़ी भी बनती है। राजपूतानेमें बहुत दूर तक रेल्व लाइन खुल जानेसे वाणिज्य व्यवसायमें बड़ी सुविधा हुई है। १८६७ ई०में यहाँ म्युनिस्पलिटी स्थापित हुई है। शहरमें विचार अदालत और राजकार्यालयके सिवा टाउनहाल, सराय, गवर्मेण्ट हाई स्कूल और अस्पताल है।

रेवास—बन्धुप्रदेशक कुलावा जिलेके मझीबाग उप विभागके अन्तर्गत एक बन्दर। यह अक्षां १८ ४० ३० तथा देशां ७२ ५८ पु०के मध्य मझीबागसे ५ कोस उत्तर-पूर्वमें अवस्थित है। यहाँ अधिकतर मत्स्य व्यवसायियोंका बास है। बरबरेसे यहाँ प्रति दिन छीमर आता जाता है। स्थानीय शस्त्रादिक वाणिज्यके लिये यह स्थान प्रसिद्ध है।

रेवेण्यू (म० पु०) किसी राजा या राज्यकी वार्षिक आय जो माछगुहारी, भाबकारी, इन्कम टैक्स, कस्टम इत्यादि कार्योंसे होती है।

रेवेण्यू बोर्ड (म० पु०) वह वड्डे बडे मकसतोंका वह बोर्ड या समिति जिसके अधीन किसी प्रदेशक राजस्व का प्रबन्ध और नियन्त्रण हो।

रेवणुगङ्गा—सारन जिलेके अरर एक नगर।
गारना देवा।

रेवोचरम् (सं० पु०) एक वैदिक ऋषिका नाम।
(यजु०भा० १२५॥१०)

रेवाण्डुमान (म० पु०) १ देश या राज्यकी शासन प्रणाली या सरकारमें भाषाविमल और मीथण परिवर्तन, राज्य विच्छन्न। २ समाजमें ऐसा उद्वेग और या परिवर्तन जिससे पुराने संस्कार, आचार विचार राजनीति इत्यादि आदिक अस्तित्व न रहे, फिरतार।

रेवोण्डुमान (म० पु०) १ राज्याधिकारी, बिच्छन्न पथी, रेवोण्डुमान सम्बन्धी।

रेवम—शब्दोंके वेदमें जो नामा प्रकारके विह्वल बल हे गनेपाछे कीड़े पैदा होते हैं, उरहाक कोप या कोपों मेंसे जो महान् सुखसे निकलता है, वही रेवम है। नामा प्रकारके रेवमक कीड़ोंसे रेवम पैदा किया जाता है। रेवमके कीड़े जो प्रकारके होते हैं—एक पाखत् और दूसरे ज गत्तो।

पाखत् रेवमक कीड़े जो अनेक प्रकारके होते हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं—(१) विद्यापती काड़े (Bombyx moti), (२) बड्डे कीड़े (Bombyx textor), (३) निस्तारो, मन्नाजी या कोनवी कीड़े (Bombyx trocari), (४) देशी या छारे कीड़े (Bombyx fortunatus), (५) जीवाकीड़े (Bombyx alensis)

माखि। इनके अलावा भारतकाती कीड़े (Bombyx arracaenensis), भासामी कीड़े और मेदिनीपुरके कीड़े भी उल्लेखयोग्य हैं। भारतकाती और भासामी कीड़े बडे कीड़ोंमें शामिल हैं। मेदिनीपुरके कीड़े कुछ पीलेपनकी लिये हुए होते हैं और उनके साथे सफेद होते हैं तथा भासामीके कीड़े खोती कीड़े की श्रेणीक होत हैं। इन सब कीड़ोंकी गिनती पाखत् कीड़ोंकी ही जा सकता है।

जड़की रेवमक कीड़े जो नामा प्रकारके हैं, जिनमें पिभोथिला (Theophyla) आदिक कीड़े ही काम जायक अच्छे कोपे पैदा करते हैं। ओसिनारा (Oxynara), त्रिलोका (Trilocha) और एथोसिया ये तीन आदिक कीड़े पैदा करते हैं।

उपर्युक्त नामा प्रकारके रेवमो कीड़ोंके सिवा और भी कई आदिके कीड़े कोपे पैदा करते हैं। उनमेंसे जिन कोपोंमेंसे अन्ना सूत निकलता है, उन्हींकी ज्यादा कदर की जाती है। जिन कोपोंसे अन्ना सूत निकलता उनके नाम ये हैं—

(१) विद्यापती कोपा (Bombyx Laeyocampotus), (२) संहाइ कोपा, (३) भासामी मूगा (Antheraea assoma) और तसरकोपा (Antheraea mylitta) ये मुख्य हैं। इस प्रकार कलार करने जायक और भी अनेक प्रकारके कोपे आविष्कृत हुए हैं। परन्तु ये इतने दुर्लभ हैं, कि ज गत्तोंमें जोड़ कर इससे रोज़गार बनाना एक तरहसे असम्भव बात है।

जिन सब कोपों की कलार नहीं की जा सकती अर्थात् जिन कोपोंसे अन्ना सूत नहीं निकलता उन प्रकारके, उनमेंसे अधिकतर प्रकारके होते हैं। इस आदिक कोपोंमें रेवमोंके कोपे (Itacus Riana और Attacus atlas) ही सर्वोत्कृष्ट हैं। ये कीड़े मंडीके पत्ते खा कर कोप तैयार करते हैं। इनमेंसे अधिकतर मद्रास प्रदेशके कोट भरि कस रिसिनोस अर्थात् असल म डोंके कोपोंसे अन्ना बनाना रेवम पैदा करते हैं, परन्तु यह रेवम मूतके रेवम अथवा गरद या म डोंके रेवमक समान कीमत्त नहीं होते। Attacus cyathia नामक जो ज गत्तो कीड़े पाये जाते हैं, ये गृहस्थित रेवमक कोपोंकी ही एक जाति है।

कृकडला (Cricula) जातीय निकृष्ट रेशमी कीड़े भारत के नाना स्थानोंमें पाये जाते हैं। राचोकी तरफ इसका सूत व्यवहृत होता है। इसके अलावा और भी सैकड़ों प्रकारके कीड़े हैं, जिनका रेशम काममें नहीं आता। फ्रान्समें नासपाती फलके पेड़ोंमें एक प्रकारकी मकड़ी होती है, जो रेशम पैदा करती है। उसके बोधेमेसे रेशम निकाल कर उममे छोटे छोटे कण्डे बनाये जा सकते हैं। परन्तु वह व्यवसाय उपयुक्त कदापि नहीं हो सकते।

पालतू रेशमी कीड़ोंमें पेटके बल रेंगनेवाले वडे कीड़े ही अच्छे समझे जाते हैं। बहुतोंका ऐसा विश्वास है, कि पहले पहल ये कीड़े मणिपुरमें इस देशमें आये थे। जंगली कोयोंमें विलायती कोये सबसे श्रेष्ठ होते हैं। जो कीड़े इन कोयोंको बनाते हैं, वे कोयारकस आइलेक्स नामक पेड़की पत्तियाँ खाते हैं। जितने प्रकारके भी विलायती कोये हैं, वे सब कभी न कभी चीन देशसे ही विलायतमें गये हैं।

यह बात पहले ही बही जा चुकी है, कि बंगालमें जितने भी प्रकारके कीड़े होते हैं, उनमें वड़े कीड़े ही सबसे श्रेष्ठ हैं। मुर्शिदाबाद, वीरभूम, मालदह आदि जिलोंमें कीड़े पैदा करनेके लिये विस्तृत तूंतकी खेती होती है। बंगालमें किस प्रकार तूंतकी खेती होती है, यहा सक्षेपमें उसका विवरण लिखा जाता है।

तूंतकी खेती।

शीतकालमें फावडेसे एक एक हाथ गहरी जमीन छोड़ कर छोड़ देनी चाहिए। वैशाख तक यों ही छोड़ देनेके बाद वर्षा होने ही उसमें दो बार खेती करनी चाहिए। ज्येष्ठ, आषाढ़ और श्रावण मासमें भी एक बार खेती करनी चाहिए। वर्षाका अन्त होने पर जमीनमें हल जोतना चाहिए और फिर पट्टेला चला कर जमीन बराबर कर देनी चाहिए। इस प्रकार जोतनेसे जमीन उमदा हो जाती है। इसके बाद रस्सी डाल कर लाइन ठीक करके एक हाथके फासलेसे जमीन खोदनी चाहिए। फिर उन खुदे हुए स्थानोंमें छोटी छोटी एक एक डाली गाड़ देनी चाहिए।

माघ फाल्गुनमें डाली लगाना हो, तो अगहनमें जमीन

खोदना और पौष मासमें जोतना समाप्त कर देना चाहिए। पीछे डाली लगानी चाहिए। मुर्शिदाबादकी तरफ आश्विन कार्तिक मासमें और मेदिनीपुरकी तरफ माघ फाल्गुन मासमें डाली लगाई जाती है। ये डालियाँ पकी अवस्था अंगुलिके समान पतली पतली होनी चाहिए। काटनेके बाद एक मास तक छायामें रख कर तीसरे चौथे दिन उनमें पानी देते रहना चाहिए। हर एक जमीनमें तूंतकी पैदावारी हो सकती है। परन्तु जमीन अच्छी तरह जोती जाय, तभी पौधे जल्दी और गूब बढ़ने हैं। डाली लगानेके बाद जय पौधे ठीक पंक्तिवार हो पाद अंगुल ऊंचे हो जायें, तब एक दफे खुरपेसे उन्हें हिला देना चाहिए। अढ़ाई महीने बाद ही वे पौधे १-१॥ हाथ उंचे हो जायेंगे। इस समय उनकी पत्तियाँ बहुत ही नरम और पतली होती हैं। ये पत्तियाँ अगर रेशमी कीड़ेको शैवावस्थामें दी जायें, तो कीड़ेको रसा नामक एक प्रकारका रोग उत्पन्न हो जाता है। इस कारण उस समय पौधोंको एक बार जड़से छाट कर बीचमें स्थानमें हल चलाना चाहिए। उसके बाद नये पौधे निकले गे, जो कि प्रथम कीड़ोंके पालनेमें काम आते हैं।

तूंतके खेतके लिए ताल या नालोंकी मिट्टीका अच्छा सार समझा जाता है। तोलकी सिटी प्रत्येक बीघामें पाँच गाड़ी, सडे गोबरका सार प्रत्येक बीघामें १० गाड़ी, कीड़ोंकी सड़ी मँगनी प्रत्येक बीघामें दो गाड़ी, सोरा प्रत्येक बीघामें आध मन—इस प्रकारका सार ही तूंतकी खेतीके लिये अच्छा होता है। सारके बिना तूंतकी आवादीमें तेज नहीं रहता। इसके सिवा और भी कई तरहकी व्यवस्थाएँ हैं। तूंतकी जमीनमें अकसर पानी नहीं दिया जाता। जहाँ पानी देनेकी सुविधा प्राप्त है, वहा पानी सीचनेसे वर्षमें दो बारसे ज्यादा पत्ते नहीं काटे जा सकते। अर्थात् अगहन, चैत, भाद्र और आषाढ़—इन चार महीनोंमें चार बार पत्ते छाँट कर कीड़े पाले जाते हैं। पश्चात् माघी और वैशाखी कीड़े पालनेकी प्रथा भी कहीं कहीं पाई जाती है। काफी तीरसे आवाद करनेसे दो वर्ष बाद प्रत्येक बीघामें १ सौ मन पत्ते हो सकते हैं। कीड़ोंको १०० मन पत्ते

विज्ञानसे पाँच मनक मगमग कोये पैदा हो सकते हैं। शीतके उपयुक्त कोप होने पर हो रुपये सर विक्रि जाते हैं। वर्षार्थ २५) २० वर्षे करक एक बोधा जमानमें १ वर्षमें १००) से ३००) रूपय तकके कोये प्राप्त हो सकते हैं। इस देशमें साधारण जिस ढ गस खेती करते हैं, उसमें कष कुछ ज्यादा पड़ता है। परन्तु यदि तूतक पेड़ोंको बड़ा होने दिया जाय, तो फिर आबाबोमें कष नहीं होता। मन्थान्य देशोंमें बड़े पौधाको पत्तियां लिजा घर देशमें कीड़े पाके जाते हैं। इस कारण इस देशकी अयेसा मन्थ देशोंके देशमेंको कोये सस्ते पड़ते हैं। यहाँ पर भी मन्थ देशोंके लच्छ बड़ तूतके पीये पैदा करने चाहिए। पेड़को बड़ा करनेके लिए घर पाँच वर्ष तक उसको पत्ते कर्षा न करने चाहिए। फिर पाँच वर्ष बाद पेड़ व्यवहारयोग्यो हो जाता है। परन्तु किसानोके लिये ऐसा करना कठिन ही है। जमी दारोंको इस विषयमें प्यान देना चाहिए। इससे जमी दारोको परिषद कामकी सम्भावना है।

सब तरहके तूतके पेड़ कीड़ोंके लिये उपयोग बड़ा होते। बड़े बड़े फाले फल देनबाड़े जो पेड़ होत हैं, उससे कीड़ोको सुविधा नहीं हाती। पेड़के बल रोगने पाके छोटे कीड़े इस पेड़की पत्तियां खा कर भ्रमसर बछसिया रोगसे मर जाया करते हैं। हाँ दूसरी आलिक कीड़े इसको पत्तियां खा कर बहुत धोड़। देश बनाते हैं। छोटे कीड़े बङ्गालके देशी गहलुक सिबा मन्थ किसी तूतकी पत्तियां खा कर काफी तीर पर जाये नहीं बना सकते। सिवायतो तूत, चीना तूत किसि पान तूत भादि कुछ भेजीक तूतके पेड़ बड़े होते हैं। इनकी पत्तियां खा कर कीड़े उत्तम कोये बनाते हैं। बोनका समय उपस्थित होने पर एक बोटकमें कपूरके पानामें दो घंटे तक तूतका बीज मिगो देना चाहिए। दो घंटे बाद बोटसमेंसे बाज निकाल कर फिर उम्ह बोना चाहिए। इस प्रकार बीज बोनसे शीघ्र ही म कुट निकलता है। साधारणतः पीयेकी छोटी छोटी बाला काट कर वही छपाई जाती है।

राम-कीरका विवरण।

ऊपरमें छोटा पिन्नु वा बंदो पिन्नु, चम्य बनरो

या मन्थानो पिन्नु, चीना और बुलु बड़ा पिन्नु इन पाँच प्रकारके देशमेंकी कीड़ोंका उल्लेख किया जा चुका है। इनमेंसे चीना बुलु और बड़ा पिन्नु मेदिनीपुर जिलेमें ही बहुतायतसे देखा जाता है। मुर्शिदाबाद और बोरूम जिलेमें भी थोडा बहुत पाया जाता है। यह कीड़ा साल भरन सित्त एक बार पैदा होता है। इसका कोया सुन्दर, सफेद और बड़ा होता है। बड़े पिन्नु का देशम सबसे उमहा होता है। कुछका विषय है, कि बड़े पिन्नुका कोया बनाना प्रायः उठ सा गया है। और इसके देशमेंकी रफ्तगी भी यह ही गई है। बड़े पिन्नुसे जो कुछ देशम पाया जाता है उसे देशी तातो अधिक मोडका रूपका बनानेके लिये खरीद रखते हैं। मेदिनीपुर अख्यमें सफेद, काक, सफ़र और पीले रंगके बड़े पिन्नु देखे जात हैं। बड़े पिन्नुकी प्रजापति क्षेत्रमासमें म हा देतो है। एक महीनेमें उस मडेमेंसे कीड़े बाहर निकलते हैं।

बङ्गाल देशमें जोग पिन्नुकी पाबनेक लिये उपयुक्त घर बना रखने हैं। यह घर मिट्टीके बने होने हैं, बीह बीह उबम घेरा दे कर भी घर तैयार करता है। यह घर इस प्रकार बनाया चाहिये कि उसमें झाड़ा या गर्मी घुस न सके। घरमें एक बड़ा दरवाजा और ऊपरकी ओर एक वा दो खरोके खाना आवश्यक है। घरमें किसी ओरसे मककी न आ सके इस पर विशेष ध्यान रहे। इसका खिय खरोये और दरवाजेके ऊपर दो थोक जरका देना उचित है। जिस समय मककीका अधिक उपद्रव रहे उस समय विशेष सावधानीको जरूरत है। जिस प्रातुमें भ्रमसर जिस मुण्ड हवा बहती है उसका विपरीत मुण्डपासे घरमें पिन्नु पाबना उचित है। गिट्टू अब कोयेकी काट कर प्रजापतिरूपमें बाहर निकलता है, तब बाजोत्पादनक सायक होता है। प्रजापति कोपसे बाहर निकल कर ही स्त्री-पुंस्वमें संगत होता है। दो एक दिनके भीतर ही म हा पाता है। एक एक प्रजापति ४५ सौ छोटे छोटे म डे देती है। म डे देनेक बाद ही कायबीबिगण्य प्रजापतिको मार कर घरसे निकाल देत हैं। सही म डे काममें माते हैं सो नहीं। कुछ म डे तो फूटते हैं म डे, कुछ म डेको म डेते आ

जाने हैं, कुछ टिकटिकिया और चूहेका भाजन हो जाता है। इस प्रकार जो बच जाता है उनमें भी सभी प्रजापतिके अंडोंमें समान कोया नहीं होता। बड़े, पिछ्लूके सिर्फ चार प्रजापतिके अंडोंसे, निस्तारी पिछ्लूके छःसे तथा छोटे पिछ्लूके दश प्रजापतिके अंडोंसे एक सेर कोया हो सकता है।

शहतूतका पत्ता ही पिछ्लूका जीवन है। अंडेसे जब पिछ्लू निकलेगा, तब डेढ़ मन कोयेका पिछ्लू बड़े टोकरेके आधेमें रहेगा। डेढ़ मन कोया बनानेमें ४० बड़े बड़े टोकरेकी जरूरत होती है। प्रत्येक टोकरा अन्दाज ४ हाथ लम्बा और ३ हाथ चौड़ा रहेगा। यदि वह टोकरा गोल हो, तो उसका घेरा ३॥ हाथ होना उचित है। टोकरा छोटा होने पर परिश्रम भी अधिक लगता है। टोकरेमें पिछ्लूको अलग अलग रखना चाहिये। इस समय शहतूतके जितने पत्ते टोकरेमें डाले जायेगे, उतने ही पिछ्लू बढ़ेंगे। ३० दिन पत्तोंको खा कर वे प्रायः १०० गुने स्थान छेक लेंगे हैं। उन ३० दिनोंके मध्य पिछ्लू ४ बार खोल छोड़ता है। एक एक खोल छोड़नेके बाद पिछ्लू प्रायः ३ गुना बढ़ जाता है। अर्थात् जो पिछ्लू पहले आधे टोकरेमें रहते हैं, काया-कल्प छोड़नेके बाद उन्हें डेढ़ टोकरेमें रखना होगा। दो कल्पके बाद ४॥ टोकरेमें, तीन कल्पके बाद १३ टोकरेमें और अन्तिम काया कल्प छोड़नेके बाद ४० टोकरेमें उन्हें रखना होगा।

जाड़ेके समय ३० टोकरोंमें भी १॥ मन कोया तैयार होने लायक पिछ्लू रखे जा सकते हैं। डेढ़ मन कोया तैयार करनेके लिये ३० मन शहतूतके पत्तोंकी जरूरत होती है। यदि पत्ता अधिक हो जाय, तो कोई क्षति नहीं किन्तु उसमें खिचाव पड़नेसे भारी नुकसान होता है। डेढ़ मन कोयेके लिये बड़े पिछ्लूकी १५० चोकड़ीके अंडे, निस्तारीकी २५० चोकड़ीके अंडे और छोटे पिछ्लूकी ४०० चोकड़ीके अंडे रखने होते हैं। जिस देशमें पत्ते अधिक मिलते हैं वहा इससे दूने अंडे रखनेमें भी कोई नुकसान नहीं। मुर्शिदाबादके लोग समझते हैं, कि ५०० निस्तारीकी चोकड़ीके वा छोटे पिछ्लूकी ८०० चोकड़ीके अंडोंसे १॥ मन कोया निकाल सके, तो काफी है। अंडोंके

बदले कोया ला कर यदि अंडे दिलवाने हो, तो जितनी चोकड़ी कही गई है, उससे दूने कोयेकी जरूरत होगी। जिस देशमें शहतूतके पत्तोंका अभाव है वहां डेढ़ मन कोया बनानेके लिये ५०० निस्तारी कोयेके अंडोंकी आवश्यकता होती है।

पहले जो ४० टोकरोंकी बात लिखी गई है उन्हें ढरुनेके लिये ८० पोठिया मछली पकड़नेके जालके समान मापसई जालकी जरूरत होती है। पिछ्लूके ऊपर जाल बिछा कर उस जाल पर ताजी पत्तिया बिछा देनेसे पिछ्लू नीचेकी मैली पत्तियोंसे निकल ऊपरकी ताजी पत्तियां खाने आता है। तीन वार पत्तियां देनेके बाद पिछ्लू समेत जालको एक दूसरे टोकरेमें रखना होता है तथा जिस टोकरेमें पहले पिछ्लू था, उसकी मैल धरके बाहर ला कर साफ करनी होती है। दूसरे टोकरेके ऊपर जो पिछ्लू रखा गया, उस पर भी एक जाल बिछा कर ताजी पत्तियां देनी होंगी। तीन वार पत्ते देनेके बाद अर्थात् एक दिनके बाद फिर ऊपरके जालके साथ पिछ्लूको दूसरे टोकरेमें रखे और नीचेके जाल तथा टोकरेकी बाहर ला कर मैल साफ करे। इस प्रकार प्रत्येक टोकरेके लिये कमसे कम दो जालकी आवश्यकता होती है।

दूसरे टोकरेके ऊपर पिछ्लूको सख्या यदि अधिक रहे, तो उन्हें दूसरे टोकरेमें रखना होता है। यदि देखा जाय, कि बहुतसे पिछ्लू मैली पत्तियों पर निश्चलभावमें पड़े हैं, ऊपर उठने नहीं पाते, तब जानना चाहिये, कि वे काया-कल्प छोड़ते हैं। यदि कीड़े ऊपर चढ़ आवें, तो जाल न दे कर केवल पत्तियां देनी होंगी। पिछ्लूका घर अधिक ठंडा होने पर और भी दो एक वार पत्ता ला कर वे रह सकते हैं। जाल उठा लेनेके बाद यदि नीचे थोड़े पिछ्लू पड़े देखे जायं, तो उन्हें खूंटी द्वारा ऊपर चढ़ा कर ऊपरवाले पिछ्लूमें मिला दे। बाद उस पर जाल बिछा कर पत्तिया दे दे।

पिछ्लू जब बहुत छोटे रहते हैं, तब पत्तियोंको बहुत वारीक करके उन पर बिछा देना चाहिये। कीड़ेका आकार ज्यों ज्यों बढ़ता जायगा, त्यों त्यों पत्तीका टुकड़ा बढ़ाते जाना चाहिये। दो काया कल्पके बाद बहुत वारीक डालियां तथा कोमल पत्तिया देनी जा सकती

हैं। पिछूको पहिले मुलायम पोछे कड़ी पत्तियां देनी चाहिये।

पहले जो कीड़ा निकलता है, उसे दूधो और उसके बाद निचले हुए कीड़ेको यदि मुलायम पत्तो आनेको दो ज्ञाप, तो रसा नामक एक प्रकारका रोग होता है।

विनायतो कीड़े मड़े अन्नका हा पाये जाते हैं। बड़े कीड़ेके मड़े कपड़ेके ऊपर छपे रहते हैं। देशो कीड़ेके मड़े दोकरे पर कागजके ऊपर पारे जाते हैं। सृष्टिपाक जलमें मड़े धो लेते होते हैं। मड़ा जिस घरमें रहता है वह घर न अधिक ठंडा रहे और न गरम। छोटा पिच्छू निस्तारी, मीना और बृण इन सब पिच्छुओंका शोथलमोषमें रहना नुकसान नहीं होता। छोटे पिच्छू निस्तारी भादिक मड़े फूले पर उसके ऊपर छोटी उंटो पत्तियां काट कर बिछा देनी चाहिये। क्योंकि सधैरेसे शाम तक पिच्छू मड़ेसे निकल आते हैं, इसलिये उस पर पत्तोंका बिछा रहना जरूरी है। मच्छे मड़ेको मच्छी तरह रकनेसे दो ही दिनमें ये निकल आते हैं। पहले दिनके कीड़े को गोधे और दूसरे दिनके कीड़े को ऊपर रकना होता है। प्रतिदिन सधैरे, शीपहर और रात को ३ बजे-पन्ना देना होता है। एक दिनके अन्तर पर दो पहरके समय पन्ना देना चाहिये। पोछे माख ये कर दोकरेसे परिष्कार नीर पिच्छूके पने होनेसे पत्तोंका परिमाण घटा देना चाहिये। पिच्छू ठब मड़ेसे निकलता है, ठब २३ या २४ दिनमें पन्ना बाने लगता है और कीषा तैयार करता है। इस समय मूख पिच्छूको प्रतिदिन चार पांच बार पन्ना देनेसे १८१९ दिनके मध्य पन्ना पाने कर कीषा तैयार कर सकता है। जाड़ेके समय अक्टूबर १०१४ दिनमें, चिगु पर गरम रकनेसे २४२५ दिनमें भी कीषा तैयार हो सकता है। पिच्छूके घरमें बहुत सावधानीसे और धीरे धीरे भाड़ देना होता है। धूज उद्यममें पिच्छूके काकशिवा नामक रोग होता है।

पिच्छूका रोग।

पिच्छूके तरह तरहके रोग होते हैं। उनमेंसे क्यारोग ही बहुत कुछ संशयमक है। परीक्षा कर देना पया है, कि एक घरमें एक जगह १२ जातिका पिच्छू पाया जाता है। तनमें ११ जातिका पिच्छू विशुद्ध धोजसे और केवल एक

जातिका पिच्छू क्यारोगयुक्त धोजसे उत्पन्न होता है। इन बारह जातिके पिच्छुओंमें धोजे ही समयके अन्तर रेंडोके पिच्छू और शहदुन पेड़के पिच्छूको छोड़ कर दूसरे सभी पिच्छू एक संशयसे क्यारोगाकार्य हुए थे। अतएव रोगो पिच्छूको अच्छे पिच्छूके साथ नहीं रकना चाहिये। काकशिवा और रसारोगकी बात पहले ही लिखी जा चुकी है। नाना जातिके पिच्छू एक ही छोट घरमें एक धूजे गये हैं। जो छोटा पिच्छू जितना अल्प रोगाकार्य होता है, निस्तारी पिच्छू उतना अल्प नहीं होता। फिर निस्तारी पिच्छू जितनी भासानी से बीमार पड़ता है, वही पिच्छू उतनी भासानीसे नहीं पड़ता। शुद्धपाकित पिच्छू विशुद्ध वायु सेवन द्वारा सहजमें बेस रोगग्रस्त नहीं होते। पाषण्ड पिच्छूकी अपेक्षा अन्नकी पिच्छू अभावनाः अन्नक और बलिष्ठ होते हैं। फिर कोई कोई पासुनू पिच्छू अन्नकी पिच्छूकी तरह ठेकनेमें लगते हैं। फ्रांस देशमें मरिक्को वा कप्लो नामक एक प्रकारका पिच्छू देखा जाता है। यह घोर काका और बहुत बलवान् होता है। एण्डिया-मादनरके स्मर्ना नगरके समीप पुनर्बिन् प्राममें पिच्छूके बीषका एक बड़ा कार बाना है। उस कारबानामें पिच्छूके शरीरमें जिवाकी तरह काका काका वाग देखा जाता है। इस जातिका पिच्छू बड़ा बलवान् और सहजमें रोगाकार्य नहीं होता। परन्तु मोतर पिच्छूका पासन ही पिच्छूके रोग का कारण है। प्रत्येक घरमें ११,१७ टोकरे नरका कर केवल ८१० टोकरे रकनेसे तथा प्रत्येक टोकरेमें २३ कार्पाषण नरका कर डेड़ वा दो कार्पाषण रकनेसे पिच्छू मारोग और सबध रह सकता है। उपरोक्त क्य (Pebrine) सरा (Grasserie) और काकशिवा (Placherie) रोगको छोड़ कर म्यूना या छोट (Muscardine), लाली या रातूनी, माछी, कीषाकाटा कीड़ा वा काम कुदुर और सारे कीड़ा, माजका कोषा, उबध कोषा वा गेटे कोषा भादिक रोग होता है तथा पिपोसिका मच्छे, टिफ्टिकी भादिका उत्पात पिच्छूका अविपद्यकर है।

१८४६ ई०में मेननिक साहबने सबसे पहले क्यारोग का धोज भाविष्कार किया। चिगु इस समय ठहूँनि

इसको चूनारोगका बीज समझा था। पीछे १८६५-६६ ई०में पास्तुर साहवने विशेष परीक्षा द्वारा उसे चूनारोगका बीज न बता कर कटारोगकी बीज साबित कर दिखाया। किन्तु बंगालके रेशमजीविगण बहुत पहलेसे कटा और चूनरोगको भिन्न भिन्न समझते थे। कटारोगका बाह्यलक्षण यूरोपमें और बङ्गालमें एक सा नहीं है। बंगालमें साधारणतः निम्न प्रकारका लक्षण देखा जाता है—

१। अंडे फूटनेके समय ३० दिनोंके बाद हठात् बहुसंख्यक पिल्लूका प्राणनाश।

२। मृत्युसे पहले कीड़ेका वर्ण कटा और खच्छ।

३। आकारमें छोटा होता है अथवा नियमित पालन करने पर भी छोटा बड़ा दिखाई देता है। बङ्गालमें कीड़ेका रंग बाह्यलक्षणमें जैसा कटा होता है, विलायतमें वैसा ही कीड़ेके बाह्यशरीरमें गोलमिर्चके चूरकी तरह छोटा छोटा काला दाग दिखाई देता है। किन्तु अणुवीक्षण द्वारा देखनेसे दोनों स्थानके रोगोंके बीजमें पृथक्ता नहीं मालूम होती।

विलायत और अन्यान्य देशोंमें जहां सालमें सिर्फ एक बार कीड़े होते हैं, वहां आसानीसे कटारोग दमन किया जा सकता है। क्योंकि, वहां अंडे १० महीनेके भीतर नहीं फूटते, जिससे परीक्षा करनेका काफी समय मिल जाता है। किन्तु बङ्गालमें ८ से १५ दिनोंके मध्य ही फूट जाता है इस कारण परीक्षाका समय नहीं रहता। कटारोगमें भी फिर तारतम्य है। यदि चोकरूकी वा प्रजापतिके परीक्षाकालमें सैकड़ों पीछे ८०।६० मेंसे हर एकमें यदि कटारोगके अनेक बीज देखे जायं, तो उस प्रजापतिके अंडेसे कभी भी कीड़े नहीं हो सकता। फिर यदि उनमें २।४ कटाके बीज दिखाई दें, तो चोकरूकीके अंडेसे कोया हो भी सकता है और नहीं भी हो सकता है। यही कटारोग चूना, रसा, कार्लाभरा और लाली आदि रोगोंके सहायता पहुंचाता है। इस कारण अणुवीक्षणयन्त्रके द्वारा परीक्षा कर सबसे पहले कटाका प्रतीकार करना उचित है। किस प्रकार कहासे निर्दोष कीड़ामें, कटा-

रोग आता है, उसे कोई भी नहीं कह सकता। इसलिये जहां जहां बीजका कारखाना है वहां वहां अणुवीक्षणयन्त्र रखना आवश्यक है। बिना परीक्षा किये एक भी चोकरूकी कारखानेमें पालना उचित नहीं। प्रत्येक बार परीक्षा करके अंडे रखना आवश्यक है। कटाका बीज क्या है उसका भी आज तक पता नहीं चला है। फिर कटाके बीजमें जो बहुत बारीक बिन्दु दिखाई देता है वही कटाका बीजाणु है। यह बीजाणु दीर्घजीवी है। सात आठ महीने तक नष्ट नहीं होता। चोकरूकी और कोयामें ही बीजाणु बहुतायतसे रहता है। इस कारण कीड़ेके पक जाने पर उन्हें चन्द्रकीमें रख कुछ दूर दूसरे घरमें रखना उचित है। चोकरूकीकी कटाई, आणुवीक्षणिक परीक्षा और कोया मजबूत रखना, यह सब क्रिया घरसे कुछ दूर दूसरे घरमें करनी चाहिये। रेशम कटाई करनेमें कोयाको सिद्ध करना होता है, क्या कटा, क्या चूना, क्या कालशिरा इन सब रोगोंके बीजाणु ५।७ मिनटमें जलमें सिद्ध हो कर मर जाते हैं।

सावधान रहनेके लिये निर्वाचनके बाद कीड़ेका घर बीजसे भिन्न होना उचित है। बीज जिस घरमें रखा जाता है वहां चूहे तथा दूसरे जंतुका उपद्रव हो सकता है। टोकरेके कोयेको चूहे वा चिउंटी न खा सके इसके लिये कीड़ेके घरमें जैसा बन्दोवस्त रहता है बीजके घरमें भी वैसा ही बन्दोवस्त रखना उचित है। कटारोगकी परीक्षा करनेमें जिस दिन चोकरूकी ढक कर रखी जाती है उसके पांच दिन बाद परीक्षा शुरू करनी होती है। परीक्षाके समय जो बीजाणु पूर्ण अवयवको प्राप्त हुए हैं उन्हें चुन लेना होगा। कालशिराके बीज, रसाके दाने और चूनेके बीजकी ओर कुछ ध्यान नहीं देना होगा। कटा-बीजकी परीक्षा बहुत सहज है। अभ्यास हो जानेसे प्रतिदिन ३०० चोकरूकीकी परीक्षा हो सकती है। कटारोगका बीज पकने पर अणुवीक्षणयन्त्र द्वारा ६०० गुना बढ़ कर ठीक तिलके जैसा दिखाई देता है। उस बीजको पकनेमें १०से २० दिन लगता है। किन्तु उसके साथ यदि कालशिरा रहे, तो १० दिनोंके भीतर ही कटा बीज पक जाता है। अंडेके दोपसे कटा रोग होता है सो नहीं, टोकरेमें, घरमें, चन्द्रकी-

में, बाद कावेकी हेतु, यहाँ तक विशुद्ध मज्जे में भी फटा रोग हो सकता है। इस कारण पतञ्जलि मज्जे और पर तथा टाकरे भाषिका तृतिपाक प्रक्रम में जो कर बीड़ा पालना उचित है। कीड़े के मज्जे से निरुद्धनेके पहले अग्रबीको इतल कर इसमें भी तृतिपाक प्रक्रम देना चाहिये। कटारोग कास कर शीतकालमें हा दिखार होता है। दूसरे समय कटारोगका जोड़ बीड़े के मध्य प्रच्छन्नमात्रमें रह कर अत्याम्य रोग उत्पन्न करता है। जिस मज्जे में कटारोग नहीं है उस मज्जेका कीड़ा पोसनेसे अत्याम्य रोग नहीं होता। कटायुक बीड़ेसे कीड़ा यदि २५ दिनक अग्र परक जाय, तो कुछ काया पाया जा सकता है।

प्लूमारोग होने पर ममक समय गन्धक प्रका कर उसे दूर करना जाता है। यहाँ मरुस्थलमें हो प्लूमारोगका बीड़ा कीड़े के शरीरमें उत्पन्न होता है। यह रोग सबसे अधिक संक्रामक है। कटारोग जिस प्रकार बाया कल्प रोग होनेके बाद ही दिखाई देता है, प्लूमारोग उस प्रकार दिखाई नहीं देता। पहले यह जिस दिन कसार क मध्य २२ कीड़ा दिखाई देगा उसी दिन सभी रोगियों का मैल अच्छी तरह साफ कर देना उचित है। किसी टाकरमें मरा हुआ कीड़ा रहने न पाये, इस पर विशेष ध्यान रह। प्रथम दिन मैल साफ करनेके बाद ही कीड़ेके घरमें पत्ता न दे कर तृतिपाक प्रक्रम छिड़क देना उचित है। प्रायः सेर गन्धक प्रका कर रचनाका परीक्षा ४५ घंटे तक बंद रखना चाहिये। पीछ गहलूतका पत्ता देनेसे प्लूमारोग नष्ट होता है।

प्लूमारोगके बाद ही रसातल कीड़ेके पक्षमें अनिष्ट कर है। यूरोपमें रसातलमें कीड़ेका उतना नुकसान नहीं होता। इस कारण यूरोपीय रोगमत्त्वविद्दोंने इस संस्थामें कोह माकोचना न की। रसातल पर्वों होता है यह भी यूरोपमें किसीको मान्य नहीं। किन्तु इस रोगमें कभी कभी रसातलमें सभी कीड़े मर जाते हैं। इस कारण इस रोगके रोगकारियोंने रसातलके लक्षण अच्छी तरह जान लिये हैं। यहाँ अगहनसे वैशाख तक प्रायः अनादृष्टिके कारण वायु गृह मूजे रहती है। ५३ मास पृथि न हो कर यदि इत्यत् एक दिन अत्यन्त

पृथि हो जाय, तो सभी कीड़े रसातल मर जाते हैं। फिर बार काया-व्यय होनेके समय यदि एक भी कीड़े न मरे, तो पक्षनेके समय २४ कोड़ेमें रसातल होता है। पक्षनेके समय इस प्रकार यूरोपमें भी जो बायाका रसातल होते देखा जाता है। अधिक दिन पृथि न हो कर यदि एक दिन इत्यत् पृथि हो जाय, तो कीड़ेको बड़े गहलूतके पेड़की पतियां इनसे रसातल नहीं होता। रोगके पिछूके पत्ता देनेके समय कामल पक्षों को न दे कर कड़ा पत्ता देनेसे भी उस कीड़ेमें रसातल होनेको सम्भावना नहीं रहती। इस कारण रोगका खेती करनेवालोंको बड़ा गहलूतका पेड़ रखना भावश्यक है। रोगके कीड़ेको छायास्थानका पत्ता खिनानेसे रसा, लाली और काकशिरा, ये तीनों ही प्रकारके रोग होत हैं। जिन सब कारणोंसे रसा होता है, उनसे काकशिरा रोग भी हो सकता है। इस कारण यूरोपके परिदल जो शर्मों रोगको एक बतलाते हैं सो उनकी मूल है। रसा संक्रामक नहीं है, काकशिरा ही संक्रामक है।

ब्रह्मण्डमें आठसे पन्द्रह दिनके मध्य मज्जे फुटत है, इस कारण बड़े कीड़ेके सिवा दूसरे कीड़े का मरना सिन्धया नहीं जा सकता। किन्तु विजायतमें १० मास तक मज्जेका संप्रद कर रचना होता है। इस समय मज्जेका पक्ष नहीं परनेसे यह सिन्धया जा सकता है। यहाँ पूष और वायुमें भी सुजाया जा सकता है। ऐसे स्थित मज्जेसे जो कीड़ा हाता है उसमें अदृष्ट काकशिरा रोगकी उत्पत्ति हुआ करती है। किन्तु यहाँ सायपाली से रखने अर्थात् तृतिपाके प्रक्रम में सेनेसे काकशिरा रोग बड़ा हो सकता है। परिपाक्याकिक हास, अंतमें रसातल या नुष्पाक्य पक्षक रखन तथा चमड़ेसे बाण निकलनेमें बाधा होनेसे कीड़ेके अन्तमें काकशिराका प्रोक्षण उत्पन्न होता है। फिर गहलूतके पक्षोंका प्रक्रम मिगा रहनेसे ना काकशिराका अणु उत्पन्न होता है। कीड़ेको काकशिरा हुआ है या नहीं, इसका पत्ता लगाने के लिये उसकी अंतिक रसक्य अणुवाष्पवग्न द्वारा परीक्षा करना उचित है। यदि अंतिके रसमें काकशिरा का अणु रहे, तो काकशिरा नहीं हुआ है और यदि अणु

रहे, तो कालशिरा निश्चय हुआ है ऐसा जानना होगा। किसीका कड़ना है, कि कालशिरा रोगके बीजाणु एक ही प्रकारके हैं। फिर कोई इस जातिके रोगके बीजाणु दो प्रकारके बतलाते हैं। एक प्रकारके अणुसे गैटोन रोग होता है। बङ्गालमें उसको सलफा, तातके वा हाँसा कहते हैं। कालशिरा रोगको भिन्न भिन्न अवस्था आलोचना का वैज्ञानिकोंने स्थिर किया है, कि हाँसा कीड़ा और कालशिरा कीड़ा एक ही अणुसे उत्पन्न होता है। अर्थात् इन दो रोगोंके संस्रवसे जो अणु देखे जाते हैं वह एक ही अणुकी विभिन्न अवस्था है। कालशिराके कीड़ाके मध्य जैसा विन्दुवत् अणु रहता है, हाँसा कीड़ाके मध्य भी वैसा ही सूत्र खण्डकी तरह अणु देखा जाता है। हाँसा कीड़ाके मर जानेसे वह कालशिरा कीड़ाकी तरह काला और पूति गन्ध युक्त होता है। दोनों प्रकारके कीड़ोंके मरनेसे कुछ पहले दोनों ही रसम छोटे छोटे सूत्रखण्डवत् अणु चलाचल करते हैं, अणुवीक्षणयन्त्र द्वारा यह दिखाई देता है। कभी कभी कालशिरा और फटारोग एकत्र हो कर एकनेके पहले ही दिन कीड़ा हटात् मर जाते हैं।

कीड़ाका पालन।

सभी कीड़ेकी पालनप्रथा एक सी नहीं है। विभिन्न जातिके कुछ कीड़ाओंकी पालन प्रथा नीचे लिखी जाती है।

बड़ा कीड़ा—इस देशमें जितने प्रकारके रेशमका कोया होता है उनमें बड़ा कीड़ा ही सर्वश्रेष्ठ है। बोरभूम और मुर्शिदाबाद जिलेके बड़े कीड़ेका कोया सफेद और देखनेमें बहुत सुन्दर होता है। मेदिनीपुर-प्रान्तमें श्वेत पीत, हरित, पाटल इन चार वर्णोंके कोये देखे जाते हैं। बड़े कीड़ेके अडे दश महीनेमें फूटते हैं। उस अंडेको कपड़ेके ऊपर रखना उचित है। १५ दिनके बाद उसमें जलमें धो कर कपड़े परसे अच्छे अंडोंको उतार लेना होता है। पीछे छायामें सुखा कर हंडीमें रख उतका मुँह अच्छी तरह बंद कर देना होता है। हंडीमें रखनेके पहले पे दोमें रुई बिछा देना उचित है। मशहरीके कपड़ेकी दो थैलीकी आवश्यकता होती है। एक एक थैलीमें २ छटाँका अंडा रखे। थैलीमें अंडा एक

दूसरेमें सटने न पावे। हंडीके मुँहसे थैलीका फासला बाँध अंगुल रहना चाहिये। उस घरमें अधिक वायुका संचालन करना और आग जलाना मना है। धूप भी उस घरमें न घुस सके। जो घर ग्यूठ ठंडा हो उसीमें थैली समेत अंडी लटका देनी चाहिये। १५ दिनसे लगायत दा भास तक ठंड लगानेके बाद रातमें दश वार ७५ डिग्री उष्ण रखनेसे अंडा अच्छी तरह फूट जाता है। इच्छा करने पर बहुत थोड़े समय कीड़ामें भी बड़े कीड़ेका अंडा फोड़ा जा सकता है। अत्यन्त ठंडा लगानेके बाद उष्णमें रखनेसे असमयमें अंडा फूट सकता है। सद्यस्त्वत्त बड़े कीड़े वा विलायती कीड़ेके अंडेको शुद्ध हाइड्रोक्लोरिक एसिडमें पाँच मिनट डुबो रखे। पाँछे जलमें धो कर सुखा ले और गरम स्थानमें रखे। इससे छोटे कीड़ेके अंडेकी तरह वह दश वारह दिनके भीतर ही फूट जाता है। वैशाख और जेठके महीनेमें अधिक गरमी पड़ती है, इस कारण बड़ा कीड़ा पोसना उचित नहीं।

विलायती कीड़ा—विलायती कीड़ाका पालन बहुत कुछ बड़े कीड़ाके ही जैसा होता है। प्रभेद इतना ही है, कि बड़े कीड़ाके अंडेको ६०° से ५०° डिग्री तक फारेनहीट देना होता है। किन्तु विलायती कीड़ोंके अंडेकी ४०° से ३०° डिग्री तक ठंडमें रखना होता है। इस कारण ग्रीष्मप्रधान देशमें विलायती कीड़ाका पालना सुविधाजनक नहीं है। अधिक ठंड पड़नेसे विलायती कीड़ा डिमको दार्जिलिङ्ग वा अन्य किसी उच्च शैल पर भेज देते और २१ मासके बाद निम्नप्रदेशमें ला गरम जगह पर रख देते हैं। इससे १०१२ दिनके भीतर ही अंडा फूटने लगता है। दूसरे समय बर्फका कलके साथ बन्दोवस्त कर सभी समय ३०° या ४०° डिग्री ठंड देनी होती है। मन्द्राज शहरके बर्फके कारखानेमें विलायती कीड़ा पाला जाता है। निम्नवङ्गमें वैशाख, जेठ और मार्दोंके महीनेमें विलायती कीड़ा पालनेसे वे प्रायः कालशिरारोगसे मर जाते हैं। फिर इस देशके शहतूतका पत्ता खिला कर यदि विलायती कीड़ा पालना हो, तो बड़े बड़े शहतूतका पेड़ लगाना उचित है। ऐसा कर मकनेसे छोटे कीड़ा या निस्तारी कीड़ाकी अपेक्षा विला-

यतो कीड़ा पाकमें अधिक लाभ है। फिर छोटे कीड़ा के पक्षमें बड़े शहसूतका पचा नितान्त अनिष्टकर है। इस कारण जो बड़े बड़े शहसूतका पेड़ लगा सकें उनके सिधे विजायती कीड़ा पाकना उचित है। सुपुत्रता के सम्बन्धमें बङ्गाकदेशके देशम धोए है सही पर विजायती कीड़ामें काम अधिक है। इस देशके पांच छाः देशमें कीवोंसे व्यवहारोपयोगी जितना देशमेंका सूता बनता है विजायती कीड़ेक तीम बार कीवोंको एक साथ काटनेसे उठना हो देशम बन सकता है। विसायती कीड़ा ही या बड़ा कीड़ा, दोनोंके मर्दे होनेके बाद कमसे कम डेढ़ मास तक गरम स्थानमें रख शीत लगानेके सिधे बरफके बकसमें या शीतप्रधान पहाड़ पर रखना उचित है। विजायती कीड़ाके पाकनेके विषयमें कोर सिधेय नियम नहीं है। केवम बड़े पेड़ का पचा मधका कड़ा पचा बिछा सकनेसे विसायती कीड़ासे मच्छा कोया मिलता है। ठंड बिछानेके पहले बड़े कीड़े या विसायती कीड़े मर्देको तृतिपाके प्रथम बुयो रकनेके बाद परिष्कार प्रक्रममें घो लेना उचित है।

छोटा कीड़ा और निस्तारी कीड़ा—विजायती और बड़े कीड़ेको जिस प्रकार शीत बिछाया जाता है। निस्तारी; छोटे कीड़ा और कोमाक काड़ेको उस प्रकार नहीं बिछाया जाता। ये सब कीड़े क्या शीत, क्या दीप्प सभी समय फूटते हैं। इन सब कीड़ोंका पाकन करवा बहुत सख्त है, इस कारण विजायती और बड़े कीड़ेमें उत्कृष्ट देशम होने पर भी इस देशके कृषक साधारणता छोटे कीड़ेको ही पाकते हैं। सभी प्रकारके कीड़ेको मर्देके निकटवर्ती पहले तृतिपाक प्रक्रममें घो लेना उचित है।

छोटा कीड़ा निस्तारी कीड़ा और बड़ा कीड़ा एकमे पर सख्तमें पहाचान जाता है। एक कीड़ेको चुन कर कोया प्रस्तुत करनक छिप चम्पूकी ऊपर रखना होता है। फिर चम्पूकीक ऊपर रकनस भी उठना उचम कोया तैयार नहीं होता। एक विजायती कीड़े प्रायः चम्पूकीक ऊपर चकते हैं और सुविधा पानस हीबार पर कड़ कर कोया बनाते हैं। इस कारण इस कीड़ेका

कोया बनानेके समय बड़े सायधानो रकनी होती है। पचा देनेके समय जो पिन्सू पसेके ऊपर म रद कर दोकरेके बातों ठरक भा जाते हैं उन्हे पछा समझना चाहिये। उन्हे चम्पूकीक नीचे रख देनेस बह कोया तैयार करता है। मयिकास बकवान कीड़ा परसे भागने को कोजित करता है। किन्तु काजगिरा रोयप्रन्त होने पर बह नही भाग सकता।

उत्तर।

शाम, भासन मजुंग हरे, बड़ेडा, बेर, देशी भाव लुस मजुया कमि, डाक, दोष शीमर, जामुन, पीपल, फाकसा, रेंडी, संयुम और कावाम, इन सब वृक्षों पर लमायता ही उत्तरके कीट उत्पन्न होते हैं। जहाँ लमायता ही उत्तरके कीट होते हैं वहाँ नया पेड़ गाड़ देनेसे इस पेड़ को पत्ती खा कर मो कमी कमी उत्तर कीट हीप प्रस्तुत करते हैं। जिस पेड़की पत्ती बड़ी या तिक गंधवासी हो या फूलस कट होता हो ये सब पत्तियां उत्तरके कीट नहीं खाते। अगर उन्हे एकदम छाडे पौधे पर छोड दिया जाय तो मो ये उत्तरकी पत्ती नहीं खाते। ये लमायता बडे पेड़ की रूको पत्ती खा कर कोय बनाते हैं। उत्तर कीट भी म गली और पाकतु दोनों मयस्थामें पाये जाते हैं। संघाक खोग प्रधानता ३ मनु या बन्धमें उत्तरकीट पाकन करते हैं। प्रथम वा पुरिया बन्धमें देशक मासक भारमम उत्तर-कीट पाकन करवा होता है। क्योंकि, इस समय पहले सालके सखित मयिकास कीमक कोयेसे पतङ्ग काट कर बाहर निकलता है। जिस रातकी पतङ्ग निकलता है उसक दूसरे हो दिन बह म डा पारता है। म डा फूटनेमें कयक भाड दिन लगता है। पीछे ही सब कीट फूट कर प्राया दो मास पच जाते और बादमें कोया तैयार करत है। इस कोयेम जो कीट रहता है वह बहुत चुपक होता है। जिस कोयेके मय्य सबक कीट रहते हैं, ये प्राया काले होते हैं। बसंतो बन्धका जो छोटा छोटा और सफेद कोया वीजक छिप चुन लिया जाता है 'वारिया' कोया कहते हैं। कारिया कोयासे ३मी या ७मी जठको कोया काट कर प्रजापति बाहर निकलता है। दूसरे हो दिन प मर्दे श्ते है। भाड दिनक बाद हा मर्दे फूटने लगते

हैं। जनन्तर वे सब कीट डेढ़ मास पेड़ पर रह कर पत्ते लाते और आषाढके शेष वा श्रावणके आरम्भमें कोया तैयार करते हैं। वरसातो वन्दका लारिया कोया पीछे तृतीय वन्द अर्थात् 'जाड़ई' वन्दके बीजके लिये रखा जाता है। जाड़ई वन्दके उपयुक्त अंडेसे २०वीं या २२वीं श्रावणको प्रजापति बाहर निकलता है। उसके दूसरे दिन वे सब प्रजापति भी अंडे देते हैं। पहलेकी तरह ये अंडे भी आठ ही दिनमें फूट निकलते हैं। दो मास भोजन कर वे आश्विन मासके अन्तिम सप्ताहमें कोया तैयार करते हैं। कीटावस्थामें टसर-कीटको दिनरात बाहरके पेड़ पर रखना होता है। दूसरे समय उन्हें घरके भीतर रख सकते हैं। अधिक बीजका कोया यदि रखना हो, तो उसे घरके बीचमें न रख कर बाहर एक वासके ऊपर रखना चाहिये। धूप और वर्षासे बचानेके लिये अंडोंके ऊपर एक खडकी छानी कर देनी चाहिये। जिस दिन दो प्रजापति बाहर होते देखे जाय उसी दिन वास नुका कर कोयेको धनुषके आकारमें बांध कर लटका देना होता है। रातके ६ या १० बजे अंडे फोड़ कर प्रजापति बाहर निकलते हैं। बाहर होते ही नर-प्रजापति उड़ जाते हैं और मादा धनुषके ऊपर बैठ जाती है। रातके १२ से ३ बजे तक नर प्रजापति भी उक्त धनुष पर बैठते हैं। जो सय उड़ गये वे वही लौट कर बैठते हैं या नहीं, कह नहीं सकते। प्रातः काल होने पर धनुषको घरके भीतर रख देना चाहिये। दो पहरकी मादा प्रजापतिको बड़े बड़े पत्तेके दोनेमें रख कर उसका मुँह बंद कर देना चाहिये। दोनेमें वह जितनी बार उड़नेकी चेष्टा करेगी, उतनी ही बार वे अंडे देंगी। जगली अथवा स्वाभाविक अवस्थामें प्रजापति एक पेड़से दूसरे पेड़ पर जा कर २।४ अंडे पारती हैं। दोनेमें अंडे पारनेके पाच दिन बाद बीजाको खोल कर प्रजापतिको फूँक दे और अंडोंको सावधानीसे उड़ा रखे। पीछे उसके ऊपर जो धूल आदि बैठ गई है, उसे धीरे धीरे फूँक कर उड़ा देना चाहिये। बादमें उसे दोनेमें रख किसी पेड़ पर लटका दे। चिउंटी आदिसे बचनेके लिये पेड़के तनेमें मिलाविका तेल लेप देवे। आठवें दिनमें अंडे

फोड़ कर कीड़े निकलने लगेंगे। इस समय कीटपालकको सारा दिन पेड़के नीचे बैठ चीकसी देनी होती है। सन्ध्याल लोग तीर धनुष ले कर पेड़के नीचे बैठते हैं। दोनेको वृक्षको डालमें सदा कर बांध देना चाहिये जिससे कीड़े डालको पत्तो आसानीसे खा सकें। उस डालकी कुछ पत्ती खा लेनेके बाद कीड़े समेत डालको काट कर दूसरे पेड़को पत्तीमें लगा देना उचित है। पेड़की पत्ती नितान्त सरस होने अथवा सूर्यका उच्चाप अत्यन्त प्रखर होनेसे टसर-कीटमें रसारांग होता है। इस रोगसे अधिकतर कीड़े मर जाते हैं। बीच बीचमें वृष्टि होनेसे ही वे बच सकते हैं।

रेडोकी पत्तिया खा कर जो सब कीड़े निकल जातिके कीड़े तैयार करते हैं उन्हें एण्ड कहते हैं। एण्डोके कोयेको कताई नहीं होती। एक एक कोयेसे एक एक भी सूता नहीं निकलता। धुनिया और पिजिया कपासकी तरह इसमेंसे सूता निकालना होता है। एण्डोका सूता पशम कपास यहाँ तक कि गरदके सूतसे भी चिमड़ा होता है। एण्डोके अंडेमें घोर पाटकिला रंगका कोया देखा जाता है। इस पाटकिला रंगके कोयेका परिमाण जितना कम है उतना ही अच्छा। यूरोपमें एण्डोके कपड़ेकी अपेक्षा एण्डोके कोयेकी ही अधिक रफतनी होती है। पाटकिला कोयेमें मिलावट देनेसे उतना माल नहीं होता। पाटकिला कांयसे जो सूता बनता है उसे परिष्कार कर सफेद करना कठिन और श्रमसाध्य है।

पिल्लू कीटके जिस प्रकार कालशिरा और कटारोग होता है आसामके एण्डो कीड़ेके भी उसी प्रकार काल शिरा और कटारोग होते देखा जाता है। उन दोनों रोगोंसे अधिकतर एण्डो कीड़े मर जाते हैं। बगुडा और कोचविहारका एण्डो-कीट आसामके एण्डोकोटसे सबल होता है। वहाँ आज भी कटारोग घुसने नहीं पाया है। एण्डोकीटका पालन आसाम देशकी एक प्रधान उपजीविका है। पिल्लूका पालन करनेके समय जिस उपायसे मक्खोका उत्पात रोकना होता है, एण्डो कीटके पालन-कालमें भी उसी उपायका अवलम्बन करना चाहिये। पिल्लू और एण्डो-कीटका एक ही नियमसे पालन

करना होता है। शहदुतका कोड़ा जब बोया बनाने
 छायाक होता है तब जिस प्रकार उसे सहजमें पहचान
 कर ठेकरेसे अलग किया जाता है, एरबी कीरके बोया
 बनाने छायाक होने पर वह इस प्रकार पहचाना नही जा
 सकता। इस समय पिस्तू कीरको अन्द्रकीके मध्य रख
 दिया जाता है, किन्तु एरिडकोया बनानेके लिये वह उप
 युक्त नही। घिसायती पिस्तूका बोया बनानेके लिये
 जैसा प्रवण्य करना होता है, एरबीकोया बनानेमें भी वैसे
 ही प्रवण्यकी जरूरत है। जो कोड़ा ठेकरेस बाहर जा
 कर बोया बनाना है वह खमायत ही अधिक सबल है।
 मीरके लिये उनमेंसे बिजकुछ सफेद कोया निकाल
 देना अधिक है। शहदुत पिस्तूके बोयेस प्रजापतिको
 बाहर होनेमें ८ से २० दिन लगता है। किन्तु इस देशमें
 एरबीके बोयेस प्रजापतिके निकालनेमें प्रीषकाळमें १५
 दिन और शीतकाळमें ३० दिन लगता है। एरबीकोयेकी
 कटाई नही होती इस कारण सभी भूतोंसे प्रजापतिको
 बाहर निकाल देना अधिक है। बहुतेरे एरबीके बोयेको
 पूर्णमें सुखा कर भीतरमेंके जीबन्त कीट मार डालते हैं।
 इस प्रकार मरे हुए कीट समेत २००० से २५०० बीजों
 से एक सेर होता है, किन्तु अधिक कोड़े रहनेसे
 ३०० ८०० बोयेस ही सर हो जाता है। जाट एरिडकोये
 की दर १०० ट० मन होनेसे सुले कीड़े समेत कापका
 काम सिर्फ २० ट० होता है। एरिडकोयेस प्रजापतिको
 बाहर निकाल देनेसे यह बहुतस कामोंमें आता है। इस
 मुर्गे मादि उर्ध्व बड़े पाकसे घात है। काइकी हेतमें
 गाड़ वेनस काइकी तिनो बढ़ता है। कुकी मादि कोइ
 कोइ असम्ब आति कोयेसे कीरका निकाल उर्ध्व पका कर
 था री है। एरबीका लाटकोया रोमक काटकोयेके जैसा
 सहजमें काटा नही जाना। लेकिन सार मिश्रित जलमें
 २३ घण्टा सिद्ध कर पोछे उसे जो कर सुण्या खेसस
 रोमक काइकी तरह सहजमें कनाई हो सखतो है। फल
 का पत्ता भपया कितो भा नये पेड़का सार व्यवहार
 करना अधिक है। रोमक लाट कायेको कटाई कर
 जितना काम होता है, एरबीकी कटाई करनेकी उठना
 ही माम हो सकता है। एरबी-मृता मरक सुतल कहीं
 सकत होता है। यह ७८ ट० सेर बिच्छा है। रसर

कोयेका छाट एरबी कोयेसे सहजमें काटा जाता है।
 किन्तु उसे भी कुछ काळ सार जलमें सिद्ध किये बिना
 सहजमें सूता नही निकलता। इस देशमें जितने प्रकारका
 रोमकी सूता बनता है उनमें केंदे सबसे सरता है। फल
 सस्ता ही नही उरचता कपड़ा भी टिकाऊ होता है। एक
 एक कपना ६।७ वर्ष रहता है। १० मन कम्पा और एक
 गात्र चौड़ा कटका धान ५.३ ट०में मिलता है।

रक्षम फार् करनेका उपाय।

कोयेको धूपमें सुखा कर सपवा कार्यन बादसाह
 फाइर के कर मार देना होगा। वर्षा छोड़ कर अन्य
 समयमें माप देनेको शीतो है। जहां कायेको कटाई अधिक
 होती है वहां माप देनेके लिये तुम्बुलकी भावरपकता
 शीतो है। तुम्बुलमें ५ मिमट १६ ० डिमी उष्णपमें रख
 देनेसे कायेमेंका कीड़ा निरवप हो मर जाता है। तुम्बुल
 करनेके बाद एक दिन पूर्णमें अच्छी तरह सुखा देना
 होता है।

इस देशमें कोयेकी कटाई कर सूना निकालनेके लिये
 तीन भायेजनको मायनरकता होती है। १मा, एक घाड़
 या गधन जलका बरतन जहां काया भूमता है और सूता
 निकलता है। २रा एक चरुना भर्पात् हो झोहलकाके
 प्रायभागमें सलग हो छोटा और सच्छिद्र मिट्टीका
 बरतन। जिस काइ फलकके सामने यह दोनों शकाका
 स बन रहती है उसीके दूसरे मागमें और भी हो पीतल
 की शकाका सीधो चढ़ी रहती है। ३रा तबिल का
 चरणी। इस चरणीमें रोमकी काई बटका कर हत्येस
 घुमाने पर पाईक कोयेसे सूता भाप हो सुलने लगता
 है। एक कोया अतम हाने पर दूसरा काया फीरज उसी
 जगह रहना हाता है तथा उसकी भी घाड़ परदेकी तरह
 लगा देनेको होगा। चरणीक ऊपर हो सुतली टीक एक
 ही जगह पोछे सर जाती है, इस कारण उसके उपरो
 माग पर एक वृद्ध जेतक माप भूमता रहता है। जो
 एरड इस प्रकार भूमता रहता है उसके ऊपर हो कापको
 छोडो शलाका चढ़ो रहती है, इस कारण एरड बाये
 भीर वहिने भूमता है। इस प्रकार भूमनेसे दोनों सुतली
 चरणीक ऊपर एक ही जगह न पड़ कर दो तीन इन्चके
 फाससे पर पड़ती है।

विलायतमें रेशम कातनेकी तीन प्रणाली प्रचलित होती जाती है,—१ इटाली प्रणाली, २ फरासी प्रणाली, ३ रोटेलिना प्रणाली। इटली प्रणाली द्वारा कताई करने से एक सूतके साथ निकटस्थ सूतका सम्बन्ध नहीं रखना होता है। यहां तक, कि कताई करने करने सूत टूट जाने पर उसे फिर जाड़नेकी जरूरत नहीं होती। इस प्रणालीसे सूत निकालनेमें दो छोटे छोटे कांचके चक्केका प्रयोग होता है। बीच बीचमें चक्केके फूट जानेका डर होता है। चक्केके फूट जानेसे सब गुड़ मिट्टी। फरासी प्रणाली प्रायः बङ्गदेशकी प्रणाली-सी है। इसमें आभ पासके दो सूतको बदल कर कताई करनी होती है। यह प्रणाली बहुत सहज है, इस कारण सभी इसे काममें लाते हैं। रोटेलिना गायबियायी प्रणाली इटलीसे भी जटिल है। इस प्रणालीमें एकही सूत दो भिन्न भिन्न स्थानमें बदल कर कताई करनी होती है। इसमें चार बहुत बारीक कांचके चक्केकी जरूरत होती है। अधिक संश्रृंषण द्वारा शेष सूतोंको बृद्ध और सुगोलभावमें सम्मिलित कर सूता प्रस्तुत किया जा सकता है, इस कारण यह जटिल प्रणाली काममें लाई जाती है। इससे उत्तम सूत तैयार होते हैं सही, पर इसके व्यवहारमें बहुत संभ्रष्ट है। बङ्गदेशकी प्रणाली बहुत सहज और अल्प व्ययसाध्य है। रेशमको कताईके लिये अभी यूरोपमें अनेक प्रकारकी कलें बन रही हैं। मालदह अञ्चलमें सालमें प्रायः २००० मन खमरू रेशम तैयार होता है। वीरभूम जिलेमें भी जहां जहां क्रीडा पाला जाता है, वहां थोडा बहुत खमरू तैयार होता है। मालदहके रेशमसे वीरभूमका खमरू खराब होता है। मुर्शिदाबाद जिलेमें कान्डीके निकट बसोया, विण्णुपुर आदि ग्रामोंमें जो पट्टवस्त्र बनते हैं, वे वीरभूमके खमरू रेशमसे, किन्तु उस जिलेके मिर्जापुर आदि ग्रामोंमें जो सर्वोत्कृष्ट कपडा बुना जाता है उसमें मालदहके रेशमका ही व्यवहार होता है।

रेशमका इतिहास।

जनसाधारणका विश्वास है, कि चीनदेश ही रेशमका प्रथम जन्मस्थान है। इसी देशसे भारतवर्ष और यूरोपमें रेशमकी रफ्तानी हुई है। किन्तु जब इस देशके

आदमी चीनका नाम तक भी नहीं जानते थे, उसके भी बहुत पहले भारतमें रेशमका व्यवहार प्रचलित था। हम लोगोंके देशमें धर्म कर्ममें देशजात द्रव्यके सिवा विदेशी द्रव्यको काममें नहीं लाते थे। यागयज्ञादि कर्मके समय सभी जगह इस वस्त्रका व्यवहार देख कर कोई कोई कहा करते हैं, कि रेशम यदि विदेशी होता तो इस देशके लोग कभी भी धर्म कर्ममें उसका व्यवहार नहीं करते। कोई कोई "क्षीमे वसने वसाना" इत्यादि वैदिक प्रमाण उद्धृत कर विवाहमें व्यवहृत उक्त क्षीम वस्त्रको ही रेशमी वस्त्र समझने हैं। किन्तु प्राचीन वैदिकसाहित्यादिमें क्षीम शब्दका उल्लेख नहीं देखा जाता। परवर्ती वैदिक और स्मृतिसाहित्यमें जहां क्षीमवस्त्रका उल्लेख है वहां प्राचीन टीकाकारोंने क्षीम शब्दका शण निर्मित वस्त्र अर्थ लगाया है। इस हिसाबसे धर्मशास्त्रमें पट्टवस्त्रके व्यवहारका प्रसङ्ग रहने पर भी वैदिककालमें रेशमका प्रकृत व्यवहार था वो नहीं, संदेह है।

अथर्ववेदीय कौशिकसूत्रमें "क्षीमिकां वैश्याय" (५७३) अर्थात् वैश्याको क्षुमानिर्मित मेखला दे। यह क्षीम शब्द देख कर भी कोई कोई "रेशम" को कल्पना करते हैं। किन्तु मनुसंहिताकारने स्वयं उस क्षीम शब्दकी इस प्रकार व्याख्या की है,—"क्षीमस्य तु मीर्वीज्या वैश्यास्य शणतान्तवी।" (२।४२) अर्थात् वैश्याका शणतन्तु ही मेखला होगा। क्षीम शब्दसे पट्टवस्त्र भी समझा जाता है, किन्तु उस पट्टवस्त्रका अर्थ पटसन है जो रेशमसे बिलकुल भिन्न है। मनुसंहितामें रेशम और टसरका स्पष्ट उल्लेख मिलता है, जैसे—

"कोपेयाविक्रयो रूपैः कुतपानामरिष्टकैः।

श्रीफलैरंशुपट्टानां क्षीमाणा गौरसर्वपैः ॥"

(मनु०१।२२०)

अर्थात् कोपेय और पशम लोना, मिट्टीसे, अंशुपट्ट वा रेशम श्रीफलसे तथा क्षीमवस्त्र गौरसर्वपसे परिशुद्ध करे। उक्त प्रमाणसे दो प्रकारके रेशमका पता चलता है। इन दोनोंमें एक टसर और दूसरा रेशम है, टसरके कोपेसे जो निकृष्ट रेशम पाया जाता था, वही कोपेय है तथा पट्ट वा बड़े पाट्ट नामक कीड़ाके कोपेसे

जो मशु मिलता था, वही मशुपट्ट कहलाता है। मनुसंहितामें चीन आदि जनपदवासीकी भारतके अन्तर्गत ज्ञाति बताया है। फिर भी मनुसंहितामें चीनांशुक अर्थात् चीनोंके निर्मित सूत कलका कोइ उल्लेख नहीं है। इससे मालूम होता है, कि मनुसंहिताकी रचनाके समय भारतवर्षमें कींचेव और मशुपट्ट नामक जो दो प्रकारके वस्त्र प्रचलित थे, वह चीनांशुकसे अलग हैं। महाभारतके राजसूय पर्वाध्यायमें लिखा है कि, चीनोमे राजा पुषिष्ठरको चीनांशुक उपहार दिया था। जैसे—

“ममप्रदागतस्पर्शान् वाह धीनीनसमुद्रमम्।

ऊर्याञ्च राजसूयैव पट्टं कीरकन्वया ॥”

(तमा ५१।२६)

शायद इसी समय भारतवर्षमें पहले पहल चीनांशुकका प्रचार हुआ होगा। पर्यक्रममें महा भाने पर भी चीनांशुक भारतवासीकी विश्वास सामग्री समझा जाता था। जैसे—

“चीनांशुकमिष, केनोः प्रतिवार्त्त मीषमालस्य ।”

(अथर्ववेद शकुन्तला १ म अङ्क)

शायद चीनांशुक जब भारतीय राजाओंको विज्ञास सामग्री था, तब चीन देशीय कोड़े इस देशमें ज्ञान्या और इसका प्रतिपादन किया गया होगा। संस्कृतसाहित्यमें देशमकीटका नाम पुरहरीक है। भाद्र भी माकरह अश्वजन्मे जो देशमके कीर पावते हैं, वे पुरहरीकास या पुण्ड्र कहलाते हैं। पुरहरीक शब्द ही अण्ड शसे पोद्द, पोद्द, पूद्द वा पिन्दु हुआ है। इसाजन्मसे कई सरो पड़े पोण्डवर्द्धनके निकट पुरहरीक नामक एक यथिक्, शाखाका हाथ जेनेके अण्डपसूत्रमें मिलता है। मासवहस बहुधा पर्यन्त एक समय देशम बहुतायतसे उत्पन्न होता था तथा पिन्दु का व्यवसाय भी जेटों चलता था। यहाँ जो पिन्दु का व्यवसाय करते थे उनमेंसे एक उष भेनी जिनकाजन्में पुरहरीक नामसे प्रसिद्ध है। संस्कृत शास्त्रमें कींचेव, पट्ट, क्रिमिसूत्र, कीटजन्तु, कीटजन्तु, कीटजन्तु और नुगुञ्ज ये सब देशमके पर्याय कहे गये हैं। उक्त नामोंसे भी वैदेशिक संभवका कोइ आभास नहीं मिलता। चीन भाषामें शी (Tsu)से कोया और तो (Tsu) कीर समझा जाता है। इसी शीसे सुगञ्ज

सिन्के, कोरिया सिर, मोक सेरिचोम, छाटिन सेरिचम (Sencum) जर्मन सिडेन (Seiden), फरासी सोपी (Sole), इस सिषलक (Sheolk), भागड़े-सकसम सिषलक (Soole), भारतवर्षकोय सिन्के (Silke) और प्रखदेशीय सा (Tsu) हुआ है। उक्त नाम वृत्तसे स्पष्ट मालूम होता है, कि चीन और मोङ्गोलियासे देशम यूरोपमें पहुँचा है। आसामो भाषामें पाटको कोया, कश्मीरो भाषामें देशम कहते हैं। यहाँ तक, कि तामिल भाषामें भी पट्ट शब्दसे देशम समझा जाता है। विभिन्न भाषाके ये सब शब्द संस्कृत पट्ट शब्दके अण्ड श हैं, इसमें संदेह नहीं। उक्त विभिन्न भाषाके शब्दोंसे क्या यह नहीं समझा जाता, कि भारतके पूर्वमान्यवासी प्रखमासिपण चीनोंसे देशमका नाम ग्रहण करने पर भी क्या इतिहास भारतमें क्या सुन्दर उच्चर भारतमें कहीं भी वैदेशिक नाम नहीं लिया जाता था। इससे यही साबित होता है कि मशुपट्ट वा भातीय देशम भारतवासीका निजक है। महाभारतमें पिन्दुकीटको 'क्रिमि' कहा है। १० भाद्र भी कश्मीर अश्वजन्मे कीटका पावन करने वाले क्रिमिक' कहलाते हैं। और तो क्या, रामायणमें भी आसामके उच्चरशको कोपकार कहा है।

“मन्वराच महाप्रमम पुपुद्रुशुहास्तयेव च ।

मूभिञ्ज कोरकायया मूभिञ्ज रजताइराम् ॥”

(किरिचुवा ४०।२३)

रामायणके वर्षमसे ही मालूम होता है, कि हिमा जयक श्लोडस्य कोपकार नामक जनपदसे बहुत पहले चीन और भारतवासीने देशम या उच्चरका संग्रहण पाया होगा। शब्दलक्ष प्राधान्य म अण्ड सेरिचोय (Sernkoth of Issiah 10 ix) नामक देशमका उल्लेख है।

भाषायिगुण्य इस उच्चरसे चीनके साथ संभव स्पर्कार करते हैं। एपर हिन्दु मंगो और शीमलक, चरवी विमलके और कुसु तथा पारसिक अण्डेशम या देशम एक पर्याय वाचक शब्द है। इन सब शब्दोंके साथ चीन वा भारतीय देशम उच्चरका कोइ संभव नहीं है।

चीन इतिहासमें लिखा है, कि फोहि नामक चीन

७ “इतिहि कोरकालसु कन्वत् लव परिपहम् ॥”

(भारत १४।१९।२६)

सम्राट्की खी सिलिञ्चोने २७०० ई०सन् पहले रेशमका सूत आविष्कार किया, किन्तु वर्त्तमान ऐतिहासिकोंका कहना है, कि चीनके इतिहासमें जो सब प्राचीन गल्प लिखी हैं उन्हें ईसा जन्मकी ३री सदीके पहलेकी नहीं मान सकते। उस समय चीनके अत्याश्वर्य प्राचीर-निर्माता चीन सम्राट् चिहोयङ्ग तिनै समस्त प्राचीन चीनग्रन्थोंको जला दिया। उनके मरनेके बाद चीनका प्राचीन इतिहास स्मृतिसे पुनः लिखा गया। इस हिसाबसे चीन-इतिहासकी अति प्राचीन घटनाधरो विलकुल सच है, हमें विश्वास नहीं होता। ३री सदीकी चीनमें जो रेशम और टसरका वाणिज्य चलता था, उस समयके ग्रन्थमें इसका प्रमाण पाया गया है। जनसाधारण का विश्वास है, कि रोमसम्राट् जस्टिनियनने ६ठी सदी में कुछ संन्यासी यतिधोंसे चीनके रेशमी वस्त्रका संधान पा कर उन लोगोंको पुनः चीनदेश जानेके लिये अनुरोध किया। वे लोग ही चीनदेशसे चीना-कीड़ेका उत्कृष्ट अंडे ला कर रोम लाँटे। उसी बीजकोपसे यूरोपमें रेशम बनानेका सूत्रपात हुआ तथा उसी समयसे रेशमका व्यवसाय भी धीरे धीरे सारे यूरोपमें फैल गया। इस प्रकार चीनका रेशम यूरोपमें प्रचारित होने पर भी उसके पहले रोमक-साम्राज्यमें रेशम अपरिचित नहीं था। प्लिनिके वर्णनसे जाना जाता है, कि आसिरिया देशमें पिब्लू कीड़ा पैदा होता था। दक्षिण यूरोपमें भी जट्टली कीड़ा मिलता था और वहाके लोग रेशम निकालनेका हाल जानते थे। प्लिनिके मतसे प्लोतेशकी कन्या पाम्फिली (Pamphile) ने कोप नामक द्वीपसे रेशमकी कताई और रेशम बुननेकी पद्धतिका आविष्कार किया। इन सब प्रमाणोंसे देखा जाता है, कि चीनके रेशमका अभी तमाम यूरोपमें आदर और प्रचार होने पर भी बहुत पहलेसे दक्षिण यूरोपके लोग जट्टली रेशम कीटका हाल जानते थे। ६ठी सदीके बाद समस्त यूरोपमें चीनी रेशमका आदर होनेसे एकमात्र चीनको ही लोग रेशमका आविष्कार जन्मस्थान मानने लगे हैं।

फरासी पण्डित बैताड (M. Boitard) का कहना है, कि रेशम भारतकी चीज है। उनके मतसे सम्राट् जस्टिनियन (Justinian) ने संन्यासियों द्वारा जो रेशम-

कीटका अण्डा मंगवाया था, वह चीनदेशसे नहीं, बल्कि पञ्जाव-प्रान्तके सरहिन्द नामक उत्तर-भारतसे। चीन लोग दुर्भय प्राचीरसे निकल कर सुगन्धिद्रव्य और गरम मसालेके बदलेमें हिन्दूको रेशम दे जाते थे। अति उर्वर अनुगाङ्गप्रदेशमें पीछे उस रेशमकी खेती होने लगी थी।

प्रोकोपियस (Procopius de Bello Gallico) के वर्णनसे भी मालूम होता है, कि ५००से ५६५ ई०के भीतर कुछ संन्यासी भारतसे रोमक-सम्राट् जस्टिनियनकी सभामें गये थे। उन लोगोंको सुननेमें आया कि सम्राट्की अब इच्छा नहीं, कि वे पारस्यसे रेशम खरीदें। उन्होंने सम्राट्से कहा, कि यदि आज्ञा हो, तो वे लोग रोमराज्यमें ही रेशम पैदा कर सकें, दूसरेके मुंह ताकनेकी जरूरत नहीं। उन्होंने यह भी कहा, कि नाना जातिसमा कुल भारतके सेरिन्दा (सरहिन्द) नामक स्थानमें उन लोगोंका आदिवास है। वे लोग आसानीसे रेशमकीट यहां ला सकते हैं।

फिर वैजन्तीवासी थियोफनेस (Theophanes of Byzantium) ने ६ठी सदीके शेष भागमें लिखा है, कि सम्राट् जस्टिनियनके शासनकालमें एक पारसिक लाठीमें कुछ रेशमकीटके अण्डे छिपा कर वैजन्ती राजधानी लाया था। उसीसे रोमकोंने रेशमकीटकी पालनप्रथा और रेशमोत्पादनका तरीका सीखा था। इससे पहले रोमराज्यमें और कोई भी रेशमकीट पालनेका हाल नहीं जानता था।

उद्धृत प्रमाणोंसे मालूम होता है, कि यूरोपीय जनसाधारणका विश्वास रहने पर भी चीनसे रोम राजधानीमें रेशमकीट नहीं लाया गया। भारत सामान्त सरहिन्द अथवा उसोके निकटवर्ती पारस्य-सीमासे शायद रेशमका बीज रोमराज्यमें लाया गया होगा। जो कुछ हो, भारतमें बहुत पहलेसे रेशमकी खेती होती आई है तथा भारतसे भी प्राचीन सुसभ्य देशोंमें रेशमका बीज गया होगा यह भी असम्भव नहीं।

भारतमें अभी जितने प्रकारके रेशमकीट देखे जाते हैं सबोंको हम लोग भारतीय कीट नहीं कह सकते। रेशमत्वविदोंकी गवेषणाके फलसे इसी भारतमें

प्रधानता १५ प्रकारके पिन्सूकोट मीर ३१ प्रकारके टसर कोटका संधान पाया गया है। उन सब जातियोंमें जो फिर बहुत सा उपजाति देना आती है। उनमेंसे बिका पती (Bombyx mori) मीर चीना पिन्सू (Bombyx suvensis) तथा इन दो अंतर्जातीयों कुछ उपजातियोंको हम लोग भारतीय माननेके लिये तय्यार नहीं हैं। वे सब विभिन्न समयमें भारतवर्ष आये और पाई गये हैं। इनमेंसे चीनापिन्सू अब इस देशमें छाया गया है उसे कोई नहीं बह सकता। बिजापती बीडा चीनक समी प्रदेशोंमें, काश्मीर, अफगानिस्तान, पारस्य, कोंधारा, मिरिया, फारस, इरान, स्पेन, सुदूर ग डस, तुर्क, इजिप्ट, अजिबिया, मधु जिया, अमरिका आदि देशोंमें ही बना पाया जाता है, किन्तु इसका आदि जन्मस्थान चीनदेश है। इस इच्छिता कर्मकाके समय बङ्गालमें बिजापती कीड़ा पाखनेका इन्तजाम हुआ किन्तु यह प्रोत्समप्रधान बङ्गदेशको अपेक्षा शीतप्रधान स्थानमें ही अधिकतासे होता है।

विषयात हो गये थे अभी उनके देशम व्यवसायका स्थाना आकर न रह गया है।

रामका बाणियाप।

सभी समय देशोंमें शीकीन चीन सनक कर देशमका आकर मीर बाणियाप होता है। इससे वर्षस चीनदेशमें देशमका बाणियाप एक-सा चला आ रहा है। सुदूर देशमें घोड़ी-बहुत देशमकी आमदनी रफानी होन पर भी चीन देशमें आमदनी नहीं होती, सिर्फ रफतनो होती है। इसी स मान्य होता है, कि चीन किसीका मो देशमके लिये मुकापेक्षा नहीं है। चीनक सब जिलोंमें सिध तरह काफी देशम उत्पन्न होता है, उसी तरह माना देशोंमें चीनसे वही सब उत्पन्न देशम मजा आता है। इसी देशमसे कमाक, चाद, पगड़ी, साटिन, फीता आदि बनता है।

चीनको तरह जापानमें भी पपेय देशम उत्पन्न होता है। जापानमें एक प्रकारका कीड़ा पैदा होता है जो बहुत देशमके कोपको नष्ट करता है। फिर मा वहाँ देशमीरक बहुतायतसे प्रस्तुत होता तथा बिजापत मीर भारतक बाजारोंमें उसकी लूरे आमदनी होती है।

पूय उपशीय, इयामदेश, पारस्य आदि स्थानोंमें जो देशम उत्पन्न होता है, उसका अधिकतम अन्तर्जातिय में ही व्यय होता है। पारस्यके मेजद प्रदेशमें हुसन कुको पौ नामक एक प्रकारका इंधिया देशमी बल तीरार होता है। मध्यपश्चिममें बुधारा देशम व्यवसायका एक प्रधान स्थान है। चीनके देशमको अपेक्षा यहाँका देशम निरुध्र समका जाता है। यहाँसे कास कर तीन प्रकारका छवि मजि (मनोके किर उत्पन्न), वह नजर मीर चित्ता आपदार नामक देशम भारतमें भेजा जाता है। इनमेंसे चित्ताजापदार देशम ही भेज है। यह इजरायल इयाम मीर कुयाद प्रदेशमें पैदा होता है।

भारतवर्षमें काफी देशम उत्पन्न होता है, तो भी यूरोपके बाजारोंमें भारतीय देशमस चीन, जपान, इयाम मीर पारस्यके देशमका ही बड़ा आदर है। इस इच्छिता कर्मकाने यंगालमें उत्कृष्ट देशम प्रस्तुत कपानेकी शधा का। इसके लिये जर्मनी १८६३ ई०में यंगालके जर्मनीशरेंस अनुलोभ किया। इसा समय इरकोस कुछ देशम व्यवसाया यहाँ आय। इरको प्रधानुसार देशम

१८३६ ई०में आकर सिध साइबेरे लिका है, कि जग मम १५०० वर्ष हुआ, बड़ा कीड़ा इरकोस इस देशमें आया गया है। हाउन साइबेरेके पश्चिम यह देशमकाट चीनसे बङ्गालमें आया है। लेकिन अब छाया गया डोक डोक माइम नहीं, किन्तु इस कीड़ेकी हम लोग पिन्सू नहीं मान सकते। यह 'ईशी' पिन्सू नामसे तमाम मया हूट है। इसी नामसे इस कीड़ेको ग्रीकीय या भारतीय कहनेमें कोई आपत्ति नहीं। १५० वर्ष पहले प्रकाशित फारसा बाणियाप कोपस आना आता है, कि उसके पहले कास्तिमबाजार, इरियाल, अह्रीपुर, राजानगर, सांतामुकी, नदिया, बगुड़ा, चङ्गपुर मीर निम्न भासाम में यह कीड़ा अधिकतासे पाया जाता था।

काश्मीरमें भी देशमकी येतो होती है। यहाँ चीन मीर कोंधारास व्यपते अन्ते देशमक कोट काये आते हैं। दृष्टिग गपमेंलके इन्धियामागके पल मीर पुणे पोप देशम पविच्छोक पलसे केशक यंगालमें हो नहीं, मयलके नामा स्थानोंमें इशी मीर बिहेशी नामा प्रकार के देशमकी वेता हान लगी है। कुछका पियप है, कि देशम-व्यवसायम इशी लोग एक समय जा एने जग

उत्पन्न होने लगा। पीछे यहाँके लोगोंने इस प्रयाको उतनी सुविधाजनक न समझ प्रहण नहीं किया। भारत के सब स्थानोंसे बंगालमें ही अधिक रेशम उत्पन्न होता है। यहाँसे उत्तर पश्चिम प्रदेश, पञ्जाब, यहाँ तक कि, काश्मीर तक वगैरह रेशम भेजा जाता है। बनारसमें जो उत्कृष्ट रेशमी कपड़े बनते हैं उसमें अधिकांश बंगीय रेशम है। मुर्शिदाबाद और मालदह-प्रान्तमें उमदा रेशमी कपड़ा तैयार होता है। वे देवनेमें चिलायती रेशमी कपड़ेसे साफ होते हैं। चिलायती रेशम धोनेसे कुछ कामका नहीं रह जाता, किन्तु देशी रेशम उस तरह नष्ट नहीं होता, वरं धोनेसे और उजला हो जाता है। यहाँके रेशममें रंग दिया जाता है। बाजारमें चौदह प्रकारके रंगमें रंगे रेशमी कपड़े देखे जाते हैं जैसे,—गाढा नीला या काला, कुछ नोला, लाल और गुलाबी, वसन्ती या हल्दी रंग, जरद या कमला नीवूकी तरह रंग, हेरा, वैंगनी, पोताम्बरी, सुनहरी, हीरामन-कण्ठी, मयूरकण्ठी, धूपछाया और आसमानी। बालु-खरमें रेशमके ऊपर जड़ीका काम किया जाता है।

इस समय यूरोप और अमेरिकाके सभी देशोंमें रेशम उत्पन्न करनेका विशेष प्रयत्न होने पर भी फ्रान्सने सब देशोंको मार किया है। और सब देशोंकी अपेक्षा फ्रान्ससे अधिक रेशम दूसरे देशोंमें भेजा जाता है। इंग्लैण्डमें सब देशोंकी अपेक्षा फ्रान्ससे ही अधिक रेशम जाता है।

रेशमके प्रसिद्ध कारखानोंके नाम।

बङ्गाल—बङ्गाल सिक्क मिक्स, कालीशङ्करपुर सिक्क फैक्ट्री, मुर्शिदाबाद सिक्क स्टोर, निमतल्ला सिक्क फैक्ट्री, पलासी सिक्क फैक्ट्री, रोज फिक्टर्स कनसर्न।

बम्बई प्रेसिडेन्सी—अहमदाबाद सिक्क और काटन मैनुफैक्चरिंग, वलुभाई यगनलाल, दयाराम हरकिशुन बोलचेवली, न्यु कोरोनेशन मिक्स, पालनपुर वीमिंग-कम्पनी।

मध्यभाग—चित्तुम सिक्क मैनुफैक्चरिंग।

काश्मीर—काश्मीर सिक्क फैक्ट्री।

महिसुर—बङ्गलोर उलन, फाटन पण्ड सिक्क मिक्स,

सालभेशन आर्मी ताता सिक्क फार्म।

पोण्डिचेरी—फिलचर्स पट टिसाजेज गैवेल्ले, साधन सोसाइटी अनोनियम दे फिलचर्स पट तिसाज।

युक्तप्रदेश आगरा और अवध—बालमुकुन्द मुल्ल सिक्क मिक्स, बनारस सिक्क वीमिंग, टाचलर वीमिंग स्कूल।

रेशमी (फा० वि०) रेशमका बना हुआ।

रेशयदारिन् (सं० त्रि०) हिसितकी प्रतिहिसा करनेवाला।

रेशा (फा० पु०) १ तन्तु या महीन सूत। यह पौधोंकी छालों आदिसे निकलता है या कुछ कलोंके भीतर पाया जाता है।

रेप (सं० पु०) १ क्षति, हानि। २ हिसा।

रेपण (सं० लो०) रेप-ल्युट्। १ अश्वगद्द, घोड़ेका हिनहिना। २ व्याघ्रका चीत्कार, बाघका गरजना या गुराणा। ३ क्षति, हानि। ४ हिसा।

रेपा (सं० लो०) १ बाघका गुराणा। २ घोड़ेकी हिनहिनाहट।

रेपिन् (सं० त्रि०) हिसाशोल, हिसा करनेवाला।

रेप्ट (सं० त्रि०) क्षतिकारक, हानि पहुँचानेवाला।

रेप्टच्छिन्न (सं० त्रि०) प्रलयके भङ्गावतसे उद्भिन्न या विदीर्ण, जो प्रचंड वायुसे टूट फूट गया हो।

रेपमन् (सं० पु०) प्रलयकाल।

रेपमथित (सं० त्रि०) जो प्रबल आंधीसे नष्ट-भ्रष्ट हो गया हो।

रेप्य (सं० त्रि०) प्रलयकालमें भी जो मौजूद रहें।

रेस (अं० लो०) १ बाजी बंद कर दौड़ना, दौड़में प्रति-योगिता करना। २ घुड़दौड़।

रेसकोर्स (अं० पु०) दौड़ या घुड़दौड़का रास्ता या मैदान।

रेस प्राउंड (अं० पु०) दौड़ या घुड़दौड़का मैदान।

रेसमान (फा० पु०) सुतरी, डोरी।

रेसलपुर—मध्यप्रदेशके हुसंगाबाद जिलान्तर्गत एक गण्ड-ग्राम।

रेह (हि० लो०) खार मिली हुई वह मिट्टी जो ऊसर मैदानोंमें पाई जाती है।

रेहन (फा० पु०) खपया देनेवालेके पास कुछ माल या

आमदाद् इस शर्त पर रक्कना कि जब वह रूपया या प्राय
तब मास या आयदाद् वापस कर दे, पंचक, गिरवा ।

देहनदार (फा० पु०) वह जिसके पास कोई आयदाद् देहन
रको हो ।

देहननामा (फा० पु०) वह कागज जिस पर देहनकी शर्ते
लिखी हो ।

देह (अ० स्त्री०) पुस्तक रखनेकी देवदार तन्त्री ।
दिख देखो ।

देहली—१ मध्यप्रदेशके सागर जिल्लासर्गल एक तहसील ।
यह अक्षा० २३ ३ से २३ ५४ उ० तथा देशा० ७८ ३३
से ७३ २२ पू०के मध्य अवस्थित है । भूपरिमाण १२३३
वर्गमील और जनसंख्या डेढ़ लाखके करीब है । इसमें
२ शहर और ३९० ग्राम आते हैं । यहाँकी जमीन बड़ी
उपजाऊ है ।

२ सागर जिलेके अन्तर्गत एक नगर और देहली का
विभागका सहर । यह अक्षा० २३ ३८ उ० तथा देशा०
७३ ५ पू०के मध्य अवस्थित है । समुद्रकी तलसे यह
१३५० फुट ऊँचा है । यह स्थान खारोप्य है । गुड़
पीसो और गेहूँके व्यवसायके अति यह नगर प्रसिद्ध है ।

पहले गौड़राज्यका यहाँ राज्य करते थे । पीछे बह
देवर्षीय राजाज्जातिकी एक शाखा निकलकर यहाँ
रिया साम्रज्य का कर बस गई । उन लोगोंने जमारियासे
राजपाठ उठा कर देहली नगरमें राजधानी बसाई तथा
सुदूर दुर्गादि द्वारा उसे सुरक्षित कर दिया । पश्चात्
मुसलमन सरदार राजा छल्लाज्जाने अशेर जातिले यह
स्थान जीत लिया । अन्ततः उन्होंने फत काबादेके
शासनकर्ता महम्मद खाँ बहलूलके बिकर युद्ध किया ।
इस युद्धमें पेशवा बाजीरावन उन्हे सहायता पशुंकाह
पी । इस प्रयुक्तारमें उन्होंने अग्राय्य समस्तिके साथ
पेशवाको यह स्थान दे दिया । वर्तमान दुर्ग उक्त पेशवा
के पक्षसे ही बनाया गया था । उस समय यहाँ अनेक
सम्मानार्थकीय महाराष्ट्रपुत्र्य का कर बस गये थे । आज
भी इनका दूध फुटा महक मीसुद है । १८१७ ई०में
सागर जिलेके साथ देहली ब्रिटिश सरकारके अधिकार
मुक्त हुआ

पट्टा (हि० वि०) जिसमें देह बहुत हो ।

देह (हि० पु०) गढ़ देखो ।

देहदार (अ० पु०) दूधसे बने प्रयुक्त सर्वांशय यमित
परीक्षामें उत्तीर्ण व्यक्ति ।

देह (अ० पु०) छरुडीका लुका हुआ हाँधा जिसमें पुस्तके
भावि रखनेके अति पर या जाने बने रहते हैं । यह आस
भारोके बंगका होता है पर भेद इतना ही होता है, कि
भारभारोके आरों और तबने अड़े होते हैं और यह कम
से कम आगेसे लुका रहता है ।

देहद (अ० पु०) देनिसके खेलमें गेद मारनेका इजा ।
इसका अग्रभाग प्रायः बटुंकाकार और तलस बुना
हुमा होता है ।

देह (सं० पु०) व्यक्तिविशेष । (इन्द्रोत्प उ० ५१।३)

देहपर्व (सं० पु०) एक जनपदका नाम ।
(इन्द्रोत्प उ० ५।२५)

देह (सं० पु०) देहक योद्धमें उत्पन्न पुत्र ।
(या ४।१।२२)

देवास—एकपुत्रय यमित एक पुत्रपुत्र । यह सोराष्ठी
के परिवार किनारे अवस्थित है । यहाँ प्राङ्गणादि आरों
वर्षोंके लोग रहते थे । सद्यःप्रिकरके अन्तर्गत कामाक्षी-
माहाशयमें देहलका क्रिये विवरण दिया गया है ।

देवच (सं० पु०) १ ऐतुक गौतमें उत्पन्न पुत्र ।
(भास्व० श्री० १३।१४)

२ एक प्रकारका नाम ।

देवक्य (सं० पु०) १ परशुराम । २ ऐतुकके गमसे
उत्पन्न ।

देवस (सं० लि०) देवा सम्प्रणीय ।
(शत०भा० १४।५।२)

देतिक (सं० लि०) पितृक सम्प्रणीय, पितृकका ।

देतिक—अविप्रवर्तित गौतमेद
(लक्ष्म० उ० नगल० १०।१३)

देतु (सं० पु०) शला देवा ।

देव्य (सं० पु०) पितृकनिमित्त पाल, शतकका बग
बलत ।

देवास (हि० पु०) १ प्रसिद्ध मन्त्र ज्ञे जातिकी अमार था ।
यह रामानन्दका शिष्य और कबीर, पावा आदिका सम
कासोन था । ईश्वर राजा । २ अमार ।

रैदासी (हि० पु०) १ रैदास भक्तके सम्प्रदायका ।
 २ एक प्रकारका मोटा जउहन धान ।
 रैन (हि० स्त्री०) रात्रि, रात ।
 रैनी (हि० स्त्री०) चांदी वा सोनेकी वह शुली जो तार
 खींचनेके लिये बनाई जाती है ।
 रैमुनिया (हि० स्त्री०) १ एक प्रकारकी अरहर । २ लाल
 पक्षीकी मादा ।
 रैभ्र (सं० पु०) रैभ्रका गोत्रापत्य ।
 रैभी (सं० स्त्री०) १ ऋड् मन्त्रभेद । (ऋक् १० ८५।६)
 २ अथर्ववेदीय दो मन्त्र । (अथर्व २०।१२७ ४६)
 रैभ्य (सं० पु०) १ सुमतिकी पुत्र और दुष्मन्तकी पिता ।
 (भाग० ६।२०।७) २ एक मुनिका नाम । (लिङ्गपु०
 ६।१।१) ३ एक ज्योतिर्विद्व । केशवाकंठे मुहूर्त्तचिन्ता-
 मणिमें इसका उल्लेख किया है ।
 रैवत (अ० स्त्री०) प्रजा, रिआया ।
 रैवाराच (हि० पु०) १ छोटा राज्य । २ एक पदवी जो
 प्राचीन समयमें राजा लोग अपने सरदारोंको देते थे ।
 रैवता (हि० पु०) घोडा ।
 रैवत (सं० पु०) १ स्वर्णालु वृक्ष, सोनुली नामक क्षुप ।
 २ गुजरातका एक पर्वत । इसी पर्वत परसे अर्जुनने
 सुभद्राका हरण किया था । (भारत-१।२।१।६) उच्चन्त
 और गिर्यार देखा । ३ शङ्कर, महादेव । ४ दैत्यविशेष ।
 महाभारतमें लिखा है, कि यह बालप्रहर्मेसे एक है ।
 (भारत ३।२।१।८-२८)
 रैवत्या भद्रः रैवती-अण् । ५ वर्त्तमान कल्पके
 पाचवें मनु । ये रैवतीके गर्भसे उत्पन्न हुए हैं । दुर्दम
 इनके पिता हैं । इस मन्वन्तरमें विक्रुण्ठ अवतार,

विभुइन्द्र, भूतरथादि देवता, हिरण्यरोमादि सप्तर्षि हैं ।
 वलि और विन्ध्यादि उस मनुके पुत्र हैं । (भागवत)
 मत्स्यपुराणके मतसे भी रैवत पञ्चम मनु हैं । इन
 मनुके समय देवधाहु, सुवाहु, पर्जन्य, सोमप, मुनि,
 हिरण्यरोमा, सप्ताश्व, ये सात सप्तर्षि, अभूतरजस् आदि
 देवता, तत्त्वदर्शी अरुण, वित्तवान्, ह्य्यप, कापमुक्त,
 निसत्तसुख, सत्त्व, निर्मोह, प्रकाशक, धर्मवीर्य और
 ब्रह्मोपेत ये दश रैवत मनुके पुत्र हैं । (मत्स्यपु० ६ अ०)
 ६ रुद्रभेद । ७ सामभेद । ८ ब्रह्मर्षिभेद । ९ बालरोग-
 विशेषके अधिष्ठातृ-अपदेवताविशेष । १० मेघ, बादल ।
 ११ सोमलताविशेष । (सुभुत ४ २६) १२ ऋषिविशेष ।
 १३ राजभेद । (भारत उद्योग पर्व) १४ आनर्त्त (कुश-
 स्थली) के राजा ककुभिनके पितृपुरुष । १५ राजा
 अमृतोदनके औरससे रैवतीके गर्भजात पुत्रभेद । १६
 आनर्त्त राजधानी कुशस्थलीके निकटस्थ पर्वतभेद ।
 १८ शाकद्वीपके अन्तर्गत पर्वतभेद । (लिङ्गपु० ५।६।१७)
 (त्रि०) १६ धनवान्, धनी ।

रैवतक (सं० पु०) स्वार्थे कन् । १ गुजरातका एक पर्वत
 जो आधुनिक जूनागढके पास है और गिरनार कहलाता
 है इसी पर्वत पर अर्जुनने सुभद्रा हरण किया था ।
 २ शकुन्तला-वर्णित द्वारपालभेद । ३ रैवतक पहाड़ पर
 रहनेवाली एक जाति ।
 रैवतिक (सं० त्रि०) रैवती (रैवत्यादिभ्यश्च क् लृपा ४।१।१४६)
 इति ठक् । रैवतीका अपत्य ।
 रैवतिकीय (सं० त्रि०) १ रैवतीसम्बन्धोय । २ रैवती-
 सम्भव ।
 रैवत्य (सं० स्त्री०) १ धने, सम्पत्ति । २ एक प्रकारका
 साम ।

